મળવાનુ ઠેકાણુ
શ્રી અ. ભા. શ્વે સ્થાનકવાસી
જૈનશાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ
ઠે. ગરેડિયા કુવા રોડ, ગ્રીન લૉજ પાસે
રાજકોટ, (સૌરાષ્ટ્ર)

Published by
Shri Akhila Bharat S. S.
Jain Shastroddhara Samiti,
Garedia Kuva Road RAJKOT
(Saurashtra) W Ry India

+

ये नाम केचिदिह नः प्रथयन्त्यवज्ञां
जानन्ति ते किमपि तान्प्रति नैष यत्नः
उत्पत्स्यतेऽस्ति मम कोऽपि समानधर्मा
कालोह्ययं निरवधिर्विपुला च पृथ्वी ॥१॥

(हरिगीतिकाछंद)

करते अवज्ञा जो हमारी यत्न ना उनके लिये
जो जानते हैं तत्त्व कुछ फिर यत्न ना उनके लिये।
जनमेगा मुझसा व्यक्ति कोई तत्त्व इससे पायगा
है काल निरवधि विपुल पृथ्वी ध्यानमें यह लायगा ॥१॥

+

પ્રથમ આવૃત્તિ : પ્રત ૧૦૦૦
વીર સંવત ૨૪૮૮
વિક્રમસંવત ૨૦૧૮
ઇસવીસન : ૧૯૬૨

: મુદ્રક :
[illegible] મોહનલાલ શાહ
નીલકમલ પ્રિન્ટરી
ઘીકાંટા રોડ : અમદાવાદ

આદ્યમુરબ્બીશ્રી



વચ્ચે બેઠેલા

1 મોટાભાઈ શ્રીમાન મૂલચંદજી જવાહીરલાલજી બરડિયા

૨ બાજુમા બેઠેલા ભાઈ મિશ્રીલાલજી બરડિયા

૩ ઉભેલા સૌથી નાનાભાઈ પૂનમચંદજી બરડિયા

श्रीमान सेठश्री वरडियाजी सा. का संक्षिप्त परिचय

राजस्थान (भारतवर्ष) के एक सुन्दर शहर अलवर में ओसवाल समाज के व॰डिया खानदान में लालाजी सा. जवाहरलालजी हजारीलालजी सा.का जन्म हुआ ये दोनों सगे भाई थे और धर्म के वडे प्रेमी थे, वडे भाई जवाहरलालजी के ३ तीन पुत्र हैं, तथा छोटे भाई हजारीलालजी के ३ तीन पुत्रियां है। ज्येष्ठ भाई के पुत्रों के नाम श्री मूलचंदजी, मिश्रीलालजी, पूनमचंदजी है, इन तीनों भाइयों का जन्म अलवर में ही हुआ आपके पिताजी तथा चाचाजी अलवर में तपस्वी श्री सुन्दरलालजी के मकान में रहते थे इनके साथ सामाजिक तथा आंतरिक वहुत घनिष्ठ सम्बन्ध था तथा दूर में रिस्तेदार भी लगते थे, करीब ३०-३५ वर्ष साथ में रहे, तपस्वीजी का प्रेम प्रशंसनीय था। श्री मूलचंदजी, मिश्रीलालजी, पूनमचंदजी के दादाजी श्री प्रेमसुखजी पहिले जयपुर रियासत में वरखेडा नाम के गाँव में रहते थे तथा वहां लेनदेन का कामकाज करते थे, वहां पर आपकी जमीन जायदाद पकी हवेली, पक्के कुए, दुकाने वगेरेह थी, तथा आपकी १ हवेली जयपुर में भी थी, आप तीन भाई थे वडे भाई छगुलालजी, गोपालजी प्रेमसुखजी, दोनों वडे भाईयो के कोई संतान नहीं हुई आप फिर अलवर में आकर वस गये, तथा तव से तमाम कुटुम्ब वहीं पर ही रहने लगे। आप का स्वर्गवास हुवे काफी समय हुवा। श्री मूलचन्दजी वरडिया वचपन से ही वाहर रहने लगे तथा वीकानेर के प्रसिद्ध मोहता खानदान के साथ आपका करीव ३० वर्ष तक वडा घनिष्ठ संवंध रहा, आप इनके यहां वहुत से कामो में मेनेजर रहे आखर में आप यहां उनके कपडे के मील में जनरल मेनेजर थे, आप सन् १९४९ में उनसे अलग हो कर वडे उत्साह से यहां अहमदावाद में ही अपना खुद का कामकाज वरडिया व्रदर्स के नाम से शुरु कर दिया और यहां पर ही आप तीनों भाई सहकुटुम्ब रहने लगे, आप तीनो भाई एक साथ ही रहते है तथा कामकाज भी आप तीनों भाईयोंका साथ में ही है आप का निवासस्थान अहमदावाद में मशहूर कांकरिया तलाव के सुन्दर रमणीय वगीचे के नजदीक ,'रामबाग-(मणीनगर) में है जो

फलविया निवास के नाम से प्रसिद्ध है, आप की माताजी श्री जैन धर्मिष्ठ, दादीजी श्री रामबाईजी विराजती हैं वे धर्म को बहुत ही श्रद्धालु हैं आपके घर में धर्मध्यान हमेशा होता ही रहता है तथा आप तीनों भाइयों की तमाम सन्तानें धर्मप्रिय हैं आप तीनों भाइयों में बहुत घनीष्ठ प्रेम है भगवान से यही प्रार्थना है कि हमेशा ऐसा ही प्रेम और स्नेह भावना कायम रहे।

आप तीनों भाइयों के परिवारों के नाम—

श्रीमान मूलचंदजी सा का परिवार—आपके धर्मपत्नी श्री मती श्री कंचनबाई हैं आप के दो पुत्रीयें और चार पुत्र हैं, जिनके नाम सरदार कुंवरबेन और सम्पतबेन पुत्रों के नाम श्री ज्ञानचंदजी श्री रमेशचंदजी श्री रामचंदजी श्री यशवंतकुमारजी

श्रीमान मिश्रीमलजी सा के परिवार के नाम—आपकी धर्मपत्नी श्री मती श्री मथुराबाई आपके दो पुत्र हैं तीन पुत्री यें हैं पुत्र श्री नवरत्नमलजी श्री इन्द्रचंदजी पुत्रीयें श्री सुशिलादेवी श्री सरोजदेवी श्री सविताबेन

श्रीमान पुनमचंदजी सा के परिवार के नाम—आप के धर्मपत्नी श्री मती श्री चांदकुंवरबाई आपके पांच पुत्रीयां हैं और दो पुत्र हैं—श्री शशिकलादेवी श्री शकुंतलादेवी श्री स्नेहलतादेवी श्री शारदादेवी शीलादेवी पुत्रों के नाम श्री राजकुमार श्री सतीशकुमार है यह सारा ही परिवार बड़ा विनयशील विनीत धर्म के श्रद्धालु और धर्मप्रेमी है, खास बात तो यह है कि आप के परिवार में साम्प्रदायिक बंधन नहीं है गुणानुरागी बन अभेद भाव से सभी मुनिवरों व स्वधर्मीयों की सेवा बजाते रहते हैं.



श्री तपस्वीराज श्री सुंदरलालजी म. सा. का संक्षिप्त जीवनचरित्र

स्वनाम धन्य श्री ओसवाल कुलभूषण श्री भैरव दासजी छाजेड ने दत्तवास ग्राम (जयपुर) राजस्थान में है अपनी धर्मपत्नी श्री अन्चीबाई (चौक का बरवाडा जिलासवाई माधोपुर) के साथ अपने सांसारिक सम्बन्ध स्थापित करते हुए २दो पुत्ररत्न व १ पुत्री को जन्म दिया। जिनमें से वडे पुत्र का नाम श्री कल्याणबक्सजी तथा वछोटे पुत्रका नाम सुन्दरलालजी सा. और पुत्री का नाम सुन्दरबाई रखा। जो विवाहयोग्य होने पर देहली शादिकी थी। श्री सुन्दरलालजी का जन्म सं. १९३२ में हुआ था और अपने बाल्यकाल में ही अलवर में श्री गोकुलचन्द्रजी सा. संचेती के यहां दत्तक पुत्रके रूप में सं १९५४ में आये थे। श्री गोकुलचन्द्रजी सा. एक बहुत ही धर्मप्रेमी सज्जन थे। और उन्होंने श्री सुन्दरलालजी का लग्न श्री उत्तमचन्दजी सा. तातेड की सुपुत्री श्री हुलासीबाई ग्राम चाटसू (जयपुर) के साथ किया था। युवावस्था में आप बहुत शौकीन तबीयत के थे। बाद में लालाजी चिरंजीलालजो पालावत के एवं साधु सन्तों के सम्पर्क में आने जाने से धर्मप्रवृत्ति की ओर विशेष झुकाव होने लगा और अणुव्रत आदि धारण करते हुवे त्यागवृत्ति की ओर प्रवृत्ति बढी और व्यापार में भी सदा सत्य बोलने का निश्चय किया। आप हमेशां एक ही भाव (रेट) ग्राहक को बतलाते थे और वस्तुकी जैसी परिस्थिति होती उसी रूप में बतला देते थे। और ग्राहक भी इनकी बातों पर विश्वास करते थे। आपका व्यापार श्री मांगीलालजी छोटेलालजी (दिगम्बर) जैन के साथ में था। एक समय की बात है कि उनके परिवार के श्री चन्दनमलजी संचेती के पुत्रवियोग होने पर दुकान की देखरेख करने का कार्य आपको सौंपा। एक ग्राहक ने छींट मांगी और ग्राहक को दुकान के दूसरे आदमीने पक्की बतलाकर देदी, आपने बीच में ही रोककर कहा लो या ना लो यह आपकी इच्छा उपर है परंतु यह छींट कच्ची है, पक्की नहीं हैं। गृहस्थ जीवन में रहते हुए ही उन्होंने एक दफा अपनी धर्मपत्नी से दीक्षा के भाव प्रगट किये, तब वे बोली कि मैं मौजूद हूं

तब तक तो दीक्षा नहीं ले। घर पर रहते हुए ही धर्मध्यान करो। तब उन्होंने ज्योतिष वगैरा से देखा कि इनकी आयु अधिक नहीं है और उन्होंने ने अल्पकाल के बाद दीक्षा लेने के भाव आपस में प्रकट कर दिये। कि मैं घर स देवलोक होजाने के बाद दीक्षा लूगा। और इतने दिन तक महीने में १७ दिन स्थानक में ही धर्मध्यान में व्यतीत करने और १३ दिन दुकान पर व्यापार के लिये जाउगा और रात्री को पूरे महीने ही नहीं जाउगा चौथे व्रत क मर्यादि पच्चक्खाण बहुत अरसे स लिये हुए थे अर्थात शीलव्रत का स्कंद किया था। चौदस के चौदस को पोषध करते थे और हमेशा सुबह शाम के समय प्रतिक्रमण करते थे अर्थात दव जी रायशो प्रतिक्रमण करते थे आप आयबिल का प्रकार से करत रहते थ, इस प्रकार तपश्चर्या में दत्तचित्त रहने से लोग आपको "तपस्वीजी' कहने लगे। शास्त्रों में भी उत्तराध्ययन व दशवै कालिक व पुच्छिसुण, भक्तामर आदि स्वयं कण्ठस्थ याद किये व थोकड़ों के भी बहुत जानकार थे, और सूत्रों का नियमानुसार सज्झाय करते थे और तपस्या भी आप असझाय का समय छोड़ कर दिनभर सज्झाय करते थे और कोई भी उनके सम्पर्क में आता तो धर्म चर्चा का प्रमाण करते रहते थ। एक समय की घटना है कि जिस मारवाड़ (चौमस) में आप रहत थे उसके पास ही में एक ब्राह्मण के घर पर एक पक्षी आकर बैठा उसको बैठा देख कर कहा कि आज इस मकान में किसी क द्वारा हत्या होना है और उसी दिन देखते हैं कि उन घर की ब्राह्मणी को उसके पर प्रमी द्वारा कत्ल कर दिया गया है इसी प्रकार एक समय स्थानक में पोषध किये हुए कई श्रावक बैठे थे कि अचानक १ बिच्छू न बंधरे म श्रावक दीवान पन्नालाल जी के काट खाया और वे बहुत ही दर्द स बेचैन हो रहथे नवकार मन्त्रादि से उन्हों न उसका दद मिटा दिया, इस बात को श्व पर मिलने वालो ने इस मंत्र को पूछा परन्तु सब को इन्कार कर दिया कि मेरा यह पेशा नहीं है वह पोषध म बैठे थे और उसमें अशातना होती। नक्षत्र व तारों का ज्ञान भी तपस्वी जी को बहुत था रात्री को आकाश की और देखकर समय व काल सही बतला देते थे, कि इतने इतने बजकर इतने मिनिट हुए हैं। इस तरह की बहुत सी घटनायें तपस्वी जी की गृहस्थ जीवन की हैं।

इन महापुरुष ने समाज में भी अच्छी इज्जत प्राप्त की थी, पंच, पंचायती में भी इनकी राय ऊँची मानी जाती थी, ये नीति से व्यापार करते थे, फिर भी वैराग्य इनको बहुत प्रिय था पूज्य श्री लालजी महाराज के पास ब्रह्मचर्य का खंध किया था युवानवय में सपत्नी नौ वर्ष तक संसारावस्था में अखंड ब्रह्मचर्य पाला था बाद में पूज्य आचार्य श्री जवाहरलाल जी महाराज के पास वि. सं. १९७८ में दीक्षा ली, प्रथम चौमासा रतलाम में था जिसमें इन्होंने चालीस दीन की तपस्या की थी, दूसरे साल अहमदनगर (दक्षिण) में चौमासा था उसमें इकसठ दिन की तपस्या की, उस मोके पर नगरसेठ दाराबजी ने सारे शहेर की जीव दया रक्खी थी, शहेर भर के कतलखाने बन्ध रखाये थे यहांतक कि गोरे लोगों की छावनी में भी कतलखाने सेठ साहेब ने बन्धरखवाये थे। दक्षिणबेलापुर में चातुर्मास किया उसमें उगनसठ दिन की तपस्या की वहां भी सारे शहेर में जीवदया पाली तथा मच्छीमारों का कामकाज वगैरह पारणा के ऊपर बन्ध रहा। ब्यावर (नयाशहेर) में चौमासे के अन्दर पिचोत्तर उपवास किये, बडा भारी जीवदया का उपकार हुआ, बीकानेर चातुर्मास में बडी तपस्या की, आदर्श धर्मध्यान हुआ, उदयपुर चातुर्मास किया, बडो वहां चौसठ और पींचोतेर दीन की तपस्या की, सारे मेवाड में अगता रहा। पाखी पलाई, भूपालसिंह जी महाराणाजी ने जीवदया का डंका बजाया और ओं शान्ति कराइ, राणा जी ने इनके दर्शन किये। राणा जी के दीवान साहेब श्री तेजसिंह जीसा. ने इनके पास समकित ली यानी इनको गुरु बनाया। नव्यासी में गोगुना में ८३–९० मे सेमलगाम मे ९० दिन की तपस्या की कुचेरा (मारवाड) में वि. सं १९९१ में चातुर्मास किया, ९१एकानु दिन की तपस्या की और उस मौके पर कुचेरा में भैरु जी के स्थान की जीवहिंसा सदा के लिये बन्द करवाई। सं. १९९२ में करांची चातुर्मास किया उसमें इन्होंने तीन महिने की तपस्या की लाखों जीवों का उपकार हुआ, दूसरे साल करांची में ही विराजे, छनु दिन की तपस्या की, करांची का कतलखाना चौबीस घंटे के लिये बन्ध रहा। करांची संघने बडी सेवा बजाई, सेठ जमसेद जी नसरवान जी महेता पारसी कोम के अग्रेसर जो सोलह सालतक करांची के मेयर थे उन्होंने कतलखाना बन्ध करवाने का बडा प्रयत्न किया

तब तक तो दीक्षा नहीं ली। घर पर रहते हुए ही धर्मध्यान करो। तब उन्होंने ज्योतिष वगैरा से देखा कि इनकी आयु अधिक नहीं है और उन्हों ने अन्तकाल के बाद दीक्षा लेने के भाव आपस में प्रकट कर दिये। कि मैं घर से देवलोक होजाने के बाद दीक्षा लूगा। और इतने दिन तक महीने में १७ दिन स्थानक में ही धर्मध्यान में व्यतीत करने और १३ दिन दुकान पर व्यापार के लिये जाऊगा और रात्री को पूरे महीन ही नहीं जाऊगा चौथे व्रत के समोंके पच्चक्खाण बहुत अरसे से लिये हुए थे अर्थात् शीलव्रत का स्कंद किया था। चौदस के चौदस को पोषध करते थे और हमेशा सुबह शाम के समय प्रतिक्रमण करते थे अर्थात् देव सी रायशी प्रतिक्रमण करते थे आप आयंबिल कई प्रकार से करते रहते थे, इस प्रकार तपश्चर्या में दत्तचित्त रहने से लोग आपको "तपस्वीजी कहने लगे। शास्त्रों में भी उत्तराध्ययन व दशवै कालिक व पुच्छिछसुण, भक्तामर आदि स्वयं कण्ठस्थ याद किये थ थोकड़ों क भी बहुत जानकार थे, और सूत्रों का नियमानुसार सज्झाय करते थे और तपस्या भी आप असज्झाय का समय छोड़ कर दिनभर सज्झाय करते थे और कोई भी उनके सम्पर्क में आता तो धर्म चर्चा का प्रसारण करते रहते थ। एक समय की घटना है कि जिस मोहल्ले (चौमक) में आप रहते थे उसके पास ही में एक ब्राह्मण क घर पर एक पक्षी आकर बैठा उसको बैठा देख कर कहा कि आज इस मकान में किसी क द्वारा हत्या होना है और उसी दिन देखते हैं कि उन घर की ब्राह्मणी को उसक एक प्रेमी द्वारा कत्ल कर दिया गया है इसी प्रकार एक समय स्थानक में पोषध किये हुए कई श्रावक बैठे थे कि अचानक ? बिच्छू ने मघरे में श्रावक दीवान पन्नालाल जी को काट खाया और वे बहुत ही दर्द से बेचैन हो रहे थे नवकार मन्त्रादि से उन्हों ने उसका दर्द मिटा दिया, इस बात को सुन कर मिलने वाले ने इस मन्त्र को पूछा परन्तु सब को इन्कार कर दिया कि मेरा यह पेशा नहीं है यह पोषध में बैठे थे और उसमें असातना होती। नक्षत्र व तारों का ज्ञान भी तपस्वी जी को बहुत था रात्री को आकाश की और देखकर समय व काल सही बतला देते थे, कि उनक इतने बजकर इतने मिनिट हुए हैं। इस तरह की बहुत सी घटनाएं तपस्वी जी की गृहस्थ जीवन की है।

श्री. समवायाङ्गसूत्रकी विषयानुक्रमणिका

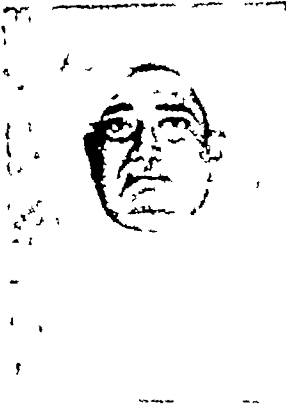
काजी खुदाबक्स जो उस समय करांची के मेयर थे उन्हों ने गुमरात नगर में कुत्ते मारने का काम बन्ध कराया था। नेटी, जेटी दरिया के भागपर हमेश के लिये मच्छी मारना वहां के गोरे कमिश्नर सा ने बन्ध कराया, हिन्दु समाज के नेता डोक्टर हिंगुरानी तथा सक्रेटरी श्री दयालसिंह जीने भी दया कराने का पूरा ही लाभ लिया। करांची से विहार कर बालोतरा पधारे वि सं, १९९४ में वहां चौरासी उपवास किया, पारणा के उपलक्ष्य में सोलह सौ गांव में अगता पला पारणा करके पीछे तेविहार सथारा किया लगभग पचास दिन का सथारा आया, आसोज सुदि दशम के दिन सुबह देवलोक हुवे जिसमें तमाम गाम वालोंने अपना समग्र कार्य बंध रखा

पूज्य आचार्य श्री आगमोद्धारक जैन धर्म दिवाकर श्री घासीलालजी म सा का संयोग मिलन से तथा वर्तमान समय में जीनवाणी सेवा का अपूर्व कार्य जो अहमदाबाद में शास्त्रोद्धारसमिति कर रही है यह भी उन्हीं महाभाग तपस्वीराम की आकांक्षा और आशीर्वाद का ही शुभफलरूप में स्थानकवासी जैनसमाज के संमुख है। तथा पंजाब केसरी आगम वारिधि आदि अनेक पदवीयों से अलंकृत श्रमण संघ के प्रधानाचार्य आत्मारामजी म सा की वि स १९९१ साल में किशनगढमें कृत प्रबलप्रेरणाकाही फल स्वरूप है ऐसे प्रभाविक महात्मा पुनः पुनः इस भारत भूमि को पावन करने के हेतु परिपूर्ण गे यही शुभ भावना।



समाप्त

આદ્યમુરબ્બીશ્રીઓ



(સ્વ.) શેઠશ્રી હરખચંદ કાલીદાસ વારિઆ
ભાણવડ.



કોઠારી હરગોવિંદભાઈ જેચંદ
રાજકોટ.



શેઠશ્રી શાંતિલાલ મગળદાસભાઈ
અમદાવાદ.



(સ્વ.) શેઠશ્રી ધારશીભાઈ જીવણલાલ,
વારસી.



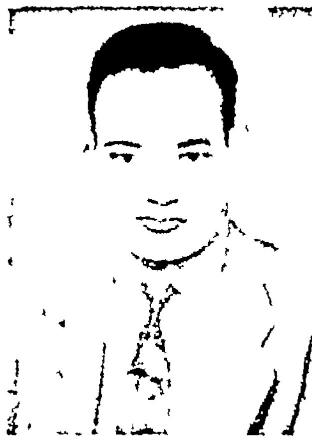
(સ્વ.) શેઠશ્રી છગનલાલ શામળદાસ ભાવસાર
અમદાવાદ.



સ્વ. શ્રીમાન શેઠશ્રી મુકનચંદજી મા
બાલિયા પાલી મારવાડ



(સ્વ.) શેઠ રંગજીભાઈ મોહનલાલ શાહ
અમદાવાદ.



(સ્વ.) શેઠશ્રી દિનેશભાઈ કાંતિલાલ શાહ
અમદાવાદ.



શેઠશ્રી જેમિંગભાઇ પોચાલાલભાઇ
અમદાવાદ.



સ્વ. શેઠશ્રી આત્મારામ માણેકલાલ
અમદાવાદ

શ્રી અખિલ ભારત શ્વેતામ્બર સ્થાનકવાસી
જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ.

*

ગરેડીયાકુવારોડ-ગ્રીન લોજ પાસે,
રાજકોટ

*

દાતાઓની નામાવલી

*

શરૂઆત તા. ૧૮-૧૦-૪૪થી તા. ૩૧-૧૨-૬૧ સુધીમાં
દાખલ થયેલ મેમ્બરોનાં મુબારક નામો.

*

લાઇફ મેમ્બરોનું ગામવાર કકાવારી લિસ્ટ.

*

(નાની ભેટની રકમો આપનારનું, તથા રૂા. ૨૫૦થી ઓછી રકમ ભરનારનું નામ આ યાદીમાં સામેલ કરેલ નથી.)

આદ્ય મુરબ્બીશ્રીઓ



(સ્વ) શેઠશ્રી શામજીભાઈ વેલજીભાઈ વીરાણી
રાજકોટ



શેઠશ્રી રામજીભાઈ શામજીભાઈ વીરાણી
રાજકોટ



(સ્વ) વિનોદકુમાર વીરાણી
રાજકોટ
(દીક્ષા લીધા પહેલા શાસ્ત્રાભ્યાસ કરતા)





શેઠશ્રી મિશ્રીમલજી લાલચંદજી સા. મુથિયા
તથા શેઠશ્રી જેતરાજજી લાલચંદજી સા

૧૬ શેઠ મીશ્રીલાલજી જેવંતરાજજી લૂણીયા ચેંડાવલવાળા અમદાવાદ ૫૫૦૨
૧૭ શેઠ રામજીભાઇ શામજી વીરાણી એન્ડ સમરતબેન
રામજી વિરાણી ટ્રસ્ટ રાજકોટ ૫૦૦૧
૧૮ એક જૈન ગૃહસ્થ અમદાવાદ ૫૪૨૫

નોટઃ–ઘાટકોપરવાળા શેઠ માણેકલાલ એ. મહેતા તરફથી અમદાવાદમાં પાલડી બસ સ્ટેન્ડ પાસે પ્લોટ ન. ૨૫૦ વાળી ૬૯૮ ચો. વાર જમીન સમિતિને ભેટ મળેલ છે. અને જેનું રજીસ્ટર તા. ૨૩–૩–૬૦ ના રોજ થઇ ગયેલ છે

મુરબ્બીશ્રીઓ–૨૫

(ઓછામાં ઓછી રૂા. ૧૦૦૦ ની રકમ આપનાર)

નંબર	નામ	ગામ	રૂપિયા
૧	વકીલ જીવરાજભાઇ વર્ધમાન કોઠારી હા. કહાનદાસભાઇ તથા વેણીલાલભાઇ કોઠારી	જેતપુર	૩૬૦૫
૨	દોશી પ્રભુદાસ મૂળજીભાઈ	રાજકોટ	૩૫૦૪
૩	મ્હેતા ગુલાબચંદ પાનાચંદ	રાજકોટ	૩૨૮૯ાા–ાા
૪	મ્હેતા માણેકલાલ અમુલખરાય	ઘાટકોપર	૩૨૫૦
૫	સંઘવી પીતામ્બરદાસ ગુલાબચંદ	જામનગર	૩૧૦૧
૬	લલ્લુભાઇ ગોરધનદાસ ચેરીટેબલટ્રસ્ટ હ. શેઠ. વાડીલાલ લલ્લુભાઇ	અમદાવાદ	૨૫૦૦
૭	નામદાર ઠાકોર સાહેબ લખધીરસિંહજી બહાદુર	મોરબી	૨૦૦૦
૮	શેઠ લ્હેરચંદ કુંવરજી હા. શેઠ ન્યાલચંદ લ્હેરચંદ	સિદ્ધપુર	૨૦૦૦
૯	શાહ છગનલાલ હેમચંદ વસા હા. મોહનલાલભાઇ તથા મોતીલાલભાઇ	મુંબઈ	૨૦૦૦
૧૦	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ હા. શેઠ ચન્દ્રકાત વીકમચંદ	મોરબી	૧૯૯૩
૧૧	મ્હેતા સોમચંદ તુલસીદાસ તથા તેમનાં ધર્મપત્ની અ. સૌ. મણીગૌરી મગનલાલ	રતલામ	૨૦૦૦
૧૨	મ્હેતા પોપટલાલ માવજીભાઇ	જામજોધપુર	૧૫૦૨
૧૩	દોશી કપુરચંદ અમરશી હા દલપતરામભાઈ	જામજોધપુર	૧૦૦૨
૧૪	બગડીયા જગજીવનદાસ રતનશી	જામનગર	૧૦૦૨
૧૫	શેઠ માણેકલાલ ભાણજીભાઈ	પોરબંદર	૧૦૦૧
૧૬	શ્રીમાન ચંદ્રસિંહજી સાહેબ મ્હેતા (રેલ્વે મેનેજર)	કલકત્તા	

આદ્યમુરબ્બીશ્રીઓ—૧૮

(ઓછામાં ઓછી રૂા ૫૦૦૦ની રકમ આપનાર)

નંબર	નામ	ગામ	રૂપિયા
૧	શેઠ શાંતીલાલ મંગળદાસભાઈ આણંદજી કલ્યાણજીના માલીક	અમદાવાદ	૧૫૦૦૦
૨	શેઠ હરખચંદ કાળીદાસભાઈ વારીયા હા શેઠ લાલચંદભાઈ, નગીનભાઈ વ્રજલાલભાઈ તથા મગનલાલભાઈ	ભાવનગર	૬૦૧૦
૩	કોઠારી જેચંદ અજરામર હા દલપતભાઈ જેચંદભાઈ	રાજકોટ	૫૨૫૧
૪	શેઠ પારસીભાઈ જીવનભાઈ	બારસી	૫૦૦૧
૫	સ્વ પિતાશ્રી છગનલાલ શામળદાસના સ્મરણાર્થે હા. શ્રી ભોગીલાલ છગનલાલભાઈ ભાવસાર	અમદાવાદ	૫૨૫૧
૬	સ્વ શેઠ દિનેશભાઇના સ્મરણાર્થે હા. શેઠ કાંતિલાલ મણીલાલ જેશીંગભાઈ	અમદાવાદ	૫૦૦૦
૭	શેઠ આત્મારામ માણેકલાલ હ. શેઠ શ્રીમનલાલભાઈ શાંતીલાલભાઈ તથા પ્રમુખભાઇ	અમદાવાદ	૬૦૦૧
૮	શ્રી શામજી વેલજી વીરાણી અને શ્રી કડવીબાઈ વીરાણી સ્મારક ટ્રસ્ટ હા શેઠ શામજી વેલજી વીરાણી	રાજકોટ	૫૦૦૦
૯	શ્રી શામજી વેલજી વીરાણી અને શ્રી કડવીબાઈ વીરાણી સ્મારક ટ્રસ્ટ હા માતુશ્રી કડવીબાઈ વીરાણી	રાજકોટ	૫૦૦૦
૧૦	શેઠ પોપટલાલ પીતાંબરદાસ	અમદાવાદ	૫૨૫૧
૧૧	શાહ રમણીકભાઇ મોહનલાલ	અમદાવાદ	૫૦૦૧
૧૨	શ્રી શામજી વેલજી વીરાણી અને શ્રી કડવીબાઈ વીરાણી સ્મારક ટ્રસ્ટ હા શેઠ દુર્લભજી વીરાણી	રાજકોટ	૫૦૦૦
૧૩	શ્રી શામજી વેલજી વીરાણી અને શ્રી કડવીબાઈ વીરાણી સ્મારક ટ્રસ્ટ હા શ્રીમતિ મણીબેન દુર્લભજી વીરાણી	રાજકોટ	૫૦૦૦
૧૪	શ્રી શામજી વેલજી વીરાણી અને શ્રી કડવીબાઈ વીરાણી સ્મારક ટ્રસ્ટ હા ઉદાલાલ શામજી વીરાણી	રાજકોટ	૫૦૦૦
૧૫	સ્વ માતુશ્રીના સ્મરણાર્થે હ ભાવસાર ભોગીલાલ છગનલાલ અને કુટુંબીજનો	અમદાવાદ	૫૦૦૦

૧૬ શેઠ મીશ્રીલાલજી જેવંતરાજજી લૂણીયા ચંડાવલવાળા અમદાવાદ ૫૫૦૨
૧૭ શેઠ રામજીભાઇ શામજી વીરાણી એન્ડ સમરતબેન
રામજી વિરાણી ટ્રસ્ટ રાજકોટ ૫૦૦૧
૧૮ એક જૈન ગૃહસ્થ અમદાવાદ ૫૪૨૫

નોટઃ–ઘાટકોપરવાળા શેઠ માણેકલાલ એ. મહેતા તરફથી અમદાવાદમાં પાલડી બસ સ્ટેન્ડ પાસે પ્લોટ નં. ૨૫૦ વાળી ૬૯૮ ચો. વાર જમીન સમિતિને ભેટ મળેલ છે. અને જેનુ રજીસ્ટર તા. ૨૩-૩-૬૦ ના રોજ થઇ ગયેલ છે.

મુરબ્બીશ્રીઓ–૨૫

(ઓછામાં ઓછી રૂા. ૧૦૦૦ ની રકમ આપનાર)

નંબર	નામ	ગામ	રૂપિયા
૧	વકીલ જીવરાજભાઇ વર્ધમાન કોઠારી હા. કહાનદાસભાઇ તથા વેણીલાલભાઇ કોઠારી	જેતપુર	૩૬૦૫
૨	દોશી પ્રભુદાસ મૂળજીભાઈ	રાજકોટ	૩૫૦૪
૩	મ્હેતા ગુલાબચંદ પાનાચંદ	રાજકોટ	૩૨૮૯ાા-ાા
૪	મ્હેતા માણેકલાલ અમુલખરાય	ઘાટકોપર	૩૨૫૦
૫	સંઘવી પીતામ્બરદાસ ગુલાબચંદ	જામનગર	૩૧૦૧
૬	લલ્લુભાઇ ગોરધનદાસ ચેરીટેબલટ્રસ્ટ હ. શેઠ. વાડીલાલ લલ્લુભાઇ	અમદાવાદ	૨૫૦૦
૭	નામદાર ઠાકોર સાહેબ લખધીરસિંહજી બહાદુર	મોરબી	૨૦૦૦
૮	શેઠ લ્હેરચંદ કુંવરજી હા. શેઠ ન્યાલચંદ લ્હેરચંદ	સિદ્ધપુર	૨૦૦૦
૯	શાહ છગનલાલ હેમચંદ વસા હા. મોહનલાલભાઇ તથા મોતીલાલભાઇ	મુંબઇ	૨૦૦૦
૧૦	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ હા. શેઠ ચન્દ્રકાંત વીકમચંદ	મોરબી	૧૯૬૩
૧૧	મ્હેતા સોમચંદ તુલસીદાસ તથા તેમનાં ધર્મપત્ની અ. સૌ. મણીગૌરી મગનલાલ	રતલામ	૨૦૦૦
૧૨	મ્હેતા પોપટલાલ માવજીભાઇ	જામજોધપુર	૧૫૦૨
૧૩	દોશી કપુરચંદ અમરશી હા દલપતરામભાઈ	જામજોધપુર	૧૦૦૨
૧૪	બગડીયા જગજીવનદાસ રતનશી	જામનગર	૧૦૦૨
૧૫	શેઠ માણેકલાલ ભાણજીભાઈ	પોરબંદર	૧૦૦૧
૧૬	શ્રીમાન ચંદ્રસિંહજી સાહેબ મ્હેતા (રેલ્વે મેનેજર)	કલકત્તા	

૧૭	મ્હેતા સોમચંદ નેણસીભાઈ (કરાંચીવાળા)	મોરબી	૧૦૧
૧૮	શાહ હરિલાલ અનોપચંદ	ખંભાત	૧૦૧
૧૯	મોદી કેશવલાલ હરિચંદ્ર	અમદાવાદ	૧ ૧
૨	કોઠારી છબીલદાસ હરખચંદ	મુંબઈ	૧૦
૨૧	કોઠારી રંગીલદાસ હરખચંદ	ભાવનગર	૧૦
૨૨	શાહ પ્રેમચંદ માણેકચંદ તથા અ. સૌ. સમરતબેન	અમદાવાદ	૧૦૦૩
૨૩	શેઠ કરમશી જેઠાભાઈ સોમૈયા હા. અ. સૌ. સાકરબેન	મુંબઈ	૧૦
૨૪	શેઠ પોપટલાલ ચત્રભુજ કોઠારી	સુરેન્દ્રનગર	૧૦૦૧
૨૫	શ્રી સ્થા. જૈન લીંબડી સંપ્રદાયના ક્ષમાગુણ નીધી પૂજ્ય શ્રી લાધાજી સ્વામીના શીષ્ય પ્રખર પંડિત રત્ન શ્રી ઉત્તમચંદજી મહારાજના સ્મરણાર્થે પૂજ્ય લાધાજી સ્વામી પુસ્તકાલય તરફથી હ. શેઠ જેશીંગભાઈ પોચાલાલ	અમદાવાદ	૧૦

સહાયક મેમ્બરો—૧૨૫

(ઓછામાં ઓછી રૂા. ૫ ની રકમ આપનાર)

નંબર	નામ	ગામ	રૂપિયા
૧	શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. ખુશાલભાઈ વેલશીભાઈ	વઢવાણશહેર	૭૫
૨	શેઠ નરોત્તમદાસ ઓધડભાઈ	જોરાવરનગર	૭૦૦
૩	શેઠ રતનશી હીરજીભાઈ હા. ગોરધનભાઈ	જામજોધપુર	૫૫૫
૪	ભાટવીયા ગીરધર પરમાણંદ હા. અમીચંદભાઈ	ખાખીજાળીયા	૫૨૭
૫	મોરબીવાળા સંઘવી દેવચંદ નેણશીભાઈ તથા તેમનાં ધર્મપત્ની અ. સૌ. મણીબાઈ તરફથી હા. મૂળચંદ દેવચંદ સંઘવી	મલાડ	૫૧૧
૬	વોરા મણીલાલ પોપટલાલ	અમદાવાદ	૫૦૨
૭	ગોસલીયા હરીલાલ લાલચંદ તથા ચંપાબેન ગોસલીયા	,,	૫૦૨
૮	શાહ મનહરલાલ પ્રાણજીવનદાસ	મુંબઈ	૫ ૧
૯	શેઠ ઇશ્વરલાલ પુરૂષોત્તમદાસ	અમદાવાદ	૫ ૧
૧	શેઠ મંગુલાલ છગનલાલ	,,	૫૦૧
૧૧	શાહ શાંતિલાલ માણેકલાલ	,,	૫ ૧
૧૨	શેઠ શીવલાલ ડુંગરભાઈ (કરાંચીવાળા)	લીંબડી	૫ ૧
૧૩	કામદાર તારાચંદ પોપટલાલ પીપળીઆવાળા	રાજકોટ	૫
૧૪	મ્હેતા મોહનલાલ કપુરચંદ	,	૫

૧૫ શેઠ ગોવિંદજીભાઇ પોપટભાઇ રાજકોટ ૫૦૦
૧૬ શેઠ રામજી શામજી વીરાણી ,, ૫૦૧
૧૭ સ્વ પિતાશ્રી નંદાજીના સ્મરણાર્થે હા વેણીચંદ શાંતિલાલ
(જાબુઆવાળા) મેઘનગર ૫૦૧

૧૮ શ્રી જનસ્થા. સંઘ હા. શેઠ ઠાકરશી કરશનજી ચાનગઢ ૫૦૧
૧૯ શેઠ તારાચંદ પુખરાજજી ઔરંગાબાદ ૫૦૦
૨૦ શ્રી સ્થા જન સંઘ ,, ૫૦૦
૨૧ મ્હેતા મૂળચંદ રાઘવજી હા. મગનલાલભાઇ તથા દુર્લભજીભાઈ ધ્રાફા ૭૫૦
૨૨ શેઠ હરખચંદ પુરૂષોત્તમ હા. ઇન્દુકુમાર ચોરવાડ ૫૦૦
૨૩ ,, કેશરીમલજી વસ્તીમલજી ગુગલીયા મલાડ ૫૦૧
૨૪ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા, બાટવીયા અમીચંદ ગીરધરભાઇ ખાખીજાળીયા ૫૦૧
૨૫ શ્રી ખીમજીભાઈ બાવાભાઈ કુલચંદભાઈ ગુલાબચંદભાઈ
નાગરદાસભાઈ જમનાદાસભાઇ મુંબઈ ૫૦૧

૨૬ શેઠ મણીલાલ મોહનલાલ ડગલી હા. મૂળજીભાઇ મણીલાલભાઇ મુંબઇ ૫૦૧
૨૭ સ્વ કાંતીલાલભાઇના સ્મરણાર્થે હા. શેઠ બાલચંદ સાકરચંદ ,, ૫૦૧
૨૮ કામદાર-રતીલાલ દુર્લભજી (જેતપુરવાળા) ,, ૫૦૧
૨૯ શાહ જયંતીલાલ અમૃતલાલ શીવ ૫૦૧
૩૦ વોરા મણીલાલ લક્ષ્મીચંદ ,, ૫૦૧
૩૧ શેઠ ગુલાબચંદ ભૂદરભાઇ તથા કસ્તુરબેન હા. ભાઈ અનોપચંદ ખારરોડ ૫૦૧
૩૨ મહાન ત્યાગી બેન ધીરજકુંવર ચુનીલાલ મહેતા ધ્રાફા ૫૭૧
૩૩ શ્રી સ્થા. જૈન સઘ ધ્રાફા ૫૦૧
૩૪ શ્રી મગનલાલ છગનલાલ શેઠ રાજકોટ ૫૦૧
૩૫ શેઠ ચતુરદાસ ઠાકરશી તથા અ. સૌ. નંદકુવરબેન જામનગર ૫૦૩
૩૬ શેઠ દેવચદ અમરશી (બેન ધીરજકુંવરની દીક્ષા પ્રસગે ભેટ) ભાણવડ ૫૦૧
૩૭ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ (બેન ધીરજકુંવરની દીક્ષા પ્રસંગે ભેટ) ભાણવડ ૫૦૧
૩૮ વકીલ વાડીલાલ નેમચદ શાહ વીરમગામ ૫૦૧

૩૯ મહેતા શાન્તિલાલ મણીલાલ હા. કમળાબેન મહેતા અમદાવાદ ૫૫૬
૪૦ શ્રીયુત લાલચદજી તથા અ. સૌ ધીસાબેન ,, ૫૦૧
૪૧ શેઠ મોહનરાજજી મુકુનચંદજી બાલીયા ,, ૫૦૧
૪૨ સ્વ. શેઠ ઉકાભાઈ ત્રીભોવનદાસના સ્મરણાર્થે તેમના
ધર્મપત્નીલક્ષ્મીબાઇ ગીરધર તરફથી હા. મરઘાબેન
તથા મગુબેન — અમદાવાદ ૫૦૧

૪૩ પારેખ જયતીલાલ મનસુખલાલ રાજકોટવાળા હા વિનુભાઈ „ ૫૦૧

૪૪ શ્રી સ્થા જૈન સંઘ વાંકાનેર ૫૦૧

૪૫ શ્રી સ્થા જૈન સંઘ બોટાદ ૫૦૧

૪૬ શેઠ ગુલાબચંદજી શોભમલજી લોઢર (બરાર) પીપળગાવ ૫ ૧

૪૭ સ્વ. ટુરખીયા હકેરચંદ માણેકચંદના સ્મરણાર્થે તેમનાં
ધર્મપત્ની જીવતીબાઈ તરફથી હા ભાઈ
જયતીલાલ તથા પુનમચંદભાઈ વડોદરા ૫ ૧

૪૮ શાહ અમરદાસ મુનરાજજી હા મુન્નરાજજી અમદાવાદ ૫ ૧

૪૯ ભાવસાર ખોડીદાસ મયેયભાઈ ધંધુકા ૫૦૧

૫ અ સૌ હીરાબેન માણેકલાલ મહેતા ઘાટકોપર ૫ ૧

૫૧ મહેતા શાંતીલાલ મગનલાલ તથા અ સૌ. પદમાવતી
શાંતિલાલ મહેતા અમદાવાદ ૫૦૦

૫૨ શેઠ હીરાચંદજી વનેચંદજી કરારીયા કુમઠી ૫ ૧

૫૩ શેઠ છોટુભાઈ હરગોવિંદદાસ કોરીવાળા મુંબઈ ૫ ૧

૫૪ પારેખ રતિલાલ નાનચંદ મોરબીવાળા તરફથી તેમના
પિતાશ્રી નાનચંદ ગોવિંદજીના સ્મરણાર્થે તથા તેમનાં
ધર્મપત્ની અ. સૌ વસંત બહેનના ઉપાઈવપ નિમિત્તે
હા ભુપતલાલ રતિલાલ અમદાવાદ ૫૫૨

૫૫ સ્વ. શાહ ત્રીભોવનદાસ મગનલાલના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્ની
શીવકુવરબાઈ તરફથી હા. રતીલાલ ત્રીભોવનદાસ શાહ અમદાવાદ ૫૧૧

૫૬ શ્રીમાન નાથાલાલ માણેકચંદ પારેખ મુંબઈ (માટુંગા) ૫ ૧

૫૭ શ્રી લીંમડી સંપ્રદાયના ગચ્છાધીપતિ પૂ. આચાર્ય
મહારાજ શ્રી લાધાજી સ્વામીના સ્મરણાર્થે હા
શેઠ જેશીંગભાઈ પોચાલાલ (મહારાજ શ્રી
ભિક્ષુચંદજી સ્વામીજીના ઉપદેશથી) અમદાવાદ ૫ ૧

૫૮ સ્વ શ્રી બિનયમુર્તિ શ્રી લક્ષ્મીચંદજી મહારાજના સ્મરણાર્થે
હા શેઠ જયસીંગભાઈ પોચાલાલ (મહારાજશ્રી ઉત્તમચંદજી
સ્વામીના ઉપદેશથી અમદાવાદ ૫ ૧

૫૯ બા. બ્ર. પ્રભાવતીબેન કેશવલાલ ઉજ્જૈનવાળા તરફથી
તેમની દીક્ષા પ્રસંગે વીરમગામ ૫૫૧

૬ શેઠ શ્રીયુત હરજીવનદાસ રાયચંદ હા છબીલદાસ હરજીવન અમદાવાદ ૫ ૧

૬૧ શેઠ પોપટલાલ હકમચંદ તથા દિવાળીબેનના સ્મરણાર્થે
હા શેઠ બાબુલાલ પોપટલાલ અમદાવાદ ૫ ૨

૬૨ અ. સૌ. લીલાવંતીબેન ઈશ્વરલાલ અમદાવાદ ૫૦૨
૬૩ હેમાણી પ્રભુદાસ ભાણજી કલકત્તા ૫૫૧
૬૪ શેઠ લક્ષ્મણદાસ સેજરામ અમદાવાદ ૫૦૧
૬૫ શ્રી સ્થા. જૈન મોટા સંઘ રાજકોટ ૫૦૧
૬૬ શેઠ ચાદમલ્લ બીરધીચંદ નાસિક સીટી ૫૦૧
૬૭ ઝવેરી માણેકચંદજી પન્નાલાલ છજલાણી
હ. ધનવંતીબેન તથા કિરણબેન દિલ્હી ૫૦૧
૬૮ શેઠ હંસરાજજી પૂર્ણમલજી કાકરીયા ગોગોળાવ ૫૦૧
૬૯ શ્રી શ્વે. સ્થા. જૈન સભા કલકત્તા ૫૦૧
૭૦ શેઠ તેજસિંહજી ફતેલાલજી છાજેડ ઉદેપુર ૫૦૧
૭૧ શેઠ રતનચંદ લક્ષ્મીચંદ મુંબઇ ૫૦૦
૭૨ શાહ ઉમરશી ભીમશીભાઇ (સ્વ. પિતાશ્રી ભીમશીભાઇ
તથા માતુશ્રી પાલાબાઇ તથા ધર્મપત્ની પાનબાઇના સ્મરણાર્થે) મુંબઇ ૫૫૨
૭૩ શાહ શામલભાઇ અમરસીભાઇ અમદાવાદ ૫૦૨
૭૪ મહેતા ચન્દ્રકાન્ત નૌતમલાલ મુંબઈ ૫૦૧
૭૫ શેઠ ભીખચંદ્ર લાલચંદ્ર પીપલગામ ૫૦૧
૭૬ બેન મોહનીબેન મહેતા મુંબઇ ૫૦૧
૭૭ શ્રીમતી મોઘીબેન નવલચંદ શાહ લીમડી (સૌરાષ્ટ્ર) ૫૦૧
હ. મોતીબેન
૭૮ શ્રીમતી વિમલાજી સૂરજમલ મહેતા બેલગામ ૫૦૧
૭૯ ઉદ્રાણી નિહાલચંદ્ર હાંકેમચન્દ્ર વકીલ
બી. એ. એલ એલ. બી, રાજકોટ ૫૦૧
૮૦ સ્વ. કોઠારી મગનલાલજી કુન્દનમલજીના
સ્મરણાર્થે હ. તેમનાં ધર્મપત્ની રાજકુંવરબેન સતારા ૭૫૧
૮૧ શેઠ મોહનલાલજી મંછાલાલજી હ રમણીકલાલ
(પૂ. મુનિશ્રી ફતેચંદ મ.ના શિષ્ય પં. મુનિશ્રી
કનૈયાલાલજી મ. ના ઉપદેશથી) જયપુર ૫૦૧
૮૨ કનૈયાલાલજી સોહનલાલજી કાવેડિયા ધારડી ૫૦૧
૮૩ શેઠ પ્રતાપમલજી કપુરચંદજી સાઢેરાવાળા [પૂજ્ય
ફતેચંદજી મ ના શિષ્ય મિશ્રીલાલજી મ
ના શિષ્ય ચાંદમલજી મ ના ઉપદેશથી] અમદાવાદ ૫૦૧

૪૩ પારેખ જયંતીલાલ મનસુખલાલ રાજકોટવાળા હા વિનુભાઇ " ૫૦૧
૪૪ શ્રી સ્થા જૈન સંઘ વાંકાનેર ૫૦૧
૪૫ શ્રી સ્થા જૈન સંઘ બોટાદ ૫૦૧
૪૬ શેઠ સુંદરમલજી શેષમલજી બોથર (બરાર) પીંપળગાંવ ૫ ૧
૪૭ સ્વ. તુરખીયા લહેરચંદ માણેકચંદના સ્મરણાર્થે તેમનાં
ધર્મપત્ની જીવતીબાઇ તરફથી હા ભાઇ
જયંતીલાલ તથા પૂનમચંદભાઇ વડોદરા ૫ ૧
૪૮ શાહ અમલદાસ શુકનરાજજી હા શુકનરાજજી અમદાવાદ ૫ ૧
૪૯ ભાવસાર ખોડીદાસ ગણેશભાઈ ધંધુકા ૫૦૧
૫૦ અ સૌ હીરાબેન માણેકલાલ મહેતા ઘાટકોપર ૫ ૧
૫૧ મહેતા શાંતીલાલ મગનલાલ તથા અ સૌ. પદમાવતી
શાંતિલાલ મહેતા અમદાવાદ ૫૦
૫૨ શેઠ હીરાચંદજી બનેચંદજી કારીયા હુબલી ૫ ૧
૫૩ શેઠ છોટુભાઇ હરગોવિંદદાસ ઠગોરીવાળા મુંબઈ ૫ ૧
૫૪ પારેખ રતિલાલ નાનચંદ મોરબીવાળા તરફથી તેમના
પિતાશ્રી નાનચંદ ગોવિંદજીના સ્મરણાર્થે તથા તેમનાં
ધર્મપત્ની અ. સૌ વસંત બહેનના અઠાઇતપ નિમિત્તે
હા ભુપતલાલ રતિલાલ અમદાવાદ ૫૫૨
૫૫ સ્વ શાહ ત્રીભોવનદાસ મગનલાલના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્ની
શીવકુવરબાઇ તરફથી હા. રતીલાલ ત્રીભોવનદાસ શાહ અમદાવાદ ૫૧૧
૫૬ શ્રીમાન નાથાલાલ માણેકચંદ પારેખ મુંબઈ (માટુંગા) ૫ ૧
૫૭ શ્રી લીંબડી સંપ્રદાયના ગચ્છાધીપતિ પૂ. આચાર્ય
મહારાજ શ્રી લાધાજી સ્વામીના સ્મરણાર્થે હા
શેઠ જેઠાભાઈ પોપટલાલ (મહારાજ શ્રી
છોટાલાલજી સદાનંદજીના ઉપદેશથી) અમદાવાદ ૫ ૧
૫૮ સ્વ શ્રી વિનયમૂર્તિ શ્રી લક્ષ્મીચંદજી મહારાજના સ્મરણાર્થે
હા શેઠ જેઠાભાઇ પોપટલાલ (મહારાજશ્રી છોટાલાલજી
સદાનંદીના ઉપદેશથી અમદાવાદ ૫ ૧
૫૯ બા બ્ર. પ્રભાવતીબેન કેશવલાલ ઉજ્જેનવાળા તરફથી
તેમની દીક્ષા પ્રસંગે વીરમગામ ૫૫૧
૬૦ શેઠ શ્રીયુત હરજીવનદાસ રાયચંદ હા છબીલદાસ હરજીવન અમદાવાદ ૫ ૧
૬૧ શેઠ પોપટલાલ હંસરાજ તથા દિવાળીબેનના સ્મરણાર્થે
હા શેઠ બાબુલાલ પોપટલાલ અમદાવાદ ૫ ૨

નંબર	નામ	ગામ	રૂપિયા
૯૮	શ્રી વર્ધમાન સ્થા. જૈન શ્રાવક સંઘ હ. પ્રમુખ બંસીલાલ કટારીયા	હિંગણઘાટ	૫૦૧
૯૯	લાલાજી રામલાલજી રોશનલાલજી (અનેક ગુણાલંકૃત મહાસતીજી મોહનદેવીના ઉપદેશથી)	દીલ્હી	૫૦૧
૧૦૦	સ્વ. મહેતા મંગળજી મણીલાલના સ્મરણાર્થે હ. તેમના ધર્મપત્ની ગુણવંતીબહેન મહેતા	રાજકોટ	૫૦૧
૧૦૧	ભાટવીયા વનેચંદ અમીચંદ [મહાવીર ટેક્ષટાઇલ સ્ટોર્સ	બેંગલોર	૫૫૩
૧૦૨	શ્રીયુત તારાચંદ ગેલડા ટ્રસ્ટ	મદ્રાસ	૫૦૧
૧૦૩	શેઠ ગુજરાજજી પુનમચંદજી મહેતા	કીનસગઢ	૫૫૧
૧૦૪	શેઠ અગરમલજી ત્રીકમચંદજી	ઇંદોર સીટી	૫૫૧
૧૦૫	કાનુગા ધીંગડમલજી મુલતાનમલજી કંવાડ ગઢસીંચાણાવાળા	અમદાવાદ	૫૦૧
૧૦૬	લાલાજી નવરતનચંદજી ચોરડીયાનાં ધર્મપત્ની શ્રીમતી રાજકુમારીબેન	દીલ્હી	૫૦૧
૧૦૭	શેઠ ચીમનલાલ રૂષભચંદ	અમદાવાદ	૫૦૧
૧૦૮	શેઠ કાનજી પાનાચંદ ભીમાણી ટ્રસ્ટ	કલકત્તા	૫૦૧
૧૦૯	શેઠ ગીરધરલાલ હંસરાજ કામાણી	,,	૫૦૧
૧૧૦	અનેક ગુણાલંકૃત મહાસતી મોહનદેવીજીના ઉપદેશથી સ્વધર્મી બંધુઓ તરફથી	દીલ્હી	૫૦૧
૧૧૧	સ્વ. વિનયચંદજી પારેખના સ્મરણાર્થે લાલા પૂર્ણચંદજી રતનચંદજી પારેખની વતી હ. શ્રીમતી પ્રેમાદેવી [શાંત સ્વભાવી મહાસતીજી કુલકુંવરબાઇના ઉપદેશથી]	દીલ્હી	૫૦૧
૧૧૨	શ્રીમતી બદામબાઇ મીશ્રીલાલજી લૂણીયા ચંડાવલવાળા	અમદાવાદ	૫૦૧
૧૧૩	શેઠ ભરતકુમાર મણીલાલ દલાલ	,,	૫૦૧
૧૧૪	શાહ હરખચંદ અમરચંદ	,,	૫૦૧
૧૧૫	શાહ જગજીવનદાસ વન્દ્રાવનદાસ	,,	૫૦૧
૧૦૬	શેઠ હંસરાજ લક્ષ્મીચંદ કામાણી જૈનભૂવન	કલકત્તા	૫૦૧

૮૪ શ્રીમાન લાલાજી રોશનલાલજી સમ કરલાલજી અંબાલા ૫ ૧
 હ મોતીલાલજી

૮૫ શ્રીમાન સૂરમલજી હલીચંદજી સાંકરિયા (પૂ. મ શ્રી સ્વામીદાસજીના સંપ્રદાય પૂ.મ શ્રી ફતેચંદજી મ ના શિષ્ય પ મુનિ શ્રી કનૈયાલાલજી મ ના ઉપદેશથી સાંડેરાવ ૫૦૧

૮૬ સ્વ. ગૌરીશંકર પ્રભુદાસ દેસાઈના સ્મરણાર્થે હ ભૂપતલાલ ગૌરીશંકર ઇંદોર ૫ ૧

૮૭ શેઠ સાહેબ શ્રી નર્સિંગભાઈ હંસરાજભાઈ કમાણી જમશેદપુર ૫ ૧

૮૮ સ્વ મહાસતીજી શ્રી ધનદેવીજી મ સા ના સ્મરણાર્થે સ્વ ભૂષણદાસજી સંખલાલનાં ધર્મપત્ની શ્રીમતી જય દેવી તરફથી [મહાસતીજી શ્રી સુદર્શનામતિજી તથા કુસુમતીજીના ઉપદેશથી] દિલ્હી ૫ ૧

૮૯ શ્રીમાન લાલાજી કપુરચંદજી ઓસવાલના ધર્મપત્ની શ્રીમતી વસંતદેવી હા લાલા રાજમલજી હેમચંદજી તરફથી (મહાસતી શ્રી સુદર્શનામતિજી તથા કુસુમ તિજી મહાદેવીના ઉપદેશથી] દિલ્હી ૫ ૧

૯૦ સ્વ મહાસતીજી શ્રી દ્રૌપતાદેવીજી મ સા ના સ્મરણાર્થે શ્રી એસ. એસ જૈન મહિલા સંઘ તરફથી [અનેક ગુણાલંકૃત મહાસતીજી શ્રી મોહનદેવીજી મ. સા ની પ્રેરણાથી] દિલ્હી ૫૦૧

૯૧ સ્વ લક્ષ્મીચંદજીના સ્મરણાર્થે નમિનાદેવી મુજ પીના તરફથી હસ્તે સંઘવી હેમંતકુમાર જૈન દિલ્હી ૫૦૧

૯૨ સ્વ. પિતાશ્રી લાલા જવેરી પન્નાલાલજી મુજન્તીના સ્મરણાર્થે હસ્તે શ્રીમતી નગીના દેવી દિલ્હી ૫ ૧

૯૩ લાલાજી કસ્તુરચંદજી ગુલાબચંદજી સંઘવી હ સાનચંદજી અલવર ૫ ૧

૯૪ સ્વ પૂજ્ય પિતાશ્રી દુર્લભજી સોમચંદ કહવરી હ ગૌરીશંકર દુર્લભજી કહનરી મુંબઈ ૫

૯૫ શેઠ સોમચંદ જેઠાલાલ ધોળાવી હ. ચુનીલાલભાઈ ગોળીબારવાળા મુંબઈ ૫ ૧

૯૬ શેઠ હીરાલાલભાઈ મુલતાનસિંહજી ગાંધીરીયા અમદાવાદ ૫ ૧

૯૭ શેઠ છગનલાલ શામજી વીરાણી તથા શ્રીમતી વ્રજકુંવરબેન છગનલાલ વિરાણી ટ્રસ્ટફંડ તરફથી શેઠ છગનલાલભાઈના સ્મરણાર્થે રાજકોટ ૫ ૧

નંબર	નામ	ગામ	રૂપિયા
૯૮	શ્રી વર્ધમાન સ્થા. જૈન શ્રાવક સંઘ ૯. પ્રમુખ બંસીલાલ કટારીયા	હિંગણઘાટ	૫૦૧
૯૯	લાલાજી રામલાલજી રોશનલાલજી (અનેક ગુણાલંકૃત મહાસતીજી મોહનદેવીના ઉપદેશથી)	દીલ્હી	૫૦૧
૧૦૦	સ્વ. મહેતા મંગળજી મણીલાલના સ્મરણાર્થે હ. તેમના ધર્મપત્ની ગુણવંતીબહેન મહેતા	પોંડેચેરી	૫૦૧
૧૦૧	પાટવીયા વનેચંદ અમીચંદ [મહાવીર ટેક્ષટાઇલ સ્ટોર્સ	બેંગલોર	૫૫૩
૧૦૨	શ્રીયુત તારાચંદ ગેલડા ટ્રસ્ટ	મદ્રાસ	૫૦૧
૧૦૩	શેઠ ગુલરાજજી પુનમચંદજી મહેતા	કીનસગઢ	૫૫૧
૧૦૪	શેઠ અગરમલજી ત્રીકમચંદજી	ઇંદોર સીટી	૫૫૧
૧૦૫	કાનુગા ધીંગડમલજી મુલતાનમલજી કંવાડ ગઢસીંયાણાવાળા	અમદાવાદ	૫૦૧
૧૦૬	લાલાજી નવરતનચંદજી ચોરડીયાનાં ધર્મપત્ની શ્રીમતી રાજકુમારીબેન	દીલ્હી	૫૦૧
૧૦૭	શેઠ ચીમનલાલ રૂષભચંદ	અમદાવાદ	૫૦૧
૧૦૮	શેઠ કાનજી પાનાચંદ ભીમાણી ટ્રસ્ટ	કલકત્તા	૫૦૧
૧૦૯	શેઠ ગીરધરલાલ હંસરાજ કામાણી	,,	૫૦૧
૧૧૦	અનેક ગુણાલંકૃત મહાસતી મોહનદેવીજીના ઉપદેશથી સ્વધર્મી બંધુઓ તરફથી	દીલ્હી	૫૦૧
૧૧૧	સ્વ. વિનયચંદજી પારેખના સ્મરણાર્થે લાલા પૂર્ણચંદજી રતનચંદજી પારેખની વતી હ. શ્રીમતી પ્રેમાદેવી [શાંત સ્વભાવી મહાસતીજી ફુલકુંવરબાઇના ઉપદેશથી]	દીલ્હી	૫૦૧
૧૧૨	શ્રીમતી બદામબાઇ મીશ્રીલાલજી લુણીયા ચંડાવલવાળા	અમદાવાદ	૫૦૧
૧૧૩	શેઠ ભરતકુમાર મણીલાલ દલાલ	,,	૫૦૧
૧૧૪	શાહ હરખચંદ અમરચંદ	,,	૫૦૧
૧૧૫	શાહ જગજીવનદાસ વન્દ્રાવનદાસ	,,	૫૦૧
૧૦૬	શેઠ હંસરાજ લક્ષ્મીચંદ કામાણી જૈનભૂવન	કલકત્તા	૫૦૧

૧૧૭	પૂ. ઘાસીજી સ્વ. કપુરચંદજી તથા શ્રાવિકા કેસરબેન મોરડીયાના સ્મરણાર્થે હ. બાબુ કુંવરચંદજી અને શ્રીમતી વીમલકુંવરી ઝવેરી ની વતી નામથી નમીનાદેવી [મહાસતીજી કુસુમતીજીના ઉપદેશથી]	દીલ્હી ૫૦૧
૧૧૮	શેઠ નમીનદાસ છોટાલાલ	અમદાવાદ ૫૦૧
૧૧૯	શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હ. શેઠ અક્ષેચમલ ગુલાબચંદ	બેરાશ ૫૦૧
૧૨૦	શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ	બદેસર ૫૦૧
૧૨૧	શ્રી સૌરાષ્ટ્ર જૈન વિદ્યાલય	કુમારડી ૫૦૧
૧૨૨	ગાંધી ખુશાલ નાનચંદ	મુંબઈ ૫૦૧
૧૨૩	શ્રીમાન હિંમતસિંહજી સાહેબ ગહલોત એડીશનલ કમીશનર અજમેર ડીવીઝનના ધર્મપત્ની અ. સૌ. માણેકકુંવરબેન તરફથી હ. જસવંતસિંહ ગહલોત	જયપુર ૫૫૧

૫૮૪—લાઈફ મેમ્બરો

અમદાવાદ તથા પરાઓ

નંબર	નામ	ગામ	રૂપિયા
૧	શાહ મગનલાલ કરમચંદ		૨૫૧
૨	શેઠ હિરાલાલ વખતચંદ હા. કુરીચંદભાઈ		૨૫૧
૩	શાહ કાંતિલાલ ત્રીભોવનદાસ		૨૫૧
૪	શાહ પોપટલાલ મોહનલાલ		૨૫૧
૫	શેઠ પ્રેમચંદ સાકરચંદ		૨૫૦
૬	શાહ રતીલાલ વાડીલાલ		૨૫૧
૭	શેઠ લાલભાઈ મંગળદાસ		૨૫૧
૮	સ્વ. અમૃતલાલ વધમાનના સ્મરણાર્થે હા. કાનજીભાઈ અમૃતલાલ દેસાઈ		૨૫૧
૯	શાહ નટવરલાલ મફતલાલ		૨૫૧
૧૦	શાહ નરસિંહદાસ ત્રીભોવનદાસ		૨૫૧
૧૧	શાહ બીપીનચંદ્ર તથા ઉમાકાંત ચુનીલાલ ભેપાણી		૩૦૧
૧૨	શ્રી શાહપુર હરિપુરા ભાઠોડી સ્થા. જૈન ઉપાશ્રય હા. ટ્રસ્ટી કર્તા શેઠ ઇશ્વરલાલ પુરુષોત્તમદાસ		૨૫૧

૧૩ શ્રી છીપાપોળ દરીયાપુરી આઠકોટી સ્થા. જૈન સંઘ
હા. શેઠ ચંદુલાલ અચરતલાલ ૨૫૧

૧૪ શાહ ચીનુભાઈ બાલાભાઇ C/o. શાહ બાલાભાઈ મહાસુખલાલ ૨૫૧
૧૫ શાહ ભાઈલાલ ઉજમશી ૨૫૧
૧૬ શ્રી સુખલાલ ડી. શેઠ હા. ડૉ. કુ. સરસ્વતીબેન શેઠ ૨૫૧
૧૭ શ્રી સૌરાષ્ટ્ર સ્થા. જૈન સંઘ હા. શેઠ કાંતિલાલ જીવણલાલ ૨૫૧
૧૮ મોદી નાથાલાલ મહાદેવદાસ ૨૫૧
૧૯ શાહ મોહનલાલ ત્રીકમલાલ ૨૫૧
૨૦ શ્રી છકોટી સ્થા. જૈન સંઘ હા. શેઠ પોચાલાલ પિતાંબરદાસ ૨૫૧
૨૧ દેસાઈ અમૃતલાલ વર્ધમાનના સ્મરણાર્થે હા. ભાઇલાલ અમૃતલાલ ૨૫૧
૨૨ શાહ નવીનતરાય અમુલખરાય ૨૫૧
૨૩ શાહ મણીલાલ આશારામ ૨૫૧
૨૪ શેઠ ચીનુભાઇ સાકરચંદ ૨૫૧
૨૫ શાહ વરજીવનદાસ ઉમેદચંદ ૨૫૧
૨૬ શાહ રજનીકાંત કસ્તુરચંદ ૨૫૧
૨૭ સંઘવી જીવણલાલ છગનલાલ ૨૫૧
૨૮ શાહ શાંતિલાલ મોહનલાલ ધ્રાંગધ્રાવાળા ૨૫૨
૨૯ અ. સૌ. બેન રતનબેન નાહેચા હા. શેઠ ધુલજી ચંપાલાલજી ૨૫૧
૩૦ શાહ હરિલાલ જેઠાલાલ ભાડલાવાળા ૨૫૧
૩૧ શ્રી સરસપુર દરીયાપુરી આઠ કોટી સ્થા. જૈન ઉપાશ્રય
હા. ભાવસાર ભોગીલાલ છગનલાલ ૨૫૧

૩૨ શેઠ પુખરાજજી સમતીરામજી પુનમિયા સાદડીવાળા ૨૫૧
૩૩ સ્વ. પિતાશ્રી જવાહરલાલજી તથા પૂજ્ય આચાજી હજારીમલજી
બરડીયાના સ્મરણાર્થે હા. મુળચંદ જવાહરલાલજી બરડીયા ૨૫૧

૩૪ સ્વ. ભાવસાર બબાભાઈ (મંગળદાસ) પાનાચંદના સ્મરણાર્થે
હા. તેમનાં ધર્મપત્ની પુરીબેન ૨૫૧

૩૫ સ્વ પિતાશ્રી રવજીભાઇ તથા સ્વ. માતુશ્રી મુળીબાઇના સ્મરણાર્થે
હા. કકલભાઇ કોઠારી ૩૦૧
૩૬ ભાવસાર કેશવલાલ મગનલાલ ૨૫૧
૩૭ શાહ કેશવલાલ નાનચંદ જાખડાવાળા હા. પાર્વતીબેન ૨૫૧

૩૮	શાહ છોટેકુમાર બાડીલાલ માણેકચંદ રાજસીતાપુરવાળા	૨૫૧
૩૯	શ્રી સાબરમતી સ્થા. જૈન સંઘ હા. શેઠ મણીલાલભાઈ	૨૫
૪૦	ભાવસાર બિટાલાલ છગનલાલ	૨૫૧
૪૧	ભાવસાર શંકરભાઈ છગનલાલ	૨૫૧
૪૨	અ. સૌ. બેન જીવીબેન રતિલાલ હા. ભાવસાર રતિલાલ હરગોવિંદદાસ	૨૫૧
૪૩	ભાવસાર સોમીલાલ જમનાદાસ પાટણવાળા	૨૫૧
૪૪	સંઘવી બાબુભાઈ કમળશી તથા તેમના ધર્મપત્નીઓ અ. સૌ. ચંપાબેન તરફથી તથા વસંતબેન તરફથી	૨૫૧
૪૫	અ. સૌ. વિદ્યાબેન વનેચંદ દેસાઈ વર્ષીતપ તથા અઠાઈ પ્રસંગે હા. ભુપેન્દ્રકુમાર વનેચંદ દેસાઈ	૫૦૭
૪૬	શાહ નટવરલાલ મેળાદાસ	૨૫૧
૪૭	અ. સૌ. સરસ્વતીબેન મણીલાલ છગનલાલ	૩૫૧
૪૮	અ. સૌ. કંકુબેન (ભાવસાર સોમીલાલ છગનલાલના ધર્મપત્ની)	૩ ૦
૪૯	અ. સૌ. સવિતાબેન (જયંતીલાલ સોમીલાલના ધર્મપત્ની)	૨૫૧
૫૦	અ. સૌ. શાંતાબેન (ચીનુભાઈ સોમીલાલના ધર્મપત્ની)	૨૫૧
૫૧	અ. સૌ. સુનંદાબેન (રમણલાલ સોમીલાલના ધર્મપત્ની)	૨૫૧
૫૨	શેઠ હીરાજી ફૂલનાથજીના સ્મરણાર્થે હ. પારસમલજી ફૂલનાથજી	૩૦૧
૫૩	શેઠ મણીલાલ મિઠાભાઈ	૨૫૧
૫૪	પટવા સુમેરમલજી અનોપચંદજી જોધપુર વા.	૩૦૧
૫૫	સ્વ. માણેકલાલ વનમાળીદાસ શેઠના સ્મરણાર્થે હ. રમણલાલ માણેકલાલ	૨૫૧
૫૬	સ્વ. શાહ ધનરાજજી ખેમરાજજીના સ્મરણાર્થે હા. કનૈયાલાલ ધનરાજજી	૩ ૧
૫૭	શ્રી સારંગપુર દ. અ. દે. સ્થા. જૈન સંઘ હ. શાહ રમણલાલ મગનભાઈ	૨૫૧
૫૮	દોશી રણછોડદાસ જીવરાજ તથા લક્ષ્મીબાઈ મહેસાણાના સ્મરણાર્થે હ. દોશી મનહરલાલ કરશનદાસ મુળીવાળા	૨૫૧
૫૯	શાહ પુનમચંદ ફતેચંદ	૨૫૧
૬૦	શ્રીયુત ચતુરભાઈ નગીનદાસ	૨૫૧
૬૧	શ્રીયુત અમૃતલાલ ઈશ્વરલાલ મહેતા	૨૫૧
૬૨	શાહ ભારમલજી મોહનલાલ તથા શાહ ચીમનલાલ અમુલખભાઈ	૨૫૧

૬૩ અ સૌ. બેન લાભુબેન મગનલાલ હ. શાહ અમૃતલાલ ધનજીભાઈ
વઢવાણ શહેરવાળા ૩૦૧
૬૪ અ. સૌ. બેન કાન્તાબેન ગોરધનદાસ (ચાંદમુનિના ઉપદેશથી) ૨૫૧
૬૫ દોશી ફુલચંદ સુખલાલભાઈ બોટાદવાળાના સ્મરણાર્થે
હ. દોશી છબીલદાસ ફુલચંદભાઈ ૨૫૧

૬૬ લાલાજી રામકુંવરજી જૈન ૨૫૧
૬૭ શેઠ છોટાલાલ ગુલાબચંદ પાલનપુરવાળા ૨૫૧
૬૮ શાહ ધીરજલાલ મોતીલાલ ૨૫૧

૬૯ સંઘવી સૂર્યકાંત ચુનીલાલના સ્મરણાર્થે
હ. સંઘવી જીવણલાલ ચુનીલાલ ૨૫૧
૭૦ ભાવસાર મોહનલાલ અમુલખરાય ૨૫૧
૭૧ મહેતા મૂળચંદ મગનલાલ ૨૫૧
૭૨ વૈદ્ય નરસિંહદાસ સાકરચંદનાં ધર્મપત્ની રેવાબાઈના સ્મરણાર્થે
હ. હરીલાલ નરસિંહદાસ ૨૫૧

૭૩ શાહ ફુલચંદભાઈ મુલચંદ હ. હસમુખભાઈ ફુલચંદભાઈ ૨૫૧
૭૪ શેઠશ્રી મિશ્રીલાલજી જવાહીરલાલજી બરડીયા ૨૫૧
૭૫ શાહ લલ્લુભાઈ મગનભાઈ ચુડાવાળા હ. જશવંતલાલ લલ્લુભાઈ ૩૦૧
૭૬ કુમારી પુષ્પાબેન હીરાલાલ (ચાંદમુનિના ઉપદેશથી) ૨૫૧
૭૭ શાહ મણીલાલ ઠાકરશી હ. કમળાબેન મણીલાલ લખતરવાળા
(ચાંદમુનિના ઉપદેશથી) ૨૫૧

૭૮ કુમારી નલીનીબેન જયંતીલાલ ૨૫૧
૭૯ સ્વ. ઉમેદરામ ત્રીભુવનદાસનાં ધર્મપત્ની કાશીબાઈના સ્મરણાર્થે
હા. શાંતિલાલ ઉમેદરામ (ચાંદમુનિનાં ઉપદેશથી) ૨૫૧
૮૦ સ્વ. ભાવસાર મોહનલાલ છગનલાલનાં ધર્મપત્ની દીવાળીબાઈના
સ્મરણાર્થે હ. રતીલાલ માણેકલાલ (ચાંદમુનિના ઉપદેશથી) ૨૫૧
૮૧ મહેતા દેવીચંદજી ખુબચંદજી ધોકા ગઢસીયાણાવાળાના સ્મરણાર્થે
હ. મહેતા ચુનીલાલ હરમાનચંદ ૨૫૧

૮૨ ઘાસીલાલજી મોહનલાલજી કોઠારી ઠે. લક્ષ્મી પુસ્તક ભંડાર ૨૫૧
૮૩ સ્વ. શેઠ નાથાલાલ રતનાભાઈ મારફતીયાના સ્મરણાર્થે
પુનાબેન તરફથી હ. કરશનભાઈ (ચાંદમુનિના ઉપદેશથી) ૨૫૧

૮૪ શાહ મણીલાલ છગનલાલ ૨૫૧

૮૫ ભાવસાર જયંતીલાલ સોમીલાલ ૨૫૧

૮૬ ભાવસાર હિંમતભાઈ સોમીલાલ ૨૫૧

૮૭ ભાવસાર રમણલાલ સોમીલાલ ૨૫૧

૮૮ ભાવસાર કનુભાઈ સાકરચંદ ૨૫૧

૮૯ શેઠ સેરૂમલજી સાહેબ લેખપુરવાળા ૨૫૧

૯૦ સ્વ. બેનાબી વર્ધમાન શામજીભાઈ કુલ્લીવળા સ્મરણાર્થે

હ. શાંતિલાલ વર્ધમાન ૨૫૧

૯૧ સ્વ. કમળાભાઈ લહેરાભાઈના સ્મરણાર્થે

હ. શાંતિભાઈ કમળાભાઈ ૨૫૧

૯૨ એકસ્વધર્મી બંધુ હ. શાહ રીખબદાસજી જયંતિલાલજી ૨૫૧

૯૩ અ. સૌ. સરસ્વતીબેન મણીલાલ ચતુરભાઈ શાહ

(સદાનંદી છોટાલાલ મહારાજશ્રીના ઉપદેશથી) ૨૫૧

૯૪ ચીમનલાલ મણીલાલ શાહ (દરીયાપુરી સંપ્રદાયના પૂ. તપસ્વી મહારાજશ્રી માણેકચંદ્રજીના શિષ્ય મુનિશ્રી મગનલાલજી મહારાજશ્રીના સ્મરણાર્થે) ૨૫૧

૯૫ બેન જેકુવર મગનલાલ પારેખ ૨૫૧

૯૬ શેઠ પુનમચંદજી જવાહીરલાલજી બરઠીયા ૨૫૧

૯૭ અ. સૌ. લીલાવતી ધીરજલાલ મહેતા

હે. ડૉ. ધીરજલાલ નીકમલાલ મહેતા ૩૦૧

૯૮ શેઠ રાજમલજી વાસીલાલજી કોઠારી કોથીવલવાળા ૨૫૧

૯૯ શેઠ ચુનીલાલ ભગવાનજી હે. રતીલાલ ચુનીલાલ ૨૫૧

૧૦૦ ભાગ્યવતી અરવીંદકુમાર હે. અરવીંદકુમાર જશરાભાઈ ભાવસાર ૨૫૧

૧૦૧ અ. સૌ. સમજબેન મનસુખલાલ

હા. મનસુખલાલ જેમલાલ રૂપેરા ૨૫૧

૧૦૨ સ્વ. આશીબાઈ તથા મસ્તીમલજી સોભાજીના સ્મરણાર્થે

હા. શેઠ મીશ્રીમલજી દેવચંદજી ઓસવાલ કેસવાળા ૨૫૧

૧૦૩ સ્વ. શેઠ કીશનમલજી મહિલના સ્મરણાર્થે

હા. થીરેમલજી કીશનમલજી સોજતવાળા ૨૫૧

૧૦૪ સ્વ. શેઠ નાતાવરમલજીના સ્મરણાર્થે

હા. શેઠ વીસાલચંદજી મુનરાજજી શીનારીના (લેખપુરવાળા) ૨૫૧

૧૦૫ શાહ મહાસુખલાલ ભાઈલાલ (સદાનંદી પંડિત મુનિશ્રી
છોટાલાલજી મહારાજના ઉપદેશથી) ૨૫૧
૧૦૬ અ. સૌ. કાંતાબેન કાળીદાસ ઠે. કુમાર બુકબાઈન્ડીંગ વર્ક્સ ૨૫૧
૧૦૭ સ્વ. હીંમતલાલ મગનલાલના સ્મરણાર્થે તેમના
સુપુત્રો મેસર્સ દ્વારકાદાસ એન્ડ બ્રધર્સ તરફથી ૩૦૧
૧૦૮ અ. સૌ કાન્તાબેનના સ્મરણાર્થે
હા. ભાવસાર નાગરદાસ હરજીવનદાસ ૨૫૧
૧૦૯ શ્રી ઉમેદચંદ ઠાકરશી ઠે યુ ટી ગોપાણી એન્ડ સન્સ ૩૫૧
૧૧૦ પૂ. માતુશ્રીના સ્મરણાર્થે હા. ભાવસાર ભોગીલાલ છગનલાલ ૨૫૧
૧૧૧ શાહ શાંતીલાલ મેહનલાલ ૨૫૧
૧૧૨ સરસ્વતી પુસ્તકભંડાર હા. પ્રભુદાસ મહેતા ૨૫૧
૧૧૩ સરસ્વતી પુસ્તક ભંડાર હા શાહ ભુરાલાલ કાળીદાસ ૨૫૧
૧૧૪ સ્વ. પિતાશ્રી મોતીલાલજીના સ્મરણાર્થે
હા. મહેતા રણજીતલાલજી મોતીલાલજી ઉદેપુરવાળા ૨૫૧
૧૧૫ શેઠ પરસોતમદાસ અમરસીનાં ધર્મપત્ની સ્વ. કુસુમબેનના
સ્મરણાર્થે તથા અ. સૌ. સવીતાબેનના માસખમણના નિમિત્તે
હા. શેઠ સોમચંદ પરસોતમદાસ (પોર્ટ સુદાનવાળા) ૩૦૧
૧૧૬ શ્રીમાન જોરાવરમલજી ધર્મચંદ્રજી ડુંગરવાલ
રાજાજી કાકેરડાવાળા (મુનિશ્રી માંગીલાલજીના ઉપદેશથી) ૨૫૧
૧૧૭ ડૉ ધનજીભાઈ પરસોતમદાસ ૨૫૧
૧૧૮ સરસ્વતી પુસ્તક ભંડાર ૩૫૧
૧૧૯ સરસ્વતી પુસ્તક પુસ્તક ભંડાર ૩૫૧
૧૨૦ સરસ્વતી પુસ્તક ભંડાર ૩૫૧
૧૨૧ શેઠ ગેરિલાલજી સુગનલાલજી ઉદેપુરવાળા ૨૫૧
૧૨૨ શેઠ કનૈયાલાલજી સુરાણા પીપલોદાવાળા ૨૫૨
૧૨૩ કામદાર વાડીલાલ રતીલાલ (સાબરમતી) ૨૫૨
૧૨૪ કુમારી ચંપાબેન ભોગીલાલ ભાવસાર ૨૮૦
૧૨૫ કુમારી ઉષાબેન જયંતીલાલ ભાવસાર ૨૫૧
૧૨૬ કુમારી ચંદ્રાબેન જયંતીલાલ ભાવસાર ૨૫૧
૧૨૭ કુમારી જયશ્રી રમણલાલ ભાવસાર ૨૫૧
૧૨૮ શાહ ડાહ્યાભાઈ અંબાલાલ ૩૫૧

૧૨૯ ભરડીયા ચાંદમલજી જવાહીરલાલજી ૨૫૧
૧૩૦ શ્રી વીજયદાન સુરીશ્વરજી જ્ઞાનમંદીર પૌષધશાળા ૨૫૧
૧૩૧ શેઠ પાનાચંદ ઝવેરચંદ સારંગપુર ઉપાશ્રય ટ્રસ્ટ
હ. વકીલ બાબુભાઈ હીમતલાલ ૨૫૧

અમલનેર

૧ શાહ નાગરદાસ વજેભાઈ ૨૫૧
૨ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. માંડાલાલ ભીખાલાલ ૨૫૧

અજમેર

૧ શેઠ ખુશાલાલ મોહનલાલ ડુંગરવાલ ૨૫૧

અલ્વર

૧ શ્રીમતી ચમ્પાદેવી ધ. સુગ્દામલજી રતનમલજી સંઘવી ૨૫૧
૨ શેઠ ચાંદમલજી મહાવીરપ્રસાદ પાલાવત ૨૫૧
૩ શ્રીયુત રૂપકુમાર સુમતિકુમાર જૈન ૨૫૧

આસનસોલ

૧ ભાવીશી મણીલાલ ચત્રભુજના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્ની
મણીબાઈ તરફથી હા. રસિકલાલ, કનિકાંત, તથા વીનોદરાય ૨૫૧

આટકોટ

૧ મહેતા ચુનીલાલ નારણદાસ ૨ ૧

આબુદ

શેઠ રમણીકલાલ એમ. કપાસી હા. મનસુખલાલભાઈ ૨૫૧

અકોલા

શેઠ કેશવલાલ શામજી અજમેરા ક. મેસર્સ અજમેરા બ્રધર્સ એન્ડ
કું. (પૂ. શતાવધાની મુનિશ્રી છોટાલાલજી મહારાજના ઉપદેશથી) ૨૫૧

ઇગતપુરી

૧ શેઠ પનાલાલ લખીચંદ જૈન ૨૫૧

ઇન્દોર

૧ અ. સૌ. બેન લાભબેન મોહનલાલ દેસાઈ જેતપુરવાળા
(અ. સૌ. બેન વિદ્યાબેનના વર્ષીતપ નિમિત્તે)
હા. અરવિંદકુમાર તથા જીતેન્દ્રકુમાર ૨૫૧
૨ શ્રીયુત બાબુલાલ છગનલાલ તુરખીયા ૨૫૧

ઉદયપુર

૧	શેઠ રણુજીતલાલજી મોતીલાલજી હિંગડ	૨૫૧
૨	શ્રીમતી સોહિનીબાઇ ઠે રણુજીતલાલજી મોતીલાલજી હિંગડ	૨૫૧
૩	અ સૌ બેન ચન્દ્રાવતી તે શ્રીમાન બહોતલાલજી નાહરના ધર્મપત્ની, હા શેઠ રણુજીતલાલજી મોતીલાલજી હિંગડ	૨૫૧
૪	શેઠ છગનલાલજી બાગ્રેચા	૨૫૧
૫	શેઠ મગનલાલજી બાગ્રેચા	૨૫૧
૬	સ્વ શેઠ કજુલાલજી લોઢાના સ્મરણાર્થે હા શેઠ દોલતસિંહજી લોઢા	૨૫૧
૭	સ્વ શેઠ પ્રતાપમલજી સાખલાના સ્મરણાર્થે હા પ્રાણુલાલ હીરાલાલ સાખલા	૨૫૧
૮	શેઠ ભીમરાજજી થાવરચંદજી બાફણા	૨૫૧
૯	શ્રીયુત સાહેબલાલજી મહેતા	૨૫૧
૧૦	શેઠ પન્નાલાલજી ગણેશલાલજી હીંગડ	૨૫૧
૧૧	શેઠ દીપચંદજી પન્નાલાલજી લોઢા	૨૫૧
૧૨	શેઠ કસ્તુરચંદજી નારૂમલજી	૨૫૧
૧૩	શ્રી યૂ. એલ. કોઠારી	૩૦૧
૧૪	બાબુ પરશુરામ છગનલાલજી શેઠ	૨૫૦
૧૫	શેઠ કનૈયાલાલજી દારૂલાલજી જૈન	૨૫૧
૧૬	શ્રી વર્ધમાન સ્થા. જૈન શ્રાવક સંઘ આમડ	૩૫૧

ઉપલેટા

૧	શેઠ જેઠાલાલ ગોરધનદાસ	૨૫૧
૨	સ્વ. બેન સંતોકબેન કચરા હા. ઓતમચંદભાઇ, છોટાલાલભાઇ મથા અમૃતલાલભાઇ વાલજી (કલ્યાણુવાળા)	૨૫૧
૩	શેઠ ખુશાલચંદ કાનજીભાઈ હા. પ્રતાપભાઇ	૨૫૧
૪	દોશી વીઠ્ઠલજી હરખચંદ	૨૫૧
૫	સંઘાણી મુળશંકર હરજીવનભાઇના સ્મરણાર્થે હા. તેમના પુત્રો જયંતીલાલ તથા રમણીકલાલ	૨૫૧

ઉમરગાવ રોડ

૧ શાહ મોહનલાલ પોપટલાલ પાનેલીવાળા ૨૫૧

એડન કેમ્પ

૧ મહેત પ્રેમચંદ માણેકચંદના સ્મરણાર્થે
હા. લાલચંદભાઈ, પોપટલાલભાઈ તથા રસીકલાલભાઈ ૨૫૧
૨ શાહ જગજીવનદાસ પુરસોતમદાસ ૨૫૧
૩ શાહ ગોકળદાસ શામજી ઉદાણી ૨૫૧

કલકત્તા

૧ શ્રી કલકત્તા જૈન શ્વે સ્થા (ગુજરાતી) સંઘ ૨૫૧

કલોલ

૧ શેઠ મોહનલાલ જેઠાભાઈના સ્મરણાર્થે
હા શેઠ આત્મારામ મોહનલાલ ૨૫૧
૨ ઠા મયાચંદ મગનલાલ શેઠ હા ઠા રતનચંદ મયાચંદ ૨૫૧
૩ સ્વ. નાથાલાલ ઉમેદચંદના સ્મરણાર્થે હા શાહ રતીલાલ નાથાલાલ ૨૫૧
૪ શેઠ મણીલાલ તલકચંદના સ્મરણાર્થે
હા માસ્તરીવાળા મંછુલાલ મણીલાલ ૨૫૧
૫ સ્વ. શ્રીયુત વાડીલાલ પરશોતમદાસના સ્મરણાર્થે
હા પેથાભાઈ તથા આત્મારામભાઈ ૨૫૧
૬ શાહ નાગરદાસ કેશવલાલ ૨૫૧
૭ શ્રી સ્થા જૈન સંઘ હા શેઠ આત્મારામભાઈ મોહનલાલભાઈ ૨૫૧

કડી

૧ શ્રી સ્થા દરિયાપુરી જૈન સંઘ
હા ભાવસાર દામોદરદાસભાઈ ઇશ્વરલાલભાઈ ૨૫૧
૨ પાનતીમેન ઠે જેસીંગભાઈ ઇશ્વરલાલભાઈ ૨૫૧

કરજણ

૧ શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ મીયાંગામ કરજણ ૨૫૧

કઠોર

૧ સ્થા. જૈન સંઘ ઠે. જેસીંગભાઈ પીતાંબર તરફથી
(માધવસિંહજી મહારાજશ્રીના ઉપદેશથી)
હ ડાહ્યાભાઈ તારાચંદ ૨૫૧

કત્રાસગઢ

૧ શ્રી શ્વે સ્થા. જૈન સંઘ હ. શેઠ દેવચંદ અમુલખભાઇ ૨૫૧

કલ્યાણ

૧ સંઘવી ઠાકરશીભાઇ સંઘજીના સ્મરણાર્થે
હ શાહ હીંમતલાલ હરખચંદ ૨૫૧

કાનપુર

૧ શાહ રમણીકલાલ પ્રેમચંદ ૩૦૦

કુંદણી-(આટકોટ)

૧ દોશી રતીલાલ ટેકરશી ૨૫૧

કોલકી

૧ પટેલ ગોવિંદલાલ ભગવાનજી ૨૫૧
૨ પટેલ ખીમજી જેઠાભાઇ વાઘાણી
(તેમના સ્વ સુપુત્ર રામજીભાઈના સ્મરણાર્થે) ૩૦૨

કમ્પાલા

૧ સ્વ. શેઠ નાનચંદ મોતીચંદ ધ્રાંફાવાળાના સ્મરણાર્થે
હ. તેમના સુપુત્ર જમનાદાસ નાનચંદ શેઠ ૨૫૧
૨ શ્રીમતી હીરાબેન, રતીલાલ નાનચંદ શેઠ ધ્રાફાવાળા ૨૫૧

કુશળગઢ

૧ શેઠ ચંપાલાલજી દેવચંદજી ૨૫૧

ખાખીજાળીયા

૧ બાટવીયા ગુલાબચંદ લીલાધર ૪૦૧

ખારાઘોડા

૧ સ્વ પિતાશ્રી હરજીવનદાસ લાલચંદ શાહ તથા
સ્વ. અ. સૌ બેન જમકુબાઇ તથા લીલાબાઇના
સ્મરણાર્થે હ નરસિંહદાસ હરજીવનદાસ ૨૫૧
૨ સ્વ. શેઠ ઓઘડલાલ લક્ષ્મીચંદના સ્[illegible] હ. ભાઈચંદ ઓઘડભાઈ ૨૫૧

ખીચન

૧ શેઠ હીરાલાલ પૃથ્વીરાજ માલુ	૩૫૨

ખુરદાબાદ

૧ શેઠ ગીરધારીલાલજી સીતારામજી ખેડપવાળા	૪૦૦
૨ શેઠ નરસિંહદાસ શાંતિલાલજી ગોરધાવાળા (મુનિશ્રી ચાંદમલજીના ઉપદેશથી)	૨૫૧

ખંભાત

૧ શેઠ માણેકલાલ ભગવાનદાસ	૨૫૧
૨ શેઠ ત્રીભોવનદાસ મગનદાસ	૨૫૧
૩ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ	૨૫૧
૪ શાહ મફતલાલ છબીલાલ	૨૫૧
૫ શાહ સાંકરચંદ મોહનલાલ	૨૫૧
૬ શાહ શકરાભાઈ દેવચંદ	૨૫૧
૭ શાહ સુખલાલ દોલતચંદ	૨૫૧
૮ ચોકસી બાપુલાલ મોહનલાલ	૨૫૧
૯ બેન લલિતા માણેકલાલ	૨૫૧

ગાંધીગામ

૧ શાહ મોરારજી નાગજી એન્ડ કંપની	૨૫૧

ગુંદાળા

૧ શાહ માલશી ધેલાભાઈ	૨૫૧

ગુલાબપુરા

૧ શ્રી સ્થા. જૈન વર્ધમાન સંઘ હ. માગીલાલજી ઉદયમલજી ધનોપવાળા	૨૫૧
૨ શ્રી ઓસવાલ પંચાયત હ. ગુલાબચંદજી મોરડીયા	૨૫૧

ગોંડલ

૧ સ્વ. ભાયાણી વચ્છરાજ તુલસીદાસનાં ધર્મપત્ની કમળાબાઈ તરફથી હા. માણેકચંદભાઈ તથા કપુરચંદભાઈ	૨૫૧
૨ પીપળીયા લીલાધર દામોદર તરફથી તેમનાં ધર્મપત્ની અ. સૌ. લીલાવતી શાકરચંદ કોઠારીના બીજા વર્ષીતપની ખુશાલીમાં	૩૦૧

૩ કામદાર જુઠાલાલ કેશવજીના સ્મરણાર્થે હા
હરીલાલ જુઠાલાલ કામદાર ૩૦૧
૪ સ્વ. કોઠારી કૃપાશંકર માણેકચંદના સ્મરણાર્થે
હા. તેમના ધર્મપત્ની પ્રભાકુંવરબેન ૨૫૧
૫ કોઠારી ગુલાબચંદ રાયચંદ રંગુનવાળા ૨૫૧
૬ જસાણી રૂગનાથભાઈ નાનજી હા. ચુનીલાલભાઇ ૨૫૧
૭ માસ્તર હુકમીચંદ દીપચંદ શેઠ ૨૫૧

ગોંદીયા

૧ સ્થા. જૈન સંઘ હ શાહ પ્રેમચંદ છોટાલાલ (શેઠ પોપટલાલભાઈ તરફથી) ૨૫૧

ગોધરા

૧ શાહ ત્રીભોવનદાસ છગનલાલ ૩૦૧
૨ સ્વ પ્રેમચંદ ઠાકરશીના સ્મરણાર્થે હા શાહ ચુનીલાલ પ્રેમચંદ ૩૦૧

ઘટકણ

૧ શાહ ચંદુલાલ કેશવલાલ ૨૫૧

ઘોલવડ (થાણા)

૧ મહેતા ગુલાબચંદ ગંભીરમલજી ૩૦૦

ઘોડનદી

૧ શેઠ ચંદ્રભાણુ શોભાચંદ ગાદીયા ૨૫૧

ચુડા

૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા રતીલાલ મગનલાલ ગાંધી ૨૫૧

ચોટીલા

૧ શાહ વનેચંદ જેઠાલાલ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘને ભેટ ૩૫૧

ચારભુજારોડ

૧ શેઠ માગીલાલજી હીરાચંદજી બાબેલ ૩૦૧

જમશેદપુર

૧ દોશી ઝવેરચંદ વલમજી ૨૫૧

જલેસર (બાલાસોર)

૧ સંઘવી નાનચંદ પોપટભાઇ થાનગઢવાળા ૨૫૧

જયપુર

૧ શ્રીમાન શેઠ ધીરેમલજી નવલખાના ધર્મપત્ની અ સૌ પ્રેમલતાદેવી ૨૫૧

જસવન્તગઢ

૧ શ્રીમાન સુન્દરલાલજી નેમીચંદજી તલેસરા ૩૫૧

જામખંભાળીયા

૧ શેઠ વસનજી નારણજી ૨૫૧
૨ શ્રી સ્થા જૈન સંઘ હા મહેતા રણછોડદાસ પરમાણંદ ૨૫૧
૩ સંઘવી પ્રાણલાલ લવજીભાઈ ૨૫૧

જામનગર

૧ શાહ છોટાલાલ કેશવજી ૨૫૧
૨ વોરા ચીમનલાલ દેવજીભાઈ ૨૫૧
૩ ડૉ. આદેશ પી ધી શેઠ ૨૫૦
૪ શાહ રંગીલદાસ પોપટલાલ ૨૫૧
૫ વકીલ મણીલાલ ખેંગારભાઈ પુનાતર ૨૫૧

જુનારદેવ

૧ મેઘાણી ત્રીકમજી લાધાભાઈ ૨૫૧

જુનાગઢ

૧ શેઠ મણીલાલ મીઠાભાઈ હ હરિલાલભાઈ (હાથીનામ ભીંયાવાળા) ૨૫૧

જામજોધપુર

૧ શ્રી સ્થા જૈન સંઘ હ. મહેતા પોપટલાલ માવજીભાઈ ૩૮૭
૨ શાહ ત્રીભોવનદાસ ભગવાનજી પાનેલીવાળા ૨૫૧
૩ દોશી માણેકચંદ ભવાન ૨૫૧
૪ પટેલ લાલજી જુઠાભાઈ ૨૫૧
૫ શેઠ ભાવનજી જેઠાભાઈ ૨૫૧
૬ શેઠ મગનલાલ ચુનીલાલ ૨૫૧

જેતપુર

૧ કોઠારી ઝાલરકુમાર વેણીલાલ ૨૫૧
૨ અ. સૌ. બેન સુરજકુંવર વેણીલાલ કોઠારી ૨૫૧

૩ શેઠ અમૃતલાલ હીરજીભાઈ હ. નરભેરામભાઈ (જસાપુરવાળા) ૨૫૧
૪ દોશી છોટાલાલ વનેચંદ ૨૫૧

જેતલસર

૧ શાહ લક્ષ્મીચંદ કપુરચંદ ૨૫૧
૨ કોઠાર લીલાધર જીવરાજના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્ની
જબકબેન તરફથી હ. શાંતિલાલભાઈ ગોંડલવાળા ૨૫૧

જોધપુર

૧ શેઠ નવરતમલજી ધનવતસિંહજી ૨૫૦
૨ શેઠ હસ્તીમલજી મનરૂપમલજી સામસુખા ૨૫૧
૩ શેઠ પુખરાજજી પદમરાજજી ભંડારી ૨૫૧
૪ શેઠ વસ્તીમલજી આનંદરૂપજી સામસુખા ૨૫૧

જોરાવરનગર

૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હ. શેઠ ચંપકલાલ ધનજીભાઈ ૨૫૧

ઝરીયા

૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હ. શેઠ કનૈયાલાલ ખી મોદી ૨૫૧

ડોંડાયચા

૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ ૨૫૦

ઢસા

૧ ઢસાગામ સ્થા. જૈન સંઘ હ એક સદ્‌ગૃહસ્થ તરફથી ૨૫૧
૨ શ્રી સ્થા જૈન સંઘ હ. બગડિયા નરભેરામ જેઠાલાલ (ઢસા જંકશન) ૨૫૧

તાસગાંવ

૧ સ્વ. ચુનીલાલજી દુગડના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્ની
ઢેલુંબાઈ તરફથી હા. શેઠ રામચંદજી ૩૫૧

થાનગઢ

૧ શાહ ઠાકરશીભાઇ કરશનજી ૨૫૧
૨ શેઠ જેઠાલાલ ત્રીભોવનદાસ ૨૫૧
૩ શાહ ધારશીભાઈ પાશવીરભાઇ હા. સુખલાલભાઇ ૨૫૧
૪ હંસાબેન અરવીંદ હા ભાઇ રવીચંદ માણેકચંદ ૩૦૧

દહાણુરોડ

૧ શાહ હરજીવનદાસ ભીમજી ખંધાર (કરાંચીવાળા) ૨૫૧

દાહોદ

૧ શેઠ માણેકલાલભાઈ ખેમચંદજી ૨૫૧

દિલ્હી

૧ લાલાજી પૂર્ણચંદજી જૈન (સેન્ટ્રલ બેંકવાળા) ૭૫૧
૨ શ્રીયુત કંચનચંદજી મહેતાબચંદજી ચોરડીયા,
 હા શ્રીમતી નગીનાદેવી તથા શ્રીયુત મહેતાબચંદ જૈન ૧૫૧
૩ અ સૌ. સજ્જનબેન ઉત્તમલાલ પારેખ ૧૫૧
૪ લાલાજી ગીનલાલજી જૈન એન્ડ સન્સ ૩૦૧
૫ લાલાજી શુગનલાલજી જૈન એન્ડ સન્સ ૩૦૧
૬ બેન વિજ્યાકુમારી જૈન C/o મહેતાબચંદ જૈન
 (વયોવૃદ્ધ સરલ સ્વભાવી કુલમતીજી મહાસતીજીની પ્રેરણાથી) ૨૫૧
૭ શ્રીમાન લાલાજી વતનચંદજી જૈન C/o ભાઈ સી. હોઝીયરી ૨૫૧
૮ સ્વ. લાલાશ્રી ચંદજી ડુગરીયાના સ્મરણાર્થે રાજસ્થાન ન્યાયાધિકારી
 હુકમચંદજી જૈનના સુપુત્ર જીતેન્દ્રકુમાર વકીલના સુપુત્ર અનિલકુમાર
 તરફથી શેઠ બ. વિનયકુમારી ૩૫૧
૯ સ્વ. લાલાજી ચંપાલાલજી ચોરડીયાના સ્મરણાર્થે લાલચંદજી
 તથા હીરાલાલજી તરફથી હ. શાંતાદેવી ૩૫૧
૧૦ એક સદ્ગૃહસ્થ તરફથી હ. મહેતાબજી જૈન ૩૦૧
૧૧ એક સ્વધર્મી બંધુ તરફથી હસ્તે વિજિયાકુમારી બેન ૩૦૧
૧૨ બાબુ નિરંજન સિંહજી જૈન ૨૫૧

ધાફા

૧ શેઠ મણીલાલ ભેમજીભાઈ ૨૫૧

ધાર

૧ શેઠ સામરમલજી પનાલાલજી ૨૫૧

ધાગધ્રા

૧ બાલબ્રહ્મચારિણી અ. સૌ. કૃપાળીબેન હિંમતલાલ સંઘવીની તપશ્ચર્યાર્થે
 પ્રેમથી સોમનકાલ પુરષોત્તમદાસ સંઘવી તરફથી ૩૦૫

૨ સંઘવી નરસિંહદાસ વખતચંદ ૩૦૧
૩ શ્રી સ્થા. જૈન મોટા સંઘ- હ. મંગળજી જીવરાજ ૨૫૧
૪ ઠક્કર નારણદાસ હરગોવિંદદાસ ૨૫૧
૫ કોઠારી કપુરચંદ મંગળજી ૨૫૧

ધોરાજી

૧ મહેતા પ્રભુદાસ મુળજીભાઇ ૩૫૧
૨ અ. સૌ બચીબેન બાબુભાઇ ૨૫૧
૩ ધી નવસૌરાષ્ટ્ર ઓઇલ મીલ પ્રા. લીમીટેડ ૨૫૧
૪ સ્વ. રાયચંદ પાનાચંદના સ્મરણાર્થે હ ચીમનલાલ રાયચંદ શાહ ૩૦૧
૫ ગાંધી પોપટલાલ જેચંદભાઇ ૨૫૦
૬ દેસાઇ છગનલાલ ડાહ્યાભાઈ લાઠવાળાના ધર્મપત્ની દિવાળીબેન તરફથી હ કુમારી હસુમતી ૨૫૧
૭ એક સદ્‌ગૃહસ્થ હ. મહેતા પ્રભુદાસ મુળજીભાઈ ૨૫૧
૮ શેઠ દલપતરામ વસનજી મહેતા ૨૫૧
૯ સ્વ. પિતાશ્રી ભગવાન કચરાભાઈના તથા ચિ. હંસાના સ્મરણાર્થે હ. પટેલ દલીચંદ ભગવાનજી ૩૦૧
૧૦ મહેતા હેમચંદ કાળીદાસ જામખંભાળીયાવાળા ૨૫૧

ધંધુકા

૧ શેઠ પોપટલાલ ધારશીભાઈ ૨૫૧
૨ સ્વ. ગુલાબચંદભાઇના સ્મરણાર્થે હ. વોરા પોપટલાલ નાનચંદ ૨૫૧
૩ શ્રી ચત્રભુજ વાઘજીભાઈ વસાણી ૨૫૧

ધુલીયા

૧ શ્રી અમોલ જૈન જ્ઞાનાલય હ. શેઠ કનૈયાલાલ છાજેડ ૨૫૧

નડીયાદ

૧ શાહ મોહનલાલ ભુરાભાઇ ૨૫૧

નારાયણ ગામ

૧ શેઠ મોતીલાલજી હીરાચંદજી ચોરડીયા બોરીવાળા ૨૫૧

નંદુરબાર

૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હ. શેઠ પ્રેમચંદ ભગવાન[illegible] ૨૫૧

નાગોર

૧ શ્રીપાલબાઈ એ ક ફુલ સાગરમલજી લુંકડ જસવાળા તરફથી ૨૫૧

પાલનપુર

૧ બેન લક્ષ્મીબાઈ હ. મહેતા હરીલાલ પીતાંબરદાસ ૧૫૧

૨ લોંકાગચ્છ સ્થા. જૈન પુસ્તકાલય હ. કેશવલાલ જી શાહ ૨૫૧

પામુસણા

૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હ. શાહ છોટાલાલ પુંજાભાઈ ૨૫૧

પાલેજ

૧ સ્વ. મનસુખલાલ મોહનલાલ સંઘવીના સ્મરણાર્થે
  હ. ભાઈ ધીરજલાલ મનસુખલાલ ૩૦૧

પ્રાંતીજ

૧ સ્થા. જૈન સંઘ હ. શ્રીયુત અંબાલાલ ગંગાસુખરામ ૧૦૦

પૂના

૧ શેઠ ઉત્તમચંદજી કેવળચંદજી ધોકા ૧૫૧

ફાલના

૧ મહેતા પુખરાજજી હસ્તીમલજી સાદડીવાલા ૩ ૧

૨ મહેતા કુંદનમલજી અમરચંદજી સાદડીવાલા ૨૫૧

બગસરા

૧ શેઠ પોપટલાલ લવજી શવડીવાળા
  હ. નાનચંદ પ્રેમચંદ શાહ ૨૫૧

૨ સ્વ. માતુશ્રી જબકબાઈના સ્મરણાર્થે
  હ. દેસાઈ વૃજલાલ કાળીદાસ ૨૫૧

બરવાળા-ઘેલાશા

૧ સ્વ. ગોરધનલાલ નરસિંહદાસના સ્મરણાર્થે
  હ. તેમનાં ધર્મપત્ની સુરજબેન મોરારજી ૧૫૧

બદનાવર

૧ શ્રી વર્ધમાન સ્થા. જૈન શ્રાવક સંઘ હ. મિશ્રીલાલ જૈન વકીલ ૨૫૧

બાલોતરા

૧ શાહ જેઠમલજી હસ્તીમલજી ભગવાનદાસજી ભણુસારી — ૨૫૧

બીદડા

૧ શાહ કાનજી શામજીભાઈ — ૨૫૧

બીકાનેર

૧ શેઠ ભેરૂદાનજી શેઠીયા — ૨૫૪

બેરાજા

૧ શેઠ ગાગજી કેશવજી (જ્ઞાનભંડાર માટે) — ૨૫૧

બેલારી

૧ શ્રી સ્થા જૈન સઘ હ શેઠ હજારીમલજી હસ્તીમલજી રાંકા — ૨૫૧

બેરમો

૧ શ્રી બેરમો સ્થા જૈન સંઘ હ. મહેતા નવલચંદ હાકેમચંદ — ૨૫૧

બેંગલોર

૧ શેઠ કીશનલાલજી કુલચદજી સાહેબ — ૨૫૧
૨ અજમેરા છોટાલાલ માનસિંગ — ૨૫૧

બોટાદ

૧ સ્વ વસાણી હરગોવિંદદાસ છગનલાલના સ્મરણાર્થે
હા તેમના ધર્મપત્ની છબલબેન — ૨૫૧

બોડેલી

૧ શાહ પ્રવીણચન્દ્ર નરસિંહદાસ સાણંદવાળા — ૨૫૧
૨ શાહ ગીરધરલાલ સાકરચંદ — ૨૫૧

ભાણવડ

૧ શેઠ જેચદભાઇ માણેકચદભાઇ — ૩૫૨
૨ સઘવી માણેકચંદ માધવજી — ૨૫૧
૩ શેઠ લાલજી માણેકચંદ લાલપુરવાળા — ૨૫૧
૪ શેઠ રામજી જીણાભાઇ — ૨૫૧
૫ શેઠ પદમશી ભીમજી ફોફરીયા — ૨૫૧
૬ ફોફરીયા ગાડાલાલ કાનજીભાઈ હા અ. સૌ. શાંતાબેન વસનજી — ૨૫૧
૭ સ્વ મહેતા પુનમચદ ભવાનના સ્મરણાર્થે હા. તેમનાં
ધર્મપત્ની દિવાળીબેન લીલાધર (ગુંદાવાળા) — ૨૫૧

ભાવનગર

૧ સ્વ. કુંવરજી બાવાભાઇના સ્મરણાર્થે હા. શાહ લહેરચંદ કુંવરજી ૨૦૧

ભાદરણ

૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. શેઠ ફુલાભાઈ ઝવેરભાઈ ૨૫૧

ભીલવાડા

૧ શ્રી શાંતી જૈન પુસ્તકાલય હા. ચાંદમલજી માનમલજી સંઘવી ૨૫૧

૨ શેઠ ભીમરાજજી મીશ્રીલાલજી ૩૧

ભીમ

૧ ચંપકલાલજી જૈન પુસ્તકાલય હા. શેઠ ભિખામલજી માંગીલાલજી ૨૫૧

ભુસાવલ

૧ શેઠ રાજમલજી લખીચંદજી ચેરિટેબલટ્રસ્ટ ૨૫૧

ભોજાય

૧ જ્ઞાન મંદિરના સેક્રેટરી શાહ કુંવરજી જીવરાજ ૨૫૧

મદ્રાસ

૧ શેઠ મેઘરાજજી દેવીચંદજી મહેતા ૨૫૧

૨ મહેતા મણીલાલ ખીમચંદ ૨૫૧

૩ મહેતા સુરજમલ ભાઇચંદ ૨૫૧

૪ મહેતા બાપાલાલ ભાઇચંદ ૨૫૧

મનફરા

૧ સ્થા. છકોટી સ્થા. જૈન સંઘ ૨૫૧

મનોર

૧ શાહ શેરમલજી દેવીચંદજી ચંદનમલવાળા
હા. પુનમચંદજી શેરમલજી મોદીયા ૨૫૧

માનકુવા

સ્વ. મહેતા કુંવરજી નાથાલાલના સ્મરણાર્થે હા. તેમના ધર્મપત્ની
કુંવરબાઈ લખમચંદ (માનકુવા સ્થા. જૈન સંઘ માટે) ૨૫૧

માંડવી

૧ શ્રી સ્થા. છકોટી જૈન સંઘ હા. મહેતા ચુનીલાલ વેલજી ૨૦૭

માંડવા

૧ શ્રી માંડવા સ્થા. જૈન સંઘ
હ. અ. સૌ. કંચનગૌરી રતીલાલ ગોસલીયા (ગઢડાવાળા) ૨૫૧

માલેગાંવ

૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હ. ફતેલાલ માલુ જૈન ૨૫૧

માંગરોલ

૧ શાહ ત્રીભોવનદાસ નાનજી ૨૫૦
૨ દોશી ગીરધરલાલ જેઠાલાલ ૨૫૦

મુંબઇ તથા પરાંઓ

૧ સ્વ શ્રી પિતાશ્રી કુંદનમલજી મોતીલાલજી મુથાના સ્મરણાર્થે
હા. શેઠ મોતીલાલજી જુખરમલજી (અહમદનગરવાળા) ૨૫૧
૨ વર્ધમાન સ્થા. જૈન સંઘ હ. કામદાર રૂપચંદ શીવલાલ (અંધેરી) ૨૫૧
૩ અ. સૌ કમળાબેન કામદાર હ. કામદાર રૂપચંદ શીવલાલ (અંધેરી) ૨૫૧
૪ સ્વ. માતુશ્રી કડવીબાઈના સ્મરણાર્થે હ તેમના પૌત્ર
હકમીચંદ તારાચંદ દોશી (અંધેરી) ૨૫૧

૫ શાહ હરજીવન કેશવજી ૨૫૧
૬ શાહ રમણીકલાલ કાળીદાસ તથા અ. સૌ. કાન્તાબેન રમણીકલાલ ૨૫૧
૭ સંઘવી હિંમતલાલ હરજીવનદાસ ૨૫૧
૮ વોરા પાનાચંદ સંઘજીના સ્મરણાર્થે
હ ત્રંબકલાલ પાનાચંદ એન્ડ બ્રધર્સ ૨૫૧
૯ શાહ રામજી કરશનજી થાનગઢવાળા ૨૫૧
૧૦ સ્વ જટાશંકર દેવજીભાઇ દોશીના સ્મરણાર્થે
હ. રણછોડદાસ (બાબુલાલ) જટાશંકર દોશી ૩૦૧
૧૧ ઘેલાણી વલભજી નરભેરામ હ. નરસીંહદાસ વલભજી ૨૫૧
૧૨ કપાસી મોહનલાલ શીવલાલ ૨૫૧
૧૩ ત્રીભોવનદાસ માનસિંગભાઇ દોઢીવાળાના સ્મરણાર્થે
હ શાહ હરખચંદ ત્રીભોવનદાસ ૨૫૧
૧૪ ખેતાણી મણીલાલ કેશવજી (વડીયાવાળા) ઘાટકોપર ૨૫૧
૧૫ સ્વ પિતાશ્રી શામળજી કલ્યાણજી ગોંડલવાળાના સ્મરણાર્થે
હા. વૃજલાલ શામળજી બાવીસી ૩૦૧
૧૬ શાહ રવિચંદ સુખલાલભાઇ (દદર) ૩૫૧

૧૭	સ્વ. આશારામ મીરખરલાલના સ્મરણાર્થે હા. શાંતિલાલ આશારામ વતી જશવંતલાલ શાંતિલાલ	૨૫૧
૧૮	ગાંધી કાંતીલાલ માણેકચંદ	૨૫૧
૧૯	શાહ રવજીભાઈ તથા ભાઈલાલભાઈની કું. (કાંદીવલી)	૨૫૧
૨૦	અ. સૌ. લાભુબેન હ. રવજીભાઈ શામજી ,,	૨૫૧
૨૧	સ્વ. માતુશ્રી માણેકબાઈના સ્મરણાર્થે હ. શેઠ વલભદાસ નાનજી	૨૫૧
૨૨	એક સદ્‌ગૃહસ્થ હ. શેઠ સુંદરલાલ માણેકલાલ	૨૫૧
૨૩	શેઠ ખુશાલભાઈ ખેંગારભાઈ	૨૫૧
૨૪	શેઠ ચુનીલાલ નરસેરામ વેકરીવાળા	૨૫
૨૫	સ્વ. માતુશ્રી એમતીબાઈના સ્મરણાર્થે હ. શાહ પોપટલાલ પાનાચંદ	૨૫૧
૨૬	કોઠારી જયંતીલાલ રણછોડદાસ સૌભાગ્યચંદ જુનાગઢવાળા	૨૫૧
૨૭	વોરા ઠાકરશી જસરાજ	૨૫૧
૨૮	કોઠારી સુખલાલજી પુનમચંદજી (મારવાડ)	૨૫૧
૨૯	અ. સૌ. બેન કુંદનગૌરી મનહરલાલ સવજી ,,	૨૫૧
૩૦	કોઠારી રમણીકલાલ કસ્તુરચંદભાઈ	૨૫૧
૩૧	દેસાઈ અમૃતલાલ વર્ધમાનના સ્મરણાર્થે હ. હરીચંદ અમૃતલાલ દેસાઈ	૨૫૧
૩૨	સ્વ. ત્રિભોવનદાસ મજપાળ વીછીવાળાના સ્મરણાર્થે હા. હરગોવિંદદાસ ત્રિભોવનદાસ અજમેરા	૨૫૧
૩૩	તેજાણી કુબેરદાસ પાનાચંદ	૨૫૧
૩૪	શેઠ સરદારમલજી દેવીચંદજી કાવેડીયા (સાદડીવાળા)	૨૫૧
૩૫	શેઠ નેમચંદ સ્વરૂપચંદ ખંભાતવાળા હ. ભાઈ જેઠાલાલ નેમચંદ	૨૫૧
૩૬	શાહ કેશવલાલ હીરજીભાઈ	૩ ૧
૩૭	શ્રીમતી મણીબાઈ વ્રજલાલ પારેખ ચેરીટેબલ ટ્રસ્ટ ફંડ હ. વ્રજલાલ દુર્લભજી પારેખ	૨૫૧
૩૮	દડિયા અમૃતલાલ મોતીચંદ (ઘાટકોપર)	૨૫૧
૩૯	દોશી ચત્રભુજ સુંદરજી ,	૪૦૧
૪૦	દોશી જુગલકિશોર ચત્રભુજ ,,	૪ ૧
૪૧	દોશી પ્રવિણચંદ ચત્રભુજ ,,	૩૮૧
૪૨	શેઠ મનુભાઈ માણેકચંદ હા. જાટકીયા નરસેરામ મોરારજી ,,	૨૫૧
૪૩	શાહ કાંતિલાલ મગનલાલ ,	૨૫૧

૪૪ શેઠ મણીલાલ ગુલાબચંદ (ઘાટકોપર) ૨૫૧
૪૫ શેઠ છગનલાલ નાનજીભાઈ ૨૫૧
૪૬ શાહ શીવજી માણેકભાઈ ૨૫૧
૪૭ મેસર્સ સવાણી ટ્રાન્સપાર્ટ કું. હા શેઠ માણેકલ લ વાડીલાલ ૨૫૧
૪૮ શાહ નગીનદાસ કલ્લાણજી (વેરાવળવાળા) ૨૫૬
૪૯ મહેતા રતીલાલ ભાયચંદ ૨૫૧
૫૦ શાહ મેમજી હીરજી ગાલા ૨૫૧
૫૧ બેન કેશરબાઈ ચંદુલાલ જેશીગભાઈ શાહ ૨૫૧
૫૨ પારેખ ચીમનલાલ લાલચંદ સાયલાવાળાના ધર્મપત્ની અ. સૌ
ચંચળબાઈના સ્મરણાર્થે હા. સારાભાઈ ચીમનલાલ ૨૫૧

૫૩ ધી મરીના મોર્ડન હાઈસ્કુલ ટ્રસ્ટ ફંડ હા. શાહ મણીલાલ ઠાકરશી ૨૫૧
૫૫ મહેતા સ્ટોર્સ હા. અનોપચદ ડી. મહેતા ૨૫૧
૫૫ શેઠ રસીકલાલ પ્રભાશકર મોરબીવાળા તરફથી તેમના
માતુશ્રી મણીબેનના સ્મરણાર્થે ૩૦૧

૫૬ શ્રીયુત જસવંતલાલ ચુનીલાલ વોગ ૨૫૦
૫૭ શાહ કુંવરજી હંસરાજ ૨૫૧
૫૮ દડીયા જેમીગલાલ ત્રીકમજી ૨૫૧
૫૯ મોદી અભેચંદ સુરચંદ રાજકોટવાળા હા. ડોસાલાલ અભેચદ ૨૫૧
૬૦ શાહ જેઠાલાલ ડામરશી ધ્રાંગધ્રાવાળા હા. શાહ વાડીલાલ જેઠાલાલ ૨૫૦
૬૧ સ્વ પિતાશ્રી ભગવાનજી હીરાચદ જસાણીના સ્મરણાર્થે
હા. લક્ષ્મીચદભાઇ તથા કેશવલાલભાઇ ૩૫૧

૬૨ સ્વ. પિતાશ્રી શાહ અંબાલાલ પુરૂષોત્તમદાસના સ્મરણાર્થે
હા શાહ બાપાલાલ અંબાલાલ ૨૫૧
૬૩ સ્વ કસ્તુરચદ અમરશીના સ્મરણાર્થે હા. તેમના ધર્મપત્ની ઝવેરબેન
મગનલાલ વતી જયંતીલાલ કસ્તુરચંદ મશ્કારીયા (ચુડાવાળા) ૨૫૧

૬૪ શેઠ ડુંગરશી હંસરાજ વીસરીયા ૨૫૧
૬૫ શાહ રતનશી મોણુશીની કું. ૨૫૧
૬૬ શેઠ શીવલાલ ગુલાબચંદ મેવાવાળા ૨૫૧
૬૭ શાહ ચંદુલાલ કેશવલાલ ૨૫૧
૬૮ સ્વ પિતાશ્રી વીરચદ જેસીંગ શેઠ લખતરવાળાના સ્મરણાર્થે
હા કેશવલાલ વીરચંદ ૨૫૧
૬૯ ચંદુલાલ કાનજી મહેતા ૨૫૧

૭૦ શ્રી વર્ધમાન સ્થા. જૈન સંઘ

દા. કેશરીમલજી અનોપચંદજી ગુલેચીયા (મલાડ) ૨૫૧

૭૧ સ્વ. પિતાશ્રી પદુભાઈ મોનાભાઈના સ્મરણાર્થે ૨૫૧

દા. શાહ કાનજી પદુભાઈ , ૨૫૧

૭૨ અ. સૌ. પાનબાઈ દા. શેઠ પદમશી નરસિંહભાઈ ,, ૨૫૧

૭૩ સ્વ. નાગશીભાઈ રોજપાલના સ્મરણાર્થે રામજી નાગશી ,, ૩૦૧

૭૪ સ્વ. મોઢા વણારશી નીસોવનદાસ સરસઈવાળાના સ્મરણાર્થે

દા. જગજીવન વણારશી મોઢા ,, ૨૫૧

૭૫ સ્વ. કાનજી મુળજીના સ્મરણાર્થે તથા માતુશ્રી દિવાળીના

૧૬ ઉપવાસના પારણા પ્રસંગે દા. જયંતિલાલ કાનજી ૨૫૧

૭૬ શાહ પ્રેમજી માલશી બમર ,, ૨૫૧

૭૭ શાહ શ્રી નેણશીભાઈ છાસરાવાળા તરફથી તેમનાં ધર્મપત્ની

સ્વ. નાનબાઈના સ્મરણાર્થે ,, ૩૦૧

૭૮ સ્વ. પિતાશ્રી રાયશી વેલશીના સ્મરણાર્થે

દા. શાહ રામજી રાયશીભાઈ , ૩૦૧

૭૯ શાહ વલ્લભભાઈ શીવજીભાઈ ,, ૨૫૧

૮૦ શાહ ખીમજી મુરજી પુજા ,, ૨૫૧

૮૧ અ. સૌ. ધમનાબેન શાંતિલાલ ઠે. શાંતીલાલ ઉજમશી શાહ ,, ૨૫૧

૮૨ સ્વ. કેશવલાલ વછરાજ કોઠારીના સ્મરણાર્થે સુરજબેન તરફથી ૨૫૧

દા. તનસુખલાલભાઈ ,, ૨૫૧

૮૩ સ્વ. પિતાશ્રી દશરાજ હીરાના સ્મરણાર્થે

દા. દેવશી દશરાજ કચ્છ બીદડાવાળા ,, ૨૫૧

૮૪ પિતાશ્રી પ્રભુલાલ મોહનજી (બોરીવલી) ૨૫૨

૮૫ શેઠ ત્રંબકલાલ કસ્તુરચંદ ધીમડી અજરામર શાસન સદને ભેટ (માટુંગા) ૨૫૧

૮૬ અ. સૌ. બેન રંજનગૌરી ઠે. શાહ મંગુલાલ લક્ષ્મીચંદ ,, ૨૫૧

૮૭ શાહ નટવરલાલ દીપચંદ તરફથી તેમનાં ધર્મપત્ની અ. સૌ.

સુશીલાબેનના વર્ષીતપની ખુશાલીમાં ,, ૨૫૧

૮૮ દોશી ભીખાલાલ ગુજરલાલ પાળીયાદવાળા ,, ૨૫૧

૮૯ શાહ ગોપાળજી માનસંગ ,, ૨૫૧

૯૦ દોશી ફુલચંદ માણેકચંદ ,, ૨૫૦
૯૧ શેઠ ચંપકલાલ ચુનીલાલ દાદભાવાળા ,, ૨૫૧
૯૨ શ્રી વર્ધમાન સ્થા. જૈન શ્રાવક સંઘ
હ. શાહ રવિચંદ સુખલાલ (દાદર) ૨૫૧
૯૩ શાંતીલાલ ડુંગરશી અદાણી ,, ૨૫૧
૯૪ શાહ કરશન લધુભાઈ ,, ૨૫૧
૯૫ કીસનલાલ સી. મહેતા (શીવ) ૨૫૧
૯૬ માતુશ્રી જીવીબાઈના સ્મરણાર્થે
હ. શામજી શીવજી કચ્છ ગુંદાળાવાળા (ગોરેગાંવ ૨૫૧
૯૭ સ્વ. શાહ રાયશી કચરાભાઈના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્ની
નેણબાઈ વતી હ. જેઠાલાલ રાયશી ,, ૨૫૧
૯૮ શુશીલાબેન શકરાભાઈ ઠે. નવીનચંદ્ર વસંતલાલ શાહ (વીલેપાર્લે) ૨૫૧
૯૯ બેન ચંદનબેન અમૃતલાલ વારિવા ૨૫૧
૧૦૦ સ્વ કાળીદાસ જેઠાલાલ શાહના સ્મરણાર્થે
હ. સુમનલાલ કાળીદાસ (કાનપુરવાળા ૩૦૧
૧૦૧ શાહ ત્રીભોવન ગોપાળજી તથા અ. સૌ. બેન કસુંબા
ત્રીભોવન (થાનગઢવાળા) (શીવ) ૨૫૧

મુળી

શેઠ ઉજમશી વીરપાળ હ. શેઠ કેશવલાલ ઉજમશી ૩૦૧

મોરબી

૧ દોશી માણેકચંદ સુંદરજી ૩૫૧

મોમ્બાસા

૧ શ્રીયુત નાથાલાલ ડી. મહેતા ૨૫૧
૨ શાહ દેવરાજ પેથરાજ ૨૫૦

મહેસાણા

૧ શાહ પદમશી સુરચંદના સ્મરણાર્થે હ. શીવલાલ પદમશી ૨૫૧

યાદગીરી

૧ શેઠ બાદરમલજી સુરજમલજી બેંકર્સ ૨૫૦

૭૦ શ્રી વર્ધમાન સ્થા. જૈન સંઘ
હા. કેશરીમલજી અનોપચંદજી ગુલશીયા (મલાડ) ૨૫૧
૭૧ સ્વ. પિતાશ્રી પતુભાઈ મોનાભાઈના સ્મરણાર્થે ૨૫૧
હા. શાહ કાનજી પતુભાઈ , ૨૫૧

૭૨ અ. સૌ. પાનબાઈ હા. શેઠ ખેતશી નરસિંહભાઈ ,, ૨૫૧
૭૩ સ્વ. નાગશીભાઈ સેજપાલના સ્મરણાર્થે રામજી નોંઘશી ,, ૩૦૧
૭૪ સ્વ. ગોસા વણારશી ત્રીભોવનદાસ સરસઈવાળાના સ્મરણાર્થે
હા જગજીવન વણારશી ગોસા ,, ૨૫૧
૭૫ સ્વ. કાનજી મુળજીના સ્મરણાર્થે તથા માતુશ્રી દિવાળીના

૧૬ ઉપવાસના પારણા પ્રસંગે હા. જયંતિલાલ કાનજી ૨૫૧
૭૬ શાહ પ્રેમજી માલશી ગગર ,, ૨૫૧
૭૭ શાહ શ્રી જેસંગભાઈ છાસરાવાળા તરફથી તેમનાં ધર્મપત્ની
સ્વ. નાનબાઈના સ્મરણાર્થે ,, ૩૦૧

૭૮ સ્વ પિતાશ્રી રામશી વેલશીના સ્મરણાર્થે
હા શાહ રામજી રામશીભાઈ , ૩૦૧

૭૯ શાહ વલ્લભભાઈ શીવજીભાઈ ,, ૨૫૧
૮૦ શાહ ખીમજી મુરજી પુંજા ,, ૨૫૧
૮૧ અ સૌ સમતાબેન શાંતિલાલ ઠે શાંતીલાલ ઉજમશી શાહ ,, ૨૫૧
૮૨ સ્વ કેશવલાલ વછરાજ કોઠારીના સ્મરણાર્થે સુરજબેન તરફથી ૨૫૧
હા તનસુખલાલભાઈ ,, ૨૫૧

૮૩ સ્વ. પિતાશ્રી હંસરાજ હીરાના સ્મરણાર્થે
હા દેવશી હંસરાજ કચ્છ બીદડાવાળા ,, ૨૫૧

૮૪ પેથાણી મણીલાલ ત્રીકમજી (બોરીવલી) ૨૫૨
૮૫ શેઠ ત્રંબકલાલ કસ્તુરચંદ લીમડી અજરામર શાસન સારને બેટ (માટુંગા) ૨૫૧
૮૬ અ સૌ. બેન રંજનગૌરી ઠે. શાહ ચંદુલાલ લક્ષ્મીચંદ ,, ૨૫૧
૮૭ શાહ નટવરલાલ દીપચંદ તરફથી તેમનાં ધર્મપત્ની અ સૌ
સુશીલાબેનના વર્ષીતપની ખુશાલીમાં ,, ૨૫૧

૮૮ દોશી ભીખાલાલ વૃજલાલ પાળીયાદવાળા ,, ૨૫૧
૮૯ શાહ ગોપાળજી માનસંગ ,, ૨૫૧

૯૦ દોશી ફુલચંદ માણેકચંદ	,,	૧૫૦
૯૧ શેઠ ચંપકલાલ ચુનીલાલ દાહભાવાળા	,,	૨૫૧
૯૨ શ્રી વર્ધમાન સ્થા જૈન શ્રાવક સંઘ		
હ. શાહ રવિચંદ સુખલાલ	(દાદર)	૨૫૧
૯૩ શાંતીલાલ ડુંગરશી અદાણી	,,	૨૫૧
૯૪ શાહ કરશન લધુભાઈ	,,	૨૫૧
૯૫ કીસનલાલ સી. મહેતા	(શીવ)	૨૫૧
૯૬ માતુશ્રી જવીબાઈના સ્મરણાર્થે		
હ. શામજી શીવજી કચ્છ ગુંદાળાવાળા	(ગોરેગાંવ	૨૫૧
૯૭ સ્વ. શાહ રાયશી કચરાભાઈના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્ની		
નેણબાઈ વતી હ. જેઠાલાલ રાયશી	,,	૨૫૧
૯૮ શુશીલાબેન શકરાભાઈ ઠે. નવીનચંદ્ર વસંતલાલ શાહ	(વીલેપાર્લે)	૨૫૧
૯૯ બેન ચંદનબેન અમૃતલાલ વારિવા		૨૫૧
૧૦૦ સ્વ. કાળીદાસ જેઠાલાલ શાહના સ્મરણાર્થે		
હ. સુમનલાલ કાળીદાસ (કાનપુરવાળા		૩૦૧
૧૦૧ શાહ ત્રીભોવન ગોપાળજી તથા અ. સૌ. બેન કસુંબા		
ત્રીભોવન (થાનગઢવાળા)	(શીવ)	૨૫૧

મુળી

શેઠ ઉજમશી વીરપાળ હ. શેઠ કેશવલાલ ઉજમશી — ૩૦૧

મોરબી

૧ દોશી માણેકચંદ સુંદરજી — ૩૫૧

મોમ્બાસા

૧ શ્રીયુત નાથલાલ ડી. મહેતા — ૨૫૧
૨ શાહ દેવરાજ પેથરાજ — ૨૫૦

મહેસાણા

૧ શાહ પદમશી સુરચંદના સ્મરણાર્થે હ. શીવલાલ પદમશી — ૨૫૧

યાદગીરી

૧ શેઠ બાદરમલજી સુરજમલજી બેંકર્સ — ૨૫૦

રતલામ

૧ અનેક સદ્ગૃહસ્થો તરફથી હ. શ્રીમાન કેશરીમલજી ક્ર
(શ્રી દેવચંદ મુનિશ્રીના ઉપદેશથી) ૨૫૧

રાણપુર

૧ શ્રીમતી માતુશ્રી અમરતબાઈના સ્મરણાર્થે
હ. ડૉ. નરોત્તમદાસ ચુનીલાલ કાપડીઆ ૨૫૧

૨ સ્વ. પિતાશ્રી લહેરાભાઈ ખીમજીના સ્મરણાર્થે
હ. શેઠ કાળીદાસ લહેરાભાઈ વસાણી ૩૦૧

રાણીવાડા

૧ શેઠ જવાનમલજી નમીચંદજી હા. બાબુ ઈંદ્રમલજી ૩૧

રાયચુર

૧ સ્વ. માતુશ્રી મોંઘીબાઈના સ્મરણાર્થે

હ. શાહ ધીરજલાલ ભુખણચંદ વઢવાણવાળા ૫૫૧
૨ હાકમચંદજી ચાંદમલજી સઘેતી ૨૫૧

રાજકોટ

૧ વાડીલાલ ડાઈંગ પ્રિન્ટીંગ વર્કસ ૪
૨ શેઠ રતીલાલ ન્યાલચંદ શીતળીયા ૨૫૧
૩ શેઠ મનુભાઈ મુળચંદ (એન્જીનીયર સાહેબ) ૨૫૧
૪ શેઠ રતિલાલ પ્રેમચંદ તેમનાં ધર્મપત્નીના વર્ષીતપ પ્રસંગે ૨૫૧
૫ શેઠ પ્રભાશમ વીરૂજી ૨૫૧
૬ બેન સમુબાળા નોતમલાલ જસાણી (વર્ષીતપની ખુશાલી) ૨૫૧
૭ મોદી સૌભાગ્યચંદ મોતીચંદ ૨૫૧
૮ જશાણી શીમજી વેલજી તરફથી તેમનાં ધર્મપત્ની અ. સૌ.
અમરતબેનના વર્ષીતપ નિમિત્તે ૨૫૧

૯ દોશી મોતીચંદ ધારશીભાઇ (રીટાયર્ડ એકઝીકયુટીવ એન્જીનીયર) ૨૫૧
૧૦ કામદાર ચંદુલાલ જીવરાજ (ધ્રાંગધ્રાવાળા) ૨૫૦
૧૧ હેમાણી વેલાભાઇ સવચંદ ૨૫૧
૧૨ દફતરી પ્રભુલાલ ન્યાલચંદ ૨૫૧
૧૩ સ્વ. મહેતા દેવચંદ પુરૂષોતમના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્ની
હેમકુંવરબાઈ તરફથી હ. જયંતીલાલ દેવચંદ મહેતા ૨૫૧
૧૪ પારેખ શીવલાલ જુઆભાઈ મોમ્બાસાવાળા હ. અ. સૌ. કંચનબેન ૨૫૨

રાપર

૧ પૂજ્ય વાલજીભાઇ ન્યાલચંદભાઈ ૨૫૧

રામપુરા

૧ શેઠ તેજમલજી મનોહરલાલજી બેંકર ૩૫૧

રાવટી

૧ શેઠ મીયાચંદજી જુહારમલજી કટારિયા ૩૫૧

લખતર

૧ શાહ રાયચંદ ઠાકરશીના સ્મરણાર્થે હ. શાંતિલાલ રાયચંદ શાહ ૨૫૧
૨ ભાવસાર હરજીવનદાસના સ્મરણાર્થે
હ. ત્રીભોવનદાસ હરજીવનદાસ ૨૫૧
૩ શાહ તલકશી હીરાચંદના સ્મરણાર્થે
હ. ભાઇ અમૃતલાલ તલકશી ૨૫૧
૪ શાહ ચુનીલાલ માણેકચંદ ૨૫૧
૫ શાહ જાદવજી ઓઘડભાઈના સ્મરણાર્થે હ. શાંતિલાલ જાદવજી ૨૫૧
૬ દોશી ઠાકરશી ગુલાબચંદના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્ની
સમરતબેન તરફથી હ. જયંતિલાલ ઠાકરશી ૨૫૧

લાલપુર

૧ નેમચંદ સવજી મોદી હ. ભાઇ મગનલાલ ૨૫૧
૨ શેઠ મુલચંદ પોપટલાલ હ. મણીલાલ તથા જેસીંગભાઇ ૨૫૧

લાખેરી

૧ માસ્તર જેઠાલાલ મોનજીભાઈ હ. અમૃતલાલ જેઠાલાલ
(સીવીલ એન્જીનીયર સાહેબ) ૨૫૧

લાકડીયા

૧ શ્રી લાકડીયા સ્થા. જૈન સંઘ હ. શાહ રતનસી કરમણ ૨૫૧

લીંબડી (સૌરાષ્ટ્ર)

૧ શાહ મનુભાઈ ગુલાબચંદ ૨૫૧

લીમડી [પંચમહાલ]

૧ શાહ કુંવરજી ગુલાબચંદ ૨૫૧
૨ છાજેડ પારસીરામ ગુલાબચંદ ૨૫૧ા=
૩ શેઠ વીરચંદ પન્નાલાલજી કલ્યાણચંદ ૨૫૧
૪ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હ. શાહ શાંતીલાલ ગુલાબચંદ ૩૫૧

લોનાવાલા

૧ શેઠ ધનરાજજી મુલચંદજી મુથા ૨૫૧

લુધીયાના

૧ બાબુ રાજેન્દ્રકુમાર જૈન સીલ્કીવાળા ૨૫૧

વઢવાણ શહેર

૧ શેઠ દીલીપકુમાર સવાઈલાલ ઠે. શાહ સવાઈલાલ ત્રંબકલાલ ૨૫૧
૨ કામદાર મગનલાલ મોહનલાલ હ. રતીલાલ મગનલાલ ૨૫૧
૩ સંઘવી મુળચંદ ભૈયરભાઈ હ. જીવણલાલ બકુલદાસ ૨૫૧
૪ શેઠ કાંતિલાલ નાગરદાસ ૨૫૧
૫ વોરા ચત્રભુજ મગનલાલ ૨૫૧
૬ સંઘવી શીવલાલ હીમજીભાઈ ૨૫૧
૭ શાહ દેવશીભાઈ દેવકરણ ૨૫૧
૮ વોરા ઓઘાભાઈ લાલચંદ સ્થા. જૈન સંઘ
હ. વોરા નાનચંદ શીવલાલ ૨૫૧
૯ વોરા ધનજીભાઈ લાલચંદ સ્થા. જૈન સંઘ
હ. વોરા પાનાચંદ ઓઘડદાસ ૨૫૧
૧૦ દોશી વીરચંદ સુરચંદ હા. દોશી નાનચંદ ઉજમશી ૨૫૧
૧૧ સ્વ. વોરા મણીલાલ મગનલાલ તથા વોરા [illegible] મણીલાલ ૨૫૧
૧૨ શાહ વાડીલાલ દેવજીભાઈ ૨૫૧
૧૩ કામદાર મોરધનદાસ મગનલાલનાં ધર્મપત્ની
અ. સૌ. કમળાબેન રંજનવાળા ૨૫૧
૧૪ શ્રી વૃજલાલ સુખલાલ ૨૫૧

વડોદરા

૧ કામદાર કેશવલાલ હિંમતરામ પ્રોફેસર ૧૫૧

૨ વકીલ મણીલાલ કેશવલાલ શાહ ૨૫૧
૩ સ્વ. પિતાશ્રી ફકીરચંદ પુંજાભાઈના સ્મરણાર્થે
હા. શાહ રમણુલાલ ફકીરચંદ ૨૫૧

વડીયા

૧ શેઠ ભવાનભાઇ કાળાભાઈ પંચમીયા ૨૫૧

વલસાડ

૧ શાહ ખીમચંદ મુલજીભાઇ ૨૫૧

વણી

૧ મહેતા નાનાલાલ છગનલાલના ધર્મપત્ની સ્વ. ચંચળબેન તથા
પુરીબેનના સ્મરણાર્થે હા. મનહરલાલ નનાલાલ મહેતા ૨૫૧

વટામણ

૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. પટેલ ડાયાભાઈ હલુભાઇ ૨૫૧

વડગાંવ

૧ શેઠ માણેકચંદજી રાજમલજી બાફણા ૨૫૧

વાંકાનેર

૧ ખંઢેરીયા કાંતીલાલ ત્રંબકનાલ ૨૫૧
૨ દફતરી ચુનીલાલ પોપટલાલ મોરબીવાળા
હા પ્રાણુલાલ ચુનીલાલ દફતરી ૨૫૧

વીંછીયા

૧ શ્રી સ્થા જૈન સંઘ હા. અજમેરા રાયચંદ વ્રજપાળ ૨૫૧

વીરમગામ

૧ માસ્તર વીઠલભાઇ મોદી ૨૫૧
૨ શાહ નાગરદાસ માણેકચંદ ૨૫૧
૩ શાહ મણીલાલ જીવણલાલ શાહપુરવાળા ૨૫૧
૪ શાહ અમુલખ નાગરદાસનાં ધર્મપત્ની અ. સૌ. બેન લીલાવતીના
વર્ષીતપ નિમિત્તે હા શાહ કાંતિલાલ નાગરદાસ ૩૦૦
૫ સ્વ. શેઠ ઉજમશી નાનચંદના સ્મરણાર્થે હા. ચુનીલાલ નાનચંદ ૨૫૧
૬ સ્વ. શેઠ મણીલાલ લક્ષ્મીચંદ બારાઘોડાવાળાના સ્મરણાર્થે
તેમના પુત્રો તરફથી હ. ખીમચંદભાઇ ૨૫૧
૭ સ્વ શેઠ હરિલાલ પ્રભુદાસના સ્મરણાર્થે હા. અનુભાઈ ૨૫૧

લીંબડી (સૌરાષ્ટ્ર)

૧ શાહ મણુભાઈ ગુલાબચંદ ૨૫૧

લીમડી [પંચમહાલ]

૧ શાહ કુંવરજી ગુલાબચંદ ૨૫૧
૨ છાજેડ વાસીરામ ગુલાબચંદ ૨૫૧ાા
૩ શેઠ વીરચંદ પન્નાલાલજી કરણાવટ ૨૫૧
૪ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હ. શાહ શાંતીલાલ ગુલાબચંદ ૩૫૧

લોનાવાલા

૧ શેઠ ધનરાજજી મુલચંદજી મુથા ૨૫૧

લુધીયાના

૧ બાબુ રાજેન્દ્રકુમાર જૈન દીલ્હીવાળા ૨૫૧

વઢવાણ શહેર

૧ શેઠ દીલીપકુમાર સવાઈલાલ ઠે. શાહ સવાઈલાલ ત્રંબકલાલ ૨૫૧
૨ કામદાર મગનલાલ મોહનદાસ હ. રવીલાલ મગનલાલ ૨૫૧
૩ સંઘવી મુળચંદ મિસરભાઈ હ. જીવણલાલ મોહનદાસ ૨૫૧
૪ શેઠ કાંતિલાલ નાગરદાસ ૨૫૧
૫ વોરા ચત્રભુજ મગનલાલ ૨૫૧
૬ સંઘવી શીવલાલ હામજીભાઈ ૨૫૧
૭ શાહ દેવશીભાઈ દેવકરણ ૨૫૧
૮ વોરા ડોસાભાઈ લાલચંદ સ્થા. જૈન સંઘ
  હ. વોરા નાનચંદ શીવલાલ ૨૫૧
૯ વોરા ધનજીભાઈ લાલચંદ સ્થા. જૈન સંઘ
  હ. વોરા પાનાચંદ ગોરધનદાસ ૨૫૧
૧૦ દોશી વીરચંદ સુરચંદ હા. દોશી નાનચંદ ઉજમશી ૨૫૧
૧૧ સ્વ. વોરા મણીલાલ મગનલાલ તથા વોરા ચત્રભુજ મણીલાલ ૨૫૧
૧૨ શાહ વાડીલાલ દેવજીભાઈ ૨૫૧
૧૩ કામદાર ગોરધનદાસ મગનલાલનાં ધર્મપત્ની
  અ. સૌ. કમળાબેન રંગુનવાળા ૨૫૧
૧૪ શ્રી વૃજલાલ સુખલાલ ૨૫૧

વડોદરા

૧ કામદાર કેશવલાલ હિંમતરામ પ્રોફેસર ૨૫૧

સાણંદ

૧ શાહ હીરાચંદ છગનલાલ હ. શાહ ચીમનલાલ હીરાચંદ ૩૦૧
૨ અ. સૌ. ચંપાબેન હા. દોશી જીવરાજ લાલચંદ ૨૫૧
૩ પટેલ મહાસુખલાલ ડોસાભાઇ ૨૫૧
૪ શાહ સાંકરચંદ કાનજીભાઇ ૨૫૧
૫ પુરીબેન ચીમનલાલ કલ્યાણજી સંઘવી લીંબડીવાળાના સ્મરણાર્થે
હા. વાડીલાલ મોહનલાલ કોઠારી ૨૫૧
૬ પારેખ નેમચંદ મોતીચંદ ઝુળીવાળાના સ્મરણાર્થે ૨૫૧
હા. પારેખ ભીખાલાલ નેમચંદ
૭ સંઘવી નારણદાસ ધરમશીના સ્મરણાર્થે હા. જયંતિલાલ નારણદાસ ૨૫૧
૮ શાહ કસ્તુરચંદ હ હરજીવનદાસ
હા. ડૉ માણેકલાલ કસ્તુરચંદ શાહ
૯ શેઠ મોહનલાલ માણેકચંદ ગાંધી ચુડાવાળા તરફથી
તેમના ધર્મપત્ની મંછાબેન લલ્લુભાઈના સ્મરણાર્થે ૩૦૧
૧૦ સંઘવી કાન્તિલાલ મરખચંદ ૩૦૧
૧૧ શાહ ભીખાલાલ નાગરદાસ ૨૫૧

સાલબની

૧ દોશી ચુનીલાલ ફુલચંદ ૨૫૦

સાદડી

૧ શેઠ દેવરાજજી જીતમલજી પુનનીયા ૨૫૧

સાસવડ

૧ ચંદનમલજી મુથાનાં ધર્મપત્ની અ. સૌ. રંભુબાઇ મુથા તરફથી
હ. અમરચંદજી મુથા ૨૫૧

સિંગાપુર

૧ દોશી વનેચંદ વછરાજ ૨૫૧

સુરત

૧ શ્રી સ્થા જૈન સંઘ હા. શાહ રતિલાલ લલ્લુભાઇ ૨૫૧
૨ શ્રી કલ્યાણચંદ માણેકચંદ હડાલાવાળા ૨૫૧
૩ શ્રી હરીપુરા છકોટી સ્થા જૈન સંઘ હા. બાબુલાલ છોટાલાલ ૨૫૧

સુરેન્દ્રનગર

૧ શેઠ ચાપશીભાઈ સુખલાલ ૨૫૧
૨ ભાવસાર ચુનીલાલ પ્રેમચંદ ૨૫૧

૮ સંઘવી જેચંદભાઈ નારણદાસ ૨૫૧
૯ સ્વ. શાહ વેલશીભાઈ ખુશાલચંદ ક્લાસમંડવાળાના સ્મરણાર્થે
હ. ધીમનલાલભાઈ ૨૫૧
૧૦ પારેખ મણીલાલ ગોકળદાસ લાઠીવાળા (મોટીબેનના સ્મરણાર્થે) ૨૫૧
૧૧ શાહ નારણદાસ નાનજીભાઇના પુત્ર વાડીલાલભાઈના ધર્મપત્ની
અ. સૌ નારંગીબેનના વર્ષીતપ નિમિત્તે હ. શાંતિનાથ નારણદાસ ૨૫૧
૧૨ સ્વ. છગનલાલ ગોકળદાસના સ્મરણાર્થે તેમની ધર્મપત્ની
કમળાબેન તરફથી હ. મંજુલાકુમારી ૨૫૧
૧૩ શ્રી સ્થા. જૈન શ્રાવિકા સંઘ હ. રંભાબેન વાડીલાલ ૨૫૧
૧૪ સ્વ ત્રિભોવનદાસ દેવચંદ તથા સ્વ. ચંચળબેનના સ્મરણાર્થે
હ. ડૉ હિંમતલાલ સુખલાલ ૨૫૧
૧૫ શાહ ગુલાબચંદ કાનજીભાઈ હ. શાહ નાગરદાસ ઓધવભાઈ ૨૫૧
૧૬ શેઠ મોહનલાલ પિતાંબરદાસ હ. ભાઈ કેશવલાલ તથા મનસુખલાલ ૨૫૧
૧૭ શ્રીમતી હીરાબેન નથુભાઈના વર્ષીતપ નિમિત્તે
હ. નથુભાઈ નાનચંદ શાહ ૩૦૧
૧૮ શેઠ મણીલાલ શીવલાલ ૨૫૧
૧૯ સ્વ. મણીબાઇ પરસોત્તમદાસ સુંદરજીના સ્મરણાર્થે
હ. સાકરચંદ પરસોતમદાસ શાહ ૨૫૧
૨૦ સ્વ. મોહનદાસ ગુલાબભાઈના સ્મરણાર્થે હ. તેમનાં ધર્મપત્ની
નાથીબાઈ તરફથી હ. ચંદુલાલ તથા શાંતીલાલ ૨૫૧

વીજયનગર

૧ શ્રી વર્ધમાન શ્વે. સ્થા. જૈન શ્રાવક સંઘ
હ. છોટુમલ અજિતસિંહ ૨૫૧

વેરાવળ

૧ શાહ કેશવલાલ જેચંદભાઈ ૨૫૧
૨ શાહ ખીમચંદ સોભાગચંદ ૨૫૧
૩ સ્વ શેઠ મકનજી જેચંદભાઇના સ્મરણાર્થે તેમના ધર્મપત્ની
બાઈ કુંવરબાઈ તરફથી હ. શ્રી ગીરજાલાલ મકનજી ૨૫૧
૪ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હ. શાહ ગોકળચંદ કરશનજી ૨૫૧
૫ શાહ હરિકિશનદાસ ફુલચંદ માનપુરવાળા ૨૫૧

સરા

૧ શ્રી સરા સ્થા. જૈન સંઘ હ. દોશી પાનાચંદ સોમચંદ ૨૫૧

॥ श्रीवीतरागाय नमः ॥

'जैनाचार्य'-जैनधर्मदिवाकर'-पूज्यश्री-घासीलालव्रति-विरचितया

भावबोधिन्याख्यया व्याख्यया समलङ्कृतम्—

श्री-समवायाङ्गसूत्रम् ॥

मङ्गलाचरणम् ।

स्याद्वादसार्थैश्च नयैः प्रमाणै-
जीवादिभावप्रतिबोधको यः ।
यः शोभतेऽनन्तचतुष्टयैश्च,
वन्दे मुनीन्द्रं तमहं जिनेन्द्रम् ॥ १॥

कमलकोमलमञ्जुपदद्विकं
विमलबोधदबोधविबोधकम् ।
मुखलसद्वरदोरकवस्त्रिकं,
गुरुवर प्रणमामि विशोधकम् ॥ २॥

समवायाङ्गसूत्र का हिन्दी अनुवाद प्रारंभ—

मंगलाचरण—

जिन जिनेन्द्रदेव ने स्याद्वादसिद्धान्त के सार्थभूत नयों और प्रमाणों से जीवादि पदार्थों के वास्तविक स्वरूप का प्रतिपादन कर उन्हें समझाया है और जो स्वयं अनंत चतुष्टयों से विराजमान हैं, ऐसे उन मुनीन्द्र जिनेन्द्र को मैं नमस्कार करता हूं ॥१॥

जिनके दोनों मनोहर चरण, कमल के जैसे कोमल हैं, विमलबोधि को प्रदान करने वाले बोध को जो जगाने वाले है, तथा मुख पर जिनके सदोरकमुखवस्त्रिका सदा शोभित होती रहती है तथा और जो अपनी और पर की आत्मा के विशोधक हैं ऐसे गुरुवर को मै प्रणाम करता हूं ॥२॥

સમવાયાંગ સૂત્રનો ગુજરાતી અનુવાદ પ્રારંભ—

મંગલાચરણ—

જે જિનેન્દ્ર દેવે સ્યાદ્વાદનાસિદ્ધાંતના સહાયક નયો અને પ્રમાણો દ્વારા જીવાદિ પદાર્થોના વાસ્તવિક સ્વરૂપનુ પ્રતિપાદન કરીને તેમને સમજાવ્યા છે, અને જે પોતે અનંત ચતુષ્ટયોથી વિરાજમાન છે, એવાં એ મુનીન્દ્ર જિનેન્દ્રને હું નમન કરૂં છું ॥૧॥

જેમના બન્ને મનોહર ચરણ, કમલ સમાન કોમળ છે, વિમલ જ્ઞાન અને બોધના જે દેનાર છે, જેના મુખ પર દોરા સહિત મુહપત્તી શોભે છે અને જે પોતાના તથા અન્યના આત્માના વિશોધક (શુદ્ધ કરનાર) છે, એવા ગુરુવરને હુ પ્રણામ કરૂં છું ॥૨॥

૩ સ્વ. કેશવલાલ મુળજીભાઈની ધર્મપત્ની અમરતબાઈના
૪ સ્મરણાર્થે હા, ભાઈલાલ કેશવલાલ શાહ
૫ શાહ ન્યાલચંદ હેમચંદ ૨૫૧
૬ શાહ વાડીલાલ હરખચંદ ૧૫૧
શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ ૩૦૧

સુવઈ

૧ સાવળા શામજી હીરજી તરફથી સદાનંદી જૈન મુનિશ્રી છોટાલાલજી મહારાજના ઉપદેશથી સુવઈ સ્થા. જૈન સંઘ જ્ઞાનભંડારને ભેટ ૧૫૧

સજેલી

૧ શાહ હુકમાજી ગુલાબચંદભાઈ ૧૫૧
૨ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. શાહ પ્રેમચંદ હઠીચંદ ૧૫૧

સોજત

૧ અ. સૌ. ધીસાબેન લાલચંદ મહેતા (ફતેહનગર સંઘને ભેટ) ૩૫૧

હારીજ

૧ શાહ અમુલખ મુળજીભાઈ હા. મહેશચંદ્ર અમુલખભાઈ ૧૦૧
૨ સ્વ. બેન ચંદ્રકાંતાના સ્મરણાર્થે હા. શાહ અમુલખ મુળજીભાઈ [illegible]

હાટીના માળીયા

૧ શેઠ ગોપાલજી મીઠાભાઈ ૨૫૦
૨ શ્રીમતી આનંદગૌરી ભગવાનદાસના સ્મરણાર્થે
હા, તેમનાં નાનાબેન અ. સૌ. મંજુલાબેન ભગવાનદાસ ૧૫૧

*

તા. ૩૧—૧૨—૬૧ સુધીના મેમ્બરોની સંખ્યા

૧૭ આદ્ય મુરબ્બીશ્રી
૨૫ મુરબ્બીશ્રી
૧૨૩ સહાયક મેમ્બરો
૫૮૪ લાઈફ મેમ્બરો
૫૪ બીજા કલાસના જુના મેમ્બરો

૮૦૩

દરેક દાતાઓનો સમિતિ તરફથી આભાર માનું છું,

લી. સેવક,

રાજકોટ તા. ૩૧—૧૨—૬૧

ઠાકરચંદ ભાઈચંદ શેઠ
મંત્રી

क्रमसमाभिरतस्तज्जिज्ञासुभिस्तत्र द्रष्टव्यम्। जीवाजीवादिपदार्थसमुदायस्य संख्यानमस्मिन्नङ्गे प्रतिपाद्यतया वर्तते, अतएवास्य समवायाङ्गमिति संज्ञाऽन्वर्था भवति।

तत्र-किल श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य श्री वर्धमानस्वामिनः पञ्चमो गणधरः श्री सुधर्मास्वामी श्री जम्बूनामानं स्वान्तेवासिनं समवायाङ्गस्यार्थं विवक्षुः स्वधर्माचार्यस्य तस्य भगवतो महावीरस्य महिमानं प्रदर्शयन् केवलालोकसाक्षात्कृतलोकालोकस्वरूपस्य वीतरागस्य वचनमनुसृत्य प्रवृत्तस्य स्वकीयवचनस्य प्रामाण्यं श्रद्धेयत्वं चापि समुद्भावयन्निदमाद्यं सूत्रमाह—

मूलम्—सुयं मे आउसं तेणं भगवया एवमक्खायं ॥ सू. १॥

टीका—'आउसं' आयुष्मन्! हे चिरजीविन! जम्बूः', आयुष्मन्निति पदं शिष्यस्य जम्बूस्वामिनः कोमलवचनामन्त्रणं विनयित्वबोधनार्थम्। किं च तस्याशेषश्रुतज्ञानो-

---

में मैंने किया है। अतः जिज्ञासु इस विषय को उसमें से जान सकते हैं। तात्पर्य कहने का यह है कि जीव अजीव आदि पदार्थ समूह की गणना इस अंग में प्रतिपाद्यरूप से करने में आई है, इसलिये इसकी समवाय यह संज्ञा सार्थक है।

श्रमण भगवान् महावीर श्री वर्धमान स्वामी के, पंचम गणधर श्री सुधर्मास्वामी, अपने शिष्य जंबूस्वामी के प्रति, समवायांग के अर्थ को कहने की इच्छा से, निज धर्माचार्य उन भगवान् महावीर की महिमा को दिखलाते हुए, अपने वचन में कि जो, केवलज्ञान रूप आलोक (प्रकाश) से लोक और अलोक के स्वरूप को साक्षात् करने वाले ऐसे वीतराग प्रभु के वचन के अनुसार ही प्रवृत्त हुए अपने वचन में प्रमाणता और श्रद्धेयता प्रकट करने के अभिप्राय से इस प्रथम सूत्र को कहते हैं—'सुयं मे इत्यादि।

સંજીવની ટીકામાં મેં કરેલ છે-તો જિજ્ઞાસુ તે વિષયને ત્યાંથી જાણી શકે છે તાત્પર્ય એ જ છે કે આ અંગમાં જીવ, અજીવ આદિ પદાર્થસમૂહની ગણના પ્રતિપાદ્યરૂપે કરવામાં આવી છે તેથી તેનો 'સમવાય' એ સંજ્ઞા સાર્થક છે

શ્રમણ ભગવાન મહાવીર શ્રી વર્ધમાન સ્વામીના પાંચમા ગણધર શ્રી, સુધર્માસ્વામી, પોતાના શિષ્ય જંબૂસ્વામીને, સમવાયાંગનો અર્થ સમજાવવાની ઈચ્છાથી, પોતાના ધર્માચાર્ય એવા તે મહાવીર પ્રભુનો મહિમા બતાવતા, કેવળજ્ઞાનરૂપ પ્રકાશથી લોક અને અલોકનું સ્વરૂપ પ્રત્યક્ષ જોઈ શકનારા વીતરાગ પ્રભુના વચનાનુસાર જ પ્રવૃત્ત થયેલ પોતાના વચનોમાં પ્રમાણતા અને શ્રદ્ધેયતા દર્શાવવાના હેતુથી આ પ્રથમ સૂત્ર કહે છે—"સુયં મે" ઇત્યાદિ।

समवायाङ्गसूत्रस्य, वृत्तिं सरलभाषया ।
घासीलालेन मुनिना, क्रियते भावबोधिनी ॥ ३॥

स्थानाङ्गाख्यतृतीयाङ्गानन्तरं समवायनामकमिदं चतुर्थमङ्गं क्रमप्राप्तमेवास्ति। अथ च समवायाङ्गशब्दार्थः ? उच्यते—सम्=सम्यक्, अव=स्वरूपमर्यादया, अयः=अयनं—परिच्छेदः संख्यानं जीवाजीवादिपदार्थसमुदायस्य यत्र स समवायः । यद्वा —समवयन्ति संमिलन्ति जीवादयो भावा विषयतया—प्रतिपाद्यतया यत्र स समवाय इति। समवाय एवाङ्ग—समवायाङ्गम्। इदं हि प्रवचनरूपस्य पुरुषस्य वामजङ्घास्थानीयं भवति। प्रवचनाङ्गानां सविस्तरवर्णनमुपासकदशाङ्गसूत्रव्याख्यायां

मैं मुनि घासीलाल समवायांग सूत्र के ऊपर सरल भाषा में भावबोधिनी नामकी वृत्ति रचता हूं ॥३॥

स्थानाङ्ग नामक तृतीय अंग के अनन्तर समवायांग नाम का यह चौथा अंग क्रमप्राप्त है। इस समवायांग शब्द का वाच्यार्थ क्या है? इस प्रश्न का उत्तर इस प्रकार है समवाय पद में 'सम्' 'अव' 'अय' ऐसे ये तीन शब्द हैं सो 'सम्' का अर्थ सम्यक् 'अव' का अर्थ स्वरूप मर्यादा और 'अय' का अर्थ परिच्छेद–संख्या है। इससे यह तात्पर्य निकलता है कि इस शास्त्र में जीव अजीव आदि पदार्थ समूह की अच्छी तरह से उन के स्वरूप प्रदर्शन पूर्वक संख्या–गणना की गई है। अथवा जीवादिक पदार्थों का इसमें प्रतिपादन किया गया है। इसलिये प्रतिपाद्य रूप से ये सब इसमें एकत्रित हुए हैं। यह समवायरूप अंग प्रवचनरूप पुरुष की वामजंघा के स्थानापन्न है। प्रवचनरूप पुरुष के समस्त अंगों का सविस्तरवर्णन उपासकदशांग सूत्र की अगारधर्म संजीवनी टीका

હું મુનિ ઘાસીલાલ "સમવાયાંગ સૂત્ર" ઉપર સરળ ભાષામાં "ભાવબોધિની" નામની વૃત્તિ–ટીકા રચું છું ॥૩॥

અનુક્રમે લેતા, સ્થાનાંગ નામના ત્રીજા અંગ પછી સમવાયાંગ નામનું આ ચોથું અંગ આવે છે. આ સમવાયાંગ શબ્દનો વાચ્યાર્થ શો છે? આ પ્રશ્નનો જવાબ આ પ્રમાણે છે–

સમવાય પદમાં 'સમ્' 'અવ' અને 'અય' એ ત્રણ શબ્દો છે 'સમ્' નો અર્થ સમ્યક્ 'અવ' નો અર્થ સ્વરૂપમર્યાદા અને 'અય' નો અર્થ પરિચ્છેદ–સંખ્યા છે તેનો ભાવાર્થ એ છે કે આ શાસ્ત્રમાં જીવ, અજીવ આદિ પદાર્થસમૂહની સારી રીતે, તેમના સ્વરૂપ પ્રદર્શન પૂર્વક સંખ્યા–ગણના કરવામાં આવેલ છે અથવા આ શાસ્ત્રમાં જીવાદિક પદાર્થનું પ્રતિપાદન કરાયું છે તેથી તે સૌ પ્રતિપાદ્ય રૂપે આમાં એકત્રિત થયાં છે આ સમવાયરૂપ અંગ પ્રવચન રૂપ પુરુષની ડાબી જંઘાના જેવું છે પ્રવચન રૂપ પુરુષનાં સમસ્ત અંગોનું સવિસ્તરવર્ણન ઉપાસક દશાંગ સૂત્રની અગારધર્મ

सृतवचनश्रवणं च नोपपद्यते । भगवया भगवता=भग.–ज्ञान सकलपदार्थविषयकम् (१), माहात्म्यम्=अनुपममहनीयमहिमसम्पन्नत्वम् (२), यशः–विविधानुकूलप्रतिकूलपरीषहोपसर्गसहनसमुद्भूता जगद्रक्षणप्रज्ञासमुत्था वा कीर्तिः (३) वैराग्यं=सर्वथा कामभोगाभिलाषराहित्यम्, यद्वा- क्रोधादिकषायनिग्रहलक्षणम् (४), मुक्ति –सकलकर्मक्षयलक्षणो मोक्षः (५), रूपं–सुरासुरनरनिकरहृदयहारि सौन्दर्यम् (६), वीर्यम्–अन्तरायान्तजन्यमनन्तसामर्थ्यम् (७), श्रीः–घनघातिकर्मपटलविघटनजनितानन्तचतुष्टयलक्ष्मीः (८), धर्मः अपवर्गद्वारकपाटोद्घाटनसाधनं श्रुतचारित्रलक्षणम्

से यह बात अपने आप लभ्य हो जाती है कि मैंने गुरु के समीप निवास किया है। क्यों कि गुरु के पासमें निवास किये विना उनके चरणकमलों का स्पर्शपूर्वक अभिवादन करना और उनके मुखारविन्द से निकले हुए वचनो का सुनना बन नहीं सकता है। 'भगवान्' पद में जो भग शब्द है उसके दश अर्थ हैं उनसे युक्त को भगवान् कहते हैं जैसे –ज्ञान–सकल पदार्थो को विषय करने वाले ज्ञान से१, माहात्म्य–अनुपम महनीय महिमा से२, यश-विविध अनुकूल एवं प्रतिकूल परीषह और उपसर्गों को सहन करने से उत्पन्न हुई कीर्ति से, अथवा जगत को रक्षण करने वाली प्रज्ञा से उत्पन्न हुई कीर्ति से३, वैराग्य–सर्वथा कामभोगों की अभिलाषा के त्याग से, अथवा क्रोधादिकषायों के निग्रह से४, मुक्ति–सकलकर्मक्षयरूप मुक्ति से५, रूप–सुर और असुरों के हृदय को हरण करने वाले सौन्दर्य से६, वीर्य–अन्तरायकर्म के अन्त होने से जनित अनन्त शक्ति से७, श्री-घनघातिक कर्मों के सर्वथा क्षय से जन्य अनन्तचतुष्टयरूप अन्तरंग लक्ष्मी से८ धर्म–मोक्ष के कपाट को उद्घाटन करने में साधन श्रुत

છે ગુરુના પાસે નિવાસ કર્યા વિના, તેમના ચરણકમલના સ્પર્શપૂર્વકનુ અભિવાદન અને તેમના મુખારવિંદમાથી નિકળતા વચનોનુ શ્રવણ શકય બનતું નથી "भगवान्" પદમા જે 'भग' શબ્દ છે તેના દસ અર્થ છે, તે અર્થથી જે યુકત હોય ને ભગવાન્ કહેવાય છે તે દસ અર્થ નીચે પ્રમાણે છે [૧] ज्ञान–સઘળા પદાર્થોને વિષય કરનાર જ્ઞાન. [૨] "माहात्म्य"–અનુપમ મહનીય મહિમા [૩] यश–વિવિધ અનુકૂળ અને પ્રતિકૂળ પરીષહ અને ઉપસર્ગો સહન કરવાથી પ્રાપ્ત થયેલી કીર્તિ અથવા જગતનુ રક્ષણ કરનાર પ્રજ્ઞાથી ઉત્પન્ન થયેલી કીર્તિ [૪] "वैराग्य"–સર્વદા કામભોગોની ઇચ્છાનો ત્યાગ અથવા ક્રોધાદિ કષાયોનો નિગ્રહ [૫] "मुक्ति"–સકલ કર્મોના ક્ષયરૂપ મુક્તિ (૬) रूप-સુર અસુરોના હૃદયને હરનાર સૌન્દર્ય (૭) वीर्य–અન્તરાય કર્મનો નાશ થવાથી પેદા થયેલ અનંત શકિત (૮) श्री घनघातिक–કર્મોનો તદ્દન ક્ષય થવાથી પેદા થયેલ અનંત ચતુષ્ટયરૂપ અંતરંગ લક્ષ્મી (૯) धर्म-મોક્ષના દરવાજાના કમાડ

पदेशश्रवण–ग्रहणधारण–रत्नत्रयाराधन–मोक्षसाधनयोग्यतामाप्स्यथेमेतद्वचनम् । विनाऽऽयुषा श्रुतश्रवणादिमोक्षपर्यन्तसिद्धि र्न कस्यचित् सम्भवतीति भाव । एत द्वचनप्रभावादेव जम्बूस्वामी मोक्षपदं तस्मिन्नेव जन्मनि प्राप । श्रुतं=श्रवणवि षयीकृतं, 'मे' मया, साक्षाद्भगवन्मुखात् नतु परम्परया, यतो गणधराणामनन्तरागमो भवति । 'मयाश्रुतम्' इत्यनेन 'गुरुसमीपे निवसता मया' इत्यर्थ सुतरां सम्पद्यते । गुरुसमीपे निवासमन्तरेण हि गुरुचरणसरोजस्पर्शपूर्वकाभिवादनं तन्मुखारविन्दविनि

टीकार्थ–(आउसं) हे चिरजीविन् जम्बू! (मे) मैंने (सुय) सुना है (तेण भग वया एवमक्खायं) उन भगवान ने ऐसा कहा है। सूत्र में "आउसं" यह पद शिष्य जंबूस्वामी को कोमलवचन से आमन्त्रण करने के लिये प्रयुक्त किया गया है जो उनमें विनीतता प्रकट करता है। "आयुष्मन्" इस संबोधन पद से जो सुधर्मास्वामीने अपने अन्तेवासी जंबूस्वामी को संबोधित किया है उससे यह उनकी इच्छा उनके प्रति जाहिर होती है कि वे अशेष श्रुतज्ञान के उपदेश का श्रवण करने की, उसे ग्रहण करने की, धारण करने की रत्नत्रयको आराधन करने की और मोक्ष के साधने की योग्यता प्राप्त कर लेवें। क्यों कि बिना आयु के श्रुतश्रवणादि से लेकर मोक्षपर्यन्त की सिद्धि किसी भी जीव को संभवित नहिं होती है। इस वचन के प्रभावसे ही जम्बूस्वामी ने मोक्षपद उसी भव में प्राप्त कर लिया। "मैंने सुना है" इस वाक्य का तात्पर्य ऐसा है कि मैंने जो सुना है वह साक्षात् भगवान् के मुखसे ही सुना है परंपरा से नहीं, कारण गणधरों का आगम अनन्तर आगम होता है। मैंने सुना है" इस तरह के कथन

ટીકાર્થ–"आउसं" હે ચીરાયુ જંબૂ! "मे सुयं" સાંભળ્યુ છે "तेणं भगवया एवमक्खायं" તે ભગવાને આ પ્રમાણે કહ્યુ છે સૂત્રમાં "आउस" શિષ્ય જંબૂ સ્વામીને મૃદુવચનોથી સંબોધવાને વપરાયુ છે, જે તેમની નમ્રતા દર્શાવે છે "आयुष्मन्" આ સંબોધનથી સુધર્મા સ્વામીએ પોતાના અંતેવાસી જંબૂસ્વામીને સંબોધ્યા છે, તેથી તેમની એ ઇચ્છા પ્રગટ થાય છે કે તેઓ સમસ્ત શ્રુતજ્ઞાનના ઉપદેશને સાંભળવાની, તેને ગ્રહણ કરવાની, ધારણ કરવાની, રત્નત્રયનુ આરાધન કરવાની અને મોક્ષ સાધવાની યોગ્યતા પ્રાપ્ત કરે કારણકે આયુષ્ય વિના શ્રુતશ્રવણ આદિથી લઈને મોક્ષ સુધીની પ્રાપ્તિ કોઈ પણ જીવને માટે શક્ય નથી. આ વચનને પ્રભાવે જ જંબૂસ્વામીએ એજ ભવમાં મોક્ષપદ પ્રાપ્ત કરી લીધુ મે સાંભળ્યું છે" આ વાક્યનો ભાવાર્થ એ છે કે મે જે સાંભળ્યુ છે તે પ્રત્યક્ષ ભગવાનને મુખે સાંભળ્યું છે પરંપરાથી નહી કારણકે ગણધરોના આગમ અનંતર પછીના આગમ હોય છે "મે સાંભળ્યુ છે" આ પ્રકારના કથનથી એ વાત આપોઆપ સમજાય છે કે મે ગુરૂની પાસે નિવાસ કર્યો

स्तवचनश्रवणं च नोपपद्यते । भगवया भगवता=भग.-ज्ञानं सकलपदार्थविषयकम् (१), माहात्म्यम्=अनुपममहनीयमहिमसम्पन्नत्वम् (२), यशः-विविधानुकूलप्रतिकूलपरीषहोपसर्गसहनसमुद्भूता जगद्रक्षणप्रज्ञासमुत्था वा कीर्तिः (३) वैराग्यं=सर्वथा कामभोगाभिलापराहित्यम्, यद्वा- क्रोधादिकषायनिग्रहलक्षणम् (४), मुक्ति -सकलकर्मक्षयलक्षणो मोक्षः (५), रूपं-सुरासुरनरनिकरहृदयहारि सौन्दर्यम् (६), वीर्यम्-अन्तरायान्तजन्यमनन्तसामर्थ्यम् (७), श्रीः-घनघातिकर्मपटलविघटनजनितानन्तचतुष्टयलक्ष्मीः (८), धर्मः अपवर्गद्वारकपाटोद्घाटनसाधनं श्रुतचारित्रलक्षणम्

से यह बात अपने आप लभ्य हो जाती है कि मैंने गुरु के समीप निवास किया है। क्यों कि गुरु के पासमें निवास किये विना उनके चरणकमलों का स्पर्शपूर्वक अभिवादन करना और उनके मुखारविन्द से निकले हुए वचनों का सुनना बन नहीं सकता है। 'भगवान्' पद में जो भग शब्द है उसके दश अर्थ हैं उनसे युक्त को भगवान् कहते हैं जैसे -ज्ञान-सकल पदार्थों को विषय करने वाले ज्ञान से१, माहात्म्य-अनुपम महनीय महिमा से२, यश-विविध अनुकूल एव प्रतिकूल परीषह और उपसर्गों को सहन करने से उत्पन्न हुई कीर्ति से, अथवा जगत् को रक्षण करने वाली प्रज्ञा से उत्पन्न हुई कीर्ति से३, वैराग्य-सर्वथा कामभोगों की अभिलाषा के त्याग से, अथवा क्रोधादिकषायों के निग्रह से४, मुक्ति-सकलकर्मक्षयरूप मुक्ति से५, रूप-सुर और असुरों के हृदय को हरण करने वाले सौन्दर्य से६, वीर्य-अन्तरायकर्म के अन्त होने से जनित अनन्त शक्ति से७, श्री-घनघातिक कर्मों के सर्वथा क्षय से जन्य अनन्तचतुष्टयरूप अन्तरंग लक्ष्मी से८ धर्म-मोक्ष के कपाट को उद्घाटन करने में साधन भूत

છે ગુરુના પાસે નિવાસ કર્યા વિના, તેમના ચરણકમલના સ્પર્શપૂર્વકનુ અભિવાદન અને તેમના મુખારવિંદમાથી નિકળતા વચનોનુ શ્રવણ શકય બનતું નથી "भगवान्" પદમા જે 'भग' શબ્દ છે તેના દસ અર્થ છે, તે અર્થથી જે યુકત હોય ને ભગવાન્ કહેવાય છે તે દસ અર્થ નીચે પ્રમાણે છે [૧] ज्ञान-સઘળા પદાર્થોને વિષય કરનાર જ્ઞાન. [૨] "माहात्म्य"-અનુપમ મહનીય મહિમા [૩] यश-વિવિધ અનુકૂળ અને પ્રતિકૂળ પરીષહ અને ઉપસર્ગો સહન કરવાથી પ્રાપ્ત થયેલી કીર્તિ અથવા જગતનુ રક્ષણ કરનાર પ્રજ્ઞાથી ઉત્પન્ન થયેલી કીર્તિ [૪] "वैराग्य"-સર્વદા કામભોગોની ઇચ્છાનો ત્યાગ અથવા ક્રોધાદિ કષાયોનો નિગ્રહ [૫] "मुक्ति"-સકલ કર્મોના ક્ષયરૂપ મુક્તિ (૬) रूप-સુર અસુરોના હૃદયને હરનાર સૌંદર્ય (૭) वीर्य-અન્તરાય કર્મનો નાશ થવાથી પેદા થયેલ અનંત શક્તિ (૮) श्री घनघातिक-કર્મોનો તદ્દન ક્ષય થવાથી પેદા થયેલ અનંત ચતુષ્ટયરૂપ અંતરંગ લક્ષ્મી (૯) धर्म-મોક્ષના દરવાજાના કમાડ

(ए) ऐश्वर्य–त्रैलोक्याधिपत्य चास्यास्तीति भगवान् (१०), तेन भगवता–ज्ञानादियुक्तेन, 'तेणं' तेन तीर्थंकरेण वक्ष्यमाणार्थस्य तीर्थंकरभाषितत्वात् सम्बन्धनात्र तीर्थंकर परामर्शः। उक्तं च—

'अत्थं भासइ अरिहा, सुत्तं गंथंति गणहरा णिउणा॥" इत्यादि,

भगवतस्तीर्थंकरोपदिष्टमर्थरूपमागममुपाश्रित्य गणधरा गणधरामूत्ररूपमागम निबध्नन्तीत्यर्थः।

'एवं" वक्ष्यमाणप्रकारेण, 'अक्खायं' आख्यातं कथितं द्वादशपरिषत्सु।

भगवत्तीर्थंकरकथितार्थस्यानुसारतः वक्ष्यमाणं वाक्यं वदिष्यामीति

श्रुतचारित्ररूप धर्म सं०, ऐश्वर्य–तीन लोक के आधिपत्य से १० जो युक्त होते हैं वे भगवान कहे जाते हैं। तात्पर्य यह है कि भग शब्द के ये जो ज्ञानादिरूप दश अर्थ प्रकट किये गये हैं, भगवान उन समस्त अर्थों से संपन्न होते हैं। "तेणं" यह पद भगवान का विशेषण है जो इस बात को कहता है कि वे भगवान तीर्थंकर थे। जो भी विषय इस शास्त्र में कहा जायगा वह उन तीर्थंकर प्रभु–भगवान द्वारा भाषित ही कहा जायगा कहा भी है–"अत्थं भासइ अरिहा, सुत्तं गंथंति गणहरा णिउणा" इति। अर्थात्–सर्व प्रथम अर्हंत प्रभु ही अर्थरूप आगम की प्ररूपणा करते हैं और बाद में निपुण गणधर उस अर्थ को मूल सूत्ररूप में आगमरूप में-ग्रथित करते हैं। भगवान ने क्या कहा? यह कहते हैं–भगवान ने इस रूप से–वक्ष्यमाण प्रकार से–बारह प्रकार की परिषद में कहा है अतः उन भगवत् तीर्थंकर कथित अर्थ के अनुसार ही मैं वक्ष्यमाण–आगे कहे

ભોગવાના સાધનરૂપ શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ અને (૧૦) ઐશ્વર્ય ત્રણ લોકનું આધિપત્ય આ રીતે જ્ઞાન આદિ દશ ગુણોથી જે યુક્ત હોય છે તેમને ભગવાન કહે છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે 'ભગ' શબ્દના આ જે જ્ઞાનાદિરૂપ દશ અર્થ બતાવ્યા છે, એ બધા અર્થોથી ભગવાન યુક્ત હોય છે 'तेणं" આ પદ ભગવાનનું વિશેષણ છે જે એ વાત બતાવે છે કે ભગવાન તીર્થંકર હતા જે કોઈ વિષય આ શાસ્ત્રમાં કહેવામાં આવશે તે વિષય તીર્થંકર ભગવાન દ્વારા ભાષિત હશે. કહ્યું પણ છે–"अत्थं भासइ अरिहा, सुत्तं गंथंति गणहरा णिउणा" અરથ કે સૌથી પહેલાં અર્હંત પ્રભુ જ અર્થરૂપ આગમની પ્રરૂપણા કરે છે, અને ત્યાર બાદ નિપુણ ગણધરો તે અર્થને મૂળ–સૂત્રરૂપે–ગ્રંથિત કરે છે ભગવાને શું કહ્યું છે? આ પ્રશ્નના ઉત્તરરૂપે તેઓ કહે છે કે ભગવાન આ પ્રમાણે–નીચે દર્શાવ્યા પ્રમાણે–બાર પ્રકારની પરિષદોમાં કહેલ છે તે ત તીર્થંકર ભગવાને કહેલ અર્થ પ્રમાણે જ હું આગળ દર્શાવવામાં આવતા અર્થ

वाक्यार्थः। आगमोक्तार्थस्य काल्पनिकत्वाभावाद् द्रव्यार्थिकनयेनार्थरूपोऽयमागमोऽनादिरिति भावः।

एषा परम्परा परिपाटी वरीवर्ति सर्वेषां गणधराणाम्–यद् विनीतैः स्वस्वान्तेवासिभिर्मोक्षमार्गं सविनय पृष्टा गणधराः 'सुयं मे' इति वाक्य प्रथम वदन्ति। उक्तं च—

निपुणशिष्यगणैर्विनयान्वितै–
विमलभावयुतैः परिसेवितैः।
गणधरैरखिलैः प्रथम वचः,
खलु 'सुयं मे' इति प्रतिभाषितम् ॥सू० १॥

जाने वाला अर्थ कहूंगा। आगमोक्त अर्थ कल्पित नहीं होता है। वह तो तीर्थंकर परंपरा से जैसा भाषित होता हुआ चला आता है वैसा ही गणधर आदि द्वारा प्रकाशित किया जाता है–वे अपनी ओर से उस में कुछ भी परिवर्द्धन या परिवर्तन नहीं करते हैं। इसीलिये आगमोक्त अर्थ में काल्पनिकत्व का अभाव होने से वह अर्थरूप आगम द्रव्यार्थिक नय की अपेक्षा से अनादि माना जाता है। समस्त गणधरों की परंपरा से ऐसी ही परिपाटी चली जाती है कि जब विनीत अपने २ शिष्य उनसे मोक्षमार्ग को विनय के साथ पूछते हैं–तब वे उनसे सर्व प्रथम "सुय मे" इस प्रकार से कहते हैं! कहाभी है—

"निपुणशिष्यगणैर्विनयान्वितैः विमलभावयुतैः परिसेवितैः।
गणधरैरखिलैः प्रथम वचः–खलु 'सुय मे' इति प्रतिभाषितम्" ॥१॥

भावार्थ—इस सूत्र द्वारा पंचम गणधर श्री सुधर्मास्वामी अपने

કહીશ. આગમોક્ત અર્થ કલ્પિત હોતા નથી. તે તો તીર્થંકર પરંપરાથી જે પ્રમાણે કહેવાતો આવે છે એજ પ્રમાણે ગણધર આદિ દ્વારા પ્રકાશિત કરવામા આવે છે–તેઓ પોતાનું કઇ પણ તેમા ઉમેરતા નથી કે તેમા કઈ પણ પરિવર્તન કરતા નથી તેથી આગમોક્ત અર્થમા કાલ્પનિકપણાનો અભાવ હોવાથી તે અર્થરૂપ આગમ દ્રવ્યાર્થિક નયની અપેક્ષાએ અનાદિ મનાય છે સમસ્ત ગણધરોની પરંપરાથી એવી રૂઢિ ચલી આવે છે કે જ્યારે તેમના પોત પોતાના શિષ્યો તેમને મોક્ષમાર્ગ વિષે વિનયથી પૂછે ત્યારે તેઓ સૌથી પહેલા તેમને "સુયં મે" (મે તીર્થંકર પ્રભુ પાસે સાંભળ્યુ છે એ રીતે તેમના જવાબની શરૂઆત કરે છે કહ્યુ પણ છે—

"निपुणशिष्यगणैर्विनयान्वितैः, विमलभावयुतैः परिसेवितैः
गणधरैरखिलैः प्रथम वचः, खलु "सुयं मे" इति प्रतिभाषितम्" ॥१॥

ભાવાર્થ—આ સૂત્રમા પાચમા ગણધર શ્રી સુધર્માસ્વામી પોતાના શિષ્ય શ્રી

(९) ऐश्वर्य-लोकत्रयाधिपत्य चास्यास्तीति भगवान् (१०), तेन भगवता-ज्ञानादियुक्तेन, 'तेण' तेन तीर्थंकरेण वक्ष्यमाणार्थस्य तीर्थंकरभाषितत्वात् तच्छब्देनात्र तीर्थंकर परामर्शः। उक्तं च—

'अत्थं भासइ अरिहा, सुत्तं गंथति गणहरा णिउणा॥'' इत्यादि,

भगवत्तीर्थंकरोपदिष्टमर्थरूपमागममुपादाय मेधाविनो गणधरा मूलरूपमागम निबध्नन्तीत्यर्थः।

''एवं'' वक्ष्यमाणप्रकारेण, 'अक्खायं' आख्यातं कथितं द्वादशपरिषत्सु। भगवत्तीर्थंकरकथितार्थजातमेवानुसृत्य वक्ष्यमाणं वाक्यं वदिष्यामीति

श्रुतचारित्ररूप धर्म से ९, ऐश्वर्य-तीन लोक के आधिपत्य से १० जो युक्त होते हैं वे भगवान् कहे जाते हैं। तात्पर्य यह है कि भग शब्द के ये जो ज्ञानादिरूप दश अर्थ प्रकट किये गये हैं, भगवान् उन समस्त अर्थों से संपन्न होते हैं। ''तेणं'' यह पद भगवान् का विशेषण है जो इस बात को कहता है कि वे भगवान् तीर्थंकर थे। जो भी विषय इस शास्त्र में कहा जायगा यह उन तीर्थंकर प्रभु-भगवान् द्वारा भाषित ही कहा जावेगा कहा भी है-''अत्थ भासइ अरिहा, सुत्तं गंथति गणहरा णिउणा'' इति। अर्थात्-सर्व प्रथम अर्हंत प्रभु ही अर्थरूप आगम की प्ररूपणा करते हैं और बाद में निपुण गणधर उस अर्थ को मूल सूत्ररूप में आगमरूप में-ग्रथित करते हैं। भगवान ने क्या कहा? यह कहते हैं-भगवान् ने इस रूप से-वक्ष्यमाण प्रकार से-बारह प्रकार की परिषद् में कहा है अतः उन भगवत् तीर्थंकर कथित अर्थ के अनुसार ही मैं वक्ष्यमाण-आगे कहे

હોવાના સાધનરૂપ શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ અને (૧૦) ઐશ્વર્ય ત્રણ લોકનું આધિપત્ય આ રીતે જ્ઞાન આદિ દસ ગુણોથી જે યુક્ત હોય છે તેમને ભગવાન કહે છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે 'ભગ શબ્દના આ જે જ્ઞાનાદિરૂપ દસ અર્થ બતાવ્યા છે એ સઘળા અર્થોથી ભગવાન યુક્ત હોય છે 'तेणं' આ પદ ભગવાનનું વિશેષણ છે જે એ વાત બતાવે છે કે ભગવાન તીર્થંકર હતા જે કોઈ વિષય આ શાસ્ત્રમાં કહેવામાં આવશે તે વિષય તીર્થંકર ભગવાન દ્વારા ભાષિત હશે. કહ્યું પણ છે -''अत्थ भासइ अरिहा, सुत्त गंथति गणहरा णिउणा'' એટલે કે સૌથી પહેલાં અર્હંત પ્રભુ જ અર્થરૂપ આગમની પ્રરૂપણા કરે છે અને ત્યાર પછી નિપુણ ગણધરો તે અર્થને મૂળ-સૂત્રરૂપે-ગ્રંથિત કરે છે ભગવાને શું કહ્યું છે? એ પ્રશ્નના ઉત્તરરૂપે તેઓ કહે છે કે-ભગવાને આ પ્રમાણે-નીચે દર્શાવ્યા પ્રમાણે-બાર પ્રકારની પરિષદોમાં કહેલ છે તો તે તીર્થંકર ભગવાને કહેલ અર્થ પ્રમાણે જ હું આગળ દર્શાવવામાં આવનાર અર્થ

मूलम्—इह खलु समणेणं भगवया महावीरेणं आइगरेणं तित्थगरेणं सयं संबुद्धेणं पुरिसुत्तमेणं पुरिससीहेणं पुरिसवरपुंडरीएणं पुरिसवरगंधहत्थिएणं लोगुत्तमेणं लोगनाहेणं लोगहिएणं लोगपईवेणं लोगपज्जोगरेणं अभयदएणं चक्खुदएणं मग्गदएणं सरणदएणं जीवदएणं धम्मदएणं धम्मदेसएणं धम्मनायगेणं धम्मसारहिएणं धम्मवरचाउरंतचक्कवट्टिएणं अप्पडिहयवरनाणदंसणधरेणं

भग शब्द के दश अर्थ कहा है। जो भग शब्द के इन अर्थों से युक्त हैं वे ही भगवान होते हैं। शब्द और उनका अर्थ अनादि है। ये किसी के द्वारा किये हुए नही है। परन्तु तीर्थंकर भगवान् उस अर्थरूप आगम के उपदेष्टा होते है, इस अपेक्षा वे उस अर्थरूप आगम के कर्त्ता माने जाते हैं। इस तीर्थंकरोपदिष्ट अर्थरूप आगम को लेकर ही मेधावी गणधर मूलरूप आगम की रचना करते हैं, अतः पर्यायार्थिक नयकी अपेक्षा आदिमान् होता हुआ भी आगम द्रव्यार्थिक नयकी अपेक्षा से अनादि कहा जाता है। इस सूत्र में जो "सुयं मे" ये पद आये है वे इस गणधरों की परपरा से चली आई परिपाटी के परिचायक हैं, कि जब वे अपने शिष्य जनों को पूछने पर मोक्षमार्ग का उपदेश देते हैं तो सर्व प्रथम वे उस समय उनसे ऐसा ही कहते हैं। इससे उनके वचनों में प्रमाणता और श्रद्धेयता आ जाती है ॥सू. १॥

ભગવાન શબ્દનો વ્યુત્પત્તિલભ્ય અર્થ કરેલ છે. 'भग' શબ્દના એ અર્થોથી જે યુકત હોય છે તેઓ જ ભગવાન કહેવાય છે. શબ્દ અને તેમનો અર્થ અનાદિ છે તે કોઈના વડે કરાયેલ નથી પણ તીર્થંકર ભગવાન તે અર્થરૂપ આગમના ઉપદેષ્ટા હોય છે, તે અપેક્ષાએ તેમને તે અર્થરૂપ આગમના કર્તા માનવામા આવે છે તીર્થંકરો વડે ઉપદેશાયેલ તે અર્થરૂપ આગમને આધારે જ મેધાવી ગણધરો મૂલરૂપ આગમની રચના કરે છે તેથી પર્યાયાર્થિક નયની અપેક્ષાએ આદિમાન્ હોવા છતા પણ દ્રવ્યાર્થિક નયની અપેક્ષાએ આગમોને અનાદિ કહેવામા આવે છે આ સૂત્રમા આવેલ "सुयं मे" પદો તે ગણધરોની પરંપરાથી ચાલતી આવતી તે રૂઢિના સૂચક છે કે જ્યારે તેઓ પોતાના શિષ્યો વડે પૂછાતા મોક્ષમાર્ગનો ઉપદેશ દે છે ત્યારે સૌથી પહેલા તેમને તેઓ એ પ્રમાણે "सुयं मे" જ કહે છે તેથી તેમના વચનોમા પ્રમાણતા અને શ્રદ્ધેયતા આવી જાય છે. ॥સૂ. ૧॥

शिष्य श्री जंबूस्वामी को 'समवायांग में क्या २ विषय प्रतिपादित हुआ है' इस बात को समझाने के लिये सर्वप्रथम उन्हें कहते हैं कि इस अंग में जो भी विषय मैं प्रतिपादित करूँगा-वह भगवान के मुखारविन्द से जैसा मैंने सुना है वैसा ही कहूंगा-अपनी तर्क से उसमें कुछ भी कमी बेशी नहीं करूँगा। 'आयुष्मन्' शब्द से जो सुधर्मा स्वामी ने उन्हें आमंत्रित किया है इससे यह बात जाहिर होती है कि जंबू स्वामी बहुत अधिक विनयी थे। अपने विनीत शिष्य में प्रत्येक गुरुजन की यही भावना रहा करती है कि हमारा शिष्य अशेष श्रुतज्ञान के उपदेश को श्रवण करने योग्य बन जावे, उसे अपने हृदय में उतारने की शक्ति वाला हो जावे, उसकी स्मृति इतनी अधिक विकसित हो जावे कि जिससे वह उस गृहीत उपदेश को विस्मृत न कर सके, सदा उसके अन्तःकरण में उसकी धारणा बनी रहे-निरतिचार रत्नत्रय की आराधना करने में वह पटु हो जाये और मोक्ष के साधने की उसमें अधिक से अधिक योग्यता का विकास हो जावे। यह प्राकृतिक नियम है कि सच्ची भावना का असर अवश्य ही होता है-यही हुआ। गुरुमहाराज की सच्ची भावना के प्रभाव ने जंबूस्वामी को इस योग्य बना दिया-और उन्होंने उसी भव में मुक्ति प्राप्त करली। भगवान शब्द का व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ सूत्रकार ने

જંબૂસ્વામીને "સમવાયાંગમાં કયા કયા વિષયોનું પ્રતિપાદન કર્યુ છે" આ વાતને સમજાવવાને માટે સૌથી પહેલાં તેમને એ બતાવે છે કે આ અંગમાં જે કોઇ વિષયનું હું પ્રતિપાદન કરીશ, તે ભગવાનના મુખારવિન્દમાંથી મેં જે રીતે સાંભળેલ છે તે પ્રમાણે જ કહીશ મારૂં પોતાનું તેમાં કંઇ પણ ઉમેરીશ નહીં સુધર્માસ્વામીએ તેમને 'આયુષ્મન્' શબ્દથી જે સંબોધ્યા છે તેથી એ વાત પ્રગટ થાય છે કે જંબૂસ્વામી અત્યંત વિનયી હતા પોતાના વિનીત શિષ્ય પ્રત્યે પ્રત્યેક ગુરુજનની એવી ભાવના રહે છે કે અમારો શિષ્ય અશેષશ્રુતજ્ઞાનના ઉપદેશનું શ્રવણ કરવાને યોગ્ય બને તેને પોતાના હૃદયમાં ઉતારવાને શક્તિમાન બને, તેની સ્મૃતિ એટલી બધી વિકસે કે તે ગ્રહણ કરેલ ઉપદેશને ભૂલી ન જાય, તેના અંતઃકરણમાં હમેશાં તેની ધારણા કાયમ રહે નિરતિચાર રત્નત્રયની આરાધના કરવામાં તે નિપુણ બને, અને મોક્ષ પ્રાપ્ત કરવા માટેની તેનામાં વધારેમાં વધારે યોગ્યતાનો વિકાસ થાય કુદરતનો એવો નિયમ છે કે સાચી ભાવનાની અસર અવશ્ય થાય છે-એવું જ બન્યું ગુરુમહારાજની સાચી ભાવનાના પ્રભાવે જંબૂસ્વામીને તેને યોગ્ય બનાવી દીધા-તેમણે એ જ ભવમાં મોક્ષની પ્રાપ્તિ કરી લીધી. 'भग' શબ્દના દસ અર્થ બતાવીને સૂત્રકારે

सूत्रकृतम् २, स्थानम् ३, समवायः ४, विवाहप्रज्ञप्तिः ५, ज्ञाताधर्मकथाः ६, उपासकदशाः ७, अन्तकृद्दशाः ८, अनुत्तरोपपातिकदशाः ९, प्रश्नव्याकरणम् १०, विपाकश्रुतम् ११, दृष्टिवादः १२। तत्र खलु यत् तत् चतुर्थमङ्गं 'समवाय' इति 'आहिए' आख्यातम्, तस्य खलु अयमर्थः प्रज्ञप्तः, तद् यथा ॥ सू. २॥

भगवता यदाख्यातं तदाह-'एगे आया' इत्यादि।

मूलम्—एगे आया ॥ सू. १॥

टीका—'आया' आत्मा-जीवः, 'एगे' एकः-एकत्वसंख्यावान, कथंचिदिति भावः। यद्यपि जीवस्य सिद्धसंसारिभेदेन द्वैविध्याद् उभयरूपत्वमस्ति, यथाप्युपयो-

---

वह इस प्रकार से है-(आयारे १ सूयगडे २ ठाणे ३ समवाए ४ विवाहपन्नत्ती ५ णायाधम्मकहाओ ६ उवासकदसाओ ७ अंतगडदसाओ ८ अणुत्तरोववाइदसाओ ९ पण्हावागरणं १० विवागसुयं ११ दिट्ठिवाए १२)

आचारांग १ सूत्रकृतांग २ स्थानांग ३ समवायांग ४ विवाह प्रज्ञप्ति ५ ज्ञाताधर्मकथांग ६ उपासकदशांग ७ अंतकृद्दशांग ८ अनुत्तरोपपातिकदशांग ९, प्रश्नव्याकरण १० विपाकश्रुत ११ और दृष्टिवाद १२। (तत्थणं) इनमें (जे से) जो यह (चउत्थे अंगे) चौथा अंग (समवाए त्ति) 'समवाय' इस नाम से (आहिए) कहा गया है (तस्सणं) उसका (अयमट्ठे) यह अर्थ (पण्णत्ते) कहा है (तं जहा) वह इस प्रकार ॥सू. २॥

अब सूत्रकार उसी भगवान् द्वारा कथित प्रकार को प्रकट करते हैं—'एगे आया' इति।

टीकार्थ—(आया एगे) कथंचित्-किसी अपेक्षा से-जीव एक है। यद्यपि सिद्ध और संसारी जीव की अपेक्षा से जीव के दो प्रकार हैं तो भी उपयो-

---

ते आ प्रमाणे छे- आयारे १, सूयगडे २, ठाणे ३ समवाए ४, विवाहपन्नती ५, णायाधम्मकहाओ ६, उवासकदसाओ ७, अंतगडदसाओ ८ अणुत्तरोववाइ दसाओ ९, पण्हावागरण १० विवागसुयं ११ दिट्ठिवाए १२) (१) આચારાંગ, (२) સૂત્રકૃતાંગ (૩) સ્થાનાંગ (૪) સમવાયાંગ, (૫) વિવાહપ્રજ્ઞપ્તિ, (૬) જ્ઞાતાધર્મકથાંગ (૭) ઉપાસકદશાંગ, (૮) અંતકૃદ્દશાંગ, (૯) અનુત્તરોપપાતિક દશાંગ, (૧૦) પ્રશ્ન વ્યાકરણ, (૧૧) વિપાકશ્રુત અને (૧૨) દૃષ્ટિવાદ. 'तत्थणं' તેઓમાંથી 'जे से' આ જે 'चउत्थे अंगे' ચોથું અંગ 'समवाए त्ति' 'સમવાય' નામનું 'आहिए' કહેલ છે 'तस्सणं' તેનો 'अयमट्ठे' આ અર્થ 'पण्णत्ते' કહેલ છે. 'तं जहा' તે અર્થ આ પ્રમાણે છે ॥ સૂ. ૨ ॥

હવે સૂત્રકાર ભગવાન દ્વારા કથિત તે અર્થ પ્રગટ કરે છે-"एगे आया" ઈતિ

ટીકાર્થ—'आया एगे' અમુક દૃષ્ટિએ જોતા જીવ એક છે જો કે સિદ્ધ અને સંસારી જીવની અપેક્ષાએ જીવના બે પ્રકાર છે, છતાં પણ ઉપયોગની દૃષ્ટિએ જોતા તેમનામાં

वियट्टच्छउमेणं जिणेणं जावएणं तिन्नेणं तारएणं बुद्धेणं बोहएणं मुत्तेणं मोयगेणं सव्वन्नुणा सव्वदरिसिणा सिव–मयल–मरुय–मणंत–मक्खयमव्वाबाहमपुणरावित्ति सिद्धिगइनामधेयं ठाणं संपाविउकामेणं इमे दुवालसंगे गणिपिडगे पन्नत्ते, तं जहा—आयारे १, सूयगडे २, ठाणे ३, समवाए ४, विवाहपन्नत्ती ५, णायाधम्मकहाओ ६, उवासगदसाओ ७, अंतगडदसाओ ८, अणुत्तरोववाइयदसाओ ९, पण्हावागरणं १०, विवागसुयं ११, दिट्ठिवाए १२, । तत्थ णं जे से चउत्थे अंगे समवाएत्ति आहिए तस्स णं अयमट्ठे पन्नत्ते तं जहा ॥ सू. २॥

टीका—"इह खलु समणेणं" इत्यादि। इदं च प्रथमसूत्रसंगृहीतार्थस्यैव सविस्तरप्रतिपादनपरम्। 'समणेणं' इत्यारभ्य 'संपाविउकामेणं' इत्यन्तस्य व्याख्या ज्ञाताधर्मकथाङ्गसूत्रे प्रागेव कृताऽस्माभिरिति विरम्यते। जिज्ञासुभिस्तु तत एवावलोकनीया। इदं द्वादशाङ्गं गणिपिटकं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा आचारः १,

अब सूत्रकार द्वितीय सूत्र को कहते हैं—'इह खलु' इत्यादि।

टीकार्थ—यह सूत्र प्रथम सूत्र द्वारा संगृहीत हुए अर्थ का ही विस्तार पूर्वक प्रतिपादन करने के लिये कहा गया है। इस सूत्र में जो "समणेणं" पद से लेकर "संपाविउकामेणं" तक जितने भी पद तृतीयान्त विभक्ति वाले आये हुये हैं इन सबकी व्याख्या ज्ञाताधर्मकथांग सूत्र में हमने पहिले ही कर दी है। अतः यहां इनकी व्याख्या नहीं की है। जिन्हें इनके अर्थ को जानने की इच्छा होवे वहां से जान लें। (इमे दुवालसंगे गणिपिडगे पन्नत्ते) इन पूर्वोक्त विशेषणों से विराजित श्रमण भगवान महावीर ने यह द्वादशांग रूप गणिपिटक प्ररूपित किया है। (तं जहा)

હવે સૂત્રકાર બીજું સૂત્ર કહે છે—"इह खलु" ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—આ સૂત્ર પહેલા સૂત્ર દ્વારા ગ્રહણ કરાયેલ અર્થનું જ વિસ્તારથી પ્રતિપાદન કરવાને માટે કહેવાયું છે આ સૂત્રમાં "समणेणं" પદથી લઈને "संपाविउकामेणं" સુધીના ત્રીજી વિભક્તિનાં જેટલાં પદો આવ્યાં છે એ બધાં પદોની વ્યાખ્યા જ્ઞાતાધર્મકથાંગ સૂત્રમાં આ અમારા આપી દીધેલ છે તેથી તેમની વ્યાખ્યા અહીં આપી નથી. તેનો અર્થ જાણવાની જેમને ઇચ્છા હોય તેઓ તેનો અર્થ તે સૂત્રમાંથી વાંચી લે "इमे दुवालसंगे गणिपिडगे पन्नत्ते" એ પૂર્વોક્ત વિશેષણોથી વિભૂષિત શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે આ દ્વાદશાંગરૂપ ગણિપિટકની પ્રરૂપણા કરી છે "तं जहा"

हैं वह अनादिसिद्ध स्वतन्त्र द्रव्य है। तात्त्विक दृष्टि से अरूपि होने के कारण उसका ज्ञान इन्द्रियों द्वारा नहीं हो सकता है तथापि साधारण जिज्ञासुओं के लिये एक ऐसा लक्षण कह देना आवश्यक हो जाता है कि जिससे आत्मा की पहिचान की जा सके। इसी अभिप्राय से प्रस्तुत सूत्र में उसके टीकाकार ने उसका लक्षण उपयोग कहा है। और इसी उपयोग लक्षण की एकता से उसमें एकत्व प्रकट किया है। आत्मा लक्ष्य और उपयोग उसका लक्षण-जानने का उपाय है। जगत अनेक चेतन जड पदार्थों का मिश्रण है। उसमें से जड और चेतन का विवेक पूर्वक निश्चय करना हो तो उपयोग के द्वारा ही हो सकता है। क्यों कि यह उपयोग तरतमभाव से सभी जीवों में पाया जाता है। जड में यह उपयोग नहीं पाया जाता। बोधरूप व्यापार का नाम ही उपयोग है। आत्मा में ही बोधरूप क्रिया होती है-जड में नहीं होती-इसका कारण चेतनाशक्ति है। आत्मा जब स्वतंत्रद्रव्य है तो उसमें अनेक गुण होना चाहिये, फिर उपयोग को ही लक्षण क्यो कहा? तो इस शंका का समाधान यह है कि आत्मा में अनंतगुणपर्यायें हैं, पर उन सबमें उपयोग ही मुख्य है, क्यों कि स्व पर प्रकाश रूप होने से उपयोग ही अपना तथा इतर पर्यायों का ज्ञान करा सकता है। आत्मा जो कुछ भी जानता है-

---

તાત્ત્વિક દૃષ્ટિથી જોતા તે અરૂપી હોવાથી ઇન્દ્રિયો દ્વારા તેનુ જ્ઞાન થઈ શકતુ નથી, છતા પણ સાધારણ જિજ્ઞાસુઓ માટે એક એવુ લક્ષણ બતાવી દેવાનુ આવશ્યક થઇ પડે છે કે જેનાથી આત્માને ઓળખી શકાય તે કારણે જ આ સૂત્રના ટીકાકાર તેનુ લક્ષણ ઉપયોગ બતાવેલ છે અને એ જ ઉપયોગ લક્ષણની એકતાથી તેમા એકત્વ દર્શાવ્યુ છે આત્મા લક્ષ્ય છે અને ઉપયોગ તેનુ લક્ષણ જાણવાનો ઉપાય છે જગત અનેક ચેતન અને જડ પદાર્થોનુ મિશ્રણ છે તેમાથી જડ અને ચેતનનો વિવેકપૂર્વક નિર્ણય કરવો હોય તો ઉપયોગ દ્વારા જ થઈ શકે છે કારણકે તે ઉપયોગ વધુ ઓછા પ્રમાણમા સમસ્ત જીવોમા નજરે પડે છે જડમા તે ઉપયોગ નજરે પડતો નથી બોધરૂપ વ્યાપારનુ નામ જ ઉપયોગ છે આત્મામા બોધરૂપ ક્રિયા થાય છે-જડમા થતી નથી- તેનુ કારણ ચેતનાશક્તિ છે આત્મા જો સ્વતત્ર દ્રવ્ય હોય તો તેમા અનેક ગુણ હોવા જોઇએ, તો પછી ઉપયોગને જ લક્ષણ કેમ કહ્યુ? તો તે શંકાનું સમાધાન એ છે કે આત્મામા અનંતગુણ પર્યાયો છે, પણ તે સૌમા ઉપયોગ જ મુખ્ય છે, કારણકે સ્વ તથા પર પ્રકાશરૂપ હોવાથી ઉપયોગ જ પોતાનું તથા અન્ય પર્યાયોનું જ્ઞાન કરાવી શકે છે. આત્મા જે કંઇ જાણે છે-અનુભવે છે

गरूपत्वेन तयोर्भेदाऽसद्भावात्। किं च-द्रव्यार्थतयाऽऽत्मन एकत्वम्, एकद्रव्यत्वात् आत्मनः द्रव्यार्थता नाम प्रदेशगुणपर्यायाधारता, अद्वयमात्रद्रव्यमेवेत्यर्थः, प्रदेशार्थतया तु अनेकत्वमात्मनः, असंख्यातप्रदेशात्मकत्वात् तस्य। सकलपदार्थानां ज्ञानादिभिर्विषयीकरणादात्मनः स्वेतरपदार्थापेक्षया प्राधान्यमस्तीत्यतः प्रथमतन्निर्देशः ॥सू १॥

गरूप से उनमें भेद का असद्भाव है अतः वह इस अपेक्षा एक भी है, तथा-द्रव्यार्थिक नय की अपेक्षा से आत्मा में एक द्रव्यार्थता होने से एकत्व माना जाता है। प्रदेश, गुण और पर्यायों की आधारता का नाम ही द्रव्यार्थता-द्रव्यार्थिक नय है। यह द्रव्यार्थता मुख्यरूप से एक अखंड द्रव्य को ही विषय करती है। उस विषयभूत द्रव्य में प्रदेश गुण और पर्यायें रहती है। इन पर उसकी दृष्टि नहीं रहती है। इन सब पर दृष्टि रखने वाली प्रदेशार्थता-असंख्यातप्रदेशयुक्तता-पर्यायार्थिकनय है। उसकी अपेक्षा आत्मा में अनेकता मानी जाती है। आत्मा एक प्रदेशवाला नहीं है वह तो असंख्यात प्रदेशों वाला है। आत्मा सकल पदार्थों का ज्ञानादिगुणों द्वारा विषयकरता है इसलिये उसकी अपने से भिन्न पदार्थों की अपेक्षा प्रधानता है। इसीलिये सूत्रकारने यहां सर्व प्रथम उसका निर्देश किया है।

भावार्थ—सूत्रकार ने इस सूत्र द्वारा आत्मा को जो एक कहा है उसका कारण उपयोग लक्षण की अभिन्नता है। क्यों कि जीव का उपयोग कहा गया है। जीव जिसे आत्मा और चेतन भी कहते

ભેદનો અભાવ છે, તેથી એ અપેક્ષાએ તે એક પણ છે તથા-દ્રવ્યાર્થિક નયની અપેક્ષાએ તે આત્મામાં એક દ્રવ્યાર્થતા હોવાથી એકત્વ મનાય છે દ્રવ્યાર્થતા દ્રવ્યાર્થિક નય એટલે પ્રદેશ ગુણ અને પર્યાયોનું અવલંબન તે દ્રવ્યાર્થતા મુખ્યત્વે એક અખંડ દ્રવ્યને વિષય કરે છે તે વિષયભૂત દ્રવ્યમાં પ્રદેશ, ગુણ અને પર્યાયો રહે છે તેમના પર તેની દૃષ્ટિ રહેતી નથી એ બધા પર દૃષ્ટિ રાખનારી પ્રદેશાર્થતા-અસંખ્યાત પ્રદેશયુક્તતા-પર્યાયાર્થિક નય છે તેની અપેક્ષાએ આત્મામાં અનેકતા મનાય છે આત્મા એક પ્રદેશવાળો નથી તે તો અનેક પ્રદેશવાળો છે આત્મા સમસ્ત પદાર્થોને જ્ઞાનાદિ ગુણો દ્વારા વિષય કરે છે તેથી પોતના કરતા ભિન્ન પદાર્થોની અપેક્ષાએ તેની પ્રધાનતા છે તે કારણે સૂત્રકારે સૌથી પહેલા અહીં તેનો નિર્દેશ કર્યો છે

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્ર દ્વારા આત્માને જે એક બતાવ્યો છે તેનું કારણ ઉપયોગ લક્ષણની અભિન્નતા છે કારણ કે જીવનું લક્ષણ ઉપયોગ બતાવવામાં આવેલ છે જીવ કે જેને આત્મા તથા ચેતન પણ કહે છે તે અનાદિ સિદ્ધ સ્વતંત્ર દ્રવ્ય છે

मूलम्--एगे अणाया ॥ सू. २ ॥

टीका--'अणाया' अनात्मा=आत्मभिन्नः घटादिपदार्थः, 'एगे' एकः-एकत्वसंख्यावानस्ति कथंचिदित्यर्थः, अनात्माऽपि यद्यपि प्रदेशार्थतया कश्चित् संख्यातप्रदेशः, कश्चिदसंख्यातप्रदेशः, कश्चिदनन्तप्रदेशोऽप्यस्ति, तथापि परिणा-

को यहां सूत्रकार ने एक कहा है-और कहीं २ पर अनेक भी प्रकट किया है-तो फिर इस प्रकार से यह मान्यताएँ परस्पर में विरुद्ध दिखलाई देती हैं। ऐसी स्थिति में प्रश्न हो सकता है कि इन दोनों मान्यताओं में परस्पर विरूद्धता वास्तविक है या अवास्तविक है। तब नयवाद यह कहता है कि यह ऊपर से दिखनेवाली विरूद्धता वास्तविक नहीं है, क्यों कि द्रव्यार्थिक नय की अपेक्षा आत्मा में एकत्व है और प्रदेशार्थता-पर्यायार्थिक नयकी अपेक्षा आत्मा में अनेकत्व है। यही विषय संक्षेप में टीकाकार ने इस सूत्रद्वारा समझाया है ॥सू० १॥

'एगे अणाया' इति।

टीकार्थ-(अणाया एगे) आत्मा से भिन्न घट पटादिपदार्थ रूप अनात्मद्रव्य किसी अपेक्षा से एकत्वसंख्या विशिष्ट है। जिस अपेक्षा से यह अनात्म-द्रव्य एक है वह अपेक्षा परिणामित्वरूप एक द्रव्यार्थता है। पुद्गलद्रव्य, धर्मद्रव्य, अधर्मद्रव्य, आकाशद्रव्य और काल ये सब अनात्म-अजीव-द्रव्य हैं। इनमें यद्यपि कोई द्रव्य संख्यात प्रदेशवाला, कोई द्रव्य असं-ख्यातप्रदेशवाला और कोई द्रव्य अनंत प्रदेशवाला भी है तौ भी इस

છે અહીં સૂત્રકારે આત્માને એક બતાવ્યો છે અને કોઈ કોઈ સ્થળે અનેક પણ બતાવ્યો છે, તો એ રીતે તે માન્યતાઓ એક બીજાની વિરોધી જણાય છે એ પરિસ્થિતિમાં એવો પ્રશ્ન ઉદ્ભવી શકે કે તે માન્યતાઓ વચ્ચેની વિરૂદ્ધતા વાસ્તવિક છે કે અવાસ્તવિક છે? તો નયવાદ એ દર્શાવે છે કે ઉપરથી દેખાતી તે વિરૂદ્ધતા વાસ્તવિક નથી, કારણકે દ્રવ્યાર્થિકનયની અપેક્ષાએ આત્મામાં એકત્વ છે અને પ્રદે-શાર્થતા-પર્યાયાર્થિકનયની અપેક્ષાએ આત્મામાં અનેકત્વ છે એ જ વિષય સંક્ષેપમાં ટીકાકારે આ સૂત્ર દ્વારા સમજાવ્યો છે. ॥ સૂ. ૧ ॥

"एगे अणाया" इति ।

ટીકાર્થ-'अणाया एगे' આત્મા કરતા ભિન્ન ઘટ પટ (ઘડો, પડદો) આદિ પદાર્થરૂપ અનાત્મદ્રવ્ય કયી દૃષ્ટિએ એકત્વ છે? જે અપેક્ષાએ તે અનાત્મદ્રવ્ય એક છે તે પરિણા-મિત્વરૂપ એક દ્રવ્યાર્થતા છે. પુદ્ગલ દ્રવ્ય, ધર્મદ્રવ્ય, અધર્મદ્રવ્ય, આકાશદ્રવ્ય, અને કાળ એ બધા અનાત્મ-અજીવદ્રવ્ય છે. તેમનામાં જો કે કોઈ દ્રવ્ય સંખ્યાત પ્રદેશ-વાળુ, કોઈ દ્રવ્ય અસંખ્યાત પ્રદેશવાળુ, અને કોઈ દ્રવ્ય અનંત પ્રદેશવાળું પણ

अनुभव करता है वह सब उपयोग से ही करता है। इसलिये यह ही सब पर्यायों में प्रधान है। द्रव्यार्थिकता का तात्पर्य एक अखंड द्रव्य से है। द्रव्यार्थिकता में द्रव्य के आधार रहे हुए प्रदेश, गुण और पर्याय, इन पर दृष्टि नहीं जाती है, प्रत्युत केवल एक द्रव्य पर ही दृष्टि रहती है। इसी दृष्टि का नाम द्रव्यार्थिक नय है। द्रव्यार्थिक नय अपने विषय को ग्रहण करते समय उसमें रहे हुए अन्य गुणादिकों का लोप नहीं करता है, परन्तु उन्हें गौण कर देता है और अपने विषय को मुख्य।

किसी भी एक या अनेक चीजों के बारे में एक या अनेक व्यक्तियों के विचार अनेक तरह के होते हैं। अर्थात् एक वस्तु के विषय में भिन्न २ विचारों की परिगणना की जाय तो वे अपरिमित प्रतीत होंगे, अतः तद्विषयक प्रत्येक विचार का बोध करना अशक्य हो जाता है। इसलिये उनका अतिसंक्षिप्त और अतिविस्तृत प्रतिपादन छोड़ करके मध्यममार्ग से प्रतिपादन करना यही नयवाद का काम है। जैन दर्शन में द्रव्यार्थिक, और पर्यायार्थिक, ऐसे दो नयों का उपदेश हुआ है। यद्यपि द्रव्य को विषय करने वाला द्रव्यार्थिक नय है और पर्याय को विषय करने वाला पर्यायार्थिक नय है, फिर भी गुणों को विषय करने वाला गुणार्थिक नय जो नहीं माना है उसका कारण यही है कि पर्यायार्थिक नय में ही इसका अन्तर्भाव हो जाता है। क्योंकि गुण सहभावी पर्याय हैं। आत्मा

તે બધુ ઉપયોગથી જ કરે છે તેથી તે જ સઘળી પર્યાયોમાં મુખ્ય છે દ્રવ્યાર્થિકતા એટલે એક અખંડ દ્રવ્ય દ્રવ્યાર્થતામાં દ્રવ્યને આધારે રહેલ પ્રદેશ, ગુણ અને પર્યાય પર દૃષ્ટિ જતી નથી પણ કેવળ એક દ્રવ્ય પર જ દૃષ્ટિ રહે છે એ દૃષ્ટિનું નામ જ દ્રવ્યાર્થિક નય છે દ્રવ્યાર્થિક નય પોતાના વિષયને ગ્રહણ કરતી વખતે તેમાં રહેલા અન્ય ગુણોનો લોપ કરતો નથી પણ તેને ગૌણ ગણે છે અને પોતાના વિષયને મુખ્ય ગણે છે

કોઈ એક કે અનેક ચીજો વિષે એક અથવા અનેક વ્યક્તિઓના વિચાર અનેક જાતના હોય છે એટલે કે એક જ વસ્તુની બાબતમાં ભિન્ન ભિન્ન વિચારોની ગણતરી કરવામાં આવે તો તે અપરિમિત લાગશે, તેથી તે બાબતના દરેક વિચારનો બોધ કરવો અશક્ય થઈ જાય છે. તેથી તેમનું અતિસંક્ષિપ્ત કે અતિવિસ્તૃત પ્રતિપાદન કરવાનું છોડી દઈને મધ્યમમાર્ગથી પ્રતિપાદન કરવું એ નયવાદનું કામ છે જૈન દર્શનમાં દ્રવ્યાર્થિક અને પર્યાયાર્થિક એવા નયનો ઉપદેશ અપાયો છે જો કે દ્રવ્યનો વિષય કરનાર દ્રવ્યાર્થિક નય છે અને પર્યાયને વિષય કરનાર પર્યાયાર્થિક નય છે છતાં પણ ગુણોને વિષય કરનાર ગુણાર્થિક નયને નહીં માનવાનું કારણ એ જ છે કે પર્યાયાર્થિક નયમાં જ તેનો સમાવેશ થઈ જાય છે, કારણ કે ગુણ સહભાવી પર્યાય છે।

मूलम्--एगे अणाया ॥ सू. २ ॥

टीका--'अणाया' अनात्मा=आत्मभिन्नः घटादिपदार्थः, 'एगे' एकः-एकत्वसंख्यावानपि कथंचिदित्यर्थः, अनात्माऽपि यद्यपि प्रदेशार्थतया कश्चित् संख्यातप्रदेशः, कश्चिदसंख्यातप्रदेशः, कश्चिदनन्तप्रदेशोऽप्यस्ति, तथापि परिणा-

को यहां सूत्रकार ने एक कहा है-और कहीं २ पर अनेक भी प्रकट किया है-तो फिर इस प्रकार से यह मान्यताएँ परस्पर में विरुद्ध दिखलाई देती हैं। ऐसी स्थिति में प्रश्न हो सकता है कि इन दोनों मान्यताओं में परस्पर विरुद्धता वास्तविक है या अवास्तविक है। तब नयवाद यह कहता है कि यह ऊपर से दिखनेवाली विरुद्धता वास्तविक नहीं है, क्यों कि द्रव्यार्थिक नय की अपेक्षा आत्मा में एकत्व है और प्रदेशार्थता-पर्यायार्थिक नयकी अपेक्षा आत्मा मे अनेकत्व है। यही विषय संक्षेप में टीकाकार ने इस सूत्रद्वारा समझाया है ॥सू० १॥

'एगे अणाया' इति।

टीकार्थ-(अणाया एगे) आत्मा से भिन्न घट पटादिपदार्थ रूप अनात्मद्रव्य किसी अपेक्षा से एकत्वसंख्या विशिष्ट है। जिस अपेक्षा से यह अनात्म-द्रव्य एक है वह अपेक्षा परिणामित्वरूप एक द्रव्यार्थता है। पुद्गलद्रव्य, धर्मद्रव्य, अधर्मद्रव्य, आकाशद्रव्य और काल ये सब अनात्म-अजीव-द्रव्य हैं। इनमें यद्यपि कोई द्रव्य संख्यात प्रदेशवाला, कोई द्रव्य असंख्यातप्रदेशवाला और कोई द्रव्य अनंत प्रदेशवाला भी है तो भी इस

છે અહીં સૂત્રકારે આત્માને એક બતાવ્યો છે અને કોઈ કોઈ સ્થળે અનેક પણ બતાવ્યો છે, તો એ રીતે તે માન્યતાઓ એક બીજાની વિરોધી જણાય છે એ પરિસ્થિતિમા એવો પ્રશ્ન ઉદ્દ્ભવી શકે કે તે માન્યતાઓ વચ્ચેની વિરુદ્ધતા વાસ્તવિક છે કે અવાસ્તવિક છે ? તો નયવાદ એ દર્શાવે છે કે ઉપરથી દેખાતી તે વિરુદ્ધતા વાસ્તવિક નથી, કારણકે દ્રવ્યાર્થિકનયની અપેક્ષાએ આત્મામા એકત્વ છે અને પ્રદેશાર્થતા-પર્યાયાર્થિકનયની અપેક્ષાએ આત્મામા અનેકત્વ છે એ જ વિષય સંક્ષેપમા ટીકાકારે આ સૂત્ર દ્વારા સમજાવ્યો છે. ॥ સૂ. ૧ ॥

"एगे अणाया' इति ।

ટીકાર્થ-'अणाया एगे' આત્મા કરતા ભિન્ન ઘટ પટ (ઘડો, પડદો) આદિ પદાર્થરૂપ અનાત્મદ્રવ્ય કયી દૃષ્ટિએ એકત્વ છે ? જે અપેક્ષાએ તે અનાત્મદ્રવ્ય એક છે તે પરિણામિત્વરૂપ એક દ્રવ્યાર્થતા છે. પુદ્ગલ દ્રવ્ય, ધર્મદ્રવ્ય, અધર્મદ્રવ્ય, આકાશદ્રવ્ય, અને કાળ એ બધા અનાત્મ-અજીવદ્રવ્ય છે. તેમનામા જો કે કોઈ દ્રવ્ય સંખ્યાત પ્રદેશવાળું, કોઈ દ્રવ્ય અસંખ્યાત પ્રદેશવાળું, અને કોઈ દ્રવ્ય અનંત પ્રદેશવાળું પણ

मित्वरूपैकद्रव्यार्थतया एक एवेति भाव । धर्मास्तिकायादीनामनात्मनां एद्दृशप रिणामवत्त्वापेक्षया तु कथंचिद्भिन्नरूपाणामपि अनुपयोगरूपैकस्वभावत्वादेकत्व बोध्यम्॥ सू २॥

परिणामित्वरूप एक द्रव्यार्थता की अपेक्षा ये सबही एक हैं। धर्मास्ति कायादिक अनात्मद्रव्यों म सदृशपरिणमन की अपेक्षा से कथंचित् भिन्न स्वरूपता है तो भी अनुपयोग रूप एक स्वभाव से युक्त होने के कारण एकत्व जानना चाहिये।

भावार्थ—जीव के लक्षण से जो शून्य होता है वह अजीव है। इसी का नाम अनात्मा है। यह आत्मा–जीव का विरोधी भावात्मक तत्त्व है वह केवल अभावात्मक नहीं है। यह अजीवतत्त्व पांच प्रकार है। पुद्ग लास्तिकाय, धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय और काल। अस्तिकाय का तात्पर्य है प्रदेशों का समूह। धर्म, अधर्म, और आकाश ये ३ तीन द्रव्य तो प्रदेश समूह रूप हैं और पुद्गल अवयवरूप तथा अव यव समूहरूप है। काल को अस्तिकाय नहीं कहने का यही तात्पर्य है कि वह प्रदेशसमूह रूप नहीं है। यदि इस प्रकार की मान्यता से उसे अस्तिकाय नहीं कहा जाता है–तो फिर पुद्गल परमाणु को अस्ति काय आप कैसे कह सकते हो? सो इस प्रकार की शंका करना उचित नहीं है, कारण कि–पुद्गल का परमाणु यद्यपि एक प्रदेशवाला

છ, છતાં પણ આ પરિણામિત્વરૂપ દ્રવ્યાર્થતાની અપેક્ષાએ તે બધા એક જ છે ધર્માસ્તિકાય આદિ અનાત્મ દ્રવ્યોમાં સમાન પરિણમનની અપેક્ષાએ ભિન્નસ્વરૂપતા છે, છતાં પણ અનુપયોગરૂપ એક સ્વભાવ (લક્ષણ)થી યુક્ત હોય ને કારણે એકત્વ સમજવું જોઈએ.

ભાવાર્થ—જીવના લક્ષણથી જે રહિત હોય તે અજીવ કહેવાય છે એનું જ નામ અનાત્મા છે તે આત્મા–જીવનું વિરોધી ભાવાત્મક તત્ત્વ છે, તે કેવળ અભા વાત્મક નથી તે અજીવ તત્ત્વ પાંચ પ્રકારનું છે–પુદ્ગલાસ્તિકાય, ધર્માસ્તિકાય, અધર્માસ્તિકાય, આકાશાસ્તિકાય, અને કાળ. અસ્તિકાયનું તાત્પર્ય પ્રદેશોનો સમૂહ થાય છે ધર્મ, અધર્મ અને આકાશ એ ત્રણ દ્રવ્ય તો પ્રદેશસમૂહરૂપ છે, અને પુદ્ગલ અવયવરૂપ તથા અવયવસમૂહ રૂપ છે કાળને અસ્તિકાય નહીં કહેવાનું કારણ એ છે કે તે પ્રદેશસમૂહરૂપ નથી જો તે પ્રકારની માન્યતાથી તેને અસ્તિકાય કહે વાય નહીં તો પુદ્ગલ પરમાણુને આપ કેવી રીતે અસ્તિકાય કહી શકો છો ? ના એ પ્રકારની શંકા કરવી એ ઠીક નથી, કારણ કે પુદ્ગલનું પરમાણુ જો કે એક

होता है तो भी वह अनेक स्कधों का कारण होने से बहुप्रदेशी उपचार से माना गया है। ऐसा काल नहीं है। जितने आकाशक्षेत्र में एक अविभागी पुद्गल परमाणु रहता है उस भाग को प्रदेश कहते हैं। एक जीव द्रव्य के धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय के असंख्यप्रदेश हैं। पुद्गल द्रव्य में कोई पुद्गल संख्यात प्रदेशी, कोई असंख्यातप्रदेशी और कोई अनंत प्रदेशी होता है। प्रदेश का दूसरा नाम निरंश अंश भी है। पुद्गल और दूसरे द्रव्यों के बीच इतना अन्तर है कि पुद्गल के प्रदेश अपने स्कंध से अलग २ हो सकते हैं पर अन्य चार (जीव, धर्म, अधर्म- और आकाश) द्रव्यों के प्रदेश अपने २ स्कंध से भिन्न-अलग-नहीं हो सकते हैं। इसका कारण यह है कि पुद्गल के सिवाय अन्य चारों द्रव्य तथा काल अमूर्त और अप्रदेशी माना गया है। जो अमूर्त होता है उसका स्वभाव खंडित होने का नहीं होता है। मूर्त द्रव्य का ही खंड हो सकता है, क्यों कि संश्लेष और विश्लेष के द्वारा मिलने की तथा अलग होने की शक्ति मूर्तद्रव्य में देखी जाती है। इसी के कारण पुद्गल द्रव्य के छोटे बडे सभी अंशों को अवयव कहते हैं।

जिस प्रकार पराणु पुद्गल का अविभाज्य अंश है उसी प्रकार प्रदेश भी एक अविभाज्य अंश-भाग है तब परमाणु और

પ્રદેશવાળું હોય છે, તો પણ અનેક સ્કધોનું કારણ હોવાથી તેને ઔપચારિક રીતે બહુપ્રદેશી માનવામા આવ્યો છે કાળ એવો નથી જેટલા આકાશક્ષેત્રમા એક અવિભાગી પુદ્ગલ પરમાણુ રહે છે તે ભાગને પ્રદેશ કહે છે એક જીવ દ્રવ્યના ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાયના અસખ્યાત પ્રદેશ છે પુદ્ગલદ્રવ્યમા કોઈ પુદ્ગલ સખ્યાત પ્રદેશી, કોઇ અસખ્યાત પ્રદેશી અને કોઇ અનન્ત પ્રદેશી હોય છે પ્રદેશનુ બીજુ નામ 'નિરંશ અશ' પણ છે પુદ્ગલ અને બીજા દ્રવ્યો વચ્ચે એટલુ અંતર છે કે પુદ્ગલના પ્રદેશો સ્કધથી અલગ અલગ થઇ શકે છે પણ બીજા ચાર (જીવ ધર્મ, અધર્મ અને આકાશ) દ્રવ્યોના પ્રદેશો પોત પોતાના સ્કધોથી અલગ થઇ શકતા નથી. તેનુ કારણ એ છે કે પુદ્ગલ સિવાય બીજા ચારે દ્રવ્યો તથા કાળ અમૂર્ત અને અપ્રદેશી માનવામા આવેલ છે જ અમૂર્ત હોય તેનો ખડિત થવાનો સ્વભાવ હોતો નથી મૂર્ત દ્રવ્યના જ ખડ થઇ શકે છે, કારણ કે સશ્લેષ અને વિશ્લેષ દ્વારા મળવાની તથા અલગ થવાની શકિત મૂર્ત દ્રવ્યમા જ નજરે પડે છે તે કારણે પુદ્ગલ દ્રવ્યના નાના મોટા બધાજ અશોને અવયવ કહે છે.

જેમ પુદ્ગલનું પરમાણુ પુદ્ગલનો અવિભાજ્ય અંશ છે એ જ રીતે પ્રદેશ પણ

प्रदेश में अन्तर क्यों माना गया है— तो इस शंका का समाधान इस प्रकार है कि यदि परिमाणु की अपेक्षा विचार किया जावे तो पुद्गल परमाणु और प्रदेश में कोई अन्तर नहीं है, परन्तु जिस प्रकार परमाणु अपने स्कंध से अलग हो सकता है उस प्रकार प्रदेश अपने स्कंध से अलग नहीं हो सकता है। टीकाकार ने जो अनात्मद्रव्यों में परिणामि स्वरूप एक द्रव्यार्थता की अपेक्षा एकत्व प्रकट किया है उसका तात्पर्य इस प्रकार से है—

जैनसिद्धान्त की प्रक्रिया के अनुसार सभी सत् कहलानेवाली वस्तुएँ उत्पाद, व्यय और ध्रौव्यरूप वाली हैं। प्रत्येक वस्तु में दो अंश मौजूद रहते हैं। एक अंश वह है जो तीनों कालों में शाश्वत रहता है और दूसरा अंश वह है जो अशाश्वत रहता है। शाश्वत अंश के कारण वस्तु में ध्रौव्य रूप की प्रतीति और अशाश्वत अंश के कारण उत्पाद और व्ययरूप की संगति होती है। अर्थात् उत्पाद व्यय ये दोनों धर्म वस्तु में अशाश्वत अंश को लेकर होते हैं। ऐसी कोई भी वस्तु नहीं है जो सर्वथा शाश्वत हो या सर्वथा अशाश्वत हो या कुछ अंश उसका सर्वथा नित्य हो या कुछ अंश उसका सर्वथा अनित्य हो। जब वस्तु गत इन दो अंशों में से किसी अंश की तरफ विचारकों की दृष्टि जाती है तो वह

અવિભાજ્ય અંશ માત્ર છે તો પરમાણુ અને પ્રદેશમાં ભેદ કેમ પાડવામાં આવ્યો છે ? તે શંકાનું સમાધાન આ પ્રમાણે છે—જો પરમાણુની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો પુદ્ગલ પરમાણુ અને પ્રદેશમાં કોઈ તફાવત નથી, પણ જે રીતે પરમાણુ પોતાના સ્કંધથી અલગ થઈ શકે છે તે પ્રમાણે પ્રદેશ પોતાના સ્કંધથી અલગ થઈ શકતો નથી. અનાત્મદ્રવ્યોમાં પરિણમિતત્વાપ એક દ્રવ્યાર્થતાની અપેક્ષાએ જે એકત્વ પ્રગટ કર્યું છે તેનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે—જૈન સિદ્ધાંતની પ્રક્રિયા પ્રમાણે સઘળી અસ્તિત્વ ધરાવતી વસ્તુઓ ઉત્પાદ, વ્યય અને ધ્રૌવ્યરૂપ વાળી છે પ્રત્યેક વસ્તુમાં બે અંશ મોજૂદ હોય છે એક અંશ એવો છે કે જે ત્રણે કાળમાં શાશ્વત રહે છે અને બીજો અંશ એવો છે કે જે અશાશ્વત રહે છે શાશ્વત અંશને કારણે વસ્તુમાં ધ્રૌવ્ય રૂપની પ્રતીતિ થાય છે અને અશાશ્વત અંશને કારણે ઉત્પાદ અને વ્યય રૂપની સંગતિ થાય છે એટલે કે ઉત્પાદ અને વ્યય એ બન્ને ધર્મ વસ્તુમાં અશાશ્વત અંશને લીધે થાય છે એવી કોઈ પણ વસ્તુ નથી કે જે તદ્દન શાશ્વત હોય કે તદ્દન અશાશ્વત હોય કે તેનો થોડો અંશ સર્વથા નિત્ય હોય કે થોડો અંશ સર્વથા અનિત્ય હોય જ્યારે વસ્તુમાં રહેલ એ બન્ને અંશોમાંથી કોઈ એક અંશ તરફ વિચારકની દૃષ્ટિ

वस्तु या तो स्थिर रूप प्रतीत होती है या अस्थिर रूप। एतावता इतने मात्र से वस्तु का पूर्ण यथार्थरूप नहीं सध सकता है–वह दोनों अंशों की ओर दृष्टि देने से ही सधता है। इसी का नाम परिणामिनित्य है और यह परिणमन प्रत्येक वस्तु में हरएक समय होता रहता है–इस परिणमन से कोई भी वस्तु किसी भी समय में अछूती नहीं रहती है। अतः इस परिणमन की अपेक्षा समस्त अनात्मा पदार्थ एक है। परिणमन दो प्रकार का होता है–एक सदृश परिणमन और एक विसदृश परिणमन,–जीव और पुद्गल इन दो द्रव्यों में दोनों प्रकार का परिणमन होता रहता है। पर धर्मास्तिकायादिक द्रव्यों में केवल सदृशपरिणमन ही होता है, विसदृश परिणमन नहीं। इस अपेक्षा धर्मास्तिकायादिक द्रव्य अपने २ सदृश परिणमन की अपेक्षा आपस में भिन्न २ है–फिर भी इन सबमें अनुपयोग रूप एक स्वभावता रहने से इस अपेक्षा वे सब एक हैं। यही टीकाकार का अभिप्राय है। इस प्रकार इस भावार्थ द्वारा प्रदेश, परिणामि नित्यत्व और सदृशपरिणमन के ऊपर यह संक्षिप्त विवेचन किया है। इस तरह अनात्म द्रव्यों में एकत्व के बोधक परिणामिरूप एक द्रव्यत्व और अनुपयोगरूप एक स्वभाववत्व है, यह बात सध जाती है ॥सू०२॥

જાય છે ત્યારે તે વસ્તુ કાતો સ્થિર રૂપ લાગે છે અથવા અસ્થિર રૂપ લગે છે તો એમ કરવા માત્રથી જ તે વસ્તુનું પૂર્ણ યથાર્થ રૂપ જાણી શકાતુ નથી તે જાણવા માટે તો બન્ને અશો તરફ દૃષ્ટિ પડવી જોઇએ એનું નામ જ પરિણામિનિત્ય છે. અને તે પરિણમન દરેક સમયેજ થયા કરે છે–આ પરિણમનથી કોઈ પણ વસ્તુ કોઇ પણ સમયે અલિપ્ત રહી શકતી નથી તેથી તે પરિણમનની અપેક્ષાએ સમસ્ત અનાત્મ પદાર્થ એક છે

પરિણામ બે પ્રકારના હોય છે-સદૃશ પરિણમન (સમાન પરિણમન) અને વિસદૃશ પરિણમન (અસમાન પરિણમન) જીવ અને પુદ્ગલ એ બન્ને દ્રવ્યોમા બન્ને પ્રકારના પરિણમન થયા કરે છે પણ ધર્માસ્તિકાય આદિ દ્રવ્યોમા ફકત વિસદૃશ પરિણમન થતું નથીતે દૃષ્ટિએ જોતા ધર્માસ્તિકાયાદિક દ્રવ્ય પોતપોતાના સદૃશ પરિણામનની અપેક્ષાએ અન્યોન્ય ભિન્ન ભિન્ન છે-છતા પણ તે બધામા અનુપયોગરૂપ એક સ્વભાવતા હોવાથી તે દૃષ્ટિએ જોતા તે બધા એક જ છે એજ ટીકાકારના કથનનુ તાત્પર્ય છે. આ રીતે ભાવાર્થ દ્વારા પ્રદેશ, પરિણામિનિત્યત્વ, અને સદૃશ પરિણમન ઉપર સંક્ષિપ્ત વિવેચન કરવામાં આવ્યું છે એ જ પ્રમાણે અનાત્મદ્રવ્યોમા એકત્વના બોધક પરિણામિરૂપ એક દ્રવ્યત્વ અને અનુપયોગરૂપ એક સ્વભાવત્વ છે, તે વાતની પ્રતીતિ થાય છે ॥સૂ. ૨॥

आत्मनो निष्क्रियत्वं केचिदङ्गीकुर्वन्ति, तन्निराकरणायात्मनः क्रियावत्त्वं वक्ष्यमाणः सूत्रकारः क्रियाजनकत्वेन प्रथमं दण्डस्वरूपमाह—

मूलम्—एगे दंडे ॥ सू ३ ॥

टीका—'दंडे' दण्डः–दण्डयते=ज्ञानाद्यपहारेण पीड्यते नि:सारीक्रियते वा आत्माऽनेनेति दण्डः, स च द्रव्यतो यष्टि भीवितो दुष्प्रयुक्तमनोवाक्कायरूपः, हिंसारूपो वा, स च 'एगे' एकः, एकत्वमस्य सामान्यनयापेक्षया। एवमन्यत्रापि सर्वत्रैकत्वं बोध्यम् ॥ सू ३ ॥

मूलम्—एगे अदंडे ॥ सू ४ ॥

टीका—'अदंडे' अदण्डः–प्रशस्तयोगत्रयरूपः, अहिंसारूपो वा। सामान्यनयापेक्षया एकत्वमदण्डस्येति भावः ॥सू ४॥

आत्मा में सर्वथा निष्क्रियत्व कितनेक वादियों ने अंगीकार किया है परन्तु यह उनकी मान्यता ठीक नहीं है, क्यों कि आत्मा सक्रिय है। इसी बातको दिखलाने के लिये सूत्रकार दंड का स्वरूप कहते हैं—'एगे दंडे' इत्यादि।

ज्ञानादिकों के अपहार से आत्मा जिसके द्वारा पीडित किया जाता है, अथवा सारहित किया जाता है उसका नाम दंड है। यह दंड दो प्रकार का होता है एक द्रव्यदंड और दूसरा भावदंड। यष्टिआदिक बाह्य पदार्थ द्रव्य दंड है और मन वचन एवं काय की दुष्प्रवृत्ति भावदंड है। अथवा हिंसा रूप व्यापार भावदंड है। यह दंड भी सामान्य की अपेक्षा एक है। इसी तरह से अन्यत्र भी एकत्व की सिद्धि जानना चाहिये ॥सू०३॥

'एगे अदंडे' इति।

प्रशस्त योगत्रयरूप अदंड भी सामान्यनय की अपेक्षा एक है ॥सू० ४॥

કેટલાક એવો મત ધરાવે છે કે આત્મા સર્વથા નિષ્ક્રિય છે, પણ તેમનો તે મત બરાબર નથી, કારણ કે આત્મા સક્રિય છે તે વાત દર્શાવવાને માટે સૂત્રકાર દંડનું સ્વરૂપ બતાવે છે—"एगे दंडे" ઇત્યાદિ।

ટીકાર્થ–જ્ઞાનાદિના અપહારથી આત્માને જેના દ્વારા પીડવામાં આવે છે, અથવા સારરહિત કરવામાં આવે છે તેને દંડ કહે છે તે દંડના બે પ્રકાર છે–(૧) દ્રવ્યદંડ અને (૨) ભાવદંડ લાકડી વગેરે બાહ્ય પદાર્થ દ્રવ્યદંડ છે અને મન, વચન અને કાયાની દુષ્પ્રવૃત્તિ ભાવદંડ છે અથવા હિંસારૂપ પ્રવૃત્તિ ભાવદંડ છે તે દંડ પણ સામાન્ય નયની અપેક્ષાએ એક છે એ જ રીતે અન્યત્ર પણ એકત્વ સિદ્ધ થયેલુ માનવુ ॥સૂ ૩॥

"एग अदंडे" इति

પ્રશસ્ત યોગત્રયરૂપ અથવા અહિંસારૂપ અદંડ પણ સામાન્ય નયની અપેક્ષાએ એક છે ॥સૂ૰ ૪॥

मूलम्--एगा किरिया ॥ सू. ५॥

टीका--'किरिया' क्रिया=कायिकी प्रभृतयः आस्तिक्यं वा । संग्रहनयाश्रितसामान्यरूपापेक्षया एकत्वमस्ति क्रियाया अपीतिभावः ॥ सू. ५॥

मूलम्--एगा अकिरिया ॥सू. ६॥

टीका--'अकिरिया' अक्रिया=योगनिरोधरूपा, नास्तिकत्वं वा ॥ सू. ६॥

मूलम्--एगे लोए ॥सू. ७॥

टीका--'लोए' लोकः, 'एगे' एकः, यद्यपि लोकस्य त्रैविध्यम्, असंख्यातप्रदेशकत्वं च, तथापि द्रव्यार्थतया एकत्वमितिभावः ॥सू० ७॥

'एगा किरिया' इति।

टीकार्थ-कायिक आदि क्रियाओं में अथवा अस्तिकाय में संग्रहनय के अश्रित सामान्य रूप की अपेक्षा से एकता है ॥सू० ५॥

'एगा अकिरियाँ' इति ।

योगों को निरोध करने रूप अक्रिया में अथवा नास्तिकत्व में भी इसी तरह से एकता है ॥सू० ६॥

'एगे लोए' एगे अलोए' इति।

टीकार्थ-लोक एक है। अलोक एक है-यद्यपि उर्ध्वलोक,, तिर्यग्लोक और अधोलोक, इस प्रकार से लोक के तीन भेद किये गये हैं। तथा लोक-असंख्य प्रदेशवाला माना गया है। फिर भी द्रव्यार्थिकता की अपेक्षा उसमें एकत्व आ जाता है। इसी तरह अलोक में भी प्रदेशार्थता को लेकर यद्यपि अनेकता है फिर भी द्रव्यार्थिकता की अपेक्षा उसमें एकता

"एगा किरिया" इति—

કાયિક આદિ ક્રિયાઓમા અથવા આસ્તિકયમા સગ્રહનયને આશ્રિત સામાન્ય રૂપની અપેક્ષાએ એકતા છે ॥સૂ ૫॥

"एगा अकिरिया" इति--

યોગોને નિરોધ કરવારૂપ અક્રિયામા અથવા નાસ્તિકત્વમા પણ એજ રીતે એકતા છે ॥સૂ ૬॥

"एगे लोए" "एगे अलोए" इति—

લોક એક છે અલોક એક છે-જો કે ઉર્ધ્વલોક, તિર્યગ્લોક અને અધોલોક, એવા લોકના ત્રણ ભેદ પડાય છે તથા લોકને અસખ્યાત પ્રદેશવાળો માનવામા આવ્યો છે તો પણ દ્રવ્યાર્થિકતાની અપેક્ષાએ તેમા એકત્વ રહેલ છે એ જ પ્રમાણે અલોકમા પણ પ્રદેશાર્થતાને લીધે જો કે અનેકતા છે, છતાં પણ દ્રવ્યાર્થિકતાની

एगे अलोए ॥सू ८॥

टीका—'अलोए' अलोक, 'एगे' एक यद्यप्यलोकस्य प्रदेशार्थतयाऽनेकत्वमस्ति,अनन्तप्रदेशत्वात्, तथापि द्रव्यार्थतया स एक एवास्तीति भावः। यद्वा ये केचिद् लोका अलोका अपि बहव इति मन्यन्ते, तन्मतनिराकरणार्थमिदं, लोकालोकयोर्बहुत्वं नास्तीति भाव ॥सू ८॥

ही है। अथवा जो कोई 'लोक बहुत हैं अलोक भी बहुत हैं" ऐसा मानते हैं उनकी एकान्तरूपमान्यता का निराकरण करने के लिये यह सूत्र कहा गया है। लोक और अलोक में अनेकता नहीं है।

भावार्थ—आकाश द्रव्य के ही ये दो भेद सिद्धान्तकारों ने कहे हैं, एक लोक और दूसरा अलोक। इनमें लोकाकाश असंख्यात प्रदेशवाला और अलोकाकाश अनंतप्रदेशवाला माना गया है। जिस में जीव पुद्गल आदि द्रव्य रहते हैं वह लोक है और जिसमें केवल आकाश ही आकाश है वह अलोक है। तात्पर्य यह है कि जीव पुद्गल आदि द्रव्य समग्र आकाश में नहीं रहते हैं किन्तु अमुक परिमित भाग में ही रहते है। जितने भागमें इनका निवास है उतना आकाशभाग लोक और इसके बाहर चारों ओर अनंत आकाश विद्यमान है वह अलोक है। यद्यपि देव नारकी और मनुष्यादि के निवास की अपेक्षा लोक के भी उर्ध्वलोक-अधोलोक एवं तिर्यग्लोक, इस तरह तीन भेद माने गये हैं परन्तु द्रव्यार्थिकता-द्रव्यरूप लोकाकाश की अपेक्षा से इनमें अभेद-एकत्व आ

અપેક્ષાએ તેમાં એકતા જ છે અથવા જે કોઇ "લોક ઘણા છે અલોક પણ ઘણા છે" એવી માન્યતા ધરાવે છે તેમની એકાન્તરૂપ માન્યતાનુ નિવા ણુ કરવાને માટે આ સૂત્ર કહેવામાં આવ્યુ છે લોક અને અલોકમાં અનેકતા નથી.

ભાવાર્થ—આકાશ દ્રવ્યના જ આ બે ભેદ સિદ્ધાંતકારોએ બતાવ્યા છે—(૧) લોક અને (૨) અલોક તેઓમાં લોકાકાશ અસખ્યાત પ્રદેશવાળુ અને અલોકાકાશ અનત પ્રદેશવાળુ માનવામાં આવેલ છે જેમાં જીવ, પુદ્ગલ આદિ દ્રવ્ય રહે છે તે લોક છે, અને જેમા ફક્ત આકાશ જ છે તે અલોક છે તેનુ તાત્પર્ય એ છે કે જીવ, પુદ્ગલ આદિ દ્રવ્ય સમગ્ર આકાશમાં રહેતુ નથી, પણ અમુક પરિમિત ભાગમાં જ રહે છે જેટલા ભાગમા તેમનો નિવાસ છે એટલો આકાશભાગ લોક કહેવાય છે અને તેની બહાર આસપાસ, ચોમેર જે અનત આકાશ આવેલુ છે તેને અલોક કહે છે જો કે દેવ નારકી અને મનુષ્ય આદિના નિવાસની અપેક્ષાએ લોકના પણ ઉર્ધ્વલોક અધોલોક અને તિર્યગ્લોક એ ત્રણ ભેદ માનવામાં આવ્યા છે તો પણ દ્રવ્યાર્થિક-દ્રવ્યરૂપ લોકાકાશની અપેક્ષાએ તેમનામાં અભેદ-એકત્વ આવી જાય છે

मूलम्—एगे धम्मे ॥सू. ९॥

टीका—'धम्मे' धर्मः=धर्मास्तिकायः, एकः। जीवपुद्गलाः स्वभावतः सक्रियाः सन्ति, तेषां गतिपरिणामवतां तत्स्वभावं यो धारयति स धर्म इत्युच्यते, स चास्तीनां प्रदेशानां संघातरूपत्वात् कायः, अतोऽसावस्तिकाय इति व्यपदिश्यते। धर्मास्तिकायस्यासंख्यातप्रदेशकत्वेऽपि द्रव्यार्थतया स एक एवेतिभावः ॥सू. ९॥

एगे अधम्मे ॥सू. १०॥

टीका—'अधम्मे' अधर्मः—अधर्मास्तिकायः 'एगे' एकः द्रव्यत इतिभावः। न धर्मः—अधर्मः, जीवपुद्गलानां गत्युपष्टम्भको धर्मस्तद्विपरीतः स्थित्युपष्टम्भकत्वादधर्म इत्युच्यते ॥सू. १०॥

जाता है। इसी प्रकार अनंतप्रदेशात्मक अलोकाकाश है-अतः अनंतप्रदेशों की अपेक्षा उसमें अनेकता आती है फिर भी अलोकाकाशरूप द्रव्यत्व की अपेक्षा उसमें भी एकत्व बन जाता है। जिस प्रकार ब्राह्मण, क्षत्रिय आदि की अपेक्षा मनुष्यों में अनेकता होने पर भी मनुष्यत्व की अपेक्षा एकता घटित होती है। द्रव्यों को अपने में अवकाश देने रूप कार्य से इस आकाश की सिद्धि होती है ॥७॥८॥

'एगे धम्मे' 'एगे अधम्मे' इति।

धर्मास्तिकाय एक है, अधर्मास्तिकाय एक है। स्वभावतः गतिक्रिया शील जीव और पुद्गलों को चलनेमें जो निमित्त कारण होता है वह धर्म-द्रव्य है। द्रव्य प्रदेशों का संघातरूप है इसलिये इसको अस्तिकाय कहा है। इस तरह धर्मास्तिकाय में असंख्यातप्रदेशात्मकता होने पर भी द्रव्यार्थता की अपेक्षा एकत्व माना गया है। स्थिति क्रिया परिणत जीव

એ જ પ્રમાણે અનંત પ્રદેશવાળુ અલોકાકાશ છે તેથી અનંત પ્રદેશોની અપેક્ષાએ તેમા અનેકતા લાગે છે છતાં પણ અલોકાકાશરૂપ દ્રવ્યત્વની અપેક્ષાએ તેમા પણ એકત્વ આવી જાય છે જેમ બ્રાહ્મણ, ક્ષત્રિય આદિની અપેક્ષાએ મનુષ્યોમાં અનેકતા હોવા છતા પણ મનુષ્યત્વની અપેક્ષાએ તેમનામાં એકતા ઘટાવી શકાય છે દ્રવ્યોને પોતાનો અંદર સ્થાન દેવાના કાર્યથી તે આકાશની સિદ્ધિ થાય છે. ॥૭॥૮॥

"एगे धम्मे" "एगे अधम्मे" इति—

ધર્માસ્તિકાય એક છે, અધર્માસ્તિકાય એક છે સ્વભાવથી જ ગતિ ક્રિયાશીલ જીવ અને પુદ્ગલોની ગતિમાં જે નિમિત્ત કારણરૂપ હોય છે તે ધર્મદ્રવ્ય છે તે દ્રવ્ય પ્રદેશોના સંઘાતરૂપ છે, તેથી તેને અસ્તિકાય કહેલ છે એ રીતે ધર્માસ્તિકાયમા અસંખ્યાત પ્રદેશાત્મકતા હોવા છતાં પણ દ્રવ્યાર્થતાની અપેક્ષાએ તેમા એકત્વ માનવામાં આવ્યુ છે સ્થિતિ ક્રિયા પરિણત જીવ અને પુદ્ગલોને થોભવામા જે

और पुद्गलों को जो ठहरने में निमित्त-सहायक होता है वह अधर्मद्रव्य है। यह अधर्मद्रव्य भी धर्मद्रव्य की तरह असंख्यात प्रदेशवाला है यह भी द्रव्यार्थता की अपेक्षा माना गया है।

भावार्थ—धर्म, अधर्म और आकाश ये तीनों अमूर्त होने से घट पटादि की तरह इन्द्रियगम्य नहीं हैं। इसलिये इनकी सिद्धि लौकिक प्रत्यक्ष से नहीं हो सकती है। यदि कहा जावे कि आगमप्रमाण से इनकी सिद्धि होती है सो यह बात तो ठीक है परन्तु आगमाश्रय हेतु उस सिद्धान्त के अनुयायियों में ही अपनी महत्ता का स्थापक हो सकता है। आगमोक्त अर्थ की पोषण करने वाली युक्ति भी तो होनी चाहिये, वही युक्ति यहां टीकाकार ने उपस्थित की है-जगतमें गतिशील और गतिपूर्वक स्थिति शील पदार्थ जीव और पुद्गल ये दो ही है। धर्मास्तिकाय या अधर्मास्तिकाय इन दोनों द्रव्यों को प्रेरणा करके न चलाते हैं और न ठहराते हैं। यदि ये चलते हैं तो धर्मास्तिकाय इन्हें चलनेमें मदद कर देता है, जैसे चलने के स्वभाववाले मत्स्योंको चलनेमें जल सहायक हो जाता है। इसीतरह जीव और पुद्गल यदि ठहरते हैं तो छाया जिस प्रकार पथिकों को ठहरने में सहायता पहुँचाती है उसी प्रकार उन्हें ठहरने में अधर्मास्तिकाय सहायक हो जाता है इससे यह फलितार्थ निकलता है कि गति और स्थिति का उपा

નિમિત્ત-સહાયક હોય છે તે અધર્મ દ્રવ્ય છે તે અધર્મદ્રવ્ય પણ ધર્મ દ્રવ્યની જેમ અસંખ્યાત પ્રદેશવાળું છે તેને પણ દ્રવ્યાર્થતાની અપેક્ષાએ એક માનવામાં આવ્યું છે

ભાવાર્થ—ધર્મ અધર્મ અને આકાશ એ ત્રણે અમૂર્ત હોવાથી ઘટ, પટ આદિની જેમ ઇન્દ્રિયગમ્ય નથી તેથી લૌકિક નજરે તેમને સિદ્ધ કરી શકાતા નથી જો એમ કહેવામાં આવે કે આગમ પ્રમાણથી તેમનું પ્રતિપાદન કરી શકાય છે તો તે વાત બરાબર જ પણ આગમોનો આધાર તે સિદ્ધાંતના અનુયાયીઓમાં જ તેની મહત્તા દર્શાવી શકે છે તેથી આગમોક્ત અર્થને પુષ્ટિ આપનાર યુક્તિ પણ હોવી જોઈએ એ યુક્તિ જ ટીકાકારે અહીં યોજી છે—જગતમાં ગતિશીલ અને ગતિપૂર્વક સ્થિતિશીલ પદાર્થ જીવ અને પુદ્ગલ એ બે જ છે ધર્માસ્તિકાય કે અધર્માસ્તિકાય એ બન્ને દ્રવ્યોને પ્રેરણા આપીને ચલાવતાં નથી કે અટકાવતાં નથી જો તે ચાલે તો ધર્માસ્તિકાય તેમને ચાલવામાં મદદ કરે છે જેમ ચાલવાના સ્વભાવવાળા મત્સ્યોને ચાલવામાં પાણી સહાયક થાય છે તેમ ધર્માસ્તિકાય તેમને ચાલવામાં સહાયક થાય છે એજ પ્રમાણે જીવ અને પુદ્ગલ જો થોભે તો જેમ મુસાફરોને થોભવામાં છાયો સહાયક થાય છે તેમ તેમને થોભવામાં અધર્માસ્તિકાય સહાયક થાય છે તેથી એ સાબિત થાય છે કે

मूलम्—एगे पुण्णे ॥सू. ११॥

टीका--'पुण्णे' पुण्य-'पुण शुभे' इति वचनात् पुणति-शुभं-करोति-आत्मानं पवित्रीकरोतीति पुण्यं-शुभकर्म तच्च 'एगे' एकम्। यद्यपि अन्नपुण्यादिभेदेन नवप्रकारकमस्ति, यद्वा-पुण्यानुबन्धि पापानुबन्धि चेति द्विविधमपि, यद्वा-

दान कारण जीव और पुद्गल ही हैं। तथापि निमित्त कारण जो कार्य की उत्पत्ति में अवश्य अपेक्षित है वह उपादान कारण से भिन्न होना ही चाहिये। इसीलिये जीव पुद्गल की गति में निमित्तरूप से धर्मास्तिकाय की और स्थिति में अधर्मास्तिकाय की सिद्धि हो जाती है। इसी अभिप्राय से "गतिस्थित्युपग्रहोधर्माधर्मयोरुपकारः" ऐसा कहा गया है। आकाशद्रव्य की सिद्धि के विषय में बतला ही दिया गया है कि-'आकाशस्यावगाहः अपने में इन धर्मादिक द्रव्यों को स्थान देना आकश का कार्य है। इस कार्य से उसकी भी अबाध सिद्धि हो जाती है ॥९॥१०॥

'एगे पुण्णे' 'एगे पावे'।

एक पुण्य है, एक पाप है। पुण धातु से पुण्य बनता है। पुण का अर्थ शुभ होता है। जो आत्मा को पवित्र करे उसका नाम पुण्य है। शुभ कर्म ही आत्मा को पवित्र किया करते हैं, अतः शुभ कर्म ही पुण्य हैं। यह पुण्य भी सामान्य की अपेक्षा एक है। यद्यपि पुण्य प्रकृतियों के भेद से पुण्य नौ प्रकार है, तथा पुण्यानुबंधी पुण्य और पापानुबंधी पुण्य के

ગતિ અને સ્થિતિનું ઉપાદાન કારણ જીવ અને પુદ્ગલ જ છે. છતા પણ નિમિત્ત કારણ કે જે કાર્યની ઉત્પત્તિમા અવશ્ય અપેક્ષિત છે તે ઉપાદાન કારણથી જુદું હોવુ જ જોઈએ. તેથી જીવ, પુદ્ગલની ગતિમા નિમિત્તરૂપે ધર્માસ્તિકાય અને સ્થિતિમા નિમિત્તરૂપે અધર્માસ્તિકાય સિદ્ધ થઇ જાય છે. એ જ કારણે "गतिस्थित्युपग्रहो धर्माधर्मयोरुपकारः' એવુ કહેવાયુ છે આકાશ દ્રવ્યની સિદ્ધિના વિષયમા એ બતાવી દેવામા આવ્યું છે કે-"आकाशस्यावगाहः" પોતાની અંદર એ ધર્માદિક દ્રવ્યોને સ્થાન દેવાનુ કાર્ય આકાશનુ છે તેકાર્યથી તેની પણ સિદ્ધિમાં મુશ્કેલી નડતી નથી ॥૧૦॥

'एगे पुण्णे' 'एगे पावे' इति

પુણ્ય એક છે, પાપ એક છે 'પુણ' ધાતુમાથી પુણ્ય બને છે. પુણ એટલે શુભ આત્માને જે પવિત્ર કરે તેનું નામ પુણ્ય છે. શુભ કર્મ જ આત્માને પવિત્ર કર્યા કરે છે, તેથી શુભ કર્મ જ પુણ્ય છે. તે પુણ્ય પણ સામાન્યની અપેક્ષાએ એક છે જો કે પુણ્ય પ્રકૃતિયોના ભેદ પ્રમાણે પુણ્ય નવ પ્રકારનુ છે. તથા પુણ્યાનુબંધી પુણ્ય અને પાપાનુબંધી પુણ્ય એવા બે પ્રકારના પણ ભેદ છે અથવા પ્રત્યેક જીવમા

प्रतिजीवं भिन्नभिन्नप्रकारकं भवति, ततश्चानन्तमप्यस्ति, तथापि सामान्यविवक्षया तदेकमिति भावः ॥सू० ११॥

एगे पावे ॥सू० १२॥

'पावे' पापम्-अशुभकर्म, 'एगे' एकम् अस्ति। तत्र यद्यपि ज्ञानावरणीयादिरूपमनेकप्रकारकम्, पुण्यानुबन्धिपापानुबन्धिभेदात् द्विविधम्, अनन्तजीवाश्रितत्वादनन्तमपि अशुभत्वरूपसामान्यविवक्षया एकमिति भावः ॥सू० १२॥

भेद दो प्रकार का भी है। अथवा हरएक जीव में पुण्य प्रकृति का न्यूनाधिकभाव से सद्भाव होने से उनकी अपेक्षा यह अनेक प्रकार का भी हो सकता है, इस तरह अनन्त जीवों में इसका अस्तित्व पाया जाने के कारण यह अनन्त भेद वाला भी हो जाता है। फिर भी पुण्यत्व सामान्य की अपेक्षा यह एक माना गया है, क्यों कि सामान्य अपने विशेष व्यक्तियों में रहता है। इसी तरह ज्ञानावरणीय आदि अशुभकर्म भी अनेक प्रकार का होने पर भी अशुभत्वरूप सामान्य की अपेक्षा से एक है ॥११॥

पाप शब्द का अर्थ अशुभ कर्म है। यह भी ज्ञानावरणीय आदि पापप्रकृतियों की अपेक्षा से अनेक प्रकार का, पुण्यानुबंधी पाप, पापानुबंधी पाप के भेद से दो प्रकार का, और अनंत जीवों में आश्रित होने से अनंत प्रकार का भी होता है तो भी सामान्य की अपेक्षा से एक होने में इसमें कोई बाधा नहीं है।

भावार्थ—शास्त्र में अन्नपुण्य आदि भेद से पुण्य नौ प्रकार का कहा है। तथा जिस पुण्य से पुण्य का बंध हो वह पुण्यानुबंधीपुण्य, और जिससे

પુણ્યપ્રકૃતિનો ન્યૂન કે અધિક પ્રમાણમાં સદ્ભાવ હોવાથી તેમની અપેક્ષાએ તે અનેક પ્રકારનું પણ હોઈ શકે છે, આ રીતે અનંત જીવોમાં તેનું અસ્તિત્વ હોવાને કારણે તે અનંત ભેદવાળું પણ માની શકાય છે. છતાં પણ સામાન્ય પુણ્યત્વની અપેક્ષાએ તેને એક ગણવામાં આવે છે, કારણ કે સામાન્ય પોતાની વિશેષ વ્યક્તિઓમાં રહે છે. એ જ પ્રમાણે જ્ઞાનાવરણીય આદિ અશુભ કર્મ પણ અનેક પ્રકારના હોવા છતાં પણ અશુભત્વરૂપ સામાન્યની અપેક્ષાએ એક છે ॥૧૧॥

પાપ શબ્દનો અર્થ અશુભ કર્મ છે. તે પણ જ્ઞાનાવરણીય આદિ પાપપ્રકૃતિઓની અપેક્ષાએ અનેક પ્રકારનું છે, પુણ્યાનુબંધી પાપ અને પાપાનુબંધી પાપના ભેદથી તે બે પ્રકારનું છે, અને અનંત જીવોમાં આશ્રિત હોવાથી તે અનંત પ્રકારનું પણ છે. તો પણ સામાન્યની અપેક્ષાએ તેને એક ગણવામાં કોઈ વાંધો નથી.

ભાવાર્થ—શાસ્ત્રમાં અન્નપુણ્ય આદિ ભેદથી પુણ્ય નવ પ્રકારનું કહેલ છે, તથા જે પુણ્યથી પુણ્યનો બંધ બંધાય તે પુણ્યાનુબંધી પુણ્ય અને જેનાથી પાપનો

पाप का बंध हो वह पापानुबंधी पुण्य इस प्रकार से पुण्य दो प्रकार का भी होता है। तथा भिन्न २ जीवों में पुण्यकर्म की सत्ता हीनाधिक रूप में पाई ही जाती है, अतः इस अपेक्षा वह अनंतभेद वाला भी है। फिर भी यहां पर सूत्रकार ने इन सब भेदों को पुण्यत्वरूप सामान्य में अन्तर्हित कर उसे एक ही माना है, क्यों कि सामान्य में समस्त अपने भेदों का समावेश हो जाता है।

इसी तरह पाप भी प्राणातिपात आदि के भेद से अठारह प्रकार का, पुण्यानुबंधी पाप, पापानुबंधी पाप के भेद से दो प्रकार का और अनंतजीवों में रहने की अपेक्षा अनंत प्रकार का है, फिर भी पापत्वरूप अशुभ सामान्य की अपेक्षा ये सब एक है।

जिन २ कर्मों का बंध होता है उन सभी का विपाक केवल शुभ या अशुभ ही नहीं होता बल्कि अध्यवसाय रूप कारण की शुभाशुभता के निमित्त से वे शुभाशुभ दोनों प्रकार के निर्मित होते हैं। शुभ अध्यवसाय से निर्मित विपाक शुभ होता है और अशुभ अध्यवसाय से निर्मित विपाक अशुभ होता है। जिस परिणाम में संक्लेश जितना ही कम होगा, वह उतना ही अधिक शुभ, और जिस परिणाम में संक्लेस जितना अधिक होगा वह परिणाम उतना ही अशुभ होगा। शुभ परिणाम से पुण्यप्र-

બંધ બંધાય-તે પાપાનુબંધી પુણ્ય, એ પ્રમાણે પુણ્યના બે પ્રકારના ભેદ થાય છે તથા જુદા જુદા જીવોમાં પુણ્ય કર્મની સત્તા ઓછા વધુ પ્રમાણમાં જોવા મળે છે, તેથી તે દૃષ્ટિકોણથી જોતાં તે અનંત ભેદવાળું પણ છે છતાં પણ સૂત્રકારે અહીં તે બધા ભેદોને પુણ્યત્વરૂપ સામાન્યમાં સમાવી લઈને એક જ માનેલ છે. કારણ કે સામાન્યમાં તેના સઘળા ભેદોનો સમાવેશ થઈ જાય છે

એ જ પ્રમાણે પાપ પણ પ્રાણાતિપાત આદિના ભેદથી અઢાર પ્રકારનું છે. પુણ્યાનુબંધી પાપ અને પાપાનુબંધી પાપના ભેદથી બે પ્રકારનું, અને અનંત જીવોમાં રહેવાની અપેક્ષાએ અનંત પ્રકારનું છે તો પણ પાપત્વરૂપ અશુભ સામાન્ય અપેક્ષાએ તે બધા એક જ છે

જે જે કર્મોનો બંધ પડે છે તે બધાનો વિપાક (ફળ) કેવળ શુભ કે અશુભ જ નથી હોતો પરન્તુ અધ્યવસાયરૂપ કારણની શુભાશુભના નિમિત્તથી તે શુભાશુભ બન્ને પ્રકારનું થાય છે. શુભ અધ્યવસાયથી થયેલ વિપાક શુભ હોય છે અને અશુભ અધ્યવસાયથી નિર્મિત વિપાક અશુભ હોય છે. જે પરિણામમાં સંકલેશ જેટલો ઓછો હશે, તે પરિણામ એટલું જ વધારે શુભ હશે. જે પરિણામમાં સંકલેશ વધારે હશે તે પરિણામ એટલું જ અશુભ હશે શુભ પરિણામથી પુણ્યપ્રકૃતિયોનો

कृतियों का बंध होता है, और अशुभ परिणाम से पाप प्रकृतियों का बंध होता है, ऐसा जो शास्त्रीय विधान है वह आपेक्षिक है। क्यों कि जैसे अशुभ अध्यवसाय के समय प्रथम आदि गुणस्थानों में ज्ञानावरणीय आदि सभी पुण्य पाप प्रकृतियों का यथासंभव बंध होता है वैसे ही छट्ठे आदि गुणस्थानों में शुभ अध्यवसाय के समय भी सभी पुण्य पाप प्रकृतियों का यथासम्भवबंध होता ही है, अतः शुभ अध्यवसाय से पुण्य का और अशुभ अध्यवसाय से पाप का बंध होता है, यह कथन एकान्ततः संगत कैसे माना जा सकता है, इसलिये यह कथन आपेक्षिक ही मानना चाहिये। और अनुभाग एवं स्थितिबंध की अपेक्षा इसकी संगति कर लेनी चाहिये। कोई भी एक परिणाम ऐसा नहीं जो एकान्ततः शुभ या अशुभ कहा जा सके। हरएक परिणाम शुभ, अशुभ, अथवा उभयरूप होने पर भी उसमें जो शुभत्व, अशुभत्व का व्यवहार किया जाता है वह गौण मुख्य भाव की अपेक्षा से समझना चाहिये, इसी लिये जिस शुभ परिणाम से पुण्य प्रकृतियों में शुभ अनुभागबंधता है उसी परिणाम से पाप प्रकृतियों में अशुभ अनुभाग भी बंधता है। इसके विपरीत जिस परिणाम से अशुभ अनुभाग बंधता है उसी परिणाम से पुण्य प्रकृतियों में शुभ अनुभाग भी बंधता है। अन्तर इतना ही है-जैसे प्रकृष्ट शुभ परिणाम से होने वाला

બંધ બંધાય છે, અને અશુભ પરિણામથી પાપપ્રકૃતિઓનો બંધ બંધાય છે એવું જે શાસ્ત્રીય વિધાન છે તે આપેક્ષિક છે કારણ કે જેમ અશુભ અધ્યવસાય વખતે પ્રથમ આદિ ગુણસ્થાનોમાં જ્ઞાનાવરણીય આદિ સઘળી પુણ્ય પાપ પ્રકૃતિઓનો જે પ્રમાણે બંધ બંધાય છે એ જ પ્રમાણે છઠ્ઠા વગેરે ગુણસ્થાનોમાં શુભ અધ્યવસાયને વખતે પણ સઘળી પુણ્ય પાપ પ્રકૃતિઓનો સંભવિત બંધ બંધાય છે જ તો શુભ અધ્યવસાયથી પુણ્યનો અને અશુભ અધ્યવસાયથી પાપનો બંધ બંધાય છે, તે કથન એકાન્તતઃ સંગત કેવી રીતે માની શકાય ? તેથી તે કથન આપેક્ષિક જ માનવું જોઈએ અને અનુભાગ અને સ્થિતિબંધની અપેક્ષાએ તેની સંગતતા સમજી લેવી જોઈએ કોઈ પણ એક પરિણામ એવું નથી કે જે એકાન્તતઃ શુભ કે અશુભ કહી શકાય દરેક પરિણામ શુભ, અશુભ અથવા બન્ને રૂપ હોવાં છતાં પણ તેમાં જે શુભત્વ અશુભત્વનો વ્યવહાર કરવામાં આવે છે તે ગૌણ મુખ્ય ભાવની અપેક્ષાએ માનવો જોઈએ તેથી જે શુભ પરિણામથી પુણ્યપ્રકૃતિઓમાં શુભ અનુભાગ બંધાય છે એ જ પરિણામથી પાપપ્રકૃતિઓમાં અશુભ અનુભાગ પણ બંધાય છે તેથી ઉલટું જે પરિણામથી અશુભ અનુભાગ બંધાય છે એ જ પરિણામથી પુણ્યપ્રકૃતિઓમાં શુભ અનુભાગ પણ બંધાય છે તેમાં ફરક એ જ તફાવત છે કે—જેમ પ્રકૃષ્ટ શુભ

मूलम्—एगे बंधे ॥सू, १३॥

टीका—'बंधे' बन्धः-बन्धनं बन्धः, यदि जीवः कषायवान् भवति तदा स कषायसद्भावात् कर्मणो योग्यान् पुद्गलान् उपादत्ते गृह्णाति, स कर्मपुद्गलसंश्लेषो बन्ध इत्युच्यते, स 'एगे' एकोऽस्तीत्यर्थः। बन्धस्य प्रकृतिस्थितिप्रदेशानुभावभेदाच्चातुर्विध्यमस्ति, तथापि सामान्यतः स एक इति भावः। यद्वा-द्रव्यभावभेदाद् बन्धो द्विविधः-द्रव्यतो निगडादिभिः, भावतस्तु कर्मणा, तयोश्च बन्धनसामान्यविवक्षया एको बन्ध इति भावः ॥सू. १३॥

शुभ अनुभाग प्रकृष्ट होता है और अशुभ अनुभाग निकृष्ट होता है वैसे ही प्रकृष्ट अशुभ परिणाम से बँधने वाला अशुभ अनुभाग प्रकृष्ट होता है और शुभ अनुभाग निकृष्ट होता है। इसी तरह स्थितिबंध में भी यही बात समझना चाहिये। इस तरह पुण्य पाप प्रकृतियों भिन्नता आने पर भी उनमें जो शास्त्रकार ने एकता का कथन किया है वह पुण्यत्व और पापत्वरूप सामान्य की अपेक्षा से किया है ॥११॥१२॥

'एगे बंधे' 'एगे मोक्खे' इति।

बंध एक है मोक्ष एक है। यदि जीव कषाय युक्त होता है तो वह कषाय के सद्भाव से कर्म के योग्य पुद्‌गलों को ग्रहण करता है वह बंध कहलाता है। यह बंध एक है। यद्यपि प्रकृतिबंध, प्रदेशबंध और अनु-भागबंध, इस तरह से बंध के चार भेद हैं तो भी वह सामान्य की अपेक्षा एक है। अथवा द्रव्यबंध और भावबंध इस प्रकार से भी बंध

પરિણામથી થનાર અનુભાગ પ્રકૃષ્ટ (બળવાન) હોય છે અને અશુભ અનુભાગ નિકૃષ્ટ (નબળો) હોય છે એ જ પ્રમાણે પ્રકૃષ્ટ અશુભ પરિણામથી બધાનાર અશુભ અનુભાગ પ્રકૃષ્ટ હોય છે અને શુભ અનુભાગ નિકૃષ્ટ હોય છે એ જ પ્રમાણે સ્થિતિબંધમા પણ એ જ વાત સમજવાની છે. આ રીતે પુણ્ય પાપ પ્રકૃતિયોમાં ભિન્નતા હોવા છતાં પણ શાસ્રકારે જે એકતા દર્શાવી છે તે પુણ્યત્વ અને પાપત્વ રૂપ સામાન્યની અપેક્ષાએ દર્શાવેલ છે ॥૧૧॥૧૨॥

'एगे बंधे,' 'एगे मोक्खे' इति—

બંધ એક છે, મોક્ષ એક છે જીવ કષાય યુકત થાય છે તો કષાયના સદ્‌ભાવથી કર્મનાં યોગ્ય પુદ્‌ગલોને ગ્રહણ કરે છે, તેને બંધ કહે છે તે બંધ એક છે જો કે પ્રકૃતિબંધ, સ્થિતિબંધ, પ્રદેશબંધ અને અનુભાગબંધ, એ રીતે બંધના ચાર ભેદ પડે છે, છતા પણ સામાન્યની અપેક્ષાએ તે એક છે અથવા દ્રવ્યબંધ અને

एगे मोक्खे ॥सू० १४॥

'मोक्खे' मोक्षः-मोचनम्-आत्मन कर्मपाशाद् वियोजन मोक्ष, 'एगे' एकः, ज्ञानावरणीयादिकर्मापेक्षया त्वष्टकर्मतो मोक्षोऽप्यष्टविधः, तथापि मोच नसामान्यापेक्षया स एवैक इतिभावः। यद्वा द्रव्यभावभेदाद् द्वैविध्येऽपि मोक्षसामा न्यापेक्षया एक इति भावः। यद्वा जीवस्य मोक्षः सकृदेव भवति, तथा चैकैकस्य जीवस्य एकैक एव मोक्षः, मुक्तस्य पुनर्मोक्षाभावात्, तदपेक्षया एको मोक्ष इति भावः ॥सू० १४॥

दो प्रकार का है। निगड आदि से जो बंधन होता है वह द्रव्य बंध है। तथा कर्म पुद्गलों का और आत्मप्रदेशों का एकक्षेत्रावगाहरूप सम्श्लेष होता है वह भावबंध है। इस प्रकार से बंध दो प्रकार का होकर भी बंधन सामान्य की विवक्षा से एक ही है ॥१३॥

आत्मा का कर्मरूप पाश से अलग होना इसका नाम मोक्ष है। यह मोक्ष यद्यपि ज्ञानावरणीय आदि आठ कर्मों में से तत्कर्मों छूटने से आठ प्रकार का है, फिर भी मोचन सामान्य की अपेक्षा से वह एक प्रकार का ही है। अथवा द्रव्य और भाव के भेद से यह मोक्ष दो प्रकार का भी है सो भी मोक्षसामान्य की अपेक्षा यह एक ही है। इसमें भेद नहीं है। अथवा जीव की मुक्ति एक ही बार होती है, बार २ नहीं होती। इसलिए एक एक जीव का एक एक ही मोक्ष है। मुक्त हुए जीव को पुनः मोक्ष का अभाव है। इस अपेक्षा से मोक्ष एक है। ॥१४॥

भावार्थ—सूत्रकार ने इस सूत्र द्वारा बंध और मोक्ष में सामान्य

ભાવબંધ નામના પણ તેના બે ભેદ છે. નિગડ આદિથી જે બંધ બંધાય છે તે દ્રવ્યબંધ છે, તથા કર્મપુદ્ગલોનો અને આત્મપ્રદેશોનો જે એક ક્ષેત્રાવગાહ રૂપે સંશ્લેષ થાય છે તે ભાવબંધ છે આ પ્રમાણે બે પ્રકારના બંધ હોવા છતાં પણ સામાન્યની અપેક્ષાએ બંધ એક જ છે ॥૧૩॥

કર્મરૂપી બંધનથી આત્માનું અલગ થવું તે મોક્ષ કહેવાય છે, તે મોક્ષ પણ જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ કર્મોમાંથી તે તે કર્મોના છૂટવાને લીધે આઠ પ્રકારનો છે પણ મુક્ત થવા રૂપ સામાન્યની અપેક્ષાએ તે એક પ્રકારનો જ છે અથવા દ્રવ્ય અને ભાવ, એ બે ભેદથી મોક્ષ બે પ્રકારનો પણ છે, છતાં મોક્ષ સામાન્યની અપેક્ષાએ એક પ્રકારનો જ છે તેમાં ભેદ નથી. અથવા જીવની મુક્તિ એક વાર જ થાય છે. વાર વાર નહીં તેથી પ્રત્યેક જીવનો એક એક જ મોક્ષ છે મુક્ત થયેલ જીવને ફરી મોક્ષનો અભાવ હોય છે તે અપેક્ષાએ મોક્ષ એક જ છે ॥૧૪॥

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્ર દ્વારા બંધ અને મોક્ષમાં સામાન્યની અપેક્ષાએ એકતા

की अपेक्षा एकत्व-भेदाभाव-कहा है। वंध का लक्षण-"सकपायत्वात् जीवः कर्मणो योग्यान् पुद्गलान् आदत्ते स वंधः' अर्थात् जीव जव कपाय से संतप्त होता है तव वह अनेक प्रकार की पौद्गलिक वर्गणाओं में से कर्मरूप परिणाम को प्राप्त करने की योग्यता रखनेवाली वर्गणाओं को ग्रहण करता है। और ग्रहण करके उन्हें आत्मप्रदेशों के साथ विशिष्टरूप से जोड लेता है। यद्यपि जीव स्वभावतः अमूर्त है और पौद्गलिक कर्मवर्गणाएँ मूर्त हैं, अतः अमूर्त के साथ मूर्त का विशिष्ट रूप से जुडना असंभव जैसी वात्त है फिर भी आत्मा अनादि काल से कर्म संवंध वाला होने के कारण मूर्त जैसा हो जाने से मूर्त कर्मपुद्गलों को ग्रहण कर लेता है और उन्हें कर्मरूप में परिणमा लेता है। जिस प्रकार खाये हुए भोजन का विविध रस रुधिर आदि रूप में परिणमन हो जाता है उसी प्रकार गृहीत कर्मवर्गणाओं का भी ज्ञानावरणीय आदि रूप से परिणमन हो जाता है। आत्मप्रदेशों के साथ कर्मरूप में परिणत हुए पुद्गलों का यह संवंध ही-संयोगरूप संवध ही-वंध है। शास्त्र में मिथ्यादर्शन, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग, ये कर्मवंध के हेतु कहे गये है। तात्पर्य यह है कि प्रकृतिवंध, स्थितिवंध, अनुभागवंध और प्रदेशवंध, इस प्रकार से जो चार प्रकार का

દર્શાવી છે બ ધનુ લક્ષણ આ પ્રમાણે છે-सकपायत्वात् जीवः कर्मणो योग्यान् पुद्गलान् आदत्ते स वंधः એટલે કે જ્યારે જીવ કષાયયુકત થાય છે ત્યારે તે અનેક પ્રકારની પૌદ્ગલિક વર્ગણાઓમાંથી કર્મરૂપી પરિણામને પ્રાપ્ત કરવાની યોગ્યતાવાળી વર્ગણાઓને ગ્રહણ કરે છે અને તેમને ગ્રહણ કરીને આત્મપ્રદેશની સાથે વિશિષ્ટ રીતે જોડી દે છે. જો કે જીવ સ્વભાવથી અમૂર્ત છે અને પૌદ્ગલિક કર્મવર્ગણાઓ મૂર્ત છે, તેથી અમૂર્તની સાથે મૂર્તનું વિશિષ્ટ રીતે જોડાવુ તે વાત અસ ભવિત જેવી લાગે છે છતા પણ આત્મા અનાદિ કાળથી કર્મસ બધવાળો હોવાને કારણે મૂર્ત જેવો થઈ જવાથી મૂર્ત કર્મપુદ્ગલોને ગ્રહણ કરી લે છે, અને તેને કર્મરૂપે પરિણમાવે છે જેમ ખાધેલ ભોજનનો વિવિધ પ્રકારનો રસ રકત આદિ રૂપે પરિણમે છે એ જ પ્રમાણે ગ્રહણ કરાયેલ કર્મવર્ગણાઓ પણ જ્ઞાનવરણીય આદિ રૂપે પરિણમે છે આત્મપ્રદેશોની સાથે કર્મરૂપે પરિણત થયેલ પુદ્ગલોનો તે સ બધ જ-સયોગરૂપ જ 'બ ધ' ગણાય છે. શાસ્ત્રમાં મિથ્યાદર્શન અવિરતિ, પ્રમાદ, કષાય અને યોગ, એ બધાને કર્મબ ધના હેતુ બતાવ્યા છે. તેનું તાત્પર્ય એ છે કે પ્રકૃતિબ ધ, સ્થિતિબ ધ, અનુભાગબ ધ, અને પ્રદેશબ ધ એ પ્રમાણે ચાર પ્રકારના જે બ ધતત્વ દર્શાવ્યા છે તેમાના પ્રકૃતિ

बंधतत्त्व कहा गया है उनमें प्रकृतिबंध और प्रदेशबंध, ये दो योग से होते हैं, तथा स्थितिबंध, और अनुभागबंध ये दो कषाय से होते हैं। बंधतत्त्व के ये चार प्रकार एक ही कर्म में समन्वित चार अंशरूप हैं। गुणस्थानों को लेकर जब कर्मबंध के कारणों का विचार किया जाता है तब वहां पर ऐसा विचार किया जाता है कि प्रथमगुणस्थान में बंध का कारण मिथ्यादर्शन है, चौथे गुणस्थान तक अविरति, छट्ठे गुणस्थानतक प्रमाद, दशवें गुणस्थान तक कषाय और तेरहवें गुणस्थान तक योग। इस तरह इन पांच बंध हेतुओं में से जहां २ पूर्व २ के बंध हेतु होंगे, वहां उसके बाद के भी सभी होंगे ऐसा नियम है। परन्तु जब उत्तर का होगा तब पूर्व का बंध हेतु हो भी और न भी हो। इस तरह बंध में मिथ्यात्व आदि अनेक कारण पडते हैं फिर भी यहां जो "सकषायत्वाज्जीवः कर्मणो योग्यान् पुद्गलान् उपादत्ते स पुद्गलसंश्लेषो बंधः" ऐसा कहा गया है वह अन्य हेतुओं की अपेक्षा कषाय की प्रधानता प्रदर्शित करने के लिये ही कहा गया जानना चाहिये।

शंका—कषाय से जो कर्मबंध होता है वह तो दशवें गुणस्थान तक ही होता है, परन्तु योग से जो बंध होता है वह तेरहवें गुणस्थान तक होता है, इस तरह बंध हेतुओं से कषाय में प्रधानता न बनकर केवल योग में ही प्रधानता आती है?

બંધ અને પ્રદેશબંધ, એ બન્ને યોગથી થાય છે સ્થિતિબંધ અને અનુભાગબંધ એ બન્ને કષાયથી થાય છે બંધતત્વના આ ચારે પ્રકારો એક જ કર્મમાં સમન્વિત ચાર અંશરૂપ છે ગુણસ્થાનોને લઈને જો કર્મબંધનાં કારણોનો વિચાર કરવામાં આવે તો પહેલા ગુણસ્થાનમાં બંધનું કારણ મિથ્યાદર્શન છે ચોથા ગુણસ્થાન સુધી અવિરતિ છઠ્ઠા ગુણ સ્થાન સુધી પ્રમાદ, દસમા ગુણસ્થાન સુધી કષાય અને તેરમા ગુણસ્થાન સુધી યોગ આ રીતે એ પાંચ બંધહેતુઓમાંથી જ્યાં જ્યાં પૂર્વના (આગળના) બંધ હેતુ હશે ત્યાં તેમની પાછળના પણ બધા બંધહેતુ હશે એવો નિયમ છે પણ જ્યારે પછીના—હશે ત્યારે પૂર્વના આગળના બંધહેતુ હોય પણ ખરા અને ન પણ હોય આ રીતે બંધમાં મિથ્યાત્વ આદિ અનેક કારણો રહેલા હોય છે છતાં પણ અહીં જે "सकषायत्वाज्जीवः कर्मणो योग्यान् पुद्गलान् उपादत्ते स पुद्गलसंश्लेषो बंधः" એવું કહેવામાં આવ્યું છે તે અન્ય હેતુઓ કરતાં કષાયની પ્રધાનતા દર્શાવવાને માટે જ કહેવાયું છે તેમ સમજવાનું છે

શંકા—કષાયથી કર્મનો જે બંધ છે તે તો દસમા ગુણસ્થાન સુધી જ બંધાય છે પણ યોગથી જે કર્મબંધ બંધાય છે તે તેરમા ગુણસ્થાન સુધી બંધાય છે, આ રીતે બંધ હેતુઓમાં કષાયની પ્રધાનતાને બદલે યોગની પ્રધાનતા શું આવી જતી નથી?

समाधान—योग के निमित्त से जायमान प्रकृति और प्रदेशबंध आत्मा को उतना पराधीन नहीं बनाते है कि जितना पराधीन स्थितिबंध और अनुभाग बंध बनाते है अतः बंधों में इन दो बंधो की मुख्यता प्रदर्शित करने के लिये ऐसा कहा गया है

कर्म पुद्गलों में जो आत्मा के ज्ञानादिक गुणों को रोकने की तथा सुख दुःख आदि देने की प्रकृति की निर्मिति होती है–स्वभाव–बनता है–इसी का नाम प्रकृतिबंध है १। प्रकृति का कर्मपुद्गलो में अमुक समयतक च्युत नहीं होना–इसी प्रकृति का उनमें अमुक समय तक बने रहने का निर्माण होना इसका नाम स्थितिबंध है २। तीव्रता मंदता आदि रूप में कर्मपुद्गलों का फल देना इसका नाम अनुभागबंध है ३। कर्मपुद्गलो में स्वभावानुसार अमुक २ परिमाण में बट जाने का निर्माण होना इसका नाम प्रदेशबंध है ४। प्रकृतिबंध और प्रदेशबंध में यही अन्तर है कि आत्मा के साथ बंधदशा को प्राप्त हुए कर्मपुद्गलों में जो ज्ञानादिगुणों को रोकने का स्वभाव निर्मित होना है वह तो है प्रकृतिबंध, और कर्मपुद्गल जो आत्मा के साथ बंध को प्राप्त हुए हैं वे कितने हुए है, इस प्रकार प्रदेशगणना का नाम प्रदेशबंध है। इस तरह यह बंध अनेक प्रकार का है, फिर भी बंध सामान्य की अपेक्षा वह एक है। उसमें भेद नहीं है। चाहे प्रकृतिबंध हो, चाहे प्रदेशादि-

---

સમાધાન—યોગના નિમિત્તથી પેદા થયેલ પ્રકૃતિ અને પ્રદેશબંધ આત્માને એટલો પરાધીન બનાવતા નથી કે જેટલો પરાધીન સ્થિતિબંધ અને અને અનુભાગબંધ બનાવે છે, તેથી બંધોમા તે બે બંધોની પ્રધાનતા બતાવવાને માટે એવું કહેવાયું છે

કર્મપુદ્ગલોમા આત્માના જ્ઞાનાદિક ગુણોને રોકવાની તથા સુખદુઃખ આદિ દેવાની જે પ્રકૃતિનું નિર્માણ થાય છે સ્વભાવ બને છે તેનું નામ જ પ્રકૃતિબંધ છે. (૧) પ્રકૃતિનું કર્મપુદ્ગલોમા અમુક સમય સુધી ચ્યુત ન થવું–એ જ પ્રકૃતિનું તેમનામાં અમુક સમય સુધી સ્થિર રહેવાનું નિર્માણ થવું–તેનું નામ સ્થિતિબંધ (૨) તીવ્રતા મંદતા આદિ રૂપે કર્મપુદ્ગલોનું ફળ દેવું તેનું નામ અનુભાગબંધ છે (૩)કર્મપુદ્ગલોમા સ્વભાવાનુસાર અમુક પ્રમાણમા વહેચાઇ જવાનું નિર્માણ થવું તેને પ્રદેશબંધ કહે છે (૪) પ્રકૃતિબંધ અને પ્રદેશબંધમા એટલો જ તફાવત છે કે આત્માની સાથે બંધદશા પામેલ કર્મપુદ્ગલોમા જે જ્ઞાનાદિક ગુણોને રોકવાનો સ્વભાવ નિર્મિત થાય છે તે પ્રકૃતિબંધ છે, અને આત્માની સાથે બંધ પ્રાપ્ત જે કર્મપુદ્ગલો છે તે કેટલા થયા છે, તે પ્રદેશ ગણનાને પ્રદેશબંધ કહે છે આ રીતે તે બંધના અનેક પ્રકાર છે, છતા પણ બંધ સામાન્યની અપેક્ષાએ તે એક છે તેમા ભેદ નથી ભલે પ્રકૃતિ-

बंध हो-कोई भी बंध हो हैं तो वह सामान्यतया बंध ही, अत इस विवक्षा से वह एक है। इसीलिये सूत्रकारने "एगे बंधे" ऐसा कहा है॥१३॥

ज्ञानावरणीय आदि अष्टविध कर्मों का आत्मा से आत्यन्तिक विनाश होना इसका नाम मोक्ष है। एक बार बंधा हुआ कर्म कभी तो क्षय को प्राप्त होता ही है, पर वैसे कर्म का बंधन फिर सम्भव हो अथवा उस प्रकार का कोई कर्म अभी शेष हो तो ऐसी स्थिति में 'कर्म का आत्यन्तिक क्षय हुआ है" ऐसा नहीं कहा जा सकता। आत्यन्तिक क्षय का तात्पर्य है पूर्वबद्धकर्म का और नवीन कर्म के बांधने की योग्यता का अभाव। मोक्ष की प्राप्ति आत्यन्तिक कर्मक्षय हुए विना कदापि संभव नहीं हो सकती है, इसलिये ज्ञानावरणीय आदि आठ कर्मों के क्षय की अपेक्षा मोक्ष भी आठ प्रकार का माना जा सकता है परन्तु कर्मविमोचन रूप सामान्य की अपेक्षा यह भी एक है। अथवा जो जीव एक बार मोक्ष प्राप्त कर लेता है वह फिर से संसार में जन्म के कारणों का अभाव होने से जन्म धारण नहीं करता है, अतः जो स्थिति प्राप्त हो गई वह सादि होकर भी अपर्यवसित बनी रहती है, इसलिये पुनः प्राप्ति का अभाव होने से मोक्ष एक ही है ॥१४॥

બંધ હોય કે પ્રદેશાદિ બંધ હોય- કોઈપણ બંધ હોવ-પણ સામાન્ય રીતે તો તેમ બ ન્ધ જ છે, આ દૃષ્ટિકોણથી જોતાં તે એક જ છે તેથી સૂત્રકારે એમ કહ્યું છે ॥૧૩॥

જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ પ્રકારનાં કર્મોનો આત્મામાંથી તદ્દન નાશ થવો તેનું નામ મોક્ષ છે એક વાર બંધાયેલ કર્મનો ક્યારેક તો ક્ષય થાય છે જ, પણ એવાં કર્મનું બંધન ફરીથી સંભવિત પણ છે-અથવા એવા પ્રકારનું કોઈ પણ કર્મ હજી શેષ હોય તો એવી સ્થિતિમાં કર્મોનો આત્યંતિક ક્ષય થયો છે" એમ કહી શકાય નહીં આત્યાન્તિક ક્ષય નું તાત્પર્ય એ છે કે પહેલાં બંધાયેલાં કર્મોનો તથા નવીન કર્મો બંધાવાની યોગ્યતાનો અભાવ આત્યન્તિક કર્મક્ષય વિના મોક્ષની પ્રાપ્તિ કદી પણ સંભવી શકતી નથી, તેથી જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ કર્મના ક્ષયની અપેક્ષાએ મોક્ષ પણ આઠ પ્રકારનો માની શકાય છે, પણ કર્મવિમોચન રૂપ સામાન્યની અપેક્ષાએ તે પણ એક જ છે અથવા કે જે જીવ એક વાર મોક્ષ પ્રાપ્ત કરી લે છે તે જીવને સંસારમાં ફરી જન્મ ધારણ કરવાના કારણોનો અભાવ હોવાથી ફરી જન્મ ધારણ કરવો પડતો નથી તેથી જે સ્થિતિ પ્રાપ્ત થઈ જાય તે સાદિ હોવા છતાં પણ અપર્યવસિત (અનન્ત) બની જાય છે, આ રીતે પુનઃ પ્રાપ્તિના અભાવને કારણે પણ મોક્ષ એક જ છે ॥૧૪॥

मूलम्—एगे आसवे ॥सू. १५॥

टीका—जीवस्य पुण्यपापकर्मभ्यां सह यः संयोगः स बन्धः इत्युक्तं, तस्य कारणं निरूपयितुमाह—'एगे आसवे' इति। एक आस्रवः, आस्रवन्ति=प्रविशन्ति येन कर्माण्यात्मनि स आस्रवः कर्मबन्धकारणमित्यर्थः। आस्रवस्य मिथ्यात्वादिभेदादनेकविधत्वेऽपि आस्रवसामान्यादेकत्वमिति भावः।

यद्वा—द्रव्यभावभेदादास्रवो द्विविधः, यथा जलोपरिवर्तिनावादौ छिद्रद्वारेण जलप्रवेशो भवति, यथा वा नालीरूपेण मार्गेण सरसि जलस्य प्रवेशः तत्र छिद्रा-द्रव्यास्रवः, भावास्रवस्तु इन्द्रियादिः, तेन द्वारेण हि जीवप्रदेशेषु कर्मपुद्गलानां संश्लेषो भवति। एवमास्रवस्य द्वैविध्येऽपि सामान्यादेकत्वमिति भावः॥सू. १५॥

'एगे आसवे' इति।

एक आस्रव है, एक संवर है। जीव का पुण्य और पाप के साथ जो संबंध होता है उसका नाम बंध है, ऐसा जो अभी कहा है सो इस बंध का जो कारण है वह "आत्मा में जिससे कर्म प्रवेश करते है" इस व्युत्पत्ति के अनुसार आस्रव है। यह मिथ्यात्व आदि के भेद से अनेक प्रकार का है, तो भी सामान्य की अपेक्षा से एक है।

अथवा—द्रव्य और भाव के भेद से भी आस्रव दो प्रकार का होता है। जल के ऊपर रही हुई नाव में छिद्र द्वारा जलका आना नाली मार्ग से तालाब में पानी का आना यह सब जैसे द्रव्यास्रव है। इसी तरह इन्द्रियादि द्वारा जीव के प्रदेशों में जो कर्मपुद्गलों का संश्लेष होता है यह भावास्रव है इस तरहआस्रव में द्विविधता होने पर भी सामान्य की अपेक्षा यह एक ही है॥१५॥

'एगे आसवे' इति'

આસ્રવ એક છે સવર એક છે જીવનો પુણ્ય અને પાપની સાથે જે સબધ થાય છે. તેનુ નામ બધ છે, એવુ હમણા કહેવામા આવ્યુ છે તો તે બધનુ જે કરણ છે તે "આત્મામા જે વડે કર્મ પ્રવેશ કરે છે" તે વ્યુત્પત્તિ પ્રમાણે આસ્રવ છે તે મિથ્યાત્વ આદિના ભેદથી અનેક પ્રકારના છે છતા પણ સામાન્યની અપેક્ષાએ એક છે અથવા દ્રવ્ય અને ભાવ, એ બે ભેદથી પણ આસ્રવ બે પ્રકારના છે પાણી ઉપર તરતી હોડીમા છિદ્ર દ્વારા જલનુ પેસવુ, નાળામા તળાવમા પાણીનુ આવવુ, એ બધા જેમ દ્રવ્યાસ્રવ છે તેમ ઇન્દ્રિયાદિ દ્વારા જીવના પ્રદેશમા જે કર્મપુદ્ગલોનો સશ્લેષ થાય તે ભાવાસ્રવ છે આ રીતે આસ્રવમાં દ્વિવિધતા હોવા છતા પણ સામાન્યની અપેક્ષાએ તે એક જ છે ॥૧૫॥

एगे संवरे ।सू. १९॥

आस्रवप्रतिपक्ष संवरं निरूपयति-'एगे संवरे' इति, एकः संवरः । संव्रियते निरुध्यते कर्मणः कारणं प्राणातिपातादि येन परिणामेन स संवरः । आस्रवनिरोध इत्यर्थः । स च गुप्त्यादिभिरुपायैर्भवति । संवरोपायभूतानां गुप्त्यादीनामनेके भेदाः सन्ति, तान् भेदानाश्रित्य संवरोऽनेकविधः, किंच द्रव्यभावभेदात् संवरस्य द्वैविध्यम् तथापि संवरसामान्यादेक इति भावः ॥सू. १९॥

'एगे संवर' इति।

आस्रव का प्रतिपक्षी तत्त्व संवर है। प्राणातिपात आदि जो कर्म के आने के कारण हैं वे जिस आत्मपरिणामद्वारा रोक दिये जाते हैं वह आत्मपरिणाम संवर है। अर्थात् आस्रव का निरोध होना ही संवर है। यह संवर गुप्ति आदि उपायों द्वारा होता है। संवर के उपायभूत गुप्ति आदि के अनेक भेद हैं, अतः इन भेदों की अपेक्षा संवर भी अनेक प्रकार का है, तथा द्रव्यसंवर, और भावसंवर इस तरह से भी संवर दो प्रकार है तो भी संवर सामान्य की अपेक्षा यह एक ही है।

भावार्थ-जिस प्रकार छिद्र द्वारा नाव में पानी आता है इसी प्रकार मिथ्यात्व आदि द्वारा आत्मा में कर्मरूपपानि का आना होता है। यह आना ही आस्रव है। यह आस्रव संसार का कारण है। आस्रव से बंध होता है, अतः आस्रव को बंध का कारण माना गया है। यह कर्मबंध हेतु रूप जो आस्रव है वह मिथ्यात्वादि के भेद से विविध प्रकार का है-फिर भी यहां जो उसे सूत्रकार ने एक कहा है। वह आस्रव सामान्य की अपेक्षा से कहा है। जिस प्रकार विविध वृक्षों में वृक्षत्व सामान्य

'एगे संवरे' इत्यादि

આસ્રવથી ઉલટો તત્ત્વ સંવર છે પ્રાણાતિપાત આદિ કર્મને આવવાના જે કારણો છે તેમને જે આત્મપરિણામ દ્વારા રોકવામાં આવે છે તે આત્મ પરિણામને સંવર કહે છે એટલે કે આસ્રવનો નિરોધ થવો તે જ સંવર છે તે સંવર ગુપ્તિ આદિ ઉપાયો દ્વારા થાય છે સંવરના ઉપાયભૂત ગુપ્તિ આદિના અનેક ભેદ છે તેથી તે ભેદોની અપેક્ષાએ સંવર પણ અનેક પ્રકારના છે તથા દ્રવ્યસંવર અને ભાવસંવર એવા તેના બે ભેદ પણ છે છતાં સામાન્યની અપેક્ષાએ તે એક જ છે

ભાવાર્થ—જેમ નાવમાં છિદ્ર દ્વારા પાણી પ્રવેશે છે તેમ આત્મામાં મિથ્યાત્વ આદિ દ્વારા કર્મપુદ્ગલોના પ્રવેશ થાય છે આ પ્રમાણે આવવું એને જ આસ્રવ કહે છે આ આસ્રવ જ સંસારનું કારણ જ આસ્રવથી જ બંધ થાય છે, તેથી આસ્રવને બંધનું કારણ મનાય છે તે કર્મબંધના હેતુરૂપ જે આસ્રવ છે તે મિથ્યાત્વ આદિના ભેદથી વિવિધ પ્રકારના જ, છતાં પણ તેને સૂત્રકારે એક કહેલ છે તે આસ્રવ સામાન્યની અપેક્ષાએ કહેલ છે જેમ જુદાં જુદાં વૃક્ષોમાં એક વૃક્ષત્વ

मूलम्--एगा वेयणा ॥सू १७॥

टीका-'एगा वेयणा' एका वेदना, स्वभावेन, उदीरणा करणेन वा उदयावलिकामविष्टस्य कर्मणोऽनुभवनं वेदना। यद्यपि-ज्ञानावरणीयादिभेदात् कर्मणोऽष्टविधत्वे तद्वेदनाऽप्यष्टविधा भवति, किं च विपाकोदय-प्रदेशोदय भेदाद् वेदनाया द्वैविध्यम्, तथापि वेदनासामान्यादेका भवतीति भावः ॥सू. १७॥

रहता है और उस अपेक्षा में समस्त वृक्ष एक माने जाते हैं उसी प्रकार मिथ्यादर्शन आदि में तथा द्रव्यास्रव, भावास्रव रूप एक सामान्यधर्म रहता है। इस कारण वह भी एक है। भिन्न २ नहीं।

संवर का अर्थ है-आस्रव का रुकना-जिन मार्गभूत कारणों से कर्मों का आना होता था उन मार्गों का बंद हो जाना इसी का नाम संवर है। यह संवर गुप्त्यादिक उपायों द्वारा साध्य होता है। यहां आदि पद से समिति, धर्म, अनुप्रेक्षा परीषह जय और चारित्र का ग्रहण हुआ है। गुप्ति समिति आदि के भेद से यह संवर तत्त्व अनेक प्रकार का है फिर भी आस्रव प्रतिपक्ष रूप संवर सामान्य की अपेक्षा यह तत्त्व एक ही है ॥१५।१६॥

'एगा वेयणा' इति।

टीकार्थ-एक वेदना है, एक निर्जरा है। स्वभाव से अथवा उदीरणा कारण से उदयावलिका में प्रविष्ट हुए कर्म का अनुभव करना इसका नाम वेदना है। यह वेदना ज्ञानावरणीय आदि के भेद से आठ प्रकार के कर्मों की

સામાન્ય રહે છે અને તે અપેક્ષાએ સમસ્ત વૃક્ષોને એક માનવામા આવે છે, એ જ પ્રમાણે મિથ્યા દર્શન આદિમા તથા દ્રવ્યાસ્રવ, ભાવાસ્રવમા આસ્રવરૂપ એક સામાન્ય ધર્મ રહે છે તે કારણે તે પણ એક છે તેમનામા ભિન્નતા નથી

સવર એટલે આસ્રવને રોકવા તે—જે માર્ગભૂત કારણોથી કર્મોનું આગમન થતુ હતુ તે માર્ગોનુ બધ થઈ જવુ તેનૂ નામ સવર છે તે સવર ગુપ્તિ આદિ ઉપાયોથી સાધી શકાય છે અહી 'આદિ' પદથી સમિતિ, ધર્મ, અનુપ્રેક્ષા, પરીષહ, જય અને ચારિત્ર ગ્રહણ કરવામા આવેલ છે- ગુપ્તિ, સમિતિ આદિના ભેદથી તે સવર તત્વ અનેક પ્રકારનુ છે છતા પણ આસ્રવથી ઉલટો 'સંવર' તો સામાન્ય ધર્મની અપેક્ષાએ તે તત્વ એક જ છે ॥૧૬॥

"एगा वेयणा" इति।

ટીકાર્થ-વેદના એક છે નિર્જરા એક છે સ્વભાવથી અથવા ઉદીરણા કરણથી ઉદયાવલિકામા પ્રવેશ થયેલ કર્મનો અનુભવ કરવો તેનુ નામ વેદના છે તે વેદના પ્રત્યેક જીવને જ્ઞાનાવરણીય આ આઠ પ્રકારના કર્મોની હોય છે કર્મ આઠ પ્રકારના

एगा णिज्जरा ॥सू० १८॥

यस्माद्वेदनायाः सम्यग्वेदनादेव कर्म निर्गच्छतीति तदनन्तरं कर्मपरिशटनरूपां निर्जरां निरूपयति—'एगा णिज्जरा' इति। एका निर्जरा—निर्जरणं निर्जरा विशरणं परिशटनमित्यर्थः यद्यपि साऽनेकविधा—तथाहि—अष्टविधकर्मभेदात् तन्निर्जराऽप्यष्टविधा, किंच—सा द्वादशविधतपोजन्यतया द्वादशविधा, किंच—अकामक्षुत्पिपासाशीतातपब्रह्मचर्यधारणादि नानाप्रकारजन्यतया नानाविधा, किंच—द्रव्यतो निर्जरा वस्त्रादीनामात्मनस्तु कर्मणामिति द्रव्यभावभेदात् द्विविधाऽपि भवति परन्तु निर्जरा-सामान्यापेक्षया एकैवेति भावः।

प्रत्येक जीव को होती है—अतः कर्म आठ प्रकार का होने से उनकी वेदना भी आठ प्रकार की होती है। तथा विपाकोदय और प्रदेशोदय के भेद से यह वेदना दो प्रकार की भी होती है। इस तरह वेदना में विविधता आने पर भी यह वेदना सामान्य की अपेक्षा से एक ही है ॥१७॥

'एगा णिज्जरा' इति।

टीकार्थ—वेदना के बाद आत्मप्रदेशों से जो कर्मों का परिशाटन—अलग होना ऐसा है इसी का नाम निर्जरा है। यह निर्जरा भी आठ प्रकार के कर्मों के उन उन कर्मों के झड़ने से आठ प्रकार की, तथा बारह प्रकार के तप से जन्य होने से बारह प्रकार की, और बिना इच्छा के क्षुधा, पिपासा, शीत, उष्ण के सहन करने से एवं ब्रह्मचर्य के धारण करने आदिरूप नाना प्रकार के कारणों से उत्पन्न होने से नाना प्रकार की है। तथा द्रव्य निर्जरा और भाव निर्जरा इस तरह से दो प्रकार की है। इनमें वस्त्रादिकों की निर्जरा—जीर्णदशा—द्रव्यनिर्जरा और कर्मों की निर्जरा

હોવાથી તેમની વેદના પણ આઠ પ્રકારની હોય છે, તથા વિપાકોદય અને પ્રદેશોદયના ભેદથી તે બે પ્રકારની હોય છે આ રીતે વેદનામાં વિવિધતા હોવા છતાં પણ વેદના સામાન્યની અપેક્ષાએ એક જ છે ॥૧૭॥

"एगा णिज्जरा"

વેદના કર્યા બાદ આત્મપ્રદેશોમાંથી કર્મોનું જે પરિશાટન—અલગ થવાની ક્રિયા થાય છે તે નિર્જરા પણ આઠ પ્રકારના કર્મોમાંથી તે તે કર્મોના ખરવાથી—છૂટવાથી આઠ પ્રકારની અને બાર પ્રકારનાં તપથી પેદા થતી હોવાથી બાર પ્રકારની તથા કોઈ પણ પ્રકારની ઇચ્છા વિના ક્ષુધા (ભૂખ) તૃષા શીત અને ઉષ્ણતા સહન કરવાથી અને બ્રહ્મચર્ય ધારણ કરવા આદિ રૂપ વિવિધ પ્રકારના કારણોથી ઉત્પન્ન થવાથી અનેક પ્રકારની છે તથા દ્રવ્યનિર્જરા અને ભાવનિર્જરા એવા તેના બે ભેદ છે તેમાં વસ્ત્રાદિકની નિર્જરા ભાવ નિર્જરા—જીર્ણદશા—દ્રવ્ય નિર્જરા છે અને કર્મોની નિર્જરા ભાવનિર્જરા

ननु निर्जरामोक्षयोः को भेद ? इति, उच्यते—देशतः कर्मक्षयो निर्जरा, सर्वथा सकलकर्मक्षयो मोक्ष इति ॥सू. १८॥

इतः प्रभृति आश्रयविशेषबोधकानि सप्तसूत्राण्याह—

मूलम्—जंबूदीवे दीवे एगं जोयणसयसहस्सं आयाम विक्खंभेणं पण्णत्ते ।१। अप्पइट्ठाणे नरए एगं जोयण सयसहस्सं आयामविक्खंभेणं पण्णत्ते ।२। पालए जाणविमाणे एगं जोयणसयसहस्सं आयामविक्खंभेणं पण्णत्ते ।३। सव्वट्ठसिद्धे महाविमाणे एगं जोयणसयसहस्सं आयामविक्खंभेणं पण्णत्ते ॥१–४॥

टीका—उक्तरीत्याऽऽत्मादीनां सर्वप्रवचनगतानामर्थानां प्रत्येकमेकत्वमुक्त्वाऽऽत्मपरिणामरूपाणामर्थानामेकत्वं निरूपयति—"जंबूदीवे" इत्यादि। जम्बूद्वीपो द्वीपः—जम्बूद्वीपनामको द्वीपः, 'एगं जोयणसयसहस्सं' एकं योजनशतसहस्रं लक्षैकयोजनप्रमाण इत्यर्थः, 'आयामविक्खंभेणं' आयामविष्कम्भेण—आयामेन दैर्घ्येण, विष्कम्भेण—विस्तारेण च 'पण्णत्ते' प्रज्ञप्तः—प्रवेदितः। सू. १॥

भावनिर्जरा है। इस तरह से यह निर्जरा यद्यपि अनेक प्रकारकी है—फिर भी अपने भेदों की अपेक्षा न करके यह स्वरूप सामान्य से एक ही है। निर्जरा में कर्मों का एक देश से क्षय होता है और मोक्ष में सम्पूर्णरूप से क्षय होता है ॥१८॥

अब सूत्रकार यहां से आश्रय विशेष को बोध कराने वाले सात सूत्र कहते हैं—'जम्बूद्दीवे दीवे' इत्यादि।

टीकार्थ—जम्बूद्वीप नामका द्वीप लंबाई चौड़ाई की अपेक्षा एक लाख योजन का कहा गया है। अप्रतिष्ठान नामका नरक—समस्त नरक भूमि का

છે આ રીતે તે નિર્જરા જો કે અનેક પ્રકારની છે, તો પણ ભેદોની અપેક્ષાએ ન જોતા સ્વરૂપ સામાન્યની અપેક્ષાએ જોતા તે એક જ છે નિર્જરામા કર્મોનો એકદેશથ ક્ષય થાય છે અને મોક્ષમા સંપૂર્ણપણે ક્ષય થાય છે ॥૧૮॥

હવેના સાત સૂત્રમા સૂત્રકાર આશ્રય વિશેષની સમજૂતી આપે છે—

'जंबूदीवे' इत्यादि ।

ટીકાર્થ—જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપની લમ્બાઇ તથા પહોળાઇ લાખ લાખ યોજનની દર્શાવી છે. અપ્રતિષ્ઠાન નામની સાતમી નરક ભૂમિના મધ્યમ આવાસની લંબાઇ તથા પહોળાઇ

एगा णिज्जरा ॥सू १८॥

वेदनायां सत्यामात्मप्रदेशेभ्यः कर्मपरिशटतीति वेदनानन्तर कर्मपरि शटनरूपां निर्जरां निरूपयति-'एगा णिज्जरा' इति। एका निर्जरा-निर्जरणं निर्जरा विशरण परिशटनमित्यर्थः यद्यपि साऽनेकविधा-तथाहि-अष्टविधकर्मभेदात् तन्नि र्जराऽप्यष्टविधा, किंच-सा द्वादशविधतपोजन्यतया द्वादशविधा, किंच-अकाम क्षुत्पिपासा शीतोष्णसहनब्रह्मचर्यधारणादि नानाविधकारणजन्यतया नानाविधा, किंच-द्रव्यतो निर्जरा वस्त्रादमायतस्तु कर्मणामस्य द्रव्यभावभेदात् द्विविधाऽपि भवति परन्तु निर्जरा-सामान्यात्मिका भवतीति भावः।

प्रत्येक जीव को होती है-अतः कर्म आठ प्रकार का होने से उनकी वेदना भी आठ प्रकार की होती है। तथा विपाकोदय और प्रदेशोदय के भेद से यह वेदना दो प्रकार की भी होती है। इस तरह वेदना में विविधता आने पर भी यह वेदना सामान्य की अपेक्षा से एक ही है ॥१७॥

'एगा णिज्जरा' इति।

टीकार्थ-वेदना के होने पर आत्मप्रदेशों से जो कर्मों का परिशाटन-अलग होना होता है इसी का नाम निर्जरा है। यह निर्जरा भी आठ प्रकार के कर्मों में से तत्तत्कर्मों के झरने से आठ प्रकार की, तथा बारह प्रकार के तप से जन्य होने से बारह प्रकार की, और बिना किसी इच्छा के क्षुधा, पिपासा, शीत, उष्ण के सहन करने से एवं ब्रह्मचर्य के धारण करने आदिरूप नाना प्रकार के कारणों से उत्पन्न होने से नाना प्रकार की है। तथा द्रव्य निर्जरा और भाव निर्जरा इस तरह से दो प्रकार की है। इनमें वस्त्रादिकों की निर्जरा-जीर्णदशा-द्रव्यनिर्जरा और कर्मों की निर्जरा

હોવાથી તેમની વેદના પણ આઠ પ્રકારની હોય છે તથા વિપાકોદય અને પ્રદેશોદયના ભેદથી તે બે પ્રકારની હોય છે આ રીતે વેદનામાં વિવિધતા હોવા છતાં પણ વેદના સામાન્યની અપેક્ષાએ એક જ છે ॥૧૭॥

"एगा णिज्जरा"

વેદના હોવાથી આત્મપ્રદેશોમાંથી કર્મોનું જે પરિશટન-અલગ હોવાની ક્રિયા થાય છે તે નિર્જરા પણ આઠ પ્રકારનાં કર્મોમાંથી તે તે કર્મોના ખરવાથી-છૂટવાથી આઠ પ્રકારની અને બાર પ્રકારનાં તપથી પેદા થતી હોવાથી બાર પ્રકારની તથા કોઈ પણ પ્રકારની ઈચ્છાવિના ક્ષુધા (ભૂખ), તૃષા શીત, અને ઉષ્ણતા સહન કરવાથી અને બ્રહ્મચર્ય ધારણ કરવા આદિ રૂપ વિવિધ પ્રકારના કારણોથી ઉત્પન્ન થવાથી અનેક પ્રકારની છે તથા દ્રવ્યનિર્જરા અને ભાવનિર્જરા એવા તેના બે ભેદ છે તેમાં વસ્ત્રાદિકની નિર્જરા અને નિર્જરા-જીર્ણદશા-દ્રવ્યનિર્જરા છે અને કર્મોની નિર્જરા ભાવનિર્જરા

ननु निर्जरामोक्षयोः को भेद? इति, उच्यते—देशतः कर्मक्षयो निर्जरा, सर्वथा सकलकर्मक्षयो मोक्ष इति ॥सू. १८॥

इतः प्रभृति आश्रयविशेषबोधकानि सप्तसूत्राण्याह—

मूलम्—**जंबूद्दीवे दीवे एगं जोयणसयसहस्सं आयाम विक्खंभेणं पण्णत्ते ।१। अप्पइट्ठाणे नरए एगं जोयण सयसहस्सं आयामविक्खंभेणं पण्णत्ते ।२। पालए जाणविमाणे एगं जोयणसयसहस्सं आयामविक्खंभेणं पण्णत्ते ।३। सव्वट्ठसिद्धे महाविमाणे एगं जोयणसयसहस्सं आयामविक्खंभेणं पण्णत्ते ॥१–४॥**

टीका—उत्तरीत्याऽऽत्मादीनां सर्वप्रवचनगतानामर्थानां प्रत्येकमेकत्वमुक्त्वाऽऽत्मपरिणामरूपाणामर्थानामेकत्वं निरूपयति—"जम्बूद्दीवे" इत्यादि। जम्बूद्वीपो द्वीपः—जम्बूद्वीपनामको द्वीपः, 'एगं जोयणसयसहस्सं' एकं योजनशतसहस्रं लक्षैकयोजनप्रमाण इत्यर्थः, 'आयामविक्खंभेणं' आयामविष्कम्भेण—आयामेन दैर्घ्येण, विष्कम्भेण—विस्तारेण च 'पण्णत्ते' प्रज्ञप्तः—प्रवेदितः। सू. १॥

भावनिर्जरा है। इस तरह से यह निर्जरा यद्यपि अनेक प्रकारकी है—फिर भी अपने भेदों की अपेक्षा न करके यह स्वरूप सामान्य से एक ही है। निर्जरा में कर्मों का एक देश से क्षय होता है और मोक्ष में सम्पूर्णरूप से क्षय होता है ॥१८॥

अब सूत्रकार यहां से आश्रय विशेष को बोध कराने वाले सात सूत्र कहते हैं—'जम्बूद्दीवे दीवे' इत्यादि।

टीकार्थ—जम्बूद्वीप नामका द्वीप लंबाई चौडाई की अपेक्षा एक लाख योजन का कहा गया है। अप्रतिष्ठान नामका नरक—सप्तम नरक भूमि का

છે આ રીતે તે નિર્જરા જો કે અનેક પ્રકારની છે, તો પણ ભેદોની અપેક્ષાએ ન જોતા સ્વરૂપ સામાન્યની અપેક્ષાએ જોતા તે એક જ છે નિર્જરામાં કર્મોનો એકદેશથ ક્ષય થાય છે અને મોક્ષમાં સંપૂર્ણપણે ક્ષય થાય છે ॥૧૮॥

હવેના સાત સૂત્રમાં સૂત્રકાર આશ્રય વિશેષની સમજૂતી આપે છે—

'जंबुद्दीवे' इत्यादि ।

ટીકાર્થ—જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપની લંબાઇ તથા પહોળાઇ લાખ લાખ યોજનની કહેલી છે અપ્રતિષ્ઠાન નામની સાતમી નરકભૂમિના મધ્યમ આવાસની લંબાઇ તથા પહોળાઇ

'अप्पइट्ठाणे णरए' अप्रतिष्ठानो नरकः–अप्रतिष्ठाननामको नरक –सप्तम्या नरकभूम्या मध्यम आवास इत्यर्थः । 'एगं जोयणसयसहस्सं' एकं योजन शतसहस्रं–लक्षैकयोजनप्रमाण इत्यर्थः 'आयामविक्खंभेणं' आयामविष्कम्भेण–दैर्घ्यविस्तारेण 'पण्णत्ते' प्रज्ञप्तः ॥सू २॥

'पालए' पालक–सौधर्मेन्द्रसम्बन्धी आभियोगिक पालकनामको देवस्तत्कृतं यद् वैक्रियं तद् पालकं, 'जाणविमाणे' यानविमान यान–गमन, तदर्थं विमान मित्यर्थः यद्वा–यायतेऽनेनेति यान–वाहन, तदेव विमान परियानिकमित्यर्थः । एक योजनशत–सहस्रमायामविष्कम्भेण प्रज्ञप्तम् । सू ३॥

'सव्वट्ठसिद्धे' सर्वार्थसिद्ध अनुत्तरदेवलोकसम्बधि सर्वार्थ–सिद्धनामक पञ्चमं विमान तद् सर्वतः श्रेष्ठमस्तीत्याह–'महाविमाणे' महाविमानम्, एकं योजनशतसहस्रम् आयामविष्कम्भेण प्रज्ञप्तम् ॥सू ४॥

मूलम्—अद्दा–नक्खत्ते एगतारे पण्णत्ते ॥सू ५॥

चित्ता–नक्खत्ते एगतारे पण्णत्ते ॥सू ६॥

साति–नक्खत्ते एगतारे पण्णत्ते ॥सू ७॥

मध्यम आवास–बीच का प्रस्तर–पाथडा–लंबाई चौडाई की अपेक्षा एक लाख योजन का कहा गया है। इसी तरह आयाम और विष्कंभ की अपेक्षा पालक नामका यानविमान एक लाख योजन का कहा गया है। सर्वार्थ सिद्ध नामका पांचवां महाविमान भी आयाम और विष्कंभ की अपेक्षा एक लाख योजन का कहा गया है।

भावार्थ—यह कि लंबाई चौडाई की अपेक्षा जम्बूद्वीप नामका प्रथम द्वीप अप्रतिष्ठान नामका सातवी नरक भूमि का मध्यम आवास, सौ–धर्मेन्द्र का पालक नामका यानविमान, और अनुत्तर लोक संबंधी सर्वार्थ सिद्ध नामका पंचमविमान ये चारों एक–एक लाख योजन के हैं ॥१–४॥

લાખ લાખ યોજનની બતાવી છે એજ રીતે પાલક નામનું યાનવિમાન આયામ અને વિષ્કંભની અપેક્ષાએ એક લાખ યોજનનું કહ્યું છે સર્વાર્થસિદ્ધ નામનું પાંચમું મહાવિમાન પણ આયામ અને વિષ્કંભની અપેક્ષાએ એક લાખ યોજનનું કહેલ છે

ભાવાર્થ—લંબાઈ પહોળાઈની અપેક્ષાએ જમ્બૂદ્વીપ નામનો પહેલો દ્વીપ, અપ્રતિષ્ઠાન નામની સાતમી નરકભૂમિનો મધ્યમ આવાસ સૌધર્મેન્દ્રનું પાલક નામનું યાન વિમાન અને અનુત્તર દેવલોકનું સર્વાર્થસિદ્ધ નામનું પાંચમું વિમાન, તે ચારે એક એક લાખ યોજનનાં છે ॥૧-૪॥

टीका—'अद्दानक्खत्ते' आर्द्रानक्षत्रम्, 'एगतारे' एकतारं 'पण्णत्ते' प्रज्ञप्तम् ॥सू ५॥
'चित्तानक्खत्ते' चित्रानक्षत्रम् 'एगतारे' एकतारं 'पण्णत्ते' प्रज्ञप्तम् ॥सू. ६॥
'सातिनक्खत्ते' स्वातिनक्षत्रम् एकतारं प्रज्ञप्तम् ॥सू ७॥
इतः प्रभृति अष्टादशसूत्राणि आश्रयिणां स्थित्यादिधर्माणां बोधकान्याह—

मूलम्—इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं एगं पलिओवमं ठिई पण्णत्ता ।१। इमीसेणं रयणप्पभाए पुढवीए नेरइयाणं उक्कोसेणं एगं सागरोवमं ठिई पण्णत्ता ।२। दोच्चाए पुढवीए नेरइयाणं जहन्नेणं एगं सागरोवमं ठिई पण्णत्ता ॥३॥

टीका—'इमीसे ण' इत्यादि । अस्यां खलु 'रयणप्पभाए' रत्नप्रभायां 'पुढवीए' पृथिव्याम् 'अत्थेगइयाणं' अस्त्येकेषाम्—अस्ति—विद्यते, एकेषां—केषांचित्, 'नेरइयाणं' नैरयिकाणां—नारकिणाम्, 'एगं' एकं 'पलिओवमं पल्योपमं, 'ठिई' स्थितिः, इति कृत्वा 'पण्णत्ता' प्रज्ञप्ता—प्रवेदिता जिनैरित्यर्थः । सा पल्योपमस्थितिश्चतुर्थे प्रस्तटे मध्यमाऽवगन्तव्या ॥१-३॥

'अद्दानक्खत्ते' इत्यादि ।

टीकार्थ—आर्द्रा नक्षत्र एकतारा वाला कहा है। चित्रा नक्षत्र एक तारावाला कहा है। स्वातिनक्षत्र एक तारावाला कहा है ॥७॥

अब यहां से लेकर आश्रयी जीवों की स्थिति आदि धर्मों के बोधक अठारह सूत्रों को सूत्रकार कहते हैं—'इमीसेणं रयणप्पभाए' इत्यादि ।

टीकार्थ—इस रत्नप्रभा पृथिवी में कितनेक नारकियों की एक पल्य की स्थिति जिनदेव ने कही है ॥१॥ इस रत्नप्रभा पृथिवी में नारकियों की उत्कृष्ट स्थिति एक सागर की कही है ॥२॥ द्वितीय पृथिवी में नारकियों की जघन्य स्थिति एक सागर की कही गई है ॥३॥

'अद्दानक्खत्ते' इत्यादि ।

टीकार्थ-આર્દ્રા નક્ષત્ર એક તારા વાળું છે. ચિત્રા નક્ષત્ર એક તારા વાળું છે. સ્વાતિ નક્ષત્ર પણ એક તારા વાળુ છે. ॥૭॥

હવે પછીના અઢાર સૂત્રોથી સૂત્રકાર આશ્રયી જીવોની સ્થિતિ આદિ ધર્મોની સમજૂતી આપે છે—'इमीसे णं रयणप्पभाए' इत्यादि ।

ટીકાર્થ-આ રત્નપ્રભા પૃથ્વીમા કેટલાક નારકીઓની સ્થિતિ જિનદેવે એક પલ્યની કહી છે ॥૧॥ આ રત્નપ્રભા પૃથ્વીમા નારકીઓની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ એક સાગરની કહેલ છે ॥૨॥

બીજી પૃથ્વીમા નારકીઓની જઘન્ય સ્થિતિ એક સાગરની કહેલ છે. ॥૩॥

भावार्थ--लोक के अध मध्य और उर्ध्व, इस प्रकार तीन भाग है। अधोभाग मेरुपर्वत के समतल के नीचे नौसौ योजन की गहराई के बाद गिना जाता है। या आकाश में औंधे किये हुए सकोरे के समान नीचे विस्तीर्ण है। समतल के नीचे के तथा ऊपर के नौ सौ नौ सौ योजन प्रमाण कुल अठारह सौ योजन का मध्यलोक है। जो आकार में झालर के समान बराबर लंबाई चौडाई वाला है। मध्यलोक के ऊपर का सम्पूर्ण लोक उर्ध्वलोक है जो आकार में पखावज-मृदङ्ग विशेष के समान है। अधोलोक में नरकभूमियाँ हैं। ये सात हैं, जो समश्रेणि में न होकर एक एक के नीचे हैं। इनका विशेष वर्णन शास्त्रों में हैं। पहिली भूमि का नाम रत्नप्रभा है। इसमें तेरह प्रस्तर हैं। ये मजिल्घाले घर के तले समान होते हैं। इनमें जो चौथा प्रस्तार है उसमें मध्यम स्थिति एक पल्य की है। इसी अपेक्षा सूत्रकार ने यहां एक पल्य की स्थिति "कितनेक नारकियों की है" ऐसा कहा है। इसी प्रथम नरक में नारकियों की उत्कृष्ट स्थिति एक सागरोपम की है। प्रत्येक गति के जीवों की स्थिति जघन्य और उत्कृष्ट दो तरह से कही जा सकती है। जिससे कम न पाई जा सके उसे जघन्य और जिससे अधिक न पाई जा सके उसे उत्कृष्ट कहते हैं। एक सागर की जो उत्कृष्ट स्थिति प्रथम नरक

ભાવાર્થ—લોકના ત્રણ ભાગ છે— અધોલોક, મધ્યલોક અને ઉર્ધ્વલોક મેરુ પર્વતના સમતલની નીચે નવસો યોજનની ઉંડાઇ પછીના ભાગને અધોભાગ ગણવામાં આવે છે, જે આકાશમાં ઉંધા પડેલા શકોરાની જેમ નીચે જાય તેમ વિસ્તીર્ણ થતો જાય છે સમતલની નીચે તથા ઉપરના નવ નવસો યોજનો મળીને કુલ અઢારસો યોજનનો મધ્યલોક છે, જે આકારમાં ઝાલરના જેવો બરાબર લંબાઈ પહોળાઈ વાળો છે મધ્યલોકના ઉપરનો બધો ભાગ ઉર્ધ્વલોક કહેવાય છે, જેનો આકાર મૃદંગ જેવો છે અધોલોકમાં નરકભૂમિઓ છે તે સાત છે તે એક જ હારમાં નથી પણ એકની નીચે બીજી એવી રીતે આવેલ છે. તેનું બધું વર્ણન શાસ્ત્રોમાં છે પહેલી ભૂમિનું નામ રત્નપ્રભા છે તેમાં તેર પ્રસ્તર-થર-છે તે માળ વાળા મકાનના તળ સમાન હોય છે તેમાં જે ચોથું પ્રસ્તર છે તેમાં મધ્યમ સ્થિતિ એક પલ્યની છે એ અપેક્ષાએ સૂત્રકારે કેટલાક નારકીઓની" એક પલ્યની ત્યાં સ્થિતિ છે એમ કહ્યું છે એ જ પહેલી નરકમાં નારકીઓની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ એક સાગરોપમની છે પ્રત્યેક પ્રકારના જીવોની સ્થિતિ જઘન્ય અને ઉત્કૃષ્ટ એમ બે પ્રકારે કહી શકાય છે જેના કરતાં ઓછી સ્થિતિ મળે નહીં તેને જઘન્ય કહે છે અને જેનાથી વધારે ન મળી શકે તે સ્થિતિને ઉત્કૃષ્ટ કહે છે પ્રથમ નરકમાં જે એક સાગરની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ

मूलम्--असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगइयाणं एगं पालिओवमं ठिई पण्णत्ता ।४। असुरकुमाराणं देवाणं उक्कोसेणं एगं साहियं सागरोवमं ठिई पण्णत्ता ।५। असुरकुमारिंदवज्जियाणं भोमिज्जाणं देवाणं अत्थेगइयाणं एगं पलिओवमं ठिई पण्णत्ता ॥सू. ६॥

टीका--'असुरे'त्यादि । असुरकुमाराणां देवानाम् 'अत्थेगइयाणं' अस्ति=विद्यते, एकेषां=केषाचित् एकं पल्योपमं स्थितिः प्रज्ञप्ता । 'अस्ति' इत्यस्य 'प्रज्ञप्ता' इत्यनेन सहान्वयः । असुरकुमाराणा देवानाम् उत्कर्षेण एकं साधिकं सागरोपमं स्थितिः प्रज्ञप्ता । 'असुरकुमारिंदवज्जियाण' असुरकुमारेन्द्रवर्जितानां=चमरबलिवर्जितानामित्यर्थः, 'भोमिज्जाणं' भूमिजाना-भूमौ=रत्नप्रभाभिधाया पृथिव्यां जायमानत्वाद् 'भूमिजाः' उच्यन्ते, भूमिजाः=भवनवासिनइत्यर्थः, तेषां, एकं पल्योपम मध्यमा स्थितिः प्रज्ञप्ता ॥सू. ४-६॥

में कही है वही द्वितीय नरक में जघन्यस्थिति है ॥सू. १ २-३॥

'असुरकुमाराणं' इत्यादि० ।

टीकार्थ-असुर कुमारों में कितनेक असुरकुमारों की एक पल्य की स्थिति है ॥४॥ असुर कुमार देवों में कितनेक असुरकुमार देवों की उत्कृष्ट स्थिति एक सागरोपम से कुछ अधिक है ॥५॥ असुरकुमारों के इन्द्रों को छोडकर भूमिजों की एक पल्योपम की स्थिति है ॥६॥

भावार्थ--ये भवनवासी निकाय हैं-असुरकुमार, नागकुमार, सुपर्णकुमार, विद्युतकुमार, अग्निकुमार, द्वीपकुमार, उदधिकुमार, दिशाकुमार पवनकुमार और स्तनितकुमार । इन में कितनेक असुरकुमारों की स्थिति-उत्कृष्ट स्थिति-एक पल्योपम की है। तथा-दक्षिणार्ध और उत्तरार्ध के असुरेन्द्रों

કહી છે એ જ બીજી નરકમા જઘન્ય સ્થિતિ છે ॥સૂ. ૧-૨-૩॥

'असुरकुमाराण' इत्यादि ।

ટીકાર્થ-અસુરકુમારોમા કેટલાક અસુરકુમારોની એક પલ્યની સ્થિતિ છે ॥૪॥ અસુરકુમાર દેવોમા કેટલાક અસુરકુમાર દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ એક સાગરોપમથી સહેજ વધારે છે ॥૫॥ અસુરકુમારોના ઇન્દ્રોને બાદ કરતા ભૂમિજોની એક પલ્યોપમની સ્થિતિ છે ॥૬॥

ભાવાર્થ—ભવનવાસી નિકાય આ પ્રમાણે છે—અસુરકુમાર, નાગકુમાર, સુપર્ણકુમાર વિદ્યુતકુમાર, અગ્નિકુમાર, દ્વીપકુમાર, ઉદધિકુમાર, દિશાકુમાર, પવનકુમાર અને સ્તનિતકુમાર તેમાના કેટલાક અસુરકુમારોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ એક પલ્યોપમની છે

भावार्थ--लोक के अधः मध्य और उर्ध्व, इस प्रकार तीन भाग हैं। अधोभाग मेरुपर्वत के समतल के नीचे नौसौ योजन की गहराई के बाद गिना जाता है। यह आकाश में औंधे किये हुए सकोरे के समान नीचे २ विस्तीर्ण है। समतल के नीचे के तथा ऊपर के नौ सौ नौ सौ योजन अर्थात् कुल अठारह सौ योजन का मध्यलोक है। जो आकार में झालर के समान बराबर लंबाई चौडाई वाला है। मध्यलोक के ऊपर का संपूर्ण लोक उर्ध्वलोक है जो आकार में पखावज-मृदङ्ग विशेष के समान है। अधोलोक में नरकभूमियां हैं। ये सात हैं, जो समश्रेणि में न होकर एक एक के नीचे हैं। इनका विशेष वर्णन शास्त्रों में है। पहिली भूमि का नाम रत्नप्रभा है। इसमें तेरह प्रस्तर हैं। ये मंजिलवाले घर के तले समान होते हैं। इनमें जो चौथा प्रस्तार है उसमें मध्यम स्थिति एक पल्य की है। इसी अपेक्षा सूत्रकार ने यहां एक पल्य की स्थिति "कितनेक नारकियों की है" ऐसा कहा है। इसी प्रथम नरक में नारकियों की उत्कृष्ट स्थिति एक सागरोपम की है। प्रत्येक गति के जीवों की स्थिति जघन्य और उत्कृष्ट दो तरह से कही जा सकती है। जिससे कम न पाई जा सके उसे जघन्य और जिससे अधिक न पाई जा सके उसे उत्कृष्ट कहते हैं। एक सागर की जो उत्कृष्ट स्थिति प्रथम नरक

ભાવાર્થ—લોકના ત્રણ ભાગ છે– અધ લોક, મધ્યલોક અને ઉર્ધ્વલોક મેરુ પર્વતના સમતલની નીચે નવસો યોજનની ઊંડાઈ પછીના ભાગને અધોભાગ ગણવામા આવે છે, જે આકાશમાં ઊંધા પડેલા શકોરાની જેમ નીચે જાય તેમ વિસ્તીર્ણ થતો જાય છે સમતલની નીચે તથા ઉપરના નવ નવસો યોજને એટલે કે કુલ અઢારસો યોજનનો મધ્યલોક છે, જે આકારમાં ઝાલરના જેવો બરાબર લંબાઈ પહોળાઈ વાળો છે મધ્યલોકના ઉપરનો બધો ભાગ ઉર્ધ્વલોક કહેવાય છે, જેનો આકાર મૃદંગ જેવો છે અધોલોકમાં નરકભૂમિઓ છે તે સાત છે તે એક જ હારમાં નથી પણ એકની નીચે બીજી એવી રીતે આવેલ છે. તેનુ વધુ વર્ણન શાસ્ત્રોમાં છે પહેલી ભૂમિનુ નામ રત્નપ્રભા છે તેમાં તેર પ્રસ્તર-થર-જે બે માળ વાળા ઘરના તળ સમાન હોય છે તેમાં જે ચોથુ પ્રસ્તર છે તેમાં મધ્યમ સ્થિતિ એક પલ્યની છે એ અપેક્ષાએ સૂત્રકારે કેટલાક નારકીઓની" એક પલ્યની ત્યાં સ્થિતિ છે એમ કહ્યુ છે એ જ પહેલી નરકમાં નારકીઓની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ એક સાગરોપમની છે પ્રત્યેક પ્રકારના જીવોની સ્થિતિ જઘન્ય અને ઉત્કૃષ્ટ એમ બે પ્રકારે કહી શકાય છે જેના કરતાં ઓછી સ્થિતિ મળે નહીં તેને જઘન્ય કહે છે અને જેનાથી વધારે ન મળી શકે તે સ્થિતિને ઉત્કૃષ્ટ કહે છે પ્રથમ નરકમાં જે એક સાગરની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ

पण्णत्ता ।९। जोइसियाणं देवाण एगं उक्कोसेणं एगं पलिओवमं वाससयसहस्समब्भहियं ठिई पण्णत्ता ॥सू. १०॥

टीका—'असंखिज्जे' त्यादि । 'असंखिज्जवासाउयसन्निपंचिंदियतिरिक्ख जोणियाणं' असंख्येयवर्षायुष्कसंज्ञिपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकानाम्, असंख्येयानि वर्षाणि आयुर्येषां ते, असंख्येयवर्षायुष्काः, संज्ञिनः=समनस्काः, पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकाः= पञ्चेन्द्रियाः=पञ्चेन्द्रियविशिष्टाः तिर्यञ्चो योनिर्येषां ते, एषां कर्मधारयः, हैमवतैरण्यवतवर्षयोरुत्पन्नानामित्यर्थः, केषाचित् एकं पल्योपमं स्थितिः प्रज्ञप्ता । 'असंखिज्जवासाउयगब्भवक्कंतियसंणिमणुयाण' असंख्येयवर्षायुष्कगर्भव्युत्क्रान्तिक संज्ञिमनुजानाम्, असंख्येयवर्षायुष्काः, गर्भव्युत्क्रान्तिकाः=गर्भे व्युत्क्रान्तिरुत्पत्तिर्येषां ते, गर्भोत्पन्नाः, इत्यर्थः, संज्ञिनः= समनस्काः, मनुजाः=मनुष्याः, एषां कर्मधारयः, एकेषां केषाचित् एकं पल्योपमं स्थितिः प्रज्ञप्ता । 'वाणमंतराणं' व्यन्तराणां अन्तरं नामावकाशः, तच्चेह स्थानरूपं ज्ञेयम्, विविधं भवननगरावासरूप अन्तरं स्थानं येषां ते, व्यन्तराः, तत्र भवनानि रत्नप्रभायाः प्रथमे रत्नकाण्डे उपर्यधश्च योजनशतमपहाय शेषे अष्टयोजनशतप्रमाणे मध्यभागे सन्ति । यद् वा विविधम् अन्तरं पर्वतान्तरं कन्दरान्तरं वनान्तरं वा क्रीडाया आश्रयरूपं स्थानं येषां ते व्यन्तराः, पर्वतादि स्थानेषु एते क्रीडाप्रिया भवन्ति, अतो व्यन्तरा उच्यन्ते । अथवा 'वाणमन्तरा' इत्यस्य 'वानमन्तरा' इतिच्छाया । व्युत्पत्तिस्तु वनानामन्तराणि वनान्तराणि, तेषु भवाः वानमन्तराः । अत्र मकारागमः आर्षत्वाद्वा पृषोदरादित्वात् तेषाम् उत्कृष्टा एका पल्योपमा स्थितिः प्रज्ञप्ता । 'जोइसियाणं' ज्योतिष्काणां देवाना चन्द्रविमानदेवानामित्यर्थः, उत्कर्षेण 'वाससयसहस्समब्भहियं' वर्षशतसहस्राभ्यधिकम् एकं पल्योपमं स्थितिः प्रज्ञप्ता ॥सू.७-१०॥

'असंखिज्जवासाउय' इत्यादि ।

टीकार्थ–असंख्यातवर्ष की आयुवाले संज्ञीपचेन्द्रियतिर्यंचों की-अर्थात् हैमवत और ऐरण्यवतवर्ष में उत्पन्न हुए कितनेक तिर्यञ्च योनि वालों की–एक पल्योपम की स्थिति है॥७॥ असंख्यात वर्ष की आयुवाले गर्भजसज्ञी मनुष्यों में से कितनेक मनुष्यों की स्थिति एक पल्पोपम की है ॥८॥ व्यंतर देवों

"असंखिज्जवासाउय" इत्यादि ।

टीकार्थ—"असंख्यात वर्षनां आयुष्यवाळा संज्ञीपंचेन्द्रिय तिर्यंचोनी–એटલે કે હૈમવત અને ઐરણ્યવત ક્ષેત્રમા ઉત્પન્ન થયેલ કેટલાક તિર્યંચ યોનિવાળાની એક પલ્યોપમની સ્થિતિ હોય છે ॥૭॥ અસંખ્યાત વર્ષનાં આયુષ્યવાળા ગર્ભજ સંજ્ઞી મનુષ્યોમાંથી કેટલાક મનુષ્યોની સ્થિતિ એક પલ્યોપમની ॥૮॥ વ્યંતરદેવોની

मूलम्—असंखिज्जवासाउयसन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं अत्थेगइयाणं एगं पलिओवमं ठिई पण्णत्ता ।७। असंखिज्जवासाउयगब्भवक्कंतियसण्णिमणुयाणं अत्थेगइयाणं एगं पलिओवमं ठिई पण्णत्ता ।८। वाणमंतराणं देवाणं उक्कोसेणं एगं पलिओवमं ठिई

की उत्कृष्ट स्थिति क्रमशः एक सागरोपम की और एक सागरोपम से कुछ अधिक की है। दक्षिणार्ध का अधिपति चमर और उत्तरार्ध का अधिपति बलि है। असुरकुमारों के इन दो इन्द्रों को छोडकर बाकी नौ भवनवासियों की जो एक पल्योपम की स्थिति कही है वह मध्यमस्थिति की अपेक्षा कही गई जानना चाहिये। असुरकुमार भूमिज नहीं कहलाते हैं क्यों की ये बहुत करके आवासों में और कभी भवनों में बसते हैं। तथा नागकुमार आदि नौ भवनपति प्रायः भवनों में ही रहते हैं। आवास रत्नप्रभा के पृथ्वीपिंड में से ऊपर नीचे के एक एक हजार योजन छोडकर बीच के एक लाख अठत्तर हजार योजन परिमाण भाग में सब जगह हैं पर भवन तो रत्नप्रभा के नीचे नब्बे हजार योजन परिमाण भाग में ही होते हैं। आवास बडे मंडप जैसे होते हैं और भवन नगर सदृश। भवन बाहर से गोल भीतर से समचतुष्कोण और तले में पुष्करकर्णिका जैसे होते हैं ॥सू० ४।५।६॥

તથા દક્ષિણાર્ધ અને ઉત્તરાર્ધના અસુરેન્દ્રોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ક્રમશઃ એક સાગરોપમની અને એક સાગરોપમથી થોડી વધારે છે દક્ષિણાર્ધના અધિપતિ ચમર અને ઉત્તરાર્ધના અધિપતિ બલિ છે અસુરકુમારોના એ બે ઇન્દ્રો સિવાયના બાકીના નવ ભવનવાસીઓની જે એક પલ્યોપમની સ્થિતિ બતાવવામાં આવી છે તે મધ્યમ સ્થિતિની અપેક્ષાએ બતાવેલ છે તેમ સમજવું અસુરકુમારો ભૂમિજ કહેવાતા નથી કારણ કે તેઓ ઘણે ભાગે આવાસોમાં અને ક્યારેક ભવનોમાં વસે છે તથા નાગકુમાર આદિ નવ ભવનપતિ સામાન્ય રીતે ભવનોમાં જ રહે છે રત્નપ્રભાના પૃથ્વી પિંડમાંથી ઉપર નીચેના એક એક હજાર યોજન છોડી દઈને વચ્ચેના એક લાખ અઠ્ઠોતેર હજાર યોજન પરિમાણ ભાગમાં બધી જગ્યાએ આવાસો છે, પણ ભવન તો રત્નપ્રભાની નીચેના નેવું હજાર યોજન પરિમાણ ભાગમાં જ હોય છે આવાસ મોટા મંડપ જેવાં હોય છે, અને ભવન નગર જેવાં હોય છે ભવન બહારથી ગોળ અંદરથી સમચતુષ્કોણ અને તળિયેથી પુષ્કરકર્ણિકા જેવાં હોય છે ॥સૂ.૪-૫-૬ ॥

पण्णत्ता ।९। जोइसियाणं देवाण एगं उक्कोसेणं एगं पलिओवमं वाससयसहस्समब्भहियं ठिई पण्णत्ता ॥सू. १०॥

टीका—'असंखिज्जे' इत्यादि । 'असंखिज्जवासाउयसन्निपंचिंदियतिरिक्ख जोणियाणं' असंख्येयवर्षायुष्कसंज्ञिपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकानाम्, असंख्येयानि वर्षाणि आयुर्येषां ते, असंख्येयवर्षायुष्काः, संज्ञिनः=समनस्काः, पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकाः= पञ्चेन्द्रियाः=पञ्चेन्द्रियविशिष्टाः तिर्यञ्चो योनिर्येषां ते, एषां कर्मधारयः, हैमवतैरण्यवतवर्षयोरुत्पन्नानामित्यर्थः, केषाञ्चित् एकं पल्योपमं स्थितिः प्रज्ञप्ता । 'असंखिज्जवासाउयगब्भवक्कंतियसंज्ञिमणुयाणं' असंख्येयवर्षायुष्कगर्भव्युत्क्रान्तिक संज्ञिमनुजानाम्, असंख्येयवर्षायुष्काः, गर्भव्युत्क्रान्तिकाः=गर्भे व्युत्क्रान्तिरुत्पत्तिर्येषां ते, गर्भोत्पन्नाः, इत्यर्थः, संज्ञिनः= समनस्काः, मनुजाः=मनुष्याः, एषां कर्मधारयः, एकेषां केषाञ्चित् एकं पल्योपमं स्थितिः प्रज्ञप्ता । 'वाणमंतराणं' व्यन्तराणां अन्तरं नामावकाशः, तच्चेह स्थानरूपं ज्ञेयम्, विविधं भवननगरावासरूपं अन्तरं स्थानं येषां ते, व्यन्तराः, तत्र भवनानि रत्नप्रभायाः प्रथमे रत्नकाण्डे उपर्यधश्च योजनशतमपहाय शेषे अष्टयोजनशतप्रमाणे मध्यभागे सन्ति । यद् वा विविधम् अन्तरं पर्वतान्तरं कन्दरान्तरं वनान्तरं वा क्रीडाया आश्रयरूपं स्थानं येषां ते व्यन्तराः, पर्वतादि स्थानेषु एते क्रीडाप्रिया भवन्ति, अतो व्यन्तरा उच्यन्ते । अथवा 'वाणमन्तरा' इत्यस्य 'वानमन्तरा' इतिच्छाया । व्युत्पत्तिस्तु वनानामन्तराणि वनान्तराणि, तेषु भवाः वानमन्तराः । अत्र मकारागमः आर्षत्वाद्वा पृषोदरादित्वात् तेषाम् उत्कृष्टा एका पल्योपमा स्थितिः प्रज्ञप्ता । 'जोइसियाणं' ज्योतिष्काणां देवानां चन्द्रविमानदेवानामित्यर्थः, उत्कर्षेण 'वाससय सहस्समब्भहियं' वर्षशतसहस्राभ्यधिकम् एकं पल्योपमं स्थितिः प्रज्ञप्ता ॥सू.७-१०॥

'असंखिज्जवासाउय' इत्यादि ।

टीकार्थ—असंख्यातवर्ष की आयुवाले संज्ञीपंचेन्द्रियतिर्यंचों की-अर्थात् हैमवत और ऐरण्यवतवर्ष में उत्पन्न हुए कितनेक तिर्यञ्च योनि वालों की—एक पल्योपम की स्थिति है॥७॥ असंख्यात वर्ष की आयुवाले गर्भजसंज्ञी मनुष्यों में से कितनेक मनुष्यों की स्थिति एक पल्पोपम की है ॥८॥ व्यंतर देवों

"असंखिज्जवासाउय" इत्यादि ।

ટીકાર્થ—"અસંખ્યાત વર્ષના આયુષ્યવાળા સંજ્ઞીપંચેન્દ્રિય તિર્યંચોની—એટલે કે હૈમવત અને ઐરણ્યવત ક્ષેત્રમાં ઉત્પન્ન થયેલ કેટલાક તિર્યંચ યોનિવાળાની એક પલ્યોપમની સ્થિતિ હોય છે ॥૭॥ અસંખ્યાત વર્ષના આયુષ્યવાળા ગર્ભજ સંજ્ઞી મનુષ્યોમાંથી કેટલાક મનુષ્યોની સ્થિતિ એક પલ્યોપમની ॥૮॥ વ્યંતરદેવોની

की उत्कृष्ट स्थिति एक पल्योपम की है ॥९॥ ज्योतिष्क देवों की-चन्द्रविमान देवों की-उत्कृष्टस्थिति एक लाखवर्ष अधिक एक पल्योपम की है ॥१०॥

भावार्थ—असंख्यात वर्षजीवी भोगभूमिया मनुष्य और तिर्यञ्च ही होते हैं। हैमवत और ऐरण्यवत ये क्षेत्र भोगभूमि हैं। भोगभूमि में असंज्ञीजीव नहीं होते हैं। असंख्यात वर्ष जीवी मनुष्य तीस अकर्म भूमियों में छप्पन अन्तर्द्वीपों में और कर्मभूमियों में उत्पन्न युगलिक ही हैं, परन्तु असंख्यातवर्ष जीवी तिर्यञ्च तो उक्त क्षेत्रों के अलावा ढाईद्वीप के बाहर के द्वीप समुद्रों में भी पाये जाते हैं। अकर्मभूमियों आदि में उत्पन्न मनुष्य और तिर्यञ्च की भवस्थिति एक ही नहीं है। एक पल्य से भी अधिक है। किसकी कितनी २ है।? यह अन्यशास्त्रों से जानी जा सकती है। यहां तो असंख्यातवर्ष जीवी जिन संज्ञी पंचेन्द्रिय मनुष्यों की एवं तिर्यञ्चों की स्थिति एक पल्योपम की कही गई है उनका निर्देश है। हैमवत और ऐरण्यवत क्षेत्रों के संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यञ्च और गर्भज संज्ञी पंचेन्द्रिय मनुष्य इन दोनों की एक पल्योपम की स्थिति-भवस्थिति कही है। वैसे तो तिर्यञ्चों और मनुष्यों की स्थिति उत्कृष्ट तीन पल्य की मानी गई है। व्यन्तर देवों के भवन, और नगर रूप

ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ એક પલ્યોપમની છે ॥૯॥ જ્યોતિષ્ક દેવોની-ચન્દ્ર વિમાન દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ એક પલ્યોપમ કરતાં એક લાખ વર્ષની વધારે હોય છે ॥૧૦॥

ભાવાર્થ—ભોગભૂમિયા મનુષ્ય અને તિર્યંચ જ અસંખ્યાત વર્ષના આયુષ્ય વાળા હોય છે હૈમવત અને ઐરણ્યવત એ ભોગભૂમિના ક્ષેત્રો છે ભોગભૂમિમાં અસંજ્ઞી જીવ હોતા નથી અસંખ્યાત વર્ષ જીવનારા મનુષ્યો ત્રીસ અકર્મભૂમિઓમાં છપ્પન અન્તર્દ્વીપમાં અને કર્મભૂમિઓમાં ઉત્પન્ન થતા યુગલિકો જ છે, પણ અસંખ્યાત વર્ષ જીવનારાં તિર્યંચો તો ઉપરોક્ત ક્ષેત્રો ઉપરાંત અઢી દ્વીપની બહારના દ્વીપ સમુદ્રોમાં પણ મળે છે અકર્મભૂમિઓ આદિમાં જ થતા મનુષ્ય અને તિર્યંચની ભવસ્થિતિ એક સરખી નથી એક પલ્યથી પણ અધિક છે કોની કેટકેટલી છે તે બીજા શાસ્ત્રોની મદદથી જાણી શકાય છે અહીં તો અસંખ્યાત વર્ષના આયુષ્ય વાળા જે સંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય મનુષ્યોની અને તિર્યંચોની સ્થિતિ એક પલ્યોપમની બતાવવામાં આવી તેમનો નિર્દેશ કર્યો છે હૈમવત અને ઐરણ્યવત ક્ષેત્રોના સંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય તિર્યંચ અને ગર્ભજ સંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય મનુષ્ય એ બન્નેની એક પલ્યોપમની ભવસ્થિતિ બતાવી છે આમ તો તિર્યંચો અને મનુષ્યોની સ્થિતિ ઉત્કૃષ્ટ ત્રણ પલ્યની માનવામાં આવે છે વ્યન્તર દેવોનાં ભવન, અને નગરરૂપ આવાસ અનેક

मूलम्—सोहम्मे कप्पे देवाणं जहन्नेणं एगं पलिओवमं ठिई पण्णत्ता ।११। सोहम्मे कप्पे देवाणं अत्थेगइयाणं एगं पलिओवमं

आवास अनेक प्रकार के होते हैं इसलिये ये देव व्यन्तर कहलाते हैं। इनकी वि-विविधं, अन्तरं-स्थानं येषां ते व्यन्तराः" इस प्रकार व्युत्पत्ति है। इनके भवन रत्नप्रभापृथिवी का जो प्रथम रत्नकाण्ड है उसमें ऊपर नीचे सौ सौ योजन छोडकर शेष आठ सौ (८००) योजन प्रमाण मध्यभाग में हैं। अथवा ये विविध प्रकार के पहाड और गुफाओं के अन्तरों में बसने के कारण व्यन्तर कहलाते हैं। या ये सब स्थान इनको क्रीडा करने के होते हैं, क्यों कि ये पर्वतादि स्थानों में क्रीडाप्रिय होते हैं, इसलिये भी व्यन्तर कहे जाते हैं। अथवा "वाणमन्तरा" इसकी संस्कृतछाया 'वानमन्तरा' भी होती है। वनों के अंतरों में जो हों वे वानमन्तर हैं। यहां पृषोदरादि से "म" का आगम हुआ है। इन व्यंतरदेवों की स्थिति एक पल्योपम की मानी गई है। ज्योतिष्क देवों से यहां चन्द्र के विमान के देव गृहीत हुए हैं, क्यों कि उन्हीं की स्थिति कुछ अधिक एक पल्योपम की कही हुई है। वैसे तो ग्रहों की उत्कृष्ट स्थिति एक पल्योपम की है। नक्षत्रों की उत्कृष्ट स्थिति अर्ध पल्योपम की है। तारों की उत्कृष्ट स्थिति पल्योपम का चौथा भाग है ॥७।८।९।१०॥

પ્રકારના હોય છે, તેથી તે દેવોને વ્યન્તર કહેવાય છે તેમની વ્યુત્પત્તિ આ પ્રમાણે છે—वि=विविधं, अन्तरं-स्थानं येषां ते व्यन्तराः તેમના ભવનો રત્નપ્રભા પૃથ્વીનો જે પહેલો રત્નકાંડ છે તેમાં ઉપર અને નીચે સો સો યોજન છોડીને બાકીના આઠ સો યોજન પ્રમાણ મધ્યભાગમાં છે અથવા વિવિધ પ્રકારના પહાડો અને ગુફાઓના અન્તરોમાં (સ્થાનોમાં) તથા વનોની અંદર વસવાને કારણે તેમને વ્યન્તર કહે છે અથવા તે સઘળા સ્થાનો તેમની ક્રીડા કરવાને માટે હોય છે કારણકે પર્વતાદિ સ્થાનોમાં ક્રીડા કરવી તેમને ગમે છે, તેથી પણ તેમને વ્યન્તર કહે છે. અથવા "वाणमन्तरा" ની સંસ્કૃત છાયા "वानमन्तरा" પણ થાય છે વનોમાં સ્થાનોમાં જે હોય તેમને વાનમન્તર કહે છે અહીં પૃષોદરાદિથી "म" નો આગમ થયો છે. તે વ્યન્તરદેવોની સ્થિતિ એક પલ્યોપમની માનવામાં આવે છે જ્યોતિષ્ક દેવોથી અહીં ચન્દ્રના વિમાનના દેવો ગ્રહણ કરેલ છે, કારણકે તેમની સ્થિતિ એક પલ્યોપમ કરતા કંઈક વધુ કહેલ છે આમ તો ગ્રહોની ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિ એક પલ્યોપમની છે. નક્ષત્રોની ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિ અર્ધ પલ્યોપમની છે તારાની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ પલ્યોપમના ચોથા ભાગની છે. ॥૭-૮-૯-૧૦॥

ठिई पण्णत्ता ।१२। ईसाणे कप्पे देवाण जहन्नेण साइरेगं एगं पलिओवमं ठिई पण्णत्ता ।१३। ईसाणे कप्पे देवाण अत्थेगइयाणं एगं सागरोवमं ठिई पण्णत्ता ॥ सू० १८॥

टीका—'सोहम्मे' इत्यादि । सौधर्मे कल्पे देवानां जघन्येन एकं पल्योपमं स्थितिः प्रज्ञप्ता । सौधर्मे कल्पे एकेषां केषांचिद् देवानामेकं सागरोपमं स्थितिः प्रज्ञप्ता । ईशाने कल्पे जघन्येन सातिरेकम्=साधिकम् एकं पल्योपमं स्थितिः प्रज्ञप्ता । ईशाने कल्पे एकेषां केषांचिद् देवानाम् एकं सागरोपमं स्थितिः प्रज्ञप्ता । ।सू ११-१४॥

सोहम्मे कप्पे' इत्यादि ।

शब्दार्थ—सौधर्मकल्प में देवों की जघन्य स्थिति एक पल्योपम की सौधर्म कल्प में कितनेक देवों की उत्कृष्ट स्थिति एक सागरोपम की है। ईशानकल्प में देवों की जघन्यस्थिति कुछ अधिक एक पल्य की है। ईशानकल्प में कितनेक देवों की जघन्यस्थिति एक सागरोपम की है ॥

भावार्थ—सौधर्मकल्प में देवों की उत्कृष्ट स्थिति दो सागरोपम की और ईशानकल्प में कुछ अधिक दो सागरोपम की कही गई है। सो सौधर्मकल्प में कितनेक देव ऐसे हैं कि जिनकी स्थिति एक ही सागर की होती है। इसी तरह ईशानकल्प में भी जानना चाहिये। जघन्यस्थिति सौधर्मकल्प में एक पल्योपम की, और ईशानकल्प में कुछ अधिक एक पल्योपम की है ॥११-१४॥

"सोहम्मे कप्पे" इत्यादि ।

શબ્દાર્થ—સૌધર્મકલ્પમાં દેવોની જઘન્ય સ્થિતિ એક પલ્યોપમની છે સૌધર્મ કલ્પમાં કેટલાક દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ એક સાગરોપમની છે ઇશાન કલ્પમાં દેવોની જઘન્ય સ્થિતિ એક પલ્યથી થોડી વધારે છે ઇશાનકલ્પમાં કેટલાક દેવોની જઘન્ય સ્થિતિ એક સાગરોપમની છે

ભાવાર્થ—સૌધર્મકલ્પમાં દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ બે સાગરોપમની અને ઇશાન કલ્પમાં બે સાગરોપમથી થોડી વધારે બતાવી છે સૌધર્મકલ્પમાં કેટલાક એવા પણ દેવો છે કે જેમની સ્થિતિ એક જ સાગરની હોય છે એ જ પ્રમાણે ઈશાનકલ્પમાં એક પલ્યોપમથી થોડી વધારે છે ॥૧૧-૧૪॥

मूलम्--जे 'देवा सागरं सुसागरं सागरकंतं भवं मणुं माणुसोत्तरं लोगहियं [विमाणं] देवात्ताए उववण्णा, तेसिं णं देवाणं उक्कोसेणं एगं सागरोवमं [ठि]ई पण्णत्ता ।१५। ते णं देवा एगस्स अद्धमासस्स आणमंति वा पाणमंति वा उस्ससंति वा नीससंति वा ।१६ तेसिं णं देवाणं एगस्स वाससहस्सस्स आहारट्ठे समुप्पज्जइ ।१७। संतेगइया भवसिद्धिया जे जीवा ते एगे णं भवग्गहणेणं सिज्झिस्संति बुज्झिस्संति मुच्चिस्संति परिनिव्वाइस्संति सव्वदुक्खाणमंतं करिस्संति ।सू० १८॥

टीका--'जे देवा' इत्यादि । ईशानाभिधेयस्य द्वितीयदेवलोकस्य सप्तमे प्रस्तटे स्थितानि यानि सागर-सुसागर-सागरकान्त-भवमनु-मानुषोत्तर-लोकहिताख्यानि सप्तविमानानि सन्ति, तत्र उत्पन्ना ये देवास्तेषामुत्कर्षेण एक सागरोपम स्थितिः । अत्र देवानामेव एक सागरोपमं स्थितिः, न तु देवीनाम तासां सागरोपमस्थितेरभावात् । ते खलु देवा अर्द्धमासस्यान्ते आनन्ति= अन्तरुच्छ्वासं गृह्णन्ति, प्राणन्ति=अन्तर्निःश्वासं गृह्णन्ति, उच्छ्सन्ति=बाह्यमुच्छ्वास

'जे देवा सागरं' इत्यादि ।

टीकार्थ-ईशान नामक द्वितीय देवलोक के सातवें प्रस्तर में सागर, सुसागर सागरकान्त, भव, मनु, मानुषोत्तर और लोकहित, ये सात विमान हैं । इन विमानों में उत्पन्न हुए जो देव हैं उनकी उत्कृष्टस्थिति एक सागरोपम की होती है। सागरोपमकी स्थिति देवों की ही होती है, देवियों की नहीं । ये देव एक पक्ष के अन्त में भीतर में उच्छ्वास लेते हैं और एक पक्ष के अन्त में ही भितर में निःश्वास लेते हैं इसी प्रकार

"जे देवा सागरं" इत्यादि ।

टीकार्थ-ईशान नामना बीजा देवलोकना सातमा प्रस्तरमां सागर, सुसागर, सागरकान्त, भव, मानुषोत्तर, अने लोकहित, ए सात विमान छे ते विमानोमा उत्पन्न थयेला जे देवो छे तेमनी उत्कृष्ट स्थिति एक सागरोपमनी होय छे, देवोनी ज स्थिति सागरोपमनी होय छे देवीओनी नही ते देवो एक पखवाडियाने अंते अंदर उच्छ्वास ले छे अने एक पखवाडियाने अंते अंदर निःश्वास ले छे

एकन्ति, नि श्वसन्ति=श्वासनिःश्वासं गृह्णन्ति, तेषामाहारसंज्ञा च मासद्वयानन्तर भवति। 'संगइया' सन्ति एके च केचिद् भवसिद्धिका जीवास्ते एकेन भवग्रहणेन सेत्स्यन्ति, मोक्ष्यन्ति, मोक्ष्यन्ति, परिनिर्वास्यन्ति, सर्वदुःखानामन्तं करिष्यन्ति ॥सू १५-१८॥

सामान्यनयमाश्रित्य अथ द्वितीय समवायाङ्गं एकत्वेन वस्तु मभिधाय साम्प्रत विशेषनयमाश्रित्य द्वित्वेन वस्तु आह—

मूलम्—दो दंडा पन्नत्ता, त जहा—अट्ठादंडे चेव अणट्ठादंडे चेव। दुवे रासी पण्णत्ता, त जहा—जीवरासी चेव अजीवरासी चेव। दुविहे बन्धणे पण्णत्ते, त जहा—रागबंधणे चेव दोसबंधणे चेव। पुव्वाफग्गुणी नक्खत्ते दुतारे पण्णत्ते, उत्तराफग्गुणी नक्खत्ते दुतारे पण्णत्ते। पु०वाभद्दवया नक्खत्ते दुतारे पण्णत्ते। उत्तराभद्दवया नक्खत्त। दुतारे पण्णत्ते ॥सू० ८॥

एक महिने के अन्त में बाहर में उच्छ्वास लेते है और एक महिने के अन्त में बाहर में निश्वास लेते हैं। इन्हें आहारसंज्ञा एक हजार वर्ष बाद होती है। कितनेक ऐसे जीव होते हैं जो भवसिद्धिक होते हैं, वे एक ही भव करके सिद्ध अवस्था को प्राप्त करने वाले होंगे आत्मा के अनंत ज्ञानादिक गुणों का भोग करने वाले होंगे, समस्तकर्मों से छूटने वाले होंगे, सब प्रकार से कृतकृत्य हो जायेंगे, और सब प्रकार के दुःखों का अंत करने वाले होंगे ॥१५-१८॥

इस प्रकार सामान्य नय की अपेक्षा से वस्तुओं में एक संख्या का कथन कर अब सूत्रकार उनमें विशेष नयकी अपेक्षा लेकर द्वितीय

આ પ્રમાણે એક મહિનાને અંતે બહાર ઉચ્છવાસ લે છે અને એક મહિનાને અંતે બહાર નિશ્વાસ લે છે તેમને એક હજાર વર્ષ પછી આહાર સંજ્ઞા થાય છે કેટલાક એવા જીવો હોય છે કે જે ભવસિદ્ધિક હોય છે તેઓ એકજ ભવ કરીને સિદ્ધિ અવસ્થા પ્રાપ્ત કરનાર થશે, આત્માના અનંત જ્ઞાનાદિક ગુણોનો ઉપભોગ કરનાર થશે, સમસ્ત કર્મોમાંથી છૂટનારા થશે, દરેક રીતે કૃતકૃત્ય થશે અને બધા પ્રકારનાં દુઃખોનો અંત લાવનાર થશે ॥૧૫ ૧૮॥

આ પ્રમાણે સામાન્ય નયની અપેક્ષાએ વસ્તુઓમાં એક સંખ્યાનું કથન કરીને હવે સૂત્રકાર તેમનામાં વિશેષ નયની અપેક્ષાએ કરીને દ્વિતીય સમવાયમાં બે, બેની

टीका–'दो दंडा' इत्यादि। द्वौ दण्डौ प्रज्ञप्तौ, तद्यथा–अर्थदण्डश्च अनर्थदण्डश्चैव। दण्डः प्राणातिपातादिः, अर्थाय=इन्द्रियादिप्रयोजनाय यो दण्डः सोऽर्थदण्डः, तद्भिन्नो दण्डोऽनर्थदण्डः। द्वौ राशी प्रज्ञप्तौ, तद्यथा–जीवराशिश्च, अजीवराशिश्च। द्विविधे बन्धने प्रज्ञप्ते, तद्यथा रागबन्धन च दोषबन्धन च। पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र द्वितारं प्रज्ञप्तम्। उत्तराफल्गुनी नक्षत्र द्वितारं प्रज्ञप्तम्। पूर्वभाद्रपद नक्षत्र द्वितारं प्रज्ञप्तम्। उत्तराभाद्रपदं नक्षत्रं द्वितार प्रज्ञप्तम् ॥सू. ८॥

मूलम्—इमीसे णं रयणप्पहाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरयियाणं दो पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। दोच्चाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं दो पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। दोच्चाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं दो सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगइयाणं दो पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। असुरकुमारिंदवज्जियाणं भोमिज्जाणं देवाणं उक्कोसेणं देसूणाइं दो पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। असंखिज्जवासाउयसन्निपंचेदिंय तिरिक्खजोणियाणं अत्थेगइयाणं दो पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। असंखिज्जवासाउय-

समवाय में दो दो की संख्या का कथन करते हैं–'दो दंडा पन्नत्ता इत्यादि।

टीकार्थ–दंड तीर्थंकरों ने दो प्रज्ञप्त किये हैं वे इस प्रकार हैं–एक अर्थदण्ड और दूसरा अनर्थदंड। राशी दो कही हैं, वे इस प्रकार है–एक जीवराशि दूसरी अजीव राशि। बंधन दो प्रकारके कहे है, वे ये है-एक रागबंध और दूसरा द्वेषबंध। पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र दो तारोंवाला उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र दो तारोंवाला, पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र दो तारोंवाला और उत्तराभद्रपदनक्षत्र दो तारोंवाला कहा है ॥८॥

સંખ્યાનુ કથન કરે છે—दो दंडा पन्नत्ता इत्यादि।

ટીકાર્થ–તીર્થંકરોએ દંડ બે બતાવ્યા છે તે આ પ્રમાણે છે-પહેલો અર્થ દંડ અને બીજો અનર્થદંડ રાશી બે બતાવી છે-પહેલી જીવ રાશિ અને બીજી અજીવ રાશિ બંધન બે પ્રકારના છે—(૧) રાગબંધ અને (૨) દ્વેષબંધ પૂર્વાફાલ્ગુની નક્ષત્ર બે તારવાળુ ઉત્તર-ફાલ્ગુની નક્ષત્ર બે તારાવાળુ, પૂર્વાભાદ્રપદ નક્ષત્ર બે તારાવાળુ, અને ઉત્તરા ભાદ્રપદ નક્ષત્ર બે તારાવાળુ દર્શાવ્યુ છે ॥૮॥

गब्भवक्कतिय सन्निमाणुस्साण अत्थेगइयाण दो पलिओवमाइ ठिई पण्णत्ता ॥ सू ९॥

टीका—'इमीसे' इत्यादि । नैरयिकाणां रत्नप्रभायाश्चतुर्थे प्रस्तटे द्विपल्योपमा मध्यमा स्थितिः, तथा द्वितीयाया षष्ठे प्रस्तटे द्विसागरोपमा मध्यमा स्थितिर्ज्ञेया। असुरकुमारेन्द्र (चमरबलि) वर्जितभवनवासिनामौदीच्यनागकुमारादीनां 'देसूणे' देशोने द्वे पल्योपम स्थिति प्रज्ञप्ता । हरिवर्षरम्यकवर्षोत्पन्नासंख्येयायुषां पञ्चेन्द्रियाणां तिरश्चां मानुषाणां च द्विपल्योपमा स्थितिर्विज्ञेया ॥९॥

'इमीसे णं' इत्यादि।

टीकार्थ—इस रत्नप्रभा पृथिवी में कितनेक नारकियों की चौथे प्रस्तर में दो पल्योपम की मध्यम स्थिति कही गई है। द्वितीय पृथिवी में कितनेक नारकियों की भी स्थिति दो पल्योपम की कही गई है। और इसी द्वितीय पृथिवी में कितनेक नारकियो की दो सागरोपम की स्थिति कही गई है। सो यह छठवें प्रस्तर की अपेक्षा मध्यमस्थिति कही हुई है ऐसा जानना चाहिये। असुरकुमार देवों में कितनक देवों की पल्योपम की स्थिति कही गई है। असुरकुमारों के चमर और बलि, इन दो इन्द्रों को छोडकर जो उत्तरार्ध के नागकुमार आदि भवनवासी देवों के भूतानंद आदि नव इन्द्र हैं उनकी देशोन दो पल्य की स्थिति कही गई है। असंख्यातवर्ष की आयुवाले हरि वर्ष और रम्यकवर्ष में उत्पन्न कितनेक भोगभूमियां पंचेन्द्रिय तिर्यंचों की दो पल्योपम की स्थिति कही गई है। इसी तरह असंख्यात वर्ष की आयुवाले गर्भज संज्ञी पंचेन्द्रिय

"इमीसे णं" इत्यादि।

टीकार्थ—આ રત્નપ્રભા પૃથ્વીમાં કેટલાક નારકીઓની ચોથા પ્રસ્તરમાં બે પલ્યોપમની સ્થિતિ બતાવવામા આવી છે બીજી પૃથ્વીમાં કેટલાક નારકીઓની સ્થિતિ પણ બે પલ્યોપમની કહેલ છે અને એ જ બીજી પૃથ્વીમાં કેટલાક નારકીઓની સ્થિતિ બે સાગરોપમની કહેલ છે તો તે છઠ્ઠાં પ્રસ્તરની અપેક્ષાએ મધ્યમ સ્થિતિ કહેલ છે તેમ સમજવું અસુરકુમાર દેવોમાં કેટલાક દેવોની પલ્યોપમની સ્થિતિ કહેલ છે અસુરકુમારોના ચમર અને બલિ એ બે ઇન્દ્રો સિવાયના ઉત્તરાર્ધના નાગકુમાર આદિ ભવનવાસી દેવોના ભૂતાનંદ આદિ જે નવ ઇન્દ્રો છે તેમની બે પલ્યથી સહેજ ઓછી સ્થિતિ બતાવી છે અસંખ્યાત વર્ષના આયુષ્યવાળા હરિવર્ષ અને રમ્યક વર્ષમાં ઉત્પન્ન થયેલ કેટલાક ભોગભૂમિના પંચેન્દ્રિય તિર્યંચોની સ્થિતિ બે પલ્યોપમની કહેલ છે એ જ પ્રમાણે અસંખ્યાત વર્ષના આયુષ્યવાળા ગર્ભજ સંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય એવા

मूलम्--सोहम्मे कप्पे अत्थेगइयाणं देवाणं दो पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। ईसाणे कप्पे अत्थेगइयाणं देवाणं दो पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। सोहम्मे कप्पे अत्थेगइयाणं देवाणं उक्कोसेणं दो सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। ईसाणे कप्पे देवाणं उक्कोसेणं साहियाइं दो सागरोमाइं ठिई पण्णत्ता। सणंकुमारे कप्पे देवाणं जहण्णेणं दो सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। माहिंदे कप्पे देवाणं जहण्णेणं दो सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता ॥सू. १०॥

टीका—'सोहम्मे' इत्यादि। सौधर्मे ईशाने च कल्पे केषांचिद् देवानां द्विसागरोपमा स्थितिः। सौधर्मे कल्पे केषाचिद् देवानामुत्कृष्टतो द्विसागरोपमा स्थितिः। ईशाने कल्पे तु देवानामुत्कृष्टतः साधिका द्विसागरोपमा स्थितिः प्रज्ञप्ता। सनत्कुमारे कल्पे देवानां जघन्यतो द्विसागरोपमा स्थितिः : माहेन्द्रे कल्पे तु देवानां जघन्यतः साधिका द्विसागरोपमा स्थितिरवसेया ॥सू.१०॥

कितनेक मनुष्यों की दो पल्योपम की स्थिति कही गई है। यह स्थिति भी हरिवर्ष और रम्यक वर्ष क्षेत्र की अपेक्षा कही गई जाननी चाहिये ॥९॥

'सोहम्मे कप्पे' इत्यादि।

टीकार्थ—सौधर्मकल्प में और ईशानकल्प में कितनेक देवों की दो सागरोपम की स्थिति कही गई है सो सौधर्मकल्प में कितनेक देवों की उत्कृष्ट स्थिति दो सागरोपम की है, परन्तु जो दूसरा ईशानकल्प है उस में देवों की स्थिति दो सागरोपम से कुछ अधिक स्थिति है। सनत्कुमार कल्प में देवों की जघन्य स्थिति दो सागरोपम से कुछ अधिक है ॥१०॥

કેટલાક મનુષ્યોની સ્થિતિ બે પલ્યોપમની કહેલ છે તે સ્થિતિ પણ હરિવર્ષ અને અને રમ્યકવર્ષ ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ કહેવામા આવી છે તેમ સમજવું ॥૯॥

"सोहम्मे कप्पे" इत्यादि।

ટીકાર્થ–સૌધર્મકલ્પમાં અને ઇશાનકલ્પમા કેટલાક દેવોની બે સાગરોપમની સ્થિતિ કહેલ છે તો સૌધર્મકલ્પમાં કેટલાક દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ બે સાગરોપમની છે. પણ જે બીજુ ઇશાનકલ્પ છે તેમા દેવોની સ્થિતિ બે સાગરોપમથી થોડી વધારે છે. સનત્કુમાર કલ્પમા દેવોની જઘન્ય સ્થિતિ બે પ્રકારની છે, પણ માહેન્દ્રકલ્પમા દેવોની જઘન્ય સ્થિતિ બે સાગરોપમથી થોડી વધારે છે ॥૧૦॥

मूलम्—जे देवा सुभ सुभकत सुभवण्ण सुभगंध सुभलेस सुभफास सोहम्मवडिंसग विमाण देवत्ताए उववण्णा, तेसिं णं देवाणं उक्को सेणं दो सागरोवमाई ठिई पण्णत्ता, ते णं देवा दोण्हं अद्धमासाणं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा, तेसिं देवाणं दोहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जइ । अत्थेगइया भवसिद्धिया जीवा जे दोहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति, बुज्झिस्संति मुच्चिस्संति परिनिव्वाइस्संति सव्वदुक्खाणमंतं करिस्संति ॥ सू. ११॥

टीका--'जे देवा' इत्यादि । ये देवाः शुभ-शुभकान्त-शुभवर्ण-शुभगन्ध-शुभलेश्य-शुभस्पर्श-सौधर्मावतंसकनामकेषु सप्तसु विमानेषु देवत्वेन उत्पन्ना, ते खलु देवा द्वाभ्यामर्धमासाभ्याम्–मासेनेत्यर्थः । आहारसंज्ञा च तेषां द्विवर्षसहस्रानन्तरमुत्पद्यते । ये खलु तत्र भवसिद्धिका जीवाः सन्ति ते द्विभवग्रहणेन सेत्स्यन्ति, भोत्स्यन्ति, परिनिर्वास्यन्ति सर्वदुःखानामन्तं करिष्यन्ति ॥सू. ११॥

'जे देवा' इत्यादि ।

टीकार्थ–जो देव शुभ, शुभकान्त, शुभवर्ण, शुभगंध, शुभलेश्य, शुभस्पर्श और सौधर्मावतंसक, इन सात विमानों में जो जीव देवरूप से उत्पन्न होते हैं उनकी स्थिति उत्कृष्टरूप से दो सागरोपम की होती है। ये देव दो पक्षमें अर्थात् एक माह में–बाह्य आभ्यन्तरिक उच्छ्वास निश्वास लेते हैं। उन देवों को आहार संज्ञा दो हजार वर्ष के अनन्तर उत्पन्न होती है। जो वहां भवसिद्धिक जीव होते हैं वे मनुष्य के दो भव करके सिद्धिगति को प्राप्त करेंगे, आत्मा के अनंत ज्ञानादिक गुणों का

"जे देवा" इत्यादि ।

टीकार्थ शुभ शुभकान्त, शुभवर्ण, शुभगंध शुभलेश्य शुभस्पर्श, अने सौधर्मावतंसक, मे सात विमानोमां जे जीवो देव रूपे उत्पन्न थाय छे तेमनी स्थिति उत्कृष्ट रूपे बे सागरोपमनी होय छे ते देवो बे पखवाडियामां अेटले के महिने–बहार तथा अंदर उच्छ्वास निश्वास ले छे ते देवोने बे हजार वर्ष बाद आहार संज्ञा उत्पन्न थाय छे त्यां जे भवसिद्धिक जीव होय छे तेओ मनुष्यना बे भव करीने सिद्धिगति प्राप्त करशे, आत्माना अनंत ज्ञानादिक गुणोनो उपभोग करशे, समस्त

अथ तृतीयसमवायाङ्गमाह—

मूलम्—तओ दंडा पण्णत्ता, तं जहा—मणदंडे, वयदंडे, कायदंडे। तओ गुत्तीओ पण्णत्ता, तं जहा—मणगुत्ती, वयगुत्ती, कायगुत्ती,। तओ सल्ला पण्णत्ता, तं जहा—मायासल्लेणं, नियाणसल्लेणं, मिच्छादंसणसल्लेणं। तओ गारवा पण्णत्ता, तं जहा—इड्ढीगारवे णं रसगारवे णं सायागारवे णं। तओ विराहणा पण्णत्ता, तं जहा—नाण विराहणा, दंसण विराहणा, चरित्तविराणा। मिगसिर नक्खत्ते तितारे पण्णत्ते पुस्स नक्खत्ते तितारे पण्णत्ते, जेट्ठा नक्खत्ते तितारे पण्णत्ते, अभिइ नक्खत्ते तितारे पण्णत्ते सवण नक्खत्ते तितारे पण्णत्ते, अस्सिणि नक्खत्ते तितारे पण्णत्ते, भरिणी नक्खत्ते तितारे पण्णत्ते ॥१२॥

टीका—'तओ दंडा' इत्यादि। दण्डयते=चारित्र्यादिविनाशेन निःसारी क्रियते आत्मा येनासौ दण्डः, स हि त्रिविधः-मनोदण्डः, वचोदण्डः, कायदण्डश्च। दुष्प्रयुक्तेन मनसाऽऽत्मसंबन्धो दण्डः मनोदण्डः, एवमितरावपि विज्ञेयौ। तिस्रो गुप्तयः—मनोगुप्तिः, वचोगुप्तिः, कायगुप्तिश्चेति। गुप्तिर्गोपनम्—अशुभप्रवृत्तिनिरोधपूर्वकं शुभप्रवृत्तौ प्रवर्तनम्, त्रीणि शल्यानि प्रज्ञप्तानि—शल्यं हि शल्यते—

उपभोग करेंगे, समस्तकर्मों से आत्यंतिक रूप में छूट जावेंगे। तदा कृतकृत्य हो जावेंगे और समस्तप्रकार के दुःखों का अन्त करेंगे ॥११॥

अब सूत्रकार तृतीय समवाय को प्रकट करते हैं 'तओ दंडा' इत्यादि।

टीकार्थ—चारित्र आदि को विनाश के द्वारा निःसार बना दी जाती है उसका नाम दंड है, यह दंड तीन प्रकार का भगवान् ने कहा है। वे उसके तीन प्रकार ये हैं—मनोदंड, वचनदंड और कायदंड। गुप्ति—तीनप्रकार की है, जैसे—मनोगुप्ति, वचनगुप्ति और कायगुप्ति। शल्य तीन प्रकार के हैं,

---

કર્મોનો આત્યંતિક ક્ષય કરશે, તથા કૃતકૃત્ય થઇ જશે, અને સમસ્ત પ્રકારના દુઃખોનો અન્ત લાવશે ॥૧૧॥

હવે સૂત્રકાર ત્રીજું સમવાય પ્રગટ કરે છે—"तओ दंडा" इत्यादि।

ટીકાર્થ—ચારિત્ર આદિના વિનાશથી આત્માને જેનાથી નિસાર બનાવી દેવામાં આવે છે તેનું નામ દંડ છે તે દંડ ત્રણ પ્રકારના ભગવાને બતાવ્યા છે—(૧) મનોદંડ, (૨) વચનદંડ (૩) કાયદંડ ગુપ્તિ ત્રણ પ્રકારની છે—(૧) મનોગુપ્તિ, (૨) વચનગુપ્તિ

मूलम्—जे देवा सुभ सुभकंत सुभवण्ण सुभगंध सुभलेस सुभफास सोहम्मवडिंसग विमाण देवत्ताए उववण्णा, तेसिं णं देवाणं उक्कोसेणं दो सागरोवमाई ठिई पण्णत्ता, ते णं देवा दोण्हं अद्धमासाणं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा, तेसिं देवाणं दोहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुपज्जइ । अत्थेगइया भवसिद्धिया जीवा जे दोहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति, बुज्झिस्संति मुच्चिस्संति परिनिव्वाइस्संति सव्वदुक्खाणमंतं करिस्संति ॥ सू ११॥

टीका--'जे देवा' इत्यादि । ये देवाः शुभ-शुभकान्त-शुभवर्ण-शुभगन्ध-शुभलेश-शुभस्पर्श-सौधर्मावतंसकनामकेषु सप्तसु विमानेषु देवत्वेन उत्पन्ना, ते खलु देवा पाक्षाभ्यन्तरिकायुच्छ्वासनिःश्वासौ द्वाभ्यामर्धमासाभ्याम्-मास नेत्यर्थः । आहारसंज्ञा च तेषां द्विसहस्रवर्षानन्तरमुत्पद्यते । ये खलु तत्र भवसिद्धिका जीवा' सन्ति ते द्विभवग्रहणेन सेत्स्यन्ति, मोक्ष्यन्ति, परिनिर्वास्यन्ति सर्वदुःखानामन्तं करिष्यन्ति ॥सू ११॥

'जे देवा' इत्यादि ।

टीकार्थ–जो देव शुभ, शुभकान्त, शुभवर्ण, शुभगंध, शुभलेश्य, शुभस्पर्श और सौधर्मावतंसक, इन सात विमानों में जो जीव देवरूप से उत्पन्न होते हैं उनकी स्थिति उत्कृष्टरूप से दो सागरोपम की होती है। वे देव दो पक्षमें अर्थात् एक माह में-बाह्य आभ्यन्तरिक उच्छ्वास निश्वास लेते हैं। उन देवों का आहार संज्ञा दो हजार वर्ष के अनन्तर उत्पन्न होती है। जो यहां भवसिद्धिक जीव होते हैं वे मनुष्य के दो भव करके सिद्धिगति को प्राप्त करेंगे, आत्मा के अनन्त ज्ञानादिक गुणों का

"जे देवा" इत्यादि ।

टीकार्थ शुभ शुभकान्त शुभवर्ण, शुभगंध शुभलेश्य शुभस्पर्श अने सौधर्मावतंसक, ए सात विमानोमां जे जीवो देव रूपे उत्पन्न थाय छे तेमनी स्थिति उत्कृष्ट रूपे बे सागरोपमनी होय छे ते देवो बे पखवाडियामां एटले के महिने-बहार तथा अंदर उच्छ्वास-निश्वास ले छे ते देवोने बे हजार वर्ष बाद आहार संज्ञा उत्पन्न थाय छे त्यां जे भवसिद्धिक जीव होय छे तेओ मनुष्यना बे भव करीने सिद्धिगति प्राप्त करशे, आत्माना अनंत ज्ञानादिक गुणोनो उपभोग करशे, समस्त

भावार्थ—जिसके संबंध से आत्मा अपने चारित्र का विनाश कर निस्सार बन जाता है उस का नाम दंड है। दुष्प्रयुक्त मन के संबंध से आत्मा में कर्म वर्गणाओं का जो कर्मरूप से परिणमन होता है इसका नाम मनोदंड है। इसी तरह दुष्प्रयुक्त वचन के द्वारा और दुष्प्रयुक्त काय के द्वारा भी आत्मा को दंड का पात्र होना पडता है इसलिये मन वचन और कायके-भेद से दंड को तीन प्रकार का कहा गया है। मन वचन और काय का भले प्रकार निरोध करना इसका नाम गुप्ति है। यह गुप्ति भी तीन प्रकार की है-मनोगुप्ति-मन को अशुभ प्रवृत्ति से हटाकर शुभ प्रवृत्ति में लगाना, वचनगुप्ति-वचन को अशुभ प्रवृत्ति से हटाकर शुभ प्रवृत्ति में लगाना अर्थात्-बोलने के प्रत्येक प्रसंग पर या तो वचन का नियमन करना या प्रसंग पाकर मौन धारण कर लेना वचनगुप्ति है। कायगुप्ति-किसी भी चीज के लेने व धरने में अथवा बैठने, उठने, चलने आदि में कर्तव्य अकर्तव्य का विवेक हो ऐसे शारीरिक व्यापार को नियमन करना ही कायगुप्ति है। गुप्ति का जीवन के निर्माण में बडा हाथ है। क्यों कि भवबंधन से मुक्ति इसके बिना नहीं मिलती। गुप्ति में मात्र अशुभ प्रवृत्ति से हटकर शुभप्रवृत्ति में प्रवृत्त होना होता है। चारित्र के साथ

છે જયેષ્ઠા નક્ષત્ર ત્રણ તારાવાળુ છે અશ્વિની નક્ષત્ર ત્રણ તારાઓવાળુ છે અને ભરણી નક્ષત્ર ત્રણ તારાઓવાળુ છે

ભાવાર્થ—જેના સંબંધથી આત્મા પોતાના ચારિત્રને વિનાશ કરીને નિઃસાર બની જાય છે તેનુ નામ દંડ છે દોષયુક્ત મનના સંબંધથી આત્મામા કર્મવર્ગણાઓનુ જે કર્મરૂપે પરિણામ થાય છે, તેનુ નામ મનોદંડ છે એ જ રીતે દોષયુક્ત વચન દ્વારા અને દોષયુક્ત કાયા દ્વારા પણ આત્માને દંડને પાત્ર થવુ પડે છે તેથી મન, વચન અને કાયાના ભેદથી દંડના ત્રણ પ્રકાર દર્શાવ્યા છે મન, વચન, અને કાયાનો સારી રીતે નિરોધ કરવો તેને ગુપ્તિ કહે છે. તે ગુપ્તિ પણ ત્રણ પ્રકારની છે—મનોગુપ્તિ-મનને અશુભ પ્રવૃત્તિથી દૂર રાખીને શુભ પ્રવૃત્તિમા જોડવુ વચનગુપ્તિ—વચનને અશુભ પ્રવૃત્તિમાથી હટાવી લઇને શુભ પ્રવૃત્તિમા જોડવા, એટલે કે બોલવાના દરેક પ્રસંગે વાણીનુ નિયમન કરવુ કે પ્રસંગોપાત મૌન ધારણ કરવુ તે વચનગુપ્તિ છે કાયગુપ્તિ-કોઇ પણ ચીજ લેવામા કે રાખવામા અથવા બેસવા ઉઠવા, ચાલવા આદિ ક્રિયામા કર્તવ્ય અકર્તવ્યનો વિવેક રહે એ રીતે શારીરિક પ્રવૃત્તિયોનુ નિયમન કરવુ તે કાયગુપ્તિ કહેવાય છે જીવનનિર્માણમા ગુપ્તિનો મોટો ફાળો રહે છે કારણ કે તેના વિના ભવબંધનમાથી મુક્ત થઇ શકાતુ નથી ગુપ્તિમા માત્ર અશુભ પ્રવૃત્તિયોથી દૂર રહીને શુભ પ્રવૃત્તિયોમા પ્રવૃત્ત થવાનુ હોય

–बाध्यते अनेनेति शल्यम्, तच्च द्रव्यभावभेदाद्द्विविधम्। द्रव्यशल्यम्=तोमरादि। भावशल्यं तु–मायाशल्य निदानशल्य, मिथ्यादर्शनशल्य चेति त्रिविधम्। 'च' इति वाक्यालङ्कारे। माया=परवञ्चना सैव शल्यम्=माया शल्यम्। निदान= देवादीनाम् ऋद्धीदृष्ट्वा श्रुत्वा ममापि ब्रह्मचर्यादेरनुष्ठानादेता स्युरित्यध्यवसाय', तदेव शल्यम्=निदानशल्यम्, तच्च मोक्षफलोच्छेदकम्। मिथ्यादर्शनम्=अतत्त्वार्थ श्रद्धानम्=तदेवशल्यम्=मिथ्यादर्शनशल्यम्। त्रीणि गौरवाणि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा– ऋद्धि गौरवम्, रसगौरवम्, साता गौरव च। 'णं' इति अत्रापि वाक्यालङ्कारे। गौरवम्=मानलोभकषायजनितमात्मनोऽशुभभावगुरुत्वम्, तच्च चतुर्गतिसंसारपरि भ्रमणहेतु कर्म–कारण भवति। तत्र ऋद्धया=नरेन्द्रादिपूजालक्षणया पूज्याचार्यादि पदप्राप्ति लक्षणयावाऽभिमानद्वारकगौरवम्=ऋद्धिगौरवम् ऋद्धि–प्राप्त्यभिमानेन तदप्राप्ति प्रार्थनया च आत्मनोऽशुभभावगौरवम् इत्यर्थः। रसगौरवम्=रसो रसनेन्द्रियविषयमनोज्ञमधुरादिलक्षणः, तत्प्राप्त्या गौरवम्–अभिमानकरणम्, तदप्राप्तिप्रार्थनयाऽऽत्मनोऽशुभभावकरण च रसगौरवम्। सातेन गौरवम्=सात गौरवम्=अहमेव सुखीत्यभिमानम् सातप्राप्त्यभिमानेन तदप्राप्तिप्रार्थनया च आत्मनोऽशुभभावगौरवमित्यर्थः। तिस्रो विराधनाः=खण्डना प्रज्ञप्ताः, तद्यथा– ज्ञानविराधना, दर्शनविराधना, चारित्रविराधना। ज्ञानस्य विराधना=ज्ञाननिन्दया गुर्वादि निह्नवेन च विराधना। एवमितरे अपि। तत्र दर्शन–सम्यग्दर्शनम् दर्श नस्य–जिनप्रवचनादि रोचनलक्षणस्य क्षायिकादौ विराधना=दर्शनविराधना तत्प्रत्य नीकतानिह्नवादिरूपा। चारित्रस्य=सामयिकादेर्विराधना=चारित्रविराधना, व्रतादि खण्डनमित्यर्थः। मृगशिरो नक्षत्र त्रितारं प्रज्ञप्तम्। एव पुष्यज्येष्ठाऽभिजिच्छ्रव णाश्विनीभरणी नक्षत्राणि त्रिताराणि प्रज्ञप्तानि ॥सू १२॥

जैसे–मायाशल्य, निदानशल्य और मिथ्यादर्शनशल्य। तीन गौरव हैं वे ये हैं–ऋद्धिगौरव, रस गौरव और साता गौरव। तीन विराधना हैं वे ये हैं–ज्ञानविराधना, दर्शनविराधना और चारित्र विराधना। मृगशिरा नक्षत्र तीन ताराओं वाला है। पुष्यनक्षत्र तीन ताराओं वाला है। ज्येष्ठा नक्षत्र तीन ताराओं वाला है। अभिजित् नक्षत्र तीन ताराओं वाला है। श्रवणनक्षत्र तीन ताराओं वाला है। अश्विनी नक्षत्र तीन ताराओं वाला है, भरणी नक्षत्र तीन ताराओं वाला है।

અને (૩) કાયગુપ્તિ. શલ્ય ત્રણ પ્રકારનાં છે–(૧) માયાશલ્ય, (૨) નિદાન શલ્ય, અને (૩) મિથ્યા દર્શન શલ્ય ગૌરવ ત્રણ છે–(૧) ઋદ્ધિગૌરવ (૨) રસગૌરવ અને (૩) સાતા ગૌરવ. વિરાધના ત્રણ છે—(૧) જ્ઞાન વિરાધના, (૨) દર્શન વિરાધના અને (૩) ચારિત્ર વિરાધના મૃગશિર નક્ષત્ર ત્રણ તારાવાળું છે. પુષ્ય નક્ષત્ર ત્રણ તારાવાળું

अस्थिर चित्त और लक्ष्य से व्यग्र बना देता है उसी प्रकार ये शल्य भी व्रती को अपने व्रतों की सच्ची आराधना करनेरूप लक्ष्य में अकुशल परिणाम और व्यग्र बना देते है। व्रतों को प्राप्त करना और बात है और उन्हें अपने जीवन में उतार लेना और बात है।

शल्यों के सद्भाव में व्रती अपनी मानसिक स्थिति का सन्तुलन खो बैठता है, अतः व्रतों के आराधन के लिये मानसिक स्वास्थ्य ठीक रखना इन शल्यों के अभाव का कार्य है। व्रतों के पालन करने में कपट, ढोंग और ठगने की वृत्ति का बना रहना मायाशल्य है। देवादिकों की ऋद्धियों का अवलोकन कर या सुनकर सा मन में सकल्प करना की मुझे भी ब्रह्मचर्य आदि व्रतों के अनुष्ठान से ये ऋद्धियां प्राप्त हों इसका नाम निदानशल्य है। यह निदानशल्य मोक्षरूप फल को उच्छेद करने वाला होता है। व्रतों का पालन करते हुए भी सत्यपर श्रद्धा न लाना अथवा असत्यका आग्रह रखना मिथ्यादर्शनशल्य है। मानकषाय और लोभकषाय से जनित अशुभभावों की गुरुता का आत्मा में होना इसका नाम गौरव है। यह गौरव ऋद्धि गौरव, रसगौरव, और सात गौरव के भेद से तीन प्रकार का है। यह गौरव चतुर्गति रूप संसार में परिभ्रमण कराने के कारणभूत कर्म का हेतु होता है। नरेन्द्र आदि द्वारा पूजित होने

करी नाखे छे એ જ પ્રમાણે એ શલ્ય પણ વ્રતીને પોતાના વ્રતની સાચી આરાધના કરવા રૂપી લક્ષ્યથી અકુશલ પરિણામ યુકત તથા વ્યગ્ર બનાવે છે વ્રતોને અંગીકાર કરવા તે એક વાત છે અને તેમને પોતાના જીવનમા ઉતારવા તે અલગ વાત છે

આ શલ્યોના સદ્ભાવમા વ્રતી પોતાની માનસિક સ્થિતિનુ સમતોલપણુ ગુમાવી બેસે છે તેથી વ્રતોની આરાધનાને માટે માનસિક સ્વાસ્થ્ય બરાબર રાખવુ તે શલ્યોનો અભાવ હોય તોજ સભવી શકે છે વ્રતોનુ પાલન કરવામા કપટ ઢોંગ, અને ઠગવાની વૃત્તિ રાખવી તેનુ નામ માયા શલ્ય છે દેવાદિકોની ઋદ્ધિયોનુ અવલોકન કરીને કે તેનું વર્ણન સાભળીને મનમા એવો સકલ્પ કરવો કે મને પણ બ્રહ્મચર્ય આદિ વ્રતો આચરવાથી તે ઋદ્ધિયો પ્રાપ્ત થશે, તેનુ નામ નિદાન શલ્ય છે તે નિદાનશલ્ય મોક્ષરૂપ ફળનો ઉચ્છેદ કરનાર હોય છે વ્રતોનુ પાલન કરતી વખતે પણ સત્ય પર શ્રદ્ધા ન રાખવી, અથવા અસત્યનો આગ્રહ રાખવો તે મિથ્યાદર્શન શલ્ય છે માનકષાય અને લોભકષાયથી ઉત્પન્ન થયેલ અશુભ ભાવોની ગુરુતાનુ આત્મામા અસ્તિત્વ હોવુ તેનુ નામ ગૌરવ છે ગૌરવના ત્રણ પ્રકાર છે–ઋદ્ધિગૌરવ રસગૌરવ અને સાત ગૌરવ તે ગૌરવ ચાર ગતિરૂપ સંસારમા પરિભ્રમણ કરાવવાના કારણરૂપ કર્મનો હેતું હોય છે નરેન્દ્ર આદિ દ્વારા પૂજવાનુ

संवर होने के कारण इसमें अप्रशस्त क्रियाओं का निग्रह करना इष्ट होता है। समिति में सत्क्रिया में प्रवर्तन मुख्य होता है। तात्पर्य यह है। प्रशस्त क्रियाओं में भी मन का नियमनकरना, मौन धारण करना और शारीरिक क्रिया को नियमन के जीवन की रक्षा करना क्रमशः मनोगुप्ति, वचनगुप्ति और कायगुप्ति है। शल्य शब्द का अर्थ काँटा या वैसी कोई तीक्ष्ण वस्तु है-जो शरीर में चुभने पर शरीर को और मन को अस्वस्थ बना देती है, और आत्मा को किसी भी कार्य के करने में एकाग्र नहीं होने देता है अतः आत्मा शल्य से बाधित होता रहता है। ये शल्य तीन हैं-माया, मिथ्या, निदान। ये तीनों भावशल्य हैं। बाँण आदि बाह्य चुभने वाली वस्तुएँ द्रव्यशल्य हैं। व्रती बनने के लिये आवश्यक है कि वह इन तीन भावशल्यों का सर्वथा परित्याग कर दे। जहा व्रती बनने का विधान है वहां उस व्रती आत्मा को इन शल्यों का सर्वथा परित्याग करने का उपदेश इसलिये है कि इनके प्रभाव से अव्रत भी व्रतों के जैसे प्रतीत होते हैं। अहिंसा आदि व्रतों को अंगीकार कर लेने मात्र से कोई सच्चा व्रती नहीं बन जाता है। सच्चा व्रती बनने के लिये उसे इन शल्यों का सर्वथा परित्याग कर देना आवश्यक हो जाता है। जैसे-स्वस्थ भी मनुष्य के पैर आदि में लगा हुआ काँटा उसे

છે ચારિત્રની સાથે સંબંધ હોવાને કારણે અપ્રશસ્ત ક્રિયાઓનો નિગ્રહ કરવો તે ઇચ્છનીય છે સમિતિમાં સક્રિયામાં પ્રવર્તન મુખ્ય હોય છે તેનું તાત્પર્ય એ છે કે પ્રશસ્ત ક્રિયાઓમાં પણ મનનું નિયમન કરવું, મૌન ધારણ કરવું, અને શારીરિક ક્રિયાઓનું નિયમન કરીને જીવોનું રક્ષણ કરવું તે અનુક્રમે મનોગુપ્તિ વચનગુપ્તિ અને કાયગુપ્તિ છે શલ્ય એટલે કાંટો અથવા એવી જ કોઈ તીક્ષ્ણ વસ્તુ, કે જે શરીરને વાગતાં જ શરીર તથા મનને અસ્વસ્થ કરી નાખે છે, અને કોઈ પણ કાર્ય કરવા માટે આત્માને એકાગ્ર થવા દેતી નથી તેથી આત્મા શલ્યથી આકુળતા અનુભવ્યા કરે છે તે શલ્યના ત્રણ પ્રકાર છે માયા મિથ્યા, અને નિદાન એ ત્રણે ભાવશલ્ય છે બાણ આદિ બહાર ભોંકાતી વસ્તુઓ દ્રવ્યશલ્ય છે વ્રતી બનવાને માટે તે જરૂરી છે કે તેણે ત્રણે ભાવશલ્યોનો સંપૂર્ણ પરિત્યાગ કરવો જોઈએ. જ્યાં વ્રતી બનવાનું વિધાન છે ત્યાં તે વ્રતી આત્માને તે શલ્યોનો સંપૂર્ણરીતે પરિત્યાગ કરવાનો આદેશ એ કારણે છે કે તેના પ્રભાવથી અવ્રત પણ વ્રતના જેવાં લાગે છે માત્ર અહિંસા આદિ વ્રતો અંગીકાર કરવાથી જ કોઈ સાચો વ્રતી બની જતો નથી સાચા વ્રતી બનાવવા માટે તેણે એ શલ્યોનો ત્યાગ પરિત્યાગ કરવો આવશ્યક છે જેમ કે-સ્વસ્થ મનુષ્યનાં પગ આદિમાં વાગેલ કાંટો તેના ચિત્તને અસ્થિર બનાવી નાખે છે અને લક્ષ્યથી વ્યગ્ર

अस्थिर चित्त और लक्ष्य से व्यग्र बना देता है उसी प्रकार ये शल्य भी व्रती को अपने व्रतों की सच्ची आराधना करनेरूप लक्ष्य में अकुशल परिणाम और व्यग्र बना देते है। व्रतों को प्राप्त करना और बात है और उन्हें अपने जीवन में उतार लेना और बात है।

शल्यों के सद्भाव में व्रती अपनी मानसिक स्थिति का सन्तुलन खो बैठता है, अतः व्रतों के आराधन के लिये मानसिक स्वास्थ्य ठीक रखना इन शल्यों के अभाव का कार्य है। व्रतों के पालन करने में कपट, ढोंग और ठगने की वृत्ति का बना रहना मायाशल्य है। देवादिकों की ऋद्धियों का अवलोकन कर या सुनकर मन में संकल्प करना की मुझे भी ब्रह्मचर्य आदि व्रतों के अनुष्ठान से ये ऋद्धियां प्राप्त हों इसका नाम निदानशल्य है। यह निदानशल्य मोक्षरूप फल का उच्छेद करने वाला होता है। व्रतों का पालन करते हुए भी सत्यपर श्रद्धा न लाना अथवा असत्यका आग्रह रखना मिथ्यादर्शनशल्य है। मानकषाय और लोभकषाय से जनित अशुभभावों की गुरुता का आत्मा में होना इसका नाम गौरव है। यह गौरव ऋद्धि गौरव, रसगौरव, और सात गौरव के भेद से तीन प्रकार का है। यह गौरव चतुर्गति रूप संसार में परिभ्रमण कराने के कारणभूत कर्म का हेतु होता है। नरेन्द्र आदि द्वारा पूजित होने

કરી નાખે છે એ જ પ્રમાણે એ શલ્ય પણ વ્રતીને પોતાના વ્રતની સાચી આરાધના કરવા રૂપી લક્ષ્યથી અકુશલ પરિણામ યુક્ત તથા વ્યગ્ર બનાવે છે વ્રતોને અંગીકાર કરવા તે એક વાત છે અને તેમને પોતાના જીવનમા ઉતારવા તે અલગ વાત છે

આ શલ્યોના સદ્ભાવમા વ્રતી પોતાની માનસિક સ્થિતિનુ સમતોલપણુ ગુમાવી બેસે છે તેથી વ્રતોની આરાધનાને માટે માનસિક સ્વસ્થ્ય બરાબર રાખવુ તે શલ્યોનો અભાવ હોય તોજ સભવી શકે છે વ્રતોનુ પાલન કરવામા કપટ ઢોંગ, અને ઠગવાની વૃત્તિ રાખવી તેનુ નામ માયા શલ્ય છે દેવાદિકોની ઋદ્ધિઓનુ અવલોકન કરીને કે તેનુ વર્ણન સાભળીને મનમા એવો સકલ્પ કરવો કે મને પણ બ્રહ્મચર્ય આદિ વ્રતો આચરવાથી તે ઋદ્ધિઓ પ્રાપ્ત થશે, તેનુ નામ નિદાન શલ્ય છે તે નિદાનશલ્ય મોક્ષરૂપ ફળનો ઉચ્છેદ કરનાર હોય છે વ્રતોનુ પાલન કરતી વખતે પણ સત્ય પર શ્રદ્ધા ન રાખવી, અથવ અસત્યનો આગ્રહ રાખવો તે મિથ્યાદર્શન શલ્ય છે માનકષાય અને લોભકષાયથી ઉત્પન્ન થયેલ અશુભ ભાવોની ગુરુતાનુ આત્મામા અસ્તિત્વ હોવુ તેનુ નામ ગૌરવ છે ગૌરવના ત્રણ પ્રકાર છે-ઋદ્ધિગૌરવ રસગૌરવ અને સાત ગૌરવ તે ગૌરવ ચાર ગતિરૂપ સંસારમા પરિભ્રમણ કરાવવાના કારણરૂપ કર્મનો હેતુ હોય છે નરેન્દ્ર આદિ દ્વારા પૂજવાનુ

रूप अथवा पूज्य आचार्य आदि की पदवी प्राप्ति होने रूप अभिमान द्वारा अपना गौरव प्रदर्शित करना इसका नाम ऋद्धिगौरव है। ऋद्धि प्राप्ति के अभिमान से और उसकी अप्राप्ति में अशुभभाव करने से यह ऋद्धिगौरव होता है। रसना इन्द्रिय के विषयभूत मनोज्ञ मधुर आदि रसों की प्राप्ति में आनद मानना और उनकी अप्राप्ति में आत्मा में आकुल व्याकुलरूप अशुभ परिणति करना यह रसगौरव है। 'मैं ही सुखी हूं' इस प्रकार का अभिमान करना सातगौरव है। इस सातगौरव में अपने को सुखी होने का अभिमान रहता है और दूसरों को ऐसा सुख प्राप्त न हो ऐसी भावना रहती है। विराधना शब्द का अर्थ है नाश करना। यह निन्दा अथवा निन्हव से होती है ज्ञान विराधना, दर्शनविराधना और चारित्र विराधना, इस प्रकार से यह विराधना तीन प्रकार का है। ज्ञान की निंदा करना अथवा ज्ञान के साधनभूत गुर्वादिकों का निह्नव (छिपाना) करना यह ज्ञानविराधना है। क्षायिक सम्यक्त्व आदि की निंदा या उनके धारकों का निह्नव करना यह दर्शन विराधना है। सामयिक आदि चारित्र की निंदा करना या व्रत आदि का खडन करना इसका नाम चारित्रविराधना है।सू०१२।

અથવા પૂજ્ય આચાર્ય આદિની પદવી પ્રાપ્ત થવાનું અભિમાન હોવાને પોતાનું ગૌરવ પ્રદર્શિત કરવું તેને ઋદ્ધિગૌરવ કહે છે ઋદ્ધિ પ્રાપ્તિના અભિમાનથી અને તેની અપ્રાપ્તિના અશુભ ભાવ કરવાથી તે ઋદ્ધિગૌરવ પેદા થાય છે રસનેન્દ્રિયના વિષય ભૂત મનોજ્ઞ, મધુર આદિ રસોની પ્રાપ્તિમાં આનંદ માણવો અને તેમની અપ્રાપ્તિમાં આત્મામાં આકુળ વ્યાકુળ બનવા રૂપ અશુભવૃત્તિ થવી તેને રસગૌરવ કહે છે "હું જ સુખી છુ" આ પ્રકારનું અભિમાન કરવુ તે સાતગૌરવ છે સાત ગૌરવમાં સુખી હોવાનું પોતાને અભિમાન રહે છે, અને એવા સુખ બીજાને પ્રાપ્ત ન થાય એવી ભાવના રહે છે વિરાધના એટલે નાશ કરવો. તે નિન્દા અથવા નિન્હવથી-વિપરીત તત્વ બતાવવાથી થાય છે જ્ઞાન વિરાધના દર્શન વિરાધના, અને ચારિત્ર વિરાધના, એવા તેના ત્રણ પ્રકાર છે જ્ઞાનની નિંદા કરવી અથવા જ્ઞાનદાતા ગુર્વાદિકોનું નિન્હવ કરવુ (વિપરીત તત્વ બતાવવુ) તેને જ્ઞાન વિરાધના કહે છે ક્ષાયિક સમ્યકત્વ આદિની નિંદા અથવા તે ધારણ કરનારનું નિન્હવ કરવુ તે દર્શન વિરાધના છે સામયિક આદિ ચારિત્રની નિંદા કરવી અથવા વ્રત આદિનું ખંડન કરવુ તેને ચારિત્ર વિરાધના કહે છે ।સૂ ૧૨।

मूलम्—इमीसे णं रयणप्पहाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं तिन्नि पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। दोच्चाए णं पुढवीए नेरइयाणं उक्कोसेणं तिण्णि सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। तच्चाए णं पुढवीए नेरइयाणं जहण्णेणं तिण्णि सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगइयाणं तिण्णि पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। असंखिज्जवासाउय सन्निपंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं उक्कोसेणं तिण्णि पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। असंखिज्जवासाउयसन्निगब्भवक्कंतियमणुस्साणं उक्कोसेणं तिण्णि पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगइयाणं देवाणं तिण्णि पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। सणंकुमार माहिंदेसु कप्पेसु अत्थेगइयाणं देवाणं तिण्णि सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता॥ सू० १३॥

टीका—'इमीसे णं' इत्यादि। अस्यां खलु रत्नप्रभायां पृथिव्याम् अस्ति एकेषां नैरयिकाणां त्रीणि पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। द्वितीयस्यां खलु पृथिव्यां नैरयिकाणामुत्कर्षेण त्रीणि सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। तृतीयस्यां खलु पृथिव्यां नैरयिकाणां जघन्येन त्रीणि सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। असुरकुमाराणां देवानामस्त्येकेषां त्रीणि सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। असंख्येयवर्षायुष्कसंज्ञिपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकानामुत्कर्षेण त्रीणि पल्योपमानि स्थितिः

'इमीसे णं' इत्यादि।

टीकार्थ—इस रत्नप्रभा पृथिवी में कितनेक नारकियों की स्थिति तीन पल्योपम की होती है। द्वितीय पृथ्वी में नारकियों की उत्कृष्ट स्थिति तीन सागरोपम की होती है। तीसरी पृथिवी मे नारकियों की जघन्यस्थिति तीन सागरोपम की है। असुरकुमार देवों में कितनेक असुरकुमार देवों की तीन पल्योपम की स्थिति है। असंख्यातवर्ष की आयुवाले भोगभूमिया

'इमीसे ण' इत्यादि।

ટીકાર્થ-આ રત્નપ્રભા પૃથ્વીમા કેટલાક નારકીઓની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ત્રણ પલ્યોપમની હોય છે. બીજી પૃથ્વીમા નારકીઓની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ત્રણ સાગરોપની હોય છે. ત્રીજી પૃથ્વીમાં નારકીઓની જઘન્ય સ્થિતિ ત્રણ સાગરોપમની છે અસુરકુમાર દેવોમા કેટલાક અસુરકુમાર દેવોની ત્રણ પાલ્યોપમની સ્થિતિ છે અસંખ્યાત વર્ષ।

मूलम्- जे देवा आभकरं पभकरं आभकरपभकरं चंदं चंदावतं चंदप्पभं चंदकंतं चंदवण्णं चंदलेसं चंदज्झयं चंदसिंगं चंदसिट्ठं चंदकूडं चंदुत्तरवडिंसगं विमाणं देवत्ताए उववण्णा, तेसिं णं देवाणं उक्कोसेणं तिण्णि सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता, ते णं तिण्हं अद्धमासाणं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा, तेसिं णं देवाणं उक्कोसेणं तिहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जेइ। संतेगइया भवसिद्धिया जीवा जे तिहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति, बुज्झिस्संति मुच्चिस्संति परिनिव्वाइस्संति, सव्वदुक्खाणमंतं करिस्संति ॥१४॥

टीका—'जे देवा' इत्यादि। ये देवा आभङ्कर१, प्रभङ्करम्२, आभङ्करप्रभङ्करं३ चन्द्र४, चन्द्रावर्त५ चन्द्रप्रभ६, चन्द्रकान्त७, चन्द्रवर्ण ८, चन्द्रलेश्य९, चन्द्रध्वजं१०, चन्द्रशृङ्ग११, चन्द्रसृष्ट१२ चन्द्रकूट१३ चन्द्रोत्तरावतंसक१४ चन्द्र विमानं=एतेषु चतुर्दशसंख्यकेषु विमानेषु देवत्वेन उत्पन्ना, तेषां खलु देवानामुत्कर्षेण त्रीणि सागरोपमाणि स्थितिः प्रज्ञप्ता, ते खलु देवाः 'तिण्ह अद्धमासाणं' त्रयाणामर्धमासानाम् ते आनन्ति वा प्राणन्ति वा उच्छ्वसन्ति वा,

---

है। अतः यहां जो तीन सागरोपम की स्थिति कितनेक देवों की प्रकट की गई है वह मध्यमस्थिति की अपेक्षा कही गई जाननी चाहिये ॥सू० १३॥

'जे देवा' इत्यादि।

टीकार्थ–जो देव आभकर,१ प्रभकर,२ आभकर–प्रभंकर३ चन्द्र,४ चन्द्रावर्त,५ चन्द्रप्रभ,६ चन्द्रकान्त,७ चन्द्रवर्ण,८ चन्द्रलेश्य,९ चन्द्रध्वज,१० चन्द्रशृंग११ चन्द्रसृष्ट १२ चन्द्रकूट१३ और चन्द्रोत्तरावतंसक इन१४ विमानों में देवकी पर्याय से उत्पन्न होते हैं, उन देवों की उत्कृष्ट स्थिति तीन सागरोपम की होती है। वे देव डेढ माह के अन्त में बाह्य आभ्यन्तर

રોપમથી થોડી વધારે છે તેથી અહીં જે કેટલાક દેવોની સ્થિતિ ત્રણ સાગરોપમની પ્રકટ કરવામા આવેલ છે તે મધ્યમ સ્થિતિની અપેક્ષાએ દર્શાવવામાં આવેલ છે એમ સમજી લેવું ॥સૂ. ૧૩॥

ટીકાર્થ—'जे देवा' इत्यादि।

ટીકાર્થ–જે દેવો આભકર ૧ પ્રભકર ૨ આભકર–પ્રભકર ૩ ચન્દ્ર, ૪ ચન્દ્રાવર્ત ૫, ચન્દ્રપ્રભ, ૬ ચન્દ્રકાન્ત ૭ ચન્દ્રવર્ણ ૮ ચન્દ્રલેશ્ય, ૯ ચન્દ્રધ્વજ, ૧૦ ચન્દ્રશૃંગ, ૧૧ ચન્દ્રસૃષ્ટ, ૧૨ ચન્દ્રકૂટ, ૧૩ અને ચન્દ્રોત્તરાવતંસક ૧૪એ વિમાનોમાં દેવની પર્યાયથી પેદા થાય છે, તે દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ત્રણ સાગરોપમની હોય છે તે દેવો દોઢ

तेषां खलु देवानामुत्कर्षेण त्रिभिर्वर्षसहस्रैः 'आहारट्ठे' आहारार्थः—आहारसंज्ञेति समुत्पद्यते। सन्त्येके भवसिद्धिका जीवा ये त्रिभि भवग्रहणैः सेत्स्यन्ति भोत्स्यन्ति मोक्ष्यंति, परिनिर्वास्यन्ति, सर्वदुःखानामन्तं करिष्यन्ति ॥१४॥

अथचतुर्थसमवायाङ्गमाह—

मूलम्—चत्तारि कषाया पण्णत्ता, तं जहा—कोहकसाए, माणकसाए, मायाकसाए, लोभकसाए। चत्तारि झाणा पण्णत्ता, तं जहा—अट्टज्झाणे, रुद्दज्झाणे, धम्मज्झाणे, सुक्कज्झाणे,। चत्तारि विकहाओ पण्णत्ताओ, तं जहा—इत्थिकहा, भत्तकहा, रायकहा, देसकहा। चत्तारि सण्णा पण्णत्ता—तं जहा—आहारसण्णा, भयसण्णा, मेहुणसण्णा, परिग्गहसण्णा। चउव्विहे बंधे पण्णत्ते—तं जहा—पगइबंधे, ठिइबंधे, अणुभावबंधे, पएसबंधे। चउगाउए जोयणे पण्णत्ते। अणुराहानक्खत्ते चउत्तारे पण्णत्ते। पुव्वासाढानक्खत्ते चउत्तारे पण्णत्ते। उत्तरासाढा नक्खत्ते चउतारे पण्णत्ते ॥ १५ ॥

टीकार्थ'—चत्तरि कषाया' इत्यादि। चत्वारः कषायाः प्रज्ञप्ताः तद्यथा—क्रोधकषायः, मानकषायः, मायाकषायः लोभकषायः। चत्वारि ध्यानानि-प्रज्ञप्तानि तद्यथा—आर्तध्यानम्, रौद्रध्यानम्, धर्मध्यानम्, शुक्लध्यानम्। ध्यानं हि—अन्तर्मुहूर्त्तं यावच्चि

रिक श्वासोच्छ्वास ग्रहण करते हैं। उन देवों को आहारसंज्ञा तीन हजार वर्ष के बाद उत्पन्न होती है। उनमें कितनेक देव ऐसे भी होते हैं जो भव सिद्धिक होते हैं। वे तीन भव करके सिद्धिगति को प्राप्त करेंगे, आत्मा के अनंत ज्ञानादिक गुणों का भोग करेंगे, समस्तकर्मों से आत्यतिक रूप में छूट जावेंगे। तथा कृतकृत्य बन जावेंगे और समस्त प्रकार के दुःखों का अन्त करने वाले होंगे ॥सू० १४॥

માસને અન્તે અંદર તથા બહાર શ્વાસોચ્છ્વાસ ગ્રહણ કરે છે. તે દેવોને ત્રણ હજાર વર્ષ બાદ આહાર સંજ્ઞા ઉત્પન્ન થાય છે તેમનામાંથી કેટલાક દેવો એવા હોય છે કે જે ભવસિદ્ધિક હોય છે, તેઓ ત્રણ ભવ કરીને સિદ્ધિ ગતિ પ્રાપ્ત કરશે, આત્માના અનંત જ્ઞાનાદિક ગુણોનો ઉપભોગ કરશે, સમસ્ત કર્મોનો આત્યંતિક રીતે ક્ષય કરશે, કૃતકૃત્ય થઇને સમસ્ત પ્રકારના દુઃખોનો અંત કરનાર થશે ॥સૂ. ૧૪॥

मज्ञप्ता। असंख्येयवर्षायुष्कसंज्ञिगर्भव्युत्क्रान्तिकमनुष्याणामुत्कर्षेण त्रीणि पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता दवकुरूत्तरकुरुक मनामसंख्येयवर्षायुषां पञ्चेन्द्रियतिरश्चां मनुष्याणां च उत्कर्षात् त्रि पल्योपमा स्थितिर्विज्ञेयत्यर्थः। सौधर्मेशानेषु अस्ति एकेषां देवानां त्रीणि पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । सनत्कुमारमाहेन्द्रेषु कल्पेषु अस्त्येकेषां देवानां त्रीणि सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता ॥१३॥

सञ्ज्ञी पचेन्द्रिय तिर्यंचगति के जीवों की उत्कृष्टस्थिति तीनपल्योपम की होती है। इसी तरह असंख्यातवर्ष की आयुवाले भोगभूमिया (अकर्मभूमि) गर्भज सञ्ज्ञी मनुष्यों की भी उत्कृष्ट स्थिति तीन पल्योपम की है। सौधर्म ईशान देवलोकों में कितनेक देवों की तीन पल्योपम की स्थिति कही गई है। सनत्कुमार माहेन्द्रकल्पों में कितनेक देवों की तीन सागरोपम की स्थिति कही गई है।

भावार्थ—पहिली पृथिवी में नारकियों की जघन्यस्थिति दशहजार वर्ष की और उत्कृष्टस्थिति एक सागरोपम की कही गई है। पर यहां जो कितनेक नारकियों की स्थिति तीन पल्योपम की कही गई है वह मध्य स्थिति को लक्ष्य में रखकर कही गई है। दूसरी पृथिवी में उत्कृष्ट स्थिति तीन सागरोपम की है वही तीसरी पृथिवी में जघन्य है। तीसरी पृथिवी में उत्कृष्ट स्थिति सातसागरोपम की है। असुर कुमार देवों में जो कितनेक देवों की स्थिति यहां तीन पल्योपम की कही गई है वह मध्यम स्थिति की अपेक्षा कथन की है। क्यों की असुरकुमारों की स्थिति एक सागरोपम और एक सागरोपम से कुछ

આયુ વવાળા ભોગભૂમિયા સંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય તિર્યંચ્ યોનિના જીવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ત્રણ પલ્યોપમની હોય છે એ જ પ્રમાણે અસંખ્યાત વર્ષના આયુષ્યવાળા ભોગભૂમિયા ગર્ભજ સંજ્ઞી મનુષ્યોની પણ ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ત્રણ પલ્યોપમની છે સૌધર્મ અને ઇશાન દેવલોકમાં કેટલાક દેવોની ત્રણ પલ્યોપમની સ્થિતિ કહેલી છે સનત્કુમાર અને માહેન્દ્ર કલ્પોમાં કેટલાક દેવોની ત્રણ સાગરોપમની સ્થિતિબતાવી છે

ભાવાર્થ—પહેલી પૃથ્વીમાં નારકીઓની જઘન્ય સ્થિતિ દસ હજાર વર્ષની અને ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ એક સાગરોપમની કહેલ છે પણ અહિં જે કેટલાક નારકીઓની સ્થિતિ ત્રણ પલ્યોપમની બતાવી છે ત મધ્યમ સ્થિતિને ધ્યાનમાં લઈને બતાવેલ છે બીજી પૃથ્વીમાં ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ત્રણ સાગરોપમની છે, એ જ ત્રીજી પૃથ્વીમાં જઘન્ય છે ત્રીજી પૃથ્વીમાં ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિ સાત સાગરોપમની છે અસુરકુમાર દેવો માંના કેટલાક દેવોની સ્થિતિ અહીં જે ત્રણ પલ્યોપમની બતાવી છે તે મધ્યમ સ્થિતિની અપેક્ષાએ કહેલ છે કારણ કે અસુરકુમારોની સ્થિતિ એક સાગરોપમ અને

अधिक कही गई है। भोगभूमि के उत्तम मध्यम और जघन्य की अपेक्षा तीन भेद हैं। जघन्य भोगभूमि में एक पल्योपम की. मध्यम-भोगभूमि में दो पल्योपम की और उत्कृष्ट भोगभूमि में तीन पल्योपम की उत्कृष्ट स्थिति होती है। सो देवकुरु और उत्तर कुरु में तिर्यञ्चों और मनुष्यों की यह स्थिति होती है। विदेहक्षेत्र में मेरु और नील पर्वत के बीच का अर्धचन्द्राकार भाग, कि जिसकी पूर्वपश्चिम सीमा वहां के दो पर्वतों से निश्चित होती है वह उत्तरकुरु कहलाता है। और मेरु तथा निषध पर्वत के बीच का वैसा ही अर्धचन्द्राकार भाग देवकुरु कहलाता है। देवकुरु और उत्तरकुरु ये दोनों क्षेत्र विदेह क्षेत्र के ही भाग हैं। परन्तु उन क्षेत्रों में युगलियों की वस्ती होने से वे भिन्नरूप से जाने जाते हैं। सौधर्म और ईशान कल्प में देवों की उत्कृष्ट स्थिति दो सागरोपम की और दो सागरोपम से कुछ अधिक की कही हुई है। अतः यहां जो तीन पल्योपम की स्थिति कही हुई है वह मध्यमस्थिति कही है। जघन्यस्थिति यहां एक पल्योपम की और एक पल्योपम से कुछ अधिक की है। सनत्कुमार और माहेन्द्रकल्प में उत्कृष्टस्थिति क्रमशः सात सागरोपम की और सातसागरोपम से कुछ अधिक की है। और जघन्यस्थिति दो सागरोपम की और दो सागरोपम से कुछ अधिक की

એક સાગરોપમથી થોડી વધારે દર્શાવેલ છે ભોગભૂમિના ઉત્તમ, મધ્યમ અને જઘન્યની અપેક્ષાએ ત્રણ ભેદ છે જઘન્ય ભોગભૂમિમા એક પલ્યોપમની, મધ્યમ ભોગભૂમિમા બે પલ્યોપમની અને ઉત્કૃષ્ટ ભોગભૂમિમા ત્રણ પલ્યોપમની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ હોય છે. દેવકુરુ અને ઉત્તરકુરુમા તિર્યંચો અને મનુષ્યોની આ સ્થિતિ હોય છે. વિદેહ ક્ષેત્રમા મેરુ અને નીલ પર્વતની વચ્ચેના અર્ધચન્દ્રાકાર ભાગ કે જેની પૂર્વ પશ્ચિમ સીમા ત્યાંના બે પર્વતે થી નિશ્ચિત થાય છે, તેને ઉત્તર કુરુ કહે છે અને મેરુ તથા નિષધ પર્વતની વચ્ચેના એવો જ અર્ધચન્દ્રાકાર ભાગ દેવકુરુ કહેવાય છે દેવકુરુ અને ઉત્તરકુરુ એ બન્ને ક્ષેત્રો વિદેહ ક્ષેત્રના જ ભાગ છે પણ તે ક્ષેત્રોમા યુગલિકોની વસ્તી હોવાથી તેમને ભિન્ન રૂપે ઓળખવામાં આવે છે સૌધર્મ અને ઇશાન કલ્પમા દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ બે સાગરોપમની અને બે સાગરોપમથી થોડી વધારે બતાવેલ છે. તેથી અહીં જે ત્રણ પલ્યોમની સ્થિતિ કહેવામા આવી છે તે મધ્યમ સ્થિતિ કહેલ છે. ત્યા જઘન્ય સ્થિતિ એક પલ્યોપમની અને એક ાપમથી થોડી વધારે છે સનત્કુમાર અને માહેન્દ્રકલ્પમાં ઉતકૃષ્ટ સ્થિતિ ક્રમશ સાત સાગરોપમની અને સાત સાગરોપમથી થોડી વધારે છે, અને જઘન્ય સ્થિતિ બે સાપરોપમની અને બે સાગ

मूलम्- जे देवा आभकरं पभकरं आभकरपभकरं चंदं चंदावत्तं चंदप्पभं चंदकंतं चंदवण्णं चंदलेसं चंदज्झयं चंदसिंगं चंदसिट्ठं चंदकूडं चंदुत्तरवडिंसगं विमाणं देवत्ताए उववण्णा, तेसिं णं देवाणं उक्कोसेणं तिण्णि सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता, ते णं तिण्हं अद्धमासाणं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा, तेसिं णं देवाणं उक्कोसेणं तिहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जइ। संतेगइया भवसिद्धिया जीवा जे तिहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति, बुज्झिस्संति मुच्चिस्संति परिनिव्वाइस्संति, सव्वदुक्खाणमंतं करिस्संति ॥१४॥

टीका—'जे देवा' इत्यादि। ये देवा आभङ्कर१, प्रभङ्करम्२, आभङ्करप्रभङ्कर३ चन्द्र४, चन्द्रावर्त५ चन्द्रप्रभ६, चन्द्रकान्त७, चन्द्रवर्ण ८, चन्द्रलेश्य९, चन्द्रध्वज१०, चन्द्रशृङ्ग११, चन्द्रसृष्ट१२ चन्द्रकूट१३ चन्द्रोत्तरावतंसक१४ चन्द्र विमानं=एतेषु चतुर्दशसंख्यकेषु विमानेषु देवत्वेन उत्पन्ना, तेषां खलु देवानामुत्कर्षेण त्रीणि सागरोपमाणि स्थितिः प्रज्ञप्ता, ते खलु देवाः 'तिण्हं अद्धमासाणं' त्रयाणामर्धमासानामन्ते आनन्ति वा प्राणन्ति वा उच्छ्वसन्ति वा,

---

है। अतः यहां जो तीन सागरोपम की स्थिति कितनेक देवों की प्रकट की गई है वह मध्यमस्थिति की अपेक्षा कही गई जाननी चाहिये ॥सू० १३॥

'जे देवा' इत्यादि।

टीकार्थ–जो देव आभंकर,१ प्रभंकर,२ आभंकर–प्रभंकर३ चन्द्र,४ चन्द्रावर्त,५ चन्द्रप्रभ,६ चन्द्रकान्त,७ चन्द्रवर्ण,८ चन्द्रलेश्य,९ चन्द्रध्वज,१० चन्द्रशृंग११ चन्द्रसृष्ट १२ चन्द्रकूट१३ और चन्द्रोत्तरावतंसक इन१४ विमानों में देवकी पर्याय से उत्पन्न होते हैं, उन देवों की उत्कृष्ट स्थिति तीन सागरोपम की होती है। वे देव डेढ माह के अन्त में बाह्य आभ्यन्त

કેવળથી થોડી વધારે છે તેથી અહીં જે કેટલાક દેવોની સ્થિતિ ત્રણ સાગરોપમની પ્રકટ કરવામાં આવેલ છે તે મધ્યમ સ્થિતિની અપેક્ષાએ દર્શાવવામાં આવેલ છે એમ સમજવું ॥સૂ ૧૩॥

ટીકાર્થ—'जे देवा' इत्यादि।

ટીકાર્થ–જે દેવો આભંકર,૧ પ્રભંકર ૨ આભંકર–પ્રભંકર, ૩ ચન્દ્ર, ૪ ચન્દ્રાવર્ત ૫, ચન્દ્રપ્રભ, ૬ ચન્દ્રકાન્ત ૭ ચન્દ્રવર્ણ ૮ ચન્દ્રલેશ્ય ૯ ચન્દ્રધ્વજ, ૧૦ ચન્દ્રશૃંગ ૧૧ ચન્દ્રસૃષ્ટ, ૧૨ ચન્દ્રકૂટ ૧૩ અને ચન્દ્રોત્તરાવતંસક ૧૪એ વિમાનોમાં દેવની પર્યાયથી પેદા થાય છે, તે દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ત્રણ સાગરોપમની હોય છે તે દેવો દોઢ

तेषां खलु देवानामुत्कर्षेण त्रिभिर्वर्षसहस्रैः 'आहारट्ठे' आहारार्थः-आहारसंज्ञेति समुत्पद्यते। सन्त्येके भवसिद्धिका जीवा ये त्रिभि र्भवग्रहणैः सेत्स्यन्ति भोक्ष्यन्ति मोक्ष्यंति, परिनिर्वास्यन्ति, सर्वदुःखानामन्तं करिष्यन्ति ॥१४॥

अथ चतुर्थसमवायाङ्गमाह--

मूलम्--चत्तारि कषाया पण्णत्ता, तं जहा-कोहकसाए, माणकसाए, मायाकसाए, लोभकसाए। चत्तारि झाणा पण्णत्ता, तं जहा-अट्टज्झाणे, रुद्दज्झाणे, धम्मज्झाणे, सुक्कज्झाणे,। चत्तारि विकहाओ पण्णत्ताओ, तं जहा-इत्थिकहा, भत्तकहा, रायकहा, देसकहा। चत्तारि सण्णा पण्णत्ता-तं जहा-आहारसण्णा, भयसण्णा, मेहुणसण्णा, परिग्गहसण्णा। चउव्विहे बंधे पण्णत्ते-तं जहा-पगइबंधे, ठिइबंधे, अणुभावबंधे, पएसबंधे। चउगाउए जोयणे पण्णणे। अणुराहानक्खत्ते चउत्तारे पण्णत्ते। पुव्वासाढानक्खत्ते चउत्तारे पण्णत्ते। उत्तरासाढा नक्खत्ते चउतारे पण्णत्ते ॥ १५ ॥

टीकार्थ'-चत्तरि कषाया' इत्यादि। चत्वारः कषायाः प्रज्ञप्ताः तद्यथा-क्रोधकषायः, मानकषायः, मायाकषायः लोभकषायः। चत्वारि ध्यानानि-प्रज्ञप्तानि तद्यथा-अर्तध्यानम्, रौद्रध्यानम्, धर्मध्यानम्, शुक्लध्यानम्। ध्यानं हि-अन्तर्मुहूर्त्तं यावच्चि

रिक श्वासोच्छ्वास ग्रहण करते है। उन देवों को आहारसंज्ञा तीन हजार वर्ष के वाद उत्पन्न होती है। उनमें कितनेक देव ऐसे भी होते हैं जो भव सिद्धिक होते हैं। वे तीन भव करके सिद्धिगति को प्राप्त करेंगे, आत्मा के अनंत ज्ञानादिक गुणों का भोग करेंगे, समस्तकर्मों से आत्यतिक रूप में छूट जावेंगे। तथा कृतकृत्य बन जावेंगे और समस्त प्रकार के दुःखों का अन्त करने वाले होंगे ॥सू० १४॥

માસને અન્તે અ દર તથા બહાર શ્વાસોચ્છવાસ ગ્રહણ કરે છે. તે દેવોને ત્રણ હજાર વર્ષ બાદ આહાર સંજ્ઞા ઉત્પન્ન થાય છે તેમનામાંથી કેટલાક દેવો એવા હોય છે કે જે ભવસિદ્ધિક હોય છે, તેઓ ત્રણ ભવ કરીને સિદ્ધિ ગતિ પ્રાપ્ત કરશે, આત્માનાઅનંત જ્ઞાનાદિક ગુણોનો ઉપભોગ કરશે, સમસ્ત કર્મોનો આત્ય તિક રીતે ક્ષય કરશે, કૃતકૃત્ય થઈને સમસ્ત પ્રકારના દુ.ખોનો અ ત કરનાર થશે ॥સૂ ૧૪॥

मूलम्- जे देवा आभकरं पभकरं आभकरपभकरं चदं चदावत्तं चदप्पभं चदकंतं चदवण्णं चदलेसं चदज्झयं चदसिंगं चदसिट्ठं चदकूडं चदुत्तरवडिंसगं विमाणं देवत्ताए उववण्णा, तेसिं णं देवाणं उक्कोसेणं तिण्णि सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता, ते णं तिण्हं अद्धमासाणं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा, तेसिं णं देवाणं उक्कोसेणं तिहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जइ। संतेगइया भवसिद्धिया जीवा जे तिहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति, बुज्झिस्संति मुच्चिस्संति परिनिव्वाइस्संति, सव्वदुक्खाणमंतं करिस्संति ॥१४॥

टीका—'जे देवा' इत्यादि। ये देवा आभङ्कर१, प्रभङ्करम्२, आभङ्करप्रभङ्करं३ चन्द्र४, चन्द्रावर्त५ चन्द्रप्रभ६, चन्द्रकान्तं७, चन्द्रवर्णं ८, चन्द्रलेश्य९, चन्द्रध्वजं१०, चन्द्रशृङ्ग११, चन्द्रसृष्ट१२ चन्द्रकूट१३ चन्द्रोत्तरावतंसक१४ चन्द्र विमानं=एतेषु चतुर्दशसङ्ख्यकेषु विमानेषु देवत्वेन उत्पन्ना, तेषां खलु देवानामुत्कर्षेण त्रीणि सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता, ते खलु देवाः 'तिण्हं अद्धमासाणं' त्रयाणामर्धमासानामन्ते आनन्ति वा प्राणन्ति वा उच्छ्वसन्ति वा,

है। अतः यहां जो तीन सागरोपम की स्थिति कितनेक वृषों की प्रकट की गई है वह मध्यमस्थिति की अपेक्षा कही गई जाननी चाहिये ॥सू० १३॥

'जे देवा' इत्यादि।

टीकार्थ-जो देव आभकर,१ प्रभंकर,२ आभकर-प्रभंकर३ चन्द्र,४ चन्द्रावर्त,५ चन्द्रप्रभ,६ चन्द्रकान्त,७ चन्द्रवर्ण,८ चन्द्रलेश्य,९ चन्द्रध्वज,१० चन्द्रशृंग११ चन्द्रसृष्ट १२ चन्द्रकूट१३ और चन्द्रोत्तरावतंसक इन१४ विमानों में देवकी पर्याय से उत्पन्न होते हैं, उन देवों की उत्कृष्ट स्थिति तीन सागरोपम की होती है। वे देव डेढ माह के अन्त में बाह्य आभ्यन्तर

ગરોપમથી થોડી વધારે છે તેથી અહીં જે કેટલાક દેવોની સ્થિતિ ત્રણ સાગરોપમની પ્રગટ કરવામાં આવેલ છે તે મધ્યમ સ્થિતિની અપેક્ષાએ કહેવામાં આવેલ છે એમ સમજી લેવું ॥સૂ. ૧૩॥

टीकार्थ—'जे देवा' इत्यादि।

ટીકાર્થ–જે દેવો આભંકર ૧ પ્રભંકર ૨ આભંકર-પ્રભંકર, ૩ ચન્દ્ર, ૪ ચન્દ્રાવર્ત ૫, ચન્દ્રપ્રભ ૬ ચન્દ્રકાન્ત, ૭ ચન્દ્રવર્ણ ૮ ચન્દ્રલેશ્ય, ૯ ચન્દ્રધ્વજ, ૧૦ ચન્દ્રશૃંગ, ૧૧ ચન્દ્રસૃષ્ટ, ૧૨ ચન્દ્રકૂટ, ૧૩ અને ચન્દ્રોત્તરાવતંસક ૧૪એ વિમાનોમાં દેવની પર્યાયથી પેદા થાય છે તે દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ત્રણ સાગરોપમની હોય છે તે દેવો દોઢ

भावबंधे' 'पएसबंधे' प्रदेशबन्धः=सकषायजीवेन मनोवागादिद्वारेण क्रियाविशेषस्य कर्त्रा भिन्नभिन्नस्वभावानां कर्मपुद्गलानां स्वभावानुसारं तत्तत्परिमाणभागेन संबन्धः=प्रदेशबन्धः, इति चतुर्विधो बन्धः । 'चउगाउए' चतुर्गव्यूत योजनं प्रज्ञप्तम् क्रोशचतुष्टयस्य योजनं भवति । अनुराधानक्षत्रं चतुस्तारं प्रज्ञप्तम् । पूर्वपाढानक्षत्रं चतुस्तारं प्रज्ञप्तम् । उत्तरापाढानक्षत्रं चतुस्तारं प्रज्ञप्तम् ॥१५॥

योजन कहा गया है। अनुराधानक्षत्र चारताराओं वाला, पूर्वाषाढा नक्षत्र चारताराओं वाला, और उत्तराषाढानक्षत्र चार ताराओं वाला कहा गया है।

भावार्थ—चारित्ररूप आत्मपरिणामों में अनिर्मलता का नाम ही कषाय है। कषायमोह के उदय से क्रोध, मान, माया और लोभ, ये चार कषायें उत्पन्न होती है। मिथ्यात्व गुणस्थान से लेकर यह कषाय-सूक्ष्मसांपराय में दसवें गुणस्थानतक पाई जाती है। आगे के गुणस्थानों में या तो चारित्रमोहनीय का उदय नहीं रहता या चारित्रमोहनीय कर्म ही नहीं रहता इसलिये आगे यह नहीं पाई जाती। ध्यान शब्द का अर्थ है अन्तर्मुहूर्त तक चित्त की एकाग्रता। उत्तमसंहनन वालों के यह चित्त की एकाग्रता प्रशस्तरूप में रहती है और इनके अतिरिक्त जीवों में अप्रशस्तरूप में रहती है। प्रशस्त रूप ध्यान में ही संवर और निर्जरा का हेतु होता है, अप्रशस्त ध्यान नहीं इसीलिये ध्यान के ये चार भेद किये है–आर्त्तध्यान, रौद्रध्यान, और शुक्लध्यान। ऋत नाम दुःख का है, जिसके होने में दुःख का उद्वेग अथवा तीव्रता निमित्त हो या

બતાવ્યો છે અનુરાધા નક્ષત્ર ચાર તારાઓ વાળુ પૂર્વાષાઢા નક્ષત્ર ચાર તારાઓ-વાળુ, અને ઉત્તરાષાઢા નક્ષત્ર ચાર તારાઓવાળુ બતાવ્યું છે

ભાવાર્થ—ચારિત્રરૂપ આત્મપરિણામોમા અનિર્મળતાનુ નામ જ કષાય છે. કષાયમોહના ઉદયથી ક્રોધ, માન માયા અને લોભ, એ ચાર કષાયો ઉત્પન્ન થાય છે મિથ્યાત્વ ગુણસ્થાનથી લઇને દસમા ગુણસ્થાન સુધી કષાય વધુ ઓછા પ્રમાણમા રહેલ હોય છે પછીના ગુણસ્થાનોમા કા તો ચારિત્ર મોહનીયનો ઉદય રહેતો નથી અથવા તો ચારિત્ર મોહનીય કર્મ જ નથી રહેતા, તેથી પછીના ગુણસ્થાનોમા કષાય હોતો નથી ધ્યાન એટલે અન્તર્મુહૂર્ત સુધી ચિત્તની એકાગ્રતા ઉત્તમ સંહનન વાળાઓને ચિત્તની તે એકાગ્રતા પ્રશસ્ત રૂપમા રહે છે અને તે સિવાયના જીવોમા પ્રશસ્ત રૂપે રહે છે પ્રશસ્ત રૂપ ધ્યાન જ સંવર અને નિર્જરાનો હેતુ હોય છે, અપ્રશસ્ત ધ્યાન નહી, તેથી ધ્યાનના આ ચાર ભેદ કહેલ છે–આર્ત્તધ્યાન, રૌદ્રધ્યાન, ધર્મધ્યાન, અને શુકલધ્યાન 'ઋત' એટલે દુ ખ જે થવાને માટે દુઃખનો ઉદ્વેગ

त्तस्यैकाग्रतारूपम् । तत्र चतुर्विधध्यानेषु आर्तध्यानं निरूपयति-ऋतं=दुःखम्, तस्य निमित्तं तत्र भवं वा आर्तम्, आर्तं च तद्ध्यानम् आर्तध्यानम्, अथवा आर्तस्य =दुःखितस्य वा ध्यानम्=आर्तध्यानम्=मनोज्ञामनोज्ञवस्तुसंयोगवियोगादि निबन्धन चित्तविकलतारूपम् । रौद्रध्यानम्=रोदयत्यपरानिति रुद्र =प्राण्युपघातादि परिणतो जीवस्तस्य कर्म=रौद्रम्-हिंसाद्यतिक्रूरता रूपम्, तद्रूप ध्यानम्=रौद्रध्यानम् । धर्म ध्यानम्=धर्मः=सर्वज्ञस्य आज्ञादि, तस्य ध्यानम्=अनुचिन्तनम्=धर्मध्यानम् । शुक्ल ध्यानम्=शुचं शोकं क्लमयति=अपनयतीति शुक्लं=भवक्षयकारणम्=शुक्लं च तद्ध्यानम् =शुक्लध्यानम् । चतस्रो विकथाः प्रज्ञप्ताः, विरुद्धाचारि[म] मति याः कथास्ता विकथा, ता हि-स्त्रीकथा, भक्तकथा, राजकथा, देशकथा चेति चतस्रः । चतस्र संज्ञा प्रज्ञप्ता संज्ञा हि-असातवेदनीय मोहनीय कर्मोदयसंपाद्या आहाराद्यभि लाषादिरूपाऽऽत्मना विशेषा । तास्तु-आहारसंज्ञा-भयसंज्ञा, मैथुनसंज्ञा-परिग्रहस ज्ञाख्याः । चतुर्विधो बन्ध प्रज्ञप्तः, बन्धनं बन्ध, स हि -कर्मवर्गणायोग्यपुद्गलाना मात्मप्रदेशैः सह क्षीरनीरवत्सम्बन्धो बन्धः। स च 'पगइबंधे' प्रकृतिबन्धः=प्रकृतयः =कर्मभेदोऽज्ञानावरणीयादयः, तासां बन्धः प्रकृतिबन्ध । 'ठिइबन्धे' स्थितिबन्धः, जघन्यादिभेदभिन्ना स्थितिः, प्रकृतिनामवस्थानं स्थितिः तस्या बन्ध =स्थितिबन्धः। अनुभावबन्धः, अनुभावो विपाकस्तीव्रादिभेदो रसस्तस्य बन्धोऽनुभावबन्धः। 'अणु

अब सूत्रकार चतुर्थ समवायांग को प्रतिपादित करते हैं—'चत्तारि' इत्यादि।

कषाय चार कही गई गइ हैं। वे इस प्रकार हैं-क्रोधकषाय, मान कषाय मायाकषाय और लोभकषाय। चार ध्यान कहे गये हैं वे ये हैं-आर्तध्यान, रौद्रध्यान धर्मध्यान और शुक्लध्यान। चार विकथाएँ कही गई हैं, वे इस प्रकार है-स्त्रीकथा, भक्तकथा, राजकथा और देशकथा। चार संज्ञाएँ कही गई हैं, वे इस प्रकार हैं-आहारसंज्ञा, भयसंज्ञा, मैथुनसंज्ञा और परिग्रह संज्ञा। चार प्रकार का बंध प्रज्ञप्त हुआ है वह इस प्रकार है-प्रकृतिबंध, स्थितिबंध, अनुभावबंध और प्रदेशबंध। चार कोश का एक

હવે સૂત્રકાર ચોથા સમવાયાંગનું પ્રતિપાદન કરે છે—'चत्तारी' इत्यादि।

ટીકાર્થ-કષાય ચાર છે-(૧) ક્રોધ કષાય (૨) માન કષાય, (૩) માયા કષાય અને લોભ કષાય. ધ્યાન ચાર કહેલ છે-(૧) આર્ત્તધ્યાન, રૌદ્રધ્યાન, (૩) ધર્મધ્યાન અને (૪) શુકલ ધ્યાન. ચાર વિકથાઓ કહેલ છે-સ્ત્રીકથા, ભક્તકથા રાજકથા અને દેશ કથા. ચાર સંજ્ઞાઓ આ પ્રમાણે છે- (૧) આહાર સંજ્ઞા, ૨) ભયસંજ્ઞા (૩) મૈથુન સંજ્ઞા. (૪) પરિગ્રહ સંજ્ઞા ચાર પ્રકારના બંધ બતાવેલ છે-(૧) પ્રકૃતિબંધ, (૨) સ્થિતિબંધ, (૩) અનુભાગબંધ અને (૪) પ્રદેશબંધ. ચાર કોશનો એક યોજન

भावबंधे' 'पएसबंधे' प्रदेशबन्धः=सकषायजीवेन मनोवागादिद्वारेण क्रियाविशेषस्य कर्त्रा भिन्नभिन्नस्वभावानां कर्मपुद्गलानां स्वभावानुसार तत्तत्परिमाणभागेन संबन्धः=प्रदेशबन्धः, इति चतुर्विधो बन्धः। 'चउगाउए' चतुर्गव्यूत योजन प्रज्ञप्तम् क्रोशचतुष्टयस्य योजनं भवति। अनुराधानक्षत्रं चतुस्तारं प्रज्ञप्तम्। पूर्वषाढानक्षत्रं चतुस्तारं प्रज्ञप्तम्। उत्तराषाढानक्षत्रं चतुस्तारं प्रज्ञप्तम् ॥१५॥

योजन कहा गया है। अनुराधानक्षत्र चारताराओं वाला, पूर्वाषाढा नक्षत्र चारताराओं वाला, और उत्तराषाढानक्षत्र चार ताराओं वाला कहा गया है।

भावार्थ—चारित्ररूप आत्मपरिणामों में अनिर्मलता का नाम ही कषाय है। कषायमोह के उदय से क्रोध, मान, माया और लोभ, ये चार कषायें उत्पन्न होती है। मिथ्यात्व गुणस्थान से लेकर यह कषाय न्यूनाधिकरूप में दसवें गुणस्थानतक पाई जाती है। आगे के गुणस्थानों में या तो चारित्रमोहनीय का उदय नहीं रहता या चारित्रमोहनीय कर्म ही नहीं रहता इसलिये आगे यह नहीं पाई जाती। ध्यान शब्द का अर्थ है अन्तर्मुहूर्त तक चित्त की एकाग्रता। उत्तमसंहनन वालों के यह चित्त की एकाग्रता प्रशस्तरूप में रहती है और इनके अतिरिक्त जीवों में अप्रशस्तरूप में रहती हैं। प्रशस्त रूप ध्यान में ही संवर और निर्जरा का हेतु होता है, अप्रशस्त ध्यान नहीं इसीलिये ध्यान के ये चार भेद किये है-आर्त्तध्यान, रौद्रध्यान, और शुक्लध्यान। ऋत नाम दुःख का है, जिसके होने में दुःख का उद्वेग अथवा तीव्रता निमित्त हो या

બતાવ્યો છે અનુરાધા નક્ષત્ર ચાર તારાઓ વાળુ પૂર્વાષાઢા નક્ષત્ર ચાર તારાઓ-વાળું, અને ઉત્તરાષાઢા નક્ષત્ર ચાર તારાઓવાળુ બતાવ્યું છે

ભાવાર્થ—ચારિત્રરૂપ આત્મપરિણામોમા અનિર્મળતાનુ નામ જ કષાય છે. કષાયમોહના ઉદયથી ક્રોધ, માન માયા અને લોભ, એ ચાર કષાયો ઉત્પન્ન થાય છે મિથ્યાત્વ ગુણસ્થાનથી લઇને દસમા ગુણસ્થાન સુધી કષાય વધુ ઓછા પ્રમાણમા રહેલ હોય છે પછીના ગુણસ્થાનોમા કાતો ચારિત્ર મોહનીયનો ઉદય રહેતો નથી અથવા તો ચારિત્ર મોહનીય કર્મ જ નથી રહેતા, તેથી પછીના ગુણસ્થાનોમા કષાય હોતો નથી ધ્યાન એટલે અન્તર્મુહૂર્ત સુધી ચિત્તની એકાગ્રતા ઉત્તમ સંહનન વાળા ઓને ચિત્તની તે એકાગ્રતા પ્રશસ્ત રૂપમાં રહે છે અને તે સિવાયના જીવોમા પ્રશસ્ત રૂપે રહે છે પ્રશસ્ત રૂપ ધ્યાન જ સંવર અને નિર્જરાનો હેતુ હોય છે, અપ્રશસ્ત ધ્યાન નહી, તેથી ધ્યાનના આ ચાર ભેદ કહેલ છે—આર્ત્તધ્યાન, રૌદ્રધ્યાન, ધર્મધ્યાન, અને શુકલધ્યાન 'ઋત' એટલે દુ ખ જે થવાને માટે દુ ખનો ઉદ્વેગ

जो दुःख में होनेवाला हो उसका नाम आर्तध्यान है। अथवा दुःखित व्यक्ति का जो ध्यानहै वह आर्तध्यान है। यह आर्तध्यान चार प्रकार का होता है अप्रिय वस्तुके प्राप्त होने पर उसके वियोग के लिये चिन्तासातत्य का होना यह प्रथम आर्तध्यान है १। प्रियवस्तु के वियोग होने पर उसकी प्राप्ति के लिये सतत चिन्ता करना दूसरा आर्तध्यान है २। वेदना होने पर उसके दूर करने के लिये निरन्तर चिन्ता करना तीसरा आर्तध्यान ३ है। आगामी विषय की प्राप्ति के लिये निरन्तर चिन्ता करना चौथा आर्तध्यान है ४ यह आर्तध्यान चौथे, पांचवें और छठवें गुणस्थान में अर्थात् प्रारंभ से लेकर छठवें गुणस्थानतक होता है, परन्तु इसमें का चौथा भेद छठवें गुणस्थान में नहीं होता १। दुःख की उत्पत्ति के मूल में चार कारण हैं–अनिष्ट वस्तु का संयोग१, इष्टवस्तु का वियोग२, प्रतिकूल वेदना३ और भोगलालसा४। इन कारणों को लेकर ही आर्तध्यान के ये चार भेद किये गये हैं। जो दूसरे प्राणियों को रुलावे–कष्ट देवे, ऐसे क्रूर दुष्ट–जीव के, प्राणियों को उपमर्दन आदि करने वाले जितने भी कार्य हैं वे सब रौद्र हैं। इस रौद्ररूप जो ध्यान होता है वह रौद्रध्यान कहलाता है। तात्पर्य कहने का यह है कि जिसका चित्त अतिकठोर और क्रूर है ऐसे जीव का जो ध्यान है वही रौद्रध्यान

અથવા તીવ્રતા નિમિત્ત હોય અથવા જે ધ્યાન દુઃખમાં જ ઉત્પન્ન થનાર હોય હોય તેનું નામ આર્ત્તધ્યાન છે અથવા દુઃખિત વ્યક્તિનું જે ધ્યાન હોય તે આર્ત્ત ધ્યાન કહેવાય છે તે આર્ત્તધ્યાન ચાર પ્રકારનું છે (૧) અપ્રિય વસ્તુ પ્રાપ્ત થતા તેના વિયોગને માટે ચિન્તિત રહેવું તે પ્રથમ આર્ત્તધ્યાન છે (૨) પ્રિય વસ્તુનો વિયોગ થતા તેની પ્રાપ્તિને માટે સતત ચિન્તા કરવી તે બીજું આર્ત્તધ્યાન છે (૩) વેદના થતાં તેને દૂર કરવાને માટે નિરંતર ચિન્તા કરવી તે ત્રીજું આર્ત્તધ્યાન છે (૪) આગામી વિષયની પ્રાપ્તિને માટે નિરંતર ચિંતા કરવી તે ચોથું આર્ત્તધ્યાન છે તે આર્ત્તધ્યાન ચોથા પાંચમા અને છઠ્ઠા ગુણસ્થાનમાં એટલે કે શરૂઆતથી લઈને છઠ્ઠા ગુણસ્થાન સુધી થાય છે પણ તેમાંનો ચોથો ભેદ છઠ્ઠા ગુણસ્થાનમાં થતો નથી. દુઃખની ઉત્પત્તિના મૂળમાં ચાર કારણ છે–(૧) અનિષ્ટ વસ્તુનો સંયોગ, (૨) ઇષ્ટ વસ્તુનો વિયોગ, (૩) પ્રતિકૂળ વેદના અને (૪) ભોગલાલસા ને કારણોને લીધે જ આર્ત્તધ્યાનના એ ચાર ભેદ પડેલ છે જે બીજા જીવોને રડાવે–કષ્ટ દે, એવાં ક્રૂર –દુષ્ટ જીવોનાં પ્રાણીઓનું ઉપમર્દન કરનારા જે કોઈ કાર્યો હોય તે સઘળાં રૌદ્ર કહેવાય છે એ રૌદ્રરૂપ જે ધ્યાન હોય છે તેને રૌદ્રધ્યાન કહે છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે જેનું ચિત્ત અતિ કઠોર અને ક્રૂર હોય છે એવાં જીવનું જે ધ્યાન હોય છે તેને

है। चित्त में कठोरता का जागरण हिंसा, झूठ, चोरी प्राप्तविषयों का संरक्षण इन बातों से ही होता है, अतः इसके भी हिंसानुबंधी, मृषानुबंधी, स्तेयानुबंधी और संरक्षणानुबंधी, ऐसे चार भेद है। यह ध्यान पहिले से लेकर पांचवें गुणस्थान तक के जीवों को होता है।२। सर्वज्ञ भगवान् की आज्ञा आदि का नाम धर्म है। इस धर्म का वार २ चिन्तवन करना सो धर्मध्यान है। इसके आज्ञाविचय१, अपायविचय२, विपाकविचय३ और संस्थानविचय४, ऐसे चार भेद हैं।३। जो शोक को दूर करे उसका नाम शुक्ल है ऐसा शुक्ल का यह व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ होता है। भवके क्षय का कारण यही ध्यान है। धर्मध्यान सातवे गुणस्थान से लेकर बारहवे गुणस्थान तक और शुक्लध्यान ग्यारहवे गुणस्थान से चौदवे गुणस्थान तक के जीवों के होता है। पृथक्त्व वितर्क सविचार१, एकत्ववितर्काविचार२, सूक्ष्मक्रिया अनिवृत्ति३, और समुच्छिन्न क्रिया अप्रतिपाती४ ये चारभेद शुक्लध्यान के हैं। इनका विशेष वर्णन आगमों से जाना जा सकता है। चारित्र के प्रति जो कथाएँ विरुद्ध पडती हों वे विकथा है—स्त्री संबंधी कथा का नाम स्त्रीकथा१, भोजन से संबंध रखनेवाली कथा का नाम भक्तकथा२, राजा से संबंधित कथा— बातचीत का नाम राजकथा३ और देश से

રૌદ્રધ્યાન કહે છે ચિત્તમા કઠોરતાની ઉત્પત્તિ હિંસા, અસત્ય, ચોરી અને પ્રાપ્ત વિષયોના સંરક્ષણ, એ ચાર કારણે જ થાય છે, તેથી તેના પણ આ પ્રમાણે ચાર ભેદ છે-(૧) હિંસાનુબંધી (૨) મૃષાનુબંધી, (૩) સ્તેયાનુબંધી, અને સંરક્ષણાનુબંધી આ ધ્યાન પહેલેથી લઇને પાંચમા ગુણસ્થાન સુધીના જીવોને થાય છે ॥૨॥ સર્વજ્ઞ ભગવાનની આજ્ઞા આદિને ધર્મ કહે છે. તે ધર્મનું વારવાર ચિંતન કરવું તે ધર્મધ્યાન છે તેના ચાર ભેદ આ પ્રમાણે છે-(૧) આજ્ઞાવિચય, (૨) અપાયવિચય, (૩) વિપાકવિચય, અને (૪) સંસ્થાન વિચય. ॥૩॥

જે શોકને દૂર કરે તેનું નામ શુક્લ છે, એવો શુકલનો વ્યુત્પત્તિલભ્ય અર્થ થાય છે આ ધ્યાન જ ભાવના ક્ષયનું કારણ છે. ધર્મધ્યાન સાતમાં ગુણસ્થાનથી લઇને બારમા ગુણસ્થાન સુધીના અને શુકલધ્યાન અગિયારમાં ગુણસ્થાનથી લઇને ચૌદમાં ગુણસ્થાન સુધીના જીવોને થાય છે. શુકલધ્યાનના આ પ્રમાણે ચાર ભેદ છે—[૧] પૃથક્ત્વ વિતર્ક સવિચાર, [૨] એકત્વવિતર્કાવિચાર, [૩] સૂક્ષ્મક્રિયા અનિવૃત્તિ અને ૪ સમુચ્છિન્ન ક્રિયા અપ્રતિપાતી તેમનું વિશેષ વર્ણન આગમોમાંથી જાણી શકાય છે. જે કથાઓ ચારિત્રથી વિરૂદ્ધની હોય છે તેમને વિકથા કહે છે [૧] સ્ત્રી વિષેની કથાને સ્ત્રીકથા કહે છે. [૨] ભોજન વિષેની કથાને ભકતકથા કહે છે. [૩] રાજા સંબંધી કથાને રાજકથા કહે છે અને [૪] દેશ વિષેની કથાને દેશ કથા કહે

मूलम्—जे देवा किट्ठिं सुकिट्ठिं किट्ठियावत्त किट्ठिप्पभ किट्ठिजुत्त किट्ठिवण्ण किट्ठिलेस किट्ठिज्झय किट्ठिसिंग किट्ठिसिट्ठ किट्ठिकूड किट्ठुत्तर वडिंसग विमाणं देवत्ताए उववण्णा, तेसिणं देवाणं उक्कोसेणं चत्तारि सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। ते णं देवा चउण्हं अद्धमासाणं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा, तेसिं देवाणं चउहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जइ। अत्थेगइया भवसिद्धिया जीवा जे चउहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति बुज्झिस्संति मुच्चिस्संति परिनिव्वाइस्संति, सव्वदुक्खाणं अंतं करिस्संति ॥१७॥

टीका—'जे देवा' इत्यादि। ये देवाः कृष्टिं सुकृष्टिं कृष्ट्यावर्त्तं कृष्टिप्रभं कृष्टियुक्तं कृष्टिवर्णं कृष्टिलेश्यं कृष्टिध्वजं कृष्टिशृङ्गं कृष्टिसृष्टं कृष्टिकूटं कृष्ट्युत्तरावतंसकं विमानं एतन्नामकेषु द्वादशविधविमानेषु देवत्वेन उत्पन्नाः, तेषां खलु देवानामुत्कर्षेण चत्वारि सागरोपमाणि स्थितिः प्रज्ञप्ता। ते खलु देवा चतुर्णामर्द्धमासानाम्=मासद्वयानन्तरमित्यर्थः आनन्ति=आन्तरं श्वासं गृह्णन्ति, प्राणन्ति=आन्तरं निश्वासं गृह्णन्ति, उच्छ्वसन्ति=बाह्यमुच्छ्वासं गृह्णन्ति, निश्वसन्ति=बाह्य निःश्वासं गृह्णन्तीत्यर्थः। तेषां देवानां चतुर्भिर्वर्षसहस्रैः आहारसंज्ञा समुत्पद्यते।

'जे देवा' इत्यादि।

टीकार्थ—जो देव, कृष्टि, सुकृष्टि कृष्ट्यावर्त, कृष्टिप्रभ, कृष्टियुक्त, कृष्टिवर्ण, कृष्टिलेश्य, कृष्टिध्वज, कृष्टिशृंग, कृष्टिसृष्ट कृष्टिकूट और कृष्ट्युत्तरावतंसक, इन बारह प्रकार के विमानों में देव की पर्याय में उत्पन्न होते हैं, उन देवों की उत्कृष्ट स्थिति चार सागरोपम की होती है। वे देव चारपक्ष में अर्थात् दो मास के बाद में आन्तर श्वास लेते हैं, आन्तर निःश्वास लेते हैं बाह्य उच्छ्वास लेते हैं, और बाह्य निश्वास लेते हैं। उन देवों को चार हजार वर्ष के

'जे देवा' इत्यादि।

ટીકાર્થ-જે દેવો, કૃષ્ટિ સુકૃષ્ટિ, કૃષ્ટ્યાવર્ત્ત કૃષ્ટિપ્રભ કૃષ્ટિયુક્ત, કૃષ્ટિવર્ણ, કૃષ્ટિલેશ્ય, કૃષ્ટિધ્વજ, કૃષ્ટિશૃંગ, કૃષ્ટિસૃષ્ટ, કૃષ્ટિકૂટ, અને કૃષ્ટ્યુત્તરાવતંસક એ બાર પ્રકારનાં વિમાનોમાં દેવની પર્યાયમાં ઉત્પન્ન થાય છે તે દેવોની ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિ ચાર સાગરો-પમની હોય છે તે દેવો ચાર પખવાડિયામાં એટલે કે મહિને અંદર શ્વાસ લે છે અંદર નિશ્વાસ લે છે બહાર ઉચ્છ્વાસ લે છે તે દેવોને ચાર હજાર વર્ષ પછી

सन्ति एके भवसिद्धिका जीवाः ये चतुर्भिर्भवग्रहणैः सेत्स्यन्ति, भोत्स्यन्ते, मोक्ष्यन्ति, परिनिर्वास्यन्ति, सर्वदुःखानामन्तं करिष्यन्ति ॥१७॥

पञ्चमं समवायाङ्गमाह— तजह

मूलम्—पंच किरिया पण्णत्ता, तंजहा—काइया, अहिगरणिया, पाउसिया, पारितावणिया पाणाइवाय किरिया। पंचमहव्वयापण्णत्ता—तं जहा—सव्वाओ पाणाइवायाओ वेरमणं, सव्वाओ मुसावायाओ वेरमणं, सव्वाओ अदिण्णादाणाओ वेरमणं सव्वाओ मेहुणाओ वेरमणं, सव्वाओ परिग्गहाओ वेरमणं। पंचकामगुणा पण्णत्ता, तं जहा सद्दा रूवा रसा गंधा फासा। पंच आसवदारा पण्णत्ता, तं जहा मिच्छत्तं, अविरई, पमाया, कसाया, जोगा। पंच संवरदारा पण्णत्ता, तं जहा—सम्मत्तं, विरई, अप्पमत्तया, अकसाया, अजोगया। पंच निज्जरट्ठाणा पण्णत्ता, तं जहा—पाणाइवायाओ वेरमणं, मुसावायाओ वेरमणं, अदिन्नादाणाओ वेरमणं, मेहुणाओ वेरमणं, परिग्गहाओ वेरमणं। पंच समिईओ पण्णत्ता, तं जहा—ईरियासमिई, भासासमिई, एसणासमिई, आयाणभंडमत्तनिक्खेवणासमिई, उच्चारपासवण खेल-जल्लसिंघाणपरिट्ठावणिया समिई। पंच अत्थिकाया पण्णत्ता, तं जहा—धम्मत्थिकाए, अधम्मत्थिकाए, आगासत्थिकाए, जीवत्थिकाए, पोग्गलत्थिकाए। रोहिणीनक्खत्ते पंचतारे पण्णत्ते। पुणव्वसु नक्खत्ते पंचतारे पण्णत्ते। हत्थनक्खत्ते पंचतारे पण्णत्ते विसाहानक्खत्ते पंचतारे पण्णत्ते। धणिट्ठानक्खत्ते पंचतारे पण्णत्ते ॥१८॥

अनन्तर आहारसंज्ञा उत्पन्न होती है—इन देवों में कितनेक देव भवसिद्धिक होते हैं जो चार भव ग्रहण करने के बाद सिद्ध हो जावेंगे, बुद्ध हो जावेंगे, कर्मों से छूट जावेंगे, परिनिर्वृत हो जावेंगे और समस्त दुःखों का अंत कर देंगे ॥सू० १७॥

આહાર સંજ્ઞા થાય છે તે દેવોમાં કેટલાક દેવો ભવસિદ્ધિક હોય છે, જેઓ ચાર ભવ કરીને સિદ્ધ બનશે, બુદ્ધ થશે, કર્મોથી મુક્ત થશે, પરિનિ-વૃત થશે અને સમસ્ત દુઃખોનો અંત કરશે ॥સૂ. ૧૭॥

संबंधित कथा का नाम देशकथा है४। इन कथाओं का सम्यक् चारित्र की आराधना के साथ कोई प्रयोजन नहीं है, प्रत्युत ये उस चारित्र को मलिन वाली होती हैं इसलिये विकथाएँ हैं। असातवेदनीय और मोहनीय कर्म के उदय से जो जीवों को आहार आदि की अभिलाषा रूप परिणति है इसका नाम सज्ञा है। ये आहारसज्ञा आदि के भेद से चार प्रकार की हैं। एकेन्द्रिय से लेकर पंचेन्द्रियतक के जीवों में ये सब पाई जाती हैं। बंध चार प्रकार का है-प्रकृतिबंध, स्थितिबंध, अनुभावबंध और प्रदेशबंध। कर्मवर्गणा योग्य पुद्गलों का आत्मप्रदेशों के साथ क्षीरनीर की तरह जो संबंध हो जाता है इसका नाम बंध है। गृहीत कर्मों के जो ज्ञानावरणीय आदि रूप अंश हैं उन अंशो का बंध, जघन्य आदि के भेद से युक्त प्रकृतियों का आत्मा में ठहरने की मर्यादा रूप से बंधना इसका नाम स्थिति, बंध की गई प्रकृतियों का अपनी कालमर्यादा के अनुसार उदय में आना और मन्दतीव्रादिरूप से रस-फल-देना इस प्रकार का बंध होता है उसका नाम अनुभावबंध है। कषाययुक्त बने हुए जीव के द्वारा मनो, वाग् आदि योग प्रणाली से गृहीत भिन्न२ स्वभाव में परिणत होनेवाली कर्मपुद्गल राशि का जो अमुक अमुक विभाग रूप में बँट जाना होता है इसका नाम प्रदेशबंध है ॥सू० १५॥

છે તે કથાઓ સમ્યક્ ચારિત્રની આરાધનામાં કોઇ પણ રીતે ઉપયોગી નથી, પણ તે કથાઓ ચારિત્રને મલિન કરનારી હોય છે, તેથી જ તેમને વિકથાઓ કહે છે અસાતવેદનીય અને મોહનીય કર્મના ઉદયથી જીવોને આહાર આદિની અભિલાષા રૂપ જે પરિણતિ થાય છે તેને સંજ્ઞા કહે છે આહાર સંજ્ઞા આદિ તેના ચાર ભેદ છે એકે ન્દ્રિયથી પંચેન્દ્રિય સુધીના સઘળા જીવોમાં આહારસંજ્ઞા હોય છે બંધના ચાર પ્રકાર છે-પ્રકૃતિબંધ, સ્થિતિબંધ, અનુભાવબંધ, અને પ્રદેશબંધ કર્મવર્ગણા યોગ્ય પુદ્ગલોનો આત્મપ્રદેશોની સાથે ક્ષીરનીર [દૂધ અને પાણી] ની જેમ જે સંબંધ થઈ જાય છે તેને બંધ કહે છે ગૃહીત કર્મના જ્ઞાનાવરણીય આદિરૂપ જે અંશો છે તે અંશોનો બંધ પ્રકૃતિબંધ છે જઘન્ય આદિના ભેદથી યુક્ત પ્રકૃતિયોનું આત્મામાં રોકાવાની મર્યાદા રૂપથી બંધાવું તેનું નામ સ્થિતિબંધ બંધાયેલ પ્રકૃતિયોનું પોતાની કાળ મર્યાદા અનુસાર ઉદયમાં આવવું અને મન્દતીવ્રાદિ રૂપે રસ-ફલ-દેવું એ પ્રકારનો જે બંધ હોય છે તેનું નામ અનુભાવબંધ છે કષાય યુક્ત બનેલ જીવોના દ્વારા મન વચન આદિ યોગ પ્રણાલીથી ગૃહીત ભિન્ન ભિન્ન સ્વભાવમાં પરિણમતી કર્મ પુદ્ગલ રાશિનું જે અમુક અમુક વિભાગરૂપે વહેંચાઇ જવાનું થાય છે તેનું નામ પ્રદેશબંધ છે ॥સૂ. ૧૫॥

मूलम्—इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरयियाणं चत्तारि पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। तच्चाए णं पुढवाए अत्थेगइयाणं नेरयियाणं चत्तारि सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगइयाणं चत्तारि पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगइयाणं देवाणं चत्तारि पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। सणंकुमारमाहिंदेसु कप्पेसु अत्थेगइयाणं देवाणं चत्तारि सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता ॥१६॥

टीका—'इमीसे णं' इत्यादि। अस्यां खलु रत्नप्रभाया पृथिव्यामस्ति एकेषां नैरयिकाणां चत्वारि पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। तृतीयस्या खलु पृथिव्याम् अस्त्येकेषा नैरयिकाणा चत्वारि सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। असुरकुमाराणा देवानामस्त्येकेषां चत्वारि पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। सौधर्मेशानेषु कल्पेषु अस्त्येकेषा देवानां चत्वारि पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। सनत्कुमारमाहेन्द्रेषु कल्पेषु अस्त्येकेषां देवानां चत्वारि सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता॥१६

'इमीसेण' इत्यादि।

टीकार्थ–इस रत्नप्रभापृथिवी में कितनेक नाकियों की स्थिति चार पल्योपम की है। तृतीय पृथिवी में कितनेक नारकियों की स्थिति चार सागरोपम की है। असुरकुमार देवों में कीतनेक देवों की स्थिति चार पल्योपम की है। सौधर्म और ईशान इन दो कल्पों में कितनेक देवों की स्थिति चार पल्योपम की है। सनत्कुमार और माहेन्द्र इन दो कल्पों में कितनेक देवों की स्थिति चार–पल्योपम की है। इस सूत्र द्वारा यह मध्यस्थिति ही कही गई है ॥१६॥

'इमीसे ण' इत्यादि ।

ટીકાર્થ–આ રત્નપ્રભા પૃથ્વીમા કેટલાક નારકીઓની સ્થિતિ ચાર પલ્યોપમની છે ત્રીજી પૃથ્વામા કેટલાક નારકીઓની સ્થિતિ ચ ર સાગરોપમની છે અસુરકુમાર દેવોમા કેટલાક દેવોની સ્થિતિ ચાર પાલ્યોપમની છે. સૌધર્મ અને ઈશાન, એ બે કલ્પોમા કેટલાક દેવોની સ્થિતિ ચાર પલ્યોપમની છે સનત્કુમાર અને માહેન્દ્ર, એ બે કલ્પોમા કેટલાક દેવોની સ્થિતિ ચાર પલ્યોપમની છે. આ સૂત્ર દ્વારા આ મધ્યમસ્થિતિ જ બતાવવામા આવી છે ॥૧૬॥

मूलम्—जे देवा किट्ठि सुकिट्ठि किट्ठियावत्त किट्ठिप्पभ किट्ठिजुत्त किट्ठिवण्ण किट्ठिलेस किट्ठिज्झय किट्ठिसिंग किट्ठिसिट्ठ किट्ठिकूड किट्ठुत्तर वडिंसग विमाण देवत्ताए उववण्णा, तेसिण देवाण उक्कोसेणं चत्तारि सागरोवमाइ ठिई पण्णत्ता । ते ण देवा चउण्ह अद्धमासाणं आणमति वा पाणमति वा ऊससति वा नीससति वा, तेसिं देवाणं चउहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जइ । अत्थेगइया भवसिद्धिया जीवा जे चउहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्सति बुज्झिस्सति मुच्चिस्सति परिनिव्वाइस्सति, सव्वदुक्खणं अत करिस्सति ॥१७॥

टीका—'जे देवा' इत्यादि । ये देवाः कृष्टि सुकृष्टि कृष्ट्यावर्त कृष्टिप्रभ कृष्टियुक्त कृष्टिवर्ण कृष्टिलेश्य कृष्टिध्वज कृष्टिशृङ्ग कृष्टिसृष्ट कृष्टिकूट कृष्ट्युत्तरा वतंसक विमाने एतन्नामकेषु द्वादशविधविमानेषु देवत्वेन उत्पन्नाः, तेषां खलु देवानामुत्कर्षेण चत्वारि सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । ते खलु देवाः चतु र्णामर्द्धमासानाम्=मासद्वयानन्तरमित्यर्थः आनन्ति=आन्तरं श्वास गृह्णन्ति, प्राणन्ति =आन्तरं निश्वासं गृह्णन्ति, उच्छ्वसन्ति=बाह्यमुच्छ्वास गृह्णन्ति, निश्वसन्ति=बाह्य निःश्वास गृह्णन्तीत्यर्थः । तेषां देवानां चतुर्भिर्वर्षसहस्रै आहारसंज्ञा समुत्पद्यते ।

'जे देवा' इत्यादि ।

टीकार्थ–जो देव, कृष्टि, सुकृष्टि कृष्ट्यावर्त्त, कृष्टिप्रभ, कृष्टियुक्त, कृष्टिवर्ण, कृष्टिलेश्य, कृष्टिध्वज, कृष्टिशृंग, कृष्टिसृष्ट कृष्टिकूट और कृष्ट्युत्तरावतंसक, इन बारह प्रकार के विमानों में देव की पर्याय में उत्पन्न होते हैं, उन देवों की उत्कृष्ट स्थिति चार सागरोपम की होती है। ये देव चारपक्ष में अर्थात् दो माह के बाद में आन्तर श्वास लेते हैं, आन्तर नि श्वास लेते हैं बाह्य उच्छ्वास लेते हैं, और बाह्य निश्वास लेते हैं। उन देवों को चार हजार वर्ष के

'जे देवा' इत्यादि ।

टीकार्थ–જે દેવો, કૃષ્ટિ સુકૃષ્ટિ, કૃષ્ટયાવર્ત્ત કૃષ્ટિપ્રભ, કૃષ્ટિયુક્ત, કૃષ્ટિવર્ણ, કૃષ્ટિલેશ્ય, કૃષ્ટિધ્વજ, કૃષ્ટિશૃંગ કૃષ્ટિસૃષ્ટ, કૃષ્ટિકૂટ, અને કૃષ્ટયુત્તરાવતંસક એ બાર પ્રકારનાં વિમાનોમાં દેવની પર્યાયમાં ઉત્પન્ન થાય છે, તે દેવોની ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિ ચાર સાગરો પમની હોય છે તે દેવો ચાર પખવાડિયામાં એટલે કે બે મહિને અંદર શ્વાસ લે છે અંદર નિઃશ્વાસ લે છે બહાર ઉચ્છવાસ લે છે તે દેવોને ચાર હજાર વર્ષ પછી

सन्ति एके भवसिद्धिका जीवाः ये चतुर्भिर्भवग्रहणैः सेत्स्यन्ति, भोत्स्यन्ते, मोक्ष्यन्ति, परिनिर्वास्यन्ति, सर्वदुःखानामन्तं करिष्यन्ति ॥१७॥

पञ्चमं समवायाङ्गमाह—

मूलम्—पंच किरिया पण्णत्ता, तद्यथा—काइया, अहिगरणिया, पाउसिया, पारितावणिया पाणाइवाय किरिया। पंचमहव्वयापण्णत्ता—तं जहा—सव्वाओ पाणाइवायाओ वेरमणं, सव्वाओ मुसावायाओ वेरमणं, सव्वाओ अदिण्णादाणाओ वेरमणं सव्वाओ मेहुणाओ वेरमणं, सव्वाओ परिग्गहाओ वेरमणं। पंचकामगुणा पण्णत्ता, तं जहा सद्दा रूवा रसा गंधा फासा। पंच आसवदारा पण्णत्ता, तं जहा मिच्छत्तं, अविरई, पमाया, कसाया, जोगा। पंच संवरदारा पण्णत्ता, तं जहा—सम्मत्तं, विरई, अप्पमत्तया, अकसाया, अजोगया। पंच निज्जरट्ठाणा पण्णत्ता, तं जहा—पाणाइवायाओ वेरमणं, मुसावायाओ वेरमणं, अदिन्नादाणाओ वेरमणं, मेहुणाओ वेरमणं, परिग्गहाओ वेरमणं। पंच समिईओ पण्णत्ता, तं जहा—ईरियासमिई, भासासमिई, एसणासमिई, आयाणभंडमत्तनिक्खेवणासमिई, उच्चारपासवण खेल-जल्लसिंघाणपरिट्ठावणिया समिई। पंच अत्थिकाया पण्णत्ता, तं जहा—धम्मत्थिकाए, अधम्मत्थिकाए, आगासत्थिकाए, जीवत्थिकाए, पोग्गलत्थिकाए। रोहिणीनक्खत्ते पंचतारे पण्णत्ते। पुणव्वसु नक्खत्ते पंचतारे पण्णत्ते। हत्थनक्खत्ते पंचतारे पण्णत्ते विसाहानक्खत्ते पंचतारे पण्णत्ते। धणिट्ठानक्खत्ते पंचतारे पण्णत्ते ॥१८॥

अनन्तर आहारसंज्ञा उत्पन्न होती है—इन देवों में कितनेक देव भवसिद्धिक होते हैं जो चार भव ग्रहण करने के बाद सिद्ध हो जावेंगे, बुद्ध हो जावेंगे, कर्मों से छूट जावेंगे, परिनिर्वृत हो जावेंगे और समस्त दुःखों का अंत कर देंगे ॥सू० १७॥

આહાર સંજ્ઞા થાય છે તે દેવોમાં કેટલાક દેવો ભવસિદ્ધિક હોય છે, જેઓ ચાર ભવ કરીને સિદ્ધ બનશે, બુદ્ધ થશે, કર્મોથી મુક્ત થશે, પરિનિવૃત થશે અને સમસ્ત દુખોનો અંત કરશે. ॥સૂ. ૧૭॥

टीका--'पंच किरियाओ' इत्यादि। पंच 'किरियाओ' क्रियाः=व्यापा रविशेषरूपा' प्रज्ञप्ता, तद्यथा-'काइया' कायिकी, कायेन निर्वृत्ता काय भवा वा क्रिया, कायकी-कायचेष्टारूपेत्यर्थः। 'अहिगरणिया' अधिकरणिकी, आधि क्रियते नारकादियोनि विशेषेषु स्थाप्यते आत्माऽनेनेति अधिकरणम् अनुष्ठान विशेषो बाह्यवस्तु खड्गचक्रादि च, तत्र भवा, तेन निर्वृत्ता वा अधिकरणिकी= खड्गादिनिर्वर्त्तनादिलक्षणेत्यर्थ 'पाउसिया' प्राद्वेषिकी, प्रद्वेषा=मत्सरः कर्मबन्ध हेतुरकुशलो भावपरिणामविशेष, तत्र भवा, तेन निर्वृत्ता वा प्राद्वेषिकी, मत्सरादि रूपाक्रियेत्यर्थ'। 'पारियावणिया' पारितापनिकी, परितापन=ताडनादिदुःख विशेषलक्षणम् पीडाकरणमित्यर्थः, तेन निर्वृत्ता, पारितापनिकी। 'पाणाइवायकिरिया' प्राणातिपातक्रिया=प्राणा प्राणिनः तेषामतिपातो विनाश', तद्विषया, एव वा क्रिया=प्राणातिपातक्रिया। पंच महव्वया' महाव्रतानि=महान्ति व्रतानि नियमा महाव्रतानि प्रज्ञप्तानि, तानि च प्राणातिपाताद् 'वेरमण' विरमण=निवृत्तिः सर्वतः मृषावादात्=असत्यभाषणात् विरमणम्। सर्वतः अदत्तादानात्, विरमणम्। सर्वत मैथुनाद् विरमणम्। सर्वत परिग्रहात् धर्मोपकरणातिरिक्तात् विरमणम्। पंच कामगुणा=काम्यन्ते अभिलष्यन्ते य ते कामाः=अभिलाषविषयाः ते च ते गुणाः =पुद्गलधर्माः शब्दादयः इति कामगुणा इन्द्रिय सुखदाः सद्वृत्तरसस्य मिष्टान्न पुष्पचन्दननाटकगीतवालवेणुवीणाकलीतकाकलीगीतादिपदार्थाः इत्यर्थः अथवा कामस्य=मदनोद्दीपकस्य गुणाः पर्दका कामगुणा शब्दादय पञ्चधा कथिता-

अब सूत्रकार पंचम समवायांग को कहते हैं-'पंचकिरिया' इत्यादि।

टीकार्थ-पांच क्रियाएं कही गई हैं। वे इस प्रकार है-कायिकी क्रिया, अधिकरणिकी क्रिया, पारितापनिकी क्रिया और प्राणातिपातक्रिया। पांच महाव्रत होते हैं वे ये हैं-सर्व प्रकार के प्राणातिपात से विरमण होना१, सर्व प्रकार के मृषावाद से विरमण होना२, सर्व प्रकार के अदत्तान से विरमण होना३, सर्वप्रकार के मैथुन से विरमण होना४, और सर्वप्रकार के परिग्रह से विरमण होना ५। पांच कामगुण होते हैं वे इस प्रकार से

હવે સૂત્રકાર પાંચમા સમવાયાંગનું કથન કરે છે—

"पंच किरिया" इत्यादि।

ટીકાર્થ-ક્રિયાઓ પાંચ છે-કાયિક ક્રિયા, અધિકરણિકી ક્રિયા પ્રદ્વેષિકી ક્રિયા પારિતાપનિકી ક્રિયા, અને પ્રાણાતિપાત ક્રિયા, મહાવ્રત પાંચ છે- (૧) સર્વ પ્રકારના પ્રાણાતિપાતથી વિરમણ (૨) સર્વ પ્રકારના મૃષાવાદનું વિરમણ, (૩) સર્વ પ્રકારના અદત્તાદાનનું વિરમણ, (૪) સર્વ પ્રકારના મૈથુનનું વિરમણ (૫) અને સર્વ પ્રકારના પરિગ્રહનું વિરમણ કરવું પાંચ કામગુણ હોય છે તે આ પ્રમાણે છે- શબ્દ, રૂપ

तद्यथा-शब्दाः, रूपाणि, रसा, गन्धाः, स्पर्शाः। पञ्च 'आसवदारा' आस्रवद्वाराणि=कर्मोपादानोपायभूतानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा मिथ्यात्वम् अविरतिः, प्रमादाः कषायाः, योगाः। पंच 'संवरदारा' संवरद्वाराणि=संवरस्य=कर्मानुपादानस्य द्वाराणि=उपायाः-संवरद्वाराणि प्रज्ञप्तानि= तानि च सम्यक्त्व-विरत्य-प्रमत्तताऽकषायाऽयोगकनामानि। पञ्च 'पञ्च 'णिज्जराट्ठाणा' निर्जरास्थानानि निर्जरणं-निर्जरा=परिपक्वानां कर्मावयवानामात्मप्रदेशात्पृथग्भवनम्। तस्याः स्थानानि-निर्जरास्थानानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-प्राणातिपाताद् विरमणम्, यावत् परिग्रहाद् विरमणम्। पञ्च 'समिईओ' समितयः=सम् सगता इतयः प्रवृत्तयः=समितयः प्रज्ञप्ताः तद्यथा-ईर्या समितिः=ईर्यायां गमने सम्यक्तया जीवरक्षणपूर्वकं प्रवृत्तिः, भाषासमितिः=भाषायां भाषणे सम्=सम्यक्तया अवद्यपरिहारपूर्वकमिति यावत्

है-शब्द, रूप, रस, गंध और स्पर्श। पांच आस्रवद्वार होते है-वे इस प्रकार से हैं-मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद कषाय और योग। पांच संवरद्वार होते हैं, वे इस प्रकार से हैं-सम्यक्त्व, विरति, अप्रमत्तता, अकषाय, और अयोग। पांच निर्जरास्थान होते है-वे ये हैं-प्राणातिपात से विरक्त होना मृषावाद से विरक्त होना, अदत्तादान से विरक्त होना, मैथुन से विरक्त होना और परिग्रह से विरक्त होना। पांच समितियां होती हैं-वे इस प्रकार हैं-ईर्यासमिति, भाषासमिति, एषणासमिति, आदान भाण्डमात्रनिक्षेपणासमिति और उच्चारप्रस्रवणखेलजल्लसिंघाणपरिष्ठापनिकासमिति। गमन-करते समय किसी भी जीव को क्लेश न हो इस प्रकार की सावधानी रखते हुए चलना इसका नाम ईर्यासमिति है१। भाषा बोलने में सत्य, हित, परिमित और संदेह रहित निरवद्य वचन बोलना इसका नाम भाषा समिति है २। संयम जीवनयात्रा में उपयोगी

રસ, અને ગંધ અને સ્પર્શ પાંચ આસ્રવ દ્વાર હોય છે તે આ પ્રમાણે છે મિથ્યાત્વ, અવિરતિ, પ્રમાદ, કષાય અને યોગ. પાંચ સંવરદ્વાર હોય છે તે આ પ્રમાણે છે-સમ્યકત્વ વિરતિ, અપ્રમત્તતા, અકષાય, અને અયોગ પાંચ નિર્જરાસ્થાન હોય છે તે આ પ્રમાણે છે પ્રાણાતિપાતથી વિરકત થવું, મૃષાવાદથી વિરકત થવું, અદત્તાદાનથી વિરકત થવું મૈથુનથી વિરકત થવું અને પરિગ્રહથી વિરકત થવું પાંચ સમિતિયો છે તે આ પ્રમાણે છે-ઇર્યાસમિતિ ભાષા સમિતિ, એષણાસમિતિ આદાન ભાંડ માત્ર નિક્ષેપણા સમિતિ અને ઉચ્ચાર-પ્રસ્રવણખેલ જલ્લ શિંઘાણ પરિષ્ઠાપનિકા સમિતિ ચાલતી વખતે કોઈ પણ જીવને કલેશ ન થાય તે પ્રકારની સાવચેતી રાખવી તેનું નામ ઇર્યા સમિતિ છે (૧) ભાષા બોલવામાં સત્ય હિત, પરિમિત અને સંદેહ રહિત વચન બોલવા તેનું નામ ભાષા સમિતિ છે (૨) સંય-

प्रवृत्ति , एषणासमिति:=मक्षादीनामाधान द्विचत्वारिंशद्दोषवर्जनपुरस्सर प्रवृत्ति , आदानभाण्डमात्रनिक्षेपणसमिति =आदाने-ग्रहणे=ग्रहणं च भाण्डमात्राणामेव, भाण्डमात्राणां=उपकरणानां-निक्षेपणे मरम्थापन समिति गुप्रस्युपेक्षितादिरूपण प्रवृत्ति । 'उच्चारपासवणखेलसिंघाणजल्लपारिट्ठावणियासमिई' उच्चारप्रस्रवण खेलजल्लसिङ्घाणपरिष्ठापनासमिति -उच्चार -पुरीष, प्रस्रवण=मूत्र, खेल= निष्ठीवन जल्ल=देहमल, शिङ्घाण=नासिकामल, तेषां परिष्ठापनाया=परित्यागे समितिः=स्थण्डिलादि दोषपरिहार पूर्वक प्रवृत्ति । पञ्च 'अत्थिकाया' अस्तिकाया = प्रदेशराशय तद्यथा-धर्मास्तिकाय , अधर्मास्तिकाय , आकाशास्तिकायः, जीवा स्तिकाय , पुद्गलास्तिकाय । रोहिणीनक्षत्र पञ्चतार प्रज्ञप्तम्। पुनर्वसु नक्षत्रं पञ्चतार प्रज्ञप्तम् । हस्तनक्षत्र पञ्चतार प्रज्ञप्तम् । धनिष्ठानक्षत्र पञ्चतारं प्रज्ञप्तम् ॥१८॥

ऐसे आहार आदि को बयालीस ४२ दोष टालकर लेने में प्रवृत्ति करना इसका नाम एषणासमिति है ३। संयमोपकारी भांडमात्रों-उपकरणों के रखने में और उठाने में यतनापूर्वक पडिलेहणादिरूप से प्रवृत्ति करना अथात् वस्तुमात्र को भलीभांति देखकर एवं प्रमार्जित करके यतनासे लेना या रखना इसका नाम आदानभाण्डमात्रनिक्षेपणासमिति है ४ उच्चार- पडीनीत, प्रस्रवण-लघुनीत, खेल-थूक, जल्ल-देहमल और सिंघाण- नाक का मल, इनको प्रासुक भूमि में देख भालकर यतना स परिठवना, इसका नाम उच्चार पासवणखेल जल्ल शिंघाण परिष्ठापनिकासमिति है ५। पांच अस्तिकाय हैं-वे य हैं-धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्ति काय, जीवास्तिकाय और पुद्गलास्तिकाय। रोहिणीनक्षत्र, पुनर्वसुनक्षत्र हस्तनक्षत्र विशाखानक्षत्र और धनिष्ठानक्षत्र ये पांच नक्षत्र पांच पांच ताराओं वाले हैं।

મધુકર જીવનયાત્રામાં ઉપયોગી એવા આહાર આદિને ૪૨ દોષથી બચીને મેળવવાની પ્રવૃત્તિ કરવી તેનું નામ એષણા સમિતિ છે (૩) સંયમોપકારી ભાંડમાત્રો-ઉપકરણોને મૂકવા તથા લેવામાં યતનાપૂર્વક પડિલેહણા આદિ પ્રવૃત્તિ કરવી એટલે કે પ્રત્યેક વસ્તુને સારી રીતે જોઈને અને પ્રમાર્જિત કરીને મૂકવી કે લેવી તેનું નામ આદાન ભાંડમાત્ર-નિક્ષેપણા સમિતિ છે (૪) ઉચ્ચાર ઝાડો પ્રસ્રવણ-મૂત્ર ખેલ થૂક, જલ્લ- દેહમળ અને શિંઘાણ-નાકનો મળ તેમને પ્રાસુક (દોષરહિત) ભૂમિમાં જોઈ તપાસીને યતના પૂર્વક પાઠવવો તેનું નામ ઉચ્ચારપાસવણ ખેલ જલ્લ શિંઘાણ પરિ ષ્ઠાપનિકા સમિતિ છે (૫) અસ્તિકાય પાંચ છે તે આ પ્રમાણે છે ધર્માસ્તિકાય, અધર્માસ્તિકાય આકાશાસ્તિકાય જીવાસ્તિકાય અને પુદ્ગલાસ્તિકાય રોહિણી નક્ષત્ર પુનર્વસુનક્ષત્ર, હસ્તનક્ષત્ર, વિશાખા નક્ષત્ર અને ધનિષ્ઠા નક્ષત્ર એ પાંચ નક્ષત્રો પાંચ પાંચ તારાઓવાળાં છે

भावार्थ—सूत्रकार इस सूत्रद्वारा पंचम समवायांग को प्रकट कर रहे हैं, इसमें क्रिया, महाव्रत कामगुण, आस्रवद्वार, संवरद्वार, निर्जरास्थान, समिति, अस्तिकाय और रोहिणी नक्षत्र के तारे आदि पांच २ कहे गये हैं। शारीरिक चेष्टामात्र का नाम कायिकी क्रिया है १। जिसके कारण–आत्मा नरक आदि कुयोनियों में जाने के योग्य बनाया जाता है ऐसे अनुष्ठानविशेष का नाम आधिकरणिकी क्रिया है २। तलवार आदि हिंसा के साधनों का आविष्कार इसी क्रिया के अन्तर्गत जानना चाहिये। कर्मबंध का हेतुभूत जीव का जो अकुशलपरिणाम होता है इसका नाम प्रद्वेष है। इस प्रद्वेप से जो क्रिया उत्पन्न होती है वह प्राद्वेषिकी क्रिया है ३। ताडनादि के दुःख से जो क्रिया होती है वह परितापनिकी क्रिया है ४। जिस क्रिया में जीवों के प्राणों का विनाश हो ऐसी क्रिया का नाम प्राणातिपातक्रिया है ५। गृहस्थव्रतों की अपेक्षा जो व्रत महान् होते हैं उन्हें महाव्रत कहते हैं। ये महाव्रत अहिंसा महाव्रत आदि के भेद से पाच कहे गये हैं–मन, वचन और काय द्वारा हर-तरह से हिंसा का त्याग कर देना अहिंसा महाव्रत१, मन वचन और काय द्वारा हर तरह से झूठ का त्याग कर देना सत्यमहाव्रत२, इसी तरह से अदत्त के आदान का त्याग कर देना अचौर्यमहाव्रत३, कुशीलका त्याग

ભાવાર્થ—સૂત્રકાર આ સૂત્રદ્વારા પાચમા સમવાયાગનું વર્ણન કરે છે. તેમા ક્રિયા, મહાવ્રત કામગુણ, આસ્રવદ્વાર, સવર દ્વાર નિર્જરાસ્થાન, સમિતિ, અસ્તિકાય, અને રોહિણી આદિ નક્ષત્રના તારા આદિ પાંચ પાચ હોય છે. તેમ બતાવ્યુ છે દરેક શારીરિક ચેષ્ટાને કાયિક ક્રિયા કહે છે. (૧) જેને કારણે આત્મા નરક આદિ કુયોનિયોમા જવાને પાત્ર બને છે તેવા અનુષ્ઠાન વિશેષોને અધિકરણિકી ક્રિયા કહે છે (૨) તલવાર આદિ હિંસાનાં સાધનોનો સમાવેશ આ ક્રિયાની અદર થાય છે કર્મબધના હેતુરૂપ જીવનુ જે અકુશલ પરિણામ હોય છે તેને પ્રદ્વેષ કહે છે તે પ્રદ્વેષથી ઉત્પન્ન થતી ક્રિયાને પ્રાદ્વેષિકી ક્રિયા કહે છે (૩) મારપીટ આદિ દુખથી જે ક્રિયા થાય છે તેનુ નામ પરિતાપનિકી ક્રિયા છે (૪) જે ક્રિયામા જીવોના પ્રાણોનો વિનાશ થાય એવી ક્રિયાને પ્રાણાતિપાત ક્રિયા કહે છે (૫) ગૃહસ્થના વ્રતો કરતા જે વ્રતો મહાન હોય છે તેમને મહાવ્રત કહે છે તે મહાવ્રતો અહિંસા આદિ ભેદથી પાચ બતાવ્યા છે મન, વચન અને કાયા દ્વારા દરેક પ્રકારે હિંસાનો ત્યાગ કરવો તેનુ નામ અહિંસા મહાવ્રત (૧) મન, વચન, અને કાયા દ્વારા હિંસાનો ત્યાગ કરવો તે અહિંસા મહાવ્રત છે મન વચન અને કાય દ્વારા દરેક રીતે અસત્યનો ત્યાગ કરવો તેનું નામ સત્ય મહાવ્રત છે (૨) તે જ પ્રમાણે ન દીધેલું ગ્રહણુ ન કરવુ તેનું નામ અચૌર્ય મહાવ્રત છે. (૩) કુશીલના ત્યાગ કરવો તે બ્રહ્મચર્ય

मूलम्--इमीसे ण रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगइयाण नेरयियाण पच पलिओवमाइ ठिई पण्णत्ता। तच्चाए ण पुढवीए अत्थेगइयाण नेरइयाण पच सागरोवमाइ ठिई पण्णत्ता। असुरकुमाराण देवाण अत्थेगइयाण पच पलिओवमाइ ठिई पण्णत्ता। सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगइयाण देवाण पच पलिओवमाइ ठिई पण्णत्ता। सणकुमारमाहिंदेसु कप्पेसु अत्थेगइयाण देवाण पच सागरोवमाइ ठिई पण्णत्ता ॥सू १९॥

कर देना ब्रह्मचर्यमहाव्रत४, और धर्मोपकरण के सिवाय अन्यवस्तु का त्याग देना परिग्रह महाव्रत है ५। अभिलाषा के विषयभूत बने हुए पुद्गल के धर्म शब्दादिक कामगुण कहलाते हैं।

ये सक्क, मिष्टान्न, पुष्प, चन्दन, आदि समस्त पदार्थ कि जो भिन्न२ रूप में इन्द्रियों को सुखप्रदान करते हैं। मिथ्यात्व, अविरति प्रमाद, कषाय और योग ये पाच आस्रवद्वार हैं। सम्यक्त्व, विरति अप्रमत्तता अकषाय, अयोग ये पांच संवरद्वार हैं, क्यों कि आचरण से नवीन कर्मों का आगमन रुक जाता है। प्राणातिपात आदि से विरमण होने से सचित कर्मों की निर्जरा होती है, इसलिये प्राणातिपातविरमण आदि पांच निर्जरा स्थान हैं ईर्यासमिति आदि पाच समितिया हैं। समितियों का स्वरूप सूत्र के अर्थ में स्पष्ट कर दिया गया है। प्रदेशों के समुदाय से युक्त पदार्थों को अस्तिकाय कहा गया है। धर्मादिक पाचअस्तिकायहैं॥सू १८॥

મહાવ્રત છે (૪) અને ધર્મોપકરણ સિવાયની અન્ય વસ્તુનો ત્યાગ કરવો તેનુ નામ પરિગ્રહ મહાવ્રત છે (૫ અભિલાષાના વિષયભૂત બનેલ પુદ્ગલના ધર્મ શબ્દાદિકને કામગુણ કહે છે વસ્ત્ર મિષ્ટાન્ન, પુષ્પ, ચંદન આદિ પદાર્થો જુદી જુદી રીતે ઇન્દ્રિયોને સુખ આપે છે મિથ્યાત્વ, અવિરતિ, પ્રમાદ, કષાય અને યોગ, એ પાંચ આસ્રવ દ્વાર છે સમ્યકત્વ, વિરતિ, અપ્રમત્તતા, અકષાય અને અયોગ એ પાંચ સંવર દ્વાર છે, કારણ કે તેના આચરણથી નવાં કર્મોનુ આગમન અટકી જાય છે પ્રાણાતિપાત આદિનું વિરમણ ના સંચિત કર્મોની નિર્જરા થાય તેથી પ્રાણાતિપાત વિરમણ આદિ પાંચ નિર્જરાસ્થાન છે ઇર્યાસમિતિ આદી પાંચ સમિતિયોનુ સ્વરૂપ સૂત્રના અર્થમાં સ્પષ્ટ કરવામા આવ્યુ છે પ્રદેશોના સમુદાયથી યુક્ત પદાર્થોને અસ્તિકાય કહેવાય છે ધર્માદિક પાંચ દ્રવ્યને અસ્તિકાય કહે છે ॥સૂ ૧૮॥

टीका—'इमीसे णं' इत्यादि। अस्या खलु रत्नप्रभायां पृथिव्याम् अस्त्येकेषां नैरयिकाणां पञ्च पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। तृतीयस्यां खलु पृथिव्याम् अस्त्येकेषां नैरयिकाणां पञ्चसागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। असुरकुमाराणां देवानाम् अस्त्येकेषां पञ्चपल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। सौधर्मेशानेषु कल्पेषु अस्त्येकेषा देवानां पञ्चपल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। सनत्कुमार माहेन्द्रेषु कल्पेषु अस्त्येकेषा देवानां पञ्चसागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता ॥१९॥

मूलम्—जे देवा वायं सुवायं वायावत्तं वायप्पभं वायकंतं वायवण्णं वायलेसं वायज्झयं वायसिंगं वायसिट्ठं वायकूडं वाउत्तरवडिंसगं सूरं सुसूरं सूरवत्तं सूरप्पभं सूरकंतं सूरवण्णं सूरलेसं सूरज्झयं सूरसिंगं सूरसिट्ठं सूरकूडं सूरुत्तरवडिंसगं विमाणं देवत्ताए उववण्णा, तेसिं णं देवाणां उक्कोसेणं पंच सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। ते णं देवा पंचण्हं अद्धमासाणं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा। तेसि णं देवाणं पंचहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जइ, सन्तेगइया भवसिद्धिया जीवा जे पंचहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति जाव अंतं करिस्संति ॥२०॥

'इमीसे णं इत्यादि।

टीकार्थ—इस रत्नप्रभा पृथिवी में कितनेक नारकियों की स्थिति पांच पल्योपम की है। तृतीय पृथिवी में कितनेक नारकियो की स्थिति पांच सागरोपम काल की है। असुरकुमार देवों में कितनेक असुरकुमारों को पांच पल्य की स्थिति है। सौधर्म ईशान कल्पों में कितनेक देवों की पांच पल्योपम की स्थिति है। सनत्कुमार माहेन्द्र कल्पों में कितनेक देवों की पांच सागरोपम की स्थिति है। इस सूत्र द्वारा यह मध्यम स्थिति प्रदर्शित की गई है ॥सू० १९॥

"इमीसे णं" इत्यादि।

टीकार्थ–આ રત્નપ્રભા પૃથ્વીમાં કેટલાક નારકીઓની સ્થિતિ પાચ પલ્યોપમની છે ત્રીજી પૃથ્વીમા કેટલાક નારકીઓની સ્થિતિ પાચ સાગરોપમ કાળની છે અસુરકુમાર દેવોમા કેટલાક અસુરકુમારોની પાચ પલ્યની સ્થિતિ છે સૌધર્મ અને ઇશાન કલ્પોમાં, કેટલાક દેવોની પાંચ પલ્યોપમની સ્થિતિ છે સનત્કુમાર અને માહેન્દ્ર કલ્પોમા કેટલાક દેવોની પાચ સાગરોપમનીસ્થિતિ છે. આ સૂત્ર દ્વારા આ મધ્યમ સ્થિતિ બતાવવામા આવી છે. ॥સૂ ૧૯॥

टीका—'जे देवा' इत्यादि । ये देवा वात सुवात वातावर्त वातप्रभ वातकान्तं वातवर्ण वातलेश्यं वातध्वज वातशृङ्ग वातसृष्ट वातकूट वातोत्तरा वतंसक सूर सुसूर सूरावर्त सूरप्रभ सूरकान्त सूरवर्ण सूरलेश्य सूरध्वज सूरशृङ्ग सूरसृष्ट सूरकूटं सूरोत्तरावतंसक च विमानम्=एषु चतुर्विंशतिविमानेषु देवत्वेन उत्पन्नाः, तेषां खलु देवानां सोत्कृष्टा पञ्चसागरोपमा स्थितिः प्रज्ञप्ता । ते खलु देवा पञ्चानामर्द्धमासानामन्ते आनन्ति=आन्तरं श्वासमाददति, प्राणन्ति=बाह्य रिकमुच्छ्वास गृह्णन्ति, उच्छ्वसन्ति=ऊर्ध्व श्वास गृह्णन्ति, निश्वसन्ति=अध निश्वासं गृह्णन्ति । तेषां खलु देवाना पञ्चभिर्वर्षसहस्रैराहारसंज्ञा समुत्पद्यते भवति । सन्त्येके भवसिद्धिका जीवा ये पञ्चभिर्भवग्रहणैः सेत्स्यन्ति 'जाव' यावत्—यावच्छ ब्दात्,—भोत्स्यन्ते, मोक्ष्यन्ति, परिनिर्वास्यन्ति, सर्वदुःखानामन्तं करिष्यन्ति । २०॥

'जे देवा इत्यादि ।

टीकार्थ—जो देव, वात१, सुवात२, वातावर्त३, वातप्रभ४, वातकान्त५, वातवर्ण६, वातलेश्य७, वातध्वज८, वातभृग९, वातसृष्ट१०, वातकूट११, वातोत्तरावतंसक१२, सूर१३, सुसूर१४, सूरावर्त१५, सूरप्रभ१६, सूरकान्त१७, सूरवर्ण१८, सूरलेश्य१९, सूरध्वज२०, सूरभृग२१, सूरसृष्ट२२, सूरकूट२३, और सूरोत्तरावतंसक २४ इन चोईस विमानों में देव की पर्याय से उत्पन्न होते हैं, उन देवों की उत्कृष्ट स्थिति पांच सागरोपम की होती है। वे देव ढाई २॥ माह के बाद बाह्य आभ्यन्तर श्वासोच्छ्वास ग्रहण करते हैं, उन देवों को पांचहजार वर्ष के बाद आहारसज्ञा उत्पन्न होती है। उन देवों में कितनेक देव भवसिद्धिक होते हैं जो पांच भव ग्रहण करने के बाद सिद्ध अवस्था प्राप्त करने वाले होंगे यावत् समस्त दुःखों का अत करेंगे ॥सू० २०॥

"जे देवा" इत्यादि ।

टीकार्थ—જે દેવો (૧) વાત, (૨) સુવાત, (૩) વાતાવર્ત, (૪) વાતપ્રભ (૫) વાતકાન્ત, (૬) વાતવર્ણ (૭) વાતલેશ્ય (૮) વાતધ્વજ, (૯) વાતશ્રૃંગ (૧૦) વાતકૂટ (૧૧) વાતો ત્તરાવતંસક, (૧૩) સૂર (૧૪) સુસૂર (૧૫) સૂરાવર્ત (૧૬) સૂરપ્રભ, (૧૭) સૂરકાન્ત (૧૮) સૂરવર્ણ (૧૯) સૂરલેશ્ય (૨૦) સૂરધ્વજ (૨૧) સૂરશ્રૃંગ, (૨૨) સૂરસૃષ્ટ (૨૩) સૂરકૂટ અને (૨૪) સૂરોત્તરાવતંસક એ ચોવીસ વિમાનોમાં દેવની પર્યાયથી ઉત્પન્ન થાય છે, તે દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ પાંચ સાગરોપમની હોય છે તે દેવો અઢી માસે બહાર અને અંદર શ્વાસોચ્છ્વાસ લે છે તે દેવોને પાંચ હજાર વર્ષે આહાર સંજ્ઞા ઉત્પન્ન થાય છે તે દેવોમાં કેટલાક દેવો ભવસિદ્ધિક હોય છે જે પાંચ ભવ કરીને સિદ્ધ અવસ્થા પ્રાપ્ત કરશે ત્યાંથી શરૂ કરીને સમસ્ત દુઃખોનો અંત કરશે ત્યાં સુધીનું કથન આગળ મુજબ સમજવું ॥સૂ ૨૦॥

अथ षष्ठ समवायाङ्गमाह—

मूलम्—छ लेसाओ पण्णत्ता, तं जहा–कण्हलेसा नीललेसा काउलेसा तेउलेसा पम्हलेसा सुक्कलेसा। छ जीवनिकाया पण्णत्ता, तं जहा–पुढवीकाए, आऊकाए, तेउकाए, वाउकाए, वणस्सइकाए, तसकाए। छव्विहे बाहिरे तवोकम्मे पण्णत्ते, तं जहा–अणसणे ऊणोयरिया, वत्तीसंखेवो, रसपरिच्चाओ, कायकिलेसो, संलीणया। छव्विहे अब्भिंतरे तवोकम्मे पण्णत्ते, तं जहा–पायच्छित्तं विणओ वेयावच्चं सज्झाओ झाणं उस्सग्गो। छ छाउमत्थिया समुग्घाया पण्णत्ता, तं जहा–वेयणासमुग्घाए कसायसमुग्घाए, मारणंतिअ समुग्घाए, वेउव्वियसमुग्घाए, ते य समुग्घाए, आहारसमुग्घाए। छव्विहे अत्थुग्गहे पण्णत्ते, तं जहा–सोइंदिय अत्थुग्गहे, चक्खुइंदिय अत्थुग्गहे, घाणेंदियअत्थुग्गहे, जिब्भिंदिय अत्थुग्गहे, फासिंदिय अत्थुग्गहे, नोइंदियअत्थुग्गहे। कत्तियानक्खत्ते छतारे पण्णत्ते। असिलेसानक्खत्ते छतारे पण्णत्ते ॥२१॥

टीका—'छ लेसाओ' इत्यादि। षड्=षड्विधाः 'लेसाओ' लेश्याः=प्रज्ञप्ताः, तत्र लिश्यते श्लिष्यते कर्मणा सह आत्माऽनेनेति लेश्या कृष्णादिद्रव्यसाचिव्यात् आत्मपरिणामविशेषः, तदुक्तम्–'कृष्णादि–द्रव्यसाचिव्यात् परिणामो य आत्मनः। स्फटिकस्येव तत्राय लेश्या शब्दः प्रवर्तते' इति। प्रज्ञप्ता=कथिताः, तद्यथा–कृष्णलेश्या, नीललेश्या, कापोतलेश्या, तेजोलेश्या, पद्मलेश्या, शुक्ल-

---

अब छठवां समवायांग कहते हैं—'छ लेसाओ इत्यादि।

छह लेश्याएं कही गई हैं। वे इस प्रकार है—कृष्णलेश्या, नीललेश्या, कापोतलेश्या, तेजोलेश्या पद्मलेश्या, और शुक्ललेश्या। छह जीवनिकाय

હવે છઠ્ઠુ સમવાયાગ કહે–'छ लेसाओ' इत्यादि।

ટીકાર્થ–લેશ્યાઓ છ બતાવી છે તે આ પ્રમાણે છે—

(૧) કૃષ્ણલેશ્યા (૨) નીલલેશ્યા, (૩) કાપોત લેશ્યા (૪) તેજો લેશ્યા, (૫) પદ્મ લેશ્યા અને (૬) શુક્લ લેશ્યા જીવનિકાય છ છે તે આ પ્રમાણે છે–(૧) પૃથ્વીકાય

लेश्या। षड्=षड्विधा जीवनिकाया =जीवानां निकाया =समूहाः प्रज्ञप्ता = कथिता, तद्यथा-पृथिवीकाय अप्कायः, तेजस्कायः, वायुकाय, वनस्पतिकाय', त्रसकाय। षड्विध बाह्य तपः प्रज्ञप्तम् तपति दहति अष्टविधकर्माणि इति तपः, अष्टविधकर्मभस्मकारकमित्यर्थ, तद्यथा-'अणसणे' अनशनम्=अशनम्=चतुर्विध आहार, तत्परित्यागोऽनशनम्, 'ऊणोयरिया' ऊनोदर्यम्=ऊन न्यूनमुदरं यस्य सः, तस्य भावः, स्वल्पाहारतेत्यर्थः, अवमौदर्यमित्यपि पाठः, 'वित्तीसखेवा' वृत्तिसक्षेप =वृत्तिः-भक्ष्यं तस्या सक्षेपः वृत्तिसंक्षेप, स च उत्क्षिप्तनिक्षिप्तादिने कविध, 'रसपरिच्चाओ' रसपरित्यागः=रस्यते समास्वाद्यते सादरमिति रसः-मधुरादिलक्षणः, तस्य परित्याग =प्रत्याख्यान रस परित्यागः। 'कायकिलेसे' कायक्लेशः=कायस्य-शरीरस्य क्लेशो बाधनम्, स तु वीरासनोत्कटुकासनके शलुञ्चनादिरनेकविध। 'संलीणया' सल्लीनता=कूर्मवदिन्द्रियगोपनता। अनश नादिबाह्यतपसा बाह्यशरीरपरिशोषणेन सङ्गत्याग-शरीरलाघवन्द्रियविजय-संयमरक्षण-कर्मनिर्जरादिकं भवति। छव्विहे' इत्यादि-षड्विधमाभ्यन्तरं तपः कर्म प्रज्ञप्तम्, आभ्यन्तरत्वं हि-चित्तनिरोध प्राधान्येन कर्मक्षपणकारणत्वात्, तद्यथा-'पायच्छित्त' प्रायश्चित्त, पापोच्छेदकारित्वात्प्रायश्चित्तम्, तच्च आलोचना द्यनेकविधम्। विणओ' विनयः-विनीयतेऽष्टविध कर्म येनासौ विनयः ज्ञाना ने सेऽनेकविध। 'वेयावच्च' वैयावृत्त्य=भुक्तोपदर्शन व्यावृत्तः-सेवार्थ प्रवृत्त, तस्य भावः, वैयावृत्त्यम् बालग्लानादीनां सेवाकरणम्। 'सज्झाओ' स्वाध्याय =सुष्ठु=मर्या दयाऽकालवेलापरिहारेण पौरुष्यपेक्षया वाऽऽध्याय स्वाध्यायः, सूत्रस्यावर्त नमित्यर्थ। झाणे' ध्यान चाकायचित्तानामागमविधानेन निरोधो ध्यानम्, तच्च धर्मध्यानाद्यनेकविधम्। 'विउस्सग्गा' व्युत्सर्ग =विशेषेण उत्सर्गः=व्युत्सर्गः, भक्तीचारादि निवारणार्थं कायोत्सर्गो धर्मशुक्लध्यायिन कायोत्सर्गो वा। 'छ

कहे गये हैं, वे इस प्रकार हैं-पृथिवीकाय, अप्काय, तेजस्काय, वायुकाय, वनस्पतिकाय और त्रसकाय। छह प्रकार के बाह्य तप कहे गये हैं वे इस प्रकार हैं-अनशन, ऊनोदरिका, वृत्तिसंक्षेप रसपरित्याग, कायक्लेश और सलीनता। छह प्रकार के आभ्यन्तर तप कहे गये हैं, वे इस प्रकार से हैं प्रायश्चित्त, विनय, वैयावृत्त्य, स्वाध्याय, ध्यान, और व्युत्सर्ग। छह

(२) અપ્કાય (૩) તેજસ્કાય, (૪) વાયુકાય, (૫) વનસ્પતિકાય, અને (૬) ત્રસકાય છ પ્રકારના બાહ્ય તપ બતાવ્યાં છે તે આ પ્રમાણે છે—(૧) અનશન (૨) ઉણોદરિકા (૩) વૃત્તિસંક્ષેપ, (૪) રસપરિત્યાગ (૫) કાયક્લેશ અને (૬) સંલીનતા છ પ્રકારનાં આભ્યન્તર તપ કહ્યાં છે તે આ પ્રમાણે છે-(૧) પ્રાયશ્ચિત્ત, (૨) વિનય (૩) વૈયાવૃત્ય, (૪) સ્વાધ્યાય, (૫) ધ્યાન અને (૬) વ્યુત્સર્ગ છ છાદ્મસ્થિક સમુદ્ઘાત છે, તે

षड्=षड्विधाः 'छाउमत्थिया' छाद्मस्थिकाः–छद्मस्थोऽकेवली, तत्र भवाः छाद्मस्थिकाः=छद्मस्थसमुद्भवाः 'समुग्घाया' समुद्घाताः प्रज्ञप्ताः, समुद्घातो हि यथास्वभावस्थितानामात्मप्रदेशानां वेदनादिभिः कारणैरन्यथा परिणमनम्। समुद्घातानां षड्विधत्वं दर्शयति–वेदनासमुद्घातः, कषायसमुद्घातः, मारणान्तिसमुद्घातः, वैकुर्विकसमुद्घातः, आहारकसमुद्घातः तैजससमुद्घातः,। षड्विधोऽर्थावग्रहः प्रज्ञप्तः–अवग्रहणमवग्रहः–अर्थस्य=स्पर्शरसगन्धवर्णशब्दाद्यात्मकस्य वस्तुनः अवग्रहः=अर्थावग्रहः=सकलरूपादिविशेषनिरपेक्षानिर्देश्य सामान्यमात्ररूपार्थग्रहणम्=षड्विधत्वमस्य दर्शयति–'सोइंदिय' इत्यादिना–श्रोत्रेन्द्रिया यावत् नो इन्द्रियार्थावग्रहः, चक्षुरिन्द्रियार्थावग्रहः, घ्राणेन्द्रियार्थावग्रहः, जिह्वेन्द्रियार्थावग्रहः, स्पर्शेन्द्रियार्थावग्रहः, नो इन्द्रिय=इन्द्रियसदृशं मनइत्यर्थः, नो शब्दः सदृशार्थकः मनस इन्द्रियवदर्थपरिच्छेदकत्वात्तस्य नो इन्द्रियत्वम्। तस्य अर्थो विषयः, नो इन्द्रियार्थः, तदवग्रहः, नो इन्द्रियार्थावग्रहः। कृत्तिकानक्षत्रं षट्तारं प्रज्ञप्तम्। अश्लेषानक्षत्रं षट्तारं प्रज्ञप्तम् ॥ सू. १९ ॥

छाद्मस्थिक समुद्घात हैं, वे इस प्रकार हैं-वेदनासमुद्घात, कषायसमुद्घात, मारणांतिकसमुद्घात, वैक्रियसमुद्घात, तैजससमुद्घात, और अहारकसमुद्घात। छह प्रकार का अर्थावग्रह कहा गया है, वह इस प्रकार है–श्रोत्रेन्द्रिय अर्थावग्रह, चक्षुरिन्द्रिय अर्थावग्रह, घ्राणेन्द्रिय अर्थावग्रह, जिव्हेन्द्रिय अर्थावग्रह, स्पर्शनेन्द्रिय अर्थावग्रह और नोइन्द्रिय अर्थावग्रह। कृत्तिका नक्षत्र और अश्लेषानक्षत्र ये दोनों नक्षत्र छह छह ताराओं वाले कहे गये हैं।

भावार्थ—कषाय के उदय से अनुरंजित योग की प्रवृत्ति का नाम लेश्या है। इसके प्रभाव से आत्मा कर्मों के साथ संबंधित हो जाती है। लेश्या दो प्रकार की होती है–एक द्रव्यलेश्या और दूसरी भाव लेश्या।

આ પ્રમાણે છે-(૧) વેદના સમુદ્ઘાત, (૨) કષાય સમુદ્ઘાત, (૩) મારણાંતિક સમુદ્ઘાત (૪) વૈક્રિય સમુદ્ઘાત, (૫) તૈજસ સમુદ્ઘાત, અને (૬) આહારસમુદ્ઘાત, છ પ્રકારનો અર્થાવગ્રહ બતાવેલ છે, તે આ પ્રમાણે છે—(૧) શ્રોત્રેન્દ્રિય અર્થાવગ્રહ (૨) ચક્ષુરિન્દ્રિય અર્થાવગ્રહ, (૩) ઘ્રાણેન્દ્રિય અર્થાવગ્રહ, (૪) જિહ્વેન્દ્રિય અર્થાવગ્રહ, (૫) સ્પર્શેન્દ્રિય અર્થાવગ્રહ અને (૬) નોઇન્દ્રિય અર્થાવગ્રહ, કૃત્તિકા નક્ષત્ર અને અશ્લેષા નક્ષત્ર એ બન્ને નક્ષત્રો છ, છ તારાઓ વાળા છે.

ભાવાર્થ—કષાયના ઉદયથી અનુરંજિત યોગથી પ્રવૃત્તિનું નામ લેશ્યા છે તેના પ્રભાવથી આત્મા કર્મોની સાથે સંબંધિત થઈ જાય છે લેશ્યા બે પ્રકારની હોય છે–[૧] દ્રવ્યલેશ્યા અને (૨) ભાવલેશ્યા. દ્રવ્ય લેશ્યા બાહ્ય શરીરનો રંગ છે. ભાવ-

द्रव्यलेश्या बाह्य शरीरका रंग है। भावलेश्या आत्मा के शुभ अशुभ परिणाम हैं। जिस प्रकार स्फटिकमणि में जपापुष्पादि द्रव्य की सहायता से विशेष प्रकार का परिणमन हो जाता है उसी प्रकार बाह्य कृष्ण आदि द्रव्यकी सहायता से आत्मा में जो परिणमन होता है वह लेश्या है। कृष्ण, नील, कापोत, ये तीन अशुभलेश्याएँ हैं और तेज, पद्म एवं शुक्ल, ये तीन शुभलेश्याएँ हैं। जीवनिकाय का तात्पर्य है छह-प्रकार के जीवों का समुदाय। वैसे तो दो प्रकार का ही जीव है। त्रस और स्थावर, परन्तु यहां पर जीव में षट्प्रकारता बोधन करने के लिये स्थावर निकाय के पृथिवीकाय आदि ये पांच भेद किये हैं। "तेजोवायुद्वीन्द्रियादयश्च त्रसा" इस सूत्र के अनुसार यद्यपि तेज और वायुकाय को भी त्रस कहा गया है, परन्तु यहां पर जो इन्हें त्रसकाय में परिगणित नहीं किया गया है उसका कारण यह है कि इन में त्रस नामकर्म का उदय नहीं है। स्थावर नाम कर्म का ही उदय है। शास्त्र में जो इन्हें त्रस कहा गया है वह गति त्रस की अपेक्षा लेकर कहा है। स्थावर नामकर्म का उदय होने पर भी त्रस जैसी गति होने के कारण जो त्रस कहलाते हैं वे गतित्रस हैं। लब्धित्रस नहीं। लब्धित्रस तो त्रस नाम कर्म के उदयवाले जीव ही होते हैं। वासनाओं को क्षीण करने के लिये

લેશ્યા આત્માના શુભ અશુભ પરિણામ છે જે પ્રમાણે સ્ફટિક મણિમાં જપાપુષ્પ આદિ દ્રવ્યની મદદથી વિશેષ પ્રકારનું પરિણમન થઇ જાય છે તે જ પ્રમાણે બાહ્ય કૃષ્ણ આદિ દ્રવ્યની મદદથી આત્મામાં જે પરિણામ થાય છે તે લેશ્યા છે, કૃષ્ણ, નીલ કાપોત, એ ત્રણ અશુભ લેશ્યાઓ છે અને તે જ પદ્મ અને શુક્લ એ ત્રણ શુભ લેશ્યાઓ છે જીવનિકાય એટલે છ પ્રકારના જીવોનો સમુદાય આમ તો બે પ્રકારના જ જીવો છે-ત્રસ અને સ્થાવર, પણ અહીં જીવોના છ પ્રકાર સમજાવવા માટે સ્થાવર નિકાયના પૃથ્વીકાય આદિ પાંચ ભેદ કર્યા છે "तेजोवायुद्वीन्द्रियादयश्च त्रसाः" એ સૂત્ર પ્રમાણે જો કે તેજ અને વાયુકાયને પણ ત્રસ કહેવામાં આવેલ છે, પણ અહીં ત્રસ કાયમાં તેમની ગણતરી કરવામાં આવી નથી તેનું કારણ એ છે કે તેમનામાં ત્રસ નામકર્મનો ઉદય નથી સ્થાવર નામકર્મનો જ ઉદય છે શાસ્ત્રમાં એમને જે ત્રસ કહેલ છે તે ગતિત્રસની અપેક્ષાએ કહેલ છે સ્થાવર નામ કર્મોને ઉદય હતા પણ ત્રસના જેવી ગતિ હોવાને કારણે જેમને ત્રસ કહેવામાં આવે છે ગતિત્રસ છે, લબ્ધિત્રસ નહીં લબ્ધિત્રસ તો ત્રસ નામકર્મના ઉદય વાળા જીવો હોય છે વાસનાઓને ક્ષીણ કરવાને માટે તથા સમુચિત આધ્યાત્મિક

तथा समुचित आध्यात्मिक बल की साधना के लिये इन्द्रिय और मन को जिन उपायों से तपाया जाता है वे सभी तप है। तप के बाह्य-और आभ्यन्तर, ऐसे दो भेद है बाह्य जीवों को दो देखने में आवे तथा जिनमें शारीरिक क्रिया की प्रधानता रहे और जो बाह्य द्रव्यों की अपेक्षा से युक्त हों वे बाह्यतप है, और जिनमें बाह्य द्रव्यों की अपेक्षा न हो और इसी कारण जो बाह्यजनों की दृष्टि के अविषय हों वे आभ्यन्तर तप हैं। बाह्यतप आभ्यन्तरतप की पुष्टि का कारण होता है। बाह्यतप के छह भेद इस प्रकार है—नियमरूप से चतुर्विध आहार का परित्याग करना इसका नाम अनशन है१। भूख से कम आहार लेना इसका नाम ऊनोंदर्य है२। भिक्षा का संक्षेप करना इसका नाम वृत्तिसंक्षेप है, यह उत्क्षिप्त आदि के भेद से अनेक प्रकार का है।३। घी दूध आदि का परित्याग कर देना इसका नाम रसपरित्याग है ४। ठंडी गरमी या विविध आसनादि द्वारा शरीर को कष्ट देना इसका नाम कायक्लेश है। यह वीरासन, उत्कुटकासन और केशलुंचन आदि के भेद से अनेक प्रकार का है। ५। बाधारहित एकान्तस्थान में रहना अथवा कूर्म की तरह इन्द्रियों का गोपन करना इसका नाम संलीनता है ६। आभ्यन्तर तप के छह भेद

બળની સાધનાને માટે ઇન્દ્રિયો તથા મનને જે ઉપાયો વડે તપાવવામા આવે છે તે ઉપાયોને તપ કહે છે તપના બાહ્ય અને આભ્યન્તર એવા બે ભેદ છે જે બાહ્ય જીવોના જોવામા આવે તથા જેમા શારીરિક ક્રિયાની પ્રધાનતા રહે તથા જે બાહ્ય દ્રવ્યોની અપેક્ષાથી યુકત હોય તે બાહ્યતપ છે, અને જેમા બાહ્ય દ્રવ્યોની અપેક્ષા ન હોય અને એજ કારણે જે બાહ્યજનોની દૃષ્ટિનો વિષય બની ન શકે તે તપને આભ્યન્તર તપ કહે છે બાહ્યતપ આભ્યન્તર તપની પુષ્ટિનું કારણ બને છે. છ બાહ્ય તપના છ ભેદ આ પ્રમાણે છે- (૧) નિયમથી ચાર પ્રકારના આહારનો ત્યાગ કરવો તેનુ નામ અનશન છે (૨) ભૂખ હોય તેના કરતા પણ ઓછો આહાર લેવો તેનુ નામ ઉણોદર્ય છે [૩] ભિક્ષાનો સક્ષેપ કરવો તેનુ નામ વૃત્તિ સક્ષેપ છે, તે ઉત્ક્ષિપ્ત નિક્ષિપ્ત આદિના ભેદથી અનેક પ્રકારનુ છે. (૪ ઘી, દૂધ વગેરેનો પરિત્યાગ કરવો તેનું નામ રસપરિત્યાગ છે (૫) શીત, ગરમી કે વિવિધ આસનાદિ દ્વારા શરીરને કષ્ટ આપવુ તેનુ નામ કાયકલેશ છે તેના વીરાસન, ઉત્કુટુકાસન, અને કેશલુચન આદિ અનેક ભેદ છે (૬) બાધારહિત એકાન્તસ્થાનમા રહેવુ અથવા કાચબાની જેમ ઇન્દ્રિયોનુ ગોપન (આકુચન) કરવુ તેનુ નામ સલીનતા છે. આભ્યાન્તર તપના છ ભેદ આ પ્રમાણે છે—

ये हैं-धारण किये हुए व्रत में प्रमाद जनित दोषों का जिससे शोधन किया जा सके उसका नाम प्रायश्चित है, यह आलोचना आदि के भेद से अनेक प्रकार का है। ज्ञान आदि सद्‌गुणों में बहुमान रखना इसका नाम विनय है २। योग्य साधनों को जुटाकर अथवा अपने आपको काम में लगाकर गुरु आदि पूज्यजनों की सेवा शुश्रूषा करना वैयावृत्त्य है। विनय और वैयावृत्त्य में केवल इतना ही अन्तर है कि विनय तो मान सिक धर्म है और वैयावृत्त्य शारीरिक धर्म है ३। ज्ञान प्राप्ति के लिये विविध प्रकार का अभ्यास करना तथा मूलसूत्रों को पढना इसका नाम स्वाध्याय है ४। चित्त के विक्षेपों का त्याग करना अथवा सूत्रार्थ का चिन्तन करना भी ध्यान है ५। और अतीचारादि निवारण करने के लिये कायो त्सर्ग करना व्युत्सर्ग है। अथवा धर्मध्यानी शुक्लध्यानी के कायोत्सर्ग को व्युत्सर्ग कहते हैं।६। मूल शरीर को न छोडकर आत्मा के प्रदेशों का बाहर निकालना इसका नाम समुद्‌घात है। यह समुद्‌घात सात प्रकार का होता है, इनमें जो केवलिसमुद्‌घात होता है उसकी यहां विवक्षा नहीं है, क्यों कि वह केवली के सिवाय छद्मस्थों में नहीं पाया जाता है। यहां तो जो छद्मस्थ जीवों में पाये जाते हैं उनका वर्गीकरण किया गया है। इसलिये यह छह प्रकार का है, वह इस प्रकार-तीव्र वेदना के निमित्त

(1) ધારણ કરેલ વ્રતમાં પ્રમાદ જનિત દોષોનું જેનાથી શોધન કરવામાં આવે તેનું નામ પ્રાયશ્ચિત્ત છે તે આલોચના આદિના ભેદથી અનેક પ્રકારનું છે (૨) જ્ઞાન આદિ સદ્‌ગુણોમાં બહુમાન રાખવું તેનું નામ વિનય છે (૩) યોગ્ય સાધનોને એકત્ર કરીને અથવા પોતાની જાતથી ગુરુ આદિ પૂજ્ય જનોની સેવા શુશ્રૂષા કરવી તેને વૈયાવૃત્ત કહે છે વિનય અને વૈયાવૃત્યમાં એટલો જ તફાવત છે કે વિનય તો માનસિક ધર્મ છે અને વૈયાવૃત્ય શારીરિક ધર્મ છે (૪) જ્ઞાનપ્રાપ્તિને માટે વિવિધ પ્રકારનો અભ્યાસ કરવો તથા મૂળ સૂત્રોનું અધ્યયન કરવું તેનું નામ સ્વાધ્યાય છે (૫) ચિત્તના વિક્ષેપોનો ત્યાગ કરવો તેનું અથવા સૂત્રાર્થનું ચિ તન કરવું તે પણ ધ્યાન છે (૬) અતીચાર આદિના નિવારણ માટે કાયોત્સર્ગ કરવો તેને વ્યુત્સર્ગ કહે છે મૂળ શરીરને છોડયા વિના આત્માના પ્રદેશોનું બહાર કાઢવું તેનું નામ સમુદ્‌ઘાત છે તે સમુદ્‌ઘાત સાત પ્રકારના હોય છે, તેમાનો જે કેવલી સમુદ્‌ઘાત છે તેનું વર્ણન અહિં કર્યું નથી, કારણ કે તે કેવલી સિવાયના છદ્મસ્થોમાં જોવા મળતો નથી અહીં તો જે છદ્મસ્થ જીવોમાં હોય છે તેનું વર્ગીકરણ કરવામાં આવ્યું છે તેથી તે છ પ્રકારનો છે તે છ પ્રકારો આ પ્રમાણે છે-(૧) તીવ્ર વેદનાને કારણે જે આત્માના પ્રદેશોનું બહાર

को लेकर जो आत्मा के प्रदेशों का शरीर से बाहर निकालना होता है उसका नाम वेदना समुद्घात है १। क्रोधादिकषाय के तीव्र उदयरूप निमित्त को लेकर जो आत्मा के प्रदेशों का पर का घात करने के लिये बाहर निकलना होता है उसका नाम कषायसमुद्घात है २। मरण होने के कुछ समय पहिले जो समुद्घात होता है वह मारणांतिक समुद्घात है ३। अणिमा, महिमा आदि नाना प्रकार की शारीरिक विक्रियाओं को करने के लिये आत्मा के प्रदेश बाहर निकलते हैं उसका नाम वैक्रिय समुद्घात है ४। तैजस समुद्घात दो प्रकार का होता है-एक शुभ तैजस दूसरा अशुभतैजस। जगत को मारी रोग आदि से पीडित देख कर संयमी महातेजस्वी साधु के हृदय में प्राणियों की रक्षार्थ दया उत्पन्न होने पर उनको बचाने के लिये शुभतेज का निकालना शुभ तैजस समुदघात हैं। और जो क्रोधादि कषाय के निमित्त को लेकर भस्म करने के लिये तेज का निकालना अशुभ तैजस समुद्घात है ५। छठवें गुणस्थानवर्ती किसी परम तपसी मुनीजन के लिये शंका आदि के होने पर जो उनके शरीर से एक हाथ का पुतला निकलता है कि जो पुरुषाकार होता है और शंका की निवृत्ति ही अपने उद्गम स्थान में प्रविष्ट हो जाता है उसका नाम आहारक समुद्घात है ३। अर्थावग्रह के छह भेद ये है-नाम जाति आदि की विशेष कल्पना से रहित सामान्य मात्र रूप अर्थ का जो अवग्रह-ग्रहण होता

કાઢવાનુ બને છે તેનુ નામ વેદના સમુદ્દઘાત' છે (૨) ક્રોધાદિ કષાયના તીવ્ર ઉદયરૂપ નિમિત્તને લીધે જે આત્માના પ્રદેશોનુ અન્યના ઘાતને માટે બહાર કાઢવાનુ થાય છે ત કષાય સમુદ્દઘાત' કહે છે (૩) મૃત્યુ પહેલા થોડા સમયે જે સમુદ્દઘાત થાય છે તેને 'માર ણાતિક સમુદ્દઘાત' કહે છે અણિમા, મહિમા આદિ વિવધ પ્રકારની શારીરિક વિક્રિયાઓ કરવા ને માટે આત્માના પ્રદેશો બહાર નીકળે છે, 'વૈક્રિય સમુદ્દઘાત' કહે છે (૫) તૈજસ સમુદ્દઘાતના બે પ્રકાર છે-(૧) શુભ તૈજસ અને બીજો અશુભ તૈજસ જગ તને મહામારી આદિથી પીડીત જોઇને સયમી મહાતેજસ્વી સાધુના હૃદયમા પ્રાણીઓની રક્ષાર્થે દયા ઉત્પન્ન થવાથી તેમને બચાવવાને માટે શુભ તેજને છોડવુ તેને "શુભ તૈજસ સમુદ્દઘાત" કહે છે અને ક્રોધાદિ કષાયને કારણે ભસ્મ કરવાને માટે તેજને છોડવુ તેનુ નામ 'અશુભ તૈજસ સમુદ્દઘાત" છે (૬) છઠ્ઠા ગુણસ્થાનવર્તી કોઇ કોઇ પરમ તપસ્વી મુનિજનને શકા આદિ ઉત્પન્ન થતા શરીરમાથી એક હાથનુ પુતળુ નીકળે છે તેનો આકાર પુરુષ જેવો હોય છે શકાનુ નિવારણ થતા જ તે પોતાના ઉંડા સ્થાનમા પ્રવેશ કરે છે તેનું નામ "આહારક સમુદ્દઘાત" છે અર્થાવગ્રહના આ પ્રમાણે છ ભેદ છે-નામ, જાતિ આદિની વિશેષ કલ્પનાથી રહિત સામાન્ય માત્ર અર્થનો જ જે અવગ્રહ થાય છે-જ્ઞાન થાય છે તે અવગ્રહને 'અર્થા-

है-ज्ञान है-उसका नाम अर्थावग्रह है। अवग्रह अर्थावग्रह और व्यञ्जनावग्रह के भेद से दो प्रकार का होता है। अर्थ-पदार्थ-बहु, बहुविध क्षिप्र, अनिश्रित, असंदिग्ध और ध्रुव, इस तरह छ-प्रकार के हैं। दो या दो से अधिक पदार्थों का जो अवग्रह रूप ज्ञान होता है वह बहुग्राही अवग्रह ज्ञान है। बहुत प्रकार के पदार्थों का जो अवग्रह रूप ज्ञान होता है वह बहुविधग्राही अवग्रहज्ञान है। शीघ्रता से पदार्थ का जो ज्ञान होता है वह क्षिप्रग्राही अवग्रह है। क्षयोपशम आदि की मंदता से जो पदार्थ का शीघ्र ज्ञान नहीं होता है उसका नाम अक्षिप्रग्राही अवग्रह है। अनिश्रितपदार्थ का जो अवग्रहरूप ज्ञान होता है वह अनिश्रितग्राही अवग्रह है। असंदिग्ध पदार्थ का जो अवग्रहरूप ज्ञान होता है वह असंदिग्धग्राही अवग्रहज्ञान है तथा ध्रुवपदार्थ का जो ज्ञान होता है वह ध्रुवग्राही अवग्रहज्ञान है। इस प्रकार के इन पदार्थों का जो यह अवग्रहरूप ज्ञान होता है वह पांच इन्द्रिय और छठे मन से होता है। इसलिये अर्थावग्रह छह प्रकार का हो जाता है। शास्त्र में बहु आदिक के भेद से अर्थ बारह प्रकार के कहे गये हैं। पूर्वोक्त ये छ और इनके उल्टे एक, एक विध आदि और छह भेद हैं। इनका भी जो अवग्रहरूप ज्ञान होता है वह भी इसी प्रकार पांच इन्द्रिय और एक मन से होता है, इसलिये

વગ્રહ કહે છે અવગ્રહના બે પ્રકાર છે—અર્થાવગ્રહ અને વ્યંજનાવગ્રહ અર્થ-પદાર્થ-બહુ, બહુવિધ, ક્ષિપ્ર, અનિશ્રિત, અસંદિગ્ધ અને ધ્રુવ, એમ છ પ્રકારના છે બે કે બેથી વધારે પદાર્થોનું જે અવગ્રહ રૂપ જ્ઞાન થાય છે તે બહુગ્રાહી અવગ્રહ જ્ઞાન છે ઘણા પ્રકારના પદાર્થોનું જે અવગ્રહરૂપ જ્ઞાન થાય છે તે બહુવિધગ્રાહી અવગ્રહજ્ઞાન છે શીઘ્રતાથી પદાર્થનું જે જ્ઞાન થાય છે તે ક્ષિપ્રગ્રાહી અવગ્રહ છે ક્ષયોપશમ આદિની મંદતાથી પદાર્થનું જે શીઘ્ર જ્ઞાન થતું નથી તેનું નામ અક્ષિપ્રગ્રાહી અવગ્રહ છે અનિશ્રિત પદાર્થનું જે અવગ્રહરૂપ જ્ઞાન થાય છે તે અનિશ્રિતગ્રાહી અવગ્રહ છે અસંદિગ્ધ પદાર્થનું જે અવગ્રહરૂપ જ્ઞાન થાય છે તે અસંદિગ્ધગ્રાહી અવગ્રહ જ્ઞાન છે તથા ધ્રુવ પદાર્થનું જે જ્ઞાન હોય છે તે ધ્રુવગ્રાહી અવગ્રહ જ્ઞાન છે આ પ્રકારના તે પદાર્થોનું જે અવગ્રહરૂપ જ્ઞાન થાય છે તે પાંચ ઇન્દ્રિયો અને છઠ્ઠા મનથી થાય છે તેથી અર્થાવગ્રહ છ પ્રકારનો થાય છે શાસ્ત્રમાં બહુ આદિના ભેદથી અર્થ બાર પ્રકારના બતાવ્યા છે પૂર્વકથિત તે છ ભેદ અને તે દરેકનો ઉલટો એક એક ભેદ એમ બીજા છ ભેદ પડે છે તેમનું પણ જે અવગ્રહરૂપ જ્ઞાન હોય છે તે પણ પાંચ ઇન્દ્રિયો અને એક મનથી થાય છે, તેથી અર્થાવગ્રહ છ પ્રકારનો મનાયો છે વ્યંજનાવગ્રહે

मूलम्--इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरयियाणं छ पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। तच्चाए णं पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं छ सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगइयाणं छ पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगइयाणं देवाणं छपलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। सणंकुमारमाहिंदेसु अत्थेगइयाणं देवाणं छ सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता ॥ २० ॥

टीका—'इमीसे' इत्यादि। अस्यां खलु रत्नप्रभायां पृथिव्यामस्त्येकेषां नैरयिकाणां षट्पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। तृतीयस्यां खलु पृथिव्यामस्त्येकेषां नैरयिकाणां षट् सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। असुरकुमाराणां देवानामस्त्येकेषां षट् पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। सौधर्मेशानेषु कल्पेषु अस्त्येकेषां देवानां षट्पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। सनत्कुमारमाहेन्द्रेषु अस्त्येकेषां देवानां षट्सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता ॥२०॥

अर्थावग्रह छह प्रकार का कहा गया है। व्यंजनावग्रह मन और चक्षु इन्द्रिय से नहीं होता है इसलिये उसके चार ही भेद होते है। इन सब का विशेष खुलासा शास्त्र से जानना चाहिये ॥१९॥

टीकार्थ-'इमीसे णं' इत्यादि।

इस रत्नप्रभा पृथिवी में कितनेक नारकियों की स्थिति छह पल्योपम की कही गई है। तृतीय पृथिवी में भी कितनेक नारकियों की छह सागरोपम की स्थिति कही गई है। असुर कुमार देवो में भि कितनेक देवों की स्थिति छह पल्योपम की कही गई है। सौधर्म, ईशान कल्पों में भी कितनेक देवों की स्थिति छह पल्योपम की कही गई है। इसी तरह

મન અને ચક્ષુ ઇન્દ્રિય વડે થતો નથી, તેથી તેના ચાર જ ભેદ છે તે બધાનો વધુ ખુલાસો શાસ્ત્રોમાથી જાણી લેવો ॥૧૯॥

"इमीसेणं" इत्यादि।

ટીકાર્થ–આ રત્નપ્રભા પૃથ્વીમા કેટલાક નારકીઓના સ્થિતિ છ પલ્યોપમની દર્શાવી છે ત્રીજી પૃથ્વીમા પણ કેટલાક નારકીઓની સ્થિતિ છ સાગરોપમની બતાવવામા આવી છે અસુરકુમાર દેવોમા પણ કેટલાક દેવોની સ્થિતિ છ પલ્યોપમની કહેલ છે સૌધર્મ અને ઈશાન કલ્પોમા પણ કેટલાક દેવોની સ્થિતિ છ પલ્યોપમની કહેલ છે–એ જ

मूलम्- जे देवा सयमु सयभूरमण घोस सुघोस महाघोस किट्ठिघोस वीर सुवीर वीरगत वीरसेणिय वीरावत्त वीरप्पभ वीरकत वीरवण्ण वीरलेस वीरज्झय वीरसिंग वीरसिट्ठ वीरकूड वीरुत्तरवडिंसग विमाण देवत्ताए उववण्णा, तेसिं ण देवाण उक्कोसेण छ सागरोवमाइ ठिई पण्णत्ता । ते णं देवा छण्ह अद्धमासाण आणमति वा । पाण मति वा ऊससति वा नीससति वा । तेसिं ण देवाण छहिं वासस हस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जइ । सतेगइया भवसिद्धिया जीवा जे छहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्सति जाव सव्वदुक्खानामन्त करिस्सति ॥सू २१॥

टीका—'जे देवा' इत्यादि। य देवाः स्वयंभुव स्वयभूरमण घोष सुघोष कृष्टिघोष वीरं सुवीरं वीरगत वीरसैनिकं वीरावर्त्त वीरप्रभं वीरकान्त वीरवर्ण वीरलेश्य वीरध्वजं वीरशृङ्ग वीरसृष्टं वीरकूटं वीरोत्तरावतंसक विमान= एतेषु विंशतिविमानेषु देवत्वेनोत्पन्ना , तेषां खलु देवानामुत्कर्षेण षट्साग रोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। ते खलु देवाः षण्णामर्धमासानाम ते आनन्ति वा

सनत्कुमार माहेन्द्र कल्पों में भी कितनेक देवों की छ सागरोपम की स्थिति कही गई है ॥सू० २०॥

'जो देवा' इत्यादि।

टीकार्थ–जो देव स्वयमू,१ स्वयंभूरमण,२ घोष,३ सुघोष,४ महाघोष,५ कृष्टिघोष,६ वीर,७ सुवीर,८ वीरगत,९ वीरसैनिक,१० वीरावर्त,११ वीर प्रभ,१२ वीरकान्त,१३ वीरवर्ण,१४ वीरलेश्य,१५ वीरध्वज,१६ वीरशृङ्ग,१७ वीरसृष्ट,१८ वीरकूट,१९ और वीरोत्तरावतसक२०, इन २० वीस विमानों में देव की पर्याय से उत्पन्न होते हैं, उन देवो की

प्रमाणे सनत्कुमार अने माहेन्द्र कल्पोमा पण केटलाक देवोनी छ सागरोपमनी स्थिति कहेवमां आवी छे ॥सू २०॥

'जे देवा' इत्यादि।

टीकार्थ–जे देवो स्वयभू, स्वयभूरमण, घोष, सुघोष, महाघोष कृष्टिघोष, वीर सुवीर, वीरगत, वीरसैनिक, वीरावर्त, वीरप्रभ, वीरकान्त, वीरवर्ण, वीरलेश्य वीरध्वज, वीरशृग, वीरसृष्ट, वीरकूट अने वीरोत्तरावतसक, ए वीस विमानोमां देवनी पर्याये उत्पन्न थाय छे ते देवोनी उत्कृष्ट स्थिति छ सागरोपमनी होय छे ते देवो छ अर्धने

प्राणन्ति वा, उच्छ्वसन्ति वा निःश्वसन्ति वा। तेषां खलु देवानां षड्भिर्वर्षसहस्रैराहारसंज्ञा समुत्पद्यते। सन्त्येके भवसिद्धिका जीवाः, ये षड्भिर्भवग्रहणैः सेत्स्यन्ति, 'जाव' यावत्-यावत्पदेन भोत्स्यन्ते, मोक्ष्यन्ति, परिनिर्वास्यन्ति, सर्वदुःखानामन्तं करिष्यन्ति ॥२१॥

अथ सप्तमं समवायमाह—

मूलम्—सत्तभयट्ठाणा पण्णत्ता, तं जहा—इहलोगभए, परलोगभए। आदाणभए, अकम्हाभए, आजीवभए, मरणभए, असिलोगभए। सत्तसमुग्घाया पण्णत्ता, तं जहा—वेयणासमुग्घाए, कसायसमुग्घाए, मारणंतियसमुग्घाए, वेउव्वियसमुग्घाए, तेयससमुग्घाए, आहारकसमुग्घाए, केवलिसमुग्घाए। समणे भगवं महावीरे सत्तरयणीओ उड्ढं उच्चत्तेणं होत्था। इहेव जंबूदीवे दीवे सत्तवासहरपव्वया पण्णत्ता, तं जहा—चुल्लहिमवंते, महाहिमवंते, निसढे, नीलवंते, रुप्पी, सिहरी, मंदरे। इहेव जंबूदीवे दीवे सत्तवासा पण्णत्ता, तं जहा—भरहे, हेमवते, हरिवासे, महाविदेहे, रम्मए, एरण्णवए, एरवए। खीणमोहेणं भगवया मोहणिज्जवज्जाओ सत्तकम्मपयडीओ वेएइ। महानक्खत्ते सत्ततारे पण्णत्ते। कत्तिआइआ सत्तनक्खत्ता

उत्कृष्ट स्थिति छह सागरोपम की होती है। वे देव छह अर्धमासों के अन्त में बाह्य आभ्यन्तरिक उच्छ्वास निःश्वास ग्रहण करते हैं। उन देवों को छह हजार वर्ष व्यतीत होने पर आहार की संज्ञा उत्पन्न होती है इनमें कितनेक देव ऐसे भी होते हैं जो भवसिद्धिक होते हैं। वे छह भवों को ग्रहण करने के बाद सिद्ध अवस्था को प्राप्त करने वाले होंगे यावत् समस्त दुःखों का अन्त करेंगे ॥सू० २१॥

બાહ્ય આભ્યન્તરિક ઉચ્છવાસ નિશ્વાસ લે છે તે દેવોને છ હજાર વર્ષે આહાર સંજ્ઞા ઉત્પન્ન થાય છે-તેમા કેટલાક દેવો ભવસિદ્ધિક પણ હોય છે તેઓ છ ભવો કરીને સિદ્ધ અવસ્થા પ્રાપ્ત કરશે ત્યાંથી લઇને સમસ્ત દુઃખોનો અન્ત કરશે ત્યાં સુધીનો અર્થ આગળના સૂત્રોમાંથી જાણી લેવો ॥સૂ. ૨૧॥

पुव्वदारिआ पण्णत्ता महाइया सत्तनक्खत्ता दाहिण दारिआ पण्णत्ता। अणुराहाइआ सत्तनक्खत्ता अवरदारिआ पण्णत्ता धणिट्ठाइया सत्त नखत्ता उत्तरदारिआ पण्णत्ता ॥२२॥

टीका—'सत्तभयट्ठाणा' इत्यादि। सप्त 'भयट्ठाणा' भयस्थानानि, भयस्य= मोहनीयप्रकृतिसमुत्पन्नात्मपरिणामविशेषस्य स्थानानि मयानि, तद्यथा—इहलोकभयम्=मनुष्याणां यदन्यस्माद् मनुष्यादभय, तत् इहलोकभयम्, परलोकभयम्= परस्मात् लोकात् देवतिर्यगादेर्यद् भय, तत् परलोकभयम्। आदानभयम्–आ दीयते गृह्यते यत्तदादान धनम्, तन्निमित्त चौरादिकर्तृकापहरणाद् यद् भयं तदादानभयम्। अकस्माद्भयम्' अकस्माद् भयम्, अत एवाह बाह्यनिमित्तमनपेक्ष्यैव रात्र्यादौ यद्भय तदकस्माद्भयम्। आजीवभयम्–आजीवस्य जीविकाया भयम् आजीवभयम्। मरणभयम् 'असिलागभय' अश्लोकभयम्, अश्लोकोऽपयशः,

अथ सूत्रकार सातवें समवाय को कहते हैं—'सत्तभयट्ठाणा' इत्यादि।

टीकार्थ–सात भयस्थान कहे गये हैं। यह भय नोकषाय मोहनीय के उदय से होता है। भय आत्मा का ही एक परिणाम विशेष है। इस भय के सात स्थान हैं वे इस प्रकार से हैं—इहलोकभय, परलोकभय, आदानभय, अकस्मात्‌भय, आजीवभय, मरणभय और अश्लोकभय। मनुष्यों को जो दूसरे मनुष्यों से भय होता है वह इहलोकभय है १। देव तिर्यञ्च आदिरूप परलोक से जो भय होता है वह परलोकभय है २। आदान शब्द का अर्थ धन आदि है। इस निमित्त को लेकर जो चौरादिकर्तृक अपहरण से भय होता है वह आदानभय है ३। चौरादिनिमित्त की अपेक्षा किये विना ही रात्रि आदि के समय जो भय होता है वह अकस्माद्भय है ४।

હવે સૂત્રકાર સાતમું સમવાયાંગ કહે છે–"सत्तभयट्ठाणा" इत्यादि।

ટીકાર્થ–સાત ભયસ્થાનો બતાવ્યાં છે તે ભય નોકષાય મોહનીયના ઉદયથી થાય છે ભય આત્માનું જ એક પરિણામ વિશેષ છે તે ભયનાં સાત સ્થાન છે—

(૧) ઇહલોક ભય (૨) પરલોક ભય (૩) આદાનભય, (૪) અકસ્માત્‌ ભય, (૫) આજીવ ભય, (૬) મરણભય અને (૭) અશ્લોક ભય માણસોને જે બીજા મનુષ્યોનો ભય હોય છે તે 'ઇહલોકભય' કહેવાય છે દેવ તિર્યંચ આદિરૂપ પરલોકનો જે ભય હોય છે તેને પરલોકભય કહે છે આદાન એટલે ધનના નિમિત્તને લઈને ચોર આદિ વડે અપહરણ થવાનો જે ભય રહે છે તેને 'આદાનભય' કહે છે ચોર આદિ નિમિત્તની અપેક્ષા કર્યા વિના જ રાત્રિ આદિ સમયે જે ભય થાય છે તે

तस्य भयम् अश्लोकभयम्-निन्दाभयमित्यर्थः। सप्त समुद्घाताः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-वेदनासमुद्घातः, कषायसमुद्घातः मारणान्तिकसमुद्घातः, वैकुर्विकसमुद्घातः, तैजससमुद्घातः, आहारकसमुद्घातः, केवलिसमुद्घातः। वेदनादिसमुद्घातपरिणतो ह्यात्मा बहून् वेदनीयादिकर्मप्रदेशान् कालान्तरानुभवयोग्यान् उदीरणाकरणेनाकृष्य उदयावलिकायां च निक्षिप्य अनुभूय निर्जरयति। तत्र वेदना समुद्घातस्तु असातवेद्यकर्माश्रयः, वेदना पीडितो जीवः अनन्तानन्तकर्मस्कन्धवेष्टितान् स्वात्मप्रदेशान् शरीराद् बहिर्निक्षिपति, तैः प्रदेशैः स वदनजठरादिरन्ध्राणि कर्णस्कन्धाद्यन्तरालानि च आपूर्य आयामविस्तारतः शरीरमात्रं क्षेत्रमभिव्याप्य

जीविका का जो भय है वह आजीवभय है ५। मरण से जो भय होता है वह मरणभय है ६। अकीर्ति-अपयश का जो भय होना है वह अश्लोकभय है। इसका दूसरा नाम निन्दाभय है ।७। समुद्घात सात होते हैं, वे इस प्रकार से है-वेदनासमुद्घात१ कषायसमुद्घात२, मारणांतिकसमुद्घात३, वैकुर्विकसमुद्घात४, तैजससमुद्घात५, आहारकसमुद्घात६, और केवलिसमुद्घात७। इन वेदनादिसमुद्घात से युक्त हुआ आत्मा कालान्तर में अनुभव करने योग्य अनेक वेदनीयादि कर्मपुद्गलों को उदीरणाकरण से खेंचकर और उदयावलि में निक्षिप्तकर उन्हें अनुभव करके निर्जीर्ण कर-देता है। इन सात समुद्घातों का स्वरूप इस प्रकार से है-तीव्र वेदना से पीडित हुआ जीव अनतानंत कर्मस्कन्ध से वेष्टित अपने आत्मप्रदेशों को शरीर से बाहिर निकालता है। वह उन प्रदेशों से वदन जठर आदि के छिद्रों को, और कर्ण, स्कंध आदि अंतरालों को पूरण कर आयाम विस्तार की अपेक्षा शरीरमात्र क्षेत्र को व्याप्त कर

'અકસ્માતભય' છે જીવનનિર્વાહનો જે ભય હોય છે તેને અજીવભય કહે છે અને મરણનો જે ભય છે તેને 'મરણભય' કહે છે અકીર્તિનો જે ભય છે તેને 'અશ્લોકભય' કહે છે તેનું બીજું નામ નિન્દાભય' છે સાત સમુદ્ઘાત હોય છે તે આ પ્રમાણે છે-[૧] વેદના સમુદ્ઘાત, [૨] કષાયસમુદ્ઘાત, [૩] મરણાંતિક સમુદ્ઘાત, [૪] વૈકુર્વિકસમુદ્ઘાત, (૬) તૈજસસમુદ્ઘાત, (૬) આહારકસમુદ્ઘાત અને (૭) કેવલિસમુદ્ઘાત છે વેદના દે સમુદ્ઘાતથી યુકત થયેલ આત્મા કાલાન્તરે અનુભવ કરવા યોગ્ય અનેક વેદનીયાદિ કર્મપુદ્ગલોને ઉદીરણા કરણથી ખેંચીને અથવા ઉદયાવલિમા નિક્ષિપ્ત કરીને તેમને અનુભવીને નિર્જીર્ણ કરી નાખે છે તે સાત સમુદ્ઘાતોનું સ્વરૂપ આ પ્રમાણે છે-તીવ્ર વેદના વડે પીડાતો જીવ અનંતાનંત કર્મસ્કંધથી વીંટળાયેલ પોતાના આત્મપ્રદેશોને શરીરમાથી બહાર કાઢે છે તે જીવ તે પ્રદેશોમાથી વદન, જઠર આદિના છિદ્રોને અને કર્ણ, સ્કંધ આદિ અંતરાલોને પૂરી દઇને લંબાઇ પહોળાઇની અપેક્ષાએ

वस्मिन्नान्तर्मुहूर्ते प्रभूतामातवेदनीयकर्मपुद्गलपरिशाटनं करोति। कषायसमुद्घात कषायाख्यचारित्रमोहनीयकर्माश्रय, तीव्रकषायोदयाकुलो जीवः स्वात्मप्रदेशान् बहिर्विक्षिपति, तैः प्रदेशैर्वदनादरादिरन्ध्राणि कर्णस्कन्धाद्यन्तरालानि चाऽपूर्य आयामविस्ताराभ्यां देहमात्रक्षेत्रमभिव्याप्य वर्तते, तथाभूताश्च प्रभूतान् कषायकर्मपुद्गलान् परिशाटयति। मारणान्तिकसमुद्घात =अन्तर्मुहूर्तशेषायुः कर्माश्रय, मरणमेव प्राणिनामन्तकारित्वादन्त, मरणान्तः, तत्र भवो मारणान्तिक, स चासौ समुद्घातश्च मारणान्तिकसमुद्घातः। मरणसमुद्घातगतो विक्षिप्तस्वात्मप्रदेशा वदनादरादिरन्ध्राणि स्कन्धाद्यन्तरालानि चापूर्य विष्कम्भबाहल्याभ्यां

के अन्तर्मुहूर्तकाल में प्रभूत असात वेदनीय कर्मपुद्गलों को परिशटित कर देता है। इस तरह यह वेदना समुद्घात असातवेदनीय कर्म के आश्रय से होता है १। कषायसमुद्घात कषायनामक चारित्रमोहनीय कर्म के संबंध को लेकर होता है, वह इस प्रकार से है तीव्र कषाय के उदय से आकुल बना हुआ जीव अपने आत्मप्रदेशों को बाहर निकालता है। उन प्रदेशों से वह वदन उदर आदि के रन्ध्रों को और कर्ण स्कंध आदि के अन्तरालों को पूरित करके देहप्रमाण लंबे चौडे क्षेत्र में ठहर कर तथाभूत प्रभूत कषायपुद्गलों को परिशाटित कर देता है २। मारणान्तिक समुद्घात अन्तर्मुहूर्त की शेष आयु जब रह जाती है तब होता है। मारणान्तिक समुद्घात का तात्पर्य है—मरण के अन्त समय में होने वाला समुद्घात। इस समुद्घात को करने वाला जीव अपने कुछेक आत्मप्रदेशों को शरीर से बाहिर फैलाता है और उनसे वदन उदर आदि के रन्ध्रों को तथा स्कंध आदि के अन्तरालों को पूरित करके

શરીર પ્રમાણ ક્ષેત્રને અન્તમુહૂર્ત કાળમાં પ્રભૂત (અનેક) અસાતવેદનીયકર્મ પુદ્ગલોને પરિશટિત કરી નાખે છે એટલે કે છે આ રીતે તે વેદના સમુદ્ઘાત અસાતવેદનીય કર્મને આશ્રયે થાય છે (૧) કષાય સમુદ્ઘાત કષાય નામના ચારિત્ર મોહનીય કર્મના યોગથી થાય છે તે આ પ્રમાણે-તીવ્રકષાયના ઉદયથી આકુળવ્યાકુળ બનેલ જીવ પોતાના આત્મ પ્રદેશોને બહાર કાઢે છે તે પ્રદેશો વડે તે વદન, ઉદર આદિનાં છિદ્રોને અને કર્ણ સ્કંધ આદિના અન્તરાલોને પૂરી દઈને દેહપ્રમાણ લંબાઈ પહોળાઈ ક્ષેત્રમાં ગોઠવીને તે પ્રમાણે ઉદ્ભવેલા પ્રભૂત કષાયપુદ્ગલોને પરિશટિત કરી નાખે છે—એટલે કે છે (૨)-જ્યારે અન્તમુહૂર્તનું આયુષ્ય બાકી રહે છે ત્યારે મારણાન્તિક સમુદ્ઘાત થાય છે મારણાન્તિક સમુદ્ઘાત એટલે મરણના અન્ત સમયે થનારો સમુદ્ઘાત. આ સમુદ્ઘાત કરનાર જીવ પોતાના કેટલાક આત્મપ્રદેશોને શરીરમાંથી બહાર ફેલાવે છે, અને તેમનાથી વદન, ઉદર આદિનાં છિદ્રોને તથા સ્કંધ આદિના અન્તરાલોને પૂરી દઈને પહોળાઈ અને ઊંચાઈની અપેક્ષાએ

स्वशरीरप्रमाणमायामतः स्वशरीरातिरेकातो जघन्यतोऽङ्गुलासंख्येयभागम्, उत्कर्षतोऽसंख्येयानि योजनान्येकदिशि क्षेत्रमभिव्याप्य आयुष्कर्मपुद्गलान् परिशाटयति। वैकुर्विकसमुद्घातः-वैक्रियशरीरकर्माश्रयः। वैक्रियसमुद्घातगतः पुनर्जीवः स्वात्मप्रदेशान् शरीराद् बहिर्निःसार्य शरीरविष्कम्भबाहल्यमानमायामतः संख्येययोजनप्रमाणं दण्डं निसृजति, निसृज्य च यथा स्थूलान् वैक्रियशरीरनामककर्मपुद्गलान् प्राग्वच्छातयति। तैजसमुद्घातःतैजसशरीरकर्माश्रयः। तेजो निसर्गलब्धिमान् क्रुद्धःसाध्वादिः सप्ताष्टपदानि गत्वा विष्क-

---

विष्कंभ चौडाई और बाहल्य-ऊँचाई की अपेक्षा अपने शरीर प्रमाण तथा आयाम की अपेक्षा अपने शरीर से अधिक-जघन्य की अपेक्षा अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण और उत्कृष्ट की अपेक्षा असंख्यात योजन प्रमाण, ऐसे एकदिशा संबधी क्षेत्र को व्याप्त कर लेता है। फिर वह अपने आयुकर्म के पुद्गलों को परिशाटित कर देता है ३। वैक्रिय समुद्घात वैक्रिय शरीरकर्म के आश्रय होता है, इस समुद्घात को करने वाला जीव अपने आत्मप्रदेशों को शरीर से बाहर निकाल कर शारीरिक विष्कंभ और बाहल्य के अनुसार उन्हें आयाम की अपेक्षा संख्यात योजन प्रमाण वाले दण्डाकाररूप में बनाता है। बनाकर फिर वह यथास्थूल वैक्रिय शरीर नामकर्म के पुद्गलों की पहिले की तरह परिशाटित कर देता है ४। तैजससमुद्घात तैजस शरीर नामकर्म के आश्रय से होता है, जो विशिष्ट तपस्वी तपस्या जन्य खास तेजोलब्धि प्राप्त कर लेता है वह जब कुपित होता है तो सात आठ पद अपने स्थान से आगे जाकर

પોતાના શરીર પ્રમાણ તથા લંબાઇની અપેક્ષાએ પોતાના શરીર કરતા અધિક-જઘન્યની અપેક્ષાએ અંગુલના અસંખ્યાતમા ભાગ પ્રમાણ અને ઉત્કૃષ્ટની અપેક્ષાએ અસંખ્યાત યોજન પ્રમાણ, એવા એક દિશા સંબંધી ક્ષેત્રને વ્યાપ્ત કરી લે છે. પછી તે પોતાના આયુકર્મના પુદ્‌ગલોને પરિશટિત કરી દે છે-જોડી દે છે. (૩) વૈક્રિય સમુદ્‌ઘાત વૈક્રિય શરીરકર્મને આશ્રયે થાય છે તે સમુદ્‌ઘાત કરનાર જીવ પોતાના આત્મપ્રદેશોને શરીરમાંથી બહાર કાઢીને શારીરિક વિષ્કંભ-પહોળાઇ અને બાહલ્ય-ઊંચાઇ પ્રમાણે તેમને આયામ-લંબાઈની અપેક્ષાએ સંખ્યાત યોજન પ્રમાણવાળા દંડાકાર રૂપમા બનાવે છે બનાવ્યા પછી તે યથાસ્થૂલ વૈક્રિય શરીર નામકર્મના પુદ્‌ગલોનેપહેલાની જેમ પરિશટિત કરી નાખે છે (૪) તૈજસ સમુદ્‌ઘાત તૈજસ શરીર-નામ કર્મને આશ્રયે થાય છે જે વિશિષ્ટ તપસ્વી તપસ્યાજન્ય ખાસ લબ્ધિ પ્રાપ્ત કરી લે છે તે જ્યારે ક્રોધે ભરાય છે ત્યારે પોતાના સ્થાનથી સાત આઠ ડગલા આગળ

प्रमाणाभ्यां शरीरमानमायामतस्तु संख्येययोजनप्रमाणं जीवप्रदेशदण्डं शरीराद् बहिः प्रक्षिप्य क्रोधविषयीकृतं मनुष्यादिकं निर्दहति, तत्र प्रभूतांस्तैजसशरीर नामकर्मपुद्गलान् शातयति ।

आहारकसमुद्घात आहारकशरीरकर्माश्रयः, आहारकसमुद्घाते जीवःस्वात्म प्रदेशान् शरीराद्बहिर्निःसार्य बाहल्यतःशरीरमात्रमायामतश्च संख्येयानि योज नानि दण्डं निसृजति निसृज्य च यथास्थूलानाहारकशरीरनामकर्मपुद्गलान् शातयति। केवलिसमुद्घात =सातासातवेद्य शुभाशुभनामोच्चनीचगोत्रकर्माश्रयः । केवलिनः समुद्घात केवलिसमुद्घातः । अन्तर्मुहूर्तभाविनि परमपदे केवल्यी आयु

विष्कंभ और बाहल्य की अपेक्षा अपने शरीर प्रमाण तथा आयाम-लंबाई की अपेक्षा संख्यातयोजन प्रमाण तक अपने आत्मप्रदेशों को बाहर निकाल कर दण्डाकाररूप में बाहिर फैलाता है। और क्रोध के विषयभूत बने हुए मनुष्य आदिकों को भस्मसात् कर देता है। वह उस अवस्था में प्रभूत तैजस शरीर नामक कर्मपुद्गलों को परिशटित कर देता है ५। आहारकसमुद्घात आहारक-शरीरकर्म के सहारे से होता है, जब जीव आहारक समुद्घात करता है तो उस समय वह आत्म प्रदेशों को शरीर से बाहर निकाल कर बाहल्य-ऊँचाई की अपेक्षा शरीर मात्र तथा आयाम की अपेक्षा संख्यात योजन तक दण्डाकाररूप में परिण माता है, और परिणमा कर फिर यथास्थूल आहारकशरीर नामकर्म के पुद् गलों को परिशटित कर देता है ६। केवलिसमुद्घात साता, असाता वेदनीयकर्म, शुभ अशुभ नामकर्म, और ऊँच नीच गोत्रकर्म के सहारे से होता है। परमपद की प्राप्ति जब अन्तर्मुहूर्त काल में होने वाली होती

જાડાઈ અને ઊંચાઈની અપેક્ષાએ પોતાના શરીર પ્રમાણ તથા લંબાઈની અપેક્ષાએ સંખ્યાત યોજન પ્રમાણ સુધી પોતાના આત્મ પ્રદેશોને બહાર કાઢીને દંડા કાર રૂપે બહાર ફેલાવે છે અને ક્રોધના કારણરૂપ બનેલ મનુષ્ય આદિને બાળીને ભસ્મ કરી નાખે છે એ અવસ્થામાં તે પ્રભૂત તૈજસ શરીર નામના કર્મપુદ્ગલોને પરિશટિત કરે છે (૫) આહારક સમુદ્ઘાત આહારક શરીર કર્મની મદદથી થાય છે જ્યારે જીવ આહારક સમુદ્ઘાત કરે છે ત્યારે તે આત્મપ્રદેશોને શરીરમાંથી બહાર કાઢીને ઊંચાઈની અપેક્ષાએ શરીર પ્રમાણ તથા લંબાઈની અપેક્ષાએ સંખ્યાત યોજન સુધી દંડાકાર રૂપમાં પરિણમાવે છે અને પરિણમાવીને તે યથાસ્થૂલ આહારક શરીર નામકર્મના પુદ્ગલોને પરિશટિત કરી લે છે (૬) કેવલિસમુદ્ઘાત સાતા, અસાતા વેદનીયકર્મ, શુભ અશુભ નામકર્મ, અને ઊંચનીચ ગોત્રકર્મને આશ્રયે થાય છે— પરમપદની પ્રાપ્તિ જ્યારે અન્તર્મુહૂર્તકાળમાં થનારી હોય છે ત્યારે કેવલી ભગવાન

वेदनीयकर्मदलिकसमीकरणार्थं प्रथमसमये बाहल्यतः स्वशरीरप्रमाणमूर्ध्वमधश्च लोकान्तपर्यन्तमात्मप्रदेशानां दण्डमारचयति। द्वितीयसमये पूर्वापरयोर्दिशयोर्विस्तृतात्मप्रदेशाना कपाटाकारत्वं कुरुते। तृतीयसमये दक्षिणोत्तरदिशयोःप्रसृतात्मप्रदेशानां मन्थानाकारत्वं कुरुते। चतुर्थे समयेऽन्तरालपूरणेन चतुर्दशरज्ज्वात्मक सकललोकपूरण कुरुते। एवं समुद्घातं कुर्वन् केवली चतुर्भिःसमयैःसकललोकव्यापी भवति। एवं कर्मणोंऽशान् समीकृत्य पञ्चमे समयेऽन्तरालपूरकान् आत्मप्रदेशान् संकोचयति षष्ठे समये मन्थानं, सप्तमे समये कपाटं च संकोचयति। अष्टमे समये दण्डमुपसंहरन् स्वशरीरस्थो भवति। केवलिसमुद्घातवर्जाः शेषाः षट्समुद्घाताः

है नव केवली भगवान् आयु और वेदनीय कर्म के दलिकों को समीकरण--समान करने के लिये प्रथम समय में बाहल्य की अपेक्षा स्वशरीरप्रमाण तथा उर्ध्व और अधः लोकान्त पर्यन्त आत्मप्रदेशों को दण्डरूप मे बाहर निकालते हैं। द्वितीय समय में पूर्व और पश्चिम दिशा में विस्तृत आत्मप्रदेशों को कपाटरूप में, तृतीय समय में दक्षिण और उत्तर दिशा में प्रस्तृत आत्मप्रदेशों को मन्थान दंडरूप में और चतुर्थ-समय में अन्तरालों को पूरणकरने से चौदह राजूप्रमाण सकललोक को भर देते है। इस प्रकार समुदघात करते हुए केवली भगवान् चार समय मे समस्त लोकव्यापी बन जाते हैं। इस तरह कर्मों के अंशों को समान करके पंचम समय में वे अन्तरालपूरक आत्मप्रदेशों को, छठवें समय में मन्थान–दंड को और सातवें समय में कपाट को संकुचित करते है। तथा आठवें समय में दण्डाकाररूप आत्मप्रदेशों को संहृत कर वे केवली स्वशरीरस्थ हो जाते है। केवलिसमुद्घात को छोडकर छह समुद्घातों का समय एक

આયુ અને વેદનીય કર્મના દલિકોને સમાન કરવાને માટે પ્રથમ સમયે બાહલ્ય ઊંચાઈની અપેક્ષાએ સ્વશરીર પ્રમાણ તથા ઉર્ધ્વ અને અધ લોકાન્ત સુધી આત્મપ્રદેશોને દંડરૂપે બહાર કાઢે છે દ્વિતીય સમયે પૂર્વ અને પશ્ચિમ દિશામા વિસ્તૃત આત્મપ્રદેશોને કપાટરૂપે, ત્રીજા સમયે દક્ષિણ અને ઉત્તર દિશામાં પ્રસ્તુત આત્મપ્રદેશોને મન્થાન દંડરૂપે અને ચોથે સમયે અન્તરાલોને પૂરીને ચૌદ રાજૂપ્રમાણ સમસ્ત લોકને ભરી દે છે આ પ્રમાણે સમુદ્ઘાત કરતા કરતા કેવલી ભગવાન ચાર સમયમા સમસ્ત લોકવ્યાપી બની જાય છે આ રીતે કર્મોના અંશોને સરખા કરીને પાંચમા સમયમા તેઓ અન્તરાલ પૂરક આત્મપ્રદેશોને, છઠ્ઠા સમયમા મન્થાન દંડને, અને સાતમા સમયમા કપાટને સંકુચિત કરે છે તથા આઠમા સમયમા દંડાકારરૂપ આત્મપ્રદેશોને સંહૃત (વિસ્તૃત) કરીને તે કેવલી સ્વશરીરસ્થ થઇ જાય છે કેવલી

भान्तर्मौहूर्तिकाः, केवलिसमुद्घातस्य अष्टसामायिकः षण्मासायुष्कास्ततो न्यूनायुष्काश्च केवलिना नियमतः समुद्घातं कुर्वन्ति। षण्मासाधिकायुषां केवलिनां तु समुद्घातस्य भजना। उक्तं च—

छम्मासाऊसेसे, उप्पन्नं जस्स केवलं नाणं।

तं नियमा समुग्घाया सेसा समुग्घायमइयव्वा।

छाया—षण्मासायुषि शेषे उत्पन्नं यस्य केवलं ज्ञानम्।

ते नियमात्समुद्घाताः शेषाः समुद्घातभक्तव्याः॥ इति। समुद्घाताः=समुद्घातवन्तः। समुद्घातभक्तव्याः=समुद्घाते भक्तव्याः समुद्घातभक्तव्याः, समुद्घातवन्तो भवन्ति न वा भवन्ति इत्यर्थः। श्रमणो भगवान् महावीरः सप्त 'रयणीओ' रत्नयः, रत्निः=विस्मृताङ्गुलिर्हस्तः, 'उड्ढंउच्चत्तेणं' ऊर्ध्वोच्चत्वेन न तु तिर्यगुच्चत्वेन 'होत्था' अभूत्। इहैव जम्बूद्वीपे द्वीपे 'सत्त' सप्तसंख्यकाः 'वासहरपव्वया' वर्षधरपर्वताः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—'चुल्लहिमवंते' क्षुद्रहिमवान्, महा

अन्तर्मुहूर्त है और केवलिसमुद्घात का आठ समय है। जो केवली छहमास की लवशेष आयुवाले होते हैं अथवा इससे भी कम जिनकी आयु होती है वे नियम से समुद्घात करते हैं। परन्तु जिन केवलियों की आयु छह मास से अधिक की है उनमें समुद्घात कि भजना मानी गई है। कहा भी है—

"जिन केवलियों की आयु छह मास की बाकी रह जाती है और तब जिन्हें केवलज्ञान उत्पन्न होता है वे नियम से समुद्घात करते हैं। परन्तु जिनकी आयु छह मास से अधिक है ऐसे केवली समुद्घात करते भी हैं और नहीं भी करते हैं ॥१॥"

श्रमण भगवान् महावीर सात रत्नि प्रमाण ऊँचे थे। इस जम्बूद्वीप नाम के द्वीप में सात वर्षधर पर्वत हैं वे ये हैं—चुल्ल हिमवान्, महाहिमवान्,

---

समुद्घात सिवायना छ समुद्घातोनो समय એક અન્તર્મુહૂર્ત છે, અને કેવલિ સમુદ્ઘાતના આઠ સમય છે જે કેવલીનું આયુષ્ય છ માસનું બાકી રહેલ છે અથવા તેના કરતા પણ ઓછું જેનું આયુષ્ય હોય છે તેઓ સમુદ્ઘાત કરે જ છે એવો નિયમ છે પણ જે કેવલીઓનું આયુષ્ય છ માસથી વધારે બાકી હોય, તેમનામાં સમુદ્ઘાતની ભજના (થાય કે ન થાય એવી હાલત) માનવામાં આવેલ છે કહ્યુ પણ છે—

"જે કેવલીઓને છ માસનું આયુષ્ય બાકી રહેલ હોય ત્યારે કેવળજ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે તેઓ નિયમથી જ સમુદ્ઘાત કરે છે પણ જેમનું છ માસથી વધારે આયુષ્ય બાકી હોય છે એવા કેવળીઓ સમુદ્ઘાત કરે પણ છે અને નથી પણ કરતા ॥૧॥"

શ્રમણ ભગવાન મહાવીર સાત રત્નિ પ્રમાણ ઊંચા હતા. આ જમ્બૂદ્વીપ નામના દ્વીપમાં સાત વર્ષધર પર્વતો છે—ચુલ્લ હિમવાન, મહા હિમવાન, નિષધ,

हिमवान् 'निसढे' निषधः, नीलवान् 'रुप्पी' रुक्मी 'सिहरी' शिखरी मन्दरः। इहैव जम्बूद्वीपे द्वीपे 'सत्तवासा' सप्तवर्षाणि क्षेत्राणि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—भरतम्, हैमवतम्, हरिवर्षम्, महाविदेहम्, रम्यकम्, ऐरण्यवतम्, ऐरवतम्। क्षीणमोहेन भगवता मोहनीयवर्जाः सप्तकर्मप्रकृतयः 'वेएई' वेद्यन्ते अनुभूयन्ते, 'वेएई' इत्येकवचनमार्षत्वात्। मघानक्षत्र सप्ततार प्रज्ञप्तम्। कृत्तिकादिकानि सप्तनक्षत्राणि पूर्वद्वारकाणि प्रज्ञप्तानि। (अभिजिदादिकानि सप्तनक्षत्राणि पूर्वद्वारकाणि प्रज्ञप्तानि इति केचित्) मघादिकानि सप्तनक्षत्राणि दक्षिणद्वाराणि प्रज्ञप्तानि। अनुराधादिकानि सप्तनक्षत्राणि अपरद्वारकाणि पश्चिमद्वारकाणीत्यर्थः प्रज्ञप्तानि। धनिष्ठादिकानि सप्तनक्षत्राणि उत्तरद्वारकाणि प्रज्ञप्तानि ॥२२॥

मूलम्—इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं सत्तपलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। तच्चाए णं पुढवीए नेरइयाणं उक्कोसेणं सत्त सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। चउत्थीए णं पुढवीए नेरइयाणं जहण्णेणं सत्तसागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगइयाणं सत्तपलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। सोहम्मी-

---

निषध, नील, रुक्मी, शिखरी और मन्दर। इस जम्बूद्वीप नामके द्वीप में सात क्षेत्र हैं, वे इस प्रकार हैं–भरत, हैमवत, हरिवर्ष, महाविदेह, रम्यक, ऐरण्यवत् और ऐरवत्त। बारहवें गुणस्थानवर्ती वीतराग भगवान् मोहनीय कर्म को छोडकर शेष सात कर्म प्रकृतियों का अनुभव करते है। मघानक्षत्र सात ताराओं वाला कहा गया है। कृत्तिका आदि सात नक्षत्र पूर्व द्वार वाले कहे गये हैं (अभिजित् आदि सात पूर्वद्वार वाले है एसा कोई २ कहते है) मघा आदि सात नक्षत्र दक्षिण द्वारवाले अनुराधा आदि सात नक्षत्र अपर द्वार वाले,–पश्चिम द्वार वाले, और धनिष्ठा आदि सात नक्षत्र उत्तर द्वारवाले कहे गये हैं ॥सू०२२॥

નીલ, રુકમી, શિખરી અને મન્દર આ જંબૂદ્વીપમા સાત ક્ષેત્ર છે-ભરત, હૈમવત, હરિવર્ષ, મહાવિદેહ, રમ્યક ઐરણ્યવત, અને ઐરવત. બારમા ગુણસ્થાનવર્તી વીતરાગ ભગવાન મોહનીયકર્મોને છોડીને બાકીની સાત કર્મ પ્રકૃતિયોનો અનુભવ કરે છે મઘા નક્ષત્ર સાત તારાઓ વાળું છે કૃતિકા આદિ સાત નક્ષત્ર પૂર્વદ્વાર વાળા કહેવાય છે (કોઇ કોઈ લોકોનુ એવુ માનવુ છે કે અભિજીત આદિ સાત નક્ષત્રો પૂર્વદ્વાર વાળા છે) મઘા આદિ સાત નક્ષત્ર દક્ષિણદ્વાર વાળાં, અનુરાધા આદિ સાત નક્ષત્ર પશ્ચિમદ્વાર વાળા અને ધનિષ્ઠા આદિ સાત નક્ષત્ર ઉત્તર દ્વારવાળા છે ॥સૂ ૨૨॥

साणेसु कप्पेसु अत्थेगइयाण देवाण सत्त पलिओवमाइ ठिई पण्णत्ता। सणकुमारे कप्पे अत्थेगइयाण देवाण उक्कोसेण सत्तसागरोवमाइ ठिई पण्णत्ता। माहिंदे कप्पे देवाण उक्कोसेण साइरेगाइ सत्तसाग रोवमाइ ठिई पण्णत्ता। बभलोए कप्पे अत्थेगइयाण दवाण सत्त साहिया सागरोवमाइ ठिई पण्णत्ता। जे देवा सम समप्पभ महापभ पभास भासुर विमल कचणकूड सणकुमारवडिंसग विमाण देवत्ताए उववण्णा, तेसि ण देवाण उक्कोसेण सत्तसागरोवमाइ ठिइ पण्णत्ता। ते ण देवा सत्तण्ह अद्धमासाण आणमति वा पाणमति वा ऊस सति वा नीससति वा। तेसिं णं देवाणं सत्तहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जइ। सन्तेगइया भवसिद्धिया जीवा जे ण सत्तहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति बुज्झिस्सति जाव सव्वदुक्खाणमत करिस्सति ॥सू० २३॥

टीका–'इमोसे ण' इत्यादि अस्यां खलु रत्नप्रभायां पृथिव्यामस्त्येकेषां नैरयिकाणं सप्तपल्योपमानि स्थिति प्रज्ञप्ता। तृतीयस्यां खलु पृथिव्यां नैरयिकाणां सोत्कृष्टा सप्तसागरोपमा स्थितिः प्रज्ञप्ता चतुर्थ्यां खलु पृथिव्यां नैरयिकाणां सजघन्या सप्तसागरोपमा स्थिति प्रज्ञप्ता। असुरकुमाराणां देवानामस्त्य

'इमीसेण' इत्यादि।

टीकार्थ–इस रत्न प्रभा पृथिवी में कितनेक नारकियों की स्थिति सात पल्यो पम की है। तीसरे नरक में नारकियों की उत्कृष्ट स्थिति सात सागरोपम की है। चौथी पृथिवी में नारकियों की स्थिति जघन्य सात सागरोपम की है। असुरकुमार देवों में कितनेक देवों की स्थिति सात पल्योपम की है।

"इमीस णं" इत्यादि।

टीकार्थ–આ રત્નપ્રભા પૃથ્વીમાં કેટલાક નારકીઓની સ્થિતિ સાત પલ્યોપમની છે ત્રીજી નરકમાં નારકીઓની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ સાત સાગરોપમની છે ચોથી પૃથ્વીમાં નારકીઓની સ્થિતિ જઘન્ય સાત સાગરોપમની છે અસુરકુમાર દેવોમાં કેટલાક દેવોની

केषां सप्तपल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। सौधर्मैशानेषु कल्पेषु अस्त्येकेषां देवानां सप्तपल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। सनत्कुमारे कल्पेऽस्त्येकेषां देवानामुत्कर्षेण सप्तसागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। माहेन्द्रे कल्पे देवानामुत्कर्षेण सातिरेकाणि=साधिकानि सप्तसागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। ब्रह्मलोके कल्पे अस्त्येकेषां देवानां सप्त 'साहिया' साधिकानि किंचिदधिकानीत्यर्थः, सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता।

ये देवाः समं१ समप्रभं२ महाप्रभं३ प्रभासं४ भास्वरं५ विमलं६ काञ्चनकूट७ सनत्कुमारावतसकं८ विमानं=एषु अष्टसु विमानेष्वित्यर्थः, देवत्वेनोत्पन्नाः, तेषां खलु देवानाम् उत्कर्षेण सप्तसागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। ते खलु देवाः सप्तानामर्धमासानामन्ते आनन्ति वा प्राणन्ति वा=आभ्यन्तरिकौ श्वासनिश्वासौ गृह्णन्ति, उच्छ्वसन्ति वा=निःश्वसन्ति वा बाह्यं श्वासं निःश्वासं च गृह्णन्ति। तेषां खलु देवानां सप्तभिर्वर्षसहस्रैराहारसंज्ञा संजायते। सन्त्येके भवसिद्धिका

सौधर्म ईशानकल्प में कितनेक देवों की स्थिति सात पल्योपम की है। सनत्कुमार में कितनेक देवों की उत्कृष्ट स्थिति सात सागरोपम की है। माहेन्द्रकल्प में देवों की उत्कृष्टस्थिति कुछ अधिक सात-सागरोपम की है। ब्रह्मलोक कल्प में कितनेक देवों की सातसागर से कुछ अधिक स्थिति है। जो देव सम१, समप्रभ२, महाप्रभ३, प्रभास४, भास्वर५, विमल६, काञ्चनकूट७ और सनत्कुमारावतंसक८, इन आठ विमानों में देव की पर्याय से उत्पन्न होते है। उन देवों की उत्कृष्टस्थिति सात सागरोपम की होती है। वे देव सात अर्धमासों के बाद बाह्य आभ्यन्तरिक श्वासोच्छ्वास ग्रहण करते हैं। उन देवों को सात हजार वर्ष के बाद आहार की अभिलाषा होती है। इन देवों में कितनेक देव ऐसे होते है जो

સ્થિતિ સાત પલ્યોપમની છે સૌધર્મ, ઇશાન કલ્પમા કેટલાક દેવોની સ્થિતિ સાત પલ્યોપમની છે સનત્કુમારકલ્પમા કેટલાક દેવોની ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિ સાત સાગરોપમની કહેલ છે માહેન્દ્ર કલ્પમા દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ સાત-સાગરોપમથી થોડી વધારે છે બ્રહ્મલોક કલ્પમા કેટલાક દેવોની સ્થતિ સાતસગરોપમ કરતા થોડી વધારે છે જે દેવો (૧) સમ, (૨) સમપ્રભ, (૩) મહાપ્રભ, (૪) પ્રભાસ, (૫) ભાસ્વર, (૬) વિમલ, (૭) કાચનકૂટ અને (૮) સનત્કુમારાવતસક, એ આઠ વિમાનોમા દેવોની પર્યાએ ઉત્પન્ન થાય છે, તે દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ સાત સાગરોપમની હોય છે તે દેવો સાત અર્ધ મહિને બહાર તથા અદર શ્વાસોચ્છાસ છે તે દેવોને સાત હજાર વર્ષ આહારની અભિલાષા થાય છે તે દેવોમાથી

साणेसु कप्पेसु अत्थेगइयाण देवाण सत्त पलिओवमाइ ठिई पण्णत्ता। सणकुमारे कप्पे अत्थेगइयाण देवाण उक्कोसेण सत्तसागरोवमाइ ठिई पण्णत्ता। माहिंदे कप्पे देवाण उक्कोसेण साइरेगाइ सत्तसाग रोवमाइ ठिई पण्णत्ता। बभलोए कप्पे अत्थेगइयाण देवाण सत्त साहिया सागरोवमाइ ठिई पण्णत्ता। जे देवा सम समप्पभ महापभ पभास भासुर विमल कचणकूड सणकुमारवडिंसग विमाण देवत्ताए उववण्णा, तेसिं ण देवाण उक्कोसेण सत्तसागरोवमाइ ठिइ पण्णत्ता। ते ण देवा सत्तण्ह अद्धमासाणं आणमति वा पाणमति वा ऊस सति वा नीससति वा। तेसिं णं देवाणं सत्तहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जइ। सन्तेगइया भवसिद्धिया जीवा जे ण सत्तहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्सति बुज्झिस्सति जाव सव्वदुक्खाणमत करिस्सति ॥सू० २३॥

टीका–'इमोसे ण' इत्यादि अस्या खलु रत्नप्रभायां पृथिव्यामस्त्येकेषां नैरयिकाण सप्तपल्योपमानि स्थिति प्रज्ञप्ता। तृतीयस्यां खलु पृथिव्यां नैरयिकाणा सोत्कृष्टा सप्तसागरोपमा स्थितिः प्रज्ञप्ता चतुर्थ्यां खलु पृथिव्यां नैरयिकाणां सजघन्या सप्तसागरोपमा स्थिति प्रज्ञप्ता। असुरकुमाराणां देवानामस्त्य

'इमीसेण' इत्यादि।

टीकार्थ–इस रत्नप्रभा पृथिवी में कितनेक नारकियों की स्थिति सात पल्यो पम की है। तीसरे नरक में नारकियों की उत्कृष्ट स्थिति सात सागरोपम की है। चौथी पृथिवी में नारकियों की स्थिति जघन्य सात सागरोपम की है। असुरकुमार देवों में कितनेक देवों की स्थिति सात पल्योपम की है।

"इमीसे ण" इत्यादि।

टीकार्थ–आ रत्नप्रभा पृथ्वीमां केटलाक नारकीओनी स्थिति सात पल्योपमनी छे त्रीजा नरकमां नारकीओनी उत्कृष्ट स्थिति सात सागरोपमनी छे चोथी पृथ्वीमां नारकी ओनी स्थिति जघन्य सात सागरोपमनी छे असुरकुमार देवोमां केटलाक देवोनी

केषां सप्तपल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। सौधर्मेशानेषु कल्पेषु अस्त्येकेषां देवानां सप्तपल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। सनत्कुमारे कल्पेऽस्त्येकेषां देवानामुत्कर्षेण सप्तसागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। माहेन्द्रे कल्पे देवानामुत्कर्षेण सातिरेकाणि=साधिकानि सप्तसागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। ब्रह्मलोके कल्पे अस्त्येकेषां देवाना सप्त 'साहिया' साधिकानि किंचिदधिकानीत्यर्थः, सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता।

ये देवाः समं१ समप्रभं२ महाप्रभं३ प्रभासं४ भास्वरं५ विमलं६ काञ्चनकूटं७ सनत्कुमारावतंसकं८ विमानं=एषु अष्टसु विमानेष्वित्यर्थः, देवत्वेनोत्पन्नाः, तेषां खलु देवानाम् उत्कर्षेण सप्तसागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। ते खलु देवाः सप्तानामर्धमासानामन्ते आनन्ति वा प्राणन्ति वा=आभ्यन्तरिकौ श्वासनिश्वासौ गृह्णन्ति, उच्छ्वसन्ति वा=निःश्वसन्ति वा बाह्यं श्वासं निःश्वास च गृह्णन्ति। तेषां खलु देवानां सप्तभिर्वर्षसहस्रैराहारसंज्ञा संजायते। सन्त्येके भवसिद्धिका

सौधर्म ईशानकल्प में कितनेक देवों की स्थिति सात पल्योपम की है। सनत्कुमार में कितनेक देवों की उत्कृष्ट स्थिति सात सागरोपम की है। माहेन्द्रकल्प में देवों की उत्कृष्टस्थिति कुछ अधिक सात-सागरोपम की है। ब्रह्मलोक कल्प में कितनेक देवों की सातसागर से कुछ अधिक स्थिति है। जो देव सम१, समप्रभ२, महाप्रभ३, प्रभास४, भास्वर५, विमल६, काञ्चनकूट७ और सनत्कुमारावतंसक८, इन आठ विमानों में देव की पर्याय से उत्पन्न होते है। उन देवों की उत्कृष्टस्थिति सात सागरोपम की होती है। वे देव सात अर्धमासों के बाद बाह्य आभ्यन्तरिक श्वासोच्छ्वास ग्रहण करते है। उन देवों को सात हजार वर्ष के बाद आहार की अभिलाषा होती है। इन देवों में कितनेक देव ऐसे होते है जो

સ્થિતિ સાત પલ્યોપમની છે સૌધર્મ, ઇશાન કલ્પમા કેટલાક દેવોની સ્થિતિ સાત પલ્યોપમની છે સનત્કુમારકલ્પમા કેટલાક દેવોની ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિ સાત સાગરોપમની કહેલ છે માહેન્દ્ર કલ્પમા દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ સાત-સાગરોપમથી થોડી વધારે છે બ્રહ્મલોક કલ્પમા કેટલાક દેવોની સ્થિતિ સાતસગરોપમ કરતા થોડી વધારે છે જે દેવો (૧) સમ, (૨) સમપ્રભ, (૩) મહાપ્રભ, (૪) પ્રભાસ, (૫) ભાસ્વર, (૬) વિમલ, (૭) કાચનકૂટ અને (૮) સનત્કુમારાવતસક, એ આઠ વિમાનોમાં દેવોની પર્યાયે ઉત્પન્ન થાય છે, તે દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ સાત સાગરોપમની હોય છે તે દેવો સાત અર્ધ મહિને બહાર તથા અદર શ્વાસોચ્છ્વાસ છે તે દેવોને સાત હજાર વર્ષ આહારની અભિલાષા થાય છે તે દેવોમાથી

जीवा, य खलु सप्तभिर्भवग्रहणैः सेत्स्यन्ति भोत्स्यन्ते यावत् मोक्ष्यन्ति, परि निर्वास्यन्ति सर्वदुःखानामन्त च करिष्यन्ति। सू २३॥

भवसिद्धिक होते हैं। वे सात भव करने के बाद सिद्ध हो जावेंगे, बुद्ध हो जावेंगे, यावत् समस्त दुःखों का अन्त कर देंगे।

भावार्थ—यह पहिले कहा जा चुका है कि नरकों में वसमान नारकियों की उत्कृष्टस्थिति क्रमशः एक१, तीन३, सात७, दश१०, सत्रह १७, बाईस२२ और तेतीस सागरोपम प्रमाण है। तथा जघन्य स्थिति क्रमशः दसहजार वर्ष, एकसागर, तीनसागर, सातसागर, दशसागर, सत्रहसागर और बाईस सागर की है। इस तरह इस सूत्र द्वारा जो रत्नप्रभा नामकी प्रथमपृथिवी के कितनेक जीवों की सात पल्योपम की स्थिति कही हुई है, वह मध्यम स्थिति जाननी चाहिये। इसी तरह जहा "कितनेक देवों की या कितनेक नारकियों की स्थिति अमुक २ प्रमाण में है" ऐसा कथन आवे वहां यह कथन प्रायः मध्यम स्थिति की अपेक्षा ही कहा गया जानना चाहिये। इसी तरह सौधर्म आदि कल्पों में भी जानना चाहिये। वहां जघन्य स्थिति इस प्रकार से है-पहिले देवलोक में एक पल्योपम की, दूसरे में पल्योपम से कुछ अधिक की, तीसरे में दो सागरो पम की, चौथे में दो सागरोपम से कुछ अधिक की, पांचवें में सातसागरो

કેટલાક દેવો એવા હોય છે કે જે ભવસિદ્ધિક હોય છે તેઓ સાત ભવ કરીને સિદ્ધ અવસ્થા પામશે ત્યાંથી લઈને સમસ્ત દુઃખોનો અંત કરશે સુધીનું કથન આગલા સૂત્રો પ્રમાણે સમજી લેવું

ભાવાર્થ—એ વાત પહેલાં બતાવવામાં આવી ગઈ છે કે નરકોમાં વર્તમાન નારકીઓની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ અનુક્રમે એક ત્રણ, સાત, દસ, સત્તર, બાવીસ, અને તેત્રીસ સાગરોપમ પ્રમાણે છે તથા જઘન્ય સ્થિતિ અનુક્રમે દસ હજાર વર્ષ, એક સાગર ત્રણ સાગર, સાત સાગર સત્તર સાગર અને બાવીસ સાગરની છે આ રીતે આ સૂત્ર દ્વારા, રત્નપ્રભા નામની પહેલી પૃથ્વીમાં કેટલાક જીવોની સ્થિતિ જે સાત પલ્યોપમની દર્શાવી છે તે મધ્યમ સ્થિતિની અપેક્ષાએ સમજવી એ જ પ્રમાણે જ્યાં " કેટલાક દેવોની કે કેટલાક નારકીઓની સ્થિતિ અમુક અમુક પ્રમાણમાં છે" એવું કથન આવે ત્યાં તે કથન સામાન્ય રીતે મધ્યમ સ્થિતિની અપેક્ષાએ કહેલ સમજવું એ જ પ્રમાણે સૌધર્મ આદિ દેવલોકમા પણ સમજવું ત્યાં જઘન્ય સ્થિતિ આ પ્રમાણે છે-પહેલા દેવલોકમા એક પલ્યોપમની બીજામાં પલ્યોપમથી થોડી વધારે, ત્રીજામાં બે સાગરોપમની ચોથામાં બે સાગરોપમથી થોડી વધારે,

पम की छठवें में दस सागरोपम की, सातवें में चौदह सागरोपम की आठवें में सत्रह १७ सागरोपम की, नववें में अठारह १८ सागरोपम की, ग्यारह और बारहवें में बीस सागरोपम की, प्रथम ग्रैवेयक में बाईस २२ सागरोपम की है। इसी तरह नीचे २ के ग्रैवेयक की उत्कृष्टस्थिति को ऊपर ऊपर के ग्रैवेयक की जघन्यस्थिति समझना चाहिये। इस क्रम से नववें ग्रैवेयक की जघन्यस्थिति तीस ३० सागरोपम की होती है। चार अनुत्तरविमान की जघन्यस्थिति इकतीस ३१ सागरोपम की है। सर्वार्थसिद्धि में उत्कृष्ट और जघन्य स्थिति में अन्तर नहीं है। इस कथन से यह बात कही गई है कि पूर्व २ के देवलोकों की उत्कृष्ट स्थिति आगे २ के देवलोकों में जघन्य होती जाती है। तीसरे नरक में नारकियों की उत्कृष्टस्थिति सात सागरोपम की कही हुई है सो यही स्थिति चौथे नरक में जघन्य हो गई है। सौधर्म ईशान में सात पल्योपम की स्थिति मध्यमस्थिति की अपेक्षा कथित हुई है क्यों कि यहां पर उत्कृष्ट स्थिति दो सागरोपम की और ईशान की एक सागरोपम से कुछ अधिक कही हुई है और जघन्यस्थिति एक पल्योपम की और एक पल्योपम से कुछ अधिक की कही हुई है। ब्रह्मलोक नामक पांचवें कल्प में कितनेक देवों की जो सात सागरोपम से कुछ अधिक स्थिति प्रकट की गई है यह जघन्य-

પાચમામા સાત સાગરોપમની, છઠ્ઠામા દસ સાગરોપમની, સાતમામા ચૌદ સાગરોપમની, આઠમામા સત્તર સાગરોપમની, નવમાં અને દસમામાં અઢાર, અઢાર સાગરોપમની, અગિયાર તથા બારમામા વીસ સાગરોપમની, પ્રથમ ગ્રવેયકમા બાવીસ સાગરોપમની છે એ રીતે નીચેના પ્રત્યેક ગ્રૈવેયકની ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિને ઉપરના પ્રત્યેક ગ્રૈવેયકની જઘન્ય સ્થિતિ સમજવી. આ ક્રમ પ્રમાણે નવમા ગ્રવેયકની જઘન્ય સ્થિતિ ત્રીસ સાગરોપમની થાય છે ચાર અનુત્તર વિમાનની જઘન્ય સ્થિતિ એકત્રીસ સાગરોપમની છે સર્વાર્થ સિદ્ધિમા ઉત્કૃષ્ટ અને જઘન્ય સ્થિતિમા તફાવત નથી આ કથનથી એ વાત સ્પષ્ટ થાય છે કે આગળના દેવલોકની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ પછીના દેવલોકની જઘન્ય સ્થિતિ થતી જાય છે. ત્રીજી નરકમા નારકીઓની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ સાત સાગરોપમની કહેલ છે, તો તે સ્થિતિ ચોથી નરકમા જઘન્ય થાય છે. સૌધર્મ ઈશાન દેવલોકમા મધ્યમ સ્થિતિની અપેક્ષાએ સાત પલ્યોપમની સ્થિતિ કહેવામા આવેલ કારણ કે ત્યા ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ બે સાગરોપમની અને એક સાગરોપમથી થોડી વધારે અને જઘન્ય સ્થિતિ એક પલ્યોપમની અને એક પલ્યોપમથી થોડા વધારે કાળની કહેલ છે બ્રહ્મલોક નામના પાચમા દેવલોકમા કેટલાક દેવોની સ્થિતિ જે સાત સાગરોપમથી થોડી વધારે દર્શાવી છે તે જઘન્ય સ્થિતિની અપેક્ષાએ

अथाष्टम समवायाङ्गमाह

मूलम्—अट्ठ मयट्ठाणा पण्णत्ता, त जहा–जाइमए, कुलमए, बलमए, रूवमए, तवमए, सुयमए, लाभमए, इस्सरियमए। अट्ठ पवयणमायाओ पण्णत्ता, त जहा–ईरियासमिई, भासासमिई, एसणासमिई, आयाणभंडमत्तनिक्खेवणासमिई, उच्चारपासवणखेलजल्ल सिंघाणपरिट्ठावणियासमिई, मणगुत्ती, वयगुत्ती, कायगुत्ती। वाणमंतराण देवाण चेइयरुक्खा अट्ठजोयणाइ उड्ढ उच्चत्तणेण पण्णत्ते। कूडसामलीण गरूलावासे अट्ठ जोयणाइ उड्ढ उच्चत्तणे ण पण्णत्ते। जबूद्दीवस्स ण जगई अट्ठजोयणाइ उड्ढ उच्चत्तेण पण्णत्ता। अट्ठसामइए केवलिसमुग्घाए पण्णत्ते, त जहा–पढमे समए दड करेइ, वीए समए कवाड करेइ, तइए समए मथ करेइ, चउत्थे समए मथतराइ पूरेइ, पचमे समए मथतराइ पडिसाहरइ, छट्ठे समए मथं पडिसाहरइ, सत्तमे समए कवाड पडिसाहरइ, अट्ठमे समए दड पडिसाहरइ, तओ पच्छा सरीरत्थे भवइ। पासस्स ण अरहओ पुरिसादाणियस्स अट्ठ गणा अट्ठ गणहरा होत्था, त जहा–सुभे य

स्थिति की अपेक्षा जानना चाहिये, क्यों कि यहा पर उत्कृष्टस्थिति दस सागरोपमकी और जघन्यस्थिति कुछ अधिक सात सागरोपम की होती है। जो देव सम समप्रम आदि ८ विमानों में उत्पन्न होते हैं वे साढे तीन ३॥ मास के बाद श्वासोच्छ्वास लेते हैं और सात हजार वर्ष के बाद आहार। इनमें कितनेक जीव भवसिद्धिक होते हैं जो सातभव ग्रहण करने के बाद सिद्ध हो जाते हैं ॥सू० २३॥

समजवानी छे, कारण के त्यां उत्कृष्ट स्थिति दस सागरोपमनी अने जघन्य स्थिति सात सागरोपमथी थोडी वधारे होय छे जे देवो सम समप्रभ आदि आठ विमानोमां उत्पन्न थाय छे तेओ ३॥ (साडा त्रण) महिने श्वासोच्छ्वास ले छे अने सात हजार वर्षे आहार ग्रहण करे छे तेमांना केटलाक देवो भवसिद्धिक होय छे जेओ सात भव कर्या पछी सिद्ध अवस्थाने प्राप्त करे छे ॥सू. २३॥

ुभघोसे य वसिट्ठे बंभयारि य। सोमे सिरिघरे चेव वीरभद्दे जसे इय ॥१॥ अट्ठ नक्खत्ता चंदेणं सद्धिं पमद्दं जोगं जोएंति, तं जहा--कत्तिआ१ रोहिणी२ पुणव्वसू३ महा४ चित्ता५ विसाहा६ अणुराहा७ जेट्ठा८ ॥सू० २४॥

टीका—'अट्ठ मयट्ठाणा' इत्यादि। अष्ट 'मयट्ठाणा' मदस्थानानि=मदस्य अभिमानस्य स्थानानि मदस्थानानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—जातिमदः, कुलमदः, रूपमदः, तपोमदः, श्रुतमदः, लाभमदः, ऐश्वर्यमदः। अष्टसंख्यकाः 'पवयणमायाओ' प्रवचनमातरः=प्रवचनस्य द्वादशाङ्गस्य तदाधारस्य संघस्य वा जननहेतुत्वात् मातर इव जनन्य इव प्रवचनमातरः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—ईर्यासमिति, भाषासमिति, एषणासमिति, आदानभाण्डमात्रनिक्षेपणासमिति, उच्चारप्रस्रवणखेलजल्लशिङ्घाणपरिष्ठापनासमितिः, मनोगुप्तिः, वचोगुप्तिः, कायगुप्तिश्चेति। प्रवचनरूपं द्वादशाङ्गं हि साक्षात्परंपरया वा एता आश्रित्यैव प्रवर्तते, अतएतासां तन्मातृत्वोपमा। यथा शिशुः मातरममुञ्चन् न जातुकदाचिदात्मलाभं लभते, एवं संघोऽपि ऋते एताभ्यो न कदाचित् सघत्वं लभते, अतः संघमातृत्वमप्यासाम्। 'वाणमंतराणं' वानमन्तराणां व्यन्तराणामित्यर्थः, देवानां 'चेइयरुक्खा' चैत्यवृक्षाः अष्ट योजनानि ऊर्ध्वमुच्चत्वेन प्रज्ञप्ताः। देवानां तत्त-

---

अब सूत्रकार आठवें समवाय को कहते हैं--'अट्ठ मयट्ठाणा' इत्यादि।

टीकार्थ–आठ मदस्थान होते हैं, वे इस प्रकार हैं—जातिमद, कुलमद, बलमद, रूपमद, तपमद, श्रुतमद, लाभमद, और ऐश्वर्यमद। आठ प्रवचन माताएँ कही गई हैं वे इस प्रकार हैं–ईर्यासमिति१, भाषासमिति२, एषणासमिति३, आदानभांडमात्रनिक्षेपणासमिति४, उच्चारप्रस्रवण-खेलजल्ल शिङ्घणपरिष्ठापनासमिति५, मनोगुप्ति६, वचनगुप्ति७ और कायगुप्ति८। व्यन्तर देवों के चैत्यवृक्ष आठ योजन के ऊँचे कहे गये है। देवों के उन उन नगरों

હવે સૂત્રકાર આઠમું સમવાયાંગ કહે છે—'अट्ठमयट्ठाणा' इत्यादि

ટીકાર્થ–આઠ મદસ્થાન હોય છે, તે આ પ્રમાણે છે—(૧) જાતિમદ, (૨) કુળમદ (૩) બળમદ, (૪) રૂપમદ, (૫) તપમદ, (૬) શ્રુતમદ (૭) લાભમદ, અને (૮) ઐશ્વર્યમદ આઠ પ્રવચનમાતાઓ આ પ્રમાણે છે—

(૧) ઇર્યાસમિતિ, (૨) ભાષાસમિતિ, (૩) એષણા સમિતિ, (૪) આદાન ભાંડમાત્રનિક્ષેપણા સમિતિ, (૫) ઉચ્ચાર પ્રસ્રવણ ખેલ જલ્લ શિંઘાણ પરિઠાપના સમિતિ (૬) મનોગુપ્તિ [૭] વચનગુપ્તિ અને (૮) કાયગુપ્તિ વ્યન્તર દેવોનાં ચૈત્યવૃક્ષ આઠ યોજન ઉંચા કહેલ છે દેવોનાં તે તે નગરોમાં સુધર્મા આદિ સભાઓ

न्नगरषु सुधर्मादिसभानामग्रतः मणिपीठिकापरिस्थिता सर्वरत्नमया छत्र चामरध्वजादलङ्कृता वृक्षाश्चैत्यवृक्षत्वेन व्यवह्रियन्ते। यद्देवजातीयस्य यच्चैत्य वृक्ष स गाथाद्वयेन प्रोच्यते–'कलम्बो पिसायाण वडो जक्खाणचेइय। तुलसी भूयाण भवे रक्खसाण य कंडओ ॥ १ ॥ असोगो किण्णराण य किंपुरिसाणं य चंपओ। नागरुक्खो भुयगाण गंधव्वाण य तुंबरू ॥२॥ इति, कदम्बः (कदम्ब वृक्षः) पिशाचानां वटो यक्षाणां चैत्यम्। तुलसी भूतानां भवत् राक्षसानां तु काण्डकः ॥१॥ अशोकः किन्नराणां च किं पुरुषाणां च चम्पकः। नागवृक्षा भुजगानां गन्धर्वाणान्तु तुम्बरु ॥२॥ वटः=वटवृक्ष इत्यर्थः। भुजगानां= महोरगदेवानामित्यर्थः। 'जंबूणं सुदंसणा' जम्बूः खलु सुदर्शना उत्तरकुरुक्षत्र स्थितः पृथिवीकायपरिणत सुदर्शनाभिधेया जम्बूवृक्ष इत्यर्थः। अष्टयोजनानि ऊर्ध्वोच्चत्वेन प्रज्ञप्ता। 'कूड सामलीणं गरुलावासे' कूटशाल्मली खलु गरुडा-वासा =देवकुरुक्षेत्रस्थितगरुडजातीयस्य वेणुदेवस्यावास इत्यर्थः, अष्टा

में सुधर्मा आदि सभाएँ आगे मणिपीठिका के ऊपर स्थित तथा छत्र, चामर एवं ध्वजा आदि से सुशोभित जो सर्वरत्नमय वृक्ष होते हैं उन्हीं का नाम चैत्यवृक्ष है। जिस देव जाति का जो चैत्यवृक्ष होता है वह इन दो गाथाओं द्वारा कहा जाता है—'कलंबो' 'असोगो' इत्यादि। 'पिशाचों का चैत्यवृक्ष होता है उसका नाम कदम्बवृक्ष है १। यक्षों का चैत्यवृक्ष वटवृक्ष है २। भूतों का चैत्यवृक्ष तुलसी है ३। राक्षसों का चैत्य वृक्ष काण्डक है ४ ॥१॥ किन्नरों का चैत्यवृक्ष अशोकवृक्ष है ५। किं पुरुषों का चैत्यवृक्ष चम्पकवृक्ष है ६। भुजंगों का चैत्यवृक्ष नागवृक्ष है ७। और गंधर्वों का चैत्यवृक्ष तुम्बरु है ८ ॥२॥ जंबूद्वीप की जगती आठ योजन की ऊँची कही गई है। देवकुरुक्षेत्रस्थित गरुड जातीय वेणुदेव के

આગળ મણિપીઠિકાની ઉપર રહેલ તથા છત્ર ચામર અને ધ્વજ આદિથી સુશોભિત જે સર્વરત્નમય વૃક્ષો હોય છે તેમને ચૈત્યવૃક્ષ કહે છે કઈ દેવજાતિનું કયુ ચૈત્ય વૃક્ષ હોય છે તે આ બે ગાથાઓ દ્વારા બતાવ્યું છે—'कलंबो' असोगो' इत्यादि'

' પિશાચોના ચૈત્યવૃક્ષનું નામ કદમ્બવૃક્ષ છે (૧) યક્ષોના ચૈત્યવૃક્ષનું નામ વટવૃક્ષ છે (૨) ભૂતોનું ચૈત્યવૃક્ષ તુલસી છે (૩) રાક્ષસોનુ ચૈત્યવૃક્ષ વ ગ્ર કાંડક છે(૪) ॥૧॥ કિન્નરોનુ ચૈત્યવૃક્ષ અશોકવૃક્ષ છે (૫) કિંપુરુષોનુ ચૈત્યવૃક્ષ ચંપકવૃક્ષ છે ૬, ભુજંગોનુ ચૈત્યવૃક્ષ નાગવૃક્ષ છે (૭) અને ગંધર્વોનુ ચૈત્યવૃક્ષ તુંબરુ છે (૮)

જંબૂદ્વીપની જગતી–(કોટ) આઠ યોજન ઉંચી બતાવી છે દેવકુરુક્ષેત્રમાં આવેલ ગરુડ જાતિના વેણુદેવના આવાસ આઠ યોજન ઉંચા કહેલ છે આઠ સંખ્યાનો

तनानि उद्र्ध्वमुच्चत्वेन प्रज्ञप्तः। जम्बूद्वीपस्य खलु 'जगई' जगती प्राकार-कल्पापालीत्यर्थः, अष्ट योजनानि ऊद्र्ध्वमुच्चत्वेन प्रज्ञप्ता। अष्ट सामयिकः केवलि समुद्घातः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—प्रथमे समये दण्डं करोति, द्वितीयसमये कपाट करोति, तृतीये समये मन्थं करोति, चतुर्थे समये मन्थान्तराणि पूरयति, पञ्चमे समये मन्थान्तराणि प्रतिसहरति, षष्ठे समये मन्थं प्रतिसहरति सप्तमे समये कपाटं प्रति-सहरति, अष्टमे समये दण्ड प्रतिसंहरति। ततः पश्चात् शरीरस्थो भवति। पार्श्वस्य खलु अर्हतः 'पुरिसादाणिअस्स' पुरुषादानीयस्य=पुरुषाणां मध्ये आदानीयः =आदेयः श्रद्धेय इत्यर्थः, तस्य अष्टौ गणा गणधराश्चाभूवन्, तद्यथा--शुभश्च शुभघोषश्च वशिष्ठो ब्रह्मचारिकः। सोमः श्रीधरश्चैव वीरभद्रो यशस्वीति। ननु क्व-चित्पार्श्वस्यार्हतो दशगणधराः निर्दिष्टाः अत्राष्टौ, इति विरोधः इतिचेत्, शृणु,

---

आवास आठ योजन के ऊँचे कहे गये हैं। आठ समय का केवलि समुद्घात कहा है, वह इस प्रकार से है–प्रथम समय में वे दण्ड करते हैं१, द्वितीय समय में कपाट करते हैं२, तीसरे समय में मंथान करते हैं३, चौथे समय में मन्थान के छिद्रों को पूरते हैं४, पंचमसमय में मंथान के छिद्रों को संकुचित करते हैं५, छठवें समय में मथान को प्रतिसंहरित करते हैं६, सातवे समय में कपाट को, और आठवे समय में दंड को संकोचते हैं ८। इसके बाद वे फिर स्वशरीरस्थ हो जाते हैं। समस्त पुरुषों में श्रद्धेय ऐसे अर्हत पार्श्वप्रभु के आठ गण और गणधर हुए हैं। वे इस प्रकार है–शुभ१, शुभघोष२, वशिष्ठ३, ब्रह्मचारिक४, सोम५, श्रीधर६, वीरभद्र७, और यशस्वी८।

शंका—पार्श्वनाथ प्रभु के कहीं २ पर दस गणधर कहे गये हैं यहां आठ ही गणधर क्यों कहे गये हैं?

કેવલિ સમુદ્ઘાત છે, તે આ પ્રમાણે છે—(૧) પહેલા સમયમા તેઓ દંડ કરે છે (૨)બીજા સમયમા કપાટ કરે છે (૩)ત્રીજા સમયમા મન્થાન કરે છે (૪) ચોથા સમયમા મન્થાનના છિદ્રો પૂરે છે. (૫) પાચમે સમયે મન્થાનના છિદ્રોને સંકુચિત કરે છે, (૬) છઠ્ઠા સમયે મથાનને પ્રતિસહરિત (એકત્ર) કરે છે (૭) સાતમા સમયમા કપાટને (૮) અને આઠમા સમયમાં દંડને સકોચે છે ત્યાર બાદ તેઓ ફરીથી સ્વશરીરસ્થ થઇ જાય છે સમસ્ત પુરૂષોમા શ્રેષ્ઠ એવા અર્હંત પાર્શ્વપ્રભુના આઠ ગણ અને આઠ ગણધર થયા છે. તેમના નામ આ પ્રમાણે છે—(૧) શુભ, (૨) શુભઘોષ, (૩) (૩) વશિષ્ઠ, (૪) બ્રહ્મચારિક, (૫) સોમ, (૬) શ્રીધર, (૭) વીરભદ્ર અને (૮) યશસ્વી

શંકા—કોઇ કોઇ સ્થાને પાર્શ્વનાથ પ્રભુના દસ ગણધર બતાવ્યા છે, તો અહી આઠ ગણધર શા કરણે કહેલ છે?

पार्श्वस्यार्हतो द्वौ गणधरौ अल्पायुष्कौ, तयारगणनयाऽष्टत्वमुपपन्नम् । अष्ट नक्षत्राणि चन्द्रेण सह प्रमर्दरूपं योगं योजयन्ति=कुर्वन्ति । एतैरष्टभिर्नक्षत्रैः सह यदा चन्द्रो भवति, तदा प्रमर्दयोगो जायते । तद्यथा—कृत्तिका १ रोहिणी २ पुनर्वसु ३ मघा ४ चित्रा ५ विशाखा ६ अनुराधा ७ ज्येष्ठाश्चेति ॥२४॥

समाधान—पार्श्वनाथ प्रभु के दो गणधर अल्पायुष्क थे, इसलिये उनकी यहां गणना नहीं की है। इस हिसाब से गणधर उनके आठ कहे गये हैं।

आठ नक्षत्र चंद्र के साथ प्रमर्दरूप योग को करते हैं, अर्थात् जब चन्द्रमा इन आठ नक्षत्रों के साथ होता है तब प्रमर्द नामका योग होता है। वे आठ नक्षत्र इस प्रकार हैं—कृत्तिका१, रोहिणी२, पुनर्वसु३, मघा४, चित्रा५, विशाखा६, अनुराधा७ और ज्येष्ठा ८।

भावार्थ—इस सूत्र द्वारा सूत्रकार ने आठ समवाय प्रकट किये हैं। मदस्थान, प्रवचनमाता आदि ये सब अष्ट सङ्ख्योपेत समवायांग हैं। इन इर्यासमिति आदि पांच समितियों का, तथा मनोगुप्ति आदि तीन गुप्तियों जो प्रवचन की माता कही गई है उसका तात्पर्य इस प्रकार है—जिस प्रकार बिना माता के शिशु का पालन-पोषण नहीं हो सकता है। उसी प्रकार पांच समिति और तीन गुप्ति के बिना द्वादशांग की प्रवृत्ति नहीं हो सकती है। इनके साक्षात् अथवा परपरारूप सहारे से ही द्वादशांगरूप प्रव

સમાધાન—પાર્શ્વનાથ પ્રભુના બે ગણધરો ટુંકા આયુષ્ય વાળા હતા તેથી તેમની ગણતરી અહીં કરી નથી આ ગણતરી પ્રમાણે તેમના આઠ ગણધર કહ્યા છે

આઠ નક્ષત્રો ચન્દ્રની સાથે પ્રમર્દયોગ કરે છે, એટલે કે જ્યારે ચન્દ્રમાં એ આઠ નક્ષત્રોની સાથે હોય છે ત્યારે પ્રમર્દ નામનો યોગ થાય છે તે આઠ નક્ષત્રોના નામ નીચે પ્રમાણે છે—

(૧) કૃત્તિકા (૨) રોહિણી (૩) પુનર્વસુ, (૪) મઘા, (૫) ચિત્રા, વિશાખા, (૭)અનુરાધા અને (૮) જ્યેષ્ઠા.

ભાવાર્થ—આ સૂત્રદ્વારા સૂત્રકારે આઠ પ્રકારના સમવાય પ્રગટ કર્યા છે મદસ્થાન, પ્રવચન માતા આદિ સઘળા આઠ આઠ સંખ્યાવાળાં સમવાયાંગ છે જેમ ઇર્યાસમિતિ આદિ પાંચ સમિતિઓને તથા મનોગુપ્તિ આદિ ત્રણ ગુપ્તિઓને પ્રવચનની માતા કહેવામાં આવેલ છે તેનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે—જેમ માતા વિના બાળકનું પાલન-પોષણ થતું નથી તેમ પ્રવચન રૂપ બાર અંગનું તેમના વિના પ્રવર્તન થઈ શકતું નથી. તેમના સાક્ષાત્ અથવા પરંપરારૂપ સહારાથી

मूलम्--इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाण अट्ठ पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। चउत्थीए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं अट्ठ सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगइयाणं अट्ठ पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगइयाणं देवाणं अट्ठ पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। बंभलोए कप्पे अत्थेगइयाणं देवाणं अट्ठसागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। जे देवा अच्चिं१ अच्चिमालिं२ वइरोयणं३ पभंकरं४ चंदाभं५ सूराभं६ सुपइट्ठाभं७ अग्गिच्चाभं८ रिट्ठाभं९ अरुणाभं१० अरुणुत्तरवडिंसगं११ विमाणं देवत्ताए उववण्णा, तेसि णं देवाणं उक्कोसेणं अट्ठसागरो-

---

चनप्रवर्तित होता । इन्हें संघ की माता भी कही गई है और वह इसी अभिप्राय से कि विना इनके संघ कभी भी संघत्त्व को प्राप्त नहीं कर सकता है। ऊँचाई की अपेक्षा से चैत्यवृक्षों की उर्ध्वता आठ योजन की कही गई है। ये चैत्यवृक्ष सर्वरत्नों के बने हुए होते हैं। छत्र, चामर और ध्वजा आदि से अलकृत होते है। देवों के उनर नगरों में ये सुधर्मा आदि सभाओं के आगे मणिपीठिका के उपर स्थित रहते हैं। जंबूद्वीप के भीतर जो जंबू नामका वृक्ष है उसका दूसरा नाम सुदर्शना है। यह वृक्ष उत्तरकुरु क्षेत्र में स्थित है। पृथिवीकाय है। वनस्पतिकाय नहीं। इसकी ऊँचाई आठ योजन की है। जगती, प्राकार-कोट के जैसी होती है। बाकी के पदों का भावार्थ स्पष्ट है ॥सू० २४॥

દ્વાદશાગરૂપ પ્રવચન પ્રવર્તિત થાય છે તેમને સંઘની માતા પણ કહેલ છે, કારણ કે તેમના વિના સંઘ કદી પણ સંઘત્વ પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી ચૈત્યવૃક્ષોની ઉંચાઈ આઠ યોજનની બતાવી છે તે ચૈત્યવૃક્ષો સર્વરત્નોના બનેલ હોય છે, અને છત્ર ચામર અને ધ્વજા વગેરેથી શણગારેલ હોય છે દેવોના નગરે મા તે ચૈત્યવૃક્ષો સુધર્મા આદિ સભાઓ આગળ મણિપીઠિકાનાં ઉપર ઉભા રહે છે જંબૂદ્વીપની અંદર જે જંબૂ નામનુ વૃક્ષ છે તેનું બીજુ નામ સુદર્શના છે, તે વૃક્ષ ઉત્તરકુરુ ક્ષેત્રમા આવેલ છે તે પૃથ્વીકાય છે વનસ્પતિકાય નથી તે આઠ યોજન ઉંચુ છે. જગતી પ્રકાર —કોટના જેવી હોય છે બાકીના પદોનો ભાવાર્થ સ્પષ્ટ છે ॥સૂ ૨૪॥

वमाइ ठिई पणणत्ता । ते ण देवा अट्ठण्हं अद्धमासाण आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा । तेसि ॱ देवाण अट्ठहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जइ, सतेगइया भवसिद्धिया जीवा जे अट्ठहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्सति बुज्झिस्सति जाव अं करिस्सति ॥ २५ ॥

टीका— इमीसे ण' इत्यादि । अस्यां खलु रत्नप्रभायां पृथिव्यामस्त्य कर्षा नैरयिकाणामष्टपल्योपमानि स्थिति प्रज्ञप्ता। चतुर्थ्यां पृथिव्यामस्त्य कर्षा नैरयिकाणामष्टसागरोपमानि स्थिति प्रज्ञप्ता । असुरकुमाराणां देवानाम स्त्यकर्षामष्टपल्योपमानि स्थिति प्रज्ञप्ता । सौधर्मेशानेषु कल्पेषु अस्त्यकर्षां देवानामष्टपल्योपमानि स्थिति प्रज्ञप्ता । ब्रह्मलोक कल्पे अस्त्यकेषां देवा नामष्टसागरोपमानि स्थिति प्रज्ञप्ता । य देवा अर्चिषम्, अर्चिर्मालिनम्, वैरोचन, प्रभङ्करं, चन्द्राभं, सूराभं, सुप्रतिष्ठाभम्, आग्नेयाभम्, रूप्टाभम्, अरुणा भम्, अरुणोत्तरावतंसक विमानम्=अर्चिरादिषु विमानेष्वित्यर्थः, देवत्वे

टीकार्थ–'इमीसे ण' इत्यादि ।

इस रत्नप्रभा पृथिवी में कितनेक नारकियों की स्थिति आठपल्यो पम की कही गई है। चौथी पृथिवी में कितनेक नारकियों की स्थिति आठ सागरोपम की कही गई है। असुरकुमार देवों में कितनेक असुरकुमार देवों की आठ पल्योपम की स्थिति कही गई है। सौधर्म और ईशानकल्प में कितनेक देवों की आठ पल्योपम की स्थिति कही गई है। ब्रह्मलोककल्प में कितनेक देवों की स्थिति आठ सागरोपम की कही गई है। जो देव अर्चिष१, अर्चि र्मालि२, वैरोचन३, प्रभंकर४, चन्द्राभ५ सूर्याभ६, सुप्रतिष्ठाभ७, आग्ने याभ८, रूप्टाभ९, अरुणाभ१०, और अरुणोत्तरावतंसक११ इन ग्यारह११

टीकार्थ—'इमीसे णं इत्यादि !

આ રત્નપ્રભા પૃથ્વીમાં કેટલાક નારકીઓની સ્થિતિ આઠ પલ્યોપમની કહેલ છે ચોથી પૃથ્વીમાં કેટલાક નારકીઓની સ્થિતિ આઠ સાગરોપમની કહેલ છે અસુર- કુમાર દેવોમાં કેટલાક અસુરકુમાર દેવોની સ્થિતિ આઠ પલ્યોપમની કહેલ છે સૌધર્મ અને ઇશાન કલ્પમાં કેટલાક દેવોની આઠ પલ્યોપમની સ્થિતિ કહેલ છે બ્રહ્મલોક કલ્પમાં કેટલાક દેવોની સ્થિતિ આઠ સાગરોપમની કહેલ છે જે દેવો (૧) અર્ચિષ, (૨) અર્ચિમાલિ (૩) વૈરોચન (૪) પ્રભંકર (૫) ચન્દ્રાભ (૬)સૂર્યાભ (૭) સુપ્રતિષ્ઠાભ, (૮) આગ્નેયાભ, (૯)રુષ્ટાભ, (૧૦) અરુણાભ (૧૧) અરુણોત્તરાવતંસક, એ અર્ચિ

नोत्पन्नाः, तेषां खलु देवानामुत्कर्षेण अष्टसागरोपमाणि स्थितिः प्रज्ञप्ता। ते खलु देवाः अष्टानामर्धमासानामन्ते आनन्ति वा प्राणन्ति वा उच्छ्वसन्ति वा निःश्वसन्ति वा। तेषां खलु देवानामष्टभिर्वर्षसहस्रैराहारसंज्ञा समुत्पद्यते। सन्त्येके भवसिद्धिका जीवाः येऽष्टभिर्भवग्रहणैः सेत्स्यन्ति भोत्स्यन्ते, यावता मोक्ष्यन्ति परिनिर्वास्यन्ति, सर्वे दुःखानामन्तं करिष्यन्ति ॥२५॥सू॥

विमानों में देव की पर्याय से उत्पन्न होते हैं, वे उत्कृष्टरूप से आठ सागरोपम काल की स्थिति वाले कहे गये हैं। वे देव चार मास के बाद बाह्य और आभ्यन्तरिक श्वासोच्छ्वास ग्रहण करते हैं। उन देवों को आठ हजार वर्ष के बाद आहारसंज्ञा उत्पन्न होती है। इनमें कितनेक देव ऐसे होते हैं जो आठ भवों को ग्रहण करने के बाद सिद्धगति को प्राप्त करेंगे, बुद्ध हो जावेंगे, मुक्त हो जावेंगे, परिनिर्वृत हो जावेंगे और समस्त दुःखों का अन्त कर देंगे।

भावार्थ—इस सूत्र द्वारा सूत्रकार ने जो रत्नप्रभा पृथिवी के नारकियों की स्थिति आठ पल्योपम की कही है, वह मध्यमस्थिति की अपेक्षा से जानना चाहिये, क्यों कि यहां पर उत्कृष्टस्थिति एक सागरोपम की और जघन्य दस हजार वर्ष की स्थिति है। इसी तरह चौथी पृथिवी में जो यह आठ सागरोपम की स्थिति प्रकट की गई है वह भी मध्यमस्थिति को लक्ष्य में रख कर प्रकट की है, क्यों कि यहां पर उत्कृष्टस्थिति दस सागरोपम की है और जघन्यस्थिति सात सागरोपम की है। इसी प्रकार असुरकुमार देवों की भी स्थिति जो आठ पल्योपम की कही गई

ચાર વિમાનોમા દેવની પર્યાયે ઉત્પન્ન થાય છે, તેમને ઉત્કૃષ્ટ રીતે આઠ સાગરોપમ કાળની સ્થિતિવાળા કહેલ છે તે દેવો ચાર મહિને બાહ્ય અને આભ્યાન્તરિક શ્વાસોચ્છવાસ ગ્રહણ કરે છે તેમને આઠ હજાર વર્ષે આહારની અભિલાષા થાય છે તેઓમા કેટલાક દેવો એવા હોય છે કે જે આઠ ભવ કર્યા બાદ સિદ્ધગતિ પ્રાપ્ત કરશે, બુદ્ધ થશે મુક્ત થશે, પરિનિર્વૃત થશે અને સમસ્ત દુખોનો અંત કરી નાખશે

ભાવાર્થ—આ સૂત્ર દ્વારા સૂત્રકાર રત્નપ્રભા પૃથ્વીના નારકીઓની સ્થિતિ આઠ પલ્યોપમની કહી છે તે મધ્યમ સ્થિતિની અપેક્ષાએ સમજવી, કારણ કે ત્યા ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ એક સાગરોપમની અને જઘન્યસ્થિતિ દસ હજાર વર્ષની છે. એ જ પ્રમાણે ચોથી પૃથ્વીમા આઠ સાગરોપમની જે સ્થિતિ બતાવી છે તે પણ મધ્યમ-સ્થિતિને ધ્યાનમા લઈને પ્રગટ કરેલ છે, કારણ કે ત્યા ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ દસ સાગરોપમની છે, અને જઘન્ય સ્થિતિ સાત સાગરોપમની છે. એ જ પ્રમાણે અસુરકુમાર દેવોની પણ સ્થિતિ જે આઠ પલ્યોપમની કહેવામા આવેલ છે તે પણ મધ્યમ

मूलम्—नव ब्भचेरगुत्तीओ पण्णत्ताओ, त जहा—नो इत्थीप सुपडगससत्ताणि सिज्जासणाणि सेवित्ता भवइ१ नो इत्थीण कह कहित्ता भवइ२ नो इत्थी ठाणाइ सेवित्ता भवइ३ नो इत्थीणं इदियाइ मणोहराइ मणोरमाइ आलोइत्ता निज्झाइत्ता भवइ४ नो सद्दाणुवाई, नो रूवाणुवाई५, नो गधाणुवाई, नो रसाणुवाई, नो फासाणुवाई, नो सिलोगाणुवाई५, नो इत्थीणं पुव्वरयाइ पुव्वकीलियाइ समरइत्ता भवइ६, नो पणीयरसभोई७, नो पाणभोयणस्स अइमायाए आहारइत्ता८, नो सायासोक्खपडिबद्धे यावि भवइ९॥ नव बभचेर अगुत्तीओ पण्णत्ता, त जहा—इत्थीपसुपडगससत्ताण सिज्जासणाण सेवणया जाव सायासुक्खपडिबद्धे यावि भवइ। नव बभचेरापण्णत्ता, त जहा—सत्थपरिण्णा लोगविजओ सीओसणिज्ज सम्मत्त। आवति धुयविमोहा उवयाण सुह महपरिण्णा ॥१॥ पासे णं अरहा पुरिसा

है वह भी मध्यम स्थिति जाननी चाहिये, क्यों कि असुरकुमार देवों में सागरोपम की और सागरोपम से कुछ अधिक की उत्कृष्ट स्थिति कही गई है। तथा जघन्यस्थिति दस हजार वर्ष की कही गई है। सौधर्म और ईशान कल्प में उत्कृष्ट स्थिति क्रमशः दो सागरोपम की और कुछ अधिक दो सागरोपम की है, और जघन्यस्थिति अनुक्रम से एक पल्योपम से कुछ अधिक की है, अतः यहां जो इन कल्पों में आठ पल्योपम की स्थिति कही गई है वह मध्यमस्थिति की अपेक्षा जानना चाहिये। बाकी के पदों का भावार्थ स्पष्ट है ॥सू० २५॥

સ્થિતિ સમજવી કારણ કે અસુરકુમાર દેવોમાં સાગરોપમની અને સાગરોપમથી થોડી વધારે ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ કહેલ છે તથા જઘન્ય સ્થિતિ દસ હજાર વર્ષની કહેલ છે સૌધર્મ અને ઇશાન કલ્પમાં ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ અનુક્રમે બે સાગરોપમની અને બે સાગરોપમથી થોડી વધારે છે, અને જઘન્ય સ્થિતિ અનુક્રમે એક પલ્યોપમની અને પલ્યોપમથી થોડા વધારે કાળની છે, તેથી અહીં તે કલ્પોમાં જે આઠ પલ્યોપમની સ્થિતિ કહેવામાં આવી છે તે મધ્યમ સ્થિતિની અપેક્ષાએ સમજવી. બાકીના પદોનો ભાવાર્થ સ્પષ્ટ છે ॥સૂ ૨૫॥

दाणीए नव रयणीओ उड्ढं उच्चत्तेणं होत्था, अभिजीनक्खत्ते साइरेगे नवमुहुत्ते चंदेणं सद्धिं जोगं जोएइ, अभिजियाइया नव नक्खत्ता चंदस्स उत्तरेणं जोगं जोयंति, तं जहा--अभिजीसवणो जाव भरणी ॥ सू० २६ ॥

टीका--'नव बंभचेर गुत्तीओ' इत्यादि नव नवसंख्यकाबंभचेर गुत्तीओ' ब्रह्मचर्यगुप्तयः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-'नो इत्थी पसुपंडगसंसत्ताणि सिज्जासणाणि सेवित्ता भवइ'नो स्त्रीपशुपण्डकसमक्तानि शय्यासनानि सेविता भवति, स्त्रीभिः पशुभिर्नपुंसकैश्च सयुक्तानां शय्यासनानामनिषेवणं प्रथमा ब्रह्मचर्यगुप्तिः। 'नो इत्थीण कह कहित्ता भवइ'नो स्त्रीणां कथा कथयिता भवति=स्त्री सम्बन्धिकथा कथनाभावरूपा द्वितीया। 'नो इत्थीठाणाइ सेवित्ता भवइ'नो स्त्रीस्थानानि सेविता भवति=तिष्ठन्ति येषु तानि स्थानानि निषद्यादयः, स्त्रीणां स्थानानि= स्त्रीस्थानानि. यत्र निषद्यादिषु स्त्रिय उपविष्टाः, ततः उत्थितास्वपि तासु मुहूर्तं नोपविशेदिति तृतीया। नो इत्थीणं इंदियाइ मणोहराइ मणोरमाइं आलोइत्ता निज्झाइत्ता भवइ' स्त्रीणां मनोहराणि=चित्ताकर्षकत्वात्, मनोरमाणि=सुन्दराकृतित्वात् इन्द्रियाणि=मुखनयननासिकादीनि आलोकयिता=सामान्यतयाऽवलो-

टीकार्थ--'नव बंभचेर गुत्तीओ' इत्यादि।

ब्रह्मचर्य की नौ गुप्तियां कही गई है। वे इस प्रकार है-स्त्री, पशु और पंडक-नपुंसक, इन से संयुक्त शय्या आसन का सेवन नहीं करना,यह प्रथम ब्रह्मचर्य की गुप्ति है १। स्त्रियों की कथा नहीं करना यह द्वितीय गुप्ति है २। जिस निषद्या आदिकों के ऊपर स्त्रियां बैठी हों और फिर वे उन पर से उठ गई हों तो उन निषद्यादिकों पर एक मुहूर्त्त तक नहीं बैठना, यह ब्रह्मचर्य की तीसरी गुप्ति है ३। चित्ताकर्षक होने से मनोहर, तथा सुन्दराकृतिसंपन्न होने से मनोरम ऐसे स्त्रियों के मुख, नयन एवं नासिका आदि इन्द्रियों के रागभाव से प्रेरित होकर सामान्य रूप से

સૂત્રકાર નવમું સમવાયાંગ કહે છે—'नव बंभचेरगुत्तीओ'' इत्यादि।

ટીકાર્થ-બ્રહ્મચર્યની નવ ગુપ્તિઓ છે તે આ પ્રમાણે છે-સ્ત્રી, પશુ, અને પંડક-નપુંસક, તેમની સાથે શય્યાનુ સેવન ન કરવુ તે બ્રહ્મચર્યની પહેલી ગુપ્તિ છે સ્ત્રીઓની કથા ન કરવી તે બીજી ગુપ્તિ છે જે નિષદ્યા (સ્થાન) આદિની ઉપર સ્ત્રીઓ બેઠી હોય અને પછી તેના પરથી ઉઠી ગઇ હોય તે નિષદ્યા આદિ ઉપર એક મુહૂર્ત સુધી ન બેસવુ તે બ્રહ્મચર્યની ત્રીજી ગુપ્તિ છે ચિત્તાકર્ષક હોવાને લીધે મનોહર, તથા સુંદર આકારના હોવાને લીધે મનોરમ એવા સ્ત્રીઓના મુખ, નયન, નાસિકા આદિ અંગોને રાગ ભાવથી પ્રેરાઇને સામાન્ય રીતે તથા વિશેષ

मूलम्—नव बंभचेरगुत्तीओ पण्णत्ताओ, त जहा—नो इत्थीप सुपडगससत्ताणि सिज्जासणाणि सेवित्ता भवइ१ नो इत्थीण कह कहित्ता भवइ२ नो इत्थी ठाणाइ सेवित्ता भवइ३ नो इत्थीण इंदियाइ मणोहराइ मणोरमाइ आलोइत्ता निज्झाइत्ता भवइ४ नो सद्दाणुवाई, नो रूवाणुवाई५, नो गधाणुवाई, नो रसाणुवाई, नो फासाणुवाई, नो सिलोगाणुवाई५, नो इत्थीणं पुव्वरयाइ पुव्वकीलियाइ समरइत्ता भवइ६, नो पणीयरसभोई७, नो पाणभोयणस्स अइमायाए आहारइत्ता८, नो सायासोक्खपडिबद्धे यावि भवइ९॥ नव बभचेर अगुत्तीओ पण्णत्ता, त जहा—इत्थीपसुपडगससत्ताण सिज्जासणाण सेवणया जाव सायासुक्खपडिबद्धे यावि भवइ । नव बभचेरापण्णत्ता, त जहा—सत्थपरिण्णा लोगविजओ सीओसणिज्ज सम्मत्त । आवति धुयविमोहा उवयाण सुह महपरिण्णा ॥१॥ पासे णं अरहा पुरिसा

है यह भी मध्यम स्थिति जाननी चाहिये, क्यों कि असुरकुमार देवों में सागरोपम की और सागरोपम से कुछ अधिक की उत्कृष्ट स्थिति कही गई है। तथा जघन्यस्थिति दस हजार वर्ष की कही गई है। सौधर्म और ईशान कल्प में उत्कृष्ट स्थिति क्रमशः दो सागरोपम की और कुछ अधिक दो सागरोपम की है, और जघन्यस्थिति अनुक्रम से एक पल्योपम से कुछ अधिक की है, अतः यहां जो इन कल्पों में आठ पल्योपम की स्थिति कही गई है वह मध्यमस्थिति की अपेक्षा जानना चाहिये। बाकी के पदों का भावार्थ स्पष्ट है ॥सू० २७॥

સ્થિતિ સમજવી કારણ કે અસુરકુમાર દેવોમા સાગરોપમની અને સાગરોપમથી થોડી વધારે ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ કહેલ છે તથા જઘન્ય સ્થિતિ દસ હજાર વર્ષની કહેલ છે સૌધર્મ અને ઈશાન કલ્પમા ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ અનુક્રમે બે સાગરોપમની અને બે સાગરોપમથી થોડી વધારે છે, અને જઘન્ય સ્થિતિ અનુક્રમે એક પલ્યોપમની અને પલ્યોપમથી થોડા વધારે કાળની છે, તેથી અહીં તે કલ્પોમાં જે આઠ પલ્યોપમની સ્થિતિ કહેવામાં આવી છે તે મધ્યમ સ્થિતિની અપેક્ષાએ સમજવી. બાકીના પદોનો ભાવાર્થ સ્પષ્ટ છે ।સૂ ૨૭।

दाणीए नव रयणीओ उड्ढं उच्चत्तेणं होत्था, अभिजीनक्खत्ते साइरेगे नवमुहुत्ते चंदेणं सद्धिं जोगं जोएइ, अभिजियाइया नव नक्खत्ता चंदस्स उत्तरेणं जोगं जोयंति, तं जहा--अभिजीसवणो जाव भरणी ॥ सू० २९ ॥

टीका--'नव बंभचेर गुत्तीओ' इत्यादि नव नवसंख्यकाबंभचेर गुत्तीओ' ब्रह्मचर्यगुप्तयः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-'नो इत्थी पसुपंडगसंसत्ताणि सिज्जासणाणि सेवित्ता भवइ'नो स्त्रीपशुपण्डकसमक्तानि शय्यासनानि सेविता भवति, स्त्रीभिः पशुभिर्नपुंसकैश्च सयुक्तानां शय्यासनानामनिषेवणं प्रथमा ब्रह्मचर्यगुप्तिः। 'नो इत्थीण कहं कहित्ता भवइ'नो स्त्रीणां कथा कथयिता भवति=स्त्री सम्बन्धि कथा कथनाभावरूपा द्वितीया। 'नो इत्थीठाणाइं सेवित्ता भवइ'नो स्त्रीस्थानानि सेविता भवति=तिष्ठन्ति येषु तानि स्थानानि निषद्यादयः, स्त्रीणां स्थानानि= स्त्रीस्थानानि. यत्र निषद्यादिषु स्त्रिय उपविष्टाः, ततः उत्थितास्वपि तासु मुहूर्तं नोपविशेदिति तृतीया। नो इत्थीणं इंदियाइं मणोहराइं मणोरमाइं आलोइत्ता निज्झाइत्ता भवइ' स्त्रीणां मनोहराणि=चित्ताकर्षकत्वात्, मनोरमाणि=सुन्दराकृतित्वात् इन्द्रियाणि=मुखनयननासिकादीनि आलोकयिता=सामान्यतयाऽवलो-

टीकार्थ--'नव बंभचेर गुत्तीओ' इत्यादि।

ब्रह्मचर्य की नौ गुप्तियां कही गई हैं। वे इस प्रकार है-स्त्री, पशु और पंडक-नपुंसक, इन से संयुक्त शय्या आसन का सेवन नहीं करना,यह प्रथम ब्रह्मचर्य की गुप्ति है १। स्त्रियों की कथा नहीं करना यह द्वितीय गुप्ति है २। जिस निषद्या आदिकों के उपर स्त्रियां बैठी हों और फिर वे उन पर से उठ गई हों तो उन निषद्यादिकों पर एक मुहूर्त्त तक नहीं बैठना, यह ब्रह्मचर्य की तीसरी गुप्ति है ३। चित्ताकर्षक होने से मनोहर, तथा सुन्दराकृतिसंपन्न होने से मनोरम ऐसे स्त्रियों के मुख, नयन एवं नासिका आदि इन्द्रियों के रागभाव से प्रेरित होकर सामान्य रूप से

સૂત્રકાર નવમું સમવાયાંગ કહે છે—'नव बंभचेरगुत्तीओ'' इत्यादि !

ટીકાર્થ–બ્રહ્મચર્યની નવ ગુપ્તિઓ છે તે આ પ્રમાણે છે-સ્ત્રી, પશુ, અને પંડક-નપુંસક, તેમની સાથે શય્યાનું સેવન ન કરવું તે બ્રહ્મચર્યની પહેલી ગુપ્તિ છે સ્ત્રીઓની કથા ન કરવી તે બીજી ગુપ્તિ છે જે નિષદ્યા (સ્થાન) આદિની ઉપર સ્ત્રીઓ બેઠી હોય અને પછી તેના પરથી ઉઠી ગઇ હોય તે નિષદ્યા આદિ ઉપર એક મુહૂર્ત સુધી ન બેસવું તે બ્રહ્મચર્યની ત્રીજી ગુપ્તિ છે ચિત્તાકર્ષક હોવાને લીધે મનોહર, તથા સુંદર આકારના હોવાને લીધે મનોરમ એવા સ્ત્રીઓના મુખ, નયન, નાસિકા આદિ અંગોને રાગ ભાવથી પ્રેરાઇને સામાન્ય રીતે તથા વિશેષ

कनकर्ता 'निज्झाइत्ता'-निध्यांता=एकाग्रचित्ततयाऽवलोकनकर्ता च न भवति, स्त्री न्द्रियाणां सादरावलोकनरूपा चतुर्थी । 'नो सद्दाणुवाई, नो रूवाणुवाई, नो गंधाणुवाई, नो फासाणुवाई, नो सिलोगाणुवाई' नो शब्दानुपाती, नो रूपानुपाती, नो गन्धानुपाती, नो रसानुपाती, नो स्पर्शानुपाती, नो श्लोकानुपाती, शब्द= मन्मथकारकं कूजितादि शब्दमनुपतितुं=श्रोतुं शीलमस्यति शब्दानुपाती=विषय कारकशब्दश्रवणाभिलाषो, रूपं=स्त्रीणां सौन्दर्यम्, तदनुपतितुं=द्रष्टुं शीलमस्य रूपानुपाती=स्त्रीरूपदर्शनोत्सुक , एवं गन्धानुपातीत्यादिष्वपि विज्ञेयम् । श्लोका नुपाती=श्लोका.=स्त्रीणां सौन्दर्यादि गुणवर्णनम्, तमनुपतितुं=श्रोतुं शीलमस्येति श्लोकानुपाती=स्त्री सौन्दर्यादिगुणश्रवणाभिलाषी न भवतीत्यर्थ । इति पञ्चमी गुप्ति । 'नो इत्थीणं पुव्वरयाइ पुव्वकीलिआइं समरइत्ता भवइ' नो स्त्रीणां पूर्वरतानि पूर्वक्रीडितानि स्मर्ता भवति=स्त्रीभि सह या रति कृता या च क्रीडा विहिता, तत्स्मृतेरकरणं षष्ठी । 'नो पणीय रसभोई'नो प्रणीतरसभोजी=प्रणीतरसं=घृतादि स्नेहपदार्थाप्लुत भोजन भोक्तुं शीलमस्यति प्रणीतरसभोजी=मदिगम्स्नेह रसबिन्दुकस्य भोजनस्य प्रतिदिनमनाचरणमिति सप्तमी । 'नो पाणभायस्स

देखने का तथा विशेषरूप से देखने का परित्याग करना, यह चौथी गुप्ति है ४। स्त्रियों के विषयकारक-कामोद्दीपक शब्दों के सुनने का अभिलाषी नहीं होना, स्त्रियों के सौंदर्य को देखने का अभिलाषी नहीं होना, इसी तरह गंध आदिको सुंघने का, स्पर्श को छूने का, अभिलाषी नहीं होना श्लोका नुपाती नहीं होना,-स्त्रियों के सौंदर्य आदि गुणों के सुनने का अभिलाषी नहीं होना, यह पांचवी गुप्ति ५ । इसी तरह मुनि अवस्था धारण करने के पहिले जो स्त्रियों के साथ रति की हो, जो क्रीडा की हो, उसका स्मरण नहीं करना यह छठवीं गुप्ति है ६। प्रतिदिन सरस भोजन नहीं करना क्यों कि ऐसा भोजन कामोद्दीपक

રીતે દેખવાનો પરિત્યાગ કરવો તે ચોથી ગુપ્તિ છે સ્ત્રીઓના કામોદ્દીપક શબ્દોને સાંભળવાની અભિલાષા ન કરવી સ્ત્રીઓનુ સૌંદર્ય જોવાની અભિલાષા ન રાખવી એ જ પ્રમાણે ગંધ આદિ સુંઘવાની રસ ચાખવાની, સ્પર્શ કરવાની અભિલાષા વાળા ન થવુ, શ્લોકાનુપાતી ન થવુ —સ્ત્રીઓના સૌંદર્ય આદિ ગુણોની વાત સાંભળવાની અભિલાષા ન રાખવી તે પાંચમી ગુપ્તિ છે એ જ પ્રમાણે મુનિ અવસ્થા ધારણ કર્યા પહેલાં સ્ત્રીઓ સાથે જે રતિ સુખ ભોગવ્યાં હોય જે ક્રીડા કરી હોય તેનુ સ્મરણ ન કરવુ તે છઠ્ઠી ગુપ્તિ છે ઘી આદિ રસથી તરબોળ ભોજન દરરોજ ન લેવુ કારણ કે એવુ ભોજન કામોદ્દીપક હોય છે તે સાતમી ગુપ્તિ છે અધિક

अइमायाए आहारइत्ता'नो पानभोजनस्य अतिमात्रेण आहारयिता अधिकमात्रायां पानभोजनाकरणम् अष्टमी। 'नो सायासोक्खपडिबद्धे यावि भवइ' नो सात सौख्यप्रतिबद्धश्चापि भवति=सातात्-सातवेदनीयादुदयमाप्तायत्सौख्यं तत्प्रतिबद्धश्चापि नो भवति-सुखानभिलाषिता नवमी गुप्तिः। नव संख्यका ब्रह्मचर्यागुप्तयःप्रज्ञप्ताः, तद्यथा - स्त्री पशुपण्डकसंसक्तानां शय्यासनानां 'सेवणया' सेवनेन यावत् सातसौख्यप्रतिबद्धश्चापि भवति। ब्रह्मचर्यगुप्तौ अकरणीयतया यदुक्तं तत्करणं ब्रह्मचर्यास्यागुप्तिः। नवसंख्यकानि ब्रह्मचर्याणि प्रज्ञप्तानि-ब्रह्मचर्यम्, ब्रह्म=तपः संयमानुष्ठानम् तस्य चर्यमासेवनम्=ब्रह्मचर्यम्. तत्प्रतिपादकानि=आचाराङ्गप्रथमश्रुतस्कंधप्रतिबद्धानि अध्ययनानि=ब्रह्मचर्याणि, तद्यथा-'सत्थपरिण्णा' शस्त्रपरिज्ञा=जीवोपमर्दनहेतोर्द्रव्यभाव-

---

होता है। यह सातवीं गुप्ति है७। अधिक मात्रा में पान भोजन नहीं करना, यह आठवीं गुप्ति है ८। तथा सातावेदनीय कर्म के उदय से जो सुख प्राप्त होता है उसमें प्रतिबद्ध नहीं होना, यह नौवीं गुप्ति है९। नौ ब्रह्मचर्य की अगुप्तियां कही हैं। वे इस प्रकार से हैं-स्त्री, पशु, पंडक से संसक्त-युक्त शय्या और आसन का सेवन करना, यावत् सातावेदनीयकर्म के उदय से प्राप्त सुख में प्रतिबद्ध होना। तात्पर्य यह है कि ब्रह्मचर्यगुप्ति में जो २ अकरणीय रूप से कहा गया है उसका करना यही ब्रह्मचर्य की अगुप्ती है। नौ प्रकार के ब्रह्मचर्य कहे गये है वे इस प्रकार हैं-तप और संयम रूप अनुष्ठान का नाम ब्रह्म में। इस ब्रह्म का चर्य-आसेवन करना इसका नाम ब्रह्मचर्य है। इस ब्रह्मचर्य के प्रतिपादक जो आचारांग के प्रथमश्रुतस्कंध में प्रतिबद्ध अध्ययन हैं वे ब्रह्मचर्य हैं। जैसे शस्त्रपरिज्ञा नामक अध्ययन-द्रव्यभाव के भेद से अनेकविध ऐसा जो

પ્રમાણમાં ભોજન ન લેવું, તે આઠમી ગુપ્તિ છે, તથા સાતવેદનીય કર્મના ઉદયથી જે સુખ પ્રાપ્ત થાય છે તેના જકડવું નહીં, તે નવમી ગુપ્તિ છે બ્રહ્મચર્યની નવ અગુપ્તિયો બતાવી છે, તે આ પ્રમાણે છે—

સ્ત્રી, પશુ, પંડક--નપુંસકની સાથે શય્યાનું સેવન કરવું," ત્યાંથી શરૂ કરીને "સાતાવેદનીય કર્મના ઉદયથી પ્રાપ્ત સુખોનો પ્રતિબદ્ધ થવું જકડાવું" સુધી આગળ પ્રમાણે સમજવું એટલે કે બ્રહ્મચર્ય-ગુપ્તિમા જે કરવા લાયક નથી એમ ગણાવ્યું છે, તે કાર્ય કરવું એજ બ્રહ્મચર્યની અગુપ્તિ છે.

બ્રહ્મચર્ય નવ પ્રકારના કહેલ છે, તે આ પ્રમાણે છે—તપ અને સંયમ રૂપ અનુષ્ઠાનનું નામ બ્રહ્મ છે. બ્રહ્મનુ ચર્ય-સેવન કરવું, બ્રહ્મચર્ય છે આ બ્રહ્મચર્યનુ પ્રતિપાદન કરનાર આચારાંગના પહેલા શ્રુતસ્કંધમા જે પ્રતિબદ્ધ અધ્યયનો છે તે બ્રહ્મચર્ય છે. જેમ કે શસ્ત્રપરિજ્ઞા નામનું અધ્યયન-દ્રવ્યભાવના ભેદથી

मेदादनेकविधस्य शस्त्रस्य परिज्ञा=ज्ञेयपरिज्ञया ज्ञात्वा प्रत्याख्यानपरिज्ञया परिहरण प्रत्याख्यान षड्जीवनिकायपरिरक्षणरूपं शस्त्रपरिज्ञेतिनामकं प्रथमाध्ययनम् । 'लोग विजयो' लोकविजयः=रागद्वेषलक्षणस्य भावलोकस्य विजयस्त्याग =लोकविजय , तत्प्रतिपादकं द्वितीयमध्ययनम् । 'सीओसणिज्ज' शीतोष्णीयम्=शीता अनुकूलाः परीषहाः, उष्णाः प्रतिकूलाः परीषहा , तानधिकृत्य कृतमध्ययनं शीतोष्णीयं तृतीयम् । 'सम्मत्त' सम्यक्त्वम्=तत्त्वश्रद्धानलक्षणम्, तन्निश्चलरूपेणासेव्यम् न तु परतीर्थिनामाडम्बरं वीक्ष्य दृष्टिविपर्यासो विधेय इति प्रतिपादकं चतुर्थम् । 'आवंति' आवन्ती=लोकसारस्यापरं नाम, लोकसारो रत्नत्रयम्, अज्ञानमोहादि

जीवोपमर्दन हेतुरूप शस्त्र है उसको ज्ञ परिज्ञा से जानकर प्रत्याख्यान परिज्ञा से त्याग करना इसका नाम 'शस्त्रपरिज्ञा' है अर्थात् यह अध्ययन षड्जीवनिकाय के परिरक्षण रूप है। और यह यहां का प्रथम अध्ययन है१ । 'लोकविजय' यह दूसरा अध्ययन हैं, इसका अर्थ रागद्वेषरूप भावलोक का त्याग करना है । इस राग द्वेष रूप भावलोक के परित्याग करने का प्रतिपादन करने वाला यह द्वितीय अध्ययन कहा गया है २। 'शीतोष्णीय' नामका यह तृतीय अध्ययन है। इस अध्ययन द्वारा यह प्रतिपादित किया गया है कि शीत-अनुकूल और उष्ण-प्रतिकूल रूप परीषह कौन २ हैं। इन्हीं शीत और उष्ण परीषहों को लेकर इस अध्ययन का निर्माण किया गया है।३। 'सम्यक्त्व'—तत्त्वश्रद्धान रूप चतुर्थ अध्य यन है। इस में यह कहा गया है कि सम्यक्त्व को दृढरूप से सेवन करना चाहिये-परतीर्थिकों के आडंबर को देखकर दृष्टि विपर्यास नहीं करना चाहिये४। 'आवन्ती' यह लोकसार का दूसरा नाम है। रत्नत्रय

અનેક વિધ એવુ જે જીવોપમર્દન હેતુરૂપ શસ્ત્ર છે તેને જ્ઞ-પરિજ્ઞાથી જાણીને પ્રત્યાખ્યાન પરિજ્ઞાથી ત્યાગ કરવો તેનુ નામ "શસ્ત્રપરિજ્ઞા" છે એટલે કે તે અધ્યયન છ જીવનિકાયના પરિરક્ષણ રૂપ છે અને તે તમાંનુ પહેલુ અધ્યયન છે (૧) "लोक विजय" એ બીજુ અધ્યયન છે તેનો અર્થ રાગ દ્વેષરૂપ ભાવલોકનો ત્યાગ કરવો થાય છે આ રાગદ્વેષ રૂપ ભાવલોકનો પરિત્યાગ કરવાનુ પ્રતિપાદન કરનાર આ બીજુ અધ્યયન છે (૨) "शीतोष्णीय" એ નામનુ ત્રીજુ અધ્યયન છે આ અધ્યયનદ્વારા તે વાતનુ પ્રતિપાદન કરવામા આવ્યુ છે કે શીત-અનુકૂલ અને ઉષ્ણ પ્રતિકૂલ પરીષહ કયા કયા છે એ જ શીત અને ઉષ્ણ પરીષહોને અનુલક્ષીને આ અધ્યયન રચ્યુ છે (૩) "सम्यक्त्व"-તત્ત્વશ્રદ્ધાનરૂપ ચોથુ અધ્યયન છે તેમાં એવુ કહેવામાં આવ્યુ છે કે સમ્યકત્વનુ દૃઢતાથી સેવન કરવુ જોઇએ -પરતીર્થિકોના આડંબરને જોઇને દૃષ્ટિ વિપર્યાસ કરવો જોઇએ નહીં (૪) 'आवन्ती" તે લોકસાર

प। रपूर्वकं लोकसारभूत रत्नत्रयमासेव्यमिति प्रतिपादकमध्ययनं पञ्चमम्। 'धुय' धुत=पूर्व पश्चात्संगाना परित्यागः, तत्प्रतिपादक षष्ठम्। 'विमोहा' विमोहः= मो. वशसमुत्पन्नेषु परीषहादिषु विमोहो भवेत्, तान् सम्यक् सहेनेति यत्राभिधीयते तद् विमोहनामकं सप्तममध्ययनम्। 'उवहाणसुयं' उपधानश्रुतम्=भगवता महा वीरेण यदुपधानं=यदुग्रतपः समाचरितम् तत्प्रतिपादक श्रुतम् उपधानश्रुत नामा- ष्टमम्। 'महपरिण्णा' महापरिज्ञा=महती परिज्ञा=महापरिज्ञा अन्तक्रिया लक्षणा सम्यग्विधेयेति प्रतिपादक महापरिज्ञेतिनामक नवमम्। पार्श्वः खलु अर्हन

का नाम लोकसार है। अज्ञान, मोह आदि के परिहारपूर्वक लोक में सार भूत रत्नत्रय का अच्छी तरह से सेवन करना चाहिये, इस विषय को प्रतिपादन करने वाला यह आवन्ती' नामका पांचवां अध्ययन है ५। पूर्वसंग और पश्चात् संग का परित्याग करना इसका नाम 'धुत' है। इस बात का प्रतिपादन करने वाला यह 'धुत' नाम का छठवा अध्ययन है ६। मोह के वश समुत्पन्न हुए परीषह आदिकों को अच्छी तरह सहन करना चाहिये यह विषय 'विमोह' नामक सप्तम अध्ययन में प्रतिपादित किया गया है। अतः इस विषय का-प्रतिपादन करने वाला होने से इस अध्ययन का नाम 'विमोह' हुआ है। यह सातवा है ७। भगवान श्री महावीर स्वामीने जिस उपधान (उग्र) तप को समाचरित किया है उस तप का प्रतिपादक श्रुत उपधानश्रुत है। यह आठमा अध्ययन है ८। अन्तक्रियारूप महती परिज्ञा अच्छी तरह से धारण करना चाहिये, इस विषय को प्रतिपादन करने वाले अध्ययन का नाम महापरिज्ञा ९। और यह नौवां अध्ययन है। इस प्रकार ये समस्त अध्ययन ब्रह्मचर्य के नाम

રનુ બીજુ નામ છે. રત્નત્રયને લેકસાર કહે છે અજ્ઞાન મેહ આદિના પરિત્યાગ કરીને લોકમા સારભૂત રત્નત્રયનુ સારી રીતે સેવન કરવુ જોઇએ, એ વિષયનુ પ્રતિપાદન કરનાર તે "आवन्ती" નામનુ પાચમુ અધ્યયન છે (૫) પૂર્વસંગ અને પશ્ચાત્ સંગનો પરિત્યાગ કરવો તેનુ નામ 'ધુત' છે. તે વાતનુ પ્રતિપાદન કરનાર 'ધુત' નામનુ છઠ્ઠું અધ્યયન છે (૬) મોહને કારણે ઉત્પન્ન થયેલ પરીષહોને સારી રીતે સહન કરવા જોઇએ, તે વિષયનુ "विमोह" નામના સાતમા અધ્યયનમા પ્રતિપાદન કરેલ છે, તેથી એ વિષયનુ પ્રતિપાદન કરનાર હોવાથી તે અધ્યયનનું નામ "विमोह" છે (૭) ભગવાન મહાવીર સ્વામીએ જે ઉપધાન (ઉગ્ર) તપ કર્યું હતુ તે તપનુ પ્રતિપાદન કરનાર સૂત્ર 'ઉપધાનશ્રુત' છે, અને તે આઠમુ અધ્યયન છે (૮) અન્તક્રિયારૂપ મહતી પરિજ્ઞા સારી રીતે ધારણ કરવી જોઇએ, તે વિષયનુ પ્રતિપાદન કરનાર અધ્યયનનુ નામ "महापरिज्ञा" છે અને તે નવમુ અધ્યયન છે આ

पुरुषादानीय नवरत्निप्रमाणोच्चत्व आसीत् । अभिजिन्नक्षत्रं सातिरेकान्=साधिकान् नव मुहूर्तान् चन्द्रेण सार्धं योग=सम्बन्धं योजयति=करोति । सातिरेकत्वं च तथाहि—द्विषष्टिभागीकृतस्य मुहूर्तस्य चतुर्विंशतिभागाः, तथा मुहूर्तस्य द्विषष्टितमभागस्य सप्तषष्टितमभागेषु षट्षष्टिभागरूपम् । अभिजिदादीनि नवनक्षत्राणि चन्द्रस्य उत्तरेण योगं योजयन्ति उत्तरस्यां दिशि स्थितानि अभिजिदादीनि नव नक्षत्राणि दक्षिणदिशास्थितेन चन्द्रेण सार्धं सम्बन्धं कुर्वन्तीत्यर्थः । अभिजिदादि यस्य—अभिजिच्छ्रवणधनिष्ठाशतभिषापूर्वभाद्रोत्तरभाद्ररेवत्यश्विनीभरण्यः ॥ सू०२६॥

मूलम्—इमीसे ण रयणप्पभाए पुढवीए बहुसमरमणिज्जाओ भूमिभागाओ नव जोयणसए उड्ढं आवाहाए उवरिल्ले तारारूवे चारं चरइ । जंबूद्दीवे णं दीवे नव जोयणिया मच्छा पविसिंसु वा पविसंति वा पविसिस्संति वा, विजयस्स णं दाराए एगमेगाए बाहाए नव नव भोमा पण्णत्ता । वाणमंतराणं देवाणं सभाओ सुहम्माओ नव जोयणाइं उड्ढं उच्चत्तेणं पण्णत्ता । दंसणावरणिज्जस्स णं कम्मस्स नव उत्तरपगडीओ पण्णत्ता, तं जहा—निद्दा१ पयला२ निद्दा–निद्दा३ पयला

से प्रसिद्ध हैं अतः ये ब्रह्मचर्य के प्रकार हैं। पुरुषश्रेष्ठ श्री पार्श्वनाथ प्रभु नव रत्नि (हाथ)प्रमाण ऊंचे थे। अभिजित् नक्षत्र कुछ अधिक नौ मुहूर्त तक चन्द्र के साथ संबंध करता है। अभिजित् आदि नौ नक्षत्र चन्द्र का उत्तर के साथ संबंध करते हैं–अर्थात्–उत्तरदिशा में स्थित अभिजित आदि नौ नक्षत्र दक्षिणदिशा में स्थित चन्द्र के साथ संबंध करते हैं। अभिजित्, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिखा, पूर्वभाद्रपदा, रेवती, अश्विनी और भरणी, ये सब नक्षत्र अभिजित् के आदि पद से गृहीत हुए हैं ॥सू० २६॥

રીતે તે બધા અધ્યયનો બ્રહ્મચર્યના નામે પ્રસિદ્ધ હોવાથી તેમને બ્રહ્મચર્યના પ્રકાર ગણેલ છે પુરુષશ્રેષ્ઠ શ્રી પાર્શ્વનાથ પ્રભુ નવરત્નિ પ્રમાણ ઊંચા હતા અભિજિત્ નક્ષત્રનો નવ મુહૂર્તથી થોડો વધારે સમય ચન્દ્રની સાથે યોગ થાય છે અભિજિત્ આદિ નવ નક્ષત્રો ચન્દ્રનો ઉત્તરની સાથે સંબંધ (યોગ) કરે છે, એટલે કે ઉત્તર દિશામાં રહેલ અભિજિત્ આદિ નવ નક્ષત્ર દક્ષિણ દિશામાં રહેલ ચન્દ્ર સાથે સંબંધ કરે છે અભિજિત્ શ્રવણ ધનિષ્ઠા, શતભિષા પૂર્વભાદ્રપદા, ઉત્તરભાદ્રપદા, રેવતી, અશ્વિની અને ભરણી એ બધા નક્ષત્રો અભિજિત્ આદિ પદથી ગ્રહણ કરવામાં આવ્યા છે ॥સૂ. ૨૬॥

पयला४ थीणद्धी,५ चक्खुदंसणावरणे६ अचक्खुदंसणावरणे७ ओहिदंसणावरणे,८ केवलदंसणावरणे९। इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं नव पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। चउत्थीए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं नव सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगइयाणं नव पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगइयाणं नव पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। बंभलोए कप्पे अत्थेगइयाणं देवाणं नव सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। जे देवा पम्हं सुपम्हं पम्हावत्तं पम्हप्पभं पम्हकंतं पम्हवण्णं पम्हलेसं पम्हज्झयं पम्हसिंगं पम्हसिट्ठं पम्हकूडं पम्हुत्तरवडिंसगं सुज्जं सुसुज्जं सुज्जवित्तं सुज्जकंतं सुज्जवण्णं सुज्जलेसं सुज्जज्झयं सुज्जसिंगं सुज्जसिट्ठं सुज्जकूडं सुज्जुत्तरवडिंसगं रुइल्लं रुइल्लावत्तं रुइल्लप्पभं रुइल्लकंतं रुइल्लवण्णं रुइल्ललेसं रुइल्लज्झयं रुइल्लसिंगं रुइल्लसिट्ठं रुइल्लकूडं रुइल्लुत्तरवडिंसगं विमाणं देवत्ताए उववण्णा, तेसि णं देवाणं नव सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। ते णं देवा नवण्हं अद्धमासाणं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा। तेसिं णं देवाणं नवहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जइ। संतेगइया भवसिद्धिया जीवा जे नवहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति जाव सव्वदुक्खाणमंतं करिस्संति ॥ सू० २७॥

टीका—'इमीसे णं' इत्यादि। अस्याः खलु रत्नप्रभायाः पृथिव्याः 'बहुसमरमणिज्जाओ भूमिभागाओ' बहुसमरमणीयाद् भूमिभागात्—बहुसमोऽत्य-

---

टीकार्थ—'इमीसे णं' इत्यादि।

इस रत्नप्रभा पृथिवी के अत्यंतसमरमणीय भूमिभाग से रुचक

'इमीसे णं' इत्यादि।

ટીકાર્થ–આ રત્નપ્રભા પૃથ્વીના અત્યંત સમતલ રમણીય ભૂમિભાગથી રુચક કન્તા

न्तसमोऽनुभावत्त इति यावत्, अतएव रमणीय तस्मात् भूमिभागात्–न पर्वता पेक्षया नापि गत्तावक्षया अपि तु रुचकापेक्षया नव योजनशतानि उर्ध्वम् 'आबा हाए' आबाधायाम् अन्तर इत्यर्थ 'उवरिल्ले उपरितन तारारूवे 'तारास्प तारक जातीयं तारामण्डलमित्यर्थः, चारं=भ्रमण चरति करोति। रत्नप्रभपृथिव्या बहुसम भागरमणीयप्रदेशात् नवशतयोजनोपरिस्थितं तारामण्डलं परिभ्राम्यति इत्यर्थः। जम्बूद्वीप खलु द्वीपे नव योजनिका मत्स्याः लवणसमुद्रात् प्रविविंशुर्वा प्रविशन्ति वा प्रवक्ष्यन्ति वा। यद्यपि लवणसमुद्रे पञ्चशतयोजनपरिमितावगाहना मत्स्या निव सन्ति तथापि जगतीरन्ध्रस्यौचित्येन नवयोजनिका एव मत्स्या जम्बूद्वीपे

की अपेक्षा नौ सौ योजन ऊपर बीच में तारामण्डल भ्रमण करता है, अर्थात मेरु के समतल भूभाग से सात सौ नब्बे योजनकी ऊँचाई पर ज्योतिश्चक्र के क्षेत्र का आरंभ होता है, जो वहां से ऊँचाई में एक सौ दश योजन परिमाण है, और तिरछा असंख्यात द्वीप समुद्र परिमाण है। उसमें दस योजन की ऊँचाई पर अर्थात् उक्त समतल से आठ सौ योजन की ऊँचाई पर सूर्य के विमान हैं, वहां से अस्सी योजन की ऊँचाई पर अर्थात् समतल से आठ सौ अस्सी योजन की ऊंचाई पर चन्द्र के विमान हैं वहां से बीस योजन की ऊंचाई तक में अर्थात् समतल से नव सौ योजन की ऊंचाई तक में ग्रह, नक्षत्र और प्रकीर्ण तारे हैं। पांचसौ योजन परिमित अवगाहना वाले मत्स्य लवणसमुद्र में रहते हैं वे वहां से निकलकर जंबूद्वीप नामके इस द्वीप में प्रवेश करते हैं, पहिले भी प्रवेश किया है और आगे भी प्रवेश करेंगे–तात्पर्य इसका यह है कि लवणसमुद्र में यद्यपि पांचसौ योजन परिमित अवगाहन वाले मत्स्य रहते हैं तो भी

નવસો યોજન ઉપર વચ્ચે તારામંડળ ભ્રમણ કરે છે એટલે કે મેરૂના સમતલ ભૂભાગથી સાતસો નેવુ યોજનની ઉંચાઇએ જ્યોતિશ્ચક્રના ક્ષેત્રની શરૂઆત થાય છે, જે ત્યાંથી ઉંચાઇમાં એક સો દસ યોજન જેટલુ છે અને તિરછુ અસંખ્યાત દ્વીપ સમુદ્ર પરિમાણ છે તેમાં દસ યોજનની ઊંચાઇ પર એટલે પૂર્વોક્ત સમતલથી આઠસો યોજનની ઊંચાઇએ સૂર્યનાં વિમાન છે ત્યાંથી એંશી (૮૦એંસી) યોજનની ઊંચાઇએ એટલે કે સમતલથી ૮૮૦ આઠસો એંસી યોજનની ઊંચાઇએ ચન્દ્રનાં વિમાન છે ત્યાંથી વીસ યોજનની ઊંચાઇ સુધીમાં એટલે કે સમતલથી ૯૦૦ નવસો યોજનની ઊંચાઇમાં ગ્રહ નક્ષત્ર અને પ્રકીર્ણ તારાઓ છે નવ યોજન પ્રમાણ અવગાહના વાળાં મત્સ્યો જ લવણસમુદ્રમાંથી નીકળીને જંબૂદ્વીપ નામના આ દ્વીપમાં પ્રવેશ કરે છે, પહેલાં પણ પ્રવેશ કર્યો હતો અને ભવિષ્યમાં પણ પ્રવેશ કરશે તેનું તાત્પર્ય એવું છે કે લવણસમુદ્રમાં જો કે પાંચસો યોજન પ્રમાણ અવગાહનાવાળાં મત્સ્ય રહે છે તો પણ જગ

प्रवेशं कर्तुमर्हन्ति । विजयस्य खलु द्वारस्य=जम्बूद्वीपसम्बन्धिनः पूर्वदिग्व्यव-स्थितस्य विजयद्वारस्य 'एगमेगाए' एकैकस्मिन् 'वाहाए' वाहौ पार्श्वभागे इत्यर्थः, नवनव संख्यकानि 'भोमा' भौमानि=भूमिसंबन्धीनि विशिष्टस्थानानि सन्ति । व्यन्तराणां देवानां सुधर्मासभा नव योजनानि उर्ध्वमुच्चत्वेन प्रज्ञप्ताः । दर्शनावरणीयस्य खलु कर्मणो नव उत्तरप्रकृतयः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-निद्रा, प्रचला, निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला, 'थीणद्धी' स्त्यानर्द्धिः, चक्षुर्दर्शनावर-णम्, अचक्षुर्दर्शनावरणम्, अवधिदर्शनावरणम्, केवलदर्शनावरणम् । अस्यां खलु रत्नप्रभायांपृथिव्याम् अस्त्येकेषां नैरयिकाणां नव पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । चतुर्थ्यां पृथिव्यामस्त्येकेषां नैरयिकाणां नव सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । असुरकुमाराणां देवानाम् अस्त्येकेषां नव पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । सौधर्मे-

---

जगती में जो रन्ध्र-छिद्र है सो उस के औचित्य से उनमें से नव योजन प्रमाण अवगाहना वाले ही मत्स्य जंबूद्वीप में प्रवेशकर सकते हैं इससे अधिक अवगाहना वाले नहीं। पूर्वदिशा में व्यवस्थित विजयद्वार के जंबू-द्वीप संबंधी विजयद्वार के पार्श्वभाग में नव नव भौम हैं-भूमि संबंधी-विशिष्टस्थान अथवा नगर हैं। व्यन्तर देवों की अपेक्षा नव योजन की ऊंची है। दर्शनावरणीय कर्म की उत्तर प्रकृतियां नव हैं, वे इस प्रकार हैं-निद्रा१, प्रचला२, निंद्रा-निद्रा३, प्रचला-प्रचला४, स्त्यानर्धि५, चक्षुद-र्शनावरण६, अचक्षुदर्शनावरण७, अवधिदर्शनावरण८, और केवलदर्श-नावरण९। इस रत्नप्रभा पृथिवी में कितनेक नारकियों की नव पल्योपम की स्थिति कही गई है। चौथी पृथिवी में कितनेक नारकियों की स्थिति नव सागरोपम की कही गई है। असुरकुमार देवों में कितनेक देवों की

तीमां (કોટમા) જે છિદ્રો છે તે એવા છે કે તેમાથી નવ યોજન પ્રમાણુ અવગાહના વાળા જ મત્સ્યો જંબૂદ્વીપમાં પ્રવેશ કરી શકે છે, તેથી વધારે અવગાહનાવાળા પ્રવેશી શકતા નથી.

પૂર્વદિશામા આવેલ જંબૂદ્વીપના વિજયદ્વારના પાર્શ્વ ભાગમા નવ, નવ ભૌમ છે-ભૂમિનું વિશિષ્ટ સ્થાન અથવા નગર છે વ્યન્તર દેવોની સુધર્મા સભા ઊ ચાઇની અપેક્ષાએ નવ યોજનની છે દર્શનાવરણીય કર્મની ઉત્તર પ્રકૃતિયો નવ છે, તે આ પ્રમાણે છે-(૧)નિદ્રા, (૨) પ્રચલા, (૩) નિદ્રા-નિદ્રા (૪) પ્રચલા-પ્રચલા, (૫) સ્ત્યાનર્દ્ધિ (૬) ચક્ષુદર્શનાવરણુ (૭) અચક્ષુદર્શનાવરણુ, (૮) અવધિદર્શનાવરણુ (૯) કેવલદર્શ-નાવરણુ. આ રત્નપ્રભા પૃથ્વીમા કેટલાક નારકીઓની સ્થિતિ નવ પલ્યોપમની કહી છે ચોથી પૃથ્વીમા કેટલાક નારકીઓની સ્થિતિ નવ સાગરોપમની કહેલ છે અસુર-કુમાર દેવોમા કેટલાક દેવોની સ્થિતિ નવ પલ્યોપમની કહી છે સૌધર્મ, ઇશાન

शानेषु कल्पेषु अस्त्यकेषां देवानां नव पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। ब्रह्म लोके कल्पे अस्त्यकेषां देवानां नव सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। ये देवा पक्ष्म१ सुपक्ष्म२ पक्ष्मावर्त३ पक्ष्मप्रभ४ पक्ष्मकान्त५ पक्ष्मवर्ण६ पक्ष्मलेश्य७ पक्ष्मध्वज८ पक्ष्मशृङ्ग९ पक्ष्मसृष्ट१० पक्ष्मकूट११ पक्ष्मोत्तरावतंसक१२ सूर्य१३ सुसूर्य१४ सूर्यावर्त१५ सूर्यप्रभ१६ सूर्यकान्त१७ सूर्यवर्ण१८ सूर्यलेश्य१९ सूर्यध्वज२० सूर्यशृङ्ग२१ सूर्यसृष्ट२२ सूर्यकूट२३ सूर्योत्तरावतंसक२४ 'रुइल' रुचिर२५ रुचिरावर्त२६ रुचिरप्रभ२७ रुचिरकान्त२८ रुचिरवर्ण२९ रुचिरलेश्य३० रुचिरध्वज३१ रुचिरशृङ्ग३२ रुचिरसृष्ट३३ रुचिरकूट३४ रुचिरोत्तरावतंसक३५ च विमान= एतेषु पञ्चत्रिंशत् विमानेषु देवत्वेनोत्पन्ना, तेषां खलु देवानां नव सागरोप

नव पल्योपम की स्थिति कही गई है। सौधर्म ईशानकल्प में कितनेक देवों की नव पल्योपम की स्थिति कही गई है। ब्रह्मलोक कल्प में कितनेक देवों की नव सागरोपम की स्थिति कही गई है। जो देव, पक्ष्म १, सुपक्ष्म २, पक्ष्मावर्त ३, पक्ष्मप्रभ ४, पक्ष्मकान्त ५, पक्ष्मवर्ण ६, पक्ष्म लेश्य ७, पक्ष्मध्वज ८, पक्ष्मशृंग ९, पक्ष्मसृष्ट १०, पक्ष्मकूट ११, पक्ष्मो त्तरावतंसक १२, सूर्य १३, सुसूर्य १४, सूर्यावर्त १५, सूर्यप्रभ १६, सूर्य कान्त १७, सूर्यवर्ण १८, सूर्यलेश्य १९, सूर्यध्वज २०, सूर्यशृंग २१, सूर्य सृष्ट २२ सूर्यकूट २३, सूर्योत्तरावतंसक २४, रुचिर २५, रुचिरावर्त २६, रुचिरप्रभ २७, रुचिरकान्त २८, रुचिरवर्ण २९, रुचिरलेश्य ३०, रुचिर ध्वज ३१, रुचिरशृंग, ३२, रुचिरसृष्ट ३३, रुचिरकूट ३४, और रुचिरो त्तरावतंसक ३५, इन ३५, विमानों में देवकी पर्याय से उत्पन्न होते हैं

કલ્પમા કેટલાક દેવોની સ્થિતિ નવ પલ્યોપમની કહેલ છે બ્રહ્મલોક કલ્પમાં કેટલાક દેવોની નવ સાગરોપમની સ્થિતિ કહેલ છે

જે દેવો (૧) પક્ષ્મ (૨) સુપક્ષ્મ, (૩) પક્ષ્માવર્ત, (૪) પક્ષ્મપ્રભ (૫) પક્ષ્મકાન્ત, (૬) પક્ષ્મવર્ણ (૭) પક્ષ્મલેશ્ય, (૮) પક્ષ્મધ્વજ, (૯) પક્ષ્મશૃંગ, (૧૦) પક્ષ્મસૃષ્ટ (૧૧) પક્ષ્મકૂટ, (૧૨) પક્ષ્મોત્તરાવતંસક (૧૩) સૂર્ય (૧૪) સુસૂર્ય, (૧૫) સૂર્યાવર્ત, (૧૬) સૂર્યપ્રભ, (૧૭) સૂર્યકાન્ત (૧૮) સૂર્યવર્ણ, (૧૯) સૂર્યલેશ્ય, [૨૦] સૂર્યધ્વજ, (૨૧) સૂર્યશૃંગ (૨૨) સૂર્યસૃષ્ટ (૨૩) સૂર્યકૂટ (૨૪) સૂર્યોત્તરાવતંસક, (૨૫) રુચિર, (૨૬) રુચિરાવર્ત, (૨૭) રુચિરપ્રભ, (૨૮) રુચિરકાન્ત, (૨૯) રુચિરવર્ણ (૩૦) રુચિરલેશ્ય (૩૧) રુચિરધ્વજ (૩૨) રુચિરશૃંગ, (૩૩) રુચિરસૃષ્ટ, (૩૪) રુચિરકૂટ અને (૩૫) રુચિરોત્તરાવતંસક, એ પાંત્રીસ વિમાનોમાં દેવની પર્યાયે ઉત્પન્ન થાય છે,

मानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। ते खलु देवा नवानामर्द्धमासानामन्ते आनन्ति वा प्राणन्ति वा उच्छ्वसन्ति वा निःश्वसन्ति वा। तेषां खलु देवानां नवभिर्वर्षसहस्रैराहारसंज्ञा समुत्पद्यते। सन्त्येके भवसिद्धिका जीवा ये नवभिर्भवग्रहणैः सेत्स्यन्ति भोत्स्यन्ते मोक्ष्यन्ति परिनिर्वास्यन्ति सर्वदुःखानामन्तं करिष्यन्ति ॥सू २७॥

उन देवों की स्थिति नव सागरोपम की कही गई है। वे देव साढे चार ४॥ मास के बाद बाह्य आभ्यन्तरिक श्वासोच्छ्वास ग्रहण करते हैं। जिन देवों को नौ हजार वर्षों के बाद आहार संज्ञा उत्पन्न होती है। इनमें कितनेक देव ऐसे होते हैं जो भवसिद्धिक होते हैं। वे नौ भव ग्रहण करने के बाद सिद्धपद प्राप्त करेंगे। यावत् समस्त दुःखों का अंत करेंगे॥

भावार्थ--सूत्रकार इस सूत्र द्वारा नव संख्योपेत वस्तुओं को गिनाते हुए कह रहे हैं कि रत्नप्रभापृथिवी के अत्यंत सम रमणीय भूमिभाग से नौ सौ योजन की उंचाई पर तारा मंडल है। लवणसमुद्र से जंबूद्वीप में जो कि उस द्वीप को घेरे हुए हैं और जिसका विस्तार उसकी अपेक्षा द्विगुणित है उसकी जगती के छेद से जो कि नौ योजन की अवगाहना वाले मत्स्य जिसमें से निकल सकें इतना ही बडा है इतनी ही अवगाहना वाले मत्स्य आते हैं, आये हैं और आवेंगे। जंबूद्वीप संबंधी विजय द्वार के पार्श्वभाग में नौ-नौ भोम हैं। व्यंतरदेवों की सुधर्मासभा की उँचाई नव योजन की है। दर्शनावरणीय कर्म की उत्तर

તે દેવોની નવ સાગરોપમની સ્થિતિ કહી છે તે દેવો સાડાચાર મહિને અંદર તથા બહાર શ્વાસોચ્છ્વાસ લે છે, અને તે દેવોને નવ હજાર વર્ષે આહારની અભિલાષા થાય છે તેમા કેટલાક દેવો ભવસિદ્ધિક હોય છે. તેઓ નવ ભવ કરીને સિદ્ધગતિ પામશે ત્યાથી સમસ્ત દુઃખોનો અંત કરશે સુધીનો અર્થ ગ્રહણ કરાયો છે

ભાવાર્થ—સૂત્રકાર આ સૂત્રદ્વારા નવ સંખ્યાવાળી વસ્તુઓ ગણાવતાં કહે છે કે રત્નપ્રભા પૃથ્વીના અત્યંત સમરમણીય ભૂમિ ભાગથી નવ સો યોજનની ઉંચાઈએ તારામંડળ છે લવણસમુદ્રમાંથી જંબૂદ્વીપમા, કે જે તે દ્વીપને ઘેરીને રહેલો છે અને જેનો વિસ્તાર તેના કરતા બમણો છે, તેની જગતી (કોટ) ના છિદ્રમાથી નવ યોજનની લંબાઈવાળાં મત્સ્ય આવે છે, આવતા હતા અને આવશે. તે છિદ્ર એવડું છે કે તેમાથી નવ યોજનની અવગાહનવાળા મત્સ્યો જ પ્રવેશી શકે છે, તેના કરતાં મોટા નહીં. જંબુદ્વીપના વિજયદ્વારમાં નવ નવ ભૌમ છે. વ્યન્તર દેવોની સુધર્માસભાની ઉંચાઇ નવ યોજનની છે દર્શનાવરણીય કર્મની ઉત્તર પ્રકૃતિયો નવ છે જે (કર્મના ઉદ-

प्रकृतियां नौ हैं। जिस कर्म के उदय से सुखपूर्वक जाग सके ऐसी निद्रा को निद्रा कहते हैं १। जिसके उदय से निद्रा से जागना अत्यंत दुष्कर हो वह निद्रा-निद्रा है २। जिस कर्म के उदय के बैठे २ या खडे २ ही नींद आ जावे वह प्रचला है। ३। जिस कर्म के उदय से चलते २ ही नींद आजावे वह प्रचलाप्रचला है। ४। जिस कर्म के उदय से जागरित अवस्था में सोचे हुए कार्य को निद्रावस्था में करने का सामर्थ्य प्रकट हो जाय वह स्त्यानगृद्धि है। इस निद्रा में सहज बल से कहीं अनेकगुण अधिक बल प्रकट होता है ५। रत्नप्रभा पृथिवी में जो कितनेक नारकियों की स्थिति यहां नव पल्योपम की कही गई है वह मध्यमस्थिति की अपेक्षा कही गई है, क्यों कि इस पृथिवी में उत्कृष्टस्थिति एक सागरोपम की और जघन्यस्थिति दस हजार वर्ष की है इसी तरह चौथी पृथिवी में जो नौ सागरोपम की स्थिति यहां प्रकट की गई है वह भी मध्यम स्थिति की अपेक्षा माननी चाहिये, क्यों कि यहां उत्कृष्टस्थिति दस सागरोपम की और जघन्यस्थिति सात सागरोपम की है। असुर कुमार देवों की भी नौ पल्यापमकी जो यहां स्थिति कही गई है वह भी मध्यमस्थिति की यहां अपेक्षा माननी चाहिये, ब्रह्मलोक में जो नवसागरोपमकी स्थिति ही कही गई है वह भी मध्यस्थिति की अपेक्षा लेकर ही कही

थयी सुखपूर्वक जागी शकाय एवी निद्राने 'निद्रा' कहे छे (२) जे कर्मना उदयथी निद्रामांथी जागवु अतिशय दुष्कर होय छे ते निद्राने 'निद्रा-निद्रा' कहे छे (३) जे कर्मना उदयथी बेठां बेठां के उभां उभां ऊंघ आवी जाय ते कर्मने 'प्रचला' कहे छे ४) जे कर्मना उदयथी चालतां चालतां ऊंघ आवी जाय ते कर्म प्रकृतिने 'प्रचला-प्रचला'' कहे छे (५) जे कर्मना उदयथी जागृत अवस्थामां विचारेल काम निद्रावस्थामां करवानु सामर्थ्य प्रकट थई जाय ते ''स्त्यानगृद्धि'' छे ते निद्रामां स्वाभाविक बळ करतां अनेक गणु बळ प्रगट थय छे रत्नप्रभा पृथ्वीमा केटलाक नारकीओनी स्थिति जे नव पल्योपमनी कही छे ते मध्यम स्थितिनी अपेक्षाए कहेवायेल छे कारण के आ पृथ्वीमा उत्कृष्ट स्थिति एक सागरोपमनी अने जघन्य स्थित दस हजार वर्षनी छे एज प्रमाणे चोथी पृथ्वीमां जे नव सागरोपमनी स्थिति प्रगट करवामां आवी छे ते पण मध्यम स्थितिनी अपेक्षाए कहेल छे एम समजवु, कारण के त्यां उत्कृष्ट स्थिति दस सागरोपमनी अने जघन्य स्थिति सात सागरोपमनी छे असुरकुमार देवोनी पण अहीं जे नव पल्योपमनी स्थिति कहेवामां आवी छे ते पण मध्यम स्थितिनी अपेक्षाए समजवी-ब्रह्मलोकमां जे नव सागरोपमनी स्थिति अहीं कहेवामां आवी छे ते पण मध्यम स्थितिनी अपेक्षाए

अथ दशमं समवायमाह—

मूलम्—दसविहे समणधम्मे पण्णत्ते, तं जहा—खंती१ मुत्ती२ अज्जवे३ मद्दवे४ लाघवे५ सच्चे६ संजमे७ तवे८ चियाए९ बंभचेरवासे१०। दस चित्तसमाहिट्ठाणा पण्णत्ता, तं जहा—धम्मचिंता वा से असमुप्पण्णपुव्वा समुप्पज्जिज्जा सव्व धम्मं जाणित्तए१ सुमिणे वा से असमुप्पण्णपुव्वे समुप्पज्जिज्जा अहातच्चं सुमिणं पासित्तए२ सण्णि नाणे वा से असमुप्पण्णपुव्वे समुपज्जिज्जा पुव्वभवे सुमरित्तए३ देवदंसणे वा से असमुप्पण्णपुव्वे समुपज्जिज्जा दिव्वं देवड्ढिं दिव्वं देवजुइं दिव्वं देवाणुभावं पासित्तए४ ओहिनाणे वा से असमुप्पण्णपुव्वे समुपज्जिज्जा ओहिणा लोगं जाणित्तए५ ओहिदंसणं वा से असमुप्पण्णपुव्वे समुपज्जिज्जा ओहिणा लोगं पासित्तए६ मणपज्जव नाणे वा से असमुपण्णपुव्वे समुप्पज्जिज्जा जाव मणोगये भावे जाणित्तए७ केवलनाणे वा से असमुप्पण्णपुव्वे समुप्पज्जित्ता केवलं लोगं जाणित्तए८ केवल दंसणे वा से असमुप्पण्णपुव्वे समुप्पज्जिज्जा केवलं लोयं पासित्तए९ केवलिमरणं वा मरिज्जा सव्वदुक्खपहीणाए१० मंदरे णं पव्वए मूले दसजोयणसहस्साइं विक्खंभेणं पण्णत्ते। अरिहा णं अरिट्ठनेमि दस धणुइं उड्ढं उच्चत्तेणं होत्था। कण्हे णं वासुदेवे दस धणूइं उड्ढं उच्चत्तेणं होत्था। रामे णं बलदेवे दसधणूइं उड्ढं उच्चत्तेणं होत्था। दस नक्खत्ता नाण बुड्ढिकरा पण्णत्ता, तं जहा—

गई जानना चाहिये, क्यों कि इस पांचमे ब्रह्मलोक कल्प में उत्कृष्टस्थिति दस सागरोपम की और जघन्यस्थिति सात सागरोपम की है ॥सू० २७॥

કહેલ સમજવી, કારણ કે આ પાચમા બ્રહ્મલોક કલ્પમા ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ દસ સાગરોપમની અને જઘન્ય સ્થિતિ સાત સાગરોપમની છે. ॥સૂ. ૨૭॥

मिगसिर अद्दा पुस्सो तिण्णि य पुव्वा य मूलमस्सेसा । हत्थो चित्तो य तहा दस वुड्ढिकराइ नाणस्स । अकम्मभूमियाण मणुयाण दस विहा रुक्खा उवभोगत्थाए उवत्थिया पण्णत्ता, त जहा—मत्तगया य भिंगा तुडिअगा दीव जोइ चित्तगा चित्तरसा मणिअंगा गेहागारा अनिगिणा य ॥ सू० २८ ॥

टीका—'दसविहे समणधम्मे' इत्यादि । दशविध श्रमणधर्मः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—'खंती' क्षान्तिः=निन्दादिश्रवणेऽपि क्रोधत्यागः, 'मुत्ती' मुक्तिः=बाह्याभ्यन्तरवस्तुषु लोभपरित्यागः, 'अज्जवे' आर्जवम्=मायात्यागः । 'मद्दवे' मार्दवम्=मानपरित्यागः । 'लाघवे' लाघवम्=द्रव्यतोऽल्पोपधिता, भावतो गौरवत्यागः । 'सच्चे' सत्यम्=सत्यभाषित्वम् । 'संजमे' संयमः=प्राणातिपातादि विरमणम् । 'तवे' तपः तपति इति अष्टप्रकारकं कर्मेति तप =तपस्या । 'चियाए' त्यागः, सभोगिमुनिभ्यो भक्तादीनां दानम् । 'बंभचेरवासे' ब्रह्मचर्यवास'=ब्रह्मचर्येणावस्थानम् ।

अब सूत्रकार दशवें समवाय को कहते हैं—'दसविहे' इत्यादि ।

टीकार्थ-दस प्रकार का श्रमणधर्म कहा गया है । वह दश प्रकारता इस प्रकार से है क्षान्ति—अपनी निन्दा आदि के सुनने पर भी क्रोध का त्याग करना १, मुक्ति बाह्य और आभ्यन्तर वस्तुओं पर से लोभ का परित्याग करना २, आर्जव—माया का त्याग करना ३, मार्दव—मान का त्याग करना ४, लाघव अल्प उपधि का रखना द्रव्य लाघव और गौरव का त्याग करना भावलाघव है ५। सत्य सत्यवचन बोलना ६, संयम—प्राणातिपात आदि से विरत होना ७, तप—अष्ट प्रकार के कर्मों को जलाने वाली तपस्या करना ८, सभोगिमुनियों को भक्तपान आदि देना ९, ब्रह्म

હવે સૂત્રકાર દશમાં સમવાયનું કથન કરે છે—'दसविहे' इत्यादि ।

ટીકાર્થ—દશ પ્રકારના શ્રમણધર્મ બતાવ્યા છે તે આ પ્રમાણે છે—

(१) क्षान्ति—પોતાની નિન્દા આદિ સાંભળવા છતાં ક્રોધનો ત્યાગ કરવો-(२) मुक्ति—બહારની અને અંતરિક વસ્તુઓ પ્રત્યેના લોભનો ત્યાગ કરવો (૩) आर्जव—માયાનો ત્યાગ કરવો (૪) मार्दव—માનનો ત્યાગ કરવો (૫) लाघव—થોડી ઉપધિ રાખવી, તે દ્રવ્ય લાઘવ છે અને ગૌરવનો ત્યાગ કરવો તે ભાવલાઘવ છે (૬) सत्य—સત્ય બોલવુ (૭) संयम—પ્રાણાતિપાત આદિથી વિરત રહેવુ (૮) तप—આઠ પ્રકારના કર્મોનો ક્ષય કરનારી તપસ્યા કરવી. (૯) त्याग—સંભોગી મુનિઓને ભક્તપાન (આહારપાણી) દેવાં (૧૦) ब्रह्मचर्यवास—બ્રહ્મચર્ય ધારણ કરવુ મિત્તસભાસ્થાન

दशविधानि 'चित्तसमाहिट्ठाणा' चित्तसमाधिस्थानानि=चित्तस्य=मनसः समाधिः =प्रशान्तता, तस्य स्थानानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-'धम्मचिंता वा से असमुप्पण्णपुव्वा समुपज्जिज्जा सव्वं धम्मं विजाणित्तए' 'से' तस्य कल्याणभागिनः साधोः 'सव्वं' सर्वं=निरवशेषं धर्मं=जीवादिद्रव्यस्वभावमुपयोगोत्पादादिकं श्रुतादिरूपं वा 'जाणित्तए' ज्ञ परिज्ञया ज्ञातुं ज्ञात्वा च प्रत्याख्यानपरिज्ञया परिहरणीयकर्मपरिहर्तुम् 'असमुप्पण्णपुव्वा' असमुत्पन्नपूर्वा=पूर्वं समुत्पन्ना=समुत्पन्नपूर्वा, न समुत्पन्नपूर्वा असमुत्पन्नपूर्वा=पूर्वस्मिन् अनादौ अतीते कालेऽनुपजाता, तदुत्पत्तौ हि अपार्द्धपुद्गलपरावर्तान्ते कल्याणस्यावश्यंभावात्। 'धम्मचिंता' धर्मचिन्ता= धर्माः=जीवाजीवादि द्रव्याणामुत्पादादि स्वभावाः, तेषां चिन्ता अनुप्रेक्षा, अथवा

चर्यवास-ब्रह्मचर्य-धारण करना १०। चित्तसमाधिस्थान दस कहे गये हैं। वे इस प्रकार से हैं-कल्याण को प्राप्त हुए साधु को जो समस्त धर्म को जानने के लिये असमुत्पन्नपूर्व-(पहेले कभी नहीं उत्पन्न हुई वैसी) धर्मचिन्ता उत्पन्न होती है यह प्रथम चित्तसमाधिस्थान है। इसका तात्पर्य यह है कि आत्मकल्याणाभिलाषी साधु जीवादि द्रव्यों के स्वभाव को, अथवा आत्मस्वभावरूप उपयोग को, या उत्पाद आदि रूप सत् को, अथवा सर्वज्ञ भाषित श्रुतादिरूप धर्म को ज्ञ परिज्ञा से जानकर और प्रत्याख्यान परिज्ञा से परिहरणीय कर्म को छोडकर जो अनादिकाल से इस संसार में परिभ्रमण करते हुए अभीतक प्राप्ति नहीं हुई ऐसी धर्म चिंता को जो कि धर्मध्यान की कारणभूत होती है प्राप्त कर लेता है। इससे उसे अपार्द्धपुद्गल-परावर्तन काल के अन्त में अवश्य ही मोक्ष की प्राप्ति हो जाती है। इस धर्मचिन्ता में मुनि इस प्रकार का भी विचार करता

દસ કહ્યા છે, તે આ પ્રમાણે છે—કલ્યાણને પામેલ સાધુને સમસ્ત ધર્મને જાણવાની જે અસમુત્પન્નપૂર્વ-પહેલાં કદી પણ થઇ ન હોય એવી ધર્મચિન્તા ઉત્પન્ન થાય છે, તે પહેલું ચિત્ત સમાધિસ્થાન છે. એટલે કે આત્મકલ્યાણાભિલાષી સાધુ જીવાદી દ્રવ્યોના સ્વભાવને, અથવા આત્મ સ્વભાવરૂપ ઉપયોગને, કે ઉત્પાદ આદિ રૂપ સત્‌ને, અથવા સર્વજ્ઞ ભાષિત શ્રતાદિ રૂપ ધર્મને જ્ઞ પરિજ્ઞાથી જાણીને અને પ્રત્યાખ્યાન પરિજ્ઞાથી ત્યાગ કરવા લાયક કર્મને ત્યાગ કરીને, અનાદિકાળથી આ સંસારમાં પરિભ્રમણ કરતા હજી સુધીમાં કદી પણ પેદા ન થઇ હોય એવી ધર્મચિન્તા પ્રાપ્ત કરી લે છે, જે ધર્મચિન્તા ધર્મધ્યાનના કારણરૂપ હોય છે તેથી તેને અપાર્દ્ધપુદ્ગલ-પરાવર્તન કાળને અન્તે મોક્ષની પ્રાપ્તિ અવશ્ય થાય છે. આ ધર્મચિન્તામાં મુનિ એવો પણ વિચાર કરે છે કે

मिगसिर अद्दा पुस्सो तिण्णि य पुव्वा य मूलमस्सेसा। हत्थो चित्तो य तहा दस वुड्ढिकराइ नाणस्स। अकम्मभूमियाण मणुयाण दस विहा रुक्खा उवभोगत्ताए उवत्थिया पण्णत्ता, तं जहा—मत्तंगया य भिंगा तुडिअंगा दीवे जोइ चित्तंगा चित्तरसा मणिअंगा गेहागारा अनिगिणा य ॥सू० २८॥

टीका—'दसविहे समणधम्मे' इत्यादि। दशविधः श्रमणधर्मः प्रज्ञप्तः, तद्यथा–'खंती' क्षान्तिः=निन्दादिश्रवणेऽपि क्रोधत्यागः, 'मुत्ती' मुक्तिः=बाह्याभ्यन्तरवस्तुषु लोभपरित्यागः, 'अज्जवे' आर्जवम्=मायापरित्यागः। 'मद्दवे' मार्दवम्=मानपरित्यागः। 'लाघवे' लाघवम्=द्रव्यतोऽल्पोपाधिता, भावतो गौरवत्यागः। 'सच्चे' सत्यम्=सत्यवादित्वम्। 'संजमे' संयमः=प्राणातिपातादिविरमणम्। 'तवे' तपः तपति दहति अष्टप्रकारकं कर्मेति तपः=तपस्या। 'चियाए' त्यागः, संभोगिमुनिभ्यो भक्तादीनां दानम्। 'बंभचेरवासे' ब्रह्मचर्यवासः=ब्रह्मचर्येणावस्थानम्।

अब सूत्रकार दशवें समवाय को कहते हैं—'दसविहे' इत्यादि।

टीकार्थ-दस प्रकार का श्रमणधर्म कहा गया है। यह दश प्रकारता इस प्रकार से है क्षान्ति–अपनी निन्दा आदि के सुनने पर भी क्रोध का त्याग करना १, मुक्ति बाह्य और आभ्यन्तर वस्तुओं पर से लोभ का परित्याग करना २, आर्जव–माया का त्याग करना ३, मार्दव–मान का त्याग करना ४, लाघव अल्प उपधि का रखना द्रव्य लाघव और गौरव का त्याग करना भावलाघव है ५। सत्य सत्यवचन बोलना ६, संयम–प्राणातिपात आदि से विरत होना ७, तप–अष्ट प्रकार के कर्मों को जलाने वाली तपस्या करना ८, संभोगिमुनियों को भक्तपान आदि देना ९, ब्रह्म

હવે સૂત્રકાર દશમાં સમવાયાંગનું કથન કરે છે—'दसविहे' इत्यादि।

ટીકાર્થ—દસ પ્રકારના શ્રમણધર્મ બતાવ્યા છે તે આ પ્રમાણે છે--

(૧) ક્ષાન્તિ પોતાની નિન્દા આદિ સાંભળવા છતાં ક્રોધનો ત્યાગ કરવો (૨) મુક્તિ–બહારની અને આંતરિક વસ્તુઓ પ્રત્યેના લોભનો ત્યાગ કરવો (૩) આર્જવ–માયાનો ત્યાગ કરવો (૪) માર્દવ–માનનો ત્યાગ કરવો (૫) લાઘવ–થોડી ઉપધિ રાખવી, તે દ્રવ્ય લાઘવ છે અને ગૌરવનો ત્યાગ કરવો તે ભાવલાઘવ છે (૬) સત્ય–સત્ય બોલવું (૭) સંયમ–પ્રાણાતિપાત આદિથી વિરત રહેવું (૮) તપ–આઠ પ્રકારના કર્મોનો ક્ષય કરનારી તપસ્યા કરવી. (૯) ત્યાગ–સંભોગી મુનિઓને ભક્તપાન (આહારપાણી) દેવાં (૧૦) બ્રહ્મચર્યવાસ–બ્રહ્મચર્ય ધારણ કરવું ચિત્તસમાધિસ્થાન

दशविधानि 'चित्तसमाहिट्ठाणा' चित्तसमाधिस्थानानि=चित्तस्य=मनसः समाधिः =प्रशान्तता, तस्य स्थानानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-'धम्मचिंता वा से असमुप्पण्ण-पुव्वा समुपज्जिज्जा सव्वं धम्मं विजाणित्तए' 'से' तस्य कल्याणभागिनः साधोः 'सव्वं' सर्वं=निरवशेषं धर्मं=जीवादिद्रव्यस्वभावमुपयोगोत्पादादिकं श्रुतादिरूपं वा 'जाणित्तए' ज्ञ परिज्ञया ज्ञातुं ज्ञात्वा च प्रत्याख्यानपरिज्ञया परिहरणीयकर्म-परिहर्तुम् 'असमुप्पण्णपुव्वा' असमुत्पन्नपूर्वा=पूर्वं समुत्पन्ना=समुत्पन्नपूर्वा, न समु-त्पन्नपूर्वा असमुत्पन्नपूर्वा=पूर्वस्मिन् अनादौ अतीते कालेऽनुपजाता, तदुत्पत्तौ हि अपार्द्धपुद्गलपरावर्तान्ते कल्याणस्यावश्यंभावात्। 'धम्मचिंता' धर्मचिन्ता= धर्माः=जीवाजीवादि द्रव्याणामुत्पादादि स्वभावाः, तेषां चिन्ता अनुप्रेक्षा, अथवा

चर्यवास-ब्रह्मचर्य-धारण करना १०। चित्तसमाधिस्थान दस कहे गये हैं। वे इस प्रकार से हैं-कल्याण को प्राप्त हुए साधु को जो समस्त धर्म को जानने के लिये असमुत्पन्नपूर्व-(पहेले कभी नहीं उत्पन्न हुई वैसी) धर्म-चिन्ता उत्पन्न होती है यह प्रथम चित्तसमाधिस्थान है। इसका तात्पर्य यह है कि आत्मकल्याणाभिलाषी साधु जीवादि द्रव्यों के स्वभाव को, अथवा आत्मस्वभावरूप उपयोग को, या उत्पाद आदि रूप सत् को, अथवा सर्वज्ञ भाषित श्रुतादिरूप धर्म को ज्ञ परिज्ञा से जानकर और प्रत्याख्यान परिज्ञा से परिहरणीय कर्म को छोडकर जो अनादिकाल से इस संसार में परिभ्रमण करते हुए अभीतक प्राप्ति नहीं हुई ऐसी धर्म चिंता को जो कि धर्मध्यान की कारणभूत होती है प्राप्त कर लेता है। इससे उसे अपार्द्धपुद्गल-परावर्तन काल के अन्त में अवश्य ही मोक्ष की प्राप्ति हो जाती है। इस धर्मचिन्ता में मुनि इस प्रकार का भी विचार करता

દસ કહ્યા છે, તે આ પ્રમાણે છે—કલ્યાણને પામેલ સાધુને સમસ્ત ધર્મને જાણવાની જે અસમુત્પન્નપૂર્વ-પહેલાં કદી પણ થઇ ન હોય એવી ધર્મચિન્તા ઉત્પન્ન થાય છે, તે પહેલુ ચિત્ત સમાધિસ્થાન છે. એટલે કે આત્મકલ્યાણાભિલાષી સાધુ જીવાદી દ્રવ્યોના સ્વભાવને, અથવા આત્મ સ્વભાવરૂપ ઉપયોગને, કે ઉત્પાદ આદિ રૂપ સત્‌ને, અથવા સર્વજ્ઞ ભાષિત શ્રતાદિ રૂપ ધર્મને જ્ઞ પરિજ્ઞાથી જાણીને અને પ્રત્યાખ્યાન પરિજ્ઞાથી ત્યાગ કરવા લાયક કર્મનો ત્યાગ કરીને, અનાદિકાળથી આ સંસારમાં પરિભ્રમણ કરતાં હજી સુધીમાં કદી પણ પેદા ન થઇ હોય એવી ધર્મચિન્તા પ્રાપ્ત કરી લે છે. જે ધર્મ-ચિન્તા ધર્મધ્યાનના કારણરૂપ હોય છે. તેથી તેને અપાર્દ્ધપુદ્ગલ-પરાવર્તન કાળને અન્તે મોક્ષની પ્રાપ્તિ અવશ્ય થાય છે. આ ધર્મચિન્તામાં મુનિ એવો પણ વિચાર કરે છે કે

धर्मस्य=श्रुतचारित्रात्मकस्य सर्वज्ञभाषितस्य धर्मस्य हरिहरादिकथितधर्मेभ्य भावा न्यमित्यत्र चिन्ता, 'समुप्पज्जिज्जा' समुत्पद्येत=धर्मध्यानकरणभूता धर्मचिन्ता समुत्पद्यते इति समुदितार्थः। इति प्रथम चित्तसमाधिस्थानम्। 'सुमिणदंसणेवा से असमुप्पण्णपुव्वे समुप्पज्जिज्जा अहातच्च सुमिणं 'पासित्तए' 'अहातच्च' यथा तथ्य तथ्यमनतिक्रम्य यथातथ्य सर्वथाऽव्यभिचरित 'सुमिणं' स्वप्न स्वप्नफलं 'पासित्तए' द्रष्टुं ज्ञातुमित्यर्थः, 'से' तस्य असमुत्पन्नपूर्वं 'सुमिणदंसण' स्वप्नदर्शनं स्वप्नस्य=निद्रावशविकल्पज्ञानस्य दर्शन=संवेदन, यथा भगवतो महावीरस्य समुत्पन्न तथा, समुत्पद्येत। भवत्यभावि मुक्तिफल प्राप्नु साधुः तादृशं स्वप्नदर्शन लभते इत्यर्थः। इति द्वितीयम्। 'सण्णिनाणे वा से असमुप्पण्णपुव्वे समुप्पज्जिज्जा पुव्वभवे सुमरित्तए' 'पुव्वभवे' पूर्वभवान्=पूर्वजन्मानि 'सुमरित्तए' स्मर्तुम् तस्य असमुत्पन्नपूर्वं 'सन्निनाणं' संज्ञिज्ञानम्=सज्ञानं सज्ञा=ज्ञानम्-साच हेतुत्वाद् दृष्टिवाद-

है कि श्रुतचारित्रात्मक धर्म जो सर्वज्ञ प्रभु द्वारा भाषित हुआ है अन्य द्वारा कथित धर्म से विशिष्ट है। इस प्रकार विचार करते रहने से चित्त की समाधी होती है, अतः यह प्रथम चित्त समाधिस्थान है १। इस प्रकार करते २ जब चित्त इन धर्मस्थान के कारणभूत विचारों से संस्कारित हो जाता है तब उसे यथातथ्यसर्वथा अव्यभिचरित-इसी प्रकार के अस मुत्पन्नपूर्व स्वप्न भी आने लग जाते हैं और उस आत्मा को इन स्वप्नों के फल का भगवान् महावीर की तरह दर्शन संवेदन उत्पन्न होते लगता है तात्पर्य इसका यह है कि ऐसे मुनि को मुक्तिरूप फल की प्राप्ति अवश्य होती है जो उसे स्वप्न में भी ज्ञात होने लगती है। यह चित्तसमाधि का द्वितीयस्थान है २। इसी तरह उस चित्तसमाधि संपन्न साधु को अपने पूर्वभवों का भी ज्ञान जो इसे पहिले कभी नहीं हुआ

જે શ્રુતચારિત્રધર્મ સર્વજ્ઞ પ્રભુ દ્વારા ભાષિત છે તે બીજા કોઈ દ્વારા કથિત ધર્મ કરતાં વિશિષ્ટ છે આ પ્રમાણે વિચાર કર્યો કરવાથી ચિત્તની સમાધિ થાય છે, તેથી તે પહેલુ 'ચિત્તસમાધિસ્થાન છે (૧ આમ કરતાં કરતાં જ્યારે તે ધર્મધ્યાનના કારણભૂત વિચારોથી સંસ્કારિત થઈ જાય છે ત્યારે તેને યથાતથ્ય-સર્વથા અવ્યભિચરિત-પૂર્વે કદી પણ જોયાં ન હોય એવાં સ્વપ્નો આવવા લાગે છે અને તે આત્માને ભગવાન મહાવીરની જેમ તે સ્વપ્નોના ફળનું દર્શન સંવેદન ઉત્પન્ન થવા માંડે છે તેનું તાત્પર્ય એ છે કે એવા મુનિને મોક્ષરૂપ ફળની પ્રાપ્તિ અવશ્ય થાય છે ? તેને સ્વપ્નોમાં પણ જાણવા મળે છે આ ચિત્તસમાધિનું દ્વિતીય સ્થાન છે એ જ પ્રમાણે તે ચિત્ત સમાધિ યુક્ત મુનિને પોતાના પૂર્વભવોનું જ્ઞાન, કે જે એ પહેલાં કદી થયું હોય

दीर्घकालिकोपदेशभेदात्त्रिधा। तत्र विकलेन्द्रियस्य हेतुवादसंज्ञा। सम्यग्दृष्टेः दृष्टिवादसंज्ञा, समनस्कसंज्ञिनः दीर्घकालिकोपदेशसंज्ञा भवति। इह संज्ञाशब्देन दीर्घकालिकोपदेशसंज्ञा गृह्यते, सा यस्यास्ति स संज्ञी समनस्कः, तस्य ज्ञानं संज्ञिज्ञानं=जातिस्मरणं समुत्पद्येत। जातिस्मरणेन स्वस्य उत्तमस्थानं संयमलक्षणं मोक्षलक्षणं च जानाति इति भावः। इति तृतीयं चित्तसमाधिस्थानम्। 'देव दंसणे वा से असमुप्पण्णपुव्वे समुपज्जिज्जा दिव्वं देविड्ढिं दिव्वं देवजुइं दिव्वं देवाणुभावं पासित्तए' 'दिव्वं देविड्ढिं' प्रधानपरिवाररूपां दिव्यां देवर्द्धिम्, 'दिव्वं देवजुइं' विशिष्टशरीराभरणादिदीप्तिरूपां दिव्यां देवद्युतिं 'दिव्वं देवाणुभावं' उत्तमवैक्रियकरणादिप्रभावरूपं दिव्यं देवानुभावं द्रष्टुं तस्य कल्याणभाजः

होता है हो जाता है। पूर्वभवों के ज्ञान का दूसरा नाम जातिस्मरण ज्ञान है। संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों को ही यह ज्ञान होता है। यहां संज्ञी शब्द का अर्थ दीर्घकालिक उपदेश संज्ञा जिसके हो उसका नाम संज्ञी है, ऐसा विवक्षित हुआ है, क्यों कि संज्ञा तीन प्रकार की होती है १, हेतुवाद संज्ञा २, दृष्टिवाद संज्ञा, और दीर्घकालिकोपदेश संज्ञा। इन में विकलेन्द्रियजीवों में जो संज्ञा होती है उसका नाम हेतुवादसंज्ञा है। सम्यग्दृष्टि के जो संज्ञा होती है उसका नाम दृष्टिवादसंज्ञा है। तथा समनस्क संज्ञीजीव के जो संज्ञा होती है उसका नाम दीर्घकालिकोपदेशसंज्ञा है। जातिस्मरणज्ञान इसी संज्ञावाले संज्ञीपंचेन्द्रिय जीव के होता है। दीर्घकालिकोपदेश संज्ञावाले पंचेन्द्रिय समनस्कजीव जातिस्मरणज्ञान से अपना संयमरूप तथा मोक्षरूप उत्तमस्थान जानलेते हैं। यह तीसरा चित्तसमाधिस्थान है ३। प्रधान परिवाररूप दिव्य देवर्द्धि को तथा विशिष्ट शरीराभरणादि दीप्तिरूप दिव्य देवद्युति और उत्तम वैक्रिय

નથી, તે થવા લાગે છે પૂર્વભવોના જ્ઞાનનું બીજું નામ જાતિસ્મરણ જ્ઞાન છે. સંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય જીવોને જ આ જ્ઞાન થાય છે. દીર્ઘકાલિક ઉપદેશ સંજ્ઞા જેને હોય તેને અહીં સંજ્ઞી ગણવામાં આવેલ છે, કારણ કે સંજ્ઞા ત્રણ પ્રકારની હોય છે. (૧ હેતુવાદ સંજ્ઞા, (૨) દૃષ્ટિવાદ સંજ્ઞા, અને (૩) દીર્ઘકાલિકોપદેશ સંજ્ઞા વિકલેન્દ્રિય જીવોને જે સંજ્ઞા થાય છે તેને હેતુવાદ સંજ્ઞા કહે છે સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવને જે સંજ્ઞા થાય છે તેને દૃષ્ટિવાદ સંજ્ઞા કહે છે તથા સમનસ્ક સંજ્ઞી જીવને જે સંજ્ઞા થાય છે તેને દીર્ઘકાલિકોપદેશ સંજ્ઞા કહે છે જાતિસ્મરણ જ્ઞાન એ જ સંજ્ઞાવાળા સંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય જીવને થાય છે દીર્ઘકાલિકોપદેશ સંજ્ઞાવાળા પંચેન્દ્રિય સમનસ્ક જીવો જાતિસ્મરણ જ્ઞાનથી પોતાનું સંયમરૂપ તથા મોક્ષરૂપ ઉત્તમસ્થાન જાણી લે છે. તે "ત્રીજું ચિત્ત-સમાધિસ્થાન ગણાય છે પ્રધાન પરિવારરૂપ દિવ્ય દેવર્દ્ધિને તથા વિશિષ્ટ શરીરાભર-

माघोः असमुत्पन्नपूर्वे देवदर्शनं समुत्पद्येत। देवा हि आत्मानं दर्शयन्ति, देव दर्शनाच्च आगमार्थे श्रद्धादार्ढ्यं धर्मेऽतिशयो मानश्च सजायते ततश्चित्तसमाधिरिति देवदर्शनं चतुर्थं चित्तसमाधिस्थानम्। 'ओहिनाणे वा से असमुप्पण्णपुव्वे समुप्पज्जिज्जा ओहिणा लोगं जाणित्तए' 'ओहिणा' अवधिना नियत द्रव्यक्षेत्रकालभावरूपया मर्यादया 'लोगं जाणित्तए' लोकं ज्ञातु लोकज्ञानायत्यर्थं, तस्य असमुत्पन्नपूर्वम् 'ओहिनाणं' अवधिज्ञानं समुत्पद्येत। विशिष्टज्ञानाद्धि चित्तसमाधिरुत्पद्यते। इति पञ्चमं समाधिस्थानम्। 'ओहिदंसणे वा से असमुप्पण्णपुव्वे समुप्पज्जिज्जा ओहिणा लोगं पासित्तए' अवधिना लोकं 'पासित्तए' द्रष्टुम् असमुत्पन्नपूर्वमवधिदर्शनं तस्य समुत्पद्येत। विशिष्टदर्शनादपि चित्तसमाधिर्भवति। इति षष्ठं, चित्तसमाधिस्थानम्।

करणादि प्रभावरूप दिव्य देवानुभाव को देखने के लिये उस कल्याण प्राप्त साधु को असमुत्पन्न देवदर्शन हो जाता है। ऐसे व्यक्तियों को देव खुद आकर दर्शन देते हैं। देवदर्शन से ऐसे महानुभावों की दृढश्रद्धा आगमोक्त अर्थों में हो जाती है। धर्म में अतिशय तथा अत्यन्त बहुमान हो जाता है। इससे चित्तसमाधि होती है। इस तरह देवदर्शनरूप यह चतुर्थ चित्तसमाधिस्थान है ४। नियतद्रव्य क्षेत्र, काल और भावरूप अवधि-मर्यादा को लेकर लोक को जानने के लिये उस कल्याण प्राप्त साधु को पहिले उत्पन्न नहीं हुआ ऐसा अवधिज्ञान उत्पन्न हो जाता है। विशिष्टज्ञान से चित्तसमाधि उत्पन्न होती है। यह पांचवां चित्तसमाधिस्थान है। विशिष्टदर्शन से भी चित्तसमाधि होती है यह बात सूत्रकार अब इस सूत्र द्वारा प्रकट करते हैं-द्रव्य क्षेत्रादिकी मर्यादा लेकर यह कल्याण प्राप्त साधु लोक को देखने के लिये असमुत्पन्नपूर्व अवधिदर्शन को

વાળિ દીપ્તિરૂપ દિવ્ય દેવદ્યુતિ અને ઉત્તમ વૈક્રિય કરણાદિ પ્રભાવરૂપ દિવ્ય દેવાનુભાવને જોવાને માટે તે કલ્યાણ પ્રાપ્ત સાધુને અસમુત્પન્ન પૂર્વ (પૂર્વે થયું ન હોય એવું) દેવદર્શન થાય છે એવી વ્યક્તિઓને દેવ જાતે જ આવીને દર્શન આપે છે દેવદર્શનને લીધે આગમોક્ત અર્થોમાં તે મહાનુભાવોની શ્રદ્ધા દૃઢ બને છે ધર્મ પ્રત્યે અતિશય તથા અત્યંત માન થાય છે તેથી ચિત્તસમાધિ થાય છે આ રીતે દેવદર્શન રૂપ આ ચોથું સમાધિસ્થાન છે નિયત દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાળ અને ભાવ રૂપ અવધિ-મર્યાદા ની અપેક્ષાએ લોકોને જાણવાનું તે કલ્યાણ પ્રાપ્ત સાધુને અપૂર્વ (પહેલાં ઉત્પન્ન ન થયું હોય એવું) અવધિજ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે વિશિષ્ટ જ્ઞાનથી ચિત્તસમાધિ ઉત્પન્ન થાય છે આ પાંચમું ચિત્તસમાધિસ્થાન છે વિશિષ્ટ દર્શનથી પણ ચિત્તસમાધિ થાય છે એ વાત સૂત્રકાર આ સૂત્ર દ્વારા બતાવે છે દ્રવ્ય ક્ષેત્ર આદિની મર્યાદાની અપેક્ષાએ તે કલ્યાણ પ્રાપ્ત સાધુ લોકોને જોવાને માટેનું

'मणपज्जवनाणे वा से असमुप्पण्णपुव्वे समुपज्जिज्जा जाव मणोगए भावे जाणित्तए' 'जावमणोगए भावे' यावन्मनोगतान् भावान् ज्ञातुम्=अर्धतृतीयद्वीपसमुद्रेषु संज्ञिनां पञ्चेन्द्रियाणां पर्याप्तकानां यावन्मनोगतान् भावान ज्ञातुम् तस्य असमुत्पन्नपूर्वं मनःपर्यवज्ञानं समुत्पद्येत । इति सप्तम् । 'केवलनाणे वा से असमुप्पण्णपुव्वे समुपज्जिज्जा केवलं लोगं जाणित्तए' केवलं=परिपूर्णं लोकं=लोक्यते दृश्यते केवलालोकेनेति लोकः=लोकालोकस्वरूपस्तम्, ज्ञातुं तस्य=साधोरसमुत्पन्नपूर्वं केवलं ज्ञानं समुत्पद्येत । केवलज्ञानस्य चित्तसमाधिभेदत्वाच्चित्तसमाधिस्थानता । इह च अमनस्कतया केवलिनश्चित्त चैतन्यमवसेयम् । इति अष्टमम् । 'केवलदंसणे वा से असमुप्पण्णपुव्वे समुपज्जिज्जा केवल लोयं पासित्तए' केवलं लोकं द्रष्टुं तस्य पूर्वसमुत्पन्नं केवलदर्शनं समुत्पद्येत । केवलदर्शनं नवमं चित्तसमाधिस्थानम् । 'केवलिमरणं वा मरि सव्वदुक्खपहाणाय' सर्वदुःख

प्राप्त कर लेता है। यह छठवां चित्तसमाधिस्थान है ६। ढाईद्वीप समुद्रवर्ती पंचेन्द्रिय पर्याप्तक संज्ञी जीवों के यावत् मनोगत भावों को जानने के लिये उस कल्याण प्राप्त साधु को असमुत्पन्नपूर्व मनःप्रर्यवज्ञान उत्पन्न हो जाता है। यह सातवां चित्तसमाधिस्थान है ७। परिपूर्णलोक को जानने के लिये साधु के असमुत्पन्नपूर्व केवलज्ञान उत्पन्न हो जाता है। केवलज्ञान चित्तसमाधिका एक भेदरूप है-इसलिये इसे चित्तसमाधि का स्थान कहा गया है केवलि भगवान् यद्यपि अमनस्क होते हैं परन्तु फिर भी उनका चैतन्य ही चित्तरूप है। इसलिये चित्त समाधिता उनमें घटित हो जाती है। यह आठवां चित्तसमाधिस्थान है ८। परिपूर्ण लोक को देखने के लिये केवलि-भगवान के केवलदर्शन जो असमुत्पन्नपूर्व था वह उत्पन्न हो जाता हैं। यह नवमा चित्तसमाधि-

અસમુત્પન્ન પૂર્વ અવધિ દર્શન પ્રાપ્ત કરી લે છે. આ છઠ્ઠુ ચિત્તસમાધિ સ્થાન છે અઢી દ્વીપ સમુદ્રવર્તી પાચેન્દ્રિય પ્રર્યાપ્ત સંજ્ઞી જીવોના મનોગત ભાવોને માટે તે કલ્યાણ પ્રાપ્ત સાધુને અપૂર્વ મન પર્યવજ્ઞાન ઉત્પન્ન થઈ જાય છે આ સાતમુ ચિત્તસમાધિસ્થાન, છે પરિપૂર્ણ લોકોને જાણવાને માટે સાધુને અપૂર્વ કેવળજ્ઞાન ઉત્પન્ન થઈ જાય છે કેવળજ્ઞાન ચિત્તસમાધિના એક ભેદ રૂપ છે, તેથી તેને ચિત્તસમાધિનું સ્થાન દર્શાવ્યું છે જો કે કેવલિ ભગવાન અમનસ્ક હોય છે, છતાં પણ તેમનુ ચૈતન્ય જ ચિત્તરૂપ છે તેથી તેમનામાં ચિત્તસમાધિતા ઘટાવી શકાય છે આ આઠમું ચિત્તસમાધિસ્થાન છે પરિપૂર્ણલોકોને જોવાને માટે કેવલિ ભગવાનમા અપૂર્વ કેવલ દર્શન ઉત્પન્ન થઈ જાય છે. આ નવમુ ચિત્તસમાધિસ્થાન છે. સમસ્ત દુ ખોનો નાશ કરવા માટે કેવ-

महाणाय=सकलदुःखविनाशाय केवलिमरण 'मरिज्जा' म्रियत, केवलिमरणेन शरीरत्यागं कुर्यादित्यर्थः । इदं केवलिमरण सर्वोत्कृष्ट चित्तसमाधिस्थानम् । इति दशमं चित्तसमाधिस्थानम् । 'मं' शब्दः सर्वत्र मकारान्तरबोधकः । मन्दरः खलु पर्वतः मूले दशयोजनसहस्राणि 'विक्खंभेण' विष्कम्भेण=विस्तारेण प्रज्ञप्तः । मन्दरपर्वतस्य मूलप्रदेशो दशसहस्रयोजनविस्तारवानित्यर्थः । अर्हन् अरिष्टनेमि र्दशधनूंषि ऊर्ध्वमुच्चत्वेनासीत् । कृष्णः खलु वासुदेवो दश धनूंषि ऊर्ध्वमुच्चत्वे नासीत् । रामः खलु बलदेवो दशधनूंषि ऊर्ध्वमुच्चत्वेनासीत् । दशनक्षत्राणि 'नाण वुड्ढिकरा' ज्ञानवृद्धिकराणि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-'मिगसिर' मृगशिर, 'अदा' आर्द्रा 'पुस्सो' पुष्यम् 'तिण्णि य पुव्वा' त्रीणि च पूर्वाणि=पूर्व पूर्वाणि त्रीणि पूर्वफल्गुनी पूर्वाषाढा पूर्वाभाद्रपदा नामधेयानि नक्षत्राणि, मूलम्, अश्लेषा, हस्तः, तथा चित्रा च दशनक्षत्राणि 'नाणस्स वुड्ढिकराणि' ज्ञानस्य वृद्धिकराणि प्रज्ञप्तानि । 'अकम्मभूमियाण' अकर्मभूमिजानां भोगभूमिसमुत्पन्नानामित्यर्थः, मनुष्याणां दश विधा 'रुक्खा' वृक्षा 'उपभोगत्ताए' उपभोगत्वाय उपभोगसाधनसंपादनाय 'उवत्थिया' उपस्थिता उपगता भवन्ति इत्यर्थ । ते के ? इत्याह-'मत्तंगया'

स्थान है ९। समस्त दुःखों को नाश करने के लिये केवलिमरण से शरीर का त्याग करना यह सर्वोत्कृष्ट चित्तसमाधिका दशवां स्थान है १०। सुमेरू पर्वत मूल में दश हजार योजन का विस्तारवाला कहा गया है। अरिष्टनेमि अर्हंतप्रभु ऊँचाई में दश धनुष ऊँचे थे। इसी तरह कृष्णवासुदेव भी ऊँचाई में दस धनुष ऊँचे थे। बलभद्र-राम भी ऊँचाई में दस धनुष ऊँचे थे। दस नक्षत्र ज्ञान की वृद्धि करनेवाले कहे गये है, वे ये हैं-मृगशिर, आर्द्रा, पुष्य, पूर्वाफल्गुनी, पूर्वाषाढा, पूर्वाभाद्रपदा, मूल, अश्लेषा हस्त तथा चित्रा । अकर्म भूमिज मनुष्यों के उपभोग साधन संपादन के लिये ये दस प्रकार के कल्पवृक्ष उपस्थित होते हैं, वे इस

કેવળમરણથી શરીરનો ત્યાગ કરવો તે સર્વોત્કૃષ્ટ ચિત્તસમાધિનું દશમું સ્થાન છે" સુમેરુ પર્વત મૂળમાં દસ હજાર યોજનના વિસ્તાર વાળો કહેલ છે અરિષ્ટ નેમિ અર્હંત પ્રભુ દસ ધનુષ પ્રમાણ ઊંચા હતા એ જ પ્રમાણે કૃષ્ણ વાસુદેવ પણ દસ ધનુષ પ્રમાણ ઊંચા હતા બલભદ્ર-બલરામની ઊંચાઇ પણ દસ ધનુષ પ્રમાણ હતી દસ નક્ષત્રોને જ્ઞાનની વૃદ્ધિ કરનાર કહેલ છે, તે નક્ષત્રોનાં નામ આ પ્રમાણે છે-મૃગશિર, આર્દ્રા પુષ્ય, પૂર્વાફાલ્ગુની પૂર્વાષાઢા, પૂર્વાભાદ્રપદા, મૂલ, અશ્લેષા, હસ્ત અને ચિત્રા અકર્મભૂમિ જ મનુષ્યોના ઉપભોગનાં સાધનો પૂરાં પાડવા માટે દસ પ્રકારના કલ્પવૃક્ષો આવેલાં હોય છે તે આ પ્રમાણે છે-(૧) મત્તાङ્ગક તે મદ્ય

मत्ताङ्गका-सुखपेय परमस्वादुरसदायकाः, 'भिंगा' भृङ्गा=रत्नकटोरक-सुवर्णस्थाल प्रभृति भाजनदायिनः, 'तुडिअगा' त्रुटिताङ्गाः=मृदङ्गादिवाद्यदायिनः, 'दीव' दीपाः=प्रदीपवत्प्रकाशकारकाः, 'जोइ' ज्योतिषः=अग्निकार्यकारिणः, 'चित्तंगा' चित्राङ्गाः=विविधसुगन्धिपुष्पदायिनः, 'चित्तरसा' चित्ररसाः=मनोभिलषित मनोज्ञभोजनदायिनः, 'मणिअंगा' मण्यङ्गाः=हारार्धहाराद्याभरणदायिनः 'गेहागारा' गेहाकाराः=गेहस्यैवाकारो येषां ते गेहाकाराः, द्विचत्वारिंशद् भूमभवनाकारपरिणता इत्यर्थः, 'अणिगिणा' अनग्नकाः अनग्नत्वसंपादका वस्त्रदायिन इत्यर्थः ॥२८॥

मूलम्--इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं जहन्नेणं दसवाससहस्साइं ठिई पण्णत्ता। इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं दस पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। चउत्थाए पुढवीए दस निरयावाससयसहस्साइं पण्णत्ता। चउत्थीए पुढवीए अत्थेगइयाणं उक्कोसेणं दस सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। पंचमीए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं जहण्णेणं दस सागरोवमाइं ठिई

प्रकार-मत्ताङ्गक-ये सुखपेय परम स्वादुरस के देनेवाले होते हैं १, भृङ्ग ये रत्नकी कटोरियो को और सुवर्ण के थाल आदि भाजनों को देते हैं २, त्रुटितांग-ये मृदङ्ग आदि वाद्यों को देते है ३, दीप ये उज्ज्वल प्रदीप का प्रकाश प्रदाता होते हैं ४, ज्योतिष-ये अग्नि के कार्य को करते हैं ५, चित्राङ्ग-ये विविध सुगंध से भरे हुए पुष्पों को देते है ६, चित्ररस ये मनोनुकूल मनोज्ञ भोजन प्रदान करते हैं ७। मण्यङ्ग-ये हार, अर्धहार आदि आभरणों को देते है ८, गेहाकार-ये बयालीस ४२ खंड के मकानों को देते है ९, और अनग्नक जाति के कल्पवृक्ष सुन्दर कीमती वस्त्रों को देते हैं १०॥सू० २८॥

દાર, પરમ સ્વાદિષ્ટ રસ દેનારા હોય છે (૨)ભૃઙ્ગ તે રત્નોની કટોરીઓ તથા સુવર્ણના થાળ આદિ પાત્રો દે છે (૩)ત્રુટિતાંગ તે મૃદંગ આદિ વાદ્યો દે છે દીપ તે તેજસ્વી દીવાનો પ્રકાશ દેનારાં છે. (૫) જ્યોતિષ તે અગ્નિના જેવુ કાર્ય કરે છે (૬) ચિત્રાઙ્ગ તે વિવિધ સુગંધીથી ભરપૂર પુષ્પો છે (૭) ચિત્રરસ તે મનને અનુકૂળ મનોજ્ઞ ભોજન આપે છે (૮) મણ્યઙ્ગ તે હાર અર્ધહાર, આદિ આભુષણો આપે છે. (૯)ગેહાકાર તે બેંતાલીસ ખંડવાળા મકાનો આપે છે. અને (૧૦) અનગ્નક જાતિના કલ્પવૃક્ષ સુંદરમાં સુંદર કીમતી વસ્રો આપે છે ॥સૂ. ૨૮॥

पण्णत्ता। असुरकुमाराण देवाण अत्थेगइयाण जहण्णेण दसवास-सहस्साइ ठिई पण्णत्ता। असुरिंदवज्जाण भोमिज्जाण देवाण अत्थे गइयाण जहण्णेण दसवाससस्साइ ठिई पण्णत्ता। असुरकुमाराण देवाण अत्थेगइयाण दस पलिओवमाइ ठिई पणण्त्ता। बायरवण स्सइकाइयाण उक्कोसेण दस वाससहस्साइ ठिई पण्णत्ता। वाणम न्तराण देवाण अत्थेगइयाण जहण्णेण दस वाससहस्साइ ठिई पण्णत्ता। सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगइयाण देवाण दस पलि ओवमाइ ठिई पण्णत्ता। बभलोए कप्पे देवाण उक्कोसेण दस सागरोवमाइ ठिई पण्णत्ता। लातए कप्पे देवाण अत्थेगइयाण जहण्णेण दस सागरोवमाइ ठिई पण्णत्ता। जे देवा घोस सुघोस महाघोस नदिघोस सुसर मणोरम रम्म रम्मग रमणिज्ज मगलावत्त बभलोगवडिंसग विमाण देवत्ताए उववण्णा, तेसि ण देवाण उक्को सेण दस सागरोवमाइ ठिइ पण्णत्ता। ते ण देवा दसण्ह अद्धमासाण आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा, तेसि णं देवाणं दसहि वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जइ, सतेगइया भवसि द्धिया जीवा जे दसहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति, बुज्झिस्संति, मुच्चिस्संति, परिनिव्वाइस्संति, सव्वदुक्खाणमंत करिस्संति ॥सू २९॥

टीका—'इमीसे ण' इत्यादि। अस्यां खलु रत्नप्रभायां पृथिव्याम् अस्त्ये केषां नैरयिकाणां जघन्येन दशवर्षसहस्राणि स्थितिः प्रज्ञप्ता। अस्यां खलु रत्नप्रभायां पृथिव्यामस्त्येकेषां नैरयिकाणां दश पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता।

टीकार्थ-'इमीसे' इत्यादि। इस रत्नप्रभा पृथिवी में कितनेक नारकियों की दस हजार वर्ष की जघन्य स्थिति कही गई है। इस रत्नप्रभा पृथिवी में कितनेक

ટીકાર્થ-इमीसे इत्यादि! આ રત્નપ્રભા પૃથ્વીમાં કેટલાક નારકીઓની દસ હજાર વર્ષની જઘન્ય સ્થિતિકહેલ છે આ રત્નપ્રભા પૃથ્વીમાં કેટલાક નારકીઓની

चतुर्थ्यां पृथिव्या दश नरकावासशतसहस्राणि प्रज्ञप्तानि । चतुर्थ्यां खलु पृथिव्या-मस्त्येकेषाम् उत्कर्षेण दश सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । पञ्चम्यां पृथिव्याम् अस्त्येकेषां नैरयिकाणां जघन्येन दश सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । असुर-कुमाराणां देवानामस्त्येकेषां जघन्येन दशवर्ष सहस्राणि स्थितिः प्रज्ञप्ता । असु-रेन्द्रवर्जाणां भौमेयानां=भवनपतीनां देवानामस्त्येकेषां जघन्येन दशसहस्रवर्षाणि स्थितिः प्रज्ञप्ता । असुरकुमाराणां देवानामस्त्येकेषां दश पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । 'बायरवणस्सइकाइएणं' बादरवनस्पतिकायानाम् बादरकर्मोदय-वशाश्चक्षुर्ग्राह्यतां गतानां वनस्पतिकायानामित्यर्थः, उत्कर्षेण दशसहस्रवर्षाणि स्थितिः प्रज्ञप्ताः । 'वाणमन्तराणां' व्यन्तराणां देवानामस्त्येकेषां देवानां जघन्येन दश सहस्रवर्षाणि स्थितिः प्रज्ञप्ता । सौधर्मेशानेषु कल्पेषु अस्त्येकेषां देवानां दश पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । ब्रह्मलोके कल्पे देवानामुत्कर्षेण दश सागरोप-

नारकियों की स्थिति दस पल्योपम की कही गई है। चौथी पृथिवी में दस लाख नरकावास हैं। चौथी पृथिवी में कितनेक नारकियों की उत्कृष्टस्थिति दस सागरोपम की कही गई है। पांचमी पृथिवी में कितनेक नारकियों की जघन्य स्थिति दस सागरोपम की है। असुरकुमार देवों में कितनेक देवों की जघन्य स्थिति दस हजार वर्षकी कही गई है। असुरेन्द्रो को छोडकर भवनपति कितनेक देवों की जघन्य स्थिति दस हजार वर्ष की होती है। असुरकुमार देवों में कितनेक देवो की दस पल्योपम की स्थिति होती है। बादरवनस्पति कायिक जीवों की उत्कृष्ट स्थिति दस हजार वर्ष की होती है। वाणव्यन्तर देवों में कितनेक देवों की जघन्यस्थिति दस हजार वर्ष की होती है। सौधर्म ईशान कल्पों में कितनेक देवों की स्थिति दस पल्योपम की होती है। ब्रह्मलोक कल्प में देवों की उत्कृष्ट स्थिति दस सागरोपम की कही गई है। लान्तक

સ્થિતિ દસ પલ્યોપમની કહી છે ચોથી પૃથ્વીમા દસ લાખ નારકાવાસ છે ચોથી પૃથ્વીમા કેટલાક નારકીઓની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ દસ સાગરોપમની કહી છે પાચમી પથ્વીમાં કેટલાક નારકીઓના જઘન્ય સ્થિતિ દસ સાગરોપમની છે અસુરકુમારે દેવોમા કેટલાક દેવોની જઘન્યસ્થિતિ દસ હજાર વર્ષની કહી છે અસુરેન્દ્રો સિવાયના કેટલાક ભવન-પતિ દેવોની જઘન્ય સ્થિતિ દસ હજાર વર્ષની હોય છે. અસુરકુમાર દેવોમાં કેટલાક દેવોની સ્થિતિ દસ પલ્યોપની હેય છે બાદર વનસ્પતિ કાયિક જીવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ દસ હજાર વર્ષની હોય છે વાણુ વ્યન્તર દેવોમા કેટલાક દેવોની જઘન્ય સ્થતિ દસ હજાર વર્ષની હોય છે સૌધર્મ ઇશાન કલ્પોમાં કેટલાક દેવોની દસ પલ્યોપમની સ્થિતિ હોય છે બ્રહ્મલોક કલ્પમા દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ દસ સાગરો-

मानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। लान्तके कल्पे देवानामस्त्येकेषां जघन्येन दश सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। ये देवा घोषं १ सुघोषं २ महाघोषं ३ नन्दिघोषं ४ सुस्वरं ५ मनोरमं ६ रम्यं ७ रम्यकं ८ रमणीयं ९ मङ्गलावर्त्तं १० ब्रह्मलोकावतंसकं विमानम्=एतेषु एकादशविमानेषु देवत्वेनोत्पन्ना, तेषां खलु देवानामुत्कर्षेण दश सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। ते खलु देवाः दशानामर्द्धमासानामन्ते आनन्ति वा प्राणन्ति वा उच्छ्वसन्ति वा निःश्वसन्ति वा। तेषां खलु देवानां दशभिर्वर्षसहस्रैः आहारसंज्ञा समुत्पद्यते। सन्त्येके भवसिद्धिका जीवा ये दशभिर्भवग्रहणैः सेत्स्यन्ति, भोत्स्यन्ते मोक्ष्यन्ति, परिनिर्वास्यन्ति सर्वदुःखानामन्तं करिष्यन्ति ॥२९॥

कल्पमें कितनेक देवोंकी जघन्यस्थिति दस सागरोपमकी कही गई है। जो देव घोष १, सुघोष २, महाघोष, ३, नन्दिघोष ४, सुस्वर ५, मनोरम६, ६, रम्य ७, रम्यक ८, रमणीय ९ मङ्गलावर्त्त १०, और ब्रह्मलोकावतंसक ११, इन ग्यारह विमानों में देव की पर्याय से उत्पन्न होते हैं, उन देवों की उत्कृष्ट स्थिति दस सागरोपम की कही गई है, व दस पांच आभ्यन्तरिक श्वासोच्छ्वास किया पांच महिनों के अनन्तर करते हैं। इन देवों को दस हजार वर्ष व्यतीत होने पर आहार संज्ञा उत्पन्न होती है। इन देवों में कितनेक ऐसे भी देव होते हैं जो भवसिद्धिक होते हैं। ये दसभव करने के बाद सिद्धि गति को प्राप्त करेंगे, आत्मिक अनंतज्ञानादिक गुणों का भोग करने वाले होंगे, समस्त कर्मों से छूटने वाले होंगे, सब प्रकार से कृतकृत्य हो जायेंगे, और सब प्रकार के दुःखों का अन्त कर देंगे।

પમની હોય છે લાન્તક કલ્પમાં કેટલાક દેવોની જઘન્ય સ્થિતિ દસ સાગરોપમની કહેલ છે જે દેવો (૧) ઘોષ (૨) સુઘોષ, (૩) મહાઘોષ, (૪) નન્દિઘોષ, (૫) સુસ્વર (૬) મનોરમ (૭) રમ્ય (૯) રમણીય (૧૦)મંગલાવર્ત અને (૧૧) બ્રહ્મલોકાવતંસક એ અગિયાર વિમાનોમાં દેવની પર્યાયે ઉત્પન્ન થાય છે, તે દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ દસ સાગરોપમની કહી છે તે દેવો અંદર તથા બહાર શ્વાસોચ્છ્વાસ લેવાની ક્રિયા પાંચ મહિને કરે છે, અને તે દેવોને દસ હજાર વર્ષે આહાર લેવાની અભિલાષા થાય છે તે દેવોમાં કેટલાક એવા દેવો પણ હોય છે કે જે ભવસિદ્ધિક હોય છે તેઓ દસ ભવ કર્યા પછી સિદ્ધિ ગતિ પામશે, આત્મિક અનંત ગુણોનો ઉપભોગ કરનાર થશે સમસ્ત કર્મોથી મુક્ત થશે, બધી રીતે કૃતકૃત્ય થશે, અને બધા પ્રકારનાં દુઃખોનો અન્ત કરશે.

भावार्थ यह पहिले के सूत्रों मे भावार्थ द्वारा स्पष्ट किया जा चुका है कि जहा पर शास्त्र में जो स्थिति जीवों की जघन्य और उत्कृष्ट–कही गई है यदि वह यहां नहीं कही जाती है तथा जो भी और स्थिति कही जाती है "वह मध्यमस्थिति की अपेक्षा कथित की गई है" ऐसा जानना चाहिये। प्रथम पृथिवी में जघन्य स्थिति दस हजार वर्ष की है यह पहिले कई भावार्थों में सूचित किया जा चुका है–वही बात यहां सूत्रकार ने सूत्रद्वारा प्रदर्शित की है। अब यहां जो दस पल्योपम की स्थिति कितनेक नारकियों की प्रगट की गई है-वह मध्यम स्थिति की अपेक्षा कथन है। क्यों कि यहां उत्कृष्ट स्थिति एक सागरोपम की है। चौथी भूमि में नारकियों के नरकावास दस लाख हैं। ये पहिली पृथिवी में तीस लाख हैं, दूसरी में पच्चीसलाख है, तीसरी में पंद्रहलाख हैं, चौथी में दस लाख हैं, पांचमी में तीन लाख, छठी में पांच कम एक लाख और सातमी भूमि में सिर्फ पांच ही नरकावास है। ये नरकावास सातों भूमियों की जितनी २ मोटाई कही गई है उसके ऊपर तथा नीचे का एक एक हजार योजन छोडकर बाकी के मध्यभाग में होते है। इनका विशेष वर्णन अन्य शास्त्रों से जाना जा सकता है। चौथी पृथिवी में उत्कृष्टस्थिति दस सागरोपम की कही

ભાવાર્થ—આગલા સૂત્રોમા ભાવાર્થ દ્વારા એ સ્પષ્ટ કરવામા આવ્યું છે કે જ્યા જ્યા શાસ્ત્રમા જીવોની જે જઘન્ય અને ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ બતાવી છે–તે જો અહી બતાવવામા ન આવે તથા જે કોઈ બીજી સ્થિતિ બતાવવામા આવે છે "તે મધ્યમ સ્થિતિની અપેક્ષાએ કહેલ છે" એમ સમજવુ પહેલી પૃથ્વીમા જઘન્ય સ્થિતિ દસ હજાર વર્ષની છે, એ વાત આગળ કેટલાક ભાવાર્થોમા સૂચિત કરવામા આવી ગઇ છે–એ જ વાત અહી સૂત્રકારે સૂત્રદ્વારા દર્શાવી છે હવે અહી કેટલાક નારકીઓની જે દસ પલ્યોપમની સ્થિતિ દર્શાવી છે તે મધ્યમ સ્થિતિની અપેક્ષાએ કહેવામા આવી છે કારણ કે ત્યા ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ એક સાગરોપમની છે ચોથી ભૂમિમા નારકીઓના દસ લાખ નરકાવાસ છે તે પહેલી પૃથ્વીમાં ત્રીસ લાખ છે, બીજી પૃથ્વીમા પચીશ લાખ છે, ત્રીજીમા પદર લાખ છે, ચોથીમા દસ લાખ છે, પાંચમીમાં ત્રણ લાખ છે, છઠ્ઠીમાં એક લાખમાં પાચ ઓછા છે, અને સાતમીમા ફકત પાંચ જ નરકાવાસ છે તે નરકાવાસ સાતે ભૂમિયોની જેટલી જેટલી જાડાઇ કહેવામાં આવી છે, તેના ઉપર તથા નીચેના એક એક હજાર યોજન છોડીને બાકીના મધ્ય ભાગમા હોય છે તેનું અધિક વર્ણન અન્ય શાસ્ત્રોમાથી જાણી શકાય છે ચોથી પૃથ્વીમા ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ દસ સાગરોપમની કહી છે, એ સ્થિતિ પાચમી નરકમા

अथ एकादश समवायमाह—

मूलम्- एक्कारस उवासगपडिमाओ पण्णत्ताओ, त जहा—दसणसावए१ कयव्वयकम्मे२ सामाइयकडे३ पोसहोववासनिरए४ दिया बभयारी रत्ति परिमाणकडे५ दिया वि राओ वि बभयारी असिणाई वियडभोई मउलिकडे६ सचित्तपरिण्णाए७ आरभपरिणाए८ पेसपरिण्णाए९ उद्दिट्ठभत्तपरिण्णाए१० समणभूए११ यावि भवइ समणाउसो। लोगताओ इक्कारसएहिं एक्कारेहिं जोयणेहिं आबाहाए जोइ

गई है, सो यही स्थिति पांचवे नरक में जघन्य स्थिति हो सकती है। असुरकुमार देवों की जघन्य स्थिति इतनी ही कही गई है। असुरेन्द्रों को छोडकर बाकी के नागकुमार आदि नौ प्रकार के देवों की जघन्य स्थिति दस हजार वर्ष की है। असुरकुमारों में कितनेक देवों की जो यहां दसपल्योपम की स्थिति कही गई है वह मध्यमस्थिति है। वनस्पतिकाय की यहां दस हजार वर्ष की उत्कृष्ट स्थिति कही है वह भवस्थिति की अपेक्षा जाननी चाहिये, क्योंकि कायस्थिति अनन्त उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी प्रमाण है। व्यन्तरदेवों की भी स्थिति जघन्य दस हजार वर्ष की है। सौधर्म ईशान कल्प में जो दस पल्योपम की स्थिति यहां कही गई है वह मध्यम स्थिति की अपेक्षा जानना चाहिये। ब्रह्मलोक कल्पमें देवों की उत्कृष्ट स्थिति दस सागरोपम की है। यही स्थिति लान्तककल्प में जघन्य हो जाती है ॥सू० २९॥

જઘન્ય સ્થિતિ કહી આવ છે અસુરકુમાર દેવોની જઘન્ય સ્થિતિ દસ હજાર વર્ષની કહી છે, કારણ કે ભવનપતિ નિકાયની જઘન્ય સ્થિતિ એટલી જ કહી છે અસુરેન્દ્રો સિવાયના બાકીના નાગકુમાર આદિ નવ પ્રકારના દેવોની જઘન્ય સ્થિતિ દસ હજાર વર્ષની છે અસુરકુમારોમાં કેટલા દેવોની દસ પલ્યોપમની જે સ્થિતિ અહીં કહી છે તે મધ્યમ સ્થિતિ છે વનસ્પતિકાયની અહીં જે દસ હજાર વર્ષની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ કહી છે તે ભવસ્થિતિની અપેક્ષાએ કહેવામાં આવેલ છે એમ સમજવું કારણ કે કાય સ્થિતિ અનંત ઉત્સર્પિણી અને અવસર્પિણી પ્રમાણ છે વ્યન્તર દેવોની સ્થિતિ પણ દસ હજાર વર્ષની છે-સૌધર્મ ઇશાન કલ્પમાં અહીં જે દસ પલ્યોપમની સ્થિતિ કહી છે તે મધ્યમ સ્થિતિની અપેક્ષાએ સમજવી બ્રહ્મલોક કલ્પમાં દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ દસ સાગરોપમની છે-એજ સ્થિતિ લાન્તક કલ્પમાં જઘન્ય રૂપ આવ છે ॥સૂ ૨૯॥

संते पण्णत्ते। जंबूद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स एक्कारसेहिं एक्कवीसेहिं जोयणेहिं जोइसे चारं चरइ। समणस्स णं भगवओ महावीरस्स एक्कारस गणहरा होत्था, तं जहा–इंदभूई, अग्गिभूई, वायुभूई, विअत्ते, सोहम्मे, मंडिए, मोरियपुत्ते, अकंपिए, अयलभाए, मेअज्जे पभासे। मूले नक्खत्ते एक्कारसतारे पण्णत्ते। हेट्ठिम गेविज्जयाणं वाणं एक्कारसमुत्तरं गेविज्ज विमानसतं भवइत्तिमक्खायं। मंदरेणं पव्वए धरणितलाओ सिहरतले एक्कारसभागपरिहीणे उच्चत्तेणं पण्णत्ते॥सू.३०॥

टीका—'एक्कारस' इत्यादि। एकादश 'उवासग पडिमाओ' उपासन्ते=सेवन्ते श्रमणान्=साधून् इति उपासकाः=श्रावकाः, तेषां प्रतिमाः=अभिग्रहरूपा उपासकप्रतिमाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–'दंसणसावए' दर्शनश्रावकः, तत्र–दर्शनं=सम्यक्त्वं तत्प्रतिपन्नः श्रावको दर्शनश्रावकः। यद्यपीहैकादशविधत्वं प्रतिमानमुक्तम्, तथापि प्रतिमा प्रतिमावतोरभेदोपचारात्प्रतिमावत एव निर्दे-

---

अब सूत्रकार ग्यारवें समवाय का कथन करते है—'एगारस इत्यादि।

टीकार्थ–उपासकों की ग्यारह प्रतिमा होती हैं। साधुओंकी जो सेवा करते हैं उनका नाम उपासक है। प्रतिमा नाम अभिग्रहविशेष का है। इनमें अनेकविध अभिग्रह होते हैं, अतः प्रतिमाएँ अभिग्रहरूप ही जाननी चाहिये। वे इस प्रकार से है—दर्शनश्रावक—सम्यक्त्व को स्वीकार करने वाला श्रावक दर्शनश्रावक कहा गया है। यद्यपि यहां पर प्रतिमाओं में ग्यारह प्रकारता कथित हुई है फिर भी प्रतिमा और प्रतिमावालों में अभेदोपचार से प्रतिमावान् का निर्देश किया गया है। इस प्रतिमा का काल एक

હવે સૂત્રકાર અગિયારમું સમવાય કહે છે—'एगारस इत्यादि।

ટીકાર્થ–ઉપાસકોની અગિયાર પ્રતિમા હોય છે. સાધુઓની જે લોકો સેવા કરે છે તેમને ઉપાસક કહે છે પ્રતિમા એટલે પ્રતિજ્ઞા તેમાં અનેક પ્રકારના અભિગ્રહ હોય છે, તેથી તે પ્રતિમાઓને અભિગ્રહરૂપ જ સમજવી. તે પ્રતિમાઓ આ પ્રમાણે છે–दर्शन श्रावक–સમ્યક્ત્વ અંગીકાર કરનાર શ્રાવકને દર્શન શ્રાવક કહેવામા આવેલ છે. જો કે અહીં પ્રતિમાના અગિયાર ભેદ બતાવ્યા છે, તો પણ પ્રતિમા અને પ્રતિમાવાળામા અ દોપચારની દૃષ્ટિએ પ્રતિમાવાળાનો નિર્દેશ કરાયો છે. આ પ્રતિમાનો કાળ એક

शङ्कः। शङ्काकाङ्क्षादिशल्यरहितस्याणुव्रतादिविकलस्य सम्यग्दर्शनस्य यत् मासमवधि स्वीकरणं सा प्रतिमा प्रथमा। 'कयव्वयकम्मे' कृतव्रतकर्मा=कृतं विहितं व्रतानाम्=अनुव्रतादीनां कर्म=श्रवण१ ज्ञान२ ग्रहण३ प्रतिसेवन४ लक्षणं चतुर्विधं कर्म येन स कृतव्रतकर्मा, प्रतिपन्नाणुव्रतादिरित्यर्थः। तत्र श्रवणम्=आकर्णनम्, ज्ञानम्=श्रुतस्यावबोधः, ग्रहणम्=अवबुद्धस्य स्वीकरणम्, प्रतिसेवन=स्वीकृतस्य परिपालनम्, इति द्विमासावधिर्द्वितीया उपासक प्रतिमा। सामाइयकए' सामायिककृत =कृत=विहितं सामायिकं=सावद्ययोगपरिवर्जन निरवद्ययोगसेवनरूप येन स सामायिककृत, आहिताग्न्यादित्वात् निष्ठान्तस्य परनिपात। प्रमतिप न्नपौषधस्य दर्शनव्रतोपेतस्य प्रतिदिनमुभयकाल मासत्रय यावत् सामायिककरणरूपा

मास का है। इस प्रतिमा में सम्यक् दर्शन को शंका कांक्षा आदि शल्य से रहित बनाया जाता है। इस प्रतिमाधारी के अणुव्रत नहीं होते हैं। यह पहिली प्रतिमा है१। दूसरी प्रतिमा का नाम कृतव्रतकर्मा है-इस प्रतिमा का काल दो मास का है, इस प्रतिमा को धारण करने वाला उपासक (श्रावक) अपने स्वीकृत अणुव्रतादिकों के श्रवण, ज्ञान, ग्रहण और प्रतिसेवन, इन चार प्रकार की क्रिया को करता है। अर्थात्-इस प्रतिमा में अणुव्रतादिकों का श्रवण करना१, सुने हुए का बोध करना२, जाने हुए का ग्रहण करना३, ग्रहण किये हुए का पालन करना४ होता है२। तीसरी प्रतिमा का नाम सामायिक कृत है, इस प्रतिमावाला श्रावक जो कि सम्यग्दर्शन और अणु व्रतादि से युक्त होता है, तथा पौषध धारण करने रूप नियम से रहित होता है, दोनों काल प्रतिदिन, तीनमासतक सावद्ययोग परिवर्जन रूप सामायिक करता है। सावद्ययोग का परित्याग

માસનો છે આ પ્રતિમામાં સમ્યક્દર્શનને શંકા કાંક્ષા આદિ શલ્યોથી રહિત બનાવવામાં આવે છે તે પ્રતિમાધારીના અણુવ્રત હોતા નથી આ પહેલી પ્રતિમા છે (૧) બીજી પ્રતિમાનું નામ કૃતવ્રતકર્મા છે-તે પ્રતિમાનો સમય બે માસનો હોય છે તે પ્રતિમા ધારણ કરનાર ઉપાસક પોતે અંગીકાર કરેલ અણુવ્રતાદિનું શ્રવણ, જ્ઞાન, ગ્રહણ અને પ્રતિસેવન એ ચાર પ્રકારની ક્રિયાઓ કરે છે એટલે કે આ પ્રતિમા ધારણ કરનારે અણુવ્રતાદિનું શ્રવણ કરવું સાંભળેલાનો બોધ કરવો અવબુદ્ધ ગ્રહણ કરવું અને ગ્રહણ કરેલ પાળવું, તે ચાર ક્રિયાઓ કરવાની હોય છે (૨) ત્રીજી પ્રતિમાનું નામ સામાયિકકૃત છે આ પ્રતિમા ધારક શ્રાવક કે જે સમ્યગ્દર્શન અને અણુવ્રતાદિથી યુક્ત હોય છે તથા પૌષધ ધારણ કરવા રૂપ નિયમથી રહિત હોય છે ત્રણ માસ સુધી દરરોજ બે વખત સાવદ્યયોગ પરિવર્જનરૂપ સામાયિક કરે છે

तृतीया प्रतिमा। 'पोसहोववासनिरए' पोषधोपवासनिरतः पोषं=पुष्टिं श्रुतचारित्रलक्षणधर्मस्य धत्ते पोषधम् आहारत्यागादिकानुष्ठानम्, तेनोपवासः=अहोरात्र यावदवस्थानं पोषधोपवासः। अथवा-पोषधं-पर्वदिनमष्टम्यादि, तत्र उपवासः= आहारशरीरसत्काराब्रह्मचर्यसावद्यव्यापारपरिवर्जनपूर्वकं वसन पोषधोपवासः, तत्र-निरतः=आसक्तः पोषधोपवासनिरतः। इति चतुर्थी प्रतिमा। पूर्वोक्त प्रतिमात्रययुक्तेनाष्टमीचतुर्दश्यमावास्यापौर्णमासीष्वाहारपोषधादिचतुर्विधं पोषधं प्रतिपद्यमानेन चतुर्भिर्मासैश्चतुर्थी प्रतिमा समाराधनीया भवतीतिभावः। पञ्चभिर्मासैः समाराधनीयायां पञ्चमीप्रतिमायां 'दियावभयारी रत्तिं परिमाणे कडे'

करना और निरवद्ययोग का सेवन करना इसी का नाम सामायिक है३। पोषधोपवास निरत यह चौथी प्रतिमा है। श्रुतचारित्ररूपधर्म की पुष्टि जिससे हो उसका नाम पोषध है। अर्थात्-आहार आदि का त्याग रूप जो अनुष्ठान है वही पोषध है। इसे त्यागपूर्वक जो उपवास-एक दिन रात तक रहना होता है उसका नाम पोषधोपवास है। अथवा--अष्टमी आदि जो पर्व के दिनस है उनका नाम पोषध है, इन दिनों में-उपवास में-आहार, शरीरसंस्कार, अब्रह्म और सावद्यव्यापार; इनका त्याग पूर्वक रहना पोषधोपवास है। इस प्रतिमा के पालने की अवधि चार मास की है। इस प्रतिमा के पालन करने में निरत उपासक को पूर्वोक्त प्रतिमात्रय के आचारों का आराधन करना आवश्यक है। अष्टमी, चतुर्दशी, अमावस्या और पौर्णमासी ये पर्वदिन है४। पांचवीं प्रतिमा के पालन करने की अवधि पांच मास की है-इस प्रतिमा का पालक दिन में ब्रह्मचारी

સાવદ્યયોગનો પરિત્યાગ કરવો અને નિરવદ્યયોગનું સેવન કરવું તેનું નામ સામાયિક છે. (૩) પોષધોપવાસનિરત એ ચોથી પ્રતિમા છે શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની જેનાથી પુષ્ટિ થાય તેનું નામ પોષધ છે એટલે કે આહાર આદિના ત્યાગરૂપ જે અનુષ્ઠાન છે એનું નામ જ પોષધ છે આ ત્યાગ પૂર્વક એક દિવસ અને એક રાત જે ઉપવાસ કરવો પડે છે તેને પોષધોપવાસ કહે છે અથવા આઠમ આદિ જે પર્વના દિવસો છે તેમનું નામ પોષધ છે. તે દિવસોમાં-ઉપવાસમાં-આહાર, શરીર સંસ્કાર, અબ્રહ્મ, અને સાવદ્યવ્યાપાર, એ બાબતોના ત્યાગપૂર્વક રહેવું તે પોષધોપવાસ કહેવાય છે. આ પ્રતિમા પાળવાનો સમય ચાર માસનો છે. આ પ્રતિમાની ઉપાસના કરનાર ઉપાસકે પૂર્વોકત ત્રણે પ્રતિમાનું આરાધન કરવું આવશ્યક ગણાય છે આઠમ, ચૌદશ, અમાવાસ્યા અને પૂર્ણિમા, એ પર્વદિનો છે (૪) પાંચમી પ્રતિમાનું પાલન કરવાનો સમય પાંચ માસનો છે આ પ્રતિમાનું પાલન કરનાર દિવસે બ્રહ્મચારી રહે છે અને રાત્રે મૈથુન સેવનની

दिवा ब्रह्मचारी रात्रौ परिमाणकृत । षष्ठी प्रतिमायां 'दिआवि राओ वि बंभयारी' दिवापि रात्रावपि ब्रह्मचारी 'असिणाई' अस्नायी स्नानपरिवर्जित', 'वियडभोई' विकटभोजी=विकटप्रकाशे भोक्तुं शीलमस्येति विकटभोजी=रात्रौ तु सर्वथा न भुङ्क्ते किन्तु दिवापि प्रकाशयुक्त एव प्रदेशे भोक्ता, 'मउलिकडे' मुकुलीकृतः=एक कक्ष वस्त्रधारी च भवेत्। इय षष्ठी प्रतिमा षण्मासैः समाराधनीया 'सचित्त =परिण्णाए' सचित्त परिज्ञात =सचित्तद्रव्यज्ञानपूर्वककृततद्वस्तुपरित्यागः। पूर्वोक्त षट् प्रतिमाराधकस्य प्रासुकाहारयुक्तस्य सप्तमासान् यावत् सप्तमी प्रतिमा भवति। 'आरंभपरिण्णाए' आरम्भपरिज्ञातः=स्वयं षट्कायारम्भपरित्यागी। पूर्वोक्त सप्तप्रतिमाकारिणोऽष्टौ मासान् यावत् स्वकृतारम्भपरिवर्जनरूपाऽष्टमी प्रतिमा

और रात्रि में मैथुन सेवन की मर्यादा करने वाला होता है५। छठवीं प्रतिमा में दिन में और रात्रि में दोनों समय में ब्रह्मचर्यव्रत का पालन किया जाता है। स्नान करने का परित्याग हो जाता है। विकट अर्थात् प्रकाशयुक्त स्थान में भोजन करना होता है। रात्रि में तो भोजन करने का सर्वथा परित्याग हो ही जाता है। इस प्रतिमा धारक एककक्ष वस्त्र धारी (धोती की एक लांग खुली रखने वाला) होता है६। सातवीं प्रतिमा का नाम सचित्तपरिज्ञात है। इस प्रतिमा के धारण करने में सचित्त द्रव्य का ज्ञानपूर्वक सचित्त वस्तु का परित्याग हो जाता है। तात्पर्य यह है कि सातवीं प्रतिमा का आराधक–उपासक पहिले की छ प्रतिमाओं के आचार का पालन करता है और प्रासुक आहारका सेवन करता है। अप्रासुक आहार का नहीं७। आठवीं प्रतिमा का नाम आरम्भपरिज्ञात है। इसके आराधन करने का काल आठ मास तक का है। इसके पालक को स्वयं

મર્યાદ કરનાર હોય છે (૫) છઠ્ઠી પ્રતિમા ધારણ કરનાર રાત્રે તથા દિવસે બન્ને સમય બ્રહ્મચર્ય વ્રતનું પાલન કરે છે સ્નાન કરવાનો પરિત્યાગ કરે છે વિકટ પ્રકાશ યુક્ત સ્થાનમાં ભોજન કરે છે, રાત તો ભોજન લેવાનો સર્વથા પરિત્યાગ કરે છે આ પ્રતિમા પાળનાર એકકક્ષ વસ્ત્રધારી હોય છે (એક બાજુ પર વસ્ત્ર રાખનાર) હોય છે (૬) સાતમી પ્રતિમાનું નામ "सचित्तपरिज्ञात" છે આ વ્રત ધારણ કરનારી સચિત્ત દ્રવ્યજ્ઞાન પૂર્વક સચિત્ત વસ્તુનો પરિત્યાગ કરાય છે એટલે કે સાતમી પ્રતિમાનો આરાધક ઉપાસક આગળની છ પ્રતિમાઓના આચારોનું પાલન કરે છે, અને પ્રાસુક આહારનું (જીવ રહિત આહારનું) સેવન કરે છે અપ્રાસુક આહારનું નહીં (૭) આઠમી પ્રતિમાનું નામ आरम्भपरिज्ञात છે તેની આરાધનાનો કાળ આઠ માસનો છે તેનો આરાધક જાતે આરંભનો ત્યાગ કરે છે તે આરંભત્યાગી પૂર્વોક્ત

विज्ञेया। 'पेसपरिण्णाए' प्रेष्यपरिज्ञातः=अन्यद्वाराऽऽरम्भ परित्यागीत्यर्थः। पूर्वोक्तसकलप्रतिमानुष्ठानशीलस्य श्रावकस्य षट्कायारम्भं परैरप्यकारयतो नव मासावधि नवमी प्रतिमा भवति। 'उद्दिट्ठभत्तपरिण्णाए' उद्दिष्टभक्तपरिज्ञातः, उद्दिष्टं स्वोद्देशेन कृतं भक्तं परिज्ञातं प्रत्याख्यातं येन स उद्दिष्टभक्तपरिज्ञातः स्वनिमित्तसंपादिताहारपरित्यागी। पूर्वोक्त नव प्रतिमायुक्तस्याऽऽधाकर्माद्याहार परिहारिणः क्षुरमुण्डितशिरसः सशिखस्य वा 'गृहे सम्बन्धेकेनापि पृष्टस्य परि-

आरंभ करने का त्याग हो जाता है। यह आरंभत्यागी पूर्वोक्त सात प्रतिमाओं के आहार का पालन करता हुआ ऐसा कोई स्वयं आरंभ नहीं करता है कि जिस में षट्काय के जीवों की विराधना हो८। नवमीं प्रतिमा का नाम प्रेष्यपरिज्ञात है, इसके पालन का समय नव मास तक का है। इसमें दूसरों से भी षट्काय के आरम्भ कराने का सर्वथा त्याग कर दिया जाता है। इस प्रतिमा का आराधक प्राणी पूर्वोक्त आठ प्रतिमाओं के आचार का पालन करता हुआ इस प्रतिमा का पालन करने वाला होता है९। दशवीं तिमा का नाम उद्दिष्टभक्तपरिज्ञात है। इसमें अपने उद्देश्य से बनाये आहार का परिज्ञान होने पर परित्याग हो जाता है। इस प्रतिमा का आराधक जीव अपने लिये किसी से भी आहार नहीं बनवाता है। तथा यदि कोई अपने लिये आहार बना लेता है और उसे यह ज्ञात हो जाता है कि इसने मेरे निमित्त को लेकर आहार बनाया है तो वह इस प्रकार के आहार को अपने उपयोग में नहीं लेता है। उसका परित्याग कर देता है, क्यों कि इस प्रकार का आहार आधा-

સાત પ્રતિમાઓના આચારનું પાલન કરેલ છે. અને એવો કોઇ પણ આરંભ કરતો નથી કે જેમા છ કાયના જીવોની વિરાધના થાય (૮) નવમી પ્રતિમાનું નામ પ્રેષ્યપરિજ્ઞાત છે. તેના પાલનનો કાળ નવ માસનો છે તે પ્રતિમાના આરાધકે બીજા લોકો પાસે પણ છ કાયના જીવોની વિરાધના થાય એવો આરંભ કરાવવાનો પરિત્યાગ કરવો પડે છે. આ પ્રતિમાનું આરાધન કરનાર જીવ પૂર્વોકત આઠ પ્રતિમાઓના આચારનું પાલન કરતો કરતો આ પ્રતિમાનું પાલન કરનાર થાય છે (૯) દસમી પ્રતિમાનું નામ 'उद्दिष्टभक्तपरिज्ञात' છે તે પાળનાર પોતાને નિમિત્તે આહાર બન્યો છે એવું જાણવા મળેથી તેનો પરિત્યાગ કરે છે—આ પ્રતિમાનો આરાધક જીવ પોતાને માટે કોઇની પણ પાસે આહાર બનાવરાવતો નથી તથા કોઇ તેના માટે આહાર બનાવે અને તે વાતની તેને ખબર પડે કે તેણે મારા નિમિત્તે આહાર બનાવ્યો છે, તો તે એવા આહારને પોતાના ઉપયોગમા લેતો નથી-તેનો પરિત્યાગ કરે છે, કારણ કે તે પ્રકારનો આહાર આધાકર્મ આદિ દોષોથી દૂષિત ગણાય છે તે

दिवा ब्रह्मचारी रात्रौ परिमाणकृत । षष्ठी प्रतिमायां 'दिआवि राओ वि बंभयारी' दिवापि रात्रावपि ब्रह्मचारी 'असिणाई' अस्नायी स्नानपरिवर्जित, 'वियडभोई' विकटभोजी=विकटप्रकाशे भोक्तु शीलमस्येति विकटभोजी=रात्रौ तु सर्वथा न भुङ्क्ते किन्तु दिवापि प्रकाशयुक्त एव प्रदेशे भोक्ता, 'मउलिकडे' मुकुलीकृत=एक कक्ष वस्त्रधारी च भवत् । इय षष्ठी प्रतिमा षण्मासैः समाराधनीया 'सचित्त =परिण्णाए' सचित्त परिज्ञात =सचित्तद्रव्यज्ञानपूर्वककृततद्वस्तुपरित्याग । पूर्वोक्त षट् प्रतिमाराधकस्य प्रासुकाहारयुक्तस्य सप्तमासान यावत् सप्तमी प्रतिमा भवति। 'आरंभपरिण्णाए' आरम्भपरिज्ञात =स्वय पट्कायारम्भपरित्यागी। पूर्वोक्त सप्तप्रतिमाकारिणोऽष्टौ मासान् यावत् स्वकृतारम्भपरिवर्जनरूपाऽष्टमी प्रतिमा

और रात्रि में मैथुन सेवन की मर्यादा करने वाला होता है५। छठवीं प्रतिमा में दिन में और रात्रि में दोनों समय में ब्रह्मचर्यव्रत का पालन किया जाता है। स्नान करने का परित्याग हो जाता है। विकट अर्थात् प्रकाशयुक्त स्थान में भोजन करना होता है। रात्रि में तो भोजन करने का सर्वथा परित्याग हो ही जाता है। इस प्रतिमा धारक एककक्ष वस्त्र धारी (धोती की एक लाग खुली रखने वाला) होता है६। सातवीं प्रतिमा का नाम सचित्तपरिज्ञात है। इस प्रतिमा के धारण करने में सचित्त द्रव्य का ज्ञानपूर्वक सचित्त वस्तु का परित्याग हो जाता है। तात्पर्य यह है कि सातवीं प्रतिमा का आराधक–उपासक पहिले की छह प्रतिमाओं के आचार का पालन करता है और प्रासुक आहारका सेवन करता है। अप्रासुक आहार का नहीं७। आठवीं प्रतिमा का नाम आरम्भपरिज्ञात है। इसके आराधन करने का काल आठ मास तक का है। इसके पालक को स्वयं

મર્યાદા કરનાર હોય છે (૫) છઠ્ઠી પ્રતિમા ધારણ કરનાર રાત્રે તથા દિવસે, બન્ને સમય બ્રહ્મચર્ય વ્રતનું પાલન કરે છે સ્નાન કરવાનો પરિત્યાગ કરે છે વિકટ પ્રકાશ યુક્ત સ્થાનમાં ભોજન કરે છે, રાત્રે તો ભોજન લેવાનો સર્વથા પરિત્યાગ કરે છે આ પ્રતિમા પાળનાર એકકક્ષ વસ્ત્રધારી હોય છે (એક બાજુ પર વસ્ત્ર રાખનાર) હોય છે (૬) સાતમી પ્રતિમાનું નામ "सचित्तपरिज्ञात" છે આ વ્રત ધારણ કરવાથી સચિત્ત દ્રવ્યજ્ઞાન પૂર્વક સચિત્ત વસ્તુનો પરિત્યાગ કરાય છે એટલે કે સાતમી પ્રતિમાનો આરાધક ઉપાસક આગળની છ પ્રતિમાઓના આચારોનું પાલન કરે છે, અને પ્રાસુક આહારનું (દોષ રહિત આહારનું) સેવન કરે છે અપ્રાસુક આહારનું નહી (૭) આઠમી પ્રતિમાનું નામ आरम्भपरिज्ञात છે તેની આરાધનાનો કાળ આઠ માસનો છે તેનો આરાધક જાતે આરંભનો ત્યાગ કરે છે તે આરંભત્યાગી પૂર્વોક્ત

लप्रवेशे सति 'श्रमणोपासकाय प्रतिमाप्रतिपन्नाय भिक्षां देहि' इति ब्रुवाणस्य 'कस्त्वमिति पृष्टस्य 'श्रमणोपासकोऽहं' मितिब्रुवाणस्य एकादशमासान यावदे- कादशी प्रतिमा भवति । 'लोगंताओ' लोकान्तात्=तिर्यग्लोकान्तात् 'एक्कारसएहिं एक्कारेहिं जोयणेहिं' एकादशशतैः एकादशभिर्योजनैः एकादशाधिकैकादशतयोजनैः कृत्वा 'अबाहाए' अबाधया अन्तरेण 'जोइसंते' ज्योतिषान्तः=ज्योतिश्च- क्रान्तभागः प्रज्ञप्तः, अर्थात्--लोकान्तादेकादशाधिकैकादशशतयोजनदूरे ज्योतिश्चक्रं प्रारभ्यते । जम्बूद्वीपे द्वीपे मन्दरस्य पर्वतस्य 'एकारससएहिं एक्कवीसेहिं जोय- णेहिं' एकादशशतैरेकविंशत्यायोजनैः एकविंशत्यधिकैकादशशतयोजनैः कृत्वा दूरेण 'जोइसं' ज्योतिषं ज्योतिश्चक्रं 'चारं' भ्रमणं 'चरइ' चरति=करोति । श्रमणस्य खलु भगवतो महावीरस्य एकादश गणधरा आसन्, तद्यथा-'इंदभूइ' इन्द्रभूतिः१,

तियों का यह पालन करता हुआ भिक्षा के निमित्त जब अपने कुलके घरोंमें जाता है तब वहां-"प्रतिमाप्रतिपन्न श्रमणोपासक के लिये भिक्षा दो" इस प्रकार कहता है। जब उससे कोई पूछता है कि तुम कौन हो तब उत्तर में यह कहता है कि मै श्रमणोपासक हूं। जब कोई वन्दना करने लगता है तो वह कहता है मैं श्रमणोपासक-श्रावक हू। इस प्रतिमा को आराधन करने का काल ग्यारहमास हैं। ग्यारह महीने तक इस प्रतिमा का पालम किया जाता है। लोकान्त से अर्थात् तिर्छालोक के अन्तसे ग्यारह सो ग्यारह (११११) योजन दूर पर ज्योतिश्चक्र प्रारंभ होता है। जंबूद्वीप नामके द्वीप में ग्यारहसौ इकीस (११२१) योजन सुमेरु को छोडकर ज्योतिश्चक्र भ्रमण करता है। श्रमण भगवान् महावीर के ग्यारह गणधर थे। वे इस प्रकार से हैं-इंद्रभूति१, अग्निभूति२,

निमित्ते पोताना कुटुंबीओनां घरे जाय छे त्यारे ते आ प्रमाणे बोले छे "प्रतिमा युक्त श्रमणोपासकने माटे भिक्षा आपो" ज्यारे तेने कोइ पुछे छे के "तमे कोण छो ?" त्यारे ते जवाब आपे छे के "हुं श्रमणोपासक छुं." जो तेमने कोइ वंदणा करवा लागे छे तो ते कहे छे के "हुं श्रमणोपासक श्रावक छुं" अगियार मास सुधी आ प्रतिमानु पालन करवामा आवे छे (११)

लोकान्तथी एटले के तिरछा लोकना अन्तथी एक हजार एक सो अगियार (११११) योजनने अंतरे ज्योतिश्चक्रनो प्रारंभ थाय छे जंबूद्वीप नामना द्वीपमां अगियार सो एकवीस (११२१) योजन प्रमाणु सुमेरुने छोडीने ज्योतिश्चक्र भ्रमण करे छे. श्रमण भगवान महावीरना अगियार गणधर हता, तेमना नाम नीचे प्रमाणे छे-

ज्ञातविषय जानामि अपरिज्ञातविषय न जानामी' ति ब्रुवाणस्य दशमासान् यावद्दशमी प्रतिमा भवति। 'समणभूए यावि भवइ समणाउसो' श्रमणभूतश्चापि भवति श्रमणायुष्मन्! हे श्रमण! हे आयुष्मन्जम्बूः! पूर्वोक्त दशविधप्रति मामतिपन्न श्रावकः श्रमणभूतः श्रमणसदृशश्चापि भवति। भूतशब्दः सदृशार्थक। अय भाव –उपरिसमुदित सकलप्रतिमासमुपेतस्य क्षुरमुण्डितशिरसो लुञ्चितशिरसो वा परिगृहीतसाधुवेषस्य ईर्यासमित्यादिक श्रमणधर्ममनुपालयतो भिक्षार्थ स्वक

कर्म आदि दोषों से दूषित माना गया है। यह अपने बालों को क्षुरा से बनवाता है और शक्ति हो तो केशलुंचन भी करवाता है। यदि शिखा रखना चाहे तो शिखा रख सकता है। घर के संबंध में यदि कोई इससे पूछता है तो यह जिस विषय को जानता है उस विषय में 'हाँ' कर देता है और जिस विषय को नहीं जानता है उस विषय में 'ना' कर देता है। इस प्रतिमा के पालन करने का काल दस महिने तक का है१०। ग्यारहवीं प्रतिमा का नाम श्रमणभूत है जबूस्वामी को समझाते हुए सुधर्मा स्वामी कहते हैं कि हे श्रमण आयुष्मन्! जंबू! इन पूर्वोक्त दश विध प्रतिमाओं को पालन करता हुआ श्रावक ग्यारहवी प्रतिमाको स्वीकार करनेपर श्रमण जैसा हो जाता है। यहां भूतशब्द सदृश अर्थ का वाचक है। इसका भाव इस प्रकार है–जब यह पूर्वोक्त इन समस्त प्रतिमाओं के पालन करने में निष्णात हो जाता है तब यह चाहे अपने केशों को क्षुरा से उतरवाता या इनका स्वयं लुञ्चन करे साधु जैसा हो जाता है। इसकी वेषभूषा साधु जैसी होती है। ईर्यासमिति आदि पांच समि

અસ્ત્રાથી પેતાના વાળ કપાવે છે અને તેની ઈચ્છા થાય તો શિખા રાખી શકે છે તેને કોઇ ઘરના વિષયમાં પૂછે તો જે વિષયની તેને ખબર હોય તે વિષયનો જવાબ હા મા આપે છે અને જે બાબતની તેને ખબર ન હોય તેનો જવાબ 'ના' માં જ દેછે આ પ્રતિમાની આરાધનાનો કાળ દસ માસનો છે (૧૦) અગિયારમી પ્રતિમાનું નામ 'श्रमणभूत' છે જબૂસ્વામીને સમજાવતા સુધર્મા સ્વામી કહે છે કે હે શ્રમણ આયુષ્મન્! જબૂ! આ પૂર્વોક્ત પ્રકારની પ્રતિમાઓનુ પાલન કરનાર શ્રાવક શ્રમણ જેવો "થઇ જાય છે" અહીં ભૂત શબ્દનો અર્થ સમાન' થાય છે તેનો ભાવાર્થ આ પ્રમાણે છે–જ્યારે તે પૂર્વોક્ત સઘળી પ્રતિમાઓનુ પાલન કરવામા નિષ્ણાત થઇ જાય છે ત્યારે સાધુ જેવો જ બની જાય છે–પછી ભલે તે વાળને અસ્ત્રા વડે મુડાવતો હોય કે પોતે જ તેનો લોચ કરતો હોય પહેરવેશ સાધુ જેવો હોય છે ઇર્યાસમિતિ આદિ પાંચ સમિતિઓનુ પાલન કરતો એવો તે જ્યારે ભિક્ષાને

योजनसहस्रे एकादशभिरपहृते नवयोजन सहस्रं लभ्यते। तस्मिन् मन्दरस्य पृथ्वीसमतलस्य दशसहस्रयोजनप्रमाणविष्कम्भतो निष्कासितेऽवशिष्यते एकयोजनसहस्रम्। एतत् एकयोजनसहस्रं मन्दरशिखरस्य विष्कम्भो भवतीति ॥सू.३०॥

मूलम्—इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं इक्कारस पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। पंचमीए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं एक्कारस सागरोवमाई ठिई पण्णत्ता। असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगइयाणं एक्कारस पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगइयाणं देवाणं एक्कारस पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। लंतए कप्पे अत्थेगइयाणं देवाणं एक्कारस सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। जे देवा बंभं सुबंभं बंभावत्तं बंभप्पभं बंभकंतं बंभवण्णं बंभलेसं बंभज्झयं बंभसिंगं बंभसिट्ठं बंभकूडं बंभुत्तरवडिंसगं विमाणं देवत्ताए उववण्णा, तेसि णं देवाणं एक्कारस सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। ते णं देवा एक्कारसण्हं अद्धमासाणं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा। तेसि णं देवाणं एक्कारसण्हं वाससहस्साणं आहारट्ठे समुप्पज्जइ। संतेगइया भवसिद्धिया जीवा जे एक्कारसहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति, बुज्झिस्संति, मुच्चिस्संति, परिनिव्वाइस्संति, सव्वदुक्खाणमंतं करिस्संति ॥सू.३१॥

भाग देने पर नव हजार लब्ध रहता है। उस नौ हजार लब्ध को, मन्दर पर्वत के पृथ्वी समतलस्थित दस हजार योजन विष्कम्भ में से घटाने पर एक हजार योजन अवशिष्ट रहता है। यह एक हजार योजन मन्दर पर्वत के शिखर का विष्कम्भ समझना चाहिये ॥सू. ३०॥

નને, મન્દર પર્વતના પૃથ્વીસમતલ વિસ્તાર દસ હજાર યોજનમાંથી બાદ કરતા એક હજાર યોજન બાકી રહે છે તો મન્દર પર્વતના શિખરનો વિષ્કંભ–વિસ્તાર એક હજાર યોજન સમજ। ॥સૂ ૩૦॥

'अग्गिभूई' अग्निभूतिः२, 'वायुभूइ' वायुभूति , 'विअत्ते' व्यक्त ४, 'सोहम्मे' सुधमा, मंडिए' मण्डित ६, 'मोरियपुत्ते' मौर्यपुत्र , 'अकपिए' अकम्पितः८, अयलभाए' अचलभ्राता९, 'मअज्जे' मतार्यः१०, 'पभास''प्रभासः११। मूलनक्षत्र मेकादशतारक प्रज्ञप्तम्। हेट्ठिम गेविज्जयाणं देवाणं' अधस्तनग्रैवेयकाणां देवानाम् एकादशोत्तर ग्रैवेयकविमानशतम्=एकादशाधिकैकशतग्रैवेयकविमानानि सन्ति 'त्तिमक्खायं' इत्याख्यातम्। मन्दरः खलु पर्वत धरणितलाओ सिहरतले' धर णितलात् शिखरतले=धरणितलापेक्षया शिखरप्रदेशे 'एकारसभागपरिहीणे' एका दशभागपरिहीणः एकादशभागन्यून उच्चत्वेन प्रज्ञप्त । अत्रेदं बोध्यम्-मन्दरस्य पृथ्वीसमतले यावान् विष्कम्भस्ततो मन्दरोच्चताया एकादश भागमपकृष्य शिखरे तद्विष्कम्भो बोध्य । अयं भाव -मन्दरपर्वतस्य पृथ्वीसमतले दशसहस्रयोजनप रिमितो विष्कम्भ , उच्चता च मन्दरस्य नवनवतिसहस्रयोजनपरिमिता। नवनवति

वायुभूति३, व्यक्तस्वामि४, सुधर्मास्वामि५, मण्डित६, मौर्यपुत्र७, अकम्पित८, अचलभ्राता९, मेतार्य१० और प्रभास ११। मूलनक्षत्र ग्यारह ताराओं वाला है। अधस्तन ग्रैवेयक निवासी देवों के एक सौ ग्यारह (१११) ग्रैवेयक विमान हैं। इस प्रकार प्रभुने कहा है। सुमेरु पर्वत के धरणितल की अपेक्षा शिखरप्रदेश में एकादशभाग न्यून है। यहाँ यह समझना चाहिये कि-मंदर पर्वत का पृथ्वी के समतल भाग में जितना विष्कम्भ (स्थूलता) है, उसमें से मन्दर पर्वत की उच्चता का ग्यारहवाँ भाग निकाल लेने पर जो अवशिष्ट रहता है वह मन्दर पर्वत के शिखर का विष्कम्भ होता है। इसका खुलासा इस प्रकार है-पृथ्वी के समतल में मन्दर (मेरु)पर्वत का विष्कम्भ दस हजार योजन का है और मन्दर पर्वत की ऊँचाई निन्यानवे हजार योजन है। निन्यानवे हजार को ग्यारह का

(१) ઇન્દ્રભૂતિ, (२) અગ્નિભૂતિ, (૩) વાયુભૂતિ, (૪) વ્યક્ત, (५) સુધર્મા, (६) મંડિત, (७) મૌર્યપુત્ર (८) અકંપિત (९) અચલભ્રાતા, (१०) મેતાર્ય અને (११) પ્રભાસ મૂળ નક્ષત્ર અગિયાર તારાઓવાળું છે અધસ્તન ગ્રૈવેયક નિવાસી દેવોનાં એક સો અગિયાર (१११) ગ્રૈવેયક વિમાન છે એમ ભગવાને કહ્યું છે સુમેરુ પર્વત વિસ્તારમાં ધરણિતલની અપેક્ષાએ શિખર પ્રદેશમાં અગિયાર ભાગ ન્યૂન (ઓછો) છે એટલે કે મંદર પર્વતની તળેટીના ભાગમાં જેટલી પહોળાઈ છે, તેમાંથી મંદર પર્વતની ઊંચાઇનો અગિયારમો ભાગ બાદ કરતાં જે બાકી રહે તે મન્દરપર્વતના શિખરનો વિષ્કંભ છે તેનું સ્પષ્ટીકરણ આ પ્રમાણે છે-પૃથ્વીના સમતલ પર મન્દર પર્વતનો વિષ્કંભ-વિસ્તાર-દસ હજાર યોજનનો છે મન્દર પર્વતની ઊંચાઈ નવાણું હજાર યોજન છે તેનો અગિયારમો ભાગ નવ હજાર યોજન થાય છે તે નવ હજાર યોજ

योजनसहस्रे एकादशभिरपहृते नवयोजन सहस्रं लभ्यते। तस्मिन् मन्दरस्य पृथ्वीसमतलस्य दशसहस्रयोजनप्रमाणविष्कम्भतो निष्कासितेऽवशिष्यते एकयोजनसहस्रम्। एतत् एकयोजनसहस्रं मन्दरशिखरस्य विष्कम्भो भवतीति ॥सू.३०॥

मूलम्—इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं इक्कारस पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। पंचमीए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं एक्कारस सागरोवमाई ठिई पण्णत्ता। असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगइयाणं एक्कारस पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगइयाणं देवाणं एक्कारस पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। लंतए कप्पे अत्थेगइयाणं देवाणं एक्कारस सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। जे देवा बंभं सुबंभं बंभावत्तं बंभप्पभं बंभकंतं बंभवण्णं बंभलेसं बंभज्झयं बंभसिंगं बंभसिट्ठं बंभकूडं बंभुत्तरवडिसगं विमाणं देवत्ताए उववण्णा, तेसि णं देवाणं एक्कारस सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। ते णं देवा एक्कारसण्हं अद्धमासाणं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा। तेसि णं देवाणं एक्कारसण्हं वाससहस्साणं आहारट्ठे समुप्पज्जइ। संतेगइया भवसिद्धिया जीवा जे एक्कारसहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति, बुज्झिस्संति, मुच्चिस्संति, परिनिव्वाइस्संति, सव्वदुक्खाणमंतं करिस्संति ॥सू.३१॥

भाग देने पर नव हजार लब्ध रहता है। उस नौ हजार लब्ध को, मन्दर पर्वत के पृथ्वी समतलस्थित दस हजार योजन विष्कम्भ में से घटाने पर एक हजार योजन अवशिष्ट रहता है। यह एक हजार योजन मन्दर पर्वत के शिखर का विष्कम्भ समझना चाहिये ॥सू. ३०॥

નને, મન્દર પર્વતના પૃથ્વીસમતલ વિસ્તાર દસ હજાર યોજનમાથી બાદ કરતાં એક હજાર યોજન બાકી રહે છે તો મન્દર પર્વતના શિખરને। વિષ્કભ–વિસ્તાર એક હજાર યોજન સમજ઼ા. ॥સૂ ૩૦॥

टीका—'इमीसे णं' इत्यादि । अस्यां खलु रत्नप्रभायां पृथिव्यामस्त्येकेषां नैरयिकाणामेकादश पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । पञ्चम्यां पृथिव्यामस्त्येकेषां नैरयिकाणामेकादश सागरोपमाणि स्थितिः प्रज्ञप्ता । असुरकुमाराणां देवानामस्त्येकेषामेकादशपल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । सौधर्मैशानेषु कल्पेषु अस्त्येकेषां देवानामेकादशपल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । लान्तके कल्पे अस्त्येकेषां देवानामेकादश सागरोपमाणि स्थितिः प्रज्ञप्ता । ये देवा ब्रह्मसुब्रह्मब्रह्मावर्त ब्रह्मप्रभं ब्रह्मकान्तं ब्रह्मवर्णं ब्रह्मलेश्यं ब्रह्मध्वज ब्रह्मशृङ्ग ब्रह्मसृष्टं ब्रह्मकूट ब्रह्मोत्तरावतंसक विमानम्=एषु द्वादशविमानेषु देवत्वेन उत्पन्ना, तेषां खलु देवानाम् एकादश सागरोपमाणि स्थितिः प्रज्ञप्ता । ते खलु देवाः एकादशानामर्द्धमासानामानन्ति वा प्राणन्ति वा उच्छ्वसन्ति वा निःश्वसन्ति वा । तेषां

टीकार्थ-'इमीसे णं' इत्यादि । इस रत्नप्रभा पृथिवी में कितनेक नारकियों ग्यारह की पल्योपमकी स्थितिकही गई है । पंचमी भूमि में कितनेक नारकियों की ग्यारह सागरोपम की स्थिति कही गई है । असुरकुमार देवों में कितनेक देवों की स्थिति ग्यारह पल्योपम की कही गई है । सौधर्म और ईशान, इन दो कल्पों में कितनेक देवों की स्थिति ग्यारह पल्योपम की होती है । लान्तककल्प में कितनेक देवों की स्थिति ग्यारह सागरोपम की कही गई है । जो देव, ब्रह्म१, सुब्रह्म२, ब्रह्मावर्त३, ब्रह्मप्रभ४, ब्रह्मकान्त५, ब्रह्मवर्ण६, ब्रह्मलेश्य७, ब्रह्मध्वज८, ब्रह्मशृंग९, ब्रह्मसृष्ट१०, ब्रह्मकूट११, और ब्रह्मोत्तरावतंसक१२, इन बारह विमानों में देवकी पर्याय से उत्पन्न होते हैं उन देवों की स्थिति ग्यारह सागरोपम की होती है । वे देव ग्यारह अर्धमासों के अनन्तर बाह्य आभ्यन्तरिक

ટીકાર્થ—'इमीसे णं' इत्यादि । આ રત્નપ્રભા પૃથ્વીમાં કેટલાક નારકીઓની અગિયાર પલ્યોપમની સ્થિતિ કહી છે પંચમી ભૂમિમાં કેટલાક નારકીઓની અગિયાર સાગરોપમની સ્થિતિ કહી છે અસુરકુમાર દેવોમાં કેટલાક દેવોની સ્થિતિ અગિયાર પલ્યોપમની કહી છે સૌધર્મ અને ઇશાન કલ્પોમાં કેટલાક દેવોની સ્થિતિ અગિયાર પલ્યોપમની હોય છે લાન્તક કલ્પમાં કેટલાક દેવોની સ્થિતિ અગિયાર સાગરોપમની કહી છે જે દેવો (૧) બ્રહ્મ, (૨) સુબ્રહ્મ, (૩) બ્રહ્માવર્ત (૪) બ્રહ્મપ્રભ, (૫) બ્રહ્મકાન્ત, (૬) બ્રહ્મવર્ણ (૭) બ્રહ્મલેશ્ય, (૮) બ્રહ્મધ્વજ (૯) બ્રહ્મશૃંગ, (૧૦) બ્રહ્મસૃષ્ટ (૧૧) બ્રહ્મકૂટ અને (૧૨)બ્રહ્મોત્તરાવતંસક, એ બાર વિમાનોમાં દેવની પર્યાયે ઉત્પન્ન થાય છે, તે દેવોની સ્થિતિ અગિયાર સાગરોપમની હોય છે તે દેવો સાડાપાંચ મહિને બાહ્ય તથા આભ્ય

खलु देवानामेकादशसहस्रवर्षान्ते आहारसंज्ञा समुत्पद्यते । सन्त्येके भवसिद्धिका जीवा ये एकादशभिर्भवग्रहणैः सेत्स्यन्ति, भोत्स्यन्ते, मोक्ष्यन्ति, परिनिर्वास्यन्ति, सर्वदुःखानामन्तं करिष्यन्ति ॥सू. ३१॥

अथ द्वादशं समवायमाह—

मूलम्—वारस भिक्खुपडिमाओ पण्णत्ताओ, तं जहा—मासिआ भिक्खुपडिमा, दोमासिआ भिक्खुपडिमा, तिमासिआ भिक्खुपडिमा, चउमासिया भिक्खुपडिमा, पंचमासिया भिक्खुपडिमा, छमासिया भिक्खुपडिमा, सत्तमासिया भिक्खुपडिमा, पढमा सत्तराइंदिया भिक्खुपडिमा, दोच्चा सत्तराइंदिया भिक्खुपडिमा, अहोराइया भिक्खुपडिमा, एगराइया भिक्खुपडिमा। दुवालसविहे संभोगे पण्णत्ते, तं जहा—उवहीसुयभत्तपाणे अंजलीपग्गहेत्ति य। दायणे य निकाये य अब्भुट्ठाणेइ यावरे ॥१॥ किइकम्मस्स य करणे, वेयावच्चकरणेइ य। समोसरणं संनिसिज्जा य कहाए य पवंधणे ॥२॥ दुवालसावत्ते किइकम्मे पण्णत्ते, तं जहा—दुओणंय जहाजायं किइकम्मं वारसावयं। चउसिरं तिगुत्तं च दुपवेसं एगनिक्खमं ॥१॥ विजया णं रायहाणी दुवालस जोयणसयसहस्साइं आयामविक्खंभेणं पण्णत्ता। रामे णं बलदेवे

श्वासोच्छ्वास ग्रहण क है। उन देवों को ग्यारह हजार वर्ष निकलने के अनन्तर ही आहारसंज्ञा उत्पन्न होती है। इनमें कितनेक भवसिद्धिक जीव ग्यारह भव करने के बाद सिद्धिगति को पाने वाले होंगे, आत्मिक अनंत ज्ञानादिक गुणों के भोक्ता बनेंगे, समस्त कर्मों से छूट जावेंगे, सब प्रकार से कृतकृत्य हो जावेंगे, और सब दुःखों का अंत करदेंगे॥सू० ३१॥

ન્તરિક શ્વાસોચ્છ્વાસ ગ્રહણ કરે છે તે દેવોને અગિયાર હજાર વર્ષ બાદ આહાર સંજ્ઞા ઉત્પન્ન થાય છે તેમા કેટલાક ભવસિદ્ધિક હોય છે, જે અગિયાર ભવ કર્યા પછી સિદ્ધિ ગતિ પ્રાપ્ત કરશે, આત્મિક અનંત જ્ઞાનાદિક ગુણોના ભોકતા થશે, સમસ્ત કર્મોથી છૂટી જશે, દરેક રીતે કૃતકૃત્ય થશે, અને સમસ્ત દુઃખોનો અન્ત કરી નાખશે ॥સૂ ૩૧॥

दुवालसववासस्याइ सव्वाउय पालित्ता देवत्त गए। मंदरस्स णं पव्वयस्स चूलिया मूले दुवालस जोयणाइ विक्खम्भेण पण्णत्ता। जम्बू दीवस्स ण दीवस्स वेइया मूले दुवालस जोयणाइ विक्खभेण पण्णत्ता। सव्वजहण्णिया राई दुवालस मुहुत्तिया पण्णत्ता। एव दिवसो वि नायव्वो। सव्वट्ठ सिद्धस्स ण महाविमाणस्स उवरिल्लाओ थुभियग्गाओ दुवालस जोयणाइ उड्ढ उप्पइया ईसिपब्भार नाम पुढवी पण्णत्तो। ईसिपब्भाराए ण पुढवीए दुवालसनामधेज्जा पण्णत्ता, त जहा–ईसित्ति वा ईसिपब्भाराइ वा तणूइवा तणूयतरित्ति वा सिद्धित्ति वा सिद्धालएत्ति वा मुत्तीति वा मुत्तालेएति वा बभेत्ति वा बभवडिंसएत्ति वा लोगपरिपूरणेति वा लोगग्गचूलियाइ वा॥सू १२॥

टीका—'बारस' इत्यादि। द्वादश 'भिक्खुपडिमाओ' भिक्षुप्रतिमाः= भिक्षूणां साधूनां प्रतिमा अभिग्रहविशेषरूपा,भिक्षुप्रतिमा प्रज्ञप्ताः, तद्यथा–मासिकी भिक्षुप्रतिमा=मासावधि भिक्षुप्रतिमा। तत्र प्रथमे मासे प्रतिदिनमन्नपानयोरे केका दत्तिर्भिक्षुणा ग्राह्या। द्वितीया द्विमासिकी भिक्षुप्रतिमा। द्वितयस्मिन्

अब सूत्रकार बारहवें समवाय को प्रकट करते हैं–'बारस' इत्यादि।

टीकार्थ–बारह भिक्षुप्रतिमाएँ होती हैं–जो इस प्रकार हैं–एक मास की प्रथम भिक्षुप्रतिमा, दो मासकी द्वितीय भिक्षुप्रतिमा, तीन मास की तीसरी भिक्षुप्रतिमा, चारमास की चौथी भिक्षुप्रतिमा होती है। एकमास तक की जो पहिली भिक्षुप्रतिमा है उसमें प्रथम मास में प्रतिदिन भिक्षु को अन्नपान की एक एक दत्ति ग्रहण करनी होती है। द्वितीय

હવે સૂત્રકાર બારમું સમવાય પ્રકટ કરે છે—'बारस इत्यादि'

ટીકાર્થ–બાર ભિક્ષુ પ્રતિમાઓ હોય છે જે આ પ્રમાણે છે—પ્રથમ ભિક્ષુપ્રતિમા એક માસની, બીજી ભિક્ષુપ્રતિમા બે માસની ત્રીજી ભિક્ષુપ્રતિમા ત્રણ માસની અને ચોથી ભિક્ષુપ્રતિમા ચાર માસની હોય છે એક માસની જે ભિક્ષુપ્રતિમા છે છે તેનુ સેવન કરનાર ભિક્ષુ એ એક માસ સુધી દરરોજ અન્નપાનની એક એક દત્તિ (ધારા એક વાર ખંડિત થાય ત્યારે એક દત્તિ થઈ ગણાય છે) લેવાની હોય છે બીજી

मासे भिक्षु द्वे दत्ती अन्नस्य द्वे पानस्य च गृह्णीयात्। तृतीयस्मिन् मासे त्रिमासिकी भिक्षुप्रतिमा तृतीया। चतुर्थे मासे चतुर्मासिकी भिक्षुप्रतिमा चतुर्थी। पञ्चमे मासे पञ्चमासिकी भिक्षुप्रतिमा पञ्चमी। षष्ठे मासे षाण्मासिकी भिक्षुप्रतिमा षष्ठी। सप्तमे मासे सप्तमासिकी भिक्षुप्रतिमा सप्तमी। आसु क्रमशः अन्नपानयोरेकैक दत्ति वृद्ध्या सप्तमे मासे सप्तदत्ती आहारस्य सप्तपानस्य च भिक्षु गृह्णीयादिति भावः। अनन्तरम् अष्टमे मासे प्रथम सप्तके प्रथमा-'सत्तराइंदिया' सप्तरात्रिन्दिवा-सप्तरात्रिन्दिवानि=अहोरात्राणि यस्यां सा सप्तरात्रिन्दिवा भिक्षु

भिक्षु प्रतिमा में कि जो दो मास तक आराधित की जाती है अन्न को दो दत्ति और पान की दो दत्ति ली जाती हैं। तृतीयभिक्षुप्रतिमा में कि जिसकी आराधना का काल तीन मासका है अन्नपान की तीन-तीन दत्ति ली जाती है। इस तरह से पांचमास की भिक्षुप्रतिमा में, छह मासकी भिक्षुप्रतिमा में और सातमास की भिक्षुप्रतिमा में क्रमशः अन्न और पान की ५, ६, और सातमास तक ५, दत्तियां, ६ छह दत्तियां और सात दत्तियां ग्रहण की जाती हैं। इस तरह इन सात भिक्षु प्रतिमाओं में क्रमशः अन्नपान की एक१ से लेकर दत्तियां वर्धित होती हुई सात मास तक की अवधिवाली सातवीं भिक्षुप्रतिमा में सात सात अन्न-पान की दत्तियां ग्रहण की जाती हैं। इस के बाद आठवें महिने में प्रथम सप्तक (सप्ताह) में प्रथम भिक्षु प्रतिमा-अर्थात् आठवीं प्रतिमा-पाली जाती है। इसके आराधन करने का समय सात दिन रात का है। इस प्रतिमा का आराधक चतुर्थभक्त(चोविहार) की तपस्या करता है। गाँव से

ભિક્ષુપ્રતિમા કે જેનું આરાધન બે માસ સુધી કરવાનું હોય છે, તેમાં અન્નની બે દત્તિ અને પાન (પેય પદાર્થ) ની બે દત્તિ દરરોજ ગ્રહણ કરાય છે ત્રીજી ભિક્ષુ-પ્રતિમાનો આરાધન કાળ ત્રણ માસનો છે તેમાં દરરોજ અન્નપાનની ત્રણ ત્રણ દત્તિ લેવામા આવે છે એ જ પ્રમાણે ચાર માસની ભિક્ષુપ્રતિમામા, પાચ માસની ભિક્ષુપ્રતિમામા, છ માસની ભિક્ષુપ્રતિમામા અને સાત માસની ભિક્ષુપ્રતિમામા અન્ન પાનની અનુક્રમે ચાર, પાચ, છ અને સાત માસ સુધી, ચાર, પાચ છ અને સાત દત્તિયો ગ્રહણ કરવામાં આવે છે આ રીતે એ સાત ભિક્ષુપ્રતિમાઓમાં અનુક્રમે અન્નપાનની એકથી લઇને દત્તિયો વધતી વધતી સાત માસની અવધિવાળી સાતમી ભિક્ષુપ્રતિમામા અન્નપાનની સાત સાત દત્તિઓ ગ્રહણ કરાય છે ત્યાર બાદ આઠમા માસના પહેલા અઠવાડિયામાં પ્રથમ ભિક્ષુપ્રતિમા એટલે કે આઠમી પ્રતિમાનું આરા-ધન કરાય છે તેની આરાધનાનો સમય સાત દિન-રાતનો છે તે પ્રતિમાનો આરા-ધક ચતુર્થભકતની (ચૌવિહાર) તપસ્યા કરે છે, ગામની બહાર રહે છે, ઉત્તાન

प्रतिमा अष्टमी। अस्यां चतुर्थभक्तं तपः, ग्रामाद् बहिरवस्थानम्, उत्तानादिनाऽऽसनेन च समुपवेशनम्। द्वितीया सप्तरात्रिन्दिवा भिक्षुप्रतिमा नवमी, अस्या मुत्कुटुकाद्यासनेनावस्थानमेतावदेव विशेषः। तृतीया सप्तरात्रिन्दिवा भिक्षुप्रतिमा दशमी, अस्यां वीरासनादिनाऽवस्थानम्। अहोरात्रिकी-एकाहोरात्रप्रमाणा भिक्षुप्रतिमा एकादशी एषा षष्ठभक्तेन सम्पद्यते। 'एगराइया' एकरात्रिकी-रात्रिप्रमाणा भिक्षुप्रतिमा द्वादशी। अस्यां चाष्टमभक्तपर्यन्तरात्रौ प्रलम्बभुजेन सह

बाहिर रहता है। उत्तान आदि आसन से बैठता है। दूसरी प्रतिमा-अर्थात् नवमी भिक्षु प्रतिमा के आराधन करने का समय द्वितिय सप्ताह है। इसमें आराधक उत्कुटुक आदि आसन से बैठता है। बाकी सब विधि आठवीं प्रतिमा जैसी ही है। तीसरी भिक्षुप्रतिमा अर्थात् दसवीं प्रतिमा के आराधन करने का काल आठवें महीने का तृतीय सप्ताह है। इस प्रतिमा की आराधना सात दिन रात तक आठवें महीने के तीसरे सप्ताह में की जाती है। इसका आराधक वीरासन आदि आसन से बैठता है। इस तरह इक्कीस दिन रात में आठवीं नौवीं और दशवी प्रतिमाओं का आराधन समाप्त हो जाता है। बाईसवें दिन में ग्यारहवीं भिक्षुप्रतिमा आराधित होती है। इसका काल एक दिन रात का है। उसकी आराधना में षष्ठभक्त की तपस्या की जाती है। बारहवीं प्रतिमा का काल एक दिन रात का है। इसमें अष्टमभक्त की अंतिम रात्रि में (स्मशानमें जाकर एक पुद्गलपर दृष्टि रखता हुआ) दोनों हाथ लटका कर

આદિ આસને બેસે છે બીજી પ્રતિમા-એટલે કે નવમી ભિક્ષુ પ્રતિમાની આરાધનનો કાળ આઠમા માસના બીજા સપ્તાહનો છે તેની આરાધના માટે આરાધક ઉત્કુટુક (ઉભા પગે બેસવુ તે) આદિ આસને બેસે છે અને બાકીની બધી વિધિ આઠમી પ્રતિમા જેવી જ છે દસમી-ભિક્ષુપ્રતિમાનો આરાધન કાળ આઠમા માસનું ત્રીજુ સપ્તાહ છે આઠમા માસના ત્રીજા સપ્તાહમાં આ પ્રતિમાની આરાધના સાત દિનરાત કરાય છે તેનો આરાધક વીરાસન આદિ આસને બેસે છે આ રીતે એકવીસ દિનરાતમાં આઠમી, નવમી અને દસમી પ્રતિમાઓનું આરાધન સમાપ્ત થાય છે બાવીસમે દિવસે અગિયારમી ભિક્ષુપ્રતિમાનુ આરાધન થાય છે તેનો આરાધન કાળ એક દિનરાતનો છે તેની આરાધનામાં ષષ્ઠભક્તની (બે ઉપવાસ) તપસ્યા કરવામાં આવે છે બારમી પ્રતિમાનો આરાધન કાળ એક રાતનો છે તેમાં અષ્ટભક્તની-ત્રણ ઉપવાસ (અઠ્ઠમની) છેલ્લી રાત્રે બન્ને હાથ લટકતા રાખીને ઉભા રહેવુ પડે છે,

पादेनैपदवनतकायेनाऽनिमेषनयनेन च भिक्षुणा स्थीयते। एतद्विषये विशेष-जिज्ञासुभिर्दशाश्रुतस्कन्धस्य सप्तमेऽध्ययने मत्कृतमुनिहर्षिणी टीकायां द्रष्टव्यम्। 'दुवालसविहे' द्वादशविधः संभोगः, भोजनं भोगः, सम्यक् एकीभूय भोगः= संभोगः समानसामाचारिकसाधूनामेकमण्डल्यां भोजनादिव्यवहार इत्यर्थः, प्रज्ञप्तः, तद्यथा-'उवहीसुयभत्तपाणे' उपधिश्रुतभक्तपानम्=उपधिश्च श्रुतं च भक्तपान च उपधिश्रुतभक्तपानम् संभोगत्रयम्। तत्र उपधिः प्रथमः संभोगः। स च उप-धिर्वस्त्रपात्रादिः, तमुत्पादनैषणादोषरहितं विशुद्धं सांभोगिकेन सह गृह्णन् सांभो-गिकः साधुः शुद्धः, उत्पादनैषणादोषसहितं गृह्णन् साधुरशुद्धः। एतादृशदोष-युक्तमुपधिं वारत्रयं गृहीत्वा विहितप्रायश्चित्तः संभोगार्हः। चतुर्थे वारे सदोषमुपधिं

खडा रहना पडता है। दोनों पैर आपस में जुडे हुए रहते हैं। शरीर कुछ२ झुका सा रहता है। नेत्र अपलक रहते हैं।इस विषय में विशेष जिज्ञासुओं के लिये दशाश्रुतस्कंध के सप्तम अध्ययन में हमारे द्वारा रचित मुनिहर्षिणी नामक टीका देखनी चाहिये। बारह प्रकार का संभोग होता है। समान समाचारी वाले साधुओं का एक मंडली में जो आहारादिव्य-वहार होता है उसका नाम संभोग है। संभोग के बारह प्रकार ये हैं।— उपधि-वस्त्र, पात्र आदि१, श्रुत२, भक्तपान३, अंजलिप्रग्रह४, दान५, निकाच६, अभ्युत्थान७, कृतिकर्मकरण८, वैयावृत्यकरण९, समवसरण१०, संनिषद्या११, और कथाप्रबन्धन१२। १ उपधिसंभोग—उत्पादन एषणा दोष से रहित वस्त्र पात्र आदि विशुद्ध उपधि को सांभोगिक साधु के साथ ग्रहण करता हुआ सांभो-गिक साधु शुद्ध होता है और उत्पादन एषणा दोष से सहित उपधि को ग्रहण करता हुआ साधु अशुद्ध होता है। इस प्रकार दोष युक्त उपधि को तीन बार

બન્ને પગ એક બીજા સાથે જોડાયેલા રહે છે, શરીર થોડું ઝુકતું રહે અને નેત્ર અપલક રહે છે આ વિષયમા વધુ જાણવાની ઇચ્છા વાળા જિજ્ઞાસુઓએ દશાશ્રુત સ્કંધની દસમા અધ્યયનની અમે લખેલી મુનિહર્ષિણી નામની ટીકા જોઇ જવી.

બાર પ્રકારના સંભોગ હોય છે સમાન સમાચારી સાધુઓનો એક મંડળીમા જે આહારાદિ વ્યવહાર થાય છે તેનું નામ સંભોગ છે સંભોગના બાર પ્રકાર છે તે આ પ્રમાણે છે-(૧) ઉપધિ-વસ્ત્ર, પાત્ર આદિ (૨) શ્રુત, (૩) ભક્તપાન, (૪) અંજલિપ્રગ્રહ, (૫) દાન, (૬) નિકાચ, (૭) અભ્યુત્થાન, (૮) કૃતિકર્મકરણ, (૯) વૈયાવૃત્યકરણ, (૧૦) સમવસરણ, (૧૧) સંનિષદ્યા અને (૧૨) કથા પ્રબન્ધન.

ઉપધિસંભોગ—ઉત્પાદન એષણા દોષથી રહિત વસ્ત્ર પાત્ર આદિ વિશુદ્ધ ઉપધિને સંભોગિક સાધુની સાથે ગ્રહણ કરતો સંભોગિક સાધુ શુદ્ધ હોય છે, અને ઉત્પાદન એષણા દોષથી યુક્ત ઉપધિને ગ્રહણ કરતો અશુદ્ધ હોય છે આ પ્રમાણે

गच्छन् विहितप्रायश्चित्तोऽपि विसम्भोग्य । तथा यदि साम्भोगिक साधु विस माभिकेन पार्श्वस्थादिना सह स्थित्वा शुद्धमशुद्ध वापधिं गृह्णीयात्, अनन्तरम् न्यप्रेरणया प्रायश्चित्त कुर्यात्, स साधु वारत्रयमेव कुर्वन् सम्भोगार्हः । चतुर्थवार तु असम्भोग्य एव। एवमुपधेः परिकर्म परिभोग च कुर्वन् साधु सम्भोग्योऽस भोग्यश्च भवति। इति प्रथम सम्भाग १। 'सुय' श्रुतम्—श्रुतसम्भोगो द्वितीय । अध्ययनार्थमागत साम्भोगिकमन्यसाम्भोगिक वा साधु सविधि वाचनां पृच्छनां कुर्वन् शुद्ध । यदि अविधिना समागच्छेत्, पार्श्वस्थादिका वा भवेत्, तं वाचना

ग्रहण करके प्रायश्चित्त करने वाला साधु सभोग के योग्य माना जाता है। परन्तु वही साधु यदि इस प्रकार की उपधि को चौथी बार ग्रहण कर लेता है और प्रायश्चित्त भी ले लेता है तो भी वह सभोग के योग्य नहीं होता है। तथा—यदि साम्भोगिक साधु विसाम्भोगिक पार्श्वस्थ आदि साधु के साथ रहकर शुद्ध अथवा अशुद्ध उपधि को ले लेता है और इसके बाद किसी अन्य की प्रेरणा से वह प्रायश्चित्त लेता है इस तरह वह साधु तीन बार ऐसा करता है और तीन बार प्रायश्चित्त लेकर शुद्ध हो जाता है तो वह सभोगार्ह है। परन्तु यदि वह चौथी बार ऐसा करता है फिर प्रायश्चित्त भी ले लेता है तो भी वह असभोग्य ही है। इस प्रकार उपधि के परिकर्म और परिभोग को करता हुआ साधु सभोग्य और असभोग्य होता है। श्रुतसभोग—अध्ययन के लिये आये हुए सभोगिक अथवा अन्य सभोगिक साधु से सविधि वाचना प्रच्छना करने वाला साधु शुद्ध है। अविधि से आये हुए साधु से अथवा पार्श्वस्थ साधु से वाचना प्रच्छना

દોષ યુક્ત ઉપધિને ત્રણ વાર ગ્રહણ કરીને પ્રાયશ્ચિત્ત કરનાર સાધુ સંભોગને યોગ્ય ગણાય છે પણ જો એ જ સાધુ તે પ્રકારની ઉપધિ જો ચોથી વાર ગ્રહણ કરે અને પ્રાયશ્ચિત્ત પણ કરી લે તો પણ તે સંભોગને યોગ્ય મનાતો નથી તથા જો સાંભોગિક સાધુ વિસાંભોગિક પાર્શ્વસ્થ-(શિથિલાચારી)-આદિ સાધુની સાથે રહીને શુદ્ધ અથવા અશુદ્ધ ઉપધિ ગ્રહણ કરે અને ત્યાર બાદ કોઈ બીજાની પ્રેરણાથી જો તે પ્રાયશ્ચિત્ત લઈ લે-આ પ્રમાણે ત્રણ વાર તે સાધુ એવું કરે અને પ્રાયશ્ચિત્ત લઈને શુદ્ધ થાય તો તે સાધુ સંભોગને પાત્ર ગણાય છે પણ જો તે ચોથી વાર પણ એવું કરે અને પછી તેનું પ્રાયશ્ચિત્ત પણ લે તો તે અસંભોગ્ય જ ગણાય છે આ પ્રમાણે ઉપધિના પરિકર્મ અને પરિભોગ કરતો સાધુ અસંભોગ્ય હોય છે (૧)

(૨) શ્રુતસંભોગ—અધ્યયનને માટે આવેલ સંભોગિક અથવા અન્ય સંભોગી સાધુ સાથે વિધિ પૂર્વક વાચના પ્રચ્છના કરનાર સાધુ શુદ્ધ છે અવિધિથી આવેલ

प्रच्छनादिकं कुर्वन् साधुरशुद्धः। एवं वारत्रयमविधिना वाचनां पृच्छनां कुर्वन् साधुः प्रायश्चित्तविधिना संभोग्यः। चतुर्थवेलायां तथा कुर्वन् विहितप्रायश्चित्तोऽपि असंभोग्य एव। इति द्वितीयः संभोगः २। 'भत्तपाणे' भक्तपानम् भक्तपानसंभोगः तृतीयः। एतद् विषये सर्वमुपधिवद्विज्ञेयम्। केवलं परिकर्मस्थाने दानं परिभोगस्थाने च आदानमिति वाच्यम्। इति तृतीयः संभोगः।३। 'अंजलिपग्गहे त्ति य' अञ्जलिप्रग्रहणम् इति च, इति शब्दः स्वरूप प्रदर्शनार्थः, च ग्रहणं समुच्चयार्थः। अञ्जलिप्रग्रहणमिति चतुर्थः संभोगः। अञ्जलिग्रहणशब्देन वन्दनारूपोऽर्थोऽवसेयः। तथाहि-संभोगिकमन्यसंभोगिकं वा साधुं वन्देत, साञ्जलिप्रणमेत, आलोचनासूत्रार्थनिमित्तं निषद्यां कुर्वीत, एवं कुर्वन् साधुः संभोग्यः। परन्तु म

करने वाला साधु अशुद्ध है। इस तरह तीन वार अविधि पूर्वक वाचना प्रच्छना करने से अशुद्ध बना हुआ प्रायश्चित्त विधि से सभोग्य हो जाता है। परन्तु यदि वही साधु चौथी वार भी ऐसा करता है तो प्रायश्चित्त लेने पर भी वह अशुद्ध माना जाता है और इस तरह वह असभोग्य ही रहता है२। भक्तपान संभोग३-इसके विषय में उपधि की तरह ही सब विधि जाननी चाहिये। परन्तु यहां परिकर्म के स्थान में दान, और परिभोग के स्थान में आदान शब्द का प्रयोग करना चाहिये३। अंजलिप्रग्रह४-यह संभोग का चतुर्थ भेद है, यहां अंजलि शब्द वंदनारूप अर्थ को प्रकट करता है, साधु सांभोगिक अथवा अन्यसांभोगिक साधु मिलने पर उन्हें वंदना करता है, साञ्जलि नमस्कार करता है और आलोचना तथा सूत्रार्थ निमित्त निषद्या करता है, अर्थात् बैठता है, इस प्रकार करने वाला साधु संभोग्य माना जाता है, परन्तु यदि वह साधु पासत्थ आदि साधुओं

સાધુ સાથે અથવા પાર્શ્વસ્થ સાધુ સાથે વાચના પ્રચ્છના કરનાર સાધુ અશુદ્ધ છે આ રીતે ત્રણ વખત અવિધિ પૂર્વક વાચના પ્રચ્છના કરવાથી અશુદ્ધ થયેલ સાધુ પ્રાયશ્ચિત્ત વિધિથી સભોગ્ય થઇ જાય છે પણ એ જ સાધુ ચોથી વાર પણ એવું કરે તો પ્રાયશ્ચિત્ત લેવા છતા પણ તેને અશુદ્ધ માનવામાં આવે છે, અને આ રીતે તે અસભોગ્ય જ રહે છે (૨)

(૩) भक्तपानसभोग—તેમા ઉપધિ પ્રમાણે જ બધી વિધિ છે. પણ અહી પરિકર્મની જગ્યાએ દાન અને પરિભોગને સ્થાને આદાન શબ્દનો પ્રયોગ કરવો જોઇએ (૩)

(૪) अंजलिप्रग्रह—આ સંભોગનો ચોથો ભેદ છે અહી અજલિ શબ્દનો અર્થ વંદના થાય છે સાધુ સાભોગિક અથવા અન્ય સાભોગિક સાધુ સાથે મુલાકાત થતા તેમને વદના કરે છે, અજલિબદ્ધ નમસ્કાર કરે છે, અને આલોચના તથા સૂત્રાર્થ નિમિત્ત નિષદ્યા કરે છે એટલે કે બેસે છે આ પ્રમાણે કરનાર સાધુને સભોગ્ય માન-

ग्रहन त्रिरितमायश्चित्ताऽपि विसंभोग्य । तथा यदि सांभोगिकः साधु विस भोगिकेन पार्श्वस्थादिना सह स्थित्वा शुद्धमशुद्ध वोपधिं गृह्णीयात्, अनन्तरम न्यप्रेरणया प्रायश्चित्तं कुर्यात्, स साधुः वारत्रयमत्र कुर्वन संभोगार्हः । चतुर्थवारे तु असंभोग्य एव । एवमुपधेः परिकर्म परिभोग च कुर्वन् साधुः संभोग्योऽसं भोग्यश्च भवति । इति प्रथम संभोग १। 'सुय' श्रुतम्—श्रुतसंभोगो द्वितीय । अध्ययनार्थमागत संभोगिकमन्यसंभोगिकं वा साधु सविधि वाचनां पृच्छनां कुर्वन शुद्ध । यदि अविधिना समागच्छेत्, पार्श्वस्थादिको वा भवत्, तं वाचना

ग्रहण करके प्रायश्चित्त करने वाला साधु संभोग के योग्य माना जाता है। परन्तु वही साधु यदि इस प्रकार की उपधि को चौथी बार ग्रहण कर लेता है और प्रायश्चित्त भी ले लेता है तो भी वह संभोग के योग्य नहीं होता है। तथा—यदि सांभोगिक साधु विसांभोगिक पार्श्वस्थ आदि साधु के साथ रहकर शुद्ध अथवा अशुद्ध उपधि को ले लेता है और इसके बाद किसी अन्य की प्रेरणा से वह प्रायश्चित्त लेता है इस तरह वह साधु तीन बार ऐसा करता है और तीन बार प्रायश्चित्त लेकर शुद्ध हो जाता है तो वह संभोगार्ह है। परन्तु यदि वह चौथी बार ऐसा करता है फिर प्रायश्चित्त भी ले लेता है तो भी वह असंभोग्य ही है। इस प्रकार उपधि के परिकर्म और परिभोग को करता हुआ साधु संभोग्य और असंभोग्य होता है। श्रुतसंभोग२—अध्ययन के लिये आये हुए संभोगिक अथवा अन्य संभोगिक साधु से सविधि वाचना पृच्छना करने वाला साधु शुद्ध है। अविधि से आये हुए साधु से अथवा पार्श्वस्थ साधु से वाचना पृच्छना

દોષ યુક્ત ઉપધિને ત્રણ વાર ગ્રહણ કરીને પ્રાયશ્ચિત્ત કરનાર સાધુ સંભોગને યોગ્ય ગણાય છે પણ જો એ જ સાધુ તે પ્રકારની ઉપધિ ને ચોથી વાર ગ્રહણ કરે અને પ્રાયશ્ચિત્ત પણ કરી લે તો પણ તે સંભોગને યોગ્ય મનાતો નથી તથા જો સંભો ગિક સાધુ વિસંભોગિક પાર્શ્વસ્થ-(શિથિલાચારી)-આદિ સાધુની સાથે રહીને શુદ્ધ અથવા અશુદ્ધ ઉપધિ ગ્રહણ કરે અને ત્યાર બાદ કોઈ બીજાની પ્રેરણાથી તે પ્રાયશ્ચિત્ત લઈ લે-આ પ્રમાણે ત્રણ વાર તે સાધુ એવું કરે અને પ્રાયશ્ચિત્ત લઈને શુદ્ધ થાય તે તે સાધુ સંભોગને પાત્ર ગણાય છે પણ જો તે ચોથી વાર પણ એવું કરે અને પછી તેનું પ્રાયશ્ચિત્ત પણ લે તો તે અસંભોગ્ય જ ગણાય છે આ પ્રમાણે ઉપધિના પરિકર્મ અને પરિભોગ કરતો સાધુ અસંભોગ્ય હોય છે (૧)

૨) શ્રુતસંભોગ—અધ્યયનને માટે આવેલ સંભોગિક અથવા અન્ય સંભોગી સાધુ સાથે વિધિ પૂર્વક વાચના પૃચ્છના કરનાર સાધુ શુદ્ધ છે અવિધિથી આવેલ

प्रच्छनादिकं कुर्वन् साधुरशुद्धः। एवं वारत्रयमविधिना वाचना पृच्छना कुर्वन् साधुः प्रायश्चित्तविधिना संभोग्यः। चतुर्थवेलायां तथा कुर्वन् विहितप्रायश्चित्तोऽपि असंभोग्य एव। इति द्वितीयः संभोगः २। 'भत्तपाणे' भक्तपानम् भक्तपानसंभोगः तृतीयः। एतद् विषये सर्वमुपधिवद्विज्ञेयम्। केवलं परिकर्मस्थाने दानं परिभोगस्थाने च आदानमिति वाच्यम्। इति तृतीयः संभोगः।३। 'अंजलिपग्गहेत्ति य' अञ्जलिप्रग्रहणम् इति च, इति शब्दः स्वरूप प्रदर्शनार्थः, च ग्रहणं समुच्चयार्थः। अञ्जलिप्रग्रहणमिति चतुर्थः संभोगः। अञ्जलिग्रहणशब्देन वन्दनारूपोऽर्थोऽवसेयः। तथाहि—सम्भोगिकमन्यसंभोगिकं वा साधुं वन्देत, साञ्जलिप्रणमेत, आलोचनासूत्रार्थनिमित्तं निषद्यां कुर्वीत, एवं कुर्वन साधुः संभोग्यः। परन्तु स

करने वाला साधु अशुद्ध है। इस तरह तीन वार अविधि पूर्वक वाचना प्रच्छना करने से अशुद्ध बना हुआ प्रायश्चित्त विधि से संभोग्य हो जाता है। परन्तु यदि वही साधु चौथी वार भी ऐसा करता है तो प्रायश्चित्त लेने पर भी वह अशुद्ध माना जाता है और इस तरह वह असंभोग्य ही रहता है२। भक्तपान संभोग३—इसके विषय में उपधि की तरह ही सब विधि जाननी चाहिये। परन्तु यहां परिकर्म के स्थान में दान, और परिभोग के स्थान में आदान शब्द का प्रयोग करना चाहिये३। अंजलिप्रग्रह४—यह संभोग का चतुर्थ भेद है, यहां अंजलि शब्द वंदनारूप अर्थ को प्रकट करता है, साधु सांभोगिक अथवा अन्यसांभोगिक साधु मिलने पर उन्हें वंदना करता है, साञ्जलि नमस्कार करता है और आलोचना तथा सूत्रार्थ निमित्त निषद्या करता है, अर्थात् बैठता है, इस प्रकार करने वाला साधु संभोग्य माना जाता है, परन्तु यदि वह साधु पासत्थ आदि साधुओं

સાધુ સાથે અથવા પાર્શ્વસ્થ સાધુ સાથે વાચના પ્રચ્છના કરનાર સાધુ અશુદ્ધ છે આ રીતે ત્રણ વખત અવિધિ પૂર્વક વાચના પ્રચ્છના કરવાથી અશુદ્ધ થયેલ સાધુ પ્રાયશ્ચિત્ત વિધિથી સંભોગ્ય થઇ જાય છે પણ એ જ સાધુ ચોથી વાર પણ એવું કરે તો પ્રાયશ્ચિત્ત લેવા છતાં પણ તેને અશુદ્ધ માનવામાં આવે છે, અને આ રીતે તે અસંભોગ્ય જ રહે છે (૨)

(૩) भक्तपानसंभोग—તેમાં ઉપધિ પ્રમાણે જ બધી વિધિ છે. પણ અહીં પરિકર્મની જગ્યાએ દાન અને પરિભોગને સ્થાને આદાન શબ્દનો પ્રયોગ કરવો જોઇએ (૩)

(૪) अंजलिप्रग्रह—આ સંભોગનો ચોથો ભેદ છે અહીં અંજલિ શબ્દનો અર્થ વંદના થાય છે સાધુ સાંભોગિક અથવા અન્ય સાંભોગિક સાધુ સાથે મુલાકાત થતાં તેમને વંદના કરે છે, અંજલિબદ્ધ નમસ્કાર કરે છે, અને આલોચના તથા સૂત્રાર્થ નિમિત્ત નિષદ્યા કરે છે એટલે કે બેસે છે આ પ્રમાણે કરનાર સાધુને સંભોગ્ય માન-

साधुर्यदि पार्श्वस्थादीना कृते एवमाचरेत्, तदा पूर्ववदेव समाप्याऽसमोग्यश्चति मात्र । इति चतुर्थभाग ४। 'दायणे य' दानं च दानसमोग पञ्चमः। दान स्वशिष्यस्य अन्यस्मै समर्पणम् । सम्मोगिक सम्भोगिकायाऽन्यसभोगिकाय वा शिष्यगणं प्रयच्छन् शुद्ध । परन्तु निष्कारणेन संभोगिकाय वा विसंभोगिकाय वा पार्श्वस्थाय वा यदि शिष्यगणं प्रयच्छत् तदा पूर्ववत् प्रायश्चित्तेन वारत्रय संभोग्य, चतुर्थवारमसमोग्य । इति पञ्चम समोगः५। 'निकाए य' निकाचश्च, निकाचो निमन्त्रणम्। तत्र शय्योपध्याहारे शिष्यगणप्रदानेन स्वाध्यायन च

के साथ ऐसा व्यवहार करता है तो वह अशुद्ध हो जाता है और प्राय श्चित लेकर शुद्ध हो जाता है। इस तरह तीन वार करने पर प्रायश्चित विधि से उसकी शुद्धि हो जाती है। परन्तु चौथी वार इस प्रकार के व्यव हार से वह प्रायश्चित लेने पर भी शुद्ध नहीं हो सकता है। अत वह असभोग्य है४। दानसंभोग यह संभोग का पांचवा भेद है, दान का तात्पर्य यहा शिष्य का प्रदान करना है। समोगिक साधु समोगिक के लिये, अथवा अन्यसमोगिक के लिये अपने शिष्य को देता है, स्थिति में वह शुद्ध है, परन्तु यदि वह निष्कारण समोगिक अथवा विसंभोगिक के लिये या किसी पार्श्वस्थ आदि के लिये अपने शिष्य को प्रदान करता है तो वह अशुद्ध है, इस प्रकार तीन वार करता हुआ भी यह प्रायश्चित्त से शुद्ध हो जाता है। परन्तु चौथी वार जब वह इस प्रकार करता है तब प्राय श्चित्त लेने पर भी वह शुद्ध नहीं हो सकता है। इसलिये वह असंभोग्य माना जाता है५। निकाचसंभोग-शय्या, उपधि, आहार, शिष्य प्रदान

वामां आवे छे पण जो ते साधु पासत्थ शिथिलाचारी आदि साधुओनी साथे ओ प्रकारनो व्यवहार करे तो ते अशुद्ध थई जाय छे अने प्रायश्चित्त लेवाथी ते शुद्ध थाय छे आ प्रमाणे त्रण वार करे त्यां सुधी प्रायश्चित्त विधिथी तेनी शुद्धि थई शके छे पण चोथी वार ज्यो प्रकारनो व्यवहार करे तो प्रायश्चित्त लेवा छतां पण तेनी शुद्धि थई शकती नथी तेथी ओवो साधु असंभोग्य छे (५) दानसमोग, ते पांचमो भेद छे अहीं दान ओटले शिष्यनुं प्रदान ओवो अर्थ समजवानो छे संभोगिक साधु संभोगिकने माटे अथवा अन्य संभोगिकने माटे पोतानो शिष्य अर्पण करे छे, आ स्थितिमां ते शुद्ध छे पण जो ते निष्कारण संभोगिक अथवा विसंभोगिकने माटे के कोई पार्श्वस्थ आदि ने माटे पोताना शिष्यो आपे छे तो ते अशुद्ध गणाय छे आ प्रमाणे त्रण वखत करे त्यां सुधी ते प्रायश्चित्तथी शुद्ध थई शके छे पण जो ते, चोथी वार ओवुं करे तो प्रायश्चित्त लेवा छतां पण ते शुद्ध थई शकतो नथी तेथी ते असंभोग्य छे (६) निकाच समोग—शय्या, उपधि आहार शिष्य प्रदान अने

संभोगिकः संभोगिक निमन्त्रयन् शुद्धः । शेष पूर्ववदेव । निकाचसंभोगः षष्ठः६। तथा 'अब्भुट्ठाणेइ यावरे' अभ्युत्थानमितिचापरः, अभ्युत्थानमासनत्यागरूपमित्यपरः षष्ठादन्यः संभोगः। तत्र—पार्श्वस्थादीना कृतेऽभ्युत्थानादिकं कुर्वन पूर्ववदेवासंभोग्यः । अभ्युत्थानपद किंकरता न्यासकरणा विभक्तीनामुपलक्षणम् । तत्र किंकरता—प्राघुर्णकग्लानादीन प्रति 'भवतो विश्रामाय कीदृशं प्रयत्नमहं

एवं स्वाध्याय इन से संभोगिक को आमंत्रण करता हुआ संभोगिक साधु शुद्ध कहा गया है। बाकी का इस संबंध में कथन पहिले के जैसा लगा लेना चाहिये। अर्थात् जब वह साधु पार्श्वस्थ आदि के लिये शय्या आदि से आमंत्रित करता है तब वह अशुद्ध माना जाता है। इस तीन बार की गई अशुद्धि का जब वह प्रयश्चित्त विधान से संशोधन कर शुद्ध हो जाता है तब वह संभोग्य बन जाता है। परन्तु तीन बार करने पर भी जब चतुर्थ बार भी वह ऐसी अशुद्धि कर लेता है तब वह प्रायश्चित्त से भी शुद्ध नहीं होता है। इस स्थिति में वह असंभोग्य ही होता है६। अभ्युत्थानसंभोग—यह संभोग का सातवां भेद है, अभ्युत्थान का तात्पर्य आसन के त्याग करने से है, अर्थात्—पार्श्वस्थ आदि के आने पर अपना त्याग कर खडे हो जाना उनकी विनय करना आदि ये सब क्रियाएँ अभ्युत्था पद से ग्रहण की गई हैं। यहां अभ्युत्थान पद किंकरता, न्यासकरण और अविभक्ति, इनका उपलक्षक है। प्राघूर्णक ग्लान आदि अवस्थासंपन्न साधुओं के प्रति ऐसी प्रश्नात्मक उक्ति मन में करना कि "मैं आप के विश्राम

સ્વાધ્યાય, વડે સંભોગિકને આમંત્રણ કરતો સંભોગિક સાધુ શુદ્ધ કહેવાય છે આ વિષયમાં બાકીનું કથન આગળના કથનો પ્રમાણે સમજી લેવું—એટલે કે જ્યારે તે સાધુ પાર્શ્વસ્થ આદિને શય્યા આદિ વડે આમંત્રિત કરે છે ત્યારે તે અશુદ્ધ ગણાય આ પ્રમાણે ત્રણ વખત થયેલી અશુદ્ધિનું પ્રાયશ્ચિત્ત કરવાથી તે શુદ્ધ થઈ જાય છે અને સંભોગ્ય બને છે. પણ જો ચોથી વાર પણ તે એ જ પ્રકારની અશુદ્ધિ કરે તો પ્રાયશ્ચિત્ત કરવા છતાં પણ તે શુદ્ધ થઈ શકતો નથી આ સ્થિતિમાં તે અસંભોગ્ય જ ગણાય છે (૭) अभ्युत्थानसंभोग—તે સંભોગનો સાતમો ભેદ છે અભ્યુત્થાન એટલે આસનનો ત્યાગ કરવો એટલે કે પાર્શ્વસ્થ આદિનું આગમન થતા પોતાનું આસન છોડીને ઉભા થઈ જવું, તેમને માન આપવું, આદિ ક્રિયાઓ 'અભ્યુત્થાન' પદથી ગ્રહણ કરવામાં આવી છે અહીં અભ્યુત્થાન' પદ કિંકરતા, ન્યાસકરણ અને અવિભક્તિ, એ ત્રણનો ઉપલક્ષક છે પ્રાઘૂર્ણ, ગ્લાન (મહેમાન, બિમાર) આદિ અવસ્થા સંપન્ન સાધુઓ પ્રત્યે મનમાં એવી પ્રશ્નાત્મક ઉક્તિ કરવી કે ' હું આપના

कुर्याम्' इत्येवं प्रश्नात्मिकाऽस्ति । न्यासकरणम् पार्श्वस्थादिधर्माच्च्युतस्य पुनः साधुधर्मे संस्थापनम् ।

अविभक्तिः=अपृथग्भावः भेदभावराहित्यम्, पार्श्वस्थादीनां किंकरतादिकं कुर्वन् साधुरशुद्धोऽसंभोग्यश्च भवति । यथागमं कुर्वंस्तु शुद्धः संभोग्यश्चेति । इति सप्तमः संभोगः७। तथा-'किइकम्मस्स य करणे' कृतिकर्मणश्च करणम्, कृतिकर्म= वन्दनं, तस्य करणम् । विधिना वन्दनां कुर्वन् शुद्धः संभोग्यश्च । अविधिना कुर्वंस्तु पूर्ववदेवासंभोग्यः। यस्तु साधुर्वातव्याधिना स्तब्धगात्रः उत्थानादिकं कर्तुमसमर्थः, स सूत्रमेव अस्खलितादिगुणसमुपेतमुच्चारयति, एवमावर्तन शिरोनमनादियच्छक्नोति

के लिये कैसा प्रयत्न करूँ" इसका नाम किंकरता है। पार्श्वस्थ आदि के धर्म से च्युत हुए साधु को पुनः साधुधर्म में संस्थापित करना, इसका नाम न्यास करण है, और भेदभाव रहित होना इसका नाम अविभक्ति है। साधु पार्श्वस्थ आदियों की किंकरता आदि जब करने लगता है-तब वह अशुद्ध होने के कारण असंभोग्य हो जाता है। और आगम के अनुसार इन किंकरतादिकों को करता है तब वह शुद्ध होने से संभोग्य होता है७। कृतिकर्मसंभोग-यह संभोग का आठवां भेद है-विधिपूर्वक वन्दना करने वाला साधु शुद्ध और संभोग्य माना गया है, और अविधि पूर्वक कृतिकर्म करने वाला साधु पूर्व की तरह अशुद्ध और असंभोग्य कहा गया है। जो साधु वात व्याधि से पीडित होता हुआ स्तब्ध शरीर हो जाता है तब वह उत्थान आदि क्रिया करने में असमर्थ बन जाता है। इस स्थिति में वह सूत्र को ही अस्खलित आदि गुण से समुपेत होकर उच्चारण करता है, तथा आवर्तन-शिरोनमन आदि आवश्यक क्रियाओं

વિચારને માટે કેવો પ્રયત્ન કરૂં" તેનું નામ કિંકરતા છે. પાર્શ્વસ્થ આદિ ધર્મથી ચલિત બનેલ સાધુને ફરી સાધુધર્મમાં સંસ્થાપિત કરવો, તેનું નામ ન્યાસકરણ છે અને ભેદભાવ રહિત થવું, તેનું નામ અવિભક્તિ છે. જ્યારે સાધુ પાર્શ્વસ્થ આદિ કરવા માંડે છે ત્યારે તે અશુદ્ધ થવાને કારણે અસંભોગ્ય થાય છે પણ જો આગમન અનુસાર તે કિંકરતા આદિ કરે છે તો તે શુદ્ધ હોવાથી સંભોગ્ય ગણાય ૭ (૮) કૃતિકર્મ સંભોગ— તે સંભોગનો આઠમો ભેદ છે. વિધિપૂર્વક વંદના કરનાર સાધુ શુદ્ધ અને સંભોગ્ય ગણાય છે. પણ અવિધિપૂર્વક કૃતિકર્મ કરનાર સાધુ આગળ કહ્યું તેમ અશુદ્ધ અને અસંભોગ્ય મનાય છે. જ્યારે સાધુ વાતના રોગથી પીડાવાને કારણે શારીરિક હલનચલન કરવાને અસમર્થ થાય છે, ત્યારે તે ઉત્થાન આદિ ક્રિયા કરવાને શક્તિમાન હોતો નથી. આ પ્રકારની સ્થિતિમાં જો સૂત્રનું જ અસ્ખલિત આદિ ગુણ પૂર્વક ઉચ્ચારણ કરે છે તથા શિરોનમન આદિ આવશ્યક

तत् करोति, तस्य साधोरेवं विधो वन्दनादिविधिरशठप्रवृत्तिरिति स संभोग्य एव। इत्यष्टमः संभोगः८। 'वेयावच्चकरणे इ य' वैयावृत्त्यकरणमिति, वैयावृत्त्यम्–आहारोपधिदानादिना प्रस्रवणादिमात्रकाऽर्पणादिनाऽधिकरणोपशमनेन साहाय्यदानेन वा उपष्टम्भकरणम्। वैयावृत्त्यविषयेऽपि पूर्ववदेव संभोगासंभोगौ भवतः। इति नवमः९। 'समोसरणं' समवसरणम्=वहूनां साधूनामेकत्रावस्थानम्। तद् द्विविधम्–निरवग्रहम् सावग्रहं च। क्षेत्रमाश्रित्य निरवग्रहम् साधूनामप्रतिबन्धविहारित्वात्। वसतिमाश्रित्य सावग्रहम्, वसतिस्थितसाधूनामवग्रहमादायैव

को जितना बनता है उतना करता है, इस तरह उस साधु की इस प्रकार की जो वंदनादिविधि है वह अशठ–कपटरहित प्रवृत्ति है, इसलिये वह साधु संभोग्य ही है८। वैयावृत्यकरण–यह संभोग का नववां भेद है–वैयावृत्य का तात्पर्य है योग्य साधनों को जुटाकर, अथवा अपने आप को काम में लगाकर सेवाशुश्रूषा करना। इसी बात को टीकाकार यों बताते हैं कि–आहार, उपधि आदि के देने से, प्रस्रवण आदि के परिष्ठापन के लिये मात्रकादि के देने से अधिकरण के उपशमन से अथवा और भी विषय में सहायता करने से गुर्वादिजनों को सहायक होना इसका नाम वैयावृत्य है। इस वैयावृत्य के विषय में भी पूर्व की तरह संभोग और असंभोग होते है९। समवसरण-अनेक साधुओं का एक जगह रहना। यह दो प्रकार का है–एक निरवग्रह और दूसरा सावग्रह। क्षेत्र को आश्रित करके निरवग्रह समवसरण होता है, क्यों कि साधु जनों का विहार प्रतिबंध से रहित होता है। वसति को आश्रित

ક્રિયાઓ બની શકે એટલા પ્રમાણમાં કરે છે તે સાધુની આ પ્રકારની જે વંદનાવિધિ છે તે કપટ રહિત હોવાને કારણે તે સાધુ સંભોગ્ય જ ગણાય છે (૯) વૈયાવૃત્ય કરણ—આ સંભોગનો નવમો ભેદ છે વૈયાવૃત્ય એટલે યોગ્ય સાધનો એકત્ર કરીને અથવા પોતાની જાતને જ કામમાં લગાડીને શુશ્રૂષા કરવી એ જ વાતને ટીકાકાર આ પ્રમાણે સમજાવે છે–આહાર, ઉપધિ, આદિ દેવાથી, પ્રસ્રવણ મૂત્ર આદિનું પરિષ્ઠાપન કરવાને માટે દેવાથી અધિકરણના ઉપશમનથી અથવા બીજી બાબતોમાં મદદ કરીને ગુરૂ આદિને સહાય કરવી તેનું નામ વૈયાવૃત્ય છે, વૈયાવૃત્યની બાબતમાં પણ આગળ પ્રમાણે જ સંભોગ અને અસંભોગ થાય છે (૧૦) **સમવસરણ**–અનેક સાધુઓનું એક જગ્યાએ રહેવું તેને સમવસરણ કહે છે તે બે પ્રકારનું છે. (૧) નિરવગ્રહ (૨) સાવગ્રહ નિરવગ્રહ સમવસરણ ક્ષેત્રને આધારે થાય છે, કારણ કે સાધુઓનો વિહાર પ્રતિબંધ રહિત હોય છે સાવગ્રહ સમવસરણ વસતિને (વસવાટ)

कुर्याम्' इत्येवं प्रश्नात्मिकोक्ति । न्यासकरणम् पार्श्वस्थादिधर्माच्च्युतस्य पुनः साधुधर्मे संस्थापनम् ।

अविभक्ति =अपृथग्भावः भेदभावराहित्यम्, पार्श्वस्थादीनां किंकरतादिकं कुर्वन् साधुरशुद्धोऽसंभोग्यश्च भवति । यथागमं कुर्वंस्तु शुद्धः संभोग्यश्चेति । इति सप्तमः संभोगः७। तथा-'किइकम्मस्स य करणे' कृतिकर्मणश्च करणम्, कृतिकर्म= वन्दनं, तस्य करणं । विधिना वन्दनां कुर्वन् शुद्धः संभोग्यश्च । अविधिना कुर्वंस्तु पूर्ववदेवासंभोग्यः। यस्तु साधुर्वातवशेन स्तब्धगात्रः उत्थानादिकं कर्तुमसमर्थः, स सूत्रमेव अस्खलितादिगुणसमुपेतमुच्चारयति, एवमावर्तन शिरोनमनादियत्किञ्चिकरोति

के लिये कैसा प्रयत्न करूँ" इसका नाम किंकरता है। पार्श्वस्थ आदि के धर्म से च्युत हुए साधु को पुनः साधुधर्म में संस्थापित करना, इसका नाम न्यास करण है, और भेदभाव रहित होना इसका नाम अविभक्ति है। साधु पार्श्वस्थ आदिकों की किंकरता आदि जब करने लगता है-तब वह अशुद्ध होने के कारण असंभोग्य हो जाता है। और आगम के अनुसार इन किंकरतादिकों को करता है तब वह शुद्ध होने से संभोग्य होता है७। कृतिकर्मसंभोग-यह संभोग का आठवां भेद है-विधिपूर्वक वन्दना करने वाला साधु शुद्ध और संभोग्य माना गया है, और अविधिपूर्वक कृतिकर्म करने वाला साधु पूर्व की तरह अशुद्ध और असंभोग्य कहा गया है। जो साधु वात व्याधि से पीड़ित होता हुआ स्तब्ध शरीर हो जाता है तब वह उत्थान आदि क्रिया करने में असमर्थ बन जाता है। इस स्थिति में वह सूत्र को ही अस्खलित आदि गुण से समुपेत होकर उच्चारण करता है, तथा आवर्तन-शिरोनमन आदि आवश्यक क्रियाओं

વિશ્રામને માટે કેવો પ્રયત્ન કરૂં" તેનુ નામ કિંકરતા છે. પાર્શ્વસ્થ આદિ ધર્મથી ચલિત થયેલ સાધુને ફરી સાધુધર્મમાં સંસ્થાપિત કરવો, તેનુ નામ ન્યાસકરણ છે અને ભેદભાવ રહિત થવુ તેનુ નામ અવિભક્તિ છે. જ્યારે સાધુ પાર્શ્વસ્થ આદિ કરવા માંડે છે ત્યારે તે અશુદ્ધ થવાને કારણે અસંભોગ્ય થાય છે પણ જો આગમન અનુસાર તે કિંકરતા આદિ કરે છે તો તે શુદ્ધ હોવાથી સંભોગ્ય ગણાય છે (૮) કૃતિકર્મ સંભોગ— તે સંભોગના આઠમો ભેદ છે વિધિપૂર્વક વંદના કરનાર સાધુ શુદ્ધ અને સંભોગ્ય ગણાય છે પણ અવિધિપૂર્વક કૃતિકર્મ કરનાર સાધુને આગળ કહ્યું તેમ અશુદ્ધ અને અસંભોગ્ય મનાય છે. જ્યારે સાધુ વાના રોગથી પીડાવાને કારણે શારીરિક હલનચલન કરવાને અસમર્થ થાય છે, ત્યારે તે ઉત્થાન આદિ ક્રિયા કરવાને શક્તિમાન હોતો નથી આ પ્રકારની સ્થિતિમાં જે સૂત્રનુ જ અસ્ખલિત આદિ ગુણ પૂર્વક ઉચ્ચારણ કરે છે તથા શિરોનમન આદિ આવશ્યક

'दुओणए' द्व्यवनतम्, अवनतम्=शिरोनमनम् द्वे अवनते यस्मिस्तद् द्व्यवनतम्, तत्रैकं यदा पूर्वमेव 'इच्छामिखमासमणो! वंदिउं जावणिज्जाए निसीहियए' इति अभिधायावग्रहानुज्ञापनायाऽवनमनम् १। द्वितीयं-पुन र्यदा पूर्ववदवग्रहानुज्ञापनायैवावनमनं इति आवर्त्तद्वयम्। 'जहाजायं' यथाजातं यथा श्रमणो जातस्तथा-वन्दते, अर्थात् दीक्षाग्रहणसमये यथा-परिधृतचोलपट्टकमावरणसदोरकमुखवस्त्रिका रजोहरणप्रमार्जिको बद्धाञ्जलिपुटश्चासीत्, तामवस्थामाश्रित्य वन्दनम्-इति भावः, इति तृतीयः आवर्तः। 'किइकम्मंबारसावयं' कृतिकर्मद्वादशावर्त्तम्, द्वादशा आवर्ताः सूत्रोच्चारणमिश्राः कायव्यापारा यस्मिस्तद् द्वादशावर्त्त वन्दनकम्। तथाहि-'अहो कायं कायसंफासं' इत्यत्र 'अ' इत्युच्चार्याऽञ्जलिपुटं दक्षिणभागक्रमेण परि-

---

दो शिरोनमन वाला कृतिकर्म, इसमें एक शिरोनति तब की जाती है कि जब पहिले ही "इच्छामि खमासमणो! वंदि उं जावणिज्जाए निसीहियाए" ऐसा पाठ बोलकर अवग्रह की अनुज्ञा ली जाती है १। दूसरा तब किया जाता है जब पहिले की तरह पुनः अवग्रह की आज्ञा ली जाती है। इस प्रकार ये दो आवर्त्त हो जाते हैं २। तीसरा आवर्त्त यथाजात है यह उस समय किया जाता है जब दीक्षाग्रहण के समय में वह चोलपट्टक को धारण करता है सदोरकमुखवस्त्रिका को अपने मुह पर बाँधता है रजोहरण और प्रमार्जिका को लेता है, अपने गुरुदेव को दोनों हाथ जोडकर नमस्कार करता है। इसी का नाम यथाजात है यह तृतीय आवर्त्त है ३। द्वादश आवर्त्तवाला-कृत्तिकर्म चौथा आवर्त्त है। सूत्रोच्चारण से मिश्रित कायव्यापार का नाम आवर्त्त है। ये वंदन क्रिया में बारह इस प्रकार से होते हैं-"अहो कायं कायसंफास" इस पाठ को बोलकर

શિરોનમન વાળા કૃતિકર્મ છે તેમા પહેલા જ્યારે "इच्छामि खमासमणो! वंदिउं जावणिज्जाए निसीहियाए" એવો પાઠ બોલીને જ્યારે અવગ્રહની અનુજ્ઞા લેવામાં આવે છે ત્યારે પહેલી વખત શિરોનતિ (મસ્ત નમાવવાની ક્રિયા) થાય છે જ્યારે પહેલાની જેમ ફરીથી અવગ્રહની આજ્ઞા લેવાય છે ત્યારે બીજી વખત શિરોનતિ કરાય છે. આ પ્રમાણે તે બે આવર્ત્ત થાય છે (૨) ત્રીજુ આવર્ત યથાજાત છે. તે એ સમયે કરવામાં આવે છે કે જ્યારે દીક્ષા લેતી વખતે તે ચોલપટ્ટક ધારણ કરે છે, સદોરકમુહપત્તિ પોતાના મોઢે બાંધે છે; રજોહરણ અને પ્રમાર્જિકા લે છે, પોતાના ગુરુદેવને બન્ને હાથ જોડીને નમસ્કાર કરે છે. તેનું નામ 'યથાજાત' છે. બાર આવર્ત્તવાળું કૃતિકર્મ ચોથુ આવર્ત છે. સૂત્રોચ્ચારણથી મિશ્રિત કાય વ્યાપારને આવર્ત કહે છે. વંદન ક્રિયામાં તે બાર આવર્ત્ત આ પ્રમાણે થાય છે-'अहो कायं काय संफासं'

समागतसाधु निवसनात्। सम्भोग्या समाग्यव्यवस्था पूर्ववद् विज्ञेया। इति दशम संभोग १०। सनिषद्या=एकासनोपवेशनम्, सा हि सम्भोगासंभोगहेतु र्भवति। आसनोपविष्टआचार्यस्तदासनोपविष्टसांभोगिकाचार्येण सह श्रुतपरिवर्तनादिक कुर्वन् शुद्ध। अमनोज्ञ-पार्श्वस्थादिभिः सह तथा कुर्वन्नशुद्ध पूर्ववत्सम्भोगविवेकेन शुध्यति। इत्येकादश संभोग ११। तथा 'कहाए य पबंधणे' कथायाम प्रबन्धनम्=व्याख्यानादिकरणम्। सम्भोग्यासम्भोग्यव्यवस्थापूर्ववद्विज्ञेया। इति द्वादश संभोग १२। 'दुवालसावत्ते' द्वादशावर्त्त कृतिकर्म=वन्दनं 'पण्णत्ते' प्रज्ञप्तम्, द्वे यथा

कारके साधग्रह समवसरण होता है, क्यों कि उपाश्रयरूप वसति में पहिले से ठहरे हुए साधुओं का अवग्रह लेकर ही पीछे से आये हुए साधु वहां ठहरते है। इसमें सम्भोग्य और असम्भोग्य व्यवस्था पहिले की तरह घटित कर लेना चाहिये १०। सनिषद्या-यह सम्भोग का ग्यारहवां भेद है- इसमें एक आसन से साधु बैठा रहता है। यह सनिषद्या सम्भोग और असम्भोग की हेतु होती है। आसन पर बैठे हुए आचार्य अपने आसन पर बैठे हुए अन्य सम्भोगिक आचार्य के साथ श्रुतपरिवर्तन आदि करते हुए शुद्ध माने गये हैं। तथा अमनोज्ञ पार्श्वस्थ आदि के साथ एक आसन पर बैठकर श्रुतपरिवर्तन आदि करते हुए अशुद्ध माने गये हैं। इनमें सम्भोग्य की व्यवस्था पहिले कहे गये प्रकार की तरह घटित कर लेनी चाहिये ११। इसी तरह से कथाप्रबन्ध नामका जो बारहवां भेद संभोग का है उसमें भी संभोग्यासम्भोग्य की व्यवस्था समझ लेनी चाहिये। कृतिकर्म-वन्दन-द्वादश आवर्त्तवाला होता है, वह इस प्रकार है-पहला

આધારે થાય છે, કારણ કે ઉપાશ્રય રૂપ વસતિમાં પહેલેથી આવી રહેલા સાધુઓના અવગ્રહ (રજા) લીધા પછી જ પછીથી આવેલ સાધુ ત્યાં રહે છે તેમાં સંભોગ્ય તથા અસંભોગ્ય વ્યવસ્થા આગળ પ્રમાણે જ સમજી લેવી સન્નિષદ્યા—આ સંભોગનો અગિયારમો ભેદ છે. તેમાં સાધુ એક આસને બેસી રહે છે તે સનિષદ્યા સંભોગ અને અસંભોગનું કારણ બને છે આસન ઉપર બેઠેલા આચાર્ય પોતાના આસને બેઠા બેઠાં અન્ય સંભોગિક આચાર્યની સાથે શ્રુતપરિવર્તન આદિ કરે તો તે શુદ્ધ ગણાય છે પણ અમનોજ્ઞ પાર્શ્વસ્થ આદિ સાથે એક આસને બેસીને શ્રુતપરિવર્તન આદિ કરે તો તે અશુદ્ધ ગણાય છે તેમાં પણ સંભોગ્ય અને અસંભોગ્યની વ્યવસ્થા આગળ કહ્યા પ્રમાણે ઘટાવી લેવી (૧૨) એ જ પ્રમાણે कथाप्रबंध નામનો જે બારમો ભેદ છે, તેમાં પણ સંભોગ્ય, અસંભોગ્યની વ્યવસ્થા આગળ કહ્યા પ્રમાણે સમજવી.

કૃતિકર્મ—વંદન-બાર આવર્તવાળું હોય છે તે આ પ્રમાણે છે-પહેલા બે

'दुओणए' द्व्यवनतम्, अवनतम्=शिरोनमनम् द्वे अवनते यस्मिन्तद् द्व्यवनतम्, तत्रैकं यदा पूर्वमेव 'इच्छामिखमासमणो! वंदिउं जावणिज्जाए निसीहियए' इति अभिधायावग्रहानुज्ञापनायाऽवनमनम् १। द्वितीयं–पुन र्यदा पूर्ववदवग्रहानुज्ञापनायैवावनमनं इति आवर्त्तद्वयम्। 'जहाजायं' यथाजातं यथा श्रमणो जातस्तथा वन्दते, अर्थात् दीक्षाग्रहणसमये यथा–परिधृतचोलपट्टकप्रावरणसदोरकमुखवस्त्रिका रजोहरणप्रमार्जिको बद्धाञ्जलिपुटश्चासीत्. तामवस्थामाश्रित्य वन्दनम्-इति भावः, इति तृतीयः आवर्तः। 'किइकम्मंबारसावयं' कृतिकर्मद्वादशावर्त्तम्, द्वादशा आवर्ताः सूत्रोच्चारणमिश्राः कायव्यापारा यस्मिस्तद् द्वादशावर्त्तं वन्दनकम्। तथाहि–'अहो कायं कायसंफासं' इत्यत्र 'अ' इत्युच्चार्याऽञ्जलिपुट दक्षिणभागक्रमेण परि-

दो शिरोनमन वाला कृतिकर्म, इसमें एक शिरोनति तब की जाती है कि जब पहिले ही "इच्छामि खमासमणो! वंदिउं जावणिज्जाए निसीहियाए" ऐसा पाठ बोलकर अवग्रह की अनुज्ञा ली जाती है १। दूसरा तब किया जाता है जब पहिले की तरह पुनः अवग्रह की आज्ञा ली जाती है। इस प्रकार ये दो आवर्त्त हो जाते हैं २। तीसरा आवर्त्त यथाजात है यह उस समय किया जाता है जब दीक्षाग्रहण के समय में वह चोलपट्टक को धारण करता है सदोरकमुखवस्त्रिका को अपने मुह पर बांधता है रजोहरण और प्रमार्जिका को लेता है, अपने गुरुदेव को दोनों हाथ जोडकर नमस्कार करता है। इसी का नाम यथाजात है यह तृतीय आवर्त्त है ३। द्वादश आवर्त्तवाला–कृत्तिकर्म चौथा आवर्त्त है। सूत्रोच्चारण से मिश्रित कायव्यापार का नाम आवर्त्त है। ये वंदन क्रिया में बारह इस प्रकार से होते हैं–"अहो कायं कायसफास" इस पाठ को बोलकर

શિરોનમન વાળા કૃતિકર્મ છે. તેમા પહેલા જ્યારે "इच्छामि खमासमणो! वंदिउं जावणिज्जाए निसीहियाए" એવો પાઠ બોલીને જ્યારે અવગ્રહની અનુજ્ઞા લેવામા આવે છે ત્યારે પહેલી વખત શિરોનતિ (મસ્ત નમાવવાની ક્રિયા) થાય છે જ્યારે પહેલાની જેમ ફરીથી અવગ્રહની આજ્ઞા લેવાય છે ત્યારે બીજી વખત શિરોનતિ કરાય છે. આ પ્રમાણે તે બે આવર્ત્ત થાય છે. (૨) ત્રીજુ આવર્ત યથાજાત છે તે એ સમયે કરવામાં આવે છે કે જ્યારે દીક્ષા લેની વખતે તે ચોલપટ્ટક ધારણ કરે છે, સદોરકમુહપત્તિ પોતાના મોઢે બાંધે છે; રજોહરણ અને પ્રમાર્જિકા લે છે, પોતાના ગુરુદેવને બન્ને હાથ જોડીને નમસ્કાર કરે છે તેનું નામ 'યથાજાત' છે. બાર આવર્ત્તવાળું કૃતિકર્મ ચોથુ આવર્ત છે. સૂત્રોચ્ચારણથી મિશ્રિત કાય વ્યાપારને આવર્ત કહે છે. વંદન ક્રિયામા તે બાર આવર્ત્ત આ પ્રમાણે થાય છે–'अहो कायं काय संफासं'

प्राम्य वाममागमानीय शिरसा सयोज्य 'हो' इति वदेत् इत्थं प्रथमावर्तन समाप्य 'का' 'यं' इत्युक्त्वा द्वितीयम्, 'काय' इत्युक्त्वा तृतीय चापवर्तन पूर्ववत्कृत्वा 'स फास' इति वदन् शिरो नमयित्वा गुरुचरणौ स्पृशन्, प्रविश्य नैव 'खमणिज्जो भे किलामो अप्पकिलंताणं-बहुसुभेण भे दिवसो वइक्कंतो?' इति वाक्येनापराध क्षमापनपूर्वक दैवसिक सुखशातादिक पृष्ट्वा। 'जत्ता भे' इत्युच्चार्य चतुर्थम्, 'जव णिज्ज' इत्युच्चार्य पञ्चमम् 'च भे' इत्युच्चार्य षष्ठमावर्तनम्। अनयैव रीत्या द्वितीयक्षमाश्रमणदानेऽपि षडावर्तनानि इति उभय मिलित्वा द्वादश आवर्तनानि

जब शिष्य अपने गुरु देव के चरणों का स्पर्श करता है तब इसमें तीन आवर्त हो जाते हैं, जैसे-"अहो" में से वह पहिले "अ" को बोलते समय अपने अजलिपुट को दक्षिणभाग से घुमाकर वाम भाग में लाता है, और फिर उसे शिर से संयुक्त कर "हो" शब्द का उच्चारण करता है। इसमें प्रथम आवर्त होकर समाप्त हो जाता है १। बाद में "कायं" पद को "का" "य" इस प्रकार भिन्नरूप से बोलकर द्वितीय आवर्त को, और "काय" पद को समग्ररूप में बोलकर तृतीय आवर्त को पूर्ववत करके "सफास" बोलता हुआ वह शिर को झुकाकर गुरु के चरणों को स्पर्श करता है ३। बाद में प्रवेश होते ही 'खमणिज्जो भे किलामो अप्पकिलंताणं बहुसुभेण भे दिवसो वइक्कंतो' इस वाक्य से अपराध क्षमापनपूर्वक दैवसिक सुखशातादिक पूछकर "जत्ता भे" ऐसा उच्चारण करके चतुर्थ आवर्त ४, "जवणिज्जं" बोलने में पंचम आवर्त ५, "च भे" बोलने में छठवां आवर्त हो जाता है ६। इसी रीति से द्वितीय क्षमाश्रमणदान में भी छह आवर्त

આ પાઠ બોલતાં શિષ્ય પોતાના ગુરુદેવના ચરણોનો સ્પર્શ કરે છે ત્યારે તેમાં ત્રણ આવર્ત થાય છે જેમ કે "अहो" માંથી પહેલાં 'अ' ને બોલતી વખતે પોતાના અંજલિપુટને જમણી તરફથી લઈને ડાબી તરફ લઈ જાય છે, અને પછી તેને શિર સાથે સંયુક્ત કરીને 'हो' શબ્દનું ઉચ્ચારણ કરે છે આ રીતે પહેલું આવર્ત સમાપ્ત થાય છે ત્યાર બાદ "कायं" પદને "का" "यं" એમ ભિન્ન રૂપે બોલીને દ્વિતીય આવર્તને અને 'काय' પદને સમગ્ર રૂપે બોલીને પહેલાની જેમ કરીને "काय" सफासं" બોલતા તે ત્રીજા આવર્તને સમાપ્ત કરે છે અને શિર નમાવીને ગુરુના ચરણોનો સ્પર્શ કરે છે ત્યાર પછી खमणिज्जो भे किलामो अप्पकिलंताणं बहुसुभेणं भे दिवसो वइक्कंतो" આ વાક્યથી અપરાધ ક્ષમાપન પૂર્વક દિવસ સંબંધી સુખ શાતાદિક પૂછીને "जत्तामे" એવું ઉચ્ચારણ કરીને ચોથું આવર્ત "जवणिज्जं" બોલીને પાંચમું આવર્ત 'च मे' બોલીને છઠ્ઠું આવર્ત થાય છે એ રીતે બીજા ક્ષમાપન દાનમાં

भवन्ति, एति चतुर्थ आवर्तः। तथा 'चउसिरं' चतुः शिरः, प्रथमप्रविष्टस्य शिष्यस्य क्षमापणकाले शिष्याचार्ययोः शिरोद्वयम्५,

पुनरपि निष्क्रम्य प्रविष्टस्य द्वयम्, इति चतुःशिरः। इति-आवर्तद्वयम्, इति पञ्चमः षष्ठ आवर्तः। तथा 'तिगुत्त' त्रिगुप्तं-तिसृभिर्गुप्तं त्रिगुप्तम् अत्र आवर्तत्रयमिति नवावर्ताः। 'दुपवेसं' द्विप्रवेशम्- द्वौ प्रवेशौ यस्मिंस्तत् द्विप्रवेशम्। तत्र अवग्रहमनुज्ञाप्य प्रविशतः प्रथमः प्रवेशः, निर्गत्य पुनः प्रविशतो द्वितीयः प्रवेशः इति प्रवेशरूपमावर्तद्वयम् संकलनया एकादशावर्ताः। 'एगनिक्खमणं' अवग्रहादावश्यक्या निर्गच्छत एकं निष्क्रमणम्। द्वितीयवेलायां तु अवग्रहान्न निर्गच्छति, पादपतित एव सूत्रं समापयतीति। द्वदश आवर्ताः। अत्र द्वादशविधेष्वावर्तेषु अवश्यकरणीयतया पञ्चविंशतिर्विधयो भवन्ति, ते यथा-

हो जाते हैं१२। इस प्रकार कृतिकर्म बारह आवर्त्तवाला होता है। ये चार आवर्त्त हुए४। तथा चारशिर ये पांचवां और छठवां आवर्त्त है- प्रथम प्रविष्ट हुए शिष्य के क्षमापणकाल में शिष्य और आचार्य के दो शिर, बाद में पुनः निकल कर प्रविष्ट हुए शिष्य के क्षमापण काल में शिष्य और आचार्य के दो शिर, इस प्रकार ये चार शिर हैं। इनके दो आवर्त्त, ऐसे पांचवां और छठा आवर्त्त होता है ६। तथा तीनगुप्तियों के तीन आवर्त्त, इस तरह ये नव आवर्त हो जाते हैं ९। दो प्रवेश के दो आवर्त्त-अवग्रह को लेकर प्रवेश करना यह प्रथम प्रवेश, तथा निकलकर पुनः प्रवेश करना यह द्वितीय प्रवेश-ये प्रवेशरूप दो आवर्त हैं ११। तथा-अवग्रह से आवश्यकी करके निकलने वाले का एक यह बारहवां निष्क्रमणरूप आवर्त्त होता है१२। दूसरी बार अवग्रह से नहीं निकलता है किन्तु वहीं गुरुचरण में रहा हुआ ही क्षमाश्रमण का पूरा पाठ पढना है, इस प्रकार से कृतिकर्म-वन्दन-द्वादश आवर्त्तवाला कहा है। इन

પણ છ આવર્ત્ત થાય છે આ રીતે કૃતિકર્મ બાર આવર્ત્ત વાળુ હોય છે આ રીતે ચાર આવર્ત થયા તથા ચારશિર એ પાચમુ અને છઠુ આવર્ત્ત છે, પહેલાં દાખલ થયેલ શિષ્યના ક્ષમાપણુ-કાળમા શિષ્ય અને આચાર્યના બે શિર, ત્યાર બાદ પુન નીકળીને પ્રવિષ્ટ થયેલ શિષ્યના ક્ષમાપણુકાળમા શિષ્ય અને આચાર્યના બે શિર છે એ પ્રમાણે ચાર શિર છે તેમના બે આવર્ત્ત એ રીતે પાચમું અને છઠુ આવર્ત્ત થાય છે તથા ત્રણ ગુપ્તિયોના ત્રણ આવર્ત્ત એ રીતે તે નવ આવર્ત્ત થઇ જાય છે બે પ્રવેશના બે આવર્ત્ત-અવગ્રહ લઇને પ્રવેશકરવો તે પ્રથમ પ્રવેશ, તથા નીકળીને પુન પ્રવેશ કરવો તે દ્વિતીય પ્રવેશ, એ પ્રવેશરૂપ બે આવર્ત્ત છે તથા અવગ્રહથી આવશ્યકી કરીને નીકળનારનો એક, તે બારમો નિષ્ક્રમરૂપ આવર્ત્ત થાય છે, બીજી વાર અવગ્રહથી નીકળતો નથી પણ ત્યા ગુરુ ચરણમા રહીને જ ક્ષમા શ્રમણનો પુરો પાઠ બોલે છે આ રીતે કૃતિકર્મ-વન્દન-બાર

द्वे अवनती२, एकं यथाजातम्३, आदक्षिणप्रदक्षिणरूपं द्वादशविधं कृतिकर्म१५ चत्वारि शिरांसि१९, तिस्रो गुप्तयः२२, द्वौ प्रवेशौ२४, एकं निष्क्रमणम्२५, इति पञ्चविंशतिर्विधयः। विजया खलु राजधानी द्वादशयोजनसहस्राणि 'आयामवि क्खंभेण' आयामविष्कम्भाभ्याम् आयामो दैर्घ्यम्, विष्कम्भो विस्तारः ताभ्याम्, प्रज्ञप्ता। राम खलु बलभद्रो द्वादशवर्षसहस्राणि सर्वायुः 'पालित्ता' पालयित्वा समाप्य पञ्चम देवलोकं देवत्वं गतः। मन्दरस्य खलु पर्वतस्य 'चूलिया' चूलिका= चूडा मूले द्वादश योजनानि विष्कम्भेण प्रज्ञप्ता। जम्बूद्वीपस्य खलु द्वीपस्य वेदिका मूले द्वादशयोजनानि विष्कम्भेण प्रज्ञप्ता। सर्वेषु वर्षेषु 'सव्वजहण्णिया' सर्व- जघन्या न्यूनातिन्यूनेत्यर्थः, 'राई' रात्रि 'दुवालसमुहुत्तिया' द्वादशमुहूर्तिका द्वादशमुहूर्ता यस्याः सा, प्रज्ञप्ता। एवं दिवसोऽपि सर्वजघन्यो द्वादशमुहूर्तको ज्ञातव्य। सर्वार्थसिद्धस्य खलु महाविमानस्य उपरितनात् स्तूपिकाग्रात् शिख

बारह आवर्तों में अवश्य करने योग्य पचीस विधियां होती हैं, वे ये हैं-दो शिरो नमन२, एक यथाजात३, आदक्षिणप्रदक्षिणारूप बारह प्रकार का कृतिकर्म१५, चार शिर१९, तीनगुप्तियां२२, दो प्रवेश२४, और एक निष्क्रमण२५। आयाम और विष्कंभ की अपेक्षा विजया नामकी राजधानी बारह हजार योजन की कही गई है। राम नाम के बलभद्र बारह हजार वर्ष की आयु को पालकर-समाप्तकर-पांचवें देवलोक में देव हुए हैं। मंदर पर्वत की चूलिका मूल में विष्कंभ की अपेक्षा बारह योजन प्रमाण कही गई है। जंबूद्वीप नामक प्रथम द्वीप की वेदिका मूल में विष्कम की अपेक्षा बारह योजन की कही गई है। समस्त वर्ष में सब से अतिकम (सब से छोटी) रात्रि बारह मुहूर्तवाली होती है। इसी प्रकार द्वादश मुहूर्त का दिन सब से छोटा कहा गया है। सर्वार्थसिद्ध महाविमान

આવત વાળુ કહેલ છે એ બાર આવર્તોમાં અવશ્ય કરવા યોગ્ય પચીસ વિધિઓ હોય છે તે આ પ્રમાણે છે—

બે શિરોનમન ૨, એક યથાજાત ૩ આદક્ષિણ પ્રદક્ષિણ રૂપ બાર પ્રકારના કૃતિકર્મ ૧૫ ચાર શિર ૧૯ ત્રણ ગુપ્તિઓ, ૨૨ બે પ્રવેશ ૨૪ અને એક નિષ્ક્રમણ ૨૫.

આયામ (લંબાઈ) અને વિષ્કંભ (પહોળાઈ) ની અપેક્ષાએ વિજયા નામની રાજધાની બાર હજાર યોજનની કહી છે રામ નામના બલભદ્ર બાર હજાર વર્ષનું આયુષ્ય ભોગવીને પાંચમાં દેવલોકમાં દેવ થયા છે. મંદર પર્વતની ચૂલિકા મૂળમાં વિષ્કંભની અપેક્ષાએ બાર યોજનની કહેલ છે આખા વર્ષમાં સૌથી ટૂંકી રાત્રિ બાર મુહૂર્તની હોય છે એ જ પ્રમાણે સૌથી ટૂંકો દિવસ પણ બાર મુહૂર્તનો હોય છે સર્વાર્થ સિદ્ધ મહાવિમાનના ઉપરિતન શિખરના અગ્રભાગથી બાર યોજન ઉપર

रग्रभागात् द्वादशयोजनानि ऊर्ध्वमुपरितनी ईषत्प्राग्भारनामधेया सिद्धशिलेति नाम्ना प्रसिद्धा पृथ्वी प्रज्ञप्ता। ईषत्प्राग्भारायाः खलु पृथिव्या द्वादशनामधेयानि प्रज्ञप्तानि। तद्यथा—'ईसित्ति वा' ईषदिति वा, वा शब्दो विकल्पार्थः, इति शब्दः स्वरूपनिर्देशार्थः, ईषदिति प्रथमं नाम। 'इसिपब्भाराइवा' ईषत्प्राग्भारेति द्वितीयं नाम। 'तणूइ वा' तनुरिति तृतीयम्। 'तणुयतरित्ति वा' तनुकतरेति चतुर्थम्। 'सिद्धित्ति वा' सिद्धिरिति नामधेयं पञ्चमम्। 'सिद्धालएत्ति वा' सिद्धालयेति षष्ठम्। 'मुत्तित्ति वा' मुक्तिरिति सप्तम्। 'मुत्तालएत्ति वा' मुक्तालयेति नामधेयमष्टमम्। 'बंभेत्ति वा' ब्रह्मेति नवमम्, 'बंभवडिंसएत्ति वा' ब्रह्मावतंसिकेति दशमम्। 'लोगपडिपुरणेत्ति वा' लोकप्रतिपूरणेति एकादशम्। 'लोगग्गचुलियाइ वा' लोगाग्रचूलिकेति द्वदशं नाम ॥३२॥

मूलम्—इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं बारस पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। पंचमीए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं बारस सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगइयाणं बारस पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगइयाणं देवाणं बारसपलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। लंतए कप्पे अत्थेगइयाणं देवाणं बारस सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। जे देवा माहिंदं महिंदज्झयं कंबु कंबुगीवं पुंखं सुपुंखं महापुंखं पुंडं सुपुडं महापुडं नरिंदं नरिंदकंतं नरिंदुत्तरवडिंसगं विमाणं

के—उपरितन शिखर के अग्रभाग से बारह योजन ऊपर ईषत्प्रागभार नामक सिद्ध शिला है। इस ईषत्प्राग्भार पृथिवी के बारह नाम हैं। वे इस प्रकार है—ईषत्१, ईषत्प्राग्भार२, तनू३, तनुकतरा४, सिद्धि५, सिद्धालय६, मुक्ति७, मुक्तालय८, ब्रह्म९, ब्रह्मावतंसिका१०, लोकप्रतिपूरणा११, और लोकाग्रचूलिका १२॥ सू० ३२॥

ઈષત્પ્રાગભાર નામની સિદ્ધશિલા છે. આ ઇષત્પ્રાગ્ભાર પૃથ્વીના બાર નામ છે, તે આ પ્રમાણે છે—(૧) ઇષત્ (૨) ઇષત્પ્રાગ્ભાર. (૩) તનૂ (૪) તનુકતરા, (૫) સિદ્ધિ (૬) સિદ્ધાલય, (૭) મુકિત, (૮) મુકતાલય, (૯) બ્રહ્મ, (૧૦) બ્રહ્માવતંસિકા, (૧૧) લોકપ્રતિપૂરણુ અને (૧૨) લોકાગ્રચૂલિકા, ॥ સૂ. ૩૨॥

देवत्ताए उववण्णा, तेसि णं देवाणं उक्कोसेणं बारससागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। ते णं देवा बारसण्हं अद्धमासाणं आणमति वा पाणमति वा उस्ससति वा नीससति वा। तेसि णं देवाणं बारसहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जइ। सतेगइया भवसिद्धिया जीवा जे बारसहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्सति, बुज्झिस्सति, मुच्चिस्सति परिनिव्वाइस्सति, सव्वदुक्खाण अंत करिस्सति ॥सू० १३॥

टीका— इमीसे णं' इत्यादि। अस्यां खलु रत्नप्रभायां पृथिव्यामस्त्येकेषां नैरयिकाणां द्वादशपल्योपमानि स्थिति प्रज्ञप्ता। पञ्चम्यां पृथिव्यामस्त्येकेषां नैरयिकाणां द्वादश सागरोपमानि स्थिति प्रज्ञप्ता। असुरकुमाराणां देवानामस्त्येकेषां द्वादशपल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। सौधर्मेशानेषु कल्पेषु अस्त्येकेषां देवानां द्वादशपल्योपमानि स्थिति प्रज्ञप्ता। लान्तके कल्पे अस्त्येकेषां देवानां द्वादश सागरोपमानि स्थिति प्रज्ञप्ता। ये देवा महेन्द्र१, महेन्द्रध्वज२ कम्बु३, कम्बुग्रीव४, पुङ्ख५, सुपुङ्ख६, महापुङ्ख७, पुण्ड्र८ सुपुण्ड्र९, महापुण्ड्र१०,

टीकार्थ--'इमीसे णं इत्यादि।

इस रत्नप्रभा पृथिवी मे कितनेक नारकियों की बारह पल्योपम की स्थिति कही गई है। पांचवी में कितनेक नारकियों की बारह सागरोपम की स्थिति कही गई है। असुरकुमार देवों में कितनेक देवों की स्थिति बारह पल्योपम की कही गई है। सौधर्म ईशान कल्पों में कितनेक देवों की स्थिति बारह पल्योपम की कही गई है। लान्तक कल्प मे कितनेक देवों की स्थिति बारह सागरोपम की कही गई है। जो देव महेन्द्र१, महेन्द्रध्वज२, कम्बु३, कम्बुग्रीव४ पुङ्ख५, सुपुङ्ख६, महापुङ्ख७, पुण्ड्र८

ટીકાર્થ—'इमीसे णं' इत्यादि।

આ રત્નપ્રભા પૃથ્વીમાં કેટલાક નારકીઓની બાર પલ્યોપમની સ્થિતિ છે પાંચમી પૃથ્વીમા કેટલાક નારકીઓની બાર સાગરોપમની સ્થિતિ કહી છે અસુર કુમાર દેવોમાં કેટલાક દેવોની સ્થિતિ બાર પલ્યોપમની કહી છે સૌધર્મ તથા ઈશાન કલ્પોમાં કેટલાક દેવોની સ્થિતિ બાર પલ્યોપમની કહી છે લાન્તક કલ્પમાં કેટલાક દેવાની સ્થિતિ બાર સાગરોપમની કહી છે જે દેવો (૧) મહેન્દ્ર (૨) મહેન્દ્રધ્વજ (૩) કંબુ (૪) કંબુગ્રીવ, (૫) પુંખ (૬) સુપુંખ (૭) મહાપુંખ, (૮) પુંડ્ર (૯)

नरेन्द्रं नरेन्द्रकान्त नरेन्द्रोत्तरावतंसकं च विमानम्=एतेषु त्रयोदशविमानेषु देवत्वेनोत्पन्ना', तेषां खलु देवाना सोत्कर्षा द्वादशसागरोपमा स्थितिः प्रज्ञप्ता। ते खलु देवा द्वादशानामर्द्धमासानां=षण्णां मासानामन्ते आनन्ति वा प्राणन्ति वा उच्छ्वसन्ति वा निःश्वसन्ति वा। तेषां खलु देवाना द्वादशभिर्वर्षसहस्रैराहारसंज्ञा समुत्पद्यते। सन्त्येके भवसिद्धिका जीवा ये द्वादशभिर्भवग्रहणैः सेत्स्यन्ति, भोत्स्यन्ते, मोक्ष्यन्ति, परिनिर्वास्यन्ति, सर्वदुःखानामन्तं च करिष्यन्ति ॥सू. ३३॥

त्रयोदश समवायामाह -

मूलम्--तेरस किरिया ठाणा पण्णत्ता, तं जहा--अट्ठादंडे, अणट्ठादंडे, हिंसादंडे, अकम्हादंडे, दिट्ठिविपरियासिदंडे, मुसावायवत्तिए, अदिन्नादाणवत्तिए, अज्झत्थिए मानवत्तिए, मित्तदोसवत्तिए, मायावत्तिए, लोभवत्तिवए, इरियावहिए नामं तेरसमे। सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु तेरस विमाणपत्थडा पण्णत्ता। सोहम्मवडिंसगे णं विमाणे णं अद्धतेरसजोयणसयसहस्साइं आयामविक्खंभेणं पण्णत्ते।

सुपुंड्र९, महापुंड्र१०, नरेन्द्र११, नरेन्द्रकान्त१२, और नरेन्द्रोत्तरावतंसक १३, इन तेरह विमानों में देव की पर्याय से उत्पन्न होते हैं, उन देवों की उत्कृष्ट स्थिति बारह सागरोपम की कही गई है। वे देव बारह अर्द्धमासों के अर्थात् छ महीनों के बाद बाह्य आभ्यन्तरिक श्वासोच्छ्वास लेते हैं। उन देवों को बारह हजार वर्ष के अनन्तर आहारसंज्ञा उत्पन्न होती है। इन में कितनेक जीव ऐसे होते है जो भवसिद्धिक होते है, और ये जीव बारह भव लेने के बाद सिद्धपद प्राप्त करने वाले होंगे, बुद्ध होंगे, सर्वथा कर्ममल से छूट जाने वाले होगे, परिर्निवृत्त हो जावेंगे और समस्त दुःखों का नाश कर देंगे ॥सू० ३३॥

સુપુંડ્ર (૧૦) મહાપુંડ્ર, (૧૧) નરેન્દ્ર (૧૨) નરેન્દ્રકાન્ત અને (૧૩) નરેન્દ્રોત્તરાવતંસક એ તેર વિમાનોમા દેવની પર્યાયે ઉત્પન્ન થાય છે, ને દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ બાર સાગરોપમની કહેલ છે તે દેવો છ મહિને બાહ્ય આભ્યન્તરિક શ્વાસોચ્છવાસ લે છે તે દેવોને બાર હજાર વર્ષે આહાર લેવાની અભિલાષા ઉત્પન્ન થાય છે તેમાના કેટલાક દેવો ભવસિદ્ધિક હોય છે તે દેવો બાર ભવ કરીને સિદ્ધપદ પ્રાપ્ત કરશે બુદ્ધ થશે, સર્વથા કર્મમલથી મુકત થશે, પરિનિવૃત થઈ જશે અને સમસ્ત દુઃખોનો નાશ કરશે ॥સૂ ૩૩॥

एवं ईसाणवडिंसगे वि। जलयरपंचिंदिय तिरिक्खजोणियाण अद्ध तेरस जाइकुलकोडीजोणीपमुहसयसहस्साइ पण्णत्ताइं। पाणाउस्स णं पुव्वस्स तेरस वत्थू पण्णत्तानि। गब्भवक्कंतिय पंचिंदिय तिरिक्ख जोणियाण तेरस विहे पओगे पण्णत्ते। तं जहा—सच्चमणपओगे, मोसमणपओगे, सच्चामोसमणपओगे, असच्चामोसमणपओगे, सच्च वइपओगे, मोसवइपओगे, सच्चामोसवइपओगे, असच्चामोसवइप ओगे, ओरालिअसरीरकायपओगे ओरालियमीससरीरकायपओगे, वेउव्वियसरीरकायपओगे, वेउव्वियमीससरीरकायपयोगे कम्मसरीर कायपओगे। सूरमंडलजोयणेण तेरसेहिं एगसट्ठि भागेहिं जोयणस्स ऊण पण्णत्ते॥ सू० ३४॥

टीका—'तेरस' इत्यादि। 'तेरस' त्रयोदश 'किरियाठाणा' क्रियास्थानानि प्रज्ञप्तानि। तत्र करणं क्रिया कर्मबन्धनहेतुरूपा प्रवृत्तिः, तस्याः स्थानानि भेदाः। तद्यथा—'अट्ठादंडे' अर्थदण्डः=दण्ड्यते=त्रसस्थावरादिर्हिंस्यते येन स दण्डः, दण्डः=अर्थदण्डः—स्वशरीरस्वजनादि प्रयोजनाय हिंसाकरणम्। इदं प्रथमं क्रियास्थानम्। द्वितीयम् 'अणट्ठादंडे' अनर्थदण्डः—प्रयोजनमनपेक्ष्यैव त्रसस्थावरादिजीवानां प्राण

अब सूत्रकार तेरहवें समवाय को प्रकट करते हैं—'तेरस' इत्यादि।

टीकार्थ—कर्मबन्धन में हेतुभूत प्रवृत्ति का नाम क्रिया है। इसके स्थान—भेद—तेरह हैं वे इस प्रकार हैं—अर्थदंड१, अनर्थदंड२, हिंसादंड३, अकस्मात दंड४, दृष्टिविपर्यासिकादंड५, मृषावाद प्रत्यय६, अदत्तादानप्रत्यय७, आध्यात्मिक८, मानप्रत्यय९, मित्रद्वेषप्रत्यय१०, मायाप्रत्यय११, लोभप्रत्यय१२, ऐर्यापथिक१३। स्वशरीर एवं स्वजनादि के निमित्त को लेकर जो हिंसाकृत्य क्रिया

હવે સૂત્રકાર તેરમું સમવાય બતાવે છે—'तेरस' इत्यादि।

ટીકાર્થ—કર્મબંધનના કારણ રૂપ પ્રવૃત્તિને ક્રિયા કહે છે તેના આ પ્રમાણે તેર ભેદ છે—(૧) અર્થદંડ (૨) અનર્થદંડ, (૩) હિંસાદંડ (૪) અકસ્માતદંડ (૫) દૃષ્ટિ વિપર્યાસિકા દંડ (૬) મૃષાવાદ પ્રત્યય, (૭) અદત્તાદાન પ્રત્યય, (૮) આધ્યાત્મિક (૯) માન પ્રત્યય (૧૦) મિત્રદ્વેષ પ્રત્યય (૧૧) માયા પ્રત્યય, (૧૨) લોભ પ્રત્યય અને (૧૩) ઐર્યાપથિક (૧) પોતાના શરીર નિમિત્તે અને સ્વજનાદિને નિમિત્તે જે હિંસાકૃત્ય કરવામાં

विनाऽर्थेन साऽनर्थदण्डो द्वितीय क्रियास्थानम् । तथा 'हिंसादंडे' हिंसादण्डः= हिंसामाश्रित्य यो दण्डो=हिंसनं, अर्थात् 'अयं मामहिंसीत्, हिनस्ति, हिंसिष्यति वेति मनसि विधाय प्रतिपक्षिणो यो वधः स हिंसादण्डस्तृतीयं क्रियास्थानम् । तथा 'अकम्हादंडे' अकस्माद्दण्डः=अन्यवधाय प्रवृत्तस्य अन्यस्य हननम् । इति-चतुर्थं क्रियास्थानम् । तथा 'दिट्ठिविपरिआसियादंडे' दृष्टि विपर्यासिकादण्डः= विपर्यासो विपर्यासिका, दृष्टेर्विपर्यासिका मतिभ्रान्तता, तया निमित्तभूतया यो दण्डः=प्राणिवधः स दृष्टि विपर्यासिकादण्डः, मित्रादीनाममित्रादिबुद्ध्या हननमित्यर्थः। इति पञ्चमम् । तथा-'मुसावायवत्तिए' मृषावादप्रत्ययम्, मृषावादः =आत्मपरोभयार्थमसत्यवचनम्, स एव प्रत्ययः=कारणं यस्य तत् मृषावादप्र-त्ययम् । षष्ठं क्रियास्थानम् । तथा 'आदिन्नादाणवत्तिए' अदत्तादानप्रत्ययम्, अदत्तादानं चौर्यं प्रत्ययः कारणं यस्य तत् । सप्तमं क्रियास्थानम् । तथा 'अज्झत्थिए' आध्यात्मिकम्=अध्यात्म=मनः, तत्र भवम् आध्यात्मिकम्, बाह्यनिमित्तमनपेक्ष्यैव

जाता है वह अर्थदंड है१। प्रयोजन की अपेक्षा विना ही जो त्रस स्थावर आदि जीवों की हिंसा कर दी जाती है वह अनर्थदंड२। 'इसने मेरी हिंसा की थी, यह मेरी हिंसा करता है अथवा यह मेरी हिंसा करेगा' इस प्रकार का विचार कर प्रतिपक्षी का जो वध कर दिया जाता है वह हिंसादंड है३। अन्यजीव की हिंसा करने के लिये प्रवृत्त हुआ पुरुष अन्य प्राणी की हिंसा कर दे यह अकस्मात् दंड है४। मति की विपर्यासिता का निमित्त लेकर जो हिंसा हो जाती है वह दृष्टिविपर्यासिका दंड है। जैसे मित्र को अमित्र की बुद्धि से मार देना५। जिस का कारण मृषावाद हो वह मृषावाद-प्रत्यय है६। जिस का कारण अदत्तादान हो वह अदत्तादान प्रत्यय है७। बाह्यनिमित्त की अपेक्षा किये विना ही जो शोक किया जाता है वह

આવે છે, તેને 'अर्थदंड' કહે છે, ( ) કોઇ પણ જાતના પ્રયોજન વિના ત્રસ, સ્થાવર આદિ જીવોની જે હિંસા કરાય છે તેને 'अनर्थदंड' કહે છે (૩) " આ વ્યક્તિએ મારી હિંસા કરી હતી, આ મની હિંસા કરે છે, અથવા આ મારી હિંસા કરશે" એવો વિચાર કરીને પ્રતિપક્ષી (વીરોધી) નો જે વધ કરાય છે તે "हिंसादंड" છે. (૪) એક જીવની હિંસા કરવાને તૈયાર થયેલ પુરૂષ અન્ય જીવની હિંસા કરી નાખે છે. તેને 'अकस्मात् दंड' કહે છે (૫) મતિના વિપર્યાસિતાને કારણે જે હિંસા થઇ જાય છે તેને 'दृष्टिविपर्यासिका दंड' કહે છે જેમ કે મિત્રને અમિત્ર ગણીને મારવો (૬) હિંસાનું કારણ મૃષાવાદ હોય તે હિંસાને "मृषावादप्रत्यय" કહે છે (૭) જે હિંસાનુ કારણ અદત્તાદાન હોય છે તે હિંસાને "अदत्तादानप्रत्यय" કહે છે [૮] બાહ્ય નિમિત્તની અપેક્ષા કર્યા વિના જ જે શોક આદિ કરાય છે તેને 'आध्यात्मिक'

शाक्यादिकरणमष्टमं क्रियास्थानम्। तथा–'माणवत्तिए' मानप्रत्ययं मात्यादिमद निमित्तं नवमं क्रियास्थानम्। तथा 'मित्तदोसवत्तिए' मित्रद्वेषप्रत्ययम्=मित्रेषु द्वेष प्रत्ययो यस्य तत् हितचिन्तकानां मातापित्रादीनामल्पेऽप्यपराधे महादण्डकरण दशमं क्रियास्थानम्। मायाप्रत्ययम्–मायानिबन्धनमेकादशम्। एवं लोभप्रत्ययम्=लोभनिमित्तक द्वादशं क्रियास्थानम्। तथा 'इरियावहिए' ऐर्यापथिकम्= ईर्यापथ भवम् ऐर्यापथिकं, केवलयोगनिमित्तं कर्मबन्धं, अर्थादुपशान्तमोहादीनां सातवेदनीयबन्धो नाम 'तेरसम' त्रयोदशं क्रियास्थानं प्रज्ञप्तम्। सौधर्मेशानेषु कल्पेषु त्रयोदश 'विमाणपत्थडा' विमानप्रस्तटाः प्रज्ञप्ताः।

'सोहम्मवडिंसगे णं विमाणे णं' सौधर्मावतंसकं खलु विमानं खलु 'ण' इति वाक्यालङ्कारे, सौधर्मस्वर्लोकोऽर्धचन्द्राकृतिकः पूर्वपश्चिमतः आयामयुक्तः उत्तरदक्षिणतो विस्तृतः। तस्य मध्यभागे त्रयोदशे प्रस्तटे शक्रस्य निवासभूतं विमानमस्ति, तद् विमानं सौधर्मदेवलोकस्य अवतंसकः=शिरोभूषणमिव वर्तते

आध्यात्मिक है८। मात्यादि मद को निमित्त करके जो क्रिया जाता है वह मानप्रत्यय है९। हितकारी माता पिता आदि को अल्प भी अपराध होने पर बड़ा दण्ड देना यह मित्र द्वेषप्रत्यय है१०। इसी तरह माया को निमित्त करके जो किया जाता है वह मायाप्रत्यय है११। तथ लोभ के निमित्त से किया जाने वाला लोभप्रत्यय है१२। केवल योग निमित्तक जो कर्मबंध होता है अर्थात् उपशान्तमोह आदि गुणस्थानवर्ती जीवों के जो एक सातावेदनीय कर्म का बंध होता है वह ऐर्यापथिक क्रिया स्थान है१३।

सौधर्म तथा ईशान, इन दो कल्पों में तेरह विमान प्रस्तट कहे गये हैं। सौधर्म स्वर्लोक अर्धचन्द्र के आकार जैसा है। पूर्वपश्चिम में लंबा और उत्तरदक्षिण में चौड़ा है। इस के मध्यभाग में तेरहवें प्रस्तट में इन्द्र का निवासभूत विमान है। यह विमान सौधर्म देवलोक का शिरो

(૯) જાતિ આદિના મદને કારણે જે ક્રિયા કરાય છે તે 'માનપ્રત્યય' કહેવાય છે (૧૦) હિતકારી માતા પિતા આદિને થોડો પણ અપરાધ થતા મોટી શિક્ષા કરવી તે 'મિત્રદ્વેષપ્રત્યય' કહેવાય છે (૧૧) એજ પ્રમાણે માયાને કારણે જે કરવામા આવે છે તેને 'માયાપ્રત્યય' કહે છે (૧૨) લોભને કારણે જે કરવામા આવે છે તેને 'લોભપ્રત્યય' કહે છે (૧૩) કેવળ યોગ નિમિત્ત જે કર્મબંધ થાય છે એટલે ઉપશાન્તમોહ આદિ ગુણસ્થાનવર્તી જીવોને જે એક સાતાવેદનીય કર્મનો બંધ થાય છે તેને ઐર્યાપથિક 'ક્રિયાસ્થાન' કહે છે

સૌધર્મ તથા ઇશાન એ બન્ને કલ્પોમાં તેર વિમાન પ્રસ્તર કહેલ છે પૂર્વ પશ્ચિમમાં લાંબુ અને ઉત્તર દક્ષિણમાં પહોળુ છે તેના મધ્ય ભાગમાં તેરમાં પ્રસ્તરમા (થરમા) ઇન્દ્રના નિવાસભૂત વિમાન છે તે વિમાન સૌધર્મ દેવલોકના

ऽतस्तद् विमानं सौधर्मावतंसकविमानमित्युच्यते, तद् विमानम् 'अद्धतेरस जोयण सयसहस्साइ' अर्धत्रयोदशयोजनशतसहस्राणि सार्धद्वादशलक्षयोजनानि आयामविष्कम्भाभ्यां प्रज्ञप्तम्। एवं सौधर्मावतंसक विमानवत् ईशानावतंसकविमानमपि विज्ञेयम्। जलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकानाम् 'जाइकुलकोडीजोणीपमुहसयसहस्साइ' जातिकुलकोटियोनिप्रमुखशतसहस्राणि=जातौ कुलकोटीना योनिप्रमुखानि उत्पत्तिस्थानप्रभवानि यानि शतसहस्राणि तानि 'अद्धतेरस' अर्धत्रयोदशसार्धद्वादशलक्षाणि प्रज्ञप्तानि, 'पाणाउस्स णं पुव्वस्स तेरस वत्थू पण्णत्ता' 'पाणाउस्स णं' प्राणायुषः खलु. यत्र प्राणिनामायुर्विधानं सभेदमभिधीयते, तत्प्राणायुर्द्वादशं पूर्वम् तस्य खलु पूर्वस्य त्रयोदश 'वत्थू' वस्तूनि=अध्ययनवद्विभागविशेषाः प्रज्ञप्तानि। 'गब्भवक्कंतियपंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं' गर्भव्युत्क्रान्तिकपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकानाम्=गर्भाद् व्युत्क्रान्तिरुत्पत्ति येषा ते, ते च पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकाश्चेति, तेषाम्, 'तेरसविहे' त्रयोदशविधः 'पओगे' प्रयोगः=प्रयोजनं प्रयोगः - मनोवाक्कायव्यापार इत्यर्थः, प्रज्ञप्तः, तद्यथा—'सच्चामणपयोगे' सत्यमनः प्रयोगः१, 'मोसमणपओगे' मृषामनः प्रयोगः२, सच्चा मोसमणपओगे' सत्यमृषामनः प्रयोगः३. 'असच्चा मोसमणपओगे' असत्यामृषामनः प्रयोगः४, इति चत्वारो मनसः प्रयोगाः।

भूषण जैसा है, इसलिये इसका नाम सौधर्मावतंसकविमान है। यह विमान लंबाई और चौडाई में अर्धत्रयोदश अर्थात् साढा बारह १२॥ लाख योजन का है। इसी तरह ईशानावतंसक विमान भी है। जलचर पचेन्द्रिय तिर्यंच योनिवाले जीवों की जाति में कुल कोटियों की योनियां अर्धत्रयोदश--सार्धद्वादश लक्ष अर्थात् साढा बारह १२॥ लाख कही गई हैं। प्राणायु नामक बारहवें पूर्व के, अध्ययन की तरह विभाग विशेष तेरह कहे गये है। गर्भज पचेन्द्रिय तिर्यंचों के प्रयोग—मन, वचन और काय के व्यापार तेरह प्रकार के कहे गये है। वे इस प्रकार है—सत्यमनः प्रयोग१, मृषामनः प्रयोग२, सत्य मृषामनः प्रयोग३, असत्यामृषामनः प्रयोग४,

---

શિરોભૂષણ જેવું છે, તેનુ નામ સૌધર્માવતંસક વિમાન છે તે વિમાન લબાઈમા સાડા બાર (૧૨॥) લાખ યોજનનુ છે એ જ પ્રમાણે ઇશાનાવતંસક વિમાન પણ છે. જળચર પચેન્દ્રિય તિર્યંચ યોનિવાળા જીવોની જાતિમા કુલ કોટિયોની યોનિયો સાડા બાર લાખ કહેવામા આવેલ છે પ્રણાયું નામના બારમા પૂર્વના, અધ્યયનના જેવા વિભાગ તેર કહેલ છે ગર્ભજ પંચેન્દ્રિય તિર્યંચોના પ્રયોગ મન, વચન, અને કાયની પ્રવૃત્તિ તેર પ્રકારની કહેલ છે તે આ પ્રમાણે છે—(૧) સત્ય મન. પ્રયોગ (૨) મૃષા મન. પ્રયોગ, (૩) સત્ય મૃષા મન. પ્રયોગ, (૪) અસત્યામૃષામન. પ્રયોગ

तथा 'सच्चवइपओगे' सत्यवच प्रयोगः५, 'मोसवइपओगे' मृषावच प्रयोग ६, मोसावइपओगे' सत्यमृषावच प्रयोग ७, असच्चामोसावइपओगे' असत्यामृष प्रयोग ८, इति चत्वारो वचन प्रयोगा । 'ओरालियसरीरकायपओगे' औ शरीरकायप्रयोग ओरालियमीससरीरकायपओगे औदारिकमिश्रशरीरक योग, 'वेउव्वियसरीरकायपओगे' वैकुर्विकशरीरकायप्रयोग, 'वेउव्वियमीस रकायपओगे' वैकुर्विकमिश्रशरीरकायप्रयोग, 'कम्मसरीरकायपओगे' कर्म कायप्रयोग इति पञ्च कायिका प्रयोगा । यद्यपि प्रयोगा पञ्चदश परन्तु आहारकाहारकमिश्रौ प्रयोगौ संयमिनामेव भवत, न तु तिरश्चा प्रयोदशैव प्रज्ञप्ता । 'सरमंडलस्सजोयणे' सूरमण्डलस्योजनम्=सूरमण्डलस्य=भा विमानवृत्तस्य योजनम् 'णं' इति वाक्यालङ्कारे, 'तेरसेहिं एगसट्ठिभ भायणस्स' 'एगसट्ठिभागेहिं' एकषष्टिभागैः=एकषष्टिभागविभक्तस्य योज अर्थादेकषष्टिभागविभक्ते योजने 'तेरसेहिं' त्रयोदशभिरूनम्=त्रयोदशभागन्यू योजनस्याष्टचत्वारिंशद्भागप्रमाणमित्यर्थः, प्रज्ञप्तम् ।सू ३५॥

मन के इस प्रकार ये चार प्रयोग ४। सत्यवच प्रयोग५, मृषावच प्रयो सत्यमृषावच प्रयोग७, असत्यामृषावच प्रयोग८, वचन के इस प्रकार ये प्रयोग ८। औदारिक शरीर कायप्रयोग ९। औदारिकमिश्रशरीरकायप्रयोग वैकुर्विक शरीर कायप्रयोग ११, वैकुर्विकमिश्र शरीर कायप्रयोग १२, और का शरीरकायप्रयोग है १३। इस प्रकार ये पांच शरीरके प्रयोग हैं यद्यपि प्र पन्द्रह प्रकार के कहे गये हैं परन्तु आहारक प्रयोग और आहारकमि प्रयोग, ये दो प्रयोग केवल संयमीजनों के ही होते हैं, तिर्यञ्चों के इसलिये उनकी अपेक्षा ये यहां तेरह ही कहे गये हैं। आदित्यवि के वृत्त का योजन इगसठ (६१) विभागों में विभक्त करने पर त

આ રીતે મનના ચાર પ્રયોગ છે (૫) સત્યવચા પ્રયોગ, (૬) મૃષાવચ પ્ર (૭) સત્ય મૃષા વચ પ્રયોગ (૮) અસત્યા મૃષા વચ પ્રયોગ, આ રીતે વચનના પ્રયોગ ૮ (૯) ઔદારિક કાય પ્રયોગ, (૧૦) ઔદારિક મિશ્ર શરીર કાય (૧૧) વૈકુર્વિક શરીર કાય પ્રયોગ (૧૨) વૈકુર્વિક મિશ્ર શરીર કાય પ્રયોગ, અને કાર્મણ શરીર કાય પ્રયોગ આ પ્રકારના પાંચ શરીરના પ્રયોગ છે જો કે પ્રકારના પ્રયોગ કહેલ છે પણ આહારક પ્રયોગ અને આહારક મિશ્ર પ્રયોગ પ્રયોગ ફક્ત સંયમી જનોને જ થાય છે તિર્યંચોને નહીં, અહીં તેર પ્રયોગ બતાવ્ય

આદિત્ય વિમાનના વૃત્તનું યોજન એકસઠ ભાગોમાં વિભક્ત કરવામાં

मूलम्—इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं तेरस पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। पंचमीए पुढवीए अत्थेगइय णं नेरइयाणं तेरस सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगइयाणं तेरस पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगइयाणं देवाणं तेरस पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। लंतए कप्पे अत्थेगइयाणं देवाणं तेरस सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। जे देवा वज्जं सुवज्जं वज्जावत्तं वज्जकंतं वज्जवण्णं वज्जलेसं वज्जरूवं वज्जसिंगं वज्जसिट्ठं वज्जकूडं वज्जूत्तरवडिंसगं वइरं वइरावत्तं वइरप्पभं वइरकंतं वइरवण्णं वइरलेसं वइररूवं वइरसिंगं वइरसिट्ठं वइरकूडं वइरुत्तरवडिंसगं लोगं लोगावत्तं लोगप्पभं लोगकंतं लोगवण्णं लोगलेसं लोगरूवं लोगसिंगं लोगसिट्ठं लोगकूडं लोगुत्तरवडिंसगं विमाणं देवत्ताए उववण्णा, तेसि णं देवाणं उक्कोसेणं तेरस सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। ते णं देवा तेरसहिं अद्धमासेहिं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससति वा नीससंति वा। तेसि णं देवाणं तेरसहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जइ। संतेगइया भवसिद्धिया जीवा जे तेरसहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति बुज्झिस्संति मुच्चिस्संति परिनिव्वाइस्संति, सव्वदुक्खाणमंतं करिस्संति ॥सू. ३५॥

टीका—'इमीसे णं' इत्यादि। अस्यां खलु रत्नप्रभायां पृथिव्यामस्त्येकेषां नैरयिकाणां त्रयोदश पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। पञ्चम्यां पृथिव्याम-

---

तेरह भागों से न्यून है। अर्थात् एकयोजन के इगसठ भागों में से अडतालीस (४८) भागप्रमाण है सू० ३४॥

તેના તેર ભાગ જેટલું ન્યૂન છે એટલે કે એક યોજનના એકસઠ ભાગોમાંથી અડતાલીશ (૪૮) ભાગ પ્રમાણ છે (સૂ ૩૪)

स्त्येकेषां नैरयिकाणां त्रयोदश सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । असुरकुमाराणां देवानामस्त्येकेषां त्रयोदश पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । सौधर्मेशानयोः कल्पयोः अस्त्येकेषां देवानाम् त्रयोदश पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । लान्तके कल्पे अस्त्येकेषां देवानां त्रयोदश सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । ये देवा वज्रं सुवज्रं वज्रावर्तं वज्रकान्तं वज्रवर्णं वज्रलेश्यं वज्ररूपं वज्रभृङ्गं वज्रसृष्टं वज्रकूटं वज्रोत्तरावतंसकं वइरं वइरावर्त्तं वइरप्रभं वइरकान्तं वइरवर्णं वइरलेश्यं वइररूपं वइरशृङ्गं वइरसृष्टं वइरकूटं वइरोत्तरावतंसकं लोकं लोकावर्त्तं लोकप्रभं लोककान्तं लोकवर्णं लोकलेश्यं लोकरूपं लोकभृङ्गं लोकसृष्टं लोककूटं लोकोत्तरावतंसकं च

'इमीसे णं' इत्यादि ।

टीकार्थ—इस रत्नप्रभा पृथिवी में कितनेक नारकियों की स्थिति तेरह पल्योपम की कही गई है। पांचवी पृथिवी में कितनेक नारकियों की स्थिति तेरह सागरोपम की कही गई है। असुरकुमार देवों में कितनेक देवों की स्थिति तेरह पल्योपम की कही गई है। सौधर्म ईशान कल्पों में कितनेक देवों की स्थिति तेरह पल्योपम की कही गई है। लान्तक कल्प में कितनेक देवों का तेरह सागरोपम की स्थिति कही गई है। जो देव वज्र१ सुवज्र२, वज्रावर्त३, वज्रकान्त४, वज्रवर्ण५, वज्रलेश्य६, वज्ररूप७, वज्रभृग८, वज्रसृष्ट९, वज्रकूट१०, वज्रोत्तरावतंसक११, वइर१२, वइरावर्त१३ वइरप्रभ१४, वइरकांत१५, वइर वर्ण१६, वइरलेश्य१७, वइररूप१८, वइरभृग१९, वइरसृष्ट२०, वइरकूट२१, वइरोत्तरावतंसक२२, लोक२३, लोकावर्त २४, लोकप्रभ२५, लोककान्त२६, लोकवर्ण२७, लोकलेश्य२८, लोकरूप२९, लोकभृङ्ग३०, लोकसृष्ट३१, लोककूट३२, और लोकोत्तरावतंसक३३,

ટીકાર્થ–ઇમિસેણં ઇત્યાદિ ।

આ રત્નપ્રભા પૃથ્વીમાં કેટલાક નારકીઓની સ્થિતિ તેર પલ્યોપમની કહી છે પાંચમી પૃથ્વીમાં કેટલાક નારકીઓની સ્થિતિ તેર સાગરોપમની કહી છે અસુરકુમાર દેવોમાં કેટલાક દેવોની તેર પલ્યોપમની સ્થિતિ કહી છે સૌધર્મ તથા ઇશાન કલ્પોમાં કેટલાક દેવોની સ્થિતિ તેર પલ્યોપમની કહી છે લાન્તક કલ્પમાં કેટલાક દેવોની સ્થિતિ તેર સાગરોપમની કહી છે જે દેવો (૧) વજ્ર, (૨) સુવજ્ર (૩) વજ્રાવર્ત (૪) વજ્રકાન્ત (૫) વજ્રવર્ણ (૬) વજ્રલેશ્ય (૭) વજ્રરૂપ (૮) વજ્રશ્રૃંગ (૯) વજ્રસૃષ્ટ (૧૦) વજ્રકૂટ, (૧૧) વજ્રોત્તરાવતંસક (૧૨) વઇર, (૧૩) વઇરાવર્ત (૧૪) વઇરપ્રભ (૧૫) વઇરકાન્ત, (૧૬) વઇર વર્ણ, (૧૭) વઇરલેશ્ય, (૧૮) વઇર રૂપ (૧૯) વઇર શ્રૃંગ, (૨૦) વઇરસૃષ્ટ (૨૧) વઇરકૂટ (૨૨) વઇરોત્તરાવતંસક (૨૩) લોક, (૨૪) લોકવર્ત (૨૫) લોકપ્રભ (૨૬) લોકકાન્ત, (૨૭) લોકવર્ણ (૨૮) લોકલેશ્ય (૨૯) લોકરૂપ (૩૦) લોકશ્રૃંગ (૩૧) લોકસૃષ્ટ (૩૨) લોકકૂટ અને (૩૩)

विमानम्=एतेषु त्रयस्त्रिंशद् विमानेषु देवत्वेनोत्पन्नाः, तेषां खलु देवानामुत्कर्षेण त्रयोदशसागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। ते खलु देवास्त्रयोदशभिरर्द्धमासैरानन्ति वा प्राणन्ति वा उच्छ्वसन्ति वा निःश्वसन्ति वा। तेषां खलु देवाना त्रयोदशभिर्वर्षसहस्रैराहारसंज्ञा समुत्पद्यते। सन्त्येके भवसिद्धिका जीवा ये त्रयोदशभिर्भवग्रहणैः सेत्स्यन्ति भोत्स्यन्ते परिनिर्वास्यन्ति सर्वदुःखानामन्तं करिष्यन्ति ॥ सू. ३५ ॥

चतुर्दश समवायमाह—

मूलम्—चउद्दस भूयग्गामा पण्णत्ता, तं जहा—सुहुमा अपज्जत्तया[1] सुहुमा पज्जत्तया[2] बादरा अपज्जत्तया[3] बादरा पज्जत्तया[4] बेइंदिया अपज्जत्तया[5] बेइंदिया पज्जत्तया[6] तेंदिया अपज्जत्तया[7] तेंदिया पज्जत्तया[8] चउरिंदिया अपज्जत्तया[9] चउरिंदिया पज्जत्तया[10] पंचिंदिया आसन्नि अपज्जत्तया[11] पंचिंदिया आसन्निपज्जत्तया[12] पंचिंदिया सन्नि अपज्जत्तया[13] पंचिंदिया सन्नि पज्जत्तया[14]। चउदस पुव्वा पण्णत्ता, तं जहा—उप्पायपुव्वमग्गेणियं च तइयं च वीरियं पुव्वं। अत्थीनत्थिपवायं तत्तो नाणप्पवायं च ॥१॥ सच्चप्पवायपुव्व तत्तो आयप्पवाय पुव्वं च। कम्मप्पवायपुव्वं

इन तेतिस विमानों में देव की पर्याय से उत्पन्न होते हैं उन देवों की उत्कृष्ट स्थिति तेरह सागरोपम की कही गई है वे देव तेरह अर्द्धमासों के बाद बाह्य आभ्यन्तरिक श्वासोच्छ्वास लेते हैं। उन देवों को तेरह हजार वर्षों के अनन्तर आहारसंज्ञा उत्पन्न होती है। इनमें कितनेक देव ऐसे होते हैं जो तेरह भव के बाद सिद्धपद को भोगने वाले होगें, बुद्ध होंगे, कर्ममल से सर्वथा रहित हो जावेंगे, परिनिवृत्त होजावेंगे और समस्त दुःखों को अन्त कर देंगे ॥सू० ३५॥

લોકોત્તરાવતંસક, એ તેત્રીસ વિમાનોમા દેવની પર્યાયે ઉત્પન્ન થાય છે તે દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ તેર સાગરોપમની કહી છે તે દેવો સાડા છ મહિને બાહ્ય અભ્યન્તરિક શ્વાસોચ્છવાસ ગ્રહણ કરે છે. તે દેવોને તેર હજાર વર્ષ પછી આહાર સંજ્ઞા ઉત્પન્ન થાય છે તે દેવોમા કેટલાક દેવો એવા હોય છે કે જે તેર ભવ કર્યા પછી સિદ્ધપદ પ્રાપ્ત કરશે, બુદ્ધ થશે, કર્મમળથી સર્વથા રહિત થઇ જશે, પરિનિર્વૃત થશે અને સમસ્ત દુઃખોનો અન્ત કરી નાખશે ॥સૂ. ૩૫॥

पच्चक्खाण भवे नवमं ॥२॥ विज्जाअणुप्पवाय अवझपाणाउ बारस पुव्वं । तत्तो किरियविसाल पुव्व तह बिंदुसार च ॥३॥ अग्गणीअस्स ण पुव्वस्स चउद्दसवत्थूइ पण्णत्ता इ । समणस्स ण भगवओ महावीरस्स चउद्दस समणसाहस्सीओ उक्कोसिआ समणसपया होत्था । कम्मविसोहिमग्गण पडुच्च चउद्दस जीवट्ठाणा पण्णत्ता । त जहा–मिच्छदिट्ठी सासायणसम्मदिट्ठी सम्मामिच्छदिट्ठी अविरयसम्मदिट्ठी विरयाविरए पमत्तसजए अप्पमत्तसजए नियट्टि बायरे अनियट्टिबायरे सुहुमसपराए उवसामए वा खवए वा उवसतमोहे खीणमोहे सजोगी केवली अजोगी केवली । भरहेर वयाओ ण जीवाओ चउद्दस चउद्दस जोयणसहस्साइ चत्तारि य एगुत्तरे जोजणसए छच्च एगूणवीसे भागे जोयणस्स आयामेण पण्णत्ता । एगमेगस्स ण रण्णो चाउरतचक्कवट्टिस्स चउद्दस्स रयणा पण्णत्ता, तंजहा–इत्थीरयणे सेणावइरयणे गाहावइरयणे पुरोहियरयणे वड्ढइरयणे आसरयणे हत्थिरयणे असिरयणे दडरयणे चक्करयणे छत्तरयणे चम्मरयणे मणिरयणे कागिणीरयणे । जम्बूद्दीवे ण दीवे चउद्दस महानईओ पुव्वावरेण लवणसमुद्द समुप्पति त जहा–गगा सिंधूरोहिया रोहिअसा हरी हरिकता सीया सीओदा नरकंता नारिकासा सुवण्णकूला रुप्पकुला रत्ता रत्तवई ॥१६॥

टीका— 'चउदस' इत्यादि । चतुर्दश 'भूयग्गामा' भूतग्रामा =जीवसमूहाः प्रज्ञप्ताः । तद्यथा–'सुहुमा अपज्जत्तया'=सूक्ष्माः=सूक्ष्मनामकर्मोदयवर्ति

अब चौदहसख्या विशिष्ट समवाय को सूत्रकार प्रकट करते हैं– 'चउदस' इत्यादि ।

टीकार्थ–चौदह जीवसमूह कहा हैं, व इस प्रकार हैं–सूक्ष्म एकेन्द्रिय

હવે સૂત્રકાર ચૌદની સંખ્યાવાળા સમવાયોને પ્રકટ કરે છે—
'चउद्दस' इत्यादि !

ટીકાર્થ–નીચે પ્રમાણે ચૌદ જીવસમૂહ કહ્યા છે (૧) સૂક્ષ્મ એકેન્દ્રિય અપર્યાપ્ત

त्वात् एकेन्द्रियाः पृथिव्यादयः, अपर्याप्तका=सूक्ष्मनामकर्मोदयवशादपरिपूर्ण-स्वकीय पर्याप्तयः इति प्रथमो भूतग्रामः। 'सुहुमा पज्जत्तया' सूक्ष्माः पर्याप्तयः= एकेन्द्रियाः पृथिव्यादय एव कर्मपरिसमाप्तिवशात्परिपूर्णस्वकीयपर्याप्तय इति द्वितीयो भूतग्रामः। तथा बादरा अपर्याप्तकाः बादरा पर्याप्तकाः। बादरनामकं कर्मोदयवशात्पृथिव्यादयः अपर्याप्तकपर्याप्तकभेदाद्विविधाः इति तृतीयचतुर्थौ भूतग्रामौ। तथा द्विन्द्रियाः अपर्याप्तकाः, द्विन्द्रियाः पर्याप्तकाः। इति पञ्चमषष्ठ-भूतग्रामौ। त्रीन्द्रियाः अपर्याप्तका त्रीन्द्रियाः-पर्याप्तकाः। इति सप्तमाष्टमौ भूत-ग्रामौ। चतुरिन्द्रिया अपर्याप्तकाःचतुरिन्द्रया पर्याप्तकाः इति नवमदशमौ भूतग्रामौ। पञ्चेन्द्रिया असञ्ज्यपर्याप्तकाः, पञ्चन्द्रियाः असज्ञि पर्याप्तकाः=मनःपर्याप्त्यपर्याप्ति रहितत्वेन द्विविधाः पञ्चेन्द्रियाः इति एकादशद्वादशौ भूतग्रामौ। पञ्चेन्द्रियाः सञ्ज्य-पर्याप्तकाः, पञ्चेन्द्रियाः संज्ञि पर्याप्तकाः=मनमः पर्याप्त्यपर्याप्तिभेदेन पञ्चेन्द्रिया द्विविधा इति त्रयोदशचतुर्दशौ भूतग्रामौ।

चतुर्दशपूर्वाणि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-तान्येवाह-'उप्पायपुव्वे' त्यादिभिस्तिसृभि-र्गाथाभिः-तच्छायाश्चेत्थम्—

उत्पादपूर्वमग्रायणीय च तृतीय च वीर्यं पूर्वम्।
अस्ति नास्ति प्रवादं ततो ज्ञानप्रवाद च ॥१॥
सत्यप्रवादपूर्वं तत आत्मप्रवादं च।
कर्मप्रवादपूर्वं प्रत्याख्यानं भवेन्नवमम् ॥२॥
विद्यानुप्रवादमवन्ध्यं प्राणायुर्द्वादशं पूर्वम्
ततः क्रियाविशालं पूर्वं तथा विन्दुसारं च ॥३॥

अपर्याप्त१, सूक्ष्म एकेन्द्रिय पर्याप्त२, बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्त३, बादर-एकेन्द्रिय पर्याप्त४, दो, इंद्रिय अपर्याप्त५, दो इंद्रिय पर्याप्त६, तेन्द्रिय अप-र्याप्त७, तेन्द्रिय पर्याप्त८, चौ इन्द्रिय अपर्याप्त९, चौ इन्द्रिय पर्याप्त१०, पंचेन्द्रिय असंज्ञी अपर्याप्त११, पचेन्द्रिय असंज्ञी पर्याप्त१२, पचेन्द्रियसज्ञी अपर्याप्त१३, पचेन्द्रियसज्ञी पर्याप्त१४।

चौदह पूर्व कहे गये हैं-वे इस प्रकार हैं-सो तीन गाथाओं से कहे

---

(२) સૂક્ષ્મ એકેન્દ્રિ પર્યાપ્ત, (૩) બાદર એકેન્દ્રિય અપર્યાપ્ત (૪) બાદર એકેન્દ્રિય પર્યાપ્ત. (૫) દ્વીન્દ્રિય અપર્યાપ્ત, (૬) દ્વીન્દ્રિયપર્યાપ્ત (૭) તેન્દ્રિય અપર્યાપ્ત, (૮) તેન્દ્રિય પર્યાપ્ત, (૯) ચૌઈન્દ્રય અપર્યાપ્ત, (૧૦) ચૌઈન્દ્રય પર્યાપ્ત, (૧૧) પંચેન્દ્રિય અસંજ્ઞી અપર્યાપ્ત, (૧૨) પચેન્દ્રીય અસંજ્ઞી પર્યાપ્ત, (૧૩) પચેન્દ્રિય સંજ્ઞી અપર્યાપ્ત (૧૪) પચેન્દ્રિય સંજ્ઞી પર્યાપ્ત.

ચૌદ પૂર્વ દર્શાવ્યા છે તે ત્રણ ગાથાઓ દ્વારા આ પ્રમાણે બતાવ્યા છે

'उप्पायपुव्व' उत्पादपूर्वम्=उत्पादमधिकृत्य यत्र द्रव्यपर्याया प्ररूपितास्तत् उत्पादपूर्वं नाम प्रथमं पूर्वम्। 'अग्गेणियं च'=अग्रायणीयं च अग्रं परिमाणं तस्य अयनं गमनम्, अग्रायणं, तस्मै हितम् अग्रायणीयं पूर्वम्=सर्वद्रव्यादिपरिमाणपरिच्छेदकारी त्यर्थः, तत्र हि-सर्वद्रव्याणां सर्वपर्यायाणां सर्वजीवादिविशेषाणां च परिमाणमुपवर्ण्यते। इति द्वितीयपूर्वम्। 'तइयं च वीरियं पुव्वं' तृतीयं च वीर्यं पूर्वम्, विशेषेण ईरयति प्रेरयति आत्मानं तासु तासु क्रियास्विति वीर्यम् यत्र जीवादीनां वीर्यं प्रोच्यते तद्वीर्यप्रवादं नाम तृतीयं पूर्वम्। तथा 'अत्थीनत्थिपवायं' अस्तिनास्तिप्रवादम्, लोके यद् वस्तु यथा-अस्ति, यद् वस्तु यथा नास्ति, तस्य प्रवादः कथनं यस्मिन् तत् अस्तिनास्तिप्रवादं नाम चतुर्थं पूर्वम्। 'तत्तो' ततः 'नाणप्पवायं च' ज्ञानप्रवादं च, ज्ञानस्य मत्यादेः प्रवादो यत्र तत् ज्ञानप्रवादं नाम पञ्चमम् ॥१॥ तथा 'सच्चप्पवायपुव्वं' सत्यप्रवादपूर्वम्=सद्भ्यो जीवेभ्यो हितं सत्यं संयमः सत्यवचनं वा, स यत्र सभेदं सप्रतिपक्षं प्रोच्यतेऽभिधीयते तत्सत्यप्रवादम्,

---

जाते हैं 'उप्पायपुव्व०' इत्यादि।

टीकार्थ-उत्पादपूर्व-इस पूर्व, में उत्पाद् धर्म को लेकर द्रव्य और पर्यायों की प्ररूपणा की गई है१। अग्रायणीयपूर्व-इस पूर्व मे समस्त द्रव्यों का समस्त पर्यायों का और समस्त जीवों की विशेषताओं का वर्णन किया गया है२। वीर्यप्रवादपूर्व उन२ क्रियाओं में जो आत्मा को विशेष रूप से प्रेरित करे उसका नाम वीर्य है इस व्युत्पत्ति के अनुसार इस पूर्व में जीवादिकों की शक्ति का वर्णन किया गया है३। अस्तिनास्ति प्रवादपूर्व-इस पूर्व में जो वस्तु जिस रूप में है और जो वस्तु जिस रूप में नहीं है उसका वर्णन किया गया है४। ज्ञानप्रवादपूर्व-मति आदि ज्ञानो का इसमें वर्णन किया गया है५। सत्यप्रवादपूर्व इसमें जीवों के हितकारक सत्यसंयम का

'उप्पायपुव्व' इत्यादि।

ટીકાર્થ-ઉત્પાદપૂર્વ—આ પૂર્વમાં ઉત્પાદ ધર્મને અનુલક્ષીને દ્રવ્ય અને પર્યાયોની પ્રરૂપણા કરવામાં આવી છે (૨)—'અગ્રાયણીય પૂર્વ'—આ પૂર્વમાં સમસ્ત દ્રવ્યોનું સમસ્ત પર્યાયોનું અને સમસ્ત જીવોની વિશેષતાઓનું વર્ણન કરાયું છે (૩) વીર્યપ્રવાદ પૂર્વ—પ્રત્યેક ક્રિયામાં જે આત્માને વિશેષ રૂપે પ્રેરિત કરે તેનું નામ વીર્ય છે આ વ્યુત્પત્તિ પ્રમાણે આ પૂર્વમાં જીવાદિની શક્તિનું વર્ણન કરાયું છે અસ્તિનાસ્તિ પ્રવાદ પૂર્વ—આ પૂર્વમાં કોઈ વસ્તુ કયા સ્વરૂપે છે અને કયા સ્વરૂપમાં નથી તેનું વર્ણન કરાયું છે (૫) જ્ઞાન પ્રવાદ પૂર્વ મતિજ્ઞાન આદિ જ્ઞાનોનું આ પૂર્વમાં વર્ણન કરાયું છે (૬) સત્યપ્રવાદ પૂર્વ—આ પૂર્વમાં જીવોના હિતકારી સત્ય સંય

तच्च पूर्वं च सत्यप्रवादपूर्वं नाम षष्ठं । ततः 'आयप्पवायपुव्वं च' आत्मप्रवादपूर्वं च=आत्मनो जीवस्य अनेकविधैर्नयैर्यत्र प्रवादोऽभिधानं तत्पूर्वम् आत्मप्रवादपूर्वं नाम सप्तमम् । तथा 'कम्मपवायपुव्वं' कर्मप्रवादपूर्वम्=ज्ञानावरणीयादिकर्मणो यत्र प्ररूपणं तत्कर्मप्रवादपूर्वं नामाष्टमम् । तथा-'पच्चक्खाणं भवे नवमं' प्रत्याख्यानस्य प्रकारो यत्र निरूप्यते तत्पूर्वं प्रत्याख्याननामकं नवमं भवेत् ॥२॥

'विज्जा अणुप्पवायं' विद्यानुप्रवादम्, यत्रानेकविधानां विद्यानामनुप्रवादो वर्णनं तद्दशमं पूर्वम् । 'अवझं' अवन्ध्यम्, अवन्ध्यानां सफलानां सम्यग्ज्ञानादीनां वर्णनं यत्र तदवन्ध्यं नामैकादश पूर्वम् । तथा 'पाणाउ बारसं पुव्वं' प्राणायुर्द्वादशं पूर्वम्=यत्र प्राणा जीवास्तदायुषश्च विविधप्रकारेण वर्ण्यन्ते तत् प्राणायु नाम द्वादशं पूर्वम् ततः 'किरियविसालं' क्रियाविशालम्, क्रियाः कायिक्यादयो विशालाः सविस्तृता यत्र निरूप्यन्ते तत्क्रियाविशाल नाम पूर्वं त्रयोदशम् । 'तह' तथा 'बिन्दुसार च' बिन्दुसारपदं लोकबिन्दुसारपदम्, तेनायं निर्गलि

अथवा सत्यवचन का भेदों को और प्रतिपक्ष को लेकर वर्णन किया गया है६, आत्मप्रवादपूर्व-इसमें विविध नयों के अनुसार जीवद्रव्य का कथन किया गया है७ कर्मप्रवादपूर्व-इसमें ज्ञानावरणीय आदि कर्मों के स्वरूप आदि का वर्णन किया गया है८। प्रत्याख्यानपूर्व-इसमें प्रत्याख्यान का प्रकार वर्णित किया गया है९। विद्यानुप्रवादपूर्व-इसमें अनेकविध विद्याओं का वर्णन किया गया है१०। अवंध्यपूर्व-इसमें सफल सम्यग्ज्ञान आदिकों का वर्णन किया गया है११। प्राणायुपूर्व-इसमें जीवों का और उनकी आयु का विविध प्रकार से वर्णन किया गया है। यह बारहवां पूर्व है १२। क्रियाविशाल-इस पूर्व में कायिकी आदि क्रियाओं का विस्तृत वर्णन किया गया है १३। बिन्दुसार-इस पूर्व में यह कहा गया है कि जिस

મનુ અથવા સત્ય વચનનુ તેના ભેદો તથા તેની વિરોધી બાબતોને અનુલક્ષીને વર્ણન કરાયુ છે आत्मप्रवाद पूर्व—તેમા વિવિધ નયો અનુસાર જીવ દ્રવ્યનુ કથન કરાયુ છે (૮) कर्मप्रवाद पूर्व—તેમા જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોના સ્વરૂપનુ વર્ણન કરેલ છે प्रत्याख्यानपूर्व—તેમા પ્રત્યાખ્યાનના પ્રકારોનું વર્ણન કર્યું છે (૧૦) विद्यानुप्रवाद पूर्व—તેમા અનેક પ્રકારની વિદ્યાઓનુ વર્ણન કરાયુ છે (૧૧) अवंध्यपूर्व-તેમા સફળ સમ્યગ્ જ્ઞાન આદિનું વર્ણન કર્યું છે (૧૨) प्राणायुपूर्व—તેમાં જીવો અને તેમનાં આયુષ્યનુ વિવિધ પ્રકારે વર્ણન કરાયુ છે (૧૩) क्रियाविशाल—આ પૂર્વમાં કાયિકી આદિ ક્રિયાઓનુ વિસ્તૃત વર્ણન કરવામા આવ્યુ છે (૧૪) बिन्दुसार—આ પૂર્વમા એ બતાવવામાં આવ્યુ છે કે જેમ અક્ષરોની ઉપર

तोऽयं यथा बिन्दुरक्षराणां शिरःस्थत्वेन सारः, तथैव लोकेषु सर्वोत्कृष्टत्वेन सारभूतो यः स लोकबिन्दुसारः, तस्याभिधाने यत्र तद् बिन्दुसारनामकं चतुर्दशं पूर्वम् ॥३॥

अग्रायणीयस्य खलु पूर्वस्य चतुर्दशवस्तूनि प्रज्ञप्तानि। श्रमणस्य खलु भगवतो महावीरस्य चतुर्दश श्रमणसाहस्त्र्य =चतुर्दशसहस्रसंख्यका श्रमणा 'उक्कोसिया' उत्कृष्टया सम्पत्या श्रमणसम्पदा 'होत्था' आसन्। 'कम्मविसोहिमग्गणं' कर्मविशोधिमार्गणाम=ज्ञानावरणादिकर्मविशुद्धिगवेषणां 'पडुच्च' प्रतीत्य समाश्रित्य चतुर्दशजीवस्थानानि जीवस्था प्रज्ञप्तानि, तद्यथा–'मिच्छदिट्ठी' मिथ्यादृष्टि =मिथ्यादृष्टि =मिथ्याविपरीता दृष्टिर्यस्यासौ मिथ्यादृष्टि रुदितमिथ्यात्वमोहनीयविशेष कुदेवकुगुरुकुधर्मेषु सुदेवसुगुरु सुधर्मबुद्धिरितिभाव। इति प्रथमम्। 'सासायणसम्मदिट्ठी' सासादनसम्यग्दृष्टि, आयम् औपशमिकसम्यक्त्वलाभलक्षणं

प्रकार अक्षरों के ऊपर रहने से बिन्दु सारभूत मानी जाती है उसी प्रकार लोकों में सर्वोत्कृष्ट होने से जो सारभूत हो वही लोकबिन्दुसार है। इस लोकबिन्दुसार का वर्णन इस पूर्व में करने में आया है। यह चौदहवां पूर्व है १४। अग्रायणीयपूर्व की चौदहवस्तुएँ कही गई हैं। श्रमण भगवान् महावीर की उत्कृष्ट श्रमणसंपदा चौदह हजार की थी। ज्ञानावरणीय आदि कर्मों की विशुद्धि की गवेषणा की अपेक्षा को लेकर के चौदह जीव स्थान कहे गये हैं। वे इस प्रकार हैं–मिथ्यादृष्टि–इस गुणस्थान में जीव की विपरीत दृष्टि–मान्यता होती है। इसलिये इसकी संज्ञा मिथ्यादृष्टि कही जाती है। मिथ्यात्वमोहनीय के उदय से ऐसा जीव कुगुरु, कुदेव और कुधर्म में सुगुरु, सुदेव और सुधर्म की श्रद्धावाला बन जाता है सासादन सम्यग्दृष्टि– 'आयं सादयति इति–सासादनम्'' औपशमिक सम्यक्त्व

રહેવાથી બિન્દુ સારભૂત મનાય છે તેમ લોકોમાં સર્વોત્કૃષ્ટ હોવાને કારણે જેઓ સારભૂત હોય તે જ લોક બિન્દુસાર છે તે લોક બિન્દુસારનું વર્ણન આ ચૌદમાં પૂર્વમાં કરવામાં આવ્યું છે અગ્રાયણીય પૂર્વની ચૌદ વસ્તુઓ કહેલ છે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરની ઉત્કૃષ્ટ શ્રમણ સંપદા ચૌદ હજારની હતી જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોની વિશુદ્ધિની ગવેષણાની અપેક્ષાએ ચૌદ જીવસ્થાન કહેલ છે તે આ પ્રમાણે છે મિથ્યાદૃષ્ટિ–આ ગુણસ્થાનમાં જીવની વિપરીત દૃષ્ટિ–માન્યતા હોય છે તેથી તેને મિથ્યાદૃષ્ટિ કહે છે મિથ્યાત્વ મોહનીયના ઉદયથી એવો જીવ કુગુરુ કુદેવ અને કુધર્મમાં સુગુરુ સુદેવ અને સુધર્મની શ્રદ્ધા વાળો બની જાય છે सासादन सम्यग्दृष्टि–'आयं सादयति इति सासादनम्' ઔપશમિક સમ્યક્ત્વ લાભ રૂપ આય

मादयति अपनयतीति आसादनम् अनन्तानुबन्धिकषायवेदनम्, सति ह्यस्मिन् परमानन्दरूपानन्तसुखफलदोऽपवर्गरूपतरुबीजभूतऔपशमिकसम्यक्त्वलाभो जघन्यतः समयमात्रेण उत्कर्षतः षड्भिरावलिकाभिरपगच्छति, तेनासादनेन सह वर्तते सासादनः, सम्यक् अविपरीता दृष्टिर्जिनप्रणीतवस्तुप्रतिपत्तिर्यस्यासौ सम्यग्दृष्टिः, सासादनश्चासौ सम्यग्दृष्टिश्च=सासादनसम्यग्दृष्टिः। अथवा सास्वादनसम्यग्दृष्टिः=आस्वादनेन सम्यक्त्वलक्षणरसास्वादनेन सह वर्तते सास्वादनः यथा क्षीरान्ने भुक्ते तत्रारुचिवशादुद्वमन् पुरुषो वमनकाले तद्रसमास्वादयति तथा मिथ्यात्वाभिमुखतया सम्यक्त्वाद् विगलितचित्तः सम्यक्त्वमुद्वमन्नपि अनासादि-

---

लाभरूप आय को जो दूर करदे, ऐसी अनंतानुबंधीकषाय के वेदन का नाम आसादन है। इस आसादन के होने पर परमानंदरूप अनंतसुख- फलदाता और अपवर्गरूप वृक्ष का बीज जो औपशमिक सम्यक्त्व है उसका लाभ जघन्य से एक समय और उत्कृष्ट से छह आवलिका प्रमाण काल-तक रहता है, बाद में नहीं रहता। इस आसादन के साथ जो रहता है उसका नाम सासादन है। तथा जिन प्रणीत वस्तुतत्त्व की प्रतिपत्ति जिस जीव के अविपरीत-सम्यक् हो उसका नाम सम्यग्दृष्टि है। इस आसादन सहित जो सम्यग्दृष्टि है उसका नाम सासादन सम्यग्दृष्टि है। अथवा- "सासायणसम्मदिट्ठी" की छाया "सास्वादन सम्यग्दृष्टि" ऐसी भी होती है, इसका अर्थ-सम्यक्त्व रूप रस के आस्वाद से जो युक्त होता है उसका नाम सास्वादन है। जिस प्रकार खीर के खा लेने पर अरुचि के वश से उसे वमन करता हुआ व्यक्ति वमनकाल में उसके रस का आस्वादन करता है, उसी तरह मिथ्यात्व के सन्मुख हुआ भी मिथ्यात्वभूमि पर

(આવક) ને જે દૂર કરી નાખે, એવી અનંતાનુબંધી કષાય વેદનને **આસાદન** કહે છે આ અસાદન થતા પરમાનંદ રૂપ અનંત સુખ- ફ્લદાતા અને અપવર્ગરૂપ વૃક્ષના બીજ જેવું જે ઔપશમિકસમ્યકત્વ છે તેનો લાભ જઘન્યની અપેક્ષાએ એક સમય અને ઉત્કૃષ્ટની અપેક્ષાએ છ આવલિકા પ્રમાણુ કાળ સુધી રહે છે, પછી રહેતો નથી આ અસાદનની સાથે જે રહે છે તેનું નામ **સાસાદન** છે તથા જિન પ્રરૂપિત વસ્તુ તત્વની સિદ્ધિ જે જીવને અવિપરીત—સમ્યક્ હોય તેનું નામ સમ્યકદૃષ્ટિ છે તે અસાદન સહિત જે સમ્યગ્દૃષ્ટિ હોય તેને સાસાદન સમ્યગ્દૃષ્ટિ કહે છે અથવા— "સાસાયણ સમ્મદિટ્ઠી" ની છાયા "સાસ્વાદન સમ્યગ્દૃષ્ટિ" એવી પણ થાય છે તેનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે-જેમ ખીર ખાધા પછી અરુચિને કારણે તેનું વમન કરતો માણસ વમનકાળમા તેના રસનું આસ્વાદન કરે છે, એ જ પ્રમાણે મિથ્યાત્વની

तोऽर्थः यथा बिन्दुरक्षराणां शिरः स्थत्वेन सारः, तथैव लोकेषु सर्वोत्कृष्टत्वेन सारभूतो यः स लोकबिन्दुसारः, तस्याभिधानं यत्र तद् बिन्दुसारनामकं चतुर्दश पूर्वम् ॥३॥

अग्रायणीयस्य खलु पूर्वस्य चतुर्दशवस्तूनि प्रज्ञप्तानि। श्रमणस्य खलु भगवतो महावीरस्य चतुर्दश श्रमणसाहस्य=चतुर्दशसहस्रसंख्यका श्रमणा 'उक्कोसिया' उत्कृष्टया सात्कर्षया श्रमणसंपदा 'होत्था' आसन्। 'कम्मविसोहिमग्गणं' कर्मविशोधिमार्गणाम्=ज्ञानावरणादिकर्मविशुद्धिगवेषणां 'पडुच्च' प्रतीत्य समभिगम्य चतुर्दशजीवस्थानानि जीवभेदाः प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-'मिच्छदिट्ठी' मिथ्या दृष्टिः=मिथ्यादृष्टिः=मिथ्या विपरीता दृष्टिर्यस्यासौ मिथ्यादृष्टिः उदितमिथ्यात्वमोहनीयविशेष कुदेव कुगुरु कुधर्मेषु सुदेव सुगुरु सुधर्मबुद्धिरिति भावः। इति प्रथमम्। 'सासायण सम्मदिट्ठी' सासादनसम्यग्दृष्टिः, आयम् औपशमिकसम्यक्त्वलाभलक्षणं

प्रकार अक्षरों के ऊपर रहने से बिन्दु सारभूत मानी जाती है उसी प्रकार लोकों में सर्वोत्कृष्ट होने से जो सारभूत हो वही लोकबिन्दुसार है। इस लोकबिन्दुसार का वर्णन इस पूर्व में करने में आया है। यह चौदहवां पूर्व है १४। अग्रायणीयपूर्व की चौदहवस्तुएं कही गई हैं। श्रमण भगवान महावीर की उत्कृष्ट श्रमणसंपदा चौदह हजार की थी। ज्ञानावरणीय आदि कर्मों की विशुद्धि की गवेषणा की अपेक्षा को लेकर के चौदह जीव स्थान कहे गये हैं। वे इस प्रकार हैं-मिथ्यादृष्टि-इस गुणस्थान में जीव की विपरीत दृष्टि-मान्यता होती है। इसलिये इसकी संज्ञा मिथ्यादृष्टि का जाता है। मिथ्यात्वमोहनीय के उदय से ऐसा जीव कुगुरु, कुदेव और कुधर्म में सुगुरु, सुदेव और सुधर्म की श्रद्धावाला बन जाता है सासादन सम्यग्दृष्टि- 'आयं सादयति इति-आसादनम्' औपशमिक सम्यक्त्व

રહેવાથી બિંદુ સારભૂત મનાય છે તેમ લોકોમાં સર્વોત્કૃષ્ટ હોવાને કારણે જેઓ સારભૂત હોય તે જ લોક બિંદુસાર છે તે લોક બિંદુસારનું વર્ણન આ ચૌદમાં પૂર્વમાં કરવામાં આવ્યું છે. અગ્રાયણીય પૂર્વની ચૌદ વસ્તુઓ કહેલ છે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરની ઉત્કૃષ્ટ શ્રમણ સંપદા ચૌદ હજારની હતી જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોની વિશુદ્ધિની ગવેષણાની અપેક્ષાએ ચૌદ જીવસ્થાન કહેલ છે તે આ પ્રમાણે છે-મિથ્યાદૃષ્ટિ-આ ગુણસ્થાનમાં જીવની વિપરીત દૃષ્ટિ-માન્યતા હોય છે તેથી તેને મિથ્યાદૃષ્ટિ કહે છે મિથ્યાત્વ મોહનીયના ઉદયથી એવો જીવ કુગુરૂ કુદેવ અને કુધર્મમાં સુગુરુ સુદેવ અને સુધર્મની શ્રદ્ધાવાળો બની જાય છે સાસાદન સમ્યગ્દૃષ્ટિ-'आयं सादयति इति आसादनम्' ઔપશમિક સમ્યક્ત્વ લાભ રૂપ આય

मादयति अपनयतीति आसादनम् अनन्तानुबन्धिकषायवेदनम्, सति ह्यस्मिन् परमानन्दरूपानन्तसुखफलदोऽपवर्गरूपतरुबीजभूतऔपशमिकसम्यक्त्वलाभो जघन्यतः समयमात्रेण उत्कर्षतः षड्भिरावलिकाभिरपगच्छति, तेनासादनेन सह वर्तते सासादनः, सम्यक् अविपरीता दृष्टिर्जिनप्रणीतवस्तुप्रतिपत्तिर्यस्यासौ सम्यग्दृष्टिः, सासादनश्चासौ सम्यग्दृष्टिश्च=सासादनसम्यग्दृष्टिः। अथवा सास्वादनसम्यग्दृष्टिः=आस्वादनेन सम्यक्त्वलक्षणरसास्वादनेन सह वर्तते सास्वादनः यथा क्षीरान्ने भुक्ते तत्रारुचिवशादुद्वमन् पुरुषो वमनकाले तद्रसमास्वादयति तथा मिथ्यात्वाभिमुखतया सम्यक्त्वाद् विगलितचित्तः सम्यक्त्वमुद्वमन्नपि अनासादि-

लाभरूप आय को जो दूर करदे, ऐसी अनंतानुबंधीकषाय के वेदन का नाम आसादन है। इस आसादन के होने पर परमानंदरूप अनंतसुख-फलदाता और अपवर्गरूप वृक्ष का बीज जो औपशमिक सम्यक्त्व है उसका लाभ जघन्य से एक समय और उत्कृष्ट से छह आवलिका प्रमाण काल-तक रहता है, बाद में नहीं रहता। इस आसादन के साथ जो रहता है उसका नाम सासादन है। तथा जिन प्रणीत वस्तुतत्त्व की प्रतिपत्ति जिस जीव के अविपरीत-सम्यक् हो उसका नाम सम्यग्दृष्टि है। इस आसादन सहित जो सम्यग्दृष्टि है उसका नाम सासादन सम्यग्दृष्टि है। अथवा-"सासायणसम्मदिट्ठी" की छाया "सास्वादन सम्यग्दृष्टि" ऐसी भी होती है, इसका अर्थ-सम्यक्त्व रूप रस के आस्वाद से जो युक्त होता है उसका नाम सास्वादन है। जिस प्रकार खीर के खा लेने पर अरुचि के वश से उसे वमन करता हुआ व्यक्ति वमनकाल में उसके रस का आस्वादन करता है, उसी तरह मिथ्यात्व के सन्मुख हुआ भी मिथ्यात्वभूमि पर

(આવક) ને જે દૂર કરી નાખે, એવી અનંતાનુબંધી કષાય વેદનને **આસાદન** કહે છે. આ અસાદન થતા પરમાનંદ રૂપ અનંત સુખ-ફલદાતા અને અપવર્ગરૂપ વૃક્ષના બીજ જેવુ જે ઔપશમિકસમ્યકત્વ છે તેનો લાભ જઘન્યની અપેક્ષાએ એક સમય અને ઉત્કૃષ્ટની અપેક્ષાએ છ આવલિકા પ્રમાણુ કાળ સુધી રહે છે, પછી રહેતો નથી. આ અસાદનની સાથે જે રહે છે તેનું નામ **સાસાદન** છે તથા જિન પ્રરૂપિત વસ્તુ તત્વની સિદ્ધિ જે જીવને અવિપરીત—સમ્યક્ હોય તેનુ નામ સમ્યકદૃષ્ટિ છે તે અસાદન સહિત જે સમ્યગૃદૃષ્ટિ હોય તેને સાસાદન સમ્યગૃદૃષ્ટિ કહે છે અથવા—"**सासायण सम्मदिट्ठी**" ની છાયા "**सास्वादन सम्यग्दृष्टि**" એવી પણ થાય છે તેનુ તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે-જેમ ખીર ખાધા પછી અરુચિને કારણે તેનું **વમન** કરતો માણસ વમનકાળમા તેના રસનુ આસ્વાદન કરે છે, એ જ પ્રમાણે મિથ્યાત્વની

वमिथ्यात्वभूमि षडावलिपर्यन्तं तद्रसमास्वादयति। तदुक्तम्-एकस्मिन्नुदित मध्यात्क्षानन्तानुबन्धिनाम्। आर्यौपशमिकसम्यक्त्वशैलमौले परिच्युतः॥ सम यादावलीषट्कं यावन्मिथ्यात्वभूतमम्। नासादयति जीवोऽयं तावत्सास्वादनो भवेत्॥ इति, स चासौ सम्यग्दृष्टि सास्वादनसम्यग्दृष्टिरितिद्वितीयम्। तथा 'सम्मामिच्छादिट्ठी' सम्यङ्मिथ्यादृष्टि-समीची च मिथ्या च दृष्टिर्यस्यासौ सम्यङ्मिथ्यादृष्टि, मिथ्यात्वपुद्गला एव ईषद् विशुद्धा सम्यक्मिथ्यात्वव्यप देशभाजो भवन्ति। यदुदयवशात् जिनप्रणीतं तत्त्व न सम्यक् श्रद्धत्ते नापि निन्दति, मतिदौर्बल्यवशात्सम्यगसम्यग्वेत्येकान्ततो निश्चयं न करोति, तद्विशिष्टा दृष्टिः सम्यङ्मिथ्यादृष्टिः। इति तृतीयम्। 'अविरयसम्मदिट्ठी' अविरतसम्य

जबतक नहीं पहुंचा है तबतक वह छह आवलिपर्यन्त उसके रसका आस्वादन करता है। कहा भी है—

"अनंतानुबंधी क्रोधादिक के बीच में से किसी एक के उदय होने पर औपशमिक सम्यक्त्वरूपी पर्वत से च्युत हुआ और मिथ्यात्वभूमि की तरफ सन्मुख हुआ जीव जबतक मिथ्यात्व भूमि में नहीं पहुंचता है तबतक वह कम से कम एक समय तक और अधिक से अधिक छ आवली तक सम्यक्त्व और मिथ्यात्व का स्वाद लेता है २। सम्यङ्मिथ्यादृष्टि–जिसकी दृष्टि सम्यक्त्व और मिथ्यात्व दोनों से मिश्रित हो वह सम्यङ्मिथ्यादृष्टि है। ईषद्विशुद्धमिथ्यात्व के पुद्गल की ही सम्यङ्मिथ्यात्व कहलाते हैं। इसके उदय से जीव जिन प्रणीततत्त्व का सम्यक्रूप से श्रद्धा ही करता है और न उसकी निन्दा ही करता है। मतिदौर्बल्य के वश सम्यक् का एकान्ततः

સમીપનો જીવ સમ્યકત્વથી વિચલિત ચિત્તવાળો થઇને તેનું વમન કરતાં પણ જ્યાં સુધી મિથ્યાત્વ ભૂમિ પર પહોંચતો નથી ત્યાં સુધી છ આવલિ કાળ સુધી તે તેનું આસ્વાદન કરે છે કહ્યું પણ છે કે "અનંતાનુબંધી ક્રોધાદિકમાંથી કોઇ એકના ઉદય થવા ઔપશમિક સમ્યકત્વ રૂપી પર્વતથી ચલિત થયેલ અને મિથ્યાત્વભૂમિની તરફ વળેલ જીવ જ્યાં સુધી મિથ્યાત્વભૂમિમાં પહોંચતો નથી ત્યાં સુધી તે ઓછામાં ઓછા એક સમય સુધી અને વધારેમાં વધારે છ આવલિકાળ સુધી સમ્યકત્વનો સ્વાદ લે છે (૨) સમ્યક્ મિથ્યાદૃષ્ટિ—જેની દૃષ્ટિ સમ્યકત્વ અને મિથ્યાત્વ એ બન્નેથી મિશ્રિત હોય તેને સમ્યગ મિથ્યાદૃષ્ટિ કહે છે ઇષદ્વિશુદ્ધ મિથ્યાત્વના (મિ, મિથ્યાત્વ અને થોડું સમ્યકત્વ મિશ્રિત મિથ્યાત્વ) પુદ્ગલ જ સમ્યક્ મિથ્યાત્વ કહેવાય છે તેના ઉદયથી જીવ જિન પ્રણીત તત્ત્વમાં સમ્યક્ રીતે શ્રદ્ધા પણ રાખતો નથી અને તેની નિન્દા પણ કરતા નથી મતિદૌર્બલ્યને અધીન થઇને તે સમ્યક્ અને

ग्दृष्टिः=न विरत. सावद्यव्यापारेभ्यो यः सोऽविरतः, स चासौ सम्यग्दृष्टिश्च अविरतसम्यग्दृष्टिः, यः परममुनिप्रणीतां सावद्ययोगविरतिं सिद्धिप्रासादपर्यारोहणसोपानभूताम् जानन्नपि अप्रत्याख्यानकषायोदयविघ्नवशात् तां नाधिगच्छति, नापि तत्पालनाय प्रयतते इत्यसावविरतसम्यग्दृष्टिरुच्यते। यथा कश्चित्पुरुषः न्यायोपार्जितधनधान्यः प्रचुरभोगविलाससुखसौन्दर्यसमुपपन्नः सुकुलसमुत्पन्नोऽपि दुरन्तद्यूतादिव्यसनजनितापराधलब्धराजदण्डः संखण्डिताभिमानश्चण्डदण्डपाशिकै-

निश्चय नहीं कर सकता है। इस तरह की जिसकी दृष्टि होती है उसका नाम सम्यङ्मिथ्यादृष्टि है ३। अविरतसम्यक्दृष्टि जो सावद्य व्यापारों से विरत नहीं है परन्तु दृष्टि जिसकी सम्यग् है, ऐसा जीव चतुर्थगुणस्थानवर्ती कहा जाता है। यह जीव इस बात को जानता है कि परममुनि तीर्थंकर प्रभु द्वारा प्रणीत सावद्ययोगविरति, सिद्धिप्रासाद पर आरोहण करने के लिये सोपानपङ्क्ति जैसी है तो भी वह अप्रत्याख्यानकषाय के उदय से उसे प्राप्त नहीं कर पाता है, और न उसके पालन करने का प्रयत्न ही करता है, इसी लिये वह अविरत सम्यग्दृष्टि कहा गया है। जिस प्रकार न्यायोपार्जित धनधान्यादिसंपत्ति वाला कोई कुलिन सद्गृहस्थ प्रचुरभोगविलासों को भोगता हुआ भी जब द्यूतादिव्यसनों में फँस कर राज्य का अपराधी बन जाता है तब वह राजदंड को भोगता है और इस स्थिति अपने गौरव की रक्षा करने में असमर्थ हो जाता है। दुष्टदंडपाशिकों द्वारा अपमानित और विडंम्बित होता हुआ वह कुत्सित कृत्य को अपने कुल की

અસમ્યક્ નો પૂરો નિશ્ચય કરી શકતો નથી આ પ્રકારની જેની દૃષ્ટિ હોય તે જીવને "सम्यग् मिथ्यादृष्टि" કહે છે (૩)

अविरतसम्यक्दृष्टि-જે જીવો સાવદ્ય વ્યાપારોથી વિરત થયા નથી પણ જેમની દૃષ્ટિ સમ્યગ્ છે એવા જીવોને 'ચતુર્થ ગુણસ્થાનવર્તી' કહેવાય છે. તે જીવ એ વાતને જાણે છે કે પરમ મુનિ તીર્થંકર પ્રભુ દ્વારા પ્રણીત સાવદ્યયોગવિરતિ, સિદ્ધિ પ્રાસાદ પર આરોહણ કરવાને માટે નીસરણીના પગથિયાં સમાન છે, છતા પણ તે અપ્રત્યાખ્યાન કષાયના ઉદયથી તેને પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી, અને તેનું પાલન કરવાનો પ્રયત્ન પણ કરતો નથી, તેથી તેને अविरत सम्यग्दृष्टि કહેલ છે. જે રીતે ન્યાયોપાર્જિત ધન ધાન્ય આદિ સંપત્તિવાળો કોઈ કુલીન સદ્ગૃહસ્થ અતિશય ભોગ વિલાસો ભોગવતા ભોગવતા જ્યારે જુગાર આદિ લતોમાં ફસાઇને રાજ્યનો અપરાધી બને છે ત્યારે તે રાજદંડ ભોગવે છે. અને એવી પરિસ્થિતિમા તે પોતાના ગૌરવનું રક્ષણ કરવાને અસમર્થ બની જાય છે. દુષ્ટ દંડપાશિકો દ્વારા અપમાનિત અને વિડમ્બિત થતો એ કુત્સિત કૃત્યને પોતાના કુળની

विडम्ब्यमान स्वकं कुत्सित कर्म स्वमतिष्ठाप्रतिकूलं जानन स्वकुलमुखसौन्दर्यं सपदमभिलषन्नपि दण्डपाशिकसकाशात् किमपि कर्तुं न शक्नोति, तथैवाऽयं जीवाऽविरतिं कुत्सितकर्मरूपां जानन् सुधापमविरतिसुखसौन्दर्यमभिलषन्नपि दण्डपाशिकस्थानीयकषायाणां सकाशाद् व्रतोरसाऽमपि कर्तुं न शक्नोति इत्य विरतसम्यग्दृष्टित्वमनुभवति इत्यर्थः । इति चतुर्थम्। 'विरयाविरए' विरता विरत = देशविरतः श्रावक इत्यर्थः । इति पञ्चमम्। 'पमत्तसंजए' प्रमत्तसंयत इति

प्रतिष्ठा के प्रतिकूल जानता है तो भी उनसे वह कुछ भी नहीं कर सकता के प्रतिकूल जानता है तो भी कहते वह कुछ भी नहीं कर सकता है। वह यह अवश्य चाहता हुआ कुलका गौरव नष्ट न होने पावे, मेरे सुख भोग में कोई बाधा नहीं आवे, मेरी संपत्ति सुरक्षित रहे। इसी तरह अविरतसम्यग्दृष्टि जीव कुत्सितकर्म के जैसी अविरति को जानता है और सुधा (अमृत)के सदृश विरति जन्य सुख सौन्दर्य का अभिलाषी होता हुआ दण्डपाशिक समान द्वितीयकषाय–अप्रत्याख्यानावरण–के वश से व्रत धारण करने का उत्साह भी नहीं कर सकता है। इस प्रकार इस चतुर्थ गुणस्थान में रहने वाला जीव सम्यग्दृष्टि तो होता है पर विरति धारण नहीं करता है। इस लिये इसका नाम अविरत सम्यग्दृष्टि है४। पञ्चमगुणस्थानका नाम विरताविरत–देशविरत है। इस गुणस्थान में रहा हुआ जीव श्रावक के बारह व्रतों का पालन करता है अर्थात मन, वचन और काय से त्रसहिंसा का तथा स्थूल झूठ आदि का अर्थात् एक देश से सावद्ययोग का त्याग कर देता है। छठवें गुणस्थान का नाम प्रमत्त

પ્રતિષ્ઠા પર ઘા કરનારૂં ગણે છે છતાં પણ તેમને તે કંઇ પણ કહી શકતો નથી. તે એમ જરૂર ઇચ્છે છે કે મારા કુળના ગૌરવનો નાશ ન થાય, મારાં સુખભોગમાં કોઇ બાધા ન આવે અને મારી સંપત્તિ સુરક્ષિત રહે એ જ પ્રમાણે તે અવિરત સમ્યગ્ દૃષ્ટિ જીવ કુત્સિત કર્મોના જેવી અવિરતિને ગણે છે અને અમૃત જેવી વિરતિજન્ય સુખસૌંદર્યનો અભિલાષી હોય છે છતાં પણ દંડપાશિક સમાન દ્વિતીય કષાય અપ્રત્યાખ્યાનાવરણને આધીન થઇને વ્રત ધારણ કરવાનો ઉત્સાહ પણ કરી શકતો નથી આ રીતે તે ચતુર્થ ગુણસ્થાનમાં રહેનાર જીવ સમ્યગ્દૃષ્ટિ તો હોય છે પણ વિરતિ ધારણ કરતો નથી તેથી તેને અવિરતસમ્યગ્દૃષ્ટિ કહેલ છે (૪) પાંચમા ગુણસ્થાનનું નામ વિરતાવિરત—દેશવિરત છે આ ગુણસ્થાનમાં રહેલ જીવ શ્રાવકનાં બાર વ્રતોનું પાલન કરે છે એટલે કે મન, વચન અને કાયથી ત્રસ હિંસાનો તથા સ્થૂલ જૂઠ આદિનો–એટલે કે એકદેશની અપેક્ષાએ સાવદ્યયોગનો

त्प्रमादयुक्तः सर्वविरत इति षष्ठम्। 'अप्पमत्तसंजए' अप्रमत्तसंयतः=सर्वप्रमादरहितः सर्वसंयत इत्यर्थ इति सप्तमम्। 'नियट्टिबायरे' निवृत्तिबादरः=निवृत्तिः समानकालं गुणस्थानप्रतिपन्नानां जीवानामध्यवसायभेदस्तत्प्रधानो बादरः बादरसंपरायो निवृत्तिबादरः प्रमादरहितो मुनिःक्षपकश्रेणीमुपशमश्रेणीं वा प्रतिपन्नः क्षीणदर्शनसप्तकः उपशान्तदर्शनसप्तको वा अपूर्वकरणापरनामकनिवृत्तिबादरजीव-

संयत है। इसमें रहा हुआ जीव किंचित प्रमाद से युक्त रहता है६। सातवें गुणस्थान का नाम अप्रमत्त संयत है, इसमें रहा हुआ जीव समस्त प्रमाद से रहित हो जाता है।७। निवृत्ति बादर आठवां गुणस्थान है, इस गुणस्थान में समानकाल में इस गुणस्थान को धारण करनेवाले नाना जीवों के अध्यवसायों में भेद रहता है८। इसलिये यह गुणस्थान भेद प्रधान जो बादर-बादरसंपराय है उस स्वरूप है। इसी का नाम निव्रत्तिबादर है। इसका भाव यह है-प्रमाद रहित मुनि जब उपशम श्रेणी अथवा क्षपकश्रेणी पर आरूढ होने लगता है तब वह यदि अनंतानुबंधी कषाय संबंधी क्रोधादि चार प्रकृतियों का और दर्शन मोहनीय संबंधी तीन प्रकृतियों का क्षय अथवा उपशम कर देता है तो वह क्षय करने से क्षपकश्रेणि और उपशम करने से उपशमश्रेणी मांडता है। इस का नाम निव्रत्तिबादर गुणस्थान है। इसका दूसरा नाम अपूर्वकरण भी है। अपूर्व नाम नवीन का है, स्थितिघात, रसघात गुणश्रेणी, गुणसंक्रम, स्थितिबंध, ये पांच बातें जहां होती हैं इसी का नाम

ત્યાગ કરે છે (૫) છઠ્ઠા ગુણસ્થાનનુ નામ प्रमत्त संयत છે તેમા રહેલ જીવ થોડા પ્રમાણમા પ્રમાદ વાળો રહે છે. (૬) સાતમા ગુણસ્થાનનુ નામ अप्रमत्तसंयत છે, તેમા રહેલ જીવ સમસ્ત પ્રમાદથી રહિત બની જાય છે (૭) 'निर्वृत्ति बादर' તે આઠમું ગુણસ્થાન છે, આ ગુણસ્થાનમા સમાન કાળે આ ગુણસ્થાનને ધારણ કરનાર વિવિધ જીવોના અધ્યવસાયોમા ભેદ રહે છે તેથી આ ગુણસ્થાન ભેદ પ્રધાન જે બાદર-બાદરસંપરાય છે તે સ્વરૂપનુ છે તેનુ નામ નિર્વૃત્તિ બાદર છે તેનો ભાવાર્થ આ પ્રમાણે છે-પ્રમાદ રહિત મુનિ જ્યારે ઉપશમ શ્રેણી અથવા ક્ષપકશ્રેણી પર ચડવા લાગે છે. ત્યારે જો તે અનંતાનુબંધી કષાય સંબંધી ક્રોધાદિ ચાર પ્રકૃતિયોનો અને દર્શન મોહનીય સબંધી ત્રણ પ્રકૃતિયોનો ક્ષય અથવા ઉપશમ કરી નાખે તો તે ક્ષય કરવાથી ક્ષપકશ્રેણી અને ઉપશમ કરવાથી ઉપશમ શ્રેણી માડે છે. એનું જ નામ નિર્વૃત્તિ બાદર ગુણસ્થાન છે. તેનુ બીજુ નામ अपूर्व करण છે અપૂર્વ એટલે નવીન. સ્થિતિઘાત, રસઘાત, ગુણશ્રેણી, ગુણસંક્રમ, અને સ્થિતિબંધ, એ પાંચ બાબતો

स्थानमुच्यते । इति अष्टमं जीवस्थानम् । 'अणियट्टिबायरे' अनिवृत्तिबादरः न विद्यते अन्योऽन्यमध्यवसायस्थानस्य निवृत्ति-र्न्यूनाधिकता यस्य युगपन्नवमगुण स्थानसमाप्तस्य जीवसमूहस्य सोऽनिवृत्ति स चासौ बादरश्च अनिवृत्तिबादरः, एष च अप्रत्याख्यानादि द्वादशकषायाणां नवानां च नोकषायाणां शमनाय क्षपणाय च तत्परो भवतीत्यतोऽनिवृत्तिबादर उच्यते । इति नवमं जीवस्थानम् ।

अपूर्वकरण है। जिनकर्मों की स्थिति अधिक होती है उनकी उस स्थिति को अपवर्तन करण द्वारा अल्पस्थिति वाला करना इसका नाम स्थिति घात है१। तीव्र रस को अपवर्तन द्वारा खंडित करना इसका नाम रसघात है२। काल की अपेक्षा ह्रस्वतर, और दलिक रचना की अपेक्षा पृथुतर करना इसका नाम गुणश्रेणि है३। बध्यमान शुभ प्रकृति में अब ध्यमान अशुभ प्रकृतियों के दलिकों को प्रतिसमय असख्यात गुणी विशुद्धि लिये हुए निक्षिप्त करना इसका नाम गुणसंक्रम है४। कर्म की स्थिति का जघन्यरूप में बंध करना इसका नाम स्थितिबंध है५। इस गुणस्थान में मोहनीय कर्म का न उपशम होता है और न क्षय, इसी दृष्टि को लेकर इसका नाम अपूर्व करण पडा है। अनिवृत्ति बादर—यह नौवां गुण स्थान है—युगपत् इस गुणस्थान प्रतिपन्न नाना जीवों के परिणामों में परस्पर कोई भिन्नता नहीं होती है। यह गुणस्थान अप्रत्याख्यान आदि बारह कषायों को और नव नो कषायों को शमन और क्षपण करने में तत्पर हुए जीव को होता है९। दशवें गुणस्थान का नाम सूक्ष्म संपराय

કહેવાય છે તેને અપૂર્વ કરણ કહે છે જે કર્મોની સ્થિતિ અધિક હોય તે તે સ્થિતિનું અપવર્તન કરણ દ્વારા અલ્પસ્થિતિ યુક્ત કરવું તેનું નામ સ્થિતિઘાત છે તીવ્ર રસને અપવર્તન દ્વારા ખંડિત કરવો તેનું નામ રસઘાત છે કાળની અપેક્ષાએ હ્રસ્વતર અને દલિક રચનાની અપેક્ષાએ પૃથુતર કરવું તેનું નામ ગુણશ્રેણી છે બધ્યમાન શુભ પ્રકૃતિઓમાં અબધ્યમાન અશુભ પ્રકૃતિઓના દલિકોને પ્રતિસમય અસંખ્યાત ગણી વિશુદ્ધિ સહિત નિક્ષિપ્ત કરવા તેનું નામ ગુણસંક્રમ છે કર્મની સ્થિતિને જઘન્ય રૂપે બંધ કરવા તેનું નામ સ્થિતિબંધ છે આ ગુણસ્થાનમાં મોહનીય કર્મનો ઉપશમ થતો નથી, કે ક્ષય થતો નથી. તે કારણે તેનું નામ અપૂર્વકરણ પડયું છે (૯) 'अनिवृत्तिबादर' તે નવમું ગુણસ્થાન છે–યુગપત્ આ ગુણસ્થાન યુક્ત વિવિધ જીવોનાં પરિણામોમાં પરસ્પર કોઈ ભિન્નતા હોતી નથી. આ ગુણસ્થાન અપ્રત્યાખ્યાન આદિ બાર કષાયોનું અને નવ નોકષાયોનું અને શમન અને ક્ષપણ કરવાને તત્પર બનેલ જીવને થાય છે (૧૦) દશમાં ગુણસ્થાનનું નામ 'सूक्ष्मसंपराय' છે તેમાં

'सुहुम संपराए उवसामए वा खवए वा' सूक्ष्मसंपरायः=सूक्ष्मः संज्वलनलोभासंख्येयखण्डरूपः संपरायः कषायो यस्य सः, लोभानुवेदकइत्यर्थः, स च द्विविधः 'उवसमए' उपशमकः उपशमश्रेणी संप्राप्तः, 'खवए' क्षपकः=क्षपकश्रेणीं संप्राप्त इति दशमं जीवस्थानम् । तथा 'उवसंतमोहे' उपशान्तमोहः, उपशान्तः सर्वथाऽनुदयावस्थो मोहो मोहनीयं कर्म यस्यासौ, उपशमवीतराग इत्यर्थः, अय च उपशमश्रेणिसमाप्तावन्तर्मुहूर्त्त भवति, पुनस्ततः प्रच्यवत्येव । इत्येकादशम् । 'खीणमोहे' क्षीणमोहः, क्षीणो विनष्टो मोहो यस्य सः, क्षयवीतराग इत्यर्थः,

है-यहां संज्वलन संबंधी लोभकषाय सूक्ष्मरूप में उदित रहती है। इसके दो भेद है-१ उपशमक और दूसरा क्षपक, उपशमश्रेणी पर आरोहण करने वाला जीव उपशमक और क्षपकश्रेणी पर आरोहण करने वाला जीव क्षपक कहा गया है१०। ग्यरहवें गुणस्थान का नाम उपशांतमोह है, जिस जीव का मोहनीय कर्म सर्वथा उपशांत हो जाता है उस जीव के यह गुणस्थान होता है। इसको उपशम वीतराग भी कहते हैं। यह उपशमश्रेणी का स्थान है। यहां पर आने पर जीव नियमतः नीचे के गुणस्थानों में पतित हो जाता है, क्यों कि यहां पर मोहनीय कर्म की अठाईस प्रकृतियां उपशमित ही रहती है, बाद में स्थिति समाप्त होने पर जब उनका उदय हो जाता है तब जीव वहां से नीचे गिर जाता है। इसके साथ जो वीतराग विशेषण लगा है उसका तात्पर्य यही है कि कषायों के उपशमित हो जाने से यह जीव उतने समय के लिये वीतराग बन जाता है। इस गुणस्थान का उत्कृष्ट समय एक अन्तर्मुहूर्त का है११। बारहवें गुणस्थान का नाम क्षीणमोह है। यहां पर मोह-

સંજ્વલન સંબંધી લોભકષાય સૂક્ષ્મ રીતે ઉદિત રહે છે તેના બે ભેદ છે (૧) ઉપશમક અને (૨) ક્ષપક, ઉપશમશ્રેણી પર આરોહણ કરનાર જીવ ક્ષપક કહેવાય છે (૧૦) અગિયારમા ગુણસ્થાનનું નામ 'उपशान्तमोह' છે જે જીવના મોહનીય કર્મ તદ્દન ઉપશાંત થઇ જાય છે તે જીવને આ ગુણસ્થાન હોય છે તેને 'ઉપશમ વીતરાગ' પણ કહે છે આ ઉપશમશ્રેણીનું સ્થાન છે અહીં આવતા જીવ નિયમથી જ નીચેના ગુણસ્થાનોમાં પડી જાય છે, કારણ કે આ સ્થાને મોહનીય કર્મના અઠ્ઠાવીસ પ્રકૃતિયો ઉપશમિત જ રહે છે, ત્યાર બાદ સ્થિતિ સમાપ્ત થતા જ્યારે તેનો ઉદય થાય છે ત્યારે જીવ ત્યાથી નીચે પડી જાય છે તેની સાથે જે 'વીતરાગ' વિશેષણ લગાડયું છે તેનું તાત્પર્ય એ છે કે કષાયો ઉપશમિત થઇ જવાથી તે જીવ એટલા સમયને માટે વીતરાગ બની જાય છે આ ગુણસ્થાનનો ઉત્કૃષ્ટ કાળ એક અન્તર્મુહૂર્તનો છે (૧૧) બારમાં ગુણસ્થાનનું નામ क्षीणमोह છે. આ ગુણ

अयमप्यन्तर्मुहूर्तमेव । इति द्वादशम् । तथा 'सजोगी केवली' सयागी केवली कायादिव्यापारवान् कचलज्ञानीत्यर्थः। इति त्रयोदशं जीवस्थानम् । तथा अयोगीकेवली=निरुद्धमन प्रभृतियोग द्वैशेशीगतः हृस्वपञ्चाक्षरोच्चारणमात्रकालमवस्थायीत्यर्थ । इति चतुर्दशं जीवस्थानम् । 'भरहेरवयाओ ण' भरतैरवतयोः खलु जीवा प्रत्यञ्चा चतुर्दश चतुर्दश योजनसहस्राणि चत्वारि च एकोत्तराणि योजनशतानि योजनस्य एकोनविंशतिभागेषु षड्भागांश्च आयामेन प्रज्ञप्ता। अर्थात् भरतैरवतयो प्रत्यकं जीवा १४४०१ योजनानि, एकोनविंशतिभागविभक्तस्य योजनस्य षड्भागाश्च विस्तारेण प्रज्ञप्ताः । भरतैरवते हि आरोपित प्रत्य

नीय कर्म सर्वथा क्षीण हो जाता है। इसका दूसरा नाम क्षयवीतराग भी है। इस गुणस्थान की प्राप्ति क्षपक को ही होती है। इसका भी उत्कृष्ट काल एक अन्तर्मुहूर्त का है १२। तेरहवें गुणस्थान का नाम सयोगि केवली है। मन, वचन और काय इन तीनों योगों से युक्त जीव यहां पर रहता है और घातक कर्मों के सर्वथा क्षय होने से केवलज्ञान को प्राप्त कर लेता है१३। चौदहवें गुणस्थान का नाम अयोगिकेवली है, इस गुणस्थान में आत्मा तब ही पहुँचता है कि जब वह तीनों योगों का निरोध कर देता है इसमें जीव की शैलेशी अवस्था हो जाती है। पांच हृस्व अक्षरों के उच्चारण करने में जितना समय लगता है उतने समय तक जीव इस गुणस्थान में ठहर कर बाद में मोक्ष में चला जाता है१४। भरत और ऐरवत इन क्षेत्रों की प्रत्येक की जीवा-प्रत्यञ्चा-(धनुष की डोरी) विस्तार की अपेक्षा चौदह हजार चारसौ एक (१४४०१) योजन और एक योजन के उन्नीस (१९) भागों में से छह भाग ६/१९ प्रमाण अर्थात्-भरत और ऐरवत

રથ ને મોહનીયકર્મ તદન ક્ષીણ થઈ જાય છે તેનું બીજું નામ ક્ષયવીતરાગ પણ છે આ ગુણસ્થાનની પ્રાપ્તિ ક્ષપકને જ થાય છે તેનો ઉત્કૃષ્ટ કાળ પણ એક અન્તર્મુહૂર્તનો છે (૧૨) તેરમા ગુણસ્થાનનું નામ સયોગિકેવલી છે આ ગુણસ્થાને જીવ મન વચન, અને કાય આ ત્રણે યોગોથી યુક્ત રહે છે અને ઘાતિયા કર્મોનો સર્વથા ક્ષય થવાથી કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરી લે છે (૧૩) ચૌદમા ગુણસ્થાનનું નામ 'अयोगिकेवली' છે આ ગુણસ્થાને આત્મા ત્યારે જ પહોંચે છે કે જ્યારે તે ત્રણે યોગોનો નિરોધ કરી નાખે છે તેમાં જીવની શૈલેશી અવસ્થા (અચલાવસ્થાન અવસ્થા) થઈ જાય છે પાંચ હ્રસ્વ અક્ષરોનું ઉચ્ચારણ કરવામાં જેટલો સમય લાગે છે એટલા સમય સુધી જીવ આ ગુણસ્થાનમાં રહીને મોક્ષમાં ચાલ્યો જાય છે (૧૪) ભરત અને ઐરવત, એ બંને ક્ષેત્રની જીવા-પ્રત્યંચા- (ધનુષની દોરી) વિસ્તારની અપેક્ષાએ ચૌદ હજાર ચારસો એક (૧૪૪૦૧) યોજન અને એક યોજનના

श्लस्य धनुषः समानाकृतिके। ततस्तयो र्जीवे भवतः। तत्र भरतस्य जीवा हिमवतः पर्वतस्य दक्षिणपार्श्वस्थाऽनन्तरप्रदेशश्रेणिरुच्यते। ऐरवतस्य जीवा तु शिखरिणः पर्वतस्य परपार्श्वस्थाऽनन्तरश्रेणिरुच्यते। 'एगमेगस्स' एकैकस्य खलु राज्ञः 'चाउरंतचक्कवट्टिस्स' चातुरन्तचक्रवर्तिनः चत्वारोऽन्ताः समुद्रत्रयहिमवल्लक्षणा यस्याः सा चातुरन्ताभूमिः, तस्याः स्वामी चातुरन्तः स चासौ चक्रवर्ती च तस्य, चतुर्दशरत्नानि प्रज्ञप्तानि तद्यथा–स्त्रीरत्नम्१, सेनापतिरत्नम्२, गाथापतिरत्नम्, गाथापतिः=कोष्ठागारिकः, पुरोहितरत्नम्३, पुरोहितः–शान्ति-

ये दो क्षेत्र आरोपित प्रत्यंचा–डोरी वाले धनुष के जैसे आकार के है। इसलिये इनकी प्रत्येक की जीवा होती है। भरतक्षेत्र की जीवा हिमवन पर्वत के दक्षिण पार्श्वभाग में स्थित है। जो अनन्तर प्रदेशश्रेणि कही जाती है। इसी तरह ऐरवत क्षेत्र की जीवा है अन्तिम शिखरी पर्वत के दूसरे पार्श्वभाग में स्थित है और यह भी अनन्त प्रदेशश्रेणि के नाम सेप्रख्यात है। एक एक चक्रवर्त्ती के यहां जो चातुरन्तभूमि अर्थात् तीनसमुद्र और चौथा हिमवान् इस प्रकार चार अन्तवाली भूमि के अधिपति होते हैं उनके चौदह चौदह रत्न होते हैं, वे इस प्रकारहैं—स्त्रीरत्न१, सेनापतिरत्न२, गथापति रत्न३, पुरोहितरत्न४, वर्द्धकि रत्न५, अश्वरत्न६, हस्तिरत्न७, असि रत्न८, दण्डरत्न९, चक्ररत्न१०, छत्ररत्न११, चर्मरत्न-१२, मणिरत्न१३, और काकिणीरत्न१४।

कोष्ठागार (कोठार) की रक्षा करने वाले का नाम गाथापति है३। शांतिकर्म आदि के करने वाले का नाम पुरोहित है४। वर्द्धकि रत्न

ઓગણીસ ભાગોમાંથી છ ભાગ (६/१९) પ્રમાણ છે. એટલે કે ભરત અને ઐરવત એ બન્ને ક્ષેત્રો આરોપિત પ્રત્યંચા–દોરી ચડાવેલા ધનુષ્યના આકારના છે તેથી તે પ્રત્યેકને જીવા હોય છે ભરતક્ષેત્રની જીવા હિમતપર્વતના દક્ષિણ પાર્શ્વભાગમાં રહેલ છે જે અનન્તર પ્રદેશશ્રેણી કહેવાય છે, એજ પ્રમાણે ઐરવત ક્ષેત્રની પણ જીવા છે, જે અન્તિમ શિખરી પર્વતના બીજા પાર્શ્વભાગમાં સ્થિત છે અને તે પણ અનન્તર પ્રદેશ-શ્રેણીના નામથી વિખ્યાત છે દરેક ચક્રવર્તી કે જે ચાતુરન્તભૂમી એટલે કે ત્રણ સમુદ્ર અને ચોથો હિમવાન એ ચાર અન્તવાળી ભૂમિના અધિપતિ હોય છે, તેમના ચૌદ રત્નો નીચે પ્રમાણે હોય છે–(१) સ્ત્રીરત્ન, (२) સેનાપતિરત્ન, (૩) ગાથાપતિરત્ન, (૪) પુરોહિતરત્ન, (૫) વર્દ્ધકિરત્ન (૬) અશ્વરત્ન, (૭) હસ્તિરત્ન, (૮) અસિરત્ન, (૯) દંડરત્ન, (૧૦) ચક્રરત્ન, (૧૧) છત્રરત્ન, (૧૨) ચર્મરત્ન (૧૩) મણિરત્ન અને (૧૪) કાકિણીરત્ન

કોષ્ઠાગાર (કોઠારનું રક્ષણ કરનારને ગાથાપતિ કહે છે ૩. શાંતિકર્મ આદિ કરનારને પુરોહિત કહે છે૪, જે રથાદિકનું નિર્માણ કરે છે તેને વર્દ્ધકિરત્ન કહે છે ૫

कर्मादिकारक, वर्द्धकिरत्नम्५, वर्द्धकि-रथादिनिर्माणयता, अश्वरत्नम्६ हस्तिरत्नम्७, असिरत्नम्८, दण्डरत्नम्९, चक्ररत्नम्१०, छत्ररत्नम्११, चर्मरत्नम्१२, इदं चर्मरत्नं हि चक्रवर्ति हस्तस्पर्शमात्रेण द्वादशयोजनायामविस्तार वद्भवति, तथा प्रातरुप्तशाल्यादीनपराह्णकाले समुपभोगयोग्यान् सम्पादयति। नद्यादौ तरणे सेनापतिहस्तस्पर्शमात्रेण नौकारूपं च भवति। मणिरत्नम्१३, इदं हि चतुरङ्गुलायाम द्व्यङ्गुलपृथुलं षट्कोणकं च भवति। शिरसि धृतेऽस्मिन् रोगशान्तिः देवादिकृतोपसर्गाद्यभावः शस्त्रावध्यता च भवति। काकिणीरत्नम्१४ =अष्टसुवर्णपरिमाणं तिमिरनाशकमयोघनसंस्थानं रत्नम्। जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे चतुर्दश महानद्यः 'पुव्वावरेण' पूर्वापराभ्यां-पूर्वपश्चिमाभ्यां दिग्भ्यां लव

वह है जो रथादि का निर्माण करता है। चर्मरत्न का यह कार्य है कि चक्रवर्ती जब इसे अपने हाथ से स्पर्श करते हैं तब यह द्वादशयोजन तक लंबा चौड़ा हो जाता है। तथा यह प्रातः काल बोये हुए शाल्यादि धान्य को अपराह्णकाल में उपभोग योग्य कर देता है। तथा नद्यादिकों को पार करने के लिये सेनापति के हाथ से जब स्पर्शित होता है तो यह नौकारूप बन जाता है १२। मणिरत्न चार अंगुल लंबा और दो अंगुल का मोटा होता है। इसके छह कोने होते हैं। इसे मस्तक पर धारण करने पर रोगों की शांति हो जाती है। देवादिकृत उपसर्गों का अभाव हो जाता है। शस्त्रों द्वारा घात नहीं हो सकता है १३। काकिणीरत्न-आठसुवर्णों का जितना परिमाण होता है उतना ही परिमाण इस काकिणी रत्न का होता है। यह अंधियार को नष्ट करता है। लोहे के घण जैसा इसका आकार होता है। जम्बूद्वीप नाम के द्वीप में चौदह महानदी हैं। जो पूर्व और पश्चिमदिशा के लवणसमुद्र में मिली है। नदियाँ य

ચર્મરત્નનું કામ એ છે કે જ્યારે ચક્રવર્તી તેને પોતાના હાથનો સ્પર્શ કરે છે ત્યારે તે બાર યોજન લાંબુ પહોળું થઈ જાય છે તથા તે સવારે વાવેલ શાલ આદિ ધાન્યને બપોર પછીના સમયે ખાવા યોગ્ય કરી દે છે અને નદી આદિને પાર કરવી હોય ત્યારે સેનાપતિના હાથથી તેનો સ્પર્શ કરાય છે ત્યારે તે નૌકારૂપ બની જાય છે ૧૨ મણિરત્ન ચાર આંગળ લાંબુ અને બે આંગળ જાડું હોય છે તેને છ ખૂણા હોય છે તેને માથા પર ધારણ કરવાથી રોગાદિકનું ઉપશમન થઈ જાય છે દેવાદિ કૃત ઉપસર્ગોનો અભાવ થઈ જાય છે અને શસ્ત્રો દ્વારા ઘાત થઈ શકતો નથી ૧૩ કાકિણીરત્ન-તે આઠ મહોરો જેવડા કદનું હોય છે તે અંધકારનો નાશ કરે છે લોઢાના ઘણ જેવો તેનો આકાર હોય છે

જમ્બૂદ્વીપ નામના દ્વીપમાં ચૌદ મહા નદી છે, જે પૂર્વ અને પશ્ચિમ

णसमुद्रं आत्मान 'समर्प्येति' समर्पयन्ति. तद्यथा—गङ्गा,—सिन्धुः, रोहिता, रोहिताशा, हरिः, हरिकान्ता, सीता, सीतोदा, नरकान्ता, नारिकान्ता सुवर्णकूला, रूप्यकूला, रक्ता, रक्तवती। इति चतुर्दश महानद्यः ॥सू. ३४॥

मूलम्—इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं चउद्दस पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। पंचमीए णं पुढवीइ अत्थेगइयाणं नेरइयाणं चउद्दस सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगइयाणं चउद्दस पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगइयाणं देवाणं चउद्दस पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। लंतए कप्पे देवाणं अत्थेगइयाणं चउद्दस सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। महासुक्के कप्पे देवाणं अत्थेगइयाणं जहण्णेणं चउद्दस सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। जे देवा सिरिकंतं सिरिमहियं सिरिसोमनसं लंतयं काविट्ठं महिंदकंतं महिंदुत्तरवडिंसगं विमाणं देवत्ताए उववण्णा, तेसि णं देवाणं उक्कोसेणं चउद्दस सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता। ते ण देवा चउद्दसहिं अद्धमासेहिं आणमंति वा पाणमंति वा उस्ससंति वा निस्ससंति वा। तेसि णं देवाणं चउद्दसहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जइ। संतेगइया भवसिद्धिया जीवा जे चउदसहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति बुज्झिस्संति, मुच्चिस्संति परिनिव्वाइस्संति सव्वदुक्खाणमंतं करिस्संति ॥सू. ३५॥

हैं—गंगा१, सिन्धु२, रोहिता३, रोहितांशा४, हरि५, हरिकान्ता६, सीता७, सीतोदा८, नरकान्ता९, नारिकांता१०, सुवर्णकूला११, रूप्यकूला१२. रक्ता-१३ और रक्तवती १४। ॥सू० ३४॥

દિશામાં લવણસમુદ્રને મળે છે તે નદીઓ નીચે પ્રમાણે છે—

(૧) ગંગા, (૨) સિંધુ, (૩) રોહિતા, (૪) રોહિતાશા. (૫) હરિ, (૬) હરિકાન્તા, (૭) સીતા, (૮) સીતોદા (૯) નરકાન્તા, [૧૦] નારિકાન્તા, (૧૧) સુવર્ણ-કૂલા, (૧૨) રુપ્યકૂલા, (૧૩) રક્તા, અને (૧૪) રક્તવતી ॥સૂ ૩૪॥

टीका— इमीसे णं' इत्यादि। अस्यां खलु रत्नप्रभायां पृथिव्याम् अस्त्येकेषां नैरयिकाणां चतुर्दशपल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। पञ्चम्यां पृथिव्याम् अस्त्येकेषां नैरयिकाणां चतुर्दशसागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। असुरकुमाराणां देवानामस्त्येकेषां चतुर्दशपल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। सौधर्मेशानयोः कल्पयोः अस्त्येकेषां देवानां चतुर्दशपल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। लान्तके कल्पे देवानामस्त्येकेषां चतुर्दशसागरोपमानि स्थिति प्रज्ञप्ता। महाशुक्रे कल्पे देवानामस्त्येकेषां जघन्यप्रमाणेन चतुर्दशसागरोपमानि स्थिति प्रज्ञप्ता। ये देवा श्रीकान्तं१, श्रीमहितं२, श्रीसौमनसं३, लान्तकं४, कापिष्ठं५, महेन्द्रं६, महेन्द्रकान्तं७, महेन्द्रोत्तरावतंसकं८, च विमानम्=एतेष्वष्टसु विमानेषु देवत्वेनोत्पन्नाः, तेषां खलु देवानामुत्कर्षेण चतुर्दश सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता। ते खलु देवाश्चतुर्दशभिरर्द्धमासैः आनन्ति वा प्राणन्ति वा उच्छ्वसन्ति वा

टीकार्थ–'इमीसे णं' इत्यादि। इस रत्नप्रभा पृथिवी में कितनेक नारकियों की स्थिति चौदह पल्योपम की कही गई है। पंचमी पृथिवी में कितनेक नारकियों की चौदह सागरोपम की स्थिति कही गई है। असुरकुमार देवों में कितनेक देवों की चौदह पल्योपम की स्थिति कही गई है। सौधर्म ईशान इन दो कल्पो में कितनेक देवों की स्थिति चौदह पल्योपम की कही गई है। लान्तक कल्प में कितनेक देवों की स्थिति चौदह सागरोपम की कही गई है। महाशुक्र कल्प में कितनेक देवों की जघन्य स्थिति चौदह सागरोपम की कही गइ है। जो देव श्रीकांत१, श्री महित२, श्रीसौमनस३, लान्तक४, कापिष्ठ५, महेन्द्र६, महेन्द्रकान्त७, और महेन्द्रोत्तरावतंसक८, इन आठ विमानों में देव की पर्याय से उत्पन्न होते हैं उन देवों की स्थिति चौदह सागरोपम की कही गई है। ये देव चौदह अर्धमासों के अर्थात् सात महीनों के बाद बाद आभ्यन्तरिक श्वासोच्छ्वास ग्रहण करते हैं। इन देवों को चौदह

ટીકાર્થ—ઇમીસેણં ઇત્યાદિ। આ રત્નપ્રભા પૃથ્વીમાં કેટલાક નારકીઓની સ્થિતિ પલ્યોપમની કહી છે પાંચમી પૃથ્વીમાં કેટલાક નારકીઓની ચૌદ સાગરોપમની સ્થિતિ કહી છે અસુરકુમાર દેવોમા કેટલાક દેવોની ચૌદ પલ્યોપમની સ્થિતિ કહી છે સૌધર્મ અને ઇશાન કલ્પોમાં કેટલાક દેવોની સ્થિતિ ચૌદ પલ્યોપમની કહી છે લાન્તક કલ્પમાં કેટલાક દેવોની સ્થિતિ ચૌદ સાગરોપમની કહી છે મહાશુક્ર કલ્પમા કેટલાક દેવોની જઘન્ય સ્થિતિ ચૌદ સાગરોપમની કહી છે જે દેવો (૧) શ્રીકાન્ત (૨) શ્રી મહિત, (૩) શ્રી સૌમનસ, (૪) લાન્તક (૫) કાપિષ્ઠ (૬) મહેન્દ્ર (૭) મહેન્દ્રકાન્ત અને (૮) મહેન્દ્રોત્તરાવતંસક, એ આઠ વિમાનોમાં દેવની પર્યાયે ઉત્પન્ન થાય છે, તે દેવોની સ્થિતિ ચૌદ સાગરોપમની કહી છે તે દેવો સાત મહિને આભ્યન્તરિક

निःश्वसन्ति वा। तेषां खलु देवानां चतुर्दशभिर्वर्षसहस्रैराहारसंज्ञा समुत्पद्यते। सन्त्येके भवसिद्धिका जीवा ये चतुर्दशभिर्भवग्रहणैः सेत्स्यन्ति, भोत्स्यन्ते, मोक्ष्यन्ति, परिनिर्वास्यन्ति सर्वदुःखानामन्तं च करिष्यन्ति ॥सू. ३५॥

पञ्चदशं समवायाङ्गमाह—

मूलम्—पन्नरस परमाहम्मिया पण्णत्ता, तं जहा—अंबे अंबरिसे चेव सामे सबलेत्ति आवरे। रुद्दोवरुद्दकाले य महाकालेत्ति आवरे ॥१॥ असिपत्ते धणु कुंभे वालुए वेयरणीति य खरस्सरे महाघोसे एए पन्नरसाहिया ॥२॥ णमी णं अरहा पन्नरस धणूइं उड्ढं उच्चत्तेणं होत्था, धुवराहूणं बहुलपक्खस्स पडिवए पन्नरसभागं पन्नरसभागेणं चंदस्सलेसं आवरेत्ताण चिट्ठइ, तं जहा—पढमाए पढमं भागं बीयाए दुभागं तइयाए तिभागं चउत्थीए चउभागं पंचमीए पंचभागं छट्ठीए छभागं सत्तमीए सत्तभागं अट्ठमीए अट्ठभागं नवमीए नवभागं दसमीए दसभागं एक्कारसीए एक्कारसभागं बारसीए बारसभागं तेरसीए तेरसभागं चउद्दसीए चउद्दसभागं पन्नरसेसु पन्नरसभागं तं चेव सुक्कपक्खस्स य उवदंसेमाणे उवदंसेमाणे चिट्ठइ, तं जहा-पढमाए पढमं भागं जाव पन्नरसेसु पन्नरसभागं। छ णक्खत्ता पन्नरसमुहुत्तसंजुत्ता पण्णत्ता, तं जहा—सतभिसय भरणि अद्दा असलेसा साई तहा जेट्ठा। एते छण्णक्खत्ता पन्नरसमुहुत्तसंजुत्ता ॥१॥ चेत्ता सोएसु णं मासेसु

हजार वर्ष के बाद आहार संज्ञा उत्पन्न होती है। इनमें कितनेक देव ऐसे होते हैं जो भवसिद्धिक होते हैं। ये चौदह भवग्रहण करने के अनंतर सिद्धपद को भोगने वाले होंगे। बुद्ध होंगे। कर्ममल से सर्वथा मुक्त हो जावेंगे तथा समस्त दुःखों का नाश कर देंगे॥ ॥सू० ३५॥

શ્વાસોચ્છવાસ ગ્રહણ કરે છે તે દેવોને ચૌદ હજાર વર્ષ પછી આહાર સંજ્ઞા ઉત્પન્ન થાય છે. તે દેવોમાંના કેટલાક દેવો ભવસિદ્ધિક હોય છે. તેઓ ચૌદ ભવ ગ્રહણ કર્યા પછી સિદ્ધિપદ પામશે બુધ્ધ થશે, કર્મમળથી સર્વથા મુક્ત થશે, તથા સમસ્ત દુઃખોનો સર્વથા નાશ કરશે ॥સૂ ૩૫॥

पन्नरस मुहुत्तो दिवसो भवइ, एव चेत्ता सोएसु मासेसु पण्णरस वत्थू पण्णत्ता । मणूसाण पणरसविहे पओगे पण्णत्ते, त जहा—सच्च-मणपओगे मोसमणपओगे सच्चमोसमणपओगे असच्चामोसमणपओगे सच्चवइपओगे मोसवइपओगे सच्चमोसवइपओगे असच्चामोसवइपओगे ओरालियसरीरकायपओगे ओरालियमीससरीरकायपओगे वेउव्वियसरीरकायपओगे वेउव्वियमीससरीरकायपओगे आहारयससरीरकाय पओगे आहारयमीससरीरकायपओगे कम्मयसरीरकायप्पओगे ॥सू ३६॥

टीका—'पन्नरस' इत्यादि । 'परमाहम्मिया' परमाधार्मिक'=परमाश्च तेऽधार्मिकाश्च परमाधार्मिका संक्लिष्टपरिमाणयन्तोऽसुरविशेषाः प्रथमामारभ्य तिसृषु पृथिवीषु नारककदर्थनशीला पञ्चदशसंख्यका प्रज्ञप्ता तद्यथा=अम्बोऽम्बरिषी चैव श्याम शबल इति चापर । रुद्रोपरुद्रकालाश्च महाकाल इति चापरः ॥१॥ असिपत्रो धनु कुम्भो वालु वैतरणीति च । खरस्वरो महाघोष एते पञ्चद शाख्याता ॥२। तत्र—अम्ब =अम्बनामा परमाधार्मिका, यो हि नारकान् गग

अब सूत्रकार पन्द्रहवाँ संख्याविशिष्ट समवाय को कहते हैं—'पन्नरस' इत्यादि।

टीकार्थ—पन्द्रह परमाधार्मिक देव होते हैं। ये परमाधार्मिक देव सदा संक्लिष्टपरिणामों से युक्त रहते हैं। तथा प्रथम नरक से लेकर तीसरे नरक तक के नारकियों को ये परस्पर में लडाते रहते हैं। ये पन्द्रह ये हैं—अम्ब१ अम्बरीप२, श्याम३, शबल४, रुद्र५ उपरुद्र६, काल७, महाकाल८, असिपत्र९, धन१० कुम्भ ११ वालु१२, वैतरिणी१३, खरस्वर१४, और महाघोष१५ इनमें जो प्रथम अम्ब नाम का असुर है वह नारकियों का

હવે સૂત્રકાર પદર સખ્યાવાળા સમવાયનુ વર્ણન કરે છે—पन्नरस इत्यादि ।

ટીકાર્થ—પદર પરમાધામિક દેવો હોય છે તે પરમાધામિક દેવા નદ સકિલષ્ટ પરિણામો વાળા હોય છે તેઓ પહેલી નરકથી લઈને ત્રીજી નરક સુધીના નારકીઓને પરસ્પર લડાવ્યા કરે છે તે પદરનાં નામ નીચે પ્રમાણે છે—(૧) અમ્બ (૨) અમ્બરીષ (૩) શ્યામ, (૪) શબલ, (૫) રુદ્ર (૬) ઉપરુદ્ર (૭) કાળ (૮) મહાકાળ (૯) અસિપત્ર, (૧૦) ધનુ (૧૧) કુમ્ભ, (૧૨) વાલુ (૧૩ વૈતરિણી, (૧૪) ખરસ્વર અને (૧૫) મહાઘોષ તેમનામાં પહેલો જે અમ્બ નામના અસુર છે તે નારકીઓને આકાશમાં લઈ જઈને ત્યાંથી નીચે પછાડે

नतलं नीत्वाऽधस्ताद्विमुञ्चति, दत्त्वा च गलहस्तं गर्ते पातयति, अधोमुखमम्बरतले समुत्क्षिप्य पुनः पुनः पतन्तं शूलादिना विध्यति पापं संस्मार्य चानेकधा भूयः कदर्थयति ॥१॥ 'अम्बरीषी' नारकान् मुद्गरादिना कुट्टयित्वा क्रकचादिभिः खण्डशः कृत्वा भ्राष्ट्रादौ पचति, हताऽऽहततया मूर्च्छितांश्च तान् रम्भास्तम्भवच्चर्मणामेकैकं पुटमुत्पाटयोत्पाटय कदर्थयति ॥२॥ 'श्यामः, कशाघातादिना शातयति, हस्तपादादीन् दुर्दशतया छिनत्ति, शूलसूच्यादिना विध्यति, उपरितोवज्रशिलोपरि पोथ (पात) यति, तथा रज्ज्वादिना दृढं बध्वा लतादि-

गगनतल में ले जाकर वहां से नीचे पटकता है और गला पकड कर फिर उन्हें खड्डे में डाल देता है। नारकी जीव ऊपर से नीचे मुख करके गिरने लगता है-तब वह उसे बीच ही में झेल कर शूलादि द्वारा छेद डालता है और पूर्वकृतपाप को याद दिलाकर उसे विविध प्रकार के कष्ट देता है १। दूसरा जो अम्बरीष नामका असुर है वह नारकियों को मुद्गर आदि से कूट कर एव करोंत आदि से खंड खंड कर उन्हें भाडमें पकाता है। इस तरह हताहत हो जाने के कारण मूर्च्छित हुआ उन नारकियों के चमडे के एकएक पुट को केले के स्तंभ समान फाड २ कर-उखाड २ कर वह उन्हें बहुत कष्ट देता है २। तीसरा जो श्याम नाम का परमाधार्मिक असुर कशाओं के आघात आदि से नारकियो को खूब पीटता है। उनके हस्त पाद आदि अवयवों को बुरी तरह से काट डालता है। शूली के अग्रभाग से उन्हे छेद देता है। ऊपर से उन्हें वज्रशिला के ऊपर पटक देता है तथा रस्सी आदि से उन्हें खूब मजबूत बाधकर लतादि

છે અને ગળુ પકડીને તેમને ખાડામા નાખી દે છે નારકી જીવ જ્યારે ઉપરથી ઊંધે માથે નીચે પડવા માડે છે ત્યારે તે તેને વચ્ચેથી જ પકડીને શૂલાદિ દ્વારા છેદી નાખે છે અને પૂર્વકૃત પાપોને યાદ કરાવીને તેને અનેક પ્રકારે કષ્ટ આપે છે. ।૧। બીજો જે 'અમ્બરીષ' નામનો અસુર છે તે નારકીઓને મગદળ આદિ વડે મારે છે અને કરવત આદિથી તેમના ટુકડે ટુકડા કરીને તેને ભઠ્ઠીમા પકાવે છે. આવી રીતે ટુકડે ટુકડા થવાને કારણ મૂર્ચ્છિત થયેલ નારકીઓની ચામડીના એક એક પુટને કેળના સ્તભની જેમ ફાડી ફાડીને તથા ઉપાડી ઉપાડીને તે તેમને ઘણુ જ કષ્ટ આપે છે (૨) ત્રીજો 'શ્યામ' નામનો પરમાધાર્મિક અસુર છે તે ચાબુક વડે નારકીઓને ખૂબ મારે છે તેમના હાથ, પગ આદિ અંગોને ખરાબ રીતે કાપી નાખે છે શૂળની અણિથી તેને વીંધી નાખે છે તેને ઉપરથી વજ્ર શિલા ઉપર પટકે છે તથા તેમને દોરડા આદિથી બાધીને લાત આદિના પ્રહારથી વધારેમા વધારે

महारपुरम्परं भीषणयातनां नयति, अस्य श्यामाङ्गत्वाच्छ्यामो नाम ॥३॥ शबलः= वर्णेन कर्बुरः अयमपर परमाधार्मिकः, अयं हि मुद्गरादिना नारकियामस्थि सन्धिं चूर्णयति, अन्त्रवसादीन्निष्कासयति ॥४॥ रौद्रा रुद्रकर्मकरत्वाद्रौद्रोऽय नारकान भ्रामयित्वा भ्रामयित्वा गगने मुद्गरमुत्क्षिप्य निपततस्तान्खड्गशक्तितोमरा ग्रेषु प्रोतयति ॥ उपरौद्र =रौद्रकल्पः, एष च करचरणाङ्गोपाङ्गानि भनक्ति ॥६॥ काल स यो नारकान नानाविधासु कुम्भीषु पचति। अयं च वर्णतोऽपि काल एव ॥७॥ महाकालः इति चापरः परमाधार्मिक अयं पूर्वस्मिन् जन्मनि मांसा

के प्रहारों से अधिक से अधिक भयंकर कष्ट पहुँचाता है। इस असुर का शरीर काला होता है इसलिये इसका नाम श्याम है ३। चौथा शबल नामका परमाधार्मिक असुर वर्ण से कर्बुर होता है। यह मुद्गर आदि से नारकियों की अस्थि(हड्डि)संधियों को चूर २ कर देता है। उनकी आँतें और चर्बी-चर्बी आदि का निकाल लेता है४। पांचवां रुद्र नामका परमाधार्मिक असुर जैसा उसका नाम है वैसा ही उस का काम है। यह नारकियों का घुमा २ कर आकाश में बहुत दूरतक उन्हें फेंकता है। जब वे नीचे गिरने लगते हैं तो उन्हें शक्ति, असि और तोमर आदि पर बीच ही में झेल लेता है। इस तरह वे उनमें भिद जाते हैं५। छट्ठा उपरौद्र नामका जो परमाधार्मिक असुर है वह नारकियों के कर, चरण आदि अंग उपांगों को फाड देता है-चीर देता है६। सातवां काल नाम का परमाधार्मिक असुर नारकियों को नाना प्रकार की कुंभियों कुण्डों में पकाता है। यह असुर रूप रंग में काला होता है७। आठवां महाकाल नामका

पहोंचाडे छे ते असुरनुं शरीर काळुं होय छे, तेथी तेने 'श्याम' कहे छे (३) चोथो 'शबल' नामनो परमाधार्मिक असुर रंगे कबरो होय छे ते मगदळ आदिथी नारकीओनां हाडकांना चूरे चूरा करी नाखे छे तेमनां आंतरडां तथा चरबी आदि बहार काढी ले छे. (४) पांचमो रुद्र नामनो परमाधार्मिक असुर छे जेवुं तेनुं नाम भयंकर छे तेवुं ज भयंकर तेनुं काम छे. ते नारकीओने चक्कर चक्कर घुमावीने आकाशमां घणे ज दूर दूर फेंके छे अने ज्यारे तेओ नीचे पडतां होय छे त्यारे ते तेमने शक्ति तलवार, तोमर आदि अस्त्रिहार शस्त्रो पर झीली ले छे, आ रीते पडवाथी तेओ तेमां वींधाइ जाय छे (५) छठ्ठो जे उपरौद्र नामनो परमाधार्मिक असुर छे ते नारकीओना हाथ पग, आदि अंगोने फाडी नाखे छे, (६) सातमो जे 'काल' नामनो परमाधार्मिक असुर छे ते नारकीओने विविध प्रकारनी कुंभियो तथा कुंडोमां पकावे छे ते असुर रूपे तथा रंगे काळो होय छे

हारिणो नारकास्तदीयोत्कर्तित पृष्ठादिस्थं मांसं कदर्थनया भक्षयति, वर्णेन च महाश्यामत्वान्महाकाल उच्यते ॥८॥ असिपत्रः स देवो योऽसि (तरवारि)-तुल्यपत्राणां वनं विरचय्य तच्छायाभिलाषेण समागतान्नारकिणो विकृतवाता न्दोलनपूर्वकमसिपत्रपातनेन खण्डश-श्छिनत्ति 'असिपत्र' इत्यत्र अर्श आदित्वादच् ॥९॥ धनुः स यो धनुषो विनिर्मुक्तैरर्द्धचन्द्राकारैर्बाणैः कर्णौष्ठनासादीन् अवयवान् नारकिणा छिनत्ति ॥१०॥ कुम्भः विविधासु उष्ट्रिकाकाराधासु कुम्भीषु नारकिणो भृश पचति हन्ति च ११ वालु भ्राष्ट्रस्थ तप्तवज्रवालुकासु नारकान् स तडत्कारं चणकादीनिव भर्जयति। वैतरणी=नरकस्थनदी, तदधिष्ठातृत्वेन तद् देवोऽपि गृहादार

परमाधार्मिक असुर, पूर्वजन्म में जीवों ने मांस का भक्षण किया है उन नारकियों को उन्हीं के पृष्ठादि के मांस को काट २ कर खिलाता है। वर्ण में यह अत्यंत काला होता है इसलिये इसका नाम महाकाल है८. नववां असिपत्र नामक परमाधार्मिक असुर वे देव हैं जो असि के जैसे पत्रों का वन अपनी विक्रिया से रच कर उसकी छाया सेवन की अभिलाषा से आये हुये नारकियों के शरीर के विकृत वातान्दोलन (हवा चलाकर) पूर्वक असिपत्र के पात से खंड २ कर देता है९। दसवां धनुजाति का परमाधार्मिक वह असुर हैं जो धनुष से विनिर्मुक्त अर्धचंद्राकार वाणों से नारकियों के कान ओष्ठ आदि अवयवों को छेदता है१०। ग्यारहवां कुम्भ जाति का परमाधार्मिक असुर वह है जो उष्ट्राकारवाली कुम्भियों में नारकियों को बुरी तरह पकाता है और मारता भी हैं११। बारहवां वालु नामका परमाधार्मिक असुर भाड की संतप्त वज्र वालुका में नारकियों को भुंजते समय फड २ करते हुए चनों की तरह भुजता है१२। तेरहवां वैतरिणी

(૭) આઠમો 'महाकाल' નામનો જે પરમાધાર્મિક અસુર છે તે પૂર્વજન્મમાં જે જીવોએ માંસ આદિનું ભક્ષણ કર્યું હોય તે નારકીઓને તેમના જ પૃષ્ઠાદિ ભાગોનું માંસ કાપી કાપીને ખવરાવે છે તે રંગે અતિશય કાળો હોવાથી તેનું નામ મહાકાલ' છે (૮) નવમો 'असिपत्र' નામનો પરમાધાર્મિક અસુર છે તે એવો છે કે જે પોતાની વૈક્રિય શક્તિથી તલવાર જેવા પાન વાળા વન બનાવે છે, અને તેની છાયાનું સેવન કરવાની ઇચ્છાથી તેની નીચે આવેલ નારકીઓના શરીરના વિકૃત વાતાન્દોલન પૂર્વક [પવનનું તોફાન ઉત્પન્ન કરીને] અસિપત્રોને નીચે પાડીને ટુકડે ટુકડા કરી નાખે છે (૯). દસમો 'धनु' નામનો પરમાધાર્મિક અસુર ધનુષ્યમાંથી છોડેલા અર્ધચંદ્રાકાર બાણોથી નારકીઓના હોઠ, કાન આદિ અવયવોનું છેદન કરે છે (૧૦) અગિયારમો 'कुम्भ' જાતિનો પરમાધાર્મિક અસુર ઉષ્ટ્રાકારની કુંભિયોમાં નારકીઓને ખરાબ રીતે પકાવે છે તથા મારે છે (૧૧) બારમો 'वालु' નામનો પરમાધાર્મિક અસુર ભઠીમાં ગરમ કરેલ વજ્રની રેતીમાં નારકીઓને, શેકતી વખતે ફડ ફડ કરતા ચણાની માફક સેકે છે

त्रीणि शतानि उच्चत्वेन चमरराजस्य नगर्याः प्राकारप्रमाणं सद्पेक्षयाऽधिकमेवेति सार्धशतम्-तथा सौधर्मवैमानिकानाम्-मूलप्रासादः-पञ्च योजनानां शतानि तदन्ये चत्वारस्तत्परिवारभूताः सार्धे द्वे शते प्रत्येकं च तेषां चतुर्णामपि अन्ये परिवारभूताश्चत्वारः सपादं शतम् एवमन्ये तत्परिवारभूताः सार्धाद्विषष्टिः एवमन्ये सपादैकत्रिंशत्, इह तु चमरचञ्चाराजधान्यां मूलप्रासादः सार्धे द्वे योजनशते। एवमेवाऽर्धार्धहीनास्तदपरे सर्वेभवन्ति यावदन्तिमाः पञ्चदशयोजनानि पञ्च च भागा योज-

तथा सौधर्म देवों का मूल महल पांचसौ योजन का ऊँचा है तथा इस प्रासादके परिवार रूप चार और महल हैं सो इनकी ऊँचाई दो सौ पचास २५० योजन की है। तथा इन चार महलों में से प्रत्येक महल के आस पास दूसरे और चार चार इनके परिवाररूप महल हैं, उनकी ऊँचाई एकसौ पचीस १२५ योजन की है। इसी तरह इन चार २ महलों के परिवार भूत और भी चार २ महल हैं इनकी ऊँचाई साढे बासठ साढे बासठ ६२॥-६२॥ योजन की है। इसी तरह इन महलों के भी और चार चार परिवार महल हैं इनकी ऊँचाई प्रत्येक की सवा इगतीस सवा इगतीस ३१।-३१। योजन की है। परन्तु यहां चमरचंचा राजधानी में मूलमहल की ऊचाई दो सौ पचास २५० योजन की है। और इस मूलप्रासाद के आस पास के और जितने महल-प्रासाद हैं उसकी ऊँचाई मूल महल की अपेक्षा आधी २ होती गई है। इस तरह अन्तिम महल की ऊचाई पन्द्रह १५ योजन और एक योजन के अठिया पांच भाग अर्थात् आठ भागों में से पांच भाग है। इसी तरह बात को वाचना

યોજન ઊંચો છે તે મહેલના પરિવાર રૂપ બીજા જે ચાર મહેલ છે તેમની ઊંચાઈ ૨૫૦-૨૫૦ અઢિસો અઢિસો યોજનની છે તે ચાર મહેલમાંના પ્રત્યેક મહેલની આસપાસ તેમના પરિવાર રૂપ ચાર ચાર મહેલ છે તે દરેકની ઊંચાઈ ૧૨૫-૧૨૫ સવાસો સવાસો યોજનની છે વળી તે ચાર મહેલમાંના પ્રત્યેકના પરિવાર રૂપ ચાર ચાર મહેલ છે તે દરેકની ઊંચાઈ ૬૨॥-૬૨॥ સાડીબાસઠ સાડીબાસઠ યોજનની છે વળી તે ચાર મહેલોમાંના પ્રત્યેકના પરિવારરૂપ બીજા ચારચાર મહેલ છે તે દરેકની ઊંચાઈ ૩૧।-૩૧। સવા એકત્રીસ સવા એકત્રીસ યોજનની છે ચમરચંચા રાજધાનીમાં મહેલોનું માપ ઉપર દર્શાવેલા સૌધર્મ દેવલોકના મહેલો કરતાં અર્ધું છે એટલે કે ચમરચંચા રાજધાનીના મુખ્ય મહેલની ઊંચાઈ ૨૫૦ અઢિસો યોજન છે અને તે મુખ્ય મહેલની આસપાસના બીજા જેટલા પ્રાસાદ (મહેલો) છે તે દરેકની ઊંચાઈ મુખ્ય પ્રાસાદ કરતાં અર્ધી અર્ધી થતી જાય છે આ રીતે છેલ્લા ચાર પ્રસાદોની ઊંચાઈ ૧૫૫/૮ યોજનની છે એજ વાત સૂત્રકારે નીચેના સૂત્ર દ્વારા પ્રકટ કરી છે-(चत्तारि परिवाडीओ

नस्याऽष्टसु भागेषु, उक्तञ्च-' चत्तारिपरिवाडीओ, पासायवडिंसगाणं अद्धद्धहीणाओ ' चतस्रः परिपाटयः प्रासादावतंसकानामर्द्धार्द्धहीना इतिच्छाया । एतेषां च प्रासादादीनां चतस्रोऽपि परिपाटयः त्रीणि शतानि एक चत्वारिंशदधिकानि भवन्ति। एतेभ्यः प्रासादादिभ्य उत्तरपूर्वस्यामीशानकोणे सुधर्मा सभा भवतीति तदेव दर्शयति 'सभासुहम्मा ' इति ईशानकोणे सुधर्मानाम्नी सभा भवति असुरेन्द्रस्य चमरराजस्येति इतिभगवत उत्तरम् ॥ सू-१ ॥

इति श्री-जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्य श्री घासीलाल व्रतिविरचितायां प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां द्वितीय शतकस्य अष्टमोद्देशकः समाप्तः ॥ २-८ ॥

न्तर में (चत्तारि परिवाडिओ पासायवडिंसगाणं अद्धद्धहीणाओ त्ति) इस पाठ द्वारा कहा गया है, अर्थात्-प्रासादावतंसकों की अर्धार्धहीन चार परिपाटी-पंक्तियां हैं। इन प्रासादावतंसकों की चारों भी परिपाटियों में कुल तीनसौ इगतालीस प्रासाद हैं। इन प्रासादों के ईशानकोने में असुरेन्द्र चमरराजकी (सभा सुहम्मा) सुधर्मा सभा है। इस प्रकार भगवान् ने गौतम को उत्तर दिया ॥ सू०१ ॥

जैनाचार्य श्री घासीलालजी महाराजा कृत "भगवतीसूत्र" की प्रियदर्शिनी व्याख्याके द्वितीय शतकके आठवां उद्देशा समाप्त ॥२-८॥

पासायवडिंसगाण अद्धद्धहीणा ओत्ति) પ્રાસાદાવતંસકોની—ઉત્તમ પ્રાસાદોની અર્ધાર્ધ હીન ચાર પરિપાટી-પંક્તિયો છે એટલે કે મુખ્ય પ્રાસાદનીઆસપાસ પહેલી ચાર પ્રાસાદની પંક્તિ છે જેના દરેક પ્રાસાદની ઊંચાઈ ૧૨૫સવાસો ચોજનની છે. તે ચાર પ્રાસાદની આસપાસ ૬૨ાા-૬૨ાા સાડીબાસઠ સાડીબાસઠ ચોજનની ઊંચાઇના ચાર ચાર પ્રાસાદોની બીજી પંક્તિ છે, વળી આ બીજી પંક્તિના પ્રત્યેક પ્રાસાદની આસપાસ ૩૧ા-૩૧ા સવા એકત્રીસ સવા એકત્રીસ ચોજનની ઊંચાઈ વાળા ચાર ચાર પ્રાસાદોની ત્રીજી પંક્તિ આવે છે. પછી આ ત્રીજી પંકતીના પ્રત્યેક પ્રાસાદની આસપાસ ૧૫૫/૮-૧૫૫/૮ ચોજનની ઊંચાઈ વાળા ચાર ચાર પ્રાસાદોની ચોથી પંક્તિ આવે છે તે પ્રાસાદાવતંસકોની ચારે પંક્તિયોમાં એકંદરે ૩૪૧ ત્રણુસો એકતાલીસ પ્રાસાદો છે (મુખ્ય ૧×૪+૧૬+૬૪×૨૫૬) એ પ્રાસાદોના ઇશાનકોણુમા અસુરેન્દ્ર ચમરરાજની (सभा सुहम्मा) સુધર્મા સભા આવેલી છે. ભગવાને ગૌતમસ્વામીને ઉપર મુજબ જવાબ દીધો.ાસૂ ૧ા

જૈનાચાર્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ કૃત "ભગવતીસૂત્ર" ની પ્રિયદર્શિની વ્યાખ્યાના બીજા શતકને આઠમો ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥ ૨-૮ ॥

॥ अथ नवमोद्देशकः प्रारभ्यते ॥

नवमोद्देशकस्य संक्षिप्तविषयविवरणम् ॥ कस्य समयक्षेत्रमिति नाम भवतीति प्रश्नः सार्धद्वीपद्वयम् द्वौ समुद्रौ च समयक्षेत्रमित्युच्यते इति उत्तरम्, जीवाभिगमसूत्रोद्धरणं चेति ॥

अष्टमोद्देशके चमरचंचानामकं क्षेत्रम् सुधर्मासभादिकमुक्तम् अथ क्षेत्राधिकारात् नवम उद्देशके समयक्षेत्रम् कथ्यते 'किमिदं भंते ।' इत्यादि ।

मूलम्—किमिदं भंते! समय खेत्तेत्ति पवुच्चइ गोयमा! अड्ढाइज्जादीवा दोयसमुद्दा एसणं एवइए समयखेत्तेत्ति पवुच्चइ तत्थ णं अयं जंबूदीवे दीवे सव्वदीवसमुद्दाणं सव्वब्भंतरे एवं जीवाभिगमवत्तव्वया नेयव्वा जाव अब्भिंतर पुक्खरद्धं जोइस विहूणं ॥ सू-१ ॥

छाया—किमिदं भदन्त! समयक्षेत्रमिति प्रोच्यते? गौतम! अर्धतृतीयद्वीपाः

द्वितीयशतक का नवम उद्देशा प्रारंभ—

इस नवम उद्देशक का संक्षेप से विषय विवरण इस प्रकार से है— समयक्षेत्र यह किसका नाम है ऐसा प्रश्न, अढाई द्वीप और दो समुद्र यह समयक्षेत्र है ऐसा उत्तर, जीवाभिगमसूत्र का उद्धरण।

अष्टम उद्देशक में चमरचंचा नामक राजधानी और सुधर्मा सभा आदि विषय कहा गया है सो क्षेत्र के अधिकार को लेकर इस नवम उद्देशक में समय क्षेत्र का वर्णन कहा जाता है (किमिदं भंते) इत्यादि

सूत्रार्थ—(किमिदं भंते! समयखेत्तेत्ति पवुच्चइ) हे भदन्त! स-

બીજા શતકના નવમા ઉદ્દેશકનો પ્રારંભ—

બીજા શતકના નવમા ઉદ્દેશકનું સંક્ષિપ્ત વર્ણન નીચે પ્રમાણે છે- સમયક્ષેત્ર કોને કહે છે? ઉત્તર અઢી દ્વીપ અને બે સમુદ્રોને સમયક્ષેત્ર કહે છે આ વિષયમાં જીવાભિગમ સૂત્રનો ઉલ્લેખ

આઠમા ઉદ્દેશકમાં ચમરચંચા નામની રાજધાની તથા ચમરેન્દ્રની સુધર્મા સભા આદિ વિષયોનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે. ક્ષેત્રના અધિકારની અપેક્ષાએ આ નવમા ઉદ્દેશકમાં સમયક્ષેત્રનું વર્ણન કરવામાં આવે છે

(કિમિદં ભંતે !)

સૂત્રાર્થ—(કિમિદં ભંતે ! સમયખેત્તેત્તિ પવુચ્ચઇ ?) હે ભદન્ત ! કયા

नस्याऽष्टसु भागेषु, उक्तञ्च-' चत्तारिपरिवाडीओ, पासायवडिंसगाणं अद्धद्धहीणाओ ' चतस्रः परिपाटयः प्रासादावतंसकानामर्द्धार्द्धहीना इतिच्छाया। एतेषां च प्रासादादीनां चतस्रोऽपि परिपाटयः त्रीणि शतानि एक चत्वारिंशदधिकानि भवन्ति। एतेभ्यः प्रासादादिभ्य उत्तरपूर्वस्यामीशानकोणे सुधर्मा सभा भवतीति तदेव दर्शयति 'सभासुहम्मा ' इति ईशानकोणे सुधर्मानाम्नी सभा भवति असुरेन्द्रस्य चमरराजस्येति इतिभगवत उत्तरम् ॥ सू-१ ॥

इति श्री-जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्य श्री घासीलाल व्रतिविरचितायां प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां द्वितीय शतकस्य अष्टमोद्देशकः समाप्तः ॥ २-८ ॥

न्तर में (चत्तारि परिवाडिओ पासायवडिसगाणं अद्धद्धहीणाओ त्ति) इस पाठ द्वारा कहा गया है, अर्थात्-प्रासादावतंसकों की अर्धार्धहीन चार परिपाटी-पंक्तियां हैं। इन प्रासादावतंसकों की चारों भी परिपाटियों में कुल तीनसौ इगतालीस प्रासाद हैं। इन प्रासादों के ईशानकोने में असुरेन्द्र चमरराजकी (सभा सुहम्मा) सुधर्मा सभा है। इस प्रकार भगवान् ने गौतम को उत्तर दिया ॥ सू०१ ॥

जैनाचार्य श्री घासीलालजी महाराजा कृत "भगवतीसूत्र" की प्रियदर्शिनी व्याख्याके द्वितीय शतकके आठवां उद्देशा समाप्त ॥२-८॥

पासायवडिंसगाण अद्धद्धहीणा ओत्ति) પ્રાસાદાવતંસકોની—ઉત્તમ પ્રાસાદોની અર્ધોર્ધ હીન ચાર પરિપાટી-પંક્તિયો છે એટલે કે મુખ્ય પ્રાસાદનીઆસપાસ પહેલી ચાર પ્રાસાદની પંક્તિ છે જેના દરેક પ્રાસાદની ઊંચાઈ૧૨૫સવાસો યોજનની છે. તે ચાર પ્રાસાદની આસપાસ ૬૨ાા-૬૨ાા સાડીબાસઠ સાડીબાસઠ યોજનની ઊંચાઇના ચાર ચાર પ્રાસાદોની બીજી પંક્તિ છે, વળી આ બીજી પંક્તિના પ્રત્યેક પ્રાસાદની આસપાસ ૩૧ા-૩૧ા સવા એકત્રીસ સવા એકત્રીસ યોજનની ઊંચાઈ વાળા ચાર ચાર પ્રાસાદોની ત્રીજી પંક્તિ આવે છે. પછી આ ત્રીજી પંકતીના પ્રત્યેક પ્રાસાદની આસપાસ ૧૫૫/૮-૧૫૫/૮ યોજનની ઊંચાઈ વાળા ચાર ચાર પ્રાસાદોની ચોથી પંક્તિ આવે છે તે પ્રાસાદાવતંસકોની ચારે પંક્તિયોમાં એકંદરે ૩૪૧ ત્રણસો એકતાલીસ પ્રાસાદો છે (મુખ્ય ૧ × ૪ + ૧૬ + ૬૪ × ૨૫૬) એ પ્રાસાદોના ઇશાનકોણમા અસુરેન્દ્ર ચમરરાજની (सभा सुहम्मा) સુધર્મા સભા આવેલી છે. ભગવાને ગૌતમસ્વામીને ઉપર મુજબ જવાબ દીધો.॥સૂ ૧॥

જૈનાચાર્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ કૃત " ભગવતીસૂત્ર " ની પ્રિયદર્શિની વ્યાખ્યાના બીજા શતકનો આઠમો ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥ ૨-૮ ॥

'अड्ढाइज्जादीवा' अर्धतृतीयौ द्वीपौ अर्धमधिकं तृतीयं यत्र तादृशौ यद्वा तृतीयस्यार्धभागेन युक्तौ द्वौ द्वीपौ इति तथा अर्धतृतीयौ द्वीपौ इति कथ्यते 'दो य समुद्दा' द्वौ च समुद्रौ 'एसणं एवइए समयखेत्तेत्ति पवुच्चइ' एतत् खलु एतावत् समयक्षेत्रमिति प्रोच्यते 'तत्थ णं' तत्र खलु तत्र सार्द्धद्वीपद्वयसमुद्रस्य मध्ये 'अयं जंबूद्दीवेदीवे' अयं जंबूद्वीपनामको द्वीपः 'सव्वदीवसमुद्दाणं सव्वब्भंतरे' सर्वद्वीपसर्वसमुद्राणामभ्यन्तरे तिष्ठतीति शेषः, 'समयखेत्तेत्ति' समयक्षेत्रमिति तत्र समयः कालः कालेनातीताऽनागतवर्तमानलक्षणेनोपलक्षितं यत् सम

प्रभु उनसे कहते हैं कि (गोयमा) हे गौतम! (अड्ढाइज्जा दीवा) अढाई द्वीप और (दो य समुद्दा) दो समुद्र (एस णं एवइए समयखेत्तेत्ति पवुच्चइ) इतना यह समय क्षेत्र कहा गया है। इस प्रकार के कथन से जंबूद्वीप धातकीखंड और आधा पुष्कर वर द्वीप इतना क्षेत्र समयक्षेत्र है तथा इसमें जो लवणसमुद्र और कालोदधि समुद्र ये जो दो समुद्र हैं यह सब समयक्षेत्र कहा गया है। समय शब्द का अर्थ काल है और इस काल से उपलक्षित जो क्षेत्र है वह समयक्षेत्र है। इसे टीकाकार स्वयं आगे स्पष्ट कर रहे हैं (तत्थ णं) वहां ढाईद्वीप और दो समुद्र के बीच में (अयं जंबूदीवे दीवे) जो जम्बूद्वीप नामका पहिला द्वीप है वह (सव्वदीवसमुद्दाणं सव्वब्भंतरे) समस्त द्वीप और समुद्रों के ठीक बीचों बीच है। समयक्षेत्र का तात्पर्य क्या है? सो इसे टीकाकार स्पष्ट करते हैं—समय नाम काल का है इसके अतीत, अनागत, और वर्तमान ऐसे तीन भेद हैं इन

મહાવીર સ્વામી તે પ્રશ્નનો આ પ્રમાણે જવાબ આપે છે-(ગોયમા!) હે ગૌતમ! (અડ્ઢાઇજ્જાદીવા) અઢી દ્વીપ અને (દો ય સમુદ્દા) બે સમુદ્રોને (એસણં એવઇએ સમયખેત્તે ત્તિ પવુચ્ચઇ) સમયક્ષેત્ર કહે છે એટલે કે જંબૂદ્વીપ, ધાતકીખંડ અને અર્ધો પુષ્કરદ્વીપ, એ અઢી દ્વીપને તથા લવણસમુદ્ર અને કાલોદધિ સમુદ્ર એ બે સમુદ્રોને સમયક્ષેત્ર કહે છે સમય એટલે કાળ તે કાળથી ઉપલક્ષિત જે ક્ષેત્ર તેનું નામ સમયક્ષેત્ર છે સૂત્રકાર પોતે જ આગળ તેનું સ્પષ્ટીકરણ કરે છે-(તત્થણં) ત્યાં અઢી દ્વીપ અને બે સમુદ્રોની વચ્ચે (અયં જંબુદ્દીવે દીવે) જે જંબૂદ્વીપ નામનો પહેલો દ્વીપ છે તે (સવ્વદીવસમુદ્દાણં સવ્વબ્ભંતરે) સમસ્ત દ્વીપો અને સમુદ્રની બરાબર વચ્ચે છે સમયક્ષેત્ર એટલે શું ટીકાકાર તેનું સ્પષ્ટીકરણ નીચે પ્રમાણે કરે છે-સમય એટલે કાળ. તેના ત્રણ ભેદ છે-ભૂતકાળ, ભવિષ્યકાળ અને વર્તમાનકાળ તે

द्वौ च समुद्रौ एतत् खलु एतावत् समयक्षेत्रमिति प्रोच्यते तत्रायं जंबूद्वीपो द्वीपः सर्वद्वीपसमुद्राणां सर्वाभ्यन्तरे एव जीवाभिगमवक्तव्यता ज्ञातव्या यावदभ्यन्तरं पुष्कराद्धम् ज्योतिपिकविहीनम् ॥ सू–१ ॥

टीका—'किमिदं भंते ! समयक्खेत्तेत्ति पवुच्चइ' किमिदं भदन्त ! समयक्षेत्रमिति प्रोच्यते ? हे भगवन् ! कस्य क्षेत्रस्य समयक्षेत्रमिति नाम भवतीति गौतमस्य प्रश्नः । भगवानाह–'गोयमा' इत्यादि 'गोयमा' हे गौतम ! 'अ-

मयक्षेत्र कौनसा क्षेत्र कहलाता है ? । (गोयमा !) हे गौतम ! (अड्ढाइज्जा दीवा दो य समुद्दा एसणं एवइए समयखेत्तेत्ति पवुच्चइ) अढाई द्वीप और दो समुद्र इसे समयक्षेत्र कहा गया है । (तत्थ णं अयं जंबूदीवे दीवे, सव्वदीवसमुद्दाणं सव्वब्भंतरे एवं जीवाभिगमवत्तव्वया नेयव्वा जाव अब्भितरं पुक्खरद्ध जोइसविहूणं) इसमें जो जंबूद्वीप नामका द्वीप है वह समस्त द्वीप और समुद्रों के ठीक बीच में है । इस तरह यहां समस्त कथन जीवाभिगमसूत्र के कथन की तरह जानना चाहिये । वहां का यह कथन यहां कहां तक लेना चाहिये ? तो इसके लिये कहा गया है कि आभ्यन्तर पुष्करार्धतक का लेना चाहिये उसमें भी ज्योतिपिक संबंधी कथन छोड देना चाहिये उसको यहां नहीं लेना चाहिये ।

टीकार्थ—(किमिदं भंते ! समयखेत्तेत्ति पवुच्चइ) हे भदन्त ! (समयक्षेत्र) यह किसको कहा गया है ? अर्थात् समयक्षेत्र यह किस क्षेत्र का नाम है ऐसा यह प्रश्न गौतम का है, इसका उत्तर देते हुए

ક્ષેત્રને સમયક્ષેત્ર કહે છે ! (गोयमा !) હે ગૌતમ ! (अड्ढाइज्जादीवा दो य समुद्दा एस ण एवइए समयखेत्ते त्ति पवुच्चइ) અઢી દ્વીપ અને બે સમુદ્રોને સમયક્ષેત્ર કહે છે (तत्थणं अय जंबुदीवे, दीवे सव्वदीवसमुद्दाण सव्वब्भंतरे एवं जीवाभिगमवत्तव्वया नेयव्वा जाव अब्भितरपुक्खरद्धजोइसविहूणं) તેમાં જંબૂદ્વીપ નામનો દ્વીપ છે તે સમસ્ત દ્વીપ અને સમુદ્રોની બરાબર વચ્ચો વચ્ચ છે આ પ્રમાણે સમસ્ત કથન જીવાભિગમ સૂત્રના કથન પ્રમાણેજ અહીં ગ્રહણ કરવાનું છે કયા સુધી તે કથન ગ્રહણ કરવુ ! તો સૂત્રકાર કહે છે કે "અભ્યન્તર પુષ્કરાર્ધ પર્યન્ત તે કથન ગ્રહણ કરવુ જોઇએ. પરંતુ તેમા જ્યોતિષિકના વિષયમા જે કથન આવે છે તે છોડી દેવું જોઇએ–તે સિવાયનુ સમસ્ત કથન ગ્રહણ કરવુ જોઇએ

ટીકાર્થ–ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને પૂછે છે–(किमिद भंते ! समयखेत्ते त्ति पवुच्चइ) હે ભદન્ત ! કયા ક્ષેત્રને સમયક્ષેત્ર કહે છે ! એટલે કે કયા ક્ષેત્રનું નામ સમયક્ષેત્ર છે !

द्धाइज्जादीवा' अर्धतृतीयौ द्वीपौ अर्धमधिक द्वितयं यत्र तादृशौ यद्वा तृतीयस्यार्धभागेन युक्तौ द्वौ द्वीपौ इति तथा अर्धतृतीयौ द्वीपौ इति कथ्यते 'दो य समुद्दा' द्वौ च समुद्रौ 'एसणं एवइए समयखेत्तेत्ति पवुच्चइ' एतत् खलु एतावत् समयक्षेत्रमिति प्रोच्यते 'तत्थ णं' तत्र खलु तत्र सार्धद्वीपद्वयसमुद्रस्य मध्ये 'अयं जंबूद्दीवेदीवे' अयं जम्बूद्वीपनामको द्वीपः 'सव्वदीवसमुद्दाण सव्वब्भंतरे' सर्वद्वीपसर्वसमुद्राणामभ्यन्तरं तिष्ठतीति शेषः, 'समयखेत्तेत्ति' समयक्षेत्रमिति तत्र समयः काल कालनातीतानागतवर्तमानलक्षणेनोपलक्षितं यत् सम

प्रभु उनसे कहते हैं कि (गोयमा) हे गौतम! (अड्ढाइज्जा दीवा) अढाई द्वीप और (दो य समुद्दा) दो समुद्र (एस णं एवइए समयखेत्तेत्ति पवुच्चइ) इतना यह समय क्षेत्र कहा गया है। इस प्रकार के कथन से जंबूद्वीप धातकीखंड और आधा पुष्कर वर द्वीप इतना क्षेत्र समयक्षेत्र है तथा इसमें जो लवणसमुद्र और कालोदधि समुद्र ये जो दो समुद्र हैं यह सब समयक्षेत्र कहा गया है। समय शब्द का अर्थ काल है और इस काल से उपलक्षित जो क्षेत्र है वह समयक्षेत्र है। इसे टीकाकार स्वयं आगे स्पष्ट कर रहे हैं (तत्थ णं) वहां ढाईद्वीप और दो समुद्र के बीच में (अयं जंबूदीवे दीवे) जो जंबूद्वीप नामका पहिला द्वीप है वह (सव्वदीवसमुद्दाण सव्वब्भंतरे) समस्त द्वीप और समुद्रों के ठीक बीचों बीच है। समयक्षेत्र का तात्पर्य क्या है? सो इसे टीकाकार स्पष्ट करते हैं—समय नाम काल का है इसके अतीत, अनागत, और वर्तमान ऐसे तीन भेद हैं इन

મહાવીર સ્વામી તે પ્રશ્નનો આ પ્રમાણે જવાબ આપે છે-(ગોયમા!) હે ગૌતમ! (अड्ढाइज्जादीवा) અઢી દ્વીપ અને (दो य समुद्दा) બે સમુદ્રોને (एसणं एवइए समयखेत्तेत्ति पवुच्चइ) સમયક્ષેત્ર કહે છે એટલે કે જબૂદ્વીપ, ધાતકીખંડ અને અર્ધો પુષ્કરદ્વીપ, એ અઢી દ્વીપને તથા લવણસમુદ્ર અને કાલોદધિ સમુદ્ર એ બે સમુદ્રોને સમયક્ષેત્ર કહે છે સમય એટલે કાળ તે કાળથી ઉપલક્ષિત જે ક્ષેત્ર તેનુ નામ સમયક્ષેત્ર છે સૂત્રકાર પોતે જ આગળ તેનુ સ્પષ્ટીકરણ કરે છે-(तत्थणं) ત્યાં અઢી દ્વીપ અને બે સમુદ્રોની વચ્ચે (अयं जंबुदीवे दीवे) જે જબૂદ્વીપ નામનો પહેલો દ્વીપ છે તે (सव्वदीवसमुद्दाण सव्वब्भंतरे) સમસ્ત દ્વીપો અને સમુદ્રની બરાબર વચ્ચે છે. સમયક્ષેત્ર એટલે શુ ટીકાકાર તેનુ સ્પષ્ટીકરણ નીચે પ્રમાણે કરે છે-સમય એટલે કાળ. તેના ત્રણ ભેદ છે-ભૂતકાળ, ભવિષ્યકાળ અને વર્તમાનકાળ તે

यक्षेत्रम् कालश्च समयक्षणाहोरात्र–मासपक्ष-ऋतुअयन संवत्सरादिरूपो दिनकरगत्य-भिव्यंग्यो मनुष्यक्षेत्रे एव भवति नान्यत्र–मनुष्यक्षेत्रादन्यत्र न सूर्यस्य सञ्चारो भवतीति अतो यावत्पर्यन्तं सूर्यस्य गतिस्तावदेव कालव्यवहारो जायते कालोपलक्षितत्वात् क्षेत्रं समयक्षेत्रमिति । 'एवं जीवाभिगम वत्तव्वया नेयव्वा' एवं जीवाभिगमवक्तव्यता नेतव्या (ज्ञातव्या) सर्वमत्र जीवाभिगमसूत्रप्रतिपादितदिशैव ज्ञातव्यमिति जीवाभिगमवक्तव्यता चैवम् 'एगं जोयण सयसहस्सं आयामविक्खंभेणं' इत्यादि एकं योजनशतसहस्रमायामविष्कंभेण इत्यादिकं सर्वमत्र विज्ञेयम् । कियत्पर्यन्तं जीवाभिगमवक्तव्यता ज्ञेया ? तत्राह–" जाव अब्भितरं

तीन भेदो से युक्त जो क्षेत्र हैं—वे समयक्षेत्र शब्द से व्यवहृत हुए हैं। समय, क्षण, अहोरात्र, मास, पक्ष, ऋतु, अयन, संवत्सर आदि रूप जो काल है कि जो सूर्यकी गति से जाना जाता है वह मनुष्यक्षेत्र में ही है दूसरे क्षेत्रों में नहीं है, क्यों कि मनुष्य क्षेत्र से अन्यत्र क्षेत्रों में सूर्य गति नहीं करते हैं। इसलिये जहांतक सूर्य की गति है वहीं तक काल का व्यवहार होता है। इसलिये इस काल से उपलक्षित क्षेत्र समय क्षेत्र है, ऐसा जानना चाहिये। (एवं जीवाभिगमवत्तव्वया नेयव्वा) इस तरह जीवाभिगम की वक्तव्यता कहनी चाहिये, अर्थात्–जीवाभिगम सूत्र में जिस प्रकार से यह विषय प्रतिपादन किया गया है उसी प्रकार से यहां पर यह विषय प्रतिपादित कर लेना चाहिये, जीवाभिगम कि वक्तव्यता इस प्रकार से है–(एगं जोयणसयसहस्सं आयामविक्खंभेणं) एकलाख योजन का आयाम और विष्कंभ है इत्यादि सब यहां जानना चाहिये, जीवाभिगमसूत्र की वक्तव्यता

ત્રણ ભેદોથી યુક્ત જે ક્ષેત્ર છે તે ક્ષેત્રને સમય ક્ષેત્ર કહે છે સમય, ક્ષણ, દિવસ–રાત્રિ, માસ, પક્ષ, ઋતુ, અયન, સવત્સર આદિ રૂપ જે કાળ છે; તે સૂર્યની ગતિથી જાણી શકાય છે અને તેનુ અસ્તિત્વ મનુષ્યક્ષેત્રોમાં જ છે–અન્યક્ષેત્રોમા નથી, કારણ કે મનુષ્યક્ષેત્ર સિવાયના ક્ષેત્રોમા સૂર્ય ગતિ કરતો નથી. તેથી જ્યા સુધી સૂર્યની ગતિ છે ત્યા સુધી કાળનો વ્યવહાર થાય છે. તેથી જ તે કાળથી ઉપલક્ષિત ક્ષેત્રને સમયક્ષેત્ર કહે છે

(एवं जीवाभिगमवत्तव्वया नेयव्वा) જીવાભિગમસૂત્રમા આ વિષયનુ જે વર્ણન કરવામા આવ્યુ છે તે અહીં ગ્રહણ કરવુ જોઇએ જીવાભિગમ સૂત્રમા આ પ્રમાણે વર્ણન કર્યું છે–(एग जोयणसयसहस्स आयामविक्खभेणं) એક લાખ યોજનની તેની લબાઇ અને પહોળાઇ છે " ઇત્યાદિ સમસ્ત કથન અહી લેવું જોઇએ. આ વિષયનુ પ્રતિપાદન કરવા માટે જીવાભિગમ સૂત્રમાથી કયા સુધી વર્ણન

लोकान्तयोः पूर्वापरभावो विद्यते न वेति प्रश्नाशय। भगवानाह-'रोहा लोयंते य अलोयते भाव अणाणुपुव्वी एसा रोहा' रोह! लोकान्तश्चालोकान्तश्च यावदनानुपूर्वी एषा रोह!, लोकान्तालोकान्तयोर्नास्ति पूर्वापरभावोऽपि तु पूर्वापर क्रमरहितावेतौ अलोकान्त पूर्व लोकान्तो वा पूर्वम्? लोकान्त पूर्वमलोकान्तो वा पूर्वमिति क्रमो नाऽस्तीति भाव। पुन पृच्छति रोह -'पुव्विं भंते लोयते पच्छा सत्तमे उवासंतरे पुच्छा' पूर्व भदन्त! लोकान्त' पश्चात् सप्तममवकाशान्तरम् पृच्छा, हे भदन्त! किम् पूर्व लोकान्त पश्चात्सप्तममवकाशान्तरमस्ति, अथवा पूर्वमवका शान्तरं पश्चाल्लोकान्तोऽस्तीति प्रश्नाशय। भगवानाह-' रोहे '-इत्यादि। 'रोहा' हे रोह! 'लोयंते य सत्तमेउवासंतरे य' लोकान्तश्च सप्तममवकाशान्तरं च 'पुव्विंपेते पच्छापेते' पूर्वमप्येते द्वे पश्चादप्येते द्वे 'दोवि एए' द्वावप्येतौ

बाद में अलोकान्त है, कि पहिले अलोकान्त है बाद में लोकान्त है? अर्थात् लोकान्त और अलोकान्त में पूर्वापरभाव मौजूद है या नहीं? इसका उत्तर देते हुए भगवान् कहते हैं कि (रोह! लोयंते य अलोयते य जाव अणाणुपुव्वी एसा रोहा) हे रोह! लोकान्त और अलोकान्त ये दोनों हैं यावत् इनमें आनुपूर्वी नहीं है। लोकान्त और अलोकान्त में पूर्वापरभाव नहीं है। पूर्वापरक्रम से ये दोनों रहित ही हैं। ऐसा नहीं कि पहिले लोकान्त है और बाद में अलोकान्त है, पहिले अलोकान्त है और बाद में लोकान्त है। रोह पुनः पूछते हैं कि-(पुव्विं भंते! लोयंते पच्छा सत्तमे उवासतरे? पुच्छा) हे भदन्त! पहिले लोकान्त है और बाद में सातवां अवकाशान्तर है, कि पहिले सातवां अवकाशान्तर है और बाद में लोकान्त है? भगवान् इसका उत्तर देते हुए कहते हैं कि- (रोहा! लोयंते य, सत्तमे उवासंतरे य, पुव्विं पेते पच्छा पते) हे रोह!

અલોયતે, પુવ્વિં અલોયતે પચ્છા લોયંતે?) હે ભગવન્! પહેલા લોકાન્ત છે અને પછી અલોકાન્ત છે કે પહેલા અલોકાન્ત છે અને પછી લોકાન્ત છે? એટલે કે લોકાન્ત અને અલોકાન્તમા પૂર્વાપર ભાવ મોજૂદ છે કે નહીં? ઉત્તર— (રોહ! લોયતે ય અલોયતે ય જાવ અણાણુપુવ્વી એસા રોહા!) હે રોહ! લોકાન્ત અને અલોકાન્ત બન્ને છે ત્યાંથી લઈને તેમનામા આનુપૂર્વી નથી ત્યાં સુધીનું તમામ કથન અહીં ગ્રહણ કરવું લોકાન્ત અને અલોકાન્તમા પૂર્વાપર ભાવ નથી. તે બન્ને પૂર્વાપરના ક્રમથી રહિત જ છે રોહ વળી નીચેનો પ્રશ્ન પૂછે છે-(પુવ્વિં ભંતે! લોયંતે પચ્છા સત્તમે ઉવાસંતરે? પુચ્છા) હે ભગવન્! પહેલુ લોકાન્ત અને ત્યાર બાદ સાતવું અવકાશાન્તર છે? કે પહેલુ સાતવું અવકાશાન્તર અને ત્યાર બાદ લોકાન્ત છે?

ઉત્તર (રોહા! લોયંતે ય સત્તમે ઉવાસંતરે ય પુવ્વિં પેતે પચ્છા પેતે) હે રોહ!

॥ अथ दशमोद्देशकः प्रारभ्यते ॥

दशमोद्देशकस्थ विषया इमे—कतिपयाः अस्तिकायाः ? धर्मास्तिकाये कतिपयाः वर्णाः, इत्यादि. ते च वर्णादिरहिताः अवस्थिताश्च इत्यादि प्रश्नोत्तरम् । धर्मास्तिकायस्य पञ्चभेदाः—द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, गुणभेदात् । जीवास्तिकाये वर्णादिरस्ति किमिति प्रश्नः ? तस्मिन् वर्णादिर्नास्ति इत्युत्तरम् । गतिगुणो धर्मास्तिकायः स्थितिगुणश्च अधर्मास्तिकायः, अवगाहनगुणः आकाशास्तिकायः, उपयोग गुणः जीवास्तिकायः, पूरणगलनस्वभावः—पुद्गलास्तिकायः, तस्मिन् कियन्ति वर्णादीनि इति प्रश्नः पञ्चवर्ण-पञ्चरस-द्विगन्धाष्टस्पर्शयुक्तः पुद्गलास्तिकायः इत्युत्तरम् । धर्मा-

---

दूसरे शतकके दशवां उद्देशक प्रारंभ–

(दसवें उद्देशक का विषय विवरण)

इस दशवें उद्देशक में विषय इस प्रकार से हैं–अस्तिकाय कितने हैं ? धर्मास्तिकायमें कितने वर्ण हैं ? इत्यादि । वे वर्णादि से रहित है और अवस्थित हैं इत्यादिरूप से प्रश्नोत्तर । धर्मास्तिकाय के द्रव्य, क्षेत्र काल, भाव और गुण के भेद से पांच भेद हैं । जीवास्तिकाय में वर्णादिक हैं क्या ? ऐसा प्रश्न । उसमें वर्णादिक नहीं हैं ऐसा उत्तर । गतिगुणवाला धर्मास्तिकाय है, स्थितिगुणवाला अधर्मास्तिकाय है, अवगाहनगुणवाला आकाशास्तिकाय है, उपयोगगुणवाला जीवास्तिकाय है, पूरण गलन स्वभाव वाला पुद्गलास्तिकाय है पुद्गलास्तिकाय में कितने वर्णादिक होते हैं ? ऐसा प्रश्न । उसमें पांच वर्ण, पांच रस, दो गंध

બીજા શતકના દશમા ઉશકના પ્રારંભ

આ દસમાં ઉદ્દેશકનું સંક્ષિપ્ત વિષય વિવરણ નીચે પ્રમાણે છે–

પ્રશ્ન અસ્તિકાય કેટલાં છે ? ધર્માસ્તિકાયના કેટલા વર્ણ છે ?

ઉત્તર—તેઓ વર્ણાદિથી રહિત છે અને અવસ્થિત છે.દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ, ભાવ અને ગુણની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાયના પાચ ભેદ છે પ્રશ્ન– જીવાસ્તિકાયમાં વર્ણાદિક હોય છે કે નહીં ? ઉત્તર–તેમાં વર્ણાદિક હોતા નથી. ધર્માસ્તિકાય ગતિગુણવાળુ છે, અધર્માસ્તિકાય સ્થિતિગુણવાળું છે આકાશાસ્તિકાય અવગાહન ગુણવાળુ છે, જીવાસ્તિકાય ઉપયોગ ગુણવાળુ છે અને પુદ્ગલાસ્તિકાય પૂરણ ગલન સ્વભાવવાળું છે. પ્રશ્ન–પુદ્ગલાસ્તિકાયમા કેટલા વર્ણાદિક હોય છે ? ઉત્તર– તેમા પાંચ વર્ણ, પાચ રસ, બે ગંધ અને આઠ સ્પ-

पुक्खरवद्द जोइस विहूणम्" यावत् अभ्यन्तर पुष्करार्धद्वीपपर्यन्तम् ज्योतिषिक विहीनम् तत्र जंबूद्वीपमनुष्यक्षेत्रवक्तव्यतायाम् जीवाभिगमसूत्रप्रवेदितायाम् ज्योतिष्कवक्तव्यताऽपि विद्यते किन्तु प्रकृते ज्योतिष्कविहीनं यथा भवेत् तथा—जीवाभिगमवक्तव्यता ग्राह्या ज्योतिष्काधिकार परित्यज्याऽन्यत् सर्वमत्र ग्राह्यम्, अत्र परिमाणमात्रस्यैवाधिकारादिति ॥ सू० १ ॥

इति श्री–जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्य श्री घासीलाल व्रतिविरचितायां भगवती सूत्रस्य प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां द्वितीय शतकस्य नवमोद्देशकः समाप्तः ॥ २–९ ॥

इस विषय को प्रतिपादन करने के लिये कहां तक की लेनी चाहिये तो इसके लिये कहा गया है कि (जाव अभिंतरं पुक्खरद्धं जोइसविहूणं) तात्पर्य इसका यह है कि–जीवाभिगम सूत्र में जंबूद्वीप मनुष्यक्षेत्र की वक्तव्यता में ज्योतिष्कदेवों की भी वक्तव्यता कहने में आई है सो वह वक्तव्यता यहां नहीं कहनी चाहिये, उसको छोडकर ही यहां प्रकृत में जीवाभिगमसूत्र प्रतिपादित वक्तव्यता ग्रहण करनी चाहिये। अर्थात् देव संबंधी अधिकार को छोडकर बाकी सब वहां का विषय यहां ग्रहण कर लेना चाहिये ॥ सू०१ ॥

जैनाचार्य श्री घासीलालजी महाराजा कृत "भगवतीसूत्र" की प्रिय दर्शिनी व्याख्याके द्वितीय शतकके नववां उद्देशा समाप्त॥२–९॥

કરવુ જોઈએ ? તો સૂત્રકાર કહે છે કે (जाव अभिंतरं पुक्खरद्धं जोइसविहूणं) કહેવાનુ તાત્પર્ય એ છે કે જીવાભિગમસૂત્રમા જબૂદ્વીપ મનુષ્યક્ષેત્રના વર્ણન સાથે જ્યોતિષ્ક દેવોનુ પણ વર્ણન કરવામાં આવેલ છે જ્યોતિષ્ક દેવોનુ વર્ણન અહી કરવુ જોઈએ નહીં એ સિવાયનુ જીવાભિગમસૂત્રમાં આપેલ સમસ્ત વર્ણન અહીં કરવુ જોઇએ. એટલે કે જ્યોતિષ્ક દેવોના વિષયમાં જે અધિકાર આવે છે તે છોડી દઈ ને બાકીનો સમસ્ત વિષય અહી ગ્રહણ કરવો જોઈએ ॥સૂ.૧॥

જૈનાચાર્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ કૃત ભગવતી સૂત્રની પ્રિયદર્શિની વ્યાખ્યાના બીજા શતકનો નવમો ઉદ્દેશો સમાપ્ત થયો.

॥ अथ दशमोद्देशकः प्रारभ्यते ॥

दशमोद्देशकस्य विषया इमे–कतिपयाः अस्तिकायाः ? धर्मास्तिकाये कतिपयाः वर्णाः, इत्यादि. ते च वर्णादिरहिताः अवस्थिताश्च इत्यादि प्रश्नोत्तरम् । धर्मास्तिकायस्य पञ्चभेदाः–द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, गुणभेदात् । जीवास्तिकाये वर्णादिरस्ति किमिति प्रश्नः ? तस्मिन् वर्णादिर्नास्ति इत्युत्तरम् । गतिगुणो धर्मास्तिकायः स्थितिगुणश्च अधर्मास्तिकायः, अवगाहनगुणः आकाशास्तिकायः, उपयोग गुणः जीवास्तिकायः, पूरणगलनस्वभावः–पुद्गलास्तिकायः, तस्मिन् कियन्ति वर्णादीनि इति प्रश्नः पञ्चवर्ण-पञ्चरस-द्विगन्धाष्टस्पर्शयुक्तः पुद्गलास्तिकायः इत्युत्तरम् । धर्मा-

---

दूसरे शतकके दशवां उद्देशक प्रारंभ–

(दसवें उद्देशक का विषय विवरण)

इस दशवें उद्देशक में विषय इस प्रकार से हैं–अस्तिकाय कितने हैं ? धर्मास्तिकायमें कितने वर्ण हैं ? इत्यादि । वे वर्णादि से रहित है और अवस्थित हैं इत्यादिरूप से प्रश्नोत्तर । धर्मास्तिकाय के द्रव्य, क्षेत्र काल, भाव और गुण के भेद से पांच भेद हैं । जीवास्तिकाय में वर्णादिक हैं क्या ? ऐसा प्रश्न । उसमें वर्णादिक नहीं हैं ऐसा उत्तर । गतिगुणवाला धर्मास्तिकाय है, स्थितिगुणवाला अधर्मास्तिकाय है, अवगाहनगुणवाला आकाशास्तिकाय है, उपयोगगुणवाला जीवास्तिकाय है, पूरण गलन स्वभाव वाला पुद्गलास्तिकाय है पुद्गलास्तिकाय में कितने वर्णादिक होते हैं ? ऐसा प्रश्न । उसमें पांच वर्ण, पांच रस, दो गंध

બીજા શતકના દશમા ઉદ્દેશકનો પ્રારંભ

આ દસમાં ઉદ્દેશકનું સંક્ષિપ્ત વિષય વિવરણ નીચે પ્રમાણે છે–

પ્રશ્ન અસ્તિકાય કેટલાં છે ? ધર્માસ્તિકાયના કેટલા વર્ણ છે ?

ઉત્તર—તેઓ વર્ણાદિથી રહિત છે અને અવસ્થિત છે દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ, ભાવ અને ગુણની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાયના પાંચ ભેદ છે. પ્રશ્ન– જીવાસ્તિકાયમાં વર્ણાદિક હોય છે કે નહીં ? ઉત્તર–તેમાં વર્ણાદિક હોતા નથી. ધર્માસ્તિકાય ગતિગુણવાળુ છે, અધર્માસ્તિકાય સ્થિતિગુણવાળુ છે આકાશાસ્તિકાય અવગાહન ગુણવાળુ છે, જીવાસ્તિકાય ઉપયોગ ગુણવાળુ છે અને પુદ્ગલાસ્તિકાય પૂરણ ગલન સ્વભાવવાળુ છે પ્રશ્ન–પુદ્ગલાસ્તિકાયમાં કેટલા વર્ણાદિક હોય છે ? ઉત્તર– તેમા પાંચ વર્ણ, પાંચ રસ, બે ગંધ અને આઠ સ્પ-

स्तिकायस्य एकः प्रदेशोऽनेकप्रदेशाः वा धर्मास्तिकाय इत्युच्यते इति प्रश्नः यावत् एकोऽपि प्रदेशोन्यूनो भवेत् तावत् नास्ति तावत् धर्मास्तिकाय इत्युत्तरम्, यथा अखण्डो मोदक एव मोदक इति व्यवह्रियते किन्तु अर्धो मोदको मोदकखण्ड इत्युच्यते। तथैवात्राऽपि धर्मास्तिकायादौ विशेषम्। आकाशस्य कतिभेदा इति प्रश्नः लोकाकाशाऽलोकाकाशभेदेन द्वौ भेदौ इत्युत्तरम्। लोकाकाशो जीवरूप-जीव देशरूपः-जीवप्रदेशरूप अजीवरूप अजीवदेशरूपः अजीवप्रदेशरूप', रूप्यजीवस्य चतुर्भेदाः स्कन्ध-स्कन्धदेश-स्कन्धप्रदेश-परमाणुपुद्गल-लक्षणा, अरूप्यजीवस्य पञ्चभेदा-धर्मास्तिकाय १, धर्मास्तिकायस्य प्रदेशा २, अधर्मास्तिकायः ३, अधर्मास्तिकायस्य प्रदेशा ४, अद्धासमय ५, अलोकाकाश स अजीवद्रव्यदेशा

और आठस्पर्श होते हैं ऐसा उत्तर। धर्मास्तिकाय का एक प्रदेश अनेक प्रदेश धर्मास्तिकाय कहे जाते हैं क्या? ऐसा प्रश्न। जबतक एक भी प्रदेश कम है तबतक वह धर्मास्तिकाय नहीं है। जैसे अखंड मोदक ही मोदक कहलाता है और मोदक का आधा खंड मोदक खण्ड कहलाता है। इसीप्रकार यहाँ धर्मास्तिकाय आदि में भी जानना चाहिये। आकाश के कितने भेद होते हैं ऐसा प्रश्न। लोकाकाश और अलोकाकाश इस प्रकारसे आकाशके दो भेद होते हैं ऐसा उत्तर। लोकाकाश जीवरूप है, जीवदेशरूप है, जीवप्रदेशरूप हैं, अजीवरूप है अजीव देशरूप है, अजीव प्रदेशरूप है, रूपी अजीवके स्कन्ध,स्कन्धदेश स्कन्धप्रदेश, परमाणु ये चार भेद होते हैं, अरूपी अजीवके पांच भेद होते हैं। जैसे-धर्मास्तिकाय १ धर्मास्तिकाय के प्रदेश २, अधर्मास्तिकाय ३, अधर्मास्तिका के प्रदेश ४, अद्धासमय ५। अलोकाकाश अजीवद्रव्यदेशरूप, अगुरुलघुरूप है, लोका-

र्श होय छे प्रश्न-धर्मास्तिकायना એક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહે છે કે અનેક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહે છે? જવાબ—જ્યાં સુધિ એક પણ પ્રદેશ ઓછો હોય ત્યાં સુધી તેને ધર્માસ્તિકાય કહેવાય નહીં. જેમ કે આખા લાડુને જ લાડુ કહેવાય છે અર્ધા લાડુને તો લાડુનો અર્ધો કકડો કહેવાય છે' એજ પ્રમાણે ધર્માસ્તિકાય આદિની બાબતમાં પણ સમજવું પ્રશ્ન-આકાશના કેટલા ભેદ છે? ઉત્તર-આકાશના બે ભેદ છે- લોકાકાશ અને અલોકાકાશ. જીવરૂપ છે, જીવદેશરૂપ છે જીવપ્રદેશરૂપ છે છે અજીવરૂપ છે અજીવ દેશરૂપ છે, અજીવ પ્રદેશરૂપ છે રૂપી અજીવના ચાર ભેદ છે (૧) સ્કન્ધ (૨) સ્કન્ધદેશ, (૩) સ્કન્ધ પ્રદેશ અને (૪) પરમાણુ અરૂપી અજીવના નીચે પ્રમાણે પાંચ ભેદ છે-(૧) ધર્માસ્તિકાય, (૨) ધર્માસ્તિકાયના પ્રદેશ (૩) અધર્માસ્તિકાય (૪) અધર્માસ્તિકાયના પ્રદેશ અને (૫) અદ્ધાસમય અલોકાકાશ અજીવ દ્રવ્ય

अगुरुलघुः। लोकाकाशे कियन्ति वर्णादीनि इति प्रश्नः तस्मिन् नास्ति वर्णादिकमित्युत्तरम्। धर्मास्तिकायादीनां प्रमाणं स्पर्शना च तथा धर्मास्तिकायः कियान् विशालः इति प्रश्नः लोकपरिमित', इत्युत्तरम् ' एवं लोकाकाशास्तिकायेषु प्रश्नोत्तरम् ' अधोलोकः धर्मास्तिकायस्य कियन्तं भागं स्पृशति ? किञ्चिदधिकमेकभागम् इत्युत्तरम्। तिर्यग्लोकः धर्मास्तिकायस्य कियन्तं भागं स्पृशति ? असंख्येयभागमित्युत्तरम्। ऊर्ध्वलोकः कियन्तं भागं स्पृशति ? किञ्चिन्न्यूनमर्धं भागं स्पृशति। धर्मास्तिकायेन सार्द्धं रत्नप्रभायाः घनोदधेः अवकाशान्तरस्य च स्पर्शना। अनेन प्रकारेण सप्तपृथिवीनामपि स्पर्शना जम्बूद्वीपादयो द्वीपाः लवणसमुद्रादयः

काश में कितने वर्णादिक होते हैं ऐसा प्रश्न। उसमें वर्णादिक नहीं हैं ऐसा उत्तर। धर्मास्तिकाय आदिकों का प्रमाण और स्पर्शना तथा धर्मास्तिकाय कितना विशाल है ऐसा प्रश्न, लोकपरिमित है ऐसा उत्तर एवं लोकाकाश और अस्तिकायादिकों में भी प्रश्नोत्तर समझना। अधोलोक धर्मास्तिकाय के कितने भाग को स्पर्श करता है ?। यह प्रश्न। कुछ अधिक आधे भाग को स्पर्श करता है ऐसा उत्तर। तिर्यग् लोक धर्मास्तिकाय के कितने भाग का स्पर्श करता है ? ऐसा प्रश्न। असंख्यात भाग का स्पर्श करता है ऐसा उत्तर। ऊर्ध्वलोक कितने भाग का स्पर्श करता है ? ऐसा प्रश्न–कुछकम आधे भागका स्पर्श करता है, ऐसा उत्तर। धर्मास्तिकाय के साथ रत्नप्रभा की, घनोदधि की, अवकाशान्तर की स्पर्शना इस प्रकार से सातों पृथिवियों की स्पर्शना कहना,

દેશરૂપ, અગુરુ લઘુરૂપ છે પ્રશ્ન–લોકાકાશમા કેટલા વર્ણાદિક હોય છે ? ઉત્તર તેમાં વર્ણાદિક હોતા નથી

પ્રશ્ન–ધર્માસ્તિકાય આદિકોનું પ્રમાણ કેટલુ હોય છે ? સ્પર્શના તથા વિશાળતા કેટલી હોય છે ? ઉત્તર–ધર્માસ્તિકાય લોકપરિમિત છે.

એજ પ્રમાણે લોકાકાશ અને અસ્તિકાયાદિકોના પણ પ્રશ્નોત્તરો સમજી લેવા

પ્રશ્ન ..અધોલોક ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગને સ્પર્શે છે !

ઉત્તર—અર્ધા કરતા થોડા વધારે ભાગને સ્પર્શે છે

પ્રશ્ન—તિર્યગ્લોક ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગને સ્પર્શે છે !

ઉત્તર—અસંખ્યાત ભાગને સ્પર્શે છે

પ્રશ્ન—ઉર્ધ્વલોક ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગને સ્પર્શે છે !

ઉત્તર—અર્ધાકરતા થોડા ઓછા ભાગને સ્પર્શે છે

ધર્માસ્તિકાયની સાથે રત્નપ્રભાની, ઘનોદધિની, અવકાશાન્તરની સ્પર્શના એજ પ્રમાણે સાતે પૃથિવીઓની સ્પર્શનાનુ કથન, જબૂદ્વીપાદિક દ્વીપોનુ,

स्तिकायस्य एकः प्रदेशोऽनेकप्रदेशाः वा धर्मास्तिकाय इत्युच्यते इति प्रश्नः यावत् एकोऽपि प्रदेशोन्यूनो भवेत् तावत् नास्ति तावत् धर्मास्तिकाय इत्युत्तरम्, यथा अखण्डो मोदक एव मोदक इति व्यवह्रियते किन्तु अर्धो मोदको मोदकखण्ड इत्युच्यते। एवमेवाऽपि धर्मास्तिकायादौ विज्ञेयम्। आकाशस्य कतिभेदाः इति प्रश्नः लोकाकाशाऽलोकाकाशभेदेन द्वौ भेदौ इत्युत्तरम्। लोकाकाशो जीवरूपः-जीवदेशरूपः-जीवप्रदेशरूपः अजीवरूपः अजीवदेशरूप अजीवप्रदेशरूपः, रूप्यजीवस्य चतुर्भेदाः स्कन्ध-स्कन्धदेश-स्कन्धप्रदेश-परमाणुपुद्गल-लक्षणाः, अरूप्यजीवस्य पञ्चभेदा-धर्मास्तिकाय १, धर्मास्तिकायस्य प्रदेश २, अधर्मास्तिकायः ३, अधर्मास्तिकायस्य प्रदेशाः ४, अद्धासमय ५, अलोकाकाशः स अजीवद्रव्यदेशः

और आठस्पर्श होते हैं ऐसा उत्तर। धर्मास्तिकाय का एक प्रदेश अनेक प्रदेश धर्मास्तिकाय कहे जाते हैं क्या? ऐसा प्रश्न। जबतक एक भी प्रदेश कम है तबतक वह धर्मास्तिकाय नहीं है। जैसे अखण्ड मोदक ही मोदक कहलाता है और मोदक का आधा खण्ड मोदक खण्ड कहलाता है। इसीप्रकार यहां धर्मास्तिकाय आदि में भी जानना चाहिये। आकाश के कितने भेद होते हैं ऐसा प्रश्न। लोकाकाश और अलोकाकाश इस प्रकारसे आकाशके दो भेद होते हैं ऐसा उत्तर। लोकाकाश जीवरूप है, जीवदेशरूप है, जीवप्रदेशरूप हैं, अजीवरूप है अजीव देशरूप है, अजीव प्रदेशरूप है, रूपी अजीवके स्कन्ध, स्कन्धदेश स्कन्धप्रदेश, परमाणु ये चार भेद होते हैं, अरूपी अजीवके पांच भेद होते हैं। जैसे-धर्मास्तिकाय १ धर्मास्तिकाय के प्रदेश २, अधर्मास्तिकाय ३, अधर्मास्तिका के प्रदेश ४, अद्धासमय ५। अलोकाकाश अजीवद्रव्यदेशरूप, अगुरुलघुरूप है, लोका-

र्श होय छे प्रश्न-धर्मास्तिकायना એક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહે છે કે અનેક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહે છે? જવાબ—જ્યાં સુધિ એક પણ પ્રદેશ ઓછો હોય ત્યાં સુધી તેને ધર્માસ્તિકાય કહેવાય નહીં. જેમ કે આખા લાડુને જ લાડુ કહેવાય છે અર્ધા લાડુને તો લાડુનો અર્ધો કટકો કહેવાય છે' એજ પ્રમાણે ધર્માસ્તિકાય આદિની બાબતમાં પણ સમજવું પ્રશ્ન-આકાશના કેટલા ભેદ છે? ઉત્તર-આકાશના બે ભેદ છે- લોકાકાશ અને અલોકાકાશ જીવરૂપ છે, જીવદેશરૂપ છે, જીવપ્રદેશરૂપ છે છે, અજીવરૂપ છે, અજીવ દેશરૂપ છે, અજીવ પ્રદેશરૂપ છે, રૂપી અજીવના ચાર ભેદ છે (૧) સ્કંધ (૨) સ્કન્ધદેશ, (૩) સ્કન્ધ પ્રદેશ અને (૪) પરમાણુ અરૂપી અજીવના નીચે પ્રમાણે પાંચ ભેદ છે-(૧) ધર્માસ્તિકાય, (૨) ધર્માસ્તિકાયના પ્રદેશ,(૩) અધર્માસ્તિકાય (૪) અધ ર્માસ્તિકાયના પ્રદેશ અને (૫) આદ્ધાસમય અલોકાકાશ અજીવ દ્રવ્ય

अगुरुलघुः। लोकाकाशे कियन्ति वर्णादीनि इति प्रश्नः तस्मिन् नास्ति वर्णादिक-मित्युत्तरम्। धर्मास्तिकायादीनां प्रमाणं स्पर्शना च तथा धर्मास्तिकायः कियान् विशालः इति प्रश्नः लोकपरिमित', इत्युत्तरम्' एवं लोकाकाशास्तिकायेषु प्रश्नो-त्तरम्' अधोलोकः धर्मास्तिकायस्य कियन्तं भागं स्पृशति? किञ्चिदधिकमेक-भागम् इत्युत्तरम्। तिर्यग्लोकः धर्मास्तिकायस्य कियन्तं भागं स्पृशति? असंख्येय-भागमित्युत्तरम्। ऊर्ध्वलोकः कियन्तं भागं स्पृशति? किञ्चिन्न्यूनमर्धं भागं स्पृ-शति। धर्मास्तिकायेन सार्द्धं रत्नप्रभायाः घनोदधेः अवकाशान्तरस्य च स्पर्शना। अनेन प्रकारेण सप्तपृथिवीनामपि स्पर्शना जम्बूद्वीपादयो द्वीपाः लवणसमुद्रादयः

काश में कितने वर्णादिक होते हैं ऐसा प्रश्न। उसमें वर्णादिक नहीं हैं ऐसा उत्तर। धर्मास्तिकाय आदिकों का प्रमाण और स्पर्शना तथा धर्मास्तिकाय कितना विशाल है ऐसा प्रश्न, लोकपरिमित है ऐसा उत्तर एवं लोकाकाश और अस्तिकायादिकों में भी प्रश्नोत्तर समझना। अधो-लोक धर्मास्तिकाय के कितने भाग को स्पर्श करता है?। यह प्रश्न। कुछ अधिक आधे भाग को स्पर्श करता है ऐसा उत्तर। तिर्यग् लोक धर्मास्तिकाय के कितने भाग का स्पर्श करता है? ऐसा प्रश्न। असंख्या-त भाग का स्पर्श करता है ऐसा उत्तर। उर्ध्वलोक कितने भाग का स्पर्श करता है? ऐसा प्रश्न-कुछकम आधे भागका स्पर्श करता है, ऐसा उत्तर। धर्मास्तिकाय के साथ रत्नप्रभा की, घनोदधि की, अवकाशा-न्तर की स्पर्शना इस प्रकार से सातों पृथिवियों की स्पर्शना कहना,

દેશરૂપ, અગુરુ લઘુરૂપ છે પ્રશ્ન-લોકાકાશમાં કેટલા વર્ણાદિક હોય છે? ઉત્તર તેમાં વર્ણાદિક હોતા નથી

પ્રશ્ન-ધર્માસ્તિકાય આદિકોનું પ્રમાણ કેટલુ હોય છે? સ્પર્શના તથા વિશા-ળતા કેટલી હોય છે? ઉત્તર-ધર્માસ્તિકાય લોકપરિમિત છે

એજ પ્રમાણે લોકાકાશ અને અસ્તિકાયાદિકોના પણ પ્રશ્નોત્તરો સમજી લેવા

પ્રશ્ન . અધોલોક ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગને સ્પર્શે છે।

ઉત્તર—અર્ધા કરતા થોડા વધારે ભાગને સ્પર્શે છે.

પ્રશ્ન—તિર્યગ્લોક ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગને સ્પર્શે છે।

ઉત્તર—અસખ્યાત ભાગને સ્પર્શે છે

પ્રશ્ન—ઉર્ધ્વલોક ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગને સ્પર્શે છે।

ઉત્તર—અર્ધાકરતા થોડા ઓછા ભાગને સ્પર્શે છે.

ધર્માસ્તિકાયની સાથે રત્નપ્રભાની, ઘનોદધિની, અવકાશાન્તરની સ્પર્શના એજ પ્રમાણે સાતે પૃથિવીઓની સ્પર્શનાનુ કથન, જમ્બૂદ્વીપાદિક દ્વીપોનું,

समुद्राः सौधर्मकल्पः यावत् ईषत् प्राग्भारा पृथिवी तथैव अधर्मास्तिकायः, एवं लोकाकाशोऽपि विज्ञेयः ॥

नवमोद्देशके क्षेत्रनिरूपणं कृतम्, तत् क्षेत्रम् अस्तिकायरूपम्। अतोऽस्तिकाय-निरूपणाय तथा द्वारगाथोक्ताऽस्तिकाय निरूपणाय च दशमोद्देशक माह, तस्येद मादिमं सूत्रम् 'कइ ण भंते' इत्यादि।

मूलम्—कइ ण भंते अत्थिकाया पण्णत्ता गोयमा! पंच अत्थिकाया पण्णत्ता, त जहा धम्मत्थिकाए, अधम्मत्थिकाए, आगासत्थिकाए, जीवत्थिकाए, पोग्गलत्थिकाए, धम्मत्थिकाए ण भंते! कइवण्णे, कइगंधे, कइरसे, कइफासे गोयमा! अवण्णे अगंधे, अरसे अफासे, अरूपी, अजीवे, सासए अवट्ठिए लोग दव्वे, से समासए पंचविहे पण्णत्ते, त जहा दव्वओ, खेत्तओ कालओ, भावओ, गुणओ, दव्वओण धम्मत्थिकाए एके दव्वे खेत्तओण लोगपमाणमेत्ते कालओ न कया वि न आसि, न कया वि नत्थि जावणिच्चे, भावओ, अवण्णे, अगंधे, अरसे, अफासे गुणओ गमणगुणे, अहम्मत्थिकाए, वि एव चेव नवर गुणओ ठाण गुणे, आगासत्थिकाए वि एव चेव नवर खेत्तओ

जम्बूद्विपादिक द्वीप, लवणसमुद्रादि समुद्र, सौधर्मकल्प यावत् ईषत्प्राग्भारा पृथिवी, इसी प्रकार अधर्मास्तिकाय एव लोकाकाश के विषय में भी जानना चाहिये।

नवर्वे उद्देशक में क्षेत्र का निरूपण किया यह क्षेत्र अस्तिकायरूप है, इसलिये अस्तिकाय के निरूपण के लिये तथा द्वारगाथोक्त अस्तिकाय के

લવણસમુદ્રાદિ સમુદ્રોનું, સૌધર્મકલ્પથી ઇષત્પ્રાગ્ભારા પૃથ્વી પર્યન્તનું, અને એજ પ્રમાણે અધર્માસ્તિકાય અને લોકાકાશનું વર્ણન સમજવું

નવમાં ઉદ્દેશકમાં ક્ષેત્રનું નિરૂપણ કર્યું તે ક્ષેત્ર અસ્તિકાય રૂપ છે, તેથી અસ્તિકાયનું નિરૂપણ કરવા માટે તથા દ્વારગાથામાં કહેલા અસ્તિ

णं आगासत्थिकाए लोयालोयप्पमाणमेत्ते, अणंते चेव जाव. गुणओ अवगाहणागुणे जीवत्थिकाएणं भंते! कइवण्णे, कइगंधे, कइरसे, कइफासे गोयमा! जाव अरूवी, जीवे सासए अवट्ठिए लोगदव्वे से समासए पंचविहे पण्णत्ते, तं जहा दव्वओ जावगुणओ, दव्वओ णं जीवत्थिकाए अणंताइं जीवदव्वाइं, खेत्तओ लोगप्पमाणमेत्ते कालओ न कया वि न आसी जाव णिच्चे, भावओ-पुण अवण्णे, अगंधे, अरसे, अफासे, गुणओ उवओगगुणो. पोग्गलत्थिकाए णं भंते! कइवण्णे, कइगंधे, कइरसे, कइफासे? गोयमा! पंचवण्णे पंचरसे, दुगंधे, अट्ठफासे, रूपी, अजीवे, सासए, अवट्ठिए, लोगदव्वे, से समासओ पंचविहे पण्णत्ते, तं जहा-दव्वओ, खेत्तओ कालओ, भावओ, गुणओ, दव्वओ णं पोग्गलत्थिकाए अणंताइं, दव्वाइं, खेत्तओ लोगप्पमाणमेत्ते, कालओ न कयाइ न आसी जाव णिच्चे भावओ वण्णमंते गंधमंते फासमंते गुणओ गहणगुणे ॥ सू० १ ॥

छाया—कति खलु भदन्त! अस्तिकायाः मज्ञप्ताः, गौतम! पञ्च अस्तिकाया मज्ञप्ताः तद्यथा धर्मास्तिकायोऽधर्मास्तिकायः आकाशास्तिकायो जीवास्तिकायः

निरूपण के लिये इस दशवें उद्देशक का प्रारंभ किया गया है इसका आदिम सूत्र यह है—(कइण भंते!) इत्यादि।

सूत्रार्थ-(भंते!) हे भदन्त! (कइणं अत्थिकाया पण्णत्ता) अस्तिकाय कितने कहे गये हैं? (गोयमा!) हे गौतम! (पंच अत्थिकाया पण्णत्ता) पांच अस्तिकाय कहे गये हैं। (तंजहा) जैसे-(धम्मत्थिकाए, अधम्मत्थिकाए, आगासत्थिकाए, जीवत्थिकाए, पोग्गलत्थि-

---

કાયનું નિરૂપણ કરવા માટે આ દસમા ઉદ્દેશકનો પ્રારંભ કરાયો છે. તેનુ પહેલું સૂત્ર આ પ્રમાણે છે-(कइ ण भंते!) ઇત્યાદિ--

સૂત્રાર્થ—(भंते,) હે ભદન્ત! (कइण अत्थिकाया पण्णत्ता?) અસ્તિકાય કેટલા કહ્યા છે. (गोयमा) હે ગૌતમ! (पंचअत्थिकाया पण्णत्ता) અસ્તિકાય પાંચ કહ્યા છે (तंजहा) તે પાંચના નામ આ પ્રમાણે છે-(धम्मत्थिकाए, अधम्मत्थिकाए, आगासत्थिकाए जीवत्थिकाए, पोग्गलत्थिकाए) ધર્માસ્તિકાય

समुद्राः सौधर्मकल्पः यावत् ईषत् प्राग्भारा पृथिवी तथैव अधर्मास्तिकायः, एवं लोकाकाशोऽपि विज्ञेयः ॥

नवमोद्देशके क्षेत्रनिरूपणं कृतम्, तत् क्षेत्रम् अस्तिकायरूपम्। अतोऽस्तिकाय-निरूपणाय तथा द्वारगाथोक्ताऽस्तिकाय निरूपणाय च दशमोद्देशकं माह, तस्येद मादिमं सूत्रम् 'कइ ण भंते' इत्यादि।

मूलम्—कइ णं भंते अत्थिकाया पण्णत्ता गोयमा! पंच अत्थिकाया पण्णत्ता, तं जहा धम्मत्थिकाए, अधम्मत्थिकाए, आगासत्थिकाए, जीवत्थिकाए, पोग्गलत्थिकाए, धम्मत्थिकाए णं भंते! कइवण्णे, कइगंधे, कइरसे, कइफासे गोयमा! अवण्णे अगंधे, अरसे अफासे, अरूवी, अजीवे, सासए अवट्ठिए लोग दव्वे, से समासए पंचविहे पण्णत्ते, तं जहा दव्वओ, खेत्तओ कालओ, भावओ, गुणओ, दव्वओणं धम्मत्थिकाए एके दव्वे खेत्तओणं लोगपमाणमेत्ते कालओ न कया वि न आसि, न कया वि नत्थि जावणिच्चे, भावओ, अवण्णे, अगंधे, अरसे, अफासे गुणओ गमण गुणे, अहम्मत्थिकाए, वि एवं चेव नवरं गुणओ ठाण गुणे, आगासत्थिकाए वि एवं चेव नवरं खेत्तओ

जम्बूद्वीपादिक द्वीप, लवणसमुद्रादि समुद्र, सौधर्मकल्प यावत् ईषत्प्राग्भारा पृथिवी, इसी प्रकार अधर्मास्तिकाय एवं लोकाकाश के विषय में भी जानना चाहिये।

नववें उद्देशक में क्षेत्र का निरूपण किया वह क्षेत्र अस्तिकायरूप है, इसलिये अस्तिकाय के निरूपण के लिये तथा द्वारगाथोक्त अस्तिकाय के

લવણસમુદ્રાદિ સમુદ્રોનું, સૌધર્મકલ્પથી ઇષત્પ્રાગ્ભારા પૃથ્વી પર્યન્તનું, અને એજ પ્રમાણે અધર્માસ્તિકાય અને લોકાકાશનું વર્ણન સમજવું

નવમાં ઉદ્દેશકમાં સમયક્ષેત્રનું નિરૂપણ કર્યું તે ક્ષેત્ર અસ્તિકાય રૂપ છે, તેથી અસ્તિકાયનું નિરૂપણ કરવા માટે તથા દ્વારગાથામાં કહેલા અસ્તિ

'सासया भावा' शाश्वतौ भावौ 'अणाणुपुव्वी एसा रोहा' अनानुपूर्व्येषा रोह! हे रोह! लोकान्तश्च सप्तममवकाशान्तरं च, पूर्वमपि पश्चादपि। एतयोर्नियताऽऽनुपूर्वी नास्ति किन्तु आनुपूर्वीरहिते एते द्वे, पूर्वपश्चाद्रूपः क्रमो न भवतीति। सप्तममवकाशान्तरमिति सप्तमपृथिव्या अधोवर्त्ति आकाशमिति। 'एवं लोयंते य सत्तमे य तणुवाए' एवं लोकान्तश्च सप्तमश्च तनुवातः। 'एवं घणवाए' एवं घनवातः, 'घणोदही' घनोदधिः 'सत्तमा पुढवी' सप्तमी पृथिवी 'एवं लोयंते एक्केक्केणं संजोएयव्वे इमेहिं ठाणेहिं' एवं लोकान्त एकैकेन संयोजयितव्य एभिः वक्ष्यमाणगाथोक्तैश्चतुर्विंशतिसंख्यकैः स्थानैः 'तं जहा' तद्यथा-तदेव गाथाद्वयेन दर्शयति-'उवास' इत्यादि। 'उवास' इति अवकाशः, अत्र पदैकदेशे पदसमुदायग्र-

लोकान्त और सातवां अवकाशान्तर ये दोनों हैं। इनमें पहिले अमुक है और बाद में अमुक है ऐसा पूर्व पश्चात् क्रम नहीं है। (दो वि एए सासया भावा) ये दोनों ही शाश्वतभाव हैं। (अणाणुपुव्वी एसा रोहा! हे रोह! लोकान्त, और सातवां अवकाशान्तर ये दोनों पहिले भी हैं और बाद में भी है। इनमें नियत आनुपूर्वी नहीं है। किन्तु ये दोनों आनुपूर्वी से रहित हैं अतः इनमें पूर्वपश्चत् रूप क्रम नहीं है। सप्तम पृथ्वी के नीचे रहा हुआ जो आकाश है उसका नाम सप्तम अवकाशान्तर है। (एवं लोयंते य सत्तमे य तणुवाए, एवं घणवाए, घणोदही, सत्तमा पुढवी, एवं लोयंते एक्केक्केणं संजोएयव्वे इमेहिं ठाणेहिं) इसी तरहसे लोकान्त और सातवां तनुवात, तथा इसी तरहसे घनवात घनोदधि और सातवीं पृथिवी, इस तरह इन "उवासवाय०" इत्यादि दो गाथाओं में कहे हुए चोईस २४ स्थानों में से प्रत्येक स्थान के लोकान्त को जोड़ना चाहिये। गाथामें कहे हुए २४ स्थान ये हैं- (उवास)

લોકાન્ત અને સાતમુ અવકાશાન્તર બન્ને છે. તેમાં પહેલું અમુક અને પછી અમુક છે એવો પૂર્વાપરનો ક્રમ હોતો નથી "दो वि एए सासए भावे" એ બન્ને શાશ્વત ભાવ છે "अणाणुपुव्वी एसा रोहा!" હે રોહ! લોકાન્ત અને સાતમું અવકાશાન્તર એ બન્ને પહેલાં પણ છે અને પછી પણ છે. તે બન્ને આનુપૂર્વીથી રહિત છે તેથી તેમાં પૂર્વાપરના ક્રમનો અભાવ છે સાતમી પૃથ્વીની નીચે રહેલા આકાશને સાતમું અવકાશાન્તર કહે છે "एवं लोयंते य सत्तमे य तणुवाए, एवं घणवाए, घणोदही, सत्तमा पुढवी, एवं लोयंते एक्केक्केणं संजोएयव्वे इमेहि ठाणेहिं" એજ પ્રમાણે લોકાન્ત અને સાતમુ તનુવાત, તથા એજ રીતે ઘનવાત ઘનોદધિ અને સાતમી પૃથ્વી, તથા એવી જ રીતે આ ગાથામા કહેલાં ૨૪ સ્થાનોમાંના પ્રત્યેક સ્થાનની સાથે લોકાન્તને યોજીને આલાપકો બનાવવા જોઈએ ગાથમાં દર્શાવેલાં ૨૪ સ્થાનો આ પ્રમાણે છે-"उवास"

पुद्गलास्तिकायः, धर्मास्तिकायः खलु भदन्त ! कतिवर्णः कतिगन्धः कतिरसः कतिस्पर्शः ? गौतम ! अवर्ण अगन्ध अरस अस्पर्शः अरूपी अजीव शाश्वतः अव स्थितो लोकद्रव्यम् स समासतः पञ्चविध प्रज्ञप्तः, तद्यथा द्रव्यतः क्षेत्रतः कालतो भावतो गुणतः, द्रव्यतो धर्मास्तिकायः एक द्रव्यम् । क्षेत्रतो लोकप्रमाणमात्र कालतो न कदाचिन्नासीत् न कदाचिन्नास्ति, यावत् नित्यः भावतोऽवर्णः अग-

---

काए) धर्मास्तिकाय १, अधर्मास्तिकाय २, आकाशास्तिकाय ३, जीवास्तिकाय ४, पुद्गलास्तिकाय ५ । (धम्मत्थिकाए णं भंते ! कइवण्णे, कइ गंधे, कइ रसे, कइ फासे ?) हे भदन्त ! धर्मास्तिकाय में कितने वर्ण हैं, कितने गंध हैं, कितने रस हैं, और कितने स्पर्श हैं ? (गोयमा ! अवण्णे, अगंधे, अरसे अफासे) हे गौतम ! धर्मास्तिकाय में वर्ण नहीं है, गंध नहीं है, रस नहीं है और स्पर्श नहीं है (अरूवी अजीवे सासए अवट्ठिए लोगदव्वे) यह द्रव्य अरूपी है अजीव है, शाश्वत है, अवस्थित है लोक द्रव्य है (से समासओ पंचविहे (तंजहा) जैसे- (दव्वओ, खेत्तओ, कालओ भावओ गुणओ) द्रव्य की अपेक्षा धर्मास्तिकाय, क्षेत्र की अपेक्षा धर्मास्तिकाय, काल की अपेक्षा धर्मास्तिकाय, भाव की अपेक्षा धर्मास्तिकाय और गुणकी अपेक्षा धर्मास्तिकाय (दव्वओ णं धम्मत्थिकाए एगे दव्वे) द्रव्य की अपेक्षा धर्मास्तिकाय एक द्रव्य है । (खेत्तओ ण लोगप्पमाणमेत्ते) क्षेत्र की अपेक्षा धर्मास्तिकाय

---

(२) અધર્માસ્તિકાય, (૩) આકાશાસ્તિકાય (૪) જીવાસ્તિકાય અને (૫) પુદ્ગલાસ્તિકાય (धम्मत्थिकाए ण भंते ! कइवण्णे कइगंधे, कइरसे, कइफासे !) હે ભદન્ત ! ધર્માસ્તિકાયના કેટલા પ્રકારના વર્ણ હોય છે, કેટલા પ્રકારનો ગંધ હોય છે, કેટલા પ્રકારના રસ હોય છે અને કેટલા પ્રકારના સ્પર્શ હોય છે (गोयमा ! अवण्णे, अगंधे अरसे अफासे) હે ગૌતમ ! ધર્માસ્તિકાયમાં વર્ણ નથી, ગંધ નથી, રસ નથી, સ્પર્શ નથી. (अरूवी अजीवे सासए अवट्ठिए लोगदव्वे) તે દ્રવ્ય અરૂપી છે અજીવ છે શાશ્વત છે અવસ્થિત છે, લોક દ્રવ્ય છે (से समासओ पंचविहे पण्णत्ते) તે ધર્માસ્તિકાયના સંક્ષિપ્તમાં પાંચ પ્રકાર છે (तंजहा) તે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે-(दव्वओ, खेत्तओ, कालओ भावओ गुणओ (૧) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય, (૨) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય, (૩) કાળની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય, (૪) ભાવની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય અને (૫) ગુણની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય (दव्वओ ण धम्मत्थिकाए एगे दव्वे) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય એક દ્રવ્ય છે (खेत्तओ ण लोगप्पमाण

न्धोऽरसोऽस्पर्शः गुणतो गमनगुणः, अधर्मास्तिकायोऽपि एवमेव. नवर, गुणतः स्थानगुणः आकाशास्तिकायोऽपि एवमेव, नवरम् – क्षेत्रतः खलु आकाशास्तिकायो लोकालोकप्रमाणमात्रः अनन्तश्चैव यावत् गुणतोऽवगाहनागुणः। जीवास्तिकायः खलु भदन्त कतिवर्णः कतिगन्धः कतिरसः कतिस्पर्शः? गोतम ! अवर्णो

लोकप्रमाण है। (कालओ न कयाइ नासी, न कयाइ नत्थि, जाव णिच्चे) कालकी अपेक्षा धर्मास्तिकाय पूर्वकाल में किसी भी समय में नहीं था ऐसा भी नहीं है, वर्तमान काल में किसी भी समय नहीं है ऐसा भी नहीं है और भविष्यत् काल में किसी भी समय में नहीं होगा, ऐसा भी नहीं है, क्यों कि यावत् वह नित्य है (भावओ अवण्णे अगंधे, अरसे, अफासे) भावकी अपेक्षा धर्मास्किायवर्ण रहित, गंधरहित, रसरहित और स्पर्शरहित है। (गुणओ गमणगुणे) गुण की अपेक्षा धर्मास्तिकाय गमनमें सहायक गुणवाला है। (अहम्मत्थिकाए वि एवं चेव) अधर्मास्तिकाय भी ऐसा ही है (नवरं गुणओ ठाणगुणे) परन्तु अधर्मास्तिकाय गुण की अपेक्षा स्थिति गुण वाला है। (आगासत्थिकाए वि एवं चेव) आकाशास्तिकाय भी ऐसा ही है। (नवरं खेत्तओ णं आगास=त्थिकाए लोया लोयप्पमाणमेत्ते) परन्तु आकाशास्तिाकाय क्षेत्र की अ–पेक्षा लोकालोकप्रमाण है। (अणंते चेव) अनन्त है। (जाव गुणओ अवगाहणागुणे) यावत् आकाशास्तिकाय गुण की अपेक्षा अवगाहन

णमेत्ते) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય લોક પ્રમાણ છે (कालओ न कयाइ नत्थि, जाव णिच्चे) કાળની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય ભૂતકાળમાં કોઇ પણ સમયે ન હતુ એવુ પણ નથી, વર્તમાન કાળમા કોઈ સમયે નથી એવું પણ શક્ય નથી, અને ભવિષ્યકાળમાં પણ કોઇ પણ સમયે તેનું અસ્તિત્વ નહીં હોય એવું પણ નથી, કારણ કે તે નિત્ય છે, (भावओ अवण्णे अगंधे, अरसे, अफासे) ભાવની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય વર્ણરહિત, ગંધરહિત, રસ રહિત અને સ્પર્શ રહિત છે (गुणओ गमणगुणे) ગુણની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય ગમન ગુણ વાળુ છે (अहम्मत्थिकाए वि एवं चेव) અધર્મા સ્તિકાય પણ એવુ જ છે (नवर गुणओ ठाणगुणे) પરંતુ અધર્માસ્તિકાય ગુણની અપેક્ષાએ સ્થિતિ ગુણ વાળુ છે. (आगासत्थिकाए वि एवं चेव) આકાશાસ્તિકાય પણ એવું જ છે (नवरं खेत्तओ णं अगासत्थिकाए लोया-लोयप्पमाणमेत्ते) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ આકાશાસ્તિકાય લોકાલોકપ્રમાણુ છે, (अणंते चेव) અનંત છે, (जाव गुणओ अवगाहणा गुणे) અને ગુણની અપેક્ષાએ અવગાહન ગુણવાળુ છે.

पुद्गलास्तिकायः, धर्मास्तिकायः खलु भदन्त ! कतिवर्णः कतिगन्धः कतिरसः कतिस्पर्शः ? गौतम ! अवर्णः अगन्धः अरसः अस्पर्शः अरूपी अजीवः शाश्वतः अवस्थितो लोकद्रव्यम् स समासतः पञ्चविधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा द्रव्यतः क्षेत्रतः कालतो भावतो गुणतः, द्रव्यतो धर्मास्तिकायः एकं द्रव्यम् । क्षेत्रतो लोकप्रमाणमात्रः कालतो न कदाचिन्नासीत् न कदाचिन्नास्ति, यावत् नित्यः भावतोऽवर्णः अग

काए) धर्मास्तिकाय १, अधर्मास्तिकाय २, आकाशास्तिकाय ३, जीवास्तिकाय ४, पुद्गलास्तिकाय ५ । (धम्मत्थिकाए णं भंते ! कइवण्णे, कइ गंधे, कइ रसे, कइ फासे ?) हे भदन्त ! धर्मास्तिकाय में कितने वर्ण हैं, कितने गंध हैं, कितने रस हैं, और कितने स्पर्श हैं ? (गोयमा ! अवण्णे, अगंधे, अरसे अफासे) हे गौतम ! धर्मास्तिकाय में वर्ण नहीं है, गंध नहीं है, रस नहीं है और स्पर्श नहीं है (अरूपी अजीवे सासए अवट्ठिए लोगदव्वे) यह द्रव्य अरूपी है अजीव है, शाश्वत है, अवस्थित है लोक द्रव्य है (स समासओ पंचविहे (तंजहा) जैसे- (दव्वओ, खेत्तओ, कालओ भावओ गुणओ) द्रव्य की अपेक्षा धर्मास्तिकाय, क्षेत्र की अपेक्षा धर्मास्तिकाय, काल की अपेक्षा धर्मास्तिकाय, भाव की अपेक्षा धर्मास्तिकाय और गुणकी अपेक्षा धर्मास्तिकाय (दव्वओ णं धम्मत्थिकाए एगे दव्वे) द्रव्य की अपेक्षा धर्मास्तिकाय एक द्रव्य है । (खेत्तओ ण लोगप्पमाणमेत्ते) क्षेत्र की अपेक्षा धर्मास्तिकाय

---

(२) अधर्मास्तिकाय, (३) आकाशास्तिकाय (४) જીવાસ્તિકાય અને (૫) પુદ્ગલાસ્તિકાય (धम्मत्थिकाए ण भंते ! कइवण्णे कइगंधे, कइरसे, कइफासे !) હે હે ભદન્ત ! ધર્માસ્તિકાયના કેટલા પ્રકારના વર્ણ હોય છે, કેટલા પ્રકારનો ગંધ હોય છે, કેટલા પ્રકારના રસ હોય છે અને કેટલાક પ્રકારના સ્પર્શ હોય છે (गोयमा ! अवण्णे, अगंधे, अरसे अफासे) હે ગૌતમ ! ધર્માસ્તિકાયમાં વર્ણ નથી, ગંધ નથી, રસ નથી, સ્પર્શ નથી (अरूपी अजीवे सासए अवट्ठिए लोगदव्वे) તે દ્રવ્ય અરૂપી છે અજીવ છે, શાશ્વત છે અવસ્થિત છે, લોક દ્રવ્ય છે (से समासओ पंचविहे पण्णत्ते) તે ધર્માસ્તિકાયના સંક્ષિપ્તમાં પાંચ પ્રકાર છે. (तंजहा) તે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે-(दव्वओ, खेत्तओ, कालओ भावओ गुणओ (૧) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય, (૨) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય, (૩) કાળની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય, (૪) ભાવની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય અને (૫) ગુણની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય (दव्वओ ण धम्मत्थिकाए एगे दव्वे) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય એક દ્રવ્ય છે (खेत्तओ ण लोगप्पमाण

न्धोऽरसोऽस्पर्शः गुणतो गमनगुणः, अधर्मास्तिकायोऽपि एवमेव. नवरं, गुणतः स्थानगुणः आकाशास्तिकायोऽपि एवमेव, नवरम् – क्षेत्रतः खलु आकाशास्तिकायो लोकालोकप्रमाणमात्रः अनन्तश्चैव यावत् गुणतोऽवगाहनागुणः । जीवास्तिकायः खलु भदन्त कतिवर्णः कतिगन्धः कतिरसः कतिस्पर्शः? गौतम ! अवर्णो

लोकप्रमाण है। (कालओ न कयाइ नासी, न कयाइ नत्थि, जाव णिच्चे) कालकी अपेक्षा धर्मास्तिकाय पूर्वकाल में किसी भी समय में नहीं था ऐसा भी नहीं है, वर्तमान काल में किसी भी समय नहीं है ऐसा भी नहीं है और भविष्यत् काल में किसी भी समय में नहीं होगा, ऐसा भी नहीं है, क्यों कि यावत् वह नित्य है (भावओ अवण्णे अगंधे, अरसे, अफासे) भावकी अपेक्षा धर्मास्तिकायवर्ण रहित, गंधरहित, रसरहित और स्पर्शरहित है। (गुणओ गमणगुणे) गुण की अपेक्षा धर्मास्तिकाय गमनमें सहायक गुणवाला है। (अहम्मत्थिकाए वि एवं चेव) अधर्मास्तिकाय भी ऐसा ही है (नवरं गुणओ ठाणगुणे) परन्तु अधर्मास्तिकाय गुण की अपेक्षा स्थिति गुण वाला है। (आगासत्थिकाए वि एवं चेव) आकाशास्तिकाय भी ऐसा ही है। (नवरं खेत्तओ ण आगासत्थिकाए लोया लोयप्पमाणमेत्ते) परन्तु आकाशास्तिकाय क्षेत्र की अपेक्षा लोकालोकप्रमाण है। (अणंते चेव) अनन्त है। (जाव गुणओ अवगाहणागुणे) यावत् आकाशास्तिकाय गुण की अपेक्षा अवगाहन

णमेत्ते) क्षेत्रनी अपेक्षाએ धर्मास्तिકાય લોક પ્રમાણ છે (कालओ न कयाइ नत्थि, जाव णिच्चे) કાળની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય ભૂતકાળમાં કોઇ પણ સમયે ન હતુ એવુ પણ નથી, વર્તમાન કાળમા કોઈ સમયે નથી એવું પણ શકય નથી, અને ભવિષ્યકાળમા પણ કોઇ પણ સમયે તેનું અસ્તિત્ત્વ નહીં હોય એવુ પણ નથી, કારણ કે તે નિત્ય છે, (भावओ अवण्णे अगंधे, अरसे, अफासे) ભાવની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય વર્ણરહિત, ગંધરહિત, રસ રહિત અને સ્પર્શ રહિત છે. (गुणओ गमणगुणे) ગુણની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય ગમન ગુણ વાળુ છે (अहम्मत्थिकाए वि एवं चेव) અધર્માસ્તિકાય પણ એવુ જ છે (नवर गुणओ ठाणगुणे) પરંતુ અધર્માસ્તિકાય ગુણની અપેક્ષાએ સ્થિતિ ગુણ વાળુ છે (आगासत्थिकाए वि एवं चेव) આકાશાસ્તિકાય પણ એવુ જ છે (नवरं खेत्तओ णं अगासत्थिकाए लोयालोयप्पमाणमेत्ते) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ આકાશાસ્તિકાય લોકાલોકપ્રમાણ છે, (अणंते चेव) અનંત છે, (जाव गुणओ अवगाहणा गुणे) અને ગુણની અપેક્ષાએ અવગાહન ગુણવાળું છે.

यावदरूपी जीवं शाश्वतः अवस्थितो लोकद्रव्यम् । स समासतः पञ्चविधः प्रज्ञप्तः तद् यथा द्रव्यतो यावत्-गुणत, द्रव्यतः खलु जीवास्तिकायोऽनन्तानि जीव द्रव्याणि क्षेत्रतो लोकप्रमाणमात्रः कालतो न कदाचिन्नासीत् यावन्नित्यः भावता पुनरवर्णः अगन्धः अरसः अस्पर्शः गुणतउपयोगगुण, पुद्गलास्तिकायः खलुभदन्त!

गुणवाला है। (जीवत्थिकाए णं भंते! कइ वण्णे, कइ गंधे, कइ रसे, कइ फासे?) हे भदन्त! जीवास्तिकाय कितने वर्णवाला है, कितने गंध वाला है, कितने रसवाला है और कितने स्पर्श वाला है? (गोयमा!) हे गौतम! (अवण्णे जाव अरूवी) जीवास्तिकाय वर्णरहित है यावत् वह अरूपीद्रव्य है (जीवे सासए अवट्ठिए लोगदव्वे) जीव है शाश्वत है, अवस्थित है, लोकद्रव्य है। (से समासओ पंचविहे पण्णत्ते) वह संक्षेप से पांच प्रकार का कहा गया है। (तंजहा) जैसे (दव्वओ जाव गुणओ) द्रव्य की अपेक्षा जीवास्तिकाय यावत् गुण की अपेक्षा जीवास्तिकाय (दव्वओ ण जीवत्थिकाए अणंताइं जीवदव्वाइं) द्रव्य की अपेक्षा जीवास्तिकाय अनंत जीवद्रव्यरूप है। (खेत्तओ लोगप्पमाण-मेत्ते) क्षेत्र की अपेक्षा जीवास्तिकाय लोकप्रमाणमात्र है। (कालओ ण कयाइ न आसी, जाव निच्चे) कालकी अपेक्षा जीवास्तिकाय भूतकाल में किसी भी समय में नहीं था ऐसा नहीं है यावत् वह नित्य है। (भावओ पुणअवण्णे, अगंधे, अरसे, अफासे) भाव की अपेक्षा जी-

(जीवत्थिकाए ण भंते! कइवण्णे, कइ रसे, कइ फासे) હે ભદન્ત! જીવાસ્તિકાયને કેટલા વર્ણ, કેટલા ગંધ, કેટલા રસ અને કેટલા સ્પર્શ હોય છે? (गोयमा!) હે ગૌતમ! (अवण्णा जाव अरूवी) જીવાસ્તિકાય વર્ણરહિતથી લઈને અરૂપી પર્યન્તના ગુણોવાળું હોય છે (जीवे, सासए, अवट्ठिए लोगदव्वे) જીવાસ્તિકાય ચેતનાવાળું, શાશ્વત, અવસ્થિત, લોકદ્રવ્ય છે (से समासओ पंच विहे पण्णत्ते) તે સંક્ષિપ્તમાં પાંચ પ્રકારનું છે (तंजहा) તે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે-"दव्वओ जाव गुणओ" દ્રવ્યની અપેક્ષાએથી લઈને ગુણની અપેક્ષા પર્યન્તના તેના પાંચ પ્રકાર છે "दव्वओ ण जीवत्थिकाए अणंताइं जीवदव्वाइं" દ્રવ્યની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાય અનંત જીવદ્રવ્યરૂપ છે खेत्तओ लोगप्पमाण मेत्ते" ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાય લોક પરિમિત છે, "कालओ ण कयाइ ण आसी, जाव निच्चे" કાળની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાયનું અસ્તિત્વ ભૂતકાળમાં કોઈ પણ સમય ન હતું એવું બન્યું નથી, ત્યાંથી લઈને તે નિત્ય છે ત્યાં સુધીનું કથન ધર્માસ્તિકાય પ્રમાણે સમજવું "भावओ पुण अवण्णे, अगंधे, अरसे, अफासे" ભાવની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાય વર્ણ, ગંધ, રસ અને સ્પર્શરહિત

कतिवर्णः कतिगन्धः कतिरसः कतिस्पर्शः? गौतम ! पञ्चवर्णः पञ्चरसः द्विगन्धः अष्ट स्पर्शः रूपी अजीवः शाश्वतोऽवस्थितो लोकद्रव्यम् स समासतः पञ्चविधः प्रज्ञप्तः तद् यथा द्रव्यतः क्षेत्रतः कालतो भावतो गुणतः, द्रव्यतः पुद्गलास्तिकायोऽनन्तानि द्रव्याणि क्षेत्रतो लोकप्रमाणमात्रः कालतो न कदाचिन्नासीत् यावन्नित्य भावतो वर्णवान् गन्धरसस्पर्शवान् गुणतोग्रहणगुणः ॥ सू० १ ॥

वास्तिकाय वर्ण, गंध, रस और स्पर्श से रहित है। (गुणओ उवओगगुणे) गुण की अपेक्षा जीवास्तिकाय उपयोग गुणवाला है। (पोग्गलत्थिकाए णं भंते ! कइवण्णे, कइगंधे, कइरसे, कइफासे) हे भदन्त ! पुद्गलास्तिकाय कितने वर्णवाला है ? कितने गंधवाला है ? कितने रसवाला है ? कितने स्पर्शवाला है ? (गोयमा) हे गौतम ! (पंचवण्णे पंचरसे दुगंधे अट्ठफासे रूवी अजीवे, सासए अवट्ठिए लोगदव्वे) पुद्गलास्तिकाय पांच वर्णवाला है, पांच रसवाला है, दो गंधवाला है आठ स्पर्शवाला है रूपी है अजीव है शाश्वत है अवस्थित है और लोकद्रव्य है। (से समासओ पंचविहे पण्णत्ते) वह पुद्गलास्तिकाय संक्षेपसे पांच प्रकार का कहा गया है। (तं जहा) जैसे (दव्वओ, खेत्तओ, कालओ, भावओ, गुणओ) द्रव्य की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय, क्षेत्र की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय, काल की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय, भाव की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय, गुण की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय (दव्वओ णं पोग्गलत्थिकाए अणंताइं दव्वाइं) द्रव्य की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय अनंत द्रव्यरूप

છે "गुणओ उवओगगुणे" ગુણની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાય ઉપયોગ ગુણવાળુ છે.

"पोग्गलत्थिकाए णं भंते! कइ वण्णे, कइ गंधे, कइ रसे कइ फासे !" હે ભદન્ત ! પુદ્ગલાસ્તિકાય કેટલા વર્ણવાળુ છે, કેટલા ગંધવાળું છે ? કેટલા રસ વાળુ છે ? અને કેટલા સ્પર્શવાળું છે ? (गोयमा !) હે ગૌતમ ! (पंचवण्णे, पंच रसे, दुगंधे, अट्ठफासे, रूवे अजीवे सासए अवट्ठिए लोगदव्वे) પુદ્ગલાસ્તિકાય પાંચ વર્ણવાળું પાંચ રસવાળું, બે ગંધવાળું, આઠ સ્પર્શવાળું, રૂપી, અજીવ, શાશ્વત, અવસ્થિત, અને લોકદ્રવ્ય છે (से समासओ पंचविहे पण्णत्ते) તે પુદ્ગલાસ્તિકાયના સંક્ષિપ્તમાં પાચ પ્રકાર છે (तंजहा) તે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે-(दव्वओ खेत्तओ, कालओ, भावओ, गुणओ) (૧) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય, (૨) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય, (૩) કાળની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય, (૪) ભાવની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય, અને (૫) ગુણની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય. (दव्वओ ण पोग्गलत्थिकाए अणंताइं दव्वाइं) દ્રવ્યની

यावद्रूपी जीवः शाश्वतः अवस्थितो लोकद्रव्यम् । स समासतः पञ्चविधः प्रज्ञप्तः तद् यथा द्रव्यतो यावत्-गुणत, द्रव्यतः खलु जीवास्तिकायोऽनन्तानि जीव द्रव्याणि क्षेत्रतो लोकप्रमाणमात्रः कालतो न कदाचिन्नासीत् यावन्नित्यः भावतः पुनरवर्णः अगन्धः अरसः अस्पर्शः गुणतउपयोगगुणः, पुद्गलास्तिकाय खलुभदन्त।

गुणवाला है। (जीवत्थिकाए णं भंते ! कइ वण्णे, कइ गंधे, कइ रसे, कइ फासे ?) हे भदन्त ! जवास्तिकाय कितने वर्णवाला है, कितने गंध वाला है, कितने रसवाला है और कितने स्पर्श वाला है ? (गोयमा !) हे गौतम ! (अवण्णे जाव अरूवी) जीवास्तिकाय वर्णरहित है यावत् वह अरूपीद्रव्य है (जीवे सासए अवट्ठिए लोगदव्वे) जीव है शाश्वत है, अवस्थित है, लोकद्रव्य है। (से समासओ पंचविहे पण्णत्ते) वह संक्षेप से पांच प्रकार का कहा गया है। (तजहा) जैसे (दव्वओ जाव गुणओ) द्रव्य की अपेक्षा जीवास्तिकाय यावत् गुण की अपेक्षा जीवास्तिकाय (दव्वओ ण जीवत्थिकाए अणताइं जीवदव्वाइं) द्रव्य की अपेक्षा जीवास्तिकाय अनत जीवद्रव्यरूप है। (खेत्तओ लोगप्पमाण-मेत्ते) क्षेत्र की अपेक्षा जीवास्तिकाय लोकप्रमाणमात्र है। (कालओ ण कयाइ न आसी, जाव निच्चे) कालकी अपेक्षा जीवास्तिकाय भूतकाल में किसी भी समय में नहीं था ऐसा नहीं है यावत् वह नित्य है। (भावओ पुणअवण्णे, अगंधे, अरसे, अफासे) भाव की अपेक्षा जी-

(जीवत्थिकाए ण भंते ! कइवण्णे, कइ रसे, कइ फासे) હે ભદન્ત ! જીવાસ્તિકાયને કેટલા વર્ણ, કેટલા ગંધ, કેટલા રસ અને કેટલાસ્પર્શ હોય છે? (गोयमा !) હે ગૌતમ ! (अवण्णा जाव अरूवी) જીવાસ્તિકાય વર્ણરહિતથી લઈને અરૂપી પર્યન્તના ગુણોવાળું હોય છે (जीवे, सासए, अवट्ठिए लोगदव्वे) જીવાસ્તિકાય ચેતનાવાળું, શાશ્વત, અવસ્થિત, લોકદ્રવ્ય છે (से समासओ पंचविहे पण्णत्ते) તે સંક્ષિપ્તમાં પાંચ પ્રકારનું છે (तजहा) તે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે—" दव्वओ जाव गुणओ " દ્રવ્યની અપેક્ષાએથી લઈને ગુણનીઅપેક્ષા પર્યન્તના તેના પાંચ પ્રકાર છે " दव्वओ ण जीवत्थिकाए अणताइ जीवदव्वाइं " દ્રવ્યની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાય અનંત જીવદ્રવ્યરૂપ છે खेत्तओ लोगप्पमाण मेत्ते " ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાય લોક પરિમિત છે, ' कालओ ण कयाइ न आसी, जाव निच्चे " કાળની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાયનું અસ્તિત્વ ભૂતકાળમાં કોઈ પણ સમય ન હતું એવું બન્યું નથી, ત્યાંથી લઈને તે નિત્ય છે ત્યાં સુધીનું કથન ધર્માસ્તિકાય પ્રમાણે સમજવું "भावओ पुण अवण्णे, अगंधे, अरसे, अफासे " ભાવની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાય વર્ણ, ગંધ, રસ અને સ્પર્શરહિત

कतिवर्णः कतिगन्धः कतिरसः कतिस्पर्शः? गौतम ! पञ्चवर्णः पञ्चरसः द्विगन्धः अष्ट स्पर्शः रूपी अजीवः शाश्वतोऽवस्थितो लोकद्रव्यम् स समासतः पञ्चविधः प्रज्ञप्तः तद् यथा द्रव्यतः क्षेत्रतः कालतो भावतो गुणतः, द्रव्यतः पुद्गलास्तिकायोऽनन्तानि द्रव्याणि क्षेत्रतो लोकप्रमाणमात्रः कालतो न कदाचिन्नासीत् यावन्नित्य भावतो वर्णवान् गन्धरसस्पर्शवान् गुणतोग्रहणगुणः ॥ सू० १ ॥

वास्तिकाय वर्ण, गंध, रस और स्पर्श से रहित है। (गुणओ उवओ-गगुणे) गुण की अपेक्षा जीवास्तिकाय उपयोग गुणवाला है। (पोग्ग-लत्थिकाए णं भंते ! कइवण्णे, कइगंधे, कइरसे, कइफासे) हे भदन्त ! पुद्गलास्तिकाय कितने वर्णवाला है ? कितने गंधवाला है ? कितने रस-वाला है ? कितने स्पर्शवाला है ? (गोयमा) हे गौतम ! (पंचवण्णे पंचरसे दुगंधे अट्ठफासे रूवी अजीवे, सासए अवट्ठिए लोगदव्वे) पुद्ग-लास्तिकाय पांच वर्णवाला है, पांच रसवाला है, दो गंधवाला है आठ स्पर्शवाला है रूपी है अजीव है शाश्वत है अवस्थित है और लोकद्रव्य है। (से समासओ पंचविहे पण्णत्ते) वह पुद्गलास्तिकाय संक्षेपसे पांच प्रकार का कहा गया है। (त जहा) जैसे (दव्वओ, खेत्तओ, कालओ, भावओ, गुणओ) द्रव्य की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय, क्षेत्र की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय, काल की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय, भाव की अपेक्षा पुद्ग-लास्तिकाय, गुण की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय (दव्वओ णं पोग्गलत्थि-काए अणंताइं दव्वाइं) द्रव्य की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय अनंत द्रव्यरूप

છે " गुणेओ उवओगगुणे" ગુણની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાય ઉપયોગ ગુણવાળુ છે.

"पोग्गलत्थिकाए ण भते! कइ वण्णे, कइ गंधे, कई रसे कइ फासे!" હે ભદન્ત ! પુદ્ગલાસ્તિકાય કેટલા વર્ણ વાળુ છે, કેટલા ગંધવાળુ છે ? કેટલા રસ વાળુ છે ? અને કેટલા સ્પર્શવાળુ છે ? (गोयमा !) હે ગૌતમ ! (पंच-वण्णे, पंच रसे, दुगंधे, अट्ठफासे, रूवे अजीवे सासए अवट्ठिए लोगदव्वे) પુદ્ગ-લાસ્તિકાય પાંચ વર્ણવાળુ પાંચ રસવાળું, બે ગંધવાળું, આઠ સ્પર્શવાળું, રૂપી, અજીવ, શાશ્વત, અવસ્થિત, અને લોકદ્રવ્ય છે (से समासओ पंचविहे पण्ण-त्ते) તે પુદ્ગલાસ્તિકાયના સંક્ષિપ્તમાં પાચ પ્રકાર છે. (तंजहा) તે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે-(दव्वओ खेत्तओ, कालओ, भावओ, गुणओ) (૧) દ્રવ્યની અપે-ક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય, (૨) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય, (૩) કાળની અપે-ક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય, (૪) ભાવની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય, અને (૫) ગુણની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય. (दव्वओ ण [illegible] अणंताइं दव्वाइं) દ્રવ્યની

टीका—"कइ ण भंते अत्थिकाया पण्णत्ता" कति खलु हे भदन्त ! अस्तिकाया प्रज्ञप्ताः ? कतिताः अस्तिकायानां किं स्वरूपम् कीयती च संख्येति प्रश्नः भगवानाह-'गोयमा' इत्यादि । "गोयमा" हे गौतम ! 'पंच अत्थिकाया पण्णत्ता" पञ्च अस्तिकायाः प्रज्ञप्ताः अस्तिकायशब्दास्याऽर्थस्त्वयम् । अस्तिकाय इत्यत्र अस्तिशब्दस्य प्रदेशोऽर्थः कायशब्दस्य च राशिः=समुदायः तथा च

है । (खेत्तओ लोयप्पमाणमेत्ते) क्षेत्र की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय लोक प्रमाण मात्र है (कालओ ण कयाइ न आसी जाव णिच्चे) काल की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय भूतकाल में कभी नहीं था ऐसा नहीं है यावत् यह नित्य है । (भावओ वण्णमंते गंधरसफासमंते) भाव की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय वर्णवाला है, गंधवाला है, रसवाला है, स्पर्शवाला है, (गुणओ गहणगुणे) गुण की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय ग्रहणगुण वाला है ॥ सू० १ ॥

टीकार्थ—(कइ णं भंते ! अत्थिकाया पण्णत्ता) हे भदन्त ! अस्तिकाय कितने कहे गये हैं ? अर्थात्–अस्तिकायों का क्या स्वरूप है और उनकी संख्या कितनी है ऐसा इस प्रश्न का भाव है । भगवान् इसका उत्तर देते हुए कहते हैं (गोयमा) हे गौतम ! (पंच अत्थिकाया पण्णत्ता) पांच अस्तिकाय कहे गये हैं । अस्तिकाय शब्द का अर्थ इस प्रकार से है-(अस्तिकाय) में दो शब्द हैं-एक (अस्ति) और दूसरा (काय) अस्ति शब्दका अर्थ प्रदेश है और काय शब्द का अर्थ राशि है, इस

અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય અનંત દ્રવ્યરૂપ છે, (खेत्तओ लोयप्पमाणमेत्त) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય લોકપરિમિત (લોકપ્રમાણ) છે (कालओ ण कयाइ न आसी जाव णिच्च) કાળની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાયનું અસ્તિત્વ ભૂતકાળમાં ન હતું એવું બન્યું નથી, ત્યાંથી લઈને તે નિત્ય છે ત્યાં સુધીનું સમસ્ત કથન ધર્માસ્તિકાય મુજબ સમજવું (भावओ वण्णमंते गंधरसफासमंते) ભાવની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય વર્ણ, ગંધ, રસ અને સ્પર્શથી યુક્ત છે (गुणओ गहणगुणे) ગુણની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય ગ્રહણગુણવાળું છે ॥ સૂ. ૧ ॥

ટીકાર્થ—"कइणं भंते ! अत्थिकाया पण्णत्ता" હે ભદન્ત ! અસ્તિકાય કેટલા છે ? પ્રશ્નનો ભાવાર્થ એ છે કે અસ્તિકાયોનું કેવું સ્વરૂપ છે અને તેમની સંખ્યા કેટલી છે ?

ગૌતમ સ્વામીના પ્રશ્નનો જવાબ આપતાં મહાવીર પ્રભુ કહે છે કે "गोयमा" હે ગૌતમ ! "पंच अत्थिकाया पण्णत्ता" અસ્તિકાય પાંચ કહ્યાં છે "અસ્તિકાય" શબ્દનો અર્થ આ પ્રમાણે છે—અસ્તિ×કાય=અસ્તિકાય અસ્તિ એટલે પ્રદેશ અને કાય એટલે રાશિ. પ્રદેશોની જે રાશિ (સમુદાય) હોય

कतिवर्णः कतिगन्धः कतिरसः कतिस्पर्शः? गौतम ! पञ्चवर्णः पञ्चरसः द्विगन्धः अष्टस्पर्शः रूपी अजीवः शाश्वतोऽवस्थितो लोकद्रव्यम् स समासतः पञ्चविधः प्रज्ञप्तः तद् यथा द्रव्यतः क्षेत्रतः कालतो भावतो गुणतः, द्रव्यतः पुद्गलास्तिकायोऽनन्तानि द्रव्याणि क्षेत्रतो लोकप्रमाणमात्रः कालतो न कदाचिन्नासीत् यावन्नित्य भावतो वर्णवान् गन्धरसस्पर्शवान् गुणतोग्रहणगुणः ॥ सू० १ ॥

वास्तिकाय वर्ण, गंध, रस और स्पर्श से रहित है। (गुणओ उवओगगुणे) गुण की अपेक्षा जीवास्तिकाय उपयोग गुणवाला है। (पोग्गलत्थिकाए णं भंते ! कइवण्णे, कइगंधे, कइरसे, कइफासे) हे भदन्त ! पुद्गलास्तिकाय कितने वर्णवाला है ? कितने गंधवाला है ? कितने रसवाला है ? कितने स्पर्शवाला है ? (गोयमा) हे गौतम ! (पंचवण्णे पंचरसे दुगंधे अट्ठफासे रूवी अजीवे, सासए अवट्ठिए लोगदव्वे) पुद्गलास्तिकाय पांच वर्णवाला है, पांच रसवाला है, दो गंधवाला है आठ स्पर्शवाला है रूपी है अजीव है शाश्वत है अवस्थित है और लोकद्रव्य है। (से समासओ पंचविहे पण्णत्ते) वह पुद्गलास्तिकाय संक्षेपसे पांच प्रकार का कहा गया है। (तं जहा) जैसे (दव्वओ, खेत्तओ, कालओ, भावओ, गुणओ) द्रव्य की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय, क्षेत्र की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय, काल की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय, भाव की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय, गुण की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय (दव्वओ णं पोग्गलत्थिकाए अणंताइं दव्वाइं) द्रव्य की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय अनंत द्रव्यरूप

છે " गुणओ उवओगगुणे" ગુણની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાય ઉપયોગ ગુણવાળુ છે.

"पोग्गलत्थिकाए णं भंते! कइ वण्णे, कइ गंधे, कई रसे कइ फासे!" હે ભદન્ત ! પુદ્ગલાસ્તિકાય કેટલા વર્ણ વાળુ છે, કેટલા ગંધવાળું છે ? કેટલા રસ વાળું છે ? અને કેટલા સ્પર્શવાળું છે ? (गोयमा !) હે ગૌતમ ! (पंचवण्णे, पंच रसे, दुगंधे, अट्ठफासे, रूवी अजीवे सासए अवट्ठिए लोगदव्वे) પુદ્ગલાસ્તિકાય પાંચ વર્ણવાળું પાંચ રસવાળુ, બે ગંધવાળું, આઠ સ્પર્શવાળું, રૂપી, અજીવ, શાશ્વત, અવસ્થિત, અને લોકદ્રવ્ય છે (से समासओ पंचविहे पण्णत्ते) તે પુદ્ગલાસ્તિકાયના સંક્ષિપ્તમાં પાંચ પ્રકાર છે (तंजहा) તે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે-(दव्वओ खेत्तओ, कालओ, भावओ, गुणओ) (૧) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય, (૨) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય, (૩) કાળની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય, (૪) ભાવની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય, અને (૫) ગુણની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય. (दव्वओ ण [illegible] अणंताइं दव्वाइं) દ્રવ્યની

हणात्–अवकाशान्तराणीति। एवमग्रेऽपि विज्ञेयम्। अवकाशान्तराणि–पृथिव्या अधोवर्त्याकाशानि सप्त १। 'वाय' इति–वाताः–तनुवाताः सप्त २। 'घण' इति घनाः–घनवाताः सप्त ३। 'उदहि' इति उदधय –घनोदधयः सप्त ४। अवकाशान्तरादीनां सप्तसु पृथिवीषु प्रत्येकस्मिन्नेकैकमन्तरावात्ते सप्त भवन्ति। 'पुढवी' इति पृथिव्यः=नारकपृथिव्य सप्त ५। 'दीवा य' इति द्वीपाश्च जम्बूद्वीपादयोऽसंख्येया ६। 'सागरा' इति सागराः=समुद्राः लवणसमुद्रादयोऽसंख्येयाः७। 'वासा' इति वर्षाणि=भरतादिक्षेत्राणि सप्त ८। 'नेरइयाई' नैरयिकादयश्च सुचिंशतिदण्डका ९। 'अत्थिय' इति अस्तिकाया'–धर्मास्तिकायादिकाः पञ्च१०। 'समया' इति समयाः=कालविभागाः ११। 'कम्माइं' इति कर्माणि ज्ञानावरणीयादीन्यष्ट १२। 'लेस्साओ' लेश्याः कृष्णादय षट् १३। गा ॥१॥ 'दिट्ठी' इति दृष्टयः–मिथ्यादृष्ट्यादिकास्तिस्रः १४। 'दंसण' इति दर्शनानि चक्षुरादीनि चत्वारि १५। 'णाणा' ज्ञानानि–मतिश्रुतादीनि पञ्च १६। 'सण्णा, इति सञ्ज्ञाः=

अवकाश पद से यहां पदैकदेश में पदसमुदाय के ग्रहण करने के नियम से अवकाशान्तर कहना चाहिए। आगे भी इसी तरह से जानना चाहिये। ये अवकाशान्तर सातों पृथिवियोंमेंसे एकर पृथिवीके नीचे रहने के कारण सात होते हैं, क्यों कि सातों पृथिवियोंमें जो परस्परमें अन्तराल है वही अवकाशान्तर है। वात–तनुवात७, घन–घनवात७, उदधि–घनोदधि७, नारकपृथिवीयां ७, जंबूद्वीप आदि असंख्यातद्वीप, लवणसमुद्र आदि असंख्यात समुद्र, भरत आदि सात क्षेत्र, नैरयिक आदि चोईस दण्डक, धर्मास्तिकायादिक पांच, अस्तिकाय, समय–कालविभाग, ज्ञानावरणीय आदि आठ कर्म, कृष्णादिक छ लेश्याएँ, मिथ्यादृष्टि आदिक तीन दृष्टियां, चक्षुर्दर्शनादिक चार दर्शन, मतिज्ञान आदि पांच ज्ञान, आहारसंज्ञा आदि

અવકાશ પદ દ્વારા અહીં અવકાશાન્તર સમજવું જોઈએ. તે અવકાશાન્તર સાત છે કારણ કે સાતે પૃથ્વીમાની દરેક પૃથ્વીની નીચે અવકાશાન્તર હોય છે સાતે પૃથ્વીઓમાં પરસ્પરની (એકબીજાની) વચ્ચે જે અન્તરાલ છે તેને જ અવકાશાન્તર કહે છે વાત–તનુવાત ૭ ઘન–ઘનવાત, ઉદધિ–ઘનોદધિ ૭ નારક પૃથ્વીઓ ૭, જબૂદ્વીપ વગેરે અસખ્યાત દ્વીપ લવણ સમુદ્ર વગેરે અસખ્યાત સમુદ્ર ભરત વગેરે ૭, ક્ષેત્ર નૈરયિક વગેરે ૨૪ દંડક ધર્માસ્તિકાય વગેરે ૫ અસ્તિકાય સમય–કાલવિભાગ, જ્ઞાનાવરણીય વગેરે ૮ કર્મ, કૃષ્ણાદિક ૬ લેશ્યાઓ, મિથ્યાદૃષ્ટિ વગેરે ત્રણ દૃષ્ટિઓ ચક્ષુદર્શન વગેરે ૪ દર્શન, મતિજ્ઞાન વગેરે પાચ જ્ઞાન, આહારસજ્ઞા વગેરે ૪ સજ્ઞાઓ ઔદારિક વગેરે

अस्तीनाम् प्रदेशानाम् कायाः राशयः इति अस्तिकायाः अथवा अस्तीति तिङन्त प्रतिरूपको निपातः भूतभविष्यद्वर्त्तमानेति कालत्रयवाचकः ततः अस्तीति सन्ति आसन् भविष्यन्ति च ये कायाःप्रदेशराशयः ते अस्तिकायाः। एतद्रूपा इमे अस्तिकायाः पञ्च प्रज्ञप्ताः, पञ्चास्तिकायानेव दर्शयति 'तं जहा' इत्यादि। "तं जहा" तद् यथा "धम्मत्थिकाए" धर्मास्तिकायः "अधम्मत्थिकाए" अधर्मास्तिकायः "आगासत्थिकाए" आकाशास्तिकायः "जीवत्थिकाए" जीवास्तिकायः "पोग्गलात्थिकाए" पुद्गलास्तिकायः–इति, बहुषु अस्तिकायेषु प्रथमतः

तरह से प्रदेशों की जो राशि–समुदाय है वह अस्तिकाय है। अथवा–अस्ति यह तिङन्त प्रतिरूपकनिपात अव्यय है और यह भूत, भविष्यत् और वर्तमान ऐसे तीनों कालों का वाचक है। इससे यह अर्थ निकलता है कि जो काय वर्तमान काल में है, भूतकाल में थे, और भविष्यत्काल में भी रहेंगे वे अस्तिकाय है। इस तरह के अस्तिकाय पांच कहे गये हैं–तात्पर्य कहने का यही है कि काय–शरीर के समान जो द्रव्य बहुत प्रदेश वाले हैं वे अस्तिकाय हैं। अविभागी पुद्गलका परमाणु जितने आकाशरूप स्थान को रोकता है उसका नाम प्रदेश है। ऐसे प्रदेश जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म और आकाश द्रव्य में ही होते हैं अतःये अस्तिकायकहे गये हैं। (तंजहा) इस विषयका स्पष्टीकरण स्वयं टीकाकार आगे कर रहे हैं–(धम्मत्थिकाए, अधम्मत्थिकाए, आगासत्थिकाए, जीवत्थिकाए, पोग्गेलत्थिकाए) धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय। इस प्रकार इन पांच अस्ति

છે તેનુ નામ અસ્તિકાય છે અથવા "અસ્તિ" એ તિઙન્ત પ્રતિરૂપક નિપાત અવ્યય છે અને તે ભૂત, ભવિષ્ય અને વર્તમાન, એ ત્રણે કાળનું વાચક છે. તેનો ભાવાર્થ એ થાય છે કે જે કાય રાશિ ભૂતકાળમાં હતાં, વર્ત. વર્તમાનકાળમાં છે અને ભવિષ્યમાં પણ હશે તેમને અસ્તિકાય કહે છે આ પ્રકારના પાચ અસ્તિકાય કહ્યાં છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે કાય- શરીરની જેમ જે દ્રવ્યો બહુ પ્રદેશોવાળા છે તેમને અસ્તિકાય કહે છે. અવિભાગી પુદ્ગલનું પરમાણુ જેટલા આકાશરૂપ સ્થાનને પ્રદેશ કહે છે એવા પ્રદેશો જીવ, પુદ્ગલ, ધર્મ, અધર્મ અને આકાશ દ્રવ્યમા જ હોય છે, તેથી તે પાંચે ને અસ્તિકાય કહેવામાં આવે છે હવે ટીકાકાર તે અસ્તિકાયો બતાવે છે "તંજહા" તે પાચ અસ્તિકાયો નીચે પ્રમાણે છે–" धम्मत्थिकाए, अधम्मत्थिकाए, आगासत्थिकाए, जीवत्थिकाए, पोग्गलत्थिकाए " (૧) ધર્માસ્તિકાય, (૨) અધર્માસ્તિકાય, (૩) આકાશાસ્તિકાય, (૪) જીવાસ્તિકાય અને (૫) પુદ્ગલાસ્તિકાય

टीका—"कइ ण भंते अस्थिकाया पण्णत्ता" कति खलु हे भदन्त ! अस्तिकायाः प्रज्ञप्ताः ? कतिसंख्यकाः अस्तिकायानां किं स्वरूपम् कीयती च संख्येति प्रश्नः भगवानाह-'गोयमा' इत्यादि । "गोयमा" हे गौतम ! 'पंच अस्थिकाया पण्णत्ता" पञ्च अस्तिकायाः प्रज्ञप्ताः अस्तिकायशब्दस्यार्थस्त्वयम् । अस्तिकाय इत्यत्र अस्तिशब्दस्य प्रदेशोऽर्थः कायशब्दस्य च राशिः=समुदायः तथा च

है । (खेत्तओ लोयप्पमाणमेत्ते) क्षेत्र की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय लोक प्रमाण मात्र है (कालओ ण कयाइ न आसी जाव णिच्चे) काल की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय भूतकाल में कभी नहीं था ऐसा नहीं है यावत् यह नित्य है। (भावओ वण्णमंते गंधरसफासमंते) भाव की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय वर्णवाला है, गंधवाला है, रसवाला है, स्पर्शवाला है, (गुणओ गहणगुणे) गुण की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय ग्रहणगुण वाला है ॥ सू० १ ॥

टीकार्थ—(कइ णं भंते ! अत्थिकाया पण्णत्ता) हे भदन्त ! अस्तिकाय कितने कहे गये हैं ? अर्थात्-अस्तिकायों का क्या स्वरूप है और उनकी संख्या कितनी है ऐसा इस प्रश्न का भाव है। भगवान् इसका उत्तर देते हुए कहते हैं (गोयमा) हे गौतम ! (पंच अत्थिकाया पण्णत्ता) पांच अस्तिकाय कहे गये हैं। अस्तिकाय शब्द का अर्थ इस प्रकार से है-(अस्तिकाय) में दो शब्द हैं-एक (अस्ति) और दूसरा (काय) अस्ति शब्दका अर्थ प्रदेश है और काय शब्द का अर्थ राशि है, इस

અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય અનંત દ્રવ્યરૂપ છે, (खेत्तओ लोयप्पमाणमेत्ते) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય લોકપરિમિત (લોકપ્રમાણ) છે (कालओ ण कयाइ नासी जाव णिच्चे) કાળની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાયનું અસ્તિત્વ ભૂતકાળમાં ન હતું એવું બન્યું નથી, ત્યાંથી લઈને તે નિત્ય છે, ત્યાં સુધીનું સમસ્ત કથન ધર્માસ્તિકાય મુજબ સમજવું (भावओ वण्णमंते गंधरसफासमंते) ભાવની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય વર્ણ ગંધ, રસ અને સ્પર્શથી યુક્ત છે (गुणओ गहणगुणे) ગુણની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય ગ્રહણગુણવાળું છે ॥ સૂ ૧ ॥

ટીકાર્થ—"कइणं भंते ! अत्थिकाया पण्णत्ता" હે ભદન્ત ! અસ્તિકાય કેટલા છે? પ્રશ્નનો ભાવાર્થ એ છે કે અસ્તિકાયોનું કેવું સ્વરૂપ છે અને તેમની સંખ્યા કેટલી છે?

ગૌતમ સ્વામીના પ્રશ્નનો જવાબ આપતાં મહાવીર પ્રભુ કહે છે કે 'गोयमा" હે ગૌતમ ! "पंच अत्थिकाया पण्णत्ता' અસ્તિકાય પાંચ કહ્યાં છે "અસ્તિકાય" શબ્દનો અર્થ આ પ્રમાણે છે-અસ્તિ × કાય= અસ્તિકાય. અસ્તિ એટલે પ્રદેશ અને કાય એટલે રાશિ. પ્રદેશોની જે રાશિ (સમુદાય) હોય

अस्तीनाम् प्रदेशानाम् कायाः राशयः इति अस्तिकायाः अथवा अस्तीति तिङन्त प्रतिरूपको निपातः भूतभविष्यद्वर्त्तमानेति कालत्रयवाचकः ततः अस्तीति सन्ति आसन् भविष्यन्ति च ये कायाःप्रदेशराशयः ते अस्तिकायाः। एतद्रूपा इमे अस्तिकायाः पञ्च प्रज्ञप्ताः, पञ्चास्तिकायानेव दर्शयति 'तं जहा' इत्यादि। "तं जहा" तद् यथा "धम्मत्थिकाए" धर्मास्तिकायः "अधम्मत्थिकाए" अधर्मास्तिकाय· "आगासत्थिकाए" आकाशास्तिकायः "जीवत्थिकाए" जीवास्तिकायः "पोग्गलत्थिकाए" पुद्गलास्तिकायः–इति, वहुषु अस्तिकायेषु प्रथमतः

तरह से प्रदेशों की जो राशि–समुदाय है वह अस्तिकाय है। अथवा–अस्ति यह तिङन्त प्रतिरूपकनिपात अव्यय है और यह भूत, भविष्यत् और वर्तमान ऐसे तीनों कालों का वाचक है। इससे यह अर्थ निकलता है कि जो काय वर्तमान काल में है, भूतकाल में थे, और भविष्यत्काल में भी रहेंगे वे अस्तिकाय है। इस तरह के अस्तिकाय पांच कहे गये हैं–तात्पर्य कहने का यही है कि काय–शरीर के समान जो द्रव्य वहुत प्रदेश वाले हैं वे अस्तिकाय हैं। अविभागी पुद्गलका परमाणु जितने आकाशरूप स्थान को रोकता है उसका नाम प्रदेश है। ऐसे प्रदेश जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म और आकाश द्रव्य में ही होते हैं अतः ये अस्तिकायकहे गये हैं। (तंजहा) इस विषयका स्पष्टीकरण स्वयं टीकाकार आगे कर रहे हैं–(धम्मत्थिकाए, अधम्मत्थिकाए, आगासत्थिकाए, जीवत्थिकाए, पोग्गेलत्थिकाए) धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय। इस प्रकार इन पांच अस्ति-

છે તેનુ નામ અસ્તિકાય છે અથવા "અસ્તિ" એ તિઙન્ત પ્રતિરૂપક નિપાત અવ્યય છે અને તે ભૂત, ભવિષ્ય અને વર્તમાન, એ ત્રણે કાળનું વાચક છે. તેનો ભાવાર્થ એ થાય છે કે જે કાય રાશિ ભૂતકાળમાં હતાં, વર્ત· વર્તમાનકાળમા છે અને ભવિષ્યમાં પણ હશે તેમને અસ્તિકાય કહે છે આ પ્રકારના પાચ અસ્તિકાય કહ્યા છે કહેવાનુ તાત્પર્ય એ છે કે કાય- શરી· રની જેમ જે દ્રવ્યો બહુ પ્રદેશોવાળા છે તેમને અસ્તિકાય કહે છે અવિ- ભાગી પુદ્ગલનું પરમાણુ જેટલા આકાશરૂપ સ્થાનને પ્રદેશ કહે છે એવા પ્રદેશો જીવ, પુદ્ગલ, ધર્મ, અધર્મ અને આકાશ દ્રવ્યમા જ હોય છે, તેથી તે પાચે ને અસ્તિકાય કહેવામા આવે છે હવે ટીકાકાર તે અસ્તિકાયો બતાવે છે "तंजहा" તે પાચ અસ્તિકાયો નીચે પ્રમાણે છે–"धम्मत्थिकाए, अधम्मत्थिकाए, आगासत्थिकाए, जीवत्थिकाए, पोग्गलत्थिकाए" (૧) ધર્માસ્તિકાય, (૨) અધર્માસ્તિકાય, (૩) આકાશાસ્તિકાય, (૪) જીવાસ્તિકાય અને (૫) પુદ્ગલાસ્તિકાય.

टीका—"कइ णं भंते अस्थिकाया पण्णत्ता" कति खलु हे भदन्त ! अस्तिकायाः प्रज्ञप्ताः ? कथिताः, अस्तिकायानां किं स्वरूपम् कीयती च सङ्ख्येति प्रश्नः भगवानाह-'गोयमा' इत्यादि । "गोयमा" हे गौतम ! 'पंच अत्थिकाया पण्णत्ता" पञ्च अस्तिकायाः प्रज्ञप्ताः अस्तिकायशब्दस्यायमर्थस्त्वयम् । अस्तिकाय इत्यत्र अस्तिशब्दस्य प्रदेशोऽर्थं कायशब्दस्य च राशिः=समुदायः तथा च

है । (खेत्तओ लोयप्पमाणमेत्ते) क्षेत्र की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय लोक प्रमाण मात्र है (कालओ ण कयाइ न आसी जाव णिच्चे) काल की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय भूतकाल में कभी नहीं था ऐसा नहीं है यावत् यह नित्य है। (भावओ वण्णमंते गंधरसफासमंते) भाव की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय वर्णवाला है, गंधवाला है, रसवाला है, स्पर्शवाला है, (गुणओ गहणगुणे) गुण की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय ग्रहणगुण वाला है ॥ सू० १ ॥

टीकार्थ—(कइ णं भंते ! अत्थिकाया पण्णत्ता) हे भदन्त ! अस्तिकाय कितने कहे गये हैं ? अर्थात्-अस्तिकायों का क्या स्वरूप है और उनकी संख्या कितनी है ऐसा इस प्रश्न का भाव है। भगवान् इसका उत्तर देते हुए कहते हैं (गोयमा) हे गौतम ! (पंच अत्थिकाया पण्णत्ता) पांच अस्तिकाय कहे गये हैं। अस्तिकाय शब्द का अर्थ इस प्रकार से है-(अस्तिकाय) में दो शब्द हैं-एक (अस्ति) और दूसरा (काय) अस्ति शब्दका अर्थ प्रदेश है और काय शब्द का अर्थ राशि है, इस

અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય અનંત દ્રવ્યરૂપ છે, (खेत्तओ लोयप्पमाणमेत्ते) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય લોકપરિમિત (લોકપ્રમાણ) છે (कालओ ण कयाइ न आसी जाव णिच्चे) કાળની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાયનું અસ્તિત્વ ભૂતકાળમાં ન હતું એવું બન્યું નથી, ત્યાંથી લઈને તે નિત્ય છે ત્યાં સુધીનું સમસ્ત કથન ધર્માસ્તિકાય મુજબ સમજવું (भावओ वण्णमंते गंधरसफासमंते) ભાવની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય વર્ણ, ગંધ, રસ અને સ્પર્શથી યુક્ત છે (गुणओ गहणगुणे) ગુણની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય ગ્રહણગુણવાળું છે ॥ સૂ ૧ ॥

ટીકાર્થ—"कइणं भंते ! अत्थिकाया पण्णत्ता" હે ભદન્ત ! અસ્તિકાય કેટલા છે ? પ્રશ્નનો ભાવાર્થ એ છે કે અસ્તિકાયોનું કેવું સ્વરૂપ છે અને તેમની સંખ્યા કેટલી છે ?

ગૌતમ સ્વામીના પ્રશ્નનો જવાબ આપતાં મહાવીર પ્રભુ કહે છે કે 'गोयमा" હે ગૌતમ ! "पंच अत्थिकाया पण्णत्ता" અસ્તિકાય પાંચ કહ્યાં છે. "અસ્તિકાય" શબ્દનો અર્થ આ પ્રમાણે છે-અસ્તિ + કાય = અસ્તિકાય અસ્તિ એટલે પ્રદેશ અને કાય એટલે રાશિ. પ્રદેશોની જે રાશિ (સમુદાય) હોય

अस्तीनाम् प्रदेशानाम् कायाः राशयः इति अस्तिकायाः अथवा अस्तीति तिङन्त प्रतिरूपको निपातः भूतभविष्यद्वर्त्तमानेति कालत्रयवाचकः ततः अस्तीति सन्ति आसन् भविष्यन्ति च ये कायाः प्रदेशराशयः ते अस्तिकायाः। एतद्रूपा इमे अस्तिकायाः पञ्च प्रज्ञप्ताः, पञ्चास्तिकायानेव दर्शयति 'तं जहा' इत्यादि। "तं जहा" तद् यथा "धम्मत्थिकाए" धर्मास्तिकायः "अधम्मत्थिकाए" अधर्मास्तिकाय "आगासत्थिकाए" आकाशास्तिकायः "जीवत्थिकाए" जीवास्तिकायः "पोग्गलत्थिकाए" पुद्गलास्तिकायः-इति, बहुषु अस्तिकायेषु प्रथमतः

तरह से प्रदेशों की जो राशि-समुदाय है वह अस्तिकाय है। अथवा-अस्ति यह तिङन्त प्रतिरूपकनिपात अव्यय है और यह भूत, भविष्यत् और वर्तमान ऐसे तीनों कालों का वाचक है। इससे यह अर्थ निकलता है कि जो काय वर्तमान काल में है, भूतकाल में थे, और भविष्यत्काल में भी रहेंगे वे अस्तिकाय है। इस तरह के अस्तिकाय पांच कहे गये हैं-तात्पर्य कहने का यही है कि काय-शरीर के समान जो द्रव्य बहुत प्रदेश वाले हैं वे अस्तिकाय हैं। अविभागी पुद्गलका परमाणु जितने आकाशरूप स्थान को रोकता है उसका नाम प्रदेश है। ऐसे प्रदेश जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म और आकाश द्रव्य में ही होते हैं अतःये अस्तिकायकहे गये हैं। (तंजहा) इस विषयका स्पष्टीकरण स्वयं टीकाकार आगे कर रहे हैं-(धम्मत्थिकाए, अधम्मत्थिकाए, आगासत्थिकाए, जीवत्थिकाए, पोग्गलत्थिकाए) धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय। इस प्रकार इन पांच अस्ति

છે તેનું નામ અસ્તિકાય છે. અથવા "અસ્તિ" એ તિઙન્ત પ્રતિરૂપક નિપાત અવ્યય છે અને તે ભૂત, ભવિષ્ય અને વર્તમાન, એ ત્રણે કાળનું વાચક છે. તેનો ભાવાર્થ એ થાય છે કે જે કાય રાશિ ભૂતકાળમાં હતાં, વર્તમાનકાળમાં છે અને ભવિષ્યમાં પણ હશે તેમને અસ્તિકાય કહે છે આ પ્રકારના પાંચ અસ્તિકાય કહ્યાં છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે કાય- શરીરની જેમ જે દ્રવ્યો બહુ પ્રદેશોવાળા છે તેમને અસ્તિકાય કહે છે. અવિભાગી પુદ્ગલનું પરમાણુ જેટલા આકાશરૂપ સ્થાનને પ્રદેશ કહે છે એવા પ્રદેશો જીવ, પુદ્ગલ, ધર્મ, અધર્મ અને આકાશ દ્રવ્યમાં જ હોય છે, તેથી તે પાંચેને અસ્તિકાય કહેવામા આવે છે હવે ટીકાકાર તે અસ્તિકાયો બતાવે છે "तंजहा" તે પાચ અસ્તિકાયો નીચે પ્રમાણે છે-"धम्मत्थिकाए, अधम्मत्थिकाए, आगासत्थिकाए, जीवत्थिकाए, पोग्गलत्थिकाए" (૧) ધર્માસ્તિકાય, (૨) અધર્માસ્તિકાય, (૩) આકાશાસ્તિકાય, (૪) જીવાસ્તિકાય અને (૫) પુદ્ગલાસ્તિકાય.

धर्मास्तिकायस्यैव निर्वचन कृतम् तत्रायं हेतुः धर्मशब्द सुखादिमङ्गलस्यार्थ प्रयोजनकत्वेन मङ्गलरूपोऽतः धर्मास्तिकायस्य प्रथम निर्देशः तदनन्तरम् धर्मास्ति कायविरोधित्वात् अधर्मास्तिकायस्य कथनं कृतम्। तदनन्तरम् धर्मास्तिकायाऽध र्मास्तिकाययोराधारभूतत्वात् आकाशास्तिकायस्य कथन कृतम् ततश्चामूर्तत्वाऽन न्तत्वसाधर्म्यात् जीवास्तिकायस्य कथनम् ततो जीवोपष्टंभकत्वात् पुद्गलास्तिका यस्य कथनमिति "धम्मत्थिकाएणं भंते" धर्मास्तिकायः खलु भदन्त! "कति वण्णे" कतिवर्णवान् 'कति गंधे" कति गन्धवान् "कति रसे" कतिरस

कार्यों में से सूत्रकार ने जो सर्वप्रथम धर्मास्तिकाय का निरूपण किया है उसका कारण यह है-धर्मशब्द सुखादिमङ्गलरूप अर्थ का प्रयोजक होने से मंगलरूप माना जाता है अत सूत्रकार ने प्रथम धर्मास्तिकाय का निर्देश किया है। धर्मास्तिकाय से विपरीत स्वभाव वाला होने के कारण धर्मास्तिकाय के बाद अधर्मास्तिकाय का पाठ रखा है। धर्मा स्तिकाय और अधर्मास्तिकाय का आधार भूत क्षेत्र आकाश है-अतः आकाशास्तिकाय का कथन उन दोनों के बाद किया गया है। अमूर्तत्व और अनन्तत्व के साधर्म्य को लेकर आकाशास्तिकाय के बाद जीवा स्तिकाय का कथन किया है। जीव का उपष्टंभक (उपकारक) होने से जीवास्तिकाय के बाद पुद्गलास्तिकाय का कथन किया गया है। (धम्म त्थिकाए भंते!) हे भदन्त! धर्मास्तिकाय (कइवण्णे) कितने वर्णों वाला है? (कइ गंधे) कितने गंध वाला है?, (कइ रसे) कितने रसोंवाला है! (कइफासे) कितने स्पर्शों वाला है? तात्पर्य यह कि हे भदन्त। कहिये

આ પાંચ અસ્તિકાયોમાંથી સૂત્રકારે સૌથી પહેલા ધર્માસ્તિકાયનું નિરૂપણ કર્યું છે, તેનું કારણ એ છે કે-ધર્મ શબ્દ સુખાદિ મંગળરૂપ અર્થનો પ્રયોજક હોવાથી મંગળરૂપ મનાય છે ધર્માસ્તિકાય કરતાં વિપરીત સ્વભાવવાળુ અધર્માસ્તિકાય છે તેથી ધર્માસ્તિકાયનું નિરૂપણ કર્યા પછી સૂત્રકારે અધર્માસ્તિ કાયનું નિરૂપણ કર્યું છે ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાયનું આધારરૂપ ક્ષેત્ર આકાશ છે તેથી સૂત્રકારે તે બન્નેનું નિરૂપણ કર્યા પછી આકાશાસ્તિકાયનું નિરૂપણ કર્યું છે અમૂર્તત્વના અને અનન્તત્વનાસમાન ગુણને લીધે આકા શાસ્તિકાય પછી જીવાસ્તિકાયનું નિરૂપણકર્યું છે પુદ્ગલાસ્તિકાયજીવનું ઉપકારક હોવાથી જીવાસ્તિકાયનું નિરૂપણ કર્યા પછી સૂત્રકારે પુદ્ગલાસ્તિકાયનું નિરૂપણ કર્યું છે પ્રશ્ન- धम्मत्थिकाए भंते!" હે ભદન્ત! ધર્માસ્તિકાયને "कइवण्णे" કેટલા વર્ણ હોય છે? 'कइगंधे' કેટલી ગંધ છે! "कइरसे" કેટલા રસ હોય છે, 'कइफासे" અને કેટલા સ્પર્શ હોય છે?

वान् "कतिफासे" कतिस्पर्शवान्। हे भगवन्! धर्माऽस्तिकाये कति वर्णगन्धरसस्पर्शाः भवन्तीति कथयेति भावः। भगवानाह–'गोयमा' इत्यादि. 'गोयमा' हे गौतम! 'अवण्णे अगंधे अरसे अफासे अरूवी अजीवे सासए अवट्ठिए लोगदव्वे' अवर्णोऽगन्धोऽरसोऽस्पर्शः–अरूपी अजीवः शाश्वतोऽवस्थितो लोकद्रव्यम्। तत्र अवर्णः नीलपीतादिपञ्चवर्णरहितः, तथा अगन्धः = सुरभिदुरभिगन्धरहितः, अरसः–तिक्तादिरसरहितः, अस्पर्शः–कर्कशाद्यष्टविधस्पर्शरहितश्च धर्मास्तिकायः, "अरूवे" अरूपी–आकाररहितः "अजीवे" अजीवः–जीवरहितः "सासए" शाश्वतः–द्रव्यतो नित्यः "अवट्ठिए" अवस्थितःप्रदेशैः "लोगदव्वे" लोकद्रव्यम्। लोकस्य पञ्चाऽस्तिकायरूपस्यांशभूतं द्रव्यमिति लोकद्रव्यम् "से समासओ पंचविहे पन्नत्ते" स धर्मास्तिकायः समासतः संक्षेपतः, पञ्चविधः–पञ्चमका-

---

धर्मास्तिकाय मे कितने वर्ण, कितने गंध, कितने रस, और कितने स्पर्श होते हैं। प्रभु ने इस पर यों कहा–(गोयमा!) हे गौतम। (अवण्णे, अगंधे, अरसे, अफासे, अरूवी, अजीवे, सासए, अवट्ठिए, लोगदव्वे) धर्मास्तिकाय नील पीत आदि पांचों वर्णो से रहित है सुरभिदुरभिगंध से रहित है, तिक्तादि पांच प्रकार के रसों से रहित है कर्कश आदि आठ प्रकार के स्पर्श से रहित है। इसका कोई रूप नहीं है। यह अ-जीव–चैतन्य गुण से रहित है। द्रव्य की अपेक्षा यह (सासए) शाश्वत है। अर्थात् द्रव्य नित्य है। (अवट्ठिए) अपने प्रदेशों से यह सदा एकसा रहता है-अर्थात् धर्मास्तिकाय के असंख्यात प्रदेश हैं–सो ये प्रदेश इसके कमती वढती नहीं होते हैं। (लोगदव्वे) पंचास्तिकायरूप लोक का यह द्रव्य अंशभूत है इसलिये इसे लोक द्रव्य कहा गया है। (से समासओ पंचविहे पण्णत्ते) यह धर्मास्तिकाय संक्षपसे पांच प्रकार का कहा

ઉત્તર—(अवण्णे, अगंवे, अरसे, अफासे, अरूवी, अजीवे, सासए, अवट्ठिए, लोगदव्वे) હે ગૌતમ! ધર્માસ્તિકાય લાલ, પીળો, વાદળી આદિ પાચ રંગોથી રહિત હોય છે, તે સુગંધ અને દુર્ગંધથી રહિત છે તે ખાટો, ખારો, કડવો આદિ પાચ રસથી રહિત છે, તે કઠોર આદિ આઠ પ્રકારના સ્પર્શથી રહિત છે. તે અરૂપી છે, તે અજીવ (ચૈતન્ય રહિત) છે દ્રવ્યની અપેક્ષાએ તે શાશ્વત (નિત્ય) છે. (अवट्ठिए) ધર્માસ્તિકાયના અનેક પ્રદેશો હોય છે તેના તે પ્રદેશોમા વધારો ઘટાડો થતો નથી, માટે તેને અવસ્થિત કહ્યો છે (लोगदव्वे) પંચાસ્તિકાય રૂપ લોકનુ તે અંશભૂત દ્રવ્ય છે તેથી તેને લોકદ્રવ્ય કહેલ છે. (से समासओ पंचविहे पण्णत्ते) તે ધર્માસ્તિકાયના સંક્ષિપ્તમા પાંચ પ્રકાર છે.

धर्मास्तिकायस्यैव निर्वचनं कृतम् तत्रायं हेतुः धर्मशब्दः सुखादिमङ्गलरूपार्थ प्रयोजनकत्वेन मङ्गलरूपोऽतः धर्मास्तिकायस्य प्रथमं निर्देशः तदनन्तरम् धर्मास्तिकायविरोधित्वात् अधर्मास्तिकायस्य कथन कृतम्। तदनन्तरम् धर्मास्तिकायाऽधर्मास्तिकाययोराधारभूतत्वात् आकाशास्तिकायस्य कथनं कृतम् ततश्चामूर्तत्वाऽनन्तत्वसाधर्म्यात् जीवास्तिकायस्य कथनम् ततो जीवोपष्टम्भकत्वात् पुद्गलास्तिकायस्य कथनमिति "धम्मत्थिकाएणं भंते" धर्मास्तिकायः खलु भदन्त! "कति वण्णे" कतिवर्णवान् ' कति गंधे " कति गन्धवान् " कति रसे " कतिरस-

कार्यों में से सूत्रकार ने जो सर्वप्रथम धर्मास्तिकाय का निरूपण किया है उसका कारण यह है-धर्मशब्द सुखादिमङ्गलरूप अर्थ का प्रयोजक होने से मंगलरूप माना जाता है अतः सूत्रकार ने प्रथम धर्मास्तिकाय का निर्देश किया है। धर्मास्तिकाय से विपरीत स्वभाव वाला होने के कारण धर्मास्तिकाय के बाद अधर्मास्तिकाय का पाठ रखा है। धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय का आधार भूत क्षेत्र आकाश है-अतः आकाशास्तिकाय का कथन इन दोनों के बाद किया गया है। अमूर्तत्व और अनन्तत्व के साधर्म्य को लेकर आकाशास्तिकाय के बाद जीवास्तिकाय का कथन किया है। जीव का उपष्टंभक (उपकारक) होने से जीवास्तिकाय के बाद पुद्गलास्तिकाय का कथन किया गया है। (धम्मत्थिकाए भंते!) हे भदन्त! धर्मास्तिकाय (कइवण्णे) कितने वर्णों वाला है? (कइ गंधे) कितने गंध वाला है?, (कइ रसे) कितने रसोंवाला है? (कइफासे) कितने स्पर्शो वाला है? तात्पर्य यह कि हे भदन्त। कहिये

આ પાંચ અસ્તિકાયોમાંથી સૂત્રકારે સૌથી પહેલાં ધર્માસ્તિકાયનું નિરૂપણ કર્યું છે, તેનું કારણ એ છે કે-ધર્મ શબ્દ સુખાદિ મંગળરૂપ અર્થનો પ્રયોજક હોવાથી મંગળરૂપ મનાય છે ધર્માસ્તિકાય કરતાં વિપરીત સ્વભાવવાળું અધર્માસ્તિકાય છે તેથી ધર્માસ્તિકાયનું નિરૂપણ કર્યા પછી સૂત્રકારે અધર્માસ્તિકાયનું નિરૂપણ કર્યું છે ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાયનું આધારરૂપ ક્ષેત્ર આકાશ છે તેથી સૂત્રકારે તે બન્નેનું નિરૂપણ કર્યા પછી આકાશાસ્તિકાયનું નિરૂપણ કર્યું છે અમૂર્તત્વના અને અનન્તત્વનાસમાન ગુણને લીધે આકાશાસ્તિકાય પછી જીવાસ્તિકાયનું નિરૂપણ કર્યું છે પુદ્ગલાસ્તિકાય જીવનું ઉપકારક હોવાથી જીવાસ્તિકાયનું નિરૂપણ કર્યા પછી સૂત્રકારે પુદ્ગલાસ્તિકાયનું નિરૂપણ કર્યું છે પ્રશ્ન- धम्मत्थिकाए भंते !" હે ભદન્ત ! ધર્માસ્તિકાયને " कइवण्णे " કેટલા વર્ણ હોય છે? ' कइगंधे " કેટલી ગંધ છે! " कइरसे " કેટલા રસ હોય છે, " कइफासे " અને કેટલા સ્પર્શ હોય છે?

वान् " कतिफासे " कतिस्पर्शवान् । हे भगवन् ! धर्मास्तिकाये कति वर्णगन्ध रसस्पर्शाः भवन्तीति कथयेति भावः । भगवानाह–' गोयमा ' इत्यादि. ' गोयमा' हे गौतम ! 'अवण्णे अगंधे अरसे अफासे अरूवी अजीवे सासए अवट्ठिए लोगदव्वे' अवर्णोऽगन्धोऽरसोऽस्पर्शः–अरूपी अजीव· शाश्वतोऽवस्थितो लोकद्रव्यम् । तत्र अवर्णः नीलपीतादिपञ्चवर्णरहितः, तथा अगन्धः = सुरभिदुरभिगन्धरहितः, अरसः–तिक्तादिरसरहितः, अस्पर्शः–कर्कशाद्यष्टविधस्पर्शरहितश्च धर्मास्तिकाय., "अरूवे" अरूपी–आकाररहितः " अजीवे " अजीवः–जीवरहितः " सासए " शाश्वतः–द्रव्यतो नित्यः " अवट्ठिए " अवस्थितःप्रदेशैः " लोगदव्वे " लोक द्रव्यम् । लोकस्य पञ्चास्तिकायरूपस्यांशभूतं द्रव्यमिति लोकद्रव्यम् " से समासओ पंचविहे पन्नत्ते" स धर्मास्तिकायः समासतः संक्षेपतः, पञ्चविधः–पञ्चप्रका-

---

धर्मास्तिकाय मे कितने वर्ण, कितने गंध, कितने रस, और कितने स्पर्श होते हैं। प्रभु ने इस पर यों कहा–(गोयमा!) हे गौतम। (अवण्णे, अगंधे, अरसे, अफासे, अरूवी, अजीवे, सासए, अवट्ठिए, लोगदव्वे) धर्मास्तिकाय नील पीत आदि पांचों वर्णो से रहित है सुरभिदुरभिगंध से रहित है, तिक्तादि पांच प्रकार के रसों से रहित है कर्कश आदि आठ प्रकार के स्पर्श से रहित है। इसका कोई रूप नहीं है। यह अ-जीव–चैतन्य गुण से रहित है। द्रव्य की अपेक्षा यह (सासए) शाश्वत है। अर्थात् द्रव्य नित्य है। (अवट्ठिए) अपने प्रदेशों से यह सदा एकसा रहता है–अर्थात् धर्मास्तिकाय के असंख्यात प्रदेश हैं–सो ये प्रदेश इसके कमती बढती नहीं होते हैं। (लोगदव्वे) पंचास्तिकायरूप लोक का यह द्रव्य अंशभूत है इसलिये इसे लोक द्रव्य कहा गया है। (से समासओ पंचविहे पण्णत्ते) यह धर्मास्तिकाय संक्षपसे पांच प्रकार का कहा

ઉત્તર—(अवण्णे, अगंवे, अरसे, अफासे, अरूवी, अजीवे, सासए, अवट्ठिए, लोगदव्वे) હે ગૌતમ ! ધર્માસ્તિકાય લાલ, પીળો, વાદળી આદિ પાચ રંગોથી રહિત હોય છે, તે સુગંધ અને દુર્ગંધથી રહિત છે તે ખાટો, ખારો, કડવો આદિ પાચ રસથી રહિત છે, તે કઠોર આદિ આઠ પ્રકારના સ્પર્શથી રહિત છે. તે અરૂપી છે, તે અજીવ (ચૈતન્ય રહિત) છે દ્રવ્યની અપેક્ષાએ તે શાશ્વત (નિત્ય) છે (अवट्ठिए) ધર્માસ્તિકાયના અનેક પ્રદેશો હોય છે તેના તે પ્રદેશોમા વધારો ઘટાડો થતો નથી, માટે તેને અવસ્થિત કહ્યો છે (लोगदव्वे) પંચાસ્તિકાય રૂપ લોકનું તે અંશભૂત દ્રવ્ય છે. તેથી તેને લોકદ્રવ્ય કહેલ છે. (से समासओ पंचविहे पण्णत्ते) તે ધર્માસ્તિકાયના સંક્ષિપ્તમા પાંચ પ્રકાર છે.

रूकः प्रज्ञप्तः कथित "तं जहा" तद् यथा "दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ गुणओ" द्रव्यतः क्षेत्रत कालतो भावतो गुणतः "दव्वओ ण धम्म त्थिकाए एगे दव्वे" द्रव्यत खलु धर्मास्तिकाय एकं द्रव्यम्। अयत्र धर्मास्तिकायो द्रव्यरूपेण एकद्रव्यरूपो भवति नतानकः 'खेत्तओ णं लोकपमाणमेत्ते" 'क्षेत्रत खलु लोकप्रमाणमात्रम् लोकप्रमाण मात्रा यस्य स तथा लोकपरिमितक्षेत्र विस्तृत इत्यर्थं 'कालओ न कयाइ न आसी" कालतो न कदाचिदपि नासीद् "न कयाइनत्थि" न कदाचिद् नास्ति, "आव णिच्चे" यावन्नित्य, यावत्पदेन "न कयाइ न भविस्सइ भविंसु भवइ भविस्सइ धुए णियए सासए अक्खए

गया है (तंजहा) वे पांच प्रकार इस के इस प्रकार से है-(दव्वओ, खेत्तओ, कालओ, भावओ, गुणओ) द्रव्य से धर्मास्तिकाय १, क्षेत्र से धर्मास्तिकाय २, काल से धर्मास्तिकाय ३ भाव से धर्मास्तिकाय ४ और गुण से धर्मास्तिकाय ५ (दव्वओ णं धम्मत्थिकाए एगे दव्वे) द्रव्य की अपेक्षा से जब धर्मास्तिकाय का विचार किया जाता है-तो यह धर्मास्तिकाय एक द्रव्य रूप होता है अनेकद्रव्यरूप नहीं। (खेत्तओ णं लोकपमाणमेत्ते) क्षेत्र की अपेक्षा यह धर्मास्तिकाय लोकप्रमाणमात्र है अर्थात् जितना बड़ा लोक है उतना ही बड़ा यह है, इसका कारण यह है कि लोकाकाश में यह सर्वत्र व्याप्त है लोकाकाश ऐसा कोई भी प्रदेश नहीं है कि जहां पर इस द्रव्य की अवस्थान (स्थिति) न हो। (कालओ न कयावि न आसी, न कयाइ नत्थि, जाव णिच्चे) काल की अपेक्षा ऐसा कोई भी काल नहीं है कि जिस समय यह नहीं था और न वर्तमान काल ही ऐसा है कि जिसमें यह नहीं है न भविष्यत् काल ही

(तंजहा) ते पांच प्रकारो नीचे प्रमाणे छे-(दव्वओ, खेत्तओ, कालओ भावओ, गुणओ) (१) द्रव्यनी अपेक्षाए धर्मास्तिकाय, (२) क्षेत्रनी अपेक्षाए धर्मास्तिकाय, (३) काळनी अपेक्षाए धर्मास्तिकाय (४) भावनी अपेक्षाए धर्मास्तिकाय. (दव्वओ धम्मत्थिकाए एगे दव्वे) द्रव्यने अनुलक्षीने जो धर्मास्तिकायनो विचार करवामां आवे तो ते धर्मास्तिकाय एक द्रव्य रूप छे अनेक द्रव्यरूप नथी. (खेत्तओ ण लोकप्पमाणमेत्ते) क्षेत्रनी अपेक्षाए विचार करवामां आवे तो ते धर्मास्तिकाय लोक प्रमाण छे एटले के ते लोकना जेटलुं ज मोटुं छे तेनुं कारण ए छे के ते लोकाकाशमां सर्वत्र व्याप्त छे-लोकाकाशनो कोई पण प्रदेश एवो नथी के ज्यां आ द्रव्यनुं अस्तित्व न होय. (कालओ न कयावि न आसी, न कयाइ नत्थि जाव णिच्चे) काळनी अपेक्षाए भूतकाळमां कोई पण समये ते (धर्मास्तिकाय) न हतुं एवुं बन्युं नथी वर्तमान काळमां कोई पण समये ते नथी एवुं बनतुं नथी अने भविष्यकाळमां कोई पण समये तेनुं

आहारादिकाश्चतस्रः १७। 'सरीरा य' शरीराणि च-औदारिकादीनि पञ्च १८। 'जोग' इति योगाः-मनोवाक्कायरूपास्त्रयः १९। 'उवओगे' इति-उपयोगौ द्वौ साकारानाकाररूपौ २०। 'दव्व' इति द्रव्याणि-धर्मास्तिकायादीनि-षट् २१। 'पएसा' प्रदेशा अनन्ताः २२। 'पज्जव' इति पर्यवाः-अनन्ताः २३। 'अद्धा' इति-अद्धाः-अतीताऽनागतसर्वाद्धाभेदात्त्रिविधाः २४। एतानि चतुर्विंशतिस्थानानि 'किं पुव्विं लोयंते' किं पूर्वं लोकान्तः, इत्येवंरूपेण पदेन संयोजितव्यानीति। सूत्राभिलापप्रकारश्चेत्थम्-तत्र-अवकाशान्तरालापकः सूत्र एव कथितः। तनुवातालापको यथा-" पुव्विं भंते लोयंते पच्छा सत्तमे तणुवाए, पुव्विं सत्तमे तणुवाए, पच्छा लोयंते? रोहा! लोयंते य तणुवाए य पुव्विंपेते पच्छापेते दोवि एए सासया

चार संज्ञाएँ, औदारिक आदि पांच शरीर, मनोयोग, वचनयोग, काययोग ये तीन योग, साकार उपयोग अनाकार उपयोग ये दो उपयोग धर्मद्रव्य अधर्मद्रव्य आदिक छ द्रव्य, अनन्तप्रदेश अनंत पर्यायें और अतीत, अनागत, सर्वाद्धाकाल। इन चोईस स्थानकोंका "किं पुव्विं लोयंते" इस पद के साथ संयोजित करना चाहिये। यहां सूत्राभिलाप इस प्रकार होगा इसमें अवकाशान्तरालापक तो सूत्रमें ही कह दिया गया है। तनुवातका अलापक जैसे-" पुव्विं भंते! लोयंते पच्छा सत्तमे तणुवाते, पुव्विं सत्तमे तणुवाते पच्छा लोयंते? रोह! लोयंते य तणुवाए य, पुव्विं पेते पच्छा पेते दुवे सासया भावा अणाणुपुव्वी एसा रोहा" हे भदन्त! पहिले लोकान्त है और बादमें सातवां तनुवात है कि पहिले सातवां तनुवात है और पश्चात् लोकान्त है! उत्तर-हे रोहा दोनों हैं लोकान्त है और सातवां तनुवात है। ये दोनों पहले भी हैं और पीछे भी हैं, क्यों कि

પાંચ શરીર, મનોયોગ, વચનયોગ, અને કાયયોગ એ ત્રણ યોગ સાકારઉપયોગ અને અનાકાર ઉપયોગ, એ બે ઉપયોગ, ધર્મદ્રવ્ય, અધર્મદ્રવ્ય વગેરે છ દ્રવ્ય, અનન્ત પ્રદેશ, અનન્ત પર્યાયો અને અતીત અનાગત, સર્વાદ્ધાકાળ ઉપરોક્ત ૨૪ સ્થાનોનું "किं पुव्विं लोयंते" લોકાન્તની સાથે સંયોજન કરવું જોઈએ, અહીં આ પ્રકારનો સૂત્રાભિલાપ થશે-અવકાશાન્તરનો આલાપક તો સૂત્રમાં જ કહી દીધેલ છે તનુવાતનો આલાપક આ પ્રમાણે બનશે-"पुव्विं भंते! लोयंते पच्छा सत्तमे तणुवाए पुव्विं सत्तमे तणुवाए पच्छा लोयंते?" रोहा! लोयंते य तणुवाए य पुव्विं पेते पच्छा पेते दुवे सासया भावा, अणाणुपुव्वी एसा, रोहा! હે ભગવન્! પહેલાં લોકાન્ત અને પછી સાતમો તનુવાત છે, કે પહેલાં સાતમો તનુવાત અને પછી લોકાન્ત છે? ઉત્તર હે રોહ, લોકાન્ત અને સાતમો તનુવાત બન્ને છે તે બન્ને પહેલાં પણ છે અને પછી પણ છે કારણ કે તે

रकः प्रज्ञप्तः कथित "त जहा" तद् यथा "दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ गुणओ" द्रव्यतः क्षेत्रत कालतो भावतो गुणतः "दव्वओ ण धम्म त्थिकाए एगे दव्वे" द्रव्यत' खलु धर्मास्तिकाय एक द्रव्यम्। अयम धर्मास्ति-कायो द्रव्यरूपेण एकद्रव्यरूपो भवति नत्वनेक 'खेत्तओ णं लोगपमाणमेत्ते' 'क्षेत्रत खलु लोकप्रमाणमात्रम् लोकप्रमाण मात्रा यस्य स तथा लोकपरिमितक्षेत्र विस्तृत इत्यर्थः 'कालओ न कयाइ न आसी" कालतो न कदाचिदपि नासीत् "न कयाइनत्थि" न कदाचित् नास्ति, "जाव णिच्चे" यावन्नित्य, यावत्पदेन "न कयाइ न भविस्सइ भविंसु भवइ भविस्सइ धुवे णियए सासए अक्खए

गया है (तंजहा) वे पांच प्रकार इस के इस प्रकार से है-(दव्वओ, खेत्तओ, कालओ, भावओ, गुणओ) द्रव्य से धर्मास्तिकाय १, क्षेत्र से धर्मास्तिकाय २, काल से धर्मास्तिकाय ३ भाव से धर्मास्तिकाय ४ और गुण से धर्मास्तिकाय ५ (दव्वओ णं धम्मत्थिकाए एगे दव्वे) द्रव्य की अपेक्षा से जब धर्मास्तिकाय का विचार किया जाता है-तो यह धर्मास्तिकाय एक द्रव्य रूप होता है अनेकद्रव्यरूप नहीं। (खेत्तओ णं लोकपमाणमेत्ते) क्षेत्र की अपेक्षा यह धर्मास्तिकाय लोकप्रमाणमात्र है अर्थात् जितना बड़ा लोक है उतना ही बड़ा यह है, इसका कारण यह है कि लोकाकाश में यह सर्वत्र व्याप्त है लोकाकाश ऐसा कोई भी प्रदेश नहीं है कि जहां पर इस द्रव्य की अवस्थान (स्थिति) न हो। (कालओ न कयावि न आसी, न कयाइ नत्थि, जाव णिच्चे) काल की अपेक्षा ऐसा कोई भी काल नहीं है कि जिस समय यह नहीं था और न वर्तमान काल ही ऐसा है कि जिसमें यह नहीं है न भविष्यत् काल ही

(तंजहा) ते पांच प्रकारो नीचे प्रमाणे छे-(दव्वओ, खेत्तओ, कालओ भावओ, गुणओ) (१) द्रव्यनी अपेक्षाओ धर्मास्तिकाय, (२) क्षेत्रनी अपेक्षाओ धर्मास्तिकाय, (३) काળની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય (૪) ભાવની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય. (દવ્વઓ ણં ધમ્મત્થિકાએ એગે દવ્વે) દ્રવ્યને અનુલક્ષીને જો ધર્માસ્તિકાયનો વિચાર કરવામાં આવે તો તે ધર્માસ્તિકાય એક દ્રવ્ય રૂપ છે અનેક દ્રવ્યરૂપ નથી. (ખેત્તઓ ણ લોગપ્પમાણમત્તે) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો તે ધર્માસ્તિકાય લોક પ્રમાણ છે એટલે કે તે લોકના જેટલું જ મોટું છે તેનું કારણ એ છે કે તે લોકાકાશમાં સર્વત્ર વ્યાપ્ત છે-લોકાકાશનો કોઈ પણ પ્રદેશ એવો નથી કે જ્યાં આ દ્રવ્યનું અસ્તિત્વ ન હોય. (કાલઓ ન કયાવિ ન આસી, ન કયાઇ નત્થિ જાવ નિચ્ચે) કાળની અપેક્ષાએ ભૂતકાળમાં કોઈ પણ સમયે તે (ધર્માસ્તિકાય) ન હતું એવું બન્યું નથી, વર્તમાન કાળમાં કોઈ પણ સમયે તે નથી એવું બનતું નથી અને ભવિષ્યકાળમાં કોઈ પણ સમયે તેનું

अव्वए अवट्ठिए" न कदाचित् न भविष्यति अभवत् भवति भविष्यति तत एव ध्रुवः नियतः शाश्वतोऽक्षयोऽव्ययोऽवस्थितः इत्येषां पदानां ग्रहणं भवतीति। तथा नित्योऽस्ति ततश्च कालतः धर्मास्तिकायस्त्रिकालेऽपि तिष्ठतीति 'भावओ अवण्णे अगंधे अरसे अफासे' भावतोऽवर्णोऽगन्धोऽस्पर्शः तत्र भावतः अत एव ध्रुवः नियतः शाश्वतोऽक्षयोऽव्ययोऽव्यवस्थितः इत्येषां पदानां ग्रहणं भवतीति तथा नित्योऽस्ति ततश्च कालतः धर्मास्तिकायस्त्रिकालेऽपि तिष्ठतीति। 'भावओ अवण्णे अगंधे अरसे अफासे" भावतोऽवर्णोऽगन्धोऽरसोऽस्पर्शः तत्र भावतः धर्मास्तिकायः वर्णगन्धरसस्पर्शरहितो भवतीति। "गुणओ गमणगुणे" गुणतः

ऐसा होगा जिस में धर्मास्तिकाय नही रहेगा, तीनों कालों में इस द्रव्य का सद्भाव माना गया है। क्यों कि यह द्रव्य यावत् नित्य है यहां यावत्पद से (न कयाइ न भविस्सइ, भविंसु, भवइ, भविस्सइ, धुवे णिइए सासए अक्खए अधुए अवट्ठिए) इस पाठ को ग्रहण किया गया है। यह ध्रुव है नियत है शाश्वत है अक्षय है अव्यय अवस्थित है। और नित्य है। त्रिकालवर्ती यह अस्तिकाय है। (भावओ अवण्णे, अगंधे, अरसे, अफासे) भाव की अपेक्षा यह धर्मास्तिकायरूप द्रव्य वर्ण, गंध, रस और स्पर्श से रहित है। रूपादिक गुण पुद्गल में ही पाये जाते हैं। पुद्गल के सिवाय अन्य द्रव्यों में नहीं। अतः धर्मास्तिकाय में इन गुणों का निषेध किया गया है क्यों कि यह द्रव्य अरूपी माना गया है। (गुणओ गमणगुणे) गुण की अपेक्षा यह द्रव्य गमनगुणवाला माना गया है। जिस प्रकार जल मत्स्यादिक

અસ્તિત્વ નહીં હોય એવુ બનવાનું નથી એટલે કે ત્રણે કાળમાં તેનું અસ્તિત્વ હોય છે જ કારણ કે તે દ્રવ્ય નિત્ય પર્યન્તના વિશેષણોવાળું છે અહીં (यावत्) પદથી નીચેનો સૂત્રપાઠ ગ્રહણ કરાયો છે-(न भविस्सइ, भविंसु, भवइ, भविस्सइ, धुवे णिइए सासए, अक्खए अव्वए) તે ધ્રુવ છે, નિયત છે, શાશ્વત છે, અક્ષય છે, અવસ્થિત છે અને નિત્ય છે ધર્માસ્તિકાયનો ત્રણે કાળમા સદ્ભાવ (અસ્તિત્વ) હોય છે (भावओ अवण्णे, अगंधे, अरसे, अफासे) ભાવની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય રૂપ દ્રવ્ય વર્ણ ગંધ, રસ અને સ્પર્શથી રહિત હોય છે. રૂપાદિક પુદ્ગલમા જ જોવામા આવે છે-પુદ્ગલ સિવાયના અન્ય દ્રવ્યમાં રૂપાદિક ગુણો હોતા નથી તેથી ધર્માસ્તિકાયમા તે ગુણોનો અભાવ બતાવવામાં આવ્યો છે. એટલે જ ધર્માસ્તિકાયને અરૂપી માનવામા આવ્યું છે,

(गुणओ गमणगुणे) ગુણની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાયને ગમન ગુણવાળું

रकः मज्ञप्त कथित "तं जहा" तद् यथा "दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ गुणओ" द्रव्यत क्षेत्रत कालओ भावतो गुणतः "दव्वओ ण धम्मत्थिकाए एगे दव्वे" द्रव्यत खलु धर्मास्तिकाय एक द्रव्यम्। अयम्ब धर्मास्तिकायो द्रव्यरूपेण एकद्रव्यरूपो भवति नत्वनेकः 'खेत्तओ ण लोगपमाणमेत्ते" 'क्षेत्र खलु लोकप्रमाणमात्रम् लोकप्रमाण मात्रा यस्य स तथा लोकपरिमितक्षेत्र विस्तृत इत्यर्थः 'कालओ न कयाइ न आसी" कालतो न कदाचिदपि नासीत् "न कयाइनत्थि" न कदाचित् नास्ति, "जाव णिच्चे" यावन्नित्य, यावत्पदेन "न कयाइ न भविस्सइ भविंसु भवइ भविस्सइ धुवे णियए सासए अक्खए

गया है (तंजहा) वे पांच प्रकार इस के इस प्रकार से है-(दव्वओ, खेत्तओ, कालओ, भावओ, गुणओ) द्रव्य से धर्मास्तिकाय १, क्षेत्र से धर्मास्तिकाय २, काल से धर्मास्तिकाय ३ भाव से धर्मास्तिकाय ४ और गुण से धर्मास्तिकाय ५ (दव्वओ णं धम्मत्थिकाए एगे दव्वे) द्रव्य की अपेक्षा से जब धर्मास्तिकाय का विचार किया जाता है-तो यह धर्मास्तिकाय एक द्रव्य रूप होता है अनेकद्रव्यरूप नहीं। (खेत्तओ णं लोकपमाणमेत्ते) क्षेत्र की अपेक्षा यह धर्मास्तिकाय लोकप्रमाणमात्र है अर्थात जितना बडा लोक है उतना ही बडा यह है, इसका कारण यह है कि लोकाकाश में यह सर्वत्र व्याप्त है लोकाकाश ऐसा कोई भी प्रदेश नहीं है कि जहां पर इस द्रव्य की अवस्थान (स्थिति) न हो। (कालओ न कयावि न आसी, न कयाइ नत्थि, जाव णिच्चे) काल की अपेक्षा ऐसा कोई भी काल नहीं है कि जिस समय यह नहीं था और न वर्तमान काल ही ऐसा है कि जिसमें यह नहीं है न भविष्यत् काल ही

(तंजहा) તે પાંચ પ્રકારો નીચે પ્રમાણે છે-(दव्वओ, खेत्तओ, कालओ भावओ, गुणओ) (૧) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય, (૨) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય, (૩) કાળની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય (૪) ભાવની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય. (दव्वओण धम्मत्थिकाए एगे दव्वे) દ્રવ્યને અનુલક્ષીને જો ધર્માસ્તિકાયનો વિચાર કરવામાં આવે તો તે ધર્માસ્તિકાય એક દ્રવ્ય રૂપ છે અનેક દ્રવ્યરૂપ નથી. (खेत्तओ ण लोकप्पमाणमेत्ते) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો તે ધર્માસ્તિકાય લોક પ્રમાણ છે એટલે કે તે લોકના જેટલું જ મોટું છે તેનું કારણ એ છે કે તે લોકાકાશમાં સર્વત્ર વ્યાપ્ત છે-લોકાકાશનો કોઈ પણ પ્રદેશ એવો નથી કે જ્યાં આ દ્રવ્યનું અસ્તિત્વ ન હોય. (कालओ न कयावि न आसी, न कयाइ नत्थि जाव णिच्चे) કાળની અપેક્ષાએ ભૂતકાળમાં કોઈ પણ સમયે તે (ધર્માસ્તિકાય) ન હતું એવું બન્યું નથી, વર્તમાન કાળમાં કોઈ પણ સમયે તે નથી એવું બનતું નથી અને ભવિષ્યકાળમાં કોઈ પણ સમયે તેનું

अव्वए अवट्ठिए" न कदाचित् न भविष्यति अभवत् भवति भविष्यति तत एव ध्रुवः नियतः शाश्वतोऽक्षयोऽव्ययोऽवस्थितः इत्येषां पदानां ग्रहणं भवतीति। तथा नित्योऽस्ति ततश्च कालतः धर्मास्तिकायस्त्रिकालेऽपि तिष्ठतीति 'भावओ अवण्णे अगंधे अरसे अफासे' भावतोऽवर्णोऽगन्धोऽस्पर्शः तत्र भावतः अत एव ध्रुवः नियतः शाश्वतोऽक्षयोऽव्ययोऽव्यवस्थितः इत्येषां पदानां ग्रहणं भवतीति तथा नित्योऽस्ति ततश्च कालतः धर्मास्तिकायस्त्रिकालेऽपि तिष्ठतीति। 'भावओ अवण्णे अगंधे अरसे अफासे" भावतोऽवर्णोऽगन्धोऽरसोऽस्पर्शः तत्र भावतः धर्मास्तिकायः वर्णगन्धरसस्पर्शरहितो भवतीति। "गुणओ गमणगुणे" गुणतः

ऐसा होगा जिस में धर्मास्तिकाय नहीं रहेगा, तीनों कालों में इस द्रव्य का सद्भाव माना गया है। क्यों कि यह द्रव्य यावत् नित्य है यहां यावत्पद से (न कयाइ न भविस्सइ, भविंसु, भवइ, भविस्सइ, धुवे णिइए सासए अक्खए अधुए अवट्ठिए) इस पाठ को ग्रहण किया गया है। यह ध्रुव है नियत है शाश्वत है अक्षय है अव्यय अवस्थित है। और नित्य है। त्रिकालवर्ती यह अस्तिकाय है। (भावओ अवण्णे, अगंधे, अरसे, अफासे) भाव की अपेक्षा यह धर्मास्तिकायरूप द्रव्य वर्ण, गंध, रस और स्पर्श से रहित है। रूपादिक गुण पुद्गल में ही पाये जाते हैं। पुद्गल के सिवाय अन्य द्रव्यों में नहीं। अतः धर्मास्तिकाय में इन गुणों का निषेध किया गया है क्यों कि यह द्रव्य अरूपी माना गया है। (गुणओ गमणगुणे) गुण की अपेक्षा यह द्रव्य गमनगुणवाला माना गया है। जिस प्रकार जल मत्स्यादिक

અસ્તિત્વ નહીં હોય એવું બનવાનુ નથી એટલે કે ત્રણે કાળમા તેનું અસ્તિત્વ હોય છે જ કારણ કે તે દ્રવ્ય નિત્ય પર્યન્તના વિશેષણોવાળુ છે અહી (यावत्) પદથી નીચેનો સૂત્રપાઠ ગ્રહણ કરાયો છે-(न भविस्सइ, भविंसु, भवइ, भविस्सइ, धुवे णिइए सासए, अक्खर अव्वए) તે ધ્રુવ છે, નિયત છે, શાશ્વત છે, અક્ષય છે, અવસ્થિત છે અને નિત્ય છે ધર્માસ્તિકાયનો ત્રણે કાળમાં સદ્ભાવ (અસ્તિત્વ) હોય છે (भावओ अवण्णे, अगंधे, अरसे, अफासे) ભાવની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય રૂપ દ્રવ્ય વર્ણ ગંધ, રસ અને સ્પર્શથી રહિત હોય છે રૂપાદિક પુદ્ગલમા જ જોવામા આવે છે-પુદ્ગલ સિવાયના અન્ય દ્રવ્યમાં રૂપાદિક ગુણો હોતા નથી તેથી ધર્માસ્તિકાયમા તે ગુણોનો અભાવ બતાવવામાં આવ્યો છે. એટલે જ ધર્માસ્તિકાયને અરૂપી માનવામા આવ્યું છે,

(गुणओ गमणगुणे) ગુણની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાયને ગમન ગુણવાળું

गमनगुणो भवति । गति परिणतानां जीवपुद्गलानां गत्युपष्टम्भकत्वात् । मत्स्यादि जलचरजीवानां जलमिव यथा जलादि द्रव्यं मत्स्यादीनां गतौ उपकारक भवो जकतया भवति तद्वत् धर्मास्तिकायोऽपि जीवपुद्गलानां गतिपरिणतानां गतौ उपष्टम्भकतया साहाय्यं सम्पादयन् प्रयोजको भवतीति अतएव-अलोके धर्मा स्तिकायाभावात् अलोके जीवादीनां गमनं न भवति किन्तु लोकाकाशपर्यन्तमेव एतेषां गतिर्भवतीति । " अहम्मत्थिकाए वि एवं चेव " अधर्मास्तिकायोऽपि एव मेव यत्र रूपेण धर्मास्तिकायस्य द्रव्यक्षेत्रादिभेदेन स्वरूपस्य कथनं कृतम् तेनैव रूपेण अधर्मास्तिकायस्याऽपि सर्वं ज्ञातव्यम् तथाहि द्रव्यत एकद्रव्यम् क्षेत्रतो लोकप्रमाणं कालतस्त्रिकालवर्ती, शाश्वतो नित्यः भावतोऽवर्णः अगन्धः, अरसः, अस्पर्शः, तत् किम् धर्मास्तिकायाऽधर्मास्तिकायौ सर्वथा समानौ, तन्तु न सम

जलचर जीवों को चलने में उदासीन कारण होता है उसी प्रकार गतिपरिणत जीवपुद्गलों को चलने में यह द्रव्य सहायक होता है । इसी कारण अलोकाकाश में जीवादिकों की गति नहीं होती है । क्यों कि वहां पर इस द्रव्य का अभाव है । लोकाकाश के अन्ततक ही इस द्रव्य का सद्भाव है अतः वहीं तक जीवादिक द्रव्यों का गमन होता है । (अहम्मत्थिकाएवि एवं चेव) अधर्मास्तिकाय भी ऐसा ही है । द्रव्य, क्षेत्र, काल आदि के भेद द्वारा जिस तरह से धर्मास्तिकाय का स्वरूप कथन किया गया है उसी तरह से अधर्मास्तिकाय के विषय में भी समस्त कथन जानना चाहिये द्रव्य की अपेक्षा अधर्मास्तिकाय एक द्रव्य है, क्षेत्र की अपेक्षा यह लोक प्रमाण है, काल की अपेक्षा यह त्रि-कालवर्ती है, शाश्वत है, नित्य है, भावकी अपेक्षा यह वर्ण, गंध, रस, स्पर्श इन चार गुणों से रहित है ।

કહ્યું છે, જેવી રીતે મત્સ્યાદિક જલચર જીવોને ચાલવામાં જળ ઉદાસીનરૂપે કારણરૂપ બને છે, એજ પ્રમાણે ગતિપરિણત જીવાદિકોની ગતિ થતી નથી,કારણ કે ત્યાં આ દ્રવ્ય (ધર્માસ્તિકાય) નો અભાવ છે, લોકાકાશના અન્ત સુધી જ આ દ્રવ્યનો સદ્ભાવ (અસ્તિત્વ) છે તેથી ત્યાં સુધી જ જીવાદિક દ્રવ્યોનું ગમન થઈ શકે છે (अहम्मत्थिकाए वि एवं चेव) અધર્માસ્તિકાય પણ એવું જ છે, દ્રવ્ય, કાલ, ક્ષેત્ર આદિની દૃષ્ટિએ ધર્માસ્તિકાયનું જેવું સ્વરૂપ બતાવ્યું છે, એવું જ સ્વરૂપ અધર્માસ્તિકાયનું પણ સમજવું દ્રવ્યની અપેક્ષાએ અધર્માસ્તિકાય એક દ્રવ્ય છે, ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ તે લોકપ્રમાણ છે, કાળની અપેક્ષાએ ત્રણે કાળમાં તેનો સદ્ભાવ (અસ્તિત્વ) હોય છે તે શાશ્વત અને નિત્ય છે ભાવની અપેક્ષાએ તે વર્ણ, ગંધ, રસ અને સ્પર્શથી રહિત હોય છે

वति विरुद्धयोर्द्वयोः सर्वथा साजात्यस्याऽन्यत्राऽदृष्टत्वात् सर्वथा साजात्ये द्वयोर्विरोध एव कः स्यादित्यत आह–'नवरं गुणओ ठाणगुणे' इति "नवरं गुणओ ठाणगुणे" नवरं गुणतः स्थानगुणः, अधर्मास्तिकायः स्थितिगुणः यथा धर्मास्तिकायो गुणतः कार्यतो गत्युपग्राहकस्तथा अधर्मास्तिकायोऽपि कार्यतः स्थितौ प्रयोजकः स्थितिपरिणतानां जीवपुद्गलानां स्थित्युपष्टंभहेतुः मत्स्यादि जीवानां शुष्कस्थलमिव यद्वा श्रान्तपथिकानाम् वृक्षादिच्छायेव, अयमेव धर्मास्तिकायाऽधर्मास्तिकाययोर्भेदः यदेकः गतौ कारणम् परश्च स्थितौ कारणम्। "आगासत्थिकाए

शंका—तो फिर इस कथन से तो यही बात आई कि ये दोनों द्रव्य आपस में सर्वथा रूप से ही समान हैं परन्तु यह बात तो संभवित नहीं होती है क्यों कि धर्मद्रव्य से अधर्मद्रव्य विरुद्ध है और अधर्मद्रव्य से धर्मद्रव्य विरुद्ध है अतः जब ये दोनों द्रव्य आपस में विरुद्ध हैं तब इनमें सर्वथा रूप से समानता कैसे आसकती है क्यों कि विरुद्ध दो द्रव्यों में सर्वथा साजात्य अन्यत्र देखने में नहीं आता है। यदी सर्वथा साजात्य परस्पर विरुद्ध दो द्रव्यों में हो तो फिर उनमें विरोध ही क्यों माना जावे? तो ऐसी शंका को दूर करते हुए सूत्रकार कहते हैं कि (नवरं गुणओ ठाणगुणे) इन दोनों द्रव्यों में सर्वथा समानता नहीं है क्यों कि यह अधर्मास्तिकाय स्थानगुण वाला है जिस प्रकार धर्मास्तिकाय गतिपरिणत जीवों और पुद्गलों को गमन में सहायक होता है उसी प्रकार यह द्रव्य भी स्थिति परिणत जीव और पुद्गलों को ठहरने में पथिकों की छाया की तरह सहायक होता है अतःजिस प्रकार धर्मद्रव्य का कार्य चलने में सहायता

શંકા–ઉપરના કથકથી તો એવું લાગે છે કે ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાય એ બન્ને દ્રવ્યો તદ્દન સમાન છે, પરતુ એ વાત તો સંભવિત નથી, કારણુ કે ધર્મ દ્રવ્યથી અધર્મ દ્રવ્ય વિરુદ્ધ છે અને અધર્મ દ્રવ્યથી ધર્મદ્રવ્ય વિરુદ્ધ છે, આ રીતે બન્ને વચ્ચે અસમાનતા રહેલી હોય તો તેમની વચ્ચે બધી રીતે સમાનતા કેવી રીતે સંભવી શકે ? કારણુ કે બે વિરુદ્ધ દ્રવ્યોમાં સંપૂર્ણ સમાનતા અન્યત્ર જોવામાં આવતી નથી, જો પરસ્પર વિરુદ્ધ દ્રવ્યોમાં સંપૂર્ણતઃ સમાનતા હોય તો તેમનામા વિરોધકેવી રીતે માની શકાય ? આ શંકાનુ નિવારણુ કરવા માટે સૂત્રકાર કહે છે કે–

(નવર ગુણઓ ઠાણગુણે) ધર્માસ્તિકાય ગમન ગુણવાળું છે પણુ અધર્માસ્તિકાય સ્થાન ગુણવાળું છે જેવી રીતે ધર્માસ્તિકાય ગમન કરતા જીવો અને પુદ્ગલોને ગમન કરવામા સહાયક બને છે, એજ પ્રમાણે અધર્માસ્તિકાય દ્રવ્ય સ્થિતિપરિણુત જીવો અને પુદ્ગલોને સ્થિતિની બાબતમાં (થોભવામાં) સહા-

गमनगुणो भवति । गति परिणतानां जीवपुद्गलानां गत्युपष्टंभकत्वात् । मत्स्यादि जलचरजीवानां जलमिव यथा जलादि द्रव्य मत्स्यादीनां गतौ उपकारक प्रयोजकतया भवति तद्वत् धर्मास्तिकायोऽपि जीवपुद्गलानां गतिपरिणतानां गतौ उपष्टंभकतया साहाय्यं सम्पादयन् प्रयोजको भवतीति अतएव-अलोके धर्मास्तिकायाभावात् अलोके जीवादीनां गमनं न भवति किन्तु लोकाकाशपर्यन्तमेव एतेषां गतिर्भवतीति । " अहम्मत्थिकाए वि एवं चेव " अधर्मास्तिकायोऽपि एवमेव यत् रूपेण धर्मास्तिकायस्य द्रव्यक्षेत्रादिभेदेन स्वरूपस्य कथनं कृतम् तेनैव रूपेण अधर्मास्तिकायस्याऽपि सर्वं ज्ञातव्यम् तथाहि द्रव्यत एकद्रव्यम् क्षेत्रतो लोकप्रमाणं कालतस्त्रिकालवर्ती, शाश्वतो नित्यः भावतोऽवर्ण अगन्धः, अरसः, अस्पर्शः, तत् किम् धर्मास्तिकायाऽधर्मास्तिकायौ सर्वथा समानौ, तन्न सम-

जलचर जीवों को चलने में उदासीन कारण होता है उसी प्रकार गतिपरिणत जीवपुद्गलों को चलने में यह द्रव्य सहायक होता है । इसी कारण अलोकाकाश में जीवादिकों की गति नहीं होती है । क्यों कि वहां पर इस द्रव्य का अभाव है । लोकाकाश के अन्ततक ही इस द्रव्य का सद्भाव है अतः वहीं तक जीवादिक द्रव्यों का गमन होता है । (अहम्मत्थिकाएवि एवं चेव) अधर्मास्तिकाय भी ऐसा ही है । द्रव्य, क्षेत्र, काल आदि के भेद द्वारा जिस तरह से धर्मास्तिकाय का स्वरूप कथन किया गया है उसी तरह से अधर्मास्तिकाय के विषय में भी समस्त कथन जानना चाहिये द्रव्य की अपेक्षा अधर्मास्तिकाय एक द्रव्य है, क्षेत्र की अपेक्षा यह लोक प्रमाण है, काल की अपेक्षा यह त्रिकालवर्ती है, शाश्वत है, नित्य है, भावकी अपेक्षा यह वर्ण, गंध, रस, स्पर्श इन चार गुणों से रहित है ।

કહ્યું છે, જેવી રીતે મત્સ્યાદિક જલચર જીવોને ચાલવામાં જળ ઉદાસીનરૂપે સહાયરૂપ બને છે, એજ પ્રમાણે ગતિપરિણત જીવાદિકોની ગતિ થતી નથી, કારણ કે ત્યાં આ દ્રવ્ય (ધર્માસ્તિકાય) નો અભાવ છે લોકાકાશના અન્ત સુધી જ આ દ્રવ્યનો સદ્ભાવ (અસ્તિત્વ) છે તેથી ત્યાં સુધી જ જીવાદિક દ્રવ્યોનું ગમન થઈ શકે છે, (अहम्मत्थिकाए वि एवं चेव) અધર્માસ્તિકાય પણ એવું જ છે, દ્રવ્ય, કાલ, ક્ષેત્ર આદિની દૃષ્ટિએ ધર્માસ્તિકાયનું જેવું સ્વરૂપ બતાવ્યું છે, એવું જ સ્વરૂપ અધર્માસ્તિકાયનું પણ સમજવું દ્રવ્યની અપેક્ષાએ અધર્માસ્તિકાય એક દ્રવ્ય છે, ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ તે લોકપ્રમાણ છે, કાળની અપેક્ષાએ ત્રણે કાળમાં તેનો સદ્ભાવ (અસ્તિત્વ) હોય છે તે શાશ્વત અને નિત્ય છે ભાવની અપેક્ષાએ તે વર્ણ, ગંધ, રસ અને સ્પર્શથી રહિત હોય છે

वति विरुद्धयोर्द्वयोः सर्वथा साजात्यस्याऽन्यत्राऽदृष्टत्वात् सर्वथा साजात्ये द्वयोर्विरोध एव कः स्यादित्यत आह–' नवरं गुणओ ठाणगुणे ' इति " नवरं गुणओ ठाणगुणे " नवरं गुणतः स्थानगुणः, अधर्मास्तिकायः स्थितिगुणः यथा धर्मास्तिकायो गुणतः कार्यतो गत्युपग्राहकस्तथा अधर्मास्तिकायोऽपि कार्यतः स्थितौ प्रयोजकः स्थितिपरिणतानां जीवपुद्गलानां स्थित्युपष्टंभहेतुः मत्स्यादि जीवानां शुष्कस्थलमिव यद्वा श्रान्तपथिकानाम् वृक्षादिच्छायेव, अयमेव धर्मास्तिकायाऽधर्मास्तिकाययोर्भेदः यदेकः गतौ कारणम् परश्च स्थितौ कारणम् । " आगासत्थिकाए

शंका—तो फिर इस कथन से तो यही बात आई कि ये दोनों द्रव्य आपस में सर्वथा रूप से ही समान हैं परन्तु यह बात तो संभवित नहीं होती है क्यों कि धर्मद्रव्य से अधर्मद्रव्य विरुद्ध है और अधर्मद्रव्य से धर्मद्रव्य विरुद्ध है अतः जब ये दोनों द्रव्य आपस में विरुद्ध हैं तब इनमें सर्वथा रूप से समानता कैसे आसकती है क्यों कि विरुद्ध दो द्रव्यों में सर्वथा साजात्य अन्यत्र देखने में नहीं आता है। यदी सर्वथा साजात्य परस्पर विरुद्ध दो द्रव्यों में हो तो फिर उनमें विरोध ही क्यों माना जावे ? तो ऐसी शंका को दूर करते हुए सूत्रकार कहते हैं कि (नवरं गुणओ ठाणगुणे) इन दोनों द्रव्यों में सर्वथा समानता नहीं है क्यों कि यह अधर्मास्तिकाय स्थानगुण वाला है जिस प्रकार धर्मास्तिकाय गतिपरिणत जीवों और पुद्गलों को गमन में सहायक होता है उसी प्रकार यह द्रव्य भी स्थिति परिणत जीव और पुद्गलों को ठहरने में पथिकों की छाया की तरह सहायक होता है अतःजिस प्रकार धर्मद्रव्य का कार्य चलने में सहायता

શંકા–ઉપરના કથકથી તો એવું લાગે છે કે ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાય એ બન્ને દ્રવ્યો તદ્દન સમાન છે, પરંતુ એ વાત તો સંભવિત નથી, કારણ કે ધર્મ દ્રવ્યથી અધર્મ દ્રવ્ય વિરુદ્ધ છે અને અધર્મ દ્રવ્યથી ધર્મદ્રવ્ય વિરુદ્ધ છે, આ રીતે બન્ને વચ્ચે અસમાનતા રહેલી હોય તો તેમની વચ્ચે બધી રીતે સમાનતા કેવી રીતે સભવી શકે ? કારણ કે બે વિરુદ્ધ દ્રવ્યોમાં સંપૂર્ણ સમાનતા અન્યત્ર જોવામાં આવતી નથી, જો પરસ્પર વિરુદ્ધ દ્રવ્યોમાં સંપૂર્ણતઃ સમાનતા હોય તો તેમનામા વિરોધકેવી રીતે માની શકાય ? આ શંકાનુ નિવારણ કરવા માટે સૂત્રકાર કહે છે કે–

(નવર ગુણઓ ઠાણગુણે) ધર્માસ્તિકાય ગમન ગુણવાળુ છે. પણ અધર્માસ્તિકાય સ્થાન ગુણવાળું છે જેવી રીતે ધર્માસ્તિકાય ગમન કરતા જીવો અને પુદ્ગલોને ગમન કરવામા સહાયક બને છે, એજ પ્રમાણે અધર્માસ્તિકાય દ્રવ્ય સ્થિતિપરિણત જીવો અને પુદ્ગલોને સ્થિ[illegible]તમાં (થોભવામાં) સહા-

गमनगुणो भवति । गति परिणतानां जीवपुद्गलानां गत्युपष्टम्भकत्वात् । मत्स्यादि जलचरजीवानां जलमिव यथा जलादि द्रव्य मत्स्यादीनां गतौ उपकारक प्रयोजकतया भवति तद्वत् धर्मास्तिकायोऽपि जीवपुद्गलानां गतिपरिणतानां गतौ उपष्टम्भकतया साहाय्य सम्पादयन् प्रयोजको भवतीति अतएव-अलोके धर्मास्तिकायाभावात् अलोके जीवादीनां गमन न भवति किन्तु लोकाकाशपर्यन्तमेव एतेषां गतिर्भवतीति । " अहम्मत्थिकाए वि एवं चेव " अधर्मास्तिकायोऽपि एव मेव येन रूपेण धर्मास्तिकायस्य द्रव्यक्षेत्रादिभवन स्वरूपस्य कथन कृतम् तेनैव रूपेण अधर्मास्तिकायस्याऽपि सर्वं ज्ञातव्यम् तथाहि द्रव्यत एकद्रव्यम् क्षेत्रतो लोकप्रमाणं कालतस्त्रिकालवर्ती, शाश्वतो नित्यः भावतोऽवर्णः अगन्धः, अरसः, अस्पर्शः, तत् किम् धर्मास्तिकायाऽधर्मास्तिकायौ सर्वथा समानौ, तन्नु न संभ-

---

जलचर जीवों को चलने में उदासीन कारण होता है उसी प्रकार गतिपरिणत जीवपुद्गलों को चलने में यह द्रव्य सहायक ,होता है । इसी कारण अलोकाकाश में जीवादिकों की गति नहीं होती है । क्यों कि यहां पर इस द्रव्य का अभाव है । लोकाकाश के अन्ततक ही इस द्रव्य का सद्भाव है अतः वहीं तक जीवादिक द्रव्यों का गमन होता है । (अहम्मात्थिकाएवि एवं चेव) अधर्मास्तिकाय भी ऐसा ही है । द्रव्य, क्षेत्र, काल आदि के भेद द्वारा जिस तरह से धर्मास्तिकाय का स्वरूप कथन किया गया है उसी तरह से अधर्मास्तिकाय के विषय में भी समस्त कथन जानना चाहिये द्रव्य की अपेक्षा अधर्मास्तिकाय एक द्रव्य है, क्षेत्र की अपेक्षा यह लोक प्रमाण है, काल की अपेक्षा यह त्रि-कालवर्ती है, शाश्वत है, नित्य है, भावकी अपेक्षा यह वर्ण, गंध, रस, स्पर्श इन चार गुणों से रहित है ।

કહ્યું છે, જેવી રીતે મત્સ્યાદિક જલચર જીવોને ચાલવામાં જળ ઉદાસીનરૂપે કારણરૂપ બને છે, એજ પ્રમાણે ગતિપરિણત જીવાદિકોની ગતિ થતી નથી,કારણ કે ત્યાં આ દ્રવ્ય (ધર્માસ્તિકાય) નો અભાવ છે, લોકાકાશના અન્ત સુધી જ આ દ્રવ્યનો સદ્ભાવ (અસ્તિત્વ) છે તેથી ત્યાં સુધી જ જીવાદિક દ્રવ્યોનું ગમન થઈ શકે છે (अहम्मत्थिकाए वि एवं चेव) અધર્માસ્તિકાય પણ એવું જ છે દ્રવ્ય, કાલ ક્ષેત્ર આદિની દૃષ્ટિએ ધર્માસ્તિકાયનું જેવું સ્વરૂપ બતાવ્યું છે, એવું જ સ્વરૂપ અધર્માસ્તિકાયનું પણ સમજવું દ્રવ્યની અપેક્ષાએ અધર્માસ્તિકાય એક દ્રવ્ય છે, ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ તે લોકપ્રમાણ છે, કાળની અપેક્ષાએ ત્રણે કાળમાં તેનો સદ્ભાવ (અસ્તિત્વ) હોય છે તે શાશ્વત અને નિત્ય છે ભાવની અપેક્ષાએ તે વર્ણ, ગંધ, રસ અને સ્પર્શથી રહિત હોય છે

वति विरुद्धयोर्द्वयोः सर्वथा साजात्यस्याऽन्यत्राऽदृष्टत्वात् सर्वथा साजात्ये द्वयोर्विरोध एव कः स्यादित्यत आह–'नवरं गुणओ ठाणगुणे' इति "नवरं गुणओ ठाणगुणे" नवरं गुणतः स्थानगुणः, अधर्मास्तिकायः स्थितिगुणः यथा धर्मास्तिकायो गुणतः कार्यतो गत्युपग्राहकस्तथा अधर्मास्तिकायोऽपि कार्यतः स्थितौ प्रयोजकः स्थितिपरिणतानां जीवपुद्गलानां स्थित्युपष्टंभहेतुः मत्स्यादि जीवानां शुष्कस्थलमिव यद्वा श्रान्तपथिकानाम् वृक्षादिच्छायेव, अयमेव धर्मास्तिकायाऽधर्मास्तिकाययोर्भेदः यदेकः गतौ कारणम् परश्च स्थितौ कारणम्। "आगासत्थिकाए

शंका—तो फिर इस कथन से तो यही बात आई कि ये दोनों द्रव्य आपस में सर्वथा रूप से ही समान हैं परन्तु यह बात तो संभवित नहीं होती है क्यों कि धर्मद्रव्य से अधर्मद्रव्य विरुद्ध है और अधर्मद्रव्य से धर्मद्रव्य विरुद्ध है अतः जब ये दोनों द्रव्य आपस में विरुद्ध हैं तब इनमें सर्वथा रूप से समानता कैसे आसकती है क्यों कि विरुद्ध दो द्रव्यों में सर्वथा साजात्य अन्यत्र देखने में नहीं आता है। यदी सर्वथा साजात्य परस्पर विरुद्ध दो द्रव्यों में हो तो फिर उनमें विरोध ही क्यों माना जावे? तो ऐसी शंका को दूर करते हुए सूत्रकार कहते हैं कि (नवरं गुणओ ठाणगुणे) इन दोनों द्रव्यों में सर्वथा समानता नहीं है क्यों कि यह अधर्मास्तिकाय स्थानगुण वाला है जिस प्रकार धर्मास्तिकाय गतिपरिणत जीवों और पुद्गलों को गमन में सहायक होता है उसी प्रकार यह द्रव्य भी स्थिति परिणत जीव और पुद्गलों को ठहरने में पथिकों की छाया की तरह सहायक होता है अतः जिस प्रकार धर्मद्रव्य का कार्य चलने में सहायता

શંકા–ઉપરના કથકથી તો એવું લાગે છે કે ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાય એ બન્ને દ્રવ્યો તદ્દન સમાન છે, પરંતુ એ વાત તો સંભવિત નથી, કારણ કે ધર્મ દ્રવ્યથી અધર્મ દ્રવ્ય વિરુદ્ધ છે અને અધર્મ દ્રવ્યથી ધર્મદ્રવ્ય વિરુદ્ધ છે, આ રીતે બન્ને વચ્ચે અસમાનતા રહેલી હોય તો તેમની વચ્ચે બધી રીતે સમાનતા કેવી રીતે સંભવી શકે? કારણ કે બે વિરુદ્ધ દ્રવ્યોમાં સંપૂર્ણ સમાનતા અન્યત્ર જોવામાં આવતી નથી, જો પરસ્પર વિરુદ્ધ દ્રવ્યોમાં સંપૂર્ણતઃ સમાનતા હોય તો તેમનામા વિરોધ કેવી રીતે માની શકાય? આ શંકાનુ નિવારણ કરવા માટે સૂત્રકાર કહે છે કે–

(નવર ગુણઓ ઠાણગુણે) ધર્માસ્તિકાય ગમન ગુણવાળુ છે પણ અધર્માસ્તિકાય સ્થાન ગુણવાળું છે જેવી રીતે ધર્માસ્તિકાય ગમન કરતા જીવો અને પુદ્ગલોને ગમન કરવામા સહાયક બને છે, એજ પ્રમાણે અધર્માસ્તિકાય દ્રવ્ય સ્થિતિપરિણત જીવો અને પુદ્ગલોને સ્થિતિની બાબતમાં (થોભવામાં) સહા-

भावा अणाणुपुव्वी एसा रोहा!" एवं घनवातमारभ्य पर्यवपर्यन्ता एकविंशति रालापकाः स्वबुद्धया संयोजनीया इति। अद्धाविषये तु अतीतानागताद्धाविषयौ द्वावालापकौ विशेषौ। तथाहि-" पुव्विं भंते! लोयंते पच्छा अतीतद्धा, पुव्विं अतीतद्धा पच्छा लोयंते?, रोहा! लोयंते य अतीतद्धा य पुव्विंपेते पच्छापेते-दोवि एए सासया भावा अणाणुपुव्वी एसा रोहा!। अथानागताद्धा विषये आह-"पुव्विं भंते लोयंते पच्छा अणागयद्धा, पुव्विं अणागयद्धा पच्छा लोयंते? रोहा लोयंते य

ये दोनों शाश्वत भाव हैं। इस लिए हे रोह! इन दोनों में पूर्वपश्चात् भावरूपक्रम नहीं बनता है। इसी प्रकार से घनवात से लेकर पर्यव पर्यन्त २१ आलापक अपनी बुद्धि से संयोजित कर लेना चाहिये। अद्धाविषय में अतीत अनागत अद्धा विषयक दो आलापक जानना चाहिये। वे इस प्रकार से हैं-" पुव्विं भंते! लोयंते पच्छा अतीताद्धा, पुव्विं अतीताद्धा पच्छा लोयंते? रोहा! लोयंते य अतीताद्धा य पुव्विंपेते पच्छापेते दुवे सासया भावा अणाणुपुव्वी एसा रोहा। हे भदन्त! पहिले लोकान्त है, और बाद में अतीताद्धा है कि पहिले अतीताद्धा है और बाद में लोकान्त है? हे रोह! लोकान्त और अतीताद्धा ये दोनों हैं और ये दोनों पहिले भी हैं और पश्चात् भी हैं, क्योंकि ये दोनों शाश्वत भाव हैं। इनमें पूर्व पश्चात्क्रम नहीं है। "पुव्विं भंते! लोयंते पच्छा अणागयद्धा? पुव्विं अणागयद्धा पच्छा लोयंते? रोहा! लोयंते य अणागयद्धा य पुव्विंपेते पच्छापेते दुवे सासया भावा, अणाणुपुव्वी एसा रोहा।" हे भदन्त! पहिले लोकान्त है और पीछे अनागताद्धा है कि पहिले अनागताद्धा है और पीछे लोकान्त है? हे रोह!

બન્ને શાશ્વતભાવ છે તેથી હે રોહ! તેમનામા પૂર્વ અને પછીના ભાવરૂપ આનુપૂર્વીનો અભાવ છે એજ પ્રમાણે ઘનવાતથી લઈને પર્યાય સુધીના ૨૧ આલાપક બનાવી લેવા. અતીત, અનાગત અને અદ્ધા વિષયક બે આલાપકો આ પ્રમાણે બનશે. "पुव्विं भंते! लोयंते पच्छा अतीतद्धा पुव्विं अतीताद्धा पच्छा लोयंते? रोहा लोयंते य अतीताद्धा य पुव्विं पेते पच्छा पेते दुवे सासया भावा अणाणुपुव्वी एसा रोहा!" હે ભગવન્! પહેલા લોકાન્ત અને પછી અતીતાદ્ધા છે, કે પહેલા અતીતાદ્ધા અને ત્યારબાદ લોકાન્ત છે? હે રોહ! લોકાન્ત અને અતીતાદ્ધા બન્ને પહેલાં પણ છે અને પછી પણ છે કારણ કે તે બન્ને શાશ્વતભાવ છે તેથી તેમનામાં પૂર્વાપર ભાવ રૂપ (આનુપૂર્વી) ક્રમ નથી. "पुव्विं भंते! लोयंते पच्छा अणागयद्धा? पुव्विं अणागयद्धा पच्छा लोयंते?' 'रोहा! लोयंते य अणागयद्धा य पुव्विं पेते पच्छा पेते दुवे सासया भावा, अणाणुपुव्वी एसा रोहा!" હે ભગવન્! પહેલા લોકાન્ત અને પછી અનાગતાદ્ધા છે, કે પહેલા અનાગતાદ્ધા

वति विरुद्धयोर्द्वयोः सर्वथा साजात्यस्याऽन्यत्राऽदृष्टत्वात् सर्वथा साजात्ये द्वयोर्विरोध एव कः स्यादित्यत आह–' नवरं गुणओ ठाणगुणे ' इति " नवरं गुणओ ठाणगुणे " नवरं गुणतः स्थानगुणः, अधर्मास्तिकायः स्थितिगुणः यथा धर्मास्तिकायो गुणतः कार्यतो गत्युपग्राहकस्तथा अधर्मास्तिकायोऽपि कार्यतः स्थितौ प्रयोजकः स्थितिपरिणतानां जीवपुद्गलानां स्थित्युपष्टंभहेतुः मत्स्यादि जीवानां शुष्कस्थलमिव यद्वा श्रान्तपथिकानाम् वृक्षादिच्छायेव, अयमेव धर्मास्तिकायाऽधर्मास्तिकाययोर्भेदः यदेकः गतौ कारणम् परश्च स्थितौ कारणम् । " आगासत्थिकाए

शंका—तो फिर इस कथन से तो यही बात आई कि ये दोनों द्रव्य आपस में सर्वथा रूप से ही समान हैं परन्तु यह बात तो संभवित नहीं होती है क्यों कि धर्मद्रव्य से अधर्मद्रव्य विरुद्ध है और अधर्मद्रव्य से धर्मद्रव्य विरुद्ध है अतः जब ये दोनों द्रव्य आपस में विरुद्ध हैं तब इनमें सर्वथा रूप से समानता कैसे आसकती है क्यों कि विरुद्ध दो द्रव्यों में सर्वथा साजात्य अन्यत्र देखने में नहीं आता है । यदी सर्वथा साजात्य परस्पर विरुद्ध दो द्रव्यों में हो तो फिर उनमें विरोध ही क्यों माना जावे ? तो ऐसी शंका को दूर करते हुए सूत्रकार कहते हैं कि (नवरं गुणओ ठाणगुणे) इन दोनों द्रव्यों में सर्वथा समानता नहीं है क्यों कि यह अधर्मास्तिकाय स्थानगुण वाला है जिस प्रकार धर्मास्तिकाय गतिपरिणत जीवों और पुद्गलों को गमन में सहायक होता है उसी प्रकार यह द्रव्य भी स्थिति परिणत जीव और पुद्गलों को ठहरने में पथिकों की छाया की तरह सहायक होता है अतःजिस प्रकार धर्मद्रव्य का कार्य चलने में सहायता

શંકા—ઉપરના કથકથી તો એવુ લાગે છે કે ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાય એ બન્ને દ્રવ્યો તદ્દન સમાન છે, પરંતુ એ વાત તો સંભવિત નથી, કારણ કે ધર્મ દ્રવ્યથી અધર્મ દ્રવ્ય વિરુદ્ધ છે અને અધર્મ દ્રવ્યથી ધર્મદ્રવ્ય વિરુદ્ધ છે, આ રીતે બન્ને વચ્ચે અસમાનતા રહેલી હોય તો તેમની વચ્ચે બધી રીતે સમાનતા કેવી રીતે સંભવી શકે ? કારણ કે બે વિરુદ્ધ દ્રવ્યોમાં સંપૂર્ણ સમાનતા અન્યત્ર જોવામા આવતી નથી, જો પરસ્પર વિરુદ્ધ દ્રવ્યોમા સંપૂર્ણતઃ સમાનતા હોય તો તેમનામા વિરોધકેવી રીતે માની શકાય ? આ શંકાનુ નિવારણ કરવા માટે સૂત્રકાર કહે છે કે–

(નવર ગુણઓ ઠાણગુણે) ધર્માસ્તિકાય ગમન ગુણવાળુ છે. પણ અધર્માસ્તિકાય સ્થાન ગુણવાળુ છે જેવી રીતે ધર્માસ્તિકાય ગમન કરતાં જીવો અને પુદ્ગલોને ગમન કરવામા સહાયક બને છે, એજ પ્રમાણે અધર્માસ્તિકાય દ્રવ્ય સ્થિતિપરિણત જીવો અને પુદ્ગલોને સ્થિતિ ભાણતમાં (થોભવામાં) સહા-

वि एवं चेव" आकाशास्तिकायोऽपि एवमेव । यथैव धर्मास्तिकायाऽ-धर्मास्तिकाययोः स्वरूपं तथा आकाशास्तिकायोऽपि ज्ञातव्यः पूर्वापेक्षयाऽऽकाशास्तिकायस्य वैलक्षण्यं द्योतयितुमाह-'नवरं खेत्तओण' इत्यादि "नवरं खेत्तओ णं आगासत्थिकाए लोयालोयप्पमाणमेत्ते" नवरं क्षेत्रतः खलु आकाशास्तिकाय लोकालोकप्रमाणमात्र, पूर्वापेक्षया आकाशास्तिकायस्याऽयं भेदः यत् धर्मास्तिकायाऽधर्मास्तिकायौ लोकप्रमाणौ एव भवतः क्षेत्रत, आकाशास्तिकायस्तु क्षेत्रतो लोकालोकप्रमाणक लोकमलोकमुभयमपि व्याप्नोति आकाशास्तिकाय इति। 'अणते चेव जाव' अनन्तमेव यावत्। अत्र यावत्पदेन शाश्वतोऽवस्थित

पहुंचाता है उसी प्रकार इसका भी कार्य ठहरने में सहायता प्रदान करना है। यही धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकायमें भेद है। एक गतिमें कारण होता है और दूसरा स्थितिमें कारण होता है। (आगासत्थिकाए वि एवं चेव) आकाशास्तिकाय भी ऐसा ही है-अर्थात् धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकायका जैसा स्वरूप है, उसी प्रकारसे आकाशास्तिकायका भी जानना चाहिये। परंतु इसमें जो विशेषता है-वह इस प्रकारसे है-(नवर खेत्तओ णं आगासत्थिकाए लोयालोयप्पमाणमेत्ते) क्षेत्रकी अपेक्षा आकाशास्तिकाय लोक और अलोकप्रमाण है। धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय ये दोनों द्रव्य क्षेत्र की अपेक्षा लोकप्रमाण ही कहे गये हैं तब कि आकाशास्तिकाय क्षेत्र की अपेक्षा लोकालोकप्रमाण होता है ऐसा कहा गया है। यह आकाशास्तिकाय लोक और अलोक दोनों में व्याप्त है। धर्मास्ति-

---

રૂપ બને છે પથિકોને જેમ છાયડો રોકાવામા સહાયક થાય છે તેમ આ દ્રવ્ય પણ જીવો અને પુદ્ગલોને રોકાવામા સહાયરૂપ થાય છે એવી રીતે ધર્મદ્રવ્ય ચાલવામાં સહાયક બને છે એજ રીતે અધર્મ દ્રવ્ય રોકાવામા સહાયક બને છે એક ગતિમા સહાયક બને છે બીજું સ્થિતિમાં સહાયક બને છે ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાય વચ્ચે ઉપરોક્ત ભેદ હોય છે

(આગાસત્થિકાએ વિ એવં ચેવ) આકાશાસ્તિકાયનુ સ્વરૂપ પણ ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાય જેવું જ છે (નવર ખેત્તઓ ણ આગાસત્થિકાએ લોયાલોયપ્પમાણમેત્તે) ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાય કરતાં આકાશાસ્તિકાયમાં શી વિશેષતા છે તે આ સૂત્રમાં સૂત્રકારે પ્રકટ કરી છે

ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ આકાશાસ્તિકાય લોક અને અલોક પ્રમાણ છે પરતુ ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાય ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ લોક પ્રમાણ છે એટલે કે

त्रिकालवर्त्ती नित्य इत्यादीनां ग्रहणं भवतीति । ' गुणओ अवगाहणगुणे ' गुणतोऽवगाहनगुण आकाशास्तिकायः जीवपुद्गलादीनामवकाशदाने कारणम् । आकाशास्तिकायः बदरादीनां वंशपात्रवत् यथा-धर्मास्तिकायस्य कार्यं गतिः अधर्मास्तिकायस्य कार्यं स्थितिस्तथा आकाशास्तिकायस्य कार्यम् अवकाशदायकत्वमेवेति भावः । " जीवत्थिकाए णं भंते " जीवास्तिकायः खलु भदन्त ! " कति वण्णे कति गंधे कति रसे कति फासे " कतिवर्णः कतिगन्धः कतिरस कतिस्पर्शः हे भगवन् ! जीवास्तिकाये कति वर्णगन्धरसस्पर्शाः सन्तीति गौतमस्य प्रश्नः

काय और अधर्मास्तिकाय ऐसे नहीं हैं। वे तो सिर्फ लोक को ही व्याप्त किये हुए हैं। (अणंते चेव जाव) यह आकाशास्तिकाय यावत् अनन्त है यहां यावत् शब्द से (शाश्वत, अवस्थित, त्रिकालवर्ती नित्य) इत्यादि पदों को ग्रहण किया गया है। (गुणओ अवगाहणागुणे) गुण की अपेक्षा आकाशास्तिकाय अवगाहनागुणवाला है जैसे टोकरी बदर आदि फलों को अपने में स्थान देती है उसी प्रकार से आकाश, जीव और पुद्गल आदि द्रव्यों को अपने में ठहरने में मदद होता है। जिस प्रकार धर्मास्तिकाय का कार्य गति में मदद करना है और अधर्मास्तिकाय का कार्य स्थिति में मदद करना है उसी प्रकार से आकाशास्तिकाय का कार्य अवकाशदान देना है। अब जीव का स्वरूप कहते हैं-(जीवत्थिकाए णं भंते ! कइवण्णे, कइगंधे, कइरसे, कइफासे) गौतम प्रभु से पूछ रहे हैं कि हे भदन्त ! जीवास्तिकाय में कितने वर्ण हैं, कितने गंध हैं, कितने

આકાશાસ્તિકાય લોક અને અલોક બન્નેમા વ્યાપેલુ છે, પણ ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાય તો ફક્ત લોકોમા જ વ્યાપેલુ છે (अण ते चेव जाव) આકાશાસ્તિકાય શાશ્વત, અવસ્થિત, ત્રિકાલવર્તી, નિત્ય અને અનંત છે,

(गुणओ अवगाहणा गुणे) ગુણની અપેક્ષાએ આકાશાસ્તિકાય અવગાહના ગુણ વાળું છે. જેવી રીતે ટોપલી બોર આદિ ફળોને પોતાની અદર રહેવાને માટે આધાર આપે છે, એજ પ્રમાણે આકાશ જીવ, પુદ્ગલ આદિ દ્રવ્યોને પોતાની અંદર રહેવાને સ્થાન આપવામા મદદ રૂપ થાય છે જેવી રીતે ધર્માસ્તિકાય ગતિમા મદદ કરે છે અને અધર્માસ્તિકાય સ્થિતિમાં મદદ કરે છે. એવી રીતે આકાશાસ્તિકાયનુ કાર્ય અવકાશદાન દેવાનું છે,

હવે સૂત્રકાર જીવસ્તિકાયનું સ્વરૂપ બતાવે છે-

પ્રશ્ન—(जीवत्थिकाए ण भते ! कइ वण्णे, कई ग धे कई रसे, कइ फासे !) ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને પૂછે છે- ભદન્ત ! જીવાસ્તિકાયમા કેટલા વર્ણ, કેટલા ગધ, કેટલા રસ અને કેટલા સ્પર્શ હોય છે !

वि एवं चेव" आकाशास्तिकायोऽपि एवमेव । यथैव धर्मास्तिकायाऽ-धर्मास्तिकाययोः स्वरूपं तथा आकाशास्तिकायोऽपि ज्ञातव्यः पूर्वापेक्षयाऽऽकाशास्तिकायस्य वैलक्षण्यं द्योतयितुमाह-'नवरं खेत्तओण' इत्यादि "नवरं खेत्तओ णं आगासत्थिकाए लोयालोयप्पमाणमत्ते" नवरं क्षेत्रतः खलु आकाशास्तिकायः लोकालोकप्रमाणमात्रः, पूर्वापेक्षया आकाशास्तिकायस्यायं भेदः यत् धर्मास्तिकायऽधर्मास्तिकायौ लोकप्रमाणौ एव भवतः क्षेत्रतः, आकाशास्तिकायस्तु क्षेत्रतो लोकालोकप्रमाणकः लोकमलोकमुभयमपि व्याप्नोति आकाशास्तिकाय इति । 'अणंते चेव जाव' अनन्तश्चैव यावत् । अत्र यावत्पदेन शाश्वतोऽवस्थित-

पहुंचाता है उसी प्रकार इसका भी कार्य ठहरने में सहायता प्रदान करना है। यही धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकायमें भेद है। एक गतिमें कारण होता है और दूसरा स्थितिमें कारण होता है। (आगासत्थिकाए वि एवं चेव) आकाशास्तिकाय भी ऐसा ही है-अर्थात् धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकायका जैसा स्वरूप है,उसी प्रकारसे आकाशास्तिकायका भी जानना चाहिये। परंतु इसमें जो विशेषता है-वह इस प्रकारसे है-(नवरं खेत्तओ णं आगासत्थिकाए लोयालोयप्पमाणमेत्ते) क्षेत्रकी अपेक्षा आकाशास्तिकाय लोक और अलोकप्रमाण है। धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय ये दोनों द्रव्य क्षेत्र की अपेक्षा लोकप्रमाण ही कहे गये हैं तब कि आकाशास्तिकाय क्षेत्र की अपेक्षा लोकालोकप्रमाण होता है ऐसा कहा गया है। यह आकाशास्तिकाय लोक और अलोक दोनों में व्याप्त है। धर्मास्ति

યક બને છે પથિકોને જેમ છાયડો થોભવામાં સહાયક થાય છે તેમ આ દ્રવ્ય પણ જીવો અને પુદ્ગલોને થોભવામાં સહાયરૂપ થાય છે એવી રીતે ધર્મદ્રવ્ય ચાલવામાં સહાયક બને છે એજ રીતે અધર્મ દ્રવ્ય થોભવામાં સહાયક બને છે એક ગતિમાં સહાયક બને છે બીજું સ્થિતિમાં સહાયક બને છે ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાય વચ્ચે ઉપરોક્ત ભેદ હોય છે

(આગાસત્થિકાએ વિ एवं चेव) આકાશાસ્તિકાયનું સ્વરૂપ પણ ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાય જેવું જ છે (नवरं खेत्तओ णं आगासत्थिकाए लोयालोयप्पमाणमेत्ते) ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાય કરતાં આકાશાસ્તિકાયમાં શી વિશેષતા છે તે આ સૂત્રમાં સૂત્રકારે પ્રકટ કરી છે

ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ આકાશાસ્તિકાય લોક અને અલોક પ્રમાણ છે પરંતુ ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાય ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ લોક પ્રમાણ છે એટલે

त्रिकालवर्त्ती नित्य इत्यादीनां ग्रहणं भवतीति । 'गुणओ अवगाहणगुणे' गुणतोऽवगाहनगुण आकाशास्तिकायः जीवपुद्गलादीनामवकाशदाने कारणम् । आकाशास्तिकायः वदरादीनां वंशपात्रवत् यथा-धर्मास्तिकायस्य कार्यं गतिः अधर्मास्तिकायस्य कार्यं स्थितिस्तथा आकाशास्तिकायस्य कार्यम् अवकाशदायकत्वमेवेति भावः । "जीवत्थिकाए णं भंते" जीवास्तिकायः खलु भदन्त ! "कति वण्णे कति गंधे कति रसे कति फासे" कतिवर्णः कतिगन्धः कतिरसः कतिस्पर्शः हे भगवन् ! जीवास्तिकाये कति वर्णगन्धरसस्पर्शाः सन्तीति गौतमस्य प्रश्नः

काय और अधर्मास्तिकाय ऐसे नहीं हैं। वे तो सिर्फ लोक को ही व्याप्त किये हुए हैं। (अणंते चेव जाव) यह आकाशास्तिकाय यावत् अनन्त है यहां यावत् शब्द से (शाश्वत, अवस्थित, त्रिकालवर्ती नित्य) इत्यादि पदों को ग्रहण किया गया है। (गुणओ अवगाहणागुणे) गुण की अपेक्षा आकाशास्तिकाय अवगाहनागुणवाला है जैसे टोकरी बदर आदि फलों को अपने में स्थान देती है उसी प्रकार से आकाश, जीव और पुद्गल आदि द्रव्यों को अपने में ठहरने में मदद होता है। जिस प्रकार धर्मास्तिकाय का कार्य गति में मदद करना है और अधर्मास्तिकाय का कार्य स्थिति में मदद करना है उसी प्रकार से आकाशास्तिकाय का कार्य अवकाशदान देना है। अब जीव का स्वरूप कहते हैं-(जीवत्थिकाए णं भंते ! कइवण्णे, कइगंधे, कइरसे, कइफासे) गौतम प्रभु से पूछ रहे हैं कि हे भदन्त ! जीवास्तिकाय में कितने वर्ण हैं, कितने गंध हैं, कितने

આકાશાસ્તિકાય લોક અને અલોક બન્નેમા વ્યાપેલુ છે, પણ ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાય તો ફક્ત લોકોમા જ વ્યાપેલુ છે (अणते चेव जाव) આકાશાસ્તિકાય શાશ્વત, અવસ્થિત, ત્રિકાલવર્તી, નિત્ય અને અનંત છે,

(गुणओ अवगाहणा गुणे) ગુણુની અપેક્ષાએ આકાશાસ્તિકાય અવગાહના ગુણ વાળુ છે. જેવી રીતે ટોપલી બોર આદિ ફળોને પોતાની અંદર રહેવાને માટે આધાર આપે છે, એજ પ્રમાણે આકાશ જીવ, પુદ્ગલ આદિ દ્રવ્યોને પોતાની અંદર રહેવાને સ્થાન આપવામાં મદદ રૂપ થાય છે જેવી રીતે ધર્માસ્તિકાય ગતિમાં મદદ કરે છે અને અધર્માસ્તિકાય સ્થિતિમાં મદદ કરે છે. એવી રીતે આકાશાસ્તિકાયનુ કાર્ય અવકાશદાન દેવાનું છે,

હવે સૂત્રકાર જીવસ્તિકાયનું સ્વરૂપ બતાવે છે-

પ્રશ્ન—(जीवत्थिकाए ण भंते ! कइ वण्णे, कई गधे कई रसे, कइ फासे !) ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને પૂછે છે- ભદન્ત ! જીવાસ્તિકાયમા કેટલા વર્ણ, કેટલા ગંધ, કેટલા રસ અને કેટલા સ્પર્શ હોય છે !

भगवानाह—'गोयमा' इत्यादिना "गोयमा" हे गौतम! "अवण्णे-जाव अरूवी जीवे सासए अवट्ठिए लोगदव्वे" अवर्णो यावत् अरूपी जीवः शाश्वतोऽवस्थितो लोकद्रव्यम्। इह यावत्पदेन अगन्धोऽरसोऽस्पर्श इत्येषां ग्रहणम् "जीवे सासए" द्रव्यतो जीव—चेतनावान्—शाश्वत "अवट्ठिए" अवस्थितः पर्यायतः लोकस्य पञ्चास्तिकायात्मकस्यांशभूत द्रव्यमिति लोकद्रव्यम्। "से समासओ पंचविहे पन्नत्ते" स समासतः संक्षेपेण स इति जीवास्तिकायः पञ्चविधः पञ्च प्रकारक प्रज्ञप्तः कथितो जीव इति, पञ्चविधत्वमेव दर्शयति 'तं जहा' इत्यादि "तं जहा" तद् यथा "दव्वओ जाव गुणओ" द्रव्यतो यावत् गुणतः अत्र यावत्पदेन क्षेत्रकालभावानां ग्रहण भवति, तत्र खलु "दव्वओ णं जीवत्थिकाए अणंताइं जीवदव्वाइं" द्रव्यत खलु जीवास्तिकायोऽनन्तानि जीवद्रव्याणि द्रव्या-

इस है और कितने स्पर्श हैं? तब भगवान् गौतम से कहते हैं कि हे गौतम! (अवण्णे जाव अरूवी जीवे सासए, लोगदव्वे) जीवास्तिकाय इन रूप रस आदि पौद्गलिक गुणों से सर्वथा रहित है। वह अरूपी है, शाश्वत है, अवस्थित है, लोकद्रव्यरूप है। यहां यावत् पद से (अगन्ध, अरस और अस्पर्श) इनका ग्रहण किया गया है। द्रव्य की अपेक्षा जीव चेतनावाला है, शाश्वत है और अवस्थित है। पर्याय की अपेक्षा पंचास्तिकायरूप लोक का अंशभूत द्रव्य है। (से समासओ पंचविहे पण्णत्ते) यह जीवास्तिकाय संक्षेप से पांच प्रकार का कहा गया है-(दव्वओ) द्रव्य की अपेक्षा जीवास्तिकाय यावत् गुण की अपेक्षा जीवास्तिकाय यहां यावत् पदसे (क्षेत्र, काल और भाव) इन तीन का ग्रहण किया गया है। (तत्थ दव्वओण जीवत्थिकाए अणताइं जीवदव्वाइं)

મહાવીર પ્રભુ જવાબ આપે છે-(ગોયમા! અવણ્ણે જાવ અરૂવી જીવે સાસએ અવટ્ઠિએ લોગદવ્વે) જીવાસ્તિકાય રૂપ, રસ, સ્પર્શ વગેરે પૌદ્ગલિક ગુણોથી બિલકુલ રહિત હોય છે તે અરૂપી છે શાશ્વત છે અવસ્થિત છે અને લોકદ્રવ્ય રૂપ છે અહીં (જાવ) (પર્યન્ત) અગંધ, અરસ અને અસ્પર્શ એ નિર્દેશો લેવામાં આવ્યા છે દ્રવ્યની અપેક્ષાએ જીવ ચેતનાવાળો, શાશ્વત અને અવસ્થિત છે પર્યાયની અપેક્ષાએ પંચાસ્તિકાયરૂપ લોકના અંશભૂત દ્રવ્ય છે (સે સમાસઓ પંચવિહે પણ્ણત્તે) તે જીવાસ્તિકાયના સંક્ષિપ્તમાં નીચે પ્રમાણે પાંચ ભેદ છે-(દવ્વઓ જાવ ગુણઓ) (૧) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાય, (૨) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાય, (૩) કાળની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાય, (૪) ભાવની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાય અને (૫) ગુણની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાય (તત્થ દવ્વઓ ણ જીવત્થિકાએ અણતાઇં જીવદવ્વાઇં)

पेक्षया जीवा अनन्ताः सन्तीत्यर्थः "खेत्तओ लोगप्पमाणमेत्ते" क्षेत्रतो लोकप्रमाण मात्रः यावदेव लोकस्य प्रमाणं तावदेव जीवास्तिकायस्यापीत्यर्थः। "कालओ न कयाइ नासी जाव निच्चे" कालतो न कदाचित्–नासीत् यावत् नित्यः अत्र यावत्पदेन न कदाचित् नास्ति न कदाचित् न भविष्यति अपि तु आसीत् अस्ति भविष्यति ध्रुवः नियतः, शाश्वतोऽक्षयोऽव्ययोऽवस्थितः इत्येतेषां ग्रहणं भवति, कालापेक्षया नित्यः खलु जीवः त्रिकाले विद्यमानत्वात् पर्यायतोऽनित्यत्वेऽपि द्रव्यतः सदैवाऽवस्थानात्। "भावओ पुण अवण्णे अगंधे अरसे अफासे" भावतः

द्रव्य की अपेक्षा जीवास्तिकाय अनन्त हैं। (खेत्तओ लोगप्पमाणमेत्ते) क्षेत्र की अपेक्षा जीवास्तिकाय लोकप्रमाणमात्र हैं—अर्थात् जितना लोक का प्रमाण है–उतना ही प्रमाण जीवास्तिकाय का है। "कालओ न कयावि नासी जाव निच्चे" कालकी अपेक्षा यह जीवास्तिकाय किसी समय नहीं था ऐसा नहीं है यावत् यह नित्य है यहां यावत् पद 'न कदापि नास्ति, न कदापि न भविष्यति, अपि तु असीत् अस्ति, भविष्यति, ध्रुवः, नियतः, शाश्वतोऽक्षयोऽव्ययोऽवस्थितः, इन पदों का संग्राहक है। अर्थात्–पहिले कभी जीव नहीं था ये बात नहीं अपितु था ही, वर्तमान में नहीं है ये बात नहीं अपि तु है, भविष्यत्काल में जीव नहीं होगा ये बात नहीं किन्तु होगाही। त्रिकाल में जीव की सत्ता रहती है अतः वह काल की अपेक्षा नित्य है। यद्यपि पर्यायदृष्टि से जीव को अनित्य भी माना गया है-फिर भी द्रव्य की अपेक्षा से उस का अव-

---

અપેક્ષાએ અનંત છે. (खेत्तओ लोगप्पमाणमेत्ते) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાય લોકપરિમિત છે એટલે કે જેટલું લોકનું પ્રમાણ છે એટલું જ પ્રમાણ જીવાસ્તિકાયનું છે (कालओ न कयाई नासी जाव निच्चे) કાળની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાય કોઇ પણ સમયે ન હતું એવું નથી, તે તો નિત્ય છે. અહીં (जाव) (પર્યન્ત) પદથી નીચેના સૂત્રપાઠ ગ્રહણ કરાયો છે–(न कदापि नास्ति, न कदापि न भविष्यति, अपितु आसीत्, अस्ति, भविष्यति, ध्रुव नियत शाश्वतो–ऽक्षयोऽव्ययोऽवस्थितिः) પહેલાં જીવાસ્તિકાયનુ અસ્તિત્વ ન હોય એવું બન્યું નથી– એટલે કે ભૂતકાળમા તે હતું વર્તમાનમાં તેનું અસ્તિત્વ ન હોય એવું પણ બનતું નથી, એટલે કે વર્તમાનકાળમા પણ તેનુ અસ્તિત્વ છે જ ભવિષ્યમાં તેનું અસ્તિત્વ ન હોય એવું પણ બનવાનુ નથી– ભવિષ્યમાં પણ તે હશે જ ત્રણે કાળમા જીવાસ્તિકાયનું અસ્તિત્વ રહે છે, માટે જ કાળની અપેક્ષાએ તે નિત્ય છે. જો કે પર્યાયની અપેક્ષાએ જીવને અનિત્ય માનવામા આવેલ છે, પણ દ્રવ્યની અપેક્ષાએ તેનો સદ્‌ભાવ શાશ્વત રહેતો હોવાથી તેને નિત્ય માન-

जीवोऽवर्णः शुक्लनीलादि वर्णरहितः अगन्ध –सुरभिदुरभिगन्धरहितः अरसो मधुरादिरसवर्जितः अस्पर्शः कर्कशाद्यष्टविधस्पर्शरहितश्चेति । " गुणओ उव ओगगुणे " गुणतः–उपयोगगुणः उपयोगश्चैतन्यम् तद् साकारानाकारभेदेन द्विविधम् तदेव चैतन्य गुण कार्यम् यस्य स उपयोगगुणः जीवः यथा धर्मास्ति कायादीनां गत्यादिकं कार्यम् तथा जीवस्याऽपि चैतन्य कार्यं जीवस्य चैतन्यम्प्र ति कारणत्वम् भवतीति भाव । पञ्चास्तिकायान्तर्गतजीवास्तिकायान्त विविच्य

स्थान शाश्वत रहने के कारण यह नित्य भी माना गया है। " भावओ पुण अवण्णे, अगंधे, अरसे, अफासे " भाव की अपेक्षा जीवास्तिकाय में कोई भी वर्ण नहीं है, किसी भी प्रकार का गंध नहीं है, पांच प्रकार के रसों से यह सर्वथा रहित है। आठ प्रकार के स्पर्श में से कोई भी स्पर्श यहां पाया नहीं जाता है। " गुणओ उवओगगुणे " गुण की अपेक्षा यह उपयोग गुणवाला है। उपयोग नाम चैतन्य का है। शास्त्रों में ऐसा ही कहा है—(आत्मचैतन्यानुविधायीपरिणाम उपयोग) आत्मा का चैतन्यानुविधायी जो परिणाम है वह उपयोग है। यह उप योग साकार और अनाकार के भेद से दो प्रकार का होता है। यह चैतन्यरूप उपयोग जिसका गुण–कार्य है वह उपयोग गुण है। यह उपयोग गुण जीव का है। जिस प्रकार से धर्मास्तिकायादि कों के कार्य गत्यादिक हैं उसी प्रकार से जीव का कार्य चैतन्य है। क्यों कि जीव में ही चैतन्यके प्रति कारणता है। इस प्रकार से पंचास्तिकाय के अन्त र्गत जीवास्तिकायान्त तक विवेचन करके अब सूत्रकार पुद्गलास्तिकाय

વામાં આવે છે (भावओ पुण अवण्णे अगंधे, अरसे, अफासे) ભાવની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાયમાં કોઇ વર્ણ નથી, બે પ્રકારની ગંધમાંની કોઈ ગંધ નથી, પાંચ પ્રકારના રસમાના કોઇ રસ નથી અને આઠ પ્રકારના સ્પર્શમાંથી કોઇ પણ સ્પર્શ નથી તે વર્ણ, ગંધ, રસ અને સ્પર્શથી રહિત છે (गुणओ उव ओगगुणे) ગુણની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાય ઉપયોગ ગુણવાળુ છે. ઉપયોગ એટલે ચૈતન્ય. શાસ્ત્રોમા એવુ કહ્યુ છે કે (आत्मचैतन्यानुविधायी परिणाम उपयोग) આત્માનુ ચૈતન્યાનુવિધાયી જે પરિણામ હોય છે તેનુ નામ જ ઉપ યોગ છે તે ઉપયોગના સાકાર અને અનાકાર એવા બે પ્રકાર પડે છે તે ચૈતન્ય રૂપ ઉપયોગ જેનો ગુણ (કાર્ય) છે, તે ઉપયોગગુણ કહેવાય છે જીવમાં આ ઉપ યોગગુણ હોય છે જેમ ધર્માસ્તિકાયનુ કાયનુ કાર્ય (ગુણ) ગતિ છે, તેમ જીવનો ગુણ–જીવનું કાર્ય–ચૈતન્ય છે કારણ કે જીવમાં જ ચૈતન્યનો ગુણ હોય છે

पुद्गलास्तिकायं निरूपयितुमाह—'पोग्गलत्थि' इत्यादि, 'पोग्गलत्थिकाएणं भंते' पुद्गलास्तिकायः खलु भदन्त ! "कइवण्णे, कइगंधे, कइरसे, कइफासे" कतिवर्णः कतिगन्धः कतिरसः कतिस्पर्शः अत्र वर्णादिपदं वर्णाश्रयपरकं तेन पुद्गलास्तिकायः कतिवर्णवान् कतिगन्धरसस्पर्शवांश्चेत्यर्थः भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि, "गोयमा" हे गौतम ! "पंच वण्णे" पञ्चवर्णः पञ्चवर्णवान् 'दुगंधे' द्विगन्धः द्विगन्धवान् "पंचरसे" पञ्चरसः पञ्चप्रकारकरसवान् "अट्ठफासे" अष्टस्पर्शवान् "रूवी" रूपी रूपवान् "अजीवे" अजीवः चेतनादि गुणरहितः

का निरूपण करने के लिये (पोग्गलत्थिकाएणं भंते ! कइ वण्णे, कइ गंधे, कइ रसे, कइफासे) इस पाठ से कथनप्रारंभ करते हैं–हे भदन्त ! पुद्गलास्ति काय में कितने वर्ण, कितने गंध, कितने रस, और कितने स्पर्श पाये जाते हैं ? यहां पर वर्णादिपदवर्णाश्रयपरक हैं–इससे पुद्गल कितने वर्णवाला है कितने गंध, रस और स्पर्शवाला है ऐसा इस पाठ का अर्थ करना चाहिये। उत्तर देते हुए भगवान् गौतम से कहते हैं कि–हे गौतम ! (पंचवण्णे, दुगंधे, पंचरसे, अट्ठफासे) पुद्गलास्तिकाय–पांच–वर्णवाला, दोगंधवाला, पांच रस वाला और आठ स्पर्शवाला है। 'रूवी' इसी कारण वह रूपी कहा गया है। (अजीवे) जिसमें रूप रसादिक गुण पाये जाते हैं वह अजीव चेतना रहित होता है– इसलिये यह अजीव है। इसका तात्पर्य यह नहीं है कि जो अजीव होगा वह नियमतः रूप रसादि वाला होगा क्यों कि इस प्रकार की मान्यता से धर्मास्तिकायादिकों में रूप रसादि–

આ રીતે પંચાસ્તિકાયોમાના જીવાસ્તિકાય સુધીના ચાર અસ્તિકાયોનું નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર પુદ્ગલાસ્તિકાયનું નિરૂપણ કરે છે

પ્રશ્ન–(પોગ્ગલત્થિકાએણ ભંતે ! કઇ વણ્ણે, કઇ ગંધે, કઇ રસે, કઇ ફાસે ?) હે ભદન્ત ! પુદ્ગલાસ્તિકાયમા કેટલા વર્ણ, કેટલા પ્રકારના ગધ કેટલા રસ, અને કેટલા પ્રકારના સ્પર્શ હોય છે ?

ગૌતમ સ્વામીના આ પ્રશ્નનો મહાવીર પ્રભુ આ પ્રમાણે જવાબ આપે છે–(ગોયમા) હે ગૌતમ ! (પંચ વણ્ણે, દુગંધે, પંચ રસે, અટ્ઠફાસે) પુદ્ગલાસ્તિકાય પાચ વર્ણવાળુ, બે ગધવાળુ, પાચ રસવાળુ અને આઠ સ્પર્શવાળું હોય છે. (રૂવી) તે કારણે તેને "રૂપી" કહેલુ છે. "અજીવે" જેમાં રૂપ, રસ આદિ ગુણ રહેલા હોય છે તે અજીવચેતના રહિત હોય છે. આનું તાત્પર્ય એવું નથી કે જે અજીવ હશે તે નિ[illegible] રૂપ, રસાદિથી યુક્ત હશે કારણ

जीवोऽवर्णः शुक्लनीलादि वर्णरहितः अगन्धः-सुरभिदुरभिगन्धरहितः अरसो मधुरादिरसवर्जितः अस्पर्शः कर्कशाद्यष्टविधस्पर्शरहितश्चेति । " गुणओ उव ओगगुणे " गुणतः-उपयोगगुणः उपयोगश्चैतन्यम् तत् साकारानाकारभेदेन द्विविधम् तदेव चैतन्य गुणः कार्यम् यस्य स उपयोगगुणः जीव' यथा धर्मास्ति कायादीनां गत्यादिकं कार्यम् तथा जीवस्यापि चैतन्य कार्यं जीवस्य चैतन्यम ति कारणत्वम् भवतीति भाव । पञ्चास्तिकायान्तर्गतजीवास्तिकायान्तं विविच्य

स्थान शाश्वत रहने के कारण वह नित्य भी माना गया है। " भावओ पुण अवण्णे, अगंधे, अरसे, अफासे " भाव की अपेक्षा जीवास्तिकाय में कोई भी वर्ण नहीं है,।किसी भी प्रकार का गंध नहीं है, पांच प्रकार के रसों से वह सर्वथा रहित है । आठ प्रकार के स्पर्श में से कोई भी स्पर्श वहां पाया नहीं जाता है। " गुणओ उवओगगुणे " गुण की अपेक्षा यह उपयोग गुणवाला है। उपयोग नाम चैतन्य का है। शास्त्रों में ऐसा ही कहा है—(आत्मचैतन्यानुविधायीपरिणाम उपयोग) आत्मा का चैतन्यानुविधायी जो परिणाम है वह उपयोग है। यह उप योग साकार और अनाकार के भेद से दो प्रकार का होता है। यह चैतन्यरूप उपयोग जिसका गुण—कार्य है वह उपयोग गुण है। यह उपयोग गुण जीव का है । जिस प्रकार से धर्मास्तिकायादि कों के कार्य गत्यादिक हैं उसी प्रकार से जीव का कार्य चैतन्य है । क्यों कि जीव में ही चैतन्यके प्रति कारणता है। इस प्रकार से पंचास्तिकाय के अन्त र्गत जीवास्तिकायान्त तक विवेचन करके अब सूत्रकार पुद्गलास्तिकाय

नामां आवे छे (भावओ पुण अवण्णे अगंधे, अरसे, अफासे) भावनी अपेक्षाओ જીવાસ્તિકાયમાં કોઈ વર્ણ નથી, બે પ્રકારની ગંધમાંની કોઈ ગંધ નથી, પાંચ પ્રકારના રસમાંનો કોઈ રસ નથી અને આઠ પ્રકારના સ્પર્શમાંથી કોઈ પણ સ્પર્શ નથી તે વર્ણ ગંધ, રસ અને સ્પર્શથી તદ્દન રહિત છે (गुणओ उवओगगुणे) ગુણની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાય ઉપયોગ ગુણવાળું છે. ઉપયોગ એટલે ચૈતન્ય. શાસ્ત્રોમાં એવું કહ્યું છે કે (आत्मचैतन्यानुविधायी परिणाम उपयोगः) આત્માનું ચૈતન્યાનુવિધાયી જે પરિણામ હોય છે તેનું નામ જ ઉપયોગ છે તે ઉપયોગના સાકાર અને અનાકાર એવા બે પ્રકાર પડે છે તે ચૈતન્ય-રૂપ ઉપયોગ જેનો ગુણ (કાર્ય) છે, તે ઉપયોગગુણ કહેવાય છે જીવમાં આ ઉપયોગગુણ હોય છે જેમ ધર્માસ્તિકાયનું કાર્ય (ગુણ) ગતિ છે, તેમ જીવનો ગુણ-જીવનું કાર્ય-ચૈતન્ય છે કારણ કે જીવમાં જ ચૈતન્યનો ગુણ હોય છે

अणागयद्धा य पुव्विंपेते पच्छापेते-दोवि एए सासया भावा अणाणुपुव्वी एसा रोहा!' सर्वाद्धालापकं तु सूत्रकार एवाह-'पुव्विं भंते' इत्यादि। 'पुव्विं भंते लोयंते पच्छा सव्वद्धा' इति पदेन सर्वोऽपि सूत्रालापकः संग्राह्यस्तथाहि-"पुव्विं भंते लोयंते पच्छा सव्वद्धा, पुव्विं सव्वद्धा पच्छा लोयंते? रोहा! लोयंते य सव्वद्धा य पुव्विंपेते पच्छापेते दोवि एए सासया भावा अणाणुपुव्वी एसा रोहा" इति। अथालोकविषये प्राह-'जहा लोयतेणं' इत्यादि। 'जहा लोयतेणं संजोइया सव्वे-ठाणा एते अलोयंतेणवि संजोएयव्वा सव्वे" यथा लोकान्तेन संयोजितानि सर्वाणि स्थानानि एतानि एवमलोकान्तेनापि योजयितव्यानि सर्वाणि, येन प्रका-

लोकान्त और अनागताद्धा ये दोनों हैं और ये दोनों पहिले भी हैं और पश्चात् भी हैं, क्योंकि ये शाश्वत भाव हैं इसलिये इनमें पूर्व पश्चात् भाव नहीं है। सर्वाद्धालापक तो सूत्रकारने स्वयं ही (पुव्विं भंते! लोयंते पच्छा सव्वद्धा) इस सूत्र द्वारा कह दिया है। इसी तरह से और भी समस्त सूत्रालापक संयोजित कर लेना चाहिये। जैसे-हे भदन्त! पहिले लोकान्त है और बाद में सर्वाद्धा है कि पहले सर्वाद्धा है और बाद में लोकान्त है? हे रोह! लोकान्त और सर्वाद्धा ये दोनों पहिले भी हैं और बाद में भी हैं। इनमें पूर्वापर क्रम नहीं है। क्योंकि ये दोनों शाश्वत भाव है। (जहा लोयंतेणं संजोइया सव्वे ठाणा एते अलोयंतेणवि संजोएयव्वा सव्वे) जिस तरह लोकान्त के साथ इन समस्त स्थानों को संयोजित किया गया है उसी तरह से इन समस्त स्थानों को अलोकान्त के साथ भी संयोजित कर लेना चाहिये।

तात्पर्य कहने का यह है कि जिस प्रकार से लोकान्त के साथ एक एक स्थानको जोड़कर सूत्रालापक किया है उसी तरह से अलोकान्त के

અને પછી લોકાન્ત છે? હે રોહ! લોકાન્ત અને અનગતાદ્ધા બંને છે. અને તે બંને પહેલા પણ છે અને પછી પણ છે કારણ કે તે બંને શાશ્વતભાવ છે. તે કારણે તેમાં પૂર્વાપર ભાવ (આનુપૂર્વી) નથી સર્વાદ્ધા આલાપક તો સૂત્રકારે પોતે જ સૂત્ર દ્વારા કહ્યો છે-(पुव्विंभंते! लोयते पच्छा सव्वद्धा) હે પૂજ્ય! પહેલાં લોકાન્ત છે અને ત્યારબાદ સર્વાદ્ધા છે, કે પહેલા સર્વાદ્ધા અને ત્યાર પછી લોકાન્ત છે? હે રોહ! લોકાન્ત અને સર્વાદ્ધા, એ બન્ને પહેલા પણ છે અને પછી પણ છે. તે બન્ને શાશ્વત ભાવ હોવાથી તેમનામા પૂર્વાપર ક્રમ નથી.

(जहा लोयतेण संजोइया सव्वे ठाणा एते अलोयतेण वि संजोएयव्वा सव्वे) જેવી રીતે લોકાન્તની સાથે ઉપર મુજબના તમામ સ્થાનોનું સંયોજન કરવામાં આવ્યુ છે. એવી જ રીતે અલોકાન્તની સાથે પણ તે બધા સ્થાનોનું સંયોજન

"सासए" शाश्वतः कालत्रयवर्ती, "अवट्ठिए" अवस्थितो द्रव्यतः 'लोगदव्वे' लोकद्रव्यम्, 'से समासओ पचविहे पन्नत्ते" स पुद्गलास्तिकायः समासतः संक्षेपतः पञ्चविध प्रज्ञप्तः "त जहा" तद् यथा "दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ गुणओ" द्रव्यत क्षेत्रतः कालतो भावतो गुणतः द्रव्यक्षेत्रकालभावगुणैः पञ्चविधः पुद्गलास्तिकायो भवतीत्यर्थः 'दव्वओ ण पोग्गलत्थिकाए अणंताइ दव्वाइ'

र्कों के होने का प्रसंग प्राप्त होगा, अतः यही मानना चाहिये कि रूप रसादिवाला पदार्थ नियमतः अजीव होता है, पर जो अजीव होगा वह इन वाला हो भी और न भी हो। इस तरह यहां रूपी और अजीवत्व की विषम व्याप्ति ही बनती है समव्याप्ति नहीं। यह पुद्गलास्तिकाय भी अन्य अस्तिकायों की तरह (सासए) शाश्वत है कालत्रयवर्ती है। (अवट्ठिए) अवस्थित है। (लोकदव्वे) लोकद्रव्यरूप है। पुद्गलास्तिकाय में जो नित्यपना एवं अवस्थितपना कहा गया है वह द्रव्य की अपेक्षा ही कहा गया है ऐसा जानना चाहिये। (से समासओ पंचविहे पण्णत्ते) यह पुद्गलास्तिकाय संक्षेप से पांच प्रकार का कहा गया है (तंजहा) वे उसके पांच प्रकार ये हैं (दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ गुणओ) द्रव्य की अपेक्षा से पुद्गलास्तिकाय, क्षेत्र की अपेक्षा से पुद्गलास्तिकाय, काल की अपेक्षा से पुद्गलास्तिकाय, भाव की अपेक्षा से पुद्गलास्तिकाय और गुण की अपेक्षा से पुद्गलास्तिकाय (दव्वओ णं

કે એ પ્રકારની માન્યતાથી તે ધર્માસ્તિકાય આદિમાં પણ રૂપ, રસાદિક હોવાનું માનવું પડે. તે આ કથનનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે સમજવું રૂપ, રસાદિવાળા પદાર્થો નિયમથી જ અજીવ હોય છે પણ જે અજીવ હોય તે રૂપ, રસાદિથી યુક્ત હોય પણ ખરું અને રૂપ, રસાદિથી રહિત પણ હોય આ રીતે અહીં રૂપી અને અજીવત્વની વિષમ વ્યાપ્તિ જ સંભવે છે-સમવ્યાપ્તિ સંભવતી નથી.

તે પુદ્ગલાસ્તિકાય પણ અન્ય અસ્તિકાયોના જેવું જ (सासए) શાશ્વત છે-ત્રણે કાળમાં તેનું અસ્તિત્વ હોય છે, (अवट्ठिए) તે અવસ્થિત છે અને (लोगदव्वे) લોકદ્રવ્ય રૂપ છે પુદ્ગલાસ્તિકાયમાં જે નિત્યતા અને અવસ્થિતપણું કહ્યું છે તે દ્રવ્યની અપેક્ષાએ જ કહેવામાં આવ્યું છે તેમ સમજવું

(से समासओ पंचविहे पण्णत्ते) તે પુદ્ગલાસ્તિકાયના સંક્ષિપ્તમાં પાંચ પ્રકાર પડે છે (तंजहा) તે પાંચ પ્રકારો આ પ્રમાણે છે (दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ गुणओ) (૧) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય (૨) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય, (૩) કાળની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય, (૪) ભાવની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય અને (૫) ગુણની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય.

पुद्गलास्तिकायं निरूपयितुमाह—' पोग्गलत्थि ' इत्यादि, ' पोग्गलत्थिकाएणं भंते ' पुद्गलास्तिकायः खलु भदन्त ! " कइवण्णे, कइगंधे, कइरसे, कइफासे " कतिवर्णः कतिगन्धः कतिरसः कतिस्पर्शः अत्र वर्णादिपदं वर्णाश्रयपरकं तेन पुद्गलास्तिकायः कतिवर्णवान् कतिगन्धरसस्पर्शवांश्चेत्यर्थः भगवानाह–' गोयमा ' इत्यादि, " गोयमा " हे गौतम ! " पंच वण्णे " पञ्चवर्णः पञ्चवर्णवान् 'दुगंधे' द्विगन्धः द्विगन्धवान् " पंचरसे " पञ्चरसः पञ्चप्रकारकरसवान् " अट्ठफासे " अष्टस्पर्शवान् " रूवी " रूपी रूपवान् " अजीवे " अजीवः चेतनादि गुणरहितः

का निरूपण करने के लिये (पोग्गलत्थिकाएणं भंते । कइ वण्णे, कइ गंधे, कइ रसे, कइफासे) इस पाठ से कथनप्रारंभ करते हैं–हे भदन्त ! पुद्गलास्ति काय में कितने वर्ण, कितने गंध, कितने रस, और कितने स्पर्श पाये जाते हैं ? यहां पर वर्णादिपदवर्णाश्रयपरक हैं–इससे पुद्गल कितने वर्णवाला है कितने गंध, रस और स्पर्शवाला है ऐसा इस पाठ का अर्थ करना चाहिये। उत्तर देते हुए भगवान् गौतम से कहते हैं कि–हे गौतम ! (पंचवण्णे, दुगंधे, पंचरसे, अट्ठफासे) पुद्गलास्तिकाय–पांच–वर्णवाला, दोगंधवाला, पांच रस वाला और आठ स्पर्शवाला है। ' रूवी ' इसी कारण वह रूपी कहा गया है। (अजीवे) जिसमें रूप रसादिक गुण पाये जाते हैं वह अजीव चेतना रहित होता है– इसलिये यह अजीव है। इसका तात्पर्य यह नहीं है कि जो अजीव होगा वह नियमतः रूप रसादि वाला होगा क्यों कि इस प्रकार की मान्यता से धर्मास्तिकायादिकों में रूप रसादि–

આ રીતે પંચાસ્તિકાયોમાના જીવાસ્તિકાય સુધીના ચાર અસ્તિકાયોનું નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર પુદ્ગલાસ્તિકાયનું નિરૂપણ કરે છે

પ્રશ્ન–(पोग्गलत्थिकाएणं भंते ! कइ वण्णे, कइ गंधे, कइ रसे, कइ फासे ?) હે ભદન્ત ! પુદ્ગલાસ્તિકાયમા કેટલા વર્ણ, કેટલા પ્રકારના ગંધ કેટલા રસ, અને કેટલા પ્રકારના સ્પર્શ હોય છે ?

ગૌતમ સ્વામીના આ પ્રશ્નનો મહાવીર પ્રભુ આ પ્રમાણે જવાબ આપે છે–(गोयमा) હે ગૌતમ ! (पंच वण्णे, दुगंधे, पंच रसे, अट्ठफासे) પુદ્ગલાસ્તિકાય પાચ વર્ણવાળું, બે ગંધવાળું, પાચ રસવાળુ અને આઠ સ્પર્શવાળુ હોય છે. (रूवी) તે કારણે તેને ' રૂપી " કહેલુ છે " अजीवे " જેમા રૂપ, રસ આદિ ગુણ રહેલા હોય છે તે અજીવચેતના રહિત હોય છે. આનું તાત્પર્ય એવું નથી કે જે અજીવ હશે તે નિયમથી જ રૂપ, રસાદિથી યુક્ત હશે કારણ

" सासए " शाश्वतः कालत्रयवर्ती, " अवट्ठिए " अवस्थितो द्रव्यतः ' लोगदव्वे ' लोकद्रव्यम् , ' से समासओ पचविहे पन्नत्ते " स पुद्गलास्तिकायः समासतः संक्षेपतः पञ्चविधः प्रज्ञप्तः " त जहा " तद् यथा " दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ गुणओ " द्रव्यत क्षेत्रतः कालतो भावतो गुणतः द्रव्यक्षेत्रकालभावगुणैः पञ्चविधः पुद्गलास्तिकायो भवतीत्यर्थः 'दव्वओ ण पोग्गलत्थिकाए अणंता दव्वाई'

र्कों के होने का प्रसंग प्राप्त होगा, अतः यही मानना चाहिये कि रूप रसादिवाला पदार्थ नियमतः अजीव होता है, पर जो अजीव होगा वह इन वाला हो भी और न भी हो। इस तरह यहां रूपी और अजीवत्व की विषम व्याप्ति ही बनती है समव्याप्ति नहीं। यह पुद्गलास्तिकाय भी अन्य अस्तिकायों की तरह (सासए) शाश्वत है कालत्रयवर्ती है। (अवट्ठिए) अवस्थित है। (लोकदव्वे) लोकद्रव्यरूप है। पुद्गलास्तिकाय में जो नित्यपना एवं अवस्थितपना कहा गया है वह द्रव्य की अपेक्षा ही कहा गया है ऐसा जानना चाहिये। (से समासओ पंचविहे पण्णत्ते) यह पुद्गलास्तिकाय संक्षेप से पांच प्रकार का कहा गया है (तजहा) वे उसके पांच प्रकार ये हैं (दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ गुणओ) द्रव्य की अपेक्षा से पुद्गलास्तिकाय, क्षेत्र की अपेक्षा से पुद्गलास्तिकाय, काल की अपेक्षा से पुद्गलास्तिकाय, भाव की अपेक्षा से पुद्गलास्तिकाय और गुण की अपेक्षा से पुद्गलास्तिकाय (दव्वओ णं

છે એ પ્રકારની માન્યતાથી તો ધર્માસ્તિકાય આદિમાં પણ રૂપ, રસાદિક સિવાય માનવું પડે. તો આ કથનનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે સમજવું રૂપ, રસાદિવાળા પદાર્થો નિયમથી જ અજીવ હોય છે પણ જે અજીવ હોય તે રૂપ, રસાદિથી યુક્ત હોય પણ ખરું અને રૂપ, રસાદિથી રહિત પણ હોય. આ રીતે અહીં રૂપી અને અજીવત્વની વિષમ વ્યાપ્તિ જ સભવે છે-સમવ્યાપ્તિ સભવતી નથી

તે પુદ્ગલાસ્તિકાય પણ અન્ય અસ્તિકાયોના જેવુ જ (સાસપ) શાશ્વત છે-ત્રણે કાળમાં તેનુ અસ્તિત્વ હોય છે, (અવટ્ઠિએ) તે અવસ્થિત છે અને (લોગદવ્વે) લોકદ્રવ્ય રૂપ છે પુદ્ગલાસ્તિકાયમાં જે નિત્યતા અને અવસ્થિતપણુ કહ્યુ છે તે દ્રવ્યની અપેક્ષાએ જ કહેવામાં આવ્યુ છે તેમ સમજવુ

(સે સમાસઓ પચવિહે પણ્ણત્તે) તે પુદ્ગલાસ્તિકાયના સંક્ષિપ્તમાં પાંચ પ્રકાર પડે છે (તં જહા) તે પાંચ પ્રકારો આ પ્રમાણે છે-(દવ્વઓ ખેત્તઓ, કાલઓ ભાવઓ ગુણઓ) (૧) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય (૨) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય, (૩) કાળની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય, (૪) ભાવની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય અને (૫) ગુણની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય.

द्रव्यतः खलु पुद्गलास्तिकायोऽनन्तानि द्रव्याणि द्रव्यतोऽनन्तद्रव्यरूपत्वं पुद्गलास्तिकायस्येत्यर्थः । "खेत्तओ लोयप्पमाणमेत्ते" क्षेत्रतो लोकप्रमाणमात्रः "कालओ न कयावि नासी जाव णिच्चे" कालतो न कदाऽपि नासीत्-यावन्नित्यः अत्र यावत्पदेन न कदापि 'न भवइ' न कदापि 'न भविस्सइ' किन्तु पूर्वमप्यासीत् इदानीमपि वर्त्तते अनागतेऽपि भविष्यति शाश्वतोऽव्ययोऽवस्थित इत्यादीनां ग्रहणं भवति । "भावओ वण्णमंते गंधरसफासमंते" भावतो वर्णवान् गंधरसस्पर्शवान् भावतः वर्णवान् गन्धवान् रसवान् स्पर्शवान् इत्यर्थः । "गुणओ गहणगुणे"

पोग्गलत्थिकाए अणंताइं दव्वाइं) द्रव्य की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय अनन्तद्रव्यरूप है । (खेत्तओ लोयप्पमाणमेत्ते) क्षेत्र की अपेक्षा से पुद्गलास्तिकाय लोकप्रमाणमात्र है । (कालओ न कयाइ नासी जाव णिच्चे) काल की अपेक्षा से पुद्गलास्तिकाय कभी नहीं था ऐसा नहीं है यावत् वह नित्य है । यहां यावत् पद से (न कयाइ न भवइ, न कयाइ न भविस्सइ, भविंसु भवइ भविस्सइ धुवे णिइए सासए अक्खए अव्वए अवट्ठिए) इस पाठ का संग्रह किया गया है । अर्थात् पुद्गलास्तिकाय भूतकाल में नहीं था यह बात नहीं, था ही, वर्तमानकाल में नहीं है यह बात नहीं, है ही भविष्यत् कालमें नहीं होगा यह बात नहीं, होगा ही । (क्यों कि यह ध्रुव है, नियत है, शाश्वत है, अक्षय है, अव्यय है, अवस्थित है) और नित्य है (भावओ वण्णमंते गंधरसफास मंते) भाव की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय वर्णवाला है, गंध रस और स्पर्शवाला है । (गुणओ गहणगुणे) गुण की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय ग्रहण गुण

(दव्वओ ण पोग्गलत्थिकाए अणंताइ दव्वाइं) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય અનંત દ્રવ્યરૂપ છે (खेत्तओ लोयप्पमाणमेत्त) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય લોકપ્રમાણ છે (कालओ न कयाइ नासी जाव णिच्चे) કાળની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાયનું અસ્તિત્વ કોઇ પણ કાળે ન હોય એવું બન્યું નથી, કારણ-કે તે નિત્ય છે. અહીં जाव (પર્યન્ત) પદથી નીચેનો સૂત્રપાઠ ગ્રહણ કરવાનો છે-(न कयाइ न भवइ, न कयाइ न भविस्सइ, धुवे, णिईए, सासए, अक्खए, अव्वए, अवट्ठिए) એટલે કે પુદ્ગલાસ્તિકાય ભૂતકાળમાં ન હતું એવું બન્યું નથી વર્તમાનમાં નથી એવું પણ બનતું નથી અને ભવિષ્યમાં નહીં હોય એવું પણ બનવાનું નથી ત્રણે કાળમાં તેનું અસ્તિત્વ હોય છે જ, કારણ કે તે ધ્રુવ, નિયત, શાશ્વત, અક્ષય, અવ્યય, અવસ્થિત અને નિત્ય છે (भावओ वण्णमंते गंध, रस, फासमंते) ભાવની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય વર્ણ, ગંધ, રસ અને સ્પર્શવાળું છે, (गुणओ गहणगुणे) ગુણની અપેક્ષાએ

गुणतो ग्रहणगुण'-गुणस्त कार्यत इत्यर्थ तथा च ग्रहण परस्परेण सम्बन्धनं जीवेन वा औदारिकादिभिः शरीर प्रकारैरिति ॥ सू० १ ॥

अवतरणम्—धर्मास्तिकायादीनां स्वरूपं निरूप्य तदेकदेशे धर्मास्तिकायत्व मस्ति न वेत्यादि प्ररूपयन्नाह—"एगे भंते" इत्यादि ।

मूलम्-एगे भंते! धम्मत्थिकाएपयसे धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया ? गोयमा! णो इणट्ठे समट्ठे एव दोण्णि वि, तिण्णि वि, चत्तारि वि, पच छ सत्त अट्ठ णव दस सखेज्जा असखेज्जा भंते! धम्मत्थिकायपएसा धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया । गोयमा! णो इणट्ठे समट्ठे एगपएसूणे वि य ण भंते! धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया, णो इणट्ठे समट्ठे । से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ एगे धम्मत्थिकायस्स पएसे नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया जाव एगपएसूणे वि य ण धम्मत्थिकाए नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया । से णूण गोयमा! खंडे चक्के सगले चक्के ? भगव सयले चक्के नो खडे चक्के, एव छत्ते, चम्मे, दडे, दूसे, आउहे मोयए, से तेणट्ठेण गोयमा! एव वुच्चइ एगे धम्मत्थिकायपदेसे णो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया, जाव एगपएसूणे वि य ण धम्मत्थिकाए णो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया। से किं

वाला है । गुण शब्द का अर्थ कार्य और ग्रहण शब्द का अर्थ आपस में सबध होना है । इसका तात्पर्य यह है कि औदारिक आदि पुद्गलों के साथ जीवका संबध है, अथवा जीव औदारिक आदि अनेक प्रकार के पुद्गलों को ग्रहण करता है यही पुद्गल का ग्रहण होना गुण है ॥सू०१॥

પુદ્ગલાસ્તિકાય ગ્રહણગુણવાળું છે, ગુણનો અર્થ કાર્ય અને ગ્રહણનો અર્થ આપસમાં સબધ હોવો એવો થાય છે તેનુ તાત્પર્ય એ છે કે ઔદારિક આદિ પુદ્ગલોની સાથે જીવનો સબંધ છે અથવા જીવ ઔદારિક આદિ અનેક પ્રકારનાં પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરતો રહે છે એને જ પુદ્ગલાસ્તિકાયનો ગ્રહણ ગુણ કહે છે ॥ સૂ ૧ ॥

द्रव्यतः खलु पुद्गलास्तिकायोऽनन्तानि द्रव्याणि द्रव्यतोऽनन्तद्रव्यरूपत्वं पुद्गलास्तिकायस्येत्यर्थः। "खेत्तओ लोयप्पमाणमेत्ते" क्षेत्रतो लोकप्रमाणमात्रः "कालओ न कयावि नासी जाव णिच्चे" कालतो न कदाऽपि नासीत्-यावन्नित्यः अत्र यावत्पदेन न कदापि 'न भवइ' न कदापि 'न भविस्सइ' किन्तु पूर्वमप्यासीत् इदानीमपि वर्त्तते अनागतेऽपि भविष्यति शाश्वतोऽव्ययोऽवस्थित इत्यादीनां ग्रहणं भवति। "भावओ वण्णमंते गंधरसफासमंते" भावतो वर्णवान् गंधरसस्पर्शवान् भावतः वर्णवान् गन्धवान् रसवान् स्पर्शवान् इत्यर्थः। "गुणओ गहणगुणे"

पोग्गलत्थिकाए अणताइं दव्वाइं) द्रव्य की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय अनन्तद्रव्यरूप है। (खेत्तओ लोयप्पमाणमेत्ते) क्षेत्र की अपेक्षा से पुद्गलास्तिकाय लोकप्रमाणमात्र है। (कालओ न कयाइ नासी जाव णिच्चे) काल की अपेक्षा से पुद्गलास्तिकाय कभी नहीं था ऐसा नहीं है यावत् वह नित्य है। यहां यावत् पद से (न कयाइ न भवइ, न कयाइ न भविस्सइ, भविंसु भवइ भविस्सइ धुवे णिइए सासए अक्खए अव्वए अवट्ठिए) इस पाठ का संग्रह किया गया है। अर्थात् पुद्गलास्तिकाय भूतकाल में नहीं था यह बात नहीं, था ही, वर्तमानकाल में नहीं है यह बात नहीं, है ही भविष्यत् कालमें नहीं होगा यह बात नहीं, होगा ही। (क्यों कि यह ध्रुव है, नियत है, शाश्वत है, अक्षय है, अव्यय है, अवस्थित है) और नित्य है (भावओ वण्णमंते गंधरसफास मंते) भाव की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय वर्णवाला है, गंध रस और स्पर्शवाला है। (गुणओ गहणगुणे) गुण की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय ग्रहण गुण

(दव्वओ णं पोग्गलत्थिकाए अणताइं दव्वाइं) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય અનંત દ્રવ્યરૂપ છે (खेत्तओ लोयप्पमाणमेत्त) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય લોકપ્રમાણુ છે (कालओ न कयाइ नासी जाव णिच्चे) કાળની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાયનું અસ્તિત્વ કોઇ પણ કાળે ન હોય એવું બન્યું નથી, કારણ કે તે નિત્ય છે. અહીં जाव (પર્યન્ત) પદથી નીચેના સૂત્રપાઠ ગ્રહણ કરવાના છે-(न कयाइ न भवइ, न कयाइ न भविस्सइ, धुवे, णिईए, सासए, अक्खए, अव्वए, अवट्ठिए) એટલે કે પુદ્ગલાસ્તિકાય ભૂતકાળમા ન હતું એવુ બન્યુ નથી વર્તમાનમા નથી એવુ પણ બનતું નથી અને ભવિષ્યમાં નહીં હોય એવું પણ બનવાનું નથી ત્રણે કાળમા તેનું અસ્તિત્વ હોય છે જ, કારણુ કે તે ધ્રુવ, નિયત, શાશ્વત, અક્ષય, અવ્યય, અવસ્થિત અને નિત્ય છે. (भावओ वण्णमंते गंध, रस, फासमंते) ભાવની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય વર્ણ, ગંધ, રસ અને સ્પર્શવાળુ છે, (गुणओ गहणगुणे) ગુણની અપેક્ષાએ

गुणतो ग्रहणगुण-गुणत कार्यत इत्यर्थः तथा च ग्रहण परस्परेण सम्बन्धं जीवेन वा औदारिकादिभिः शरीर मकारैरिति ॥ सू० १ ॥

अवतरणम्—धर्मास्तिकायादीनां स्वरूपं निरूप्य तदेकदेशे धर्मास्तिकायत्वमस्ति न वेत्यादि प्ररूपयन्नाह—"एगे भंते" इत्यादि ।

मूलम्-एगे भते! धम्मत्थिकायपएसे धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया ? गोयमा! णो इणट्ठे समट्ठे एव दोण्णि वि, तिण्णि वि, चत्तारि वि, पच छ सत्त अट्ठ णव दस सखेज्जा असखेज्जा भते! धम्मत्थिकायपएसा धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया । गोयमा! णो इणट्ठे समट्ठे एगपएसूणे वि य ण भते! धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया, णो इणट्ठे समट्ठे । से केणट्ठेणं भते! एवं वुच्चइ एगे धम्मत्थिकायस्स पएसे नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया जाव एगपएसूणे वि य ण धम्मत्थिकाए नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया । से णूण गोयमा! खडे चक्के सगले चक्के? भगव सयले चक्के नो खडे चक्के, एव छत्ते, चम्मे, दंडे, दूसे, आउहे मोयए, से तेणट्ठेण गोयमा! एव वुच्चइ एगे धम्मत्थिकायपदेसे णो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया, जाव एगपएसूणे वि य ण धम्मत्थिकाए णो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया। से किं

वाला है। गुण शब्द का अर्थ कार्य और ग्रहण शब्द का अर्थ आपस में संबंध होना है। इसका तात्पर्य यह है कि औदारिक आदि पुद्गलों के साथ जीवका सबध है, अथवा जीव औदारिक आदि अनेक प्रकार के पुद्गलों को ग्रहण करता है यही पुद्गल का 'ग्रहण होना गुण है ॥सू०१॥

પુદ્ગલાસ્તિકાય ગ્રહણગુણવાળુ છે, ગુણનો અર્થ કાર્ય અને ગ્રહણનો અર્થ આપસમાં સબધ હોવો, એવો થાય છે તેનુ તાત્પર્ય એ છે કે ઔદારિક આદિ પુદ્ગલોની સાથે જીવનો સબંધ છે, અથવા જીવ ઔદારિક આદિ અનેક પ્રકારનાં પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરતો રહે છે અને જ પુદ્ગલાસ્તિકાયનો ગ્રહણ ગુણ કહે છે ॥ સૂ. ૧ ॥

खाइणं भंते ! धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया । गोयमा ! असंखेज्जा धम्मत्थिकाएपएसा, ते सव्वे कसिणा पडिपुण्णा, निरवसेसा एगगहणगहिया एसणं गोयमा ! धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया । एवं अधम्मत्थिकाए वि । आगासत्थिकाए वि जीवत्थिकाए वि, पोग्गलत्थिकाए वि एवं चेव, नवरं तिण्हंपि-पएसा अणंता भाणियव्वा सेसं तं चेव ॥ सू० २ ॥

छाया–एको भदन्त ! धर्मास्तिकायप्रदेशो धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात् गौतम ! नायमर्थः समर्थः एवं द्वावपि त्रयोऽपि चत्वारोऽपि पञ्चषट् सप्त अष्ट नव दश–संख्या-

धर्मास्तिकाय आदि पांच प्रकार के अस्तिकायों का स्वरूप निरूपण करके अब सूत्रकार यह प्रकट करते हैं कि धर्मास्तिकाय के एकदेश में धर्मास्तिकायता है या नहीं— (एगे भंते ! धम्मत्थिकायपएसे) इत्यादि। (एगे भंते ! धम्मत्थिकायपएसे धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) हे भदन्त ! धर्मास्तिकायके एकप्रदेशको (यह धर्मास्तिकाय है) ऐसा कहाजा सकता है क्या ? (गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे) हे गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है अर्थात् धर्मास्तिकायका एकप्रदेश धर्मास्तिकाय नहीं कहा जा सकता है ।(एवं दोण्णि वि तिण्णि वि, चत्तारि वि, पंच, छ,सत्त,अट्ठ, नव, दस, संखेज्जा,) इसी तरह से धर्मास्तिकाय के दो प्रदेश भी, तीन प्रदेश भी, चार प्रदेश भी, पांच प्रदेश भी, छह प्रदेश भी, सात प्रदेश भी आठ प्रदेश भी, नौ प्रदेश भी, दश प्रदेश भी धर्मास्तिकाय नहीं कहे जा

ધર્માસ્તિકાય આદિ પાચ પ્રકારના અસ્તિકાયોના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર તે બતાવે છે કે- ધર્માસ્તિકાયના એક દેશમા -ધર્માસ્તિકાયના હોય છે કે નહીં—(एगे भंते ! धम्मत्थिकायपएसे) ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ–(एगे भंते ! धम्मत्थिकायपएसे धम्मत्थिए त्ति वत्तव्व सिया) હે ભદન્ત ! ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશને અનુલક્ષીને, (આ ધર્માસ્તિકાય છે,) એવુ કહી શકાય ખરૂ ? (गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे) હે ગૌતમ ! એ અર્થ બરાબર નથી–એટલે કે ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય નહી. (एवं दोण्णि वि, तिण्णिवि चत्तारि वि, पच, छ, सत्त, अट्ठ, नव, दस, संखेज्जा) એજ પ્રમાણે ધર્માસ્તિકાયના બે ત્રણ, ચાર, પાચ, છ સાત, આઠ, નવ, દસ વગેરે પ્રદેશોને પણ ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય નહીં. ધર્માસ્તિકાયના

गुणतो ग्रहणगुण'-गुणत कार्यत इत्यर्थ तथा च ग्रहण परस्परेण सम्बन्ध, जीवेन वा औदारिकादिभिः शरीर प्रकारैरिति ॥ सू० १ ॥

अथप्रकरणम्—धर्मास्तिकायादीनां स्वरूप निरूप्य तदेकदेशे धर्मास्तिकायस्य मस्ति न वेत्यादि प्ररूपयन्नाह—"एगे भते" इत्यादि ।

मूलम्-एगे भते! धम्मत्थिकायपयसे धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया? गोयमा! णो इणट्ठे समट्ठे एव दोण्णि वि, तिण्णि वि, चत्तारि वि, पच छ सत्त अट्ठ णव दस सखेज्जा असखेज्जा भते! धम्मत्थिकायपएसा धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया। गोयमा! णो इणट्ठे समट्ठे एगपएसूणे वि य ण भते! धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया, णो इणट्ठे समट्ठे। से केणट्ठेणं भते! एव वुच्चइ एगे धम्मत्थिकायस्स पएसे नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया जाव एगपएसूणे वि य ण धम्मत्थिकाए नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया। से णूण गोयमा! खडे चक्के सगले चक्के! भगव सयले चक्के नो खडे चक्के, एव छत्ते, चम्मे, दडे, दूसे, आउहे मोयए, से तेणट्ठेण गोयमा! एव वुच्चइ एगे धम्मत्थिकायपदेसे णो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया, जाव एगपएसूणे वि य ण धम्मत्थिकाए णो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया। से किं

वाला है। गुण शब्द का अर्थ कार्य और ग्रहण शब्द का अर्थ आपस में संबंध होना है। इसका तात्पर्य यह है कि औदारिक आदि पुद्गलों के साथ जीवका संबंध है, अथवा जीव औदारिक आदि अनेक प्रकार के पुद्गलों को ग्रहण करता है यही पुद्गल का ग्रहण होना गुण है॥सू०१॥

પુદ્ગલાસ્તિકાય ગ્રહણગુણવાળું છે, ગુણનો અર્થ કાર્ય અને ગ્રહણનો અર્થ આપસમાં સંબંધ હોવો એવો થાય છે તેનું તાત્પર્ય એ છે કે ઔદારિક આદિ પુદ્ગલોની સાથે જીવનો સંબંધ છે અથવા જીવ ઔદારિક આદિ અનેક પ્રકારનાં પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરતો રહે છે એને જ પુદ્ગલાસ્તિકાયનો ગ્રહણ ગુણ કહે છે ॥ સૂ ૧ ॥

खाइणं भंते! धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया। गोयमा! असंखेज्जा धम्मत्थिकाएपएसा, ते सव्वे कसिणा पडिपुण्णा, निरवसेसा एगगहणगहिया एसणं गोयमा! धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया। एवं अधम्मत्थिकाए वि। आगासत्थिकाए वि जीवत्थिकाए वि, पोग्गलत्थिकाए वि एवं चेव, नवरं तिण्हंपि-पएसा अणंता भाणियव्वा सेसं तं चेव॥ सू० २॥

छाया–एको भदन्त! धर्मास्तिकायप्रदेशो धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात् गौतम! नायमर्थः समर्थः एवं द्वावपि त्रयोऽपि चत्वारोऽपि पञ्चषट् सप्त अष्ट नव दश–संख्या-

धर्मास्तिकाय आदि पांच प्रकार के अस्तिकायों का स्वरूप निरूपण करके अब सूत्रकार यह प्रकट करते हैं कि धर्मास्तिकाय के एकदेश में धर्मास्तिकायता है या नहीं— (एगे भंते! धम्मत्थिकायपएसे) इत्यादि।

(एगे भंते! धम्मत्थिकायपएसे धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) हे भदन्त! धर्मास्तिकायके एकप्रदेशको (यह धर्मास्तिकाय है) ऐसा कहा जा सकता है क्या? (गोयमा! णो इणट्ठे समट्ठे) हे गौतम! यह अर्थ समर्थ नहीं है अर्थात् धर्मास्तिकायका एकप्रदेश धर्मास्तिकाय नहीं कहा जा सकता है।(एवं दोण्णि वि तिण्णि वि, चत्तारि वि, पंच, छ,सत्त,अट्ठ, नव, दस, संखेज्जा,) इसी तरह से धर्मास्तिकाय के दो प्रदेश भी, तीन प्रदेश भी, चार प्रदेश भी, पांच प्रदेश भी, छह प्रदेश भी, सात प्रदेश भी आठ प्रदेश भी, नौ प्रदेश भी, दश प्रदेश भी धर्मास्तिकाय नहीं कहे जा

ધર્માસ્તિકાય આદિ પાચ પ્રકારના અસ્તિકાયોના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર તે બતાવે છે કે ધર્માસ્તિકાયના એક દેશમા ધર્માસ્તિકાયના હોય છે કે નહીં—(एगे भंते! धम्मत्थिकायपएसे) ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ–(एगे भंते! धम्मत्थिकायपएसे धम्मत्थिए त्ति वत्तव्व सिया) હે ભદન્ત! ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશને અનુલક્ષીને, (આ ધર્માસ્તિકાય છે,) એવુ કહી શકાય ખરૂ? (गोयमा! णो इणट्ठे समट्ठे) હે ગૌતમ! એ અર્થ બરાબર નથી–એટલે કે ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય નહી. (एवं दोण्णि वि, तिण्णिवि चत्तारि वि, पच, छ, सत्त, अट्ठ, नव, दस, संखेज्जा) એજ પ્રમાણે ધર્માસ્તિકાયના બે ત્રણ, ચાર, પાચ, છ સાત, આઠ, નવ, દસ વગેરે પ્રદેશોને પણ ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય નહીં. ધર્માસ્તિકાયના

रेण लोकान्तेन सह एकैकस्य संयोजनं कृत्वा सूत्राभिलापः कर्तव्यः, अलोकान्तेनापि सह सर्वेषां स्थानानां संयोजनं करणीयमिति। 'पुव्विं भंते सत्तमे उवासंतरे पच्छा सत्तमे तणुवाए' पूर्वं भदन्त सप्तममवकाशान्तरं पश्चात् सप्तमस्तनुवातः 'एवं सत्तमं उवासंतरं सव्वेहिं समं संजोएयव्वं जाव सव्वद्धाए' एवं सप्तममवकाशान्तरं सर्वैः समं संयोजयितव्यं यावत्सर्वाद्धया, एवम्=अनुपदोक्तक्रमेण सप्तममवकाशान्तरं सर्वैस्तनुवातादिस्थानैः समं संयोज्य प्रश्नोत्तररूपा आलापकाः सर्वाद्धापर्यन्तमध्येतव्या इति भावः। अथ सप्तमतनुवातघनवातमधिकृत्याह 'पुव्विं भंते' इत्यादि। 'पुव्विं भंते सत्तमे तणुवाए पच्छा सत्तमे घणवाए' पूर्वं भदन्त! सप्तमस्तनुवातः पश्चात्सप्तमो घनवातः, इत्यादि। 'एयंपि तहेव नेयव्वं जाव सव्वद्धा' एतदपि तथैव ज्ञातव्यं यावत्सर्वाद्धा, एतत् तनुवातमधिकृत्य प्रश्नोत्तरं सर्वाद्धापर्यन्तं तथैव=पूर्ववदेव ज्ञातव्यमिति। 'एवं उवरिल्लं एक्केक्कं संजोयंतेणं जो जो हिट्ठिल्लो तं तं छड्डेंतेण

साथ भी समस्त स्थानोंको जोडकर सूत्रालापक कहना चाहिये। (पुव्विं भंते! सत्तमे उवासंतरे पच्छा सत्तमे तणुवाए ?) हे भदन्त! पहिले सातवां अवकाशान्तर है और बाद में सातवां तनुवात है ? (एवं सत्तमं उवासंतरं सव्वेहिं समं संजोएयव्वं जाव सव्वद्धाए) हे रोह! पूर्वोक्तरूप से सातवें अवकाशान्तर को समस्त तनुवात आदि स्थानों के साथ जोडकर प्रश्नोत्तररूप आलापक सर्वाद्धा तक करलेना चाहिये। (पुव्विं भंते! सत्तमे तणुवाए पच्छा सत्तमे घणवाए) हे भदन्त! पहिले सप्तम तनुवात है और पीछे सातवां घनवात है ? (एयं पि तहेव नेयव्वं जाव सव्वद्धा) हे रोह! सर्वाद्धा तक इस विषयसंबंधी प्रश्नोत्तर, पहिले जैसे ही जानना चाहिये। (एवं उवरिल्लं एक्केक्कं संजोयंतेणं जो जो हेट्ठिल्लो तं तं छड्

रीते कहेवु. (पुव्विं भंते! सत्तमे उवासंतरे पच्छा सत्तमे तणुवाए ?) हे भगवन्! पहेलां सातमुं अवकाशान्तर छे अने पछी सातमुं तनुवात छे, के पहेलां तनुवात छे अने पछी सातमुं अवकाशान्तर छे ? (एवं सत्तमं उवासंतरं सव्वेहिं समं संजोएयव्वं जाव सव्वद्धाए) हे रोह! पूर्वे कहेल छे ए रीते सातमां अवकाशान्तरने तमाम तनुवात वगेरे स्थानोनी साथे जोडीने सर्वाद्धा सुधीना प्रश्नोत्तर रूप आलापको बनाववा जोइए. (पुव्विं भंते! सत्तमे तणुवाए पच्छा सत्तमे घणवाए?) हे भगवन्! शुं पहेलां सातमुं तनुवात छे अने त्यारबाद सातमुं घनवात छे ? (एयं पि तहेव नेयव्वं जाव सव्वद्धा) एवी रीते सर्वाद्धा पर्यन्तना विषय संबंधी प्रश्नोत्तरो पण पहेलांना प्रश्नोत्तरो प्रमाणे ज समजवा. (एवं उवरिल्लं एक्केक्कं संजोयंतेणं जो जो हेट्ठिल्लो तं तं छड्डेंतेणं नेयव्वं)

गौतम ! खण्डं चक्रं सकल चक्रम् ? भगवन् ! सकलं चक्रम् नो खण्डं चक्रम् एवं छत्रं चर्म दण्डः दूष्यम्–आयुधम्–मोदकम्–तत् तेन अर्थेन गौतम ! एवमुच्यते एको धर्मास्तिकायप्रदेशोन धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात् यावदेकप्रदेशोनोऽपि च खलु धर्मास्तिकायो न धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात् तत् किं खाइ–पुनः खलु

वक्तव्य नहीं हो सकता है यावत् एक प्रदेशन्यून भी धर्मास्तिकाय धर्मास्तिकाय ऐसा नहीं कहा जा सकता है ? (से णूणं गोयमा ! खंडे चक्के ? सगले चक्के ? भगवं ! सगले चक्के, नो खडे चक्के एवं छत्ते, चम्मे, दंडे, दूस, आउहे, मोयए से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ एगे धम्मस्थिकायपएसे णो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया–जाव एगपएसूणे विय णं नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) हे गौतम ! हम तुमसे पूछते है कि चक्र का खंड पूरा चक्र कहलावेगा या पूरा चक्र संपूर्ण चक्र कहलावेगा ? तब गौतम ने कहा–हे भदन्त ! पूरा चक्र ही चक्र कहलावेगा, चक्र का खंड चक्र नहीं कहलावेगा, इसी तरह से छत्र, चर्म, दण्ड दूष्य, (वस्त्र,) शस्त्र, मोदक के विषय में भी जानना चाहिये। (से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ, एगे धम्मत्थिकायपएसे णो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया, जाव एगपएसूणे वि य णं धम्मत्थिकाए नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) इस कारण हे गौतम ! मैंने ऐसा कहा है कि धर्मास्तिकाय का एक प्रदेश पूरा धर्मास्तिकाय नहीं कहा जा सकता

એક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય નહીં, બે, ત્રણ આદિથી લઇને અસંખ્યાત પ્રદેશોને પણ ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય નહીં, અને એક પ્રદેશ ન્યૂન હોય તો પણ તેને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય નહીં ? (से णूण गोयमा ! खंडे चक्के ? सगले चक्के ? भगवं सगले चक्के, नो खंडे चक्के) હે ગૌતમ ! ચક્રના ખંડને ચક્ર કહી શકાય, કે આખા ચક્રને જ ચક્ર કહેવાય ! ગૌતમ સ્વામી જવાબ આપે છે,–હે ભદન્ત ! આખા ચક્રને જ ચક્ર કહી શકાય, ચક્રના ખંડને ચક્ર કહી શકાય નહીં " મહાવીર પ્રભુ કહે છે કે (एव छत्ते, चम्मे, दंडे दूसे, आउहे, मोयए से तेणट्ठे ण गोयमा ! एवं वुच्चइ एगे धम्मत्थिकायपएसे णो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया जाव एगपएसूणे वि य णं धम्मत्थिकाए नो धम्मत्थिकाएत्ति वत्तव्वसिया) એજ પ્રમાણે છત્ર, ચર્મ, દંડ વસ્ત્ર, શસ્ત્ર મોદક આદિના વિષયમાં પણ સમજવુ એટલે કે તેમના આખા ભાગને જ છત્ર, ચર્મ, આદિ કહી શકાય, તેમના ખંડને છત્ર, ચર્મ, દંડ આદિ નામે ઓળખી શકાય નહીં હે ગૌતમ ! તે કારણે જ હું એવું કહું છું કે ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશને પૂરો ધર્માસ્તિકાય કહેવાતુ નથી. બે, ત્રણ, સંખ્યાત, અસંખ્યાત આદિ પ્રદે-

ता: असंख्याता: । भदन्त ! धर्मास्तिकायप्रदेशा धर्मास्तिकाय इतिवक्तव्यं स्यात् गौतम ! नायमर्थः समर्थः एकप्रदेशोनोऽपि च खलु भदन्त ! धर्मास्तिकायः धर्मास्तिकाय इति वक्तव्य स्यात् नायमर्थः समर्थः तत्केनार्थेन भदन्त ! एवमुच्यते एको धर्मास्तिकायस्य प्रदेशो न धर्मास्तिकाय इतिवक्तव्यं स्यात् यावत् एकप्रदेशोनोऽपि च खलु धर्मास्तिकायो न धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात् तन्नूनं

सकते हैं। तथा धर्मास्तिकाय के संख्यात प्रदेश भी धर्मास्तिकाय नहीं कहला सकते हैं। 'असंखेज्जा भंते धम्मत्थिकायपएसा धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया' हे भदन्त! धर्मास्तिकाय के असंख्यात प्रदेश धर्मास्तिकाय इसरूप से वक्तव्य हो सकते हैं? 'गोयमा! णो इणट्ठे समट्ठे' हे गौतम! यह अर्थ समर्थ नहीं है-अर्थात् धर्मास्तिकाय के असंख्यात प्रदेश धर्मास्तिकाय इसरूप से वक्तव्य नहीं हो सकते हैं। 'एगपएसूणे वि य णं भंते? धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया' हे भदन्त। एक प्रदेश न्यून भी धर्मास्तिकाय धर्मास्तिकाय इस पद से वक्तव्य हो सकता है? 'गोयमा! णो इणट्ठे समट्ठे' हे गौतम! यह अर्थ समर्थ नहीं है। अर्थात्-एक प्रदेश न्यून भी धर्मास्तिकाय इस पद द्वारा वक्तव्य नहीं हो सकता है। 'से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ एगे धम्मत्थिकायस्स पएसे नो धम्मत्थिकाएत्ति वत्तव्वं सिया, जाव एगपएसूणे वि य णं धम्मत्थिकाए नो धम्मत्थिकाएत्ति वत्तव्वं सिया' हे भदन्त! ऐसा आप किस कारण से कहते हो कि धर्मास्तिकाय का एक प्रदेश धर्मास्तिकाय इसरूप से

સંખ્યાત પ્રદેશોને પણ ધર્માસ્તિકાય કહેવાય નહીં (असंखेज्जा भंते! धम्मत्थिकायपएसा धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया?) હે ભદન્ત! ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાત પ્રદેશોને અનુલક્ષીને (આ ધર્માસ્તિકાય છે, એવું કહી શકાય ખરૂં? (गोयमा! णो इणट्ठे समट्ठे) હે ગૌતમ! તે અર્થ પણ બરાબર નથી-એટલે કે ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાત પ્રદેશોને પણ ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય નહીં (एगपएसूणे वि य णं भंते! धम्मत्थिकाए धम्मत्थिकाएत्ति वत्तव्वं सिया?) હે ભદન્ત! એક પણ પ્રદેશ ન્યૂન (ઓછો) હોય એવા ધર્માસ્તિકાયને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય ખરૂં? (गोयमा! णो इणट्ठे समट्ठे) હે ગૌતમ! એ અર્થ પણ બરાબર નથી, એટલે કે એક પ્રદેશની પણ ન્યૂનતા હોય તો તેને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય નહીં (से केणट्ठेणं भंते एवं वुच्चइ एगे धम्मत्थिकायस्स पएसे नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया, जाव एगपएसूणे वि य णं नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) હે ભદન્ત! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે ધર્માસ્તિકાયના

गौतम ! खण्डं चक्रं सकल चक्रम्? भगवन् !सकलं चक्रम् नो खण्डं चक्रम् एवं छत्रं चर्म दण्डः दूष्यम्–आयुधम्–मोदकम्–तत् तेन अर्थेन गौतम ! एवमुच्यते एको धर्मास्तिकायप्रदेशोन धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात् यावदेकप्रदेशोनोऽपि च खलु धर्मास्तिकायो न धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात् तत् किं खाइ–पुनः खलु

वक्तव्य नहीं हो सकता है यावत् एक प्रदेशन्यून भी धर्मास्तिकाय धर्मास्तिकाय ऐसा नहीं कहा जा सकता है ? (से णूणं गोयमा ! खंडे चक्के ? सगले चक्के ? भगवं ! सगले चक्के, नो खंडे चक्के एवं छत्ते, चम्मे, दंडे, दूस, आउहे, मोयए से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ एगे धम्मत्थिकायपएसे णो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया–जाव एगपएसूणे विय णं नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया) हे गौतम ! हम तुमसे पूछते है कि चक्र का खंड पूरा चक्र कहलावेगा या पूरा चक्र संपूर्ण चक्र कहलावेगा ? तब गौतम ने कहा–हे भदन्त ! पूरा चक्र ही चक्र कहलावेगा, चक्र का खंड चक्र नहीं कहलावेगा, इसी तरह से छत्र, चर्म, दण्ड दूष्य, (वस्त्र,) शस्त्र, मोदक के विषय में भी जानना चाहिये। (से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ, एगे धम्मत्थिकायपएसे णो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया, जाव एगपएसूणे वि य णं धम्मत्थिकाए नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) इस कारण हे गौतम ! मैंने ऐसा कहा है कि धर्मास्तिकाय का एक प्रदेश पूरा धर्मास्तिकाय नहीं कहा जा सकता

એક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય નહીં, બે, ત્રણ આદિથી લઇને અસંખ્યાત પ્રદેશોને પણ ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય નહીં, અને એક પ્રદેશ ન્યૂન હોય તો પણ તેને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય નહીં ? (से णूण गोयमा ! खंडे चक्के ? सगले चक्के ? भगवं सगले चक्के, नो खंडे चक्के) હે ગૌતમ ! ચક્રના ખંડને ચક્ર કહી શકાય, કે આખા ચક્રને જ ચક્ર કહેવાય ! ગૌતમ સ્વામી જવાબ આપે છે,–હે ભદન્ત ! આખા ચક્રને જ ચક્ર કહી શકાય, ચક્રના ખંડને ચક્ર કહી શકાય નહીં" મહાવીર પ્રભુ કહે છે કે (एव छत्ते, चम्मे, दंडे दूसे, आउहे, मोयए से तेणट्ठे णं गोयमा ! एवं वुच्चइ एगे धम्मत्थिकायपएसे णो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया जाव एगपएसूणे वि य णं धम्मत्थिकाए नो धम्मत्थिकाएत्ति वत्तव्वसिया) એજ પ્રમાણે છત્ર, ચર્મ, દંડ વસ્ત્ર, શસ્ત્ર મોદક આદિના વિષયમાં પણ સમજવુ એટલે કે તેમના આખા ભાગને જ છત્ર, ચર્મ, આદિ કહી શકાય, તેમના ખંડને છત્ર, ચર્મ, દંડ આદિ નામે ઓળખી શકાય નહીં હે ગૌતમ ! તે કારણે જ હું એવું કહું છું કે ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશને પૂરો ધર્માસ્તિકાય કહેવાતુ નથી. બે, ત્રણ, સંખ્યાત, અસંખ્યાત આદિ પ્રદે-

भदन्त ! धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात् गौतम ! असंख्येया धर्मास्तिकायप्रदेशास्ते सर्वे कृत्स्ना प्रतिपूर्णा निरवशेषा एकग्रहणगृहीता एषः खलु गौतम ! धर्मास्तिकाय इति वक्तव्य स्यात् एवमधर्मास्तिकायोऽपि । आकाशास्तिकायोऽपि जीवास्तिकायोऽपि पुद्गलास्तिकायोऽपि एवमेव नवरं त्रयाणामपि अनन्ता भणितव्या । शेष तदेव ॥ सू० २ ॥

है और इसी तरह से यावत एक प्रदेश न्यून धर्मास्तिकाय भी पूरा धर्मास्तिकाय नहीं कहा जा सकता है। (से किं खाइए णं भंते धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) तो हे भदन्त ! कहो धर्मास्तिकाय इस शब्द से क्या वक्तव्य होना चाहिये ? (गोयमा ! असंखेज्जा धम्मत्थिकायपएसा) हे गौतम ! धर्मास्तिकाय के असंख्यातप्रदेश हैं (ते सव्वे कसिणा पडिपुण्णा, निरवसेसा, एग गहणगहिया एस णं गोयमा ! धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) वे सब कृत्स्न, प्रतिपूर्ण, निरवशेष और एक ग्रहण–शब्द से गृहीत होजावें ऐसे रूप में हो गये हों तब वे असंख्यात प्रदेश (धर्मास्तिकाय) इस शब्दद्वारा वक्तव्य हो सकते हैं। (एवमहम्मत्थिकाए वि, आगासत्थिकाए वि जीवत्थिकाए वि पोग्गलत्थिकाए वि एवं चेव– नवरं तिण्णं पि पएसा अणंता भाणियव्वा–सेसं तं चेव) इसी तरह से अधर्मास्तिकाय में भी, आकाशास्तिकाय में भी और जीवास्तिकाय में भी जानना चाहिये तथा पुद्गलास्तिकाय में भी

ટાને પણ ધર્માસ્તિકાય કહેવતા નથી, એક જ પ્રદેશ ન્યૂન (ઓછો) હોય એવા ધર્માસ્તિકાયને પણ પૂરો ધર્માસ્તિકાય કહી શકાતો નથી.

(से किं खाइए णं भंते ! धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) હે ભદન્ત ! તો પછી ધર્માસ્તિકાય શબ્દથી શું ગ્રાહ્ય થાય છે ? (गोयमा ! असंखेज्जा धम्मत्थिकाए पएसा) હે ગૌતમ ! ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાત પ્રદેશો હોય છે.

(ते सव्वे कसिणा पडिपुण्णा निरवसेसा एगगहणगहिया एवणं गोयमा ! धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) હે ગૌતમ ! તે સઘળા પ્રદેશો કૃત્સ્ન (સંપૂર્ણ) પ્રતિપૂર્ણ, નિરવશેષ અને (ધર્માસ્તિકાય) એવા એક શબ્દ વડે ગ્રાહ્ય (ગ્રહણ કરવા યોગ્ય) બનતાં હોય, ત્યારે જ તે અસંખ્યાત પ્રદેશોને 'ધર્માસ્તિકાય' શબ્દથી ઓળખી શકાય છે (एवमहम्मत्थिकाए वि, जीवत्थिकाए वि पोग्गलत्थिकाए वि एव चेव–नवरं तिण्णि वि पएसा अणंता भाणियव्वा–सेसं तं चेव) અધર્માસ્તિકાય આકાશાસ્તિકાય, અને જીવાસ્તિકાયના વિષયમાં પણ એ પ્રમાણે જ સમજવું પુદ્ગલાસ્તિકાયના વિષયમાં પણ એમ જ સમજવું પણ તેમાં

टीका—"एगे भंते ! धम्मत्थिकायपएसे धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया" एकोऽपि भदन्त ! धर्मास्तिकायप्रदेशो धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात् हे भदन्त ! धर्मास्तिकायस्य एकस्मिन् प्रदेशे धर्मास्तिकायत्वं धर्मो विद्यते न वा विद्यते चेत्तदा एकस्मिन्नपि अवयवे धर्मास्तिकायोऽयमिति व्यवहारः स्यात् तथा च तत् तदवयवेनैव धर्मास्तिकाय इति व्यवहारस्य सम्पादनात् प्रदेशसमुदायात्मकधर्मास्तिकायस्य नैरर्थक्यमेव प्रसज्येत प्रत्येकस्मिन्नवयवे धर्मास्तिकायत्वं धर्मो न

इस प्रकार से जानना चाहिये। विशेषता केवल इतनी ही है कि जीवास्तिकाय, आकाशास्तिकाय और पुद्गलास्तिकाय इन के प्रदेश अनन्त कहना चाहिये। बाकी का अवशिष्ट कथनसब पूर्व जैसा नहीं हैं ॥सू २॥

टीकार्थ—(एगे भंते ! धम्मत्थिकायपएसे धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया" हे भदन्त ! धर्मास्तिकायका एकप्रदेश धर्मास्तिकाय इस शब्द द्वारा वक्तव्य हो सकता है क्या ? पूछने का अभिप्राय ऐसा है कि-धर्मास्तिकाय के एक प्रदेश में धर्मास्तिकायत्वरूप धर्म मौजूद है या नहीं ? यदि प्रथम पक्ष अंगीकार किया जावे तो फिर इस स्थिती में प्रदेश समुदायात्मक धर्मास्तिकाय के मानने की आवश्यकता ही क्या रहती है क्यों कि धर्मास्तिकाय के एक भी प्रदेश में (यह धर्मास्तिकाय है) ऐसा व्यवहार होना तुम मान रहे हो अतः जब एक प्रदेश से ही धर्मास्तिकायरूप व्यवहार संपादित होजाता है-तो बात स्वतः ही साबित हो जाती है कि प्रदेशसमुदायात्मक धर्मास्तिकाय मानना निरर्थक ही है ?

એટલી જ વિશેષતા છે કે જીવાસ્તિકાય, આકાશાસ્તિકાય અને પુદ્ગલાસ્તિકાયના પ્રદેશ અનેક છે એમ કહેવું જોઇએ. બાકીનું સમસ્ત કથન ધર્માસ્તિકાય જેવું જ સમજવું ॥ સૂ ૨ ॥

ટીકાર્થ–" एगे भंते ! धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया " હે ભદન્ત ! ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય ખરૂ ? પ્રશ્નનુ તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશમા ધર્માસ્તિકાયના બધા ધર્મો (ગુણો) મોજુદ હોય છે કે નહી !

જો એક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાતો હોય તો પ્રદેશસમુદાય રૂપ ધર્માસ્તિકાયનુ અસ્તિત્વ માનવાની આવશ્યકતા જ શી રહે કારણ કે ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશને માટે "આ ધર્માસ્તિકાય છે" એવો ઉલ્લેખ કરવામાં આવી શકે તો એ વાત તો આપો આપ સાબિત થઇ જાય છે કે પ્રદેશ સમુદાયાત્મક ધર્માસ્તિકાય માનવું નિરર્થક જ છે જો પ્રદેશ સમુદાયાત્મક

भदन्त ! धर्मास्तिकाय इति वक्तव्य स्यात् गौतम ! असख्येया धर्मास्तिकायप्रदेशास्ते सर्वे कृत्स्नाः प्रतिपूर्णा निरवशेषा एकग्रहणगृहीताः एषः खलु गौतम ! धर्मास्तिकाय इति वक्तव्य स्यात् एवमधर्मास्तिकायोऽपि । आकाशास्तिकायोऽपि जीवास्तिकायोऽपि पुद्गलास्तिकायोऽपि एवमेव नवर त्रयाणामपि अनन्ता भणितव्याः । शेष तदेव ॥ सू० २ ॥

है और इसी तरह से यावत् एक प्रदेश न्यून धर्मास्तिकाय भी पूरा धर्मास्तिकाय नहीं कहा जा सकता है। (से किं खाइए णं भंते धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) तो हे भदन्त ! कहो धर्मास्तिकाय इस शब्द से क्या वक्तव्य होना चाहिये ? (गोयमा ! असंखेज्जा धम्मत्थिकायपएसा) हे गौतम ! धर्मास्तिकाय के असंख्यातप्रदेश हैं (ते सव्वे कसिणा पडिपुण्णा, निरवसेसा, एग गहणगहिया एस णं गोयमा ! धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) वे सब कृत्स्न, प्रतिपूर्ण, निरवशेष और एक ग्रहण-शब्द से गृहीत होजावें ऐसे रूप में हो गये हो तब वे असंख्यात प्रदेश (धर्मास्तिकाय) इस शब्दद्वारा वक्तव्य हो सकते हैं। (एवमहम्मत्थिकाए वि, आगासत्थिकाए वि जीवत्थिकाए वि पोग्गलत्थिकाए वि एवं चेव- नवरं तिण्णं पि पएसा अणता भाणियव्वा-सेसं तं चेव) इसी तरह से अधर्मास्तिकाय में भी, आकाशास्तिकाय में भी और जीवास्तिकाय में भी जानना चाहिये तथा पुद्गलास्तिकाय में भी

હોને પણ ધર્માસ્તિકાય કહેવતા નથી, એક જ પ્રદેશ ન્યૂન (ઓછો) હોય એવા ધર્માસ્તિકાયને પણ પૂરો ધર્માસ્તિકાય કહી શકાતો નથી.

(से किं खाइए ण भंते ! धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) હે ભદન્ત ! તો પછી ધર્માસ્તિકાય શબ્દથી શું વ્યક્ત થાય છે ? (गोयमा ! असंखेज्जा धम्मत्थिकाए पएसा) હે ગૌતમ ! ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાત પ્રદેશો હોય છે.

(ते सव्वे कसिणा पडिपुण्णा निरवसेसा एगगहणगहिया एसणं गोयमा ! धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) હે ગૌતમ ! તે સઘળા પ્રદેશો કૃત્સ્ન (સંપૂર્ણ) પ્રતિપૂર્ણ, નિરવશેષ અને (ધર્માસ્તિકાય) એવા એક શબ્દ વડે ગ્રાહ્ય (ગ્રહણ કરવા યોગ્ય) બનતા હોય ત્યારે જ તે અસંખ્યાત પ્રદેશોને 'ધર્માસ્તિકાય' શબ્દથી ઓળખી શકાય છે (एवमहम्मत्थिकाए वि, जीवत्थिकाए वि पोग्गलत्थिकाए वि एव चेव-नवरं तिण्णि वि पएसा अणता भाणियव्वा-सेसं त चेव) અધર્માસ્તિકાય, આકાશાસ્તિકાય, અને જીવાસ્તિકાયના વિષયમાં પણ એ પ્રમાણે જ સમજવું પુદ્ગલાસ્તિકાયના વિષયમાં પણ એમ જ સમજવું પણ તેમાં

टीका—"एगे भंते ! धम्मत्थिकायपएसे धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया" एकोऽपि भदन्त ! धर्मास्तिकायप्रदेशो धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात् हे भदन्त ! धर्मास्तिकायस्य एकस्मिन् प्रदेशे धर्मास्तिकायत्वं धर्मो विद्यते न वा विद्यते चेत्तदा एकस्मिन्नपि अवयवे धर्मास्तिकायोऽयमिति व्यवहारः स्यात् तथा च तत् तदवयवेनैव धर्मास्तिकाय इति व्यवहारस्य सम्पादनात् प्रदेशसमुदायात्मकधर्मास्तिकायस्य नैरर्थक्यमेव प्रसज्येत प्रत्येकस्मिन्नवयवे धर्मास्तिकायत्वं धर्मो न

इस प्रकार से जानना चाहिये। विशेषता केवल इतनी ही है कि जीवास्तिकाय, आकाशास्तिकाय और पुद्गलास्तिकाय इन के प्रदेश अनन्त कहना चाहिये। बाकी का अवशिष्ट कथनसब पूर्व जैसा नहीं है ॥सू २॥

टीकार्थ—(एगे भंते ! धम्मत्थिकायपएसे धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया" हे भदन्त ! धर्मास्तिकायका एक प्रदेश धर्मास्तिकाय इस शब्द द्वारा वक्तव्य हो सकता है क्या ? पूछने का अभिप्राय ऐसा है कि—धर्मास्तिकाय के एक प्रदेश में धर्मास्तिकायत्वरूप धर्म मौजूद है या नहीं ? यदि प्रथम पक्ष अंगीकार किया जावे तो फिर इस स्थिती में प्रदेश समुदायात्मक धर्मास्तिकाय के मानने की आवश्यकता ही क्या रहती है क्यों कि धर्मास्तिकाय के एक भी प्रदेश में (यह धर्मास्तिकाय है) ऐसा व्यवहार होना तुम मान रहे हो अतः जब एक प्रदेश से ही धर्मास्तिकायरूप व्यवहार संपादित होजाता है–तो बात स्वतः ही साबित हो जाती है कि प्रदेशसमुदायात्मक धर्मास्तिकाय मानना निरर्थक ही है ?

એટલી જ વિશેષતા છે કે જીવાસ્તિકાય, આકાશાસ્તિકાય અને પુદ્ગલાસ્તિકાયના પ્રદેશ અનેક છે એમ કહેવું જોઇએ. બાકીનું સમસ્ત કથન ધર્માસ્તિકાય જેવું જ સમજવું ॥ સૂ ૨ ॥

ટીકાર્થ–" एगे भंते ! धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया " હે ભદન્ત ! ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય ખરૂ ? પ્રશ્નનુ તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશમા ધર્માસ્તિકાયના બધા ધર્મો (ગુણો) મોજુદ હોય છે કે નહી !

જો એક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાતો હોય તો પ્રદેશસમુદાય રૂપ ધર્માસ્તિકાયનુ અસ્તિત્વ માનવાની આવશ્યકતા જ શી રહે કારણ કે ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશને માટે "આ ધર્માસ્તિકાય છે" એવો ઉલ્લેખ કરવામાં આવી શકે તો એ વાત તો આપો આપ સાબિત થઇ જાય છે કે પ્રદેશ સમુદાયાત્મક ધર્માસ્તિકાય માનવું નિરર્થક જ છે જો પ્રદેશ સમુદાયાત્મક

विद्यते चेत्तदा प्रत्येकस्मिन् अविद्यमानस्य समुदायेऽपि अवर्तमानत्वमेव भवतीति नियमेन प्रदेशसमुदायात्मकधर्मास्तिकायेऽपि धर्मास्तिकायत्वधर्मस्य वृत्तिता न स्यात् यथा प्रत्येकसिकताकणेषु अनुपलभ्यमानं तैलं न सिकताकणसमुदायेऽपि भवति तद्वत् प्रकृतेऽपीति सेयमुभयतः 'पाशारज्जुरिति न्यायः समापततीति प्रष्टुः प्रश्नाशयः। भगवान् आह–' गोयमा ! ' इत्यादि ' गोयमा ' हे गौतम ! ' णो इणट्ठे समट्ठे ' नायमर्थः समर्थः धर्मास्तिकायस्य प्रतिप्रदेशं धर्मास्तिकायत्व धर्मो न भवतीत्यर्थः। यथा एकप्रदेशस्य धर्मास्तिकाय इति व्यवहारो न युक्तस्तथा सर्वप्रदेशेऽपि स व्यवहारो न युक्त इत्यतिदेशेन दर्शयति—'एवं दोण्णि वि' एवं द्वौ

यदि प्रदेश समुदायात्मक धर्मास्तिकायकी सिद्धि मानने निमित्त द्वितीय पक्ष स्वीकार किया जावे और कहा जावे कि धर्मास्तिकायके प्रत्येक प्रदेश में धर्मास्तिकायत्वस्वरूप धर्म नहीं है तो फिर इस प्रकार के कथन में पूरे धर्मास्तिकाय का ही लोप प्राप्त होता है क्यों कि जो धर्म अवयव में नहीं है-वह अवयव के समुदाय में क्योंकर हो सकता है। इस लिये यह मानना ही पडेगा कि (प्रत्येकस्मिन् अविद्यमानस्य समुदायेऽपि अवर्तमानत्वमेव) प्रदेश समुदायात्मक धर्मास्तिकाय में धर्मास्तिकायत्वस्वरूप धर्म की वृत्ति नहीं है। जैसे प्रत्येक सिकताकणों में अनुपलभ्यमान तैल की उपलब्धि सिकता कणों के समुदाय में नहीं होती है। इस तरह उभयतः पाशारज्जु प्राप्त होती है। ऐसा आशय प्रश्नकर्ताका है इसका उत्तर देते हुए प्रभु कहते हैं कि (गोयमा) हे गौतम ! (णो इणट्ठे समट्ठे) यह

ધર્માસ્તિકાયને સિદ્ધ કરવાને માટે ઉપર દર્શાવેલો બીજો મત સ્વીકારવામાં આવે અને કહેવામાં આવે કે ધર્માસ્તિકાયના પ્રત્યેક પ્રદેશમાં ધર્માસ્તિકાયત્વ રૂપ ધર્મ હોતો નથી, તો એ પ્રકારના કથનથી તો પૂરા ધર્માસ્તિકાયનો જ લોપ થવાનો પ્રસંગ ઉભો થાય છે કારણ કે જે ધર્મ અવયવમાં અસ્તિત્વ ન ધરાવતો હોય તે અવયવના સમુદાયમાં ક્યાંથી સંભવી શકે ? તેથી એવું માનવું જ પડશે કે "प्रत्येकस्मिन् अविद्यमानस्य समुदायेऽपि अवर्तमानत्वमेव" પ્રદેશસમુદાયાત્મક ધર્માસ્તિકાયમાં ધર્માસ્તિકાયત્વરૂપ ધર્મનો સદ્ભાવ હોતો નથી જેવી રીતે રેતીના પ્રત્યેક કણમાંથી તેલ મળવાનો સંભવ નથી હોતો તેવી જ રીતે રેતીના કણોના સમૂહમાંથી પણ તેલ મળવાનો સંભવ હોતો નથી એજ પ્રમાણે ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશમાં જે ધર્મ (ગુણ) નથી તે તેના પ્રદેશસમુદાયમાં

१ उभयतः पाशारज्जुरिति न्याय–जैसे दोनों तरफ जाल बिछा हो उसके मध्य में अवस्थित पुरुष अगर इधर आता है तो भी जाल में फसता है उधर जानेसे भी जालमें फसता है अतः मध्य में ही दुःखी होता है। यह न्याय इतोव्याघ्रस्ततस्तटी ए न्यायके समान है-इधर वाघ उधर नदी बीचमें खडा मनुष्य के समान है-अर्थात् दोनों तरफ भय उपस्थित है।

अपि 'तिण्णि वि चत्तारि त्रि' त्रयोऽपि चत्वारोऽपि 'पंच छ सत्त अट्ठ नव दश संखेज्जा' पञ्चपट् सप्ताष्ट नव दश संख्याताः अपीतिशेषः धर्मास्तिकायस्य प्रत्येकस्मिन् अवयवे धर्मास्तिकाय इति व्यवहारो न युक्तस्तथा द्वित्रिचतुःपञ्चषट् सप्ताष्ट नव दश संख्येयाऽवयवेष्वपि धर्मास्तिकाय इति व्यवहारो नैव युज्यते इत्यर्थः। 'असंखेज्जा भंते! धम्मत्थिकायपएसा धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया' असंख्याताः भदन्त! धर्मास्तिकायप्रदेशाः धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात्-हे भदन्त! धर्मास्तिकायस्य असंख्याता' प्रदेशा धर्मास्तिकायशब्देन व्यपदेष्टुं शक्याः किमित्यर्थः, भगवान आह-'गोयमा! णो इणट्ठे समट्ठे' हे गौतम! नायमर्थः समर्थः=हे गौतम! एवं व्यपदेष्टुं नैव शक्यते इत्यर्थः 'एगपएसूणे वि य णं भंते!

अर्थ समर्थ नही है अर्थात् धर्मास्तिकाय के प्रतिप्रदेश में धर्मास्तिकायत्वरूप व्यवहार नहीं होता है। इसी तरह से (दोण्णि वि, तिण्णि वि चत्तारि वि, पंच, छ, सत्त, अट्ठ, नव, दस, संखेज्जा) धर्मास्तिकाय के दो प्रदेशोंमें, तीन प्रदेशोंमें, चार प्रदेशोंमें, पांच प्रदेशोंमें, छह प्रदेशोंमें, सात प्रदेशोंमें, आठ प्रदेशोंमें नौ प्रदेशोंमें दश प्रदेशोंमें, संख्यात प्रदेशोंमें भी धर्मास्तिकायरूप व्यवहार नहीं होता है। (असखेज्जा णं भंते! धम्मत्थिकायपएसा) हे भदन्त! धर्मास्तिकाय के असंख्यात प्रदेश धर्मास्तिकायरूप से वक्तव्य हो सकता हैं क्या? अर्थात् वे धर्मास्तिकाय इस शब्द से व्यपदेश करना शक्य हो सकते हैं? इसका उत्तर देते हुए प्रभु कहते हैं (गोयमा) हे गौतम (णो इणट्ठे समट्ठे) यह अर्थ समर्थ नहीं है अर्थात् धर्मास्तिकाय के असंख्यात प्रदेश धर्मास्तिकाय इस शब्द से व्यपदेश करना शक्य नहीं

પણ હોતો નથી. હવે ગૌતમ સ્વામીના પ્રશ્નનો મહાવીર સ્વામીએ જે જવાબ આપ્યો તેનું ટીકાકાર નીચે પ્રમાણે સ્પષ્ટીકરણ કરે છે

(गोयमा) હે ગૌતમ! (णो इणट्ठे समट्ठे) તે અર્થ યોગ્ય નથી. એટલે કે ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાતો નથી એજ પ્રમાણે (दोण्णि वि तिण्ण वि, चत्तारि वि, पच छ, सत्त, अट्ठ, नव, दस, सखेज्जा) ધર્માસ્તિકાયના બે પ્રદેશને, ત્રણ પ્રદેશને, ચાર પ્રદેશને, પાચ પ્રદેશને, છ પ્રદેશને, સાત પ્રદેશને, આઠ પ્રદેશને, નવ પ્રદેશોને દસ પ્રદેશને અને સખ્યાત પ્રદેશને પણ ધર્માસ્તિકાય કહી શકાતાં નથી (असंखेज्जा णं भते! धम्मथिकायपएसा? હે ભદન્ત! ધર્માસ્તિકાયના અસખ્યાત પ્રદેશોને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય ખરૂં? એટલે કે ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાત પ્રદેશોને માટે (ધર્માસ્તિકાય) શબ્દ વાપરી શકાય ખરો? મહાવીર પ્રભુ તેનો આ પ્રમાણે જવાબ આપે છે-(गोयमा!) હે ગૌતમ! (णो इणट्ठे समट्ठे) આ અર્થ પણ બરાબર નથી.

विद्यते चेत्तदा प्रत्येकस्मिन् अविद्यमानस्य समुदायेऽपि अवर्तमानत्वमेव भवतीति नियमेन प्रदेशसमुदायात्मकधर्मास्तिकायेऽपि धर्मास्तिकायत्वधर्मस्य वृत्तिा न स्यात् यथा प्रत्येकसिकताकणेषु अनुपलभ्यमान तैलं न सिकताकणसमुदायेऽपि भवति तद्वत् प्रकृतेऽपीति सेयमुभयत 'पाशारज्जुरिति न्यायः समापततीति प्रश्न-यितुः प्रश्नाशयः । भगवान् आह–' गोयमा ! ' इत्यादि ' गोयमा ' हे गौतम ! ' णो इणट्ठे समट्ठे ' नायमर्थः समर्थः धर्मास्तिकायस्य प्रतिप्रदेशं धर्मास्तिकायत्व धर्मो न भवतीत्यर्थः। यथा एकप्रदेशस्य धर्मास्तिकाय इति व्यवहारो न युक्तस्तथा सर्वप्रदेशेऽपि स व्यवहारो न युक्त इत्यतिदेशेन दर्शयति—'एवं दोण्णि वि' एवं द्वौ

यदि प्रदेश समुदायात्मक धर्मास्तिकायकी सिद्धि मानने निमित्त द्वितीय पक्ष स्वीकार किया जावे और कहा जावे कि धर्मास्तिकायके प्रत्येक प्रदेश में धर्मास्तिकायत्वरूप धर्म नहीं है तो फिर इस प्रकार के कथन में पूरे धर्मास्तिकाय का ही लोप प्राप्त होता है क्यों कि जो धर्म अवयव में नहीं है-वह अवयव के समुदाय में क्योंकर हो सकता है । इस लिये यह मानना ही पडेगा कि (प्रत्येकस्मिन् अविद्यमानस्य समुदायेऽपि अवर्तमानत्वमेव) प्रदेश समुदायात्मक धर्मास्तिकाय में धर्मास्तिकायत्वरूप धर्म की वृत्ति नहीं है। जैसे प्रत्येक सिकताकणों में अनुपलभ्यमान तैल की उपलब्धि सिकता कणों के समुदाय में नहीं होती है । इस तरह उभयतः पाशारज्जु प्राप्त होती है । ऐसा आशय प्रश्नकर्ताका है इसका उत्तर देते हुए प्रभु कहते हैं कि (गोयमा) हे गौतम ! (णो इणट्ठे समट्ठे) यह

धर्मास्तिकायने सिद्ध करवाने माटे ઉपर દર્શાવેલા બીજો મત સ્વીકારવામાં આવે અને કહેવામાં આવે કે ધર્માસ્તિકાયના પ્રત્યેક પ્રદેશમાં ધર્માસ્તિકાયત્વ રૂપ ધર્મ હોતો નથી તો એ પ્રકારના કથનથી તો પૂરા ધર્માસ્તિકાયનો જ લોપ થવાનો પ્રસંગ ઉભો થાય છે કારણ કે જે ધર્મ અવયવમાં અસ્તિત્વ ન ધરાવતો હોય તે અવયવના સમુદાયમાં ક્યાંથી સંભવી શકે ? તેથી એવું માનવું જ પડશે કે " प्रत्येकस्मिन् अविद्यमानस्य समुदायेऽपि अवर्तमानत्वमेव ' પ્રદેશસમુદાયાત્મક ધર્માસ્તિકાયમાં ધર્માસ્તિકાયત્વરૂપ ધર્મનો સદ્ભાવ હોતો નથી જેવી રીતે રેતીના પ્રત્યેક કણમાંથી તેલ મળવાનો સંભવ નથી હોતો તેવી જ રીતે રેતીના કણોના સમૂહમાંથી પણ તેલ મળવાનો સંભવ હોતો નથી એજ પ્રમાણે ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશમાં જે ધર્મ (ગુણ) નથી તે તેના પ્રદેશસમુદાયમાં

१ उभयतः पाशारज्जुरितिन्याय–अब–जैसे दोनों तरफ जाल बिछा हो उसके मध्य में अवस्थित पुरुष अगर इधर आता है तो भी जाल में फसता है उधर जानेसे भी जालमें फसता है अतः मध्य में ही दुःखी होता है । यह न्याय इतोव्याघ्रइतस्तटी ए न्यायके समान है–इधर बाघ उधर नदी बीचमें खड़ा मनुष्य के समान है–अर्थात् दोनों तरफ भय उपस्थित है ।

नेयव्वं" एवमुपरितनम् एकैकं संयोजयता यो योऽधस्तनस्तं त छर्दयता ज्ञातव्यम्, एव पूर्वोक्तक्रमेणोपरितनमेकैकं संयोजयन् अधस्तनं पूर्वप्रोक्तमेकैकं च परित्यजन् पूर्ववदेव सर्वं ज्ञातव्यम्। कियत्पर्यन्तमित्याह-'जाव अतीयअणागयद्धा पच्छा सव्वद्धा' यावदतीतानागताद्धा पश्चात्सर्वाद्धा, घनोदधित आरभ्य अतीताद्धाऽनागताद्धापर्यन्तं, पश्चात् तदनन्तरं सर्वाद्धेति सर्वाद्धापर्यन्तं सर्वं प्रश्नोत्तरं स्वयमूहनीयमिति, कियदवधीत्याह-'जाव अणाणुपुव्वी एसा रोहा!' यावत् अनानुपूर्वी एषा रोह! यावत्पदेन उत्तरपक्षे 'पुव्विं पेते पच्छा पेते दोवि एए सासया भावा' इति संयोजनीयम् हे रोह! पूर्वमप्येतौ पश्चादप्येतौ द्वावप्येतौ शाश्वतौ भावौ एषोऽ-

तेणं नेयव्वं) इस तरह ऊपर के अर्थात् आगे२ के एक एक पद को जोड़कर और जो जो नीचे के पद हैं अर्थात् पीछे२ के पद हैं उन्हें छोड़कर पहिले की तरह से ही सब प्रश्नोत्तर जानना चाहिये। कहां तक जानना चाहिये इस के लिये सूत्रकार कहते हैं कि (जाव अतीताणागयद्धा सव्वद्धा) यावत् अतीत अनागत काल तक और पश्चात् सर्वाद्धा तक (जाव अणाणुपुव्वी एसा रोहा) यावत् हे रोह! यहां किसी भी प्रकार का क्रम नहीं है। तात्पर्य कहने का यह है कि घनोदधि से लेकर अतीत अनागताद्धा तक, पश्चात् सर्वाद्धा तक सब प्रश्न और उत्तर अपने आप ही पहिले की तरह से बना कर समाधानयुक्त कर लेना चाहिये। "जाव अणाणुपुव्वी एसा रोहा" में जो यावत् पद रखा है उससे सूत्रकार इस बात की सूचना देते हैं कि उत्तरपक्ष में जो "पुव्विं पेते पच्छापेते, दुवे सासया भावा" पहिले ऐसा कहा गया है सो

આ રીતે જ આગળ આવતાં પ્રત્યેક પદને જોડીને અને પાછળ આવી ગયેલાં પદોને છોડીને પહેલા બતાવ્યા પ્રમાણે જ પ્રશ્નોત્તરો બનાવવા જોઇએ. ક્યાં સુધી આ પ્રમાણે પ્રશ્નોત્તર બનાવવા? તો સૂત્રકાર કહે છે કે (जाव अतीताणागयद्धा सव्वद्धा) અતીત અનાગત કાળ સુધી અને છેવટે સર્વાદ્ધા સુધી આ પ્રમાણે કરવું (जाव अणाणुपुव्वी एसा रोहा!) હે રોહ! તે બધામાં કોઇ પણ પ્રકારનો ક્રમ નથી. તે અનાનુપૂર્વી છે ત્યાં સુધી પણ ઉપર મુજબ કહેવું. તાત્પર્ય એ છે કે ઘનોદધિથી લઇને અતીત અનાગત અદ્ધા સુધી અને છેવટે સર્વાદ્ધા સુધી તમામ પ્રશ્નો અને ઉત્તરો પહેલા પ્રમાણે જ જાતે બનાવી લેવા જોઇએ. (जाव अणाणुपुव्वी एसा रोहा!) એ વાક્યના यावत् (પર્યન્ત) પદ વડે સૂત્રકાર એ સૂચન કરે છે કે ઉત્તરપક્ષમા જે "पुव्विं पेते पच्छा पेते, दोवि एए सासया भावा" કહ્યુ છે (તે બન્ને પહેલા પણ છે અને ...

धम्मत्थिकाए धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया ' एकप्रदेशोनोऽपि च खलु भदन्त ! धर्मास्तिकायो धर्मास्तिकाय इति वक्तव्य स्यात्-हे भदन्त ! यावत्पर्यन्तम् एकेनापि प्रदेशेन ऊनः-धर्मास्तिकायः तावत् किं धर्मास्तिकाय इति शब्देन व्यवहर्तुं शक्यते किमिति ? भगवानाह-' णो इणट्ठे समट्ठे ' नायमर्थः समर्थः इति प्रतिज्ञामात्रेण कथितम् युक्तिस्तु न प्रतिपादिता इति तत्र युक्तिं ज्ञातुं गौतमः पुनः प्रश्नयति ' से केणट्ठे ण ' इत्यादिना ' से केणट्ठे णं भंते ! ' तत् केन अर्थेन हे भदन्त ! ' एवं वुच्चइ ' एगे धम्मत्थिकायस्स पएसे नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया ' एको धर्मास्तिकायस्य प्रदेशो न धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात्-' जाव एगपएसूणे वि य णं धम्मत्थिकाए नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया ' यावदेकप्रदेशोनोऽपि च खलु धर्मास्तिकायो न धर्मास्तिकाय इति वक्तव्य स्यात्-हे भगवन् ! धर्मास्ति-

हैं। (एगपएसूणे वि य णं भंते ! धम्मत्थिकाए धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) हे भदन्त! एक प्रदेशन्यून धर्मास्तिकाय क्या(धर्मास्तिकाय) इस शब्दद्वारा कहा जा सकता है? इसके उत्तरमें प्रभुने कहा (गोयमा!) हे गौतम ! (णो इणट्ठे समट्ठे) यह अर्थ समर्थ नहीं है । इस प्रकार प्रभु का कथन सुनकर इस विषय में युक्ति की जिज्ञासा वाले गौतम ने पूछा (से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ) हे भदन्त ! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि (एगे धम्मत्थिकायस्स पएसे नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया, जाव एगपएसूणे वि य णं धम्मत्थिकाए नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) धर्मास्तिकाय का एक प्रदेश धर्मास्तिकाय नहीं कहा जा सकता है, यावत् एक प्रदेशन्यून भी धर्मास्तिकाय धर्मास्तिकाय नहीं कहा जा सकता है। अर्थात् धर्मास्तिकाय के एक प्रदेश

તેનુ કારણ એ છે કે ધર્માસ્તિકાયના અસખ્યાત પ્રદેશને પણ ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય નહીં (एगपएसूणे वि य णं भंते ! धम्मत्थिकाए धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया ?) ગૌતમ સ્વામી પૂછે છે કે- હે ભદન્ત ! એમાં એક પ્રદેશ ઓછો હોય એવા ધર્માસ્તિકાયને માટે " ધર્માસ્તિકાય " એવો પ્રયોગ કરી શકાય ખરો ! ભગવાન જવાબ આપે છે-(गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे) હે ગૌતમ ! એ વાત બરાબર નથી-એક ન્યૂન પ્રદેશવાળા ધર્માસ્તિકાયને પણ " ધર્માસ્તિકાય " કહી શકાય નહીં ભગવાનનો આ પ્રકારનો જવાબ સાંભળીને તેનુ કારણ જાણવાની જિજ્ઞાસાથી ગૌતમ સ્વામી નીચેનો પ્રશ્ન પૂછે છે-(से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ) હે ભદન્ત ! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે (एगे धम्मत्थिकायस्स पएसे नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया जाव एगपएसूणे वि य णं धम्मत्थिकाए नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાતો નથી એક પ્રદેશની ન્યૂનતા હોય તો પણ તેને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય નહી

अपि 'तिण्णि वि चत्तारि त्रि' त्रयोऽपि चत्वारोऽपि 'पंच छ सत्त अट्ठ नव दश संखेज्जा' पञ्चषट् सप्ताष्ट नव दश संख्याताः अपीतिशेषः धर्मास्तिकायस्य प्रत्येकस्मिन् अवयवे धर्मास्तिकाय इति व्यवहारो न युक्तस्तथा द्वित्रिचतुःपञ्चषट् सप्ताष्ट नव दश संख्येयाऽवयवेष्वपि धर्मास्तिकाय इति व्यवहारो नैव युज्यते इत्यर्थः। 'असंखेज्जा भंते! धम्मत्थिकायपएसा धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया' असंख्याताः भदन्त! धर्मास्तिकायप्रदेशाः धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात्-हे भदन्त! धर्मास्तिकायस्य असंख्याता' प्रदेशा धर्मास्तिकायशब्देन व्यपदेष्टुं शक्याः किमित्यर्थः, भगवान् आह-'गोयमा! णो इणट्ठे समट्ठे' हे गौतम! नायमर्थः समर्थः-हे गौतम! एवं व्यपदेष्टुं नैव शक्यते इत्यर्थः 'एगपएसूणे वि य णं भंते!

अर्थ समर्थ नहीं है अर्थात् धर्मास्तिकाय के प्रतिप्रदेश में धर्मास्तिकायत्वरूप व्यवहार नहीं होता है। इसी तरह से (दोण्णि वि, तिण्णि वि चत्तारि वि, पंच, छ, सत्त, अट्ठ, नव, दस, संखेज्जा) धर्मास्तिकाय के दो प्रदेशोंमें, तीन प्रदेशोंमें, चार प्रदेशोंमें, पांच प्रदेशोंमें, छह प्रदेशोंमें, सात प्रदेशोंमें, आठ प्रदेशोंमें नौ प्रदेशोंमें दश प्रदेशोंमें, संख्यात प्रदेशोंमें भी धर्मास्तिकायरूप व्यवहार नहीं होता है। (असंखेज्जा णं भंते! धम्मत्थिकायपएसा) हे भदन्त! धर्मास्तिकाय के असंख्यात प्रदेश धर्मास्तिकायरूप से वक्तव्य हो सकता हैं क्या? अर्थात् वे धर्मास्तिकाय इस शब्द से व्यपदेश करना शक्य हो सकते हैं? इसका उत्तर देते हुए प्रभु कहते हैं (गोयमा) हे गौतम (णो इणट्ठे समट्ठे) यह अर्थ समर्थ नहीं है अर्थात् धर्मास्तिकाय के असंख्यात प्रदेश धर्मास्तिकाय इस शब्द से व्यपदेश करना शक्य नहीं

પણ-હોતો નથી. હવે ગૌતમ સ્વામીના પ્રશ્નનો મહાવીર સ્વામીએ જે જવાબ આપ્યો તેનું ટીકાકાર નીચે પ્રમાણે સ્પષ્ટીકરણ કરે છે

(गोयमा) હે ગૌતમ! (णो इणट्ठे समट्ठे) તે અર્થ યોગ્ય નથી અટલે કે ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાતો નથી એજ પ્રમાણે (दोण्णि वि तिण्ण वि, चत्तारि वि, पंच छ, सत्त, अट्ठ, नव, दस, संखेज्जा) ધર્માસ્તિકાયના બે પ્રદેશને, ત્રણ પ્રદેશને, ચાર પ્રદેશને, પાંચ પ્રદેશને, છ પ્રદેશને, સાત પ્રદેશને, આઠ પ્રદેશને, નવ પ્રદેશોને દસ પ્રદેશને અને સંખ્યાત પ્રદેશને પણ ધર્માસ્તિકાય કહી શકાતા નથી (असंखेज्जा णं भंते! धम्मत्थिकायपएसा? હે ભદન્ત! ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાત પ્રદેશોને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય ખરું? એટલે કે ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાત પ્રદેશોને માટે (ધર્માસ્તિકાય) શબ્દ વાપરી શકાય ખરો? મહાવીર પ્રભુ તેનો આ પ્રમાણે જવાબ આપે છે- (गोयमा!) હે ગૌતમ! (णो इणट्ठे समट्ठे) આ અર્થ પણ બરાબર નથી.

धम्मत्थिकाए धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया ' एकप्रदेशोनोऽपि च खलु भदन्त ! धर्मास्तिकायो धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात्–हे भदन्त ! यावत्पर्यन्तम् एकेनापि प्रदेशेन ऊनः=धर्मास्तिकाय तावत् किं धर्मास्तिकाय इति शब्देन व्यवहर्तुं शक्यते किमिति ? भगवानाह–' णो इणट्ठे समट्ठे ' नायमर्थः समर्थः इति प्रतिज्ञामात्रं कथितम् युक्तिस्तु न प्रतिपादिता इति तत्र युक्तिं ज्ञातुं गौतमः पुनः प्रश्नयति ' से केणट्ठे ण ' इत्यादिना ' से केणट्ठेण भंते ! ' तत् केन अर्थेन हे भदन्त ! ' एवं वुच्चइ ' एगे धम्मत्थिकायस्स पएसे नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया ' एको धर्मास्तिकायस्य प्रदेशो न धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात्–' जाव एगपएसूणे वि य णं धम्मत्थिकाए नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया ' यावदेकप्रदेशोनोऽपि च खलु धर्मास्तिकायो न धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात्–हे भगवन् ! धर्मास्ति

है। (एगपएसूणे वि य णं भंते ! धम्मत्थिकाए धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) हे भदन्त ! एक प्रदेशन्यून धर्मास्तिकाय क्या (धर्मास्तिकाय) इस शब्दद्वारा कहा जा सकता है? इसके उत्तरमें प्रभुने कहा (गोयमा !) हे गौतम ! (णो इणट्ठे समट्ठे) यह अर्थ समर्थ नहीं है। इस प्रकार प्रभु का कथन सुनकर इस विषय में युक्ति की जिज्ञासा वाले गौतम ने पूछा (से केणट्ठेण भंते ! एवं वुच्चइ) हे भदन्त ! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि (एगे धम्मत्थिकायस्स पएसे नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया, जाव एगपएसूणे वि य णं धम्मत्थिकाए नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) धर्मास्तिकाय का एक प्रदेश धर्मास्तिकाय नहीं कहा जा सकता है, यावत् एक प्रदेशन्यून भी धर्मास्तिकाय धर्मास्तिकाय नहीं कहा जा सकता है। अर्थात् धर्मास्तिकाय के एक प्रदेश

તેનુ કારણ એ છે કે ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાત પ્રદેશને પણ ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય નહીં (एगपएसूणे वि य णं भंते ! धम्मत्थिकाए धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया ?) ગૌતમ સ્વામી પૂછે છે કે–' હે ભદન્ત ! જેમાં એક પ્રદેશ ઓછો હોય એવા ધર્માસ્તિકાયને માટે " ધર્માસ્તિકાય " એવો પ્રયોગ કરી શકાય ખરો ? મહાવીર ભગવાન જવાબ આપે છે–(गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे) હે ગૌતમ ! એ વાત બરાબર નથી–એક ન્યૂન પ્રદેશવાળા ધર્માસ્તિકાયને પણ " ધર્માસ્તિકાય " કહી શકાય નહીં ભગવાનનો આ પ્રકારનો જવાબ સાંભળીને તેનું કારણ જાણવાની જિજ્ઞાસાથી ગૌતમ સ્વામી નીચેનો પ્રશ્ન પૂછે છે–(से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ) હે ભદન્ત ! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે (एगे धम्मत्थिकायस्स पएसे नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया जाव एगपएसूणे वि य णं धम्मत्थिकाए नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાતો નથી એક પ્રદેશની ન્યૂનતા હોય તો પણ તેને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય નહીં

कायस्यैकस्मिन् प्रदेशे न्यूनेऽपि धर्मास्तिकाये धर्मास्तिकायशब्देन व्यवहारः कथम् भवति तत्र किं कारणमिति प्रश्नाशयः भगवानाह—'से णूणं गोयमा' इत्यादि । 'से णूणं गोयमा !' तन्नूनं गौतम ! 'खंडे चक्के सगले चक्के' खण्डं चक्रम् सकलम् चक्रम्–हे गौतम ! चक्रस्य एको भागश्चक्रं भवति किंवा सकलं चक्रं चक्रं भवतीति भगवतः गौतमम्प्रति कथनम् यथा खण्डं चक्रं चक्रं न भवति खण्डचक्रमित्येव तस्य व्यवहारात् किन्तु सकलमेव चक्रं चक्रं भवति एवं प्रदेशेनापि ऊनो धर्मास्तिकायो न धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात् यथा चक्रे तथेहापि ज्ञातव्यम् एप निश्चयनयाऽनुसारेण एकप्रदेशेनाप्यूने धर्मास्तिकाये

में धर्मास्तिकाय इस शब्द का व्यवहार नहीं हो सकता है और न एक प्रदेश से हीन धर्मास्तिकाय में धर्मास्तिकाय इस शब्द का व्यवहार हो सकता है सो हे भदन्त ! इसमें क्या कारण है? इस विषय में गौतम की जिज्ञासा के समाधान निमित्त प्रभु उनसे ही पूछते हुए कहते हैं (से णूणं गोयमा !) हे गौतम ! तुम यह तो कहो कि (खंडे चक्के, सगलेचक्के) चक्र का एक भाग चक्र कहलाता है कि समस्त चक्र चक्र कहलाता है । भदन्त ! चक्र का खंड चक्र नहीं कहलाता किन्तु समस्त चक्र चक्र कहलाता है, तो हे गौतम ! सोचो जिस प्रकार चक्र का खण्ड चक्र नहीं कहा जा सकता वह तो खण्ड चक्र इसरूप से ही व्यवहृत होता है किन्तु पूरा चक्र ही चक्र कहा जाता है– इसी प्रकार एक प्रदेश से भी न्यून धर्मास्तिकाय, धर्मास्तिकाय नहीं कहला सकता है । वह तो खण्ड

અહીં યાવત્ (પર્યન્ત) પદથી નીચેનો સૂત્રપાઠ ગ્રહણ કરાયો છે–બે, ત્રણ, ચાર, પાંચ આદિથી લઈને ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાત પ્રદેશોને પણ ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય નહીં આ રીતે ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને તેમણે આપેલા ઉત્તરનું કારણ પૂછે છે આ પ્રશ્નનો ઉત્તર સમજાવવા માટે પ્રભુ તેમને જ પ્રશ્ન કરે છે–(से णूणं गोयमा !) હે ગૌતમ ! (खंडे चक्के, सगले चक्के !) આખા ચક્રને ચક્ર કહેવાય કે તેના એક ભાગને ચક્ર કહેવાય ? ગૌતમ સ્વામી જવાબ આપે છે– હે ભદન્ત ! ચક્રના ભાગને ચક્ર કહેતા નથી પણ આખા ચક્રને જ ચક્ર કહેવાય છે" મહાવીર પ્રભુ સમજાવે છે, "જેમ ચક્રના ભાગને ચક્ર કહેવાય નહીં પણ ચક્રનો ભાગ જ કહેવાય છે, અને આખા ચક્રને જ ચક્ર કહેવાય છે, એજ પ્રમાણે એક પ્રદેશ પણ ઓછો હોય એવા ધર્માસ્તિકાયને ધર્માસ્તિકાય કહેવાતુ નથી. તેને તો ધર્માસ્તિકાયનો ભાગ જ કહેવાય છે. આ

धर्मास्तिकायव्यवहारस्य निषेधः कृतः व्यवहारनयाऽनुसारेण तु एकादिप्रदेशाद् नोऽपि पदार्थस्तेनैव रूपेण व्यपदिश्यते एव यथा कतिपयावयवरहितोऽपि पटः पट एव भवति, यथा वा छिन्नलाङ्गूलोऽपि श्वा श्वा एव कथ्यते, तदुक्तम् वैयाकरणैः ' एकदेशविकृतमनन्यवत् ' इति। भगवतः काकुभिभितमुत्तरं निशम्य कथयति गौतमः ' भगवं सगले चक्के नो खंडे चक्के' हे भगवन्! सकलम् चक्र नो खण्डं चक्रम् विकलावयवस्य न चक्रमिति संज्ञा भवति अपि तु सकलावयवस्यैव चक्रमिति संज्ञा भवतीति गौतम! युक्तादेवोत्तरं निर्णयाय्यातिश्रयेनान्यथाऽपि इत्थमेवोत्तर मदर्शयति भगवान्-'एवं छत्ते' इत्यादि, ' एवं छत्तेचम्मे दंडे दूसे आउहे

धर्मास्तिकाय कहलावेगा, चक्रकी तरह ही यहां जानना चाहिये। ऐसा यह कथन निश्चयनय के मतानुसार है-निश्चयनय के मन्तव्यानुसार धर्मास्तिकाय के एक प्रदेश में पूरे धर्मास्तिकाय का व्यवहार होना निषिद्ध माना गया है। परन्तु हां-व्यवहार नयके मन्तव्यानुसार तो एक आदि प्रदेश से न्यून भी पदार्थ उसी रूप से कहा ही जाता है-जैसे कितनेक अवयवों से रहित भी पट पट ही व्यवहार में माना जाता है वह अपट नहीं माना जाता, अथवा जैसे छिन्न पूंछ वाला भी कुत्ता कुत्ता ही कहा जाता है वह गधा नहीं कहा जाता-वैयाकरणों ने भी इसी सिद्धान्त को माना है- वे कहते हैं (एकदेशविकृतमनन्यवत्) एकदेश में विकार होजाने पर भी पदार्थ दूसरा थोडे ही हो जाता है। जो, वह पदार्थ है वही वह रहता है। इस प्रकार प्रभुका काकुभिभित उत्तर सुन कर गौतम ने जो कहा उसे सूत्रकार (भगवं सगले चक्के) इस पाठ

કથન નિશ્ચયનયના મત પ્રમાણે કહ્યું છે નિશ્ચયનયના અભિપ્રાય અનુસાર તો ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહેવાનો નિષેધ છે પરંતુ વ્યવહાર નયની માન્યતા પ્રમાણે તો એકાદિ પ્રદેશ ન્યૂન હોય એવા પદાર્થને પણ એ પદાર્થ રૂપે જ ઓળખવામાં આવે છે જેમ કે કેટલાક અવયવોથી રહિત પટને પણ વ્યવહારમાં તો પટ જ માનવામાં આવે છે-અપટ માનવામાં આવતો નથી, પૂંછડી કપાઈ ગયેલી હોય એવા કુતરાને કુતરો જ કહે છે-બીજા કોઈ પણ નામે ઓળખતા નથી. વ્યાકરણકારોએ પણ એજ સિદ્ધાંત માન્ય કર્યો છે તેઓ કહે છે (एकदेशविकृतमनन्यवत्) એક પ્રદેશમાં (ભાગમાં) વિકાર થઈ જવાથી પદાર્થ બીજો થોડોક જ થઈ જાય છે? એ પદાર્થ જે હોય છે તે જ રહે છે

ભગવાનનો યુક્તિપૂર્વકનો પ્રશ્ન સાંભળીને ગૌતમસ્વામીએ જે ઉત્તર આપ્યો તે નીચેના સૂત્રપાઠ દ્વારા સૂત્રકારે પ્રકટ કર્યો છે-(भगवं सगले चक्के

कायस्यैकस्मिन् प्रदेशे न्यूनेऽपि धर्मास्तिकाये धर्मास्तिकायशब्देन व्यवहारः कथम् भवति तत्र किं कारणमिति प्रश्नाशयः भगवानाह—'से णूणं गोयमा' इत्यादि। 'से णूणं गोयमा!' तन्नूनं गौतम! 'खंडे चक्के सगले चक्के' खण्डं चक्रम् सकलम् चक्रम्—हे गौतम! चक्रस्य एको भागश्चक्रं भवति किंवा सकलं चक्रं चक्रं भवतीति भगवतः गौतमम्प्रति कथनम् यथा खण्डं चक्रं चक्रं न भवति खण्डचक्रमित्येव तस्य व्यवहारात् किन्तु सकलमेव चक्रं चक्रं भवति एवं प्रदेशेनापि ऊनो धर्मास्तिकायो न धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात् यथा चक्रे तथेहापि ज्ञातव्यम् एप निश्चयनयाऽनुसारेण एकप्रदेशेनाप्यूने धर्मास्तिकाये

में धर्मास्तिकाय इस शब्द का व्यवहार नहीं हो सकता है और न एक प्रदेश से हीन धर्मास्तिकाय में धर्मास्तिकाय इस शब्द का व्यवहार हो सकता है सो हे भदन्त! इसमें क्या कारण है? इस विषय में गौतम की जिज्ञासा के समाधान निमित्त प्रभु उनसे ही पूछते हुए कहते हैं (से णूणं गोयमा!) हे गौतम! तुम यह तो कहो कि (खंडे चक्के, सगलेचक्के) चक्र का एक भाग चक्र कहलाता है कि समस्त चक्र चक्र कहलाता है। भदन्त! चक्र का खंड चक्र नहीं कहलाता किन्तु समस्त चक्र चक्र कहलाता है, तो हे गौतम! सोचो जिस प्रकार चक्र का खण्ड चक्र नहीं कहा जा सकता वह तो खण्ड चक्र इसरूप से ही व्यवहृत होता है किन्तु पूरा चक्र ही चक्र कहा जाता है- इसी प्रकार एक प्रदेश से भी न्यून धर्मास्तिकाय, धर्मास्तिकाय नहीं कहला सकता है। वह तो खण्ड

અહીં યાવત્ (પર્યન્ત) પદથી નીચેનો સૂત્રપાઠ ગ્રહણ કરાયો છે-બે, ત્રણ, ચાર, પાંચ આદિથી લઈને ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાત પ્રદેશોને પણ ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય નહીં આ રીતે ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને તેમણે આપેલા ઉત્તરનું કારણ પૂછે છે આ પ્રશ્નનો ઉત્તર સમજાવવા માટે પ્રભુ તેમને જ પ્રશ્ન કરે છે-(से णूणं गोयमा!) હે ગૌતમ! (खंडे चक्के, सगले चक्के!) આખા ચક્રને ચક્ર કહેવાય કે તેના એક ભાગને ચક્ર કહેવાય? ગૌતમ સ્વામી જવાબ આપે છે- હે ભદન્ત! ચક્રના ભાગને ચક્ર કહેતા નથી પણ આખા ચક્રને જ ચક્ર કહેવાય છે" મહાવીર પ્રભુ સમજાવે છે, "જેમ ચક્રના ભાગને ચક્ર કહેવાય નહીં પણ ચક્રનો ભાગ જ કહેવાય છે, અને આખા ચક્રને જ ચક્ર કહેવાય છે, એજ પ્રમાણે એક પ્રદેશ પણ ઓછો હોય એવા ધર્માસ્તિકાયને ધર્માસ્તિકાય કહેવાતુ નથી. તેને તો ધર્માસ્તિકાયનો ભાગ જ કહેવાય છે. આ

धर्मास्तिकायव्यवहारस्य निषेधः कृतः व्यवहारनयाऽनुसारेण तु एकादिप्रदेशाद् नोऽपि पदार्थस्तेनैव रूपेण व्यपदिश्यते एव यथा कतिपयावयवरहितोऽपि पटः पट एव भवति, यथा वा छिन्नलाङ्गूलोऽपि श्वा श्वा एव कथ्यते, तदुक्तम् वैयाकरणैः ' एकदेशविकृतमनन्यवत् ' इति। भगवत काकुमिश्रितमुत्तरं निशम्य कथयति गौतमः ' भगवं सगले चक्के नो खंडे चक्के' हे भगवन् ! सकलम् चक्रं नो खण्डं चक्रम् विकलावयवस्य न चक्रमिति संज्ञा भवति अपि तु सकलावयवस्यैव चक्रमिति संज्ञा भवतीति गौतम ! युक्तादेशोत्तर निर्णायकातिशयेनान्यथाऽपि इत्थमेवोत्तरं प्रदर्शयति भगवान्-'एवं वुच्चे' इत्यादि, ' एव वुच्चे धम्मे दव्वे वृसे आउदे

धर्मास्तिकाय कहलावेगा, चक्रकी तरह ही यहां जानना चाहिये। ऐसा यह कथन निश्चयनय के मतानुसार है-निश्चयनय के मन्तव्यानुसार धर्मास्तिकाय के एक प्रदेश में पूरे धर्मास्तिकाय का व्यवहार होना निषिद्ध माना गया है। परन्तु हां-व्यवहार नयके मन्तव्यानुसार तो एक आदि प्रदेश से न्यून भी पदार्थ उसी रूप से कहा ही जाता है-जैसे कितनेक अवयवों से रहित भी पट पट ही व्यवहार में माना जाता है वह अपट नहीं माना जाता, अथवा जैसे छिन्न पूंछ वाला भी कुत्ता कुत्ता ही कहा जाता है वह गधा नहीं कहा जाता-वैयाकरणों ने भी इसी सिद्धान्त को माना है- वे कहते हैं (एकदेशविकृतमनन्यवत्) एकदेश में विकार होजाने पर भी पदार्थ दूसरा थोडे ही हो जाता है। जो वह पदार्थ है वही वह रहता है। इस प्रकार प्रभुका काकुमिश्रित उत्तर सुन कर गौतम ने जो कहा उसे सूत्रकार (भगवं सगले चक्के) इस पाठ

કથન નિશ્ચયનયના મત પ્રમાણે કર્યું છે નિશ્ચયનયના અભિપ્રાય અનુસાર તે ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહેવાનો નિષેધ છે પરંતુ વ્યવહાર નયની માન્યતા પ્રમાણે તો એકાદિ પ્રદેશ ન્યૂન હોય એવા પદાર્થને પણ તે પદાર્થ રૂપે જ ઓળખવામાં આવે છે જેમ કે કેટલાક અવયવોથી રહિત પટને પણ વ્યવહારમાં તો પટ જ માનવામાં આવે છે-અપટ માનવામાં આવતો નથી, પૂછડી કપાઈ ગયેલી હોય એવા કુતરાને કુતરો જ કહે છે-બીજા કોઈ પણ નામે ઓળખતા નથી. વ્યાકરણકારોએ પણ એજ સિદ્ધાંત માન્ય કર્યો છે તેઓ કહે છે (एकदेशविकृतमनन्यवत्) એક પ્રદેશમાં (ભાગમાં) વિકાર થઈ જવાથી પદાર્થ બીજો થોડોક જ થઈ જાય છે? જે પદાર્થ જે હોય છે તે જ રહે છે

ભગવાનનો યુક્તિપૂર્વકનો પ્રશ્ન સાંભળીને ગૌતમસ્વામીએ જે ઉત્તર આપ્યો તે નીચેના સૂત્રપાઠ દ્વારા સૂત્રકારે પ્રકટ કર્યો છે-(भगवं सगले चक्के

मोयए ' एवं छत्रं चर्म दण्डो दूष्यम् (वस्त्रम्) आयुधम् मोदकः एवं यथा एकावयवरहितं चक्रं चक्रं न भवति यथा वा छत्र-चर्मदण्ड वस्त्रास्त्रमोदकादिकम् एकावयवरहितम् छत्रादिशब्देन न व्यपदिश्यते तथैव एकपदेशेनापि ऊनो धर्मास्तिकायो धर्मास्तिकाय इति नैव वक्तव्यम् स्यात् इति भावः । ' से तेणट्ठेणं गोयमा ! ' तत् तेनार्थेन गौतम ! ' एवमुच्चइ एगे धम्मत्थिकायपदेसेणो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया ' एको धर्मास्ति धर्मास्तिकायप्रदेशो न धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात् अनेन कारणेन, हे गौतम ! कथयामि एक-

द्वारा प्रकट किया है। अतः गौतम के ही मुख से (अवयव रहित चक्र ऐसी संज्ञा नहीं होती है किन्तु सकल अवयवों से युक्त चक्र में ही चक्र ऐसी संज्ञा होती है) इस प्रकारका निर्णय करा कर अन्यत्र भी इसी तरह से होता है इस बात को प्रभु उनसे प्रकट करते हैं-(एवं छत्ते, चम्मे, दंडे, दूसे, आउहे, मोयए,) हे गौतम । जिस प्रकार एकावयव रहित चक्र पूराचक्र नहीं कहलाता अथवा जैसे-छत्र, चर्म, दण्ड, वस्त्र, शस्त्र, मोदक आदि पदार्थ एक अपने अवयव से रहित होने पर छत्रादि शब्द द्वारा व्यपदिष्ट नहीं होते-उसी तरह एकप्रदेश से भी उन धर्मास्तिकाय धर्मास्तिकाय इस शब्द द्वारा व्यपदिष्ट नहीं हो सकता है। (से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ, एगे धम्मत्थिकायपएसे णो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) इस कारण हे गौतम । मैंने ऐसा कहा है कि धर्मास्तिकाय का एक प्रदेश धर्मास्तिकाय रूप से वक्तव्य नहीं हो सकता है । अर्थात्- धर्मास्तिकाय के एकप्रदेश में धर्मास्तिकायता नही है । (जाव एगपएसूणे वि य णं धम्मत्थिकाए नो धम्मत्थिकाए त्तिवत्त-

नो खण्डे चक्के) આ રીતે ગૌતમસ્વામીને મુખે જ, " ચક્રના ભાગને ચક્ર કહેવાતું નથી પણ આખા ચક્રને જ ચક્ર કહેવાય છે એવો નિર્ણય કરાવીને બીજા પદાર્થોમાં પણ એવું જ બને છે તે દર્શાવવામાટે કહે છે-एवं छत्ते, चम्मे, दंडे, दूसे, आउहे, मोयए) હે ગૌતમ જેવી રીતે એક પણ અવયવથી રહિત ચક્રને આખું ચક્ર કહેવાતું નથી, જેવી રીતે એક પણ અવયવથી રહિત છત્ર, ચર્મ, દંડ, વસ્ત્ર, શસ્ત્ર, મોદક આદિને છત્ર, ચર્મ આદિ નામે ઓળખાતા નથી એજ પ્રમાણે એક પણ પ્રદેશ ન્યૂન હોય એવા ધર્માસ્તિકાયને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાતો નથી. (से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ) ઇત્યાદિ હે ગૌતમ ! તે કારણે મેં એવું કહ્યું છે કે ધર્માસ્તિકાયના એક

स्मिन् धर्मास्तिकायप्रदेशे धर्मास्तिकायत्वं नास्तीति भावः । 'जाव एग-पएसूणे वि य णं धम्मत्थिकाए नो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वसिया' यावत् एक प्रदेशोनोऽपि च खलु धर्मास्तिकायो न धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात्। अत्र यावत्पदेन द्वि-त्रि चतुः पञ्च षट्-सप्त-अष्ट-नव-दश-सङ्ख्येया-ऽसंख्यपर्यानां धर्मास्तिकायप्रदेशानाम् ग्रहण भवतीति । 'से किं खाइए भंते! धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया' अथ कः किं पुनःखलु भदन्त! धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात् पुनरर्थबोधकः 'खाइए' इति देशीयशब्दः पुनरर्थे, हे भदन्त! यदि धर्मास्तिकायस्य प्रतिप्रदेशं धर्मास्तिकाय इति व्यवहारो वार्यते प्रदेशन्यूनेऽपि धर्मास्तिकाये धर्मास्तिकाय इति व्यवहारो वार्यते तदा पुनः कुत्र धर्मास्तिकायोऽयमिति व्यवहारः क्रियते प्रदेशसमुदायातिरिक्तस्य धर्मास्तिकायस्याभावादिति प्रश्नकर्तुराशयः । भगवानाह 'गोयमा' इत्यादि "गोयमा" हे गौतम! "असंखेज्जा धम्मत्थिकाए पएसा" असंख्याता धर्मास्तिकायप्रदेशा "ते सव्वे" ते सर्वे

व्व सिया) यावत् एक प्रदेश से कम भी धर्मास्तिकाय पूरा धर्मास्तिकाय नहीं माना जासकता है। यहां (यावत्) पद से (धर्मास्तिकाय के अनेक प्रदेशों का ग्रहण हुआ है। (से किं खाइए णं भंते! धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) हे भदन्त! धर्मास्तिकाय इस शब्द का व्यवहार कहां किया जा सकता है। तात्पर्य इस प्रश्न का यह है कि-जब आप धर्मास्तिकाय के एक प्रदेश में धर्मास्तिकायरूप व्यवहार होनेका निषेध कर रहे हैं और एकप्रदेश न्यून भी धर्मास्तिकायमें धर्मास्तिकायके व्यवहार होने का निषेध कर रहे हैं-तब यह तो कहिये कि धर्मास्तिकाय इस शब्द का व्यवहार कहांपर हो सकेगा? (खाइए) यह देशीय शब्द है और पुन अर्थ का बोधक है। इसका उत्तर देते हुए प्रभु गौतम से कहते हैं-गोयमा) हे गौतम! (असंखेज्जा धम्मत्थिकायपएसा) धर्मास्तिकाय में

ज्यात प्रदेशने पण धर्मास्तिकाय कही शकाय नहीं, એક પણ પ્રદેશ ન્યૂન હોય એવા ધર્માસ્તિકાયને પણ ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય નહીં."

(से किं खाइए णं भंते! धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) તો હે ભદન્ત! કોને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય? કહેવાનો ભાવાર્થ એ છે કે જો ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય ન કહી શકાય એક પણ પ્રદેશની ન્યૂનતા વાળા ધર્માસ્તિકાયને પણ ધર્માસ્તિકાય ન કહી શકાય, તો એ તો કહો કે 'ધર્માસ્તિકાય' શબ્દનો વ્યવહાર ક્યાં કરી શકાય? કોને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય?

આ સૂત્રમાં વપરાયેલો 'खाइए' શબ્દ ગામઠી છે તેનો અર્થ 'पुनः' થાય છે ગૌતમ સ્વામીના પ્રશ્નનો ઉત્તર આપતા પ્રભુ કહે છે- "

मोयए ' एव छत्रं चर्म दण्डो दूष्यम् (वस्त्रम्) आयुधम् मोदकः एवं यथा एकावयवरहितं चक्रं चक्रं न भवति यथा वा छत्र-चर्मदण्ड वस्त्रास्त्रमोदकादिकम् एकावयवरहितम् छत्रादिशब्देन न व्यपदिश्यते तथैव एकप्रदेशेनापि ऊनो धर्मास्तिकायो धर्मास्तिकाय इति नैव वक्तव्यम् स्यात् इति भावः। ' से तेणट्ठेणं गोयमा ! ' तत् तेनार्थेन गौतम ! ' एवमुच्चइ एगे धम्मत्थिकायपदेसेणो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया ' एको धर्मास्ति धर्मास्तिकायप्रदेशो न धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात् अनेन कारणेन, हे गौतम ! कथयामि एक-

---

द्वारा प्रकट किया है। अतः गौतम के ही मुख से (अवयव रहित चक्र ऐसी संज्ञा नहीं होती है किन्तु सकल अयवों से युक्त चक्र में ही चक्र ऐसी संज्ञा होती है) इस प्रकारका निर्णय करा कर अन्यत्र भी इसी तरह से होता है इस बात को प्रभु उनसे प्रकट करते हैं-(एवं छत्ते, चम्मे, दंडे, दूसे, आउहे, मोयए,") हे गौतम। जिस प्रकार एकावयव रहित चक्र पूराचक्र नहीं कहलाता अथवा जैसे-छत्र, चर्म, दण्ड, वस्त्र, शस्त्र, मोदक आदि पदार्थ एक अपने अवयव से रहित होने पर छत्रादि शब्द द्वारा व्यपदिष्ट नहीं होते-उसी तरह एकप्रदेश से भी उन धर्मास्तिकाय धर्मास्तिकाय इस शब्द द्वारा व्यपदिष्ट नहीं हो सकता है। (से तेणट्ठेणं गोयमा। एवं वुच्चइ, एगे धम्मात्थिकायपएसे णो धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) इस कारण हे गौतम। मैंने ऐसा कहा है कि धर्मास्तिकाय का एक प्रदेश धर्मास्तिकाय रूप से वक्तव्य नहीं हो सकता है। अर्थात्- धर्मास्तिकाय के एकप्रदेश में धर्मास्तिकायता नही है। (जाव एगपएसूणे वि य णं धम्मत्थिकाए नो धम्मत्थिकाए त्तिवत्त-

---

नो खण्डे चक्के) આ રીતે ગૌતમસ્વામીને મુખે જ, " ચક્રના ભાગને ચક્ર કહેવાતું નથી પણ આખા ચક્રને જ ચક્ર કહેવાય છે એવો નિર્ણય કરાવીને બીજા પદાર્થોમાં પણ એવુ જ બને છે તે દર્શાવવામાટે કહે છે-एवं छत्ते, चम्मे, दंडे, दूसे, आउहे, मोयए) હે ગૌતમ જેવી રીતે એક પણ અવયવથી રહિત ચક્રને આખુ ચક્ર કહેવાતું નથી, જેવી રીતે એક પણ અવયવથી રહિત છત્ર, ચર્મ, દંડ, વસ્ત્ર, શસ્ત્ર, મોદક આદિને છત્ર, ચર્મ આદિ નામે ઓળખાતા નથી એજ પ્રમાણે એક પણ પ્રદેશ ન્યૂન હોય એવા ધર્માસ્તિકાયને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાતો નથી. (से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ) ઇત્યાદિ હે ગૌતમ! તે કારણે મેં એવુ કહ્યુ છે કે ધર્માસ્તિકાયના એક

नानुपूर्वी नाम पूर्वापरभावो विद्यते, इति भावः। एतानि च सूत्राणि शून्यवादज्ञानवादादिनिरासेन विचित्रानेकबाह्यार्थसद्भावसूचकानि तेन शून्यतावस्तुरूपा, अर्थाबापारमार्थिका, इति शून्यवादिमतं निरस्तम्' एवं ज्ञानमात्रं जगत् अर्थस्तु स्वप्नोपम इति ज्ञानवादिमतमपि निरस्तम्। एवं पृथिव्यादय ईश्वरादिविनिर्मिता इति जगत्कर्तृत्ववादिमतस्यापि निराकरणपराण्येतानि सूत्राणि, लोकालोकादय सर्वेपि पदार्था विविधा अनाद्यनंता न तु ईश्वरकालप्रकृत्यादिजनिता, तथा सति कदाचिद्भवेयुरिमे

यह सब यहां पर भी उत्तरपक्ष में लगा कर लेना चाहिये। ये सब सूत्र शून्यवाद को जिसे कि माध्यमिक बौद्ध मानते हैं, एवं ज्ञानवाद को कि जिसे सौत्रान्तिक बौद्ध मानते हैं इत्यादि अनेक वादों का निराकरण करते हैं और विचित्र अनेक बाह्यार्थके सद्भावको सूचित करते हैं।

ये सूत्र यह कहते हैं कि विविध प्रकारके बाह्यार्थ हैं और वे स्वतंत्र हैं। शून्यता मानना वास्तविक रूपसे युक्तिसंगत नहीं है। बाह्य पदार्थ परमार्थिक सत् हैं। जगत् ज्ञानमात्ररूप नहीं है। और न बाह्यपदार्थ स्वप्नोपमपदार्थतुल्य हैं। इसी तरहसे ये सूत्र इस बातका भी निराकरण करते हैं कि जो ईश्वरवादी ऐसा कहते हैं कि पृथिव्यादिरूप जगतको ईश्वरने बनाया है। और इस बातका समर्थन करते हैं कि लोक अलोक आदि जितने भी पदार्थ हैं वे सभी विचित्र हैं और अनादि अनन्त हैं। ईश्वर, काल, प्रकृति आदिसे जनित नहीं हैं। यदि इन्हें ऐसा माना

હોવાથી તેમનામાં આનુપૂર્વી નથી.) તેનુ અહીં પણ ઉત્તર પક્ષમાં અધ્યાહાર કરવુ જોઈએ. આ બધા સૂત્રોથી એકાન્ત શૂન્યવાદ (કે જેને માધ્યમિક બૌદ્ધો માને છે) અને એકાન્ત જ્ઞાનવાદ (કે જેને સૌત્રાન્તિક બૌદ્ધો માને છે) વગેરે અનેક વાદોનું નિરાકરણ (ખંડન) થઇ જાય છે અને અનેક સ્વતંત્ર બાહ્ય પદાર્થોના સદ્ભાવ સૂચિત થાય છે

સારાંશ એ છે કે આ સૂત્રો વડે એ બતાવવામાં આવેલ છે કે વિવિધ પ્રકારના બાહ્યાર્થો છે અને તે સ્વતંત્ર પણ છે શૂન્યતા માનવી તે વાસ્તવિક રીતે યુક્તિસંગત નથી. કારણ કે બાહ્ય પદાર્થો પારમાર્થિક સત્ છે જગત ખાલી જ્ઞાનરૂપ જ નથી. અને બાહ્યપદાર્થો સ્વપ્ના જેવા પણ નથી. વળી આ સૂત્રો વડે ઇશ્વરવાદીઓ કહે છે કે આ પૃથ્વી વગેરે રૂપ જગત ઇશ્વરે બનાવ્યું છે એ વાતનું પણ અહીં ખંડન થઇ જાય છે અહીં એ વાતનું પ્રતિપાદન કરાયું છે કે લોક અલોક વગેરે જેટલા પદાર્થો છે તે બધા પદાર્થો સ્વતંત્ર છે અને અનાદિ અનન્ત છે તે પદાર્થો ઇશ્વર, કાળ, પ્રકૃતિ વગેરેથી ઉત્પન્ન થયેલા નથી.

असंख्यात प्रदेश हैं (ते सव्वे) वे सब (कसीणा) पूरे (पडिपुण्णा) प्रतिपूर्ण (निरवसेसा) निरवशेष (एगग्गहणगहिया) यह धर्मास्तिकाय है इस शब्द से ग्रहण करने के लायक हो जावे-तब (धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) उन सब का वह समूह (धर्मास्तिकाय) इस शब्द द्वारा वक्तव्य होता है। धर्मास्तिकाय प्रदेशों के इन विशेषणों की सार्थकता इस प्रकार से है-सर्व शब्द का अर्थ (समस्त) ऐसा होता है तथा (कसिणा-कृत्स्ना) इस शब्द का अर्थ भी समस्त होता है तथा और भी जो विशेषण हैं-वे भी इसी अर्थ के वाचक हैं-परन्तु जब इन शब्दों के अर्थ का बारीक रीतिसे विचार किया जाता है तब इस में इस प्रकार से भिन्नत आती है-जो थोडे बहुत भी पदार्थ होते हैं उन्हें भी व्यवहार में (सर्व) ऐसा कह दिया जाता है क्यों कि यह सर्व शब्द एक देशीय सर्वता का भी सूचक होता है अतः (असंख्यात वे सब प्रदेश धर्मास्ति काय हैं) इस कथन से ऐसा भी अर्थबोध हो सकता है कि एक, दो तीन आदि अनेक सब अवयव धर्मास्तिकायके है, इसमें असंख्यात प्रदेशों के समुदाय रूप पदार्थ में धर्मास्तिकायता का अर्थ बोध नहीं होता।

હે ગૌતમ! (असंखेज्जा धम्मत्थिकाए पएसा) ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાત પ્રદેશો હોય છે. "ते सव्वे" તે બધા "कसिणा" પૂરે પૂરા, "पडिपूण्णा" પ્રતિપૂર્ણ રૂપે, "निरवसेसा" નિરવશેષરૂપે "एगग्गहण गहिया" આ ધર્માસ્તિકાય છે" એવા શબ્દ પ્રયોગથી ગ્રહણ કરવાને-યોગ્ય બની જાય ત્યારે "धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्व सिया" તે સૌના તે સમૂહને માટે "ધર્માસ્તિકાય" શબ્દનો પ્રયોગ કરી શકાય છે ધર્માસ્તિકાય પ્રદેશોના ઉપરોક્ત વિશેષણોની સાર્થકતા બતાવવા માટે ટીકાકાર કહે છે કે-'સર્વ' એટલે સમસ્ત એજ પ્રમાણે "कसिणा-कृत्स्ना" પદનો અર્થ પણ 'સમસ્ત' થાય છે, તથા એ સિવાયના વિશેષણો પણ એજ અર્થના વાચક છે. પણ જ્યારે તે શબ્દોના અર્થનો ઝીણવટથી વિચાર કરવામા આવે ત્યારે તેમની વચ્ચે નીચે પ્રમાણે તફાવત નજરે પડે છે-જે થોડા કે ઝાઝા પદાર્થો હોય છે તેમને પણ વ્યવહારમા 'સર્વ' (સમસ્ત કહેવામા આવે છે, કારણ કે તે 'સર્વ' શબ્દ એક દેશીય સર્વતાનો પણ દર્શક હોય છે તેથી "તે બધા, અસખ્યાત પ્રદેશો ધર્માસ્તિકાય છે" એવું માનવાનો પ્રસંગ ઉપસ્થિત થાય છે વળી એ કથનથી એવો અર્થ-બોધ થાય છે કે એક, બે, ત્રણ આદિ અનેક અવયવ ધર્મા-

ते च सर्वे देशापेक्षयाऽपि भवन्ति, प्रकारकात्स्न्येऽपि सर्वशब्दस्य प्रवृत्तिदर्शना दित्यत आह ' कसिण ' कृत्स्नाः समस्ता न तु तदेकदेशापेक्षया सर्वे इत्यर्थः। ते च प्रदेशाः स्वस्वभावरहिता अपि कदाचिद् भवंति, ते स्वस्वभावरहिता फलोपधायकत्वरूपकारणत्वाभाववन्तोऽपि स्वरूपयोग्यत्वेन तथा व्यवहर्तुम् शक्यते इत्याशयेनाह-" पडिपुण्णा " प्रतिपूर्णा स्वस्वरूपेणाऽविकलाः फलोपधायकाः

देशापेक्ष सब प्रदेशों में धर्मास्तिकायता का बोध होता है-अतःऐसी मान्यता आगमके अनुकूल नहीं है-प्रतिकूल है-इसलिये सर्व शब्द का यहां ऐसा अर्थ नहीं लेना चाहिये किन्तु (कसिणे) कृत्स्न ऐसा अर्थ लेना चाहिये क्यों कि सर्व शब्द की प्रकार और कृत्स्न इन अर्थों में प्रवृत्ति देखी गई है-कृत्स्न शब्द का अर्थ है पूरे पूरे सब एक भाग की अपेक्षा सब नहीं किन्तु सर्व प्रकार से पूरे पूरे सब। ऐसे प्रदेश स्वभावरहित भी, कदाचित् हो सकते हैं अर्थात् सब पूरे पूरे प्रदेश हो भी और यदि वे अपने २ स्वभाव से भी रहित हों तो उनमें सर्व कृत्स्नता का बाध नहीं आता है और वे धर्मास्तिकायरूप से मानलिये जावेंगे, कारण फलोपधायकत्वरूप (कार्य को सिद्ध करनेवाला) कारण के अभाव में, स्वरूप योग्यता होने पर भी ऐसा व्यवहार बन सकता है सो इस बात को निषेध करने के लिये (पडिपुण्णा) यह विशेषण रक्खा है। यह विशेषण यह प्रगट करता है कि वे सर्वकृत्स्न प्रदेश ऐसे हों कि जो अपने स्वभाव

स्तिकायतानो बोध थवाने लईने देश पेक्ष सघळा प्रदेशोमां धर्मास्तिकायतानो बोध थाय छे पण ओ प्रकारनी मान्यता तो आगमोनी विरुद्ध जाय छे. तेथी ' सर्व ' शब्दनो अहीं अेवो अर्थ लेवो जोईओ नहीं पण " कसिणे " ' कृत्स्न (संपूर्ण) अर्थ लेवो जोईओ, ' कृत्स्न ' ओटले पूरे पूरा-केटलाक भागोनी अपेक्षाओ पूरा नहीं पण सर्व प्रकारे संपूर्ण अेवा प्रदेशो क्याक स्वभाव रहित पण होइ शके छे-ओटले के सर्व पूरे पूरा प्रदेश होय पण जो तओ पोत पोताना स्वभावथी पण रहित होय तो तेमां सर्व 'कृत्स्ना' -संपूर्णतानो बाध (बाधा) आवतो नथी, अने तेमने धर्मास्तिकाय रूपे मानवा पडे, कारण के फलोपधायकत्वरूप कारणना अभावे स्वरूप योग्यता होवा छता पण अेवो व्यवहार संभवी शके छे. तो ओ वातनुं निराकरण करवाने माटे " पडिपुण्णा " (प्रतिपूर्ण) विशेषण वापर्युं छे आ विशेषण अेवुं बतावे छे के ते सर्वकृत्स्न (संपूर्ण) प्रदेश अेवां होवा जोईओ के जे

ते च प्रदेशाः प्रदेशान्तरापेक्षया स्वस्वभावन्यूना अपि आत्मस्वरूपेणाऽविकला उच्यन्ते तत्राह-'निरवसेसा' निरवशेषाः प्रदेशान्तरतोऽपि स्वस्वभावेन न

से युक्त हों, उस समय में वहां स्वरूप योग्यता की आवश्यकता नहीं मानी गई है वह योग्यता उनमें आविर्भूत हो रही हो ऐसे ही हों, तभी जाकर उनमें धर्मास्तिकायरूप व्यवहार हो सकता है। यहां ऐसा नहीं माना गया है कि जिस प्रकार दंड अपने कार्य को नहीं कर रहा है और वह एक तरफ रखा हुआ है फिर भी वह दण्ड कहलाता है-ऐसा ही वे कृत्स्नप्रदेश अपने कार्यको जब नहीं करते हैं तब भी उनमें धर्मास्तिकाय का व्यवहार हो जावे। क्यों कि निश्चयनय की मान्यतानुसार अपनीक्रिया में प्रवृत द्रव्य ही उस २ अभिधेय का वाच्य होता है। कृत्स्नप्रदेशों की अपनीक्रियाके करने में प्रवृत्ति होना यही उनमें (प्रतिपूर्णता) है ।

शंका—अपनी क्रिया के करने में प्रवृत्ति, अपने में वैसी योग्यता-स्वभाव न भी हो तो भी अन्य की सहायता से होती देखी जाती है इसी तरह इन धर्मास्तिकाय के प्रदेशों में अन्यप्रदेशों की सहायता से, अपनी क्रियाके करने के स्वभाव की विकलता होने पर भी तत्स्वभावता मान लेनेपर (प्रतिपूर्णता) मान ली जावे तो क्या बाधा है?

પોતાના સ્વભાવથી યુક્ત હોય, તે સમયે ત્યાં સ્વરૂપ યોગ્યતાની આવશ્યક્તા માનવામાં આવી નથી-તે યોગ્યતાનો તો ત્યાં સદ્ભાવ જ માન્યો છે. ત્યારે જે તેમને માટે 'ધર્માસ્તિકાય' શબ્દ વાપરી શકાય છે-અહીં એવું માનવામાં આવ્યું નથી કે "લાકડી પોતાનું કાર્ય ન કરતી હોય-તે એક બાજુએ પડેલી હોય તો પણ તેને લાકડી જ કહી શકાય છે"-એજ પ્રમાણે તે કૃત્સ્ન (સંપૂર્ણ) પ્રદેશ પોતાનું કાર્ય ન કરતા હોય ત્યારે પણ તેમને ધર્માસ્તિકાય કહેવાનો પ્રસંગ ઉપસ્થિત થાય છે. કારણ કે નિશ્ચયનયની માન્યતા પ્રમાણે તો પોતાની ક્રિયામાં પ્રવૃત્ત દ્રવ્ય જ તે તે અભિધેયનું વાચ્ય (બોધક) હોય છે. કૃત્સ્ન પ્રદેશોની પોતાની ક્રિયાઓ કરવામાં પ્રવૃત્તિ હોવી એજ એમાં રહેલી 'પ્રતિપૂર્ણતા' છે.

શંકા—પોતાની ક્રિયા કરવાની પ્રવૃત્તિ, પોતાની અંદર એવી યોગ્યતા ન હોય તોપણુ અન્યની સહાયતાથી જોવામા આવે છે, એ રીતે તે ધર્માસ્તિકાયના પ્રદેશોમાં અન્ય પ્રદેશોની સહાયતાથી, પોતાની ક્રિયા કરવાના સ્વભાવની વિકલતા હોવા છતાં તે સ્વભાવનું અસ્તિત્વ માની લઈને 'પ્રતિપૂર્ણતા' માની લેવામાં આવે તો શો વાંધો છે?

ते च सर्वे देशापेक्षयाऽपि भवन्ति, प्रकारकात्स्न्येऽपि सर्वशब्दस्य प्रवृत्तिदर्शना दित्यत आह 'कसिण' कृत्स्नाः समस्ता न तु तदेकदेशापेक्षया सर्वे, इत्यर्थः। ते च प्रदेशाः स्वस्वभावरहिता अपि कदाचिद् भवंति ते स्वस्वभावरहिता फलो पधायकत्वरूपकारणत्वाभाववन्तोऽपि स्वरूपयोग्यत्वेन तथा व्यवहर्तुम् शक्यते इत्याशयेनाह-" पडिपुण्णा " प्रतिपूर्णा स्वस्वरूपेणाऽविकलाः फलोपधायकाः

देशापेक्ष सब प्रदेशों में धर्मास्तिकायता का बोध होता है-अत ऐसी मान्यता आगमके अनुकूल नहीं है-प्रतिकूल है-इसलिये सर्व शब्द का यहां ऐसा अर्थ नहीं लेना चाहिये किन्तु (कसिणे) कृत्स्न ऐसा अर्थ लेना चाहिये क्यों कि सर्व शब्द की प्रकार और कृत्स्न इन अर्थों में प्रवृत्ति देखी गई है-कृत्स्न शब्द का अर्थ है पूरे पूरे सब एक भाग की अपेक्षा सब नहीं किन्तु सर्व प्रकार से पूरे पूरे सब। ऐसे प्रदेश स्वभावरहित भी कदाचित् हो सकते हैं अर्थात् सब पूरे पूरे प्रदेश हो भी और यदि ये अपने २ स्वभाव से भी रहित हों तो उनमें सर्व कृत्स्नता का बाध नहीं आता है और वे धर्मास्तिकायरूप से मानलिये जावेंगे, कारण फलोपधायकस्वरूप (कार्य को सिद्ध करनेवाला) कारण के अभाव में, स्वरूप योग्यता होने पर भी ऐसा व्यवहार बन सकता है सो इस, बात को निषेध करने के लिये (पडिपुण्णा) यह विशेषण रखा है। यह विशेषण यह प्रगट करता है कि वे सर्वकृत्स्न प्रदेश, ऐसे हों कि जो अपने स्वभाव

स्तिकायतानो बोध थवाने बदले देशापेक्ष सघळा प्रदेशोमां धर्मास्तिकायतानो बोध थाय छे पण ए प्रकारनी मान्यता तो आगमोनी विरुद्ध जाय छे तेथी सव ' शब्दनो अही एवो अर्थ लेवो जोइए नहीं पण ' कसिणे " ' कृत्स्न (संपूर्ण) अर्थ लेवो जोईए, ' कृत्स्न ' एटले पूरे पूरा-केटलाक भागोनी अपेक्षाए पूरा नहीं पण, सर्व प्रकारे संपूर्ण एवा प्रदेशो. एवा स्वभाव रहित पण होइ, शके छे-एटले के सर्व पूरे पूरा प्रदेश होय पण जो तेओ पोत पोताना स्वभावथी पण रहित होय तो तेमां सर्व 'कृत्स्ना' -संपूर्णतानो बाध (बाधा) आवतो नथी, अने तेमने धर्मास्तिकाय रूपे मानवा पडे, कारण के फलोपधायकत्वरूप कारणना अभावे स्वरूप योग्यता होवा छतां पण एवो व्यवहार संभवी शके छे तो ए वातनुं निराकरण करवाने माटे " पडिपुण्णा " (प्रतिपूर्ण) विशेषण वापर्युं छे आ विशेषण एवुं बतावे छे के ते सर्वकृत्स्न (संपूर्ण) प्रदेश एवा होवा जोइए के जे

द्रव्याणामपि "पएसा" प्रदेशा "अणंता भाणियव्वा" अनन्ता भणितव्य एतेषां त्रयाणामपि अनन्ताः प्रदेशाः ज्ञातव्या इत्यर्थः लोकाऽलोकापेक्षया आक शास्तिकायस्यानन्तत्वम् । जीवास्तिकायस्य सर्वजीवापेक्षयाऽनन्तत्वं ज्ञातव्य पुद्गलास्तिकायस्य तु स्वभावत एवानन्तत्वं ज्ञातव्यम् "सेसं तं चेव" शेषं तदे पूर्वोक्तमेव ज्ञातव्यम् धर्मास्तिकायाधर्मास्तिकाययोरसंख्येयाः प्रदेशाः कथित आकाशास्तिकायादीनां त्रयाणां द्रव्याणां पुनरनन्ताः प्रदेशा वक्तव्याः अन प्रदेशिकत्वादेतेषामिति भावः ॥ सू० २ ॥

उपयोगगुणवान् जीवास्तिकाय इति पूर्वप्रकरणे प्रदर्शितम् इदानीं जीव स्तिकायस्य देशभूत एको जीव उत्थानादिगुणवानिति दर्शयितुमाह–'जीवेणं इत्यादि ॥

मूलम्–जीवे णं भंते ? स उट्ठाणे, स कम्मे, स बले, स वीरिए, स पुरिसक्कारपरक्कमे, आयभावे णं जीवभावं, उवदंसे तीति वत्तव्वं सिया? हंता गोयमा ! जीवेणं स उट्ठाणे जा उवदंसेतीति वत्तव्वं सिया, से केणट्ठेणं जाव वत्तव्वं सिय

भाणियव्वा) आकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय इन ती अस्तिकायरूप द्रव्यों के प्रदेश अनन्त हैं । लोक और अलोक की अपेक्ष से आकाशास्तिकाय के प्रदेशों में अनन्तता है । जीवों में सर्वजी की अपेक्षा अनन्तता है तथा पुद्गलास्तिकाय में तो स्वभावतः ही अ न्तता है । (सेसं तं चेव) अवशिष्ट कथन पूर्वोक्त जैसा ही जानना च हिये । धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय इन दो द्रव्यों के असंख्यात प्रदे कहे गये हैं आकाशास्तिकाय आदि तीन द्रव्यों के प्रदेश अनन्त क गये हैं । क्यों कि ये प्रत्येक अनन्तप्रदेशिक हैं ॥ सू. २ ॥

अणंता भाणियव्वा" આકાશાસ્તિકાય, જીવાસ્તિકાય અને પુદ્ગલાસ્તિકાય એ ત્રણે અસ્તિકાયરૂપ દ્રવ્યોના પ્રદેશ અનન્ત છે, લોક અને અલોકની અપેક્ષાએ આકાશાસ્તિકાયના પ્રદેશમા અનંતતા છે, જીવોમાં સર્વ જીવોની અપેક્ષાએ અનં તતા છે તથા પુદ્ગલાસ્તિકાયમા તો સ્વભાવથી જ અનંતતા છે. 'सेसं त चेव' બાકીનુ સમસ્ત કથન આગળ કહ્યા પ્રમાણે જ સમજવુ ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાય દ્રવ્યોના અસંખ્યાત પ્રદેશ કહ્યા છે. આકાશાસ્તિકાય આદિ ત્રણ દ્રવ્યોના અનંત પ્રદેશ કહ્યા છે ...

न्यूना इत्यर्थः तथा 'एगगाइणगहिया" एकग्रहणगृहीता एकग्रहणेन एकश-ब्देन 'धर्मास्तिकाय' इत्येवलक्षणेन गृहीता ये ते एकग्रहणगृहीताः एकशब्द वाच्या इत्यर्थः। "एसणं गोयमा" एष खलु गौतम! "धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया" धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात्। 'एवं अधम्मत्थिकाए वि' एवम् अधर्मास्तिकायोऽपि यथा धर्मास्तिकायस्य वक्तव्यं कृतं तथा अधर्मास्तिकायोऽपि ज्ञातव्यः। "आगासत्थिकाए वि जीवत्थिकाए वि पोग्गलत्थिकाए वि एवं चेव" आकाशास्तिकायोऽपि जीवास्तिकायोऽपि पुद्गलास्तिकायोऽपि एवमेव नवरं केवलम् 'तिर्णंपि' त्रयाणाम् आकाशास्तिकाय-जीवास्तिकाय-पुद्गलास्तिकाय

समाधान—ऐसा नहीं है क्यों कि-(निरवसेसा) पद से यह समझाया गया है कि उन प्रदेशों में जो धर्मास्तिकायता है वह अन्यप्रदेशों की सहायता से नहीं है किन्तु स्वभाव से ही है। इस प्रकार वे सब प्रदेश जब धर्मास्तिकायरूप स्वभाव से युक्त हो जाते हैं तभी (एगगहणगहिया) धर्मास्तिकाय इस एक शब्द के वाच्य होते हैं। अथवा ये सब कृत्स्न आदि शब्द समान अर्थवाले हैं। (एस णं गोयमा! धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) और तभी वे धर्मास्तिकाय कहे जा सकते हैं। (एवमहम्मत्थिकाए वि वत्तव्वं) इसी प्रकारसे अधर्मास्तिकायके विषय में भी जानना चाहिये। (आगासत्थिकाए जीवत्थिकाए वि पोग्गलत्थिकाए वि एवं चेव) इसी तरह से आकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय और पुद्गलास्तिकाय की वक्तव्यता भी जानमी चाहिये। (नवरं) इनके विषय में जो विशेषता है वह इस प्रकार से है (तिण्हं पि पएसा अणंता

સમાધાન—એવું નથી કારણ કે "निरवसेसा" પદથી એવું સમજાવવામાં આવ્યું છે કે પ્રદેશોમાં જે ધર્માસ્તિકાયતા છે તે અન્યપ્રદેશોની સહાયતાથી નથી, પણ સ્વભાવથી જ છે આ રીતે બધા પ્રદેશો જ્યારે ધર્માસ્તિકાયરૂપ સ્વભાવથી યુક્ત થઈ જાય છે ત્યારે 'एगगहणगहिया" (ધર્માસ્તિકાય) એવા એક શબ્દના વાચ્ય-કહેવાને પાત્ર-બની જાય છે અથવા-તે કૃત્સ્ન આ દિ સઘળાં પદો સમાન અર્થના વાચક છે "एस णं गोयमा! धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया" હે ગૌતમ! ત્યારે જ તેમને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય છે "एवमहम्मत्थिकाए वि वत्तव्वं" એજ પ્રમાણે અધર્માસ્તિકાયના વિષયમાં પણ સમજવું "आगासत्थिकाए वि जीवत्थिकाए वि पोग्गलत्थिकाए वि एवं चेव" આકાશા સ્તિકાય, જીવાસ્તિકાય અને પુદ્ગલાસ્તિકાયના વિષયમાં પણ એજ પ્રમાણે સમજવું "नवरं" પણ તેમનામાં નીચે પ્રમાણે વિશેષતા છે- तिण्हं वि पएसा

द्रव्याणामपि "पएसा" प्रदेशा "अणंता भाणियव्वा" अनन्ता भणितव्याः एतेषां त्रयाणामपि अनन्ताः प्रदेशाः ज्ञातव्या इत्यर्थः लोकाऽलोकापेक्षया आकाशास्तिकायस्यानन्तत्वम्। जीवास्तिकायस्य सर्वजीवापेक्षयाऽनन्तत्वं ज्ञातव्यम् पुद्गलास्तिकायस्य तु स्वभावत एवानन्तत्वं ज्ञातव्यम् "सेसं तं चेव" शेषं तदेव पूर्वोक्तमेव ज्ञातव्यम् धर्मास्तिकायाधर्मास्तिकाययोरसंख्येयाः प्रदेशाः कथिताः आकाशास्तिकायादीनां त्रयाणां द्रव्याणां पुनरनन्ताः प्रदेशा वक्तव्याः अनन्त प्रदेशिकत्वादेतेषामिति भावः॥ सू० २॥

उपयोगगुणवान् जीवास्तिकाय इति पूर्वप्रकरणे प्रदर्शितम् इदानीं जीवास्तिकायस्य देशभूत एको जीव उत्थानादिगुणवानिति दर्शयितुमाह-'जीवेणं' इत्यादि॥

मूलम्-जीवे णं भंते? स उट्ठाणे, स कम्मे, स वले, स वीरिए, स पुरिसक्कारपरक्कमे, आयभावे णं जीवभावं, उवदंसेतीति वत्तव्वं सिया? हंता गोयमा! जीवेणं स उट्ठाणे जाव उवदंसेतीति वत्तव्वं सिया, से केणट्ठेणं जाव वत्तव्वं सिया,

---

भाणियव्वा) आकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय इन तीनों अस्तिकायरूप द्रव्यों के प्रदेश अनन्त हैं। लोक और अलोक की अपेक्षा से आकाशास्तिकाय के प्रदेशों में अनन्तता है। जीवों में सर्वजीवों की अपेक्षा अनन्तता है तथा पुद्गलास्तिकाय में तो स्वभावतः ही अनन्तता है। (सेसं तं चेव) अवशिष्ट कथन पूर्वोक्त जैसा ही जानना चाहिये। धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय इन दो द्रव्यों के असंख्यात प्रदेश कहे गये हैं आकाशास्तिकाय आदि तीन द्रव्यों के प्रदेश अनन्त कहे गये हैं। क्यों कि ये प्रत्येक अनन्तप्रदेशिक हैं॥ सू. २॥

अणंता भाणियव्वा" આકાશાસ્તિકાય, જીવાસ્તિકાય અને પુદ્ગલાસ્તિકાય એ ત્રણે અસ્તિકાયરૂપ દ્રવ્યોના પ્રદેશ અનન્ત છે, લોક અને અલોકની અપેક્ષાએ આકાશાસ્તિકાયના પ્રદેશમા અનંતતા છે, જીવોમાં સર્વ જીવોની અપેક્ષાએ અનંતતા છે તથા પુદ્ગલાસ્તિકાયમા તો સ્વભાવથી જ અનંતતા છે. 'સેસં તં ચેવ" બાકીનુ સમસ્ત કથન આગળ કહ્યા પ્રમાણે જ સમજવુ. ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાય દ્રવ્યેના અસંખ્યાત પ્રદેશ કહ્યા છે. આકાશાસ્તિકાય આદિ ત્રણ દ્રવ્યોના અનંત પ્રદેશો કહ્યા છે, કારણ કે તે દરેક અનંત પ્રદેશિક છે ॥સૂ૦૨॥

गोयमा ! जीवेण अणंताणं अभिणिबोहियणाणपज्जवाणं, एवं सुयणाणपज्जवाणं, ओहिणाणपज्जवाणं, मणपज्जवणाणपज्जवाणं केवलणाणपज्जवाणं, मइ अन्नाणपज्जवाणं, सुअअण्णाणपज्जवाणं, विभंगणाणपज्जवाणं, चक्खुदंसण—पज्जवाणं, अचक्खुदंसणपज्जवाणं, ओहिदंसणपज्जवाणं, केवलदंसणपज्जवाणं, उवओगं गच्छइ उवयोगलक्खणे णं जीवे से एएणट्ठेणं, एवं वुच्चइ गोयमा ? जीवे णं स उट्ठाणे जाव वत्तव्वं सिया ॥ ३ ॥

छाया—जीवः खलु भदन्त ! सोत्थानः सकर्मा सबलः सवीर्यः स पुरुषकारपराक्रमः आत्मभावेन जीवभावमुपदर्शयति, इति वक्तव्यम् स्यात् ? हन्त गौतम ! जीवः खलु सोत्थानः यावदुपदर्शयति इति वक्तव्यम् स्यात् तत् केनार्थेन

जीवास्तिकाय उपयोग गुण वाला है-यह पहिले प्रकट किया जा चुका है। अब यह प्रकट किया जाता है कि जीवास्तिकाय का देशभूत एक जीव उत्थान आदि गुणवाला होता है—(जीवे णं भंते ! सउट्ठाणे) इत्यादि।

सूत्रार्थ—(जीवे णं भंते ! सउट्ठाणे, सकम्मे, सबले, सवीरिए, सपुरिसक्कारपरक्कमे) हे भदन्त ! उत्थानवाला, कर्मवाला, बलवाला, वीर्यवाला, और पुरुषकारपराक्रमवाला जीव (आयभावेणं) आत्मभावद्वारा (जीवभावं उवदंसेति इति वत्तव्वं सिया) जीवभावरूप चैतन्य को दिखाता है ऐसा वक्तव्य हो सकता है क्या ? (हंता गोयमा ! जीवे णं सउट्ठाणे जाव

જીવાસ્તિકાય ઉપયોગ ગુણવાળું હોય છે એ વાત પહેલાં બતાવવામાં આવી છે. હવે એ સમજાવવામાં આવે છે કે જીવાસ્તિકાયના દેશરૂપ એક જીવ ઉત્થાન આદિ ગુણવાળો હોય છે—" जीवेणं भंते ! सउट्ठाणे " ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—" जीवे णं भंते ! सउट्ठाणे, सकम्मे, सबले, सवीरिए, सपुरिसक्कार परक्कमे " હે ભદન્ત ! ઉત્થાનવાળો, કર્મવાળો, બળવાળો વીર્યવાળો અને પુરુષકાર પરાક્રમવાળો જીવ (आयभावेण) આત્મભાવ દ્વારા (जीवभाव उवदंसेति इति वत्तव्वं सिया) જીવભાવ રૂપ ચૈતન્ય બતાવે છે, એવું કહી શકાય

यावद् वक्तव्यं स्यात् ? गौतम ! जीवः खलु अनन्तानामाभिनिवोधिकज्ञानपर्यवाणाम् । एवं श्रुतज्ञान पर्यवाणाम् अवधिज्ञान पर्यवाणाम् मनः पर्यवज्ञानपर्यवाणाम् केवलज्ञानपर्यवाणाम् , मत्यज्ञानपर्यवाणाम् , श्रुतज्ञानपर्यवाणाम् , विभंगज्ञानपर्यवाणाम् , चक्षुर्दर्शनपर्यवाणाम् , अचक्षुर्दर्शनपर्यवाणाम् , अवधिदर्शनपर्यवाणाम् ,

---

उवदसेतीति वत्तव्वं सिया) हां गौतम ! उत्थान आदि विशेषणों वाला जीव यावत् जीवभावरूप चैतन्य को दिखाता है ऐसा वक्तव्य हो सकता है। (से केणट्ठेणं जाव वत्तव्वं सिया) हे भदन्त ! ऐसा आप किस कारण से कहते हैं कि उत्थान आदि विशेषणों वाला जीव आत्मभाव द्वारा जीवभावरूप चैतन्य को दिखाता है ऐसा वक्तव्य हो सकता है। (गोयमा) हे गौतम ! (जीवे णं अणंताणं आभिणिवोहियणाणपज्जवाणं, एवं सुयणाणपज्जवाणं, ओहिणाणपज्जवाणं, मणपज्जवणाणपज्जवाणं, केवलणाणपज्जवाणं) जीव अभिनिबोधिक ज्ञान की अनन्तपर्यायों के इसी तरह श्रुतज्ञान की अनन्त पर्यायों के, अवधिज्ञान की अनन्तपर्यायों के, मनः पर्ययज्ञान की अनन्त पर्यायों के केवल ज्ञान की अनन्त पर्यायों के (मइ अन्नाणपज्जवाणं, सुय अण्णाणपज्जवाणं, विभंग अन्नाणपज्जवाणं,) मत्यज्ञान की अनन्तपर्यायोंके, श्रुत अज्ञान की अनन्तपर्यायों के, विभंग अज्ञान की अनन्त पर्यायों के, (चक्खुदंसणपज्जवाणं,

---

ખરૂં ? (हंता गोयमा!जीवे णं स उट्ठाणे जाव उवदंसेतीति वत्तव्वं सिया) હે ગૌતમ ! હા, ઉત્થાન આદિ વિશેષણોવાળો જીવ આત્મભાવરૂપ ચૈતન્ય બતાવે છે, એવું કહી શકાય છે. (से केणट्ठेण जाव वत्तव्वं सिया) હે ભદન્ત ! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે ઉત્થાન આદિ વિશેષણોવાળો જીવ આત્મભાવદ્વારા જીવભાવરૂપ ચૈતન્ય બતાવે છે, એવું કહી શકાય છે ? (गोयमा !) હે ગૌતમ ! ((जीवे णं अणंताणं आभिणिवोहियणाणपज्जवाण एवं सुयणाणपज्जवाण ओहिणाणपज्जवाणं, मणपज्जवणाणपज्जवाणं, केवलणाणपज्जवाणं) જીવ અભિનિબોધિક જ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના એજ પ્રમાણે શ્રુતજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના, અવધિજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના, મનઃ પર્યયજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના, કેવલજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના, (मइ अन्नाणपज्जवाण , सुय अण्णाणपज्जवाण , विभंगअन्नाणपज्जवाणं) મતિ અજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના, શ્રુત અજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના, વિભંગ અજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના (चक्खुदंसणपज्जवाण , अचक्खुदंसणपज्जवाणं, ओहिदंसणपज्जवाण) ચક્ષુદર્શનની અનંત પર્યાયોના, અચક્ષુદર્શનની અનંત પર્યાયોના, અવધિદર્શનની અનંત પર્યાયોના (केवलदंसणपज्जवाणं) અને કેવલદર્શનની અનંત પર્યાયોના (उवओग गच्छइ) ઉપયોગને પ્રાપ્ત કરે છે. (उवओग लक्खणे

गोयमा ! जीवेण अणताण अभिणिबोहियणाणपज्जवाण, एव सुयणाणपज्जवाण, ओहिणाण पज्जवाण, मणपज्जवणाण पज्जवाण केवलणाण पज्जवाण, मइ अन्नाण पज्जवाण, सुअअण्णाण पज्ज वाणं, विभंगणाण पज्जवाण, चक्खुदसण—पज्जवाण, अचक्खु दसणपज्जवाण, ओहिदसणपज्जवाणं, केवलदसणपज्जवाणं, उवओग गच्छइ उवयोगलक्खणे णजीवे से एएणट्ठेण, एव वुच्चइ गोयमा ? जीवे ण स उट्ठाणे जाव वत्तव्वं सिया ॥ २ ॥

छाया—जीव खलु भदन्त ! सोत्थानः सकर्मा सबलः सवीर्यः स पुरुषकारपराक्रमः आत्मभावेन जीवभावमुपदर्शयति, इति वक्तव्यम् स्यात् ? हन्त गौतम ! जीवः खलु सोत्थानः यावदुपदर्शयति इति वक्तव्यम् स्यात तत् केनार्थेन

जीवास्तिकाय उपयोग गुण वाला है-यह पहिले प्रकट किया जा चुका है। अब यह प्रकट किया जाता है कि जीवास्तिकाय का देशभूत एक जीव उत्थान आदि गुणवाला होता है—(जीवे णं भंते ! सउट्ठाणे) इत्यादि।

सूत्रार्थ-(जीवे णं भंते ! सउट्ठाणे, सकम्मे, सबले, सवीरिए, सपुरिसक्कारपरक्कमे) हे भदन्त ! उत्थानवाला, कर्मवाला, बलवाला, वीर्यवाला, और पुरुषकारपराक्रमवाला जीव (आयभावेणं) आत्मभावद्वारा (जीवभावं उवदंसेति इति वत्तव्वं सिया) जीवभावरूप चैतन्य को दिखाता है ऐसा वक्तव्य हो सकता है क्या ? (हंता गोयमा ! जीवे णं सउट्ठाणे जाव

જીવાસ્તિકાય ઉપયોગ ગુણવાળુ હોય છે, એ વાત પહેલાં બતાવવામાં આવી છે હવે એ સમજાવવામાં આવે છે કે જીવાસ્તિકાયના દેશરૂપ એક જીવ ઉત્થાન આદિ ગુણવાળો હોય છે—" જીવેણ મંતે ! સઉટ્ઠાણ " ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—" જીવે ણ મંતે ! સઉટ્ઠાણે, સકમ્મે, સબલે, સવીરિએ, સપુરિસક્કાર પરક્કમે " હે ભદન્ત ! ઉત્થાનવાળો, કર્મવાળો, બળવાળો, વીર્યવાળો અને પુરુષકાર પરાક્રમવાળો જીવ (આયભાવેણ) આત્મભાવ દ્વારા (જીવભાવ ઉવદંસેતિ ઇતિ વત્તવ્વ સિયા) જીવભાવ રૂપ ચૈતન્ય બતાવે છે, એવું કહી શકાય

लोकाद्याः कदाचिन्नैव वा, नत्वेवं, नियमत एतेषां सद्भावदर्शनादिति । 'सेवं भंते सेवं भंते त्ति जाव विहरइ'–तदेवं भदन्त तदेवं भदन्त इति यावत् विहरति, हे भगवन्! यत् देवानुप्रियेण प्रतिपादितं तद् एवमेव सर्वमेव तत् तथैव न तु विपरीतम् इत्युक्त्वा भगवन्तं वन्दते नमस्करोति वन्दित्वा नमस्कृत्य संयमेन तपसाऽऽत्मानं भावयन् विहरति स्वस्थाने समुपविशतीति ॥सू०४॥

॥ इति रोहप्रकरणम् ॥

जावे तो फिर ये लोकादिक कभी होंगे और कभी नहीं होंगे। परन्तु ऐसा तो नहीं है। क्यों कि नियम से इनका सद्भाव दिखाई देता है। (सेवं भंते। सेवं भंते। त्ति जाव विहरइ) हे भदन्त। जैसा आप देवानुप्रियने प्रतिपादन किया है वह सब ऐसा ही है, हे भदन्त! वह सब ऐसा ही है विपरीत नहीं है। ऐसा कहकर वे रोह अनगार यावत् अपनी आत्मा को तप संयम से भावित कर विचरने लगे। यहां यावत् पद से "उन्होंने भगवान को वंदना की, उन्हें नमस्कार किया। वंदना नमस्कार करके तप और संयम से आत्मा को भावित करते हुए फिर वे" इस अर्थ का संग्रह हुआ है। "अपने स्थान पर बैठ गये" यह अर्थ "विहरति" पदका है। तात्पर्य कहने का यह है कि वे भगवदुक्त प्रवचन की मन, वचन, कायासे अनुमोदना करके अपने स्थानपर बैठगये॥सू०४॥

॥ रोहप्रकरण समाप्त ॥

જો આ પદાર્થોને ઈશ્વર વગેરેથી ઉત્પન્ન થયેલાં માનવામાં આવે તો આ લોક અલોક વગેરેનું અસ્તિત્વ ક્યારેક હશે અને ક્યારેક નહીં હોય, એ વાત પણ માનવી પડશે, પણ એવું બનતું નથી કારણ કે નિયમથી જ તેમનો સદ્ભાવ જણાય છે (सेवं भंते! सेवभते त्ति जाव विहरइ) "હે ભગવન્! આપે જે પ્રમાણે પ્રતિપાદન કર્યું છે તે પ્રમાણે જ છે હે ભગવન્! આપનું કથન સાચું જ છે." એવું કહીને ભગવાનને વંદણા નમસ્કાર કરીને રોહ અણગાર તપ અને સંયમથી પોતાના આત્માને ભાવિત કરતા પોતાને સ્થાને બેસી ગયા. "विहरति" એ પદનો અર્થ અહિં "પોતાને સ્થાને બેસી ગયા" એવો થાય છે. તાત્પર્ય એ છે કે મન, વચન અને કાયાથી ભગવાને કહેલ પ્રવચનની અનુમોદના કરીને રોહ અણગાર પોતાના સ્થાને બેસી ગયા. ॥ સૂ. ૪ ॥

રોહપ્રકરણ સમાપ્ત

केवलदर्शनपर्यवाणाम् उपयोग गच्छति, उपयोग लक्षणः खलु जीवः तदेतेनार्थेन एवमुच्यते गौतम ! जीवा खलु सोत्थानो यावत् वक्तव्यं स्यात् ॥ सू० ३ ॥

टीका—"जीव ण भंते" जीव खलु भदन्त "स उट्ठाणे" सोत्थान उत्थानं चेष्टाविशेषः "स कम्मे" सकर्मा – क्रियाविशेषयुक्तः "स बले" सबल–बल शारीरसामर्थ्यम् "स वीरिए" सवीर्यः वीर्यं जीवभवम् "स पुरिसक्कार– परक्कमे" सपुरुषकारपराक्रमः – पुरुषकारोऽभिमानविशेषः पराक्रमः पुरुषकार एव निष्पादितविषयः "आयभावेण" आत्मभावेन–आत्मस्वरूपेण त्वर्थः "जीवभाव" जीवभावं जीवत्वं चैतन्यमित्यर्थ 'उपदंसतीति' वक्तव्य

अचक्खुदंसणपज्जवाणं, ओहिदंसणपज्जवाणं,) चक्षुर्दर्शन की अनन्तप र्यायों के, अचक्षुर्दर्शन की अनन्तपर्यायों के अवधिदर्शन की अनन्तप र्यायों के (केवल दंसणपज्जवाण) और केवल दर्शन की अनन्त पर्यायों के (उवओग गच्छइ) उपयोग को प्राप्त करता है। (उवओगलक्खणे जीवे से) उपयोगलक्षणवाला जीव है। (एएहेणं एवं वुच्चइ गोयमा ! जीवे णं सउट्ठाणे जाव वत्तव्वं सिया) इस कारण हे गौतम ! मैंने ऐसा कहा है कि उत्थान आदि विशेषणों वाला जीव यावत् जीवभाव को दिखाता है ऐसा वक्तव्य हो सकता है ॥ सू० ३ ॥

टीकार्थ—(जीवे णं भंते !) हे भदन्त ! जीव (सउट्ठाणे सकम्मे) चेष्टा विशेषरूप उत्थान वाला होकर, ज्ञानवरणीय आदि कर्मवाला हो कर (सबले) शारीरिक सामर्थ्यरूप बल विशिष्ट होकर (सवीरिए) जीवसंबंधी बलसे युक्त होकर (सपुरिसक्कारपरक्कमे) अभिमानविशेष रूप पुरुषकार से और पराक्रम से युक्त होकर (आयभावेणं) आत्मा–

જીવે સે) જીવ ઉપયોગલક્ષણ વાળો છે (એ એણટ્ઠેણં એવં વુચ્ચઇ ગોયમા ! જીવેણ સઉટ્ઠાણે જાવ વત્તવ્વં સિયા) હે ગૌતમ ! તે કારણે મેં એવું કહ્યું છે કે ઉત્થાન આદિ વિશેષણોથી યુક્ત જીવ આત્મભાવરૂપ ચૈતન્ય બતાવે છે, એવું કથન કરી શકાય છે ॥ સૂ. ૩ ॥

ટીકાર્થ—(જીવેણં ભંતે !) હે ભદન્ત ! જીવ (સઉટ્ઠાણે સકમ્મે) વિશિષ્ટ ચેષ્ટારૂપ ઉત્થાન વાળો, જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મવાળો (સબલે) શારીરિક તાકાતરૂપ બળ વાળો, (સવીરિએ) વીર્ય વાળો "સપુરિસક્કારપરક્કમે" અભિમાન વિશેષરૂપ પુરુષકાર અને પરાક્રમવાળો થઈને (આયભાવેણં) આત્મ

यावद् वक्तव्यं स्यात्? गौतम! जीवः खलु अनन्तानामाभिनिवोधिकज्ञानपर्यवाणाम्। एवं श्रुतज्ञान पर्यवाणाम् अवधिज्ञान पर्यवाणाम् मनः पर्यवज्ञानपर्यवाणाम् केवलज्ञानपर्यवाणाम्, मत्यज्ञानपर्यवाणाम्, श्रुतज्ञानपर्यवाणाम्, विभंगज्ञानपर्यवाणाम्, चक्षुर्दर्शनपर्यवाणाम्, अचक्षुर्दर्शनपर्यवाणाम्, अवधिदर्शनपर्यवाणाम्,

---

उवदंसेतीति वत्तव्वं सिया) हां गौतम! उत्थान आदि विशेषणों वाला जीव यावत् जीवभावरूप चैतन्य को दिखाता है ऐसा वक्तव्य हो सकता है। (से केणट्ठेणं जाव वत्तव्वं सिया) हे भदन्त! ऐसा आप किस कारण से कहते हैं कि उत्थान आदि विशेषणों वाला जीव आत्मभाव द्वारा जीवभावरूप चैतन्य को दिखाता है ऐसा वक्तव्य हो सकता है। (गोयमा) हे गौतम! (जीवे णं अणंताणं आभिणिबोहियणाणपज्जवाणं, एवं सुयणाणपज्जवाणं, ओहिणाणपज्जवाणं, मणपज्जवणाणपज्जवाणं, केवलणाणपज्जवाणं) जीव अभिनिबोधिक ज्ञान की अनन्तपर्यायों के इसी तरह श्रुतज्ञान की अनन्त पर्यायों के, अवधिज्ञान की अनन्तपर्यायों के, मनः पर्ययज्ञान की अनन्त पर्यायों के केवल ज्ञान की अनन्त पर्यायों के (मइ अन्नाणपज्जवाणं, सुय अण्णाणपज्जवाणं, विभंग अन्नाणपज्जवाणं,) मत्यज्ञान की अनन्तपर्यायोंके, श्रुत अज्ञान की अनन्तपर्यायों के, विभंग अज्ञान की अनन्त पर्यायों के, (चक्खुदंसणपज्जवाणं,

---

ખરું? (हंता गोयमा! जीवे णं स उट्ठाणे जाव उवदंसेतीति वत्तव्वं सिया) હે ગૌતમ! હા, ઉત્થાન આદિ વિશેષણોવાળો જીવ આત્મભાવરૂપ ચૈતન્ય બતાવે છે, એવું કહી શકાય છે (से केणट्ठेणं जाव वत्तव्वं सिया) હે ભદન્ત! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે ઉત્થાન આદિ વિશેષણોવાળો જીવ આત્મભાવદ્વારા જીવભાવરૂપ ચૈતન્ય બતાવે છે, એવું કહી શકાય છે? (गोयमा!) હે ગૌતમ! ((जीवे णं अणंताणं आभिणिबोहियणाणपज्जवाण एवं सुयणाणपज्जवाणं ओहिणाणपज्जवाणं, मणपज्जवणा णपज्जवाणं, केवलणाणपज्जवाणं) જીવ અભિનિબોધિક જ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના એજ પ્રમાણે શ્રુતજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના, અવધિજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના, મનઃ પર્યયજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના, કેવલજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના, (मइ अन्नाणपज्जवाण, सुय अण्णाणपज्जवाण, विभंगअन्नाणपज्जवाणं) મતિ અજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના, શ્રુત અજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના, વિભંગ અજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના (चक्खुदंसणपज्जवाण, अचक्खुदंसणपज्जवाणं, ओहिदंसणपज्जवाणं) ચક્ષુદર્શનની અનંત પર્યાયોના, અચક્ષુદર્શનની અનંત પર્યાયોના, અવધિદર્શનની અનંત પર્યાયોના (केवलदंसणपज्जवाणं) અને કેવલદર્શનની અનંત પર્યાયોના (उवओग गच्छइ) ઉપયોગને પ્રાપ્ત કરે છે. (उवओग लक्खणे

केवलदर्शनपर्यवाणाम् उपयोग गच्छति, उपयोगलक्षण खलु जीवः तदेतनार्थेन एवमुच्यते गौतम ! जीव खलु सोत्थाना यावत् वक्तव्यं स्यात् ॥ सू० ३ ॥

टीका—" जीव ण भंते " जीव खलु भदन्त " स उट्ठाणे " सोत्थान उत्थानं चेष्टाविशेषः " स कम्म " सकर्मा – क्रियाविशेषयुक्तः " स बले " सबल'–बल शारीरसामर्थ्यम् " स वीरिए " सवीर्य वीर्यं जीवबलम् " स पुरिसकार– परक्कम " सपुरुषकारपराक्रम –पुरुषकारोऽभिमानविशेषः पराक्रमः पुरुषकार एव निष्पादितविषय " आयभावेण " आत्मभावन–आत्मस्वरूपेण स्वयं " जीवभाव " जीवभावं जीवत्वं चैतन्यमित्यर्थ ' उपदर्शयतीति वक्तव्य

अचक्खुदंसणपज्जवाणं, ओहिदंसणपज्जवाणं,) चक्षुर्दर्शन की अनन्तपर्यायों के, अचक्षुर्दर्शन की अनन्तपर्यायों के अवधिदर्शन की अनन्तपर्यायों के (केवल दंसणपज्जवाण) और केवल दर्शन की अनन्त पर्यायों के (उवओग गच्छइ) उपयोग को प्राप्त करता है । (उवओगलक्खणे जीवे से) उपयोगलक्षणवाला जीव है । (एएहेणं एवं वुच्चइ गोयमा ! जीवे णं सउट्ठाणे जाव वत्तव्वं सिया) इस कारण हे गौतम ! मैंने ऐसा कहा है कि उत्थान आदि विशेषणों वाला जीव यावत् जीवभाव को दिखाता है ऐसा वक्तव्य हो सकता है ॥ सू. ३ ॥

टीकार्थ—(जीवे णं भंते !) हे भदन्त ! जीव (सउट्ठाणे सकम्मे) चेष्टा विशेषरूप उत्थान वाला होकर, ज्ञानवरणीय आदि कर्मवाला होकर (सबले) शारीरिक सामर्थ्यरूप बल विशिष्ट होकर (सवीरिए) जीवसबंधी बलसे युक्त होकर (सपुरिसक्कारपरक्कमे) अभिमानविशेषरूप पुरुषकार से और पराक्रम से युक्त होकर (आयभावेण) आत्मा–

जीवे से) જીવ ઉપયોગલક્ષણ વાળો છે (एएहेणं एवं वुच्चइ गोयमा ! जीवेणं सउट्ठाणे जाव वत्तव्वं सिया) હે ગૌતમ ! તે કારણે મેં એવું કહ્યું છે કે ઉત્થાન આદિ વિશેષણોથી યુક્ત જીવ આત્મભાવરૂપ ચૈતન્ય બતાવે છે, એવું કથન કરી શકાય છે ॥ સૂ. ૩ ॥

ટીકાર્થ—(जीवेणं भंते !) હે ભદન્ત ! જીવ (सउट्ठाणे सकम्मे) વિશિષ્ટ ચેષ્ટારૂપ ઉત્થાન વાળો જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મવાળો, (सबले) શારીરિક સામર્થ્યરૂપ બળ વાળો, (सवीरिए) વીર્ય વાળો " सपुरिसक्कारपरक्कमे " અભિમાન વિશેષરૂપ પુરુષાર્થ અને પરાક્રમવાળો થઈને (आयभावेण) આત્મ

या ' उपदर्शयतीति वक्तव्यं स्यात्। अत्र खलु ' स उट्ठाणे ' इत्यादीनि पञ्च शेषणानि सिद्धजीवव्यवच्छेदकानि. सिद्धजीवानामुत्थानादिक्रियाया अभा-त् यावत्संसारमेवोत्थानादिक्रियाया आत्मनि समवेतत्वात्। एतदेव जीवस्य सारित्वं यत् क्रियादिमत्त्वम् मोक्षेऽपि क्रियादिसत्त्वे मोक्ष इति परिभाषामात्रमेव गादिति। ' आय भावेणं ' आत्मभावेन उत्थानशयनगमनभोजनादिरूपेणाऽऽ-परिणामविशेषेण ' जीवभावं ' जीवत्वं चैतन्यम् ' उपदंसेति ' उपदर्शयति—

पने परिणामों द्वारा (जीवभावं) चैतन्यरूप जीवभाव को (उवदंसे-ीति वत्तव्वं सिया) प्रकट करता है ऐसा कहा जा सकता है क्या ? ये ो पूर्वोक्त पांच विशेषण जीव के कहे गये हैं वे सिद्ध जीव के व्यव-छेदक हैं। क्यों कि सिद्ध जीवों के उत्थान आदि क्रिया का अभाव हता है। ये उत्थानादि क्रियाएँ जीव में जबतक उसके साथ संसार ा संबंध है तभीतक उसमें पाई जाती हैं। उत्थान आदि क्रियाविशिष्ट ोना यही जीव में संसारीपना है। उत्थान आदि क्रियाओं का हां असद्भाव है वही मोक्ष है। मोक्ष में ये उत्थान आदि क्रियाएँ हीं होती हैं। यदि वहां पर भी इनका सद्भाव मानने में आ-ाय तो फिर मोक्ष यह केवल एक पारिभाषिक शब्द ही माना जायगा। अतःयही मानना उचित है कि मोक्ष में ये उत्थान आदि क्रियाएँ नहीं है। संसार में ही हैं। इसी कारण संसारी जीव में संसार के सम्बन्ध से ये क्रियाएँ आदि पाई जाती हैं। अतःऐसा यह संसारी जीव (आय-भावेणं) उत्थान, शयन, गमन, भोजन, करण आदिरूप आत्मपरिणाम

ભાવદ્વારા–પરિણામો દ્વારા (जीवभाव) ચૈતન્યરૂપ જીવભાવને (उवदसेतीति वत्तव्व सिया) પ્રકટ કરે છે, એવું કહી શકાય ખરૂં ? ઉપર જીવના જે પાંચ વિશેષણ કહ્યાં છે તે સિદ્ધજીવને લાગૂ પડતા નથી. કારણ કે સિદ્ધજીવોમાં ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓનો અભાવ હોય છે જ્યાં સુધી જીવનો સંસાર સાથે સં-બંધ હોય ત્યા સુધી જ એ ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓ જીવમાં જોવા મળે છે. ઉત્થા નાદિ ક્રિયાઓથી યુક્ત હોવું એજ જીવનું સંસારીપણુ છે જ્યાં ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓનો અસદ્ભાવ છે, એવુ સ્થાન મોક્ષ છે મોક્ષમાં ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓ હોતી નથી. જો ત્યા પણ તેમનો સદ્ભાવ માનવામાં આવે તો મોક્ષ એક પારિભાષિક શબ્દ જ મનાય તેથી એવું જ માનવુ યોગ્ય છે કે મોક્ષમા ઉત્થા-નાદિ ક્રિયાઓ નથી–સંસારમાં જે તે ક્રિયાઓનું અસ્તિત્વ છે. કારણ કે સંસાર સાથેના સંબંધથી સસારી જીવોમાં તે ક્રિયાઓનો સદ્ભાવ હોય છે તો એ ક્રિયાઓથી યુક્ત સસારી જીવ (आयभावे णं) ઉત્થાન શયન, ગમન, ભોજન આદિરૂપ આત્મપરિણામ દ્વારા (जीवभाव उवदंसेति) જીવભાવ રૂપ ચૈતન્યને

केवलदर्शनपर्यवाणाम् उपयोग गच्छति, उपयोग लक्षणः खलु जीवः तदेतेनार्थेन एवमुच्यते गौतम ! जीवः खलु सोत्थानो यावत् वक्तव्यं स्यात् ॥ सू० ३ ॥

टीका—" जीवे णं भंते " जीव खलु भदन्त " स उट्ठाणे " सोत्थान उत्थानं चेष्टाविशेषः " स कम्मे " सकर्मा – क्रियाविशेषयुक्तः " स बले " सबलः–बलं शारीरसामर्थ्यम् " स वीरिए " सवीर्य वीर्य जीवभवम् " स पुरिसक्कार– परक्कमे " सपुरुषकारपराक्रम – पुरुषकारोऽभिमानविशेषः पराक्रमः पुरुषकार एव निष्पादितविषयः " आयभावेण " आत्मभावेन–आत्मस्वरूपेणेत्यर्थः " जीवभाव " जीवभाव जीवत्वं चैतन्यमित्यर्थ ' उपदसतीति वक्तव्वं

अचक्खुदंसणपज्जवाणं, ओहिदंसणपज्जवाणं,) चक्षुर्दर्शन की अनन्तपर्यायों के, अचक्षुर्दर्शन की अनन्तपर्यायों के अवधिदर्शन की अनन्तपर्यायों के (केवल दसणपज्जवाण) और केवल दर्शन की अनन्त पर्यायों के (उवओगं गच्छइ) उपयोग को प्राप्त करता है। (उवओगलक्खणे जीवे से) उपयोगलक्षणवाला जीव है। (एएहेणं एवं वुच्चइ गोयमा ! जीवे णं सउट्ठाणे जाव वत्तव्वं सिया) इस कारण हे गौतम ! मैंने ऐसा कहा है कि उत्थान आदि विशेषणों वाला जीव यावत् जीवभाव को दिखाता है ऐसा वक्तव्य हो सकता है ॥ सू. ३ ॥

टीकार्थ—(जीवे णं भंते !) हे भदन्त ! जीव (सउट्ठाणे सकम्मे) चेष्टा विशेषरूप उत्थान वाला होकर, ज्ञानावरणीय आदि कर्मवाला होकर (सबले) शारीरिक सामर्थ्यरूप बल विशिष्ट होकर (सवीरिए) जीवसभवी बलसे युक्त होकर (सपुरिसक्कारपरक्कमे) अभिमानविशेषरूप पुरुषकार से और पराक्रम से युक्त होकर (आयभावेण) आत्मा–

જીવે સે) જીવ ઉપયોગલક્ષણ વાળો છે (एएहेणं एवं वुच्चइ गोयमा ! जीवेणं सउट्ठाणे जाव वत्तव्वं सिया) હે ગૌતમ ! તે કારણે મેં એવું કહ્યું છે કે ઉત્થાન આદિ વિશેષણોથી યુક્ત જીવ આત્મભાવરૂપ ચૈતન્ય બતાવે છે, એવું કથન કરી શકાય છે ॥ સૂ. ૩ ॥

ટીકાર્થ—(जीवेणं भंते !) હે ભદન્ત ! જીવ (सउट्ठाणे सकम्मे) વિશિષ્ટ ચેષ્ટારૂપ ઉત્થાન વાળો, જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મવાળો (सबले) શારીરિક તાકાતરૂપ બળ વાળો, (सवीरिए) વીર્ય વાળો " सपुरिसक्कारपरक्कमे " અભિમાન વિશેષરૂપ પુરુષકાર અને પરાક્રમવાળો થઈને (आयभावेण) આત્મ

सिया ' उपदर्शयतीति वक्तव्यं स्यात्। अत्र खलु ' स उट्ठाणे ' इत्यादीनि पञ्च विशेषणानि सिद्धजीवव्यवच्छेदकानि. सिद्धजीवानामुत्थानादिक्रियाया अभावात् यावत्संसारमेवोत्थानादिक्रियाया आत्मनि समवेतत्वात्। एतदेव जीवस्य संसारित्वं यत् क्रियादिमत्त्वम् मोक्षेऽपि क्रियादिसत्त्वे मोक्ष इति परिभाषामात्रमेव स्यादिति। ' आय भावेणं ' आत्मभावेन उत्थानशयनगमनभोजनादिरूपेणाऽऽत्मपरिणामविशेषेण ' जीवभावं' जीवत्वं चैतन्यम् ' उपदंसेति ' उपदर्शयति—

अपने परिणामों द्वारा (जीवभावं) चैतन्यरूप जीवभाव को (उवदंसेतीति वत्तव्वं सिया) प्रकट करता है ऐसा कहा जा सकता है क्या ? ये जो पूर्वोक्त पांच विशेषण जीव के कहे गये हैं वे सिद्ध जीव के व्यवच्छेदक हैं। क्यों कि सिद्ध जीवों के उत्थान आदि क्रिया का अभाव रहता है। ये उत्थानादि क्रियाएँ जीव में जबतक उसके साथ ससार का संबंध है तभीतक उसमें पाई जाती हैं। उत्थान आदि क्रियाविशिष्ट होना यही जीव में संसारीपना है। उत्थान आदि क्रियाओं का जहां असद्भाव है वही मोक्ष है। मोक्ष में ये उत्थान आदि क्रियाएँ नहीं होती हैं। यदि वहां पर भी इनका सद्भाव मानने में आ जाय तो फिर मोक्ष यह केवल एक पारिभाषिक शब्द ही माना जायगा। अतःयही मानना उचित है कि मोक्ष में ये उत्थान आदि क्रियाएँ नहीं है। संसार में ही हैं। इसी कारण संसारी जीव में संसार के सम्बन्ध से ये क्रियाएँ आदि पाई जाती हैं। अतःऐसा यह संसारी जीव (आयभावेणं) उत्थान, शयन, गमन, भोजन, करण आदिरूप आत्मपरिणाम

ભાવદ્વારા–પરિણામો દ્વારા (जीवभावं) ચૈતન્યરૂપ જીવભાવને (उवदंसेतीति वत्तव्वं सिया) પ્રકટ કરે છે, એવું કહી શકાય ખરૂં ? ઉપર જીવના જે પાંચ વિશેષણ કહ્યાં છે તે સિદ્ધજીવને લાગૂ પડતાં નથી. કારણ કે સિદ્ધજીવોમાં ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓનો અભાવ હોય છે જ્યા સુધી જીવનો સંસાર સાથે સંબંધ હોય ત્યાં સુધી જ એ ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓ જીવમાં જોવા મળે છે. ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓથી યુક્ત હોવુ એજ જીવનું સંસારીપણુ છે જ્યા ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓનો અસદ્ભાવ છે, એવું સ્થાન મોક્ષ છે મોક્ષમા ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓ હોતી નથી. જો ત્યા પણ તેમનો સદ્ભાવ માનવામા આવે તો મોક્ષ એક પારિભાષિક શબ્દ જ મનાય તેથી એવું જ માનવુ યોગ્ય છે કે મોક્ષમાં ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓ નથી–સંસારમાં જે તે ક્રિયાઓનુ અસ્તિત્વ છે. કારણ કે સંસાર સાથેના સંબંધથી સંસારી જીવોમા તે ક્રિયાઓનો સદ્ભાવ હોય છે તો એ ક્રિયાઓથી યુક્ત સંસારી જીવ (आयभावेणं) ઉત્થાન શયન, ગમન, ભોજન આદિરૂપ આત્મપરિણામ દ્વારા (जीवभावं उवदंसेति) જીવભાવ રૂપ ચૈતન્યને

उपदर्शने प्रकाशस्तथा च प्रकाशयति इति वक्तव्यं स्यात् विशिष्टाया उत्थानादि क्रियाया विशिष्टज्ञानपूर्वकत्वनियमात्। दृश्यते च ज्ञानतारतम्येन क्रियातु तारतम्यमिति गौतमस्य प्रश्न भगवानाह-'हंता' इत्यादि। "हंता गोयमा" हन्त गौतम! "जीवे णं जाव उवदंसेतीति वत्तव्वं सिया" जीवः खलु यावत् पदर्शयतीति वक्तव्यं स्यात् अत्र यावत्पदेन उत्थानादारभ्य जीवभावमित्यन्तं प्रश्नोक्तं सर्वमेव संग्राह्यम् उत्थानादिकं सर्वम् जीव आत्मभावेनोपदर्शयतीति भाव

द्वारा (जीवभावं उवदंसेति) चैतन्यरूप जीव भाव को प्रकाशित करता है-प्रकट करता है ऐसा (वत्तव्वं सिया) कहा जा सकता है क्या? तात्पर्य-इस प्रश्न का यही है कि विशिष्ट उत्थान आदि क्रियाएँ विशिष्ट ज्ञानपूर्वक ही होती हैं ऐसा नियम है। यह बात प्रत्यक्ष देखने में आती है कि जहां पर ज्ञान की तरतमता होती है वहाँ पर क्रियाओं में भी तरतमता पाई जाती है। अतः इन क्रियाओं आदिकी तरतमता से जीव अपने विशिष्ट चैतन्य का प्रकाशन करता है-यदि ऐसा माना जावे तो इसमें कोई बाधा तो नहीं है-ऐसा यह प्रश्न प्रभु से किया है। इसके उत्तर में प्रभु कहते हैं-(हता गोयमा! जीवेणं जाव उवदंसेतीति वत्तव्वं सिया) हां गौतम! उत्थानादि विशेषणों वाला जीव अपने परिणामों द्वारा चैतन्यरूप भाव को प्रकाशित करता है-ऐसा मानने में कोई बाधा नहीं है। यहां यावत्पद से उत्थान से लेकर जीवभावतक के सब पद ग्रहण किये गये हैं। जीव आत्मभाव द्वारा अपने भाव को-चैतन्य को

પ્રકટ કરે છે, એવું (वत्तव्व सिया) કહી શકાય ખરું? હવે ટીકાકાર પ્રશ્નનું તાત્પર્ય સમજાવે છે—વિશિષ્ટ ઉત્થાન આદિ ક્રિયાઓ વિશિષ્ટ જ્ઞાન પૂર્વક જ થાય છે એવો નિયમ છે એવું પ્રત્યક્ષ જોવામાં આવે છે કે જ્યાં જ્ઞાનની અધિકતા હોય છે ત્યાં ક્રિયાઓમાં પણ અધિકતા હોય છે. તેથી તે ક્રિયાઓ આદિની તરતમતાથી (અધિકતાથી) જીવ પોતાના વિશિષ્ટ ચૈતન્યને પ્રકટ કરે છે-એવું જો માનવામાં આવે તો કોઈ પણ વાંધો નથી આ પ્રકારનું મંતવ્ય યોગ્ય છે કે નહીં, એવો ગૌતમ સ્વામીના પ્રશ્નનો ભાવાર્થ છે તેનો ઉત્તર મહાવીર પ્રભુ નીચે પ્રમાણે આપે છે-(हंता गोयमा! जीवेणं जाव उवदंसेतीति वत्तव्वं सिया) હે ગૌતમ! હા, ઉત્થાનાદિ વિશેષણોથી યુક્ત જીવ પોતાના પરિણામો દ્વારા ચૈતન્યરૂપ ભાવને પ્રકટ કરે છે- એવું માનવામાં કોઈ પણ હરકત નથી. અહીં (यावत्) (પર્યન્ત) પદથી ઉત્થાનથી લઈને જીવ ભાવ સુધીના પદો ગ્રહણ કરવામાં આવ્યા છે જીવ આત્મભાવ દ્વારા પોતાના

सिया ' उपदर्शयतीति वक्तव्यं स्यात्। अत्र खलु ' स उट्ठाणे ' इत्यादीनि पञ्च विशेषणानि सिद्धजीवव्यवच्छेदकानि. सिद्धजीवानामुत्थानादिक्रियाया अभावात् यावत्ससारमेवोत्थानादिक्रियाया आत्मनि समवेतत्वात्। एतदेव जीवस्य संसारित्वं यत् क्रियादिमत्त्वम् मोक्षेऽपि क्रियादिसत्त्वे मोक्ष इति परिभाषामात्रमेव स्यादिति। ' आय भावेणं ' आत्मभावेन उत्थानशयनगमनभोजनादिरूपेणाऽऽत्मपरिणामविशेषेण ' जीवभावं ' जीवत्वं चैतन्यम् ' उपदंसेति ' उपदर्शयति—

अपने परिणामों द्वारा (जीवभावं) चैतन्यरूप जीवभाव को (उवदंसेतीति वत्तव्वं सिया) प्रकट करता है ऐसा कहा जा सकतो है क्या ? ये जो पूर्वोक्त पांच विशेषण जीव के कहे गये हैं वे सिद्ध जीव के व्यवच्छेदक हैं। क्यों कि सिद्ध जीवों के उत्थान आदि क्रिया का अभाव रहता है। ये उत्थानादि क्रियाएँ जीव में जबतक उसके साथ संसार का संबंध है तभीतक उसमें पाई जाती हैं। उत्थान आदि क्रियाविशिष्ट होना यही जीव में संसारीपना है। उत्थान आदि क्रियाओं का जहां असद्भाव है वही मोक्ष है। मोक्ष में ये उत्थान आदि क्रियाएँ नहीं होती हैं। यदि वहां पर भी इनका सद्भाव मानने में आ-जाय तो फिर मोक्ष यह केवल एक पारिभाषिक शब्द ही माना जायगा। अतःयही मानना उचित है कि मोक्ष में ये उत्थान आदि क्रियाएँ नहीं है। संसार में ही हैं। इसी कारण संसारी जीव में संसार के सम्बन्ध से ये क्रियाएँ आदि पाई जाती हैं। अतःऐसा यह संसारी जीव (आयभावेणं) उत्थान, शयन, गमन, भोजन, करण आदिरूप आत्मपरिणाम

ભાવદ્વારા-પરિણામો દ્વારા (जीवभाव) ચૈતન્યરૂપ જીવભાવને (उवदसेतीति वत्तव्व सिया) પ્રકટ કરે છે, એવું કહી શકાય ખરૂં ? ઉપર જીવના જે પાંચ વિશેષણ કહ્યાં છે તે સિદ્ધજીવને લાગૂ પડતાં નથી. કારણ કે સિદ્ધજીવોમાં ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓનો અભાવ હોય છે જ્યા સુધી જીવનો સંસાર સાથે સંબંધ હોય ત્યા સુધી જ એ ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓ જીવમા જોવા મળે છે. ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓથી યુક્ત હોવું એજ જીવનું સંસારીપણુ છે. જ્યાં ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓનો અસદ્ભાવ છે, એવુ સ્થાન મોક્ષ છે. મોક્ષમાં ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓ હોતી નથી. જો ત્યા પણ તેમનો સદ્ભાવ માનવામા આવે તો મોક્ષ એક પારિભાષિક શબ્દ જ મનાય તેથી એવું જ માનવુ યોગ્ય છે કે મોક્ષમા ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓ નથી-સંસારમાં જે તે ક્રિયાઓનું અસ્તિત્વ છે. કારણ કે સંસાર સાથેના સબંધથી સંસારી જીવોમા તે ક્રિયાઓનો સદ્ભાવ હોય છે તો એ ક્રિયાઓથી યુક્ત સંસારી જીવ (आयभावे णं) ઉત્થાન શયન, ગમન, ભોજન આદિરૂપ આત્મપરિણામ દ્વારા (जीवभावं उवदंसेति) જીવભાવ રૂપ ચૈતન્યને

के अनुसार उन २ शक्तिके अशों को जितने रूप में प्राप्त कर सकता है -प्राप्त करता है। मतिज्ञान में भी इसी तरह के शक्ति के अंश अनन्त होते हैं। छद्मस्थान जीवों की बुद्धिगम्य ये अंश नहीं हुआ करते हैं-इन्हें तो सर्वज्ञ ही साक्षात् जानता है। हां अनुमानादि द्वारा छद्मस्थ भी इन्हें परोक्षरूप से जान सकता है ये मतिज्ञान के अनंत शक्त्यांश ही यहां पर्यवशब्द से गृहीत हुए हैं। ये सर्वज्ञ प्रज्ञाकृत माने गये हैं। जीव जब उत्थान आदि क्रियाओं के करनेमें व्यापारित होता है तब वह उन क्रियाओं द्वारा अपने स्वरूपभूत उपयोग स्वरूप को प्रकट करता है यह उपयोगरूप उसका अनेक धाराओं में बहता रहता है कभी वह मतिज्ञान रूप में तो कभी वह श्रुतज्ञान रूप में कभी अवधिज्ञानरूप में तो कभी मनःपर्यय ज्ञानरूप में कभी केवलज्ञानरूप में तो कभी मतीअज्ञान आदि आदि अनेक रूप में संसारी जीव जब उत्थान, शयन आदि क्रियाओं में लगता है तब वह इन क्रियाओं के करते समय मतिज्ञान आदि की अनन्त पर्यायों में से किसी न किसी एक पर्याय को धारण किये हुए रहता है। इससे यह बात प्रकट होती है कि वह संसारी जीव क्रियाओं के करते समय अपने स्वरूप भूत उपयोग के अं

અનંત હોય છે પ્રત્યેક જીવ તે તે આવારક કર્મના ક્ષયોપશમ આદિ અનુસાર તે તે શક્તિના અંશને જેટલા પ્રમાણમા પ્રાપ્ત કરી શકાય તેટલા પ્રમાણમાં પ્રાપ્ત કરે છે મતિજ્ઞાનમાં પણ તે પ્રકારની શક્તિના અંશ અનંત હોય છે એ અંશ છદ્મસ્થજીવોને માટે તો બુદ્ધિગમ્ય હોતા નથી-તેમને તો સર્વજ્ઞ જ સાક્ષાત્ જાણે છે હા, અનુમાન આદિ દ્વારા છદ્મસ્થ પણ તેમને પરોક્ષરૂપે જાણી શકે છે મતિજ્ઞાનનામે અનંત શક્તિ અંશોને જ અહીં (પર્યવ) પદથી ગ્રહણ કરવામાં આવ્યા છે એ સર્વજ્ઞ પ્રજ્ઞાકૃત મનાયા છે. જીવ જ્યારે ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓ કરવામા પ્રવૃત્ત બન્યો હોય છે ત્યારે તે ક્રિયાઓ દ્વારા તે પોતાના સ્વરૂપભૂત ઉપયોગ સ્વરૂપને પ્રકટ કરે છે તેનું તે ઉપયોગરૂપ સ્વરૂપ અનેક ધારાઓમાં વહેતું રહે છે-ક્યારેક મતિજ્ઞાનરૂપે તો ક્યારેક શ્રુતજ્ઞાન રૂપે ક્યારેક અવધિજ્ઞાન રૂપે તો ક્યારેક મન:પર્યય જ્ઞાન રૂપે, ક્યારેક કેવળજ્ઞાન રૂપે તો ક્યારેક મતિ અજ્ઞાન આદિ અનેક રૂપે તે વહેતું રહે છે સંસારી જીવ જ્યારે ઉત્થાન શયન આદિ ક્રિયાઓમા પ્રવૃત્ત થાય છે ત્યારે તે ક્રિયાઓ કરતી વખતે મતિજ્ઞાન આદિની અનંત પર્યાયોમાંથી કોઈને કોઈ એક પર્યાયને ધારણ કરતો રહે છે તેથી એ વાત પ્રકટ થાય છે કે તે સંસારીજીવ ક્રિયાઓ કરતી વખતે પોતાના સ્વરૂપભૂત ઉપયોગના મતિજ્ઞાન આદિની અનંત પર્યાયોમાંથી

आत्मभावेन जीवभावमुपदर्शयतीत्यत्र कारणज्ञानाय भवतीति पुनर्गौतमः प्रश्नयति 'से केणट्ठेणं' इत्यादि-" से केणट्ठेणं जाव वत्तव्वं सिया " तत्केनार्थेन यावत् वक्तव्यं स्यात्? भगवानाह--'गोयमा' इत्यादि. हे गौतम! " जीवेणं " जीवः खलु 'अणंताणं आभिणिबोहियणाणपज्जवाणं' अनन्तानाम् आभिनिबोधिकज्ञानपर्यवाणाम् - मतिज्ञानपर्यवाणामित्यर्थः पर्यवाःसर्वज्ञप्रज्ञाकृता विभागाः परिच्छेदास्ते च परिच्छेदा अनन्ताः सन्ति-आभिनिबोधिकज्ञानस्य तस्मात्

दिखाता है ऐसा यह कथन कारणज्ञान के लिये प्रकट किया गया है। तात्पर्य यह-कि आत्मा अतीन्द्रिय पदार्थ है वह किसी भी इन्द्रिय से एवं क्षायोपशमिक ज्ञान से गम्य नहीं हो सकता है। अतःइन परिणामों का कर्त्ता जो आत्मा है उसका ज्ञान इन परिणामों द्वारा हो जाता है। इन परिणामों का जो कर्त्ता है वही उन परिणामों का कारण होता है। गौतमस्वामी पुनः प्रभुसे पूछते है (से केणट्ठेणं जाव वत्तव्वं सिया) हे भदन्त! आप ऐसा किस कारणसे कहते हैं कि जीव आत्मभाव द्वारा जीवभावको प्रकट करता है ऐसा कहा जा सकता है? इसका उत्तर देते हुए प्रभु गौतम से कहते हैं-(गोयमा!) हे गौतम! (जीवेणं) जीव (अणंताणं) अनन्त (अभिणिबोहिय नाणपज्जवाणं) आभिनिबोधिकज्ञान-मतिज्ञान की पर्यायों के सर्वज्ञप्रतिज्ञाद्वारा किये गये विभागों के उपयोग को प्राप्त करता है। तात्पर्य यह है कि ज्ञान में शक्ति के अंश अनन्त हुआ करते हैं। प्रत्येक जीव तत्तत् आवारक कर्म के क्षयोपशम आदि

ચૈતન્યને બતાવે છે, એવું આ કથન કારણુજ્ઞાન ને માટે પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે-આત્મા અતીન્દ્રિય પદાર્થ છે તેને કોઈ પણ ઇન્દ્રિયથી કે ક્ષાયોપશમિક જ્ઞાનથી ઓળખી શકાતો નથી તેથી તે પરિણામોનો કર્ત્તા જે આત્મા છે તેનું જ્ઞાન એ પરિણામો દ્વારા જ થાય છે. તે પરિણામોનો જે કર્ત્તા છે, તે જ તે પરિણામોનુ કારણ હોય છે.

ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુએ જે ઉત્તર આપ્યો તેનું કારણ જાણવાને માટે પ્રશ્ન કરે છે- (से केणट्ठेणं जाव वत्तव्वं सिया) હે ભદન્ત! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે "જીવ આત્મપરિણામોદ્વારા ચૈતન્યભાવ પ્રકટ કરે છે એમ કહેવામા કોઇ હરકત નથી? તેનો ઉત્તર મહાવીરપ્રભુ આ પ્રમાણે આપે છે (गोयमा!) હે ગૌતમ (जीवेणं) જીવ (अणंताणं) અનંત (आभिणिबोहियनाणपज्जवाण) આભિનિબોધિક જ્ઞાન (મતિજ્ઞાન)ની પર્યાયોના સર્વજ્ઞપણાદ્વારા કરાયેલા વિભાગોના ઉપયોગને પ્રાપ્ત કરે છે. કહેવાનુ તાત્પર્ય એ છે કે જ્ઞાનમા શક્તિના અંશ

अथ लोकस्थितिवर्णनम्—

पूर्वं लोकान्तादिलोकपदार्थानां निरूपणं कृतं, तत्प्रस्तावात्साम्प्रतं लोकस्थिति प्ररूपयति—'भंते त्ति' इत्यादि।

मूलम्—भंते त्ति भगवं गोयमे समणं जाव एवं वयासी—कइविहा णं भंते! लोयट्ठिई पन्नत्ता?, गोयमा! अट्ठविहा लोयट्ठिई पन्नत्ता, तं जहा—आगासपइट्ठिए वाए, वायपइट्ठिए उदही, उदहिपइट्ठिया पुढवी, पुढविपइट्ठिया तसा थावरा पाणा, अजीवा जीवपइट्ठिया, जीवा कम्मपइट्ठिया, अजीवा जीवसंगहिया, जीवा कम्मसंगहिया। से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ अट्ठविहा, जाव जीवा कम्मसंगहिया?, गोयमा! से जहा णामए केइ पुरिसे वत्थिमाडोवेइ, वत्थिमाडोवेत्ता उप्पिं सितं बंधइ, बंधित्ता मज्झेणं गंठिं बंधइ, बंधित्ता उवरिल्लं गंठिं मुयइ, मुइत्ता, उवरिल्लं देसं वामेइ, उवरिल्लं देसं वामेत्ता, उवरिल्लं देसं आउयायस्स पूरेइ, पूरित्ता उप्पिं सितं बंधइ, बंधित्ता मज्झिल्लगंठिं मुयइ, से णूणं गोयमा! आउयाए तस्स वाउयायस्स उप्पिं उवरिमतले चिट्ठइ?, हंता चिट्ठइ, से तेणट्ठेणं जाव जीवा कम्मसंगहिया। से जहा वा केइ पुरिसे वत्थिं आडोवेइ आडोवित्ता कडीए बंधइ, बंधित्ता अत्थाहमतारमपोरुसियंसि उदगंसि ओगाहेज्जा, से णूणं गोयमा! से पुरिसे तस्स आउयायस्स उवरिमतले चिट्ठइ?, हंता चिट्ठइ, एवं वा अट्ठविहा लोयट्ठिई पन्नत्ता, जाव जीवा कम्मसंगहिया ॥ सू० ५ ॥

छाया—भदन्त इति भगवान् गौतमः श्रमणं यावत् एवमवादीत्—कतिविधा भदन्त! लोकस्थितिः प्रज्ञप्ता?, गौतम! अष्टविधा लोकस्थितिः प्रज्ञप्ता, तद्यथा—आकाशप्रतिष्ठितो वातः१, वातप्रतिष्ठित उदधिः२, उदधिप्रतिष्ठिता [illegible]३,

आभिनिबोधिकज्ञानपर्यवा अनन्ता इति भावः "एवं सुयणाणपज्जवाणं" एवं श्रुतज्ञानपर्यवाणाम् अनन्तानामित्यस्य सर्वत्र सम्बन्धस्तेनाऽनन्तानां श्रुतज्ञानपर्यवाणामित्यर्थः एवमेवाऽवधिज्ञानादावपि योजनीयम् "ओहिणाणपज्जवाणं" अवधिज्ञानपर्यवाणामनन्तानाम् "मण पज्जवणाणपज्जवाणं" मनःपर्यवज्ञानपर्यवाणाम्-"केवलणाणपज्जवाणं" केवलज्ञानपर्यवाणाम् "मइ अन्नाणपज्जवाणं" मत्यज्ञानपर्यवाणाम् "सुअअण्णाण पज्जवाणं" श्रुताज्ञान पर्यवाणाम् "विभंगण्णाण पज्जवाणं' विभंगज्ञानपर्यवाणाम्-'चक्खुदंसणपज्जवाणं' चक्षुर्दर्शनपर्यवाणाम्. 'अचक्खुदंसणपज्जवाणं' अचक्षुदर्शनपर्यवाणाम् 'ओहिदंसणपज्जवाणं' अव-

---

शरूप मतिज्ञान आदि के अनन्त अंशों में से किसी एक अंश को प्रकट करता रहता है ऐसा कहने में कोई बाधा नहीं है इसी तरह का विवेचन श्रुतज्ञान आदि के विषय में भी समझना चाहिये। (अनन्त) इस पद का संबंध यहां सब जगह कर लेना चाहिये। तथा च-(एवं सुयणाणपज्जवाणं) इसी प्रकार से वह संसारी जीव अनन्त श्रुतज्ञान की पर्यायों के उपयोग को-(ओहिनाणपज्जवाणं) अवधिज्ञान की अनन्तपर्यायों के (मणपज्जवणाणपज्जवाणं) मनः पर्यवज्ञान की अनन्तपर्यायों के (केवलणाणपज्जवाणं) केवलज्ञान की अनन्त पर्यायों के (मई अन्नाणपज्जवाणं) मत्यज्ञान की अनन्तपर्यायों के (सुय अण्णाणपज्जवाणं) श्रुताज्ञान की अनन्तपर्यायों के, (विभंगणाणपज्जवाणं) विभंगज्ञान की अनन्तपर्यायों के (चक्खुदंसणपज्जवाणं) चक्षुदर्शन की अनंतपर्यायों के (अचक्खुदंसणपज्जवाणं) अचक्षुर्दर्शन की अनंतपर्यायों

કોઇ એક અંશને પ્રકટ કરતો રહે છે-એવું કહેવામાં કોઇપણ પ્રકારનો વાંધો નથી. શ્રુતજ્ઞાન આદિના વિષયમાં પણ એજ પ્રકારનું કથન સમજી લેવું "अनन्त" અનન્ત પદનો સંબંધ અહીં બધી જગ્યાએ કરી લેવો જોઇએ. વળી (एवं सुयणाणपज्जवाणं), તે સંસારી જીવ અનંત શ્રુતજ્ઞાનની પર્યાયોના ઉપયોગને, (ओहिनाणपज्जवाणं) અવધિજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના ઉપયોગને, (मणपज्जवणाणपज्जवाणं) મનઃપર્યવજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના ઉપયોગને) (केवलणाणपज्जवाणं) કેવળજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના ઉપયોગને પ્રાપ્ત કરે છે, અને તે જીવ (मई अण्णाणपज्जवाणं) મતિજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના (सुयअण्णाणपज्जवाणं) શ્રુતઅજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના, (विभंगणाण पज्जवाणं) વિભંગજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના, (चक्खुदंसणपज्जवाणं) ચક્ષુદર્શનની અનંત પર્યાયોના, (अचक्खुदंसणपज्जवाणं) અચક્ષુદર્શનની અનંત પર્યાયોના,

के अनुसार उन २ शक्तिके अशों को जितने रूप में प्राप्त कर सकता है -प्राप्त करता है। मतिज्ञान में भी इसी तरह के शक्ति के अ श अनन्त होते हैं। छद्मस्थानं जीवों की बुद्धिगम्य ये अश नहीं हुआ करते हैं-इन्हें तो सर्वज्ञ ही साक्षात् जानता है। हां अनुमानादि द्वारा छद्मस्थ भी इन्हें परोक्षरूप से जान सकता है ये मतिज्ञान के अनंत शक्त्यांश ही यहां पर्यवशब्द से गृहीत हुए हैं। ये सर्वज्ञ प्रज्ञाकृत माने गये हैं। जीव जब उत्थान आदि क्रियाओं के करनेमें व्यापारित होता है तब वह उन क्रियाओं द्वारा अपने स्वरूपभूत उपयोग स्वरूप को प्रकट करता है यह उपयोगरूप उसका अनेक धाराओं में बहता रहता है कभी वह मतिज्ञान रूप में तो कभी वह श्रुतज्ञान रूप में कभी अवधिज्ञानरूप में तो कभी मनःपर्यय ज्ञानरूप में कभी केवलज्ञानरूप में तो कभी मतीअज्ञान आदि आदि अनेक रूप में संसारी जीव जब उत्थान, शयन आदि क्रियाओं में लगता है तब वह इन क्रियाओं के करते समय मतिज्ञान आदि की अनन्त पर्यायों में से किसी न किसी एक पर्याय को धारण किये हुए रहता है। इससे यह बात प्रकट होती है कि वह संसारी जीव क्रियाओं के करते समय अपने स्वरूप भूत उपयोग के अं

અનંત હોય છે પ્રત્યેક જીવ તે તે આવારક કર્મના ક્ષયોપશમ આદિ અનુસાર તે તે શક્તિના અંશને જેટલા પ્રમાણમાં પ્રાપ્ત કરી શકાય તેટલા પ્રમાણમાં પ્રાપ્ત કરે છે મતિજ્ઞાનમાં પણ તે પ્રકારની શક્તિના અંશ અનંત હોય છે એ અંશ છદ્મસ્થજીવોને માટે તો બુદ્ધિગમ્ય હોતા નથી-તેમને તો સર્વજ્ઞ જ સાક્ષાત્ જાણે છે હા, અનુમાન આદિ દ્વારા છદ્મસ્થ પણ તેમને પરોક્ષરૂપે જાણી શકે છે મતિજ્ઞાનનાએ અનંત શક્તિ અંશોને જ અહીં (પર્યવ) પદથી ગ્રહણ કરવામાં આવ્યા છે એ સર્વજ્ઞ પ્રજ્ઞાકૃત મનાયા છે જીવ જ્યારે ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓ કરવામાં પ્રવૃત્ત બન્યો હોય છે, ત્યારે તે ક્રિયાઓ દ્વારા તે પોતાના સ્વરૂપભૂત ઉપયોગ સ્વરૂપને પ્રકટ કરે છે તેનું તે ઉપયોગરૂપ સ્વરૂપ અનેક ધારાઓમાં વહેતું રહે છે-ક્યારેક મતિજ્ઞાનરૂપે તો ક્યારેક શ્રુતજ્ઞાન રૂપે ક્યારેક અવધિજ્ઞાન રૂપે તો ક્યારેક મનઃપર્યય જ્ઞાન રૂપે, ક્યારેક કેવલજ્ઞાન રૂપે તો ક્યારેક મતિ અજ્ઞાન આદિ અનેક રૂપે તે વહેતું રહે છે સંસારી જીવ જ્યારે ઉત્થાન, શયન આદિ ક્રિયાઓમાં પ્રવૃત્ત થાય છે ત્યારે તે ક્રિયાઓ કરતી વખતે તે મતિજ્ઞાન આદિની અનંત પર્યાયોમાંથી કોઇને કોઇ એક પર્યાયને ધારણ કરેલો રહે છે તેથી એ વાત પ્રકટ થાય છે કે તે સંસારીજીવ ક્રિયાઓ કરતી વખતે પોતાના સ્વરૂપભૂત ઉપયોગના અંશરૂપ મતિજ્ઞાન આદિના અનંત અંશોમાંથી

आभिनिबोधिकज्ञानपर्यवा अनन्ता इति भावः " एवं सुयणाणपज्जवाणं" एवं श्रुतज्ञानपर्यवाणाम् अनन्तानामित्यस्य सर्वत्र सम्बन्धस्तेनाऽनन्तानां श्रुतज्ञानपर्यवाणामित्यर्थः एवमेवाऽवधिज्ञानादावपि योजनीयम् "ओहिणाणपज्जवाणं" अवधिज्ञानपर्यवाणामनन्तानाम् " मण पज्जवणाणपज्जवाणं " मनःपर्यवज्ञानपर्यवाणाम्–" केवलणाणपज्जवाणं " केवलज्ञानपर्यवाणाम् " मइ अन्नाणपज्जवाणं " मत्यज्ञानपर्यवाणाम् "सुअअण्णाण पज्जवाणं" श्रुताज्ञान पर्यवाणाम् " विभंगण्णाण पज्जवाणं ' विभंगज्ञानपर्यवाणाम्–' चक्खुदंसणपज्जवाणं ' चक्षुर्दर्शनपर्यवाणाम्. ' अचक्खुदंसणपज्जवाणं ' अचक्षुर्दर्शनपर्यवाणाम् ' ओहिदंसणपज्जवाणं ' अव-

शरूप मतिज्ञान आदि के अनन्त अंशों में से किसी एक अंश को प्रकट करता रहता है ऐसा कहने में कोई बाधा नहीं है इसी तरह का विवेचन श्रुतज्ञान आदि के विषय में भी समझना चाहिये। (अनन्त) इस पद का संबंध यहां सब जगह कर लेना चाहिये। तथा च–(एवं सुयणाणपज्जवाणं) इसी प्रकार से वह संसारी जीव अनन्त श्रुतज्ञान की पर्यायों के उपयोग को–(ओहिनाणपज्जवाणं) अवधिज्ञान की अनन्तपर्यायों के (मणपज्जवणाणपज्जवाणं) मनः पर्यवज्ञान की अनन्तपर्यायों के (केवलणाणपज्जवाणं) केवलज्ञान की अनन्त पर्यायों के (मई अन्नाणपज्जवाणं) मत्यज्ञान की अनन्तपर्यायों के (सुय अण्णाणपज्जवाणं) श्रुताज्ञान की अनन्तपर्यायों के, (विभंगणाणपज्जवाणं) विभंगज्ञान की अनन्तपर्यायों के (चक्खुदंसणपज्जवाणं) चक्षुदर्शन की अनंतपर्यायों के (अचक्खुदंसणपज्जवाणं) अचक्षुदर्शन की अनंतपर्यायों

કોઇ એક અંશને પ્રકટ કરતા રહે છે-એવું કહેવામાં કોઇપણ પ્રકારનો વાંધો નથી, શ્રુતજ્ઞાન આદિના વિષયમાં પણ એજ પ્રકારનું કથન સમજી લેવું "अनन्त" અનન્ત પદનો સંબંધ અહીં બધી જગ્યાએ કરી લેવો જોઇએ. વળી (एवं सुयणाणपज्जवाणं), તે સંસારી જીવ અનંત શ્રુતજ્ઞાનની પર્યાયોના ઉપયોગને, (ओहिनाणपज्जवाणं) અવધિજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના ઉપયોગને, (मणपज्जवणाणपज्जवाणं) મનઃપર્યવજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના ઉપયોગને (केवलणाणपज्जवाणं) કેવળજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના ઉપયોગને પ્રાપ્ત કરે છે, અને તે જીવ (मई अण्णाणपज्जवाणं) મતિઅજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના (सुयअण्णाणपज्जवाणं) શ્રુતઅજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના, (विभंगणाण पज्जवाणं) વિભંગજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના, (चक्खुदंसणपज्जवाणं) ચક્ષુદર્શનની અનંત પર્યાયોના, (अचक्खुदंसणपज्जवाणं) અચક્ષુદર્શનની અનંત પર્યાયોના

धिदर्शनपर्यवाणाम् ' केवलदसणपज्जवाणं ' केवलदर्शनपर्यवाणम् ' उवओगं गच्छइ ' उपयोग गच्छति, उपयोगलक्षणजीवभाव उत्थानादौ आत्मभावेन वर्त्तमान इति वक्तव्यम् । ननु यदि उत्थानादि आत्मपरिणामे वर्त्तमानो जीव आभिनिबोधिकज्ञानादिस्वरूपं माप्नोति तत् किमेतावदेव जीवभाव चैतन्य मुपदर्शयतीति वक्तव्य स्यादित्याकाङ्क्षायामाह–' उपयोग ' इत्यादि ' उपयोग

के (ओहिदसणपज्जवाणं) अवधिदर्शन की अनन्तपर्यायों के (केवल दंसणपज्जवाणं) केवलदर्शन की अनन्तपर्यायों के (उवओगं गच्छइ) उपयोग को पाता है । इस कथन का भाव इस प्रकार से समझना चाहिये कि सिद्धान्त में उपयोग मूलतः दो प्रकार का कहा गया है १ दर्शनोपयोग और दूसरा ज्ञानोपयोग । (उपयोगो लक्षणम्) के अनुसार जीव का स्वरूप उपयोग है । चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन और केवलदर्शन के भेदसे दर्शनोपयोग चार प्रकार का होता है, और मति ज्ञान श्रुतज्ञान अवधिज्ञान, मन पर्यवज्ञान और केवलज्ञान के भेद से तथा मति अज्ञान, श्रुताज्ञान और विभंगज्ञान इनतीन अज्ञानों के भेद से ज्ञानोपयोग आठ प्रकार का होता है उपयोग जीव में ही पाया जाता है, अजीव में नहीं । अतः जब जीव उत्थान आदि क्रियाओं वाला होता है तब वह इन उपयोगों में से कोई न कोई उपयोग वाला रहता है ।

शंका–केवल दर्शन और केवलज्ञान ये उपयोग तो अर्हतकेवली एवं

(ओहिदंसण पज्जवाण) અવધિ–દર્શનની અનંત પર્યાયોના અને (केवलदंसणपज्जवाण) કેવળ દર્શનની અનંત પર્યાયોના (उवओग गच्छइ) ઉપયોગને પ્રાપ્ત કરે છે આ કથનનો ભાવાર્થ આ પ્રમાણે સમજવો જોઈએ-સિદ્ધાંતમાં ઉપયોગના મુખ્ય બે પ્રકાર કહ્યા છે-(૧) દર્શનોપયોગ (૨) જ્ઞાનોપયોગ (उपयोगो लक्षणम्) જીવનું લક્ષણ ઉપયોગ છે. ચક્ષુદર્શન, અચક્ષુદર્શન અવધિદર્શન અને કેવળ દર્શનના ભેદથી દર્શનોપયોગના ચાર પ્રકાર છે અને જ્ઞાનોપયોગના નીચે પ્રમાણે આઠ ભેદ છે-(૧) મતિજ્ઞાન, (૨) શ્રુતજ્ઞાન, (૩) અવધિજ્ઞાન, (૪) મનઃપર્યવજ્ઞાન (૫) કેવળ જ્ઞાન, (૬) મતિ અજ્ઞાન (૭) શ્રુત અજ્ઞાન, અને (૮) વિભંગજ્ઞાન ઉપયોગનું લક્ષણ જીવમાં જ હોય છે- અજીવમાં હોતું નથી. તેથી જ્યારે જીવ ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓ વાળો હોય છે ત્યારે તે ઉપરોક્ત ઉપયોગોમાંથી કોઈ ને કોઈ ઉપયોગવાળો રહે છે.

શંકા–કેવળદર્શન અને કેવળજ્ઞાન, એ બે ઉપયોગ તો અર્હંત કેવલી અને

लक्खणेणं जीवे से ' उपयोगलक्षणः खलु जीवः सः उपयोगो ज्ञानं तदेव लक्षणं स्वरूपं यस्य स उपयोगलक्षणः उपयोगस्वभाव एव – जीवः उपयुज्यते वस्तुपरिच्छेदम्प्रति व्यापार्यते जीवोऽनेनेति उपयोगः अत उपयोगस्वरूपं जीवभाव

सिद्ध परमात्मा में पाये जाते हैं पर वहां उत्थान आदि क्रियाएँ तो पाई नहीं जाती, फिर यह बात कैसे मानी जा सकती है कि उत्थनादि क्रियाओं में वर्तता जीव उपयोग को प्राप्त करता है।

समाधान—अर्हत अवस्थामें तो उत्थानादि क्रियाएँ शरीर के सद्भाव से रहती ही हैं-इसमें तो कोई बाधा ही नहीं है। अब रही सिद्धपरमात्माकी बातको सिद्धोंमें ये क्रियाएँ नहीं पाई जानी हैं-क्यों कि वे अशरीरी हैं। परन्तु वहां इन दो उपयोगों के होने में बाधा ही कौनसी है। बाधा तो कब कही जा सकती कि जब ऐसा कहा गया होता कि उपयोगके रहने पर उत्थानादि क्रियाएँ होती हैं। यहां तो यह प्रकट किया गया है कि उत्थानादिक्रियाओं के सद्भाव में जीव इन उपयोगों में से कोई न कोई उपयोग को प्राप्त करता है। शंका–उत्थान आदिरूप आत्मपरिणाम में वर्तमान जीव आभिनिबोधिक ज्ञानादिरूप उपयोग को प्राप्त करता है तो क्या वह इससे ही अपने चैतन्य को प्रकाशित करता है ऐसा कहा जा सकता है तो इस शंका का समाधान इस प्रकार से है (उवओगलक्ख-

---

સિદ્ધ પરમાત્માઓમાંજ હોય છે; પણ તેઓમા ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓનો સદ્ભાવ તો હોતો નથી. તો પછી એ વાત કેવી રીતે માની શકાય કે ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓ કરતો જીવ ઉપયોગને પ્રાપ્ત કરે છે?

સમાધાન-અર્હંત અવસ્થામાં તો શરીરનો સદ્ભાવ હોવાથી ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓ રહે છે જ– તેમાં તો કોઇ હરકત નથી. હવે રહી સિદ્ધ પરમાત્માઓની વાત. સિદ્ધ પરમાત્માઓ તો તે ક્રિયાઓ કરતા નથી, કારણ કે તેમને શરીર જ હોતા નથી. પણ તેમનામાં એ બે ઉપયોગોનુ અસ્તિત્વ હોવામાં શી હરકત છે ? આ કથનમાં વાંધો તો ત્યારે જ નડે કે જ્યારે એવું કહેવામાં આવ્યું હોય કે ઉપયોગના સદ્ભાવમાં ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓ થાય છે અહીં તો એવુ કહેવામાં આવ્યુ છે કે ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓના સદ્ભાવમા જીવ એ ઉપયોગોમાથી કોઇ ઉપયોગને પ્રાપ્ત કરે છે

શંકા—ઉત્થાનાદિ રૂપ આત્મપરિણામમાં પ્રવૃત્ત જીવ આભિનિબોધિક જ્ઞાનાદિરૂપ ઉપયોગને પ્રાપ્ત કરે છે. તો શું તેની મદદથી જ તે પોતાના ચૈતન્યને પ્રકટ કરે છે?

धिदर्शनपर्यवाणाम् 'केवलदंसणपज्जवाणं' केवलदर्शनपर्यवाणम् 'उवओगं गच्छइ' उपयोग गच्छति, उपयोगलक्षणजीवभावः उत्थानादौ आत्मभावेन वर्तमान इति वक्तव्यम्। ननु यदि उत्थानादि आत्मपरिणामे वर्तमानो जीव आभिनिबोधिकज्ञानादिस्वरूपं प्राप्नोति तत् किमेतावतैव जीवभावं चैतन्य मुपदर्शयतीति वक्तव्यं स्यादित्याशङ्कायामाह-'उपयोग' इत्यादि 'उपयोग

के (ओहिदसणपज्जवाणं) अवधिदर्शन की अनन्तपर्यायों के (केवल दंसणपज्जवाणं) केवलदर्शन की अनन्तपर्यायों के (उवओगं गच्छइ) उपयोग को पाता है। इस कथन का भाव इस प्रकार से समझना चाहिये कि सिद्धान्त में उपयोग मूलतः दो प्रकार का कहा गया है १ दर्शनोपयोग और दूसरा ज्ञानोपयोग। (उपयोगो लक्षणम्) के अनुसार जीव का स्वरूप उपयोग है। चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन और केवलदर्शन के भेदसे दर्शनोपयोग चार प्रकार का होता है, और मति ज्ञान श्रुतज्ञान अवधिज्ञान, मनःपर्यवज्ञान और केवलज्ञान के भेद से तथा मति अज्ञान, श्रुताज्ञान और विभंगज्ञान इनतीन अज्ञानों के भेद से ज्ञानोपयोग आठ प्रकार का होता है उपयोग जीव में ही पाया जाता है, अजीव में नहीं। अतः जब जीव उत्थान आदि क्रियाओं वाला होता है तब वह इन उपयोगों में से कोई न कोई उपयोग वाला रहता है।

शंका-केवल दर्शन और केवलज्ञान ये उपयोग तो अर्हतकेवली एवं

(ओहिदंसण पज्जवाण) અવધિ-દર્શનની અનંત પર્યાયોના અને (केवलदंसणपज्जवाण) કેવળ દર્શનની અનંત પર્યાયોના (उवओग गच्छइ) ઉપયોગને પ્રાપ્ત કરે છે આ કથનનો ભાવાર્થ આ પ્રમાણે સમજવો શાસ્ત્ર-સિદ્ધાંતમાં ઉપયોગના મુખ્ય બે પ્રકાર કહ્યા છે-(૧) દર્શનોપયોગ (૨) જ્ઞાનોપયોગ (उपयोगो लक्षणम्) જીવનું લક્ષણ ઉપયોગ છે. ચક્ષુદર્શન, અચક્ષુદર્શન અવધિદર્શન અને કેવળ દર્શનના ભેદથી દર્શનોપયોગના ચાર પ્રકાર છે અને જ્ઞાનોપયોગના નીચે પ્રમાણે આઠ ભેદ છે-(૧) મતિજ્ઞાન, (૨) શ્રુતજ્ઞાન, (૩) અવધિજ્ઞાન, (૪) મનઃપર્યવજ્ઞાન (૫) કેવળ જ્ઞાન, (૬) મતિ અજ્ઞાન (૭) શ્રુત અજ્ઞાન, અને (૮) વિભંગજ્ઞાન ઉપયોગનું લક્ષણ જીવમાં જ હોય છે-અજીવમાં હોતું નથી. તેથી જ્યારે જીવ ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓ વાળો હોય છે ત્યારે તે ઉપરોક્ત ઉપયોગોમાંથી કોઈ ને કોઈ ઉપયોગવાળો રહે છે.

શંકા-કેવળદર્શન અને કેવળજ્ઞાન, એ બે ઉપયોગ તો અર્હંત કેવળી અને

जे जीवपएसा, ते नियमा एगिंदियपएसा, जाव अणिंदियपएसा जे अजीवा ते दुविवहा पण्णत्ता। तं जहा रूवीय अरूवीय, जे रूवी ते चउव्विहा पणत्ता. तं जहा खंधा खंधदेसा खंधपएसा परमाणुपोग्गला. जे अरूवी ते पंचविहा पण्णत्ता. तं जहा-धम्मत्थिकाए. नो धम्मत्थिकायस्स देसे धम्मत्थिकायपएसा, अधम्मत्थिकाए नो अधम्मत्थिकायस्स देसे अधम्मत्थिकायस्स-पएसा अद्धासमये। अलोगागासेणं भंते ! किं जीवा पुच्छा तह चेव । गोयमा! नो जीवा जाव, नो अजीवप्पएसा, एगे अजीव प्पएसा एगे अजीवदव्वदेसे अगुरुलघुए अणंतेहिं अगुरुलहुय गुणेहिं संजुत्ते, सव्वागासे अणंतभागूणे ॥ सू० ४ ॥

छाया-कतिविधः खलु भदन्त ! आकाशः प्रज्ञप्तः? गौतम ! द्विविध आकाशः प्रज्ञप्तः तद्यथा लोकाकाशश्चालोकाकाशश्च । लोकाकाशे खलु भदन्त ! किं जीवाः

आकाशनिरूपण-

पूर्वप्रकरण में जीव का विचार किया गया है। जीव का आधार क्षेत्र आकाश है। अतःजीव का आधारभूत क्षेत्र होने के कारण अब सूत्रकार आकाश का निरूपण करते हैं-(कइविहेणं भंते! आगासे पण्णत्ते) इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(कइविहे णं भंते। आगासे पण्णत्ते?) हे भदन्त। आकाश कितने प्रकार का कहा गया है? (गोयमा!) हे गौतम! (आगासे दुविहे पण्णत्ते) आकाश दो प्रकार का कहा गया है। (तंजहा) वे दो प्रकार

આકાશ નિરૂપણ

પૂર્વ પ્રકરણમા જીવનો વિચાર કર્યો જીવનું આધાર ક્ષેત્ર આકાશ છે તેથી જીવનું નિરૂપણ કર્યા પછી તેના આધારરૂપ ક્ષેત્ર હોવાને કારણ સૂત્ર કાર હવે આકાશનુ નિરૂપણ કરે છે-(कइ विहेण भंते ! आगासे पण्णत्ते) ઈત્યાદિ

સૂત્રાર્થ-(कइविहेण भंते ! आगासे पण्णत्ते) હે ભદન્ત! આકાશ કેટલા પ્રકારનુ કહ્યુ છે? (गोयमा !) હે ગૌતમ ! (आगासे दुविहे पण्णत्ते) આકાશ બે પ્રકારના કહ્યાં છે. (तंजहा) તે બે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે-(लोयागासे य अलोयागासे य) (૧)

त्थानादि – आत्मभावेनोपदर्शयति 'स तेणट्ठेणं – एवं वुच्चइ गोयमा' अनेनार्थेन एवमुच्यते गौतम! 'जीवेणं स उट्ठाणे जाव–सकम्मे सिया' जीवः खलु सोत्थानो यावत् सकर्म्य स्यात् अत्र यावत्पदेन 'स कम्मे' इत्यारभ्य 'जीवभावं उवदंसेति' एतत्पर्यन्तस्य ग्रहण भवतीति भाव ॥ सू० ३ ॥

अथाकाशनिरूपणम्—अनन्तरपूर्व प्रकरणे जीवस्य विचारः कृतः स च जीव आकाशाधार इति जीवाऽऽकाशनिरूपणायाह–"कइ विहेणं" इत्यादि।

मूलम्—कइविहेण भंते! आगासे पण्णत्ते, गोयमा! दुविहे आगासे-पण्णत्ते–त जहा लोयागासे य अलोयागासे य, लोयागासे ण भंते! किं जीवा जीवदेसा, जीवप्पएसा अजीवा, अजीवदेसा, अजीवप्पएसा, गोयमा! जीवावि, जीवदेसावि, जीवप्पएसावि, अजीवावि, अजीवदेसावि, अजीवप्पएसावि, जे जीवा ते नियमा एगेंदिया, बेइंदिया, तेइंदिया, चउरिंदिया, पचिंदिया, अणिंदिया, जे जीवदेसा ते नियमा एगिंदियदेसा,

णं जीवे से एण्णट्ठेणं) जीव का लक्षण उपयोग है–ज्ञान है क्यों कि इसके द्वारा ही यह वस्तुपरिच्छेद के प्रति व्यापृत किया जाता है–इस कारण वह उपयोग स्वरूप जीव भाव को उत्थान आदि आत्मभाव द्वारा प्रकट करता है। (तेणट्ठेण एवं वुच्चइ जीवेण स उट्ठाणे जाव सकम्म सिया) इस कारण ऐसा कहा है कि उत्थानक्रिया वाला जीव यावत् जीव भाव को प्रकट करता है ऐसा कहा जा सकता है। यहां यावत् पद से (सकम्मे) यहां से लेकर (जीवभाव उवदंसेति) यहां तक का पाठ ग्रहण किया गया है ॥ सू० ३ ॥

સમાધાન—(ઉવઓગલક્ખણે ણં જીવે સે એણટ્ઠેણ) જીવનું લક્ષણ ઉપયોગ છે–જ્ઞાન છે–કારણ કે તેના દ્વારા જ તેને વસ્તુ પરિચ્છેદ તરફ પ્રવૃત્ત કરાય છે–તે કારણે તે ઉપયોગરૂપ જીવભાવને ઉત્થાનાદિ આત્મભાવ દ્વારા પ્રકટ કરે છે (તેણટ્ઠેણં એવ વુચ્ચઇ જીવેણ સઉટ્ઠાણે જાવ સકમ્મ સિયા) તે કારણે એવું કહ્યું છે કે ઉત્થાનાદિ ક્રિયાવાળો જીવ પોતાના પરિણામો દ્વારા જીવભાવ સ્વરૂપ ચૈતન્ય પ્રકટ કરે છે અહીં (યાવત્) (પર્યન્ત) પદથી (સકમ્મે) થી લઈને (જીવભાવ ઉવદંસેતિ) પર્યન્તનો સૂત્ર પાઠ ગ્રહણ કરવામાં આવ્યો છે ॥સૂ. ૩॥

जे जीवपएसा, ते नियमा एगिंदियपएसा, जाव अणिंदियपएसा जे अजीवा ते दुविवहा पण्णत्ता। तं जहा रूवीय अरूवीय, जे रूवी ते चउव्विहा पणत्ता. तं जहा खंधा खंधदेसा खंधपएसा परमाणुपोग्गला. जे अरूवी ते पंचविहा पण्णत्ता. तं जहा-धम्मत्थिकाए. नो धम्मत्थिकायस्स देसे धम्मत्थिकायपएसा, अधम्मत्थिकाए नो अधम्मत्थिकायस्स देसे अधम्मत्थिकायस्स-पएसा अद्धासमये। अलोगागासेणं भंते ! किं जीवा पुच्छा तह चेव। गोयमा! नो जीवा जाव, नो अजीवप्पएसा, एगे अजीव प्पएसा एगे अजीवदव्वदेसे अगुरुलघुए अणंतेहिं अगुरुलहुय गुणेहिं संजुत्ते, सव्वागासे अणंतभागूणे ॥ सू० ४ ॥

छाया-कतिविधः खलु भदन्त ! आकाशः प्रज्ञप्तः? गौतम ! द्विविध आकाशः प्रज्ञप्तः तद्यथा लोकाकाशश्चालोकाकाशश्च । लोकाकाशे खलु भदन्त ! किं जीवाः

आकाशनिरूपण-

पूर्वप्रकरण में जीव का विचार किया गया है। जीव का आधार क्षेत्र आकाश है। अतःजीव का आधारभूत क्षेत्र होने के कारण अब सूत्रकार आकाश का निरूपण करते हैं-(कइविहेणं भंते ! आगासे पण्णत्ते) इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(कइविहे णं भंते। आगासे पण्णत्ते?) हे भदन्त। आकाश कितने प्रकार का कहा गया है ? (गोयमा!) हे गौतम! (आगासे दुविहे पण्णत्ते) आकाश दो प्रकार का कहा गया है। (तंजहा) वे दो प्रकार

આકાશ નિરૂપણ

પૂર્વ પ્રકરણમા જીવનો વિચાર કર્યો જીવનું આધાર ક્ષેત્ર આકાશ છે તેથી જીવનુ નિરૂપણ કર્યા પછી તેના આધારરૂપ ક્ષેત્ર હોવાને કારણ સૂત્ર કાર હવે આકાશનુ નિરૂપણ કરે છે-(कइ विहेणं भंते ! आगासे पण्णत्ते) ઈત્યાદિ

સૂત્રાર્થ-(कइविहेण भंते ! आगासे पण्णत्त) હે ભદન્ત ! આકાશ કેટલા પ્રકારનું કહ્યુ છે? (गोयमा !) હે ગૌતમ ! (आगासे दुविहे पण्णत्ते) આકાશ બે પ્રકારના કહ્યા છે. (तंजहा) તે બે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે-(लोयागासे य अलोयागासे य) (૧)

जीवदेशा जीवप्रदेशाः अजीवाः अजीवदेशाः अजीवप्रदेशाः? गौतम ! जीवा अपि जीवदेशा अपि जीवप्रदेशा अपि अजीवा अपि अजीव देशा अपि अजीवप्रदेशा अपि ये जीवास्ते नियमात् एकेन्द्रियाः द्वीन्द्रिया त्रीन्द्रियाश्चतुरिन्द्रियाः पञ्चेन्द्रिया अनिन्द्रियाः ये जीवदेशास्तेनियमात् एकेन्द्रियदेशाः यावदनिन्द्रियदेशा ये जीवप्र

आकाश के ये हैं-(लोयागासे य अलोयागासे य) एक लोकाकाश दूसरा अलोकाकाश। (लोयागासे णं भंते ! किं जीवा, जीवदेसा, जीवप्पएसा, अजीवा, अजीवदेसा, अजीवप्पएसा) हे भदन्त! लोकाकाश में जीव हैं? या जीव के देश है? अथवा कि जीवको प्रदेश हैं? अजीव है! या अजीव के देश है? अथवा कि अजीव के प्रदेश है? (गोयमा!) हे गौतम! (जीवा वि, जीवदेसा वि, जीवप्पएसा वि, अजीवा वि, अजीवदेसा वि, अजीवप्पएसा वि,) उस लोकाकाश में जीव भी हैं, जीवके देश भी हैं और जीव के प्रदेश भी हैं। अजीव भी हैं, अजीवके देश भी हैं, तथा अजीव के प्रदेश भी हैं। (जे जीवा ते नियमा एगिंदिया, बेइंदिया, तेइंदिया, चउरिंदिय, पंचिंदिया, अणिंदिया) जब ऐसा माना जाता है कि लोकाकाश में जीव हैं अर्थात लोकाकाश में जीव रहते हैं-तो जो जीव उस लोकाकाश में रहते हैं-वे जीव नियम से कोईतो एकइन्द्रिय वाले होते हैं कोई दो इन्द्रिय वाले होते हैं, कोई तीन इन्द्रिय वाले होते हैं, कई चार इन्द्रिय वाले होते हैं, कोई पांच इन्द्रिय वाले होते हैं और कोई अनिन्द्रिय-विना इन्द्रियों के होते हैं। (जे जीवदेसा ते नियमा ए

લોકાકાશ અને (૨) અલોકાકાશ. (लोयागासे णं भंते ! किं जीवा, जीव देसा, जीवप्पएसा अजीवा, अजीवदेसा, अजीवप्पएसा) હે ભદન્ત ! લોકાકાશમાં શું જીવો છે? કે જીવના દેશો છે? કે જીવનાપ્રદેશો છે? કે અજીવ છે? કે અજીવના દેશો છે? કે અજીવના પ્રદેશો છે? (गोयमा !) હે ગૌતમ ! (जीवा वि, जीवदेसा वि जीवप्पएसा वि, अजीवा वि अजीव देसावि अजीवप्पएसा वि) તે લોકાકાશમાં જીવો પણ છે, જીવના દેશ પણ છે, અને જીવના પ્રદેશ પણ છે, અજીવ પણ છે, અજીવના દેશ પણ છે અને અજીવના પ્રદેશ પણ છે (जे जीवा ते नियमा एगिंदिया, बेइंदिया, तेइंदिया, चउरिंदिया, पंचिंदिया, अणिंदिया) લોકાકાશમાં જે જીવો રહે છે તેમાંના કોઇ જીવ નિયમથી જ એક ઇન્દ્રિયવાળા હોય છે, કોઇ બે ઇન્દ્રિયોવાળા હોયછે, કોઇ ત્રણ ઇન્દ્રિયોવાળા હોય છે, કોઇચાર ઇન્દ્રિયોવાળા હોય છે કોઇ પાંચ ઇન્દ્રિયોવાળા હોય છે અને કોઇ અનિન્દ્રિય ઇન્દ્રિયો વિનાના હોય છે (जे जीवदेसा ते नियमा एगिंदियदेसा) લોકાકા

पृथिवीप्रतिष्ठिताः त्रसाः स्थावराः प्राणाः४, अजीवाजीवप्रतिष्ठिताः५, जीवाः कर्मप्रतिष्ठिताः६, अजीवाः जीवसंगृहीताः७, जीवाः कर्मसंगृहीताः८। तत्केनार्थेन भदंत! एवमुच्यते। अष्टविधा यावत् जीवाः कर्मसंगृहीताः, गौतम! तद्यथा नामकः कश्चित् पुरुषो वस्तिमाटोपयति. वस्तिमाटोप्योपरि सितं बध्नाति, बद्ध्वा मध्ये खलु ग्रन्थिं बध्नाति, बद्ध्वोपरितनां ग्रन्थिं मुञ्चति, मुक्त्वोपरितनं देशं वमयति उपरितनं देशं वमयित्वोपरितनं देशमप्कायेन पूरयति, पूरयित्वोपरि सितं बध्नाति, बद्ध्वा मध्यतनां ग्रन्थिं मुञ्चति, तन्नून गौतम! स अप्कायो वायुकायस्य उपरिमतले तिष्ठति?। हन्त तिष्ठति। तत्तेनार्थेन यावत् जीवाः कर्मसंगृहिताः।, तद्यथा वा कश्चित्पुरुषो वस्तिमाटोपयति,आटोप्य कट्यां बध्नाति,बद्ध्वाऽस्ताघाऽतारापौरुषेये उदकेऽवगाहेत, तद् नूनं गौतम! स पुरुषस्तस्याप्कायस्योपरिमतले तिष्ठति? हन्त तिष्ठति, एवं वाऽष्टविधा लोकस्थितिः प्रज्ञप्ता यावत् जीवाः कर्मसंगृहीताः ॥सू०५॥

टीका—'भंते त्ति' हे भदन्त इति संबोध्य 'भगवं गोयमे' भगवान् गौतमः 'समणं जाव' श्रमणं यावत्–अत्र यावच्छब्देन ' भगवं महावीरं वन्दइ नमंसइ वन्दित्ता नमंसित्ता णच्चासण्णे णाइदूरे सुस्सूसमाणे णमंसमाणे अभिमुहे विणएणं

लोकस्थितिवर्णन—

पहिले लोकान्त आदि लोक के पदार्थों का निरूपण सूत्रकार ने किया। अब वे उन्हींके संबधसे लोकस्थिति की प्ररूपणा करनेके निमित्त सूत्र कहते हैं—" भंते त्ति " इत्यादि। (भंते! त्ति) हे भदंत! ऐसा संबोधन करके (भगवं गोयमे) भगवान् गौतमने (समणं जाव एवं वयासी) श्रमण भगवान् महावीरसे यावत् ऐसा कहा। यहां सूत्र में जो यह " जाव " पद आया है उससे सूत्रकार ने " भगवं महावीरं वंदइ, नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता, णच्चासण्णे णाइदूरे सुस्सूसमाणे णमंसमाणे

લોકસ્થિતિવર્ણન

પહેલા લોકાન્ત વગેરે લોકના પદાર્થોનું નિરૂપણ કરીને સૂત્રકાર હવે તેમના સંબંધથી લોકસ્થિતિની પ્રરૂપણા કરવાને માટે સૂત્ર કહે છે. "भंते त्ति" ઇત્યાદિ

(भंते त्ति) હે ભગવન્! એવું સંબોધન કરીને (भगवं गोयमे) ભગવાન્ ગૌતમે (समणं जाव एवं वयासी) મહાવીરને આ પ્રમાણે કહ્યું ત્યાં સુધીનું કથન ગ્રહણ કરવું અહીં " यावत् " (પર્યન્ત) પદથી " भगवं महावीरं वंदइ, नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता, णच्चासण्णे णाइदूरे सुस्सूसमाणे णमंसमाणे

जीवदेशाः जीवप्रदेशाः अजीवाः अजीवदेशाः अजीवप्रदेशाः? गौतम ! जीवा अपि जीवदेशा अपि जीवप्रदेशा अपि अजीवा अपि अजीव देशा अपि अजीवप्रदेशा अपि ये जीवास्ते नियमात् एकेन्द्रियाः द्वीन्द्रिया त्रीन्द्रियाश्चतुरिन्द्रियाः पञ्चेन्द्रिया अनिन्द्रियाः ये जीवदेशास्तेनियमात् एकेन्द्रियदेशाः यावदनिन्द्रियदेशाः ये जीवप्र-

आकाश के ये हैं-(लोयागासे य अलोयागासे य) एक लोकाकाश दूसरा अलोकाकाश। (लोयागासे णं भंते ! किं जीवा, जीवदेसा, जीवप्पएसा, अजीवा, अजीवदेसा, अजीवप्पएसा) हे भदन्त ! लोकाकाश में जीव हैं? या जीव के देश है? अथवा कि जीवको प्रदेश हैं? अजीव हैं! या अजीव के देश है? अथवा कि अजीव के प्रदेश है? (गोयमा !) हे गौतम ! (जीवा वि, जीवदेसा वि, जीवप्पएसा वि, अजीवा वि, अजीवदेसा वि, अजीवप्पएसा वि,) उस लोकाकाश में जीव भी हैं, जीवके देश भी हैं और जीव के प्रदेश भी हैं। अजीव भी हैं, अजीवके देश भी हैं, तथा अजीव के प्रदेश भी हैं। (जे जीवा ते नियमा एगिंदिया, बेइंदिया, तेइंदिया, चउरिंदिय, पंचिंदिया, अणिंदिया) अब ऐसा माना जाता है कि लोकाकाश में जीव हैं अर्थात् लोकाकाश में जीव रहते हैं-तो जो जीव उस लोकाकाश में रहते हैं-वे जीव नियम से कोईतो एकइन्द्रिय वाले होते हैं, कोई दो इन्द्रिय वाले होते हैं, कोई तीन इन्द्रिय वाले होते हैं, कई चार इन्द्रिय वाले होते हैं, कोई पांच इन्द्रिय वाले होते हैं और कोई अनिन्द्रिय-विना इन्द्रियों के होते हैं। (जे जीवदेसा ते नियमा ए

લોકાકાશ અને (૨) અલોકાકાશ. (लोयागासेणं भंते ! किं जीवा, जीव देसा, जीवप्पएसा, अजीवा, अजीवदेसा,-अजीवप्पएसा) હે ભદન્ત ! લોકાકાશમાં શું જીવો છે ? કે જીવના દેશો છે ? કે જીવનાપ્રદેશો છે ? કે અજીવ છે ? કે અજીવના દેશો છે ? કે અજીવના પ્રદેશો છે ? (गोयमा !) હે ગૌતમ ! (जीवा वि, जीवदेस वि जीवप्पएसा वि, अजीवा वि अजीव देसावि अजीवप्पएसा वि) તે લોકાકાશમાં જીવો પણ છે, જીવના દેશ પણ છે, અને જીવના પ્રદેશ પણ છે, અજીવ પણ છે, અજીવના દેશ પણ છે અને અજીવના પ્રદેશ પણ છે (जे जीवा ते नियमा एगिंदिया, बेइंदिया, तेइंदिया, चउरिंदिया, पंचिंदिया, अणिंदिया) લોકાકાશમાં જે જીવો રહે છે તેમાંના કોઇ જીવ નિયમથી જ એક ઇન્દ્રિયવાળા હોય છે, કોઇ બે ઇન્દ્રિયોવાળા હોયછે, કોઈ ત્રણ ઇન્દ્રિયોવાળા હોય છે, કોઇચાર ઇન્દ્રિયોવાળા હોય છે કોઇ પાંચ ઇન્દ્રિયોવાળા હોય છે અને કોઇ અનિન્દ્રિય ઇન્દ્રિયો વિનાના હોય છે (जे जीवदेसा ते नियमा एगिंदियदेसा) લોકાકા

देशास्ते नियमात् एकेन्द्रियप्रदेशाः यावदनिन्द्रियप्रदेशाः ये अजीवास्ते द्विविधाः प्रज्ञप्ताः तद्यथा रूपिणश्चारूपिणश्च ये रूपिणस्ते चतुर्विधाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा स्कन्धाः स्कन्धदेशाः स्कन्धप्रदेशाः परमाणुपुद्गलाः येऽपि अरूपिणस्ते पञ्चविधाः प्रज्ञप्ताः तद्यथा धर्मास्तिकायो नो धर्मास्तिकायस्य देशः धर्मास्तिकायस्य प्रदेशाः अधर्मास्तिकायःनोऽधर्मास्तिकायस्य देशः अधर्मास्तिकायस्य प्रदेशाः अद्धासमयः।

गिंदियदेसा) लोकाकाश में जो जीव के देश हैं वे नियम से एकेन्द्रिय जीव के देश हैं (जाव अणिंदिय देसा) यवत् इन्द्रिय विना के जीव के देश हैं। (जे अजीवा ते दुविहा पण्णत्ता) लोकाकाश में जो अजीव हैं वे दो प्रकार के कहे गये हैं-(तंजहा) जैसे-(रूवि य अरूवि य) एकरूपी अजीव और दूसरा अरूपी अजीव। (जे रूवी ते चउव्विहा पण्णत्ता) जो रूपी अजीव हैं वे चार प्रकार के कहे गये हैं (तंजहा) जैसे-(खधा, खंधदेसा, खंधपएसा, परमाणुपोग्गला) स्कंध, स्कंधदेश, स्कन्धप्रदेश और परमाणुपुद्गल (जे अरूवी ते पंचविहा पण्णत्ता) तथा-जो अरूपी अजीव हैं वे पांच प्रकार के कहे गये हैं-(तंजहा) जैसे (धम्मत्थिकाए, नो धम्मत्थिकायस्स देसे, धम्मत्थिकायस्स पएसा, अधम्मत्थिकाए नो अधम्मत्थिकायस्स देसे, अधम्मत्थिकायस्स पएसा, अद्धासमये) धर्मास्तिकाय है, धर्मास्तिकाय का देश नहीं हैं, धर्मास्तिकाय के प्रदेश हैं, अधर्मास्तिकाय है, अधर्मास्तिकाय का प्रदेश नहीं है, अधर्मास्तिकाय

शમાં જીવના જે દેશ છે તે નિયમથી જ એકેન્દ્રિય જીવના દેશ છે, (जाव अणिंदिय देसा) અને દ્વીન્દ્રિયથી લઈને અનિન્દ્રિય જીવ પર્યન્તના દેશ છે. (जे अजीवा ते दुविहा पण्णत्ता) લોકાકાશમાં જે અજીવ છે તે બે પ્રકારના કહ્યા છે. (तंजहा) તે બે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે-(रूवी य अरूवी य) (૧) રૂપી અજીવ (૨) અરૂપી અજીવ (जे रूवी ते चउव्विहा पण्णत्ता) રૂપી અજીવના ચાર પ્રકાર કહ્યા છે. (तंजहा) તે ચાર પ્રકાર આ પ્રમાણે છે (खधा, खंधदेसा, खंधपएसा, परमाणुपोग्गला) (૧) સ્કંધ, (૨) સ્કંધદેશ, (૩) સ્કંધપ્રદેશ અને (૪) પરમાણુ પુદ્ગલ. (जे अरूवी ते पंचविहा पण्णत्ता) અરૂપી અજીવના પાંચ પ્રકાર કહ્યા છે. (तंजहा) તે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે (धम्मत्थिकाए, नो धम्मत्थिकायस्स देसे धम्मत्थिकायस्स पएसा, अधम्मत्थिकाए नो अधम्मत्थिकायस्स देसे, अधम्मत्थिकायस्स पएसा, अद्धा समये) (૧) ધર્માસ્તિકાય છે ધર્માસ્તિકાયનો દેશ નથી, (૨) ધર્માસ્તિકાયના પ્રદેશ છે (૩) અધર્માસ્તિકાય છે- અધર્માસ્તિકાયનો દેશ નથી (૪) અધર્માસ્તિકાયના પ્રદેશ છે અને (૫) અદ્ધા સમય છે

अलोकाकाशे खलु भदन्त ! किं जीवाः पृच्छा ? तथैव गौतम ! नो जीवाः यावत् नो अजीवप्रदेशाः एष अजीवद्रव्यदेशः अगुरुलघुकः अनन्तैरगुरुलघुकगुणैः संयुक्तः सर्वाकाशोऽनन्तभागोनः

टीका—' कइविहेणं भंते ! आगासे पण्णत्ते ' कतिविधः खलु भदन्त ! आकाशः प्रज्ञप्तः ? हे भदन्त ! आकाशस्य कियन्तो भेदाः सन्तीत्यर्थः अयञ्च प्रश्नः नैयायिकादिमतप्रसिद्धाकाशस्यैकत्वशङ्कानिराकरणपरक इति नानुपपन्नः प्रश्नः इति

के प्रदेश और अद्धासमय हैं, (अलोगागासे णं भंते ! किं जीवा, पुच्छा तह चेव) हे भदन्त ! अलोकाकाश में क्या जीव हैं, इत्यादि रूप से पहिले की तरह ही यहां पर पृच्छा जाननी चाहिये। (गोयमा !) हे गौतम ! (नो जीवा जाव नो अजीवप्पएसा) अलोकाकाश में जीव नहीं हैं, यावत्-अजीव के प्रदेश भी नहीं हैं। (एगे अजीवदव्वदेसे) वह अलोकाकाश एक अजीव द्रव्य देश रूप है। (अगुरुलहुए अणंतेहिं अगुरु लहुय गुणेहिं संजुत्ते, सव्वागासे अणंतभागूणे) वह अगुरु लघुरूप है और अनंत अगुरुलघु स्वभाववाले गुणों से संयुक्त है तथा अनन्त भाग से हीन सर्वाकाशरूप है क्यों कि अलोकाकाश की अपेक्षा से लोकाकाश अनन्तभागरूप है ॥ सू० ॥ ४ ॥

टीकार्थ-(कइविहेणं भंते ! आगासे पण्णत्ते) गौतम स्वामी प्रभु महावीर से पूछ रहे हैं कि हे भदंत ! आकाश कितने प्रकार का प्रज्ञप्त कहा गया है ? अर्थात्- आकाश के कितने भेद हैं ? गौतम स्वामीने जो ऐसा प्रश्न किया है उसका कारण यह है कि नैयायिक आदि मत में

(अलोगागासेणं भंते ! किं जीवा पुच्छा तहचेव) હે ભદન્ત ! અલોકાકાશમાં શું જીવો છે ? વગેરે પ્રશ્નો આગળ લોકાકાશ વિષયમાં પૂછ્યા પ્રમાણે જ અહીં પૂછવા જોઈએ. (गोयमा !) હે ગૌતમ ! (नो जीवा जाव नो अजीवप्पएसा) અલોકાકાશમાં જીવથી લઈને અજીવના પ્રદેશો પર્યન્તના કોઈ પણ નથી (एगे अजीवदव्वदेसे) તે અલોકાકાશ એક અજીવદ્રવ્ય દેશરૂપ છે. (अगुरुलहुए अणंतेहिं अगुरुलहुयगुणेहिं संजुत्ते सव्वागासे अणंतभागूणे) તે અગુરુલઘુ છે, અનંત અગુરુલઘુ સ્વભાવવાળા ગુણોથી સંપન્ન છે, તથા અનંતભાગથી ન્યૂન સર્વાકાશરૂપ છે-કારણ કે અલોકાકાશની અપેક્ષાએ લોકાકાશ અનંતમા ભાગરૂપ છે.

ટીકાર્થ-ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને પૂછે છે કે (कइविहेणं भंते ! आगासे पण्णत्ते) હે પ્રભુ ! આકાશ કેટલા પ્રકારનું કહ્યું છે ? એટલે કે આકાશના કેટલા ભેદ છે ? આ પ્રકારનો પ્રશ્ન પૂછવાનું કારણ એ છે કે નૈયાયિક આદિ

देशास्ते नियमात् एकेन्द्रियप्रदेशाः यावदनिन्द्रियप्रदेशाः ये अजीवास्ते द्विविध
प्रज्ञप्ताः तद्यथा रूपिणश्चारूपिणश्च ये रूपिणस्ते चतुर्विधाः प्रज्ञप्तास्तद्यथा स्क
न्धाः स्कन्धदेशाः स्कन्धप्रदेशाः परमाणुपुद्गलाः येऽपि अरूपिणस्ते पञ्चविध
प्रज्ञप्ताः तद्यथा धर्मास्तिकायो नो धर्मास्तिकायस्य देशः धर्मास्तिकायस्य प्रदेश
अधर्मास्तिकायःनोऽधर्मास्तिकायस्य देशः अधर्मास्तिकायस्य प्रदेशाः अद्धासमय

गिंदियदेसा) लोकाकाश में जो जीव के देश हैं वे नियम से एकेन्द्रि
जीव के देश हैं (जाव अणिंदिय देसा) यवत् इन्द्रिय विना के जीव
देश हैं। (जे अजीवा ते दुविहा पण्णत्ता) लोकाकाश में जो अजीव
वे दो प्रकार के कहे गये हैं-(तंजहा) जैसे-(रूवि य अरूवि य) एकरूप
अजीव और दूसरा अरूपी अजीव। (जे रूवी ते चउव्विहा पण्णत्ता
जो रूपी अजीव हैं वे चार प्रकार के कहे गये हैं (तंजहा) जैसे-(खंध
खंधदेसा, खंधपएसा, परमाणुपोग्गला) स्कंध, स्कंधदेश, स्कन्धप्रदे
और परमाणुपुद्गल (जे अरूवी ते पंचविहा पण्णत्ता) तथा-जा अरूप
अजीव हैं वे पांच प्रकार के कहे गये हैं-(तंजहा) जैसे (धम्मत्थिकाए
नो धम्मत्थिकायस्स देसे, धम्मत्थिकायस्स पएसा, अधम्मत्थिकाए न
अधम्मत्थिकायस्स देसे, अधम्मत्थिकायस्स पएसा, अद्धासमये) धर्म
स्तिकाय है, धर्मास्तिकाय का देश नहीं हैं, धर्मास्तिकाय के प्रदेश है
अधर्मास्तिकाय है, अधर्मास्तिकाय का प्रदेश नहीं है, अधर्मास्तिका

શમાં જીવના જે દેશ છે તે નિયમથી જ એકેન્દ્રિય જીવના દેશ છે, (जाव अणिंदिय देसा) અને દ્વીન્દ્રિયથી લઈને અનિન્દ્રિય જીવ પર્યન્તના દેશ છે. (जे अजीवा ते दुविहा पण्णत्ता) લોકાકાશમાં જે અજીવ છે તે બે પ્રકારના કહ્યા છે. (तंजहा) તે બે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે-(रूवी य अरूवी य) (૧) રૂપી અજીવ (૨) અરૂપી અજીવ (जे रूवी ते चउव्विहा पण्णत्ता) રૂપી અજીવના ચાર પ્રકાર કહ્યા છે (तंजहा) તે ચાર પ્રકાર આ પ્રમાણે છે (खंधा, खंधदेसा, खंधपएसा, परमाणुपोग्गला) (૧) સ્કંધ, (૨) સ્કંધદેશ, (૩) સ્કંધપ્રદેશ અને (૪) પરમાણુ પુદ્ગલ. (जे अरूवी ते पंचविहा पण्णत्ता) અરૂપી અજીવના પાંચ પ્રકાર કહ્યા છે. (तंजहा) તે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે (धम्मत्थिकाए, नो धम्मत्थिकायस्स देसे धम्मत्थिकायस्स पएसा, अधम्मत्थिकाए नो अधम्मत्थिकायस्स देसे, अधम्मत्थिकायस्स पएसा, अद्धा समये) (૧) ધર્માસ્તિકાય છે ધર્માસ્તિકાયનો દેશ નથી, (૨) ધર્માસ્તિકાયના પ્રદેશ છે (૩) અધર્માસ્તિકાય છે- અધર્માસ્તિકાયનો દેશ નથી (૪) અધર્માસ્તિકાયના પ્રદેશ છે અને (૫) અદ્ધા સમય છે.

प्रश्नमकरोत् उत्तरितश्च भगवता द्विभेदेन अन्यथा लक्षणज्ञानाभावे-विभागस्यासम्भवापातात् लक्षणज्ञानानन्तरमेव सर्वत्र विभागस्य प्रश्नस्योत्थानादिति। तत्र लोकाकाशाऽलोकाकाशयोर्द्वयोरपीदं लक्षणम् धर्मास्तिकायादीनां द्रव्याणां वृत्तिर्यत्र भवति तत्क्षेत्रम् ते क्षेत्रद्रव्ये सह विद्यमानो लोकः एतद्विपरीतोऽलोकास्य आकाश लोकोपलक्षितो लोकाकाशः अलोकोपलक्षितोऽलोकाकाश इति।

'लोयागासे णं भंते!' लोकाकाशे खलु भदन्त! 'किं जीवा जीवदेसा जीवपदेसा अजीवा अजीवदेसा अजीवपदेसा' किम् जीवाः जीवदेशाः जीवप्रदेशाः अजीवा अजीवदेशाः अजीवप्रदेशाः! हे भदन्त! किं लोकाकाशे जीवादयः सन्ती

आकाश का लक्षण ज्ञात है। जहां कहीं पर भी विभाग का प्रश्न होता है वह उसके लक्षण ज्ञान के बाद ही होता है। आकाश लोकाकाश और अलोकाकाश इस तरह से दो भेद वाला कहा गया है सो जितने क्षेत्र में धर्मास्तिकायादिक द्रव्यों का अस्तित्व पाया जाता है उतने आकाश का नाम लोकाकाश है और उससे विपरीत अलोकाकाश। अलोकाकाश में केवल आकाश के सिवाय और कोई द्रव्यों का सद्भाव नहीं पाया जाता है। इसलिये (लोकोपलक्षितो लोकाकाशः अलोकोपलक्षितोऽलोकाकाश) इस कथन के अनुसार लोकरूप धर्मादिक द्रव्यों से उपलक्षित आकाश लोकाकाश और अलोकरूप धर्मादिक द्रव्यों के अभाव से उपलक्षित आकाश अलोकाकाश है- ऐसा निश्चित हो जाता है।

(लोयागासे णं भंते!) हे भदन्त लोकाकाशमें (किं जीवा, जीवदेसा, जीवपएसा) क्या जीव हैं, कि जीवदेश है, कि जीवप्रदेश हैं? यहां

ત્યાં તેના લક્ષણનું જ્ઞાન તો પહેલાં પ્રાપ્ત થયેલું હોય જ આકાશના લોકાકાશ અને અલોકાકાશ, એવા બે ભેદ કહ્યા છે જેટલા ક્ષેત્રમાં ધર્માસ્તિકાયાદિક દ્રવ્યોનું અસ્તિત્વ છે એટલા ક્ષેત્રને-એટલા આકાશને-લોકાકાશ કહે છે, અને તેથી વિપરીત પ્રકારનું અલોકાકાશ છે અલોકાકાશમાં આકાશ સિવાય કોઈપણ દ્રવ્યનો સદ્ભાવ હોતો નથી. તેથી, જ (લોકોપલક્ષિતો લોકાકાશ અલોકોપલક્ષિતોઽલોકાકાશ) આ કથન અનુસાર લોક રૂપ ધર્માદિક દ્રવ્યોથી ઉપલક્ષિત આકાશને લોકાકાશ કહે છે અને અલોક રૂપ ધર્માદિક દ્રવ્યોના અભાવથી ઉપલક્ષિત આકાશને અલોકાકાશ કહે છે

પ્રશ્ન—(લોયાગાસે ण भंते) હે ભદન્ત! લોકાકાશમાં (किं जीवा, जीवदेसा, जीवपएसा) શું જીવો (જીવનું અસ્તિત્વ) છે કે જીવદેશો છે, કે જીવપ્રદેશો

भावः। भगवान् प्राह—'गोयमा!' इत्यादि 'गोयमा' हे गौतम! 'दुविहे आगासे पन्नत्ते' द्विविधः आकाशः प्रज्ञप्तः 'तंजहा' तद्यथा 'लोयागासेय-अलोयागासेय' लोकाकाशश्चालोकाकाशश्च अवगाहनादानलक्षणम् आकाशत्व-मिति आकाशस्य सामान्यं लक्षणमित्याकारकं लक्षणं जानन् गौतमः षट्संख्यकं

आकाश को सर्वथा एक माना गया है अतः इस प्रकारकी मान्यता की निवृत्ति के निमित्त यह प्रश्न किया गया है। अतः ऐसा प्रश्न अनुचित नहीं माना जा सकता। प्रभु गौतम के इस प्रश्न का उत्तर देते हुए उनसे कहते हैं कि (गोयमा!) हे गौतम! (दुविहे आगासे पन्नत्ते) आकाश दो भेद वाला कहा गया है। उसके वे दो भेद एक लोकाकाश और दूसरा अलोकाकाश ऐसे हैं यही बात (लोयागासे य अलोयागासे य) इस पाठ द्वारा प्रकट की गई है। अपने में जीवादिक द्रव्यों को स्थानदानदेना यही आकाश का सामान्य लक्षण है—सो इस सामान्य लक्षण को चित्त में रखकर गौतम ने प्रभु से छह प्रश्न इस प्रकार से किये और प्रभुने इन ६ छह प्रश्नोंका उत्तर आकाशके दो भेद समझा कर उन्हें उत्तर दिया, यदि गौतम को आकाश का सामान्य लक्षण ज्ञान न होता तो वे प्रभु से आकाश कितने प्रकार का है ऐसा प्रश्न न करते। परन्तु जब उन्हों ने ऐसा प्रश्न किया है तो इससे यही ज्ञात होता है कि उन्हें

મતાનુસાર આકાશને એક જ ગણુવામા આવ્યું છે. તેથી એ માન્યતાનું નિવારણુ–ખંડન–કરવાના હેતુથી આ પ્રશ્ન કરાયો છે. માટે તે પ્રશ્નને અનુચિત ગણી શકાય નહીં.

મહાવીર પ્રભુ તે પ્રશ્નનો આ પ્રમાણે જવાબ આપે છે, (गोयमा!) હે ગૌતમ! (दुविहे आगासे पन्नत्तो) આકાશના નીચે પ્રમાણે બે ભેદ કહ્યા છે– (૧) લોકાકાશ અને (૨) અલોકાકાશ–એજ વાત(लोयागासे य अलोयागासेय) પદો દ્વારા વ્યક્ત કરવામાં આવી છે

આકાશનું સામાન્ય લક્ષણુ એ છે કે તે જીવાદિક દ્રવ્યોને પોતાની અંદર સ્થાન દાન આપે છે એ સામાન્ય લક્ષણુને નજર સમક્ષ રાખી ગૌતમ સ્વામીએ આ પ્રકારના છ પ્રશ્નો પૂછયા છે, અને મહાવીર પ્રભુએ આકાશના બે ભેદ સમજાવીને તે છ પ્રશ્નોના ઉત્તર આપ્યા છે જો ગૌતમસ્વામીને આકાશના સામાન્ય લક્ષણુનું જ્ઞાન ન હોત તો તેઓ પ્રભુને "આકાશ કેટલા પ્રકારનુ છે" એ પ્રશ્ન ન કરત પણુ તેમણે એવો પ્રશ્ન પૂછયો છે તેથી જાણી શકાય છે કે તેમને આકાશના લક્ષણુનુ તો જ્ઞાન છે જ જ્યા વિભાગનો પ્રશ્ન ઉભો થતો હોય

सिद्ध एवेति यतो जीवाजीवादिदेशप्रदेशाना जीवाजीवे सद्भावादिति जीवा दिग्रहणे सति तदीयप्रदेशादीनामुपादानं निरर्थकमेवामाति इति चेदुच्यते जीवा निरवयवा इति येषां मतं तन्मतनिराकरणायैव तथा कथनादिति गृहाण। भगवान् माह–' गोयमा ! ' इत्यादि ' गोयमा ' हे गौतम ! ' जीवा वि जीवदे सावि जीवप्पएसावि ' जीवा अपि जीवदेशा अपि जीवप्रदेशा अपि लोकाकाशे सर्वत्र इति भावः। एवम् ' अजीवा वि अजीव देसावि अजीवपएसा वि ' अ जीवा अपि अजीवदेशा अपि अजीवप्रदेशा अपि। ' जे जीवा ते नियमा एगिं दिया बेइंदिया तेइंदिया चउरिंदिया पंचिंदिया अणिंदिया ' ये जीवास्तत्र लोका

सिद्ध हो जाती है कि यहां पर जीवदेश जीवप्रदेश अजीवदेश आदिकों का भी सद्भाव है, क्यों कि उनका उनके साथ अभेद है–तो फिर यहां पर सूत्र में स्वतन्त्र रूप से जीव अजीव के साथ जीवदेश, जीवप्रदेश, अजीवदेश अजीवप्रदेश का ग्रहण क्यों किया गया है ?

समाधान–कितनेक वादी जन ऐसा मानते हैं कि जीव निरवयव हैं सो इन कथनसे उन्हें यह समझाया गया है कि जीव निरवयव नहीं है सावयव है। इसीलिए सूत्र में जीव देश आदि पदों का स्वतन्त्ररूप से पाठ कहा गया है। इस तरह (गोयमा !) हे गौतम ! (जीवा वि जीवदेसा वि जीवप्प एसावि) लोकाकाश में समस्त जीव द्रव्य भी, जीवद्रव्य के देश भी, और उनके प्रदेश भी हैं। इसी तरह (अजीवा वि अजीवदेसा वि अ जीवपएसा वि) अजीवद्रव्य भी, अजीवद्रव्य के देश भी और उनके प्रदेश भी हैं। (जे जीवा–ते नियमा एगिंदिया, बेइंदिया, तेइंदिया, चउ

ત્યાં જીવપ્રદેશ, અજીવદેશ, અને અજીવ પ્રદેશ આદિનો પણ સદ્ભાવ છે, કારણ કે તેમનો તેમની સાથે અભેદ છે તો પછી સૂત્રકારે અહીં જીવ અને અજીવની સાથે જીવદેશ,પ્રદેશ, અજીવદેશ અને અજીવપ્રદેશને સ્વતંત્રરૂપે શા માટે ગ્રહણ કર્યા છે ?

સમાધાન–કેટલાક મતવાદીઓ એવું માને છે કે જીવ નિરવયવ છે તો આ કથન દ્વારા તેમને એ વાત સમજાવવામાં આવી છે કે જીવ નિરવયવ નથી પણ સાવયવ (અવયવસહિત) છે તે માટેજ સૂત્રમાં જીવદેશ આદિ પદોને સ્વતંત્ર રીતે ગ્રહણ કરવામાં આવ્યા છે ગૌતમ સ્વામીના પ્રશ્નનો મહાવીરપ્રભુ આ પ્રમાણે જવાબ આપે છે–(गोयमा !) હે ગૌતમ ! (जीवा वि, जीवदेसा वि, जीवपएसावि) લોકાકાશમાં સમસ્ત જીવદ્રવ્ય પણ છે, જીવદ્રવ્યના દેશપણ છે અને જીવદ્રવ્યના પ્રદેશ પણ છે (अजीवा वि अजीवदेसा वि अजीवपएसा वि) એજ પ્રમાણે તેમાં અજીવદ્રવ્ય પણ છે,અજીવદ્રવ્યના દેશ પણ છે અજીવ દ્રવ્યનાપ્રદેશ પણ છે (जे जीवा

ति प्रश्नः 'लोयागासे' इति सूत्रे पट्प्रश्नाः सन्ति गौतमस्य, तत्र लोकाकाशे जी इति सम्पूर्णानि जीवद्रव्याणि वर्त्तन्ते किम्? 'जीवदेसा' इति उपयोगलक्षणजीव स्य केवलिप्रज्ञाकृता द्वित्रादयो विभागा जीवदेशा इति कथ्यन्ते 'जीवप्पएसा' इ जीवस्यैव प्रकृष्टा देशाः प्रदेशा इति कथ्यन्ते निर्विभागा भागा इत्यर्थः 'अजीवा इति धर्मास्तिकायादयः तेषां च देशाः प्रदेशा एव पूर्वोक्ता एवेति। अथ लोकाका जीवा अजीवाश्च विद्यन्ते इति कथिते सति जीवा जीव देशप्रदेशयोरपि सद्भाव

पर गौतमके ६छह प्रश्न है तीन प्रश्न जीव, जीवदेश और जीवप्रदेश संबंध हैं और तीन प्रश्न अजीव, अजीवदेश और अजीव प्रदेश संबंधी है जीव से यहां समस्त जीव द्रव्य ग्रहण किये गये हैं। उपयोग लक्षण वाले जीव के केवलिप्रज्ञाकृत दो तीन आदि जो विभाग हैं वे जीव देश से ग्रहण किये गये हैं। तथा उसी जीव के प्रकृष्ट देश प्रदेश शब्द से कहे गये हैं। इन प्रदेशों का फिर विभाग नहीं होता है अतःनिर्विभाग जो भाग हैं वे प्रदेश होते हैं ऐसा जानना चाहिये। इस प्रश्न का तत्पय यह है कि लोकाकाशमें सम्पूर्ण जीव द्रव्य हैं, कि जीवके देश हैं अथव जीव के प्रदेश हैं? इसी तरह से लोकाकाश में (अजीवा अजीवदेस अजीवपएसा) अजीव जो धर्मास्तिकायादिक द्रव्य हैं वे हैं कि उनके देश हैं या उनके प्रदेश हैं? शंका–जब यह बात निश्चित है कि लोकाकाश में जीव और अजीव ये दोनों द्रव्य हैं, तो इस कथन से यह बात भ

અહીં ગૌતમ સ્વામીએ છ પ્રશ્નો કર્યા છે તેમાંના ત્રણ જીવ, જીવદેશ અને જીવપ્રદેશ વિષે છે અને બીજા ત્રણ પ્રશ્નો અજીવ, અજીવદેશ અને અજીવ–પ્રદેશ વિષે છે. 'જીવ' પદ દ્વારા અહીં સમસ્ત જીવદ્રવ્ય ગ્રહણ કરવામાં આવ્યું છે. ઉપયોગ લક્ષણવાળા જીવના કેવલિ પ્રજ્ઞાકૃત બે, ત્રણ આદિ જે વિભાગ છે, તેમને "જીવદેશ" કહેવામા આવેલ છે. તથા એજ જીવના પ્રકૃષ્ટ દેશને માટે (જીવપ્રદેશ) શબ્દનો પ્રયોગ કર્યો છે. તે વિભાગો પાડી શકાતા નથી. તેથી જે અવિભાજ્ય ભાગો છે તેમને જ પ્રદેશ કહેવામાં આવે છે, એમ સમજવું.

ગૌતમ સ્વામીના આ પ્રશ્નનુ તાત્પર્ય એ છે કે–લોકાકાશમાં સંપૂર્ણ જીવદ્રવ્ય છે, કે જીવના દેશ છે, કે જીવના પ્રદેશ છે? એજ પ્રમાણે લોકાકાશમા (अजीवा, अजीवादेसा, अजीवपएसा) અજીવ "ધર્માસ્તિકાય આદિ દ્રવ્ય છે," કે તેમના પ્રદેશ છે?

શંકા—જો એ વાત ચોકકસ છે કે લોકાકાશમાં જીવ અને અજીવ, એ બન્ને દ્રવ્યોનું અસ્તિત્વ છે, તો તે કથનથી એ વાત પણ સિદ્ધ થાય છે કે

सिद्ध एवेति यतो जीवाजीवादिदेशप्रदेशानां जीवाजीवै सहाभेदादिति जीवा दिग्रहणे सति तदीयप्रदेशादीनामुपादानं निरर्थकमेवामाति इति चेदमोच्यते जीवा निरवयवा इति यदा मत तन्मतनिराकरणायैव तथा कथनादिति गृहाण। भगवान् प्राह–' गोयमा ! ' इत्यादि ' गोयमा ' हे गौतम ! ' जीवा वि जीवदे सावि जीवप्पएसावि ' जीवा अपि जीवदेशा अपि जीवप्रदेशा अपि लोकाकाशे वर्तन्ते इति भावः। एवम् ' अजीवा वि अजीव देसावि अजीवपएसा वि ' अ जीवा अपि अजीवदेशा अपि अजीवप्रदेशा अपि। ' जे जीवा ते नियमा एगिं दिया बेइंदिया तेइंदिया चउरिंदिया पंचिंदिया अणिंदिया ' ये जीवास्तत्र लोका

सिद्ध हो जाती है कि यहां पर जीवदेश जीवप्रदेश अजीवदेश आदिकों का भी सद्भाव है, क्यों कि उनका उनके साथ अभेद है–तो फिर यहां पर सूत्र में स्वतन्त्र रूप से जीव अजीव के साथ जीवदेश, जीवप्रदेश, अजीवदेश अजीवप्रदेश का ग्रहण क्यों किया गया है ?

समाधान–कितनेक वादी जन ऐसा मानते हैं कि जीव निरवयव है सो इन कथनसे उन्हें यह समझाया गया है कि जीव निरवयव नहीं है सावयव है। इसीलिए सूत्र में जीव देश आदि पदों का स्वतन्त्ररूप से पाठ कहा गया है। इस तरह (गोयमा !) हे गौतम ! (जीवा वि जीवदेसा वि जीवप्प एसावि) लोकाकाश में समस्त जीव द्रव्य भी, जीवद्रव्य के देश भी, और उनके प्रदेश भी हैं। इसी तरह (अजीवा वि अजीवदेसा वि अ-जीवपएसा वि) अजीवद्रव्य भी, अजीवद्रव्य के देश भी और उनके प्रदेश भी हैं। (जे जीवा–ते नियमा एगिंदिया, बेइंदिया, तेइंदिया, चउ

त्यां જીવપ્રદેશ, અજીવદેશ અને અજીવ પ્રદેશ આદિનો પણ સદ્ભાવ છે કારણ કે તેમનો તેમની સાથે અભેદ છે તો પછી સૂત્રકારે અહીં જીવ અને અજીવની સાથે જીવદેશ,પ્રદેશ, અજીવદેશ અને અજીવપ્રદેશને સ્વતંત્રરૂપે શા માટે ગ્રહણ કર્યા છે ?

સમાધાન–કેટલાક મતવાદીઓ એવું માને છે કે જીવ નિરવયવ છે તો આ કથન દ્વારા તેમને એ વાત સમજાવવામાં આવી છે કે જીવ નિરવયવ નથી પણ સાવયવ (અવયવસહિત) છે તે માટે જ સૂત્રમાં જીવદેશ આદિ પદોને સ્વતંત્ર રીતે ગ્રહણ કરવામાં આવ્યા છે ગૌતમ સ્વામીના પ્રશ્નનો મહાવીરપ્રભુ આ પ્રમાણે જવાબ આપે છે-(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (जीवा वि जीवदेसा वि, जीवप्पएसावि) લોકાકાશમાં સમસ્ત જીવદ્રવ્ય પણ છે, જીવદ્રવ્યના દેશપણ છે અને જીવદ્રવ્યના પ્રદેશ પણ છે (अजीवा वि अजीवदेसा वि, अजीवपएसा वि) એજ પ્રમાણે તેમાં અજીવદ્રવ્ય પણ છે,અજીવદ્રવ્યના દેશ પણ છે અજીવ દ્રવ્યનાપ્રદેશ પણ છે (जे जीवा

काशे विद्यन्ते ते नियमात् एकेन्द्रिया द्वीन्द्रियास्त्रीन्द्रियाः चतुरिन्द्रियाः पञ्चेन्द्रियाः अनिन्द्रियाः, अनिन्द्रियाः-अपर्याप्ताः केवलिनः सिद्धाश्चेति । एतेनाद्यस्य प्रश्नत्रयस्योत्तरं दत्तम् । 'जे जीवदेसा ते नियमा एगेंदिय देसा जाव अणिंदियदेसा'

रिंदिया, पंचिंदिया, अणिंदिया) लोकाकाश में जो जीव द्रव्य हैं-वे एकेन्द्रिय भी हैं, दो इन्द्रिय भी हैं, ते इन्द्रिय भी हैं, चौ इन्द्रिय भी हैं, पांच इन्द्रिय वाले भी हैं। तथा-अनिन्द्रिय-अपर्याप्त केवली और सिद्ध भी हैं। अतिन्द्रियसे यहां जो अपर्याप्त आदि जीव ग्रहण किये गये हैं उस का कारण यह है कि इन जीवों के इन्द्रियां नहीं होती हैं। अपर्याप्त जीवोंके इन्द्रिय प्रर्याप्ति की पूर्णताके अभाव से तथा ६छह पर्याप्तियोंमें से किसी भी पर्याप्ति के न होने से कोई भी इन्द्रिय नहीं होती हैं। यद्यपि केवली के इन्द्रियां होती हैं परन्तु वे वहां कार्यकारी नहीं होती हैं। केवली का ज्ञान क्षायिक होता है अतः वह इन्द्रियातीत माना गया है। सिद्धों के शरीर न होने के कारण वे इन्द्रियों से सर्वथा रहित माने गये हैं। इन सब जीवों का निवास लोकाकाश में ही है। सिद्धों का निवास यद्यपि लोक के आग्रभाग में है, परन्तु वह अग्रभाग आखिर तो लोक में ही है। इस कथन से कि लोकाकाश में जीवद्रव्य, जीव देश और जीवप्रदेश रहते हैं, प्रभु ने गौतम के आदि के तीन

ते नियमा एगिंदिया, बेइंदिया, तेइंदिया, चउरिंदिया, पंचिंदिया, अणिंदिया) લોકાકાશમાં રહેલું જીવદ્રવ્ય નિયમથી જ એકેન્દ્રિય પણ છે, બે ઇન્દ્રિય પણ છે, ત્રીન્દ્રિય પણ છે, ચતુરિન્દ્રિય પણ છે, પંચેન્દ્રિય પણ છે અને અનિન્દ્રિય-અપર્યાપ્ત, કેવલી અને સિદ્ધ-પણ હોય છે (અનિન્દ્રિય) પદ દ્વારા અહીં જે અપર્યાપ્ત આદિ જીવો ગ્રહણ કરવામાં આવ્યા છે. તેનું કારણ એ છે કે તે જીવોને ઇન્દ્રિયો હોતી નથી. અપર્યાપ્ત જીવોને ઇન્દ્રિય પર્યાપ્તિની પૂર્ણતાને અભાવે તથા છ પર્યાપ્તિયોમાંથી એક પર્યાપ્તિનો સદ્ભાવ ન હોવાથી કોઇ પણ ઇન્દ્રિય હોતી નથી જો કે કેવલીને ઇન્દ્રિયો હોય છે, પણ તે કાર્યકારી નથી. કેવલીનું જ્ઞાન ક્ષાયિક હોય છે તેથી તેને ઇન્દ્રિયાતીત માનવામાં આવ્યું છે. સિદ્ધ પરમાત્માઓને શરીર જ હોતું નથી તેમને ઇન્દ્રિયોથી તદ્દન રહિત માનવામા આવ્યા છે તે બધા જીવોનો નિવાસ લોકાકાશમા જ છે સિદ્ધોનો નિવાસ લોકના અગ્ર ભાગમા છે, પણ તે અગ્રભાગ પણ લોકમાં જ છે એમ કહેવામાં કોઇ વાધો નડતો નથી. " લોકાકાશમાં જીવદ્રવ્ય, જીવદેશ અને જીવપ્રદેશ રહે છે, " આ કથનથી ભગવાને ગૌતમ સ્વામીના પહેલા ત્રણ પ્રશ્નોના

पंजलिउडे पज्जुवासमाणे' इति सम्प्राह्यम्। एवं वक्ष्यमाणप्रकारेण 'वयासी' अवादीत् 'कइविहा णं भंते लोयट्ठिई पण्णत्ता' कतिविधा खलु भदन्त! लोकस्थितिः प्रज्ञप्ता? भगवानाह—'गोयमे'—त्यादि, 'गोयमा' हे गौतम! 'अट्ठविहा लोयट्ठिई पण्णत्ता'

अभिमुहे विणएणं पंजलिउडे पज्जुवासमाणे" इस पाठ का संग्रह किया है। इसका अर्थ इसप्रकार से है–गौतमने जब भगवान् को हे भदन्त! इस पदसे संबोधित कर पूछा तो एकदम नहीं पूछा किन्तु उन्होंने पूछने के पहिले भगवान् महावीर को वन्दना की, नमस्कार किया। वन्दना नमस्कार करके फिर वे उनके सन्मुख ऐसे बैठे कि जिससे वे न अधिक उनके पास प्रतीत होते थे और न अधिक दूर ही दिखलाई देते थे। उचित स्थान पर सन्मुख बैठने का कारण यह था कि वे भगवद्वचन को सुनने के अभिलाषी थे। वन्दना और नमस्कार करके भी जब वे अपने योग्य स्थानपर बैठने लगे तब पुनः उन्होंने प्रभुको वन्दना नमस्कार किया। सन्मुख बैठे हुए भी वे प्रभुको विनयपूर्वक दोनों हाथ जोडकर पूछनेलगे। इस तरहकी क्रियासे वे प्रभुकी भक्तिमें लीन रहते आये हैं, यह बात सूत्रकारने प्रकट की है। गौतम ने प्रभु से क्या पूछा सो इसके लिये सूत्रकार कहते हैं–(कइविहा णं भंते! लोयट्ठिई पण्णत्ता) गौतम ने प्रभु से यह पूछा कि हे भदन्त! लोक की स्थिति कितने प्रकार की कही गई है? प्रभु ने गौतम के इस प्रश्नका उत्तर क्या दिया इसे सूत्रकार बताते हुए कहते हैं कि–(गोयमा! अट्ठविहा लोयट्ठिई पण्णत्ता) प्रभुने गौतमके द्वारा किए गए प्रश्नका

अभिमुहे विणएणं पंजलिउडे पज्जुवासमाणे" આ પાઠને ગ્રહણ કરવામાં આવ્યો છે તેનો અર્થ આ પ્રમાણે છે—ગૌતમસ્વામીએ જ્યારે ભગવાન મહાવીરને 'હે ભગવન્! એ પદથી સંબોધ્યા પછી એક દમ પ્રશ્નો પૂછયા નહીં પણ તેમણે પહેલા તો ભગવાન મહાવીરને વંદણા કરી નમસ્કાર કર્યા વંદણા નમસ્કાર કરીને તેઓ તેમનાથી અતિ દૂર પણ નહીં અને અતિ નિકટ પણ નહીં એવા સ્થાને (ઉચિત સ્થાને) બેસીને પ્રશંસા કરતા મહા ભગવાનને ફરીથી નમસ્કાર કરીને ભગવાનની સામે બન્ને હાથ જોડીને વિનયપૂર્વક પર્યુપાસના કરતા મહા પૂછવા લાગ્યા. આ સૂત્રો વડે ગૌતમ સ્વામીની ભગવાન પ્રત્યેની ભક્તિ અને વિનય દર્શાવવામાં આવેલ છે હવે ગૌતમ સ્વામીએ પ્રભુને પૂછેલા પ્રશ્નો અને પ્રભુ વડે તે પ્રશ્નોના જે ઉત્તરો અપાયા તે સૂત્રકાર બતાવે છે

પ્રશ્ન—(कइविहा णं भंते! लोयट्ठिई पण्णत्ता) હે પ્રભો! લોકની સ્થિતિ કેટલા પ્રકારની કહી છે ઉત્તર—(गोयमा! अट्ठविहा लोयट्ठिई पण्णत्ता) હે ગૌતમ!

नाऽभेदस्य स्वाभाविकत्वात्, वृक्षशिंशपयोरिवेति भाव· अत्र यावत्पदेन द्वीन्द्रिय त्रीन्द्रिय–चतुरिन्द्रिय–पञ्चेन्द्रियप्रदेशानां ग्रहणं भवति तथा च य एव जीवप्रदेशा स्त एव द्वीन्द्रियादिप्रदेशा अपीति भावः। अथान्त्यस्य प्रश्नत्रयस्य उत्तरमाह–' जे अजीवा ' इत्यादि ' जे अजीवा ते दुविहा पण्णत्ता ' ये अजीवास्ते, द्विविधाः

स्वाभाविक है। जैसे वृक्ष और शिंशपा–शिशममें व्याप्य व्यापक भाव होने से अभेदस्वाभाविक है। तात्पर्य–इस कथन का यह है कि जिस प्रकार वृक्ष व्यापक और शिंशपा व्याप्य माना जाता है क्यों कि शिंशपा के विना भी वृक्षत्व का सद्भाव पाया जाता है परन्तु वृक्षत्व के विना शिंशपा का सद्भाव त्रिकाल में भी नहीं पाया जाता है अतः इन दोनों में व्याप्य व्यापक भाव होने से कथंचित् अभेद माना जाता है उसी प्रकार जीवदेश, जीवप्रदेश ये दोनों व्यापक हैं और एकेन्द्रियादि देश प्रदेश सब व्याप्य हैं। जहां जीवदेश, जीवप्रदेशत्वरूप व्यापक होगा वहां एकेन्द्रिय का ही देशत्व होगा यह नियम नहीं बन सकता अन्य-जीव का भी देशत्व हो सकता है। पर जहां एकेन्द्रियादि देशत्वादि होगा–वहां नियम से जीव देशत्वादि होगा। (जे जीवपएसा ते नियमा एगिंदिय पएसा जाव अणिंदियपएसा) यहां यावत् शब्द से, द्वीन्द्रिय प्रदेश, त्रीन्द्रियप्रदेश, चतुरिन्द्रियप्रदेश, पंचेन्द्रियप्रदेश और अनिन्द्रिय-प्रदेशों का ग्रहण किया गया हैं। अब प्रभु अन्त के तीन प्रश्नों का उत्तर देने के निमित्त गौतमसे कहते हैं–(जे अजीवा ते दुविहा पण्णत्ता) जो

વૃક્ષને વ્યાપક અને સીસમને વ્યાપ્ય માનવામાં આવે છે, કારણ કે સીસમ વિના પણ વૃક્ષનું અસ્તિત્વ સંભવી શકે છે પણ વૃક્ષવિના સીસમનું અસ્તિત્વ કદી પણ સંભવી શકતું નથી. આ રીતે તે બન્ને વચ્ચે વ્યાપ્ય વ્યાપક ભાવ હોવાથી તેમની વચ્ચે અભેદ માનવામાં આવે છે એજ પ્રમાણે જીવદેશઅને જીવપ્રદેશ, એ બન્ને વ્યાપક છે અને એકેન્દ્રિયાદિ દેશ અને પ્રદેશ વ્યાપ્ય છે. જ્યાં જીવદેશ અને જીવપ્રદેશત્વ રૂપ વ્યાપક હશે ત્યાં એકેન્દ્રિયનું જ દેશત્વ હોઇ શકે છે, એવો નિયમ થઈ શકતો નથી–અન્ય જીવનું પણ દેશત્વ ત્યાં હોઇ શકે છે.પણ જ્યા એકેન્દ્રિયાદિ દેશત્વ હશે ત્યાં જીવદેશત્વાદિ પણ હશે, એવો નિયમ છે.(जे जीवपएसा ते नियमा एगिंदियपएसा जाव अणिंदियपएसा) આ સૂત્રમાં (जाव) (પર્યન્ત) પદથી દ્વીન્દ્રિયપ્રદેશ, ત્રીન્દ્રિયપ્રદેશ, ચતુરિન્દ્રિયપ્રદેશ પચેન્દ્રિય પ્રદેશ અને અનિન્દ્રિય પ્રદેશો ગ્રહણ કરાયા છે. હવે પ્રભુ ગૌતમ સ્વામીના છેલ્લા ત્રણ પ્રશ્નોના ઉત્તર આપતા કહે છે–(जे अजीवा ते दुविहा पण्णत्ता)

ये जीवदेशास्ते नियमात् एकेन्द्रियदेशा यावत् अनिन्द्रियदेशाः, जीवदेश एकेन्द्रियदेशयोरभेदात् जीवैकेन्द्रिययोर्व्याप्यव्यापकभावादित्यर्थ । 'जे जीवप्पएसा ते नियमा एगेंदियपएसा जाव अणिंदियपएसा' ये जीवप्रदेशाः ते नियमात् एकेन्द्रियप्रदेशाः यावत् अनिन्द्रि प्रदेशा ये जीवानाम् प्रकृष्टा देशाः त जीवप्रदेशा त नियमात् एकेन्द्रियप्रदेशाः यावत् अनिन्द्रियप्रदेशाः जीवप्रदेश – एकेन्द्रियादिप्रदेशानामभिन्नत्वम् यदा जीव-एकेन्द्रिययोर्व्याप्य-व्यापकभावस्तदा जीवप्रदेश — एकेन्द्रियप्रदेशयोरपि व्याप्यव्यापकभावे

प्रश्नों का उत्तर दिया है । (जे जीवदेसा ते नियमा एगेंदिय देसा जाव अणिंदियदेसा) जो जीवदेश होते हैं वे ही नियम से एकेन्द्रियदेश होते हैं, यावत् अनिन्द्रियजीवों के देश होते हैं । जीवदेश और एकेन्द्रियदेश में अभेद है क्यों कि जीव और एकेन्द्रिय में व्याप्य व्यापकभाव है। यहां यावत् पद से द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय देशों का ग्रहण हुआ है । तथाच-जो ही जीव देश हैं वे ही दोइन्द्रिय आदि जीवों के भी देश हैं। इसी तरह-(जे जीवपएसा ते नियमा एगिंदियपएसा जाव अणिंदियपएसा) जो जीव प्रदेश हैं वे ही नियम से एकेन्द्रियप्रदेश हैं यावत् अनिन्द्रियप्रदेश हैं । जो जीवों के प्रकृष्ट देश हैं वे जीवप्रदेश हैं वे नियम से एकेन्द्रियप्रदेश यावत् अनिन्द्रिय प्रदेश हैं । जीवप्रदेशों में अभिन्नता है । जब जीव और एकेन्द्रिय में व्याप्य व्यापक भाव है तब जीव प्रदेश और एकेन्द्रिय प्रदेश में भी व्याप्य व्यापक भाव होने से अभेद

જવાબ આપ્યા છે (जे जीवदेसा ते नियमा एगेंदियदेसा जाव अणिंदियदेसा) જીવદેશો નિયમથી જ એકેન્દ્રિયથી લઈને અનિન્દ્રિય જીવો પર્યન્તના દેશ હોય છે જીવદેશ અને એકેન્દ્રિયદેશમા અભેદ છે કારણ કે જીવ અને એકેન્દ્રિયમા વ્યાપ્ય વ્યાપક ભાવ છે અહીં यावत् (પર્યન્ત) પદથી દ્વિ ઇન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય, ચતુરિન્દ્રિય અને પંચેન્દ્રિય દેશો ગ્રહણ કરવામા આવ્યા છે વળી જે જીવદેશો છે તેજ દ્વિન્દ્રિય આદિ જીવોના પણ દેશ છે એજ પ્રમાણે (जे जीवपएसा ते नियमा एगिंदियपएसा) જે જીવપ્રદેશ છે તેઓ નિયમથી જ એકેન્દ્રિય પ્રદેશથી લઈને અનિન્દ્રિય પર્યન્તના પ્રદેશ છે જે જીવોના પ્રકૃષ્ટ દેશ છે—અવિભાજ્ય વિભાગ છે—તેમને જીવપ્રદેશ કહે છે તેઓ નિયમથી જ એકેન્દ્રિય પ્રદેશથી લઈને અનિન્દ્રિય પર્યન્તના પ્રદેશ છે જીવપ્રદેશ અને એકેન્દ્રિયાદિ પ્રદેશોમાં અભેદ છે જેવી રીતે જીવ અને એકેન્દ્રિયમાં વ્યાપ્ય વ્યાપક ભાવ છે એવી જ રીતે જીવપ્રદેશ અને એકેન્દ્રિયપ્રદેશમાં પણ વ્યાપ્ય વ્યાપક ભાવ હોવાથી તે અભેદ સ્વાભાવિક લાગે છે - જેવી રીતે વૃક્ષ અને સીસમમાં વ્યાપ્ય વ્યાપક ભાવ હોવાથી અભેદ સ્વાભાવિક છે- એટલે કે જેવી રીતે

नाऽभेदस्य स्वाभाविकत्वात्, वृक्षशिंशपयोरिवेति भाव· अत्र यावत्पदेन द्वीन्द्रिय त्रीन्द्रिय–चतुरिन्द्रिय–पञ्चेन्द्रियप्रदेशानां ग्रहणं भवति तथा च य एव जीवप्रदेशा स्त एव द्वीन्द्रियादिप्रदेशा अपीति भावः। अथान्त्यस्य प्रश्नत्रयस्य उत्तरमाह–' जे अजीवा ' इत्यादि ' जे अजीवा ते दुविहा पण्णत्ता ' ये अजीवास्ते द्विविधाः

स्वाभाविक है। जैसे वृक्ष और शिंशपा–शिशममें व्याप्य व्यापक भाव होने से अभेदस्वाभाविक है। तात्पर्य–इस कथन का यह है कि जिस प्रकार वृक्ष व्यापक और शिंशपा व्याप्य माना जाता हे क्यों कि शिंशपा के विना भी वृक्षत्व का सद्भाव पाया जाता है परन्तु वृक्षत्व के विना शिंशपा का सद्भाव त्रिकाल में भी नहीं पाया जाता है अतः इन दोनों में व्याप्य व्यापक भाव होने से कथंचित् अभेद माना जाता है उसी प्रकार जीवदेश, जीवप्रदेश ये दोनों व्यापक हैं और एकेन्द्रियादि देश प्रदेश सब व्याप्य हैं। जहां जीवदेश, जीवप्रदेशत्वरूप व्यापक होगा वहां एकेन्द्रिय का ही देशत्व होगा यह नियम नहीं बन सकता अन्य-जीव का भी देशत्व हो सकता है। पर जहां एकेन्द्रियादि देशत्वादि होगा–वहां नियम से जीव देशत्वादि होगा। (जे जीवयएसा ते नियमा एगिंदिय पएसा जाव अणिंदियपएसा) यहां यावत् शब्द से, द्वीन्द्रिय प्रदेश, त्रीन्द्रियप्रदेश, चतुरिन्द्रियप्रदेश, पंचेन्द्रियप्रदेश और अनिन्द्रिय-प्रदेशों का ग्रहण किया गया हैं। अब प्रभु अन्त के तीन प्रश्नों का उत्तर देने के निमित्त गौतमसे कहते हैं–(जे अजीवा ते दुविहा पण्णत्ता) जो

વૃક્ષને વ્યાપક અને સીસમને વ્યાપ્ય માનવામાં આવે છે, કારણ કે સીસમ વિના પણ વૃક્ષનું અસ્તિત્વ સંભવી શકે છે પણ વૃક્ષવિના સીસમનું અસ્તિત્વ કદી પણ સંભવી શકતું નથી. આ રીતે તે બન્ને વચ્ચે વ્યાપ્ય વ્યાપક ભાવ હોવાથી તેમની વચ્ચે અભેદ માનવામાં આવે છે એજ પ્રમાણે જીવદેશઅને જીવપ્રદેશ, એ બન્ને વ્યાપક છે અને એકેન્દ્રિયાદિ દેશ અને પ્રદેશ વ્યાપ્ય છે. જ્યાં જીવદેશ અને જીવપ્રદેશત્વ રૂપ વ્યાપક હશે ત્યાં એકેન્દ્રિયનું જ દેશત્વ હોઇ શકે છે, એવો નિયમ થઇ શકતો નથી–અન્ય જીવનું પણ દેશત્વ ત્યાં હોઇ શકે છે.પણ જ્યાં એકેન્દ્રિયાદિ દેશત્વ હશે ત્યાં જીવદેશત્વાદિ પણ હશે, એવો નિયમ છે (जे जीवपएसा ते नियमा एगिंदियपएसा जाव अणिंदियपएसा) આ સૂત્રમાં (जाव) (પર્યન્ત) પદથી દ્વીન્દ્રિયપ્રદેશ, ત્રીન્દ્રિયપ્રદેશ, ચતુરિન્દ્રિયપ્રદેશ પંચેન્દ્રિય પ્રદેશ અને અનિન્દ્રિય પ્રદેશો ગ્રહણ કરાયા છે. હવે પ્રભુ ગૌતમ સ્વામીના છેલ્લા ત્રણ પ્રશ્નોનો ઉત્તર આપતા કહે છે–(जे अजीवा ते दुविहा पण्णत्ता)

प्रज्ञप्ता 'त जहा' तद् यथा 'रूवीय अरूवीय' रूपिणश्चारूपिणश्च रूपिणो मूर्त्ताः पुद्गलाः अरूपिणोऽमूर्त्ताः धर्मास्तिकायादयः, 'जे रूवी ते चउव्विहा प ण्णत्ता' ये रूपिणः पुद्गलास्ते चतुर्विधाः प्रज्ञप्ताः 'त जहा' तद् यथा 'खंधा खंधदेसा–खंधपएसा परमाणु पोग्गला' स्कन्धाः स्कन्धदेशाः स्कन्धप्रदेशाः परमाणुपुद्गलाः तत्र स्कन्धाः परमाणुसमुदायात्मका अवयवि न इत्यर्थः स्कन्धदेशा द्व्यादयो विभागाः स्कन्धप्रदेशास्तस्यैव निरंशा अवयवाः परमाणुपुद्गला अवयवा

अजीव हैं वे दो प्रकार के हैं–(तजहा) जैसे–(रूवी य अरूवी य) एकरूपी अजीव और दूसरा अरूपी अजीव, रूपी शब्द का अर्थ–जिसमें वर्ण, गंध, रस और स्पर्श ये पाये जाते हैं ऐसा मूर्तिक पदार्थ और जिसमें ये चार गुण नहीं पाये जाये ऐसा अमूर्तिक पदार्थ अरूपी कहा गया है। मूल में अजीव के धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय और काल ऐसे पांच भेद हैं। इनमें पुद्गलास्तिकाय को छोड़कर बाकी चार अस्तिकाय अरूपी हैं और पुद्गलास्तिकाय रूपी है। (जे रूवी ते चउव्विहा पण्णत्ता) रूपी पुद्गलास्तिकाय चार प्रकार का कहा गया है (तंजहा) जैसे (खंधा, खंधदेसा, खंधपएसा, परमाणुपोग्गला) स्कंध, स्कंधदेश, स्कंधप्रदेश और परमाणुपुद्गल, तथा परमाणु समुदायात्मक जो अवयवी है वह स्कंध है, स्कंध के दो तीन आदि अपृथग्भूत जो विभाग हैं वे स्कंधदेश हैं' स्कंधदेश के जो निरंश विभाग हैं वे स्कंधप्रदेश हैं। तथा

જે અજીવ છે તે બે પ્રકારના છે (तजहा) જેમ કે (रूवीय अरूवी य) (૧) રૂપી અજીવ અને (૨) અરૂપી અજીવ જેમાં રૂપ, રસ, ગંધ સ્પર્શ હોય છે એવા મૂર્તિક પદાર્થને 'રૂપી' કહે છે, અને જેમાં એ ચાર ગુણ હોતા નથી એવાં અમૂર્તિક પદાર્થ ને "અરૂપી" કહે છે અજીવના મૂળ પાંચ ભેદ છે ૧, ધર્માસ્તિકાય, ૨, અધર્માસ્તિકાય, ૩ આકાશાસ્તિકાય ૪ પુદ્ગલાસ્તિકાય અને ૫, કાળ તેમાંના પુદ્ગલાસ્તિકાય સિવાયના ચાર અસ્તિકાય અરૂપી છે પણ પુદ્ગલાસ્તિકાય રૂપી છે (जे रूवी ते चउव्विहा पण्णत्ता !) રૂપી પુદ્ગલાસ્તિકાયના ચાર પ્રકાર નીચે પ્રમાણે છે (खंधा, खंधदेसा, खंधपएसा परमाणुपोग्गला) (૧) સ્કંધ (૨) સ્કંધદેશ, (૩) સ્કંધપ્રદેશ અને (૪) પરમાણુ પુદ્ગલપરમાણુના સમુદાયરૂપ જે અવયવી છે તેને સ્કંધ કહે છે સ્કંધના બે ત્રણ આદિ અપૃથક્રૂપ જે વિભાગો છે તેમને સ્કંધદેશ કહે છે સ્કંધદેશના જે નિરંશ (અવિભાજ્ય) વિભાગ છે તેમને સ્કંધપ્રદેશ કહે છે તથા અવયવ

वयविभाववर्जिताः परमाणवः एवेति, 'जे अरूवी ते पंचविहा पण्णत्ता' ये अरूपिणस्ते पञ्चविधाः प्रज्ञप्ताः 'तं जहा-धम्मत्थिकाए' इत्यादि. 'तं जहा धम्मत्थिकाए' तद् यथा धर्मास्तिकायः। धर्मास्तिकायः नास्ति धर्मास्तिकायस्य देशरूपः धर्मास्तिकायस्य प्रदेशाः२ अधर्मास्तिकायः अधर्मास्तिकायोऽपि नास्ति अधर्मास्तिकायस्य देशरूपः ३ अधर्मास्तिकायस्य प्रदेशाः४ अद्धा-कालस्तल्लक्षणः समयः-क्षणोऽद्धासमयः स चैक एव वर्तमानक्षणलक्षणः, अतीतानागतयोः सत्त्वाभावात्।

अवयव अवयवी भाव से वर्जित जो पुद्गल हैं वे परमाणुपुद्गल हैं। यह परमाणुपुद्गल वे ही लिये गये हैं जो स्कंध अवस्था को प्राप्त नहीं हुए हैं (जे अरूवी ते पंचविहा पण्णत्ता) तथा जो अरूपी अजीव है वह पांच प्रकार का कहा गया है-(तंजहा) जैसे (धम्मत्थिकाए, नो धम्मत्थिकायस्स देसे, धम्मत्थिकायस्स पएसा अधम्मत्थिकाए, नो अधम्मत्थिकायस्सदेसे, अधम्मत्थिकायस्स पएसा, अद्धासमए) धर्मास्तिकाय १ धर्मास्तिकाय के प्रदेश २ अधर्मास्तिकाय ३ अधर्मास्तिकाय के प्रदेश ४ और अद्धासमय ५ यहां पर धर्मास्तिकाय का देश और अधर्मास्तिकाय का देश नहीं माना गया है। ऐसे क्यों नहीं माना गया है सो इस विषय में स्पष्टीकरण इस प्रकार से है-जीव और पुद्गल अनेक हैं, इसलिये एक जीव जितने स्थान में समाता है अथवा एक पुद्गल जितने स्थान को रोकता है उतने स्थान में संकोच विस्तार गुण से युक्त होने के कारण अनेक जीव और पुद्गल समा सकते हैं। इस कारण जीव, जीव-

---

અને અવયવી ભાવથી રહિત જે પુદ્ગલ છે, તેને પરમાણુ પુદ્ગલ કહે છે અહીં પરમાણુ પુદ્ગલ તેમને જ કહ્યા છે કે જેઓએ સ્કંધ અવસ્થા પ્રાપ્ત કરી નથી.

(जे अरूवी ते पंचविहा पण्णत्ता) અરૂપી જીવના નીચે પ્રમાણે પાંચ પ્રકાર કહ્યા છે (धम्मत्थिकाए,नो धम्मत्थिकायस्स देसे, धम्मत्थिकायस्स पएसा) अधम्मत्थिकाए, नो अधम्मत्थिकायस्स देसे,अधम्मत्थिकायस्स पएसा अद्धासमये) (૧)ધર્માસ્તિકાય,(૨) ધર્માસ્તિકાયના પ્રદેશ (૩)અધર્માસ્તિકાય (૪) અધર્માસ્તિકાય પ્રદેશ અને(૫) અદ્ધાસમય (કાળ) અહીં ધર્માસ્તિકાયનો દેશ અને અધર્માસ્તિકાયનો દેશ ગ્રહણ કરવાનો નથી. અહીં ધર્માસ્તિકાયના અને અધર્માસ્તિકાયનાદેશને શા માટે અરૂપી અજીવના પ્રકાર ગણવામાં આવ્યા નથી તેનું સ્પષ્ટીકરણ નીચે પ્રમાણે છે-જીવ અને પુદ્ગલ અનેક છે તેથી એક જીવ જેટલા સ્થાનમાં સમાય છે અથવા એક પુદ્ગલ જેટલી જગ્યા રોકે છે, એટલી જગ્યામા સંકોચ વિસ્તાર ગુણથી યુક્ત

मज्ञप्ता 'त जहा' तद् यथा 'रूवीय अरूवीय' रूपिणश्चारूपिणश्च रूपिणः मूर्त्ताः पुद्गलाः अरूपिणोऽमूर्त्ताः धर्मास्तिकायादयः, 'जे रूवी ते चउव्विहा पण्णत्ता' ये रूपिणः पुद्गलास्ते चतुर्विधाः प्रज्ञप्ताः 'त जहा' तद् यथा 'खंधा खंधदेसा-खंधपएसा परमाणु पोग्गला' स्कन्धाः स्कन्धदेशाः स्कन्धप्रदेशाः परमाणुपुद्गलाः तत्र स्कन्धाः परमाणुसमुदायात्मका अवयविन इत्यर्थः स्कन्धदेशा द्व्यादयो विभागा स्कन्धप्रदेशास्तस्यैव निरंशा अवयवाः परमाणुपुद्गला अवयवा

अजीव हैं ये दो प्रकार के हैं-(तजहा) जैसे-(रूवी य अरूवी य) एकरूपी अजीव और दूसरा अरूपी अजीव, रूपी शब्द का अर्थ-जिसमें वर्ण, गंध, रस और स्पर्श ये पाये जाते हैं ऐसा मूर्तिक पदार्थ और जिसमें ये चार गुण नहीं पाये जाये ऐसा अमूर्तिक पदार्थ अरूपी कहा गया है। मूल में अजीव के धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय और काल ऐसे पांच भेद हैं। इनमें पुद्गलास्तिकाय को छोड़कर बाकी चार अस्तिकाय अरूपी हैं और पुद्गलास्तिकाय रूपी है। (जे रूवी ते चउव्विहा पण्णत्ता) रूपी पुद्गलास्तिकाय चार प्रकार का कहा गया है (तंजहा) जैसे (खंधा, खंधदेसा, खंधपएसा, परमाणुपोग्गला) स्कंध, स्कंधदेश, स्कंधप्रदेश और परमाणुपुद्गल, तथा परमाणु समुदायात्मक जो अवयवी है वह स्कंध है, स्कंध के दो तीन आदि अपृथग्भूत जो विभाग हैं वे स्कंधदेश हैं' स्कंधदेश के जो निरंश विभाग हैं वे स्कंधप्रदेश हैं। तथा

જે અજીવ છે તે બે પ્રકારના છે (तंजहा) જેમ કે (रूवीय अरूवी य) (१) રૂપી અજીવ અને (२) અરૂપી અજીવ. જેમાં રૂપ રસ, ગંધ સ્પર્શ હોય છે એવા મૂર્તિક પદાર્થને 'રૂપી' કહે છે, અને જેમાં એ ચાર ગુણ હોતા નથી એવાં અમૂર્તિક પદાર્થ ને "અરૂપી" કહે છે અજીવના મૂળ પાંચ ભેદ છે १, ધર્માસ્તિકાય, २, અધર્માસ્તિકાય, ३, આકાશાસ્તિકાય ४ પુદ્ગલાસ્તિકાય અને ५, કાળ તેમાંના પુદ્ગલાસ્તિકાય સિવાયના ચાર અસ્તિકાય અરૂપી છે પણ પુદ્ગલાસ્તિકાય રૂપી છે (जे रूवी ते चउव्विहा पण्णत्ता !) રૂપી પુદ્ગલાસ્તિકાયના ચાર પ્રકાર નીચે પ્રમાણે છે (खंधा, खंधदेसा, खंधपएसा परमाणुपोग्गला)(१) સ્કંધ, (२) સ્કંધદેશ, (३) સ્કંધપ્રદેશ અને (४) પરમાણુ પુદ્ગલપરમાણુના સમુદાય રૂપ જે અવયવી છે તેને સ્કંધ કહે છે સ્કંધના બે ત્રણ આદિ અપૃથક્‌રૂપ જે વિભાગો છે તેમને સ્કંધદેશ કહે છે સ્કંધદેશના જે નિરંશ (અવિભાજ્ય) વિભાગ છે તેમને સ્કંધપ્રદેશ કહે છે તથા અવયવ

वयविभाववर्जिताः परमाणवः एवेति, 'जे अरूवी ते पंचविहा पण्णत्ता' ये अरूपिणस्ते पञ्चविधाः प्रज्ञप्ताः 'तं जहा-धम्मत्थिकाए' इत्यादि. 'तं जहा धम्मत्थिकाए' तद् यथा धर्मास्तिकायः। धर्मास्तिकायः नास्ति धर्मास्तिकायस्य देशरूपः१ धर्मास्तिकायस्य प्रदेशाः२ अधर्मास्तिकायः अधर्मास्तिकायोऽपि नास्ति अधर्मास्तिकायस्य देशरूपः ३ अधर्मास्तिकायस्य प्रदेशाः४ अद्धा-कालस्तल्लक्षणः समयः-क्षणोऽद्धासमयः स चैक एव वर्तमानक्षणलक्षणः, अतीतानागतयोः सत्त्वाभावात् ॥

अवयव अवयवी भाव से वर्जित जो पुद्गल हैं वे परमाणुपुद्गल हैं। यहां परमाणुपुद्गल वे ही लिये गये हैं जो स्कंध अवस्था को प्राप्त नहीं हुए हैं। (जे अरूवी ते पंचविहा पण्णत्ता) तथा जो अरूपी अजीव है वह पांच प्रकार का कहा गया है-(तंजहा) जैसे (धम्मत्थिकाए, नो धम्मत्थिकायस्स देसे, धम्मत्थिकायस्स पएसा अधम्मत्थिकाए, नो अधम्मत्थिकायस्सदेसे, अधम्मत्थिकायस्स पएसा, अद्धासमए) धर्मास्तिकाय १ धर्मास्तिकाय के प्रदेश २ अधर्मास्तिकाय ३ अधर्मास्तिकाय के प्रदेश ४ और अद्धासमय ५ यहां पर धर्मास्तिकाय का देश और अधर्मास्तिकाय का देश नहीं माना गया है। ऐसे क्यों नहीं माना गया है सो इस विषय में स्पष्टीकरण इस प्रकार से है-जीव और पुद्गल अनेक हैं, इसलिये एक जीव जितने स्थान में समाता है अथवा एक पुद्गल जितने स्थान को रोकता है उतने स्थान में संकोच विस्तार गुण से युक्त होने के कारण अनेक जीव और पुद्गल समा सकते हैं। इस कारण जीव, जीव-

અને અવયવી ભાવથી રહિત જે પુદ્ગલ છે, તેને પરમાણુ પુદ્ગલ કહે છે અહી પરમાણુ પુદ્ગલ તેમને જ કહ્યા છે કે જેઓએ સ્કંધ અવસ્થા પ્રાપ્ત કરી નથી.

(जे अरूवी ते पंचविहा पण्णत्ता) અરૂપી અજીવના નીચે પ્રમાણે પાંચ પ્રકાર કહ્યા છે (धम्मत्थिकाए,नो धम्मत्थिकायस्स देसे, धम्मत्थिकायस्स पएसा) अधम्मत्थिकाए, नो अधम्मत्थिकायस्स देसे,अधम्मत्थिकायस्स पएसा अद्धासमये) (૧)ધર્માસ્તિકાય,(૨) ધર્માસ્તિકાયના પ્રદેશ (૩)અધર્માસ્તિકાય (૪) અધર્માસ્તિકાય પ્રદેશ અને(૫) અદ્ધાસમય (કાળ) અહીં ધર્માસ્તિકાયનો દેશ અને અધર્માસ્તિકાયનો દેશ ગ્રહણ કરવાનો નથી. અહીં ધર્માસ્તિકાયના અને અધર્માસ્તિકાયનાદેશને શા માટે અરૂપી અજીવના પ્રકાર ગણવામા આવ્યા નથી તેનું સ્પષ્ટીકરણ નીચે પ્રમાણે છે-જીવ અને પુદ્ગલ અનેક છે તેથી એક જીવ જેટલા સ્થાનમાં સમાય છે અથવા એક પુદ્ગલ જેટલી જગ્યા રોકે છે, એટલી જગ્યામા સંકોચ વિસ્તાર ગુણથી યુક્ત

अथ जीवानां पुद्गलानाञ्चाऽनेकत्वादेकस्य जीवस्य वा एकस्य पुद्गलस्य वा स्थाने संकोचादिकारणसद्भावादनेके जीवाः पुद्गलाश्च जीवदेशाः पुद्गलदेशा जीवप्रदेशाः पुद्गलप्रदेशाश्च तथा रूपिद्रव्यापेक्षया अजीवाश्चाऽजीवदेशाश्चाऽजीवप्रदेशाश्चेत्येवंरूपेण बहुवचनं सङ्गतमेव एकस्मिन्नप्यधिकरणे भेदवतो वस्तुत्रयस्य सद्भावात् धर्मास्तिकायादौ तु द्वितयमेव युक्तम् यतो यदा संपूर्णमेव वस्तु विवक्ष्यते तदा धर्मास्तिकायादि इत्युच्यते तस्य वस्तुनोंऽशमात्रस्य विवक्षायां तु तत्प्रदेशा इति तेषामवस्थितरूपत्वात् तदीयदेशकल्पना तु न युक्ता तेषामनवस्थितरूपत्वात् इति।

देश, जीवप्रदेश और पुद्गल, पुद्गलदेश एव पुद्गलप्रदेश ऐसा कथन बन जाता है। तात्पर्य कहने का यह है कि पुद्गल और जीव के प्रदेशों में संकोच और विस्तार होने की प्रदीपवत् शक्ति है स्वभाव है। अतः एक पुद्गल तथा एक जीव जितने स्थान में रहता है उतने ही स्थान में अनेक जीव और अनेकपुद्गल भी रह सकते हैं। इसलिये अनेक जीव और अनेक पुद्गल हो सकते हैं और इस कारण ऐसा बहुवचनवाला कथन संगत बन जाता है कि अनेक जीव, अनेकपुद्गल, अनेक जीवदेश, अनेक पुद्गलदेश, अनेक जीवप्रदेश और अनेक पुद्गलप्रदेश। तथा रूपीद्रव्य की अपेक्षा से भी ऐसा बहुवचनवाला कथन संगत बन जाता है अनेक अजीव, अनेक अजीवदेश, अनेक अजीवप्रदेश। क्यों कि एक ही अधिकरण (स्थान) में भेदवान् वस्तुत्रय का सद्भाव रह सकता है। धर्मास्तिकाय आदि में तो इस प्रकार से ३ तीन भेद संभवित न होकर

હોવાને કારણે અનેક જીવ અને અનેક પુદ્ગલનો સમાવેશ થઇ શકે છે તે કારણે જીવ, જીવદેશ, જીવપ્રદેશ અને પુદ્ગલ, પુદ્ગલ દેશ અને પુદ્ગલ પ્રદેશના વિષયમાં એવું કથન થઇ શકે છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે પુદ્ગલ અને જીવના પ્રદેશમાં સંકોચ અને વિસ્તાર પામવાની શક્તિ (સ્વભાવ) છે તેથી એક પુદ્ગલ તથા એક જીવ જેટલા સ્થાનમાં રહી શકે છે એટલા જ સ્થાનમાં અનેક જીવ અને અનેક પુદ્ગલ પણ રહી શકે છે તેથી અનેક જીવ અને અનેક પુદ્ગલ હોઇ શકે છે અને તે કારણે અનેક જીવ, અનેક પુદ્ગલ, અનેક જીવદેશ, અનેક પુદ્ગલદેશ, અનેક જીવપ્રદેશ અને અનેક પુદ્ગલપ્રદેશ એવું બહુવચનવાળું કથન સંગત બની જાય છે તથા રૂપી દ્રવ્યની અપેક્ષાએ પણ "અનેક અજીવ, અનેક અજીવદેશ, અનેક અજીવપ્રદેશ" એવું બહુવચનવાળું કથન સંગત બની જાય છે તેનું કારણ એ છે કે એકજ અધિકરણ (સ્થાન)માં ભેદવાળી ત્રણે વસ્તુનો સદ્ભાવ રહી શકે છે ધર્માસ્તિકાય આદિમાં તો આ પ્રકારના ત્રણ ભેદ સંભવિત નથી, પણ ઉપર

यद्यपि अनवस्थितरूपत्वं जीवादिदेशानामपि अस्ति तथापि तेषां जीवादिदेशानामेकस्मिन्नधिकरणे भेदेन सम्भवः प्ररूपणाकारणम् अत्र तु तन्नास्ति धर्मास्तिकायादेरेकत्वात् सङ्कोचादिधर्मत्वाभावाच्च अतएव धर्मास्तिकायादिदेशनिषेधार्थमाह- 'नो धम्मत्थिकायस्सदेसे तथा नो अधम्मत्थिकायस्स देसे इति।' धर्मास्तिका-

जो पूर्वोक्तरूप से दो भेद ही संभवित होते हैं उसका कारण यह है कि जब धर्मास्तिकायादिरूप संपूर्ण ही वस्तु विवक्षित होती है तभी धर्मास्तिकाय आदि ऐसा कहा जाता है और जब धर्मास्तिकायादि के अंशमात्र की विवक्षा होती है, तब धर्मास्तिकायादि के प्रदेश ऐसा कहा जाता है कारण कि वे प्रदेश अवस्थित रूप वाले होते हैं। धर्मास्तिकायादिके देशों की कल्पना इसलिये युक्तियुक्त नहीं है, कि वे उनके देश अनवस्थित रूप वाले होते हैं। यद्यपि जीवादिद्रव्यों के देश भी अनवस्थितरूपवाले होते हैं, तथापि उन जीवादिदेशों का एक ही अधिकरण में भिन्न २ रूप से रहना संभव होता है इसलिये उनकी भिन्न २ रूप से प्ररूपणा की गई है। धर्मास्तिकायादिक में तो ऐसी बात है नहीं कारण कि वे एक द्रव्य है। भेद विना के हैं। दूसरे उनमें संकोच आदि होने रूप धर्म नहीं है। इसी कारण धर्मास्तिकायादिकों के देशों को निषेध करने के लिये (नो धम्मत्थिकायस्स देसे, नो अधम्मत्थिकायस्स देसे) ऐसा कहा है। धर्मास्तिकाय आदि के देशों के

કહ્યા મુજબના બે ભેદ જ સંભવિત છે. તેનું કારણ એ છે કે જ્યારે ધર્માસ્તિકાયાદિ રૂપ સંપૂર્ણ વસ્તુની વાત કરવામાં આવતી હોય ત્યારે જ તેને માટે ધર્માસ્તિકાય આદિ શબ્દનો પ્રયોગ થાય છે. પણ જ્યારે ધર્માસ્તિકાય આદિના અંશ માત્રની જ વાત થતી હોય, ત્યારે તેમને ધર્માસ્તિકાય આદિના પ્રદેશ કહેવામાં આવે છે, કારણ કે તે પ્રદેશો અવસ્થિત રૂપવાળા હોય છે. ધર્માસ્તિકાયદિકોના દેશોની કલ્પના સુસંગત લાગતી નથી, કારણ કે એમના તે દેશો અનવસ્તિરૂપવાળા હોય છે જો કે જીવાદિક દ્રવ્યોના દેશ પણ અનવસ્તિરૂપવાળા હોય છે, તો પણ તે જીવાદિ દેશોનું એક જ સ્થાને ભિન્ન ભિન્ન રૂપે રહેવાનું સંભવિત હોય છે, તેથી તેમની ભિન્ન ભિન્ન રૂપે પ્રરૂપણા કરવામાં આવી છે. ધર્માસ્તિકાય આદિ દ્રવ્યમા તો એવી વાત જ શક્ય નથી, કારણ કે એકદ્રવ્યરૂપ છે–ભેદ વિનાના છે. વળી તેમનામાં સંકુચન આદિ ધર્મ (સ્વભાવ) હોતા નથી તે કારણે જ ધર્માસ્તિકાય આદિકોમાં દેશોનો નિષેધ કરવા માટે नो धम्मत्थिकायस्स [illegible] अधम्मत्थिकायस्स देसे) એવું કહે

अत्र जीवानां पुद्गलानाञ्चाऽनेकत्वादेकस्य जीवस्य वा एकस्य पुद्गलस्य वा स्थाने संकोचादिकारणसद्भावेनेके जीवाः पुद्गलाश्च जीवदेशाः पुद्गलदेशा जीव प्रदेशाः पुद्गलप्रदेशाश्च तथा रूपिद्रव्यापेक्षया अजीवाश्चाऽजीवदेशाश्चाऽजीवप्रदेशाश्चे त्येवंरूपेण बहुवचनं संगतमेव एकस्मिन्नप्यधिकरणे भेदवतो वस्तुत्रयस्य सद्भावात् धर्मास्तिकायादौ तु द्वितयमेव युक्तम् यतो यदा संपूर्णमेव वस्तु विवक्ष्यते तदा धर्मा स्तिकायादि इत्युच्यते तस्य वस्तुनोंऽशमात्रस्य विवक्षायां तु तत्प्रदेशा इति तेषा मवस्थितरूपत्वात् तदीयदेशकल्पना तु न युक्ता तेषामनवस्थितरूपत्वात् इति।

देश, जीवप्रदेश और पुद्गल, पुद्गलदेश एवं पुद्गलप्रदेश ऐसा कथन बन जाता है। तात्पर्य कहने का यह है कि पुद्गल और जीव के प्रदेशों में सकोच और विस्तार होने की प्रदीपवत् शक्ति है स्वभाव है। अतः एक पुद्गल तथा एक जीव जितने स्थान में रहता है उतने ही स्थान में अनेक जीव और अनेकपुद्गल भी रह सकते हैं। इसलिये अनेक जीव और अनेक पुद्गल हो सकते हैं और इस कारण ऐसा बहुवचनवाला कथन सगत बन जाता है कि अनेक जीव, अनेकपुद्गल, अनेक जीवदेश, अनेक पुद्गलदेश, अनेक जीवप्रदेश और अनेक पुद्गलप्रदेश। तथा रू-पीद्रव्य की अपेक्षा से भी ऐसा बहुवचनवाला कथन सगत बन जाता है अनेक अजीव, अनेक अजीवदेश, अनेक अजीवप्रदेश। क्यों कि एक ही अधिकरण (स्थान) में भेदवान् वस्तुत्रय का सद्भाव रह सकता है। धर्मास्तिकाय आदि में तो इस प्रकार से ३ तीन भेद संभवित न होकर

હોવાને કારણે અનેક જીવ અને અનેક પુદ્ગલનો સમાવેશ થઈ શકે છે તે કારણે જીવ, જીવદેશ, જીવપ્રદેશ અને પુદ્ગલ, પુદ્ગલ દેશ અને પુદ્ગલ પ્રદેશના વિષયમાં એવુ કથન થઈ શકે છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે પુદ્ગલ અને જીવના પ્રદેશમાં સંકોચ અને વિસ્તાર પામવાની શક્તિ (સ્વભાવ) છે તેથી એક પુદ્ગલ તથા એક જીવ જેટલા સ્થાનમાં રહી શકે છે એટલા જ સ્થાનમાં અનેક જીવ અને અનેક પુદ્ગલ પણ રહી શકે છે તેથી અનેક જીવ અને અનેક પુદ્ગલ હોઈ શકે છે અને તે કારણે અનેક જીવ, અનેક પુદ્ગલ, અનેક જીવદેશ. અનેક પુદ્ગલદેશ, અનેક જીવપ્રદેશ અને અનેક પુદ્ગલપ્રદેશ એવુ બહુવચનવાળું કથન સગત બની જાય છે તથા રૂપી દ્રવ્યની અપેક્ષાએ પણ "અનેક અજીવ, અનેક અજીવદેશ, અનેક અજીવપ્રદેશ" એવુ બહુવચનવાળુ કથન સગત બની જાય છે તેનું કારણ એ છે કે એક જ અધિકરણ (સ્થાન)માં ભેદવાળી ત્રણે વસ્તુનો સદ્ભાવ રહી શકે છે ધર્માસ્તિકાય આદિમાં તો આ પ્રકારના ત્રણ ભેદ સભવિત નથી, પણ ઉપર

अष्टविधा लोकस्थितिः प्रज्ञप्ताः 'तं जहा' तद्यथा-' आगासपइट्ठिए वाए ' आकाश-प्रतिष्ठितो वातः-आकाशे प्रतिष्ठा स्थितिर्विद्यते यस्यासौ आकाशप्रतिष्ठित आकाशाधिकरणको वायुस्तनुवातघनवातरूपः, तस्यावकाशान्तरोपरिस्थितत्वात्। ननु यथा वायुराकाशे प्रतिष्ठितस्तथा आकाशस्यापि किंचिदधिष्ठानमस्ति न वा?, अस्ति चेत्तदा तदधिकरणं मूलकृता कुतो न दर्शितम्, नास्ति इति चेत् तदा

उत्तर इस प्रकारसे दिया कि हे गौतम! लोक की स्थिति आठ प्रकारकी कही गई है। (तं जहा) वह आठ प्रकार की स्थिति इस तरहसे है-(आगासपइट्ठिए वाए, वायपइट्ठिए उदही, उदहिपइट्ठिया पुढवी, पुढविपइट्ठिया तसा थावरा पाणा, अजीवा जीवपइट्ठिया, जीवा कम्मपइट्ठिया, अजीवा जीवसंगहिया, जीवा कम्मसंगहिया) आकाशप्रतिष्ठित वात (१), वातप्रतिष्ठित उदधि (२), उदधिप्रतिष्ठित पृथिवी(३), पृथिवीप्रतिष्ठित त्रस स्थावर प्राण-जीव(४), जीवप्रतिष्ठित अजीव(५), कर्मप्रतिष्ठित जीव(६), जीवसगृहीत अजीव (७), और कर्मसगृहीत जीव (८)। आकाश में जिसकी स्थिति है ऐसा तनुवातरूप और घनवातरूप जो वायु है वह आकाशप्रतिष्ठितवायु है। यह वायु अवकाशान्तर के ऊपर स्थित रहता है।

शंका-जिस प्रकारसे वायु आकाशमें प्रतिष्ठित कहा गया है उसी प्रकार से आकाश को भी किसी और में प्रतिष्ठित बताना चाहिये। यदि इस पर कहा जाय कि आकाश का आधार और कोई नहीं है तो हम इस पर यों कह सकते है कि जिस प्रकार बिना आधार के वायुके

લોકની સ્થિતિ આઠ પ્રકારની કહી છે (तंजहा) તે આઠ પ્રકાર આ પ્રમાણે છે-(आगासपइट्ठिए वाए, वायपइट्ठिए उदही, उदहीपइट्ठिया पुढवी, पुढवीपइट्ठिया तसा थावरा पाणा, अजीवा जीवपइट्ठिया, जीवा कम्मपइट्ठिया, अजीवा जीवसंगहिया, जीवा कम्मसंगहिया) (१) આકાશપ્રતિષ્ઠિતવાયુ, (२) વાયુપ્રતિષ્ઠિત ઉદધિ, (૩) ઉદધિપ્રતિષ્ઠિતપૃથ્વી, (૪) પૃથ્વીપ્રતિષ્ઠિત ત્રસ સ્થાવર પ્રાણિઓ, (૫) જીવ પ્રતિષ્ઠિત અજીવ, (૬) કર્મપ્રતિષ્ઠિત જીવ, (૭) જીવસંગૃહીત અજીવ અને (૮) કર્મસંગૃહીત જીવ

આકાશના આધારે જેની સ્થિતિ છે એવા જે તનુવાત અને ઘનવાત તેનુ નામ આકાશપ્રતિષ્ઠિત વાયુ છે. તે વાયુ અવકાશાન્તર ઉપર રહેલ છે.

શંકા—જેવી રીતે વાયુને આકાશના આધારે પ્રતિષ્ઠિત (રહેલો) કહ્યો છે, એજ પ્રમાણે આકાશને પણ કોઇ બીજા પદાર્થના આધારે પ્રતિષ્ઠિત બતાવવું જોઇએ. જો તેના જવાબમાં એમ કહેવામાં આવે કે આકાશનો કોઇ આધાર નથી. તો તેની સામે એ દલીલ કરી શકાય કે જેવી રીતે આધાર વગર

पस्य देशनिषेधे भगवत: प्ररूपणैव कारणमिति। 'धम्मत्थिकायस्स पएसा' धर्मास्तिकायस्य प्रदेशाः, तथा 'अधम्मत्थिकाए' अधर्मास्तिकायः 'नो अधम्मत्थिकायस्स देसे' नो अधर्मास्तिकायस्य देशः, 'अधम्मत्थिकायस्स पएसा' अधर्मास्तिकायस्य प्रदेशाः 'अद्धासमए' अद्धासमय अद्धा कालस्तत्स्वरूपः समयः क्षण इति अद्धासमय स च काल एक एव वर्तमानक्षण अतीतानागतयोरसत्त्वात् एव मकारेण

निषेध में भगवान् की प्ररूपणा ही कारण है। इस तरह धर्मास्तिकाय १, धर्मास्तिकाय के प्रदेश २, अधर्मास्तिकाय ३ अधर्मास्तिकाय के प्रदेश ४ और अद्धासमय ५ अरूपीद्रव्य के ये पांच प्रकार वर्णित किये गये हैं। इनका वर्णन से ही लोकाकाश विषयक ६ छह प्रश्नों का उत्तर हो जाता है। अद्धासमय का तात्पर्य क्षण से है। और यह क्षण वर्तमान समय रूप होता है-और वर्तमान समय एक क्षणरूप होता है। अतीतकाल और अनागतकाल का असत्त्व होने से सद्भाव ही नहीं माना गया है। एक क्षण रूप वर्तमानकाल को ही अद्धासमयरूप माना गया है। दूसरी जगह अरूपी दश प्रकार के कहे हुए हैं-जैसे-आकाशास्तिकाय, १ आकाशास्तिकायदेश २ आकाशास्तिकायप्रदेश ३ धर्मास्तिकाय ४ धर्मास्तिकायदेश ५ धर्मास्तिकायप्रदेश ६ अधर्मास्तिकाय ७ अधर्मास्तिकायदेश ८ अधर्मास्तिकायप्रदेश ९, अद्धासमय १०,।

તેમાં કારણુ છે ધર્માસ્તિકાય આદિના દેશોના નિષેધમાં ભગવાનની પ્રરૂપણા જ કારણરૂપ છે આ રીતે (૧) ધર્માસ્તિકાય, (૨) અધર્માસ્તિકાયના પ્રદેશો, (૩) અધર્માસ્તિકાય (૪) અધર્માસ્તિકાયના પ્રદેશ (૫) અદ્ધાકાળ (વર્તમાન કાળ) એ પ્રમાણે અરૂપી દ્રવ્યના પાંચ પ્રકાર વર્ણવ્યા છે તેમનું વર્ણન કરવાથી લોકાકાશ વિષેના છ પ્રશ્નોના ઉત્તર મળી જાય છે અદ્ધાસમય એટલે ક્ષણ અને તે ક્ષણ વર્તમાન સમય રૂપ હોય છે-અને વર્તમાન સમય એક ક્ષણ રૂપ હોય છે ભૂતકાળ અને ભવિષ્યકાળનું અસત્ત્વ (અભાવ-અનસ્તિત્વ) હોવાથી, તેમનો સદ્ભાવ જ માનવામાં આવ્યો નથી એક ક્ષણરૂપ વર્તમાન કાળને જ અદ્ધાસમય રૂપ માન્યો છે બીજી જગ્યાએ અરૂપીને નીચે પ્રમાણે કહ્યા છે—(૧) આકાશાસ્તિકાય, (૨) આકાશાસ્તિકાય દેશ, (૩) આકાશાસ્તિકાય પ્રદેશ, (૪) ધર્માસ્તિકાય, (૫) ધર્માસ્તિકાય દેશ, (૬) ધર્માસ્તિકાય પ્રદેશ, (૭), અધર્માસ્તિકાય, (૮) અધર્માસ્તિકાય દેશ, (૯) અધર્માસ્તિકાય પ્રદેશ, અને (૧૦) અદ્ધા સમય (વર્તમાન કાળ)

लोकाकाशविषयकप्रश्नषट्कस्याप्युत्तरं कृतमिति । अन्यत्र तु अरूपिणो दश प्रकारा वर्णिताः यथा आकाशास्तिकायः, तद्देशः तत्प्रदेशश्च एवं धर्मास्तिकायाधर्मास्तिकायौ तयोर्देशप्रदेशाः समयश्चेति मिलित्वा दश भवन्ति, इह तु सभेदस्याऽऽकाशस्याधिकरणरूप्यरूपितया विवक्षितत्वात् इति आकाशाधेयाः सप्तैव वक्तव्या भवन्ति न च ते सप्तापीह विवक्षिता अविवक्षाकारणस्य अग्रे वक्ष्यमाणत्वात्,

अथ लोकाकाशविषयकप्रश्नषट्कस्यापि उत्तर कृत्वा अलोकाकाशविषयकं प्रश्नं कुर्वन्नाह–'अलोगागासे' इत्यादि. 'अलोगागासे णं भंते' अलोकाकाशः खलु

शंका–जब इस प्रकार से अरूपी के दूसरी जगह१० भेद कहे गये हैं तो फिर यहां उसके पांच भेद कहने का कारण क्या है ?

उत्तर—यहां पर तीन भेद वाले आकाश को आधाररूप से विवक्षित किया गया है इस कारण उसके तीन भेद यहां गिने नहीं गये हैं। यहां तो जो आधेय हैं उनके ही भेदों का विचार किया गया है। अतः धर्मास्तिकाय अधर्मास्तिकाय और अद्धासमयरूप काल इन आधेय रूप अरूपी तीनों का ही विचार करने में आया है इस विचार में पूर्वोक्त १० दस भेदों में से आकाशास्तिकाय के तीन ३ भेद निकाल देने पर बाकी सात ७ बचे रहते हैं। सो इनमें भी सात भेदों की यहां विवक्षा नहीं हुई है इसका कारण आगे प्रकट किया जायगा। जिन भेदों की विवक्षा की गई है उन्हें ही यहां प्रकट किया गया है।

अब अलोकाकाश के विषय में प्रश्न करते हुए गौतम स्वामी प्रभु से पूछते हैं (अलोगागासे णं भंते ! किं जीवा पुच्छा तह चेव) अलोकाकाश में

શંકા—જો બીજી જગ્યાએ અરૂપીના દસ પ્રકાર કહ્યા છે તો અહીં શા માટે તેના પાંચ ભેદ કહ્યા છે ? ઉત્તર–અહીં ત્રણ ભેદવાળા આકાશને આધાર રૂપ ગણુવામા આવેલ છે, તેથી તેના ત્રણ ભેદને ગણુતરીમાં લીધા નથી. અહીં તો જે આધેય છે તેમના ભેદોનો જ વિચાર કરવામાં આવ્યો છે. તેથી ધર્માસ્તિકાય, અધર્માસ્તિકાય અને અદ્ધાસમય રૂપ કાળ એ આધેય રૂપઅરૂપી ત્રણેનો જ અહીં વિચાર કરવામા આવ્યો છે. આ રીતે ઉપર કહેલા ૧૦ દસ ભેદોમાથી આકાશાસ્તિકાયના ત્રણ ભેદોને કાઢી નાખવાથી બાકી સાત ભેદ રહે છે. તે સાત ભેદને બદલે પાચ ભેદોનુ વર્ણન શા માટે કરવામા આવ્યુ છે તે આગળ બતાવવામા આવ્યુ છે. એટલે કે ધર્માસ્તિકાયના દેશ અને અધર્માસ્તિકાયના દેશ અને અધર્માસ્તિકાયના દેશને પણ ગણુવામા આવ્યા નથી. બાકીના પાંચને જ અરૂપીના ભેદ તરીકે ગણુાવ્યા છે

હવે ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને અલોકાકાશ ને વિષે પ્રશ્ન પૂછે છે–(अलोगागासे ण भंते ! किं जीवा पुच्छा तह चेव) અલોકાકાશમા જીવ અને

भदन्त ! ' किं जीवा पुच्छा तह चेव तथा चैव यथा लोकाकाशे प्रश्न कृत तथा अलोकाकाशेऽपि प्रश्नो प्रावव्यस्तथाहि ' अलोगागासे णं भंते किं जीवा जीवदेसा जीवप्पएसा अजीवा अजीवदेसा अजीवप्पएसा " एवं रूपेणालोकाकाशविषयक पूर्ववदेव प्रश्नः । एतेषा षण्णामपि निषेधं कुर्वन्नेव भगवानाह— गोयमा' इत्यादि ' गोयमा ' हे गौतम ! ' नो जीवा जाव नो अजीवप्पएसा ' नो जीवाः यावत् नो अजीवप्रदेशाः हे गौतम ! योऽयमलोकाकाशः स जीवानां तद्देशानां तत्प्रदेशानामजीवानां तद्देशानां तत्प्रदेशानां नास्ति आधार इत्यर्थः अत्र यावत्पदेन जीवदेशप्रदेशाजीवतद्देशतत्प्रदेशानां संग्रहो भवतीति । यदि अलोकाकाशो न जीवादीनामाधारभूतस्तदा किं स्वरूपस्तत्राह-' एगे ' इत्यादि । ' एगे अजीवदव्वदेसे ' एकोऽजीवद्रव्यदेशः अलोकाकाशस्य देशत्वं लोकाकाशद्रव्यस्य भाग-

भी जीव और अजीवादि को लेकर पहिले लोकाकाशो की तरह ६ छह प्रश्न कर लेना चाहिये-वे इस प्रकार से-(अलोगागासे णं भंते ! किं जीवा, जीवदेसा, जीवप्पएसा, अजीवा, अजीवदेसा, अजीवपएसा, ? हे भदन्त ! अलोकाकाश में जीव, जीवदेश, जीवप्रदेश, अजीव, अजीवदेश और अजीवप्रदेश है क्या ? इसका उत्तर देते हुए प्रभु गौतम से कहते है (गोयमा !) हे गौतम ! (नो जीवा जाव नो अजीवपएसा) अलोकाकाश में न जीव के देश है, न जीव के प्रदेश है, न अजीव है, न अजीव के देश है और न अजीव के प्रदेश भी है । यहां (यावत्) पद से जीवदेश तत् प्रदेश, अजीवदेश और तत् प्रदेश इनका संग्रह हुआ है । प्रश्न-यदि अलोकाकाश जीवादिक द्रव्यों का आधारभूत नहीं है तो फिर यह किं स्वरूप है-? समाधान-(एगे अजीवदव्वदेसे) यह अलोकाकाश एक अजीवद्रव्यदेशरूप है । यहां जो अलोकाकाश में अ

અજીવ આદિ છે કે નહીં અહીં પણ લોકાકાશને વિષે જે ૬ છ પ્રશ્નો આગળ પૂછ્યા છે એજ અલોકાકાશ વિષે પૂછવા જોઇએ. તે પ્રશ્નો આ પ્રમાણે છે-(અલોગાગાસે ण भंते ! किं जीवा, जीवदेसा, जीवपएसा, अजीवा, अजीवदेसा, अजीवपएसा) હે ભદન્ત ! અલોકાકાશમાં જીવ, જીવદેશ, જીવ પ્રદેશ, અજીવ, અજીવદેશ અજીવપ્રદેશ હોય છે કે નહીં ? (गोयमा) હે ગૌતમ ! (नो जीवा जाव नो अजीव पएसा) ના અલોકાકાશમાં જીવદ્રવ્યો નથી, જીવદેશ નથી, અજીવદ્રવ્ય નથી અજીવદેશ નથી અજીવપ્રદેશ નથી અહીં (जाव) (પર્યન્ત) પદથી જીવદેશ જીવપ્રદેશ, અજીવ, અજીવદેશ અને અજીવપ્રદેશ ગ્રહણ કરાયા છે

પ્રશ્ન—જો અલોકાકાશ જીવાદિદ્રવ્યોના આધારરૂપ ન હોય તો તેનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

लोकाकाशविषयकप्रश्नषट्कस्याप्युत्तरं कृतमिति । अन्यत्र तु अरूपिणो दश प्रकारा वर्णिताः यथा आकाशास्तिकायः, तद्देशः तत्प्रदेशश्च एवं धर्मास्तिकायाधर्मास्तिकायौ तयोर्देशप्रदेशाः समयश्चेति मिलित्वा दश भवन्ति, इह तु सभेदस्याऽऽकाशस्याधिकरणरूप्यरूपितया विवक्षितत्वात् इति आकाशाधेयाः सप्तैव वक्तव्या भवन्ति न च ते सप्तापीह विवक्षिता अविवक्षाकारणस्य अग्रे वक्ष्यमाणत्वात्,

अथ लोकाकाशविषयकप्रश्नषट्कस्यापि उत्तर कृत्वा अलोकाकाशविषयकं प्रश्नं कुर्वन्नाह-'अलोगागासे' इत्यादि. 'अलोगागासे णं भंते' अलोकाकाशः खलु

शंका-जब इस प्रकार से अरूपी के दूसरी जगह१० भेद कहे गये हैं तो फिर यहां उसके पांच भेद कहने का कारण क्या है ?

उत्तर—यहां पर तीन भेद वाले आकाश को आधाररूप से विवक्षित किया गया है इस कारण उसके तीन भेद यहां गिने नहीं गये हैं। यहां तो जो आधेय हैं उनके ही भेदों का विचार किया गया है। अतः धर्मास्तिकाय अधर्मास्तिकाय और अद्धासमयरूप काल इन आधेय रूप अरूपी तीनों का हो विचार करने में आया है इस विचार में पूर्वोक्त १० दस भेदों में से आकाशास्तिकाय के तीन ३ भेद निकाल देने पर बाकी सात ७ बचे रहते हैं। सो इनमें भी सात भेदों की यहां विवक्षा नहीं हुई है इसका कारण आगे प्रकट किया जायगा । जिन भेदों की विवक्षा की गई है उन्हें ही यहां प्रकट किया गया है ।

अब अलोकाकाश के विषय में प्रश्न करते हुए गौतम स्वामी प्रभु से पूछते हैं (अलोगागासे णं भंते ! किं जीवा पुच्छा तह चेव) अलोकाकाश में

શંકા—જો બીજી જગ્યાએ અરૂપીના દસ પ્રકાર કહ્યા છે તે અહીં શા માટે તેના પાચ ભેદ કહ્યા છે ? ઉત્તર—અહી ત્રણ ભેદવાળા આકાશને આધાર રૂપ ગણવામા આવેલ છે, તેથી તેના ત્રણ ભેદને ગણતરીમા લીધા નથી. અહીં તો જે આધેય છે તેમના ભેદોનો જ વિચાર કરવામાં આવ્યો છે. તેથી ધર્માસ્તિકાય, અધર્માસ્તિકાય અને અદ્ધાસમય રૂપ કાળ એ આધેય રૂપઅરૂપી ત્રણેનો જ અહી વિચાર કરવામા આવ્યો છે. આ રીતે ઉપર કહેલા ૧૦ દસ ભેદોમાથી આકાશાસ્તિકાયના ત્રણ ભેદોને કાઢી નાખવાથી બાકી સાત ભેદ રહે છે. તે સાત ભેદને બદલે પાચ ભેદોનું વર્ણન શા માટે કરવામા આવ્યુ છે તે આગળ બતાવવામા આવ્યુ છે. એટલે કે ધર્માસ્તિકાયના દેશ અને અધર્માસ્તિકાયના દેશ અને અધર્માસ્તિકાયના દેશને પણ ગણવામા આવ્યા નથી બાકીના પાચને જ અરૂપીના ભેદ તરીકે ગણ્યાં છે

હવે ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને અલોકાકાશ ને વિષે પ્રશ્ન પૂછે છે—(अलोगागासे ण भंते ! किं जीवा पुच्छा तह चेव) અલોકાકાશમાં જીવ અને

भदन्त ! ' किं जीवा पुच्छा तह चेव तया चेव यथा लोकाकाशे प्रश्न कृतः तथा अलोकाकाशेऽपि प्रश्नो ज्ञातव्यस्तथाहि ' अलोगागासे णं भंते किं जीवा जीव देसा जीवप्पएसा अजीवा अजीवदेसा अजीवप्पएसा " एवं रूपेणालोकाकाशविष यक पूर्ववदेव प्रश्न । एतषां षण्णामपि निषेधं कुर्वन्नेव भगवानाह— गोयमा' इत्यादि ' गोयमा ' हे गौतम ! ' नो जीवा जाव नो अजीवप्पएसा ' नो जीवाः यावत् नो अजीवप्रदेशा हे गौतम ! योऽयमलोकाकाश स जीवानां तद्देशानां तत्प्रदेशानामजीवानां तद्देशानां तत्प्रदेशानां नास्ति आधार इत्यर्थः अत्र यावत्पदेन जीवदेशप्रदेशाजीवतद्देशतत्प्रदेशानां सग्रहो भवतीति । यदि अलोकाकाशो न जीवादीनामाधारभूतस्तदा किं स्वरूपस्तत्राह-' एगे ' इत्यादि । ' एगे अजीव दव्वदेसे ' एकोऽजीवद्रव्यदेशः अलोकाकाशस्य देशत्वं लोकाकाशद्रव्यस्य भाग-

भी जीव और अजीवादि को लेकर पहिले लोकाकाश की तरह ६ छह प्रश्न कर लेना चाहिये-वे इस प्रकार से-(अलोगागासे ण भंते ! किं जीवा, जीवदेसा, जीवप्पएसा, अजीवा, अजीवदेसा, अजीवपएसा, ? हे भद न्त ! अलोकाकाश में जीव, जीवदेश, जीवप्रदेश, अजीव, अजीवदेश और अजीवप्रदेश है क्या ? इसका उत्तर देते हुए प्रभु गौतम से कह ते हैं (गोयमा !) हे गौतम ! (नो जीवा जाव मो अजीवपएसा) अ लोकाकाश में न जीव के देश है, न जीव के प्रदेश है, न अजीव है, न अजीव के देश है और न अजीव के प्रदेश भी है । यहां (यावत्) पद से जीवदेश तत् प्रदेश, अजीवदेश और तत् प्रदेश इनका संग्रह हुआ है। प्रश्न—यदि अलोकाकाश जीवादिक द्रव्यों का आधारभूत नहीं है तो फिर वह किं स्वरूप है ? समा धान-(एगे अजीवदव्वदेसे) वह अलोकाकाश एक अजीवद्रव्यदेशरूप है । यहां जो अलोकाकाश में अ-

અજીવ આદિ છે કે નહીં અહીં પણ લોકાકાશને વિષે જે ૬ છ પ્રશ્નો આગળ પૂછ્યા છે એજ અલોકાકાશ વિષે પૂછવા જોઇએ. તે પ્રશ્નો આ પ્રમાણે છે-(अलोगागासे ण भंते ! किं जीवा, जीवदेसा, जीवपएसा, अजीवा, अजीवदेसा, अजीवपएसा હે ભદન્ત ! અલોકાકાશમાં જીવ, જીવદેશ, જીવ પ્રદેશ, અજીવ, અજીવદેશ અજીવપ્રદેશ હોય છે કે નહીં ? (गोयमा) હે ગૌતમ ! (नो जीवा जाव नो अजीव पएसा) ના, અલોકાકાશમા જીવદ્રવ્યો નથી, જીવદેશ નથી, અજીવદ્રવ્ય નથી અજીવદેશ નથી અજીવપ્રદેશ નથી અહીં (जाव) (પર્યન્ત) પદથી જીવદેશ જીવપ્રદેશ, અજીવ, અજીવદેશ અને અજીવપ્રદેશ ગ્રહણ કરાયા છે

પ્રશ્ન—જો અલોકાકાશ જીવાદિદ્રવ્યોના આધારરૂપ ન હોય તો તેનું સ્વરૂપ કેવું છે ?

रूपत्वात् कथितम् 'अगुरुलहुए' अगुरुलघुकः नो गुरुर्नैवा लघुरलोकाकाश इत्यर्थः तथा 'अणंतेहिं अगुरुलहुयगुणेहिं संजुत्ते' अनन्तैरगुरुलघुकगुणैः संयुक्तः अनन्तैः स्वपर्यायपरपर्यायैर्गुणैरगुरुलघुस्वभावैः संयुक्त इत्यर्थः 'सव्वागासे अणंतभागूणे'

जीवद्रव्य को देशत्व कहा गया है वह लोकालोकरूप अकाशद्रव्य का भागरूप होने से कहा गया है यह अलोकाकाश न गुरु है, न लघु है, अतःअगुरुलघुरूप है। (अणंतेहिं अगुरुलहुयगुणेहिं संजुत्ते) अनत अगुरुलघुस्वभाववाले गुणों से यह युक्त है। अर्थात्- अगुरुलघु स्वभाववाले स्वपर्यायरूप एवं परपर्यायरूप गुणों से यह सहित है। तात्पर्य कहने का यह है कि परिणमन से शून्य कोई भी वस्तु नहीं है। आकाश-अलोकाकाश भी वस्तुरूप है अतः उसमें भी परिणमन होता है। और यह परिणमन न लघु होता है और न गुरु ही होता है। इस परिणमन का नाम ही स्वपर्याय परपर्याय है। परपर्याय का तात्पर्य पर के निमित्त से जो परिणमन होता है वह है। यद्यपि अलोकाकाश में आकाश के सिवाय और कोई द्रव्य नहीं है-पर फिर भी वहां जो परपर्यायरूप परिणमन होता रहता है वह लोकाकाश के संबंध को लेकर ही माना गया है। तात्पर्य कहने का यह है कि आकाश एक अखंड समूचा द्रव्य है उसमें जितने भाग में धर्मादिक द्रव्य रहते हैं उतने भाग को लोका-

---

ઉત્તર—(एगे अजीवदव्वदेसे) તે અલોકાકાશ એક અજીવ દ્રવ્યદેશરૂપછે. અહીં જે અલોકાકાશમાં અજીવદ્રવ્યનું દેશત્વ કહેલું છે તે લોકાલોકરૂપ આકાશદ્રવ્યના ભાગરૂપ હોવાથી કહેલ છે. તે અલોકાકાશ ગુરુ નથી, લઘુ નથી, પણ અગુરુલઘુરૂપ છે. (अणंते हिं अगुरुलहुयगुणेहिं संजुत्ते) તે અનંત અગુરૂલઘુ સ્વભાવવાળા ગુણોથી યુક્ત છે. એટલે કે અગુરુલઘુ સ્વભાવવાળા સ્વપર્યાયરૂપ અને પરપર્યાયરૂપ ગુણોથી તે યુક્ત છે કહેવાનો ભાવાર્થ એ છે કે પરિણમન વિનાની કોઈપણ વસ્તુ હોતી નથી આકશ અને અલોકાકાશ પણ વસ્તુરૂપ છે. તેથી તેમનામાં પણ પરિણમન હોય છે તે પરિણમન લઘુ પણ હોતું નથી અને ગુરુ પણ હોતું નથી તે પરિણમનનું નામ જ સ્વપર્યાય પરપર્યાય છે પરને નિમિત્તે જે પરિણમન થાય છે તેને પરપર્યાય કહે છે જો કે અલોકાકાશમાં આકાશ સિવાય બીજું કોઈ દ્રવ્ય હોતું નથી, તો પણ ત્યાં જે પરપર્યાયરૂપ પરિણમન થતું રહે છે તે લોકાકાશના સંબધને લીધેજ થાય છે એમ માનવામાં આવ્યું છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે આકાશ એક અખંડ દ્રવ્ય છે--તેના જેટલા ભાગમા ધર્માદિક દ્રવ્ય રહે છે એટલા ભાગને લોકાકાશ કહે છે

सर्वाकाशेऽनन्तभागोनं अलोकाकाशं, अलोकाकाशापेक्षया लोकाकाशस्यानन्तभागरूपत्वात् ॥ सू०४ ॥

॥ धर्मास्तिकायादीनां प्रमाणस्पर्शनयोर्विचारः ।

अथ अनन्तरप्रकरणे उक्तान् धर्मास्तिकायादीन् प्रमाणतो निरूपयन्नाह 'धम्मत्थिकाएणं भंते' इत्यादि ॥

मूलम्—धम्मत्थिकाएण भंते! के महालए पण्णत्ते गोयमा! लोए लोयमेत्ते लोयप्पमाणे लोयफुडे लोयं चेव फुसित्ताणं

काश कह दिया गया है और जितने में ये नहीं रहते उतने को अलोकाकाश कहा गया है। तो जिस प्रकार एक अखंड बांस के छोर को हिलाने पर पूरा बांस हिल जाया करता है उसी प्रकार लोकाकाश में जो परपदार्थों को लेकर परिणमन होता है—वह पूरे आकाशमात्र में होता है। नहीं तो फिर अलोकाकाश में कालद्रव्य तो है नहीं—वहां फिर स्वपर्यायरूप सदृश परिणमन भी जो कि प्रत्येक क्षण २ में होता रहता है कैसे माना जायगा। परिणमनमात्र कालद्रव्य के निमित्त से होता है स्वतः नहीं होता। इस तरह अलोकाकाश स्वपरपर्यायरूप अनन्तगुणों से जो कि अगुरुलघुस्वभाववाले होते हैं युक्त है। (सव्वागासे अणंतभागूणे) यह अलोकाकाश सर्वाकाश में अनन्त भागन्यून है, क्यों कि अलोकाकाश की अपेक्षा लोकाकाश अनन्तभागरूप माना गया है अतः अलोकाकाश उतने भाग से न्यून कहा गया है सू०॥ ४ ॥

॥ आकाशनिरूपण समाप्त ॥

અને જેટલા ભાગમાં તે રહેતું નથી તેટલા ભાગને અલોકાકાશ કહે છે. તો જેવી રીતે એક અખંડ વાંસના છેડાને હલાવવાથી આખો વાંસ હલ્યા કરે છે, એજ પ્રમાણે પરપદાર્થોને કારણે લોકાકાશમાં જે પરિણમન થાય છે તે અખંડ (પૂરે પૂરા) આકાશમાં થાય છે અલોકાકાશમાં કાળદ્રવ્ય તો છે જ નહીં—તો ત્યાં પ્રત્યેક ક્ષણે થયા કરતાં સ્વપર્યાયરૂપ સદૃશ (સમાન) પરિણમન કેવી રીતે સંભવી શકે? દરેક પરિણમન કાળદ્રવ્યને કારણે થતું હોય છે, સ્વતઃ (આપો આપ) થતું નથી. આ રીતે અલોકાકાશ અગુરુલઘુ સ્વભાવવાળા સ્વપર્યાય અને પરપર્યાયરૂપ અનંત ગુણોથી યુક્ત છે (सव्वागासे अणंतभागूणे) તે અલોકાકાશ સર્વાકાશમાં અનંત ભાગ ન્યૂન છે કારણ કે અલોકાકાશ કરતાં લોકાકાશ અનંત ભાગરૂપ માનવામાં આવ્યું છે, તેથી અલોકાકાશને એટલા ભાગ પ્રમાણ ન્યૂન કહેલ છે

॥ આકાશ નિરૂપણ સમાપ્ત ॥

रूपत्वात् कथितम् 'अगुरुलहुए' अगुरुलघुकः नो गुरुर्नेवा लघुरलोकाकाश इत्यर्थः तथा 'अणंतेहिं अगुरुलहुयगुणेहिं संजुत्ते' अनन्तैरगुरुलघुकगुणैः संयुक्तः अनन्तैः स्वपर्यायपरपर्यायैर्गुणैरगुरुलघुस्वभावैः संयुक्त इत्यर्थः 'सव्वागासे अणंतभागूणे'

जीवद्रव्य का देशत्व कहा गया है वह लोकालोकरूप अकाशद्रव्य का भागरूप होने से कहा गया है यह अलोकाकाश न गुरु है, न लघु है, अतःअगुरुलघुरूप है। (अणंतेहिं अगुरुलहुयगुणेहिं संजुत्ते) अनंत अगुरुलघुस्वभाववाले गुणों से यह युक्त है। अर्थात्- अगुरूलघु स्वभाववाले स्वपर्यायरूप एवं परपर्यायरूप गुणों से यह सहित है। तात्पर्य कहने का यह है कि परिणमन से शून्य कोई भी वस्तु नहीं है। आकाश-अलोकाकाश भी वस्तुरूप है अतः उसमें भी परिणमन होता है। और यह परिणमन न लघु होता है और न गुरु ही होता है। इस परिणमन का नाम ही स्वपर्याय परपर्याय है। परपर्याय का तात्पर्य पर के निमित्त से जो परिणमन होता है वह है। यद्यपि अलोकाकाश में आकाश के सिवाय और कोई द्रव्य नहीं है-पर फिर भी वहां जो परपर्यायरूप परिणमन होता रहता है वह लोकाकाश के संबंध को लेकर ही माना गया है। तात्पर्य कहने का यह है कि आकाश एक अखंड समूचा द्रव्य है उसमें जितने भाग में धर्मादिक द्रव्य रहते हैं उतने भाग को लोका-

---

ઉત્તર—(एगे अजीवदव्वदेसे) તે અલોકાકાશ એક અજીવ દ્રવ્યદેશરૂપછે. અહી જે અલોકાકાશમાં અજીવદ્રવ્યનું દેશત્વ કહેલું છે તે લોકાલોકરૂપ આકાશદ્રવ્યના ભાગરૂપ હોવાથી કહેલ છે. તે અલોકાકાશ ગુરુ નથી, લઘુ નથી, પણ અગુરુલઘુરૂપ છે. (अणंते हिं अगुरुलहुयगुणेहिं संजुत्ते) તે અનંત અગુરૂલઘુ સ્વભાવવાળા ગુણોથી યુક્ત છે. એટલે કે અગુરુલઘુ સ્વભાવવાળા સ્વપર્યાયરૂપ અને પરપર્યાયરૂપ ગુણોથી તે યુક્ત છે. કહેવાને ભાવાર્થ એ છે કે પરિણુમન વિનાની કોઈપણુ વસ્તુ હોતી નથી આકશ અને અલોકાકાશ પણુ વસ્તુરૂપ છે. તેથી તેમનામાં પણુ પરિણુમન હોય છે તે પરિણુમન લઘુ પણુ હોતું નથી અને ગુરુ પણુ હોતું નથી તે પરિણુમનનું નામ જ સ્વપર્યાય પરપર્યાય છે પરને નિમિત્તે જે પરિણુમન થાય છે તેને પરપર્યાય કહે છે જો કે અલોકાકાશમાં આકાશ સિવાય બીજું કોઈ દ્રવ્ય હોતું નથી, તો પણુ ત્યાં જે પરપર્યાયરૂપ પરિણુમન થતું રહે છે તે લોકાકાશના સંબધને લીધેજ થાય છે એમ માનવામાં આવ્યું છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે આકાશ એક અખડ દ્રવ્ય છે--તેના જેટલા ભાગમા ધર્માદિક દ્રવ્ય રહે છે એટલા ભાગને લોકાકાશ કહે છે

सर्वाकाशेऽनन्तभागोन अलोकाकाशः, अलोकाकाशापेक्षया लोकाकाशस्यानन्तभागरूपत्वात् ॥ सू०४ ॥

॥ धर्मास्तिकायादीनां प्रमाणस्पर्शनयोर्निरूपणम् ।

अथ अनन्तरप्रकरणे उक्तान् धर्मास्तिकायादीन् प्रमाणतो निरूपयन्नाह 'धम्मत्थिकाएणं भंते ' इत्यादि ॥

मूलम्—धम्मत्थिकाएण भंते? के महालए पण्णत्ते गोयमा ! लोए लोयमेत्ते लोयप्पमाणे लोयफुडे लोयं चेव फुसित्ताणं

काश कह दिया गया है और जितने में ये नहीं रहते उतने को अलोकाकाश कहा गया है। तो जिस प्रकार एक अखंड बांस के छोर को हिलाने पर पूरा बांस हिल जाया करता है उसी प्रकार लोकाकाश में जो परपर्यायों को लेकर परिणमन होता है- वह पूरे आकाशमात्र में होता है। नहीं तो फिर अलोकाकाश में कालद्रव्य तो है नहीं-वहां फिर स्वपर्याय रूप सदृश परिणमन भी जो कि प्रत्येक क्षण २ में होता रहता है कैसे माना जायगा। परिणमनमात्र कालद्रव्य के निमित्त से होता है स्वतः नहीं होता। इस तरह अलोकाकाश स्वपरपर्यायरूप अनन्तगुणों से जो कि अगुरुलघुस्वभाववाले होते हैं युक्त है। (सव्वागासे अणंतभागूणे) यह अलोकाकाश सर्वाकाश में अनन्त भागन्यून है, क्यों कि अलोकाकाश की अपेक्षा लोकाकाश अनन्तभागरूप माना गया है अतः अलोकाकाश उतने भाग से न्यून कहा गया है सू०॥ ४ ॥

॥ आकाशनिरूपण समाप्त ॥

અને જેટલા ભાગમાં તે રહેતું નથી તેટલા ભાગને અલોકાકાશ કહે છે. તો જેવી રીતે એક અખંડ વાંસના છેડાને હલાવવાથી આખો વાંસ હલ્યા કરે છે, એજ પ્રમાણે પરપર્યાયોને કારણે લોકાકાશમાં જે પરિણમન થાય છે તે અખંડ (પૂરે પૂરા) આકાશમાં થાય છે અલોકાકાશમાં કાળદ્રવ્ય તો છે જ નહીં-તો ત્યાં પ્રત્યેક ક્ષણે થયા કરતાં સ્વપર્યાયરૂપ સદૃશ (સમાન) પરિણમન કેવી રીતે સંભવી શકે ? દરેક પરિણમન કાળદ્રવ્યને કારણે થતું હોય છે, સ્વત. (જાતે જ) થતું નથી. આ રીતે અલોકાકાશ અગુરુલઘુ સ્વભાવવાળા સ્વપર્યાય અને પરપર્યાયરૂપ અનંત ગુણોથી યુક્ત છે (સવ્વાગાસે અણંતભાગૂણે) તે અલોકાકાશ સર્વાકાશમાં અનંત ભાગ ન્યૂન છે, કારણ કે અલોકાકાશ કરતાં લોકાકાશ અનંત ભાગરૂપ માનવામાં આવ્યું છે, તેથી અલોકાકાશ તેને જેટલા ભાગ પ્રમાણ ન્યૂન કહેલ છે

॥ આકાશ નિરૂપણ સમાપ્ત ॥

चिट्ठइ एवमहमत्थिकाए लोयागासे जीवत्थिकाए पोग्गलत्थिकाए पंचवि एक्काभिलावा अहो लोएण भंते धम्मत्थिकायस्स केवइयं फुसति? गोयमा! सातिरेगं अद्धं फुसइ, तिरियलोएणं भंते! पुच्छा? गोयमा! असंखेज्जइ भागं फुसइ उड्ढलोएणं भंते! पुच्छा? गोयमा! देसूणं अद्धं फुसइ, इमाणं भंते! रयणप्पभा पुढवी धम्मत्थिकायस्स किं संखेज्जभागं फुसइ, असंखेज्जभागं फुसइ, संखेज्जे भागे फुसइ, असंखेज्जे भागे फुसइ, सव्वं फुसइ? गोयमा! णो संखेज्जभागं फुसइ. असंखेज्जभागं फुसइ, णो संखेज्जे भागे णो असंखेज्जे भागे फुसइ, नो सव्वं फुसइ। इमीसे णं भंते! रयणप्पभाए पुढवीए घणोदही धम्मत्थिकायस्स पुच्छा किं संखेज्जइभागं फुसइ? जहा रयणप्पभा तहा घणोदही घणवाय-तणुवाया वि। इमीसे णं भंते? रयणप्पभाए पुढवीए उवासंतरे धम्मत्थिकायस्स किं संखेज्जइभागं फुसइ.असंखेज्जइ भागं फुसइ जाव सव्वं फुसइ? गोयमा! संखेज्जइभागं फुसइ णो असंखेज्जइ भागं फुसइ. णो संखेज्जे णो असंखेज्जे णो सव्वं फुसइ उवासंतराइं सव्वाइं. जहा रयणप्पभाए पुढवीए वत्तव्वया भाणिया एवं जाव अहे सत्तमाए जंबूदीवाइया दीवा, लवणसमुद्दाइया समुद्दा, एवं सोहम्मे कप्पे जाव इसी पब्भारा पुढवी फुसइ ते सव्वे वि असंखेज्जइभागं फुसंति सेसा पडिसेहियव्वा. एवं अधम्मत्थिकाए एवं लोयागासे वि, गाहा-पुढवोदहीघणतणू, कप्पा गेवेज्जणुत्तरा सिद्धी संखेज्जइ भागं अंतरेसु सेसा असंखेज्जा ॥ सू० ५ ॥

॥ बितियं सयं समत्तं ॥

मनधिकरणस्य वायोर्यथा न संभवस्तथाऽनधिकरणस्याकाशस्यापि कुतः सम्भवः ? इति चेदाह—वस्तुस्वभावस्य वैचित्र्येण अधिकरणमन्तरेणापि आकाशस्य प्रतिष्ठितत्वसंभवात्, नहि एकस्य पदार्थस्य यादृश स्वरूप, सर्वस्यापि पदार्थस्य तादृगेव स्वरूप स्यादिति नियम । अन्यथा वस्तुवैचित्र्यमेव न स्यात् । यथा भवति किंचिद्वस्तु चक्षुषा ग्राह्य किंचिद्रसनया ग्राह्यम्, सम न कश्चिदपि भवति भङ्ग, यत् रसो न कथं चक्षुर्ग्राह्य, रूपं वा कथ न रसनया गृह्यते, तत्कस्माद्धेतो ? वस्तुस्वभावस्य

होने की सभवना नहीं उसी प्रकारसे विना आधारके आकाश का भी सद्भाव कैसे हो सकता है। यदि कहा जाय कि आकाशका भी अन्य अधिष्ठान आधार है तो फिर उसे यहां सूत्रकार ने क्यों नहीं दिखलाया ? उसे अवश्य दिखाना चाहिये था।

उत्तर—यह तो वस्तुके स्वभाव की विचित्रता है जो आकाशरूप वस्तु विना दूसर आधार के भी प्रतिष्ठित रहती है। ऐसा तो कोई नियम नहीं है कि एक पदार्थका जैसा स्वभाव हो दूसरे पदार्थका भी वैसा ही स्वभाव होना चाहिये। यदि ऐसा ही होने लगे तो फिर वस्तुओं में जो वैचित्र्य पाया जाता है वह नहीं पाया जा सकेगा। यह वस्तु स्वभावकी ही तो विचित्रता है जैसे कोई वस्तु रसना इन्द्रियसे ग्राह्य होती है और कोई वस्तु चक्षुइन्द्रिय से ग्रहण करने में आती है। यदि ऐसा न होता तो फिर रस चक्षुइन्द्रिय से ग्राह्य हो जाता और रूप रसना इन्द्रिय से ग्राह्य हो जाता। जो नहीं होता है तो इसका कारण वस्तु स्वभाव की विचित्रता ही तो है। तो जिस प्रकारसे यहां पर वस्तुस्वभाव

વાયુનું અસ્તિત્વ સભવી શકતુ નથી. તેવી રીતે આધાર વિના આકાશનું અસ્તિત્વ પણ સભવી શકતુ નથી ? તેના જવાબમા જો એમ કહો કે આકાશનો આધાર પણ કોઈ અન્ય પદાર્થ છે, તો સૂત્રકારે અહીં શા માટે તેનો ઉલ્લેખ કર્યો નથી ? અથવા તો તેનો ઉલ્લેખ અવશ્ય થવો જોઈતો હતે

ઉત્તર—આકાશરૂપ વસ્તુ બીજી કોઈ પણ વસ્તુના આધાર વગર પણ રહી શકે છે, એતો વસ્તુના સ્વભાવની વિચિત્રતા દર્શાવે છે એવો કોઈ નિયમ નથી કે એક પદાર્થનો જેવો સ્વભાવ હોય તેવો જ સ્વભાવ બીજા પદાર્થનો પણ હોવો જોઈએ. જો એવું જ બનતું હોય તો જુદી જુદી વસ્તુઓમાં જે જુદી જુદી વિચિત્રતા જોવા મળે છે તે વિચિત્રતા સભવત જ નહીં. વસ્તુ સ્વભાવની જ એ વિચિત્રતા છે કે કોઈ વસ્તુ જીહ્વા ઇન્દ્રિય વડે ગ્રાહ્ય હોય છે તો કોઈ વસ્તુ ચક્ષુઈન્દ્રિય વડે ગ્રાહ્ય હોય છે જો એવું બનતું ન હોત તો ખાટમીઠા રસને ચક્ષુઇન્દ્રિય વડે ગ્રહણ કરી શકાત અને રૂપને જીહ્વા ઇન્દ્રિય વડે જાણી શકાત પણ એવું બનતું નથી. તેનુ કારણ વસ્તુસ્વભાવની વિચિત્રતા જ છે

चिट्ठइ एवमहमत्थिकाए लोयागासे जीवत्थिकाए पोग्गलत्थि-काए पंचवि एक्काभिलावा अहो लोएणं भंते धम्मत्थिकायस्स केवइयं फुसति? गोयमा! सातिरेगं अद्धं फुसइ, तिरियलोएणं भंते! पुच्छा? गोयमा! असंखेज्जइ भागं फुसइ उड्ढलोएणं भंते! पुच्छा? गोयमा! देसूणं अद्धं फुसइ, इमाणं भंते! रयणप्पभा पुढवी धम्मत्थिकायस्स किं संखेज्जभागं फुसइ, असंखेज्जभागं फुसइ, संखेज्जे भागे फुसइ, असंखेज्जे भागे फुसइ, सव्वं फुसइ? गोयमा! णो संखेज्जभागं फुसइ. असंखेज्ज-भागं फुसइ, णो संखेज्जे भागे णो असंखेज्जे भागे फुसइ, नो सव्वं फुसइ। इमीसे णं भंते! रयणप्पभाए पुढवीए घणोदही धम्मात्थिकायस्स पुच्छा किं संखेज्जइभागं फुसइ? जहा रयण-प्पभा तहा घणोदही घणवाय-तणुवाया वि। इमीसे णं भंते? रयणप्पभाए पुढवीए उवासंतरे धम्मत्थिकायस्स किं संखेज्जइ-भागं फुसइ.असंखेज्जइ भागं फुसइ जाव सव्वं फुसइ? गोयमा! संखेज्जइभागं फुसइ णो असंखेज्जइ भागं फुसइ. णो संखेज्जे णो असंखेज्जे णो सव्वं फुसइ उवासंतराइं सव्वाइं. जहा रय-णप्पभाए पुढवीए वत्तव्वया भाणिया एवं जाव अहे सत्तमाए जंबूदीवाइया दीवा, लवणसमुद्दाइया समुद्दा, एवं सोहम्मे कप्पे जाव इसी पब्भारा पुढवी फुसइ ते सव्वे वि असंखेज्जइभागं फुसंति सेसा पडिसेहियव्वा. एवं अधम्मत्थिकाए एवं लोया-गासे वि, गाहा–पुढवोदहीघणतणू, कप्पा गेवेज्जणुत्तरा सिद्धी संखेज्जइ भागं अंतरेसु सेसा असंखेज्जा ॥ सू० ५ ॥

॥ बितियं सयं समत्तं ॥

छाया-धर्मास्तिकायः खलु भदन्त ! कियान्महालयः प्रज्ञप्तः ? गौतम ! लोकः लोकमात्रः लोकप्रमाणको लोकस्पृष्टो लोकं चैव स्पृष्ट्वा खलु तिष्ठति एवमधर्मास्तिकायो लोकाकाशो जीवास्तिकायः पुद्गलास्तिकाय पञ्चाऽपि एकाभिलापाः अधोलोकः खलु भदन्त ! धर्मास्तिकायस्य कियन्तं स्पृशति ? गौतम ! सातिरेकमर्धं

धर्मास्तिकायादिक के प्रमाण का और स्पर्शना का विचार—

अनन्तर प्रकरण में कथित धर्मादिक द्रव्यों का कथन प्रमाण की अपेक्षा से अब सूत्रकार करते हैं—(धम्मत्थिकाए ण भंते !) इत्यादि।

सूत्रार्थ—(धम्मत्थिकाए णं भंते ! के महालए पण्णत्ते) हे भदन्त ! धर्मास्तिकाय कितना बडा कहा गया है ? (गोयमा) हे गौतम ! (लोए, लोयमेत्ते, लोयप्पमाणे लोयफुडे, लोयं चेव फुसित्ताणं चिट्ठइ) यह धर्मास्तिकाय लोकरूप है, लोकमात्र है, लोकप्रमाण है, लोक स्पृष्ट है और लोकको स्पर्श करके रहा हुआ है। (एवमहम्मत्थिकाए लोयागासे जीवत्थिकाए पोग्गलत्थिकाए पंच वि एक्काभिलावा) इसी तरह अधर्मास्तिकाय, लोकाकाश, जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय के विषय में भी जानना चाहिये। इन पांचों का एक ही जैसा अभिलाप है (अहो लोए णं भंते ! धम्मत्थिकायस्स केवइयं फुसति) हे भदन्त ! अधोलोक धर्मास्तिकाय के कितने भाग का स्पर्श करता है ? (गोयमा) हे गौतम ! (सातिरेगं अद्धं फुसइ) अधोलोक धर्मास्तिकाय के कुछ अधिक आधे

धर्मास्तिकाय आदिना प्रमाण अने स्पर्शनानुं निरूपण—

पूर्व प्रकरणमां जे धर्मादिक द्रव्योनी वात करवामां आवी छे, तेमना प्रमाणनुं आ प्रकरणमां सूत्रकारे निरूपण कर्युं छे–(धम्मत्थिकाए णं भंते !) इत्यादि

सूत्रार्थ—(धम्मत्थिकाए णं भंते ! के महालए पण्णत्ते ?) हे भदन्त ! धर्मास्तिकाय केटलुं मोटुं होय छे ? (गोयमा !) हे गौतम ! (लोए, लोयमेत्ते, लोयप्पमाणे, लोयफुडे, लोय चेव फुसित्ताणं चिट्ठइ) ते धर्मास्तिकाय लोकरूप छे, लोकमात्र छे, लोकप्रमाण छे, लोकस्पृष्ट छे, अने लोकने स्पर्शीने रहेलुं छे (एव महम्मत्थिकाए लोयागासे जीवत्थिकाए पोग्गलत्थिकाए पच वि एक्काभिलावा) एज प्रमाणे अधर्मास्तिकाय, लोकाकाश, जीवास्तिकाय अने पुद्गलास्तिकायना विषयमां पण वक्तव्य (कथन) समजवुं जोइए के पहेलां वचन सरखुं ज समजवुं (अहोलोए णं भंते ! धम्मत्थिकायस्स केवइयं फुसति ?) हे भदन्त ! अधोलोक धर्मास्तिकायना केटला भागने स्पर्श करे छे ? (गोयमा !) हे गौतम !(सातिरेगं अद्धं फुसइ) अधोलोक धर्मास्तिकायना अर्धा करतां वधारे भागने स्पर्श

स्पृशति तिर्यग्लोकः खलु भदन्त! पृच्छा? गौतम! असंख्येयभागं स्पृशति। ऊर्ध्वलोकः खलु भदन्त! पृच्छा? गौतम! देशोनमर्धं स्पृशति इयं खलु भदन्त! रत्नप्रभा पृथिवी धर्मास्तिकायस्य किं संख्येयभागं स्पृशति असंख्येयभागं स्पृशति संख्येयान् भागान् स्पृशति असंख्येयान् भागान् स्पृशति सर्वं स्पृशति? गौतम! नो संख्येयभागं

भाग का स्पर्श करता है। (तिरियलोए णं भंते! पुच्छा) हे भदन्त! तिर्यग् लोक धर्मास्तिकाय के कितने भाग का स्पर्श करता है? (गोयमा! असंखेज्जइभाग फुसइ) हे गौतम! तिर्यग् लोक धर्मास्तिकाय के असंख्यातवें भाग का स्पर्श करता है। (उड्ढे लोए णं भंते! पुच्छा) हे भदन्त! उर्ध्वलोन धर्मास्तिकाय के कितने भाग का स्पर्श करता है? (गोयमा) हे गौतम! उर्ध्वलोक धर्मास्तिकाय के (देसूणं अद्धं फुसइ) कुछ कम आधे भाग का स्पर्श करता है। (इमा णं भंते! रयणप्पभा पुढवी धम्मत्थिकायस्स किं संखेज्जइभागं फुसइ, असंखेज्जइभागं फुसइ, संखेज्जे भागे फुसइ, असंखेज्जे भागे फुसइ, सव्वं फुसइ) हे भदन्त! यह जो रत्नप्रभा नामकी पृथिवी है वह धर्मास्तिकाय के संख्यातवें भाग का स्पर्श करती है, कि असंख्यातवें भाग का स्पर्श करती है? अथवा उसके संख्यातभागों का स्पर्श करती है या असंख्यातभागों का स्पर्श करती है? अथवा कि समस्त पूरे का स्पर्श करती है? (गोयमा!) हे गौतम! (णो सखेज्जाइभागं फुसइ

કરે છે.(तिरियलोए णं भंते! पुच्छा) હે ભદન્ત! અધોલોક ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે? (गोयमा!) હે ગૌતમ! (असंखेज्जइभागं फुसइ) તિર્યગ્લોક ધર્માસ્તિકાયના અસખ્યાતમાં ભાગને સ્પર્શે છે. (उड्ढलोए णं भंते! पुच्छा) હે ભદન્ત! ઉર્ધ્વલોક ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે? (गोयमा) હે ગૌતમ! (देसूणं अद्धं फुसइ) ઉર્ધ્વલોક તેના અર્ધ કરતાં ઓછા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે (इमाण भंते! रयणप्पभापुढवी धम्मथिकायस्स किं संखेज्जइभागं फुसइ, असंखेज्जइभागं फुसइ, सखज्जे भागे फुसइ, असंखज्जे भागे फुसइ, सव्वं फुसइ?) હે ભદન્ત! રત્નપ્રભા પૃથ્વી ધર્માસ્તિકાયના સંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે, કે અસખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે, કે તેના સંખ્યાત ભાગોનો સ્પર્શ કરે છે, તેના અસખ્યાત ભાગોનો સ્પર્શ કરે છે, કે સમસ્ત ભાગનો સ્પર્શ કરે છે? (गोयमा!) હે ગૌતમ! (णो संखेज्जइ भागं फुसइ,

छाया-धर्मास्तिकायः खलु भदन्त ! कियान्महालय प्रज्ञप्तः ? गौतम ! लोकः लोकमात्रः लोकप्रमाणको लोकस्पृष्टो लोकं चैव स्पृष्ट्वा खलु तिष्ठति एवमधर्मास्तिकायो लोकाकाशो जीवास्तिकाय पुद्गलास्तिकायः पञ्चाऽपि एकाभिलापाः अधोलोकः खलु भदन्त ! धर्मास्तिकायस्य कियन्तं स्पृशति ? गौतम ! सातिरेकमर्धं

धर्मास्तिकायादिक के प्रमाण का और स्पर्शना का विचार—

अनन्तर प्रकरण में कथित धर्मादिक द्रव्यों का कथन प्रमाण की अपेक्षा से अब सूत्रकार कहते हैं—(धम्मत्थिकाए ण भंते !) इत्यादि।

सूत्रार्थ — (धम्मत्थिकाए ण भंते ! के महालए पण्णत्ते) हे भदन्त ! धर्मास्तिकाय कितना बडा कहा गया है ? (गोयमा) हे गौतम ! (लोए, लोयमेत्ते, लोयप्पमाणे लोयफुडे, लोयं चेव फुसित्ताण चिट्ठइ) यह धर्मास्तिकाय लोकरूप है, लोकमात्र है, लोकप्रमाण है, लोक स्पृष्ट है और लोकको स्पर्श करके रहा हुआ है। (एवमहम्मत्थिकाए लोयागासे जीवत्थिकाए पोग्गलत्थिकाए पंच वि एकाभिलावा) इसी तरह अधर्मास्तिकाय, लोकाकाश, जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय के विषय में भी जानना चाहिये। इन पांचों का एक ही जैसा अभिलाप है (अहो लोए णं भंते ! धम्मत्थिकायस्स केवइय फुसंति) हे भदन्त ! अधोलोक धर्मास्तिकाय के कितने भाग का स्पर्श करता है ? (गोयमा) हे गौतम ! (सातिरेगं अद्धं फुसइ) अधोलोक धर्मास्तिकाय के कुछ अधिक आधे

ધર્માસ્તિકાય આદિના પ્રમાણ અને સ્પર્શનાનું નિરૂપણ—

પૂર્વ પ્રકરણમાં જે ધર્માદિક દ્રવ્યોની વાત કરવામાં આવી છે, તેમના પ્રમાણનું આ પ્રકરણમાં સૂત્રકારે નિરૂપણ કર્યું છે-(धम्मत्थिकाए णं भंते !) ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—(धम्मत्थिकाए णं भंते ! के महालए पण्णत्ते ?) હે ભદન્ત ! ધર્માસ્તિકાય કેટલું મોટું હોય છે ? (गोयमा !) હે ગૌતમ ! (लोए, लोयमेत्ते, लोयप्पमाणे, लोयफुडे, लोयं चेव फुसित्ताणं चिट्ठइ) તે ધર્માસ્તિકાય લોકરૂપ છે, લોકમાત્ર છે, લોકપ્રમાણ છે, લોકસ્પૃષ્ટ છે, અને લોકને સ્પર્શીને રહેલું છે (एवमहम्मत्थिकाए लोयागासे जीवत्थिकाए पोग्गलत्थिकाए प च वि एकाभिलावा) એજ પ્રમાણે અધર્માસ્તિકાય, લોકાકાશ, જીવાસ્તિકાય અને પુદ્ગલાસ્તિકાયના વિષયમાં પણ વક્તવ્ય (કથન) સમજવું એટલે કે પાંચેનું વર્ણન સરખું જ સમજવું (अहोलोए णं भंते ! धम्मत्थिकायस्स केवइय फुसंति ?) હે ભદન્ત ! અધોલોક ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે ? (गोयमा !) હે ગૌતમ !(सातिरेगं अद्धं फुसइ) અધોલોક ધર્માસ્તિકાયના અર્ધા કરતાં વધારે ભાગનો સ્પર્શ

स्पृशति तिर्यग्लोकः खलु भदन्त! पृच्छा? गौतम! असंख्येयभागं स्पृशति। ऊर्ध्वलोकः खलु भदन्त! पृच्छा? गौतम! देशोनमर्धं स्पृशति इयं खलु भदन्त! रत्नप्रभा पृथिवी धर्मास्तिकायस्य किं संख्येयभागं स्पृशति असंख्येयभागं स्पृशति संख्येयान् भागान् स्पृशति असंख्येयान् भागान् स्पृशति सर्वं स्पृशति? गौतम! नो संख्येयभागं

भाग का स्पर्श करता है। (तिरियलोए णं भंते! पुच्छा) हे भदन्त! तिर्यग् लोक धर्मास्तिकाय के कितने भाग का स्पर्श करता है? (गोयमा! असंखेज्जइभाग फुसइ) हे गौतम! तिर्यग् लोक धर्मास्तिकाय के असंख्यातवें भाग का स्पर्श करता है। (उड्ढे लोए णं भंते! पुच्छा) हे भदन्त! उर्ध्वलोन धर्मास्तिकाय के कितने भाग का स्पर्श करता है? (गोयमा) हे गौतम! उर्ध्वलोक धर्मास्तिकाय के (देसूणं अद्धं फुसइ) कुछ कम आधे भाग का स्पर्श करता है। (इमा णं भंते! रयणप्पभा पुढवी धम्मत्थिकायस्स किं संखेज्जइभागं फुसइ, असंखेज्जइभागं फुसइ, संखेज्जे भागे फुसइ, असंखेज्जे भागे फुसइ, सव्वं फुसइ) हे भदन्त! यह जो रत्नप्रभा नामकी पृथिवी है वह धर्मास्तिकाय के संख्यातवें भाग का स्पर्श करती है, कि असंख्यातवें भाग का स्पर्श करती है? अथवा उसके संख्यातभागों का स्पर्श करती है या असंख्यातभागों का स्पर्श करती है? अथवा कि समस्त पूरे का स्पर्श करती है? (गोयमा!) हे गौतम! (णो सखेज्जाइभागं फुसइ

કરે છે (तिरियलोए णं भंते! पुच्छा) હે ભદન્ત! અધોલોક ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે? (गोयमा!) હે ગૌતમ! (असंखेज्जइभागं फुसइ) તિર્યગ્લોક ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાતમાં ભાગને સ્પર્શે છે. (उड्ढेलोए णं भते! पुच्छा) હે ભદન્ત! ઉર્ધ્વલોક ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે? (गोयमा) હે ગૌતમ! (देसूणं अद्धं फुसइ) ઉર્ધ્વલોક તેના અર્ધ કરતાં ઓછા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે (इमाणं भंते! रयणप्पभापुढवी धम्मत्थिकायस्स किं संखेज्जइभागं फुसइ, असंखेज्जइभागं फुसइ, संखज्जे भागे फुसइ, असंखज्जे भागे फुसइ, सव्वं फुसइ?) હે ભદન્ત! રત્નપ્રભા પૃથ્વી ધર્માસ્તિકાયના સંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે, કે અસંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે, કે તેના સંખ્યાત ભાગોનો સ્પર્શ કરે છે, તેના અસંખ્યાત ભાગોનો સ્પર્શ કરે છે, કે સમસ્ત ભાગનો સ્પર્શ કરે છે? (गोयमा!) હે ગૌતમ! (णो संखेज्जइ भागं फुसइ,

स्पृशति असंख्येयभागं स्पृशति नो संख्येयान् भागान् नो असंख्येयान् भागान् स्पृशति नो सर्वं स्पृशति एतस्याः खलु भदन्त ! रत्नप्रभाया पृथिव्याः घनोदधिः धर्मास्तिकायस्य पृच्छा किं संख्येयभागं स्पृशति ? यथा रत्नप्रभा तथा घनोदधि घनवात तनुवाता अपि । एतस्या खलु भदन्त ! रत्नप्रभायाः पृथिव्या अव काशान्तर धर्मास्तिकायस्य किं सङ्ख्येयभागं स्पृशति यावत् सर्वं स्पृशति ? गौतम !

असखेज्जइभागं फुसइ, णो संखेज्जे, णो असंखेज्जे नो सव्व फुसइ) यह रत्नप्रभानाम की पृथिवी धर्मास्तिकाय के संख्यातवें भागका स्पर्श नहीं करती है किन्तु उसके असंख्यातवें भाग का ही स्पर्श करती है। वह उसके सख्यातभागों असंख्यातभागों का भी स्पर्श नहीं करती है और न समस्त पूर्ण रूप में ही उसका वह स्पर्श करती है। (इमीसे ण भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए घणोदही, धम्मत्थिकायस्स पुच्छा किं संखेज्जइभागं फुसइ) हे भदन्त ! इस रत्नप्रभा पृथिवी का जो घनोदधि है वह धर्मास्तिकाय के कितने भाग का स्पर्श करता है-क्या वह उसके संख्यातवें भाग का स्पर्श करता है ? (जहा रयणप्पभा तहा घणोदही-घणवाय तणुवाया वि) हे गौतम ! जिस प्रकार रत्नप्रभापृथिवी धर्मास्तिकाय के असंख्यातवें भाग का स्पर्श करती है उसी प्रकार से घनोदधि भी उसके असंख्यातवें भाग का ही स्पर्श करता है इसी तरह से घनवात और तनुवात भी उसके असंख्यातवें भाग का स्पर्श करते हैं। (इमीसे ण भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए उवासंतरे धम्मत्थिकायस्स किं संखेज्ज

असंखेज्जइ भाग फुसइ, णो संखेज्ज ना असंखेज्ज नो सव्व फुसइ) રત્નપ્રભા પૃથ્વી ધર્માસ્તિકાયના સંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરતી નથી, પણ તેના અસંખ્યાતમાં ભાગનો જ સ્પર્શ કરે છે તે તેના સંખ્યાતમા ભાગનો કે અસંખ્યાત ભાગનો પણ સ્પર્શ કરતી નથી. તે તેના સમસ્ત ભાગનો પણ સ્પર્શ કરતી નથી (इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए घणोदही, धम्मत्थिकायस्सपुच्छा किं संखेज्जइ भाग फुसइ) હે ભદન્ત ! તે રત્નપ્રભા પૃથ્વીનો જે ઘનોદધિ છે તે ધર્માસ્તિ કાયના કેટલા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે ? શું તે તેના સંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે ? (जहा रयणप्पभा तहा घणोदही-घणवायतणुवाया वि) હે ગૌતમ ! જે પ્રમાણે રત્નપ્રભા પૃથ્વી ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાતમા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે, એજ પ્રમાણે ઘનોદધિ પણ તેના અસંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે એજ પ્રમાણે ઘનવાત અને તનુવાત પણ તેના અસંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે (इमीसे ण भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए उवासंतरे धम्मत्थिकायस्स किं

संख्येयभागं स्पृशति नो असंख्येयभागं स्पृशति नो संख्येयान् भागान् नो असंख्येयान् भागान् नो सर्वं स्पृशति अवकाशान्तराणि सर्वाणि यथा रत्नप्रभायाः पृथिव्याः वक्तव्यता भणिता एवं यावदधः सप्तम्याः जंबूद्वीपादिका द्वीपाः लव-

इभागं फुसइ, असंखेज्जइभागं फुसइ जाव सव्वं फुसइ) हे भदन्त ! इस रत्नप्रभा पृथिवी का अवकाशान्तर क्या धर्मास्तिकाय के संख्यातवें भाग का स्पर्श करता है या असंख्यातवें भाग का स्पर्श करता है–या यावत् वह सब पूरे धर्मास्तिकाय का स्पर्श करता है ? (गोयमा !) हे गौतम ! इस रत्नप्रभापृथिवी का अवकाशान्तर (सखेज्जइभागं फुसइ, णो अ-संखेज्जइभागं फुसइ, णो संखेज्जे भागे फुसइ, णो असंखेज्जेभागे णो सव्वं फुसइ) धर्मास्तिकाय के संख्यातवें भाग का स्पर्श करता है, किन्तु असंख्यातवें भाग का नहीं और न उसके संख्यातभागोंका स्पर्श करता है और न असंख्यातभागों का स्पर्श करता है तथा न वह पूरे धर्मा-स्तिकाय का स्पर्श करता है। (उवासंतराइं सव्वाइं) इसी तरह से अ-न्य अवकाशान्तरों के विषय में जानना चाहिये। (जहा रयणप्पभाए पुढवीए वत्तव्वया भणिया, एवं जाव अहे सत्तमाए) रत्नप्रभापृथिवी के विषय में जैसी वक्तव्यता कही है उसी तरह की वक्तव्यता यावत् सप्त-मपृथिवीतक समझनी चाहिये। (जंबूदीवाइया दीवा, लवणसमुद्दाइया

संखेज्जइभागं फुसइ, असखेज्जइभागं फुसइ जाव सव्वं फुसइ ?) હે ભદન્ત ! આ રત્નપ્રભાપૃથ્વીનુ અવકાશાન્તર શુ ધર્માસ્તિકાયના સખ્યાતમા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે, કે અસંખ્યાતમા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે, સંખ્યાત ભાગનો સ્પર્શ કરે છે, કે અસખ્યાત ભાગનો સ્પર્શ કરે છે, કે સમસ્ત ધર્માસ્તિકાયનો સ્પર્શ કરે છે ! (गोयमा !) હે ગૌતમ ! આ રત્નપ્રભાપૃથ્વીનું અવકાશાન્તર (सखेज्जइ भागं फुसइ, णो असंखेज्जइ भागं फुसइ, णो सखेज्जे भागे फुसइ, णो असंखेज्जे भागे, णो सव्व फुसइ) ધર્માસ્તિકાયના સખ્યાતમા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે, તેના અસખ્યાતમા ભાગનો સ્પર્શ કરતુ નથી, તેના સખ્યાત ભાગોનો સ્પર્શ કરતુ નથી, કે તેના અસંખ્યાત ભાગોનો સ્પર્શ કરતુ નથી અથવા તો પૂરા ધર્માસ્તિકાયનો પણ સ્પર્શ કરતુ નથી (उवासंतराइं सव्वाइं) એજ પ્રમાણે બીજા અવકાશાન્તરોના વિષયમા પણ સમજવુ (जहा रयणप्पभाए पुढवीए वत्तव्वया भणिया, एवं जाव अहे सत्तमाए) રત્નપ્રભા પૃથ્વીના વિષયમાં અહીં જે કથન થયુ છે તે સાતમી પૃથ્વી સુધીની બધી પૃથ્વીઓને પણ લાગૂ પડે છે. (जंबूदीवाइया दीवा, लवणसमुद्दाइया समुद्दा) જંબૂદ્વીપ આદિ દ્વીપો લવણ સમુદ્ર

स्पृशति असंख्येयभागं स्पृशति नो सख्येयान् भागान् नो असंख्येयान् भागान् स्पृशति नो सर्वं स्पृशति एतस्याः खलु भदन्त ! रत्नप्रभायाः पृथिव्याः घनोदधिः धर्मास्तिकायस्य पृच्छा किं संख्येयभागं स्पृशति ? यथा रत्नप्रभा तथा घनोदधि घनवात तनुवाता अपि । एतस्या खलु भदन्त ! रत्नप्रभायाः पृथिव्या अव काशान्तरं धर्मास्तिकायस्य किं संख्येयभागं स्पृशति यावत् सर्वं स्पृशति ? गौतम !

असंखेज्जइभागं फुसइ, णो सखेज्जे, णो असखेज्जे, नो सव्व फुसइ) यह रत्नप्रभानाम की पृथिवी धर्मास्तिकाय के संख्यातवें भागका स्पर्श नहीं करती है किन्तु उसके असंख्यातवें भाग का ही स्पर्श करती है। वह उसके सख्यात भागों असंख्यातभागों का भी स्पर्श नहीं करती है और न समस्त पूरे रूप में ही उसका वह स्पर्श करती है। (इमीसे ण भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए घणोदही, धम्मत्थिकायस्स पुच्छा किं संखेज्जइभागं फुसइ) हे भदन्त ! इस रत्नप्रभा पृथिवी का जो घनोदधि है वह धर्मास्तिकाय के कितने भाग का स्पर्श करता है-क्या वह उसके सख्यातवें भाग का स्पर्श करता है ? (जहा रयणप्पभा तहा घणोदही-घणवाय तणुवाया वि) हे गौतम ! जिस प्रकार रत्नप्रभापृथिवी धर्मास्तिकाय के असंख्यातवें भाग का स्पर्श करती है उसी प्रकार से घनोदधि भी उसके असंख्यातवें भाग का ही स्पर्श करता है इसी तरह से घनवात और तनुवात भी उसके असंख्यातवें भाग का स्पर्श करते हैं। (इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए उवासंतरे धम्मत्थिकायस्स किं संखेज्ज

असंखेज्जइ भाग फुसइ, णो संखेज्जे ना असखेज्जे नो सव्व फुसइ) રત્નપ્રભા પૃથ્વી ધર્માસ્તિકાયના સંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરતી નથી, પણ તેના અસંખ્યાતમાં ભાગનો જ સ્પર્શ કરે છે તે તેના સંખ્યાતમાં ભાગનો કે અસંખ્યાત ભાગનો પણ સ્પર્શ કરતી નથી. તે તેના સમસ્ત ભાગનો પણ સ્પર્શ કરતી નથી (इमीसे ण भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए घणोदही धम्मत्थिकायस्सपुच्छा किं संखेज्जइ भाग फुसइ) હે ભદન્ત ! તે રત્નપ્રભા પૃથ્વીનો જે ઘનોદધિ છે તે ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે ? શું તે તેના સંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે ? (जहा रयणप्पभा तहा घणोदही-घणवायतणुवाया वि) હે ગૌતમ ! જે પ્રમાણે રત્નપ્રભા પૃથ્વી ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે, એજ પ્રમાણે ઘનોદધિ પણ તેના અસંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે એજ પ્રમાણે ઘનવાત અને તનુવાત પણ તેના અસંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે (इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए उवासंतरे धम्मत्थिकायस्स किं

टीका—'धम्मत्थिकाएणं भंते' धर्मास्तिकायः खलु भदन्त! "के महालए पण्णत्ते' कियान् महालयः प्रज्ञप्तः? कियान विशालः कथितः धर्मास्तिकायस्य कियद्विशालत्वम् इति प्रश्नः। भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि 'गोयमा' हे गौतम! 'लोए लोय मेत्ते लोयप्पमाणे लोयफुडे लोयं चेव फुसित्ताणं चिट्ठइ' लोको लोकमात्रः लोकप्रमाणः लोकस्पृष्टः लोकं चैव स्पृष्ट्वा खलु तिष्ठति। तत्र लोको लोकम-

---

टीकार्थ-(धम्मत्थिकाए णं भंते!) हे भदन्त! धर्मास्तिकाय (के महालए पण्णत्ते) कितना बड़ा कहा गया है? अर्थात्- धर्मास्तिकाय कितना विशाल है? इस प्रकार के गौतम के इस प्रश्न का उत्तर देते हुए भगवान् उनको कहते हैं-(गोयमा!) हे गौतम! (लोए लोयमेत्ते लोयप्पमाणे लोयफुडे लोयं चेव फुसित्ता णं चिट्ठइ) यह धर्मास्तिकाय लोक धर्मास्तिकाय को लोकरूप कहने का कारण यह है कि यह लोक प्रमित होने के कारण अथवा लोक इस द्वारा कहे जाने के कारण लोक शब्द से कहा गया है। तात्पर्य कहने का यह है कि धर्मास्तिकाय जितना बडा लोक उतना ही बड़ा है क्यों किया वह उसमें व्यापक बना हुआ है। जिस प्रकार तिल में तैल व्यापक होकर रहता है उसी प्रकार से यह संपूर्ण लोकाकाश में रहता है। लोकाकाश का ऐसा कोई सा भी प्रदेश नहीं है कि जहां पर यह द्रव्य न हो। इस कारण धर्मास्तिकाय को लोकप्रमित कहा गया है तथा जब लोकाकाश का विचार किया है तब वहां पर धर्मादिक द्रव्यों को (लोक) ऐसे नाम से कहा

ટીકાર્થ—"धम्मत्थिकाए णं भंते! के महालये पण्णत्ते" હે ભદન્ત! ધર્માસ્તિકાય કેટલુ મોટું હોય છે-એટલે કે તે કેટલું વિશાળ છે? ગૌતમ સ્વામીના આ પ્રશ્નનો ઉત્તર આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે કે "गोयमा!" હે ગૌતમ! "लोए लोयमेत्ते लोयप्पमाणे लोयफुडे लोयचेव फुसित्ताणं चिट्ठइ" આ ધર્માસ્તિકાય લોકરૂપ છે" ધર્માસ્તિકાયને લોકરૂપ કહેવાનું કારણ એ છે કે તે લોકપ્રમિત (લોકપ્રમાણુ) હોવાથી અથવા "લોક" દ્વારા ઓળખાતું હોવાને કારણે તેને (લોક) શબ્દ દ્વારા ઓળખવામાં આવે છે-લોક જેટલો મોટો છે એટલું જ મોટુ ધર્માસ્તિકાય છે કારણુ કે તે સમસ્ત વ્યાપેલું છે જેવી રીતે તલમાં તેલ વ્યાપક બનીને રહે છે, એજ રીતે ધર્માસ્તિકાય સંપૂર્ણ લોકાકાશમા રહે છે-લોકાકાશનો કોઇ પણુ એવો પ્રદેશ નથી કે જ્યાં તેનું અસ્તિત્વ ન હોય તેથીજ ધર્માસ્તિકાયને લોકપ્રમિત (લોક પ્રમાણુ કહ્યુ છે, તથા જ્યારે લોકાકાશનો વિચાર કરાયો છે ત્યારે ત્યાં પણુ ધર્માદિક દ્રવ્યોને "લોક"

णसमुद्रादिकाः समुद्राः एवं सौधर्मः कल्पो यावत् ईषत्प्राग्भारा पृथिवी स्पृशति ते सर्वेऽपि असंख्येयभागं स्पृशन्ति शेषाः प्रतिषेद्धव्याः। एवमधर्मास्तिकायः एवं लोकाकाशोऽपि।

गाथा—पृथिव्युदधी घन तनुकल्पा ग्रैवेयकानुत्तरौ सिद्धिः।
सङ्ख्येयभागम् अन्तरेषु शेषा असंख्येयाः॥
॥ द्वितीयशतके दशमो द्देशकः समाप्तः॥
॥ द्वितीयं शतकं समाप्तम्॥

समुद्दा) जम्बूद्वीप आदिक द्वीप, और लवणसमुद्र आदिक समुद्र (एवं सोहम्मे कप्पे, जाव इसीपब्भारा पुढवी) सौधर्मकल्प यावत् ईषत्प्राग्भोरापृथिवी, ये सब हे भदन्त! धर्मास्तिकाय के कितने भाग का (फुसइ) स्पर्श करते हैं तो इसका उत्तर यह है कि (ते सव्वेऽवि असंखेज्जइभाग फुसति) ये सब धर्मास्तिकाय के असंख्यातवें भाग का स्पर्श करते हैं। (सेसा पडिसेहियव्वा) अवशिष्ट भागों के स्पर्श करने का निषेध करना चाहिये। (एवं अहम्मत्थिकाए एवं लोगागासे वि) इसी प्रकार अधर्मास्तिकाय और लोकाकाश को भी जानना चाहिये। गाथा (पुढवोदही घणतणूकप्पा गेवेज्जणुत्तरासिद्धी, । संखेज्जइभागं अंतरेसु सेसा असंखेज्जा) पृथिवी, उदधी, घनवात, तनुवात, कल्प, ग्रैवेयक, अनुत्तर, और सिद्धि इनके अवकाशान्तर धर्मास्तिकाय के संख्यातवें भाग का स्पर्श करते हैं और बाकी सब पृथिवी घनोदधि वगैरह धर्मास्तिकाय के असंख्यातवें भाग का ही स्पर्श करते हैं॥सू०५॥

આદિ સમુદ્રો, (एवं सोहम्मे कप्पे जाव इसीपब्भारा पुढवी) સૌધર્મ કલ્પથી લઇને ઇષત્પ્રાગ્ભારા પૃથ્વી પર્યન્તના એ બધા પદાર્થો ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગનો (फुसइ) સ્પર્શ કરે છે?

ઉત્તર—(ते सव्वेऽवि असंखेज्जइभागं फुसंति) તે બધા, ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે, (सेसा पडिसेहियव्वा) સંખ્યાતમાં ભાગનો, કે સંખ્યાતભાગોનો, કે અસંખ્યાત ભાગોનો, કે સમસ્ત ધર્માસ્તિકાયનો સ્પર્શ કરતા નથી (एवं अहम्मत्थिकाए एवं लोगागासे वि) અધર્માસ્તિકાય અને લોકાકાશના વિષયમાં પણ એજ પ્રમાણે સમજવું

ગાથા—" पुढवोदहीघण-तणूकप्पागेवेज्जणुत्तरा सिद्धि, संखेज्जइभागं अंतरेसु सेसा असंखेज्जा " પૃથિવી, ઉદધિ, ઘનવાત, તનુવાત, કલ્પ ગ્રૈવેયકો, અનુત્તર વિમાનો અને સિદ્ધિના અવકાશાન્તરો ધર્માસ્તિકાયના સંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે, અને બાકીના પૃથિવી, ઘનોદધિ વગેરે ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે ॥ સૂ. ૫ ॥

विचित्रत्वात्, तथेहापि वस्तुस्वभाववैचित्र्यमादाय निरधिष्ठानस्याप्याकाशस्याव-स्थानसंभवेन आकाशाधिकरणस्य शास्त्रे विचारो न कृत इति भावः। 'वायपइट्ठिए उदही' वातप्रतिष्ठित उदधिः, तनुवातघनवातयोरुपरि घनोदधेः प्रतिष्ठितत्वात्, अर्थात् यथा वायोरधिकरणं गगनम् तथोदधेरधिकरणं वायुरेव। एवम् 'उदहिपइ-ट्ठिया पुढवी' उदधिप्रतिष्ठिता पृथिवी, घनोदधेरुपरि रत्नप्रभादिपृथिवीनां स्थित-त्वात्। मूले यदुक्तं 'उदहिपइट्ठिया पुढवी' इति, तद् बाहुल्यापेक्षया विज्ञेयम्, ईषत्प्राग्भारायाः पृथिव्या आकाशप्रतिष्ठितत्वात्। 'पुढवी पइट्ठिया तसा थावरा

में विचित्रता है उसी प्रकार से आकाशस्वभाव में भी विचित्रता है, जिसकी वजह से वह बिना अन्य आधार के भी प्रतिष्ठित रहता है। अतः जब आकाश बिना किसी अन्य आधार के प्रतिष्ठित है तो फिर अधिष्ठान से विहीन आकाश के अधिकरण (आधार) का विचार शास्त्र में करने की आवश्यकता ही क्या है? इसी कारण शास्त्र में आका-शाधिकरण का विचार नहीं किया गया है। वातप्रतिष्ठित उदधि कहने का तात्पर्य ऐसा है कि तनुवात और घनवात के ऊपर घनोदधि प्रतिष्ठित है। अर्थात् जैसे वायु का अधिकरण (आधार) गगन है उसी प्रकार उदधि का अधिकरण वायु ही है। "उदहि पइट्ठिया पुढवी" का तात्पर्य यह है कि घनोदधि के ऊपर रत्नप्रभा आदि पृथिवियां प्रतिष्ठित हैं अर्थात् स्थित हैं। मूल में जो "उदहिपइट्ठिया पुढवी" ऐसा कहा गया है सो वह बाहुल्य की अपेक्षा से कहा गया जानना चाहिये। क्योंकि ईषत्प्राग्भार नाम की जो पृथिवी है वह आकाश में प्रतिष्ठित है।

તે તેવી જ રીતે અહીં વસ્તુસ્વભાવની વિચિત્રતા જાણી શકાય છે તેવી જ રીતે આકાશ દ્રવ્ય પણ પોતાના સ્વભાવની વિચિત્રતાને કારણે જ અન્ય દ્રવ્યના આધાર વગર પણ પ્રતિષ્ઠિત રહે છે આ રીતે આકાશ કોઇ પણ અન્ય પદાર્થના આધાર વિના જ રહેલું હોવાથી અધિકરણ (આધાર) રહિત હોવાથી તેના અધિકરણનો વિચાર કરવાની આવશ્યકતા રહેતી નથી. તે કારણે જ શાસ્ત્રમાં આકાશના અધિકરણનો વિચાર કરવામાં આવ્યો નથી "વાત પ્રતિષ્ઠિત ઉદધિ"નું તાત્પર્ય એ છે કે તનુવાત અને ઘનવાતના આધારે ઘનોદધિ પ્રતિષ્ઠિત (રહેલ) છે એટલે કે જેવી રીતે વાયુનું અધિકરણ (આધાર) ગગન છે એવી જ રીતે ઉદધિનો આધાર વાયુ છે "उदधिपइट्ठिया पुढवी" ઉદધિપ્રતિષ્ઠિત પૃથ્વીનું તાત્પર્ય એ છે કે ઘનોદધિના આધારે રત્નપ્રભા વગેરે પૃથ્વીઓ (નરકો) પ્રતિષ્ઠિત (રહેલી) છે મૂળમાં જે "उदहिपइट्ठिया पुढवी" કહેલ છે તે બાહુલ્યની અપેક્ષાએ સમજવું કારણ કે ઈષત્પ્રાગ્ભારા નામની જે સિદ્ધશિલા

मितत्वात् लोकव्यपदेशाद्वा लोकशब्देनोच्यते-धर्मास्तिकाय इति, तदुक्तम् "पंचत्थिकायमइयं लोय" (पञ्चास्तिकायमयो लोकः) लोकमात्रो लोकपरिमाणः लोकस्य यावत्तं परिमाणं तावत्परिमाणवान् इत्यर्थः स च किञ्चिन्न्यूनोऽपि व्यवहारतस्तथास्यादित्यत आह-लोकप्रमाणः सम्पूर्णलोकव्यापित्वात् लोकप्रमाणः स चान्योन्यानुबन्धेन स्थित इत्येतदेवाह-लोकस्पृष्टः लोकेन लोकाकाशेन स्वकस्वकीयप्रदेशैः स्पृष्ट इति लोकस्पृष्टः। तथा लोक चतुर्दशरज्ज्वात्मक स्पृष्ट्वा

गया है इस कारण लोकप्रमित होने से एव लोक शब्द द्वारा व्यवहृत होनेसे धर्मास्तिकाय को स्वयं लोकरूप कहा गया है। कहा भी है-(पंचत्थिकायमइयं लोयं) पंचास्तिकायमयो लोकः) यह लोक पांच अस्तिकाय मय है। अतः जब धर्मास्तिकाय स्वयं लोकरूप है तब यह (लोकमात्र) लोक का जैसा परिमाण है तादृश परिमाणवाला है यह कथन संगत हो जाता है। यदि कोई ऐसा यहां पर कहें कि यह धर्मास्तिकाय कुछ प्रमाण में कम भी हो तो भी व्यवहार में ऐसा किया जाता है कि यह लोकमात्र है तो इस आशंका की निवृत्ति के लिये सूत्रकार ने (लोकप्रमाण) यह पद रखा है इससे उन्होंने यह प्रकट किया है कि यह थोडे से भी अंश में न्यून नहीं है-किन्तु संपूर्ण लोक में व्यापी है और इसी कारण लोकाकाश के जितने भी प्रदेश हैं उन सब प्रदेशों द्वारा यह स्पृष्ट है। तथा-धर्मास्तिकाय १४ चौदह राजूप्रमाण इस लोक को अपने प्रदेशों द्वारा स्पर्श करके रहा

નામથી વર્ણવ્યા છે તેથી જ તેને લોકપ્રમિત કહેલ છે વળી આ રીતે લોકપ્રમાણુ હેવાને લીધે અને (લોક) શબ્દ દ્વારા ઓળખાતું હોવાથી ધર્માસ્તિકાયને પોતાને જ લોકરૂપ કહેલ છે કહ્યું પણ છે કે "પંચત્થિકાયમઇયંલોયં" પંચાસ્તિકાયમયો લોક-આ લોક પાંચ અસ્તિકાયમય છે આ રીતે ધર્માસ્તિકાય સ્વયં (પોતે જ) લોકરૂપ છે-તેથી તે લોકમાત્ર (લોક પ્રમાણુ)-લોકનું જેટલું પ્રમાણુ છે એટલા પ્રમાણુ વાળો-છે એ કથન સુસંગત લાગે છે કદાચ કોઈ એવી દલીલ કરે કે ધર્માસ્તિકાય થોડા પ્રમાણુમાં ઓછુ હોય તો પણ વહેવારમાં તે એવુ કહી શકાય કે તે લોકમાત્ર (લોક પ્રમિત) છે, તો તે દલીલનું નિરાકરણુ કરવા માટે સૂત્રકારે (લોક પ્રમાણુ) પદ મૂક્યુ છે 'લોક પ્રમાણુ' પદનો ઉપયોગ કરીને સૂત્રકારે એ પ્રકટ કર્યું છે કે તે સાવ થોડા અંશે પણ ન્યૂન નથી, પણ સમસ્ત લોકમાં વ્યાપ્ત છે, અને તે કારણે લોકાકાશના જેટલા પ્રદેશો છે તે સઘળા પ્રદેશો દ્વારા તે સ્પૃષ્ટ છે, તથા ધર્માસ્તિકાય ચૌદ રાજૂપ્રમાણુ આ લોકને પોતાના સઘળા પ્રદેશો દ્વારા સ્પર્શીને રહેલ છે

टीका—' धम्मत्थिकाएणं भंते ' धर्मास्तिकायः खलु भदन्त ! " के महालए पण्णत्ते' कियान् महालयः प्रज्ञप्तः? कियान विशालः कथितः धर्मास्तिकायस्य कियद्विशालत्वम् इति प्रश्नः । भगवानाह—' गोयमा ' इत्यादि ' गोयमा ' हे गौतम ! ' लोए लोय मेत्ते लोयप्पमाणे लोयफुडे लोयं चेव फुसित्ताणं चिट्ठइ ' लोको लोकमात्रः लोकप्रमाणः लोकस्पृष्टः लोकं चैव स्पृष्ट्वा खलु तिष्ठति । तत्र लोको लोकम-

---

टीकार्थ-(धम्मत्थिकाए णं भंते !) हे भदन्त ! धर्मास्तिकाय (के महालए पण्णत्ते) कितना बड़ा कहा गया है ? अर्थात्- धर्मास्तिकाय कितना विशाल है ? इस प्रकार के गौतम के इस प्रश्न का उत्तर देते हुए भगवान् उनको कहते हैं- (गोयमा !) हे गौतम ! (लोए लोयमेत्ते लोयप्पमाणे लोयफुडे लोयं चेव फुसित्ता णं चिट्ठइ) यह धर्मास्तिकाय लोक धर्मास्तिकाय को लोकरूप कहने का कारण यह है कि यह लोक प्रमित होने के कारण अथवा लोक इस द्वारा कहे जाने के कारण लोक शब्द से कहा गया है । तात्पर्य कहने का यह है कि धर्मास्तिकाय जितना बडा लोक उतना ही बड़ा है क्यों किया वह उसमें व्यापक बना हुआ है । जिस प्रकार तिल में तैल व्यापक होकर रहता है उसी प्रकार से यह संपूर्ण लोकाकाश में रहता है । लोकाकाश का ऐसा कोई सा भी प्रदेश नहीं है कि जहां पर यह द्रव्य न हो । इस कारण धर्मास्तिकाय को लोकप्रमित कहा गया है तथा जब लोकाकाश का विचार किया है तब वहां पर धर्मादिक द्रव्यों को (लोक) ऐसे नाम से कहा

ટીકાર્થ—" धम्मत्थिकाए णं भंते ! के महालये पण्णत्ते " હે ભદન્ત ! ધર્માસ્તિકાય કેટલુ મોટું હોય છે-એટલે કે તે કેટલું વિશાળ છે? ગૌતમ સ્વામીના આ પ્રશ્નનો ઉત્તર આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે કે " गोयमा ! " હે ગૌતમ ! " लोए लोयमेत्ते लोयप्पमाणे लोयफुडे लोयचेव फुसित्ताणं चिट्ठइ " આ ધર્માસ્તિકાય લોકરૂપ છે " ધર્માસ્તિકાયને લોકરૂપ કહેવાનું કારણ એ છે કે તે લોકપ્રમિત (લોકપ્રમાણ) હોવાથી અથવા " લોક " દ્વારા ઓળખાતું હોવાને કારણે તેને (લોક) શબ્દ દ્વારા ઓળખવામાં આવે છે-લોક જેટલો મોટો છે એટલુ જ મોટુ ધર્માસ્તિકાય છે કારણ કે તે સમસ્ત વ્યાપેલું છે જેવી રીતે તલમાં તેલ વ્યાપક બનીને રહે છે, એજ રીતે ધર્માસ્તિકાય સંપૂર્ણ લોકાકાશમા રહે છે-લોકાકાશનો કોઇ પણ એવો પ્રદેશ નથી કે જ્યાં તેનુ અસ્તિત્વ ન હોય તેથીજ ધર્માસ્તિકાયને લોકપ્રમિત (લોક પ્રમાણ કહ્યુ છે, તથા જ્યારે લોકાકાશનો વિચાર કરાયો છે ત્યારે ત્યા પણ ધર્માદિક દ્રવ્યોને " લોક "

धर्मास्तिकायस्याधोलोकः स्पृशतीति भावः, भगवानाह–'गोयमा' इत्यादि 'गोयमा' हे गौतम ! 'सातिरेगं अद्धं फुसइ' सातिरेकमर्धं स्पृशति धर्मास्तिकायो हि लोकव्यापकः अधोलोकस्तु सातिरेकसप्तरज्जुप्रमाणः अतः सातिरेकमर्धभागमेवाधोलोको धर्मास्तिकायस्य स्पृशतीति । 'तिरियलोएणं भंते पुच्छा' तिर्यग्लोकः खलु भदन्त ! पृच्छा ? धर्मास्तिकायस्य कियन्तं भागं स्पृशति तिर्यग्लोक इति प्रश्नः 'गोयमा असंखेज्जइ भागं फुसइ' इत्युत्तरम् हे गौतम ? असंख्येयभागं धर्मास्तिकायस्य तिर्यग्लोकः स्पृशति असंख्यातयोजनप्रमाण धर्मास्तिकायः

हे भदन्त ! अधोलोक (धम्मत्थिकायस्स केवइयं फुसइ) धर्मास्तिकाय के कितने भाग को स्पर्श करता है ? इस गौतम ! के प्रश्न का उत्तर देते हुए प्रभु उनको कहते हैं (गोयमा) हे गौतम ! (सातिरेगं अद्धं फुसइ) अधोलोक धर्मास्तिकाय के कुछ अधिक आधेभाग को स्पर्श करता है –इसका तात्पर्य यह है कि–धर्मास्तिकाय तो लोकभर में व्यापक है,और अधोलोक जो है वह कुछ अधिक सातराजू प्रमाण वाला है । इस तरह १४चौदह राजूप्रमाण लोक में व्यापक हुए धर्मास्तिकाय के कुछ अधिक आधे भाग का ही यह स्पर्श करता है यह हिसाब ठीक बैठता है । (तिरियलोए णं भंते ! पुच्छा) हे भदन्त ! तिर्यग्लोक धर्मास्तिकाय के कितने भाग को स्पर्श करता है ? इस गौतम के प्रश्न को उत्तर देते हुए प्रभु उनसे कहते हैं–(गोयमा ! हे गौतम ! (असंखेज्जइभागं फुसइ) तिर्यग् लोक धर्मास्तिकाय के असंख्यातवें भाग का स्पर्श करता है–इसका

અધોલોક ધર્માસ્તિકાયના કેટલાક ભાગનો સ્પર્શ કરે છે

ઉત્તર—' ગોયમા ! " હે ગૌતમ ! "सातिरेगं अद्धं फुसइ " અધોલોક ધર્માસ્તિકાય અર્ધા કરતાં વધારે ભાગનો સ્પર્શ કરે છે આ કથનનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે-ધર્માસ્તિકાય તો સમસ્ત લોકમાં વ્યાપક છે અધોલોક તો સાત રાજુપ્રમાણથી સહેજ વધારે પ્રમાણવાળો છે તેથી ચૌદ રાજુપ્રમાણ લોકમાં વ્યાપક (વ્યાપેલ) ધર્માસ્તિકાય તેના અર્ધા કરતાં થોડા વધારે ભાગનો સ્પર્શ કરે છે, એ ગણતરી યોગ્ય લાગે છે

પ્રશ્ન—" तिरियलोए णं भंते पुच्छा " હે ભદન્ત ! તિર્યગ્લોક ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે ?

ઉત્તર—" गोयमा ! " હે ગૌતમ ! " असंखेज्जइभागं फुसइ " તિર્યગ્લોક ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે આ કથનનું તાત્પર્ય નીચે

स्वप्रदेशैस्तिष्ठतीति । 'एवमधम्मत्थिकाए' एवमधर्मास्तिकायः यथा धर्मास्तिकायो लोकः लोकमात्रो लोकप्रमाणो लोकस्पृष्टो लोकं स्पृष्ट्वा तिष्ठति तथा अधर्मास्तिकायोऽपि लोको लोकमात्रो लोकप्रमाणो लोकस्पृष्टो लोकं स्पृष्ट्वा तिष्ठतीति ज्ञातव्यः । "लोयागासे' लोकाकाशः एवमेव लोकाकाशोऽपि 'जीवत्थिकाए' जीवास्तिकायः 'पोग्गलत्थिकाए' पुद्गलास्तिकायः 'पंच वि एक्काभिलावा' पञ्चापि एकाभिलापाः धर्माऽधर्माकाश जीव पुद्गलास्तिकाया एते पञ्चापि समानाभिलापैरभिलप्याः इत्यर्थः । धर्मास्तिकायादीनां पञ्चानामपि प्रमाणस्पर्शनादिकं कथमिति स्पर्शनाधिकारादेवाधोलोकादीनां धर्मास्तिकायादिगतां स्पर्शनां दर्शयन्नाह- 'अहोलोएणं भंते' इत्यादि 'अहोलोएणं भंते' अधोलोकः खलु भदन्त ! 'धम्मत्थिकायस्स केवइयं फुसइ' धर्मास्तिकायस्य कियन्तं स्पृशति ? कियन्तं भागं

हुआ है (एवमधम्मत्थिकाए) जिस प्रकार धर्मास्तिकाय लोकरूप, लोकमात्र, लोकप्रमाण, लोकस्पृष्ट है और लोकको स्पर्शकर रहा हुआ है उसी प्रकार अधर्मास्तिकाय भी लोकरूप, लोकमात्र, लोकप्रमाण, लोकस्पृष्ट है और लोक को स्पर्शकर रहा हुआ है ऐसा जानना चाहिये। (लोयागासे) इसी तरह से लोकाकाश (जीवत्थिकाए) जीवास्तिकाय (पोग्गलत्थिकाए) पुद्गलास्तिकाय के विषय में भी जानना चाहिये। क्यों कि इन (पंच वि एक्काभिलावा) पांचों का पाठ एक जैसाही है। इस तरह धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय और पुद्गलास्तिकाय की विशालता और स्पर्शना का कथन करके अब सूत्रकार स्पर्शना के अधिकार को लेकर ही धर्मास्तिकायादिगत अधोलोकादिकों की स्पर्शना के विषय में कथन करते हैं-(अहोलोए णं भंते

'एवमधम्मत्थिकाए" જેમ ધર્માસ્તિકાય લોકરૂપ, લોકમાત્ર, લોકપ્રમાણ, લોકસ્પૃષ્ટ છે અને લોકને સ્પર્શીને રહેલું છે, એજ પ્રમાણે અધર્માસ્તિકાય પણ લોકરૂપ, લોકમાત્ર, લોકપ્રમાણ, લોસ્પૃષ્ટ છે અને લોકને સ્પર્શીને રહેલું છે, એમ સમજવું "लोयागासे" એજ પ્રમાણે લોકાકાશ, "जीवत्थिकाए" જીવાસ્તિકાય,અને "पोग्गलत्थिकाए" પુદ્ગલાસ્તિકાયના વિષયમાં પણ સમજવું કારણ કે તે પાચેનું "पंच वि एक्काभिलावा" વક્તવ્ય એક સરખું જ છે આ રીતે ધર્માસ્તિકાય, અધર્માસ્તિકાય, આકાશાસ્તિકાય, જીવાસ્તિકાય અને પુદ્ગલાસ્તિકાયની વિશાળતાનું અને સ્પર્શનાનું વર્ણન કરીને સૂત્રકાર સ્પર્શનાના અધિકારને લઈને ધર્માસ્તિકાયાદિગત અધોલોક દિઓની સ્પર્શનાના વિષયનું નિરૂપણ કરે છે-

પ્રશ્ન—"अहोलोए णं भंते ! धम्मत्थिकायस्स केवइयं फुसइ) હે ભદન્ત !

धर्मास्तिकायस्याधोलोक स्पृशतीति भावः, भगवानाह-'गोयमा' इत्यादि 'गोयमा' हे गौतम ! 'सातिरेगं अद्धं फुसइ' सातिरेकमर्धं स्पृशति धर्मास्तिकायो हि लोकव्यापक अधोलोकस्तु सातिरेकसप्तरज्जुप्रमाणः अतः सातिरेकमर्धभागमेवाधोलोको धर्मास्तिकायस्य स्पृशतीति। 'तिरियलोएणं भंते पुच्छा' तिर्यग्लोक खलु भदन्त! पृच्छा? धर्मास्तिकायस्य कियन्त भागं स्पृशति तिर्यग्लोक इति प्रश्नः 'गोयमा असंखेज्जइ भागं फुसइ' इत्युत्तरम् हे गौतम? असंख्येयभागं धर्मास्तिकायस्य तिर्यग्लोकः स्पृशति असंख्यातयोजनप्रमाण धर्मास्तिकाय:

हे भदन्त ! अधोलोक (धम्मत्थिकायस्स केवइयं फुसइ) धर्मास्तिकाय के कितने भाग को स्पर्श करता है ? इस गौतम के प्रश्न का उत्तर देते हुए प्रभु उनको कहते हैं (गोयमा) हे गौतम ! (सातिरेगं अद्धं फुसइ) अधोलोक धर्मास्तिकाय के कुछ अधिक आधेभाग को स्पर्श करता है -इसका तात्पर्य यह है कि-धर्मास्तिकाय तो लोकभर में व्यापक है,और अधोलोक जो है वह कुछ अधिक सातराजू प्रमाण वाला है। इस तरह १४चौदह राजूप्रमाण लोक में व्यापक हुए धर्मास्तिकाय के कुछ अधिक आधे भाग का ही वह स्पर्श करता है यह हिसाब ठीक बैठता है। (तिरियलोए णं भंते ! पुच्छा) हे भदन्त ! तिर्यग्लोक धर्मास्तिकाय के कितने भाग को स्पर्श करता है ? इस गौतम के प्रश्न को उत्तर देते हुए प्रभु उनसे कहते हैं-(गोयमा ! हे गौतम ! (असंखेज्जइभागं फुसइ) तिर्यग् लोक धर्मास्तिकाय के असंख्यातवें भाग का स्पर्श करता है-इसका

અધોલોક ધર્માસ્તિકાયના કેટલાક ભાગનો સ્પર્શ કરે છે

ઉત્તર—"गोयमा !" હે ગૌતમ ! "सातिरेगं अद्धं फुसइ" અધોલોક ધર્માસ્તિકાય અર્ધા કરતાં વધારે ભાગનો સ્પર્શ કરે છે આ કથનનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે-ધર્માસ્તિકાય તો સમસ્ત લોકમાં વ્યાપક છે અધોલોક તો સાત રાજુપ્રમાણથી સહેજ વધારે પ્રમાણવાળો છે તેથી ચૌદ રાજુપ્રમાણ લોકમાં વ્યાપક (વ્યાપેલ) ધર્માસ્તિકાય તેના અર્ધા કરતાં થોડા વધારે ભાગનો સ્પર્શ કરે છે, એ બરાબર યોગ્ય લાગે છે

પ્રશ્ન—"तिरियलोए णं भंते पुच्छा" હે ભદન્ત ! તિર્યગ્લોક ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે ?

ઉત્તર—"गोयमा !" હે ગૌતમ ! "असंखेज्जइभागं फुसइ" તિર્યગ્લોક ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે આ કથનનું તાત્પર્ય નીચે

तिर्यग्लोकस्तु अष्टादशयोजनशतप्रमाणः-अतो धर्मास्तिकायस्यासंख्यातभागे विद्यमानत्वात्तस्यासंख्येयमेव भागं स्पृशतीति भावः। "उड्ढलोएणं भंते पुच्छा" ऊर्ध्वलोकः-खलु भदन्त! पृच्छा हे भदन्त! ऊर्ध्वलोको धर्मास्तिकायस्य कियन्तं भागं स्पृशतीति प्रश्नः भगवानाह-'गोयमा' इत्यादि। 'गोयमा देसूणं अद्धं फुसइ' गौतम! देशोनमर्धं स्पृशति, देशोनसप्तरज्जुप्रमाणत्वात् ऊर्ध्वलोकस्येति सम्पूर्ण लोकश्चतुर्दशरज्जुप्रमाणकस्तदर्द्धम् सप्तरज्जुप्रमाणकः इति भावः 'इमाणं भंते' इयं खलु भदन्त! 'रयणप्पभा पुढवी' रत्नप्रभा पृथिवी. "धम्मत्थिकायस्स" धर्मा-

---

तात्पर्य यह है कि धर्मास्तिकाय असंख्यात स्वजन प्रमाणवाला है और तिर्यग्लोक जो है वह १८अठारह सौ योजन प्रमाण वाला है। अतः वह धर्म के असंख्यातवें भाग में वर्तमान होनेके कारण उसके असंख्यात वें भाग का ही स्पर्श करता है यह कथन ठीक है। (उड्ढलोएणं भंते! पुच्छा) हे भदन्त! उर्ध्वलोक धर्मास्तिकाय के कितने भाग का स्पर्श करता है? इस गौतम के प्रश्न का समाधान करनेके निमित्त प्रभु उनसे कहते हैं (गोयमा) हे गौतम! (देसूणं अद्धं फुसइ) उर्ध्वलोक धर्मास्तिकाय के कुछ कम आधे भाग का स्पर्श करता है-सो इसका कारण यह है कि उर्ध्वलोक का प्रमाण कुछ कम सात राजू का है। समस्त लोक का प्रमाण १४ चौदह राजू का है सो १४ चौदह राजू प्रमाण वाले लोक में व्यापक रहे हुए धर्मास्तिकाय के कुछ कम आधे भाग का ऊर्ध्व लोक स्पर्श करता है। (इमाणं भंते! रयणप्पभा पुढवी) हे भदन्त! जो यह रत्नप्रभा नाम की पहिली पृथिवी है सो वह (धम्मत्थिकायस्स

મુજબ છે-ધર્માસ્તિકાય અસંખ્યાત યોજન પ્રમાણુ વાળું છે,પણુ તિર્યગ્લોક ૧૮૦૦ અઢાર સો યોજન પ્રમાણુ છે તેથી તે ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાતમાં ભાગ પ્રમાણુ હોવાથી તેના અસંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે, તે કથન બરાબર છે.

પ્રશ્ન--"उड्ढलोए ण भंते! पुच्छा" હે ભદન્ત! ઉર્ધ્વલોક ધર્માસ્તિકાયના કેટલાક ભાગનો સ્પર્શ કરે છે?

ઉત્તર--"गोयमा!" હે ગૌતમ! "देसूणं अद्धं फुसइ" ઉર્ધ્વલોક ધર્માસ્તિકાયના અર્ધા કરતા ઓછા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે. આ કથનનું કારણુ નીચે પ્રમાણે છે, સમસ્ત લોક ૧૪ રાજુપ્રમાણુ છે ઉર્ધ્વલોકનું પ્રમાણુ સાત રાજુ કરતા આછુ છે તેથી ૧૪ રાજુપ્રમાણુ લોકમાં ધર્માસ્તિકાય ઉર્ધ્વલોકના અર્ધા કરતા ઓછા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે તે કથન બરાબર છે.

પ્રશ્ન---इमाणं भंते! रयणप्पभा पुढवी" હે ભદન્ત! રત્નપ્રભા નામની

स्तिकायस्य 'किं सखेज्जभागं फुसइ' किं सख्येयभाग स्पृशति ? 'असंखेज्ज भागं फुसइ' असख्येयभागं स्पृशति ? 'सखेज्जे भागे फुसइ' सख्येयान् भागान् स्पृशति ? 'असखेज्जे भाग फुसइ' असख्येयान् भागान् स्पृशति ? 'सव्व फुसइ' सर्वं स्पृशति ? हे भदन्त ! येयं रत्नप्रभा पृथिवी सा किं धर्मास्तिकायस्य सख्येय भागं स्पृशति असख्येय भाग स्पृशति अथवा सख्येयान् वा भागान् असख्येयान् वा भागान् स्पृशति सर्व वा स्पृशतीति प्रश्न भगवानाह— गोयमा' इत्यादि 'गोयमा' हे गौतम ! 'णो सखेज्जइ भागं फुसइ' नो संख्येयभाग स्पृशति-धर्मास्तिकायस्य रत्नप्रभा किन्तु 'असखेज्जइ भाग फुसइ' असख्येयभागं स्पृशति धर्मास्तिकायस्य लोकव्यापकत्वात् रत्नप्रभायाश्चाल्पदेशवृत्तित्वादिति तथा 'णो सखेज्जे णो असखेज्जे नो सव्वं फुसइ' नो सख्येयान् भागान् नो

किं संखेज्जइभाग फुसइ, असखेज्जइभागं फुसइ, सखेज्जे भागे फुसइ, असखेज्जे भागे फुसइ, सव्वं फुसइ) धर्मास्तिकाय के सख्येय भाग का स्पर्श करती है ? या असख्येयभाग का स्पर्श करती है ? अथवा-उसके संख्यात भागों का स्पर्श करती है ? या असंख्यात भागों का स्पर्श करती है ? या सम्पूर्ण धर्मास्तिकाय का वह स्पर्श करती है। इस गौतम के प्रश्न का उत्तर देते हुए प्रभु उनसे कहते हैं (गोयमा) हे गौतम ! (णो संखेज्जइ भागं फुसइ, असखेज्जइ भाग फुसइ, णो संखेज्जे, णो असखेज्जे, णो सव्वं फुसइ) रत्नप्रभा नाम की पहिली पृथिवी धर्मास्तिकाय के संख्यातवें भाग का स्पर्श नहीं करती है, किन्तु उसके असंख्यातवें भाग का ही स्पर्श करती है क्यों कि धर्मास्तिकाय सम्पूर्णलोक में व्याप्त है और रत्नप्रभा पृथिवी थोड़ीसी जगह में है। तथा यह रत्नप्रभापृथिवी धर्मास्तिकाय के (णो संखेज्जे णो असखेज्जे नो सव्वं फुसइ) सख्यात

જે પહેલી પૃથ્વી (નરક) છે "धम्मत्थिकायस्स किं सखेज्जइ भाग फुसइ असखेज्जइ भागं फुसइ, संखेज्जे भागे फुसइ असंखेज्जे भागे फुसइ सव्व फुसइ ?" તે ધર્માસ્તિકાયના સંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે ? કે અસંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે ? કે તેના સંખ્યાત ભાગોનો સ્પર્શ કરે છે કે તેના અસંખ્યાત ભાગોનો સ્પર્શ કરે છે ? કે તે સંપૂર્ણ ધર્માસ્તિકાયનો સ્પર્શ કરે છે

ઉત્તર—' गोयमा ! " " णो सखेज्जइ भागं फुसइ असंखेज्जइभागं फुसइ, णो सखेज्जे, णो असखेज्जे णो सव्वं फुसइ' રત્નપ્રભા નામની પહેલી પૃથ્વી ધર્માસ્તિ કાયના સંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરતી નથી, તેમજ અસંખ્યાત ભાગનો સ્પર્શ કરતા નથી, સંખ્યાત ભાગોનો સ્પર્શ પણ કરતી નથી, અસંખ્યાત ભાગોનો પણ સ્પર્શ કરતી નથી, સમસ્ત ધર્માસ્તિકાયનો

तिर्यग्लोकस्तु अष्टादशयोजनशतप्रमाणः-अतो धर्मास्तिकायस्यासंख्यातभागे विद्यमानत्वात्तस्यासंख्येयमेव भागं स्पृशतीति भावः। "उड्ढलोएणं भंते पुच्छा" ऊर्ध्वलोकः-खलु भदन्त! पृच्छा हे भदन्त! ऊर्ध्वलोको धर्मास्तिकायस्य कियन्तं भागं स्पृशतीति प्रश्नः भगवानाह-'गोयमा' इत्यादि। 'गोयमा देसूणं अद्धं फुसइ' गौतम! देशोनमर्धं स्पृशति, देशोनसप्तरज्जुप्रमाणत्वात् ऊर्ध्वलोकस्येति सम्पूर्ण लोकश्चतुर्दशरज्जुप्रमाणकस्तदर्द्धम् सप्तरज्जुप्रमाणकः इति भावः 'इमाणं भंते' इयं खलु भदन्त! 'रयणप्पभा पुढवी' रत्नप्रभा पृथिवी. "धम्मत्थिकायस्स" धर्मा-

तात्पर्य यह है कि धर्मास्तिकाय असंख्यात स्वजन प्रमाणवाला है और तिर्यग्लोक जो है वह १८अठारह सौ योजन प्रमाण वाला है। अतः वह धर्म के असंख्यातवें भाग में वर्तमान होनेके कारण उसके असंख्यात वें भाग का ही स्पर्श करता है यह कथन ठीक है। (उड्ढलोएणं भंते! पुच्छा) हे भदन्त! उर्ध्वलोक धर्मास्तिकाय के कितने भाग का स्पर्श करता है? इस गौतम के प्रश्न का समाधान करनेके निमित्त प्रभु उनसे कहते हैं (गोयमा) हे गौतम! (देसूणं अद्धं फुसइ) उर्ध्वलोक धर्मास्तिकाय के कुछ कम आधे भाग का स्पर्श करता है-सो इसका कारण यह है कि उर्ध्वलोक का प्रमाण कुछ कम सात राजू का है। समस्त लोक का प्रमाण १४ चौदह राजू का है सो १४ चौदह राजू प्रमाण वाले लोक में व्यापक रहे हुए धर्मास्तिकाय के कुछ कम आधे भाग का ऊर्ध्व लोक स्पर्श करता है। (इमाणं भंते! रयणप्पभा पुढवी) हे भदन्त! जो यह रत्नप्रभा नाम की पहिली पृथिवी है सो वह (धम्मत्थिकायस्स

મુજબ છે-ધર્માસ્તિકાય અસંખ્યાત યોજન પ્રમાણુ વાળું છે,પણ તિર્યગ્લોક ૧૮૦૦ અઢાર સો યોજન પ્રમાણુ છે. તેથી તે ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાતમાં ભાગ પ્રમાણુ હોવાથી તેના અસંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે, તે કથન બરાબર છે.

પ્રશ્ન--" उड्ढलोए ण भंते! पुच्छा " હે ભદન્ત! ઉર્ધ્વલોક ધર્માસ્તિકાયના કેટલાક ભાગનો સ્પર્શ કરે છે?

ઉત્તર--" गोयमा! " હે ગૌતમ! " देसूणं अद्धं फुसइ " ઉર્ધ્વલોક ધર્માસ્તિકાયના અર્ધ કરતા ઓછા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે. આ કથનનું કારણુ નીચે પ્રમાણે છે, સમસ્ત લોક ૧૪ રાજુપ્રમાણુ છે ઉર્ધ્વલોકનું પ્રમાણુ સાત રાજુ કરતા આછુ છે તેથી ૧૪ રાજુપ્રમાણુ લોકમાં ધર્માસ્તિકાય ઉર્ધ્વલોકના અર્ધા કરતાં ઓછા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે તે કથન બરાબર છે.

પ્રશ્ન--इमाणं भंते! "रयण प्पभा पुढवी" હે ભદન્ત! રત્નપ્રભા નામની

स्तिकायस्य ' किं सखेज्जमागं फुसइ ' किं संख्येयमाग स्पृशति ? ' असखेज्ज मागं फुसइ ' असंख्येयमागं स्पृशति ? 'संखेज्जे भागे फुसइ ' संख्येयान् मागान् स्पृशति ? 'असंखेज्जे मागे फुसइ ' असंख्येयान् भागान् स्पृशति ? 'सव्व फुसइ' सर्वं स्पृशति ? हे भदन्त ! येय रत्नप्रभा पृथिवी सा किं धर्मास्तिकायस्य सख्येयं भागं स्पृशति असख्येय माग स्पृशति अथवा संख्येयान् वा मागान् असंख्येयान् वा मागान् स्पृशति सर्व वा स्पृशतीति प्रश्न भगवानाह— गोयमा ' इत्यादि 'गोयमा ' हे गौतम ! ' णो संखेज्जइ माग फुसइ ' नो संख्येयमाग स्पृशति- धर्मास्तिकायस्य रत्नप्रभा किन्तु ' असखेज्जइ माग फुसइ ' असख्येयमागं स्पृशति धर्मास्तिकायस्य लोकव्यापकत्वात् रत्नप्रभायाश्चाल्पदेशस्थितत्वादिति तथा ' णो सखेज्जे णो असखेज्जो नो सव्वं फुसइ ' नो सख्येयान् मागान् नो

किं संखेज्जइभाग फुसइ, असखेज्जइभागं फुसइ,सखेज्जे भागे फुसइ, असखेज्जे भागे फुसइ, सव्वं फुसइ) धर्मास्तिकाय के सख्येय भाग का स्पर्श करती है ? या असख्येयभाग का स्पर्श करती है ? अथवा-उसके संख्यात भागों का स्पर्श करती है ? या असख्यात भागों का स्पर्श करती है ? या सम्पूर्ण धर्मास्तिकाय का वह स्पर्श करती है। इस गौतम के प्रश्न का उत्तर देते हुए प्रभु उनसे कहते हैं (गोयमा) हे गौतम ! (णो संखेज्जइ भागं फुसइ, असखेज्जइ भाग फुसइ, णो संखेज्जे, णो असखेज्जे, णो सव्वं फुसइ) रत्नप्रभा नाम की पहिली पृथिवी धर्मास्तिकाय के संख्यातवें भाग का स्पर्श नहीं करती है, किन्तु उसके असख्यातवें भाग का ही स्पर्श करती है क्यों कि धर्मास्तिकाय सम्पूर्णलोक में प्राप्त है और रत्नप्रभा पृथिवी थोड़ीसी जगह में है। तथा यह रत्नप्रभापृथिवी धर्मास्तिकाय के (णो संखेज्जे णो असखेज्जे नो सव्व फुसइ) संख्यात

હવે પહેલી પૃથ્વી (रत्न) છે "धम्मत्थिकायस्स किं सखेज्जइ भाग फुसइ असखेज्जइ भागं फुसइ, सखेज्जे भागे फुसइ असंखेज्जे भागे फुसइ सव्व फुसइ ? " તે ધર્માસ્તિકાયના સંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે ? કે અસંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે ? કે તેના સંખ્યાત ભાગોનો સ્પર્શ કરે છે કે તેના અસંખ્યાત ભાગોનો સ્પર્શ કરે છે ? કે તે સંપૂર્ણ ધર્માસ્તિકાયનો સ્પર્શ કરે છે

ઉત્તર—' गोयमा ! ' ' णो सखेज्जइ मागं फुसइ असंखेज्जइभागं फुसइ, णो संखेज्जे, णो असखेज्जे णो सव्वं फुसइ' રત્નપ્રભા નામની પહેલી પૃથ્વી ધર્માસ્તિકાયના સંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરતી નથી, તેમજ અસંખ્યાત ભાગનો સ્પર્શ કરતા નથી, સંખ્યાત ભાગોનો સ્પર્શ પણ કરતી નથી, અસંખ્યાત ભાગોનો પણ સ્પર્શ કરતી નથી, સમસ્ત ધર્માસ્તિકાયનો

असंख्येयान् भागान् न वा सर्वं भागं स्पृशति, किन्तु असंख्येयमेव भागं स्पृशतीति । 'इमीसेणं भंते' अस्याः खलु भदन्त ! 'रयणप्पभाए पुढवीए' रत्नप्रभायाः पृथिव्याः 'घनोदही' घनोदधिः 'धम्मत्थिकायस्स' धर्मास्तिकायस्य "किं संखेज्जभागं फुसइ' धर्मास्तिकायस्य किं संख्येयभागं स्पृशति सर्वं वा स्पृशतीति रत्नप्रभापृथिव्याः सम्बन्धी घनोदधिः धर्मास्तिकायस्यसंख्येयभागं स्पृशत्यादि प्रश्नः । भगवानाह—'जहा' इत्यादि—" जहा रयणप्पभा तहा–घणोदही" यथा रत्नप्रभा तथा घनोदधिः, यथा रत्नप्रभा धर्मास्तिकायस्या–संख्येय

भागों का और असंख्यात भागों का भी स्पर्श नहीं करती है–और न वह सम्पूर्णरूप में ही उसका स्पर्श करती है–इस तरह यहां असंख्यातवें भाग का स्पर्श करना यह द्वीतीयपक्ष ही अङ्गीका किया है–शेष चार पक्ष नहीं। (इमीसेणं भंते! रयणप्पभाए पुढवीए घनोदही) हे भदन्त! अब हम आपसे यह जानना चाहते हैं कि इस रत्नप्रभासंबंधी जो घनोदधि है वह धर्मास्तिकाय के कितने भाग का स्पर्श करता है? (किं संखेज्जइभागं फुसइ, असंखेज्जइभागं फुसइ, संखेज्जेइभागे फुसइ, असखेज्जेभागे फुसइ, सव्वं वा फुसइ) क्या संख्यातवें भाग का स्पर्श करता हैं, या असंख्यातवें भाग का स्पर्श करता है, अथवा धर्मास्तिकाय के संख्यातभागों का स्पर्श करता है–या असंख्यातभागों का स्पर्श करता है–कि समस्तरूप से उसका स्पर्श करता है? इस विषय में गौतम का समाधान करने निमित्त प्रभु उनसे कहते हैं (गोयमा) हे गौतम। (जहारयणप्पभा तहा घणोदही) जिस प्रकार रत्नप्रभा पृथिवी

પણ સ્પર્શ કરતી નથી. પણ તે તેના અસંખ્યાતમા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે. આ જવાબનું કારણ નીચે પ્રમાણે છે ધર્માસ્તિકાય સંપૂર્ણ લોકમાં વ્યાપ્ત છે પણ રત્નપ્રભા પૃથ્વી ઘણી થોડી જગ્યામાં આવેલી છે ગૌતમ સ્વામીના ઉપરોક્ત પાંચ વિકલ્પોમાંના બીજા વિકલ્પનો જ અહીં સ્વીકાર થયો છે.

પ્રશ્ન—" इमीसे ण भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए घनोदही " હે ભદન્ત! આ રત્નપ્રભા સંબંધી જે ઘનોદધિ છે તે ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે? (किं संखेज्जइभाग फुसइ ?) શું તે તેના સંખ્યાતમા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે! (किं असंखेज्जइ भाग फुसइ) કે તેના અસંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે? " संखेज्जे भागे फुसइ ? असंखेज्जे भागे फुसइ ? सव्वं वा फुसइ " કે તેના સંખ્યાત ભાગોનો સ્પર્શ કરે છે, કે તેના અસંખ્યાત ભાગોનો સ્પર્શ કરે છે? કે સમસ્ત ધર્માસ્તિકાયનો સ્પર્શ કરે છે?

पाणा ' पृथिवीप्रतिष्ठिता त्रसाः स्थावरा प्राणा, सर्वेऽपि प्राणिनः पृथिव्यधिकरणका एव । जीवा पृथिवीप्रतिष्ठिता, इत्यपि कथनम् प्रायिकमेव, आकाशपर्वत विमानादावपि जीवनिवासस्य शास्त्रे प्रतिपादनात् । 'अजीवा जीवपइट्ठिया' अजीवा शरीरादिपुद्गलरूपाः जीवप्रतिष्ठिताः जीवा प्रतिष्ठा=अधिकरण येषां ते जीवप्रतिष्ठिता शरीरादीनां जीवेषु स्थितत्वात् । 'जीवा कम्मपइट्ठिया' जीवा कर्मप्रतिष्ठिताः, अनुदयावस्थकर्मपुद्गलसमुदायरूपेषु कर्मसु संसारिजीवानामाश्रितत्वात्, जीवा कर्माधीनस्थितिका इत्यर्थः । 'अजीवा जीवसंगहिया' अजीवा जीवसंगृहीता, मनोभाषादिषु पुद्गलानां जीवे संगृहीतत्वात् ।

"पुढवीपइट्ठिया तसा थावरा पाणा" जो ऐसा कहा गया है सो इसका भावार्थ यह है कि-जितने भी त्रस और स्थावर जीव हैं वे सब पृथिवी है अधिकरण (आधार) वाले हैं । "पृथिवी प्रतिष्ठितास्त्रसा स्थावराः प्राणाः" ऐसा जो कथन किया गया है सो यह भी प्रायिक ही है क्योंकि आकाश, पर्वत और विमान आदि में भी जीवों का निवास शास्त्र में प्रतिपादित किया गया है । "अजीवा जीवप्रतिष्ठिता" ऐसा जो कहा गया है सो उसका अभिप्राय ऐसा है कि शरीरादि पुद्गलरूप जो अजीव हैं वे जीव के आधाररूप है-जिनका अधिकरण जीव है, क्यों कि शरीरादिक पुद्गल जीवों में स्थित होते हैं । "जीवा कम्मपइट्ठिया" जीव कर्मप्रतिष्ठित हैं ऐसा जो कहा गया है, सो उसका अभिप्राय ऐसा है कि अनुदयावस्था प्राप्त कर्म पुद्गल के समुदाय ऊपर संसारी जीव आश्रित रहते हैं, अर्थात् संसारी

પૃથ્વી છે તે આકાશના આધારે જ પ્રતિષ્ઠિત છે 'पुढवीपइट्ठिया तसा थावरा पाणा', (પૃથ્વીપ્રતિષ્ઠિત ત્રસ સ્થાવર જીવો) નું તાત્પર્ય એ છે કે જેટલાં ત્રસ અને સ્થાવર જીવો છે તેનો આધાર પૃથ્વી છે 'पुढवीपइट्ठिया तसा थावरा पाणा" એવું જે કથન છે તે પણ ઘણે ભાગે છે એમ સમજવું કારણ કે આકાશ, પર્વત અને વિમાન વગેરેના આધારે પણ જીવોના રહેઠાણો છે એવું શાસ્ત્રોમાં પ્રતિપાદન કરાયેલ છે (अजीवा जीवपइट्ठिया) (અજીવો જીવપ્રતિષ્ઠિત છે) તેનું તાત્પર્ય એ છે કે શરીરાદિ પુદ્ગલ રૂપ જે અજીવ છે તેમનું અધિકરણ (આધાર) જીવ છે જેમનું અધિકરણ (આધાર) જીવ છે તેમને જીવપ્રતિષ્ઠિત કહે છે કારણ કે શરીરાદિ પુદ્ગલો જીવને આધારે પ્રતિષ્ઠિત (સ્થિત) હોય છે "जीवा कम्मपइट्ठिया (કર્મપ્રતિષ્ઠિત જીવો) જીવો કર્મપ્રતિષ્ઠિત છે તેનો ભાવાર્થ આ પ્રમાણે છે-ઉદયમાં નહીં આવેલ કર્મપુદ્ગલોને આધારે સંસારી જીવો રહેલા છે એટલે કે સંસારી જીવોની સ્થિતિ કર્માધીન હોય,

असंख्येयान् भागान् न वा सर्वं भागं स्पृशति. किन्तु असंख्येयमेव भागं स्पृशतीति। 'इमीसेणं भते' अस्याः खलु भदन्त! 'रयणप्पभाए पुढवीए' रत्नप्रभायाः पृथिव्याः 'घनोदही' घनोदधिः 'धम्मत्थिकायस्स' धर्मास्तिकायस्य "किं संखेज्जभागं फुसइ' धर्मास्तिकायस्य किं संख्येयभागं स्पृशति सर्वं वा स्पृशतीति रत्नप्रभापृथिव्याः सम्बन्धी घनोदधिः धर्मास्तिकात्रयत्रसंख्येयभागं स्पृशत्यादि प्रश्नः। भगवानाह—'जहा' इत्यादि—"जहा रयणप्पभा तहा–घणोदही" यथा रत्नप्रभा तथा घनोदधिः, यथा रत्नप्रभा धर्मास्तिकायस्या–संख्येय

भागों का और असंख्यात भागों का भी स्पर्श नहीं करती है–और न वह सम्पूर्णरूप में ही उसका स्पर्श करती है–इस तरह यहां असंख्यातवें भाग का स्पर्श करना यह द्वीतीयपक्ष ही अङ्गीका किया है–शेष चार पक्ष नहीं। (इमीसेणं भंते! रयणप्पभाए पुढवीए घनोदही) हे भदन्त! अब हम आपसे यह जानना चाहते हैं कि इस रत्नप्रभासंबंधी जो घनोदधि है वह धर्मास्तिकाय के कितने भाग का स्पर्श करता है? (किं संखेज्जइभागं फुसइ,असंखेज्जइभागं फुसइ, संखेज्जेइभागे फुसइ, असखेज्जेभागे फुसइ, सव्वं वा फुसइ) क्या संख्यातवें भाग का स्पर्श करता हैं, या असंख्यातवें भाग का स्पर्श करता है, अथवा धर्मास्तिकाय के संख्यातभागों का स्पर्श करता है–या असंख्यातभागों का स्पर्श करता है–कि समस्तरूप से उसका स्पर्श करता है? इस विषय में गौतम का समाधान करने निमित्त प्रभु उनसे कहते हैं (गोयमा) हे गौतम। (जहोरयणप्पभा तहा घणोदही) जिस प्रकार रत्नप्रभा पृथिवी

પણ સ્પર્શ કરતી નથી. પણ તે તેના અસંખ્યાતમા ભાગને સ્પર્શ કરે છે. આ જવાબનુ કારણુ નીચે પ્રમાણે છે. ધર્માસ્તિકાય સંપૂર્ણ લોકમાં વ્યાપ્ત છે પણ રત્નપ્રભા પૃથ્વી ઘણી થોડી જગ્યામા આવેલી છે ગૌતમ સ્વામીના ઉપરોક્ત પાચ વિકલ્પોમાના બીજા વિકલ્પને જ અહીં સ્વીકાર થયો છે.

પ્રશ્ન—"इमीसे णं भंते! रयणप्पभाए पुढवीए घनोदही" હે ભદન્ત! આ રત્નપ્રભા સબંધી જે ઘનોદધિ છે તે ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગને સ્પર્શ કરે છે? (किं संखेज्जइभाग फुसइ?) શું તે તેને સંખ્યાતમાં ભાગને સ્પર્શ કરે છે! (किं असंखेज्जइ भाग फुसइ) કે તેના અસંખ્યાતમાં ભાગને સ્પર્શ કરે છે? "संखेज्जे भागे फुसइ? असंखेज्जे भागे फुसइ? सव्वं वा फुसइ" કે તેના સંખ્યાત ભાગોને સ્પર્શ કરે છે, કે તેના અસંખ્યાત ભાગોને સ્પર્શ કરે છે? કે સમસ્ત ધર્માસ્તિકાયને સ્પર્શ કરે છે?

भागमेव स्पृशति तथा रत्नप्रभासम्बन्धी घनोदधिरपि धर्मास्तिकायस्यासंख्येय भागमेव स्पृशतीति द्वितीयपक्षस्यानुमतिर्दर्शिता भगवता शेषपक्षचतुष्टयस्यास्वीकार एवेति भावः । एवम्-'घणवाय तणुवाया वि' घनवाततनुवातावपि यथा घनोदधिः रत्नप्रभासम्बन्धी धर्मास्तिकायस्यासंख्येयभागमेव स्पृशति एवमेव-घनवातस्तनुवातश्चापि धर्मास्तिकायस्यासंख्येयमेव भागं स्पृशतीति । 'इमीसे णं भंते' अस्याः खलु भदन्त ! 'रयणप्पभाए पुढवीए' रत्नप्रभाया पृथिव्याः 'उवासंतरे' अवकाशान्तरम् 'धम्मत्थिकायस्स' धर्मास्तिकायस्य 'किं संखेज्जइभागं फुसइ' किं संख्येयभागं स्पृशति 'असंखेज्जइभागं फुसइ' असंख्येयभागं स्पृशति । 'जाव सव्वं फुसइ' यावत्सर्व स्पृशति इह यावत्पदेन 'संखेज्जे भागे असंखेज्जे भागे' अनयोर्ग्रहणम् । रत्नप्रभासम्बन्धि अवकाशान्त

धर्मास्तिकाय के असंख्यातवें भाग का स्पर्श करती है उसी प्रकार से इस रत्नप्रभा संबंधी जो घनोदधी है वह भी धर्मास्तिकायके असंख्यातवें भाग का ही स्पर्श करता है इस प्रकार द्वितीय पक्ष ही यहां स्वीकार किया गया है शेष चार पक्ष नहीं । (एवं घणवायतणुवाया वि) इसी तरह से रत्नप्रभा संबंधी घनवात और तनुवात ये दो भी धर्मास्तिकाय के असंख्यातवें भागका ही स्पर्श करता हैं ।

अब गौतम प्रभु से यह पूछते हैं कि (इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए उवासंतरे धम्मत्थिकायस्स किं संखेज्जइभागं फुसइ, असंखेज्ज इभागं फुसइ, जाव सव्वं फुसइ) हे भदन्त ! इस रत्नप्रभा पृथिवी का जो अवकाशान्तर है वह धर्मास्तिकाय के कितने भाग का स्पर्श करता है क्या संख्यातवें भाग का स्पर्श करता है या उसके असंख्यातवें भा ग का स्पर्श करता है अथवा धर्मास्तिकाय के संख्यातभागों का स्पर्श

ઉત્તર—" ગોયમા ! " હે ગૌતમ ! " जहा रयणप्पभा तहा घणोदही " જેમ રત્નપ્રભા પૃથ્વી ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાતમાં ભાગને સ્પર્શ કરે છે એજ પ્રમાણે રત્નપ્રભાનો ઘનોદધિ પણ ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાતમાં ભાગને સ્પર્શ કરે છે આ રીતે અહીં પણ પાંચ વિકલ્પોમાંના બીજા વિકલ્પનો સ્વીકાર કરાયો છે બાકીના ચારનો સ્વીકાર થયો નથી. (एवं घणवायतणुवाया वि " એજ પ્રમાણે રત્નપ્રભાના ઘનવાત અને તનુવાત પણ ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે

પ્રશ્ન—" इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए उवासंतरे धम्मत्थिकायस्स किं संखेज्जइभागं फुसइ, असंखेज्जइ भागं फुसइ जाव सव्वं फुसइ " હે ભદન્ત ! આ રત્નપ્રભા પૃથ્વીનું જે અવકાશાન્તર છે તે ધર્માસ્તિકાયના સંખ્યાતમાં ભાગને

रम्, धर्मास्तिकायस्य कतमं भागं स्पृशतीति प्रश्नः। भगवानाह-'गोयमा' इत्यादि। 'गोयमा' हे गौतम! 'संखेज्जइभागं फुसइ' संख्येयभागं स्पृशति 'णो असंखेज्जइभागं फुसइ' नो असंख्येयभागं स्पृशति 'णो संखेज्जे भागे णो असंखेज्जे भागे णो सव्वं फुसइ' नो संख्येयभागान् नो असंख्येयभागान् नो वा सर्वं स्पृशति। 'उवासंतराइं सव्वाइं' अवकाशान्तराणि, पूर्वोक्तप्रकारेण सर्वाण्यपि अवकाशान्तराणि ज्ञातव्यानीति। "जहा रयणप्पभाए पुढवीए वत्तव्वया भणिया' यथा रत्नप्रभायाः पृथिव्याः वक्तव्यता भणिता. 'एवं जाव अहे सत्तमाए' एवं यावत् अधः सप्तम्या वक्तव्यता भणितव्याः धर्मास्तिकायस्य

करता है या असंख्यातभाग स्पर्श करता है या कि सम्पूर्णरूप से उसका स्पर्श करता है? इसका उत्तर देते हुए प्रभु गौतम से कहते हैं (गोयमा!) हे गौतम! (संखेज्जइभागं फुसइ) रत्नप्रभापृथिवी का अवकाशान्तर धर्मास्तिकाय के संख्यातवें भाग का ही स्पर्श करता है। असंख्यातवें भाग का, संख्यातभागों का असंख्यातभागों का स्पर्श नहीं करता है और न वह सम्पूर्ण से ही उसका स्पर्श करता है। (उवासंतराइं सव्वाइं) इस तरह से और भी जितने अवकाशान्तर हैं वे सब धर्मास्तिकाय के संख्यातवें भाग का ही स्पर्श करते हैं ऐसा जानना चाहिये। (जहा रयणप्पभाए पुढवीए वत्तव्वया भणिया एवं जाव अहे सत्तमाए) जिस प्रकार से धर्मास्तिकाय की स्पर्शना का यह पूर्वोक्त रूप से विचार रत्नप्रभा पृथिवी में किया गया है उसी प्रकार से शेष छह पृथिवीकाय में भी जानना चाहिये। तात्पर्य यह है कि रत्नप्रभा

સ્પર્શ કરે છે? કે અસંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે? સંખ્યાત ભાગોનો સ્પર્શ કરે છે? કે અસંખ્યાત ભાગોનો સ્પર્શ કરે છે? કે સમસ્ત ધર્માસ્તિકાયનો સ્પર્શ કરે છે?

ઉત્તર-"गोयमा!" હે ગૌતમ! "संखेज्जइ भागं फुसइ" રત્નપ્રભા પૃથ્વીનું અવકાશાન્તર ધર્માસ્તિકાયના સંખ્યાતમા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે. તે ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યમા ભાગનો, કે સંખ્યાત ભાગોનો, કે અસંખ્યાત ભાગોનો, કે સમસ્ત ધર્માસ્તિકાયનો સ્પર્શ કરતું નથી.

એજ પ્રમાણે "उवासंतराइं सव्वाइं" બીજાં પણ જેટલાં અવકાશાન્તરો છે, તેઓ બધાં ધર્માસ્તિકાયના સંખ્યાતમા ભાગનો જ સ્પર્શ કરે છે, એવું સમજી લેવું.

"जहा रयणप्पभाए पुढवीए वत्तव्वया भणिया एवं जाव अहे सत्तमाए" ધર્માસ્તિકાયની સ્પર્શનાનો પૂર્વોક્ત રીતે રત્નપ્રભા પૃથ્વીની બાબતમાં જે રીતે વિચાર કરવામા આવ્યો છે એજ રીતે બાકીની છ પૃથ્વીઓ સાથેની સ્પર્શના

स्पर्शनाविषयको विचारो यथा रत्नप्रभायां कृतः तथैव अधः सप्तमपृथिवीपर्यन्ते तेनैव क्रमेण विचारः कर्तव्य इति यथा रत्नप्रभा पृथिवी तत् सम्बन्धि-घनोदधि घनवात-तनुवात-अवकाशान्तरमिति मिलिता पञ्च सूत्राणि तथैव शर्करापृथिवी तत्सम्बन्धी घनोदधि घनवात-तनुवात-अवकाशान्तरमिति मिलिता तत्रापि पञ्च सूत्राणि, एवं शेषासु पञ्चपृथिवीषु पञ्चसूत्राणि विज्ञेयानि। सर्वसंकलनया पञ्चत्रिंशत् सूत्राणि भवन्ति। ' जंबुद्दीवाइया दीवा लवणसमुद्दाइयासमुद्दा " जम्बूद्वीपादिका द्वीपाः लवणसमुद्रादिकाः समुद्राः पूर्वोक्तक्रमेण ज्ञातव्या जम्बूद्वीपादयोऽपि धर्मास्तिकायस्यासंख्येयभागमेव स्पृशन्तीति ' एवं सोहम्मे कप्पे जाव ईसीपब्भारा पुढवी फुसइ ' एवं सौधर्मः कल्पो यावत् ईषत्प्राग्भारा पृथिवी

संबंधी घनोदधि, घनवात, तनुवात, अवकाशान्तर ये सब मिलकर जिस प्रकार पांच सूत्रों द्वारा विचारित हुए हैं, उसी प्रकार से शर्करा पृथिवी संबंध घनोदधि, घनवात, तनुवात और अवकाशान्तर तथा स्वयं शर्करा पृथिवी इनके विषय में भी इसी प्रकार के पांच सूत्र बना कर विचार कर लेना चाहिये। इसी प्रकार से वालुकाप्रभा आदि पांच पृथिवी विषय के भी पांच पांच सूत्र जानना चाहिये। इस प्रकार सब मिलकर ३५ पैंतीस सूत्र हो जाते हैं। (जंबुद्दीवाइया दीवा लवण समुद्दाइया समुद्दा) इसी प्रकार से जंबूद्वीप आदि असंख्यात द्वीप और लवण समुद्र आदि असंख्यात समुद्र भी धर्मास्तिकाय के असंख्यातवें भाग का ही स्पर्श करते हैं-अन्य चार का नहीं। (एवं सोहम्मे कप्पे जाव ईसीपब्भारा पुढवी फुसइ) इसी प्रकार से सौधर्म कल्प से लेकर ईषत्प्राग्-

બાબતમાં પણ સમજી લેવું કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે રત્નપ્રભાના ઘનોદધિ, ઘનવાત, તનુવાત અને અવકાશાન્તર, એ બધાનો જેવી રીતે પાંચ સૂત્રો દ્વારા વિચાર કરવામાં આવ્યો છે એજ પ્રમાણે શર્કરા, વાલુકાપ્રભા વગેરે છ પૃથ્વીઓના ઘનોદધિ, ઘનવાત, તનુવાત અને અવકાશાન્તરો તથા તે છએ પૃથ્વીને વિષે પણ ઉપર પ્રમાણે પાંચ, પાંચ સૂત્રો સમજી લેવા. આ રીતે સાતેના મળીને ૩૫ પાંત્રીસ સૂત્રો બનશે.

"જંબૂદ્દીવાઇયાદીવા લવણસમુદ્દાઇયાસમુદ્દા" એજ પ્રમાણે જંબૂદ્વીપ આદિ અસંખ્યાત દ્વીપો અને લવણ સમુદ્ર આદિ અસંખ્યાત સમુદ્રો પણ ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે, સંખ્યાતમાં ભાગનો, કે અસંખ્યાત ભાગોનો કે અસંખ્યાત ભાગનો કે સમસ્ત ધર્માસ્તિકાયનો સ્પર્શ કરતા નથી. " एवं सोहम्मे कप्पे जाव ईसीपब्भारा पुढवीफुसइ ' એજ પ્રમાણે સૌધર્મ કલ્પ આદિ કલ્પથી લઈને ઈષત્પ્રાગ્ભારા પૃથ્વી પર્યન્તના વિષે સમજવું એટલે કે

स्पृशति. 'ते सव्वे वि असंखेज्जइभागं फुसंति' ते सर्वेऽपि असंख्येयभागं स्पृशंति 'सेसा पडिसेहियव्वा' शेषाः प्रतिषेद्धव्याः जम्बूद्वीपादिकाः द्वीपाः सर्वे समुद्राः सौधर्मकल्पादयो यावत् ईषत्प्राग्भारा पृथिवी-पर्यन्ताः-सर्वेऽपि धर्मास्तिकायस्यासंख्येयमेव भागं स्पृशन्तीति न तु सख्येयभागम् संख्येयान् भागान् असंख्येयान् भागान् सर्वं वा स्पृशन्तीति भावः । 'एवं अहमत्थिकाए' एवमधर्मास्तिकायः धर्मास्तिकायवदेवाऽधर्मास्तिकायस्यापि स्पर्शनाविषये विचारः करणीयः 'एवं लोयागासेवि' एवं लोकाकाशेऽपि ।

आलापश्चेत्थम् 'इमाणं रयणप्पभा पुढवी अहमत्थिकाए सा किं संखेज्जइ भागं फुसइ असंखेज्जइ भागं फुसइ. संखेज्जे भागे फुसइ, असंखेज्जे भागे फुसइ

ग्भारा नाम की पृथिवी तक जानना चाहिये-अर्थात् सौधर्म आदि समस्तकल्प, नव ग्रैवेयक, पांच अनुत्तर और ईषत्प्रग्भारा पृथिवी ये सब धर्मास्तिकाय के असंख्यातवें भाग का ही स्पर्श करते हैं (सेसा पडिसेहियव्वा) धर्मास्तिकाय के सख्यातवें भाग का, धर्मास्तिकाय के संख्यातभागों का, असंख्यातभागों का स्पर्श नहीं करते हैं और न धर्मास्तिकाय को ये सब पूर्णरूप से स्पर्श करते हैं। (एवं अहम्मत्थिकाए) इसी तरह से अधर्मास्तिकाय के स्पर्श के विषय में भी विचार जानना चाहिये। (एवं लोगागासे वि) तथा लोकाकाश को स्पर्श करने के विषय में ऐसा ही विचार जानना चाहिये। अधर्मास्तिकाय के स्पर्श करने के विषय में रत्नप्रभा पृथिवी को लेकर आलाप इस प्रकार से है-(इमाणं रयणप्पभा पुढवी अहम्मत्थिकाए सा किं संखेज्जइभागं फुसइ? असंखेज्जइभार्गं? फुसइ? संखे-

સૌધર્મ આદિતસમસ્ત કલ્પો (દેવલોકો), નવ ગ્રૈવેયકો, પાચ અનુત્તર વિમાનો, અને ઇષિત્પ્રાગભારા પૃથ્વી, એ બધા ધર્માસ્તિકાયના અસખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે "सेसा पडिसेहियव्वा" તેઓ સખ્યાતમાં ભાગનો, કે સંખ્યાતભાગોનો, કે અસખ્યાતભાગોનો કે સમસ્ત ધર્માસ્તિકાયનો સ્પર્શ કરતા નથી. આ રીતે બાકીના ચાર વિકલ્પો અહી પણ લાગૂ પડતાં નથી "एवं अहम्मत्थिकाए" અધર્માસ્તિકાયની સ્પર્શનાના વિષયમાં પણ ધર્માસ્તિકાય પ્રમાણે જ વર્ણન સમજી લેવુ (एवं लोगागासे वि) લોકાકાશની સ્પર્શનાના વિષયમાં પણ એ પ્રમાણે જ સમજવું. અધર્માસ્તિકાયની રત્નપ્રભા પૃથ્વી સાથેની સ્પર્શના વિષેનાં સૂત્રો નીચે પ્રમાણે છે-

"इमाणं रयणप्पभा पुढवी अहम्मत्थिकाए सा किं संखेज्जइभागं फुसइ? असंखेज्जइभागं फुसइ? संखेज्जे भागे फुसइ, ? असंखेज्जेभागे फुसइ, सव्वं फुसइ"

सब्व फुसइ गोयमा ! नो संखेज्जभागं फुसइ असंखेज्ज भागं फुसइ नो संखेज्ज भाग फुसइ, नो असंखेज्जे भागे फुसइ नो सव्व फुसइ ' इत्यादिरूपेण सर्वमा आपका स्वयमवोदनीयाः इहापि पूर्ववदेव विचार कर्तव्य इति ।

। भवति चेद संग्रहगाथा—पुढवोमही घणतणु कप्पा गेवेज्जणुत्तरासिद्धी । संखेज्जइ भागं अंतरसु सेसा असंखेज्जा ' पृथिव्युदधी घनतनूकल्पा ग्रैवेयका नुत्तरौ सिद्धि र स्ययभागम अन्तरेषु शेषाः असंख्याः ॥ पृथिव्युदधिघनवात

ज्जे भागे फुसइ ? असंखेज्जे भागे फुसइ ? सव्व फुसइ ?-गोयमा ! नो संखेज्जइभागं फुसइ, असंखेज्जइ भाग फुसइ, नो संखेज्जे भागे फुसइ नो असंखेज्जेभागे फुसइ, नो सव्व फुसइ) इन सूत्रों का अर्थस्पष्ट है-सिर्फ धर्मास्तिकाय की जगह अधर्मास्तिकाय लगा कर इनका अर्थ करना चाहिये । इसी तरहसे धर्मास्तिकायके सूत्रपाठ की तरह अधर्मास्तिकाय की स्पर्शना के विषय में अतिलोक उर्ध्वलोक आदि सबधि विचार भी करलेना चाहिये और उस विषय में सूत्रपाठ धर्मास्तिकाय की जगह अधर्मास्तिकाय लगाकर कहना चाहिये । यही बात (इहापि पूर्ववदेव विचारः करणीयः) इस कथन से प्रकट की गई है ।

संग्रह गाथा- का अर्थ इस प्रकार से है-रत्नप्रभा आदिक सातों पृथिविकाय, घनोदधि, घनवात और तनुवात ये तीनों १२ कल्प,९ ग्रैवेयक, ५ अनुत्तर और ईषत्प्राग्भारा नामक सिद्धि स्थान ये सब धर्मो

"गोयमा ! नो संखेज्जइभागं फुसइ, असंखेज्जइभागं फुसइ नो संखेज्जे भागं" फुसइ ? ' नो असंखेज्जेभागे फुसइ नो सव्वं फुसइ ?" આ સૂત્રોનો અર્થ સ્પષ્ટ છે આગળ ધર્માસ્તિકાયની રત્નપ્રભા પૃથ્વી આદિની સ્પર્શના વિષે જે સૂત્રો આપ્યાં છે, તે સૂત્રોમાં ધર્માસ્તિકાયને બદલે અધર્માસ્તિકાયના પદ મૂકીને ધર્માસ્તિકાયનાં સૂત્રો પ્રમાણે જ તેમનો અર્થ કરવો જોઈએ એજ પ્રમાણે ધર્માસ્તિકાયના સૂત્રપાઠ પ્રમાણે જ અધર્માસ્તિકાયની અધોલોક, ઉર્ધ્વલોક વગેરેની સાથેની સ્પર્શનાના વિષયમાં પણ સૂત્રો કહેવા જોઈએ. પણ તે સૂત્રપાઠમાં ધર્માસ્તિકાયને બદલે ' અધર્માસ્તિકાય ' પદ મૂકવું જોઈએ. એજ વાત "इहापि पूर्ववदेव विचारः करणीयः" આ કથન દ્વારા બતાવવામાં આવેલ છે

સંગ્રહગાથાનો અર્થ આ પ્રમાણે છે-રત્નપ્રભા આદિ સાતે પૃથ્વી, ઘનોદધિ, ઘનવાત અને તનુવાત. એ ત્રણે બાર કલ્પ, ૯ ગ્રૈવેયક, પાંચ અનુ

तनु वातकल्पग्रैवेयकानुत्तरसिद्धीनामवकाशान्तराणि सर्वाणि धर्मास्तिकायस्य संख्येयभागं स्पृशन्ति शेषाः सर्वेऽपि धर्मास्तिकायस्य असंख्येयमेव भागं स्पृशन्तीति गाथार्थः ॥ सू० १२ ॥

इति श्रीविश्वविख्यात–जगद्वल्लभ–प्रसिद्धवाचकपञ्चदशभाषाकलितललितकलापालापक–प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक–वादिमानमर्दक–श्रीशाहूछत्रपतिकोल्हापुरराजप्रदत्त–' जैनशास्त्राचार्य ' पदभूषित–कोल्हापुरराजगुरु–बालब्रह्मचारि–जैनाचार्य–जैनधर्मदिवाकरपूज्यश्री–घासीलालव्रतिविरचितायां श्रीभगवतीसूत्रस्य प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां व्याख्यायां द्वितीयशतके दशमोद्देशकः समाप्तः ॥२–१०॥

स्तिकाय के असंख्यातवें भाग को ही स्पर्श करते हैं तथा जो अवकाशान्तर हैं वे धर्मास्तिकाय के संख्यातवें भागको स्पर्श करते हैं ॥सू०५॥

जैनाचार्य श्री घासीलालजी महाराजा कृत "भगवतीसूत्र" की प्रियदर्शिनी व्याख्याके द्वितीय शतकके दशवां उद्देशा समाप्त ॥२–१०॥

त्तर विमानो अने ईषत्प्राग्भारा नामनुं सिद्धि स्थान, ए साते धर्मास्तिकायना असंख्यातमां भागनो स्पर्श करे छे पण जे अवकाशान्तर छे ते धर्मास्तिकायना संख्यातमां भागनो स्पर्श करे छे.

॥ बीजा शतकनो दशमो उद्देशक समाप्त ॥

जैनाचार्य श्री घासीलालजी महाराज कृत भगवती सूत्रनी प्रियदर्शिनी व्याख्याना बीजा शतकनो दशमो उद्देशो समाप्त थयो. ॥ २–१० ॥

—

सव्व फुसइ गोयमा ! नो सखेज्जभाग फुसइ असखेज्ज भागं फुसइ नो सखेज्जे भागे फुसइ, नो असखेज्जे भागे फुसइ नो सव्व फुसइ ' इत्यादिरूपेण सर्वमा-लापकाः स्वयमेवोहनीयाः इहापि पूर्ववदेव विचार कर्तव्य इति ।

भवति चेह सग्रहगाथा—पुढवोदही घणतणु कप्पा गेवेज्जणुत्तरासिद्धी । सखेज्जइ भागं अंतरेसु सेसा असखेज्जा ' पृथिव्युदधी घनतनूकल्पा ग्रैवेयका नुत्तरौ सिद्धि सख्येयभागम् अन्तरेषु शेषा असख्येयाः ॥ पृथिव्युदधिघनवात

ज्जे भागे फुसइ ? असखेज्जेभागे फुसइ ? सव्व फुसइ ?–गोयमा ! नो सखेज्जइभागं फुसइ, असंखेज्जइ भागं फुसइ, नो सखेज्जे भागे फुसइ नो असंखेज्जेभागे फुसइ, नो सव्व फुसइ) इन सूत्रों का अर्थस्पष्ट है– सिर्फ धर्मास्तिकाय की जगह अधर्मास्तिकाय लगा कर इनका अर्थ करना चाहिये । इसी तरहसे धर्मास्तिकायके सूत्रपाठ की तरह अधर्मास्तिकाय की स्पर्शना के विषय में अधोलोक ऊर्ध्वलोक आदि संबंधि विचार भी करलेना चाहिये और उस विषय में सूत्रपाठ धर्मास्तिकाय की जगह अधर्मास्तिकाय लगाकर कहना चाहिये । यही बात (इहापि पूर्ववदेव विचारः करणीय) इस कथन से प्रकट की गई है ।

संग्रह गाथा– का अर्थ इस प्रकार से है–रत्नप्रभा आदिक सातों पृथिवीकाय, घनोदधि, घनवात और तनुवात ये तीनों १२ कल्प,९ ग्रैवेयक, ५ अनुत्तर और ईषत्प्राग्भारा नामक सिद्धि स्थान ये सब धर्मा

"गोयमा ! नो सखेज्जइभागं फुसइ, असंखेज्जइभागं फुसइ, नो संखेज्जे भागं फुसइ ?' नो असंखेज्जेभागं फुसइ नो सव्व फुसइ !" આ સૂત્રોનો અર્થ સ્પષ્ટ છે આગળ ધર્માસ્તિકાયની રત્નપ્રભા પૃથ્વી આદિની સ્પર્શના વિષે જે સૂત્રો આપ્યાં છે તે સૂત્રોમાં ધર્માસ્તિકાયને બદલે અધર્માસ્તિકાયના પદ મૂકીને ધર્માસ્તિકાયનાં સૂત્રો પ્રમાણે જ તેમનો અર્થ કરવો જોઈએ એજ પ્રમાણે ધર્માસ્તિકાયના સૂત્રપાઠ પ્રમાણે જ અધર્માસ્તિકાયની અધોલોક, ઉર્ધ્વલોક વગેરેની સાથેની સ્પર્શનાના વિષયમાં પણ સૂત્રો કહેવા જોઈએ. પણ તે સૂત્રપાઠમાં ધર્માસ્તિકાયને બદલે 'અધર્માસ્તિકાય' પદ મૂકવું જોઈએ. એજ વાત "इहापि पूर्ववदेव विचारः करणीय" આ કથન દ્વારા બતાવવામાં આવેલ છે

સંગ્રહગાથાનો અર્થ આ પ્રમાણે છે–રત્નપ્રભા આદિ સાતે પૃથ્વી, ઘનોદધિ, ઘનવાત અને તનુવાત એ ત્રણે, બાર કલ્પ, ૯ ગ્રૈવેયક, પાંચ અનુ



ननु 'अजीवा जीवपइट्ठिया अजीवा जीवसगहिया' इत्यनयोर्वाक्ययोरर्थे को भेदः? न कोपि भेदः प्रतिभाति यथा मुनिसंयतयोः, इतिचेदत्रोच्यते-अजीवा जीवप्रतिष्ठिता', इत्यत्राऽजीवजीवयोराधाराधेयभावः कथितः, तथा अजीवा जीवसगृहीता इति वाक्ये तु अजीवजीवयोः संग्राह्यसंग्राहकभावः प्रतिपादितः संग्रहकर्ता जीवः संग्राह्याश्चाजीवाः, इत्येतावानेव भेद उभयत्र, सावद्यकर्मणि मौनकरणान्मुनिः, षट्-

---

जीवों की स्थिति कर्माधीन होती है इस कारण वे कर्माधीन स्थितिवाले होने के कारण' जीव कर्मप्रतिष्ठित हैं ' ऐसा कहा गया है। "अजीवा जीवसंगहिया" ऐसा जो कहा है सो उसका भाव ऐसा है कि जीव मनो भाषा आदि रूप में पुद्गलों का ग्रहण करते रहते हैं।

शंका—"अजीवा जीवपइट्ठिया" इस वाक्य में और "अजीवा जीवसंगहिया" इन दोनों वाक्यों के अर्थ में क्या भेद है? मुझे तो कोई भी भेद मालूम नहीं पड़ता है। जैसे मुनि और संयत में फर्क नहीं है क्यों कि जो मुनि है, वही संयत है, जो संयत है, वही मुनि है।

समाधान—"अजीवा जीवप्रतिष्ठिताः" इस वाक्य में अजीव और जीव इनमें आधार आधेय भाव कहा गया है। और "अजीवा जीव संगृहीता" इस वाक्य में संग्राह्यसंग्राहक भाव कहा गया है। सग्रह-कर्त्ता जीव और संग्राह्य अजीव हैं। इतना ही मात्र इन दोनोंमें भेद है। मुनि और संयत, इनमें भी समभिरूढनय की अपेक्षा भेद है और

છે. આ રીતે તેઓ કર્માધીન સ્થિતિવાળા હોવાથી તેમને કર્મપ્રતિષ્ઠિત કહ્યાં. "अजीवा जीवसगहिया' (અજીવો જીવસગૃહીત છે) એનું તાત્પર્ય એ છે કે જીવો મનોવર્ગણાના પુદ્ગલોને મનરૂપે તથા ભાષા વગેરે વર્ગણાના પુદ્ગલોને ભાષા વગેરે રૂપે ગ્રહણ કરતા રહે છે તે કારણે અજીવો જીવ સંગૃહીત કહેલ છે

શંકા—"अजीवा जीवपइट्ठिया" અને "अजीवा जीवसगहिया" એ બન્ને વાકયોમા શો અર્થભેદ છે? જેવી રીતે મુનિ અને સંયત વચ્ચે કોઇ ભેદ નથી કારણ કે જે મુનિ છે તેજ સયત છે અને જે સંયત છે તેજ મુનિ છે, એજ પ્રમાણે ઉપરના વાકયોના અર્થમા પણ કોઇ ભેદ લાગતો નથી

સમાધાન—"अजीवा जीवप्रतिष्ठिताः" આ વાકયમાં અજીવ અને જીવનો આધાર આધેય ભાવ કહ્યો છે અને "अजीवा जीवसगृहीता" આ વાક્યમા સગ્રાહ્ય અને સંગ્રાહક ભાવ કહ્યો છે સગ્રહકર્ત્તા જીવ છે અને સંગ્રાહ્ય અજીવ છે એટલો તે બન્ને વચ્ચે તફાવત છે. મુનિ અને સંયતમાં પણ સમભિરૂઢનયની અપેક્ષાએ ભેદ છે. તે ભેદ આ પ્રમાણે છે—પાપકર્મ

रभ्य 'अजीवा जीवसंगृहीताः, जीवाः कर्मसंगृहीताः' इत्यन्त पदसन्दर्भो यावत्पदेन ज्ञातव्य, हे भदन्त ! एतत्सर्वं यदुच्यते देवानुप्रियेण तत्र किं कारणमिति भावः। भगवानाह-'गोयमे'-इत्यादि। 'गोयमा' हे गौतम ! 'से जहा णामए केइ पुरिसे' स यथा नामकः कश्चित् पुरुष, 'वत्थिमाडोवेइ' बस्तिमाटोपयति, वस्ति=दृतिं आटोपयति वायुना प्रपूरयति 'वत्थिमाडोवेत्ता' वस्तिमाटोपयित्वा दृतिं वायुना पूरयित्वा 'उप्पिं सियं बंधइ' उपरि सितं बध्नाति, उपरि सितं= बन्धनं बध्नाति 'बंधित्ता' बद्ध्वा 'मज्झेणं' मध्ये खलु 'गंठिं बंधइ' ग्रन्थिं बध्नाति, 'बंधित्ता' बद्ध्वा 'उवरिल्लं गंठिं मुयइ' उपरितनं ग्रन्थिं मुञ्चति, 'मुइत्ता' मुक्त्वा, ग्रन्थिं विमोच्य 'उवरिल्लं देसं वामेइ' उपरितनं देशं वमयति-बस्तेरूर्ध्वदेशाद्वायुं

"यावत्" शब्द से "अट्ठविहा लोयट्ठिई" से लेकर "अजीवा जीव संगहिया जीवा कम्मसंगहिया" तक का पाठ ग्रहण किया गया है। इसका भाव यही है, जो पहिले कह दिया गया है कि हे भदन्त ! यह सब जो आप कहते हैं उसका क्या कारण है ? तब प्रभु इस का उत्तर देते हुए कहते हैं कि (गोयमा) हे गौतम। (से जहा णामए केइ पुरिसे) जैसे अमुक नामवाला कोई पुरुष (वत्थिमाडोवेइ) मसक को हवा से भर दे (वत्थिमाडोवेत्ता) और मसक को हवा से भर कर (उप्पिं सितं बंधइ) फिर वह उसका मुख बांध दे। (बंधित्ता मज्झेणं गंठिं बंधइ) बांध कर उस मसक के बीचमें वह फिर गांठ लगा दे। (बंधित्ता) बीच में गांठ लगा कर वह फिर (उवरिल्लं गंठिं मुयइ) ऊपर की अर्थात् मसक के मुख की गांठ को खोल दे। (मुइत्ता) गांठ खोलकर (उवरिल्लं देसं वामेइ) उस मसक के ऊपरी भाग से वायु को वह निकाल

અહીં "यात्र" પદ વડે "अट्ठविहा लोयट्ठिई" થી લઈને 'अजीवा जीवसंगहिया" 'जीवा कम्मसंगहिया" સુધીનો પાઠ ગ્રહણ કરાયો છે તેનો ભાવાર્થ આગળ કહ્યા પ્રમાણે જ છે કે હે પ્રભો ! આપ લોકસ્થિતિમાં જે આઠ પ્રકાર બતાવો છો તેનું કારણ શું છે? ઉત્તર—(गोयमा !) હે ગૌતમ ! (स जहा णामए केइ पुरिसे) જેમકે કોઈ પુરુષ (वत्थिमाडोवेइ) મશકને હવા વડે ભરી દે (वत्थिमाडोवेत्ता) અને મશકને હવાથી ભરી દઈને (उप्पिं सितं बंधइ) પછી તે માણસ તેના મુખને બાંધી દે. (बंधित्ता मज्झेणं गंठिं बंधइ) આ રીતે મશકના મુખને બાંધીને તેની વચ્ચે તે ફરીથી ગાંઠ વાળી દે (बंधित्ता) વચ્ચે ગાંઠ બાંધીને (उवरिल्लं गंठिं मुयइ) ઉપરની એટલે કે મશકના મુખની ગાંઠને પછી છોડી નાખે. (मुइत्ता) પછી ઉપરની ગાંઠને છોડીને (उवरिल्लं देसं वामेइ) તે

भगवत कथनम्। गौतमः माह–'हंता चिट्ठइ' हन्त तिष्ठति भदन्त!, इति गौतमस्य स्वीकरणम्। तथा च यथा वायुराधारा जलस्य वस्तिस्थले दृश्यते एवमत्र तनु वातमलयोरप्याधाराधेयभाव समवन्येव, तत्र वायुरधिकरणमाधेयश्च जलमिति। भगवानाह—'से तेणट्ठेण जाव जीवा कम्मसंगहिया' तच्चेनार्थेन यावत् जीवा कर्मसगृहीताः, तेन कारणेन इतिस्थितवायुजलदृष्टा तेन एवमुच्यते हे गौतम! 'जाव जीवा कम्मसंगहिया' यावत्–जीवा कर्मसंगृहीता, यावच्छब्देन आकाश मविष्ठितो वायुरित्यारम्य 'अजीवा जीवसंगहिया' अजीवाः जीवसंगृहीताः, इत्यन्त पाठ' समाप्तः, अथ घनोदध्युपरि पृथिवीति दृष्टा तेन स्पष्टयति–'से जहा या' इत्यादि, 'से जहा या केइ पुरिसे वत्थि आडोवेइ' तद्यथा–वा कश्चित् पुरुषो वस्तिमाटोपयति, वायुना पूरयति अत्र 'वा' शब्दो दृष्टान्तान्तरयोत

है। इस बात को प्रकट करने के लिये यह 'उवरिमतल' पद कहा गया है। तथा –जैसे वायु आधार जल का वस्तिस्थल में दिखलाई देता है, इसी प्रकार से तनुवात और जल इन दोनों का भी आधार आधेयभाव समझना है। यहां वायु अधिकरण है और जल आधेय है। (से तेणट्ठेणं जाव जीवा कम्मसंगहिया) इस कारण हे गौतम! मैंने ऐसा कहा है कि यावत् जीव कर्मसंगृहीत हैं। यहां यावत् शब्द से आगासपइट्ठिए वाए" इस पाठ से लेकर "अजीवा जीवसंगहिया" यहां तक का पाठ ग्रहण किया गया है। "घनोदधि के ऊपर पृथिवी है" इस बात को अब सूत्रकार दृष्टान्त से स्पष्ट करते हैं। (से जहा वा केइ पुरिसे वत्थि आडावेइ) जैसे कोई पुरुष चमड़े की मसक में वायु भरकर फुलावे। यहां जो "वा" शब्द प्रयुक्त हुआ है वह दूसरे दृष्टान्त का पोषक है।

'उवरिमतल" पद મૂકયુ છે જેવી રીતે પાણીનો આધાર વાયુ મશકમાં દેખાય છે એજ પ્રમાણે તનુવાત અને પાણી, એ બન્નેમા પણ આધાર આધેય ભાવ સમજી શકે છે અહીં વાયુ આધાર છે અને પાણી આધેય છે (से तेणट्ठेणं जाव जीवा कम्मसंगहिया !) હે ગૌતમ ! તે કારણે મે એવુ કહ્યું છે કે અહીં ' જીવ કર્મ સંગૃહીત છે" ત્યા સુધીનું કથન ગ્રહણ કરવુ અહીં (जाव) यावत्" પદથી ' आगासपइट्ठिए वाए" થી શરૂ કરીને 'अजीवा जीवसंगहिया" સુધીનો પાઠ ગ્રહણ કરવો ઘનોદધિની ઉપર પૃથ્વી છે" એ વાતને સૂત્રકાર દૃષ્ટાન્ત વડે સમજાવે છે–(से जहा वा केइ पुरिसे वत्थि आडोवेइ) જેમ કે કોઇ પુરુષ ચામડાની મશકમાં હવા ભરીને તેને ફુલાવે અહીં જે "वा" પદ આવ્યુ છે તે બીજા દૃષ્ટાન્તનુ પોષક છે (आडोविता

निष्कासयतीत्यर्थः, 'उपरिल्लं देसं वामेत्ता' उपरितन देशं वमयित्वा, ऊर्ध्वदेशाद्वायुमपसार्य्य, 'उपरिल्लं देसं आउकायस्स पूरेइ' उपरितनं देशमप्कायेन पूरयति, ऊर्ध्वं देशं जलेन प्रपूरयतीत्यर्थः, 'पूरित्ता' पूरयित्वा 'उप्पिं सितं बंधइ' उपरि सितं=बन्धनं बध्नाति, 'बंधित्ता' बद्ध्वा 'मज्झिल्लं गंठिं मुयइ' मध्यमां ग्रन्थि मुञ्चति, 'से णूणं गोयमा' तन्नून हे गौतम! 'से आउकाए वाउकायस्स उप्पिं उवरिमतले चिट्ठइ' स अप्कायो वायुकायस्योपरि उपरिमतले तिष्ठति किम्? अप्कायो जलम् वायुकायस्य वायोरुपरि यद्यप्युपरि व्यवहारतोपि संभवेत्तथापि सर्वोपरित्वबोधनायाह 'उवरिमतले' उपरिमतले सर्वोपरीत्यर्थः किं तिष्ठतीति

दे। इस तरह उस मसक में आधे भागमें तो वायु भरी रहती है और आधाभाग वायु से रहित होकर खाली हो जाता। (उवरिल्लं देसं वामेत्ता) इस प्रकार ऊर्ध्वदेश से वायु को हटाकर (उवरिल्लं देसं आउकायस्स पूरेइ) वह उस ऊर्ध्वदेश को जलसे भर दे। (पूरित्ता उप्पिं सितं बंधइ) भर कर फिर वह उसे बांध दे। (बंधित्ता) बांधकर (मज्झिल्लं गंठिं मुयइ) पहिले लगाई हुई बीच की गांठ को फिर वह खोल दे। (से नूणं गोयमा! से आउकाए वायुकायस्स उप्पिं उवरिमतले चिट्ठइ) तो हे गौतम! वह भरा हुआ पानी उस पवन के ऊपर के भाग में रहता है क्या? ऐसा भगवान् ने गौतम से पूछा। तब गौतम ने कहा (हंता चिट्ठइ) हां भदन्त! रहता है। यहां (उवरिमतले) ऐसा जो कहा गया है उसका कारण यह है कि जल वायु के ऊपर रहता है यह बात व्यवहार से भी लोक में मानी जाती है तो भी वह जल सर्वोपरि

મશકની ઉપરના ભાગમાંથી વાયુને બહાર કાઢી નાખે આ પ્રમાણે કરવાથી મશકના અર્ધા ભાગમાં તો વાયુ ભરેલો રહેશે અને અર્ધો ભાગ વાયુરહિત ખાલી થઈ જશે (उवरिल्ल देस वामेत्ता) પછી મશકના ઉપરના ભાગમાંથી વાયુને કાઢી નાખીને (उवरिल्ल देसं आउकायस्स पूरेइ) તે ઉપરના ભાગને પાણીથી ભરી દે (पुरित्ता उप्पिं सित बंधइ) પછી પાણી ભરીને ફરીથી તેનું ઉપરનું મુખ બાંધી દે (बंधित्ता) મુખને બાંધી દઈને (मज्झिल्ल गंठिं मुयइ) પહેલા બાંધેલી વચલા ભાગની ગાંઠને પછી ખોલી નાખે (से णूण गोयमा! से आउकाए वाउकायस्स उप्पिं उवरिमतले चिट्ठइ?) તો હે ગૌતમ! તે ભરેલું પાણી વાયુના ઉપરના ભાગમાં રહે છે ખરૂં? ગૌતમે જવાબ આપ્યો (हंता चिट्ठइ) હા ભગવન્! રહે છે. અહીં (उवरिमतले) એવું જે કહ્યું છે તેનું કારણ એ છે કે પાણી વાયુની ઉપર રહે છે તે વાત વ્યવહારથી પણ લોકમાં માનવામાં આવે છે. તો પણ પાણી સર્વોપરી છે એ વાતને બતાવવાને માટે

लोकस्थितरेवाश्रा चिकारेण तदाभित्यैवदमाह—'अत्थि ण'–मित्यादि। अथवा 'अजीवा जीवपइट्ठिया' इत्यादि पदचतुष्टयस्य भावनार्थमिदमाह 'अत्थि ण' मित्यादि।

मूलम्—अत्थि णं भंते जीवा य पोग्गला य अन्नमन्नबद्धा अन्नमन्नपुट्ठा अन्नमन्नमोगाढा अण्णमण्णसिणेहपडिबद्धा अन्नमन्न घडत्ताए चिट्ठति ? हंता अत्थि। से केणट्ठेणं भंते जाव चिट्ठति, गोयमा !, से जहा णामए हरए सिया पुण्णे पुण्णप्पमाणे वोलट्टमाणे वोसट्टमाणे समभरघडत्ताए चिट्ठइ, अहे णं केइ पुरिसे तंसि हरयंसि एगं महं नावं सयासवं सयछिद्दं ओगाहेज्जा, से णूण गोयमा ! सा णावा तेहिं आसवदारेहिं आपूरेमाणी आपूरेमाणी पुन्ना, पुन्नप्पमाणा वोलट्टमाणा वोसट्टमाणा समभरघटत्ताए चिट्ठइ?, हंता चिट्ठइ। से तेणट्ठेण, गोयमा ! अत्थि ण जीवा य जाव चिट्ठति ॥ सू० ६ ॥

छाया—अस्ति खलु भदन्त ! जीवाश्च पुद्गलाश्चान्योन्यबद्धा अन्योन्यस्पृष्टाः अन्योन्यावगाढा अन्योन्यस्नेहप्रतिबद्धा अन्योन्यघटतया तिष्ठन्ति?, हन्त अस्ति, तत्केनार्थेन भदन्त यावत् तिष्ठति?, गौतम ! तद्यथा नामकः ह्रदः स्यात् पूर्णः पूर्णप्रमाणो व्यपलोटयन् विकसन् समभरघटतया तिष्ठति अथ कश्चित्पुरुषस्तस्मिन् ह्रदे एकां महतीं नावं शताश्रवाम् शतछिद्रामवगाहयेत्, तद् नूनं गौतम ! सा नौस्तैः आस्रवद्वारैरापूर्यमाणी आपूर्यमाणी पूर्णा पूर्णप्रमाणा व्यपलोटयन्ती विकसन्ती समभरघटतया तिष्ठति?, हन्त तिष्ठति, तत्तेनार्थेन गौतम ! अस्ति खलु जीवाश्च यावत् तिष्ठन्ति ॥सू०६॥

ठिया" यहां तक का पाठ संगृहीत किया गया है। "एवं वा" यहां "वा" शब्द दूसरे दृष्टान्त का सूचक है ऐसा जानना चाहिये ॥सू० ५॥

यहां लोकस्थितिका ही अधिकार चल रहा है। अब उसी को लेकर सूत्रकार कहते हैं—अथवा 'अजीवा जीव पइट्ठिया" इत्यादि जो चार

'आगासपइट्ठिए वाए' थी शरू करीने 'अजीवा कम्मसंगहिया" सुधीनो पाठ ग्रहण करायो छे "एवं वा" आ पदमां 'वा" शब्द बीजा दृष्टान्तनुं सूचक छे एम समजवुं ॥ सू. ५ ॥

अहीं लोकस्थितिनुं ज वर्णन चाली रह्युं छे. तेथी तेने अनुलक्षीने सूत्रकार कहे छे– 'अत्थि णं भंते' इत्यादि अथवा अजीवा जीवपइट्ठिया" इत्यादि

'आडोवित्ता कडीए बंधइ' आटोप्य कट्यां बध्नाति 'बंधित्ता' बद्ध्वा 'अत्थाह-मतारमपोरुसियंसि उदगंसि ओगाहेज्जा' अस्ताघाऽतारापौरुषेये उदके अवगाहेत, अस्ताघश्च अतारं चापौरुषेयं चेत्यस्ताघाऽतारापौरुषेयं तस्मिन्, मकारद्वयमत्र प्राकृतत्वात्। स्ताघं=प्रमाणं, न स्ताघम्-अस्ताघम्-अप्रमाणं प्रमाणरहितं-गम्भीरमित्यर्थः, अथवा 'अत्थाहं'-इति अस्ताधः अस्तम् अधः=अधस्तलं यस्येति तत् अस्ताधः, निरस्ताधस्तलम् अगाधमित्यर्थः, यत एवागाधमत एवातारं तरीतुमशक्यम्, पुरुषः प्रमाणं विद्यते यस्य तत् पौरुषेयम्, न पौरुषेयमित्यपौरुषेयम्, पुरुषप्रमाणाधिकरणमित्यर्थः। एतादृशे जले कश्चिदवगाहनं कुर्यात्, 'से णूणं गोयमा' तद् नूनं गौतम! 'से पुरिसे तस्स आउक्कायस्स उवरिमतले चिट्ठइ' स पुरुषस्तस्याप्कायस्योपरिमतले किं तिष्ठति?, गौतमः आह-'हंता चिट्ठइ' हन्त तिष्ठति, हे भदंत स पुरुषो जलस्योर्ध्वभागे एव तिष्ठतीति। भगवानाह-'एव वा अट्ठविहा लोयट्ठिई पन्नत्ता जाव जीवा कम्मसंगहिया' एवं वाऽष्टविधा लोकस्थितिः प्रज्ञप्ता यावत् जीवाः कर्मसंगृहीताः, यावत्पदेन-आकाशप्रतिष्ठितो वायुरित्यारभ्य 'अजीवा जीवसंगृहीताः' इत्यन्तः पाठोऽत्र संग्राह्यः। 'एवं वा' इत्यत्र 'वा' शब्दो दृष्टान्तान्तरसूचक इति बोध्यम्॥५॥

(आडोवित्ता कडीए बंधइ) फुलाकर फिर उसे अपने कटिप्रदेशमें बांध लेवे (बंधित्ता अत्थाह-मतार-मपोरुसियंसि उदगंसि ओगाहेज्जा) बांध कर फिर वह अगाध ऐसे जल में कि जिस में तैरा नहीं जा सके और जो पुरुष प्रमाणसे भी अधिक हो प्रवेश करे तो (से णूणं गोयमा! से पुरिसे तस्स आउयस्स उवरिमतले चिट्ठइ) हे गौतम! वह पुरुष पानी के ऊपर ही रहेगा न? (हंता चिट्ठइ) हां, भदन्त! रहेगा। (एव वा अट्ठविहा लोयट्ठिई पन्नत्ता जाव जीवा कम्मसंगहिया) इसी तरह लोक की स्थिति आठ प्रकार की कही गई है। यावत् जीव कर्मसंगृहीत हैं। यहां यावत् शब्द से "आगासपइट्ठिए वाए" इस पाठ से लगा कर "अजीवा जीव संग-

---

कडीए बंधइ) આ રીતે ફુલાવીને તે તેને પોતાની કેડ સાથે બાંધી દે. (बंधित्ता अत्थाह-मतार-मपोरुसियंसि उदगंसि ओगाहेज्जा) આ રીતે ફુલાવેલી મશકને કેડે બાંધીને અગાધ, અને જેને તરી શકાય નહીં એવા તથા માણસ ડૂબી જાય એવા ઊંડા પાણીમાં પ્રવેશ કરે તો (से णूणं गोयमा! से पुरिसे तस्स आउयस्स उवरिमतले चिट्ठइ?) હે ગૌતમ! તે પુરુષ પાણીની ઉપર જ રહેશે કે નહીં? (हंता चिट्ठइ) હે પૂજ્ય! તે માણસ પાણીની ઉપર જ રહેશે. (एव वा अट्ठविहा लोयट्ठिई पन्नत्ता जाव जीवा कम्मसंगहिया) આ રીતે હે ગૌતમ! લોકની સ્થિતિ આઠ પ્રકારની કહી છે અહીં પણ "જીવકર્મસંગૃહીત છે" ત્યાં સુધીનો પાઠ ગ્રહણ કરાયો છે. અહીં (जाव) "यावत्" પદ વડે

अन्योन्यस्नेहप्रतिबद्धा, अन्योन्यं=परस्परं स्नेहेन रागादिरूपेण प्रतिबद्धाः=एकीभावं गताः । उक्तञ्च—

"स्नेहाभ्यक्तशरीरस्य रेणुना श्लिष्यते यथा गात्रम् ।
रागद्वेषक्लिन्नस्य कर्मबन्धो भवत्येवम्" ॥ १ ॥ इति ।

स्पर्शनामात्र से परस्पर में स्पृष्ट थे इसी कारण ये दोनों पीछे गाढतर बंध से आपस में संबद्ध हो गये हैं क्या? "अन्नमन्नोगाढा" का तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार लोहे के गोले में अग्नि सब तरफ से प्रविष्ट हो जाती है उसी तरह से कर्मपरमाणु आत्मा के साथ और आत्मा कर्मपरमाणुओं के साथ एकीभाव को प्राप्त हो जाता है क्या? एकीभाव का तात्पर्य है एकमेक हो जाना। जैसे अयोगोलक (लोहेका गोला) और अयोगोलक (लोहे के गोले) में प्रविष्ट अग्नि परस्पर में एकमेक हो जाते हैं, उसी प्रकार क्या आत्मा और कर्मपरमाणु परस्पर में एकमेक हो जाते हैं क्या? । ये आपसमें स्नेहप्रतिबद्ध हैं क्या? यहां स्नेह से तात्पर्य रागादिरूप स्नेह (चिकनाहट)से है। कहा भी है—"स्नेहाभ्यक्त० इति।

जिस व्यक्तिका शरीर तैल आदिसे चिकना होता है तो जैसे उसका शरीर चिकना होनेके कारण धूलि आदिसे, विशेषरूप से आश्लिष्ट हो जाता है, अर्थात् उस पर धूलि आदि के कण आकर चिपक जाते हैं उसी प्रकार जब आत्मा रागद्वेष आदिरूप स्नेह से चिकना बन जाता है तो उसके साथ भी कर्मों का बंध हो जाता है, अर्थात् कर्मपरमाणु

—પરસ્પરમાં સ્પૃષ્ટ હતા. તેઓ પાછળથી ગાઢતર બંધ વડે આપસમાં (પરસ્પરમાં) સંબદ્ધ થઈ ગયા છે ખરા? "અન્નમન્નોગાઢા" નું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે જેમ લોઢના ગોળામાં બધી બાજુએથી અગ્નિ પ્રવેશી શકે છે તેમ કર્મપરમાણુઓ આત્માની સાથે અને આત્મા કર્મપરમાણુઓની સાથે એકીભૂત (એકમેક થવા પણું) થાય છે શું? જેવી રીતે અયોગોલક (લોઢાનોગોળો) અને અયોગોલક (લોઢાના ગોળામાં પ્રવેશેલ અગ્નિ પરસ્પરમાં એક મેક થઈ જાય છે એજ પ્રમાણે શું આત્મા અને કર્મપરમાણુઓ પરસ્પરમાં એકમેક થઈ જાય છે? શું તેઓ પરસ્પર સ્નેહ પ્રતિબદ્ધ છે? અહીં "સ્નેહ" નો અર્થ રાગાદિરૂપ સ્નેહ (ચીકાશ) ગ્રહણ કર્યો છે. કહ્યું પણ છે "સ્નેહાભ્યક્ત૦" ઇત્યાદિ

જ્યારે કોઈ વ્યક્તિનું શરીર તેલ વગેરેથી ચીકણું થયું હોય ત્યારે તે વ્યક્તિના શરીર ઉપર ધૂળ વગેરેના રજકણો આવીને ચોંટી જાય છે એજ પ્રમાણે જ્યારે આત્મા રાગદ્વેષ રૂપ સ્નેહથી ચીકણો હોય છે ત્યારે તેની સાથે કર્મોનો તીવ્ર બંધ થાય છે એટલે કે આત્મપ્રદેશોની સાથે કર્મપરમાણુઓ

टीका-'अत्थि णं भंते' अस्ति खलु भदन्त! "जीवा य पोग्गला य अन्नमन्न-बद्धा" जीवाश्च पुद्गलाश्च अन्योन्यबद्धाः, जीवाः पुद्गलाश्च-कर्मशरीरादिपुद्गलाः परस्परं संबद्धाः, जीवाः पुद्गलानां, पुद्गलाश्च जीवानां संबद्धा इति भावः। कथं-बद्धाः? इत्यत्र हेतुगर्भितविशेषणमाह 'अन्नमन्नपुट्ठा' अन्योन्यस्पृष्टाः यतः पूर्वं स्पर्श-नामात्रेणान्योन्यं स्पृष्टा अत एवेत्यर्थः, यतः पूर्वं स्पृष्टाः स्पर्शनविषया जाताः, पश्चात् अन्योन्य बद्धाः=गाढतरसंबद्धा इति भाव। 'अन्नमन्नमोगाढा' अन्योन्या-वगाढाः, अयोगोलकवत् परस्परेण लोलीभावं प्राप्ताः, 'अण्णमण्णसिणेहपडिबद्धा'

पद हैं उन पदों का विचार करने के निमित्त यह सूत्र कहते है-'अत्थि णं भंते! जीवा य पोग्गला य" इत्यादि।

(अत्थि णं भंते! जीवा य पोग्गला य अन्नमन्नबद्धा, अन्नमन्नपुट्ठा, अन्नमन्नमोगाढा, अण्णमण्णसिणेहपडिबद्धा, अन्नमन्नघडत्ताए चिट्ठंति?) हे भदन्त! जीव और पुद्गल क्या परस्पर बद्ध हैं? चेतना लक्षण वाला जो होता है उसका नाम जीव और रूप, रस, गंध और स्पर्श इन चार गुणों वाला जो होता है वह पुद्गल है। पुद्गल से यहां कर्मशरीरादि पुद्गल लिये गये हैं। पुद्गलों के साथ जीव और जीवों के साथ पुद्गलों का जो एक क्षेत्रावगाह संबंध है वही यहां पर परस्पर में बंध है और इस सबंध से युक्त होना इसका नाम बद्ध है। ये आपस में बद्ध हैं ऐसा प्रश्न जो किया गया है उसका कारण यह है कि-ये दोनों "अन्नमन्नपुट्ठा" हैं यह हेतुगर्भित विशेषण है। इसका तात्पर्य यह है कि ये दोनों पहिले

જે ચાર પદ છે તેમનો વિચાર કરવાને માટે સૂત્રકાર કહે છે "अत्थि णं भंते" ઇત્યાદિ

(अत्थि णं भंते! जीवा य पोग्गला य अन्नमन्नबद्धा, अन्नमन्नपुट्ठा, अन्नमन्नमोगाढा, अण्णमण्णसिणेहपडिबद्धा अन्नमन्नघडत्ताए चिट्ठंति?) હે ભગવન્! જીવો અને પુદ્ગલો શું પરસ્પર બંધાયેલાં છે?" ચેતના જેનું લક્ષણ છે તેને જીવ કહે છે તથા રૂપ, રસ, ગંધ અને સ્પર્શ એ ચાર ગુણો જેમાં હોય છે તેનું નામ પુદ્ગલ છે "પુદ્ગલ" પદ વડે અહીં કર્મશરીરાદિ પુદ્ગલો ગ્રહણ કરાયેલ છે પુદ્ગલોની સાથે જીવનો અને જીવની સાથે પુદ્ગલોનો જે એકક્ષેત્રાવગાહ (એક સ્થળમાં રહેવાનો) સંબંધ છે એજ અહીં પરસ્પરમાં બંધરૂપ છે, અને તે સંબંધથી યુક્ત હોવું એવી સ્થિતિને "બદ્ધ" કહે છે "જીવ અને પુદ્ગલ પરસ્પર બદ્ધ છે?" એ પ્રકારનો પ્રશ્ન પૂછવાનું કારણ એ છે કે તે બન્ને "अन्नमन्नपुट्ठा" (પરસ્પર બંધાયેલા) છે, એ હેતુગર્ભિત વિશેષણ છે તેનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે-તેઓ બન્ને પહેલા માત્ર સ્પર્શનાથી

पूर्णप्रमाणः 'वोलट्टमाणे, व्यपलोटयन्, अतिशयजलभरत्वेन छर्यमानजल इत्यर्थः॥ 'वोसट्टमाणे' त्ति विकसन् जलाधिक्यात् विकासमाप्नुवन् जलेन वर्द्धमान इत्यर्थ, 'समभरघडत्ताए'त्ति समभरघटतया, समो न विषमो यत्र्फदेशमनाश्रितत्वेन भरो जलसमूहो यस्मिन् स समभर तथया भृत इति समभरः, समशब्द सर्वार्थकोपि विद्यते, समभरश्चासौ घटश्चेति समभरघट' समभरघट इवेति समभरघटस्तस्य भावः समभरघटता, तया समभरघटतया सर्वथा संभृतघटाकारतया तिष्ठतीत्यर्थः। 'अहे ण केइ पुरिसे तंसि हरयंसि एगं मह नाव' अथ खलु कश्चित् पुरुषः तस्मिन् ह्रद एकां महतीं नावं=नौकाम्, कीदृशीमित्याह-'सयासव' शताश्रवाम्, आ=ईषद् स्रवति=क्षरति जलं येभ्यस्ते आस्रवाः=सूक्ष्मरन्ध्राणि ते सन्तो=विद्यमाना यत्र सा सदास्रवा, ताम्। यद्वा-सदा=सर्वकाले आस्रवति जल यस्याः सा सदास्रवा, ताम्, यद्वा-'शतास्रवाम्' इतिच्छायापक्षे शतसंख्यका आस्रवा यस्यां सा शता स्रवा, ताम्। तथा 'सयछिद्दं' शतच्छिद्राम् छिद्राणि बृहत्तररन्ध्राणि शतानि=शत-संख्यकानि छिद्राणि बृहत्तररन्ध्राणि यस्यां सा शतच्छिद्रा, ताम् बृहत्तररन्ध्रवतीं

कुछ कम भी भरा होने पर व्यवहार में लोग कह दिया करते हैं कि यह पूरा भरा है-सो ऐसा भरा हुआ यहां नहीं समझना चाहिये किन्तु उस ह्रदमें पानी अपने प्रमाणमें जितना भरा जा सकता हो उतना पानी उसमें भरा हो, इसी बात को प्रकट करने के लिये यहां "पुण्णप्पमाणे" पद दिया गया है, अर्थात् वह ऐसा ह्रद-जलाशय हो जो खूब ऊपर तक लबालब भरा हो और इसी कारण जिसमें से जल छलक रहा हो अर्थात् लबालब भरे होने के कारण जिसमें से जल बाहर भी निकल जाता हो तथा जल की अधिकता से जो विकास को अर्थात् वृद्धि को प्राप्त हो रहा हो और देखने पर ऐसा मालूम देता हो कि मानो जल से लबालब भरा हुआ यह एक विशाल घड़ा ही रक्खा है। (अहे ण केइ पुरिसे तंसि हरयंसि एगं महं नावं सयासवं सयछिद्द ओगाहेज्जा) ऐसे उस ह्रद में कोई पुरुष एक बड़ी नौका कि जिसमें छोटे २ सैकड़ों छिद्र

વ્યવહારમાં લોકો એવું કહે છે કે તે ભરેલું છે અહીં એવા સરોવરની વાત નથી. પણ જેટલું પાણી ભરાઈ શકે તેટલું ભરેલું છે એમ બતાવવાને માટે અહીં 'पुण्णप्पमाणे' પદ મૂક્યું છે) એટલે કે પાણીથી છલોછલ ભરેલુ તે સરોવર હોય અને છલોછલ ભરેલુ હોવાથી જેમાથી પાણી બહાર પણ આવ્યુ જતું હોય તથા પાણીની અધિકતાથી જે વિકાસ પામી રહ્યું હોય અને પાણીથી છલોછલ ભરેલા ઘડા જેવુ જે દેખાતું હોય. (अहे ण केइ पुरिसे तंसि हरयंसि एगं महं नावं सयासवं सयछिद्दं ओगाहेज्जा) એવા સરોવરમા કોઈ માણસ એક

अत एव 'अन्नमन्नघडत्ताए चिट्ठति' अन्योन्यघटतया तिष्ठन्ति। अन्योन्यं परस्परं घटः समुदायो येषां ते अन्योन्यघटास्तस्य भावोऽन्योन्यघटता, तया अन्योन्यघटतया तिष्ठन्ति किमिति प्रश्नः। भगवानाह-'हंते'-त्यादि। 'हंता अत्थि' हन्त अस्ति, हे गौतम! यथा त्वया प्रोक्तं तत्तथैवास्तीत्युत्तरम्। गौतमः प्राह-'से केणट्ठेणं भंते जाव चिट्ठंति' तत्केनार्थेन भदन्त! यावत् तिष्ठन्ति, यावच्छब्देन-'अन्नमन्नबद्धाः' इत्यारभ्य 'अन्नमन्नघडत्ताए' इत्यन्तः पदसंदर्भः संग्राह्यः। भगवानाह--'गोयमे'-त्यादि 'गोयमा' हे गौतम! 'से जहा णामए हरदे सिया' तद् यथा नामको ह्रदः स्यात् 'पुण्णे पुण्णप्पमाणे वोलट्टमाणे वोसट्टमाणे समभरघडत्ताए चिट्ठइ' पूर्णः पूर्णप्रमाणो व्यपलोटयन् विकसन समभरघटतया तिष्ठति, यथा ह्रदो जलेन पूर्णः स्यात् किञ्चिन्न्युनत्वेपि व्यवहारतः पूर्णतया व्यवह्रियेत तत्राह-'पुण्णप्पमाणे' पूर्णप्रमाणः पूर्णं जलेन स्वकीय मानं यस्य स

चिपक जाते हैं। "अन्नमन्नघडत्ताए" का तात्पर्य है आपस में एक समुदायरूप में होकर रहना। प्रश्न कर्त्ताका यहां ऐसा अभिप्राय है कि कर्मपुद्गल और जीव जब आपस में बंधदशा को प्राप्त हो जाते हैं तब क्या ये दोनों एक समुदायरूप में आजाते हैं? इस प्रकार ये प्रश्न हैं। इन सब का उत्तर देते हुए भगवान् कहते हैं कि (हंता अत्थि) हे। गौतम! हां ऐसा ही है। (से केणट्ठेणं भंते! जाव चिट्ठंति?) हे भदन्त! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि यावत् वे इस प्रकार से रहते हैं? (गोयमा! से जहा नामए हरदे सिया पुण्णे पुण्णप्पमाणे वोलट्टमाणे वोसट्टमाणे समभरघडत्ताए चिट्ठइ) हे गौतम! जैसे कोई एक ह्रद हो और वह पानी से पूरा भरा हो। पूरा नहीं भरा होने पर भी अर्थात्

ચોટી જાય છે, "अन्नमन्नघडत्ताए" એટલે "પરસ્પર એક સમુદાય રૂપે રહેવુ" પ્રશ્ન કર્ત્તાનો આશય એવો છે કે જ્યારે કર્મપુદ્ગલો અને જીવના પ્રદેશો પરસ્પર બધાય છે ત્યારે શુ તેઓ બન્ને એક સમુદાય રૂપે બની જાય છે? આ જાતના ગૌતમસ્વામીના પ્રશ્નોના ઉત્તર મહાવીર પ્રભુ આ પ્રમાણે આપે છે -(हंता अत्थि) હે ગૌતમ! એવુ જ બને છે

પ્રશ્ન—(से केणट्ठेणं भंते! जाव चिट्ठति? હે ભગવન્! આ શા કારણે એવુ કહો છો કે "તેઓ આ રીતે રહે છે? ત્યા સુધીનો સૂત્રપાઠ ગ્રહણ કરવો. ઉત્તર-(गोयमा! से जहा नामए हरए सिया पुण्णे पुण्णप्पमाणे वोलट्टमाणे वोसट्टमाणे समभरघडत्ताए चिट्ठइ) હે ગૌતમ! જેવી રીતે કોઈ એક સરોવર હોય અને તે પાણીથી પૂરેપૂરૂ ભરેલુ હોય (પૂરેપૂરૂ ન ભરેલુ હોવા છતા પણ

पूर्णप्रमाणः 'वोलट्टमाणे' व्यपलोटयन्, अतिशयजलभरत्वेन छर्दमानजल इत्यर्थः। 'वोसट्टमाणे' त्ति विकसन् जलाधिक्यात् विकासमाप्नुवन् महत्वेन वर्द्धमान इत्यर्थः, 'समभरघडत्ताए'त्ति समभरघटतया, समो न विषमो घर्षकदेशमनाभितत्वेन भरो भस्मसमूहो यस्मिन स समभर सर्वथा भृत इति समभरः, समशब्द सर्वार्थकोपि विद्यते, समभरश्चासौ घटश्चेति समभरघटः समभरघट इवेति समभरघटस्तस्य भावः समभरघटता, तया समभरघटतया सर्वथा सभृतघटाकारतया तिष्ठतीत्यर्थः। 'अहे ण केइ पुरिसे तंसि हरयंसि एगं महं नावं' अथ खलु कश्चित् पुरुषः तस्मिन् ह्रदे एकां महतीं नावं=नौकाम्, कीदृशीमित्याह-'सयासवं' शताश्रयाम्, आ=ईषद् स्रवति=क्षरति जल यम्यस्ते आस्रवाः=सूक्ष्मरन्ध्राणि, ते सन्तो=विद्यमाना यत्र सा सदास्रवा, ताम्। यद्वा-सदा=सर्वकाले आस्रवति जलं यस्याः सा सदास्रवा, ताम्, यद्वा-'शतास्रवाम्' इतिच्छायापक्षे शतसंख्यका आस्रवा यस्यां सा शता स्रवा, ताम्। तथा 'सयछिदं' शतच्छिद्राम् छिद्राणि बृहत्तररन्ध्राणि शतानि=शत संख्यकानि छिद्राणि बृहत्तररन्ध्राणि यस्यां सा शतछिद्रा, ताम् बृहत्तररन्ध्रवतीं

कुछ कम भी भरा होने पर व्यवहार में लोग कह दिया करते हैं कि यह पूरा भरा है-सो ऐसा भरा हुआ यहां नहीं समझना चाहिये किन्तु उस ह्रदमें पानी अपने प्रमाणमें जितना भरा जा सकता हो उतना पानी उसमें भरा हो, इसी बात को प्रकट करने के लिये यहां "पुण्णप्पमाणे" पद दिया गया है, अर्थात् वह ऐसा ह्रद-जलाशय हो जो खूब ऊपर तक लबालब भरा हो और इसी कारण जिसमें से जल छलक रहा हो अर्थात् लबालब भरे होने के कारण जिसमें से जल बाहर भी निकल जाता हो तथा जल की अधिकता से जो विकास को अर्थात् वृद्धि को प्राप्त हो रहा हो और देखने पर ऐसा मालूम देता हो कि मानो जल से लबालब भरा हुआ यह एक विशाल घड़ा ही रक्खा है। (अहे ण केइ पुरिसे तंसि हरयंसि एगं महं नावं सयासवं सयछिदं ओगाहेज्जा) ऐसे उस ह्रद में कोई पुरुष एक बड़ी नौका कि जिसमें छोटे २ सैकड़ों छिद्र

વ્યવહારમાં લોકો એવું કહે છે કે તે ભરેલું છે અહીં એવા સરોવરની વાત નથી. પણ જેટલું પાણી ભરાઈ શકે તેટલું ભરેલું છે એમ બતાવવાને માટે અહીં ' पुण्णप्पमाणे '' પદ મૂક્યું છે) એટલે કે પાણીથી છલોછલ ભરેલું તે સરોવર હોય અને છલોછલ ભરેલું હોવાથી જેમાંથી પાણી બહાર પણ ચાલ્યું જતું હોય તથા પાણીની અધિકતાથી જે વિકાસ પામી રહ્યું હોય અને પાણીથી છલોછલ ભરેલા ઘડા જેવું જે દેખાતું હોય. (अहेण केइ पुरिसे तंसि हरयंसि एगं महं नावं सयासवं सयछिद्दं ओगाहेज्जा) એવા સરોવરમાં કોઈ માણસ એક

नौकाम्, आस्रवच्छिद्रयोः सूक्ष्मस्थूलरन्ध्रत्वेन वैलक्षण्यमिति न पुनरुक्तिः। 'ओगाहेज्जा' अवगाहयेत् प्रवेशयेत्, 'से णूणं गोयमा' अथ नूनं हे गौतम! 'सा णावा' सा नौका 'तेहिं आसवदारेहिं' तैरास्रवद्वारैः 'आपूरेमाणी''आपूरेमाणी-आपूर्यमाणा आपूर्यमाणा पौनःपुन्येन भ्रियमाणा सती 'पुन्ना' पूर्णा जलेन 'पुण्णप्पमाणा' पूर्णप्रमाणा-स्वकीयप्रमाणेन भृता 'वोलट्टमाणा'व्यपलोटयन्ती-अतिशयजलवत्त्वेन छर्द्यमानजला, 'वोसट्टमाणा' विकसन्ती-जलाधिक्येन व मानासती 'समभरघडत्ताए' समभरघट-तया, हृदक्षिप्तसर्वथा भृतघटवत् हृदतलावस्थानतया, 'चिट्ठइ' तिष्ठति=हृदजले

हों और बडे २ भी सैकड़ों छिद्र हों उसको डाले। "सयासव्वं" जिनसे धीरे २ जल आवे वे आस्रव, अर्थात् सूक्ष्मछिद्र,-ये सूक्ष्मछिद्र जिस में विद्यमान हैं वह सदास्रवा है। अथवा-"सदा आस्रवति जलं यस्याः सा सदास्रवा"-सब समय में जिसमें जल आता रहता हो वह सदास्रवा है। अथवा शतास्रवा-शतसंख्यक हैं छेद जिस में ऐसी वह शतास्रवा नौका। यहां पर आस्रव और छिद्र में सूक्ष्म स्थूल छिद्रों की अपेक्षा भेद होने के कारण पुनरुक्ति दोष आने की संभावना नहीं है। (से-णूणं गोयमा! सा णावा तेहिं आसवदारेहिं आपूरमाणी आपूरमाणी पुन्ना पुन्नप्पमाणा, वोलट्टमाणा समभडघरत्ताए चिट्ठइ) तो हे गौतम! वह नौका उन आस्रवद्वारों-छेदों से आते हुए जल से भरती रहती है। भरते २ वह पूरी भर जाती है। पानी से छलकने लग जाती है। यहां तक कि पानी उसके ऊपर से भी निकलने लग जाता है। इस स्थिति में वह नौका जल की अधिक वृद्धि हो जाने के कारण हृदमें डाले हुए भरे

મોટી નાવને ઉતારે કે જેમા નાનાં મોટાં સેકડો છિદ્રો હોય "सयासव्व" તે છિદ્રો વડે ધીમે ધીમે પાણીનો પ્રવેશ થાય તેવાં આસ્રવો-સૂક્ષ્મ છિદ્રો-વાળી નૌકાને "સદાસ્રવા" કહી છે અથવા-" सदा आस्रवति जलं यस्या सा सदास्रवा" હમેશાં જેમા પાણી આવ્યા કરતું હોય તેને સદાસ્રવા કહે છે, અથવા-"शतास्रवा" એટલે જેમા સેકડો છિદ્રો હોય એવી નૌકા અહીં આસ્રવ અને છિદ્રમા સૂક્ષ્મ અને સ્થૂળ છિદ્રોની અપેક્ષાએ ભિન્નતા હોવાને કારણે પુન-રુક્તિ દોષનો સભવ રહેતો નથી (से णूण गोयमा! सा णावा तेहिं आसवदारेहिं आपूरेमाणी२ पुन्ना पुन्नप्पमाणा वोलट्टमाणा वोसट्टमाणा समभरघडत्ताए चिट्ठइ?) તો હે ગૌતમ! આવી નાવ તે આસ્રવદ્વારો વડે (છિદ્રોમાથી) પ્રવેશ પામતા પાણીથી ભરાતી રહેશે આવી રીતે ભરાતા ભરાતા તે પાણીથી પૂરેપૂરી ભરાઇ જશે અને પાણીથી છલકાવા માડશે વળી તે એટલે સુધી છલકાશે કે પાણી તેમાથી બહાર પણ નીકળવા માડશે. એવી સ્થિતિમા પાણીની વિશેષ વૃદ્ધિ થવાને

निमज्जति ?, इति भगवद्वाक्यम् , गौतम आह-'हंता चिट्ठइ' हन्त तिष्ठति, हे भदंत! यथा जलपूर्णो घटो हृदतले जलेन सह तिष्ठति तथा नौरपि जलपूर्णा हृदस्याधोदेशे तिष्ठतीति। भगवानाह-'से तेणट्टेण गोयमा' तत्तेनार्थेन हे गौतम! 'अत्थि णं जीवा य जाव चिट्ठंति' अस्ति जीवाश्च यावत्तिष्ठन्तीति, जीवाश्च अत्र यावत्पदेन-पुद्गलाश्च अन्योन्यबद्धा अन्योन्यस्पृष्टा अन्योन्यावगाढा अन्योन्यस्नेहप्रतिबद्धा अन्योन्यघटतया इति संग्राह्य, तिष्ठन्तीति सम्बन्ध । यथा नौका हृदजलं च परस्परावगाढपूर्वकं तिष्ठति तथैव जीवाः पुद्गलाश्चान्योन्यावगाढपूर्वकं तिष्ठन्तीति सूत्राशय ॥सू०६॥

हुए घडे की तरह नीचे बैठ जाती है न?, अर्थात डूब जाती है न?, (हंता चिट्ठइ) हां भदन्त! ऐसी वह नौका उस हृद में डूब जाती है। जैसे जल पूर्ण घट हृद तल में जल के साथ २ डूब जाता है उसी प्रकार वह नौका कि जिस में सैकडों छोटे बडे छिद्रों द्वारा जल भी आ कर लबालब भर गया है डूब जाती है। (से तेणट्ठेण गोयमा! अत्थि णं जीवा य जाव चिट्ठति) इसी कारण हे गौतम! मैं ऐसा कहता हूं जीव कि यावत् पहिले कहे हुए की तरह रहते हैं। यहां जो "यावत्" पद आया है उससे "पुद्गलाश्च, अन्योन्यबद्धा अन्योन्यस्पृष्टा अन्योन्यावगाढा अन्योन्यस्नेहप्रतिबद्धा अन्योन्यघटतया" इस पूर्वोक्त पाठ का संग्रह किया गया है। तात्पर्य इस सूत्र का ऐसा है कि जिस प्रकार नौका और हृद जल ये दोनों परस्पर में अवगाहपूर्वक रहते हैं उसी प्रकार से जीव और पुद्गल भी आपस में एक दूसरे में अवगाहपूर्वक रहते हैं ॥सू०६॥

કારણે તે નાવ ભરેલા ઘડાની જેમ સરોવરમાં ડુબી જાય છે કે નહીં ? (हंता चिट्ठइ) હે ભગવન્ એવી નાવ સરોવરમાં અવશ્ય ડુબી જાય છે. જેવી રીતે પાણીથી ભરેલા ઘડા સરોવરની અંદર ડુબી જાય છે તેવી રીતે સેંકડો નાનાં મોટાં છિદ્રોવાળી છે નૌકા પણ ડુબી જાય છે. (से तेणट्टेणं गोयमा! अत्थि णं जीवा य जाव चिट्ठंति) હે ગૌતમ! તેથી જ હું એમ કહું છું કે જીવો 'આગળ કહ્યા પ્રમાણે રહે છે' ત્યાં સુધીનો પાઠ ગ્રહણ કરવો અહીં (जाव) "यावत्" પદ વડે 'पुद्गलाय अन्नमन्नबद्धा, अन्नमन्नपुट्ठा अन्नमन्नमोगाढा अन्नमन्न सिणेहपडिबद्धा अन्नमन्नघडत्ताए' આ પૂર્વોક્ત પાઠ ગ્રહણ કરાયો છે આ સૂત્રનો ભાવ એવો છે કે જેવી રીતે નાવ અને સરોવરનું પાણી એ બન્ને અવગાઢ પૂર્વક રહે છે, એવી જ રીતે જીવ અને પુદ્ગલો પણ પરસ્પર અવગાઢ પૂર્વક રહે છે ॥ સૂ. ૬॥

लोकस्थितिविपये एवेदमाह—, अत्थि णं 'इत्यादि ।

मूलम्—अत्थि' णं भंते सया समियं सुहुमे सिणेहकाये पवडइ, हंता अत्थि । से भंते किं उड्ढे पवडइ अहे पवडइ, तिरियं पवडइ, गोयमा ! उड्ढे वि पवडइ, अहे वि पवडइ, तिरिए वि पवडइ, जहा से बायरे आउकाए अन्नमन्नसमाउत्ते चिरंपि दीहकालं चिट्ठइ तहा णं से वि?, णो इणट्ठे समट्ठे, से णं खिप्पामेव विद्धंसमागच्छइ । सेवं भंते सेवं भंते त्ति ॥ सू०७॥

॥ छट्ठो उद्देसो समत्तो ॥

छाया —अस्ति खलु भदंत ! सदा समितं सूक्ष्मः स्नेहकायः प्रपतति, हन्त अस्ति ! तद् भदन्त ! किम् ऊर्ध्वं प्रपतति, अधः प्रपतति, तिर्यक् प्रपतति, गौतम ! ऊर्ध्वमपि प्रपतति, अधोपि प्रपतति, तिर्यगपि प्रपतति, यथा स बादरोऽप्कायोऽन्योन्यसमायुक्तश्चिरमपि दीर्घकालं तिष्ठति, तथा खलु सोऽपि?, नायमर्थः समर्थः तत् क्षिप्रमेव विध्वंसमागच्छति। तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥सू०७॥

॥ षष्ठ उद्देशः समाप्तः ॥

टीका—' अत्थि णं भंते ' अस्ति खलु भदन्त ! ' सया ' सदा-सर्वकालम् , 'समियं' समित सपरिमाणं न तु बादराप्कायवदपरिमितम् , अथवा सदा सर्वऋतुषु समितमिति रात्रौ दिवसे च ' सुहुमे सिणेहकाये पवडइ ' सूक्ष्मः स्नेहकायः सूक्ष्मोऽप्कायविशेषः प्रपतति किमिति प्रश्नः । भगवानाह—' हंते '—त्यादि ।

फिर लोक की स्थिति के विषय में ही सूत्रकार कहते हैं— 'अत्थि णं भंते ! सया समियं' इत्यादि ।

(अत्थि ण भंते) हे भदन्त ! (सया) सर्वकाल (समियं) परिमाणसहित, बादर अप्कायकी तरह अपरिमित नहीं, अथवा—सदा—सर्व ऋतुओं में, समित—रात्रि और दिवस में, (सुहुमे सिणेहकाये पवडइ) सूक्ष्म—स्नेहकाय अप्कायविशेष—गिरता है क्या ? तात्पर्य पूछने का यह

લોકસ્થિતિના વિષયમા જ સૂત્રકાર કહે છે—" અત્થિ ણ ભંતે ! " ઈત્યાદિ

अत्थि ण भंते ! હે પ્રભો ! (सया) સદા—સર્વકાળે (समिय) પરિમાણ (માપ) સહિત (બાદર અપ્કાયની જેમ અપરિમિત નહીં) અથવા—સદા તમામ ઋતુઓમા સમિત—રાત્રે અને દિવસે (सुहुमे सिणेहकाये पवडइ ?) સૂક્ષ્મ સ્નેહકાય—અપ્કાયવિશેષ પડયા જ કરે છે શુ ? તાત્પર્ય કે શુ હમેશા સૂક્ષ્મ અપ્કાય

'हन्त अत्थि हन्त अस्ति, सर्वस्मिन्नेव ऋतौ दिवसे रात्रौ च सूक्ष्मोऽप्कायः सर्वं कालं प्रपतत्यपति समुदितार्थः । 'से भंते किं उड्ढे पवडइ, अहे पवडइ, तिरिए पवडइ ?' तद् भदन्त! किम् ऊर्ध्वे पतति, अधः पतति, तिर्यक् पतति? ऊर्ध्वे-वर्तुल वैताढ्यादौ, अधः -अधोलोकग्रामेषु तिर्यक्-तिर्यग्लोके । भगवानाह-'गोयमे' -त्यादि, 'गोयमा' हे गौतम ! 'उड्ढे वि पवडइ अहेवि पवडइ, तिरिएवि पवडइ' ऊर्ध्वमपि प्रपतति, अधोऽपि प्रपतति, तिरश्चपि प्रपतति, ऊर्ध्वलोकेपि, अधोलोकेऽपि, तिर्यग्लोकेऽपि सर्वत्र सर्वदा सूक्ष्माप्कायः प्रपततीति भाव ।

ननु यदि रात्रौ दिवसे सर्वऋतुषु सर्वदैवाप्कायः प्रपतति तदा साधुभिः कस्मिन्नपि काले कुत्रापि कथमपि न गन्तव्यं सर्वकालेऽप्कायविराधनाप्रसंगादिति

है कि सब समय सूक्ष्म जलकाय गिरता है क्या ? इसका उत्तर देते हुए प्रभु कहते हैं कि-(हंता अत्थि) हां गिरता है । अर्थात् सभी ऋतुओं में रात और दिनमें सूक्ष्म अप्काय सब समय में गिरता ही रहता है । (से भंते ! किं उड्ढे पवडइ, अहे पवडइ, तिरिय पवडइ ?) हे भदन्त ! वह सूक्ष्म जल्काय क्या ऊँचे गिरता है, या नीचे गिरता है, या कि तिरछा गिरता है ? अर्थात्-ऊँचे वर्तुल वैताढ्य आदि में, नीचे-अधोलोक ग्रामों में और तिरछे-तिर्यग्लोक में पड़ता है क्या ? इसका उत्तर देते हुए प्रभु कहते हैं कि-(गोयमा-उड्ढे वि पवडइ, अहे वि पवडइ, तिरिये वि पवडइ) हे गौतम ! वह सूक्ष्म अप्काय ऊँचे-वर्तुल वैताढ्य आदि पर्वतों पर भी, नीचे-अधो लोकग्रामों में भी और तिरछे-तिर्य ग्लोक में भी सदा गिरता है ।

शंका—यदि सूक्ष्म अप्काय रात्रि में दिन में, सर्व ऋतुओं में सदा ही गिरता रहता है तो फिर साधुजनोंको किसी भी समय में कहीं पर भी किसी भी तरह नहीं जाना चाहिये-क्यों कि ऐसा करने से सर्वत्र

પડે છે ? ઉત્તર—(હંતા અત્થિ) હા પડે છે એટલે કે બધાં ઋતુઓમાં (દરરોજ) સૂક્ષ્મ અપ્કાય હમેશા પડ્યા જ કરે છે (से भंते ! किं उड्ढे पवडइ, अहे पवडइ तिरिए पवडइ ?) હે ભગવન્ ! તે સૂક્ષ્મ અપ્કાય શું ઊંચે પડે છે કે નીચે પડે છે કે તિરછુ પડે છે ? એટલે કે ઊંચે-વર્તુલ વૈતાઢ્ય પર્વત વગેરેમા નીચે અધોલોકમા તિરછુ-તિર્યગ્લોકમાં પડે છે ? ઉત્તર—(गोयमा ! उड्ढे पवडइ, अहे वि पवडइ, तिरिए वि पवडइ,) હે ગૌતમ ! તે સૂક્ષ્મ અપ્કાય ઊંચે-વર્તુલ વૈતાઢ્ય વગેરે પર્વતોમા પણ હમેશા પડે છે નીચે અધોલોકમા પણ હમેશા પડે છે અને તિરછુ-તિર્યગ્લોકમા પણ હમેશા પડે છે

શંકા—જો સૂક્ષ્મ અપ્કાય રાતને દિવસ તમામ ઋતુઓમા હમેશા પડ્યું જ રહેતું હોય તો સાધુઓએ કોઈ પણ સ્થળે કોઈ પણ રીતે ક્યારેય

भगवानाह-' णो इणट्ठे ' इत्यादि। ' णो इणट्ठे समट्ठे ' नायमर्थः समर्थः, तत्रिकमित्याह 'से ण खिप्पामेव विद्धंसमागच्छइ' तत् खलु क्षिप्रमेव विध्वंसमागच्छति स्वल्पत्वात्तस्य 'सेव भंते सेव भंते त्ति' तदेव भदन्त! तदेवं भदन्त! हे भगवन् देवानुप्रियेण यत् कथितं तत्सर्वं सत्यमेवेति ॥सू०७॥

इति श्री-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्य-श्रीघासीलालव्रतिविर चितायां श्रीभगवतीसूत्रस्य प्रमेयचन्द्रिका-व्याख्यायां प्रथम शतकस्य षष्ठोद्देशक समाप्तः ॥१-६॥

उत्तर—(णो इणट्ठे समट्ठे) हे गौतम! यह अर्थ-समर्थ-ठीक-नहीं है, क्यों कि (से णं) वह (खिप्पामेव विद्धंसमागच्छइ) बहुत ही शीघ्र नष्ट हो जाता है। कारण यह है कि वह स्वल्प होता है। (सेवं भंते, सेव भंते त्ति) हे भदन्त! जैसा आपने कहा है वह ऐसा ही है। हे भदन्त! वह ऐसा ही है। इस प्रकार कह कर वे गौतमस्वामी प्रभु की वंदना और उन्हें नमस्कार कर अपने स्थान पर बैठ गये ॥सू०७॥

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्य श्रीघासीलालजी महाराजकृत भगवती सूत्रकी प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके प्रथम शतकका छट्ठा उद्देशक समाप्त ॥१-६॥

એવું બનતું નથી. કારણ કે (से णं) તે સૂક્ષ્મ અપ્કાયના જીવો (खिप्पामेव विद्धंसमागच्छइ) એકદમ જલ્દીથી નાશ પામે છે કારણ કે તેઓ સૂક્ષ્મ હોય છે (सेव भंते! सेव भंते!) હે ભગવન! આપે કહ્યા પ્રમાણે જ બધુંય છે હે પ્રભો! આપનું કહેવું સાચું જ છે આ પ્રમાણે કહીને મહાવીરને વંદણા અને નમસ્કાર કરીને ગૌતમસ્વામી પોતાને સ્થાને ગયા ॥ સૂ-૭॥

॥ઇતિશ્રી જૈનાચાર્ય જૈનધર્મદિવાકર પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલ વ્રતિ વિરચિત ભગવતીસૂત્રની પ્રિયદર્શિની વ્યાખ્યાના પહેલા શતકનો છઠ્ઠો ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥૧-૬॥

चेन-दिवसे सूर्यकिरणेन तस्याप्कायस्याकाशपतितस्य विनाशेन तत्काले साधुगमनस्याविरुद्धत्वात्, यदि परिष्ठापनकाद्यावश्यककारणमासाद्य रात्रिगमनमापतेत्तदा संवरणेनैव गन्तव्यमिति शास्त्रमर्यादा। गौतमः पृच्छति-'जहा से बायरआउकाए' यथा स बादराऽप्कायः 'अन्नमन्नसमाउत्ते' अन्योन्यसमायुक्तः-एको बादराप्कायोऽन्येन बादराप्कायेन सह मिलितः सन् 'चिरंपि' चिरमपि=अनेकवर्षं यावत् तडागादिपूरणात्, 'दीहकालं' दीर्घकालम्=अनेकदिनं यावत् 'चिट्ठइ' तिष्ठति-'तहा णं' तथा खलु तेन प्रकारेण हे भदन्त! 'सेवि' सोऽपि सूक्ष्माप्कायोऽपि चिरमपि दीर्घकालं तिष्ठति किमिति प्रश्नः।

सब काल में अप्काय की विराधना होने का प्रसङ्ग प्राप्त होता है।

उत्तर—दिन में सूर्यकिरणों से आकाशपतित उस अप्काय का विनाश हो जाता है-अतः उस समय में साधुजनों का गमन अविरुद्ध है-बाधाकारी नहीं है। यदि परठवने आदि आवश्यक कारणों को लेकर रात्रि में गमन करना पडे तो शरीर को ढक कर ही चलना चाहिये. खुले शरीर होकर नहीं चलना चाहिये, ऐसी शास्त्र की मर्यादा है। अब गौतम पुनः पूछते हैं (जहा से बायरे आउकाए अन्नमन्नसमाउत्ते चिरंपि, दीहं कालं चिट्ठइ, तहा ण से वि हे भदन्त! जैसे एक बादर अप्काय दूसरे बादर अप्काय के साथ मिला हुआ होकर अनेक वर्षों तक यावत् तडाग आदिमें भर जानेसे अनेक दिनों अनेक मास अनेक वर्षों तक रहता है उसी तरहसे क्या यह सूक्ष्म अप्काय भी रहता है?

પણ જવુ જોઇએ નહીં કારણ કે તેઓના જવા આવવાથી બધે સ્થળે હમેશાં અપ્કાયના જીવોની વિરાધના થવાનો પ્રસંગ ઉપસ્થિત થશે

સમાધાન—દિવસે સૂર્યનાં કિરણોની ગરમી વડે આકાશમાંથી પડતાં તે અપ્કાયના જીવોનો સ્વાભાવિક રીતેજ વિનાશ થાય છે તેથી દિવસે સાધુઓના જવા આવવાથી અપ્કાય જીવોની વિરાધનાનો સંભવ રહેતો નથી પરંતુ રાત્રે અપ્કાયના જીવોની હિંસાથી બચવાને માટે ઝાડો, પેશાબ વગેરે અનિવાર્ય કારણોને લઇને રાત્રે સાધુ સાધ્વી તથા વ્રતધારી શ્રાવક શ્રાવિકાઓને જવા આવવાની જરૂર પડે તો શરીરને ઢાંકીને જ જવું આવવુ જોઇએ ઉઘાડે શરીરે જઇ આવી શકાય નહી એવી શાસ્ત્રની આજ્ઞા છે વળી ગૌતમસ્વામી પૂછે છે (जहा से बायरे आउकाए अन्नमन्नसमाउत्त चिरंपि, दीहं काल चिट्ठइ, तहा णं से वि) હે ભગવન્! જેવી રીતે બાદર (સ્થૂળ) અપ્કાય (પાણી) બીજા બાદર અપ્કાયની સાથે મળીને તળાવ વગેરેમા દિવસોના દિવસો, મહિનાઓ અને વર્ષો સુધી રહે છે, એવી રીતે શું સૂક્ષ્મ અપ્કાય પણ રહે છે?

ઉત્તર-(णो इणट्ठे समट्ठे) હે ગૌતમ તે અર્થ બરાબર નથી એટલે કે

तादीनामाहारः, इत्युत्तरम् , गर्भगतस्य क आहारः? इति प्रश्नः, मातृशोणितेन सार्धं मातृभक्षिताहार', इत्युत्तरम्। गर्भगतस्य जीवस्य मूत्रपुरीषादिकं भवति नवे ति प्रश्नः, नेत्युत्तरम्। तत्र कारणप्रश्नः, आहारस्यानेकरूपेण परिणामो भवतीत्युत्तरम्। गर्भस्थो जीव किं मुखेन भुङ्क्ते ?। नेत्युत्तरम्। तत्र कारणप्रश्नः, सर्वशरीरेणाहारं करोतीति कारणकथनम्। मातृरसहारिणी–पुत्रजीवरसहारिणी–नाडयोर्विचारः, सन्तानस्य मातुरङ्गानि कियंति भवन्तीति प्रश्न', त्रीणीत्युत्तरम् , मातुः सकाशाल्लब्धाङ्गानि कियत्कालं तिष्ठन्तीति प्रश्नः, आमरणमित्युत्तरम्। गर्भे विद्यमानो जीवो नरके याति नवे ति प्रश्नः, याति न वा यातीत्युत्तरम्। तत्र कारणकथनम्। गर्भस्थ

प्रश्न। शुक्रशोणित आदि का वह आहार करता है ऐसा उत्तर। गर्भ में रहे हुए जीव का आहार क्या होता है? ऐसा प्रश्न–माता के शोणित के साथ माता के द्वारा भक्षित पदार्थ उसका आहार होता है, ऐसा उत्तर। गर्भगत जीव के मूत्र पुरीष (विष्टा) आदि होते हैं या नहीं? ऐसा प्रश्न–नहीं होते, ऐसा उत्तर। इसका क्या कारण है ऐसा पूछना–और आहार का अनेक रूप से परिणाम होता है ? ऐसा उत्तर देना। गर्भमें रहा हुआ जीव क्या मुखसे खाता है ऐसा प्रश्न–मुखसे नहीं खाता है ऐसा उत्तर। इसमें क्या कारण है ? ऐसा प्रश्न, वह सर्व शरीर से आहार करता है ऐसा कारणकथनरूप उत्तर। मातृजीवरसहारिणी और पुत्रजीवरसहारिणी नाडियों का विचार, संतान के माता के अंग कितने होते हैं ? ऐसा प्रश्न, तीन होते हैं, ऐसा उत्तर, मातासे प्राप्त हुए अंग कितने काल तक रहते हैं ? ऐसा प्रश्न, मरण पर्यन्त रहते हैं, ऐसा उत्तर, गर्भ में विद्यमान जीव नरकमें जाता है या नहीं ? ऐसा प्रश्न, जाता भी है और

કરે છે એવો ઉત્તર, ગર્ભમાં રહેલો જીવ કયો આહાર લે છે? એવો પ્રશ્ન અને માતાના શોણિતની સાથે માતા વડે ખવાયેલ પદાર્થોનો આહાર લે છે એવો ઉત્તર ગર્ભમાં રહેલો જીવ મળ મૂત્ર કરે છે કે નહીં? એવો પ્રશ્ન અને તેનો નકારમાં ઉત્તર, તેનું શું કારણ છે? એવો પ્રશ્ન અને આહાર અનેક રીતે પરિણમે છે એવો ઉત્તર, ગર્ભમાં રહેલો જીવ શું મુખ વડે ખાય છે? એવો પ્રશ્ન અને નથી ખાતો એવો ઉત્તર, તેનું કારણ શું? એવો પ્રશ્ન અને તે સમસ્ત શરીર વડે આહાર કરે છે એવો ઉત્તર માતૃજીવરસહારિણી અને પુત્રજીવરસહારિણી નાડિયોનો વિચાર, સંતાનમાં માતાનાં કેટલાં અંગ હોય છે? એવો પ્રશ્ન, અને ત્રણ હોય છે એવો ઉત્તર માતાથી પ્રાપ્ત થયેલાં અંગો કેટલા કાળ સુધી રહે છે? એવો પ્રશ્ન–મરણ પર્યન્ત રહે છે એવો ઉત્તર, ગર્ભમાં રહેલો જીવ નરકમાં જાય છે કે નહીં? એવો પ્રશ્ન–

। अथ सप्तमोद्देशकः प्रारभ्यते ।

सप्तमोदेशके संक्षेपतो विचारणीया इमे विषयास्तथाहि—नारकादिजीवानामुत्पत्तिविचारः, तत्र चतुर्विंशतिदण्डकाः, नारकादीनामाहारविचारः, पुनश्चतुर्विंशतिदण्डकाः, नैरयिकोद्वर्त्तनविचारस्तत्रोपपन्नोद्वृत्तविग्रहगतिसमापन्नाऽविग्रहगति समापन्नादिकथने चतुर्विंशतिदण्डकाः देवानां च्यवनं गर्भविचारः, गर्भे समुत्पद्यमाना जीवा इन्द्रियवन्तो न वेति विचारः, द्रव्येन्द्रियभावेन्द्रिययोः कथनम् , गर्भादुत्पद्यमानस्य शरीरं भवति न वेति विचारः, औदारिकवैक्रियाहारकतैजसकार्मणशरीराणां विचारः, गर्भे उत्पद्यमानो जीवः प्रथमतः कमाहारं गृह्णातीति प्रश्नः, शुक्रशोणि-

सातवां उद्देशक प्रारंभ—

अथ सातवां उद्देशक प्रारंभ होता है। इसमें जो विचारणीय विषय हैं वे संक्षेप से इस प्रकार हैं—नारक आदि जीवों की उत्पत्ति का विचार, उसमें चौवीस दडक, नारक आदि जीवोंका आहारविषयक विचार, पुनः चौवीस दण्डकों का विचार, नैरयिक जीवों के उद्वर्तन का विचार उपपन्न (उत्पन्न होना), उद्वृत्त (निकलना), विग्रहगतिसमापन्न, अविग्रहगतिसमापन्न आदि कथन में चौवीस दण्डक, देवच्यवन और गर्भविचार, गर्भ में उपजते जीव इन्द्रियों से युक्त होते हैं या नहीं होते हैं? ऐसा विचार, द्रव्येन्द्रिय और भावेन्द्रिय का कथन, गर्भ से उपजते हुए जीव के शरीर होना है या नहीं होता है, ऐसा विचार, औदारिक, वैक्रिय, आहारक, तैजस और कार्मण, इन शरीरों का विचार, गर्भ में उपजता हुआ जीव पहिले किस आहार को ग्रहण करता है? ऐसा

સાતમા ઉદ્દેશકની શરૂઆત

હવે સાતમો ઉદ્દેશક શરૂ થાય છે તેમા જે વિષયોનું નિરૂપણ કરાયું છે તે વિષયોને સક્ષેપમાં બતાવવામા આવે છે—નારકાદિ જીવોની ઉત્પત્તિનો વિચાર, તેમા ૨૪ દડક, નારકાદિ જીવોના આહારનો વિચાર, ફરીથી ૨૪ દંડકોનો વિચાર, નારક જીવોના ઉદ્વર્ત્તનનો વિચાર, ઉત્પન્ન (ઉત્પન્ન થવુ) ઉદ્વર્ત્તન (નીકળવુ) વિગ્રહગતિ સમાપન્ન, અવિગ્રહગતિ સમાપન્ન, વગેરેના કથનમા ૨૪ દડક, દેવચ્યવન અને ગર્ભ વિચાર, ગર્ભમા ઉપજતા જીવો ઇન્દ્રિયોથી યુક્ત હોય છે કે નથી હોતા તેનો વિચાર, દ્રવ્યેન્દ્રિય અને ભવેન્દ્રિયનું વર્ણન, ગર્ભથી ઉપજતા જીવોને શરીર હોય છે કે નહી, તેનો વિચાર, ઔદારિક, વૈક્રિય, આહારક, તૈજસ, અને કાર્મણ, એ શરીરોનો વિચાર, ઉત્પન્ન થતો જીવ પહેલા કયો આહાર લે છે? તેવો પ્રશ્ન, અને શુક્ર શોણિત વગેરેનો તે આહાર

नाशनिरूपणे कृते नाशविरोधिन उत्पादस्य स्मरणमभवात् प्रसङ्गसङ्गत्या नाशोत्तर काले उत्पादस्य निरूपणमायातीति उत्पादनिरूपणाय सप्तमोद्देशकस्यारम्भः क्रियते अथवा लोकस्थिति षष्ठे कथिता, अत्रापि लोकस्थितिविषय एव कथ्यत इति एककार्यकारित्वरूपसंगत्या षष्ठोद्देशकानन्तरसप्तमोद्देशकस्य निरूपणं क्रियते। अथवा 'नेरइए' इति संग्रहगाथायां कथितम्, तस्य विवचनमवसरप्राप्तमिति अवसरसंगत्या षष्ठोद्देशकानन्तरं नैरयिकविषयस्य सप्तमोद्देशकस्य निरूपणं क्रियते, तस्येदमादिमं सूत्रम्—' नेरइए णं भंते ' इत्यादि।

मूलम्—नेरइए णं भंते ! नेरइएसु उववज्जमाणे किं देसेणं देसं उववज्जइ, देसेणं सव्वं उववज्जइ, सव्वेणं देसं उववज्जइ,

---

धर्म हैं। इस कारण नाश के निरूपण करने से नाश के विरोधी उत्पाद का स्मरण हो आना संभव होने से प्रसंग से नाशोत्तरकाल में उत्पाद का निरूपण आता है। इसलिये उत्पाद निरूपणके लिये सातवें उद्देशक का आरंभ किया गया है अथवा लोककी स्थिति छट्ठे उद्देशक में कही गई है, यहां पर भी लोकस्थिति के विषय में ही कहा जा रहा है। सो इस निमित्त को लेकर एककार्यकारित्वरूप संगति के ध्यान से सूत्रकार छट्ठे उद्देशक के बाद सातवें उद्देशक का निरूपण कर रहे हैं। अथवा-"नेरइए" इस संग्रह गाथा में जो नारकपद कहा गया है उसका विवेचन अब अवसरप्राप्त है सो अवसरप्राप्त होने के कारण छठवें उद्देशक के बाद नैरयिक विषयवाले सातवें उद्देशक का सूत्रकार निरूपण कर रहे हैं। उसका सर्वप्रथम सूत्र यह है-"नेरइए णं भंते" इत्यादि।

ઉત્પન્ન થવું એ બન્ને પરસ્પર વિરોધી ધર્મો છે તેથી વિનાશનું નિરૂપણ કર્યા પછી તેનાથી વિપરીત એવા ઉત્પાદનું સ્મરણ થઇ આવે છે તે કારણે વિનાશ પછી ઉત્પાદનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે હવે ઉત્પાદનું નિરૂપણ કરવાના આશયથી સાતમાં ઉદ્દેશાની શરૂઆત કરવામાં આવી છે અથવા-છઠ્ઠા ઉદ્દેશામાં લોકની સ્થિતિનું વર્ણન કર્યું છે તે મુજબ અહીં પણ લોકસ્થિતિના વિષયમાં જ કથન ચાલી રહ્યું છે તો તે નિમિત્તને કારણે એક કાર્યકારિત્વરૂપ સંગતિને ધ્યાનમાં રાખીને સૂત્રકાર છઠ્ઠા ઉદ્દેશાની સમાપ્તિ કરીને હવે સાતમો ઉદ્દેશો શરૂ કર્યો છે અથવા ' નેરइए " આ સંગ્રહ ગાથામાં જે "નારક" પદ કહ્યું છે, તેનું વિવેચન કરવાનો અવસર હવે આવી ગયો છે એમ સમજીને સૂત્રકાર છઠ્ઠા ઉદ્દેશાની પછી નરયિક વિષયવાળા સાતમાં ઉદ્દેશાનું નિરૂપણ કરે છે તેનું સૌથી પહેલું સૂત્ર "नेरइएणं भंते !" ઇત્યાદિ છે

जीवस्य शत्रुणा सह संग्रामकरणम्। गर्भस्थो जीवः किं देवो भवेदिति प्रश्नः, भवेन्न वा भवेदित्युत्तरम्। गर्भस्थितस्य धार्मिकप्रवचनादिश्रवणविचारः, जीवस्य गर्भनिवासप्रकारविचारः, मातुः सुखात्सुखी दुःखाःदुखी भवति किमिति प्रश्नः, भवतीत्युत्तरम्, गर्भान्निःसरणकालिकशुभाशुभविचारः, उद्देशकपरिसमाप्तिश्चेति ॥

अथ षष्ठमुद्देशकं निरूप्य तदनन्तरं सप्तमोद्देशकं निरूपयति, षष्ठसप्तमयोरयं संबन्धस्तथाहि-षष्ठोद्देशकस्यान्ते स्नेहकायः क्षिप्रमेव विनश्यतीति कथितम्, इह तु तादृशविनाशविपर्यय उत्पादः प्रतिपाद्यते, तत्र नाशोत्पादयोः परस्परं विरोधेन

नहीं भी जाता है, ऐसा उत्तर, इसमें कारण कथन, गर्भ में रहा हुआ जीवका शत्रुके साथ संग्राम करना, गर्भमें रहा हुआ जीव क्या देव होता है? ऐसा प्रश्न, हो भी सकता नहीं भी हो सकता है ऐसा उत्तर, गर्भस्थ जीवके धार्मिक प्रवचन आदिके सुननेका विचार, जीवके गर्भ निवासके प्रकार का विचार, माता के सुख से सुखी और माता के दुःख से दुःखी होता है? क्या ऐसा प्रश्न,-होता है, ऐसा उत्तर, गर्भसे निकलते समय का शुभाशुभ विचार, उद्देशक की समाप्ति ॥

छट्ठे उद्देशक का निरूपण करके अब सूत्रकार इसके बाद सातवें उद्देशक का निरूपण करते हैं। इन दोनों का संबंध इस प्रकार से है- छट्ठे उद्देशक के अन्त में जो ऐसा कहा गया है कि स्नेहकाय जो सूक्ष्म होता है वह शीघ्र ही नष्ट हो जाता है सो इस उद्देशक में उसके उस विनाश से विपरीत जो उत्पाद है उसका कथन किया गया है। क्यों कि नाश और उत्पाद (उत्पन्न होना) ये दोनों आपस में विरोधी

જાય છે પણુ ખરો અને નથી પણુ જતો એવો ઉત્તર, અને ગર્ભમાં રહેલા જીવનો શત્રુની સાથે સગ્રામ, વગેરે કારણોનુ વર્ણન ગર્ભમાં રહેલા જીવ શુ દેવ થાય છે? એવો પ્રશ્ન થાય પણુ ખરો અને ન પણુ થાય એવો ઉત્તર ગર્ભમાં રહેલ જીવનો ધાર્મિક પ્રવચન વગેરે શ્રવણુ કરવાનો વિચાર, જીવના ગર્ભનિવાસના પ્રકારનો વિચાર, ગર્ભમાનો જીવ માતાના સુખથી સુખી અને માતાના દુખથી દુ.ખી થાય છે કે નહી? એવો પ્રશ્ન-થાય છે એવો ઉત્તર, ગર્ભમાંથી બહાર આવવાના સમયનો શુભાશુભ વિચાર, ઉદ્દેશકની સમાપ્તિ

છઠ્ઠા ઉદ્દેશાનુ નિરૂપણુ કરીને હવે સૂત્રકાર સાતમાં ઉદ્દેશાનું નિરૂપણુ કરે છે તે બન્ને ઉદ્દેશાઓ વચ્ચે આ પ્રમાણે સબંધ છે- છઠ્ઠા ઉદ્દેશાને અંતે એવુ કહ્યુ છે કે સૂક્ષ્મ સ્નેહકાય શીઘ્ર (જલ્દીથી) નાશ પામે છે જ્યારે આ ઉદ્દેશામા વિનાશથી વિપરીત ઉત્[illegible] કરવામા આવ્યુ છે. નાશ અને

मुपपद्यते, नो देशेन सर्वमुपपद्यते नो सर्वेण देशमुपपद्यते, सर्वेण सर्वमुपपद्यते, यथा नैरयिकः एवं यावद्वैमानिकः। नैरयिकः खलु भदन्त ! नैरयिकेषूपपद्यमानः किं देशेन देशमाहरति, देशेन सर्वमाहरति, सर्वेण देशमाहरति, सर्वेण सर्वमाहरति, गौतम ! नो देशेन देशमाहरति, नो देशेन सर्वमाहरति, सर्वेण वा देशमाहरति, सर्वेण वा सर्वमाहरति, एवं यावद्वैमानिकः। नैरयिकः खलु भदन्त ! नैरयिकेभ्य उद्वर्तमानः किं देशेन देशमुद्वर्तते, यथोपपद्यमानस्तथैवोद्वर्तमानेपि दण्डको भणितव्यः नैरयिकः खलु भदन्त ! नैरयिकेभ्य उद्वर्तमानः किं देशेन देशमाहरति? तथैव यावत् सर्वेण वा देशमाहरति, सर्वेण वा सर्वमाहरति, एवं यावद्वैमानिकः, नैरयिकः खलु भदन्त ! नैरयिकेषूपपन्नः किं देशेन देशमुपपन्नः, एषोपि तथैव, यावत् सर्वेण सर्वमुपपन्नः। यथोपपद्यमाने उद्वर्तमाने च चत्वारो दण्डकाः तथोपपन्नेनोद्वृत्तेनापि चत्वारो दण्डका भणितव्याः, सर्वेण सर्वमुपपन्नः, सर्वेण सर्वमुद्वृत्तः, सर्वेण वा देशमाहरति, सर्वेण वा सर्वमाहरति, एतेनाभिलापेन, उपपन्नेपि, उद्वर्तनेऽपि ज्ञातव्यम्, नैरयिकः खलु भदन्त! नैरयिकेषूपपद्यमानः किम् अर्द्धेन अर्द्धमुपपद्यते, अर्द्धेन सर्वमुपपद्यते, सर्वेणार्द्धमुपपद्यते, सर्वेण सर्वमुपपद्यते, यथा प्राथमिकेनाष्ट दण्डकास्तथार्द्धेनाप्यष्ट दण्डकाः भणितव्याः, नवरं यत्र देशेन देशमुपपद्यते, तत्र अर्द्धेनार्द्धमुपपद्यते इति भणितव्यम्, एतन्नानात्वम्, एते सर्वेपि षोडश दण्डका भणितव्याः ॥ सू० १ ॥

टीका—ननु 'नेरइएणं भंते नेरइएसु उववज्जमाणे' इति मूलसूत्रवाक्यं न युक्तियुक्तं प्रतिभाति यतो यो जीवः इदानीं नरकेनोत्पन्नः स कथं नैरयिक इति कथयितुं शक्यते, नरके उत्पत्त्यनन्तरमेव नैरयिक इति कथनं युक्तियुक्तं भवेत् न

टीकार्थ—शंका-'नेरइए णं भंते ! नेरइएसु उववज्जमाणे" यह जो मूलसूत्र वाक्य है वह युक्तियुक्त नहीं मालूम पड़ता है। क्योंकि जो जीव इस समय में नरक में उत्पन्न नहीं हुआ है। वह कैसे नैरयिक कहा जा सकता है। नरक में जन्म लेने के बाद ही जीव नारक कहलाता है, और यही बात युक्तियुक्त प्रतीत होती है। इस के पहिले नारक कहने की बात युक्तियुक्त प्रतीत नहीं होती है।

ટીકાર્થ—શંકા—નેરઇએ ણં ભંતે ! નેરઇએસુ ઉવવજ્જમાણે" નારકોમાં ઉત્પન્ન થનારો નારક જીવ આ જે મૂળસૂત્ર વાક્ય છે તે યુક્તિ યુક્ત લાગતું નથી. કારણ કે જે જીવ વર્તમાન કાળે નરકમાં ઉત્પન્ન થયો નથી તેને નૈરયિક (નારક) કેવી રીતે કહી શકાય? નરકમાં જન્મ લીધા પછી જ તેને નારકીનો જીવ કહી શકાય. તે પહેલા તેને નારકીનો જીવ કહેવો તે યુક્તિયુક્ત લાગતું નથી.

सव्वेणं सव्वं उववज्जइ?, गोयमा ! नो देसेणं देसं उववज्जइ, नो देसेणं सव्वं उववज्जइ, नो सव्वेणं देसं उववज्जइ, सव्वेणं सव्वं उववज्जइ, जहा नेरइए एवं जाव वेमाणिए। नेरइए णं भंते ! नेरइएसु उववज्जमाणे किं देसेणं देसं आहारेइ, देसेणं सव्वं आहारेइ, सव्वेणं देसं आहारेइ, सव्वेणं सव्वं आहारेइ, गोयमा ! नो देसेणं देसं आहारेइ, नो देसेणं सव्वं आहारेइ, सव्वेणं वा देसं आहारेइ, सव्वेणं वा सव्वं आहारेइ, एवं जाव वेमाणिए। नेरइए णं भंते ! नेरइएहिंतो उव्वट्टमाणे किं देसेणं देसं उव्वट्टइ४? जहा उववज्जमाणे तहेव उव्वट्टमाणे वि दंडगो भाणियव्वो, नेरइएणं भंते! नेरइएहिंतो उव्वट्टमाणे किं देसेणं देसं आहारेइ४? तहेव जाव सव्वेणं वा देसं आहारेइ, सव्वेणं वा सव्वं आहारेइ, एवं जाव वेमाणिए, नेरइए णं भंते! नेरइएसु उववन्ने किं देसेणं देसं उववन्ने४, एसो वि तहेव जाव सव्वेणं सव्वं उववण्णे। जहा उववज्जमाणे, उव्वट्टमाणे य चत्तारि दंडगा तहा उववन्नेणं उववट्टेण वि चत्तारि दंडगा भाणियव्वा, सव्वेणं सव्वं उववण्णे, सव्वेणं सव्वं वा देसं आहारेइ, सव्वेणं वा सव्वं आहारेइ, एएणं अभिलावेणं उववन्ने वि, उव्वट्टणे वि नेयव्वं, नेरइए णं भंते ! नेरइएसु उववज्जमाणे किं अद्धेणं अद्धं उववज्जइ, अद्धेणं सव्वं उववज्जइ, सव्वेणं अद्धं उववज्जइ, सव्वेणं सव्वं उववज्जइ, जहा पढमिल्लेणं अट्ठदंडगा तहा अद्धेण वि अट्ठदंडगा भाणियव्वा, नवरं जहिं देसेणं देसं उववज्जइ तहिं अद्धेणं अद्धं उववज्जइ, इति भाणियव्वं, एयं णाणत्तं, एए सव्वेवि सोलसदंडगा भाणियव्वा ॥सू०१॥

छाया–नैरयिकः खलु भदन्त ! नैरयिकेषु उपपद्यमानः किं देशेन देशमुपपद्यते, देशेन सर्वमुपपद्यते, सर्वेण देशमुपपद्यते, मुपपद्यते, गौतम! नो देशेन देश-

नैरयिको भदन्त नैरयिकेषु उपपद्यमानः 'किं देसेणं देसं उववज्जइ' किं देशेन देशमुपपद्यते जीवः स्वस्यैकदेशेन एकेनावयवेन नारकस्यैकदेशमाश्रित्य उत्पद्यते, किम्? 'देसेणं सव्वं उववज्जइ' देशेन सर्वमुपपद्यते, देशेन स्वावयवेन सर्वं सर्व माश्रित्य सर्वात्मना नारकावयवितयस्यर्थं, उत्पद्यते ? अथवा किम् 'सव्वेणं देसं उववज्जइ' सर्वेण देशमुपपद्यते, सर्वेण सर्वात्मना द्यं देशतो नारकावयवतयोत्पद्यते, अथवा किम्–'सव्वेणं सव्वं उववज्जइ' सर्वेण सर्वमुपपद्यते, सर्वेण सर्वात्मना सर्वं सर्वतो नारकावयवितया समुत्पद्यते ? अयमाशयः–नरके उत्पद्यमानो जीवः किम् स्वस्यैकदेशेन, नारकस्यैकदेशतयोत्पद्यते १, अथवा स्वस्यैकदेशेन नारकस्य सर्वावयवतया–उत्पद्यते २, अथवा सर्वावयवेन नारकस्यैकदेशतया समुत्पद्यते ३, अथवा स्वस्य सर्वावयवेन नारकस्य सर्वावयवितया समुत्पद्यते ४ इति चत्वारो

अब गौतमस्वामी प्रभु से पूछते हैं कि (णेरइए णं भंते! नेरइएसु उववज्जमाणे) हे भदन्त! नरकों में उपजनेवाला–अभी उत्पन्न नहीं हुआ है। आगे उत्पन्न होनेवाला है, ऐसा नारक जीव (किं देसेणं देसं उववज्जइ) क्या अपने एक देश से–एक अवयव से–नारक के एक देश को आश्रित करके उत्पन्न होता है ? (देसेणं सव्वं उववज्जइ ?) या एक देश से सब को आश्रित करके–पूर्ण नारकरूप अवयवीपने से उत्पन्न होता है ? अथवा (सव्वेणं देसं उववज्जइ) अपने समस्त अवयवों से नारक के अवयवरूप से उत्पन्न होता है ? अथवा–(सव्वेणं सव्वं उववज्जइ) समस्त अवयवों से नारक के समस्त अवयव रूप से उत्पन्न होता है ? इसका यह आशय है कि–नरक में उत्पद्यमान जीव क्या अपने एक देश से नारक के एकदेशरूप से उत्पन्न होता है, अथवा अपने एकदेश से नारक के सर्वावयवरूप से उत्पन्न होता है, अथवा अपने सर्वावयव से नारक के एकदेशरूप से उत्पन्न होता है, अथवा कि अपने सर्वावयव से नारक के सर्वावयवरूप से उत्पन्न होता है ? इस तरह से चार विकल्प गौतमस्वामी के हैं–इसका उत्तर देते

ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને પૂછે છે કે (णेरइए णं भंते! नेरइएसु उव वज्जमाणे नारडेभां ઉત્પન્ન થનારો નારક જીવ (किं देसेणं देसं उववज्जइ) શું પોતાના એકદેશથી નારકના એકદેશ રૂપે ઉત્પન્ન થાય છે, (દેશ એટલે અવયવ અથવા અંશ) (देसेणं सव्वं उववज्जइ ?) પોતાના એક દેશથી નારકના સર્વ દેશ રૂપે ઉત્પન્ન થાય છે ? કે (सव्वेणं देसं उववज्जइ ?) પોતાના સમસ્ત અવયવોથી નારકના એક અવયવ રૂપે ઉત્પન્ન થાય છે ? કે सव्वेणं सव्वं उववज्जइ ?) કે પોતાના સમસ્ત અવયવોથી નારકના સમસ્ત અવયવરૂપે ઉત્પન્ન થાય છે? અહિં ચાર વિકલ્પો ગૌતમસ્વામીએ પૂછ્યા.

तु तत्पूर्वकाले ? इत्याशङ्कायामाह–वर्तमानभविष्यत्कालयोरभेदमुपचर्य्य उत्पद्यमानो जीव उत्पन्न इति कथ्यते, तथा नरके उत्पद्यमानो जीवः नरक इति संज्ञयापि संगतो भवितुमर्हति नरकत्व प्रायोग्यायुष उदयप्राप्तत्वादिति। अपि च यदा जीवस्यान्यस्यायुष्यकर्मणो नोदयोऽपि तु नारकायुष्कस्यैवोदयस्तथा यदि स नारक इति शब्देन न व्यवह्रियते तदा केन नामविशेषेण तस्य संकेतः करणीयः स्यादिति हेतुनाऽपि नरके उत्पद्यमानो जीवो नैरयिकशब्देन व्यवह्रियते। न तत्र काऽपि क्षतिरिति। गौतमः पृच्छति–'नेरइए णं भंते नेरइएसु उववज्जमाणे'

उत्तर वर्तमानकाल और भविष्यत्काल इन दोनों कालोंमें यहां अभेद का उपचार किया गया है। सो इन अभेद उपचार को लेकर नरकमें उत्पन्न होने के सन्मुख हुए जीवको नारक कह दिया गया है। तथा नरकमें जो उत्पन्न होने जा रहा है ऐसा जीव नारक इस नामसे भी कहा जाय तो कोई विरोध नहीं आता है क्योंकि उस समय उस जीवके नरकप्रायोग्य आयु का उदय हो जाता है। गति, आनुपूर्वी और आयु, इनका उदय एक साथ होता है। तथा–जब नरक गति में उपजने के लिये सन्मुख हुए जीव के तिर्यञ्चायु मनुष्यायु और देवायु, इनमें से किसी भी आयु का उदय नहीं होता है, एक नरकायुष्क का ही उदय होता है तो ऐसी स्थिति में वह नारक शब्द से नहीं कहा जायगा तो ओर किस शब्द से कहा जायगा, अतः नरक में उत्पद्यमान जीवका नैरयिक शब्द से ही व्यवहार होगा। इसी कारण यहां पर भी उसका नारक शब्दसे व्यवहार किया गया है। इस प्रकार के व्यवहार में सैद्धान्तिक कोई भी आपत्ति नहीं आती है।

સમાધાન—અહીં વર્તમાનકાળ અને ભવિષ્યકાળ, એ બન્ને કાળમાં અભેદનો ઉપચાર (આરોપણ) કરવામાં આવેલ છે તે અભેદ ઉપચારની અપેક્ષાએ નરકમાં ઉત્પન્ન થવાને સન્મુખ થયેલા જીવને નારક કહેવામાં આવ્યો છે નરકમાં જે ઉત્પન્ન થવાનો છે એવા જીવને નારક કહેવામાં કોઈ વાંધો જણાતો નથી કારણ કે તે સમયે જીવના નરક પ્રાયોગ્ય (યોગ્ય) આયુષ્યનો ઉદય થઈ ગયો હોય છે ગતિ, આનુપૂર્વી અને આયુષ્યનો ઉદય એક સાથે જ થાય છે વળી નરકગતિમાં ઉપજવાને સન્મુખ થયેલા જીવના તિર્યંચાયુ, મનુષ્યાયુ અને દેવ આયુ, એ ત્રણેમાંથી એક પણ આયુનો ઉદય હોતો નથી ફક્ત નરકાયુનો જ ઉદય હોય છે તો એવી સ્થિતિમા તેને "નારક" ન કહી શકાય તો બીજુ શું કહી શકાય ? તેથી નારકમાં ઉત્પદ્યમાન (ઉત્પન્ન થવાને સન્મુખ થયેલા) જીવને માટે "નારક" શબ્દનો જ પ્રયોગ કરવો જોઈએ. આમ કરવામાં કોઈ પણ પ્રકારનો સૈદ્ધાન્તિક વાંધો નથી.

जायते, सम्पूर्णरूपेणैव दुग्धं सम्पूर्णदधिरूपतयैव परिणमते न तु दुग्धस्यैकदेशेन दध्न एकदेशो भवति, यथा वा तन्तुना पटाप्रतिबद्धपटप्रदेशः। यथा पटदेशभूतेन तन्तुना पटाप्रतिबद्धः पटदेशो न निर्वर्त्यते, तथैव पूर्वतिर्यगाद्यवयवि

क्यों कि कारणसे अर्थात् अपने एक अंशसे अपने कार्यके एक अंशरूपमें उत्पन्न नहीं होता, इसका अभिप्राय ऐसा है कि जो परिणामी कारण होता है उसके एक अवयव से कार्य के एक अवयव की उत्पत्ति स्वीकृत नहीं की गई है, क्यों कि जो परिणामी कारण होता है-अर्थात् उपादान कारण होता है-वह अपने सर्वरूप से ही कार्य के आकार में परिणम जाता है। ऐसा नहीं है कि उसके एकदेश से उसके कार्य का एकदेश निष्पन्न होता हो। जैसे दही का उपादान कारण दूध है सो वह उपादान कारणरूप दूध अपने समस्त अवयवों से ही संपूर्ण दधिरूप में परिणमता है। ऐसा नहीं है कि उस दूध के एकदेश से दही का एकदेश निष्पन्न होता हो। तात्पर्य कहने का यह है कि जो उपादान कारण होता है वह नियम से अपने सम्पूर्णरूप से अपने कार्यरूप में बदल जाता है। उपादान की उपादानता केवल यही तो है कि जो वह अपने आप को समस्तरूप में कार्यरूप में परिणमा देता है। दही का उपादान कारण दूध अपने समस्त निजरूप को दहीरूप में बना देता है। जैसे-वस्त्र के एकदेशभूत तंतुसे पटाप्रतिबद्ध पटप्रदेश उत्पन्न नहीं होता है। उसी तरह पूर्वतिर्यगादि-अवयवी में प्रतिबद्ध रहते हुए जीव के एकदेश से उत्तरावयवीरूप नारकका एकदेश निष्पन्न नहीं हो सकता है। कहनेका तात्पर्य यह है कि आतानवितानीभूत तंतुओंसे (तानावाना किये हुए) बनते हुए वस्त्रके उपादान कारण वे तंतु होते हैं, और वह वस्त्र उनका कार्य होता है। अब यहांपर यह विचारना चाहिये कि उन तंतुओंसे जो वस्त्रका

આવેલ છે જેમ કે દહીંનું ઉપાદાન કારણ દૂધ છે તે ઉપાદાન કારણ રૂપ દૂધ પોતાના તમામ અંશોથી તમામ અંશો સહિત દહી રૂપે પરિણમે છે એવું નથી હોતું કે દૂધના એકદેશથી દહીંનો એકદેશ બને. ઉપાદાન કારણની મહત્તા એજ છે કે તે પોતાને સમસ્ત રૂપે જ કાર્ય રૂપે પરિણમાવે છે જેમ વસ્ત્રના એકદેશરૂપ તંતુથી (તાંતણાથી) આખું વસ્ત્ર તૈયાર થતું નથી એવી જ રીતે પૂર્વની તિર્યંચ વગેરે યોનિના જીવોના એકદેશ (અવયવ)થી નારકનો એકદેશ (અવયવ) નિષ્પન્ન થતો નથી. તાત્પર્ય એ છે કે તાણાવાણાઓથી બનતા વસ્ત્રના ઉપાદાન કારણરૂપ તંતુઓ છે અને વસ્ત્ર તેમનું કાર્ય છે હવે તંતુઓના એકદેશથી વસ્ત્રનું નિર્માણ થતુ નથી, એટલુ જ નહીં પણ તંતુઓના

विकल्पाः प्रश्नकर्तुरिति। भगवानाह—'गोयमे'-त्यादि। 'गोयमा' हे गौतम! 'नो देसेणं देसं उववज्जइ' नो देशेन देशमुपपद्यते, यतः-परिणामि कारणस्यैकेनावयवेन कार्यावयवस्योत्पत्तेरनभ्युपगम एव भवति, यत् परिणामि कारणं तत्सर्वरूपतयैव कार्याकारेण परिणमते न तु एकदेशतः कार्यस्य एकदेशो

हुए प्रभु कहते हैं-(गोयमा? नो देसेणं देसं उववज्जइ, नो देसेणं सव्वं उववज्जइ, नो सव्वेणं देसं उववज्जइ, सव्वेणं सव्वं उववज्जइ) हे गौतम! उत्पद्यमान नारकजीव अपने एकदेश से न तो नारकजीव के एकदेश रूप से उत्पन्न होता है, न वह अपने एकदेश से नारक जीवके सर्वावयवरूप से उत्पन्न होता है और न वह अपने समस्त अवयवों से नारकजीव के एकदेशरूप से उत्पन्न होता है किन्तु वह अपने समस्त अवयवों से नारक जीव के समस्त अवयवरूप से ही उत्पन्न होता है। इन चार प्रश्नों का भावार्थ ऐसा है कि कोई नया जीव जो नरकों में नारकजीव की पर्याय से उत्पन्न होने वाला होता है उसके विषय में गौतमस्वामी ने प्रभु से ऐसा पूछा है कि वह जीव अपने किसी एक अंश से उस पर्याय के एक अंश में उत्पन्न होता है, या उसके समस्त अंश में उत्पन्न होता है, या अपने समस्त अंश से उस पर्याय के एक अंश से उत्पन्न होता है या समस्त अंश में उत्पन्न होता है। इनमें पहिले के तीन प्रश्नों को असान्य बताकर चौथे प्रश्न को स्वीकार करते हुए प्रभु ने गौतम को समझाया कि हे गौतम! जो नया जीव नैरयिक की पर्याय से उत्पन्न होता है वह वहां अपने समस्त अंशों से उस विवक्षित पर्यायके समस्त अंशोंमें अर्थात् उसी पूर्ण अवयवीरूपमें उत्पन्न होता है।

ભગવાન કહે છે-(गोयमा! नो देसेण देसं उववज्जइ, नो देसेणं सव्वं उववज्जइ, नो सव्वेण देसं उववज्जइ, सव्वेण सव्वं उववज्जइ) હે ગૌતમ! નારકોમાં ઉત્પન્ન થતો જીવ પોતાના એકદેશથી નારકના એકદેશ રૂપે ઉત્પન્ન થતો નથી, તથા પોતાના એકદેશથી નારકના સર્વદેશ રૂપે પણ ઉત્પન્ન થતો નથી, તેમજ પોતાના સર્વદેશથી નારકના એકદેશ રૂપે પણ ઉત્પન્ન થતો નથી, પરંતુ તે પોતાના સર્વદેશથી નારકના સર્વદેશ રૂપે જ ઉત્પન્ન થાય છે

ઉપરના ચાર પ્રશ્નોમાથી ત્રણ પ્રશ્નોના જવાબ નકારમા અને ચોથા પ્રશ્નનો જવાબ હકારમા આપતા મહાવીર પ્રભુએ કહ્યુ કે હે ગૌતમ! જે નવો જીવ નરકગતિમા ઉત્પન્ન થાય છે તે પોતાના તમામ અંશોથી નરકગતિમા તમામ અંશો સાથે-પૂર્ણ અવયવી રૂપે ઉત્પન્ન થાય છે, કારણ કે પરિણામી કારણ એક અંશથી પોતાના કાર્યના એક અંશ રૂપે ઉત્પન્ન થતું નથી તેનું તાત્પર્ય એ છે કે જે પરિણામી કારણ એટલે કે ઉપાદાન કારણ હોય છે તેના એક અવયવથી કાર્યના એક અવયવની ઉત્પત્તિ સ્વીકારવામા આવી નથી પરંતુ તેના સર્વ અવયવોથી જ કાર્યના સર્વ અવયવોની ઉત્પત્તિ સ્વીકારવામાં

नोपपद्यते सम्पूर्णपरिणामिकारणत्वात् समस्तघटकारणैर्घटैकदेशवत्, यथा मृत्तिकारूपपरिणामिकारण न देशतया घटमुत्पादयति, तद्वत् प्रकृते सम्पूर्णो जीवावयवः नारकादिस्वरूपैकदेशं नोत्पादयितुं समर्थः परिणामिकारणस्य सर्वात्मनैव परिणामस्य कार्याकारेण दर्शनात् ३। किन्तु 'सव्वेणं सव्वं उववज्जइ' सर्वेण सर्वमुपपद्यते, सर्वेण सर्वावयवेन सर्वम् सम्पूर्णोऽवयवी उत्पद्यते पूर्णकारणसमवायात् घटादिवत्, यथा घटसमवायिकारणभूता मृत्तिका सर्वरूपेण सर्वात्मना सम्पूर्णघटरूपेण परिणमति तद्वत् प्रकृतेऽपि जीवः सर्वावयवेन नारकादिसर्वावयवतया समुत्पद्यते इति, चतुर्थ एव पक्षस्तीर्थंकरस्याभिमत इति। 'जहा नेरइए

इसका भाव यह है कि यह उत्पद्यमान नारकजीव अपने पूर्ण अंशों से नारक पर्याय के एक अंशरूप में उत्पन्न नहीं होता है। जैसे समस्त घट के कारणों से घट का एकदेश उत्पन्न नहीं होता है, जिस प्रकार मृत्तिकारूप परिणामिकारण घटका उत्पाद एकदेश से नहीं करता है। उसी प्रकार यहां पर भी सपूर्ण जीवावयव नारकादिरूप के एकदेश को उत्पन्न नहीं कर सकते हैं, क्यों कि जो परिणामी कारण होता है वह अपने समस्तरूप से ही अपने कार्य के आकार से देखा जाता है। "सव्वेणं सव्वं उववज्जइ" ऐसा जो कहा गया है–सो उसका तात्पर्य यह है कि उत्पद्यमान नारकजीव अपने समस्त अवयवों द्वारा संपूर्ण अवयवीरूप से उत्पन्न होता है, पूर्णकारणकलाप के मिलजाने से जैसे घट उत्पन्न हो जाता है। तात्पर्य यह है कि जैसे घट की समवायीकारण–उपादानकारण मृत्तिका सर्वरूप से सपूर्ण घटरूप में परिणम जाती है। उसी तरह यहां पर भी उत्पद्यमान नारकजीव अपने समस्त अवयवों द्वारा नारकजीवरूप पूर्ण पर्याय में बदल जाता है। ऐसा यह

આ પ્રમાણે છે–જેમ ઘડાનાં સંપૂર્ણ કારણોથી ઘડાનો એકદેશ તૈયાર થતો નથી. જેમ માટીરૂપ ઉપાદાન કારણ એક ભાગ રૂપે ઘડાનું નિર્માણ કરતું નથી. એજ પ્રમાણે જીવના પોતાના સંપૂર્ણ અવયવો નારકાદિ રૂપના એક દેશને ઉત્પન્ન કરી શકતા નથી; કારણ કે જે પરિણામી કારણ હોય છે તે પોતાના સમસ્ત રૂપથી જ કાર્યના રૂપે પરિણમતું જોવામાં આવે છે 'सव्वेणं सव्वं उववज्जइ' નું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે–ઉત્પદ્યમાન (ઉત્પન્ન થનાર) નારકજીવ પોતાના સમસ્ત અવયવો વડે જ સંપૂર્ણ અવયવી રૂપે ઉત્પન્ન થાય છે પૂર્ણકારણ કલાપ મળવાથી જ ઘડાની ઉત્પત્તિ થાય છે–એટલે કે ઘડાનું ઉપાદાન કારણ માટી છે તે માટી સમસ્તરૂપે સંપૂર્ણ ઘડાના રૂપે જેમ પરિણમે છે તેમ ઉત્પન્ન થનાર નારક જીવ પોતાના સમસ્ત અવયવો વડે નારક જીવ રૂપ સમસ્ત પર્યાયમાં બદલાય છે આ ચોથા ... તૃતીય કર પ્રભુએ સ્વીકાર કર્યો ... બાકીના

प्रतिबद्धेन जीवस्यैकदेशेनोत्तरावयविनारकदेशो न निर्वर्त्तयितुं शक्यते इति १। तथा-'नो देसेणं सव्वं उववज्जइ' नो देशेन सर्वमुपपद्यते, न देशेनावयवेन सर्वम् सर्वतयोत्पद्यते अपरिपूर्णकारणत्वात् तन्तुना पट इवेति२। तथा-'नो सव्वेणं देसं उववज्जइ' नो सर्वेण देशम् उपपद्यते, सर्वेण देशं देशतया अवयवतयापि

निर्माण होता है वह उन तंतुओं के एकदेश से नहीं होता है, और न वस्त्र का भी एकदेश उन के एकदेश से तैयार होता है। किन्तु समस्त तंतुओंसे ही समस्त वस्त्र का निर्माण किया जाता है। अवयवी का एकदेश पूर्ण अवयवी नहीं कहलाता। पट का ऐसा कोई सा भी भाग तंतुओं के एकदेश से तैयार नहीं होता है, जो पट से जुदा हो। उपादान कारण अपने कार्य के साथ जुड़ा हुआ होता है- अर्थात्-अपने आप को वह कार्यरूप में परिणमा देता है। तब उसका कोई सा भी ऐसा भाग नहीं होता है, जो अपने कार्य के एकदेश को उत्पन्न करे, किन्तु पूर्ण उपादान ही अपने पूर्ण कार्य को निष्पन्न करता है, अतः जब यह सिद्धान्त निश्चित है तो फिर यह कैसे माना जा सकता है कि उत्पद्यमान नारकजीव अपने एकदेश से ही नारकजीव की पर्याय के एकदेश में उत्पन्न होता है। तथा-"नो देसेणं सव्वं उववज्जइ" इस का भाव यह है। कि वह उत्पद्यमान नारकजीव अपने एकदेश से पूर्णनारकरूप पर्याय में उत्पन्न नहीं होता है जैसे एक तन्तु से पूरा पट उत्पन्न नहीं होता है। तथा-"नो सव्वेणं देसं उववज्जइ"

એકદેશથી વસ્ત્રના એકદેશનુ નિર્માણ થતું નથી માટે કહ્યુ છે કે-"નો देसेण देसं उववज्जइ" પરંતુ બધા તંતુઓ વડે જ સંપૂર્ણ વસ્ત્રનું નિર્માણ થાય છે. અવયવીના એકદેશને પૂર્ણ અવયવી કહેવાતો નથી. વસ્ત્રનો એવો કોઈ પણ ભાગ તંતુઓના એકદેશથી-એક ભાગથી તૈયાર થતો નથી કે જે વસ્ત્રથી જુદો હોય. ઉપાદાન કારણ પોતાના કાર્ય સાથે જોડાયેલુ જ હોય છે-એટલે કે પોતાને જ તે કાર્યરૂપે પરિણમાવે છે તેથી તેનો કોઇપણ ભાગ એવો હોતો નથી કે જે પોતાના કાર્યના એકભાગને ઉત્પન્ન કરતો હોય, પણ પૂર્ણ ઉપાદાનજ તેના પૂર્ણ કાર્યનું નિર્માણ કરે છે. આ પ્રકારનો સિદ્ધાંત નિશ્ચિત હોવાથી ઉત્પદ્યમાન નારકજીવ પોતાના એકદેશથી નારકજીવની પર્યાયના એકદેશરૂપે ઉત્પન્ન થતો નથી તથા "नो देसेणं सव्व उववज्जइ" નો ભાવાર્થ એવો છે કે જેવી રીતે એક તંતુમાંથી પૂરૂ વસ્ત્ર તૈયાર થતું નથી એવી જ રીતે ઉત્પદ્યમાન (ઉત્પન્ન થનાર) નારક જીવ એકદેશથી પૂર્ણ નારકરૂપ પર્યાયમા ઉત્પન્ન થતો નથી. તથા "नो सव्वेणं देसं उववज्जइ" નો ભાવાર્થ

एवं जाव वेमाणिए' यथा नैरयिक एवं यावद्वैमानिक, उत्पत्तिविषये यथा नैरयिकविषये विचार कृतस्तद्वदेवासुरकुमारादारभ्य वैमानिकपर्यन्तत्रयोविंशति दण्डकविषयेपि विचारो विधेय इति। उत्पत्त्यनन्तरमाहारस्यावश्यकता भवस्यत आहारसूत्रमाह-' नेरइएणं भंते! नेरइएसु उववज्जमाणे ' नैरयिकः खलु भदन्त! नैरयिकेषूपपद्यमानः, ' किं देसेणं देस आहारेइ ' किं देशेन देशमाहरति, देशेनात्मप्रदेशेन देशम् अभ्यवहार्य द्रव्यस्य मदेशमेकावयवमेवाहरति आहार कर्तुमाहरणीयद्रव्यस्यैकदेशमेकावयवमेव स्वावयवेन गृह्णाति किम्? इति प्रथमो भङ्ग १। किंवा 'देसेणं सव्वं आहारेइ' देशेन सर्वमाहरति, जीवः स्वस्यैकावयवेनाहरणीय द्रव्यस्य सर्वानेवावयवान् आहरति इति द्वितीयो भङ्गः २। किम् 'सव्वेणं देस आहारेइ' सर्वेण देशमाहरति, जीवः स्वस्य सर्वावयवेनाहरणीयद्रव्यस्यैकदेशमाहरतीति तृतीयो भङ्गः ३। 'सव्वेणं सव्वं आहारइ' सर्वेण सर्वमाहरति, जीवः सर्वात्मप्रदेशेन सर्वात्मना आहारणीयद्रव्यस्य सर्वानेवावयवान् आहरति किम्,

(जहा नेरइए, एवं जाव वेमाणिए) उत्पत्ति के विषय में जैसा यह विचार नैरयिक विषयमें किया गया है वैसा ही विचार असुरकुमारसे लेकर वैमानिक तक जो २३तेईस दण्डक हैं उनमें भी करलना चाहिये। उत्पत्ति के बाद आहारकी आवश्यकता होती है इसलिये सूत्रकार आहार संबंधी सूत्र कहते हैं-(नेरइए णं भंते! नेरइएसु उववज्जमाणे किं देसेणं देस आहारेइ, देसेणं सव्वं आहारेइ सव्वेणं देसं आहारेइ, सव्वेणं सव्वं आहारेइ) हे भदन्त! नैरयिक पर्याय में उत्पद्यमान नैरयिक जीव क्या एकदेश से एकभाग को आश्रय कर आहार करता है? या एकदेश से सर्वदेश का आश्रय कर आहार करता है? या सर्वदेश से एकदेश का आश्रय कर आहार करता है? या सर्वदेश से सर्वदेश का

(जहा नेरइए, एवं जाव वेमाणिए) ઉત્પત્તિના વિષયમાં જેવું કથન ના રકોના વિષયમાં કરવામાં આવ્યુ છે, એવું જ કથન અસુરકુમારોથી લઈને વૈમાનિકો સુધીના૨૩ દંડકના વિષયમાં પણ સમજવું ઉત્પત્તિ થયા પછી આહારની આવશ્યકતા રહે છે તેથી હવે સૂત્રકાર આહાર સબંધી સૂત્રોનુ કથન કરે છે-

(नेरइए णं भंते! नेरइएसु उववज्जमाणे किं देसेणं देसं आहारेइ देसेण सव्वं आहारेइ, सव्वणं देसं आहारेइ, सव्वेणं सव्वं आहारेइ?) હે પૂજ્ય! નરકગતિમાં ઉત્પન્ન થએલ જીવ શું એકદેશથી આહાર કરવા લાયક દ્રવ્યના એકદેશનો આહાર કરે છે? અથવા એકદેશથી આહાર કરવા લાયક દ્રવ્યના સમસ્ત દેશનો આહાર કરે છે? અથવા સમસ્ત દેશથી તેના એકદેશનો આહાર કરે છે? અથવા સમસ્ત દેશની આહાર કરવાલાયક દ્રવ્યના સમસ્ત દેશનો આહાર કરે છે?

चौथा पक्ष ही तीर्थंकर प्रभु को मान्य है, शेष ३ तीन नहीं। इस सब कथन का सारांश ऐसा है कि यदि कोई जीव नारकपर्याय में उत्पन्न होनेवाला है तो वह वहां इस रूप से उत्पन्न नहीं होगा कि उसके एक प्रदेश को छोडकर बाकी के प्रदेश तो पूर्व पर्याय में प्रतिबद्ध रहे और अपने एक प्रदेश से वह नारक पर्याय के एकदेश से अथवा सर्वदेश से नरक में उत्पन्न हो जाय। इसी तरह वह इस रूप से भी वहां उत्पन्न नहीं होगा कि वह अपने समस्त प्रदेशों को यहां लेकर अर्थात् पूर्वपर्याय से मरकर नरक में नारक जीव की पर्याय के एक अंश से जन्म ले, सम्पूर्ण अंश से जन्म न ले, अर्थात् वह संपूर्ण अंश में नारक न बने किन्तु एक ही अंशमें नारक बनें। सिद्धान्त क्या है सो यही बात अंतिम चतुर्थ प्रश्न से प्रकट की गई है-कि पूर्वपर्याय को छोड़कर जो जीव नरकादि गतियों में तत्तत्पर्याय में उत्पन्न होता है वह उस पर्याय में अपने समस्त प्रदेशों से ही पूर्णरूप में उत्पन्न होता है, क्यों कि-वह विवक्षित पर्याय उस पूर्वपर्यायगत जीव का कार्य है, इसलिये वह उस पर्याय का उपादान कारण है। और यह बात अभी २ प्रकट ही कर दी गई है कि जो जिस पर्याय का उपादान कारण होता है वह सम्पूर्ण रूप से ही अपने को उस समस्त पर्यायरूप में ही परिणमा देता है, अतः यही सिद्ध हुआ कि उत्पद्यमान नारक नरकमें संपूर्ण रूप से ही उस समस्त विवक्षित पर्याय में उत्पन्न होता है।

ત્રણ પક્ષનો અસ્વીકાર કર્યો છે ઉપરના કથનનો સારાશ એ છે કે નારક પર્યાયમાં ઉત્પન્ન થનારો કોઇ જીવ એવી રીતે ઉત્પન્ન નહીં થાય કે તેના એક પ્રદેશ (અવયવ) સિવાયના બાકીના પ્રદેશો તો પૂર્વ પર્યાયરૂપે જ પ્રતિબદ્ધ (બંધાયલા) રહે અને માત્ર એક પ્રદેશથી જ તે નારક પર્યાયના એક દેશ રૂપે કે સર્વદેશ રૂપે નારકમાં ઉત્પન્ન થઈ જાય પરંતુ એવુ બનતું નથી એટલે કે પૂર્વપર્યાયમાથી મરીને નરકમા નારક જીવની પર્યાયના એક અંશે ઉત્પન્ન થાય એવું પણ બનતું નથી. ચોથા પ્રશ્નના જવાબમા કયો સિદ્ધાંત છે તે પૂર્વે બતાવ્યું છે કે પૂર્વ પર્યાયને છોડીને જે જીવ નરકાદિ ગતિયોમા ઉત્પન્ન થાય છે તે જીવ તે પર્યાયમા પોતાના સમસ્ત પ્રદેશોથી જ પૂર્ણરૂપે ઉત્પન્ન થાય છે, કારણ કે તે પૂર્વપર્યાયગત જીવનું કાર્ય છે તેથી તે જીવ તે પર્યાયનું ઉપાદાન કારણ છે અને એ વાતનું અમે આગળ પ્રતિપાદન કરી ગયા છીએ કે જે કાર્યનુ જે ઉપાદાન કારણ હોય છે તે ઉપાદાન કારણ સંપૂર્ણ રીતે જ કાર્ય રૂપે પરિણમે છે, આ રીતે ઉત્પદ્યમાન નારક જીવ નરકમા સંપૂર્ણ અવયવોથી જ સંપૂર્ણ અવયવો રૂપે ઉત્પન્ન થાય છે.

यवों को ग्रहण करता है क्या? अथवा-यह जीव अपने समस्त अवयवों से आहरणीय द्रव्य के एकदेश को ग्रहण करता है- क्या? अथवा-यह जीव समस्त अपने प्रदेशों से आहरणीय द्रव्य के समस्त प्रदेशों को ग्रहण करता है क्या? इन प्रश्नों का उत्तर देते हुए प्रभुने जो गौतम स्वामी से कहा वह ऐसा है कि हे गौतम! प्रथम के जो दो प्रश्न हैं, वे असमान्य हैं। अर्थात् यह जीव अपने एक देश से आहरणीय द्रव्य के एक देश को आहार करने के लिये ग्रहण नहीं करता है और न अपने एक ही देश से आहार करने योग्य द्रव्य के आहार करने के लिये समस्त अवयवों को ग्रहण करता है, किन्तु या तो यह अपने समस्त प्रदेशों से आहार करने योग्य द्रव्य के एकदेश को आहार करने के निमित्त ग्रहण करता है या अपने समस्त अवयवों द्वारा आहार करने योग्य द्रव्य के समस्त अवयवों को आहार करने के लिये ग्रहण करता है। यह जीव जो अपने समस्त प्रदेशों-अवयवों द्वारा आहरणीय द्रव्य के एक देश को अर्थात् एक भाग को आहार करने के निमित्त ग्रहण करता है सो इसका आशय इस प्रकार से है कि यह जीव उत्पत्ति के बाद तुरत ही अपने समस्त प्रदेशों द्वारा आहरणीय द्रव्य के-आहार करने योग्य द्रव्य के-पुद्गलों को ग्रहण करता है। इनमें से यह कितनेक पुद्गलों का तो

અવયવોને ગ્રહણ કરે છે? અથવા તે નારક જીવ પોતાના સમસ્ત અવયવો વડે આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના એક ભાગ (દેશ)ને ગ્રહણ કરે છે? કે તે જીવ પોતાના સમસ્ત પ્રદેશો દ્વારા આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના સમસ્ત પ્રદેશોને ગ્રહણ કરે છે? આ ચાર પ્રશ્નોના જવાબમાં ભગવાને પહેલા બે પ્રશ્નોના જવાબ નકારમાં આપ્યા છે એટલે કે તે નારક જીવ પોતાના એકદેશથી આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના એકદેશને ગ્રહણ કરતો નથી, અને પોતાના એક જ દેશથી આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના સમસ્ત પ્રદેશોને પણ તે આહાર માટે ગ્રહણ કરતો નથી. ત્રીજા અને ચોથા પ્રશ્નોનો જવાબ હકારમાં આપ્યો છે એટલે કે તે નારક જીવ પોતાના સમસ્ત પ્રદેશો વડે આહારને યોગ્ય પદાર્થના એકદેશને પણ ગ્રહણ કરે છે, અને પોતાના સમસ્ત પ્રદેશો વડે આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના સમસ્ત અવયવોને પણ આહાર કરવા માટે ગ્રહણ કરે છે તે નારક જીવ પોતાના સમસ્ત પ્રદેશો (અવયવો) વડે આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના એકદેશ (ભાગ) ને આહાર માટે ગ્રહણ કરે છે એવું જે કહેવામાં આવ્યું છે તેનું કારણ આ પ્રમાણે છે-તે નારક જીવ નરકયોનિમાં ઉત્પન્ન થયા પછી તરત જ પોતાના તમામ અવયવો વડે આહાર કરવા યોગ્ય પદાર્થનાં પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરે છે તેમાંનાં

इति चतुर्थो भङ्गः ४। भगवानाह—'गोयमे'-त्यादि, 'गोयमा' हे गौतम ! नो देसेणं देसं आहारेइ' नो देशेन देशमाहरति, जीवः स्वस्यैकदेशेन अवयवेनाहरणीयद्रव्यस्य देशमेकावयवं नाहरति १। 'नो देसेणं सव्वं आहारेइ' नो देशेन सर्वमाहरति २। एतौ द्वौ भङ्गौ निषिद्धौ। अथ-स्वीकृतभङ्गौ प्रदर्शयति-'सव्वेणं वा देसं आहारेइ' सर्वेण वा देशमाहरति, जीवः स्वकीयसर्वावयवेनाहरणीयद्रव्यस्यैकदेशमाहरति, अयमाशयः-जीवः स्वकीय सर्वप्रदेशैराहरणीयद्रव्यस्यैकभागमाहरति, यतः उत्पत्त्यनन्तरं तत्काले एव जीवः स्वकीयसर्वप्रदेशैरा-

---

आश्रय कर आहार करता है ? (गोयमा !) हे गौतम ! (नो देसेणं देसं आहारेइ, नो देसेणं सव्वं आहारेइ, सव्वेणं वा देसं आहारेइ, सव्वेणं वा सव्व अहारेइ) वह एकदेश से एकदेश का आश्रय कर आहार नहीं करता है और न एकदेश से सर्वदेश का आश्रय कर आहार करता है। किन्तु सर्वदेश से एकदेश का आश्रय कर आहार करता है तथा सर्वदेश से सर्वदेश का आश्रय कर आहार करता है। "देसेणं देसं आहारेइ" का तात्पर्य पूछने वाले का ऐसा है कि नैरयिकों में उत्पद्यमान नैरयिक जो आहार करता है, सो क्या वह अपने एक प्रदेश से खाने योग्य द्रव्य के एक प्रदेश का-एक अवयव का ही आहार करता है ? अर्थात् आहार करने के लिये आहार करने योग्य द्रव्य के एक देश रूप अवयव को ही अपने एक अवयव से ग्रहण करता है क्या ? अथवा वह जीव अपने ही एक अवयव से आहरणीय द्रव्य के समस्त अव-

---

ભગવાન કહે છે-(गोयमा) હે ગૌતમ ! (नो देसेणं देस आहारेइ, नो देसेणं सव्व आहारेइ, सव्वेणं वा देसं आहारेइ, सव्वेणं वा सव्वं आहारेइ) તે એકદેશથી આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના એકદેશનો આહાર કરતો નથી, તે એકદેશથી સમસ્ત દેશનો આહાર કરતો નથી, પરંતુ સર્વદેશથી આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના એકદેશનો આહાર કરે છે તથા સર્વદેશથી સમસ્ત દેશનો આહાર પણ કરે છે, હવે આ સૂત્રોનું સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવે છે-"देसेण दे आहारेइ" આ પ્રશ્નનો ભાવાર્થ એ છે કે નરકગતિમાં ઉત્પન્ન થતો નારક જીવ જે આહાર કરે છે તે શું પોતાના એક પ્રદેશથી આહારને યોગ્ય પદાર્થના એક પ્રદેશનો જ આહાર કરે છે ? એટલે કે આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના એક દેશરૂપ અવયવને જ પોતાના એક અવયવ વડે આહાર માટે ગ્રહણ કરે છે ? કે તે નારક જીવ પોતાના એક [illegible] વડે આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના સમસ્ત

तप्तकटाहे सर्वत प्रथमं पतितम् यदपूपं तत् यथा तैलादेः सर्वानेव भागान् स्वकीयसर्वभागेन गृह्णाति, तथा जीवोऽपि स्वकीयसर्वप्रदेशैराहरणीयद्रव्यपुद्गलस्य सर्वानेवावयवान् आहरति, अत एवोक्तम्–' सव्वेणं सव्वं आहारेइ ' एतावता आहारनिर्णये चतुर्थभङ्गोपि स्वीकृत एव, ततश्च प्रथमद्वितीयपक्षौ निराकृत्य तृतीयचतुर्थयो स्वीकार कृत इति । अथोत्पादविपक्षभूतत्वात् वर्तमाननिर्देश साधर्म्याच्चोद्वर्तनासूत्रमाह–' नेरइए णं भंते ' इत्यादि । ' णेरइए णं भंते ' नैरयिकः खलु भदन्त ! ' नेरइएहिंतो उव्वट्टमाणे ' नैरयिकेभ्य उद्वर्तमान, किं दसेण देसं उव्वट्टइ ' किं देशेन देशमुद्वर्तते, जीवः नरकादुद्वर्तमानः निस्सरन् किं स्वस्यैकदेशेन एकावयवेन देशम् उत्पत्तिस्थानस्यैकदेशमाश्रित्य, नारकावयवस्येनो

कढाई में सर्वप्रथम डाला गया पहले पुआ (पुड़ला) घृतादिक के समस्त भागों को अपने समस्त भागों से ग्रहण करता है। उसी तरह से जीव भी अपने समस्त प्रदेशों से आहरणीय द्रव्य पुद्गल के समस्त अवयवों को अपने आहार के काम ले लेता है। इसीलिये " सव्वेणं सव्वमाहारेइ " ऐसा सूत्र सूत्रकार ने कहा है। उनके इस कथन से " आहार के विषय में उन्होंने यह चौथा विकल्प भी मान्य रखा ही है " यह बात ज्ञात हो जाती है। इस तरह प्रथम और द्वितीय पक्षों को निराकृत करके तृतीय और चतुर्थ पक्ष स्वीकार किये गये हैं। अब उत्पाद का विपक्षभूत होने से और वर्तमान निर्देश के सरीखा होने से उद्वर्तनासूत्र को सूत्रकार कहते हैं–' णेरइए णं भंते !) हे भदन्त ! नैरयिक जीव (नेरइएहिंतो उव्वट्टमाणे) नैरयिकों में से उद्वर्तित होता हुआ अर्थात् उस पर्याय से निकलता हुआ (किं देसेण देसं उव्वट्टइ) क्या अपने एक देश से–एक अवयव से–गृहीत नारक पर्याय के एक

ઘીથી ભરેલા અત્યંત તપેલા તાવડામાં સૌથી પહેલા નાખવામાં આવેલ પુડલો ઘી વગેરેના તમામ ભાગોને પોતાના તમામ ભાગો વડે ગ્રહણ કરે છે એવી રીતે જીવ પણ પોતાના તમામ પ્રદેશો વડે આહારને યોગ્ય દ્રવ્ય પુદ્ગલના તમામ અવયવોને પોતાના આહાર માટે ગ્રહણ કરે છે તેથીજ કહ્યું છે કે "सव्वेण सव्व माहारेइ" તેમના આ કથન વડે આહારના વિષયમા સૂત્રકારે ચોથા ભાગાનો પણ સ્વીકાર કર્યો છે, એ વાત સ્પષ્ટ રીતે સમજી શકાય છે આ રીતે ચાર ભાંગામાના પહેલા અને બીજા ભાંગાનો અસ્વીકાર કરીને ત્રીજા અને ચોથા ભાગાનો સૂત્રકારે સ્વીકાર કર્યો છે હવે ઉત્પાદથી વિપરીત એવી ઉદ્વર્તનના વિષયનું સૂત્રકાર નિરૂપણ કરે છે–' णरइए ण भंते ! " હે ભગવન્ ! નારક જીવ नेरइएहिंतो उव्वट्टमाण" નારકોમાથી ઉદ્વર્તિત થતી વખતે નીકળતી વખતે " किं देसेण देसं उव्वट्टइ ? " શું પોતાના એકદેશથી–એક અવયવથી–ઉત્પત્તિસ્થાનના એકદેશને આશ્રિત કરીને

हरणीयद्रव्यस्य पुद्गलानाहरति, तत्र कियन्तो भागा आह्रियमाणा भवन्ति, कियन्तश्चानाह्रियमाणा एव तिष्ठन्ति । यथाऽतितप्तकटाहे तैलघृतादिपूरिते पतितमपूपं, तैलादेः कियन्तो भागान आददाति अवशिष्टांश्च भागान् नाददाति, तथैव जीव आहरणीयद्रव्यस्य कियद्भागमाहरति कियद्भागांश्च परित्यजति, अत एवोक्तं सूत्रकृता सर्वेण देशमाहरतीति । एतावता तृतीयभङ्गस्याहारविषये स्वीकारः कृतः ३ । 'सव्वेणं वा सव्वं आहारेइ' सर्वेण वा सर्वमाहरति, जीवः स्वकीयसर्वभागैराहरणीयद्रव्यस्य सर्वानेव भागानाहरति, जीवः स्वोत्पत्तिसमये एव सर्वात्मप्रदेशैः सर्वानेवाहारपुद्गलान् आहरति, प्रथमतो घृतादिपूरितातितप्तकटाहादिपतितप्राथमिकापूपवत्, यथा परिमितघृतप्रपूरितातित-

आहार करता है और कितनेक पुद्गलों को वैसे ही छोड़ देता है। जैसे-तेल अथवा घृत आदि से भरे हुए ऐसे अत्यंत संतप्त कडाई में प्रक्षिप्त पुआ (पुड़ला) घृतादिक के कितनेक भागों को ग्रहण कर लेता है और बाकी के भागों को छोड़ देता है-ग्रहण नहीं करता हैं। इसी तरह वह जीव आहरणीय द्रव्य के कितनेक भागों को आहार के काम में ले लेता है और कितनेक भागों को छोड़ देता है-आहार के काम में नहीं लेता है। इसीलिये सूत्रकार ने "सर्वेण देशमाहरति" ऐसा कहा है। इस कथन से "उन्होंने आहार के विषय में तृतीय भंग-विकल्प स्वीकार किया है" यह प्रमाणित होता है। "सव्वेणं वा सव्वं आहारेइ" अथवा वह जीव समस्त अपने प्रदेशों द्वारा समस्त आहरणीय द्रव्य को आहार के निमित्त ग्रहण करता है सो इसका अभिप्राय ऐसा है कि जीव अपनी उत्पत्ति के समय में ही समस्त आत्मप्रदेशों से समस्त आहार पुद्गलों को ग्रहण करता है। जैसे- घृतादि से भरे हुए अत्यंत तप्त

કેટલાક પુદ્ગલોનો તો તે આહાર કરે છે પણ કેટલાક પુદ્ગલોને તે એમ ને એમ છોડી દે છે જેવી રીતે ઉકળતા ઘી તેલ વગેરેના તાવડામાં નાખેલ માલપૂવા ઘી તેલ વગેરેના અમુક ભાગોને જ ગ્રહણ કરે છે અને અમુક ભાગોને છોડી દે છે, અર્થાત્ ગ્રહણ કરતા નથી, એજ પ્રમાણે નારક જીવો પણ આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના કેટલાક ભાગોને આહારના કામમા લે છે અને કેટલાક ભાગોને આહારના કામમાં લેતો નથી-છોડી દે છે એજ કારણે સૂત્રકારે કહ્યુ છે કે "સવ્વેણં વા દેસં આહારેઇ" આ કથન વડે તેમણે આહારના વિષયમા ત્રીજા ભાંગાનો સ્વીકાર કર્યો છે તે સિદ્ધ થાય છે સવ્વેણં વા સવ્વં આહારેઇ" અથવા તે જીવ પોતાના સમસ્ત પ્રદેશો વડે આહારને યોગ્ય તમામ દ્રવ્યને આહાર માટે ગ્રહણ કરે છે એ કથનનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે-જીવ પોતાની ઉત્પત્તિને સમયે તમામ આત્મપ્રદેશો વડે તમામ આહારના પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરે છે જેવી રીતે ઘી વગેરેથી

इति। अत्र उत्पत्ति सूत्रवच्चतुर्थभङ्ग स्वीकृत इति। अथाऽऽहारविषयं चिन्त यितुमाह—'नेरइए णं भंते' नैरयिकः खलु भदन्त। 'नेरइएहिंतो उव्वट्टमाणे किं देसेण देसं आहारेइ' नैरयिकेभ्य उद्वर्तमान किं देशेन देशमाहरति?, इत्यादि

वा सर्वेण देशमुद्वर्तते, अपि तु सर्वेण सर्वमुद्वर्तते" अर्थात् वह नारक, नारकरूप से गृहीत किये गये उस नारक के शरीर में के एकदेश से अपने एकदेश से नहीं निकलता है और न अपने एकदेश से वहां से सर्वदेश में उद्वर्तित होता है और न अपने सर्वदेश से उसके एकदेश से उद्वर्तित होता है किन्तु अपने सर्वदेश से ही वहां के सर्वदेश से उद्वर्तित–नरक से निकलता है। इस तरह यहां उत्पत्तिसूत्र की तरह ही चौथा विकल्प स्वीकार किया गया। अब सूत्रकार आहार के विषय में विचार करते हुए कहते हैं कि-(नेरइए ण भंते। नेरइएहिंतो उव्व-ट्टमाणे किं देसेणं देसं आहारेइ, देसेणं सव्वं आहारेइ, सव्वेणं देसं आहारेइ, सव्वेण सव्वं आहारेइ) हे भदन्त! नारकों में से उद्वर्तमान नारकजीव क्या अपने एकदेश से आहार करने योग्य द्रव्य के एकदेश का आहार करता है? या अपने एकदेश से आहार करने योग्य द्रव्य के सर्वदेश का आहार करता है? या अपने सर्वदेश से आहार करने योग्य द्रव्य के एकदेश का आहार करता है? या अपने सर्वदेश से

वा सर्वेण देशमुद्वर्तते, अपितु सर्वेण सर्वमुद्वर्तते" એટલે કે નારક જીવ નારક રૂપે ગૃહીત નારક શરીરના એકદેશથી નીકળીને ઉત્પત્તિસ્થાનના એકદેશનો આશ્રય કરીને ઉદ્વર્તિત થતો નથી, વળી તે નારક જીવ પોતાના એકદેશથી (અવયવથી) નીકળીને ઉત્પત્તિસ્થાનના સર્વદેશનો આશ્રય કરીને નીકળતો નથી, તેમજ પોતાના તમામ દેશથી ત્યાંના એકદેશનો આશ્રય કરીને નીકળતો નથી. પણ તે નારક જીવ પોતાના તમામ દેશથી ત્યાના તમામ દેશને આશ્રિત કરીને નીકળે છે આ રીતે ઉત્પત્તિ સૂત્રમાં જેમ ચોથા ભાંગાનો સ્વીકાર કર્યો છે તેમ ઉદ્વતનામાં પણ ચોથા ભાગાનો જ સ્વીકાર કર્યો છે

હવે સૂત્રકાર આહારના વિષયમાં વિચાર કરતા કહે છે કે—

"नेरइए णं भंते! नरइएहिंतो उव्वट्टमाणे किं देसेण देसं आहारेइ, देसेण सव्वं आहारेइ, सव्वेणं देसं आहारेइ, सव्वेण सव्वं आहारेइ?" હે ભગવન્! નરકમાંથી નિકળતો નારક જીવ પોતાના એકદેશ (અવયવ) થી આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના એકદેશનો આહાર કરે છે? કે પોતાના એકદેશથી આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના સર્વદેશનો આહાર કરે છે? કે પોતાના તમામ દેશથી આહાર

र्त्तित उत्पत्तिस्थानस्यैकदेशमाश्रित्योद्वर्त्तितो भवति किम् ? इति प्रथमो भङ्गः । एवं शेपास्त्रयः प्रश्नाः पूर्ववदेवाध्येतव्या., तथाहि किं देशेन सर्वमुद्वर्त्तते २, सर्वेण देशमुद्वर्त्तते ३, सर्वेण सर्वमुद्वर्त्तते ४ इति । भगवानाह—'जहे'-त्यादि । 'जहा उववज्जमाणे' 'तहेव उव्वट्टमाणे वि दंडगो भाणियव्वो' यथा उत्पद्यमाने तथैवोद्वर्तमानेऽपि दण्डको भणितव्यः, यथोत्पत्तिविषये दण्डकः कथितस्तथैव उद्वर्तनाविषयेऽपि दण्डको वर्णनीयस्तथाहि न देशेन देशमुद्वर्तते १, न वा देशेन सर्वमुद्वर्तते २ । न वा सर्वेण देशमुद्वर्तते ३ । अपि तु सर्वेण सर्वमुद्वर्तते४

देश से उद्वर्त्तना करता है-अर्थात् उस गृहीत नारक के शरीर के एक भाग से निकलता है ? बाकी के ३ प्रश्न और यहां पर उस विषय में पहले की तरह से ही लगा लेना चाहिये-जैसे-वह नैरयिक जीव अपने एकदेश से सर्वभाग का आश्रय करके उस गृहीत नारक के समस्त शरीर से उद्वर्त्तना करता है ? या अपने सर्वदेश से उस गृहीत नारक पर्याय के एकदेश से निकलता है ? या अपने सर्वदेश से उस गृहीत नारक पर्याय के सर्वदेश से निकलता है ? इन प्रश्नो का उत्तर देते हुए प्रभु गौतम से कहते हैं कि हे गौतम ! (जहा उववज्जमाणे तहेव उव्वट्टमाणे वि दंडगो भाणियव्वो) जैसा उत्पद्यमान में दण्डक कहा है वैसा ही यहां उद्वर्त्तमान में भी दण्डक कह लेना चाहिये-अर्थात् जिस प्रकार से उत्पत्तिविषय में दण्डक कहा गया है उसी प्रकार से उद्वर्त्तना के विषय में भी दण्डक का वर्णन कर लेना चाहिये। वह इस प्रकार से है-"न देशेन देशं उद्वर्तते न वा देशेन सर्वमुद्वर्तते, न

ઉદ્વર્તના કરે છે ?-એટલે કે તે ગૃહીત નારક શરીરના એક ભાગથી નીકળીને ઉત્પત્તિસ્થાનના એકદેશને આશ્રિત કરીને નીકળે છે ? એવો પ્રશ્ન છે. બાકીના ત્રણ પ્રશ્નો પહેલા બતાવ્યા પ્રમાણે જ સમજી લેવા જેમકે-શું તે નારક જીવ પોતાના એકદેશથી નીકળીને ઉત્પત્તિસ્થાનના સમસ્ત દેશને આશ્રિત કરીને ઉદ્વર્તના કરે છે ? કે પોતાના સર્વદેશથી નીકળીને ઉત્પત્તિસ્થાનના એકદેશને આશ્રિત કરીને નીકળે છે ? કે પોતાના સર્વદેશથી નીકળીને ઉત્પત્તિસ્થાનના સર્વદેશને આશ્રિત કરીને નીકળે છે ?

આ પ્રશ્નોના ઉત્તર મહાવીર પ્રભુ આ પ્રમાણે આપે છે—

હે ગૌતમ ! "जहा उववज्जमाणे तहेव उव्वट्टमाणे वि दंडगो भाणियव्वो" જે પ્રમાણે ઉત્પત્તિના વિષયમા દંડક કહેલ છે એજ પ્રમાણે ઉદ્વર્તનાના દંડકોનું પણ વર્ણન કરવું. જેમ કે-"न [illegible] उद्वर्तते, न वा देशेन सर्वमुद्वर्तते,

करणीय । अथोत्पन्नविषय आह- नेरइए णं भंते नेरइएसु उववण्णे' नैरयिक खलु भदन्त ! नैरयिकेषु उपपन्न 'किं देसेण देसं उववन्ने' किं देशेन देशमुपपन्नः, हे भदन्त ! नैरयिकेषु जीव देशेनावयवेन देशमवयवत उपपन्नो भवति१, देशेनावयवेन सर्व सर्वतया उपपन्नो भवति २, सर्वेण देशमुपपन्नो भवति ३, सर्वेण सर्व वा उपपन्नो भवतीति४ । चत्वारो विकल्पा प्रश्नरूपाः। भगवानाह-'एसो वि' इत्यादि । 'एसो वि तहेव' एषोऽपि उपपन्नो-तथैव, यथा उपपद्यमाना-द्वर्त्तमान सूत्रे चतुर्थो भङ्ग स्वीकृतस्तथेहापि चतुर्थो भङ्ग स्वीकरणीयः, तदेवाह-' जाव सव्वेणं सव्वं उववण्णे ' यावत् सर्वेण सर्व उपपन्न एवमचतुर्थो भङ्गः स्वीकरणीय।

के निमित्त सूत्र कहते हैं-(नेरइएणं भंते ! नेरइएसु उववण्णे किं देसेणं देसं उववन्ने ?) हे भदन्त ! नैरयिकों में उत्पन्न नारक जीव क्या अपने एक भाग से नारक के एक भाग में उत्पन्न हुआ माना जाता है ? अथवा अपने एक भाग से सर्वभाग में उत्पन्न हुआ माना जाता है ? अथवा अपने सर्वभाग से नारक के एक भाग में उत्पन्न हुआ माना जाता है ? अथवा अपने सर्वभागों से सर्वभागों में उत्पन्न हुआ माना जाता है ? भगवान इस का उत्तर देते हुए कहते हैं कि (एसो वि तहेव जाव सव्वेणं सव्वं उववन्ने) यह, उत्पन्न पक्ष भी उत्पद्यमान पक्ष की तरह ही जानना चाहिये-अर्थात् जिस प्रकार से उवर्त्तना सूत्र में चौथा भंग स्वीकार किया गया है उसी प्रकार से यहां पर भी " आपने समस्त अवयवों से यह नारक के समस्त अवयवों रूप से उत्पन्न हुआ माना जाता है " यह चौथा भंग ही स्वीकार किया गया है । यही बात " जाव

હવે ઉત્પન્ન વિષયને પણ વિચાર કરવાને માટે સૂત્રકાર કહે છે—
" नेरइए णं भंते ! नेरइएसु उववण्णे किं देसेणं देसं उववन्ने ? " હે ભગવન્ ! નારકીમાં ઉત્પન્ન થયેલ નારક જીવ શું પોતાના એક ભાગથી નરકના એક ભાગમાં ઉત્પન્ન થયેલ મનાય છે ? કે પોતાના એક ભાગથી નરકના સર્વ ભાગમાં ઉત્પન્ન થયેલ મનાય છે ! કે પોતાના સર્વ ભાગોથી નારકના એક ભાગમાં ઉત્પન્ન થયેલ મનાય છે ? કે પોતાના સર્વભાગથી નરકના સર્વ ભાગોમાં ઉત્પન્ન થયેલ મનાય છે ? તેનો ઉત્તર ભગવાન આ પ્રમાણે આપે છે " एसो वि तहेव जाव सव्वेणं सव्वं उववन्ने" ઉત્પન્ન પક્ષના વિષયમાં પણ ઉત્પદ્યમાન પ્રમાણે જ સમજવું જોઈએ કે જેવી રીતે ઉત્પદ્યમાન સૂત્રમાં ચોથા ભાંગાનો સ્વીકાર કર્યો છે એવી જ રીતે ઉત્પન્ન સૂત્રમાં પણ " તે પોતાના તમામ અવયવોથી નારકના તમામ અવયવો રૂપે ઉત્પન્ન થયેલ મનાય છે ' આ ચોથા ... સ્વીકાર

प्रश्नप्रकरणे चत्वारो भंगा ज्ञातव्याः । भगवानाह—' तहेवे '-त्यादि । ' तहेव जाव सव्वेणं वा देसं आहारेइ सव्वेणं वा सव्वं आहारेइ ' तथैव यावत् सर्वेण वा देशमाहरति सर्वेण वा सर्वमाहरति, अयं भावः-नैरयिकेभ्य उद्वर्तमानो जीवो न देशेन देशमाहरति नवा देशेन सर्वमाहरति किन्तु सर्वेण देशमाहरति सर्वेण वा सर्वमाहरति, इति तृतीयचतुर्थभङ्गौ ग्राह्यौ । ' एवं जाव वेमाणिए ' एवं यावत् वैमानिकः, यथा नैरयिकजीवानां नरकेभ्य उद्वर्तनासमये आहारविषये विचारः कृतः तथैव यावदिति असुरकुमारादारभ्य वैमानिकपर्यन्तविषयेऽपि विचारः

आहार करने योग्य द्रव्य के सर्वदेश का आहार करता है ? ऐसे ये चार प्रश्न हैं । इसका उत्तर देते हुए प्रभु गौतम को समझाते हैं कि-(तहेव जाव सव्वेणं वा देसं आहारेइ, सव्वेणं वा सव्वं आहारेइ, एवं जाव वेमाणिए) हे गौतम ! वह अपने एकदेश से आहार करने योग्य द्रव्य के एकदेश का आहार नहीं करता है, और न अपने एकदेश से वह आहार करने योग्य द्रव्य के सर्वदेश का ही आहार करता है, किन्तु सर्वदेश से आहार करने योग्य द्रव्य के एकदेश का आहार करता और अपने सर्वदेश से आहार करने योग्य द्रव्य के सर्वदेश का भी आहार करता है । इस तरह यहां पर तृतीय और चतुर्थ विकल्प स्वीकृत किये गये हैं । यावत् वैमानिक देवों में भी इसी तरह से जानना चाहिये । तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार से नैरयिक जीवों के, नरकों से उद्वर्तना के समय में आहार के विषय में विचार किया गया है उसी तरह से असुरकुमार से लगाकर वैमानिक तक के देवों के विषय में भी ऐसा ही विचार कर लेना चाहिये । अब सूत्रकार उत्पन्न विषय में विचार

કરવા લાયક દ્રવ્યના એકદેશનો આહાર કરે છે ? કે પોતાના તમામ અવયવોથી આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના સર્વદેશનો આહાર કરે છે ? આ પ્રમાણે ચાર પ્રશ્નો છે.

ઉત્તર—" तहेव जाव सव्वेणं वा देसं आहारेइ, सव्वेणं वा सव्वं आहारेइ एव जाव वेमाणिए " હે ગૌતમ ! તે જીવ પોતાના એકદેશથી આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના એકદેશનો આહાર કરતો નથી, તેમજ એકદેશથી આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના સમસ્ત દેશનો પણ આહાર કરતો નથી, પણ સર્વદેશથી આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના એકદેશનો આહાર કરે છે, અને સર્વદેશથી આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના સર્વદેશનો પણ આહાર કરે છે આ રીતે અહીં પણ ત્રીજા અને ચોથા ભાંગાને સ્વીકારવામા આવેલ છે વૈમાનિક દેવો સુધીના વિષયમા પણ આ પ્રમાણે જ સમજવું તાત્પર્ય એ છે કે જે રીતે નારક જીવોના, નરકમાં ઉત્પત્તિ સમયમા આહારના વિષયમાં વિચાર કરવામાં આવ્યો છે, એજ પ્રમાણે અહીં પણ ઉત્તરસૂત્ર સમજી લેવું. એવી જ રીતે અસુરકુમારોથી માંડીને વૈમાનિક સુધીના દેવોના વિષયમા પણ વિચાર કરવો જોઇએ.

सर्वमाहरति, इत्येवरूपेण आहारविषयेऽपि पूर्वोक्तैव परिपाटी ज्ञातव्या तदेवाह- 'एएणं अभिलावेणं उववन्ने वि उव्वट्टणे वि नेयव्वं' एतेनाहारविषयकेनाभिलापेनोपपन्नेऽपि उद्वर्त्तनेऽपि ज्ञातव्यम्। यथोपपद्यमाने उद्वर्त्तमानेऽपि आहारविषयक आलापकः कृतस्तथोपपन्ने उद्वर्त्तनेऽपि आहारालापकः करणीय इति भावः।

उपपन्नसूत्रे तदालापकश्चैत्थम्—

"नेरइए णं भंते नेरइएसु उववन्ने किं देसेणं देसं उववन्ने, देसेणं सव्वं उववन्ने सव्वेणं देसं उववन्ने सव्वेणं सव्वं उववन्ने? गोयमा! नो देसेणं देसं उववन्ने नो देसेणं सव्वं उववन्ने, नो सव्वेणं देसं उववन्ने, सव्वेणं सव्वं उववन्ने।"

और अपने समस्त अवयवों से आहार करने योग्य द्रव्य का समस्त रूप में भी आहार करता है। इस रूप से पूर्वोक्त परिपाटी ही जाननी चाहिये। (एएणं अभिलावेणं उववन्ने वि उव्वट्टणे वि नेयव्वं, इस आहार विषयक अभिलाप से उपपन्न में और उद्वर्त्तन में भी ऐसा ही जानना चाहिये-अर्थात्-जैसा उपपद्यमान और उद्वर्त्तमान में भी आहारविषयक अभिलाप किया गया है वैसा ही उपपन्न और उद्वर्त्तन में आहारविषयक अभिलाप कर लेना चाहिये। आहारसूत्र में आहार विषयक आलाप इस प्रकार से है-"नेरइएणं भंते! नेरइएसु उववन्ने किं देसेणं देसं उववन्ने देसेणं सव्वं उववन्ने सव्वेणं देसं उववन्ने, सव्वेणं सव्वं उववन्ने? गोयमा! नो देसेणं देसं उववन्ने, नो देसेणं सव्वं उववन्ने, नो सव्वेणं देसं उववन्ने, सव्वेणं सव्वं उववन्ने" हे भदन्त! नारकों में उत्पन्न नारक जीव क्या अपने एकदेश से उस पर्याय के एकदेश में

આહાર કરે છે અને પોતાના તમામ પ્રદેશોથી આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના તમામ પ્રદેશોને પણ આહાર રૂપે ગ્રહણ કરે છે. આ પ્રમાણે પૂર્વોક્ત પરિપાટી જ અહીં સમજવી. "एएणं अभिलावेणं उववन्ने, वि उव्वट्टणे वि नेयव्वं" આ આહાર વિષયક આલાપકો ઉત્પન્ન અને ઉદ્વર્તનના વિષયમાં પણ એ જ પ્રમાણે સમજવા જોઈએ. જેવો ઉત્પદ્યમાન અને ઉદ્વર્તમાનમાં આહાર વિષયક બતાવ્યો છે, એવો જ ઉત્પન્ન અને ઉદ્વર્તનના વિષયમાં પણ આહાર વિષયક બતાવો જોઈએ. ઉત્પન્ન સૂત્રમાં ઉત્પન્ન વિષયક બતાવ્યો આ પ્રમાણે છે—

'नेरइए णं भंते! नेरइएसु उववन्ने, किं देसेणं देसं उववन्ने देसेणं सव्वं उववन्ने सव्वेणं देसं उववन्ने सव्वेणं सव्वं उववन्ने?" गोयमा! नो देसेणं देसं उववन्ने नो देसेणं सव्वं उववन्ने नो सव्वेणं देसं उववन्ने सव्वेणं सव्वं उववन्ने" હે ભગવન્! નરકોમાં ઉત્પન્ન નારક જીવ શું પોતાના અંશોથી તે પર્યાયના અંશોમાં ઉત્પન્ન થયો છે? કે પોતાના અંશોથી તે પર્યા-

'जहा उववज्जमाणे उव्वट्टमाणे चत्तारि दंडगा तहा उववन्नेणं उव्वट्टेण वि चत्तारि दंडगा भाणियव्वा ' यथा उपपद्यमाने उद्वर्तमाने च चत्वारो दण्डकाः, तथा उपपन्नेन उद्वृत्तेनापि चत्वारो दण्डकाः भणितव्याः, अयं भावः—यथा वर्त्तमानकालिकोत्पत्त्युद्वर्तनविषये चत्वारो दण्डका जाताः तथा भूतकालिकोपपत्त्युद्वर्तनविषयेपि चत्वारो दण्डकाः पठनीया एव, स्वीकृतभङ्गमाह—'सव्वेणं सव्वं उववन्ने सव्वेणं सव्वं उव्वट्टे' सर्वेण सर्वमुपपन्नः सर्वेण सर्वमुद्वृत्तः, 'सव्वेणं वा देसं आहारेइ सव्वेणं वा सव्वं आहारेइ' सर्वेण वा देशमाहरति, सर्वेण वा

सव्वेणं सव्वं उववण्णे " इस सूत्र द्वारा प्रकट की गई है। (जहा उववज्जमाणे, उव्वट्टमाणे य चत्तारि दंडगा, तहा उववन्नेणं उव्वट्टेण वि चत्तारि दंडगा भाणियव्वा) जिस प्रकार से वर्त्तमानकाल संबधी उत्पत्ति और उद्वर्त्तन के विषय में चार दण्डक हुए हैं, उसी तरह से भूतकालिक उत्पत्ति और उद्वर्तन के विषय में भी चार ही दण्डक कहना चाहिये। अब सूत्रकार इन्हीं स्वीकृत भंगों की परिगणना करते हैं कि—सव्वेणं सव्वं उववन्ने, सव्वेणं सव्वं उव्वट्टे, सव्वेणं वा देसं आहारेइ, सव्वेणं सव्वं आहारेइ) जो नया नारक जीव नारकों में उत्पन्न होता है वह वहां अपने समस्त अवयवों से ही उस पर्याय के समस्त अवयवों के रूप में उत्पन्न होता है। इसी तरह से वह जो वहां से उद्वर्तित (निकलना) होता है सो अपने समस्त अवयवों से उस पर्याय के समस्त अवयवों में से उद्वर्त्तित होता है। तथा जो वह वहां आहार करता है सो सर्वदेश से आहार करने योग्य द्रव्य के एकदेशरूप में आहार करता है

કર્યો છે એજ વાત "जाव सव्वेणं सव्वं उववण्णे" સૂત્ર વડે દર્શાવી છે (जहा उववज्जमाणे, उववट्टमाणे य चत्तारि दंडगा, तहा उववन्नेणं, उव्वट्टेण वि चत्तारि दंडगा भाणियव्वा " જે રીતે ઉત્પત્તિ અને ઉદ્વર્તનાના વિષયમા વર્તમાનકાળ સબધી ચાર દંડકો થયા છે, એવી જ રીતે ભૂતકાલિક ઉત્પત્તિ અને ઉદ્વર્તનના વિષયમાં પણ ચાર દડક કહેવા જોઈએ હવે સૂત્રકાર એજ સ્વીકૃત ભાગાઓની ગણના કરે છે—"सव्वेणं सव्वं उववन्ने, सव्वेणं सव्व उव्वट्टे, सव्वेणं वा देसं आहारेइ, सव्वेणं सव्वं आहारेइ) જે નારક જીવ નારકોમા ઉત્પન્ન થાય છે તે ત્યા પોતાના તમામ અવયવોથી તે પર્યાયના તમામ અવયવો રૂપે ઉત્પન્ન થાય છે, એજ પ્રમાણે નારક જીવનું ત્યાથી જે નીકળવાનું થાય છે તે પણ તેના તમામ અવયવોથી નીકળીને ઉત્પત્તિસ્થાનના તમામ દેશને આશ્રિત કરીને થાય છે. તથા તે ત્યા પોતાના તમામ પ્રદેશોવડે આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના એકદેશનો

अथोत्पन्नस्याहारालापकमाह—

" नेरइएण भंते ! नेरइएसु उववन्ने किं देसेणं देस आहारेइ देसेण सव्वं आहारेइ, सव्वेणं देस आहारेइ, सव्वेणं सव्वं आहारेइ ? । गोयमा ! नो देसेणं देसं आहारेइ, नो देसेणं सव्वं आहारेइ, सव्वेणं देस आहारेइ, सव्वेणं सव्वं आहारेइ "।

अथोद्वृत्तस्याहारालापकमाह—

" नेरइए णं भंते ! नेरइएहिंतो उव्वट्टे किं देसेणं देस आहारेइ, देसेणं सव्वं आहारेइ, सव्वेणं देस आहारेइ, सव्वेण सव्वं आहारेइ ? गोयमा ! नो देसेणं देसं आहारेइ, नो देसेणं सव्व आहारेइ, सव्वेणं देस आहारेइ, सव्वेणं सव्व आहारेइ"

पर्याय के एक अंश से निकला है ऐसा माना जावेगा, या वह अपने समस्त अंशों से उस पर्याय के समस्त अंशों से निकला है ऐसा माना जावेगा ? प्रभु इसका उत्तर देते हुए कहते हैं कि हे गौतम ! वह नारक जीव नरकों से जो निकलता है सो अपने एक देश से उस पर्याय के एकदेश से नहीं निकलता है, और न वह अपने एकदेश से उस पर्याय के सर्वदेश से निकलता है, और न अपने सर्वदेश से उस पर्याय के एक देश से निकलता है, किन्तु अपने समस्त देश से ही उस पर्याय संबंधी समस्त अंशों से निकलता है ऐसा माना जावेगा।

उत्पन्न का आहार संबंधी आलापक इस प्रकार से है—

" नेरइएणं भंते ! नेरइएसु उववन्ने किं देसेणं देस आहारेइ, देसेणं सव्व आहारेइ, सव्वेणं देस आहारेइ, सव्वेणं सव्व आहारेइ ? " हे भदन्त ! नारकों में उत्पन्न हुआ नारक जीव क्या अपने एक भाग से द्वारा

દેશે નીકળેલો મનાશે, કે પોતાના તમામ દેશોથી તે પર્યાયના તમામ દેશરૂપે નીકળેલો મનાશે ? તેનો મહાવીર પ્રભુ આ પ્રમાણે ઉત્તર આપે છે–હે ગૌતમ ! તે નારક જીવ કે જે નરકોમાથી નીકળે છે તે પોતાના એકદેશથી તે પર્યાયના એકદેશ રૂપે નીકળતો નથી. તેમજ તે પોતાના એકદેશથી તે પર્યાયના સર્વદેશ રૂપે પણ નીકળતો નથી, વળી તે પોતાના સર્વદેશથી તે પર્યાયના એકદેશ રૂપે પણ નીકળતો નથી પણ પોતાના તમામ દેશથી તે પર્યાયના તમામ દેશ રૂપે જ નીકળે છે

ઉત્પન્નનો આહાર વિષયક આલાપ આ પ્રમાણે છે

ટીકાર્થ– 'नेरइएणं भंते ! नेरइएसु उववन्ने किं देसेण देस आहारेइ देसेणं सव्व आहारेइ, सव्वेणं देस आहारेइ सव्वेणं सव्वं आहारेइ ?" હે ભગવન્ ! નરકોમા ઉત્પન્ન થયેલ નારક જીવ શું પોતાના એક આત્મપ્રદેશ વડે આહાર કરવા

अथोद्वर्त्तनालापकमाह—

" नेरइए णं भंते! नेरइएहिंतो उव्वट्टे किं देसेणं देसं उव्वेट्टइ, देसेणं सव्वं उव्वट्टे, सव्वेणं देसं उव्वट्टे, सव्वेणं सव्वं उव्वट्टे? गोयमा! नो देसेणं देसं उव्वट्टे, नो देसेणं सव्वं उव्वट्टे, नो सव्वेणं देसं उव्वट्टे, सव्वेणं सव्वं उव्वट्टे।"

उत्पन्न हुआ माना जावेगा? या अपने एकदेश से उस पर्याय के समस्त देश में उत्पन्न हुआ माना जावेगा? या अपने समस्त अंशो से उस पर्याय के एकदेश में उत्पन्न हुआ माना जावेगा? या अपने समस्त अंशो से उस पर्याय के समस्त अंशों में-भागों में उत्पन्न हुआ माना जावेगा? प्रभु इस का उत्तर देते हुए कहते हैं कि हे गौतम! नारक जीवों में उत्पन्न हुआ नारक जीव वहां अपने समस्त अंशों से उस पर्याय के समस्त अंशों में उत्पन्न हुआ ही माना जावेगा।

उद्वर्तनालापक इस प्रकार से है—

" नेरइएणं भंते! नेरइएहिंतो उव्वट्टे किं देसेणं देसं उवट्टे, देसेणं, सव्वं उवट्टे, सव्वेणं देसं उवट्टे, सव्वेणं सव्वं उवट्टे? गोयमा! नो देसेणं देसं उव्वट्टे, नो देसेणं सव्वं उव्वट्टे नो सव्वेणं देसं उव्वट्टे, सव्वेणं सव्वं उव्वट्टे" हे भदन्त! नारकों से उद्वृत्त-निकला हुआ जीव क्या वहां से वह अपने एक अंश से उस पर्याय के एक अंश से निकला है ऐसा माना जावेगा या वह अपने एक अंश से उस पर्याय के समस्त अंशों से निकला है ऐसा माना जावेगा, या वह अपने समस्त अंशों से उस

યના તમામ દેશમા ઉત્પન્ન થયેલ મનાશે? કે પોતાના તમામ દેશથી તે પર્યાયના એકદેશમા ઉત્પન્ન થયેલ મનાશે? કે પોતાના તમામ દેશોથી તે પર્યાયના તમામ દેશોમા ઉત્પન્ન થયેલ મનાશે?

ઉત્તર—હે ગૌતમ! નારકોમા ઉત્પન્ન થયેલ નારક જીવ પોતાના તમામ દેશોથી તે પર્યાયના તમામ દેશોમા જ ઉત્પન્ન થયેલો મનાશે ઉદ્વર્ત્તના બાબતનો આલાવો આ પ્રમાણે છે—

" नेरइए ण भंते! नेरइएहिंतो उव्वट्टे किं देसेण देसं उव्वट्टइ, देसेणं सव्वं उव्वट्टे, सव्वेण देसं, उव्वट्टे, सव्वेणं सव्वं उव्वट्टे?" " गोयमा! नो देसेण देसं उव्वट्टे, नो देसेणं सव्व उव्वट्टे, नो सव्वेण देस उवट्टे, सव्वेण सव्वं उव्वट्टे" હે ભગવન્! નારકોમાથી ઉદ્વૃત્ત (નીકળેલા) જીવ શું ત્યાથી પોતાના એકદેશથી તે પર્યાયના એકદેશ રૂપે નીકળેલો મનાશે, કે પોતાના એકદેશથી તે પર્યાયના તમામ દેશ રૂપે નીકળેલો મનાશે, કે પોતાના તમામ દેશોથી તે પર્યાયના એક

नकालमाश्रित्य-उद्वर्त्यमानस्योद्वर्तनाविषयस्तृतीयसूत्रात्मकस्तृतीयो दण्डकः ३। उद्वर्त्यमानस्याहारविषयश्चतुर्थसूत्रात्मकश्चतुर्थो दण्डक ४। उद्वर्तनातूत्पन्नस्य स्यादिति भूतकालमाश्रित्योत्पन्नस्योत्पत्तिविषयकः पञ्चमसूत्रात्मकः पञ्चमो दण्डक ५। उत्पन्नः सआहारं करोतीति भूतकालमाश्रित्योत्पन्नस्याहारविषयक' षष्ठसूत्रात्मकः षष्ठो दण्डकः ६। उत्पन्नप्रतिपक्षत्वादुद्वृत्तस्योद्वर्तनाविषयकः सप्तमसूत्रात्मकः सप्तमो दण्डकः ७। उद्वृत्तः सआहारं करोतीत्युद्वृत्तस्याहारविषयकोऽष्टमसूत्रात्मकोऽष्टमो दण्डकः ८॥

अथ पूर्वोक्तैरष्टाभिरेव दण्डकैरर्थमर्वाच्यामुत्पादादिकमेवचिन्तयन्नाह— 'नेरइए णं भंते' इत्यादि। 'नेरइए णं भंते' नैरयिकः खलु भदन्त ! 'नेरएसु

प्राय से वर्तमानकाल को आश्रित करके उद्वर्त्यमान नारक जीव की उद्वर्तना को विषय करने वाला तृतीय सूत्रात्मक तीसरा दण्डक ३, उद्वर्त्यमान नारक के आहार को विषय करने वाला चतुर्थ सूत्रात्मक चौथा दण्डक ४,उद्वर्तना उत्पन्न नारक जीव की होती है इस ख्याल से भूतकाल को आश्रित करके उत्पन्न नारक जीव की उत्पत्ति को विषय करने वाला पञ्चम सूत्रात्मक पांचवां दण्डक५, उत्पन्न हुआ नारक जीव आहार करता है इस ख्याल से भूतकाल को आश्रित करके उत्पन्न हुए नारक के आहारको विषय करनेवाला षष्ठसूत्रात्मक छठा दण्डक६, उत्पन्नका प्रतिपक्ष उद्वृत्त और उद्वर्तना है इसलिये उद्वृत्त और उद्वर्तना विषयक सप्तम दण्डक कहा है। ७, उद्वृत्त होता हुआ नारक जीव आहार करता है इस ख्याल से उद्वृत्त का आहार विषयक अष्टमसूत्रात्मक ८ वां दण्डक है।

अथ सूत्रकार इन्हीं पूर्वोक्त आठ दण्डकों द्वारा इस बात का विचार

શબ્દ ઉદ્વર્તન છે તેથી વર્તમાનકાળની અપેક્ષાએ ઉદ્વર્ત્યમાન (નીકળતા) નારક જીવની ઉદ્વર્તના વિષેના ત્રીજા સૂત્ર રૂપે આપેલું ત્રીજુ દંડક, ઉદ્વર્તમાન નારકના આહાર વિષેનું ચોથા સૂત્ર રૂપ ચોથુ દંડક ઉદ્વર્તના ઉત્પન્ન થયેલ નારક જીવની જ થાય છે તેથી ભૂતકાળને અનુલક્ષીને ઉત્પન્ન થનાર નારક થયેલ જીવની ઉત્પત્તિ વિષયક પાંચમા સૂત્રમા આપેલું પાંચમુ દંડક ઉત્પન્ન થયેલો નારક જીવ આહાર કરે છે તેથી ભૂતકાળને અનુલક્ષીને ઉત્પન્ન થયેલ નારકના આહાર વિષેના છઠ્ઠા સૂત્રમાં બતાવેલુ છઠ્ઠુ દંડક ઉત્પન્નથી ઉલટો શબ્દ ઉદ્વૃત્ત અને ઉદ્વર્તના છે તે કારણે ઉદ્વૃત્ત અને ઉદ્વર્તના વિષયક સાતમુ દંડક કહ્યું છે અને ઉદ્વૃત્ત થતો નારક જીવ આહાર કરે છે તેને અનુલક્ષીને ઉદ્વૃત્તના આહાર વિષેના આઠમા સૂત્ર રૂપે આપેલું આઠમુ દંડક આ રીતે આઠ દંડકોનો વિચાર કરવામા આવ્યો છે.

હવે સૂત્રકાર એજ પૂર્વોક્ત આઠ દંડકો વડે એ વાતનો વિચાર કરે છે

अयं भावः—वर्त्तमानकालमाश्रित्य उत्पद्यमानस्योत्पत्तिविषयक एकसूत्रात्मक एको दण्डकः १, उत्पद्यमानस्याहारावश्यकतां भवेदिति उत्पद्यमानस्याहारविषयको द्वितीयसूत्रात्मको द्वितीयो दण्डकः २। उत्पादप्रतिपक्षमुद्वर्त्तनमिति वर्तमा-

आहार करने योग्य द्रव्य के एक भाग का आहार करता है? या अपने एक भाग के द्वारा आहार करने योग्य द्रव्य के सर्वभाग का आहार करता है? या अपने सर्वभाग द्वारा आहार करने योग्य द्रव्य के एक-भाग का आहार करता है? या अपने सर्वभागों द्वारा आहार करने योग्य द्रव्य के सर्वभागों का आहार करता है? हे गौतम! नारकों में उत्पन्न हुआ नारक जीव न अपने एकदेशरूप भाग से आहार करने योग्य द्रव्य के एक भाग का आहार करता है और न अपने एकदेशरूप भाग से आहार करने योग्य द्रव्य के सर्वभागों का ही आहार करता है किन्तु वह अपने सर्वदेशरूप भागों से, आहार करने योग्य द्रव्य के एक भाग का और सर्वभागों का भी आहार करता है।

इस कथन का यह भाव है—वर्तमानकाल को आश्रित करके उपजने वाले नारक जीव की उत्पत्ति को विषय करने वाला एक दण्डक१, वर्तमान में उत्पन्न हुए नारक जीव को आहार की आवश्यकता होती है इस ख्याल से उत्पद्यमान नारक के आहार को विषय करने वाला द्वितीय सूत्रात्मक दूसरा दण्डक२, उत्पादका प्रतिपक्षी उद्वर्तन होता है इस अभि-

યોગ્ય દ્રવ્યના એક દેશનો આહાર કરે છે? કે પોતાના એક આત્મપ્રદેશ વડે આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના તમામ ભાગનો આહાર કરે છે? કે પોતાના તમામ આત્મપ્રદેશો વડે આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના એક ભાગનો આહાર કરે છે? કે પોતાના તમામ આત્મપ્રદેશો વડે આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના તમામ દેશોનો આહાર કરે છે?

ઉત્તર—હે ગૌતમ! નારકોમાં ઉત્પન્ન થયેલો નારક જીવ પોતાના એક દેશ રૂપ ભાગથી આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના એક ભાગનો આહાર કરતો નથી. તેમજ તે પોતાના એકદેશ રૂપ ભાગ વડે આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના તમામ ભાગનો પણ આહાર કરતો નથી, પણ તે પોતાના સર્વદેશ રૂપ ભાગો વડે આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના એક ભાગનો આહાર કરે છે અને સર્વભાગનો પણ આહાર કરે છે

આ કથનનો સારાંશ આ પ્રમાણે છે—વર્તમાન કાળની અપેક્ષાએ ઉત્પદ્યમાન (ઉત્પન્ન થનાર) નારક જીવની ઉત્પત્તિ વિષેનું એક દંડક, વર્તમાન કાળમાં ઉત્પદ્યમાન નારક જીવને આહારની આવશ્યકતા રહે છે. તેથી ઉત્પદ્યમાન નારકના આહાર વિષેના બીજા સૂત્ર રૂપે આપેલું બીજું દંડક, ઉત્પાદથી ઉલટો

कथनीयाः। नवरं विशेषस्त्वयम्-' जहिं देसेणं देस उववज्जइ, तहिं अद्धेणं अद्धं उववज्जइत्ति भाणियव्वं ' यत्र देशेन देशमुपपद्यत तत्र अर्द्धेण अर्द्धमुपपद्यते इति भणितव्यम्। अयं भावः-देशघटितार्द्धघटितद्वये एतदेव वैलक्षण्यं यत् यत्र किं देशेन 'देशमुपपद्यते' इत्यादि कथितम् तत्र स्थले इह 'किम् अर्द्धेनार्धमुपपद्यते' इत्यादि वक्तव्यमित्येतावानेनयोरुभयोर्भेद इति ' एवं णाणत्तं ' एतन्नानात्वम्, एतद्=एतदेव अनुपदमुक्तमेव नानात्वम्=उभयोर्भेद इति। देशस्थाने अर्धं पद यित्वा भेदो रचनीय इति भाव । ' एए सव्वे वि ' एते सर्वेपि ' सोलस दंडगा

कि जिस प्रकार से पहिले देश के साथ उत्पाद आदिकों के आठ दण्डक कहे गये हैं, उसी तरह से अर्द्ध के साथ भी उत्पाद आदिकों के आठ दण्डक कह लेना चाहिये। (नवरं) विशेषता यह है कि-(जहिं देसेण दसं उववज्जइ, तहिं अद्धेणं अद्धं उववज्जइ, इति भाणियव्वं) जहां पर "क्या एकदेश से एकदेश को आश्रय करके उत्पन्न होता है?" ऐसा पाठ आता है वहां पर "क्या अर्धभाग से अर्धभाग को आश्रित करके उत्पन्न होता है" ऐसा पाठ लगा लेना चाहिये। तात्पर्य कहने का यह है कि देश संबंधी और अर्ध संबंधी ये जो दो प्रश्न हैं उनमें इतना ही भेद है कि जहा पर "क्या देश से देश को आश्रित कर के उत्पन्न होता है" ऐसा कहा गया है, वहां पर इस स्थलमें "क्या आधे भाग से आधे भाग को आश्रित करके उत्पन्न होता है" ऐसा पाठ कहना चाहिये। (एवं णाणत्तं) यही इन दोनों में विशेषता है। अर्थात् देश के स्थान में अर्ध पद जोड़ कर भेद कर लेना चाहिये। (एए सव्वे वि सोलस दंडगा

એટલે કે પહેલાં જેવી રીતે દેશની અપેક્ષાએ ઉત્પાદ વગેરેનાં આઠ દંડકો કહેવામાં આવ્યા છે, એવી જ રીતે અર્ધની અપેક્ષાએ પણ ઉત્પાદ વગેરેનાં આઠ દંડકો કહેવાં જોઈએ 'नवर" પણ તેમાં જે વિશેષતા છે તે આ પ્રમાણે છે "जहिं देसेणं देस उववज्जइ, तहिं अद्धेणं अद्ध उववज्जइ, इति भाणियव्वं " જ્યાં "એકદેશથી એકદેશનો આશ્રય લઈને ઉત્પન્ન થાય છે?' એવું કથન આવે છે ત્યાં " શું અર્ધભાગથી અર્ધભાગનો આશ્રય લઈને ઉત્પન્ન થાય છે?" એવું કથન કરવું જોઈએ. તાત્પર્ય એ છે કે દેશ સબંધી અને અર્દ્ધ સબંધી જે બે પ્રશ્નો છે તેમાં એટલો જ ભેદ છે કે જ્યાં દેશથી દેશનો આશ્રય લઈને ઉત્પન્ન થાય છે?" એવું કહ્યું છે ત્યાં શું અર્ધભાગથી અર્ધભાગનો આશ્રય લઈને ઉત્પન્ન થાય છે?' એટલો ફેરફાર કરવો જોઈએ 'एवं णाणत्तं" એ બન્નેમાં એજ વિશેષતા છે એટલે કે 'દેશ" ની જગ્યાએ 'અર્ધ" પદનો પ્રયોગ કરીને સૂત્ર બનાવવાં જોઈએ "एए सव्वे वि सोलस दंडगा

उववज्जमाणे ' नैरयिकेषूपपद्यमानः ' किं अद्धेणं अद्धं उववज्जइ ' किम् अर्द्धेनार्द्धम् उपपद्यते, ' अद्धेणं सव्वं उववज्जइ ' अर्द्धेण सर्वमुपपद्यते ' सव्वेणं अद्धं उववज्जइ ' सर्वेणार्द्धमुपपद्यते, ' सव्वेणं सव्वं उववज्जइ ' सर्वेण सर्वमुपपद्यते, हे भगवन् नरके उत्पद्यमानो नारकः किमर्द्धेण भागेनार्धभागमाश्रित्योत्पद्यते किं वा अर्द्धभागेन सर्वमाश्रित्योत्पद्यते, अथवा सर्वभागेनार्द्धभागमाश्रित्योत्पद्यते अथवा सर्वभागेन सर्वभागमाश्रित्योत्पद्यते इति प्रश्नः । भगवानाह–'जहापढमिल्लेण'मित्यादि । ' जहा पढमिल्लेणं अट्ठ दंडगा तहा अद्धेण वि अट्ठ दंडगा भावियव्वा ' यथा प्राथमिकेन देशरूपेणाष्ट दण्डकास्तथाऽर्द्धेनापि अष्टौ दण्डका भणितव्या', यथा पूर्वं देशेन सहोत्पादादीनामष्ट दण्डका उक्तास्तथाऽर्द्धेनापि सहोत्पादादीनामष्टदण्डकाः

करते हैं कि नैरयिकों में उपजता हुआ नारक जीव क्या अपने अर्ध- भाग से उत्पन्न होता है अथवा अपने सर्वभाग से उत्पन्न होता है– (नेरइए णं भंते !) हे भदन्त ! नारक जीव (नेरइएसु उववज्जमाणे) जो कि नैरयिकों में उपजनेवाला है (किं अद्धेणं अद्धं उववज्जइ, अद्धेणं सव्वं उववज्जइ) वह क्या अपने आधे भाग से आधे भाग को आश्रित करके उत्पन्न होता है ? या अपने आधे भाग से सर्वभाग को आश्रित करके उत्पन्न होता है ? (सव्वेणं अद्धं उववज्जइ, सव्वेणं सव्वं उववज्जइ) या अपने सर्वभागसे उत्पत्तिस्थानके आधे भागको आश्रित करके उत्पन्न होता है ? या अपने सर्वभाग से सर्वभागको आश्रित करके उत्पन्न होता है ? (जहा पढमिल्लेणं अट्ठ दंडगा तहा अद्धेण वि अट्ठ दंडगा भाणियव्वा) जैसे देशरूप प्रथम के साथ आठ दण्डक कहे गये हैं उसी तरह से अर्ध के साथ भी आठ दण्डक कहना चाहिये । तात्पर्य यह है

કે નૈરયિકોમાં ઉપજતો નારક જીવ શું પોતાના અર્ધભાગથી ઉત્પન્ન થાય છે, કે પોતાના સર્વ ભાગથી ઉત્પન્ન થાય છે ?

ટીકાર્થ—" नेरइए ण भंते ! नेरइएसु उववज्जमाणे" હે ભગવન્ ! નારક જીવોમાં ઉપજનારો નારક જીવ "किं अद्धेण अद्ध उववज्जइ अद्धेण सव्वं उववज्जइ ?" શું પોતાના અર્ધાભાગથી અર્ધભાગને આશ્રિત કરીને ઉત્પન્ન થાય છે ? કે પોતાના અર્ધભાગથી સર્વભાગને આશ્રિત કરીને ઉત્પન્ન થાય છે ? (सव्वेणं अद्ध उववज्जइ, सव्वेण सव्व उववज्जइ ? " કે પોતાના સર્વભાગોથી અર્ધભાગને આશ્રિત કરીને ઉત્પન્ન થાય છે ? કે પોતાના સર્વભાગથી સર્વભાગને આશ્રિત કરીને ઉત્પન્ન થાય છે ? " जहा पढमिल्लेणं अट्ठ दंडगा तहा अद्धेणं वि अट्ठ दडगा भाणियव्वा " હે ગૌતમ ! જેવી રીતે દેશરૂપ પ્રથમની સાથે આઠ દંડકો કહેવામાં આવ્યા છે એજ પ્રમાણે અર્ધની સાથે પણ આઠ દંડકો કહેવા જોઈએ.

किं अद्वेणं अद्धं आहारेइ, अद्वेण सव्वं आहारेइ, सव्वेण अद्धं आहारेइ, सव्वेणं सव्वं आहारेइ? गोयमा! नो अद्वेणं अद्धं आहारेइ, नो अद्वेणं सव्वं आहारेइ, सव्वेणं अद्धं आहारेइ, सव्वेणं सव्वं आहारेइ २। नेरइए णं भंते! नेरइएहिंतो

भागको आश्रित करके उत्पन्न होता है। नरकमें उत्पन्न हुए नारक जीवको आहारकी आवश्यकता होती है अतः गौतमस्वामी प्रभुसे इस विषयमें प्रश्न करते हुए पूछते हैं कि-(नेरइए णं भंते! नेरइएसु उववज्जमाणे अद्वेणं अद्धं आहारेइ, अद्वेणं सव्वं आहारेइ, सव्वेण अद्धं आहारेइ, सव्वेणं सव्वं आहारेइ) हे भदन्त! नारकियों में उत्पन्न हुआ नारकजीव क्या अपने आधे भागसे आधे भागको आश्रितकर आहार करता है? या अपने आधे भागसे सर्वभागको आश्रितकर आहार करता है? या अपने सर्वभाग से सर्वभाग को आश्रित कर आहार करता है? (गोयमा! नो अद्वेणं अद्धं आहारेइ, नो अद्वेणं सव्वं आहारेइ, सव्वेणं अद्धं आहारेइ, सव्वेणं सव्वं आहारेइ) हे गौतम! वह न अपने आधे भाग से आहरणीय द्रव्य के आधे भाग को आश्रितकर आहार करता है, न अपने आधे भाग से आहरणीय द्रव्य के सर्व भागों को आश्रितकर आहार करता है किन्तु अपने सर्वदेश से आहरणीय द्रव्य के आधे भाग को आश्रित करके आहार करता है और अपने सर्वदेश से आहरणीय द्रव्य के सर्वदेश को भी आश्रित करके आहार करता है। (नेरइएणं

જ ઉત્પન્ન થાય છે નરકમા ઉત્પન્ન થયેલા નારક જીવને આહારની આવશ્યકતા રહે છે-તેથી ગૌતમસ્વામી મહાવીર પ્રભુને આહાર સબંધી પ્રશ્નો પૂછે છે- "નેરइए णं भंते! नेरइएसु उववज्जमाणे अद्वेणं अद्धं आहारेइ, अद्वेणं सव्वं आहारेइ सव्वेण अद्धं आहारेइ सव्वेणं सव्वं आहारेइ?" હે ભગવન્! નારકોમાં ઉત્પન્ન થયેલા નારક જીવ શું પોતાના અર્ધાભાગથી આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના અર્ધા ભાગનો આહાર કરે છે? કે પોતાના અર્ધાભાગથી આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના સર્વભાગનો આહાર કરે છે? કે પોતાના સર્વભાગથી અર્ધાભાગનો આહાર ગ્રહણ કરે છે? કે પોતાના સર્વભાગોથી આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના સર્વભાગોનો આહાર લે છે?

ઉત્તર- 'गोयमा! नो अद्वेण अद्धं आहारेइ, नो अद्वेण सव्वं आहारेइ, सव्वेणं अद्धं आहारेइ सव्वेण सव्वं आहारेइ' હે ગૌતમ! તે નારક જીવ પોતાના અર્ધભાગથી આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના અર્ધભાગનો આહાર કરતો નથી, તેમજ તે પોતાના અર્ધભાગથી આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના સર્વભાગનો પણ આહાર કરતો નથી. પણ તે પોતાના સર્વદેશથી આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના અર્ધભાગનો આહાર કરે છે તથા પોતાના સર્વદેશથી આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના સર્વભાગનો આહાર પણ કરે છે

भाणियव्वा ' षोडश दण्डका भणितव्याः, देशघटितोत्पादे चत्वारो दण्डकास्तथा देशघटिते आहारे चत्वारो दण्डकाः, संकलनया अष्टौ दण्डकाः, एवमर्द्धघटितोत्पादे चत्वारो दण्डकास्तथार्द्धघटिते आहारेऽपि चत्वारो दण्डकाः, इति अर्द्धघटितेऽष्टौ दण्डकाः, सर्वसंकलनया षोडश दण्डकाः भवन्तीति परमार्थः। अर्द्धसर्वयोरष्ट दण्डकाश्चेत्थम्-अत्र प्रथमदण्डकप्रश्नसूत्रं मूले एव कथितम्, उत्तरसूत्रं त्वेवम्-

"नो अद्धेणं अद्धं उववज्जइ, नो अद्धेणं सव्वं उववज्जइ, नो सव्वेणं अ उववज्जइ, सव्वेणं सव्वं उववज्जइ १। नेरइए णं भंते ! नेरइएसु उववज्जमाणे

भाणियव्वा) इस तरह ये सब मिल कर सोलह दंडक हो जाते हैं। तात्पर्य यह कि-जैसे देश संबंधी उत्पाद में चार दण्डक और देश संबंधी आहारमें चार दण्डक इस प्रकार ये ८ आठ दण्डक होते हैं उसी प्रकारसे अर्द्ध संबंधी उत्पादमें चार दण्डक और अर्द्ध संबंधी आहारमें चार दण्डक होते हैं। इस तरह देश संबधी ८ आठ दण्डक और अर्द्ध संबधी ८ आठदण्डक मिलकर सोलह दण्डक हो जाते हैं। अर्द्ध के और सर्व के आठ दण्डक इस प्रकार से हैं-इन में जो प्रथम दण्डक प्रश्नसूत्र है वह तो मूल में ही कह दिया गया है परन्तु जो उत्तर सूत्र है वह इस प्रकार से है-"नो अद्धेणं अद्धं उववज्जइ, नो अद्धेणं सव्वं उववज्जइ, नो सव्वेणं अद्धं उववज्जइ, सव्वेणं सव्वं उववज्जइ" हे गौतम ! नैरयिकों में उत्पन्न होने वाला नारकजीव अपने आधे भाग से आधे भाग को आश्रित करके उत्पन्न नहीं होता है, और न वह अपने सर्व भाग से आधे भाग को आश्रित करके ही उत्पन्न होता है, किन्तु अपने सर्व भाग से ही सर्व-

---

भाणियव्वा" આ રીતે તે બન્ને મળીને કુલ ૧૬ દંડક થાય છે એટલે કે જેમ ઉત્પાદમાં દેશસંબંધી ચાર દંડક અને આહારમાં દેશ સંબંધી ચાર દંડક થાય છે તેમ ઉત્પાદમાં અર્ધસંબંધી ચાર દંડક અને આહારમા અર્ધસંબંધી ચાર દંડક આ રીતે દેશ સંબંધી ૮ દંડક અને અર્ધસંબંધી ૮ દંડક મળીને કુલ ૧૬ દંડક થાય છે, અર્દ્ધના અને સર્વના આઠ દંડક નીચે પ્રમાણે છે તેમાનું પ્રથમ દંડક પ્રશ્નસૂત્ર તો મૂળસૂત્રમાં જ કહી દીધુ છે પણ જે ઉત્તરસૂત્ર છે તે આ પ્રમાણે છે-"नो अद्धेणं अद्धं उववज्जइ, नो अद्धेणं सव्वं उववज्जइ, नो सव्वेण अद्धं उववज्जइ, सव्वेणं सव्वं उववज्जइ" હે ગૌતમ નૈરયિકોમાં ઉત્પન્ન થનારો નારક જીવ પોતાના અર્ધભાગથી અર્ધભાગને આશ્રિત કરીને ઉત્પન્ન થતો નથી વળી તે પોતાના અર્ધભાગથી સર્વભાગને આશ્રિત કરીને પણ ઉત્પન્ન થતો નથી, તેમજ તે પોતાના સર્વભાગથી અર્ધભાગને આશ્રિત કરીને ઉત્પન્ન થતો નથી પણ તે પોતાના સર્વભાગથી સર્વભાગને આશ્રિત કરીને

सव्व आहारेइ ?, गोयमा ! नो अद्धेणं अद्ध आहारेइ, नो अद्धेणं सव्वं आहारेइ, सव्वेणं वा अद्धं आहारेइ, सव्वेणं वा सव्व आहारइ ४ । इत्यादि । एवं वर्तमानकालिकचतुर्दण्डकवद् भूतकालिके उपपन्नोत्पत्तिविषये १, उपपन्नाहारविषये २,

भदन्त ! नैरयिकों में से उद्वर्तित हुआ नारकजीव क्या अपने आधेभाग से आहरणीय द्रव्यके आधेभाग को आश्रित कर आहार करता है ? या अपने आधे भागसे आहार करनेयोग्य द्रव्यके सर्वभागको आश्रित कर आहार करता है ? या अपने सर्वभाग से आहरणीय द्रव्य के एकभाग को आश्रित कर आहार करता है ? या अपने सर्वभाग से आहरणीय द्रव्य के सर्वभाग को आश्रित कर आहार करता है ? (गोयमा ! नो अद्धेण अद्ध आहारेइ, नो अद्धेणं सव्वं आहारेइ, सव्वेणं वा अद्धं आहारेइ, सव्वेण वा सव्वं आहारेइ) हे गौतम ! वह न अपने आधेभाग से आहरणीय द्रव्य के आधेभाग को आश्रित कर उसका आहार करता है और न अपने आधेभाग से आहरणीय द्रव्य के समस्त भाग को आश्रित कर उसका आहार करता है । किन्तु अपने समस्त भाग से आहरणीय द्रव्य के आधेभाग को आश्रित कर आहार करता है और अपने समस्त भागों से आहरणीय द्रव्य के समस्त भागों को भी आश्रित कर उनका आहार करता है, इस तरह से ये वर्तमान काल को लेकर चार दंडक कहे इसी तरह से भूतकाल को लेकर भी चार दंडक उपपन्न की उपपत्ति, उपपन्न के आहार उद्वृत्तके उद्वर्तन और उद्वृत्त के

वन् ! नरकमांथी ઉદ્વર્તિત થતો નારક જીવ શું પોતાના અર્ધભાગથી આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના અર્ધભાગનો આહાર કરે છે ? કે પોતાના અર્ધભાગથી આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના સર્વભાગનો આહાર કરે છે ? કે પોતાના સર્વભાગથી આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના અર્ધભાગનો આહાર કરે છે ? કે પોતાના સર્વભાગરૂપ પ્રદેશોથી આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના સર્વભાગનો આહાર કરે છે ?

ઉત્તર— "गोयमा ! नो अद्धेण अद्ध आहारेइ नो अद्धेणं सव्वं आहारेइ, सव्वेण वा अद्धं आहारेइ सव्वेणं वा सव्वं आहारेइ" હે ગૌતમ ! તે પોતાના અર્ધભાગથી આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના અર્ધભાગનો આહાર કરતો નથી તેમજ તે પોતાના અર્ધભાગથી આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના સર્વભાગનો પણ આહાર કરતો નથી. પણ પોતાના સર્વભાગથી આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના અર્ધભાગનો આહાર કરે છે તથા પોતાના સર્વ ભાગથી આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના સર્વભાગનો પણ આહાર કરે છે આ રીતે વર્તમાનકાળની અપેક્ષાએ ચાર દંડક કહેવામાં આવ્યા એજ પ્રમાણે ભૂતકાળની અપેક્ષાએ પણ ઉપપન્નની ઉત્પત્તિ, ઉપપન્નનો આહાર

उव्वट्टमाणे किं अद्धेणं अद्धं उव्वट्टइ, अद्धेणं सव्वं उव्वट्टइ, सव्वेणं अद्धं उव्वट्टइ, सव्वेणं सव्वं उव्वट्टइ? गोयमा! नो अद्धेणं अद्धं उव्वट्टइ, नो अद्धेणं सव्वं उव्वट्टइ, नो सव्वेणं अद्धं उव्वट्टइ, सव्वेणं वा सव्वं उव्वट्टइ ३। नेरइएणं भंते! नेरइएहिंतो उव्वट्टमाणे किं अद्धेणं अद्धं आहारेइ, अद्धेणं सव्वं आहारेइ, सव्वेणं अद्धं आहारेइ, सव्वेणं

भंते! नेरइएहिंतो उव्वट्टमाणे किं अद्धेणं अद्धं उव्वट्टइ, अद्धेणं सव्वं उव्वट्टइ, सव्वेणं अद्धं उव्वट्टइ, सव्वेणं सव्वं उव्वट्टइ?) हे भदन्त! नैरयिकोंसे वर्तमानकालमें उद्वृत्त (निकलाहुवा)हुआ नारकजीव क्याअपने आधे भागसे आधे भागको आश्रित करके उद्वत्त होता है? या अपने आधे भागसे सर्वभागको आश्रित करके उद्वत्त होता है? या सर्वभागसे आधे भागको आश्रित करके उद्वत्त होता है? या अपने सर्वभागसे सर्वभागको आश्रित करके उद्वत्त होता है? (गोयमा! नो अद्धेणअद्धं उव्वट्टइ, नो अद्धेणं सव्वं उव्वट्टइ, नो सव्वेणं अद्धं उव्वट्टइ, सव्वेणं सव्वं उव्वट्टइ) हे गौतम! न वह अपने आधे भागसे आधे भागको आश्रितकर उद्वत्त होता है, न अपने आधेभागसे सर्वभागको आश्रितकर उद्वृत्त होता है, और न अपने सर्वभागसे आधेभागको ही आश्रितकर उद्वर्तित होता है किन्तु अपने सर्वभागसे ही सर्वभाग को आश्रित कर उद्वर्तित होता है। (नेरइए णं भंते! नेरइएहिंतो उव्वट्टमाणे किं अद्धेणं अद्धं आहारेइ, अद्धेणं सव्वं आहारेइ, सव्वेणं अद्धं आहारेइ, सव्वेणं सव्वं आहारेइ?) हे

પ્રશ્ન—"नेरइए णं भंते! नेरइएहिंतो उव्वट्टमाणे किं अद्धेणं अद्धं उव्वट्टइ, अद्धेणं सव्वं उव्वट्टइ, सव्वेणं अद्धं उव्वट्टइ, सव्वेणं सव्वं उव्वट्टइ?" હે ભગવાન્! નૈરયિકોમાંથી વર્તમાનકાળે ઉદ્‌વૃત્ત થયેલો નારક જીવ શું પોતાના અર્ધભાગથી અર્ધભાગને આશ્રિત કરીને ઉદ્‌વૃત્ત થાય છે? કે પોતાના અર્ધભાગથી સર્વભાગને આશ્રિત કરીને ઉદ્‌વૃત્ત થાય છે? કે પોતાના સર્વભાગથી અર્ધભાગને આશ્રિત કરીને ઉદ્‌વૃત્ત થાય છે? કે પોતાના સર્વભાગથી સર્વભાગને આશ્રિત કરીને ઉદ્‌વૃત્ત થાય છે?

ઉત્તર—"गोयमा! नो अद्धेणं अद्धं उव्वट्टइ, नो अद्धेणं सव्वं उव्वट्टइ, नो सव्वेणं अद्धं उव्वट्टइ सव्वेणं सव्वं उव्वट्टइ" હે ગૌતમ! તે પોતાના અર્ધભાગથી અર્ધભાગને આશ્રિત કરીને પણ ઉદ્‌વૃત્ત થતો નથી તેમજ અર્ધભાગથી સર્વભાગને આશ્રિત કરીને ઉદ્‌વૃત્ત થતો નથી, તથા સર્વભાગથી અર્ધભાગને આશ્રિત કરીને પણ ઉદ્‌વૃત્ત થતો નથી પણ સર્વભાગથી સર્વભાગને આશ્રિત કરીને જ ઉદ્‌વૃત્ત થાય છે

પ્રશ્ન—"नेरइए णं भंते! नेरइएहिंतो उव्वट्टमाणे किं अद्धेणं अद्धं आहारेइ, अद्धेणं सव्वं आहारेइ, सव्वेणं अद्धं आहारेइ, सव्वेणं सव्वं आहारेइ? હે ભગ.

णं भते ! किं विग्गहगइसमन्नगा अविग्गहगइसमावन्नगा, गोयमा! विग्गहगइसमावन्नगा वि अविग्गहगइसमावन्नगा वि, नेरइयाण भते! किं विग्गहगइसमावन्नया, अविग्गहगइसमा वन्नया, गोयमा! सव्वे वि ताव होज्जा अविग्गहगइसमाव न्नगा १ अहवा अविग्गहगइसमावन्नगा य, विग्गहगइ समावन्नगे य२, अहवा अविग्गहगइसमावन्नगा य, विग्गह गइसमावन्नगा य ३, एव जीव एगिंदियवज्जो तियभगो॥२॥

छाया—जीवो भदन्त! किं विग्रहगतिसमापन्नकः अविग्रहगतिसमापन्नकः गौतम ! स्याद् विग्रहगतिसमापन्नकः स्यादविग्रहगतिसमापन्नक एवं यावत् वैमानिकः। जीवा भदन्त ! किं विग्रहगतिसमापन्नकाः अविग्रहगतिसमापन्नकाः गौतम ! विग्रहगतिसमापन्नका अपि अविग्रहगतिसमापन्नका अपि । नैरयिकाः भदन्त ! किं विग्रहगतिसमापन्नका अविग्रहगतिसमापन्नका ? गौतम ! सर्वेपि तावत् भवेयुरविग्रहगतिसमापन्नका १, अथवा अविग्रहगतिसमापन्नका विग्रह गतिसमापन्नकाश्च २, अथवा अविग्रहगतिसमापन्नकाश्च विग्रहगतिसमापन्नकाश्च ३। एवं जीवैकेन्द्रियवर्जं त्रिभङ्गः ॥ सू०२ ॥

टीका—'जीवे ण भंते' जीवः खलु भदन्त ! 'किं विग्गहगइ समावण्णए' किं विग्रहगतिसमापन्नकः, 'अविग्गहगइसमावण्णए' अविग्रहगतिसमापन्नकः,

विग्रहगति देवच्यवन

पहिले उत्पत्ति और उद्वर्तना जो कही गई हैं, सो ये प्राय गति पूर्विका होती (गतिको लेकर ही) है अतः अब सूत्रकार गतिप्रश्नों को कहते हैं—' जीवेण भंते ! " इत्यादि ।

टीकार्थ-(जीवेण भंते ? किं विग्गहगइसमावण्णए, अविग्गहगइसमाव ण्णए) हे भदन्त! जीव क्या विग्रहगतिसमापन्नक (विग्रहगतिवाला) है कि

વિગ્રહગતિ અને દેવચ્યવન

પહેલાં જે ઉત્પત્તિ અને ઉદ્વર્તનનું નિરૂપણ કર્યું તે ઉત્પત્તિ અને ઉદ્ વર્તન સામાન્ય રીતે ગતિપૂર્વક હોય છે તેથી હવે સૂત્રકાર ગતિસૂત્રોનું કથન કરે છે- ' जीवेण भंते " ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ-(जीवेणं भंते ! किं विग्गहगइसमावण्णए, अविग्गहगइ समावण्णए ?) હે ભગવન્ ! જીવ શું વિગ્રહગતિ વાળો હોય છે કે અવિગ્રહગતિ વાળો હોય છે ?

उद्वृत्तोद्वर्त्तनविषये ३, उद्वृत्ताहारविषये ४ चेति चत्वार आलापकाः पठनीयाः, वर्त्तमानकालिकवदेवात्रापि—आहारविषयेऽन्तिमौ द्वौ भङ्गौ स्वीकृततया पठनीयौ। इति परमार्थः। ननु देशस्यार्द्धस्य च को विशेषः, नहि देशार्धयोः किञ्चिद्वैलक्षण्यमनुभूयते, य एव देशस्तदेवार्धम् ?, इति चेदाह—देश—एकद्वित्रिभागादिरनेकप्रकारकः, अर्द्धं तु एकप्रकारकमेव, अतो देशार्द्धयोर्वैलक्षण्यान्नात्र पौनरुक्त्यम् ॥सू०१॥

विग्रहगतिदेवच्यवनप्रकरणम्—

पूर्वमुत्पत्तिरुद्वर्त्तना च कथिता, सा च प्रायो गतिपूर्विका भवतीति गति सूत्राणि प्राह—"जीवेणं भंते" इत्यादि।

मूलम्—जीवे णं भंते! किं विग्गहगइसमावण्णए, अविग्गहगइसमावण्णए, गोयमा! सिय विग्गहगइसमावन्नगे, सिय अविग्गहगइसमावन्नगे, एवं जाव वेमाणिए। जीवा

आहार के विषयमें भी लगा लेना चाहिये। वर्तमान कालकी तरह यहां पर भी आहारके विषयमें अंतिम दो भंग ही स्वीकृत माने गये हैं।

शंका—देश और अर्द्ध में क्या अन्तर है ? हमें तो इन दोनों में कोई अन्तर प्रतीत नहीं होता है, क्यों कि जो देश है वही अर्ध है।

उत्तर—एक, दो, तीन भाग आदि रूप से देश अनेक प्रकार का होता है, और अर्द्ध जो होता है वह एक प्रकार का ही होता है अतः देश और अर्द्ध में भिन्नता होने के कारण यहां इन दोनों के कथन में पुनरुक्ति दोष नहीं आता है॥ सू. १॥

ઉદ્‌વૃત્તનું ઉદ્વર્તન અને ઉદ્‌વૃત્તના આહારના વિષયમા પણ ચાર દડક કહેવા જોઇએ વર્તમાનકાળની જેમ જ અહીં પણ આહારના વિષયમાં છેલ્લા બે ભાંગાને જ સ્વીકાર થયેલો છે એ ઉત્તર સૂત્રોમા બતાવવુ જોઇએ

શંકા—દેશ અને અર્ધમાં શો ભેદ છે ? અમને તો તે બનેમા કોઇ તફાવત લાગતો નથી કારણ કેજે દેશ છે તેજ અર્ધ છે અને જે અર્ધ છે તેજ દેશ છે

ઉત્તર—તમારી વાત બરાબર નથી કારણ કે એક, બે, ત્રણ, વગેરે ભાગ રૂપે દેશ અનેક પ્રકારનો હોય છે પણ અર્ધભાગ તો એક જ પ્રકારનો હોય છે આ રીતે દેશ અને અર્ધમાં ભિન્નતા હોવાથી અહીં તે બનેના કથન જુદા જુદા કહેલ છે ॥ સૂ ૧ ॥

स्थित इत्येवार्थः, अविग्रहगतीत्यत्र विग्रहगतेरभावमात्रस्याभयणात्। यदि अवि- ग्रहगतिसमापन्नक इत्यत्र ऋजुगतिक इत्येवार्थ उच्येत तदा नारकादिपदेषु सर्व दैवाविग्रहगतिकानां यद् बहुत्वं कथयिष्यति तत्सर्वं चैव बाधितं भवेदिति, एका- दीनामपि तेषु नारकादिपदेषूत्पादभवणात्। भगवानाह—' गोयमे 'त्यादि।

स्थित ऐसा ही होता है, क्यों कि "अविग्रहगति" यहां पर विग्रहगति का अभाव मात्र ही लिया गया है। यदि "अविग्रहगतिसमापन्नक" का अर्थ ऋजुगतिवाला ऐसा ही लिया जावे और स्थित अर्थ न लिया जावे तो नारक आदि पदों में जो सर्वदा ही अविग्रहगति वालों की बहुता कही जाने वाली है वह सर्वथा ही बाधित हो जावेगी, क्यों कि उन नरकादि पदों में अविग्रहगमिसमापन्नक एक आदि जीवों का भी उत्पाद सुना जाता है। तात्पर्य कहने का यह है कि यदि अविग्रहगति समापन्नकका अर्थ केवल "ऋजुगतिवाला जीव" ऐसा ही माना जावेगा तो इसका अर्थ ऐसा होगा कि नारकों में ऋजुगतिवाले जीव बहुत होते हैं अर्थात् एक दो आदि जीव नहीं होते, सो इस तरह से यहां एक दो आदि अविग्रहगतिवाले जीवोंका उत्पन्न होना बनेगा नहीं, परन्तु ऐसी बात तो है नहीं, क्योंकि शास्त्रोंमें यहां एक दो आदि अविग्रहगतिवाले जीवोंका भी उत्पाद होना कहा गया है। इस लिये अविग्रहगतिसमा पन्नक का अर्थ सीधी गतिवाला तथा स्थित–गति बिना का–ऐसा अर्थ लेना चाहिये।

થાય છે કારણ કે "અવિગ્રહગતિ" માં વિગ્રહગતિનો અભાવ જ લીધો છે અને ' અવિગ્રહગતિવાળા " નો અર્થ " ઋજુગતિવાળો " જ લેવામા આવે અને " સ્થિત અર્થ લેવામા ન આવે તો નારક વગેરેમાં હમેશા અવિગ્રહ ગતિવાળા જીવોની જે બહુલતા કહેવાની છે તેમાં મોટી મુશ્કેલી ઉભી થશે. કારણ કે તે નારકાદિ પદોમાં અવિગ્રહગતિવાળા એક વગેરે જીવોનો ઉત્પાદ પણ થાય છે એવું સાંભળ્યુ છે તાત્પર્ય એ છે કે જો અવિગ્રહગતિવાળાનો અર્થ માત્ર ઋજુગતિવાળા જ લેવામાં આવે તો એવું માનવુ પડશે કે નારકોમાં ઋજુગતિવાળા જીવો પણ હોય છે–એટલે કે ત્યાં એક, બે વગેરે અવિગ્રહગતિ વાળા જીવો હોતા નથી એ રીતે તો ત્યા એક બે વિગેરે અવિગ્રહગતિવાળા જીવોની ઉત્પત્તિ જ સભવી શકે નહી પણ શાસ્ત્રોમાં તો ત્યાં એક, બે, વગેરે અવિગ્રહગતિવાળા જીવોનો પણ ઉત્પાદ થવાનુ કહ્યુ છે તેથી અવિગ્રહ- ગતિવાળાનો અર્થ "સીધીગતિવાળો તથા સ્થિત–ગતિવાળો" થવો જોઇએ.

विग्रहगतिसमापन्नक इत्यत्र विग्रहो वक्रता तत्प्रधाना गति विग्रहगतिः, तां समापन्नः=प्राप्त इति विग्रहगतिसमापन्नः । तद्भिन्नः अविग्रहगतिसमापन्नः, स तु ऋजुगतिकः, अथवा स्थितो वा भवेत् विग्रहगतिनिषेधमात्राश्रयणात् । तथा च यदा विग्रहगत्या गच्छन् जीवो विग्रहगतिसमापन्नक इति । विग्रहगत्यभाववांश्च जीव २ । अविग्रहगतिसमापन्नकः, अभावस्याधिकरणस्वरूपत्वमितिनये विग्रहगत्यभाववान् ऋजुगतिको जीव इत्यर्थः । अथवा अविग्रहगतिसमापन्नक इत्यस्य

अविग्रहगतिसमापन्नक है? विग्रह नाम वक्रता-तेढे का है। यह वक्रता तेढापन जिस गतिमें प्रधान होती है उस गति का नाम विग्रहगति है। इस गतिको जो जीव प्राप्त होता है वह विग्रहगतिसमापन्नक कहलाता है। जिस गतिमें तेढापन नहीं होता है वह अविग्रह गति है। ऐसी गति ऋजुगति होती है। इस ऋजुगतिको जो प्राप्त होता है वह अविग्रहगतिसमापन्नक कहलाता है। अथवा 'अविग्रहगति' में विग्रहगति मात्रके निषेध के आश्रयण से अविग्रहगति का अर्थ स्थित है। इस तरह अविग्रहगति समापन्नक का तात्पर्य स्थित ऐसा होता है। अतः विग्रहगतिसे परभव में जाता हुआ जीव विग्रहगतिसमापन्नक और विग्रहगति के अभाव-वाला जीव अविग्रहगतिसमापन्नक है। अभाव अधिकरण स्वरूपवाला होता है ऐसा एक नय है सो इस नय की मान्यतानुसार "विग्रहगति के अभाववाला जीव अर्थात् ऋजुगतिवाला जीव" ऐसा अविग्रहगतिसमापन्नकका अर्थ हो जाता है। अथवा अविग्रहगतिसमापन्नक इसका अर्थ

વિગ્રહ એટલે વળાંક તે વળાંકી જે ગતિમા મુખ્ય હોય છે તે ગતિને વિગ્રહ ગતિ કહે છે તે ગતિને પ્રાપ્ત કરનાર જીવને વિગ્રહગતિવાળો કહેવામાં આવે છે જે ગતિમા વળાંક હોતા નથી તે ગતિને અવિગ્રહગતિ કહે છે એવી ગતિને ઋજુગતિ કહે છે તે ઋજુગતિ વાળા જીવને અવિગ્રહગતિવાળો જીવ કહે છે અથવા "અવિગ્રહગતિ" મા વિગ્રહગતિમાત્રના નિષેધને કારણે અવિ-ગ્રહગતિનો અર્થ "સ્થિત" પણ થાય છે

આ રીતે અવિગ્રહગતિ વાળા જીવોનો ભાવાર્થ "સ્થિત" પણ થાય છે તેથી વિગ્રહગતિથી પરભવમાં જતા જીવને વિગ્રહગતિવાળો અને જેમનામાં વિગ્રહ ગતિનો અભાવ છે એવા જીવોને અવિગ્રહગતિવાળા કહેવામા આવે છે તેમજ અભાવ, અધિકરણ સ્વરૂપવાળો હોય છે, એવો એક નય છે તે નયની માન્યતા અનુસાર "વિગ્રહગતિના અભાવવાળો જીવ એટલે કે ઋજુગતિવાળો જીવ" અવિગ્રહગતિવાળો ગણાય છે અથવા અવિગ્રહગતિવાળો એનો અર્થ સ્થિત જ

अथानेक जीवविषये आह-'जीवा णं भंते इत्यादि, 'जीवा णं भंते' जीवा खलु भदन्त ! किं विग्गहगइसमावन्नगा' किं विग्रहगतिसमापन्नकाः, "अविग्गहगइसमावन्नगा' अविग्रहगतिसमापन्नकाः, इमे परिदृश्यमाना अनेकप्रकारका जीवाः किं विग्रहगतिसमापन्नका अविग्रहगतिसमापन्नका वा भवन्तीति प्रश्नः। भगवानाह-गोयमे '-त्यादि। 'गोयमा' हे गौतम ! 'विग्गहगइसमावन्नगा वि' विग्रहगतिसमापन्नका अपि 'अविग्गहगइसमावन्नगा वि' अविग्रहगतिसमापन्नका अपि उभयविधा अपि भवन्ति, जीवानामानन्त्यादुभयेपामपि बहूनां सद्भावात्। सम्प्रति नैरयिकविषयमाह-'नेरइया ण भंते' इत्यादि। 'नेरइया णं भते' नैरयिकाः खलु भदन्त ! किं विग्गहगइसमावन्नगा, अविग्गहगइसमावन्नगा' किं विग्रहगति समापन्नका अविग्रहगतिसमापन्नकाः, नारकजीवानां किं विग्रहगतिमत्त्वमविग्रहग

अब सूत्रकार इसी विषय को नाना जीवों की अपेक्षा लेकर प्रकट करनेके निमित्त प्रश्नोत्तरपूर्वक सूत्र कहते हैं कि—(जीवा णं भंते ! किं विग्गहगइसमावन्नगा अविग्गहगइसमावन्नगा) हे भदन्त ! जीव क्या विग्रहगतिसमापन्नक हैं कि अविग्रहगतिसमापन्नक हैं ? अर्थात् ये अनेक प्रकार के दिखलाई पड़ने वाले जो जीव हैं वे विग्रहगतिवाले होते हैं या अविग्रहगतिवाले होते हैं ? (गोयमा ! विग्गहगइसमावन्नगा वि, अविग्गहगइसमावन्नगा वि) हे गौतम ! ये विग्रहगतिसमापन्नक भी होते हैं और अविग्रहगतिसमापन्नक भी होते हैं। क्यों कि जीव राशि अनन्त है, अतः इनमें दोनों गतियाले अनेक जीवों का सद्भाव रहता है। (नेरइया ण भंते ! किं विग्गहगइसमावन्नगा, अविग्गहगइसमावन्नगा ?) हे भदन्त ! नारक जीव क्या विग्रहगति समापन्नक

હવે સૂત્રકાર એજ વિષયનુ અનેક જીવોની અપેક્ષાએ નિરૂપણ કરવા માટે પ્રશ્નોત્તર પૂર્વક સૂત્રો કહે છે—

(जीवा ण भंते ! किं विग्गहगइसमावन्नगा अविग्गहगइसमावन्नगा ?) હે ભગવન્ ! જીવો શુ વિગ્રહગતિવાળા હોય છે કે અવિગ્રહગતિવાળા હોય છે ? એટલે કે સંસારમા જે અનેક પ્રકારના જીવો નજરે પડે છે તેઓ શુ વિગ્રહગતિવાળા હોય છે કે અવિગ્રહગતિવાળા હોય છે ?

ઉત્તર—(गोयमा ! विग्गहगइसमावन्नगा वि, अविग्गहगइसमावन्नगा वि) હે ગૌતમ ! તેઓ વિગ્રહગતિવાળાં પણ હોય છે અને અવિગ્રહગતિવાળા પણ હોય છે કારણ કે જીવરાશિ અનંત હોવાથી તેમા બન્ને ગતિવાળા જીવોનો સદ્ભાવ રહે છે

પ્રશ્ન— नेरइया णं भंते ! किं विग्गहगइसमावन्नगा अविग्गहगइसमावन्नगा ?" હે ભગવન્ ! શુ નારક જીવો વિગ્રહગતિવાળા હોય છે, કે અવિગ્રહગતિવાળા હોય છે ?

'गोयमा' हे गौतम ! 'सिय विग्गहगइसमावन्नगे' स्यात् विग्रहगतिसमापन्नकः, 'सिय अविग्गहगइसमावन्नगे' स्यात् अविग्रहगतिसमापन्नकः योऽयं जीवः कदाचिद् ऋजुगतिमान् स्थितो वा भवति, नायं नियमो यत् सर्वथा विग्रहगतिमानेव अथवा सर्वथा अविग्रहगतिमानेवेति किन्तु कश्चिद्विग्रहगतिमान् कश्चिदविग्रह—गतिमान्, इति । 'एवं जाव वेमाणिए' एवं यावद्वैमानिकः, एवम् यथा जीव सामान्यविषये कदाचिद्विग्रहगतिमत्त्वं कदाचित् अविग्रहगतिमत्त्वं भगवता प्रदर्शितं तथैव नैरयिकादारभ्य वैमानिकपर्यन्तमुभयमपि बोध्यमिति भावः ।

"जीव क्या विग्रहगतिसमापन्नक है या अविग्रहगतिसमापन्नक" है? इस प्रश्नका उत्तर देते हुए भगवान कहते हैं कि-(गोयमा! सिय विग्गहगइसमावन्नगे सिय अविग्गहगइसमावन्नगे, एवं जाव वेमाणिए) हे गौतम ! कोई जीव विग्रहगतिसमापन्नक भी होता है और कोई जीव अविग्रहगति समापन्नक भी होता है। इस तरह यावत् वैमानिक तक जानना चाहिये। तात्पर्य यह-कि जो यह जीव कदाचित् वक्रगतिवाला होता है, कदाचित् ऋजुगतिवाला अथवा स्थित विना गतिका होता है—ऐसा नियम नहीं है कि जीव सर्वथा विग्रहगतिवाला ही हो, अथवा—सर्वथा अविग्रहगति वाला ही हो, किन्तु कोई जीव विग्रहगतिवाला होता है और कोई अविग्रहगतिवाला होता है। इस तरह सूत्रकार ने जैसे सामान्य जीव के विषय में कदाचित् विग्रहगतिमत्त्व और कदाचित् अविग्रहगतिमत्त्व दिखाया है वैसा ही नैरयिकसे लेकर वैमानिक देवों तकमें कदाचित् विग्रहगतिमत्त्व और कदाचित् अविग्रहगतिमत्त्व जानना चाहिये।

ગૌતમે પૂછેલો પ્રશ્ન-"શું જીવ વિગ્રહગતિવાળો છે કે અવિગ્રહગતિવાળો છે?"

ઉત્તર—(गोयमा ! सिय विग्गहगइसमावन्नगे सिय अविग्गहगइसमावन्नगे एवं जाव वेमाणिए) હે ગૌતમ ! કોઈ જીવ વિગ્રહગતિવાળો પણ હોય છે અને કોઈ જીવ અવિગ્રહગતિવાળો પણ હોય છે આ પ્રમાણેનું કથન નારકીથી માડીને વૈમાનિક દેવો સુધી સમજવુ તાત્પર્ય એ છે કે સસારી જીવ ક્યારેક વક્રગતિ-વાળો હોય છે, અને ક્યારેક ઋજુગતિવાળો પણ હોય છે અથવા વિના ગતિ વાળો (સ્થિત) પણ હોય છે એવો નિયમ નથી કે સસારી જીવ હમેશા વિગ્ર-હગતિવાળો જ હોય અથવા સર્વથા અવિગ્રહગતિવાળો જ હોય પરન્તુ કોઈ જીવ વિગ્રહગતિવાળો પણ હોય છે અને કોઇ જીવ અવિગ્રહગતિવાળો પણ હોય છે આ રીતે સૂત્રકારે જેમ સામાન્ય જીવના વિષયમાં ક્યારેક વિગ્રહગતિ પણ અને ક્યારેક અવિગ્રહગતિપણું પ્રકટ કર્યું છે એજ પ્રમાણે નારકોથી લઇને વૈમાનિકો સુધીના જીવોમા પણ ક્યારેક વિગ્રહગતિ ... ક્યારેક અવિગ્રહગતિપણુ સમજવું

विप्यप्येतद्विकल्पत्रय संयोजनीयमित्याशयेनाह—' एव ' मित्यादि, ' एव जीव एगिंदियवज्जो तियमगो ' एवं जी वैकेन्द्रियवर्जितस्त्रिमङ्ग , एव नारयवत् जीवै केन्द्रियवर्ज इति सामा यजीवविषयैकेन्द्रियविषयालापकवर्जित त्रिमङ्गो विज्ञेय, सामान्यजीवसूत्रे एकेन्द्रियसूत्रे चैते पूर्वोक्तास्त्रयो मङ्गा न कर्त्तव्या, शेषपु नैर यिकमारभ्यैकोनविंशतिदण्डकेषु मवो मङ्गा विज्ञेया इति भाव ॥ सू० २॥

अथ गत्यधिकारात् च्यवनसूत्रमाह—' देवे णं मंते ' इत्यादि ।

मूलम्—देवे ण भते! महिड्डिए महज्जुइए महब्बले महा जसे महासोक्खे महाणुभावे अविउक्कतिय चय चयमाणे किंचिकाल हिरिवत्तिय दुगुछावत्तिय परिसहवत्तिय आहार नो आहारेइ, अहेण आहारेइ आहारिज्जमाणे आहारिए परिणामि ज्जमाणे परिणामिए, पहीणे य आउए भवइ, जत्थ उववज्जइ त माउय पडिसवेदेइ, त जहा तिरिक्खजोणियाउय वा, मणुस्सा उय वा, हता गोयमा देवेण महड्डिए जाव मणुस्साउय वा॥३॥

जीव विग्रहगतिसमापन्नक होते हैं। यह तीसरा भङ्ग है ३। असुर आदि को में भी ये तीन विकल्प जोड़ लेना चाहिये, इस आशय से सूत्रकार कहते हैं कि–(एवं जीव एगिंदियवज्जो तियभंगो) इसी तरह से ये तीन भंग सर्वत्र जानना चाहिये, परन्तु सामान्यजीवसूत्र में और एकेन्द्रियजीव सूत्र में ये तीन भंग नहीं करना चाहिये। बाकी तेईस दण्डकों में ये तीनों भंग नारक जीवों की तरह से ही जानना जाहिये॥ सू २॥

હોય છે પણ નારક જીવો વિગ્રહગતિવાળા હોય છે આ ત્રીજો ભાગો થયો. અસુરકુમાર વગેરેમા પણ આ ત્રણે ભાંગા કરવા જોઈએ. તે દર્શાવવા માટે સૂત્રકાર કહે છે કે (एवं जीव एगिंदियवज्जो तियभंगो) આ રીતે તે ત્રણે ભાંગા બધી જગ્યાએ સમજવા જોઈએ પરંતુ સામાન્યજીવસૂત્રમા અને એકેન્દ્રિય જીવસૂત્રમા આ ત્રણ ભાગા હોતા નથી બાકીના ૧૯ દડકોમા નારક જીવો પ્રમાણે જ તે ત્રણ ભાગા સમજવા ॥સૂ. ૨॥

तिमत्त्वं वा भवतीति प्रश्नाशयः। भगवानाह-'गोयमे' त्यादि। 'गोयमा' हे गौतम! 'सव्वे वि ताव होज्जा अविग्गहगइसमावन्नगा' सर्वेऽपि तावद् भवेयुरविग्रहगतिसमापन्नकाः, सर्वेऽपि नारका अविग्रहगतिमन्त एव भवन्ति, नारकजीवानामल्पत्वाद् विग्रहगतिवतां च कदाचिदसंभवात्, संभवेऽपि एकद्व्यादीनामेव संभवाद् विग्रहगतिप्रतिषेधवतां च सदैव बहूनां संभवात् इति प्रथमो भङ्गः १। 'अहवा अविग्गहगइसमावन्नगा विग्गहगइसमावन्नगे य' अथवा अविग्रहगतिसमापन्नकाः विग्रहगतिसमापन्नकश्च, अनेके अविग्रहगतिमन्तो भवन्ति एको विग्रहगतिमान् भवतीति द्वितीयो भङ्गः २। 'अहवा अविग्गहगइसमावन्नगा य विग्गहगइसमावन्नगा य' अथवा अविग्रहगतिसमापन्नकाश्च विग्रहगतिसमापन्नकाश्च, अनेके अविग्रहगतिमन्त' अनेके विग्रहगतिमन्तश्च भवन्तीति तृतीयो भङ्गः ३। असुरा-

होते हैं कि अविग्रहगतिसमापन्नक होते हैं। (सव्वे वि ताव होज्जा अविग्गहगइसमावन्नगा) हे गौतम! जितने भी नारक जीव हैं वे सब अविग्रहगतिसमापन्नक ही होते हैं, क्यों कि नारक जीव अल्प होते हैं। अतः विग्रहगतिवाले जीवों की उन में प्रायः असंभवता ही होती है। यदि ऐसे जीवों की उनमें संभवता भी हो तो वे एक दो आदि ही संभवते हैं। तथा जिनकी विग्रहगति नहीं होती है ऐसे अनेक जीवों की वहां सदा ही संभवता रहती है। इस प्रकार यह प्रथम भंग है १। (अहवा-अविग्गहगइसमावन्नगा विग्गहगइसमावन्नगे य) अथवा वहां कितनेक नारक जीव अविग्रहगतिसमापन्नक होते हैं और कोई एक नारक जीव विग्रहगतिसमापन्नक होता है। ऐसा यह दूसरा भङ्ग है २। (अहवा-अविग्गहगइसमावन्नगा य विग्गहगइसमावन्नगा य) अथवा वहां अनेक नारकजीव अविग्रहगतिसमापन्नक होते हैं और अनेक नारक

ઉત્તર—"सव्वे वि ताव होज्ज अविग्गहगइसमावन्नगा" હે ગૌતમ! જેટલા નારક જીવો છે તેઓ અવિગ્રહગતિ વાળા જ હોય છે કારણ કે નારક જીવો અલ્પ હોય છે તેથી વિગ્રહગતિવાળા જીવોની તેમનામા સામાન્ય રીતે અસંભવતા જ હોય છે જો તેમનામા એવા જીવોની સંભાવના હોય તો પણ તેમનામા એવા જીવો એક, બે વગેરે જ સંભવે છે જ્યારે વિગ્રહગતિ વિનાના અનેક જીવોની ત્યા હમેશા સંભાવના જ રહે છે આ પ્રકારનો આ પહેલો ભાગો છે (अहवा अविग्गहगइसमावन्नगा विग्गहगइसमावन्नगे य) અથવા ત્યા ઘણા નારક જીવો અવિગ્રહગતિવાળા હોય છે અને કોઇ એક નારક જીવ વિગ્રહગતિ વાળો હોય છે આ બીજો ભાગો છે (अहवा-अविग्गहगइसमावन्नगाय विग्गहगइसमावन्नगा य) અથવા ઘણા નારક જીવો અવિગ્રહગતિવાળા

तभिवैभावश्च्युत्क्रान्तिकं तद् यथा स्यात्तथा 'चयमाणे' च्यवमानः, जीवन्नेव मरणमापद्यमान इत्यर्थः, किम् 'किंचिकाल' किञ्चित्कालम्, कियन्तमपि कालम् 'आहारं नो आहारेइ' इत्यग्रेतनेन सम्बन्धः कुतः कियत्कालं नाहरति तत्राह–'हिरिवत्तिय' ह्रीप्रत्ययम्, लज्जानिमित्त नाहारयतीति देवो हि च्यवनसमये उत्पत्तिस्थानं पश्यति दृष्ट्वा च देवभवविलक्षण पुरुषोपभुज्यमानस्त्रीगर्भाशयरूपम्' तत्राह स्वकीयं सर्वसुखदं स्थानं परित्यज्य यास्यामी'ति कृत्वा नाहरति, तथा 'दुगुंछावत्तियं' जुगुप्साप्रत्ययं, कुत्सानिमित्त शुक्रशोणितादेरुत्पत्तिकारणस्य जुगुप्साकारणत्वात्, 'परिसहवत्तिय' परिषहप्रत्ययम्, इह प्रकरणात् परिषहशब्देनारति

न्त्य बलवाला हो (अचिउक्किंतियं चयं चयमाणे) और मरने के सन्मुख हो रहा हो–अभी वहां से च्युत नहीं हुआ हो जीते जी ही जो मरने की तैयारी कर रहा हो– ऐसा वह देव (किंचि काल आहारं नो आहारेइ) कुछ कालतक आहार नहीं लेता है। कुछ कालतक उसके आहार नहीं लेने में कारण यह है कि वह (हिरिवत्तियं) लज्जित होता है–अर्थात् देव च्यवनसमय में अपने प्राप्त होनेवाले उत्पत्तिस्थान को देखता है सो देवभवसे विलक्षण अपने उत्पत्तिस्थानको कि जो पुरुषद्वारा भोगी जाती स्त्रीके गर्भाशयरूप होता है देखकर उसे यह विचार आता है कि मैं उस स्थान में अपने इस सर्वसुखद स्थान को छोड़कर जाऊँगा, इस विचार से वह लज्जायुक्त बनकर खाता नहीं है (दुगुंछावत्तियं) नहीं खाने में दूसरा कारण उसे घृणा आती है, क्यों कि वह यह जानता है कि मेरी उत्पत्ति का कारण शुक्रशोणित आदि है, ऐसा जानकर उसे घृणा-ग्लानि आती है। (परिसहवत्तियं) यहां प्रकरणवश परीषह शब्द से

वानी क्रिया वगेरेमां अचिन्त्य બળવાળો હોય, "अचिउक्कंतियं चयं चयमाणे" અને જે મૃત્યુની નજીક પહોંચી ગયો હોય. એ કે હજી ત્યાંથી ચ્યવન (મરણ) થયુ નથી પણ જે મરવાની તૈયારીમાં હોય છે " किंचिकालं आहारं नो आहारेइ" તે દેવ કેટલોક સમય આહાર લેતો નથી. "हिरिवत्तियं" તે લજ્જિત થાય છે કારણકે દેવ પોતાના ચ્યવન સમયે પોતાનું ભાવિ ઉત્પત્તિસ્થાન પોતાના જ્ઞાનથી જુવે છે તે ઉત્પત્તિસ્થાન સ્ત્રીના ગર્ભાશયરૂપ હોય છે ચ્યવનકાળે દેવના મનમાં એવો વિચાર આવે છે કે આ સુખના સ્થાનને છોડીને મારે એવા દુઃખદ સ્થાનમાં જવું પડશે? આ વિચાર આવવાથી લજ્જાયુક્ત બનીને તે ખાતો નથી "दुगुछावत्तिय" નહી ખાવાનું બીજુ કારણ તેના મનમાં ઉત્પન્ન થતી ઘૃણા પણ છે કારણકે પોતાની ઉત્પત્તિનું કારણ શુક્ર શોણિત વગેરે છે, એ જાણીને તેને ઘૃણા થાય છે 'परिसहवत्तियं' અહીં "પરીષહ" પદ વડે

छाया—देवो भदन्त ! महर्द्धिको महाद्युतिको महाबलो महायशा मह सौख्यो महानुभावोऽव्युत्क्रान्तिकम् चयं च्यवमानः किञ्चित्कालं ह्रीमत्ययम् जुगु प्साप्रत्ययं परिषहप्रत्ययमाहारं नो आहरति, अथ खलु आहरति आह्रियमाणमाहृत परिणम्यमानं परिणतं प्रहीणं चायुष्कं भवति, यत्रोपपद्यते तदायुष्कं प्रतिसंवेद यति, तत् तिर्यग्योन्यायुष्कं वा मनुष्यायुष्कं वा ? हंत गौतम! देवो महर्द्धिको याव मनुष्यायुष्कं वा ॥ सू० ३ ॥

टीका—'देवेणं भंते' देवः खलु भदन्त 'महिड्ढिए' महर्द्धिकः विमान परिवाराद्यपेक्षया देवानां महर्द्धिकत्वं विज्ञेयम्। 'महज्जुइए' महाद्युतिकः महती शरीराभरणाद्यपेक्षयाऽतिशायिनी द्युतिर्विद्यते यस्य स महाद्युतिकः। 'महाबले महाबलः शरीरप्राणापेक्षया, 'महाजसे' महायशाः, महद्ध्यादिसंपन्नत्वेन अति शयितख्यातिमान, 'महासोक्खे' महासौख्यः, महदत्यधिकं सौख्यं यस्य स महासौख्यः विशिष्टसुखसंपन्न इत्यर्थः, 'महानुभावे' महानुभावः, विशिष्टवैक्रिया करणाचिन्त्यसामर्थ्यः, 'अविउक्कंतियं' अव्युत्क्रान्तिकम्, व्युत्क्रान्तिः-मरण

अब सूत्रकार गति के अधिकार होने से च्यवनसूत्र कहते हैं— 'देवेणं भंते !' इत्यादि।

टीकार्थ–(देवेणं भंते !) हे भदन्त ! ऐसा देव (महिड्ढिए) जो महर्द्धिक ह विमान, परिवार आदिकी अपेक्षा से मोटी ऋद्धिवाला हो, (महज्जुइए महाद्युतिक हो शरीर आभरण आदि की अपेक्षा से जिसकी द्युति बहुत अधिक हो, (महब्बले) महाबल हो–शारीरिक अपेक्षासे विशिष्ट बलशाल हो (महाजसे) महायशावाले हो महाऋद्धि आदिसे संपन्न होनेके कारण विशिष्टख्यातिवाला हो (महासोक्खे) विशिष्ट सुख संपन्न हो (महानुभावे विशिष्ट रीति से अनेक प्रकार के रूप करने वगैरह की क्रिया में अचि

ગતિનો અધિકાર ચાલતો હોવાથી હવે સૂત્રકાર દેવતાના ચ્યવનસૂત્રો કહે છે 'देवेणं भंते! महिड्ढिए" ઈત્યાદિ.

ટીકાર્થ–(देवेणं भंते!) હે ભગવન્ ! જે દેવ (महिड्ढिए) મહર્દ્ધિક હોય એટલે કે (વિમાન પરિવાર વગેરેની અપેક્ષાએ મહાઋદ્ધિવાળો હોય) (महज्जुइए) મહાગતિવાળો હોય (શરીર આભૂષણો વગેરેની અપેક્ષાએ જેની ગતિ–કાંતિ ઘણીજ વધારે હોય) (महाबले) ઘણો બળવાન હોય–શારીરિક શક્તિની અપેક્ષાએ વિશિષ્ટ બળયુક્ત હોય (महाजसे) ઘણો યશસ્વી હોય, મહાઋદ્ધિ વગેરેથી યુક્ત હોવાને કારણે જેની ખ્યાતિ ઘણીજ હોય, "महासोक्खे" વિશિષ્ટ સુખ-સંપન્ન હોય, "महानुभावे" મહાનુભાવ હોય એટલે કે અનેક પ્રકારના રૂપ કર-

निष्ठाकालयोरभेदादाहारकालस्याल्पता कथिता-स्वल्पमाहारं गृह्णातीत्यर्थः । परिणामिज्जमाणे परिणामिए' परिणम्यमानं परिणतम्, 'पहीणे य आउए भवइ' प्रहीणं चायुष्कं भवति, देवायुष्कं च सदा विनष्टं भवति, 'जत्थ उववज्जइ' यत्रोपपद्यते, देवशरीरं परित्यजन् यादृग्योनिविशेषे समुत्पत्स्यमानत्वम्, 'तं आउयं पडिसंवेदेइ' तदायुष्कं-अनिर्दिष्टायुष्कं प्रतिसंवेदयति तस्यस्यायुष्ककर्मणोऽनुभवं करोतीत्यर्थः, अथ गन्तव्यस्यानायुष्कस्य निर्देशं करोति-'तं जहा' तद्यथा-'तिरिक्खजोणियाउयं वा' तिर्यग्योनिकायुष्कं वा 'मणुस्साउयं वा' मनुष्यायुष्कं वा, तिर्यगादियोनौ देवानां समुत्पत्तिर्भवति न तु कदाचिदपि देवश्च्युतो देवलोके नरके वा गच्छतीति देवनारकयोः प्रतिषेधः कृतो भवति इति

अर्थात् प्रारंभकाल और निष्ठाकाल अर्थात् समाप्तिकाल इन दोनों में यहां अभेद का उपचार किया गया है। इससे आहार में अल्पता कही गई है, अतः इससे यह ज्ञात होता है कि वह स्वल्पमात्रा में आहार लेता है। (पहीणे य आउए भवइ) इस तरह उसका आयुष्क-देवायुष्क समाप्त हो जाता है। (जत्थ उववज्जइ तं आउयं पडिसंवेदेइ) सो देव शरीर को छोड़कर आगे जिस योनिविशेष में इसे उत्पन्न होना है वहां के आयुष्क का यह अनुभव करता है सो हे भदन्त! वह किस का आयुष्य जानना चाहिये-(तिरिक्खजोणियाउयं वा, मणुस्साउयं वा) तिर्यग्योनिक का? कि मनुष्य का यहां जो ऐसा प्रश्न आयुष्य संबंध को लेकर किया गया है उसका कारण यह है कि देवों की उत्पत्ति मरने के बाद या तो मनुष्यगति में होती है या तिर्यग्गति में होती है, अन्य गतियों में नहीं, क्यों कि देव च्युत होकर देवलोक में अथवा नरक में

કાળ એટલે કે સમાપ્તિકાળ એ બન્નેમાં અહીં અભેદનો ઉપચાર કરાયો છે. તેના વડે આહારમાં અલ્પતા કહેવામાં આવી છે તેથી એ વાત જાણી શકાય છે કે તે સ્વલ્પમાત્રામાં-થોડા પ્રમાણમાં જ આહાર ગ્રહણ કરે છે

(पहीणे य आउए भवइ) ત્યારબાદ છેવટે તેનું આયુષ્ય (દેવાયુષ્ય) સમાપ્ત થઈ જાય છે (जत्थ उववज्जइ तं आउयं पडिसंवेदेइ) તે પછી દેવનું શરીર છોડીને જે યોનિવિશેષમાં તેને ઉત્પન્ન થવાનું હોય છે તે યોનિવિશેષના આયુષ્યનો તે અનુભવ કરે છે તો હે ભગવન્! તે કોનું આયુષ્ય સમજવું? (तिरिक्खजोणियाउयं वा, मणुस्साउयं वा) તિર્યગ્યોનિનું કે મનુષ્યયોનિનું તે આયુષ્ય સમજવું? અહીં આયુષ્યના વિષયમાં આ પ્રકારનો પ્રશ્ન પૂછવાનું કારણ એ છે કે દેવતા મરીને એટલે કે ચ્યવીને મનુષ્યગતિમાં અથવા તિર્યગ્ગતિમાં

परिषहो ग्राह्यस्तेनारतिपरिषहनिमित्तमाहारं न गृह्णाति, लोकेऽपि दृश्यते अरतिप्रत्ययात् आहारग्रहणाभाव इति, 'आहारं नो आहारेइ' आहारं नो आहरति, मनसा तथाविध-पुद्गलोपादानरूपं देवसम्बन्धिकं दिव्यमाहारं न करोतीति, अहेणं आहारेइ' अथ खलु आहरति, लज्जादिक्षणानन्तरमाहारमाहरति क्षुधावेदनीयस्य कर्मणश्चिरकालं सोढु-मशक्यत्वात् 'आहरिज्जमाणे आहारिए' आह्रियमाणमाहृतम्, अनेन क्रियाकाल

अरतिपरीषह ग्रहण करना चाहिए इससे यह ध्वनित होता है कि उसे इन समस्त कारणों को लेकर चित्त में चैन नहीं पड़ती है-वह जैसे लोक में लोग चैन न होने के कारण कुछ समय आहार ग्रहण नहीं करते हैं अगर करते हैं तो अल्प करते हैं, वैसे ही चित्त में चैन के अभाव से - अर्थात् वेचैन होने से आहार ग्रहण नहीं करता है। देवों के मानसिक आहार होता है कवलाहार तो होता नहीं है अतः वह देव मन से तथाविध पुद्गलोपादानरूप देवसंबंधी दिव्य आहार नहीं लेता है। अर्थात् मानसिक आहार नहीं करता है! (अहेणं आहारेइ) क्षुधावेदनीय कर्म को चिरकालतक सहने में असमर्थ होने के कारण लज्जा वगैरह हो चुकने के बाद वह आहार करता है-मन से तथाविध पुद्गलों का ग्रहण करता है-(आहारिज्जमाणे आहारिए परिणामिज्जमाणे परिणामिए) सो लिया जाता वह आहार लिया जा चुका, तथा परिणाम को प्राप्त हो रहा वह आहार परिणम गया ऐसा कहा जाता है क्यों कि क्रियाकाल

"અરતિપરીષહ" અર્થ ગ્રહણ કરવો ઉપરોક્ત કારણોને લીધે તેને ચેન પડતું નથી તેનું મન ઉદ્વિગ્ન રહે છે આ લોકમાં પણ મન ઉદ્વિગ્ન હોય છે ત્યારે લોકો આહાર ગ્રહણ કરતા નથી અને ગ્રહણ કરે તો ઘણો જ ઓછો આહાર ગ્રહણ કરે છે. એજ પ્રમાણે દેવો પણ મનની ઉદ્વિગ્નતાને લીધે આહાર લેતા નથી દેવો માનસિક ઇચ્છા માત્રથી જ રોમ આહાર લે છે, કવલાહાર લેતાં નથી એટલે અહી એમ સમજવુ કે તે દેવ મનથી તથાવિધ પુદ્ગલોપાદન રૂપ દેવ સબંધી દિવ્ય આહાર લેતો નથી એટલે કે માનસિક આહાર પણ ગ્રહણ કરતો નથી (अहे ण आहारेइ) અથવા ક્ષુધાવેદનીય કર્મને લાંબા સમય સુધી સહન કરવાને અસમર્થ હોવાથી તે લજ્જા વગેરે ઉત્પન્ન થયા પછી પણ અલ્પ આહાર ગ્રહણ કરે છે-મનથી તથાવિધ પુદ્ગલોને બહુજ થોડા પ્રમાણમાં ગ્રહણ કરે છે. (आहारिज्जमाणे आहारिए परिणामिज्जमाणे परिणामिए) તો લેવાતો તે આહાર લેવાઈ ચુક્યો તથા પરિણમનને પ્રાપ્ત થતો તે આહાર પરિણમી ગયો, એવુ કહી શકાય છે કારણકે ક્રિયાકાળ એટલે કે પ્રારંભકાળ અને નિષ્ઠા

केणट्ठेण? गोयमा ! ओरालिय वेउव्विय आहारयाइ पडुच्च असरीरी वक्कमेइ, तेया कम्माइ पडुच्च ससरीरी वक्कमइ से तेणट्ठेण गोयमा० ! जीवे ण भंते ! गब्भ वक्कममाणे तप्पढमयाए किं आहार आहारेइ, गोयमा ! माउओय पिउसुक्क तं तदुभय संसिट्ठ कलुस किब्बिस तप्पढमयाए आहार आहारेइ । जीवे णं भंते ! गब्भगए समाणे किं आहार आहारेइ, गोयमा ! ज से मायानाणपिहाओ रस विगईओ आहार आहारेइ, तदेकदेसेणं ओय आहारेइ । जीवस्स ण भंते ! गब्भगयस्स समाणस्स अत्थि उच्चारेइ वा, पासवणेइ वा, खेलेइ वा, सिंघाणेइ वा वतेइ वा पित्तेइ वा? गोयमा! णो इणट्ठे समट्ठे, से केणट्ठेणं भंते !० गोयमा! जीवे णं गब्भगए समाणे ज आहारेइ त चिणाइ त सोइ दियत्ताए जाव फासिंदियत्ताए अट्ठि अट्ठिमिंज केस मसुरोम नहत्ताए, से तेणट्ठेणं० । जीवे णं भंते ! गब्भगए समाणे पभू मुहेणं कावलिय आहार आहारित्तए, गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे से केणट्ठेणं, गोयमा ! जीवे णं गब्भगए समाणे सव्वओ आहारेइ सव्वओ परिणामेइ सव्वओ उस्ससइ सव्वओ निस्ससइ अभिक्खणं आहारेइ, अभिक्खणं परिणामेइ, अभिक्खणं उस्ससइ, अभिक्खणं निस्ससइ, आहच्च आहारेइ, आहच्च परिणामेइ, आहच्च उस्ससइ, आहच्च नीससइ । माउ जीवरसहरणी पुत्तजीवरसहरणी, माउजीवपडिबद्धा पुत्त जीवफुडा तम्हा आहारेइ, तम्हा परिणामेइ, अवरा वि य णं

किं सत्यमिति प्रश्नः। भगवानाह—'हंता' इत्यादि। 'हंता गोयमा' हंत हे गौतम! हंतेति स्वीकारे 'देवेणं महिड्ढिए जाव मणुस्साउयं वा' देवः खलु महर्द्धिको यावत् मनुष्यायुष्कं वा, अत्र यावत्पदेन प्रश्नोक्तः सर्वोऽपि पाठः संग्राह्यः। महर्द्धिकत्वादिगुणविशिष्टो देवः परिभोगेन देवलोके स्वकीयायुष्कं कर्म परिसमाप्य देवलोकान्निर्गच्छन् प्राप्स्यमानतिर्यग्योनिकाद्यायुषः प्रतिसंवेदनं करोतीति भावः॥ सू० ३॥

गर्भशास्त्रम्—

उत्पत्त्यधिकाराद् गर्भसूत्रमाह—'जीवे णं' इत्यादि।

मूलम्—जीवे णं भंते! गब्भं वक्कममाणे किं सइंदिए वक्कमइ, अणिंदिए वक्कमइ, गोयमा! सिय सइंदिए वक्कमइ, सिय अणिंदिए वक्कमइ, से केणट्ठेणं भंते! गोयमा! दव्विंदियाइं पडुच्च अणिंदिए वक्कमइ, भाविंदियाइं पडुच्च सइंदिए वक्कमइ, से तेणट्ठेणं०। जीवे णं भंते! गब्भं वक्कममाणे किं ससरीरी वक्कमइ, असरीरी वक्कमइ, गोयमा! सिय सरीरी वक्कमइ, सिय असरीरी वक्कमइ, से

जन्म कभी भी नहीं लेता है ऐसा सिद्धान्त है। अतः यहां ऐसा प्रश्न देव नारक संबंधी आयुष्य को निषिद्ध कर किया गया है। (हंता गोयमा! देवेणं महिड्ढिए जाव मणुस्साउयं वा), हाँ गौतम! महर्द्धिकत्वादिगुण विशिष्ट देव अपनी आयु की परिसमाप्ति होने पर वहां से च्यव कर– अर्थात् देवलोक से निकलकर, तिर्यग्योनिक आदि जीवों की आयु का अनुभव करता है। यहां यावत् पद से प्रश्नसूत्रोक्त सब पाठ ग्रहण कर लेना चाहिये॥ सू०३॥

જ ઉત્પન્ન થાય છે દેવલોકમાંથી ચ્યવીને દેવ દેવલોકમાં કે નરકગતિમાં કદિ પણ ઉત્પન્ન થતા નથી, એવો સિદ્ધાંત છે તેથી અહીં પ્રશ્નમા દેવાયુ અને નરકાયુનો ઉલ્લેખ થયો નથી

ઉત્તર—(हंता गोयमा! देवेणं महिड्ढिए जाव मणुस्साउयं वा) હે ગૌતમ! મહર્દ્ધિકપણુ વગેરે ગુણસપન્ન દેવ પોતાનું આયુષ્ય પૂરૂ થતાં ત્યાથી ચ્યવીને– દેવલોકમાંથી નીકળીને–તિર્યગ્યોનિક જીવોના અથવા મનુષ્યગતિના જીવોના આયુષ્યનો અનુભવ કરે છે અહી "जाव" (यावत्) પદથી પ્રશ્નસૂત્રોક્ત તમામ પાઠ ગ્રહણ કરવો જોઇએ ॥ સૂ ૩ ॥

सर्वत आहरति सर्वत: परिणमयति सर्वत उच्छ्वसति सर्वतो नि श्वसति अभीक्ष्ण माहरत्यभीक्ष्ण परिणमयत्यभीक्ष्णमुच्छ्वसत्यभीक्ष्ण निःश्वसति, आहत्याहरति आहत्य परिणमयति आहत्योच्छ्वसति आहत्य नि श्वसति, मातृजीवरसहरणी पुत्र जीवरसहरणी मातृजीवप्रतिबद्धा पुत्रजीवस्पृष्टा तस्मादाहरति तस्मात्परिणमयति, अपरापि च पुत्रजीव प्रतिबद्धामातृजीवस्पृष्टा तस्माच्चिनोति तस्मादुपचिनोति तत्तेनार्थेन यावत् नो प्रभुर्मुखेन कावलिकमाहारमाहर्तुम्, कति खलु भदन्त ! मात्र ङ्गानि मज्ञप्तानि? गौतम ! त्रिणि मात्रङ्गानि मज्ञप्तानि तद्यथा–मांस शोणित मस्तुलु ङ्गम्। कति खलु भदन्त ! पित्रङ्गानि मज्ञप्तानि, गौतम ! त्रीणि पित्रङ्गानि मज्ञप्तानि तद्यथा–अस्थि, अस्थिमज्जा, केशश्मश्रुरोमनखा, अम्बापैतृक खलु भदंत ! शरीरं कियत्काल सतिष्ठते, गौतम ! यावन्त कालं तस्य भवधारणीयं शरीरमव्यापन्नं भवति, एतावन्तं कालं संतिष्ठते, अथ खलु समये समये ऽपपकृष्यमाण व्यपकृष्यमाणं चरमकालसमये व्युच्छिन्नं भवति ॥ सू० ४ ॥

टीका—'जीवे णं भंते ' जीव: खलु भदन्त ! 'गब्मं वक्कममाणे ' गर्भे व्युत्क्रामन्, गर्भे समुत्पद्यमान इत्यर्थः, 'किं सइंदिए वक्कमइ अणिंदिए वक्कमइ' किं सेन्द्रियो व्युत्क्रामति अनिन्द्रियो व्युत्क्रामति, सेन्द्रियः=इन्द्रियविशिष्टः, अनिन्द्रियः=इन्द्रियरहितः, गर्भावस्थायां जीवस्येन्द्रियाणि भवन्ति न वेति प्रश्नाशय: ।

गर्भशास्त्र

उत्पत्ति का अधिकार होने से ही सूत्रकार अब गर्भसूत्र को कहते हैं–'जीवे ण भंते ! ' इत्यादि ।

टीकार्थ—(जीवे णं भंते ! गब्भं वक्कममाणे किं सइंदिए वक्कमइ, अणिंदिए वक्कमइ) हे भदन्त! गर्भमें उत्पन्न होते समय जीव क्या इन्द्रिय सहित उत्पन्न होता है ? कि बिना इन्द्रिय के उत्पन्न होता है ? तात्पर्य इस प्रश्न का यह है के गर्भावस्था में जीव की इन्द्रियां होती हैं कि नहीं

ગર્ભશાસ્ત્ર—

ઉત્પત્તિનો અધિકાર ચાલતો હોવાથી હવે સૂત્રકાર ગર્ભસૂત્રનું કથન કરે છે–' जीवे ण भंते ! गब्भं वक्कममाणे " ઇત્યાદિ।

ટીકાર્થ–"जीवे ण भंते ! गब्भ वक्कममाणे किं सइंदिए वक्कमइ, अणिंदिए वक्कमइ ?" હે ભગવન્ ! ગર્ભમાં ઉત્પન્ન થતી વખતે શું જીવ ઇન્દ્રિયો સહિત ઉત્પન્ન થાય છે? કે ઇન્દ્રિયો વિના ઉત્પન્ન થાય છે? આ પ્રશ્નનો ભાવાર્થ એવો છે કે ગર્ભમાં ઉત્પન્ન થતી વખતે જીવને ઇન્દ્રિયો હોય છે કે નથી હોતી ?

पुत्तजीवपडिबद्धा माउजीवफुडा तम्हा चिणाइ, तम्हा उवचिणाइ, से तेणट्ठेणं जाव नो पभूमुहेणं कावलियं आहारं आहरित्तए। कइ णं भंते माइयंगा पन्नत्ता, गोयमा! तओ माइयंगा पन्नत्ता, तं जहा—मंसे, सोणिए, मत्थुलुंगे। कइ णं भंते! पिइयंगा पन्नत्ता, गोयमा! तओ पिइयंगा पन्नत्ता, तं जहा—अट्ठी, अट्ठिमिंजा, केसमंसुरोमनहे। अम्मापिइए णं भंते! सरीरए केवइयं कालं संचिट्ठइ? गोयमा! जावइयं से कालं भवधारणिज्जे सरीरए अव्वावन्ने भवइ एवइयं कालं संचिट्ठइ, अहे णं समए समए वोक्कसिज्जमाणे वोक्कसिज्जमाणे चरमकालसमयंसि वोच्छिन्ने भवइ ॥ सू०४ ॥

छाया—जीवो भदंत! गर्भे व्युत्क्रामन् किं सेन्द्रियो व्युत्क्रामति अनिन्द्रियो व्युत्क्रामति, गौतम! स्यात्सेन्द्रियो व्युत्क्रामति स्यात् अनिन्द्रियो व्युत्क्रामति, तत्केनार्थेन? गौतम! द्रव्येन्द्रियाणि प्रतीत्यानिन्द्रियो व्युत्क्रामति भावेन्द्रियाणि प्रतीत्य सेन्द्रियो व्युत्क्रामति, तत्तेनार्थेन०। जीवो भदन्त! गर्भे व्युत्क्रामन् किं सशरीरी व्युत्क्रामति, अशरीरी व्युत्क्रामति?, गौतम! स्यात् सशरीरी व्युत्क्रामति, स्यादशरीरी व्युत्क्रामति, तत्केनार्थेन भदन्त! एवमुच्यते, गौतम! औदारिकवैक्रियाहारकाणि प्रतीत्याशरीरी व्युत्क्रामति, तैजसकार्मणे प्रतीत्य सशरीरी व्युत्क्रामति तत्तेनार्थेन गौतम०। जीवो भदन्त! गर्भे व्युत्क्रामन् तत्प्रथमतया कमाहारमाहरयति? गौतम! मात्रोजः पितृशुक्रम् तद् तदुभयसंश्लिष्टं कलुषं किल्बिषं तत्प्रथमतयाऽऽहारमाहरति। जीवो भदन्त! गर्भगतः सन् कमाहारमाहरति? गौतम! यत्तस्य माता नानाविधा रसविकृतीराहारमाहरति, तदेकदेशेन ओज आहरति, जीवस्य खलु भदन्त! गर्भगतस्य सतोऽस्ति उच्चार इति वा प्रस्रवणमिति वा खेल इति वा शिंघानकमिति वा वान्तमिति वा पित्तमिति वा?, नायमर्थः समर्थः, तत्केनार्थेन० गौतम! जीवो गर्भगतः सन् यदाहरति तच्चिनोति तत् श्रोत्रेन्द्रियतया यावत् स्पर्शेन्द्रियतया अस्थ्यस्थिमज्जाकेशश्मश्रुरोमनखतया, तत्तेनार्थेन० जीवो भदन्त! गर्भगतः सन् प्रभुर्मुखेन कावलिकमाहारमाहर्तुम्?, गौतम! नायमर्थः समर्थः, तत्केनार्थेन? गौतम! जीवो गर्भगतः सन्

सेन्द्रियो व्युत्क्रामति, भावेन्द्रियाणि उपयोगात्मकानि, तानि तु जीवस्य सर्वा स्थायामेव भवन्ति उपयोगस्य जीवेन सह तादात्म्यादिति तदभिप्रायेण गर्भेऽपि

इन्द्रियों सहित उत्पन्न होता है। इस कारण में ऐसा कहता हूँ कि जीव गर्भ में किसी अपेक्षा से-इन्द्रिय सहित उत्पन्न होता है और किसी अपेक्षा से इन्द्रिय विना भी उत्पन्न होता है। निर्वृत्ति और उपकरण के भेद से द्रव्येन्द्रिया दो प्रकार की होती हैं। द्रव्येन्द्रिय की रचना जीव के पर्याप्तावस्था में होती है, अपर्याप्तावस्था में नहीं। अतः गर्भ में उत्पन्न होने वाला जीव जबतक विग्रह गति में रहता है तबतक उसके इन्द्रियपर्याप्ति न होनेक कारण वह अनिन्द्रिय-विना इन्द्रियका-रहता है तथा गर्भ में उपजते समय भी वह जीव उसी समय इन्द्रियवाला नहीं होता है, क्यों कि जबतक इन्द्रियों की रचना उसकी पूर्ण नहीं हो जाती तबतक उसकी इन्द्रियपर्याप्ति पूर्ण हुई नहीं कहलाती है, अत इन्द्रियपर्याप्ति की पूर्णता होने पर ही द्रव्येन्द्रियों की पूर्णता होती है। गर्भ में उत्पन्न होते समय जीव के इन्द्रियपर्याप्ति पूर्ण नहीं होती है, इस अपेक्षा से वह विना इन्द्रिय का उत्पन्न होता है ऐसा कहा गया है, क्यों कि उस समय उसके द्रव्येन्द्रिय का अभाव है। लब्धि और उपयोग, ये भाव इन्द्रियां हैं, इनकी अपेक्षा से जीव गर्भ में इन्द्रियसहित उत्पन्न होता है ऐसा कहा है, क्यों कि भावेन्द्रियां जीव के सर्वकाल में रहती हैं।

ગર્ભમાં ઇન્દ્રિયો વિના ઉત્પન્ન થાય છે અને ભાવેન્દ્રિયની અપેક્ષાએ જીવ ગર્ભમાં ઇન્દ્રિયો સહિત ઉત્પન્ન થાય છે તે કારણે હું એવું કહું છું કે ગર્ભમાં જીવ કોઈ અપેક્ષાએ ઇન્દ્રિય સહિત ઉત્પન્ન થાય છે અને કોઈ અપેક્ષાએ ઇન્દ્રિય રહિત ઉત્પન્ન થાય છે નિર્વૃત્તિ અને ઉપકરણ ઇન્દ્રિયના ભેદથી દ્રવ્યેન્દ્રિયો બે પ્રકારની હોય છે દ્રવ્યેન્દ્રિયની રચના જીવની પર્યાપ્તાવસ્થામાં થાય છે, અપર્યાપ્તાવસ્થામાં થતી નથી તેથી ગર્ભમાં ઉત્પન્ન થનારો જીવ જ્યાંસુધી વાટે વહેતો રહે છે ત્યાંસુધી તેને ઇન્દ્રિયપર્યાપ્તિ ન હોવાને કારણે તે અનિન્દ્રિય-ઇન્દ્રિયો વિનાનો રહે છે વળી ગર્ભમાં ઉપજતી વખતેજ તે જીવ ઇન્દ્રિયોવાળો હોતો નથી. કારણકે જ્યાંસુધી તેની ઇન્દ્રિયોની રચના થતી નથી ત્યાંસુધી તેની ઇન્દ્રિય પર્યાપ્તિ કહી શકાતી નથી. તેથી ઇન્દ્રિયપર્યાપ્તિની પૂર્ણતા થાય ત્યારે જ દ્રવ્યેન્દ્રિયોની પૂર્ણતા થાય છે ગર્ભમાં ઉત્પન્ન થતી વખતે જીવને ઇન્દ્રિયપર્યાપ્તિ હોતી નથી, એ રીતે વિચાર કરતાં 'તે ઇન્દ્રિયો વિના ઉત્પન્ન થાય છે' એવું કહ્યું છે, કારણકે તે સમયે તેનામાં દ્રવ્યેન્દ્રિયનો અભાવ હોય છે લબ્ધિ અને ઉપયોગ એ બે ભાવઇન્દ્રિયો છે તેમની અપેક્ષાએ એવું કહેવાયું છે કે જીવ ગર્ભમાં ઇન્દ્રિયો સહિત ઉત્પન્ન થાય છે કારણકે ભાવેન્દ્રિયો જીવમાં સર્વકાળે રહે છે.

भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि। 'गोयमा' हे गौतम! 'सिय सइंदिए वक्कमइ सिय अणिंदिए वक्कमइ' स्यात् सेन्द्रियो व्युत्क्रामति स्यादनिन्द्रियो व्युत्क्रामति उभावपि पक्षौ भवतः कदाचित् इन्द्रियविशिष्टोपि गर्भे समुत्पन्नो भवति जीवः कदाचिदिन्द्रियराहित्येनाप्युत्पद्यते गर्भे जीवः। 'से केणट्ठेणं' तत्केनार्थेन हे भदन्त! तत्केन कारणेन एवमुच्यते, यदिन्द्रियविशिष्टोप्युत्पद्यते इन्द्रियरहितोप्युत्पद्यते? इति भावः, भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि। 'गोयमा' हे गौतम! 'दव्विंदियाइं' द्रव्येन्द्रियाणि निर्वृत्त्युपकरणलक्षणानि 'पडुच्च' प्रतीत्य—द्रव्येन्द्रियापेक्षयेत्यर्थः 'अणिंदिए वक्कमइ' अनिन्द्रियो व्युत्क्रामति समुत्पद्यते, द्रव्येन्द्रियाणि इन्द्रियपर्याप्तौ सत्यामेव भविष्यन्तीत्यतो गर्भे समागच्छन् अनिन्द्रिय एव जीव उत्पद्यते तदानीं द्रव्येन्द्रियस्याभावात् 'भाविंदियाइं' भावेन्द्रियाणि लब्ध्युपयोगलक्षणानि 'पडुच्च' प्रतीत्य आसाद्येत्यर्थः, 'सइंदिए वक्कमइ'

होती हैं? इस का उत्तर देते हुए भगवान् कहते हैं कि (गोयमा! सिय सइंदिए वक्कमइ, सिय अणिंदिए वक्कमइ) हे गौतम! जीव इन्द्रिय सहित भी उत्पन्न होता है और इन्द्रिय विना का भी होता है। इस तरह दोनों पक्ष मान्य हुए हैं। किसी अपेक्षा से इन्द्रियविशिष्ट भी उत्पन्न होता है और किसी अपेक्षा से इन्द्रिय विना का भी उत्पन्न होता है। (से केणट्ठेणं) हे भदन्त! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि इन्द्रिय सहित भी जीव गर्भ में उत्पन्न होता है और इन्द्रिय विना का भी जीव गर्भ में उत्पन्न होता है (गोयमा! दव्विंदियाइं पडुच्च, अणिंदिए वक्कमइ, भाविंदियाइं पडुच्च सइंदिए वक्कमइ से तेणट्ठेणं०) हे गौतम! द्रव्येन्द्रियों के अपेक्षा करके जीव गर्भ में विना इन्द्रियों का उत्पन्न होता है और भावइन्द्रियों की अपेक्षा करके जीव गर्भ में

ઉત્તર—"गोयमा! सिय सइंदिए वक्कमइ, सिय अणिंदिए वक्कमइ" હે ગૌતમ! જીવ ગર્ભમા ઇન્દ્રિય સહિત પણ ઉત્પન્ન થાય છે અને ઇન્દ્રિય વિના પણ ઉત્પન્ન થાય છે આ રીતે બન્ને પક્ષનો સ્વીકાર કર્યો છે

પ્રશ્ન—"से केणट्ठेण ઇત્યાદિ" હે ભગવન્! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે જીવ ગર્ભમા ઇન્દ્રિયસહિત પણ ઉત્પન્ન થાય છે અને ઇન્દ્રિય વિના પણ ઉત્પન્ન થાય છે?

ઉત્તર—"गोयमा! दव्विंदियाइं पडुच्च, अणिंदिए वक्कमइ, भाविंदियाइं पडुच्च सइंदिए वक्कमइ से तेणट्ठेण" હે ગૌતમ! દ્રવ્યેન્દ્રિયોની અપેક્ષાએ જીવ

वा भवति। ननु सशरीरिपक्षे शरीरकारणस्य मातृपितृशोणितादेरभावात् कथं सशरीरत्वं संभवति ? अशरीरिपक्षे शरीराभावे कथमुत्पत्तिः ? नहि अशरीरस्य जीवस्य क्वचिदप्युत्पत्तिरिष्टा संभवति वा, तथा सति मुक्तस्यापि तदापत्तिस्स्यादिति चेदाह—अपेक्षाभेदात् शरीराशरीरसम्भवादित्याशयेनोत्तरयति भगवान् —' गोयमा ' इत्यादि। ' गोयमा ' हे गौतम। ' सिय ससरीरी वक्कमइ ' स्यात् सशरीरी व्युत्क्रामति, ' सिय असरीरी वक्कमइ ' स्यात् अशरीरी व्युत्क्रामति, गौतमः पृच्छति-' से केणट्ठेणं ' तत् केनार्थेन,-केन कारणेन एवमुच्यते ?। भगवानाह-' गोयमा ! ' हे गौतम ! ' ओरालिय-वेउव्विय-आहारयाइ पडुच्च '

उत्पन्न होता है—तो ऐसा कहना ठीक नहीं है, क्यों कि उस समय शरीर के कारणभूत मातापिता संबंधी शुक्रशोणित आदि का अभाव रहता है। यदि कहा जावे कि अशरीरी उत्पन्न होता है, तो ऐसा कहना भी ठीक नहीं बनता, कारण कि बिना शरीर के सिद्धों की तरह जीव की उत्पत्ति ही नहीं हो सकती है ? सो ऐसी आशंका ठीक नहीं, कारण-अपेक्षाभेद से शरीरसहितपना और शरीररहितपना माना गया है और इसी आशय से भगवान् ने इसका उत्तर यों दिया है- (गोयमा ! सिय ससरीरी वक्कमइ, सिय असरीरी वक्कमइ) हे गौतम ! जीव गर्भ में किसी अपेक्षा से सशरीरी भी उत्पन्न होता है और किसी अपेक्षा से बिना शरीर के भी उत्पन्न होता है। (से केणट्ठेणं॰) हे भदन्त ! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि जीव गर्भ में शरीरसहित भी उत्पन्न होता है और शरीररहित भी उत्पन्न होता है ?

જો એમ કહેવામાં આવે કે શરીરરહિત ઉત્પન્ન થાય છે—તો તે કથન બરાબર નથી કારણ કે તે સમયે શરીરના કારણભૂત માતાપિતાના શુક્ર શોણિત વગેરેનો અભાવ હોય છે જો એમ કહેવામાં આવે કે તેઓ અશરીરી ઉત્પન્ન થાય છે—તો તે કથન પણ યોગ્ય લાગતી નથી કારણ કે શરીર વિના સિદ્ધોના આત્માઓની જેમ જીવની ઉત્પત્તિ જ થઈ શકતી નથી. ઉપરની શંકા આશય ને અનુચિત છે કારણ કે ભિન્ન ભિન્ન દૃષ્ટિએ વિચાર કરીને શરીરયુક્તતા અને શરીરરહિતતા માનવામાં આવી છે અને એ આશયથી ભગવાન તેનો આ પ્રમાણે ઉત્તર આપે છે-(ગોયમા ! સિય સસરીરી વક્કમઇ સિય અસરીરી વક્કમઇ) હે ગૌતમ ! કોઈ અપેક્ષાએ ગર્ભમાં શરીરસહિત પણ ઉત્પન્ન થાય છે અને કોઈ અપેક્ષાએ અશરીરી (શરીરરહિત) પણ ઉત્પન્ન થાય છે

जीवः सेन्द्रिय एव उत्पद्यते इति भावार्थः। 'से तेणट्ठेणं०' तत्तेनार्थेन गौतम? एवमुच्यते कदाचित् सेन्द्रिय उत्पद्यते कदाचिदनिन्द्रिय उत्पद्यते, द्रव्येन्द्रियापेक्षया अनिन्द्रियः भावेन्द्रियापेक्षया तु सेन्द्रियः गर्भगतस्य जीवस्येन्द्रियवैशिष्ट्या-वैशिष्ट्यं प्रतिपाद्य शरीरवैशिष्ट्यं प्रतिपादयितुमाह—'जीवे ण भंते' इत्यादि, 'जीवे णं भंते' जीव. खलु भदन्त! 'गब्भ वक्कममाणे' गर्भे व्युत्क्रामन् गर्भे उत्पद्यमानः किं ससरीरी वक्कमइ असरीरीवक्कमइ' किं सशरीरी व्युत्क्रामति, अशरीरी व्युत्क्रामति, गर्भे समुत्पद्यमानो जीवः किं शरीरविशिष्टो भवति शरीररहितो

उपयोग भावेन्द्रियों में है, अतः उपयोगात्मक भावेन्द्रियों के जीव की सर्वावस्थाओं में ही होने के कारण जीव किसी भी समय किसी भी अवस्था में इन्द्रियों से रहित नहीं होता है। जीव का और उपयोग का तादात्म्य संबंध कहा गया है, अतः इस अभिप्राय से गर्भ में भी जीव इन्द्रियसहित भी उत्पन्न होता है। (से तेणट्ठेणं०) इस कारण हे गौतम! मैं ऐसा कहता हूं कि जीव किसी अपेक्षा इन्द्रियसहित उत्पन्न होता है और किसी अपेक्षा इन्द्रियरहित उत्पन्न होता है।

इस तरह गर्भगत जीव के इन्द्रियसहितपना और इन्द्रियरहितपना प्रतिपादन करके अब सूत्रकार उसके शरीरसहितना और शरीररहितता का प्रतिपादन करने के लिये प्रश्नोत्तरपूर्वक सूत्र कहते हैं (जीवे णं भंते! गब्भं वक्कममाणे किं ससरीरी वक्कमइ, असरीरी वक्कमइ?) हे भदन्त गर्भ में उत्पन्न होते समय जीव शरीरसहित उत्पन्न होता है, कि विना शरीर के उत्पन्न होता है? यदि कहा जावे कि शरीरसहित

ઉપયોગ એ ભાવેન્દ્રિય છે તેથી ઉપયોગાત્મક ભાવેન્દ્રિયોનુ અસ્તિત્વ જીવની સર્વ અવસ્થાઓમાં હોવાને કારણે જીવ કોઈપણ સમયે કોઈપણ અવસ્થામાં ભાવ ઇન્દ્રિયોથી રહિત હોતો નથી. જીવનો તથા ઉપયોગનો તાદાત્મ્ય સંબંધ કહ્યો છે, તેથી આ રીતે ગર્ભમા પણ જીવ ઇન્દ્રિય સહિત જ ઉત્પન્ન થાય છે એમ કહી શકાય. "से तेणट्ठेणं ઇત્યાદિ" હે ગૌતમ! તે કારણે હુ એવુ કહું છું કે કોઈ અપેક્ષાએ ગર્ભમાંનો જીવ ઇન્દ્રિય સહિત ઉત્પન્ન થાય છે અને કોઈ અપેક્ષાએ ઇન્દ્રિય રહિત ઉત્પન્ન થાય છે

આ રીતે ગર્ભગત જીવની ઇન્દ્રિયયુક્તતા અને ઇન્દ્રિયરહિતતાનું પ્રતિપાદન કરીને હવે સૂત્રકાર તેના શરીરની યુક્તતા અને શરીરરહિતતાનુ પ્રતિપાદન કરવા માટે પ્રશ્નોત્તરપૂર્વક સૂત્ર કહે છે—(जीवे ण भंते! गब्भ वक्कममाणे किं ससरीरी वक्कमइ, असरीरी वक्कमइ?) હે ભગવન્! ગર્ભમા ઉત્પન્ન થતી વખતે જીવ શરીરસહિત ઉત્પન્ન થાય છે કે શરીરરહિત ઉત્પન્ન થાય છે?

सर्वदेव मात्रात् गर्भोत्पत्तिसमयपि जीव शरीरत्वानेवेति तादृशशरीरद्वयापेक्षया सशरीरी समुत्पद्यते इति कथ्यते, एवमौदारिकवैक्रियाहारक-शरीरत्रयापेक्षया अशरीरीति कथ्यते उत्पत्तेः पूर्वमेवाहशशरीरत्रयस्य तस्याभावादिति ।

पूर्वं शरीरेन्द्रियविषयक वर्णनं कृत साम्प्रत शरीरेन्द्रियवत्त्वे आहारस्यावश्यकता मवेदित्याहारसूत्रमाह-'जीवे णं भंत' इत्यादि । 'जीवे णं भंते' जीव खलु भदन्त ! 'गब्भ वक्कममाणे' गर्भं व्युत्क्रामन् गर्भे समुत्पद्यमान इत्यर्थः,'तप्पढमयाए' तत्प्रथमतया 'किं आहार माहारेइ' कमाहारमाहरति 'तप्पढमयाए' त्ति, तस्य गर्भागमनस्य प्रथमतेति तत्प्रथमता, तया प्रथमतया गर्भे उत्पद्यमान एवेत्यर्थः, कमाहारमाहरति-गर्भे उत्पत्त्यनन्तरं कीदृशमाहारं प्रथमत आहरतीति प्रश्नाशयः । भगवानाह-'गोयमे'त्यादि । 'गोयमा' हे गौतम ! 'माउओयं' मात्रोजः, ओजः=

औदारिक, वैक्रियक, और आहारक इन तीन शरीरों की अपेक्षा जब की जाती है-तब गर्भ में उत्पन्न होते समय इन तीन शरीरों में से जीव के कोई भी शरीर नहीं होता है इस तरह गर्भ में उत्पन्न होते समय जीव के इनमें से कोई भी शरीर न होने के कारण "वह अशरीरी गर्भ में उत्पन्न होता है" यह कथन भी बन जाता है ।

पहिले सूत्रकार ने इन्द्रिय और शरीर का वर्णन सूत्रों द्वारा कर ही दिया है। अब वे आहार का वर्णन करने के निमित्त आहारसूत्र का कथन करते हैं क्यों कि इन्द्रिय और शरीर से युक्तता होने पर जीव को आहार की आवश्यकता होती है (जीवे णं भंते ! गब्भ वक्कममाणे तप्पढमयाए किं आहारं आहारेइ) हे भदन्त ! जीव जब गर्भ में उत्पन्न होता है तब वह सर्वप्रथम क्या खाता है ? अर्थात् कैसा आहार लेता है ? (गोयमा ! माउओयं पिउसुक्कं तं तदुभयसंसिट्ठं कलुसं,

---

વિચારતા "જીવ ગર્ભમાં શરીરસહિત ઉત્પન્ન થાય છે" એ કથન બરાબર છે તથા ગર્ભમાં ઉત્પન્ન થતી વખતે જીવને ઔદારિક, વૈક્રિય, અને આહારક ત્રણ એ શરીરમાંનું કોઇ પણ શરીર હોતું નથી. એ દૃષ્ટિએ વિચાર કરતાં "જીવ ગર્ભમાં અશરીરી ઉત્પન્ન થાય છે" એ કથન પણ યોગ્ય છે"

પહેલા સૂત્રકાર ઈન્દ્રિય અને શરીરનુ વર્ણન સૂત્રો વડે કરી દીધુ જ છે હવે આહારનું વર્ણન કરવાને માટે તેઓ આહાર સૂત્રનું કથન કરે છે કારણ કે ઇન્દ્રિયો અને શરીરથી યુક્ત એવા જીવને આહારની આવશ્યકતા રહે છે-(जीवे णं भंते ! गब्भं वक्कममाणे तप्पढमयाए किं आहारं आहारेइ ?) હે ભગવન્ ! જ્યારે જીવ ગર્ભમાં ઉત્પન્ન થાય છે, ત્યારે તે સૌથી પહેલાં શું ખાય છે ? એટલે કે કેવો આહાર લે છે ?

औदारिकवैक्रियाहारकाणि शरीरत्रितयानि प्रतीत्य=समाश्रित्य 'असरीरी वक्कमइ' अशरीरी व्युत्क्रामति, औदारिकादिशरीरत्रितयापेक्षया औदारिकादिशरीरत्रयं विहाय जीवो गर्भे समुत्पद्यमान अशरीरी समुत्पद्यते इति, 'तेयाकम्माइं-पडुच्च' तैजसकार्मणे शरीरे प्रतीत्य=समाश्रित्य 'ससरीरी वक्कमइ। सशरीरी व्युत्क्रमति, तैजसकार्मणशरीरद्वयापेक्षया जीवः सशरीरी समुत्पद्यते इति भावः। 'से तेणट्ठेणं गोयमा०' तत्तेनार्थेन गौतम! एवमुच्यते, स्यात् कदाचित् अशरीरी कदाचित्सशरीरी गर्भे व्युत्क्रामति, अयमाशयः तैजसकार्मणशरीरद्वयसंबन्धस्य

(गोयमा! ओरालिय-वेउव्विय-आहारयाइं पडुच्च असरीरी वक्कमइ) हे गौतम! जीव को जो "अशरीरी उत्पन्न होता है" ऐसा कहा है उसका कारण यह है कि-उस समय उस के औदारिक वैक्रिय और आहारक इन तीन शरीरोंमें से एक भी शरीर नहीं होना है। इस अपेक्षा विना शरीरके ही जीव उत्पन्न होता है। (तेया-कम्माइं पडुच्च ससरीरी वक्कमइ) तैजस और कार्मण इन दो शरीरों की अपेक्षा जब की जाती है तब वह शरीरसहित ही गर्भमें उत्पन्न होता है, ऐसा कहा जाता है। (से तेणट्ठेणं०) इस कारण हे गौतम! मैं ऐसा कहता हू कि जीव गर्भ में शरीररहित और शरीरसहित भी उत्पन्न होता है। तात्पर्य कहने का यह है कि-"सर्वस्य" सूत्र के अनुसार तैजस और कार्मण ये दो शरीर समस्त संसारी जीवों के होते हैं, इसलिये गर्भ में उत्पत्ति होने के समय में भी इनका सद्भाव रहता है अतः इस अपेक्षा से जीव गर्भ में शरीरसहित भी उत्पन्न होता है-ऐसा कथन बन जाता है। तथा

प्रश्न—से केणट्ठेणं० ઇત્યાદિ હે ભગવન્! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે જીવ ગર્ભમાં શરીરસહિત પણ ઉત્પન્ન થાય છે અને શરીર રહિત પણ ઉત્પન્ન થાય છે?

ઉત્તર—(गोयमा! ओरालिय, वेउव्विय, आहारयाइं, पडुच्च असरीरी वक्कमइ) હે ગૌતમ! "જીવ અશરીરી ઉત્પન્ન થાય છે," એવું જે કહ્યું છે તેનું કારણ એ છે કે, તે સમયે તેને ઔદારિક વૈક્રિય અને આહારક, એ ત્રણ શરીરમાનુ એક પણ શરીર હોતું નથી એ દૃષ્ટિબિન્દુથી ઉત્પન્ન થતી વખતે જીવ અશરીરી જ હોય છે, (तेयाकम्माइं पडुच्च ससरीरी वक्कमइ) તથા તૈજસ અને કાર્માણ, એ બે શરિરની અપેક્ષાએ એમ કહી શકાય કે જીવ શરીરસહિત જ ગર્ભમા ઉત્પન્ન થાય છે से तेणट्ठेणं० ઇત્યાદિ હે ગૌતમ! તે કારણે હુ એવું કહુ છુ કે જીવ ગર્ભમા શરીરરહિત પણ ઉત્પન્ન થાય છે અને શરીરસહિત પણ ઉત્પન્ન થાય છે તાત્પર્ય એ છે કે-"सर्वस्य" એ સૂત્રાનુસાર તૈજસ અને કાર્મણ એ બે શરીરો તમામ સંસારી જીવોને હોય છે તેથી ગર્ભમા જીવની ઉત્પત્તિ થતી વખતે પણ તેમનો સદ્ભાવ હોય છે, એ દૃષ્ટિએ

चिकृतीनामेकदेश इति प्रकाशः तेन निष्पन्न ओजः-सारमाहरति-गृह्णातीति भावः। 'जीवस्स णं भंते ' जीवस्य खलु भदन्त ! 'गब्भगयस्स समाणस्स' गर्भगतस्य सतः 'अत्थि-उच्चारे इ वा ' अस्ति उच्चार इति वा, उच्चारः-पुरीषम् 'पासवणे इ वा ' प्रस्रवणमिति वा, प्रस्रवणं-मूत्रम् 'खेलेइवा ' खेल इति वा, खेलः-श्लेष्मा, 'सिंघाणे इ वा ' सिंघानक मिति वा, सिंघानकं-नासिकामलं, 'वंते इ वा ' वान्तमिति वा, वान्त-वमनम्, 'पित्ते इ वा' पित्तमिति वा, हे भदन्त! गर्भगतस्य जीवस्य मूत्रपुरीषवमनपित्तश्लेष्मादिकं भवति किमिति प्रश्नः भगवानाह—'णो इणट्ठे समट्ठे ' नायमर्थः समर्थः, यत् गर्भगतस्य नोच्चारादिकं भवतीति भावः। गौतमः पृच्छति-' से केणट्ठेणं ' तत् केनार्थेन हे भदन्त ! केन कारणेन एवमुच्यते यत् गर्भगतस्य जीवस्योच्चारादिकं न भवतीति। भगवानाह-'गोयमे 'त्यादि, 'गोयमा ' हे गौतम ! जीवे णं गब्भगए समाणे ' जीवः खलु

करता है। (जीवस्स णं भंते ! गब्भगयस्स समाणस्स अत्थि उच्चारेइ वा पासवणेइ वा, खेलेइ वा, सिंघाणेइ वा, वंतेइ वा, पित्तेइ वा ?) हे भदन्त ! गर्भ में स्थित जीव के मल होता है क्या ? मूत्र होता है क्या ? कफ होता है क्या ? नाक का मैल होता है क्या ? वमन होता है क्या ? पित्त होता है क्या ? (गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे) हे गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है। अर्थात् गर्भगत जीव के उच्चार (बड़ी नीत) मल होना, पासवण (लघुनीत) मल मूत्र आदि का होना यह सब नहीं होता है (से केणट्ठेणं०) हे भदन्त) आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि गर्भगत जीव के मलमूत्र आदि नहीं होते हैं (गोयमा !

જે આહાર કરે છે તે આહારના એકદેશથી એટલે કે ખાવામાં આવેલ તે રસવિકૃતિયોના એક અંશ વડે તૈયાર થયેલ જે ઓજ (સાર) છે, તેનો તે આહાર કરે છે (जीवस्स णं भंते ! गब्भगयस्स सामणस्स अत्थि उच्चारेइ वा पासवणेइ वा खेलेइ वा, सिंघाणेइ वा, वंतेइ वा, पित्तेइ वा ?) હે ભગવન્ ! ગર્ભમાં રહેલા જીવને શું ઝાડો થાય છે? પેશાબ થાય છે ? કફ થાય છે? નાકનો મેલ હોય છે ? ઉલટી થાય છે ? પિત્ત થાય છે ? (गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे) હે ગૌતમ ! તે અર્થ બરાબર નથી-એટલે કે ગર્ભમાં રહેલ જીવને ઉચ્ચાર (ઝાડો) પાસવણ (પેશાબ) વગેરે કંઇ પણ થતું નથી. (से केणट्ठेणं० ઇત્યાદિ હે ભગવન્ ! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે ગર્ભગત જીવને ઝાડો પેશાબ વગેરે કંઇ પણ થતાં નથી ? (गोयमा ! जीवे णं गब्भगए समाणे

आर्तवम् शोणितमित्यर्थः, 'पिउसुक्कं' पितृशुक्रं, पितृवीर्यमाहरतीति सम्बन्धः। 'तं' इति आहारम्, कीदृशमित्याह—'तदुभयसंसिट्ठं' 'तदुभयसंश्लिष्टं, तदुभयेन-मात्रोज.पितृशुक्ररूपेण संश्लिष्टं=संमिलितम्, अत एव कलुषम्=अतिघृणितम् आहारम् 'किव्विसं' किल्विषम्=अपवित्रम्, एतादृशम् आहारं 'तप्पढमयाए' तत्प्रमतया सर्वतः प्रथमम् 'आहारेइ' आहरति, गर्भे उत्पद्यमानस्य आहारं निरूप्य सम्प्रति गर्भगतः सन् जीवः कीदृशमाहारमाहरतीति निरूपयति–'जीवे णं भंते' इत्यादि। 'जीवे णं भते' जीवः खलु भदन्त! 'गब्भगए समाणे' गर्भगतः सन् 'किं आहारं आहारेइ' कमाहारमाहरति, भगवानाह—'गोयमे'–त्यादि। 'गोयमा' हे गौतम! 'जं से माया' यास्तस्य माता, या इति यद्रूपाः, 'णाणा विहाओ' नानाविधा–अनेकप्रकारकाः, 'रसविगईओ' रसविकृतीः–रसरूपाविकृतीः दुग्धदध्यादिरूपाः 'आहारं आहारेइ' आहारमाहरति, आहारतया गृह्णाति, 'तदेगदेसेणं ओयं आहारेइ' तदेकदेशेन ओज आहरति, तदेकदेशेन तासां

किव्विसं तप्पढमयाए आहारं आहारेइ) हे गौतम। जीव जब माता के गर्भ में उत्पन्न होता है–तब वह सर्व से प्रथम माता का ओज–आर्तव-अर्थात् शोणित और पिता का शुक्र इन दोनों से मिश्रित जो आहार होता है उसे ग्रहण करत है। यह आहार अतिघृणित होता है। तथा अपवित्र होता है, क्यों कि यह माता के शोणित और पिता के वीर्य से मिश्रितरूप होता है। (जीवे णं भंते! गब्भगए समाणे किं आहारं आहारेइ) हे भदन्त! जीव जब तक माता के गर्भ में रहता है तबतक वह क्या आहार करता है? (गोयमा! जं से माया णाणाविहाओ रसविगईओ आहारं आहारेइ, तदेगदेसेणं ओयं आहारेइ) हे गौतम! जो उसकी माता दूध, दहीं आदिरूप नाना प्रकार की विकृतियों का आहार करती है उस आहार के एकदेश से अर्थात् उपभुक्त उन रस विकृतियों के एकांश से निष्पन्न जो ओज है–सार है–उसका वह आहार ग्रहण

ઉત્તર—(गोयमा! माउओयं पिउसुक्कं तं तदुभयसंसिट्ठं कलुसं, किव्विसं तप्पढमयाए आहार आहारेइ) હે ગૌતમ! જ્યારે જીવ માતાના ગર્ભમા ઉત્પન્ન થાય છે ત્યારે માતાનું ઓજ (આર્તવ, શોણિત) અને પિતાનુ શુક્ર, એ બન્નેથી મિશ્રિત જે આહાર હોય છે તે ખાય છે માતાના શોણિત અને પિતાના શુક્રથી મિશ્રિત હોવાને કારણે તે આહાર ઘૃણિત (મેલો) અને અપવિત્ર હોય છે. (जीवे णं भंते! गब्भगए समाणे किं आहार आहारेइ?) હે ભગવન્! જીવ માતાના ગર્ભમાં રહે ત્યા સુધી કયો કયો આહાર લે છે? (गोयमा! जं से माया णाणाविहाओ रसविगईओ आहार आहारेइ, तदेगदेसेणं ओय आहारेइ) હે ગૌતમ! તેની માતા દૂધ, દહીં વગેરે રૂપ વિવિધ પ્રકારની વિકૃતિયો વાળો

हारमाहर्तुम् , हे भदन्त ! गर्भस्थो जीव मुखेनाहारमाहर्तुं समर्थो भवेदिति प्रश्नः। भगवानाह—' गोयमे 'त्यादि । ' गोयमा ' हे गौतम ! ' णो इणट्ठे समट्ठे ' नायमर्थ समर्थ , गर्भगतो जीवो मुखेन कावलिकमाहारं नाहरतीति । तत्कारणं पृच्छति–' से केणट्ठेणं ' तत्केनार्थेन, केन कारणेन हे भदन्त ! एवमुच्यते यत् गर्भगतो जीवो कावलिकमाहारमाहर्तुं न समर्थ इति । भगवानाह—' गोयमा ' इत्यादि, ' गोयमा ' हे गौतम ! ' जीवेणं गब्भगए समाणे सव्वओ आहारेइ ' जीवः खलु गर्भगतः सन् सर्वतः सर्वात्मना आहरति, ' सव्वओ परिणामेइ ' सर्वतः सर्वात्मना परिणमयति ' सव्वओ उस्ससइ ' सर्वत सर्वात्मना उच्छ्वसति, श्वास मुञ्चति, ' सव्वओ निस्ससइ' सर्वतो निःश्वसति, सर्वात्मना श्वास मुञ्चति, 'अभिक्खणं आहारेइ ' अभीक्ष्णमाहरति पुनः पुनराहरतीत्यर्थ , ' अभिक्खणं परिणामेइ'

आहारित्तए) हे भदन्त ! गर्भगत जीव क्या मुख से कवलरूप निवाला आहार करने में समर्थ है ? (गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे) हे गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है । अर्थात् गर्भगत जीव मुख से कावलिक आहार लेने में समर्थ नहीं है । (से केणट्ठेणं०) हे भदन्त ! आप ऐसा किस कारण से कहते हो कि गर्भगत जीव कावलिक रूप आहार लेने में समर्थ नहीं है ? (गोयमा ! जीवे ण गब्भगए समाणे सव्वओ आहारेइ) हे गौतम ! गर्भ में रहा हुआ जीव सर्वात्मना खाता है (सव्वओ परिणामेइ) खाए हुए को सर्वात्मना परिणमाता है । (सव्वओ निस्ससइ) सर्वात्मना वह श्वास लेता है (सव्वओ निस्ससइ) सर्वात्मना वह निश्वास लेता है, अर्थात् सर्वात्मना वह श्वास को छोड़ता है । (अभिक्खणं आहारेइ) वार २ वह आहार लेता है । (अभिक्खण परिणामेइ)

आहार आहरित्तए ?) हे भगवन् ! शु गर्भमां रहेलो जीव मुखथी कवलाहार (कोळीया वडे खावुं ते) ग्रहण करवाने समर्थ होय छे ? (गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे) हे गौतम ! ते अर्थ बराबर नथी, एटले के गर्भमा रहेल जीव मुखथी कवलाहार लेवाने समर्थ होतो नथी. (से केणट्ठेणं) हे भगवन् ! आप शा कारणे एवुं कहो छो के गर्भमां रहेलो जीव कवल आहार ग्रहण करवाने समर्थ होतो नथी ? (गोयमा ! जीवेणं गब्भगए समाणे सव्वओ आहारेइ) हे गौतम ! गर्भमां रहेलो जीव सर्व आत्मप्रदेशो वडे खाय छे (सव्वओ परिणामेइ) खाधेला बधा आहारने सर्व आत्मप्रदेशो वडे परिणमावे छे (सव्वओ ऊससइ) सर्व आत्मप्रदेशो वडे ते श्वास ले छे (सव्वओ निस्ससइ) अने सर्व आत्मप्रदेशो वडे निश्वास छोडे छे (अभिक्खणं आहारेइ) ते वारवार आहार

गर्भगतः सन् 'जं आहारेइ तं चिणाइ' यदाहरति तत् चिनोति, 'तं सोइंदियत्ताए' तत् श्रोत्रेन्द्रियतया 'जाव फासिंदियत्ताए' यावत् स्पर्शनेन्द्रियतया, यावत् पदेन-चक्षुरसनघ्राणेन्द्रियाणां-परिग्रहो भवति, 'अट्ठि अट्ठिमिंजकेसमंसुरोमनहत्ताए' अस्थ्यस्थिमज्जाकेशश्मश्रुरोमनखतया, तत्र-'अट्ठिमिंज'-त्ति अस्थिमज्जातया-अस्थिगतधातुविशेषतया 'केस' त्ति, केशतया 'मंसु' त्ति श्मश्रुतया 'रोम'त्ति, रोमतया 'नह'त्ति नखतया च चिनोतीति सम्बन्धः, चिनोति परिणमयतीति भावः। 'से तेणट्ठेणं०' तत् तेनार्थेन हे गौतम! एवमुच्यते यद् गर्भगतस्य जीवस्य उच्चारादिकं न भवति, आह्रियमाणाहारस्य यदि कोप्यशोऽवशिष्टो भवेत्तदा तन्निःसरणात्मकमलादीनां संभावना भवेन्नत्वेवम् आह्रियमाणाहारस्य श्रोत्रेन्द्रियादिरूपेण परिणतत्वात्। 'जीवे णं भंते' जीवः खलु भदन्त! 'गब्भगए समाणे' गर्भगतः सन् 'पभू मुहेणं कावलियं आहारं आहरित्तए' प्रभुर्मुखेन कावलिकमा-

---

जीवेणं गब्भगए समाणे जं आहारेइ, तं चिणाइ) हे गौतम! गर्भस्थित जीव जो आहार करता है वह उसका चय करता है। (तं सोइंदियत्ताए जाव फासिंदियत्ताए, अट्ठि, अट्ठिमिंज,-केस,-मंसु-रोम,-नहत्ताए परिणामेइ से तेणट्ठेणं) उसे वह श्रोत्रेन्द्रिय रूप से यावत् स्पर्शन इन्द्रियरूप से, अस्थि-हड्डीरूप से, अस्थिमज्जा-अस्थिगत धातुविशेषरूप से केशरूप से, श्मश्रुरूप से, रोमरूप से, नखरूप से, परिणमाता है। इस कारण हे गौतम! मैंने ऐसा कहा है कि गर्भगत जीव उच्चार आदिक नहीं करता है। आह्रियमाण आहार का यदि कोई अंश बाकी बचा रहे तो उसे निकालने रूप मलादिकों की संभावना हो सकती है, परन्तु ऐसा तो होता नहीं है, क्यों कि आह्रियमाण आहार श्रोत्रेन्द्रियादिरूप से परिणत होता रहता है। (जीवे णं भंते! गब्भगए समाणे पभू मुहेणं कावलियं आहारं

जं आहारेइ, त चिणाइ) હે ગૌતમ ! ગર્ભમા રહેલ જીવ જે આહાર કરે છે, તેનો તે ચય કરે છે (त सोइदियत्ताए जाव फासिंदियत्ताए अट्ठि, अट्ठिमिंज, केस, मसु, रोम, नहत्ताए से तेणट्ठेणं०) તેને તે ગર્ભનો જીવ શ્રોતેન્દ્રિયથી લઇને સ્પર્શેન્દ્રિય રૂપે, અસ્થિ (હાડકા) રૂપે, અસ્થિમજ્જારૂપે, કેશરૂપે, શ્મશ્રુ (દાઢી) રૂપે, રોમરૂપે, અને નખરૂપે પરિણમાવે છે તે કારણે, હે ગૌતમ ! મે એવુ કહ્યુ છે કે ગર્ભમાં રહેલ જીવ મળ, મૂત્રાદિ કરતો નથી આહાર રૂપે ગ્રહણ કરાયેલ આહારનો કોઇ ભાગ જો ચય પામ્યા વિનાનો બાકી રહે તો તેને બહાર કાઢવા માટે ઝાડા, પેશાબ વગેરે જરૂરીયાત રહે છે પણ ગર્ભમાં રહેલ જીવની બાબતમાં એવું બનતુ નથી કારણ કે આહાર રૂપે ગ્રહણ કરાયેલ ખોરાક શ્રોત્રેન્દ્રિય આદિ રૂપે પરિણમતો રહે છે. (जीवे ण भंते! गब्भगए समाणे पभूमुहेण कावलियं

'पुत्तजीवरसहरणी' पुत्रजीवरसहरणी, एते द्वे नाड्यौ स्तः, तयोर्मध्ये आद्या या मातृजीवरसहरणी सा, 'माउजीवपडिबद्धा पुत्तजीवफुडा' मातृजीवप्रतिबद्धा पुत्रजीवस्पृष्टा, इयं रसग्राहिका नाडी मातृजीवप्रतिबद्धा-मातृजीवेन सह संबद्धा, तथा सैव नाडी पुत्रजीवस्पृष्टा इति पुत्रजीव स्पर्शिका भवति, इह प्रतिबद्धता च गाढसंबन्ध, मातृजीवस्यांशरूपत्वात्तस्या, स्पृष्टता च संबन्धमात्रम्, यतो न सा पुत्रजीवस्यांशरूपा, मातृजीवप्रतिबद्धा केवलं पुत्रजीव स्पृशत्येवेति 'तम्हा आहारेइ' तस्मादाहरति यस्मात् एवं तस्मात् कारणात् मातृजीवप्रतिबद्धया रसहरण्या नाड्या पुत्रजीवेन सह स्पर्शनात् गर्भगतो जीव आहरति=आहारं

को हरण करने वाली नाडी नाभिनाल होता है। क्योंकि माता द्वारा उपभुक्त आहार का रस गर्भगत जीव को इसी के द्वारा मिलता रहता है इसलिये "रसो ह्रियते-आदीयते यया सा रसहरणी" ऐसी रसहरणी शब्द की व्युत्पत्ति टीकाकार ने की है। (पुत्तजीवरसहरणी) पुत्रजीवरसहरणी-यह भी एक नाडी होती है। इस तरह ये दो नाडियां हैं। इनके बीचमें जो आदि की नाडी मातृजीवरसहरणी है वह (माउजीवपडिबद्धा) मातृजीव के साथ संबद्ध रहती है, और पुत्र जीव के साथ स्पृष्ट होती है। प्रतिबद्धता शब्द का तात्पर्य गाढसंबंध से है, क्यों कि यह प्रतिबद्धता मातृजीव के अंशरूप होती है। और स्पृष्टता का तात्पर्य सामान्य संबंध से है, क्योंकि यह स्पृष्टता पुत्र जीव के अंशरूप नहीं होती है। मातृजीव प्रतिबद्धा नाडी केवल पुत्र जीवका स्पर्श ही करती है। (तम्हा आहारेइ) इसलिये वह आहार करता है। तात्पर्य यह है कि मातृजीवप्रतिबद्ध रसहरणी नाडी पुत्र जीव

નાડી-નાભિનાલ-માતા વડે આહાર રૂપે ગ્રહણ કરાયેલ આહારનો રસ ગર્ભસ્થ જીવ તે નાભિનાલ વડે મેળવતો રહે છે તેથી "रसो ह्रियते-आदीयते यया सा रसहरणी" એવી રસહરણી શબ્દની વ્યુત્પત્તિ ટીકાકારે કરી છે (पुत्तजीवरसहरणी) પુત્રજીવરસહરણી-તે પણ એક નાડી હોય છે તેમાની પહેલી માતૃજીવરસહરણી નાડી (माउजीवपडिबद्धा) માતાના જીવ સાથે બંધાયેલી રહે છે અને પુત્રના જીવ સાથે પણ સ્પૃષ્ટ હોય છે પ્રતિબદ્ધપણું એટલે ગાઢ સંબંધ. કારણ કે તે પ્રતિબદ્ધપણું માતૃજીવના અંશરૂપ હોય છે સ્પૃષ્ટતા એટલે સામાન્ય સંબંધ કારણ કે તે સ્પૃષ્ટતા પુત્રજીવના અંશ રૂપ હોતી નથી. માતાના જીવ સાથે બંધાયેલી નાડી માત્ર પુત્રના જીવનો સ્પર્શ જ કરે છે (तम्हा आहारेइ) તેથી તે આહાર કરે છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે માતૃજીવપ્રતિબદ્ધરસહરણી નાડી પુત્ર જીવની સાથે સ્પર્શ કરે છે, તે કારણે

अभीक्ष्णं=पौनःपुन्येन परिणमयति,'अभिक्खणं उस्ससइ' अभीक्ष्णमुच्छ्वसति'अभिक्खणं निस्ससइ ' अभीक्ष्णं निःश्वसति, कदाचित् ' आहच्च आहारेइ ' आहत्याहरति-विरम्य विरम्य आहरति, 'आहच्च परिणामेइ' आहत्य परिणमयति, 'आहच्च उस्ससइ ' आहत्योच्छ्वसति, आहच्च निस्ससइ ' आहत्य निःश्वसति, कदाचिदाहारादिकं करोति गर्भगतो जीवः कदाचिदाहारादिकं न करोति, एतादृशस्वभावत्वात्तस्य , गर्भगतो जीवः कथं सर्वत आहारं करोतीत्याह-' माउजीवे '-त्यादि । ' माउजीवरसहरणी ' मातृजीवरसहरणी, रसो ह्रियते आदीयते यया सा रसहरणी नाभिनालमित्यर्थः, मातृजीवस्य रसहरणीति मातृजीवरसहरणी, तथा

बार २ वह लिये हुए आहार को बार २ परिणमाता है । (अभिक्खणं-उस्ससइ) बार २ वह श्वास लेता है। (अभिक्खणं निस्ससइ) बार २ वह श्वास छोड़ता रहता है । (आहच्च आहारेइ) कदाचित् वह ठहर ठहर कर आहार करता है। (आहच्च परिणामेइ) कदाचित् वह ठहर २ कर उस कृत आहार को परिणमाता है । (आहच्च उस्ससइ) कदाचित् ठहर २ कर वह श्वास लेता है (आहच्च निस्ससइ) कदाचित् वह ठहर २ कर निःश्वास लेता है । तात्पर्य इस कथन का यह है कि गर्भगत जीव कदाचित् आहार आदि करता भी है और. कदाचित् आहार आदि नहीं भी करता है, क्यों कि उसका ऐसा ही स्वभाव होता है। गर्भगत जीव सर्वात्मना कैसे आहार करता है ? इसके समाधान निमित्त भगवान् कहते हैं कि (माउजीवरसहरणी) मातृजीव रस हरिणी-यहां मातृ जीव रसहरिणी शब्द का अर्थ-मातृ जीव के रस

લે છે (अभिक्खणं परिणामेइ) અને વારવાર ગ્રહણ કરેલા આહારને વારવાર પરિણમાવે છે (अभिक्खणं उस्ससइ) વારવાર તે શ્વાસ લે છે, (अभिक्खणं निस्ससइ) વારવાર તે શ્વાસ છોડે છે (आहच्च आहारेइ) ક્યારેક તે થોભી થોભીને પણ આહારને લે છે. (आहच्च परिणामेइ) ક્યારેક થોભી થોભીને તે આહારને તે પરિણમાવે છે (आहच्च उस्ससइ) અને ક્યારેક થોભી થોભીને તે શ્વાસ લે છે (आहच्च निस्ससइ) અને ક્યારેક થોભી થોભીને તે નિઃશ્વાસ છોડે છે-આ કથનનુ તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે-ગર્ભમાં રહેલો જીવ ક્યારેક આહાર વગેરે ગ્રહણ કરે છે અને ક્યારેક આહારાદિ ગ્રહણ નથી પણ કરતો કારણ કે તેનો એવો સ્વભાવ હોય છે ગર્ભમા રહેલ જીવ સર્વ આત્મપ્રદેશો વડે કેવી રીતે આહાર લે છે તે સમજાવવા માટે ભગવાન કહે છે કે-(माउजीवस्स रसहरणी) માતૃજીવરસહરિણી-એટલે કે માતૃજીવના રસનુ હરણ કરનારી

'से तेणट्ठेणं' तदेनार्थेन, तेन कारणेन 'जाव नो पभू मुहेणं कावलियं आहारं आहरित्तए' यावत् नो प्रभुः मुखेन कावलिकमाहारमाहर्तुम्, अत्र यावत्पदन–'हे गौतम! एवमुच्यते जीवः खलु गर्भगत सन्' इति संग्रहः। पूर्वोक्त कारणेन गर्भगतो जीवो मुखेन कावलिकमाहारं कर्तुं न समर्थ इति।

गर्भाधिकारादेव गर्भगत जीवस्याङ्गविषये प्राह—'कइ णं भंते' इत्यादि। 'कइ ण भंते' कति खलु भदन्त! माइ अंगा पन्नत्ता' मात्रंगानि मज्ञप्तानि, भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि। 'गोयमा' हे गौतम! 'तओ माइ यगा पन्नत्ता' त्रिणि मात्रङ्गानि मज्ञप्तानि 'तं जहा' तद्यथा–'मंस सोणिए-मत्थुलुंगे' मांस शोणित मस्तुलुंगम्–मस्तुलुङ्गं=मस्तिक मस्तकान्तःस्थितस्निग्धपदार्थ विशेषः 'भेजा' इति मसिद्धम्, 'कइ णं भते पिइयंगा पन्नत्ता' कति खलु भदन्त! पित्रङ्गानि मज्ञप्तानि, भगवानाह—'गोयमे' त्यादि, 'गोयमा' हे गौतम! तओ पिइयंगा पन्नत्ता' त्रीणि पित्रङ्गानि मज्ञप्तानि 'तं जहा' तद्यथा—'अट्ठि अट्ठि

पुत्र की नाभि में और माता के हृदय में नाड़ी संबंधित है। इसी नाड़ी से गर्भगत जीव कुल्यासे खेतमें पानी पहुंचने के स्थानरूप नाली से केदार (क्यारा) की तरह पुष्ट होता रहता है ॥१॥

(से तेणट्ठेणं०) इस कारण हे गौतम! मैं ऐसा कहता हूं कि (जाव नो पभू मुहेणं कावलियं आहरं आहरित्तए) गर्भगत जीव मुख से कवलरूप आहारको लेने के लिये समर्थ नहीं है।

गर्भ का अधिकार होने से ही सूत्रकार अब गर्भगत जीव के अंग के विषय में प्रश्नोत्तरपूर्वक सूत्र कहते हैं–(कइ णं भंते! माइअंगा पन्नत्ता) हे भदन्त! माता के अंग कितने कहे गये हैं? (गोयमा! तओ माइ अंगा पन्नत्ता, त जहा मंसे, सोणिए, मत्थुलुंगे) हे गौतम! माता के अंग

(से तेणट्ठेणं०) હે ગૌતમ! તે કારણે હું એવું કહું છું કે (जाव नो पभू मुहेणं कावलियं आहारं आहारित्तए) ગર્ભમાં રહેલ જીવ મુખ વડે કવલાહાર લેવાને સમર્થ હોતો નથી.

ગર્ભનો અધિકાર ચાલતો હોવાથી હવે સૂત્રકાર ગર્ભમાં રહેલ જીવનાં અંગોના વિષયમાં પ્રશ્નોત્તર પૂર્વક સૂત્રો કહે છે (कइ णं भंते! माइअंगा पन्नत्ता) હે ભગવન્! ગર્ભમાં રહેલ જીવમાં માતાના અંગો કેટલા હોય છે? (गोयमा! तओ माइअंगा पन्नत्ता–तं जहा–मंसे सोणिए, मत्थुलुंगे) હે ગૌતમ! માતાનાં ત્રણ અંગ તેને હોય છે–(૧) માંસ, (૨) શોણિત, (રુધિર) અને (૩) મગજ (कइ ण भंते! पिइअंगा पन्नत्ता?) હે ભગવન્ તે જીવને પિતાના કેટલાં અંગો હોય છે? (गोयमा! तओ पिइअंगा पन्नत्ता) હે ગૌતમ! તે જીવને

करोति 'तम्हा परिणामेइ' तस्मात् परिणमयति, तस्मादेव कारणात्तद् आहृतमाहारं परिणमयति। 'अवरावि य णं' अपरापि च स्पर्शिका खलु अपरा=अन्या या 'पुत्तजीवरसहरणी' पुत्रजीवरसहरणी सा 'पुत्तजीवपडिबद्धा' पुत्रजीवप्रतिबद्धा, पुत्रजीवेन सह संबद्धा सैव, 'माउजीवफुडा' मातृजीवस्पृष्टा, मातृजीवस्य केवलं स्पर्शं कुर्वती, यस्मादेवम् 'तम्हा' तस्मात् कारणात् गर्भगतो जीवः 'चिणाइ' चिनोति, पुष्णाति सामान्येन शरीरादिकं पुष्टं करोति, एवम् 'तम्हा उवचिणाइ' तस्मादुपचिनोति, तस्मादेवकारणात् विशेषतया पुष्णाति=पुष्टं करोति शरीरादिकं गर्भगतो जीव इति। उक्त च—

"पुत्रस्य नाभौ मातुश्च, हृदि नाडी निबध्यते।
ययासौ पुष्टिमाप्नोति, केदार इव कुल्यया" ॥१॥

के साथ स्पर्श करती है, इस कारण गर्भगत जीव उस मातृजीवप्रतिबद्ध नाडी द्वारा आहार लेता है। (तम्हा परिणामेइ) इसी कारण वह आहृत आहार को परिणमाता है। (अवरा वि य ण पुत्तजीवपडिबद्धा माउजीवफुडा तम्हा चिणाइ तम्हा उवचिणाइ) तथा दूसरी नाडी जो पुत्र जीवरस हरिणी है वह पुत्र जीवके साथ संबद्ध है और मातृजीव को स्पर्श करती है। इसकारण गर्भगत जीव सामान्यरूप से अपने शरीर आदि को पुष्ट करता रहता है। विशेषरूप से पुष्ट करता रहता है।कहा भी है—

"पुत्रस्य नाभौ मातुश्च हृदि नाड़ी निबध्यते।
ययासौ पुष्टिमाप्नोति केदार इव कुल्यया ॥१॥"

ગર્ભમાં રહેલ જીવ માતૃજીવપ્રતિબદ્ધ નાડી વડે આહાર લે છે (तम्हा परिणामेइ) તેથી આહાર કરેલ આહારને પરિણમાવે છે (अवरा वि य ण पुत्तजीवपडिबद्धा माउजीवफुडा—तम्हा चिणाइ, तम्हा उवचिणाइ) તથા બીજી પુત્ર જીવરસહરિણી નામની નાડી પુત્ર જીવની સાથે બંધાયલી છે અને માતાના જીવનો માત્ર સ્પર્શ જ કરે છે તે કારણે ગર્ભમા રહેલ જીવ સામાન્ય રૂપે તથા વિશેષરૂપે પોતાના શરીર વગેરેની પુષ્ટિ કરતો રહે છે,

કહ્યુ પણ છે કે—

"पुत्रस्य नाभौ मातुश्च, हृदि नाडी निबध्यते।
ययासौ पुष्टिमाप्नोति, केदार इव कुल्यया ॥१॥"

પુત્રની નાભિમાં અને માતાના હૃદયમાં નાડી સંબધિત છે જેવી રીતે કહ્યાથી—ખેતરમા પાની પહોચાડવાની નીક વડે ખેતરને પોષણ મળ્યા કરે છે, એવી રીતે તે નાડી વડે ગર્ભમા રહેલ જીવને પોષણ મળ્યા કરે છે ॥૧॥

च-ने ' अव्यापन्नम्, व्यापन्नम् विनष्टम् तन्निषेधात् अव्यापन्नम् अविनष्टमित्यर्थः, भवति=तिष्ठति, ' एवतियं कालं संचिट्ठइ ' एतावन्तं कालं संतिष्ठते ' अहे णं ' अथ खलु-शरीरप्राप्त्यनन्तरम् ' समए समए ' समये समये-प्रतिक्षणमित्यर्थः, वोक्कसिज्जमाणे वोक्कसिज्जमाणे ' व्यपकृष्यमाण व्यपकृष्यमाण-प्रतिसमय हीयमानं सत् ' चरमकालसमयंसि ' चरमकालसमये-मरणसमय ' वोच्छिन्ने भवइ ' व्युच्छिन्न भवति-नष्टं भवतीति ॥ सू० ४ ॥

गर्भस्यैवाधिकारात् गर्भगतजीवस्य गत्यन्तरगमनं प्रदर्शयन् आह- 'जीवे णं भंते' इ०

मूलम्-जीवे ण भते ! गब्भगए समाणे नेरइएसु उववज्जेज्जा, गोयमा ! अत्थेगइए उववज्जेज्जा, अत्थेगइए नो उववज्जेज्जा, से केणट्ठेण गोयमा ! से णं सन्नीपचिंदिए सव्वाहिं पज्जत्तीहिं पज्जत्तए, वीरियलद्धीए, वेउव्वियलद्धीए, पराणीय आगय सोच्चा निसम्म पएसे निच्छुभइ, निच्छुभित्ता वेउव्वियसमुग्घाएण समोहणइ, समोहणित्ता चाउरंगिणिं से

संचिट्ठइ) हे गौतम ! जितने कालतक उसका भवधारणीय शरीर विनष्ट नहीं होता है उतने कालतक ठहरता है । (अहे णं समए समए वोक्कसिज्जमाणे २ चरमकालसमयंसि वोच्छिन्ने भवइ) फिर समय पर छीजता हुआ वह अन्तसमय में नष्ट हो जाता है । तात्पर्य इस प्रश्नोत्तरका ऐसा है कि गर्भगत जीवके शरीरमें माता पिताके प्राप्त अंग तब तक रहते हैं कि जबतक उसका भवधारणीय शरीर-जन्मसे लेकर मरण पर्यन्त रहनेवाला शरीर-रहता है । जैसे२ वह भवधारणीय शरीर समय २ में हीन होता जाता है वैसे २ वे अंग भी हीन होते जाते हैं, और भवधारणीय उस शरीरके नष्ट होते ही वे अंग भी नष्ट हो जाते हैं॥सू०४॥

ધારણીય શરીર નાશ પામતુ નથી ત્યાં સુધી તે શરીર રહે છે (अहे णं समए समए वोक्कसिज्जमाणे२ चरमकालसमयंसि वोच्छिन्ने भवइ) ત્યાર બાદ પ્રત્યેક સમયે છીજતુ (ક્ષીણ થતુ) તે શરીર અંત સમયે નાશ પામે છે આ પ્રશ્નોત્તરોનુ તાત્પર્ય એ છે કે જ્યાં સુધી ભવધારણીય શરીર-જન્મથી લઈને મરણ પર્યન્ત રહેનારૂ શરીર-રહે છે ત્યાં સુધી ગર્ભમાં રહેલ જીવ પ્રાપ્ત કરેલાં માતાપિતાનાં અંગો તેનેરહે છે જેમ જેમ તે ભવધારણીય શરીર સમયે સમયે ક્ષીણ થતુ જાય છે તેમ તેમ તે અંગો પણ ક્ષીણ થતાં જાય છે અને તે ભવધારણીય શરીર નાશ પામતાં જ તે અંગો પણ નષ્ટ થઈ જાય છે ॥સૂ૦૪॥

मिंजा ' केसमंसरोमनहे ' अस्थि अस्थिमज्जाकेशश्मश्रुरोमनखाः, गर्भस्थितजीवस्य शरीरे मांसशोणितमस्तुलुङ्गानि मातुःसकाशादागतानि तथा अस्थ्यस्थिमज्जा केशश्मश्रुरोमनखाः पितुः सकाशादागतानि भवन्तीति भावः । गर्भगतस्य जीवस्य मातृपित्रवयवप्राप्तशरीरं-कियत्कालपर्यन्तं तिष्ठतीत्यावेदयितुमाह—'अम्मापिइए' इत्यादि । ' अम्मापिइए णं भंते सरीरए ' अम्बापैतृकं खलु भदन्त ! शरीरकं ' केवइयं-कालं संचिट्ठइ ' कियत्कालं संतिष्ठते, हे भदन्त !, भगवानाह-'गोयमे' त्यादि । ' गोयमा ' हे गौतम ! ' जावइयं से कालं ' यावन्तं कालं तस्य ' भवधारणिज्जे सरीरए ' भवधारणीयं शरीरम् ' अव्वावन्ने भवइ ' अव्यापन्नं भवति, भवधारणीयं=भवधारणप्रयोजन मनुष्यादि भवोपग्राहकमित्यर्थः, 'अव्वा-

तीन कहे गये हैं-वे इस प्रकार से है-१ मांस, २ शोणित (रुधिर) और तीसरा मस्तक के भीतरस्थित स्निग्ध पदार्थविशेष जिसे " भेजा " कहते हैं । (कइ णं भंते ! पिइअंगा पन्नत्ता) हे भदन्त ! पिताके अंग कितने कहे गये है ? (गोयमा ! तओ पिइअगा पन्नत्ता) हे भदन्त ! पिताके अंग तीन कहे गये हैं । (तं जहा) वे इस प्रकार से हैं (अट्ठिमिज्जा केसमंसुरोमनहे) हाड, अस्थिमज्जा केश-श्मश्रु-रोम और नख । तात्पर्य यह है कि-गर्भस्थित जीव के शरीर में मांस, शोणित और भेजा ये तीन माता से प्राप्त होते हैं और हाड १, अस्थिमज्जा २, केश, श्मश्रु, रोम और नख ३, ये पिता से प्राप्त होते हैं । गर्भगत जीव का माता पिता के अवयवों से प्राप्त शरीर कितने कालतक रहता है ? इस बात को अब सूत्रकार प्रश्नोत्तरपूर्वक कहते हैं—(अम्मापिइए णं भंते ! सरीरए केवइयं कालं संचिट्ठइ ?) हे भदन्त ! माता पिता के अवयवों से प्राप्त गर्भस्थित जीव का शरीर कितने कालतक ठहरता है ? (गोयमा ! जावइयं से कालं भवधारणिज्जे सरीरए अव्वावन्ने भवइ एवतियं कालं

પિતાના ત્રણ અંગ હોય છે-(तं जहा) તે આ પ્રમાણે છે-(अट्ठि-अट्ठिमिंजा,-केसमंसरोमनहे) હાડકા, અસ્થિમજ્જા, કેશ-શ્મશ્રુરોમ અને નખ કહેવાનો ભાવાર્થ એ છે કે ગર્ભમા રહેલ જીવના શરીરમા માસ, રુધિર અને મગજ માતા તરફથી પ્રાપ્ત થાય છે અને (૧) હાડકા, (૨) અસ્થિમજ્જા અને (૩) કેશ, શ્મશ્રુ રોમ અને નખ પિતા તરફથી પ્રાપ્ત થાય છે. માતા પિતાના અવયવોથી પ્રાપ્ત એવુ ગર્ભમાં રહેલ જીવનું શરીર ક્યા સુધી રહે છે-એ વાતને સૂત્રકાર પ્રશ્નોત્તર વડે બતાવે છે-(अम्मापिइए ण भंते ! सरीरए केवइय काल सचिट्ठइ ?) હે ભગવન્ ! માતા પિતાના અવયવોથી પ્રાપ્ત થયેલુ ગર્ભમા રહેલ જીવનુ શરીર કેટલા સમય સુધી ટકે છે ? (गोयमा ! जावइय से कालं भवधारणिज्जे सरीरए अव्वावन्ने भवइ एवइयं कालं संचिट्ठइ) હે ગૌતમ ! જ્યા સુધી તેનું ભવધાર-

जागरइ सुहियाए सुहिए भवइ, दुहियाए दुहिए भवइ, हंता गोयमा ! जीवे ण गब्भगए समाणे जाव दुहियाए दुहिए भवइ, अहे ण पसवणकालसमयंसि सीसेण वा पाएहिं वा आगच्छइ, सम आगच्छइ तिरिय आगच्छइ विणिहाय आवज्जइ वन्नव ज्झाणिय से कम्माइ बद्धाइ पुट्ठाई निहत्ताइ कडाइ पट्ठवियाइ आभिनिविट्ठाइ अभिसमन्नागयाइ उदिन्नाइ नो उवसताइ भवति, तओ भवइ दुरूवे दुवन्ने दुरसे दुफासे अणिट्ठे अकते अप्पिए असुभे अमणुन्ने अमणामे हीणस्सरे दीणस्सरे अणिट्ठस्सरे अकतस्सरे अप्पियस्सरे असुभस्सरे अमणुस्सरे अमणामस्सरे अणाएज्जवयणे पच्चायाए यावि भवइ वणवज्झाणिय से कम्माइ नो बद्धाइ पसत्थ णेयव्व जाव आदिज्जवयणे पच्चायाए यावि भवइ, सेव भते सेव भते त्ति ॥ सू० ५ ॥

॥ पढम सयये सत्तमो उद्देसो सम्मत्तो ॥ १-७ ॥

छाया—जीवः खलु भदन्त ! गर्भगतः सन् नैरयिकेषूपपद्येत ? गौतम ! अस्त्येकक उपपद्येत अस्त्येकको नोपपद्येत तत् केनार्थेन, गौतम ! ससंज्ञी पञ्चेन्द्रियः सर्वाभिः पर्याप्तिभिः पर्याप्तको वीर्यलब्ध्या वैक्रियलब्ध्या परानीकमागतं श्रुत्वा निशम्य प्रदेशान् निक्षिपति निक्षिप्य वैक्रियसमुद्घातेन समवहन्ति समवहत्य चतुरंगिणीं सेनां विकुर्वति चतुरंगिणीं सेनां विकुर्व्य चतुरङ्गिण्या सेनया परानीकेन सार्धं सग्रामं संग्रामयते सोऽर्थकामको राज्यकामको भोगकामकः कामकामकः, अर्थकांक्षितो राज्यकांक्षितो भोगकांक्षितः कामकांक्षितः, अर्थपिपासितो राज्यपिपासितो भोगपिपासित कामपिपासितः तच्चित्तस्तन्मनास्तल्लेश्यस्तदध्यवसितस्त तीव्राध्यवसानस्तदर्थोपयुक्तस्तदर्पितकरणस्तद्भावनाभावितः एतस्मिन्नन्तरे कालं कुर्यात् नैरयिकेषूपपद्यते, तत्तेनार्थेन गौतम ! यावदस्त्येकक उपपद्येत अस्त्येकको नोपपद्यते, जीवः खलु भदन्त ! गर्भगतः सन् देवलोकेषूपपद्येत, गौतम !

णं विउव्वइ चाउरंगिणिं सेणं विउव्वित्ता चाउरंगिणीए सेणाए पराणीए णं सद्धिं संगामं संगामेइ, से णं जीवे अत्थकामए रज्जकामए भोगकामए कामकामए, अत्थकंखिए रज्जकंखिए भोगकंखिए, कामकंखिए, अत्थिपिवासिए रज्जपिवासिए भोगपिवासिए कामपिवासिए, तच्चित्ते तम्मणे तल्लेसे तदज्झवसिए तत्तिव्वज्झवसाणे तदट्ठोवउत्ते तदप्पियकरणे तब्भावणभाविए, एएसिं णं अंतरंसि कालं करेज्ज नेरइएसु उववज्जइ से तेणट्ठेणं गोयमा जाव अत्थेगइए उववज्जेज्जा, अत्थेगइए नो उववज्जेज्जा, जीवे णं भंते ! गब्भगए समाणे देवलोगेसु उववज्जेज्जा, गोयमा ! अत्थेगइए उववज्जेज्जा अत्थेगइए नो उववज्जेज्जा, से केणट्ठेणं, गोयमा ! से णं सन्नी पंचिंदिए सव्वाहिं पज्जत्तिहिं पज्जत्तए तहारूवस्स समणस्स वा माहणस्स वा अंतिए एगमवि आरियं धम्मियं सुवयणं सोच्चा निसम्म तओ भवइ संवेगजायसड्ढे तिव्वधम्माणुरागरत्ते, से णं जीवे धम्मकामए पुन्नकामए सग्गकामए मोक्खकामए धम्मकंखिए पुन्नकंखिए सग्गकंखिए मोक्खकंखिए धम्मपिवासिए पुन्नपिवासिए सग्गपिवासिए मोक्खपिवासिए तच्चित्ते तम्मणे तल्लेसे तदज्झवसितत्तिव्वज्झवसाणे तदट्ठोवउत्ते तदप्पियकरणे तब्भावणाभाविए एएसि णं अंतरंसि कालं करेज्ज देवलोगेसु उववज्जइ से तेणट्ठेणं गोयमा० ।। जीवे णं भंते ! गब्भगए समाणे उत्ताणे वा पासिल्लए वा अंबखुज्जए वा अच्छेज्ज वा चिट्ठेज्ज वा निसीएज्ज वा तुयट्टेज्ज वा माउए सुवमाणीए सुवइ जागरमाणीए

'उववज्जेज्जा' उपपद्येत 'अत्थेगइए नो उववज्जेज्जा' अस्त्येकको नोपपद्येत, कश्चिन्नरके उत्पद्यते कश्चिन्नोत्पद्यते, गौतमः-प्राह—'से केणट्ठेणं' तत्केनार्थेन कारणेन हे भदन्त एवमुच्यते-भगवानाह-'गोयमे 'त्यादि, 'गोयमा' हे गौतम! 'से णं सन्नी पंचिंदिए' स खलु संज्ञी पंचेन्द्रियः 'सव्वाहिं पज्जत्तीहिं' सर्वाभिः पर्याप्तिभिः 'पज्जत्तए' पर्याप्तकः, साभिमानिरानादि जीवः कश्चिद्गर्भ गतः सन् नरकगमनयोग्यं कर्मबध्नातीति समवति, एतदेव सूचयितुं संज्ञित्वादि विशेषणानि दत्तानि तत्र 'वीरियलद्धीए' वीर्यलब्ध्या 'वेउव्वियलद्धीए' वैक्रिय लब्ध्या च सङ्ग्रामयतीत्यग्रेतनेन सह संबन्धः, अथवा 'वीरयलद्धिए वेउव्वियलद्धिए' इति वीर्यलब्धिको वैक्रियलब्धिकश्च सन् 'पराणीयं ण' परानीकं सह प्रभु सैन्यम् 'आगयं सोच्चा' आगतं श्रुत्वा 'निसम्म' निशम्य हृदयधार्य 'पएसे निच्छुभइ' प्रदेशान् निक्षिपति आत्मप्रदेशान् गर्भदेशाद्बहिष्काशयति, निष्छु

अत्थेगइए उववज्जेज्जा, अत्थेगइए नो उववज्जेज्जा) हे गौतम! कोई एक गर्भगत जीव मरकर नरकों में उत्पन्न होता है। और कोइ एक गर्भगत जीव मरकर नरकों में उत्पन्न नहीं भी होता है। (से केणट्ठेण) हे भदन्त! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि कोई एक गर्भगत जीव मरकर नरक में उत्पन्न होता है और कोइ एक गर्भगत जीव मरकर नरक में उत्पन्न नहीं होता है? (गोयमा! से णं सन्नी पंचिंदिए सव्वाहिं पज्जत्तीहिं पज्जत्तए) हे गौतम! यह संज्ञी पंचेन्द्रिय और सर्व पर्याप्तियों से पूर्ण-पर्याप्तक हुआ गर्भगत जीव (वीरियलद्धीए, वेउव्वियलद्धीए) वीर्यलब्धिद्वारा, वैक्रियलब्धिद्वारा, (पराणीयं आगयं सोच्चा) शत्रु की सेना को आई हुई सुनकर (निसम्म) उसे हृदय में धारण कर (पएसे निच्छुभइ) अपने आत्मप्रदेशों को गर्भदेश

ववज्जेज्जा, अत्थेगइए नो उववज्जेज्जा) हे ગૌતમ! કોઇ એક ગર્ભમાં રહેલ જીવ મરીને નરકોમા પણ ઉત્પન્ન થાય છે અને કોઇ એક ગર્ભમા રહેલ જીવ મરીને નરકોમા ઉત્પન્ન નથી પણ થતો (से केणट्ठेणं०) હે ભગવન્! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે કોઇ એક ગર્ભમાં રહેલ જીવ મરીને નરકોમાં ઉત્પન્ન થાય છે અને કોઇ એક ગર્ભમાં રહેલ જીવ મરીને નરકોમા ઉત્પન્ન થતો નથી? (गोयमा! से णं सन्नी पंचिंदिए सव्वाहिं पज्जत्तीहिं पज्जत्तए) હે ગૌતમ! તે સંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય અને સર્વપર્યાપ્તિયોથી પૂર્ણ-પર્યાપ્ત અવસ્થામાં રહેલો ગર્ભમાંનો જીવ (वीरियलद्धीए वेउव्वियलद्धीए पराणीयं आगयं सोच्चा निसम्म पएसे निच्छुभइ) વીર્યલબ્ધિ વડે અને વૈક્રિયલબ્ધિ વડે શત્રુની સેનાનું આગમન સાંભળીને, તેને હૃદયમાં ધારણ કરીને, પોતાના આત્મપ્રદેશોને ગર્ભપ્રદેશ

अस्त्येककउपपद्येत अस्त्येकको नोपपद्येत तत्–केनार्थेन, गौतम ! ससंज्ञी पंचेन्द्रियः सर्वाभिः पर्याप्तिभिः पर्याप्तकस्तथारूपस्य श्रमणस्य वा माहनस्य वाऽन्तिके एकमपि आर्यम् धार्मिकं सुवचनं श्रुत्वा निशम्य ततो भवति संवेगजातश्रद्धस्तीव्रधर्मानुरागरक्तः सजीवो धर्मकामकः पुण्यकामकः स्वर्गकामको मोक्षकामकः, धर्मकांक्षित पुण्यकांक्षितः स्वर्गकांक्षितो मोक्षकांक्षितः, धर्मपिपासितः पुण्यपिपासितः स्वर्गपिपासितः मोक्षपिपासितः तच्चित्तस्तल्लेश्यस्तदध्यवसितस्तत्तीव्राध्यवसानस्तदर्थोपयुक्तस्तदर्पितकरणस्तद्भावनाभावित एतस्मिन्नन्तरे कालं कुर्यात्, देवलोकेषूपपद्येत तत्तेनार्थेन गौतम०। जीवः खलु भदन्त! गर्भगतः सन् उत्तानको वा पार्श्वीयो वा आम्रकुब्जको वा आसीद्वा तिष्ठेद्वा निषीदेद्वा, त्वग्वर्तयेद्वा मातरि स्वपत्यां स्वपिति, जाग्रत्यां जागर्ति, सुखितायां सुखितो भवति, दुःखितायां दुःखितो भवति, हंत गौतम ! जीवो गर्भगतः सन् यावत् दुःखितायां दुःखितो भवति, अथ खलु प्रसवन् कालसमये शीर्षेण वा पादाभ्यां वा आगच्छति सम्यगागच्छति तिर्यगागच्छति विनिघातमापद्यते वर्णवध्यानि च तस्य कर्माणि बद्धानि स्पृष्टानि निधत्तानि कृतानि प्रस्थापितानि अभिनिविष्टानि अभिसमन्वागतानि उदीर्णानि नो उपशान्तानि भवन्ति ततो भवति दुरूपो दुर्वर्णः दूरसः दुःस्पर्शः अनिष्टः अकान्तः अप्रियः अशुभः अमनोज्ञः अमनोमः हीनस्वर दीनस्वरः अनिष्टस्वरः अकान्तस्वरः अप्रियस्वरः अशुभस्वरः अमनोज्ञस्वरः अमनोमस्वरः अनादेयवचनः प्रत्यायातश्चापि भवति, वर्णवध्यानि च तस्य कर्माणि नो बद्धानि० प्रशस्त ज्ञातव्यम् यावदादेयवचनः प्रत्यायातश्चापि भवति तदेवं भदंत तदेवं भदंत इति ॥ सू० ५ ॥

टीका—'जीवे णं भंते' जीवः खलु भदन्त ! 'गब्भगए समाणे' गर्भगतः सन् 'नेरइएसु' नैरयिकेषु 'उववज्जेज्जा' उपपद्येत किम् ? हे भदन्त ! गर्भगतो जीवो मृत्वा किं नरकेषु उत्पत्तिं प्राप्नुयादिति प्रश्नाशयः, भगवानाह— 'गोयमे'त्यादि । 'गोयमा' हे गौतम ! 'अत्थेगइए' अस्त्येककः कश्चिदित्यर्थः

गर्भ का ही अधिकार होने से सूत्रकार अब गर्भगत जीव का गत्यन्तर गमन सूत्र का कथन करते हैं–'जीवेणं भंते !" इत्यादि ।

टीकार्थ–(जीवे णं भंते ! गब्भगए समाणे नेरइएसु उववज्जेज्जा) हे भदन्त ! गर्भ में जीव क्या मरकर नरकों में उत्पन्न होता है ? (गोयमा !

ગર્ભનો અધિકાર ચાલતો હોવાથી સૂત્રકાર હવે ગર્ભમાં રહેલ જીવના બીજી ગતિમાં જવા બાબત સૂત્રનું કથન કરે છે–" जीवे णं भंते ! ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ–(जीवे णं भंते ! गब्भगए समाणे नेरइएसु उववज्जेज्जा) હે ભદન્ત ! ગર્ભમાં રહેલ જીવ શું મરીને નરકોમાં ઉત્પન્ન થાય છે ? (गोयमा ! अत्थेगइए उवव-

गर्भस्थमीवो वैक्रियलब्धिप्राप्तसेनया शत्रुसेनया सह सग्रामं करोति तादृशो जीवः ' अत्थकामए ' अर्थकामकः—अर्थे द्रव्ये कामो वांछा मात्र यस्य स अर्थ कामकः, अर्थमुद्दिश्य सग्रामं सपादयतीत्यर्थः रूपेण सर्वत्र योजनीयमिति, 'रज्जकामए' राज्यकामकः, राज्यग्रहणेच्छावानित्यर्थः ' भोगकामए ' भोगकामकः, भोगाः= ग धरसस्पर्शा तेषु कामः=वाञ्छा यस्य स तथा । ' कामकामए ' कामकामकः, कामौ=शब्दरूपौ तयोर्वाञ्छा यस्य स तथा, ' अत्थकंखिए ' अर्थकांक्षितः, अर्थे कांक्षा=गृद्धिः सजाता यस्य स अर्थकांक्षितः, ' रज्जकंखिए ' राज्यकांक्षितः,

वैक्रियसमुद्घात करता है । उससे वह चतुरंगी सेना को बना लेता है और उससे शत्रुसेना के साथ सग्राम करता है । ऐसा गर्भगत जीव नरक गमन योग्य कर्म का बंध करता है ऐसा समव होता है । यहां सूत्र में जो " वीरियलद्धीए, वेउव्वियलद्धीए " ऐसा तृतीयाविभक्त्यन्त पाठ रखा गया है सो उसके स्थान पर प्रथमाविभक्त्यन्त भी यह पाठ रखा जा सकता है, तब उसका ऐसा अर्थ होगा कि गर्भगत जो जीव है वह वीर्यलब्धिवाला और वैक्रियलब्धिवाला होकर सग्राम करता है । (से णं जीवे) ऐसा वह जीव-गर्भस्थ जीव-जो वैक्रियलब्धिद्वारा प्राप्त अपनी सेना द्वारा शत्रु सेना के साथ (अत्थकामए, रज्जकामए, भोग कामए, कामकामए) द्रव्य में वाञ्छावाला बनकर, राज्यग्रहण करने की इच्छावाला बनकर, भोग-गन्ध, रस, स्पर्श इनमें वाञ्छावाला बनकर, काम-शब्द और रूप की वांछा वाला बनकर, (अत्थकंखिए) अर्थ में गृद्धि वाला बनकर, (रज्जकंखिए) राज्य में गृद्धि वाला बनकर, (काम-

પ્રદેશોને ગર્ભપ્રદેશમાથી બહાર કાઢે છે અને વૈક્રિય સમુદ્‌ઘાત કરે છે પછી તે ચતુરગી સેના બનાવી લે છે અને તેની મારફત શત્રુ સેના સાથે યુદ્ધ કરે છે એવો ગર્ભમા રહેલ જીવ નરકમા જવા યોગ્ય કર્મનો બધ બાંધે તે સભવિત છે અહીં સૂત્રમાં " वीरियलद्धीए वेउव्वियलद्धीए " એવાં જે ત્રીજી વિભક્તિનાં પદો મૂક્યાં છે તેમની જગ્યાએ પહેલી વિભક્તિનાં પદો પણ મૂકી શકાય છે ત્યારે તેનો અર્થ આ પ્રમાણે છે ગર્ભમાં રહેલ જે જીવ છે તે વીર્ય લબ્ધિવાળો અને વૈક્રિયલબ્ધિવાળો થઈને સગ્રામ કરે છે (से णं जीवे) એવો તે ગર્ભમા રહેલ જીવ વૈક્રિયલબ્ધિ વડે બનાવેલી પોતાની સેના વડે શત્રુની સેના સાથે (अत्थकामए रज्जकामए भोगकामए कामकामए) ધનની વાસનાવાળો થઈને, રાજ્ય મેળવવાની ઇચ્છાવાળો થઈને ભોગ ' ગધ રસ સ્પર્શ ' ભોગ વવાની વાસનાયુક્ત બનીને, કામ-શબ્દ અને રૂપની વાસનાથી યુક્ત બનીને

मित्ता ' निक्षिप्य 'वेउव्वियसमुग्घाए णं समोहणइ ' वैक्रियसमुद्घातेन खलु समवहन्ति समवहतो भवति तथाविध पुद्गलग्रहणार्थं वैक्रियसमुद्घातं करोति 'समोहणित्ता ' समवहत्य 'चाउरंगिणिं सेणं विउव्वइ ' चतुरङ्गिणीं सेनां विकुर्वति वैक्रियसमुद्घातेन गजाश्वरथपदातिरूपां चतुरङ्गिणीं सेनामुत्पादयतीत्यर्थः, 'चाउरंगिणिं से णं विउव्वित्ता ' चातुरङ्गिणीं सेनां विकुर्व्य तादृशीं सेनां वैक्रियलब्ध्या समुत्पाद्य ' चउरंगिणीए सेणाए ' तया चतुरंगिण्या सेनया 'पराणीए णं' परानीकेन शत्रुसैन्येन 'सद्धिं ' सार्द्धम् ' संगामं ' संग्रामं युद्धमित्यर्थः, 'संगामेइ ' संग्रामयति संग्रामं करोतीत्यर्थः । ' से णं जीवे ' स खलु जीवः य. खलु

से बाहर निकालता है। (निच्छुभित्ता वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहणइ) बाहर निकालकर वैक्रिय समुद्घात द्वारा समवहत होता है अर्थात् तथाविध पुद्गलों को ग्रहण करने के लिये वैक्रियसमुद्घात करता है। (समोहणित्ता चाउरंगिणिं सेन्नं विउव्वइ) वैक्रियसमुद्घात करके फिर वह चतुरंगी सेना को–गज, अश्व, रथ, और पदातिरूप चार अंगवाली सेना को उत्पन्न करता है। (चाउरंगिणिं सेन्नं विउव्वित्ता) चतुरंगी सेना को उत्पन्न करके (चाउरंगिणीए सेणाए पराणीए णं सद्धिं संगामं संगामेइ) उस अपनी चतुरंगी सेना से शत्रु की सेना के साथ संग्राम–युद्ध करता है। यहां ऐसा कहा गया है कि वह गर्भगत जीव साभिमानी कोई राजा आदि का जीव हो और वह संज्ञी हो, पांचोंइन्द्रिय वाला हो। समस्त पर्याप्तियां जिसकी पूर्ण हो चुकी हों ऐसा हो। वह जब शत्रु की सेना को आई हुई सुनता है तब वह वीर्यलब्धि द्वारा या वैक्रियलब्धि-द्वारा अपने आत्मप्रदेशों को गर्भदेश से बाहर निकालता है, और

માથી બહાર કાઢે છે (निच्छुभित्ता वेउव्वियसमुग्घाएण समोहणइ) બહાર કાઢીને વૈક્રિય સમુદ્ઘાત વડે તથાવિધ પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરવાને માટે વૈક્રિય સમુદ્ઘાત કરે છે (समोहणित्ता चाउरंगिणिं सेन्नं विउव्वइ) વૈક્રિયસમુદ્ઘાત કરીને તે ચતુરંગી સેનાને–ગજ, અશ્વ, રથ અને પાયદળ, એ ચાર પ્રકારની સેનાને–ઉત્પન્ન કરે છે (चाउरंगिणिं सेन्न विउव्वित्ता) ચતુરંગી સેનાને ઉત્પન્ન કરીને (चाउरंगिणीए सेणाए पराणीएण सद्धिं संगाम संगामेइ) પોતાની તે ચતુરંગી સેનાથી શત્રુની સેના સાથે સગ્રામ કરે છે અહી એવુ કહ્યુ છે કે તે ગર્ભમા રહેલ જીવ સ્વાભિમાની કોઈ રાજા વગેરેનો જીવ હોય અને તે સજ્ઞી હોય, પાચે ઈન્દ્રિયો વાળો હોય, જેની સમસ્તપર્યાપ્તિઓ પૂર્ણ થઈ ચુકી હોય, આ જાતનાં તેના લક્ષણો બતાવ્યા છે એવો ગર્ભમા જીવ જ્યારે શત્રુની સેનાનુ આગમન થયેલું સાભળે છે ત્યારે વીર્યલબ્ધિ વડે અથવા વૈક્રિયલબ્ધિ વડે પોતાના આત્મ-

नुमोदितरूपाणि, करणानि येन स तदर्पितकरण इति । 'तब्भावणा भाविए' तद्भावना भावितः, अर्थादिभावनया भावितो य स तद्भावना भावितः, 'एयंसि णं अंतरंसि' एतस्मिन् खलु अन्तरे, एतस्मिन् संग्रामादिकरणसमय 'कालं करेज्ज' कालं कुर्यात्, म्रियते तदा 'नेरइएसु ' उववज्जइ ' नैरयिकेषूपपद्यते, यदा खलु अर्थादिकामकः संग्रामादिकं गर्भस्थ एव सपादयन् तस्मिन्नेवावसरे मरणं प्राप्नुयात् तदा स जीव नरकेषूत्पद्यत अन्यस्तु नोत्पद्यते इति, 'से तेणट्ठे णं गोयमा ' वचनार्थेन हे गौतम ! 'जाव अत्थेगइए उववज्जेज्जा ' यावत् अस्त्येक उपपद्येत 'अत्थेगइए नो उववज्जेज्जा ' अस्त्येकको नोपपद्येत, यावत्पदेन-'एवं वुच्चइ जीवे णं गब्भगए समाणे नेरइएसु ' इति संग्राह्यम् । अनेन कारणेन हे गौतम ! कथयामि यत् कश्चित् कारणविशेषमासाद्य नरके उत्पद्यते कश्चित् नोत्पद्यते इति भाव ।

निमित्त समस्त इन्द्रियों को अथवा कृत कारित एव अनुमोदना को समावेशित कर (तब्भावणाभाविए) अर्थादिक की भावना से भावित बनकर युद्ध करता है-यदि(एयंसि णं अंतरंसि) इसी संग्राम आदि करने के समय में वह (कालं करेज्जा) मृत्यु को प्राप्त हो जाता है तो (नेरइएसु उववज्जइ) नारकों में वह उत्पन्न होता है । तात्पर्य इसका यही है कि गर्भस्थ जीव अर्थादिक की कामनावाला बनकर संग्राम आदि करता है और उसी स्थिति में यदि वह मर जाता है तो वह गर्भस्थ जीव नरकों में उत्पन्न होता है । अन्य गर्भस्थ जीव नहीं । (से तेणट्ठेणं०गोयमा !) इस कारण हे गौतम ! मैं ऐसा कहता हूं (जाव अत्थेगइए उववज्जेज्जा अत्थेगइए नो उववज्जेज्जा) कि यावत कोई एक गर्भस्थ जीव कारणविशेष को लेकर नरक में उत्पन्न होता है और कोई एक जीव नरकमें उत्पन्न नहीं होता है।

સમસ્ત ઇન્દ્રિયોને અથવા કૃત કારિત અને અનુમોદનાને સમાવેશિત કરીને (तब्भावणाभाविए) અર્થાદિકની ભાવનાથી ભાવિત બનીને યુદ્ધ કરે છે અને (एयंसि णं अंतरंसि) આ રીતે યુદ્ધ વગેરે કરતી વખતે જો તે ગર્ભમાં રહેલ જીવ (कालं करेज्जा મૃત્યુ પામે તો (नेरइएसु उववज्जइ) નારકોમા ઉત્પન્ન થાય છે કહેવાનુ તાત્પર્ય એ છે કે ગર્ભમા રહેલ જીવ અર્થાદિકની ઇચ્છાવાળો થઇને સંગ્રામ વગેરે કરે છે અને જો એ સ્થિતિમા તે મરણ પામે છે તો તે ગર્ભમા રહેલ જીવ નરકોમા ઉત્પન્ન થાય છે અન્ય પ્રકારના ગર્ભમાં રહેલા જીવો નારકોમા ઉત્પન્ન થતા નથી. (से तेणट्ठेणं गोयमा!) હે ગૌતમ! તે કારણે હું એવું કહું છું કે (जाव अत्थेगइए उववज्जेज्जा अत्थेगइए नो उववज्जेज्जा) કોઇ એક ગર્ભમાં રહેલ જીવ ઉપરોક્ત કારણે નરકમાં ઉત્પન્ન થાય છે અને કો એક જીવ નરકમાં ઉત્પન્ન થતો નથી.

'भोगकंखिए' भोगकांक्षितः 'कामकंखिए' कामकांक्षितः 'अत्थपिवासिए' अर्थपिपासितः पिपासा इव पिपासा प्राप्तेप्यर्थेऽतृप्तिरूपा संजाता यस्य स तथा, 'रज्जपिवासिए' राज्यपिपासितः, प्राप्तेपि राज्ये तृप्त्यभाववानित्यर्थः, 'भोगपिवासिए' भोगपिपासितः 'कामपिवासिए' कामपिपासितः, 'तच्चित्ते' तच्चित्तः, तस्मिन् अर्थादौ चित्तं यस्य स तच्चित्तः, 'तम्मणे' तन्मनाः, तस्मिन् अर्थादौ मनो विद्यते यस्य स तन्मनाः, 'तल्लेसे' तल्लेश्यः, लेश्यानाम् आत्मपरिणामविशेषः तादृशलेश्यावानित्यर्थः, 'तदज्झवसिए' तदध्यवसितः, इहाध्यवसाय इति अध्यवसितं, तत्र तच्चित्तादि भावयुक्तस्य सतस्तेष्वर्थराज्यभोगकामेष्वेवाध्यवसितं परिभोगक्रियासंपादनविषयकं यस्य स तदध्यवसितः, तद्विषयकोत्साहवानित्यर्थः, 'तत्तिव्वज्झवसाणे' तत्तीव्राध्यवसानः, तस्मिन्नेवार्थराज्यादौ तीव्रमारंभकालादारभ्य प्रकृष्टमध्यवसानं प्रयत्नविशेषो यस्य स तीव्राध्यवसानः, 'तदट्ठोवउत्ते' तदर्थोपयुक्तः तदर्थम् अर्थराज्यभोगादिनिमित्तमुपयुक्तोऽवहित इति तदर्थोपयुक्तः, 'तदप्पियकरणे' तदर्पितकरणः तस्मिन्नेवार्थराज्यादौ अर्पितानि विनिहितानि समावेशितानि करणानि=इन्द्रियाणि, अथवा कृतकारिता-

---

कंखिए) काम में गृद्धिवाला बनकर (अत्थपिवासिए) अर्थ के होने पर भी अतृप्तिरूप अभिलाषावाला बनकर (रज्जपिवासिए) प्राप्त राज्य में भी अतृप्तिरूप अभिलाषावाला बनकर (भोगपिवासिए) भोगमें पिपासित बनकर (कामपिवासिए) काम में पिपासित बनकर (तच्चित्ते) अर्थादिक में एकचित्तवाला होकर (तम्मणे) अर्थादिक में एक अन्तःकरण वाला होकर (तल्लेसे) उसीरूप आत्म परिणामवाला होकर (तदज्झवसिए) तद्विषयक अध्यवसायवाला होकर (तत्तिव्वज्झवसाणे) आरंभ काल से ही तद्विषयक प्रयत्नविशेषवाला होकर (तदट्ठोवउत्ते) उसी अर्थ राज्य, भोगादि के निमित्त उपयुक्त बन कर (तदप्पियकरणे) उन्हीं की प्राप्ति

(अत्थकंखिये) અર્થની લાલસા વાળો બનીને, (अत्थपिवासिए) અર્થ હોવા છતા પણ તેનાથી અતૃપ્ત રહીને તેની અભિલાષા વાળો બનીને, (रज्जपिवासिए) પ્રાપ્ત રાજ્યથી અતૃપ્ત રહીને રાજ્ય મેળવવાની અભિલાષા વાળો બનીને (भोगपिवासिए) ભોગની ઇચ્છાવાળો બનીને, (कामपिवासिए) કામની ઇચ્છાથી યુક્ત બનીને (तच्चित्ते) અર્થાદિકમા એક ચિત્ત થઇને (तम्मणे) અર્થાદિકમા એક અંતઃકરણવાળો થઇને-તલ્લીન થઇને (तल्लेसे) તે પ્રકારના આત્મપરિણામ વાળો થઇને (तदज्झवसिए) તે વિષયક પ્રવૃત્તિવાળો થઇને (तत्तिव्वज्झवसाणे) આરંભ કાળથી જ તે વિષે વિશિષ્ટ પ્રયત્ન વાળો થઇને (तदट्ठोवउत्ते) અર્થ, રાજ્ય, ભોગાદિને માટે ઉપયુક્ત બનીને (तदप्पियकरणे) તેમની પ્રાપ્તિને માટે

कृस्य भावतः समितिगुप्त्याराधकस्य ' समणस्स वा ' श्रमणस्य वा-द्वादशविधत पोयुक्तस्य श्रमणस्य साधो , ' माहणस्स वा ' माहनस्य वा, वा-अथवा स्वयंस्थूल प्राणातिपातादिभ्यो निवृत्त सन् ' माहन माहन ' एवं रूपेण परानुपदिशति या स माहनः=देशविरतस्तस्य ' अंतिए ' अन्तिके समीपे 'एगमवि' एकमपि 'आरियं धम्मियं ' आर्यम्=जिनप्रणीतं धार्मिकम्=श्रुतचारित्ररूप धर्मसम्पादकम् अत एव ' सुवयणं ' सुवचनम्-प्राणातिपातादिविरतिरूपं निरवद्य ' सोच्चा ' श्रुत्वा ' निसम्म ' निशम्य-हृदि अवधार्य, ' तओ भवइ ' ततो भवति, तदनन्तरमेव श्रवणाऽवधारणानन्तरमेव जायते, 'संवेगजायसड्ढे' संवेगजातश्रद्धः, संवेगो वैराग्यं तेन जाता समुत्पन्ना श्रद्धा तत्त्वश्रद्धानं यस्य स संवेगजातश्रद्धः, तिव्वधम्माणु

सीहिं पज्जत्तए तहारूवस्स समणस्स वा माहणस्स वा अंतिए एगमवि आरियं धम्मियं सुवयणं सोच्चा निसम्म) हे गौतम ! वह गर्भगत जीव यदि कोई धार्मिक जीव है और वह संज्ञी, पञ्चेन्द्रिय पर्याप्तक है तो ऐसी स्थिति में वह जीव तथारूप-द्रव्यतः-सदोरकमुखवस्त्रिकादिरूप साधु का वेष धारण किये हुए भावत -समिति गुप्ति आदि के आराधक, ऐसे श्रमण, बारह प्रकार के तपों को तपने वाले साधु के, अथवा माहण-स्थूल प्राणातिपात आदि पाप क्रियाओं से निवृत्त होकर जो दूसरों को ऐसा ही उपदेश देता है कि जीवों को "मा हन मा हन" "मत मारो मत मारो " ऐसे देशविरति को धारण किये हुए पंचम गुणस्थानवर्ती श्रावक रूप माहण के पास एक भी आर्य जिनप्रणीत-धार्मिक-श्रुतचारित्ररूप धर्मके सम्पादक-सुवचन को-प्राणातिपातादिविरतिरूप निरवद्य-वचन को सुन करके और उसे हृदय में अवधारण करके (तओ) उसी समय (संवेगजायसड्ढे तिव्वधम्माणुरागरत्ते भवइ) संवेग से-वैराग्य

तहारूवस्स समणस्स वा माहणस्स वा अंतिए एगमवि आरियं धम्मियं सुवयणं सोच्चा निसम्म) હે ગૌતમ ! તે ગર્ભમાં રહેલો જીવ જો ધાર્મિક હોય, સંજ્ઞી હોય અને પંચેન્દ્રિય સહિત અને પર્યાપ્તક હોય તો તે દ્રવ્યથી દોરા સહિત મુખપર મુહપત્તી વ ઉપકરણો સહિત સાધુ વેશ ધારણ કરેલા અને ભાવથી સમિતિ, ગુપ્તિ વગેરેના આરાધક તથા બાર પ્રકારના તપ કરનારા શ્રમણ પાસે તેમજ સ્થૂલ પ્રાણાતિપાત વગેરે પાપ ક્રિયાઓથી નિવૃત્ત થઈને બીજાને પણ ' मा हन मा हन " ' હણો નહીં હણો નહીં " એવો ઉપદેશ દેનાર દેશવિરતિને ધારણ કરનાર પાંચમા ગુણસ્થાનવર્તી શ્રાવકરૂપ માહણ પાસે એક પણ આર્ય જિન પ્રણીત—ધાર્મિક-શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મના સંપાદક-સુવચનો-પ્રાણાતિપાતાદિ વિર તિરૂપ નિર્દોષ વચનોને સાંભળીને અને તેને પોતાના હૃદયમાં ધારણ કરીને (तओ) ત્યાર બાદ (संवेगजायसड्ढे तिव्वधम्माणुरागरत्ते भवइ) સંવેગથી (વૈરાગ્યથી)

पूर्वं गर्भगतस्य जीवस्य नरकगमनकरणं प्रतिपाद्य सम्प्रति देवलोकगमन-करणं प्रदर्शयन्नाह—'जीवे णं भंते' इत्यादि।

'जीवे णं भंते' जीवः खलु भदन्त! 'गब्भगए समाणे' गर्भगतः सन् देवलोगेसु उववज्जेज्जा' देवलोकेषूपपद्येत किम्?। भगवानाह—'गोयमे'—त्यादि, 'गोयमा' हे गौतम! अत्थेगइए उववज्जेज्जा' अस्त्येककः कश्चित् उपपद्येत 'अत्थेगइए नो उववज्जेज्जा' अस्त्येककः कश्चित् नोपपद्येत 'से केणट्ठे णं' तत्केनार्थेन हे भदन्त! केन कारणेनैवमुच्यते यत् कश्चिद्देवलोकं गच्छति कश्चिन्नो गच्छतीति भावः। भगवानाह—'गोयमे' त्यादि। 'गोयमा' हे गौतम! 'से णं सन्नी पंचिंदिए' स खलु संज्ञी पञ्चेन्द्रियः, 'सव्वाहिं पज्जत्तीहिं पज्जत्तए' सर्वाभिः पर्याप्तिभिः पर्याप्तकः सर्व पर्याप्तिभिर्युक्त सन्नित्यर्थः, 'तहा-रूवस्स' तथारूपस्य, तथाविधस्य द्रव्यतः सदोरकमुखवस्त्रिकादि साधुवेषधार-

इस तरह गर्भगत जीव के नरक गमन में कारण प्रतिपादित कर अब सूत्रकार देवलोक में उसके गमन के कारण का प्रतिपादन करने निमित्त प्रश्नोत्तररूप सूत्र का कथन करते हैं—(जीवे णं भंते! गब्भगए समाणे देवलोगेसु उववज्जेज्जा) हे भदंत! गर्भस्थ जीव क्या देवलोकों में उत्पन्न हो जाता है? (अत्थेगइए उववज्जेज्जा) हे गौतम! गर्भ में रहा हुआ कोई एक जीव मरके देवलोक में उत्पन्न होता है और कोई एक गर्भगत जीव मरकर देवलोक में उत्पन्न नहीं भी होता है। (से केणट्ठेणं०) हे भदन्त! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि कोई एक गर्भस्थ जीव मरके देवलोक में उत्पन्न नहीं होता है? (गोयमा! से णं सन्नी पंचिंदिए सव्वाहिं पज्ज-

આ રીતે ગર્ભમા રહેલ જીવના નરકગમનનાં કારણોનું પ્રતિપાદન કરીને હવે સૂત્રકાર તેના દેવલોક ગમનનાં કારણોનું પ્રતિપાદન કરવાને માટે પ્રશ્નોત્તર રૂપ સૂત્રોનુ કથન કરે છે- (जीवे ण भंते! गब्भगए समाणे देवलोगेसु उववज्जेज्जा?) હે ભગવન્! શુ ગર્ભમા રહેલ જીવ દેવલોકમાં ઉત્પન્ન થાય છે? (अत्थेगइए उववज्जेज्जा, अत्थेगइए नो उववज्जेज्जा) હે ગૌતમ! ગર્ભમા રહેલો કોઈ એક જીવ મરીને દેવલોકમા ઉત્પન્ન થાય છે, અને કોઈ એક ગર્ભમા રહેલ જીવ મરીને દેવલોકમાં ઉત્પન્ન નથી પણ થતો (से केणट्ठेणं०) હે ભગવન્! આપ શા કારણે એવુ કહો છો કે કોઇ એક ગર્ભમાં રહેલ જીવ મરીને દેવલોકમા જાય છે અને કોઈ એક ગર્ભમા રહેલ જીવ મરીને દેવ-લોકમા જતો નથી

ઉત્તર—(गोयमा! से ण सन्नी पंचिंदिए सव्वाहिं पज्जत्तीहिं पज्जत्तए

'तम्मणे' तन्मनाः तस्मिन् धर्मादावेव मनो यस्य स तथा, तल्लेस्से ' तल्लेश्य', लेश्या आत्मपरिणामविशेष -तथा च तस्मिन्नेव धर्मादौ लेश्या आत्मपरिणामविशेषरूपा विद्यते यस्य स तथा ' तदज्झवसिए ' तदध्यवसित , धर्मादिविषयकाध्यवसायवान् ' तत्तिव्वज्झवसाणे ' तत्तीव्राध्यवसान , तस्मिन्नेव तीव्राध्यवसाय युक्त , ' तदट्ठोवउत्ते ' तदर्थोपयुक्तः, तदर्थं धर्मादिनिमित्तमुपयुक्त उपयोगवान् ' तदप्पियकरणे ' तदर्पितकरण , तस्मिन् धर्मादावेव अर्पितानि करणानि=इन्द्रियाणि अथवा करणानि=कृतकारितानुमोदितरूपाणि वा यस्य स तथा, ' तब्भावणा भाविए ' तद् भावना भावित , तस्मिन् धर्मादावेव भावना वासना तया भावितो य' स, तथा, ' एयसि णं अंतरंसि एतस्मिन् खलु अंतरे-एतस्मिन् समये ' कालं करेज्जा ' कालं कुर्यात् म्रियेत तदा स जीवः ' देवलोगेसु ' देवलोकेषु ' उववज्जइ ' उपपद्येत, देवो भवेदित्यर्थ , ' से तेणट्ठेणं गोयमा० ' तदेनार्थेन हे

धर्मादिक में ही एक चित्त वाला बनकर (तम्मणे) धर्मादिक में ही एक अन्तःकरण वाला बनकर (तल्लेसे) धर्मादिकरूप आत्मपरिणाम वाला बनकर (तदज्झवसिए) धर्मादिविषयक अध्यवसायवाला बनकर (तत्तिव्वज्झवसाणे) धर्मादिविषयक तीव्र अध्यवसायवाला बनकर (तदट्ठोवउत्ते) धर्मादिक निमित्त ही उपयोगवाला बनकर (तदप्पियकरणे) धर्मादिक में ही अपनी इन्द्रियों को, अथवा कृत कारित अनुमोदना को समर्पित करनेवाला बनकर (तब्भावणाभाविए) धर्मादिक की ही भावना से भावित बनकर (एयंसि अंतरंसि) उस समय यदि (कालं करेज्जा) कालधर्म को प्राप्त होता है-गर्भ में ही मर जाता है-तब ऐसा वह जीव (देवलोगेसु) देवलोक में (उववज्जइ) उत्पन्न होता है, अर्थात् देव होता है (से तेणट्ठेणं गोयमा !) इस कारण हे

ચિત્ત થઈને, (तम्मणे) ધર્મ વગેરેમાં જ પોતાનું અંતઃકરણ લીન કરીને, (तल्लेसे) ધર્માદિ રૂપ આત્મપરિણામ વાળો થઈને (तदज्झवसिए) ધર્માદિ પ્રવૃત્તિમાં પ્રવૃત્ત થઈને, (तत्तिव्वज्झवसाणे) ધર્માદિવિષયક તીવ્ર અધ્યવસાય વાળો થઈને, (तदट्ठोवउत्ते) ધર્માદિ નિમિત્તે જ ઉપયોગવાળો બનીને, (तदप्पियकरणे) ધર્માદિકમાં જ પોતાની ઈન્દ્રિયોને અથવા કૃત, કારિત અનુમોદનાને સમર્પિત કરનારો બનીને (तब्भावणाभाविए) ધર્માદિકની ભાવનાથી જ ભાવિત બનીને (एयंसि अंतरंसि) તે સમયે જો તે ગર્ભનો જીવ (कालं करेज्जा) કાળધર્મ પામે-ગર્ભમાં જ મૃત્યુ પામે-તો તે ગર્ભમાં રહેલો જીવ (देवलोगेसु उववज्जइ) દેવલોકમાં ઉત્પન્ન થાય છે એટલે કે દેવ થાય છે (से तेणट्ठेणं०

रागरत्ते ' तीव्रधर्मानुरागरक्तः, तीव्रोऽतिशयितो यो धर्मविषयको अनुरागो धर्म बहुमानरूपस्तेन रक्त इव रक्तो यः स तीव्रधर्मानुरागरक्तः, ' से णं जीवे ' स खलु जीवः ' धम्मकामए ' धर्मकामकः-श्रुतचारित्ररूपधर्मवाञ्छायुक्त, ' पुन्नकामए ' पुण्यकामकः, पुण्य-शुभकर्म तस्य कामो=वाञ्छा विद्यते यस्य स पुण्यकामकः, ' सग्गकामए ' स्वर्गकामकः, स्वर्गवाञ्छावान् ' मोक्खकामए ' मोक्षकामकः मोक्षवाञ्छायुक्तः ' धम्मकंखिए ' धर्मकांक्षितः, ' पुन्नकंखिए ' पुण्यकांक्षितः, ' सग्गकंखिए ' स्वर्गकांक्षितः ' मोक्खकंखिए ' मोक्षकांक्षितः ' धम्मपिवासिए ' धर्मपिपासितः, धर्मे पिपासा इव पिपासा अतृप्तिर्विद्यते यस्य स तथा, ' पुन्नपिवासिए ' पुण्यपिपासितः, ' सग्गपिवासिए ' स्वर्गपिपासितः ' मोक्खपिवासिए ' मोक्षपिपासितः, ' तच्चित्ते ' ' तच्चित्तः तस्मिन् एव धर्मादौ चित्तं यस्य स तथा,

से श्रुतचारित्ररूप धर्ममें श्रद्धावाला बन जाता है, अथवा-वैराग्य से जिसे तत्वश्रद्धारूप रुचि उत्पन्न हो जाती है, जो तीव्र धर्मानुरागसे-अतिशय धर्मविषयक बहुमानरूप अनुराग से-रंग जाता है (से णं जीवे) ऐसा वह पूर्वोक्त विशेषणोंवाला गर्भगत जीव (धम्मकामए, पुन्नकामए, सग्गकामए) श्रुतचारित्ररूप धर्म की वांछासे युक्त बनकर, शुभकर्मरूप पुण्य की वांछासे युक्त बनकर, स्वर्ग की वांछासे युक्त बनकर, (मोक्खकामए) मोक्षकी वांछासे युक्त बनकर (धम्मकंखिए) धर्मकी कांक्षासे युक्त बनकर, (पुण्णकंखिए) पुण्य की कांक्षायुक्त बनकर (सग्गकंखिए) स्वर्ग की कांक्षासेयुक्त बनकर (मोक्खकंखिए) मोक्षकी कांक्षासे युक्त बनकर, (धम्मपिवासिए) धर्म की पिपासा वाला बनकर (पुण्णपिवासिए) पुण्य की पिपासा वाला बनकर (सग्गपिवासिए) स्वर्ग की पिपासावाला बनकर (मोक्खपिवासिए) मोक्ष की पिपासा वाला बनकर (तच्चित्ते)

શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મમા શ્રદ્ધાવાળો બની જાય છે અથવા વૈરાગ્યને લીધે જેને સાચા તત્વમા શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન થઈ હોય છે, અને જે તીવ્ર ધર્માનુરાગથી રંગાયો હોય છે (से णं जीवे) એવા પૂર્વોક્ત વિશેષણો વાળો તે ગર્ભમા રહેલ જીવ (धम्मकामए, पुन्नकामए, सग्गकामए) શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની અભિલાષા વાળો બનીને, શુભકર્મરૂપ પુણ્યની વાછા વાળો બનીને, સ્વર્ગની અભિલાષા વાળો બનીને, (मोक्खकामए) મોક્ષની કામના વાળો બનીને, (धम्मकंखिए) ધર્મની ઈચ્છાવાળો બનીને, (पुण्णकंखिए) પુણ્યની ઈચ્છા વાળો બનીને (सग्गकंखिए) સ્વર્ગની ઇચ્છાવાળો બનીને (मोक्खकंखिए) મોક્ષની ઈચ્છાવાળો બનીને (धम्मपिवासिए) ધર્મની પિપાસાવાળો બનીને, (पुण्णपिवासिए) પુણ્યની પિપાસા વાળો બનીને, (सग्गपिवासिए) સ્વર્ગની પિપાસાવાળો બનીને (मोक्खपिवासिए) મોક્ષની પિપાસાવાળો બનીને, (तच्चित्ते) ધર્મ વગેરેમાં એક

गत एव जीवोपि जागर्ति-किम् 'सुहियाए सुहिए भवइ' सुखितायां सुखितो भवति किम्? 'दुहियाए दुहिए भवइ' दुःखितायां दुःखितो भवति किमिति प्रश्नः। भगवानाह-'हंते'त्यादि। 'हंता गोयमा' हन्त हे गौतम! 'जीवे णं गब्भगए समाणे' जीवः खलु गर्भगतः सन् 'जाव दुहियाए दुहिए भवइ' यावत् दुःखितायां दुःखितो भवति, गर्भगतस्य जीवस्य सर्वाऽपि क्रिया मातुरनुसारिण्येव भवेदिति भावः। 'अहे णं' अथ खलु नवमासपर्यन्तं गर्भे वासानन्तरम् 'पसवणकालसमयंसि' प्रसवनकालसमये-प्रसूतिसमये 'सीसेण वा पाएहिं वा आगच्छति' यदा शीर्षेण वा पादाभ्यां वा आगच्छति तदा 'सम आगच्छइ' सममागच्छति=समं=सुखेन आगच्छति। यदा-'तिरियमागच्छइ' तिर्यगागच्छति, एक

क्या वह भी सो जाता है? (जागरमाणीए जागरइ) तथा माता के जग जाने पर क्या वह भी जग जाता है? (सुहियाए सुहिए भवइ दुहियाए दुहिए भवइ) अथवा जब माता सुखी होती है तब वह क्या सुखी होता है? जब माता दुःखी होती है तब यह गर्भगत जीव क्या दुःखी होता है? (हंता गोयमा! गब्भगए समाणे जाव दुहियाए दुहिए भवई) हां गौतम! गर्भगत जीव यावत् माताके दुःखित होनेपर दुःखी होता है। तात्पर्य कहने का यह है कि गर्भगत जीव की समस्त क्रियाएँ माता की क्रिया अनुसार ही होती हैं। (अहे णं पसवणकालसमयंसि) जीव जब नौ माह तक गर्भ में रह चुकता है तब उसके बाद प्रसूति समय में (सीसेण वा पाएहिं वा) वह जीव यदि मस्तक से अथवा दोनों पैरों से (आगच्छइ) बाहर निकलता है तो (सम्म आगच्छइ)) अच्छी तरह से-बिना किसी कष्ट के-बाहर निकल आता है। यदि वह (तिरि

જાય છે? (जागरमाणीए जागरइ) શું માતા જાગે ત્યારે તે પણ જાગી જાય છે? (सुहियाए सुहिए भवइ दुहियाए दुहिए भवइ) શું માતા દુઃખી થાય ત્યારે ગર્ભમાં રહેલો જીવ દુઃખી થાય છે? અને માતા સુખી થાય ત્યારે શું તે સુખી થાય છે?

ઉત્તર—(हंता गोयमा!) હા, ગૌતમ! (जीवे णं गब्भगए समाणे जाव दुहियाए दुहिए भवइ) ગર્ભમાં રહેલો જીવ સુખ શયન કરીને રહે છે અહીંથી લઈને માતાના દુઃખે દુઃખી થવા સુધીની બધી ક્રિયાઓથી યુક્ત રહે છે તાત્પર્ય એ છે કે ગર્ભમાં રહેલ જીવની બધી ક્રિયાઓ માતાની ક્રિયા પ્રમાણે જ થાય છે (अहे णं पसवणकालसमयंसि) જીવ નવ માસ સુધી ગર્ભમાં રહે છે—ત્યાર પછી પ્રસૂતિના સમયે सीसेण वा पाएहिं वा જો તે જીવ મસ્તકથી અથવા બન્ને પગથી (आगच्छइ) બહાર નીકળે છે તો (सम्म आगच्छइ) કોઈ પણ જાતની મુશ્કેલી વિના બહાર નીકળે છે પણ જો (तिरियमागच्छइ) તિરછો "આડો"

गौतम ! अनेन कारणेन एवमुच्यते यदेकः कश्चिद् धर्मी जीवो गर्भे मृत्वा देवलोकं गच्छति, एकः कश्चित् धर्मादिरहितो गर्भे मृत्वा देवलोकं न गच्छतीति भावः

गर्भाधिकारादेवेदमपरं गर्भसूत्रमाह-'जीवे णं भंते' इत्यादि ।

'जीवे णं भंते' जीवः खलु भदन्त ! 'गब्भगए समाणे' गर्भगतः सन् 'उत्ताणए' उत्तानको वा, गर्भे वसन् जीवः किम् उत्तानक ऊर्ध्वमुखः, तथा- 'पासिल्लए वा' पार्श्वितो वा-पार्श्वभागेन स्थितो वा 'अंबखुज्जए वा' आम्रकुब्जको वा, आम्रफलवत् कुब्जो वा 'अच्छेज्ज वा' आसीत वा सामान्यतः । 'चिट्ठेज्ज वा' तिष्ठेद्वा ऊर्ध्वस्थानेन 'निसीएज्ज वा' निषीदेद्वा पर्यङ्काद्यासनेन 'तुयट्टेज्ज वा' त्वग्वर्तयेद्वा, पार्श्वं परिवर्तयेद्वा, 'माउए सुवमाणीए सुवइ' मातरि स्वपत्यां स्वपिति. यदा माता निद्राति तदा तद्गर्भगतो जीवोपि निद्राति किम् जागरमाणीए जागरइ' जाग्रत्यां जागर्ति, यदा माता जागर्ति तदा तदीयगर्भ-

---

गौतम ! मैं ऐसा कहता हूं कि गर्भमें रहा हुआ कोई एक जीव मर कर देवलोक में जाता है, कोई एक धर्मादि से रहित बना हुआ गर्भस्थित जीव मरकर देवलोक में नहीं जाता है ।

गर्भ का अधिकार होने से ही सूत्रकार अब यह दूसरा गर्भसूत्र कहते हैं (जीवे णं भंते! गब्भगए समाणे उत्ताणए वा पासिल्लए वा) हे भदन्त! गर्भ में स्थित जीव क्या चत्ता-ऊँचा मुख किया हुआ स्थितहोता है ? पार्श्वभागसे स्थित होता है ? (अंबखुज्जए वा) क्या वह आमके जैसा कुब्ज होता है ? (अच्छेज्ज वा) सामन्यआसनसे बैठता है (चिट्ठेज्ज वा) खड़ा होता है ? (निसीएज्ज वा) अथवा कि-पर्यङ्क आदि आसनसे बैठता है ? (तुयट्टेज्ज वा) या करवट बदलता है ? (माउए सुवमाणीए सुवइ) अथवा-माताके सो जाने पर

गोयमा !) હે ગૌતમ! તે કારણે હુ એવુ કહુ છું કે ગર્ભમા રહેલો કોઇ એક જીવ મરીને દેવલોકમાં ઉત્પન્ન થાય છે અને ધર્માદિથી રહિત એવો કોઈ એક જીવ મરીને દેવલોકમા જતો નથી

ગર્ભનો અધિકાર ચાલતો હોવાથી સૂત્રકાર આ બીજુ ગર્ભ સૂત્ર કહે છે-

(जीवे णं भंते! गब्भगए समाणे उत्ताणए वा पासिल्लए वा) હે ભગવન્! ગર્ભમા રહેલો જીવ શુ મુખ ઊચુ કરીને રહે છે? શુ તે પાર્શ્વભાગથી સ્થિત હોય છે? (अंबखुज्जए वा) શુ તે આમના સમાન કુબ્જ (કુબડો) હોય છે? (अच्छेज्जवा) શુ તે સામાન્ય આસને બેસે છે? (चिट्ठेज्जवा) ઉભો થાય છે? (निसीएज्ज वा) અથવા પર્યંક વગેરે આસને બેસે છે? (तुयट्टेज्ज वा) કે પડખુ ફેરવે છે? (माउए सुवमाणीए सुवइ) અથવા-માતા સૂવે ત્યારે તે પણ સૂઈ

त्वेन व्यवस्थापितानि, 'अभिनिविट्ठाई' अभिनिविष्टानि, अभि=तीव्रानुभावतया निविष्टानि स्थापितानीत्यर्थः, 'अभिसमन्नागयाई' (अभिसमन्वागतानि उदयाभिमुखीभूतानि ततश्च 'उदिन्नाइं उदीर्णानि, कर्मस्थितिपरिपाकेन उदयावलिकायां प्राप्तानि, किन्तु 'नो उवसंताइ भवति' नो उपशान्तानि भवन्ति 'तओ भवइ' ततो भवति, यदि कर्मणोपशान्तम् किन्तु फलोदयाय फलप्रदानाय व्यवस्थितं स्यात् तदा गर्भनिर्गतो जीव कीदृशो भवतीत्याह–'दुरूवे' दुरूप, दुरूपो भवति–विकृताकृतिमान् भवति, 'दुवन्ने' दुर्वर्णः, कुत्सितवर्णवान् भवति, 'दुग्गंधे' दुर्गन्धः, कुत्सितगंधवानित्यर्थः, 'दुरसे' दुरस, कुत्सितरस इत्यर्थः, 'दुफासे' दुःस्पर्श, कर्कश कठोराद्यशुभस्पर्शवानित्यर्थः, 'अणिट्ठे' अनिष्टः, अवांछनीयः, 'अकते' अकान्तः, अनभिलषणीयः, 'अप्पिए' अप्रियः, सर्वापकारकः, 'असुभे' अशुभः, अकल्याणकरः, 'अमणुन्ने' अमनोज्ञः, अहितकारकः 'अमणामे' अमनोमः, सकलजनप्रतिकूल, 'हीणस्सरे' हीनस्वरः, 'दीणस्सरे' दीनस्वर, 'अणिट्ठस्सरे' अनिष्टस्वर 'अकंतस्सरे' अकान्तस्वरः, 'अप्पियस्सरे' अप्रियस्वर 'असुभस्सरे' अशुभस्वरः, 'अमणुन्नस्सरे' अमनोज्ञस्वरः, अमणामस्सरे'

हुए हैं, (तओ भवइ, दुरूवे, दुवन्ने, दुरसे, दुफासे, अणिट्ठे, अकंते, अप्पिए, असुभे, अमणुन्ने, अमणामे, हीणस्सरे, दीणस्सरे, अणिट्ठस्सरे, अकन्तस्सरे, अप्पियस्सरे, असुभस्सरे, अमणुण्णस्सरे अमणामस्सरे, अणएज्जवयणे पच्चायाए यावि भवइ) तो वह जीव ऐसा मनुष्य होता है, कि जो कुरूप होता है, खोटे वर्णवाला होता है, खोटे रस वाला होता है, खोटे स्पर्शवाला होता है, अनिष्ट होता है, अकान्त होता है, अप्रिय होता है, अशुभ होता है, अमनोज्ञ होता है, अमनोम होता है, हीनस्वरवाला होता है, दीनस्वरवाला होता है, अनिष्टस्वरवाला होता है, अकान्त स्वरवाला होता है, अशुभ स्वरवाला होता है, अमनोज्ञ स्वरवाला होता है,

---

આવશે." (तओ भवइ, दुरूवे, दुवन्ने दुरसे दुफासे, अणिट्ठे अकंते, अप्पिए, असुभे, अमणुन्ने, अमणामे हीणस्सरे, दीणस्सरे, अणिट्ठस्सरे, अकंतस्सरे, अप्पियस्सरे, असुभस्सरे अमणुण्णस्सरे अमणामस्सरे अणाएज्जवयणे पच्चायाए या वि भवइ) તે કદરૂપો હોય છે ખરાબ વર્ણયુક્ત હોય છે, ખરાબ રસવાળો હોય છે ખરાબ સ્પર્શવાળો હોય છે અનિષ્ટ હોય છે અકાન્ત હોય છે, અપ્રિય હોય છે અશુભ હોય છે અમનોજ્ઞ હોય છે અમનોમ હોય છે, દીન સ્વરવાળો હોય છે દીનસ્વરવાળો હોય છે અનિષ્ટ સ્વરવાળો હોય છે, અકાન્ત સ્વરવાળો હોય છે, અપ્રિયસ્વરવાળો હોય છે, અશુભસ્વરવાળો હોય છે, અમનોજ્ઞ

तया निस्सरति तदा 'विणिघायमावज्जइ' विनिघातमापद्येत, म्रियेतेत्यर्थः, यदा गर्भस्तिरश्चीनो भूत्वा मातुरुदरान्निर्गन्तुं प्रवर्तते तदा स तन्माता च प्रायो मरणमापद्येत, तिर्यग्रूपेण निःसरणस्यासंभवात्। गर्भनिर्गतस्य जीवस्य यत् स्यात्तदाह- 'वन्नवज्झाणि' वर्णवध्यानि च वर्णः श्लाघारूपः स वध्यो हन्तव्यो येषां तानि वर्णवध्यानि निन्दनीयानीत्यर्थः, अथवा 'वर्णबाह्यानि' इतिच्छाया, तत्र-वर्णाद् बाह्यानि अशुभानीत्यर्थः। 'से' तस्य गर्भविनिर्गतस्य जन्तोः 'कम्माइं' कर्माणि 'बद्धाइं' बद्धानि सामान्यतः, तानि तु दूरतोऽपि भवन्तीत्याह-'पुट्ठाइं' स्पृष्टानि संलग्नतया गाढतरबन्धनतः, अथवा बद्धानि, कुतः? स्पृष्टानि-पूर्वं स्वव्यापारेणैव स्पर्शविषयीकृतानी अभूवन् अतएव बद्धानीति भावः, 'निहत्ताइं' निधत्तानि, उद्वर्तनाऽपवर्तनकरणवर्जितशेषकरणायोग्यत्वेन व्यवस्थापितानि, 'कडाइं' कृतानि, निकाचितानि सर्वकरणायोग्यत्वेन व्यवस्थापितानि, 'पट्ठवियाइं' प्रस्थापितानि, मनुष्यगतिपञ्चेन्द्रियजातित्रसादिनामकर्मादिना सहोदय-

---

यमागच्छइ) तिरछा होकर बाहर निकलता है तब तो (विणिघायमावज्जइ) मरजाता है। तात्पर्य यह हैं कि जब गर्भ तिरछा होकर माता के गर्भाशय से बाहर निकलने लगता है, तब वह माता और गर्भ प्रायः दोनों ही मरण को प्राप्त हो जाते हैं। क्यों कि गर्भ तिरछा होकर माता के पेट से योनि द्वारा निकल नहीं सकता है। अब सूत्रकार यह प्रकट करते हैं कि गर्भ से निर्गत जीव कैसा क्या होता है—(वन्नवज्झाणि य से कम्माइं बद्धाइं, पुट्ठाइं, निहत्ताइं, कडाइं, पट्ठवियाइं, अभिनिविट्ठाइं, अभिसमन्नागयाइं, उदिन्नाइं नो उवसंताइं भवंति) गर्भ से निर्गत हुए उस जीव के जो अशुभ कर्म बद्ध हैं, स्पृष्ट हैं, निधत्त हैं, कृत हैं, प्रस्थापित हैं, अभिनिविष्ट हैं, अभिसमन्वागत हैं, उदयप्राप्त हैं, उपशान्त नहीं

થઈને બહાર આવે તો (विणिघायमावज्जइ) તે મરણ પામે છે તાત્પર્ય એ છે કે જો ગર્ભ તિરછો "આડો" થઈને માતાના ગર્ભાશયમાથી બહાર નીકળે તો ઘણે ભાગે માતા અને ગર્ભ બન્ને મરણ પામે છે કારણ કે ગર્ભ તિરછો થઈને માતાના ગર્ભાશયમાથી બહાર નીકળી શકતો નથી

હવે સૂત્રકાર એ બતાવે છે કે ગર્ભમાથી બહાર આવેલો જીવ કેવો હોય છે?

(वण्णवज्झाणि य से कम्माइं, वद्धाइं, पुट्ठाइ, निधत्ताइं, कडाइ, पट्ठवियाइं, अभिनिविट्ठ इं, अभिसमन्नागयाइ, उदिन्नाइ, नो उवसताइ भवंति) ગર્ભમાથી બહાર નીકળેલો તે જીવ કે જેને અશુભ કર્મ બદ્ધ છે, સ્પૃષ્ટ છે, નિધત્ત છે, કૃત છે, પ્રસ્થાપિત છે, અભિનિવિષ્ટ છે, અભિસમત્વાગત છે, ઉદય પ્રાપ્ત છે અને જેનાં કર્મ ઉપશાન્ત થયેલ નથી "આ બધાં પદોનો અર્થ આગળ સમજાવવામાં

आदिज्जवयणे पच्चायाए आविभवइ' यावत् आदेयवचनः प्रत्यायातश्चापि भवति, यदि तस्याशुभं कर्म नो बद्धं भवेत्तदा रूपादारभ्य स्वरपर्यन्तं सर्वशुभप्रशस्तमेव भवेत् समुत्पन्नश्च स जीव आदेयवचन सन् मनुष्यत्वे समुत्पन्नो भवतीति, 'सेवं भंते सेवं भंते' त्ति तदेवं भदन्त तदेवं भदन्त इति, हे भदन्त! गर्भविषये येन प्रकारेण यद्वस्तु देवानुप्रियेण। कथितं तत् एवमेव सर्वं सत्यमेव इत्युक्त्वा श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा च संयमेन तपसा आत्मानं भावयन् विहरतीति ॥ सू०५ ॥

"पुट्ठाइं" यह पद हेतुपरक पद है–आत्मा में कर्म बद्ध क्यों हुए तो इसका उत्तर यह (पुट्ठाइं) पद देता है–यह बताता है कि आत्माने पहिले इन्हें अपने ही योगादिरूप व्यापार से स्पर्श का विषयभूत बनाया था सो वे आत्माके साथ चिपक गये। 'निधत्त' इस पदके विषयमें विशेष विवरण मेरे बनाये हुए "मोक्खपद" में लिखा जा चुका है–जिसका तात्पर्य यह है कि निधत्त जो कर्म होते हैं उनमें उद्वर्तना और अपवर्तना इन दो करणों के सिवाय दूसरे और करण कुछ भी नहीं कर सकते हैं। तथा जीव के साथ जो कर्म बद्ध हैं उनका कर्ता और कोई दूसरा जीव नहीं है किन्तु वही स्वयं आत्मा है कि जिसके साथ वे बद्ध हैं, यह बात "कडाइं" पद प्रकट करता है। इससे यह बात सिद्धान्त की पुष्ट और स्पष्ट हो जाती है कि कर्मों को अपने साथ बद्ध करने में अधिकारी स्वयं आत्मा ही है। निकाचित वे कर्म होते हैं कि जिनमें कोई भी करण कुछ भी नहीं कर सकता है। मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रस

હેતુપરક પદ છે એટલે કે આત્માની સાથે કર્મ શા માટે બદ્ધ થયા તેનો ઉત્તર આ "પુટ્ઠાઇં" પદ આપે છે તે એ વાત બતાવે છે કે આત્માએ પહેલા પોતાના જ યોગ વગેરે વ્યાપારથી તેમને ગ્રહણ કર્યાં અને તેથી તે કર્મો આત્માની સાથે બંધાયા 'निधत्त" પદના વિષયમા વિશેષ વર્ણન મોક્ષ પદ મા લખવામા આવ્યુ છે તેનું તાત્પર્ય એ છે કે નિધત્ત કર્મમાં, ઉદ્વર્તના અને અપવર્તના એ બે સિવાયના કરણ કંઇ પણ કરી શકતાં નથી, તથા જીવની સાથે જે કર્મ બદ્ધ હોય છે તેનો કર્તા બીજો કોઇ પણ જીવ હોતો નથી પણ સ્વયં આત્મા પોતે જ છે એજ વાત "कडाइं" પદ પ્રકટ કરે છે આથી સિદ્ધાંતની એ વાતને સમર્થન મળે છે કે કર્મોને પોતાની સાથે બદ્ધ કરવામાં આત્મા પોતે જ અપરાધી હોય છે જે કર્મ ઉપર કોઇ પણ કરણની કોઇ પણ પ્રકારની અસર થતી નથી તે કર્મને નિકાચિત" કર્મ કહે છે.

अमनोमस्वरः, 'अणाएज्जवयणे' अनादेयवचनः, अग्राह्यवचनः, एतादृशः सन् 'पच्चयाए यावि भवइ' प्रत्यायातश्चापि भवति, मनुष्यभवमागच्छतीति, यस्य जीवस्य 'वण्णवज्झाणियसे कम्माइं नो बद्धाइं' वर्णवद्ध्यानि च तस्य कर्माणि नो बद्धानि 'पसत्थं णेयव्वं' प्रशस्तं ज्ञातव्यम्, अत्र पूर्वपाठो व्यत्ययेन=प्रशस्तरूपेन ग्राह्य इत्यर्थः,यदि तस्य जीवस्य कर्माणि अशुभरूपेण नो बद्धानि भवेयुस्तदा सर्वं रूपादिकं प्रशस्तमेव भवतीति ज्ञातव्यानीतिभावः। कियत्पर्यन्तमित्याह-'जाव

अमनोमस्वरवाला होता है, अनादेयवचनवाला होता है। सूत्रकारने यहां यह कहा है कि यदि गर्भस्थ जीव भाग्यवशात् सुरक्षित रीति से गर्भ से बाहर निकल भी आता है परन्तु यदि उसके पूर्वोपार्जित कर्म निंदनीय या अशुभ आदि रूप हैं और अभीतक वे उपशांत दशा में नहीं आ पाये हैं-उदय दशा में ही चल रहे हैं तो वह उनके उदय के कारण खोटे रूप आदि वाला बन जाया करता है। सूत्र में जो "वन्नवज्झाणि" पद आया है उसका अर्थ "निंदनीय या अशुभ" ऐसा है, कारण कि-वर्ण शब्दका अर्थ श्लाघारूप वर्ण जिनका नष्ट हो चुका है, अर्थात् जो निंदनीय हैं वे कर्म। अथवा जो कर्म अशुभ हैं वे "वण्णवज्झ" है यहां इस पद की संस्कृत छाया "वर्णबाह्य" ऐसी होगी, क्योंकि जो अशुभ कर्म होते हैं वे वर्ण से-प्रशंसा से बाह्य.बहिर्भूत हुआ करते हैं। (बद्ध) का तात्पर्य यहां सामान्यरूप से बांधे गये ऐसे कर्मों से है (पुट्ठाइं) पद से यह बात स्पष्ट होती है कि जो गाढ बंधन से पुष्ट किये हैं ऐसे वे कर्म। अथवा

સ્વરવાળો હોય છે, અમનોમસ્વરવાળો હોય છે, અને અનાદેય વચનવાળો હોય છે. સૂત્રકાર અહી એ બતાવે છે કે ગર્ભનો જીવ જો ભાગ્યવશાત્ સુરક્ષિત રીતે ગર્ભમાથી બહાર નીકળે તો પણ તેના પૂર્વોપાર્જિત કર્મ જો નિંદનીય અથવા અશુભ હોય અને જ્યા સુધી તેના તે કર્મો ઉપશાન્ત દશામાં આવ્યા ન હોય ઉદય દશામાં જ હોય તો તે કર્મોના ઉદયને કારણે તે જીવ ખરાબ રૂપ વગેરે વાળો જન્મે છે. સૂત્રમાં આપેલા "वन्नवज्झाणि" પદનો અર્થ અહિં "નિંદનીય કે અશુભ" એવો થાય છે કારણ કે "વર્ણ" શબ્દનો અર્થ "શ્લાઘા" પણ થાય છે તે શ્લાઘારૂપ વર્ણ જેનો નષ્ટ થઇ ગયો છે એટલે કે જે નિંદનીય છે એવા કર્મ અથવા જે કર્મ અશુભ હોય છે તેમને "वण्णवज्झ" કહે છે અહીં તેની સસ્કૃત છાયા "वर्णबाह्य" એવી થાય છે. કારણ કે જે અશુભ કર્મો હોય છે ને વર્ણથી (પ્રશસાથી) બાહ્ય (રહિત) હોય છે. "बद्ध" એટલે સામાન્ય રૂપે બાધેલા કર્મો "पुट्ठाइ" પદનો અર્થ ગાઢ બધનથી પુષ્ટ કરાયેલા કર્મ એવો સમજવો અથવા "पुट्ठाइ" એ પદ

यदि (वण्णवज्झाणि से कम्माई नो बद्धाइं पसत्थं णेयव्वं जाव आदिज्जवयणे पच्चायाए यावि भवइ) उस गर्भगत जीव के अशुभ अथवा निंदनीय कर्म बद्ध न हों तो सब रूपादिक उसके प्रशस्त ही होते हैं, ऐसा जानना चाहिये, यह प्रशस्तता कहांतक जाननी चाहिये तो इसके लिये सूत्रकार ने कहा कि—" जाव आदिज्जवयणे पच्चायाए यावि भवइ " कि यदि जीव के अशुभ कर्म बद्ध नहीं अपितु शुभ कर्म बद्ध हैं तो रूप से लेकर स्वर पर्यन्त सब उसके प्रशस्त ही होते हैं। वह अपनी उन्नति करता हुआ लोक में आदेयवचन वाला बन जाता है। ऐसा वह मनुष्य होता है। तात्पर्य कहने का यह है कि अशुभ कर्म बद्ध आदि वाले पूर्वजीव की अपेक्षा इस शुभ कर्म बद्धादिवाले जीव की सब बातें प्रशस्त ही प्रशस्त होती हैं। (सेवं भंते२ ! त्ति) हे भदन्त ! गर्भ के विषय में जिस प्रकार से आप देवानुप्रिय ने कहा है वह सब ऐसा ही है ऐसा ही है अर्थात् सत्य ही है सत्य ही है-ऐसा कह कर उन गौतम स्वामी ने श्रमण भगवान् महावीर को वन्दना की, नमस्कार किया। वन्दना नमस्कार कर फिर वे संयम और तप से अपनी आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर बैठ गये ॥सू०५॥

॥ प्रथम शतकमें यह सप्तम उद्देश समाप्त हुआ १-७॥

હે તો પણ ખરાબ રૂપ વગેરે વાળો થાય છે પણ જે (वण्णवज्झाणि से कम्माइं नो बद्धाइं पसत्थं णेयव्वं जाव आदिज्ज वयणे पच्चायाए यावि भवइ) તે ગર્ભમાંથી નિકળેલા જીવે અશુભ અથવા નિંદનીય કર્મ બાંધ્યા ન હોય તો તેના રૂપ વગેરે પ્રશસ્ત (સારાં) જ હોય છે એમ જાણવુ તે પ્રશસ્ત પણું ક્યાં સુધી સમજવુ તે બતાવવાને માટે સૂત્રકારે કહ્યું છે કે " जाव आदिज्जव यणे पच्चायाए यावि भवइ " એટલે કે જો જે જીવને અશુભ કર્મોનો બંધ બાંધેલો ન હોય પણ શુભકર્મો જ બાંધ્યા હોય તો તેના રૂપથી લઇને સ્વર સુધીના બધા જ સારાં હોય છે તે પોતાની પ્રગતિ સાધતો સાધતો લોકમાં આદેયવચન વાળો બની જાય છે (તેનાં વચનને બધાં લોકો માન્ય કરે છે,) તાત્પર્ય એ છે કે અશુભ કર્મ બદ્ધ જીવની અપેક્ષાએ શુભ કર્મબદ્ધ જીવના રૂપ વગેરે બધાં પ્રશસ્ત જ હોય છે (सेवं भंते ! सेवं भंते !) હે ભગવન્! આપે ગર્ભના વિષયમાં જે કહ્યું તે યથાર્થ જ છે હે ભગવન્! આપની વાત તદ્દન સાચી છે આ પ્રમાણે કહીને ગૌતમ સ્વામીએ મહાવીર પ્રભુને વંદણા કરી, નમસ્કાર કર્યા. વંદણા નમસ્કાર કરીને, સંયમ અને તપથી પોતાના આત્માને ભાવિત કરતાં તેઓ પોતાને સ્થાને બેસી ગયા. ॥ સૂ-૫ ॥

आदि वगैरह नामकर्म के साथ उदयरूप से व्यवस्थापित किये गये ऐसे जो कर्म हैं वे व्यवस्थापित कर्म हैं। जिन कर्मों का अनुभाव तीव्ररूप से स्थापित हुआ है वे कर्म अभिनिविष्ट हैं। "अभिसमन्नागयाइं" का तात्पर्य है कि जो कर्म उदय के सन्मुख हो रहे हैं। और इसी कारण जो "उदिन्नाइं" उदयावलिका में प्राप्त हो रहे हैं तो जीव ऐसे कर्मों के प्रभाव से कैसा होता है? इसका उत्तर सूत्रकार ने "दुरूवे" इत्यादि पदों द्वारा दिया है। दुरूप शब्द का अर्थ विकृत (खराब) आकारवाला होता है। ऐसा जीव विकृत आकारवाला होता है। "दुवन्ने" कुत्सित वर्णवाला होता है। "दुग्गंधे" दुर्गंध आदि वाला होता है। "अणिट्ठे" पद यह कहता है कि उसे कोई चाहता नहीं है। (अकंते) वह अनभिलषणीय होता है "अप्पिए" अप्रिय-सब का अपकार करने वाला होता है। "असुभे" अकल्याणकर होता है। अमनोज्ञ-अहितकारक होता है। अमनोम-सकलजनों के प्रतिकूल रहा करता है। तथा हीनादि स्वर वाला होता है। उसका वचन कोई नहीं मानता है ऐसा वह अनादेय वचन वाला होता है। "पच्चायाए यावि भवइ" यह पद प्रकट करता है कि ऐसा जीव यदि मनुष्य होता है तो वह ऐसा होता है। तथा

મનુષ્યગતિ, પંચેન્દ્રિય જાતિ, ત્રસ વગેરે નામ કર્મની પ્રકૃતિઓ સાથે ઉદયરૂપે વ્યવસ્થાપિત એવા જે કર્મ છે તેને "વ્યવસ્થાપિત કર્મ" કહે છે. જે કર્મોનો અનુભવ તીવ્ર રૂપે સ્થાપિત થયો હોય છે તે કર્મોને "અભિનિવિષ્ટ" કહે છે "अभिसमन्नागयाइ" એટલે કે જે કર્મો ઉદયની સન્મુખ આવી રહ્યાં હોય અને તે કારણે જે "उदिन्नाइं" ઉદયાવલિકામાં આવી રહ્યાં હોય છે એવાં કર્મ. એવા કર્મોના પ્રભાવથી જીવ કેવા સ્વરૂપે ઉત્પન્ન થાય છે, એ સૂત્રકારે 'दुरूवे" ઈત્યાદિ પદો વડે બતાવ્યુ છે "दुरूवे" એટલે વિકૃત (ખરાબ દેખાવ વાળો, "दुग्गंधे" એટલે દુર્ગન્ધ વાળો, "अणिट्ठे" (અનિષ્ટ) એ પદ એ અર્થ બતાવે છે કે તેને કોઈ ચાહતુ નથી 'अकंते" એ પદ એમ સૂચવે છે કે તે અકાન્ત-અનભિલષણીય-હોય છે "अप्पिए" અપ્રિય સૌનો અપકાર કરનારો હોય છે "असुभे" અકલ્યાણકારી, "अमनोज्ञ" અહિતકારક, "अमनोम' બધા લોકોને પ્રતિકૂળ રહેનારો હોય છે વળી તે ગર્ભમાંથી નિકળેલો જીવ હીન વિગેરે સ્વર વાળો હોય છે તેનાં વચનને કોઈ માનતુ નથી, માટે તેને અનાદેય વચન વાળો કહ્યો છે "पच्चायाए यावि भवइ" આ પદો વડે એ બતાવ્યું છે કે એવો જીવ જો મનુષ્ય ગતિમાં જન્મ

सप्तमुद्देशकं निरूप्य, तदनु अष्टमं निरूपयति, तदनयोः सप्तमाष्टमोद्देशकयोः परस्परमयं सम्बन्धः, सप्तमोद्देशके जीवाना गर्भवासः प्रतिपादितः, गर्भवासश्च जीवानां सत्यायुष्के एव भवति, इत्यायुषो निरूपणायायमष्टमोद्देशकः तथा प्रथम शतकप्रथमोद्देशकस्यादौ संग्रहगाथायां-'बाल'त्ति यदुक्तं तद्विबालस्य निरूपणाय चाष्टमोद्देशकः प्रारभ्यते, तस्य प्रारभ्यमाणस्याष्टमोद्देशकस्येदमादिमं सूत्रम्-' रायगिहे ' इत्यादि ।

मूलम्—रायगिहे समोसरणं जाव एवं वयासी-एगंत बालेणं भंते! मणुस्से किं णेरइयाउयं पकरेइ तिरिक्खाउयं पकरेइ, मणुस्साउयं पकरेइ, देवाउयं पकरेइ ? णेरइयाउयं किच्चा णेरइएसु उववज्जइ, तिरिक्खाउयं किच्चा तिरिएसु उववज्जइ, मणुस्साउयं किच्चा मणुस्सेसु उववज्जइ, देवाउयं किच्चा देवलोगेसु उववज्जइ ? गोयमा ! एगंत बालेणं

का कथन, वीर्यविचार लब्धिवीर्य तथा करणवीर्य का विचार, चौवीस दण्डक, उद्देशक की परिसमाप्ति-

सप्तम उद्देशक का निरूपण करके अब सूत्रकार आठवें उद्देशक का निरूपण करते हैं। इन दोनों सातवें और आठवें उद्देशकों का आपस में इस प्रकार से संबंध है-सप्तम उद्देशक में जीवों का गर्भवास प्रतिपादित किया गया है-सो यह गर्भवास जीवों का आयुकर्म के होने पर ही होता है। इस आयु कर्मके निमित्त तथा प्रथम शतकके प्रथम-उद्देशक की आदि में संग्रह गाथा में " बाल " ऐसा जो कहा गया है सो उस बाल के निरूपण करने के निमित्त यह आठवां उद्देशक प्रारंभ किया गया है उसका सर्व प्रथम सूत्र (रायगिहे समोसरणं जाव) इत्यादि है।

સાતમા ઉદ્દેશનુ નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર આઠમાં ઉદ્દેશનુ નિરૂપણ કરે છે તે બન્ને ઉદ્દેશાઓ વચ્ચે પરસ્પરનો સબંધ આ પ્રમાણે છે-સાતમા ઉદ્દેશકમા જીવોના ગર્ભવાસનુ પ્રતિપાદન કરાયુ છે-જીવોનો ગર્ભવાસ આયુષ્ય કર્મના સદ્ભાવથી જ થાય છે તેથી આયુષ્યકર્મનુ નિરૂપણ કરવાના આશયથી તથા પહેલા શતકના પહેલા ઉદ્દેશાની શરૂઆતમા આવતી સગ્રહગાથામાં જે " બાલ " પદ આવે છે તે બાલનુ નિરૂપણ કરવાને માટે આ આઠમા ઉદ્દેશનો પ્રારભ કર્યો છે તેનુ સૌથી પહેલુ સૂત્ર 'रायगिह समोसरण जाव' ઈત્યાદિ છે

॥ अथ अष्टमोद्देशकः प्रारभ्यते ॥

अस्मिन् उद्देशके संक्षेपतो विचारणीया विषया इमे सन्ति एकान्तबालस्य एकान्तपण्डितस्य च स्वरूपादिकथनम्, अंतक्रियायाः कल्पोपपत्तिकाक्रियायाश्च स्वरूपविचारः, बालपण्डितस्य स्वरूपादिनिर्णयः, देवगतेः कारणप्रतिपादनम्। मृगघातकादिपुरुषाणां स्वरूपादि संकीर्त्तनम्, क्रिया–कायिकीआधिकरणिकी–प्राद्वेषिकी–पारितापनिकी–प्राणातिपातिक्यादीनां स्वरूपादिविचारः, तृणदाहकपुरुषस्य स्वरूपादिकथनम्, धनुर्धारिपुरुषविचारः, मृगवैरपुरुषवैरादीनां कथनम्, षण्मासानां मध्ये तदुपरि वा मरणे क्रियाविचारः पुरुषघातकपुरुषस्य विचारः, समानयोर्द्वयोः पुरुषयोः स्वरूपकथनपूर्वकं जयपराजययोः कारणकथनम्, वीर्यविचारः, लब्धिवीर्यस्य तथा करणवीर्यस्य विचारः, चतुर्विंशतिर्दण्डकाः उद्देशकपरिसमाप्तिश्चेति।

प्रथमशतक अष्टम उद्देशक

इस अष्टम उद्देशक में विचारणीय विषयों की सूची सक्षेप से इस प्रकार से है–एकान्त बालक तथा एकान्तपण्डित का स्वरूप आदि का कथन अन्तक्रिया का और कल्पोपपत्तिका क्रिया का स्वरूप विचार, बालपण्डित के स्वरूप आदि का निर्णय, देवगति के कारणों का प्रतिपादन, मृगघातक आदि पुरुषों के स्वरूप आदि का कथन, क्रिया–कायिकी, अधिकरणिकी, प्राद्वेषिकी, पारितापनिकी, प्राणातिपाति की आदिकों के स्वरूप आदि का विचार, तृणदाहक पुरुष के स्वरूप आदि का विचार, धनुर्धारी पुरुष का कथन, मृगवैर, पुरुषवैर आदि का कथन, छहमास के भीतर व उसके बाद मरने में क्रिया का विचार, पुरुषघातक पुरुष का विचार समान दो पुरुषों के स्वरूपकथनपूर्वक जय पराजय के कारण

પહેલા શતકનો આઠમો ઉદ્દેશક

પહેલાં તો આ આઠમાં ઉદ્દેશમાં કયા કયા વિષયનો વિચાર કર્યો છે તે સંક્ષેપમાં બતાવવામાં આવે છે–એકાન્ત તથા બાલક એકાન્ત પંડિતના સ્વરૂપનું કથન, અન્તક્રિયાનો અને કલ્પોપપત્તિકા ક્રિયાના સ્વરૂપનો વિચાર, બાલ પંડિતના સ્વરૂપ વગેરેનો નિર્ણય, દેવગતિના કારણોનુ પ્રતિપાદન, મૃગઘાતક વગેરે પુરુષોના સ્વરૂપ વગેરેનું કથન, ક્રિયા–કાયિકી, આધિકરણિકી, પ્રદ્વેષિકી, પારિતાપનિકી, પ્રાણાતિપાતિકા વગેરેના સ્વરૂપ આદિનો વિચાર, તૃણદાહક પુરૂષના સ્વરૂપ વગેરેનો વિચાર, ધનુર્ધારી પુરૂષનું કથન, મૃગવૈર પુરૂષવૈર વગેરેનુ કથન, છ માસની અંદર અને છ માસ પછી મરવામાં ક્રિયાનો વિચાર, પુરૂષઘાતક પુરૂષનો વિચાર, સમાન બે પુરૂષોના સ્વરૂપ કથન પૂર્વક જય પરાજયના કારણોનો વિચાર, વીર્ય વિચાર, લબ્ધિવીર્ય તથા કરણ વીર્યનો વિચાર, ચોવીસ દંડક, ઉદ્દેશની સમાપ્તિ

वन्दित्वा नमस्यित्वा नात्यासन्ने नातिदूरे शुश्रूषमाण नमस्यन् अभिमुखं विनयेन प्राञ्जलिपुट' " इति समह , ' एव वयासी ' एवमवादीत्–वक्ष्यमाणप्रकारेणा-कथयत्–किमवादीदित्याह—' एगतबाले ' इत्यादि ।

' एगतबाले ण भंते ' एकान्तबालः खलु भदन्त !, एकान्तबालः–मिथ्या-दृष्टिरविरतो वा ' मणुस्से ' मनुष्यः ' किं णेरइयाउय पकरेइ ' किं नैरयिकायुष्कं प्रकरोति, सर्वैकान्तबाल इत्यत्र एकान्तेति पद मिश्रदृष्टिकजीव व्यावर्तयति । ' मणुस्साउयं पकरेइ ' मनुष्यायुष्कं प्रकरोति, ' देवाउय पकरेइ ' देवायुष्कं प्रक रोति ? ' णेरइयाउयं किच्चा णेरइएसु उववज्जइ ' नैरयिकायुष्क कृत्वा नैरयिकेषु

बाद गौतम ने प्रभु को वन्दना और नमस्कार किया । बाद में वे अपने उचित स्थान पर धर्म सुनने की अभिलाषा से प्रभु के सन्मुख नमस्कार कर दोनों हाथ जोड़ कर बैठ गये । और इस प्रकारसे पूछने लगे (एगंत बालेणं भंते मणुस्से किं णेरइयाउयं पकरेइ ?) हे भदन्त एकान्तबाल क्या नरकायुष्क का बंध करता है ? (तिरिक्खाउय पकरेइ ?) तिर्यगायु का बंध करता है ? (मनुस्साउय पकरेइ) मनुष्यायु का बंध करता है ? (देवाउय पकरेइ) देवायु का बंध करता है ? यहाँ एकान्त शब्द का अर्थ मिथ्या दृष्टि अथवा अविरत–विरति विना का जीव है । बाल पद के साथ जो एकान्त विशेषण पद का प्रयोग किया है उससे यह बात सूचित होती है कि जो जीव मिश्रदृष्टि वाला है वह एकान्त बाल नहीं है । अतः इस मिश्र दृष्टि वाले की व्यावृत्ति के निमित्त बाला पद के साथ एकान्त शब्द विशेषणरूप से प्रयुक्त किया गया है । (णेरइया

નગરમાં પાછા ફર્યા ત્યાર બાદ ગૌતમ સ્વામી પ્રભુને વંદણા નમસ્કાર કરીને, ધમ તત્વનુ શ્રવણ કરવાની અભિલાષાથી બન્ને હાથ જોડીને શિર નમાવીને પ્રભુની સંમુખ બેસી ગયા અને આ પ્રમાણે પ્રશ્ન પૂછયો–(एगत बालेणं भंते मणुस्से किं णेरइयाउय पकरेइ ?) હે ભગવન્ ! એકાન્ત બાલ જીવ, શું નરકાયુષ્યનો બંધ બાંધે છે ? કે (तिरिक्खाउय पकरेइ ?) તિર્યંચના આયુનો બંધ બાંધે છે ? (मणुस्साउयं पकरेइ) કે મનુષ્યના આયુનો બંધ બાંધે છે ? (देवाउयं पकरेइ) કે દેવતાના આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે ? અહીં એકાન્તબાલનો અર્થ મિથ્યાદૃષ્ટિ અથવા અવિરતિ (વિરતિ વિનાનો) જીવ સમજવો. બાલ શબ્દ સાથે એકાન્ત વિશેષણનો પ્રયોગ કરવાનું કારણ એ છે કે જે જીવ મિશ્રદૃષ્ટિવાળો હોય છે તેને એકાન્તબાલ કહી શકાતો નથી. તેથી મિશ્રદૃષ્ટિવાળાનો સમાવેશ ન કરવા માટે એકાન્ત વિશેષણ બાલ પદની સાથે યોજવામાં આવ્યું છે (णेरइयाउयं किच्चा, णेरइएसु उववज्जइ) તે એકાન્તબાલ

मणुस्से णेरइयाउयंपि पकरेइ, तिरियाउयंपि पकरेइ, मणुस्साउयंपि पकरेइ, देवाउयंपि पकरेइ, णेरइयाउयंपि किच्चा णेरइएसु उववज्जइ, तिरियाउयंपि किच्चा तिरिएसु उववज्जइ, मणुस्साउयंपि किच्चा मणुएसु उववज्जइ, देवाउयंपि किच्चा देवलोगेसु उववज्जइ ॥ सू० १ ॥

छाया—राजगृहे समवसरणम्, यावदेवमवादीत्, एकान्तबालो भदन्त ! मनुष्यः किं नैरयिकायुष्कं प्रकरोति, तिर्यगायुष्कं प्रकरोति मनुष्यायुष्कं प्रकरोति, देवायुष्कं प्रकरोति ? नैरयिकायुष्कं कृत्वा नैरयिकेषूपपद्यते, तिर्यगायुष्कं कृत्वा तिर्यक्षूपपद्यते, मनुष्यायुष्कं कृत्वा मनुष्येषूपपद्यते, देवायुष्कं कृत्वा देवलोकेषूपपद्यते, गौतम ! एकान्तबालः खलु मनुष्यो नैरयिकायुष्कमपि प्रकरोति तिर्यगायुष्कमपि प्रकरोति मनुष्यायुष्कमपि प्रकरोति देवायुष्कमपि प्रकरोति, नैरयिकायुष्कमपि कृत्वा नैरयिकेषूपपद्यते, तिर्यगायुष्कमपि कृत्वा तिर्यक्षूपपद्यते मनुष्यायुष्कमपि कृत्वा मनुष्येषूपपद्यते देवायुष्कमपि कृत्वा देवलोकेषूपपद्यते ॥ सू० १ ॥

टीका—'रायगिहे समोसरणं' राजगृहे समवसरणम्—राजगृहे नगरे भगवतः समागमनम् 'जाव' यावत्पदेन—तच्छ्रुत्वा परिषदो नगरान्निर्गमनम्, भगवतो धर्मकथा श्रवणानन्तरं परिषदः प्रतिगमनं, तदनु भगवान् गौतमो भगवन्त

"रायगिहे समोसरणं जाव एवं वयासी" इत्यादि।

टीकार्थ-(रायगिहे समोसरणं जाव एवं वयासी) राजगृह नगरमें भगवानका समवसरण-शुभागमन-हुवा यावत् इस प्रकारसे बोले "यहां यावत् पद से इस प्रकार से प्रकरण की सगति करनी चाहिये-" भगवान् के शुभागमन को सुनकर वहां का जनसमूह नगर से निकला, भगवानके पास जाकर वंदना नमस्कार कर प्रभुके मुखसे उसने धर्मकथा श्रवण की, धर्मकथा सुनकर वह नगर में पीछे वापस आ गया। इसके

"रायगिहे समोसरणं जाव एव वयासि" इत्यादि।

ટીકાર્થ—"रायगिहे समोसरण जाव एवं वयासि" રાજગૃહ નગરમા ભગવાનનું સમવસરણ-શુભાગમન-થયુ. ત્યાથી શરૂ કરીને "આ પ્રમાણે બોલ્યાં" સુધીનો પાઠ અહી લેવો જોઈએ અહી "यावत्" (પર્યન્ત) પદ વડે આ પ્રમાણે પાઠ ગ્રહણ કરવો—ભગવાનના શુભાગમનના સમાચાર સાંભળીને ત્યાંનો માનવસમૂહ નગરમાથી નીકળીને ભગવાન પાસે ગયો ભગવાનની પાસે જઈને વંદણા નમસ્કાર કરીને ધર્મકથાનું શ્રવણ કર્યું. ધર્મકથા સાંભળીને લોકો

छाया—एवं खलु चतुर्भिः स्थानैर्जीवा नैरयिकतायै कर्म प्रकुर्वन्ति, नैरयिकतायै कर्म प्रकृत्य नैरयिकेषु उपपद्यन्ते, तद्यथा-महारम्भतया१, महापरिग्रहतया २, पञ्चेन्द्रियवधेन ३, कुणपाहारेण ४ इति।

'तिरिक्खाउयपि पकरेइ' तिर्यगायुष्कमपि प्रकरोति, मायित्वादिभिश्चतुर्भिः कारणैर्जीवस्तिर्यगायुष्कं बध्नाति, उक्तञ्च—" तिरिक्खजोणिएसु माइल्लयाए णियडिल्लयाए१, अलियवयणेणं२, उक्कंचणयाए ३, वंचणयाए " इति।

छाया—तिर्यग्योनिकेषु मायावितया निकृतिमत्तया१, अलीकवचनेन २, उत्कञ्चनतया ३, वञ्चनतया ४ इति। 'मणुस्साउयंपि पकरेइ' मनुष्यायुष्कमपि

(णेरइयाउयंपि किच्चा णेरइएसु उववज्जइ) नरकायुष्क का भी बंध कर यह नैरयिकों में उत्पन्न होता है। (तिरियाउयंपि किच्चा तिरिएसु उववज्जइ) तिर्यचायुष्क भी बंध कर यह तिर्यचों में उत्पन्न होता है। (मणुस्साउयंपि किच्चा मणुएसु उववज्जइ देवाउयंपि किच्चा देवलोगेसु उववज्जइ) मनुष्यायु का भी बंध कर यह मनुष्यों में उत्पन्न होता है। देवायु का भी बंध कर यह देवलोक में उत्पन्न होता है। एकान्त बाल जो मनुष्य होता है—अर्थात् जो मनुष्य मिथ्यादृष्टि अथवा विरति बिना का होता है--वह महारंभ आदि रूप चार कारणों को लेकर नरकायुष्क का बंध करता है—औपपातिक सूत्र में कहा है कि " एवं खलु चउहिं ठाणेहिं जीवा णेरइयत्ताए कम्मं पकरेंति णेरइयत्ताए कम्मं पकरेत्ता णेरइएसु उववज्जंति—त जहा—महारंभयाए १ महापरिग्गहयाए २ पंचिंदियवहणं ३, कुणिमाहारेणं ४" जीव इन चार स्थानों द्वारा नैरयिक गति में जाने के लिये कर्मबंध करते हैं-

किच्चा तिरिएसु उववज्जइ) તિર્યંચાયુષ્યનો બંધ બાંધીને તિર્યંચ યોનીમાં પણ ઉત્પન્ન થાય છે (मणुस्साउयंपि किच्चा मणुएसु उववज्जइ देवाउयंपि किच्चा देवलोगेसु उववज्जइ) મનુષ્યના આયુષ્યનો બંધ બાંધીને મનુષ્યોમાં પણ ઉત્પન્ન થાય છે અને દેવના આયુષ્યનો બંધ બાંધીને દેવલોકમાં પણ ઉત્પન્ન થાય છે એકાન્તબાલ એવો કે મિથ્યાદૃષ્ટિ અથવા વિરતિ વિનાનો-મનુષ્ય મહારંભ વગેરે ચાર કારણોને લીધે નરકના આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે ઔપપાતિક સૂત્રમાં કહ્યું છે કે-(एवं खलु चउहिं ठाणेहिं जीवा णेरइयत्ताए कम्मं-पकरेंति णेरइयत्ताए कम्मं पकरेत्ता णेरइएसु उववज्जं ति-त जहा-(१) महारंभयाए (२) परिग्गहयाए (३) पंचिंदियवहणं (४) कुणिमाहारेण) આ ચાર કારણોને લીધે જીવ નરકગતિમાં જવા યોગ્ય કર્મનો બંધ બાંધે છે-(૧) મહારંભ કરે

उपपद्यते, 'तिरियाउयं किच्चा तिरिएसु उववज्जइ' तिर्यगायुष्कं कृत्वा तिर्यक्षु उपपद्यते, 'मणुस्साउयं किच्चा मणुस्सेसु उववज्जइ' मनुष्यायुष्कं कृत्वा मनुष्येषूपपद्यते, 'देवाउयं किच्चा देवलोगेसु उववज्जइ' देवायुष्कं कृत्वा देवलोकेषूपपद्यते। किमितिप्रश्नः। भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि। 'गोयमा' हे गौतम! 'एकांतबालेणं-मणुस्से णेरइयाउयंपि पकरेइ' एकान्तबालः खलु मनुष्यो नैरयिकायुष्कमपि प्रकरोति, हे गौतम! एकान्तबालो मिथ्यादृष्टिरविरतो वा जीवो महारंभादिभिश्चतुर्भिः कारणैरुपार्जयति नैरयिकायुष्कमपीति।

उक्तं चौपपातिकसूत्रे—'एवं खलु चउहिं ठाणेहिं जीवा णेरइयत्ताए कम्मं पकरेंति, नेरइयत्ताए कम्मं पकरेत्ता णेरइएसु उववज्जंति त जहा—महारंभयाए १, महापरिग्गहयाए २, पंचिंदियवहेणं ३, कुणिमाहारेणं ४।' इति।

उयं किच्चा णेरइएसु उववज्जइ) वह एकान्त बाल नरकायु का बंध कर क्या नैरयिकों में उत्पन्न होता है? (तिरिक्खाउयं किच्चा तिरिएसु-उववज्जइ) तिर्यश्चायु का बंधकर क्या तिर्यश्चों में उत्पन्न होता है? (मणुस्साउयं किच्चा मणुस्सेसु उववज्जइ) मनुष्यायु का बंधकर क्या मनुष्यों में उत्पन्न होता है? (देवाउयं किच्चा देवलोगेसु उववज्जइ) देवायु का बंधकर क्या देवलोक में उत्पन्न होता है? ये सब प्रश्न हैं-इनका उत्तर देते हुए भगवान् कहते हैं कि (गोयमा! एगंतबालेणं मणुस्से णेरइयाउयं पि पकरेइ, तिरिया उयं पि पकरेइ, मणुस्सा उयं पि पकरेइ, देवाउयं पि पकरेइ) हे गौतम! एकान्त बाल जो मनुष्य होता है वह नरकायुष्क का भी बंध करता है, तिर्यंचायुष्क का भी बंध करता है, मनुष्यायुष्क का भी बंध करता है, देवायुष्क का भी बंध करता है।

નરકાયુષ્યનો બંધ બાંધીને શું નરયિકોમાં ઉત્પન્ન થાય છે? (तिरिक्खउय किच्चा तिरिएसु उववज्जइ) તિર્યંચના આયુષ્યનો બંધ બાંધીને શું તિર્યંચોમાં ઉત્પન્ન થાય છે? (मणुस्साउयं किच्चा मणुस्सेसु उववज्जइ) મનુષ્યના આયુષ્યનો બંધ બાંધીને શું મનુષ્યોમાં ઉત્પન્ન થાય છે? કે (देवाउयं किच्चा देवलोगेसु उववज्जइ?) દેવતાના આયુષ્યનો બંધ બાંધીને દેવલોકોમાં ઉત્પન્ન થાય છે?

ઉત્તર—(गोयमा! एगंतबाले णं मणुस्से णेरइयाउय पि पकरेइ, तिरियाउयं पि पकरेइ, मणुस्साउय पि पकरेइ, देवाउय पि पकरेइ) હે ગૌતમ! એકાન્ત બાલ મનુષ્ય નરકાયુષ્યનો બંધ પણ બાંધે છે તિર્યંચાયુષ્યનો બંધ પણ બાંધે છે-(णेरइयाउय पि किच्चा णेरइएसु उववज्जइ) તે એકાન્તબાલ મનુષ્ય નરકાયુષ્યનો બંધ બાંધીને નૈરયિકોમાં પણ ઉત્પન્ન થાય છે, (तिरियाउयं पि-

नैरयिकेषूपपद्यते, तादृशायुष्ककर्म बन्धनं कृत्वा तत्कर्मप्रेरितो नरकेषु समुत्पद्यते इति भाव । 'तिरियाउयंपि किच्चा तिरिएसु उववज्जइ' तिर्यगायुष्कमपि कृत्वा तिर्यक्षु उपपद्यते, 'मणुस्साउयंपि किच्चा मणुस्सु उववज्जइ' मनुष्यायुष्कमपि कृत्वा मनुष्येषूपपद्यते, 'देवाउयंपि किच्चा देवलोगसु उववज्जइ' देवायुष्कमपि कृत्वा देवलोकेषूपपद्यते, यादृश यादृश कर्मबन्धनं स्वयमेव करोत्येकान्तबालो जीवः स तदनुकूलनारकादारम्य देवलोकपर्यन्त गच्छति, कर्मणामेतादृशस्व भावादिति भावः, एकान्तबालत्वे सर्वेषां समानेऽपि तत्कारणविशेषवशादेव नानाविधमायुर्बध्नात्यत एव बालत्वे समानेऽप्यविरतसम्यग्दृष्टिर्मनुष्यो देवायुष्कमेव बध्नाति, न तु शेषाणि नारकाद्यायुष्काणीति ॥ सू०१ ॥

एकान्तबालप्रतिपक्षत्वेन एकान्तपण्डितसूत्रमाह—'एगंतपंडिए' इत्यादि ।

मूलम्—एगंत पंडिए णं भंते ! मणुस्से किं णेरइयाउय पकरेइ जाव देवाउय किच्चा देवलोएसु उववज्जइ? गोयमा !

यह उस कर्म से प्रेरित होकर उसी गति में जाकर उत्पन्न हो जाता है। यही बात सूत्रकार ने (णेरइयाउयपि किच्चा णेरइएसु उववज्जइ) इत्यादि सूत्रों द्वारा प्रकट की है। कर्मों का ऐसा ही स्वभाव है कि एका न्तबाल जीव जैसे २ कर्म को बंधा करता है वह उसके अनुकूल ही नारक से लकर देवलोक पर्यन्त जाता है। यद्यपि जितने भी एकान्तबाल जीव है उन सब में एकान्त बालपना समान होता है-फिर भी आयु ष्कबंध के कारणों की विशेषता को लेकर नाना प्रकार की आयु का बंध बालजीव करते हैं। इस तरह बालपना समान होने पर भी अविरत सम्यग्दृष्टि मनुष्य देवायु का ही बंध करता है। शेष नरकादिक तीन आयुओं का नहीं ॥ सू-१ ॥

જે ગતિના આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે-તે કર્મબંધને કારણે-તે ગતિમાં ઉત્પન્ન થાય છે એજ વાત સૂત્રકારે (णेरइयाउयंपि किच्चा णेरइएसु उववज्जइ) વગેરે સૂત્રો વડે બતાવી છે એકાન્ત બાલ જીવો જેવા જેવા કર્મોનો બંધ બાંધે છે, તેનાં તેવાં કર્મોને અનુકૂળ નારકગતિથી લઈને દેવગતિ સુધી ઉત્પન્ન થાય છે એ કે તમામ એકાન્તબાલ જીવોમાં એકાન્ત બાલ પણું સરખું જ હોય છે, છતાં પણ આયુષ્ય બંધના કારણોની વિશેષતાને લીધે તે એકાન્તબાલ જીવો વિવિધ ગતિના આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે આ રીતે બાલપણાની (અજ્ઞાન પણાની) સમાનતા હોવા છતાં પણ અવિરતિ સમ્યગ્દૃષ્ટિ મનુષ્ય દેવાયુષ્યનો જ બંધ બાંધે છે-નારકાદિ શેષ ત્રણ આયુષ્યોનો બંધ બાંધતો નથી ॥ ૧ ॥

प्रकरोति, प्रकृतिभद्रतादिभिश्चतुर्भिः कारणैर्जीवोऽपि मनुष्यायुष्कं प्रकरोति, उक्तञ्च—

"मणुस्सेसु पगइभद्दयाए १, पगइविणीययाए २, साणुक्कोसयाए ३, अमच्छरियाए ४" इति।

छाया—मनुष्येषु प्रकृतिभद्रतया १, प्रकृतिविनीततया, २, सानुक्रोशतया ३, अमत्सरितया ४। इति। 'देवाउयंपि पकरेइ' देवायुष्कमपि प्रकरोति, सरागसंयमादिभिश्चतुर्भिः कारणैर्जीवो देवायुष्कं प्रकरोति, उक्तञ्च—

"देवेसु-सरागसंजमेणं १, संजमासंजमेणं २, अकामणिज्जराए ३, बालतवोकम्मेणं ४" इति।

छाया-देवेषु-सरागसंयमेन१, संयमासंयमेन२, अकामनिर्जरया३, बालतपःकर्मणा ४। इति। 'णेरइयाउयंपि किच्चा णेरइएसु उववज्जइ' नैरयिकायुष्कमपि कृत्वा

कर्मबंध कर वे नैरयिकों में उत्पन्न हो जाते हैं। वे चार स्थान इस प्रकार से हैं-महा आरंभ करना, महा परिग्रह रखना, पंचेन्द्रिय जीवों का वध करना, कुणिमाहार (मांसाहार) करना। इसी तरह जीव मायाचार आदि चार कारणोंके सेवन करनेसे तिर्यंच की आयुका बंध करता है-वे चार कारण इस प्रकार से हैं—१ मायाचार, निकृति, २ अलीक वचन, ३ उत्कंचन(लांच),४ वंचन। प्रकृतिभद्रता आदि चार कारणों को लेकर जीव मनुष्य आयु का बंध करता है-वे चार कारण ये हैं-प्रकृति से भद्र होना १, स्वभावतः विनीत होना २, दयालु होना ३, मत्सर भाव नहीं रखना ४ सरागसंयम आदि चार कारणों के सेवन करने से जीव देवायु का बंध करता है-वे चार कारण इस प्रकार से हैं-सरागसयम का पालन करना १, अकामनिर्जरा करना २, बाल तप करना ३ संयमासंयम का पालन करना ४। इस तरह जीव जिस आयुका बंध करता है

વાથી (૨) મહા પરિગ્રહ રાખવાથી, (૩) પંચેન્દ્રિય જીવોને વધ કરવાથી અને (૪) કુણિમાહાર (માંસાહાર) કરવાથી જીવ તિર્યંચ આયુષ્યનો બંધ બાંધેછે. તે ચાર કારણો આ પ્રમાણે છે-(૧) માયાચાર નિકૃતિ, (૨) અલીક વચન, (૩) ઉત્કંચન અને (૪) વંચન. પ્રકૃતિભદ્રિકતા વગેરે ચાર કારણોના સેવનથી જીવ મનુષ્યના આયુષ્યનો બધ બાંધે છે તે ચાર કારણો આ પ્રમાણે છે— (૧) સરલ પ્રકૃતિવાળા હોવું, (૨) વિનીત સ્વભાવના હોવુ, (૩) દયાળુ હોવું અને (૪) મત્સર ભાવ ન રાખવો સરાગસયમ વગેરે ચાર કારણોના સેવનથી જીવ દેવાયુષ્યનો બધ બાંધે છે તે ચાર કારણો આ પ્રમાણે છે- (૧) સરાગસંયમનું પાલન કરવું, (૨) અકામ નિર્જરા કરવી, (૩) બાલ તપ કરવું અને (૪) સંયમાસંયમનું (શ્રાવકધર્મનું) પાલન કરવુ. આ રીતે જીવ

द्वे गती मज्ञायेते तद्यथा अन्तक्रिया चैव कल्पोपपत्तिका चैव, तत्तेनार्थेन गौतम ! यावत् देवायुष्कं कृत्वा देवेषूपपद्यते, बालपण्डित खलु भदन्त ! मनुष्यः किं नैर यिकायुष्कं मकरोति यावद्देवायुष्कं कृत्वा देवेषूपपद्यते ? गौतम ! नो नैरयिकायुष्क मकरोति, यावत् देवायुष्कं कृत्वा देवेषूपपद्यते, तत्केनार्थेन यावत् देवायुष्क कृत्वा देवेषूपपद्यते ? गौतम ! बालपण्डितः खलु मनुष्यस्तथारूपस्य श्रमणस्य वा माहनस्य वाऽन्तिके एकमपि आर्यधार्मिकं सुवचनं श्रुत्वा निशम्य देशमुपरमति देशं नोपरमति, देशं मत्याख्याति देशं नो प्रत्याख्याति, तत्तेनार्थेन देशोपरमदेश मत्याख्यानेन नो नैरयिकायुष्कं मकरोति यावद्देवायुष्कं कृत्वा देवेषूपपद्यते तत्ते नार्थेन यावद्देवेषूपपद्यते ॥ सू० २ ॥

टीका—' एगंत पंडिए णं भंते ' एकान्तपण्डितः खलु भदन्त ! एकान्त पण्डित साधु ' मणुस्से ' मनुष्यः, ' एकान्तपण्डिते ' ति कथनेनैव मनुष्य- आयाति पुन ' मणुस्से ' इति कथनं किमर्थं कृतम् ? यतो मनुष्यमन्तरेण एकान्त पण्डितत्वं न भवितुमर्हति ? अत्रोच्यते-मनुष्यति विशेषणं स्वरूपमात्रपरिचाय

एकान्त बालपने का प्रतिपक्षी जो एकान्तपण्डितपना है उस संबंधी सूत्र को अब सूत्रकार कहते हैं-'एगंतपंडिए णं भंते ! मणुस्से ' इत्यादि।

टीकार्थ-(एगंतपंडिए णं भंते ! मणुस्से किं णेरइयाउयं पकरेइ ? जाव देवाउयं किच्चा देवलोएसु उववज्जइ) हे भदन्त ! जो मनुष्य एकान्त पण्डित है-वह क्या नैरयिक की आयु का बंध करता है ? तथा-यावत् वह देवायु का बंध करके देवलोक में उत्पन्न होता है ? ऐसा यह प्रश्न है ? यदि कोई यहां ऐसी बात कहें कि एकान्तपण्डितपना तो मनुष्य के सिवाय और कहीं संभवित है नहीं-फिर सूत्रकार ने जो (मणुस्से) यह पद रक्खा है वह क्यों रक्खा। क्यों कि (एगंत पंडिए) इस शब्दसे ही

એકાન્ત બાલને પ્રતિપક્ષી એકાન્તપંડિત હોય છે હવે સૂત્રકાર એકાન્ત પંડિત વિષે સૂત્રો કહે છે—' एगंत पंडिए णं भंते ! मणुस्से " ઇત્યાદિ।

ટીકાર્થ:-(एगंत पंडिए णं भंते ! मणुस्से किं णेरइयाउयं पकरेइ ? जाव देवाउयं किच्चा देवलोएसु उववज्जइ ?) "હે ભગવન્ ! શું એકાન્ત પંડિત મનુષ્ય નરકાયુષ્યનો બંધ બાંધે છે ? ત્યાંથી શરૂ કરીને પદોવાળા સૂત્રો પ્રમાણેજ ' શું તે દેવાયુષ્યનો બંધ બાંધીને દેવલોકમાં ઉત્પન્ન થાય છે ? ' ત્યાં સુધીનું કથન ગ્રહણ કરવું જોઈએ અહીં એવી દલીલ કરે કે એકાન્ત પંડિતપણું તો મનુષ્ય સિવાયની યોનીમાં સંભવી શકતું જ નથી. તો સૂત્રકારે સૂત્રમાં (मणुस्स) (મનુષ્ય) પદ શા માટે મુકયું છે ? કારણ કે (एगंतपंडिए) પદથી જ મનુષ્ય શબ્દ ગ્રહણ થાય છે તો તે

एगंतपंडिएणं मणूसे आउयं सिय पकरेइ सिय णो पगरेइ, जइ पगरेइ णो णेरइयाउयं पकरेइ, णो तिरियाउयं पकरेइ, णो मणुस्साउयं पकरेइ, देवाउयं पकरेइ, णो णेरइयाउयं किच्चा णेरइएसु उववज्जइ, णो तिरियाउयं किच्चा तिरिएसु उववज्जइ, णो मणुस्साउयं किच्चा मणुस्सेसु उववज्जइ, देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ। से केणट्ठेणं जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ? गोयमा! एगंतपंडियस्स केवलमेव दोगईओ पण्णायंति, तं जहा-अंतकिरिया चेव कप्पोववइया चेव, से तेणट्ठेणं गोयमा! जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ, बालपंडिए णं भंते! मणुस्से किं णेरइयाउयं पकरेइ, जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ? गोयमा! णो णेरइयाउयं पकरेइ जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ। से केणट्ठेणं जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ? गोयमा! बालपंडिए णं मणुस्से तहारूवस्स समणस्स वा माहणस्स वा अंतिए एगमपि आरियं धम्मियं सुवयणं सोच्चा णिसम्म देसं उवरमति, देसं णो उवरमइ, देसं पच्चक्खाइ, देसं णो पच्चक्खाइ, से तेणट्ठेणं देसोवरमदेसपच्चक्खाणे णं णेरइयाउयं पकरेइ, जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ, से तेणट्ठेणं जाव देवेसु उववज्जइ॥ सू० २॥

छाया—एकान्तपण्डितः खलु भदन्त! मनुष्यः किं नैरयिकायुष्कं प्रकरोति, यावद्देवायुष्कं कृत्वा देवलोकेषूपपद्यते? गौतम! एकान्तपण्डितो मनुष्यः स्यादायुष्कं प्रकरोति स्यान्नो प्रकरोति, यदि प्रकरोति नो नैरयिकायुष्कं प्रकरोति नो तिर्यगायुष्कं प्रकरोति नो मनुष्यायुष्कं प्रकरोति, देवायुष्कं प्रकरोति, नो नैरयिकायुष्कं कृत्वा नैरयिकेषूपपद्यते, नो तिर्यगायुष्कं कृत्वा तिर्यक्षूपपद्यते नो मनुष्यायुष्कं कृत्वा मनुष्येषूपपद्यते, देवायुष्कं कृत्वा देवेषूपपद्यते। तत्केनार्थेन यावत् देवायुष्कं कृत्वा देवेषूपपद्यते? गौतम! एकान्तपण्डितस्य मनुष्यस्य केवलमेव

–'गोयमे' इत्यादि, 'गोयमा' हे गौतम ! 'एगंत पंडिएण मणूसे' एकान्त पण्डितः खलु मनुष्यः 'सिय पकरइ सिय णो पकरइ' स्यात् प्रकरोति स्यात् नो प्रकरोति, एकान्तपण्डितः कदाचिदायुष्यं बध्नाति कदाचिन्नो बध्नाति, सम्यक्त्वसप्तके क्षपिते न बध्नात्यायु अन्यथा तु बध्नात्येवेत्याश्रयेन कथितं स्यात् प्रकरोति स्यान्न प्रकरोतीति। 'जइ पकरेइ णो णेरइयाउयं पकरेइ' यदि प्रकरोति तदा न नैरयिकायुष्कं प्रकरोति, 'णो तिरियाउयं पकरइ' नो तिर्यगायुष्कं प्रकरोति 'णो मणुस्साउयं पकरेइ' नो मनुष्यायुष्कं प्रकरोति, अपि तु 'देवाउयं पकरेइ' देवायुष्कं प्रकरोति, एकान्तपण्डितो यद्यायुष्ककर्मोपार्जयति तदा देवसम्बन्धिकर्मोपार्जयति नान्यदिति भावः। अथ पुनः प्रकारान्तरेण तदेव दर्शयति–'णो णेरइयाउयं किच्चा णेरइएसु उववज्जइ' नो नैरयिकायुष्कं कृत्वा नैरयिकेषूपपद्यते, 'णो तिरियाउयं किच्चा तिरिएसु उववज्जइ' नो तिर्यगायुष्क

एण मणुस्से आउयं सिय पकरेइ, सिय णो पकरेइ) गौतम ! जो एकान्त पण्डित मनुष्य है वह किसी अपेक्षा आयु का बंध करता भी है और किसी अपेक्षा आयु का बंध नहीं भी करता है। (जइ पकरेइ णो णेरइयाउयं पकरेइ, णो तिरियाउयं पकरेइ, णो मणुस्साउयं पकरेइ, देवाउयं पकरेइ) यदि वह आयु का बंध करता है तो नैरयिक आयु का बंध नहीं करता, तिर्यगायु का बंध नहीं करता, मनुष्यायु का बंध नहीं करता, सिर्फ एक देवायु का बंध करता है। (णो णेरइयाउयं किच्चा णेरइएसु उववज्जइ, णो तिरियाउयं किच्चा, तिरिएसु उववज्जइ, णो मणुस्साउयं किच्चा मणुस्सेसु उववज्जइ) नैरयिक आयु का बंध कर वह नैरयिकों में उत्पन्न नहीं होता है, तिर्यगायु का बंध कर वह तिर्यंचों

(गोयमा ! एगंत पंडिएण मणुस्से आउयं सिय पकरेइ सिय णो पकरेइ) हे गौतम ! जे એકાન્ત પંડિત મનુષ્ય હોય છે તે કોઈ અપેક્ષાએ આયુષ્યનો બંધ બાંધે પણ છે અને કોઈ પણ અપેક્ષાએ આયુષ્યનો બંધ નથી પણ બાંધતા (जइ पकरेइ णो णेरइयाउयं पकरेइ णो तिरियाउयं पकरेइ, णो मणुस्साउयं पकरेइ देवाउयं पकरेइ) જો તે આયુષ્યનો બંધ બાંધે તો તે નૈરયિક આયુષ્યનો બંધ બાંધતો નથી, તિર્યંચ આયુષ્યનો બંધ પણ બાંધતો નથી મનુષ્યાયુષ્યનો બંધ પણ બાંધતો નથી. પરંતુ દેવાયુષ્યનો જ બંધ બાંધે છે (णो णेरइयाउयं किच्चा णेरइएसु उववज्जइ णो तिरियाउयं किच्चा तिरिएसु उववज्जइ णो मणुस्साउयं किच्चा मणुस्सेसु उववज्जइ देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ) નરકાયુષ્યનો બંધ બાંધીને તે નારકગતિમાં ઉત્પન્ન થતા નથી.

कम्, शुक्लं दधि प्रमेयो घट इत्यादौ यथा शुक्लत्वं प्रमेयत्वं परिचायकं तथैव प्रकृतेपि। 'किं णेरइयाउयं पकरेइ' किं नैरयिकायुष्कं प्रकरोति- बध्नाति किम्? 'जाव देवाउयं किच्चा देवलोगेसु उववज्जइ' यावत् देवायुष्कं कृत्वा देवलोकेषूपपद्यते किम्? अत्र यावत्पदेन-"तिरिक्खाउयं पकरेइ? मणुस्साउयं पकरेइ? देवाउयं पकरेइ? नेरइयाउयं किच्चा नेरइएसु उववज्जइ? तिरिक्खाउयं किच्चा तिरिएसु उववज्जइ? मणुस्साउयं किच्चा मणुस्सेसु उववज्जइ?" इति संग्राह्यम्। अस्यार्थस्तु एकान्तबालसूत्रप्रश्नव्याख्यायां विलोकनीयः। भगवानाह

मनुष्यका ग्रहण हो जाता है। सो इसका समाधान ऐसा है कि (मनुष्य) यह पद जो विशेषरूप से रखा गया हैं सो वह व्यावर्तक विशेषणरूप से नहीं रखा हैं किन्तु स्वरूप विशेषरूप से रखा गया है-जैसे शुक्लं दधि, प्रमेयो घटः इत्यादि प्रयोगों में देखा जाता है। अतः शुक्लत्व और प्रमेयत्वं ये स्वरूप के परिचायक जैसे विशेषण हैं उसी प्रकार से यहां पर भी (मणुस्से) यह भी स्वरूप का परिचायक विशेषण है। यहां जो (जाव) पद आया है उससे (तिरिक्खाउयं पकरेइ, मणुस्साउयं पकरेइ, देवाउयं पकरेइ, णेरइयाउयं, किच्चा नेरइएसु उववज्जइ, तिरिक्खाउयं किच्चा तिरिक्खेसु उववज्जइ? मणुस्साउयं किच्चा मणुस्सेसु उववज्जइ) यह सब पूर्वोक्त पाठ संगृहित हुआ हैं। इस पाठ का अर्थ एकान्तबालसूत्र की यहां पहिले सूत्र में प्रश्नव्याख्या में कर दिया गया है। सो वहां देख लेना चाहिये। इस तरह से जो गौतमस्वामी ने प्रश्न किया है उसका उत्तर देते हुए प्रभु उनसे कहते हैं कि - (गोयमा! एगंतपंडि-

શંકાનું સમાધાન આ પ્રમાણે કરી શકાય-"મનુષ્ય" પદને જે વિશેષણરૂપે મૂકવામાં આવ્યુ છે તે વ્યાવર્તક વિશેષણરૂપે મૂકયુ નથી પણ સ્વરૂપ વિશેષણરૂપે મૂકયું છે-એવુ જ (शुक्लं दधि) (प्रमेयो घटः) વગેરે પ્રયોગોમાં જોવા મળે છે જેવી રીતે શુકલત્વ અને પ્રમેયત્વ, એ બન્ને સ્વરૂપનો પરિચય આપનારા વિશેષણો છે, એવી જ રીતે (मणुस्से) મનુષ્યપદ પણ સ્વરૂપનો પરિચય આપનારૂ વિશેષણ છે અહીં આવેલાં (जाव) (यावत् પર્યન્ત) પદથી નીચેના પાઠને ગ્રહણ કરવો જોઈએ (तिरिक्खाउयं पकरेइ, मणुस्साउयं पकरेइ देवाउयं पकरेइ, णेरइयाउयं किच्चा नेरइएसु उववज्जइ, तिरिक्खाउयं किच्चा तिरिक्खेसु उववज्जइ? मणुस्साउयं किच्चा मणुस्सेसु उववज्जइ?) આ પાઠનો અર્થ એકાન્તબાલ સૂત્રના પહેલા સૂત્રની પ્રશ્નવ્યાખ્યામાં આપવામાં આવ્યો છે, ત્યાંથી વાચી લેવો. આ પ્રકારના જે પ્રશ્નો ગૌતમ સ્વામીએ પૂછયા છે તેનો ઉત્તર મહાવીર પ્રભુ આ પ્રમાણે આપે છે-

तीर्थङ्करैः प्रज्ञाप्येते, एतादृशगतिद्वयस्यैवावश्यं भावित्वादिति। अन्तक्रिया-निर्वाणम्, कल्पोपपत्तिका=कल्पेषु अनुत्तर विमानान्तदेवलोकेषु उपपत्ति कल्पोपपत्तिः, सैव कल्पोपपत्तिका, अत्र कल्पशब्दः सामान्ये नैव वैमानिक देवावासस्य सूचकः।

देवायु का बंध कर वह देवलोक में उत्पन्न होता है। यहां पर "केवल-मेव दो गईओ पण्णायंति" जो ऐसा कहा है सो उसका तात्पर्य यह है कि जितने भी एकान्तपण्डित मनुष्य हैं उन सब का ही अन्तक्रिया और कल्पोपपत्तिका ये दो ही गति होती हैं अन्य गति नहीं होती हैं। ऐसा तीर्थंकर प्रभु का कहना है। अन्तक्रिया शब्द का अर्थ निर्वाण है और कल्पोपपत्तिका का अर्थ सौधर्म देवलोक से लेकर अनुत्तर विमानतक देवलोक में उत्पन्न होना है तथा एकान्तपण्डित मनुष्य आयु का बंध करता भी है और नहीं भी करता है ऐसा जो कहा गया है उसका तात्पर्य यह है कि अनन्तानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ ये अनंतानुबंधी चार एवं मिथ्यात्व मोहनीय, मिश्रमोहनीय, सम्यक्त्व मोहनीय, ये तीन इस प्रकार सात प्रकृतियां जिसके क्षय हो गये है तो वह किसी भी आयु का बंध नहीं करता है। और यदि ये सम्यक्त्व सप्तक उसके नष्ट नहीं हुए तो वह आयु का बंध करता है। कल्पोपपत्तिका में जो कल्प शब्द है वह सामान्यरूप से ही वैमानिक देवावास का सूचक है।

કહ્યું છુ કે યાવત્ તે દેવાયુષ્યનો બંધ બાંધીને દેવલોકમાં ઉત્પન્ન થાય છે. અહીં "केवलमेव दो गईओ पण्णायंति" એવું જે કહ્યું છે તેનું તાત્પર્ય એ છે કે એકાન્ત પંડિત મનુષ્ય બે ગતિમાં જ જાય છે (૧) અન્તક્રિયા અને (૨) કલ્પોપપત્તિકા અન્ય ગતિમાં જતો નથી, એવું તીર્થંકર પ્રભુએ કહ્યું છે. અન્તક્રિયા એટલે નિર્વાણ 'મોક્ષ' અને કલ્પોપપત્તિકા એટલે સૌધર્મ કલ્પથી લઈને અનુત્તર વિમાન સુધીના દેવલોકમાં ઉત્પન્ન થવું "એકાન્ત પંડિત મનુષ્ય આયુષ્યનો બંધ બાંધે પણ છે અને નથી પણ બાંધતો એ કથનનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે-અનન્તાનુબંધી ક્રોધ માન, માયા અને લોભ એ ચાર અને મિથ્યાત્વ મોહનીય, મિશ્રમોહનીય, અને સમ્યકત્વ મોહનીય, એ ત્રણ મળીને કુલ સાત પ્રકૃતિયોનો જેણે સંપૂર્ણ ક્ષય કર્યો હોય તે કોઈ પણ આયુષ્યનો બંધ બાંધતો નથી. પણ જો તે સાતે પ્રકૃતિયોનો ક્ષય થયો ન હોય તો તે એકાન્ત પંડિત આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે કલ્પોપપત્તિકામાંનો કલ્પ શબ્દ સામાન્ય રીતે વૈમાનિક દેવ આવાસનો સૂચક છે

कृत्वा तिर्यक्षु उपपद्यते ' णो मणुस्साउयं किच्चा मणुस्सेसु-उववज्जइ ' नो मनुष्यायुष्कं कृत्वा मनुष्येषु उपपद्यते, किन्तु ' देवाउयं-किच्चा देवेसु उववज्जइ ' देवायुष्कं कृत्वा देवेषूपपद्यते, नैरयिकाद्यायुष्कं नोपार्जयति, न वा तादृशमायुष्कमुपार्ज्य नरकादिषु कदाचिदप्युत्पद्यते किन्तु देवायुष्कं समुपार्ज्य तदायुर्बलाद्देवलोके एव समुत्पद्यते इति समुदितार्थ इति। ' से केणट्ठेणं ' तत्केनार्थेन ' जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ ' यावत् देवायुष्कं कृत्वा देवेषूपपद्यते, केन कारणेन स नारकादिकर्मायुरनुपार्ज्य नरकादिषु नोत्पद्यते देवायुष्कमुपार्ज्य देवलोके एवोत्पद्यत इति? भगवानाह—' गोयमे 'त्यादि। ' गोयमा ' हे गौतम ! ' एगंतपंडियस्स णं' एकान्तपण्डितस्य खलु 'मणूसस्स' मनुष्यस्य 'केवलमेव केवलमेव ' दोगईओ ' द्वे गती ' पण्णायति ' प्रज्ञाप्यते नान्या इति। ते एवं दर्शयति-' तं जहा ' तद्यथा ' अतकिरिया चेव कप्पोववत्तिया चेव ' अन्तक्रिया चैव कल्पोपपत्तिका चैव। केवलशब्दः साकल्यार्थे अतः सर्वेषामेवैकान्तपंडितानां द्वे एव गती

में उत्पन्न नहीं होता है, मनुष्य आयु का बंध कर वह मनुष्यों में उत्पन्न नहीं होता है। किन्तु देवायु का ही बंध कर वह देवों में उत्पन्न होता है। (से केणट्ठेणं जाव देवाउय किच्चा देवेसु उववज्जइ) हे भदन्त ! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि एकान्तपण्डित मनुष्य यावत् देवायु का बंध कर देवों में उत्पन्न होता है? (गोयमा ! एगतपंडियस्स णं मणुसस्स केवलमेव दो गईओ पण्णायंति) हे गौतम! जो एकान्तपण्डित मनुष्य होता है उसकी दो गतियां कही गई हैं (तं जहा) वे इस प्रकार से हैं। (अंतकिरियाचेव कप्पोववत्तिया चेव) एक अन्तक्रिया और दूसरी कल्पोपपत्तिका (से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ) इस कारण हे गौतम ! में ऐसा कहता हूँ कि यावत्

તિર્યંચ આયુષ્યનો બંધ બાંધીને તે તિર્યંચ યોનિમાં ઉત્પન્ન થતા નથી, મનુષ્યાયુષ્યનો બંધ બાંધીને તે મનુષ્યગતિમાં ઉત્પન્ન થતા નથી, પણ દેવાયુષ્યનો જ બંધ બાંધીને તે દેવોમાં જ ઉત્પન્ન થાય છે. (से केणट्ठेण जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ ?) હે ભગવન્ ? આપ શા કારણે એવું કહો છો કે એકાન્ત બાલપંડિત મનુષ્યો " નરકાયુષ્યનો બંધ બાંધીને નરકોમાં ઉત્પન્ન થતા નથી" ત્યાંથી લઈને " દેવાયુષ્યનો બંધ બાંધીને દેવગતિમાં ઉત્પન્ન થાય છે?" ત્યાં સુધીનો સૂત્રપાઠ ગ્રહણ કરવો (गोयमा ! एगंत पंडियस्स णं मणुसस्स केवलमेव दो गईओ पण्णायंति) હે ગૌતમ ! એકાન્ત પંડિત મનુષ્યોની બે ગતિઓ જ કહી છે, (तंजहा) તે ગતિઓ આ પ્રમાણે છે-(अंतकिरिया चेव कप्पोववत्तिया चेव) (૧) અંતક્રિયા અને (૨) કલ્પોપપત્તિકા (से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ) હે ગૌતમ ! તે કારણે હું એવું

पूपपद्यते, बालपण्डितः नरयिकादिसम्बन्धि आयुष्यकर्म नोपार्जयति, न वा तादृश कर्मबलेन नैरयिकायारभ्य मनुष्यपर्यन्तगतौ समुत्पद्यते किन्तु देवायुष्कं समुपार्ज्य तादृशकर्मबलाद्देवलोके एव समुत्पद्यते इति भावः । पुनः प्रश्नयति-'से केणट्ठेणं' तत्केनार्थेन 'जाव देवाउय-किच्चा देवेसु उववज्जइ' यावत् देवायुष्कं कृत्वा देवेषूपपद्यते ? बालपंडितो न नैरयिकाद्यायुर्बध्नाति, न च नैरयिकाद्यायुर्बद्ध्वा नारकादिषूत्पद्यते किन्तु देवायुरेव बद्ध्वा देवलोकेषूत्पद्यते, तत्र किं कारणमिति प्रश्नाशय । भगवानाह—'गोयम' त्यादि । 'गोयमा' हे गौतम ! 'बालपंडि एणं मणुस्से' बालपंडित खलु मनुष्य बालपंडितो नाम श्रावक', 'तहारूवस्स'

मनुष्य नरकायु का बंध नहीं करता है और यावत् वह देवायु का बंध कर देवलोक में उत्पन्न होता है । तात्पर्य कहने का यह है कि जो बाल-पंडित मनुष्य होता है वह नैरयिक संबंधी आयुष्क कर्मका उपार्जन नहीं करता है, और न वह ऐसे कर्म के बल से नैरयिक से लेकर मनुष्य पर्यन्त गति में उत्पन्न होता है, किन्तु देवायुष्क का उपार्जन कर वह तादृश कर्म के प्रभाव से देवलोकों में ही उत्पन्न होता है । (से केणट्ठेण जाव-देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ ?) हे भदन्त ! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि वह बालपण्डित मनुष्य यावत् देवायुष्क का उपार्जन कर देवलोकों में उत्पन्न होता है अर्थात्-वह बालपंडित मनुष्य न नैरयिक आदि की आयु बांधता है और न नैरयिक आदि की आयु बांध कर वह नारकादिकों में उत्पन्न होता है किन्तु देवायु ही बांध कर वह देवलोकों में उत्पन्न होता है इसमें क्या कारण है ? (गोयमा ! बालपंडिए णं मणुस्से) हे गौतम ! जो बालपंडित मनुष्य होता है वह

" हे गौतम ! ते બાલપંડિત મનુષ્ય નારકાયુનો બંધ બાંધતો નથી. " ત્યાંથી લઈને ' દેવાયુનો બંધ બાંધીને દેવલોકમાં ઉત્પન્ન થાય છે ' ત્યાં સુધીનો પાઠ ગ્રહણ કરવો. તાત્પર્ય એ છે કે તે બાલપંડિત મનુષ્ય નારકી સંબંધી આયુષ્ય કર્મનું ઉપાર્જન કરતો નથી, અને તે તિર્યંચાયુષ્યનો અને મનુષ્યાયુષ્યનો બંધ પણ બાંધતો નથી. અને એવાં કર્મોનો બંધ ન બાંધવાને કારણે તે નારક ગતિમાં, તિર્યંચ ગતિમાં તેમજ મનુષ્ય ગતિમાં ઉત્પન્ન થતો નથી. પણ દેવાયુષ્યનો બંધ બાંધીને દેવલોકમાં જ ઉત્પન્ન થાય છે.

પ્રશ્ન—(से केणट्ठेण जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ ?) હે ભગવન્ ! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે તે બાલપંડિત મનુષ્ય નારક, તિર્યંચ અને મનુષ્ય આયુષ્યનો બંધ બાંધીને નારકગતિમાં, તિર્યંચ ગતિમાં કે મનુષ્યગતિમાં ઉત્પન્ન થતો નથી પણ દેવાયુષ્યનો બંધ બાંધીને દેવલોકમાં જ ઉત્પન્ન થાય છે ?

तथारूपस्य 'समणस्स वा' श्रमणस्य वा तपस्विनः 'माहणस्स वा' माहनस्य वा-माहन माहन इत्येवं वदनशीलस्य निवृत्तसर्वसावद्यव्यापारस्य साधोः, यद्वा-माहनस्येति श्रावकस्य वा 'अंतिए' अन्तिके समीपे 'एगमपि आरियं धम्मियं सुवयणं सोच्चा' एकमपि आर्यं धार्मिकं सुवचनं श्रुत्वा 'णिसम्म' निशम्य हृदि अवधार्य 'देसं उवरमइ' देशमुपरमति, धार्मिकप्रवचनश्रवणोत्तरकाल देशादुपरतो भवतीत्यर्थः, 'देसं णो उवरमइ' देशं नोपरमति, देशान्नोपरतो भवति, 'देसं पच्चक्खाइ' देशं प्रत्याख्याति, देशादुपरमानन्तरं देशम्-एकदेशं स्थूलं प्राणातिपातादिकं प्रत्याख्याति त्यजति 'देसं णो पच्चक्खाइ' देशं नो प्रत्याख्याति, आंशिकं प्रत्याख्यानं करोति आंशिकं प्रत्याख्यानं न करोति, 'से तेणट्ठेणं' तत्ते-

---

(अर्थात् श्रावक) (तहारूवस्स समणस्स वा माहणस्स वा अंतिए) तथा रूप श्रवण तथा माहन-मत मारो, मत मारो इस प्रकार का उपदेश देने वाले सर्वसावद्यव्यापारनिवृत्तशाली साधु के अथवा माहन श्रावक-के पास से (एगमवि आरियं धम्मियं सुवयणं सोच्चा) एक भी आर्य धार्मिक सुवचन सुन करके और (णिसम्म) उसे हृदय में अवधारण करके (देसं उवरमइ) कितनिक प्रवृत्तियों से दूर हो जाता है, और (देसं णो उवरमइ) कितनी प्रवृत्तियों से दूर नहीं होता है। (देस पच्चक्खाइ, देसं णो पच्चाक्खाइ) उपरम होने के बाद वह एकदेश से प्राणातिपात आदिका-अर्थात् स्थूलप्राणातिपात आदिका त्याग कर देता है और एकदेश से प्राणातिपात आदि का त्याग नहीं

ઉત્તરઃ—(गोयमा ! बालपडिए णं मणुस्से) હે ગૌતમ ! જે બાલપંડિત (શ્રાવક) મનુષ્ય હોય છે તે (तहारुवस्स समणस्स वा माहणस्स वा अंतिए) તે પ્રકારના શ્રમણ પાસેથી તથા "मा हन" "હણો નહી, હણો નહી" એવો ઉપદેશ દેનારા સર્વસાવદ્ય વ્યાપારથી રહિત એવા સાધુ પાસેથી અથવા માહન-શ્રાવકની પાસેથી (एगमपि आरियं धम्मियं सुवयणं सोच्चा) એક પણ આર્ય ધાર્મિક સુવચનનું શ્રવણ કરીને અને (णिसम्म) તેને હૃદયમા ધારણ કરીને (देसं उवरमइ) કેટલીક પાપકારી પ્રવૃત્તિયોથી દૂર રહે છે અને (देसं णो-उवरमइ) કેટલીક પાપકારી પ્રવૃત્તિયોથી દૂર રહેતો નથી (देस पच्चक्खाइ,-देस णो पच्चक्खाइ) તે એક દેશથી (અમુક અંશે) પ્રાણાતિપાત (હિંસા) વગેરેનો સ્થૂલ પ્રાણાતિપાત વગેરેનો ત્યાગ કરે છે અને અમુક અંશે પ્રાણાતિપાત વગેરેનો ત્યાગ કરતો નથી. એટલે કે પ્રાણાતિપાત વગેરેનો અમુક દૃષ્ટિએ આંશિક ત્યાગ કરે છે અને અમુક પ્રકારે આંશિકરૂપે તેનો ત્યાગ નથી પણ

नार्थेन 'देसोवरम दसपच्चक्खाणेण' देशोपरमदेशप्रत्याख्यानेन 'णो णेरइया उयं पकरेइ' नो नैरयिकायुष्कं प्रकरोति, 'जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ' यावत् देवायुष्कं कृत्वा देवेषूपपद्यते, 'से तेणट्टेणं जाव देवेसु उववज्जइ' तत्तेनार्थेन देवेषूपपद्यते, एतेन देशोपरमदेशप्रत्याख्यानेन बालपण्डितो नारकायुष्कं न बध्नाति किन्तु देवायुषो बन्धनं कृत्वा देवलोकेषु समुत्पन्नो भवतीति ॥सू०२॥

॥ इत्येकान्तपण्डितबालपण्डितयोर्विचारः ॥

अथ मृगघातकपुरुषादिविचारः—

जन्मग्रहणे आयुष्यकर्म कारणम्, आयुषो बन्धे च क्रिया कारणमिति क्रियाप्रतिपादिकां पञ्चसूत्रीमाह—'पुरिसे णं भंते' इत्यादि।

करता है। अर्थात् वह प्राणातिपात आदिका किसीरूप आंशिकरूप में त्याग कर देता है और किसीरूप से आंशिकरूप में उनका त्याग नहीं करता है। इस तरह वह देशविरत श्रावक बन जाता है। (से तेणट्टेणं देसोवरमदेसपच्चक्खाणेणं णो णेरइयाउयं पकरेइ, जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ से तेणट्टेणं जाव देवेसु उववज्जइ) इसलिये हे गौतम! देशोपरम और देशप्रत्याख्यान से युक्त होने के कारण वह बाल पण्डित मनुष्य नैरयिक आयुका बंध नहीं करता है। यावत् वह देवायु का बंध कर देवों में उत्पन्न होता है। इस कारण हे गौतम! मैंने ऐसा कहा है कि वह बालपण्डित मनुष्य यावत् देवलोकोंमें उत्पन्न होता है ॥ सू० २॥

॥इस प्रकारसे एकान्त पण्डित और बालपंडित का विचार संपूर्ण हुआ॥

अथ मृगघातक पुरुषादिकों का विचार—

जन्म के लेने में आयु कर्म कारण है और आयुकर्म के बांधने में

કરતો આ રીતે તે દેશવિરત-શ્રાવક કહેવાય છે (से तेणट्टेणं देसोवरम-देसपच्चक्खाणेणं णो णेरइयाउयं पकरेइ, जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ) હે ગૌતમ! દેશોપરમ અને દેશ પ્રત્યાખ્યાનથી યુક્ત હોવાને કારણે તે બાલ પંડિત મનુષ્ય નરયિક, તિર્યંચ અને મનુષ્યાયુષ્યનો બંધ બાંધીને નારક, તિર્યંચ અને મનુષ્ય ગતિમાં ઉત્પન્ન થતો નથી પણ દેવાયુષ્યનો બંધ બાંધીને દેવલોકમાં ઉત્પન્ન થાય છે તે કારણે મે એવું કહ્યું છે કે તે બાલપંડિત મનુષ્ય દેવાયુષ્યનો બંધ બાંધીને દેવલોકમાં જ ઉત્પન્ન થાય છે ॥ સૂ ૨॥

॥ એકાન્ત પંડિત અને બાલપંડિતનું વક્તવ્ય સમાપ્ત॥

મૃગઘાતક પુરૂષાદિકનું વક્તવ્ય

જન્મ લેવામાં કારણરૂપ આયુષ્ય કર્મ છે અને આયુષ્ય કર્મ બાંધવામાં

मूलम्–पुरिसे णं भंते ! कच्छंसि वा दहंसि वा उदगंसि दवियंसि वा वलयंसि वा नूमंसि वा गहणंसि वा गहणविदुग्गंसि वा पव्वयंसि वा पव्वयविदुग्गंसि वा वणंसि वा वणविदुग्गंसि वा मियवित्तिए मियसंकप्पे मियपणिहाणे मियवहाए गंता, एते मियत्ति काउं अण्णयरस्स मियस्स वहाए कूडपासं उद्दाइ, तओ णं भंते ! से पुरिसे कइ किरिए पन्नत्ते, गोयमा ! जावं च णं से पुरिसे कच्छंसि वा जाव कूडपासं उद्दाइ, तावं च णं से पुरिसे सिय ति किरिए, सिय चउ किरिए, सिय पंच किरिए, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ सिय ति किरिए सिय चउ किरिए सिय पंच किरिए, गोयमा ! जे भविए उद्दवयणयाए णो वंधणयाए, णो मारणयाए, तावं च णं से पुरिसे काइयाए अहिगरणियाए पाउसियाए, तिहिं किरियाहिं पुट्ठे, जे भविए उद्दवणयाए वि वंधणयाए वि णो मारणयाए तावं च णं से पुरिसे काइयाए अहिगरणियाए पाउसियाए पारितावणियाए चउहिं किरियाहिं पुट्ठे, जे भविए उद्दवणयाए वि वंधणयाए वि मारणयाए वि तावं च णं से पुरिसे काइयाए–अहिगरणियाए पाउसियाए जाव पाणाइवायकिरियाए पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे, से तेणट्ठेणं जाव पंचकिरिए ॥ सू० ३ ॥

क्रिया कारण है। इस विचार से अब सूत्रकार क्रिया प्रतिपादिका पंचसूत्री का कथन करते हैं—'पुरिसे णं भंते !' इत्यादि।

ક્રિયા કારણભૂત હોય છે. તેથી હવે સૂત્રકાર ક્રિયા પ્રતિપાદક પાંચ સૂત્રોનું કથન કરે છે–"पुरिसे णं भंते !" ઈત્યાદિ

छाया—पुरुषः खलु भदन्त ! कच्छे वा ह्रदे वा उदके वा द्रवके वा वलय वा नूमे वा गहने वा गहनविदुर्गे वा पर्वते वा पर्वतविदुर्गे वा वने वा वनविदुर्गे वा मृगवृत्तिको मृगसङ्कल्पो मृगप्रणिधानो मृगवधाय गन्ता एत मृगा इति कृत्वाऽन्यतरस्य मृगस्य वधाय कूटपाशमुद्दाति, ततो भदन्त ! स पुरुषः कतिक्रियः प्रज्ञप्तः ? गौतम ! यावच्च खलु स पुरुष कच्छे वा यावत् कूटपाशमुद्दाति, तावच्च खलु स पुरुषः स्यात् त्रिक्रिय स्यात् चतुष्क्रियः, स्यात् पंचक्रियः ? तत्केनार्थेन भदन्त ! एवमुच्यत स्यात् त्रिक्रियः स्यात् चतुष्क्रिय स्यात् पंचक्रियः गौतम ! यो भव्य उद्द्रवणतया, नो बन्धनतया, नो मारणतया तावच्च खलु स पुरुषः कायिकया आधिकरणिक्या प्राद्वेषिक्या तिसृभिः क्रियाभिः स्पृष्टः यो भव्यः उद्द्रवणतयापि, बन्धनतयापि नो मारणतया तावच्च खलु स पुरुषः कायिक्या आधिकरणिक्या प्राद्वेषिक्या पारितापनिक्या चतसृभिः क्रियाभिः स्पृष्टः, यो भव्य उद्द्रवणतयापि बन्धनतयापि मारणतयापि तावच्च खलु स पुरुषः कायिक्या आधिकरणिक्या प्राद्वेषिक्या यावत् प्राणातिपातक्रियया पंचभिः क्रियाभिः स्पृष्टः तत्तेनार्थेन यावत् पंचक्रियः ॥ सू० २ ॥

टीका—' पुरिसे णं भंते ' पुरुषः खलु भदन्त ! ' कच्छंसि वा ' कच्छे वा—कच्छे नदीजलपरिवेष्टितवृक्षादियुक्तप्रदेशविशेषे, ' दहंसि वा ' ह्रदे वा—अगाधजलप्रदेशे 'उदगंसि वा' उदके वा, सामान्ये जलाशय 'दवियंसि वा' द्रवके वा तृणादि द्रव्य समुदाये ' वलयंसि वा ' वलये वा, वृत्ताकारनद्यादिसकुटि

टीकार्थ–(भंते !) हे भदन्त ! ण निश्चयसे (मिय वित्तिए) मृगोंसे अपनी जीविका चलानेवाला (मिय सकप्पे) मृगों को मारने के लिये कृत संकल्पवाला, (मियपणिहाणे) मृगों की शिकार करने में तल्लीन चित्तवाला ऐसा (पुरिसे) कोई पुरुष (मियवहाए) मृगों को मारने के लिये (कच्छंसिवा) कच्छ में–नदी के जल से घिरे हुए झाडोंवाले स्थान में (दहंसिवा) अथवा ह्रद–अगाध जलवाले स्थान में (उदगंसि वा) या सामान्य जलाशय रूप तालाब आदि स्थान पर (दवियंसि वा)

ટીકાર્થ—(भंते ! णं मियवित्तिए) હે ભગવન્ મૃગો વડે એટલે કે પશુ ઓની હત્યા કરીને જ પોતાનો નિર્વાહ કરનારો, (मिय सकप्पे) મૃગોને માર વાનો જેમણે સંકલ્પ કર્યો છે એવા (मियपणिहाणे) મૃગોનો શિકાર કરવામાં જ તલ્લીન ચિત્ત વાળો (पुरिसे) એવો કોઇ પુરુષ (मियवहाए) મૃગોની હત્યા કરવાને માટે (कच्छंसि वा) કચ્છમાં નદીથી ઘેરાયેલા ઝાડીવાળા સ્થાનમાં (दहंसि वा) અથવા દ્રહમાં–અગાધ જળવાળા સ્થાનમાં, (उदगंसि वा) અથવા સામાન્ય જળાશય રૂપ તળાવ વગેરે સ્થાન પર, (दवियंसि वा) અથવા ઘાસ

मूलम्–पुरिसे णं भंते ! कच्छंसि वा दहंसि वा उदगंसि दवियंसि वा बलयंसि वा नूमंसि वा गहणंसि वा गहणविदुग्गंसि वा पव्वयंसि वा पव्वयविदुग्गंसि वा वणंसि वा वणविदुग्गंसि वा मियवित्तिए मियसंकप्पे मियपणिहाणे मियवहाए गंता, एते मियत्ति काउं अण्णयरस्स मियस्स वहाए कूडपासं उद्दाइ, तओ णं भंते ! से पुरिसे कइ किरिए पन्नत्ते, गोयमा ! जावं च णं से पुरिसे कच्छंसि वा जाव कूडपासं उद्दाइ, तावं च णं से पुरिसे सिय ति किरिए, सिय चउ किरिए, सिय पंच किरिए, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ सिय ति किरिए सिय चउ किरिए सिय पंच किरिए, गोयमा ! जे भविए उद्दवयणयाए णो बंधणयाए, णो मारणयाए, तावं च णं से पुरिसे काइयाए अहिगरणियाए पाउसियाए, तिहिं किरियाहिं पुट्ठे, जे भविए उद्दवणयाए वि बंधणयाए वि णो मारणयाए तावं च णं से पुरिसे काइयाए अहिगरणियाए पाउसियाए पारितावणियाए चउहिं किरियाहिं पुट्ठे, जे भविए उद्दवणयाए वि बंधणयाए वि मारणयाए वि तावं च णं से पुरिसे काइयाए–अहिगरणियाए पाउसियाए जाव पाणाइवायकिरियाए पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे, से तेणट्ठेणं जाव पंचकिरिए ॥ सू० ३ ॥

क्रिया कारण है। इस विचार से अब सूत्रकार क्रिया प्रतिपादिका पंचसूत्री का कथन करते हैं—'पुरिसे णं भंते!' इत्यादि।

ક્રિયા કારણભૂત હોય છે તેથી હવે સૂત્રકાર ક્રિયા પ્રતિપાદક પાચ સૂત્રોનું કથન કરે છે–"પુરિસે णं भंते!" ઈત્યાદિ

उपास उराइ ' कूटपाशमुद्ददाति, कूटं=मृगग्रहणकारणगर्तादिकम् , पाशश्च वागुरा इति कूटपाशम् , उद्ददाति मृगवधाय रचयति, 'तओ ण भंते' ततः खलु भदन्त! ' से पुरिसे ' स पुरुषः ' काइकिरिए ' कतिक्रियः, कतिसंख्यकक्रियावान् भवतीति प्रश्नः । उत्तरयति भगवान्-' गोयमे ' त्यादि । 'गोयमा !' हे गौतम! ' जावंच ण से पुरिसे ' यावत् च स खलु पुरुषः ' कच्छंसि वा ' कच्छे वा ' जावकूडपासं उराइ ' यावत् कूटपाशमुद्दाति, ' तावं च ण से पुरिसे सिय ति किरिए ' तावत् च स खलु पुरुष स्यात् त्रिक्रिय 'सियचउकिरिए ' स्यात् चतुष्क्रियः, ' सियपंचकिरिए ' स्यात्पञ्चक्रियः, यावत्कालम् स पुरुषः कूटपाशादिक रचयति तावत् स पुरुषः, कदाचित् त्रिक्रियावान् कदाचित् चतुष्क्रियावान् कदाचित् पंचक्रियावान् स्यादिति भावः । पुनः प्रश्नयति गौतमः ' से केणट्ठेण ' मित्यादि, ' से केणट्ठेणं भंते ' तत् केनार्थेन भदन्त ! ' एवं वुच्चइ ' एवमुच्यते

करके किसी मृग को मारने के लिये खड्डा बना कर उस पर जाल तान दिया (तओ ण भंते ! से पुरिसे कई किरिए पण्णत्ते ?) तो हे भदन्त! ऐसा वह पुरुष कितनी क्रियावाला कहलावेगा ? मृग को पकड़ने के लिये कूट और बांधने के लिये जाल होता है । (गोयमा ! जावं च णं से पुरिसे कच्छंसि वा जाव कूडपास उराइ तावं च णं से पुरिसे सिय तिकिरिए, सिय चउकिरिए सिय पंचकिरिए) हे गौतम ! जब तक वह कच्छ में यावत् कूट-मृगादिकों को पकड़ने के लिये गर्त आदि को और जाल आदिको रचता है तबतक वह पुरुष कदाचित् तीन क्रियावाला, कदाचित् चार क्रियावाला, और कदाचित् पांचक्रियावाला कहलावेगा । (से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ, सिय तिकिरिए, सिय चउकिरिए, सियपंचकिरिए ?) हे भदन्त ! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि

निश्चय કરીને એક મૃગને મારવાને માટે ખાડો બનાવીને તેની ઉપર જાળ પાથરી દીધી (तओ णं भंते ! से पुरिसे कई किरिए पण्णत्ते ?) તો હે ભગવન્! એવા પુરુષને કેટલી ક્રિયા વાળો કહી શકાય. (મૃગને પકડવાને માટે કૂટ અને બાંધવાને માટે જાળ હોય છે) (गोयमा ! जाव च णं से पुरिसे कच्छंसि वा जाव कूडपास उराइ तावं च णं से पुरिसे सिय तिकिरिए सिय चउकिरिए, सिय पंचकिरिए) હે ગૌતમ ! જ્યાં સુધી તે પુરુષ કચ્છમાં (નદીથી ઘેરાયેલા ભાગ વાળા સ્થાનમાં) (ત્યાંથી લઈને) ' મૃગાદિકોને પકડવાને માટે ખાડો બનાવી તેના પર જાળ વગેરે રચે છે ' (ત્યાં સુધીનો પાઠ ગ્રહણ કરવો) ત્યાં સુધી તે પુરુષ કયારેક ત્રણ ક્રિયાવાળો, કયારેક ચાર ક્રિયાવાળો અને કયારેક પાંચ ક્રિયાવાળો કહેવાય છે (से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ, सियति किरिए, सिय चउ किरिए, सिय पंचकिरिए ?) હે ભગવન્ આપ શા કારણે

लगतियुक्तप्रदेशे इत्यर्थः, 'नूमंसि वा' नूमे वा, नूमे-अन्धकारयुक्ते कन्दरादावित्यर्थः। 'गहणंसि वा' गहने वा, तृणगुल्मलतावृक्षादिसमुदाये 'गहणविदुग्गंसि वा' गहनविदुर्गे वा, पर्वताग्रेकदेशावस्थितवृक्षवल्ल्यादिसमुदाये 'पव्वयंसि वा' पर्वते वा 'पव्वयविदुग्गंसि वा' पर्वतविदुर्गे वा, पर्वतसमुदाये इत्यर्थः, 'वणंसि वा' वने वा, एकजातीय वृक्षसमुदायो वनम्, तस्मिन्। 'वणविदुग्गंसि वा' वनविदुर्गे वा, अनेकप्रकारकवृक्षसमुदाये, 'मियवित्तिए' मृगवृत्तिकः, मृगैर्वन्यपशुविशेषैर्वृत्तिर्जीविका यस्य स मृगवृत्तिकः, । मृगपालकोपि मृगवृत्तिः स्यादित्यतआह—'मियसंकप्पे' मृगसंकल्पः, मृगमारणाय कृतः संकल्पो निश्चयो येन स मृगसंकल्पः, मृगमारणसंकल्पवानित्यर्थः, चलचित्ततयापि मृगवधाध्यवसायो भवेदित्यत आह—'मियपणिहाणे' मृगप्रणिधान, मृगवधाय कृतं प्रणिधानं चित्तैकाग्र्यं येन स मृगप्रणिधानः, मृगवधैकचित्तः, 'मियवहाए गंता' मृगवधाय गन्ता=गमनशीलः 'एते मिय त्ति काउं' एते मृगाः इति कृत्वा 'अण्णयरस्स' अन्यतरस्य 'मियस्स' मृगस्य 'वहाए' वधाय-मारणाय 'कू

अथवा-घास आदि समुदाय से व्याप्त प्रदेश में (वलयंसि वा) गोलाकार नदी के जल से कुटिल गति वाले स्थान में (नूमंसि वा) अथवा अंधकार युक्त कन्दरादिरूप प्रदेश में (गहणंसि वा) अथवा तृणगुल्म, लता, वृक्ष आदिकों से युक्त स्थान में (गहणंविदुग्गंसि वा) अथवा पर्वतादि के एक देश में स्थित ऐसे वृक्षलतादि समुदायवाले स्थान में (पव्वयंसि-वा) अथवा किसी पर्वत के ऊपर (पव्वयविदुग्गंसि वा) अथवा अनेक पर्वतो पर (वणंसिवा) अथवा एक जाती के वृक्षों के समुदाय वाले स्थान में (वणविदुग्गंसि वा) अथवा अनेक जातीके वृक्षों के समुदायाकीर्ण स्थान में (गंता) गया-वहां जाकर उसने (एते मियत्ति काउं अण्णयरस्स मियस्स वहाए कूटपासं उद्दाइ) ये ही मृग हैं ऐसा ख्याल करके-निश्चय

વગેરેથી આચ્છાદિત પ્રદેશમા, (वलयंसि) ગોળાકાર નદીના જળથી કુટિલ સ્થાનમા (नूमंसि वा) અથવા અંધકાર વાળી ગુફાઓના સ્થાનમાં (गहणं सि वा) અથવા તૃણ, ગુલ્મ, લતા, વૃક્ષ વગેરેથી યુક્ત સ્થાનમાં, (गहण विदुग्गंसि वा) અથવા પર્વતાદિના એક ભાગમાં આવેલ લતા અને વૃક્ષોના સમુદાય વાળા સ્થાનમા (पव्वयंसि वा) અથવા પર્વત ઉપર (पव्वयविदुग्गंसि वा) અથવા અનેક પર્વતો ઉપર, (वणंसिवा) અથવા એક જ જાતના વૃક્ષોના સમુદાય વાળા સ્થાનમા, (वणविदुग्गंसि वा) અથવા અનેક જાતના વૃક્ષોના સમુદાયથી આચ્છાદિત સ્થાનમા (गंता) ગયો. ત્યાં જઈને તેણે (एते मियत्तिकाउं अण्णयरस्स मियस्स वहाए कूटपासं) આ મૃગો જ છે એવો

भ्रामणादिरूपपीडनाय मवर्चते किन्तु 'णो बंधणयाए' नो बन्धनाय 'णो मारणयाए' नो मारणाय, यावत्पर्यन्त स पुरुषः कूटपाशादिकं रचयति मृगपीडनमुद्दिश्य किन्तु नो बध्नाति मृगं नो वा मारयति मृगमिति भाव । 'तावं च णं से पुरिसे' तावत् च खलु स पुरुष 'काइयाए' कायिक्या, गमनादिकायचेष्टारूपया क्रियया, 'अहिगरणियाए' आधिकरणिक्या, अधिकरणेन कूटपाशादिरू

है। इस क्रिया से वह युक्त बना हुआ है, अतः वह अधिकरणिकी क्रिया से स्पृष्ट कहा गया है। मृगों के प्रति जो उसके हृदय में हुए भाव जगा है वह प्रद्वेष है-इस प्रद्वेष को लेकर जो क्रिया वह कर रहा है वह प्राद्वेषिकी क्रिया है। इस क्रिया वाला वह मारणक्रिया में द्वेष अवश्य होने के कारण हुआ है अत वह प्राद्वेषिकी क्रिया से स्पृष्ट कहा गया है। जो पुरुष केवल मृगों को मारने के लिये कूटपाश आदि की रचना कर रहा है अभी उनको न बांध रहा है और न मार रहा है-तब तक वह कायिकी आधिकरणिकी और प्राद्वेषिकी इन तीन क्रियाओं से युक्त होता है। इसीलीये यहां वह कदाचित् तीन क्रियाओं से युक्त होता है ऐसा कहा गया है। (जे भविए उद्दवणयाए वि, बंधणयाए वि नो मारणयाए, तावं च णं से पुरिसे काइयाए, अहिगरणियाए, पाउसियाए, परितावणियाए चउहिं किरियाहिं पुट्ठे) तथा जबतक वह वधक पुरुष जाल को रखे हुए है मृग की खोज में इधर उधर फिर रहा है, तथा मृग को बांध रहा है मार नहीं रहा है तबतक वह वधक पुरुष

તે ક્રિયાથી યુક્ત હોવાને કારણે તેને અધિકરણિકી ક્રિયાથી સ્પૃષ્ટ કહેવામાં આવ્યો છે મૃગો પ્રત્યે તેના હૃદયમા જે દુષ્ટભાવ ઉત્પન્ન થયો છે તે પ્રાદ્વેષરૂપ ભાવ છે તે પ્રદ્વેષને લીધે તે જે ક્રિયા કરી રહ્યો છે તેને પ્રાદ્વેષિકી ક્રિયા કહે છે મારવાની ક્રિયામા દ્વેષ અવશ્ય રહેલો હોય છે તે કારણે તેનો પ્રાદ્વેષિકી ક્રિયાથી સ્પૃષ્ટ કહેવામા આવ્યો છે જે પુરુષ મૃગોને મારવાને માટે કૂટપાશાદિની રચના કરી રહ્યો હોય પણ જ્યા સુધી તે મૃગોને બાધતો ન હોય અથવા મારતો ન હોય ત્યા સુધી તે કાયિકી, અધિકરણિકી અને પ્રાદ્વેષિકી એ ત્રણ ક્રિયાઓથી જ યુક્ત હોય છે તેથી અહીં એમ કહ્યું છે કે તે પુરુષ કયારેક ત્રણ ક્રિયાઓથી યુક્ત હોય છે (जे भविए उद्दवणयाए वि, बंधणयाए वि, नो मारणयाए तावं च णं से पुरिसे काइयाए, अहिगरणियाए, पाउसियाए पारितावणियाए चउहिं किरियाहिं पुट्ठे) તથા જ્યાં સુધી તે પુરુષ જાળને બિછાવીને મૃગની શોધમાં આમ તેમ ફરતો હોય, તથા મૃગને બાધતો હોય પણ મારતો ન હોય ત્યા સુધી તે શિકારી ચાર ક્રિયાઓથી યુક્ત ગણાય

'सिय तिकिरिए सिय चतुकिरिए सिय पंचकिरिए' स्यात् त्रिक्रियः स्यात् चतुष्क्रियः स्यात् पंचक्रिय इति? उत्तरयति भगवान्-' गोयमे'त्यादि। 'गोयमा' हे गौतम! 'जे भविए' यो भव्यः, भवतीति भव्यो वधकः, अत्र भव्यशब्देन वधको जीवो गृह्यते, यावन्तं कालं स मृगवधकः 'उद्दवणाए' उद्द्रवणतायै=उद्रवणाय=इतस्ततो

वह पुरुष कदाचित् तीन क्रियावाला, कदाचित् चारक्रियावाला, कदाचित् पांच क्रियावाला कहलावेगा (गोयमा! जे भविए उद्धवणयाए णो बंधणयाए णो मारणाए, तावं च णं से पुरिसे काइयाए अहिगरणियाए पाउसियाए तिहिं किरियाहिं पुट्ठे) हे गौतम! जब तक वह वधक पुरुष इधर उधर चलने फिरने आदि रूप क्रिया में प्रवृत्त हो रहा है मृग को बांधने और मारने में प्रवृत्त नहीं हो रहा है तथा वह पुरुष मृग को पीडा देने के उद्देश से जबतक कूट पाशादिक की रचना कर रहा है, किन्तु वह अभी उसे पकड़ नहीं रहा है और न मार ही रहा है, तब-तक वह पुरुष कायिकी, आधिकरणिकी और प्राद्वेषिकी इन तीन क्रिया-ओं से स्पृष्ट हो रहा है। तात्पर्य कहने का यह है कि उस वधिक पुरुष में मृगको मारनेके निमित्त जो आने जाने आदि रूप शरीरकी चेष्टा हो रही है वह शारीरिक क्रिया है। इस क्रियावाला होनेके कारण वह उस क्रिया से उस समय स्पृष्ट हो रहा है। तथा कूट पाशरूप हिंसा के अधिकरण के निमित्त जो क्रिया हो रही है वह आधिकरणिकी क्रिया

એવુ કહો છો કે તે પુરુષ ક્યારેક ત્રણ ક્રિયાવાળો, ક્યારેક ચાર ક્રિયાવાળો અને પાંચ ક્યારેક ક્રિયાવાળો હોય છે? (गोयमा! जे भविए उद्दवणयाए णो बंधणयाए णो मारणाए ताव च णं से पुरिसे काइयाए अहिगरणियाए पाउसियाए तिहिं किरियाहिं पुट्ठे) હે ગૌતમ! જ્યાં સુધી તે હિંસક પુરુષ આમ તેમ હરવા ફરવાની ક્રિયા કરી રહ્યો છે, પણ મૃગને બાધવા તથા મારવાને માટે પ્રવૃત્ત થયો નથી તથા તે પુરુષ મૃગને મારવાને માટે જ્યા સુધી કૂટ પાશાદિકની રચના કરી રહ્યો છે, પણ તેને જ્યાં સુધી પકડતો નથી કે મારતો નથી, ત્યાં સુધી તે પુરુષ કાયિકી, અધિકરણિકી, અને પ્રાદ્વેષિકી એ ત્રણ ક્રિયાઓથી સ્પૃષ્ટ હોય છે (કરતો હોય છે) કહેવાનુ તાત્પર્ય એ છે કે તે શિકારી, મૃગને મારવાને માટે જે અવર જવર રૂપ શારીરિક ક્રિયાઓ કરતો હોય છે તેને કાયિકી ક્રિયા કહે છે. આ ક્રિયાવાળો હોવાને કારણે તે વખતે તે આ ક્રિયાથી સ્પૃષ્ટ થતો હોય છે. તથા કૂટ પાશાદિ રૂપ હિંસાના અધિકરણને (સાધનોને) નિમિત્તે જે ક્રિયા થતી હોય છે તે ક્રિયાનુ નામ અધિકરણિકી

प्राद्वेषिक्या ' जाव पाणाइवाय किरियाए ' यावत्-यावत्पदेन पारितापनिक्या, तथा प्राणातिपातिक्या, आभिः ' पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे ' पञ्चभिः क्रियाभिः स्पृष्टो भवति, अयमाशयः-उद्रावणमात्रे कृते कायिकी आधिकरणिकी प्राद्वेषिकीति क्रियात्रययुक्तो भवति, बन्धने कृते परितापो जायते इति पूर्वोक्तक्रियात्रयं तथा चतुर्थी परितापनक्रियापि जायते इति चतुष्क्रियायुक्तो भवति, मारणे सति प्राणातिपातो जायते इति पूर्वोक्तचतुष्क्रियासहिता पंचमी प्राणातिपातक्रियेति पंचक्रियो भवतीति । ' से तेणट्ठेणं जाव पंचकिरिए ' तत्तेनार्थेन यावत् पंचक्रिय हे गौतम ! उक्तकारणे रूपरि प्रदर्शित युक्तिभि रुद्रावणादिकं कुर्वन् पुरुषः कदाचित् क्रियात्रयादिना स्पृष्टः सन् त्रिक्रियश्चतुष्क्रियः पचक्रियो वा भवतीति ॥२॥

प्राद्वेषिकी, पारितापनिकी और प्राणातिपात क्रिया इन पांच क्रियाओं से स्पर्श किया गया है-अर्थात् इन पांच क्रियाओं वाला कहलाता है। आशय यह है-कि उद्रावणमात्र (खड्डा खोदना, जाल बिछाना आदि) करने पर वह पुरुष कायिकी, अधिकरणिकी, प्राद्वेषिकी इन तीन क्रियाओं से युक्त होता है। मृग को बांध लने पर " परिताप उसे होता है " इसलिये वह पुरुष चारक्रियाओं से युक्त होता है। मृग के मारने पर प्राणातिपात होता है इसलिये वह पुरुष पूर्वोक्त चारक्रियावाला होता है। इस कारण हे गौतम! उक्त कारणोंको लेकर ऊपर प्रदर्शित युक्तियों के अनुसार उद्रयण (उपद्रव) आदि को करने वाला पुरुष कदाचित् तीन आदि क्रियाओं से स्पृष्ट होकर तीनक्रियावाला चारक्रियावाला पांच-क्रियावाला होता है।

અને પ્રાણાતિપાત, એ પાંચે ક્રિયાઓથી સ્પૃષ્ટ-એટલે કે એ પાંચે ક્રિયાઓથી યુક્ત કહેવાય છે તાત્પર્ય એ છે કે ઉદ્રાવણમાત્ર (ખાડો ખોદવો, જાળ બિછાવવી વગેરે) કરે ત્યાં સુધી તે પુરુષ કાયિકી અધિકરણિકી અને પ્રાદ્વેષિકી એ ત્રણ ક્રિયાઓથી યુક્ત હોય છે જ્યારે તે પુરુષ મૃગને બાંધે છે ત્યારે તેને પરિતાપ (દુઃખ) થતું હોય છે તેથી ત્યારે તેને પારિતાપનિકી ક્રિયા પણ કરે છે તેથી ચાર ક્રિયાઓથી યુક્ત થાય છે મૃગને મારવાથી પ્રાણહત્યા થાય છે તેથી તે ઉપરોક્ત ચાર ક્રિયા ઉપરાંત પાંચમી પ્રાણાતિપાત ક્રિયાથી યુક્ત થવાથી પાંચ ક્રિયાવાળો થાય છે હે ગૌતમ ! ઉપરોક્ત કારણોને લીધે હું એવું કહું છું કે તે પુરુષ ક્યારેક ત્રણ ક્રિયાવાળો, ક્યારેક ચાર ક્રિયાવાળો અને ક્યારેક પાંચ ક્રિયાવાળો, હોય છે

पेण निर्वृत्ता या क्रिया सा आधिकरणिकी तया 'पाउसियाए' प्राद्वेषिक्या, प्रद्वेषेण निर्वृत्ता या क्रिया सा प्राद्वेषिकी तया मारणक्रियायां द्वेषस्यावश्यंभावात्, 'तिहिं-किरियाहिं पुट्ठे' आभिः तिसृभिः क्रियाभिः स्पृष्टः, यो हि पुरुषः केवलम् मृगाणामुद्रवणाय कूटपाशादिकं विरचयति नो बन्धनाय न वा मारणाय स कायिक्याधिकरणिकी-प्राद्वेषिकीति क्रियात्रययुक्तो भवतीति कदाचित् त्रिक्रिय इति कथ्यते, 'जे भविए' यो भव्यः=वधकः 'उद्दवयणयाए वि बंधणयाए वि नो मारणयाए' उद्रवणतायै अपि बन्धनतायै अपि क्रियां करोति किन्तु नो मारणतायै 'तावं च णं से पुरिसे' तावत् च खलु स पुरुषः 'काइयाए' कायिक्या, गमनादि-रूपया क्रियया, 'अहिगरणियाए आधिकरणिक्या=कूटपाशाद्यधिकरण संपादितया, 'पाउसियाए' प्राद्वेषिक्या, प्रद्वेषनिष्पादितया 'पारितावणियाए' पारितापनिक्या, दुःखोत्पादनरूपया परितापप्रयोजना या क्रिया सा पारितापनिकी, सा च क्रिया मृगबन्धने कृते सति भवति, तया क्रियया 'चउहिं किरियाहिं पुट्ठे' चतसृभिः क्रियाभिः स्पृष्टः, आभिः क्रियाभिः स्पृष्टो युक्तः सन् चतुष्क्रियः स पुरुषो भवतीति कदाचिच्चतुष्क्रिय इति कथ्यते। 'जे भविए' यो भव्यः-वधकः 'उद्दवणयाए वि' उद्रवणतायै अपि 'बंधणयाए वि' बन्धनतायै अपि 'मारणयाए वि' मारणतायै अपि कूटपाशादिकं रचयति, 'तावं च ण से पुरिसे' तावत् च खलु स पुरुषः, कायिक्या 'अहिगरणियाए' आधिकरणिक्या, 'पाउसियाए'

चार क्रियाओं से युक्त हो रहा है ऐसा मानना चाहिये। वे चार क्रियाएँ इस प्रकार से हैं—पूर्वोक्त तीन और चौथी पारितापनिकी। यह पारितापनिकी क्रिया मृग के बंधन करने पर होती है। सो उसने मृग को बांध ही लीया है। (जे भविए उद्दवणयाए वि बंधणयाए वि मारणयाए वि तावं च णं से पुरिसे काइयाए, अहिगरणियाए, पाउसियाए जाव पाणाइवायकिरियाए पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे-से तेणट्ठेणं जाव पंच-किरिए) तथा वह वधक पुरुष जबतक उस जाल को रखे-हुए है, मृगों को बांधता है, मृगों को मारता है तबतक वह पुरुष कायिकी, आधिकरणिकी,

---

છે તે-પૂર્વોક્ત ત્રણ ક્રિયાઓ અને ચોથી પરિતાપનિકી ક્રિયા જ્યારે તે પુરુષ મૃગને કૂટપાશાદિમાં બાંધે છે ત્યારે પરિતાપનિકી ક્રિયા થતી હોય છે (जे भविए उद्दवणयाए वि बंधणयाए वि मारणयाए वि ताव च ण से पुरिसे काइयाए, अहिगरणियाए, पाउसियाए, जाव पाणाइवाय किरियाए पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे से तेणट्ठेणं जाव पचकिरिए) તથા તે પુરુષ જ્યારે જાળને બિછાવીને મૃગોને બાંધીને જ્યારે મૃગોને મારે છે ત્યારે કાયિકી, આધિકરણિકી, પ્રાદ્વેષિકી, પારિતાપનિકી

टीका— पुरिसे णं भंते ' पुरुष खलु भदन्त ! ' कच्छंसि वा ' कच्छे वा 'जाव वणविदुग्गंसि वा ' यावद्वनविदुर्गे वा 'तणाई ' तृणानि 'ऊसविय ऊसविय' उत्सर्प्य-पुनः पुनरेकमीकृत्येत्यर्थः, कच्छादारभ्य वनविदुर्गपर्यन्तस्थले तृणानां पुञ्जं कृत्वेत्यर्थः, 'अगणिकायं णिसिरइ' अग्निकाय निसृजति 'ताव य ण भंते से पुरिसे कइकिरिए ' तावच्च खलु भदन्त ! स पुरुषः कतिक्रियः, य खलु वधकपुरुषः कच्छादिवनविदुर्गाद्यन्यतमदेशे तृणान्येकत्रीकृत्य तत्र तृणराशौ अग्निं प्रज्वालयति तस्याग्निप्रज्वलनकर्तुः पुरुषस्य कीदृश्यः कियत्यश्च क्रिया भवन्तीति भाव । भगवानाह— ' गोयमे 'त्यादि । ' गोयमा ' हे गौतम ! ' सिय तिकिरिए ' स्यात् त्रिक्रियः, 'सिय चउकिरिए' स्यात्-चतुष्क्रियः, ' सिय पंचकिरिए' स्यात् पञ्चक्रियः, कच्छाद्यधिकरणकतृणराशौ अग्निप्रज्वलनकर्तापुरुषः कदाचित् क्रियात्रयेण कदाचित् क्रियाचतुष्केण कदाचित् क्रियापञ्चकेन कायिक्यादारभ्य प्राणातिपातपर्यन्तेन युक्तो भवन् त्रिक्रियश्चतुष्क्रिय पञ्चक्रियो वा भवेदिति भाव', गौतमः पृच्छति

इन्हीं क्रियाओं के विषय में पुन' सूत्रकार कहते हैं—' पुरिसे ण भंते ! कच्छंसि वा ' इत्यादि ।

टीकार्थ-(पुरिसे णं भंते) हे भदन्त ! कोई पुरुष (कच्छंसि वा जाव वणविदुग्गंसि वा) कच्छमें यावत् घन विदुर्गमें अनेक जातिके वृक्षवाले वन में (तणाई ऊसविय ऊसविय) तृणों को बार २ इकट्ठा करके- अर्थात् तृणों को समेट २ कर एकत्रित करके (अगणिकायं णिसिरइ) आग लगाता है (ताव य ण से भंते ! पुरिसे कति किरिए) तो वह पुरुष कितनी क्रियावाला कहलावेगा ? (गोयमा ! सियतिकिरिए, सिय चउकिरिए सिय पंच किरिए) हे गौतम ! वह पुरुष किसी अपेक्षा तीन

એ ક્રિયાઓના વિષયમા સૂત્રકાર વિશેષ કથન કરે છે- पुरिसे ण भंते ! कच्छंसि वा जाव वणविदुग्गंसि वा " इत्यादि ।

શબ્દાર્થ'—(पुरिसेण भंते !) હે ભગવન્ કોઇ માણસ (कच्छंसि वा जाव वणविदुग्गंसि वा) કચ્છમા (નદીની વચ્ચે આવેલા ઝાડીવાળા પ્રદેશમાં) ' यावत्" અનેક જાતિના વૃક્ષોવાળા વનમા (અહીં ' यावत् ' પદથી ત્રીજા સૂત્રમા આપેલા તમામ સ્થાનો ગ્રહણ કરવા) (तणाइं ऊसविय ऊसविय) ઘાસને વારવાર એકઠું કરીને એટલે કે ઘાસને વારવાર લઇ આવીને એકઠું કરે અને (अगणिकायं णिसिरइ) અને તેને આગ લગાવે તો "ताव य णं से भंते ! पुरिसे कतिकिरिए ?) હે ભગવન્ ! તે પુરુષને કેટલી ક્રિયાવાળો કહે વાય ? (गोयमा ! सिय तिकिरिए, सिय चउकिरिए, सिय पंचकिरिए) હે ગૌતમ ! ક્યારેક તે ત્રણ ક્રિયાવાળો, ક્યારેક ચાર ક્રિયાવાળો અને ક્યારેક પાંચ ક્રિયા

पुनः क्रियाविषये एव आह—' पुरिसे णं भंते ' इत्यादि—

मूलम्—पुरिसे णं भंते ! कच्छंसि वा जाव वणविदुग्गंसि वा तणाइं ऊसविय ऊसविय अगणिकायं णिसिरइ, तावं च णं से भंते पुरिसे कतिकिरिए गोयमा ! सिय तिकिरिए सिय चतुकिरिए सिय पंचकिरिए, से केणट्ठेणं? गोयमा ! जे भविए उस्सवणयाए तिहिं उस्सवणयाए णिसिरणयाए वि णो दहणयाए चउहिं, जे भविए उस्सवणयाए वि णिसिरणयाए वि दहणयाए वि तावं च णं से पुरिसे काइयाए जाव पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे से तणेट्ठेणं गोयमा ! ॥ सू० ४ ॥

छाया—पुरुषो भदन्त ! कच्छे वा यावत् वनविदुर्गे वा तृणन्युत्सर्प्योत्सर्प्याग्निकायं निसृजति तावच्च खलु भदन्त ! स पुरुषः कतिक्रियः, गौतम ! स्यात् त्रिक्रियः स्यात् चतुष्क्रियः स्यात् पंचक्रियः, तत्केनार्थेन ? गौतम ! यो भव्य उच्छ्रयणतायै तिसृभिः उच्छ्रयणतायै अपि निसर्जनतायै अपि नो दहनतायै चतसृभिः यो भव्य उच्छ्रयणतायै अपि निसर्जनतायै अपि दहनतायै अपि तावच्च खलु स पुरुषः कायिक्या यावत् पचभिः क्रियाभिः स्पृष्टः तत्तेनार्थेन गौतम ! ॥सू०४॥

भावार्थः—यहां पर बधक पुरुष कितनी २ क्रियाओं से युक्त किस २ स्थिति में होता है इसका विचार किया गया है। इसमें यह समझाया गया है कि जबतक वह बधक पुरुष सिर्फ जाल को धारण करता है—परन्तु मृगका बंधन और उसका मारण नहीं करता है—तबतक वह तीन क्रियाओं वाला माना गया है। और जब वह मृगका बंधन कर लेता है ऐसी स्थिति में वह चारक्रियाओं वाला माना जाता है। तथा जब वह मृग को मार देता है—तब वह पांचक्रियाओं वाला हो जाताहै ॥सू०३॥

ભાવાર્થ-અહી એ વિચાર કરવામા આવ્યો છે કે શિકારી પુરુષ કેવી કેવી સ્થિતિમા કેટલી કેટલી ક્રિયાઓથી યુક્ત હોય છે જ્યા સુધી તે પુરુષ કેવળ જાળ પાથરતો હોય–પણ મૃગને બાધતો ન હોય અને મારતો ન હોય–ત્યાં સુધી તેને ત્રણ ક્રિયાઓ વાળો કહેવાય છે. અને જ્યારે તે મૃગને બાંધે છે. ત્યારે તે ચાર ક્રિયાઓ વાળો કહેવાય છે અને જ્યારે તે મૃગને મારી નાખે છે ત્યારે તે પાંચ ક્રિયાવાળો કહેવાય છે ॥ સૂ ૩ ॥

प्रक्षिपति न तु प्रज्वालयति तावत्पर्यन्तं स पुरुषः कायिक्यादिपरितापनपर्यन्ताभिः चतसृभिः क्रियाभिर्युक्तो भवतीत्यर्थः । 'जे भविए उस्सप्पणयाए वि, दहणयाए वि' यो भव्य उत्सर्पणतायै अपि निसर्जनतायै अपि क्रियां करोति, 'तावं च णं-से पुरिसे काइयाए जाव पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे' तावच्च खलु स पुरुषो यावत् कायिक्यादिभिः पंचभिः क्रियाभिः स्पृष्टः, यावत्पर्यन्तम् तृणादिकं संचिनोति तत्र चाग्निं निःसृजति प्रज्वालयति च तावत् स पुरुषः कायिक्यादिभिः पंचभि क्रियाभिः युक्तो भवतीति भावः । 'से तेणट्ठेणं गोयमा०' एतेनार्थेन हे गौतम ! एतेन कारणेन एवमुच्यते यत् तृणराशौ अग्निं प्रक्षिप्य प्रज्वालयति तदा स पुरुषः पंचभिः क्रियाभिर्युक्तो भवतीति भावः ॥ सू० ४ ॥

गौतमः पुनः पृच्छति—' पुरिसे णं भंते ' इत्यादि ।

मूलम्—पुरिसे णं भंते ! कच्छंसि वा जाव वणविदुग्गंसि वा मियवित्तिए मियसंकप्पे मियपणिहाणे मियवहाए गंता एते मिय त्ति काउ अण्णयरस्स मियस्स वहाए उसुं निसिरइ, तओ णं भंते ! से पुरिसे कइकिरिए? गोयमा ! सिय ति

तब तक वह चार क्रियावाला कहा जावेगा। तथा जब वह तृणों को एकट्ठा करता है, उनमें आग डालता है और उन्हें जलाता है-तब तक वह पांच क्रियाओंवाला कहा जायेगा। साराश इस कथनका यह है कि यह पुरुष जब तक तृणादिकों को एकत्रित करता है तब तक तीन क्रियाओं से और उनमें अग्निका प्रक्षेप करता है तब तक चार क्रियाओं से और उन्हें जब जलाने लग जाता है तब वह पांच क्रियाओं से युक्त माना जायेगा। इस लिए हे गौतम ! मैंने इस कारण से ऐसा कहा है कि यह पुरुष किसी अपेक्षा तीन क्रियाओंवाला, किसी अपेक्षा चार क्रियाओंवाला और किसी अपेक्षा पांच क्रियाओंवाला माना जायेगा ॥सू०४॥

છે પણ જ્યારે તેમાં આગ મૂકીને તેને સળગાવે છે ત્યારે પાંચ ક્રિયાવાળો કહેવાય છે આ કથનનો ભાવાર્થ એ છે કે તે પુરુષ જ્યાં સુધી તૃણાદિકને એકત્ર કરતો હોય ત્યાં સુધી ત્રણ ક્રિયાવાળો મનાય છે અને તેમાં અગ્નિ મૂકે ત્યારે ચાર ક્રિયાવાળો મનાય છે અને જ્યારે આગથી તેને સળગાવવા લાગી જાય છે ત્યારે પાંચ ક્રિયા વાળો કહેવાય છે હે ગૌતમ ! તે કારણે મે એવું કહ્યું છે કે તે પુરુષ કોઈ અપેક્ષાએ ત્રણ ક્રિયાવાળો, કોઈ અપેક્ષાએ ચાર ક્રિયા વાળો અને કોઈ અપેક્ષાએ પાંચ ક્રિયાવાળો કહેવાયો ॥ સૂ. ૪ ॥

–'से केणट्ठेण' मित्यादि। 'से केणट्ठेणं' तत् केनार्थेन तत् केन कारणे–नैवमुच्यते स्यात्रिक्रिय इत्यादि। भगवानाह–'गोयमे'त्यादि, 'गोयमा' हे गौतम! 'जे भविए' यो भव्यः–वधकः 'उस्सवणयाए' उत्सर्पणतायै तृणपुञ्जरूपं व्यापारं करोति तदा 'तिहिं' तिसृभिः क्रियाभिः उत्सर्पण दग्धुं व्यापारविशेषस्तथा च यो वधको दहनाय व्यापारमात्रं करोति स तिसृभिः कायिकी आधिकरणिकी प्राद्वेपिकीति क्रिया–त्रयेण युक्तो भवति, 'उस्सवणयाए वि' उत्सर्पणतायै अपि 'णिसिरणयाएवि' निसर्जनतायै अपि यदा तृणपुञ्जं रचयति किन्तु 'णो दहनयाए' नो दहनतायै, दहनाय नैव तदा 'चउहिं किरियाहिं' चतसृभिः क्रियाभिर्युक्तो भवतीति भावः। तथा च यावत्पर्यन्त स पुरुषस्तृणादिकं संचिनोति तत्र चाग्नि

क्रियावाला, किसी अपेक्षा चार क्रियावाला और किसी अपेक्षा पांच क्रिया वाला कहलावेगा। (से केणट्ठेणं) हे भदन्त! आप ऐसा किस कारणसे कहते हैं कि वह पुरुष तीन क्रियावाला और किसी अपेक्षा चार और किसी अपेक्षा से पांच क्रियावाला कहलावेगा (गोयमा! जे भविए उस्सवणयाए तिहिं उस्सवणयाए णिसिरणयाए वि णो दहणयाए चउहिं, जे भविए उस्सवणयाए वि, णिसिरणयाए वि दहणयाए वि तावं च णं से पुरिसे काइयाए जाव पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे से तेणट्ठेणं गोयमा!०) जो वह पुरुष तृणराशिको, जलाने के लिये एकत्रित करनेका जब तक केवल व्यापार करता है—अर्थात् जलानेके लिये तृणोंको इधर उधरसे बटोर २ कर एकत्रित करता है–तब तक वह कायिकी, आधिकरणिकी प्राद्वेषिकी इन तीन क्रियाओंवाला कहा जावेगा। और जब तक वह पुरुष इकट्ठा कर २ उस तृणराशिमें अग्नि डालता है–अभी उसे जलाया नहीं है

વાળો કહેવાશે (से केणट्ठेण०) હે ભગવન્! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે કોઇ અપેક્ષાએ તે ત્રણ ક્રિયાવાળો, કોઇ અપેક્ષાએ ચાર ક્રિયોવાળો અને કોઇ અપેક્ષાએ પાંચ ક્રિયાવાળો કહેવાય છે? (गोयमा! जे भविए उस्सवणयाए तिहिं, उस्सवणयाए वि णो दहणयाए चउहिं, जे भविए उस्सवणयाए वि, णिसिरणयाए वि दहणयाए वि तावं च णं से पुरिसे काइए जाव पचहिं किरियाहिं पुट्ठे से तेणट्ठेण गोयमा!०) હે ગૌતમ! જ્યા સુધી તે પુરુષ તૃણરાશિને સળગાવવાને માટે એકત્રિત કરવાની જ પ્રવૃત્તિ કરતો હોય છે–જ્યા સુધી તે ઘાસને જુદી જુદી જગ્યાએથી લાવીને સળગાવવા માટે ભેગુ કરતો હોય છે. ત્યા સુધી તે કાયિકી, આધિકરણિકી અને પ્રાદ્વેષિકી, એ ત્રણ ક્રિયાઓ વાળો કહેવાય છે અને જ્યારે તે પુરુષ તે તૃણરાશિમા અગ્નિ મૂકે છે–પણ હજી તેને સળગાવતો નથી ત્યારે તે ચાર ક્રિયાવાળો કહેવાય

नूमगहनगहनविदुर्गपर्वतपर्वतविदुर्गवनानां ग्रहणम्। एवम् अत्रापि यावत्करणात् ग्राह्यम्। 'मियवित्तिए' मृगवृत्तिकः, मृगैर्वृत्तिर्जीविका विद्यते यस्य स मृगवृत्तिकः, 'मियसंकप्पे' मृगसंकल्पः, मृगेषु संकल्पा वधनिश्चया विद्यते यस्य स मृगसंकल्पः, 'मियपणिहाणे' मृगप्रणिधानः, मृगवधाय दत्तचित्तः, 'मिय वहाए गंता' मृगवधाय गन्ता=गमनशीलः 'एते मिय त्ति काउ' एते मृगा इति कृत्वा, मृगवधमुद्दिश्य कच्छादिकं प्राप्य तत्र च मृगान् दृष्ट्वा एतेषामेव वधायाहम् आगतोऽस्मि एतानेवान्वेषयामि एते च मयाऽद्य मिलिता इति मनसा निश्चित्येत्यर्थः, 'अण्णयरस्स' अन्यतरस्य, अनेकमृगसमुदाये वर्तमानस्य कस्यचित् 'मियस्स वहाए' मृगस्य वधाय 'उसुं' इषुम्–बाणम् 'णिसिरइ' निसृजति, मृगं लक्षीकृत्य प्रक्षिपति, 'तओ णं भंते!' ततः खलु भदन्त! तदा मृगोपरि बाणप्रक्षेपानन्तरम्, 'से पुरिसे' स पुरुषः वधकः 'कइकिरिए' कतिक्रियः, एतादृशपापकर्मकरणात् सं तादृशः कियत्यः क्रियाः स्पृशन्तीति भावः। भगवानाह —'गोयमे'त्यादि। 'गोयमा' हे गौतम! 'सियतिकिरिए' स्यात् त्रिक्रियः

वनविदुर्गंसि वा गंता) मृगों को मारने के लिए कच्छ में यावत् अनेक जातियोंके वृक्षोंवाले वनमें गया वहां जा कर (एते मियत्ति काउं) येही मृग हैं इन्हें ही मारने के लिये मैं यहां आया हूं–इन्हें ही खोज रहा था ये मुझे आज से मिल गया हैं। ऐसा मन में निश्चय करके–विचार करके (अण्णयरस्स मियस्स वहाए) वह मृगों के समूह में वर्तमान किसी एक मृग को मारने के लिए (उसुं निसिरइ) अपना बाण छोड़ता है, अर्थात् किसी एक मृगको लक्ष्य कर उस पर अपना बाण चलाता है। (तओ णं भंते! से पुरिसे कइ किरिए?) तो हे भदन्त! ऐसा पुरुष मृग पर बाण प्रक्षेप के बाद कितनी क्रियाओंसे युक्त माना जाता है। (गोयमा!

કચ્છમાં (નદીના જળની વચ્ચે આવેલા ઝાડીવાળા પ્રદેશમાં) યાવત્ અનેક જાતનાં વૃક્ષોવાળા વનમાં ગયો (અહીં "યાવત્" પદથી ત્રીજા સૂત્રમાં બતાવેલાં બધાં સ્થાનો ગ્રહણ કરવાં) ત્યાં જઈને (મિયત્તિ કાઉ) આ મૃગો જ છે હું તેમને મારવાને માટે આવ્યો છું–હું તેમની જ શોધમાં હતો. મને સદ્ભાગ્યે તેમની પ્રાપ્તિ થઈ છે, એવા મનમાં વિચાર કરીને (અણ્ણયરસ્સ મિયસ્સ વહાએ) મૃગોના સમૂહમાંના કોઈ એક મૃગને મારવાને માટે (ઉસું નિસિરઇ) પોતાનું બાણ છોડે છે–કોઈ એક મૃગને લક્ષ્ય કરીને તીર છોડે છે (તઓ ણં ભંતે! સે પુરિસે કઇકિરિએ?) તો હે ભગવન્! તે પુરુષને કેટલી ક્રિયાવાળો કહી શકાય? (ગોયમા! સિય તિકિરિએ, સિય ચઉકિરિએ સિય

किरिए सियचउकिरिए सियपंचकिरिए से केणट्ठेणं ? गोयमा ! जे भविए णिसिरणयाए नो विद्धंसणयाए वि नो मारणयाए वि तिहिं, जे भविए णिसिरणयाए वि, विद्धंसणयाए वि णो मारणयाए चउहिं, जे भविए णिसिरणयाए वि विद्धंसणयाए वि मारणयाए वि तावं च णं से पुरिसे काइयाए जाव पाणाइवायकिरियाए पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे से तेणट्ठेणं गोयमा ! सिय तिकिरिए सियचउकिरिए सियपंचकिरिए ॥ सू० ५ ॥

छाया—पुरुषो भदन्त ! कच्छे वा यावद्वनविदुर्गे वा मृगवृत्तिको मृगसंकल्पो मृगप्रणिधानो मृगवधाय गंता "एते मृगा" इति कृत्वाऽन्यतरस्य मृगस्य वधायेषुं निसृजति, ततो भदन्त ! स पुरुषः कतिक्रियः? गौतम ! स्यात् त्रिक्रियः स्यात् चतुष्क्रियः स्यात् पंचक्रियः तत्तेनार्थेन गौतम ! यो भव्यो निसर्जनतायै अपि नो मारणतायै अपि तिसृभिः, यो भव्यो निसर्जनतायै अपि विध्वंसनतायै अपि नो मारणतायै चतसृभिः, यो भव्यो निसर्जनतायै अपि विध्वंसनतायै अपि तावच्च खलु स पुरुषः कायिक्या यावत् प्राणातिपातक्रियया पंचभिः क्रियाभिः स्पृष्टः, तत्तेनार्थेन गौतम ! स्यात् त्रिक्रियः स्याच्चतुष्क्रियः स्यात्पंचक्रियः ॥५॥

टीका—'पुरिसे णं भंते' पुरुषः खलु भदन्त ! 'कच्छंसि वा' कच्छे वा 'जाव वणविदुग्गंसि वा' यावत् वनविदुर्गे वा, यावत् पदेन–ह्रदोदकद्रवकवलय-

गौतम पुन प्रश्न करते हुए प्रभु से पूछते हैं–'पुरिसे णं भंते ! इत्यादि।

टीकार्थ—(भंते) हे भदन्त ! (पुरिसे णं) पुरुष खलु (मियवित्तिए) मृगों से अपनी आजीविका चलानेवाला (मियसंकप्पे) मृगों की शिकार करनेवाला (मियपणिहाणे) मृगों की शिकार करने में एकचित्तवाला ऐसा (पुरिसे) कोई पुरुष (मियवहाए कच्छंसि वा जाव

ગૌતમ સ્વામી ક્રિયાના વિષયમાં મહાવીર પ્રભુને હજી પણ વધારે પ્રશ્નો પૂછે છે-"पुरिसे णं भंते ! ઈત્યાદિ

ટીકાર્થ—હે ભગવન્! (पुरिसेणं मियवत्तिए) મૃગોને મારીને પોતાનો નિર્વાહ ચલાવનાર (मियसंकप्पे) મૃગોનો શિકાર કરવાના સંકલ્પવાળો (मियपणिहाणे) મૃગોનો શિકાર કરવાએક ચિત્તવાળો (पुरिसे) કોઇ એક પુરુષ (मियवहाए कच्छंसि वा जाव वणविदुग्गंसि वा गंता) મૃગોને મારવાને માટે

भविए णिसिरणयाए वि' यो भव्यः यदा निसर्जनतायै अपि 'विद्धंसणयाए वि' विध्वंसनतायै अपि 'नो मारणयाए' नो मारणतायै बाणं धनुषि संयोजयति तदा 'चउहिं' चतसृभिः क्रियाभिः स्पृष्टो भवति। स पुरुषो मृगमुद्दिश्य याव त्पर्यन्त बाण निक्षेपणाय विध्वंसनाय धनुषि संधत्ते परन्तु न मृगमारणाय ताव त्पर्यन्तं स पुरुषः कायिक्याधिकरणिकी प्राद्वेषिकी पारितापिनिकीति चतु ष्क्रियावान् भवतीति भाव, 'जे भविए णिसिरणयाए' यो भव्यो निसर्जनतायै अपि, 'विद्धंसणयाए वि' विध्वंसनतायै अपि 'मारणयाए वि' मारणतायै अपि बाणं प्रक्षिपति 'ताव च णं से पुरिसे' तावत्-च खलु स पुरुषः 'काइयाए जाव पाणा इवाय किरियाए' कायिक्या यावत् प्राणातिपातक्रियया 'पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे' पंचभि क्रियाभिः स्पृष्टः, यावत्पर्यन्तम् स पुरुषो मृगमुद्दिश्य बाणं प्रक्षेपणाय धनुषि संधत्ते वेधनाय तथा मारणाय संधत्ते तावत् स पुरुषः कायिकी स्यादारम्भ

की प्रद्वेषिकी य तीन क्रियाएँ स्पृष्ट की जाती हैं। (जे भविए णिसिरण याए वि विद्धंसणयाए वि णो मारणयाए चउहिं) तथा जब तक वह पुरुष मृगको उद्देश करके अपने बाणको चलानेके लिये और मृग को घायल करनेके लिये बाण को धनुष पर चढाता है मारनेके लिये नहीं तब तक वह पुरुष चार क्रियाओं से युक्त माना जाता है। तात्पर्य कहने का यह है कि उसने बाण छोड दिया और उस बाण ने मृग को लगकर घायल कर दिया जान से नहीं मारा-ऐसी स्थिति में वह पुरुष चार क्रियाओं का कर्ता माना गया है। (जे भविए णिसिरणयाए वि, विद्धंसणयाए वि, मारणयाए वि ताव च णं पुरिसे काइयाए जाव पाणा इवायकिरियाए पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे से तेणट्ठेण गोयमा! सिय तिकि रिए सियचउकिरिए सियपंचकिरिए) तथा जब तक वह पुरुष मृगको लक्ष्य कर बाण को छोडनेके लिये, धनुष पर चढाता है, मृग को वेधने

ક્રિયાઓ વાળો કહેવાય છે (जे भविए णिसिरणयाए वि विद्धंसणयाए वि णो मारणयाए चउहिं) પરંતુ જ્યારે તે પુરુષ મૃગને લક્ષ્ય કરીને, મૃગને ઘાયલ કરવાને માટે તીર છોડે છે ત્યારે તે ચાર ક્રિયાવાળો કહેવાય છે (તીર છોડતી વખતે મૃગને ઘાયલ કરવાનો જ આશય છે મારવાનો આશય નથી) તાત્પર્ય એ છે કે તેણે તીર છોડ્યુ અને તે તીર વાગવાથી મૃગ ઘાયલ થયુ જાનથી મરી ગયુ નહી-એવી સ્થિતિમાં તેપુરુષને ચાર ક્રિયાઓનો કર્તા માનવામાં આવે છે (जे भविए णिसिरणयाए वि, विद्धंसणयाए वि, मारणयाए वि, ताव च णं पुरिसे काइयाए जाव पाणाइवाय किरियाए पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे! से तेण ट्ठेण गोयमा! सिय तिकिरिए, सिय चउकिरिए, सिय पंचकिरिए) તથા તે પુરુષ મૃગને લક્ષ્ય

एतादृश पुरुषेण कदाचित् तिस्रः क्रिया बद्धा भवन्ति इत्यर्थः 'सियचउकिरिय' स्यात् चतुष्क्रियः कदाचित् चतस्रः क्रिया संपादिता भवेयुरित्यर्थः, 'सियपच किरिए' स्यात् पंचक्रियः कदाचित् कायिक्याद्यारभ्य प्राणातिपातान्तपंचक्रियावान् भवति 'से केणट्ठेणं' तत्केनार्थेन तत्र किं कारणम् येन तिस्रः, चतस्रः पंचापि क्रियास्तादृशपुरुषस्य बद्धा भवन्तीति। भगवानाह—'गोयमे' त्यादि 'गोयमा' हे गौतम! 'जे भविए निसरणयाए' यो भव्यः-वधकः निसर्जनतायै 'नो विद्धंसणयाएवि' नो विध्वंसनतायै अपि 'नो मारणयाए वि' नो मारणतायै अपि स 'तिहिं' तिसृभिः, यावत्पर्यन्तं वाणं मृगमुद्दिश्य प्रक्षेपणाय धनुषि संयोजयति परन्तु मृगं न वेधयति न वा मारयति, तावत्पर्यन्तं वाणं प्रक्षेप्तुमुद्यतस्य पुरुषस्य कायिकी आधिकरणिकी प्राद्वेषिकी, इति तिस्र एव क्रिया बद्धा भवन्तीत्यर्थः, 'जे

सिय ति किरिए, सिय चउकिरिए, सियपंचकिरिए) हे गौतम! ऐसा वह पुरुष किसी अपेक्षा से तीन क्रियाओंवाला, किसी अपेक्षा से चार क्रियाओंवाला और किसी अपेक्षा से पांच क्रियाओंवाला माना जाता है। (से केणट्ठेणं?) हे भदन्त! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि वह किसी अपेक्षासे तीन क्रियाओंवाला, किसी अपेक्षासे चार क्रियाओंवाला और किसी अपेक्षा से पांच क्रियाओंवाला माना जाता है? (जे भविए णिसिरणयाए नो विद्धंसणयाए वि नो मारणयाए वि तिहिं) हे गौतम! जो वह पुरुष जब तक सिर्फ बाण को फेंकनेके लिये क्रिया करता है मृग को घायल करनेकी तथा मृग को मारने की क्रिया नहीं करता है तब तक वह तीन क्रियाओं से युक्त होता है-अर्थात्-जब तक वह मृग को लक्ष्य कर छोड़ने के लिये बाण को धनुष के ऊपर चढाता है मृगको उस समय वह वेधता नहीं है और न मारता ही है-ऐसे बाण को चलाने में उद्यत हुए पुरुषद्वारा तब तक कायिकी, आधिकरणि

पंचकिरिए) હે ગૌતમ! કોઈ અપેક્ષાએ તેને ત્રણ ક્રિયા વાળો, કોઈ અપેક્ષાએ ચાર ક્રિયાવાળો અને કોઈ અપેક્ષાએ પાચ ક્રિયાવાળો કહે છે (से केणट्ठेणं०) હે ભગવન્! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે કોઈ અપેક્ષાએ તેને ત્રણ ક્રિયાવાળો કોઈ અપેક્ષાએ ચાર ક્રિયાવાળો અને કોઈ અપેક્ષાએ તેને પાચ ક્રિયાવાળો કહેવાય છે? (जे भविए णिसिरणयाए नो विद्धंसणयाए वि नो मारणयाए वि तिहिं) હે ગૌતમ! જ્યા સુધી તે પુરુષ મૃગને લક્ષ્ય કરીને બાણને ફેંકવાને માટે ધનુષ પર ચડાવે છે-પણ જ્યા સુધી મૃગને વીંધતો નથી તેમજ મારતો નથી ત્યા સુધી તે પુરુષ કાયિકી, અધિકરણિકી અને પ્રદ્વેષિકી, એ ત્રણ

पुनः प्रश्नयति गौतम —' पुरिसे ण ' इत्यादि ।

मूलम्—पुरिसे ण भंते ! कच्छंसि वा जाव अण्णयरस्स-मियस्स वहाए आयतकण्णायत उसु आयामेत्ता चिट्ठेज्जा अण्णे य अन्नयरे पुरिसे मग्गओ आगम्म सयपाणिणा, असिणा सीसं छिंदेज्जा, से य उसू ताए चेव पुव्वायामणयाए तं मियं विंधेज्जा, से णं भंते पुरिसे किं मियवेरेणं पुट्ठे, पुरिसवेरेण पुट्ठे ? गोयमा ! जे मियं मारेइ सिय मियवेरेणं पुट्ठे जे पुरिसं मारेइ से पुरिसवेरेणं पुट्ठे, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ जाव से पुरिसवेरेणं पुट्ठे ? से णूणं गोयमा ! कज्जमाणे कडे, संधिज्जमाणे संधित्ते, णिवत्तिज्जमाणे निव्वत्तिए, निसरिज्जमाणे णिसिट्ठेत्ति वत्तव्वंसिया हंता भगवं कज्जमाणे कडे, जाव णिसिट्ठे त्ति वत्तव्वं सिया, से तेणट्ठेणं गोयमा ! जे मियं मारेइ, से मियवेरेणं पुट्ठे, जे पुरिसं मारेइ से पुरिसवेरेणं पुट्ठे, अंतो छण्हं मासाणं मरइ काइयाए, जाव पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे, बाहिं छण्हं मासाणं मरइ काइयाए, जाव पारियावणियाए चउहिं किरियाहिं पुट्ठे ॥ सू० ६ ॥

छाया—पुरुषो भदन्त ! कच्छे वा यावदन्यतरस्य मृगस्य वधाय आयतकर्णायतम् इषुमायम्य तिष्ठेदन्यतरश्च पुरुषो मार्गतः पश्चादागत्य स्वकपाणिना असिना शीर्षं छिन्द्यात् , स चेषुस्तया चैव पूर्वायमनतया तं मृगं विध्यत्, स भदन्त ! पुरुषः किं मृगवैरेण स्पृष्टः पुरुषवैरेण स्पृष्टः गौतम ! यो मृगं मारयति ! स मृगवैरेण स्पृष्टः, यः पुरुषं मारयति स पुरुषवैरेण स्पृष्टः, तत्केनार्थेन भदन्त ! एवमुच्यते यावत् स पुरुषवैरेण स्पृष्टः ? तद् नूनं गौतम ! क्रियमाणं कृतम् संधीयमानं संहितम् निर्वर्त्यमानं निर्वर्तितम् निसृज्यमानं निसृष्टम् इति वक्तव्यं स्यात् , हंत भगवन् ! क्रियमाणं कृतं यावन्निसृष्टमिति वक्तव्यं स्यात् तत्तेनार्थेन गौतम ! यो मृगं मारयति स मृगवैरेण स्पृष्टः य पुरुषं मारयति स

प्राणातिपातपर्यन्ताभिः पंचभिः क्रियाभिर्युक्तो भवति, 'से तेणट्ठेणं गोयमा !' तत्तेनार्थेन हे गौतम ! एवमुच्यते 'सियतिकिरिए' स्यात् त्रिक्रियः, 'सियचउकिरिए' स्यात्—चतुष्क्रिय· 'सियपंचकिरिए' स्यात् पंचक्रियो भवतीति । अय भावः—वधकपुरुषो यदा निक्षेपणाय वाणं धनुषि संयोजनव्यापारं करोति, तदा तस्य आद्यास्तिस्रः क्रियाः १। निक्षेपणाय, विध्वंसनाय वाण संयोजयति तदा तस्य आद्याश्चतस्रः, २ निक्षेपणाय विध्वंसनाय मारणाय च वाणं संयोजयति तदा तस्य पञ्चापि क्रिया भवन्तीति ॥ सू० ५ ॥

के लिये तथा उसे मारने के लिये वाण को धनुष पर आरोपित करता है तब तक वह पुरुष कायिकी क्रिया से लेकर प्राणातिपात पर्यन्त पांच क्रियाओं से युक्त माना जाता है। इस कारण हे गौतम! मैंने ऐसा कहा है कि वह पुरुष किसी अपेक्षा तीन क्रियाओं से युक्त, किसी अपेक्षा चार क्रियाओं से युक्त और किसी अपेक्षा से पांच क्रियाओं से युक्त माना जाता है। इसका भाव इस प्रकार से हैं—वधक पुरुष जब छोड़ने के लिये वाण को धनुष पर आरोपित करता है तब उसके आदि की तीन क्रियाएँ होती हैं, तथा जब वह निक्षेपण के लिये और विध्वंसन के लिये वाण को धनुष पर आरोपित करता है तब उसके आदि की चार क्रियाएँ होती हैं। तथा जब वह निक्षेपण के लिये, विध्वंसन के लिये एवं मारण के लिये वाण को धनुष पर आरोपित करता है तब उसके पांचों ही क्रियाएँ होती हैं ॥ सू० ५ ॥

કરીને તીર ચલાવી ને મૃગને વીંધી નાખીને જ્યારે મારી નાખે છે ત્યારે તે કાયિકી ક્રિયાથી લઇને પ્રાણાતિપાત સુધીની પાંચે ક્રિયાઓ વાળો કહેવાય છે તે કારણે, હે ગૌતમ ! મે એવું કહ્યું છે કે કોઇ અપેક્ષાએ તે પુરુષ ત્રણ ક્રિયાવાળો કહેવાય છે અને કોઈ અપેક્ષાએ ચાર ક્રિયાવાળો કહેવાય છે અને કોઇ અપેક્ષાએ પાંચ ક્રિયાવાળો કહેવાય છે તાત્પર્ય એ છે કે શિકારી જ્યાં સુધી તીરને ધનુષ પર ચડાવે છે ત્યાં સુધી ત્રણ ક્રિયાઓથી યુક્ત કહેવાય છે તે ત્રણ ક્રિયાઓ કાયિકી, અધિકરણિકી, અને પ્રાદ્વેષિકી ક્રિયાઓ છે. પણ જ્યારે તે ધનુષ પર તીર ચડાવીને મૃગને લક્ષ્ય કરીને તીર વડે વીંધી નાખે છે ત્યારે ઉપરોક્ત ત્રણ ક્રિયાઓ ઉપરાંત પારિતાપનિકી ક્રિયા પણ કરે છે. અને જ્યારે તે તીર ચડાવીને મૃગને લક્ષ્ય કરીને તીર છોડે છે, વીંધે છે, અને મૃગને મારી નાખે છે ત્યારે ઉપરોક્ત ચાર ક્રિયાઓ ઉપરાંત પાંચમી પ્રાણાતિપાત ક્રિયા પણ કરે છે. તેથી ત્યારે તે પાંચ ક્રિયાઓવાળો કહેવાય છે સૂ ૫

न्याकृष्टवाण पुरुषस्यान्य कश्चित् पुरुष पृष्ठदेशादागत्य स्वकीयखड्गेन मस्तक मपहरेदिति भाव , 'सेय उसू' स येपु मृगवधायानुप्रक्षीयमानः पूर्वपुरुप-संबन्धी बाणः 'ताए चेव पुव्वायामणयाए' तया चैव पूर्वायामनतया पूर्वाकर्षण-तया 'त मिय विंधेज्जा' तं मृगं विध्यन् यदर्थं पूर्वपुरुषेणैताबान् प्रयत्न कृतस्तं तादृशमेवमृग यदि स इपुर्मारयेत् तदा 'से ण भंते' स खलु भदन्त! मृगवधका 'पुरिसे' पुरुष 'किं मिय वरेण-पुट्ठे' किं मृगवैरेण स्पृष्ट वा 'पुरिसवेरेण पुट्ठे' पुरुषवैरेण स्पृष्ट, किम्? बाणेन मृगस्य मरण जातमसिना च मृगवधकपुरुषस्य, तत्र मृगवधजनितपापेन धनुर्धारिपुरुषस्य स्पर्शो भवेत् खड्गधारिपुरुषस्य वेति।

अपने हाथकी तलवार से उसका शिर काट देवे अर्थात्-धडसे उसके शिरको अलग कर देवे। ऐसी स्थिति में (से य उसू) मृगके वधके लिये धनुष पर आरोपित हुआ वह बाण (ताए चेव पुव्वायामणयाए) पहिले से ही आकर्षित होने के कारण उछल कर (तं मिय विंधेज्जा) उस मृग को वेध देवे-अर्थात् जिस मृगको मारने के लिए वह पहिला व्यक्ति उस बाण को धनुष पर आरोपित कर और उसे कर्णान्त तक खेंच कर खडा हुआ था उसी मृग को धनुष से छूट कर वह बाण मार डाले तो (से ण भंते! पुरिसे किं मियवेरेणं पुट्ठे पुरिसवेरेण पुट्ठे?) वह तलवार से उस मृगघातक के शिर का छेदन करने वाला मनुष्य मृग के वैर से-पाप से-स्पृष्ट होगा कि पुरुष के वैर से-पाप से स्पृष्ट होगा? अर्थात् उस समय बाण से मृग का मरण हुआ और तलवार से पुरुष का मरण हुआ-तो ऐसी स्थिति में उस धनुर्धारी व्यक्ति को मृग के मरने का पाप लगेगा या उस पुरुषघातक को मृग के

ખેંચીને તીર ચડાવીને ઉભેલા તે પુરુષની પાછળથી આવીને કોઇ પુરુષ પોતાની તલવારથી તેનું માથું ધડથી અલગ કરી નાખે. પણ એ પરિસ્થિતિમાં (से य उसू) મૃગને મારવાને માટે ધનુષ પર ચડાવેલું તે બાણ (ताए चेव पुव्वाया मणयाए) પહેલેથી જ આકર્ષિત હોવાને કારણે છૂટીને (त मियं विंधेज्जा) તે મૃગને વીંધી નાખે તો (से णं भंते! पुरिसे किं मियवेरेण पुट्ठे पुरिसवेरेण पुट्ठे?) તો હે ભગવન્! તે મૃગઘાતકનું માથું તલવારથી કાપી નાખનાર માણસને તે મૃગ હત્યાનું પાપ લાગશે કે તીર ચડાવીને મૃગને વીંધવાને માટે તૈયાર થયેલા પુરુષને તે મૃગહત્યાનુ પાપ લાગશે? તાત્પર્ય એ છે કે મૃગને મારવાને તૈયાર થયેલા પુરુષને તેનું પાપ લાગશે કે તે પુરુષને તલવારથી મારી નાખનારને મૃગહત્યાનું પાપ લાગશે?

पुरुषवैरेण स्पृष्टः अन्त. षण्णां मासानां म्रियते कायिक्या यावत्पञ्चा भिः क्रियाभिः स्पृष्टः, बहिः षण्णां मासानां म्रियते कायिक्या यावत् पारितापनिक्या चतसृभिः क्रियाभिः स्पृष्टः ॥ सू० ६ ॥

टीका–'पुरिसे णं भंते' पुरुषः खलु भदन्त ! 'कच्छंसि' कच्छे वा 'जाव अण्णयरस्स मियस्स वहाय' यावत् अन्यतरस्य मृगस्य वधाय 'आयत कण्णायतं' आयतकर्णायतम् कर्णं यावत् आयतः कर्णपर्यन्तमाकृष्ट इति कर्णायतः, आयतं–प्रयत्नयुक्तं यथा भवतीत्यायतकर्णायत तम् आयतकर्णायतम् प्रयत्नपूर्वककर्ण-पर्यन्तमाकृष्टं 'उसुं' इषुम्–बाणम् 'आयामेत्ता' आयम्य=आकृष्य 'चिट्ठेज्जा' तिष्ठेत्, मृगवधाय प्रयत्नपूर्वकं बाणं सन्धाय तिष्ठेत् कोऽपि वधकपुरुषः, तस्मिन् समये 'अण्णयरे' अन्यतरश्च कोऽपि 'पुरिसे' पुरुष 'मग्गओ' मार्गतः पृष्ठदेशादित्यर्थः, 'आगम्म' आगम्य 'सयपाणिणा' स्वकपाणिना–स्वकीयहस्तेन 'असिना' असिना–खड्गेन 'सीसं छिंदेज्जा' शीर्षं छिन्द्यात्, मृगवधाय कर्णा–

गौतमस्वामी भगवान से पुनः प्रश्न करते हुए पूछते हैं—

'पुरिसे णं भंते ! कच्छंसि वा जाव अण्णयरस्स मियस्स' इत्यादि।

टीकार्थ—(भंते) हे भदन्त ! पूर्वोक्त विशेषणों वाला कोई एक (पुरिसे) पुरुष (कच्छंसि वा जाव अण्णयरस्स मियस्स वहाए) कच्छ में यावत् किसी एक मृग मारने निमित्त (आयतकण्णायतं) प्रयत्न-पूर्वक कान तक लंबे किये गये (उसुं) बाण को (आयामेत्ता) खेंच कर (चिट्ठेज्जा) खडा हो जावे। (अण्णे य अन्नयरे पुरिसे मग्गओ आगम्म सयपाणिणा असिणा सीसं छिंदेज्जा) इस तरह मृगको मारने के लिये प्रयत्नपूर्वक बाण को तान कर खड़े हुए मनुष्य के पीछेसे आकर

ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને વળી પૂછે છે કે-(पुरिसे ण भंते! कच्छंसि वा जाव अण्णयरस्स मियस्स) ઇત્યાદિ,

ટીકાર્થ--(भते!) હે ભગવન્! પૂર્વોક્ત વિશેષણોવાળો કોઇ એક (पुरिसे) પુરુષ (कच्छंसि वा जाव अण्णयरस्स मियस्स वहाए) કચ્છમાં–નદી વચ્ચે આવેલા ઝાડીવાળા સ્થાનમા (થી લઇને "મૃગને મારવાને નિમિત્તે" સુધીનો ત્રીજા સૂત્રમા આવેલો પાઠ અહીં "यावत" પદથી ગ્રહણ કરવો) જાય અને મૃગને મારવાને નિમિત્તે (आयत कण्णयतं) પ્રયત્નપૂર્વક કાન સુધી ખેચેલી ધનુષની પણછ પર (उसु) બાણને (आयामेत्ता) ખેચીને (चिट्ठेज्जा) ઉભો થઈ જાય, (अण्णे य अन्नयरे पुरिसे मग्गओ आगम्म सयपाणिणा असिणा सीसं छिंदेज्जा) આ રીતે મૃગને મારવાને માટે પ્રયત્નપૂર્વક ધનુષની પણછ

गौतमः-'से केणट्ठेण' इत्यादि। 'स केणट्ठेण भंते' तत्केनार्थेन भदन्त! 'एवमुच्चइ जाव स पुरिसवेरेण पुट्ठे' एवमुच्यते यावत् स पुरुषवैरेण स्पृष्टः, यो मृगं मारयति स मृगवधजनितपापेन लिप्यते यश्च पुरुषं मारयति स पुरुषवधजनितपापेन लिप्यते तत्र किं कारणमिति गौतमस्य प्रश्नः, भगवानाह-'से पूर्ण गोयमे' इत्यादि, 'से णूणं गोयमा' तन्नूनं हे गौतम! 'कज्जमाणकडे' क्रियमाणं कृतम्, 'संधिज्जमाणे संधिए' सन्धीयमानं सन्धितम् 'णिव्वत्तिज्जमाणे निव्वत्तिए' निर्वर्त्यमानं निर्वर्तितम्, णिसरिज्जमाणे णिसिट्ठे' निसृज्यमानं निसृष्टम् 'त्ति वत्तव्वं सिया' इति वक्तव्यं स्यात्? इति भगवदुक्तिं स्वीकुर्वन् गौतम कथयति-'हंते' इत्यादि, 'हंता भगवं' हन्त भगवन्, हन्तेत्यामन्त्रम स्वीकारार्थे, 'कज्जमाणे कडे' क्रियमाणं कृतम् 'जाव' यावत् 'णिसिट्ठेत्ति वत्तव्वं सिया' निसृष्टमिति वक्तव्यं स्यात्, हे भगवन् यत् कार्यं क्रियमाणं तदपि कृतम्, तथा यत् निसृज्यमानं तदपि निसृष्टमिति वक्तुं शक्यते एवेति भावः। अथ

वेरेण पुट्ठे" आप ऐसा किस कारणसे कहते हैं कि जो मृग को मारता है वह मृग वधजन्य पाप से लिप्त होता है और जो पुरुष को मारता है वह पुरुष वधजन्य पापसे लिप्त होता है। इस गौतमके कृत प्रश्नका उत्तर देते भगवान उनसे कहते हैं-(गोयमा! कज्जमाणे कडे, संधिज्जमाणे संधिये, णिवत्तिज्जमाणे निव्वत्तिते, निसरिज्जमाणे णिसिट्ठे त्ति वत्तव्वं सिया) हे गौतम! जो किया जा रहा है वह किया जा चुका जो जोड़ा जा रहा है वह जुड़ चुका, जो हो रहा है वह हो चुका, जो बनाया जा रहा है वह बन चुका ऐसा कहा जाता है न? (हंता भगवं! कज्जमाणे कडे जाव णिसिट्ठे त्ति वत्तव्वं सिया) हां भगवन्! जो किया जा रहा है वह किया जा चुका यावत् जो बनाया जा रहा है वह बन चुका ऐसा

મારનેને તેનુ પાપ લાગવુ જોઇએ નહીં, તે માટે જ ગૌતમસ્વામીએ મહાવીર પ્રભુને ઉપરોક્ત પ્રશ્ન પૂછ્યો છે હવે મહાવીર સ્વામીએ તેનો જે જવાબ આપ્યો તે સૂત્રકાર બતાવે છે-

ઉત્તર—(गोयमा! कज्जमाणे कडे संधिज्जमाणे संधिते णिवत्तिज्जमाणे निव्वत्तिते निसरिज्जमाणे णिसिट्ठे त्ति वत्तव्वं सिया) હે ગૌતમ! જે કરવામાં આવી રહ્યું છે તે કરાયુ જે જોડવામાં આવી રહ્યું છે તે જોડાઇ ચૂક્યુ જે થઇ રહ્યું છે તે થઇ ચૂક્યુ જે બનવામા આવી રહ્યું છે તે બની ચૂક્યુ એવુ કહી શકાય છે ને? (हंता! भगवं! कज्जमाणे कडे जाव णिसिट्ठे त्ति वत्तव्वं सिया) હા ભગવાન! એવું કહી શકાય છે કે જે કરવામાં આવી રહ્યું છે તે કરાયુ યાવત્ જે બનાવવામાં આવી રહ્યું છે તે બની ચૂક્યુ આ વિષયનું સ્પષ્ટીકરણ

भगवानाह—'गोयमे'त्यादि, 'गोयमा' हे गौतम ! 'जे मिय मारेइ' यो मृगं मारयति 'से मियवेरेण पुट्ठे' स मृगवैरेण स्पृष्ट., इह—वैरमिति वैरहेतुत्वाद् वधः पापं वा तेन वधेन वधजनितपापेन वेत्यर्थः। मृगघातकस्यैव मृगवधजनितं पाप भवतीति भावः। 'जे पुरिसं मारेइ' यः पुरुषं मारयति 'से' सः 'पुरिसवेरेणं पुट्ठे' पुरुषवैरेण पुरुषवधजनितपापेन स्पृष्टः लिप्तो भवतीति। ननु म्रियमाण-पुरुषस्य धनुः सकाशाद् योऽयं वाणस्योपनिपातः स न धनुर्धरपुरुषहेतुकः, अपि तु शिरश्छेदनकर्तु. पुरुषस्य प्रयत्नेन जात इति स एव शिरश्छेदनकर्ता पुरुषो मृगवधजनितपापेन स्पृष्टो भवितुमर्हति न तु धनुर्धरः, तर्हि कथमत्र मृगमारकः मृगवैरेण स्पृष्ट., पुरुषमारकः पुरुषवैरेण स्पृष्टः, इति कथितम् ? इत्याशयेन प्रश्नयति

मरने का पाप लगेगा ? ऐसा यह प्रश्न है-(गोयमा ! जे मियं मारेइ, सिय मियवेरेणं पुट्ठे, जे पुरिसं मारेइ से पुरिसवेरेणं पुट्ठे) हे गौतम ! जो पुरुष मृग को मारता है वह मृग के वधजन्य पाप से स्पृष्ट है और जो, पुरुष पुरुष को मारता है वह पुरुषवधजन्य पाप से स्पृष्ट है। (से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ जाव से पुरिसवेरेणं पुट्ठे) हे भदन्त ! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि यावत् वह पुरुषवैर से-अर्थात् पुरुष वधजन्य पाप से स्पृष्ट है ? शंकाकार का यहां ऐसा अभिप्राय है कि म्रियमाण पुरुष के धनुष से जो बाण छूटा वह उस धनुर्धर पुरुष हेतुक नहीं है, किन्तु शिर छेदन करने वाले उस पुरुष के प्रयत्न से वह छूटा है इसलिये वह शिरछेदन करने वाला पुरुष ही मृगवधजनितपाप से स्पृष्ट होना चाहिये धनुर्धर नहीं। तो फिर कैसे आप यह कहते हो कि मृगमारक मृगके वैर से-मृगवधजन्य पाप से स्पृष्ट है और पुरुष मारक पुरुष वैर से-पुरुषवधजन्य पाप से-स्पृष्ट है। इसी आशय से गौतम ने भगवान से यह पूछा कि "से केणट्ठेण भंते! एवं वुच्चइ जाव से पुरिस

ઉત્તર—(ગોયમા ! जे मियं मारेइ, सिय मियवेरेणं पुट्ठे, जे पुरिस मारेइ, से पुरिसवेरेणं पुट्ठे) હે ગૌતમ ! જે પુરુષ મૃગને મારે છે તેને મૃગહત્યાનું પાપ લાગે છે, અને જે પુરુષ પુરુષની હત્યા કરે છે તેને નરહત્યાનું પાપ લાગે છે.

પ્રશ્ન-(से केणट्ठेण भंते ! एवं वुच्चइ जाव से पुरिसवेरेणं पुट्ठे ?) હે ભગવન્! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે મૃગને મારનારને મૃગહત્યાનું પાપ લાગે છે અને પુરુષને મારનારને પુરુષહત્યાનું પાપ લાગે છે ? અહીં શંકાકારની શંકા એવા પ્રકારની છે કે મરનાર પુરુષના ધનુષમાંથી જે તીર છૂટયું તે મરનારના પ્રયત્નથી છૂટયું નથી પણ તલવારથી તેનું માથું છેદનારના પ્રયત્નથી છૂટયું છે. તો માથું છેદનાર પુરુષને જ મૃગહત્યાનું પાપ લાગવું જોઈએ, પણ તે ધનુ-

इति मृगवधजनितपापलेपस्तु धनुर्धरपुरुषस्यैव भवति न तु शिरश्छेदनकर्तु-र्द्वितीयस्य पृष्ठतः समागतस्येति । 'से तेणट्ठेणं गोयमा' तदेतेनार्थेन गौतम ! 'जे मियं मारेइ' यो मृगं मारयति 'से मिय वेरेण पुट्ठे' स मृगवैरेण स्पृष्टः यो हि मृगस्य मारकः स एव मृगवधजनितपापेन लिप्तो भवतीति भावः, 'जे पुरिस मारेइ से पुरिसवरेण पुट्ठे' यः पुरुष मारयति स पुरुषवैरेण स्पृष्टः पुरुषस्य व्यापादयिता पुरुषवधजनितपापेन लिप्तो भवतीति । अयं भावः-हिंसाया हि आत्मपरिणाम एव कारणं भवतीत्यतो मृगवधकस्य मृगमारणात्मकात्मपरिणामसद्भावात्, पुरुषवधकस्य च पुरुषमारणात्मकात्मपरिणामसद्भावात् तज्जन्यं पापं तस्य तस्यैव जायते इति ।

मान कर वह बाण उस धनुर्धर ने ही फेंका है ऐसा मानना चाहिये। इस लिये बाण के निक्षेप से जो हरण की मृत्यु हुई है उसका पाप उस धनुर्धारी को ही लगेगा-शिरछेदन कर्त्ता दूसरे पुरुष के जो कि उसके पीछे से आया है नहीं लगेगा। (से तेणट्ठेण गोयमा ! जे मियं मारइ, से मिग वेरेणं पुट्ठे जे पुरिस मारेइ, से पुरिसवेरेणं पुट्ठे) इस कारण हे गौतम ! मैंने ऐसा कहा है जो मग को मारता है वह मृग के वध जन्य पाप से लिप्त होता है और जो पुरुष को मारता है वह पुरुष वध जन्य पाप से लिप्त होता है। इसका तात्पर्य यह है कि हिंसा में आत्मा के परिणाम ही कारण होते हैं। इस लिये जो मृग का वधक है उसके मृग को मारनेरूप परिणाम के सद्भाव से, और पुरुष का वधकर्त्ता है उसके पुरुष के मारनेरूप परिणाम के सद्भाव से तज्जन्य पाप उस२

પ્રયોગ પણ કરી શકાય છે આ પ્રમાણે હકીકત હોવાથી તે ધનુર્ધરે જ તે તીર છોડયું હતું એમ માનવું જોઈએ તેથી તીર ફેંકવાથી તીર વાગવાથી જે મૃગનું મરણ થયું છે તે મૃગહત્યાનું પાપ તે ધનુર્ધારીને જ લાગશે, ધનુર્ધારીની તલવારથી શિર છેદનાર પુરુષને તે પાપ લાગશે નહીં (से तेणट्ठेणं गोयमा ! जे मियं मारेइ से मियवेरेणं पुट्ठ, जे पुरिसं मारेइ, से पुरिसवेरेणं पुट्ठे) હે ગૌતમ ! તે કારણે હું એવું કહું છું કે જે પુરુષ મૃગને મારે છે તે પુરુષને મૃગહિંસાનું પાપ લાગે છે અને જે પુરુષની હત્યા કરે છે તેને પુરુષહત્યાનું પાપ લાગે છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે હિંસામાં આત્માનાં પરિણામો જ કારણરૂપ હોય છે તેથી મૃગની હિંસા કરનારને મૃગને મારવારૂપ પરિણામના સદ્ભાવથી મૃગહત્યાનું પાપ લાગે છે અને પુરુષની હત્યા કરનારને પુરુષની હત્યા કરવારૂપ પરિણામના સદ્ભાવથી પુરુષ હત્યાનું પાપ લાગે છે વળી

माशयः यत् क्रियमाणं तत् कृतमिति व्यवह्रियते यथा 'चलमाणे चलिए' इत्यादि प्रथमशतके प्रथमोद्देशके नवमसूत्रे विवेचितमिति तत एव सर्वमनुसन्धेयम्। तथा सन्धीयमानं प्रत्यंचायां समारोप्यमाणं बाणम्, अथवा समारोप्यमाण-प्रत्यंचं धनुः संहितं कृतसंधानमिति कथ्यते तथा निर्वर्त्यमानमतिशयेन वर्तुलीक्रियमाणं प्रत्यंचाकर्षणेन निर्वर्त्तितं वृत्तीकृतं गोलाकारं कृतं भवति, तथा निसृज्यमानम् प्रक्षिप्यमाणं बाणं निसृष्टं प्रक्षिप्तमिति कथ्यते, यदा च निसृज्यमानमपि बाणं निसृष्टमिति भूतकालिकतया प्रयोगो भवति तदा निसृज्यमानतायाः धनुर्धरेणैव कृतत्वात् तेन धनुर्धरेणैव वधकेन बाणो निक्षिप्तो भवति शरनिक्षेपाच्च तेनैव शरेण मृगो मारित

कहा जाता है। इस विषय का खुलाशारूप में प्रथम शतक के पहले उद्देश में "चलमाणे चलिए" इस नौवे सूत्र में विवेचन किया जा चुका है इसलिये यह वहां से समझ लेना चाहिये। प्रकृत में इसे यों समझा जा सकता है-जो बाण प्रत्यंचा के ऊपर वर्तमान में चढा हुआ है वह सन्धीयमान है अथवा-समारोप्यमाण प्रत्यचावाला जो धनुष है वह संधीयमान है। सो यह संधित है-चढाया जा चुका है-इस प्रकारका कथन भूतकाल को लेकर प्रयोगमें लाया जाता है। इसी तरह निर्वर्त्यमान-वर्तमान में प्रत्यंचा के खेंचने से अतिशय गोल किया जा रहा जो धनुष है वह गोल किया जा चुका है, तथा निसृत्यमान-फेंकने के सन्मुख हुआ बाण फेंक दिया गया है ऐसा भूतकाल संबंधी प्रयोग हो जाता है। अतः जब यह बात है तो जिस समय बाण को फेंकने की तैयारी उस धनुर्धर ने की थी-वह उसके द्वारा उस समय फेंक ही दिया गया ऐसा

પ્રથમ શતકના પહેલા ઉદ્દેશામાં "चलणमाणे चलिए" નામના નવમા સૂત્રમાં અપાઈ ગયેલ છે તો ત્યાંથી તેને સમજી લેવુ અહીં તેને આ પ્રમાણે સમજાવી શકાય-જે બાણને વર્તમાન કાળે પ્રત્યંચાની ઉપર ચડાવવામાં આવ્યુ છે તે સન્ધીયમાન છે અથવા સમારોપ્યમાન પ્રત્યચાવાળુ જે ધનુષ છે તે સન્ધીયમાન છે તેનું સંધાન કરવામાં આવ્યું છે-તેને ચડાવવામાં આવ્યુ છે-એ પ્રકારનું કથન ભૂતકાળની અપેક્ષાએ કરી શકાય છે. એ જ પ્રમાણે નિર્વર્ત્યમાનવર્તમાન સમયે પ્રત્યચાને ખેચવાથી અતિશય ગોળાકાર કરાયેલુ જે ધનુષ છે-તે ગોળ કરાયું એવો ભૂતકાલિક પ્રયોગ કરી શકાય છે તથા નિસ્ત્યમાન-ફેંકવામા આવી રહેલુ બાણ ફેંકવામા આવી ગયુ એવો ભૂતકાલિક પ્રયોગ પણ કરી શકાય છે, વસ્તુ સ્થિતિ આ પ્રમાણે હોવાથી તે ધનુર્ધરે બાણને જે સમયે ફેંકવાની તૈયારી કરી હતી તે સમયે જ તે ધનુર્ધર વડે બાણ ફેંકાયું એવો ભૂતકાલિક

'यदि छण्ह मासाणं मरइ' यदि षण्णां मासानां म्रियते 'काइयाए-जाव पारियावणियाए' कायिक्या यावत् पारितापनिक्या 'चउहिं-किरियाहिं' चतसृभिः क्रियाभिः 'पुट्ठे' स्पृष्टो भवति। षण्मासानन्तरं मरणं तु कारणान्तरमात्यमिति कृत्वा षण्मासादनन्तरं प्राणातिपातक्रिया न भवतीति ज्ञेयम्, एतच्च व्यवहारनयापेक्षया प्राणातिपातक्रियान्यपदेशमात्रोपदर्शनार्थमेव कथितमिति, निश्चयनयेन तु यदा कदाचित्-बाणादिहेतुकं मरणं भवति तत्काले एव प्राणातिपातक्रिया भवतीति भावः ॥ सू० ६ ॥

पुनरप्याह—'पुरिसे णं भंते' इत्यादि।

मूलम्—पुरिसे णं भंते! पुरिसं सत्तीए समभिधंसेज्जा सयपाणिणा वा, से असिणा सीसं छिंदेज्जा, तओ णं भंते! से पुरिसे कइ किरिए? गोयमा! जाव च णं से पुरिसे तं पुरिसं

इन पांच क्रियाओं से स्पृष्ट होता है। तथा यदि वह छह महीने के भीतर २ नहीं मरता है बाद में मरता है-तो वह मरण अन्य कारणक हुआ है ऐसा होने से छह मास के बाद प्राणातिपात क्रिया नहीं होती है ऐसा जानना चाहिये। यह कथन व्यवहारनय की अपेक्षा से प्राणातिपात क्रिया के व्यपदेश मात्र को दिखानेके लिये ही किया गया है। नहीं तो निश्चयनय के मन्तव्यानुसार तो जब कभी भी बाणादि हेतुक मरण होता है उस काल में ही प्राणातिपात क्रिया होती है-चाहे वह मरण छह माहमें हो चाहे छह माह के बाद भी हो यदि वह बाणहेतुक है तो वहां अवश्य २ ही प्राणातिपात क्रिया है ॥ सू० ६ ॥

પનિકી અને પ્રાણાતિપાત, એ પાંચે ક્રિયાઓથી સ્પૃષ્ટ થાય છે પણ જો છ માસની અંદર તે મરણ પામે નહીં પણ ત્યાર બાદ તે મરણ પામે તો તે મરણ કોઈ બીજા કારણે થયું છે એમ માની શકાય અને તે પ્રમાણે અને ત્યારે તે પુરુષને પ્રાણાતિપાત ક્રિયાથી થતું પાપ લાગતું નથી-પણ બાકીની ચાર ક્રિયાઓથી તે પુરુષ યુક્ત થાય છે આ કથન વ્યવહાર નયની અપેક્ષાએ પ્રાણાતિપાત ક્રિયાના વ્યપદેશ માત્રને બતાવવા માટે જ કરવામાં આવ્યું છે નિશ્ચય નયના મંતવ્ય પ્રમાણે તો જ્યારે બાણાદિને કારણે કોઈ પણ મરતો થાય ત્યારે તે કાળે જ પ્રાણાતિપાતની ક્રિયા થતી હોય છે-પછી તે મરણ ભલે છ માસની અંદર થાય કે છ માસ પછી થાય જો તે મરણ બાણાદિને કારણે થયું હોય તો ત્યાં અવશ્ય પ્રાણાતિપાત ક્રિયા થઈ ગણાય છે ॥સૂ. ૬॥

अस्मिन् प्रकरणे क्रियायाः निवेचनं कृतम् ताश्च क्रिया अनन्तरकथितमृगादिवधे यावत्यो यत्र कालविभागे भवंति तावतीः क्रियास्तत्र दर्शयन्नाह—'अंतो छण्हं' इत्यादि, अंतो छण्हं मासाणं मरइ' अन्तः षण्णा मासानां म्रियते, 'काइयाए' कायिक्या 'जाव पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे' यावत् पंचभिः क्रियाभिः स्पृष्टः, वाणप्रक्षेपानन्तरं यदि षड्मासाभ्यन्तरे मृगस्य मरणं भवेत्तत्र तादृश प्रहारस्यैव कारणतेति तादृशमरणजनितपापेन स वधकः कायिक्याधिकरणिक प्राद्वेषिकी परितापनिकी प्राणातिपातक्रियारूप पंचक्रियाभिः स्पृष्टो भवतीति भावः।

को ही होता है। (अंतो छण्हं मासाणं मरइ काइयाए जाव पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे, बाहिं छण्हं मासाणं मरइ, काइयाए जाव पारियावणियाए किरियाहिं पुट्ठे) वह मरनेवाला व्यक्ति यदि छह मास के भीतर २ मर जाता है तो उसे मारनेवाली व्यक्ति कायिकी आदि पांच क्रियाओं से युक्त होता है और मरनेवाला व्यक्ति यदि छह मास के बाद मरता है तो उसे मारनेवाला व्यक्ति कायिकी क्रियासे लेकर पारितापनिकी क्रिया तक की चार क्रियाओं से युक्त होता है। तात्पर्य कहने का यह है कि इस प्रकरण में क्रिया का विवेचन किया गया है। वे क्रियाएँ अनन्तर कथित मृगादि वध में जितनी जिस काल विभाग में होती हैं उतनी क्रियाओं को "अंतो छण्हं" इत्यादि सूत्रद्वारा दिखलाया गया है। इसमें यह कहा गया है कि बाण प्रक्षेप के बाद यदि छह मासके भीतर २ मृगका मरण हो जाता है तो उसके उस मरण में उस प्रकार के प्रहारमें ही कारणता है। अतः तादृश मरणजनित पाप से वह वधक कायिकी, आधिकरणिकी, प्राद्वेषिकी, पारितापनिकी, प्राणातिपातक्रिया

શાસ્ત્રમા એમ પણ કહ્યુ છે કે (अंतो छण्ह मासाण मरइ काइयाए जाव पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे बाहिं छण्ह मासाणं मरइ काइयाए जाव पारियावणियाए चउहिं किरियाहिं पुट्ठे) જો માર ખાનાર વ્યક્તિ છ માસની અંદર મરી જાય તો મારનાર વ્યક્તિ કાયિકીથી માંડીને પ્રાણાતિપાત સુધીની પાંચે ક્રિયાઓવાળો કહેવાય છે, પણ જો માર ખાનાર વ્યક્તિ છ માસ વીતી ગયા પછી મરે તો મારનાર વ્યક્તિ કાયિકી ક્રિયાથી માંડીને પરિતાપનિકી પર્યન્તની ચાર ક્રિયાવાળો કહેવાય છે તાત્પર્ય એ છે કે આ પ્રકરણમાં ક્રિયાનુ વિવેચન કર્યું છે. તે ક્રિયાઓ પૂર્વકથિત મૃગાદિવધમાં જેટલી જે કાળ વિભાગમાં થાય છે તેટલી ક્રિયાઓને "अतो छण्ह" ઇત્યાદિ સૂત્રો વડે બતાવવામાં આવી છે તેમાં એ બતાવ્યુ છે કે બાણ છોડયા પછી છમાસની અંદર તે મૃગનુ મરણ થાય તો તેના મરણનુ કારણ તે પ્રહારને જ ગણી શકાય છે તો તે પ્રકારના મરણના પાપથી તે હત્યા કરનારો પુરુષ કાયિકી, આધિકરણિકી પ્રાદ્વેષિકી, અને પરિતા-

पुरिसे ' स पुरुषः ' तं पुरिस ' तं पुरुषम् ' सत्तीए ' शक्त्या शस्त्रविशेषेण ' समभिधंसेइ ' सममिध्वंसते इत्यादित्यर्थ, ' सयपाणिणा वा ' स्वकपाणिना वा स्वहस्तेन ' से ' तस्य ' असिणा ' असिना ' सीसं छिंदइ ' शीर्षं छिनत्ति, ' तावं च णं ' तावत् च खलु ' से पुरिसे ' स पुरुष , ' काइयाए ' कायिक्या, शरीर-व्यापाररूपया क्रियया, ' अहिगरणियाए ' आधिकरणिक्या, शक्तिलक्षणरूपया-क्रियया ' जाव पाणाइवायकिरियाए ' यावत् प्राणातिपातक्रियया, यावत् पदेन प्राद्वेषिकी पारितापनिक्यो सग्रह , ' पचहिं किरियाहिं '–पंचभि' क्रियाभि', ' पुट्ठे ' स्पृष्टो भवति, ' आसण्णवधएण य ' आसन्नवधकेन च, आसन्न समीपे विद्यमानो वधो विनाशो यस्मात् वैरात् तत् तनासन्नवधकेन भवति च वैरात् वधकस्य वधस्तमेव वध्यमाश्रित्य अन्यस्माद्वा तत्रैव जन्मनि जन्मान्तरे वा ।

से पाणिणा वा से असिणा सीसं छिंदति तावं च णं से पुरिसे काइयाए अहिगरणियाए जाव पाणाइवायकिरियाए पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे) हे गौतम ! जबतक वह पुरुष उस दूसरे पुरुष को शक्ति से–हथियारविशेष से मारता है, अथवा–अपने हाथों तलवार से उसका मस्तक काटता है तबतक वह पुरुष कायिकी,–शरीरव्यापाररूप कायिकी क्रिया से शक्ति व्यापाररूप अधिकरणिकी क्रिया से यावत् प्राणातिपातक्रिया से इन पांच क्रियाओं से स्पृष्ट होता है । यहां यावत् शब्द से प्राद्वेषिकी क्रिया और पारितापनिकी क्रिया इन दोनों क्रियाओं का ग्रहण हुआ है । (आसण्ण वधएण य अणवकंखणवत्तीए णं पुरिसवेरेणं पुट्ठे) तथा वह पुरुष आसन्न समीप में विद्यमान है वधविनाश जिससे ऐसे आसन्न वध वाले तथा दूसरे के प्राणों की अथवा अपने अपाय की जिसमें बिलकुल अपेक्षा नहीं है ऐसे पुरुषवैर से स्पृष्ट होता है । तात्पर्य कहने का

तावं च णं से पुरिसे तं पुरिस सत्तीए समभिधंसेति से पाणिणा वा से असिणा सीसं छिंदति ताव च णं से पुरिसे काइयाए अहिगरणियाए जाव पाणाइवायकिरियाए पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे) हे गौतम ! જ્યારે તે પુરુષ બીજા પુરુષને શક્તિ વડે એક પ્રકારના હથિયારથી–મારે છે અથવા પોતાના હાથમાં તલવાર લઈને તેનું મસ્તક કાપી નાખે છે ત્યારે તે કાયિકી શરીરની પ્રવૃત્તિરૂપ કાયિકી ક્રિયાથી, શક્તિ તલવાર આદિ અધિકરણનો ઉપયોગ કરવાથી અધિકરણિકી ક્રિયાથી, પ્રાદ્વેષિકી ક્રિયાથી પારિતાપનિકી ક્રિયાથી અને પ્રાણાતિપાત ક્રિયાથી સ્પૃષ્ટ થાય છે (आसण्ण वधएण य अणवकंखणवत्तीए णं पुरिसवेरेणं पुट्ठे) તથા તે પુરુષ આસન્ન–જેનો વધ સમીપમાં જ વિદ્યમાન છે–એવા આસન્ન-વધવાળા તથા તે વખતે અન્યના પ્રાણોનું અથવા પોતાના અપાયનું જેમાં બિલકુલ ભાન રહેતું નથી એવા પુરુષ વેરથી સ્પૃષ્ટ થાય છે કહે-

सत्तीए समभिधंसेति, से पाणिणा वा, से असिणा सीसं छिंदति तावं च णं से पुरिसे काइयाए अहिगरणियाए जाव पाणाइवायकिरियाए पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे, आसण्णवहएण य अणवकंखण वित्तिए णं पुरिसवेरेणं पुट्ठे ॥ सू०७ ॥

छाया-पुरुषो भदन्त ! पुरुषशक्त्या समभिध्वंसते स्वकपाणिना वा स असिना शीर्षं छिन्द्यात्, ततो भदन्त ! स पुरुषः कतिक्रियः ? गौतम ! यावत् च खलु स पुरुषस्तं पुरुषं शक्त्या समभिध्वंसते, स्वकपाणिना वा तस्य असिना शीर्षं छिनत्ति तावच्च खलु स पुरुषः कायिक्या-आधिकरणिक्या यावत् प्राणातिपातक्रियया पंचभिः क्रियाभिः स्पृष्टः आसन्नवधकेन चानवकांक्षणवृत्तिकेन पुरुषवैरेण स्पृष्टः ॥ सू० ७ ॥

टीका—'पुरिसे णं भते' पुरुष. खलु भदन्त ! 'पुरिसं' पुरुषं 'सत्तीए' शक्त्या शास्त्रविशेषेण 'समविधंसेज्जा' समभिध्वंसते हन्यादित्यर्थः, 'सयपाणिणा वा' स्वकपाणिना वा स्वकीयहस्तेनेत्यर्थ., 'असिणा' 'सोऽसिना' खड्गेन 'सीसं छिंदेज्जा' शीर्षं छिन्द्यात् विनिपातयेत्, 'तओ णं भंते' ततः खलु भदन्त ! तत' शीर्षच्छेदानन्तरम् खलु 'से पुरिसे कइकिरिए' स पुरुषः कतिक्रियः, स पुरुषः खड्गेन शिरश्छेनकर्ता पुरुष' कतिक्रियावान् भवति, भगवानाह— 'गोयमा' इत्यादि । 'गोयमा' हे गौतम ! 'जावं च णं' यावत् च खलु 'से

'पुरिसे णं भंते ! पुरिसं सत्तीए' इत्यादि ।

टीकार्थ—(भंते) हे भदन्त ! (पुरिसे) कोई एक पुरुष (पुरिसं सत्तीए समभिधंसेज्जा) दूसरे किसी पुरुष को हथियार विशेष से मारे (वा) अथवा (सयपाणिणा) अपने हाथ से (से) वह (असिणा) तलवार लेकर (सीसं छिंदेज्जा) उसका शिर काट लेवे (तया णं भंते ! से पुरिसे कइ किरिए) तो हे भदन्त ! वह पुरुष कितनी क्रियाओं वाला है ? (गोयमा ! जावं च णं से पुरिसे तं पुरिसं सत्तीए समभिधंसेति

"पुरिसे णं भंते ! पुरिसे सत्तीए" इत्यादि ।

टीकार्थ—(भंते !) હે ભગવન્ ! (पुरिसे) કોઇ એક પુરુષ (पुरिसं सत्तीए समभिधंसेज्जा) કોઇ બીજા પુરુષને હથિયાર વિશેષથી મારે (वा) અથવા (सयपाणिणा) પોતાના હાથમાં (से) તે (असिणा) તલવાર લઇને (सीसं छिंदेज्जा) તેનું માથું કાપી નાખે, (तया ण भंते ! से पुरिसे कइ किरिए) તો હે ભગવન્ ! તે પુરુષ કેટલી ક્રિયાવાળો કહેવાય ? (गोयमा !

अनयकाशणट्टपिकेन 'पुरिसवेरेण पुट्ठे' पुरुषवेरेण स्पृष्ट', एतादृशेन पुरुषवैरेण अशक्त्या शिरश्छेदनकर्त्ता पुरुषः स्पृष्टो भवतीति भाव' ॥ सू० ७॥

क्रियाधिकार एव इदमप्याह—'दो भंते' इत्यादि।

मूलम्—दो भंते! पुरिसा सरिसया सरिसत्तया सरिसत्तया सरिसभंडमत्तोवगरणा अण्णमण्णेणं सद्धिं संगामं संगामेइ तत्थ णं एगे पुरिसे पराजिणाइ, एगे पुरिसे पराइज्जइ, से कहमेयं भंते! एवं, गोयमा! सवीरिए पराजिणइ अवीरिए पराइज्जइ, से केणट्ठेणं जाव पराइज्जइ, गोयमा! जस्स णं वीरिए वज्झाइं कम्माइं णो बद्धाइं णो पुट्ठाइं जाव णो अभिसमण्णागयाइं णो उदिण्णाइं नो उवसंताइं भवंति, से णं पराजिणइ, जस्स णं वीरिए वज्झाइं कम्माइं बद्धाइं, जाव उदिण्णाइं णो उवसंताइं भवंति, से णं पुरिसे पराइज्जइ, से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ सवीरिए पराजिणइ अवीरिए पराइज्जइ ॥ सू० ८॥

छाया—द्वौ भदन्त! पुरुषौ सदृशौ सदृक्त्वचौ सदृग्वयस्कौ सदृग्भाण्डमात्रोपकरणौ अन्योन्येन सार्द्धं संग्रामं संग्रामयतः तत्रैकः पुरुषः पराजयते एकः पुरुषः पराजीयते, तत्कथमेतद् भदन्त! एवम्? गौतम! सवीर्यः पराजयते, अवीर्यः पराजीयते, तत्केनार्थेन यावत् पराजीयते? गौतम! यस्य वीर्यवध्यानि कर्माणि

है तब उससे जो वैर बंधता है उसमें दूसरे के प्राणों की जरा भी परवाह नहीं रहता है अथवा इससे हमारा क्या अनिष्ट होगा इसका भी ख्याल बिलकुल नहीं रहता है ऐसे पुरुष वैर से, वह शक्ति से–हथियारविशेष से दूसरे के शिरका छेदन करने वाला मनुष्य स्पृष्ट होता है ॥ सू–७॥

કે જ્યારે કોઈ વ્યક્તિ જીવની હત્યા કરે છે અને તેની સામે જે વેર બાંધે છે ત્યારે તેને અન્યના પ્રાણોની જરા પણ પરવા હોતી નથી, અથવા તેનાથી પોતાનું શું અનિષ્ટ થશે તેનો પણ ખ્યાલ તેને રહેતો નથી શક્તિથી અથવા હથિયારથી અન્યનું શિર કાપનાર મનુષ્ય એવા પ્રકારનું પુરુષવેર બાંધે છે ॥સૂ૭॥

तदुक्तं—" वहमरणअब्भक्खाण दाण परधणविलोवणाईणं ।
सव्व जहन्नो उदयो दसगुणिओ एक्कसिकयाणं ॥ " इति ॥

छाया—वधमरणाभ्याख्यानदानपरधनविलोपनादीनाम् , सर्वजघन्यउदयो दश गुणित एकशः कृतानामिति । आसन्नवधकेन चेत्यत्र च शब्दः समुच्चयार्थकः, 'अणवकंखणवत्तिए णं' अनवकांक्षणवृत्तिकेन खलु अनवकांक्षणा परकीयप्राण निरपेक्षा, स्वगतापायपरिहारापेक्षा वा, तया वृत्तिर्वर्त्तनं यत्र वैरे तत् तथा तेन

यह है जो पुरुष जिसका घात करता है वह पुरुष उसके द्वारा या किसी दूसरे के द्वारा उसी भव में या दूसरे भव में मारा जाता है क्यों कि वैर से वधक का वध होता है । इसलिये उसी वध्य को लेकर उसका वध हो या अन्य किसी दूसरे प्राणी को लेकर उसका वध हो चाहे वह वध उसी भव में या अन्य जन्म में हो । कहा भी है—

" वह मरणअब्भक्खाणदाण-परधण विलोवणाईणं ।
सव्वजहन्नो उदयो दस गुणिओ एक्कसिकयाणं. " इति ॥

वध करना मारना, अभ्याख्यान, चुगली करना, चोरी करना, इन सब एकवार किये अपकृत्यों का सर्वजघन्य उदय दसगुणा होता है । " आसन्नवधकेन च " यहां पर जो " च " शब्द का प्रयोग किया गया है वह समुच्चय अर्थ में किया गया है । दूसरे के प्राणों की परवाह नहीं करना अथवा अपने अपाय की दरकार नहीं रखना इसका नाम अनवकांक्षणा है । तात्पर्य इसका यह है कि जब कोई किसी का घातकरता

વાનું તાત્પર્ય એ છે કે જે પુરુષ જેનો ઘાત કરે છે તેના વડે અથવા બીજા કોઈની મારફત એજ ભવમા કે અન્ય ભવમા માર્યો જાય છે, કારણ કે વેર ને લીધે મારનારનો વધ થાય છે. તે કારણે તે વધ્ય (જેનો વધ કર્યો છે તે) વડે તેનો વધ થાય અથવા અન્ય કોઇ જીવ વડે તેનો વધ થાય, તે વધ એજ ભવમા પણ થાય અને અન્ય ભવમા પણ થાય. કહ્યુ પણ છે....

" वह मरण अब्भक्खाण दाण परधण विलोवणाईणं ।
सव्वजहन्नो उदयो दस गुणिओ एक्कसिकयाणं " इति ।

વધ કરવાનો, મારવાનો, અભ્યાખ્યાનનો. નિંદા કરવાનો અને ચોરી કરવાનો આ બધા અપકૃત્યોનો સર્વજઘન્ય ઉદય દસગણો હોય છે. " आसन्न वधकेन च " એ પદમા જે (च) એ શબ્દનો પ્રયોગ કર્યો છે તે સમુચ્ચયાર્થે કરાયો છે બીજા જીવોના પ્રાણોની દરકાર ન કરવી અથવા પોતાના અપાયની દરકાર ન કરવી તેનુ નામ " અનવકાંક્ષણા " છે. તેનો ભાવાર્થ એ છે

समानत्वेपि कथमेकस्य जयः, अपरस्य च पराजयो भवति ? भगवानाह— 'गोयमे' त्यादि, 'गोयमा' हे गौतम ! 'सवीरिए पराजिणइ' सवीर्यः परानयते अपरं पराजितं करोति 'अवीरिए पराइज्जइ' अवीर्यः पराजीयते, वीर्यरहित पराजितो भवति । पुन प्रश्नयति-'से केणट्ठेणं जाव पराइज्जइ' तस्केनार्थेन यावत् पराजीयते ? हे भदन्त ! तत्र किं कारणं येनैकस्य जयः अपरस्य च पराजय इति भावः । भगवानाह—'गोयमे' त्यादि । 'गोयमा' हे गौतम ! 'जस्स णं वीरियवज्झाई कम्माइ णो बद्धाइ' यस्य खलु वीर्यवध्यानि वीर्यवध्यं =शमुदमनीय यत्र तानि=शमुदमनीयानि कर्माणि नो बद्धानि 'णो पुट्ठाइं' नो स्पृष्टानि जाव णो अभिसमण्णागयाइ' यावत् नो अभिसमन्वागतानि, यावत

कहमेयं भंते !) तो हे भदन्त ! इसका क्या कारण है ? प्रश्नकर्त्ता का अभिप्राय ऐसा है कि जब दोनों एकसी स्थिति आदि वाले हैं समान बल आदि वाले हैं तो फिर ऐसा क्यों होता है कि एक की जीत होती है और दूसरे की हार होती है ? (गोयमा ! एव सवीरिए पराजिणाइ अवीरिए पराइज्जइ) हे गौतम ! यह बात इस प्रकार से है-कि जो वीर्यसहित होता है यह दूसरे को परास्त कर देता है और जो वीर्यरहित होता है वह परास्त हो जाता है । (से केणट्ठेणं जाव पराइज्जइ) हे भदन्त ! ऐसा आप किस कारण से कहते हो कि जो वीर्यवाला होता है वह जीतता है और जो वीर्यविनाका होता है वह हारता है ? तात्पर्य यह है कि एक की जीत होती है और दूसरे की हार होती है इसमें क्या कारण है? (गोयमा ! जस्स णं वीरियवज्झाई, कम्माइ णो बद्धाई

મેળવે છે અને બીજો પુરુષ પરાજય પામે છે (से कहमेयं भंते !) તો હે ભગવન્ ! એવું શા કારણે બને છે ? પ્રશ્ન કર્તાના પ્રશ્નનો આશય એ છે કે બન્ને સમાન બળ વાળા સમાન ઉંમર વાળા, સમાન સાધન સામગ્રીવાળા હોવા છતાં એવું કેમ બને છે કે એકની જીત અને બીજાની હાર થાય છે ? (गोयमा ! एव सवीरिए पराजिणाइ, अवीरिए पराइज्जइ) હે ગૌતમ ! તેનું કારણ એ છે કે જે વીર્યયુક્ત હોય છે તે બીજાને હરાવી દે છે અને જે વીર્યરહિત હોય છે તે પરાજય પામે છે (से केणट्ठेण जाव पराइज्जइ) હે ભગવન્ ! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે વીર્યવાળાનો જય થાય છે અને વીર્યરહિત વ્યક્તિની હાર થાય છે ? તાત્પર્ય એ છે કે એકનો જય અને બીજાનો પરાજય થવાનું કારણ શું છે ? એ પ્રશ્ન છે તેનો ઉત્તર નીચે પ્રમાણે છે

ઉત્તર—(गोयमा ! जस्स वीरियवज्झाइ, कम्माइ णो बद्धाइ णो पुट्ठाइ

नो वद्धानि नो स्पृष्टानि यावत् नो अभिसमन्यागतानि, नो उदीर्णानि उपशान्तानि भवंति स पराजयते यस्य खलु वीरवध्यानि कर्माणि वद्धानि यावत् उदीर्णानि नोपशान्तानि भवंति स पुरुषः पराजीयते तत् तेनार्थेन गौतम! एव मुच्यते स वीर्यः पराजयते अवीर्यः पराजीयते ॥ ८ ॥

टीका—'दो भंते पुरिसा' द्वौ भदन्त! पुरुषौ 'सरिसया' सदृशौ, कौशलप्रमाणादिना तुल्यौ, 'सरिसत्तया' सदृशत्वचौ, सदृशाकृती, 'सरिसव्वया' सदृशवयस्कौ समानयौवनाद्यवस्थौ, 'सरिसभंडमत्तोवगरणा' सदृशभांडामत्रोपकरणौ, तत्र-भाण्डम् हिरण्यसुवर्णादिकम्, अमत्र-कांस्यभाजनादिपात्रम् अथवा भाण्ड-मात्रा गणिमादिद्रव्यरूपः परिच्छेदः, उपकरणानि अनेकविधवस्त्रशस्त्रादीनि। ततः सदृशानि=तुल्यानि भाण्डमात्रोपकरणानि ययोस्तौ सदृशभाण्डामत्रोपकरणौ, एतावता द्वयोः पुरुषयोः समानविभूतिकत्वं कथितम्, 'अण्णमण्णेणं' अन्योन्येन परस्परेण 'सद्धिं' सार्धम् 'संगामं' संग्रामं-युद्धम्, 'संगामेन्ति' संग्रामयेते-परस्परं युद्धं कुरुत इत्यर्थः, 'तत्थणं-एगे पुरिसे पराजिणइ' तत्र खलु एकः पुरुषः पराजयते अपरं पराजितं करोति, 'एगे पुरिसे पराइज्जइ' एकः पुरुषः पराजीयते, परास्तो भवति, एकः पुरुषो विजेता भवति अपरश्च पराजितो भवतीति भावः। 'से कहमेयं भंते एवम्' तत् कथमेतद् भदन्त! एवम्, बलादिना

क्रिया के अधिकार में ही यह सूत्र भी सूत्रकार ने कहा है—
'दो भंते! पुरिसा सरसिया' इत्यादि।

टीकार्थ—(भंते) हे भदन्त! (सरिसया) एक सरीखे (सरिसव्वया) एकसी उम्र वाले (सरिसत्तया) एकसी चमडी वाले (सरिसभंडमत्तोवगरणा) समान भांडमत्र उपकरणवाले अर्थात् समानसामग्री वाले ऐसे (दो पुरिसा) कोई दो पुरुष (अण्णमण्णेणं सद्धिं) आपस में एक दूसरे के साथ (संगामं संगामेइ) लडाई करने में रत होते हैं तो (तत्थ) उनमें (एगे पुरिसे) एक पुरुष (पराजिणइ) जीतता है (एगे पुरिसे पराथिज्जइ) और एक दूसरा पुरुष हार जाता है (से

ક્રિયાના અધિકારને અનુલક્ષીને સૂત્રકાર નીચેના સૂત્રનું પણ કથન કરે છે—
"से भंते! पुरिसा सरिसया" ઈત્યાદિ.

ટીકાર્થ—(भंते) હે ભગવન્! (सरिसया) એક સરખા (सरिसव्वया) એક સરખી ઉમરના, (सरिसत्तया) એક સરખી ચામડીવાળા (सरिसभंड-मत्तोवगरणा) એક સરખા ભાડમત્ર ઉપકરણવાળા એટલે કે સમાન સાધન સામગ્રી વાળા (दो पुरिसा) બે પુરુષો (अण्णमण्णेणं सद्धिं) આપસ આપ-સમા-એક બીજાની સાથે (संगाम संगामेइ) સંગ્રામ ખેડે છે (तत्थ एगे पुरिसे पराजिणइ एगे पुरिसे पराइज्जइ) ત્યારબાદ તે બેમાનો એક પુરુષ વિજય

भयं भाव'—यस्य पुरुषस्य प्रथमं तु वीर्यवध्यानि कर्माणि पूर्वबद्धान्येव न भवेयुः यदि बद्धानि भवेयुः—तथापि स्पृष्टानि न भवेयु यदि स्पृष्टानि भवेयुः तथापि निधत्तानि न भवेयु, यदि निधत्तानि भवेयुस्तथापि निकाचितानि न भवेयुः, यदि निकाचितानि भवेयुस्तथापि अभिसमन्वागतानि न भवेयु यदि अभिसमन्वागतानि भवेयुस्तथापि उदीर्णानि न भवेयुः, तर्हि—किम्, उपशान्तानि भवेयु स्तस्य पुरुषस्य विजयो भवति, तद्भिन्नस्य पराजयो भवतीति। 'से तेणट्ठेणं गोयमा' तत्तेनार्थेन गौतम ! 'एव-वुच्चइ' एवमुच्यते—'सवीरिए पराजिणइ अवीरिए पराइज्जइ' सवीर्यः पराजयते, अवीर्य पराजीयते, इति ॥ सू० ८ ॥

॥ इति मृगघातकादिपुरुषप्रकरणम् ॥

—वीर्यरहित होने के कारण दूसरेके द्वारा पराजित होता है। तात्पर्य यह है कि जिस पुरुष के पहिले तो वीर्यवध्य कर्म पूर्व बद्ध हीन हों, यदि हों भी तो वे उससे स्पृष्ट न हों यदि स्पृष्ट भी हों तो वे निधत्त न हों, यदि निधत्त भी हों तो वे निकाचित न हों, यदि निकाचित हों तो वे उसके अभिसमन्वागत न हों, यदि अभिसमन्वागत (नहीं प्राप्त किया है) हों तो भी वे उसके उदीर्ण न हों किन्तु उपशान्त हो ऐसी दशा में उस पुरुष की विजय होती है और ऐसी स्थितिसे भिन्न स्थितिवाले की हार होती है। (से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ) इस कारण से हे गौतम ! मैं ऐसा कहता हूं कि (सवीरिए पराजिणइ, अवीरिए पराइज्जइ) जो वीर्य सहित होता है वह अपने समान वयवाले, समान समर्थीवाले, समान सामग्रीवाले और उपकरणवाले दूसरे व्यक्तिको जीत लेता है और दूसरा वीर्यरहित व्यक्ति उससे हार जाता है। "सरिसभंडमत्तोवगरणा"

શાન્ત નથી. (से पुरिसे पराइज्जइ) તે પુરુષ વીર્યરહિત હોવાને કારણે પરાજય પામે છે કહેવાનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે—જે પુરુષે વીર્યવધ્ય (વીર્યરહિત) કર્મો પહેલાં તો બાંધ્યા જ ન હોય, કદાચ બાંધ્યા હોય તો તેના વડે સ્પૃષ્ટ થયા ન હોય, જો સ્પૃષ્ટ હોય તો નિધત્ત ન હોય કદાચ નિધત્ત પણ હોય અને નિકાચિત ન હોય કદાચ નિકાચિત હોય પણ અભિસમન્વાગત ન હોય કદાચ અભિસમન્વાગત (પ્રાપ્ત નહીં કરેલા) હોય તો ઉદીર્ણ ન હોય કિન્તુ ઉપશાન્ત હોય એવી દશામાં તે પુરુષનો વિજય થાય છે અને તેથી વિપરીત સ્થિતિવાળાનો પરાજય થાય છે (से तेणट्ठेणं गोयमा ! एव वुच्चइ) હે ગૌતમ ! તે કારણે હું એવું કહું છું કે "सवीरिए पराजिणइ अवीरिए पराइज्जइ" વીર્યયુક્ત પુરુષ, સમાન વયના સમાન સામર્થ્યવાળા સમાન સામગ્રી અને ઉપકરણોવાળા વીર્યરહિત પુરુષને જીતી જાય છે, અને વીર્યરહિત વ્યક્તિ તેની

देन-'नो निधत्तानि, नो निकाचितानि' अनयोः संग्रहः, 'णो उदिण्णाइं' नो उदीर्णानि, किन्तु 'उवसंताइं भवंति' उपशान्तानि कार्यकरणासमर्थानि भवंति, 'से णं' स खलु वीर्यवान् पुरुषः 'पराजिणइ' पराजयते अपरं पराजितं करोति, एतादृशः पुरुषो युद्ध जेता भवतीत्यर्थः, 'जस्स णं वीरियवज्झाइं कम्माइं बद्धाइं जाव उदिण्णाइं णो उवसंताइं भवति' यस्य पुरुषविशेषस्य खलु वीर्यवध्यानि कर्माणि बद्धानि स्पृष्टानि निधत्तानि निकाचितानि अभिसमन्वागतानि उदीर्णानि उदयावलिकायां प्रविष्टानि किन्तु उपशान्तानि नो भवंति, 'से णं पुरिसे पराइज्जइ' स खलु वीर्यरहितः पुरुषः पराजीयते अपरेण पराजितो भवति।

णो पुट्ठाइं जाव णो अभिसमण्णागयाइं णो उदिण्णाइं णो उवसंताइं भवंति, से ण पराजिणइ) जिस जीवने वीर्यवध्य-वीर्यरहित अर्थात् शत्रुदमनीय कर्मों को तद्रूप में नहीं बांधा है, नहीं स्पर्श किया है, यावत् नहीं प्राप्त किया है, उसके वे कर्म उदीर्ण नहीं हैं, किन्तु उपशांत हैं कार्य करने में असमर्थ हैं ऐसा पुरुष युद्धमें दूसरे को जीतता है यहां यावत् शब्द से निधत्त और निकाचित इन दों पदों का संग्रह हुआ है। इस से वीर्यवध्य कर्म उसके न निधत्त हैं और न निकाचित हैं ऐसा अर्थबोध होना है। (जस्स णं वीरियवज्झाइं कम्माइं बद्धाइं जाव उदिण्णाइं णो उवसंताइं भवति) तथा जिस पुरुषके वीर्यवध्य कर्मबद्ध होते हैं-अर्थात् जिस पुरुष ने वीर्यरहित कर्मों को बांधा है, उन्हे स्पर्श किया है, वे उसके निधत्त है, निकाचित हैं, अभिसमन्वागत हैं, उदयावलिका में प्रविष्ट हैं किन्तु उपशान्त नहीं हैं (से पुरिसे पराइज्जइ) ऐसा वह पुरुष

जाव णो अभिसमण्णागयाइ णो उदिण्णाइ णो उवसंताइ भवति से ण पराजिणइ) हे गौतम! જે જીવે વીર્યવધ્ય-વીર્યરહિત એટલે કે શત્રુથી નાશ થનારા કર્મો બાધ્યા નથી, સ્પર્શ્યા નથી, યાવત્ પ્રાપ્ત કર્યા નથી તેના તે કર્મ ઉદીર્ણ નથી, પણ ઉપશાન્ત છે-કાર્ય કરવાને અસમર્થ છે-એવો પુરુષ યુદ્ધમા બીજા પુરુષને જીતે છે અહી "यावत्" પદ વડે નિધત્ત અને નિકાચિત, એ બે પદોનો પણ સમાવેશ થયો છે તેમ સમજવુ તેથી એવો અર્થબોધ થાય છે કે તેના વીર્યવધ્ય કર્મ નિધત્ત પણ નથી અને નિકાચિત પણ નથી (जस्सणं वीरियवज्झाइ कम्माइ बद्धाइ जाव उदिण्णाइ णो उवसताइ भवंति) તથા જે પુરુષે વીર્યવધ્ય કર્મો બાધ્યા હોય છે-એટલેકે જે પુરુષે વીર્યરહિત કર્મો બાધ્યા છે, સ્પર્શ્યા છે, નિધત્ત અને નિકાચિત પણ કર્યા છે, અને જેના તે કર્મો અભિસમન્વાગત છે અને ઉદયાવલિકામા પ્રવેશી ચુક્યા છે પણ ઉ-

णेरइयाण भंते ! किं सवीरिया अवीरिया, गोयमा ! णेरइया लद्धिवीरएण सवीरिया, करणवीरिएण सवीरियावि अवीरियावि । से केणट्ठेण ? गोयमा ! जेसिं ण णेरइयाण अत्थि उट्ठाणे कम्मे बले वीरिए पुरिसक्कारपराक्कमे, तेण णेरइया लद्धिवीरिएण वि सवीरिया करणवीरिएण वि सवीरिया। जे सि ण णेरइयाण णत्थि उट्ठाणे जाव परक्कमे तेण णेरइया लद्धिवीरिएणं सवीरिया, करणवीरिएणं अवीरिया से तेण ट्ठेणं० । जहा णेरइया, एव जाव पचिंदिय तिरिक्खजोणिया मणूसा जहा ओहिया जीवा, णवर सिद्धवज्जा भाणियव्वा। वाणमतरजोइसवेमाणिया जहा णेरइया । सेवं भंते सेव भंते, त्ति जाव विहरइ ॥ सू० ९ ॥

॥ पढमसए अट्ठमो उद्देसो ॥ १-८॥

छाया—जीवाः खलु भदन्त ! किं सवीर्या अवीर्या ? गौतम ! सवीर्या अपि अवीर्या अपि । तत्केनार्थेन ? । गौतम ! जीवा द्विविधा प्रज्ञप्ता तद्यथा-संसारसमापन्नकाश्चासंसारसमापन्नकाश्च । तत्र ये तेऽसंसारसमापन्नकास्ते सिद्धाः, सिद्धा अवीर्याः । तत्र खलु ये ते संसारसमापन्नकास्ते द्विविधाः प्रज्ञप्ताः तद्यथा शैलेशी प्रतिपन्नकाश्च, अशैलेशीप्रतिपन्नकाश्च । तत्र ये ते शैलेशीप्रतिपन्नकास्ते लब्धि वीर्येण सवीर्याः करणवीर्येणावीर्या । तत्र च तेऽशैलेशी प्रतिपन्नकास्ते लब्धि वीर्येण सवीर्या करणवीर्येण सवीर्या अपि अवीर्या अपि, तत्तेनार्थेन गौतम ! एवमुच्यते-जीवाः सवीर्या अपि अवीर्या अपि। नैरयिका खलु भदन्त ! किं सवीर्या अवीर्याः ? गौतम ! नैरयिका लब्धिवीर्येण सवीर्या करणवीर्येण सवीर्या अपि अवीर्या अपि । तत्केनार्थेन भदन्त ? । गौतम ! येषां खलु नैरयिकाणाम् अस्ति उत्थानम् कर्म बलम् वीर्यम् पुरुषकारपराक्रम , ते नैरयिका लब्धिवीर्येणापि सवीर्याः, करण वीर्येणापि सवीर्या येषां खलु नैरयिकाणां नास्ति उत्थानम् यावत्पराक्रमः ते खलु नैरयिका लब्धिवीर्येण सवीर्याः करणवीर्येणावीर्या तत्तेना-

अथ वीर्यविचारः-

पूर्वं 'सवीरिए अवीरिए' इत्यादि वर्णितम्, तत्प्रस्तावादेव वीर्यसूत्रमाह—'जीवा णं भंते' इत्यादि ।

मूलम्—जीवा णं भंते! किं सवीरिया अवीरिया? गोयमा! सवीरियावि अवीरियावि, से केणट्ठेणं गोयमा! जीवा दुविहा पन्नत्ता, तं जहा—संसारसमावण्णगा य असंसारसमावण्णगा य, तत्थणं जे ते असंसारसमावण्णगा तेणं सिद्धा, सिद्धा णं अवीरिया, तत्थणं जे ते संसारसमावण्णगा ते दुविहा पन्नत्ता तं जहा—सेलेसि पडिवण्णगा य, असेलेसिपडिवण्णगा य तत्थ णं जे ते सेलेसि पडिवण्णगा ते णं लद्धिवीरिए णं सवीरिया, करण-वीरिए णं अविरिया, तत्थ णं जे ते असेलेसी पडिवण्णया तेणं लद्धिवीरिए णं सवीरिया करणवीरिएणं सवीरिया वि, अविरियावि से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ जीवा सवीरियावि अवीरियावि।

में भांडमत्र उपकरण ये जो दो शब्द आये हैं उनमें हिरण्य सुवर्ण आदि को भांडसे और कांसे आदि के वर्तनों को अमत्र शब्द से कहा गया है। अथवा—भांडमात्रा गणिमादि द्रव्यरूप जो परिच्छेद है वह भांडमात्रा है। तथा अनेकविध जो वस्त्र शस्त्र आदि हैं वे उपकरण हैं। इससे उन दोनों को समान सामग्रीवाला कहा है ॥ सू० ८ ॥

॥ इस प्रकार यह मृगघातक आदि पुरुष प्रकरण समाप्त हुआ ॥

भारस्क्त પરાજય પામે છે "सग्गिसभंडमत्तोवगरणा" એ પદમા જે "ભાડા-મત્ર ઉપકરણ" પદમા ભાડ અને અમત્ર, એ બે શબ્દોનો પ્રયોગ થયો છે. તેમા હિરણ્ય, સુવર્ણ વગેરેના ઉપકરણોને 'ભાડ' કહે છે અને કાસા વગેરેના વાસણો અથવા ઉપકરણોને "અમત્ર" કહે છે અથવા—"ભાડમાત્રા"—ગણિમાદિ દ્રવ્યરૂપ જે પરિગ્રહ છે તેને ભાડમાત્રા કહે છે, તથા વિવિધ પ્રકારના જે વસ્ત્ર, શસ્ત્ર વગેરે હોય છે તેને ઉપકરણ કહે છે તેથી તે બન્નેને સમાન સામગ્રીવાળા કહેવામા આવ્યા છે ॥ સૂ-૮ ॥

॥ મૃગઘાતક આદિ પુરુષ પ્રકરણ સમાપ્ત ॥

असंसारसमापन्नकाश्च, 'तत्थ णं जे असंसारसमावण्णगा' तत्र खलु ये असंसा रसमापन्नका, 'तेणं सिद्धा' ते खलु सिद्धाः, 'सिद्धाणं अवीरिया' सिद्धाः खलु अवीर्याः, करणवीर्यस्याभावेन सिद्धा अवीर्या इति कथ्यन्ते, 'तत्थ णं जे ते संसारसमावण्णगा' तत्र खलु ये ते संसारसमापन्नकाः संसारिणः 'ते दुविहा पण्णत्ता' ते द्विविधाः प्रज्ञप्ताः, 'तं जहा' तद्यथा-'सेलेसीपडिवण्णगा य' शैलेशीप्रतिपन्नकाश्च अशैलेशीप्रतिपन्नकाश्च, शीलस्येशः शीलेशः सर्वसंवररूप चारित्रवान् तस्येयमवस्था शैलेशी अथवा शैलानां पर्वतानामीशः इति शैलेशो मेरु स्तस्येव याऽवस्था सा शैलेशी स्थिरतासाधर्म्यात्, स्थिरता च सर्वथा योगनिरोधेन इ-उ-ऋ-लृ इति पंचह्रस्वाक्षरोच्चार कालप्रमाणा, तां प्रतिपन्ना ये ते शैलेशीप्रति

कहे गये हैं। वे इस प्रकार से हैं-एक संसारसमापन्नक और दूसरे असंसारसमापन्नक (तत्थ णं जे असंसार समावण्णगा से णं सिद्धा) इनमें जो असंसारसमापन्नक हैं वे सिद्ध हैं। (सिद्धाणं अवीरिया) ये सिद्ध करणवीर्यके अभाव से वीर्य विनाके हैं ऐसे कहे गये हैं। (तत्थ णं जे ते संसारसमावण्णया ते दुविहा पन्नत्ता) तथा जो संसारसमापन्नक जीव हैं वे दो प्रकारके कहे गये हैं। (तं जहा) वे दो प्रकार ये हैं- (सेलेसी पडिवण्णगा य असेलेसी पडिवण्णगा य) एक शैलेशीप्रतिपन्नक और दूसरे अशैलेशी प्रतिपन्नक। जो शीलके ईश होते हैं वह शीलेश कहे गये हैं-अर्थात् सर्वसंवरणरूप चारित्रवाले ही शैलेश होते हैं। इन शैलेशों की जो अवस्था है वह शैलेशी है। अथवा पर्वतों का ईश जो सुमेरु पर्वत है उस पर्वत के जैसी अवस्था का नाम शैलेशी है। उसकी स्थिरता के सामर्थ्य से यह शैलेशी अवस्था कही गई है। यह स्थिरता

જીવ બે પ્રકારના હોય છે-(૧) સંસાર સમાપન્નક અને (૨) અસંસાર સમાપન્નક (तत्थणं जे असंसारसमावण्णगा से णं सिद्धा) તેમાં જે અસંસાર સમાપન્નક જીવો છે તેમને સિદ્ધ કહે છે (सिद्धाणं अवीरिया) તે સિદ્ધોને કરણવીર્યને અભાવે વીર્યરહિત કહ્યા છે (तत्थणं जे ते संसारसमावण्णगा ते दुविहा पण्णत्ता) તથા જે સંસાર સમાપન્નક જીવો છે તે બે પ્રકારના કહ્યા છે, (तं जहा) તે આ પ્રમાણે છે-(सेलेसी पडिवण्णगा य) (શૈલેશી-પ્રતિપન્નક અને (૨) અશૈલેશી પ્રતિપન્નક સર્વ સંવરરૂપ ચારિત્રવાળા જીવોને જ શીલેશ કહે છે તે શીલેશોની જે અવસ્થા તેનું નામ શૈલેશી છે

અથવા--પર્વતોનો ઈશ જે સુમેરુ પર્વત છે, તે સુમેરુના જેવી અવસ્થાને શૈલેશી અવસ્થા કહે છે સ્થિરતાની અપેક્ષાએ સમાનતા હોવાથી એવી અવસ્થાને

र्थेन० यथा नैरयिकाः एवं यावत् पंचेन्द्रियतिर्यग्योनिकाः । मनुष्या यथा औघिका जीवाः, नवरं सिद्धवर्जा भणितव्याः वानव्यंतरज्योतिष्कवैमानिका यथा नैरयिकाः, तदेवं भदंत ! तदेवं भदंत ! इति यावद्विहरति ॥ सू० ९ ॥

॥ प्रथमशतकेऽष्टमोद्देशः ॥ १-८ ॥

टीका—'जीवा णं भंते' जीवाः खलु भदन्त ! 'किं सवीरिया अवीरिया' किं सवीर्याः अवीर्याः ? जीवाः किं वीर्यवन्तो भवन्ति नवेति प्रश्नः, भगवानाह—'गोयमे'त्यादि, 'गोयमा' हे गौतम ! 'सवीरियावि-अविरियावि' सवीर्या अपि अवीर्या अपि । 'से केणट्ठेणं०' तत्केनार्थेन, हे भदन्त ! केन कारणेनैव मुच्यते जीवाः सवीर्या अपि अवीर्या अपीति । भगवानाह—'गोयमे'त्यादि । 'गोयमा' हे गौतम ! 'जीवा दुविहापन्नत्ता' जीवाः द्विविधाः प्रज्ञप्ताः, 'तं जहा'-तद्यथा-'संसारसमापन्नगा य असंसारसमावण्णगा य' ससारसमापन्नकाश्च,

वीर्यविचार- -

पहिले "सवीरिए अवीरिए" इत्यादि रूपवर्णन किया जा चुका है सो उसी प्रस्ताव को लेकर अब सूत्रकार वीर्यसूत्र का कथन करते हैं-

'जीवा णं भंते ! किं सवीरिया अवीरिया' इत्यादि ।

टीकार्थ(भंते) हे भदन्त ! (जीवा णं) जीव (किं सवीरिया अवीरिया) क्या वीर्य सहित होते हैं कि विना वीर्य के होते हैं ? (गोयमा ! सविरीया वि अवीरिया वि) हे गौमम ! जीव वीर्यवाले भी होते हैं और विना वीर्य के भी होते हैं। (से केणट्ठेणं) हे भदन्त ! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि जीव वीर्यवाले भी होते हैं और विना वीर्य के भी होते हैं (गोयमा ! जीवा दुविहा पण्णत्ता-तं जहा-संसार समावण्णगा य असंसारसमावण्णगा य) हे गौतम ! जीव दो प्रकारके

વીર્ય વિચાર-

પહેલા "सवीरिए अवीरिए" ઇત્યાદિરૂપ વર્ણન કરવામા આવ્યું છે તે એ જ પ્રસ્તાવને અનુલક્ષીને સૂત્રકાર હવે વીર્યસૂત્રનુ કથન કરે છે-

"जीवाणं भंते ! किं सवीरिया" ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—(भंते !) હે ભગવન્ ! (जीवाण किं सवीरिया अवीरिया) શું જીવો વીર્યસહિત હોય છે, કે વીર્યરહિત હોય છે ? (गोयमा ! सवीरिया वि अवीरिया वि) હે ગૌતમ ! જીવો વીર્યસહિત પણ હોય છે, અને વીર્યરહિત પણ હોય છે (से केणट्ठेणं०) હે ભગવન્ ! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે જીવ વીર્યસહિત પણ હોય છે અને વીર્યરહિત પણ હોય છે (गोयमा ! जीवा दुविहा पण्णत्ता तं जहा संसारसमावण्णगा य असंसार समावण्णग य) હે ગૌતમ !

कथ्यन्ते । 'तत्थ णं जे ते असेलेसी पडिवण्णगा' तत्र खलु ये ते अशैलेशीप्रतिपन्नकाः, 'तेण लद्धिवीरिएण सवीरिया' ते खलु लब्धिवीर्येण सवीर्याः, 'करण वीरियेणं सवीरिया वि अवीरिया वि' करणवीर्येण सवीर्या अपि अवीर्या अपि । तत्र सवीर्या उत्थानादिक्रियावन्तः अवीर्यास्तु उत्थानादिक्रियारहिताः । ते पर्याप्तादि काले अवगन्तव्या इति । 'से तेणट्ठेणं गोयमा' तत्तेनार्थेन गौतम ! 'एवं वुच्चइ' एवमुच्यते–'सवीरिया वि–अवीरिया वि' सवीर्या अपि अवीर्या अपि, वीर्यं – जीवप्रभवं बलम्, तत् लब्धिवीर्यकरणवीर्यभेदात् द्विविधम्, तत्र लब्धिवीर्यम् आत्मबलस्य सत्वाविशेषरूपमेव, करणवीर्यं तु कार्यकरणसमर्थात्मव

कहे गये हैं। (तत्थ णं जे ते असेलेसी पडिवण्णगा ते णं लद्धिवीरिएण सवीरिया वि करणवीरिएणं सवीरिया वि अवीरिया वि) तथा जो अशैलेशीप्रतिपन्नक जीव हैं वे लब्धिवीर्य की अपेक्षा से सवीर्य होते हैं। और करणवीर्य की अपेक्षा से वीर्यसहित भी होते हैं और विना वीर्य के भी होते हैं। उत्थान आदि क्रियावाले जो हैं वे सवीर्य हैं और उत्थान आदि क्रियाओं से जो रहित होता है– वे विना वीर्य के जीव–अपर्याप्त आदि समय में होते हैं। (से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ, सवीरिया वि अवीरिया वि) इसी कारण से हे गौतम ! मैंने ऐसा कहा है कि जो अशैलेशी प्रतिपन्नक जीव हैं वे वीर्य सहित भी होते हैं और विना वीर्य के भी होते हैं। जीव से जो बल उत्पन्न होता है उसका नाम वीर्य है। यह वीर्य लब्धिवीर्य और करणवीर्य के भेद से दो प्रकार का होता है। इनमें जो लब्धिवीर्य होता है वह तो आत्मबल की विशेष सत्तारूप ही होता है। तथा जो करणवीर्य

નથી, તેથી તે અપેક્ષાએ તેમને અવીર્ય-વીર્યરહિત-કહ્યા છે (तत्थ णं जे ते असेलेसी–पडिवण्णगा ते णं लद्धिवीरिएणं सवीरिया करणवीरिएणं सवीरिया वि अवीरिया वि) તથા જે અશૈલેશી પ્રતિપન્નક જીવો છે તેઓ લબ્ધિવીર્યની અપેક્ષાએ સવીર્ય છે પણ કરણવીર્યની અપેક્ષાએ વીર્યસહિત પણ હોય છે અને વીર્યરહિત પણ હોય છે ઉત્થાન વગેરે ક્રિયાવાળા જેઓ હોય છે તેઓ સવીર્ય હોય છે અને જેઓ ઉત્થાનાદિ ક્રિયારહિત હોય છે તેઓ અવીર્ય હોય છે અપર્યાપ્ત વગેરે સમયમાં જીવ અવીર્ય હોય છે (से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ, सवीरिया वि अवीरिया वि) હે ગૌતમ ! તે કારણે મેં એવું કહ્યું છે કે અશૈલેશી પ્રતિપન્નક જીવ વીર્યસહિત પણ હોય છે અને વીર્યરહિત પણ હોય છે જીવમાં જે બળ ઉત્પન્ન થાય છે તેને વીર્ય કહે છે તે વીર્યના બે પ્રકાર છે–(૧) લબ્ધિવીર્ય અને (૨) કરણવીર્ય તેમાં જે લબ્ધિવીર્ય છે તે તો

पन्नकाः, तद्भिन्ना अशैलेशीप्रतिपन्नकाः, 'तत्थणं जे ते सेलेसीपडिवन्नया' तत्र खलु ये ते शैलेशी प्रतिपन्नकाः 'तेणं लद्धिवीरियेणं सवीरिया' ते खलु लब्धिवीर्येण सवीर्या, वीर्यान्तरायक्षयक्षयोपशमतो या वीर्यस्य लब्धिः सा एव तद्धेतुत्वात् वीर्य-लब्धिवीर्यं तेन लब्धिवीर्येण सवीर्याः। एतेषां क्षायिकमेव लब्धिवीर्यम्। 'करण-वीरिएण अवीरिया' करणवीर्येणावीर्याः लब्धिवीर्यकार्यभूता क्रिया करणम् तद्रूपं वीर्यमिति करणवीर्यम्। शैलेशीप्रतिपन्नकास्तदभावादवीर्याः

शीलेश में सर्वथा योगों के निरोध हो जाने पर आती है और इसका काल -अ-इ-उ-ऋ-लृ-ए-पांच ह्रस्वाक्षरों के उच्चारणकाल के बराबर है। इस शैलेशी अवस्था को जो प्राप्त हो चुके हैं वे शैलेशीप्रतिपन्नक हैं। और इनसे भिन्न जो जीव हैं वे अशैलेशीप्रतिपन्नक हैं। (तत्थ णं जे ते सेलेसी पडिवन्नया) इनमें जो शैलेशीप्रतिपन्नक हैं (ते णं लद्धिवीरियेणं सवीरिया) वे लब्धिवीर्य से सवीर्य हैं। वीर्यान्तराय कर्म के क्षय, क्षयोपशम से जो वीर्य की लब्धि होती है वह लब्धि ही तद्धेतु होने के कारण अर्थात् वीर्य की प्राप्ति में कारण होने से वीर्यरूप है-अर्थात् लब्धिवीर्यरूप है। इस लब्धिवीर्य से वे सवीर्य होते हैं। इनमें क्षायिक भावरूप ही लब्धिवीर्य कारण है (करणवीरिएणं अवीरिया) करणवीर्य से वे अवीर्य हैं। लब्धिवीर्य की कार्यभूत जो क्रिया है उसका नाम करण है। इस करणरूप जो वीर्य वह करणवीर्य-यह करणवीर्य शैलेशीप्रतिपन्नक जीवों में होता नहीं है इसलिये उसकी अपेक्षा से वे अवीर्य-वीर्य विना के-

શૈલેશી કહી છે યોગોને સર્વથા નિરોધ થવાથી તે અવસ્થા શીલેશને જ પ્રાપ્ત થાય છે, અને તેનો કાળ અ-ઇ-ઉ-ઋ-લૃ-એ પાચ હ્રસ્વ અક્ષરોના ઉચ્ચારણકાળ જેટલો જ હોયછે એવી શૈલેશી અવસ્થા જેમણે પ્રાપ્ત કરી હોય છે તેમને શૈલેશી પ્રતિપન્નક કહે છે અને તે ચૌદમે ગુણ સ્થાને જ હોય છે અને તેમનાથી ભિન્ન ગુણવાળા જીવોને અશૈલેશી પ્રતિપન્નક કહે છે (तत्थण जे ते सेलेसी-पडिवन्नया) તેમના જે શૈલેશીપ્રતિપન્નક જીવો છે તેઓ (तेण लद्धिवीरियेण सवीरिया) લબ્ધિવીર્યને કારણે સવીર્ય છે વીર્યાન્તરાય કર્મના ક્ષય અને ક્ષયોપશમથી જે જે વીર્ય-લબ્ધિ પ્રાપ્ત થાય છે, તે લબ્ધિ જ વીર્યપ્રાપ્તિમા કારણભૂત હોવાથી વીર્યરૂપ છે-એટલે કે લબ્ધિ વીર્યરૂપ છે. આ લબ્ધિવીર્યથી જ તેઓ વીર્ય-યુક્ત કહેવાય છે ક્ષાયિકભાવરૂપ લબ્ધિવીર્ય જ તેમા કારણભૂત છે (करण वीरिएण अवीरिया) પરંતુ કરણવીર્યની અપેક્ષાએ તેઓ અવીર્ય-વીર્યરહિત-છે લબ્ધિવીર્યની કાર્યભૂત જે ક્રિયા છે તેનું નામ કરણ છે તે કરણરૂપ જે વીર્ય તેનુ નામ કરણવીર્ય છે તે કરણવીર્ય શૈલેશી પ્રતિપન્નક જીવોમા હોતું

वीर्येण सवीर्याः वीर्यसहिताः 'करणवीरिएण' करणवीर्येण 'सवीरिया वि' सवीर्या अपि 'अवीरियावि' अपि-अवीर्या अपि। पुन प्रश्नयति-'से केणट्ठेणं०' तत्केनार्थेन भदन्त! एवमुच्यते यत् नारकजीवाःसवीर्या अपि अवीर्या अपि, भगवानाह 'गोयमे' त्यादि। 'गोयमा' हे गौतम! 'जेसिं णं णेरइयाणं अत्थि' येषां खलु नैर यिकाणाम् अस्ति 'उट्ठाणे कम्मे बले वीरिए पुरिसक्कारपरक्कमे' उत्थानं कर्म बलं वीर्यं पुरुषकार पराक्रमः, तत्र उत्थानम्-चेष्टाविशेषः, कर्म = भ्रमणादिक्रिया, बलम्-शरीरसामर्थ्यम्, वीर्यम्-आत्मप्रभव बलम्, पुरुषकार -अभिमानविशेषः पराक्रम -निष्पादितस्वविषयः पुरुषकार एव। 'तेणं नेरइया' ते खलु नैरयिकाः

हे गौतम! नारकजीव लब्धिवीर्य की अपेक्षा लेकर तो वीर्य सहित के होते है और करणवीर्य की अपेक्षा लेकर वीर्यसहित भी होते हैं और वीर्यरहित भी होते हैं (से केणट्ठेणं०) हे भदन्त! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि नारक जीव लब्धिवीर्य की अपेक्षा से तो वीर्य-सहित होते हैं और करणवीर्य की अपेक्षा से वे वीर्यसहित भी होते हैं और वीर्यरहित भी होते हैं (गोयमा! जेसिं णं नेरइयाणं अत्थि उट्ठाणे कम्मे बले वीरिए पुरिसक्कारपरक्कमे से ण नेरइया लद्धिवीरिएण वि सवी रिया, करणवीरिएण वि सवीरिया) हे गौतम! जिन नारकों के उत्थान कर्म, बल, वीर्य, पुरुषकारपराक्रम है वे नारकलब्धिवीर्य की अपेक्षा से भी वीर्यवाले हैं और करणवीर्य की अपेक्षा से भी वीर्यवाले हैं। चेष्टा विशेष का नाम उत्थान है। भ्रमणादि क्रिया का नाम कर्म है। शारी रिकसामर्थ्य का नाम बल है। आत्मोत्पबल का नाम वीर्य है। अभिमान

નારક જીવો લબ્ધિવીર્યની અપેક્ષાએ વીર્યસહિત હોય છે, અને કરણવીર્યની અપેક્ષાએ વીર્યસહિત પણ હોય છે અને વીર્યરહિત પણ હોય છે (से केण-ट्ठेण०) હે ભગવન્! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે નારક જીવો લબ્ધિ વીર્યની અપેક્ષાએ વીર્યસહિત હોય છે, અને કરણવીર્યની અપેક્ષાએ વીર્યયુક્ત પણ હોય છે અને વીર્યરહિત પણ હોય છે? (गोयमा! जेसिं णं नेरइयाणं अत्थि उट्ठाणे कम्मे बले वीरिए पुरिसक्कारपरक्कमे ते णं नेरइया लद्धिवीरिएण वि सवीरिया करणवीरिएण वि सवीरिया) હે ગૌતમ! જે નારકોને ઉત્થાન કર્મ, બળ, વીર્ય અને પુરુષકાર પરાક્રમ છે, તે નારકો લબ્ધિવીર્યની અપેક્ષાએ પણ વીર્યવાળા છે અને કરણવીર્યની અપેક્ષાએ પણ વીર્યવાળા છે ચેષ્ટાવિ-શેષને ઉત્થાન કહે છે ભ્રમણાદિ ક્રિયાને કર્મ કહે છે શારીરિક સામર્થ્યને બળ કહે છે આત્મબળને વીર્ય કહે છે અભિમાન વિશેષને પુરુષકાર કહે છે

त्मेव, लब्धिवीर्यं तु प्रायः सर्वेषामेव संसारिजीवानां भवति, करणवीर्यं सर्वेषां जीवानां भवेदेवेति न नियमः किन्तु भवेन्नवा भवेदिति।

जीवसामान्यस्य वीर्यं भवति नवेति विचार्य्य जीवविशेषे तद्विचारणायाह- 'नेरइयाणं भंते' इत्यादि। 'नेरइयाणं भंते' नैरयिकाः खलु जीवाः हे भदन्त! 'किं सवीरिया अवीरिया' किं सवीर्या अवीर्या, नारकाः खलु जीवाः हे भदन्त! वीर्यवन्तो भवन्ति अवीर्यवन्तो वा भवन्ति। भगवानाह-'गोयमे' त्यादि, 'गोयमा' हे गौतम! 'नेरइया लद्धिवीरिएणं सवीरिया' नैरयिकाः लब्धि-

---

होता है वह कार्य करने में समर्थ आत्मबलरूप होता हैं। लब्धिवीर्य समस्त ही संसारी जीवों के होता है। परन्तु जो करणवीर्य है वह सर्व जीवों के होता ही है ऐसा नियम नहीं है। क्यों कि अपर्याप्तकालमें वह सर्व जीवों के नहीं होता-अतः वह होता भी और नहीं भी होता है। वीर्य एक प्रकारका आत्मबल है। लब्धिवीर्य एक जात के आत्मबलकी सत्तारूप होता है। करणवीर्य कोई भी प्रकारकी क्रिया करते हुए आत्म-बलरूप होता है। वीर्य जीव सामान्य के होता भी है और नहीं भी होता है ऐसा विचार करके अब सूत्रकार उस वीर्य का जीव विशेष के साथ विचार करने के निमित्त प्रश्नोत्तररूप सूत्रों का कथन करते हैं- (नेरइयाणं भंते! किं सविरिया? अवीरिया?) हे भदन्त! नारक जीव क्या वीर्यसहित होते हैं कि विना वीर्य के होते है? (गोयमा! नेरइया लद्धिवीरिए णं सवीरिया करणवीरिए णं सवीरिया वि अवीरिया वि)

આત્મબળની સત્તા વિશેષરૂપ હોય છે તથા જે કરણવીર્ય છે તે કાર્ય કરવાને સમર્થ એવા આત્મબળરૂપ હોય છે તમામ સંસારી જીવોમાં લબ્ધિવીર્ય હોય છે. પણ કરણવીર્ય તમામ સસારી જીવોમા હોય છે જ એવો નિયમ નથી કારણ કે અપર્યાપ્ત અવસ્થામા તે સર્વ જીવોમા હોતુ નથી- તેથી તે હોય પણ છે અને નથી પણ હોતું એવુ કહ્યુ છે વીર્ય એક પ્રકારનું આત્મબળ છે લબ્ધિ-વીર્ય એક જાતના આત્મબળની સત્તારૂપ હોય છે. કર્ણવીર્ય કોઈ પ્રકારની ક્રિયા કરતા આત્મબળરૂપ હોય છે સામાન્ય જીવો વીર્યયુક્ત પણ હોય છે અને વીર્યરહિત પણ હોય છે, એ બાબતનુ નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર તે વીર્યનો વિચાર જીવ વિશેષને અનુલક્ષીને કરવા માટે પ્રશ્નોત્તરરૂપ સૂત્રોનું કથન કરે છે (नेरइयाण भंते! किं सवीरिया? अवीरिया?) હે ભગવન્ શુ નારક જીવો વીર્યયુક્ત હોય છે કે વીર્ય વિનાના હોય છે? (गोयमा! नेरइया लद्धि-वीरिएणं सवीरिया, करणवीरिएण सवीरिया वि अवीरिया वि) હે ગૌતમ!

भाववन्त एव भवन्तीति भावः । 'से तेणट्ठेणं०' तदेतेनार्थेन, अनेन कारणेन हे गौतम ! नारकजीवाः लब्धिवीर्येण सवीर्याः करणवीर्येण तु सवीर्या अपि अवीर्या अपीति भावः । नारकजीवानाम् वीर्यवत्त्वं प्रतिपाद्य शेषत्रयोविंशतिदण्डकजीवानां तत्प्रतिपादयितुमाह—'जहे' त्यादि, 'जहा नेरइया एवं जाव पंचिंदियतिरिक्खजोणिया' यथा नैरयिका एव यावत् पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकाः, येन रूपेण नारकविषये वीर्यस्य सद्भावादिकं चिन्तितम् एवं तेनैव प्रकारेण यावत् पञ्चेन्द्रिय

वीर्य से सवीर्य हैं, परन्तु करणवीर्य से रहित होने के कारण वीर्यवाले नहीं हैं। यह कथन अपर्याप्त अवस्था की अपेक्षा से किया गया जानना चाहिये। क्यों कि अपर्याप्तावस्था में किसी भी जीव के उत्थानादि क्रियाएँ नहीं होती है। अतः अपर्याप्तावस्था में उत्थानादि क्रिया रहित नारकजीव लब्धिवीर्यवाले होते हुए भी करणवीर्य की अपेक्षा वीर्याभावविशिष्ट ही होते हैं। (से तेणट्ठेणं०) इस कारण हे गौतम! नारक जीव लब्धिवीर्य की अपेक्षा से सवीर्य होने पर भी करणवीर्य की अपेक्षा से तो वे सवीर्य भी होते हैं और वीर्य से रहित भी होते हैं-ऐसा मैंने कहा है। इस तरह नारक जीवों में वीर्यवत्ता का प्रतिपादन करके अब सूत्रकार शेष २३ दण्डकों में इस बात को प्रतिपादन करने के निमित्त कहते हैं कि-(जहा णेरइया एवं जाव पंचिंदियतिरिक्खजोणिया मणूया जहा ओहिया जीवा णवरं सिद्धवज्जा भाणियव्वा, वाणमंतर-जोतिस-वेमाणिया जहा णेरइया) जिस रूप से नारकविषय में वीर्य के सद्भाव असद्भाव का विचार किया गया है, उसी प्रकार से

જીવો લબ્ધિવીર્યની અપેક્ષાએ સવીર્ય છે, પરંતુ કરણવીર્યની અપેક્ષાએ અવીર્ય છે આ કથન અપર્યાપ્ત અવસ્થાની અપેક્ષાએ કરવામાં આવ્યું છે તેમ સમજવું કારણ કે કોઈ પણ જીવને અપર્યાપ્ત અવસ્થામાં ઉત્થાન આદિ ક્રિયાઓ હોતી નથી. તેથી અપર્યાપ્તાવસ્થામા ઉત્થાનાદિ ક્રિયારહિત નારક જીવો લબ્ધિવીર્યવાળા હોવા છતાં કરણવીર્યની અપેક્ષાએ વીર્યરહિત જ હોય છે (से तेणट्ठेणं०) હે ગૌતમ! તે કારણે મે એવું કહ્યું છે કે નારક જીવો લબ્ધિવીર્યની અપેક્ષાએ સવીર્ય હોવા છતા પણ કરણવીર્યની અપેક્ષાએ સવીર્ય પણ હોય છે અને અવીર્ય પણ હોય છે આ રીતે નારક જીવોમા વીર્યવત્તાનું પ્રતિપાદન કરીને હવે સૂત્રકાર બાકીનાં ૨૩ દંડકોમા તેનુ પ્રતિપાદન કરવાને માટે કહે છે કે (जहा णेरइया एवं जाव पंचिंदियतिरिक्खजोणिया मणूया जहा ओहिया जीवा णवरं सिद्धवज्जा भाणियव्वा वाणमंतर-जोतिस-वेमाणिया जहा णेरइया) એવી રીતે નારકોના વિષયમા વીર્યના સદ્ભાવ અને અસદ્ભાવનો વિચાર કરવામાં

'लद्धिवीरिएण वि सवीरिया करणवीरिएण वि सवीरिया' लब्धिवीर्येणापि-सवीर्याः करणवीर्येणापि सवीर्याः 'जेसिं णं नेरइया णं' येषां खलु नैरयिकाणाम् 'णत्थि उट्ठाणे जाव परक्कमे' नास्ति उत्थानं यावत् पराक्रमः, उत्थानबलवीर्य-पुरुषकारपराक्रमाः येषां न संतीत्यर्थः, 'तेणं नेरइया' ते खलु नैरयिकाः 'लद्धिवीरिएणं सवीरिया' लब्धिवीर्येण सवीर्याः 'करणवीरिएणं अवीरिया' करणवीर्येण अवीर्याः, अपर्याप्तावस्थापेक्षया, उत्थानादिरहिता नारकजीवास्तु लब्धिवीर्येण वीर्यवन्तो भवन्तोऽपि-करणवीर्येण तु अपर्याप्तावस्थामाश्रित्य वीर्या-

विशेष का नाम पुरुषकार। निष्पादित स्वविषयवाले का नाम ही पराक्रम है। तात्पर्य इसका यह है कि लब्धिवीर्य आत्मबल की सत्तारूप होता है। सो नारक जीवों में आत्मबल की सत्ता है ही अतः इस आत्मबल की सत्तारूप लब्धिवीर्य उनमें होने से वे इसलब्धिवीर्य की अपेक्षा भी सवीर्य कहलाते हैं। तथा करणवीर्य कोई भी प्रकार की क्रिया करनेवाले आत्मबलरूप होता है सो जिन नारक जीवों का उत्थानादि क्रिया करने में लगा हुआ वह आत्मबल है वे उस करण वीर्य से भी युक्त हैं। और जिनका आत्मबल उत्थानादि क्रिया रहित है वे उस वीर्य से रहित हैं। अतः वे उस वीर्य की अपेक्षा अवीर्य वाले हैं। यही बात सूत्रकार ने (जेसिं णं नेरइयाणं णत्थि उट्ठाणे जाव परक्कमे, ते णं णेरइया लद्धिवीरिए णं सवीरिया, करणवीरिएणं अवीरिया) इस सूत्र-द्वारा प्रदर्शित की है। इसमें उन्होंने यह दर्शाया है कि जिन नारक जीवों का बल उत्थान यावत् पराक्रम करनेरूप क्रिया में नहीं लगा हुआ हैं-अर्थात् जिनके उत्थानादि क्रियाएँ नहीं हैं वे नारक जीव यद्यपि लब्धि-

અને નિષ્પાદિત સ્વવિષયવાળા પુરુષકારનુ નામ જ પરાક્રમ છે તેનું તાત્પર્ય એ છે કે લબ્ધિવીર્ય આત્મબળની સત્તારૂપ હોય છે નારકજીવોમાં આત્મબળની સત્તા છે જ તે આત્મબળની સત્તારૂપ લબ્ધિવીર્યનો તેમનામા સદ્ભાવ હોવાથી લબ્ધિવીર્યની અપેક્ષાએ તેઓ સવીર્ય કહેવાય છે-તથા કરણ-વીર્ય કોઇ પણ પ્રકારની ક્રિયા કરનાર આત્મબળ રૂપ હોય છે, તો જે નારકો ઉત્થાન વગેરે ક્રિયા કરવામાં લાગેલા આત્મબળવાળા હોય છે તેઓ તે કરણું-વીર્યથી સહિત હોય છે અને જેમનું આત્મબળ ઉત્થાનાદિ ક્રિયા રહિત હોય છે તે નારકો કરણવીર્યથી રહિત હોય છે તેથી તે વીર્યની અપેક્ષાએ તેઓ અવીર્ય કહેવાય છે એજ વાત સૂત્રકારે (जेसिण नेरइयाण णत्थि उट्ठाणे जाव परकम्मे, तेण णेरइया लद्धिवीरिएण सवीरिया, करणवीरिएण अवीरिया) આ સૂત્ર મારફત બતાવી છે જે નારક જીવોને ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓ હોતી નથી તે નારક

यावद्विहरति, हे भदन्त ! जीवानां सामान्यरूपेण विशेषरूपेण च वीर्यविषय यत् भणित तद् एवमेव–सर्वथैव सत्यमिति–कथयित्वा भगवन्त नमस्कृत्य वन्दित्वा सयमेन तपसा आत्मानं भावयमानो विहरति ॥ सू० ९ ॥

इति श्री–जैनाचार्य–जैनधर्मदिवाकर–पूज्य–श्रीघासीलालव्रतिविर चितायां श्रीभगवतीसूत्रस्य प्रमेयचन्द्रिका–व्याख्यायां प्रथम शतकस्य अष्ठमोद्देशकः समाप्तः॥१–८॥

वीर्यवत्ता आदिका विचार कर लेना चाहिये। (सेव भंते सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ) हे भदन्त ! आप देवानुप्रिय ने जीवों के वीर्य के विषय में जैसा सामान्यरूप से और विशेषरूप से विचार किया है प्ररूपणा की है–वह सब ऐसा ही है–ऐसा ही है अर्थात्–सर्वथा ही सत्य है–ऐसा कह कर वे गौतम स्वामी भगवान् को नमस्कार करके उनकी वंदना करके सयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए वहां से अपने स्थान पर आकर बैठ गये।

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्य श्रीघासीलालजी महाराजकृत भगवतीसूत्रकी प्रमेयचन्द्रिका व्याख्या के प्रथम शतकका आठवा उद्देशक समाप्त ॥१–८॥

(સેવ ભંતે ! સેવ ભંતે ! ત્તિ જાવ વિહરઇ) હે ભગવન્ ! આપે જીવોના વીર્યના વિષયમાં સામાન્યરૂપે અને વિશેષ રૂપે જેવી પ્રરૂપણા કરી છે, તે પ્રમાણે જ તે તમામ હકીકત છે એ વાત વદન સત્ય છે એ પ્રમાણે કહીને ગૌતમ સ્વામીએ મહાવીર પ્રભુને વદન નમસ્કાર કર્યા. અને વદન નમસ્કાર કરીને સયમ અને તપથી પોતાના આત્માને ભાવિત કરતાં પોતાને સ્થાને ગયા.

॥ઇતિશ્રી જૈનાચાર્ય જૈનધર્મદિવાકર પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજકૃત ભગવતીસૂત્રની પ્રિયદર્શિની વ્યાખ્યાના પહેલા શતકનો આઠમો ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥૧–૮॥

तिर्यग्योनिकविषयेऽपि चिन्तनीयम्। यावत्पदेन-द्वीन्द्रियत्रीन्द्रियचतुरिन्द्रियाणां ग्रहणम्। 'मणूसा जहा ओहिया जीवा' मनुष्या यथा औधिका जीवाः, समुच्चयजीवाः, यथा जीव सामान्ये वीर्यवत्त्वादि विचारस्तथा मनुष्यदण्डकेऽपि वीर्यवत्त्वादिविचारः करणीय इति। 'णवरं सिद्धवज्जा भाणियव्वा' नवरं सिद्ध वर्जाः भणितव्या', औधिकजीवेषु सिद्धानामन्तर्भावो भवति किन्तु मनुष्येषु ते सिद्धा न सन्ति, अतो मनुष्यदण्डके वीर्यविषयकविचारे सिद्धालापको न भणितव्य इति। 'वाणमंतरजोइसवेमाणिया जहा णेरइया' वानव्यन्तरज्योतिषिक वैमानिका यथा-नैरयिकाः, यथा नैरयिकदण्डके वीर्यविचारः कृतस्तथैव वानव्यन्तरादारभ्य वैमानिकपर्यन्तजीवदण्डकेऽपि वीर्यवत्त्वादिविचारः करणीय एवेति। 'सेवं भंते सेवं भंते त्ति जाव विहरइ' तदेवं भदन्त! तदेवं भदन्त! इति-

---

यावत् पंचेन्द्रियतिर्यंच जीवों के विषय में भी विचार कर लेना चाहिये। यहां "यावत्" इस पद से द्विन्द्रिय, तेइन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय जीवों का ग्रहण किया गया है। मनुष्यदण्डक में भी वीर्यवत्ता आदि का विचार जैसा जीव सामान्य में किया गया है वैसा ही कर लेना चाहिये। परन्तु यहां पर विशेषता इतनी ही है कि यहां पर सिद्धों को छोड़ देना चाहिये। तात्पर्य यह है कि सामान्य जीवों में सिद्धों का अन्तर्भाव हो जाता है, किन्तु मनुष्यों में वे सिद्ध नहीं आते हैं। इसलिये मनुष्यदंडक में वीर्य विषयक विचार करने पर सिद्धालापक नहीं कहना चाहिये। तथा जिस प्रकार से नैरयिक जीवों में वीर्य का विचार किया गया है उसी तरह से वानव्यन्तर से लेकर वैमानिक पर्यन्त जीवदण्डक में भी

આવ્યો છે, એજ પ્રમાણે પંચેન્દ્રિય તિર્યંચ સુધીના જીવોનો વિચાર કરવો જોઇએ. અહીં "यावत्" પદ વડે દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય અને ચતુરિન્દ્રિય જીવોને ગ્રહણ કરવા જોઇએ મનુષ્યનાદંડકમા પણ વીર્યવત્તા વિગેરેનો વિચાર જીવ સામાન્યમા કહ્યા પ્રમાણે જ સમજવો પણ એટલી વિશેષતા છે કે અહીં સિદ્ધ ભગવતોનો સમાવેશ કરવો નહી કહેવાનુ તાત્પર્ય એ છે કે સામાન્ય જીવોમા સિદ્ધભગવતોનો સમાવેશ થઈ જાય છે, પરન્તુ મનુષ્યોમા સિદ્ધભગવતોનો સમાવેશ કરવો નહી, ને કારણે મનુષ્ય દંડકમા વીર્યવિષયક વિચાર કરતી વખતે સિદ્ધભગવતોની સાથે આલાપકો કહેવા નહીં જેવી રીતે નારક જીવોના વિષયમા વીર્યનો વિચાર કરવામાં આવ્યો છે એવી જ રીતે વાણવ્યતર દેવોથી લઈને વૈમાનિકદેવો સુધીના જીવદંડકમા પણ વીર્યવત્તા વગેરેનો વિચાર કરવો જોઇએ

प्राणातिपातादिकरणेन । एवं प्राणातिपाताद्यभावेन संसारं व्यतिव्रजन्ति । एवं गुरुत्व-लघुत्व-आकुलीकरणपरीतत्व-दीर्घत्व-ह्रस्वत्वपर्यटनव्यतिव्रजनेषु गुरुत्वाकुलीकरणदीर्घत्वपर्यटनरूपाणि चत्वारि अप्रशस्तानि संसारकारणत्वात् लघुत्वपरीतत्वह्रस्वत्वव्यतिव्रजनानि चत्वारि प्रशस्तानि मोक्षकारणत्वादित्येवंरूपेण प्रशस्ताप्रशस्तयोर्विचार । एवं सप्तमवकाशान्तरं गुरु, लघु, गुरुलघु, अगुरुलघुकं वेति भङ्गचतुष्टयेन प्रश्नः । नो गुरुकं न वा लघुकं नो गुरुलघुकं किन्तु चतुर्थभंगेन 'अगुरुलघुक' मित्याकारकेण । किं सप्तमस्तनुवातो गुरुको वा लघुको वा गुरुलघुको वा अगुरुलघुको वेति भङ्गचतुष्टयेन तनुवातविषये प्रश्न' । सप्तमस्तनुवातो

सीमित (कम) कर लेता है, इसी तरह से इन प्राणातिपात आदिकों के सेवन से यह अपने संसार को दीर्घ कर लेता है और इनके त्याग से यह संसार अल्प बना लेता है । प्राणातिपात आदि के करने से जीव संसार में बारबार परिभ्रमण करता है । तथा प्राणातिपात आदि के अभाव से जीव ससार से पार हो जाता है । इस प्रकार गुरुत्व, लघुत्व, आकुली करण (ससार को बढाना) परितत्व (संसार को अल्प करना) दीर्घत्व, ह्रस्वत्व, पर्यटन और व्यतिव्रजन इनमें गुरुत्व, आकुलीकरण, (ससार को बढना) दीर्घत्व पर्यटन ये चार ससार के कारण होने से अप्रशस्त हैं । तथा लघुत्व, परीतत्व, ह्रस्वत्व, और व्यतिव्रजन ये चार मोक्षकारण होने से प्रशस्त हैं । इस रूप से प्रशस्त और अप्रशस्त इन दोनों का विचार किया गया है । सातवां अवकाशान्तर गुरु है, कि लघु है कि गुरु लघु है अथवा अगुरुलघुक है इस प्रकार चार भङ्गों को लेकर प्रश्न, किया गया है । तथा न वह गुरु है, न

तिपात वगेरे पापोना सेवनथी संसारमां रहेवानो काळ वधारे छे अने तेमना त्यागथी संसारमा रहेवानो काळ घटाडे छे प्राणातिपात वगेरेना सेवनथी जीवने वारवार संसारमा परिभ्रमण करवु पडे छे पण तेमना त्यागथी जीव संसार सागर तरी जाय छे आ रीते गुरुत्व, लघुत्व आकुलीकरण (संसार वधारवो) परीतत्व (संसार घटाडवो) दीर्घत्व, ह्रस्वत्व, पर्यटन अने व्यतिव्रजन, तेमना गुरुत्व, आकुलीकरण (संसार वधारवो) दीर्घत्व अने पर्यटन, ए चार संसारना कारणरूप होवाथी अप्रशस्त छे तथा लघुत्व, परीतत्व, ह्रस्वत्व अने व्यतिव्रजन, ए चार मोक्षना कारणरूप होवाथी प्रशस्त छे आ रीते प्रशस्त अने अप्रशस्त, ए बन्नेनो विचार कर्यो छे प्रश्न-सातमुं अवकाशान्तर गुरु छे लघु छे गुरुलघु छे के अगुरुलघु छे? आ प्रकारनो -चार भागाओने अनुलक्षीने-प्रश्न पूछ्यो छे ते लघु नथी, गुरु नथी, गुरु-

अथ नवमोद्देशकः--

तदिह नवमोद्देशके संक्षेपतो विचारणीया इमे विषयाः, तथाहि-जीवानां गुरुत्वं केन कारणेन भवतीति गुरुत्वविषये प्रश्नः। प्राणातिपात-मृषावादादत्तादान-मैथुनपरिग्रहक्रोधमानमायालोभ-रागद्वेषकलहाभ्याख्यान-पैशुन्यपरपरिवाद-रतिअरति-मायामृषामिथ्यादर्शनशल्यकारणैर्जीवानां गुरुत्वं कर्मभारेण भवतीत्युत्तरम्। एवं जीवानां लघुत्वं केन कारणेन भवतीति प्रश्नः। प्राणातिपाताद्यारभ्य मिथ्यादर्शनशल्यविरमणेन पापभारापगमात् लघुत्वं जीवानां भवतीत्युत्तरम्। प्राणातिपातादिकरणेन जीवाः संसारं वर्द्धयन्ति तथा प्राणातिपातादिविरमणेन जीवाः संसारं परीतीकुर्वन्ति एवं दीर्घीकुर्वन्ति ह्रस्वीकुर्वन्ति। संसारमनुपरिवर्तन्ते

नवम प्रदेशक प्रारंभ—

इस नौवें उद्देशक में जो विषय विचार ने में आये हैं वे इस प्रकार है-जीवों में गुरुता किस कारण से होती है इस प्रकार से गुरुत्व के विषय में प्रश्न हुआ है और इस का उत्तर-प्राणातिपात, मृषावाद अदत्तादान, मैथुन, परिग्रह, क्रोध, मान, माया, लोभ, राग द्वेष, कलह, अभ्याख्यान, पैशुन्य, परपरिवादअरति, रति, माया, मृषा, मिथ्यादर्शन शल्य, इन कारणोंको लेकर बंधते हुए कर्मके भारसे जीवोंमें गुरुता होती है ऐसा कहा गया है। जीवों में लघुता किस कारण से होती है ? ऐसा प्रश्न-उत्तर-प्राणातिपात आदि से लेकर मिथ्यादर्शन शल्य तक अठारह प्रकार के पाप स्थानों का विरमण (त्याग) करने से उनमें लघुता आ जाती है। प्राणातिपात आदि के करने से जीव संसार को बढ़ाता है, तथा प्राणातिपात आदि के विरमण से-त्याग से जीव संसार को

નવમા ઉદ્દેશકનો પ્રારંભ

આ ઉદ્દેશકમાં જે વિષયોનું નિરૂપણ કર્યું છે તેનો અહિં સંક્ષેપમાં વિચાર કરવામા આવે છે-જીવોમા કયા કારણોને લીધે ગુરુતા હોય છે? એ પ્રશ્ન અને તેનો આ પ્રમાણે ઉત્તર-પ્રાણાતિપાત, મૃષાવાદ, અદત્તાદાન મૈથુન, પરિગ્રહ, ક્રોધ, માન, માયા, લોભ, રાગ, દ્વેષ, કલહ, અભ્યાખ્યાન, પૈશુન્ય, પરપરિવાદ, અરતિ, રતિ, માયા, મૃષા અને મિથ્યાદર્શનશલ્ય એ કારણોને લીધે બંધાતા કર્મના ભારથી જીવોમા ગુરુતા હોય છે. જીવોમાં કયા કારણોને લીધે લઘુતા હોય છે? એવો પ્રશ્ન-ઉત્તર-પ્રાણાતિપાતથી લઇને મિથ્યાદર્શન સુધીના ૧૮ પ્રકારના પાપસ્થાનોનો ત્યાગ કરવાથી જીવોમા લઘુતા આવે છે પ્રાણાતિપાત વગેરેના સેવનથી જીવ સંસાર વધારે છે, અને પ્રાણાતિપાત વગેરેના વિરમણથી જીવ સંસારને સીમિત કરે છે-ઘટાડે છે. આ રીતે જીવ પ્રાણી

लघुत्वं अगुरुलघुत्वमिति प्रश्न । वैक्रियतैजसशरीरापेक्षया नो गुरुत्वं न च लघुत्वम् किन्तु गुरुलघुत्वम्-न वा अगुरुलघुत्वम् । जीवं कार्मणशरीरं चाश्रित्य नो गुरुका नो लघुका नो गुरुलघुकाः किन्तु अगुरुलघुका इत्युत्तरम् । पुद्गलास्तिकायः किं गुरुकः किं वा लघुकः किं वा गुरुलघुकः अगुरुलघुको वेति पुद्गलास्तिकायानां गुरुत्वलघुत्वविषयकः प्रश्नः । नो गुरुको न वा लघुकः किन्तु गुरुलघुकोपि पुद्गलास्तिकायः । अगुरुलघुकोऽपि पुद्गलास्तिकाय इत्युत्तरम् । केन कारणेन न गुरुत्वं न लघुत्वं किन्तु गुरुलघुत्वमपि अगुरुलघुत्वमपीति प्रश्नः । गुरु

भी होते हैं और अगुरुलघु भी होते हैं ऐसा उत्तर दिया गया है । किस कारण से नारकजीवों में न गुरुता होती है अथवा न लघुता होती है किन्तु गुरुलघुता और अगुरुलघुता होती है ऐसा प्रश्न किया गया है। और इसका उत्तर-वैक्रिय शरीर, तैजसशरीर की, अपेक्षा से उनमें न गुरुता होती है, न लघुता होती है और न अगुरुलघुता होती है किन्तु गुरुलघुता होती है । तथा जीव और कार्मांण शरीर को आश्रित करके वे न गुरु होते हैं, न लघु होते हैं, न गुरुलघु होते हैं किन्तु अगुरुलघुक होते हैं ऐसा उत्तर दिया गया है । पुद्गलास्तिकाय गुरु होता है, अथवा क्या लघु होता है ? अथवा क्या गुरुलघु दोनों प्रकार का होता है या अगुरुलघु दोनों प्रकार का नहीं-होता है ? ऐसा प्रश्न किया गया है। इसका उत्तर-न वह गुरु होता है, न वह लघु होता है किन्तु वह गुरु लघु भी होता है और अगुरुलघु भी होता है । किस कारण से वह गुरु नहीं होता है, लघु नहीं होता है किन्तु गुरुलघु भी होता है और अगु

લઘુ હોય છે પ્રશ્ન—નારકોમા શા કારણે ગુરુતા અથવા લઘુતા હોતી નથી, પણ ગુરુલઘુતા અને અગુરુલઘુતા હોય છે ?

ઉત્તર—વૈક્રિય શરીર અને તૈજસ શરીરની અપેક્ષાએ તેમનામા ગુરુતા હોતી નથી, લઘુતા હોતી નથી અને અગુરુલઘુતા પણ હોતી નથી પરન્તુ ગુરુલઘુતા જ હોય છે તથા જીવ અને કાર્માણ શરીરની અપેક્ષાએ તેઓ ગુરુ હોતા નથી, લઘુ હોતા નથી, ગુરુલઘુ પણ હોતા નથી, પરન્તુ અગુરુલઘુ જ હોય છે પુદ્ગલાસ્તિકાય શું ગુરુ હોય છે લઘુ હોય છે, ગુરુલઘુ હોય છે કે અગુરુલઘુ હોય છે ? આ પ્રકારનો પ્રશ્ન પૂછ્યો છે

ઉત્તર—પુદ્ગલાસ્તિકાય ગુરુ હોતું નથી, લઘુ હોતુ નથી, પરન્તુ ગુરુલઘુ હોય છે અને અગુરુલઘુ હોય છે

પ્રશ્ન—શા કારણે પુદ્ગલાસ્તિકાય ગુરુ હોતુ નથી, લઘુ હોતુ નથી, પણ ગુરુલઘુ હોય છે અને અગુરુલઘુ હોય છે ?

न गुरुको न वा लघुकः किन्तु गुरुलघुको न वा अगुरुलघुक इत्येवं रूपेण तृतीय भंगेनोत्तरम् एवं सप्तमावकाशान्तरवत् घनवातसप्तमघनोदधिसप्तमपृथिवीद्वीपसागरवर्षाण्यपि विज्ञेयानि इत्यतिदेशेन घनवातादिषु गुरुत्वलघुत्वादिविचारः। नैरयिकाः किं गुरवो वा लघवो वा गुरुलघवो वेति नारके गुरुत्वलघुत्वादि विषयः प्रश्नः। नैरयिकाः न गुरवः न वा लघवः किन्तु गुरुलघुका अपि अगुरुलघुका अपीत्युत्तरम्। केन कारणेन नारकाणां न गुरुत्वं न लघुत्वं किन्तु गुरु-

---

वह लघु है न वह गुरुलघु है किन्तु अगुरुलघुक है इस तरह से चौथे भंग को लेकर उत्तर दिया गया हैं। क्या सातवां तनुवात गुरुक है? अथवा लघुक है? अथवा गुरुलघुक है? इस प्रकार भङ्गचतुष्टय को लेकर तनुवात के विषय में प्रश्न किया गया हैं तथा सप्तम तनुवात न गुरुक हैं, न लघुक है, न अगुरूलघुक है किन्तु गुरुलघुक है इस तरह तीसरे भंग को लेकर उत्तर दिया गया है। सप्तम अवकाशान्तर की तरह घनवात, सप्तम घनोदधि, सप्तम पृथिवी, द्वीप, सागर वर्ष क्षेत्र ये भी जानना चाहिये इस तरह अतिदेश से घनवात आदिकों में गुरुत्व लघुत्व आदि का विचार किया गया है। नैरयिक जीव क्या गुरु होते हैं? अथवा लघु होते हैं अथवा गुरुलघु दोनों प्रकार के होते हैं अथवा अगुरुलघु होते हैं? इस तरह से नारक के विषय में गुरुलघुत्व आदि विषयक प्रश्न हुआ है। नैरयिक जीव न गुरु होते हैं, न लघु होते हैं, किन्तु गुरुलघु

લઘુ નથી, પણ અગુરુલઘુ છે, એ પ્રકારનો ચોથા ભાંગાનો સ્વીકાર કરતો ઉત્તર આપ્યો છે પ્રશ્ન–શુ સાતમુ તનુવાત ગુરુ છે? કે લઘુ છે? અથવા ગુરુલઘુ છે? અથવા અગુરુલઘુ છે? આ પ્રમાણે ચાર ભાંગાની અપેક્ષાએ તનુ વાતના વિષયમાં પણ પ્રશ્ન પૂછયા છે

ઉત્તર—સાતમુ તનુવાત ગુરુ પણ નથી લઘુ પણ નથી, અગુરુલઘુ પણ નથી, પરન્તુ ગુરુલઘુ છે આ રીતે ત્રીજા ભાંગાનો સ્વીકાર કર્યો છે. સાતમા અવકાશાન્તર પ્રમાણે જ ઘનવાત, સાતમું ઘનોદધિ, સાતમી પૃથ્વી, દ્વીપ, સાગર અને વર્ષક્ષેત્રના વિષયમા પણ સમજવુ, આ રીતે અતિદેશથી ઘનવાત વગેરે મા ગુરુત્વ, લઘુત્વ વગેરેનો વિચાર કરવામા આવ્યો છે નૈરયિક જીવ શું ગુરુ હોય છે? અથવા લઘુ હોય છે? અથવા ગુરુલઘુ હોય છે? અથવા અગુરુ લઘુ હોય છે? આ રીતે નારકોના વિષયમાં પણ ગુરુતત્વ લઘુત્વ વગેરે, વિષયક પ્રશ્નો પૂછયા છે અને તેને આ પ્રમાણે ઉત્તર આપ્યો છે–નારક જીવો ગુરુ હોતા નથી, લઘુ પણ હોતા નથી, પરન્તુ ગુરુલઘુ હોય છે અને અગુરુ-

न वा लघुका न वा अगुरुलघुका किन्तु गुरुलघुकेति तृतीयभंगेनोत्तरम्। तथा भावलेश्यां प्रतीत्य चतुर्थपदेनागुरुलघुकरूपेण समाधानम्, एवमतिदेशेन नील-कापोततेजःपद्मशुक्ललेश्यास्वपि गुरुत्वलघुत्वादिकथनम्। दृष्टिदर्शनज्ञानाज्ञान-संज्ञासु चतुर्थपदेन गुरुत्वलघुत्वादीनां स्वीकार। दृष्ट्यादयो न गुरुका न वा गुरुलघुका अपि तु अगुरुलघुका इति। अधस्तनानि चत्वारि शरीराणि औदारिक वैक्रियाहारकतैजसानि तृतीयपदेन गुरुलघुकरूपेण नेतव्यानीति शरीरगुरुलघुत्व योर्विचारः। कार्मणशरीरे चतुर्थपदेन अगुरुलघुकेन स्वीकार, मनोयोग वाग्योगौ

गया है कि द्रव्यलेश्या की अपेक्षा से वह न गुरुक होती है, न लघुक होती है, और न अगुरुलघुक होती है किन्तु वह गुरुलघुक होती है। तथा भावलेश्या की अपेक्षा से वह अगुरुलघुक होती है। इसी प्रकार अतिदेश से नील, कापोत, तेजः, पद्म और शुक्ल इन लेश्याओं में भी गुरुत्व लघुत्व आदि का कथन कर लेना चाहिये। दृष्टि, दर्शन, ज्ञान, अज्ञान और संज्ञा इनमें चतुर्थ भंग को लेकर अगुरुलघुत्व को स्वीकृत किया गया है। दृष्ट्यादिक न गुरुक हैं, न लघुक हैं, और न गुरुलघुक भी हैं किन्तु अगुरुलघुक हैं। औदारिक, वैक्रिय, आहारक और तैजस ये चार शरीर न गुरुक है, न लघुक है और न अगुरुलघुक हैं किन्तु तृतीयभंग जो गुरुलघुक हैं उस स्वरूप हैं। इस तरह चार शरीर संबंधी गुरुलघुत्व का विचार हुआ हैं। कार्मोण शरीर जो कि पांचमां शरीर है उसमें अगुरुलघुत्व माना गया है। मनोयोग और वचनयोग इन

ઉત્તર- દ્રવ્ય લેશ્યાની અપેક્ષાએ તે ગુરુ હોતી નથી, લઘુ પણ હોતી નથી, અગુરુલઘુ પણ હોતી નથી પરન્તુ તે ગુરુલઘુ જ હોય છે તથા ભાવ લેશ્યાની અપેક્ષાએ તે અગુરુલઘુ જ હોય છે એજ પ્રમાણે અતિદેશથી નીલ, કાપોત, તેજુ પદ્મ, અને શુકલ લેશ્યાઓમા પણ ગુરુત્વ લઘુત્વ વગેરેનુ વર્ણન કરવું જોઈએ. દૃષ્ટિ દર્શન, જ્ઞાન અજ્ઞાન, અને સંજ્ઞામાં ચોથા ભાંગાની અપેક્ષાએ અગુરુલઘુત્વનો સ્વીકાર કરાયો છે દૃષ્ટિ વગેરે ગુરુ પણ નથી, લઘુ પણ નથી, ગુરુલઘુ પણ નથી પરન્તુ અગુરુલઘુ જ છે એમ બતાવવામાં આવ્યુ છે ઔદારિક વૈક્રિય આહારક અને તૈજસ, એ ચાર શરીર ગુરુ પણ નથી, લઘુ પણ નથી, અગુરુલઘુ પણ નથી પરન્તુ ગુરુલઘુ જ છે આ રીતે ત્યા ત્રીજા ભાંગાનો જ સ્વીકાર કર્યો છે પાચમાં પ્રકારના કાર્માણ શરીરમાં અગુરુલઘુત્વ છે આ રીતે કામણ શરીરના વિષયમાં ચોથા ભાંગાનો સ્વીકાર કર્યો છે મનયોગ તથા વચનયોગને અગુરુલઘુ માનવામા આવેલ છે કાયયો-

लघुकद्रव्यापेक्षया नो गुरुत्वं नो लघुत्वं न वा अगुरुलघुत्वं किन्तु गुरुलघुकत्वमिति तृतीयभंगेन समाधानम्। अगुरुलघुकद्रव्याणि प्रतीत्य नो गुरुको न वा गुरुलघुकः किन्तु अगुरुलघुक इति चतुर्थभंगेनोत्तरम्। एवं समयेषु कर्मसु च गुरुत्वादिविषयप्रश्नः। अगुरुलघुकमिति चतुर्थभङ्गेन समाधानम्। एवं कृष्णलेश्या गुरुका लघुका अगुरुलघुका वेति कृष्णलेश्या विषयकः प्रश्नः नो गुरुका नो लघुका किन्तु गुरुलघुका अपि अगुरुलघुका अपि इति समाधानम्। कथमेकैव कृष्णलेश्या गुरुलघुकापि अगुरुलघुकापीति प्रश्नः। द्रव्यलेश्या पेक्षया नो गुरुका

रुलघु भी होता है ऐसा प्रश्न किया गया है-और इसका उत्तर-गुरुलघु द्रव्यों की अपेक्षा से उसमें गुरुता नहीं है, न लघुता है, और न अगुरु लघुता है किन्तु गुरुलघुता है इस तृतीय भंग से दिया गया में। अगुरुलघुक द्रव्यों की अपेक्षा लेकर के वह पुद्गलास्तिकाय न गुरु हैं, न लघु है, और न गुरुलघु दोनों प्रकार का है किन्तु वह अगुरुलघु है इस प्रकार से चौथे भंग को लेकर उत्तर दिया गया है। इस प्रकार से समयों में और कर्मों में गुरुत्वादिविषयक प्रश्न हुआ है। और उसका समाधान चतुर्थभंग को लेकर किया गया है। इसी तरह से कृष्णलेश्या क्यागुरु है अथवा लघु है अथवा गुरुलघु है अथवा अगुरुलघु है ऐसा प्रश्न कृष्णलेश्या के विषय में किया गया है। वह न गुरु है, न लघु है, किन्तु वह गुरुलघु भी है और अगुरु लघु भी है ऐसा इस प्रश्न का समाधान दिया गया है। फिर प्रश्न किया गया कि एक ही कृष्णलेश्या गुरुलघु भी और अगुरुलघु भी कैसे होती है-तो इसका समाधान यों किया

ઉત્તર—ગુરુલઘુ દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ તેમાં ગુરુતા પણ નથી, લઘુતા પણ નથી, અગુરુલઘુતા પણ નથી, પરન્તુ ગુરુલઘુતા જ છે. આ રીતે ત્રીજા ભાગાનો સ્વીકાર કર્યો છે અગુરુલઘુ દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ તે પુદ્ગલાસ્તિકાયમાં ગુરુતા નથી, લઘુતા પણ નથી, ગુરુલઘુતા પણ નથી, પરન્તુ અગુરુલઘુતા જ છે. આ રીતે અહીં ચોથા ભાંગાનો સ્વીકાર કર્યો છે. એજ પ્રમાણે સમયોમાં અને કર્મોમાં ગુરુત્વાદિ વિષયક પ્રશ્નો પૂછયાછે અને ચોથા ભાગાની અપેક્ષાએ તે પ્રશ્નોનું સમાધાન થયું છે. એ જ પ્રમાણે કૃષ્ણુલેશ્યાના વિષયમા પણ પ્રશ્નો પૂછયા છે કે-"શું કૃષ્ણુલેશ્યા ગુરુ છે, અથવા લઘુ છે, અથવા ગુરુ લઘુ ને અથવા અગુરુલઘુ છે?

ઉત્તર—તે ગુરુ પણ નથી, લઘુ પણ નથી, પરન્તુ ગુરુલઘુ છે અને અગુરુલઘુ છે.

પ્રશ્ન—કૃષ્ણુલેશ્યા કેવી રીતે ગુરુલઘુ છે અને અગુરુલઘુ છે?

पश्चात्संवृत काल कुर्वन् सिद्ध्यति बुध्यते मुच्यते परिनिर्वाति सर्वदुःखानामन्तं करोतीति सिद्धान्तप्ररूपणेन निर्ग्रन्थविषये विचारः। एको जीव एकस्मिन् समये आयुष्कद्वय करोतीति परतीर्थिकाः कथयन्ति तत् सत्यमसत्यं वेतिः प्रश्नः । परतीर्थिकानां मतमसत्यम् तत् नैको जीव एकसमये आयुष्कद्वय करोति, किन्तु एको जीव एकदा एकमेवायुष्कं करोतीति सर्वज्ञमतप्रतिपादनम् । कालास्यवेषिकपुत्रानगारस्थविरयोः प्रश्नोत्तरम् । सामायिकादेः

गया है। तथा पहिले प्रवृत्त मोह वाला भी पश्चात् उस मोह का त्याग कर संवृत हुआ श्रमण मरकर क्या सिद्ध होता है ? बुद्ध होता है ! समस्त दुःखों से छूट जाता है ? बिलकुल शांत हो जाता है, सर्वदुःखों का यह अन्त कर देता है ? ऐसे प्रश्नका भी उत्तर हां के ही रूपमें दिया गया है। इस तरह सिद्धान्तकी प्ररूपणा करते हुए सूत्रकारने निर्ग्रन्थके विषयमें विचार प्रस्तुत किया है। एक जीव एकसमयमें दो आयुका बंध करता है ऐसा अन्य मत वाले कहते हैं-सो उनका यह मत सत्य है कि असत्य है ऐसा प्रश्न किया गया है और इसके समाधान में ऐसा कहा गया है कि परतीर्थिकों का यह मन्तव्य असत्य है। क्यों कि एक जीव एक समय में एक ही आयुकर्म का बंध करता है दो का नहीं। ऐसा ही सर्वज्ञ का शासन है। इस तरह के इस कथन से सर्वज्ञ प्रभु का इस विषय में क्या मत है यह प्रतिपादित किया गया है। कालास्यवेषिक पुत्र अनगार और स्थविर इन दोनों के प्रश्नोत्तर का कथन

પ્રશ્ન—પહેલાં પણ જ મોહવાળો હોય પાછળથી મોહનો ત્યાગ કરીને સંવૃત થયેલો શ્રમણ શું મરીને સિદ્ધપદ પ્રાપ્ત કરે છે? બુદ્ધ થાય છે? બધા દુઃખોથી મુક્ત થાય છે? બિલકુલ ઉપશાન્ત થઈ જાય છે? અને શું તે તમામ દુઃખોનો અન્ત લાવી દે છે? આ પ્રશ્નનો ઉત્તર પણ હકારમાં જ આપ્યો છે

આ રીતે સિદ્ધાંતની પ્રરૂપણા કરતાં સૂત્રકારે નિર્ગ્રન્થના વિષયમાં પણ વિચારની શરૂઆત કરી છે અન્ય મતવાળા એવું કહે છે કે એક જીવ એક સમયે બે આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે, તો તેમનું તે કથન સત્ય છે કે અસત્ય છે?

ઉત્તર—પરતીર્થિકોનું તે કથન અસત્ય છે, કારણ કે એક જીવ એક સમયે એક જ આયુષ્યકર્મનો બંધ બાંધે છે બેનો નહીં. એવો સર્વજ્ઞ પ્રભુનો સિદ્ધાંત છે આ પ્રકારના કથનથી સર્વજ્ઞ પ્રભુનો આ વિષયમાં જે મત છે તેનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે કાલાસ્યવેષિક પુત્ર-અણગાર અને સ્થવિર મુનિવરો એ બન્નેના પ્રશ્નોત્તરોનું કથન થયું છે સામાયિક વગેરેનું કેવું સ્વરૂપ છે? અને તેનું

चतुर्थपदेन नेतव्यौ। काययोगस्तृतीयपदेन विज्ञेयः। साकारानाकारोपयोगौ चतुर्थपदेन ज्ञातव्यौ। सर्वद्रव्य सर्वप्रदेश सर्वपर्यवाः पुद्गलास्तिकायवत् तृतीयपदेन स्वीकरणीयाः। अतीतानागतसर्वाद्धा चतुर्थपदेन विज्ञातव्या। लघुत्वाल्पेच्छत्वाऽमूर्च्छत्वाऽनासक्तत्वाऽप्रतिबद्धत्वं श्रमणानां किं प्रशस्तमिति प्रश्नः। लघुत्वादिकं सर्वं श्रमणानां प्रशस्तमित्युत्तरम्। अक्रोधत्वममानत्वममायत्वमलोभत्वं श्रमणानां प्रशस्तं किमिति प्रश्नः। अक्रोधत्वादिकं सर्वमेव प्रशस्तमित्युत्तरम्। कांक्षादोषरहितः श्रमणोऽन्तकरो भवति नवेति प्रश्नः। बहुमोहोऽपि पूर्वं विहृत्य अथ

दोनों को अगुरुलघुक माना गया है। काययोग को गुरुलघुक माना गया है। साकार उपयोग अनाकार उपयोग इन दोनों को अगुरुलघुक माना गया है। सर्व द्रव्य, सर्वप्रदेश, समस्त पर्यायें पुद्गलास्तिकाय की तरह गुरुलघुकपद से युक्त माने गये हैं। अतीतकाल, अनागतकाल, और सर्वाद्धा ये सब चतुर्थपद से अर्थात्-अगुरुलघुक से युक्त स्वीकार किये गये हैं। लघुत्व, अल्पेच्छत्व, अमूर्च्छत्व, अनासक्तत्व, अप्रतिबद्धत्व ये सब श्रमणजनों को क्या प्रशस्त हैं ऐसा प्रश्न हुआ है। और इसका उत्तर-ये सब लघुत्वादिक श्रमणजनों को प्रशस्त हैं ऐसा दिया गया है। अक्रोधत्व, अमानत्व, अमायत्व, अलोभत्व, ये सब श्रमणजनों को प्रशस्त हैं क्या? ऐसा प्रश्न इसका उत्तर-ये सब अक्रोधत्वादिक श्रमण जनों को प्रशस्त है ऐसा उत्तर इस प्रश्न का दिया गया है। कांक्षा दोषरहित श्रमण क्या अन्तकर (दुःख के अत करने वाले) होता है या नहीं होता है? ऐसा प्रश्न किया गया है और इसका उत्तर हां में दिया

गने ગુરુલઘુ માનેલ છે સાકાર ઉપયોગ અને નિરાકાર ઉપયોગને અગુરુલઘુ માનવામાં આવેલ છે સર્વદ્રવ્ય, સર્વપ્રદેશ અને સર્વપર્યાયોને પુદ્ગલાસ્તિકાય પ્રમાણે જ ગુરુલઘુ માનવામા આવેલ છે અતીતકાળ (ભૂતકાળ) અનાગતકાળ (ભવિષ્યકાળ) અને સર્વાદ્ધા (વર્તમાનકાળ) એ ત્રણે ને અગુરુલઘુ જ કહ્યા છે

પ્રશ્ન--શું લઘુત્વ, અલ્પેચ્છત્વ, અમૂર્ચ્છત્વ, અનાસક્તત્વ અને અપ્રતિબદ્ધત્વ શ્રમણોને (સાધુઓને) માટે પ્રશસ્ત ગણાય છે?

ઉત્તર—હા, લઘુત્વ વગેરે તમામ ગુણો શ્રમણોને માટે પ્રશસ્ત છે.

પ્રશ્ન—અક્રોધત્વ, અમાનત્વ, અલોભત્વ, એ સઘળા ગુણો શું શ્રમણો માટે પ્રશસ્ત ગણાય છે?

ઉત્તર—હા, અક્રોધત્વ વગેરે તમામ ગુણો શ્રમણો માટે પ્રશસ્ત છે.

પ્રશ્ન—કાક્ષા દોષરહિત શ્રમણ શુ અન્તકર (દુખનો અન્ત કરનારો) હોય છે કે નથી હોતો? તે પ્રશ્નનો ઉત્તર હકારમા આપ્યો છે.

तुल्या विषमा चेति प्रश्न , समैव सर्वेषामप्रत्याख्यानक्रियेत्युत्तरम् । तत्र किं कारण मिति प्रश्न , इच्छानिवृत्त्यभावरूपाया अविरतेः सर्वेषु समानत्वात् तुल्येव सा अप्रत्याख्यानक्रियेत्युत्तरम् , आधाकर्मिकाहारं भुञ्जानस्य श्रमणस्य कर्मबन्धो भवति नवेति प्रश्नः । भवतीत्युत्तरम् । तत्कारणप्रदर्शनं च । प्रासुकाहार भुञानः श्रमण' कर्मबन्धनं करोति नवेति प्रश्नः । नैवेत्युत्तरम् । तत्र कारणप्रदर्शनम् । अस्थिरादि प्रश्नोत्तरम् । उद्देशकपरिसमाप्तिः । इति नवमोद्देशकस्य निर्देश ॥

अष्टमोद्देशक निरूप्य नवमोद्देशकं निरूपयति, तदनयोरय संबन्ध , अष्टमोद्देशकस्यान्ते वीर्यस्य विचारः कृत , वीर्येण खलु जीवा गुरुत्वादिकमासादयतीति

है कि विषम होती है ? प्रश्न-उत्तर-इन सब की अप्रत्याख्यान क्रिया एकसी ही होती है । इसमें क्या कारण है ? प्रश्न, उत्तर-सब में इच्छा निवृत्ति की अभावरूप अविरति समान ही है इस कारण यह अप्रत्याख्यानक्रिया भी सब की समान ही है । आधाकर्मिक आहार को अपने उपयोग में लाने वाले श्रमण के कर्मबंध होता है कि नहीं होता है ? प्रश्न, उत्तर-हाँ होता है । इस कारण का दिखाना । प्रासुक आहार को करने वाला श्रमण कर्मबंध करता है ? कि नहीं करता ? प्रश्न, उत्तर -नहीं करता है । इसमें क्या कारण है-यह समझाना । अस्थिर आदि के विषय में प्रश्न और उत्तर । उद्देशक की संक्षिप्तविषय समाप्ति ।

अब सूत्रकार अष्टम उद्देशक का निरूपण करके नवमें उद्देशक का निरूपण करते हैं । इन दोनों का आपस में इस प्रकार से संबंध है-

પ્રશ્ન—શ્રેષ્ઠી દરિદ્ર, કૃપણ અને રાજા, એ સૌની અપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયા એકસરખી હોય છે કે જુદી જુદી હોય છે ?

ઉત્તર—એ સૌની અપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયા એકસરખી જ હોય છે

પ્રશ્ન—તેનું કારણ શું છે ? ઉત્તર—તે સૌમાં ઇચ્છાનિવૃત્તિના અભાવરૂપ અવિરતિ સમાન જ હોય છે તેથી તે સૌની અપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયા પણ સમાનજ હોય છે પ્રશ્ન-આધાકર્મિક આહારને પોતાના ઉપયોગમાં લેનારો શ્રમણ કર્મબંધ બાંધે છે કે નથી બાંધતો ?

ઉત્તર—હા કર્મબંધ બાંધે છે તેના કારણનું પ્રકથન.

પ્રશ્ન—પ્રાસુક આહાર લેનાર શ્રમણ કર્મબંધ બાંધે છે કે નથી બાંધતો ?

ઉત્તર—તે કર્મબંધ બાંધતો નથી. તેના કારણનું પ્રકથન અસ્થિર વગેરે બાબતોમાં પ્રશ્ન અને ઉત્તર ઉદ્દેશકના સંક્ષિપ્ત વિષય નિરૂપણની સમાપ્તિ

આઠમાં ઉદ્દેશકનું નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર નવમા ઉદ્દેશકનું નિરૂપણ કરે છે આઠમા અને નવમા ઉદ્દેશકનો પરસ્પર સંબંધ આ પ્રમાણે છે-

किं स्वरूपं किं च प्रयोजनमिति प्रश्नः। आत्मस्वरूपमेव सामायिकमात्मैव- सामायिकस्यार्थ इत्युत्तरम्। यदि भवन्मते आत्मैव सामायिकादेरर्थस्तदा किमर्थं क्रोधादीनां गर्हणमिति प्रश्नः, संयमार्थं क्रोधादीनां गर्हणमित्युत्तरम्। गर्हासंयमो ऽगर्हा वेति प्रश्नः। गर्हा संयमो नो अगर्हासंयम इत्युत्तरम्। एवं रूपेण भगवन्मुखात्सामायिकादीनां स्वरूपादिकं ज्ञात्वा संबुद्धः, कालास्यवेषिकपुत्रश्चतुर्महाव्रतिकं धर्मं परित्यज्य सप्रतिक्रमणं पंचमहाव्रतिकं धर्मं स्वीकृत्य विहरन् कालेन सिद्धः सर्वदुःखप्रहीणो जात इति। श्रेष्ठिदरिद्रकृपणराज्ञामप्रत्याख्यानक्रिया

किया है। सामायिक आदि का क्या स्वरूप है और उसका क्या प्रयोजन है-ऐसा प्रश्न किया गया है और इसका उत्तर "सामायिक है और आत्माही सामायिक का अर्थ है" इस रूप से दिया गया है। यदि आप के मत में सामायिक आदि का अर्थ आत्मा है तो फिर क्रोधादिकों की गर्हा किस लिये की गई है? ऐसा प्रश्न किया गया है और इसका उत्तर "संयम के निर्वाह के लिये क्रोधादिकों की गर्हा की गई है" ऐसा दिया गया है। गर्हा संयम है कि अगर्हा संयम? प्रश्न, उत्तर--गर्हा संयम है, अगर्हा संयम नहीं है। इस तरह से भगवान् के मुख से सामायिक आदिकों का स्वरूपादिक जानकर संबुद्ध हुए कालस्य वेषिक पुत्रने चार महाव्रतरूप धर्म को छोड़कर प्रतिक्रमण सहित पांच महाव्रतसंपन्न धर्म को स्वीकार कर विचरने लगे। अन्त में सर्वदुःखों रहित हो गये-अर्थात् मोक्ष में जाकर विराजमान हो गये। श्रेष्ठी, दरिद्र, कृपण और राजा इन सबकी अप्रत्याख्यान क्रिया एकसी होती

શું પ્રયોજન છે? એવો પ્રશ્ન. ઉત્તર-"આત્મા જ સામાયિક છે અને આત્માજ સામાયિકનો અર્થ છે" જો આપના મતાનુસાર સામાયિક વગેરેનો અર્થ આત્મા છે, તો ક્રોધાદિકોની ગર્હા (નિંદા) શા માટે કરવામાં આવી છે? એવો પ્રશ્ન કર્યો છે અને તેનો એવો ઉત્તર આપ્યો છે કે "સંયમના નિર્વાહને માટે ક્રોધાદિકની ગર્હા કરવામાં આવી છે." પ્રશ્ન-ગર્હા સંયમ છે કે અગર્હા સંયમ છે?

ઉત્તર—ગર્હા સંયમ છે, અગર્હા સંયમ નથી આ પ્રમાણે ભગવાનને મુખેથી સામાયિક વગેરેનું સ્વરૂપ સમજીને બોધ પામેલ કાલસ્યવેષિકપુત્ર અણગાર ચાર મહાવ્રતરૂપ ધર્મને છોડીને પ્રતિક્રમણ સહિત પાંચ મહાવ્રતયુક્ત ધર્મનો સ્વીકાર કરીને વિચરવા લાગ્યા, અને અન્તે તેઓ સર્વ દુઃખોથી રહિત થઈ ગયા, એટલે કે મોક્ષે સિધાવ્યા.

छाया-कथं खलु भदन्त ! जीवा गुरुकत्वं शीघ्रमागच्छन्ति, प्राणातिपातेन मृषावादेन अदत्तादानेन मैथुनेन परिग्रहेण क्रोधमानमायालोभप्रेमद्वेषकलहाभ्या-ख्यानपैशुन्य परपरिवादारतिरति मायामृषामिथ्यादर्शनशल्येन, एवं खलु गौतम ! जीवा हव्वमागच्छन्ति । कथं खलु भदन्त ! जीवा लघुकत्वं हव्वमागच्छंति, गौतम ! प्राणातिपातविरमणेन यावन्मिथ्यादर्शनशल्यविरमणेन, एवं खलु गौतम ! जीवा लघुकत्वं हव्वमागच्छन्ति । एवं संसारमाकुलीकुर्वन्ति, एवं परीतीकुर्वन्ति, एवं दीर्घीकुर्वन्ति । एवं ह्रस्वीकुर्वन्ति । एवमनुपर्यटन्ति । एवं व्यतिव्रजन्ति । प्रशस्तानि चत्वारि, अप्रशस्तानि चत्वारि ॥ सू० १ ॥

टीका-' कहण्णं भंते ' कथं खलु भदन्त ! ' जीवा गुरुयत्तं हव्वमागच्छंति ' जीवा गुरुत्वं हव्यमागच्छन्ति, हे भदन्त ! इमे जीवाः केन प्रकारेण गुरुत्वं प्राप्नुवन्तीत्यर्थः । 'हव्व' इति देशीयशब्दो वाक्यालङ्कारे शीघ्रार्थे वा। एवं सर्वत्र विज्ञेयम् ! गुरुत्वम् ज्ञानावरणीयाद्यष्टविधकर्मोपचयस्वरूपम् तद् गुरुकमिव गुरुकम् अधोगतिगमनकारणत्वात् । जीवस्य गुरुत्वसत्त्वे किं कारणमिति प्रश्नः । उत्तरयति भगवान् -' गोयमे ' त्यादि । ' गोयमा ! ' हे गौतम ! ' पाणाइवाएणं ' प्राणातिपातेन, प्राणिनां=जीवानामतिपातो वधः इति प्राणातिपातस्तेन गुरुत्वमासादयन्तीति१ । तथा ' मुसावाएण ' मृषावादेन, सतोऽपलापोऽसतश्च प्ररूपणं मृषावादस्तेन २ । ' अदिण्णादाणेणं ' अदत्तादानेन, अदत्त=देवगुरुस्वाम्यननुज्ञात, तस्य आदानं=ग्रहणम् -अदत्तादान, तेन ३ । 'मेहुणेणं ' मैथुनेन, मिथुनस्य=स्त्रीपुंसरूपस्य कर्म मैथुनं =कुशीलसेवन, तेन ४ । 'परिग्गहेण ' परिग्रहेण-परिग्रहः=स्वस्वामिभावेन मूर्च्छा तेन धर्मोपकरणव्यतिरिक्तवस्तुग्रहणरूपेण ५ । 'कोहमाणमायालोभ पेज्जदोसकलह

टीकार्थ—(भंते !) हे भदन्त ! (जीवा) जीव (गुरुयत्त) गुरुत्व को (कहण्ण) किस तरह से (हव्व आगच्छंति) पाते हैं ? " हव्व " यह देशीशब्द है और वाक्यालंकार में प्रयुक्त हुआ है । इसी तरह से सर्वत्र जानना चाहिये । (गोयमा) हे गौतम ! (पाणाइवाएणं मुसावाएणं अदिण्णादाणेणं, मेहुणेणं, परिग्गहेणं) ये जीव प्राणातिपात से, अदत्तादान से, मैथुन से परिग्रह से, (कोहमाणमायालोभपेज्ज दोस

ટીકાર્થ—ભંતે ! હે ભગવન્ ! (जीवा) જીવો (गुरुयत्त) ગુરુત્વને (कहण्णं) કેવી રીતે (हव्व आगच्छंति) પ્રાપ્ત કરે છે ? " हव्व " દેશી શબ્દ છે અને તે વાક્યાલંકારમાં વપરાયો છે. આ પ્રમાણે જ સર્વત્ર સમજવું (गोयमा !) હે ગૌતમ ! (पाणाइवाएणं मुसावाएण अदिण्णादाणेणं मेहुणेणं परिग्गहेणं) તે જીવો પ્રાણાતિપાત, મૃષાવાદ, અદત્તાદાન, મૈથુન પરિગ્રહ, (कोहमाणमायालोभ

वीर्यकार्यस्य गुरुत्वादेः प्रसङ्गेन गुरुत्वादीनां निरूपणार्थं नवमोद्देशकः प्रारभ्यते। तथा प्रथमशतकस्य प्रथमोद्देशकस्यादौ संग्रहगाथायां 'गुरुए' इत्युक्तमिति गुरुत्वादेः प्रतिपादनाय नवमोद्देशकः प्रारभ्यते, तत्रेदमादिमसूत्रम्-'कहणं' इत्यादि'

मूलम्-कहणं भंते! जीवा गुरुयत्तं हव्वमागच्छंति गोयमा! पाणाइवाएणं मुसावाएणं अदिण्णादाणेणं मेहुणेणं परिग्गहेणं, कोहमाणमायालोभपेज्जदोसकलहअभक्खाणपेसुन्नपरपरिवाय-अरइरइ-मायामोस-मिच्छादंसणसल्लेणं, एवं खलु गोयमा! जीवा गरुयत्तं हव्वमागच्छंति, कहणं भंते! जीवा लहुयत्तं हव्वमागच्छंति, गोयमा! पाणाइवायवेरमणेणं जाव मिच्छादंसणसल्लविरमणेणं, एवं खलु गोयमा! जीवा लहुयत्तं हव्वमागच्छंति, एवं संसारं आउली करेंति, एवं परित्तीकरेंति, एवं दीही करेंति, एवं हस्सी करेंति, एवं अणुपरियट्टंति, एवं वीइ वयंति, पसत्था चत्तारि, अप्पसत्था चत्तारि॥सू०१॥

अष्टम उद्देशक के अंत में वीर्य का विचार किया गया है, सो उस वीर्य से जीव गुरुत्व आदि को प्राप्त करते हैं। इस लिये वीर्य के कार्यभूत गुरुत्व आदि के प्रसङ्ग से गुरुत्वादि के निरूपण के निमित्त सूत्रकार ने इस नवमें उद्देशक का प्रारंभ किया है। तथा प्रथम शतक के प्रथम उद्देशक की आदि में संग्रह गाथा में "गुरुए" ऐसा कहा गया है सो उस गुरुत्वादिक के प्रतिपादन के निमित्त नवमें उद्देशक का उन्हों ने प्रारंभ किया है। इस उद्देशक का सर्वप्रथम सूत्र "कहणं" इत्यादि है 'कहणं भंते! जीवा गुरुयत्तं हव्वमागच्छंति' इत्यादि।

આઠમા ઉદ્દેશકને અન્તે વીર્યનો વિચાર કરવામાં આવ્યો છે તે વીર્યથી જીવ ગુરુત્વ વગેરે પ્રાપ્તિ કરે છે. તેથી વીર્યના કાર્યભૂત ગુરુત્વ વગેરેનું નિરૂપણ કરવાનો અવસર પ્રાપ્ત થવાથી સૂત્રકાર આ નવમાં ઉદ્દેશકનો પ્રારંભ કરે છે તથા પ્રથમ શતકના પ્રથમ ઉદ્દેશકની શરૂઆતમા સંગ્રહગાથામા "गुरुए" પદ આવે છે. તેથી ગુરુત્વાદિકનું પ્રતિપાદન કરવા માટે સૂત્રકારે નવમા ઉદ્દેશકની શરૂઆત કરી છે આ ઉદ્દેશકનુ સૌથી પહેલુ સૂત્ર "कहणं" ઈત્યાદિ છે.

"कहणं भंते! जीवा गुरुयत्तं हव्वमागच्छंति" ઈત્યાદિ।

शल्येन, तत्र क्रोधः=कृत्याकृत्यविवेकोन्मूलकोऽक्षमारूप आत्मपरिणामः ६। मानो गर्वः ७। माया=शाठ्यम् ८। लोभः=गृध्नुता ९। प्रेम=प्रीतिरासक्तिर्वा कामभोगादिषु १०। द्वेषः=अप्रीतिः ११। कलहः=विरोधः १२। अभ्याख्यानम्=असद्दोषारोपणम् १३ पैशुन्यं=परोक्षे कर्णान्तिकादौ विद्यमानस्याविद्यमानस्य वा दोषस्योद्घाटनम् १४। परपरिवादः = प्रभूतजनसमक्षं परदोषप्रकाशनम् १५।

प्ररूपण रूप असत्यभाषण से-देव, गुरु, राजा, गाथापति, साधर्मी द्वारा अननुज्ञात के आदानरूप अदत्तादान से, मैथुन से-स्त्रीपुरुष के संभोग कर्मरूप कुशील सेवन से, परिग्रह से-धर्मोपकरण व्यतिरिक्त वस्तुओं के ग्रहण करने से अर्थात् धर्मोपकरण के सिवाय परपदार्थों में स्व स्वामिभाव मानकर उनमें मूर्च्छा रखने से, जीव गुरुत्व भाव को प्राप्त कर लेता हैं इसी तरह क्रोधादिक जो आत्मा के विकारी भाव हैं उनसे भी जी गुरुत्व को पा लेते हैं। आत्मा में कृत्याकृत्य के विवेक जो जडमूल से उखाड देने वाला जो अक्षमारूप परिणाम होता है उसका नाम क्रोध है। गर्व का नाम मान है। माया नाम कपटका है। गृध्नुता का नाम लोभ है इसे भाषा में लालच कहते हैं। कामभोग आदिमें आसक्तिका होना इसका नाम प्रेम है अथवा प्रीतिका नाम प्रेम है। अप्रीतिका होना इसका नाम द्वेष है। विरोध का नाम कलह है। असद्दोषोंका आरोपण करना इसका नाम अभ्याख्यान है। परोक्षमें, किसीके विद्यमान अथवा नहीं विद्यमान दोषोंका एकान्तमें प्रकट करना इसका नाम पैशुन्य है। अनेक जनोंके समक्ष दूसरों के दोषोंको प्रकाशित करना इसका नाम परपरिवाद

(૨) પ્રાણાતિપાતથી-જીવોની વિરાધના કરવાથી (૨) મૃષાવાદથી-અસત્ય (૩) અદત્તાદાનથી દેવ, ગુરુ, રાજા, ગાથાપતિ, તેમજ સાધર્મી વગેરે મારફત ન અપાયેલી વસ્તુ ગ્રહણ કરવાથી, ચોરી કરવાથી (૪) મૈથુન-અબ્રહ્મચર્ય-કુશીલ સેવનથી (૫) પરિગ્રહથી-ધર્મોપકરણ સિવાયની વસ્તુઓને ગ્રહણ કરવાથી તેમજ તેમા માલીકીપણું રાખીને આસક્તિ રાખવાથી (૬) ક્રોધથી આત્મામાં સારા નરસાના વિવેકને જડમૂળથી ઉખેડી નાખનાર ઉગ્રતારૂપ જે પરિણામ ઉત્પન્ન થાય છે તેનાથી (૭) માનથી-ગર્વથી (૮) માયાથી-કપટથી, (૯) લોભથી -લાલચથી, આશા-તૃષ્ણાથી (૧૦) રાગથી-પૌદ્ગલિક વસ્તુઓમાં આસક્તિ રાખવાથી. (૧૧) દ્વેષથી-અપ્રીતિ-વેરઝેર (૧૨) કલહથી-વિરોધ રાખવાથી, કજીયા કંકાસથી, (૧૩) અભ્યાખ્યાનથી—કોઇના ઉપર આળ ચડાવવાથી (૧૪) પૈશુન્યથી—ચાડી ચુગલીથી (૧૫) પરપરિવાદથી એટલે બીજાની નિંદા કરવાથી,

अब्भक्खाणपेसुन्न परपरिवायअरइरइमायामोसमिच्छादंसणसल्लेणं' क्रोधमानमायालोभप्रेमद्वेषकलहाभ्याख्यानपैशुन्यपरपरिवादारतिरतिमायामृषामिथ्यादर्शन -

कलहअभक्खाणपेसुन्नपरपरिवायअरइरइमायामोसमिच्छादंसणसल्लेणं) क्रोध, मान, माया, लोभ, (राग) प्रेम, द्वेष, कलह, अभ्याख्यान, पैशुन्य, परपरिवाद, अरति, रति, मायामृषा और मिथ्यादर्शनशल्यसे गुरुत्वको पा लेते हैं। तात्पर्य कहने का यह है-जिस प्रकार कोई बनादी गई भारी वस्तु स्वभावतः नीचे की ओर जाती है उसी प्रकार उर्ध्वगमन स्वभाववाली यह आत्मारूप वस्तु भी जब पौद्गलिक ज्ञानावरणीय आदि अष्टविध- कर्मों के बंध से भारी बना दी जाती है-तब वह भी उर्ध्वगमन स्वभाव से विपरीत अधोगमन करने वाली बन जाती है। आत्मा का संसारदशा में भ्रमण करते रहना यही उसमें गुरुत्व है। और यह गुरुत्व उसमें ज्ञानावरणीय आदि अष्टविध कर्मों के उपचय स्वरूप है। क्यों कि इनके बंध से ही आत्मा में यह गुरुत्व आया है। आत्मा पौद्गलिक ज्ञानावरणीय आदि अष्टविध कर्मों का बंध या उपचय किन २ कारणों से किया करता हैं यही बात सूत्रकार ने यहां प्रकट की है। इसमें उन्हों ने यह कहा है कि यह आत्मा प्राणातिपात से-जीवों की विराधना से, ज्ञानावरणीय आदि अष्टविध कर्मों का उपचय रूप जो गुरुत्व है उसे प्राप्त करता है। तथा मृषावाद से-सत् के अपलाप और असत् के

पेज्जदोसकलह, अभक्खाण, पेसुन्नपरपरिवायअरइरइमायामोसमिच्छादंसणसल्लेणं) ક્રોધ, માન, માયા, લોભ, રાગ, દ્વેષ, કલહ, અભ્યાખ્યાન, પૈશુન્ય, પરપરિવાદ, અરતિ, રતિ માયામૃષા અને મિથ્યાદર્શનશલ્યના સેવનથી ગુરુત્વ પ્રાપ્ત કરે છે (એટલે કે ભારે કર્મી બને છે) તાત્પર્ય એ છે કે-જેવી રીતે ભારે વસ્તુ સ્વાભાવિક રીતે જ નીચે જાય છે, એ જ પ્રમાણે ઉર્ધ્વગમનના સ્વભાવવાળા આ આત્મા પણ જ્યારે પૌદ્ગલિક જ્ઞાનાવરણીય વગેરે આઠે કર્મોના ભારથી ભારે બને છે ત્યારે તે ઉર્ધ્વગમન કરવાને બદલે અધોગમન કરે છે. આત્માને સંસારમા જે ભ્રમણ કરવું છે તે તેના ગુરુત્વને કારણે જ છે તે ગુરુત્વ જ્ઞાનાવરણીય વગેરે આઠ કર્મના ઉપચય સ્વરૂપ છે, કારણ કે તેમનો બંધ બાધવાને કારણે જ આત્મામા ગુરુત્વ આવે છે. આત્મા પૌદ્ગલિક જ્ઞાનાવરણીય વગેરે આઠે કર્મોનો બધ અથવા ઉપચયકયા કયા કારણે કરે છે, એજ વાત સૂત્રકારે અહી પ્રકટ કરી છે તે એ છે કે આ આત્મા પ્રાણાતિપાત વગેરે અઢાર પાપસ્થાનોનુ સેવન કરવાથી જ્ઞાનાવરણીય વગેરે આઠ કર્મોના ઉપચય રૂપ ગુરુત્વને પ્રાપ્ત કરે છે.

ण भंते ' कथ खलु भन्त ! 'जीवा लहुयत्तं हव्व आगच्छति ' जीवा लघुत्व हव्वमागच्छन्ति, लघुत्वम्–केन कारणेन जीवानां लघुत्वं भवतीति प्रश्नः, उत्तरयति भगवान्–'गोयम ' त्यादि । ' गोयमा ' हे गौतम ! 'पाणाइवाय वेर मणेण' प्राणातिपातविरमणेन, 'जाव मिच्छादंसणसल्लविरमणेणं ' यावत् मिथ्या दर्शनशल्यविरमणेन यावत्पदेन–मृषावादादारभ्य मायामृषापर्यन्तस्य ग्रहणं भवति, तथा च प्राणातिपातादारभ्य यावन्मिथ्यादर्शनशल्या तदोषाणां विरमणे सति जीवा लघुत्वमागच्छन्ति । ' एवं खलु गोयमा ' एवं खलु हे गौतम ! ' जीवा लहुयत्त हव्व आगच्छति ' जीवा लघुत्वं हव्वमागच्छति, ' एवं संसारं आउली करेंति ' एवं संसारमाकुलीकुर्वन्ति, एवम्=अनेन पूर्वोक्ताभिलापप्रकारेण संसारम् आकुलीकुर्वन्ति कर्मणा प्रचुरीकुर्वन्ति, एवं आउली करंतीत्यत्र एवं शब्दा

जीव कैसे भारीपन के अभाव रूप लघुत्व का–हल्कापन को पाते हैं ? (गोयमा ! पाणाइवायवेरमणेण जाव मिच्छादंसणसल्लविरमणेणं) हे गौतम ! प्राणातिपात से दूर होने से–अर्थात्–प्राणातिपात के विरमण –त्याग से यावत् मिथ्यादर्शन शल्य के विरमण—त्याग से जीव लघुत्व पाता है । यहां "यावत्" पद से मृषावाद से लेकर मायामृषा तक का पूर्वोक्त पाठ ग्रहण किया गया है । तथा प्राणातिपात से लगाकर मिथ्यादर्शन शल्य तक के पापों के त्याग होने पर जीव लघुता को प्राप्त कर लिया करते हैं ऐसा अर्थ बोध होता है । यही बात प्रभु ने (एवं खलु गोयमा ! जीवा लहुयत्तं हव्वं आगच्छति) इस सूत्र पाठ द्वारा गौतम ! के प्रति व्यक्त की है । (एवं संसारं आउली करेंति) इस पूर्वोक्त अभिलाप प्रकार से प्राणातिपात आदिकों के सेवन करने से जीव संसार को बढाते हैं–प्रचुर करते हैं । यहां जो ' एवं" यह शब्द

गुरुत्वना अभावरूप लघुत्व હલકાપણું જીવ કેવી રીતે પ્રાપ્ત કરે છે ?

ઉત્તર—(गोयमा ! पाणाइवायवेरमणेण जाव मिच्छादंसणसल्लविरमणेणं) હે ગૌતમ ! પ્રાણાતિપાતથી લઈને મિથ્યાદર્શનશલ્ય સુધીના અઢારે પાપસ્થાનોના ત્યાગથી જીવ લઘુત્વ પ્રાપ્ત કરે છે અહીં " यावत् " પદ વડે મૃષાવાદથી લઈને માયામૃષા પર્યન્તનો પાઠ ગ્રહણ કર્યો છે તાત્પર્ય એ છે કે પ્રાણાતિપાતથી લઈને મિથ્યાદર્શનશલ્ય સુધીના પાપોનો ત્યાગ કરવાથી જીવ લઘુતા હલકાપણું પ્રાપ્ત કરે છે એ જ વાત પ્રભુએ एवं खलु गोयमा ! जीवा लहुयत्तं हव्वं आगच्छंति" સૂત્રપાઠ વડે ગૌતમને સમજાવી છે (एवं संसारं आउली करेंति) પૂર્વોક્ત અભિલાપમાં દર્શાવેલા પ્રાણાતિપાત વગેરેના સેવનથી જીવ સંસાર વધારે છે અહીં જે "एवं " પદ મૂક્યું છે તે પૂર્વોક્ત અભિલાપનું સૂચક છે તે અભિલાપ આ પ્રમાણે

रत्यरतिः, तत्र रतिः=विषयेष्वनुरागः, अरतिः=धर्मेऽनभिरुचिः, रतिसहिता अरतिः -रत्यरतिः १६ । मायामृषा=मायासहितो मृषावादः १७ । मिथ्यादर्शनशल्यम्= मिथ्यादर्शनं=मिथ्यात्वम्, तदेव शल्यमिव विविधव्यथाजनकत्वात् मिथ्यादर्शन- शल्यम्=कुदेवकुगुरुकुधर्मेषु सुदेवादिबुद्धिः १८ । इत्यष्टादशपापानि तैः । 'एवं खलु गोयमा' एवं पूर्वोक्तप्राणातिपातादारभ्य मिथ्यादर्शनशल्यपर्यन्तैरष्टा- दशभिः पापैः खलु इति निश्चयेन हे गौतम ! 'जीवा' जीवाः 'गुरुयत्तं' गुरु- कत्वम्, आगच्छंति=प्राप्नुवन्तीति । पुनः प्रश्नयति-'कहणं भंते' इत्यादि । 'कह

है । विषयों में अनुराग रखना इसका नाम रति, धर्म में अभिरुचि का नहीं होना इसका नाम अरति है । मायासहित झूठ बोलने का नाम मायामृषा है । मिथ्यात्वका नाम मिथ्यादर्शन है । इसे जो शल्य कहा गया है सो इसका कारण यह है कि जिस प्रकार शल्य अनेक प्रकारकी व्यथाओं (दुःखों) को शरीर में लग जाने पर उत्पन्न करता है उसी प्रकार से मिथ्यादर्शन भी जीव को साथ में लग जाने पर विविध प्रकार की यातनाओ को चारों गतियों में देता रहता है । इसके प्रभाव से जीव कुदेव, कुगुरु और कुधर्म में सुदेव, सुगुरु और सुधर्म की मान्यता वाला बन जाया करता है । ये सब पूर्वोक्त १८ पाप हैं । इनके द्वारा ही जीव ज्ञानावरणीय आदि आठ प्रकार के कर्मों का संचय करने पर गुरुत्व आता है १ । यही बात (एवं खलु गोयमा ! जीवा गुरुयत्तं हव्वं आगच्छंति) इस सूत्र पाठ ने गौतम को समझाई है ।

(कह णं भंते ! जीवा लहुत्तं हव्वं आगच्छंति) हे भदन्त !

---

(१६) रतिथी विषयोमा अनुराग राखवाथी, अरतिथी-धर्मभां अभिरुचि न राखवाथी, (१७) माया मृषाथी मायासहित जूठुं બोલवाथी अने (१८) मिथ्यादर्शनशल्यथी-मिथ्यात्वने मिथ्यादर्शन કહે છે. मिथ्यादर्शनने शल्य કહેવાનુ કારણ એ છે કે જેમ કાંટો (શલ્ય) વાગવાથી શરીરમા અનેક પ્રકા- રની પીડા થાય છે એ જ પ્રમાણે મિથ્યાદર્શન શલ્ય જીવને ચારે ગતિઓમાં ભ્રમણ કરાવીને અનેક પ્રકારની પીડા પહોચાડે છે. તેના પ્રભાવથી જીવ કુદેવ, કુગુરુ અને કુધર્મને સુદેવ, સુગુરુ અને સુધર્મ માનતો થાય છે ઉપરોકત ૧૮ પાપોના સેવનથી જીવ જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ કર્મોનો સંચય કરીને ગુરુત્વ પ્રાપ્ત કરે છે એ જ વાત (एवं खलु गोयमा ! जीवो गुरुयत्त हव्वं आगच्छंति) આ સૂત્ર પાઠથી ગૌતમને સમજાવવામા આવી છે

પ્રશ્ન—(कहणं भंते ! जीवा लहुत्तं हव्वं आगच्छंति ?) હે ભગવન્ !

च प्रचुरकालावस्थितिकं संसारं कुर्वन्ति, ' एवं हस्सी करे ति ' एवं हस्वीकुर्वन्ति, संसारस्याल्पकालावस्थायित्वं कुर्वन्ति, ' एवं अणुपरियट्टंति ' एवमनुपर्यटन्ति, पौनःपुन्येन भ्रमन्ति संसारे। ' एवं वीइवयंति ' एवं व्यतिव्रजन्ति, व्यति क्रामन्ति संसारं समुल्लङ्घयन्तीति। अथोपसंहरन्नाह–' पसत्थाचत्तारि ' प्रशस्तानि चत्वारि, गुरुत्वलघुत्वादिषु अष्टसु मध्ये चत्वारि–चतुः संख्यकानि लघुत्वपरी तत्व–ह्रस्वत्व–व्यतिव्रजनानि प्रशस्तानि=प्रशसनीयानि मोक्षकारणत्वात् ' अप्पस त्थचत्तारि ' अप्रशस्तानि चत्वारि, गुरुत्वाकुलत्व–दीर्घत्वपर्यटनानि अप्रशस्तानि, तेषां संसारकारणत्वात्। यद्यप्येतानि सर्वाणि संसारसंबद्धान्येव तथापि चत्वारि

संसार को इतनी बड़ी भारी लंबी स्थितिवाला वे इन्हीं प्राणातिपात आदि १८ अठारह पापों के सेवन करने से ही बनाते हैं। (एवं हस्सी करेंति) तथा प्राणातिपात आदि १८ अठारह पाप स्थानों से निवृत्त होने से वे संसार को अल्पकालावस्थायी बना लेते हैं। (एवं अणुपरियट्टंति) इसी कारण से–अर्थात् उन्हों ने अपने संसार को बहुत अधिक लंबी स्थितिवाला बना लिया है–इसी निमित्त से–वे संसार में बार २ भ्रमण करते हैं। (एवं वीइवयंति) प्राणातिपात आदि १८ अठारह पापस्थानोंसे निवृत्त होने से जीव संसार को उल्लंघ जाते हैं–अर्थात् संसार से पार हो जाते हैं। (पसत्था चत्तारि, अप्पसत्था चत्तारि अब पूर्वोक्त विषय का उपसंहार करते हुए सूत्रकार कहते हैं कि हे गौतम ! गुरुत्व लघुत्व आदि आठ में से लघु त्व, परीतत्व, ह्रस्वत्व और व्यतिव्रजन ये चार मोक्ष के कारण होने से प्रशंसनीय हैं। तथा गुरुत्व, आकुलीत्व दीर्घत्व और पर्यटन ये चार संसार

છે કે પ્રાણાતિપાત વગેરે અઢારે પાપોનું સેવન કરવાથી જ જીવનો સંસાર ખૂબ જ દીર્ઘ સ્થિતિવાળો બને છે (एवं हस्सी करे ति)તથા પ્રાણાતિપાત વગેરે અઢારે પાપોથી નિવૃત્ત થવાથી જીવ પોતાના સંસારને અલ્પકાલવાળો–ટૂંકા કાળનો બનાવે છે (एवं अणुपरियट्टंति) એ જ કારણે એટલે કે સંસારને ઘણી જ લાંબી સ્થિતિ વાળો બનાવી દીધો હોવાને કારણે એવા જીવો વારવાર સંસારમાં પરિભ્રમણ કર્યા કરે છે (एवं वीइवयंति) પ્રાણાતિપાત વગેરે અઢાર પાપસ્થાનોથી નિવૃત્ત થવાથી જીવો સંસારને ઓળંગી જાય છે, એટલે કે સંસારસાગરને તરી જાય છે (पसत्था चत्तारि अप्पसत्था चत्तारि) હવે પૂર્વોક્ત વિષયનો ઉપસંહાર કરતાં સૂત્રકાર કહે છે કે–હે ગૌતમ ! ગુરુત્વ, લઘુત્વ વગેરે આઠમાંથી લઘુત્વ પરી તત્વ, હ્રસ્વત્વ અને વ્યતિવ્રજન, એ ચાર મોક્ષના કારણરૂપ હોવાથી પ્રશસ્ત છે તથા ગુરુત્વ આકુલત્વ (સંસાર વધારવો) દીર્ઘત્વ અને પર્યટન, એ

पूर्वोक्ताभिलापसंसूचकः सचाभिलाप एवं भवति-'कहणं भंते ! जीवा संसार- आउली करेंति, गोयमा ! पाणाइवाएणं जावमिच्छादंसणसल्लेणं' कथं खलु भदन्त ? जीवाः संसारम् आकुलीकुर्वन्ति, गौतम ! प्राणातिपातेन यावन्मिथ्या- दर्शनशल्येन इत्यादि। एवमुत्तरत्रापि परीतीकरणादिपदेष्वपि अभिलापप्रकारो ज्ञातव्यः । 'एवं परित्ती करेंति' एवं परीतीकुर्वन्ति=संसारमल्पीकुर्वन्ति, 'एवं दीही करेंति' एवं दीर्घीकुर्वन्ति, संसारस्य दैर्घ्यं प्रचुरतरकालावस्थायित्वं तथा

है वह पूर्वोक्त अभिलाप का संसूचक है। वह अभिलाप इस प्रकार से होता है-"कहणं भंते ! जीवा संसारं आउली करेंति" हे भदन्त ! जीव संसार को किस कारण से बढ़ाते हैं ? "गोयमा ! पाणावाइएणं जाव मिच्छादंसणसल्लेणं" हे गौतम ! जीव ससार को प्राणातिपात आदि कारणों के सेवन से लगाकर मिथ्यादर्शन शल्यतक के कारणों के सेवन से बढ़ाते हैं। इसी तरह से परीतीकरणादिक जो आगे के पद हैं उनमें भी अभिलाप प्रकार जानना चाहिये। (एवं परित्ती करेंति) तथा- प्रणातिपात आदि संसार वर्धक कारणों से निवृत्त होने से जीव संसार को अल्प कर देते हैं। (एवं दीही करेंति) और प्राणातिपात आदिकों के सेवन करने से जीव संसार को दीर्घ-लंबा कर देते हैं। यहां दीर्घ करने का अभिप्राय यह है कि प्राणातिपात आदिकों के सेवनकर्त्ता संसार में प्रचुरकालतक भ्रमण करते रहते हैं। अतः ऐसे जीवों की अपेक्षा उनका संसार उनके साथ बहुत बड़े लंबे समय तक रहता है। अर्थात् वह संसार उनका बहुत बड़ी भारी स्थितिवाला बन जाता है। अपने

બને છે-"कहण भंते ! जीवा ससारं आउली करेति" હે ભગવન્ ! શા કારણે જીવ સંસાર વધારે છે ? 'गोयमा ! पाणाइवाएणं जाव मिच्छादंसणसल्लेण" હે ગૌતમ ! પ્રાણાતિપાતથી લઇને મિથ્યાદર્શનશલ્ય સુધીનાં પાપોનું સેવન કરવાથી જીવ સસારનો વધારો કરે છે એ જ પ્રમાણે પરીતીકરણ (સીમિત- કરણ) વગેરે જે પદો આગળ આવે છે તેમના વિષયમા પણ અભિલાપ કરવો (एवं परित्ती करेति) પ્રાણાતિપાત વગેરે સસારવર્ધક કારણોથી નિવૃત્ત થવાથી જીવ સસારને અલ્પ (સીમિત) કરી નાખે છે. (एव दीही करेति) અને પ્રાણાતિપાત વગેરેનુ સેવન કરવાથી જીવ સસારને વધારે છે સસારને વધારવો એટલે સસારમા લાંબા કાળ સુધી ભ્રમણ કરવું તે. પ્રાણાતિપાત વગેરે ૧૮ પાપોનુ સેવન કરનાર જીવ બહુ જ દીર્ઘ કાળસુધી સસારમા રહે છે. એટલે કે તેનો સંસાર ખૂબજ લાંબી સ્થિતિવાળો બની જાય છે. સારાંશ એ

पण भंते ! किं गुरुए लहुए गुरुयलहुए अगुरुयलहुए ? गोयमा ! णो गुरुए णो लहुए गुरुयलहुए वि, अगुरुयलहुए वि । से केणट्ठेणं? गोयमा ! गुरुयलहुयदव्वाइं पडुच्च णो गुरुए णो लहुए गुरुयलहुए णो अगुरुयलहुए । अगुरुयलहुयदव्वाइं पडुच्च णो गुरुए णो लहुए णो गुरुयलहुए अगुरुयलहुए । समयाकम्माणि य चउत्थपएणं । कण्हलेस्सा णं भंते ! किं गुरुया जाव अगुरुयलहुया? गोयमा ! णो गुरुया णो लहुया गुरुयलहुया वि अगुरुयलहुया वि । से केणट्ठेणं ? । गोयमा ! दव्वलेसं पडुच्च तइयपएणं । भावलेस्सं पडुच्च चउत्थपएणं । एवं जाव सुक्कलेस्सा । दिट्ठी दंसणणाणऽण्णाण सन्नाओ चउत्थपएणं णेयव्वाओ । हेट्ठिल्ला चत्तारि सरीरा णायव्वा तइएणं पएणं । कम्मया चउत्थएणं पएणं । मणजोगो वइजोगो चउत्थएणं पएणं । कायजोगो तइएणं पएण । सागारोवओगो अणागारोवओगो चउत्थपएणं । सव्वदव्वा सव्वपएसा सव्वपज्जवा जहा पोग्गलत्थिकाओ । तीयद्धा अणागयद्धा सव्वद्धा चउत्थएण पएण ॥सू०२॥

छाया—सप्तमं खलु भदन्त ! अवकाशान्तरं किं गुरुकं किं लघुकं गुरुकलघुकम् अगुरुकलघुकम् ? गौतम ! नो गुरुकं नो लघुकं नो गुरुकलघुकम् अगुरुकलघुकम् । सप्तमः खलु भदन्त ! तनुवातः किं गुरुको लघुको गुरुकलघुकः अगुरुकलघुकः ? गौतम ! नो गुरुको नो लघुको गुरुकलघुको नो अगुरुलघुकः । एवं सप्तमो घनवातः । सप्तमो घनोदधिः । सप्तमी पृथिवी । अवकाशान्तराणि सर्वाणि यथा सप्तममवकाशान्तरं । शेषा यथा तनुवातः, एवं गुरुलघुकाः "अवकाशवातघनोदधिः पृथिवीद्वीपाश्च सागराः वर्षाणि" नैरयिकाः खलु भदन्त ! किं गुरुकाः यावदगुरुलघुकाः ? । गौतम ! नो गुरुकाः नो लघुकाः गुरुकलघुकाः

आद्यानि संसारपोपकतया अप्रस्तानीति, अनादेयानि। इतराणि तु मोक्षकारणत्वेन प्रशस्तानीति समुपादेयानीति ॥ सू० १ ॥

गुरुत्वलघुत्वयोरधिकारादेवेदमपि सूत्रमाह—'सत्तमे णं' इत्यादि।

मूलम्—सत्तमेणं भंते! उवासंतरे किं गुरुए लहुए गुरुयलहुए अगुरु य लहुए? गोयमा! णो गुरुए णो लहुए णो गुरुयलहुए अगुरुयलहुए, सत्तमेणं भंते! तणुवाए किं गुरुए लहुए गुरुयलहुए अगुरुयलहुए गोयमा! णो गुरुए णो लहुए गुरुयलहुए णो अगुरुयलहुए, एवं सत्तमे घणवाए सत्तमे घणोदही सत्तमापुढवी, उवासंतराइं सव्वाइं जहा सत्तमे उवासंतरे, सेसा जहा तणुवाए, 'एवं गुरुलहुए, ओवाय--घणउदहि-पुढवी-दीवा य सायरा वासा'। णेरइयाणं भंते! किं गुरुया जाव अगुरुयलहुया? गोयमा! णो गुरुया णो लहुया गुरुलहुया वि, अगुरुयलहुया वि, से केणट्टेणं? गोयमा! विउव्वियतेयाइं पडुच्च णो गुरुया णो लहुया गुरुयलहुया णो अगुरुयलहुया। जीवं च कम्मणं च पडुच्च णो गुरुया णो लहुया णो गुरुयलहुया अगुरुयलहुया से तेणट्टेणं। एवं जाव वेमाणिया, णाणत्तं जाणियव्वं सरीरेहिं। धम्मत्थिकाए जाव जीवत्थिकाए चउत्थपएणं। पोग्गलत्थिका-

---

के कारण होने से अप्रशस्त हैं। यद्यपि ये सब संसारसंबद्ध ही हैं, तो भी आदि के चार संसार के पोषक होने के कारण अप्रशस्त–अनादेय हैं। बाकी के चार मोक्ष के कारण होनेसे प्रशस्त–उपादेय हैं ॥ सू०१ ॥

ચાર સંસારનાં કારણરૂપ હોવાથી અપ્રશસ્ત છે જો કે એ બધા કારણો સંસાર-સંબદ્ધ છે, તો પણ શરૂઆતના ચાર સંસારના પોષક હોવાથી અપ્રશસ્ત હોય છે અને બાકીના ચાર મોક્ષ અપાવનાર હોવાથી પ્રશસ્ત ઉપાદેય છે સૂ૦ ૧

" निच्छयओ सव्वगुरु सव्वलहुं वा न विज्जए दव्वं ।
ववहारओ उजुज्जइ, बायरखंधेसु नऽण्णेसु ॥ १ ॥
अगुरुलहू चउफासा अरुवि दव्वा य होंति नायव्वा ।
सेसाओ अट्ठफासा, गुरुलहुयानिच्छयणयस्स " ॥ २ ॥

छाया—निश्चयतः सर्व गुरु सर्व लघु वा नविद्यते द्रव्यम् ।
व्यवहारतस्तु युज्यते बादरस्कन्धेषु नान्येषु ॥ १ ॥
अगुरुलघवः चतु स्पर्शाः अरूपि द्रव्याणि च भवति ज्ञातव्यानि ।
शेषास्तु अष्टस्पर्शाः गुरुकलघुका निश्चयनयस्य " ॥ २ ॥ इति ।

निश्चयतः=निश्चयनयानुसारेण किमपि द्रव्यम् सर्वत गुरु सर्वतो लघु वा न भवति, परन्तु व्यवहारतः व्यवहारनयानुसारेण बादरस्कन्धेषु बादरस्कन्धविषय सर्वतः गुरुत्व सर्वतो लघुत्वं वा युज्यते=भवति, नान्येषु, अन्येषु बादरसूक्ष्मस्कन्धभिन्नेषु सूक्ष्मेषु सर्वतो गुरुत्वं सर्वापेक्षया लघुत्व वा न भवति। इति प्रथम गाथार्थ । चतुःस्पर्शा सूक्ष्मपरिणामवन्ति यानि द्रव्याणि चतुःप्रकारकस्पर्शयुक्तानि, रूपीणि तथाऽरूपिद्रव्याणि च तानि सर्वाण्यपि अगुरुलघूनि भवंति इति ज्ञातव्यानि शेषास्तु एतद्भिन्नानि यानि द्रव्याणि अष्टस्पर्शवन्ति, बादराणि तानि सर्वाण्यपि गुरुलघुकानि भवन्ति, निश्चयनयस्य=निश्चयनयस्य मतं ज्ञेयम्।

करनी चाहिये-निश्चय नय की अपेक्षा लेकर जब गुरु लघु का विचार किया जाता है तो कोई भी द्रव्य ऐसा नहीं है जो सब से भारी हो और सबसे हल्का हो । परन्तु जब व्यवहारनय की अपेक्षा लेकर गुरु लघु का विचार किया जाता है तब-जो बादर स्कंध हैं उनमें सब से भारीपना और सब से हलकापना रहता है । अन्यों में नहीं । जो द्रव्य चार स्पर्शवाले होते हैं तथा अरूपी-रूप-रस गंध और स्पर्श इनसे रहित होते हैं वे सब अगुरु लघु होते हैं । तथा बाकी के आठ स्पर्शवाले द्रव्य गुरुलघु हैं, ऐसा निश्चय नय का मन्तव्य है । तात्पर्य इन

પ્રમાણે કરવો જોઈએ જો નિશ્ચયનયની અપેક્ષાએ ગુરુત્વ અને લઘુત્વનો વિચાર કરવામાં આવે તો કોઈ પણ દ્રવ્ય એવું નથી કે જે સૌથી ભારે હોય કે સૌથી હલકું હોય પણ વ્યવહારનયની અપેક્ષાએ ગુરુ લઘુનો વિચાર કરવામાં આવે તો જે બાદર (સ્થૂળ) સ્કંધ છે તેમાં સૌથી વધારે ગુરુત્વ (ભારેપણું) અને સૌથી ઓછું લઘુત્વ (હલકાપણું) રહે છે બીજામાં રહેતું નથી. જે દ્રવ્યો ચાર સ્પર્શવાળાં હોય છે તથા અરૂપી (રૂપ, રસ ગંધ અને સ્પર્શથી રહિત) હોય છે તે બધાં દ્રવ્યો અગુરુલઘુ હોય છે અને બાકીના આઠ સ્પર્શવાળાં દ્રવ્યો ગુરુલઘુ છે, એવું નિશ્ચયનયનું મંતવ્ય છે, આ બન્ને

अपि अगुरुकलघुका अपि । तत्केनार्थेन ? । गौतम ! वैक्रियतैजसे प्रतीत्य नो गुरुका नो लघुकाः गुरुकलघुका नो अगुरुकलघुका । जीवं च कार्मणं च प्रतीत्य नो गुरुका नो लघुका नो गुरुकलघुकाः अगुरुकलघुका', तत् तेनार्थेन? एवं यावद्वैमानिकाः, नानात्वं ज्ञातव्यं शरीरैः । धर्मास्तिकायो यावत् जीवास्तिकायश्चतुर्थपदेन । पुद्गलास्तिकायः खलु भदन्त ! किं गुरुको लघुको गुरुकलघुकः अगुरुकलघुकः ? । गौतम ! नो गुरुको नो लघुको गुरुकलघुकोऽपि अगुरुलघुकोऽपि । तत् केनार्थेन ? गौतम ! गुरुकलघुकद्रव्याणि प्रतीत्य नो गुरुको नो लघुको गुरुकलघुको नो अगुरुकलघुकः । अगुरुकलघुकद्रव्याणि प्रतीत्य नो गुरुको नो लघुको नो गुरुकलघुकः अगुरुलघुकः । समयाः कर्माणि च चतुर्थपदेन । कृष्णलेश्या खलु भदन्त ! किं गुरुका यावदगुरुलघुका ? गौतम ! नो गुरुका नो लघुका गुरुलघुका अपि अगुरुलघुका अपि । तत्केनार्थेन ? गौतम ! द्रव्यलेश्यां प्रतीत्य तृतीयपदेन । भावलेश्यां प्रतीत्य चतुर्थपदेन एवं यावत् शुक्ललेश्या दृष्टिदर्शन ज्ञानाज्ञानसंज्ञाश्चतुर्थपदेन नेतव्याः । अधस्तनानि चत्वारि शरीराणि ज्ञातव्यानि तृतीय पदेन । कार्मणं चतुर्थकेन पदेन । मनोयोगो वचोयोगश्चतुर्थेन पदेन । काययोगस्तृतीयपदेन । साकारोपयोगोऽनाकारोपयोगश्चतुर्थकेन पदेन । सर्वद्रव्याणि-सर्वप्रदेशाः सर्वपर्यवाः यथा पुद्गलास्तिकाया । अतीताद्धा, अनागताद्धा सर्वाद्धा चतुर्थकेन पदेन ॥ सू० २ ॥

टीका—'सत्तमे णं भंते' सप्तमं खलु भदन्त ! 'उवासंतरे' अवकाशान्तरं 'किं गुरुए लहुए गुरुयलहुए अगुरुलहुए' किं गुरुकं लघुकं गुरुलघुकम्-अगुरुलघुकम् , अत्र च गुरुलघुव्यवस्था एवं करणीया—

गुरुत्व लघुत्व के अधिकार से ही सूत्रकार अब इस "सत्तमे णं भंते !" सूत्र का भी कथन करते हैं—'सत्तमे णं भंते ! उवासंतरे किं गुरुए' इत्यादि ० ।

टीकार्थ—(भंते !) हे भदन्त ! (सत्तमे णं उवासंतरे किं गुरुए, लहुए, गुरुयलहुए, अगुरुयलहुए) सातवां जो अवकाशान्तर है वह क्या भारी है, अथवा हलका है ? या भारी हलका दोनों रूप है ? या न भारी है, न हलका है इसरूप है ? यहां गुरु लघु की व्यवस्था इस प्रकार से

ગુરુત્વ અને લઘુત્વની અપેક્ષાએ જ હવે સૂત્રકાર "सत्तमेणं भंते !" ઇત્યાદિ સૂત્રોનુ કથન કરે છે-"सत्तमे णं भते ! उवासतरे किं गुरुए" ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—(भते !) હે ભગવન્ ! (सत्तमेण उवासतरे किं गुरुए, लहुए, गुरुयलहुए, अगुरुयलहुए ?) સાતમુ અવકાશાન્તર શું ભારે છે ? અથવા શું હલકું છે ? અથવા ભારે તથા હલકુ એ બન્નેરૂપ છે ? અગુરુલઘુ છે (ભારે પણ નહીં અને હલકું પણ નહીં એવુ) છે ? અહીં ગુરુલઘુનો વિચાર આ

उत्तरयति भगवान्–' गोयम ' त्यादि, ' गायमा ' हे गौतम ! 'णो गुरुए' नो गुरुकं सप्तममवकाशान्तरम् ' णो लहुए ' नो लघुकम् ' णो गुरुयलहुए ' नो गुरुकलघुकम् ' अगुरुयलहुए ' अगुरुकलघुकम् , ' सत्तमे णं भंते ' सप्तम खलु भदन्त ! ' तणुवाए ' तनुवातः ' किं गुरुए लहुए गुरुयलहुए–अगुरुयलहुए ' किं गुरुकः लघुकः गुरुकलघुकोऽगुरुकलघुक ? सप्तमे तनुवात गुरुत्वं लघुत्व गुरुक लघुत्वमगुरुकलघुत्व वेति प्रश्न । उत्तरयति भगवान्–'गोयमे ' त्यादि । 'गोयमा' हे गौतम ! णो गुरुए ' नो गुरुक ' णो लहुए' नो लघुकः, किन्तु ' गुरुयलहुए' गुरुकलघुक ' णो अगुरुयलहुए ' नो अगुरुलघुकः, हे गौतम ! याऽसौ सप्तमस्त नुवातः स नो गुरु नो लघु किन्तु गुरुलघुको न वा अगुरुलघुक इत्येवं ज्ञातव्य इति । एवमेव सप्तमा घनवातादयोपि ज्ञातव्या इत्याशयेनाह—'एवं सत्तमे घण वाए ' इत्यादि । ' एवं सत्तमे घणवाए ' एवं सप्तमो घनवात , यथा सप्तमस्त नुवातो न गुरुर्न वा लघु किन्तु गुरुलघुको न अगुरुलघुस्तथा सप्तमो घनवातो ऽपि न गुरु र्न वा लघुकोऽपि तु गुरुकलघुको न अगुरुकलघुक इति भाव ।

गौतमस्वामीकृत पूर्वप्रश्न का उत्तर देते हुए प्रभु कहते हैं कि–(गोयमा ! नो गुरुए, णो लहुए, णो गरुयलहुए, अगरुयलहुए) हे गौतम ! सातवाँ जो अवकाशान्तर है वह न गुरुक है, न लघुक है, न गुरुलघुक है । (सत्तमे णं भंते ! तणुवाए किं गुरुए, लहुए, गरुयलहुए, अगुरुयलहुए) हे भदन्त ! सातवाँ जो तनुवात है वह क्या गुरु है, लघु है, गुरुलघु है या अगुरुलघु है ! (गोयमा ! णो गुरुए, णो लहुए, गुरुयलहुए, णो अगुरुलहुए) हे गौतम ! सातवा जो तनुवात है वह न गुरु है, न लघु है और न अगुरुलघु है किन्तु गुरुलघु है । (एवं सत्तमे घण वाए, सत्तमे घणोदही, सत्तमा पुढवी, उवासंतराइं सव्वाइं जहा सत्तमे उवासंतरं) जैसे सातमा तनुवात न गुरु है न लघु है और न अगुरुलघु

હવે ગૌતમસ્વામીએ પૂછેલા પ્રશ્નનો મહાવીર પ્રભુ જે જવાબ આપે છે તે સૂત્રકાર પ્રકટ કરે છે—(गोयमा ! नो गुरुए णो लहुए णो गुरुयलहुए, अगुरुयलहुए) હે ગૌતમ ! સાતમું અવકાશાન્તર ગુરુ નથી, લઘુ નથી, ગુરુ-લઘુ નથી પણ અગુરુલઘુ છે (सत्तमेणं भंते ! तणुवाए किं गुरुए, लहुए, गुरुयलहुए, अगुरुयलहुए) હે ભગવન્ ! સાતમું તનુવાત લઘુ છે ગુરુ છે ? ગુરુ-લઘુ છે કે અગુરુલઘુ છે ? (गोयमा ! णो गुरुए णो लहुए, गुरुयलहुए, णो अगुरुयलहुए) હે ગૌતમ ! સાતમું તનુવાત ગુરુ પણ નથી, લઘુ પણ નથી, અગુરુલઘુ પણ નથી, પરન્તુ ગુરુલઘુ છે (एवं सत्तमे घणवाए, सत्तमे घणोदही, सत्तमा पुढवी उवासंतराइं सव्वाइं जहा सत्तमे उवासंतरं) જેવી રીતે સાતમું તનુવાત ગુરુ નથી, લઘુ નથી, અગુરુલઘુ નથી પણ ગુરુલઘુ છે એજ પ્રમાણે

यानि द्रव्याणि गुरुलघुकानि तानि रूपीणि भवंति, यानि अगुरुलघुकानि तानि रूपीणि अपि भवेयुः रूपरहितान्यपि भवेयुः। व्यवहारनयमतानुसारेण तु द्रव्याणि लघूनि गुरुणि गुरुलघूनि अगुरुलघूनि वा भवंति, यथा लोष्टो गुरुरधो गमनात् धूमो लघुरूर्ध्वगमनात् गुरुलघुर्वायुस्तिर्यग्गमनात्, आकाशोऽगुरुलघुस्तथास्वभावादिति ॥ २ ॥

दोनों गाथाओं का इस प्रकार से है कि निश्चयनय के अनुसार कोई भी द्रव्य न सर्वतः गुरु है और न सर्वतः लघु है। परन्तु व्यवहार नय के अनुसार बादर स्कन्धों में ही यह सर्वतः गुरुत्व और लघुत्व रहता है। अन्य जो बादरस्कन्धों से भिन्न सूक्ष्म स्कंध हैं उनमें सर्वापेक्षया न गुरुत्व होता है और न सर्वापेक्षया लघुत्व होता है। सूक्ष्मपरिणमनवाले जितने द्रव्य चार प्रकार के स्पर्श से युक्त हैं तथा जो रूपी और अरूपी द्रव्य हैं वे सब भी गुरुलघु होते हैं। इनसे भिन्न जो आठ स्पर्शवाले बादर द्रव्य हैं वे सब भी गुरुलघु होते हैं। जितने द्रव्य गुरुलघुक होते हैं वे सब रूपी होते हैं। जो अगुरुलघुक हैं वे रूपी भी होते हैं और अरूपी भी होते हैं। यह निश्चय नय का मत है। व्यवहारनय के मत अनुसार से तो द्रव्य लघु होते हैं, गुरु होते हैं गुरुलघु होते हैं और अगुरुलघु होते हैं। नीचे गमन करने से लोष्ट गुरु होता है, उर्ध्वगमन करने से धूम लघु होता है तीरछीगमन करने से वायु गुरुलघु होती है तथा आकाश का तथा स्वभाव होने से वह अगुरुलघु होता है।

ગાથાઓનો ભાવાર્થ આ પ્રમાણે છે-નિશ્ચયનયાનુસાર કોઇ પણ દ્રવ્ય સર્વથા ગુરુ પણ નથી અને સર્વથા લઘુ પણ નથી પરન્તુ વ્યવહારનયાનુસાર બાદર-સ્કંધોમા જ સર્વથા ગુરુત્વ અને લઘુત્વ રહે છે બાદર (સ્થૂલ) સ્કંધોથી જુદા એવા જે સૂક્ષ્મ સ્કંધો છે તેમા સર્વથા ગુરુત્વપણુ પણ નથી અને સર્વથા લઘુત્વપણુ પણ નથી સૂક્ષ્મ પરિણમનવાળા જેટલા દ્રવ્યો ચાર પ્રકારના સ્પર્શથી યુક્ત છે અને જે રૂપી અને અરૂપી દ્રવ્યો છે તે બધા પણ અગુરુલઘુ હોય છે, તે દ્રવ્યોથી ભિન્ન આઠ પ્રકારના સ્પર્શવાળા જે બાદર દ્રવ્યો છે તે બધાં પણ ગુરુલઘુ હોય છે જેટલા દ્રવ્યો ગુરુલઘુ હોય છે, તે બધાં રૂપી હોય છે અને જે દ્રવ્યો અગુરુલઘુ હોય છે, તે રૂપી પણ હોય છે અને અરૂપી પણ હોય છે, આ નિશ્ચયનયનો મત છે, વ્યવહારનયની માન્યતા પ્રમાણે તો દ્રવ્ય, લઘુ હોય છે, ગુરુ હોય છે, ગુરુલઘુ હોય છે અને અગુરુલઘુ પણ હોય છે. જેમકે અધોગમન કરવાથી પત્થર ગુરુ હોય છે, ઉર્ધ્વગમન કરવાથી ધુમાડો લઘુ હોય છે, તિરછુ ગમન કરવાથી વાયુ ગુરુલઘુ હોય છે, અને આકાશનો તે પ્રકારનો સ્વભ[illegible] લઘુ હોય છે.

पर्षविषये गुरुलघुतया ज्ञातव्यमिति, एतानि-चावकाशान्तराणि सूत्राणि संग्रह गाथानुसारेणावगन्तव्यानि तथाहि—

' ओयास-वाय-घण-उदही पुढवि दीवा य सागरावासा ।
नेरइयाई अत्थिय समया कम्माइ लेस्साओ ॥ १ ॥
दिट्ठीदसण नाणे सन्ना सरीस य जोग उवओगे ।
दव्व पएसा पज्जव तीया आगामि सव्वद्धा ' इति ॥२॥

छाया—अवकाशो वात घनोदधिः पृथिवी द्वीपाश्च सागरा वर्षाणि ।
नैरयिकादयोऽस्तिकाय समया कर्माणि लेश्याः ॥ १ ॥
दृष्टिर्दर्शन ज्ञान संज्ञा शरीराणि च योगोपयोगौ ।
द्रव्यप्रदेशा पर्यवाः अतीता आगामिनी सर्वाद्धा ॥२॥

' णेरइयाण भंते ' नैरयिकाः खलु भदन्त ! ' किं गुरुया जाव अगुरुलहुया' किं गुरुका यावत् अगुरुलघुकाः ? हे भदन्त ! नैरयिका गुरुका वा लघुका वा

घनोदधिवात, पृथिवी, द्वीप, सागर और वर्ष-क्षेत्र इनके विषय में भी जानना चाहिये अर्थात् ये सब गुरुलघुरूप तृतीय पद वाले कहे गये हैं। जितने भी ये अवकाशान्तर सूत्र हैं वे इन सग्रह गाथाओं के अनुसार हैं-वे संग्रह गाथाएँ इस प्रकार से हैं-

" ओवास वाय-घण-उदही पुढवी, दीवा य सागरा वासा ।
नेरइयाई अत्थि य समया कम्माइ लेस्साओ ॥ १ ॥
दिट्ठी दसण नाणे सन्ना सरीरा य जोग उवओगे ।
दव्वपएसा पज्जव तीया आगामि सव्वद्धा ॥ "

(णेरइया ण भंते ! किं गुरुया जाव अगुरु य लहुया ?) हे भदन्त ! नैरयिक जीव क्या गुरु हैं ? यावत् अगुरुकलघुक हैं ? यहां यावत् पद से

અવકાશ ઘનોદધિવાત, પૃથિવી દ્વીપ સાગર અને વર્ષક્ષેત્રોના વિષયમાં પણ ગ્રહણ કરવું જોઇએ, એટલે કે એ બધાને ગુરુલઘુ કહેલાં છે એમ સમજવું. જેટલાં અવકાશાન્તર સૂત્રો છે તે આ ગાથાઓ અનુસાર છે તે સંગ્રહ ગાથાઓ નીચે મુજબ છે—

' ओवास वाय-घण उदही पुढवी, दीवा य सागरावासा ।
नेरइयाई अत्थि य समया कम्माई लेस्साओ ॥ १ ॥
दिट्ठी दसण नाणे सन्ना सरीरा य जोग उवओगे ।
दव्वपएसा पज्जव तीया आगामि सव्वद्धा ॥ २ ॥ "

(णेरइयाणं भंते ! किं गुरुया जाव अगुरुलहुया ?) હે ભદન્ત ! નારક જીવો ગુરુ હોય છે ? લઘુ હોય છે ? અથવા ગુરુલઘુ હોય છે ? અગુરુલઘુ

एवमेव 'सत्तमे घणोदही' सप्तमो घनोदधिः, सप्तमो घनोदधिरपि घनवातवद् व्याख्येयः, 'सत्तमा पुढवी' सप्तमी पृथिवीः, सप्तमी पृथिव्यपि घनवातवदेव व्याख्येया। 'उववासंतराइं सव्वाइं जहा सत्तमे उवासंतरे' अवकाशान्तराणि सर्वाणि यथा सप्तममवकाशान्तरम्, सर्वेपामवकाशान्तराणां वक्तव्यता सप्तमावकाशान्तरवद् अगुरुलघुकरूपा विज्ञेया। 'सेसा जहा तणुवाए' शेपाः द्वीपादयो यथा तनुवातः, कथम् ? 'एवं गुरुलहुए' एवं गुरुकलघुकः, यथा तनुवातः गुरुकलघुकरूपेण तृतीयपदेन कथितस्तथा द्वीपाः, सागराः, वर्षाण्यपि गुरुकलघुक रूपेण तृतीयपदेन व्याख्येयानि। संग्रहगाथार्द्धमाह—

'ओवास वाय-घण-उदही-पुढवी-दीवा य सागरा-वासा"।

छाया—अवकाशः वातो घनोदधिः पृथिवी द्वीपाश्च सागरा वर्पाणि।

तनुवातविपये यथा कथितं तथैव अवकाशवातघनोदधिपृथिवीद्वीपसागर

है किन्तु गुरुलघु है उसी प्रकार से सातमा घनवात भी न गुरु है, न लघु है, और न अगुरुलघु है, किन्तु गुरुलघु है। इसी तरह से सातमा घनोदधि भी घनवात की तरह है। सातमी पृथिवी भी घनवात की तरह ही है। तथा समस्त अवकाशान्तर संबंधी वक्तव्यता सप्तम अवकाशान्तर की तरह ही जाननी चाहिये। (सेसा जहा तणुवाए) शेष द्वीपादिक तनुवात की तरह गुरुलघु तृतीय पद से कहे गये हैं। यही बात (एवं गुरुयलहुए) इस पाठ द्वारा कही गई है। अर्थात् जितने भी द्वीप हैं। सागर हैं, और वर्ष हैं वे सब गुरुलघुरूप तृतीयपद से व्याख्यात हुए हैं। इस विषय में गाथार्द्ध इस प्रकार से है-" ओवास-वाय-घण उदही-पुढवी-दीवा य सागरा वासा " तनुवात के विषय में जैसा कहा गया है-उसी प्रकार से अवकाश वात घनोदधि-अर्थात्

સાતમુ ઘનવાત પણ ગુરુ નથી, લઘુ નથી, અગુરુલઘુ નથી પણ ગુરુલઘુ છે. એ જ પ્રમાણે સાતમા ઘનોદધિ અને સાતમી પૃથ્વી વિષેનુ વક્તવ્ય પણ ઘનવાત પ્રમાણે જ સમજવું તથા તમામ અવકાશાન્તર સંબધી વક્તવ્ય સાતમા અવકાશાન્તર પ્રમાણે જ સમજવું (सेसा जहा तणुवाए) બાકીના દ્વીપાદિકનુ વક્તવ્ય તનુવાત પ્રમાણે સમજવું, એટલે કે તેમને ગુરુલઘુ કહ્યા છે એમ સમજવું, એ જ વાત (एव गुरुयलहुए) સૂત્રપાઠ વડે બતાવવામાં આવી છે એટલે કે બધા દ્વીપોને સાગરોને અને વર્ષોને ગુરુલઘુરૂપ ત્રીજા પદથી વર્ણવ્યા છે-એટલે કે તેઓ ગુરુલઘુ છે આ વિષયમા આ પ્રમાણે ગાથાર્દ્ધ છે-" ओवास, वाय, घणउदही-पुढवी, दीवाय सागरावासा " તનુવાતની બાબતમાં જે કથન થયુ છે તે કથન

वैक्रियवर्गणाश्च गुरुलघुका एव भवन्ति, तस्मात्तादृशे कारणे गुरुलघुत्वात्कार्येऽपि गुरुत्वलघुत्वं एव भवत इति । तदुक्तम्—

'ओरालिय वेउव्विय आहारग तेय गुरुलहू दव्वा' । इति ।

छाया—औदारिकवैक्रियकाहारकतैजसानि गुरुलघुकानि द्रव्याणि ॥" इति ।

औदारिकं वैक्रियकम् आहारकं तथा तैजसमित्येतत्सर्वं गुरुलघुद्रव्यमेवेति । 'जीवं च कम्मणं च पडुच्च णो गुरुया णो लहुया णो गुरुयलहुया अगुरुयलहुया' जीवं च कार्मणं च प्रतीत्य नो गुरुका नो लघुका नो गुरुकलघुकाः अगुरुलघुकाः, नारका जीवापेक्षया कार्मणशरीरापेक्षया च अगुरुलघुका एव जीवस्यारूपिद्रव्यत्वेनागुरुलघुस्वभावत्वात्, कार्मणशरीरस्य च कर्मवर्गणारूपत्वात्, कर्मवर्गणानां चागुरुलघुत्वादिति । तथोक्तम्—

वैक्रिय वर्गणाएँ गुरुलघुक ही होती हैं। इसलिये जब कारण गुरुलघुक हैं तो इनके कार्य भी गुरुलघुक ही होंगे। इसी अभिप्राय से नारक जीव " गुरुलघुक भी हैं " ऐसा कहा है। तदुक्तम्—

" ओरालिय वेउव्विय आहारग तेय गुरुलहू दव्वा "

औदारिक, वैक्रियक, आहारक, तैजस ये गुरुलघुक द्रव्य हैं। (जीवं च कम्मं च पडुच्च णो गुरुया, णो लहुया, णो गुरुयलहुया, अगुरुयलहुया) कार्माण शरीर की अपेक्षा नारक जीव न गुरु हैं, न लघु हैं और न गुरुलघु ही हैं किन्तु अगुरुलघु ही हैं। क्यों कि जीव अरूपी द्रव्य है इसलिये उसका स्वभाव अगुरुलघुरूप है। तथा जो कार्मण शरीर है वह कर्मवर्गणारूप है। और जो कर्मवर्गणाएँ हैं वे अगुरुलघुरूप होती हैं। तथा चोक्तम्—

અને વૈક્રિય વર્ગણાઓ ગુરુલઘુ જ હોયછે તેથી જો કારણ ગુરુલઘુ છે તો તેમના કાર્ય પણ ગુરુલઘુ જ હોય છે એટલા માટે નારક જીવો " ગુરુલઘુ પણ હોય છે " એમ કહેલ છે કહ્યું પણ છે કે—

" ओरालिय वेउव्विय आहारग तेय गुरुलहू दव्वा "

ઔદારિક વૈક્રિય, આહારક અને તૈજસ એ ચાર ગુરુલઘુક દ્રવ્યો છે. (जीवं च कम्मं च पडुच्च णो गुरुया, णो लहुया, णो गुरुयलहुया, अगुरुयलहुया) કામણ શરીરની અપેક્ષાએ નારક જીવ ગુરુ પણ નથી લઘુ પણ નથી ગુરુ લઘુ પણ નથી પરન્તુ અગુરુલઘુ જ કારણ કે જીવ અરૂપી દ્રવ્ય છે, તેથી તેનો સ્વભાવ અગુરુલઘુરૂપ છે તથા જે કામણ શરીર છે તે કર્મવર્ગણારૂપ છે અને કર્મવર્ગણાઓ અગુરુલઘુરૂપ હોય છે કહ્યું પણ છે કે—

गुरुलघुका वा अगुरुलघुका वेति प्रश्नः। उत्तरति भगवान्—'गोयमे' त्यादि। 'गोयमा' हे गौतम ! 'नो गुरुया' नो गुरुकाः 'नो लहुया' नो लघुकाः किन्तु 'गुरुलहुया वि' गुरुलघुका अपि 'अगुरुलहुया वि' अगुरुलघुका अपि, हे गौतम ! नारका नो गुरुका न वा लघुकाः अपि तु गुरुलघुकास्तथा अगुरुलघुकाश्च-भवन्तीति 'से केणट्ठेणं' तत्केनार्थेन? उत्तरयति भगवान्-'गोयमा' इत्यादि। 'गोयमा' हे गौतम ! 'वेउव्विय तेयाइं पडुच्च' वैक्रियतैजसे शरीरे प्रतीत्य=अधिकृत्य 'णो गुरुया णो लहुया गुरुय लहुया' नो गुरुका नो लघुका गुरुकलघुका नो अगुरुलघुकाः, नारका वैक्रियतैजसशरीरे प्रतीत्य गुरुकलघुका एव यतो वैक्रियतैजसशरीरे वैक्रियतैजसवर्गणानिष्पादिते, वैक्रिय

"लघु और गुरुलघु" इन पदों का ग्रहण किया गया है। इस तरह से हे भदन्त ! नैरयिक जीव क्या गुरु हैं? लघु हैं? या गुरु लघु रूप हैं अथवा अगुरुलघुरूप हैं? यह प्रश्न बन जाता है। (गोयमा!) हे गौतम! नारक जीव (नो गुरुया, नो लहुया) न गुरु हैं, न लघु हैं किन्तु (गुरुयलहुया वि अगुरुलहुया वि) गुरुलघु भी हैं और अगुरुलघु भी हैं। (से केणट्ठेणं?) हे भदन्त ! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि नारक जीव न लघु हैं न गुरु हैं किन्तु गुरुलघु भी हैं और अगुरुलघु भी हैं? (गोयमा! वेउव्विय-तेयाइं पडुच्च णो गुरुया, णो लहुया, गुरुय-लहुया) हे गौतम ! वैक्रियशरीर तैजस शरीर इन दो शरीरों की अपेक्षा करके नारक जीव न गुरु हैं, न लघु हैं किन्तु गुरुलघु हैं। अगुरुलघु नहीं है। तात्पर्य यह है कि नारक जीवों के तैजसशरीर कार्मणशरीर तथा वैक्रियशरीर ये ३ तीन शरीर होते हैं। सो तैजस एवं वैक्रिय शरीर तैजस और वैक्रिय वर्गणाओं से निष्पादित होते है। और ये तैजस

હોય છે? (गोयमा!) હે ગૌતમ! નારક જીવો (नो गुरुया, नो लहुया) ગુરુ પણ નથી લઘુ પણ નથી, પરન્તુ (गुरुयलहुया वि अगुरुयलहुया वि) ગુરુલઘુ પણ હોય છે અને અગુરુલઘુ પણ હોય છે? (से केणट्ठेणं०') હે ભગવન્! આપ શા માટે એવુ કહો છો કે નારકજીવો ગુરુ પણ નથી, લઘુ પણ નથી પરન્તુ ગુરુલઘુ છે અને અગુરુલઘુ પણ છે? (गोयमा! वेउव्विय-तेयाइ पडुच्च णो गुरुया, णो लहुया, गुरुयलहुया) હે ગૌતમ! વૈક્રિય અને તૈજસ શરીરની અપેક્ષાએ નારક જીવો ગુરુ પણ નથી, લઘુ પણ નથી, અગુરુ-લઘુ પણ નથી પરન્તુ ગુરુલઘુ છે તાત્પર્ય એ છે કે નારક જીવોને તૈજસ કાર્મણ શરીર અને વૈક્રિય શરીર એ ત્રણ શરીર હોય છે. તૈજસ અને વૈક્રિય શરીરનુ નિર્માણ તૈજસ અને વૈક્રિય વર્ગણાઓથી થાય છે અને તે તૈજસ

पहितेपि ते गुरुत्वादया न भवन्तीति भावः। 'से तेणट्ठेण' तत् तेनार्थेन गौतम ! एवं कथ्यते यत् नारका न गुरुका न वा लघुकाः किन्तु गुरुकलघुका नो अगुरुलघुका इति, 'एवं जाव वेमाणिया' एवं यावद्वैमानिका, असुरकुमारा दारभ्य वैमानिकदेवपर्यन्त नारकदण्डकवदेव प्रकारा योजनीय इति, 'णाणत्तं जाणियव्वं सरीरेहिं' नानात्व ज्ञातव्य शरीरैः, वैमानिकादिषु गुरुत्वलघुत्वादि विचारे न सर्वथा सादृश्यमेव किन्तु वैलक्षण्यमपि विद्यते तद्वैलक्षण्य शरीरद्वारेण ज्ञातव्यम्, यस्य यानि शरीराणि तस्य तानि शरीराणि ज्ञात्वा असुरकुमारादि सूत्राणि पठितव्यानीति, भावः। तथाहि असुरादिदेवास्तु नारकवदेव नारकतुल्याः

है। और यदि उपादि में गुरुत्व आदि नहीं हों तो तादृश उपाधि से उपहितद्रव्य में भी गुरुत्व लघुत्व नहीं होते हैं। (से तेणट्ठेण) इस कारण से हे गौतम ! मैंने ऐसा कहा है कि नारक न गुरु हैं और न लघु हैं किन्तु गुरुलघुक भी हैं और अगुरुलघुक भी हैं। (एवं जाव वेमाणिया) इसी प्रकार से असुरकुमार से लेकर वैमानिक देवपर्यन्त नारकदण्डक की तरह ही समझना चाहिये। (णाणत्तं जाणियव्वं सरीरेहिं) परन्तु जो विशेषता है वह शरीरों को लेकर है। तात्पर्य यह है कि वैमानिक देवादिकों में जब गुरुत्व लघुत्व आदिका विचार किया जाता है तब उनमें सर्वथा समानता ही नहीं आती है किन्तु भिन्नता भी आती है और यह भिन्नता उनमें शरीर द्वार से आती है ऐसा जानना चाहिये अतः जिस के जो २ शरीर हैं उसके उन २ शरीरों को समझ कर असुरकुमार आदि सूत्र पढना चाहिये। जैसे-असुर

न હોય તો તે પ્રકારની ઉપાધિથી ઉપહિત દ્રવ્યમાં પણ ગુરુત્વ લઘુત્વ કોઈ નથી, (से तेणट्ठेणं) હે ગૌતમ ! તે કારણે મેં એવું કહ્યું છે કે નારક જીવો ગુરુ પણ નથી, લઘુ પણ નથી, પરંતુ ગુરુલઘુ છે અને અગુરુલઘુ પણ છે, (एवं जाव वेमाणिया) નારકદંડકની જેમ જ અસુરકુમારથી લઈને વૈમાનિકો પર્યન્ત સુધીની ગુરુતા, લઘુતા વગેરેના વિષયમાં સમજવું, (णाणत्तं जाणियव्वं सरीरेहिं) પણ જે વિશેષતા છે તે શરીરની અપેક્ષાએ છે, તાત્પર્ય એ છે કે વૈમાનિક દેવ વગેરેમાં જ્યારે ગુરુત્વ લઘુત્વ વગેરેનો વિચાર કરવામાં આવે ત્યારે તેમનામાં બધી રીતે સરખાઈ હોતી નથી, ભિન્નતા પણ હોય છે, તે ભિન્નતા શરીરની અપેક્ષાએ રહેલી હોય છે તેથી જેના જેવાં જેવા શરીર હોય છે તેના તેવા તેવા શરીરોને સમજીને અસુરકુમાર વગેરે સૂત્રોનું કથન કરવું જોઈએ, જેમકે-અસુરકુમાર વગેરે દેવો તો નારકો જેવાં જ છે, તેથી વૈક્રિ

"कम्मण मण भासाइं एयाइ अगुरुलहुयाइं" कार्मण-मनो-भाषाः इमा सर्वा अपि वर्गणा अगुरुलघुका एव भवन्तीति। वैक्रियतैजसशरीरापेक्षया नारका गुरुलघुका भवंति, प्रयोजकयोः शरीरयोः वैक्रियतैजसयोर्गुरुलघुत्वेन तदवच्छिन्ने नारकेपि तयोर्गुरुत्वलघुत्वयोः संभवात्, जीवकार्मणापेक्षया च नारका अगुरुलघुका एव यतो जीवस्यारूपित्वं विद्यते कार्मणशरीरस्यापि अरूपित्वम्, अतः अगुरुलघुत्वमेव। एतदुक्त भवति स्वस्वभावतस्तु जीवो न गुरु र्न वा लघुः किन्तु कर्मोपाधिवशात् तथा तथा-प्रतिभासते, यदि उपाधौ गुरुत्वं लघुत्वं भवेत्तदा तदुपहिते तस्मिन्नपि तद् भवति, यद्युपाधौ गुरुत्वादिक न भवेत्तदा तादृशोपाध्यु-

---

"कम्मण मणभासाइं एयाइं अगुरुलहुयाइं।"

कार्माणवर्गणा मनोवर्गणा और भाषावर्गणा ये सब वर्गणाएँ अगुरुलघुक ही होती हैं अतः वैक्रिय और तैजस इन दो शरीरों की अपेक्षा से नारक जीव गुरुलघुक होते हैं। क्यों कि प्रयोजक वैक्रिय तैजस शरीर में गुरुता और लघुता होने से, तदवच्छिन्न-इन दो शरीरों से युक्त-नारकजीव में भी गुरुत्व और लघुत्व संभवता है। तथा-जीव और कार्माणशरीर की अपेक्षा से नारकजीव अगुरुलघुक ही होते है, क्यों कि जीव अरूपी होता है और कार्माणशरीर भी अरूपी होता है। इसलिये नारकजीव में अगुरुलघुत्व आता है। कहने का तात्पर्य यह है कि जीव स्वभाव से न गुरु है और न लघु है किन्तु कर्मोपाधि के वश से वह उस उस रूपसे प्रतिभासित होता है। यदि उपाधिमें गुरुता है तो इस उपाधिसे उपहित द्रव्यमें भी गुरुता आ जाती है और यदि उपाधि में लघुता है तो उपाधि से उपहित (युक्त) द्रव्य में भी लघुता आ जाती

"कम्मण मणभासाइं एयाइं अगुरुलहुयाइं"

કાર્માણવર્ગણા મનોવર્ગણા અને ભાષાવર્ગણા, એ બધી વર્ગણાઓ અગુરુલઘુ જ હોય છે તેથી વૈક્રિય અને તૈજસ, એ બે શરીરની અપેક્ષાએ નારક જીવો ગુરુલઘુ હોય છે, કારણ કે પ્રયોજક વૈક્રિય અને તૈજસ શરીરમાં ગુરુતા અને લઘુતા હોવાથી, તે બે શરીરોથી યુક્ત નારક જીવોમા પણ ગુરુત્વ અને લઘુત્વ સભવી શકે છે તથા જીવ અને કાર્માણ શરીરની અપેક્ષાએ નારક અગુરુલઘુજ હોય છે, કારણ કે જીવ અરૂપી હોય છે, તે કારણે નારક જીવોમા અગુરુત્વ લઘુત્વ પણ હોય છે તાત્પર્ય એ છે કે જીવ સ્વભાવથી ગુરુ પણ નથી અને લઘુ પણ નથી, કર્મોપાધિને કારણે તે ગુરુ અથવા લઘુરૂપે પ્રતિભાસિત થાય છે જો ઉપાધિમા ગુરુતા હોય તો તે ઉપાધિથી ઉપહિત દ્રવ્યમા પણ ગુરુતા આવી જાય છે, જો ઉપાધિમા લઘુતા હોય તો તે ઉપાધિથી ઉપહિત દ્રવ્યમા પણ લઘુતા આવી જાય છે, અને જો ઉપાધિમા ગુરુત્વ વગેરે

कार्मणापेक्षया चागुरुलघुका' । मनुष्यास्तु औदारिक-वैक्रिय-तैजसाहारकशरीराणि प्रतीत्य गुरुलघव', जीवकार्मणपेक्षया चागुरुलघवो मर्यतीति । 'धम्म स्थिकाए जायजीवत्थिकाए' धर्मास्तिकाय यावत् जीवास्तिकायः, इह यावत्पदेन अधर्मास्तिकायाकाशास्तिकायपदोपादानं कर्तव्यम् , 'चउत्थपएणं ,' चतुर्थपदेन, धर्मास्तिकायादारभ्य जीवास्तिकायपर्यन्ता चतुर्थपदेन 'अगुरुलघु' इत्यनेन वक्तव्या शेषाणां निषेध एव कर्तव्य , धर्मास्तिकायाऽधर्मास्तिकायाकाशास्तिकायजीवास्तिकाया आद्यमङ्ग त्रयाणाममावो वक्तव्य इति, नामरूपित्वेनागुरुलघुत्वस्यैव सम्भवात् इति । 'पोग्गलस्थिकाएण भंते' पुद्गलास्तिकाय खलु भदन्त!

आहारक शरीर नहीं होता । अत औदारिक, वैक्रिय और तैजस इन तीन शरीरों की अपेक्षा से इनमें गुरुलघुता और जीव तथा कार्मण शरीर की अपेक्षा से इनमें अगुरुलघुता आती है ऐसा जानना चाहिये। मनुष्य में पांचों ही शरीर हो सकते हैं-अत इनमें औदारिक, वैक्रिय, आहारक और तैजसशरीर की अपेक्षा से गुरुलघुता और जीव एवं कार्मणशरीरकी अपेक्षासे अगुरुलघुता आती है ऐसा जानना चाहिये। इस तरह असुरकुमार से लेकर यावत् वैमानिक देवपर्यन्त शरीरों को लेकर गुरुलघुता तथा अगुरुलघुता प्रकट की गई है । (धम्मत्थिकाए जाव जीवत्थिकाए चउत्थपएण) धर्मास्तिकाय यावत् जीवास्तिकाय चौथे पद से उपलक्षित जानना चाहिये । तात्पर्य इसका यह है कि धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, काल और जीवास्तिकाय इनमें आदि के गुरु, लघु और गुरुलघु ये तीन भंग नहीं है केवल अगुरुलघु जो

આહારક શરીર હોતું નથી. તેથી ઔદારિક, તૈજસ અને વક્રિય એ ત્રણ શરીરની અપેક્ષાએ તેમનામા ગુરુલઘુતા હોય છે અને જીવ તથા કાર્મણ શરીરની અપેક્ષાએ તેમનામાં અગુરુલઘુતા હોય છે, એમ સમજવું મનુષ્યોમાં પાંચે શરીર હોઈ શકે છે તેથી ઔદારિક તૈજસ, વૈક્રિય અને આહારક શરીરની અપેક્ષાએ તેમનામાં ગુરુલઘુતા હોય છે અને જીવ તથા કાર્મણ શરીરની અપેક્ષાએ મનુષ્યોમાં અગુરુલઘુતા હોય છે એમ સમજવું આ રીતે અસુરકુમારોથી લઈને વૈમાનિક દેવો સુધીના શરીરોની અપેક્ષાએ ગુરુલઘુતા અને અગુરુલઘુતા પ્રકટ કરવામા આવી છે (धम्मत्थिकाए जाव जीवत्थिकाए चउत्थपएणं) ધર્માસ્તિકાયથી જીવાસ્તિકાય સુધીનું ચોથુ પદ પ્રકટ કરવું એટલે કે ધર્માસ્તિકાય, અધર્માસ્તિકાય આકાશાસ્તિકાય કાળ અને જીવાસ્તિકાયમા શરૂઆતના ત્રણ ભાંગા નથી પણ ચોથો ભાંગો છે. એટલે કે તેઓ ગુરુ નથી લઘુ નથી, ગુરુલઘુ નથી, પણ અગુરુલઘુ છે કારણ કે તે બધા ત્રણે અરૂપી છે.

वैक्रियतैजसशरीरापेक्षया गुरुलघुकाः, जीवकार्मणापेक्षया चागुरुलघुका ज्ञातव्याः । पृथिव्यादिजीवास्तु पृथिव्यप्तेजोवनस्पतिजीवास्तु औदारिकतैजसशरीरे प्रतीत्य गुरुलघवो ज्ञातव्यास्तादृशशरीरयोर्गुरुलघुत्वेन तद्विशिष्टजीवस्यापि तथात्वसंभवात्, जीवं कार्मणं च शरीरं प्रतीत्यागुरुलघवः, एतयोररूपित्वेनागुरुलघुत्वात्, वायुकायास्तु औदारिक-वैक्रियतैजसशरीराणि प्रतीत्य गुरुलघवः जीवकार्मणापेक्षया अगुरुलघवः एवं पञ्चेन्द्रियतिर्यंचोपि पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनयो वायुकायवद् औदारिक-वैक्रिय-तैजसशरीराण्याश्रित्य गुरुलघुकाः । एवं जीव

आदि देव तो नारक की तरह ही है-अतः वैक्रिय तैजस शरीर की अपेक्षा से ये गुरुलघुक होते हैं तथा जीव और कार्मण शरीर की अपेक्षा से ये अगुरुलघुक होते हैं ऐसा जानना चाहिये। तथा-पृथिवीजीव, अप्जीव, तेजोजीव, वनस्पतिजीव ये सब औदारिक तैजस शरीर की अपेक्षा गुरुलघु होते हैं क्यों कि ये दोनों शरीर गुरुलघु हैं, इसलिये इन दोनों शरीरों से युक्त होने के कारण इन जीवों में भी तथा रूपता का संभव होता है । तथा-जीव और कार्मण शरीर को लेकर इनमें अगुरुलघुता आती है । क्यों कि ये दोनों अरूपी हैं । वायुकायिक जो जीव हैं इनमें-औदारिक शरीर, वैक्रियशरीर और तैजस की अपेक्षा गुरुलघुता आती है और जीव तथा कार्मणशरीर की अपेक्षा इनमें अगुरुलघुता आती है । इसी तरह से पंचेन्द्रिय जो तिर्यंच जीव हैं उनमें भी वायुकाय की तरह गुरुलघुता और अगुरुलघुता आती है। क्यों कि पंचेन्द्रिय तिर्यञ्चों में औदारिक, वैक्रिय, तैजस और कार्मण ये चार होता है।

અને તૈજસ શરીરની અપેક્ષાએ તેઓ ગુરુલઘુ હોય છે; તથા જીવ અને કાર્મણ શરીરની અપેક્ષાએ તેઓ અગુરુલઘુ હોય છે, એમ સમજવું. તથા-પૃથિવીકાયના જીવો, અપ્કાયના જીવો, તેજસ્કાયના જીવો અને વનસ્પતિકાયના જીવો, એ બધા જીવો ઔદારિક અને તૈજસ શરીરની અપેક્ષાએ ગુરુલઘુ હોય છે, કારણ કે તે બન્ને શરીર ગુરુલઘુ છે તેથી તે બે શરીરોથી યુક્ત હોવાને કારણે તે જીવોમાં પણ ગુરુલઘુપણું સંભવી શકે છે તથા જીવ અને કાર્મણ શરીરની અપેક્ષાએ તેમનામાં અગુરુલઘુપણું હોય છે, કારણ કે તે બન્ને અરૂપી છે વાયુકાયિક જીવોમાં ઔદારિક શરીર, વૈક્રિય શરીર અને તૈજસશરીરની અપેક્ષા ગુરુલઘુતા હોય છે, પણ જીવ અને કાર્મણ શરીરની અપેક્ષાએ તેમનામાં અગુરુલઘુતા હોય છે એ જ પ્રમાણે જે પંચેન્દ્રિય તિર્યંચ જીવો છે તેમનામાં પણ વાયુકાયની જેમ જ ગુરુલઘુતા અને અગુરુલઘુતા હોય છે, કારણ કે પંચેન્દ્રિય તિર્યંચોને ઔદારિક, વૈક્રિય અને તૈજસ અને કાર્મણ શરીર હોય છે-

द्रव्याइं पडुच्च ' गुरुलघुकद्रव्याणि औदारिकादीनि चत्वारि शरीराणि प्रतीत्य =आश्रित्य ' णो गुरुए ' नो गुरुकः, ' णो लहुए ' नो लघुक, पुद्गलास्तिकायः औदारिकादिशरीरापेक्षया न गुरु र्न वा लघुरिति भावः, किन्तु ' गुरुलहुए ' गुरुलघुकः ' णो अगुरुयलहुए ' नो अगुरुलघुकः, ' अगुरुयलहुयदव्वाइं पडुच्च ' अगुरुलघुकद्रव्याणि प्रतीत्य, अगुरुलघु द्रव्याणि–कार्मणद्रव्याणि, तानि आश्रित्य ' णो गुरुए णो लहुए णो गुरुय लहुए ' नो गुरुकः नो लघुको नो गुरुलघु कोऽपि तु ' अगुरुयलहुए ' अगुरुकलघुकः' पुद्गलास्तिकाय इति । ' समया कम्माणि य चउत्थपएण ' समया कर्माणि च चतुर्थपदेन, समयाः=कालविभागा अमूर्ताः, कर्माणि=कार्मणवर्गणारूपाणि एषामगुरुलघुत्वम्, ' कण्हलेस्सा ण भंते ' कृष्ण-

---

द्रव्याइं पडुच्च णो गुरुए, णो लहुए, गुरुयलहुए, णो अगुरुयलहुए) गुरुलघु द्रव्यों की अपेक्षा से पुद्गलास्तिकाय न गुरु हैं न लघु है न अगुरुलघु है किन्तु गुरुलघु है । यहा गुरुलघुक द्रव्य से औदारिक आदि चार शरीर लिये गये हैं । इन चार शरीर की अपेक्षा से पुद्गलास्तिकाय न गुरु है, न लघु है, न अगुरुलघुरूप है किन्तु यह गुरुलघुरूप है । (अगुरुयलहुयदव्वाइ पडुच्च णो गुरुए, णो लहुए णो गुरुयलहुए अगुरुलहुए) अगुरुलघु द्रव्य की अपेक्षा से पुद्गलास्तिकाय न गुरु है न लघु हैं, और न गुरुलघु है किन्तु अगुरुलघुरूप है । यहां अगुरुलघुद्रव्य से कार्मणद्रव्य लिये गये हैं । क्योंकि कार्मणद्रव्य अगुरुलघुरूप होता है यह बात अभी प्रकट की जा चुकी है । अत कार्माण द्रव्य की अपेक्षा से पुद्गलास्तिकाय अगुरुलघुरूप प्रकट किया है । (समया कम्माणि य चउत्थपएणं) समय–कालविभाग, और कार्माण वर्गणारूप कर्म ये सब अगुरु-

---

ઉત્તર—(ગુરુયલહુયદવ્વાઈ પડુચ્ચ ણો ગુરુએ ણો લહુએ, ગુરુયલહુએ, ણો અગુરુયલહુએ) ગુરુ લઘુ દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય ગુરુ પણ નથી લઘુ પણ નથી, અગુરુલઘુ પણ નથી, પરન્તુ ગુરુલઘુ છે, અહીં ગુરુલઘુ દ્રવ્યથી ઔદારિક વગેરે ચાર શરીર લેવામા આવ્યાં છે તે ચાર શરીરની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય ગુરુ પણ નથી, લઘુ પણ નથી, અગુરુલઘુ પણ નથી, પરંતુ ગુરુલઘુરૂપ જ છે (અગુરુયલહુયદવ્વાઈ પડુચ્ચ ણો ગુરુએ ણો લહુએ ણો ગુરુયલહુએ) અગુરુલઘુ દ્રવ્યની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય ગુરુ પણ નથી, લઘુ પણ નથી, ગુરુલઘુ પણ નથી પરંતુ અગુરુલઘુ છે અહીં અગુરુલઘુ દ્રવ્યથી કાર્મણદ્રવ્ય લેવામાં આવેલ છે કારણ તે કાર્મણદ્રવ્ય અગુરુલઘુરૂપ હોય છે, એ વાત હમણાં જ પ્રકટ કરવામા આવી છે તેથી કાર્મણ દ્રવ્યની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાયને અગુરુલઘુરૂપ બતાવ્યુ છે (સમયા કમ્માણિ ય ચઉત્થપએણ) સમય-કાળવિભાગ, અને કાર્મણવર્ગણારૂપ અગુરુલઘુરૂપ કર્મ છે

'किं गुरुए' किं गुरुकः, 'लहुए' लघुकः 'गुरुयलहुए' गुरुकलघुकः 'अगुरुलहुए' अगुरुलघुकः? उत्तरयति भगवान्-'गोयमे' त्यादि। 'गोयमा' हे गौतम! 'णो गुरुए' नो गुरुकः 'णो लहुए' नो लघुकः, 'गुरुलहुए वि' गुरुलघुकोपि। 'अगुरुलहुए वि' अगुरुलघुकोऽपि हे गौतम! पुद्गलास्तिकायो न गुरु र्न वा लघुः किन्तु गुरुलघुरपि अगुरुलघुरपि भवति, तथा च प्रथमद्वितीय भंगौ न ग्रहीतव्यौ किन्तु तृतीयचतुर्थयोरेव ग्रहणं कर्तव्यम्। पुद्गलास्तिकायविषये उत्तरं निश्चनयानुसारेण ज्ञातव्यम्, एतन्मते कोपि पदार्थः एकान्ततो न गुरु र्न वा लघु र्भवतीति। 'से केणट्ठेणं भंते' तत्केनार्थेन हे भदन्त! केन कारणेन एवमुच्यते, पुद्गलास्तिकायो न गुरु र्न वा लघु' किन्तु गुरुलघुकोऽगुरुलघुकश्चेति, उत्तरयति भगवान्-'गोयमे'-त्यादि। 'गोयमा' हे गौतम! 'गुरुयलहुय-

---

चौथा भंग है वही है। क्यों कि ये सब अरूपी द्रव्य हैं। (पोग्गलत्थि-काए णं भंते! किं गुरुए, लहुए, गुरुयलहुए, अगुरुयलहुए) हे भदन्त! पुद्गलास्तिकाय क्या गुरु है, अथवा लघु है? या गुरुलघु हैं? कि अगुरुलघु है? (गोयमा! णो गुरुए, णो लहुए, गुरुयलहुए वि, अगुरुलहुए वि) हे गौतम! पुद्गलास्तिकाय न गुरु है, न लघु है किन्तु गुरुलघु भी है और अगुरुलघु भी है। इस तरह यहां प्रथम भंग और द्वितीय भंग ग्रहण नहीं करना चाहिये, किन्तु तृतीय और चतुर्थ भंग ही यहां ग्रहण करना चाहिये। पुद्गलास्तिकाय में उत्तर निश्चयनय के अनुसार ही जानना चाहिये-निश्चयनय की मान्यतानुसार कोई भी पदार्थ एकान्ततः न गुरु है और न एकान्ततः लघु ही है। (से केणट्ठेणं भंते!) हे भदन्त! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि पुद्गलास्तिकाय न गुरु है और न लघु है किन्तु गुरुलघु भी है और अगुरुलघु भी है। (गुरुयलहुय-

---

(पोग्गलत्थिकाए ण भंते! किं गुरुए, लहुए, गुरुयलहुए अगुरुयलहुए?) હે ભગવન્! પૌદ્‌ગલાસ્તિકાય ગુરુ છે? લઘુ છે? અથવા ગુરુલઘુ છે? કે અગુરુલઘુ છે? (गोयमा णो गुरुए, णो लहुए, गुरुयलहुये वि, अगुरुलहुए वि) હે ગૌતમ! પૌદ્‌ગલાસ્તિકાય ગુરુ પણ નથી, લઘુ પણ નથી પણ ગુરુલઘુ છે અને અગુરુલઘુ છે આ રીતે અહીં પહેલા અને બીજા ભાગાનો સ્વીકાર કર્યો નથી પણ ત્રીજા અને ચોથા ભાગાનો સ્વીકાર કર્યો છે પુદ્‌ગલાસ્તિકાયના વિષયમાં જે ઉત્તર આપ્યો છે તે નિશ્ચયનયના મતાનુસાર સમજવો. નિશ્ચયનયની માન્યતાનુસાર કોઈ પણ પદાર્થ એકાન્તપણે ગુરુ પણ નથી અને એકાન્તપણે લઘુ પણ નથી (से केणट्ठेणं भंते!०) હે ભગવન્! આપ શા માટે એવું કહો છો કે પુદ્‌ગલાસ્તિકાય ગુરુ નથી, લઘુ નથી પરંતુ ગુરુલઘુ છે અને અગુરુલઘુ પણ છે.

वर्णो औदारिक च गुरुलघु इति कृत्वा कृष्णलेश्या गुरुलघुका वाच्या । 'भाव लेस्सं पडुच्च' भावलेश्यां प्रतीत्य 'चउत्थपएणं' चतुर्थपदेन, कृष्णलेश्या ज्ञातव्या, भावलेश्या जीवपरिणतिरूपा, जीवपरिणतिश्चामूर्ता, इत्यतो भावापेक्षया कृष्णलेश्या अगुरुलघुरेव भवतीति भाव । 'एव जाव सुक्कलेस्सा' एव यावत् शुक्ललेश्या ज्ञातव्या, 'दिट्ठी' दृष्टि 'दसण' दर्शनम् 'नाणं' ज्ञानम् 'अन्नाण' अज्ञानम् सण्णाओ' संज्ञाः 'चउत्थ पएण णेयव्वाओ' चतुर्थपदेन अगुरुलघुपदेन नेतव्या =ज्ञातव्या, 'हेट्ठिल्ला चत्तारि सरीरा णेयव्वा तईएण पएण' अधस्तनानि चत्वारि शरीराणि ज्ञातव्यानि तृतीयेन पदेन, अधस्तानि औदारिक-वैक्रियककार्मण-तैजस शरीराणि, तृतीयपदेन गुरुलघुकेन ज्ञातव्यानि, औदारिकादिचतु शरीराणाम् गुरुलघुवर्गणास्वरूपत्वात्, 'कम्मर्ण च चउत्थेणं पएणं' कार्मणं च चतुर्थेन पदेन

आदि शरीरों का जो काला रग है यह द्रव्यतः कृष्णलेश्या है। औदारिक आदि शरीर गुरुलघु होते हैं, अत कृष्णलेश्या गुरुलघु होती है। जीवों की परिणतिरूप भावलेश्या होती है। अत भावलेश्या की अपेक्षा से विचार करने पर यह कृष्णलेश्या अगुरुलघुरूप होती है। क्यों कि जीव की परिणति अमूर्त है। (एव जाव सुक्कलेस्सा) इस तरह से यावत् शुक्ललेश्या तक जानना चाहिये। (दिट्ठीदसण-णाणऽण्णाण सण्णाओ चउत्थपएणं णेयव्वाओ) तथा-दृष्टि, दर्शन, ज्ञान, अज्ञान और संज्ञा ये सब चतुर्थपद से अगुरुलघुरूप जानना चाहिये। (हेट्ठिल्ला चत्तारि सरीरा णेयव्वा तईएणं पएणं) नीचे के चार शरीर औदारिक, वैक्रिय, कार्माण और तैजस-तृतीयपद से गुरुलघुरूप जानना चाहिये। क्यों कि ये चार शरीर गुरुलघु वर्गणारूप होते हैं। (कम्मणं च चउत्थेणं पएणं)

કાળો રંગ હોય છે તે દ્રવ્યથી કૃષ્ણલેશ્યા છે ઔદારિક વગેરે શરીરો ગુરુલઘુ હોય છે, તેથી કૃષ્ણલેશ્યા પણ ગુરુલઘુ હોય છે જીવોની પરિણતિરૂપ ભાવ લેશ્યા હોય છે તેથી ભાવલેશ્યાની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો તે કૃષ્ણલેશ્યા અગુરુલઘુ રૂપ હોય છે કારણ કે જીવની પરિણતિ અમૂર્ત છે (एव जाव सुक्कलेस्सा) એ જ પ્રમાણે શુકલલેશ્યા સુધીની લેશ્યાઓ વિષે પણ સમજવુ (दिट्ठी-दसण-णाणऽण्णाणसण्णाओ चउत्थपएणं णेयव्वाओ) તથા— દૃષ્ટિ, દર્શન જ્ઞાન, અજ્ઞાન અને સંજ્ઞા, એ બધામાં ચોથા પદને ગ્રહણ કરવું જોઈએ કે તેમને અગુરુલઘુ સમજવાં. (हेट्ठिल्ला चत्तारि सरीरा णेयव्वा तईएणं पएणं) નીચેના ચાર શરીરોને ઔદારિક વૈક્રિય, આહારક તૈજસ શરીરોને ત્રીજા પદથી ગુરુલઘુરૂપ જાણવા કારણ કે તે ચારે શરીર ગુરુલઘુવર્ગણા રૂપ હોય છે (कम्मण च चउत्थेणं पएणं) કાર્મણ શરીરને અગુરુલઘુરૂપ

लेश्या खलु भदन्त ! 'किं गुरुया' किं गुरुकाः 'जाव अगुरुयलहुया' यावत् अगुरुलघुकाः, यावत्पदेन लघुकाः गुरुलघुका वेत्यस्य भंगद्वयस्य ग्रहणं कर्तव्यम् इति प्रश्नः। उत्तरयति भगवान्-'गोयमे'-त्यादि। 'गोयमा' हे गौतम ! 'णो गुरुया' नो गुरुकाः 'णो लहुया' नो लघुकाः किन्तु 'गुरुयलहुया वि' गुरुकलघुका अपि तथा 'अगुरुलहुया वि' अगुरुलघुका अपि। 'से केणट्ठेण' तत्केनार्थेन एवमुच्यते ? उत्तरयति भगवान्—'गोयमे'-त्यादि। 'गोयमा' हे गौतम ! 'दव्वलेस्सं-पडुच्च' द्रव्यलेश्यां प्रतीत्य 'तइयपएणं' तृतीयपदेन द्रव्यलेश्या-माश्रित्य कृष्णलेश्या तृतीयपदेन गुरुलघुरूपेण वाच्या। द्रव्यलेश्या पेक्षया कृष्णलेश्या गुरुलघुका भवति। द्रव्यतः कृष्णलेश्या औदारिकादिशरीर-

लघुरूप है। (कण्हलेस्साणं भंते ! किं गुरुया, जाव अगुरुयलहुया ?) हे भदन्त ! कृष्णलेश्या क्या गुरु है, अथवा लघु है, या गुरुलघु है कि अगुरुलघु है ? (गोयमा ! णो गुरुया, णो लहुया, गुरुयलहुया वि अगुरुयलहुया वि) हे गौतम ! कृष्णलेश्या न गुरु है, न लघु है, किन्तु गुरुलघु भी है और अगुरुलघु भी है। (से केणट्ठेणं०) हे भदन्त आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि कृष्णलेश्या न गुरु है, न लघु है किन्तु गुरुलघु भी है और अगुरुलघु भी है। (गोयमा ! दव्वलेस्स पडुच्च ततियपएणं, भावलेस्सं पडुच्च चउत्थपएणं) हे गौतम ! द्रव्यलेश्या की अपेक्षा से कृष्णलेश्या गुरुलघुक है और भावलेश्या की अपेक्षा से वह चतुर्थपदरूप जो अगुरुलघुक है उस स्वरूप है। कृष्णलेश्याएँ द्रव्य और भाव की अपेक्षा से दो प्रकार की होती हैं। इनमें द्रव्य की अपेक्षा कृष्ण-लेश्या औदारिक आदि शरीरों के वर्णरूप होती है। अर्थात्-औदारिक

(कण्हलेस्साण भंते ! किं गुरुया, जाव अगुरुयलहुया ?) હે ભગવન્ ! કૃષ્ણલેશ્યા ગુરુ છે, લઘુ છે, ગુરુલઘુ છે, કે અગુરુલઘુ છે ? (गोयमा ! णो गुरुया, णो लहुया, गुरुयलहुया वि अगुरुयलहुया वि) હે ગૌતમ ! કૃષ્ણલેશ્યા ગુરુ નથી, લઘુ નથી પરતુ ગુરુલઘુ છે અને અગુરુલઘુ છે (से केणट्ठणं०) હે ભગવન્ ? આપ શા કારણે એવુ કહો છો કે કૃષ્ણલેશ્યા ગુરુ પણ નથી, લઘુ પણ નથી પરતુ ગુરુલઘુ છે અને અગુરુલઘુ છે ? (गोयमा ! दव्वलेस्सं पडुच्च ततियपएणं, भावलेस्सं पडुच्च चउत्थपएण) હે ગૌતમ ! દ્રવ્યલેશ્યાની અપેક્ષાએ કૃષ્ણલેશ્યા ગુરુલઘુ છે અને ભાવલેશ્યાની અપેક્ષાએ તે અગુરુલઘુ છે અહીં ત્રીજા પદથી ગુરુલઘુ અને ચોથા પદથી અગુરુલઘુ ગ્રહણ કર્યું છે કૃષ્ણ વગેરે લેશ્યાઓ દ્રવ્ય અને ભાવની અપેક્ષાએ બે પ્રકારની હોય છે દ્રવ્યની અપેક્ષાએ કૃષ્ણલેશ્યા ઔદારિક વગેરે શરીરોના વર્ણરૂપ હોય છે, એટલે કે ઔદારિક વગેરે શરીરોનો જે

चामेव निर्विभागा अंशा, सर्वपर्यया वर्णोपयोगादयो द्रव्यधर्मा' एते सर्वे पुद्गला लास्तिकाय वद् व्यपदेश्याः गुरुत्वलघुत्वेनागुरुलघुत्वेन चेत्यर्थ एव सूक्ष्माणि अमूर्तानि च द्रव्याणि अगुरुलघूनि, इतराणि बादराणि मूर्त्तानि च गुरुलघूनि प्रदेशाः पर्यवास्तु तत्तद्रव्य संबन्धित्वेन तत्तत्स्वभावा इति। 'तीयद्धा' अतीताद्धा अतीतकाल इत्यर्थ, 'अणागयद्धा अनागताद्धा, अनागतकाल इत्यर्थः, 'सव्वद्धा' सर्वाद्धा सर्वकाल इति यावत्, चउत्थेण पएणं' चतुर्थेन पदेन अगुरुलघुकेन अतीतानागतसर्वकालाश्चतुर्थ पदेन ज्ञातव्या अगुरुलघुकाः ज्ञातव्या स्वभावत एव कालस्य गुरुत्वलघुत्वागुरुलघुत्वानाममावादित्यर्थः ॥ सू० २ ॥

अथ निर्ग्रन्थ प्रकरणम्।

इतः पूर्वप्रकरणे गुरुत्वलघुत्वयो र्विचारः कृत इति गुरुत्वलघुत्वयो प्रक्रान्तत्वाधप्रिये एव इदं सूत्रमाह—' से णूणं भंते ' इत्यादि।

मूलम्—से णूण भंते लाघवियं अपिच्छा अमुच्छा अगेही अपडिबद्धया समणाणं णिग्गंथाणं पसत्थ। हंता गोयमा!

द्रव्य हैं। इनके जो निर्विभाग अंश हैं वे प्रदेश हैं, वर्ण उपयोग आदि जो हैं वे द्रव्य के धर्म हैं। जो सूक्ष्म और अमूर्तद्रव्य हैं वे अगुरुलघु हैं और जो बादर एवं मूर्तद्रव्य हैं वे गुरुलघु हैं। प्रदेश और पर्याय ये दोनों भिन्न २ द्रव्यों के साथ रहने के कारण–तत्तद्रव्य संबधी होने से तत्तत्स्वभावरूप जानना चाहिये। (तीयद्धा अणागयद्धा, सव्वद्धा चउत्थेणं पएणं) अतीतकाल, अनागतकाल और सर्वाद्धा ये सब–चतुर्थ पद से कहना चाहिये। क्यों कि काल में स्वभावतः ही गुरुत्व, लघुत्व और गुरुलघुत्व इनका अभाव रहता है ॥ सू–२ ॥

પુદ્ગલાસ્તિકાય જેવા જ સમજવા દ્રવ્ય શબ્દથી ધર્માસ્તિકાય વગેરેને ગ્રહણ કર્યા છે, તેમના જે અવિભાજ્ય અંશ છે પ્રદેશ છે અને વર્ણ, ઉપયોગ વગેરે દ્રવ્યના ધર્મો છે જે સૂક્ષ્મ અને અમૂર્ત દ્રવ્ય છે તે અગુરુલઘુ હોય છે, અને જે બાદર (સ્થૂળ) અને મૂર્તદ્રવ્ય છે તે ગુરુલઘુ હોય છે પ્રદેશ અને પર્યાય એ બન્ને જુદા જુદા દ્રવ્યોની સાથે રહેવાને કારણે–તે તે દ્રવ્ય સબંધી હોવાને કારણે તે તે સ્વભાવરૂપ જાણવા (तीयद्धा अणागयद्धा, सव्वद्धा चउत्थेणं पएणं) અતીતકાળ (ભૂતકાળ) અનાગતકાળ (ભવિષ્યકાળ) અને સર્વાદ્ધા (વર્તમાનકાળ) એ બધાને ગુરુલઘુ કહેવા જોઈએ, કારણ કે કાળમાં સ્વભાવથી જ ગુરુત્વ, લઘુત્વ અને ગુરુલઘુત્વનો અભાવ રહે છે ॥ સૂ–૨ ॥

कार्मणशरीरस्यागुरुलघुद्रव्यात्मकत्वात् चतुर्थपदेनागुरुलघुकेनैव संग्रहसंभवात्, 'मणजोगो वयजोगो चउत्थएणं पएणं' मनोयोगो वचोयोगश्चतुर्थकेन पदेन, मनोयोगवचोयोगौ चतुर्थपदेन वक्तव्यौ तद्द्रव्याणामगुरुलघुत्वादिति, 'कायजोगो तइएणं पएणं' काययोगस्तृतीयेन पदेन, काययोगः कार्मणवर्जितस्तृतीयपदेन गुरुलघुकेन ज्ञातव्यस्तद्द्रव्याणां गुरुलघुत्वादिति 'सागारोवओगो अणागारोवओगो चउत्थपएणं' साकारोपयोगः अनाकारोपयोगश्चतुर्थपदेन इमौ द्वावपि उपयोगौ चतुर्थपदेनागुरुलघुकेन ज्ञातव्यौ, उपयोगा अरूपित्वेन अगुरुलघवो भवंति इति भावः। 'सव्वदव्वा सव्वपएसा सव्वपज्जवा जहा पोग्गलात्थिकाओ' सर्वद्रव्याणि सर्वप्रदेशाः सर्वपर्यवाः यथा पुद्गलास्तिकायः, तत्र सर्वद्रव्याणि धर्मास्तिकायादीनि सर्वप्रदेशास्ते-

कार्मणशरीर चतुर्थपद से अगुरुलघुरूप जानना चाहिये। क्यों कि वह अगुरुलघुद्रव्यात्मक होता है। (मणजोगों वइजोगो चउत्थएणं पएणं) मनयोग, वचनयोग ये दोनों चतुर्थपद जो अगुरुलघुपद है उससे कहना चाहिये। क्यों कि इनके द्रव्य अगुरुलघु होते है। काय जोगो तइएणं पएणं) काययोग तृतीयपद जो गुरुलघु पद है उससे कहना चाहिये। यहां कार्मण काययोग छोड़ देना अर्थात् वह गुरुलघुक पद से नहीं कहना चाहिये। बाकी के ६ काययोग तृतीय पद से कहना चाहिये। क्यों कि इनके द्रव्य गुरुलघु होते हैं। (सागरोवओगो अणागारोवओगो चउत्थपएणं) साकारोपयोग-ज्ञान, अनाकारोपयोग-दर्शन ये दोनों चतुर्थपद से — अगुरुलघुपद से कहना चाहिये। क्यों कि उपयोग अमूर्त्त होते हैं। इस कारण वे अगुरुलघु होते हैं।(सव्वदव्वा, सव्वपएसा, सव्वपज्जवा, जहा पोग्गलात्थिकायो) सर्वद्रव्य, सर्वप्रदेश, सर्वपर्यायें, पुद्गलास्तिकाय की तरह जानना चाहिये। धर्मास्तिकायादिक

સમજવુ, અહીં ચોથા પદથી "અગુરુલઘુ" ગ્રહણ કરાયુ છે, કારણ કે કાર્મણ શરીર અગુરુલઘુ દ્રવ્યાત્મક હોય છે (मणजोगो वइजोगो च चउत्थेणं पएण) મનોયોગ અને વચનયોગ, એ બન્નેને અગુરુલઘુ હોય છે. (कायजोगो तइएण पएणं) કાયજોગને ગુરુલઘુ કહેવો જોઈએ, અહીં કાર્મણ કાયયોગને ગ્રહણ કરવાનો નથી એટલે કે કાર્મણ કાયયોગને ગુરુલઘુ કહેવો જોઈએ નહીં બાકીના છ કાયયોગને ગુરુલઘુ કહેવા જોઈએ, કારણ કે તેમના દ્રવ્ય ગુરુલઘુ હોય છે (सागरोवओगो अणागारोवओगो चउत्थपएणं) સાકારોપયોગ-જ્ઞાન, અનાકારોપયોગ-દર્શન, એ બન્નેને અગુરુલઘુ કહેવા જોઈએ, કારણ કે ઉપયોગ અમૂર્ત્ત હોય છે, તેથી તેઓ અગુરુલઘુ હોય છે (सव्वदव्वा, सव्वपएसा, सव्वपज्जवा, जहा पोगलात्थिकायो) સર્વદ્રવ્ય, સર્વપ્રદેશ, અને સર્વપર્યાયોને

भावो लाघव लाघवमेव लाघविकम् अल्पोपधित्वं ' अपिच्छा ' अल्पेच्छा, अल्पा इच्छा अभिलाषा आहारादिषु इत्यल्पेच्छा, 'अमुच्छा' अमूर्छा, उपध्यादिरक्षणादिविषयकमूर्च्छारहितत्वम्, 'अगेही' अगृद्धिः, आहारादिषु परिभोगकाले आसक्तिरहितत्वम्। 'अपडिबद्धया' अप्रतिबद्धता=सांसारिक बन्धुबान्धवादिषु स्नेहाभावः, एतत् लाघविकाल्पेच्छाऽमूर्च्छाऽगृद्ध्यप्रतिबद्धतेति पञ्चकम् ' समणाणं ' श्रमणा नाम् 'णिग्गंथाणं' निर्ग्रन्थानाम् ' पसत्थ ' प्रशस्तम्, सुन्दरम् कल्याणकरं भवति किम् ? इति प्रश्न । भगवानाह—' हंता गोयमे ' त्यादि । ' हंता गोयमा ' हन्त हे गौतम ! ' लाघविय जाव पसत्थं ' लाघविकं यावत् प्रशस्तम्, यावत्पदेन —' अल्पेच्छाऽमूर्च्छाऽगृद्धिरप्रतिबद्धता श्रमणानां निर्ग्रन्थानाम् ' इति सङ्ग्राह्यम्। हे गौतम ! श्रमणानां निर्ग्रन्थानां लाघविकादिकं सर्वं प्रशस्तमेव, एतदेव श्रमणानां

अगिद्धि अपडिबद्धया, समणाणं निग्गंथाणं पसत्थं) लाघविक-अल्प उपधि रखने रूप लघुता, तथा अपिच्छा-आहार आदिकों में अल्पइच्छा, अमुच्छा-उपधि आदि के रक्षण करने रूप मूर्च्छासे रहितपना, अगेही आहार आदिके उपभोग कालमें अगृद्धिपन, और अप्रतिबद्धता-बांधव आदिकों के ऊपर स्नेह का अभाव होना सो ये लाघविक, अपेच्छा, अमूर्च्छा, अगृद्धि और अप्रतिबद्धता पांच बातें श्रमण निर्ग्रन्थों का कल्याण करनेवाली होती हैं क्या ? (हंता गोयमा लाघविय जाव पसत्थ) हां गौतम ! ये लाघव आदि पांच बातें श्रमण निर्ग्रन्थों का कल्याण करनेवाली होती हैं। यहां यावत् शब्द से "अल्पेच्छा, अमूर्च्छा, अगृद्धि और अप्रतिबद्धता" इनका ग्रहण हुआ है। हे गौतम ! श्रमण निर्ग्रन्थों का कल्याण करनेवाली ये लाघवादिक पांच बातें हैं। यही श्रमणों की

अगेही अपडिबद्धया समणाणं निग्गंथाणं पसत्थं ?) લાઘવિક અલ્પેચ્છા, અમૂર્છા અગૃદ્ધિ અને અપ્રતિબદ્ધતા, એ પાંચે બાબતો શું શ્રમણનિર્ગ્રંથોને માટે પ્રશસ્ત (કલ્યાણકારી) હોય છે ? એ પાંચે પદોના અર્થ નીચે મુજબ છે લાઘવિક એટલે અલ્પ ઉપધિ રાખવા રૂપ લઘુતા અપિચ્છા એટલે આહાર વગેરેની અલ્પ ઇચ્છા અમૂચ્છા એટલે ઉપધિ વગેરેની રક્ષા કરવાની આસક્તિ ન હોવી તે અગૃદ્ધિ એટલે આહાર વગેરેમા લાલસાના અભાવ, અપ્રતિબદ્ધતા એટલે સગાં સ્નેહીઓ પ્રત્યે સ્નેહ (મોહ) નો અભાવ (हता गोयमा ! लाघवियं जाव पसत्थं) હે ગૌતમ ! લાઘવ વગેરે પાચ વાતો શ્રમણનિર્ગ્રંથો માટે પ્રશસ્ત-કલ્યાણકારી ગણાય છે ' યાવત્ ' પદથી ' અલ્પેચ્છા અમૂર્છા, અગૃદ્ધિ અને અપ્રતિબદ્ધતા ગ્રહણ કરાયા છે હે ગૌતમ ! શ્રમણ નિર્ગ્રંથોનું કલ્યાણ કરનારી તે લાઘવાદિક પાંચ વાતો છે એમાં જ શ્રમણોની શ્રમણતા

लाघवियं जाव पसत्थं। से णूणं भंते ! अकोहत्तं अमायत्तं अलोभत्तं समणाणं णिग्गंथाणं पसत्थं । हंता गोयमा ! अकोहत्तं अमाणत्तं जाव पसत्थं । से णूणं भंते ! कंखपओसेणं खीणे समणे णिग्गंथे अंतकरे भवइ, अंतिमसरीरिए वा बहुमोहे वि य णं पुव्विं वि हरित्ता अहपच्छा संवुडे कालं करेइ, तओ पच्छा सिज्झइ बुज्झइ मुच्चइ सव्वे दुक्खाणं अंतंकरेइ, हंता गोयमा ! कंखपओसे खीणे जाव अंतं करेइ ॥ सू० ३ ॥

छाया—तद् नूनं भदन्त ! लाघविकम् अल्पेच्छा अमूर्च्छा अगृद्धिरप्रतिबद्धता श्रमणानां निर्ग्रन्थानाम् प्रशस्तम्? हन्त गौतम ! लाघविकं यावत् प्रशस्तम्। तद् नूनं भदन्त ! अक्रोधत्वममानत्वममायत्वमलोभत्वं श्रमणानां निर्ग्रन्थानां प्रशस्तम् ? हन्त गौतम ! अक्रोधत्वममानत्वं यावत् प्रशस्तम् । तद् नूनं भदन्त ! काँक्षाप्रदोषे क्षीणे श्रमणो निर्ग्रन्थोऽन्तकारो भवति, अंतिमशरीरको वा भवति, बहुमोहश्चापि पूर्वं विहृत्य, अथ पश्चात् संवृतः कालं करोति ततः पश्चात् सिद्धयति बुद्धयते मुच्यते परिनिर्वाति सर्वदुःखानामन्तं करोति?, हन्त गौतम ! कांक्षाप्रदोषे क्षीणे यावदन्तं करोतीति ॥ सू० ३ ॥

टीका—' से णूण भंते ! ' तद् नूनं भदन्त ! 'लाघवियं' लाघविकम् लघो-

---

निर्ग्रन्थप्रकरण—

इससे पूर्वप्रकरण में गुरुत्व और लघुत्व इनका विचार किया गया है। अतः उन्हीं का प्रकरण चलता है इस कारण उसी विषय में सूत्रकार " से णूणं भंते ! " इत्यादि सूत्र कह रहे हैं—

टीकार्थ— (भंते) हे भदन्त ! (से णूणं लाघवियं अपिच्छा, अमुच्छा

નિર્ગ્રન્થ પ્રકરણ

આ પહેલાંના પ્રકરણમા ગુરુત્વ અને લઘુત્વનો વિચાર કરવામાં આવ્યો છે એમનું જ પ્રકરણ ચાલતું હોવાથી એજ વિષયમા સૂત્રકાર " से णूणं भंते ! " ઇત્યાદિ સૂત્રો કહે છે—

' से णूण भंते ! लाघवियं अप्पिच्छा " ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—(भंते !) હે ભગવન્ ! (से णूण लाघविय अप्पिच्छा, अमुच्छा,

मत्वरताम्, साधूनामेतरस्वर्णमक्रोधरत्नादिकं मत्वस्तं तत्त्वोपादगमेव। 'से णूणं भंते' एवं नूनं भदन्त! 'कंखपओसे णं' कांक्षामदोष खलु 'खीणे' क्षीणे, विनष्टे सति, 'समणे निग्गंथे' श्रमणो निर्ग्रन्थः, 'अंतकरे भवइ' अन्तकरो भवति किम्? कांक्षाप्रदोषः कांक्षा = परदर्शनवाञ्छा, परदर्शनविषयाशक्तिर्वा, सैव महान्दोष इति कांक्षाप्रदोषः। 'अंतिमसरीरिए वा' अंतिमशरीरको वा भवति किम्? अथवा 'बहुमोह वि य णं' बहुमोहोपि च खलु भूत्वा 'पुव्विं विहरिता' पूर्व विहृत्य 'अहपच्छा' अथ पश्चात् 'संवुडेकालं करेइ' संवृतः कालं

कहने का यह है कि श्रमणों में श्रमणता तब ही आती है कि जब उनमें क्रोधादिककषायों का अभाव हो। अतः जिस प्रकार से लाघवादिकरूप प्रवृत्तियां श्रमणजनों के लिये हितावह हैं उसी प्रकार से इन लाघवादिकों की शोभा निमित्त क्रोधादिकों की अभावरूप प्रवृत्तियां भी उनके लिये हितकारक है। अतः ये सब उपादेय हैं।

(से णूणं भंते!) हे भदन्त! (कंखपओसे) कांक्षाप्रदोष (खीण) नष्ट हो जाने पर (समणे निग्गंथे) श्रमण निर्ग्रन्थ (अंतकरे भवइ) क्या अंतकर होता है? पर दर्शन विषयक आग्रहरूप वाञ्छा का नाम कांक्षा है। अथवा-परदर्शन विषयक आसक्तिरूप गृद्धि का नाम कांक्षा है। यह एक बड़ा भारी दोष है। अतः इस वाञ्छा को प्रकृष्ट दोषरूप मान कर उसे "कांक्षाप्रदोष" इस समासान्त पद द्वारा प्रकट किया गया है। (अंतिमसरीरिए वा) तथा क्या वह अन्तिमशरीर वाला होता है? (बहुमोहे वि य णं पुव्विं विहरित्ता, अहपच्छा संवुडे कालं करेइ, तओ पच्छा सिज्झइ, बुज्झइ, मुच्चइ, जाव सव्वदुक्खाणं अंतं करेइ?)

આવે ત્યારે જ આવે છે કે જ્યારે તેમનામાં ક્રોધાદિ કષાયેનો અભાવ હોય છે તેથી લાઘવાદિ રૂપ પ્રવૃત્તિયો જેવી રીતે શ્રમણોને માટે હિતકર છે, એ જ પ્રમાણે ક્રોધાદિકોના અભાવરૂપ પ્રવૃત્તિયો પણ તેમને માટે હિતકારક છે આ રીતે તે બધી પ્રવૃત્તિયો ઉપાદેય છે

(સે ણૂણં ભંતે!) હે ભદન્ત! (કંખપઓસે ખીણે સમણે નિગ્ગંથે અંતકરે ભવઈ?) કાંક્ષાપ્રદોષ નાશ પામે ત્યારે શું શ્રમણ નિર્ગ્રંથ અંતકર થાય છે? બીજા પ્રકારના વિષયક આગ્રહરૂપ વાંછા (અભિલાષા) નું નામ કાંક્ષા છે અથવા બીજા દર્શન વિષયક આસક્તિનું નામ કાંક્ષા છે. તે ઘણો મોટો દોષ ગણાય છે તે કાંક્ષાને પ્રકૃષ્ટ દોષરૂપ માનીને તેને માટે "કાંક્ષાપ્રદોષ" શબ્દનો પ્રયોગ કર્યો છે (અંતિમ સરીરએ વા) શું તે શ્રમણ અંતિમ શરીરી થાય છે? (બહુમોહે વિ ય ણં પુવ્વિં વિહરિત્તા, અહ પચ્છા

श्रमणत्वम्, तच्च क्रोधाद्यभावमन्तरेण न संभवति अतः क्रोधाद्यभावस्य प्राशस्त्य सूचनार्थमाह—'से णूणं भंते' इत्यादि। 'से णूणं भंते' तद् नूनं भदन्त! 'अकोहत्तं' अक्रोधत्वम् क्रोधराहित्यम् 'अमाणत्तं' अमानत्व मानरहितत्वं, 'अमायत्तं' अमायत्वं, मायाविवर्जितत्वम्, 'अलोभत्तं' अलोभत्वम्, लोभरहितत्वम्। एतत्सर्वं 'समणाणं' श्रमणानाम् 'णिग्गंथाणं' निर्ग्रन्थानाम् 'पसत्थं' प्रशस्तं किम्' भगवानाह—'हंता गोयमे' इत्यादि। 'हंता गोयमा' हन्त हे गौतम! 'अकोहत्तं-अमाणत्तं जाव पसत्थं' अक्रोधत्वममानत्वं यावत्

श्रमणता है। तात्पर्य कहने का यह है कि निर्ग्रन्थश्रमणजनों में ही ये पूर्वोक्त बातें देखने में आती हैं अन्यत्र नहीं। उनमें ये सब बाते इस लिये कहने में आती है कि वे इनका मन, वचन, काया से पालन करते हैं, इनके पालन करने का उनका उद्देश्य यही है कि ये सब बातें उनके लिये हितकर हैं। अतः प्रभु गौतम को समझाते है कि हे गौतम! श्रमण निर्ग्रन्थों की ये लाघवादिक सब ही प्रवृत्तियां प्रशस्त ही होती है। श्रमणों की श्रमणता इसी में समाई हुई है। साथ २ में यह श्रमणता और किन २ बातों से सम्बन्ध रखती है-सो भी प्रभु गौतम को समझाने के लिये उनके प्रश्न करने पर प्रकट करते हैं-(से णूणं भंते! अकोहत्तं, अमाणत्तं अमायत्तं अलोभत्तं समणाणं णिग्गथाणं पसत्थं) हे भदन्त! क्रोध करने से रहित होना, मान करने से रहित होना माया करने से रहित होना, लोभ करने से रहित होना सो ये सब प्रवृत्तियां निर्ग्रन्थ श्रमण जनों के लिये हितकर होती हैं। तात्पर्य

છે. ફલિતાર્થ એ છે કે નિર્ગ્રંથ શ્રમણોમા જ એ પૂર્વોક્ત પાચ બાબતો જોવામાં આવે છે બીજે જોવામા આવતી નથી. શ્રમણ નિર્ગ્રંથોમા જ એ પાચે વાતોના દર્શન થાય છે કારણ કે તેઓ મન, વચન, અને કાયાથી તેમનું પાલન કરે છે. તેઓનો તેમનું પાલન કરવા પાછળનો ઉદ્દેશ એ છે કે એ પાંચે વાત તેમને માટે હિતકારી છે. તેથી જ મહાવીર પ્રભુ ગૌતમ સ્વામીને કહે છે કે તેમની લાઘવાદિક સઘળી પ્રવૃત્તિયો પ્રશસ્ત જ હોય છે શ્રમણોની શ્રમણુતા એમાં જ રહેલી છે એ શ્રમણુપણું બીજી કઇ કઇ વાતો સાથે સબધ રાખે છે, તે વાત ગૌતમને સમજાવવા માટે, તેમના પ્રશ્નના ઉત્તર રૂપે સમજાવે છે–(से णूण भते! अकोहत्तं, अमाणत्तं, अमायत्तं, अलोभत्त, समणाण णिग्गंथाण पसत्थं ?) હે ભગવન્! અક્રોધ (ક્રોધનો અભાવ) અમાન (માનનો અભાવ) અમાયા (માયાથી રહિત હોવું) અને અલોભ (લોભનો અભાવ) એ બધા ગુણો શુ શ્રમણ નિર્ગ્રંથોને માટે હિતકર હોય છે? તાત્પર્ય એ છે કે શ્રમ-

अथान्यमतविषये प्रश्नोत्तरम्—

इतः पूर्वं कांक्षाप्रदोषः कथित, स च कांक्षाप्रदोषो महान् दोषः। तस्य कांक्षाप्रदोषस्य दोषत्वं दर्शनान्तरस्य विपरीततया समवतीति दर्शनान्तरस्य विपरीतरूपतां दर्शयन्नाह–' अण्ण उत्थिया ' इत्यादि।

मूलम्—अण्णउत्थिया णं भंते! एव आइक्खंति एव भासंति एव पण्णवेंति एव परूवेंति, एव खलु एगे जीवे एगेणं समयणं दो आउयाइ पकरेइ, त जहा–इहभविया उय च परभवियाउय च। ज समय इहभवियाउय पगरेइ, त समय परभवियाउय पकरेइ, ज समय परभवियाउयं पकरेइ, त समय इहभवियाउय पकरेइ, इहभवियाउयस्स पकरणयाए परभवियाउय पकरेइ,परभवियाउयस्स पकरणयाए इहभवियाउय पकरेइ, एव खलु एगे जीवे एगेण समएणं दो आउयाइ पकरेइ, त जहा–इहभवियाउय च परभवियाउय च से कहमेय भंते! एव? गोयमा! ज णं त अण्ण उत्थिया एव आइक्खति जाव परभवियाउय च, जे ते एव आहसु मिच्छा ते एव आहसु अह पुण गोयमा! एव आइक्खामि जाव परूवेमि, एव खलु एगे जीवे एगेणं समएणं एगं आउय पकरेइ, त जहा इहभवियाउय वा परभवियाउय वा ज समय इहभवियाउय पकरेइ, णो त समय परभवियाउय पकरेइ, ज समय परभवियाउय पकरेइ णो त समय इहभविया उय पकरेइ इह भवियाउयस्स पकरणयाए णो परभवियाउय पकरेइ, परभवियाउयस्स पकरणयाए णो इहभवियाउयं पकरेइ एव खलु एगे जीवे एगेणं समयणं एग आउय

करोति, संवृतः=संवरं प्राप्तः सन् कालं करोति म्रियते, 'तओ पच्छा' ततः पश्चात् 'सिज्झइ' सिद्ध्यति, सिद्धिप प्राप्नोति ? 'बुज्झइ' बुद्ध्यते, बोधं केवलज्ञानमाप्नोति, 'मुच्चइ' मुच्यते, ज्ञानावरणीयादि कर्मकात् निवृत्तो भवति, 'जाव अंतंकरेइ' यावदन्त करोति यावत्पदेन 'परिनिव्वाइ सव्वदुक्खाण' इति संग्रहः। परिनिर्वाति=कर्म संतापराहित्येन शीतली भवति, सर्वदुःखानां=शारीर-मानसिकदुःखानाम् अन्तं करोति किम्? भगवानाह—'हंते' त्यादि। 'हता गोयमा' हन्त हे गौतम! 'कंखपओसे खीणे' कांक्षाप्रदोषे क्षीणे सति 'जाव अंतं करेइ' यावदन्तं करोति, यस्य कांक्षा प्रदोषो विनष्टो जात स सिद्धो बुद्धः मुक्तः परिनिर्वान्तः सर्वदुःखान्तकरश्च भवतीति भावः ॥ सू० ३ ॥

॥ इति निर्ग्रन्थप्रकरणम् ॥

अथवा-पहिले वह बहुत मोहवाला होकर विहार करे और बाद में संवर से युक्त होकर मर जावे, तो क्या वह सिद्ध होता है, बुद्ध होता है? मुक्त होता है? यावत् समस्त दुःखों का अंत करता है? सिद्धि-पद को प्राप्त होना इसका नाम सिद्ध होना है। केवल ज्ञान को प्राप्त करना इसका नाम बुद्ध होना है। संसार सागर से निवृत्त होना इसका नाम मुक्त होना है। शारीरिक, मानसिक दुःखों का अन्त करना इसका नाम सर्व दुःखान्तकर है। यहां यावत् पदसे "परिनिव्वाइ" इस पद का संग्रह हुआ है। कर्म संताप से रहित होकर शीतली भूत होना इसका अर्थ है। (हंता गोयमा! कंखपओसे खीणे जाव अंतं करेइ) हां गौतम! कांक्षा प्रदोष नष्ट होने पर-श्रमण निर्ग्रन्थ सिद्ध होता है, बुद्ध होता है मुक्त होता है, परिनिर्वात होता है और सर्व दुःखों का अन्त करनेवाला होता है ॥ सू-३ ॥

संवुडे कालं करेइ, तओ पच्छा सिज्झइ, बुज्झइ, मुच्चइ, जाव सव्वदुक्खाण अंतं करेइ?) અથવા-પહેલા તે શ્રમણ ઘણા જ મોહયુક્ત થઈને વિચરતા હોય, પણ ત્યાર બાદ સવૃત થઈને (સવર યુક્ત થઈને) મરણ પામે તો શું તે સિદ્ધ થાય છે, બુદ્ધ થાય છે, મુક્ત થાય છે? પરિનિર્વૃત થાય છે? અને તમામ દુઃખોનો અત કરે છે? સિદ્ધિપદ (મોક્ષ) પ્રાપ્ત કરવું એટલે સિદ્ધ થવું. કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરવું એટલે બુદ્ધ થવું સંસાર સાગરને તરી જવો એટલે મુક્ત થવું. કર્મસંતાપથી રહિત થઇને શીતલીભૂત થવુ એટલે પરિનિર્વૃત થવુ, અને શારીરિક તથા માનસિક દુખોનો નાશ કરવો એટલે સર્વ દુઃખાન્તકર થવુ

(हता गोयमा! कंखपओसे खीणे जाव अंत करेइ) હા ગૌતમ! કાંક્ષાપ્રદો-ષનો નાશ થવાથી શ્રમણ નિર્ગ્રથ સિદ્ધપદ પામે છે, બુદ્ધ બને છે, મુક્ત થાય છે, પરિનિર્વૃત થાય છે અને તમામ દુખોનો અંત કરનાર બને છે. ॥સૂ૦ ૩॥

अथान्यमतविषये प्रश्नोत्तरम्—

इत' पूर्व कांक्षाप्रदोपः कथित, स च कांक्षाप्रदोषो महान् दोषः। तस्य कांक्षाप्रदोषस्य दोषत्वं दर्शनान्तरस्य विपरीततया समवतीति दर्शनान्तरस्य विपरीतरूपता दर्शयन्नाह–' अण्ण उत्थिया ' इत्यादि।

मूलम्—अण्णउत्थिया णं भंते ! एव आइक्खंति एव भासंति एव पण्णवेंति एव परूवेंति, एव खलु एगे जीवे एगेणं समयणं दो आउयाइ पकरेइ, त जहा–इहभविया उय च परभवियाउय च। ज समय इहभवियाउय पगरेइ, त समय परभवियाउय पकरेइ, ज समय परभवियाउयं पकरेइ, त समय इहभवियाउय पकरेइ, इहभवियाउयस्स पकरणयाए परभवियाउय पकरेइ,परभवियाउयस्स पकरणयाए इहभवियाउय पकरेइ, एव खलु एगे जीवे एगेण समएणं दो आउयाइ पकरेइ, त जहा–इहभवियाउय च परभवियाउय च से कहमेय भंते! एव? गोयमा ! ज णं त अन्न उत्थिया एव आइक्खंति जाव परभवियाउय च, जे ते एव आहसु मिच्छा ते एव आहसु अह पुण गोयमा ! एव आइक्खामि जाव परूवेमि, एव खलु एगे जीवे एगेणं समयणं एगं आउय पकरेइ, त जहा इहभवियाउय वा परभवियाउय वा ज समय इहभवियाउय पकरेइ, णो त समय परभवियाउय पकरेइ, ज समय परभवियाउय पकरेइ णो त समय इहभविया उय पकरेइ इह भवियाउयस्स पकरणयाए णो परभवियाउय पकरेइ, परभवियाउयम्स पकरणयाए णो इहभवियाउय पकरेइ एव खलु एगे जीव एगेणं समयणं एग आउय

पकरेइ, तं जहा-इहभवियाउयं वा परभवियाउयं वा, सेवं भंते त्ति भगवं गोयमे जाव विहरइ ॥ सू० ४ ॥

छाया—अन्ययूथिकाः खलु भदन्त ! एवमाख्यान्ति, एवं भाषंते, एवं प्रज्ञापयन्ति, एवं प्ररूपयंति, एवं खलु एको जीव एकेन समयेन द्वे आयुषी प्रकरोति, तद्यथा -- इहभविकायुष्कं च परभविकायुष्कं च य समयं इहभविकायुष्कं प्रकरोति, तं समयं परभविकायुष्कं प्रकरोति, यं समयं परभविकायुष्कं प्रकरोति त समयम् इहभविकायुष्कं प्रकरोति, इहभविकायुष्कस्य प्रकरणतया परभविकायुष्कं प्रकरोति परभविकायुष्कस्य प्रकरणतयेहभविकायुष्कं प्रकरोति, एवं खलु एको जीवः एकेन समयेन द्वे आयुषी प्रकरोति तद्यथा-इहभविकायुष्कं च परभविकायुष्कं च, तत् कथमेतद् भदन्त ! एवम् ? । गौतम ! यत् ते अन्ययूथिका एवमाख्याति यावत् परभविकायुष्कं च, ये ते एवमाहुः, मिथ्या ते एवमाहुः, अहं पुन र्गौतम ! एवमाख्यामि यावत् प्ररूपयामि एवं खलु एको जीव एकेन समयेन एकमायुष्कं प्रकरोति तद्यथा-इहभविकायुष्कं वा परभविकायुष्कं वा । य समयमिहभविकायुष्कं प्रकरोति नो तं समयं परभविकायुष्कं प्रकरोति, यं समयं परभविकायुष्कं प्रकरोति, नो तं समयमिहभविकायुष्कं प्रकरोति, इहभविकायुष्कस्य प्रकरणतया नो परभविकायुष्कं प्रकरोति, परभविकायुष्कस्य प्रकरणतया नो इह भविकायुष्कं प्रकरोति, एवं खलु एको जीव एकेन समयेनैकमायुष्कं प्रकरोति, तद्यथा—इहभविकायुष्कं वा परभविकायुष्कं वा, तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति भगवान् गौतमो यावद्विहरति ॥ सू०४ ॥

टीका—'अण्णउत्थिया णं भंते !' अन्य यूथिकाः खलु भदन्त ! 'एवं आइक्खंति' एवं—वक्ष्यमाणप्रकारेण आख्यान्ति सामान्यरूपेण कथयन्ति, 'एवं भासंति' एव भाषन्ते विशेषरूपेण कथयन्ति, 'एवं पण्णवेंति' एवं प्रज्ञा-

अन्यमतविषय में प्रश्नोत्तर—

इससे पहिले कांक्षाप्रदोष कहा जा चुका है और यह कहा गया है कि यह एक महान् दोष है। इस कांक्षा प्रदोष (पर दर्शन की वांछा) में दोषरूपता दर्शनान्तर की विपरीतता से ही संभवती है-अतः दर्श-

અન્યમત વિષયમાં પ્રશ્નોત્તર

આ પહેલા કાંક્ષાપ્રદોષનુ નિરૂપણ કરવામા આવ્યુ અને તેને મહાન દોષરૂપ બતાવવામા આવ્યો આ કાક્ષાપ્રદોષ (પરદર્શનની વાછા) મા બીજા દર્શનની વિપરીતતાને લીધે જ દોષપણુ સભવે છે. તેથી બીજા દર્શનોમાં

पयन्ति, उपपत्तिद्वारेण ' एवं परूवेंति ' एवं प्ररूपयन्ति, प्ररूपणां कुर्वन्ति भेद कथनत , किमित्याह-एव खलु एगे जीवे ' एव खलु एको जीवः ' एगेण समएणं ' एकेन समयेन ' दो आउयाइं ' द्वे आयुषी, आयुर्द्वय ' पकरेइ ' प्रकरोति =बध्नाति, जीवो नाम स्वपर्याय समूहरूपः स च पर्यायसमुदायात्मको जीवो यदा एकमायुःपर्याय करोति तदाऽन्यमपि पर्याय करोत्येव स्वपर्यायत्वाविशेषात् ज्ञानसम्यक्त्वादिपर्यायवत् स्वपर्यायस्य कर्ता जीव एवेति स्वीकर्तव्यमेव अन्यथा

नान्तर में विपरीतरूपता दिखाने के निमित्त सूत्रकार कहते हैं—
' अण्ण उत्थिया णं भंते ! ' इत्यादि ।

टीकार्थ—(अण्णउत्थियाणं भंते!) हे भदन्त! अन्ययूथिकजन-दूसरे तीर्थिकजन (एव माइक्खंति) इस प्रकार से सामान्यरूप से कहते हैं (एव भासति) इस प्रकार से विशेषरूप से कहते हैं । (एव पण्णवेंति) (युक्तियों द्वारा इस प्रकार से समझाते हैं (भेदों के कथनपूर्वक वे इस प्रकार से प्ररूपणा करते हैं-(एव खलु) कि-(एगे जीवे एगेणं समएणं) एक जीव एक समय में (दो आउयाइ) दो आयुओं का (पकरेइ) बंध करता है । इस विषय में उनका ऐसा कहना है कि-जीव जो है वह अपनी पर्यायों का एक समूहरूप है। अत यह पर्यायसमूहरूप जीव जिस समय एक आयुरूप पर्याय को करता है, उसी समय वह दूसरी भी आयुरूप पर्याय को करता ही है । क्यों कि स्वपर्यायत्व की उसमें अविशेषता है। ज्ञान सम्यक्त्व आदि स्वपर्याय की तरह। तात्पर्य कहने

વિપરીતતા બતાવવાને માટે સૂત્રકાર સૂત્ર કહે છે

ટીકાર્થ— ' अण्ण उत्थिया णं भंते ! ' ઇત્યાદિ

(अण्ण उत्थिया णं भंते !) હે ભગવન્ ! અન્ય યૂથિકજન-અન્ય તીર્થિકો અન્ય મતને માનનારા લોકો (एव माइक्खंति) આ પ્રમાણે સામાન્ય રીતે કહે છે, (एव भासंति) આ પ્રમાણે વિશેષરૂપે કહે છે, (एव पण्णवेंति) યુક્તિઓ વડે આ પ્રમાણે સમજાવે છે (एव परूवेंति) ભેદોના કથન પૂર્વક આ પ્રમાણે પ્રરૂપણા કરે છે કે-(एव खलु एगे जीवे एगेणं समएणं दो आउयाई पकरेइ) એક જીવ એક જ સમયે બે આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે આ વિષયમા પરધર્મીઓની માન્યતા એવી છે કે-જીવ પોતાની પર્યાયોના એક સમૂહરૂપ છે તેથી પર્યાયસમૂહરૂપ જીવ જે સમયે એક આયુષ્યરૂપ પર્યાય કરે છે એ જ સમયે તે બીજી આયુષ્યરૂપ પર્યાય પણ કરે છે કારણ કે જ્ઞાન સમ્યક્ત્વ વગેરે સ્વપર્યાયની જેમ તેનામા સ્વપર્યાયપણાની અવિશેષતા છે.

पकरेइ, तं जहा-इहभवियाउयं वा परभवियाउयं वा, सेवं भंते त्ति भगवं गोयमे जाव विहरइ ॥ सू० ४ ॥

छाया—अन्ययूथिकाः खलु भदन्त ! एवमाख्यान्ति, एवं भाषंते, एवं प्रज्ञापयन्ति, एवं प्ररूपयंति, एवं खलु एको जीव एकेन समयेन द्वे आयुषी प्रकरोति, तद्यथा — इहभविकायुष्कं च परभविकायुष्कं च य समयं इहभविकायुष्कं प्रकरोति, तं समयं परभविकायुष्कं प्रकरोति, यं समयं परभविकायुष्कं प्रकरोति त समयम् इहभविकायुष्कं प्रकरोति, इहभविकायुष्कस्य प्रकरणतया परभविकायुष्कं प्रकरोति परभविकायुष्कस्य प्रकरणतयेहभविकायुष्कं प्रकरोति, एवं खलु एको जीवः एकेन समयेन द्वे आयुषी प्रकरोति तद्यथा-इह भविकायुष्कं च परभविकायुष्कं च, तत् कथमेतद् भदन्त ! एवम् ? । गौतम ! यत् ते अन्ययूथिका एवमाख्याति यावत् परभविकायुष्कं च, ये ते एवमाहुः, मिथ्या ते एवमाहुः, अहं पुन र्गौतम ! एवमाख्यामि यावत् प्ररूपयामि एवं खलु एको जीव एकेन समयेन एकमायुष्कं प्रकरोति तद्यथा-इहभविकायुष्कं वा परभविकायुष्कं वा । य समयमिहभविकायुष्कं प्रकरोति नो तं समयं परभविकायुष्कं प्रकरोति, यं समयं परभविकायुष्कं प्रकरोति, नो तं समयमिहभविकायुष्कं प्रकरोति, इहभविकायुष्कस्य प्रकरणतया नो परभविकायुष्कं प्रकरोति, परभविकायुष्कस्य प्रकरणतया नो इह भविकायुष्कं प्रकरोति, एवं खलु एको जीव एकेन समयेनैकमायुष्कं प्रकरोति, तद्यथा—इहभविकायुष्कं वा परभविकायुष्कं वा, तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति भगवान् गौतमो यावद्विहरति ॥ सू०४ ॥

टीका—'अण्णउत्थिया णं भंते !' अन्य यूथिकाः खलु भदन्त ! 'एवं आइक्खंति' एवं—वक्ष्यमाणप्रकारेण आख्यान्ति सामान्यरूपेण कथयन्ति, 'एवं भासंति' एव भाषन्ते विशेषरूपेण कथयन्ति, 'एवं पण्णवेति' एवं प्रज्ञा-

---

अन्यमतविषय में प्रश्नोत्तर—

इससे पहिले कांक्षाप्रदोष कहा जा चुका है और यह कहा गया है कि यह एक महान् दोष है । इस कांक्षा प्रदोष (पर दर्शन की वांछा) में दोषरूपता दर्शनान्तर की विपरीतता से ही संभवती है-अतः दर्श-

---

અન્યમત વિષયમા પ્રશ્નોત્તર

આ પહેલા કાક્ષાપ્રદોષનુ નિરૂપણ કરવામા આવ્યુ અને તેને મહાન દોષરૂપ બતાવવામા આવ્યો. આ કાક્ષાપ્રદોષ (પરદર્શનની વાછા) મા બીજા દર્શનની વિપરીતતાને લીધે જ દોષપણુ સભવે છે. તેથી બીજા દર્શનોમાં

पयन्ति, उपपत्तिद्वारेण 'एवं परूवे ति' एव प्ररूपयन्ति, प्ररूपणां कुर्वन्ति भेद कथनतः, किमित्याह–एव खलु एगे जीवे' एव खलु एको जीवः 'एगेण सम एण' एकेन समयेन 'दो आउयाइ' द्वे आयुषी, आयुर्द्वयं 'पकरेइ' प्रकरोति =बध्नाति, जीवो नाम स्वपर्याय समूहरूप स च पर्यायसमुदायात्मको जीवो यदा एकमायुःपर्याय करोति तदाऽन्यमपि पर्यायं करोत्येव स्वपर्यायत्वाविशेषात् ज्ञानसम्यक्त्वादिपर्यायवत् स्वपर्यायस्य कर्ता जीव एवेति स्वीकर्तव्यमेव अन्यथा

नान्तर में विपरीतरूपता दिखाने के निमित्त सूत्रकार कहते हैं–
'अण्ण उत्थिया णं भंते!' इत्यादि।

टीकार्थ–(अण्णउत्थियाण भंते!) हे भदन्त! अन्ययूथिकजन–दूसरे तीर्थिकजन (एवं आइक्खंति) इस प्रकार से सामान्यरूप से कहते हैं (एव भासंति) इस प्रकार से विशेषरूप से कहते हैं। (एवं पण्णवेंति) (युक्तियों द्वारा इस प्रकार से समझाते हैं (भेदों के कथनपूर्वक वे इस प्रकार से प्ररूपणा करते हैं–(एव खलु) कि–(एगे जीवे एगेणं समएणं) एक जीव एक समय में (दो आउयाइ) दो आयुओं का (पकरेइ) बंध करता है। इस विषय में उनका ऐसा कहना है कि–जीव जो है वह अपनी पर्यायों का एक समूहरूप है। अत यह पर्यायसमूहरूप जीव जिस समय एक आयुरूप पर्याय को करता है, उसी समय वह दूसरी भी आयुरूप पर्याय को करता ही है। क्यों कि स्वपर्यायत्व की उसमें अविशेषता है। ज्ञान सम्यक्त्व आदि स्वपर्याय की तरह। तात्पर्य कहने

વિપરીતતા બતાવવાને માટે સૂત્રકાર સૂત્ર કહે છે
ટીકાર્થ— 'अण्ण उत्थिया णं भंते!' ઈત્યાદિ
(अण्ण उत्थिया णं भंते!) હે ભગવન્! અન્ય યૂથિકજન–અન્ય તીર્થિકો અન્ય મતને માનનારા લોકો (एव आइक्खंति) આ પ્રમાણે સામાન્ય રીતે કહે છે (एव भासंति) આ પ્રમાણે વિશેષરૂપે કહે છે (एव पण्णवेंति) યુક્તિઓ વડે આ પ્રમાણે સમજાવે છે (एव परूवेंति) ભેદોના કથન પૂર્વક આ પ્રમાણે પ્રરૂપણા કરે છે કે–(एव खलु एगे जीवे एगेणं समएणं दो आउयाइं पकरेइ) એક જીવ એક જ સમયે બે આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે આ વિષયમા પરધર્મીઓની માન્યતા એવી છે કે–જીવ પોતાની પર્યાયોના એક સમૂહરૂપ છે તેથી પર્યાયસમૂહરૂપ જીવ જે સમયે એક આયુષ્યરૂપ પર્યાય કરે છે એ જ સમયે તે બીજી આયુષ્યરૂપ પર્યાય પણ કરે છે કારણ કે જ્ઞાન સમ્યક્ત્વ વગેરે સ્વપર્યાયની જેમ તેનામા સ્વપર્યાયપણાની અવિશેષતા છે

सिद्धत्वादिपर्यायाणामुत्पादाभाव एव स्यादिति भावः । 'तं जहा' तद्यथा-' इह भवियाउयं च परभवियाउयं च' इहभविकायुष्कं च परभविकायुष्कं च, तदेव स्पष्टयति—'जं समयं' इत्यादि । 'जं समयं इहभवियाउयं पकरेइ' यं समयमा-

का यह है कि जिस तरह जीव आयुरूप पर्याय को करते समय ज्ञान सम्यक्त्व आदि अपनी पर्यायों करता है उस एक ही समय में उनके करने में कोई बाधा नहीं आती है क्यों कि वे उसकी पर्यायें हैं इसी प्रकार से एक ही जीव एक ही समय में दो आयुकर्मों का बंध करता है। इसमें भी कोई बाधा नहीं आती है। कारण-जैसे एक आयुकर्मका करना उसकी पर्याय है उसी प्रकारसे उसी समयमें दूसरी आयुकर्मका करना उसकी पर्याय है। इस कथनसे यह बात समझमें आ जाती है कि जीव ही अपनी पर्यायों का कर्त्ता है। यदि जीव अपनी पर्यायों का कर्त्ता न माना जावे तो फिर सिद्धत्व आदि पर्यायों का कभी उत्पाद ही नहीं हो सकने के कारण उनका अभाव ही हो जावेगा। इस दो आयुओं को एक समय में करने की बात को अब और विशेषरूप से स्फुट करने के लिये उन्हीं की तरफ से सूत्रकार कहते है कि-(तं जहा) उनके मन्तव्यानुसार एक ही समयमें एक ही जीव इन दो आयुओंको इस प्रकार से करता है (इह भवियाउयं च परभवियाउयं च) एक इसभव सम्बन्धी आयुको और दूसरी परभव सम्बन्धी आयुको। (जं समयं इहभवियाउयं

તાત્પર્ય એ છે કે જેવી રીતે જે સમયે જીવ; આયુષ્યરૂપ પર્યાયને કરતી વખતે જ્ઞાન સમ્યકત્વ વગેરે પોતાની પર્યાયોને પણ કરે છે-તો એ એક જ સમયે તે બધી પર્યાયો કરવામા જેમ વાધો નડતો નથી, કારણ કે તે તેની પર્યાયો છે, એજ પ્રમાણે એક જ જીવ એક જ સમયે બે આયુષ્યનો પણ બંધ કરે છે એમ કરવામાં કોઈ મુશ્કેલી નડતી નથી કારણ કે એક આયુષ્ય કર્મ કરવું એ જેમ તેની પર્યાય છે, એજ પ્રમાણે એજ સમયે બીજુ આયુષ્યકર્મ કરવું એ પણ તેની પર્યાય જ છે આ કથનથી એ વાત સ્પષ્ટ સમજાય છે કે જીવ પોતે જ પોતાની પર્યાયોનો કર્ત્તા છે. જો જીવને પોતાની પર્યાયોનો કર્ત્તા માનવામા ન આવે તો સિદ્ધત્વ વગેરે પર્યાયોની ક્યારેય પણ ઉત્પત્તિ ન થઈ શકવાને કારણે તેનો અભાવ જ માનવો પડે હવે બે આયુષ્યો એક જ સમયે કરવાના વિષયનું વિશેષ સ્પષ્ટીકરણ કરવા માટે સૂત્રકાર કહે છે કે (तं जहा) અન્ય ધર્મીઓના કથનાનુસાર એક જ સમયે એક જ જીવ બે આયુષ્યનો બંધ આ રીતે કરે છે-(इहभवियाउयं च परभवियाउयं च) એક આ ભવ સંબંધી આયુષ્યનો અને બીજો પરભવ સંબંધી આયુષ્યનો બંધ (जं समयं इहभविया यं

पयन्ति, उपपत्तिद्वारेण ' एवं परूवे ति ' एवं प्ररूपयन्ति, प्ररूपणा कुर्वन्ति भेद कथनतः, किमित्याह–एवं खलु एगे जीवे ' एवं खलु एको जीवः ' एगेणं सम एणं ' एकेन समयेन ' दो आउयाइं ' द्वे आयुषी, आयुर्द्वयं ' पकरेइ ' प्रकरोति =बध्नाति, जीवो नाम स्वपर्याय समूहरूपः स च पर्यायसमुदायात्मको जीवो यदा एकमायुःपर्यायं करोति तदाऽन्यमपि पर्यायं करोत्येव स्वपर्यायत्वाविशेषात् ज्ञानसम्यक्त्वादिपर्यायवत् स्वपर्यायस्य कर्ता जीव एवेति स्वीकर्तव्यमेव अन्यथा

नान्तर में विपरीतरूपता दिखाने के निमित्त सूत्रकार कहते हैं–

' अण्ण उत्थिया णं भंते ! ' इत्यादि ।

टीकार्थ–(अण्णउत्थियाणं भंते!) हे भदन्त! अन्ययूथिकजन–दूसरे तीर्थिकजन (एवं आइक्खंति) इस प्रकार से सामान्यरूप से कहते हैं (एवं भासंति) इस प्रकार से विशेषरूप से कहते हैं। (एवं पण्णवेंति) (युक्तियों द्वारा इस प्रकार से समझाते हैं (भेदों के कथनपूर्वक वे इस प्रकार से प्ररूपणा करते हैं–(एवं खलु) कि–(एगे जीवे एगेणं समएणं) एक जीव एक समय में (दो आउयाइ) दो आयुओं का (पकरेइ) बंध करता है। इस विषय में उनका ऐसा कहना है कि–जीव जो है वह अपनी पर्यायों का एक समूहरूप है। अत वह पर्यायसमूहरूप जीव जिस समय एक आयुरूप पर्याय को करता है, उसी समय वह दूसरी भी आयुरूप पर्याय को करता ही है। क्यों कि स्वपर्यायत्व की उसमें अविशेषता है। ज्ञान सम्यक्त्व आदि स्वपर्याय की तरह। तात्पर्य कहने

વિપરીતતા બતાવવાને માટે સૂત્રકાર સૂત્ર કહે છે

ટીકાર્થ— અણ્ણ ઉત્થિયા णं भंते ! ' ઇત્યાદિ

(अण्ण उत्थिया णं भंते !) હે ભગવન્ ! અન્ય યૂથિકજન–અન્ય તીર્થિકો અન્ય મતને માનનારા લોકો (एवं आइक्खंति) આ પ્રમાણે સામાન્ય રીતે કહે છે (एवं भासंति) આ પ્રમાણે વિશેષરૂપે કહે છે, (एवं पण्णवेंति) યુક્તિયો વડે આ પ્રમાણે સમજાવે છે (एवं परूवेंति) ભેદોના કથન પૂર્વક આ પ્રમાણે પ્રરૂપણા કરે છે કે–(एवं खलु एगे जीवे एगेणं समएणं दो आउ याई पकरेइ) એક જીવ એક જ સમયે બે આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે આ વિષયમાં પરધર્મીઓની માન્યતા એવી છે કે–જીવ પોતાની પર્યાયોના એક સમૂહરૂપ છે તેથી પર્યાયસમૂહરૂપ જીવ જે સમયે એક આયુષ્યરૂપ પર્યાય કરે છે એ જ સમયે તે બીજી આયુષ્યરૂપ પર્યાય પણ કરે છે કારણ કે જ્ઞાન સમ્યક્ત્વ વગેરે સ્વપર્યાયની જેમ તેનામાં સ્વપર્યાયપણાની અવિશેષતા છે

सिद्धत्वादिपर्यायाणामुत्पादाभाव एव स्यादिति भावः । 'तं जहा' तद्यथा-' इह भवियाउयं च परभवियाउयं च' इहभविकायुष्कं च परभविकायुष्कं च, तदेव स्पष्टयति—' जं समयं ' इत्यादि । ' जं समयं इहभवियाउयं पकरेइ' यं समयमा-

का यह है कि जिस तरह जीव आयुरूप पर्याय को करते समय ज्ञान सम्यक्त्व आदि अपनी पर्यायों करता है उस एक ही समय में उनके करने में कोई बाधा नहीं आती है क्यों कि वे उसकी पर्यायें हैं इसी प्रकार से एक ही जीव एक ही समय में दो आयुकर्मों का बंध करता है। इसमें भी कोई बाधा नहीं आती है। कारण-जैसे एक आयुकर्मका करना उसकी पर्याय है उसी प्रकारसे उसी समयमें दूसरी आयुकर्मका करना उसकी पर्याय है। इस कथनसे यह बात समझमें आ जाती है कि जीव ही अपनी पर्यायों का कर्त्ता है। यदि जीव अपनी पर्यायों का कर्त्ता न माना जावे तो फिर सिद्धत्व आदि पर्यायों का कभी उत्पाद ही नहीं हो सकने के कारण उनका अभाव ही हो जावेगा। इस दो आयुओं को एक समय में करने की बात को अब और विशेषरूप से स्फुट करने के लिये उन्हीं की तरफ से सूत्रकार कहते है कि-(तं जहा) उनके मन्तव्यानुसार एक ही समयमें एक ही जीव इन दो आयुओंको इस प्रकार से करता है (इह भवियाउयं च परभवियाउयं च) एक इसभव सम्बन्धी आयुको और दूसरी परभव सम्बन्धी आयुको। (जं समयं इहभवियाउयं

તાત્પર્ય એ છે કે જેવી રીતે જે સમયે જીવ, આયુષ્યરૂપ પર્યાયને કરતી વખતે જ્ઞાન સમ્યકત્વ વગેરે પોતાની પર્યાયોને પણ કરે છે-તો એ એક જ સમયે તે બધી પર્યાયો કરવામા જેમ વાધો નડતો નથી, કારણ કે તે તેની પર્યાયો છે, એજ પ્રમાણે એક જ જીવ એક જ સમયે બે આયુષ્યનો પણ બંધ કરે છે એમ કરવામાં કોઈ મુશ્કેલી નડતી નથી. કારણ કે એક આયુષ્ય કર્મ કરવું એ જેમ તેની પર્યાય છે, એજ પ્રમાણે એજ સમયે બીજું આયુષ્યકર્મ કરવું એ પણ તેની પર્યાય જ છે. આ કથનથી એ વાત સ્પષ્ટ સમજાય છે કે જીવ પોતે જ પોતાની પર્યાયોનો કર્ત્તા છે. જો જીવને પોતાની પર્યાયોનો કર્ત્તા માનવામા ન આવે તો સિદ્ધત્વ વગેરે પર્યાયોની ક્યારેય પણ ઉત્પત્તિ ન થઇ શકવાને કારણે તેનો અભાવ જ માનવો પડે હવે બે આયુષ્યો એક જ સમયે કરવાના વિષયનું વિશેષ સ્પષ્ટીકરણ કરવા માટે સૂત્રકાર કહે છે કે (तं जहा) અન્ય ધર્મીઓના કથનાનુસાર એક જ સમયે એક જ જીવ બે આયુષ્યનો બંધ આ રીતે કરે છે-(इहभवियाउयं च परभवियाउय च) એક આ ભવ સંબંધી આયુષ્યનો અને બીજો પરભવ સંબંધી આયુષ્યનો બંધ (जं समयं इहभविया यं

भित्य यस्मिन् समय इत्यर्थ इहभविकायुष्क मकरोति-बध्नाति, 'तं समय पर भवियाउयं पकरेइ' त समयमाश्रित्य तस्मिन् समये इत्यर्थः परभविकायुष्कं प्रकरोति, तथा 'ज समयं परभवियाउयं पकरेइ' य समयमाश्रित्य परभविकायुष्कं प्रकरोति 'त समय इह भवियाउयं पकरेइ' त समयम् इहभविकायुष्क प्रकरोति, इह भवो वर्तमानभवो यस्मिन् आयुषि वर्तते फलरूपेण तत् इहभविकायुष्कं, एव परभवः आगामिभवो यस्मिन् आयुषि फलतया वर्तते तत् परभवायुष्कम्। आभ्यां सूत्राभ्याम् इहभवायुष्करणसमये परभवायुःकरणं नियमितम्, एवं पर भवायु करणसमये इहभवायुःकरण च नियमितम् एवं सूत्रद्वयेन एकसमयका

पगरेइ, तं समयं परभवियाउयं पकरेइ ज समय परभवियाउय पकरेइ, तं समयं इहभवियाउयं पकरेइ) जिस समय जीव इस भव सम्बन्धी आयु का बंध करता है उसी समय में वह परभव सम्बन्धी आयु का बंध करता है। और जिस समय में वह इस भव सम्बन्धी आयु का बंध करता है। उसी समय में वह परभव सम्बन्धी आयुका बंध करता है। जिस आयु के फल स्वरूप यह चालू भव है वह आयु इहभविक आयु है और आगामी भव जिस आयु के होने पर फलरूप से वर्तता है वह परभवायु है। इन दो सूत्रों द्वारा यह नियमित किया गया कि इह भव आयु के करने के समय में परभव की आयु का करना नियमित है और परभवीय आयु के करने के समय इहभवीय आयु का करना नियमित है। इस तरह इन दो सूत्रों द्वारा दो आयु एक ही समय में किया जाता है इस प्रकार से कहकर अब यह प्रकट किया जाता है

पगरेइ, तं समय परभाविचाउय पगरेइ ज समय परभवियाउयं पगरेइ, त समयं इहभवियाउय पगरेइ) જે સમયે જીવ આ ભવ સંબંધી આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે તે જ સમયે પરભવ સંબંધી આયુષ્યનો બંધ પણ બાંધે છે જે સમયે તે પરભવ સંબંધી આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે એજ સમયે આ ભવ સંબંધી આયુષ્યનો બંધ પણ બાંધે છે જે આયુષ્યના ફળસ્વરૂપ આ ચાલુ ભવ છે, તે ઇહભવિક આયુષ્ય કહેવાય છે અને આગામી (હવે પછીનો) ભવ; જે આયુષ્યના ફળસ્વરૂપે ઉદ્‌ભવે છે તે પરભવાયુ છે આ બન્ને સૂત્રો વડે એ નિયમ બતાવવામાં આવ્યો છે કે આ ભવના આયુષ્યને કરવાના સમયમાં પરભવાયુષ્ય કરવાનું નિયમિત છે, અને પરભવના આયુષ્ય ને કરવાને સમયમાં ઇહભવીય આયુષ્ય કરવાનું નિયમિત છે આ રીતે આ બન્ને સૂત્રો વડે બે આયુષ્ય એક જ સમયે કરવામાં આવે છે એવુ કથન કરીને હવે એ વાત પ્રકટ કરવામાં

यतां द्वयोरायुषोः कथयित्वा द्वयोरायुषोरेकक्रियाकार्यतामाह—' इहभविया-उयस्से ' इत्यादि, ' इह भवियाउयस्स पकरणयाए ' इहभवायुषः प्रकरणतया करणेन 'परभवियाउयं पकरेइ ' परभवायुष्कं प्रकरोति, ' परभवियाउयस्स पकर-णयाए ' परभवायुष्कस्य प्रकरणतया करणेन ' इहभवियाउयं पकरेइ ' इहभवि-कायुष्कं प्रकरोति, परभवसंबन्ध्यायुष करणसमये एव एतद्भवसंबन्ध्यायुषो बन्धनं करोति। प्रकरणार्थं निगमयन्नाह—' एव खलु एगे जीवे ' एवं खलु एको जीवः ' एगेणं समएणं ' एकेन समयेन ' दो आउयाइ पकरेइ ' द्वे आयुषी प्रकरोति, ' तं जहा ' तद्यथा-' इहभवियाउयं च परभवियाउय च ' इहभविकायुष्कं च परभविकायुष्कं च, 'से कहमेयं भंते एवं ' तत्कथमेतत् किमेतत् भदन्त! एवम्= एवं रूपेणास्ति तत्कथनं किं सत्यमिति प्रश्न । हे भदन्त! एकसमये आयुषो-द्वयस्य करणं किं संभवतीति गौतमस्य प्रश्नः। भगवानाह—' गोयमे ' इत्यादि।

कि ये दोनों आयु एक ही क्रिया से की जाती हैं-(इहभवियाउयस्स पक-रणयाए परभवियाउयं पकरेइ, परभवियाउस्स पकरणयाए इहभवियाउयं पकरेइ) जीव इह सम्बन्धी आयु को कर के परभव सम्बन्धी आयु को करता है। और परभव संबंधी आयु के करने से इहभव संबंधी आयु को करता है। (इवं खलु एगे जीवे एगेणं समएणं दो आउयाई पकरेइ) इस तरह से एक जीव एक ही समय में दो आयुओं का बंध करता है। (तं जहा-इह भवियाउयं च परभवियाउयं च) एक इस भव सम्बन्धी आयु का दूसरी परभव सम्बन्धी आयु का। (से कहमेयं भंते ! एवं) सो हे भदन्त ! ऐसा यह कथन क्या उन लोगों का सत्य है ? अर्थात्-एक समय में दो आयु का बंध करना क्या संभवता है ? ऐसा

છે કે એ બન્ને આયુ એક જ ક્રિયાથી કરાય છે-(इहभवियाउयस्स पकरणयाए परभवियाउयं पकरेइ, परभवियाउस्स पकरणयाए इहभवियाउयं पकरेइ) જીવ આ ભવ સંબંધી આયુષ્ય કરવાથી પરભવ સંબંધી આયુષ્ય કરે છે. અને પરભવ સંબંધી આયુષ્ય કરવાથી આ ભવ સંબંધી આયુષ્ય કરે છે (एवं खलु एगे जीवे एगेणं समएणं दो आउयाइं पकरेइ) આ રીતે એક જ જીવ એક જ સમયે બે આયુષ્યનો બંધ કરે છે (तं जहा--इहभवियाउयं च परभवियाउयं च) તે બે આયુષ્ય આ પ્રમાણે છે-(૧) આ ભવસંબંધી આયુષ્ય અને (૨) પરભવ સંબંધી આયુષ્ય (से कहमेयं भंते ! एवं) તો હે ભગવન્ ! શું એ લોકોની ઉપરની માન્યતા સાચી છે? એટલે કે એક સમયે બે આયુષ્યનો બંધ બાંધવાનું સંભવી શકે? એવો પ્રશ્ન ગૌતમ સ્વામી પૂછે છે.

'गोयमा' हे गौतम ! 'ज ण ते अन्नउत्थिया' यत् खलु अन्ययूथिका 'एवं आइक्खंति जाव परभवियाउयं च' एवमाख्यान्ति यावत् परभविकायुष्कं च, इह यावत्पदेन भाषन्ते प्रज्ञापयंति प्ररूपयति, एको जीव एकसमये द्वे आयुषी प्रकरोति इहभविकायुष्कं चेत्यादीना सग्रह । 'जे ते एव माहसु मिच्छा त एवं आईसु' ये ते एवमुक्तवन्तो मिथ्या ते एवमुक्तवन्त , परमतस्य मिथ्यात्व चैवम्-एकेनाध्यवसायेन परस्परविरुद्धयोरायुषोर्बन्धासभवात्, यदप्युक्तं परतीर्थिकैः पर्यायान्तरकरणे पर्यायान्तरं करोति स्वपर्यायत्वात्, तत्र सम्यक् सिद्धत्वपर्याय

यह गौतम का प्रश्न है-(गोयमा ! ज णं ते अन्नउत्थिया एवं आइक्खंति जाव परभवियाउयं च) हे गौतम ! जो वे अन्ययूथिक जन ऐसा कहते हैं कि एक जीव एक ही समय में दो आयु का बंध करता है-एक इस भव सम्बन्धी आयु का और दूसरी परभवसम्बन्धी आयु का, सो (जे ते एवं आहसु मिच्छा ते एवं आहंसु) जो उन्हों ने ऐसा कहा है वह उन्हों ने मिथ्या कहा है । "आइक्खंति जाव परभवियाउयं च" यहां जो "यावत्" पद आया है वह पूर्व में कथित "भाषन्ते, प्रज्ञापयन्ति, प्ररूपयन्ति, एको जीव एक समये द्वे आयुषी प्रकरोति, इह भविकायुष्कं च" इत्यादि पाठ का संग्राहक है ।

"उन्हों ने जो ऐसा कहा है सो मिथ्या कहा है" अब यही बात स्पष्ट की जाती है-एक ही अध्यवसाय से परस्पर विरुद्ध दो आयु का होना असंभव है । तथा ऐसा जो अभी २ इन्हों ने कहा है कि अपनी पर्याय होने के कारण जीव सम्यक्त्व और ज्ञान की तरह एक पर्याय के करने में दूसरी पर्याय को करता है सो ऐसा कहना भी उनका ठीक

(ગોયમા ! जं णं ते अन्नउत्थिया एवं आइक्खंति जाव परभवियाउयं च) હે ગૌતમ ! અન્ય તીર્થિકો એવું જે કહે છે કે એક જ સમયે (૧) આ ભવ સબંધી આયુષ્યનો અને(૨) પરભવ સબંધી આયુષ્યનો-એમ બે આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે (जे ते एवं आहंसु मिच्छा ते एवं आहंसु) તેમણે એવું જે કહેલ છે તે મિથ્યા છે, સત્ય નથી "आइक्खंति जाव परभवियाउयं च" અહીં જે "यावत्" પદ છે તેનાથી પૂર્વોક્ત भाषन्ते, प्रज्ञापयन्ति, प्ररूपयन्ति, एको जीवः एक समये द्वे आयुषी प्रकरोति इह भविकायुष्कं च" ઇત્યાદિ પાઠનો સંગ્રહ કરાયો છે

'અન્ય તીર્થિકોએ જે કહ્યું છે તે મિથ્યા છે' એજ વાતનું પ્રતિપાદન હવે કરવામાં આવે છે-એક જ અધ્યવસાયથી પરસ્પર વિરૂદ્ધ એવાં બે આયુ-ષ્યોનો બંધ થવો અસંભવિત છે વળી પોતાની પર્યાય હોવાને કારણે જીવ સમ્યકત્વ અને જ્ઞાનની માફક એક પર્યાય કરવામાં બીજા પર્યાય કરે છે" એવું

यैतां द्वयोरायुषोः कथयित्वा द्वयोरायुषोरेकक्रियाकार्यतामाह—'इहभविया-उयस्से' त्यादि, 'इह भवियाउयस्स पकरणयाए' इहभवायुषः प्रकरणतया करणेन 'परभवियाउयं पकरेइ' परभवायुष्कं प्रकरोति, 'परभवियाउयस्स पकरणयाए' परभवायुष्कस्य प्रकरणतया करणेन 'इहभवियाउयं पकरेइ' इहभविकायुष्कं प्रकरोति, परभवसंबन्ध्यायुष्करणसमये एव एतद्भवसंबन्ध्यायुषो बन्धनं करोति। प्रकरणार्थं निगमयन्नाह—'एव खलु एगे जीवे' एवं खलु एको जीवः 'एगेणं समएणं' एकेन समयेन 'दो आउयाइं पकरेइ' द्वे आयुषी प्रकरोति, 'तं जहा' तद्यथा-'इहभवियाउयं च परभवियाउयं च' इहभविकायुष्कं च परभविकायुष्कं च, 'से कहमेयं भंते एवं' तत्कथमेतत् किमेतत् भदन्त! एवम्= एवं रूपेणास्ति तत्कथनं किं सत्यमिति प्रश्न'। हे भदन्त! एकसमये आयुषो-द्वयस्य करणं किं संभवतीति गौतमस्य प्रश्नः। भगवानाह—'गोयमे' त्यादि।

कि ये दोनों आयु एक ही क्रिया से की जाती हैं-(इहभवियाउयस्स पकरणयाए परभवियाउयं पकरेइ, परभवियाउस्स पकरणयाए इहभवियाउयं पकरेइ) जीव इह सम्बन्धी आयु को कर के परभव सम्बन्धी आयु को करता है। और परभव संबंधी आयु के करने से इहभव संबंधी आयु को करता है। (एवं खलु एगे जीवे एगेणं समएणं दो आउयाइं पकरेइ) इस तरह से एक जीव एक ही समय में दो आयुओं का बंध करता है। (तं जहा-इह भवियाउयं च परभवियाउयं च) एक इस भव सम्बन्धी आयु का दूसरी परभव सम्बन्धी आयु का। (से कहमेयं भंते! एवं) सो हे भदन्त! ऐसा यह कथन क्या उन लोगों का सत्य है? अर्थात्-एक समय में दो आयु का बध करना क्या संभवता है? ऐसा

છે કે એ બન્ને આયુ એક જ ક્રિયાથી કરાય છે-(इहभविचाउयस्स पकरणयाए परभवियाउय पकरेइ, परभवियाउस्स पकरणयाए इहभवियाउयं पकरेइ) જીવ આ ભવ સંબંધી આયુષ્ય કરવાથી પરભવ સંબંધી આયુષ્ય કરે છે અને પરભવ સંબંધી આયુષ્ય કરવાથી આ ભવ સંબંધી આયુષ્ય કરે છે (एव खलु एगे जीवे एगेणं समएणं दो आउइयाइं पकरेइं) આ રીતે એક જ જીવ એક જ સમયે બે આયુષ્યનો બંધ કરે છે (तं जहा--इहभवियाउयं च परभवियाउयं च) તે બે આયુષ્ય આ પ્રમાણે છે-(૧) આ ભવસંબંધી આયુષ્ય અને (૨) પરભવ સંબંધી આયુષ્ય. (से कहमेयं भंते! एव) તો હે ભગવન્! શું એ લોકોની ઉપરની માન્યતા સાચી છે? એટલે કે એક સમયે બે આયુષ્યનો બંધ બાંધવાનું સંભવી શકે? એવો પ્રશ્ન ગૌતમ સ્વામી પૂછે છે.

मकरोत्ययेति भावः। अन्ययूथिकमतस्य मिथ्यात्वमुक्त्वा स्वकीयमतं दर्शयन्नाह- 'अहं पुण' इत्यादि। 'अहं पुण गोयमा एव माइक्खामि जाव परूवेमि' अहं पुन गौतम! एवमाख्यामि यावत् प्ररूपयामि इह यावत्पदेन-'एवं भासेमि एवं पन्नवेमि' इत्यनयो सग्रहः, तत्र-आख्यामि=कथयामि सामान्येन, भाषे=ब्रवीमि विशेषरूपेण, प्रज्ञापयामि=हेतुदृष्टान्तेन प्ररूपयामि=भेदकथनेन। तदेवाह—'एवं खलु एगे जीवे एगेणं समएणं एगं आउयं पकरेइ' एवं खलु एको जीव एकेन समयेनैकमायुष्कं प्रकरोति 'त जहा' तद्यथा 'इहभवियाउयं वा परभवियाउयं वा'

ही जीव परभव सम्बन्धी आयु का बंध कर लेता है तो फिर इन सत्कृत्यों के करने का और संयमादिक अनुष्ठानों के सेवन करने का प्रयोजन ही निरर्थक हो जाता है। सो ऐसा जो दूसरों ने कहा है सो उनका यह "आयुर्बंध कालाद् अन्यत्र ज्ञातव्यम्" कथन आयु के बंध काल के सिवाय के समय का अर्थात् अपर्याप्त अवस्था की अपेक्षा से जानना चाहिये। नहीं तो फिर यह कथन अन्यतीर्थिकजनों का असत्य नहीं ठहराया जा सकता जो वे ऐसा कहते हैं कि जीव आयु के बंधकाल में इस भव सम्बन्धी आयु का वेदन करता है अर्थात् भोगता है और परभव सम्बन्धी आयु का बंध करता है। कारण कि जैनसिद्धान्त की भी यही मान्यता है। इसी तरह अन्यतीर्थिकजनों के मत को असमीचीन कहकर अपना इस विषय में क्या मन्तव्य है सो दिखाने के लिये सूत्रकार कहते हैं—

(अह पुण गोयमा! एव आइक्खामि जाव परूवेमि) हे गौतम! मैं भी इस विषय में ऐसा ही कहता हूँ यावत् प्ररूपणा करता हूँ, कि

બંધ બાંધી લેતો હોય તો તેને પછી સત્કૃત્યો કરવાનું અને સંયમાદિની આરાધના કરવાનું પ્રયોજન જ રહેતું નથી "આયુર્બંધકાલાદન્યત્ર જ્ઞાતવ્યમ્" આવું જે અન્ય મતવાદીઓનું કથન છે તે આયુષ્યના બંધકાળ સિવાયના સમયની એટલે કે અપર્યાપ્ત અવસ્થાની અપેક્ષાએ સમજવું નહીં તો અન્ય તીર્થિકોનું "જીવ આયુષ્યના બંધ કાળે આ ભવ સંબંધી આયુષ્યનું વેદન કરે છે-ભોગવે છે અને પરભવ સંબંધી આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે આ કથન અસત્ય કહી શકાશે નહીં કારણ કે જૈનસિદ્ધાન્તની પણ એ જ માન્યતા છે આ રીતે અન્ય તીર્થિકોના મતને મિથ્યા-અસમીચીન-કહીને આ વિષયમાં પોતાનું શું મન્તવ્ય છે તે બતાવવાને માટે સૂત્રકાર કહે છે કે—

(अह पुण गोयमा! एव आइक्खामि जाव परूवेमि) હે ગૌતમ! હું આ વિષયમાં એવું કહું છું યાવત્ પ્રરૂપણા કરું છું કે (एगे जीवे एगेणं

करणे संसारित्वपर्यायस्य तत्राकरणात् इति, अन्ये तु एवं कथयन्ति-" इहभवायुर्यदा प्रकरोति वेदयते तदा परभवायुः प्रकरोति बध्नाति, इहभवायुष उपभोगेन परभवसंबन्धि आयुर्बध्नातीत्यर्थः, तन्मतं मिथ्या, यतो जातमात्रो जीव इह भवायुर्वेदयते तस्मिन्नेव समये यदि परभवसंबन्ध्यायुषो बन्धनं कुर्यात् तदा दान-शीलतपोभावानामाचरणं संयमाद्याचरणं च निरर्थकं प्रसज्येत " एतत् आयुर्बन्ध-कालादन्यत्र ज्ञातव्यमन्यथा — आयुषोबन्धकाले इहभवायुर्वेदयते परभवायुस्तु

नहीं है-कारण कि आत्मा जब सिद्धत्व पर्याय को करता है तब वह उस समय संसारित्व पर्याय को नहीं करता है। दूसरे तो ऐसा कहते हैं-" इस भव सम्बन्धी आयु को जब जीव " प्रकरोति " वेदता है। तब वह परभव सम्बन्धी आयु का बंध करता है-इसका तात्पर्य यह है कि इस भव सम्बन्धी आयु के उपभोग से जीव परभव सम्बन्धी को बांधता है-सो ऐसा भी अन्यतीर्थिकों का कथन ठीक नहीं है। क्यों कि जात-मात्र (जन्मते ही) जीव इस भव सम्बन्धी आयु का वेदन करने लगता है सो यदि वह उसी समय में परभव सम्बन्धी आयु का उसने बंध कर लिया है ऐसा मान लिया जावे तो दान, शील, तप और भाव इनका आचरण करना तथा संयम आदि अनुष्ठानों का आचरण करना ये सब निरर्थक हो जावेंगे। तात्पर्य कहने का यह है कि जो जीव उत्पन्न होने के बाद समर्थ होने पर दानादिक सत्कृत्यों का और संयमादिक अनु-ष्ठानों का आचरण इसलिये तो करता कि उसे आगे चलकर उसी भव में परभव सम्बन्धी शुभआयु का बंध हो जावे। परन्तु यदि उत्पन्न होते

તેમનુ જે કથન છે તે પણ યોગ્ય નથી-કારણ કે આત્મા, જ્યારે સિદ્ધત્વ પર્યાય પ્રાપ્ત કરે છે ત્યારે તે એજ સમયે સંસારિત્વ પર્યાય ધારણ કરતો નથી વળી કેટલાક અન્ય તીર્થિકોની માન્યતા એવી છે કે-" જ્યારે જ્યારે જીવ આ ભવ સંબંધી આયુષ્યનુ વેદન કરે છે ત્યારે ત્યારે તે પરભવ સંબંધી આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે " આ માન્યતા પણ બરાબર બંધબેસતી નથી કારણ કે જન્મ થતાજ જીવ, આ ભવના આયુષ્યનુ વેદન કરવા માંડે છે, જો આત્મા એજ સમયે પરભવના આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે એવું માનવામા આવે તો દાન, શીલ, તપ અને ભાવનાનુ આચરણ તથા સંયમાદિનુ સેવન કરવુ વગેરે નિરર્થક જ થશે તાત્પર્ય એ છે કે જીવ ઉત્પન્ન થયા પછી જ્યારે તેમનામાં યોગ્ય સામર્થ્ય આવે છે ત્યારે તે દાનાદિ સત્કૃત્યો અને સંયમ વગેરે અનુષ્ઠાનોનું આચરણ કરે છે અને તે એટલા માટે જ કરે છે કે આગળ જતા એજ ભવમા પરભવ સંબંધી શુભ આયુષ્યનો બંધ બંધાય જો જન્મ થતા જ જીવ, પરભવના આયુષ્યનો

विकायुष्कस्य प्रकरणतया ' णो इहमवियाउयं पकरेइ ' नो इहमविकायुष्क प्रकरोति, ' एव खलु एगे जीवे एगेण समयेण एग आउय पकरेइ ' एव खलु एको जीव एकेन समयेन एकमायुष्कं प्रकरोति, ' त जहा ' तद्यथा–' इहमवियाउयं वा परमवियाउयं वा ' इह मविकायुष्क वा परमविकायुष्क वा, एकेन जीवेनैकदा एकमेवायुर्बध्यते, एतद्भवसमधि वा परमवसंबन्धि वा, न तु आयुर्द्वयमेकदा भवतीति । ' सेवं भंते सेव भते ' तदेव भदंत । तदेवं भदन्त ! आयुष्ककर्मणः सपादनविषये यद्देवानुप्रियेण कथित तत् तथैव सर्वथैव सम्भगिति, ' त्ति भगवं गोयमे

परभवियाउय पकरेइ) जीव इद भव सम्बन्धी आयुष्क को नहीं कर लेता है । (एव खलु एगे जीवे एगेणं समएण एग आउयं पकरेइ) इस तरह एक जीव एक समय में एक ही आयुकर्म को करता है (तं जहा–इह भवियाउयं वा परभवियाउयं वा) या तो वह इह भव का आयुष्य करता है अथवा परभव का आयुष्य करता है । इस सब कथन का सार यही है कि एक जीव एक समय में एक ही आयु को बांधता है–या तो वह इस भव सम्बन्धी आयु को बांधता है या वह परभव सम्बन्धी आयु को बांधता है। एक साथ वह दो आयुष्क का बंध नहीं करता । (सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति भगवं गोयमे जाव विहरइ) हे भदन्त ! आप देवानुप्रिय ने जो आयुकर्म के सपादन के विषय में कहा है वह वैसा ही है–अर्थात्–" सर्वथा ही सत्य है सर्वथा ही सत्य ही है " ऐसा कहकर भगवान् गौतम प्रभु को वन्दना

આયુષ્યકર્મનો બંધ બાંધતો નથી (परमवियाउयरस पकरणयाए) અને પરભવ સંબંધી આયુષ્યકર્મનો બંધ બાંધી લેવાથી (णो इहमवियाउय पकरेइ) આ ભવસંબંધી આયુષ્યકર્મનો બંધ બાંધી લેતો નથી (एव खलु एगे जीवे एगेणं समएणं एगं आउय पकरेइ) આ રીતે એક જીવ એક જ સમયે એક જ આયુષ્યકર્મનો બંધ બાંધે છે (त जहा–इहमवियाउय वा परमवियाउय वा) તે બે રીતે કે કાં તો આ ભવના આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે અને કાંતો તે પરભવના આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે આ તમામ કથનનો ભાવાર્થ એ છે કે જીવ એક સમયે એક જ આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે–કાં તો આ ભવસંબંધી આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે અને કાંતો પરભવ સંબંધી આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે. પરંતુ એક સાથે બે આયુષ્યનો બંધ બાંધતો નથી (सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति भगवं गोयमे जाव विहरइ) " ભગવન્ ! આપે આયુષ્યકર્મના વિષયમાં જે પ્રતિપાદન કર્યું છે તે સર્વથા સત્ય જ છે–એમાં શંકાને સ્થાન જ નથી. આ પ્રમાણે કહીને ગૌતમ સ્વામીએ મહાવીર પ્રભુને વંદણા નમસ્કાર કર્યા

इहभविकायुष्कं वा परभविकायुष्कं वा 'जं समयं इहभवियाउयं पकरेइ' यं समयमिहभविकायुष्कं प्रकरोति 'णो त समयं परभवियाउय पकरेइ' नो त समयं परभविकायुष्कं प्रकरोति। 'जं समयं परभवियाउय पकरेइ णो तं समयं इहभवियाउयं पकरेइ' यं समयं परभविकायुष्कं प्रकरोति न तं समयमिहभविकायुष्कं प्रकरोति, यदा जीव एतद्भवसंबन्धि आयुष्ककर्म करोति तदा न परभवसंबन्धि आयुष्कं करोति, तथा यदा परभवसंबन्धि आयुष्कं करोति। तदा न एतद्भवसंबन्धि आयुष्कर्म करोतीति भावः। यदि एकस्मिन्नेव समये द्वयोरपि बन्धनं भवेत्तदा संयमाद्याचरण निरर्थकं भवेदिति ,भावः। 'इह भवियाउयस्स पकरणयाए' इहभविकायुष्कस्य प्रकरणतया, करणेनेत्यर्थः, 'णो परभवियाउयं पकरेइ' नो परभविकायुष्कं प्रकरोति, 'परभवियाउयस्स पकरणयाए' परभ-

(एगे जीवे एगेणं समएणं एगं आउयं पकरेइ, तं जहा–इह भवियाउयं वा परभवियाउयं वा) एक जीव एक समय में एक आयु को करता है –वह इस प्रकार से–या तो वह इस भवसंबंधी आयुष्य को करे या पर भव सम्बन्धी आयुष्य को करे। एक समय में दो आयुओं को नहीं करता है। (ज समयं इह भविया उयं पकरेइ) जिस समय में इस भव सम्बन्धी आयुको वह करता है (णो तं समयं परभवियाउयं पकरेइ) उस समय में वह परभवसम्बन्धी आयु को नही करता है। यदि एक समय में दो आयु कर्म का बंध हो तो संयमादिक का आचरण करना निरर्थक हो जावेगा। तथा–(इहभवियाउयस्स पकरणयाए णो परभवियाउय पकरेइ) इस भव सम्बन्धी आयु के कर लेने से जीव परभव सम्बन्धो आयु कर्म को नहीं कर लेता है। (परभवियाउयस्स पकरणयाए) तथा परभव सम्बन्धी आयुष्क के कर लेने से (णो इह

समएण एग आउय पकरेइ, तं जहा—इह भवियाउय वा परभवियाउय वा) એક જીવ એક સમયે એક જ આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે–આ ભવસંબંધી આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે અથવા તો પરભવ સંબંધી આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે–પરંતુ એક જ સમયે બે આયુષ્યનો બંધ બાંધતો નથી (ज समय इह भवियाउयं पकरेइ) જે સમયે જીવ આ ભવ સંબંધી આયુષ્યનો બંધ બાંધતો હોય છે, (णो त समय परभवियाउय पकरेइ) તે સમયે તે પરભવસંબંધી આયુષ્યનો બંધ બાંધતો નથી જો એક જ સમયે બે આયુષ્યકર્મોનો બંધ થતો હોય તો સંયમ વગેરેનું આચરણ કરવું નકામું થઇ પડશે તેમજ (इह भवियाउयस्स पकरणयाए णो परभवियाउय पकरेइ) આ ભવ સંબંધી આયુષ્યકર્મનો બંધ બાંધી લેવાથી (णो परभवियाउय पकरेइ) જીવ, પરભવસંબંધી

थेरा सजम न जाणति, थेरा सजमस्स अट्ठ न जाणति, थेरा सवर न जाणति, थेरा सवरस्स अट्ठ न जाणति, थेरा विवेग न जाणति, थेरा विवेगस्स अट्ठ न जाणति, थेरा विउस्सग न जाणति, थेरा विउस्सग्गस्स अट्ठ न जाणति। तएण ते थेरा भगवतो कालासवेसिपुत्त अणगार एवं वयासी—जाणामो ण अज्जा सामाइय, जाणामो णं अज्जो सामाइयस्स अट्ठ जाव जाणामो णं अज्जो विउस्सग्गस्स अट्ठ। तएण से कालासवेसिपुत्ते अणगारे ते थेरे भगवते एव वयासी, जइण अज्जा तुब्भे जाणह सामाइय, जाणह सामाइयस्स अट्ठ, जाव जाणह विउस्सगस्स अट्ठ किं भे अज्जो सामाइए, किं भे अज्जो सामाइयस्स अट्ठे, जाव किं भे विउस्सग्गस्स अट्ठे? तएण थेरा भगवतो कालासवेसियपुत्ते अणगार एव वयासी आयाणे अज्जो सामाइए, आयाणे अज्जो सामाइयस्स अट्ठे, जाव विउस्सग्गस्स अट्ठे। तएणं से कालासवेसियपुत्ते अणगारे थेरे भगवते एव वयासी— जइ भे अज्जो आया सामाइए, आया सामाइस्स अट्ठे, एव जाव आया विउस्सग्गस्स अट्ठे, अवहट्टु कोहमाणमायालोभं किं अट्ठ अज्जो गरहह। कालासवेसियपुत्त! सजमट्ठयाए। से भते! किं गरहा सजमे, अगरहा सजमे? । कालासवेसियपुत्त गरहा सजमे णो अगरहा सजम, गरहा वि य णं सव्व दोस पविणेइ, सव्व बालिय परिण्णाए, एव खु णे आया सजमे उवहिए भवइ, एव खु णे आया सजमे उवहिए भवइ।

जाव विहरइ' इति भगवान् गौतमो यावद्विहरति, भगवन्तं वन्दित्वा संयमेन तपसा आत्मानं भावयमानो विहरतिस्मेति भावः ॥ सू० ४ ॥

॥ इत्यन्ययूथिकमते प्रश्नोत्तरनिरूपणप्रकरणम् ॥

आर्यकालास्यवेषिपुत्रानगारप्रकरणम्—

अन्ययूथिकप्रस्तावादेवेदं सूत्रमाह—'तेणं कालेणं' इत्यादि ।

मूलम्—तेणं कालेणं तेणं समएणं पासावच्चिज्जे कालासवेसियपुत्ते णामं अणगारे जेणेव थेरा भगवंतो तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता थेरे भगवंते एवं वयासी–थेरा सामाइयं न जाणंति, थेरा सामाइयस्स अट्ठं न जाणंति, थेरा पच्चक्खाणं न जाणंति, थेरा पच्चक्खाणस्स अट्ठं न जाणंति,

---

नमस्कार कर वहां से संयम और तप से अपनी आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर आ गये । यहां उत्तरसूत्र में जो "अहं पुण गोयमा ! एवं आइक्खामि जाव परूवेमि" यावत् पद आया है उससे "एवं भासेमि एवं पन्नवेमि" इन दो क्रियापदों का संग्रह किया गया है । सामान्यरूप से कथन करना इसका नाम आख्या है । विशेषरूप से कथन करना इसका नाम भाषण है । हेतु दृष्टान्त देकर अपने अभिमत विषय का समर्थन करना इसका नाम प्रज्ञापना है । भेदों के कथन से जो विषय निरूपित किया जाता है उसका नाम प्ररूपणा है ॥ सू–४ ॥

इस प्रकार से अन्ययूथिकमत में प्रश्नोत्तरनिरूपण करने वाला प्रकरण समाप्त हुआ ॥

વંદણા નમસ્કાર કરીને સયમ અને તપથી પોતાના આત્માને ભાવિત કરતા પોતાને સ્થાને ગયા અહીં ઉત્તર સૂત્રમા જે "अहं पुण गोयमा ! एवं आइक्खामि जाव परूवेमि" 'जाव' (યાવત્) પદ આવ્યુ છે તેની મારફત "एवं भासेमि, एवं पन्नवेमि" એ બે ક્રિયાપદોનો સમાવેશ કરાયો છે વિશેષરૂપે કથન કરવું તેનુ નામ "ભાષણ" છે હેતુ દષ્ટાન્ત વડે પોતાના મતનું પ્રતિપાદન કરવું તેનુ નામ "પ્રજ્ઞાપના" છે ભેદોના કથન વડે વિષયનું જે નિરૂપણ કરવામા આવે છે તેને "પ્રરૂપણા" કહે છે" ॥ સૂ૦૪ ॥

॥ અન્યતીર્થિક મત વિષયક પ્રશ્નોત્તર સમાપ્ત ॥

भूमिसेज्जा, फलहसेज्जा, कट्ठसेज्जा, केसलोओ बंभचेरवासो परघरप्पवेसो, लद्धावलद्धी, उच्चावया, गामकंटगा, बावीस परिसहोवसग्गा अहियासिज्जंति, तं अट्ठं आराहेइ आराहित्ता, चरमेहिं उस्सासनीसासेहिं सिद्धे बुद्धे मुत्ते परिनिव्वुडे सव्वदुक्खप्पहीणे ॥ सू० ५ ॥

छाया—तस्मिन् काले तस्मिन् समये पार्श्वापत्यीय कालास्यवेषिकपुत्रो नामानगारो यत्रैव स्थविरा भगवन्तस्तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य स्थविरान् भगवत एवमादीत्, स्थविरा सामायिकं न जानन्ति, स्थविरा सामायिकस्यार्थं न

आर्यकालास्यवेषि पुत्र अनगार प्रकरण-

अन्ययूथिकों के प्रस्ताव से ही सूत्रकार ने इस "तेणं कालेणं तेणं समएणं इत्यादि।

सूत्रार्थ--(तेणं कालेणं तेणं समएणं) उस काल में और उस समय में (पासावच्चिज्जे) पार्श्वनाथ के वंश में उत्पन्न हुए (कालासवेसियपुत्ते) कालास्य वेषिक पुत्र (णामं अणगारे) नाम के अनगार (जेणेव थेरा भगवंतो) जिस तरफ स्थविर भगवंत थे तेणेव उवागच्छइ) उस तरफ गये (उवागच्छित्ता) वहां जाकर के (थेरे भगवंते एवं वयासी) उन्होंने स्थविर भगवंतों से ऐसा कहा-(थेरा! सामाइयं न जाणंति, थेरा सामाइयस्स अट्ठं न जाणंति) हे स्थविरों! आप

આર્યકાલાસ્યવેષિકપુત્ર અનગાર પ્રકરણ—

અન્યયૂથિકો (અન્યતીર્થિકો) ના પ્રસ્તાવ વડે જ સૂત્રકારે "तेणं कालेणं तेणं समएणं ' ઈત્યાદિ સૂત્રનું કથન કર્યું છે-

' तेणं कालेणं तेणं समएणं ' ઈત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—(तेणं कालेणं तेणं समएणं) તે કાળે અને તે સમયે (पासावच्चिज्जे) પાર્શ્વનાથના વંશમાં ઉત્પન્ન થયેલ (कालासवेसियपुत्ते) કાલાસ્યવેષિકપુત્ર (णामं अणगारे) નામના અનગાર (जेणेव थेरा भगवंतो) જે તરફ સ્થવિર ભગવાન વિરાજતા હતા (तेणेव उवागच्छइ) તે તરફ ગયા "उवागच्छित्ता" ત્યાં જઈને (थेरे भगवंते एवं वयासी) તેમણે સ્થવિર ભગવંતોને આ પ્રમાણે કહ્યું-(थेरा! सामाइयं न जाणंति, थेरा सामाइयस्स अट्ठं न

एत्थ णं से कालासवेसियपुत्ते अणगारे संबुद्धे थेरे भगवंते वंदइ णमंसइ वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी एएसि णं भंते! पयाणं पुव्विं अन्नाणयाए, असवणयाए, अबोहियाए अणभिगमेणं, अदिट्ठाणं अस्सुयाणं अस्सुयाणं अविन्नायाणं अव्वोगडाणं अवोच्छिन्नाणं अणिज्जुढाणं अणुवधारियाणं एयमट्ठं नो सद्दहिए, णो पत्तइए, णो रोइए, इयाणिं भंते! एतेसिं पयाणं जाणणयाए, सवणयाए बोहीए, अभिगमेणं दिट्ठाणं सुयाणं सुयाणं विन्नायाणं वोगडाणं वोच्छिन्नाणं णिज्जुढाणं उवधारियाणं एयमट्ठं सद्दहामि, पत्तियामि, रोएमि, एवमेयं से जहेयं तुब्भे वदह। तएणं ते थेरा भगवंतो कालासवेसियपुत्तं अणगारं एवं वयासी—सद्दहाहि अज्जो पत्तियाहि अज्जो, रोएहि अज्जो से जहेयं अम्हे वदामो। तएणं से कालासवेसियपुत्ते अणगारे थेरे भगवंते वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी—इच्छामि णं भंते! तुब्भं अंतिए चाउज्जामाओ धम्माओ पंचमहव्वइयं सपडिक्कमणं धम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए, अहासुहं देवाणुप्पिया मा पडिबंधं करेह। तएणं से कालासवेसियपुत्ते अणगारे थेरे भगवंते वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता चाउज्जामाओ धम्माओ पंचमहव्वइयं सपडिक्कमणं धम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ। तएणं से कालासवेसियपुत्ते अणगारे बहूणि वासाणि सामन्नपरियागं पाउणइ, पाउणित्ता जस्सट्ठाए कीरइ नग्गभावे, मुंडभावे, अण्हाणयं अदंतधुवणयं, अच्छत्तयं, अणोवाहणयं

भार्य ! सामायिकं जानीम आर्य ! सामायिकस्यार्थं यावत् जानीम आर्य ! व्युत्सर्गस्यार्थम् । ततः स कालास्यवेपिकपुत्रोऽनगारस्तान् स्थविरान् भगवत एवमवादीत् यद्यार्याः! यूय जानीथ सामायिकं,जानीथ सामायिकस्यार्थं, यावत् जानीथ व्युत्सर्गस्यार्थं, किं भवतामार्याः! सामायिकम्'को भवतामार्याः! सामायिकस्यार्थं को भवता

कालासवेसियपुत्तं अणगारं एवं वयासी) तब उन स्थविर भगवन्तों ने कालास्यवेषिपुत्र अनगारसे इस प्रकार कहा (जाणामो णं अज्जो सामाइय, जाणामो णं अज्जो सामाइयस्स अट्ठं) हे आर्य ! हम लोग सामायिक को जानते है । हे आर्य हम लोग सामायिक के अर्थ को जानते हैं (जाव जाणामो ण अज्जो विउसग्गस्स अट्ठ) यावत् हे आर्य ! हम लोग व्युत्सर्ग के अर्थ को जानते हैं । (तएणं से कालासवेसियपुत्ते अणगारे ते थेरे भगवंते एव वयासी) तब उन कालास्यवेषिपुत्र अनगार ने उन स्थविर भगवंतों से इस प्रकार कहा—(जइण अज्जो तुब्भे जाणह सामाइयं, जाणह सामाइयस्स अट्ठं, जाव जाणह विउसग्गस्स अट्ठं) यदि हे आर्यो ! तुम लोग सामायिक को जानते हो, सामायिक के अर्थ को जानते हो, यावत् व्युत्सर्ग के अर्थ को जानते हो, तो (किं मे अज्जो सामाइए) आप के मत में आर्यों ! सामायिक यह क्या वस्तु है ? (किं मे अज्जो सामाइयस्स अट्ठे) हे आर्यों ! आप के मत में सामायिक का

ત્યારે તે સ્થવિર ભગવંતોએ કાલાસ્યવેષિપુત્ર અણગારને આ પ્રમાણે કહ્યું—

(जाणामो ण अज्जो सामाइय, जाणामो णं अज्जो सामाइयस्स अट्ठ) હે આર્ય ! અમે સામાયિક જાણીએ છીએ, હે આર્ય ! અમે સામાયિકનો અર્થ પણ જાણીએ છીએ (जाव जाणामो णं अज्जो विउसग्गस्स अट्ठ) યાવત્ હે આર્ય ! અમે વ્યુત્સર્ગનો અર્થ પણ જાણીએ છીએ. (तएण से कालासवेसियपुत्ते अणगारे ते थेरे भगवंते एव वयासी) ત્યારે તે કાલાસ્યવેષિપુત્ર અણગારે તે સ્થવિર ભગવન્તોને આ પ્રમાણે કહ્યું-(जइण अज्जो तुब्भे जाणह सामाइय जाणह सामाइयस्स अट्ठ जाव जाणह विउसग्गस्स अट्ठ) હે આર્યો ! જો તમે સામાયિકને જાણતા હો અને સામાયિકના અર્થને જાણતા હો, " यावत् " વ્યુત્સર્ગના અર્થને પણ સમજતા હો (અહીં " यावत् " પદથી પ્રત્યાખ્યાન, સંયમ વિવેક અને વ્યુત્સર્ગને જાણતા હો અને તેમના અર્થ સમજતા હો એટલો પૂર્વોક્ત સૂત્રપાઠ ગ્રહણ કરવો) તો (किं मे अज्जो सामाइए) હે આર્યો ! આપના મતાનુસાર સામાયિક શું છે ? (किं मे अज्जो सामाइयस्स अट्ठे) હે આર્યો આપના મત પ્રમાણે સામાયિકનો શો અર્થ છે ? (जाव किं

जानंति, स्थविराः प्रत्याख्यानं न जानन्ति, स्थविराः प्रत्याख्यानस्यार्थं न जानन्ति, स्थविराः संयमं न जानन्ति, स्थविराः संयमस्यार्थं न जानन्ति स्थविराः संवरं न जानन्ति, स्थविराः संवरस्यार्थं न जानन्ति, स्थविराः विवेक न जानन्ति, स्थविराः विवेकस्यार्थं न जानन्ति, स्थविराः व्युत्सर्ग न जानन्ति, स्थविराः व्युत्सर्गस्यार्थं न जानन्ति, ततस्ते स्थविराः भगवन्तः कालास्यवेषिकपुत्रमनगारमेवमवादिषुः जानीम

लोग सामायिक नहीं जानते हैं, सामायिक के अर्थ को नहीं जानते हैं (थेरा पच्चक्खाणं न जाणंति) हे स्थविरो! आप लोग प्रत्यख्यान को नहीं जानते हैं (थेरा पच्चक्खाणस्स अट्ठं न जाणंति) हे स्थविरो! आप लोग प्रत्याख्यान के अर्थ को नहीं जानते हैं। (थेरा संजमं न जाणंति) हे स्थविरो! आप लोग संयम को नहीं जानते हैं। (थेरा संजमस्स अट्ठं न जाणंति) हे स्थविरो! आप लोग संयम के अर्थ को नहीं जानते हैं। (थेरा संवरं न जानंति) हे स्थविरो! आप लोग संवर को नहीं जानते हैं। (थेरा संवरस्स अट्ठं न जाणंति) हे स्थविरो! आप लोग संवर के अर्थ को नहीं जानते हैं। (थेरा विवेगं न जाणंति, थेरा विवेगस्स अट्ठ न जाणति) हे स्थविरो! आप लोग विवेक को नहीं जानते हैं और हे स्थविरो! आप लोग विवेक के अर्थ को नहीं जानते हैं। (थेरो विउसग्गं न जानंति, थेरा विउसगस्स अट्ठं न जानंति) हे स्थविरो! आप लोग व्युत्सर्ग को नहीं जानते हैं। हे स्थविरो! आप लोग व्युत्सर्ग के अर्थ को नहीं जानते हैं। (तएणं ते थेरा भगवंतो

जाणति) હે સ્થવિરો! તમે સામાયિક જાણુતા નથી અને સામાયિકનો અર્થ પણ જાણુતા નથી (थेरा पच्चक्खाण न जाणंति) હે સ્થવિરો! તમે પ્રત્યાખ્યાનને જાણુતા નથી, (थेरा पच्चक्खाणस्स अट्ठ न जाणति) અને હે સ્થવિરો! તમે પ્રત્યાખાનનો અર્થ પણ જાણુતા નથી, (थेरा सजम न जाणंति) હે સ્થવિરો! તમે સંજમને જાણુતા નથી, (थेरा सजमस्स अठ न जाणंति) અને હે સ્થવિરો! તમે સંજમનો અર્થ પણ જાણુતા નથી, (थेरा सवर न जाणति) હે સ્થવિરો! તમે સવરને જાણુતા નથી, (थेरा संवरस्स अ न जाणति) અને હે સ્થવિરો! તમે સવરનો અર્થ પણ સમજતા નથી, (थेरो विवेग न जाणति, थेरा विवेगस्स अट्ठ न जाणंति) હે સ્થવિરો! તમે વિવેકને જાણુતા નથી, અને હે સ્થવિરો! તમે વિવેકનો અર્થ પણ જાણુતા નથી. (थेरा विउसग्ग न जाणति, थेरा विउसगस्स अट्ठं न जाणति) હે સ્થવિરો! તમે વ્યુત્સર્ગને જાણુતા નથી, અને હે સ્થવિરો! તમે વ્યુત્સર્ગનો અર્થ પણ જાણુતા નથી (तएण ते थेरा भगवतो कालासवेसिपुत्त अणगार एव वयासी)

किं गर्हा संयम अगर्हा सयमः ?। कालास्यवेपिकपुत्र ! गर्हा सयमो नो अगर्हा संयमः, गर्हापि च खलु सर्वे दोषं प्रविनयति, सर्वा बालता परिज्ञाय, एव खल्व स्माकमात्मा सयमे उपहितो भवति, एव खल्वस्माकमात्मा सयमे उपस्थितो भवति। अथ खलु स कालास्यवेपिकपुत्रोऽनगार सबुद्ध स्थविरान् भगवतो

इन क्रोधादिकों की निंदा करते हो? तब उन स्थविर भगवन्तों ने काला स्यवेपिपुत्र से कहा कि (कालासवेसिपुत्त) हे कालास्यवेपिकपुत्र! (स जमट्ठाए) हम लोग जो क्रोधादिकों की निंदा करते हैं वह सयम के लिये करते हैं। (से भंते ! किं गरहा सजमे अगरहा सजमे ?) तब काला-स्यवेपिकपुत्र ने उन स्थविर भगवंतों से पूछा कि हे भदन्तो! गर्हा (निंदा) सयम है ? कि अगर्हा संयम है ? (कालासवेसिय पुत्त ! गरहा सजमे, णो अगरहा सजमे) स्थविर भगवन्तों ने तब कहा कि कालास्यवेपि कपुत्र ! गर्हा सयम है, अगर्हा सयम नहीं है। (गरहा वि य णं सव्व दोस पविणेइ) अपि च गर्हा समस्त दोषों को बिलकुल दूर कर देती है, (सव्वं बालियं परिण्णाए) समस्त बाल्य-अज्ञान को ज्ञ परिज्ञा से जानकर। अर्थात् गर्हा द्वारा आत्मा ज्ञ परिज्ञा से समस्त अज्ञान जानकर प्रत्याख्यान परिज्ञा से दोषों का नाश कर देती है। (एव खु णे आया संजमे उवहिए भवइ) इस तरह से हम लोगों की आत्मा सयम में स्थापित हो जाती है। (एव खु णे आया सजमे उवट्ठिए भवइ) इस तरह से हम लोगों की आत्मा सयम में उपचित हो जाती है। (एवं

ગર્હા (ઘૃણા) કરો છો ? ત્યારે તે સ્થવિર ભગવંતોએ કાલાસ્યવેપિક પુત્રને કહ્યું- (कालासवेसियपुत्त!) હે કાલાસ્યવેપિક પુત્ર! (सजमट्ठाए) અમે જે ક્રોધ વગેરેની ઘૃણા કરીએ છીએ તે સયમને માટે જ કરીયે છીએ (से भंते! किं गरहा सजमे अगरहा संजमे ?) ત્યારે કાલાસ્યવેપિકપુત્રે તેમને પૂછ્યુ- હે પૂજ્યો! ગર્હા (ગુરુસાક્ષી એ આત્મનિંદા) સયમ છે ? કે અગર્હા સંયમ છે ? (काल सवेसियपुत्त! गरहा सजमे णो अगरहा सजमे) હે કાલાસ્યવેપિક પુત્ર! ગર્હા સયમ છે અગર્હા સયમ નથી. (गरहा वि य णं सव्व दोसं पविणेइ) અને ગર્હા તમામ દોષો સદતર દૂર કરનારી છે (सव्व बालियं परिण्णाए) તમામ બાલ્યને (અજ્ઞાનને) જ્ઞ પરિજ્ઞાથી જાણીને-એટલે કે ગર્હા એટલે કે ગુરુસાક્ષી એ સ્વ નિંદા કરીને આત્મા જ્ઞ પરિજ્ઞાથી અજ્ઞાનને જાણીને પ્રત્યાખ્યાન પરિજ્ઞા વડે દોષોનો નાશ કરે છે (एव खु णे आया सजमे उवट्ठिए भवइ) આ રીતે અમારો આત્મા સયમમાં સ્થાપિત થઈ જાય છે (एव खु णं आया सजमे उवट्ठिए भवइ) આ રીતે અમારો આત્મા સયમમાં ઉપચિત

मार्याः! व्युत्सर्गः, को भवतामार्या! व्युत्सर्गस्यार्थः। ततस्ते स्थविरा भगवंतः कालास्य वेपिकपुत्रमनगारमेवमवादिषुः, आत्मा-अस्माकमार्य! सामायिकम् , आत्मा अस्माकमार्य! सामायिकस्यार्थः, यावद् व्युत्सर्गस्यार्थः। ततः स कालास्यवेपिकपुत्रोनगारः स्थविरान् भगवत एवमवादीत् , यदि भवतामार्याः! आत्मा सामायिकम् , आत्मा सामायिकस्यार्थ एवं यावत् आत्मा व्युत्सर्गस्यार्थः, अपहृत्य क्रोधमानमायालोभान् किमर्थमार्याः गर्हत। कालास्यवेपिकपुत्र! संयमार्थतया। तद् भदंत!

क्या अर्थ है ? (जाव किं भे विउसंग्गस्स अट्ठे) यावत् व्युत्सर्ग का क्या अर्थ है ? (तएणं थेरा भगवन्तो कालासवेसिकपुत्त अणगारं एवं वयासी) इसके बाद उन स्थविर भगवंतों ने कालास्यवेपिपुत्र अनगार से इस प्रकार से कहा। (आयाणे अज्जो ! समाइए, आयाणे अज्जो सामाइयस्स अट्ठे जाव विउसग्गस्स अट्ठे) हे आर्य ! हमारा आत्मा सामायिक है। हे आर्य ! हमारा आत्मा सामायिक का अर्थ है। (जाव विउसग्गस्स अट्ठे) यावत् व्युत्सर्ग का अर्थ है (तएणं से कालासवेसियपुत्ते अणगारे थेरे भगवन्ते एवं वयासी) तब उन कालास्यवेषिक पुत्र अनगार ने उन स्थविर भगवन्तो से ऐसा कहा-(जइ भे अज्जो आया सामाइए, आया सामाइयस्स अट्ठे) हे आर्यो ! यदि आप लोगो की आत्मा सामायिक है, आत्मा सामायिक का अर्थ है (एवं जाव आया विउसग्गस्स अट्ठे) इसी तरह से यावत् आत्मा व्युत्सर्ग का अर्थ है, तो (कोहमाणमायालोभे) क्रोध, मान, माया और लोभ इनको (अवहट्टु छोड़कर (किं अट्ठ) किसलिये (अज्जो) हे आर्यो ! तुम लोग (गरहह)

भे विउसग्गस्स अट्ठे) યાવત વ્યુત્સર્ગનો શો અર્થ છે ? (અહીં પણ "યાવત્" પદથી પૂર્વોક્ત સૂત્રપાઠ ગ્રહણ કરવો) (तएण थेरा भगवतो कालासवेसियपुत्त अणगारं एव वयासी) ત્યારે તે સ્થવિર ભગવન્તોએ કાલાસ્યવેષિપુત્રને આ પ્રમાણે કહ્યુ-(अयाणे अज्जो! सामाइए, आयाणे अज्जो सामाइयस्स अट्ठे जाव विउगस्स अट्ठे) હે આર્ય ! અમારો આત્મા એજ સામાયિક છે, અને હે આર્ય ! અમારો આત્મા એજ સામાયિકનો અર્થ છે, " यावत् " વ્યુત્સર્ગનો અર્થ છે (तएण से कालासवेसियपुत्ते अणगारे भगवते एव वयासी) ત્યારે તે કાલાસ્યવેષિકપુત્ર અણગારે તે સ્થવિર ભગવન્તોને આ પ્રમાણે કહ્યુ-(जइ भे अज्जो आया सामाइयस्स अट्ठे एव जाव आया विउसग्गस्स अट्ठे) હે આર્યો ! જો આપનો આત્મા સામાયિક હોય અને આપનો આત્મા સામાયિકનો અર્થ હોય, " यावत् " આપનો આત્મા વ્યુત્સર્ગનો અર્થ હોય તો (कोहमाण माया लोभे) ક્રોધ, માન, માયા અને લોભનો (अवहट्टु) ત્યાગ કરીને વળી (किं अट्ठं) શા માટે (अज्जो) હે આર્યો ! (गरहह) તમે તેમની (ક્રોધાદિકોની)

व्युच्छिन्नानां निर्यूढानामवधारितानामतमर्थं श्रद्दधामि, प्रत्ययमि, रोचे, एवमेवैतत् तद् यथैतत् यूय वदत । ततस्ते स्थविरा भगवन्त कालास्यवेषिकपुत्रमनगारमेव मवादिपुः, श्रद्धेहि आर्य ! रोचस्व आर्य ! तद् यथैतद् वयं वदामः । ततः कालाम

को (नो सद्दहिए) श्रद्धा से युक्त नहीं किया (णो पत्तइए) प्रतीति (विश्वास) से युक्त नहीं किया (णो रोइए) रुचि से युक्त नहीं किया (इयाणिं भंते) इस समय हे भदन्त ! (जाणणयाए) इन पदों का ज्ञान हो जाने के कारण (सवणयाए) श्रवण हो जाने के कारण (बोहीए बोध हो जाने के कारण (अभिगमेण) अभिगम हो जाने के कारण (दिट्ठाण) देखे गये (सुयाणं) सुने गये (सुयाण) स्मरण किये गये (विन्नायाणं) विज्ञात किये गये (वोगडाण) व्याकृत किये गये (वोच्छिन्नाणं) व्युच्छिन्न किये गये (णिज्जूढाण) निर्यूढ किये गये (उवधारियाणं) अवधारित किये गये (एतेसिं पयाण) इन पदों क (एयमट्ठं) इस अर्थ की (सद्दहामि) मैं श्रद्धा करता हूं (पत्तियामि) प्रतीति करता हू (रोएमि) रुचि करता हू (एवमेयं) यह ऐसा ही है जैसा कि आप कहते हैं । (तएणं) इसके बाद (ते थेरा भगवन्तो) उन स्थविर भगवन्तों ने (कालासवेसियपुत्तं अणगारं) कालास्यवेषिक पुत्र अनगार से (एवं वयासी) ऐसा कहा (सद्दहाहि अज्जो पत्तियाहि अज्जो, रोएहि अज्जो) हे आर्य! श्रद्धा करो, हे आर्य प्रतीति करो, हे आर्य रुचि करो (से जहेयं

सहित કર્યો ન હતો, (णो पत्तइए) આ અર્થમાં પહેલાં મને વિશ્વાસ ન હતો, (णो रोइए) રુચિ ન હતી (इयाणिं भंते !) હે પૂજ્યો ! હવે(जाणणयाए) આ પદોનુ જ્ઞાન થવાને કારણે (सवणयाए) શ્રવણ થવાને કારણે, (बोहिए) બોધ થવાને કારણે (अभिगमेण) અભિગમ (સમજણ) થવાને કારણે, (दिट्ठाण, सुयाण, विन्नायाण, वोगडाण वोच्छिन्नाण, णिज्जूढाण, उवधारियाण एतेसिं पयाण एयमट्ठं सद्दहामि पत्तियामि रोएमि एवमेयं) તે પદોનાં આ અર્થને જોઈને, સાંભળીને, સ્મરણ કરીને, વિજ્ઞાત કરીને, વ્યાકૃત (પ્રગટ) થવાથી, વ્યુચ્છિન્ન થવાથી, નિર્યૂઢ થવાથી અને અવધારિત કરવાથી તે અર્થમાં હવે મને શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન થઈ છે તે અર્થની મને પ્રતીતિ થઈ છે, તે અર્થ પ્રત્યે મને રુચિ પેદા થઈ છે, આપના કહેવા પ્રમાણે જ એ તમામ અર્થ બરાબર છે (तएण) ત્યાર બાદ (ते थेरा भगवंतो) તે સ્થવિર ભગવંતોએ (कालासवेसियपुत्तं अणगारं) કાલાસ્યવેષિક પુત્ર અણગારને (एवं वयासी) આ પ્રમાણે કહ્યું-(सद्दहाहि अज्जो पत्तियाहि अज्जो, रोएहि अज्जो, से

वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमवादीत्, एतेषां भदन्त पदानां पूर्वमज्ञानतया अश्रवणतया अबोधितया अनभिगमेनादृष्टानामश्रुतानामस्मृतानामविज्ञातानामव्याकृतानामव्युच्छिन्नानामनिर्यूढानामनवधारितानामेषोऽर्थो नो श्रद्धितो नो प्रतीतः (प्रत्ययितः) नो रुचित इदानीं भदन्त ! एतेषां पदानां ज्ञानतया श्रवणतया-बोधितयाऽभिगमनेन दृष्टानां श्रुतानां स्मृतानां विज्ञातानां व्याकृतानां

खु णे आया संजमे उवट्ठिए भवइ) इस तरह हम लोगों की आत्मा संयम में उपस्थित हो जाती है। (एत्थ णं से कालासवेसियपुत्ते) ऐसा सुनकर वे कालस्यवेषिक पुत्र (अणगारे) अनगार (संवुद्धे) संवुद्ध हो गये। (थेरे भगवन्ते वंदइ, णमसइ) उन्हों ने स्थविर भगवन्तों को वन्दना की। उन्हें नमस्कार किया। (वन्दित्ता णमंसित्ता) वन्दना नमस्कार करके फिर वे उन से (एवं वयासी) इस प्रकार बोले (भंते !) हे भदन्तो) (पुव्विं) पहिले मैं ने (अन्नाणयाए) अज्ञानता के कारण (असवणयाए) अश्रवणता के कारण (अवोहियाए) अबोधिता के कारण (अनभिगमेणं) अनभिगम (नहीं जानने) के कारण (अदिट्ठाणं) नहीं देखे गये (अस्सुयाणं) नहीं सुने गये (अस्सुयाणं) नहीं स्मृत किये गये (अविन्नायाणं) नहीं विज्ञात किये गये (अव्वोगडाणं) नहीं व्याकृत (प्रगट) किये गये (अवोच्छिन्नाणं) नहीं व्युच्छिन्न किये गये (अणिज्जूढाणं) नहीं निर्यूढ किये गये (अणुवधरियाणं) नहीं अवधारित किये गये (एएसिं णं पयाणं) इन पदों के (एयमट्ठं) इस अर्थ

થઈ જાય છે (एव खु णे आया संजमे उवट्ठिए भवइ) આ રીતે અમારો આત્મા સયમમા ઉપસ્થિત થઈ જાય છે (एत्थ ण से कालासवेसियपुत्ते अणगारे सवुद्धे) તેમના એ પ્રકારના વચનો સાભળીને કાલાસ્યવેષિક પુત્ર અણગાર બોધ પામ્યા (थेरे भगव ते व दइ, णमंसइ) ત્યાર બાદ તેમણે સ્થવિર ભગવંતોને વંદણા કરી અને નમસ્કાર કર્યા (वदित्ता णमंसित्ता) વ દન નમસ્કાર કરીને (एव वयासी) તેમણે તેમને આ પ્રમાણે કહ્યુ-(भते !) હે પૂજ્યો ! (पुव्विं) પહેલા (अन्नाणयाए) અજ્ઞાનતાને કારણે, (असवणयाए) અશ્રવણતાને કારણે, (अबोहियाए) અબોધિતાને કારણે, (अनभिगमेण) અણુસમજને કારણે, (अदिट्ठाण) નહી દેખેલા, (अस्सुयाण) નહીં સાભળેલા, (अस्सुयाण) નહી સ્મૃત કરેલા, (अविन्नायाण) નહીં વિજ્ઞાત કરાયેલા, (अव्वोगडाण) નહીં પ્રકટ કરાયેલા, (अवोच्छिन्नाण) નહીં વ્યુચ્છિન્ન કરાયેલા (अणिज्जूढाण) નહીં નિર્યૂઢ કરાયેલા, (अणुववारियाण) નહીં અવધારિત કરાયેલા (एएसिं ण पयाण) એવા આ પદોનો (एयमट्ठ) આ અર્થ (नो सद्दहिए) મેં શ્રદ્ધા

धर्ममुपसम्पद्य खलु विहरति। ततः खलु स कालास्यवेषिकपुत्रोऽनगारो बहूनि वर्षाणि श्रामण्यपर्यायं पालयति, पालयित्वा यस्यार्थं क्रियते नग्नभावो मुण्डभावोऽस्नानकमदन्तधावनकम् छत्रकमनुपानत्क भूमिशय्या फलकशय्या काष्ठशय्या

वन्दना की, उन्हें नमस्कार किया (वन्दित्ता नमंसित्ता) वन्दना करके, नमस्कार करके, (चाउज्जामाओ धम्माओ) चार महाव्रत वाले धर्म को छोड़कर (सपडिक्कमणं) प्रतिक्रमण सहित (पंच महव्वइयं) पांच महाव्रत वाले (धम्मं) धर्म को (उवसंपज्जित्ताणं) प्राप्त कर (विहरइ) विचरने लगे (तएणं से कालासवेसियपुत्ते अणगार) इसके बाद इन कालास्यवेषिकपुत्र अणगारने (बहूनि वासाणि) बहुत वर्षोतक (सामन्न परियागं पाउणइ) श्रामण्यपर्याय का पालन किया। (पाउणित्ता) पालन करके (जस्सट्ठाए) जिस अपने प्रयोजन को सिद्ध करने के निमित्त (नग्गभावे कीरइ) उन्हों ने नग्नपना लिया (मुन्डभावे) मुन्डपना लिया (अण्हाणयं) स्नान नहीं करना ऐसा नियम लिया (अदंतधुवणयं) दन्तधावन-दांतोन नहीं की (अच्छत्तयं) छत्र नहीं रखा (अणोवाहणयं) पगरखे नहीं पहरे (भूमिसेज्जा) भूमि पर शयन किया (फलहसेज्जा) फलक पर शयन किया (कट्ठसेज्जा) काष्ठ पर शयन किया (केसलोओ) केशों का लुंचन किया (बंभचेर वासो) ब्रह्मचर्य में वास किया (परघरप्पवेसो)

કાર કર્યા (वन्दित्ता, नमंसित्ता) વંદણા નમસ્કાર કરીને (चाउज्जामाओ धम्माओ) ચાર મહાવ્રતવાળા ધર્મને છોડીને (सपडिक्कमणं) પ્રતિક્રમણ સહિતના (पंच महव्वइयं) પાંચ મહાવ્રતવાળા (धम्मं) ધર્મને (उवसंपज्जित्ताणं) અંગીકાર કરીને (विहरइ) વિચરવા લાગ્યા (तएणं से कालासवेसियपुत्ते अणगारे) ત્યાર બાદ તે કાલાસ્યવેષિકપુત્ર અણગારે (बहूनि वासाणि) ઘણાં વર્ષો સુધી (सामन्न परियागं पाउणइ) શ્રમણ પર્યાયનું પાલન કર્યું (पाउणित्ता) શ્રમણ પર્યાયનું પાલન કરીને (जस्सट्ठाए) તેમણે પોતાના આત્મકલ્યાણની સિદ્ધિ માટે (नग्गभावे कीरइ) નગ્નતા ધારણ કરી-વસ્ત્રોનો પરિત્યાગ કર્યો (मुण्डभावे) માથે મુંડન કર્યો-કેશલુંચન કર્યું (अण्हाणयं) સ્નાન નહીં કરવાનો નિયમ કર્યો, (अदंतधुवणयं) દાંત ધોવાનું બંધ કર્યું (अच्छत्तयं) છત્ર રાખવું બંધ કર્યું, (अणोवाहणयं) પગમાં જોડા પહેરવા બંધ કર્યા, (भूमिसेज्जा) ભૂમિ પર શયન કરવા માંડ્યું (फलहसेज्जा) ફલક પર શયન કરવા માંડ્યું (कट्ठसेज्जा) કાષ્ઠ પર શયન કરવા માંડ્યું (केसलोओ) વાળનો લોચ કરવા માંડ્યો (बंभचेरवासो) બ્રહ્મચર્ય પાળવા માંડ્યું, (परघरप्पवेसो) ભિક્ષાર્થે પરઘરમાં

स्यवेषिकपुत्रोऽनगारः स्थविरान् भगवतो वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमवादीत्, इच्छामि खलु भदंत! युष्माकमन्तिके चातुर्यामाद् धर्मात् पंचमहाव्रतिकं सप्रतिक्रमणं धर्ममुपसंपद्य विहर्तुम्। यथासुखं देवानुप्रिय! मा प्रतिबन्धं कुरु। ततः खलु स कालास्यवेषिकपुत्रोऽनगारः स्थविरान् भगवतो वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा चातुर्यामाद् धर्मात् पञ्चमहाव्रतिकं सप्रतिक्रमणं

अम्हे वदह) उस पर जैसा कि हम कहते हैं। (तएणं से कालासवेसिपुत्ते अणगारे) इसके बाद कालास्यवेषिक पुत्र अनगार ने (थेरे भगवंते वंदइ, नमंसइ) उन स्थविर भगवन्तों की वन्दना की, उन्हें नमस्कार किया (वंदित्ता नमंसित्ता) वन्दना नमस्कार करके (एवं वयासी) फिर उन्होंने उनसे ऐसा कहा (भंते! तुब्भं अंतिए) हे स्थविर भदन्तों! आप लोगों के पास में (चाउज्जामाओ धम्माओ) चार महाव्रत वाले धर्म को छोड़कर (सप्पडिक्कमणं पंचमहव्वयं धम्मं) प्रतिक्रमणसहित पाँचमहाव्रत वाले धर्म को (उवसंपज्जित्ता णं विहरित्तए इच्छामि) प्राप्त कर विचरना चाहता हूं। तब स्थविर भगवन्तों ने उनसे कहा-(अहासुहं देवाणुप्पिया! मा पडिबंधं करेह) आप को जैसे सुख हो हे देवानुप्रिय! आप वैसा करें। विलम्ब न करें। (तएणं से कालासवेसियपुत्ते अणगारे) इसके बाद उन कालस्यवेषिक पुत्र अनगार ने (थेरे भगवंते वन्दइ, नमंसइ) स्थविर भगवन्तों को

जहेयं अम्हे वदह) હે આર્ય! અમે તે વિષે જે કહીએ છીએ તેમા શ્રદ્ધા રાખો, હે આર્ય! તેની પ્રતીતિ કરો, હે આર્ય! તેમાં રુચિ રાખો. (तएण से कालासवेसियपुत्ते अणगारे) ત્યાર બાદ તે કાલાસ્યવેષિકપુત્ર અણગારે (थेरे भगवंते वंदइ नमसइ) તે સ્થવિર ભગવન્તોને વંદણા કરી, નમસ્કાર કર્યા. (वंदित्ता नमंसित्ता) વંદણા નમસ્કાર કરીને (एवं वयासी) તેમણે ફરીથી તેમને આ પ્રમાણે કહ્યુ-(भते तुब्भ अंतिए) હે સ્થવિર ભગવન્તો! આપની સમક્ષ હુ (चाउज्जामाओ धम्माओ) ચાર મહાવ્રતવાળા ધર્મને છોડીને (सप्पडिक्कमणं पचमहव्वय धम्म) પ્રતિક્રમણ સહિતના પાચ મહાવ્રતવાળા ધર્મનો (उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए इच्छामि) સ્વીકાર કરીને વિચરવા માગું છું. ત્યારે સ્થવિર ભગવન્તોએ કહ્યુ-(अहासुह देवाणुप्पिया! मा पडिबंध करेह) હે દેવાનુપ્રિય! આપને જે રીતે સુખ થાય એ પ્રમાણે કરો-પરંતુ વિલમ્બ કરશો નહી. (तएण से कालासवेसियपुत्ते अणगारे) ત્યારે તે કાલાસ્યવેષિકપુત્ર અણગારે (थेरे भगवंते वदइ, नमंसइ) સ્થવિર ભગવાનોને વંદણા કરી, નમ-

एव प्रदेशे स्थविरा भगवन्त आसन् तेनैव तस्मिन्नेव प्रदेशे उपागच्छति, 'उवाग-च्छित्ता थेरे भगवंत एवं वयासी' उपागम्य स्थविरान् भगवत एवं वक्ष्यमाणप्रकारेण अवादीत् 'थेरा सामाइय न जाणंति' हे स्थविरा! भगवन्त सामायिकं न जानन्ति, तस्यात्यन्तसूक्ष्मगूढार्थतया दुर्विज्ञेयत्वात् 'थेरा सामाइयस्स अट्ठ न जाणंति' हे स्थविरा! भवन्तः सामायिकस्य अर्थं प्रयोजनं न जानन्ति, तत्प्रयोजनज्ञानस्य अति दुष्करत्वात् 'थेरा पच्चक्खाणं न जाणंति' हे स्थविरा! भवन्त प्रत्याख्यानं न जानन्ति, त्यागधर्मस्य दुर्विज्ञेयत्वात्, थेरा पच्चक्खाणस्स अट्ठ न जाणंति' हे स्थविरा! भवन्त प्रत्याख्यानस्य अर्थं प्रयोजनं न जानन्ति, तस्य अत्यन्तगूढ

पेपी पुत्र अनगार थ। ये जिस प्रदेश में स्थविर भगवन्त विराजमान थे वहां गये। भगवान महावीर के बहुश्रुत जो शिष्य थे। उनका नाम स्थविर है। उनके समीप जाकर उन्हों ने उस स्थविर भगवन्तों से ऐसा –आगे जो विषय कहा जाने वाला है उस रूप से–कहा, वह विषय इस प्रकार से है–(थेरा सामाइय न जाणंति) हे स्थविरो। आप सामायिक को नहीं जानते हैं। क्योंकि वह अत्यन्त सूक्ष्म गूढ अर्थ वाला है। इस कारण वह दुर्विज्ञेय है–उसका समझना–जानना–बहुत कठिनाईयों से भरपूर है। (थेरा सामाइयस्स अट्ठं न जाणंति) हे स्थविरो। आप लोग सामायिक के अर्थ को नहीं जानते हैं। यहां अर्थ का तात्पर्य प्रयो जन का ज्ञान होना अतिदुष्कर है। (थेरा पच्चक्खाणं न जाणंति) हे स्थविरो! आप प्रत्याख्यान को नहीं जानते हैं। क्यों कि प्रत्याख्यान त्यागधर्मरूप होता है। और त्यागधर्म का समझना दुर्विज्ञेय है। (थेरा पच्चक्खाणस्स अट्ठ न जाणंति) हे स्थविरो! आप प्रत्याख्यान का क्या

ભગવંત વિરાજમાન હતા ત્યાં ગયા. ભગવાન મહાવીર ના જે શિષ્યો બહુશ્રુત હતા તેમને સ્થવિર કહેતા કાલાસ્યવેષીપુત્ર અણગારે તેમની પાસે જઈને તેમને આ પ્રમાણે કહ્યું— "થેરા સામાઇય ન જાણંતિ" હે સ્થવિરો! આપ સામાયિકને જાણતા નથી કારણ કે તેનો અર્થ અત્યંત સૂક્ષ્મ અને ગહન છે દુર્વિજ્ઞેય છે એટલે કે તેને સમજવાનું કાર્ય અતિશય મુશ્કેલ છે "થેરા સામાઇયસ્સ અટ્ઠં ન જાણંતિ" હે સ્થવિરો! તમે સામાયિકનો અર્થ પણ જાણતા નથી. અહીં અર્થ એટલે પ્રયોજન સમજવું કારણ કે સામાયિકનું પ્રયોજન સમજવું અતિ દુષ્કર છે "થેરા પચ્ચક્ખાણં ન જાણંતિ" હે સ્થવિરો! તમે પ્રત્યાખ્યાનને સમજતા નથી કારણ કે પ્રત્યાખ્યાન ત્યાગધર્મરૂપ હોય છે અને ત્યાગધર્મને સમજવો પણ અતિ મુશ્કેલ છે "થેરા પચ્ચક્ખાણસ્સ અટ્ઠં ન જાણંતિ" હે સ્થવિરો! તમે પ્રત્યાખ્યાનનું પ્રયોજન પણ સમજતા નથી.

केशलोचः ब्रह्मचर्यवासः परगृहप्रवेशः लब्ध्यपलब्धिः, उच्चावचा ग्रामकण्टका द्वाविंशतिः परिसहोपसर्गा अधिसह्यन्ते तमर्थमाराधयति आराध्य चरमैरुच्छ्वास निःश्वासैः सिद्धो बुद्धो मुक्तः परिनिर्वृतः सर्वदुःखप्रहीणः ॥ सू० ५ ॥

टीका-'तेणं कालेणं तेणं समएणं' तस्मिन् काले तस्मिन् समये खलु 'पासावच्चिज्जे कालासवेसियपुत्ते णामं अणगारे' पार्श्वापत्यातः-पार्श्वसन्तानीयः कालास्यवेषिपुत्रो नाम अनगारः 'जेणेव थेरा भगवंतो तेणेव उवागच्छइ' येनैव यस्मिन्

भिक्षा के लिये परघर में प्रवेश किया (लद्धावलद्धी) भिक्षा मिले या न मिले दोनों अवस्थाओं में समताभाव रखा, (उच्चावया) अनुकूल प्रतिकूल ऐसे (गामकंटगा) तथा इन्द्रियों के कण्टकरूप (बावीसं परिसहोवसग्गा) ऐसे २२ परीषहों को और उपसर्गों को (अहियासिज्जंति) सदा (तं अट्ठं आहारेइ) उस अर्थ की उन्हों ने अच्छी तरह से आराधना की। (आराहित्ता) और आराधना करके वे (चरमेहिं उस्सास नीसासेहिं) अन्तिम उच्छ्वासनिःश्वास में (सिद्धे बुद्धे मुत्ते परिनिव्वुडे, सव्वदुक्खप्पहीणे) सिद्ध, बुद्ध, मुक्त, परिनिर्वृत और समस्त दुःखों से रहित हो गये।

टीकार्थ—(तेणं काले तेणं समएणं) उस काल में अर्थात् चतुर्थ काल में, उस समय में-अर्थात्-जब कि श्रमण भगवान् महावीर विराजमान थे तब। (पासावच्चिज्जे) पार्श्वापत्यीय-पार्श्वनाथ के शिष्यों में के एक शिष्य जिनका नाम (कालासवेसियपुत्ते अणगारे) कालास्य-

---

પ્રવેશ કરવા માંડયો-ગોચરી માટે ઘરે ઘરે ફરવા માંડયુ (लद्धावलद्धी) ભિક્ષા મળે કે ન મળે, એ બન્ને અવસ્થામા સમતાભાવ રાખવા માંડયો, (उच्चावया) અનુકૂળ તથા પ્રતિકૂળ એવાં (गामकंटगो) તથા ઈન્દ્રિયોને માટે કંટકરૂપ (बावीस परिसहोवसग्गा) એવા બાવીસ પરીષહો અને ઉપસર્ગોને (अहियासिज्जंति) સહન કર્યા (त अट्ठ आहारेइ) તે અર્થની (મોક્ષમાર્ગની) તેમણે સારી રીતે આરાધના કરી (आराहित्ता) આરાધના કરીને તેઓ (चरमेहि उस्सासनीसासेहिं) અન્તિમ ઉચ્છ્વાસ નિઃશ્વાસમા (सिद्धे, बुद्धे, मुत्त, परिनिव्वुडे, सव्वदुक्खप्पहीणे) સિદ્ધ, બુદ્ધ, મુક્ત અને પરિનિર્વૃત થઈને તમામ દુખોથી રહિત થઈ ગયા અર્થાત્ મોક્ષ પદની પ્રાપ્તિ કરી

ટીકાર્થ—' तेण काले तेण समएणं " તે કાળે એટલે કે ચોથા આરામાં, તે સમયે-એટલે કે જ્યારે શ્રમણ ભગવાન મહાવીર સ્વામી વિરાજમાન હતા ત્યારે " पासावच्चिज्जे " પાર્શ્વનાથના શિષ્યોમાના એક શિષ્ય કે જેમનું નામ " कालासवेसियपुत्त अणगारे". કાલાવસ્યવેષીપુત્ર અણગાર હતું, તેઓ જ્યા સ્થવિર

हे स्थविराः ! भवन्तो व्युत्सर्गं न जानन्ति, तस्य दुष्करत्वात्, 'थेरा विउसग्गस्स अट्ठं न जाणति' हे स्थविराः ! भवन्तो व्युत्सर्गस्य अर्थं न जानन्ति, तत्स्वरूपस्य दुर्बोध्यत्वात्, 'तएण ते थेरा भगवंतो-कालासवेसियपुत्त अणगारं एवं वयासी' ततस्ते स्थविराः भगवन्त कालास्यवेपिकपुत्र अनगारम् एव-वक्ष्यमाणप्रकारेण भवादिषुः 'जाणामो णं अज्जो ! सामाइय' हे आर्य ! वय जानीमः खलु सामायिकम्, 'जाणामो णं अज्जो ! समाइयस्स अट्ठ' हे आर्य ! जानीम' खलु वयं सामायिकस्य अर्थं प्रयोजनम्, 'जाव-जाणामो णं अज्जो विउस्सग्गस्स अट्ठं'

स्थविरो ! आप विवेक के प्रयोजन को नहीं जानते हैं क्यों कि वह प्रयोजन अत्यन्त सूक्ष्म है। (थेरा विउसग्गं न जाणंति) हे स्थविरो ! आप व्युत्सर्ग को नहीं जानते हैं क्यों कि उसका करना बड़ा कठिन है। (थेरा विउसग्गस्स अट्ठ न जाणंति) हे स्थविरो ! आप व्युत्सर्ग के अर्थ को नहीं जानते हैं क्यों कि उसका स्वरूप दुर्बोध्य है। कालास्यवेपिपुत्र अनगार की इस बात को सुनकर उन स्थविर भगवन्तों ने कालास्यवेपिपुत्र अनगार से ऐसा कहा-हे आर्य ! हम सामायिक को जानते हैं सामायिक के प्रयोजन को जानते हैं। हे आर्य ! हम प्रत्याख्यान को जानते हैं, प्रत्याख्यान के अर्थ को जानते हैं। हे आर्य ! हम सयम को जानते हैं, सयम के अर्थ को अर्थात् प्रयोजन को जानते हैं। हे आर्य ! हम सवर को जानते हैं, सवर के प्रयोजन को जानते हैं। हे आर्य ! हम विवेक को जानते हैं, विवेक के अर्थ को जानते हैं। हम व्युत्सर्ग को

જાણુતા નથી, કારણ કે તે પ્રયોજન અત્યત સૂક્ષ્મ છે 'थेरा विउसग्गं न जाणंति" હે સ્થવિરો ! તમે વ્યુત્સર્ગને જાણુતા નથી કારણ કે તે કરવાનું કાર્ય પણુ કઠિન છે थेरा विउसग्गस्स अट्ठ न जाणंति" હે સ્થવિરો ! તમે વ્યુત્સર્ગનું પ્રયોજન પણુ જાણુતા નથી કારણુ કે તેનુ સ્વરૂપ જાણવાનું કાર્ય પણુ દુષ્કર છે કાલાસ્યવેપીપુત્ર અણુગારની તે વાત સાંભળીને તે સ્થવિર ભગવંતોએ તેને આ પ્રમાણે કહ્યુ-- હે આર્ય ! અમે સામાયિકને સમજીએ છીએ અને સામાયિકના પ્રયોજનને પણુ જાણીએ છીએ હે આર્ય ! અમે પ્રત્યાખ્યાનનુ પ્રયોજન પણ સમજીએ છીએ. હે આર્ય ! અમે સયમને જાણીએ છીએ અને સયમના પ્રયોજનને પણુ જાણીએ છીએ હે આર્ય ! અમે સવરને જાણીએ છીએ અને સવરના પ્રયોજનને પણ જાણીએ છીએ, હે આર્ય ! અમે વિવેકને જાણીએ છીએ અને વિવેકના અર્થને પણ જાણીએ છીએ. તથા હે આર્ય ! અમે વ્યુત્સર્ગને જાણીએ છીએ અને વ્યુત્સર્ગના અર્થને પણ જાણીએ છીએ, સ્થવિર ભગવંતોનું એ પ્રકારનુ કથન સાભળીને કાલાસ્યવેપિપુત્ર

त्वात्, 'थेरा संजमं न जाणंति' हे स्थविराः भवन्तः संयमं न जानन्ति, तस्यात्यन्तदुष्करत्वात्, 'थेरा संजमस्स अट्ठं न जाणंति' हे स्थविराः! भवन्तः संयमस्य अर्थं न जानन्ति, तस्य दुर्विज्ञेयत्वात् 'थेरा संवरं न जाणंति' हे स्थविराः! भवन्तः संवरं न जानन्ति, तदाराधनस्य दुःसाध्यत्वात्, 'थेरा संवरस्स अट्ठं न जाणंति' हे स्थविराः! भवन्तः संवरस्य अर्थं न जानन्ति, तदाराधनविधेः दुर्ज्ञेयत्वात्, 'थेरा विवेगं न जाणंति' हे स्थविराः! भवन्तो विवेकं न जानन्ति, तत्स्वरूपस्य दुर्विज्ञेयत्वात्, 'थेरा विवेगस्स अट्ठं न जाणंति' हे स्थविराः! भवन्तो विवेकस्य अर्थं न जानन्ति, तस्यात्यन्तसूक्ष्मत्वात्, 'थेरा विउसग्गं न जाणंति'

प्रयोजन है इस बात को भी नहीं जानते हैं। क्योंकि प्रत्याख्यान का प्रयोजन अत्यंत गूढ है। (थेरा संजमं न जाणंति) हे स्थविरो! आप संयम को भी नहीं जानते हैं। क्यों कि वह संयम अत्यन्त दुष्कर है। (थेरा संजमस्स अट्ठं न जाणंति) हे स्थविरो! आप संयम का क्या प्रयोजन है-इसे भी नहीं जानते हैं क्यों कि संयम का प्रयोजन बड़ी मुश्किल से समझ में आवे ऐसा है। (थेरा संवरं न जाणंति) हे स्थविरो! आप संवर को नहीं जानते हैं क्यों कि संयम की आराधना अत्यन्त दुःसाध्य है-सब इसकी आराधना कर सकें-ऐसी नहीं है। (थेरा संवरस्स अट्ठं न जाणंति) हे स्थविरो! आप संवर के अर्थं को नहीं जानते हैं क्यों कि उसके आराधना की विधि दुर्विज्ञेय है। (थेरा विवेगं न जाणंति) हे स्थविरो! आप विवेक को नहीं जानते हैं क्यो कि विवेक का स्वरूप दुर्विज्ञेय है। (थेरा विवेगस्स अट्ठं न जाणंति) हे

કારણ કે પ્રત્યાખ્યાનનુ પ્રયોજન અત્યંત ગૂઢ-ગહન છે "थेरा सजम न जाणंति" હે સ્થવિરો! તમે સયમને પણ સમજતા નથી, કારણ કે સયમ પાળવાનું કાર્ય અતિ દુષ્કર છે "थेरा सजमस्स अट्ठ न जाणति" હે સ્થવિરો! સંયમનું શું પ્રયોજન છે તે પણ તમે જાણતા નથી, કારણ કે સયમનુ પ્રયોજન સમજવાનું કાર્ય અત્યંત મુશ્કેલ છે "थेरा संवरं न जाणति" હે સ્થવિરો! તમે સવરને જાણુતા નથી કારણ કે સંવરની આરાધના કરવાનુ કાર્ય અતિ દુષ્કર છે બધા લોકો તેની આરાધના કરી શકતા નથી "थेरा सवरस्स अट्ठ न जाणति" હે સ્થવિરો! તમે સવરનુ શુ પ્રયોજન છે તે પણ જાણુતા નથી, કારણ કે તેના આરાધનની વિધિ દુર્વિજ્ઞેય છે "थेरा विवेगं न जाणति" હે સ્થવિરો! તમે વિવેકને સમજતા નથી, કારણ કે તેનુ સ્વરૂપ દુર્વિજ્ઞેય છે "थेरा विवेगस्स अट्ठ न जाणति" હે સ્થવિરો! તમે વિવેકનુ પ્રયોજન પણ

भवतां मते संयम , कश्च भवतां मते संयमस्य अर्थ , कः भवतां मते संवरः ? कश्च भवतां मते संवरस्य अर्थ ? क भवतां मते विवेकः कश्च भवतां मते विवेकस्य अर्थः प्रयोजनम् , को भवतां मते व्युत्सर्गः ? इति सग्राह्यम् , ' तएणं थेरा भगवंतो कालासवेसियपुत्तं अणगारं एवं वयासी ' तत खलु ते स्थविराः भगवन्त कालास्यवेपिकपुत्रमनगारमेवमवादिषुः 'आया णे अज्जो सामाइए' हे आर्य ! आत्मा नः अस्माकं मते सामायिक समभावरूप वर्तते, 'आया णे अज्जो सामाइयस्स अट्ठे ' हे आर्य ! आत्मा एव नः अस्माक मते सामायिकस्य समभावरूपस्य अर्थः नूतनकर्मानुपादानपूर्वकक्रतकर्मनिर्जरारूपं प्रयोजनं वर्तते ' जाव-विउस्स

से यहा पूर्वोक्त पाठ का सग्रह किया गया है-जो इस प्रकार से है-आप के मत में प्रत्याख्यान क्या है ? प्रत्याख्यान का प्रयोजन क्या है ? आपके मत में संयम क्या है ? संयम का प्रयोजन क्या है ? आपके मत में संवर क्या है ? संवर का प्रयोजन क्या है ? आप के मत में विवेक क्या है ! विवेक का प्रयोजन क्या है ? आपके मत में व्युत्सर्ग क्या है ? कालस्य वेपिकपुत्र अनगार की इस बात को सुनकर उन स्थविर भगवन्तो ने उनसे ऐसा कहा कि "आया णे अज्जो सामाइए, आया णे अज्जो सामाइयस्स अट्ठे ' हे आर्य ! हम लोगों के मत में सामायिक वस्तु समभावरूप आत्मा है । और हे आर्य ? आत्मा ही समभावरूप सामायिक का अर्थ है। आत्मा जब समभावरूप सामायिक में वर्तती है-तब उसके नवीन कर्मो का बंध नहीं होता है और पुराने संचित कृत कर्मों की निर्जरा होती रहती । यही सामायिकका अर्थ-प्रयोजन है। इसी तरहसे

પદથી પૂર્વોક્ત નીચે પ્રમાણેનો પાઠ ગ્રહણ કરાયો છે-આપના મત અનુસાર પ્રત્યાખ્યાન શુ અને પ્રત્યાખ્યાનનુ પ્રયોજન શુ છે? આપની માન્યતા મુજબ સયમ શુ છે? અને સયમનુ પ્રયોજન શુ છે? આપની માન્યતા મુજબ વિવેક શુ છે અને વિવેકનુ પ્રયોજન શુ છે? આપના મત પ્રમાણે વ્યુત્સર્ગ શુ છે?) કાલાસ્યવેપીપુત્ર અણગારના આ પ્રશ્નોનો તે સ્થવિર ભગવતોએ એવો ઉત્તર આપ્યો કે आया णे अज्जो सामाइए आया णे अज्जो समाइयस्स अट्ठे " હે આર્ય ! અમારા મત પ્રમાણે સામાયિક વસ્તુ સમભાવરૂપ આત્મા છે, અને હે આર્ય ! આત્મા જ સમભાવરૂપ સામાયિકનો અર્થ છે જ્યારે આત્મા સમભાવરૂપ સામાયિકમા પ્રવૃત્ત થાય છે ત્યારે તે નવા કર્મોનો બધ બાધતો નથી અને પહેલાના સગ્રહ કરેલા કર્મોની નિર્જરા કરે છે એ જ સામાયિકનુ પ્રયોજન છે એ જ પ્રમાણે અમારા મત પ્રમાણે આત્માજ પ્રત્યા

यावत् हे आर्य! जानीमः खलु वयं प्रत्याख्यानम्, जानीम प्रत्याख्यानस्य अर्थम् प्रयोजनम्, जानीमो वयम् संयमं, जानीमः संयमस्य अर्थम् प्रयोजनम्, जानीमो वयं संवरम्, जानीमः खलु संवरस्य अर्थम् प्रयोजनम्, जानीमो वयं विवेकम्, जानीमः खलु विवेकस्यार्थम् प्रयोजनम्, जानीमः खलु व्युत्सर्गं, जानीमो वयम् व्युत्सर्गस्य अर्थम् प्रयोजनम्, 'तएणं से कालासवेसियपुत्ते अणगारे ते थेरे भगवंते एवं वयासी' ततः खलु स कालास्यवेषिकपुत्रोऽनगारः तान् स्थविरान् भगवतः एवं-वक्ष्यमाणप्रकारेण अवादीत्-'जइणं अज्जो! तुब्भे जाणह समाइयं हे आर्याः! यदि खलु यूयं जानीथ सामायिकम् 'जाणह सामाइयस्स अट्ठं' अथ च जानीथ यूय सामायिकस्य अर्थं प्रयोजनम्, 'जाव जाणह-विउस्सग्गस्स अट्ठं' यावत्-जानीथ यूयं व्युत्सर्गस्य अर्थम् प्रयोजनम्, यावत्कारणात्-उपर्युक्त प्रत्याख्यानादिव्युत्सर्गान्तं संग्राह्यम्, तदा 'के भे अज्जो! सामाइए?' हे आर्याः! किः भवतां मते सामायिकं वस्तु वर्तते? 'के भे अज्जो! सामाइयस्स अट्ठे?' हे आर्याः! कः भवतां मते सामायिकस्य अर्थः प्रयोजनम्? 'जाव-के भे विउस्सग्गस्स अट्ठे?' यावत्-को भवतां मते व्युत्सर्गस्य अर्थ· प्रयोजनम्? यावत्करणात्-किं भवतां मते प्रत्याख्यानम्? को भवतां मने प्रत्याख्यानस्य अर्थ? कः

जानते हैं, व्युत्सर्ग के अर्थ को जानते हैं। इस प्रकार से स्थविर भगवन्तोंके कथनको सुनकर कालास्यवेषिकपुत्र अनगार ने (ते थेरे भगवन्ते एवं वयासी) उन स्थविर भगवन्तो से ऐसा पूछा-हे आर्यो! यदि आप लोग सामायिक को जानते हैं, सामायिक के प्रयोजन को जानते हैं, (यावत् व्युत्सर्ग के अर्थ-प्रयोजन को जानते हैं, यहां यावत् पद से उपर्युक्त प्रत्याख्यान से लेकर व्युत्सर्ग तक का पाठ ग्रहण किया गया है) तो हे स्थविरो! मैं आपलोगों से पूछता हूं कि सामायिक आपके मत में क्या वस्तु है। और हे आर्यो! सामायिक का प्रयोजन आप के मत में क्या है? यावत आप के मत में व्युत्सर्ग का अर्थ क्या है? (यहां यावत् शब्द

અણગારે "ते थेरे भगवंते एवं वयासी" તે સ્થવિર ભગવંતોને પૂછ્યું કે "હે આર્યો! જો તમે સામાયિકને જાણતા હો, સામાયિકનું પ્રયોજન સમજતા હો, (यावत्) વ્યુત્સર્ગનું પ્રયોજન સમજતા હો (અહીં "यावत" પદથી પ્રત્યાખ્યાનથી લઈને વ્યુત્સર્ગ સુધીનો ઉપર્યુક્ત પાઠ ગ્રહણ કરાયો છે) તો હે આર્યો! હું આપને પૂછું છું કે આપની માન્યતા પ્રમાણે સામાયિક શું છે? અને હે આર્યો! આપની માન્યતાનુસાર સામાયિકનું શું પ્રયોજન છે? "यावत्" આપના મત પ્રમાણે વ્યુત્સર્ગનો અર્થ છે? (અહીં "यावत्"

मते संवरः इन्द्रिय-नो इन्द्रिय-प्रवृत्त्यवरोधरूपो वर्तते, आत्मा एव अस्माकं मते संवरस्य इन्द्रिय-नो इन्द्रिय प्रवृत्त्यवरोधरूपस्य अर्थः, नूतनकर्मबन्धनिरोधरूपम् अनास्रवरूपं वा प्रयोजनं वर्तते, आत्मा एव अस्माकं मते विवेको विशिष्टबोध-

हुआ और इस संयम का प्रयोजन पृथिव्यादिक जीवों की रक्षा करना अथवा पापों से विरक्त रहना यह हुआ। अतः ऐसा यह प्रयोजन आत्मा से जुदा नहीं है क्यों कि आत्मा स्वयं ही तद्रूप है। इसलिये आत्मा ही संयम का प्रयोजनरूप प्रकट किया गया है। यह संयम का प्रयोजन १७ प्रकार का कहा गया है। आत्मा ही हमारे मत में संवर है। संवर का तात्पर्य इन्द्रियों और मन की प्रवृत्तियों को रोकना है। आत्मा जब संयमवाला बन जाता है तब स्वतः स्वभाव ही उसकी इन्द्रियों की एवं मन की शुभाशुभरूप प्रवृत्तियां बंद हो जाती हैं। अतः यह संवर रूप गुण आत्मा का ही है। और किसी का नहीं है। इसलिये गुणगुणी में अभेद विवक्षा मानकर यहां आत्मा को ही संवररूप कहा गया है। इस संवर का प्रयोजन भी यही है कि यह आत्मा में होने वाली शुभाशुभ प्रवृत्तियों का निरोध कर देता है। अतः शुभाशुभ प्रवृत्तियों का निरोध होनारूप प्रयोजन आत्मा में ही रहता है अतः आधाराधेय भाव में कथंचित् अभेद मानकर आत्मा को ही संवर का फलरूप प्रकट किया गया है। संवररूप आत्मा नूतन कर्म बंध से रहित हो जाता है—अर्थात् नवीन

संयमरूप गणी शकाय अने ते संयमनुं प्रयोजन पृथ्वीकाय वगेरे ७ कायना જીવોની રક્ષા કરવી અને પાપોથી વિરક્ત થવું એ ગણી શકાય તેથી આવા પ્રકારનું પ્રયોજન આત્માથી જુદું નથી કારણ કે આત્મા પોતે સંયમરૂપ છે. તેથી આત્માને સંયમના પ્રયોજનરૂપ દર્શાવ્યો છે સંયમનું પ્રયોજન ૧૭ સત્તર પ્રકારનું કહ્યું છે. આત્મા જ અમારી માન્યતા પ્રમાણે સંવર છે ઇન્દ્રિયો અને મનની પ્રવૃત્તિઓને રોકવી તેનું નામ સંવર છે જ્યારે આત્મા સંયમથી યુક્ત બને છે ત્યારે આપોઆપ ઇન્દ્રિયો અને મનની શુભાશુભ પ્રવૃત્તિઓ બંધ પડી જાય છે તેથી સંવર એ આત્માનો જ ગુણ છે બીજા કોઇનો નથી તેથી ગુણ અને ગુણીમાં અભેદની અપેક્ષાએ અહીં આત્માને સંવરરૂપ કહ્યો છે આત્માની અંદર આવતી આસ્રવની પ્રવૃત્તિઓનો નિરોધ કરવાનું પ્રયોજન તે સંવર છે તેથી તેથી આત્માની પ્રવૃત્તિઓનો નિરોધ કરવારૂપ પ્રયોજન આત્મામાં જ રહેતું હોય છે તેથી આધાર આધેય ભાવમાં અભેદપણું માનીને આત્માને જ સંવરના ફલરૂપ પ્રકટ કર્યા છે સંવરરૂપ આત્મા નવા કર્મબંધથી રહિત થઈ જાય છે

गस्स अट्ठे' यावत् आत्मा एव अस्माकं मते प्रत्याख्यानं पौरुष्यादिनियमनरूपं वर्तते, आत्मा एव अस्माकं मते प्रत्याख्यानस्य पौरुष्यादि नियमनरूपस्य अर्थः कर्मागमनमार्गात्मकाऽऽश्रवद्वारनिरोधरूपं प्रयोजनं वर्तते, आत्मा एव अस्माकं मते संयमः पृथिवीकायप्रभृतिसंरक्षणरूपः, पापोपरमरूपो वा वर्तते आत्मा एव अस्माकं मते संयमस्य पृथिव्यादि संरक्षणरूपस्य, पापोपरमरूपस्य वा अर्थः पृथिवीकायाद्यारम्भविरतिरूपम् सप्तदशविधम् प्रयोजनं वर्तते, आत्मा एव अस्माकं

हमारे मत में आत्मा ही प्रत्याख्यान-पौरुषी आदि के नियमन रूप है। और आत्मा ही हमारे मत में पौरुषी आदि के नियमनरूप प्रत्याख्यान का प्रयोजन है। अर्थात् इस प्रत्याख्यान का प्रयोजन यही है कि इसके प्रभाव से आत्मा में कर्मों के आगमन का मार्गरूप जो आश्रद्वार है उसका निरोध हो जाता है। हमारे मतमें आत्मा ही संयम है। पृथिवी काय आदि जीवों की रक्षा करने रूप, अथवा पापोपरमरूप संयम होता है। जब संयम पृथिवीकाय आदि जीवों की रक्षा करनेरूप अथवा पापों से उपरमरूप माना गया है-तो इस क्रिया का कर्त्ता एक आत्मा ही होता है-अतः क्रिया और क्रियावान् अभेद विवक्षा के वश से आत्मा ही संयमरूप मान लिया गया है। तथा आत्मा ही संयम का प्रयोजन है। इसका तात्पर्य यह है कि आत्मा का निज स्वभाव पृथि-व्यादि जीवों की विराधना करनेरूप अथवा पापों में प्रवृत्ति करनेरूप नहीं है-अर्थात् संयमरूप है। अतः जब आत्मा का निज स्वभाव ही ऐसा है तो उसका तात्पर्य ही यह हुआ कि आत्मा स्वयं ही संयम रूप

ખ્યાન પોરસી વગેરેના નિયમનરૂપ છે અને અમારા મત અનુસાર આત્મા જ પોરસી વગેરેના નિયમનરૂપ પ્રત્યાખ્યાનનુ પ્રયોજન છે એટલે કે તે પ્રત્યાખ્યાનનુ પ્રયોજન એ છે કે તેના પ્રભાવથી આત્માની સાથે કર્મોના આગમનરૂપ જે આશ્રવદ્વારો છે તે બંધ થઈ જાય છે. અમારા મત પ્રમાણે આત્માજ સયમ છે, પૃથ્વીકાય, અપ્કાય વગેરે જીવોની રક્ષા કરવારૂપ અથવા પાપથી દૂર રહેવા રૂપ સયમ હોય છે જો સયમને પૃથ્વીકાય વગેરે જીવોની રક્ષા કરવારૂપ, અથવા પાપોથી વિરામ પામવારૂપ માનવામા આવે તો તે ક્રિયાનો કર્ત્તા આત્મા જ ગણાય છે તે કારણે ક્રિયા અને ક્રિયાવાન (કર્ત્તા) મા અભેદની અપેક્ષાએ આત્માને જ સયમરૂપ માન્યો છે તથા આત્મા જ સયમનુ પ્રયોજન છે એટલે કે આત્માનો સ્વભાવ પૃથ્વીકાય વગેરે છ કાયના જીવોની વિરાધના કરવાનો અથવા પાપોમાં પ્રવૃત્તિ કરવાનો નથી એટલે કે આત્મા સયમરૂપ છે. આ રીતે આત્માનો પોતાનો સ્વભાવ જ સવરરૂપ છે તેથી આત્મા પોતે જ

मते सवर इन्द्रिय-नो इन्द्रिय-प्रवृत्त्यवरोधरूपो वर्तते, आत्मा एव अस्माकं मते सवरस्य इन्द्रिय-नो इन्द्रिय प्रवृत्त्यवरोधरूपस्य अर्थ, नूतनकर्मबन्धनिरोधरूपम् अनास्रवस्वरूप वा प्रयोजन वर्तते, आत्मा एव अस्माकं मते विवेको विनिवृत्तोप-

हुआ और इस सयम का प्रयोजन पृथिव्यादिक जीवों की रक्षा करना अथवा पापो से विरक्त रहना यह हुआ। अत ऐसा यह प्रयोजन आत्मा से जुदा नहीं है क्यों कि आत्मा स्वय ही तद्रूप है। इसलिये आत्मा ही सयम का प्रयोजनरूप प्रकट किया गया है। यह सयम का प्रयोजन १७ प्रकार का कहा गया है। आत्मा ही हमारे मत में सवर है। सवर का तात्पर्य इन्द्रियों और मन की प्रवृत्तियों को रोकना है। आत्मा जब सयमवाला बन जाता है तब स्वत स्वभाव ही उसकी इन्द्रियों की एव मन की शुभाशुभरूप प्रवृत्तियां बद हो जाती हैं। मन यह संवर रूप गुण आत्मा का ही है। और किसी का नहीं है। इसलिये गुणगुणी में अभेद विवक्षा मानकर यहां आत्मा को ही सवररूप कहा गया है। इस सवर का प्रयोजन भी यही है कि वह आत्मा में होने वाली शुभाशुभ प्रवृत्तियों का निरोध कर देता है। अत शुभाशुभ प्रवृत्तियों का निरोध होनारूप प्रयोजन आत्मा में ही रहता है अतः आधाराधेय भाव में कथंचित् अभेद मानकर आत्मा को ही सवर का फलरूप प्रकट किया गया है। सवररूप आत्मा नूतन कर्म बध से रहित हो जाता है-अर्थात् नवीन

સયમરૂપ બની શકાય અને તે સયમનુ પ્રયોજન પૃથ્વીકાય વગેરે છ પ્રકારના જીવોની રક્ષા કરવી અને પાપોથી વિરક્ત થવુ એ ગણી શકાય તેથી આવા પ્રકારનુ પ્રયોજન આત્માથી જુદુ નથી કારણ કે આત્મા પોતે સયમરૂપ છે તેથી આત્માને સયમના પ્રયોજનરૂપ દર્શાવ્યો છે સયમનુ પ્રયોજન ૧૭ સત્તર પ્રકારનુ કહ્યું છે આત્મા જ અમારી માન્યતા પ્રમાણે સવર છે ઇન્દ્રિયો અને મનની પ્રવૃત્તિઓને રોકવી તેનુ નામ સવર છે જ્યારે આત્મા સયમથી યુક્ત બને છે ત્યારે આપોઆપ ઇન્દ્રિયો અને મનની શુભાશુભ પ્રવૃત્તિઓ બંધ થઈ જાય છે તેથી સવર એ આત્માનો જ ગુણ છે બીજા કોઈનો નથી તેથી ગુણ અને ગુણીમા અભેદની અપેક્ષાએ અહીં આત્માને સવરરૂપ કહ્યો છે આત્માની અદર થનારી શુભાશુભ પ્રવૃત્તિઓનો નિરોધ કરવો તે સવરનુ પ્રયોજન છે તેથી તેથી આત્માની પ્રવૃત્તિઓનો નિરોધ કરવારૂપ પ્રયોજન આત્મામા જ રહેલું હોય છે તેથી આધાર આધેય ભાવમા અભેદરૂપ માનીને આત્માને જ સવરના ફલરૂપ માન્યો છે સવરરૂપ આત્મા નવા કર્મબંધથી રહિત થઈ જાય છે

रूपो वर्तते, तस्य ज्ञानमयस्वरूपत्वात् , आत्मा एव अस्माकं मते विवेकस्य विशिष्ट बोधरूपस्य अर्थः त्याज्यवस्तुत्यागादिरूपं प्रयोजनं वर्तते, आत्मा एव अस्माकं मते व्युत्सर्गः कायममत्वत्यागरूपो वर्तते, आत्मा एव अस्माकं मते व्युत्सर्गस्य कायममत्वत्यागरूपस्य अर्थः अनभिष्वङ्गतालक्षणं प्रयोजनम् वर्तते, तथाहि सम-भावरूपं सामायिकमुच्यते, समभावश्च समता, रागद्वेषवियुक्तो यः सर्वभूत-प्राण

कर्मों का आस्रव उसके नहीं होता है। यही शुभाशुभ प्रवृत्तियो का निरोध है। और यही संवर का प्रयोजन है। विवेक विशिष्ट ज्ञान होता है। सो हमारे मत में आत्मा ही विवेकरूप है सो इस कथन का सारांश यह है कि आत्मा स्वयं विशिष्ट ज्ञानरूप है। क्यों कि आत्मा का स्व-रूप ही ज्ञानमय है। इस ज्ञान का प्रयोजन केवल इतना ही है कि वह हेय वस्तु का बोध कराकर उसे हेय समझाता है और उपादेय वस्तु का बोध कराकर उसे उपादेय बताता है। अतः ऐसा जो यह विवेक का प्र-योजन है वह आत्मारूप वस्तु ही है। क्यों कि जब आत्मा ही विवेकरूप है तो इस विवेक का प्रयोजन भी आत्मा रूप ही होता है। इस कथन में फलरूप प्रयोजन को विवेक से अभिन्न मानकर उस विवेकरूप आत्माको विवेक का प्रयोजनरूप माना गया है। शरीर से ममत्व का त्याग करना इसका नाम व्युत्सर्ग है। सो आत्मा ही कायशरीर ममत्व त्यागरूप व्यु-त्सर्ग का अर्थ है अर्थात् अनभिष्वङ्गता (विषयों में आसक्ति नहीं रखना रूप प्रयोजनरूप है। टीकाकार इसी सब विषय को " तथाहि " कह

એટલે કે તેમા નવા કર્મોનો આશ્રવ થતો નથી એનું નામ જ શુભાશુભ પ્રવૃત્તિયોનો નિરોધ છે, અને એ જ સવરનુ પ્રયોજન છે, જ્ઞાન વિવેકયુક્ત હોય છે. અમારા મત પ્રમાણે આત્મા જ વિવેકરૂપ છે એટલે કે આત્મા પોતે જ વિશિષ્ટ જ્ઞાનરૂપ છે, કારણ કે આત્માનું સ્વરૂપ જ જ્ઞાનમય છે તે જ્ઞાનનું પ્રયોજન એટલુ જ છે કે તેની મારફત હેય અને ઉપાદેય વસ્તુનો બોધ થાય છે-અને તે જ્ઞાનવડે આત્માને હેય અને ઉપાદેયની સમજણ પડે છે વિવેકનું જે પ્રયોજન છે તે આત્મારૂપ જ છે, કારણ કે જો આત્મા જ વિવેકરૂપ હોય તો વિવેકનું પ્રયોજન પણ આત્મારૂપ જ હોય છે આ કથનવડે ફલરૂપ પ્રયોજનને વિવેકથી અભિન્ન માનીને વિવેકરૂપ આત્માને વિવેકના પ્રયોજનરૂપ માન્યો છે. શરીર ઉપરથી મમત્વનો ત્યાગ કરવો તેનુ નામ વ્યુત્સર્ગ છે, આત્મા જ કાયાના મમત્વના ત્યાગરૂપ વ્યુત્સર્ગનો અર્થ છે-એટલે કે વિષયોમા આસક્તિ ન રાખવી એવો પ્રયોજનરૂપ છે ટીકાકાર આ સમસ્ત વિષયને "તથાહિ" પદ કહીને સ્પષ્ટ-

–जीव–सत्त्वान् आत्मवत्पश्यति स समः तस्य समभावो भवति, धर्मधर्मिणोर भेदात् भावप्रधाननिर्देशाद् वा समस्य समत्वमर्थ, तथा च रागद्वेषरहितस्य समस्य समतारूपस्य प्रतिक्षणविलक्षणापूर्वापूर्वकर्मनिर्जराहेतुरूपायाः विशुद्धे भावो लाभः, समाय, स एव सामायिकम्, अथवा समानां ज्ञानदर्शनचारित्राणाम्–आय समाय प्रवर्द्धमानशरदशुक्लपक्षद्वितीयादिचन्द्रकलावत् प्रतिक्षणविलक्षण-

कर स्पष्ट करते हैं। समभावरूप सामायिक कहा गया है। समभाव का अर्थ है समता। रागद्वेष से रहित होकर जो समस्त प्राणियों को सम स्तभूतों को, समस्त जीवों को, समस्त सत्त्वों को, अपने समान देखता है–जानता है–वह सम है और इस सम का जो भाव होता है वह सम भाव है धर्म और धर्मी के अभेद से अथवा भावप्रधान निर्देश से सम का अर्थ समत्व है। तथा च–रागद्वेष से रहित ऐसे समतारूप सम को जो प्रतिक्षण विलक्षण विशुद्धि का लाभ होता है कि जो विशुद्धि अपूर्व कर्मनिर्जरा की हेतुभूत होती है उसका नाम समाय है। वह समाय ही सामायिक है। तात्पर्य इसका यह है कि समाय से सामायिक बना है और सम+आय से समाय बना है। इसमें सम शब्द का अर्थ रागद्वेष से रहित जो आत्माप्राणी है वह है, और आय का अर्थ लाभ है। इस प्राणी के लिये प्रतिक्षण विलक्षण ऐसी विशुद्धि का लाभ होता रहता है कि जिस विशुद्धि के बल पर उस आत्मा के अपूर्व अपूर्व–जो पहिले कभी नहीं हुई ऐसी–कर्म निर्जरा की हेतुभूत होती रहती है। अथवा

કરે છે સામાયિકને સમભાવરૂપ કહેલ છે સમભાવ એટલે સમતા. રાગદ્વેષથી રહિત બનીને તમામ પ્રાણીઓને, તમામ ભૂતોને, તમામ જીવોને, અને તમામ સત્વોને પોતાની માફક ગણવા તેનું નામ સમભાવ છે ધર્મ અને ધર્મીના અભેદથી અથવા ભાવપ્રધાન નિર્દેશથી સમનો અર્થ સમત્વ છે તથા–રાગ દ્વેષથી રહિત એવા સમતારૂપ (સમભાવયુક્ત વ્યક્તિને) પ્રતિક્ષણ જે વિલક્ષણ વિશુદ્ધિની પ્રાપ્તિ થાય છે અને જે વિશુદ્ધિ અપૂર્વ કર્મનિર્જરાના હેતુરૂપ બને છે તે વિશુદ્ધિનું નામ જ "સમાય" છે તે સમાય જ સામાયિક છે તાત્પર્ય એ છે કે સમ+આય=સમાય અને સમાયમાંથી જ 'સામાયિક' શબ્દ બન્યો છે રાગદ્વેષથી રહિત જે આત્મા હોય છે તેનું નામ 'સમ' છે અને આય એટલે લાભ (પ્રાપ્તિ) જીવને પ્રતિક્ષણ જે વિલક્ષણ વિશુદ્ધિની પ્રાપ્તિ થતી રહે છે કે જે વિશુદ્ધિના પ્રભાવથી આત્મા અપૂર્વ – પૂર્વ કદી ન અનુભવી હોય એવી–કર્મનિર્જરા કરે છે અથવા સમ શબ્દનો અર્થ જ્ઞાન

ज्ञानादिलाभः, स एव प्रयोजनमस्येति सामायिकम्, एवञ्च समताप्रतिपन्नो हि ज्ञानादिसम्पन्नो हि आत्मा प्रतिक्षणमपूर्वैः ज्ञानदर्शनचारित्रपर्यायैः भवाटवीभ्रमणजन्यसंक्लेशविनाशकैः अनुपमसुखहेतुभूतैः तिरस्कृतचिन्तामणि-कल्पद्रुमकामधेनुसदृशैः संयुज्यते, अथवा समो रागादिरहितस्य आयो गमनं प्रवृत्तिः समाय. समाय एव वा, समये भवं वा, समायेन निर्वृत्तं वा, समायस्यां शो वा, समायो वा प्रयोजनमस्येति सामायिकम्, । उक्तञ्च—

सम शब्द का अर्थ ज्ञान, दर्शन, चारित्र है और आय का अर्थ लाभ है। जैसे-शरत्काल में निर्मल चन्द्र की कलाएँ शुक्लपक्ष की द्वितीयादि तिथियों में बढती जाती है उसी प्रकार से प्रतिक्षण में विलक्षण ज्ञानादिक का जो आत्मा को लाभ होता रहता है उसका नाम समाय है। यह समाय ही जिसका प्रयोजन है वह सामायिक है। इस तरह समता प्रतिपन्न और ज्ञानादिक से संपन्न आत्मा, प्रतिक्षण अपूर्व ऐसे ज्ञान, दर्शन और चारित्ररूप पर्यायों द्वारा कि जो इसके भवाटवी में भ्रमण करने के संक्लेश के नाशक हैं, अनुपम सुख के हेतुभूत हैं, और चिन्तामणि, कल्पवृक्ष एवं कामधेनु से भी जो बहुत बढकर हैं युक्त होता रहता है उसका नाम सामायिक है। अथवा-रागादि से रहित होना इसका नाम सम है इस सम की जो आय -प्रवृत्ति है वह समाय है। यह समाय ही सामायिक है, अथवा समाय में जो हो वह सामायिक है, अथवा समायसे निर्वृत्त-निष्पन्न हो वह सामायिक है, अथवा समाय का जो अंश है वह सामायिक है, अथवा समाय जिसका

દર્શન અને ચારિત્ર થાય છે અને આયનો અર્થ લાભ થાય છે જેમ શરદ-ઋતુમાં ચન્દ્રની કળા શુકલ બીજથી શરૂ થઈને દરરોજ વધતી જ જાય છે તેમ પ્રતિક્ષણ આત્માને જે વિલક્ષણ જ્ઞાનાદિકની પ્રાપ્તિ થતી રહે છે તેનું નામ જ સમાય છે. આ સમાય જ જેનુ પ્રયોજન છે તે સામાયિક કહેવાય છે આ રીતે સમતાયુક્ત અને જ્ઞાનાદિથી યુક્ત આત્મા, પ્રતિક્ષણ સમ્યગ્ જ્ઞાન, દર્શન અને ચારિત્રરૂપ પર્યાયોથી યુક્ત થતો રહે છે કે જેથી ભવાટવીમા ભ્રમણ કરવા રૂપ દુખનો નાશ થાય છે, જે અનુપમ સુખને અપાવનારી છે, અને જે ચિન્તામણિ, કલ્પવૃક્ષ અને કામધેનુથી પણ અધિક ગણાય છે. એનું નામ જ સામાયિક છે અથવા—રાગાદિથી રહિત થવું એનુ નામ "સમ" છે. તે સમની જે આય (પ્રવૃત્તિ) છે તેનુ નામ 'સમાય" છે તે સમાય જ સામાયિક છે, અથવા સમાયમાં જે હોય તેને સામાયિક કહે છે, અથવા સમા-યથી જે નિષ્પન્ન થાય છે તેનું નામ સામાયિક છે, અથવા સમાયનો જે અંશ

" रागद्दोसविरहिओ, समो त्ति अयण अउत्ति गमण ति ।
समगमणति समाओ, स एव सामाइयं नाम ॥ १ ॥
अहवा भवो समाए, निव्वत्त तेण सम्मय वावि ।
तं तप्पओयणं वा, तेण वा सामाइय नेयं " त्ति ॥ २ ॥
छाया—रागद्वेषविरहितः, समोऽस्ति अयन प्रवृत्तिः गमनमिति ।
समागमनमिति समाय , स एव सामायिक नाम ॥ १ ॥
अथवा भवः समाय निर्वृत्त तेन सन्मय वापि ।
यत् तत्प्रयोजन वा, तेन वा सामायिकं ज्ञेयम् ॥ २ ॥ इति
अथवा समानि ज्ञानादीनि तेषु तैर्वा अयनम्-गमनम् अयः समाय , स एव सामायिकम् इति ।
अत्रापि च—" अहवा सामाइ सम्मत्त-नाण चरणाइ ।
तेसु तेहिं वा अयनं अओ समाओ स एव सामाइयं नाम ॥१॥
छाया—अथवा समानि सम्यक्त्वज्ञानाचरणानि ।
तेषु तैर्वा अयनम् अय समायः स एव सामायिकं नाम ॥१॥
अथवा समस्य रागादिरहितस्य आयो गुणानां लाभः, समानां वा ज्ञानादीनामाय समायः, स एव सामायिकम् ।

प्रयोजन है वह समायिक है । कहा भी है—

सामायिक शब्द की जो व्युत्पत्ति कही गई है । अथवा-सम-ज्ञान आदिकों में, अथवा ज्ञान आदिकों द्वारा । जो प्रवृत्ति है वह समाय है । यह समाय ही सामायिक है । सो ही कहा है-

अथवा-रागादिरहित आत्मा रूप सम को जो गुणों का लाभ होता है वह समाय है, अथवा-सम-ज्ञानादिकों का जो आय-लाभ है वह समाय है । यह समाय ही सामायिक है ।

છે તેનુ નામ સામાયિક છે અથવા જેનુ પ્રયોજન 'સમાય' છે તે સામાયિક છે.

આ ગાથાઓવડે સામાયિક શબ્દની જે વ્યુત્પત્તિ બતાવવામા આવી છે તે પૂર્વે અર્થસહિત પ્રકટ કરવામાં આવી ગઇ છે અથવા-સમ-જ્ઞાન વગેરેમાં અથવા જ્ઞાનાદિકોવડે જે પ્રવૃત્તિ થાય છે તેનુ નામ સમાય છે તે સમાય જ સામાયિક છે

અથવા—રાગાદિથી રહિત આત્મારૂપ સમને જે ગુણોનો લાભ (પ્રાપ્તિ) થાય છે તેનુ નામ સમાય છે અથવા જ્ઞાનાદિકોની જે આય (લાભ) તેને સમાય કહે છે તે સમાય જ સામાયિક છે

उक्तञ्च—अहवा समस्स आओ, गुणाणलाभोत्ति जो समाओ सो।
अहवा समणमाओ, णेओ समाइयं णाम ॥ १ ॥ इति।

छाया—अथवा-समस्य आयो गुणानां लाभः इति यः समायः सः।
अथवा समानमायो नेयः सामायिकं नाम ॥ १ ॥ इति

अथवा-साम्नि मैत्र्यां साम्ना वा अयः तस्य वा आयः सामायः, स एव सामायिकम्। उक्तञ्च—

"अहवा सामं मेत्ती, तत्थ अओ तेणेव त्ति समाओ।
अहवा समस्साओ लाभो, सामाइय नाम ॥ १ ॥इति।

छाया—अथवा सामं मैत्री, तत्र आयः तेन वेति सामायः।
अथवा सामस्यायो लाभः, सामायिकं नाम ॥ १ ॥

तच्च सामायिकं मूलगुणानामाधारभूत सावद्ययोगविरतिरूपम्, आत्मनश्च ज्ञानदर्शनचारित्ररूपरत्नत्रयवत्त्वस्यैव वास्तविकात्मत्वस्वरूपतया रागद्वेपरहितस्य निरावणस्य तस्यात्मनः कृतकर्मनिर्जराहेतुभूतविशुद्धिमत्त्वेन ज्ञानदर्शनचारित्रवत्वेन च स्वरूपोपपत्तेः वस्तुस्थित्या आत्मैव सामायिकमिति सिद्धम्। उक्तञ्च—

अथवा-सम शब्द का अर्थ मैत्री है, सो इस मैत्री में अथवा इस मैत्री के द्वारा जो अय-गमन प्रवृत्ति है-वह समाय है, अथवा-साम का जो आय-लाभ है वह समाय है यह सामायिक है। कहा भी है—

यह सामायिक मूलगुणों का आधारभूत कहा गया है। और इसमें समस्त सावद्ययोगका परित्याग होनेसे यह सावद्ययोगविरतिरूप होता है। ज्ञान, दर्शन, चारित्ररूप रत्नत्रयसे युक्त जो आत्मा हैं वही वास्तविकरूप में आत्मत्वस्वरूप वाली है। अतः रागद्वेष से रहित एवं निरावरण उस आत्मा को, अपने द्वारा कृतकर्मों की निर्जरा की हेतुभूत जो विशुद्धि है उस विशुद्धि के युक्त हो जाने के कारण और ज्ञान, दर्शन

અથવા-સમ શબ્દનો અર્થ મૈત્રી છે, તેથી તે મૈત્રીમા અથવા તે મૈત્રી વડે જે અય-ગમન-પ્રવૃત્તિ થાય છે, તેનુ નામ સમાય છે અથવા સમનો જે લાભ થાય છે તેને જ સમાય કહે છે. એ સમાય જ સામાયિક છે.

તે સામાયિકને મૂળ ગુણોના આધારરૂપ કહેલ છે, અને તેમા તમામ સાવદ્યયોગોનો પરિત્યાગ થતો હોવાથી તેને સાવદ્યયોગ વિરતિરૂપ પણ કહેલ છે. જ્ઞાન, દર્શન અને ચારિત્રરૂપ રત્નત્રયથી યુક્ત જે આત્મા છે, એ જ આત્મા વાસ્તવિક રીતે આત્મત્વ સ્વરૂપવાળો હોય છે તેથી રાગદ્વેષથી રહિત અને આવરણોથી રહિત એવા તે આત્માને, પોતાની મારફત થતી કૃતકર્મોની નિર્જરા કરવાના હેતુરૂપ જે વિશુદ્ધિ છે તે વિશુદ્ધિથી યુક્ત થઈ જવાને કા[illegible] જ્ઞાન, દર્શન ચારિત્રથી યુક્ત થઈ જવ[illegible]. પોતાના સ્વરૂપની પ્રા[illegible]

'जीवो गुणपडिवन्नो, नयस्स दव्वट्ठियस्स सामाइयं" इति।

छाया—जीवो गुण प्रतिपन्नो नयस्य द्रव्यार्थिकस्य सामायिकम् ॥

एतावता द्रव्यार्थिकनयानुसारेण तथाविधविशुद्धज्ञानदर्शनचारित्रवस्त्वादि रूपनिजगुणप्रतिपन्न आत्मैव सामायिकमिति फलितम्, तथा नूतनकर्मानुपादानकृतकर्मनिर्जरणरूप सामायिकस्य प्रयोजनमपि आत्मैव, नवकर्मानुपादानकृत कर्मनिर्जरादीनाम् आत्मगुणतया गुणगुणिनोरभेदात् तद्गुणानामात्माऽनतिरिक्तत्वात् 'नीलो घट' इत्यादौ नीलगुणस्य घटेन गुणिना सह अभेददर्शनात्, एवं

तथा चारित्रसे युक्त हो जानेके कारण अपने स्वरूप की प्राप्ति हो जाती है। इससे वस्तुगत्या आत्मा ही सामायिक है यह बात सिद्ध हो जाती है। सो ही कहा है—

"जीवो गुणपडिवन्नो, नयस्स दव्वट्ठियस्स समाइयं"

गुणप्रतिपन्न आत्मा ही द्रव्यार्थिक नय के अनुसार सामायिक है अर्थात्–द्रव्यार्थिक नय के मन्तव्यानुसार आत्मा जब तथाविध विशुद्ध जो ज्ञान, दर्शन और चारित्ररूप निज गुणों को प्राप्त कर लेता है तब वह ऐसा आत्मा ही सामायिक है यह फलित हो जाता है। तथा–नवीन कर्मों का ग्रहण नहीं करना और पूर्वकृत सचित कर्मो की निर्जरा होना यह जो सामायिक का प्रयोजन है वह भी आत्मा ही है। क्यों कि नवीन कर्मो का ग्रहण नहीं होना और पूर्वकृत सचित कर्मों की निर्जरा होते रहना आदि जो बातें हैं वे सब आत्माके गुण हैं–अत गुण और गुणी में अभेद विवक्षावश सामायिक के प्रयोजन को आत्मारूप कह दिया गया है। गुणगुणी में अभेद विवक्षा इसलिये कथंचित् करनी

જવાને કારણે, પોતાના સ્વરૂપની પ્રાપ્તિ થઈ જાય છે તેથી એ વાત સિદ્ધ થાય છે કે આત્મા જ સામાયિક છે કહ્યું પણ છે કે—

'જીવો ગુણપડિવન્નો, નયસ્સ દવ્વટ્ઠિયસ્સ સામાઇયં"

દ્રવ્યાર્થિક નયની અપેક્ષાએ ગુણવિશિષ્ટ આત્મા જ સામાયિક છે એટલે દ્રવ્યાર્થિક નયની માન્યતાનુસાર જે આત્મા વિશુદ્ધ જ્ઞાન, દર્શન અને ચારિત્ર રૂપ નિજગુણોને પ્રાપ્ત કરે છે એ આત્મા જ સામાયિક છે એ વાત સિદ્ધ થાય છે તથા નવા કર્મોને ગ્રહણ ન કરવા અને પૂર્વકૃત સંચિત કર્મોની નિર્જરા કરવી, એવું જે સામાયિકનું પ્રયોજન છે તે પણ આત્મા જ છે કારણ કે નવાં કર્મો ગ્રહણ ન કરવા અને સંચિત પૂર્વકૃત કર્મોની નિર્જરા કરવી એ આત્મા જ ગુણો છે તેથી ગુણ અને ગુણીમાં અભેદની અપેક્ષાએ સામાયિકના પ્રયોજનને આત્મારૂપ કહેલ છે ગુણ અને ગુણીમાં કયારેક અભેદ માની લેવાનું કારણ એ છે કે આત્માના નિજ ગુણો આત્માથી ભિન્ન હોતા નથી એમ

पौरुषीप्रभृतिनियमरूपस्य सावद्ययोगनिवृत्तिरूपस्य श्रावकनवमव्रतरूपस्य पापत्यागप्रतिज्ञारूपस्य वा प्रत्याख्यानस्य आत्मधर्मतया धर्मधर्मिणोरभेदात् आत्मैव प्रत्याख्यानं तथा कर्मागमनमार्गाऽऽस्रवनिरोधरूपस्य प्रत्याख्यानप्रयोजनस्यापि आत्मधर्मतया आत्मैव प्रत्याख्यानप्रयोजनमपि, एवं सप्तदशविधस्य पृथिवीकायिकप्रभृतिसंरक्षणरूपस्य पापोपरमरूपस्य संयमस्य आत्मधर्मतया आत्मैव संयमः, तथा प्राणातिपात- -मृषावाद—अदत्तादानमैथुनादिविरतिरूपस्य पञ्चास्रवसंवरण-मूलगुणादिकरणलक्षणानास्रवत्वरूपस्य च सयमप्रयोजनस्यापि आत्मधर्मतया आत्मैव संयमप्रयोजनम् , तथा संव्रियते कर्मकारणं प्राणातिपातादि निरुध्यते येन

जाती है कि आत्मा के निज गुण आत्मा से भिन्न नहीं होते हैं। जैसे "नीलो घटः" यहां पर नीलगुण का घटरूप गुणी के साथ अभेद किसी अपेक्षा माना जाता है। इसी तरह से पौरुषी आदि नियमरूप, अथवा सावद्य योगनिवृत्तिरूप, अथवा-श्रावक के नवमव्रतरूप, अथवा-पाप त्याग रूप जो प्रत्याख्यान है वह आत्मा का धर्म है। अतः आत्मा के धर्मरूप होने के कारण धर्म और धर्मी में यहां पर भी अभेद मानकर आत्मा को ही प्रत्याख्यानरूप कह दिया गया है। तथा नवीन कर्मों का आगमन होना इसका नाम आस्रव है-इस आस्रव के निरोध होने रूप जो प्रयोजन प्रत्याख्यान का है वह भी आत्मा का धर्म है। अतः आत्मा ही प्रत्याख्यान का प्रयोजन भी है। इसी तरह से १७ (सतरह) प्रकार का जो संयम है कि जो पृथिवीकायिक वगैरह जीवों के संरक्षणरूप और पापों के उपरम निवृत्तिरूप होता है वह भी आत्मा का ही धर्म है। अतः आत्मा ही संयम है। तथा-प्राणातिपात, मृषावाद, अदत्तादान, मैथुन

કે "नीलो घट" મા નીલ ગુણની સાથે ઘટ (ઘડા) રૂપ ગુણી સાથે કોઈ અપેક્ષાએ અભેદ ભાવ માની લેવામાં આવે છે. એ જ પ્રમાણે પોરસી વગેરે નિયમરૂપ, અથવા સાવદ્યયોગ-નિવૃત્તિરૂપ, અથવા શ્રાવકના નવમા વ્રતરૂપ, અથવા પાપત્યાગરૂપ જે પ્રત્યાખ્યાન છે, તે આત્માના ધર્મરૂપ છે. તેથી પ્રત્યાખ્યાનને પણ આત્માના ધર્મરૂપ ગણીને ધર્મ અને ધર્મીમા અહી પણ અભેદ માનીને આત્માને પ્રત્યાખ્યાનરૂપ કહેવામા આવ્યો છે-તથા નવા કર્મોના આગમન (આસ્રવ) નો નિરોધ કરવાનુ પ્રયોજનરૂપ જે પ્રત્યાખ્યાન છે તે પણ આત્માના ધર્મરૂપ છે તે કારણે આત્મા પ્રત્યાખ્યાનનુ પ્રયોજન પણ છે એજ પ્રમાણે પૃથ્વીકાયિક વગેરે જીવોની રક્ષા કરવારૂપ અને પાપથી નિવૃત્ત થવારૂપ જે ૧૭ પ્રકારના સંયમ છે તે પણ આત્માના જ ધર્મરૂપ છે તેથી આત્મા જ સંયમ છે, તથા પ્રાણાતિપાત, મૃષાવાદ, અદત્તાદાન, મૈથુન વગેરેની વિરતિ

परिणामेन स संवरः, तस्य च जीवद्रोण्यामाश्रवत्कर्मजलानामिन्द्रियादिच्छिद्राणां समित्यादिना निरोधनरूपस्य विंशतिविधस्यापि आस्रवनिरोधस्य आत्मधर्मतया आत्मैव संवरः, एवं नूतनकर्मबन्धनिरोधरूपस्य च संवरफलस्यापि आत्मधर्मतया धर्मधर्मिणोरभेदात् आत्मैव संवरफलम्, एवं विशिष्टबोधरूपस्य च विवेकस्य ज्ञान

सेवन आदि की विरनिरूप, पांच आस्रवों का संवरणरूप तथा मूलगुण आदि के धारण करने रूप जो प्रयोजन संयम का है, सो यह प्रयोजन भी आत्मा का ही धर्म है। इस कारण आत्मा ही संयम का प्रयोजन रूप कहा गया है। कर्म के कारण जो प्राणातिपात आदि हैं वे आत्मा के जिस परिणाम से रोक दिये जाते हैं-ऐसा यह आत्मा का परिणाम संवर है। यह संवर "आस्रवनिरोध संवर" इसके अनुसार आस्रव का निरोध होने रूप होता है। जिस प्रकार नौका में छिद्रों द्वारा जल आता है उसी प्रकार आत्मारूपी नौका में भी प्राणातिपात आदि क्रियाओं द्वारा एवं इन्द्रिय आदि छिद्रों द्वारा कर्मरूपी जल आता है। चतुर नाविक चलानेवाला जिस प्रकार जल आने में कारणरूप छिद्रों को बंद कर देता है और जल का आना रोक देता है उसी प्रकार आत्मा भी कर्मरूपी जल के आने के कारणों को समिति गुप्ति आदि द्वारा बंद कर देता है अतः कर्मरूपी जल का आना रुक जाता है। यही संवर है। यह आस्रव निरोधरूप संवर २० (बीस) प्रकार का कहा गया है। यह संवर आत्मा का निज धर्म है। अतः आत्मा ही संवर है। इसी तरह से नूतन कर्म बंध का निरोध

રૂપ, તથા પાંચ આસ્રવોના સંવરણરૂપ, તથા મૂળ ગુણોને ધારણ કરવારૂપ જે સંયમનું પ્રયોજન છે એ પ્રયોજન પણ આત્માના ધર્મરૂપ છે તે કારણે આત્માને જ સંયમના પ્રયોજનરૂપ કહ્યો છે કર્મના કારણરૂપ પ્રાણાતિપાત વગેરે પાપસ્થાનો છે તેમને આત્માના જે પરિણામવડે રોકવામાં આવે છે તે પરિણામને પણ સંવર કહે છે, તે સંવર આસ્રવોના નિરોધરૂપ હોય છે 'આસ્રવ નિરોધઃ સંવરઃ' જેવી રીતે નાવમાં છિદ્રોવડે જળ પ્રવેશ કરે છે એવી જ રીતે આત્મારૂપી નાવમાં પ્રાણાતિપાત વગેરે પાપ ક્રિયાઓવડે અને ઇન્દ્રિયો વગેરે છિદ્રોવડે કર્મરૂપી જળ પ્રવેશ કરે છે, પરંતુ જેવી રીતે ચતુર નાવિક નાવના છિદ્રોને બંધ કરીને તેમાં થતા જળના પ્રવેશને અટકાવે છે એ જ પ્રમાણે આત્મા પણ કર્મરૂપી જળના આગમનનાં કારણોને આસ્રવોને પાંચ સમિતિ, ત્રણ ગુપ્તિ વગેરે મારફત બંધ કરી દે છે તે કારણે કર્મરૂપી જળનું આગમન અટકી જાય છે, એનું નામ જ સંવર છે તે આસ્રવ નિરોધરૂપ સંવર ૨૦ વીસ પ્રકારનો તથા ૫૭ સત્તાવન પ્રકારનો કહ્યો છે તે સંવર આત્માનો નિજધર્મ છે. તેથી આત્મા જ સંવર છે આ પ્રમાણે નવા કર્મોનો નિરોધ કરવારૂપ જે

पौरुषीप्रभृतिनियमरूपस्य सावद्ययोगनिवृत्तिरूपस्य श्रावकनवमव्रतरूपस्य पापत्यागप्रतिज्ञारूपस्य वा प्रत्याख्यानस्य आत्मधर्मतया धर्मधर्मिणोरभेदात् आत्मैव प्रत्याख्यानं तथा कर्मागमनमार्गाऽऽश्रवनिरोधरूपस्य प्रत्याख्यानप्रयोजनस्यापि आत्मधर्मतया आत्मैव प्रत्याख्यानप्रयोजनमपि, एवं सप्तदशविधस्य पृथिवीकायिकप्रभृतिसंरक्षणरूपस्य पापोपरमरूपस्य संयमस्य आत्मधर्मतया आत्मैव संयमः, तथा प्राणातिपात--मृषावाद—अदत्तादानमैथुनादिविरतिरूपस्य पञ्चास्रवसंवरणमूलगुणादिकरणलक्षणानास्रवत्वरूपस्य च संयमप्रयोजनस्यापि आत्मधर्मतया आत्मैव संयमप्रयोजनम् , तथा संव्रियते कर्मकारणं प्राणातिपातादि निरुध्यते येन

जाती है कि आत्मा के निज गुण आत्मा से भिन्न नहीं होते हैं। जैसे "नीलो घटः" यहां पर नीलगुण का घटरूप गुणी के साथ अभेद किसी अपेक्षा माना जाता है। इसी तरह से पौरुषी आदि नियमरूप, अथवा सावद्य योगनिवृत्तिरूप, अथवा-श्रावक के नवमव्रतरूप, अथवा-पाप त्याग रूप जो प्रत्याख्यान है वह आत्मा का धर्म है। अतः आत्मा के धर्मरूप होने के कारण धर्म और धर्मी में यहां पर भी अभेद मानकर आत्मा को ही प्रत्याख्यानरूप कह दिया गया है। तथा नवीन कर्मों का आगमन होना इसका नाम आस्रव है-इस आस्रव के निरोध होने रूप जो प्रयोजन प्रत्याख्यान का है वह भी आत्मा का धर्म है। अतः आत्मा ही प्रत्याख्यान का प्रयोजन भी है। इसी तरह से १७ (सतरह) प्रकार का जो संयम है कि जो पृथिवीकायिक वगैरह जीवों के संरक्षणरूप और पापों के उपरम निवृत्तिरूप होता है वह भी आत्मा का ही धर्म है। अतः आत्मा ही संयम है। तथा-प्राणातिपात, मृषावाद, अदत्तादान, मैथुन

કે "नीलो घट" મા નીલ ગુણની સાથે ઘટ (ઘડા) રૂપ ગુણી સાથે કોઈ અપેક્ષાએ અભેદ ભાવ માની લેવામા આવે છે. એ જ પ્રમાણે પોરસી વગેરે નિયમરૂપ, અથવા સાવદ્યયોગ-નિવૃત્તિરૂપ, અથવા શ્રાવકના નવમા વ્રતરૂપ, અથવા પાપત્યાગરૂપ જે પ્રત્યાખ્યાન છે, તે આત્માના ધર્મરૂપ છે તેથી પ્રત્યાખ્યાનને પણ આત્માના ધર્મરૂપ ગણીને ધર્મ અને ધર્મીમા અહીં પણ અભેદ માનીને આત્માને પ્રત્યાખ્યાનરૂપ કહેવામા આવ્યો છે-તથા નવા કર્મોના આગમન (આસ્રવ)નો નિરોધ કરવાનુ પ્રયોજનરૂપ જે પ્રત્યાખ્યાન છે તે પણ આત્માના ધર્મરૂપ છે તે કારણે આત્મા પ્રત્યાખ્યાનનુ પ્રયોજન પણ છે એજ પ્રમાણે પૃથ્વીકાયિક વગેરે જીવોની રક્ષા કરવારૂપ અને પાપથી નિવૃત્ત થવારૂપ જે ૧૭ પ્રકારના સંયમ છે તે પણ આત્માના જ ધર્મરૂપ છે તેથી આત્મા જ સંયમ છે, તથા પ્રાણાતિપાત, મૃષાવાદ, અદત્તાદાન, મૈથુન વગેરેની વિરતિ

भाव सामायिकात् भगवद्भिः स्थविरैः तथा प्रतिपादितं, ततः कालास्यवेषिकपुत्रोऽन गार पुनः स्थविरान् पृच्छति-' तएणं से कालासवेसियपुत्ते अनगारे थेरे भगवंते एवं वयासी-जइ मे अज्जो आया सामाइए आया सामाइयस्स अट्ठे एवं जाव- आया विउस्सग्गस्स अट्ठे' ततः खलु स कालास्यवेषिकपुत्रः अनगारः स्थविरान् भगवतः एवं वक्ष्यमाणप्रकारेण अवादीत्-हे आर्याः! यदि भवतां मते आत्मा एव सामायिक भवति, आत्मा एव च सामायिकस्य अर्थं प्रयोजन भवति, एवं तथैव यावत्-प्रत्याख्यानाद्व्युत्सर्गान्तो वर्तते, आत्मैव व्युत्सर्गस्य अर्थः प्रयोजनं वर्तते, ' अवहट्टु कोह-माण-माया-लोभ किं अट्ठं अज्जो! गरहह! ' हे आर्याः! तर्हि क्रोध-मान-माया-लोभान् अपहृत्य-परित्यज्य रागद्वेषकामक्रोधादिरहितो भूत्वापि किमर्थं कथं तावत् ' णिंदामि, गरिहामि, अप्पाणं वोसिरामि'

इत्यादिरूप से व्यवहार होने के कारण आत्माही सामायिक है, आत्मा ही सामायिक का प्रयोजन है। इस तरह से व्युत्सर्ग प्रयोजन तक आत्मा को तत्स्वरूप मानने में कोई बाधक नहीं है। इस कारण भगवंतों ने ऐसा प्रतिपादित किया है। स्थविर भगवंतों द्वारा इस प्रकार का प्रतिपादन सुनकर " से कालासवेसियपुत्ते अणगारे थेरे भगवंते एवं वयासी " उन कालास्यवेषिकपुत्र अनगार ने उन स्थविर भगवंतों से इस प्रकार से पूछा-" जइ मे अज्जो! आया सामाइए, आया सामाइयस्स अट्ठे एवं जाव आया विउसग्गस्स अट्ठे " कि हे आर्यो! यदि आप के मत में आत्मा ही सामायिक है और आत्मा ही सामायिक का प्रयोजन है-तथा इसी तरह से आत्मा ही यावत् व्युत्सर्ग का प्रयोजन है तो फिर आप लोग क्रोध, मान, माया, लोभ इनका परित्याग कर अर्थात् राग द्वेष, काम क्रोध आदि से रहित होकर भी " किमर्थ कथं तावत् " 'णिंदामि गरिहामि अप्पाण वोसिरामि' क्यों इन वचनों द्वारा अवद्य(पाप)

જ સામાયિક છે, આત્મા જ સામાયિકનું પ્રયોજન છે આ રીતે વ્યુત્સર્ગ પ્રયોજન સુધીની બાબતોમાં આત્માને તે તે રૂપે માનવામાં કોઇ પણ બાબતો વાંધો આવતો નથી તે કારણે જ સ્થવિર ભગવંતોએ તેમનું પ્રતિપાદન કર્યું છે સ્થવિર ભગવંતોવડે સામાયિક વગેરેનું તે પ્રકારનું પ્રતિપાદન સાંભળીને " से कालासवेसियपुत्ते अणगारे थेरे भगवंते एवं वयासी " તે કાલાસ્યવેષિપુત્ર અણગારે તે સ્થવિર ભગવંતોને આ પ્રમાણે પૂછ્યું-' जइ मे अज्जो! आया सामाइए, आया सामाइयस्स अट्ठे एवं जाव आया विउसग्गस्स अट्ठे " હે આર્યો! જો આપના મત પ્રમાણે આત્મા જ સામાયિક હોય, આત્મા જ સામાયિકનું પ્રયોજન હોય (यावत्) આત્મા જ વ્યુત્સર્ગનું પ્રયોજન હોય તો આપ શા કારણે ક્રોધ, માન, માયા અને લોભનો પરિત્યાગ કરીને એટલે કે રાગ, દ્વેષ કામ, ક્રોધ વગેરે રહિત થઈને પણ " किमर्थं कथं तावत् " णिंदामि, गरिहामि,

मयात्मगुणतया गुणगुणिनोरभेदात् आत्मैव विवेकः, त्याज्यवस्तुत्यागादिरूपस्य च विवेकप्रयोजनस्य त्यागिरूपात्मधर्मतया धर्मधर्मिणोरभेदात् आत्मैव विवेकप्रयोजनम्, तथा कायादिममत्वराहित्यस्य व्युत्सर्गस्य आत्मधर्मतया धर्मधर्मिणोरभेदात् आत्मैव व्युत्सर्गः। अनभिष्वङ्गतालक्षणस्य च व्युत्सर्गप्रयोजनस्य आत्मधर्मतया आत्मैव व्युत्सर्गप्रयोजनम्, तथा च आत्मा त्यागी, विवेकी, निर्ममः, इत्यादि व्यवहारात् आत्मन एव सामायिकादिव्युत्सर्गप्रयोजनान्तस्वरूपस्वीकारे

होने रूप जो फल इस संवर का है वह भी आत्मा का धर्म और धर्मी के अभेद होने से आत्मा को ही संवर का फलरूप मान लिया गया है। इसी तरह से विशिष्ट बोधरूप जो विवेक है वह भी ज्ञानमय आत्मा का गुण है। इसी कारण गुणगुणी में अभेद विवक्षावश आत्मा ही विवेक है ऐसा मान लिया गया है। त्यागकरने योग्य वस्तु का त्याग करना, तथा ग्रहण करने योग्य वस्तु को ग्रहण करना इत्यादि रूप जो प्रयोजन विवेक का है वह त्यागिरूप आत्मा का धर्म है। इस कारण धर्म और धर्मी की अभेद विवक्षा से आत्मा ही विवेक का प्रयोजन है ऐसा कहा है। शरीरादिक से ममत्व भाव का परित्याग करना इसका नाम व्युत्सर्ग है। यह व्युत्सर्ग भी आत्मा का ही धर्म हैं। अतः यहां पर भी धर्म और धर्मी में अभेद मानकर आत्मा ही व्युत्सर्ग है ऐसा कहा गया है। विषयादिकों में त्यागनारूप जो प्रयोजन व्युत्सर्ग का है वह भी आत्मा का ही एक धर्म है। इस कारण उसका व्युत्सर्ग का प्रयोजन रूप कहा गया है। तथा च–आत्मा त्यागी है, विवेकी निर्मम है

સંવરનુ પ્રયોજન છે તે પણ આત્માનો જ ધર્મ છે ધર્મ અને ધર્મીમાં અભેદની અપેક્ષાએ આત્માને જ સવરના ફળરૂપ માનવામા આવ્યો છે એ જ પ્રમાણે વિશિષ્ટ બોધરૂપ જે વિવેક છે તે પણ જ્ઞાનમય આત્માનો ગુણ છે તે કારણે ગુણ અને ગુણીમાં અભેદની અપેક્ષાએ આત્માને જ વિવેક માનવામા આવ્યો છે છોડવાલાયક વસ્તુનો ત્યાગ કરવાનુ અને ગ્રહણ કરવા લાયક વસ્તુને ગ્રહણ કરવાનું જે વિવેકનુ પ્રયોજન છે તે ત્યાગીરૂપ આત્માનો ધર્મ છે. તે કારણે ધર્મ અને ધર્મીમાં અભેદની અપેક્ષાએ આત્માને જ વિવેકના પ્રયોજનરૂપ માનવામા આવ્યો છે શરીર વગેરેના મમત્વનો પરિત્યાગ કરવો તેનુ નામ વ્યુત્સર્ગ છે તે વ્યુત્સર્ગ પણ આત્માનો જ ધર્મ છે, તેથી અહી પણ ધર્મ અને ધર્મીમા અભેદની અપેક્ષાએ આત્મા જ વ્યુત્સર્ગ છે એમ કહેવામા આવ્યું છે વિષય વગેરેમાં અનાસક્તિરૂપ જે વ્યુત્સર્ગનુ પ્રયોજન છે તે પણ આત્માનો જ એક ધર્મ છે. તેથી આત્માને જ વ્યુત્સર્ગના પ્રયોજનરૂપ કહ્યો છે તથા–આત્મા ત્યાગી છે, વિવેકી છે, નિર્મમત્વી છે, ઈત્યાદિરૂપે વ્યવહાર થવાને કારણે આત્મા

र्योऽनुमोदनस्य निरसनसम्भवात्, कालास्यवेषिकपुत्र पृच्छति–'स भदंते! किं गरहा संजमे? अगरहा संजमे?' हे भदन्त! तत्र किं गर्हा निन्दा संयमः अगर्हा अनिन्दा वा संयमः?, स्थविरा उत्तरयन्ति—'कालासवेसियपुत्त! गरहा संजमे णो अगरहा संजमे' हे कालास्यवेषिकपुत्र! गर्हा संयम, ना अगर्हा संयम, गर्हाया संयमजनकत्वेऽपि कारणे कार्योपचारात् लक्षणया 'गर्हा संयमः' इत्युक्तम्, अथ न केवलं गर्हा अवद्यानुमतेर्व्यवच्छेदनद्वारा कर्मानुपादानहेतुत्वात्,

विच्छेद हो जाता है। तात्पर्य यह है कि जबतक अवद्य गर्हित नहीं होता है तबतक अवद्य सम्बन्धी अनुमतिका विच्छेद नहीं होता है, और जब उसका गर्हण हो जाता है तब गर्हणद्वारा गर्हित कार्यकी अनुमोदना करने का निरसन हो जाता है। तब कालास्यवेषिकपुत्र ने स्थविर भगवन्तों से पूछा कि भदन्त! (किं गरिहा संजमे, अगरिहा संजमे) यह तो कहीये कि गर्हा निन्दा संयम है कि अगर्हा अनिन्दा संयम है! तब स्थविर भगवन्तों ने उन्हें समझाया कि (कालासवेसियपुत्त! गरिहा संजमे णो अगरिहा संजमे) हे कालास्यवेषिकपुत्र! गर्हा संयम है और अगर्हा असंयम है। गर्हा को जो संयमरूप से कहा गया है उसमें कारण में कार्य का उपचार है। तात्पर्य कहने का यह है कि गर्हा से संयम होता है अतः गर्हा संयम का जनक होने से संयम का कारण है। सो जो यहां गर्हारूप कारण को संयमरूप कहा गया है वह कारण में कार्य का उपचार करके लक्षणावृत्ति से कहा गया है। (गर्हा

સંયમની પ્રાપ્તિ થવાય છે તાત્પર્ય એ છે કે જ્યાં સુધી અવદ્યની ગર્હા થતી નથી ત્યાં સુધી અવદ્યની અનુમતિનો વિચ્છેદ થતો નથી, અને જ્યારે તેની ગર્હા થઈ જાય ત્યારે ગર્હાવડે ગર્હિત કાર્યની અનુમોદના કરવાનું નિરસન (નિરાકરણ) થઈ જાય છે ત્યારે કાલાસ્યવેષિકપુત્ર અણગારે સ્થવિર ભગવંતોને પૂછ્યું—કે ભગવન્તો! किं गरिहा संजमे, अगरिहा संजमे' શું ગર્હા (નિંદા) સંયમ છે કે અગર્હા (અનિંદા) સંયમ છે!' ત્યારે તે સ્થવિર ભગવંતોએ તેમને સમજાવ્યું કે "कालासवेसियपुत्त! गरहा संजमे णो अगरहा संजमे" હે કાલાસ્યવેષિકપુત્ર! ગર્હા સંયમ છે અને અગર્હા અસંયમ છે ગર્હાને સંયમરૂપ જે કહી છે તેનું કારણ કારણમાં કાર્યનો ઉપચાર છે તાત્પર્ય એ છે કે ગર્હા સંયમની ઉત્પાદક હોવાથી ગર્હાને સંયમના કારણરૂપ માની છે, અહીં જે ગર્હારૂપ કારણને સંયમરૂપ કહેવામાં આવેલ છે તે કારણમાં કાર્યનો ઉપચાર કરીને લક્ષણાવૃત્તિથી કહેલ છે "गर्हा संयमः" ગર્હા સંયમ છે, તે

निन्दामि, गर्हे, आत्मान व्युत्सृजामि, इत्यादि वचनद्वारा यूयम् अवद्यं गर्हध्वे यो हि जीवो भव्यस्तथाविधसामायिकवान् त्यक्तरागद्वेषक्रोधादिश्च स्यात् स न कथमपि किमपि निन्दितुमुद्यतो भवेत्, निन्दायाःरागद्वेषादिजन्यत्वात्, सामायिकादिमतो जीवस्य द्वेषादिविरहात्, स्थविराः उत्तरयन्ति-'कालासवेसियपुत्त ! संजमट्ठयाए' हे कालास्यवेषिकपुत्र ! सयमार्थतया अवद्यं वयं गर्हामहे, अवद्ये गर्हिते सति संयमो भवति, अवद्यानुमतेर्व्युच्छेदनसंभवात्, गर्हणद्वारा गर्हितका-

---

की निंदा गर्हा आदि करते हो। क्यों कि जो जीव भव्य होता है और तथाविध सामायिक वाला होता है वह राग, द्वेष, क्रोधादि से पहिले से ही रहित हो जाता है। अतः वह जीव किसी भी तरह से किसी की भी निंदा करने के लिये उद्यत नहीं होता है। क्यों कि निंदा जो होती है वह रागद्वेष आदि से जन्य होती है। तथा सामायिक आदि से जन्य होती है। तथा सामायिक आदि से युक्त जीव के द्वेष आदि का विरह रहा करता है। इस प्रकार से कालास्यवेषिक पुत्र अनगार के प्रश्न को सुनकर उन स्थविर भगवन्तों ने उन्हें समझाया कि हे काला-वेषिकपुत्र अनगार जो रागद्वेष आदि से रहित बने हुए भी हम लोग जो " णिंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि " इन वचनों का प्रयोग करते हैं-उसका करण संयम का निमित्त है अतः " संजमट्ठाए " हम लोग संयम के निमित्त " अवद्यं गर्हामहे " अवद्य (पाप) की गर्हा करते हैं। क्यों कि अवद्यके गर्हित (गुरुसमक्ष प्रकाशित) हो जाने पर संयम होनेका कारण यह है कि अवद्य सम्बन्धी अनुमतिका होता है। संयम

अप्पाणं वोसिरामि" शा माटे आ वचनोवडे पापनी निंदा, गर्हा वगेरे करो छो ! कारण के जीवो भव्य होय छे अने सामायिकवाळा होय छे तेओ तो पहेलेथी ज राग, द्वेष अने क्रोधादिथी रहित बनी जाय छे तेथी एवा जीवो कोई पण रीते कोइनी पण निंदा करता नथी कारण के निंदा करवानुं कारण रागद्वेष वगेरे होय छे सामायिक वगेरेथी युक्त जीवमा तो रागद्वेष वगेरेनो अभाव होवो जोईए कालास्यवेषीपुत्र अणगारनो आ प्रकारनो प्रश्न सांभळीने स्थविर भगवंतोए समजाव्युं के हे कालास्यवेषीपुत्र अणगार ! रागद्वेष वगेरेथी रहित होवा छता पण अमे " णिंदामि, गरिहामि अप्पाण वोसिरामि " वगेरे वचनोनो जे प्रयोग करीये छीए ते संयमना रक्षण माटे ज करीये छीए. " संजमट्ठाए " अमे संयमना लाभने माटे ज " अवद्यं गर्हामहे" अवद्य (पाप)नी गर्हा करीए छीए, कारण के अवद्य (पाप)नी घृणा थाय त्यारे ज संयमनी प्राप्ति थाय छे, अवद्य (पाप) संबंधी अनुमतिनो विच्छेद थाय त्यारे ज

इति पूर्वेण अन्वयः, 'एवं खु णे आया संजमे उवहिते भवइ' एवं खलु तथा सति गर्हान्तरम् नः अस्माकम् आत्मा संयमे उपहितो भवति, संयमोपधावान् भवति संयमरूपफलोत्पादने सन्निहितो भवतीत्यर्थः, आत्मरूप संयमो वा उपहितः प्राप्तो भवति, 'एवं खु णे आया संजमे उवचिए भवइ' एवं खलु अवद्यवस्तु गर्हान्तरं नः अस्माकम् आत्मा संयमे उपचितः परिपुष्टो भवति, आत्मरूपो वा संयमः उपचितो भवति, 'एवं खु णे आया संजमे उवहिए भवइ' एवं खलु नः अस्माकम् आत्मा संयमे उपस्थितो भवति, अत्यन्तस्थिरतयाऽवस्थायी भवति दृढो भवति इत्याशय, 'एत्थ णं से कालासवेसियपुत्ते अणगारे संबुद्धे थेरे भग वंते वंदइ णमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी' अत्र खलु स कालास्यवेषिक पुत्रोऽनगारः संबुद्ध सम्यक् प्रबोधवान्, भगवत स्थविरान् वन्दते, नमस्यति,

देती है। (एवं खु णे आया संजमे उवहिते भवइ) इस प्रकार होनेपर गर्हा के बाद हमारा आत्मा संयम में उपधावाला हो जाता है-अर्थात् संयमरूप फल के उत्पादन में सन्निहित हो जाता है। अथवा-आत्मारूप संयम उपहित-प्राप्त हो जाता है। (एवं खु णे आया संजमे उवचिए भवइ) अवद्य (पाप) वस्तु की गर्हा के बाद नः-अस्माकं-हमारा, आया-आत्मा, संयम में उपस्थित हो जाता है-अर्थात् अत्यंतस्थिररूप से उसमें स्थायी-दृढ हो जाता है। इस प्रकार इस विषय में "से का लासवेसियपुत्ते अणगारे) वे कालास्यवेषिकपुत्र अनगार (संबुद्धे) बोधपाये अज्ञान से रहित बने गये अर्थात् संबुद्ध हो गये-तत्तद्विषयक ज्ञान से संपन्न हो गये। (थेरे भगवंते वंदइ णमंसइ, वंदित्ता, णमंसित्ता एवं वयासी) संबुद्ध होने के बाद फिर उन्हों ने उन स्थविर भगवंतों को वन्दना की, उन्हें नमस्कार किया। वन्दना और नमस्कार कर फिर वे

संजमे उवहिते भवइ" આમ બનવાથી ગર્હા કર્યા પછી અમારો આત્મા સંયમમાં સ્થિરતાવાળો બની જાય છે-એટલે કે સંયમરૂપ ફળના ઉત્પાદનમાં સન્નિહિત થઇ જાય છે અથવા આત્મારૂપ સંયમ ઉપહિત (પ્રાપ્ત) થઈ જાય છે "एवं खु णे आया संजमे उवचिए भवइ" અવદ્ય (પાપ) ની ગર્હા કર્યા પછી અમારો આત્મા સંયમમાં ઉપસ્થિત થઇ જાય છે એટલે કે અતિશય દઢરૂપે તેમાં સ્થિર થઇ જાય છે આ પ્રકારનાં સ્થવિર ભગવંતોનાં વચનો સાંભળીને 'से कालासवेसियपुत्ते अणगारे' તે કાલાસ્યવેષિકપુત્ર અણગાર "संबुद्धे" સંબુદ્ધ થઇ ગયા-અજ્ઞાનથી રહિત બની ગયા-તે તે વિષયોના જ્ઞાનથી યુક્ત બની ગયા 'थेरे भगवंते वंदइ णमंसइ वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी' સંબુદ્ધ થયા પછી તેમણે સ્થવિર ભગવંતોને વંદણા કરી, નમસ્કાર કર્યા વંદણા નમ

संयमजनिकैव भवति, अपि तु रागद्वेषादिकमपि क्षपयतीत्याह—'गरहा वि य णं सव्वं दोसं पविणेइ' गर्हैव च सर्वं दोषं रागद्वेषादिकं पूर्वोपार्जितं पापं वा प्रविणयति विनाशयति, रागद्वेषादिविनाशनप्रकारमाह-'सव्वं बालियं परिण्णाए' सा हि अवद्यवस्तुनो गर्हा सर्वां बालतां बाल्यं मिथ्यात्वं परिज्ञाय, ज्ञ परिज्ञया ज्ञात्वा, प्रत्याख्यानपरिज्ञया च प्रत्याख्याय रागद्वेषादिकं प्रविणयति

संयमः) गर्हा संयम है इस प्रकार से कहने का तात्पर्य यह है कि गर्हा अवद्यकी अनुमति का व्यवच्छेद करा देती है-अतः पहिले जो अवद्यानुमतिके अव्यवच्छेदनद्वारा कर्मों का आत्मामें उपादान (ग्रहण) होता था अब वह गर्हा करनेसे उसके व्यवच्छेदन हो जानेसे उसद्वारा होता नहीं है, इसलिये उसद्वारा होनेवाले कर्मके अनुपादन (अग्रहण)में हेतुभूत होने से वह गर्हा संयम है यह बात स्पष्ट हो जाती है। यह गर्हा केवल संयम की ही जनक है सो बात नहीं है, किन्तु यह राग द्वेष आदि को भी आत्मा से दूर करती है-यही बात सूत्रकार ने (गरिहा वि य णं सव्वं दोसं पविणेइ) इस सूत्र द्वारा प्रकट की है। उन्हों ने इसमें कहा है कि गर्हा समस्त दोषों को-रागद्वेषादिकों को अथवा पूर्वोपार्जित पाप को-नष्टकर देती है। यह गर्हा रागद्वेषादिकों को किस प्रकारसे नष्ट करती है-इसी बातको अब सूत्रकार कहते हैं कि (सव्वं बालियं परिण्णाए)वह अवद्य(पाप) वस्तुकी गर्हा समस्त मिथ्यात्वको ज्ञपरिज्ञासे जानकर और प्रत्याख्यान परिज्ञासे उसका प्रत्याख्यानकर रागद्वेष आदिकोंको नष्ट कर

પ્રકારના કથનનુ તાત્પર્ય એ છે કે ગર્હા અવદ્યની અનુમતિનો વિનાશ કરાવી નાખે છે તેથી પહેલા જે પાપમા અનુમતિના અવિનાશવડે આત્મામા કર્મોનું ઉપાદાન થતુ હતુ, તે ઉપાદાન હવે ગર્હાવડે પાપની અનુમતિનો વિનાશ થવાથી થતું નથી તેથી તેની મારફત કર્મના અનુપાદાન થવાના હેતુભૂત હોવાથી તે ગર્હા સયમરૂપ છે એ વાત સ્પષ્ટ થઈ જાય છે, તે ગર્હા માત્ર સંયમની જ જનક છે એટલુ જ નહીં પણ તે રાગદ્વેષ વગેરેને પણ આત્માથી દૂર કરે છે, એ જ વાત સૂત્રકારે—" गरहा वियण सव्व दोष पविणेइ " આ સૂત્રપાઠવડે સૂત્રકારે કહ્યુ છે કે ગર્હા તમામ દોષોને - રાગદ્વેષ વગેરેને તથા પૂર્વોપાર્જિત પાપોને નષ્ટ કરી નાખે છે તે ગર્હાવડે રાગદ્વેષ વગેરેનો કેવી રીતે નાશ થાય છે તે હવે સૂત્રકાર બતાવે છે-' सव्व वालिय परिण्णाए " તે અવદ્ય (પાપ) ગર્હા, સમસ્ત મિથ્યાત્વને જ્ઞ પરિજ્ઞાથી જાણીને અને પ્રત્યાખ્યાન પરિજ્ઞાથી તેનો પરિત્યાગ કરીને રાગદ્વેષ વગેરેનો નાશ કરી નાખે છે. " एव खु णे आया

याणं' अदृष्टानाम् साक्षात् स्वयमनुपलब्धानाम्, अश्रुतानाम् अन्यद्वाराऽनाकर्णितानाम् श्रवणागोचरीकृतानाम् इत्यर्थः, अस्मृतानाम् दर्शनाऽऽकर्णनाभावेन अनुभवजन्यसंस्काराभावात् अननुध्यातानाम् विशिष्टबोधाऽविषयीकृतानाम् अव्याकृतानाम् विशेषरूपेण गुरुभिरनाख्यातानाम् अभिगोचररूपेण अस्पष्टीकृतानाम् अव्युच्छिन्नानाम्-विपक्षाद् अव्यावर्तितानाम्, अनियूढानाम् सुन्दरयोपाय मस्ता ग्रन्थात् कृपया अत्यन्तसंक्षेपेण गुरुभि अनुदृष्टानाम्, अत एव अस्माभि अनुपधारितानाम् न निश्चयविषयीकृतानामित्यर्थः, 'एयमट्ठ णो सद्दहिए, णो पत्तिए, णो रोइए' एतार्थं भवद्भि प्रतिपादितार्थं नो श्रद्धित न श्रद्धाभावेन गृहीतं, नो प्रीत, नैव प्रीतिविषयीकृत, अथवा प्रीतित, हेतुभि न प्रत्ययित निश्-

---

णाण) विपक्ष से मैने इन्हें व्यावर्तित किया नहीं अर्थात् इनका कभी निश्चय किया नहीं, (अणिज्जूढाण) बडे २ शास्त्रों से हमारे प्रमादवश गुरुजनों ने इन्हें (शिष्यजन अच्छी तरह से समझ सकें) इस अभिप्राय से उद्धार कर के संक्षेपरूप में उद्धृत किया नहीं, अतः (अणुवधारियाणं) मैं अभीतक इन्हें अपने निश्चयज्ञान का विषयभूत नहीं बना सका। (एयमट्ठ णो सद्दहिए) अतः इन पदों का जो अर्थ आपने प्रतिपादित किया है इनका यह अर्थ मैंने इसके पहिले कभी भी अपनी श्रद्धा का विषयभूत नहीं बनाया। क्यों कि मुझे (इन पदों का यही अर्थ है) पहिले ऐसी धारणारूप श्रद्धा ही नहीं की। श्रद्धा नहीं होने के कारण इन पदों का यह अर्थ मेरी प्रीति का भी विषयभूत नहीं हो सका-अथवा हेतुओं द्वारा निर्णीत कर मैंने उसे अपने विश्वास में नहीं

'अणिज्जूढाणं' मे करी पण ते पदोनो निश्चय कर्यो न हतो, 'अणिज्जूढाणं' अमारा प्रमादने कारणे गुरुजनोए ते पदोनो अर्थ 'शिष्यो सारी रीते समजी शके' ते आशयथी मोटा मोटा ग्रंथोमांथी संक्षेपरूपे अमने समजाव्यो न हतो. तथी 'अणुवधारियाणं' हुं अहीं सुधी ते पदोना अर्थने मारा निश्चयज्ञानना विषयभूत बनावी शक्यो न हतो. 'एयमट्ठं णो सद्दहिए' आपे आ पदोना जे अर्थनुं आजे मारी समक्ष प्रतिपादन कर्युं छे ते अर्थने आ पहेलां करी पण हुं मारी श्रद्धाना विषयरूप बनावी शक्यो न हतो. कारण के आ पदोनो आ प्रमाणे ज अर्थ थाय छे' एवी धारणारूप श्रद्धा में पहेलां करी पण करी न हती. श्रद्धा न थवाने कारणे आ पदोनो आ अर्थ मारी प्रतीतिना विषयभूत पण बनी शक्यो न हतो अथवा

वन्दित्वा एवं वक्ष्यमाण-प्रकारेण अवादीत्-'एएसि णं भंते ! पयाणं पुव्विं अन्नाणयाए, असवणयाए, अबोहियाए अणभिगमेणं' हे भगवन् ! एतेषां खलु पदानां शब्दानाम् पूर्वं प्रथमम् अज्ञानतया अज्ञानो निर्ज्ञानस्तस्य भावः अज्ञानता तया स्वरूपतोऽनुपलम्भात् ज्ञानाभावेन, अश्रवणतया श्रवणाभावेन, अबोधितया अबोधिः महावीरजिनधर्मानवाप्तिः तया औत्पत्तिक्यादिबुद्ध्यभावेन वा प्रबोधाभावेन, अनभिगमाभावेन विस्तरबोधाभावेन हेतुना 'अदिट्ठाण, असुयाणं, अस्सुयाणं, अविन्नायाणं, अव्वोगडाणं, अव्वोच्छिण्णाणं, अणिज्जूढाणं उवधारि-

---

उनसे इस प्रकार कहने लगे-"भंते !" हे भगवन् ! (एएसि णं पयाणं) इन पदों की मैंने (पुव्विं) पहिले कभी (अन्नाणयाए) अज्ञानता होने के कारण इन पदों के स्वरूप को नहीं जान सकने के कारण, (असवणयाए) नहीं सुनने के कारण (अबोहियाए) महावीर जिन के धर्म की अनवाप्तिरूप अबोधि होने के कारण अथवा औत्पत्ति की आदि बुद्धि के अभाव से प्रबोधाभाव होने के कारण, (अणभिगमेणं) तथा विस्तृत बोधाभाव होने के कारण (अदिट्ठाणं) साक्षात् स्वयं देखा नहीं, (असुयाणं) दूसरों के मुख से मैंने कभी सुना नहीं, (अस्सुयाणं) दर्शन और नहीं सुनने के कारण अनुभव जन्य संस्कार के अभाव से मैंने इन्हें कभी स्मरण किया नहीं, (अविन्नायाणं) विशिष्ट बोध का इन्हें विषय बनाया (अव्वोगडाणं) गुरुजनों को नहीं पूछने से प्रश्नोत्तर पूर्वक इनका विशेषरूप से स्पष्टी करण किया नहीं, (अव्वोच्छि-

---

સ્કાર કરીને તેમણે સ્થવિર ભગવંતોને કહ્યું-"भंते ! હે ભગવંતો ! "एएसि ण पायाण" આ પદોનો આ પ્રકારનો અર્થ "पुव्विं" પહેલાં કદિ પણ "अन्नाणयाए" અજ્ઞાનને કારણે (આ પદોનું સ્વરૂપ નહીં સમજી શકવાથી) "असवणयाए" નહીં સાંભળવાથી (આ પ્રકારનો અર્થ પહેલાં કોઈની પાસે નહીં સાંભળવાથી) "अबोहियाए" મહાવીર પ્રભુના ધર્મની અપ્રાપ્તિરૂપ અબોધિ હોવાને કારણે અથવા ઔત્પાત્તિકી આદિ બુદ્ધિનો અભાવ હોવાથી, પ્રબોધનો અભાવ હોવાને કારણે, "अणभिगमेणं" તથા વિસ્તૃત બોધના અભાવને કારણે "अदिट्ठाणं" પ્રત્યક્ષરૂપે જોયો ન હતો, "अस्सुयाण" અન્યને મુખે કદી સાંભળ્યો ન હતો, "अस्सुयाण" દર્શન અને શ્રવણના અભાવે અનુભવજન્ય સંસ્કાર ન હોવાથી મે તેનું કદી પણ સ્મરણ કર્યું ન હતું, "अविन्नायाणं" વિશિષ્ટ બોધનો વિષય તેમને બનાવ્યાં ન હતા, "अव्वोगडाणं" સદ્ગુરુઓને પૂછીને પ્રશ્નોત્તરપૂર્વક કદી પણ તેમનું વિશિષ્ટ સ્પષ્ટીકરણ કર્યું ન હતું,

नाम् विशिष्टबोधविषयीकृतानाम् , तत्र कारणमाह—व्याकृतानां विशेषतया गुरुसदृशैः भवद्भिः व्याख्यातानाम् , व्युच्छिन्नानां विपक्षाद् आत्मभिन्नात् शरीरादेः व्यवच्छेदितानाम् , निर्यूढानां सुखावबोधाय अतिसंक्षेपेण सारत्वतया करुणावरुणालयैः भवद्भिः गुरुसदृशैः महत' अर्हत्प्रवचनात् उद्धृत्य प्रतिपादितानाम् , अत एव मया अस्माभि र्वा उपधारितानाम् सम्यक्तया अवधारितानाम् निश्चितरूपेण गृहीतानामित्यर्थः, सामायिकादिपदानाम् 'एयमट्ठं सद्दहामि, पत्तियामि रोएमि' एतमर्थं भवद्भिः आत्मस्वरूपतया प्रतिपादितमर्थम् श्रद्दधामि श्रद्धया गृह्णामि

वजह से मैंने इन्हें अपने स्मरणज्ञान का वार २ विषय बनाया है, अत एव मेरे विशिष्ट बोध के विषयभूत बन चुके हैं। कारण कि-गुरुसदृश आप भगवतों ने विशेषरूप से इनका स्पष्टीकरण जो किया है। आत्मा से भिन्न जो शरीरादिक पदार्थ हैं उन से उनका किसी भी प्रकार का संबंध नहीं है, किन्तु आत्मा से ही इनका यथार्थरूप से संबंध है ऐसा आपने इनके विषय में कहा जो है, इनका बोध शिष्यजनों को अनायास ही हो जावे, इस अभिप्राय से, करुणावरुणालय दयासागर-आप गुरुतुल्य भगवंतों ने साररूप में विशाल अर्हत्प्रवचन से इनको उद्धृत कर समझाया जो है इसी कारण से मैंने इन्हें बहुत ही अच्छी तरह से अपने अंतः करण में इन्हें निश्चितरूप से धारण कर लिया है अर्थात् स्थायीरूप से स्थान दिया है। ऐसे इन सामायिक आदि पदों के (एयमट्ठं) इस अर्थ को कि जो अभी आपने आत्मरूप से प्रतिपादित किया है मैं (सद्दहामि) अपनी श्रद्धा का विषय बनाता हूं-अर्थात्-आपके द्वारा प्रति

તેમનો અર્થ સારી રીતે શ્રવણ કર્યો છે, આપની પાસે તેનુ શ્રવણ કર્યા પછી અનુભવજન્ય સંસ્કારને કારણે મે વારંવાર તેમને મારાં સ્મરણજ્ઞાનનો વિષય બનાવેલ છે, તેથી તેમનું વિશિષ્ટ જ્ઞાન (બોધ) મને મળી ગયુ છે, કારણ કે ગુરુ સમાન આપ ભગવંતોએ વિશિષ્ટરૂપે તેનુ સ્પષ્ટીકરણ કર્યું છે કે આત્માથી ભિન્ન એવા જે શરીરાદિક પદાર્થો છે તેમની સાથે તેમનો કોઈ પણ પ્રકારનો સંબંધ નથી, પણ આત્માની સાથે જ તેમનો યથાર્થરૂપે સંબંધ છે એવું આપે તેમના વિષયમાં જે પ્રતિપાદન કર્યુ છે તે કારણે તથા શિષ્યોને તેનો અનાયાસે બોધ થાય તે હેતુથી દયાસાગર આપ ગુરુતુલ્ય ભગવંતોએ વિશાલ અર્હંતપ્રવચનનો સાર ગ્રહણ કરીને અમારા જેવા શિષ્યોને સમજાવ્યો છે તે કારણે મે તેને મારા અંતઃકરણમાં ઘણી જ સારી રીતે નિશ્ચિતરૂપે ધારણ કરેલ છે એટલે કે સ્થાયીરૂપે સ્થાન દીધુ છે એવા આ સામાયિક વગેરે પદોનો "एयमट्ठं" આ અર્થ કે જેને આપે હમણાં જ આત્મારૂપે પ્રતિપાદિત કર્યો છે, તેને હું "सद्दहामि" મારી શ્રદ્ધાનો વિષય બનાવું છું એટલે કે આપની

सितः, न वा रुचितः रुचिविषयीकृतः किन्तु 'एयाणि भंते! एतेसिं पयाणं जाणयाए, सवणयाए, बोहिए अभिगमेणं' हे भगवन्! इदानीम् अधुना भवद्भिः सामायिकादिपदार्थानां वास्तविकतया प्रतिपादनकाले एतेषां सामायिकादि-व्युत्सरणार्थान्तानां पदानां वास्तविकार्थस्य ज्ञानतया निश्चिततया स्वरूपत उपलम्भात्, श्रवणतया श्रावणप्रत्यक्षेण, बोधितया जिनधर्मावाप्तितया, अभिगमेन विशिष्टबोधेन, 'दिट्ठाणं, सुयाणं-सुयाणँ, विन्नायाणं, वोगडाणं, वोच्छिन्नाणं, णिज्जूढाणं, उवधारियाणं' दृष्टानां साक्षात् स्वयमुपलब्धानाम्, श्रुतानां भवद्भ्यः सम्यगाकर्णितानां सम्यक्कृतया श्रवणविषयीकृतानामित्यर्थः, स्मृतानां भवद्भ्यः आकर्णितत्वेन तदनुभवजन्यसंस्कारादनुध्यातानाम्, अतएव विज्ञाता-

लिया, (णो रोइए) और न उसे मैंने अपनी रुचि का विषय ही बनाया। किन्तु (एयाणि भंते) अब हे भदन्त! (एतेसिं पयाणं जाणयाए, सवणयाए, बोहिए, अभिगमेणं) आपने जो इन सामायिक आदि पदों के अर्थ का वास्तविक रूप से प्रतिपादन किया है सो इस अवसर में मुझे इन पदों के सामायिक से लेकर व्युत्सर्ग के अर्थ तक के पदों के -अर्थ का अच्छी तरह से ज्ञान हो गया है-निश्चितरूप से इनके स्वरूप की उपलब्धि हो गई है इस कारण से, तथा इन्हें मैंने अपने श्रवण करनेके विषयभूत बनाया है, इस कारण से, जिनधर्म महावीर के शासन में पञ्चमहाव्रतरूपधर्म की अवाप्तिरूप बोधि की मुझे प्राप्ति हो चुकी है इस कारण से, तथा मुझ में अब विशिष्ट बोध जग गया है इस कारण से, (दिट्ठाणं) इन पदों को मैंने साक्षात् स्वय उपलब्ध कर लिया है, इन्हें आप भगवंतों के मुखारविन्द से अच्छी तरह मैंने सुन लिया है, आप से सुन चुकने के बाद अनुभवजन्य संस्कार की

હેતુઓ વડે નિર્ણીત કરીને મે તેમાં વિશ્વાસ મૂક્યો નહીં, "णो रोइए" અને મે તેને મારી રૂચિના વિષયરૂપ પણ બનાવ્યો નહીં પરંતુ "एयाणि भंते! હે ભગવન્તો! "एतेसिं पयाण जाणयाए, सवणयाए, बोहिए, अभिगमेण" આપે જે સામાયિક વગેરે પદોના અર્થોનું વાસ્તવિકરૂપે પ્રતિપાદન કર્યું છે, તેને લીધે હવે મને આ પદોના – સામાયિકથી લઈને વ્યુત્સર્ગના અર્થ પર્યન્તના પદોના અર્થનુ સારી રીતે જ્ઞાન થયુ છે-નિશ્ચિંત રીતે તેના સ્વરૂપની મને સમજણ પડી છે તે કારણે, તથા મેં તે વિષયનું પ્રત્યક્ષ શ્રવણ કર્યું હોવાને કારણે, મહાવીરના શાસનમાં જૈનધર્મના પાંચ મહાવ્રતરૂપ ધર્મની અવાપ્તિરૂપ બોધિની પ્રાપ્તિ મને થઇ જવાને કારણે, તથા હવે વિશિષ્ટ બોધની મારામાં જાગૃતિ થઈ જવાને કારણે, "दिट्टाण" આ પદોને મેં પ્રત્યક્ષ જોયાં છે (તેમના વાસ્તવિક અર્થનાં દર્શન કર્યાં છે) અને આપનાં મુખેથી મેં

प्रत्येहि विश्वसिहि विश्वासं कुरु हे आर्य ! रोचस्व रुचिं कुरु, यथा एतत् सामायिकादि वस्तु वयं वदामः आत्मपरतया प्रतिपादयामः, तत् तथैव वर्तते इति त्वया प्रतिपत्तव्यम् , 'तएणं से कालासवेसियपुत्ते अणगारे थेरे भगवंते वंदइ, नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी ' ततः-खलु स कालास्यवेषिकपुत्रोऽनगारः स्थविरान् भगवतो वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा एवं वक्ष्यमाणप्रकारेण अवादीत्-' इच्छामि णं भंते ! तुब्भं अंतिए चाउज्जामाओ धम्माओ पंचमहव्वइयं सपडिक्कमणं धम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए ' इच्छामि खलु भगवन् ! भवतामन्तिके समीपे चतुर्यामात् धर्मात् चतुः प्रकारकमहाव्रतधर्मात् पञ्चमहाव्रतिकं सप्रतिक्रमणं धर्ममुपसंपद्य स्वीकृत्य विहर्तुं स्थातुम् इच्छामि इति पूर्वेणान्वयः ततः स्थविरा वोचुः-' अहा सुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंध ' हे देवानुप्रिय !

अन्यथा नहीं है इस प्रकार से तुम समझो और उस पर श्रद्धा, प्रतीति और रुचि रक्खो। इसके बाद (से कालासवेसिय पुत्ते अणगारे) उन कालास्यवेषिकपुत्र अनगार ने (थेरे भगवन्ते वंदइ नमसइ) स्थविर भगवन्तों को वन्दना की नमस्कार किया, वन्दना नमस्कार करके फिर उन्हों ने उनसे अपना हार्दिक जो अभिप्राय था उसे प्रकट किया-इसमें उन्हों ने कहा कि-(इच्छामि णं भंते ! तुब्भं अंतिए चाउज्जामाओ धम्माओ पंचमहव्वइयं सपडिक्कमणं धम्मं उवसंपज्जित्ता णं विहरित्तए) हे भगवन् ! मैं आपके पास दीक्षा लेकर रहना चाहता हूं। मैं अभीतक जो चातुर्यामरूप महाव्रत धर्म का पालन करता आया हूं, अतः मैं आपके पास प्रतिक्रमण सहित पंचमहाव्रतरूप धर्म को स्वीकार करना चाहता हूं। उनका इस प्रकार हार्दिक अभिप्राय सुनकर स्थविर भगवन्तों ने उनसे कहा-(अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं करेह) हे देवानुप्रिय

તેમનો બીજો કોઈ પણ અર્થ નથી-એવી તમે શ્રદ્ધા, પ્રતીતિ અને રુચિ રાખો ત્યાર બાદ ' से कालासवेसियपुत्ते अणगारे ' તે કાલાસ્યવેષિકપુત્ર અણગારે " थेरे भगवंते वंदइ नमंसइ " સ્થવિર ભગવંતોને વંદણા નમસ્કાર કર્યા વંદણા નમસ્કાર કરીને તેમણે પોતાની જે હાર્દિક ઇચ્છા હતી તે તેમની આગળ પ્રકટ કરી—' इच्छामि णं भंते ! तुब्भं अंतिए चाउज्जामाओ धम्माओ पंचमहव्वइयं सप्पडिक्कमणं धम्मं उवसंपज्जित्ता णं विहरित्तए ' હે ભગવન્તો ! હું આપની સમક્ષ દીક્ષા અંગીકાર કરીને રહેવા માગું છું અત્યાર સુધી હું ચાર મહાવ્રતરૂપ ધર્મનું પાલન કરતો હતો, હવે હું આપની સમક્ષ પ્રતિક્રમણસહિત પાંચ મહાવ્રતરૂપ ધર્મનો સ્વીકાર કરવા ઇચ્છું છું તેમની આ પ્રકારની હાર્દિક ઇચ્છા જાણીને સ્થવિર ભગવંતોએ તેમને કહ્યું કે " अहा सुहं देवाणुप्पिया !

प्रत्येमि विश्वसिमि, रोचे, रुचिविषयतया अभिलषामि, 'एवमेयं से जहेयं तुब्भे वदह' एवमेतत्, अथ यथा एतद्वस्तु यूयं वदथ, यूयं भवन्तः यथा आत्मपरतया एतद् वस्तु सामायिकादि पदार्थान् वदथ प्रतिपादयन्ति एवमेव तथैव एतत् सामायिकादि वस्तु विद्यते इत्याशयः। 'तएणं ते थेरा भगवंतो कालासवेसियपुत्तं अणगारं एवं वयासी' ततः तदनन्तरं ते स्थविराः भगवन्तः कालास्यवेषिकपुत्रम् अनगारं एवं वक्ष्यमाणप्रकारेण अवादिषुः प्रोचुः 'सद्दहाहि अज्जो! पत्तयाहि अज्जो! रोएहि अज्जो! से जहेयं अम्हे वदामो' हे आर्य! श्रद्धेहि, आत्मपरतया प्रतिपादितेषु सामायिकादिपदार्थेषु श्रद्धां कुरु हे आर्य!

पादित सामायिकादि पदों के आत्मरूप अर्थ पर पूर्णविश्वास करता हूं (पत्तियामि) उसे अपनी प्रीति या प्रतीति का स्थान बनाता हूं (रोएमि) और अपनी रुचि का उसे निवासस्थान बनाता हूं। (एवमेयं से जहेयं तुब्भे वदह) हे भगवन्! आप जिस प्रकार से आत्मार्थपरक सामायिक आदि पदों का कथन किया है वास्तव में उनका यही अर्थ है। इस प्रकार से कालास्यवेषिकपुत्र अनगार के हार्दिक वचनों को सुनकर उन स्थविर भगवंतों ने उनसे कहा कि आर्य! जैसा हम कहते हैं (सद्दहाहि) उस पर तुम पूर्णरूप से विश्वास करो (पत्तयाहि अज्जो) उसे अच्छी तरह से हे आर्य! तुम अपनी प्रतीतिकोटि में उतारो (रोएहि अज्झो) उस पर बहुत ही गहराई के साथ सोच विचार कर अपनी रुचि जमाओ तात्पर्य कहने का यह है कि जिस प्रकार से इन सामायिक आदि पदों का अर्थ हमने आत्मरूप अर्थ में प्रतिपादित किया है वह वैसा ही है-

---

મારફત પ્રતિપાદિત સામાયિક વગેરે પદોના આત્મરૂપ અર્થ પર હું મારી સંપૂર્ણ શ્રદ્ધા વ્યક્ત કરૂં છું 'पत्तियामि" હું એની પ્રતીતિ કરૂં છું, "रोएमि" અને તેમા મારી રુચિ જાહેર કરૂં છુ. "एवमेयं से जहेयं तुब्भे वदह" હે ભગવન્તો! આપે જે રીતે આત્માર્થસૂચક આ સામાયિક વગેરે પદોનું પ્રતિપાદન કર્યું છે એ પ્રતિપાદન જ એ પદોનો વાસ્તવિક અર્થ બતાવનાર છે. આપ્રકારના કાલાસ્યવેષિકપુત્ર અણગારના હાર્દિક વચનો સાંભળીને તે સ્થવિર ભગવંતોએ તેમને કહ્યુ કે હે આર્ય! અમે જે કહ્યુ તેમાં "सद्दहाहि" આપ સંપૂર્ણ રીતે શ્રદ્ધા રાખો "पत्तयाहि अज्जो" હે આર્ય! આપ તેની સારી રીતે પ્રતીતિ કરો "रोएहि अज्जो" તે વિષે ઊંડો વિચાર કરીને તેમાં રુચિ જમાવો. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે અમે જે પ્રકારે સામાયિક વગેરે પદોના અર્થનું આત્મરૂપ અર્થમાં પ્રતિપાદન કર્યું છે, તે અર્થ જ સાચો છે.

मस्येदि विश्वसिहि विश्वासं कुरु हे आर्य ! रोचस्व रुचिं कुरु, यथा एतत् सामायिकादि वस्तु वय वदाम आत्मपरतया प्रतिपादयाम , तत् तथैव वर्तते इति त्वया प्रतिपत्तव्यम् , 'तएण से कालासवेसियपुत्ते अणगारे थेर भगवंते वंदइ, नमसइ, वंदित्ता नमसित्ता एवं वयासी ' तत –खलु स कालास्यवेषिकपुत्रोऽनगारः स्थविरान् भगवतो वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा एवं वक्ष्यमाणप्रकारेण अवादीत्–' इच्छामि ण भंते ! तुब्भं अंतिए चाउज्जामाओ धम्माओ पंचमहव्वइय सपडिक्कमणं धम्म उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए ' इच्छामि खलु भगवन् ! भवतामन्तिके समीपे चतुर्यामात् धर्मात् चतुः प्रकारकमहाव्रतधर्मात् पञ्चमहाव्रतिकं सप्रतिक्रमणं धर्ममुपसपद्य स्वीकृत्य विहर्तुं स्थातुम् इच्छामि इति पूर्वेणान्वयः। ततः स्थविरा भोचु –' अहा सुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंध ' हे देवानुप्रिय !

अन्यथा नहीं है इस प्रकार से तुम समझो और उस पर श्रद्धा, प्रतीति और रुचि रक्खो। इसके बाद (से कालासवेसिय पुत्ते अणगारे) उन कालास्यवेषिकपुत्र अनगार ने (थेरे भगवन्ते वंदइ नमंसइ) स्थविर भगवन्तों को वन्दना की नमस्कार किया, वन्दना नमस्कार करके फिर उन्हों ने उनसे अपना हार्दिक जो अभिप्राय था उसे प्रकट किया–इसमें उन्हों ने कहा कि–(इच्छामि ण भंते ! तुब्भ अंतिमं चाउज्जामाओ धम्माओ पंचमहव्वइयं सपडिक्कमण धम्मं उवसंपज्जित्ता णं विहरित्तए) हे भगवन् ! मैं आपके पास दीक्षा लेकर रहना चाहता हूं। मैं अभीतक जो चातुर्यामरूप महाव्रत धर्म का पालन करता आया हूं, अतः मैं आपके पास प्रतिक्रमण सहित पंचमहाव्रतरूप धर्म को स्वीकार करना चाहता हूं। उनका इस प्रकार हार्दिक अभिप्राय सुनकर स्थविर भगवन्तों ने उनसे कहा–(अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं करेह) हे देवानुप्रिय

તેમનો ખીજો કોઈ પણ અર્થ નથી–એવી તમે શ્રદ્ધા, પ્રતીતિ અને રુચિ રાખો ત્યાર બાદ " से कालासवेसियपुत्ते अणगारे " તે કાલાસ્યવેષિકપુત્ર અણગારે " थेरे भगवंते वंदइ नमंसइ " સ્થવિર ભગવંતોને વંદણા નમસ્કાર કર્યા વંદણા નમસ્કાર કરીને તેમણે પોતાની જે હાર્દિક ઇચ્છા હતી તે તેમની આગળ પ્રકટ કરી—' इच्छामि णं भंते ! तुब्भं अंतिए चाउज्जामाओ धम्माओ पंचमहव्वइयं सप्पडिक्कमणं धम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए ' હે ભગવન્તો ! હું આપની સમક્ષ દીક્ષા અંગીકાર કરીને રહેવા માગું છું અત્યાર સુધી હું ચાર મહાવ્રતરૂપ ધર્મનું પાલન કરતો હતો હવે હું આપની સમક્ષ પ્રતિક્રમણ સહિત પાંચ મહાવ્રતરૂપ ધર્મનો સ્વીકાર કરવા ઇચ્છું છું તેમની આ પ્રકારની હાર્દિક ઇચ્છા જાણીને સ્થવિર ભગવંતોએ તેમને કહ્યું કે " अहासुहं देवाणुप्पिया !

यथा सुखं यथेच्छं समाचर, मा प्रतिबन्धं, विलम्बं मा कुरु इत्याशयः, 'तएणं से कालासवेसियपुत्ते अणगारे थेरे भगवंते वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता चाउज्जामाओ धम्माओ पंचमहव्वइयं सपडिक्कमणं धम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ' ततः खलु स कालास्यवेषिकपुत्रोऽनगारः स्थविरान् भगवतः वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा चतुर्यामाद् धर्मात् पञ्चमहाव्रतिकं समतिक्रमणं धर्ममुपसंपद्य स्वीकृत्य खलु विहरति तिष्ठति 'तएणं से कालासवेसियपुत्ते अणगारे बहूणि वासाणि सामन्नपरियागं पाउणइ' ततः खलु स कालास्यवेषिकपुत्रोऽनगारः बहूनि वर्षाणि श्रामण्यपर्यायं साधुपर्यायं प्राप्नोति पालयति 'पाउणित्ता जस्सट्ठाए कीरइ नग्गभावे, मुंडभावे, अण्हाणयं, अदंतधुवणयं, अच्छत्तयं, अणोवाहणयं' प्राप्य पालयित्वा यस्य प्रयोजनस्य मुक्तिरूपस्य अर्थं प्राप्त्यर्थं सिद्ध्यर्थमित्याशयः क्रियते विधीयते नग्नभावः नग्नत्वम्, मुण्डभावः मुण्डत्वं क्रियते इत्यस्य सर्वत्रैवाग्रे सम्बन्धो बोध्यः, अस्नानकम् स्नानवर्जनम्, अदन्तधूपनकम् दन्तधावनवर्जनम्, अच्छत्रकम् छत्रधारणवर्जनम्, अनुपानत्कत्वम् पादयोरुपानद्वर्जनम्, 'भूमिसेज्जा फलहसेज्जा, कट्ठसेज्जा, केसलोओ, बंभचेरवासो, परघरप्पवेसो, लद्धावलद्धी,

---

जैसी तुम्हारी इच्छा हो वैसा करो। परन्तु आत्मकल्याण में विलम्ब हो ऐसा मत करो। स्थविर भगवतों से इस प्रकार जानकर उन कालास्यवेषिकपुत्र अनगारने उन स्थविर भगवंतों को वन्दना की, नमस्कार किया, वन्दना नमस्कार कर के चातुर्याम धर्म का परित्याग कर प्रतिक्रमण सहित पंच महाव्रतवाले धर्म स्वीकार कर लिया। इसके बाद उन कालास्यवेषिकपुत्र अनगार ने अनेक वर्षों तक श्रामण्यपर्याय का पालन किया। उन्होंने जिस मुक्तिरूप प्रयोजन की सिद्धि के लिये अर्थात् मुक्तिरूप प्रयोजन की प्राप्ति लिये–नग्नभाव, मुंडभाव, स्नानवर्जन, दन्तधावनवर्जन, छत्रधारणवर्जन, पग में मोजा, जूता आदि पहिरने का

मा पडिबधं करेह" હે દેવાનુપ્રિય ! આપને જેનાથી સુખ ઉપજે તે કરો. પણ આત્મકલ્યાણમાં વિલંબ કરવો જોઈએ નહીં" સ્થવિર ભગવતોના એ વચનો સાંભળીને તે કાલાસ્યવેષિકપુત્ર અણગારે તેમને વંદણા કરી, નમસ્કાર કર્યા. વંદણા નમસ્કાર કરીને ચાતુર્યામ ધર્મનો પરિત્યાગ કરીને પ્રતિક્રમણ સહિત પાંચ મહાવ્રતવાળા ધર્મનો સ્વીકાર કર્યો. ત્યારબાદ તે કાલાસ્યવેષિકપુત્ર અણગારે અનેક વર્ષો સુધી શ્રમણપર્યાયનું પાલન કર્યું તેમણે મુક્તિરૂપ પ્રયોજનની સિદ્ધિને માટે એટલે કે મોક્ષ પ્રાપ્ત કરવાને માટે નગ્નભાવ, મુંડભાવ, સ્નાન ત્યાગ, દંતધાવનનો ત્યાગ, છત્ર ધારણનો ત્યાગ, પગમાં મોજા, જોડાં પહેર-

उच्चावचया, गामकण्टगा, बावीसं परिसहोवसग्गा अहियासिज्जंति' भूमिशय्या, पृथिवीशयनम्, फलकशय्या, पीठशयनम्, काष्ठशय्या, दारुशयनम्, केशलोच, केशलुञ्चनम्, ब्रह्मचर्यवासः, ब्रह्मचर्यव्रतपालनपूर्वकनिवास', परगृहप्रवेशः भिक्षाटनार्थं श्रावकगृहद्वारगमनम्, लब्ध्यपलब्धिः क्वचित् स्वयोग्यभिक्षोपलब्धिः क्वचिच्च स्वयोग्यभिक्षानुपलब्धिश्च, उच्चावचा निम्नोन्नताः ग्रामकण्टका अनुकूलाः प्रतिकूला वा इन्द्रियाणां कण्टकसदृशा द्वाविंशतिः परिषहोपसर्गा अधिसह्यन्ते सहनविषयीक्रियन्ते, 'तं अट्ठं आराहेइ, आराहित्ता चरमेहिं उस्सास-नीसासेहिं-सिद्धे, बुद्धे, मुक्के, परिनिव्वुडे, सव्वदुक्खप्पहीणे' स मोक्षरूपं मर्थम् आराधयति, साधयति, आराध्य ससाध्य चरमैः उच्छ्वासनिःश्वासैः सिद्ध, बुद्धः, मुक्तः, परिनिर्वृतः सर्वदुःखप्रहीणः क्षीणसर्वदुःख' सम्पन्न' इत्याशयः ॥ सू० ५ ॥

॥ इति आर्यकालास्यवेपिपुत्रानगारप्रकरणम् ॥

अप्रत्याख्यानादिप्रकरणम्—

कालास्यवेषिकपुत्रोऽनगार' प्रत्याख्यानक्रियया सिद्ध इति प्रत्याख्यानक्रिया-विपर्ययभूता अप्रत्याख्यानक्रियेति तां निरूपयितुमिदं सूत्रमाह–'भंते' इत्यादि।

मूलम्–भंते त्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी–से णूणं भंते! सेट्ठियस्स य तणुयस्स य किवणस्स य खत्तियस्स य समं चेव अपच्चक्खाण किरिया कज्जइ, हंता गोयमा! सेट्ठिय

वर्जन, भूमि आदि पर सोना, केशों का लुंचन करना, ब्रह्मचर्य का पालन करना, विशुद्ध भिक्षा लेना, लाभालाभ में संतोष करना परिषह और उपसर्गों को जीतना–उस अर्थ को उन्हों ने अच्छी तरह से सिद्ध कर लिया और वे चरम उच्छ्वास निःश्वासों द्वारा सिद्ध हो गये, बुद्ध हो गये, मुक्त हो गये, परिनिर्वृत हो गये और सर्व दुःखोंसे प्रहीण हो गये॥सू०५॥

॥ इस प्रकार यह कालास्यवेसिकपुत्र अनगार प्रकरण समाप्त हुआ॥

वानो त्याग, भूमिपर शयन, केशलुंचन, ब्रह्मचर्य पालन, विशुद्ध भिक्षानी प्राप्ति, लाभालाभमां संतोष, परीषहो अने उपसर्गो पर विजय वगेरे सहन कर्युं अने तेमणे ते अर्थनी सिद्धि करी एटले के अंतिम उच्छ्वास निःश्वासे तेओ सिद्ध थइ गया, बुद्ध थया, मुक्त थया, परिनिर्वृत थया अने तमाम दुःखोनो अंत करनार बनी गया ॥ सू० ५ ॥

॥ कालास्यवेषिकपुत्र अणगार प्रकरण समाप्त ॥

स्स य जाव अपच्चक्खाण किरिया कज्जइ, से केणट्ठेणं भंते! गोयमा ! अविरइ पडुच्च से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ, सेट्ठियस्स य. तणुयस्स य. जाव कज्जइ ॥ सू० ६ ॥

छाया—भदंत इति भगवान् गौतमः श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति वंदित्वा नमस्यित्वा एवमवादीत्, तद् नूनं भदन्त ! श्रेष्ठिकस्य च तनुकस्य च कृपणस्य च क्षत्रियस्य च सममेवाप्रत्याख्यानक्रिया क्रियते ? हंत गौतम !

अप्रत्याख्यान आदि प्रकरण—

कालास्यवेषिकपुत्र अनगार प्रत्याख्याम क्रिया से सिद्ध हुए यह बात अभी प्रकट की गई है सो इस प्रत्याख्यान क्रिया से विपरीत अप्रत्याख्यान क्रिया है। इस अप्रत्याख्यान क्रिया को निरूपण करने के लिये अब सूत्रकार सूत्र कहते हैं—" भंते त्ति भगवं गोयमे " इत्यादि।

सूत्रार्थ—(भंते ति भगवं गोयमे !) हे भदन्त ! ऐसा कह कर भगवान गौतम ने (समणं भगवं) श्रमण भगवान (महावीरं) महावीर को (वन्दइ) वन्दना की (नमंसइ) नमस्कार किया (वन्दित्ता नमंसित्ता) वन्दना नमस्कार करके (एवं वयासी) फिर उन्हों ने उनसे इस प्रकार पूछा-(से णूणं भंते ! सेट्ठिअस्स य तणुयस्स य खत्तियस्स तं समंचेव अप्पच्चक्खाण किरिया कज्जइ) हे भदन्त ! श्रेष्ठी, की दरिद्री की, कृपण की और क्षत्रिय राजा की अप्रत्याख्यान क्रिया क्या एकसी

અપ્રત્યાખ્યાન આદિ પ્રકરણ

કાલાસ્યવેષિકપુત્ર અણુગાર પ્રત્યાખ્યાન ક્રિયાથી સિદ્ધપદ પામ્યાં એ વાત તો હમણાં જ પ્રકટ કરવામાં આવી છે. ને પ્રત્યાખ્યાનની વિપરીત અપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયા છે, તે અપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયાનું નિરૂપણ કરવાને માટે હવે સૂત્રકાર સૂત્ર કહે છે—" भंते ! त्ति भगवं गोयमे !" ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—(भते त्ति भगवं गोयमे !) હે ભગવન્ ! એવુ કહીને ભગવાન ગૌતમે (समण भगवं) શ્રમણ ભગવાન (महावीरं) મહાવીરને (वंदइ) વંદણા કરી (नमंसइ) નમસ્કાર કર્યાં (वंदित्ता नमंसित्ता) વંદણા નમસ્કાર કરીને (एव वयासी) તેમણે ભગવાન મહાવીરને આ પ્રમાણે પૂછ્યું (से णूणं भंते ! सेट्ठियस्स य तणुयस्स य किवणस्स य खत्तियस्स य सम चेव अप्पच्चक्खाण किरियो कज्जइ) હે ભગવન્ ! શ્રેષ્ઠિની, દરિદ્રીની, કૃપણની અને ક્ષત્રિય—રાજાની અપ્ર-

श्रेष्ठिकस्य च यावत् अप्रत्याख्यानक्रिया क्रियते, तत्केनार्थेन भदन्त! गौतम! अविरतिं प्रतीत्य, तत्तेनार्थेन गौतम! एवमुच्यते श्रेष्ठिकस्य च तनुकस्य च यावत् क्रियते इति ॥ सू० ६ ॥

टीका—'भंतेत्ति' भदन्त इति हे भदन्त! इत्येवं रूपेण भगवन्तमामन्त्र्येति भाव, 'भगवं गोयमे' भगवान् गौतमः 'समणं भगवं महावीरं' श्रमणं भगवन्तं महावीरं 'वंदइ नमंसइ' वन्दते नमस्यति 'वंदित्ता नमंसित्ता' वन्दित्वा नमस्यित्वा 'एवं वयासी' एवं वक्ष्यमाणप्रकारेणावादीत् उक्तवान्। किमुक्तवानित्याह—'से णूणं भंते' तद् नूनं भदन्त! सेट्ठियस्स य' श्रेष्ठिकस्य

होती है? (हंता गोयमा सेट्ठियस्स जाव अपच्चक्खाण किरिया कज्जइ) हां गौतम! श्रेष्ठी से लेकर राजा तक की अप्रत्याख्यान क्रिया एकसी होती है। (से केणट्ठेणं भंते!) हे भदन्त! ऐसा आप किस कारण से कहते हैं कि श्रेष्ठी से लेकर राजा तक की अप्रत्याख्यान क्रिया एकसी होती है। (गोयमा! अविरइं पडुच्च) हे गौतम! मैं जो ऐसा कहता हूं यह अविरति भाव को लेकर कहता हूं (से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ, सेट्ठियस्स य तणुयस्स य जाव कज्जइ) कि एक सेठ की यावत् राजा की अप्रत्याख्यान क्रिया एकसी होती।

टीकार्थ-(भंते त्ति) हे भदन्त! इस रूप से भगवान आमंत्रण करके (भगवं गोयमे) भगवान गौतम ने (समणं भगवं महावीरं) श्रमण भगवान महावीर को (वंदइ नमंसइ) वन्दना की और नमस्कार किया। (वंदित्ता नमंसित्ता) वन्दना नमस्कार करके (एवं वयासी) फिर उन्हों ने उन से ऐसा प्रश्न पूछा (से णूणं भंते!) हे भदंत! (सेट्ठियस्स) जिसका मस्तक

ख्यान क्रिया शुं એકસરખી હોય છે? (हंता गोयमा! सेट्ठियस्स जाव अपच्चक्खाण किरिया कज्जइ) હા ગૌતમ! શ્રેષ્ઠીથી લઈને રાજા સુધીની અપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયા એકસરખી હોય છે (से केणट्ठेणं भंते!) હે ભગવન્! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે શ્રેષ્ઠીથી લઈને રાજા સુધીની અપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયા એક સરખી હોય છે? (गोयमा! अविरइं पडुच्च) હે ગૌતમ! હું અવિરતિ ભાવની અપેક્ષાએ એવું કહું છું (से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ, सेट्ठियस्स तणुयस्स य कज्जइ) શ્રેષ્ઠી (શેઠ) થી લઈને રાજા સુધીની અપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયા એકસરખી હોય છે

ટીકાર્થ- भंते त्ति" હે ભગવન્! આ રીતે સંબોધીને, "भगवं गोयमे" ભગવાન ગૌતમે "श्रमण भगवं महावीर" શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને "वंदइ नमंसइ" વંદણા કરી અને નમસ્કાર કર્યા "वंदित्ता नमंसित्ता" વંદણા નમસ્કાર કરીને 'एवं वयासी" આ પ્રમાણે પ્રશ્ન પૂછ્યો-"से णूणं भंते!"

च, श्रीदेवताकृपाकटाक्षप्रत्यक्षलक्ष्यमाणद्रविणलक्षलक्षणविलक्षणहिरण्यपट्टसमलंकृत-मूर्धनगरप्रधानव्यवहर्तुः, 'तणुयस्स य' तनुकस्य च, दरिद्रपूर्वोपार्जितपापकर्मकस्य प्राप्तदारिद्र्यसंपन्नस्य 'किवणस्स य' कृपणस्य च सति विभवेपि सत्कर्मादौ दानादिरहितस्य 'खत्तियस्स य' क्षत्रियस्य राज्ञश्च 'समं चेव अपच्चक्खाणकिरिया कज्जइ' सममेवाप्रत्याख्यानक्रिया क्रियते भवतीत्यर्थः किं समैव सदृश्ये-वाऽप्रत्याख्यानक्रिया सर्वेषां भवतीति प्रश्नः। भगवानाह—'हंते'-त्यादि। 'हंता गोयमा' हंत गौतम! 'सेट्ठियस्स य जाव अपच्चक्खाणकिरिया कज्जइ' श्रेष्ठिकस्य च यावद् अप्रत्याख्यानक्रिया क्रियते, अत्र यावत्पदेन तनुककृपणक्षत्रिय-पदानां संग्रहः, श्रेष्ठिकदरिद्रकृपणराज्ञां सर्वेषां तुल्यैवाप्रत्याख्यानक्रिया भवतीति

लक्ष्मीदेवी के कृपाकटाक्ष से प्रत्यक्षलक्ष्यमाण लक्षद्रविणराशी (धन का ढेर) से निर्मित सुवर्ण के मुकुट से अलंकृत हो रहा है ऐसा जो नगर का प्रधान व्यवहारी-नगर सेठ, उनकी तथा (तणुयस्स) तनुक-पूर्वोपार्जित पापकर्म के कारण लक्ष्मी रहित जो दरिद्र व्यक्ति है उसकी, (किवणस्स) विभव के होने पर जो अपनी लक्ष्मी का सदुपयोग दान धर्मादि में नहीं करता है ऐसा जो कृपण व्यक्ति है उसकी तथा (खत्तियस्स) क्षत्रिय-राजा जो है उसकी (समं चेव अप्पच्चक्खाण किरिया कज्जइ) अप्रत्याख्यान क्रिया एकसी ही होती है क्या? समान ही होती है क्या? इस प्रश्न का उत्तर देते हुए भगवान् कहते है कि-(हंता) हां (गोयमा) गौतम! (सेट्ठियस्स य जाव अपच्चक्खाण किरिया कज्जइ) श्रेष्ठी की यावत् अप्रत्याख्यान क्रिया समान ही होती है। यहां यावत् पद के (तनुक, कृपण, क्षत्रिय) इन पदों का संग्रह किया गया है। तात्पर्य कहने का यह है कि श्रेष्ठी दरिद्र कृपण, और राजा इन सब की अप्रत्याख्यान क्रिया एकसी ही होती है। सबकी क्रिया समान ही होती है इस बात

હે ભગવન્! "सेट्ठियस्स" જેનુ મસ્તક લક્ષ્મીદેવીની કૃપાદષ્ટિથી પ્રત્યક્ષ લક્ષ્ય-માન-લક્ષદ્રવિણરાશીથી રચિત સુવર્ણ મુગટથી શોભી રહ્યુ છે એવા નગરના મુખ્ય વ્યાપારી-નગરશેઠની તથા "तणुयस्स" તનુકની-પૂર્વના પાપકર્મને કારણે જે લક્ષ્મીથી રહિત દરિદ્ર સ્થિતિમા મૂકાયેલ છે તેની "किवणस्स" કંજૂસની (ધન હોવા છતાં પણ જે વ્યક્તિ તેનો દાનધર્માદિમાં સદુપયોગ કરતો નથી તેની) તથા "खत्तियस्स" ક્ષત્રિયની (રાજાની) "समं चेव अप्पच्चक्खाण किरिया कज्जइ" અપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયા શુ એકસરખી હોય છે! ભગવાન મહા-વીર સ્વામી તેનો આ પ્રમાણે જવાબ આપે છે-"हंता गोयमा!" હા, ગૌતમ! "सेट्ठियस्स य जाव अप्पच्चक्खाणकिरिया कज्जइ" શ્રેષ્ઠીની, દરિદ્રની, કંજુસની

भाव । सर्वेषां समैव क्रिया भवतीति श्रुत्वा पृच्छति गौतम 'से केणट्ठेणं भंते' तत्केनार्थेन भदन्त ! एवमुच्यते, सर्वेषां समैवति, भगवानाह-'गोयम' इत्यादि। 'गोयमा' हे गौतम ! 'अविरइं पडुच्च' अविरतिं प्रतीत्य अविरतिमाश्रित्य, 'से तेणट्ठेणं गोयमा एवं वुच्चइ' तत्तेनार्थेन हे गौतम ! एवमुच्यते-'सेट्ठियस्स य तणुयस्स य जाव कज्जइ' श्रेष्ठिकस्य च तनुकस्य च यावत् क्रियते हे गौतम ! अविरत्यपेक्षया एव कथ्यते यत् सर्वेषामेव श्रेष्ठिकादीनां तुल्या अप्रत्याख्यान-क्रिया भवतीति ॥ सू० ६ ॥

अविरतिश्च सर्वेषां समैवात सर्वेषां श्रेष्ठिकादीनामप्रत्याख्यानक्रिया तुल्यै-वेत्यादिना अप्रत्याख्यानक्रिया प्ररूपितेत्यप्रत्याख्यानक्रियाप्रस्तावादिदं सूत्रमाह-'आहाकम्म' इत्यादि ।

सूत्रम्-आहाकम्मं णं भुंजमाणे समणे णिग्गंथे किं बंधइ किं पकरेइ किं चिणाइ किं उवचिणाइ? गोयमा! आहाकम्म

को सुनकर गौतम ने भगवान से पूछा कि (से केणट्ठेण भंते!) हे भदन्त ! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि सब की अप्रत्याख्यान क्रिया एकसी ही होती है ? इसका उत्तर देते हुए प्रभु उनसे कहते हैं कि (गोयमा अविरइं पडुच्च) हे गौतम ! अविरति को आश्रित करके (से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ) मैं ऐसा कहता हूं कि (सट्ठियस्स य तणुयस्स य जाव कज्जइ) श्रेष्ठी की, तनुक की यावत् अप्रत्याख्यान क्रिया एकसी ही होती है। तात्पर्य चाहे श्रेष्ठी हो चाहे दरिद्री हो चाहे कृपण हो चाहे राजा हो कोई भी हो यदि इनके अविरति दशा है तो इन सबकी अप्रत्याख्यान क्रिया समान ही है । इसमें कोई भेद ही नहीं है।

અને ક્ષત્રિયની અપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયા એકસરખી જ હોય છે ત્યારે ગૌતમસ્વામી મહાવીરપ્રભુને પૂછે છે કે "से केणट्ठेण भंते!" હે ભગવન્ ! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે તે બધાની અપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયા એકસરખી હોય છે?

ઉત્તર—"गोयमा ! अविरइं पडुच्च" હે ગૌતમ ! અવિરતિની અપેક્ષાએ "से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ" હું એવું કહું છું કે "सेट्ठियस्स य तणुयस्स य जाव कज्जइ" શ્રેષ્ઠીની, દરિદ્રની, કૃપણની અને ક્ષત્રિયની અપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયા એકસરખી હોય છે તાત્પર્ય એ છે કે ભલે શેઠ હોય કે ભલે ગરીબ હોય, ભલે કૃપણ હોય કે ભલે રાજા હોય પણ જો તેઓ અવિરતિ હોય તો તે બધાની અપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયા સરખી જ હોય છે તેમની તે ક્રિયામાં કોઈ પણ જાતનો ભેદ હોતો નથી ॥ સૂ૦ ૬ ॥

णं भुंजमाणे समणे निग्गंथे आउयवज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ सिढिलबंधणबद्धाओ धणियबंधणबद्धाओ पकरेइ, जाव अणुपरियट्टइ, से केणट्ठेणं जाव अणुपरियट्टइ, गोयमा! आहाकम्मं णं भुंजमाणे समणे निग्गंथे आयाए धम्मं अइक्कमइ, आयाए धम्मं अइक्कममाणे पुढविकाइयं णावकंखइ, जाव तसकायं णावकंखइ, जेसिं पि य णं जीवाणं सरीराइं आहारं आहारेइ, ते वि जीवे णावकंखइ, से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ आहाकम्मं णं भुंजमाणे समणे निग्गंथे आउयवज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ जाव अणुपरियट्टइ, फासुएसणिज्जं णं भंते भुंजमाणे समणे निग्गंथे किं बंधइ जाव उवचिणाइ, गोयमा! फासुएसणिज्जं णं भंते भुंजमाणे समणे निग्गंथे किं बंधइ जाव उवचिणाइ? गोयमा! फासुएसणिज्जं णं भुंजमाणे समणे निग्गंथे आउयवज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ धणियबंधणबद्धाओ सिढिलबंधणबद्धाओ पकरेइ, जहा संवुडेणं, नवरं—आउयं च णं कम्मं सियबंधइ सिय नो बंधइ, सेसं तहेव जाव वीइवयइ, से केणट्ठेणं जाव वीइवयइ, गोयमा! फासुएसणिज्जं णं भुंजमाणे समणे निग्गंथे आयाए धम्मं नो अइक्कमइ, आयाए धम्मं अणइक्कममाणे पुढविक्काइयं अवकंखइ जाव तसकायं अवकंखइ, जेसिं पि य णं जीवाणं सरीराइं आहारेइ ते वि जीवे अवकंखइ, से तेणट्ठेणं जाव वीइवयइ ॥ सू० ७ ॥

छाया—आधाकर्म खलु भुञ्जानः श्रमणो निर्ग्रन्थः किं बध्नाति किं प्रकरोति किं चिनोति किम् उपचिनोति? गौतम! आधाकर्म खलु भुञ्जानः श्रमणो निर्ग्रन्थः आयुष्कवर्जाः सप्त कर्मप्रकृतीः शिथिलबंधनबद्धाः दृढबन्धनबद्धाः प्रकरोति, यावद् अनुपर्यटति, तत्केनार्थेन यावदनुपर्यटति ? गौतम! आधाकर्म खलु भुञ्जान

अविरति सबकी समान ही होती है अतः समस्त श्रेष्ठी आदिकों की अप्रत्याख्यान क्रिया भी तुल्य ही होती है इत्यादि कथन द्वारा अप्रत्याख्यान क्रिया का निरूपण किया। सो अब इसी अप्रत्याख्यान क्रिया के प्रस्ताव को लेकर सूत्रकार (आहाकम्मं णं) इस सूत्र का कथन करते हैं–' आहाकम्म णं भुजमाणे समणे ' इत्यादि।

सूत्रार्थ—(आहाकम्मं णं भुजमाणे) हे भदन्त! आधाकर्म दोष से दूषित आहार को भोगने वाला (समणे णिग्गथे) श्रमण निर्ग्रन्थ (किं बधइ) क्या बांधता है? (किं पकरेइ) क्या करता है? (किं चिणाइ) किस का चय करता है? (किं उवचिणाइ) किसका उपचय करता है? भगवान कहते हैं–(गोयमा! आहाकम्मं णं भुजमाणे समणे निग्गंथे आउयवज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ सिढिलबंधणबद्धाओ धणियबंधण बद्धाओ पकरेइ) हे गौतम! आधाकर्म दोष से दूषित आहार को भोगने वाला श्रमण निर्ग्रन्थ आयुकर्म को छोड़कर शेष सात कर्मप्रकृतिओं को कि जिन्हें पहिले उसने शिथिलबंधन से बांधी थीं, उन्हीं सात कर्मप्रकृतियों को मजबूत बंधन से बंधी हुई बना लेता है। (जाव अणुपरि

સૌની અવિરતિ (અમત) સમાન હોય છે તે કારણે શેઠ વગેરે સૌ જીવોની અપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયા સમાન જ હોય છે, ઇત્યાદિ કથનવડે સૂત્રકારે અપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયાનું નિરૂપણ કર્યું હવે એ જ પ્રત્યાખ્યાન ક્રિયાના પ્રસ્તાવનો આધાર લઈને સૂત્રકાર સૂત્રનું કથન કરે છે–' आहाकम्मं भुंजमाणे समणं'इ०

પ્રશ્ન—(आहाकम्म ण भुंजमाण निग्गंथे) હે ભગવન્! આધાકર્મી આહારને ગ્રહણ કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ (किं बंधइ) શું બાંધે છે? (किं पकरेइ) શું કરે છે? (किं चिणाइ) શેનો ચય કરે છે? (किं उवचिणाइ) અને શેનો ઉપચય કરે છે?

ઉત્તર—(गोयमा! आहाकम्मं णं भुंजमाणे समण निग्गंथ आउयवज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ सिढिलबंधणबद्धाओ धणियबंधणबद्धाओ पकरेइ) હે ગૌતમ! આધાકર્મી આહારને ગ્રહણ કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ આયુકર્મ સિવાયની સાત કર્મ પ્રકૃતિઓ કે જે પહેલાં શિથિલ બંધવાળી હતી તે મજબૂત બંધનવાળી કરે. (जाव अणुपरियट्टइ) (यावत्) તે સંસારમાં પરિભ્રમણ કરે છે.

णं भुंजमाणे समणे निग्गंथे आउयवज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ सिढिलबंधणबद्धाओ धणियबंधणबद्धाओ पकरेइ, जाव अणुपरियट्टइ, से केणट्ठेणं जाव अणुपरियट्टइ, गोयमा! आहाकम्मं णं भुंजमाणे समणे निग्गंथे आयाए धम्मं अइक्कमइ, आयाए धम्मं अइक्कममाणे पुढविकाइयं णावकंखइ, जाव तसकायं णावकंखइ, जेसिं पि य णं जीवाणं सरीराइं आहारं आहारेइ, ते वि जीवे णावकंखइ, से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ आहाकम्मं णं भुंजमाणे समणे निग्गंथे आउयवज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ जाव अणुपरियट्टइ, फासुएसणिज्जं णं भंते भुंजमाणे समणे निग्गंथे किं बंधइ जाव उवचिणाइ, गोयमा! फासुएसणिज्जं णं भंते भुंजमाणे समणे निग्गंथे किं बंधइ जाव उवचिणाइ? गोयमा! फासुएसणिज्जं णं भुंजमाणे समणे निग्गंथे आउयवज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ धणियबंधणबद्धाओ सिढिलबंधणबद्धाओ पकरेइ, जहा संवुडेणं, नवरं—आउयं च णं कम्मं सियबंधइ सिय नो बंधइ, सेसं तहेव जाव वीइवयइ, से केणट्ठेणं जाव वीइवयइ, गोयमा! फासुएसणिज्जं णं भुंजमाणे समणे निग्गंथे आयाए धम्मं नो अइक्कमइ, आयाए धम्मं अणइक्कममाणे पुढविक्काइयं अवकंखइ जाव तसकायं अवकंखइ, जेसिं पि य णं जीवाणं सरीराइं आहारेइ ते वि जीवे अवकंखइ, से तेणट्ठेणं जाव वीइवयइ ॥ सू० ७ ॥

श्रमणो निर्ग्रन्थ किं बध्नाति यावदुपचिणोति, गौतम ! प्रासुकैषणीय भुञ्जान श्रमणो निर्ग्रन्थ आयुष्कवर्जाः सप्त कर्मप्रकृतीः दृढबन्धनबद्धा शिथिलबन्धनबद्धाः प्रकरोति, यथा संवृतः खलु नवरम् आयुष्कं च कर्मस्यात् बध्नाति स्यान्नो बध्नाति शेषं तथैव यावद् व्यतिव्रजति, तत्केनार्थेन यावत् व्यतिव्रजति, गौतम ! प्रासु

दूषित आहार को भोगने वाला श्रमण निर्ग्रन्थ आयुकर्म को छोड़कर शेष सात कर्मप्रकृतियों को गाढबंधन से बांधता है और यावत् संसार में बारंबार घूमता रहता है। (फासुएसणिज्जं णं भंते ! भुंजमाणे समणे निग्गंथे किं बंधइ, जाव उवचिणइ) हे भदंत ! प्रासुक एषणीय आहार को अपने उपयोग में लाता हुआ श्रमण निर्ग्रन्थ क्या बांधता है यावत् वह किसका उपचय करता है ? (गोयमा ! फासुएसणिज्जं णं भुंजमाणे समणे निग्गंथे आउयवज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ घणियबंधणबद्धाओ सिढिलबंधणबद्धाओ पकरेइ) हे गौतम ! प्रासुक एषणीय आहार को अपने उपयोग में लाता हुआ श्रमण निर्ग्रन्थ आयु को छोड़कर शेष सात कर्मप्रकृतियों को जिन्हें उसने पहिले गाढ बंधन से बद्ध किया था अब शिथिलबंधन वाली कर देता है (जहा संवुडेणं) यह संवृत अनगार की तरह होता है। (नवरं) विशेषता यह है कि यह (आउयं च णं कम्मं सिय बंधइ सिय नो बंधइ) आयुकर्म का कभी बंध करता है और कभी बंध नहीं भी करता है। (सेसं तहेव जाव वीइवयइ) अवशिष्ट

પ્રકૃતિઓનો ગાઢતર બંધ બાંધે છે અને (यावत्) તે સંસારમાં વારંવાર પરિભ્રમણ કરે છે (फासुएसणिज्जं णं भंते ! भुंजमाणे समणे निग्गंथे किं बंधइ, जाव उवचिणइ) હે ભગવન્ ! પ્રાસુક એષણીય (સૂજતા) આહારનો ઉપયોગ કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રંથ શું બાંધે છે ? (यावत्) શેનો ઉપચય કરે છે ? (યાવત્ પદથી અહીં "શું કરે છે અને શેનો ચય કરે છે ?" આ બે પ્રશ્નો ગ્રહણ કરાયા છે)

(गोयमा फासुएसणिज्जं णं भुंजमाणे समणे निग्गंथे आउयवज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ घणियबंधणबद्धाओ सिढिलबंधणबद्धाओ पकरेइ) હે ગૌતમ ! પ્રાસુક એષણીય આહારનો ઉપયોગ કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રંથ, આયુષ્ય કર્મ સિવાયની સાત કર્મપ્રકૃતિઓને પહેલાં તેણે ગાઢ બંધનથી બાંધી હતી તેમને શિથિલ બંધનવાળી કરી નાખે છે (जहा संवुडेणं) તે સંવૃત અણગારના જેવો હોય છે (नवरं) પણ તેનામાં એ વિશેષતા હોય છે કે (आउयं च णं कम्मं सिय बंधइ, सिय नो बंधइ) તે આયુષ્યકર્મનો બંધ ક્યારેક બાંધે છે અને ક્યારેક નથી બાંધતો (सेसं तहेव जाव वीइवयइ) "તે સંસારને પાર

श्रमणो निर्ग्रन्थ आत्मनो धर्ममतिक्रामति, आत्मनो धर्ममतिक्रामन् पृथिवीकायिकं नावकांक्षति, येषामपि च जीवानां शरीराणि आहारमाहरति, तानपि जीवान् नावकांक्षति, तत्तेनार्थेन गौतम! एवमुच्यते आधाकर्म खलु भुञ्जानः श्रमणो निर्ग्रन्थः आयुष्कवर्जाः सप्त कर्मप्रकृतीर्यावत् अनुपर्यटति। प्रासुकैषणीयं खलु भदन्त! भुञ्जानः

यट्टइ) यावत् वह संसार में वारंवार घूमता रहता है। (से केणट्ठेणं जाव अणुपरियट्टइ) हे भदन्त ! इसका क्या कारण है-जो वह यावत् संसारमें वारंवार भ्रमण करतारहता है ? (गोयमा! आहाकम्मं णं भुंजमाणे समणे निग्गंथे आयाए धम्मं अइक्कमइ) हे गौतम ! आधाकर्मदोष से दूषित आहार को भोगने वाला श्रमण निर्ग्रन्थ अपनी आत्मा के धर्म का उल्लंघन करता है (आयाए धम्मं) अपनी आत्मा के धर्म को (अइक्कममाणे) उल्लंघन करता हुआ वह श्रमण निर्ग्रन्थ (पुढवीकाइयं णावकंखइ) पृथिवीकायिक जीवों की दया नहीं पालता है। (जाव तसकायं णावकंखइ) यावत् वह त्रसकाय की दया नहीं पालते हैं। (जेसिं पि य णं जीवाणं सरीराइं आहारं आहारेइ) तथा जिन जीवों के शरीरों को वह खाता है(ते वि जीवे नावकंखइ) उन जीवोंकी भी वह दरकार (दया) नहीं करता है। (से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ) इस कारण हे गौतम! मैंने ऐसा कहा है कि (आहाकम्मं णं भुंजमाणे समणे निग्गंथे आउयवज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ जाव अणुपरियट्टइ) आधाकर्म दोष से

પ્રશ્ન--(से केणट्ठेणं जावअणुपरियट्टइ) હે ભગવન્! શા કારણે તે સંસારમા પરિભ્રમણ કર્યા કરે છે ?

ઉત્તર--(गोयमा ! आहाकम्मं णं भुंजमाणे समणे निग्गंथे आयाए धम्मं अइक्कमइ) હે ગૌતમ ! આધાકર્મી આહારને ગ્રહણ કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રંથ પોતાના આત્મધર્મનું ઉલ્લંઘન કરે છે. (आयाए धम्मं) પોતાના આત્મધર્મનું (अइक्कममाणे) ઉલ્લઘન કરતો તે શ્રમણ નિર્ગ્રંથ (पुढवीकाइयं णावकंखइ) પૃથ્વીકાયિક જીવોની દયા પાળતો નથી (जाव तसकाय णावकंखइ) યાવત્ તે ત્રસકાય પર્યંતના જીવોની દયા પણ પાળતો નથી (जे सिं पि य णं जीवाण सरीराइं आहारं आहारेइ) તથા તે જે જીવોના શરીરને ખાય છે (ते वि जीवे नावकंखइ) તે જીવોની પણ તે દરકાર કરતો નથી (से तेणट्ठेण गोयमा ! एव वुच्चइ) હે ગૌતમ ! તે કારણે હું એવુ કહું છું કે (आहाकम्मं णं भुंजमाणे समणे निगथे आउय वज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ जाव अणुपरियट्टइ) આધાકર્મી આહાર લેનાર શ્રમણ નિર્ગ્રંથ આયુષ્યકર્મ સિવાયની સાત કર્મ-

टीका—'आहाकम्मं ण भुंजमाणे' आधाकर्म खलु भुञ्जान, आधाय साधुं मनसि निधाय कर्म = षट्कायोपमर्दऽपूर्वकमाहारादिनिष्पादनम् तत् आधाकर्म, आधया=साधुप्रणिधानेन यत् क्रियते-सचेतनं वस्तु अचेतनं, क्रियते अचेतन वा वस्तु पच्यते, चीयते वा उपाश्रयादिकं, व्यूयते वा वस्त्रादिकं तत् आधाकर्म, ताहक्षमाहारादिकं 'भुंजमाणे' भुञ्जानः=तादृशाहारादेरुपभोग कुर्वाण' 'समणे निग्गंथे' श्रमणो निर्ग्रन्थः 'किं बंधइ' किं बध्नाति कीदृशं कर्म बध्नाति प्रकृति बन्धापेक्षया स्पृष्टावस्थापेक्षया वा, 'किं पकरेइ' किं प्रकरोति स्थितिबन्धापेक्षया बद्धावस्थापेक्षया वा, 'किं चिणाइ' किं चिनोति अनुभागबन्धापेक्षया, निधत्त

टीकार्थ—(आहाकम्म णं भुंजमाणे) साधु को अपने मन में रख कर षट्काय के जीवों के उपमर्दनपूर्वक जो आहार आदि का निष्पादन होता है वह आधाकर्म है। (आधाय कर्म इति आधाकर्म) इस प्रकार की इसकी व्युत्पत्ति है, साधुओं को मन में रखकर उनके आहार के लिये षट्कायिक जीवों का उपमर्दन करना अथवा-आधया कर्म इति आधाकर्म साधु को निमित्त करके सचेतन वस्तु को अचेतन करना, अचेतन वस्तु को पकाना, उपाश्रयादिक बनवाना, वस्त्र वगैरह बुनवाना यह सब आधाकर्म आहार आदि का उपभोग करने वाला (समणे निग्गंथे) श्रमण निर्ग्रन्थ (किं बंधइ) प्रकृति बंध की अपेक्षा से अथवा स्पृष्टावस्था की अपेक्षा से कैसे कर्म का बंध करता है? (किं पकरेइ) स्थितिबंध की अपेक्षा से अथवा बद्धावस्था की अपेक्षा से क्या करता है? (किंचिणाइ) अनुभागबंध की अपेक्षा से अथवा निधत्तकरण की

ટીકાર્થ—"આહાકમ્મ ણ ભુંજમાણે" સાધુને નિમિત્તે છ કાયના જીવોના વિનાશવાળો જે આહાર વગેરે તૈયાર કરાય છે તે આહારને આધા કર્મ દોષથી દૂષિત ગણવામાં આવે છે "आधाय कर्म इति आधाकर्म" આ પ્રમાણે તેની વ્યુત્પત્તિ થાય છે-સાધુઓને નિમિત્તે છ કાયના જીવોની વિરાધના કરીને તૈયાર કરેલા આહારને માટે આ શબ્દ પ્રયોગ થાય છે, અથવા-"आधया कर्म इति आधाकर्म" સાધુને નિમિત્તે સચેત વસ્તુને અચેત કરવી, અચેત વસ્તુને રાંધવી, ઉપાશ્રયાદિક, બનાવરાવવા, વસ્ત્રાદિ વણાવવા, એ બધાંને "આધા કર્મ" કહે છે આવા આધાકર્મ દોષથી દૂષિત આહારનો ઉપયોગ કરનાર "समणे निग्गंथे" શ્રમણ નિર્ગ્રંથ "किं बंधइ" પ્રકૃતિ બંધની અપેક્ષાએ અથવા સ્પૃષ્ટાવસ્થાની અપેક્ષાએ કેવા કર્મનો બંધ બાંધે છે? "किं पकरेइ" સ્થિતિબંધની અપેક્ષાએ અથવા બદ્ધાવસ્થાની અપેક્ષાએ શું કરે છે? "किं चिणाइ" અનુભાગબંધની

कैषणीयं भुञ्जानः श्रमणो निर्ग्रन्थ आत्मनो धर्मं नातिक्रामति, आत्मनो धर्ममनतिक्रामन् पृथिवीकायिकमवकांक्षति यावत् त्रसकायमवकांक्षति, येषामपि च जीवानां शरीराण्याहरति तानपि जीवानवकांक्षति, तत्तेनार्थेन यावद् व्यतिव्रजति ॥ ७ ॥

उसी प्रकार जानना चाहिये, यावत् वह संसार को उल्लंघन कर देता है। (से केणट्ठेणं जाव वीइवयइ) हे भदन्त ! इसका क्या कारण है जो वह यावत् संसार को उल्लंघन कर देता है । (गोयमा ! फासुएसणिज्जं णं भुंजमाणे समणे निग्गंथे आयाए धम्मं नो अइक्कमइ) हे गौतम ! प्रासुक एषणीय आहार को अपने उपयोग में लाता हुआ श्रमण निर्ग्रन्थ अपनी आत्मा के धर्म का उल्लंघन नहीं करता है। (आयाए धम्मं अणइक्कममाणे पुढविक्काइयं अवकंखइ जाव तसकायं अवकंखइ) आत्मा के धर्म का उल्लंघन नहीं करता हुआ वह श्रमण निर्ग्रन्थ पृथिवीकायिक जीवों पर दया करता है यावत् वह त्रसकायिक जीवों पर दया रखता है। (जेसिं पि य णं जीवाणं सरीराइं आहारेइ, ते वि जीवे अवकंखइ से तेणट्ठेणं जाव वीइवयइ) तथा जिन जीवों के शरीर का वह आहार करता है उन जीवों की भी वह दया रखता–पालता है। (से तेणट्ठेणं जाव वीइवयइ) इस कारण हे गौतम ! वह श्रमण निर्ग्रन्थ संसार को उल्लंघन कर देता है ।

કરે છે” ત્યા સુધીનુ બાકીનું વર્ણન એ પ્રમાણે જ (સવૃત અણુગારની જેમ જ સમજવુ

(से केणट्ठेणं जाव वीइवयइ) હે ભગવન્ ! તેનુ શું કારણુ છે કે (यावत्) તે સસારને પાર કરે છે? (गोयमा ! फासुएसणिज्जं णं भुंजमाणे समणे निग्गंथे आयाए धम्मं नो आइक्कमइ) હે ગૌતમ ! પ્રાસુક એષણીય આહારનો ઉપયોગ કરનાર શ્રમણુ નિર્ગ્રંથ પોતાના આત્માના ધર્મનું ઉલ્લંઘન કરતો નથી (आयाए धम्म अणइक्कममाणे पुढविक्काइयं अवकंखइ जाव तसकायं अवकंखइ) આત્માના ધર્મનુ ઉલ્લંઘન ન કરતો તે શ્રમણુ નિર્ગ્રંથ પૃથ્વીકાયથી લઈ ને ત્રસકાય સુધીના જીવોની દયા પાળે છે (जेसिं पि य ण जीवाणं सरीराइं आहारेइ, ते वि जीवे अवकखइ–से तेणट्ठेणं जाव वीइवयइ) તથા જે જીવોના શરીરનો તે આહાર કરે છે, તે જીવોની પણ તે દયા પાળે છે હે ગૌતમ ! તે કારણે તે શ્રમણ નિર્ગ્રંથ સંસારને તરી જાય છે.

दीहकालठियाओ पकरेइ मंदाणुभावाओ तिव्वाणुभावाओ पकरेइ अप्पपएस गाओ बहुपएसग्गाओ पकरेइ, आउयं च णं कम्मं सिय बंधइ सिय नो बंधइ असायावेयणिज्जं च णं कम्मं भुज्जो भुज्जो उवचिणाइ अणाइयं च णं अणवयग्गं दीहमद्धं चाउरंतससारकंतार' इत्यस्य ग्रहणम्। छाया — ह्रस्वकालस्थितिकाः दीर्घकालस्थितिकाः प्रकरोति मन्दानुभावास्तीव्रानुभावा प्रकरोति अल्पप्रदेशाग्रा बहुप्रदेशाग्राः प्रकरोति आयुष्कं च कर्म स्यात् बध्नाति स्यात् नो बध्नाति असातावेदनीयं च कर्म भूयो भूय उपचिनोति अनादिकं चानवताग्रं दीर्घाध्वं चातुरन्तससारकान्तारम्। एतस्य व्याख्यानम्

करता है। यहां यावत् पद से (हस्सकालठिइयाओ दीहकालठिइयाओ पकरेइ, मंदाणुभावाओ तिव्वाणुभावाओ पकरेइ, अप्पपएसग्गाओ बहु पएसग्गाओ पकरेइ, आउयं च णं कम्मं सिय बंधइ सिय नो बंधइ असा यावेयणिज्जं च णं कम्मं भुज्जो भुज्जो उवचिणाइ, अणाइयं च णं अण वयग्गं दीहमद्धं चाउरंतससारकंतारं) इस पाठ का संग्रह किया गया है। इसका तात्पर्य यह है कि ह्रस्वकाल की स्थितिवाली कर्म प्रकृतियों को वह दीर्घकाल की स्थितिवाली बना देता है। मन्द अनुभाववाली कर्म प्रकृतियों को वह तीव्र अनुभाववाली कर देता है। अल्पप्रदेशाग्रवाली कर्मप्रकृतियों को वह बहुप्रदेशाग्रवाली बना देता है। यह आयुकर्म का बंध करता है और नहीं भी करता है। असातावेदनीय कर्म का यह बार २ उपचय करता है। तथा अनादि अनन्त तथा दीर्घमार्गवाले चतुर्गति रूप संसार कान्तार में बार २ भ्रमण करता रहता है। इन सब पदों की व्याख्या (संवृतान प्रकरण में प्रथम

પાવડે નીચેનો સૂત્રપાઠ ગ્રહણ કરાયો છે–" हस्सकालठिइयाओ दीहकालठिइयाओ पकरेइ मंदाणुभावाओ तिव्वाणुभावाओ पकरेइ अप्पपएसग्गाओ बहुपएसग्गाओ पकरेइ आउयं च णं कम्मं सिय बंधइ, सिय नो बंधइ असायावेयणिज्जं च णं कम्मं भुज्जो भुज्जो उवचिणाइ अणाइयं च णं अणवयग्गं दीहमद्धं चाउरंत संसारकंतारं " આ પાઠનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે–હ્રસ્વકાળની સ્થિતિવાળી કર્મ-પ્રકૃતિઓને તે દીર્ઘકાળની સ્થિતિવાળી બનાવે છે મંદ અનુભાગવાળી કર્મ-પ્રકૃતિઓને તે તીવ્ર અનુભાગવાળી બનાવે છે અલ્પ પ્રદેશવાળી કર્મપ્રકૃતિઓને તે બહુ પ્રદેશવાળી બનાવે છે–તે આયુષ્યકર્મનો બંધ બાંધે પણ છે અને નથી પણ બાંધતો તે વારંવાર અસાતાવેદનીય કર્મનો ઉપચય કરે છે, તથા અનાદિ અનંત અને દીર્ઘ માર્ગવાળા, ચાર ગતિરૂપ સંસારરૂપી વનમાં પરિભ્રમણ કર્યા કરે છે આ બધાં પદોની વ્યાખ્યા "સંવૃતાનપ્રકરણમાં" (પ્રથમ શતકના

वस्थापेक्षया वा 'किं उवचिणाइ' किम् उपचिनोति प्रदेशबन्धापेक्षया निकाचनापेक्षया वेति प्रश्नः । भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि । 'गोयमा' हे गौतम ! 'आहाकम्मं णं भुंजमाणे' आधाकर्म खलु भुञ्जानः 'समणे निग्गंथे' श्रमणो निर्ग्रन्थः 'आउयवज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ' आयुष्कवर्जाः सप्त कर्मप्रकृतीः 'सिढिलबंधणबद्धाओ' शिथिलबन्धनबद्धाः, 'धणियबंधणबद्धाओ पकरेइ' दृढबन्धनबद्धाः प्रकरोति, आधाकर्मिकाहारादिपरिसेवनेनायुष्कवर्जिताः सप्त कर्मप्रकृतयो याः शिथिलबन्धनबद्धा आसन् ता दृढबन्धनबद्धाः प्रकरोतीति, 'जाव अणुपरियट्टइ' यावत् अनुपर्यटति – परिभ्रमति, यावत्पदेन– ह्रस्सकालठिइयाओ

अपेक्षा से किसका चय करता है। (किं उवचिणाइ) प्रदेशबंध की अपेक्षा अथवा निकाचना की अपेक्षा से किसका उपचय करता ? ये प्रश्न हैं। इनका उत्तर देते हुए भगवान कहते हैं कि (गोयमा!) हे गौतम! (आहाकम्मं णं भुंजमाणे) आधाकर्म दोष से दूषित आहार आदि उपभोग करता हुआ (समणे निग्गंथे) श्रमण निर्ग्रन्थ (आउ-कम्मवज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ) आयुकर्म को छोड़कर शेष सात कर्म प्रकृतिओं को कि जो इसके पहिले (सिढिल बंधणबद्धाओ) शिथिलबंधन से बद्ध हुई थीं (धणियबंधणबद्धाओ) दृढबंधन से बद्ध बना लेता है। तात्पर्य कहने का यह है कि आधाकर्मिक आहार आदि के परिसेवन करने से सेवनकर्त्ता श्रमण निर्ग्रन्थ आयुकर्म के सिवाय सातकर्म प्रकृतियों को जो शिथिलबंधनवाली थीं दृढबंधन से बद्ध करता है। (जाव अणुपरियट्टइ) यावत् वह संसार में जन्ममरण द्वारा परिभ्रमण

અપેક્ષાએ અથવા નિધત્તકરણની અપેક્ષાએ શેનો ચય કરે છે? "किं उवचिणाइ" પ્રદેશબંધની અપેક્ષાએ અથવા નિકાચની અપેક્ષાએ શેનો ઉપચય કરે છે? આ પ્રશ્નો પૂછ્યા છે એ પ્રશ્નોના ભગવાન મહાવીર આ પ્રમાણે ઉત્તર આપે છે.

"गोयमा! હે ગૌતમ! "आहाकम्मं णं भुंजमाणे" આધાકર્મ દોષથી દૂષિત આહારાદિનો ઉપભોગ કરનાર "समणे निग्गंथे" શ્રમણ નિર્ગ્રંથ "आउ-कम्मवज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ" આયુષ્યકર્મ સિવાયની સાત કર્મપ્રકૃતિયો કે જેમને તેણે પહેલાં "सिढिलबंधणबद्धाओ" શિથિલ બંધનથી બાંધી હતી "धणियबंधणबद्धाओ" તેમને તે દૃઢ બંધનથી બાંધેલી કરે છે તાત્પર્ય એ છે કે આધાકર્મિક આહાર વગેરેનો ઉપયોગ કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રંથ આયુષ્ય-કર્મ સિવાયની જે સાત કર્મપ્રકૃતિયો પહેલાં શિથિલ બંધવાળી હતી તેમને દૃઢ બંધનવાળી કરે છે "जाव अणुपरियट्टइ" (यावत्) તે સંસારમાં જન્મ-મરણ સહિત વારંવાર પરિભ્રમણ કર્યા કરે છે અહીં "जाव" (यावत्=પર્યંત)

दीहकालठिइयाओ पकरेइ मंदाणुभावाओ तिव्वाणुभावाओ पकरेइ अप्पपएस ग्गाओ बहुपएसग्गाओ पकरेइ, आउयं च णं कम्मं सिय बंधइ सिय नो बंधइ असायावेयणिज्जं च णं कम्मं भुज्जो भुज्जो उवचिणाइ अणाइयं च णं अणवयग्गं दीहमद्धं चाउरंतसंसारकंतारं ' इत्यस्य ग्रहणम्। छाया— ह्रस्वकालस्थितिकाः दीर्घकालस्थितिकाः प्रकरोति मन्दानुभावास्तीव्रानुभावाः प्रकरोति अल्पप्रदेशाग्राः बहुप्रदेशाग्राः प्रकरोति आयुष्कं च कर्म स्याद् बध्नाति स्यात् नो बध्नाति असातावेदनीयं च कर्म भूयो भूय उपचिनोति अनादिक चानवताग्र दीर्घाध्वं चातुरन्तसंसारकान्तारम्। एतस्य व्याख्यानम्

करता है। यहां यावत् पद से (हस्सकालठिइयाओ दीहकालठिइयाओ पकरेइ, मंदाणुभावाओ तिव्वाणुभावाओ पकरेइ, अप्पपएसग्गाओ बहु पएसग्गाओ पकरेइ, आउयं च णं कम्मं सिय बंधइ सिय नो बंधइ असा यावेयणिज्जं च णं कम्मं भुज्जो भुज्जो उवचिणाइ, अणाइयं च णं अण वयग्गं दीहमद्धं चाउरंतसंसारकंतारं) इस पाठ का संग्रह किया गया है। इसका तात्पर्य यह है कि ह्रस्वकाल की स्थितिवाली कर्म प्रकृतियों को यह दीर्घकाल की स्थितिवाली बना देता है। मन्द अनुभाववाली कर्म प्रकृतियों को यह तीव्र अनुभाववाली कर देता है। अल्पप्रदेशाग्रवाली कर्मप्रकृतियों को यह बहुप्रदेशाग्रवाली बना देता है। यह आयुकर्म का बंध करता है और नहीं भी करता है। असातावेदनीय कर्म का यह बार २ उपचय करता है। तथा अनादि अनन्त तथा दीर्घमार्गवाले चतुर्गति रूप संसार कान्तार में बार २ भ्रमण करता रहता है। इन सब पदों की व्याख्या (संवृतान प्रकरण में प्रथम

પદવડે નીચેનો સૂત્રપાઠ ગ્રહણ કરાયો છે–" हस्सकालठिइयाओ दीहकालठिइयाओ पकरेइ मंदाणुभावाओ तिव्वाणुभावाओ पकरेइ अप्पपएसग्गाओ बहुपएसग्गाओ पकरेइ आउयं च णं कम्मं सिय बंधइ, सिय नो बंधइ, असायावेयणिज्जं च णं कम्मं भुज्जो भुज्जो उवचिणाइ अणाइयं च णं अणवयग्गं दीहमद्धं चाउरंत संसारकंतारं " આ પાઠનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે–હ્રસ્વકાળની સ્થિતિવાળી કર્મ-પ્રકૃતિઓને તે દીર્ઘકાળની સ્થિતિવાળી બનાવે છે મંદ અનુભાગવાળી કર્મ-પ્રકૃતિઓને તે તીવ્ર અનુભાગવાળી બનાવે છે અલ્પ પ્રદેશવાળી કર્મપ્રકૃતિઓને તે બહુ પ્રદેશવાળી બનાવે છે તે આયુકર્મનો બંધ બાંધે પણ છે અને નથી પણ બાંધતો. તે વારંવાર અસાતાવેદનીય કર્મનો ઉપચય કરે છે, તથા અનાદિ અનંત અને દીર્ઘ માર્ગવાળા, ચાર ગતિરૂપ સંસારરૂપી વનમાં પરિભ્રમણ કર્યા કરે છે આ બધા પદોની વ્યાખ્યા "સંવૃતાનપ્રકરણમાં" (પ્રથમ શતકના

संवृतानगारप्रकरणे अष्टाविंशतितमे सूत्रे कृतं तत एव द्रष्टव्यम् । 'से केणट्ठेणं जाव अणुपरियट्टइ' तत्केनार्थेन यावदनुपर्यटति ? भगवानाह—'गोयमे' त्यादि । 'गोयमा' हे गौतम ! 'आहाकम्मं णं भुंजमाणे' आधाकर्म खलु भुञ्जानः 'समणे निग्गंथे' श्रमणो निर्ग्रन्थः 'आयाए धम्मं अइकमइ' आत्मनो धर्ममतिक्रामति, आत्मनः धर्म=चारित्रधर्मं श्रुतधर्मम् अतिक्रामति उल्लंघयति परित्यजतीति भावः, 'आयाए धम्मं अइक्कममाणे' आत्मनो धर्ममतिक्रामन् स्वकीयचारित्रात्मकधर्मं परित्यजन् 'पुढविकाइयं' पृथिवीकायिक 'णावकंखइ' नावकांक्षति नानुकम्पते, 'जाव तसकायं णावकंखइ' यावत् त्रसकायं नावकांक्षति, यावत्पदेन-अप्तेजोवायुवनस्पतिकायानां ग्रहणम् । आधाकर्मिकमाहारादिकं भुञ्जानः

शतक प्रथम उद्देशक के २८ वें सूत्र में की जा चुका है सो वहां से जान लेना चाहिये । (से केणट्ठेणं जाव अणुपरियट्टइ) हे भदन्त ! यह किस कारण से पूर्वोक्त विशेषण वाले संसार कान्तार में बार २ घूमता रहता है, तो इसका उत्तर देते हुए प्रभु कहते हैं कि-(आहाकम्मं ण भुंजमाणे आधाकर्मिक आहार आदि का सेवन करता हुआ वह (समणे निग्गंथे) श्रमण निर्ग्रन्थ (आयाए धम्मं अइक्कमइ) अपने धर्म का उल्लंघन करता है । अर्थात् श्रुत चारित्ररूप जो आत्मा का धर्म है उसका वह परित्याग कर देता है । (आयाए धम्मं अइक्कममाणे) अपने चारित्रात्मक धर्म का उल्लंघन करने वाला-परित्याग कर देने वाला श्रमण निर्ग्रन्थ (पुढविकाइयं) पृथिवीकायिक जीव की (णावकंखइ) अनुकंपा नहीं करता है । (जाव तसकायं णावकंखइ) यावत् वह त्रसकाय की रक्षा नहीं करता है । यहां यावत् पद से (अप्काय, तेजःकाय, वायुकाय और

પ્રથમ ઉદ્દેશકના ૨૮મા સૂત્રમા) કરી છે તે ત્યાંથી વાચી લેવી. " से केणट्ठेणं जाव अणुपरियट्टइ " હે ભગવન્! તે શ્રમણ નિર્ગ્રંથ શા કારણે પૂર્વોક્ત વિશેષણોવાળા સંસાર વનમાં પરિભ્રમણ કર્યા કરે છે ?

ઉત્તર—आहाकम्मं णं भुजमाणे " આધાકર્મિક આહારાદિનું સેવન કરનાર " समणे निग्गंथे " શ્રમણ નિર્ગ્રંથ " आयाए धम्म अइक्कमइ " આત્માના ધર્મનુ ઉલ્લઘન કરે છે, એટલે કે શ્રુતચારિત્રરૂપ જે આત્માનો ધર્મ છે તેનું આવી સ્થિતિમા તે પાલન કરી શકતો નથી " आयाए धम्मं अइक्कममाणे " તથા પોતાના ચારિત્રાત્મક ધર્મનું ઉલ્લંઘન (પરિત્યાગ) કરનાર તે શ્રમણ નિર્ગ્રંથ " पुढविकाइयं " પૃથ્વીકાયિક જીવોની " णावकंखइ " અનુકંપા કરતો નથી-દયા પાળતો નથી. " जाव तसकायं णावकखइ " તથા ત્રસકાય સુધીના જીવોની પણ તે રક્ષા કરતો નથી. અહીં " यावत् " પદથી અપ્કાય, તેજસ્કાય,

श्रमणो निर्ग्रन्थः समस्तपृथिवीकायादारभ्य समस्तत्रसकायपर्यन्तं षट्कायं नामको क्षति-नापेक्षते नानुकम्पते च हन्तुमिच्छतीत्यर्थः । 'जेसि पि य णं जीवाणं' येषामपि च खलु जीवानाम् 'सरीराइं' शरीराणि, यानि आहारतया निष्पादितानि तानि 'आहारं आहारेइ' आहारमाहरति, आहारतया गृह्णाति 'तेसि जीवे नावकंखइ' तानपि जीवान् नावकांक्षति, अवकांक्षणम् अपेक्षा अनुकम्पा वा तान् जीवान् नापेक्षते नानुकंपते च आधाकर्मिकाहारभोजी 'अहह ! एभिर्गृहस्थैर्मदर्थे पृथिव्यादिषट्कायजीवा उपमर्दिताः' इत्येव दयां न कुरुते, 'से तेणट्ठेणं-गोयमा एवं वुच्चइ' तदेनार्थेन हे गौतम ! एवमुच्यते-' आहाकम्मं णं भुंजमाणे' आधाकर्म खलु भुञ्जानः 'समणे निग्गंथे' श्रमणो निर्ग्रन्थः 'आउयवज्जाओ

वनस्पतिकाय का ग्रहण हुआ है। आधाकर्मिक आहार आदि का उपयोग करने वाला श्रमण निर्ग्रन्थ समस्त पृथिवीकाय से लेकर समस्त त्रसकाय तक जो षट्काय के जीव हैं उन जीवों की अनुकंपा नहीं करता है, अर्थात् उन्हें मारना चाहता है। (जेसिं पि य णं जीवाणं) जिन जीवों के (सरीराइं) शरीर आहार रूप से निष्पादित हुए हैं उन्हें यह आधाकर्मिक आहारादि करने वाला श्रमण निर्ग्रन्थ (आहारं आहारेइ) आहाररूप से ग्रहण कर लेता है। (तेसि जीवे नावकंखइ) उन पर भी यह दया नहीं करता है। अर्थात् उनके मन में ऐसा दया भाव नहीं जगता है कि अहह ! इन गृहस्थों ने मेरे लिये पृथिव्यादिक षट्काय जीव विराधे हैं-उपमर्दित किये हैं। (से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ) इसलिये हे गौतम ! मैंने ऐसा कहा है कि (आहाकम्मं णं भुंजमाणे) आधाकर्म आहारादि का उपयोग करने वाला (समणे निग्गंथे, श्रमण निर्ग्रन्थ

વાયુકાય અને વનસ્પતિકાયને ગ્રહણ કરવામાં આવ્યાં છે. આધાકર્મિક આહાર વગેરેનો ઉપયોગ કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રંથ પૃથ્વીકાયથી લઈને ત્રસકાય સુધીના જે છ કાયના જીવો છે તેમની અનુકંપા કરતો નથી, એટલે કે તેમનું રક્ષણ કરતો નથી પણ વિરાધના કરે છે "जे सिं पि य णं जीवाणं" જે જીવોનાં "सरीराइं" શરીરનું આહારરૂપે નિર્માણ થયું છે તેનું તે આધાકર્મિક આહાર કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રંથ પોતાના આહારરૂપે ગ્રહણ કરે છે. "ते सि जीवे नाव कंखइ" એ જીવો પર પણ તે દયા કરતો નથી. એટલે કે તેના મનમાં એવો દયાભાવ ઉત્પન્ન થતો નથી કે અરેરે ! આ ગૃહસ્થોએ મારે નિમિત્તે આ પૃથ્વીકાય છ કાયના જીવોની વિરાધના કરી છે. "से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ" હે ગૌતમ ! તે કારણે મેં એવું કહ્યું છે કે "आहाकम्मं णं भुंजमाणे" આધાકર્મ દોષથી દૂષિત આહારનો ઉપયોગ કરનાર "समणे निग्गंथे" શ્રમણ નિર્ગ્રંથ "आउय

संवृतानगारप्रकरणे अष्टाविंशतितमे सूत्रे कृतं तत एव द्रष्टव्यम्। 'से केणट्ठेणं जाव अणुपरियट्टइ' तत्केनार्थेन यावदनुपर्यटति? भगवानाह—'गोयमे' त्यादि। 'गोयमा' हे गौतम! 'आहाकम्मं णं भुंजमाणे' आधाकर्म खलु भुंजानः 'समणे निग्गंथे' श्रमणो निर्ग्रन्थः 'आयाए धम्मं अइक्कमइ' आत्मनो धर्ममतिक्रामति, आत्मनः धर्म=चारित्रधर्म श्रुतधर्मम् अतिक्रामति उल्लंघयति परित्यजतीति भावः, 'आयाए धम्मं अइक्कममाणे' आत्मनो धर्ममतिक्रामन् स्वकीयचारित्रात्मकधर्मं परित्यजन् 'पुढविकाइयं' पृथिवीकायिक 'णावकंखइ' नावकांक्षति नानुकम्पते, 'जाव तसकायं णावकंखइ' यावत् त्रसकायं नावकांक्षति, यावत्पदेन-अप्तेजोवायुवनस्पतिकायानां ग्रहणम्। आधाकर्मिकमाहारादिकं भुञ्जानः

शतक प्रथम उद्देशक के २८ वें सूत्र में की जा चुका है सो वहां से जान लेना चाहिये। (से केणट्ठेणं जाव अणुपरियट्टइ) हे भदन्त! यह किस कारण से पूर्वोक्त विशेषण वाले संसार कान्तार में बार २ घूमता रहता है, तो इसका उत्तर देते हुए प्रभु कहते हैं कि-(आहाकम्मं ण भुंजमाणे आधाकर्मिक आहार आदि का सेवन करता हुआ वह (समणे निग्गंथे) श्रमण निर्ग्रन्थ (आयाए धम्मं अइक्कमइ) अपने धर्म का उल्लंघन करता है। अर्थात् श्रुत चारित्ररूप जो आत्मा का धर्म है उसका वह परित्याग कर देता है। (आयाए धम्मं अइक्कममाणे) अपने चारित्रात्मक धर्म का उल्लंघन करने वाला-परित्याग कर देने वाला श्रमण निर्ग्रन्थ (पुढविकाइयं) पृथिवीकायिक जीव की (णावकंखइ) अनुकंपा नहीं करता है। (जाव तसकायं णावकंखइ) यावत् वह त्रसकाय की रक्षा नहीं करता है। यहां यावत् पद से (अप्काय, तेजःकाय, वायुकाय और

પ્રથમ ઉદ્દેશકના ૨૮માં સૂત્રમાં) કરી છે તે ત્યાંથી વાંચી લેવી "से केणट्ठेणं जाव अणुपरियट्टइ" હે ભગવન્! તે શ્રમણ નિર્ગ્રંથ શા કારણે પૂર્વોક્ત વિશેષણોવાળા સંસાર વનમાં પરિભ્રમણ કર્યા કરે છે?

ઉત્તર—आहाकम्मं णं भुंजमाणे" આધાકર્મિક આહારાદિનું સેવન કરનાર "समणे निग्गंथे" શ્રમણ નિર્ગ્રંથ "आयाए धम्मं अइक्कमइ" આત્માના ધર્મનું ઉલ્લંઘન કરે છે, એટલે કે શ્રુતચારિત્રરૂપ જે આત્માનો ધર્મ છે તેનું આવી સ્થિતિમા તે પાલન કરી શકતો નથી "आयाए धम्मं अइक्कममाणे" તથા પોતાના ચારિત્રાત્મક ધર્મનું ઉલ્લંઘન (પરિત્યાગ) કરનાર તે શ્રમણ નિર્ગ્રંથ "पुढविकाइयं" પૃથ્વીકાયિક જીવોની "णावकंखइ" અનુકંપા કરતો નથી-દયા પાળતો નથી. "जाव तसकाय णावकखइ" તથા ત્રસકાય સુધીના જીવોની પણ તે રક્ષા કરતો નથી. અહીં "यावत्" પદથી અપ્કાય, તેજસ્કાય,

खलु भदन्त ! तत्र प्रासुकम्=अचित्तम्, एषणीयं=आधाकर्मादिसकलदोषरहितम् 'भुंजमाणे' भुञ्जान 'समणे निग्गंथे' श्रमणो निर्ग्रन्थः 'किं बंधइ' किं बध्नाति 'जाव उवचिणाइ' यावदुपचिनोति? यावत्पदेन–'किं पकरोति किं चिनोति' इत्यस्य संग्रह। प्रासुकैषणीयमाहारादिकं भुञ्जानः श्रमणो निर्ग्रन्थ किं कर्म बध्नाति किं प्रकरोति किं चिनोति किम् उपचिनोति चेति प्रश्न, भगवानाह– 'गोयमा' इत्यादि। 'गोयमा' हे गौतम! 'फासुएसणिज्जं णं भुंजमाणे' प्रासुकैषणीयं खलु भुञ्जानः दोषरहिताहारादिकं भुञ्जानः 'समणे निग्गंथे' श्रमणो निर्ग्रन्थ 'आउयवज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ' आयुष्कवर्जाः सप्त कर्मप्रकृतीः

और एषणीय शब्द का अर्थ आधाकर्म आदि समस्त दोषों से रहित-निर्दोष-ऐसे आहार आदि को (भुंजमाणे) अपने उपभोग में लाने वाला (समणे निग्गंथे) श्रमण निर्ग्रंथ (किं बंधइ जाव उवचिणाइ) कैसी–कितनी कर्मप्रकृतियों का बंध करता है यावत् वह कैसी कर्मप्रकृतियों का उपचय करता है। यहां यावत् पद से (किं प्रकरोति, किं चिनोति) इन दो का संग्रह किया गया है। गौतमस्वामी का प्रश्न ऐसा है कि प्रासुक एषणीय आहारादि का उपभोग करने वाला श्रमण निर्ग्रंथ कितनी कर्मप्रकृतियों को बांधता है, उन्हें कैसी करता है किसका उनमें चय करता है, किसका उनमें उपचय करता है? इसका उत्तर देते हुए भगवान कहते हैं कि (गोयमा) हे गौतम! (फासुएसणिज्जं भुंजमाणे) प्रासुक एषणीय आहार आदि का उपयोग करने वाला (समणे निग्गंथे) श्रमण निर्ग्रंथ (आउयवज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ)

એટલે અચિત્ત અને એષણીય એટલે આધાકર્મ વગેરે તમામ દોષોથી રહિત નિર્દોષ–એવા આહારનો "ભુંજમાણે" ઉપયોગ કરનાર "समणे निग्गंथे" શ્રમણ નિગ્રંથ "किं बंधइ जाव उवचिणाइ" કેવી (કેટલી) કર્મપ્રકૃતિઓનો બંધ બાંધે છે? યાવત્ તે કર્મપ્રકૃતિઓનો ઉપચય કરે છે? અહીં "यावत्" પદથી "किं प्रकरोति, किं चिनोति" એ બે પ્રશ્નો ગ્રહણ કરાયા છે. ગૌતમ સ્વામીના ઉપરના પ્રશ્નનું તાત્પર્ય એ છે કે પ્રાસુક એષણીય આહારાદિનો ઉપભોગ કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રંથ કેટલી કર્મપ્રકૃતિઓનો બંધ કરે છે? તેમને કેવી રીતે કરે છે? તેમાંથી કોનો ચય કરે છે? અને કોનો ઉપચય કરે છે? તેનો ભગવાન મહાવીરસ્વામી આ પ્રમાણે ઉત્તર આપે છે—

'गोयमा!' હે ગૌતમ! 'फासुएसणिज्जं भुंजमाणे' પ્રાસુક એષણીય આહાર વગેરેનો ઉપયોગ કરનાર "समणे निग्गंथे" શ્રમણ નિર્ગ્રંથ, 'आउयवज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ" આયુષ્કર્મ સિવાયની સાત કર્મપ્રકૃ

सत्तकम्मपगडीओ जाव अणुपरियट्टइ' आयुष्कवर्जाः सप्त कर्मप्रकृतीर्यावदनुपर्यटति अत्र यावत्पदेन-' ह्रस्वकालस्थितीः दीर्घकालस्थितीः प्रकरोति, मन्दानुभावास्तीव्रानुभावाः प्रकरोति, अल्पप्रदेशाग्रा बहुप्रदेशाग्राः प्रकरोति, आयुष्कं च खलु कर्म स्यात् बध्नाति स्यात् नो बध्नाति अशातावेदनीयं च खलु कर्म भूयो भूय उपचिनोति, अनादिकं च खलु अनवनताग्रं दीर्घाध्वं चातुरन्तसंसारकान्तारम्' इत्यस्य संग्रहः ? अनुपर्यटति=परिभ्रमति ।

आधाकर्मविपक्षश्च प्रासुकैषणीयमित्याधाकर्मसूत्रानन्तरं प्रासुकैषणीयसूत्रमाह- ' फासुएसणिज्जं णं भंते ' इत्यादि । फासुएसणिज्जं णं भंते' प्रासुकैषणीयं

(आउयवज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ जाव अणुपरियट्टइ) आयुकर्म को छोड़कर शेष सात कर्मप्रकृतियों को दृढतर बंधवाली करके बांधता है। यावत् वह संसारकान्तार-(अटवी) में बार २ जन्म मरण द्वारा परिभ्रमण करता रहता है। यहां पर "यावत्" पद से (ह्रस्वकालस्थितीः दीर्घकालस्थितीः प्रकरोति, मन्दानुभावास्तीव्रानुभावाः प्रकरोति, अल्पप्रदेशाग्रा बहुप्रदेशाग्राः प्रकरोति, आयुष्कं च खलु कर्म स्यात् बध्नाति, स्यात् नो बध्नाति, अशाता वेदनीयं च खलु कर्म भूयो भूय उपचिनोति, अनादिकं च खलु अनवनताग्रं, दीर्घाध्वं, चातुरन्त संसारकान्तारम् इस पाठ का संग्रह किया गया है। (अणुपरियट्टइ) का अर्थ "बार २ परिभ्रमण करता है" ऐसा है। आधाकर्म का विपक्ष प्रासुक एषणीय होता है इसलिये सूत्रकार ने आधाकर्म सूत्र के बाद यह प्रासुक एषणीय सूत्र कहा है-(फासु एसणिज्जं णं भंते !) प्रासुक शब्द का अर्थ अचित्त

वज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ जाव अणुपरियट्टइ" આયુષ્યકર્મ સિવાયની સાત કર્મ પ્રકૃતિયોને દૃઢતર બંધવાળી બનાવે છે, (यावत्) તે સંસારકાંતાર (અટવી) માં વારંવાર જન્મ-મરણવડે પરિભ્રમણ કરે છે અહીં "यावत्" પદથી નીચેનો સૂત્રપાઠ ગ્રહણ કરાયો છે-" તે હ્રસ્વકાળની સ્થિતિવાળી પ્રકૃતિયોને દીર્ઘકાળની સ્થિતિવાળી બનાવે છે, મંદ અનુભાગવાળી કર્મપ્રકૃતિયોને તીવ્ર અનુભાગવાળી કરે છે, અલ્પ પ્રદેશવાળી કર્મપ્રકૃતિયોને બહુ પ્રદેશવાળી બનાવે છે, તે આયુષ્યકર્મનો બંધ બાંધે છે પણ ખરો અને નથી પણ બાંધતો, તે અશાતા વેદનીયનો વારવાર ઉપચય કરે છે અને અનાદિ, અનન્ત, દીર્ઘ માર્ગ વાળી, ચાર ગતિરૂપ સંસાર અટવીમા વારવાર ભટકયા કરે છે. "अणुपरियट्टइ" એટલે વારવાર પરિભ્રમણ કરે છે. આધા કર્મથી વિપરીત અર્થવાળો શબ્દ પ્રાસુક એષણીય છે તેથી "આધાકર્મ" સૂત્રનુ નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર "પ્રાસુક એષણીય" સૂત્રનું નિરૂપણ કરે છે-" फासु-एसणिज्ज णं भंते ! પ્રાસુક

न्ककर्मबन्धनव्यतिरिक्तं सर्वम् संवृतानगारवदव बोद्धव्यं संसारव्यतिव्रजनपर्यन्तमिति भावः। 'से केणट्ठेणं जाव वीइवयइ' तत्केनार्थेन यावद् व्यतिव्रजति? संसारकान्तार समुल्लङ्घयति? भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि। 'गोयमा' हे गौतम! 'फासुएसणिज्जं' प्रासुकैषणीयम् अचित्तं निर्दोषमाहारादिकम् 'भुंजमाणे' भुञ्जान तादृशमाहारादिकमाहरन् 'समणे णिग्गंथे' श्रमणो निर्ग्रन्थः 'आयाए धम्मं' आत्मनः धर्मम्=चारित्रधर्मम् 'श्रुतधर्मं च नो अइक्कमइ' नो अतिक्रामति नोल्लङ्घयति 'आयाए धम्मं अणइक्कममाणे' आत्मनो धर्ममनतिक्रामन् 'पुढविकाइयं अवकंखति' पृथिवीकायिकमवकांक्षति अवकांक्षणमपेक्षणमनुकंपनं च तथा चापेक्षतेऽनुकंपते चेत्यर्थः, 'जाव तसकायं अवकंखइ' यावत् त्रसकायमवकांक्षति

सब कथन, आयुष्क कर्मबंध के सिवाय संवृत अनगार की तरह से ही जानना चाहिये। यह कथन कहां तक उसकी तरह जानना चाहिये तो इसके लिये सूत्रकारने (वीइवयइ) ऐसा कहा है-जिसका तात्पर्य है कि इसके संबंध का और अवशिष्ट कथन (संसार को पार कर देता है) इस निर्दिष्ट पद तक ही जानना चाहिये। (से केणट्ठेणं जाव वीइवयइ) हे भदंत आप ऐसा कथन किस आशय से करते हैं कि वह संसाररूप कान्तार को उल्लंघन कर देता है। तो इसका उत्तर-देते हुए प्रभु गौतम से कहते हैं कि-(गोयमा) हे गौतम! (फासुएसणिज्जं) अचित्त निर्दोष आहार आदि को (भुंजमाणे) अपने उपयोग में लाने वाला (समणे निग्गंथे) श्रमण निर्ग्रन्थ (आयाए धम्मं) आत्मा के धर्म का-श्रुतचारित्ररूप धर्म का-(नो अइक्कमइ) उल्लंघन नहीं करता है। आयाए धम्मं अणइक्कममाणे) आत्मा के श्रुतचारित्ररूप धर्म का उल्लंघन नहीं करने वाला श्रमण निर्ग्रन्थ (पुढविकाइयं अवकंखति) पृथिवीकायिक

'સંસારને પાર કરી જાય છે" ત્યાં સુધીનું તમામ કથન સંવૃત અણગારના કથન પ્રમાણે જ સમજવું 'वीइवयइ' એટલે સંસારને પાર કરી જાય છે

'से केणट्ठेणं जाव वीइवयइ?' હે ભદન્ત! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે તે સંસારરૂપી કાંતારને ઓળંગી જાય છે? તેનો જવાબ આપતાં મહાવીરપ્રભુ કહે છે કે 'गोयमा! હે ગૌતમ! "फासुएसणिज्जं" અચિત્ત નિર્દોષ આહાર વગેરેનો 'भुंजमाणे" ઉપભોગ કરનાર "समणे निग्गंथे" શ્રમણ નિર્ગ્રંથ "आयाए धम्मं" આત્માના ધર્મનું-શ્રુત ચારિત્રરૂપ ધર્મનું-"नो अइक्कमइ" ઉલ્લંઘન કરતો નથી. 'आयाए धम्मं अणइक्कममाणे" આત્માના ધર્મનું-શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મનું-ઉલ્લંઘન ન કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રંથ "पुढविकाइयं अवकंखति" પૃથ્વીકાયની અનુકંપા (દયા) રાખે છે "जाव तसकायं अव

अष्टौ हि कर्मप्रकृतयस्तासु आयुःप्रयोजककर्मप्रकृतिं विहाय इतराः सप्त कर्मप्रकृतीः याः 'धणियबंधणबद्धाओ' दृढबन्धनबद्धाः पूर्वमासन् ताः सिढिण बंधणबद्धाओ पकरेइ' शिथिलबन्धनबद्धाः प्रकरोति, पूर्वं याः कर्मप्रकृतयो दृढतर बन्धनबद्धाआसन् ताः शिथिलबन्धनबद्धाः प्रकरोति, 'जहा संवुडेणं' यथा संवृतः खलु, यथा संवृतोऽनगारः अत्रैव शतके प्रथमोद्देशके एकविंशतितमे सूत्रे संवृतानगारे वक्तव्यता प्रोक्ता तथाऽस्यापि वक्तव्यता विज्ञेया। 'नवरं' नवरं वैलक्षण्यं तस्माद् आयुष्कविषयेऽस्तिः—तत्र आयुष्कं कर्म कदाचिद् नो बध्नातीत्यस्ति 'आउयं च णं कम्मं सिय बंधइ सिय नो बंधइ' आयुष्कं च खलु कर्म स्यात् बध्नाति स्यात् नो बध्नाति कदाचिदायुष्कं कर्म बध्नाति कदाचिन्नो बध्नाति, यदि बध्नाति तदा शुभं देवाद्यायुष्कं बध्नातीति भावः, 'सेसं तहेव जाव वीइवयइ' शेषं तथैव यावत् व्यतिव्रजति, शेषम् आयु-

---

आयुकर्म को छोड़कर सातकर्मप्रकृतियों को कि जो उसके पहिले गाढ-बंधन से बंधी थीं अब शिथिलबंधन वाली बना देता है। इस विषय में संवृत अनगार को जैसी वक्तव्यता जो प्रथम शतक के प्रथम उद्देशक के २८ वें सूत्र में कही गई है वहाँ से जानना चाहिये। यही बात सूत्रकार ने (जहा सवुडेणं) इस सूत्र द्वारा समझाई है (नवरं) परन्तु आयुष्क के बंध के विषय में उसकी अपेक्षा जो विलक्षणता है यहां वह (आउयं च णं कम्मं सिय बंधइ, सिय नो बंधइ) इस सूत्र पाठ द्वारा प्रकट की गई है। इसमें यह समझाया गया है कि वह कभी आयु का बंध करता भी है और कभी नहीं भी करता है। यदि वह आयु का बंध करता है तो शुभ देवादि आयुष्क का ही बंध करता है। अन्य अशुभ आयु का नहीं। (सेसं तहेव जाव वीइवयइ) बाकी का और

તિયો કે જેમને પહેલા તેણે ગાઢ બ ધનોથી બાધી હતી તેમને હવે શિથિલ બ ધનવાળી બનાવે છે આ વિષયમા પહેલા શતકના પહેલા ઉદ્દેશકના ૨૮ માં સૂત્રમા સ વૃત અણુગાર વિષે જે વર્ણુન કર્યું છે તે પ્રાસુક એષણીય આહારાદિનો ઉપયોગ કરનાર શ્રમણુ નિર્ગ્ર થને લાગુ પડે છે, એ જ વાત સૂત્રકારે "जहा सवुडेण" સૂત્રવડે સમજાવી છે. "नवर" પર તુ આયુષ્યબ ધની અપેક્ષાએ તેનામા જે વિશિષ્ટતા છે તે "आउयं च णं कम्म सिय'ब धइ, सिय नो ब धइ" આ સૂત્રપાઠ વડે પ્રકટ કરી છે, તેમાં બતાવ્યું છે કે આયુષ્યકર્મને। બ ધ તે કયારેક બાધે છે અને કયારેક નથી પણુ બાધતો, જો તે આયુષ્યને। બ ધ બાધે તો દેવાદિ શુભ આયુષ્યને। જ બ ધ બાધે છે. અન્ય અશુભ આયુષ્યને। બ ધ બાધને। નથી. "सेसं तहेव जाव वीइवयइ" બાકીનુ

मित्त आहारादि करनेवाला श्रमण निर्ग्रन्थ आयु कर्म को छोड़कर सात कर्मप्रकृतियो का बंध करता है और प्रासुक निर्दोष आहार करने वाला श्रमण निर्ग्रन्थ आयुकर्म को छोड़कर शेष सात कर्म प्रकृतियों का बंध नहीं करता है। आधाकर्मिक आहार कर्त्ता श्रमण निर्ग्रन्थ जिन कर्मप्रकृतियों का बंध करता है वह उनके प्रकृति बंध में, स्थितिबंध में, अनुभागबंध में और प्रदेशबंध में विशेष महत्ता, दृढता और मजबूताई आदि बढने लगतें है। और शुद्ध निर्दोष आहारादि का उपयोग करने वाले श्रमण निर्ग्रन्थ के आगे के लिये आयुकर्म को छोड़कर शेष ७ कर्म प्रकृतियों का बंध नहीं होता है। तथा जो कर्मप्रकृतियां पूर्व बद्ध हैं उनके प्रकृतिबंध में अनुभागबन्ध में और प्रदेशबन्ध में हीनता, अल्पता अदृढता आदि आने लगती है। इस तरह से इन दोनों श्रमण निर्ग्रन्थों के विषय में जो चार प्रश्न किये गये हैं उनका उत्तर प्रथम प्रश्न आधाकर्मिक आहार को भोगने वाले की अपेक्षा तो इस सूत्र द्वारा इस प्रकार दिया गया जानना चाहिये। (किं बन्धइ) इस प्रश्न का उत्तर यह है कि वह आयुष्कर्म को छोड़कर ७ कर्म प्रकृतियों का बन्ध करता है। (किं पकरेइ) प्रश्न का उत्तर यह है कि वह अल्पकालस्थितिवाला

સૂત્રનું તાત્પર્ય એ છે કે આધાકર્મિક આહાર વગેરેનો ઉપભોગ કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રંથ આયુષ્યક સિવાયની સાત કર્મપ્રકૃતિનો બંધ બાંધે છે પરન્તુ પ્રાસુક નિર્દોષ આહાર વગેરેનો ઉપભોગ કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રંથ આયુષ્યકર્મ સિવાયની સાત કર્મપ્રકૃતિયોનો બંધ બાંધતો નથી. આધાકર્મિક આહારાદિ કરનાર શ્રમણનિર્ગ્રંથ જે કર્મપ્રકૃતિયોનો બંધ બાંધ્યો હોય છે તે કર્મપ્રકૃતિયોને તે દીર્ઘ સ્થિતિવાળી તીવ્રતર અનુભાગવાળી અને બહુતર પ્રદેશવાળી બનાવે છે, પરન્તુ પ્રાસુક નિર્દોષ આહાર આદિનો ઉપયોગ કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રંથ પહેલાં જે કર્મપ્રકૃતિયોનો બંધ બાંધેલો હોય છે તેમને તે અલ્પકાળની સ્થિતિવાળી મંદતર અનુભાગવાળી અને અલ્પતર પ્રદેશવાળી બનાવે છે

આ રીતે બંને પ્રકારના શ્રમણ નિર્ગ્રંથોના વિષયમાં જે ચાર પ્રશ્નો કર્યા છે તેના ઉત્તરો આપ્યા છે સૂત્રની શરૂઆતમાં આધાકર્મિક આહારાદિ ગ્રહણ કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રંથને અનુલક્ષીને ચાર પ્રશ્નો પૂછ્યા છે, અને તેમના ઉત્તરો આપ્યા છે—" किं बंधइ " આ પ્રશ્નનો ઉત્તર આ પ્રમાણે મળ્યો છે આયુષ્યકર્મ સિવાયની સાત કર્મપ્રકૃતિયોનો બંધ બાંધે છે ' किं पकरेइ " આ પ્રશ્નનો ઉત્તર આ પ્રમાણે મળ્યો છે- અલ્પકાળની સ્થિતિવાળી કર્મપ્રકૃતિયોને

अनुकम्पते यावत्पदेन-अप्तेजोवायुवनस्पतीनां ग्रहणं कर्तव्यम्। 'जेसिंपि य णं जीवाणं सरीराइं आहारइ' येषामपि च खलु जीवानां शरीराणि आहरति 'तेवि जीवे अवकंखइ' तानपि जीवाननवकांक्षति, तेषु जीवेष्वपि दयाबुद्धिं करोतीत्यर्थः। 'से तेणट्ठेणं जाव वीइवयइ' तत्तेनार्थेन यावत् व्यतिव्रजति, एतेन कारणेनोच्यते हे गौतम! प्रासुकैषणीयमाहारादिकं भुञ्जानः श्रमणो निर्ग्रन्थः आयुष्कर्मवर्जिताः सप्त कर्मप्रकृती नैवबध्नाति न प्रकरोति न चिनोति नवोपचिनोति दृढतरबद्धा अपि कर्मप्रकृतीः शिथिलयति यावत् संसारकान्तारं व्यतिक्रामति उल्लंघयति चेतिभावः॥ सू० ७॥

की अपेक्षा करता है-इनपर अनुकंपा रखता है। (जाव तसकायं अवकंखइ) यावत् वह त्रसकाय की अनुकंपा रखता है। यहां यावत् पद से (अप्काय, तेजःकाय, वायुकाय और वनस्पतिकाय का ग्रहण किया गया है। (जेसिं पि य णं जीवाणं सरीराइं आहाराइं) अपि च-वह श्रमण निर्ग्रन्थ जिन जीवों के शरीरों का आहार करता है (ते वि जीवे अवकंखइ) उन जीवों पर भी वह दया बुद्धि करता है। इसलिये हे गौतम! (से तेणट्ठेणं जाव वीइवयइ) इस आशय से मैंने ऐसा कहा है कि प्रासुक निर्दोष आहारादि को अपने उपयोग में लाता हुआ श्रमण निर्ग्रन्थ आयुष्ककर्म को छोड़कर आने के लिये सातकर्मप्रकृतियों को नहीं बांधता है, तथा जो पहिले बंध चुकी हैं जिनकी लंबे काल की स्थिति पड़ी है और तीव्र अनुभाग जिनमें पड़ा है, उन्हें अल्पकालस्थितिवाली बनाता है और मन्द अनुभागवाली बनाता है। तथा बहुप्रदेशाग्रवाली प्रकृतियों को वह अल्पप्रदेशाग्रवाली बनाता है। इस तरह वह यावत् संसार अटवी से पार हो जाता है। तात्पर्य इस सूत्र का यह है कि आधाक-

---

कंखइ" यावत् છે ત્રસકાય સુધીના જીવોની અનુકંપા રાખે છે. અહીં "यावत्" પદથી અપ્કાય, તેજસ્કાય વાયુકાય અને વનસ્પતિકાયને ગ્રહણ કરવામા આવેલ છે. "जेसिं पि य ण जीवाण सरीराइ आहाराइं' તથા-તે શ્રમણ નિર્ગ્રંથ જે જીવોનાં શરીરોનો આહાર કરે છે "ते वि जीवे अवकंखइ" તે જીવો પણ દયાભાવ રાખે છે હે ગૌતમ! "से तेणट्ठेण जाव वीइवयइ" તે કારણે મે એવું કહ્યું છે કે પ્રાસુક નિર્દોષ આહારાદિનો ઉપયોગ કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રંથ આયુષ્યકર્મ સિવાયની સાત કર્મપ્રકૃતિયોનો બંધ બાંધતો નથી અને જે કર્મપ્રકૃતિયોનો બંધ પહેલા બાંધેલો હોય છે, જેમની દીર્ઘકાલની સ્થિતિ હોય છે, જેમનો તીવ્ર અનુભાગ હોય છે, એવી કર્મપ્રકૃતિયોને તે અલ્પકાળની સ્થિતિવાળી અને મંદ અનુભાગવાળી બનાવે છે અને બહુપ્રદેશવાળી કર્મપ્રકૃતિયોને તે અલ્પપ્રદેશવાળી બનાવે છે આ રીતે તે સંસારકાંતારને ઓળંગી જાય છે. આ

असासय सासए पडिए पडियत्त असासए, हंता गोयमा ! अथिरे पलोट्टइ जाव पडियत्त असासए, सेव भंते! सेव भंते! त्ति जाव विहरइ ॥ सू० ८ ॥

छाया—तद् नूनं भदन्त ! अस्थिरः प्रलोटयति नो स्थिरः प्रलोटयति, अस्थिरो भज्यते नो स्थिरो भज्यते, शाश्वतो बालकः बालकत्वम् अशाश्वतम् शाश्वतः पण्डितः पण्डितत्वमशाश्वतम् ! हन्त गौतम ! अस्थिरः प्रलोटयति, यावत् पण्डितत्वमशाश्वतम् तदेव भदन्त ! तदेव भदन्त ! इति यावद्विहरति ॥ सू० ८ ॥

से पार होना प्रकट किया गया है। सो "उनका यह संसार से पार होना कर्म के अस्थिर होने के कारण उसके नाश-परिवर्तन होने पर ही समझना है" इस ख्याल से सूत्रकार अस्थिर के विषय में सूत्र कहते हैं-' से णूणं भंते ! अथिरे पलोट्टइ ' इत्यादि।

सूत्रार्थ-(भंते) हे भदन्त ! (अथिरे पलोट्टइ) जो अस्थिर पदार्थ होता है, वह पलटता रहता है (नो थिरे पलोट्टइ) स्थिर पदार्थ नहीं पलटता है। (अथिरे भज्जइ) जो अस्थिर होता है वह टूट जाता है (नो थिरे भज्जइ) स्थिर पदार्थ नहीं टूटता है (सासए बालए बालियत्तं असासयं) बालक शाश्वत है बालकपना अशाश्वत है। (सासए पंडिए पंडियत्तं असासयं) पण्डित शाश्वत है, पण्डितपना अशाश्वत है। (हंता गोयमा ! अथिरे पलोट्टइ, जाव पंडियत्तं असासयं) हां गौतम ! अस्थिर पदार्थ पलटता रहता है यावत् पण्डितपना अशाश्वत है। (सेवं भंते !

થય છે, એ વાત પ્રકટ કરવામાં આવી છે તેમનું સંસારને તરી જવાનું કાર્ય કર્મોના અસ્થિર થવાના કારણે એવું કે-કર્મોનો નાશ-પરિવર્તન થવાથી જ સમજી શકે છે તેનો ખ્યાલ રાખીને સૂત્રકાર અસ્થિરના વિષયમાં સૂત્ર કહે છે " से णूणं भंते ! अथिरे पलोट्टइ " ઇત્યાદિ.

સૂત્રાર્થ—(भंते !) હે ભગવન્ ! (अथिरे पलोट्टइ) જે પદાર્થ અસ્થિર હોય છે તે શું પલટતો (પરિવર્તન પામતો) રહે છે ? (नो थिरे पलोट्टइ) શું સ્થિર પદાર્થ પલટતો નથી ? (अथिरे भज्जइ) જે પદાર્થ અસ્થિર હોય છે તે શું ભાગી જાય છે ? (नो थिरे भज्जइ) શું સ્થિર પદાર્થ ભાગતો નથી ? (सासए बालए बालियत्तं असासयं) શું બાલક શાશ્વત છે અને બાલકપણું અશાશ્વત છે ? (सासए पंडिए पंडियत्तं असासयं) શું પંડિત શાશ્વત છે ? અને પંડિતપણું અશાશ્વત છે ? (हंता गोयमा ! अथिरे पलोट्टइ, जाव पंडियत्तं असासयं) હા, ગૌતમ ! અસ્થિર પદાર્થ પલટતો રહે છે, (यावत्) પંડિત

इहानन्तरसूत्रे संसारव्यतिव्रजनं प्राणानुकम्पावतां श्रमणानामुक्तम् तच्च व्यतिव्रजनं कर्मणोऽस्थिरतया प्रलोटने (परिवर्त्तने) सत्येव संभवति, इत्यतोऽस्थिरे सूत्रमाह—' से णूणं भंते ' इत्यादि ।

मूलम्—से णूणं भंते ! अथिरे पलोट्टइ नो थिरे पलोट्टइ, अथिरे भज्जइ नो थिरे भज्जइ, सासए बालए बालियत्तं

प्रकृतियों को दीर्घकालस्थितिवाली बना देता है, मन्दानुभाववाली प्रकृतियों को तीव्रानुभाववाली बना देता है और अल्पप्रदेशाग्रवाली प्रकृतियों को बहुप्रदेशाग्रहवाली बना देता है। तथा जो शुद्ध निर्दोश आहार करने वाला श्रमण निर्ग्रन्थ है वह आयु कर्म का बन्ध करता भी है और नहीं भी करता है। तथा बांधी हुई सात कर्म की प्रकृतियों को कि जिन्हें पहिले उसने गाढबन्धन से बाँधा है शिथिलबन्धबवाली करने लगता है। दीर्घ-लंबे काल की स्थितिवाली प्रकृतियों को वह ह्रस्वकाल की स्थितिवाली बनाना प्रारंभ कर देता है। तथा तीव्र अनुभागवाली प्रकृतियों को मंद अनुभागवाली और बहुप्रदेशाग्रवाली प्रकृतियों की अल्पप्रदेशाग्रवाली बनाना शुरू कर देता है। इसके सिवाय का और अवशिष्ट कथन संवृत अनगार के प्रकरण में जैसा कहा गया है वैसा ही जानना चाहिये। तथा आधाकर्मिक आहारादि करने वाले का कथन असंवृत अनगार की तरह जानना चाहिये ॥ सू० ७ ॥

यहां अनन्तरसूत्र में जीवों की अनुकंपा वाले श्रमणजनों का संसार

દીર્ઘકાળની સ્થિતિવાળી બનાવે છે, મંદ અનુભાગવાળી કર્મપ્રકૃતિયોને તીવ્ર અનુભાગવાળી બનાવે છે, અલ્પ પ્રદેશવાળી કર્મપ્રકૃતિયો બહુ પ્રદેશવાળી બનાવે છે તથા પ્રાસુક નિર્દોષ આહારાદિ ગ્રહણ કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રંથ આયુષ્યકર્મનો બંધ બાંધે પણ છે અને નથી પણ બાંધતો, તથા પહેલાં તેણે જે કર્મપ્રકૃતિયોનો ગાઢ બંધ બાંધ્યો હતો તે કર્મપ્રકૃતિયોને શિથિલ બંધવાળી બનાવે છે, દીર્ઘ કાળસ્થિતિવાળી કર્મપ્રકૃતિયોને તે હ્રસ્વની સ્થિતિવાળી બનાવે છે, તીવ્ર અનુભાગવાળી કર્મપ્રકૃતિયોને તે મંદ અનુભાગવાળી બનાવે છે, અને બહુ પ્રદેશવાળી કર્મપ્રકૃતિયોને તે અલ્પ પ્રદેશવાળી બનાવે છે આ સિવાયનું તમામ વક્તવ્ય સંવૃત અણગારના પ્રકરણમા બતાવ્યા પ્રમાણે જ સમજવું, આધાકર્મિક આહાર વગેરે કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રંથનુ વક્તવ્ય અસંવૃત અણગાર પ્રમાણે સમજવુ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

આગળના સૂત્રમા જીવોની અનુકંપાવાળા શ્રમણ નિર્ગ્રંથો સંસારને તરી

पर्तनं न भवति यथा शिलादिकम्, इहाध्यात्मविचारे स्थिरो जीवः कर्मक्षये जातेपि स्वरूपतस्तस्य जीवस्यावस्थितत्वादेव नासौ जीव कदाचिदपि प्रच्योटयति अजीवतया न परिवर्तते चेतनालक्षणो हि जीव स कदाचिदपि न परिवर्तते मोक्षावस्थायामपि चेतनात्मकस्वभावस्यानपायात्, तथा 'अस्थिर भज्जइ' अस्थिरं भज्यते=भृज्यति, यथा-तृणादिकमस्थिरस्वभावक सत् भज्यते, इह आत्मप्रकरणे अस्थिरं कर्म तद् भज्यते=व्यपैति विनाशमुपगच्छतीति 'नो थिरे भज्जइ' नो स्थिरो भज्यते स्थिरमभग्नस्वभावक लोहशलाकादिक न भज्यते। इहात्मविचारमस्वाय स्थिरो

आदि पदार्थ अपने निज स्वरूप से कभी नहीं बदलते हैं। यहा आत्मा को लेकर विचार चल रहा है। उसमें स्थिर पदार्थ जीव है। क्यों कि कर्मो का क्षय हो जाने पर भी जीव अपने निजस्वरूप से अवस्थित ही रहता है। ऐसा तो होता नहीं है कि जीव अजीवरूप से परिवर्तित हो जावे। मोक्षावस्था में भी उसके चेतनात्मक स्वभाव का अपाय (नाश) नहीं होता है। तथा (अथिरे भज्जइ) ऐसा जो कहा है सो उसका तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार तृणादिक अस्थिर स्वभाव वाले होते हैं इसी कारण वे टूट जाते हैं। इसी तरह यहां आत्मप्रकरण में अस्थिर स्वभाववाले जीवात्मा के साथ लगे हुए कर्म हैं अतः वे भी टूट जाते हैं अर्थात् जीवात्मा से छूट जाते हैं-विनष्ट हो जाते हैं-उससे दूर हो जाते हैं। (नो थिरे भज्जइ) ऐसा जो कहा है सो उसका अभिप्राय यह है कि जो स्थिर स्वभाववाली वस्तु होती है वह कभी भग्न नहीं होती है-सर्वथा नष्ट नहीं होती है-जैसे लोह शलाका आदि। यहां आत्मा

वर्तन थतु नथी, जेमके शिला वगेरे पदार्थो पोताना स्वरूपने कदी पण बदलता नथी, अही आत्मानी अपेक्षाओ विचार करवामा आव्यो छे तेमां स्थिर पदार्थ जीव छे कारण के कर्मोनो क्षय थवा छता पण जीव पोताना निज स्वरूपमा ज स्थिर रहे छे, ओवु क्यारे य पण बनतु नथी के जीव अजीवरूपे परिवर्तन पामतो होय मोक्षावस्थामा पण तेना चेतनरूप स्वभावनो अपाय (नाश) थतो नथी तथा ' अथिरे भज्जइ " ओवु जे कह्यु तेनो भावार्थ ओ छे के अस्थिर स्वभाववाळा तृणादिक पदार्थो जेवी रीते तूटी जाय छे, ओवी रीते जीवात्मानी साथे लागेला अस्थिर स्वभाववाळां कर्मो पण तूटी जाय छे-ओटले के जीवात्माथी अलग थई जाय छे-नाश पामी जाय छे " नो थिरे भज्जइ " ओटले के स्थिर स्वभाववाळी वस्तुओ कदी पण भांगती नथी-सर्वथा नाश पामती नथी. जेमके लोढाशलाका वगेरे स्थिर स्वभाववाळां पदार्थोनो कदी पण सर्वथा नाश थतो नथी. अहीं आत्मानी अपेक्षाओ विचार

टीका—'से णूणं भंते' तद् नूनं भदन्त! 'अथिरे पलोट्टइ' अस्थिरः प्रलोटयति, अस्थिरः स्थिरतारहितः यः सर्वदा न तिष्ठति स अस्थिर इति कथ्यते, अस्थिरः लोष्टादिपदार्थः प्रलोटयति परिवर्तते पूर्वावस्थां परित्यज्याव-स्थान्तरं प्राप्नोतीत्यर्थः, इहाध्यात्मविचारे अस्थिरं कर्म, तस्य कर्मणः जीवप्रदे-शेभ्यः प्रतिसमयं चलनेनास्थिरत्वात् प्रलोटयति = बंधोदयनिर्जरणादिपरिणामैः परिवर्तते। 'नो थिरे पलोट्टइ' नो स्थिरः प्रलोटयति, स्थिर पदार्थस्य स्वरूप परि-

---

सेवं भंते! त्ति जाव विहरइ) जैसा आप कहते हैं वह इसी तरह से है हे भदन्त! इसी तरह से है। ऐसा कहकर यावत् वे गौतम अपने उचित स्थान पर आकर बैठ गये।

टीकार्थ—(से णूणं भंते! हे भदन्त! जो (अथिरे) स्थिरता से रहित होता है-अर्थात् जो सर्वदा एकसी स्थिति में नही रहता है वह अस्थिर कहलाता है ऐसा अस्थिर लोष्ट (मिट्टी का ढेला) आदि पदार्थ (पलोट्टइ) बदलता है-पूर्वावस्था का त्याग कर अवस्थान्तर को प्राप्त करता है क्या? यहां आत्मा के विचार में अस्थिर पदार्थ कर्म है। उस कर्म का जीवप्रदेशों से प्रतिसमय जो चलना-विछुडना होता है वही उसकी अस्थिरता है। इसी कारण वह बदलता रहता है ऐसा कहा है तात्पर्य यह है कि वह बंध, उदय निर्जरण आदि परिणामों से अक्रान्त होता रहता है यही उसका बदलना है। (नो थिरे पलोट्टइ) जो पदार्थ स्थिर होता है उसके स्वरूप का परिवर्तन नहीं होता है। जैसे शिला

પણું અશાશ્વત છે. (सेवं भंते! सेवं भंते! त्ति जाव विहरइ) હે ભગવન્! આપના કહેવા પ્રમાણે જ બધુંય છે. હે ભગવન્! એ પ્રમાણે જ છે. એવું કહીને (यावत्) ગૌતમસ્વામી પોતાને સ્થાને ગયા

ટીકાર્થ—"से णूणं भंते" હે ભગવન્! જે "अथिरे" અસ્થિર હોય છે એટલે કે જે પદાર્થ, હમેશા એકસરખી સ્થિતિમાં રહેતો નથી તે પદાર્થને અસ્થિર કહે છે એવા લોષ્ટ (માટીનું ઢેકું) વગેરે પદાર્થો "पलोट्टइ" શું બદલાતા પરિવર્તન પામતા રહે છે? પહેલાની અવસ્થાને છોડીને બીજી અવસ્થાને પામતાં રહે છે? અહીં આત્માની અપેક્ષાએ અસ્થિર પદાર્થ કર્મ છે. તે કર્મો પ્રત્યેક સમયે જીવ પ્રદેશોમાંથી જૂદા પડતાં રહે છે એને જ કર્મની અસ્થિરતા કહે છે. એટલા માટે જ કર્મ બદલતું રહે છે એવું કહ્યુ છે. તાત્પર્ય એ છે કે કર્મો, બંધ, ઉદય, નિર્જરા વગેરે પરિણામોથી અક્રાન્ત થતું રહે છે, તેને જ કર્મનું પરિવર્તન કહે છે. "नो थिरे पलोट्टइ" સ્થિર પદાર્થના સ્વરૂપમાં પરિ-

वर्तनं न भवति यथा शिलादिकम् , इहाध्यात्मविचारे स्थिरो जीवः कर्मक्षये जातेपि स्वरूपतस्तस्य जीवस्यावस्थितत्वादेव नासौ जीवः कदाचिदपि प्रच्योटयति अजीवतया न परिवर्तते चेतनात्मको हि जीवः स कदाचिदपि न परिवर्तते मोक्षावस्थायामपि चेतनात्मकस्वभावस्यानपायात्, तथा 'अस्थिरं भज्जइ' अस्थिरं भज्यते=त्रुट्यति, यथा-तृणादिकमस्थिरस्वभावकं सद् भज्यते, इह आत्मप्रकरणे अस्थिरं कर्म सद् भज्यते=व्यपैति विनाशमुपगच्छतीति 'नो थिरे भज्जइ' नो स्थिरो भज्यते स्थिरमभङ्गुरस्वभावकं लोहशलाकादिकं न भज्यते । इहात्मविचारप्रस्तावे स्थिरो

आदि पदार्थ अपने निज स्वरूप से कभी नहीं बदलते हैं। यहां आत्मा को लेकर विचार चल रहा है। उसमें स्थिर पदार्थ जीव है। क्यों कि कर्मों का क्षय हो जाने पर भी जीव अपने निजस्वरूप से अवस्थित ही रहता है। ऐसा तो होता नहीं है कि जीव अजीवरूप से परिवर्तित हो जावे। मोक्षावस्था में भी उसके चेतनात्मक स्वभाव का अपाय (नाश) नहीं होता है। तथा (अथिरे भज्जइ) ऐसा जो कहा है सो उसका तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार तृणादिक अस्थिर स्वभाव वाले होते हैं इसी कारण वे टूट जाते हैं। इसी तरह यहां आत्मप्रकरण में अस्थिर स्वभाववाले जीवात्मा के साथ लगे हुए कर्म हैं अतः वे भी टूट जाते हैं अर्थात् जीवात्मा से छूट जाते हैं-विनष्ट हो जाते हैं-उससे दूर हो जाते हैं। (नो थिरे भज्जइ) ऐसा जो कहा है सो उसका अभिप्राय यह है कि जो स्थिर स्वभाववाली वस्तु होती है वह कभी भग्न नहीं होती है-सर्वथा नष्ट नहीं होती है-जैसे लोह शलाका आदि। यहां आत्मा

વર્તન થતું નથી, જેમકે શિલા વગેરે પદાર્થો પોતાના સ્વરૂપને કદી પણ બદલતા નથી, અહીં આત્માની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવ્યો છે તેમાં સ્થિર પદાર્થ જીવ છે કારણ કે કર્મોનો ક્ષય થવા છતાં પણ જીવ પોતાના નિજ સ્વરૂપમાં જ સ્થિર રહે છે એવું ક્યારે ય પણ બનતું નથી કે જીવ અજીવરૂપે પરિવર્તન પામતો હોય મોક્ષાવસ્થામાં પણ તેના ચેતનરૂપ સ્વભાવનો અપાય (નાશ) થતો નથી. તથા " અથિરે ભજ્જઇ " એવું જે કહ્યું તેનો ભાવાર્થ એ છે કે અસ્થિર સ્વભાવવાળા તૃણાદિ પદાર્થો જેવી રીતે તૂટી જાય છે, એવી રીતે જીવાત્માની સાથે લાગેલાં અસ્થિર સ્વભાવવાળાં કર્મો પણ તૂટી જાય છે-એટલે કે જીવાત્માથી અલગ થઈ જાય છે-નાશ પામી જાય છે " નો થિરે ભજ્જઇ " એટલે કે સ્થિર સ્વભાવવાળી વસ્તુઓ કદી પણ ભાંગતી નથી-સર્વથા નાશ પામતી નથી. જેમકે લોહશલાકા વગેરે સ્થિર સ્વભાવવાળાં પદાર્થો કદી પણ સર્વથા નાશ થતો નથી. અહીં આત્માની અપેક્ષાએ વિચાર

जीवः स च न भज्यते शाश्वतत्वात् चेतनालक्षणो जीवः कदापि न नश्यतीति भावः। नरामरत्वादिपर्यायत एव विनाशस्य कथं चित्स्याद्वादिभिः स्वीकृतेऽपि द्रव्यरूपेण जीवस्य सर्वथा नित्यत्वमेव, अन्यथा मोक्षार्थं कोऽपि न यतेतेति। अथ शाश्वताशाश्वतविषये सूत्रमाह—'सासए' इत्यादि। 'सासए बालए' शाश्वतो बालकः, बालकः व्यवहारनयेन शिशुर्निश्चयनयतोऽसंयतो जीव स द्रव्यरूपेण

के विचार के प्रस्ताव में स्थिर जीव है और वह शाश्वत होने से कभी भी द्रव्य से नष्ट नहीं होता है। जीव का लक्षण चेतना है। ऐसा त्रिकाल में कोई सा भी समय न आया है, न आवेगा, और न आता है जब कि जीव इस अपने लक्षण से रहित हुआ हो--होगा या है। हां जो कुछ भी इस में परिवर्तन होता रहता है वह पर्याय दृष्टि से होता रहता है। स्याद्वादसिद्धान्त का यह एक अटल नियम है कि द्रव्यार्थिकनय से किसी भी वस्तु में कोई भी जात का परिवर्तन नहीं होता है जो कुछ परिवर्तन होता है-वह सब पर्याय की अपेक्षा से ही होता है। इसी कारण यहां प्रत्येक पदार्थ को परिणामि माना गया है। अपरिणामी नित्य नहीं। इसलिये जीव नर, अमर(देव) आदि पर्यायकी अपेक्षा से विनाशी होने पर भी द्रव्यकी अपेक्षासे वह शाश्वत ही है। जो यह सिद्धान्त न माना जावे तो फिर मोक्षके लिये कौन प्रयत्न करेगा। अर्थात् कोई भी नहीं करेगा। अब सूत्रकार शाश्वत अशाश्वत के विषय में सूत्र कहते हैं-(सासए बालए) बालक शाश्वत है-व्यवहार नय से बालक शब्द का अर्थ शिशु और निश्चयनय से

કરવામાં આવે તો તે (જીવ) શાશ્વત હોવાથી કદી પણ નાશ પામતો નથી જીવનું લક્ષણ ચેતના છે, ત્રણે કાળમા એવો સમય આવ્યો નથી, આવતો નથી અને આવશે પણ નહીં કે જ્યારે જીવ ચેતના લક્ષણથી રહિત હોય. તેમા જે કાંઈ પરિવર્તન થતુ રહે છે. તે પર્યાયની દૃષ્ટિએ થતુ રહે છે સ્યાદ્વાદ સિદ્ધાન્તનો એક અટલ નિયમ છે કે દ્રવ્યાર્થિક નયની અપેક્ષાએ કોઇ પણ વસ્તુમા કોઈ પણ પ્રકારનું પરિ-વર્તન થતુ નથી, જે કાંઈ પરિવર્તન થાય છે તે પર્યાયની અપેક્ષાએ જ થાય છે. તે જ કારણે અહી પ્રત્યેક પદાર્થને પરિણામી નિત્ય માનવામા આવેલ છે અપરિણામી નિત્ય માનવામાં આવેલ નથી, તેથી નર, દેવ વગેરે પર્યાયોની અપેક્ષાએ જીવ વિનાશી હોવા છતા દ્રવ્યની અપેક્ષાએ તો તે શાશ્વત જ છે જો આ સિદ્ધાન્તને માનવામાં ન આવે તો મોક્ષને માટે પ્રયત્ન કોણુ કરે? કોઈપણુ મોક્ષને માટે પ્રયત્ન જ ન કરે, હવે સૂત્રકાર શાશ્વત અને અશાશ્વતના વિષયમા સૂત્રોનુ કથન કરેછે-"सासए बालए" બાલક શાશ્વત છે, વ્યવહારનયની અપેક્ષાએ બાલક શબ્દનો અર્થ શિશુ થાય છે અને નિશ્ચયનયની અપેક્ષાએ

शाश्वतो नित्य एव, 'बालियत्त असासय' बालकत्वमशाश्वतम् तत्र बालकत्वम् व्यवहारनयतः शिशुत्वम्, निश्चयनयतस्तु असंयतत्वम्, तदशाश्वत पर्यायरूपतया। 'सासए पडिए' शाश्वत पण्डितः 'पंडियत्तं असासय' पण्डितत्वमशाश्वतम्, पण्डितो व्यवहारेण शास्त्रज्ञो जीव निश्चयनयेन तु संयतो जीवः, पण्डितत्वं व्यवहारतः शास्त्रज्ञत्वम्, निश्चयतः संयतत्वं तदशाश्वत पर्यायरूपत्वात्। भगवा नाह—'हंता' इत्यादि। 'हंता गोयमा' हन्त गौतम! 'अथिरे पलोट्टइ' अस्थिरः प्रलोटयति 'जाव पंडियत्त असासयं' यावत् पण्डितत्वमशाश्वतम्, यावत्पदेन-नो स्थिरः प्रलोटयति, अस्थिरो भज्यते नो स्थिरो भज्यते, शाश्वतो बालकः,

---

बालक शब्द का अर्थ यहां असंयत जीव होता है। यह असंयतरूप बालक जीव द्रव्यरूप से शाश्वत-नित्य ही है और तद्गत बालकत्व-असंयतत्व निश्चयनय से और व्यवहारनय से बालकत्व शिशुत्व पर्यायरूप होने के कारण अशाश्वत है। (सासए पडिए पंडियत्त असासयं) पण्डित शाश्वत है और पण्डितत्व अशाश्वत है। व्यवहारनय से पण्डितशब्द का अर्थ शास्त्र का ज्ञाता जो जीव है वह है और निश्चयनय की अपेक्षा से जो जीव संयत है वह है। व्यवहार नय की अपेक्षा से पंडितत्व का अर्थ शास्त्रज्ञत्व होता है और निश्चयनय की अपेक्षा से संयतत्व पर्यायरूप होने के कारण अशाश्वत है। इन सब का उत्तर देते हुए भगवान कहते हैं कि-(हंता गोयमा! अथिरे पलोट्टइ, जाव पंडियत्त असासय) हां गौतम! अस्थिर पदार्थ पलटता है, यावत् पण्डितत्व अशाश्वत है। यहां यावत्पद से (नो स्थिरः पलोटयति, अस्थिरो

બાલક શબ્દનો અર્થ અસંયત જીવ થાય છે તે અસંયતરૂપ બાલક જીવ દ્રવ્યરૂપે શાશ્વત (નિત્ય) જ અને તેમાં રહેલું બાલકપણુ-અસંયતપણુ નિશ્ચયનયથી અને વ્યવહારનયથી પર્યાયરૂપ હોવાને કારણે અશાશ્વત છે "सासए पंडिए पंडियत्त असासयं" પંડિત શાશ્વત છે અને પંડિતપણુ અશાશ્વત છે વ્યવહારનયથી પંડિત શબ્દનો અર્થ શાસ્ત્રવેત્તા થાય છે, અને નિશ્ચયનયની અપેક્ષાએ સંયત જીવને પંડિત કહે છે વ્યવહારનયની અપેક્ષાએ પંડિતત્વનો અર્થ શાસ્ત્રજ્ઞપણુ થાય છે અને નિશ્ચયનયની અપેક્ષાએ તેનો અર્થ સંયતપણુ થાય છે

તે સંયતપણુ પર્યાયરૂપ હોવાને કારણે અશાશ્વત છે તે બધા પ્રશ્નોનો ઉત્તર આપતા મહાવીરપ્રભુ કહે છે કે-"हंता गोयमा! अथिरे पलोट्टइ जाव पंडियत्तं असासयं" હા, ગૌતમ! અસ્થિર પદાર્થો પરિવર્તન પામતા રહે છે, (यावत्) પંડિતપણુ અશાશ્વત છે "यावत्" પદથી નીચેનો સૂત્રપાઠ ગ્રહણ

जीवः स च न भज्यते शाश्वतत्वात् चेतनालक्षणो जीवः कदापि न नश्यतीति भावः। नरामरत्वादिपर्यायित एव विनाशस्य कथं चित्स्याद्वादिभिः स्वीकृतेऽपि द्रव्यरूपेण जीवस्य सर्वथा नित्यत्वमेव, अन्यथा मोक्षार्थं कोऽपि न यतेतेति। अथ शाश्वताशाश्वतविषये सूत्रमाह—'सासए' इत्यादि। 'सासए बालए' शाश्वतो बालकः, बालकः व्यवहारनयेन शिशुर्निश्चयनयतोऽसंयतो जीव स द्रव्यरूपेण

के विचार के प्रस्ताव में स्थिर जीव है और वह शाश्वत होने से कभी भी द्रव्य से नष्ट नहीं होता है। जीव का लक्षण चेतना है। ऐसा त्रिकाल में कोई सा भी समय न आया है, न आवेगा, और न आता है जब कि जीव इस अपने लक्षण से रहित हुआ हो--होगा या है। हां जो कुछ भी इस में परिवर्तन होता रहता है वह पर्याय दृष्टि से होता रहता है। स्याद्वादसिद्धान्त का यह एक अटल नियम है कि द्रव्यार्थिकनय से किसी भी वस्तु में कोई भी जात का परिवर्तन नहीं होता है जो कुछ परिवर्तन होता है-वह सब पर्याय की अपेक्षा से ही होता है। इसी कारण यहां प्रत्येक पदार्थ को परिणामि माना गया है। अपरिणामी नित्य नहीं। इसलिये जीव नर, अमर(देव) आदि पर्यायकी अपेक्षा से विनाशी होने पर भी द्रव्यकी अपेक्षासे वह शाश्वत ही है। जो यह सिद्धान्त न माना जावे तो फिर मोक्षके लिये कौन प्रयत्न करेगा। अर्थात् कोई भी नहीं करेगा। अब सूत्रकार शाश्वत अशाश्वत के विषय में सूत्र कहते हैं-(सासए बालए) बालक शाश्वत है-व्यवहार नय से बालक शब्द का अर्थ शिशु और निश्चयनय से

કરવામાં આવે તો તે (જીવ) શાશ્વત હોવાથી કદી પણ નાશ પામતો નથી જીવનું લક્ષણ ચેતના છે, ત્રણે કાળમા એવો સમય આવ્યો નથી, આવતો નથી અને આવશે પણ નહીં કે જ્યારે જીવ ચેતના લક્ષણથી રહિત હોય. તેમા જે કાઈ પરિવર્તન થતું રહે છે. તે પર્યાયની દૃષ્ટિએ થતુ રહે છે સ્યાદ્વાદ સિદ્ધાન્તનો એક અટલ નિયમ છે કે દ્રવ્યાર્થિક નયની અપેક્ષાએ કોઈ પણ વસ્તુમાં કોઈ પણ પ્રકારનું પરિવર્તન થતુ નથી, જે કાઈ પરિવર્તન થાય છે તે પર્યાયની અપેક્ષાએ જ થાય છે. તે જ કારણે અહી પ્રત્યેક પદાર્થને પરિણામી નિત્ય માનવામાં આવેલ છે અપરિણામી નિત્ય માનવામા આવેલ નથી, તેથી નર, દેવ વગેરે પર્યાયોની અપેક્ષાએ જીવ વિનાશી હોવા છતા દ્રવ્યની અપેક્ષાએ તો તે શાશ્વત જ છે. જો આ સિદ્ધાન્તને માનવામાં ન આવે તો મોક્ષને માટે પ્રયત્ન કોણુ કરે? કોઈપણુ મોક્ષને માટે પ્રયત્ન જ ન કરે, હવે સૂત્રકાર શાશ્વત અને અશાશ્વતના વિષયમા સૂત્રોનું કથન કરેછે–"सासए बालए" બાલક શાશ્વત છે, વ્યવહારનયની અપેક્ષાએ બાલક શબ્દનો અર્થ શિશુ થાય છે અને નિશ્ચયનયની અપેક્ષાએ

शाश्वतो नित्य एव, 'बालियत्तं असासयं' बालकत्वमशाश्वतम् तत्र बालकत्वम् व्यवहारनयतः शिशुत्वम्, निश्चयनयतस्तु असंयतत्वम्, तदशाश्वतं पर्यायरूपतया। 'सासए पंडिए' शाश्वत पण्डितः 'पंडियत्तं असासयं' पण्डितत्वमशाश्वतम्, पण्डितो व्यवहारेण शास्त्रज्ञो जीवः निश्चयनयेन तु संयतो जीवः, पण्डितत्वं व्यवहारतः शास्त्रज्ञत्वम्, निश्चयतः संयतत्वं तदशाश्वतं पर्यायरूपत्वात्। भगवा नाह—'हंता' इत्यादि। 'हंता गोयमा' हन्त गौतम! 'अथिरे पलोट्टइ' अस्थिरः प्रलोटयति 'जाव पंडियत्तं असासयं' यावत् पंडितत्वमशाश्वतम्, यावत्पदेन— नो स्थिरः प्रलोटयति, अस्थिरो भज्यते नो स्थिरो भज्यते, शाश्वतो बालकः,

---

बालक शब्द का अर्थ यहां असंयत जीव होता है। यह असयतरूप बालक जीव द्रव्यरूप से शाश्वत-नित्य ही है और तद्गत बालकत्व-असं यतत्व निश्चयनय से और व्यवहारनय से बालकत्व शिशुत्व पर्यायरूप होने के कारण अशाश्वत है। (सासए पंडिए पंडियत्त असासयं) पण्डित शाश्वत है और पण्डितत्व अशाश्वत है। व्यवहारनय से पण्डि तशब्द का अर्थ शास्त्र का ज्ञाता जो जीव है वह है और निश्चयनय की अपेक्षा से जो जीव संयत है वह है। व्यवहार नय की अपेक्षा से पंडि तत्व का अर्थ शास्त्रज्ञत्व होता है और निश्चयनय की अपेक्षा से संय-तत्व पर्यायरूप होने के कारण अशाश्वत है। इन सब का उत्तर देते हुए भगवान कहते हैं कि-(हंता गोयमा! अथिरे पलोट्टइ, जाव पंडि यत्त असासयं) हां गौतम! अस्थिर पदार्थ पलटता है, यावत् पण्डित त्व अशाश्वत है। यहां यावत्पद से (नो स्थिरः पलोटयति, अस्थिरो

બાલક શબ્દનો અર્થ અસંયત જીવ થાય છે તે અસયતરૂપ બાલક જીવ દ્રવ્ય રૂપે શાશ્વત (નિત્ય) જ અને તેમાં રહેલું બાલકપણું-અસંયતપણું નિશ્ચય-નયથી અને વ્યવહારનયથી પર્યાયરૂપ હોવાને કારણે અશાશ્વત છે 'सासए पंडिए पंडियत्तं असासयं' પંડિત શાશ્વત છે અને પંડિતપણું અશાશ્વત છે વ્યવહારનયથી પંડિત શબ્દનો અર્થ શાસ્ત્રવેત્તા થાય છે, અને નિશ્ચયનયની અપેક્ષાએ સંયત જીવને પંડિત કહે છે વ્યવહારનયની અપેક્ષાએ પંડિતત્વનો અર્થ શાસ્ત્રજ્ઞપણું થાય છે અને નિશ્ચયનયની અપેક્ષાએ તેનો અર્થ સંયતપણું થાય છે

તે સંયતપણું પર્યાયરૂપ હોવાને કારણે અશાશ્વત છે તે બધા પ્રશ્નોના ઉત્તર આપતાં મહાવીરપ્રભુ કહે છે કે-'हंता गोयमा! अथिरे पलोट्टइ जाव पंडियत्तं असासयं" હા, ગૌતમ! અસ્થિર પદાર્થો પરિવર્તન પામતા રહે છે, (यावत्) પંડિતપણું અશાશ્વત છે "यावत्" પદથી નીચેનો સૂત્રપાઠ ગ્રહણ

बालकत्वमशाश्वतम्। शाश्वतः पण्डितः, इत्यस्य ग्रहणम्। व्याख्यान तु प्रश्नसूत्रवदेव भवता करणीयम्, सेवं भंते सेवं भंते' तदेवं भदन्त! तदेवं भदन्त! हे भदन्त! यत् देवानुप्रियेण कथितं तत् एवमेव सर्वथा सत्यमेव, आप्तवाक्यस्य सर्वथाऽबाधितत्वात्, 'त्ति जाव विहरइ' इति यावद् विहरति, इत्येवंरूपेण कथयित्वा गौतमः श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा संयमेन तपसा आत्मानं भावयन् विहरतीति ॥ सू० ८ ॥

इति श्री-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्य-श्रीघासीलालव्रतिविरचितायां श्रीभगवतीसूत्रस्य प्रमेयचन्द्रिका-व्याख्यायां प्रथम शतकस्य नवमोद्देशकः समाप्तः ॥१-९॥

भज्यते, शाश्वतो बालकः, बालकत्वं अशाश्वतम्, शाश्वतः पण्डितः) इस पाठका संग्रह हुआ है। इन पदों का व्याख्यान तो प्रश्नसूत्रकी तरह ही जानना चाहिये। (सेवं भंते! सेवं भंते! त्ति जाव विहरइ) हे भदन्त! आप देवानुप्रिय ने जो कहा है वह ऐसा ही है, हे भदन्त! वह ऐसा ही है अर्थात् सर्वथा सत्य ही है-क्यों कि आप्त वाक्य जो होते हैं, वे सर्वथा अबाधित ही होते हैं। ऐसा कह कर गौतमस्वामी ने श्रमण भगवान महावीर प्रभु को वन्दना की, नमस्कार किया। वंदना नमस्कार करके फिर वे सयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर बैठ गये ॥ सू० ८ ॥

श्री जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्य श्रीघासीलालजी महाराजकृत भगवतीसूत्रकी प्रमेयचन्द्रिका व्याख्या के प्रथम शतकका नौवां उद्देशक समाप्त ॥१-९॥

॥ प्रथम शतक में नौवां उद्देशक समाप्त ॥

કરાયો છે-"સ્થિર પદાર્થો પલટાતા નથી, અસ્થિર પદાર્થો ભાંગી જાય છે, સ્થિર પદાર્થો ભાગતા નથી, બાલક શાશ્વત છે, બાલકપણું અશાશ્વત છે, પંડિત શાશ્વત છે" આ પદોનો અર્થ પ્રશ્નસૂત્રના અર્થ પ્રમાણે જ સમજવો.

"सेवं भंते! सेवं भंते! त्ति जाव विहरइ" હે ભગવન્! આપ દેવાનુપ્રિયે જે કહ્યું તે સત્ય જ છે, હે ભગવન્! તે વાત તદ્દન સાચી જ છે, કારણ કે આપ્ત વાકયમાં શંકાને સ્થાન જ હોતું નથી. એવુ કહીને ગૌતમસ્વામીએ શ્રમણ ભગવાન મહાવીરસ્વામીને વંદણા કરી, નમસ્કાર કર્યા વંદણા નમસ્કાર કરીને સંયમ અને તપથી પોતાના આત્માને ભાવિત કરતા તેઓ પોતાને સ્થાને ગયા ॥ સૂ૦ ૮ ॥

॥ઇતિશ્રી જૈનાચાર્ય જૈનધર્મદિવાકર પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજકૃત ભગવતીસૂત્રની પ્રિયદર્શિનીવ્યાખ્યાના પહેલા શતકનો નવમો ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥૧-૯॥

अथ दशमोद्देशक –

दशमोद्देशकस्य संक्षेपतो विचारणीया इमे विषयाः–अन्यतीर्थिकानां वक्तव्यता, तत्र यत् चलमानं न तत् चलितमित्यादिकथनम्। तथा द्वयो परमाण्वो परस्परं संमेलनं न भवति, परमाणोरतिसूक्ष्मतया द्वयोः परमाण्वोः स्नेहकायस्याभावात्, किन्तु त्रयः परमाणवः चत्वारः पंच वा संमिलिता भवंति, त्र्यादिषु मिलितेषु स्नेहकायस्य समुद्भवात्। ते त्रयः परमाणवो भिद्यमानाः सार्द्धेकरूपेण सार्धैकरूपेणावतिष्ठन्ते, त्रिधा विभागकरणे एकैकस्यावस्थानं भवति। एवं चत्वारो द्विधा चतुर्धा वा भिद्यन्ते। द्विधा विभजने द्वौ द्वौ, चतुर्धा विभागकरणे एकैको

दशम उद्देशक प्रारंभ—

इस दशम उद्देशे में जो विषय वर्णित हुए हैं उनका वर्णन संक्षेप में इस प्रकार से है—

अन्यतीर्थिकजनों का वक्तव्य। इसमें जो चलमान है वह चलित नहीं होता है इत्यादि कथन दो परमाणुओं का परस्पर में संमेलन नहीं होता है। क्यों कि परमाणु को अतिसूक्ष्म होने के कारण दो परमाणुओं में स्नेहकाय का अभाव रहता है। किन्तु तीन परमाणु, चार परमाणु अथवा पांच परमाणु इनका परस्पर में संमेलन होता है। क्यों कि त्र्यादि परमाणुओं में संमिलित होने पर स्नेहकाय उद्भूय हो जाता है। वे तीन परमाणु भिद्यमान होते हुए १॥-१॥ भाग में हो जाते हैं। तीन रूप में विभाग करने पर एक एक का अवस्थान रहता है इसी तरह चार पर

દશમા ઉદ્દેશકનો પ્રારંભ

દસમા ઉદ્દેશામાં જે વિષયનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે તેનું દ્રુંકમાં વર્ણન કરવામાં આવે છે—

અન્ય તીર્થિકોનું વક્તવ્ય તેમાં ચલમાન છે તે ચલિત થતું નથી એવું કથન બે પરમાણુઓનો પરસ્પરમાં સંયોગ થતો નથી, કારણ કે પરમાણુઓ અતિ સૂક્ષ્મ હોવાથી બે પરમાણુઓમાં સ્નેહકાયનો અભાવ રહે છે પણ ત્રણ ચાર પાંચ વગેરે પરમાણુઓનો પરસ્પરમાં સંયોગ થાય છે કારણ કે ત્રણ ચાર વગેરે પરમાણુઓનો જ્યારે સંયોગ થાય છે ત્યારે તેમનામાં સ્નેહકાયનો ઉદ્ભવ થાય છે તે ત્રણ પરમાણુઓ ભેદાતાં ૧॥-૧॥ ભાગમાં વહેંચાઈ જાય છે ત્રણ પરમાણુઓના ત્રણ ભાગ કરવાથી એક એક પરમાણુ રહે છે એ જ

बालकत्वमशाश्वतम्। शाश्वतः पण्डितः, इत्यस्य ग्रहणम्। व्याख्यान तु प्रश्नसूत्रवदेव भवता करणीयम्, सेवं भंते सेवं भंते' तदेवं भदन्त! तदेवं भदन्त! हे भदन्त! यत् देवानुप्रियेण कथितं तत् एवमेव सर्वथा सत्यमेव, आप्तवाक्यस्य सर्वथाऽबाधितत्वात्, 'त्ति जाव विहरइ' इति यावद् विहरति, इत्येवंरूपेण कथयित्वा गौतमः श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा संयमेन तपसा आत्मानं भावयन् विहरतीति ॥ सू० ८ ॥

इति श्री-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्य-श्रीघासीलालव्रतिविरचितायां श्रीभगवतीसूत्रस्य प्रमेयचन्द्रिका-व्याख्यायां प्रथम शतकस्य नवमोद्देशकः समाप्तः ॥१-९॥

भज्यते, शाश्वतो बालकः, बालकत्वं अशाश्वतम्, शाश्वतः पण्डितः) इस पाठका संग्रह हुआ है। इन पदों का व्याख्यान तो प्रश्नसूत्रकी तरह ही जानना चाहिये। (सेवं भंते! सेवं भंते! त्ति जाव विहरइ) हे भदन्त! आप देवानुप्रिय ने जो कहा है वह ऐसा ही है, हे भदन्त! वह ऐसा ही है अर्थात् सर्वथा सत्य ही है-क्यों कि आप्त वाक्य जो होते हैं, वे सर्वथा अबाधित ही होते हैं। ऐसा कह कर गौतमस्वामी ने श्रमण भगवान महावीर प्रभु को वन्दना की, नमस्कार किया। वंदना नमस्कार करके फिर वे संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए अपने स्थान पर बैठ गये ॥ सू० ८ ॥

श्री जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्य श्रीघासीलालजी महाराजकृत भगवतीसूत्रकी प्रमेयचन्द्रिका व्याख्या के प्रथम शतकका नौवां उद्देशक समाप्त ॥१-९॥

॥ प्रथम शतक में नौवां उद्देशक समाप्त ॥

કરાયો છે-" સ્થિર પદાર્થો પલટાતા નથી, અસ્થિર પદાર્થો ભાંગી જાય છે, સ્થિર પદાર્થો ભાગતા નથી, બાલક શાશ્વત છે, બાલકપણું અશાશ્વત છે, પંડિત શાશ્વત છે" આ પદોનો અર્થ પ્રશ્નસૂત્રના અર્થ પ્રમાણે જ સમજવો.

"सेवं भंते! सेवं भंते! त्ति जाव विहरइ" હે ભગવન્! આપ દેવાનુપ્રિયે જે કહ્યું તે સત્ય જ છે, હે ભગવન્! તે વાત તદ્દન સાચી જ છે, કારણ કે આપ્ત વાકયમાં શંકાને સ્થાન જ હોતું નથી. એવું કહીને ગૌતમસ્વામીએ શ્રમણ ભગવાન મહાવીરસ્વામીને વંદણા કરી, નમસ્કાર કર્યા વંદણા નમસ્કાર કરીને સંયમ અને તપથી પોતાના આત્માને ભાવિત કરતા તેઓ પોતાને સ્થાને ગયા ॥ સૂ૦ ૮ ॥

॥ઇતિશ્રી જૈનાચાર્ય જૈનધર્મદિવાકર પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજકૃત ભગવતીસૂત્રની પ્રિયદર્શિનીવ્યાખ્યાના પહેલા શતકનો નવમો ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥૧-૯॥

तथाहि-चलत् चलितमित्यादि कथनम्। द्वयो परमाण्वोरपि परस्परं संघातो भवति। एकैकस्मिन्नपि स्नेहसद्भावात्, त्र्यादीनां संघातस्य तैरपि स्वीकृतत्वात्। द्वयोर्द्विधाकरणे एक एकोभवति। त्रयाणां परमाणूनां संघातो भवति, द्विधाकरणे एकत एकः, एकतो द्विप्रदेशिकः स्कन्धः, न तु सार्धैकः सार्धैको भवति, त्रिधा कृते त्रयो भवन्ति। एवं चतुर्णां द्विधाकरणे एकत एकः, एकतश्च त्रिप्रदेशिकः स्कन्धो भवति न तु द्वौ द्वौ। पञ्चपरमाणूनां स्कन्धो न दुःख (कर्म) तया परिणमते। कर्म च अशाश्वत, न तु शाश्वतम्।

मत है। महावीर प्रभु का वक्तव्य। अन्यमत में असत्यता का प्रतिपादन। चलमाण वह चलित इत्यादि कथन। दो परमाणुओं का भी परस्पर में संघात होता है क्यों कि एक परमाणु में भी स्नेह का सद्भाव रहता है। त्र्यणुक आदि के संघात को उन्हों ने भी स्वीकार किया है। दो के दो टुकडे करने पर एक एक होता है। तीन परमाणुओं का संघात होता है। उसके दो भाग करने पर १॥-१॥ ऐसे दो भाग नहीं होते हैं, किन्तु एक तरफ एक का एक और दूसरा द्विप्रदेशिक स्कन्ध। तीन टुकडे करने पर तीन होते हैं। इसी तरह चार के दो टुकडे पर एक का एक और दूसरा तीन प्रदेश वाला स्कन्ध एक दो दो ऐसे दो टुकडे चार के नहीं होते हैं। पांच परमाणुओं का स्कंध दुःखकर्म रूप से नहीं परिणमता है। कर्म अशाश्वत होता है, शाश्वत नहीं होता है।

વિષયમા મહાવીર પ્રભુનુ વક્તવ્ય. અન્ય મતમા રહેલ અસત્યપણાનુ પ્રતિપાદન જે ચલમાન છે તે ચલિત થઇ ચૂક્યુ એવું કથન બે પરમાણુઓનો પણ પરસ્પરમા સંયોગ થઇ શકે છે કારણ કે એક એક પરમાણુમા પણ સ્નેહકાયનો સદ્ભાવ રહે છે ત્રણ વગેરે અણુઓના સંયોગનો તેમણે પણ સ્વીકાર કર્યો છે સંયોગ પામેલા બે અણુઓના બે ટુકડા કરવાથી એક એક અણુ છૂટ્ટ પડે છે સંયોગ પામેલા ત્રણ પરમાણુઓના બે વિભાગ કરવાથી ૧॥-૧॥ ના બે ભાગ થતા નથી પણ એક વિભાગ એક પરમાણુવાળો બને છે પણ તેના ત્રણ ટુકડા કરવાથી એક એક પરમાણુવાળા ત્રણ વિભાગ થાય છે એ જ પ્રમાણે સંયોગ પામેલા ચાર પરમાણુના બે ટુકડા કરવાથી બે બે પ્રદેશવાળા સ્કન્ધો થતા નથી પણ એક સ્કન્ધ એક પ્રદેશવાળો અને બીજો સ્કંધ ત્રણ પ્રદેશવાળો થાય છે પાંચ પરમાણુઓ સ્કન્ધ દુઃખ-કર્મરૂપે પરિણમતો નથી. કર્મ અશાશ્વત હોય છે, શાશ્વત હોતુ નથી.

भूत्वा चत्वारो भवन्ति। परमाणवो मिलिताः सन्तो दुःखतया परिणता भवंति, दुःखं कर्म तत् शाश्वतमुपचीयतेऽपचीयते च। उच्चारणात् प्रागेव भाषा भाषा न तु भाष्यमाणा भाषा, भाषणात् परतो वा भाषा भाषा, सा भाषा अभाषमाणस्य भाषा भवति न तु भाषमाणस्य। उत्पत्तेः पूर्वं क्रिया दुःखा न तु क्रियमाणा क्रिया दुःखा क्रियासमयव्यतिक्रमे कृता क्रिया दुःखरूपा, सा क्रिया अकुर्वतो दुःखा न तु कुर्वतो दुःखा। अकृत्यं दुःखमस्पृश्यं दुःखम् अक्रियमाणकृत दुःखम्, अकृत्वा अकृत्वा प्राणभूतजीवसत्त्वाः वेदनां वेदयन्ति न तु कृत्वा कृत्वा वेदयंतीति परतीर्थिकानां मतम्। सम्प्रति महावीरवक्तव्यम्। अन्यमतस्यासत्यत्वप्रतिपादनं,

माणुओं का विभाग करने पर या नो उनके दो दो के दो भाग होते हैं या एक एक का विभाग करने पर चार भाग होते हैं। परमाणु मिलित अवस्था में दुःखरूप से परिगत होते हैं। दुःख जो है वह कर्म है। वह शाश्वत है। उसमें चय और अपचय होते हैं। उच्चारण के पहिले ही भाषा भाषा है। बोली जाती भाषा भाषा नहीं है। अथवा–भाषण करने के बाद भाषा भाषा है। वह भाषा अभाषमाण की भाषा होती है, बोलते हुए की भाषा भाषा नहीं होती है। उत्पत्ति के पहिले क्रिया दुःखरूप है, की जाती क्रिया दुःखरूप नहीं है। क्रियासमय के व्यतिक्रम होने पर की गई क्रिया दुःखरूप है। वह क्रिया नहीं करने वाले को दुःखरूप है- करने वाले को दुःखरूप नहीं है। अकृत्य दुःख है। अस्पृश्य दुःख है। अक्रियमाण, कृत दुःख है। नहीं करके नहीं करके प्राण, भूत, जीव और सत्त्व वेदना भोगते हैं। कर करके वेदना नहीं भोगते हैं ऐसा परतीर्थिक जनों का

પ્રમાણે ચાર પરમાણુઓનો વિભાગ કરવામા આવે તો તેમના બે બેના વિભાગ થાય છે અથવા તો એક એકના ચાર ભાગ થાય છે. પરમાણુ મિલિત અવસ્થામા દુખરૂપે પરિણમે છે. દુઃખ જે છે તે કર્મ છે. તે શાશ્વત છે. તેમાં ચય અને અપચય થાય છે

ઉચ્ચારણના પહેલાંની ભાષા જ ભાષા છે બોલાતી ભાષા, ભાષા નથી. અથવા ભાષણ કર્યા પછીની ભાષા, ભાષા છે તે ભાષા અભાષકની ભાષા હોય છે, બોલનારની ભાષા, ભાષા હોતી નથી. ઉત્પત્તિના પહેલા ક્રિયા દુખરૂપ છે, કરાતી ક્રિયા દુઃખરૂપ હોતી નથી ક્રિયાસમયનો વ્યતિક્રમ થતાં કરાયેલી ક્રિયા દુખરૂપ છે તે ક્રિયા કરનારને દુખરૂપ છે, નહીં કરનારને દુખરૂપ નથી અકૃત્ય દુઃખ છે અસ્પૃશ્ય દુખ છે. અક્રિયમાણ, કૃત દુઃખ છે કર્મ નહીં કરવાથી પ્રાણ. ભૂત, જીવ અને સત્ત્વ વેદના ભોગવે છે. કર્મ કરીને વેદના ભોગવતા નથી એવી પરતીર્થિકોની માન્યતા છે. તે

अकषायोदयमसत्त्वा, साम्परायिकी च कषायोदयमसत्त्वा, अतो जीव एकसमये द्वे क्रिये कर्तुं न शक्नोतीति भगवन्मतम्। नरके कियान् विरहकाल ? इति पृच्छा। द्वादश मुहूर्ता इत्युत्तरम्। अत्र प्रज्ञापनायाः षष्ठं व्युत्क्रान्तिपदं बोध्यम्। 'सेवं भंते' इत्यादि गौतमस्यानुमोदनम्। उद्देशकसमाप्तिः, शतकसमाप्तिश्चेति ॥

नवमोद्देशकं निरूप्य तदनु दशमोद्देशको निरूप्यते, तत्र नवमोद्देशकस्यान्ते अस्थिरं च कर्म इति वर्णितम्, कर्मादिविषये च परतीर्थिका विरुद्धं प्रतिपादयंति अतस्तेषां निराकरणाय तथा प्रथमशतकस्यादौ (द्वार) गाथायां 'चलणाओ' इति दशमद्वारतया यदुक्तं तत्प्रतिपादनाय च दशमोद्देशकः प्रारभ्यते, तस्येदमादिमं सूत्रम्—' अन्न उत्थियाणं ' इत्यादि।

समय में दो क्रिया करने के लिये समर्थ नहीं हो सकता ऐसा भगवान का मत है। नरक में विरहकाल कितना है ऐसा प्रश्न—१२ बारह मुहूर्त का है ऐसा उत्तर। यहां प्रज्ञापना का छठवां व्युत्क्रान्ति पद जानना चाहिये। (सेवं भंते! इत्यादिरूप से गौतम! का अनुमोदन, उद्देशक की समाप्ति और प्रथम शतक की भी समाप्ति

नववें उद्देशक का निरूपण करके इसके बाद सूत्रकार अब दशम उद्देशक का निरूपण करते हैं—नववें उद्देशक के अंत में "कर्म अस्थिर होता है" ऐसा वर्णन किया गया है। कर्मादि के विषय में परतीर्थिक जन विरुद्ध ही प्ररूपणा करते हैं, अतः उनके मन्तव्य का निराकरण करने के लिये तथा—प्रथम—शतक की आदि में द्वार गाथा में "चलणाओ ऐसा जो दशम द्वाररूप से कहा गया है उसके प्रतिपादन के लिये इस दशम उद्देशक का प्रारंभ हुआ है। ' अन्नउत्थियाणं "इत्यादि

ઉદય હોય ત્યારે જ થાય છે તેથી એક જ સમયે જીવ બે ક્રિયા કરવાને સમર્થ હોતો નથી એવો ભગવાનનો મત છે નરકમાં વિરહકાળ કેટલો છે? એ પ્રશ્ન. ઉત્તર–૧૨ મુહૂર્તનો છે અહીં પ્રજ્ઞાપનાનું છઠ્ઠું વ્યુત્ક્રાન્તિપદ જાણવું જોઈએ. "સેવં ભંતે ' ઈત્યાદિ કથનવડે ગૌતમનું અનુમોદન. ઉદ્દેશકની સમાપ્તિ. અને પહેલા શતકની પણ સમાપ્તિ.

નવમા ઉદ્દેશકનું નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર દસમા ઉદ્દેશકનું નિરૂપણ કરે છે નવમા ઉદ્દેશકને અંતે "કર્મ અસ્થિર હોય છે" એવું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે કર્માદિના વિષયમાં પરતીર્થિકો એવી વિરૂદ્ધ પ્રરૂપણા કરે છે, તેથી તેમના મતનું ખંડન કરવાને માટે તથા પહેલા શતકની શરૂઆતની દ્વાર ગાથામાં "ચલણાઓ" એવું જે દસમા દ્વારરૂપે કહેલું છે તેનું પ્રતિપાદન કરવાના આશયથી આ દસમા ઉદ્દેશકની શરૂઆત કરવામાં આવી છે

भाषणात् पूर्वं न भाषा, भाष्यमाणा भाषा भवति, भाषणात् परतोऽपि न भाषा भवति। भाषमाणस्य भाषा भवति न तु अभाषमाणस्य। भाषावत् क्रियापि बोध्या। कृत्यं दुःखं, स्पृश्यं दुःखं, क्रियमाणकृतं दुःखं, कर्म कृत्वा कृत्वा प्राणभूतजीवसत्त्वाः वेदनां वेदयन्ति, न तु अकृत्यम्, अस्पृश्यम् अक्रियमाणकृतं दुःखम्, अकृत्वा अकृत्वा प्राणभूतजीवसत्त्वा वेदनां वेदयन्तीत्यतोऽसत्यमन्यतीर्थिकानां मतमिति। पुनरन्यतीर्थिकमतम्--तथाहि--एको जीव एकस्मिन् समये द्वे क्रिये -- ऐर्यापथिकी साम्परायिकी च युगपत् करोति तदसत्यम्, तयोः परस्परविरुद्धस्वभावत्वात्। यत ऐर्यापथिकी

भाषण से पहिले भाषा भाषा नहीं होती है। जो बोली जा रही है वही भाषा होती है। भाषण के बाद भी भाषा भाषा नहीं होती है। बोलते हुए की भाषा भाषा होती है। नहीं बोलते हुए की भाषा भाषा नहीं होती है। भाषा की तरह क्रिया भी जाननी चाहिये। कृत्य दु ख है। स्पृश्य दुःख है। क्रियमाण कृत दुःख है। कर्म कर कर के प्राग, भूत, जीव, सत्त्व वेदना भोगते हैं। अकृत्य, अस्पृश्य, अक्रियमाणकृत दुःख नहीं है। कर्म नहीं करके प्राण, भूत, जीव, सत्त्व वेदना भोगते हैं। इसलिये अन्यतीर्थिकों का मत असत्य है। तथा-अन्यतीर्थिकों का ऐसा और भी मत है कि एक जीव एक समय में ईर्यापथिकी और साम्परायिकी ऐसी दो क्रियाएँ एक साथ करता है। सो यह भी असत्य है-क्योंकि ये दोनों क्रियाएँ परस्पर में विरुद्ध स्वभाव वाली हैं-कारण कि ऐर्यापथिकी जो क्रिया होती है वह कषाय के उदय के अभाव में होती है और जो साम्परायिकी क्रिया है वह कषाय के उदय में होती है। इसलिये जीव एक

ભાષણની પહેલાંની ભાષા ભાષા હોતી નથી જે બોલવામા આવે છે એજ ભાષા હોય છે ભાષણ પછીની ભાષા પણ ભાષા નથી. બોલનારની ભાષાજ ભાષા કહેવાય છે નહીં બોલનારની ભાષા, ભાષા કહેવાતી નથી ભાષાની જેમ જ ક્રિયા વિષે પણ સમજવું, કૃત્ય દુ ખ છે સ્પૃશ્ય દુ ખ છે. ક્રિયમાણ કૃત દુ.ખ છે કર્મ કરીને પ્રાણ, ભૂત, જીવ. સત્ત્વ વેદના ભોગવે છે. અકૃત્ય, અસ્પૃશ્ય, અક્રિયમાણ કૃત દુ.ખ નથી, કર્મ નહીં કરી કરીને પ્રાણ, ભૂત, જીવ, સત્ત્વ વેદના ભોગવતા નથી. આ કારણે અન્ય તીર્થિકોનો મત અસત્ય છે, તથા-અન્ય તીર્થિકોની બીજી એક એવી માન્યતા છે કે એક જીવ એક જ સમયે ઇર્યાપથિકી સામ્પરાયિકી એ બે ક્રિયાએ એક સાથે કરે છે તેમની તે માન્યતા પણ અસત્ય છે. કારણ કે તે બે ક્રિયાઓ પરસ્પર વિરોધી સ્વભાવવાળી છે. ઇર્યાપથિકી ક્રિયા કષાયના ઉદયનો અભાવ હોય ત્યારે જ થાય છે. પરંતુ સામ્પરાયિકી ક્રિયા તો કષાયનો

समय वीइक्कंत च ण कडा किरिया दुक्खा, सा किं करणओ दुक्खा अकरणओ दुक्खा, अकरणओ ण सा दुक्खा, नो खलु सा करणओ दुक्खा, सेव वत्तव्व सिया । अकिच्च दुक्ख अफुस दुक्ख, अकज्जमाणकड दुक्ख, अकट्टु अकट्टु पाणभूय जीवसत्तावेयण वेदेति, इति वत्तव्व सिया, से कहमेय भते एव० ॥ सू० १ ॥

छाया–अन्ययूथिकाः खलु भदन्त ! एवमाख्यान्ति यावदेव प्ररूपयंति, एवं खलु चलमानमचलितम् यावत् निर्जीर्यमाणमनिर्जीर्णम्, द्वौ परमाणुपुद्गलौ एकतो न संहन्येते, कस्मात् द्वौ परमाणुपुद्गलौ एकतो न संहन्येते, द्वयो परमाणुपुद्गलयोनास्ति स्नेहकायः तस्मात् द्वौ परमाणुपुद्गलौ एकतो न संहन्येते, त्रयः परमाणुपुद्गला एकत संहन्यन्ते, कस्मात् त्रय परमाणुपुद्गला एकत संहन्यन्ते,

सूत्रार्थ—(भंते) हे भदन्त ! (अन्न उत्थिया णं) अन्यतीर्थिकजन (एव माइक्खति) इस प्रकार से कहते हैं (जाव एव परूवेति) यावत् इस प्रकार से प्ररूपित करते हैं कि (चलमाणे अचलिए) जो चल रहा है वह चलित नहीं कहाता है (जाव निज्जरिज्जमाणे अणिज्जिण्णे) यावत् जिसकी निर्जरा हो रही है वह निर्जीर्ण नहीं कहाता । (दो परमाणु पोग्गला एगयओ न साहणति) दो परमाणु पुद्गल एक स्कंध रूप में नहीं परिणमते हैं । (दोण्ह परमाणुपोग्गलाणं नत्थि सिणेहकाए (दो परमाणु पुद्गलों के स्नेहकाय नहीं होताहै । (तम्हा दो परमाणुपोग्गला एगयओ न साहणति) इसलिये दो परमाणुपुद्गल एक स्कंधरूप में नहीं परिणमते हैं । (तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणति) तीन पर

अन्न उत्थियाणं भंते ! एव आइक्खंति " ईत्यादि

सूत्रार्थ—(भंते !) हे भगवन् ! (अन्नउत्थियाणं) अन्य तीर्थिको (एव आइक्खंति) આ પ્રમાણે કહે છે (जाव एव परूवेति) (यावत्) આ પ્રમાણે પ્રરૂપણા કરે છે કે (चलमाणे अचलिए) જે ચાલી રહ્યું છે તેને ચલિત (ચાલી ચૂક્યું) કહી શકાય નહીં (जाव निज्जरिज्जमाणे अणिज्जिण्णे) (यावत्) જેની નિર્જરા થઈ રહી છે તેને નિર્જીર્ણ કહી શકાય નહીં. (दो परमाणुपोग्गला एगयो न साहणंति) બે પરમાણુ પુદ્ગલો એક સ્કંધરૂપે પરિણમતા નથી, (दोण्ह परमाणु पोग्गलाणं नत्थि सिणेहकाए) બે પરમાણુ પુદ્ગલોમાં સ્નેહકાયનો અભાવ હોય છે (तम्हा दो परमाणुपोग्गला एगयओ न साहणंति) તેથી બે પરમાણુ પુદ્ગલો એક સ્કંધરૂપે પરિણમતા નથી. (तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति)

मूलम्—अन्न उत्थिया णं भंते ! एवं आइक्खंति जाव एवं परूवेंति, एवं खलु चलमाणे अचलिए जाव निज्जरिज्जमाणे अणिज्जिन्ने दो परमाणु पोग्गला एगयओ न साहणंति, दोण्हं परमाणुपोग्गलाणं नत्थि सिणेहकाए, तम्हा दो परमाणुपोग्गला एगयओ न साहणंति, तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति, कम्हा तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति, तिण्हं परमाणुपोग्गलाणं अत्थि सिणेहकाए, तम्हा तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति ते भिज्जमाणा दुहा वि, तिहा वि कज्जंति, दुहा कज्जमाणा एगयओ दिवड्ढे परमाणु पोग्गले भवइ, एगयओ वि दिवड्ढे परमाणुपोग्गले भवइ, तिहा कज्जमाणा तिण्णि परमाणुपोग्गला भवंति, एवं जाव चत्तारि० पंच परमाणु पोग्गला एगयओ साहणंति, एगयओ साहणित्ता दुक्खत्ताए कज्जंति, दुक्खे वि य णं से सासए सया समियं उवचिज्जइ य अवचिज्जइ य। पुव्विं भासा भासा, भासिज्जमाणी भासा अभासा, भासासमय विइक्कंतं च णं भासिया भासा, जा सा पुव्वं भासा भासा, भासिज्जमाणी भासा अभासा, भासा समय विइक्कंतं च णं भासिया भासा, सा किं भासओ भासा, अभासओ भासा, अभासओ णं सा भासा, नो खलु सा भासओ भासा। पुव्विं किरिया दुक्खा, कज्जमाणी किरिया अदुक्खा, किरिया समयवीइक्कंतं च णं कडा किरिया दुक्खा; पुव्विं किरिया दुक्खा, कज्जमाणा अदुक्खा, किरिया

संहन्यन्ते संहत्य दुःखतया क्रियन्ते, दुःखमपि च खलु तत् शाश्वत सदा समितम् उपचीयते चाऽपचीयते च । पूर्वं भाषा भाषा, भाष्यमाणा भाषा अभाषा, भाषासमयव्यतिक्रान्ता च खलु भाषिता भाषा, या सा पूर्वं भाषा भाषा, भाष्यमाणा भाषा अभाषा, भाषासमयव्यतिक्रान्ता च खलु भाषिता भाषा, सा किं भाषमाणस्य भाषा, अभाषमाणस्य? अभाषमाणस्य खलु सा भाषा नो खलु सा भाष

इसी तरह से यावत् चार परमाणु पुद्गलों के विषय में जानना चाहिये। (पंच परमाणुपोग्गला एगओ साहणंति) पांच परमाणु पुद्गल स्कन्ध रूप से परिणम जाते हैं। (साहणिज्जा दुक्खत्ताए कज्जति) और स्कन्धरूप में परिणम करके वे दुःखरूप-कर्मरूप हो जाते हैं। (दुक्खे वि य णं से सासए सया समियं उवचिज्जइ य अवचिज्जइ य) दुःखरूप वह कर्म सर्वदा शाश्वत रहता है। और अच्छी तरह से वह उपचय और अपचय को प्राप्त करता रहता है। (पुव्विं भासा भासा, भासिज्जमाणी भासा अभासा) बोलने के पहिले भाषा भाषा है। बोलते समय भाषा अभाषा है। (भासासमयवितिक्कंतं च णं भासिया भासा) भाषा के समय को उल्लंघन करने वाली बोली गई ऐसी भाषा भाषा है। (जा सा पुव्विं भासा भासा, भासिज्जमाणी भासा अभासा, भासासमयवितिक्कंतं च णं भासिया भासा, सा किं भासओ भासा अभासओ भासा) यदि वह बोलने के पहिले की भाषा भाषा है, बोलते समय की भाषा अभाषा है, और बोलने के समय को उल्लंघन करने वाली ऐसी बोली गई भाषा

(યાવત્) ચાર પરમાણુ પુદ્ગલોના વિષયમાં પણ સમજવું (पंच परमाणुपोग्गला एगओ साहणंति) પાંચ પરમાણુ પુદ્ગલો એક સ્કંધરૂપે પરિણમે છે (साहणिज्जा दुक्खत्ताए कज्जति) અને સ્કંધરૂપે પરિણમીને તેઓ દુઃખરૂપ-કર્મરૂપ થઈ જાય છે (दुक्खे वि णं सेसासए सया समियं उवचिज्जइ य अवचिज्जइ य) દુઃખરૂપ તે કર્મ સદા શાશ્વત રહે છે, અને તે સારી રીતે ઉપચય અને અપચય પામ્યા કરે છે (पुव्विं भासा भासा भासिज्जमाणी भासा अभासा) બોલ્યા પહેલાં ભાષા; ભાષા છે બોલતી વખતે ભાષા અભાષા છે (भासा समयविइक्कंतं च णं भासिया भासा) ભાષાના સમયનું ઉલ્લંઘન કરનારી બોલવામાં આવેલી ભાષા; ભાષા છે (जा सा पुव्विं भासा भासा, भासिज्ज माणी भासा अभासा, भासासमयविइक्कंतं च णं भासिया भासा, सा किं भासओ भासा अभासओ भासा) જે બોલ્યા પહેલા ભાષા; ભાષા હોય, બોલતી વખતની ભાષા અભાષા હોય અને બોલવાના સમયનું ઉલ્લંઘન કરનારી એવી

त्रयाणां परमाणुपुद्गलानामस्ति स्नेहकायः तस्मात् त्रयः परमाणुपुद्गलाः एकतः संहन्यन्ते, ते भिद्यमाना द्विधा अपि त्रिधा अपि क्रियते, द्विधा क्रियमाणा एकतो द्व्यर्धः परमाणुपुद्गलो भवति, एकतोपि द्व्यर्धः परमाणुपुद्गलो भवति, त्रिधा क्रियमाणाः त्रयः परमाणुपुद्गला भवंति, एवं चत्वारः, पञ्च परमाणुपुद्गलाः एकतः

माणु पुद्गल एक स्कन्धरूप में परिणमते हैं। (कम्हा) किस कारण से (तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति) तीन परमाणु पुद्गल एक स्कन्ध में परिणमते हैं (तिण्हं परमाणुपोग्गलाणं अत्थि सिणेहकाए) तो इसका उत्तर यह है कि उन तीन परमाणु पुद्गलों में स्नेहकाय होता है। (तम्हा तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति) इसलिये तीन परमाणु पुद्गल स्कन्ध रूप में परिणम जाते हैं। (ते भिज्जमाणा दुहा वि, तिहा वि कज्जंति) यदि इन तीन परमाणुओं के भाग किये जावे तो उनके दो भाग भी हो सकते हैं और तीन भाग भी हो सकते हैं। (दुहा कज्जमाणा एगयओ दिवड्ढे परमाणुपोग्गले भवइ, एगयओ वि दिवड्ढे परमाणुपोग्गले भवइ) जब इनके दो भाग किये जावें तो वे देढ १॥-१॥ देढ के दो होते हैं-अर्थात् १॥ परमाणु का एक भाग और १॥ परमाणु का दूसरा भाग। (तिहा कज्जमाणा तिण्णि परमाणुपोग्गला भवंति) यदि उन परमाणु पुद्गलों के जो तीन भाग किये जावें तो तीन परमाणु पुद्गल अलग २ होकर तीन भाग बन जावेंगे। (एवं जाव चत्तारि०)

ત્રણ પરમાણુ પુદ્ગલો એક સ્કંધરૂપે પરિણમે છે (कम्हा) કયા કારણથી (तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति) ત્રણ પરમાણુ પુદ્ગલો એક સ્કંધ રૂપે પરિણમે છે? (तिण्हं परमाणुपोग्गलाणं अत्थि सिणेहकाए) તે ત્રણ પરમાણુ પુદ્ગલોમા સ્નેહકાયનો સદ્ભાવ હોવાથી (तम्हा तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति) તે ત્રણ પરમાણુ પુદ્ગલો સ્કંધરૂપે પરિણમે છે. (ते भिज्जमाणा दुहा वि, तिहा वि कज्जंति) જો તે સ્કંધના વિભાગ કરવામાં આવે તો તેના બે વિભાગ પણ થઇ શકે છે અને ત્રણ વિભાગ પણ થઇ શકે છે (दुहा कज्जमाणा एगयओ दिवड्ढे परमाणुपोग्गले भवइ, एगयओ वि दिवड्ढे परमाणु पोग्गले भवइ) જ્યારે તેના બે ભાગ કરવામા આવે છે ત્યારે ત્યારે ૧॥-૧॥ ના બે ભાગ થાય છે. એટલે કે ૧॥ પરમાણુનો એક ભાગ અને ૧॥ પરમાણુનો બીજો ભાગ થાય છે. (तिहा कज्जमाणा तिण्णि परमाणु पोग्गला भवंति) જો તેના ત્રણ ભાગ કરવામા આવે તો ત્રણે પરમાણુ પુદ્ગલો જુદા પડીને એક એક પરમાણુનો પ્રત્યેક ભાગ બને છે, (एवं जाव चत्तारि०) એજ પ્રમાણે

तदेव वक्तव्यं स्यात् । अकृत्यं दुःखम्, अस्पृश्यं दुःखम्, अक्रियमाणकृतं दुःखम्, अकृत्वा अकृत्वा प्राणभूतजीवसत्त्वा वेदनां वेदयन्ति इति वक्तव्यं स्यात्, तत्क थमेतद् भदन्त ! एवम् ? ॥ सू० १ ॥

टीका–'अन्न उत्थिया णं भंते ' अन्ययूथिकाः खलु भदन्त ! 'एवमाइक्खंति' एवमाख्यान्ति–एवं वक्ष्यमाणप्रकारेण कथयन्ति, 'जाव एवं परूवेंति' यावत् एवं प्ररूपयन्ति यावत्पदेन–' भासंति पन्नवेंति ' इत्यस्य ग्रहणम्, किं कथयन्ति तत्राह –' एवं खलु चलमाणे अचलिए ' एवं खलु चलद् अचलितम्, 'जाव निज्जरिज्जमाणे अणिज्जिण्णे ' यावत्–निर्जीर्यमाणमनिर्जीर्णम्, ' चलमाणे अचलिए

रण से दुःख–दुःखहेतु है । (अकिच्चं दुक्खं अफुसं दुक्खं, अकज्जमाणकडं दुक्खं, अकट्टु अकट्टु पाणभूयजीवसत्ता वेयणं वेदेंति) अकृत्य दुःख है । अस्पृश्य दुःख है । अक्रियमाण कृत दुःख है । उसको नहीं करके, नहीं करके प्राण, भूत, जीव और सत्त्व वेदना को भोगते हैं, ऐसा वक्तव्य है । (से कहमेयं भंते !) सो हे भदन्त ! यह किस तरह से है ?

टीकार्थ–(अन्न उत्थिया) अन्य यूथिक अन्यमत वाले (भंते) हे भदन्त ! (एवमाइक्खंति) इस प्रकार से कहते हैं । यहां जो यावत् शब्द आया है उससे (भासंति पन्नवेंति) इन दो का ग्रहण हुआ है । क्या कहते हैं सो सूत्रकार कहते हैं–(एवं खलु चलमाणे अचलिए) जो चल रहा है वह अचलित है (जाव निज्जरिज्जमाणे अणिज्जिण्णे) यावत् जो निर्जीर्यमाण हो रहा है वह अनिर्जीर्ण है ।

[illegible] દુઃખ [illegible] દુઃખ છે (અકિચ્ચં દુક્ખં, અફુસં દુક્ખં અકજ્જમાણકડં દુક્ખં અકટ્ટુ અકટ્ટુ પાણભૂયજીવસત્તા વેયણં વેદંતિ) અકૃત્ય દુઃખ છે, અસ્પૃશ્ય દુઃખ છે, અક્રિયમાણ કૃત દુઃખ છે, તેમ [illegible] નહીં કરીને પ્રાણ ભૂત જીવ અને સત્ત્વ વેદના ભોગવે છે એવું અન્ય [illegible] (સે કહમેયં ભંતે !) તો હે ભગવન્ ! એ કેવી રીતે [illegible] છે ?

ટીકાર્થ — અન્નઉત્થિયા અન્ય તીર્થિકો અન્ય મતવાદીઓ " ભંતે " હે ભગવન્ ! [illegible] આ પ્રમાણે કહે છે. અહીં [illegible] [illegible] " ભાસંતિ પન્નવેંતિ " [illegible] [illegible] [illegible]

[illegible] ([illegible]) [illegible] છે તે અનિર્જીર્ણ છે [illegible]

माणस्य भाषा। पूर्वं क्रिया दुःखा, क्रियमाणा क्रिया अदुःखा, क्रियासमयव्यतिक्रान्ता च खलु कृता क्रिया दुःखा। या सा पूर्वं क्रिया दुःखा, क्रियमाणा क्रिया अदुःखा, क्रियासमयव्यतिक्रान्ता च खलु कृता क्रिया दुःखा, सा किं करणतो दुःखा अकरणतो दुःखा, अकरणतः खलु सा दुःखा, नो खलु सा करणतो दुःखा,

भाषा है तो वह भाषा किस की है क्या बोलते हुए की वह भाषा है? या नहीं बोलते हुए की वह भाषा है? (अभासओ णं सा भासा, नो खलु सा भासओ भासा) अभाषमान नहीं बोलते हुए की वह भाषा है बोलते हुए की वह भाषा नहीं है।(पुव्विं किरिया दुक्खा, कज्जमाणी किरिया अदुक्खा) पहिले क्रिया दुःख है-दुःख हेतु है। की जाती क्रिया दुःख-दुःख हेतु-नहीं है। (किरिया समयवइक्कंत णं कडा किरिया दुक्खा) तथा पहिले की गई क्रिया दुःख-दुःखहेतु है। (पुव्विं किरिया दुक्खा, कज्जमाणी किरिया अदुक्खा किरियासमयवीइक्कंतं च णं कडा किरिया दुक्खा सा किं करणओ दुक्खा, अकरणओ दुक्खा) पहिले क्रिया दुःख है, की जाती क्रिया दुःख नहीं है। और की गई क्रिया दुःख है तो वह क्रिया करण से दुःख है कि नहीं करण से दुःख है (नो खलु सा करणओ दुक्खा, सेवं वत्तव्वं सिया) वह करण से दुःख नहीं है ऐसा कहना चाहिये। अर्थात्-अक-

બોલાયેલી ભાષા; ભાષા હોય તો તે ભાષા કોની છે-શું બોલતાની તે ભાષા છે કે નહીં બોલતાની તે ભાષા છે? (अभासओ णं सा भासा, नो खलु सा भासओ भासा) અભાષમાનની-નહીં બોલનારની-તે ભાષા છે, પરંતુ ભાષમાનની-બોલતાની તે ભાષા નથી (पुव्विं किरिया दुक्खा, कज्जमाणी किरिया अदुक्खा) કર્યા પહેલાં ક્રિયા દુ:ખ-દુ:ખહેતુ છે, જે ક્રિયા કરવામાં આવી રહી હોય છે તે દુ:ખ-દુ:ખહેતુ નથી. (किरिया समयवइक्कंत ण कडा किरिया दुक्खा) તથા પહેલાં કરાયેલી ક્રિયા દુ:ખ-દુ:ખહેતુ છે (पुव्विं किरिया दुक्खा, कज्जमाणी किरिया अदुक्खा, किरिया समयवीइक्कंत च णं कडा किरिया दुक्खा सा किं करणओ दुक्खा, अकरणओ दुक्खा) કર્યા પહેલાંની ક્રિયા દુ:ખહેતુ હોય, કરાતી ક્રિયા દુ:ખહેતુ ન હોય અને કરાયેલી ક્રિયા દુ:ખહેતુ હોય, તો તે ક્રિયા કરણકાલમાં કરનાર વ્યક્તિના દુ:ખની હેતુભૂત હોય છે કે નહીં કરનારના દુ:ખની હેતુભૂત હોય છે? (नो खलु सा करणओ दुक्खा, सेवं वत्तव्वं सिया) તે કરનારને દુ:ખની હેતુભૂત થતી નથી-પણ અક્રિયમાણ હોય ત્યારે કરવાને સમયે ન કરાતી ક્રિયા નહીં કરનારને દુ:ખની હેતુભૂત થાય છે. (તે

४, छिज्जमाणे अच्छिण्णे ५, भिज्जमाणे अभिण्णे ६, दज्झमाणे अदड्ढे ७, मिज्जमाणे अमडे ८, छाया-उदीर्यमाणमनुदीरितम् २, वेद्यमानमवेदितम् ३, प्रहीयमाणमप्रहीणम् ४, छिद्यमानमच्छिन्नम् ५, भिद्यमानमभिन्नम् ६, दह्यमानम दग्धम् ७, म्रियमाणममृतम् ८ " इति । एषु सर्वेषु अन्यतीर्थिकाः वर्तमानसमये भूतकालिककार्यस्यासंभवात् वर्तमानभूतत्वयोरेकसमयतया निर्देशं न मन्यन्ते, एवं निर्जीर्यमाणं कर्म अनिर्जीर्णमिति ते मन्यन्ते, वर्तमानसमये भूतकालिककार्य स्याकरणात्, वर्तमानत्वभूतत्वयोरेकत्वया व्यपदेशस्यासंगतत्वादिति, निर्जीयमा णमनिर्जीर्णमिति कथयन्ति । पुनश्च कथयन्ति-' दो परमाणु पोग्गला ' द्वौ पर-

पहिज्जमाणे अपहीणे४, छिज्जमाणे अच्छिण्णे५, भिज्जमाणे अभिण्णे६, डज्झमाणे अदड्ढे ७, मिज्जमाणे अमडे ८,) इस पाठ का संग्रह किया गया है । इसका तात्पर्य यह है कि अन्यतीर्थिक जन जैसा चलत् कर्म को चलित नहीं मानते हैं, उसी प्रकार से वे उदीर्यमाण कर्म को उदीर्ण वेद्यमान कर्म को वेदित, प्रहीयमाण कर्म को प्रहीण, छिद्यमान कर्म को छिन्न, भिद्यमान कर्म को भिन्न दह्यमान कर्म को दग्ध और म्रियमाण को मृत, निर्जीर्यमाण कर्म को निर्जीर्ण नहीं मानते हैं । क्यों कि इन सब में वर्तमान काल और भूतकाल का निर्देश हुआ है । सो वर्तमान समय में भूतकालिक कार्य की असंभवता के कारण वर्तमान काल और भूतकाल इन दोनों का एक समयावच्छेदेन निर्देश होना असंगत है । अतः वे ऐसा निर्देश नहीं मानते हैं । वे तो (चलमाणे अचलिए जाव निज्जरिज्जमाणे अनिज्जिण्णे) ऐसा ही मानते हैं ।

पहिज्जमाण अपहीणे ४ छिज्जमाणे अच्छिण्णे ५ भिज्जमाणे अभिण्णे ६ डज्झमाण अदड्ढे ७ मिज्जमाण अमडे ८" આ પાઠનો સંગ્રહ કરાયો છે. તેનું તાત્પર્ય એ છે કે અન્યતીર્થિકો જેવી રીતે ચલિત કર્મને ચલિત માનતા નથી, એ જ પ્રમાણે ઉદીર્યમાણ કર્મને ઉદીર્ણ માનતા નથી, વેદ્યમાન કર્મને વેદિત માનતા નથી પ્રહીયમાણ કર્મને પ્રહીણ માનતા નથી, છિદ્યમાન કર્મને છિન્ન માનતા નથી ભિદ્યમાન કર્મને ભિન્ન માનતા નથી, દહ્યમાન કર્મને દગ્ધ માનતા નથી મ્રિયમાણ કર્મને મૃત માનતા નથી અને નિર્જીર્યમાણ કર્મને નિર્જીર્ણ માનતા નથી, કારણ કે એ બધામાં વર્તમાન અને ભૂતકાળનો નિર્દેશ થયો છે વર્તમાન સમયમાં ભૂતકાલિક કાર્યની અસંભવતાને કારણે વર્તમાનકાળ અને ભૂતકાળ એ બન્નેનો એક સમયાવચ્છેદેન નિર્દેશ થવો અસંગત છે, તેથી તેઓ એવા નિર્દેશને માનતા નથી. તેઓ તો " ચલ માણ અચલિએ જાવ નિજ્જરિજ્જમાણ અનિજ્જિણ્ણે ' એવું જ માને છે તથા

त्ति' चलद् अचलितम्, चलत् कर्म चलितमिति न संभवति, चलता कर्मणा चलितकार्यस्यानिष्पादनात्, तथा चलदिति वर्तमाननिर्देशः चलितमिति भूतनिर्देशः, शतृप्रत्ययक्तप्रत्यययोर्वर्तमानभूतकालबोधकत्वात्, तथा च वर्तमानस्य भूततया व्यवहारो न संभवति, अतश्चलत्कर्म चलितमिति न मन्यन्ते परतीर्थिकाः १ 'जाव निज्जरिज्जमाणे अनिज्जिण्णे' यावत् निर्जीर्यमाणमनिर्जीर्णम्। अत्र यावत्पदेन "उदीरिज्जमाणे अणुदीरिए २, वेइज्जमाणे अवेइए ३, पहिज्जमाणे अपहीणे

तात्पर्य इस कथन का इस प्रकार से है-कि जो क अभी आत्मा से चल रहा है चल चुका नहीं है उसको चल चुका मानना यह बात संभवित नहीं होती है। क्यों कि वर्तमान में चलता हुआ कर्म चल चुके कर्म के कार्य को निष्पादन करने में असमर्थ माना गया है। तथा (कर्म आत्मा से) (चलत्) चल रहा है यह निर्देश वर्तमान काल संबंधी है। और (चलितम्) कर्म आत्मा से चल चुका यह निर्देश भूतकाल संबंधी है। (चलत्) में चल् धातु से वर्तमान काल को लेकर (शतृ) प्रत्यय हुआ है। और (चलितम्) में भूतकाल को लेकर (क्त) प्रत्यय हुआ है। और इस तरह (शतृ) और (क्त) ये दो प्रत्यय क्रमशः वर्तमान और भूतकाल के जब निर्देशक हैं-बोधक हैं तब वर्तमान का भूतकाल रूप से व्यवहार कैसे संभवित हो सकता है। अर्थात् नहीं हो सकता। इसलिये अन्यतीर्थिकजन (चलत् कर्म चलितम्) ऐसा नहीं मानते हैं। (जाव निज्जरिज्जमाणे अनिज्जिण्णे) यावत् निर्जीर्यमाणं अनिर्जीर्णम्) यहां यावत् पद से (उदीरिज्जमाणे अनुदीरिए२, वेइज्जमाणे अवेइए३,

જે કર્મ વર્તમાનકાળે આત્મામાથી ચાલી રહ્યુ છે તેને ચાલી ચૂકયુ કહી શકાય નહીં, કારણુ કે વર્તમાનમા ચાલી રહેલા કર્મને ચાલી ચૂકેલા કર્મના કાર્યનું નિષ્પાદન કરવાને અસમર્થ માનવામાં આવે છે, તથા "चलत्" ચાલી રહ્યુ છે" વર્તમાનકાળને નિર્દેશ કરે છે. અને "चलितम्" "ચાલી ચૂકયુ છે" તેની મારફત ભૂતકાળને નિર્દેશ થાય છે "चलत्'માં "चल" ધાતુને વર્તમાનકાળને "शतृ" પ્રત્યય લાગ્યે છે. અને "चलितम्" મા ભૂતકાળને "क्त" પ્રત્યય લાગ્યે છે. આ રીતે "शतृ" અને "क्त" પ્રત્યયે અનુક્રમે વર્તમાન અને ભૂતકાળના નિર્દેશક હોવાથી વર્તમાનને ભૂતકાળરૂપે વ્યવહાર સંભવી શકે જ નહી તેથી અન્ય તીર્થિકો "चलत् कर्म चलितम्" એવું માનતા નથી "जाव निज्जरिज्जमाणे अनिज्जिण्णे" (यावत्) જેની નિર્જરા થઇ રહી છે તે અનિર્જીર્ણું છે-તેની નિર્જરા થઇ ચૂકી એવું કહી શકાય નહીં અહીં "यावत्" પદથી "उदीरिज्जमाणे अनुदीरिए २, वेइज्जमाणे अवेइए ३,

साहणंति' तस्मात् द्वौ परमाणुपुद्गलौ एकतो न सहन्येते, यस्मात् द्वयोः परमाण्वोः स्नेहकायो नास्ति तस्मात् कारणात् द्वयो परमाण्वोः परस्परं समेलन न भवति, तथा-' तिण्णि परमाणुपोग्गला ' त्रय परमाणुपुद्गला ' एगयओ साहमंति ' एकतः सहन्यते ' कम्हा तिण्णि परमाणु पोग्गला एगयओ साहणंति ' कस्मात् त्रयः परमाणुपुद्गला एकत सहन्यते? ' तिण्हं परमाणु पोग्गलाण ' त्रयाणां परमाणुपुद्गलानाम् ' अत्थि सिणेहकाए' अस्ति स्नेहकायः-स्नेहपर्यायराशिः, 'तम्हा

परमाणुपोग्गला एगयओ न साहणति) दो परमाणु पुद्गल आपस में मिलकर एक स्कन्धरूपपर्याय को उत्पन्न नहीं कर सकते हैं। (स्निग्ध-रूक्षत्वाद् बधः) ऐसा सिद्धान्त का वचन है। स्निग्ध स्निग्ध का, स्निग्ध रूक्ष का और रूक्ष रूक्ष का आपस में बंध हो जाता है। अत बध होने के लिये स्निग्ध रूक्ष गुण सापेक्ष होता है। यह दो परमाणु सूक्ष्म हैं-अत उनमें स्नेह-चिकाश नहीं रहता है। इस कारण उन का परस्पर समेलन नहीं होता है। तथा-(तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति) तीन परमाणु पुद्गल आपस में मिलकर एक त्र्यणुक रूप स्कन्ध पर्याय को उत्पन्न करते हैं। क्यों कि जब ये आपस में मिलते हैं तब इनमें स्थूलता आ जाती है। इसका कारण उनमें स्नेहकाय आ जाने से उनका परस्पर में संमेलन हो जाता है। यही बात सूत्रकार ने (कम्हा तिण्णि परमाणु पोग्गला एगयओ साहणंति) इस सूत्रपाठ द्वारा शंका रूप से उत्थापित कर (अत्थि सिणेहकाए तम्हा तिण्णि परमाणु पोग्गला

પર્યાય રાશિ હોતી નથી તે કારણે "दो परमाणु पोग्गला एगयओ न साहणंति" બે પરમાણુ પુદ્ગલો પરસ્પર મળી જઈને એક સ્કંધરૂપ પર્યાયને ઉત્પન્ન કરી શકતાં નથી. "स्निग्धरूक्षत्वाद् बधः" એવું સિદ્ધાતનું વચન છે સ્નિગ્ધ સાથે સ્નિગ્ધનો, સ્નિગ્ધરૂક્ષનો અને રૂક્ષરૂક્ષનો પરસ્પરમાં બંધ થઈ જાય છે તેથી બંધ થવાને માટે સ્નિગ્ધ રૂક્ષ ગુણ સાપેક્ષ હોય છે આ બે પરમાણુ સૂક્ષ્મ હોય છે, તેથી તેમનામા સ્નેહ-ચિકાશ રહેતી નથી. તે કારણે તેમનો પરસ્પરમાં સયોગ થતો નથી. તથા " तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति " ત્રણ પરમાણુપુદ્ગલો અરસપરસમા મળીને એક ત્ર્યણુકરૂપ સ્કંધપર્યાયને ઉત્પન્ન કરે છે, કારણ કે જ્યારે તેઓનો પરસ્પરમાં સંયોગ થાય છે ત્યારે તેમનામાં સ્થૂલતા આવી જાય છે, તે કારણે તેમનામાં સ્નેહકાય આવી જવાથી તેમનો પરસ્પરમાં સંયોગ થઈ જાય છે એ જ વાત સૂત્રકારે " कम्हा तिण्णि परमाणु पोग्गला एगयओ साहणंति " આ સૂત્રપાઠ વડે શંકારૂપે રજૂ કરીને "अत्थि

माणुपुद्गलौ 'एगयओ न साहणंति' एकतो न संहन्येते, एकत एकत्वेनैकस्कंध-स्वरूपेण न संहन्येते न संहतौ संमिलितौ स्याताम्, द्वयोः परमाण्वोः परस्परं संमेलनं कुतो न भवतीति कथयति-'कम्हा दो परमाणु पोग्गला एगयओ न साहणंति' कस्मात् द्वौ परमाणुपुद्गलौ एकतो न संहन्येते, एकस्कन्धतया न परिणमेते। परस्परासंमेलने कारणमाह-'दोण्हं परमाणुपोग्गलाणं' द्वयोः परमाणु पुद्गलयोः 'नत्थि सिणेहकाये' नास्ति स्नेहकायः' द्वयोः परमाण्वोः सूक्ष्मत्वात्तत्र स्नेहकायः-स्नेहपर्यायराशिर्नास्ति, 'तम्हा दो परमाणुपोग्गला एगयओ न

तथा-और भी इनकी क्यार मान्यताएँ हैं सो सूत्रकार इन्हें (दो परमाणु पोग्गला) इत्यादि सूत्र द्वारा प्रकट कर रहे हैं-(दो परमाणुपोग्गला एगयओ न साहणंति) दो परमाणु पुद्गल एकस्कन्धरूप में नहीं परिणमते हैं। इस विषय में उनका ऐसा कहना है कि दो परमाणु मिलकर द्व्यणुक स्कंध को नहीं बना सकते हैं। क्यों कि वह अत्यन्त सूक्ष्म होते हे। इसलिये उनमें स्नेह गुण जो बंध होने में अर्थात् स्कन्ध रूप होने में कारण होता है नहीं होता हैं। यही बात सूत्रकार ने (कम्हा दो परमाणुपोग्गला एगयओ न साहणंति) इस सूत्र द्वारा शंकारूप में उत्थापित कर (दोण्हं परमाणु पोग्गलाणं नत्थि सिणेहकाए) इस उत्तर सूत्र द्वारा स्पष्ट की है। दो परमाणुपुद्गल एक स्कन्ध को बनाने के लिये संहत-संमिलित किस कारण से नहीं होते हैं? तो इसका उत्तर उनकी ओर से ऐसा दिया गया है कि वे दो परमाणु सूक्ष्म होते हैं-अतः सूक्ष्म होने के कारण स्नेहपर्याय राशि उनमें नहीं होती है। इस कारण (दो

તેમની બીજી માન્યતાઓ કયી કયી છે તે સૂત્રકાર "दो परमाणु पोग्गला" ઇત્યાદિ સૂત્રો વડે પ્રકટ કરે છે—"दो परमाणु पोग्गला एगयओ न साहणंति" બે પરમાણુ પુદ્ગલો એક સ્કંધરૂપે પરિણમતા નથી. તે બાબતમાં તેમની માન્યતા એવી છે કે બે પરમાણુ મળીને બે અણુવાળો (દ્વયણુક) સ્કંધ બનાવી શકતા નથી કારણ કે તેઓ અત્યંત સૂક્ષ્મ હોય છે. તેથી સ્કંધરૂપે પરિણમવા માટે કારણરૂપ સ્નેહગુણનો તેમનામાં સદ્ભાવ હોતો નથી. એ જ વાત સૂત્રકારે "कम्हा दो परमाणुपोग्गला एगयओ न साहणंति" આ સૂત્રવડે શંકારૂપે ઉપસ્થિત કરીને "दोण्हं परमाणुपोग्गलाणं नत्थि सिणेहकाए" આ સૂત્રવડે પ્રતિપક્ષીઓ તરફથી તેનો ઉત્તર આપ્યો છે. બે પરમાણુ પુદ્ગલો શા કારણે સંયોગ પામીને એક સ્કંધરૂપ બનતાં નથી? તેનો આ પ્રમાણે: પ્રતિપક્ષીઓએ ઉત્તર આપ્યો છે-બે પરમાણુ સૂક્ષ્મ હોય છે સૂક્ષ્મ હોવાને લીધે તેમનામાં સ્નેહ-

माणु पोग्गला भवति' त्रिधाक्रियमाणा अथ परमाणुपुद्गला भवन्ति यदि तेषां परमाणुपुद्गलानां भागत्रयं कुर्यात् तदा एकैकः परमाणुपुद्गलो भवतीति भावः। 'एवं जाव चत्तारि०' एवं यावत् चत्वार ०, एवम्=अनेन प्रकारेण यावत् चत्वारः परमाणुपुद्गला भवन्ति। अत्र यावत्पदेन-यथा त्रयाणां पुद्गलानामालापकस्तथा चतुःसख्यकपुद्गलानामप्यालापकः कार्यः, तथाहि—' चत्तारि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति। कम्हा चत्तारि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति ? चउण्हं परमाणुपोग्गलाणं अत्थि सिणेहकाए तम्हा चत्तारि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति। ते भिज्जमाणा दुहावि चउहावि कज्जंति। दुहा कज्जमाणा एगयओ

तिण्णि परमाणुपोग्गला भवंति) यदि उन संहत हुए तीन परमाणु पुद्गलों के तीन विभाग किये जावे तो एक एक परमाणु पुद्गल के रूप में उनके ३ विभाग हो जाते हैं। (जाव चत्तारि) इसी प्रकार से यावत् चार परमाणु पुद्गल होते हैं। यहां यावत् पद से (यथा त्रयाणां परमाणुपुद्गलानां आलापकस्तथा चतु सख्यक पुद्गलानाम् आलापकः कार्यः) यह समझाया गया है कि जिस तरह से तीन पुद्गल परमाणुओं का यह आलापक कहा गया है उसी प्रकार से चार पुद्गल परमाणुओं का भी आलापक कर लेना चाहिये-वह इस प्रकार से-(चत्तारि परमाणु पोग्गला एगयओ साहणंति ? कम्हा चत्तारि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति ? चउण्हं परमाणुपोग्गलाणं अत्थि सिणेहकाए तम्हा चत्तारि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति-ते भिज्जमाणा दुहावि चउहा वि कज्जंति, दुहा कज्ज

थाय छे ' तिहा वि कज्जमाणा तिण्णि परमाणुपोग्गला भवंति " जो ते संहत (स्कंधरूपे परिणमेला) त्रण परमाणु पुद्गलोना त्रण विभाग करवामां आवे तो एक एक परमाणु पुद्गलवाळा तेमना त्रण विभाग थाय छे "एवं जाव चत्तारि " एज प्रमाणे (यावत्) चार परमाणु पुद्गलोना विषयमां पण समजवुं अहीं ' यावत् " पदथी ' यथा त्रयाणां परमाणुपुद्गलानां आलापकस्तथा चतुः संख्यक पुद्गलानाम् आलापकः कार्यः " एवुं समजाववामां आव्युं छे के जेवी रीते त्रण परमाणु पुद्गलोना आलापको कहेवामां आव्या छे एवी ज रीते चार परमाणु पुद्गलोना आलापको पण बनावी लेवा जोईए, ते आलापक आ प्रमाणे बनशे—' चत्तारि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति। कम्हा चत्तारि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति ? चउण्हं परमाणु पोग्गलाणं अत्थि सिणेहकाए तम्हा चत्तारि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति। ते भिज्जमाणा दुहावि चउहा वि कज्जंति दुहा कज्जमाणा एगयओ

तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति' तस्मात् त्रयः परमाणुपुद्गला एकतः संहन्यन्ते, त्र्यादिपरमाणूनां स्थूलत्वात् स्नेहकायो भवति ततश्च स्नेहकायसाहाय्यात् त्र्यादिपरमाणवो मिलित्वा स्कन्धाकारेण परिणता भवन्तीति भावः। 'ते भिज्जमाणा दुहावि तिहावि कज्जंति' ते भिद्यमानाः द्विधाऽपि त्रिधाऽपि क्रियंते, यदि ते संहतास्त्रयः परमाणुपुद्गला भिद्यमानाः सन्तः द्वित्रिविभागेन विभक्ताः क्रियन्ते तदा 'दुहा कज्जमाणा' द्विधा क्रियमाणाः, 'एगयओ दिवड्ढे परमाणुपोग्गले भवइ एगयओ वि दिव परमाणु पोग्गले भवइ' एकतो द्व्यर्धः परमाणुपुद्गलो भवति एकतोऽपि द्व्यर्धः परमाणुपुद्गलो भवति, यदि त्रिपरमाणुपुद्गलानां संयुक्तानां द्वौ भागौ क्रियेते तदा द्विधा कृतयो र्द्वयोरपि भागयोर्द्व्यर्धे द्व्यर्धः अर्धाधिकैकत्वसंख्यावान् परमाणुपुद्गलो भवतीत्यर्थः, 'तिहाकज्जमाणा तिण्णि पर-

---

एगयओ साहणंति) इस सूत्रपाठ से स्पष्ट की है। तीन परमाणु पुद्गल आपस में मिलकर जो स्कन्धरूपपर्याय में परिणत हो जाते हैं उसका कारण उनमें स्नेहकाय है। तात्पर्य कहने का यह है कि तीन आदि परमाणुओं में स्थूलता होने के कारण उनमें स्नेहकाय होता है, इसलिये स्नेहकाय की सहायता से वे त्र्यादिक परमाणु मिलकर स्कन्धाकार में परिणत हो जाते हैं। (ते भिज्जमाणा दुहा वि तिहा वि कज्जंति) संहत स्कंधरूप में परिणत हुए-वे तीन परमाणु पुद्गल जब विभक्त किये जाते हैं तो उनके दो टुकड़े भी हो सकते हैं, और तीन टुकडे भी हो सकते हैं। (दुहा कज्जमाणा एगयओ दिवड्ढे परमाणु पोग्गमें भवइ, एगयओ वि दिवड्ढे परमाणुपोग्गले भवइ) जब संयुक्त इनके दो टुकडे-विभाग करते हैं तो एक तरफ १।। और दूसरी तरफ भी १।। पुद्गल परमाणु हो जाता है। (तिहा कज्जमाण

सिणेहकाए तम्हा तिण्णि परमाणु पोग्गला एगयओ साहणंतिं" આ સૂત્રપાઠ વડે તેનો ઉત્તર આપ્યો છે ત્રણ પરમાણુપુદ્ગલો પરસ્પરમાં મળી જઇને જે સ્કંધ પર્યાયમાં પરિણમે છે તેનું કારણ એ છે કે તેમનામાં સ્નેહકાયનો સદ્‌ભાવ છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે ત્રણ પરમાણુઓમાં સ્થૂલતા હોવાને લીધે તેમનામાં સ્નેહકાય હોય છે, તે સ્નેહકાયની સહાયતાથી તે ત્રણ ચાર વગેરે પરમાણુઓ મળી જઇને સ્કંધરૂપે પરિણમે છે, "ते भिज्जमाणा दुहा वि तिहा वि कज्जंति" સ્કંધરૂપે પરિણમેલાં તે ત્રણ પરમાણુપુદ્ગલોને જ્યારે જુદા કરવામાં આવે છે ત્યારે તેમના બે ભાગ પણ થઈ શકે છે અને ત્રણ ભાગ પણ થઇ શકે છે, "दुहा कज्जमाणा एगयओ दिवड्ढे परमाणुपोग्गले भवइ, एगयओ वि दिवड्ढे परमाणु पोग्गले भवइ" જ્યારે તે સંયુક્ત પરમાણુઓના બે વિભાગ કરવામા આવે છે ત્યારે ૧।।-૧।। પરમાણુ પુદ્ગલના બે વિભાગ

भवन्तीति भाव, अत दुःखहेतुकत्वात् दुःखं कर्म कार्ये कारणोपचारात् 'दुक्खे वि य णं से' दुःखमपि च खलु तत्, 'सासए' शाश्वतम् 'सया समियं' सदा समितं, सम्यक् सपरिमाणं वा, 'उवचिज्जइ य' उपचीयते च 'अवचिज्जइ य' अपचीयते च, उपचीयते वृद्धिम् प्राप्नोति,अपचीयते, ह्रासं प्राप्नोति, पंच परमाणवो मिलित्वा कर्मरूपेण परिणमंति, तत्कर्म प्रवाहरूपेण नित्यं सत् सर्वदैव चयापचयौ प्राप्नोतीत्यर्थः।

त्ताए कज्जंति) ऐसा कहा है सो इसका तात्पर्य ऐसा है कि वे पांच पुद्गलपरमाणु एकट्ठे होकर कर्मरूप में परिणत हो जाते हैं। यहां जो दुःख को कर्मरूप कहा गया है सो कार्य में कारण के उपचार से कहा गया है। क्यों कि कर्म दुःख का दाता होने से दुःख का कारण होता है। और दुःख उसका कार्य होता है। अतः कार्य रूप दुःख में कर्मरूप कारण का उपचार करके उसे यहां स्वयं कर्मरूप कह दिया है। (दुक्खे वि य णं से सासए) यह दुःखरूप कर्म शाश्वत है। (सया समियं) सदा समित परिमाणुसहित है। (उवचिज्जइ अवचिज्जइ) उपचय और अपचय उसमें सर्वदा होता रहता है। तात्पर्य कहने का यह है कि पांच परमाणु मिलकर कर्मरूप से परिणम जाते हैं। यह कर्म प्रवाहरूप से नित्य होता हुआ भी सर्वदा ही चय और अपचय को प्राप्त होता रहता है। चय का अर्थ वृद्धि और अपचय का अर्थ ह्रास है। (सया समियं) पद यह प्रकट करता है कि कर्म में जो चय और अपचय होता है वह प्रमाण माप सहित होता है। इसके लिये गुणहानी का प्रकरण देखना चाहिये।

અહીં જે ' दुक्खत्ताए कज्जंति ' એવું કહેવામાં આવ્યું તેનું તાત્પર્ય એ છે કે તે પાંચ પરમાણુ પુદ્ગલ એકત્ર થઈને કર્મરૂપે પરિણમે છે અહીં જે દુઃખને કર્મરૂપ કહેવામાં આવ્યું છે તે કાર્યમાં કારણના ઉપચારની અપેક્ષાએ કહેલ છે, કારણ કે કર્મ દુઃખ દેનાર હોવાથી દુઃખનું કારણ ગણાય છે અને દુઃખ તેનું કાર્ય ગણાય છે તેથી કાર્યરૂપ દુઃખમાં કર્મરૂપ કારણના ઉપચારની અપેક્ષાએ તેને અહીં સ્વયં કર્મરૂપ કહેલ છે "दुक्खे वि य ण से सासए" તે દુઃખરૂપ કર્મ શાશ્વત છે सया समियं" સદા સમિત (પરિમાણ સહિત) છે ' उवचिज्जइ अवचिज्जइ ' તેમાં સર્વદા ઉપચય અને અપચય થયા કરે છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે પાંચ પરમાણુ મળી જઈને કર્મરૂપે પરિણમે છે તે કર્મ પ્રવાહરૂપે નિત્ય હોવા છતાં પણ સર્વદા ચય અને અપચય પામ્યા કરે છે ચય એટલે વૃદ્ધિ અને અપચય એટલે હ્રાસ. (હાનિ) "सया समियं" પદ એ બતાવે છે કે કર્મમાં જે ચય અને અપચય થાય છે તે પ્રમાણસહિત (માપ) થાય છે તેના વિષયમાં ગુણહાનીનું પ્રકરણ જોઈ લેવું

दो परमाणु पोग्गला भवंति, एगयओ वि दो परमाणुपोग्गला भवंति । चउहा कज्जमाणा चत्तारि परमाणु पोग्गला भवंति' इति । तथा 'पंच परमाणु पोग्गला' पञ्च परमाणुपुद्गलाः, 'एगयओ साहणित्ता' एकतः 'संहत्य-मिलित्वा' 'दुक्खत्ताए कज्जंति' दुःखतया क्रियन्ते, पञ्च पुद्गलाःसंहत्य दुःखतया कर्मतया क्रियन्ते

माणा एगयओ दो परमाणु पोग्गला भवंति एगयओ वि दो परमाणु-पोग्गला भवंति । चउहा कज्जमाणा चत्तारि परमाणु पोग्गला भवंति) इस आलापक का भाव यह है-कि चार पुद्गल परमाणु आपस में मिलकर एक स्कन्ध रूप पर्याय में परिणत हो जाते हैं । इनके स्कन्धरूप पर्याय से परिणत होने में कारण स्नेहकाय है । क्यों कि जब ये आपस में संमिलित होते हैं तब इनमें स्थूलता आ जाती है । संहतावस्थापन्न हुए इनके यदि विभाग किये जावें तो इनके दो तथा चार भाग होते हैं एक भाग दो दो पुद्गल परमाणुओं का होता है और जब चार भाग इनके किये जाते हैं तो इसमें एक परमाणु का एक २ भाग होता है इस तरह चार भाग हो जाते हैं । तथा-पंच परमाणुपोग्गला) पांच परमाणु पुद्गल जब आपस में मिलकर एक स्कन्ध रूप पर्याय से परिणत होते हैं तब उनकी वह स्कन्धरूप पर्याय दुःखरूप में परिणत हो जाती है । यही बात सूत्रकार ने (एगयओ साहणित्ता दुक्खत्ताए कज्जंति) इस सूत्र पाठ द्वारा समझाई है । यहां जो (दुक्ख-

---

दो परमाणुपोग्गला भवंति, एगयओ वि दो परमाणु पोग्गला भवति । चउहा कज्जमाणा चत्तारि परमाणुपोग्गला भवति" આ આલાપકોનો ભાવાર્થ આ પ્રમાણે છે ચાર પરમાણુપુદ્ગલો પરસ્પરમા સયોગ પામીને એક સ્કંધરૂપ પર્યાયમા પરિણમે છે તેમ બનવાનું કારણ એ છે કે તેમનામાં સ્નેહકાયનો સદ્ભાવ હોય છે. કારણ કે જ્યારે તેઓ પરસ્પરમાં સયોગ પામે છે ત્યારે તેમનામા સ્થૂલતા આવી જાય છે. આ રીતે સયોગ પામેલાં તે પરમાણુપુદ્ગલોના જો વિભાગ કરવામા આવે તો બે વિભાગ કરવામા આવે તો બે વિભાગ પણ થઈ શકે છે અને ચાર વિભાગ પણ થઇ શકે છે.

જો તેના બે વિભાગ કરવામાં આવે તો પ્રત્યેક વિભાગ બે બે પરમાણુ પુદ્ગલોનો બને છે, અને જો ચાર વિભાગ કરવામા આવે તો પ્રત્યેક ભાગ એક એક પરમાણુ પુદ્ગલનો બને છે તથા "पंच परमाणुपोगला" જ્યારે પાંચ પરમાણુ પુદ્ગલો પરસ્પર સાથે મળીને એક સ્કંધરૂપ પર્યાયમાં પરિણમે છે ત્યારે તેની તે સ્કંધરૂપ પર્યાય દુખરૂપે પરિણમે છે. એજ વાત સૂત્રકારે "एगयओ साहणित्ता दुक्खत्ताए कज्जंति" આ સૂત્રપાઠ વડે સમજાવી છે.

स्यर्थः, ' भासिया ' भाषिता ' भासा ' सा भाषा भवति । " सा किं भासओ भासा अभासओ भासा ' सा किं भाषमाणस्य भाषा अभाषमाणस्य भाषा, उत्तरयति-' अभासओ णं सा भासा ' अभाषमाणस्य खलु सा भाषा भवति, भाषात्पूर्वं पश्चाच्च तथावबोधात्, किन्तु 'नो खलु सा भासओ भासा ' नो खलु सा भाषमाणस्य भाषा, भाष्यमाणायास्तस्या वर्तमानत्वातिसूक्ष्मत्वेन भाषात्वासंभवात्

पदार्थ विषयक ज्ञान होता है-अत यह भाषा जो कि बोली जा चुकी है भाषा है । (जा सा पुव्विं भासा भासा, भासिज्जमाणी भासा अभासा, भासासमयवीइक्कंतं च णं भासिया भासा भासा) यदि बोलने के पहिले भाषा भाषा है, वर्तमान में बोली जाती भाषा भाषा नहीं है-और बोलने में आ चुकी भाषा भाषा है तो यहां ऐसा प्रश्न होता है कि (सा किं भासओ भासा अभासओ भासा) यह भाषा बोलते हुए व्यक्तिकी है कि नहीं बोलते हुए व्यक्ति की है । उत्तर-(अभासओ णं सा भासा यह नहीं बोलते हुए की भाषा है । तात्पर्य यह है कि भाषण से पहिले और भाषण के बाद अर्थ का बोध होने के कारण यह नहीं बोलने की भाषा है । (नो खलु सा भासओ भासा) बोलते हुए व्यक्ति की यह भाषा नहीं है । क्यों कि जो भाषा बोली जा रही है-उसमें भाषात्व स्वीकार नहीं किया गया है । इसका कारण यह है कि उससे श्रोताको अर्थ बोध नहीं होता है । मुख से पूर्णरूप से भाषा के निकल चुकने पर

જ સાંભળનારને પદાર્થ સંબંધી જ્ઞાન થાય છે-તે કારણે જે ભાષા બોલાઈ ચૂકી છે તેને ભાષા કહેવાય છે " जा सा पुव्विं भासा भासा, भासिज्जमाणी भासा अभासा, भासा समयवीइक्कंतं च णं भासिया भासा भासा " એ બોલ્યા પહેલાની ભાષાને ભાષા કહેવાતી હોય, વર્તમાનમાં બોલાતી ભાષાને ભાષા કહેવાતી ન હોય, અને બોલવામાં આવી ચૂકેલી ભાષાને ભાષા કહેવામાં આવતી હોય તો એવો પ્રશ્ન ઉદ્‌ભવે છે કે " सा किं भासओ भासा अभासओ भासा " તે બોલનાર વ્યક્તિની ભાષા છે કે નહીં બોલનાર વ્યક્તિની ભાષા છે ? ઉત્તર-(अभासओ ण सा भासा) તે નહીં બોલનારની ભાષા છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે ભાષણના પહેલાં અને ભાષણની પછી અર્થનો બોધ થવાને કારણે તે નહીં બોલનારની ભાષા છે " न खलु सा भासओ भासा " બોલનાર વ્યક્તિની તે ભાષા નથી. કારણ કે જે ભાષા બોલવામાં આવી રહી છે તેમાં ભાષાપણાનો સ્વીકાર કરવામાં આવ્યો નથી. તેનું કારણ એ છે કે તેની મારફત શ્રોતાને અર્થનો બોધ થતો નથી. મુખમાંથી પૂર્ણરૂપે

अथ भाषाविषयं प्राह–' पुव्विं ' इत्यादि । ' पुव्विं भासा भासा ' पूर्वं भाषा भाषा, पूर्वं–भाषणात् प्राक्काले भाषा=भाषा स्यात् वक्ष्यमाम भाषायाः कारणात् ' भासिज्जमाणी भासा अभासा ' भाष्यमाणा भाषा अभाषा, उच्यमाना भाषा भाषा न भवति, वर्तमानसमयस्यातिसूक्ष्मतया व्यवहारानुपयोगित्वात् । ' भासा समयवीइक्कंतं च णं ' भाषासमयव्यतिक्रान्तं च खलु, भाषासमये व्यतिक्रान्ते सतीत्यर्थः, ' भासिया ' भाषिता, निःसृता सती भाषा भवति, श्रोतुःपुरुषस्य पदार्थविषयकज्ञानोत्पादकत्वात् । पुनः प्रश्नयति–' जा सा ' इत्यादि । ' जा सा पुव्विं भासा ' या सा पूर्वं भाषा, या पूर्वं भाषणात् पूर्वं सा भाषा भवति, किन्तु ' भासिज्जमाणी भासा अभासा ' भाष्यमाणा भाषा अभाषा भाष्यमाणा= भाषितुं प्रवर्त्यमाना भाषा ण वर्त्तमानकाले या भाषा सा अभाषा=भाषा न भवति, तथा ' भासासमयवीइक्कंतं च णं ' भाषासमय व्यतिक्रान्ते भाषणसमयानन्तरमि-

अब सूत्रकार भाषा के विषय में सूत्र कहते हैं–(पुव्विं भासा भासा) भाषण करने का जो प्राक्काल है वह पूर्व शब्द का अर्थ है–अर्थात् बोलने से पहिले भाषा भाषा हैं–तात्पर्य इसका यह है कि बोलने से पहिले जो शब्द के अणुओं की थोकड़ी (पुंजरूप) होती है, वह भाषा कहलाती है। क्यों कि वह वक्ष्यमाण भाषा की कारण होती है। (भासिज्जमाणी भासा अभासा) तथा जो भाषा बोलने में आ रही है वह भाषा भाषा नहीं कहलाती है। क्यों कि वर्तमान समय अतिसूक्ष्म होता है इस कारण वह व्यवहार में अनुपयोगी होता है। (भासासमय वीइक्कंतं च णं भासिया भासा) बोलने के समय को व्यतिक्रान्त हो जाने पर–अर्थात् बोल चुकने पर भाषा भाषा है–तात्पर्य कहने का यह हैं कि जब भाषा मुख से निकल चुकती है तभी सुनने वाले पुरुष को

હવે સૂત્રકાર ભાષાના વિષયમાં સૂત્ર કહે છે–"पुव्विं भासा भासा" ભાષણ કર્યા પહેલાંના સમયને માટે અહીં "पूर्व" શબ્દ વપરાયો છે એટલે કે બોલ્યા પહેલાની ભાષાને જ ભાષા કહે છે–તાત્પર્ય એ છે કે બોલ્યા પહેલા જે શબ્દના અણુઓની થોકડી (પૂંજરૂપે) થાય છે તેને ભાષા કહે છે. કારણ કે તે વક્ષ્યમાણ ભાષાની કારણરૂપ હોય છે " भासिज्जमाणी भासा अभासा " તથા જે ભાષા બોલવામા આવી રહી હોય છે તે ભાષાને ભાષા કહી શકાય નહીં, કારણ કે વર્તમાન સમય અતિસૂક્ષ્મ હોય છે, તે કારણે તે વ્યવહારમાં અનુપયોગી હોય છે " भासा समयवीइक्कंतं च ण भासिया भासा " બોલવાનો સમય પસાર થઈ ગયા પછી, એટલે કે બોલી ચૂકયા પછીની ભાષા, ભાષા છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે જ્યારે ભાષા મુખમાથી નીકળી ચૂકે છે ત્યારે

दुक्खा' या सा पूर्वे क्रिया दुःखा भवति, 'कज्जमाणी किरिया अदुक्खा' क्रियमाणा क्रिया अदुःखा, क्रियमाणा या क्रिया सा न दुःखप्रयोजिका, 'किरिया समयवीइक्कंतं च णं कडा किरिया दुक्खा' क्रियासमयव्यतिक्रान्ते च खलु कृता क्रिया दुःखा, क्रियमाणसमयव्यतिक्रमे सति कृता निष्पादिता क्रिया दुःखप्रयोजिका भवति, अथवा पूर्वकाले क्रिया दुःखजनिका अनभ्यासात्, क्रियमाणा क्रिया न दुःखप्रयोजिका अभ्यासात्, किन्तु कृता क्रिया दुःखदा यतः क्रियाकरणानन्तरं पश्चात्तापादिर्भवति परिश्रमादिर्वा जायतेऽतः सा क्रिया दुःखेति या दुःखहेतुर्भवति-'सा किं करणओ दुक्खा अकरणओ दुक्खा' सा किं करणतो दुःखा अकरणतो दुःखा? करणस्=करणमाश्रित्य करणकाले कुर्वत इत्यर्थः सा क्रिया दुःखा अथवा किम् अकरणमाश्रित्याकुर्वत इत्यर्थ, सा क्रिया दुःखेति प्रश्नः, उत्तरयति-

किरिया दुक्खा) यदि करने के पहिले क्रिया दुःखहेतु होती है, (कज्जमाणी किरिया अदुक्खा) तथा वर्तमान में की जा रही क्रिया दुःख हेतु नहीं होती है, (किरियासमयविइक्कंतं ण कडा किरिया दुक्खा) तथा जो क्रिया अपने काल को उल्लंघन कर चुकी वह क्रिया दुःखहेतु होती है। अथवा-अनभ्यास होने के कारण पूर्वकाल में क्रिया दुःख जनक होती है, और अभ्यास हो जाने से वर्तमान काल में वही क्रिया दुःख प्रयोजक नहीं होती है। किन्तु कृत क्रिया दुःखदा होती है क्यों कि क्रिया करने के अनन्तर पश्चात्ताप आदि होता है अथवा परिश्रम आदि होता है। इसलिये वह क्रिया दुःख की हेतुभूत हो जाती है। सो (सा किं करणओ दुक्खा, अकरणओ दुक्खा) वह क्रिया जो दुःख की हेतु होती है सो करणकाल में करते हुए व्यक्ति को दुःख की हेतुभूत होती है या नहीं करने वाले को दुःख की हेतुभूत होती है। इस प्रकार का

दुक्खा " ने કર્યા પહેલાંની ક્રિયા દુઃખહેતુ હોય, " कज्जमाणी किरिया अदुक्खा " અને વર્તમાનમાં કરાતી ક્રિયા દુઃખહેતુ ન હોય, " किरिया समयविइक्कंतं णं कडा दुक्खा " તથા જે ક્રિયાનો કાળ પસાર થઈ ગયો છે એવી કરવામાં આવેલી ક્રિયા દુઃખહેતુ હોય તો (અભ્યાસ ન હોવાને કારણે પૂર્વ કાળમાં ક્રિયા દુઃખજનક હોય છે, અને અભ્યાસ થઈ જવા પછી વર્તમાન કાળમાં તેજ ક્રિયા દુઃખ પ્રયોજક બની નથી પરન્તુ કૃત ક્રિયા દુઃખદાયી હોય છે કારણ કે ક્રિયા કર્યા બાદ પશ્ચાત્તાપ વગેરે થાય છે અથવા પરિશ્રમ વગેરે થાય છે તે કારણે તે ક્રિયા દુઃખના હેતુરૂપ બની જાય છે) " सा किं करणओ दुक्खा अकरणओ दुक्खा " કરણકાળમાં કરનાર વ્યક્તિને દુઃખના હેતુરૂપ હોય છે કે નહીં કરનાર વ્યક્તિને દુઃખની હેતુરૂપ હોય છે?

अथ क्रियाविषये निरूपयति--' पुव्विं ' इत्यादि । 'पुव्विं किरिया दुक्खा ' पूर्वं क्रिया दुःखा, क्रिया कायिकी सा पूर्वं करणात्पूर्वं यावन्न क्रियते तावदित्यर्थः, दुःखा=दुःखहेतुर्भवति । ' कज्जमाणा किरिया अदुक्खा क्रियमाणा क्रिया अदुःखा, क्रियमाणा करणसमये=वर्त्तमानसमये क्रिया अदुःखा=दुःखहेतुर्न भवति। तथा ' किरिया समयवीइक्कंतं च णं ' क्रियासमयव्यतिक्रान्ते सति क्रियायाः करणसमयानन्तरमित्यर्थः, ' कडा किरिया ' कृता सती क्रिया 'दुक्खा' दुःखा-दुःखहेतुर्भवति । क्रिया हि करणात्पूर्वं पश्चाच्च दुःखहेतुर्भवति किन्तु वर्तमानसमये क्रिया दुःखहेतुर्न भवतीति भावः । शिष्य पृच्छति-' जा सा पुव्विं किरिया

ही श्रोता को अर्थ का बोध होता है। इसलिये बोली जा रही भाषा को भाषा नहीं माना गया है।

अब सूत्रकार क्रिया के विषय में निरूपण करते हैं-(पुव्विं किरिया दुक्खा) यहां क्रिया कायिकी ली गई है अतः करने से पहिले-अर्थात् जब तक वह क्रिया करने में नहीं आ रही है तबतक वह क्रिया दुःख-दुःखहेतु होती है। (कज्जमाणा किरिया अदुक्खा) जो क्रिया की जा रही है वह दुःख-दुःख की हेतुरूप नहीं होती है। तथा (किरिया समयवीइक्कंतं च णं कडा किरिया दुक्खा) क्रिया के करने का समय जब व्यतिक्रान्त हो जाता है तब-अर्थात् क्रिया करने के समय के अनन्तर की जा चुकी क्रिया दुःख-दुःखहेतु होती है। तात्पर्य कहने का यह है क्रिया करने से पहिले और करने के पश्चात् दुःखहेतु होती है, किन्तु वर्तमान समय में वह क्रिया दुःख हेतु नहीं होती है। शिष्य पूछता है-(जा सा पुव्विं

ભાષા નીકળી ચૂકયા પછી જ શ્રોતાને અર્થનો બોધ થાય છે. તેથી જે ભાષા બોલવામાં આવી રહી છે તેને ભાષા ગણતા નથી.

હવે સૂત્રકાર ક્રિયાના વિષયમાં નિરૂપણ કરે છે—

" पुव्विं किरिया दुक्खा " અહીં ક્રિયા પદ વડે કાયિકી ક્રિયા લેવામાં આવી છે. જ્યાં સુધી ક્રિયા કરવામાં આવી રહી નથી ત્યાં સુધી તે ક્રિયા દુઃખ-દુઃખહેતુ હોય છે " कज्जमाणा किरिया अदुक्खा " જે ક્રિયા કરવામાં આવી રહી છે તે દુઃખ-દુઃખની હેતુરૂપ હોતી નથી. તથા " किरिया समय वीइक्कंतं च णं कडा किरिया दुक्खा " ક્રિયા કરવાનો સમય જ્યારે પસાર થઈ જાય છે ત્યારે એટલે કે ક્રિયા કરવાનો સમય પછી કરવામાં આવેલી ક્રિયા દુઃખ-દુઃખહેતુ હોય છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે-કે ક્રિયા કર્યા પહેલાં અને કર્યા પછી દુઃખહેતુરૂપ હોય છે પણ વર્તમાન સમયમાં જે ક્રિયા કરવામાં આવે છે તે દુઃખહેતુ હોતી નથી. શિષ્ય પૂછે છે-" जा सा पुव्विं किरिया

दुक्खा ' या सा पूर्व क्रिया दुःखा भवति, ' कज्जमाणी किरिया अदुक्खा' क्रियमाणा क्रिया अदुःखा, क्रियमाणा या क्रिया सा न दुःखप्रयोजिका, ' किरिया समयवीइक्कंतं च णं कडा किरिया दुक्खा ' क्रियासमयव्यतिक्रान्ते च खलु कृता क्रिया दुःखा, क्रियमाणसमयव्यतिक्रमे सति कृता निष्पादिता क्रिया दुःखप्रयोजिका भवति, अथवा पूर्वकाले क्रिया दुःखजनिका अनभ्यासात् ,क्रियमाणा क्रिया न दुःखप्रयोजिका अभ्यासात् , किन्तु कृता क्रिया दुःखदा यतः क्रियाकरणानन्तरं पश्चात्तापादिर्भवति परिश्रमादिर्वा जायतेऽतः सा क्रिया दुःखेति या दुःखहेतुर्भवति-' सा किं करणओ दुक्खा अकरणओ दुक्खा ' सा किं करणतो दुःखा अकरणतो दुःखा? करणतः-करणमाश्रित्य करणकाले कुर्वत इत्यर्थः सा क्रिया दुःखा अथवा किम् अकरणमाश्रित्याकुर्वत इत्यर्थः , सा क्रिया दुःखेति प्रश्नः, उत्तरयति-

किरिया दुक्खा) यदि करने के पहिले क्रिया दुःखहेतु होती है, (कज्जमाणी किरिया अदुक्खा) तथा वर्तमान में की जा रही क्रिया दुःखहेतु नहीं होती है, (किरियासमयविइक्कंतं च कडा किरिया दुक्खा) तथा जो क्रिया अपने काल को उल्लंघन कर चुकी वह क्रिया दुःखहेतु होती है। अथवा-अनभ्यास होने के कारण पूर्वकाल में क्रिया दुःख जनक होती है, और अभ्यास हो जाने से वर्तमान काल में वही क्रिया दुःख प्रयोजक नहीं होती है। किन्तु कृत क्रिया दुःखदा होती है क्यों कि क्रिया करने के अनन्तर पश्चात्ताप आदि होता है अथवा परिश्रम आदि होता है। इसलिये वह क्रिया दुःख की हेतुभूत हो जाती है। सो (सा किं करणओ दुक्खा, अकरणओ दुक्खा) वह क्रिया जो दुःख की हेतु होती है सो करणकाल में करते हुए व्यक्ति को दुःख की हेतुभूत होती है या नहीं करने वाले को दुःख की हेतुभूत होती है। इस प्रकार का

दुक्खा " જો કર્યા પહેલાંની ક્રિયા દુઃખહેતુ હોય, " कज्जमाणी किरिया अदुक्खा " અને વર્તમાનમાં કરાતી ક્રિયા દુઃખહેતુ ન હોય, " किरिया समयविइक्कंतं च कडा दुक्खा " તથા જો ક્રિયાનો કાળ પસાર થઈ ગયો છે એવી કરવામાં આવેલી ક્રિયા દુઃખહેતુ હોય તો (અભ્યાસ ન હોવાને કારણે પૂર્વ કાળમાં ક્રિયા દુઃખજનક હોય છે, અને અભ્યાસ થઈ ગયા પછી વર્તમાન કાળમાં તેજ ક્રિયા દુઃખ પ્રયોજક થતી નથી પરન્તુ કૃત ક્રિયા દુઃખદાયી હોય છે કારણ કે ક્રિયા કર્યા બાદ પશ્ચાત્તાપ વગેરે થાય છે, અથવા પરિશ્રમ વગેરે થાય છે તે કારણે તે ક્રિયા દુઃખના હેતુરૂપ બની જાય છે) " सा किं करणओ दुक्खा, अकरणओ दुक्खा " કરણકાળમાં કરનાર વ્યક્તિને દુઃખના હેતુરૂપ હોય છે કે નહીં કરનાર વ્યક્તિને દુઃખની હેતુરૂપ હોય છે?

'अकरणओ णं सा दुक्खा नो खलु सा करणओ दुक्खा' अकरणतः खलु सा दुःखा नो खलु करणतो दुःखा, अकरणमाश्रित्य अकुर्वते इत्यर्थः दुःखजनिका क्रिया भवति, अक्रियमाणत्वे दुःखतया तस्याः स्वीकारात्। न तु करणमाश्रित्य कुर्वत इत्यर्थः, दुःखजनिका क्रिया भवति अभ्यासात् 'सेवं वत्तव्वं सिया' तदेवं वक्तव्यं स्यात्, तदेव पूर्वोक्तं वस्तु अक्रियमाणत्वे दुःखरूपत्वं क्रियाया न तु कुर्वत इत्येवं रूपं वस्तु वक्तव्यं स्यादिति भावः।

अथान्यतीर्थिकानामेव मतान्तरमाह—'अकिच्चं' इत्यादि। 'अकिच्चं दुक्खं' अकृत्यं दुःखम्, अनागतकालापेक्षया जीवैरनिर्वर्तनीयम्, दुःखम्=असात-

यह प्रश्न है। इसका उत्तर-(अकरणओ णं सा दुक्खा नो खलु सा करणओ दुक्खा) नहीं करते हुए को वह दुःख की हेतुभूत होती है-करते हुए को वह दुःख की हेतुभूत नहीं होती है। क्यों कि जबतक वह क्रिया की नहीं जा रही हैं तभीतक वह दुःख जनक है ऐसा स्वीकार किया गया है। करने के समय की जा रही वह क्रिया करते हुए व्यक्ति को अभ्यास होने के कारण दुःखजनक नही होती है। (सेवं वत्तव्वं सिया) अक्रियमाणत्व होने पर-अर्थात् करने के समय में नहीं की जा रही क्रिया नहीं करने वाले को दुःख की हेतु होती है, और करते हुए को वह दुःख रूप नहीं होती है ऐसा कहा जा सकता है।

अन्यतीर्थिकजनों की और भी मान्यताएँ हैं-जो इस प्रकार से हैं (अकिच्च दुक्खं) दुःख अकृत्य-क्रिया के विना-होता है। तात्पर्य कहने का यह है कि दुःख-असातरूप-सुखाभावरूप जो प्रतिकूल वेद-

ઉત્તર-"अकरणओण सा दुक्खा नो खलु सा करणओ क्खा" નહીં કરનારને તે દુઃખના હેતુરૂપ થાય છે, કરનારને દુ ખની હેતુરૂપ થતી નથી, કારણ કે જ્યા સુધી તે ક્રિયા કરવામાં આવતી નથી ત્યાં સુધી તે દુઃખજનક છે એ માન્યતા સ્વીકારવામાં આવેલ છે કરવાને સમયે કરવામાં આવતી ક્રિયા કરનાર વ્યક્તિને અભ્યાસ હોવાને કારણે દુ ખજનક થતી નથી "सेव वत्तव्वं सिया" અક્રિયમાણત્વ હોય ત્યારે-એટલે કે કરવાને સમયે નહી કરાતી ક્રિયા નહી કરનારને તે દુ ખરૂપ થતી નથી એ પ્રમાણે કહી શકાય છે આ પ્રમાણે અન્યતીર્થિકોની માન્યતા છે. આ ઉપરાંત બીજી પણ કેટલીક માન્યતાઓ તેમની આ પ્રમાણે છે

"अकिच्चं दुक्खं" દુ ખ અકૃત્ય-ક્રિયા વિના-હોય છે તાત્પર્ય એ છે કે દુ ખ, ભવિષ્યકાળની અપેક્ષાએ જીવો વડે અનિષ્પાદ્ય હોય છે. અહી દુઃખ એટલે અસાતારૂપ-સુખાભાવરૂપ-પ્રતિકૂલ વેદનીય દુ ખ ગ્રહણ

रूप मतिकृत्वेन्नीयमित्यर्थः, अकरिष्यमाणं दुःखं भवतीति भावः। अथवा दुःखं दुःखकारणं कर्म, 'अफुसं दुक्खम्' अस्पृश्यं दुःखम्, तथा यत एवाकृत्यमत एवा स्पृश्यम् अबन्धनीयम् 'अकज्जमाणकडं' अक्रियमाणकृतम्, तथा क्रियमाणं वर्तमानकाले, कृतं चातीतकाले, तन्निषेधात् अक्रियमाणकृतम्, 'दुक्खं' दुःखं भवति। 'अकट्टु अकट्टु' अकृत्वा अकृत्वा, कालत्रयेऽपि कर्मणो बन्धनिषेधात् अकृत्वाऽकृत्वा अकरणादेवेत्यर्थः, दुःखम्=कर्म 'पाणभूयजीवसत्ता' प्राणभूत जीवसत्त्वाः, 'वेयणं वेदेंति' वेदनां वेदयन्ति, दुःखमनुभवन्ति, 'इति वक्तव्यं

नीय दुःख है यह अनागत काल की अपेक्षा से जीवों द्वारा अनिर्वर्तनीय अनिष्पाद्य-नहीं उपजे ऐसा होता है। कोई भी जीव ऐसा नहीं चाहता है कि मुझे दुःख उपजे-परन्तु यह तो उपजता ही है-अतः यह दुःख स्वभावतः है और इसी कारण यह अकृत्य है। अथवा दुःख से यहां दुःख का कारण जो कर्म है वह दुःख है ऐसा समझना चाहिये। (अफुसं दुक्खं) दुःख अस्पृश्य है। अर्थात् जब दुःख अकृत्य है इसीलिये यह अस्पृश्य अबन्धनीय-नहीं बंधे ऐसा है। (अकज्जमाणकडं) वर्तमान काल में जो किया जा रहा है वह क्रियमाण है तथा भूतकाल में जो किया जा चुका है वह कृत है। (दुःख न क्रियमाण है और न कृत है अतः यह अक्रियमाणकृत है। तीनकाल में भी जीव के कर्म का बंध नहीं होता है। अतः दुःख का-कर्म को-नहीं करके भी (पाणभूयजीवसत्ता) प्राण, भूत, जीव, सत्त्व ये सब (वेयणं वेदेंति) वेदना को भोगते रहते हैं। यह सब कथन स्वभाववादियों का है-वे ऐसा कहते हैं कि जो भी सुख दुःखादिक प्राणभूतादिकों द्वारा भोगने में आते रहते हैं वे

કરવું કોઈ પણ જીવ એવું ઈચ્છતો નથી કે મને દુઃખ ઉપજે પરન્તુ તેને દુઃખ તો ઉપજે છે જ તેથી તે દુઃખ સ્વભાવથી જ ઉપજે છે, અને તે કારણે જ તે અકૃત્ય છે અથવા-અહીં "દુઃખ" પદ વડે દુઃખના કારણ રૂપ "કર્મ" ને જ દુઃખ સમજવું જોઈએ. "અફુસં દુક્ખં" દુઃખ અસ્પૃશ્ય છે એટલે કે દુઃખ અકૃત્ય હોવાથી અસ્પૃશ્ય-અબંધનીય છે. "અકજ્જમાણ કડં" વર્તમાનકાળમાં જે કરવામાં આવી રહ્યું છે તે ક્રિયમાણ છે તથા ભૂતકાળમાં જે કરવામાં આવી ચુક્યું છે તે કૃત છે. દુઃખ ક્રિયમાણ પણ નથી અને કૃત પણ નથી તેથી તે અક્રિયમાણ કૃત છે. ત્રણે કાળમાં જીવને કર્મનો બંધ બાંધવો પડતો નથી તેથી કર્મ નહીં કરવા છતાં પણ "પાણ ભૂય જીવ સત્તા" પ્રાણ, ભૂત, જીવ અને સત્ત્વો "વેયણં વેદંતિ" વેદના ભોગવતા રહે છે. આ કથન સ્વભાવવાદીઓનું છે. તેઓ એવું કહે છે કે જે સુખ દુઃખ આદિ પ્રાણ, ભૂત આદિને ભોગવવા પડે છે તે તેમના કર્મોના

सिया' इति वक्तव्यं स्यात्, इति एतत् पूर्वोक्तम्-वक्तव्य स्यात्, यदेतत् लोके सुखदुःखादिकं भवति न तत् केनापि कारणेन भवति, अपि तु स्वाभाविकमेवेदं सर्वम्, तथाचोक्तम्—

"अतर्कितोपस्थितमेव सर्वं, चित्रं जनानां सुखदुःखजातम्।
काकस्य तालेन यथाभिघातो न बुद्धिपूर्वोऽत्र वृथाभिमानः॥१॥

यथा कण्टकस्य तैक्ष्ण्यं शुकादीनां हरितत्वं मयूराणां विचित्रता न नियत कारणजनिता किन्तु स्वभावादेव। यथा वा पतंगादीनां गगने उड्डयनं मत्स्यानां

उनके कर्मों के फलस्वरूप नहीं है क्यों कि किसी भी प्राणी आदि द्वारा कर्मों का बंध किया ही नहीं जाता है-अतः सब जो कुछ होता रहता है वह सब स्वभाव से ही होता रहता है। यही बात (इति वत्तव्वं सिया) इस पाठ द्वारा प्रदर्शित की गई है। लोक में जो कुछ भी सुख दुःखादिक होते रहते हैं वे किसी अन्यकारणक नहीं होते हैं किन्तु स्वभाविक ही होते हैं इस विषय को प्रकट करने वाला यह (अतर्कितोपस्थित इत्यादि पद्य है। इसके द्वारा यह समझाया गया है कि नाना प्रकार के जो सुख दुःख जीवों को विना विचारे अर्थात् अबुद्धिपूर्वक भोगने में आते हैं, वे निष्कारणक ही हैं, सकारणक नहीं। जैसे कांटों में तीक्ष्णता शुक (तोता) आदिकोंमें हरापन, मयूरोंमें विचित्रता, यह सब नियत कारणसे जनित नहीं है-किंतु स्वभावसे ही है-और जैसे पतंग आदिकों का आकाश में उडना, मछलियों का जल में संचरण करना किसी कारण से निष्पादित नहीं होता है किन्तु स्वभाव से ही यह उनमें पाया

ફળરૂપ હોતા નથી કારણ કે કોઇ પણ પ્રાણી, ભૂત વગેરે મારફત કર્મોનો બંધ બંધાતો જ નથી તેથી જે કંઈ થાય છે તે સ્વભાવથી જ થયા કરે છે. એ વાત "इति वत्तव्व सिया" આ સૂત્રપાઠ વડે બતાવવામા આવી છે. લોકમા જે કોઇ સુખ દુ ખ વગેરે ભોગવવા પડે છે તે બીજાં કોઇ કારણોને લીધે ભોગવવા પડતા નથી પણ સ્વાભાવિક જ હોય છે આ વાતને સમજાવવાને માટે "अतर्कितोपस्थित" ઈત્યાદિ પદ્યો છે તેમની મારફત એ વાત સમજાવવામા આવી છે કે જીવોને અનેક પ્રકારના જે સુખ દુ ખ અબુદ્ધિપૂર્વક (વિના વિચાર્યે) ભોગવવા પડતાં હોય છે તે નિષ્કારણજ હોય છે, સકારણ હોતા નથી એટલે કે તેની પાછળ કોઈ કારણ હોતુ નથી પણ તે સ્વભાવિકજ હોય છે જેવી રીતે કાંટામા તીક્ષ્ણતા, પોપટમાં લીલાશ, મોરમા વિચિત્રતા, એ બધાંનું કોઇ ચોક્કસ કારણ નથી-પરન્તુ સ્વભાવથી જ તે હોય છે, એવી જ રીતે સુખ-

जले सचरण न केनापि कारणेन निष्पादित किन्तु स्वभावादेव जायते, इत्येव सुखदुःखादयोऽपि भावा न कारणविशेषमासाद्य भवन्ति किन्तु स्वभावत एव प्रवर्तन्ते । उक्तञ्च—

" स्वभावेन प्रवर्तन्ते सुखदुःखादयो ह्यमी ।
यथा स्वभावतो लोके, हंसादीनां हि शुक्लता ॥ १ ॥

इत्येव स्वभाववादिमतमिति ।

तदेतत्परतीर्थिकानां मतं किं सम्यगित्याशयेन गौतमः पृच्छति–'से कहमेय' इत्यादि । ' से कहमेयं भंते एव ' तत् कथमेतत् भदन्त एवम्–तत्=अन्यतीर्थिकोक्त मतं कथं=किम् एतत्=पूर्वोक्तं हे भदन्त ! एवम्=येन प्रकारेण तैरुक्त तेनैव प्रकारणास्ति किम् तेषां पूर्वोक्त मत किं सत्यम् ? इति प्रश्नः ॥ सू० १ ॥

जाता है इसी तरह से सुख दुःखादिक भाव भी कारण विशेष को लेकर नहीं होते हैं किन्तु स्वभाव से ही होते रहते हैं । तथा चोक्तम्—

" स्वभावेन प्रवर्तन्ते सुखदुःखादयो ह्यमी ।
यथा स्वभावतो लोके हंसादीनां हि शुक्लता ॥ "

इस प्रकार से यह स्वभाव वादियों का मत है

इस पर गौतम स्वामी प्रभु से पूछते हैं कि (से कहमेयं भंते एवं) हे भदन्त ! स्वभाव वादि आदियों ने जो यह पूर्वोक्त रूप से अपना मन्तव्य प्रकट किया है सो यह क्या मन्तव्य उनका उसी प्रकार से है– अर्थात् सत्य है क्या ? यह गौतम स्वामी का प्रश्न है ॥ सू–१ ॥

દુઃખાદિ ભાવ પણ કોઇ કારણને લીધે ઉપજતાં નથી પણ સ્વભાવથી જ ઉપજ્યા કરે છે વળી એવી રીતે પતંગ વગેરેનું આકાશમાં ઉડ્ડયન, અને માછલિઓમાં પાણીનુ સંચરણ કોઈ ખાસ કારણોને લીધે થતુ નથી પણ સ્વભાવથી જ થયા કરે છે એવી જ રીતે સુખદુઃખાદિ ભાવ પણ સ્વભાવથી જ થયા કરે છે કહ્યું પણ છે—

' સ્વભાવેન પ્રવર્તન્તે સુખદુઃખાદયો હ્યમી ।
યથા સ્વભાવતો લોકે હંસાદીનાં હિ શુક્લતા ॥ "

ઉપર મુજબનો સ્વભાવવાદિઓનો મત છે

તે વિષયમાં ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને પૂછે છે કે–' સે કહમેયં ભંતે એવં " હે ભગવન્ ! સ્વભાવવાદી વગેરેનું પૂર્વોક્ત જે મન્તવ્ય છે તે શું સાચું છે ? ॥ સૂ-૧ ॥

सिया' इति वक्तव्यं स्यात्, इति एतत् पूर्वोक्तम्-वक्तव्य स्यात्, यदेतत् लोके सुखदुःखादिकं भवति न तत् केनापि कारणेन भवति, अपि तु स्वाभाविकमेवेदं सर्वम्, तथाचोक्तम्—

"अतर्कितोपस्थितमेव सर्वं, चित्रं जनानां सुखदुःखजातम्।
काकस्य तालेन यथाभिघातो न बुद्धिपूर्वोऽत्र वृथाभिमानः॥१॥

यथा कण्टकस्य तैक्ष्ण्यं शुकादीनां हरितत्वं मयूराणां विचित्रता न नियत कारणजनिता किन्तु स्वभावादेव। यथा वा पतंगादीनां गगने उड्डयनं मत्स्यानां

उनके कर्मों के फलस्वरूप नहीं है क्यों कि किसी भी प्राणी आदि द्वारा कर्मों का बंध किया ही नहीं जाता है-अतः सब जो कुछ होता रहता है वह सब स्वभाव से ही होता रहता है। यही बात (इति वत्तव्वं सिया) इस पाठ द्वारा प्रदर्शित की गई है। लोक में जो कुछ भी सुख दुःखादिक होते रहते हैं वे किसी अन्यकारणक नहीं होते हैं किन्तु स्वभाविक ही होते हैं इस विषय को प्रकट करने वाला यह (अतर्कितोपस्थित इत्यादि पद्य है। इसके द्वारा यह समझाया गया है कि नाना प्रकार के जो सुख दुःख जीवों को विना विचारे अर्थात् अबुद्धिपूर्वक भोगने में आते हैं, वे निष्कारणक ही हैं, सकारणक नहीं। जैसे कांटों में तीक्ष्णता शुक (तोता) आदिकोंमें हरापन, मयूरोंमें विचित्रता, यह सब नियत कारणसे जनित नहीं है-किंतु स्वभावसे ही है-और जैसे पतंग आदिकों का आकाश में उडना, मछलियों का जल में संचरण करना किसी कारण से निष्पादित नहीं होता है किन्तु स्वभाव से ही यह उनमें पाया

ફળરૂપ હોતા નથી. કારણ કે કોઇ પણ પ્રાણી, ભૂત વગેરે મારફત કર્મોનો બંધ બંધાતો જ નથી તેથી જે કંઈ થાય છે તે સ્વભાવથી જ થયા કરે છે. એ વાત "इति वत्तव्व सिया" આ સૂત્રપાઠ વડે બતાવવામા આવી છે. લોકમા જે કોઇ સુખ દુ ખ વગેરે ભોગવવા પડે છે તે બીજાં કોઇ કારણોને લીધે ભોગવવા પડતા નથી પણ સ્વાભાવિક જ હોય છે આ વાતને સમજાવવાને માટે "अतर्कितोपस्थित" ઈત્યાદિ પદ્યો છે તેમની મારફત એ વાત સમજાવવામા આવી છે કે જીવોને અનેક પ્રકારના જે સુખ દુ ખ અબુદ્ધિપૂર્વક (વિના વિચાર્યે) ભોગવવા પડતાં હોય છે તે નિષ્કારણજ હોય છે, સકારણ હોતા નથી એટલે કે તેની પાછળ કોઈ કારણ હોતુ નથી પણ તે સ્વભાવિકજ હોય છે જેવી રીતે કાટામા તીક્ષ્ણતા, પોપટમા લીલાશ, મોરમા વિચિત્રતા, એ બધાંનુ કોઇ ચોક્કસ કારણ નથી-પરન્તુ સ્વભાવથી જ તે હોય છે, એવી જ રીતે સુખ-

जले सचरणं न केनापि कारणेन निष्पादितं किन्तु स्वभावादेव जायते, इत्येवं सुखदुःखादयोऽपि भावा न कारणविशेषमासाद्य भवन्ति किन्तु स्वभावत एव प्रवर्तन्ते । उक्तञ्च—

" स्वभावेन प्रवर्तन्ते सुखदुःखादयो श्वमी ।
यथा स्वभावतो लोके, हंसादीनां हि शुक्लता ॥ १ ॥

इत्येवं स्वभाववादिमतमिति ।

यद्येतत्परतीर्थिकानां मतं किं सम्यगित्याशयेन गौतमः पृच्छति–'से कहमेयं' इत्यादि । ' से कहमेयं भंते एव ' तत् कथमेवत् भदन्त एवम्–तत्=अन्यतीर्थिकोक्त मतं कथ=किम् एतत्=पूर्वोक्तं हे भदन्त ! एवम्=येन प्रकारेण तैरुक्त तेनैव प्रकारेणास्ति किम् तेषां पूर्वोक्त मत किं सत्यम् ? इति प्रश्नः ॥ सू० १ ॥

जाता है इसी तरह से सुख दुःखादिक भाव भी कारण विशेष को लेकर नहीं होते हैं किन्तु स्वभाव से ही होते रहते हैं । तथा चोक्तम्—

' स्वभावेन प्रवर्तन्ते सुखदुःखादयो श्वमी ।
यथा स्वभावतो लोके हंसादीनां हि शुक्लता ॥ "

इस प्रकार से यह स्वभाव वादियों का मत है

इस पर गौतम स्वामी प्रभु से पूछते हैं कि (से कहमेयं भंते एवं) हे भदन्त ! स्वभाव वादि आदियों ने जो यह पूर्वोक्त रूप से अपना मन्तव्य प्रकट किया है सो यह क्या मन्तव्य उनका उसी प्रकार से है– अर्थात् सत्य है क्या ? यह गौतम स्वामी का प्रश्न है ॥ सू–१ ॥

दुःखादि भाव पण कोई कारणने लीधे उपजता नथी पण स्वभावथी ज उप न्या करे छे वणी एवी रीते पतग वगेरेनु आकाशमां उडवुं, अने माछलिओमां पाणीनु सञ्चरण कोई खास कारणोने लीधे थतु नथी पण स्वभावथी ज थया करे छे, एवी ज रीते सुखदुःखादि भाव पण स्वभावथी ज थया करे छे कह्युं पण छे—

" स्वभावेन प्रवर्तन्ते सुखदुःखादयो श्वमी ।
यथा स्वभावतो लोके हंसादीनां हि शुक्लता ॥ "

उपर मुजबनो स्वभाववादिओनो मत छे

ते विषयमा गौतम स्वामी महावीर प्रभुने पूछे छे के–" से कहमेयं भंते एव ' हे भगवन् ! स्वभाववादी वगेरेनु पूर्वोक्त जे मन्तव्य छे ते शु साचु छे ? ॥ सू-१ ॥

अथ भगवान् अन्यतीर्थिकमतं निराकुर्वन् स्वमतं प्ररूपयन्नाह-'गोयमा' इत्यादि।

मूलम्-गोयमा ! जं णं ते अन्नउत्थिया एवं आइक्खंति ४ जाव वेयणं वेदेंति इति वत्तव्वं सिया, जे ते एवमाहंसु, मिच्छा ते एवमाहंसु, अहं पुण गोयमा ! एवं आइक्खामि एवं खलु चलमाणे चलिए जाव णिज्जरिज्जमाणे निज्जिण्णे, दो परमाणुपोग्गला, एगयओ साहणंति, कम्हा दो परमाणु पोग्गला एगयओ साहणंति, दोण्हं परमाणुपोग्गलाणं अत्थि सिणेहकाए, तम्हा दो परमाणु पोग्गलाएगयओ साहणंति, ते भिज्जमाणा दुहा कज्जंति, दुहा कज्जमाणा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ परमाणुपोग्गले भवइ, तिण्णि परमाणुपोग्गला एयगओ साहणंति, कम्हा तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति, तिण्हं परमणुापोग्गलाणं अत्थि सिणेहकाये, तम्हा तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति, ते भिज्जमाणा दुहा वि तिहा वि कज्जंति, दुहा कज्जमाणा एगयओ परमाणुपोग्गला एगयओ दुपएसिए खंधे भवइ, तिहा कज्जमाणा तिण्णि परमाणुपोग्गला भवंति, एवं चत्तारि, पंच परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति, एगयओ साहणित्ता खंधत्ताए कज्जंति, खंधेवि य णं से असासए सया समियं उवचिज्जइ य अवचिज्जइ य। पुव्विं भासा अभासा, भासिज्जमाणी भासा भासा, भासासमयवीइक्कंतं च णं भासिया भासा अभासा, जा सा पुव्विं भासा अभासा, भासिज्जमाणी भासा भासा,

भासासमयवीइक्कतं च णं भासिया भासा अभासा, सा किं भासओ भासा, अभासओ भासा ? भासओणं भासा, नो खलु सा अभासओ भासा। पुव्विं किरिया अदुक्खा, जहा भासा तहा भाणियव्वा, किरिया वि जाव करणओ ण सा दुक्खा, नो खलु सा अकरणओ दुक्खा सेवं वत्तव्वं सिया, किच्चं दुक्खं फुसं दुक्खं, कज्जमाणकडदुक्खं, कट्टु कट्टु पाणभूय जीव सत्ता वेयणं वेयंति इति वत्तव्वं सिया० ॥ सू० २ ॥

छाया-गौतम! यत् खलु तेऽन्ययूथिका एवमाख्यान्ति४ यावद्वेदनां वेदयन्ति इति वक्तव्यं स्यात्, ये ते एवमाहुर्मिथ्या ते एवमाहुः, अहं पुनः गौतम! एवमाख्यामि, एवं खलु चलमानं चलितम् यावत् निर्जीर्यमाणं निर्जीर्णम्। द्वौ परमाणुपुद्गलौ

इस प्रश्न का उत्तर देते हुए भगवान् गौतम! स्वामी से कहते हैं। इसमें वे अन्यतीर्थिकजनों के मतका निरसन करते हुए अपने मत की प्ररूपणा करते हैं-(गोयमा! जं णं ते अन्नउत्थिया), इत्यादि।

सूत्रार्थ—(गोयमा!) हे गौतम! (ज णं ते अन्न उत्थिया) जो वे अन्ययूथिक (एवं आइक्खंति ४) ऐसा कहते हैं (जाव वेयणं वेदेति इति वत्तव्वं सिया) यावत् जीव वेदना को भोगते हैं यह स्वाभाविक है। सो (जे ते एवमाहंसु) जो उन्होंने ऐसा कहा है। (मिच्छा ते एवमाहंसु) यह तो उन्होंने मिथ्या कहा है। (अहं पुण गोयमा! एवं आइक्खामि) पर हे गौतम! मैं तो ऐसा कहता हूं (एवं खलु

આ પ્રશ્નનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ ગૌતમ સ્વામીને શું કહે છે તે આ સૂત્રમાં બતાવ્યું છે આ સૂત્ર વડે મહાવીર પ્રભુ અન્ય મતવાદીઓના મતનું ખંડન કરીને પોતાના મતની પ્રરૂપણા કરે છે—' गोयमा! जं णं ते अन्नउत्थिया " ઇ૦

સૂત્રાર્થ—(गोयमा!) હે ગૌતમ! (जं णं ते अन्नउत्थिया) તે અન્ય મતી થિકો (एवं आइक्खंति) જે એવું કહે છે કે (जाव वेयणं वेदेंति इति वत्त व्वं सिया) (यावत्) " જીવ વેદનાને ભોગવે ને તે સ્વાભાવિક છે" ત્યાં સુધીનું તેમનું (जं ते एवमाहंसु) જે બધું કથન છે-જે માન્યતા છે (मिच्छा ते एवमाहंसु) તે મિથ્યા છે-તેઓ જે કહે છે તે સત્ય નથી. (अहं पुण गोयमा! एवं आइक्खामि) હે ગૌતમ! હું તો એવું કહું છું કે (एवं खलु चलमाण

अथ भगवान् अन्यतीर्थिकमतं निराकुर्वन् स्वमतं प्ररूपयन्नाह-'गोयमा' इत्यादि ।

मूलम्-गोयमा ! जं णं ते अन्नउत्थिया एवं आइक्खंति ४ जाव वेयणं वेदेंति इति वत्तव्वं सिया, जे ते एवमाहंसु, मिच्छा ते एवमाहंसु, अहं पुण गोयमा ! एवं आइक्खामि एवं खलु चलमाणे चलिए जाव णिज्जरिज्जमाणे निज्जिण्णे, दो परमाणुपोग्गला, एगयओ साहणंति, कम्हा दो परमाणु पोग्गला एगयओ साहणंति, दोण्हं परमाणुपोग्गलाणं अत्थि सिणेहकाए, तम्हा दो परमाणु पोग्गलाएगयओ साहणंति, ते भिज्जमाणा दुहा कज्जंति, दुहा कज्जमाणा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ परमाणुपोग्गले भवइ, तिण्णि परमाणुपोग्गला एयगओ साहणंति, कम्हा तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति, तिण्हं परमणुापोग्गलाणं अत्थि सिणेहकाये, तम्हा तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति, ते भिज्जमाणा दुहा वि तिहा वि कज्जंति, दुहा कज्जमाणा एगयओ परमाणुपोग्गला एगयओ दुपएसिए खंधे भवइ, तिहा कज्जमाणा तिण्णि परमाणुपोग्गला भवंति, एवं चत्तारि, पंच परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति, एगयओ साहणित्ता खंधत्ताए कज्जंति, खंधेवि य णं से असासए सया समियं उवचिज्जइ य अवचिज्जइ य । पुव्विं भासा अभासा, भासिज्जमाणी भासा भासा, भासासमयवीइक्कंतं च णं भासिया भासा अभासा, जा सा पुव्विं भासा अभासा, भासिज्जमाणी भासा भासा,

परमाणुपुद्गलानामस्ति स्नेहकायः तस्मात् त्रयः परमाणुपुद्गला एकत सहन्यन्ते, ते भिद्यमाना द्विधा अपि त्रिधा अपि क्रियन्ते, द्विधा क्रियमाणा एकत परमाणु पुद्गलः एकतो द्विप्रदेशिक स्कन्धो भवति, त्रिधा क्रियमाणा त्रय परमाणुपुद्गला भवन्ति, एवं यावत् चत्वार ०, पच परमाणुपुद्गला एकत' सहन्यन्त, एकत'

परमाणु पोग्गला एगयओ साहणति) किस कारण से तीन परमाणुपुद्गल एक स्कन्धपर्याय को उत्पन्न करते हैं ? (तिण्हं परमाणुपोग्गलाणं अत्थि सिणेहकाए) तीन परमाणु पुद्गलों में स्नेहकाय है। (तम्हा तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति) इसलिये ये तीन परमाणुपुद्गल मिल कर एक स्कन्धपर्याय को उत्पन्न करते हैं। (ते भिज्जमाणा दुहावि तिहा वि कज्जति) जब इन तीन पुद्गल परमाणु के विभाग किये जाते हैं तो उनके दो भी भाग हो जाते हैं और तीन भी भाग हो जाते हैं (दुहा कज्जमाणा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दुपएसिए खंधे भवइ) इनके दो भाग इस प्रकार से होते हैं-एक भाग १ परमाणुपुद्गल का हो जाता है और दूसराभाग दो प्रदेशी स्कन्धरूप रहता है। (तिहा कज्जमाणा तिण्णि परमाणुपोग्गला भवति) जब इनके तीन टुकडे किये जाते हैं तो ये परमाणु पुद्गल १-१-१ इस तरह से तीन भाग में विभक्त हो जाते हैं। (एवं चत्तारि) इसी तरह से चार पुद्गलपरमाणुओं के विषय में भी जानना चाहिये। (पंच परमाणुपोग्गला एगयओ साह

(तम्हा तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति ?) શા કારણે ત્રણ પરમાણુ પુદ્ગલો સ્કંધપર્યાય રૂપે પરિણમે છે (तिण्हं परमाणुपोग्गलाणं अत्थि सिणेहकाए) ત્રણ પરમાણુ પુદ્ગલોમાં સ્નેહકાયનો સદ્ભાવ હોય છે (तम्हा तिण्णि परमाणु पोग्गला एगयओ साहणंति) તે કારણે ત્રણ પરમાણુ પુદ્ગલો પરસ્પર સાથે મળીને એક સ્કંધપર્યાયરૂપે પરિણમે છે (ते भिज्जमाणा दुहा वि तिहा वि कज्जति) જ્યારે તે ત્રણ પરમાણુ પુદ્ગલોના વિભાગ કરવામાં આવે છે ત્યારે તેમના બે વિભાગ પણ પડે છે અને ત્રણ વિભાગ પણ પડે છે (दुहा कज्जमाणा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ दुपएसिए खंधे भवइ) તેમના બે ભાગ આ પ્રમાણે બને છે એક ભાગ પરમાણુ પુદ્ગલનો બને છે અને બીજો ભાગ બે પ્રદેશી સ્કંધરૂપ બને છે (तिहा कज्जमाणा तिण्णि परमाणुपोग्गला भवंति) જ્યારે તેમના ત્રણ વિભાગ કરવામાં આવે છે ત્યારે પ્રત્યેક વિભાગ ૧, ૧ પરમાણુ પુદ્ગલનો બને છે (एवं चत्तारि) ચાર પરમાણુ પુદ્ગલોના વિષયમાં પણ એમ જ સમજવું (पंच परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति) પાંચ

एकतः संहन्येन्ते, कस्मात् द्वौ परमाणुपुद्गलौ एकतः संहन्येते, द्वयोः परमाणुपुद्गलयोरस्ति स्नेहकायः, तस्माद् द्वौ परमाणुपुद्गलौ एकतः संहन्येते, तौ भिद्यमानौ द्विधा क्रियेते, एकतः परमाणु पुद्गल एकतः परमाणुपुद्गलो भवति, त्रयः परमाणु पुद्गलाः एकतः संहन्ते, कस्मात् त्रयः परमाणुपुद्गलाः एकतः संहन्यन्ते, त्रयाणां

चलमाणे चलिए जाव णिज्जरिज्जमाणे निज्जिण्णे) कि जो चल रहा है वह चल चुका है यावत् जिसकी निर्जरा हो रही है उसकी निर्जरा हो चुकी है। (दो परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति) दो परमाणु पुद्गल आपस में मिलकर स्कन्धपर्याय को उत्पन्न करते हैं। (कम्हा दो परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति) किस कारण से दो परमाणुपुद्गल आपस में मिलकर स्कन्धपर्याय करते हैं ? इसका उत्तर यह है कि-(दोण्हं परमाणुपोग्गलाणं अत्थि सिणेहकाए) दो परमाणु पुद्गलों में स्नेहकाय है। (तम्हा दो परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति) इस कारण वे दो परमाणु पुद्गल स्कन्धपर्याय को उत्पन्न करते हैं। (ते भिज्जमाणा दुहा कज्जंति) यदि किये जावें तो इनके दो भाग हो जाते हैं। (दुहा कज्जमाणा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ परमाणु पोग्गले भवइ) एक भाग एक परमाणु का और दूसरा भाग भी एक परमाणु का हो जाता है। (तिण्णि परमाणु पोग्गला एगयओ साहणंति) तीन परमाणु पुद्गल आपसमें मिलकर स्कन्धपर्याय को उत्पन्न करते हैं।(कम्हा तिण्णि

चलिए जाव णिज्जरिज्जमाणे निज्जिण्णे) જે ચાલી રહ્યું છે તે ચાલી ચૂક્યું છે (यावत्) જેની નિર્જરા થઈ રહી છે તે કર્મ નિર્જીર્ણ થઈ ચૂકયુ છે (दो परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति) બે પરમાણુ પુદ્ગલો પરસ્પર સાથે સંયોગ પામીને એક સ્કંધપર્યાય રૂપે પરિણમે છે (कम्हा दो परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति ?) શા કારણે બે પરમાણુપુદ્ગલ મળીને એક સ્કંધપર્યાયરૂપે પરિણમે છે? ઉત્તર- (दोण्हं परमाणुपोग्गलाणं अत्थि सिणेहकाए) તે બે પરમાણુ પુદ્ગલોમાં પણ સ્નેહકાયનો સદ્ભાવ હોય છે तम्हा दो परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति) તે કારણે તે બે પરમાણુપુદ્ગલો પણ સ્કન્ધપર્યાયરૂપે પરિણમે છે :(ते भिज्जमाणा दुहा कज्जंति) જો તેમના વિભાગ કરવામાં આવે તો બે વિભાગ થાય છે (दुहा कज्जमाणा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ परमाणुपोग्गले भवइ) તેમાંનો એક ભાગ પરમાણુનો અને બીજો ભાગ પણ એક પરમાણુનો થાય છે (तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति) ત્રણ પરમાણુ પુદ્ગલો પરસ્પર સાથે સંયોગ પામીને સ્કંધપર્યાય રૂપે પરિણમે છે

भमापमाणस्य भाषा। पूर्वं क्रिया अदुःखा यथा माषा तथा भाणितव्या, क्रिया अपि यावत्-कुर्वतः खलु सा दुःखा, नो खलु सा अकुर्वतो दुःखा, सदेवं वक्तव्य स्यात्। कृत्य दुःख स्पृश्य दुःखं क्रियमाणकृत दुःखं, कृत्वा कृत्वा भाणभूतजीव सत्त्वा वेदनां वेदयन्तीति वक्तव्यं स्यात् ॥ सू० २ ॥

भाषा नहीं है, और बोलने में आरही जो भाषा है वही भाषा है। तथा बोली जा चुकी जो भाषा है वह भी भाषा नहीं है अभाषा है तो वह बोलते हुए की भाषा है कि नहीं बोलते हुए की भाषा है? (भासओ णं सा भासा) वह बोलते हुए की भाषा है। (नो खलु सा अभासओ भासा) नहीं बोलते हुए की भाषा नहीं है। (पुव्विं किरिया अदुक्खा, जहा भासा, तहा भाणियव्वा) करने से पहिले की क्रिया दुःख हेतु नहीं होती है। जैसे भाषा वैसे ही इसे समझना चाहिये। (किरिया वि जाव करणओ ण सा दुक्खा, नो खलु सा अकरणो दुक्खा सेव वत्तव्वं सिया) क्रिया भी यावत् करते हुए को दुःख की हेतुभूत होती है। नहीं करते हुए को वह दुःख की हेतुभूत नहीं होती है। ऐसा कहा जा सकता है। (किच्च दुक्खं फुसं दुक्खं, कज्जमाणकड दुक्खं, कट्टु कट्टु पाण भूय जीवसत्ता वेयणं वेएंति इति वत्तव्वं सिया०) दुःख क्रियाजन्य होता है। दुःख स्पृश्य होता है। दुःख क्रियमाण कृत होता है। प्राणी, भूत, जीव और सत्त्व उसे करके वेदना भोगते रहते हैं। ऐसा कहा जाता है। सू २

બાલવામા આવતી હોય, તથા બોલવામાં આવી ચૂકેલી ભાષાને અભાષા કહેવામાં આવતી હોય તો તે બોલનારની ભાષા છે કે નહીં બોલનારની ભાષા છે? भासओ णं सा भासा) તે બોલનારાની ભાષા છે (नो खलु सा अभासओ भासा) નહીં બોલનારની ભાષા નથી. (पुव्विं किरिया अदुक्खा, जहा भासा, तहा भाणियव्वा) કર્યા પહેલાની ક્રિયા દુઃખના હેતુરૂપ હોતી નથી ભાષાની જેમ જ ક્રિયાના વિષયમાં પણ સમજવુ (किरिया वि जाव करणओ णं सा दुक्खा, नो खलु सा अकरणओ दुक्खा सेवं वत्तव्वं सिया) ક્રિયા પણ (યાવત્,) કરનારને જ દુઃખ ની હેતુભૂત હોય છે નહીં કરનારને તે દુઃખની હેતુભૂત થતી નથી, એમજ કહેવુ જોઈએ. (किच्चं दुक्खं,) फुसं दुक्खं, कज्जमाणकडं दुक्खं, क क पाणभूयजीवसत्ता वेयणं वेएंति इतिवत्तव्वं सिया०) દુઃખ ક્રિયાજન્ય જ હોય છે દુઃખ સ્પૃશ્ય જ હોય છે દુઃખ ક્રિયમાણકૃત હોય છે પ્રાણી, ભૂત જીવ અને સત્વ; ક્રિયા કરીને જ વેદના ભોગવ્યા કરે છે એમજ કહેવુ જોઈએ. ॥સૂ-૨॥

संहत्य स्कन्धतया क्रियन्ते, स्कन्धोपि च स अशाश्वतः सदा समितमुपचीयते च अपचीयते च। पूर्वं भाषा अभाषा, भाष्यमाणा भाषा भाषा, भाषासमयव्यतिक्रान्तं च खलु भाषिता भाषा अभाषा, या सा पूर्वं भाषा अभाषा भाष्यमाणा भाषा भाषा, भाषासमयव्यतिक्रान्तं च खलु भाषिता भाषा अभाषा, सा किं भाषमाणस्य भाषा, अभाषमाणस्य भाषा, भाषमाणस्य खलु भाषा नो खलु सा

णंति) पांच परमाणुपुद्गल आपस में मिलकर स्कन्धरूप पर्याय को उत्पन्न करते हैं। (एगयओ साहणित्ता खंधत्ताए कज्जंति) अर्थात् पांच परमाणु पुद्गल आपस में चिपक जाते हैं और इस तरह से वे एक स्कन्धपर्याय को उत्पन्न करते हैं। (खंधे वि य णं से असासए) यह स्कन्धपर्याय शाश्वत नहीं है–अशाश्वत है। (सया समियं उवचिज्जइ य) सर्वदा यह पर्याय प्रमाण रूप में उपचय और अपचय को प्राप्त करती रहती है। (पुव्विं भासा अभासा) बोलने के पहिले की भाषा भाषा नहीं है अभाषा है। (भासिज्जमाणी भासा भासा) बोलने में आ रही भाषा भाषा है। (भासासमयवीइक्कंतं च णं भासिया भासा अभासा) भाषा के समय को उल्लंघन करने वाली भाषा–अर्थात् बोली जा चुकी भाषा भाषा नहीं है–अभाषा है। ये पूर्वोक्त मन्तव्य अन्य मत वालों का है उनसे पूछा जाता है कि–(सा किं भासओ भासा, अभासओ भासा) यदि वह बोलने से पहिले की भाषा अभाषा है–

પરમાણુ પુદ્ગલોપણુ પરસ્પર સાથે મળીને એક સ્કંધરૂપ પર્યાયરૂપે પરિણમે છે. (एगयओ साहणित्ता खंधत्ताए कज्जंति) એટલે કે પાંચ પરમાણુ પુદ્ગલો પણુ પરસ્પરની સાથે ભેગા મળી જાય છે અને એ રીતે તેઓ એક સ્કંધપર્યાયને ઉત્પન્ન કરે છે (खंधे वि य ण से असासए) આ સ્કંધ પર્યાય શાશ્વત નથી પણુ અશાશ્વત છે (सया समियं उवचिज्जइ य अवचिज्जइ य) તે પર્યાય સદા પરિમાણુ રૂપે છે અને ઉપચય તથા અપચય રૂપે બન્યા કરે છે

(पुव्विं भासा अभासा) બોલ્યા પહેલાની ભાષા,ભાષા નથી પણુ અભાષા છે. (भासिज्जमाणी भासा भासा भासा समय वीइक्कंतं च णं भासिया भासा अभासा) ભાષાનો સમય ઓળંગી ગયેલી ભાષા એટલે કે બોલવામા આવી ચૂકેલી ભાષા, ભાષા નથી, ભાષા છે ઉપર્યુક્ત મહાવીર પ્રભુનો અભિપ્રાય જાણીને તેમને પૂછવામા આવ્યું છે કે (सा किं भासओ भासा, अभासओ भासा) જો બોલ્યા પહેલાંની ભાષા અભાષા હોય, અને જે ભાષા બોલવામાં આવી રહી છે તેનેજ ભાષા

एवम्=वक्ष्यमाणप्रकारेण हे गौतम ! आख्यामि, एवं भाषे, एवं प्रज्ञापयामि एवं प्ररूपयामि । किमाख्यामि ? इत्याह—' एवं खलु ' इत्यादि । ' एवं खलु चलमाणे चलिए जाव निज्जरिज्जमाणे निज्जिण्णे ' एवं खलु चलत् चलितम् यावत् निर्जीर्यमाणं-निर्जीर्णमिति, अत्र यावत्पदेन-" उदीर्यमाणमुदीरितम्, वेद्यमानं वेदितम्, प्रहीयमाणं प्रहीणम्, छिद्यमानं छिन्नम्, भिद्यमानं भिन्नम्, दह्यमानं दग्धम्, म्रियमाणं मृतम्" इति संग्राह्यम् । मिथ्यात्वं च परतीर्थिकमतस्य यदि चलत् वस्तु प्रथमसमये एव चलितमिति न भवेत्तदा द्वितीयादिसमयेपि तद्वस्तु अचलदेव इति कदापि तत् न चलेत्, अन्तिमक्षणे च चलितमिति व्यवहारो दृश्यतेऽतः प्रथमसमयादारभ्यैव चलितं भवति इति मन्तव्यमेव, " तावत्कालं स्थिरं चैनं कः पश्चाद् नाशयिष्यतीति" न्यायात्प्रथमसमयादारभ्यैव

भासेमि,पण्णवेमि,परूवेमि) परन्तु हे गौतम ! मैं तो ऐसा कहता हूं यावत् प्ररूपित करता हूं कि-जो चल रहा है वह चल चुका-यावत् जिसकी निर्जरा हो रही है वह निर्जीर्ण हो चुका । यहां यावत् पद से (उदीर्यमाणमुदीरितम्-वेद्यमान वेदितम्, प्रहीयमाणं प्रहीणं छिद्यमानं छिन्न, भिद्यमानं भिन्न दह्यमान, दग्धं, म्रियमाणं मृतम्) इस पाठ का संग्रह किया गया है । परतीर्थिकों का मत मिथ्या किस प्रकार से है-सो स्पष्ट किया जाता है-यदि चलती हुई वस्तु प्रथम समय में चल चुकी न मानी जाये तो उसे द्वितीय आदि समयों में भी अचल ही मानना होगा । इस तरह वह कभी भी नहीं चल सकेगी । अन्तिम समय में जो (चल चुकी) ऐसा व्यवहार देखा जाता है उससे यही बात प्रतीति में आती है कि वह वस्तु प्रथम समय से लेकर ही अंतिम समय तक चलित हुई है ।

एव आइक्खामि, भासेमि, पण्णवेमि, परूवेमि " હે ગૌતમ ! હું તો એવું કહું છું (યાવત્) પ્રરૂપણા કરૂં છું કે જે ચાલી રહ્યું છે તે ચાલી ચૂક્યું (યાવત્) જેની નિર્જરા થઇ રહી છે તે નિર્જીર્ણ થઇ ચૂક્યું, અહીં 'યાવત્' પદથી ' उदीर्यमाणमुदीरितम् वेद्यमान वेदितम् प्रहीयमाणं प्रहीणं छिद्यमान छिन्नम्, भिद्यमान भिन्न, दह्यमान दग्ध म्रियमाण मृतम् " આ પાઠનો સંગ્રહ કરાયો છે પરતીર્થિકોનો મત કેવી રીતે મિથ્યા છે તે હવે સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે જો ચાલતી વસ્તુને પ્રથમ સમયે ચાલી ચૂકેલી માનવામાં ન આવે તો તેને બીજા સમયોમાં પણ અચલ જ માનવી પડશે. આ રીતે તો તે કદી પણ ચલિત થશે જ નહીં પરન્તુ અંતિમ સમયે " ચલિત થઈ ચૂકી ' એવો જે વ્યવહાર થતો જોવામાં આવે છે તેથી એ વાત સિદ્ધ થાય છે કે તે વસ્તુ પ્રથમ સમયથી શરૂ કરીને અન્તિમ સમય સુધી ચલિત થતી રહે છે " ताव

टीका—'गोयमा' हे गौतम ! 'जं णं अन्न उत्थिया एवं आइक्खंति' यत् अन्ययूथिका एवमाख्यान्ति एवं भाषन्ते एवं प्रज्ञापयन्ति एवं प्ररूपयन्ति, 'जाव' यावत्, अत्र यावत्पदेन-तन्मतप्रतिपादकः पूर्वोक्तः सर्वोऽपि पाठः संग्राह्यः। कियत्पर्यन्तमित्याह—'वेयणं वेदेतीति वत्तव्वं सिया' वेदनां वेदयन्तीति वक्तव्यम् स्यात्, प्राणभूतजीवसत्त्वाः स्वभावेनैव वेदनां वेदयन्तीति। 'जे ते एव माहंसु मिच्छा ते एवमाहंसु' ये ते एवमाहुर्मिथ्या ते एवमाहुः 'अहं पुण गोयमा एवं आइक्खामि भासेमि पन्नवेमि परूवेमि' अहं पुन गौतम ! एवमाख्यामि

टीकार्थ—(गोयमा !) हे गौतम ! (जं णं अन्न उत्थिया) जो अन्यतीर्थिकजन (एवं आइक्खंति) ऐसा सामान्यरूप से कथन करते हैं (एवं भासंते) ऐसा विशेषरूप से कथन करते हैं (एवं प्रज्ञापयन्ति) इस तरह प्रज्ञापना करते हैं (एवं प्ररूपयन्ति) ऐसी प्ररूपणा करते हैं। यहां (यावत्) शब्द से स्वभाववादियों के मत को प्रतिपादन करनेवाला पूर्वोक्त समस्त भी पाठ गृहित किया गया है। वह यहां कहां तक गृहीत किया गया है इसको प्रकट करने के लिये (वेयणं वेदेंति) यह पद दिया गया है। अर्थात् स्वभाव वादियों ने जो प्रथम सूत्र में अपना पूर्ण मत प्रकट कर दिया है। (वेयणं वेदेंति) तक-वह सब पाठ यहां यावत् शब्द से पकड़ा गया है इसके द्वारा जो उन्हों ने यह कहा है कि प्राण, भूत, जीव, और सत्त्व ये सब स्वभाव से ही वेदना को भोगते रहते हैं (जे ते एवं आहंसु) जो उन्हों ने ऐसा कहा है (मिच्छा ते एवमाहंसु) वह मिथ्या कहा है। (अहं पुण गोयमा ! एवं आइक्खामि

ટીકાર્થ-"गोयमा !" હે ગૌતમ ! "जं णं अन्नउत्थिया" અન્યતીર્થિકે। અન્ય મતવાદીઓ "एवं आइक्खंति" એવું જે સામાન્ય રૂપે કથન કરે છે "एवं भासंते" એવું જે વિશેષરૂપે કથન કરે છે, "एवं प्रज्ञापयन्ति" એવી જે પ્રજ્ઞાપના કરે છે, (एवं परूयन्ति) એવી જે પ્રરૂપણા કરે છે, (અહીં યાવત્ પદથી સ્વભાવવાદીઓના મતનુપ્રતિપાદન કરનાર પૂર્વોક્ત તમામ પાઠ ગ્રહણ કરાયો છે) તે પાઠ કયા સુધીને। ગ્રહણ કરવાને। છે તે બતાવવાને "वेयणं वेदेंति" સુધી તે પાઠ ગ્રહણ કરવો એમ સૂત્રકારે કહ્યુ છે, એટલે કે પહેલા સૂત્રમાં સ્વભાવવાદીઓ એ પોતાને। પૂર્ણ મત પ્રકટ કર્યો છે અહીં "યાવત્" પદ વડે એમ કહ્યું છે. (वेयणं वेदेंति) સુધીના તે પૂર્વોક્ત પાઠ ગ્રહણ કરવો તેમાં તેમણે બતાવ્યુ છે કે પ્રાણ, ભૂત, જીવ, અને સત્ત્વ, એ સૌ સ્વભાવથી જ વેદના ભોગવતા રહે છે "जे ते एवं आहंसु" તેમણે એવુ જે કહ્યુ છે તે "मिच्छा ते एवमाहंसु" મિથ્યા કહ્યુ છે. તેમનુ તે કથન સાચું નથી. "अहं पुण गोयमा !

थय यदि एकस्मिन् परमाणौ स्नेहो न भवेत्तदा परमाणुसमुदायेपि स्नेहः कथमपि न समभवेत्, एकस्मिन् सिकताकणे तैलमनुपलभ्यमानं तत्समुदाये कदाचिदपि नोपलभ्यते ? किन्तु यदा एकस्मिन्-तिले स्नेह उपलभ्यते तदैव तिलसमुदायेऽपि तैल समुपलभ्यते, तथैव यदि एकस्मिन् परमाणौ संघातकारणस्नेहो न भवेत्तदा परमाणुसमुदायादपि संघातात्मकस्कन्धस्योत्पत्ति कदाचिदपि न भवेदित्याशये नोत्तरयति भगवान्-'दो परमाणु पोग्गला एगयओ साहण्णंति' द्वौ परमाणुपुद्गलौ

कारण उनमें स्नेह का अभाव रहता है सो इसका उत्तर सूत्रकार ने (दो परमाणुपोग्गला) इत्यादि सूत्र द्वारा दिया है-इसमें यह कहा गया है- कि यदि एक परमाणु में स्नेह गुण न हो तो फिर वह स्नेहगुण परमाणु समूह में कैसे हो सकता है। अर्थात् नहीं हो सकता है। एक सिकता (रेती) के कण में हम देखते हैं कि तैल का अंश जब उपलब्ध ही नहीं है-तो वह उसके समुदाय में भी कभी उपलब्ध नहीं हो सकता है। एक तिल में स्नेहगुण की उपलब्धि होती है-इसी कारण तिलसमुदाय में भी स्नेहगुण की उपलब्धि हो जाती है। तो जब इस प्रकार का सिद्धान्त है तो इसी प्रकार से एक परमाणु में यदि संघात का कारण स्नेहगुण न हो तो विचारो वह परमाणु समुदाय में भी कैसे उपलब्ध हो सकेगा। नहीं हो सकेगा। अतः जो परमाणु समुदाय से संघातात्मक स्कन्ध की उत्पत्ति होती है वह कदाचित् भी नहीं हो सकेगी। इस आशय को लेकर भगवान गौतम से कहते हैं कि (दो परमाणु

એક સ્કન્ધપર્યાય રૂપે પરિણમતા નથી કારણ કે તેઓ અતિ સૂક્ષ્મ હોય છે-તે કારણે તેમનામાં સ્નેહ (ચીકાશ) નો અભાવ હોય છે) તેમની તે માન્યતાનું ખંડન કરવાને માટે સૂત્રકારે "दो परमाणुपोग्गला" ઇત્યાદિ સૂત્રનું કથન કર્યું છે તેમાં આ પ્રમાણે કહ્યું છે-જો એક પરમાણુમાં સ્નેહગુણ (ચિકાશ ન હોય તો તે સ્નેહગુણ પરમાણુ સમૂહમાં કેવી રીતે સંભવી શકે ? જેવી રીતે એક રેતીના કણમાંથી જો તેલનો અંશ નીકળી શકતો નથી તો તેમના સમુદાયમાંથી પણ તેની પ્રાપ્તિ થતી નથી, જ્યારે એક તલના દાણામાં સ્નેહ ગુણ રહેલ હોય છે તો તેના સમુદાયમાં પણ સ્નેહગુણ રહેલો હોય છે આ પ્રકારનો સિદ્ધાંત છે હવે તો એક પરમાણુમાં સ્નેહગુણનો અભાવ હોય તો સંયોગ પામેલા પરમાણુ સમુદાયમાં પણ સ્નેહગુણ કેવી રીતે સંભવી શકે ? કદી પણ સંભવી શકે નહીં જો એમ થતું હોય તો પરમાણુ સમુદાયના સંયોગથી સ્કંધની જે ઉત્પત્તિ થાય છે તે કદી પણ થઇ શકે નહીં આ કારણે ભગવાન મહાવીર સ્વામી ગૌતમ સ્વામીને કહે છે કે "दो परमाणुपोग्गला

चलितत्वव्यपदेशः, अन्यथा अन्त्यसमयापि चलितत्वं न भवेदिति सर्वापि क्रिया निरर्थिकैव भवेदिति, अतएव वर्तमानस्यापि विवक्षाबलादतीतत्वं न विरुद्धम्। एतत् सर्वं पूर्वमेव 'चलमाणे चलिए' इति सूत्रे प्रतिपादितमिति विस्तरभयान्नेह पुनः प्रतन्यते ।

यत्पूर्वं परतीर्थिकैः कथितं द्वौ परमाणुपुद्गलौ न संहन्येते अतिसूक्ष्मतया तत्र स्नेहाभावादित्यादि तस्येदमुत्तरम्—'दो परमाणुपोग्गला' इत्यादि, अयमा-

---

(तावत्कालं स्थिरं चैनं कः पश्चात् नाशयिष्यति) इस न्याय के अनुसार ऐसा ही मानना चाहिये। कि प्रथम समय से लगाकर ही वस्तु में (चलित) ऐसा व्यपदेश होने लग जाता है। यदि तब से वस्तु में जो ऐसा व्यपदेश न हो तो फिर अन्तिम समय में भी (चलित) ऐसा व्यपदेश उस वस्तु में नहीं हो सकता है। इस व्यपदेश के अभाव में जितनी भी क्रियाएँ हैं वे सब निरर्थक ही हो जावेगी। इसलिये वर्तमान की भी विवक्षा के वश से वस्तु में अतीतता विरुद्ध नहीं पड़ती है। वस्तु जिस वर्तमान क्षण में चलन क्रिया विशिष्ट है उसकी अपेक्षा वह वस्तु चलमाण है और वही वस्तु अपने व्यतीत पूर्वक्षणों की अपेक्षा (चलित) है। ऐसा व्यपदेश होने में भला बाधा कौनसी आ सकती है। यह सब विषय विशेषरूप से (चलमाणे चलिए) इस सूत्र में प्रतिपादित ही किया जा चुका है। अब और अधिक विस्तार भय से इसे पुनः नहिं प्रतिप्रादित करते हैं। जो परतीर्थिकों ने ऐसा कहा है कि दो परमाणु (परस्पर में मिलते नहीं हैं क्यो कि वे अति सूक्ष्म होते हैं–इस

त्काल स्थिरं चैन कः पश्चात् नाशयिष्यति" આ ન્યાયાનુસાર એમ જ માનવું જોઈએ કે પ્રથમ સમયથી લઈને જ વસ્તુમા (ચલિત) એવો વ્યવહાર થવા માંડે છે જો પ્રથમથી જ એવો વ્યવહાર થઈ શકતો ન હોય તો અન્તિમ સમયે પણ પ્રદેશ (વ્યવહાર) ને માનવામાં ન આવે તો જેટલી ક્રિયાઓ છે તે બધી નિરર્થક જ બની જશે. માટે વર્તમાનની વિવક્ષાની અપેક્ષાએ પણ વસ્તુમાં અતીતતા (ભૂતકાલીનતા) વિરૂદ્ધ પડતી નથી. જે વર્તમાન ક્ષણે વસ્તુ ચલન ક્રિયાવાળી છે, તે ક્ષણની અપેક્ષાએ તે વસ્તુ ચલમાણ છે અને વ્યતીત થઇ ગયેલી પૂર્વક્ષણોની અપેક્ષાએ એજ વસ્તુ ચલિત છે તે પ્રકારનો વ્યવહાર કરવામા કોઇ જાતની મુશ્કેલી છે જ નહી આ આખાય વિષયનુ "चलमाणे चलिए" સૂત્રમા વિસ્તાર પૂર્વક પ્રતિપાદન કરવામા આવ્યુ છે. તેથી અધિક વિસ્તાર થવાના ભયથી તેનુ ફરીથી અહી પ્રતિપાદન કર્યું નથી. પરતીર્થિકોની જે એવી માન્યતા છે કે (બે પરમાણુ પુદ્ગલો પરસ્પર સાથે મળીને

स्नेहकायो विद्यते एव, यत सार्धपुद्गलस्य सद्दत्वेन पूर्वपक्षिभिरेव स्वीकारात्, यतस्तैरेवोक्त ' तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति ते भिज्जमाणा दुहावि तिहावि कज्जति, दुहा कज्जमाणा एगयओ दिवड्ढे एगयओ दिवड्ढे " इति एवंच यदा सार्धपुद्गलस्य सद्दत्वाभ्युपगमेन एकैकस्यापि स्नेहोभ्युपगत एवेति कथं स्नेहाभावेन परमाणुद्विकयोः संघाताभाव' स्यात् अपि तु द्वयोरपि परमाण्वोः संघात स्यादेवेति भावः। यच्चोक्तम् एकत' सार्धस्तद्प्ययुक्त एकस्य परमाणोरर्धो

कारण आपस में चिपक जाते हैं। तीन परमाणुओं का ही, चार परमाणुओं का ही संघात होता है सो यह बात नहीं है। दो परमाणुओं में स्नेहकाय मौजूद है यह बात पूर्वपक्षी के इस कथन से भी ज्ञात होती है जो उसने ऐसा कहा है कि (तीन पुद्गल परमाणु आपस में चिपक जाते हैं और जब उनका विभाग किया जाता है तो उनके १।। देढ १।। देढ परमाणुओं के दो विभाग और १-१ परमाणु के ३ विभाग बन जाते हैं। तात्पर्य कहने का यह है कि यदि दो परमाणुओं में स्नेहगुण-चिकाश न होता तो तीन पुद्गल परमाणुओं के जब १।।-१।। के दो टुकडे जो उन्होंने बनाने की बात कही है वह कैसे बन सकती है। अतः उनकी इस मान्यता से यह पता अच्छी तरह पड़ जाता है-प्रमाणित-हो जाता है कि उन्होंने स्वयं दो पुद्गल परमाणुओं में स्नेहगुण माना है। नहीं तो १।।-१।। के तीन पुद्गल परमाणुजन्य संघात के दो हिस्से नहीं बन सकते हैं। इसी कथन से यह कथन भी साबित हो जाता है कि जब १।। पुद्गल परमाणुओं का आपस में चिपक जाना तुमने स्वीकार किया है तो

બીજા સાથે ચોંટી જાય છે ત્રણ પરમાણુનો કે ચાર પરમાણુનો જ સંયોગ થાય છે એવું નથી. બે પરમાણુ સ્નેહકાય મોજૂદ હોય છે એ વાતનું તો અન્ય તીર્થિકોના આ કથન વડે પણ સમર્થન થાય છે-કે ત્રણ પુદ્ગલ પરમાણુ એક બીજા સાથે ચોંટી જાય છે અને જ્યારે તેમના વિભાગ કરવામાં આવે છે ત્યારે ૧।।-૧।। પરમાણુના બે વિભાગ અથવા ૧-૧ પરમાણુના ત્રણ વિભાગ થાય છે ' કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે જો બે પરમાણુઓમાં સ્નેહગુણ (ચીકાશ) ન હોય તો ત્રણ પુદ્ગલ પરમાણુઓ વાળા સ્કન્ધના ૧।।-૧।। પરમાણુના બે વિભાગ અને ૧-૧ પરમાણુના ત્રણ વિભાગ કેવી રીતે બની શકે ? તેથી તેમની એ માન્યતા વડે પણ આ વાત સિદ્ધ થાય છે કે બે પરમાણુમાં સ્નેહગુણ હોય છે, નહીં તો ત્રણ પરમાણુના સંયોગથી ઉત્પન્ન થયેલ સ્કંધમાંથી ૧।।-૧।। ના બે વિભાગ બની શકત નહીં એજ કથન વડે એ વાત પણ સાબિત થઈ જાય છે કે જો ૧।। અન્ય પુદ્ગલ પરમાણુઓનું એક બીજા સાથે

एकतः संहन्येते, एकतः एकस्वरूपतया परमाणुद्वयस्य सहननं (संमीलनं) भवत्येव संहननकारणस्नेहस्य तत्रापि सद्भावादिति, अत्र कारणं पृच्छति–'कम्हा दो परमाणु पोग्गला एगयओ साहणंति' कस्मात् कारणात् द्वौ परमाणुपुद्गलौ एकतः संहन्येते? उत्तरमाह—'दोण्हं परमाणुपोग्गलाणं अत्थि सिणेहकाए' द्वयोः परमाणुपुद्गलयोरस्ति स्नेहकायः, 'तम्हा–दो परमाणु पोग्गला एगयओ साहणंति' तस्मात् कारणात् द्वौ परमाणुपुद्गलौ एकत संहन्येते, यस्मात् कारणात् एकस्मिन्नपि परमाणौ संघातकारणं स्नेहकायो विद्यते तस्मात् कारणात् द्वयोरपि परमाणुपुद्गलयोः संहननं भवत्येव न तु त्रयाणामेव चतुर्णामेव संघात इति भावः, द्वयोः परमाण्वोः

पोग्गला एगयओ साहणंति) दो परमाणु पुद्गल एकरूप से मिल जाते हैं। एक रूप से मिलना ही स्कन्ध की उत्पत्ति है। यह उन दोनों का संमेलन विना संघात के कारणभूत स्नेहगुण के नहीं हो सकता है। इसलिये यह मानना चाहिये कि उन दो पुद्गल परमाणुओं में स्नेहगुण अवश्य २ है और यह स्नेहगुण उन परमाणुओं के समेलन से वहां पर प्रकट हो गया सो बात नहीं है। यह तो वहां एक २ परमाणु में स्वतंत्र रूप से पहिले से ही मौजूद है। यहां शिष्य कारण को पूछता हुआ प्रभु से प्रश्न करता है कि (कम्हा दो परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति) हे भदन्त! इसमें क्या कारण है जो दो पुद्गल परमाणु आपस में मिलकर स्कन्द पर्याय को उत्पन्न करते हैं। प्रभु इसका उत्तर देते हुए शिष्य से कहते हैं कि–(दोण्हं परमाणुपोग्गलाणं अत्थि सिणेहकाए) उन दो पुद्गल परमाणुओं में स्नेहकाय है (तम्हा) इसलिये (दो परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति) दो परमाणु पुद्गल चिकाश होने के

एगयओ साहणंति" બે પરમાણુ પુદ્ગલો એકરૂપે મળી જાય છે એક રૂપે મળવુ તેનું નામ જ સ્કન્ધની ઉત્પત્તિ છે તે બન્નેનો સઘાત, (સયોગ) સઘાતના કારણરૂપ સ્નેહગુણના સદ્ભાવ વિના સંભવી શકતો નથી તેથી એમ માનવું જોઇએ કે તે બે પુદ્ગલ પરમાણુઓમાં સ્નેહગુણ અવશ્ય હોય છે અને તે સ્નેહગુણ તે પરમાણુઓના સંયોગથી ત્યાં પ્રકટ થઇ ગયો એવું પણ નથી. તે ગુણ પ્રત્યેક પરમાણુમા પહેલેથી જ મોજૂદ હતો "कम्हा दो परमाणु पोग्गला एगयओ साहणति" શા કારણે બે પરમાણુ પુદ્ગલો પરસ્પર સાથે સયોગ પામીને સ્કધપર્યાયને ઉત્પન્ન કરે છે? આ પ્રકારના ગૌતમના પ્રશ્નનો જવાબ આપતા પ્રભુ કહે છે "दोण्हं परमाणुपोग्गलाणं अत्थि सिणेहकाए" તે બે પરમાણુમા સ્નેહકાયનો સદ્ભાવ હોય છે "तम्हा" તેથી "दो परमाणु पोग्गला एगयओ साहणंति" બે પરમાણુ પુદ્ગલો ચીકાશ હોવાને કારણે એક

स्नेहकायो विद्यते एव, यत सार्धपुद्गलस्य सद्दलत्वेन पूर्वपक्षिभिरेव स्वीकारात्, यतस्तैरेवोक्त 'तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति ते भिज्जमाणा दुहावि तिहावि कज्जति, दुहा कज्जमाणा एगयओ दिवड्ढे एगयओ दिवड्ढे" इति एवा सवा सार्धपुद्गलस्य सद्दलत्वाभ्युपगमेन एकैकस्यापि स्नेहोभ्युपगत एवेति कथं स्नेहाभावन परमाणुद्विकयो संघाताभाव स्यात् अपि तु द्वयोरपि परमाण्वो संघात स्यादेवेति भावः। यच्चोक्तम् एकत सार्धस्तद्प्ययुक्त एकस्य परमाणोरर्धी

कारण आपस में चिपक जाते हैं। तीन परमाणुओं का ही, चार परमाणुओं का ही संघात होता है सो यह बात नहीं है। दो परमाणुओं में स्नेहकाय मौजूद है यह बात पूर्वपक्षी के इस कथन से भी ज्ञात होती है जो उसने ऐसा कहा है कि (तीन पुद्गल परमाणु आपस में चिपक जाते हैं और जब उनका विभाग किया जाता है तो उनके १॥ देढ १॥ देढ परमाणुओं के दो विभाग और १-१ परमाणु के ३ विभाग बन जाते हैं। तात्पर्य कहने का यह है कि यदि दो परमाणुओं में स्नेहगुण-चिकाश न होता तो तीन पुद्गल परमाणुओं के जब १॥-१॥ के दो टुकडे जो उन्हों ने बनाने की बात कही है यह कैसे बन सकती है। अतः उनकी इस मान्यता से यह पता अच्छी तरह पड जाता है-प्रमाणित-हो जाता है कि उन्होंने स्वयं दो पुद्गल परमाणुओं में स्नेहगुण माना है। नहीं तो १॥-१॥ के तीन पुद्गल परमाणुजन्य संघात के दो हिस्से नहीं बन सकते हैं। इसी कथन से यह कथन भी साबित हो जाता है कि जब १॥ पुद्गल परमाणुओं का आपस में चिपक जाना तुमने स्वीकार किया है तो

બીજા સાથે ચોંટી જાય છે ત્રણ પરમાણુનો કે ચાર પરમાણુનો જ સંયોગ થાય છે એવું નથી. બે પરમાણુ સ્નેહકાય મોજૂદ હોય છે એ વાતનું તો અન્ય તીર્થિકોના આ કથન વડે પણ સમર્થન થાય છે-કે ત્રણ પુદ્ગલ પરમાણુ એક બીજા સાથે ચોંટી જાય છે અને જ્યારે તેમના વિભાગ કરવામાં આવે છે ત્યારે ૧॥-૧॥ પરમાણુના બે વિભાગ અથવા ૧-૧ પરમાણુના ત્રણ વિભાગ થાય છે' કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે જો બે પરમાણુઓમાં સ્નેહગુણ (ચીકાશ) ન હોય તો ત્રણ પુદ્ગલ પરમાણુઓ વાળા સ્કન્ધના ૧॥-૧॥ પરમાણુના બે વિભાગ અને ૧-૧ પરમાણુના ત્રણ વિભાગ કેવી રીતે બની શકે? તેથી તેમની એ માન્યતા વડે પણ આ વાત સિદ્ધ થાય છે કે બે પરમાણુમાં સ્નેહગુણ હોય છે નહી તો ત્રણ પરમાણુના સંયોગથી ઉત્પન્ન થયેલ સ્કંધમાંથી ૧॥-૧॥ ના બે વિભાગ બની શકત નહી એજ કથન વડે એ વાત પણ સાબિત થઈ જાય છે કે જો ૧॥ દોઢ પુદ્ગલ પરમાણુઓનું એક બીજા સાથે

करणे परमाणुत्वाभावप्रसङ्गः स्यात् अत एकस्य परमाणोर्न भागौ भागा वा भवन्ति किन्तु परमाणुद्वयस्यैव भागः संभवतीत्याशयेनाह—'ते भिज्जमाणा' इत्यादि। 'ते भिज्जमाणा दुहा कज्जति' तौ भिद्यमानौ द्विधा क्रियेते, द्वौ परमाणुपुद्गलौ संहत्य स्कन्धतया परिणतौ, तयोर्यदि द्वौ भागौ क्रियेते, तदा 'दुहा

यह बात अर्थात् आपन्न है कि एक पुद्गल परमाणु में भी स्नेहगुण है। अतः जब यह बात प्रमाण से प्रतीत कोटि में आ रही है कि एक परमाणु में भी स्नेहगुण है, तो फिर ऐसा कथन कैसे युक्ति युक्त माना जा सकता है कि दो परमाणुओं में स्नेहगुण न हो सकने के कारण उनकी आपस में चिपकना नहीं होता है। अर्थात् उनका संघात नहीं बनता है। अत यह मानना चाहिये कि दो परमाणुओं का भी संघात होता ही है। तथा अभी जो ऐसा कहा है कि तीन परमाणु जन्य संघात के जब हिस्से किये जाते हैं तो उसके १।।-१।। परमाणु के दो हिस्से भी बन जाते हैं सो ऐसा कहना ठीक नहीं जचता है-कारण जब परमाणु का अर्धीकरण किया जावेगा तो उसमें परमाणुता के अभाव होने का प्रसग आ जावेगा। परमाणु का तात्पर्य तो यही है कि जिसका फिर हिस्सा-भाग न हो। अतः एक परमाणु में न दो भाग होते हैं और न अनेक भाग ही होते हैं। भाग परमाणुद्वय के ही संभवते हैं। इसी आशय को लेकर सूत्रकार कह रहे हैं कि (ते भिज्जमाणा दुहा कज्जंति)

ચોટી જવાનુ તમે સ્વીકારતા હો તો એ વાત પણ તમારે સ્વીકારવી જ પડશે કે એક પુદ્ગલ પરમાણુમાં પણ સ્નેહગુણ હોય છે, આ પ્રમાણે જ્યારે એક પરમાણુ પુદ્ગલમાં પણ સ્નેહગુણ હોવાનું પ્રમાણ મળે છે ત્યારે એ વાત કેવી રીતે સગત માની શકાય કે બે પરમાણુ પુદ્ગલોમાં સ્નેહગુણનો અભાવ હોવાથી તેમનો સઘાત-સંયોગ થતો નથી? ઉપરોક્ત પ્રમાણુને આધારે તો એમ જ માનવું પડશે કે બે પરમાણુ પુદ્ગલોનો સંઘાત (સંયોગ) પણ થઈ શકે છે વળી અન્ય તીર્થિકો એવુ જે કહે છે કે ત્રણુ પરમાણુના સંઘાતથી બનેલ સ્કન્ધના ૧।।-૧।। પરમાણુના બે વિભાગ પડે છે, તે વાત પણ સાચી નથી. કારણુ કે જો પરમાણુનું અર્ધિકરણ કરવામા આવે તો તેમાં પરમાણુ પણાના અભાવનો પ્રસગ પ્રાપ્ત થશે. કારણુ કે પરમાણુનું વિભાજન થઈ શકતું નથી. એટલે કે એક પરમાણુના બે ભાગ પણ થતા નથી અને અનેક ભાગ પણ થતા નથી પરમાણુ દ્વયના જ ભાગ સભવી શકે છે તે કારણે જ સૂત્રકાર કહે છે કે "ते भिज्जमाणा दुहा कज्जंति" સંયોગ પામેલા બે પરમાણુ

कज्जमाणा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ परमाणुपोग्गले भवइ' द्विधा क्रियमाणो एकतः परमाणुपुद्गल एकत परमाणुपुद्गलो भवति। यत्र द्वयोः परमाण्वोः सयाव स्नेहकायवशादभूतत्र पुनर्द्विधाभागे एकैकः परमाणुर्भवति, न तु सार्धता कदाचिदपि संभवति, तथासति परमाणुत्वमेव न स्यादिति। द्वयोः

जब वे दो परमाणु विभक्त हो जाते हैं तो एक १ परमाणु के दो भाग हो जाते हैं-तात्पर्य यह है कि जब दो परमाणु संघातरूप में परिणत हो जाते हैं और जब वह संघात विभक्त होता है। तो उस संघात के १-१ परमाणुरूप में दो हिस्से हो जाते हैं यही बात (दुहा कज्जमाणा एगयओ परमाणुपोग्गले भवइ) इस सूत्र पाठ द्वारा प्रकट की गई है। इस कथन से सूत्रकार ने यह बात स्पष्ट की है कि जब दो परमाणु स्नेहकाय के कारण आपस में मिलकर एक संघातरूप स्कन्ध को बनाते हैं और उसे विभक्त किया जाता है तो उसके १-१ परमाणु रूप में दो भाग हो जाते हैं तो इस अवस्था में पहिले प्रतिपक्षी ने जो ऐसा कहा है कि तीन पुद्गल परमाणु से जन्य जब स्कन्ध तैयार होता है और जब उसके हिस्से किये जाते हैं तो १॥-१॥ परमाणु के दो भी विभाग हो जाते हैं सो उनका इस कथन के अनुसार ऐसा कथन अयुक्त है। क्यों कि परमाणु में आधापन बनती नहीं है। यह सार्धता तो जब बनती कि एक परमाणु के दो भाग होते। परन्तु एक परमाणु के भाग हो नहीं होते। कारण-भाग मानने पर परमाणु में परमाणुत्व का ही विघात होता है।

જ્યારે બે છૂટા થાય છે ત્યારે એક, એક પરમાણુ વાળા બે વિભાગ થાય છે એજ વાત સૂત્રકારે 'दुहा कज्जमाणा एगयओ परमाणुपोग्गले भवइ" આ સૂત્રપાઠ વડે પ્રકટ કરી છે આ કથન વડે સૂત્રકારે એ વાત સ્પષ્ટ કરી છે કે સ્નેહકાયને કારણે એક બીજા સાથે સંયોગ પામીને એક સ્કંધરૂપે પરિણમેલ બે પરમાણુપુદ્ગલોનું જ્યારે વિભાજન કરવામાં આવે છે ત્યારે તેમાંના એક એક પરમાણુના બે ભાગ પડી જાય છે આ બાબતમાં વિપક્ષીઓનું જે મત

જે આગળ બતાવ્યું છે કે ત્રણ પરમાણુ પુદ્ગલોથી બનેલ સ્કન્ધનું જ્યારે વિભાજન કરવામાં આવે છે ત્યારે ૧॥-૧॥ પરમાણુના બે વિભાગ પડી જાય છે તેમનુ આ કથન વિચારવામાં આવે તો અયુક્ત લાગે છે કારણ કે પરમાણુમાં અર્ધાપણું સંભવતુ નથી જો એક પરમાણુના બે ભાગ થઈ શકતા હોત તો જ અર્ધાપણું સંભવી શકત. પરંતુ એક પરમાણુના બે ભાગ થતા જ નથી જો પરમાણુના બે અથવા અનેક ભાગ માનવામાં આવે તો પરમાણુમાં પર-

परमाण्वोः स्नेहकायसद्भावात् संघातं तद्विभागं च प्रदर्श्य त्रयाणां परमाणूनां संघातं तद्विभागं च वक्तुकाम आह–'तिण्णि' इत्यादि । 'तिण्णि परमाणुपोग्गला एग-यओ साहणंति' त्रयः परमाणुपुद्गलाः एकतः संहन्यन्ते, त्रयाणां परमाणूनामेकैकश परस्परं विलक्षणः संयोगो जायते येन स्कन्धस्य समुत्पत्तिर्भवतीति भावः । कथं त्रयो मिलिता भवन्ति तत्राह–'कम्हा तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति' कस्मात् त्रयः परमाणुपुद्गला एकतः संहन्यन्ते, केन कारणेन त्रयाणां संमेलनं भवतीति–प्रश्नः । उत्तरयति—'तिण्हं परमाणुपोग्गलाण अत्थि सिणे-हकाए' त्रयाणां–परमाणुपुद्गलानामस्ति स्नेहकायः, 'तम्हा तिण्णि परमाणु पोग्गला एगयओ–साहणंति' तस्मात् त्रयः परमाणुपुद्गला एकतः संहन्यन्ते, यस्मात् त्रिषु परमाणुषु विद्यते स्नेहकायः संघातकारणम् तस्मात् कारणात् त्रयाणां परमाणूनां परस्पर संमेलनं भवत्येवेति भावः । 'ते भिज्जमाणा दुहावि तिहावि

इस तरह दो परमाणुओं के स्नेहकाय के सद्भाव से हुए संघात को और उसके विभाग को दिखाकर अब सूत्रकार तीन परमाणुओं के संघात को और उसके विभाग को दिखाने के लिये सूत्र कहते हैं कि–(तिण्णि परमाणु पोग्गला एगयओ साहणंति,) तीन परमाणुओं में के हरएक परमाणु का आपस में विलक्षण संयोग होता है कि जिससे स्कन्ध की उत्पत्ति होती है । ये तीन परमाणु पुद्गल किस कारण से आपस में मिलते हैं–तो इसका उत्तर (तिण्णं परमाणुपोग्गलाण अत्थिसिणेहकाए) तीन परमाणुपुद्गलोंमें संघात का कारण स्नेहकाय होता है (तम्हा तिण्णि परमाणु पोग्गला एगयओ साहणंति) इस कारण वे तीन परमाणु पुद्गल एक स्कन्धरूप में मिल जाते हैं । (ते भिज्जमाणा दुहावि तिहावि कज्जं-

---

माणुत्वपणुानो ज नाश थाय छे आ रीते स्नेहकायना सद्‌भावे बे परमाणुओना संयोगनु अने तेमना विभागोनु प्रतिपादन करीने हवे सूत्रकार त्रणु परमाणुओना संघातनु अने तेमना विभागनु निरूपणु करवा माटे कहे छे के "तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति" त्रणु परमाणुओमांना प्रत्येक परमाणुनो परस्परमां विलक्षणु संयोग थवाथी तेओ एक स्कन्धरूपे परिणुमे छे. ते त्रणु परमाणु पुद्गलोनु शा कारणे संयोजन थाय छे ते बताववाने माटे सूत्रकार कहे छे–"तिण्ण परमाणुपोग्गलाण अत्थि सिणेहकाए" त्रणु परमाणु पुद्गलोना संयोगनु कारणु स्नेहकाय छे. "तम्हा तिण्णि परमाणु–पोग्गला एगयओ साहणंति," ते कारणे ते त्रणु परमाणु पुद्गलो एक स्कंधरूपे परिणुमे छे "ते भिज्जमाणा दुहा वि तिहा वि कज्जंति" जो ते त्रणु पर–

कज्जंति' ते मिद्यमाना द्विधाऽपि त्रिधाऽपि क्रियन्ते, सहत्य स्कन्धतया यदा परिणताः परमाणव विश्लिष्य ते तदा ते भागद्वये भागत्रये वाऽवतिष्ठन्ते इत्यर्थ, दुहा,कज्जमाणा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ दुपएसिए खंधे भवइ ' द्विधा क्रियमाणा एकत' परमाणुपुद्गलः एकतो,द्विप्रदेशिकः स्कन्धो भवति, यदा त्रयाणां परमाणूनां स्कन्धतयाऽवस्थितानां विभागो भवति, तदा एकस्मिन् प्रदेशे एकः परमाणुरवस्थितो भवति परस्मिन् प्रदेशे च द्विप्रदेशिकः स्कन्धस्तिष्ठति न तु सार्धसार्धतया परमाणवोऽवस्थिता भवन्तीति भाव ।'तिहा कज्जमाणा तिण्णि परमाणुपोग्गला भवति ' त्रिधा-क्रियमाणास्त्रयः परमाणु पुद्गला भवन्ति, यदि तेषां त्रिभागो भवेत् तदा त्रय परमाणव एकैकविभिन्ना एवावतिष्ठेरन्नित्यर्थः ।' एवं जाव चत्तारि ' एव यावत् चत्वार , चतुः सख्यकपरमाणुपुद्गलवक्तव्यता चान्य

ति) जब यह तीन परमाणु जन्य स्कन्ध विभक्त अवस्थावाला हो जाता है तो उसके भाग दो तरह से भी होते है और तीन तरह से भी होते हैं-तात्पर्य यह है कि स्कन्धरूपसे परिणत हुए वे परमाणु आपसमें विभाग को प्राप्त होते हैं तब वे भागद्वयमें या भागत्रयमें अवस्थित रहते हैं (दुहा कज्जमाणा एगयओ परमाणु पोग्गले,एगयओ दुपएसिए परमाणु पोग्गले) भागद्वय में अवस्थित रहने पर एक भाग में एक परमाणु रहता है और दूसरे भाग में द्विप्रदेशी स्कन्ध रहता है ११-११ परमाणु के दो भाग नहीं होते । और जब भागत्रय में वे परमाणुस्थित रहते हैं तब एक २ भाग में एक २ परमाणु स्थित रहता है । तात्पर्य यह है कि यदि इस स्कन्ध के तीन भाग किये जावें तो एक २ भाग में एक २ परमाणु भिन्न २ रूप में रहता है । (एवं जाव चत्तारि) इसी प्रकार से चतु संख्यक परमाणु पुद्गलों की वक्तव्यता जाननी चाहिये। यह वक्तव्यता

માણુ જન્ય સ્કન્ધનુ વિભાજન કરવામા આવે તો તેમના ભાગ બે રીતે પણ પડે છે અને ત્રણ રીતે પણ પડે છે એટલે કે તેમના બે વિભાગ પણ પડે છે અને ત્રણ વિભાગ પણ પડે છે "दुहा कज्जमाणा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दुपएसिए परमाणुपोग्गले " જ્યારે તેમના બે વિભાગ કરવામા આવે છે ત્યારે એક વિભાગ એક પરમાણુ વાળો બને છે અને બીજો વિભાગ દ્વિપ્રદેશી સ્કધરૂપ બને છે પરતુ ૧।।-૧।। પરમાણુના બે ભાગ બનતા નથી અને જ્યારે તેનુ ત્રણ ભાગમાં વિભાજન કરવામા આવે છે ત્યારે પ્રત્યેક ભાગ એક પરમાણુનો બને છે તાત્પર્ય એ છે કે જો તે સ્કન્ધના ત્રણ ભાગ કરવામાં આવે તો દરેક ભાગમા એક એક પરમાણુ ભિન્ન રૂપે રહે છે ' एव जाव चत्तारि " એજ પ્રમાણે ચાર પરમાણુ પુદ્ગલોની બાબતમા પણ સમજવુ

यूथिकालापकव्याख्यायां द्रष्टव्या। चतुर्णां परमाणूनाम् स्नेहकायवलात् संयोगे स्कन्धाकारो भवति, द्विधा विभागे कृते सति एकत्रैकः परमाणुरवस्थितो भवति, अपरभागे त्रिप्रदेशिकः स्कन्धस्तिष्ठति। 'पंचपरमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति' पंच परमाणुपुद्गला एकतः संहन्यन्ते 'एगयओ साहणित्ता खंधत्ताए कज्जंति' एकतः संहत्य स्कंधतया क्रियन्ते भवन्तीत्यर्थः, पञ्च परमाणुपुद्गला एकैकशः-परस्परं संमिलिता भवन्ति मिलित्वा च स्कन्धाकारेण-परिणता भवन्तीत्यर्थः। स्कन्धविषये उत्तरयति-'खंधे वि य णं से असासए' स्कन्धोऽपि च खलु सः अशाश्वतः स च स्कन्धो नैकान्ततो नित्य अपि तु अनित्यः, उत्पत्ति विनाशस्य

अन्ययूथिकालाप की लिखी जा चुकी व्याख्या में लिखी जा चुकी है। अतः वहां से इसे देख लेना चाहिये। चार परमाणुओं का स्नेहकाय के बल से संयोग होने पर स्कन्धाकार होता है। इसका जब विभाग करते हैं तो वे दो प्रकार से होते हैं एक प्रकार के विभाग में केवल एक परमाणु अवस्थित रहता है-और दूसरे प्रकार के विभाग में त्रिप्रदेशी स्कन्ध रहता है। (पंच परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति) पांच परमाणु पुद्गलों का स्नेहकाय के बल से संयोग होने पर स्कन्धाकार होता है। (एगयओ साहणित्ता खंधत्ताए कज्जंति) यही बात इस पाठ द्वारा प्रकट की गई है। तात्पर्य कहने का यह है कि पांच परमाणु पुद्गल एक २ कर आपस में मिल जाते हैं और मिलकर वे स्कन्धाकार से परिणत हो जाते हैं। (खंधे वि य णं से असासए) परमाणुओं के आपस में मिलने से जो स्कन्ध उत्पन्न होता है वह परमाणुओं की तरह एकान्त नित्य

तेनु वर्णन अन्ययूथिकालापनी व्याख्यामां आपवामा आव्यु छे ते। त्याथी समजी लेवु', चार परमाणुओना स्नेहकायने कारणे स घात थवाथी तेओ एक स्कध रूपे परिणमे छे ज्यारे तेमना विभाग करवामा आवे छे त्यारे बे रीते विभाग थाय छे, एक प्रकारना विभागमा फक्त एक ज परमाणु होय छे अने बीजा प्रकारना विभागमां त्रिप्रदेशी स्कन्ध होय छे. "पच परमाणु पोग्गला एगयओ साहणंति" पांच परमाणु पुद्गलोनो स्नेहकायने कारणे स योग थइने तेओ एक स्कन्धरूपे परिणमे छे. एज वात "एगयओ साहणित्ता खंधत्ताए कज्जति" आ सूत्रपाठ वडे दर्शाववामा आवेल छे तात्पर्य ए छे के पाच परमाणु पुद्गलो एक बीजा साथे मळी जइने स्कन्धरूपे परिणमे छे. "खधे वि य णं से असासए" परमाणुओ एक बीजा साथे मळी जइने जे स्कन्ध बने छे ते स्कन्ध परमाणुओनी जेम नित्य हो तो नथी पण अनि-

मस्यमत एवानुभूयमानत्वात्। 'सया समियं उवचिज्जइ य अवचिज्जइ य' सदा समितमुपचीयते चापचीयते च, सदा=सर्वस्मिन् काले, समित=नियमितं -सद् अनित्यत्वादय स स्कन्धश्चयापचयौ प्राप्नोतीत्यर्थ।

यच्चान्यतीर्थिकैरुक्तम्—पंच परमाणुपुद्गला संहताः कर्मतया भवन्ति, तदपि न युक्तम्, कर्मणोऽनन्तपरमाणुस्वरूपतयाऽनन्तस्कन्धरूपत्वात्, पंचाणुकस्य

नहीं होता है, किन्तु अशाश्वत-अनित्य होता है-सदा रहने वाला नहीं होता है। क्यों कि उसमें उत्पत्ति और विनाश होना ये दो बातें प्रत्यक्ष से ही अनुभूयमान होती हैं। (सया समियं उवचिज्जइ य अवचिज्जइ य) यह स्कन्धरूप पर्याय सर्वदा ही-सब समय में ही-नियम से अनित्य होने के कारण चय और अपचय को प्राप्त करती रहती है।

जो अन्यतीर्थिकजनोंने ऐसा कहा है कि (पंच परमाणुपुद्गला संहता कर्मतया भवन्ति) पांच परमाणुपुद्गल संहत होकर-परस्पर में मिलकर-कर्मरूप से परिणत हो जाते हैं सो उनका ऐसा कहना भी युक्त नहीं है। क्यों कि कर्मरूप जो पर्याय है वह अनंत पुद्गल परमाणुओं के सम्मेलन से निष्पन्न होती है। अत वह अनंत स्कन्ध रूप होती है। पांच परमाणुओं के संमेलन से जो पर्यायरूप स्कन्ध उत्पन्न होता है वह तो केवल स्कन्ध रूप ही होता है। तथा जीव के स्वभाव को आवरण करने वाला कर्म होता है-अर्थात् कर्म का यह स्वभाव है कि वह आत्मा के ज्ञानादिक गुणों का आवरण करें। ज्ञानादिक गुणों का आवरण करना यही जीव का आवरण करना है। क्यों कि गुणी

ત્ય (અશાશ્વત) હોય છે કારણ કે તેની ઉત્પત્તિ અને વિનાશ પ્રત્યક્ષ અનુભવી શકાય છે, "सया समियं उवचिज्जइ य अवचिज्जइ य" તે સ્કન્ધ પર્યાય સર્વદા-બધા સમયે-નિયમથી જ અનિત્ય હોવાને કારણે ચય અને અપચય પામ્યા કરે છે

અન્ય તીર્થિકોનું "पंच परमाणु पुग्गला संहता कर्मतया भवन्ति" પાંચ પરમાણુ પુદ્ગલોનું સંયોજન થઈને તેઓ કર્મરૂપે પરિણમે છે" આ કથન પણ યોગ્ય નથી. કારણ કે કર્મરૂપ પર્યાયની ઉત્પત્તિ અનંત પરમાણુ પુદ્ગલોના સંયોગ થીજ થાય છે તેથી તે અનંત સ્કંધરૂપ હોય છે પાંચ પરમાણુના સંયોગથી જે પર્યાયરૂપ સ્કંધ ઉત્પન્ન થાય છે તે તો કેવળ સ્કંધરૂપ જ હોય છે કર્મ જીવના સ્વભાવને ઢાંકે છે એટલે કે કર્મનો એવો સ્વભાવ હોય છે કે તે આત્માના જ્ઞાનાદિક ગુણોને ઢાંકી દે છે જીવના જ્ઞાનાદિક ગુણોનું આવરણ

च स्कन्धमात्ररूपत्वात्, तथा कर्म जीवस्यावरणस्वभावमिष्यते तत् कथं पञ्चपरमाणुस्कन्धमात्ररूप सत् असंख्यातप्रदेशात्मकं जीवमावृणुयादिति। तथा कर्मणो यत् शाश्वतत्वमुक्तं तदपि न संगतम्, तथासति कर्मणः शाश्वतत्वे क्षयोपशमादीनामभावात् ज्ञानादीनामुत्पत्तिरेव न स्यात् ज्ञानादीनां सर्वानुभवसिद्धहानिवृद्ध्योरभावप्रसंगात्, दृश्येते च ज्ञानादीनां हानिर्वृद्धिश्च। तथा यच्चोक्तम्-कर्म सदा चीयतेऽपचीयते चेति तदप्येकान्तनित्यत्वे न संभवति एकान्तनित्यस्य चयो-

---

और गुण में अभेद विवक्षावश भेद नहीं होता है। यही बात दिखाने के लिये टीकाकार ने (कर्म जीवस्यावरणस्वभावमिष्यते) यह कहा है है। अतः जब कर्म का स्वभाव जीव को (आवरण करने का ही है-तब यह विचार ने जैसी बात है कि असंख्यान प्रदेशवाले जीव का पांच प्रदेश वाला कर्म कैसे आवरण कर सकता है। तथा कर्म की जो शाश्वत कहा गया है वह भी संगत नहीं है। क्यों कि कर्म यदि शाश्वत मान लिया जावे तो उसकी जो क्षयोपशम आदि अवस्थाएँ होती हैं वे नहीं हो सकेंगी उनका अभाव मानना पड़ेगा। इनके अभाव में ज्ञानादिकों की उत्पत्ति होने का अभाव आवेगा। क्यों कि कर्म के क्षयोपशम आदि से ही तो ज्ञानादिकों की उत्पत्ति होती है। तथा ज्ञानादिकों में जो हानि और वृद्धि कर्म के क्षयोपशम से जन्य होती है वह भी नहीं हो सकेगी इनके भी अभाव होने का प्रसंग प्राप्त होगा। परन्तु ऐसा तो है नहीं क्यों कि ज्ञानादिकों की हानि और वृद्धि लोक में स्पष्टरूप से देखने में

કરવું એટલે જીવનું આવરણ કરવું કારણ કે ગુણી અને ગુણમાં અભેદની અપેક્ષાએ ભેદ મનાતો નથી. એજ વાત બતાવવાને માટે સૂત્રકારે કહ્યું છે કે "कर्म जीवस्यावरणस्वभावमिष्यते" આ રીતે જ્યારે કર્મનો સ્વભાવ જ જીવને આવરણ કરવાનો છે ત્યારે અસંખ્યાત પ્રદેશવાળા જીવનું પાંચ પ્રદેશ વાળું કર્મ કેવી રીતે આવરણ બની શકે ! તથા કર્મને જે શાશ્વત કહે છે, તે પણ સંગત નથી- જો કર્મને શાશ્વત માનવામાં આવે તો તેની જે ક્ષયોપશમ વગેરે અવસ્થાઓ હોય છે તે હોઈ શકે નહીં તેમનો અભાવજ માનવો પડે અને તેનો જો અભાવ હોય તો જ્ઞાનાદિકની ઉત્પત્તિનો પણ અભાવ જ માનવો પડશે, કારણ કે કર્મના ક્ષયોપશમ વગેરેથીજ જ્ઞાનાદિ પ્રકટ થાય છે. તથા જ્ઞાનાદિકમાં જે હાનિ અને વૃદ્ધિ કર્મના ક્ષયોપશમથી થયા કરે છે તે પણ થઇ શકે નહીં તેમનો પણ અભાવ માનવો પડે પરંતુ એવું તો બનતું નથી જ્ઞાનાદિકની હાનિ અને વૃદ્ધિ લોકમાં સ્પષ્ટરૂપે જોવામાં આવે છે,

चयपाभावात् नहि गगनस्यैकान्तनित्यस्य कदाचिदपि चयापचयौ भवत इति न कर्मण एकान्तशाश्वतत्वम्, अपि तु अशाश्वतत्वमेव, तथा सत्येव चयापचयादीनां संभव इति। पूर्वं कथितमन्यतीर्थिकैः 'पुव्विं भासा भासा भासिज्जमाणी भासा अभासा' इत्यादि, तत्खण्डयितुमुपक्रमते-'पुव्विं भासा अभासा' इत्यादि, 'पुव्विं भासा अभासा' पूर्वं भाषा अभाषा, पूर्वं-भाषणात् प्राक्काले या भाषा सा न भाषा, अभाषेत्यत्र नञ् शब्दोऽभावार्थकः, तथा भाषणात् प्राक्काले भाषा त्व तत्र नास्ति, भाषणात्पूर्वं भाषोत्पत्तेरप्यभावात्। एतावता भाषणात् प्राक्का

आती है। तथा-ऐसा जो कहा है कि कर्म सदा चय और अपचय को प्राप्त होता रहता है-सो यह बात कर्म की एकान्त शाश्वतता में बनती ही नहीं है। क्यों कि जो पदार्थ एकान्ततः नित्य होता है उसमें चय और अपचय नहीं होते हैं। जैसे आकाश एकान्ततः नित्य है-सो उसमें चय और अपचय कभी भी नहीं होता है। इस तरह विचार करने पर कर्म में एकान्ततः शाश्वतता नहीं बनती है। किन्तु उसमें अशाश्वतता ही आती है। क्यों कि कर्म को इस प्रकार से मानने पर ही उसमें चय और अपचय होना संभवते हैं। तथा जो अन्यतीर्थिकों ने ऐसा कहा है कि (पुव्विं भासा भासा, भासिज्जमाणी अभासा) इत्यादि-भाषण से पहिले जो भाषा है वह भाषा है बोलते समय की यह भाषा भाषा नहीं है इस बात को अब निराकरण किया जाता है-(पुव्विं भासा अभासा) इत्यादि, भाषण से पहिले भाषा में भाषापन नहीं होता है

તથા એવું જે કહ્યું છે કે "કર્મ સદા ચય અને અપચય પામ્યા કરે છે," એ વાત તો કર્મની એકાન્તતઃ શાશ્વત દશામાં બની શકતી જ નથી, કારણ કે જે પદાર્થ એકાન્તતઃ નિત્ય હોય છે તેમાં ચય અપચય થતાં નથી જેમ કે આકાશ એકાન્તતઃ નિત્ય છે તો તેમાં ચય અને અપચય કદી પણ થતાં નથી આ રીતે વિચાર કરવામાં આવે તો કર્મમાં એકાન્ત શાશ્વતતા સંભવતી નથી, પણ તેમાં અશાશ્વતતા જ સંભવે છે આ રીતે કર્મમાં અશાશ્વતતા માનવામાં આવે તો જ તેમાં ચય અને અપચય થવાનું સંભવી શકે છે હવે અન્યતીર્થિકોનું ભાષાના વિષયમાં જે મંતવ્ય છે તેનું ખંડન કરવામાં આવે છે 'पुव्विं भासा भासा भासिज्जमाणीअभासा" તેઓ કહે છે કે ભાષણના પહેલાંની જે ભાષા છે તેને જ ભાષા કહેવાય છે બોલવામાં આવતી ભાષા, ભાષા નથી. તો તેમના મતનું 'पुव्विं भासा अभासा' ઇત્યાદિ સૂત્રો વડે ખંડન કરવામાં આવ્યું છે કે ભાષણની પહેલા ભાષામાં ભાષાપણું હોતું

लिक्यामेव भाषायां यत् भाषात्वं व्यवस्थापितं परैस्तन्निराकृतम्, । ननु यदि उच्चारणात् प्राक् भाषा न भवति तदा कदा भाषा भवति तत्राह–' भासिज्जमाणी ' इत्यादि, ' भासिज्जमाणी भासा भासा ' भाष्यमाणा भाषा भाषा, उच्चारणसमये या वर्तमानकालिकी भाषा सैव भाषेति भावः । भासा समयवीइक्कंतं च णं भासिया भासा अभासा ' भाषासमयव्यतिक्रान्ते च खलु भाषिता भाषा अभाषा, उच्चारणानन्तरकाले भाषितापि न भाषा भवति । यत्तैः कथितं वर्तमान

क्यों कि भाषण से पहिले भाषोत्पत्ति का भाषामें अभाव रहता है। अतः वह अभाषा है। अभाषा में जो नञ् शब्द है वह अभावार्थक है। इससे यह बात प्रकट की गई कि बोलने से पहिले भाषा में भाषापन नहीं होता है। एतावता भाषण से पहिले समय में जो अन्यतीर्थिक जनों ने भाषा में भाषापन व्यवस्थापित किया है वह निराकृत हो जाता है। यदि यहां पर कोई ऐसी आशंका करे कि उच्चारण से पहिले यदि भाषा भाषा नहीं होती है तो भाषा कब होती है? इसके समाधान निमित्त सूत्रकार कहते हैं कि (भासिज्जमाणी भासा भासा) उच्चारण समय में जो वर्तमान कालिकी भाषा है वही भाषा है। इसी तरह से (भासा समयवीइक्कंतं च णं भासिया भासा अभासा) भाषा का समय व्यतिक्रान्त हो जाने पर भाषिता–बोलीगई–भाषा अभाषा है– भाषा नहीं है। तात्पर्य इसका यह है कि उच्चारण करने के अनन्तर काल में बोली गई भी भाषा भाषा नहीं होती है। तथा जो अन्यतीर्थियों

નથી- કારણ કે ભાષણ પહેલાં ભાષામા ભાષોત્પત્તિનોજ અભાવ રહે છે તેથી તે અભાષા છે- અભાષામાં જે નઞ્ શબ્દ છે તે અભાવાર્થક છે. તેની મારફત એ વાત દર્શાવવામા આવી છે કે બોલ્યા પહેલાંની ભાષામા ભાષા પણુ હોતુ નથી. તેથી ભાષણથી પહેલાના સમયની ભાષામાં અન્ય તીર્થિકોએ જે ભાષાપણુ બતાવ્યું છે તેનું નિરાકરણ થઈ જાય છે કદાચ અહીં કોઈને એવી શંકા થાય કે ઉચ્ચારણ પહેલાની ભાષાને જો ભાષા ન કહેવાય! તો ભાષા કોને કહેવાય? તે શંકાના સમાધાન માટે સૂત્રકાર કહે છે કે " भासिज्जमाणी भासा; भासा " ઉચ્ચારણ સમયે જે વર્તમાન કાળની ઉચ્ચારાતી ભાષા છે તેને જ ભાષા કહે છે એજ પ્રમાણે " भासासमयवीइक्कं तं च णं भासिया भासा अभासा " ભાષાનો સમય વ્યતીત થઈ ગયા પછી બોલવામા આવેલી ભાષા પણ અભાષા છે. ભાષા નથી તેનુ તાત્પર્ય એ છે કે ઉચ્ચારણ કર્યા પછીના કાળે બોલાયેલી ભાષા પણ ભાષા કહેવાતી નથી. પ્રતિક્ષી એવું જે કથન કરે છે કે વર્તમાન

समयस्यातिसूक्ष्मतया व्यवहारानुपयोगित्वेन वर्तमानकालिकी न भाषेति, तद् सत्यम्, वर्तमानसमयस्यैव विद्यमानतया व्यवहारप्रयोजकत्वात्, अतीतानागतसमयोस्तु असत्त्वेन व्यवहारानुपयोगित्वादिति। यच्चै कथितम् 'अभासमो भासा' इत्यादि, तस्योत्तर ददाति–'सा किं भासमो भासा अभासमो भासा' सा किं भाषमाणस्य भाषा अभाषमाणस्य भाषा, –भाषमाणस्य वर्तमानकालिकोच्चारणकर्तुरेव भाषा भाषा भवति अनुच्चारयितुर्वा भाषेति प्रश्नः, तदुत्तरम्–'भासमो णं भासा नो खलु सा अभासमो भासा' भाषमाणस्य वर्तमानकालिकभाषणकर्तुरेव भाषा, नो खलु सा अभाषमाणस्य भाषा, उच्चारणात् प्राक् न भाषा, उच्चारणानन्तरं च सा न भाषा किन्तु उच्चारणसमये उच्चारयितुरेव या भाषा सैव भाषा भवति, अतीतानागतकालिकी अनुच्चारयितृपुरुषसंबन्धिनी भाषा न भाषा

ने ऐसा कहा है कि वर्तमान काल अतिसूक्ष्म होने से व्यवहार में अनुपयोगी होता है अर्थात् व्यवहार का अंग नहीं होता है इस कारण वर्तमानकाल संबंधी भाषा भाषा नहीं होती है–सो ऐसा कहना भी ठीक नहीं है–क्यों कि वर्तमान जो समय होता है वही विद्यमान होने के कारण व्यवहार का प्रयोजक होता है। अतीत अनागत जो समय हैं ये तो असत्‌रूप होते हैं–इस कारण वे व्यवहार में अनुपयोगी हुआ करते हैं। तथा अन्यतीर्थियोंने जो पहिले ऐसा कहा है कि (अभासओ भासा) नहीं बोलते हुए की भाषा भाषा है–सो इसका उत्तर देते हुए सूत्रकार कहते हैं कि–(भासओ णं भासा, नो खलु सा अभासओ भासा) वर्तमानकाल में जो पुरुष उच्चारण कर रहा है उसी पुरुष की भाषा भाषा होती है, उच्चारण के पहिले और उच्चारण के बाद में भाषा

કાળ અતિ સૂક્ષ્મ હોવાથી વ્યવહારમાં અનુપયોગી હોય છે એટલે કે વ્યવહારનું અંગ બનતો નથી, તે કારણે વર્તમાન કાળની ભાષા ભાષા નથી તેમનું તે કથન પણ યોગ્ય નથી. કારણ કે વર્તમાન સમય જ વિદ્યમાન હોવાથી વ્યવહારનો પ્રયોજક હોય છે જ્યારે ભૂતકાળ અને ભવિષ્યકાળનો સમય તો અસદ્ રૂપ હોય છે તે કારણે તેઓ વ્યવહારમાં અનુપયોગી થયા કરે છે તથા પ્રતિપક્ષીએ પહેલાં એવું જે કહ્યું છે કે "અભાસઓ भासा" નહીં બોલનારની ભાષા ભાષા કહેવાય છે તો તેમની તે માન્યતાનું ખંડન કરવા માટે સૂત્રકાર કહે છે કે 'भासओ णं भासा नो खलु सा अभासओ भासा" વર્તમાનકાળે જે પુરુષ ઉચ્ચારણ કરી રહ્યો હોય છે એજ પુરુષની ભાષાને ભાષા કહેવાય છે, ઉચ્ચારણ પહેલાની કે ઉચ્ચારણ પછીની ભાષાને ભાષા કહેવાતી નથી. ભૂતકાળ

भवतीति सूत्राशयः। यदप्युक्तं 'भाषासमयव्यतिक्रान्ते' इत्यादि, तदपि न युक्तं भाष्यमाणभाषाया अभावे 'भासा समय वीइक्कंतं च णं' इत्यस्याभिलापस्याभावप्रसंगात् यश्च प्रतिपाद्यस्याभिधेये प्रत्ययोत्पादकत्वादिति हेतुः सोऽप्यहेतुरनैकान्तिक एव, प्रतिपाद्यपुरुषनिष्ठविषयज्ञानोत्पादकत्वस्य करादिचेष्टानां विद्यमानत्वेपि करादिचेष्टायां भाषात्वस्यासिद्धेरिति। यदपि कथितम्-'अभाषकस्य भाषा भाषा' तदपि न संगतम्, एवं सति सिद्धजीवस्याचेतनस्य वा भाषाप्राप्तिप्रसंगादिति।

भाषा नहीं है। अतीत और अनागत काल में अनुच्चारयिता पुरुष संबंधी भाषा भाषा नहीं होती है। तथा जो उसने ऐसा कहा है कि भाषा समय के व्यतीत हो जाने पर बोली गई भी भाषा भाषा नहीं होती है-सो ऐसा कहना भी अयुक्त है-क्यों कि जब अन्यतीर्थियों ने भाष्यमाण भाषा को भाषारूप से ही अंगीकार नहीं किया है तो (भासासमयवीइक्कंतं च णं) इस अभिलाप के ही अभाव का प्रसंग आता है। अर्थात् ऐसा अभिलाप नहीं बोला जा सकता है। क्यों कि वर्तमानकालिकी भाषा भाषारूप से जब स्वीकार ही नहीं की गई है तो भूतकाल संबंधी भाषा भाषारूप से कैसे मानी जा सकती है। अतः इस सूत्र का अभिलाप ही नहीं हो सकता है। तथा जो भूतकाल की भाषा-पूर्णरूप से बोली गई भाषा-प्रतिपाद्य-सुनने वाले के लिये अभिधेय-वाच्यपदार्थ में-प्रत्ययोत्पादक होती है-अर्थात् पूर्णरूप बोली गई भाषा के सुनने से सुनने वाले व्यक्ति को तद्वाच्यार्थ का बोध हो जाता है-

---

અને ભવિષ્યકાળમાં પુરુષે નહી ઉચ્ચારેલી ભાષાને ભાષા કહેતા નથી વળી પ્રતિપક્ષીએ એવું જે કહ્યું છે કે ભાષાનો સમય વ્યતીત થયા પછી બોલાયેલી ભાષાને ભાષા કહેવાય તે કથન પણ બરાબર નથી કારણ કે પ્રતિક્ષીએ જ્યારે ભાષ્યમાણ (બોલતી) ભાષાને ભાષારૂપે સ્વીકારી જ નથી ત્યારે "भासा समयवीइक्कंत च ण" તો આ અભિલાપના અભાવનો જ પ્રસગ આવે છે. એટલે કે આ પ્રકારનો અભિલાપજ બોલી શકાય નહી. કારણકે વર્તમાન કાળની ભાષાને જો ભાષારૂપે સ્વીકારી નથી તો ભૂતકાળની ભાષારૂપે કેવી રીતે સ્વીકારી શકાય! તેથી આ સૂત્રનો અભિલાપ જ થઈ શકે નહી. તથા ભૂતકાળની ભાષા પૂર્ણરૂપે બોલાયેલીભાષા પ્રતિપાદ્ય-શ્રોતાને માટે-અભિધેય-વાચ્યપદાર્થમાં પ્રત્યયોત્પાદક થાય છે, એટલે કે પૂર્ણરૂપે બોલાયેલી ભાષા સાંભળવાથી સાંભળનાર વ્યક્તિને તેનો વાચ્યાર્થ સમજાય છે-તેથી બોધ કરાવનાર હોવાથી ભૂતકાળની ભાષાને ભાષા કહેવી તે પણ યોગ્ય નથી. કારણ કે તેમાં જેપ્રત્ય-

– एव क्रियापि वर्तमानकाले एव युक्तेत्याशयेनाह–' पुर्व्वि किरिया' इत्यादि, ' पुव्वि किरिया अदुक्खा ' पूर्वं क्रिया अदुःखा, पूर्वकालिकी या क्रिया सा न दुःखकारणमिति ' जहा भासा तहा भाणियव्वा ' यथा भाषा तथा भणितव्या,

अत बोध कराने वाले होने से वह मूलकाल संबंधी भाषा भाषा है सो ऐसा कहना भी ठीक नहीं है–क्यों कि इसमें जो प्रत्ययोत्पादकत्व हेतु दिया गया है वह अपने साध्य के अभाव में भी रहता है अतः अनैकान्तिक है। साध्य के अभाव में भी रहने वाला हेतु अनैकान्तिक माना जाता है वह इस प्रकार से–क्यों कि सुनने वाले को–प्रतिपाद्य–जो विषय संबंधी ज्ञान कराया जाता है उसके प्रति हेतुता तो करादि चेष्टाओं में भी आती है। क्यों कि प्रतिपाद्य पुरुष उनकी चेष्टाओं द्वारा वाक्यार्थ का बोध कर लिया करता है। अत (समय व्यतिक्रान्ते सति भाषिता भाषा भाषा प्रत्ययोत्पादकत्वात्) यह हेतु करादि चेष्टाओं में भी चला गया होने से वहां भाषात्व के अभाव में अनैकान्तिक हो जाता है। तथा जो ऐसा कहा गया है कि अभाष की भाषा भाषा है सो यह कहना भी सगत नहीं है। कारण कि इस प्रकार की मान्यता में सिद्ध जीव और अचेतन पदार्थ में भाषा की प्राप्ति होने का प्रसग आता है। इसी तरह क्रिया भी वर्तमान काल में ही युक्त है–इसी आशय से सूत्रकार ने (पुव्वि किरिया अदुक्खा) ऐसा कहा है कि पूर्वकाल में की गई क्रिया दुःख की हेतु नहीं होती है। (जहा

त्पादकत्व हेतु आपवामा आवेल छे ते तेना साध्यना अभावमा पण रहे छे अनैकान्तिक छे साध्यना अभावमां पण रहेनार हेतुने अनैकान्तिक हेतु मानवामा आवे छे त आ प्रमाणे–सांभळनारने–प्रतिपाद्यने–विषय (वस्तु) सबधी जे ज्ञान अपाय छे तेना प्रत्येनी हेतुता तो कर वगेरेनी चेष्टाओमां पण आवे छे कारण के प्रतिपाद्य पुरुष (सांभळनार) तेमनी चेष्टाओ वडे पण वाक्यार्थने समजी शके छे तेथी " समयव्यतिक्रान्ते सति भाषिता भाषा भाषा प्रत्ययोत्पादकत्वात् ते हेतु वगेरेनी चेष्टाओमां पण चाल्यो गयो होवाथी त्यां भाषापणाना अभावे अनैकान्तिक हेतु थई जाय छे तथा अभाषकनी भाषाने भाषा कहेवी ते पण सगत नथी कारण के जो आ जातनी मान्यताने स्वीकारवामा आवे तो सिद्ध जीवो अने अचेतन पदार्थमा पण भाषानी प्राप्ति थवानो प्रसग उद्भवे छे एज रीते क्रिया पण वर्तमानकाळमा ज युक्त छ ए आशयथी सूत्रकारे कह्यु छे के–" पुव्वि किरिया अदुक्खा " पूर्वकाळे करवामा आवेली क्रिया दुःखना हेतुरूप थती नथी, " जहा

यथा भाषाया वर्तमानकाले एव भाषात्वं तथा वर्तमानकालिकक्रियाया एव सुख दुःखादिजनकत्वं न तु पूर्वकालिकीपरकालिक्योः दुःखादिजनकत्वमिति भावः। 'किरियावि जाव करणओ दुक्खा नो खलु सा अकरणओ दुक्खा' क्रियापि यावत् करणतः सा दुःखा नो खलु अकरणतो दुःखा, करणतः कुर्वत एव क्रिया दुःखस्य कारणं भवति, तथैव दर्शनात्, न तु अकरणात् क्रिया दुःखकारणं भवति, प्रतीतिबाधितत्वात्, दृश्यते हि लोके करणसमये एव क्रियाया दुःखोत्पादकत्वं सुखोत्पादकत्वं वा, पूर्वकाले परकाले च क्रियाया एवाभावात्, अभावस्य च कार्याजनकत्वात्, अन्यथा अभावस्य सदा सर्वत्र विद्यमानत्वेन सर्वकार्यस्य सर्वत्र सद्भावप्रसङ्गात्, यदि अभावस्यापि उत्पादकत्वं भवेत्तदा घटार्थी पुरुषो

भासा तहा भासियव्वा) जैसे वर्तमान काल संबंधी ही भाषा भाषारूप होती है उसी प्रकार से वर्तमानकाल संबंधी ही क्रिया सुख दुःखादि का कारण होती है। पूर्वकाल सम्बन्धी या परकाल सम्बन्धी क्रिया सुख दुःख आदि का कारण नहीं होती है। (किरिया वि जाव करणओ दुक्खा नो खलु सा अकरणओ दुक्खा) क्रिया अपने करने वाले को ही दुःख देने वाली होती है-नहीं करने वाले को नहीं। क्यों कि लोक में ऐसा ही देखा जाता हैं। नहीं करने वाले को क्रिया दुःख की जनक नहीं होती है। यदि ऐसी बात मानी जावे कि नहीं करने वाले को क्रिया दुःख की जनक होती है तो यह बात प्रतीति से बाधित है। लोक में ऐसा ही देखा जाता है कि क्रिया करने के समय में ही सुख दुःख की जनिका होती है। जब पूर्वकाल में अथवा परकाल में क्रिया का ही अभाव हो चुका है तो वह सुख दुःखादि की जनक कैसे हो सकती है। अभाव

भासा तथा भासियव्वा " જેવી રીતે વર્તમાન કાળની ભાષા ભાષારૂપ હોય છે એજ રીતે વર્તમાનકાળની ક્રિયા જ સુખ દુઃખ વગેરેના કારણરૂપ હોય છે. પૂર્વકાળની કે પરકાળની ક્રિયા સુખદુ ખાદિના કારણરૂપ હોતી નથી " किरिया वि जाव करणओ दुक्खा नो खलु सा अकरणओ दुक्खा " ક્રિયા કરનારને જ દુ ખદેનારી હોય છે, નહીં કરનારને દુઃખદાયક હોતી નથી કારણ કે લોકમાં એવુ પ્રત્યક્ષ જોવામા આવે છે જો એ વાત માની લેવામાં આવે કે નહીં કરનારને માટે ક્રિયા દુ.ખની જનક છે, તો તે વાતની પ્રતીતિ થઈ શકતી નથી લોકમા એવું સ્પષ્ટ જોવામા આવે છે કે ક્રિયા, કરવાને સમયે જ સુખ દુ ખની જનક હોય છે જો પૂર્વકાળે અથવા પરકાળે ક્રિયાનો જ અભાવ થઇ ચૂક્યો હોય તો તે સુખદુ.ખાદિની જનક કેવી રીતે બની શકે ? અભાવ કોઇ

दण्डादीनामुपादानं न कुर्यात्, न वा मोक्षार्थी तपःसंयमार्थं प्रयत्नं कुर्यात्, अतः पूर्वकालिकी पश्चात्कालिकी च न क्रिया न सुखदुःखादिजनिका, अपि तु वर्तमानकालिकी तथा क्रियमाणैव क्रिया दुःखादिकारणमिति । 'सेवं वत्तव्वं सिया' तदेवं वक्तव्यं स्यात्, तदेव करणत एव क्रिया दुःखजनिका न तु अकरणतः क्रिया दुःखजनिका इत्येव रूपेण वक्तव्यं स्यात् वक्तुं शक्नुयादिति भावः ।

अथ दुःखविषये आह—'किच्चं' इत्यादि ।

'किच्चं दुक्खं' कृत्यं दुःखम्, वर्तमानकालापेक्षया क्रियाद्वारेण सपाद्यमानमेव दुःखं भवति न तु अकृत्यं क्रियामन्तरेण दुःखं स्वभावत एव भवति, 'फुसं दुक्खं'

किसी भी कार्य का जनक नहीं होता है। यदि अभाव में कार्यजनकता मानी जावे तो अभाव तो सदा सर्वत्र विद्यमान रहता ही है-फिर क्या सब जगह सब कार्य की उत्पत्ति होती रहनी चाहिये। फिर क्या जरूरत है कि घटादिपदार्थों की उत्पत्ति करने के निमित्त दण्डादि कारणों को ग्रहण करने की। और क्या आवश्यकता है मोक्षार्थी के लिये संयमादि के प्रयत्न करने की। इसलिये यही मानना चाहिये कि पूर्वकालिकी तथा परकालिकी क्रिया सुख दुःख आदि की जनिका नहीं होती है, केवल वर्तमानकाल सम्बन्धी क्रियमाण क्रिया ही सुख दुःखादिक की जनक होती है। (सेवं वत्तव्वं सिया) इस तरह ऐसा कहा जा सकता है कि क्रिया अपने करने वाले को ही दुःख जनक होती है नहीं करने वाले को नहीं।

यहां क्रिया के सम्बन्ध को लेकर जो ऐसा कहा गया है कि क्रिया वर्तमान कालिकी ही करने वाले को सुखदुःखादि की जनक होती है

પણ કાર્યનો જનક બની શકતો નથી, જો અભાવમાં કાર્યજનકતા માની લેવામાં આવે તો અભાવ તો સર્વત્ર સદા મોજૂદ હોય છે તો પછી સઘળી જગ્યાએ સઘળા કાર્યની ઉત્પત્તિ થયા કરવી જોઇએ। પછી તો ઘટ વગેરેના નિર્માણને માટે, દંડ વગેરે કારણોનો ઉપયોગ કરવાની આવશ્યકતા શી છે? મોક્ષને માટે સંયમ વગેરેની પણ શી આવશ્યકતા રહે? તેથી એ વાત માનવી જ પડશે કે પૂર્વકાળની તથા પરકાળની ક્રિયા સુખદુઃખ વગેરેની જનક હોતી નથી. કેવળ વર્તમાન કાળે કરાતી ક્રિયા જ સુખદુઃખ વગેરેની જનક બને છે 'સેવ વત્તવ્વં સિયા' આ રીતે એવું કહી શકાય કે ક્રિયા કરનારને જ ક્રિયા દુઃખ જનક થાય છે નહીં કરનારને દુઃખજનક થતી નથી,

અહીં ક્રિયાના વિષયમાં એવું જે કહેવામાં આવ્યું છે કે વર્તમાનકાળની જ ક્રિયા કરનાર વ્યક્તિને સુખદુઃખ વગેરેની જનક થાય છે-મૂળ

यथा भाषाया वर्तमानकाले एव भाषात्वं तथा वर्तमानकालिकक्रियाया एव सुख दुःखादिजनकत्वं न तु पूर्वकालिकीपरकालिक्योः दुःखादिजनकत्वमिति भावः। 'किरियावि जाव करणओ दुक्खा नो खलु सा अकरणओ दुक्खा' क्रियापि यावत् करणतः सा दुःखा नो खलु अकरणतो दुःखा, करणतः कुर्वत एव क्रिया दुःखस्य कारणं भवति, तथैव दर्शनात्, न तु अकरणात् क्रिया दुःखकारणं भवति, प्रतीतिबाधितत्वात्, दृश्यते हि लोके करणसमये एव क्रियाया दुःखोत्पादकत्वं सुखोत्पादकत्वं वा, पूर्वकाले परकाले च क्रियाया एवाभावात्, अभावस्य च कार्याजनकत्वात्, अन्यथा अभावस्य सदा सर्वत्र विद्यमानत्वेन सर्वकार्यस्य सर्वत्र सद्भावप्रसङ्गात्, यदि अभावस्यापि उत्पादकत्वं भवेत्तदा घटार्थी पुरुषो

भासा तहा भाणियव्वा) जैसे वर्तमान काल संबंधी ही भाषा भाषारूप होती है उसी प्रकार से वर्तमानकाल संबंधी ही क्रिया सुख दुःखादि का कारण होती है। पूर्वकाल सम्बन्धी या परकाल सम्बन्धी क्रिया सुख दुःख आदि का कारण नहीं होती है। (किरिया वि जाव करणओ दुक्खा नो खलु सा अकरणओ दुक्खा) क्रिया अपने करने वाले को ही दुःख देने वाली होती है-नहीं करने वाले को नहीं। क्यों कि लोक में ऐसा ही देखा जाता हैं। नहीं करने वाले को क्रिया दुःख की जनक नहीं होती है। यदि ऐसी बात मानी जावे कि नहीं करने वाले को क्रिया दुःख की जनक होती है तो यह बात प्रतीति से बाधित है। लोक में ऐसा ही देखा जाता है कि क्रिया करने के समय में ही सुख दुःख की जनिका होती है। जब पूर्वकाल में अथवा परकाल में क्रिया का ही अभाव हो चुका है तो वह सुख दुःखादि की जनक कैसे हो सकती है। अभाव

भासा तथा भाणियव्वा " જેવી રીતે વર્તમાન કાળની ભાષા ભાષારૂપ હોય છે એજ રીતે વર્તમાનકાળની ક્રિયા જ સુખ દુઃખ વગેરેના કારણરૂપ હોય છે. પૂર્વકાળની કે પરકાળની ક્રિયા સુખદુ.ખાદિના કારણરૂપ હોતી નથી " किरिया वि जाव करणओ दुक्खा नो खलु सा अकरणओ दुक्खा " ક્રિયા કરનારને જ દુખદેનારી હોય છે, નહીં કરનારને દુખદાયક હોતી નથી કારણ કે લોકમાં એવું પ્રત્યક્ષ જોવામા આવે છે જો એ વાત માની લેવામાં આવે કે નહીં કરનારને માટે ક્રિયા દુખની જનક છે, તો તે વાતની પ્રતીતિ થઈ શકતી નથી લોકમા, એવુ સ્પષ્ટ જોવામા આવે છે કે ક્રિયા, કરવાને સમયે જ સુખ દુખની જનક હોય છે જો પૂર્વકાળે અથવા પરકાળે ક્રિયાનો જ અભાવ થઇ ચૂક્યો હોય તો તે સુખદુઃખાદિની જનક કેવી રીતે બની શકે ? અભાવ કોઇ

दुःखादिक भोगने पडते हों-सो बात भी नहीं है। क्रिया फल तो उसे बाद में ही प्राय मिलता हैं। अतः यह बात कैसे मानी जा सकती है कि वर्तमानकालिकी क्रिया ही अपना सुखदुःखादिरूप फल देती है भूत भविष्यत् कालीन क्रिया नहीं। समाधान-सिद्धान्त की यह मान्यता है कि कर्म अपनी अबाधास्थिति के बाद ही फल देता है। शुभाशुभ कर्म का बंध मन, वचन और काय इनकी शुभ और अशुभ प्रवृत्ति पर अवलम्बित होता है। काय सम्बन्धी क्रिया जीवों के द्वारा जैसी की जावेगी उसी के अनुसार कर्म का बंध होगा। बंध के बाद उस कर्म का उदय उसी समय आ जावे यह नियम नहीं है। अबाधाकाल व्यतीत होने पर कर्म का उदय में आवेगा ही, अतः जिस जीव ने भूतकाल में हिंसा आदि क्रिया की है-उस जीव का उस क्रिया के करते समय जैसा आत्म परिणाम रहा उसीके अनुसार उसे कर्म का बंध हुआ और उसने अपने उदय में आने पर सुखदुःखादिरूप फल दिया। सो यह कर्म की उदय में आने रूप जो क्रिया है। उससे ही जीव का सुखदुःखादिरूप फल मिला है। कर्म का उदय में आना यही वर्तमानकालिकी क्रिया है। इस कथन से यह स्पष्ट हो जाता है कि जीवने पहिले भूतकाल में हिंसा क्रिया की है-सो जीव के जब उस हिंसा जन्य कर्म का उदय आवेगा

મનુષ્યને વતમાન સમયે જ તેનું ફળ ભોગવવુ પડે છે એવુ પણ જોવામા આવતુ નથી. સામાન્ય રીતે ક્રિયાનું ફળ તેને ભવિષ્યમા જ મળે છે તેથી એ વાત કેવી રીતે માની શકાય કે વર્તમાનકાળની ક્રિયા જ સુખદુઃખાદિ રૂપ ફળ દે છે, ભૂત અને ભવિષ્યકાળની ક્રિયા નહીં.

સમાધાન—સિદ્ધાંતની એ માન્યતા છે કે પ્રત્યેક કર્મ પોતાની અબાધા સ્થિતિ પછી જ ફળ આપે છે શુભાશુભ કર્મનો બંધ મન, વચન અને કાયાની શુભ અને અશુભ પ્રવૃત્તિ પર આધાર રાખે છે કાય સંબંધી ક્રિયા જીવો મારફત જેવી કરાશે તે પ્રમાણે કર્મનો બંધ બંધાશે, બંધ બંધાયા પછી તે કર્મ એજ સમયે ઉદયમાં આવે છે એવો નિયમ નથી. અબાધાકાળ વ્યતીત થયા પછી કર્મ ઉદયમાં આવશે જ, તેથી જે જીવે ભૂતકાળમાં હિંસા વગેરે ક્રિયા કરી છે તે જીવનું તે ક્રિયા કરતી વખતે જેવું આત્મ પરિણામ રહ્યું તે પ્રમાણે તેને કર્મનો બંધ પડયો અને તેણે ઉદયમાં આવતા સુખ દુઃખાદિ રૂપ ફળ દીધુ આ રીતે કર્મની ઉદયમાં આવવા રૂપ જે ક્રિયા છે તેનાથી જ જીવને સુખદુઃખાદિ રૂપ ફળ મળે છે કર્મનું ઉદયમા આવવુ એજ વતમાનકાળની ક્રિયા છે આ કથન વડે એ વાત સ્પષ્ટ જણાય છે કે જીવે

भूत, भविष्यत्काल की क्रिया सुखदुःखादिक की जनक नहीं होती है और न वह अपने करने वाले को ही सुखदुःखादिक की जनक होती है सो इस पर कोई तटस्थ शिष्य ऐसी शंका कर सकता है कि ६ दिन पहिले अथवा इसके भी पहिले अनर्थ करने वाले व्यक्ति को अनर्थरूप की गई वह क्रिया दुःख जनक नहीं होनी चाहिये, परन्तु व्यवहार में हम देखते हैं कि पूर्व में की गई वह क्रिया वर्तमान में दुःख जनक होती है। जब किसी मनुष्य पर हत्यारूप क्रिया करने का अभियोग प्रमाणित हो जाता है तो वह वर्षों पहिले की हत्यारूप क्रिया वर्तमानकाल में उसे फांसी आदि के रूप में दुःखजनक प्रकट देखने में आती है। इसी तरह आवेश में आकर किसी की हत्या करने पर उतारु हुए पुरुष को तलवार लेकर मारने के लिये जाते समय जब सरकारी आदमी पकड़ लेता है तो उसे उसी सजा का पात्र होना पड़ता है जिसका पात्र हत्या करने वाले को होना पड़ता है। इससे यह साबित होता है कि वर्तमान में हत्या-रूप क्रिया नहीं करने पर भी आगे होने वाली उस क्रिया ने उस करने के भाव वाले व्यक्ति को अभी ही अपना फल दे दिया। तथा जिस पुरुष ने वर्तमान में किसी की हत्या की है उसे उसी समय उसे फल

ભવિષ્યતકાળની ક્રિયા સુખદુઃખ વગેરેની જનક થતી નથી અને તે કરનારને જ સુખદુઃખ વગેરેની જનક થતી નથી-તો તે વિષે કોઇ તટસ્થ શિષ્ય એવી શકા કરી શકે કે છ દિવસ પહેલાં અથવા તેનો કરતા પણ આગળ અનર્થ કરનોર મનુષ્યને અનર્થરૂપ કરાયેલી તે ક્રિયા દુઃખ જનક થવી જોઇએ નહીં. પરંતુ વ્યવહારમા તો એવું જોવા મળે છે કે પૂર્વે કરવામાં આવેલી તે ક્રિયા વર્તમાન સમયે દુ.ખ જનક થાય છે જ્યારે કોઈ માણુસ પર હત્યારૂપ ક્રિયા કરવાનો આરોપ સાબિત થાય છે ત્યારે વર્ષો પહેલા તેણે કરેલી હત્યાના ફળરૂપે તેને ફાંસી વગેરે દુઃખજનક ફળ ભોગવવા પડે છે, એજ પ્રમાણે આવેશમાં આવી જઈ ને કોઈની હત્યા કરવા માટે હાથમાં તલવાર લઇને ધસી જતા માણુસને કોઇ પોલિસ પકડી લે તો તેને એજ સજા ભોગવવી પડે છે કે જે હત્યા કરનાર ભોગવે છે આ દ્રષ્ટાંતો વડે એ સિદ્ધ થાય છે કે વર્તમાન સમયે હત્યારૂપ ક્રિયા નહીં કરવા છતાં પણ ભવિષ્યમા થનારી તે ક્રિયાએ તે ક્રિયા કરવાની ઇચ્છાવાળી વ્યક્તિને વર્તમાન સમયે જ તેનું ફળ દઈ દીધું, તથા જે મનુષ્યે વર્તમાન સમયે કોઇની હત્યા કરી હોય છે તે

'वेयण वेदेंति' वेदनां वेदयन्ति जीवा क्रियमाणकृतं दुःखं कृत्वा पुनः पुनः दुःखमनुभवन्तीति, 'इति वत्तव्वं सिया' इति एवं पूर्वोक्तरूपेण वक्तव्यं स्यात् वक्तुं शक्नुयादिति। अयमर्थः सूत्राशयः-पूर्वपक्षावसरे यदन्यतीर्थिकैः कथितं तत् सर्वं मिथ्यैव, तथाहि यदि चलदेव प्रथमसमये चलितं न भवेत् तदा द्वितीयादि समयेपि अचलितमेवेति न कदापि चलेदिति, अत एव वर्तमानस्यापि विवक्षयाऽतीतत्वं न विरुद्धमिति एतच्च चलमाणे चलिए इति प्रथमशतकस्य प्रथमोद्देशकस्य दशमसूत्रे एव प्रतिपादितमिति नात्र पुनः प्रतन्यते, यदुक्तं चलितकार्याकरणादचलितमेवेति तदयुक्तम्, यतः प्रति

णाकृत नहीं है। (कट्टु कट्टु) इस क्रियमाण कृत दुःख को कर करके प्राण, भूत, जीव और सत्त्व वेदना को भोगते हैं। तात्पर्य यह है कि जीव क्रियमाणकृत दुःख को बार २ करके पुनः पुन दुःख का अनुभव करते रहते हैं। (इति वत्तव्वं सिया) ऐसा वक्तु शक्य है। यहाँ इस प्रकार से इन सूत्रों का आशय है कि पूर्वपक्ष के अवसर पर जो अन्य तीर्थिकों ने कहा है, वह सब मिथ्या ही है—जैसे—वर्तमान में चलायमान कर्म यदि प्रथम समय में चलित न माना जावे तो द्वितीयादि समयों में भी वह अचलित ही रहेगा। अतः फिर वह कभी चलेगा ही नहीं। इसलिये वर्तमान में भी विवक्षा से अतीतता विरुद्ध नहीं होती है। यह विषय-(चलमाणे चलिए) इस सूत्र में ही पहिले कह दिया गया है अब यहाँ दुबारा उसे कहना पिष्ट पेषण हो जाने के कारण ठीक नहीं है। तथा जो पहिले ऐसा कहा गया है कि चलायमान कर्म चलित

આ ક્રિયમાણ કૃત દુઃખને કરીને પ્રાણ, ભૂત, જીવ અને સત્ત્વ વેદના ભોગવે છે તાત્પર્ય એ છે કે જીવ ક્રિયમાણ કૃત દુઃખને વારંવાર કરીને, ફરી ફરીને દુઃખનો અનુભવ કર્યા કરે છે "ઇતિ વત્તવ્વં સિયા" એ પ્રમાણે કહી શકાય છે આ સૂત્રનો ભાવાર્થ આ પ્રમાણે છે-પૂર્વપક્ષ રૂપ અન્યતીર્થિકોએ જે કહ્યું છે તે બધુ મિથ્યા જ છે જેમ કે-વર્તમાનકાળે ચલાયમાન કર્મને જો પ્રથમ સમયે ચલિત માનવામાં ન આવે તો બીજા વગેરે સમયે પણ તેને અચલિત જ માનવું પડે. તેથી તે કદી પણ ચલિત થાય જ નહીં. તેથી વર્તમાનમાં પણ વિવક્ષાથી અતીતતા વિરુદ્ધ હોતી નથી. આ વિષયનું "ચલમાણે ચલિએ" સૂત્રમાં વિસ્તારથી સ્પષ્ટીકરણ કર્યું છે તેથી અહીં તેનું ફરીથી પિષ્ટપેષણ કરવું યોગ્ય નથી. તથા પહેલાં એવું જે કહેવામાં આવ્યું છે કે ચલાયમાન કર્મ અચલિતનું કાર્ય સંપાદન કરવાને અસમર્થ હોય છે, તેથી ચલાયમાનને ચલિત

स्पृश्यं दुःखम्, स्पर्शनात वेदना देव दुःखम् न तु अवेदनात् 'कज्जमाणकडं-दुक्खं' क्रियमाण कृतं दुःखं न तु अक्रियमाणकृतम्, 'कट्टु कट्टु' कृत्वा कृत्वा, क्रियमाण कृतं दुःखं कृत्वा कृत्वा, 'पाणभूयजीवसत्ता' प्राणभूतजीवसत्त्वाः,

कभी उसको उसका फल मिलेगा। जब भी उसका उसे फल मिलता है तभी वह उसका वर्तमानकाल है। इसके पहिले का काल भूतकाल है। इसी तरह से भविष्य में जीव के द्वारा होने वाली क्रिया के विषय में भी जानना चाहिये। अतः इस अपेक्षा भूतकाल की और भविष्यत्काल की क्रियाको निरर्थक कहागया है और वर्तमान कालकी क्रियाको सार्थक।

अब सूत्रकार दुःख के विषय में कहते हैं-(किच्चं दुक्खं) वर्तमा-काल की अपेक्षा से क्रिया द्वारा संपाद्यमान ही दुःख होता है। क्रिया के विना स्वभावतः दुःख नहीं होता है। अर्थात् वर्तमानकाल में जो क्रिया की जाती है उस क्रिया से ही दुःख होता है। अतः दुःख क्रिया जन्य होता है। यह बात सिद्ध होती है! फिर स्वभाववादी ने जो (दुःख स्व-भाविक ही होता है) ऐसा कहा है-सो संगत नहीं है। यह सुखरूप है कि दुःखरूप है-यह निर्णय अन्तरात्मा में विना वेदन के नहीं होता है अतः (फुसं दुक्खम्) दुःख वेदन से ही ज्ञात होता है। विना वेदन किये नहीं। (कज्जमाणकडं दुक्खं) दुःख क्रियमाण कृत है-अक्रियमा-

પહેલા-ભૂતકાળમા-ક્રિયા રૂપ ક્રિયા કરી હોય તો જ્યારે તે ક્રિયા જન્ય કર્મ ઉદયમા આવશે ત્યારે જ જીવને તેનુ ફળ ભોગવવું પડશે, જ્યારે તેનું ફળ તેને મળે છે તે સમયને તેનો વર્તમાનકાળ કહે છે તેના પહેલાનો સમય ભૂતકાળ ગણાય છે એજ પ્રમાણે ભવિષ્યમાં જીવની મારફત થનારી ક્રિયાના વિષયમા સમજવુ, તેથી આ દૃષ્ટિબિંદુથી વિચાર કરીને ભૂતકાળ અને ભવિષ્યકાળની ક્રિયાને નિરર્થક બતાવી છે અને વર્તમાનકાળની ક્રિયાને સાર્થક કહી છે

હવે સૂત્રકાર દુઃખના વિષયમાં કહે છે-" किच्चं दुक्खं " વર્તમાનકાળની અપેક્ષાએ ક્રિયા વડે સંપાદ્યમાન જ દુઃખ હોય છે ક્રિયા વિના સ્વભાવથી દુઃખ હોતું નથી એટલે કે વર્તમાનકાળમા જે ક્રિયા કરવામા આવે છે તે ક્રિયાથી જ દુઃખ ઉદ્ભવે છે તેથી દુઃખ ક્રિયાજન્ય ગણાય છે, તે વાત સિદ્ધ થાય છે સ્વભાવવાદીઓનું એવુ કથન છે કે "દુઃખ સ્વાભાવિક જ હોય છે" તેમનુ તે કથન સંગત નથી કોઈ વસ્તુ સુખરૂપ છે કે દુઃખરૂપ છે તેનો નિર્ણય અન્તરાત્મામા વેદન કર્યા વિના થતો નથી તેથી ' फुसं दुक्खम् " દુઃખ વેદનથી જ જાણી શકાય છે, વેદન, વગર જાણી શકાતું નથી " कज्ज-माणकड दुक्खं " દુઃખ ક્રિયમાણ કૃત છે, અક્રિયમાણ કૃત નથી " कट्टु कट्टु "

'वेयणं वेदेंति' वेदनां वेदयन्ति जीवाः क्रियमाणकृतं दुःखं कृत्वा पुनः पुनः दुःखमनुभवन्तीति, 'इति वत्तव्वं सिया' इति एवं पूर्वोक्तरूपेण वक्तव्यं स्यात् वक्तु शक्नुयादिति। अयमयं सूत्राशयः-पूर्वपक्षावसरे यदन्यतीर्थिकैः कथितं तत् सर्वं मिथ्यैव, तथाहि यदि चलदेव प्रथमसमये चलितं न भवेत् तदा द्वितीयादि समयेपि तदचलितमेवेति न कदापि चलेदिति, अत एव वर्तमानस्यापि विवक्षयाऽतीतत्वं न विरुद्धमिति एतच्च चलमाणे चलिए इति प्रथमशतकस्य प्रथमोद्देशकस्य दशमसूत्रे एव प्रतिपादितमिति नात्र पुनः प्रतन्यते, यदुक्तं चलितकार्याकरणादचलितमेवेति तदयुक्तम्, यतः प्रति

णाकृत नहीं है। (कट्टु कट्टु) इस क्रियमाण कृत दु:ख को कर करके प्राण, भूत, जीव और सत्व वेदना को भोगते हैं। तात्पर्य यह है कि जीव क्रियमाणकृत दुःख को बार २ करके पुनः पुन दुःख का अनुभव करते रहते हैं। (इति वत्तव्वं सिया) ऐसा वक्तु शक्य है। यहां इस प्रकार से इन सूत्रों का आशय ले कि पूर्वपक्ष के अवसर पर जो अन्य तीर्थिकों ने कहा है, वह सब मिथ्या ही है-जैसे-वर्तमान में चलायमान कर्म यदि प्रथम समय में चलित न माना जावे तो द्वितीयादि समयों में भी वह अचलित ही रहेगा। अतः फिर वह कभी चलेगा ही नहीं। इसलिये वर्तमान में भी विवक्षा से अतीतता विरुद्ध नहीं होती है। यह विषय-(चलमाणे चलिए) इस सूत्र में ही पहिले कह दिया गया है अब यहां दुबारा उसे कहना पिष्ट पेषण हो जाने के कारण ठीक नहीं है। तथा जो पहिले ऐसा कहा गया है कि चलायमान कर्म चलित

આ ક્રિયમાણ કૃત દુઃખને કરીને પ્રાણ, ભૂત, જીવ અને સત્વ વેદના ભોગવે છે તાત્પર્ય એ છે કે જીવ ક્રિયમાણ કૃત દુઃખને વારંવાર કરીને, ફરી ફરીને દુઃખનો અનુભવ કર્યા કરે છે "इति वत्तव्वं सिया" એ પ્રમાણે કહી શકાય છે આ સૂત્રનો ભાવાર્થ આ પ્રમાણે છે-પૂર્વપક્ષ રૂપ અન્યતીર્થિકોએ જે કહ્યું છે તે બધુ મિથ્યા જ છે જેમ કે-વર્તમાનકાળે ચલાયમાન કર્મને જો પ્રથમ સમયે ચલિત માનવામાં ન આવે તો બીજા વગેરે સમયે પણ તેને અચલિત જ માનવુ પડે. તેથી તે કદી પણ ચલિત થાય જ નહીં. તેથી વર્તમાનમાં પણ વિવક્ષાથી અતીતતા વિરુદ્ધ હોતી નથી. આ વિષયનુ "चलमाणे चलिए" સૂત્રમાં વિસ્તારથી સ્પષ્ટીકરણ કર્યું છે તેથી અહીં તેનુ ફરીથી પિષ્ટપેષણ કરવુ યોગ્ય નથી તથા પહેલાં જેવુ જે કહેવામાં આવ્યુ છે કે ચલાયમાન કર્મ ચલિતનું કાર્ય સંપાદન કરવાને અસમર્થ હોય છે, તેથી ચલાયમાનને ચલિત

क्षणमुत्पद्यमानेषु स्थासकोशादिवस्तुषु अन्त्यक्षणभावि वस्तु आद्यक्षणे स्वकार्यं न करोत्येव, असत्त्वात्, अतो यत् अन्त्यसमयचलितं कार्यं विवक्षितं परतीर्थिकैः तद् आद्यसमयचलितं यदि न करोति तदा अत्र को दोषः कारणानां स्वस्वकार्यकरणस्वभावत्वादिति। यदप्युक्तं-द्वौ परमाणू न संहन्येते सूक्ष्मतया स्नेहाभावात्

के कार्य संपादन करने में असमर्थ होता है इसलिये चलायमान को चलित नहीं माना जा सकता सो ऐसा कहना भी युक्ति युक्त नहीं है, कारण कि प्रतिक्षण में उत्पद्यमान जो स्थासकोशकुशूल आदि घट की पूर्व अनस्थाएँ है उन अवस्थाओं के पूर्णरूप से समास हो जाने पर घट पर्याय की पूर्ण प्रादुर्भूति अपने अन्तक्षण में होती है, यह एक निश्चित बात है। अब उन अवस्थाओं के उत्पन्न हो जाने पर अन्तक्षग में उत्पन्न होने वाला वह घट यदि अपने कार्य को नहीं करता है। तो यह कोई आक्षेपार्ह जैसी बात ही नहीं है। क्यों कि वह उस समय असत् है-पूर्णरूप से अप्रादुर्भूत है। कार्य तो वह तब करेगा कि जब वह पूर्णरूप से प्रादुर्भूत हो जावेगा। इसी तरह से प्रथम समय का चलित कर्म अपने अन्त समय के चलित कार्य को नहीं करता है तो इसमें क्या दोष है। यह तो कारणों का स्वभाव है कि वे अपने २ कार्य को करें। तात्पर्य कहने का यह हैं कि जिस प्रकार समयवर्ती घट अपने अन्तक्षणवर्ती कार्य को नहीं करता है फिर भी वह घट ही कहलाता है-अघट नहीं उसी प्रकार प्रथम क्षणवर्ती चलित कर्म अपने अन्तक्षणवर्ती चलित कार्य को नहीं करने पर अचलित नहीं कहा जा सकता है चलित

માની શકાય નહીં, તો તે કથન પણ યુક્તિયુક્ત લાગતું નથી, કારણકે પ્રતિક્ષણે ઉત્પાદ્યમાન સ્થાસકોશકુશૂલ વગેરે ઘટની જે પૂર્વ અવસ્થાએ છે તે અવસ્થાની પૂર્ણ રૂપે સમાપ્તિ થાય ત્યારેજ ઘટપર્યાયની પૂર્ણ પ્રાદુર્ભૂતિ (નિર્માણ) તેની અન્તક્ષણે થાય છે એ એક નિશ્ચિત વાત છે તે અવસ્થાએ ઉત્પન્ન થાય ત્યારે અન્તક્ષણે ઉત્પન્ન થનારો ઘટ જો પ્રારંભકાળે પોતાનું કાર્ય ન કરે તો તે કોઈ આક્ષેપને પાત્ર વાત નથી. કારણ કે તે સમયે તે અસત્ છે-પૂર્ણરૂપે તેનું નિર્માણ થયું નથી કાર્ય તો તે ત્યારે જ કરશે કે જ્યારે પૂર્ણરૂપે તેનું નિર્માણ થશે, એજ પ્રમાણે પ્રથમ સમયનુ ચલિત કર્મ પોતાના અન્ત સમયનુ ચલિત કાર્ય ન કરે તો તેમાં શો દોષ છે ? એ તો કારણોને સ્વભાવ છે કે તેઓ પોત પોતાનું કાર્ય કર્યા કરે તાત્પર્ય એ છે કે જેવી રીતે પ્રથમ સમયવર્તી ઘટ પોતાનું અન્ત સમયવર્તી કાર્ય કરતો નથી છતાં પણ તેને ઘટ જ કહેવાય છે અઘટ કહેવાતો નથી, એજ પ્રમાણે પ્રથમ ક્ષણવર્તી ચલિત કર્મ પોતાનું

तद्युक्त, एकस्यापि परमाणो स्नेहसभवात् सार्धपुद्गलस्य सद्रतत्वेनैव तैरेव स्वीकृतत्वाच्च, यतः कथित "तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणति ते

ही कहा जावेगा। अत चलायमान कर्म को प्रथम क्षण की अपेक्षा चलितमान कर यदि उसमें अन्तक्षणवर्ती चलित के कार्य सपादन की क्षमता प्रथम समय में नहीं है, तो कोई आक्षेप जैसी बात नहीं है। यह तो ठीक ही है कि प्रथमक्षणवर्ती वह चलायमानरूप चलित पूर्णरूप से चलित होने के कारण उस समय चलित के अन्त्यक्षणवर्ती कार्य को नहीं ही करेगा। क्यों कि भिन्न २ कार्यो का होना कारणों की भिन्न २ अवस्थाओं पर अवलम्बित है।

तथा—जो ऐसा कहा है कि दो परमाणु सूक्ष्म होने के कारण स्नेहकाय के अभाव में परस्पर मिलते नहीं हैं सो यह कथन इसलिये ठीक नहीं है कि एक परमाणु में भी स्नेह गुण का सद्भाव माना ही गया है। यह बात जैनसिद्धान्त ही मानता है सो बात नहीं है, क्यों कि परती र्थिकों ने भी जहां ३ परमाणुओं के मिलने पर फिर उनके विभाग होने की बात कही है वहां उन्हों ने ऐसा भी कहा है कि १॥-१॥ परमाणु के, १ तीन परमाणु जन्य स्कन्ध के दो विभाग ही होते हैं। अत जब १

અન્તક્ષણવર્તી ચલિત કાર્ય ન કરવા છતાં અચલિત કહેવાતુ નથી, ચલિત જ કહેવાય છે તેથી ચલાયમાન કર્મને પ્રથમ ક્ષણની અપેક્ષાએ ચલિત માનીને જો તેમા અન્ત ક્ષણવર્તી ચલિતના સપાદનની ક્ષમતા પ્રથમ સમયે ન હોય તેમાં કોઈ આક્ષેપ જેવુ નથી, એ તો બરાબર જ છે કે પ્રથમ ક્ષણવર્તી તે ચલાયમાનરૂપ ચલિત પૂર્ણરૂપે ચલિત ન હોવાથી તે સમયે ચલિતનુ અન્ત્ય ક્ષણવર્તી કાર્ય નહી કરે કારણ કે જુદાં જુદાં કાર્યોનુ થવુ તે કારણોની ભિન્ન ભિન્ન અવસ્થાઓ પર આધાર રાખે છે

તથા—એવુ જે અન્યમતિઓનું કહેવુ ' બે પરમાણુ સૂક્ષ્મ હોવાથી તેમનામાં સ્નેહકાય નો અભાવ હોય છે તેથી તેઓ એક બીજા સાથે સયોજન પામતા નથી ' આ કથન પણ બરાબર નથી એક પરમાણુમા પણ સ્નેહગુણનો સદ્ભાવ માનવામાં આવે છે આ વાત જૈનસિદ્ધાત જ માને છે એવું નથી કારણ કે પરતીર્થિકો પણ કહે છે કે સયોજન પામેલ ત્રણ પરમાણુઓના સ્કંધનું વિભાજન કરવાથી ૧॥-૧॥ પરમાણુના બે વિભાગ થાય છે. આ રીતે

क्षणमुत्पद्यमानेषु स्थासकोशादिवस्तुषु अन्त्यक्षणभावि वस्तु आद्यक्षणे स्वकार्यं न करोत्येव, असत्त्वात्, अतो यत् अन्त्यसमयचलितं कार्यं विवक्षितं परतीर्थिकैः तद् आद्यसमयचलितं यदि न करोति तदा अत्र को दोषः कारणानां स्वस्वकार्यकरणस्वभावत्वादिति। यदप्युक्तं–द्वौ परमाणू न संहन्येते सूक्ष्मतया स्नेहाभावात्

के कार्य संपादन करने में असमर्थ होता है इसलिये चलायमान को चलित नहीं माना जा सकता सो ऐसा कहना भी युक्ति युक्त नहीं है, कारण कि प्रतिक्षण में उत्पद्यमान जो स्थासकोशकुशूल आदि घट की पूर्व अवस्थाएँ है उन अवस्थाओं के पूर्णरूप से समाप्त हो जाने पर घट पर्याय की पूर्ण प्रादुर्भूति अपने अन्तक्षण में होती है, यह एक निश्चित बात है। अब उन अवस्थाओं के उत्पन्न हो जाने पर अन्तक्षण में उत्पन्न होने वाला वह घट यदि अपने कार्य को नहीं करता है। तो यह कोई आक्षेपार्ह जैसी बात ही नहीं है। क्यों कि वह उस समय असत् है– पूर्णरूप से अप्रादुर्भूत है। कार्य तो वह तब करेगा कि जब वह पूर्णरूप से प्रादुर्भूत हो जावेगा। इसी तरह से प्रथम समय का चलित कर्म अपने अन्त समय के चलित कार्य को नहीं करता है तो इसमें क्या दोष है। यह तो कारणों का स्वभाव है कि वे अपने २ कार्य को करें। तात्पर्य कहने का यह हैं कि जिस प्रकार समयवर्ती घट अपने अन्तक्षणवर्ती कार्य को नहीं करता है फिर भी वह घट ही कहलाता है–अघट नहीं उसी प्रकार प्रथम क्षणवर्ती चलित कर्म अपने अन्तक्षणवर्ती चलित कार्य को नही करने पर अचलित नहीं कहा जा सकता है चलित

માની શકાય નહીં, તો તે કથન પણ યુક્તિયુક્ત લાગતું નથી, કારણકે પ્રતિક્ષણે ઉત્પાદ્યમાન સ્થાસકોશકુશૂલ વગેરે ઘટની જે પૂર્વ અવસ્થાઓ છે તે અવસ્થાની પૂર્ણ રૂપે સમાપ્તિ થાય ત્યારેજ ઘટપર્યાયની પૂર્ણ પ્રાદુર્ભૂતિ (નિર્માણ) તેની અન્તક્ષણે થાય છે એ એક નિશ્ચિત વાત છે તે અવસ્થાઓ ઉત્પન્ન થાય ત્યારે અન્તક્ષણે ઉત્પન્ન થનારો ઘટ જો પ્રારંભકાળે પોતાનું કાર્ય ન કરે તો તે કોઈ આક્ષેપને પાત્ર વાત નથી કારણ કે તે સમયે તે અસત્ છે–પૂર્ણરૂપે તેનું નિર્માણ થયું નથી કાર્ય તો તે ત્યારે જ કરશે કે જ્યારે પૂર્ણરૂપે તેનું નિર્માણ થશે, એજ પ્રમાણે પ્રથમ સમયનુ ચલિત કર્મ પોતાના અન્ત સમયનું ચલિત કાર્ય ન કરે તો તેમાં શો દોષ છે? એ તો કારણોનો સ્વભાવ છે કે તેઓ પોત પોતાનું કાર્ય કર્યા કરે. તાત્પર્ય એ છે કે જેવી રીતે પ્રથમ સમયવર્તી ઘટ પોતાનુ અન્ત સમયવર્તી કાર્ય કરતો નથી છતા પણ તેને ઘટ જ કહેવાય છે અઘટ કહેવાતો નથી, એજ પ્રમાણે પ્રથમ ક્ષણવર્તી ચલિત કર્મ પોતાનું

'पञ्च परमाणु पुद्गला संहता' कर्मतया भवति ' तदपि न सम्यक्, कर्ममोऽनं परमाणुस्वरूपतयाऽनन्तस्कन्धरूपत्वात्, पचाणुकस्य च स्कन्धमात्रत्वात्, तथ कर्म जीवानामावरणस्वभावमिष्यते तत्कथं पंचपरमाणु स्कन्धमात्रस्य सत् असख्य प्रदेशात्मकं जीवमावृणुयादिति । तथा यदुक्तं कर्मशाश्वतं तदप्ययुक्तमेव कर्मण

अर्धीकरण होता ही नहीं है। क्यों कि परमाणु नाम उसी का है कि फिर जिसका दूसरा विभाग न हो यदि परमाणु का भी विभाग होता है तो वह परमाणु नहीं कहावेगा-किन्तु वह तो स्कन्ध ही कहा जावेगा

तथा-जो ऐसा कहा है कि-(पच परमाणु पुद्गला संहता कर्मतया भवति) सो यह कहना इसलिये संगत नहीं है कि पांच परमाणुओं के समेरन से जो कर्मरूप स्कन्ध होगा-वह केवल पांच ही प्रदेशवाला होगा अनंतप्रदेशोंवाला तो होगा नहीं। फिर वह असंख्यात प्रदेशीजीव का दो आवरण कैसे कर सकेगा ? तात्पर्य कहने का यह है कि जीव का आवरण करना यह स्वभाव कर्मों का होता है। और ये कर्म अनंत परमाणुओं द्वारा निष्पन्न हुए होते हैं। अत ये एक स्कन्ध रूप न होकर अनन्त स्कन्धरूप होते हैं। तभी आकर ये असंख्यात प्रदेशवाले जीव को आवरण करते हैं। इसलिये ऐसा कहना कि पांच परम णु पुद्गल आपस में मिलकर कर्मरूप से परिणत होते हैं संगत नहीं माना जा सकता है। तथा-(कर्मशाश्वत ही है) यह कथन इसलिये संगत नहीं

શકતા નથી. કારણ કે પરમાણુ એવી નાનામાનાની વસ્તુ છે કે તેના વિભાગ પડી શકે જ નહીં. જો પરમાણુના પણ વિભાગ થતા હોય તો વિભાજ્ય વસ્તુને પરમાણુ કહેવાને બદલે સ્કંધ જ કહેવાશે

તથા- , પંચ परमाणुपुद्गलाः संहताः कर्मतया भवति " પરતીર્થિકોનું આ કથન પણ સંગત લાગતુ નથી. કારણ કે પાંચ પરમાણુઓના સંયોજનથી કર્મરૂપ સ્કંધ બનશે તે તો પાંચ જ પ્રદેશવાળો બનશે- અનંત પ્રદેશવાળો નહી બને તો તે અસંખ્યાતપ્રદેશી જીવનું આવરણ કેવી રીતે કરી શકે ? તાત્પર્ય એ છે કે જીવનું આવરણ કર વાનો સ્વભાવ કર્મોમાં હોય છે અને તે કર્મનું અનંત પરમાણુઓ વડે નિર્માણ થયું હોય છે. તેથી તેઓ એક સ્કંધરૂપ હોતા નથી પણ અનંત સ્કંધરૂપ હોય છે, ત્યારે જ તેઓ અસંખ્યાત પ્રદેશ વાળા જીવનું આવરણ કરી શકે છે તેથી " પાંચ પરમાણુ પુદ્ગલ એક બીજા સાથે સંયોજન પામીને કર્મરૂપે પરિણમે છે " એ કથન સુસંગત નથી. તથા-" કર્મ શાશ્વત જ છે" એ કથન પણ યોગ્ય નથી. કારણ કે એકાન્ત

भिज्जमाणा दुहावि तिहावि कज्जंति दुहा कज्जमाणा एगयओ दिवड्ढेत्ति" अनेन हि सार्धपुद्गलस्य सहतत्वाभ्युपगमेन तस्य स्नेहः स्वीकृत एव, इति कथं द्वयोः परमाण्वोः स्नेहाभावेन संघाताभाव इति। यदप्युक्तम्-एकतः सार्धः एकत सार्ध इति तदपि न युक्तम् परमाणोरर्धीकरणे परमाणुत्वाभावप्रसङ्गात्। तथा यदुक्तं

और और आधा परमाणु उनकी मान्यतानुसार आपस में मिल जाते हैं तो यह बात उनकी ही मान्यता से सिद्ध हो जाती है कि १ परमाणु में स्नेहगुण है। नहीं तो विना स्नेहगुण के उनका मिलना किसी तरह भी नहीं हो सकता। अतः जब (तिण्णि परमाणु पोग्गला एगयओ साहण्णंति ते भिज्जमाणा दुहा वि तिहावि कज्जंति, दुहा कज्जमाणा एगयओ दिवड्ढत्ति) इस कथन से सार्ध पुद्गल परमाणु का आपस में चिपकना स्वीकार किया गया है तो फिर दो परमाणु पुद्गलों का आपस में स्नेह के अभाव से संघातरूप से अवस्थान नहीं होता है ऐसा कथन कैसे समीचिन हो सकता है। यह तो कहना ऐसा हुआ कि जैसे कोई अपनी माता को कहे कि मेरी माता वंध्या है।

तथा-जो ११।देढ११।देढ परमाणु पुद्गल की प्रतिपक्षी ने यह बात कही है-सो जैनसिद्धान्त उसकी उस बात को नहीं मानता है। यह तो हमने उसकी बात को लेकर परमाणु स्नेह गुण की सिद्धि के लिये इसकी मान्यता प्रकट की है। जैन सिद्धान्त की मान्यतानुसार तो परमाणु का

તેમની માન્યતા પ્રમાણે એક અને અર્ધો પરમાણુ એક બીજા સાથે મળી જાય છે, તો તેમની માન્યતા વડે જ એ વાત્ત સિદ્ધ થાય છે કે એક પરમાણુમા પણ સ્નેહગુણુ હોય છે. જો સ્નેહગુણુ ન હોત તો તેમનો સંયોગ કોઇ પણુ રીતે થાત નહીં "तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति ते भिज्जमाणा दुहा वि कज्जंति, दुहा कज्जमाणा एगयओ दिवड्ढत्ति" આ કથન પ્રમાણે સાર્ધ પરમાણુઓનુ એક બીજા સાથે સયોજન પામવાનુ સ્વીકારવામાં આવ્યુ છે. તો પછી બે પરમાણુ પુદ્ગલોનુ સ્નેહકાયને અભાવે સયોજન થતું નથી એ કથન કેવી રીતે સાચુ ગણી શકાય? આ તો પોતાની માતાને વંધ્યા કહેવા જેવું લાગે છે!

વિપક્ષીએ ૧૧।-૧૧। પરમાણુપુદ્ગલની જે વાત કહી છે તેનો જૈનસિદ્ધાંત સ્વીકાર કરતો નથી. અહીં તો તેમની માન્યતાનો આધાર લઇને પરમાણુંમાં રહેલ સ્નેહ ગુણુ (ચીકાશ) સિદ્ધ કરવા માટે તેમની માન્યતા પ્રગટ કરવામાં આવેલ છે. જૈન સિદ્ધાતની માન્યતા તો એવી છે કે પરમાણુના વિભાગ પડી

कर्म सदा चीयतेऽपचीयते च इति तदप्येकान्तशाश्वतत्वे नोपपद्यते इति।

त्विक पदार्थ हैं और मद्यादिक पदार्थ असात्त्विक हैं। अतः हेयोपादेय का कथन जिस आत्मा में जितने अंश में प्रकट है वह आत्मा उतने ही अंश में ज्ञानावरणीय आदि के क्षयोपशम से विशिष्ट है और जितने अंश में हेयोपादेय का विवेक नहीं है वह उतने ही अंश में ज्ञानावरणीय कर्म के उदय से युक्त है। इस कथन से यही निष्कर्ष निकलता है कि ज्ञानावरणीय आदि कर्म का जिस आत्मा में जितना २ क्षयोपशम आदि है वह आत्मा उतने २ ज्ञान के उत्कर्ष से युक्त है और जिस आत्मा में जितना २ ज्ञानावरणीय कर्म का उदय वर्त रहा है वह आत्मा उतने २ ज्ञान की मंदता से युक्त है। अतः यदि कर्म को शाश्वत ही माना जावे तो फिर ज्ञान की हीनता और ज्ञान की उत्कर्षता जो ज्ञानावरणीय कर्म क्षयोपशमाधीन देखने में आ रही है वह नहीं आनी चाहिये। परन्तु यह आती तो है-अतः इससे यही ज्ञात होता है कि कर्म एकान्ततः शाश्वत नहीं हैं। तथा-(कर्म सदा उपचित अपचित होता रहता है) ऐसा कथन संगत इसलिये नहीं माना जा सकता कि कर्म को प्रतिपक्षी ने एकान्ततः शाश्वत स्वीकार किया है। एकान्त शाश्वत पदार्थ में उपचय और अपचय होना बनता नहीं है। यदि वह उपचय अपचय वाला

હેય અને ઉપાદેયનો વિવેક જેટલા પ્રમાણમાં રહેલો હોય છે તેટલા પ્રમાણમા તે આત્મા જ્ઞાનાવરણીય વગેરે કર્મના ક્ષયોપશમથી યુક્ત હોય છે અને જેટલા પ્રમાણમા તે હેયોપાદેયના વિવેકથી રહિત હોય છે એટલા જ પ્રમાણમા તે જ્ઞાનાવરણીય વગેરે કર્મોના ઉદયથી યુક્ત હોય છે આ કથનનો સાર એ છે કે જે આત્મામાં જ્ઞાનાવરણીય વગેરે કર્મનો જેટલા પ્રમાણમા ક્ષયોપશમ વગેરે થયેલ હોય છે તે આત્મા એટલા જ્ઞાનના ઉત્કર્ષ (વૃદ્ધિ) વાળો હોય છે અને જે આત્મામાં જ્ઞાનાવરણીય વગેરે કર્મનો જેટલો ઉદય થયેલ હોય છે તેટલો તે આત્મા જ્ઞાનની મંદતા વાળો હોય છે તેથી જો કર્મને શાશ્વત (નિત્ય) માનવામા આવે તો જ્ઞાનાવરણીય કર્મના ક્ષયોપશમને કારણે જ્ઞાનમાં જે હીનતા અને વૃદ્ધિ થાય છે તે થઈ શકે જ નહીં પણ જ્ઞાનમા હીનતા અને વૃદ્ધિ થયા કરે છે તેથી એ વાત સમજી શકાય છે કે કર્મ એકાન્ત થી શાશ્વત નથી તથા " કર્મનો સદા ઉપચય અને અપચય થતો રહે છે " કથનને પણ સાચુ માની શકાય નહીં કારણ કે અન્ય તીર્થિકોએ કર્મને એકાન્તતઃ શાશ્વત માનેલુ છે શાશ્વત પદાર્થોમા ઉપચય અને અપચય સંભવી શકતા નથી. જો તેને ઉપચય અને અપચયથી યુક્ત માનવામાં આવે

शाश्वतत्वे क्षयोपशमाद्यभावेन ज्ञानादीनां हानिप्रसङ्गात्, ज्ञानोत्कर्षस्य चाभाव प्रसंगात् दृश्येते च ज्ञानादीनां मद्यघृतादिभक्षणेन हानिवृद्धी इति। तथा यदुक्तं

बैठना है कि एकान्त नित्यता में विक्रिया का अभाव होने से किसी भी प्रकार का परिवर्तन नहीं होता है। कर्म यदि एकान्तरूप से शाश्वत माना जावेगा-तो फिर उसकी जो क्षयोपशम आदि रूप नाना अवस्थाएँ होती हैं वे कैसे हो सकेगी? इनके नहीं होने पर ज्ञानादिक गुणों में हानि और उत्कर्ष के अभाव का प्रसंग प्राप्त होगा। ज्ञानादिक गुणों में हानि और उत्कर्ष ये लोक में देखा ही जाता है। जब कोई व्यक्ति मद्यादिक का सेवन करता है तो उसके ज्ञानादिगुण में हानि होती हुई देखी जाती है और घृतादिक के सेवन करने वाले व्यक्ति में ज्ञानादिन गुणों का उत्कर्ष होता हुआ प्रतीत होता है। यहां ऐसी आशंका नहीं करना चाहिये कि मद्यादिक के सेवन से ज्ञान की हीनता और घृतादिक के सेवन से ज्ञान प्रकर्षता जब देखी जाती है तो फिर इसमें ज्ञानावरणीय आदि कर्मो के क्षयोपशमादिक की क्या आवश्यकता है? क्यों कि मद्यादिक जैसे अभक्ष अपवित्र पदार्थों का सेवन वही व्यक्ति करेगा कि जिसके हेयोपादेय का विवेक नहीं होगा-वह इनका भक्षण न करता हुआ भक्ष्य पवित्र पदार्थों का ही सेवन करेगा। घृतादिक पदार्थ सा-

નિત્યતામાં ક્રિયાનો અભાવના હોવાથી કોઈ પણ પ્રકારનું પરિવર્તન થતું નથી. કર્મને જો એકાન્ત- શાશ્વત માનવામા આવે તો તેની ક્ષયોપશમ આદિરૂપ જે વિવિધ અવસ્થાઓ હોય છે તે કેવી રીતે સંભવી શકે? અને તેના અભાવે તો જ્ઞાનાદિક ગુણોમાં હાનિ અને વૃદ્ધિનો પણ અભાવ માનવાનો પ્રસંગ ઉત્પન્ન થશે જ્ઞાનાદિક ગુણોમા હાનિ અને વૃદ્ધિ થતી તો પ્રત્યક્ષ જણાય છે મદિરાનું સેવન કરનાર વ્યકિતના જ્ઞાનાદિક ગુણોની હાનિ થતી જોવામા આવે છે અને ઘી વગેરે સેવન કરનારના જ્ઞાનાદિક ગુણોની વૃદ્ધિ થતી દેખાય છે અહી એવી શકા અસ્થાને છે કે મદિરાના વગેરે સેવનથી જ્ઞાનની હાનિ અને ઘી વગેરેના સેવનથી જ્ઞાનની વૃદ્ધિ થતી જણાતી હોય તો પછી જ્ઞાનાવરણીય વગેરે કર્મોના ક્ષયોપશમની શી આવશ્યકતા છે? કારણ કે મદિરા વગેરે અભક્ષ્ય પદાર્થોનુ સેવન એજ વ્યકિત કરશે કે જેને હેય અને ઉપાદેયનો વિવેક નથી. જેને હેય અને ઉપાદેયનુ ભાન હશે તે તો તેમનુ સેવન નહી કરે પરતુ ભક્ષ્ય, પવિત્ર પદાર્થોનુ જ સેવન કરશે. ઘૃતાદિક પદાર્થો સાત્વિક ગણાય છે અને મદ્યાદિક પદાર્થો અમ્ર ગણાય છે. તેથી જે આત્માની અં

मानसमयस्यपारिहत्वेन व्यवहारोपयोगित्वात्, अतीतानागतयोश्च विनष्टानुत्पन्न तयाऽसत्त्वेन व्यवहारानंगत्वात्, यदप्युक्तं भाषासमयव्यतिक्रान्ते इत्यादि तदपि न सम्यक् भाष्यमाणभाषाया अभावे भाषासमये व्यतिक्रान्ते इत्यस्याभिलापस्याभाव मसङ्गात्, यदपि प्रतिपादयस्याभिधेये प्रत्ययोत्पादकत्वादिति हेतुरुक्तः सोऽप्य नैकान्तिकः, करादिचेष्टानामभिधेयप्रतिपादकत्वेपि भाषात्वस्यासिद्धेः, तथा यदुक्तम्-अभाषकस्य भाषा इति तदपि न युक्तं, यत एवं सति सिद्धस्याचेतनस्य

गत समय विनष्ट एवं अनुत्पन्न के कारण मौजूदा हालत में नहीं होते हैं इसलिये ये व्यवहार के अंग भी नहीं होते हैं। तथा (भाषा समय व्यतिक्रान्त होने पर भाषा भाषा है अभाषा नहीं है) ऐसाजो कहा है सो भी ठीक नहीं है कारण कि जब भाष्यमाण भाषा को भाषारूप से ही स्वीकार नहीं किया गया है अर्थात् भाष्यमाण भाषा का ही जब अभाव कहा गया है तो फिर (भाषासमयव्यतिक्रान्ते) ऐसा अभि लाप ही नहीं बन सकता है। क्यों कि भाषा हो तो उसका समय व्य तिक्रान्त हो-वह तो है नहीं-फिर समय व्यतिक्रान्त किसका? अतः ऐसा अभिलाप नहीं बन सकता है। तथा जो समय व्यतिक्रान्त भाषारूप से प्रतिपादित करने के लिये (प्रतिपाद्यस्य अभिधेये प्रत्ययो त्पादकत्वात्) ऐसा हेतु कहा है वह अनैकान्तिक है। क्यों कि करादि चेष्टाओं में भी अभिधेय प्रतिपादकता पर उससे भाषात्व नहीं है। तथा जो ऐसा कहा है कि अभाषक की भाषा है-सो यह भी ठीक नहीं है

હોવાને કારણે મોજૂદ હોતા નથી, તેથી તે બન્ને કાળ વ્યવહારના અંગરૂપ પણ હોતા નથી. તથા ' ભાષાનો સમય વ્યતીત થયા પછીની ભાષા ભાષા છે અભાષા નથી" આ કથન પણ યોગ્ય નથી કારણ કે જો ભાષ્યમાણ (બોલાતી) ભાષાને જ ભાષા રૂપે સ્વીકારવામાં ન આવતી હોય તો "भाषा समयव्यतिक्रान्ते" ઇત્યાદિ અભિલાપ બની શકે જ નહીં જો ભાષા હોય તો તેનો સમય વ્યતીત થવાનો પ્રસંગ આવે-પણ ભાષાનો જ અભાવ હોય તો તેનો સમય વ્યતીત થવાની વાત જ ક્યાંથી ઉદ્ભવે ? તેથી આ પ્રકારનો અભિલાપ જ બની શકે નહીં તથા સમય વ્યતીત થઇ ગયા પછીની ભાષાને પ્રતિપાદિત કરવા માટે "प्रतिपाद्यस्य अभिधेये प्रत्ययोत्पादकत्वात्" આવો જે હેતુ બતાવ્યો છે તે પણ અનૈકાન્તિક છે કારણ કે કર વગેરેના હાવ ભાવોમાં પણ અભિધેય પ્રતિપાદનતા છે પણ તેમાં ભાષાત્વ નથી તથા "અભાષકની ભાષા ભાષા છે" આ કથન પણ યોગ્ય નથી, કારણ કે

यदप्युक्तं भाषणात् पूर्वं भाषा भाषणहेतुत्वात् तदयुक्तमेव, यतो भाषणात्पूर्वं भाषोत्पत्तेरभावाद् भाषात्वेन न व्यवहारः स्यात् लोकविरुद्धत्वात्। यदुक्तं भाष्यमाणा अभाषा, वर्तमानसमयस्याव्यावहारिकत्वात् तदपि न सम्यक्, वर्त-

माना जावे तो फिर उसमें एकान्ततः शाश्वतता नहीं माननी चाहिये। क्यों कि इस मान्यता के अनुसार वह परिणामी नित्य मानना पड़ेगा। परन्तु ऐसा उसे प्रतिपक्षी ने माना नहीं है। अतः एकान्त शाश्वत कर्म में उपचय अपचय नहीं घट सकने के कारण यह कथन भी उनका ठीक नहीं बैठता है।

तथा जो ऐसा कहा है कि भाषा की हेतु होने से भाषण के पहिले की भाषा भाषारूप है सो यह कथन भी संगत नहीं है, कारण कि भाषा की उत्पत्ति तो भाषण करने से ही होनी है। भाषण के पहिले तो भाषा है ही नहीं। और न भाषण के पहिले कोई (यह भाषा हैं) ऐसा व्यवहार ही करता है। तथा–ऐसा कथन लोक विरुद्ध भी है। तथा–जो ऐसा कहा गया है कि (भाष्यमाण भाषा नहीं है अभाषा है कारण कि वर्तमान समय व्यवहार का अग नहीं होता है–वह व्यवहारिक है) मो यह कथन भी ठीक नहीं है। कारण कि वर्तमान समय ही अस्तित्व विशिष्ट होने से व्यवहारोपयोगी होता है। अतीतसमय और अना-

તો તેમનામા નિશ્ચે શાશ્વતતા માનવી જોઈએ નહી, કારણ કે આ માન્યતા પ્રમાણે તેને પરિણામી નિત્ય માનવુ પડશે પરતુ વિપક્ષીએ તેને એવુ માનેલ નથી. તેથી નક્કીરૂપે શાશ્વત કર્મમા ઉપચય અને અપચયની સભવિતતા ન હોવાને લીધે તેમનુ તે કથન પણ બરાબર નથી

તથા—વિપક્ષીઓનું "ભાષાના હેતુરૂપ હોવાથી બોલ્યા પહેલાંની ભાષા ભાષારૂપ છે" એ કથન પણ સંગત લાગતું નથી, કારણ ભાષાની ઉત્પત્તિ તો ઉચ્ચારણ કરવાથી જ થાય છે ઉચ્ચારણ કર્યા પહેલાં તો ભાષાનુ અસ્તિત્વ જ નથી, અને ભાષણ (ઉચ્ચારણ) કર્યાં પહેલાં "આ ભાષા છે" એમ કહેવાતુ પણ નથી તેમજ આ પ્રકારનું કથન લોકવિરૂદ્ધ પણ છે. તથા–"ભાષ્યમાણ ભાષા, (વર્તમાન સમયે ઉચ્ચારવામા આવતી) ભાષા નથી; અભાષા છે કારણ કે વર્તમાન સમય વ્યવહારનુ અગ હોતો નથી" આ કથન પણ સાચુ નથી, કારણ કે વર્તમાન સમય જ અસ્તિત્વ વાળો હોવાથી વ્યવહારમાં ઉપયોગી છે ભૂતકાળ અને ભવિષ્યકાળ તો વિનાશી અને અનુત્પન્ન

नुष्ठानम्, तथा यदुक्तम्-अकृत्यं दुःखमित्यादि स्वभाववादिमतमाश्रित्य तदपि नासम्यक्, यतो यदि कण्टकतैक्ष्ण्यादिवत् सर्वं वस्तु अकारणादेव स्यात् तदाऽनेकप्रकारकैहिकपारलौकिककर्मणामभावप्रसंगः स्वीकृतं चान्यतीर्थिकैरपि किंचित् पारलौकिककर्मानुष्ठानम्, एतत्सर्वं कथनं परतीर्थिकानामज्ञानविलसितमिति। अन्ययूथिकानां विभङ्गज्ञाने चत्वारो भङ्गा भवन्ति, ते चेमे-सद्भूते असद्भूतम्, यथा-सद्भूते-परमाणौ, असद्भूतम्-मर्धादिकम् १। असद्भूते सद्भूतम्, यथा असद्भूते-व्यापकात्मनि-सद्भूत चैतन्यम् २। सद्भूते सद्भूतम्, यथा-सद्भूते परमाणौ, सद्भूत-निष्प्रदेशत्वम् ३। असद्भूते असद्भूतम्, यथा-असद्भूते-

सुख दुःखरूप होने लगे तो अनेक प्रकार के जो ऐहिक और पारलौकिक अनुष्ठान वगैरह किये जाते हैं वे सब ही व्यर्थ हो जावेंगे। सो ऐसा तो है नहीं क्यों कि यदृच्छावादियों ने भी कर्मानुष्ठान आदि माने हैं। तथा स्वभाववादी के मत को आश्रित कर जो (अकृत्य दुःखं) इत्यादि कहा गया है वह भी ठीक नहीं है। क्यों कि यदि कण्टक आदिकों की तीक्ष्णता की तरह समस्त वस्तुएँ विना करने से ही हो जावें तो फिर अनेक प्रकार के ऐहिक पारलौकिक कर्मों का अभाव मानना पड़ेगा। परन्तु ऐसा तो है नहीं-क्यों कि अन्यतीर्थिक जनों ने भी कुछ पारलौकिक कर्मविधियों का अनुष्ठान करना स्वीकार ही किया है। इसलिये समझना चाहिये कि अन्यतीर्थिक जनों ने जो यह सब कहा है वह उनके अज्ञान का ही कथन है। अन्ययूथिकों के विभङ्गज्ञान में चार भंग होते हैं-वे इस प्रकार से सद्भूत में असद्भूत (१) असद्भूत में सद्भूत (२) सद्भूत में सद्भूत (३) असद्भूत में असद्भूत

કરવામાં આવે છે તે વ્યર્થ જ જાય ? એવું તો બનતું નથી. નિયતિવાદીઓ પણ અનુષ્ઠાનોને માને છે "અકૃત્યમ્ દુઃખ" આ પ્રકારની સ્વભાવવાદીઓની માન્યતા પણ સાચી નથી. કારણ કે કાંટા વગેરેમાં રહેલી તીક્ષ્ણતાની જેમ તમામ વસ્તુઓ વિના કર્યે બની જતી હોય તો અનેક પ્રકારના ઐહિક અને પારલૌકિક કર્મોનો અભાવ જ માનવો પડશે પરંતુ એવું બનતું નથી અન્ય મતવાદીઓએ પણ કેટલાક પારલૌકિક કર્મવિધિઓના અનુષ્ઠાન કરવાનું સ્વીકાર્યું છે તેથી એમ જ માનવું પડશે કે અન્ય મતવાદિઓએ જે કહ્યું છે તે તેમના અજ્ઞાનને કારણે કહ્યું છે અન્ય યૂથિકો (અન્ય તીર્થિકો)ના વિભંગજ્ઞાનમાં ચાર ભાગા (વિભાગ) થાય છે, તે ચાર ભાગા આ પ્રમાણે થાય છે- (૧) સદ્ભૂતમાં અસદ્ભૂત, (૨) અસદ્ભૂતમાં સદ્ભૂત (૩) સદ્ભૂતમાં સદ્ભૂત

वा भाषाप्राप्तिप्रसङ्ग इति, एवं क्रियापि वर्तमानकाले एव युक्ता तस्या एव वर्तमानत्वात्, यच्चाभ्यासानभ्यासादिकं कारणं कथितं तदपि न युक्तम्। अनभ्यासादावपि यतः काचित् सुखादिरूपैव, तथा।

यदुक्तम्—अकरणतः क्रिया दुःखा इति तदपि न भवति। प्रतीति बाधितमेव यतः काले एव क्रिया दुःखा सुखा वा दृश्यते न पुनः पूर्वं पश्चाद्वा पूर्वपश्चात्काले क्रियाया एवासद्भावादिति।

'अकिच्चं दुक्खं' इत्यादि। यदृच्छावादिमताश्रयणेन यत् कथितं तत्सर्वमसत्यमेव, यतो यदि अकरणादेव कर्म दुःखं सुखं वा भवेत्तदाऽनेकप्रकारकैहिकपारलौकिकानुष्ठानादीनां वैयर्थ्यमेव प्रसज्येत, स्वीकृतं च यदृच्छावादिभिरपि कर्माद्य-

---

क्यों कि ऐसा मानने पर सिद्ध और अचेतन के भी भषा की प्राप्ति होने का प्रसंग प्राप्त होगा। इसी तरह से क्रिया भी वर्तमान काल में ही युक्त है—क्यों कि वर्तमान काल सद्रूप है। तथा—जो अभ्यास अनभ्यास आदि को कारण कहा गया है सो भी ठीक नहीं है क्यों कि अभ्यास आदि के नहीं होने पर भी कोई क्रिया सुखरूप ही लगती है। तथा जो ऐसा कहा है कि नहीं करने से क्रिया दुःखरूप लगती है सो ऐसा कथन भी प्रतीति से बाधित ही है कारण कि करते समय ही क्रिया सुखरूप अथवा दुःखरूप प्रतीत होती है। पहिले बाद में नहीं। क्यों कि क्रिया पूर्व पश्चात् काल में अभाव युक्त रहती है। अर्थात् पूर्व पश्चात् काल में उस क्रिया का अभाव हो जाता है।

तथा—यदृच्छावादिमत को लेकर जो ऐसा कहा गया है कि (अकिच्चं दुक्खं) इत्यादि—सो सब वह असत्य ही है। क्यों कि विना किये ही कर्म

એવું માનવામા આવે તો સિદ્ધ અને અચેતનમા પણ ભાષાની પ્રાપ્તિ થવાનો પ્રસગ ઉદ્‌ભવશે. એજ પ્રમાણે ક્રિયા પણ વર્તમાન કાળમાં જ યુકત છે—કારણ કે વર્તમાન કાળ જ સદ્રૂપ છે— અસ્તિત્વવાળો છે. તથા અભ્યાસ અનભ્યાસ વગેરે કારણ કહેવામા આવેલ છે તે પણ યોગ્ય નથી, કારણ કે અભ્યાસ વગેરે નહી હોવા છતાં પણ કોઇ ક્રિયા સુખરૂપ જ લાગે છે. તથા એવું જે કહ્યુ છે કે નહીં કરવાથી ક્રિયા દુ ખરૂપ લાગે છે, તે કથનની પણ પ્રતીતિ થતી નથી. કારણ કે કરતી વખતે જ ક્રિયા સુખરૂપ કે દુ.ખરૂપ લાગે છે —પહેલા કે પછી નહી— કારણ કે તે ક્રિયાનો પૂર્વકાળે અને પછીના કાળે અભાવ જ રહે છે તથા યદૃચ્છાવાદીઓ (નિયતિવાદીઓ)નું "अकिच्च दुक्ख" ઈત્યાદિ કથન પણ અસત્ય જ છે, કારણ કે કર્યા વિના જ જો કર્મ સુખ દુખ રૂપ થવા માંડે તો અનેક પ્રકારનાં જે ઐહિક અને પારલૌકિક અનુષ્ઠાનો

॥ परतीर्थिकानां क्रियाविषये प्रश्नोत्तराणि ॥

पुनरपि अन्ययूथिकान्तरमतं प्रदर्शयन्नाह—'अन्न उत्थियाणं भंते' इत्यादि।

मूलम्–अन्न उत्थिया णं भंते! एवं आइक्खंति, जाव एवं खलु एगे जीवे एगेणं समएणं दो किरियाओ पकरेंति, तं जहा–इरियावहियं च, संपराइयं च। जं समयं इरियावहियं पकरेइ, तं समयं संपराइयं पकरेइ, जं समयं संपराइयं पकरेइ, तं समयं इरियावहियं पकरेइ, इरियावहियाए पकरणयाए संपराइयं पकरेइ संपराइयाए पकरणयाए इरियावहियं पकरेइ, एवं खलु एगे जीवे एगेणं समयेणं दो किरियाओ पकरेंति, तं जहा इरियावहियं च संपराइयं च। से कहमेयं भंते एवं? गोयमा! जं णं ते अन्नउत्थिया एवं आइक्खंति, तं चेव जाव जे ते एवं आहंसु, मिच्छा ते एवं आहंसु, अहं पुण गोयमा! एवं आइक्खामि, एवं खलु एगे जीवे एगं समए एक्कं किरियं पकरेइ, ससमयवत्तव्वयाए णेयव्वं जाव इरियावहियं वा संपराइयं वा ॥ सू० ३॥

छाया—अन्ययूथिकाः खलु भदन्त! एवमाख्यान्ति, यावत् एवं खलु एको जीवः एकेन समयेन द्वे क्रिये प्रकरोति, तद्यथा ऐर्यापथिकीं च सांपरायिकीं च।

परतीर्थिको के क्रियाविषय में प्रश्नोत्तर—

'अन्न उत्थियाणं भंते! एवं आइक्खंति' इत्यादि।

सूत्रार्थ—(भंते) हे भदंत! (अन्नउत्थिया णं एवं आइक्खंति) अन्यतीर्थिक ऐसा कहते हैं कि (जाव एवं खलु एगे जीवे एगेणं समएणं

પરતીર્થિકોના ક્રિયા વિષે પ્રશ્નોત્તર—

"अन्न उत्थियाणं भंते! एवं आइक्खंति' ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—(भंते!) હે ભગવન્! (अन्नउत्थियाणं एवं आइक्खंति) અન્ય તીર્થિકો એવું કહે છે કે (जाव एवं खलु एगे जीवे एगेणं समएणं दो

व्यापकात्मनि, असद्भूतं कर्तृत्वम् ४। एवमन्ययूथिकमतमज्ञानविलसितं ज्ञात्वा भगवद्वचने श्रद्धा कार्येति ॥ सू-२ ॥

(४) इन्हें इस प्रकार से समझना चाहिये-सद्भूत परमाणु में असद्भूत आधे परमाणु का चिपकना-मानना यह प्रथम भंग है। व्यापक आत्मा में सद्भूत चैतन्य है ऐसा मानना द्वितीय भंग है। आत्मा को व्यापक मानना यह असद्भूत है। क्यों कि आत्मा अपने२ प्राप्त शरीर के बराबर माना गया है-व्यापक नहीं। सद्भूत परमाणु में निष्प्रदेशत्व मानना यह सद्भूत सद्भूत नाम का तीसरा भंग है। व्यापक आत्मा में असद्भूत कर्तृत्व मानना यह चौथा भंग है। इसी तरह से अन्यतीर्थिक जनों का मत अज्ञानविलसित है ऐसा जानकर भगवान के वचन में श्रद्धा करनी चाहिये।

यहां जो प्राण, भूत, जीव, सत्व ऐसा पाठ आया है-सो दो इन्द्रियवाले, तीन इन्द्रियवाले, चार इन्द्रियवाले, जीव प्राण शब्द से, वृक्ष एकेन्द्रिय जीव भूत शब्द से, पांच इन्द्रिय वाले जीव जीव शब्द से और बाकी के पृथिवीकाय अप् तेजो कायिक जीव सत्त्व शब्द से लिये गये हैं ऐसा जानना चाहिये ॥ सू-२ ॥

અને (૪) અસદ્‌ભૂતમાં અસદ્‌ભૂત તેનું સ્પષ્ટીકરણ આ પ્રમાણે છે- સદ્‌ભૂત પરમાણુમા અસદ્‌ભૂત—અર્ધા પરમાણુનુ ચોટી જવુ-એ માન્યતા ધરાવવી આ પહેલો ભાગો છે વ્યાપક આત્મામાં સદ્‌ભૂત ચૈતન્ય છે એમ માનવુ તે બીજો ભાંગો છે આત્માને વ્યાપક માનવો તે અસદ્‌ભૂત છે કારણ કે આત્મા પોત પોતાના પ્રાપ્ત શરીરની બરાબર મનાય છે- વ્યાપક મનાતો નથી- સદ્‌ભૂત પરમાણુમા નિષ્પ્રદેશત્વ માનવું તે સદ્‌ભૂતમા સદ્‌ભૂત નામનો ત્રીજો ભાગો છે વ્યાપક અત્મામાં અસદ્‌ભૂત કતૃત્વ માનવું તે ચોથા ભાંગો છે. આ રીતે અન્યતીર્થિકોનો મત અજ્ઞાનમૂલક છે, એમ જાણીને ભગવાનનાં વચનોમા શ્રદ્ધા રાખવી.

અહીં જે પ્રાણુ, ભૂત, જીવ અને સત્ત્વ શબ્દનો પ્રયોગ કરાયો છે તેનો અર્થ આ પ્રમાણે સમજવો. બે ઇન્દ્રિયવાળા, ત્રણુ ઇન્દ્રિયવાળા અને ચાર ઇન્દ્રિયવાળા જીવો, પ્રાણુ શબ્દથી ગ્રહણુ કરાયાં છે. વનસ્પતિ જીવો; ભૂત શબ્દથી, પ ચેન્દ્રિય જીવો; જીવ શબ્દથી અને બાકીના પૃથ્વીકાય અપ્કાય તેજકાય અને વાયુકાયના જીવો સત્વ શબ્દથી ગૃહણુ કરાયા છે એમ સમજવું. ॥સૂ. ૨॥

एवमाख्याति सर्वं यावत् य ते एवमाहु मिथ्या ते एवमाहु अहं पुन गौतम! एवमाख्यामि एवं खलु एको जीव एकसमये एका क्रियां प्रकरोति, स्वसमयव क्तव्यतया नेतव्यम् यावद् ऐर्यापथिकीं वा सांपरायिकीं वा ॥ सू० ॥ २ ॥

टीका-' अन्न उत्थियाण भंते ' अन्ययूथिका खलु भदन्त ! ' एवं आइक्खंति ' एवमाख्यान्ति ' जाव ' यावत्पदेन-' एवं भाषन्ते एवं प्रज्ञापयन्ति, एवं प्ररूप

गंव) तो क्या हे भदन्त ! यह कथन इसी प्रकार से है ? (गोयमा) हे गौतम ! (ज णं ते अन्नउत्थिया) जो वे अन्यतीर्थिक (एव आइक्खंति) ऐसा कहते हैं (त चेव जाव जे ते एवं आहंसु) यावत् जो उन्हों ने ऐसा कहा है (मिच्छा ते एव आहंसु) वह उन्होंने मिथ्या कहा है। (अहं पुण गोयमा ! एव आइक्खामि) मैं तो हे गौतम ! ऐसा कहता हु कि (एव खलु-एगे जीवे एगसमए एक किरियं पकरेइ) एक जीव एक समय में एक क्रिया करता है। (ससमयवत्तव्वयाए णेयव्व जाव इरिया वहियं वा सांपराइयं वा) यह बात स्वसमय वक्तव्यता से जाननी यावत् एक जीव एक समय में ऐर्यापथिकी अथवा सांपरायिकी क्रिया करता है।

टीकार्थ-(अन्न उत्थिया णं भंते) हे भदन्त ! अन्ययूथिक ऐसा कहते हैं। यहां जो (जाव) पद आया है उससे (एवं भाषन्ते, एवं प्रज्ञापयन्ति, एवं प्ररूपयन्ति) इन क्रियापदों का संग्रह किया गया है।

एव) तो हे भगवन्! तेमनु ते कथन साचु छे? (गोयमा!) हे गौतम! (ज णं ते अन्नउत्थिया एव आइक्खंति) ते अन्य तीर्थिको एवु जे कहे छे, (त चेव जाव जे ते एव आहंसु) (यावत्) तेमणे एवु जे कह्यु छे (मिच्छा ते एव आहंसु, ते तेमणे मिथ्या कह्यु छे ते साचु नथी (अहं पुण गोयमा ! एव आइक्खामि) हे गौतम! हु एवु कहु छु के (एव खलु-एगे जीवे एग समए एक्कं किरियं पकरेइ) एक जीव एक समये एक ज क्रिया करे छे (ससमय वत्तव्वयाए णेयव्वं जाव इरियावहियं वा सांपराइयं वा) ते वात स्व समय वक्तव्यताथी (स्व सिद्धांतथी) जाणवी जोइए के जीव एक समये ऐर्यापथिकी अथवा सांपरायिकी ए बे माथी एक ज क्रिया करे छे

टीकार्थ—' अन्नउत्थियाणं भंते ! " हे भगवन् अन्य मतवादीओ आ प्रमाणे कहे छे (अहीं जाव (यावत्पदेन) पद वडे एवं भाषन्ते, एवं प्रज्ञापयन्ति एवं प्ररूपयन्ति) आ क्रियापदोने ग्रहण करवामा आव्या छे) तेओ

यस्मिन् समये ऐर्यापथिकीं प्रकरोति तस्मिन् समये सांपरायिकीं प्रकरोति, यस्मिन् समये सांपरायिकीं प्रकरोति तस्मिन् समये ऐर्यापथिकीं प्रकरोति, ऐर्यापथिक्याः प्रकरणतया साम्परायिकीं प्रकरोति, साम्परायिक्याः प्रकरणतया ऐर्यापथिकीं प्रकरोति, एवं खलु एको जीव एकस्मिन् समये द्वे क्रिये प्रकरोति, तद्यथा-ऐर्यापथिकीं च सांपरायिकीं च, तत् कथमेतत् भदन्त ! एवम् ? गौतम ! यत्खलु अन्यतीर्थिका

दो किरियाओ पकरेंति) यावत् एक जीव एक समय में दो क्रियाओं को करना है। (तं जहा) वे दो क्रियाएँ इस प्रकार से हैं (ईरियावहियं च संपराइयं च) एक एर्यापथिकी दूसरी सांपरायिकी सो जीव इन दो क्रियाओं को करता है। (जं समयं इरियावहियं पकरेइ) जिस समय में एर्यापथिकी क्रिया करता है। (तं समयं संपराइयं पकरेइ) उस समय में सांपरायिकी क्रिया करता हैं (जं समयं सांपराइयं पकरेइ) जिस समय में सांपरायिकी क्रिया करता है (तं समयं इरियावहियं पकरेइ) उस समय में ऐर्यापथिकी क्रिया करता है (इरियावहियाए पकरणयाए संपराइयं पकरेइ, संपराइयाए पकरणयाए इरियावहियं पकरेइ) ऐर्यापथिकी क्रिया करने से सांपरायिकी क्रिया करता है, सांपरायिकी क्रिया करने से ऐर्यापथिकी क्रिया करता है। (एवं खलु एगे जीवे एगेणं समएणं दो किरियाओ पकरेइ) इस तरह एक जीव एक समय में दो क्रियाओं को करता है। (तं जहा इरियावहियं च संपराइयं च) एक ऐर्यापथिकी क्रिया और दूसरी सांपरायिकी क्रिया को। (से कहमेयं भंते !

किरियाओ पकरेंति) એક જીવ એક સમયે બે ક્રિયાઓ કરે છે. (तं जहा) તે બે ક્રિયાઓ આ પ્રમાણે છે- ईरियावहियं च संपराइयं च) (૧) ઇર્યાપથિકી અને (૨) સાંપરાયિકી, જીવ આ બન્ને ક્રિયાઓ કરે છે, (जं समयं इरियावहियं पकरेइ) જ્યારે જીવ ઇર્યાપથિકી ક્રિયા કરતો હોય છે ત્યારે तं समयं संपराइयं पकरेइ) સાંપરાયિકી ક્રિયા પણ કરતો હોય છે. (जं समयं संपराइयं पकरेइ तं समयं इरियावहियं पकरेइ) જે સમયે જીવ સાંપરાયિકી ક્રિયા કરતો હોય છે તે સમયે ઇર્યાપથિકી ક્રિયા પણ કરતો હોય છે, (इरियावहियाए पकरणयाए संपराइयं पकरेइ, संपराइयाए पकरणयाए इरियावहियं पकरेइ) ઇર્યાપથિકી ક્રિયા કરવાથી સાંપરાયિકી ક્રિયા કરે છે સાંપરાયિકી ક્રિયા કરવાથી ઇર્યાપથિકીક્રિયા કરે છે (एवं खलु एगे जीवे एगेणं समएणं दो किरियाओ पकरेइ) આ રીતે એક જીવ એક સમયે બે ક્રિયાઓ કરે છે-(तं जहा इरियावहियं च संपराइयं च) એક ઇર્યાપથિકી ક્રિયા અને બીજી સાંપરાયિકી ક્રિયા. (से कहमेयं भंते !

समय ऐर्यापथिकीं प्रकरोति-सपादयति 'त समयं सपराइय पकरइ' तस्मिन् समय सापरायिकीं प्रकरोति, तस्मिन्नेव समये सांपरायिकीं क्रियामपि सपा दयति। 'जं समयं संपराइय पकरइ' यस्मिन् समये सापरायिकीं प्रकरोति, 'तं समयं ईरियावहिय पकरेइ' तस्मिन् समय ऐर्यापथिकीं प्रकरोति, तथा 'इरिया वहियाए-पकरणयाए सांपराइय पकरेइ' ऐर्यापथिक्या प्रकरणतया सांपरायिकीं प्रकरोति 'संपराइयाए पकरणयाए इरियावहिय पकरेइ' सांपरायिक्या प्रकरणतया ऐर्यापथिकीं प्रकरोति, 'एव खलु एगे जीवे एगेण समएणं दो किरियाओ पकरेति' एव खलु एको जीव एकस्मिन् समये द्वे क्रिये प्रकरोति, 'तं जहा' तद्यथा-'इरियावहियं च सपराइय च' ऐर्यापथिकीं च सांपरायिकीं च 'से कह मेय भंते एवं' तत् कथमेतद् भदन्त! एवम्? हे भदन्त! यत्ते कथयन्ति तद्ये

समय में (इरियावहिय) ऐर्यापथिकी क्रिया को करता है (तं समय) उसी समय में (सपराइय) यह सांपरायिकी क्रिया को भी (पकरेइ) करता है। तथा (ज समय सपराइय पकरेइ) जिस समय में जीव सांप रायिकी क्रिया करता है (त समय ईरियावहियं पकरइ) उस समय वह एर्यापथिकी क्रया को करता है। (इरियावहियाए पकरणयाए सांप राइय पकरेइ) ऐर्यापथिकी क्रिया कर लेने से जीव (सापराइय पकरेइ) सांपरायिकी क्रिया करता है। (सपराइयाए पकरणयाए ईरियावहियं पकरेइ) साम्परायिकी क्रिया कर लेने से ऐर्यापथिकी क्रिया करता है। (एवं खलु एगे जीवे एगेण समएण दो किरियाओ पकरेंति) इस तरह एक जीव एक समय में दो क्रियाओं को करता है। (त जहा) जैसे (इरि यावहियं च संपराइयं च) एक ऐर्यापथिक को और सांपरायिकी को।

वहियं " ઇર્યાપથિકી ક્રિયા કરે છે 'त समयं ' એજ સમયે ' सपराइय पकरेइ " તે સાંપરાયિકી ક્રિયા પણ કરે છે તથા " ज समयं संपराइय पकरेइ " જે સમયે જીવ સાંપરાયિકી ક્રિયા કરે છે ' त समय ईरियावहियं पकरेइ " તે સમયે ઇર્યાપથિકી ક્રિયા પણ કરે છે " ईरियावहियाए पकरणयाए सांपराइय पकरेइ " ઇર્યાપથિકી ક્રિયા કરી લેવાથી જીવ " सांपराइय पकरेइ " સાંપરાયિકી ક્રિયા કરે છે અને ' सपराइयाए पकरणयाए ईरियावहियं पकरेइ " સાંપરાયિકી ક્રિયા કરી લેવાથી ઇર્યાપથિકી ક્રિયા કરે છે " एव खलु एगे जीवे एगेणं समएणं दो किरियाओ पकरेंति આ રીતે એક જીવ એક સમયે બે ક્રિયાઓ કરે છે-" तं जहा ' તે બે ક્રિયાઓ આ પ્રમાણે " ईरियावहियं च संपराइय च "

यन्ति, किमाख्यान्तीत्याह–'एवं खलु' इत्यादि। 'एवं खलु एगे जीवे' एवं खलु एको जीवः, 'एगेणं समएणं' एकस्मिन् समये 'दो किरियाओ पकरेंति' द्वे क्रिये प्रकरोति। के ते द्वे क्रिये? तत्राह–'तं जहे' त्यादि। 'त जहा' तद्यथा–'इरियावहियं च संपराइयं च' ऐर्यापथिकीं च साम्परायिकीं च। तत्र ईर्या नाम गमनम् तद्विषयः पन्थाः मार्ग इति ईर्यापथः तत्र भवा ऐर्यापथिकी, केवलकाययोगकारणकः कर्मबन्ध इत्यर्थः, ताम्। संपरैति=भ्रमति जीवो भवे=संसारे यैस्ते संपरायाः कषायास्तत्कारणिका या क्रिया सा सांपरायिकी क्रिया, कषायकारणकः कर्मबन्ध इत्यर्थः ताम्। 'जं समयं इरियावहियं पकरेइ' यस्मिन्

वे क्या कहते हैं–इसको सूत्रकार ने (एवं खलु एगे जीवे) इत्यादि सूत्र पाठ द्वारा प्रकट किया है एक जीव (एगेणं समएणं) एक समय में (दो किरियाओ पकरेंति) दो क्रियाएँ करता है! वे दो क्रियाएँ कौन सी हैं–इसे (तंजहा) द्वारा प्रकट करने के निमित्त कहते हैं कि वे इस प्रकार से हैं—(इरियावहियं च संपराइयं च) एक ऐर्यापथिक और दूसरी सांपरायिक, ईर्या नाम गमन का है। इस गमन का विषयभूत जो मार्ग है वह ईर्यापथ है। इसमें जो क्रिया हो वह ऐर्यापथिकी क्रिया है। अर्थात् गमनागमन करते समय केवल काययोग कारणक जो कर्मबंध होता है वह ऐर्यापथिकी क्रिया है। जिनके कारण जीव संसार में परिभ्रमण करता रहता है वह संपराय है– संपराय नाम कषाय का है। इस कषाय को लेकर जो क्रिया होती है, वह सांपरायिक क्रिया है। अर्थात् कषायकारणक जो कर्मबंध होता है वह सांपरायिकी क्रिया है। जीव (जं समयं) जिस

શું કહે છે તે સૂત્રકારે "एव खलु एगे जीवे" ઇત્યાદિ સૂત્રપાઠ વડે બતાવ્યું છે એક જીવ (एगेणं समएणं) એક સમયે 'दो किरियाओ पकरेंति" બે ક્રિયાઓ કરે છે. તે બે ક્રિયાઓ (त जहा) આ પ્રમાણે છે–"ईरियावहियं च संपराइयं च" એક ઇર્યાપથિકી ક્રિયા અને બીજી સાંપરાયિકી ક્રિયા ઇર્યા એટલે ગમન. તે ગમનને માટેનો જે માર્ગ હોય છે તેને ઇર્યાપથ કહે છે. તેમાં જે ક્રિયા થાય છે તે ક્રિયાને ઇર્યાપથિકી ક્રિયા કહે છે, એટલે કે ગમનાગમન કરતી વખતે કાયયોગને કારણે જે કર્મબંધ થાય છે તેને ઇર્યાપથિકી ક્રિયા કહે છે, સંપરાય એટલે કષાય. જેના કારણે જીવ સંસારમાં પરિભ્રમણ કર્યા કરે છે તેનું નામ સંપરાય (કષાય) છે તે કષાયને લીધે જે ક્રિયા થાય છે તે ક્રિયાને સાંપરાયિકી ક્રિયા કહે છે, એટલે કે કષાયને કારણે જે કર્મબંધ થાય છે તેને સાંપરાયિકી ક્રિયા કહે છે "ज समयं" જે સમયે જીવ "ईरिया

स्वसमयवक्तव्यतया नेतव्यम्, स्वसमयवक्तव्यता-चेत्थम्—" इरियावहियं वा संपराइयं वा। जं समयं इरियावहियं पकरेइ तं समयं संपराइयं न पकरेइ, जं समयं संपराइयं पकरेइ तं समयं इरियावहियं न पकरेइ। इरियावहियाए पकरणयाए संपराइयं न पकरेइ, संपराइयाए पकरणयाए इरियावहियं न पकरेइ। एवं खलु एगे जीवे एगेणं समएणं एगं किरियं पकरेइ, तं जहा "—इति, 'इरियावहियं वा संपराइयं वा' इत्यनेन सह संयोजनीयम्। मिथ्यात्वं चास्य पूर्वोक्तमतस्यैव प्रतिपादनीयम् ऐर्यापथिकी क्रिया तु अकषायोदयप्रभवा, ऐर्यापथिकी क्रिया केवलका ययोगकारणेन जायते काययोगश्च न कषायरूपोऽपि तु कषायभिन्नोऽतः ऐर्यापथिकी

समय में (एक्कं) एक (किरियं) क्रिया को (पकरेइ) करता है। (ससमय वत्तव्वयाए णेयव्वं) यह बात स्वसमयवक्तव्यता से जाननी चाहिये। यह स्वसमयवक्तव्यता इस प्रकार से है (इरियावहियं वा संपराइयं वा जं समयं इरियावहियं पकरेइ, तं समयं संपराइयं न पकरेइ) इत्यादि—जीव एक समय में एक ही क्रिया करता है। या तो वह ऐर्यापथिक क्रिया करता है, या सांपरायिक क्रिया करता है। जिस समय में वह ऐर्यापथिक क्रिया करता है उस समय में वह सांपरायिक क्रिया नहीं करता है। जिस समय में सांपरायिक क्रिया करता है उस समय में वह ऐर्यापथिक क्रिया नहीं करता है। ऐर्यापथिक क्रिया कर लेने से सांपरायिक क्रिया वह नहीं करता है और सांपरायिक क्रिया कर लेने से वह ऐर्यापथिक क्रिया नहीं करता है। इस तरह एक जीव एक समय में एक क्रिया करता है। या तो वह ऐर्यापथिक क्रिया करता है अथवा साम्परायिक क्रिया करता है।

જીવ " एगणं समएणं " એક સમયે ' एग किरियं पकरेइ " એક ક્રિયા જ કરે છે ससमयवत्तव्वयाए णेयव्वं " તે વાત સ્વસમય (સ્વ સિદ્ધાંત) ના વચન વને આધારે સમજવી જોઈએ તે સ્વસમયની વક્તવ્યતા આ પ્રમાણે છે " इरियावहियं वा संपराइयं वा जं समयं इरियावहियं पकरेइ, तं समयं संपराइयं न पकरेइ " ઇત્યાદિ જીવ એક સમયે એક જ ક્રિયા કરે છે કાતો તે ઐર્યાપથિકી ક્રિયા કરે જે અથવા તો સાંપરાયિકી ક્રિયા કરે છે જે સમયે તે ઐર્યાપથિકી ક્રિયા કરતો હોય છે તે સમયે તે સાંપરાયિકી ક્રિયા કરતો નથી જે સમયે તે સાંપરાયિકી ક્રિયા કરતો હોય છે તે સમયે તે ઐર્યાપથિકી ક્રિયા કરતો નથી ઐર્યાપથિકી ક્રિયા કરી લેવાથી તે સાંપરાયિકી ક્રિયા કરતો નથી અને સાંપરાયિકી ક્રિયા કરી લેવાથી જીવ ઐર્યાપથિકી ક્રિયા કરતો નથી આ રીતે એક જીવ એક સમયે એક જ ક્રિયા કરે છે-

वास्ति किम्?। भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि। 'गोयमा' हे गौतम! 'जं णं ते अन्नउत्थिया एवं आइक्खंति' ४ यत् खलु ते अन्ययूथिका एवमाख्यान्ति, एवं भाषन्ते, एवं प्रज्ञापयन्ति एवं प्ररूपयन्ति। 'तं चेव जाव' तदेव पूर्वोक्तमेव यावत्, अत्र यावच्छब्देन-"एवं खलु एगे जीवे एगेणं समएणं दो किरियाओ पकरेति, तं जहा-इरियावहियं च संपराइयं च' इत्यादि-पूर्वोक्तमन्यतीर्थिकमतं सर्वं संग्राह्यम्। 'जे ते एवमाहंसु मिच्छा ते एवमाहंसु' ये ते एवमाहुः, मिथ्या ते एवमाहुः, 'अहं पुण गोयमा' अहं पुनर्गौतम, 'एवं आइक्खामि' ४ एवमाख्यामि, एवं प्रज्ञापयामि। एवं खलु एको जीवः 'एगं समएणं' एकस्मिन् समये 'एक्कं किरियं पकरेइ' 'एकां क्रियां प्रकरोति, 'स समयवत्तव्वयाए णेयव्वं'

(से कहमेयं भंते! एवं वुच्चइ) तो हे भदन्त! जैसा वे कहते हैं क्या वह वैसा ही है?

इसका उत्तर भगवान देते हुए कहते है-(गोयमा) हे गौतम! (जं णं ते अन्नउत्थिया एवं आइक्खंति ४) जो वे अन्ययूथिक ऐसा कहते हैं, ऐसा भाषण करते हैं, ऐसा प्रज्ञापना करते हैं (तं चेव जाव) यहां यावत् शब्द से अन्यतीर्थिक समत पूर्वोक्त (एवं खलु एगे जीवे एगेणं समएणं) इत्यादि यह पाठ ग्रहण किया गया है-कि एक जीव एक समय में दो क्रियाएँ करता है इत्यादि, (जे ते एवमाहंसु) सो जो उन्हों ने ऐसा कहा है (मिच्छा ते एवमाहंसु) वह उन्हों ने झूठा कहा है। (अहं पुण गोयमा) हे गौतम! मैं तो (एवं आइक्खामि) ऐसा कहता हूं, ऐसा भाषण करता हूं, ऐसी प्रज्ञापना करता हूं, ऐसी प्ररूपणा करता हूं, कि (एवं खलु एगे जीवे) एक जीव (एगेणं समएणं) एक

એક ઈર્યાપથિકી અને બીજી સાંપરાયિકી "से कहमेयं भंते! एवं वुच्चइ?" તો હે ભગવન્! તેઓ એમ કેવી રીતે કહે છે?-શુ તેમની માન્યતા સાચી છે?

તેનો જવાબ આપતા ભગવાન કહે છે કે "गोयमा!" હે ગૌતમ! "जं णं ते अन्नउत्थिया एवं आइक्खंति ४" તે અન્ય તીર્થિકો એવુ જે કહે છે, એવુ જે ભાષણ કરેછે, એવી જે પ્રજ્ઞાપના કરેછે, એવી જે પ્રરૂપણા કરે છે, 'तं चेव जाव" અહીં "यावत्" પદથી અન્ય મતવાદીઓનો "એક જીવ એક સમયે બે ક્રિયાઓ કરે છે" ઇત્યાદિ તમામ પૂર્વોક્ત પાઠ ગ્રહણ કરવામાં આવ્યો છે, "जे ते एवमाहंसु" અને એવુ જે તેમણે કહ્યુ છે "मिच्छा ते एवमाहंसु" તે તેમણે જૂઠું કહ્યું છે-તેમની તે માન્યતા ભૂલ ભરેલી છે. "अहं पुण गोयमा!" હે ગૌતમ! હું તો "एवं आइक्खामि" એવું કહુ છુ, એવુ ભાષણ કરૂં છું, એવી પ્રજ્ઞાપના કરૂં છું અને એવી પ્રરૂપણા કરૂ છુ કે "एवं खलु एगे जीवे" એક

परतीर्थिकमतस्य मिथ्यात्वमवतीति बोध्यम्। विरुद्धयो पदार्थयोरेकपुरुषेणैकदा सपादयितुमशक्यत्वात्। नहि गच्छन् निनदतः स्थितो भवति, तद्वदिहापि कषाय जनितकषायाजनितक्रिययोः परस्पर विरुद्धत्वादेकपुरुषेण एकसमये क्रियाद्वय स्यानुष्ठातुमशक्यत्वेन मिथ्या तन्मतमिति संक्षेपः ॥ सू० ३ ॥

उपपातविरहविचारः—

अनन्तरप्रकरणे क्रियाया निरूपणं कृतम्, क्रियावतां चोत्पादो भवति इति क्रियानिरूपणे सति क्रियामूलकस्योत्पादः स्मृतो भवति, उत्पादस्मरणे सति तद्विरहस्योत्पादविरहस्य स्मरणं जातमिति तदेवाह—'निरयगई' इत्यादि।

मूलम्–निरयगई णं भंते ! केवइयं कालं विरहिया उववाएणं पण्णत्ता ? गोयमा ! जहण्णेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं बारसमुहुत्ता, एवं वक्कंतीपयं भाणियव्वं निरवसेसं, सेवं भंते सेवं भंते त्ति जाव विहरइ ॥ सू० ४ ॥

॥ पढमसमये दसमो उद्देसो सम्मत्तो ॥ १–१० ॥

कारण किसी तरह संभवित नहीं होता है। अतः इस प्रकार की मान्यतावाला परतीर्थिकों का मत मिथ्या है। ऐसा जानना चाहिये। क्यों कि एक ही काल में परस्पर विरुद्ध दो पदार्थों का एक पुरुष द्वारा संपादन होना अशक्य है। (जाता हुआ देवदत्त खड़ा है) जैसे किसी के इस कथन को कोई सत्य नहीं मान सकता है वैसा ही यह कथन है। इसे सत्य कैसे माना जा सकता है अत जैसे जानारूप क्रिया और स्थित होने रूप क्रिया एक ही काल में एक पुरुष में परस्पर में विरुद्ध होने के कारण संभवती नहीं है, उसी प्रकार से कषाय जनित और अकाषाय जनित इन दो क्रियाओं को परस्पर विरुद्ध होने के कारण ये दो क्रियाएँ एक ही काल में एक ही पुरुष द्वारा अनुष्ठातुं-कर्तुं-(करने योग्य) नहीं हो सकती हैं। अतः इस प्रकार की क्रिया द्वय की एकसाथ करने की मान्यतावाला सिद्धान्त मिथ्या है ऐसा जानना चाहिये ॥सू ३॥

મિથ્યા છે કારણ કે એકજ સમયે પરસ્પરથી વિરૂદ્ધ એવી બે ક્રિયાઓનું એક પુરૂષ વડે સંપાદન થવું અશક્ય છે જેમ કે "જઈ રહેલો દેવદત્ત ઉભો છે" એ કથન કોઈને પણ સત્ય નહીં લાગે, કારણ કે જવાની ક્રિયા અને ઉભા રહેવાની ક્રિયા પરસ્પર વિરૂદ્ધ ક્રિયાઓ છે તો તે બને ક્રિયા એક જ પુરુષ વડે એક જ સમયે સંભવી શકતી નથી એજ પ્રમાણે કષાયજનિત અને કષાય રહિત એ બે ક્રિયાઓ (સાંપરાયિકી અને ઈર્યાપથિકી) પરસ્પર વિરૂદ્ધ હોવાને કારણે એક જીવ વડે એક જ સમયે સંભવી શકતી નથી. તેથી તે બે ક્રિયાએ એક જ સાથે થાય છે, એવી માન્યતા મિથ્યા સમજવી. ॥ સૂ-૩ ॥

क्रियाऽकषायदोषप्रभवा भवति, सांपरायिकी क्रिया तु कषायदोषोद्भवा संसारे परिभ्रमणकारणं कषायाः ते एव संपरायपदवाच्यास्तैः संपरायैः कषायापरनामकैर्जायमाना क्रिया सांपरायिकीति कथ्यते इति एकस्याः कषायप्रभवत्वमेकस्यास्तु अकषायप्रभवत्वमितिद्वयोः क्रिययोः परस्परं विरोधात् कथमेकपुरुषेण एककाले तयोर्द्वयोः क्रिययोः करणं संभवतीति विरोधान्नैकदा द्वयोः संपादनं स्यादित्येवं रूपेण-

---

इस मत में मिथ्यात्व का प्रतिपादन इस प्रकार से करना चाहिये-ऐर्यापथिकी जो क्रिया होती है वह अकषायोद्भाव (विना कषय) होती है, तथा यह क्रिया केवल काययोगरूप कारण से उत्पन्न होती है। काययोगरूप जो कारण है वह कषायरूप होता नहीं है, किन्तु वह तो कषाय से भिन्न होता है। इसलिये ऐर्यापथिकी जो क्रिया है वह अकषायोद्भव (उत्पन्न) होती है। परन्तु जो सांपरायिक क्रिया है वह कषायरूप दोष से उद्भव (उत्पन्न) होती है। कषायें संसार में परिभ्रमण का कारण है। कषायों का नाम भी संपराय है। इन संपरायरूप कषायों से जो क्रिया उत्पन्न होती है, उस क्रिया का नाम सांपरायिक क्रिया है। इस तरह से जब यह बात है कि एक क्रिया कषाय से उत्पन्न होती है और एक क्रिया कषाय से उत्पन्न नहीं होती है, तो परस्पर में विरुद्ध हुई इन दो क्रियाओं का करना एक ही काल में एक पुरुष के लिये कैसे संभव हो सकता है। नहीं हो सकता है। अतः एक काल में इन दो क्रियाओं का एक पुरुष द्वारा संपादन होना मानना परस्पर में विरोध होने के

અન્ય તીર્થિકોના આ મિથ્યા મતનુ નિરસન આ રીતે કરી શકાય. ઈર્યાપથિકી ક્રિયા માત્ર કાયયોગ ને કારણે જ ઉત્પન્ન થાય છે, તે કષાયને કારણે ઉત્પન્ન થતી નથી, કાયયોગ રૂપ જે કારણો છે તે કષાયરૂપ હેતું નથી, પણ તે તો કષાયથી ભિન્નજ હોય છે તેથી ઈર્યાપથિકી ક્રિયા અકષાયોદ્ભવ (વિના કષાયે ઉત્પન્ન થનાર) હોય છે પણ સાપરાયિકી ક્રિયા કષાયરૂપ દોષથી ઉદ્ભવતી હોય છે કષાયો સસારમા પરિભ્રમણના કારણરૂપ છે કષાયોનુ નામજ સાપરાય છે, એ સાપરાયરૂપ કષાયોથી જે ક્રિયા ઉત્પન્ન થાય છે, તે ક્રિયાને સાપરાયિકી ક્રિયા કહે છે, આ રીતે એક ક્રિયા કષાયથી ઉત્પન્ન થાય છે અને બીજી ક્રિયા કષાયથી ઉત્પન્ન થતી નથી, આ પ્રકારની એક બીજાથી વિરૂદ્ધ ક્રિયાઓ એકજસમયે એક પુરુષ મારફત કેવી રીતે કરી શકાય? કહેવાનો હેતુ એ છે કે એકજ સમયે એક જીવવડે તે બને ક્રિયાઓનું સપાદન થવુ કોઈપણ રીતે સંભવિત નથી, તેથી તે બંને ક્રિયાઓ એક જીવ એકજ સમયે કરે છે" એવી પરતીર્થિકોની માન્યતા

टीका—'निरयगईणं भंते' निरयगतिः खलु भदन्त! 'केवइयं कालं विरहिया उववाएणं' कियन्तं कालं विरहिता उपपातेन 'पण्णत्ता' प्रज्ञप्ता? भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि। 'गोयमा' हे गौतम! 'जहण्णेणं एक्कं समयं' जघन्येन एकं समयम् 'उक्कोसेणं बारसमुहुत्ता' उत्कृष्टेन द्वादश मुहूर्तान्, हे गौतम! जघन्येनैकसमयपर्यन्तमुत्कृष्टतो द्वादश मुहूर्तान् उपपातरहिततया नरकगतिः कथितेति भावः। 'एवं वक्कंतीपयं भाणियव्वं निरवसेसं' एवं व्युत्क्रान्तिपदं भणितव्यम् निरवशेषम् व्युत्क्रान्तिर्जीवानामुत्पादः तदर्थपदमिति व्युत्क्रान्तिपदम् तत् प्रज्ञापनासूत्रस्य षष्ठम्। तत्सर्वं प्रज्ञापनासूत्रे विलोकनीयम्। 'सेवं भंते सेवं भंते' तदेतद् भदन्त! तदेतद् भदन्त! हे भदन्त! यद्भवानुमिदेवकथयति तत्सर्वं सत्यमेवेति ॥ सू० ४ ॥

प्रथमशतकस्य दशम उद्देशः समाप्तः ॥ १-१० ॥

इति श्री विश्वविख्यात-जगद्वल्लभ-प्रसिद्धवाचकपञ्चदशभाषाकलितललितकलापालापक-प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक-वादिमानमर्दक-श्रीशाहूछत्रपतिकोल्हापुरराजप्रदत्त-'जैनशास्त्राचार्य' पदभूषित-कोल्हापुरराजगुरु-बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकरपूज्यश्री-घासीलाल-व्रतिविरचितायां श्रीभगवतीसूत्रस्य प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां व्याख्यायां प्रथमं शतकं समाप्तम् ॥ १ ॥

भदन्त! इसी प्रकार से है हे भदन्त! इस प्रकार कहकर यावत् गौतम स्वामी तप संयम से अपनी आत्मा को भावित करते हुए विचरने लगे।

टीकार्थ—टीका का अर्थ सूत्रार्थ के अनुसार ही है। नरकगति यदि उपपात से विरहित रहे तो कम से कम १ समय तक रहे और अधिक से अधिक १२ बारह मुहूर्त तक रहे। इससे आगे वह उपपात से विरहित नहीं रह सकती। जीवों के उत्पाद का नाम व्युत्क्रान्ति है। इस सम्बन्धी जो प्रकरण है वह व्युत्क्रान्तिपद है। यह व्युत्क्रान्तिकपद प्रज्ञापनासूत्र का छठवाँ पद है। यह सब प्रज्ञापना सूत्र में देख लेना चाहिये ४

श्री जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्य श्रीघासीलालजी महाराजकृत भगवतीसूत्रकी प्रमेयचन्द्रिका व्याख्या के प्रथम शतकका दशवाँ उद्देशक समाप्त ॥१-१०॥

टीकानो अर्थ सूत्रार्थ प्रमाणे ज छे नरकगति ओछामां ओछा ओक समय अने वधारेमां वधारे १२ मुहूर्त सुधी उपपातथी विरहित रहे छे तेथी वधारे समय ते उपपातथी विरहित रहेती नथी. जीवोना उत्पादन व्युत्क्रान्ति कहे छे आ विषे व्युत्क्रान्तिपद" नामनुं प्रकरण छे ते व्युत्क्रान्तिपद प्रज्ञापना सूत्रनुं छठ्ठुं पद छे तेनी विशेष माहिती प्रज्ञापना सूत्रमांथी मेळवी लेवी ॥ सू. ४॥

श्री जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्यश्री घासीलालजी महाराजकृत भगवतीसूत्रनी प्रियदर्शिनीव्याख्याना पहेला शतकनो दसमो उद्देशक समाप्त ॥१-१०॥

छाया—निरयगतिः खलु भदन्त! कियन्तं कालं विरहिता उपपातेन प्रज्ञप्ता? गौतम! जघन्येन एकं समयम् उत्कृष्टेन द्वादशमुहूर्त्तान् एवं व्युत्क्रांतिपदं भणितव्यं निरवशेषं, तदेवं भदन्त! तदेव भदन्त! इति यावद्विहरति ॥ सू० ४ ॥

॥ प्रथमशतके दशम उद्देशः समाप्तः ॥ १-१० ॥

उपपापविरह—

अनन्तर प्रकरण में क्रिया का निरूपण किया है। जो क्रिया वाले होते हैं उनका उत्पाद होता है। इस तरह क्रिया के निरूपण होने पर क्रिया मूलक उत्पाद का स्मरण हो आता है और उत्पाद के स्मरण होने पर इसका विपक्ष भूत जो उत्पाद विरह है उसका स्मरण हो जाता है सो अब सूत्रकार इसी उत्पाद विरह का कथन करते हैं–'निरयगईणं भंते! केवइयं कालं' इत्यादि

सूत्रार्थ—(भंते) हे भदन्त! (निरयगईण) निरयगति-कितने कालतक (उववाएणं) उपपात से (विरहिया पण्णत्ता) विरहित कही गई है? (गोयमा! जहण्णेणं एक्कं समयं) हे गौतम! जघन्य से एक समयतक और (उक्कोसेणं) उत्कृष्ट से (बारस मुहुत्ता) बारह मुहूर्त्त तक निरयगति उपपात से विराहित कही गई है। (एवं वक्कंतीपयं भाणियव्वं निरवसेसं) इसी तरह समस्त व्युत्क्रान्तिक पद कहना चाहिये (सेवं भंते! सेवं भंते! त्ति जाव विहरइ) इसी यह प्रकार से है हे

ઉપપાત વિરહ

આગળના પ્રકરણમાં ક્રિયાનું નિરૂપણ કરવામા આવ્યું છે. જેઓ ક્રિયાવાળા હોય છે તેમનો ઉપપાત (જન્મ) હોય છે આ રીતે ક્રિયાનું નિરૂપણ કરતી વખતે ક્રિયામૂલક ઉપપાતનું સ્મરણ થઇ આવે છે અને ઉપપાત'નુ સ્મરણ થતા તેના પ્રતિપક્ષી ઉપપાત, વિરહનુ સ્મરણ થઈ આવે છે. તેથી હવે સૂત્રકાર ઉપાપત વિરહનુ નિરૂપણ કરે છે

" निरयगईणं भते! केवइयं कालं " ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ–(भते!) હે ભગવન્! (निरयगईण केवइयं कालं) નરકગતિ કેટલા કાળ સુધી (उववाएण विरहिया पण्णत्ता?) ઉપપાત વિરહિત કહી છે? (गोयमा!) હે ગૌતમ! (जहण्णेण एक्क समय) ઓછામાં ઓછી એક સમય અને (उक्कोसेण बारसमुहुत्ता) વધારેમાં વધારે બાર મુહૂર્ત સુધી નરકગતિને ઉપાપતથી વિરહિત કહેલ છે (एव वक्कती पयं भाणियव्व निरवसेसं) આ રીતે આખું વ્યુત્ક્રિન્તક પદ કહેવું (सेवं भते! सेव भंते! त्ति जाव विहरइ) હે ભગવાન્ આપનુ કહેવું સાચુ છે હે ભગવાન્ આપના કહેવા પ્રમાણે જ બધુ બરાબર છે આ પ્રમાણે કહીને ભગવાનને વંદણા નમસ્કાર કરીને ગૌતમ સ્વામી સંયમ અને તપથી પોતાના આત્માને ભવિત કરતા પોતાને સ્થાને બેસી ગયા.

पद्योत्पद्यन्ते इति विचारः ! वायुजीवानां मरणं कथं भवतीति प्रश्नः । आघाता दित्युत्तरम् । वायुजीवानां शरीराशरीरयोः प्रतिपादनम्, वायुजीवानां चत्वारि शरीराणि भवंतीति कथनम् । सकर्मकमृतादनगारस्य स्वरूपविचारः । प्राणभूत जीवसत्त्वविज्ञवेदृत्वानां स्वरूपकथनम् । अकर्मकमृतादनगारस्य विचारः । सिद्ध बुद्धमुक्तपारगत परंपरागतत्वादीनां स्वरूपपरिकीर्तनम् । आर्यश्रीस्कन्दस्य चरितम् । पिङ्गलकनिर्ग्रन्थवैशालिकश्रावकस्य स्कन्दकं प्रति प्रश्नः । तत्र लोकः सान्तोऽनन्तो जीवः सान्तोऽनन्तो वा, सिद्धिः सान्ताऽनंता वा, सिद्धः सान्तोऽनन्तो वा केन मरणेन म्रियमाणस्य जीवस्य संसारवृद्धिहानी चेति । स्कन्दकस्य संशयो त्पत्त्या मौनावलंबनम् । श्रीमहावीरस्यागमनं श्रुत्वा तत्पार्श्वे स्कन्दकस्य गमन प्रश्न करणं, भगवत उत्तरकथनं चेति । स्कन्दकस्याऽच्युतकल्पे उत्पत्तिः, महाविदेहे

कायिक में ही उत्पन्न होते हैं ऐसा विचार । वायुकायिक जीवों का मरण कैसे होता है ? यह प्रश्न, आघात से होता है ऐसा उत्तर । वायुकायिक जीवों के शरीर और अशरीर का प्रतिपादन वायु जीवों के चार शरीर होते हैं ऐसा कथन, सकर्मक मृतादि अनगार के स्वरूप का विचार, प्राण, भूत, जीव, सत्त्व, विज्ञ, वेत्ता इनके स्वरूप का कथन अकर्मक मृतादि अनगार का विचार, सिद्ध, बुद्ध, मुक्त, पारगत, परंपरागत आदि के स्वरूप का कथन, आर्य श्री स्कंद का चरित्र पिंगलक निर्ग्रन्थ और वैशालिक श्रावक इनका स्कंद के प्रति प्रश्न, इसमें-लोक सान्त है कि अनन्त है ? किस मरण से मरते हुए जीव के संसार की हानि और वृद्धि होती है । स्कंद का संशय की उत्पत्ति से मौनावलम्बन, श्री महावीर स्वामी का आगमन सुनकर उनके पास स्कंद का आना और उनसे प्रश्न करना, भगवान का उत्तर देना, स्कंद की अच्युत कल्प में

એ વિષેનો વિચાર વાયુકાય જીવોનું મરણ કેવી રીતે થાય છે? આઘાતથી તેમનું મરણ થાય છે વાયુકાયિક જીવોનાં શરીર અને અશરીરનું પ્રતિપાદન. વાયુકાય જીવોને ચાર શરીર હોય છે એવું કથન સકર્મક મૃતાદી અણગારના સ્વરૂપનું કથન. પ્રાણ ભૂત, જીવ સત્વ, વિજ્ઞ અને વેત્તાના સ્વરૂપનું કથન, સિદ્ધ, બુદ્ધ, મુક્ત, પારગત પરંપરાગત વગેરેના સ્વરૂપનું કથન આર્ય શ્રી સ્કંદકનું ચરિત્ર વૈશાલિક શ્રાવક પિંગલક નિર્ગ્રંથના સ્કંદકને પ્રશ્નો લોક સાન્ત (અન્ત સહિત) છે કે અનંત છે? કયા મરણથી મરતો જીવ સંસાર વધારે છે અને કયા મરણથી મરતો જીવ સંસાર ઘટાડે છે । સ્કંદકના મનમાં સંશય થવાથી તે મૌન રહે છે શ્રી મહાવીરસ્વામીના આગમનના ખબર સાંભળીને સ્કંદકનું તેમની પાસે ગમન સ્કંદકના મહાવીર પ્રભુને પ્રશ્નો અને પ્રભુના ઉત્તરો, સ્કંદ

॥ अथ द्वितीयं शतकं प्रारभ्यते–

द्वितीयशतके संक्षेपतो विचारणीयाः विषयाः "ऊसास खंदए वि" इत्यादि गाथोक्ता दशोद्देशकाः संति, तत्र प्रथमोद्देशके इमे विषयास्तथाहि–

पृथिव्याद्येकेन्द्रियजीवानां श्वासादयो भवंति नवेति प्रश्नः। भवन्तीति–उत्तरम्। ते पृथिव्यादयः श्वासादौ किं गृह्णन्तीति प्रश्नः, वायुसम्बन्धि परमाणुं गृह्णन्तीत्युत्तरम्, तत्र परमाणौ रूपरसगंधस्पर्शा भवन्तीति प्रतिपादनम्। प्रज्ञापना-सूत्रस्योद्धरणम्। संक्षेपेण नैरयिकाणां विवरणम्। षट्स्वपि दिक्षु श्वासोच्छ्वास वर्गणाया आकर्षण भवतीति निरूपणम्। वायवीयजीवानां श्वासादयो भवंति नवेति प्रश्नः। भवन्तीत्युत्तरम्। वायवीयजीवा वायुकायान्निर्गत्य पुनर्वायुकायिके

द्वितीयशतक का प्रथम उद्देशक प्रारंभ–

इस द्वितीयशतक में "उसास खंदए वि" इत्यादि गाथा द्वारा कहे हुए दश उद्देशक हैं। इनमें से प्रथमशतक में ये विषय हैं–जैसे–पृथिवी आदिक एकेन्द्रिय जीवों के श्वास आदि होते हैं कि नहीं होते हैं? हां होते हैं। वे पृथिव्यादिक जीव श्वास आदि में क्या लेते हैं? ऐसा प्रश्न–वे वायुसंबंधी परमाणु को ग्रहण करते हैं ऐसा उत्तर। परमाणु में रूप, रस, गंध और स्पर्श होते हैं–ऐसा प्रतिपादन। प्रज्ञापना सूत्र का उद्धरण। संक्षेप से नैरयिकों का विवरण। छहों भी दिशाओं में से श्वासोच्छ्वास वर्गणा का आकर्षण होता है ऐसा निरूपण। वायुकायिक जीवों के श्वास आदि होते है कि नहीं होतें हैं? ऐसा प्रश्न, हां होते है ऐसा उत्तर। वायुकायिक जीव वायुकाय से निकलकर पुनः वायु

પહેલા શતકનો પહેલો ઉદ્દેશકનો પ્રારંભ

આ બીજા શતકમા "ऊसास खंदए वि" ઇત્યાદિ ગાથા વડે કહેલા દસ ઉદ્દેશક છે તેમાના પહેલા ઉદ્દેશકમાં–નીચેના વિષયોનુ નિરૂપણ કરવામા આવ્યું છે પૃથિવીકાય વગેરે એકેન્દ્રિય જીવો શ્વાસ વગેરે લે છે કે નહી? હા, લે છે તેઓ શ્વાસ વગેરેમાં શુ લે છે? તેઓ વાયુના પરમાણુઓને ગ્રહણ કરે છે તે પરમાણુઓમા રૂપ, રસ, ગધ અને સ્પર્શ હોય છે એવું પ્રતિપાદન, અને પ્રજ્ઞાપના સૂત્રમાથી તેનુ પ્રમાણ સક્ષિપ્તમાં નારકોનું વર્ણન છએ દિશાઓમા શ્વાસોચ્છ્વાસ વર્ગણાનુ આકર્ષણ થાય છે એવુ નિરૂપણ વાયુકાયિક જીવો શ્વાસ વગેરે લે છે કે નથી લેતા? હા, લે છે. વાયુકાયિક જીવો વાયુકાયમાંથી નીકળીને વાયુકાયિકોમાં જ ઉત્પન્ન થાય છે

स्कन्दकोपि च१ 'समुग्घाय' समुद्घाता २ 'पुढविंदिय' पृथिवीन्द्रियाणि,३ पृथिवी इन्द्रियाणि च४ 'अन्न उत्थिया' अन्ययूथिका५ 'भासा य' भाषा च६ 'देवा य' देवाश्च७ 'चमरचंचा' चमरचञ्चा८ 'समयक्खित्तकाए' समया क्षेत्रम्९ अस्तिकायाः, १० एते अस्मिन् द्वितीयशतके दशोद्देशकाः सति तेषु चोद्देशकेषु निम्ननिर्दिष्ट विषयाणामधिकारा सन्ति, तत्र प्रथमोद्देशके श्वासोच्छ्वासविषयक स्कन्दनामकानगारविषयकश्च विचारः१। द्वितीयोद्देशके समुद्घातविषयक विवेचनम्२, तृतीयोद्देशके पृथिवीसंबन्धे विचारः३, चतुर्थोद्देशके इन्द्रियविषयको विचारः४, पञ्चमोद्देशकेऽन्यतीर्थिकानामधिकार ५, षष्ठोद्देशके भाषाविषये विचारः६, सप्तमे देवाधिकारः७, अष्टमोद्देशके चमरचञ्चाराजधानीविषयको विचारः८, नवमोद्देशके समय क्षेत्रयोः स्वरूपविषये विचारः९, दशमोद्देशके अस्तिकायविषयको विचारः। इति१०।

शतक में ये दश उद्देशक हैं—उच्छ्वास, स्कन्दक१, समुद्घात२ पृथिवी३ इन्द्रियां ४, अन्ययूथिक ५, भाषा ६, देव७, चमरचंचा८, समयक्षेत्र ९ अस्तिकाय१० इन उद्देशकों में निम्न लिखित विषयों के अधिकार हैं— प्रथम उद्देशकमें श्वासोच्छ्वास संबंधी और स्कन्द अनगार संबंधी विचार है। द्वितीयउद्देशक में समुद्घातविषयक विवेचन है। तृतीय उद्देशक में पृथिवी केसंबंध में विचार किया गया है। चतुर्थउद्देशक में इन्द्रिय विषयक विचार हुआ है। पंचम उद्देशक में अन्यतीर्थिकों का अधिकार है। छठवें उद्देशक में भाषाविषयक विचार हुआ है। सप्तम उद्देशक में देवों का अधिकार है। आठवें उद्देशक में चमरचंचा नाम की राजधानी का विचार किया गया है। नवम उद्देशक में समयक्षेत्र के स्वरूप का विचार किया गया है। दशवें उद्देशक में अस्तिकाय का विचार किया गया है।

પ્રમાણે દસઉદ્દેશક છે (૧) ઉચ્છ્વાસ, સ્કંદક, (૨) સમુદ્ઘાત (૩) પૃથિવી, (૪) ઇન્દ્રિયો, (૫) અન્યયૂથિક, (૬) ભાષા, (૭) દેવ, (૮) ચમરચંચા, (૯) સમયક્ષેત્ર અને (૧૦) અસ્તિકાય. તે ઉદ્દેશકોમા નીચે પ્રમાણેના વિષયોનું પ્રતિપાદન કરવામા આવ્યુ છે—પહેલા ઉદ્દેશકમાં શ્વાસોચ્છ્વાસ વિષે અને સ્કંદકઅણગાર વિષે, બીજા ઉદ્દેશકમા સમુદ્ઘાત વિષે, ત્રીજામાં પૃથ્વીના વિષયમાં, ચોથા ઉદ્દેશકમા ઇન્દ્રિયોના વિષયમા, પાંચમા ઉદ્દેશકમાં અન્ય તીર્થિકોના વિષયમા છઠ્ઠા ઉદ્દેશકમા ભાષાના વિષયમા સાતમા ઉદ્દેશકમા દેવો વિષે આઠમાં ઉદ્દેશકમાં ચમરચંચા નામની રાજધાનીના વિષે નવમાં ઉદ્દેશકમાં સમય ક્ષેત્રના સ્વરૂપ વિષે અને દસમાં ઉદ્દેશકમા અસ્તિકાયના વિષયનું વિવેચન કરવામાં આવ્યુ છે

मोक्षगमनं चेति प्रतिपादनमिति ॥

प्रथमं शतकं प्रोच्य पञ्चमाङ्गस्य यत्नतः ।
द्वितीयं शतकं तस्य विवृणोमि यथामति ॥१॥

अथ द्वीतीयशतकस्योद्देशकसंग्रहाय गाथामाह—'ऊसास' इत्यादि ।

गाहा—ऊसास खंदए वि य समुग्घाय पुढविंदिय अन्नउत्थि भासा य ।
देवा य चमरचंचा, समय खित्तऽत्थिकाय बीयसए ॥ १ ॥

छाया—उच्छ्वासः स्कन्दकोपि च समुद्घाताः पृथिवी-
इन्द्रियाणि अन्ययूथिका भाषा च ।
देवाश्च चमरचञ्चा समयक्षेत्रं अस्तिकाया द्वितीयशते ॥१॥

टीका—'बीयसए' द्वितीयशतके 'ऊसास' उच्छ्वासः 'खंदए वि'

उत्पत्ति होना और महाविदेह से मोक्षगमन, इसका प्रतिपादन ।

प्रथमं शतकं प्रोच्य पञ्चमाङ्गस्य यत्नतः ।
द्वितीयशतकं तस्य विवृणोमि यथामति ॥ १ ॥

इस पंचम अङ्ग के प्रथम शतक का प्रयत्न पूर्वक प्रतिपादन करके अब मैं उसके द्वितीय शतक का अपनी बुद्धि के अनुसार विवरण करता हूं ।

द्वितीयशतक के उद्देशकोंके संग्रहके लिये सूत्रकार ने यह (ऊसास) इत्यादि गाथा कही है ।

ऊसास खंदए वि य समुग्घाय पुढविंदिय अन्नउत्थि भासा य ।
देवा य चमर चंचा समयखित्तऽत्थिकाय बीयसए ॥ १ ॥

इस गाथा का अर्थ इस प्रकार से है–" बीयसए " इस द्वितीय

કની અચ્યુત દેવલોકમાં ઉત્પત્તિ અને મહાવિદેહમાંથી મોક્ષગમન, તેનું પ્રતિપાદન.

प्रथमं शतकं प्रोच्य पञ्चमाङ्गस्य यत्नत ।
द्वितीयशतक तस्य विवृणोमि यथामति ॥ १ ॥

પાંચમા અંગના પ્રથમ શતકનું શાન્તિપૂર્વક વિવેચન કરી ને હવે હું તેના બીજા શતકનું મારી બુદ્ધિ પ્રમાણે વિવરણ કરૂ છું.

બીજા શતકના ઉદ્દેશકોના સંગ્રહને માટે સૂત્રકારે "ऊसास" વગેરે ગાથાઓ કહી છે.

ऊसासखंदए वि य समुग्घाय पुढविंदिय अन्नउत्थि भासा य ।
देवा य चमरचंचा समयखित्तऽत्थिकाय बीयसए ॥ १ ॥

આ ગાથાનો અર્થ આ પ્રમાણે છે "बीयसए" આ બીજા શતકમાં આ

छाया—तस्मिन् काले तस्मिन् समये राजगृहं नाम नगरमासीत्, वर्णकः स्वामी समवसृतः पर्षन्निर्गता, धर्मः कथितः, परिषत् प्रतिगता, तस्मिन् काले तस्मिन् समये श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य ज्येष्ठोऽन्तेवासी यावत् पर्युपासीन एवमवादीत्, ये इमे भदन्त ! द्वीन्द्रियाः, त्रीन्द्रियाः, चतुरिन्द्रियाः, पञ्चेन्द्रिया

उन्हीं जीवों के उच्छ्वास आदि का प्रतिपादन किया गया है-अतः इस सम्बन्ध को लेकर यह द्वितीय शतक का यह प्रथम उद्देशक कहा गया है। उसका यह (तेणं कालेणं इत्यादि प्रथम सूत्र है—' तेणं कालेणं तेण समएणं ' इत्यादि।

सूत्रार्थ—(तेणं कालेणं तेण समएणं) उस काल में और उस समय में (रायगिहे णाम नयरे होत्था) राजगृह नाम का नगर था (वण्णओ) वर्णकः (सामी समोसढे) स्वामी-श्री महावीर प्रभु-वहां पधारे (परिसा णिग्गया) उसकी देशना सुनने के लिये सभा निकली (धम्मो कहिओ) प्रभुने धर्मोपदेश दिया (परिसा पडिगया) उसे सुन कर सभा पीछे गई। (तेणं कालेणं तेणं समएण) उस काल में और उस समय में (समणस्स भगवओ महावीरस्स) श्रमण भगवान् महावीर के (जेट्ठे अंतेवासी) ज्येष्ठ अन्तेवासी-शिष्य (जाव पज्जुवासमाणे) यावत् पर्युपासना करते हुए (एवं वयासी) इस प्रकार बोले-(जे इमे भंते ! बेइंदिया, तेइंदिया, चउरिंदिया जीवा) हे भदन्त ! जो ये एकेन्द्रिय, दो इन्द्रिय, ते इन्द्रिय, चौ इन्द्रिय और पंचेन्द्रिय

આ ઉદ્દેશકમાં જીવોના ઉચ્છ્વાસ વગેરેનુ પ્રતિપાદન કરાયુ છે આ બીજા શતકના ઉદ્દેશકનો આ પ્રકારનો સબંધ આગળના ઉદ્દેશકે સાથે છે તેનું પ્રથમ સૂત્ર "तेणं कालेणं" ઇત્યાદિ છે

સૂત્રાર્થ—(तेणं कालेणं तेणं समएणं) તે કાળે અને તે સમયે (रायगिहे णामं नयरे होत्था) રાજગૃહ નામનુ નગર હતુ (वण्णओ) તેનું વર્ણન ઔપપાતિક સૂત્રમા વર્ણવેલી ચપાનગરીની માફક છે (सामी समोसढे) તે નગરમા ભગવાન મહાવીર સ્વામી પધાર્યા. (परिसा णिग्गया) તેમની દેશના સાંભળવાને માટે પરિષદ નીકળી (धम्मो कहिओ) પ્રભુએ ધર્મોપદેશ આપ્યો (परिसा पडिगया) તે સાભળીને પરિષદ પાછી ગઈ (तेणं कालेणं तेणं समएणं) તે કાળે અને તે સમયે (समणस्स भगवओ महावीरस्स) શ્રમણ ભગવાન મહાવીરના (जेट्ठे अंतेवासी) મોટા અન્તેવાસી શિષ્ય (जाव पज्जुवासमाणे) (यावत्) પર્યુપાસના કરીને (एवं वयासी) આ પ્રમાણે બોલ્યા.

(जे इमे भंते ! बेइंदिया तेइंदिया, चउरिंदिया जीवा एएसि णं आणमं वा

प्रथमशतकस्य वर्णनं जातम्, तदनन्तरं द्वितीयशतकस्य प्रारंभो भवति, तत्रापि प्रारिप्सितद्वितीयशतके प्रथमोद्देशकस्य वर्णनं क्रियते, तस्य चायमभिसंबंधः—प्रथमशतकस्यान्तिमोद्देशकस्यान्ते जीवानामुत्पादविरहः प्रतिपादितः, इह तु तेषामेव जीवानामुच्छ्वासादिवर्णनमस्तीत्येवं संबन्धकस्यास्य द्वितीयशतकप्रथमोद्देशकस्येदमादिमूत्रम्—' तेणं कालेणं ' इत्यादि ।

मूलम्—तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे णामं नयरे होत्था वण्णओ, सामी समोसढे, परिसा णिग्गया, धम्मो कहिओ, परिसा पडिगया । तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे अंतेवासी जाव पज्जुवासमाणे एवं वयासी—जे इमे भंते! वेइंदिया, तेइंदिया, चउरिंदिया, पंचिंदिया जीवा, एएसिं णं आणामं वा पाणामं वा उस्सासं वा निस्सासं वा जाणामो पासामो, जे इमे पुढवीकाइया, जाव वणप्फइ काइया एगिंदिया जीवा, एएसिं णं आणामं वा पाणामं वा उसासं वा नीसासं वा न जाणामो, न पासामो, एए णं भंते! जीवा आणमंति वा पाणमंति वा, उस्ससंति वा, नीससंति वा, हंता गोयमा! एए णं जीवा, आणमंति वा, पाणमंति वा उस्ससंति वा णीससंति वा ॥सू०१॥

प्रथमतशतक का वर्णन हो चुका—अब द्वितीय शतक प्रारंभ होता है। इसमें द्वितीयशतक से प्रथम उद्देशक का वर्णन किया जाता है—इसका संबंध इस प्रकार से है—प्रथम शतक के अन्तिम उद्देशक के अन्त में जीवों का उत्पाद विरह प्रतिपादित हुआ है और इस जगह

પહેલા શતકનુ વિવરણ પૂરૂં થયું હવે બીજા શતકનું વિવેચન શરૂ થાય છે. તેમાં બીજા શતકના પહેલા ઉદ્દેશકનુ વર્ણન કરવામા આવે છે તેનો આગળના ઉદ્દેશક સાથે આ પ્રકારનો સંબંધ છે પહેલા શતકના છેલ્લા ઉદ્દેશકના અન્તિમ ભાગમા જીવોના ઉપપાત વિરહનું પ્રતિપાદન કર્યું છે ...

छाया—तस्मिन् काले तस्मिन् समये राजगृह नाम नगरमासीत्, वर्णकः स्वामी समवसृतः पर्षन्निर्गता, धर्मः कथितः, परिषत् प्रतिगता, तस्मिन् काले तस्मिन् समये श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य ज्येष्ठोऽन्तेवासी यावत् पर्युपासीन एवमवादीत्, ये इमे भदन्त ! द्वीन्द्रियाः, त्रीन्द्रिय', चतुरिन्द्रियाः, पञ्चेन्द्रिया

उन्हीं जीवों के उच्छ्वास आदि का प्रतिपादन किया गया है-अतः इस सम्बन्ध को लेकर यह द्वितीय शतक का यह प्रथम उद्देशक कहा गया है। उसका यह (तेणं कालेण इत्यादि प्रथम सूत्र है—' तेणं कालेणं तेण समएणं ' इत्यादि।

सूत्रार्थ—(तेणं कालेणं तेण समएणं) उस काल में और उस समय में (रायगिहे णामं नयरे होत्था) राजगृह नाम का नगर था (वण्णओ) वर्णकः (सामी समोसढे) स्वामी-श्री महावीर प्रभु-वहां पधारे (परिसा णिग्गया) उसकी देशना सुनने के लिये सभा निकली (धम्मो कहिओ) प्रभुने धर्मोपदेश दिया (परिसा पडिगया) उसे सुन कर सभा पीछे गई। (तेणं कालेणं तेणं समएणं) उस काल में और उस समय में (समणस्स भगवओ महावीरस्स) श्रमण भगवान् महावीर के (जेट्ठे अंतेवासी) ज्येष्ठ अन्तेवासी-शिष्य (जाव पज्जुवासमाणे) यावत् पर्युपासना करते हुए (एव वयासी) इस प्रकार बोले-(जे इमे भंते ! बेइंदिया, तेइंदिया, चउरिंदिया जीवा) हे भदन्त ! जो ये एकेन्द्रिय, दो इन्द्रिय, ते इन्द्रिय, चौ इन्द्रिय और पंचेन्द्रिय

આ ઉદ્દેશકમાં જીવોના ઉચ્છ્વાસ વગેરેનું પ્રતિપાદન કરાયુ છે આ બીજા શતકના ઉદ્દેશકનો આ પ્રકારનો સબંધ આગળના ઉદ્દેશક સાથે છે તેનું પ્રથમ સૂત્ર "तेणं कालेण " ઈત્યાદિ છે

સૂત્રાર્થ—(तेणं कालेणं तेणं समएणं) તે કાળે અને તે સમયે (रायगिहे णामं नयरे होत्था) રાજગૃહ નામનું નગર હતુ (वण्णओ) તેનું વર્ણન ઔપપાતિક સૂત્રમા વર્ણવેલી ચંપાનગરીની પ્રમાણે છે (सामी समोसढे) તે નગરમાં ભગવાન મહાવીર સ્વામી પધાર્યા. (परिसा णिग्गया) તેમની દેશના સાંભળવાને માટે પરિષદ નીકળી (धम्मो कहिओ) પ્રભુએ ધર્મોપદેશ આપ્યો (परिसा पडिगया) તે સાંભળીને પરિષદ પાછી ગઈ (तेण कालेण तेण समएण) તે કાળે અને તે સમયે (समणस्स भगवओ महावीरस्स) શ્રમણ ભગવાન મહાવીરના (जेट्ठे अतेवासी) મોટા અન્તેવાસી શિષ્ય (जाव पज्जुवासमाणे) (યાવત્) પર્યુપાસના કરીને (एव वयासी) આ પ્રમાણે બોલ્યા.

(जे इमे भंते ! बइंदिया तेइंदिया, चउरिंदिया जीवा एएसि णं आणमं वा

जीवाः, एतेषां खलु आनामं वा प्राणामं वा, उच्छ्वासं वा निश्वासं वा जानीमः पश्यामः। ये इमे पृथिवीकायिकाः यावद् वनस्पतिकायिका एकेन्द्रियजीवाः, एतेषां खलु आनामं वा प्राणामं वा उच्छ्वासं वा निश्वासं वा न जानीमः न न पश्यामः, एतेऽपि खलु भदंत! जीवा आनंति वा प्राणंति वा उच्छ्वसंति वा निःश्वसंति वा, हंत गौतम! एते खलु जीवाः, आनंति वा प्राणंति वा, उच्छ्वसंति वा निःश्वसंति वा॥ सू० १॥

जीव हैं सो (एएसि णं आणामं वा पाणामं वा उस्सासं वा नीसासं वा जाणामो, पासामो) इनके भीतरी बहिरी उच्छ्वास निःश्वासको तो हम जानते हैं और देखते हैं (जे इमे पुढवीकाइया जाव वणप्फइकाइया एगिंदिया जीवा) परन्तु जो ये पृथिवीकायिकसे ले कर वनस्पतिकायिक तकके एकेन्द्रिय जीव हैं सो (एएसि णं आणामं वा पाणामं वा उस्सासं वा नीसासं वा न जाणामो न पासामो) इनके भीतरी बाहिरी श्वास और उच्छ्वास को न हम जानते हैं और न हम देखते हैं। (एएणं भंते! जीवा आणमंति वा पाणमंति वा उस्ससंति वा, नीससंति वा) तो हे भदन्त! ये जीव क्या भीतर बाहर के श्वास और उच्छ्वास को लेते हैं? (हंता गोयमा!) हां गौतम! (एएवि णं जीवा आणमंति वा

पाणामं वा उस्सासं वा नीसासं वा जाणामो, पासामो) હે ભગવન્! દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય, ચતુરિન્દ્રિય અને પંચેન્દ્રિય જીવો જે શ્વાસ અંદર ગ્રહણ કરે છે. અને જે ઉચ્છ્વાસ બહાર કાઢે છે તે તો અમે જાણીયે છીએ અને જોઈએ છીએ પણ (जे इमे पुढवीकाइया जाव वणप्फइकाइया एगिंदिया जीवा) પૃથ્વીકાયથી લઈને વનસ્પતિકાય સુધીના જે એકેન્દ્રિય જીવો તેમના (एएसि णं आणामं वा पाणामं वा उस्सासं वा नीसासं न जाणामो न पासामो) બાહ્યાભ્યન્તર શ્વાસ અને ઉચ્છ્વાસ વિષે અમે કંઈ પણ જાણતા નથી કે તેને જોતા પણ નથી (एएणं भंते जीवा आणमंति वा पाणमंति वा उस्ससंति वा नीससंति वा?) તો હે ભગવન્! તે જીવો શું શ્વાસ ગ્રહણ કરે છે અને ઉચ્છ્વાસ બહાર કાઢે છે! (हंता गोयमा!) હા, ગૌતમ! (एएवि णं जीवा आणमंति वा पाणमंति वा,

टीका—'तेण कालेण' तस्मिन् काले-अवसर्पिणीचतुर्थारके 'तेणं समएणं' तस्मिन् समये-श्रेणिकशासनकाले 'रायगिहे णाम नयरे होत्था' राजगृहं नाम नगरमासीत्, 'वण्णओ' वर्णक 'सामी समोसढ' स्वामी समवसृतः, भगवान् समागतः। 'परिसा णिग्गया' पर्षन्निर्गता 'धम्मो कहिओ' धर्मः कथितः, 'परिसा पडिगया' परिषत् प्रतिगता, 'तेण कालेणं' तस्मिन् काले, सभाविसर्जनान्तरकाले 'तेणं समएणं' तस्मिन् समये उच्छ्वासनिःश्वासादिमभोद्भवसमवे

पाणमंति वा, उस्ससंति वा नीससंति वा) ये भी जीव भीतर में श्वास ग्रहण करते हैं भीतर में श्वास छोड़ते हैं बाहिर में श्वास ग्रहण करते और बाहिर में नि श्वास छोड़ते हैं।

टीकार्थ—(तेणं कालेणं तेणं समएणं) काल से यहां अवसर्पिणी चौथा काल लिया गया है और समय से श्रेणिक राजा के शासन समय लिया गया है। अत अवसर्पिणी के चौथे आरे में और श्रेणिक राजा के शासन समय में (रायगिहे णामं नयरे होत्था) राजगृह नाम का नगर था (वण्णओ सामी समोसढे) इस नगर का वर्णन औपपातिक सूत्र में वर्णित चंपा नगरी के समान है यह बात यहां (वण्णओ) पद से सूत्रकार ने प्रगट की है। इस नगर में स्वामी—श्रमण भगवान महावीर प्रभु—पधारे। (परिसा निग्गया) सभा प्रभु का धर्मोपदेश सुनने के लिये नगर से निकली (धम्मो कहिओ) प्रभुने धर्म का उपदेश दिया। (परिसा पडिगया) धर्मोपदेश सुनकर सभा विसर्जित हो गई। (तेणं कालेणं तेणं समएणं) पद से यहां सभा विसर्जन के अनन्तर

उस्ससंति वा णीससंति वा) ते જીવો પણ અંદર શ્વાસ લે છે અંદર શ્વાસ છોડે છે બહારથી શ્વાસ ગ્રહણ કરે છે અને નિ.શ્વાસને બહાર કાઢે છે

ટીકાર્થ-"तेणं कालेणं तेणं समएणं" કાલ પદવડે અહીં અવસર્પિણીનો ચોથો આરો લેવામાં આવ્યો છે અને 'સમય' પદથી શ્રેણિક રાજાનો શાસન સમય લેવામાં આવ્યો છે એટલે કે અવસર્પિણીના ચોથા આરામા શ્રેણિક રાજાના શાસન સમયે ' रायगिहे णामं नयरे होत्था" રાજગૃહ નામનુ નગર હતું "वण्णओ सामी समोसढ" તે નગરનુ વર્ણન ઔપપાતિક સૂત્રમાં વર્ણવેલી ચંપા નગરી ની માફક સમજવું એ વાત "वण्णओ" પદથી સૂત્રકારે બતાવી છે તે નગરમાં શ્રમણ ભગવાન મહાવીર પ્રભુ પધાર્યા. 'परिसा निग्गया" નગરમાંથી લોકોની પરિષદ પ્રભુનો ઉપદેશ સાંભળવાં માટે પ્રભુ પાસે જવા ઉપડી. ' धम्मो कहिओ प्रभुએ તેમને ધર્મોપદેશ દીધો. 'परिसा पडिगया" ધર્મોપદેશ સાંભળીને પરિષદ ત્યાંથી પાછી ફરી. "तेणं कालेणं तेणं समएणं"

'समणस्स भगवओ महावीरस्स' श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य 'जेट्ठे अंतेवासी' ज्येष्ठोऽन्तेवासी अग्निभूतिः गौतमः 'जाव पज्जुवासमाणे' यावत् पर्युपासीनः यावत्पदेन—प्रथमशतकप्रथमोद्देशकीयसप्तमाष्टमसूत्रस्थ 'जायसड्ढे' इत्यारभ्य 'पंजलिउडे' इत्यन्त सर्वं संग्राह्यम्, वन्दननमस्कारादिकं कृत्वा भगवन्तं सेवमानः 'एवं वयासी' एवमवादीत् 'एव' वक्ष्यमाणप्रकारेण अवादीत् पृष्टवान् 'जे इमे भंते' ये इमे भदन्त ! 'बेइंदिया' द्वीन्द्रियाः 'तेइंदिया' त्रीन्द्रियाः 'चउरिंदिया' चतुरिन्द्रियाः 'पंचिंदिया' पञ्चेन्द्रियाः 'जीवा' जीवाः प्राणिनः सन्ति 'एएसि णं' एतेषां खलु 'आणामं वा पाणामं वा' अनामं वा आभ्यन्तरिकम्, प्राणामं वा बाह्यम् 'उस्सासं वा निस्सासं वा' उच्छ्वासं वा निश्वासं

काल में और उच्छ्वास निःश्वास आदि के प्रश्नोद्भाव के समय में ऐसा अर्थ लिया गया है। (समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे अंतेवासी) इन पदों का अर्थ स्पष्ट है। (जेट्ठे अन्तेवासी) पद से ज्येष्ठ-प्रधान-शिष्य गौतम स्वामी लिये गये हैं। (जाव पज्जुवासमाणे) में जो यह (यावत्) शब्द आया है। उससे (प्रथमशतक के प्रथम उद्देशक में जो सातवां आठवां सूत्र है, उनमें जो (जायसड्ढे) यहां से लगाकर (पंजलिउडे) तक का पाठ है वह पाठ यहां ग्रहण किया गया है ऐसा जानना चाहिये। वन्दना नमस्कार आदि करके गौतम ने प्रभु की सेवा करते हुए (एवं वयासी) इस प्रकार से पूछा-(जे इमे भंते ! हे भदन्त ! जो ये (बेइंदिया) दो इन्द्रियवाले जीव (तेइंदिया) तीन इन्द्रियवाले जीव (चउरिंदिया) चार इन्द्रियवाले जीव (पंचिंदिया) पांच इन्द्रिय वाले (जीवा) जीव-प्राणी हैं (एएसि णं) सो इनका (आणामं) भीतर का (वा)

આ પદો વડે અહીં " સભા વિસર્જન થયા પછીનો કાળ અને ઉચ્છ્વાસ નિશ્વાસ વગેરેના પ્રશ્નો પૂછવા નો સમય" લેવામા આવ્યો છે " समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे अंतेवासी " એટલે કે શ્રમણ ભગવાન મહાવીર સ્વામીના જ્યેષ્ઠ શિષ્ય ગૌતમ સ્વામી. " जाव पज्जुवासमाणे " આ જે ' जाव " (यावत्) પદ છે તેના વડે પહેલા શતકના પહેલા ઉદ્દેશકના સાતમા અને આઠમા સૂત્રમાનો" " जायसड्ढे " પદથી શરૂ કરીને " पजलि उडे " સુધીનો પાઠ ગ્રહણ કરાયો છે તેમ સમજવુ. વદણા નમસ્કાર વગેરે કરીને પ્રભુને ગૌતમ સ્વામીએ વિનયપૂર્વક ' एव वयासी " આ પ્રમાણે પૂછ્યુ " " जे इमे भंते ! હે ભગવન્! આ જે " बेइंदिया " બે ઇન્દ્રિયોવાળા " तेइंदिया " ત્રણ ઇન્દ્રિયોવાળા, " चउरिंदिया " ચાર ઇન્દ્રિયોવાળા અને ' पंचिंदिया " પાચ ઇન્દ્રિયોવાળા ' जीवा " જીવો છે. " एएसि ण " તેમનો " आणामं " અદ

वा ' जाणामो पासामो ' जानीमः पश्याम परन्तु ' जे इमे पुढविकाइया ' ये इमे पृथिवीकायिका 'जाव वणप्फइ काइया एगिंदिया जीवा' यावत् वनस्पतिकायिका एकेन्द्रियजीवा, अत्र यावत्पदेन अप्तेजोवायुकायिकाना ग्रहणम् । ' एएसि णं आणाम वा पाणाम वा ' एतेषां खलु जीवानाम् आनाम वा प्राणाम वा ' उस्सास वा नीसास वा ' उच्छ्वास वा निःश्वास वा, न जाणामो न पासामो ' न जानीमो न पश्याम, द्वीन्द्रियादीनां जीवानां सबाह्याभ्यन्तरमुच्छ्वास निःश्वासादिकं जानीमः पश्याम स्वानुभवात् । परन्तु पृथिव्यादिवनस्पतिपर्यन्तै केन्द्रियजीवानां सबाह्याभ्यन्तर श्वासनिःश्वासादिकं न जानामि न पश्यामीति

और (पाणाम वा) बाहर का जो (उस्सास वा) उच्छ्वास, और (नीसास वा) निःश्वास है (जाणामो पासामो) उसे तो हम जानते हैं और देखते हैं । परन्तु (जे इमे पुढवीकाइया) जो ये पृथिवीकायिक (जाव वणप्फइ काइया एगिंदिया जीवा) यावत् वनस्पति कायिक एकेन्द्रिय जीव है-यहां यावत् शब्द से (अप्कायिक जीव, तेज कायिक, वायुकायिक) इन एकेन्द्रिय जीवों का ग्रहण हुआ है-(एएसि णं आणाम वा पाणामं वा) सो इनके भीतर के और बाहर के (उस्सास नीसासं वा न जाणामो न पासामो) उच्छ्वास को, निःश्वास को न हम जानते है और न हम देखते है। तात्पर्य कहने का यह है कि मैं अपने अनुभव से द्वीन्द्रियादिक जीवों के बाह्य आभ्यन्तर उच्छ्वास निःश्वास आदि को जानता हू और देखता हूं । परन्तु जो पृथिवीकायिक एकेन्द्रिय से लेकर वनस्पतिकायिक एकेन्द्रिय पर्यन्त जीव हैं, उनके बाह्य आभ्यन्तर श्वास निःश्वास आदिकों को मैं न जानता हू और न देखता ही हू ।

રનો વા' અને 'पाणाम वा બહારનો જે 'उस्सास वा नीसासं वा" ઉચ્છ્વાસ અને નિ.શ્વાસ છે ' जाणामो पासामो તેને તો સમજીયે છીએ અને જોઈ શકીએ છીએ. પણ ' जो इमे पुढवीकाइया जाव वणप्फइकाइया एगिंदिया जीवा' પૃથ્વીકાયથી લઈને વનસ્પતિ કાય સુધીના જે એકેન્દ્રિય જીવો છે (અહીં" યાવત્" પદથી અપ્કાય તેજસ્કાય અને વાયુકાયનાજીવો ગ્રહણ કરવા જોઈએ 'एएसि णं आणाम वा पाणाम वा" તેમના બાહ્ય આભ્યંતર ' उस्सासं वा नीसासं वा न जाणामो न पासामो " ઉચ્છ્વાસ નિશ્વાસને અમે જાણતા નથી અને અમે જોતા નથી. તાત્પર્ય એ છે કે દ્વીન્દ્રિય સુધીના જીવોના બાહ્યાભ્યન્તર શ્વાસોચ્છ્વાસને અનુભવથી જાણી શકાય છે અને દેખી શકાય છે પણ પૃથ્વીકાયિક એકેન્દ્રિય જીવોથી શરૂ કરીને વનસ્પતિ કાયિક સુધીના એકેન્દ્રિય જીવોના બાહ્યાભ્યન્તર શ્વાસોચ્છ્વાસ અનુભવથી જાણી શકાતા નથી અને દેખી

भाव, 'एएणं भंते जीवा' एते खलु भदन्त! जीवाः पृथिव्यादिवनस्पतिपर्यन्ताः किम् 'आणमंति वा पाणमंति वा' आनमंति वा प्राणमंति वा 'उस्ससंति वा नीससंति वा' उच्छ्वसंति वा निःश्वसंति वा, एकेन्द्रियजीवानाम् श्वासोच्छ्वासादिकं भवति नवेति प्रश्नः, संशयकारणं तु अदृश्यमानत्वम्, एकेन्द्रियजीवानां प्रत्यक्षत उच्छ्वासादिकं न दृश्यते, जीवत्वं च तेष्वप्यस्ति, अतो गौतमस्य प्रश्नः, उत्तरयति भगवान्—'हंता गोयमा' इत्यादि, 'हंता गोयमा' हन्त गौतम! 'एए वि णं जीवा' एतेपि खलु जीवाः, पृथिव्यादिवनस्पतिपर्यन्ता जीवा अपि 'आनमंति वा पाणमंति वा' आनन्ति वा प्राणन्ति वा 'उस्ससंति वा नीससंति

(एएणं भंते! तो हे भदन्त! ये जीव पृथिवीकायिक से लेकर वनस्पति कायिकतक के एकेन्द्रिय जीव (किं आणमंमि वा पाणमंति वा) क्या भीतर में श्वास ग्रहण करते हैं? बाहर में श्वास छोड़ते है? (उस्ससंति वा नीससंति वा) बाहर में निःश्वास को ग्रहण करते हैं? बाहर में निःश्वास को छोड़ते हैं? तात्पर्य प्रश्न का यह है कि एकेन्द्रिय जीवों के श्वास निःश्वास आदि होते हैं कि नहीं होते हैं? संशय का कारण यह है–कि एकेन्द्रिय जीवों का उच्छ्वास आदि प्रत्यक्ष से दिखता नहीं है? परन्तु उनमें भी चैतन्य तो है। इस लिये गौतमने ऐसा प्रश्न किया। इसका उत्तर देते हुए भगवान उनसे कहते हैं कि हंता, गोयमा! हां गौतम! (ए ए वि णं जीवा" ये पृथिवी कायिक से लेकर वनस्पति कायिक तक के समस्त एकेन्द्रिय जीव भी (आनमंति वा पाणमंतिवा) भीतर बाहर में श्वास ले ते हैं (उस्ससंति वा नीससंतिवा)

પણ શકાતો નથી "एएणं भंते! जीवा" તો હે ભગવન્ તે પૃથ્વીકાયથી લઈને વનસ્પતિકાય સુધીના એકેન્દ્રિય જીવો "किं आणमंति वा पाणमंति वा?" શું શ્વાસ અંદર લે છે અને બહાર છોડે છે? "उस्ससंति वा नीससति वा?" શુ બહારથી શ્વાસમા હવા લઇ તેને નિઃશ્વાસ રૂપે બહાર કાઢે છે? પ્રશ્નનો ભાવાર્થ આ પ્રમાણે છે એકેન્દ્રિય જીવો શ્વસોચ્છ્વાસ લે છે કે નહીં? આ જાતની શંકાનુ કારણ એ છે કે એકેન્દ્રિય જીવોના શ્વાસોચ્છ્વાસ પ્રત્યક્ષ જોઇ શકાતો નથી, પણ તેમનામા ચૈતન્ય તો હોય છે અને તેથી આ જાતનીશંકા સ્વાભાવિક રીતે ઉત્પન્ન થાય છે. ભગવાન તેનો આ પ્રમાણે જવાબ આપે છે "हंता गोयमा! હા, ગૌતમ! "एए वि ण जीवा" તે બધા એકેન્દ્રિય જીવો પણ "आनमंति वा पाणम ति वा" બાહ્યાભ્યતર શ્વાસ લે છે અને "उस्ससंति वा नीससति वा" બાહ્યાભ્યતર નિઃશ્વાસ છોડે છે જેવી રીતે ચૈતન્યયુક્ત

वा ' उच्छ्वसति वा निश्वसन्ति वा, हे गौतम ! एतेपि पृथिव्यायारभ्य वनस्पतिकायान्ता एकेन्द्रिय जीवा अपि आभ्यन्तर बाह्य वा उच्छ्वास निश्वास कुर्वन्ति, यथा वय जीवा श्वास-निश्वासौ गृह्णीमस्तथैव जीवत्वाविशेषात् इमेऽपि एकेन्द्रिया जीवा उच्छ्वासनिःश्वासौ गृह्णन्त्येवेति भावः ॥ सू०१ ॥

भीतर बाहर में निःश्वास छोडते हैं। जैसे जीवत्व की अविशेषता से युक्त हुए हम लोग श्वास निःश्वास लेते हैं और छोडते हैं उसी तरह से जीवत्व की अविशेषता से युक्त ये एकेन्द्रिय जीव भी श्वासोच्छ्वास लेते हैं और छोडते हैं। ये पृथिवीकायिक आदि एकेन्द्रिय जीव हैं ऐसा आगम का वचन है। परन्तु इनके श्वास निश्वास आदि होते हैं कि नहीं ऐसीजो शंका हुई है उसका कारण यह है कि जिस प्रकार मनुष्य आदि मे श्वास निःश्वास प्रत्यक्ष से देखने में आते हैं उस प्रकार से ये एकेन्द्रिय जीवों में देखने में नहीं आते हैं। अत इस प्रकार की शंका होना स्वाभाविक है। यदि इस पर यों कहा जावे कि जब यह आगमप्रमाण से निश्चित है कि पृथिवी आदि जीव हैं तो यह बात तो माननी ही चाहिये कि इनमें श्वासोछ्वास हैं ही फिर शंका करने की क्या जरूरत है? सो इसका समाधान यह है कि जीव होने पर भी कितनेक जीवों का शरीर मेढक आदि जीवों का शरीर बहुत समय तक विना श्वासादि के भी देखा जाता है। अतः पृथ्वी आदिजीव क्या उस तरह के हैं या मनुष्य आदि की तरह श्वासोच्छ्वास से युक्त है? ऐसी शंका है

મનુષ્યો શ્વાસોચ્છ્વાસની ક્રિયા કરે છે તેવી જ રીતે ચૈતન્યયુક્ત એકેન્દ્રિય જીવો પણ શ્વાસ લેવાની અને નિઃશ્વાસ કાઢવાની ક્રિયા કરે છે આગમોમાં શાસ્ત્રોમાં પૃથિવીકાયિક વગેરે એકેન્દ્રિય જીવો કહેવામાં આવેલ છે તેઓ શ્વાસોચ્છ્વાસ લે છે કે નહીં, એવી જે શંકા ઉદ્ભવી છે તેનું કારણ એ છે કે મનુષ્ય વગેરે જીવોમાં જેવી રીતે શ્વાસોચ્છ્વાસની ક્રિયા પ્રત્યક્ષ જોઈ શકાય છે તેવી રીતે એકેન્દ્રિય જીવોમાં તે ક્રિયા પ્રત્યક્ષ જોઈ શકાતી નથી. તેથી તે પ્રકારની શંકા અસ્થાને નથી જો આ બાબતમાં એવી દલીલ કરવામાં આવે કે આગમોમાં તેમને જીવ પ્રતિપાદિત કર્યા છે તો તે વાત માનવી જ જોઈએ કે તેઓ શ્વાસોચ્છ્વાસ લે છે તેમાંથી શંકાને માટે અવકાશ જ નથી. તો તેનું સમાધાન આ પ્રમાણે કરી શકાય કેટલાક જીવો (દેડકાં વગેરે) ઘણા સમય સુધી શ્વાસ લેતા નથી. તો શું પૃથિવીકાય વગેરે જીવો તે પ્રકારના છે? કે મનુષ્ય વગેરેની જેમ શ્વસોચ્છ્વાસથી યુક્ત છે? એ પ્રકારની શંકા થાય છે

भाव', 'एएणं भंते जीवा' एते खलु भदन्त! जीवाः पृथिव्यादिवनस्पतिपर्यन्ताः किम् 'आणमंति वा पाणमंति वा' आनमंति वा प्राणमति वा 'ऊस्ससति वा नीससंति वा' उच्छ्वसंति वा निःश्वसंति वा, एकेन्द्रियजीवानाम् श्वासोच्छ्वासादिकं भवति नवेति प्रश्नः, संशयकारणं तु अदृश्यमानत्वम्, एकेन्द्रियजीवानां प्रत्यक्षत उच्छ्वासादिकं न दृश्यते, जीवत्वं च तेष्वप्यस्ति, अतो गौतमस्य प्रश्नः, उत्तरयति भगवान्—'हंता गोयमा' इत्यादि, 'हंता गोयमा' हन्त गौतम! 'एए वि णं जीवा' एतेपि खलु जीवाः, पृथिव्यादिवनस्पतिपर्यन्ता जीवा अपि 'आनमंति वा पाणमंति वा' आनन्ति वा प्राणन्ति वा 'उस्ससंति वा नीससंति

(एएणं भंते! तो हे भदन्त! ये जीव पृथिवीकायिक से लेकर वनस्पति कायिकतक के एकेन्द्रिय जीव (किं आणमंनि वा पाणमंति वा) क्या भीतर में श्वास ग्रहण करते हैं? बाहर में श्वास छोड़ते है? (उस्ससंति वा नीससंति वा) बाहर में निःश्वास को ग्रहण करते हैं? बाहर में निःश्वास को छोड़ते हैं? तात्पर्य प्रश्न का यह है कि एकेन्द्रिय जीवों के श्वास निःश्वास आदि होते हैं कि नहीं होते हैं? संशय का कारण यह है-कि एकेन्द्रिय जीवों का उच्छ्वास आदि प्रत्यक्ष से दिखता नहीं है? परन्तु उनमें भी चैतन्य तो है। इस लिये गौतमने ऐसा प्रश्न किया। इसका उत्तर देते हुए भगवान उनसे कहते हैं कि हंता, गोयमा! हां गौतम! (ए ए वि णं जीवा" ये पृथिवी कायिक से लेकर वनस्पनि कायिक तक के समस्त एकेन्द्रिय जीव भी (आनमंति वा पाणमंतिवा) भीतर बाहर में श्वास ले ते हैं (उस्ससंति वा नीससंतिवा)

પણ શકાતો નથી "एएण भंते! जीवा" તો હે ભગવન્ તે પૃથ્વીકાયથી લઈને વનસ્પતિકાય સુધીના એકેન્દ્રિય જીવો "किं आणमंति वा पाणमंति वा?" શું શ્વાસ અંદર લે છે અને બહાર છોડે છે? "उस्ससंति वा नीससति वा?" શું બહારથી શ્વાસમાં હવા લઈ તેને નિઃશ્વાસ રૂપે બહાર કાઢે છે? પ્રશ્નનો ભાવાર્થ આ પ્રમાણે છે એકેન્દ્રિય જીવો શ્વસોચ્છ્વાસ લે છે કે નહીં? આ જાતની શંકાનું કારણ એ છે કે એકેન્દ્રિય જીવોના શ્વાસોચ્છ્વાસ પ્રત્યક્ષ જોઈ શકાતો નથી, પણ તેમનામાં ચૈતન્ય તો હોય છે અને તેથી આ જાતનીશંકા સ્વાભાવિક રીતે ઉત્પન્ન થાય છે ભગવાન તેનો આ પ્રમાણે જવાબ આપે છે "हंता गोयमा! હા, ગૌતમ! "एए वि ण जीवा" તે બધા એકેન્દ્રિય જીવો પણ "आनमंति वा पाणमंति वा" બાહ્યાભ્યંતર શ્વાસ લે છે અને "उस्ससंति वा नीससंति वा" બાહ્યાભ્યંતર નિઃશ્વાસ છોડે છે જેવી રીતે ચૈતન્યયુક્ત

छाया—किं खलु भदन्त ! एते जीवा आनन्ति वा प्राणन्ति वा उच्छ्वसति वा, निःश्वसति वा, गौतम ! द्रव्यतोऽनन्तप्रदेशिकानि द्रव्याणि, क्षेत्रतोऽसंख्येयप्रदेशावगाढानि कालतोऽन्यतरस्थितिकानि, भावतो वर्णवन्ति, गंधवन्ति, स्पर्शवन्ति आनन्ति वा प्राणन्ति वा उच्छ्वसति वा, निश्वसति वा, यानि भावतो वर्णवंति

उच्छ्वास निःश्वास का अधिकार होने से ही जीवादिक समुच्चय दण्डक और चौवीस दण्डकरूप २५ पदों में उच्छ्वास निःश्वास के स्वरूप को निर्णय करने के लिये गौतम स्वामी प्रश्न करते हुए कहते हैं कि 'किं ण भंते ! एए जीवा आणमंति वा पाणमंति वा' इत्यादि।

(किं णं भंते ! एए जीवा) हे भदन्त ! ये जीव किस प्रकार के द्रव्यों को (आणमंति वा पाणमंति वा उससंति वा निस्ससंति वा) भीतर के बाहर के श्वासरूप में लेते हैं और किस प्रकार के द्रव्यों को भीतर बाहर के निःश्वासरूप में छोडते हैं ? (गोयमा !) हे गौतम ! (दव्वओ ण अणंतपएसियाई दव्वाइं) द्रव्य की अपेक्षा से अनंतप्रदेशी द्रव्यों को, (खेत्तओ असंखेज्जपएसोगाढाइं) क्षेत्र की अपेक्षा असंख्यात प्रदेशों में अवगाढ हुए द्रव्यों को (कालओ अन्नयरठिईयाई) काल की अपेक्षा किसी भी प्रकार की स्थिति वाले द्रव्यों को (भावओ वण्णमंताई, गंधमंताई, रसमंताई, फासमंताई) भाव की अपेक्षा वर्णवाले, गंधवाले, रसवाले, स्पर्शवाले द्रव्यों को (आणमंति वा पाणमंति वा)

ઉચ્છ્વાસ નિઃશ્વાસનો અધિકાર ચાલતો હોવાથી જીવાદિક સમુચ્ચય દંડક અને ચોવીસ દંડકરૂપ પચીશ પદોમાં ઉચ્છ્વાસ નિઃશ્વાસનો નિર્ણય કરવાને માટે ગૌતમ સ્વામી પ્રશ્ન પૂછે છે કે—

"किं णं भंते ! एए जीवा आणमंति वा पाणमंति वा" ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ- (किं णं भंते ! एए जीवा) હે ભગવન્ ! તે જીવો કઈ જાતના દ્રવ્યોને (आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा ?) બાહ્યાભ્યન્તર શ્વાસ રૂપે ગ્રહણ કરે છે અને કઈ જાતના દ્રવ્યોને બાહ્યાભ્યન્તર નિઃશ્વાસ રૂપે છોડે છે ? (गोयमा !) હે ગૌતમ ! (दव्वओणं अणंतपएसियाइं दव्वाइं) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ અનંત પ્રદેશી દ્રવ્યોને (खेत्तओ असंखेज्जपएसोगाढाइं) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ અસંખ્યાત પ્રદેશોમાં અવગાઢ થયેલાં દ્રવ્યોને (कालओ अन्नयर ठिईयाइं) કાળની અપેક્ષાએ કોઈ પણ જાતની સ્થિતિવાળાં દ્રવ્યોને (भावओ वण्णमंताइं गंधमंताइं रसमंताइं फासमंताइं) ભાવની અપેક્ષાએ વર્ણ, ગંધ, રસ અને સ્પર્શવાળાં દ્રવ્યોને (आणमंति वा पाणमंति वा) તેઓ બાહ્યાભ્યન્તર શ્વાસરૂપે

उच्छ्वासनिःश्वासयोरधिकारादेव जीवादिषु पंचविंशतिपदेषु उच्छ्वासनिःश्वासयोः स्वरूपं निर्णेतु प्रश्नयन्नाह–' किं ण भंते ' इत्यादि ।

मूलम्–किं णं भंते ! एए जीवा आणमंति वा पाणमंति वा उस्ससंति वा नीससंति वा, गोयमा ! दव्वओ णं अणंतपएसियाइं दव्वाइं, खेत्तओ असंखेज्जपएसोगाढाइं, कालओ अन्नयरठिइयाइं, भावओ वण्णमंताइं, गंधमंताइं, रसमंताइं, फासमंताइं, आणमंति वा पाणमंति वा, उस्ससंति वा, जाइं भावओ वण्णमंताइं आणमंति वा पाणमंति वा उस्ससंति वा नीससंति वा, ताइं किं एगवण्णाइं आणमंति वा पाणमंति वा उस्ससंति वा नीससंति वा। आहारगमो णेयव्वो जाव ति चउपंचदिसिं । किं णं भंते ! नेरइया आणमंति वा पाणमंति वा उस्ससंति वा नीससंति वा, तं चेव जाव नियमा छद्दिसिं आणमंति वा पाणमंति वा उस्ससंति वा नीससंति वा । जीवा एगिंदिया वाघाया य णिव्वाघाया य भाणियव्वा, सेसा नियमा छद्दिसिं ॥ सू०२॥

तथा बहुत समय तक भी श्वासोच्छ्वास नहीं लेने वाले जीव किसी न किसी समय तो श्वासोच्छ्वास लेते ही है यह नजर से दिखता है परन्तु इनका श्वासोच्छ्वास तो कभी देखने में आता ही नहीं है । अतः उन जीवों में श्वासोच्छ्वास है कि नहीं ऐसा शंका का समाधान इस सूत्र द्वारा किया गया है और कहा गया है कि इनमें श्वासोच्छ्वास आदि हैं ॥सू०१॥

તથા ઘણા લાંબા સમય સુધી શ્વાસોચ્છ્વાસ નહીં લેનારા જીવો પણ કોઈક સમયે તો શ્વાસોચ્છ્વાસ લેતા જોવામાં આવે છે પણ એકેન્દ્રિય જીવો તો શ્વાસોચ્છ્વાસ લેતા કદી પણ જોવામાં આવતા નથી તેથી તે જીવો શ્વાસોચ્છ્વાસ ગ્રહણ કરે છે કે નથી કરતા ? એવી શંકા અનુચિત નથી તે શંકાના સમાધાનમાં આ સૂત્ર વડે તેઓ શ્વાસોચ્છ્વાસ વગેરે લે છે એમ કહેવામાં આવ્યું છે.॥સૂ-૧॥

उच्छ्वसति वा निःश्वसति वा जीवाः एकेन्द्रिया व्याघाता निर्व्याघाताश्च भणि तव्याः शेषा नियमात् षड्दिशम् ॥ सू० २ ॥

टीका—'किं ण भंते ' किं खलु भदन्त' अत्र किं शब्दस्य सामान्यनिर्देश त्वात् कानि=किं विधानी द्रव्याणीत्यर्थ , ' एए जीवा ' एते जीवा , एकेन्द्रियाः

हे गौतम ! इस विषय में पहिले की तरह से ही जानना चाहिये यावत् वे छह दिशाओं में से अंदर बाहर के श्वास नि श्वास के अणुओं को ग्रहन करते हैं । (जीवा एगिंदिया वाघाय निव्वाघाया य भाणियव्वा सेसा नियमा छद्दिसिं) जीव और एकेन्द्रिय के संबंध में ऐसा कहना कि यदि कोई व्याघात प्रतिषधक नहीं है तो वे समस्त दिशाओं में से श्वास निःश्वास के अणुओं को ग्रहण करते हैं और यदि प्रतिषेधक है तो वे छह दिशाओं में से श्वास निःश्वास के अणुओं को ग्रहग करते हैं और यदि प्रतिषधक है ता वे छह दिशाओं के श्वास निःश्वास के अणुओं ग्रहण नहीं कर सकने के कारण कोई समय तीन दिशाओं में से' कोइ समय चार दिशाओं में से, कोई समय पांच दिशाओं में से श्वास नि श्वास के अणुओं को ग्रहण करते हैं । बाकी समस्त जीव छहों दिशाओं में से श्वास नि श्वास के अणुओं को ग्रहण करते हैं ।

टीकार्थ—(किं णं भंते) यहां (किं) यह शब्द सामान्य का निर्देशक है । इसलिये इसका अर्थ यहां (किस प्रकार के द्रव्यों को) ऐसा होता है । (एए जीवा) पृथिवी से लेकर वनस्पति तक के एकेन्द्रिय

वा पाणमंति वा, ऊससंति वा, नीससंति वा) હે ગૌતમ ! આ વિષયમાં પણ આગળ મુજબ જ સમજવું છ દિશાઓમાંથી તેઓ બાહ્યાભ્યન્તર શ્વાસ નિઃશ્વાસના પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરે છે" ત્યાં સુધીનું કથન આગળ મુજબ જ સમજવું (जीवा एगिंदिया वाघाय निव्वाघायाय भाणियव्वा सेसा नियमा छद्दिसिं) સામાન્ય જીવો અને એકેન્દ્રિય જીવો વિષે એવું કહેવું જોઈએ કે જો કોઈ વ્યાઘાત નડતો ન હોય તો તેઓ બધી દિશાઓમાંથી શ્વાસ નિઃશ્વાસના પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરે છે પણ જો વ્યાઘાત નડતો હોય તો છએ દિશાઓમાંથી શ્વાસ નિઃશ્વાસના પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરી શકતા નથી પણ કોઈ વખત ત્રણ દિશાઓમાંથી, તો કોઈ વખત ચાર દિશાઓમાંથી અને કોઈ વખત પાંચ દિશાઓમાંથી શ્વાસ નિઃશ્વાસના પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરે છે બાકીના તમામ જીવો છએ દિશામાંથી શ્વાસ નિઃશ્વાસના પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરે છે

ટીકાર્થ— किं णं भंते અહીં "किं" પદ સામાન્યનું નિર્દેશક છે તેથી અહીં તેનો અર્થ ' કયાંપ્રકારના દ્રવ્યોને એવો થાય છે "एए जीवा" પૃથિ

आनन्ति वा प्राणन्ति वा उच्छ्वसंति वा निःश्वसंति वा, तानि किम् एकवर्णान्यानन्ति वा प्राणन्ति वा उच्छ्वसंति वा निःश्वसंति वा, आहारगमो ज्ञातव्यः यावत् त्रिचतुः पंचदिशम् । किं खलु भदंत ! नैरयिका आनन्ति वा प्राणन्ति वा उच्छ्वसंति वा निःश्वसंति वा, तदेव यावत् नियमात् षड्दिशं आनन्ति वा प्राणन्ति वा

भीतर बाहर के श्वासरूप में लेते हैं (उस्ससंति वा नीससंति वा) तथा इसी प्रकार के द्रव्यों को भीतर बाहर के निःश्वासरूप में छोड़ते हैं। (जाइं भावओ वण्णमंताइं आणमंति वा पाणमंति वा उस्ससंति वा नीससंति वा) हे भदन्त । वे जीव भाव की अपेक्षा जिन वर्णवाले द्रव्यों को भीतर बाहर के श्वासरूप में लेते हैं तथा भीतर बाहर के निःश्वासरूप में छोड़ते हैं (ताइं किं एगवण्णाइं आणमंति वा पाणमंति वा, ऊससंति वा नीससंति वा) वे द्रव्य क्या एक वर्णवाले होते हैं ? (आहारगमो णेयव्वो जाव ति चउपंचदिसिं) हे गौतम ! यहां आहार गम लेना चाहिये–और वह यावत् तीन चार पांच दिशा तरफ के श्वास और निःश्वास के अणुओं को ग्रहण करते हैं इस तरह से लगाना चाहिये। (किं णं भंते ! नेरइया आणमंति वा पाणमंति वा उस्ससंति वा नीससंति वा) हे भदन्त नैरयिक जीव किस प्रकार के द्रव्यों को अन्दर बाहर के श्वासरूप में लेते हैं अर्थात् ग्रहण करते हैं ? और किस प्रकार के द्रव्यों को अन्दर बाहर के निःश्वास में छोड़ते हैं। (तं चेव जाव नियमा छद्दिसिं आणमंति वा पाणमंति वा, उस्ससंति वा नीससंति वा)

લે છે (उस्ससति वा नीससंति वा) અને એવાજ દ્રવ્યોને બાહ્યાભ્યન્તર નિશ્વાસ રૂપે છોડે છે (जाइं भावओ वण्णमंताइं आणमंति वा पाणमंति वा उस्ससंति वा नीससति वा) હે ભગવન્! તે જીવો ભાવની અપેક્ષાએ જે વર્ણવાળા દ્રવ્યોને બાહ્યાભ્યન્તર શ્વાસ રૂપે લે છે તથા બાહ્યાભ્યન્તર નિશ્વાસ રૂપ છોડે છે, (ताइ कि एगवण्णाइ आणमति वा पाणमंति वा, ऊससंति वा नीससंति वा તે દ્રવ્યો શુ એક વર્ણવાળા હોય છે ! (आहारगमो णेयव्वो जाव ति चउ पंचदिसिं) હે ગૌતમ! અહી આહારગમ ગ્રહણ કરવો જોઇએ અને જીવો ત્રણ' ચાર અને પાચ દિશાઓમાથી શ્વાસ અને નિશ્વાસના પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરે છે ત્યા સુધીનો પાઠ ગ્રહણ કરવો જોઇએ, (किं णं भते ! नेरइया आणमंति वा पाणमंति वा उस्ससंति वा नीससंति वा) હે ભગવન્! નારક જીવો કયા પ્રકારના દ્રવ્યોને બાહ્યાભ્યન્તર શ્વાસ રૂપે લે છે અને કયા પ્રકારના દ્રવ્યોને બાહ્યાભ્યન્તર નિશ્વાસ રૂપ છોડે છે! (तं चेव जाव नियमा छद्दिसिं आणमंति

'गंधमंताइं' गन्धवन्ति, सुरभ्यादिगन्धयुक्तानि, 'रसमंताइं' रसवन्ति, तिक्तादि रसयुक्तानि 'फासमंताइं' स्पर्शवन्ति, कर्कशकठोरादिस्पर्शयुक्तानि द्रव्याणि, 'आनमति वा पाणमति वा उस्ससति वा नीससति' आनन्ति वा प्राणन्ति वा उच्छ्वसन्ति वा निःश्वसन्ति वा, प्रश्नयति 'जाइं' इत्यादि। 'जाइं भावओ वण्णमंताइं' यानि द्रव्याणि भावतो वर्णवन्ति=वर्णयुक्तानि 'आणमंति वा पाणमंति वा उस्ससति नीससति वा' आनन्ति वा प्राणन्ति वा उच्छ्वसन्ति वा निःश्वसन्ति वा, 'ताइं किं एगवण्णाइं' तानि किम् एकवर्णानि-एकवर्णयुक्तानि 'आणमति वा पाणमंति वा उस्ससति वा नीससति वा' आनन्ति वा प्राणन्ति वा उच्छ्वसन्ति वा निःश्वसन्ति वा, यानि भावतो वर्णयुक्तानि द्रव्याणि पृथिव्या

आदि वर्ण युक्त, (गंधमंताइं) सुरभि आदि गंधयुक्त, (रसमंताइं) तिक्त आदि रस युक्त, (फासमंताइं) कर्कश कठोर आदि स्पर्श युक्त द्रव्यों को (आणमंति वा, पाणमंति वा, उस्ससंति वा, निस्ससंति वा) आभ्यन्तर में श्वासरूप से ग्रहण करते हैं, बाहर में श्वासरूप से ग्रहण करते हैं भीतर में निःश्वासरूप छोड़ते हैं, बाहर में निःश्वासरूप से, छोड़ते हैं। (जाइं भावओ वण्णमंताइं) भाव की अपेक्षा वर्णवाले जिन द्रव्यों को ये जीव (आणमंति वा, पाणमंति वा, उस्ससति वा नीससति वा) भीतर बाहर के श्वासरूप में ग्रहण करते हैं और भीतर बाहर में निःश्वासरूप में छोड़ते हैं (ताइं किं एगवण्णाइं आणमति वा पाणमंति वा उस्ससति वा नीससति वा) तो वे द्रव्य एक वर्णवाले भीतर बाहर के श्वासरूप में ग्रहण किये जाते हैं, भीतर बाहर के निःश्वासरूप में छोड़े जाते हैं क्या ? यह प्रश्न है और इस का आशय यह है कि ये पृथिव्यादिक एकेन्द्रिय जीव भाव की अपेक्षा वर्णयुक्त जिन

"वण्णमंताइं" કૃષ્ણાદિ વર્ણવાળા, "गंधमंताइं" સુરભિ વગેરે ગંધવાળાં, "रसमंताइं" તિક્ત (તીખો) વગેરે રસવાળાં, 'फासमंताइं" કઠોર વગેરે સ્પર્શવાળાં દ્રવ્યોને 'आणमंति वा पाणमंति वा उस्ससंति वा, नीससंति वा" આભ્યન્તર શ્વાસરૂપે લે છે બહાર શ્વાસ રૂપે લે છે અંદર નિશ્વાસ રૂપે છોડે છે, બહાર નિશ્વાસ રૂપે છોડે છે, હે ભગવન્ 'जाइं भावओ वण्णमंताइं" ભાવની અપેક્ષાએ વર્ણવાળાં જે દ્રવ્યોને તે જીવો 'आणमंति वा पाणमंति वा उससंति वा" नीससंति वा બાહ્યાભ્યન્તર શ્વાસ રૂપે ગ્રહણ કરે છે અને બાહ્યાભ્યન્તર નિશ્વાસ રૂપે છોડે છે 'ताइं किं एगवण्णाइं आणमंति वा, पाणमंति वा उस्ससंति वा नीससंति वा' તે દ્રવ્યો શું એક વર્ણવાળાં હોય છે ? તાત્પર્ય એ છે કે પૃથ્વીકાય વગેરે એકેન્દ્રિય જીવો ભાવની અપે

पृथिव्याद्यारभ्य वनस्पतिपर्यन्ताः, 'आणमंति वा पाणमंति वा उस्ससंति वा निस्ससंति वा' आनन्ति वा प्राणन्ति वा उच्छ्वसंति वा निःश्वसंति वा, एते एकेन्द्रियजीवा आनप्राणादितया कानि द्रव्याणि गृह्णन्तीति भावः। भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि। 'गोयमा' हे गौतम! 'दव्वओ णं अणंतपएसियाइं दव्वाइं' द्रव्यतः खलु अनंतप्रदेशिकानि द्रव्याणि आनन्ति वा प्राणन्ति वा इत्यग्रेतनेन सम्बन्धः। 'खेत्तओ असखेज्जपएसोगाढाइ' क्षेत्रतोऽसंख्यातप्रदेशावगाढानि द्रव्याणीति भावः। अत्र प्रदेशशब्देन आकाशप्रदेशा गृह्यन्ते। 'कालओ अन्नयरठिइयाइं' कालतोऽन्यतरस्थितिकानि, एकद्व्यादिसमयस्थितिकेष्वन्यतरस्थितिकानि, 'भावओ वण्णमंताइं' भावतो वर्णवन्ति, कृष्णादिवर्णयुक्तानि,

---

जीव (आणमंति वा, पाणमंति वा, उस्ससंति, वा निस्ससंति वा) भीतर बाहर के श्वास में और निःश्वास में ग्रहण करते हैं। तात्पर्य इस प्रश्न का यह है कि ये एकेन्द्रिय जीव आन प्राण आदि-श्वासोच्छ्वास आदि रूप से किस प्रकार के द्रव्यों को ग्रहण करते हैं? इसका उत्तर देते हुए प्रभु गौतम से कहते हैं कि-(गोयमा) हे गौतम! (दव्वाओ णं अणंतपएसियाइं दव्वाइं वे एकेन्द्रिय जीव द्रव्य की अपेक्षा से अनंत प्रदेशवाले द्रव्यों को श्वासोच्छ्वासरूप से ग्रहण करते हैं, (खेत्तओ) क्षेत्र की अपेक्षा से (असंखेज्जपएसोगाढाइं) आकाश के असंख्येय प्रदेश में रहे हुए द्रव्यो को ग्रहण करते हैं। यहां प्रदेश शब्द से आकाश के प्रदेश लिये गये हैं। (कालओ) काल की अपेक्षा से (अन्नयरठिइयाइं एक दो आदि समय रूप स्थिति में से किसी एक स्थिति वाले द्रव्यो को ग्रहण करते हैं। (भावओ) भाव की अपेक्षा से (वण्णमंताइं) कृष्ण

वीकायथी लइने वनस्पति सुधीना એકેન્દ્રિય જીવો "आणमंति वा पाणमति वा, उस्ससंति वा, निस्ससंति वा" બાહ્યાભ્યન્તર શ્વાસમા ગ્રહણ કરે છે અને છોડે છે! પ્રશ્નનો ભાવાર્થ એ છે કે એકેન્દ્રિય જીવો શ્વાસોચ્છ્વાસમા કઈ જાતના દ્રવ્યોને ગ્રહણ કરે છે! ભગવાન મહાવીર સ્વામી તેનો આ પ્રમાણે ઉત્તર આપે છે "गोयमा!" હે ગૌતમ! "दव्वओणं अणंतपएसियाइं दव्वाइं" એકેન્દ્રિય જીવો દ્રવ્યની અપેક્ષાએ અનંત પ્રદેશવાળા દ્રવ્યોને શ્વાસોચ્છ્વાસ રૂપે ગ્રહણ કરે છે, "खेत्तओ" ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ "असखेज्जपएसोगाढाइं" આકાશના અસખ્યાત પ્રદેશોમા રહેલા દ્રવ્યને ગ્રહણ કરે છે અહીં 'પ્રદેશ" શબ્દ વડે આકાશના પ્રદેશો ગ્રહણ કરાયા છે "कालओ" કાળની અપેક્ષાએ 'अन्नयरठिइयाइं" એક, બે વગેરે સમયરૂપ સ્થિતિવાળા દ્રવ્યોમાંથી કોઇ પણ એક સ્થિતિવાળા દ્રવ્યોને ગ્રહણ કરે છે "भावओ" ભાવની અપેક્ષાએ

वण्णओ कालाई ताइ किं एकगुणकालाइं जाव अनंतगुणकालाइंपि ' इत्यादि, एक-वर्णानि द्विवर्णानि त्रिवर्णानि यावत्पञ्चवर्णान्यपि, यानि वर्णतः कालानि तानि किमेकगुणकालानि यावदनंतगुणकालान्यपि, एकवर्णानि द्विवर्णानि त्रिवर्णानि यावत् पंचवर्णान्यपि द्रव्याणि आनमाणतया गृह्णन्तीत्यर्थः, यानि द्रव्याणि वर्णतः कालानि तानि किमेकगुणकालानि यावदनंतगुणकालान्यपि, एकगुणकालानीत्या रभ्यानन्तगुणकालानि द्रव्याणि आनमाणतया गृह्णन्तीत्यर्थ एव गन्धरसादिष्वपि ज्ञातव्यम् । पृथिव्यादिजीवानामानप्राणादि भवतीत्यवगम्य नारकविषये प्रश्न यति– ते ' इत्यादि, ' किं णं भंते ' कानि खलु द्रव्याणि भदन्त ! ' णेर इया आणमंति वा, पाणमंति वा उस्ससंति वा नीससंति वा ' आनन्ति वा प्राण

दुवण्णाई, तिवण्णाई जाव पचवण्णाई पि, जाई वण्णओ कालाई ताइ किं एक गुणकालाई जाव अणंतगुणकालाइ पि) इत्यादि, अर्थात् भाव की अपेक्षा से जिस द्रव्यों को वे जीव श्वासोच्छ्वासरूप से ग्रहण करते हैं वे एक ही वर्णवाले नहीं होते हैं, किन्तु एक वर्ण वाले भी होते हैं, दो वर्ण वाले भी होते हैं, तीन वर्ण वाले भी होते हैं, चार वर्ण वाले भी होते हैं और पांच वर्ण वाले भी होते हैं। तथा जो द्रव्य वर्ण से काले उन जीवों द्वारा श्वासोच्छ्वास के रूप में ग्रहण किये जाते हैं वे द्रव्य एक गुण काले भी होते हैं, दो गुण काले भी होते हैं, तीन गुण काले भी होते हैं यावत् अनंतगुण काले भी होते हैं। इसी तरह से गंध रस आदि में भी जानना चाहिये। इस तरह के कथन से पृथिव्यादि जीवों में आन प्राणादि होते हैं ऐसा जानकर अब नारक के विषय में गौतम स्वामी प्रभु से प्रश्न करते हैं कि (किं ण भंते ! णेरइया आण-

वण्णओ कालाइ ताइ किं एकगुणकालाइं जाव अणंतगुणकालाई वि "

ભાવની અપેક્ષાએ તે જીવો જે દ્રવ્યોને શ્વાસોચ્છ્વાસ રૂપે ગ્રહણ કરે છે તે દ્રવ્યો એક જ વર્ણવાળાં હોતાં નથી, પણ એક વર્ણવાળા પણ હોય છે, બે વર્ણવાળા પણ હોય છે ત્રણ વર્ણવાળાં પણ હોય છે, ચાર વર્ણવાળાં પણ હોય છે અને પાંચ વર્ણવાળાં પણ હોય છે તથા જે કાળા વર્ણના દ્રવ્યો તે જીવો વડે શ્વાસોચ્છ્વાસ રૂપે ગ્રહણ કરાય છે તે દ્રવ્યો એક ગણા, બે ગણા ત્રણ ગણા અને અનંતગણા (પર્યંત) કાળાં પણ હોય છે એજ પ્રમાણે ગંધ, રસ વગેરેના વિષયમાં પણ સમજવું આ રીતે પૃથ્વીકાય વગેરે જીવોમાં શ્વાસોચ્છ્વાસના વિષયમાં વાત કહીને હવે નારક જીવોના શ્વાસોચ્છ્વાસના વિષયમાં ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને પૂછે છે– ' किं णं भंते ! णेरइया आणमंति वा पाणमंति वा, उस्ससंति वा नीससंति वा ' હે ભગવન્

दिभिरानमाणादितया उपादीयन्ते तानि द्रव्याणि किम् एकवर्णयुक्तानि द्व्यादि-पञ्चवर्णयुक्तानि वेति प्रश्नाशयः। भगवानाह--'आहारगमो' इत्यादि, 'आहारगमो णेयव्वो जाव तिचउ पंचदिसिं' आहारगमो ज्ञातव्यो यावत् त्रिचतुः पंचदिशमिति, षट्सु दिक्षु त्रिचतुःपंचदिगवस्थितद्रव्याणि आनप्राणतया गृह्णन्तीति, आहारगम इति प्रज्ञापनासूत्रस्याष्टविंशतितमाहारपदोक्तो गमः=आलापक इहाध्येतव्यः। विशेषश्चात्रायम्-तत्राहारविषयको गमः, अत्र तु आनमाणादिगमो वाच्यः, स चेत्थम्-'एगवन्नाइं, दुवन्नाइं, तिवन्नाइं-जाव पंचवन्नाइं पि जाइं

द्रव्यों को श्वासोच्छ्वासरूप से ग्रहण करते हैं और छोड़ते हैं तो क्या ये द्रव्य एक ही वर्णयुक्त होते हैं ? अथवा दो तीन आदि पांच वर्णयुक्त होते हैं ? प्रभु इसका उत्तर देते हुए गौतम से कहते हैं कि (आहारगमो णेयव्वो जाव ति चउ पंचदिसिं) हे गौतम ! यहां आहारगम जानना चाहिये और वह तीन, चार, पांच दिशातक के द्रव्यों के ग्रहण करने का जानना चाहिये, अर्थात् छह दिशाओं में से तीन, चार,, पांच दिशाओं में अवस्थित द्रव्यों को ये जीव श्वासोच्छ्वासरूप से ग्रहण करते हैं।और छोड़ते हैं इस उत्तर सूत्र का तात्पर्य यह है कि आहार प्रज्ञापना सूत्र के २८ अट्ठाईसवें आहार पद में कहा हुआ आलापक है वह यहां कहना चाहिये। परन्तु उसमें और इसमें भेद इतना ही है कि वहां आहार के संबंध को लेकर सूत्र कहे गये हैं और यहां वे ही सूत्र श्वासोच्छ्वास के संबंध को लेकर कहे जावेंगे जैसे-(एगवन्नाइं,

ક્ષાએ વર્ણયુકત જે દ્રવ્યોને શ્વાસોચ્છ્વાસમાં ગ્રહણ કરે છે અને છોડે છે તે દ્રવ્યો શુ એક જ વર્ણવાળા હોય છે અથવા બે, ત્રણ, પાચ વગેરે વર્ણવાળા હોય છે? તે પ્રશ્નનો મહાવીર પ્રભુ આ પ્રમાણે જવાબ આપે છે "आहारगमो णेयव्वो जाव ति चउ पंचदिसिं હે ગૌતમ ! અહીં આહારગમના વિષયમાં કહેલ આલાપક ગ્રહણ કરવો જોઇએ અને ત્રણ, ચાર, અને પાંચ દિશાના દ્રવ્યોને તેઓ ગ્રહણ કરે છે એમ સમજવુ એટલે કે છ દિશાઓમાંની ત્રણ, ચાર કે પાચ દિશાઓમા રહેલા દ્રવ્યોને તે જીવો શ્વાસોચ્છ્વાસ રૂપે ગ્રહણ કરે છે. અને છોડે છે. આ ઉત્તરસૂત્રનુ એવુ તાત્પર્ય છે કે પ્રજ્ઞાપના સૂત્રના ૨૮માં આહાર પદમાં કહેલો આહારગમ નામનો જે આલાપક છે તે અહીં કહેવો જોઇએ. પણ તે આલાપક અને આ આલાપકમાં એટલો જ તફાવત છે કે ત્યાં આહાર વિષે જે સૂત્રો કહેલા છે એજ સૂત્રો અહીં શ્વાસોચ્છ્વાસ વિષે કહેવા જોઇએ જેમ કે "एगवन्नाइं, दुवन्नाइं तिवन्नाइं, जाव पंचवन्नाइं पि, जाइं

शेषा नियमात् षड्दिशम्, जीवा एकेन्द्रियाश्च व्याघातवन्तो भणितव्याः, इह व्याघातनिर्व्याघातयोर्व्यस्यय करणीयः, तदभिलापस्य सूत्रे तथैव दर्शनात्, तत्र जीवा निर्व्याघातसव्याघाताः सूत्रे एव दर्शिताः, यदि व्याघातोऽलोकात्मको न भवेत् तदा जीवा नियमतः षड्भ्यो दिग्भ्य श्वासादिकं गृह्णन्ति, यदि व्याघातो भवेत्तदा कदाचित् दिक्त्रयेभ्य कदाचित् दिक्चतुष्टयभ्यः कदाचित् पञ्चदिग्भ्यः श्वासादिकं गृह्णन्ति इति। एकेन्द्रियजीवास्त्वेवम्-'पुढवीकाइयाणं भंते कइदिसं आणमति पाणमंति उस्ससति नीससति' पृथिवीकायिका खलु भदंत! कतिदिशम् आनन्ति प्राणन्ति उच्छ्वसति निःश्वसति?, 'गोयमा निव्वाघाएणं छद्दिसिं वाघाय पडुच्च सिय तिदिसिं चउदिसिं पंचदिसिं' गौतम! निर्व्याघातेन षड्दिशं व्याघात प्रतीत्य स्यात् त्रिदिशम् स्यात् चतुर्दिशम् स्यात् पञ्चदिशम्, इत्यादि,

इन में व्याघात विना के और व्याघातवाले जीव सूत्र में ही दिखला दिये गये हैं। यदि अलोकात्मक अलोक रूप व्याघात नहीं होता है तो जीव नियम से छह दिशाओं में से श्वासोच्छ्वास के योग्य पुद्गलों को ग्रहण करते हैं और यदि अलोक रूप व्याघात होता है तो वे कदाचित तीन दिशाओंमें से, कदाचित चार दिशाओं में से, कदाचित पांच दिशाओं में से श्वासोच्छ्वास के योग्य पुद्गलों को ग्रहण करते हैं। तथा-जो एकेन्द्रिय जीव हैं उनके विषय में इस प्रकार से जानना चाहिये-(पुढवीकाइया णं भंते! कइदिसं आणमंति पाणमंति उस्ससंति नीससंति? गोयमा! निव्वाघाएण छद्दिसिं वाघाय पडुच्च सिय तिदिसिं चउदिसिं सिय पंचदिसिं) हे भदंत! पृथिवीकायिक जीव कितनी दिशाओं में से श्वासोच्छ्वास के योग्य पुद्गलपरमाणुओं को ग्रहण करते हैं? हे गौतम! यदि व्याघात न होवे तो वे नियम

તેમાંથી કયાં જીવો વ્યાઘાતવાળાં છે અને કયાં જીવો વ્યાઘાત વિનાના છે તે સૂત્રમાં જ બતાવ્યું છે જો અલોકાત્મક અલોક રૂપ વ્યાઘાત નડતો ન હોય તો જીવો છએ દિશાઓમાંથી શ્વાસોચ્છ્વાસને યોગ્ય પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરે છે એવો નિયમ છે પણ જો અલોક રૂપ વ્યાઘાત નડતો હોય તો તેઓ ક્યારેક ત્રણ દિશાઓમાંથી ક્યારેક ચાર દિશાઓમાંથી અને ક્યારેક પાંચ દિશાઓમાંથી શ્વાસોચ્છ્વાસને યોગ્ય પુદ્ગલો ગ્રહણ કરે છે તથા એકેન્દ્રિય જીવોના વિષે આ પ્રમાણે સમજવું "पुढवीकाइयाणं भंते! कइदिसं आणमंति पाणमंति ऊससंति नीससंति? गोयमा! निव्वाघाएणं छद्दिसिं वाघाय पडुच्च सिय तिदिसिं चउदिसिं सिय पंचदिसिं" હે ભગવન્! પૃથિવીકાયના જીવો કેટલી દિશાઓમાંથી શ્વાસોચ્છ્વાસને યોગ્ય પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરે છે? હે ગૌતમ! જો વ્યાઘાત નડતો

न्ति वा उच्छ्वसंति वा निःश्वसंति वा, नारकजीवाः कानि द्रव्याणि आनप्राणादि तया गृह्णन्तीति प्रश्नाशयः । भगवानाह 'तं चेव' इत्यादि । 'तं चेव जाव नियमा छद्दिसिं आणमंति वा पाणमंति वा उस्ससंति वा नीससंति वा.' हे गौतम ! तदेव यथा पृथिव्याद्येकेन्द्रियजीवविषये कथितं तथा नैरयिका अपि 'दव्वओ णं अणंतपएसियाइं दव्वाइं' इत्याद्यालापकः संग्राह्यः । कियत्पर्यन्त-मित्याह—यावत् नियमात् षड्दिशम्, यावत् नियमात् षड्दिशमाश्रित्यानप्राणा-दिकं गृह्णन्त्येवेति भावः । 'जीवा एगिंदिया वाघायनिव्वाघायाय भाणियव्वा' जीवा एकेन्द्रिया व्याघातानिर्व्याघाताश्च भणितव्याः, 'सेसा नियमा छद्दिसिं'

मंति वा पाणमंति वा उस्ससंति वा, नीससंति वा) हे भदन्त नारकजीव किस प्रकारके द्रव्योंको श्वासोच्छ्वासरूपमें ग्रहण करतेहैं और छोड़तेहैं?

उत्तर—(तं चेव जाव छद्दिसिं आणमंति वा पाणमंति वा उस्स-संति वा नीससंति वा) हे गौतम ! जिस प्रकार से पृथिव्यादिक एके-न्द्रिय जीव के विषय में मैंने कहा है उसी तरह से नैरयिक जीवों के विषय मेंभी जानना चाहिये । अर्थात् नैरयिक जीव भी (दव्वाओ) द्रव्य की अपेक्षा से (अणंतपएसियाइं दव्वाइं) अनंत प्रदेशवाले द्रव्यों को श्वासोच्छ्वास के रूप में ग्रहण करते है और छोड़ते हैं इत्यादि आलापक यहां लगा लेना चाहिये । यह आलापक कहां तक लेना चाहिये ? तो इसके समाधान निमित्त कहा गया है कि (जाव छद्दिसिं) अर्थात् नारक छह दिशाओं में से श्वासोच्छ्वास के द्रव्यों को ग्रहण करते हैं जीवा एगेंदिया वाघाय निव्वाघाया य भाणिव्वा" सामान्य जीव और एकेन्द्रिय जीव व्याघात और अव्याघातवाले कहना चाहिये

નારકજીવ કઈ જાતના દ્રવ્યોને શ્વાસોચ્છ્વાસ રૂપે ગ્રહણ કરે છે અને છોડે છે ?

ઉત્તર–त चेव जाव छद्दिसिं आणमंति वा पाणमंति वा, उस्ससंति वा नीससंति वा" હે ગૌતમ ! પૃથિવી વગેરે એકેન્દ્રિય જીવોના શ્વાસોચ્છ્વાસના વિષયમાં કહ્યા પ્રમાણે જ નારકોના વિષયમાં પણ સમજવું એટલે કે નારકીના જીવો પણ "दव्वओ अणतपएसियाइ दव्वाइं" દ્રવ્યની અપેક્ષાએ અનંત પ્રદેશ-વાળા દ્રવ્યોને શ્વાસોચ્છ્વાસમા ગ્રહણ કરે છે અને છોડે છે, ઈત્યાદિ આલા-પક અહીં કહેવા જોઈએ ક્યાં સુધી તે આલાપક કહેવા જોઈએ ? તો તેના સમાધાન માટે કહ્યુ છે કે "जाव छद्दिसिं" નારક જીવો છ દિશામાંથી શ્વાસો-ચ્છ્વાસમાં ગ્રહણ કરવા યોગ્ય દ્રવ્યોને ગ્રહણ કરે છે " ત્યા સુધી તે આલા-પક કહેવો. "जीवा एगेंदिया वाघाय निव्वाघायाय भाणियव्वा" સામાન્ય જીવો અને એકેન્દ્રિય જીવો વ્યાઘાત વાળા અને વ્યાઘાતવિનાના કહેવા જોઈએ

नारकादिषु सजीवाः षड्दिग्भ्यमानन्ति, तेषां हि त्रसनाड्यन्तर्भूतत्वात् षड्दिग्भ्या-गमाणादिपुद्गलग्रहो भवत्येवेति भावः ॥ सू० २ ॥

वायुजीवप्रकरणम्—

पूर्वमेकेन्द्रियादिजीवानामानप्राणादिकं वर्णितम्, तेषां वायुत्पत्वात् किं वायुकायिकजीवानामपि वायुरेवानप्राणादित्वेन भवितुमर्हति ? अथवा पृथिवीका यादीनामिव तद्भिन्नोऽन्यः कश्चित् पदार्थ ? इति प्रश्नयन्नाह–'वाउकाए' इत्यादि ।

मूलम्–वाउकाए णं भंते ! वाउकाए चेव आणमइ वा पाणमइ वा ऊससइ वा नीससइ वा । हंता गोयमा ! वाउकाए णं जाव नीससइ वा, वाउकाए णं भंते ! वाउकाए चेव अणेगसयसहस्सखुत्तो उद्दाइत्ता, उद्दाइत्ता तत्थेव भुज्जो भुज्जो पच्चायाइ, से भंते किं पुट्ठे उद्दाइ अपुट्ठे उद्दाइ, गोयमा पुट्ठे उद्दाइ नो अपुट्ठे उद्दाइ । से भंते किं ससरीरी निक्खमइ असरीरी निक्खमइ, गोयमा ! सिय ससरीरी निक्खमइ, सिय असरीरी निक्खमइ । से केणट्ठेण भंते ! एवं वुच्चइ, सिय ससरीरी निक्खमइ, सिय असरीरी निक्खमइ, गोयमा! वाउकायस्स णं चत्तारि सरीरया पण्णत्ता, तं जहा–ओरालिए वेउव्विए तेयए कम्मए । ओरालिय वेउव्वियाइ

परमाणुओं को ग्रहण करने में अलोक द्वारा उन्हें अडचन पडती है । " सेसा नियमा छिद्दिसिं ' एकेन्द्रिय जीवों को छोडकर नारक आदि त्रस जीव छहों दिशाओं में से नियम से श्वासोच्छ्वास के योग्य पुद्गलपरमाणुओं को ग्रहण करते हैं क्यों कि ये त्रस नाडी के भीतर रहते हैं इस कारण इन्हें छहों दिशाओं में से श्वासोच्छ्वास के योग्य पुद्गल परमाणु मिल जाते हैं ॥ सू०२ ॥

' सेसा नियमा छद्दिसिं ' એકેન્દ્રિયજીવો સિવાયના નારકી વગેરે ત્રસ જીવો છએ દિશામાંથી શ્વાસોચ્છ્વાસને યોગ્ય પુદ્ગલ પરમાણુઓને ગ્રહણ કરે છે એવો નિયમ છે, કારણ કે ત્રસ જીવો ત્રસ નાડીની અંદર જ રહે છે તેથી છએ દિશાઓમાંથી શ્વાસોચ્છ્વાસ યોગ્ય પુદ્ગલ પરમાણુઓ મેળવી શકે છે।સૂ૦૨।

यदि व्याघातो न भवेत्तदा नियमतः षड्दिगवस्थितपुद्गलान् आनप्राणादितया गृह्णन्ति। व्याघातं प्रतीत्य तु कदाचित् त्रिदशम्, दिक्त्रयेषु व्याघाते सति अवशिष्टदिक्त्रये स्थितान् पुद्गलान् आनप्राणादितया गृह्णन्ति। एवं यत्र यत्र व्याघातो भवेत्तं तं परित्यज्यावशिष्टस्थाने स्थितान् पुद्गलान् आनप्राणादितया गृह्णन्ति। एवमप्कायिकादिवनस्पतिपर्यन्तेषु बोध्यम्, तत्र निर्व्याघातेन षड्दिशम्, व्याघातं प्रतीत्य स्यात् त्रिदिशम् स्याच्चतुर्दिशम् स्यात् पंचदिशमानन्ति४ तेषां लोकान्तवृत्तौ अलोकेन त्र्यादिदिक्षु उच्छ्वासादिपुद्गलानां व्याघातसंभवादिति।'सेसा नियमा छद्दिसिं' शेषाः नियमात् षड्दिशम्, शेषाः एकेन्द्रियवर्जाः

से छह दिशाओं में से श्वासोच्छ्वास के योग्य पुद्गलपरमाणुओं को ग्रहण करते हैं और यदि व्याघात हो तो तीन दिशाओं में व्याघात होने पर वे कदाचित् अवशिष्ट तीन दिशाओं में से, श्वासोच्छ्वास के योग्य पुद्गलपरमाणुओं को ग्रहण करते हैं। छह दिशाओं में से नहीं। इस तरह जिस २ दिशा रूप स्थान में व्याघात होगा उस उस दिशा रूप स्थान को छोड़कर अवशिष्ट स्थान में स्थित पुद्गलों को श्वासोच्छ्वासरूप से ग्रहण करते हैं। इसी प्रकार से अप्काय से लेकर वनस्पतिकाय तक के एकेन्द्रिय जीवों में भी जानना चाहिये। यदि इनमें व्याघात नहीं है तो ये छह दिशाओं में से और जो व्याघात है तो कदाचित् तीन दिशाओं में से, कदाचित् चार दिशाओ में से, कदाचित् पांच दिशाओं में से ये श्वासोच्छ्वास के योग्य पुद्गल परमाणुओं को ग्रहण करते हैं। क्यों कि ये पृथिवीकायिक आदि जीव लोक के अन्त में भी रहते हैं, इसलिये तीन आदि दिशाओं में से श्वासोच्छ्वास के पुद्गल-

---

ન હોય તો નિયતથી જ છએ દિશાઓમાંથી તેઓ શ્વાસો ઉછ્વાસને યોગ્ય પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરે છે, પણ જો અલોકરૂપ વ્યાઘાત નડતો હોય તો જે જે દિશાઓમા વ્યાઘાત નડતો હોય તો તે દિશાઓ સિવાયની બાકીની દિશાઓ માથી શ્વાસોચ્છ્વાસને યોગ્ય પુદ્ગલો ગ્રહણ કરે છે આ રીતે કયારેક ત્રણ દિશામાંથી, કયારેક ચાર દિશામાથી અને કયારેક પાચ દિશામાંથી શ્વાસોચ્છ્વાસ ને યોગ્ય પુદ્ગલો ગ્રહણ કરે છે, આ પ્રમાણે જ અપ્કાયથી લઇ વનસ્પતિ કાય સુધીના એકેન્દ્રિય જીવોના વિષયમા પણ સમજવુ. જો વ્યાઘાત નડતો ન હોય તો છએ દિશાઓમાંથી અને જો વ્યાઘાત નડતો હોયતો કયારેક ત્રણ દિશામાંથી, કયારેક ચાર દિશામાથી અને કયારેક પાચ દિશામાંથી તેઓ શ્વાસોચ્છ્વાસને યોગ્ય પુદ્ગલ પરમાણુઓને ગ્રહણ કરે છે તે પૃથિકાય વગેરેના જીવો લોકના અન્તમા પણ રહે છે, તેથી ત્રણ વગેરે દિશાઓમાથી શ્વાસોચ્છ્વાસને યોગ્ય પુદ્ગલ પરમાણુઓને ગ્રહણ કરવામા તેમને અડચણ પડે છે.

मत्यायाति ? । हंत गौतम ! यावत् मत्यायाति, स भदन्त ! किं स्पृष्टः अपद्रवति अस्पृष्ट' अपद्रवति, गौतम ! स्पृष्ट अपद्रवति नो अस्पृष्ट अपद्रवति । स भदन्त ! किं सशरीरी निष्कामति अशरीरी निष्कामति, गौतम ! स्यात् सशरीरी निष्का मति स्यात् अशरीरी निष्कामति । तत्केनार्थेन भदन्त ! एवमुच्यते स्यात् सशरीरी

इत्ता) मर मर कर के पीछे क्या (तत्थेव) वहीं पर (भुज्जो भुज्जो) बार २ (पच्चायाइ) उत्पन्न होता है ? (हंता गोयमा) हां, गौतम ! (जाव पच्चायाइ) वायुकायिक जीव अनेक लाखों बार मर मर कर फिर वहीं पर उत्पन्न होता है । (से भंते ! किं पुट्ठे उद्दाइ) हे भदन्त! क्या वह वायुकायिक जीव स्वकायशस्त्र परकायशस्त्र और उभकाय शस्त्र का आघात पहुँचने पर मरता है कि (अपुट्ठे उद्दाइ) विना आघात के मरता है ? (गोयमा) हे गौतम ! (पुट्ठे उद्दाइ नो अपुट्ठे उद्दाइ) वह स्वकायादि शस्त्र का आघात पहुँचने पर मरता है, विना आघात के नहीं मरता है । (से भंते ! किं ससरीरी निक्खमइ असरीरी निक्खमइ) हे भद न्त ! वह वायुकायिक जीव जब मर मर कर दूसरी गति में जाता है तो क्या शरीर सहित जाता है कि शरीर रहित होकर जाता है ? (गोयमा!) हे गौतम ! (सिय ससरीरी निक्खमइ सिय असरीरी निक्खमइ) वह शरीर सहित भी जाता है और शरीर रहित होकर भी जाता है । (से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ सिय ससरीरी निक्खमइ सिय असरीरी निक्ख

જીવો હજારો વખત વાયુકાયિકોમાંથી મરીને વાયુકાયોની પર્યાયમાં જ શું ફરીથી વાર વાર ઉત્પન્ન થાય છે? (हंता! गोयमा!) હા, ગૌતમ! (जाव पच्चायाइ) વાયુકાયિક જીવો હજારોવખત મરીને ફરીથી વાયુકાયોની પર્યાયમાં જ ઉત્પન્ન થાય છે (से भंते! किं पुट्ठे उद्दाइ अपुट्ठे उद्दाइ ?) હે ભગવન્! તે વાયુકાયિક જીવો સ્વકાય શસ્ત્ર, પરકાય શસ્ત્ર અને ઉભયકાય શસ્ત્રનો આઘાત પહોંચવાથી મરે છે કે વિના આઘાતે મરે છે (गोयमा! पुट्ठे उद्दाई नो अपुट्ठे उद्दाइ) તે સ્વકાય વગેરે શસ્ત્રોનો આઘાત પહોંચવાથી મરે છે,આઘાત પહોંચ્યા વિના મરતા નથી (से भंते! किं ससरीरी निक्खमइ असरीरी निक्खमइ,) હે ભગવન્! વાયુકાયિક જીવો જ્યારે મરીને અન્ય ગતિમાં જાય છે ત્યારે શરીર સહિત જાય છે કે શરીર રહિત જાય છે? (गोयमा!) હે ગૌતમ! (सिय ससरीरी निक्खमइ सिय असरीरी निक्खमइ) તે શરીર સહિત પણ જાય છે અને શરીર રહિત પણ જાય છે (से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ सिय ससरीरी निक्खमइ

विप्पजहाय तेय कम्मएहिं निक्खमइ, से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ, सिय ससरीरी निक्खमइ सिय असरीरी निक्खमइ ॥ सू० ३ ॥

छाया—वायुकायो भदन्त! वायुकायानेव आनति वा प्राणति वा उच्छ्वसति वा निःश्वसति वा, हन्त गौतम! वायुकायो यावत् निःश्वसति वा। वायुकायः खलु भदन्त! वायुकाये एवानेकशतसहस्रकृत्वोऽपद्रुत्यापद्रुत्य तत्रैव भूयो भूयः

वायु जीव प्रकरण—

पहिले एकेन्द्रिय जीवों के आनप्राण आदि का वर्णन किया गया है। एकेन्द्रिय जीवों के वायुकायिक जीव भी हैं तो क्या इन जीवो का वायु ही आनप्राणादिरूप है या पृथिवीकायिक आदि जीवों की तरह कोई दूसरा ही पदार्थ इनका आनप्राणादिरूप है? इस प्रकार का प्रश्न करते हुए गौतमस्वामी प्रभु से पूछते हैं कि—'वाउकाए णं भंते! इ०

सूत्रार्थ—(वाउकाए णं भंते!) हे भदन्त! वायुकायिक जीव (वायुकाए चेव) वायुकायों को ही (आणमइ वा पाणमइ वा ऊससइ वा नीससइ वा) क्या श्वासोच्छ्वासरूप में ग्रहण करते हैं? (हंता गोयमा!) हां गौतम! (वाउकाएणं जाव नीससइ वा) वायुकायिक जीव वायुकायों को ही श्वासोच्छ्वासरूप में ग्रहण करते हैं। (वाउकाएणं भंते!) हे भदन्त! वायुकायिक जीव (वाउकाए चेव) वायुकायिक में (अणेगसयसहस्स खुत्तो) अनेक लाखबार (उद्दाइत्ता उद्दा-

આગળના પ્રકરણમા એકેન્દ્રિય જીવોના શ્વાસોચ્છવાસનુ વર્ણન કરવામાં આવ્યુ વાયુકાય જીવોની ગણતરી પણ એકેન્દ્રિય જીવોમા જ થાય છે તો તે જીવોનો વાયુ જ શું શ્વાસ નિશ્વાસ રૂપ હોય છે કે પૃથિવીકાય વગેરે જીવોની જેમ કોઈ અન્ય પદાર્થ તેમના શ્વાસ નિશ્વાસમા ગ્રહણ થાય છે? તે જાણવા માટે ગૌતમસ્વામી મહાવીર પ્રભુને પૂછે છે કે

,'वाउकाए ण भते!" ઈત્યાદિ!

સૂત્રાર્થ— (वाउकाए ण भते! वायुकाए चेव आणमइ वा पाणमइ वा, ऊससइ वा नीससइ वा?) હે ભગવન્ વાયુકાયના જીવો શુ વાયુકાયોને જ શ્વાસોચ્છ્વાસ રૂપે ગ્રહણ કરે છે? (हता गोयमा!) હા, ગૌતમ? (वाउकाए ण जाव नीससइ वा) વાયુકાયિક જીવો વાયુકાયોને જ શ્વાસોચ્છ્વાસ રૂપે ગ્રહણ કરે છે (वाउकाए ण भते! वाउकाए चेव अणेगसयसहस्स खुत्तो उद्दाइत्ता उद्दाइत्ता भुज्जो भुज्जो पच्चायाइ) હે ભગવન્? શું વાયુકાયિક

वा उच्छ्वसति वा निःश्वसति वा, वायुकायिक जीवः किं वायुकायिकानेव सजातीयानेव श्वासादिकतया गृह्णन्ति किमित्यर्थ, भगवा 'हंत 'इत्यादि। 'हंता गोयमा' हन्त गौतम ! 'वाउकाए णं जाव नीससइ वा' वायुकायः खलु यावत् निःश्वसति वा वायुकायिको जीवो वायुकायिकानेव आन-प्राणादितया गृह्णातीत्यर्थः। ननु आनप्राणादेरपि वायुरूपत्वात्तस्याप्यन्येनानप्राणादिना भवितुमर्हति, तस्यान्येन, पुनरन्यस्याप्यन्यनेत्येवमनवस्थादोष आपतेत्!

वायुकायिकों को ही क्या श्वासादिरूपसे ग्रहण करते हैं? यह प्रश्न है। इसका उत्तर देते हुए भगवान गौतमस्वामी से कहते हैं (हंता गोयमा!) हां गौतम! (वाउकाए णं जाव नीससइ वा) वायुकायिक जीव वायु कायों को श्वासोच्छ्वासादि रूप से ग्रहण करते हैं।

शंका–जब आनप्राणादि वायुरूप होता है तो इस वायु को भी अन्यवायु की आवश्यकता पड़ेगी इस अन्यवायु को भी तीसरे वायु की आवश्यकता पड़ेगी, इस तरह से अनवस्था दोष की प्रसक्ति यहां होगी। शंकाकार का अभिप्राय ऐसा है कि–पृथिवी आदिक जीव स्वयं पृथिवी आदिरूप होते हैं और उनका जो श्वासोच्छ्वास होता है वह वायुरूप होता है। परन्तु वायु में ऐसा नहीं है क्यों कि वायु स्वयं वायु रूप है और इसका श्वासोच्छ्वास भी वायुरूप ही है अत जब वायु कायिक जीव को जीने के लिये अन्य वायुकाय की आवश्यकता होती है, तो इस अन्य वायु को भी अन्यवायुकाय की आवश्यकता होगी। इस तरह मानने पर श्वासोच्छ्वासरूप वायुका कहीं पर भी अन्त नहीं

પોતાના સજાતીય વાયુકાયિકોને જ શ્વાસાદિ રૂપે ગ્રહણ કરે છે? આ પ્રકારના ગૌતમ સ્વામીના પ્રશ્નનો મહાવીર પ્રભુ આ પ્રમાણે જવાબ આપે છે "हंता गोयमा' હા ગૌતમ! 'वाउकाए णं जाव नीससइ वा" વાયુકાયિક જીવો સજાતીય વાયુકાયોને જ શ્વાસાદિ રૂપે ગ્રહણ કરે છે

શંકા—જો શ્વાસોચ્છ્વાસ વગેરે વાયુરૂપ હોય છે તો તે વાયુને પણ બીજા વાયુની આવશ્યકતા પડશે, અને બીજા વાયુને પણ કોઈ ત્રીજા વાયુની જરૂર પડશે, આ રીતે તો અહીં અનવસ્થા દોષનો પ્રસંગ ઉભો થશે શંકાકારની શંકા એવા પ્રકારની છે કે પૃથિવી વગેરે જીવો પોતે પૃથિવી વગેરે રૂપ હોય છે, અને તેમનો જે શ્વાસોચ્છ્વાસ હોય છે તે વાયુ રૂપ હોય છે પણ વાયુકાયિકોમાં એવું નથી વાયુકાયિકો સ્વયં વાયુ રૂપ હોય છે અને તેમનો શ્વાસોચ્છ્વાસ પણ વાયુ રૂપ જ હોય છે આ રીતે જો વાયુકાયિક જીવોને જીવવા માટે અન્ય વાયુની જરૂર પડે તો બીજા વાયુકાયોને પણ વાયુની આવશ્યકતા રહેતી હશે.

निष्क्रामति स्यादशरीरीनिष्क्रामति ? गौतम ! । वायुकायस्य चत्वारि शरीराणि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा औदारिकं वैक्रियं तैजसं कार्मणम्। औदारिकवैक्रिये विप्रहाय तैजसकार्मणाभ्यां निष्क्रामति, तत् तेनार्थेन गौतम ! एवमुच्यते स्यात् सशरीरी निष्क्रामति, स्यादशरीरी निष्क्रामति ॥ सू० ३ ॥

टीका—'वायुकाए णं भंते' वायुकायः खलु भदन्त ! 'वाउकाए चेव आणमइ वा पाणमइ वा उस्ससइ वा नीससइ वा' वायुकायानेव आनति वा प्राणति-

---

मइ ?) हे भदन्त ! यह किस कारण से कहा जाता है कि वायुकायिक जीव शरीरसहित भी जाता हैं शरीर रहित भी जाता है ? (गोयमा !) हे गौतम ! (वाउकायस्स णं चत्तारि सरीरा पण्णत्ता) वायुकायिक जीव के चार शरीर कहे गये हैं (तं जहा) वे इस प्रकार से (ओरालिए, वेउव्विए, तेयए, कम्मए) औदारिक, वैक्रिय, तैजस और कार्मण (ओरालिय वेउव्वियाइं विप्पजहा य तेयकम्मएहिं निक्खमइ) औदारिक वैक्रिय इन दो शरीरों को छोड़कर तथा तैजस और कार्मण इन दो शरीरों को साथ लेकर वह दूसरी गति में जाता है। (से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ सिय ससरीरी निक्खमइ सिय असरीरी निक्खमइ) इस कारण हे गौतम ! ऐसा कहा है कि शरीर सहित भी जाता है और शरीर रहित भी जाता है।

टीकार्थ-(वायुकाए णं भंते !) हे भदन्त! वायुकायिक जीव (वायुकाए चेव आणमइ वा पाणमइ वा उस्ससइ वा नीससइ वा) अपने सजातीय

सिय असरीरी निक्खमइ) હે ભગવન્ ! શા કારણે આપ એવુ કહો છો કે તેઓ શરીર સહિત પણ જાય છે અને શરીર રહિત થઇને પણ જાય છે ! (गोयमा !) હે ગૌતમ ! (वाउकायस्स णं चत्तारि सरीरया पण्णत्ता) વાયુકાયિક જીવોનાં ચાર શરીર કહ્યા છે (तं जहा) તે આ પ્રકારે છે (ओरालिए, वेउव्विए, तेयए, कम्मए) ઔદારિક, અને વૈક્રિય, તૈજસ અને કાર્મણ, ओरालियवेउव्वियाइं विप्पजहाय तेयकम्मएहिं निक्खमइ) ઔદારિક વૈક્રિય, એ બે શરીરોને છોડી તથા તૈજસ અને કાર્મણએ બે શરીરોને સાથે લઇને તે બીજી ગતિમા જાય છે (से तेणट्ठे ण गोयमा ! एव वुच्चइ सिय ससरीरी निक्खमइ सिय असरीरी निक्खमइ) હે ગૌતમ ! તે કારણે એવુ કહેવામા આવ્યું છે કે તેઓ શરીર સહિત પણ અન્ય ગતિમા જાય છે અને શરીર રહિત પણ જાય છે.

ટીકાર્થ—"वायुकाए ण भते !" હે ભગવન્ ? વાયુકાયિક જીવો "वायुकाए चेव आणमइ वा पाणमइ वा उस्ससइ वा नीससइ वा"

संसारी नहीं हैं, मुक्त जीव हैं अतः यहां श्वासोच्छ्वास की आवश्यकता नहीं हैं। सिद्ध अवस्था कर्मों के बिलकुल अभाव होने से ही प्राप्त होती है। नाम कर्म का एक भेद पर्याप्ति नामकर्म है। इसके उदय में जीव पर्याप्तक होता है। सिद्धों के नाम कर्म का अभाव हो जाने से इस कर्म का भी अभाव हो जाता है। अतः वे पर्याप्त और अपर्याप्त दोनों अवस्थाओं से रहित हो जाते हैं। सिर्फ इनमें तो एक शुद्ध चेतना ही रहती है। शंका-यदि संसारी जीवों को ही श्वासोच्छ्वास की आवश्यकता होती है तो फिर जो विग्रह गति में जीव रहते हैं उन्हें तो इसकी आवश्यकता नहीं कही गई है। वे भी तो संसारी ही जीव हैं। विग्रहगति में रहने वाले जीवों के अर्थात् अपर्याप्तक जीवों के दस प्राणों में से सात प्राण कहे गये हैं। मनबल, वचनबल और श्वासोच्छ्वास ये तीन प्राण अपर्याप्तावस्था में जीवों के नहीं होते हैं ऐसा कहा है तो जिस प्रकार विग्रहगति समापन्न जीव श्वासोच्छ्वास के अभाव में अजीव नहीं होते उसी प्रकार वायुकायिकादि जीव भी जिनकी श्वासोच्छ्वास क्रिया देखने जानने में नहीं आती है श्वासोच्छ्वास के अभाव में भी जीव रहेंगे इनमें (वायुकाय में) श्वासोच्छ्वास मानने की क्या

સભવે છે સિદ્ધ જીવો સસારી નથી પણ મુક્ત છે વળી શરીરાથી રહિત છે તેથી તેમને શ્વાસોચ્છ્વાસની આવશ્યકતા રહેતી નથી. કર્મોનો બિલકુલ અભાવ હોય ત્યારે જ સિદ્ધ અવસ્થાની પ્રાપ્તિ થાય છે નામ કર્મનો એક ભેદ પર્યાપ્તિ નામ કર્મ છે તેનો ઉદય થાય ત્યારે જ જીવ પર્યાપ્તક કહેવાય છે સિદ્ધોને નામ કર્મનો જ અભાવ હોવાથી પર્યાપ્તિ નામ કર્મનો પણ અભાવ જ હોય છે તેથી તેઓ પર્યાપ્ત અને અપર્યાપ્ત અવસ્થાઓથી રહિત થઇ જાય છે, તેમનામાં તો એકલી શુદ્ધ ચેતના જ રહે છે શકા—જો સસારી જીવોને જ શ્વાસોચ્છ્વાસની આવશ્યકતા રહેતી હોય તો વિગ્રહગતિમા રહેલા જીવોને આવશ્યકતા કહી નથી. તેઓ પણ સસારી જીવો જ છે વિગ્રહગતિમાં રહેલા જીવોને એટલે કે અપર્યાપ્તક જીવોમાં દસ પ્રાણોમાંથી સાત પ્રાણોનું અસ્તિત્વ કહ્યુ છે મનબલ, વચનબલ અને શ્વાસોચ્છ્વાસ એ ત્રણે પ્રાણો અપર્યાપ્તાવસ્થામાં જીવોને હોતા નથી એવુ કહેલ છે તો જે રીતે વિગ્રહગતિ સમાપન્ન જીવ શ્વાસોચ્છ્વાસને અભાવે અજીવ કહેવાતો નથી એજ પ્રમાણે જેમની શ્વાસોચ્છ્વાસની ક્રિયા જોવામાં આવતી નથી એવા વાયુકાયિકાદિ જીવોને શ્વાસોચ્છ્વાસના અભાવે પણ જીવો જ કહેવાય છે છતા પણ તેમનામાં (વાયુકાયિકોમાં) શ્વાસોચ્છ્વાસનો સદ્ભાવ માનવાની આવશ્યકતા શી છે?

नैवं वाच्यम् ! अचेतनत्वात्तस्येति। आनप्राणादिग्रहणं च सचेतनानामेव भवति नत्वचेतनानाम्, आनप्राणादिवायुस्त्वचेतन इति नानावस्थादोषः। यद्वा-योऽय-

आवेगा। यदि कहीं पर इसका मान भी लिया जावेगा तो फिर ऐसा ही क्यों न मान लिया जावे कि प्रथम वायुकायिक जीवों को श्वासोच्छ्वास की आवश्यकता नहीं होती है।

समाधान—ऐसा कहना उचित नहीं है कारण कि जो जीव होता है उसे ही जीने के लिये श्वासोच्छ्वास की आवश्यकता होती है। अचित्त को नहीं। वायुकायिक जीव है, अतः उसे ही श्वास निःश्वास की आवश्यकता है। श्वासोच्छ्वासरूप वायु को नहीं, क्यों कि वह अचित्त है। इसलिये यहां अनवस्था दोष का संभव ही नहीं है।

यहां प्रसंग वश फिर कहते हैं-शंका-जीव को ही यदि श्वासोच्छ्वासकी आवश्यकता होती है तो जो सिद्ध जीव हैं उन्हें भी इसकी आवश्यकता होनी चाहिये-नहीं तो श्वासोच्छ्वास वायु की तरह उन्हें निर्जीव ही मानना पड़ेगा? सो ऐसी आशंका भी ठीक नहीं है-क्यों कि यहां जो कथन चल रहा है वह संसारी जीवों की अपेक्षा लेकर चल रहा है। पृथिवी आदिक जीव संसारी जीव है। जितने भी संसारी होते हैं उनके यथा संभव छह पर्याप्तियां तक होती हैं। सिद्ध जीव

આ પ્રમાણે માનવામા આવે તો શ્વાસોચ્છ્વાસ રૂપ વાયુનો કયાંયે પણ અન્તજ નહીં આવે જો તેનો કોઇપણ સ્થાને અન્ત માની લેવામા આવે તો એમ શા માટે માનવુ કે પ્રથમ વાયુકાયિક જીવોને શ્વાસોચ્છ્વાસની આવશ્યકતાજ હોતી નથી.

સમાધાન—આ પ્રમાણેનુ' કથન યોગ્ય નથી, કારણ કે કોઇ પણ જીવને જીવવા માટે શ્વાસોચ્છ્વાસની જરૂર પડે જ છે નિર્જીવને પડતી નથી. વાયુકાયિકો પણ જીવ જ હોય છે તેથી તેમને શ્વાસ અને નિઃશ્વાસની આવશ્યકતા પડે છે પરંતુ શ્વાસોચ્છ્વાસ રૂપ વાયુને તેની આવશ્યકતા રહેતી નથી કારણ કે તે તો અચિત્ત જીવ રહિત હોય છે તેથી અહીં અનવસ્થા દોષની સભાવના રહેતી નથી.

શકા—જો જીવને જ શ્વાસોચ્છ્વાસની જરૂર પડતી હોય તો જે સિદ્ધ પદ ને પામેલા જીવો છે તેમને પણ તેની આવશ્યકતા હોવી જ જોઇએ નહી' તો શ્વાસોચ્છ્વાસના વાયુની જેમ તેમને પણ નિર્જીવાજ માનવા પડશે ?

સમાધાન—આ જાતની શકા અસ્થાને છે, કારણ કે અહી' જે વાત ચાલી રહી છે તે સસારી જીવોની અપેક્ષાએ ચાલી રહી છે પૃથિવી, પાણી વગેરે જીવો સંસારી ગણાય છે. જે સંસારી જીવો હોય છે તેમને ૪ થી ૬ પર્યાપ્તિઓ

' वाउकाएण भंते ' वायुकायः खलु भदन्त ! ' वाउकाए चेव अणेगसयसहस्स खुत्तो उद्दाइत्ता उद्दाइत्ता तत्थेव भुज्जो भुज्जो पच्चायाइ ? ' वायुकाय खलु भदन्त ! वायुकाय एव अनेकशतसहस्रकृत्वोऽपमृत्यापमृत्य तत्रैव भूयो भूयः प्रत्यायाति । हे भदन्त ! वायुकाय वायुकाये एव अनेकशतसहस्रकृत्व=अनेकलक्षवारान् अपमृत्यापमृत्य=मृत्वा मृत्वा तत्रैव=यत्र काये मृतस्तत्रैवकाये भूयोभूयः =वारं वारं पुनः पुनरित्यर्थः प्रत्यायाति=आगच्छति न मगृह्णाति किमिति प्रश्नः। अयं च प्रश्नो वायुकायाधिकारात् वायुकायमधिकृत्य कृतः । परन्तु पृथिव्यप्तेजोवनस्पतिकायिकानामपि मृत्वा मृत्वा पृथिवीकायिकादावुत्पत्तिर्भवत्येव, सर्वेषामेषां पृथिवीकायिकादीनां कायस्थितेरसरूपातत्वया, वनस्पतिमाश्रित्यानन्तत्वया च शास्त्रे प्रतिपादनात्, उक्तञ्च—

" असखोसप्पिणी उस्सप्पणीओ एगिंदियाण उ चउण्हं ।
ता चेव ऊ अणंता वणस्सईए उ बोद्धव्वा ॥ १ ॥
छाया—असंख्ययावसर्पिण्युत्सर्पिण्य एकेन्द्रियाणां चतुर्णाम् ।
ताश्चैव तु अनंता वनस्पतेस्तु बोद्धव्या इति ॥

नियाम की आवश्यकता नहीं है । अतः अनवस्था दोष नहीं आता है ।

(वाउयाए णं भंते !) हे भदन्त ! वायुकाय (वाउकाए चेव अणेगसय सहस्स खुत्तो उद्दाइत्ता उद्दाइत्ता तत्थेव भुज्जो २ पच्चायाइ ?) वायुकाय में ही अनेक लाख बार मर मर कर के क्या वहीं पर बार२ जन्म ग्रहण करता है ? ऐसा यह प्रश्न है । यह प्रश्न वायुकाय का अधिकार होने से वायुकाय को लेकर किया गया है । नहीं तो यह प्रश्न पृथिवीकायिक आदिकोंमें भी लागू पड़ता है । क्यों कि पृथिवीकायिक आदिकोंको मर मर करके पृथिवीकायिक आदिकोंमें उत्पत्ति होती ही है । इन सब पृथिवीकायिक आदि कों की कायस्थिति असंख्यातकाल से तथा वनस्पति की अपेक्षा अनंतकाल की कही है । कहा भी है—

નથી અહીં અનવસ્થા દોષનો સંભવ રહેતો નથી.

" वाउकाए णं भंते ! " હે ભગવન્ ! વાયુકાયિકો ' वाउकाए चेव अणेगसयसहस्स खुत्तो उद्दाइत्ता उद्दाइत्ता तत्थेव भुज्जो२ पच्चायाइ ? " વાયુકાયમાં જ લાખો વખત મરીને ત્યાં જ શું વાર વાર જન્મે છે ? વાયુકાયનું વક્તવ્ય ચાલતુ હોવાથી વાયુકાયિકોના વિષયમાં જ આ પ્રશ્ન પૂછવામાં આવ્યો છે નહિતર તો આ પ્રશ્ન પૃથ્વીકાયિક વગેરે ને પણ લાગુ પાડી શકાય છે કારણ કે પૃથ્વીકાયિક વગેરે જીવોની પણ મરી મરીને પૃથ્વીકાયિક વગેરેમાં જ ઉત્પત્તિ થાય છે તે તમામ પૃથ્વીકાયિકની કાયસ્થિતિ અસંખ્યાત રૂપે તથા વનસ્પતિની અપેક્ષાએ અનંત રૂપે પ્રતિપાદિત કરવામાં આવી છે કહ્યું પણ છે

मानमाणादिवायुः स वायुत्वेऽपि वायुसंभाव्यौदारिकवैक्रियशरीररूपो न, आनप्राणसञ्ज्ञितानां तदीयपुद्गलानामौदारिकवैक्रियशरीरपुद्गलेभ्योऽनन्तगुणप्रदेशवत्त्वेन सूक्ष्मतया वायुशरीरव्यपदेश्यस्यासद्भावात्, तथा सति नोक्तदोष इति।

आवश्यकता है? सो ऐसा कहना भी ठीक नहीं-कारण कि अपर्याप्तावस्था जीव की तीन समयतक ही रहती है बाद में वह पर्याप्तक हो जाता है। समय काल का सब से छोटा में छोटा-सूक्ष्म से सूक्ष्म अंश है। व्यवहार में भी साधारण से साधारण प्राणी अपनी श्वासोच्छ्वास क्रिया को कुछ समयतक साध लेते हैं-एतावता वे निर्जीव तो हो नहीं जाते। यहां तो यह कहा जा रहा है कि श्वासोच्छ्वास क्रिया यदि पर्याप्तक जीव है तो उसके अवश्य २ है। इसके बिना वह पर्याप्तक जीव नहीं माना जा सकता।

अथवा--जो यह श्वासोच्छ्वासरूप वायु है। वह वायुरूप होने पर भी वायु कायिक जीव के सभाव्य जो औदारिक वैक्रिय शरीर हैं उन रूप नहीं है। क्यों कि आनप्राण नाम के जो वायु के पुद्गल हैं वे औदारिक वैक्रिय शरीर के पुद्गलो की अपेक्षा अनंतगुणप्रदेशवाले होने के कारण सूक्ष्म हैं इसलिये उनमें चैतन्य वाले वायु के शरीर का व्यपदेश नहीं हो सकता है। इस तरह अनवस्था दोष यहां नहीं आता है। तात्पर्य कहनेका यह है कि श्वास निःश्वासरूप वायु अचेतन है-इसलिये उसे श्वास

સમાધાન-આવી શકા પણ ઉચિત નથી કારણ કે જીવની અપર્યાપ્તાવસ્થા પણ ત્રણ સમય પર્યંત જ રહે છે ત્યાર બાદ તે પર્યાપ્તક અવસ્થા જ બની જાય છે કાળના સૂક્ષ્મમા સૂક્ષ્મ અ શને સમય કહે છે વ્યવહારમા પણ એવુ જોવામા આવે છે કે સામાન્યમાં સામાન્ય પ્રાણી પણ પોતાની શ્વાસોચ્છ્વાસની ક્રિયાને કેટલાક સમય સુધી રૂધી શકે છે- તેથી કરીને તેઓ નિર્જીવ બની જતા નથી અહીં તો એમ કહેવામાં આવ્યુ છે કે પર્યાપ્તક અવસ્થાવાળા શ્વાસોચ્છ્વાસની ક્રિયાનો અવશ્ય સદ્ભાવ હોય છે તેનો અભાવ હોય તો તે જીવને પર્યાપ્તક જ માની શકાય નહી

અથવા- આ જે શ્વાસોચ્છ્વાસ રૂપ વાયુ છે તે વાયુરૂપ હોવા છત પણ વાયુકાયિક જીવના જે ઔદારિક, વૈક્રિય શરીરો હોય છે તે રૂપે તો હોતો નથી કારણ કે આન પ્રાણ નામના વાયુના જે પુદ્ગલો છે તેઓ ઔદારિક વૈક્રિય શરીરના પુદ્ગલો કરતા અનેક ગણા પ્રદેશવાળા હોવાને કારણે સૂક્ષ્મ હોય છે તેથી તેમા ચૈતન્યવાળા વાયુના શરીરનો સમાવેશ થઇ શકતો નથી આ રીતે અહી અનવસ્થા દોષ લાગતો નથી કહેવાનો આશય એ છે કે શ્વાસ નિશ્વાસ રૂપ વાયુ અચેતન હોય છે તેથી તેને શ્વાસ નિશ્વાસની જરૂર પડતી

एव किमपद्रवति--म्रियते ? भगवानाह-' गोयमा ' इत्यादि । ' गोयमा ! ' हे गौतम ! 'पुट्ठे उद्दाइ ' स्पृष्ट'-अपद्रवति, ' नो पुट्ठे उद्दाइ ' नो अस्पृष्ट अपद्रवति । समानीयविजातीय शस्त्रसंपर्कादेव म्रियते इति कथनं सोपक्रमामिप्रायेण, निरुपक्रमाभिप्राये तु अन्यथापि मरणसंभवात् ' स भंते किं ससरीरी निक्खमइ असरीरीनिक्खमइ ? ' स भदन्त ! किं सशरीरी निष्क्रामति अशरीरी निष्क्रामति ? हे भदन्त ! यदा स वायुकायिको जीवो मृत्वा गत्यन्तरं गच्छति तदा किं शरीर सहितो याति अथवा शरीररहितो यातीति प्रश्नाशयः । भगवानाह-- ' गोयमा ' इत्यादि, ' गोयमा ' हे गौतम ! ' सिय ससरीरी निक्खमइ, सिय असरीरी निक्खमइ ' स्यात् सशरीरी निष्क्रामति स्यादशरीरी निष्क्रामति, हे गौतम ! स वायुकायो मृत्वा कदाचित् शरीरविशिष्टो गत्यन्तरं गच्छति कदाचित् शरीररहितो गच्छति । ' से केणट्ठेणं भंते एवं वुच्चइ ' तत् केनार्थेन हे भदन्त !

इस प्रश्न का उत्तर देते हुए गौतम से कहते हैं कि-(गोयमा ! पुट्ठे उद्दाइ, नो अपुट्ठे उद्दाइ) हे गौतम ! वायुकायिक जीव स्वकायादि शस्त्र से आहत होने पर ही मरता है किन्तु अनाहत नहीं । वायुकायिक जीव स्वकाय परकाय तदुभय कायरूप शस्त्र के संपर्क से आघातित होकर ही मरता है । यह जो कथन है वह सोपक्रम की अपेक्षा से है । निरुपक्रम की अपेक्षा से तो अन्य प्रकार से भी उसका मरण संभवता है । (से भंते ! किं ससरीरी निक्खमइ असरीरी निक्खमइ) हे भदन्त ! जब वह वायुकायिक जीव मर कर दूसरी गति में जाता है तो क्या वह शरीर सहित जाता है कि शरीररहित ? भगवान कहते हैं- (सिय ससरीरी निक्खमइ सिय असरीरी निक्खमइ) किसी अपेक्षा

ઉત્તર- ગોયમા ! પુટ્ઠે ઉદ્દાઇ નો અપુટ્ઠે ઉદ્દાઇ" હે ગૌતમ ! વાયુકાયિક જીવો સ્વકાય વગેરે શસ્ત્રનો આઘાત પામવાથી જ મરે છે આઘાત પામ્યા વિના મરતા નથી. " વાયુકાયિક જીવો સ્વકાય પરકાય અથવા બન્ને કાયરૂપ શસ્ત્રના સંપર્કથી આઘાત પામીને જ મરે છે ' આ કથન સોપક્રમઆયુષ્યની અપેક્ષાએ કરાયુ છે પરંતુ નિરુપક્રમ આયુષ્યની અપેક્ષાએ તો અન્ય પ્રકારે પણ તેનુ મરણ સંભવે છે

પ્રશ્ન- ' से भंते ! किं ससरीरी निक्खमइ असरीरी निक्खमइ ? " હે ભગવન્ તે વાયુકાયિક જીવ જ્યારે મરીને બીજી ગતિમા જાય છે ત્યારે શુ તે શરીર સહિત જાય છે કે શરીર રહિત જાય છે ?

ઉત્તર-सिय ससरीरी निक्खमइ " सिय असरीरी निक्खमइ ' હે ગૌતમ કોઇ અપેક્ષાએ તે શરીરને સાથે પણ લઇ જાય છે, અને કોઇ અપેક્ષાએ તે

भगवानाह—'हंत' इत्यादि, 'हता गोयमा' हन्त गौतम! 'जाव-पच्चायाइ' यावत् प्रत्यायाति, अत्र यावत्पदेन—"वाउकाए वाउकाए चेव-अणेगसयसहस्सखुत्तो उद्दाइत्ता उद्दाइत्ता तत्थेव भुज्जो भुज्जो" इति संग्रहः। पुनः प्रश्नयति गौतमः—'से भंते किं पुट्ठे उद्दाइ' स भदन्त किं स्पृष्ट अपद्रवति, स्पृष्टः=स्वकायशस्त्रेण, परकायशस्त्रेण तदुभयशस्त्रेण वा हतोऽपद्रवति-म्रियते, अथवा 'अपुट्ठे उद्दाइ' अस्पृष्टः अपद्रवति स्वकाय शस्त्रादिना अस्पृष्टः अहत

"असंखोसप्पिणीओ एगिंदियाण उ चउण्हं।
ता चेव अणंता वणस्सईए उ बोद्धव्वा॥"

अर्थात्—चार एकेन्द्रिय जीवों की कायस्थिति असंख्यात अवसर्पिणी उत्सर्पिणीकाल प्रमाण होती है। तथा वनस्पति कायिक जीवों की काय-स्थिति अनंत अवसर्पिणी उत्सर्पिणीकालरूप होती है। इस प्रश्न का उत्तर देते हुए भगवान् गौतम से कहते हैं कि (हंता गोयमा! जाव पच्चायाइ) हां गौतम! यावत् वह जन्म लेता है। यहां (यावत्) पद से (वाउकाए वाउकाए चेव अणेगसयसहस्स खुत्तो उद्दाइत्ता उद्दाइत्ता तत्थेव भुज्जो २ इस पाठ का संग्रह किया गया है।

(से भंते! किं पुट्ठे उद्दाइ) हे भदन्त! वह कायिक जीव क्या स्पृष्ट अपने शरीररूपशस्त्र से, परकायरूप शस्त्र से अथवा तदुभयकाय-रूप शस्त्र से हत होकर मरता है? कि (अपुट्ठे उद्दाइ) स्वका-यादि शस्त्र से आहत हुआ (लगकर) ही मरता है? भगवान

ભાવાર્થ—પૃથ્વી, પાણી અગ્નિ અને વાયુકાયના જીવોની કાયસ્થિતિ અસંખ્યાત અવસર્પિણી ઉત્સર્પિણી કાળ પ્રમાણ હોય છે તથા વનસ્પતિકાયના જીવોની કાયસ્થિતિ અનત અવસર્પિણી કાળ પ્રમાણે હેય છે

ગૌતમ સ્વામીના તે પ્રશ્નનો મહાવીર પ્રભુ આ પ્રમાણે ઉત્તર આપે છે. "हता गोयमा! जाव पच्चायाइ" હા, ગૌતમ! વાયુકાયના જીવો લાખો વખત મરીને વાયુકાયમા જ ફરી ફરીને જન્મ લે છે અહી (યાવત,) પદથી "वाउकाए वाउकाए चेव अणेगसयमहस्स खुत्तो उद्दाइत्ता उद्दाइत्ता तत्थेव भुज्जोर" પાઠ ગ્રહણ કરાયો છે

પ્રશ્ન—"से भते! किं पुट्ठे उद्दाइ" હે ભગવન્ તે વાયુકાયિક જીવો શું પોતાના શરીર રૂપ શસ્ત્રથી, પરકાય રૂપ શસ્ત્રથી અથવા બન્ને કાય રૂપ શસ્ત્રથી હણાઇને મરે છે! કે 'अपुट्ठे उद्दाइ" સ્વકાય વગેરે શસ્ત્રથી આઘાત પામીને મરે છે?

सीति कथ्यते । 'से तेणट्ठेणं गोयमा ' तद् तेनार्थेन गौतम ! ' एव वुच्चइ एवमुच्यते ' सिय ससरीरी ' स्यात् सशरीरी ' सिय असरीरी ' स्यात् असरीरी ' निक्खमइ ' निष्क्रामति ॥ सू० ३ ॥

अथ मृतादनगारप्रकरणम्—

वायुकायिकजीवस्य भूयो भूयोऽपि वायुकाये एवोत्पत्तिर्भवतीति पूर्वं वर्णितम् । अथ कस्यचिन्मृतादेरपि संसारचक्रापेक्षया पुनः पुनस्तत्रैवोत्पत्तिः स्यादिति दर्शयन्नाह—' मडाई णं भंते ' इत्यादि ।

मूलम्—मडाई ण भते ! नियठे नो निरुद्धभवे नो निरुद्ध भवपवंचे णो पहीणससारवेयणिज्जे, णो वोच्छिन्नससारे णो वोच्छिन्नससारवेयणिज्जे, नो निट्ठियट्ठे, नो निट्ठियट्ठ करणिज्जे, पुनरवि इत्थत्थ हव्व आगच्छइ? हता गोयमा ! मडाई ण नियठे जाव पुणरवि इत्थथ हव्व आगच्छइ ॥सू०४॥

(से तेणट्ठेणं गोयमा एवं वुच्चइ सिय ससरीरी निक्खमइ सिय अस रीरी निक्खमइ) इस कारण हे गौतम ! ऐसा कहा जाता है कि वायु कायिक जीव किसी अपेक्षा तैजस और कार्मण इन दो शरीरों की अ पेक्षा शरीर सहित और किसी अपेक्षा-औदारिक वैक्रिय इन दो की अपेक्षा शरीर रहित जाता है ॥ सू-३ ॥

मृतादनगार प्रकरण—

वायुकायिक जीव की पुन पुनः भी वायुकाय में ही उत्पत्ति होती है ऐसा पहिले वर्णन किया जा चुका है । अब यह कहा जाता है कि किसी किसी मुनि को भी ससारभ्रमण की अपेक्षा से फिर फिर वहीं

मइ सिय असरीरी निक्खमइ" હે ગૌતમ ! આરીતે વાયુકાયિક જીવો તૈજસ અને કાર્મણ શરીરની અપેક્ષાએ શરીર સહિત અન્ય ગતિમાં જાય છે અને ઔદારિક અને વૈક્રિય શરીરની અપેક્ષાએ શરીર રહિત થઈને અન્ય ગતિમા જાય છે ॥સૂ ૩॥

મૃતાદી અણગારનું પ્રકરણ

વાયુકાયિક જીવો ફરી ફરીને વાયુકાયિકોમાં જ ઉત્પત્તિ થાય છે એવું આગળના પ્રકરણમાં કહેવામા આવ્યુ છે હવે આ પ્રકરણમાં એ બતાવવામાં આવે છે કે કોઈ કોઈ મુનિ પણ સસારભ્રમણની અપેક્ષાએ ફરી ફરીને ત્યાંજ

एवमुच्यते-'सिय ससरीरी निक्खमइ सिय असरीरी निक्खमइ' स्यात् सशरीरी निष्क्रामति स्यात् अशरीरी निष्क्रामति। भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि। 'गोयमा' हे गौतम! 'वाउकायस्स णं चत्तारि सरीरा पन्नत्ता' वायुकायस्य खलु चत्वारि शरीराणि प्रज्ञप्तानि, 'तं जहा' तद्यथा 'ओरालिए' औदारिकम् 'वेउव्विए' वैक्रियम् 'तेयए' तैजसम्। 'कम्मए' कार्मणम्। 'ओरालिय वेउव्वियाइं विप्पजहाय' औदारिकवैक्रिये शरीरे विप्रहाय च, औदारिकवैक्रियशरीरद्वयं परित्यज्येत्यर्थः, 'तेययकम्मएहिं निक्खमइ' तैजसकार्मणाभ्यां निष्क्रामति, औदारिकवैक्रियशरीरद्वयं परित्यज्य गच्छति अतः शरीररहितो निष्क्रामतीति कथ्यते, तैजसकार्मणरूपशरीरद्वयेन सहितो यातीत्यतः सशरीरी निष्क्राम-

---

वह शरीर को साथ भी ले जाता है। (से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ) हे भदन्त! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि वह वायुकायिक जीव शरीर सहित भी परगति में जाता है और शरीररहित होकर भी जाता है? इसका उत्तर देते हुए प्रभु गौतम स्वामी से कहते हैं-(गोयमा! वाउकायस्स णं चत्तारि सरीरा पन्नत्ता) हे गौतम! वायुकायिक जीव के चार शरीर कहे गये हैं जो इस प्रकार से हैं-(ओरालिए) औदारिक, (वेउव्विए) वैक्रिय, (तेयए) तैजस (कम्मए) और कार्मण सो वह जीव (ओरालिय वेउव्वियाइं विप्पजहाय) औदारिक वैक्रिय शरीर को छोड़कर ही अन्यगति में जाता है। साथ में उस समय उसके (तेयय कम्मएहिं निक्खमइ) तैजस और कार्माण शरीर रहते हैं। क्यों कि ये दोनों ही शरीर (अप्रतिघाते) के अनुसार प्रतिघात से रहित होते हैं।

શરીરને સાથે નથી પણ લઈ જતા

પ્રશ્ન-" से केणट्ठेण भते! एव वुच्चइ " હે ભગવન્! આપ શા કારણે એવુ કહો છો કે વાયુકાયિક જીવો શરીર સહિત પણ પરગતિમા જાય છે અને શરીર રહિત પણ પરગતિમા જાય છે?

ઉત્તર-" गोयमा! वाउकायस्स णं चत्तारिसरीरा पन्नत्ता " હે ગૌતમ! વાયુકાયિક જીવોમાં ચાર શરીર કહ્યા છે જે આ પ્રમાણે છે
' ओरालिए " ઔદારિક, " वेउव्विए" વૈક્રિય, "तेयए" તૈજસ, અને "कम्मए" કાર્મણ વાયુકાયિક જીવો " ओरालियवेउव्वियाइ विप्पजहाय " ઔદારિક અને વૈક્રિય શરીરને છોડીને જ અન્યગતિમા જાય છે પરંતુ "तेयय कम्मएहिं निक्खमइ" તૈજસ અને કાર્મણ શરીર, અન્ય ગતિમા છે. કારણ કે તે બન્ને શરીર પ્રત્યાઘાતથી રહિત હોય છે. "से तेणट्ठेण गोयमा! एव उच्चइ सिय ससरीरी निक्ख-

टीका—' मडाई णं भंते ' मृतादी खलु भदन्त ! मृतमचित्तं वस्तु अत्तीति मृतादी, प्रासुकभोजीत्यर्थः, उपलक्षणत्वात् एषणीयादीत्यपि ज्ञातव्यम्, ' नियंठे ' निर्ग्रन्थः, 'नो निरुद्धभवे ' नो निरुद्धभवः, नैव निरुद्धः भव अग्रेतन जन्म येन स तथा अनिरुद्धभव चरमभवमप्राप्त इत्यर्थः। एतादृशम भवद्व

टीकार्थ—(मडाई ण भंते) अचित्त वस्तु का नाम मृत है। इस मृतरूप अचित्त वस्तु को जो अपने आहार के उपयोग में लाता है-वह (मृतादी) कहलाता है। इसका अर्थ जो प्रासुक भोजी है ऐसा वह मृतादी तथा उपलक्षण से एषणीय वस्तु का जो आहार करता है ऐसा वह (एषणीयादी) भी (नियंठे) निर्ग्रन्थ अनगार तिर्यञ्च मनुष्यादिगतिरूप ससार को फिर भी प्राप्त करता है। सो यह किस स्थिति में रहकर ससार को पुनः प्राप्त करता है तो इसको स्पष्ट करने के लिये सूत्रकार कहते हैं (नो निरुद्धभवे) इत्यादि यहाँ ये जितने भी मृतादी श्रवण निर्ग्रन्थ के विशेषण हैं-उन विशेषणों से विशिष्ट यदि यह श्रमण निर्ग्रन्थ है तो उसके ससार का अंत नहीं होता है अर्थात् यह संसार में ही परिभ्रमण करता रहता है। अब उन्हीं विशेषणों को कहते हैं-(नो निरुद्धभवे) यह मृतादी श्रमण निर्ग्रन्थ यदि अनिरुद्धभववाला है-चरमभववाला नहीं है अर्थात् अग्रेतन जन्म जिसने अपना निरुद्ध नहीं किया है तो यह नियमतः पुन मरकर संसार में ही जन्म धारण करेगा।

सूत्रार्थ—" मडाई णं भते! अचित्त वस्तुनेमृत कहे छे ते मृतरूप अचित्त वस्तुनो आहार लेनारने मृतादी कहे छे. एटले के प्रासुक भोजी तथा उपलक्षणथी एषणीय वस्तुनो आहार करनार ते ' एषणीयादी नियं ठे " निर्ग्रंथ अणगार पण मनुष्य तिर्यंच, मनुष्यादि वगेरे गतिरूप संसारने फरी फरीने प्राप्त करे छे? एटले के कई परिस्थितिमां ते निर्ग्रंथ संसारने फरी फरीने प्राप्त करे छे ते सूत्रकार नीचेना सूत्रो वडे स्पष्ट करे छे " नो निरुद्ध भवे " ईत्यादि जे जे मृतादी श्रमण निर्ग्रंथना विशेषणो आ सूत्रमां बताव्यां छे, ते विशेषणोथी युक्त श्रमण निर्ग्रंथना संसारनो अंत आवतो नथी कहेवानुं तात्पर्य ए छे के ते विशेषणो वाळो श्रमण निर्ग्रंथ प्रासुक आहारनो उपयोग करवा छतां पण संसारमां परिभ्रमण करे छे हवे ते विशेषणोनुं स्पष्टीकरण करवामां आवे छे ' नो निरुद्धभवे ' ते मृतादी श्रमण निर्ग्रंथ जो अनिरुद्ध भव वाळो होय चरमभव वाळो न होय एटले के जेणे पोताना आगामी भवनो अंत कर्यो नहोय ते अवश्य मरण पामीने आ संसारमां

छाया—मृतादी खलु भदत ! निर्ग्रन्थो नो निरुद्धभवो नो निरुद्धभवप्रपंचो नो प्रहीणसंसारो नो प्रक्षीणसंसारवेदनीयो नो व्यवच्छिन्नसंसारो नो व्यवच्छिन्नसंसारवेदनीयो नो निष्ठितार्थः नो निष्ठितार्थकरणीयः पुनरपि अत्रस्थं हव्वं आगच्छति ? हन्त गौतम ! मृतादी निर्ग्रन्थो यावत् पुनरपि अत्रस्थं हव्वं आगच्छति ॥

पर उत्पत्ति हो सकती है सो दिखलाते हैं–'मडाई णं भंते ! नियंठे' इ०

सूत्रार्थ-(मडाई णं भंते) हे भदन्त ! प्रासुक भोजी (नियंठे) निर्ग्रन्थ, कि जिसने (नो निरुद्धभवे) अपने भव का निरोध नहीं किया है, (णो पहीणसंसारे) जिसका संसार क्षीण नहीं हुआ है (णो पहीणसंसारवेयणिज्जे) जिसका संसार वेदनीय नष्ट नहीं हुआ है (नो वोच्छिन्न संसारे) जिसका संसार व्युच्छिन्न नहीं हुआ है (णो वोच्छिन्नसंसारवेयणिज्जे) जिसका संसार वेदनीय व्युच्छिन्न नहीं हुआ है (णो निट्ठियट्ठे) जो कृतार्थ नहीं हुआ है (णो निट्ठियट्ठकरणिज्जे) जिसका काम समाप्त हुए कार्य की तरह पूर्ण नहीं हुआ है वह क्या (पुनरवि) फिर से भी (इत्थत्थं हव्वं आगच्छइ) इस तिर्यञ्च मनुष्यादि गतिरूप संसार को प्राप्त करता है ? (हंता गोयमा) हे गौतम ! (मडाई णं नियंठे जाव पुनरवि इत्थत्थं हव्वं आगच्छइ) पूर्वोक्त विशेषणों वाला मृतादी निर्ग्रन्थ अनगार तिर्यञ्च मनुष्यादि गतिरूप संसार को वारंवार प्राप्त करता है ।

त्यांज उत्पन्न थाय छे "मडाई णं भते ! नियंठे" इत्यादि"

सूत्रार्थ—(मडाईण भते ! हे भगवन् ! प्रासुक आहार लेनार (नियंठे) निर्ग्रन्थ, के जेणे (नो निरुद्धभवे) पोताना भवनो निरोध कर्यो नथी. (नो- निरुद्धभवपवंचे) संसारना प्रपंचनो निरोध कर्यो नथी, (णो पहीणसंसारे) जेनो संसार क्षीण थयो नथी, (णो पहीणसंसारवेयणिज्जे) जेना संसार वेदनीयनो नाश थयो नथी, (णो वोच्छिन्नसंसारवेयणिज्जे) जेना संसारनु छेदन थयु नथी (णो निट्ठियट्ठे) जे कृतार्थ थया नथी, णो निट्ठियट्ठ करणिज्जे जेनु कार्य समाप्त थयेला कार्यनी जेम पूरु थयेल नथी, एटले के जे कृतकृत्य थया नथी शु (पुनरवि) फरीथी पण (इत्थंत्थं हव्वं आगच्छइ) आ तिर्यंच, मनुष्य वगेरे गतिरूप संसारने प्राप्त करे छे ? (हंता गोयमा !) हा, गौतम ! (मडाई ण नियंठे जाव पुनरवि इत्थत्थं हव्वं आगच्छइ) पूर्वोक्त विशेषणो वाळो प्रासुक आहार लेनार निर्ग्रंथ अणगार तिर्यंच, मनुष्य गतिरूप संसारने वारंवार प्राप्त करे छे.

मप्रहीणससारवेदकर्मा इत्यर्थ, अय च सकृत् चतुर्गतिगमनवोपि स्यादित्यत आह—'नो वोच्छिन्नससारे' नो व्यवच्छिन्नससार, अनुटितचतुर्गतिगमना नुबन्ध इत्यर्थ, अत एव 'नो वोच्छिन्नससारवेयणिज्जे' नो व्युच्छिन्नससार वेदनीय व्यवच्छिन्न=व्यपगतम् अनुबन्धव्यवच्छेदेन चतुर्गतिगमनवेद्यकर्म यस्य स तथा, यो न तथा स नो व्युच्छिन्नससारवेदनीय, अतएव 'नो निट्ठियट्ठे' नो निष्ठितार्थ निष्ठित निष्पादित: अर्थ =मोक्षरूपं प्रयोजन येन स निष्ठितार्थ यो न तथा स अनिष्ठितप्रयोजनक इत्यर्थः, अतएव–'नो निट्ठियट्ठकरणिज्जे' नो निष्ठितार्थकरणीय' नो नैव निष्ठितार्थानां संपादितप्रयोजनानामिव करणीयानि कृत्यानि यस्य स नो निष्ठितार्थकरणीय यस्मात्प्रयमेवंविधोऽत एव 'पुणरवि' पुनरपि, 'इत्यत्थं' भवस्थम्–भव=ससारे तिष्ठतीति भवस्थं भवं तिर्यङ्नरामरना

द्रव्यलिङ्गी ही है भावलिङ्गी नहीं है। इसी कारण (नो पहीणसंसारवेयणिज्जे) जिसका ससार वेदनीय कर्म प्रहीण नहीं हुआ है। ऐसा ससार वेद्यकर्मा साधु एक २ वार चारों गति में जाने से भी हो सकता है अतः इसकी निवृत्ति के लिये (नो वोच्छिन्नसंसारे) ऐसा पद दिया है इससे यह प्रकट किया गया है कि चारों गतियों में अनेक बार परिभ्रमण जिसे करना अभी अवशिष्ट है–बन्द नहीं हुआ है। इसी कारण (नो वोच्छिन्नससारवेयणिज्जे) जिसका चारों गतियों में अनेक बार भ्रमण कराने में कारणभूत कर्म अभी छूटा नहीं है इसी कारण (नो निट्ठियट्ठे) मोक्षरूप प्रयोजन जिसका अभीतक पूरा नहीं हो पाया है, और इसी लिये (नो निट्ठियट्ठकरणिज्जे) जो (नो निष्ठितार्थ करणीय) बना हुआ है अर्थात्–जिसके कार्य पूर्ण हुए कार्यों की तरह पूरे नहीं हुए हैं ऐसा वह मृतादी निर्ग्रन्थ अनगार इस तरह की परिस्थिति वाला बना हुआ है तो क्या (पुणरवि) फिर से वह इस अनादि संसार में (इत्थत्थ) नारकादि गतिरूप भव को प्राप्त करता

લિંગી નથી એને આ કથન લાગુ પડે છે એજ કારણે नो पहीणसंसार वेयणिज्जे " જેનો સંસાર વેદનીય કર્મ ક્ષીણ થયા નથી એ શ્રમણ નિર્ગ્રંથને ઉપરનું કથન લાગુ પડે છે સંસાર 'વેદ્યકર્મ' વાળો સાધુ ગતિમાં એક એક વાર પણ જઈ શકતો હોય છે તો તેનું નિરાકરણ કરવા માટે 'नो वोच्छिन्न ससारे' વિશેષણ મૂક્યું છે એટલે કે જેને ચારે ગતિમા અનેક વાર પરિભ્રમણ કરવાનું હજી બાકી છે અને તે કારણે नो वोच्छिन्नससारवेयणिज्जे" જેના ચારે ગતિયોમાં ભ્રમણ કરાવનાર કર્મોનો હજી ક્ષય થયો નથી, અને એજ કારણે नो निट्ठियट्ठ જેનું મોક્ષરૂપ પ્રયોજન હજી સુધી પૂર્ણ થઈ શક્યું નથી, અને તેથી જે 'नो निट्ठियट्ठ करणिज्जे' ઇચ્છિત અર્થની મોક્ષની પ્રાપ્તિ કરી શક્યો નથી એટલે કે જે કૃતાર્થ થયો નથી એવા મૃતાદી નિર્ગ્રંથ અણગાર શું पुणरवि ' ફરી ફરીને આ અનાદિ સંસારમાં 'इत्थत्थ" નરકાદિ

प्राप्तव्यमोक्षोपि संभवेदित्यत आह-' नो निरुद्धभवपवचे ' नो निरुद्धभवप्रपञ्चः अनिरुद्धभवविस्तार इत्यर्थः । एतादृशश्च देवमनुष्यभवप्रपंचापेक्षयापि संभवेत्तत्राह- 'णो पहीणससारे ' नो प्रक्षीणसंसारः, अक्षीणचतुर्गतिगमन इत्यर्थः, यतश्चाप्र- क्षीणचतुर्गतिगमनोऽतएव ' नो पहीणससारवेयणिज्जे ' नो प्रक्षीणसंसारवेदनीयः

संसार से छूटेगा नहीं । यदि यहां पर ऐसी आशंका की जावे कि जिस मृतादी श्रमण निर्ग्रन्थ ने अपने अग्रेतन जन्म का निरोध नहीं किया है वह दो भव के बाद भी मुक्ति प्राप्त करने वाला हो सकता है-तो फिर उसे संसार में जन्म लेने वाला कैसे माना जा सकता है ? तो इस आशंका के व्यवच्छेद के लिये सूत्रकार कहते हैं कि (नो निरुद्धभवपवंचे) यहाँ दो भव से मोक्ष जाने वाला विवक्षित नहीं है । यहाँ तो वही मृतादी श्रमण निर्ग्रन्थ विवक्षित है कि जिसे दो भव के बाद भी और अनेक भव करना बाकी है । क्यों कि अभीतक उसने अपना भवप्रपञ्च भव-विस्तार-निरुद्ध नहीं किया है । मृतादी श्रमण निर्ग्रन्थ अनगार अनि-रुद्ध भवप्रपंच वाला देवमनुष्य भवों की अपेक्षा से भी हो सकता है- सो ऐसा वह यहां विवक्षित नहीं हुआ है किन्तु (नो पहीणसंसारे) जिसका चतुर्गतिरूप संसार में परिभ्रमण करना प्रहीण नहीं हुआ है, ऐसा ही मृतादी श्रमण निर्ग्रन्थ संसार में पुनः २ जन्म मरण करता है । इसके कहने का तात्पर्य यह है कि जो श्रमण निर्ग्रन्थ होकर भी

ફરી જન્મ ધારણુ કરે છે, તે સંસારને તરશે નહિ અહી જો એવી શકા સેવવામાં આવે કે જે મૃતાદી શ્રમણુ નિર્ગ્રંથ પોતાના આગામી ભવનો નિરોધ કર્યો નથી. તે બે ભવ કરીને પણુ મુકિત પ્રાપ્ત કરી શકે છે, તો તેને કેવી રીતે સસારમાં જન્મ લેનારો માની શકાય? તે શંકાનુ નિવારણુ કરવા માટે સૂત્રકાર કહે છે કે " नो निरुद्धभवपवंचे " જેણે ભવપ્રપચનો ભવવિસ્તારનો નિરોધ કર્યો નથી એવો શ્રમણુ નિર્ગ્રંથ વારવાર સંસારમા જન્મ ધારણુ કરે છે અહીં બે ભવ કરીને મોક્ષ જનારનુ વર્ણુન કર્યું નથી અહી તો એવા મૃતાદી શ્રમણુ નિર્ગ્રંથનો ઉલ્લેખ કર્યો છે કે જેને બે ભવ કર્યા પછી પણુ અનેક ભવ કરવાના બાકી છે મૃતાદી અણુગાર દેવ અને મનુષ્યભવની અપેક્ષાએ પણુ અનિરુદ્ધ ભવ વિસ્તાર વાળા હોઈ શકે છે પણુ અહીં એવા શ્રમણુ નિર્ગ્રંથ ની વાત કરવામા આવી નથી પણુ અહી તો " नो पहीणसंसारे " જેનું ચતુ-ર્ગતિરૂપ સંસારમા પરિભ્રમણુ કરવાનુ પ્રહીણુ (ક્ષીણુ) થયું નથી એવો મૃતાદી શ્રમણુ નિર્ગ્રંથ સસારમા વારવાર ભ્રમણુ કરે છે એમ કહેવામા આવ્યુ છે તેનુ તાત્પર્ય એ છે કે જે શ્રમણુ નિર્ગ્રંથ હોવા છતા દ્રવ્યલિંગી છે ભાવ-

संसारचक्रमध्यगतो मुनिजीव प्राणभूतादिनामपट्केन कालभेदेन, युग-पत् च वक्तव्य स्यात् इति जिज्ञासु प्रश्नयन्नाह—'से ण भंते' इत्यादि ।

मूलम्-से णं भंते! किंति वत्तव्वं सिया गोयमा! पाणेत्ति वत्तव्वं सिया, भूएत्ति वत्तव्वं सिया, जीवेत्ति वत्तव्वं सिया, सत्तेत्ति वत्तव्वं सिया, विण्णुत्ति वत्तव्वं सिया, वेदेत्ति वत्तव्वं सिया, पाणे, भूए, जीवे, सत्ते, विण्णू, वेदत्ति वत्तव्वं सिया, से केणट्ठेण भंते! एवं वुच्चइ से णं पाणेति वत्तव्वं सिया जाव वेदेत्ति वत्तव्वं सिया, गोयमा! जम्हा आणमइ वा पाणमइ उस्ससइ वा णीससइ वा तम्हा पाणेत्ति वत्तव्वं सिया जम्हा भूए भवइ भविस्सइ य तम्हा भूएत्ति वत्तव्वं सिया जम्हा जीवइ जीवत्त आउय च कम्म उवजीवइ तम्हा जीवेत्ति वत्तव्वं सिया, जम्हा सत्ते सुहासुहेहिं कम्मेहिं तम्हा सत्तेत्ति वत्तव्वं सिया, जम्हा तित्तकडुकसाय अंबिलमहुरे रसे जाणइ तम्हा विण्णुत्ति वत्तव्वं सिया जम्हा वेदेति य सुहदुक्खं तम्हा वेदेत्ति वत्तव्वं सिया, से तेणट्ठेण गोयमा! पाणेत्ति वत्तव्वं सिया जाव वेदेत्ति वत्तव्वं सिया ॥ सू० ५ ॥

है। तात्पर्य यह है कि अनिरुद्ध भवादि विशेषण वाला निर्ग्रन्थ पुन २ चतुर्गतिरूप में जन्म मरण करता रहता है ॥ सू-४ ॥

संसारचक्र के मध्य में रहा हुआ मुनि का जीव प्राण भूतादि छह नाम से भिन्न २ समय में कि एक ही समय में वक्तव्य हो सकता है

પ્રાપ્ત કરે છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે અનિરુદ્ધ ભવાદિ વિશેષણોવાળો મુનિ નિર્ગ્રંથ વારંવાર ચતુર્ગતિરૂપ સંસારમાં જન્મ મરણ પામ્યા કરે છે ॥ સૂ.૪ ॥

સંસાર ચક્રની મધ્યમાં રહેતા મુનિના જીવને પ્રાણ ભૂત વગેરે છ નામે જુદા જુદા સમયે કે એક જ સમયે શું કહી શકાય છે? આ

रकगतिरूपम्, 'हव्वं' इति वाक्यालङ्कारे शीघ्रं वा 'आगच्छइ' आगच्छति प्राप्नोति किमिति प्रश्नः। भगवानाह-'हंत' इत्यादि। 'हंता गोयमा' हन्त हे गौतम! 'हन्त' इति स्वीकारे। 'मडाई णं नियंठे' मृतादी खलु निर्ग्रन्थः 'जाव पुणरवि' यावत् पुनरपि, इह यावत्पदेन-'नो निरुद्धभवः-नो निरुद्धभवप्रपञ्चः नो प्रक्षीणसंसारः नो प्रक्षीणसंसारवेदनीयः नो व्यवच्छिन्नसंसारः नो व्यवच्छिन्न ससारवेदनीय नो निष्ठितार्थः नो निष्ठितार्थकरणीयः' एतेषां सर्वेषां संग्रहः कर्तव्य., 'इत्थत्थं' अत्रस्थम् नरामरनारकतिर्यग्गतिगमनलक्षणम्, 'पुणरवि' पुनरपि भूयोऽपि हव्वम् 'आगच्छइ' आगच्छति प्राप्नोतीत्यर्थः, अनिरुद्धभवादि-विशेषणयुक्तो निर्ग्रन्थः पुनः पुनरपि चतुर्गतिसंसारमागच्छतीति भावः ॥सू०४॥

है। इस प्रकार से यह प्रश्न गौतम ने प्रभु से किया। इस प्रश्न का निष्कर्षार्थ यही है कि अचित्त अथवा एषणीय आहार को अपने उपयोग में लाने वाला भी श्रमण निर्ग्रन्थ यदि वह पूर्वोक्त विशेषणों वाला है तो क्या संसार में ही जन्म मरण के दुःखों को भोगने वाला बनेगा या उनसे उसका छुटकारा हो जावेगा? इसका उत्तर देते हुए भगवान गौतम से कहते हैं कि (हंता गोयमा) हां गौतम! (हंत) पद यहां स्वीकार अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। (मडाई णं नियंठे) मृतादी निर्ग्रंथ (जाव) यावत् जो निरूद्धभव नहीं है, निरूद्धभवप्रपंच वाला नहीं है, प्रक्षीण संसार नहीं है, प्रक्षीण संसार वेदनीय नहीं है, व्युच्छिन्न संसार नहीं है, व्युच्छिन्न संसार वेदनीय नहीं है, निष्ठितार्थ नहीं है, निष्ठितार्थ करणीय नहीं है इसलिये वह (पुणरवि) फिर भी वारंवार (इत्थत्थं) नरकादि गतिरूप संसार को (हव्व आगच्छइ) प्राप्त करता

गतिरૂપ ભવને પ્રાપ્ત કરે છે? ગૌતમસ્વામીના આ પ્રશ્નનો ભાવાર્થ એવો છે કે અચિત્ત અથવા એષણીય આહારનો ઉપભોગ કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રંથ જો પૂર્વોક્ત વિશેષણોથી યુક્ત હોય તો તે સંસારમાં વારંવાર જન્મ લઈને જન્મમરણના દુઃખો ભોગવશે કે તેનો સંસારમાંથી છુટકારો થઈ જશે? ગૌતમ સ્વામીના એ પ્રશ્નનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે કે "हंता गोयमा!" હા, ગૌતમ! અહીં "हंता" પદ સ્વીકારના અર્થમાં વપરાયું છે "मडाई णं नियंठे" મૃતાદી નિર્ગ્રંથ કે જે નિરૂદ્ધભવ વાળો નથી, નિરૂદ્ધભવ પ્રપંચ વાળો નથી, પ્રક્ષીણ સંસારવાળો નથી, પ્રક્ષીણ સંસાર વેદનીય કર્મ વાળો નથી, સંસારના અંત વાળો નથી, અંત કરેલા સંસાર વેદનીય કર્મ વાળો નથી, જે કૃતાર્થ થયેલ નથી, જે કૃત કૃત્ય થયેલ નથી જેનું કાર્ય સમાપ્ત થયેલા કાર્યની જેમ પૂરું થયેલ નથી તે "पुणरवि" ફરીથી પણ વારવાર "इत्थत्थं" નરકાદિગતિરૂપ સંસારને 'हव्व आगच्छइ'

माणिति वा उच्छ्वसिति वा निःश्वसिति वा तस्मात् प्राण इति वक्तव्य स्यात्। यस्माद् भूतो भवति भविष्यति च तस्मात् भूत इति वक्तव्य स्यात्, यस्मात् जीवत्‌ जीवति जीवत्वम् आयुष्क च कर्म उपजीवति तस्मात् जीव इति वक्तव्यं स्यात् यस्मात् सक्तः शुभाशुभैः कर्मभिः तस्मात् सत्त्व इति वक्तव्य स्यात्, यस्मात् तिक्तकटुकषायाम्लमधुरान् रसान् जानाति तस्मात् विज्ञ इति वक्तव्य स्यात्,

से कहा जा सकता है ? (गोयमा ! जम्हा आणमइ वा पाणमइ वा उस्ससइ वा नीससइ वा तम्हा पाणेत्ति वत्तव्व सिया) हे गौतम ! जिस कारण से यह मुनि जीव आभ्यन्तर श्वास को लेता है, आभ्यन्तर श्वास को छोड़ता है, बाह्य श्वास को ग्रहण करता है और बाह्य श्वास को छोड़ता है इस कारण वह (प्राण) इस शब्द से कहा जा सकता है। (जम्हा भूए, भवइ, भविस्सइ य तम्हा भूए त्ति वत्तव्वं सिया) जिस कारण वह हुआ है, होता है, होगा, इस कारण वह (भूत) इस शब्द से कहा जा सकता है। (जम्हा जीवे जीवइ जीवत्तं आउयं च कम्मं उवजीवइ तम्हा जीवेत्ति वत्तव्व सिया) जिस कारण से यह भूतकाल में जीव के धर्म को प्राप्त हुआ वर्तमान में जीता है, जीवत्व और आयुष्क कर्म का यह अनुभव करता है और भविष्यत् में भी जीवेगा इस कारण यह (जीव) इस शब्द से कहा जा सकता है। (जम्हा सत्ते सुभासुभेहिं कम्मेहिं तम्हा सत्तेत्ति वत्तव्वं सिया) जिस कारण यह शुभ और अशुभ कर्मों के द्वारा बद्ध हुआ है इस कारण यह (सत्त्व) इस शब्द से कहा जा सकता है। (जम्हा तित्तकडु कसाय अंबिलमहुरे

(गोयमा ! जम्हा आणमइ वा पाणमइ वा उस्ससइ वा नीससइ वा तम्हा पाणेत्ति वत्तव्व सिया) જે કારણે તે મુનિનો જીવ બાહ્યાભ્યન્તર શ્વાસ અને નિશ્વાસને ગ્રહણ કરે છે અને છોડે છે તે કારણે તેને "પ્રાણ" શબ્દથી ઓળખી શકાય છે (जम्हा भूए, भवइ भविस्सइ य तम्हा भूए त्ति वत्तव्वं सिया) જે કારણે તેની ઉત્પત્તિ થઈ હતી, થાય છે અને થશે તે કારણે તેને "भूत" શબ્દથી ઓળખી શકાય છે (जम्हा जीवे जीवइ जीवत्त आउयं च कम्मं उव जीवइ तम्हा जीवेत्ति वत्तव्वं सिया) જે કારણે તેણે ભૂતકાળમાં જીવના ધર્મને પ્રાપ્ત કર્યા હતા વર્તમાનમાં જીવે છે જીવત્વ આયુષ્ય કર્મનો તે અનુભવ કરે છે, અને ભવિષ્યમાં પણ જીવશે, તે કારણે તેને માટે "જીવ" શબ્દ વાપરી શકાય છે (जम्हा सत्ते सुभासुभेहिं कम्मेहिं तम्हा सत्ते त्ति वत्तव्वं सिया) જે કારણે તે શુભ અને અશુભ કર્મો વડે બદ્ધ છે તે કારણે "સત્વ" શબ્દથી ઓળખી શકાય છે (जम्हा तित्त कडु कसाय अंबिलमहुरे रसे

छाया— तत् खलु भदन्त ! किमिति वक्तव्यं स्यात्, गौतम ! प्राण इति वक्तव्यं स्यात्, भूत इति वक्तव्यं स्यात्, जीव इति वक्तव्यं स्यात्, सत्त्व इति वक्तव्यं स्यात्, विज्ञ इति वक्तव्यं स्यात्, वेद इति वक्तव्यं स्यात्, प्राणो भूतो जीवः सत्त्वो विज्ञो वेद इति वक्तव्यं स्यात्, तत्केनार्थेन भदन्त ! स खलु प्राण इति वक्तव्यं स्यात्, यावत् वेद इति वक्तव्यं स्यात् गौतम ! यस्मात् आनिति

क्या ? इस प्रश्न को पूछने की इच्छा से गौतमस्वामी प्रभुसे प्रश्न करते हैं–' से णं भंते ' इत्यादि ।

सूत्रार्थ–(से णं भंते ! किं ति वत्तव्वं सिया) हे भदंत ! वह निर्ग्रन्थ मुनि जीव किस शब्द से वक्तव्य हो सकता है ? (गोयमा ! पाणेत्ति वत्तव्वं सिया) वह निग्रन्थ मुनि जीव " प्राण" इस शब्द से कहा जा सकता है। (भूएत्ति वत्तव्वं सिया) "भूत" इस शब्द से कहा जा सकता है। (सत्तेत्ति वत्तव्वं सिया) "सत्व" इस शब्दसे कहा जा सकता है। (विण्णु त्ति वतव्वं) "विज्ञ" इस शब्द से कहा जा सकता है वेयोत्ति वत्तव्व सिया) "वेद" इस शब्द से कहा जा सकता है (पाणे, भूए जीवे, सत्ते विण्णू वेदेत्ति वत्तव्वं सिया) प्राण, भूत, जीव, सत्त्व विज्ञ, और वेद इन सब शब्दों से वह कहा जा सकना है। (से केणट्ठेण भंते ! एवं वुच्चइ) हे भदंत ! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि (से णं पाणेत्ति - वतव्वं सिया जाव वेयो त्ति वत्तव्वं सिया) वह मुनि जीव (प्राण) इस शब्द से कहा जा सकता है यावत् (वेद) इस शब्द

પ્રશ્નનો ઉત્તર જાણવાને માટે ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને " से णं भते " ઈત્યાદિ પદથી પૂછે છે

સૂત્રાર્થ–(सेणं भंते किं ति वत्तव्व सिया) હે ભગવન્ તે નિર્ગ્રંથ મુનિના જીવને કયા શબ્દથી વર્ણવી શકાય છે ! (गोयमा ! पाणेत्ति वत्तव्व सिया) તે નિર્ગ્રંથ મુનિ જીવને ' પ્રાણ" સંજ્ઞાથી વર્ણવી શકાય છે, (भूए त्ति वत्तव्व सिया) "ભૂત" શબ્દથી પણ ઓળખી શકાય છે, (सत्ते त्ति वत्तव्व सिया) 'સત્વ" શબ્દથી પણ ઓળખી શકાય છે (विण्णु त्ति वत्तव्वं सिया) "વિજ્ઞ" શબ્દથી પણ ઓળખી શકાય છે, (वेयोत्ति वत्तव्व सिया) " वेद " શબ્દથી પણ ઓળખી શકાય છે (पाणे भूए, जीवे, सत्ते, विण्णू वेदेत्ति वत्तव्वं सिया " તેને પ્રાણ, ભૂત જીવ, સત્વ, વિજ્ઞ અને વેદ, એ બધા શબ્દોથી ઓળખી શકાય છે (से केणट्ठेण भते ! एव वुच्चइ) હે ભગવન્ ! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે (से ण पाणेत्ति बत्तव्वं सिया जाव वेयो त्ति वत्तव्वं सिया) તે મુનિને 'પ્રાણ" ભૂત, જીવ, સત્વ વગેરેથી ઓળખી શકાય છે,

स्यात्, यदा तु भवनादि धर्मवत्त्वस्य विवक्षा क्रियते तदा भूत इत्यन्वर्थनाम धर्म येन भूत इति व्यवहारस्य संभवात्। 'जीवेत्ति वत्तव्वं सिया' जीव इति वक्तव्य स्यात्, यदा तु उपयोगादिमत्त्वधर्मस्य विवक्षा क्रियते तदा जीव इति व्यवहारस्या प्यदुष्टत्वात्, 'सत्तेत्ति वत्तव्वं सिया' सत्त्व इति वक्तव्य स्यात्, यदा तु शुभा शुभयुक्तत्वरूपधर्मस्य विवक्षा क्रियते तदा सत्त्व इति नामतोऽपि व्यवहारस्य कर्तुं शक्यत्वादिति, 'विण्णुत्ति वत्तव्वं सिया' विज्ञ इति वक्तव्यं स्यात्, कटुकषायादि रसास्वादनकर्तृत्वरूपधर्मविवक्षायां विज्ञ इति व्यवहारस्य संभवादिति। 'वेदेत्ति वत्तव्वं सिया' वेद इति वक्तव्य स्यात्, सुखदुःखादिमत्त्वानुभवकर्तृत्वात्मकधर्मविवक्षायां वेद इति व्यवहारस्य सपादनसंभवादिति। 'पाणे भूए जीवे सत्ते विण्णु

समय भवन (होना) आदि धर्मसे युक्तताकी विवक्षा करनेमें आती है उस समय उसमें (भूत) इस अन्वर्थ सार्थक नाम की संभवता से (भूत) ऐसा व्यवहार हो सकता है। (जीवे त्ति वत्तव्व सिया) जिस समय उपयोग आदि धर्म से युक्तता की विवक्षा की जाती है उस समय उसमें (जीव) ऐसा व्यवहार भी हो सकता है। इसमें कोई दोष की बात नहीं है। (सत्तेत्ति वत्तव्व सिया) जिस समय शुभ अशुभ कर्म से युक्तता की विवक्षा की जाती है उस समय (सत्त्व) इस नाम से उसका व्यवहार किया जा सकता है। (विण्णु त्ति वत्तव्व सिया) जिस समय कटुक, (कडवा) कषाय आदि रसोंके आस्वादनकर्तृत्वरूप धर्मकी विवक्षा कीजाती है उस समय (विज्ञ) इस शब्दसे भी यह कहा जा सकता है। (वेदेत्ति वत्तव्वं सिया) जिस समय सुख दुःख आदिको अनुभव करने रूप धर्म की विवक्षा की जाती है उस समय उसमें (वेद) इस शब्द

જ્યારે થવું વગેરે ધર્મથી યુક્ત પણાની વિવક્ષા કરવામાં આવતી હોય ત્યારે "ભૂત" નામ અર્થયુક્ત (સાર્થક) લાગે છે માટે તે સમયે "ભૂત" શબ્દનો ઉપયોગ કરી શકાય છે "जीवे त्ति वत्तव्व सिया" તેને "જીવ" પણ કહી શકાય છે જ્યારે ઉપયોગ આદિ ધર્મથી યુક્ત વિવક્ષા કરવામાં આવતી હોય ત્યારે તેને માટે 'જીવ' શબ્દનો પણ ઉપયોગ કરી શકાય છે "सत्ते त्ति वत्तव्व सिया' તેને 'સત્ત્વ' પણ કહેવાય છે જ્યારે શુભ અશુભ કર્મથી યુક્ત પણાની વિવક્ષા કરાતી હોય ત્યારે "સત્વ' નામથી પણ તેને ઓળખી શકાય છે "विण्णु त्ति वत्तव्वं सिया' જ્યારે કડવો, ખાટો, મધુર વગેરે રસોના આસ્વાદન કરવારૂપ ધર્મની વિવક્ષા કરવામાં આવતી હોય ત્યારે તેને માટે 'વિન' શબ્દનો પ્રયોગ પણ કરી શકાય છે "वेदेत्ति वत्तव्व सिया" જ્યારે સુખદુઃખ વગેરેના અનુભવ કરવારૂપ ધર્મની વિવક્ષા કરવામાં આવતી

यस्मात् वेदयति च सुखदुःखं तस्मात् वेदयिता इति वक्तव्यं स्यात् तत्तेनार्थेन प्राण इति वक्तव्यं स्यात्, यावत् वेदयिता इति वक्तव्यं स्यादिति ॥ सू० ५ ॥

टीका—'से णं भंते' तत् खलु भदन्त! 'किंति वत्तव्वं सिया' किमिति वक्तव्यं स्यात्, तत्र स निर्ग्रन्थो जीवः किमिति वक्तव्यं स्यात्? भगवानाह –'गोयमा' इत्यादि। 'गोयमा' हे गौतम! 'पाणेति वत्तव्वं सिया' प्राण इति वक्तव्य स्यात्, तत्र यदा उच्छ्वासादिमत्त्वस्य विवक्षा क्रियते तदा निर्ग्रन्थजीवं प्रति प्राण इत्येवरूपो व्यपदेशः कर्तुं शक्यते एव, प्राणनक्रियादिमत्त्वेन प्राणेत्यन्वर्थनामसंभवात्। 'भूएत्ति वत्तव्वं सिया' भूत इति वक्तव्यं

रसे जाणइ, तम्हा विण्णुत्ति वत्तव्वं सिया) जिस कारण यह तिक्त, कटुक, कषाय, आम्ल, मधुर रसों को जानता है इस कारण (विज्ञ) इस शब्द द्वारा यह कहा जा सकता है। (जम्हा वेदनीय सुहदुक्खं तम्हा वेदेत्ति वत्तव्वं सिया) जिस कारण सुख दुःख का वेदन करता है इस कारण यह (वेद) इस शब्द से कहा जा सकता है।

टीकार्थ—(से णं भंते!) हे भदन्त! वह मुनि जीव (किं त्ति वत्तव्वं सिया) (किमिति) किस शब्द से कहा जा सकता है? भगवान इसका उत्तर देते हुए कहते हैं कि-(गोयमा) हे गौतम! वह (पाणेत्ति वत्तव्वं सिया) प्राण इस रूप से कहा जा सकता है। जिस समय उच्छ्वास आदि से युक्तता की विवक्षा की जाती है तब उस समय-निर्ग्रन्थ जीव के प्रति (प्राण) इस रूप से व्यपदेश किया जा सकता है। क्यो कि प्राणन क्रिया आदि वाला वह है-इससे (प्राण) ऐसा अन्वर्थ नाम उसका हो जाता है। (भूए त्ति वत्तव्वं सिया) जिस

जाणइ, तम्हा विण्णू त्ति वत्तव्व सिया) જે કારણે તે તીખો, કડવો, તુરો ખાટો, અને મીઠો રસ જાણે છે તે કારણે તેને 'વિજ્ઞ" કહેવામા આવે છે (जम्हा वेदनीय सुहदुक्ख तम्हा वेदे त्ति वत्तव्व सिया) જે કારણે સુખ દુઃખ વેદન કરે છે. તે કારણે તેને "વેદ" કહેવામા આવે છે

ટીકાર્થ–"से ण भते!" હે ભગવન્! તે મુનિજીવને (किं त्ति वत्तव्वं सिया) કયા શબ્દથી ઓળખાવી શકાય છે

"गोयमा!" હે ગૌતમ! "पाणेत्ति वत्तव्व सिया" તેને "પ્રાણ" કહી શકાય છે જ્યારે શ્વાસોચ્છ્વાસ વગેરે યુક્ત પણાની વાત કહેવામાં આવતી હોય ત્યારે નિર્ગ્રંથજીવને માટે "પ્રાણ" શબ્દનો પ્રયોગ કરી શકાય છે કારણ કે તે પ્રાણનક્રિયા વગેરે યુક્ત હોવાને કારણે "પ્રાણ" નામ તેને માટે અર્થયુક્ત જણાય છે. "भूएत्ति वत्तव्व सिया" તેને "ભૂત" પણ કહી શકાય છે

स्यात्, यदा तु भवनादि धर्मवत्त्वस्य विवक्षा क्रियते तदा भूत इत्यन्वर्थनाम संभ वेन भूत इति व्यवहारस्य संभवात्। 'जीवेत्ति वत्तव्वं सिया' जीव इति वक्तव्यं स्यात्, यदा तु उपयोगादिमत्त्वधर्मस्य विवक्षा क्रियते तदा जीव इति व्यवहारस्या प्यदुष्टत्वात्, 'सत्तेत्ति वत्तव्वं सिया' सत्त्व इति वक्तव्यं स्यात्, यदा तु शुभा शुभयुक्तत्वरूपधर्मस्य विवक्षा क्रियते तदा सत्त्व इति नामतोऽपि व्यवहारस्य कर्तुं शक्यत्वादिति, 'विण्णुत्ति वत्तव्वं सिया' विज्ञ इति वक्तव्यं स्यात्, कटुकषायादि रसास्वादनकर्तृत्वरूपधर्मविवक्षायां विज्ञ इति व्यवहारस्य संभवादिति। 'वेदुत्ति वत्तव्वं सिया' वेद इति वक्तव्यं स्यात्, सुखदुःखादिमत्त्वानुभवकर्तृत्वरूपधर्मवि वक्षायां वेद इति व्यवहारस्य संपादनसंभवादिति। 'पाणे भूए जीवे सत्ते विण्णू

समय भवन (होना) आदि धर्मसे युक्तताकी विवक्षा करनेमें आती है उस समय उसमें (भूत) इस अन्वर्थ सार्थक नाम की संभवता से (भूत) ऐसा व्यवहार हो सकता है। (जीवे त्ति वत्तव्व सिया) जिस समय उपयोग आदि धर्म से युक्तता की विवक्षा की जाती है उस समय उसमें (जीव) ऐसा व्यवहार भी हो सकता है। इसमें कोई दोष की बात नहीं है। (सत्तेत्ति वत्तव्व सिया) जिस समय शुभ अशुभ कर्म से युक्तता की विवक्षा की जाती है उस समय (सत्त्व) इस नाम से उसका व्यवहार किया जा सकता है। (विण्णु त्ति वत्तव्व सिया) जिस समय कटुक, (कडवा) कषाय आदि रसोंके आस्वादनकर्तृत्वरूप धर्मकी विवक्षा कीजाती है उस समय (विज्ञ) इस शब्दसे भी यह कहा जा सकता है। (वेयोत्ति वत्तव्वं सिया) जिस समय सुख दुःख आदिको अनुभव करने रूप धर्म की विवक्षा की जाती है उस समय उसमें (वेद) इस शब्द

જ્યારે થવું વગેરે ધર્મથી યુક્ત પણાની વિવક્ષા કરવામાં આવતી હોય ત્યારે "ભૂત" નામ અર્થયુક્ત (સાર્થક) લાગે છે માટે તે સમયે "ભૂત" શબ્દનો ઉપયોગ કરી શકાય છે 'जीवे त्ति वत्तव्व सिया" તેને 'જીવ" પણ કહી શકાય છે જ્યારે ઉપયોગ આદિ ધર્મથી યુક્ત વિ ક્ષા કરવામાં આવતી હોય ત્યારે તેને માટે "જીવ" શબ્દનો પણ ઉપયોગ કરી શકાય છે 'सत्ते त्ति वत्तव्व सिया' તેને "સત્ત્વ" પણ કહેવાય છે જ્યારે શુભ અશુભ કર્મથી યુક્ત પણાની વિવક્ષા કરાતી હોય ત્યારે "સત્વ" નામથી પણ તેને ઓળખી શકાય છે 'विण्णु त्ति वत्तव्व सिया" જ્યારે કડવો, ખાટો મધુર વગેરે રસોના આસ્વાદન કરવારૂપ ધર્મની વિવક્ષા કરવામાં આવતી હોય ત્યારે તેને માટે વિજ્ઞ" શબ્દનો પ્રયોગ પણ કરી શકાય છે "वेयोत्ति वत्तव्व सिया" જ્યારે સુખદુઃખ વગેરેના અનુભવ કરવારૂપ ધર્મની વિવક્ષા કરવામાં આવતી

वेदेत्ति वत्तव्वंसिया ' प्राणो भूतो जीवः सत्त्वो विज्ञो वेद इति वक्तव्यं स्यात्, यदा तु उच्छ्वासादि धर्मैर्युगपदेव विवक्षा क्रियते तदाऽसौ निर्ग्रन्थो जीवः प्राण इति जीव इति सत्त्व इति विज्ञ इति वेद इति सर्वैरेव पदैर्व्यवहर्तुं शक्यते एवेति भावः, निगमनवाक्यमिदम् । निर्ग्रन्थो जीवः प्राणादिपदेन व्यवह्रियते तत्र किं कारणमित्याशयेन पृच्छति–' से केणट्ठेणं ' इत्यादि, ' से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ से णं ' तत् केनार्थेन हे भदन्त ! एवमुच्यते स खलु=निर्ग्रन्थो जीवः ' पाणेति वत्तव्वं सिया ' प्राण इति वक्तव्यं स्यात् ' जाव वेदेत्ति वत्तव्वं सिया ' यावत् वेद इति वक्तव्यं स्यात्, निर्ग्रन्थजीवस्य प्राणादि शब्दव्यवहारे किं कारणमिति प्रश्नः । भगवानाह—' गोयमा ' इत्यादि । ' गोयमा ' हे गौतम ! ' जम्हा आणमइ वा ' यस्मात् कारणात् निर्ग्रन्थजीव आनिति–आननक्रियां करोति

द्वारा भी व्यवहार हो सकता है । (पाणे, भूए, जीवे, सत्ते, विण्णू, वेदेत्ति वत्तव्वं सिया) और जिस समय उच्छ्वास आदि धर्मों से युक्तता की युगपत (एकसाथ) विवक्षा की जाती है उस समय वह निर्ग्रन्थ जीव प्राण, भूत, जीव, सत्त्व, विज्ञ, और वेद, इन सब ही शब्दों द्वारा कहा जा सकता है । यह निर्गमन (समाप्ति) वाक्य हैं । इसमें क्या कारण है–इसी आशय से प्रेरित होकर गौतम स्वामी प्रभु से पूछते हैं– (से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ से ण पाणेत्ति वत्तव्वं सिया, जाव वेयोत्ति वत्तव्वं सिया) हे भदन्त ! यह आप किस कारण से कहते हैं कि वह मुनि जीव प्राण इस शब्द से कहा जा सकता है यावत् वह (वेद) इस शब्द से कहा जा सकता है? तात्पर्य यह कि निर्ग्रन्थ जीव प्राणादि शब्दों द्वारा कहने में क्या कारण है ? इसका उत्तर देते हुए प्रभु कहते हैं (गोयमा !) हे गौतम ! (जम्हा) जिस कारण (आणमइ) निर्ग्रन्थ

હોય ત્યારે તેને માટે "વેદ" શબ્દનો પ્રયોગ પણ કરી શકાય છે " पाणे, भूए, जीवे, सत्ते, विण्णू वेदेत्ति वत्तव्व सिया " અને જ્યારે શ્વાસોચ્છ્વાસ વગેરે ધર્મોથી યુક્ત પણાની એક સાથે વિવક્ષા કરાતી હોય છે ત્યારે તે શ્રમણ નિર્ગ્રંથ જીવને માટે પ્રાણ, ભૂત, જીવ, સત્વ, વિજ્ઞ અને વેદ એ છએ શબ્દોનો પ્રયોગ થઇ શકે છે આ નિર્ગમન (સમાપ્તિ) વાકય છે તેનુ કારણ જાણવાના આશયથી ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને પૂછે છે કે " से केणट्ठेणं भंते ! एव वुच्चइ से ण पाणेत्ति वत्तव्व सिया, जाव वेयोत्ति वत्तव्व सिया ? " હે ભગવન્ ! આપ શા કારણે એવુ કહો છો કે તે શ્રમણ નિર્ગ્રંથને પ્રાણ, ભૂત, જીવ, સત્ત્વ, વિજ્ઞ, અને વેદ કહી શકાય છે? તેનો ઉત્તર મહાવીર પ્રભુ આ પ્રમાણે આપે છે ' गोयमा ! ' હે ગૌતમ ! "जम्हा" જે કારણે " आणमइ वा पाण

आभ्यन्तरश्वास गृह्णाति, 'पाणमइ वा' प्राणिति वा, प्राणनक्रियां करोति, आभ्यन्तरं श्वास मुञ्चति ' उस्ससइ वा ' उच्छ्वसिति वा, बाह्य श्वास गृह्णाति, 'नीससइ वा' निःश्वसिति वा, बाह्यं श्वास त्यजति, 'तम्हा पाणेत्ति वत्तव्वं सिया' तस्मात् प्राण इति वक्तव्यं स्यात्, यस्मात् कारणात् आननप्राणनो च्छ्वास-निश्वासक्रियां संपादयति तस्मात् कारणात् श्रमो निर्ग्रन्थ जीवः प्राण इत्याख्यया आख्यायते एव क्षान्वर्थमादायैव तथा व्यवहार इति भावः । 'जम्हा भूए भवइ भविस्सइ य' यस्मात् भूतो भवति भविष्यति च 'तम्हा भूएत्ति वत्तव्वं सिया' तस्मात् भूत इति वक्तव्यं स्यात्, पूर्वकालेऽभूत् वर्तमानकाले एतस्यात्पत्तिरस्ति शरीरसत्वात्, अनागतकालेऽप्युत्पत्ता भविष्यति तस्मादुत्पत्तिमत्त्वधर्ममादाय भूत इति व्यवहार लभत इति भावः। 'जम्हा जीवे' यस्मात् कारणात् अजीवत्-अतीत काले जीवधर्म प्राप्तोऽभूत् जीवस्यानादिकालिकत्वात्, 'जीवइ' जीवति प्राणान् धारयति वर्तमानकाले जीवत्व धर्मवानस्ति 'जीवत्त आउय च कम्मं उवजीवइ'

जीव अभ्यन्तर श्वास को ग्रहण करता है (पाणमइ) आभ्यन्तर श्वास को छोडता है (उस्ससइ) बाह्यश्वास को ग्रहण करता है, (नीससइ) बाह्यश्वास को छोडता है (तम्हा पाणेत्ति वत्तव्वं सिया) इस कारण वह (प्राण) शब्द से कहा जा सकता है। (जम्हा भूए भवइ भविस्सइ य तम्हा भूएत्ति वत्तव्वं सिया) जिस कारण से भूतकाल में, शरीर के संबंध से उत्पन्न हुआ वर्तमान काल में यह उत्पन्न होता है और अनागत भविष्यत् काल में भी यह उत्पन्न होगा इस कारण से उत्पत्तिमत्त्व धर्म को लेकर (भूत) इस शब्द से कहा जा सकता है। (जम्हा जीवे) अनादी कालिक होने के कारण अतीत कालमें जिस कारण से इसने जीव के धर्म को प्राप्त किया है, तथा वर्तमानकाल में भी (जीवइ) यह प्राणों को धारण कर रहा है-जीवस्वरूप धर्मवाला बना हुआ है-(जीवत्तं आउय च कम्मं उवजी

मइ वा" श्रमण निर्ग्रंथ જીવ આભ્યન્તર શ્વાસને ગ્રહણ કરે છે અને છોડે છે 'उस्ससइ वा नीससइ वा' બાહ્ય શ્વાસને ગ્રહણ કરે છે અને છોડે છે, "तम्हा पाणे त्ति वत्तव्वं सिया' તે કારણે તેને માટે 'પ્રાણ" શબ્દ કહેવામા આવે છે "जम्हा भूए भवइ भविस्सइ य तम्हा भूएत्ति वत्तव्वं सिया" જે કારણે ભૂતકાળમાં તેનું શરીર ઉત્પન્ન થયુ વર્તમાન કાળે ઉત્પન્ન થાય છે અને ભવિષ્ય કાળે પણ તે ઉત્પન્ન થશે તે કારણે ઉત્પત્તિરૂપ ધર્મની અપેક્ષાએ તેને "ભૂત" પણ કહી શકાય છે ' जम्हा जीवे ' અનાદિ હોવાને કારણે ભૂતકાળમાં તેણે જે કારણે જીવના ધર્મોને પ્રાપ્ત કર્યા હત, વર્તમાન કાળે પણ તે "जीवइ" જીવના ધર્મ ગણા છે- जीवत्तं आउयं च कम्मं उवजीवइ" તથા ઉપભોગ

जीवत्वमायुष्कं च कर्म उपजीवति, जीवत्वम्=उपयोगलक्षणम् पूर्वबद्धम् आयुष्कं च देहावस्थानकारणम् कर्म उपजीवति-अनुभवति, 'तम्हा जीवेत्ति वत्तव्वं सिया' तस्मात् जीव इति वक्तव्यं स्यात्, अतएव कारणात् स निर्ग्रन्थः जीवशब्देन व्यपदेश्यः स्यादिति भावः। 'जम्हा सत्ते-सुहासुहेहिं कम्मेहिं' यस्मात् सक्तः= आसक्तः शुभाशुभेषु कर्मसु, यस्मात् कारणात् शुभाशुभेषु कर्मसु व्यापृतः 'तम्हा सत्तेति वत्तव्वं सिया' तस्मात् सत्त्व इति वक्तव्यं स्यात् 'जम्हा तित्तकडुकसायंऽविल महुरे रसे जाणइ' यस्मात् तिक्त कटु कषायाम्लमधुरान् रसान् जानाति, एतेषां रसानामास्वादं करोति, 'तम्हा विन्नुत्ति वत्तव्वंसिया' तस्माद्विज्ञ इति वक्तव्यं स्यात्, तिक्तादि पंचविधरसास्वादकर्तृत्वेन निर्ग्रन्थजीवस्य विज्ञत्वमपि भवतीति भावः। 'जम्हा वेदेत्ति य सुहदुक्खं' यस्मात् वेदयति च सुखदुःखम्, यस्मात् कारणात् सुखदुःखमनुभवति 'तम्हा वेदोत्ति वत्तव्वं सिया' तस्मात् वेद इति

वइ) तथा उपयोग लक्षणरूप जीवत्व का और जो वर्तमान देह में इसके अवस्थान का कारण बना हुआ है उस पूर्वबद्ध आयुष्क कर्म का अनुभव कर रहा है (तम्हा जीवे त्ति वत्तव्वं सिया) इस कारण यह (जीव) इस शब्द से कहा जा सकता है। (जम्हा सत्ते सुहासुहकम्मेहिं) जिस कारण से यह शुभ और अशुभ कर्मों में आसक्त होता रहता है (तम्हा सत्तेति वत्तव्वं सिया) इस कारण यह सत्त्व शब्द से कहा जा सकता है। (जम्हा तित्तकडुकसायऽविलमहुरे रसे जाणइ) जिस कारण यह तिक्त, कटु, कषाय, आम्ल, मधुर रसों को जानता है-अर्थात् यह इन रसोंका आस्वादन करता है (तम्हा विण्णु त्ति वत्तव्वं सिया) इस कारण यह (विज्ञ) इस शब्द से कहा जा सकता है। (जम्हा वेदेत्ति सुह-दुक्खं) जिस कारण से यह सुख दुःख का वेदन करता है-अनुभव करता है (तम्हा वेदोत्ति वत्तव्वं सिया) इस कारण यह वेद इस शब्द से कहा

લક્ષણ રૂપ જીવત્વનો તથા જે વર્તમાન દેહમાં જીવને રહેવાનું કારણ બનેલ છે તે પૂર્વબદ્ધ આયુષ્ક કર્મનો અનુભવ કરી રહ્યો છે "तम्हा जीवेत्ति वत्तव्वं सिया" તે કારણે તેને "જીવ" પણ કહી શકાય છે "जम्हा सत्ते सुहासुहकम्मेहिं" જે કારણે તે શુભાશુભ કર્મોમા આસક્ત રહે છે. "तम्हा सत्ते त्ति वत्तव्व सिया" તે કારણે તેને "સત્વ" પણ કહેવામા આવે છે "जम्हा ति कडु कसायंऽविलमहुरे रसे जाणइ" જે કારણે તે તીખો, કડવો, તુરો, ખાટો અને મીઠો રસ જાણે છે એટલે કે તેનુ આસ્વાદન કરે છે "तम्हा विण्णु त्ति वत्तव्व-सिया" તે કારણે તેને "વિજ્ઞ" કહી શકાયછે "जम्हा वेदेत्ति सुहदुक्खं" જે કારણે તે સુખ અને દુઃખનુ વેદન કરે છે तम्हा वेदोत्ति वत्तव्व सिया" તે

मक्तव्य स्यात्, सुखदुःखयोरनुभवकर्तृत्वेन निर्ग्रन्थजीवस्य वेदत्वमपि भवतीति भाव। 'से तेणट्ठेणं' तत् तेनार्थेन, एभि' कारणैः हे गौतम! 'पाणेत्ति वत्तव्वं सिया' प्राण इति वक्तव्यं स्यात्, 'जाव वेदोत्ति वत्तव्वं सिया' यावत् वेद इति वक्तव्य स्यात्, अर्थात् हे गौतम! प्राणधारणोपयोगवत्त्वोत्पत्त्यादिमत्त्वशुभादि कर्मानुभवनकर्मसंसक्तत्वादिधर्मैरुपेतत्वात् निर्ग्रन्थजीव' प्राणादिवेदपर्यन्तपदैर्व्यवह्रियते एवेति भावः। अत्र यावत्पदेन भूतजीवसत्त्वविज्ञाना ग्रहणं भवतीति ॥सू०५॥

पूर्वं प्रासुकाहारभोजिनोऽनिरुद्धभवभवप्रपञ्चादिनिक्षेपणयुक्तस्य साधोरपि संसारचक्रे पुनः पुनरपि आगमनं भवतीति प्रतिपादितम्, अधुना प्रासुकाहारभोजिनो निरुद्धभवभवप्रपञ्चादिविशेषणविशिष्टस्य साधोः पुनः का गतिर्भवतीति प्रतिपादनायाह-' मडाई णं भंते ' इत्यादि।

मूलम्—मडाई णं भंते! नियंठे निरुद्धभवे, निरुद्धभव पवंचे, जाव निट्ठियट्ठकरणिज्जे, णो पुणरवि इत्थत्थं हव्वं आगच्छइ? हंता गोयमा! मडाई ण णियंठे जाव पुणरवि इत्थत्थं हव्वं आगच्छइ, से ण भंते किं वत्तव्वं सिया? गोयमा! सिद्धेत्ति वत्तव्वं सिया बुद्धेत्ति वत्तव्वं सिया, मुत्तेत्ति वत्तव्वं सिया, पारगएत्ति वत्तव्वं सिया, परंपरगएत्ति वत्तव्वं सिया, सिद्धे बुद्धे मुत्ते परिनिव्वुडे अंतकडे सव्वदुक्खपहीणेत्ति वत्तव्वं सिया, सेवं भंते सेवं भंते त्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता, संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ ॥ सू० ६ ॥

जा सकता है। (तेणट्ठेणं पाणे त्ति वत्तव्वं सिया) इसलिये हे गौतम! इन कारणोंको लेकर (पाणे त्ति वत्तव्वं सिया जाव वेदोत्ति वत्तव्वं सिया) निर्ग्रन्थ जीव प्राणसे लेकर वेदतकके शब्दोंद्वारा कहा जा सकता है॥सू ५॥

કારણે તેને "વેદ" પણ કહી શકાય છે " से तेणट्ठेणं पाणेत्ति वत्तव्वं सिया-जाव वेदोत्ति वत्तव्वं सिया" હે ગૌતમ! તે કારણે નિર્ગ્રંથ જીવને પ્રાણથી લઈને વેદ સુધીના શબ્દો વડે ઓળખાવી શકાય છે ॥ સૂ ५॥

छाया—मृतादी खलु भदन्त ! निर्ग्रन्थो निरुद्धभवो निरुद्धभवप्रपञ्चो यावत् निष्ठितार्थकरणीयो नो पुनरपि अत्रस्थं हव्वं आगच्छति, हन्त गौतम ! मृतादी निर्ग्रन्थो यावत् नो पुनरपि अत्रस्थं हव्वं आगच्छति । स खलु भदन्त ! किं वक्तव्यं

अभी पहिले ऐसा प्रतिपादन किया जा चुका है कि जो श्रमण निर्ग्रन्थ प्रासुक भोजी तो है, परन्तु यदि वह अनिरुद्धभवप्रपंच आदि विशेषणवाले है तो उसका भी चतुर्गतिरूप संसार सागर में ही बार २ भ्रमण होता रहता है । अब सूत्रकार यह कहतें हैं कि जो श्रमण निर्ग्रन्थ प्रासुक आहार भोजी है और साथ में निरुद्धभवप्रपंच आदि विशेषणवाला भी है तो उसकी क्या गति होती है सो कहते हैं 'मडाई णं भंते' इ.

सूत्रार्थ-(भंते ! निरुद्धभवे निरुद्धभवपवंचे जाव निट्ठियट्ठकरणिज्जे मडाई णं नियंठे) हे भदन्त ! जिसने अपना अग्रेतन जन्म निरुद्ध कर दिया है, अपने भवप्रपंच को रोक दिया है यावत् जिसका कार्य पूर्ण हुए कार्य की तरह पूर्ण समाप्त हो चुका है ऐसा वह मृतादी श्रमण निर्ग्रन्थ क्या (पुणरवि इत्थत्थं हव्वं णो आगच्छइ) फिर से भी मनुष्य आदि गतिरूप संसार को प्राप्त नहीं करता है ? (हंता गोयमा) हां गौतम ! (मडाई णं णियंठे जाव पुणरवि इत्थत्थं हव्वं नो आगच्छइ) निरुद्धभव आदि विशेषण वाला मृतादी श्रमण निर्ग्रन्थ यावत् फिर से भी मनुष्य

આગળ એવું પ્રતિપાદન કરવામા આવ્યું છે કે જે શ્રમણ નિર્ગ્રંથ પ્રાસુક આહાર ગ્રહણ કરનાર છે, પણ અનિરુદ્ધ ભવપ્રપંચ આદિ વિશેષણો વાળો હોય છે તેને પણ ચતુર્ગતિરૂપ સંસારમા વારવાર ભ્રમણ કરવું પડે છે. હવે એ બતાવામાં આવે છે કે જે શ્રમણ નિર્ગ્રંથ પ્રાસુક આહારનો ઉપયોગ કરતો હોય અને નિરુદ્ધ ભવપ્રપંચ વગેરે વિશેષણો વાળો હોય તેની કેવી ગતિ થાય છે !

"मडाई ण भंते !"

સૂત્રાર્થ- (भंते ! निरुद्धभवे निरुद्धभवपवंचे जाव निट्ठियट्ठकरणिज्जे मडाईणं नियंठे) હેભગવન્ ! જેણે પોતાના આગામી ભવનો નિરોધ કરી નાખ્યો છે, પોતાના ભવવિસ્તારનો નિરોધ કર્યો છે, યાવત્ જેનુ કાર્ય સંપૂર્ણ થયેલા કાર્યની જેમ પૂર્ણ થઇ ગયેલુ છે (એટલે એવો કે જે કૃતકૃત્ય થઇ ગયેલ છે) એવો મૃતાદી શ્રમણ નિર્ગ્રંથ શુ (पुणरवि इत्थत्थं हव्वं णो आगच्छइ ?) ફરીથી મનુષ્ય વગેરે ચાર ગતિ વાળા સંસારને પ્રાપ્ત કરતો નથી ? (हंता गोयमा !) હા ગૌતમ ! (मडाई ण णियंठे जाव पुणरवि इत्थत्थं हव्व नो आगच्छइ) નિરુદ્ધ ભવ વગેરે વિશેષણો વાળો મૃતાદી શ્રમણ નિર્ગ્રંથ મનુષ્ય વગેરે ચતુર્ગતિરૂપ

स्यात्, गौतम सिद्ध इति वक्तव्य स्यात् बुद्ध इति वक्तव्य स्यात् मुक्त इति वक्तव्यं स्यात्, पारगत इति वक्तव्य स्यात्, परंपरागत इति वक्तव्यं स्यात्, सिद्धः बुद्धः मुक्त परिनिर्वृत अन्तकृत' सर्वदुःखप्रहीण इति वक्तव्यं स्यात्, तदेवं भदन्त! तदेवं भदन्त! इति भगवान् गौतम श्रमणं भगवन्त महावीर वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा सयमेन तपसा आत्मानं भावयन् विहरति ॥सू०६॥

आदि गतिरूप ससार को प्राप्त नहीं करता है। (से ण भंते! किं वत्तव्व सिया? हे भदन्त! आत्मकल्याण करने वाला वह श्रमणनिर्ग्रन्थ अनगार किस नाम से कहा जा सकता है? (गोयमा) हे गौतम! (सिद्धेत्ति वत्तव्व सिया) पूर्वोक्त विशेषण वाला यह श्रमण निर्ग्रन्थ अनगार (सिद्ध) इस नाम से कहा जा सकता है। (बुद्धेत्ति वत्तव्व सिया) बुद्ध इस नाम से कहा जा सकता है। (मुत्तेत्ति वत्तव्वं सिया) (मुक्त) इस नाम से कहा जा सकता है। (पारगए त्ति वत्तव्व सिया) (पारगत) इस नाम से कहा जा सकता है। (परपरगए त्ति वत्तव्वं सिया) (परंपरागत) इस नाम से कहा जा सकता है। (सिद्धे बुद्धे मुत्ते, परिनिव्वुडे अंतकडे, सव्वदुक्खप्पहीणे त्ति वत्तव्व सिया) सिद्ध, बुद्ध, मुक्त, परिनिर्वृत, अन्तकृत, सर्वदुःखप्रहीण इस तरह इन शब्दों द्वारा यह कहा जा सकता है। (सेव भंते! सेवं भंते! भगव गोयमे समणं भगव महावीरं वदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता सजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ) हे भदन्त! आपने जो कहा है वह ऐसा

સસારમા ફરી જન્મ લેતો નથી. (સે ણં ભંતે! કિં વત્તવ્વં સિયા?) હે ભગવન્ આત્મકલ્યાણ કરનાર તે શ્રમણ નિર્ગ્રન્થને કયા કયા નામે ઓળખી શકાય? (ગોયમા!) હે ગૌતમ! (સિદ્ધેત્તિ વત્તવ્વ સિયા) પૂર્વોક્ત વિશેષણોવાળા તે શ્રમણ નિર્ગ્રન્થને 'સિદ્ધ' નામથી કહી શકાય છે, (બુદ્ધેત્તિ વત્તવ્વં સિયા) 'બુદ્ધ' પણ કહી શકાય છે, (મુત્તત્તિ વત્તવ્વં સિયા) "મુક્ત" પણ કહી શકાય છે, (પારગએ ત્તિ વત્તવ્વં સિયા) 'પારગત' પણ કહી શકાય છે (પરંપરગએ ત્તિ વત્તવ્વ સિયા) 'પરંપરાગત' પણ કહી શકાય છે (સિદ્ધે બુદ્ધે, મુત્તે પરિનિવ્વુડે અંતકડે સવ્વદુક્ખપ્પહીણે ત્તિ વત્તવ્વ સિયા) સિદ્ધ બુદ્ધ, મુક્ત પરિનિર્વૃત, અન્તકૃત અને સર્વ દુઃખ પ્રહીણ પણ કહી શકાય છે (સેવં ભંતે! સેવં ભંતે! ભગવં ગોયમે સમણં ભગવં મહાવીરં વંદઇ નમંસઇ વંદિત્તા નમંસિત્તા સંજમેણં તવસા અપ્પાણં ભાવેમાણે વિહરઇ) હે ભગવન્! આપે જે કહ્યું તે યથાર્થ જ છે હે ભગવન્! આપની વાત સાચી છે આ પ્રમાણે કહીને ભગવન્

छाया—मृतादी खलु भदन्त ! निर्ग्रन्थो निरुद्धभवो निरुद्धभवप्रपञ्चो यावत् निष्ठितार्थकरणीयो नो पुनरपि अत्रस्थं हव्वं आगच्छति, हन्त गौतम ! मृतादी निर्ग्रन्थो यावत् नो पुनरपि अत्रस्थं हव्वं आगच्छति। स खलु भदन्त ! किं वक्तव्यं

अभी पहिले ऐसा प्रतिपादन किया जा चुका है कि जो श्रमण निर्ग्रन्थ प्रासुक भोजी तो है, परन्तु यदि वह अनिरुद्धभवप्रपंच आदि विशेषणवाले है तो उसका भी चतुर्गतिरूप संसार सागर में ही वार २ भ्रमण होता रहता है। अब सूत्रकार यह कहतें हैं कि जो श्रमण निर्ग्रन्थ प्रासुक आहार भोजी है और साथ में निरुद्धभवप्रपंच आदि विशेषणवाला भी है तो उसकी क्या गति होती है सो कहते हैं 'मडाई णं भंते' इ.

सूत्रार्थ-(भंते ! निरुद्धभवे निरुद्धभवपवंचे जाव निट्ठियट्ठकरणिज्जे मडाई णं नियंठे) हे भदन्त ! जिसने अपना अग्रेतन जन्म निरुद्ध कर दिया है, अपने भवप्रपंच को रोक दिया है यावत् जिसका कार्य पूर्ण हुए कार्य की तरह पूर्ण समाप्त हो चुका है ऐसा वह मृतादी श्रमण निर्ग्रन्थ क्या (पुणरवि इत्थत्थं हव्वं णो आगच्छइ) फिर से भी मनुष्य आदि गतिरूप संसार को प्राप्त नहीं करता है? (हंता गोयमा) हां गौतम ! (मडाई णं णियंठे जाव पुणरवि इत्थत्थं हव्वं नो आगच्छइ) निरुद्धभव आदि विशेषण वाला मृतादी श्रमण निर्ग्रन्थ यावत् फिर से भी मनुष्य

આગળ એવું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે કે જે શ્રમણ નિર્ગ્રંથ પ્રાસુક આહાર ગ્રહણ કરનાર છે, પણ અનિરુદ્ધ ભવપ્રપંચ આદિ વિશેષણો વાળો હોય છે તેને પણ ચતુર્ગતિરૂપ સંસારમા વારવાર ભ્રમણ કરવું પડે છે. હવે એ બતાવામા આવે છે કે જે શ્રમણ નિર્ગ્રંથ પ્રાસુક આહારનો ઉપયોગ કરતો હોય અને નિરુદ્ધ ભવપ્રપંચ વગેરે વિશેષણો વાળો હોય તેની કેવી ગતિ થાય છે !

"मडाई णं भंते !"

સૂત્રાર્થ– (भंते ! निरुद्धभवे निरुद्धभवपवंचे जाव निट्ठियट्ठकरणिज्जे मडाईणं नियंठे) હેભગવન્ ! જેણે પોતાના આગામી ભવનો નિરોધ કરી નાખ્યો છે, પોતાના ભવવિસ્તારનો નિરોધ કર્યો છે, યાવત્ જેનુ કાર્ય સંપૂર્ણ થયેલા કાર્યની જેમ પૂર્ણ થઇ ગયેલુ છે (એટલે એવો કે જે કૃતકૃત્ય થઇ ગયેલ છે) એવો મૃતાદી શ્રમણ નિર્ગ્રંથ શું (पुणरवि इत्थत्थं हव्वं णो आगच्छइ ?) ફરીથી મનુષ્ય વગેરે ચાર ગતિ વાળા સંસારને પ્રાપ્ત કરતો નથી ? (हंता गोयमा !) હા ગૌતમ ! (मडाई णं णियंठे जाव पुणरवि इत्थत्थं हव्वं नो आगच्छइ) નિરુદ્ધ ભવ વગેરે વિશેષણો વાળો મૃતાદી શ્રમણ નિર્ગ્રંથ મનુષ્ય વગેરે ચતુર્ગતિરૂપ

स्यात्, गौतम सिद्ध इति वक्तव्यं स्यात् बुद्ध इति वक्तव्य स्यात् मुक्त इति वक्तव्यं स्यात्, पारगत इति वक्तव्यं स्यात्, परंपरागत इति वक्तव्यं स्यात्, सिद्धः बुद्ध मुक्त परिनिर्वृतः अन्तकृत सर्वदुःखप्रहीण इति वक्तव्य स्यात्, तदेवं भदन्त ! तदेव भदन्त ! इति भगवान् गौतम श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा संयमेन तपसा आत्मानं भावयन् विहरति ॥सू०६॥

आदि गतिरूप संसार को प्राप्त नहीं करता है। (से ण भंते ! किं वत्तव्व सिया ? हे भदन्त ! आत्मकल्याण करने वाला वह श्रमणनिर्ग्रन्थ अनगार किस नाम से कहा जा सकता है ? (गोयमा) हे गौतम ! (सिद्धेत्ति वत्तव्व सिया) पूर्वोक्त विशेषण वाला वह श्रमण निर्ग्रन्थ अनगार (सिद्ध) इस नाम से कहा जा सकता है। (बुद्धेत्ति वत्तव्व सिया) बुद्ध इस नाम से कहा जा सकता है। (मुत्तेत्ति वत्तव्वं सिया) (मुक्त) इस नाम से कहा जा सकता है। (पारगए त्ति वत्तव्व सिया) (पारगत) इस नाम से कहा जा सकता है। (परपरगए त्ति वत्तव्वं सिया) (परंपरागत) इस नाम से कहा जा सकता है। (सिद्धे बुद्धे मुत्ते, परिनिव्वुडे अंतकडे, सव्वदुक्खपहीणे त्ति वत्तव्व सिया) सिद्ध, बुद्ध, मुक्त, परिनिर्वृत, अन्तकृत, सर्वदुःखप्रहीण इस तरह इन शब्दों द्वारा वह कहा जा सकता है। (सेवं भंते ! सेवं भंते ! भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ) हे भदन्त ! आपने जो कहा है वह ऐसा

સંસારમાં ફરી જન્મ લેતો નથી. (से भंते ! किं वत्तव्वं सिया ?) હે ભગવન્ આત્મકલ્યાણ કરનાર તે શ્રમણ નિર્ગ્રંથને કયાં કયાં નામે ઓળખી શકાય ! (गोयमा !) હે ગૌતમ ! (सिद्धेत्ति वत्तव्व सिया) પૂર્વોક્ત વિશેષણોવાળા તે શ્રમણ નિર્ગ્રંથને 'સિદ્ધ" નામથી કહી શકાય છે, (बुद्धेत्ति वत्तव्वं सिया) "બુદ્ધ" પણ કહી શકાય છે, (मुत्तेत्ति वत्तव्वं सिया) "મુક્ત" પણ કહી શકાય છે, (पारगए त्ति वत्तव्वं सिया) "પારગત" પણ કહી શકાય છે (परपरगए त्ति वत्तव्व सिया) "પરંપરાગત" પણ કહી શકાય છે,(सिद्धे, बुद्धे, मुत्ते, परिनिव्वुडे, अंतकडे, सव्वदुक्खपहीणेत्ति वत्तव्व सिया) સિદ્ધ, બુદ્ધ, મુક્ત પરિનિર્વૃત, અંતકૃત અને સર્વ દુઃખ પ્રહીણ, પણ કહી શકાય છે (सेवं भंते ! सेव भंते ! भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ) હે ભગવન્ ! આપે જે કહ્યું તે યથાર્થ જ છે હે ભગવન્ ! આપની વાત સાચી છે આ પ્રમાણે કહીને ભગવન્

टीका—'मडाई णं भंते' मृतादी खलु भदन्त ! 'नियंठे' निर्ग्रन्थः 'निरुद्धभवे' निरुद्धभवः निरुद्धः भव. अग्रेतनं जन्म येन स निरुद्धभवः चरमभवप्राप्त इत्यर्थः, 'निरुद्धभवपवंचे' निरुद्धभवप्रपञ्चः अप्राप्तभवविस्तार इत्यर्थः, 'जाव निट्ठियट्ठकरणिज्जे' यावत् निष्ठितार्थकरणीयः यावत्पदेन-'पहीणसंसारे, पहीणसंसारवेयणिज्जे, वोच्छिन्नसंसारवेयणिज्जे, निट्ठियट्ठे' एतेषां विशेषणानाम् ग्रहणं कर्तव्यम् , तत्र 'पहीणसंसारे' प्रहीणसंसारः दूरीकृतचतुर्गतिगमन इत्यर्थः, 'पहीणसंसारवेयणिज्जे' प्रहीणसंसारवेदनीयः, प्रहीणसंसारवेद्यकर्मा, 'वोच्छिन्नसंसारे' व्यवच्छिन्नसंसारः, त्रुटितचतुर्गतिगमनानुबन्धः, अतएव-'वोच्छिन्नसंसारवेयणिज्जे' व्यवच्छिन्नसंसारवेदनीयः, व्यवच्छिन्नम् अनुबन्ध

ही है अर्थात् सत्य है इस प्रकार कह कर भगवान् गौतम ने श्रमण भगवान् महावीर को वंदन किया, नमस्कार किया। वंदन नमस्कार करके फिर वे संयम और तप से अपनी आत्मा को भावित करते हुए विचरने लगे ॥ सू-६ ॥

टीकार्थ—(मडाई णं भंते नियंठे) हे भदन्त ! मृतादी निर्ग्रन्थ कि जिसने अपना (निरुद्धभवे) अग्रेतन जन्म निरुद्ध कर दिया है, अर्थात् जो चरमभव को प्राप्त हुआ है (निरुद्धभवपवंचे) जिसे अब भव का विस्तार प्राप्त करना बाकी नहीं रहा है (जाव निट्ठियट्ठकरणिज्जे) यावत् निष्ठितार्थ करणीय (पहीणसंसारे) जिसने चतुर्गति में भ्रमण करने रूप अपने संसार को दूर कर दिया है' (पहीणसंसार वेयणिज्जे) संसारवेद्यकर्म जिसका नष्ट हो चुका है (वोच्छिन्न संसारे) जिसका चतुर्गति गमनानुबंध टूट चुका है अतएव (वोच्छिन्नसंसारवेयणिज्जे)

ગૌતમે ભગવાન મહાવીરને વંદણા કરી નમસ્કાર કર્યા વંદણા નમસ્કાર કરીને તેઓ સંયમ અને તપથી પોતાના આત્માને ભવિત કરતા વિચારવા લાગ્યા, એટલે કે પોતાને સ્થાને ગયા. ॥ સૂ ૬ ॥

ટીકાર્થ–"मडाई ण भंते ! नियठे" હે ભગવન્ ! મૃતાદી નિર્ગ્રંથ અચિત્ત વસ્તુનો આહાર કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રંથ કે જેણે (निरुद्धभवे) પોતાના આગામી ભવનો નિરોધ કર્યો છે એટલે કે જે ચરમભવને પામેલા છે, (निरुद्धभवपवंचे) જેને ભવનો વિસ્તાર પ્રાપ્ત કરવાનુ બાકી રહેલ નથી, (पहीणसंसारे) જેણે ચતુર્ગતિરૂપ સંસારમાં ભ્રમણ કરવાનું દૂર કરી નાખ્યું છે (पहीणसंसारवेयणिज्जे) જેના સંસારવેદ્ય કર્મ નષ્ટ થઇ ચૂકયાં છે, (वोच्छिन्नसंसारे) ચતુર્ગતિરૂપ સંસારમાં ગમન કરાવનાર કર્મનો બંધ જેને તૂટી ગયો છે, "वोच्छिन्न ... णिज्जे" જેના સંસાર વેદનીય કર્મનો સર્વથા

व्यवच्छेदेन विनाशित चतुर्गतिगमनवद्य कर्म यत्न स व्यवच्छिन्नससारवेदनीय इति, 'निट्टियट्टे' निष्ठितार्थ =सपादितमयोजन 'निट्ठियट्ठकरणिज्जे' निष्ठितार्थकरणीय, निष्ठितः=सम्पन्न अर्थः=प्रयोजनं यत्र सः, एतादृशः करणीयः= कर्तव्यो यस्य स तथा कृतकृत्य इत्यर्थ, एतादृशः स मृतादी अनगार 'णो पुणरवि' नो पुनरपि 'इत्यत्थ' अत्रस्थ–मर्म=तिर्यङ्नरामरनारकरूपचतुर्गतिभ्रमणलक्षणं ससारं 'हव्व' इति वाक्यालङ्कारे 'आगच्छइ' आगच्छति, न संसारे समायातीत्यर्थः, हे भदन्त ! येन ससारस्य निरोध कृतः संसारप्रपञ्चापि दूरीकृतः तथा व्यवच्छिन्नससारादिविशेषणयुतः संपादितमयोजनादिः मुनिः स किं पुनः पुन ने ससारचक्रमागच्छतीति प्रश्नः । भगवानाह–'गोयमा' इत्यादि, 'गोयमा' हे गौतम ! 'मडाई णं नियंठ' मृतादी खलु निर्ग्रन्थ, 'जाव नो पुणरवि', यावत् नो पुनरपि 'इत्यत्थ' अत्रस्थ=तिर्यङ्नरामरनारकगतिगमनलक्षणं संसारम् 'हव्व आगच्छइ' हव्यं आगच्छति, न पुनः संसारमागच्छतीत्यर्थः

ससार वेदनीयकर्म जिसका व्यवच्छिन्न हो गया है, अर्थात् अनुबंध के व्यवच्छेद से जिसने चतुर्गतिगमन वेद्य कर्म नष्ट कर दिया है (निट्ठियट्ठे) जिसने अपना कार्य सिद्ध कर लिया है (निट्ठियट्ठकरणिज्जे) तथा–जिसका कार्य पूर्ण हुए कार्य की तरह पूर्ण समाप्त हो चुका है–अर्थात् जो कृतकृत्य हो चुका है ऐसा वह मृतादी अनगार (इत्यत्थ) अत्रस्थभव को–अर्थात् चतुर्गतिभ्रमण रूप संसार को क्या (णो पुणरवि आगच्छइ) फिर से नहीं प्राप्त करता है ? अर्थात् ऐसा श्रमण अनगार फिर से ससारमें जन्ममरण नहीं करता है क्या ? इसका उत्तर देते हुए प्रभु गौतम से कहते हैं–(गोयमा) हे गौतम ! (मडाई णं नियंठ) मृतादी निर्ग्रन्थ (जाव नो पुणरवि इत्यत्थं हव्वं आगच्छइ) यावत् फिर के वह चतुर्गति भ्रमणरूप समार में नहीं आता है । अर्थात् सिद्ध हो

नाश थई गयो छे એटले के अनुबंधना छेदनने लीधे जेणे चारगतिरूप संसारमां भ्रमण करावनार वेद्य कर्मोनो नाश करी नाख्यो छे (निट्ठियट्ठे) जेणे पोतानुं कार्य सिद्ध करी लीधुं छे, (निट्ठियट्ठकरणिज्जे) तथा जे कृतकृत्य थई गयेल छे एवो ते मृतादी अणगार (इत्यत्थं) चतुर्गति भ्रमणरूप संसारने शुं (णो पुणरवि आगच्छइ) फरीथी प्राप्त करतो नथी ? એटले के एवो श्रमण निर्ग्रन्थ शुं संसारमां फरीथी जन्म मरण पामतो नथी; तेनो उत्तर प्रभु आ प्रमाणे आपे छे 'गोयमा !' हे गौतम ! 'मडाई ण नियंठे' एवो मृतादी निर्ग्रन्थ (जाव णो पुणरवि इत्यत्थं हव्वं आगच्छइ) फरीथी आ चार गतिवाळा संसारमां जन्म लेतो नथी. એटले के ते सिद्धपद पामे छे ते श्रमण निर्ग्रन्थने

टीका—'मडाई णं भंते' मृतादी खलु भदन्त ! 'नियंठे' निर्ग्रन्थः 'निरुद्धभवे' निरुद्धभवः निरुद्धः भवः अग्रेतनं जन्म येन स निरुद्धभवः चरमभवप्राप्त इत्यर्थः, 'निरुद्धभवपवंचे' निरुद्धभवप्रपञ्चः अप्राप्तभवविस्तार इत्यर्थः, 'जाव निट्ठियट्ठकरणिज्जे' यावत् निष्ठितार्थकरणीयः यावत्पदेन–'पहीणसंसारे, पहीणसंसारवेयणिज्जे, वोच्छिन्नसंसारवेयणिज्जे, निट्ठियट्ठे' एतेषां विशेषणानाम् ग्रहणं कर्तव्यम्, तत्र 'पहीणसंसारे' प्रहीणसंसारः दूरीकृतचतुर्गतिगमन इत्यर्थः, 'पहीणसंसारवेयणिज्जे' प्रहीणसंसारवेदनीयः, प्रहीणसंसारवेद्यकर्मा, 'वोच्छिन्नसंसारे' व्यवच्छिन्नसंसारः, त्रुटितचतुर्गतिगमनानुबन्धः, अतएव–'वोच्छिन्नसंसारवेयणिज्जे' व्यवच्छिन्नसंसारवेदनीयः, व्यवच्छिन्नम् अनुबन्ध

ही है अर्थात् सत्य है इस प्रकार कह कर भगवान् गौतम ने श्रमण भगवान् महावीर को वंदन किया, नमस्कार किया। वंदन नमस्कार करके फिर वे संयम और तप से अपनी आत्मा को भावित करते हुए विचरने लगे ॥ सू–६ ॥

टीकार्थ—(मडाई णं भंते नियंठे) हे भदन्त ! मृतादी निर्ग्रन्थ कि जिसने अपना (निरुद्धभवे) अग्रेतन जन्म निरुद्ध कर दिया है, अर्थात् जो चरमभव को प्राप्त हुआ है (निरुद्धभवपवंचे) जिसे अब भव का विस्तार प्राप्त करना बाकी नहीं रहा है (जाव निट्ठियट्ठकरणिज्जे) यावत् निष्ठितार्थ करणीय (पहीणसंसारे) जिसने चतुर्गति में भ्रमण करने रूप अपने संसार को दूर कर दिया है' (पहीणसंसार वेयणिज्जे) संसारवेद्यकर्म जिसका नष्ट हो चुका है (वोच्छिन्न संसारे) जिसका चतुर्गति गमनानुबंध टूट चुका है अतएव (वोच्छिन्नसंसारवेयणिज्जे)

ગૌતમે ભગવાન મહાવીરને વંદણા કરી નમસ્કાર કર્યા વંદણા નમસ્કાર કરીને તેઓ સંયમ અને તપથી પોતાના આત્માને ભવિત કરતા વિચારવા લાગ્યા, એટલે કે પોતાને સ્થાને ગયા ॥ સૂ. ૬ ॥

ટીકાર્થ–"मडाई ण भंते ! नियंठे" હે ભગવન્ ! મૃતાદી નિર્ગ્રંથ અચિત્ત વસ્તુનો આહાર કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રંથ કે જેણે (निरुद्धभवे) પોતાના આગામી ભવનો નિરોધ કર્યો છે એટલે કે જે ચરમભવને પામેલા છે, (निरुद्धभवपवचे) જેને ભવનો વિસ્તાર પ્રાપ્ત કરવાનું બાકી રહેલ નથી, (पहीणसंसारे) જેણે ચતુર્ગતિરૂપ સંસારમાં ભ્રમણ કરવાનું દૂર કરી નાખ્યું છે. (पहीणसंसारवेयणिज्जे) જેના સંસારવેદ્ય કર્મ નષ્ટ થઇ ચૂક્યાં છે, (वोच्छिन्नसंसारे) ચતુર્ગતિરૂપ સંસારમાં ગમન કરાવનાર કર્મનો બંધ જેને તૂટી ગયો છે, "वोच्छिन्नसंसारवेयणिज्जे" જેના સંસાર વેદનીય કર્મનો સર્વથા

गत इति वक्तव्य स्यात्, ससारपारगामित्वात् यद्यपि एतादृशो मुनिर्नेदानीं संसारसागरस्य पारगत' किन्तु कालान्तरे पार गमिष्यमाणत्वात् भाविनि भूतवदुपचारात् पारगत इति कथ्यते, 'परपरागएत्ति वत्तव्व सिया' परंपरागत इति वक्तव्य स्यात्, परंपरया मिथ्यात्वादिगुणस्थानकानां मनुष्यादिगतीनां वा पारं पर्येण गतः=प्राप्त इति परपरागत' अथवा परंपरया मुक्तपुरुषाणां या परंपरा तया परंपरया गतः कर्मजालं व्यतिक्रान्त इति । परंपरागत इति अथ निगमयन्नाह- 'सिद्धे' इत्यादि । 'सिद्धे बुद्धे मुत्ते परिनिव्वुडे अंतकडे सव्वदुक्खप्पहीणेत्ति वत्तव्वं सिया' सिद्धो बुद्धो मुक्तः परिनिर्वृत , अंतकृतः सर्वदुःखप्रहीण इति वक्तव्यं

के कारण वह (पारगत) इस शब्द से कहा जाता है। यद्यपि ऐसा मुनि अभी ससार सागर के पारगत नहीं हुआ है आगे वह उसके पार को प्राप्त करने वाला बनेगा-परन्तु अभी जो उसे (पारगत) इस शब्द से व्यवहार का विषयभूत कह दिया गया है सो उसको होने वाली अवस्था को यहां हो चुकी अवस्था मानकर (पारगत) कहा गया है। (परंपरगएत्ति वत्तव्वं सिया) परंपरागत इस शब्द से जो उसे वक्तव्य कहा गया है उसका तात्पर्य यह है कि उसने जो संसाररूप समुद्र की पार को प्राप्त किया, वह मिथ्यात्व आदि गुणस्थानों की अथवा मनुष्य आदि सुगति की परंपरा से प्राप्त किया है। अथवा मुक्त पुरुषों की जो परम्परा कर्म जाल से दूर होने की है उसी परंपरा के अनुसार यह भी कर्म जाल से दूर हुआ है अतः यह (परंपरागत) इस शब्द से भी व्यवहार का विषय बन सकता है। अब कथित अर्थ को निगमन करते हुए सूत्रकार कहते हैं कि-(सिद्धे, बुद्धे, मुत्ते, परिनिव्वुडे, अन्तकडे,

तरी गया होय छे तेथी तेमने माटे "पारगत" शब्दनो प्रयोग पण करी शकाय छे जो के ते मुनि हजु संसार सागरने तरी गया नथी, छतां पण तेमने माटे "पारगत" शब्दनो जे प्रयोग करवामां आव्यो छे ते आगत प्राप्त थनारी सिद्ध अवस्था प्राप्त थई चूकी एवु मानीने करवामां आवेल छे (परंपरगएत्ति वत्तव्व सिया) तेमने 'परंपरागत" कहेवानुं कारण ए छे के तेमणे जे संसाररूपी समुद्रने पार करीने मोक्षनी प्राप्ति करी छे ते मिथ्यात्व वगेरे गुणस्थानोनी अथवा मनुष्य वगेरे सुगतिनी परंपराथी प्राप्त करेल छे अथवा कर्मजाळथी दूर रहेवानी मुक्त पुरुषोनी जे परंपरा छे ते परंपराने अनुसरीने ज तेओ कर्मजाळथी दूर रह्या छे तेथी तेमने "माटे परंपरागत" शब्दनो पण प्रयोग करी शकाय छे हवे कथित अर्थनी समाप्ति करवाने माटे सूत्रकार कहे छे के (सिद्धे, बुद्धे, मुत्ते, परिनिव्वुडे, अंतकडे, सव्वदुक्ख

अत्र यावत्पदेन निरुद्धसंसारे निरुद्धसंसारपवंचे वोच्छिन्नसंसारे इत्यादि प्रश्न-प्रकरणोक्तसर्वविशेषणानां संग्रहः करणीयः, हे गौतम ! पूर्वकथितनिरुद्धसंसारादि विशेषणविशिष्टो मृतादी निर्ग्रन्थः न पुनः संसारं प्राप्नोतीति भावः । एतादृशो निर्ग्रन्थजीवः केन केन शब्देन व्यवहरणीय इत्याशयेनाह–' से णं भंते' इत्यादि । ' से णं भंते ' स खलु भदन्त ! ' किं वत्तव्वं सिया ' किं वक्तव्यं स्यात्, केन शब्देन व्यवहरणीय इत्यर्थः । भगवानाह—' गोयमा ' इत्यादि । ' गोयमा ' हे गौतम ! ' सिद्धेत्ति वत्तव्वं सिया ' सिद्ध इति वक्तव्यं स्यात्, सिद्ध इति शब्देन व्यवहरणीयः कृतसकलकार्यत्वात् । 'बुद्धेत्ति वत्तव्व सिया' बुद्ध इति वक्तव्यं स्यात्, विमलकेवलालोकेन सकललोकालोकयोर्दर्शकत्वात्, 'मुत्तेत्ति वत्तव्वं सिया' मुक्त इति वक्तव्यं स्यात्, नष्टसकलकर्मत्वात् ' पारगएत्ति वत्तव्वं सिया ' पार-

जाता है । ऐसा श्रमण निर्ग्रन्थ जीव किस किस शब्द के द्वारा व्यवहारणीय होता है ? ऐसा पूछने के अभिप्राय से अब गौतम स्वामी प्रभु महावीर से प्रश्न करते हैं-(से णं भंते ! किं वत्तव्वं सिया) हे भदन्त ! वह पूर्वोक्त विशेषण वाला श्रमण निर्ग्रन्थ किन २ नामों से कहा जाता है ? तब प्रभु कहते हैं-(गोयमा) हे गौतम ! (सिद्धे त्ति वत्तव्वं सिया) वह (सिद्ध) इस शब्दसे व्यवहार करनेके योग्य बन जाता है-क्यों कि वह अपने सकल कार्यों को कर चुका है । (बुद्धे त्ति वत्तव्वं सिया) विमल केवलरूप अलोक से वह सकल लोक और अलोक का साक्षात् ज्ञाता द्रष्टा हो जाने के कारण (बुद्ध) इस शब्द से व्यवहार करने योग्य हो जाता है । (मुत्ते त्ति वत्तव्वं सिया) ज्ञानावरण आदि आठों कर्मनष्ट हो जाने के कारण वह (मुक्त) इस शब्द से कहने योग्य हो जाता है । (पारगए त्ति वत्तव्वं सिया) संसार से पारगामी बन जाने

કયા કયાં નામે ઓળખવામાં આવે છે તે જાણુવાને માટે ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને પૂછે છે કે (से ण भंते ! किं वत्तव्वं सिया) હે ભગવન્ ! પૂર્વોક્ત વિશેષણોવાળા તે શ્રમણ નિર્ગ્રંથને કયાં કયા નામે ઓળખવામાં આવે છે ! ઉત્તર- (गोयमा !) હે ગૌતમ ! (सिद्धे,त्ति वत्तव्वं सिया) તેમને માટે. સિદ્ધ પદનો પ્રયોગ કરી શકાય છે કારણુ કે તેમણે તેમનાં તમામ કાર્યો સિદ્ધ કરી લીધાં હોય છે (बुद्धत्ति वत्तव्वं सिया) વિમળ કેવળજ્ઞાન વડે તેઓ સમસ્ત લોક અને અલોકના જ્ઞાતા અને દ્રષ્ટા બની જાય છે તેથી તેમને "બુદ્ધ" પણ કહી શકાય છે (मुत्तेत्ति वत्तव्व सिया) જ્ઞાનાવરણીય વગેરે આઠે કર્મોનો ક્ષય થઇ જવાને કારણે તેમને "મુક્ત" પણ કહી શકાય છે. "पारगए त्ति वत्तव्वं सिया) તેમણે સંસારને પાર કર્યો હોય છે- સંસાર સાગરને તેઓ

अथ श्रीस्कन्दकप्रकरणम्—

पूर्वं संयतजीवविषये ससारस्य वृद्धिहानिभ्वेवि द्वय सिद्धत्वं च कथितम्, साम्प्रत तु तेषां तदितरेषां चार्थानां प्रतिपादनार्थं स्कन्दकचरित्रमाह— 'तेण कालेणं' इत्यादि।

मूलम्—तेण कालेण तेण समएण समणे भगव महावीरे रायगिहाओ नयराओ गुणसीलाओ चइआओ पडिनिक्खमइ, पडिनिक्खमित्ता वहिया जाणवयविहार विहरइ। तेणं कालेण तेण समएण कयगला नाम नगरी होत्था वण्णओ तीसे ण कयगलाए नगरीए वहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसिभाए छत्तपलासए णाम चेइए होत्था वण्णओ, तएण समणे भगव महावीरे उप्पन्ननाणदसणधरे जाव समोसरण परिसा निग्गया। तीसे णं कयगलाए नगरीए अदूरसामते सावत्थी नाम नयरी होत्था वण्णओ, तत्थ णं सावत्थीए नयरीए गद्दभालस्स अतेवासी खदए णाम कच्चायणस्स गोत्ते परिव्वायगे परिवसइ, रिउवेय जज्जुव्वेय सामवेय, अहव्वणवेयाण, इतिहास पचमाण निघट्ट छट्ठाण, चउण्ह वेयाण संगोवगाण सरह स्साणं, सारए वारए, धारए, पारए, सडगवी सट्ठिततवि सारए सखाणे सिक्खाकप्पे वागरणे छदे निरुत्ते जोइसामयणे अन्नेसु य बहूसु बभण्णएसु परिव्वायाएसु नयेसु सुपरिनिट्ठिए यावि होत्था, तत्थ णं सावत्थीए नयरीए पिंगलए णाम नियठे वेसालिय सावए परिवसइ, तएणं से पिंगलए णाम नियठे वेसालिय सावए अन्नया कयाइ जेणेव खदए कच्चायणस्स

स्यात्, निरुद्धसंसारादिविशेपण युक्तो निर्ग्रन्थजीवः सिद्धः बुद्धः मुक्तः परिनिर्वृतोऽन्तकृतसर्वदुःखप्रक्षीण इत्यादिशब्दैर्व्यवहर्तुं योग्यो भवतीति भावः। इदानीं प्रकरणमुपसंहरन्नाह—'सेवं भंते' इत्यादि। 'सेवं भंते सेवं भंते' तदेवं भदन्त! हे भगवन् यद् देवानुप्रियेण मृतादिनिर्ग्रन्थविपये कथितं तत् एवमेव सर्वथा सत्यमेव, आप्तवाक्यस्य सत्यत्वात्, 'त्ति' इति एवंरूपेण 'भगवं गोयमे' भगवान् गौतमः 'समणं भगवं महावीरं' श्रमणं भगवन्तं महावीरम् 'वंदइ नमंसइ' वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा 'संजमेण तवसा' संयमेन तपसा 'अप्पाणं' आत्मानं 'भावे माणे' भावयन् 'विहरइ' विहरतीति भावः॥६॥

सव्वदुक्खपहीणे त्ति वत्तव्वं सिया) निरुद्ध संसार आदि विशेषणवाला वह निर्ग्रन्थ जीव सिद्ध, बुद्ध, मुक्त, परिनिर्वृत, अन्तकृत, सर्वदुःखप्रहीण इत्यादि शब्दों द्वारा व्यवहार करने के योग्य हो जाता है। अब प्रकरण के अर्थ का उपसंहार करते हुए गौतम स्वामी कहते हैं (सेवं भंते! सेवं भंते!) हे भदन्त! आप देवानुप्रिय ने जो भूत–पृथिव्यादिक एकेन्द्रिय से लेकर निर्ग्रन्थ श्रमण तक के विषय में कहा है वह सब ऐसा ही है–सर्वथा सत्य ही है। ऐसा कह कर (भगवं गोयमे) भगवान गौतम ने (समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ) श्रमण भगवान महावीर की वंदना की उन्हें नमस्कार किया। वंदना नमस्कार करके फिर वे (संजमेणं तवसा) संयम और तप से (अप्पाणं भावेमाणे) अपनी आत्मा को भावित करते हुए (विहरइ) विचरने लगे अर्थात् अपने आसन पर विराजमान हो गये॥ सू०६॥

पहीणेत्ति वत्तव्वं सिया) निरुद्ध भव वगेरे विशेषणुवाळो ते श्रमणु निर्ग्रंथ જીવ, સિદ્ધ, બુદ્ધ, મુક્ત, પરિનિર્વૃત, અન્તકૃત અને સર્વ દુઃખ પહીણ વગેરે શબ્દો નો પ્રયોગ પણ તેમને માટે કરી શકાય છે હવે પ્રકરણનો ઉપસંહાર કરવાના આશયથી ગૌતમ સ્વામી કહે છે (सेवं भंते सेवं भंते!) હે ભગવન્! આપ દેવાનુપ્રિયે પૃથિવ્યાદિક એકેન્દ્રિયથી લઈનેશ્રમણ નિર્ગ્રંથ સુધીના જીવોના વિષયમા જે કહ્યુ તે યથાર્થ જ છે તે સર્વથા સત્ય જ છે એ પ્રમાણે કહીને (भगवं गोयमे) ભગવન ગૌતમે (समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ) શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને વંદણા કરી, નમસ્કાર કર્યાં વંદણા નમસ્કાર કરીને (संजमेणं तवसा) સંયમ અને તપથી (अप्पाणं भावेमाणे) પોતાના આત્માને ભાવિત કરતા (विहरइ) વિચારવા લાગ્યા. એટલે પોતાને આસને જઈને બેસી ગયા. સૂ ૬

छाया—तस्मिन् काले तस्मिन् समये श्रमणो भगवान् महावीरो राजगृहा नगरात् गुणशिलकात् चैत्यात् प्रतिनिष्क्रामति प्रतिनिष्क्रम्य बहिर्जनपदविहार विहरति, तस्मिन् काले तस्मिन् समये कृतंगला नाम नगरी आसीत्, वर्णकः तस्याः खलु कृतंगलायाः नगर्याः बहिरुत्तरपौरस्त्ये दिग्भागे छत्रपलाशकं नाम चैत्यमासीत् वर्णकः ततः श्रमणो भगवान् महावीर, उत्पन्नज्ञानदर्शनधर यावत्स-

सिद्धत्व–संसार का सर्वथा क्षय–ये सब कहा है अब उन्हीं विषयों को तथा भिन्न विषयों को प्रतिपादन करने के निमित्त स्कंदक मुनि के चरित्र को सूत्रकार कहते हैं–' तेण कालेणं ' इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तेणं कालेणं तेणं समएणं) उस काल में और उस समय में (समणे भगवं महावीरे) श्रमण भगवान महावीर (रायगिहाओ नयराओ) राजगृह नगर के (गुणसिलाओ चेइयाओ) गुणशिल चैत्य से (पडिनिक्खमइ) निकले । (पडिनिक्खमित्ता) निकल कर (बहिया) बाहर के (जणवयविहारं विहरइ) देशों में उन्हों ने विहार किया । (तेणं कालेणं तेणं समएणं) उस काल में और उस समय में (कयंगला नामं नगरी होत्था) कृतंगला नाम की नगरी थी (वण्णओ) यहां इसका वर्णन चंपा नगरी के समान जानना चाहिये। (तीसे णं कयंगलाए नयरीए) उस कृतंगला नगरी के (बहिया) बाहर (उत्तरपुरत्थिमे दिसिभाए) उत्तरपूर्वदिशा के कोने में-ईशानकोने में (छत्तपलासए णामं चेइए होत्था) छत्रपलाशक नामका चैत्य था (वण्णओ)

સિદ્ધત્વ- સંસારનો સર્વથા ક્ષય- એ વિષયોનું કથન કરવામાં આવ્યું છે હવે એજ વિષયોનું તથા તેમના કરતાં ભિન્ન વિષયોનું પ્રતિપાદન કરવા માટે સૂત્રકાર સ્કંદકમુનિનું ચરિત્ર કહે છે

" तेणं कालेणं " ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ —(तेणं कालेणं तेणं समएणं) તે કાળે અને તે સમયે (समणे भगवं महावीरे) શ્રમણ ભગવાન મહાવીર (रायगिहाओ नयराओ) રાજગૃહ નગરના (गुणसिलाओ चेइयाओ) ગુણશિલ ચૈત્યમાંથી (ઉદ્યાનમાંથી) पडिनिक्खमइ) નીકળ્યા (पडिनिक्खमित्ता) ત્યાંથી નીકળીને (बहिया) બહારના (जणवयविहारं विहरइ) પ્રદેશોમાં તેઓ વિચરવા લાગ્યા. (तेणं कालेणं तेणं समएणं) તે કાળે અને તે સમયે (कयंगला नामं नयरी होत्था) કૃતંગલા નામની નગરી હતી. (वण्णओ) વર્ણન ચંપાનગરી પ્રમાણે જ સમજવું (तीसे णं कयंगलाए नयरीए)તે કૃતંગલા નગરીની (बहिया) બહાર (उत्तर पुरत्थिमे दिसिभाए) ઈશાન ખુણામાં (छत्तपलासए णामं चेइए होत्था) છત્ર પલાશક નામનું ચૈત્ય ઉદ્યાન હતું (वण्णओ) તેનું વર્ણન પૂર્ણભદ્રના

गोत्ते तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता खंदगं कच्चायणस्स-गोत्तं इणमक्खेवं पुच्छइ मागहा किं स अंते लोए अणंते-लोए स अंते जीवे, अणंते जीवे, स अंता सिद्धी, अणंता सिद्धी, स अंते सिद्धे अणंते सिद्धे केण वा मरणेणं मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा एतावं ताव आयक्खाहि वुच्चमाणे एवं। तएणं से खंदए कच्चायणस्सगोत्ते पिंगलएणं णियंठेणं वेसालियसावएणं इणमक्खेवं पुच्छिए समाणे संकिए कंखिए वितिगिच्छिए भेदसमावन्ने कलुससमावन्ने णो संचाएइ पिंगलयस्स नियंठस्स वेसालियसावयस्स किंचि वि पामोक्खं अक्खाइउं तुसिणीए संचिट्ठइ। तएणं से पिंगलए नियंठे वेसालीसावए खंदयं कच्चायणस्सगोत्तं दोच्चंपि तच्चंपि इणमक्खेवं पुच्छे मागहा किं स अंते लोए जाव केण वा मरणेणं मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा एतावं ताव आइक्खाहि वुच्चमाणे एवं। तएणं से खंदए कच्चायणस्सगोत्ते पिंगलएणं णियंठेणं वेसालियसावएणं दोच्चंपि तच्चंपि इणमक्खेवं पुच्छिए समाणे संकिए कांखिए वितिगिच्छिए भेदसमावन्ने कलुससमावन्ने णो संचाएइ पिंगलस्स णियंठस्स वेसालिय सावयस्स किंचिवि पमोक्खं अक्खाइउं तुसणीए संचिट्ठइ ॥ सू० ७ ॥

आर्य श्री स्कन्दक प्रकरण

पहिले प्रकरण में संयत जीव को लेकर संसार की वृद्धि, हानि तथा

આર્ય શ્રી સ્કન્દકનું પ્રકરણ

આગળના પ્રકરણમાં સંયત જીવની અપેક્ષાએ સંસારની વૃદ્ધિ, હાનિ તથા

पारिव्राजकेषु नयेषु सुपरिनिष्ठितश्चाप्यभवत्, तत्र खलु श्रावस्त्यां नगर्यां पिंगलको नाम निर्ग्रन्थो वैशालिकश्रावकः परिवसति, ततः पिंगलको नाम निर्ग्रन्थो वैशालिकश्रावकोऽन्यदा कदाचित् यत्रैव स्कन्दक कात्यायनगोत्रस्तत्रैवोपाग

निरूते जोइसामयणे अन्नेसु बहुसु बम्भण्णएसु परिव्वायएसु नयेसु सुपरिनिट्ठिए यावि होत्था) यह ऋग्वेद, यजुर्वेद, समावेद, अथर्वणवेद इन चार वेदों का जानने वाला था। साथ में इतिहास पुराणों का भी वह ज्ञाता था। निघंटु को भी वह जानता था। केवल इतिहास निघंटु सहित ही यह चारों वेदों का ज्ञाता था सो बात नहीं है किन्तु अङ्गोपाङ्ग सहित एवं रहस्य युक्त चारों वेदों का वह विशेषरूप से ज्ञाता था स्मारक था वारक था धारक था, एतावता ऐसा ज्ञात होता था कि मानों चारों ही वेद इसे कण्ठस्थ हैं। इस तरह वह वेदसंबंधी सम्पूर्ण ज्ञान से परिपूर्ण था। वेदों के छहों अंगों का वेत्ता था। षष्टि तंत्र में विशारद था। गणित शास्त्र में पण्डित था। शिक्षा शास्त्र में, आचार शास्त्र में, व्याकरण शास्त्र में छंदः शास्त्र में व्युत्पत्ति शास्त्र में, ज्योतिष शास्त्र में तथा और भी अनेक ब्राह्मण शास्त्रों में एवं परिव्राजक संबंधी नीति में बहुत अधिक चतुर था। (तत्थ ण सावत्थीए णयरीए पिंगलए नियंठे वेसालियसावए परिवसइ) उसी श्रावस्ती नगरी में वैशालिक के श्रावक एक पिंगलक नामके निर्ग्रन्थ रहते थे। (तएणं से पिंगलए णामं नियंठ

वागरणे छंदे, निरुत्ते जोइसामयणे अन्नेसु बहुसु बम्भण्णएसु परिव्वायएसु नयेसु सुपरिनिट्ठिए यावि होत्था) ते ऋग्वेद, समावेद, अने यजुर्वेद अने अथर्ववेद ओ यारे वेदोनो जाणुकार हतो. साथे साथे ઈतिहास पुराणोनो पण ते जाणकार हतो. ते निघंटुनो पण जाणकार हतो. ઈतिहास निघंटु सहित चारे वेदोनो ते जाणकार हतो ओटलुं ज नहीं पण ते अंग उपांग सहित अने रहस्य सहित चारे वेदोनो विशिष्टरूपे ज्ञाता हतो, स्मारक हतो वारक हतो, अने धारक हतो. तेथी ओवुं लागतुं के तेणे जाणे के चारे वेदोने कंठस्थ करी लीधा छे आ रीते वेदोना विषयमां ते संपूर्ण ज्ञान धरावतो हतो, वेदोनां छओ अंगोनो ते वेत्ता (ज्ञाता) हतो. ते षष्टितंत्रनो पण निष्णात हतो. गणितशास्त्र शिक्षण शास्त्र, आचारशास्त्र व्याकरण शास्त्र, छंद शास्त्र, व्युत्पत्ति शास्त्र ज्योतिष शास्त्र तथा बीजां पण अनेक ब्राह्मण शास्त्रोनो ते विशारद हतो परिव्राजक संबंधी नीतिमां ते घणो ज चतुर हतो (तत्थ णं सावत्थीए णयरीए पिंगलए नियंठे वेसालिए सावए) हवे ओज श्रावस्ती नगरीमां वैशालिक श्रावक, पिंगलक नामनो ओक निर्ग्रंथ रहेतो हतो, (तएणं से पिंगलए णाम नियंठे वेसालिए सावए)

मवसरणं पर्षद् निर्गच्छति। तस्याः खलु कृतंगलायाः नगर्याः अदूरसामन्ते श्रावस्ती नाम नगरी अभवत्, वर्णकः तत्र खलु श्रावस्त्यां नगर्यां गर्दभालस्यांतेवासी स्कन्दको नाम कात्यायनगोत्रः परिव्राजकः परिवसति, ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेदाथर्वणवेदानामितिहासपंचमानां निघण्टुषष्ठानां चतुर्णां वेदानां सांगोपांगानां सरहस्यानां स्मारको वारकः धारकः पारकः षडंगवित् षष्टितंत्रविशारदः संख्यानः शिक्षाकल्पे व्याकरणे छन्दसि निरुक्ते ज्यौतिषायने अन्येषु ब्राह्मण्यकेषु

वर्णक इसका वर्णन औपपातिकसूत्रमें पूर्णभद्र चैत्यके वर्णन समान यहां समझना चाहिये। (तएणं समणं भगव महावीरे उप्पन्ननाणदंसणधरे जाव समोसरणं परिसा निग्गया) इसके बाद केवलज्ञान केवलदर्शनके धारी श्रमण भगवान् महावीर वहां पधारे यावत् समवसरण हुआ, सभा निकली (तीसे णं कयंगलाए णयरीए अदूरसामंते सावत्थी नामं नयरी होत्था) उस कृतंगला नगरीके अदूरसामन्त न अति निकट और न अतिदूर किन्तु पासमें ही श्रावस्ती नामकी नगरी थी (वण्णओ) वर्णक वर्णन चम्पा नगरी जैसा समझना (तत्थ णं सावत्थीए नयरीए गद्दभालस्स अंतेवासी खंदए णामं कच्चायणस्स गोत्ते परिव्वायगे परिवसइ) उस श्रावस्ती नगरी में गर्दभाल नाम के परिव्राजक का शिष्य स्कंदक नाम का एक परिव्राजक कि जिसका गोत्र कात्यायन था रहता था। (रिउव्वेय, जजुव्वेय, सामवेय, अहव्वणवेयाणं इतिहासपंचमाणं निघंटु छट्ठाणं चउण्हं वेयाणं संगोवंगाणं सरहस्साणं सारए, वारए, धारए, पारए, सडंगवी, संट्ठितंतविसारए संखाणे सिक्खाकप्पे, वागरणे छंदे,

---

चैत्य प्रमाणे ज समजवु (तएणं समणं भगवं महावीरे उप्पन्ननाणदंसणधरे-जाव समोसरण परिसा निग्गया) विहार करता करतां केवળज्ञान अने केवળ दर्शन युक्त श्रमण भगवान महावीर ते छत्रपलाशक चैत्यमा (उद्यानमां) पधार्या. (यावत्) समवसरण रचायुं, तेमनो उपदेश साभળवा माटे परिषद नीकળी वगेरे सूत्रपाठ ग्रहण करवो (तीसे ण कयगलाए णयरीए अदूरसामंते) ते कृतगला नगरीथी बहु दूर पण नहीं अने नजीक पण नही एवे स्थाने (सावत्थी नाम नयरी होत्था) श्रावस्ती नामनी नगरी हती (वण्णओ) तेनुं वर्णन पण चपानगरी जेवु ज समजवु. (तत्थ ण सावत्थीए नयरीए गद्दभालस्स अंतेवासी खंदए णाम कच्चायणस्स गोत्ते परिव्वायगे परिवसइ) ते श्रावस्ती नगरीमां गर्दभाल नामना परिव्राजकनो शिष्य स्कंदक नामनो परिव्राजक रहेतो हतो ते कात्यायन गोत्रनो हतो (रिउव्वेय, जज्जुवेय, सामवेय, अहव्वणवेयाण इतिहासपंचमाण निघट्ट छट्ठाण चउण्ह वेयाण संगोवंगाण सरहस्साणं सारए, वारए, धारए, पारए, सडंगवी, संट्ठितंतविसारए, संखाणे सिक्खाकप्पे,

गोत्र पिंगलकेन निर्ग्रन्थेन वैशालिकश्रावकेणेममाक्षेपं पृष्टः सन् शङ्कित कांक्षितो विचिकित्सितो भेदसमापन्नः कलुषसमापन्नो न शक्नोति पिंगलकाय निर्ग्रन्थाय वैशालिकश्रावकाय किंचिदपि ममोक्षमाख्यातुम् तूष्णीकः सतिष्ठत। ततः स पिंगलको निर्ग्रन्थ' वैशालिकश्रावकः स्कन्दकं कात्यायनगोत्रं द्विस्त्रिरपि इममाक्षेपम भाषीत्-मागध ! सांतो लोको यावत् केन वा मरणेन म्रियमाणो जीवो वर्द्धते

से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते) कात्यायन गोत्र वाला वह स्कन्दक वेसालिय सावयणं) भगवान महावीरके वचन सुननेमें रसिक बने हुए (पिंगलएणं नियंठेणं) पिंगलक निर्ग्रन्थ के द्वारा (इणमक्खेवं पुच्छिए समाणे) जब इस प्रकार के प्रश्नों का विषयभूत बनाया गया तब (संकिए कंखिए वितिगिच्छिए, भेदसमावन्ने कलुससमावन्ने) शंकायुक्त हो गया कांक्षा युक्त हो गया, विचिकित्सायुक्त हो गया। और (वेसालिय सावयस्स पिंगलस्स नियंठस्स पमोक्खं किंचिवि आक्खाइउं णो सचाएइ) वैशालिक श्रावक पिंगलक निर्ग्रन्थ के प्रश्नों का कुछ भी उत्तर देने के लिये समर्थ नहिं होसका। (तुसिणीए संचिट्ठइ) केवल चुप ही रहा। (तएण से वेसालियसावए पिंगलए नियंठे कच्चायणस्स गोत्तं खंदयं दोच्चपि तच्चपि इणमक्खेवं पुच्छे) चुपचाप रहा देखकर वैशालिक श्रावक पिंगलक निर्ग्रंथ ने कात्यायन गोत्री उस स्कन्दक से दुबारा भी तिबारा भी इन्ही प्रश्नों को पूछा (मागहा किं स अन्ते लोए जाव केण वा मरणेणं मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा) हे मागध ! लोक अन्त

(तएण से खंदए कच्चायणस्सगोत्ते वेसालियसावएण पिंगलएणं नियंठेण इणमक्खेवं पुच्छिए समाणे) જ્યારે ભગવાન મહાવીરના વચનોમાં શ્રદ્ધા રાખનાર પિંગલક નિર્ગ્રંથવડે કાત્યાયન ગોત્રીય સ્કંદકને આ પ્રકારનાં પ્રશ્નો પૂછવામાં આવ્યા ત્યારે (संकिए कंखिए वितिगिच्छिए, भेदसमावन्ने, कलुससमावन्ने) તે સ્કન્દક પરિવ્રાજક શંકાયુક્ત કાંક્ષાયુક્ત, અને વિચિકિત્સાયુક્ત થઈ ગયા અને તેઓ ભેદ તથા કલુષભાવને પામ્યા. (वेसालियसावयस्स पिंगलस्स नियंठस्स पामोक्खं किं चि वि आक्खाइउं णो सचाएइ) તેઓ મહાવીરના ઉપાસક પિંગલક નિર્ગ્રંથના પ્રશ્નોનો ઉત્તર આપી શક્યા નહીં (तुसिणीए संचिट्ठइ) તેથી તેઓ ચુપ જ રહ્યા (तएण से वेसालियसावए पिंगलए नियंठे कच्चायणगोत्तं खंदयं दोच्चंपि तच्चंपि इणमक्खेवं पुच्छे) તેમને ચુપચાપ રહેલા જોઈને વૈશાલિક શ્રાવક પિંગલક નિર્ગ્રંથે કાત્યાયન ગોત્રીય તે સ્કન્દકને બીજી વાર પણ એજ પ્રશ્નો પૂછયા અને ત્રીજી વાર પણ એજ પ્રશ્નો પૂછ્યા કે (मागहा ! किं स अंते लोए जाव केण वा मरणेण मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा)

च्छति, उपागत्य स्कन्दकं कात्यायनगोत्रमिममाक्षेपमप्राक्षीत्–मागध ! किं सान्तो लोकः, अनंतो लोकः सान्तो जीवः अनंतो जीवः सान्ता सिद्धिः अनंता सिद्धिः, सान्तः सिद्धः, अनंतः सिद्धः केन वा मरणेन म्रियमाणो जीवः वर्द्धते वा हीयते वा, एतावत् तावदाख्याहि उच्यमाने एवम् , ततः स स्कन्दकः कात्यायन-

वेसालिए सावए) वैशालिक श्रावक विशाला भगवान की माता का नाम था, उनका पुत्र होने से भगवान महावीर वैशालिक कहलाये। वैशालिक भगवान महावीर, उनका श्रावक अर्थात भगवान महावीर के वचन सुनने में रसिक वे पिंगलक निर्ग्रन्थ (अन्नया कयाइं) किसी एक दिन (जेणेव कच्चायणस्सगोत्ते खंदए तेणेव उवागच्छइ) जहां कात्यायन गोत्री स्कन्दक था वहां गये। उवागच्छित्ता वहां जाकर कच्चायणस्सगोत्तं खंदगं) उन्होंने उस कात्यायन गोत्रवाले स्कन्दक से (इणमक्खेवं पुच्छइ) इस प्रश्नको पूछा (मागहा ! किं स अंते लोए अणंते लोए) हे मागध ! लोक सान्त है कि अनंत है ? (स अंते जीवे अणंते जीवे) जीवसान्त है कि अनन्त है ? (सअन्ता सिद्धी अणंता सिद्धी) सिद्धि अन्त सहित है कि अन्त रहित है ? (केण वा मरणेणं मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा) अथवा किस मरणसे मरा हुआ जीव बढता है और घटता है ? (एवं वुच्चमाणे एतावं ताव आयक्खा हि) इस प्रकार से मेरे द्वारा प्रश्न के विषयभूत बनाये गये तुम इन मेरे प्रश्नोंका उत्तर दो (तएणं

ભગવાનની માતાનુ નામ વિશાલા હતું. વિશાલાના પુત્ર હોવાથી તેમને માટે અહીં વૈશાલિક શબ્દનો પ્રયોગ થયો છે "વૈશાલિક શ્રાવક" એટલે ભગવાન મહાવીરનાં વચનોમાં શ્રદ્ધા રાખનાર તે પિંગલક નિર્ગ્રંથ (अन्नया कयाइं) એક દિવસ (जणेव कच्चायणस्सगोत्ते खंदए तेणेव उवागच्छइ) જ્યા કાત્યાયન ગોત્રીય સ્કંદક પરિવ્રાજક વિરાજતા હતા ત્યા ગયા (उवागच्छित्ता) ત્યા જઈને (कच्चायणस्स गोत्त खंदगं इणमक्खेवं पुच्छइ) તેમણે તો કાત્યયન ગોત્રીય સ્કન્દકને આ પ્રમાણે પ્રશ્નો પૂછયા (मागहा ! किं स अंते लोए अणंते लोए) હે માગધ! લોક અન્ત સહિત છે કે અન્ત રહિત છે (स अंते जीवे अणंते-जीवे) જીવ અન્ત યુક્ત છે કે અન્ત સહિત છે (स अंता सिद्धि, अणंता सिद्धि) સિદ્ધિ અંત સહિત છે કે અત રહિત છે. (केण वा मरणे णं मरमाणे जीवे-वड्ढइ वा हायइ वा) કયા મરણથી મરતા જીવનો સસાર વધે છે, અને કયા કયા મરણથી મરતાં જીવનો સસાર ઘટે છે (एव वुच्चमाणे एतावं ताव आयक्खाहि) મેં આપને જે આ પ્રશ્નો પૂછયા છે તેનો તમે જવાબ આપો.

नगरात् 'गुणसिलाओ चेइयाओ' गुणशिलकात् चैत्यात्=उद्यानात् 'पडिनिक्खमइ' प्रतिनिष्क्रामति=निर्गच्छति। 'पडिनिक्खमित्ता' प्रतिनिष्क्रम्य 'बहिया जणवयविहारं विहरइ' बहिः जनपदविहारं विहरति।

'तेणं कालेणं तेणं समएणं' तस्मिन्काले तस्मिन् समये 'कयंगला नामंनयरी होत्था' कृतंगला नाम नगरी आसीत्, वण्णओ' वर्णकः वर्णनप्रकारः औपपातिकसूत्रोक्तचंपानगरीवर्णनवत् विज्ञेयः। 'तीसे णं कयंगलाए' नयरीए बहिया' तस्याः कृतंगलाया नगर्याः बहिः प्राग् प्रदेशे 'उत्तरपौरस्त्ये उत्तर पूर्वदिशोरन्तराले 'दिसिमाए' दिग्भागे-ईशानकोणे 'छत्तपलासए नामं चेइए होत्था' छत्रपलाशकं नाम चैत्यमासीत्। 'वण्णओ' वर्णक-वर्णनप्रकारः, इहापि औपपातिकसूत्रोक्तपूर्णभद्रचैत्यवर्णनवत् विज्ञेयः। 'तएणं समणे भगवं महावीरे उप्पन्ननाणदंसणधरे जाव समोसरणं'

राओ) राजगृह नगर से (गुणसिलाओ चेइयाओ) गुणशिलक चैत्य उद्यान से (पडिनिक्खमइ) निकले। (पडिनिक्खमित्ता) निकल कर (बहिया जणवयविहारं विहरइ) वे बाहरके देशमें विहार करने लगे। (तेणं कालेणं तेणं समएणं) उस काल और उस समय में (कयंगला नामं नयरी होत्था) कयंगला नाम की एक नगरी थी। (वण्णओ) इसका वर्णन प्रकार औपपातिकसूत्र में वर्णित चंपा नगरी के समान जानना चाहिये। (तीसे णं कयंगलाए नयरीए बहिया उत्तरपुरित्थमे दिसिभाए छत्तपलासए णामं चेइए होत्था) उस कयंगला नगरी के बाहिर उत्तर पौरस्त्यदिग्विभाग में-ईशानकोण में-छत्रपलाशक नाम का चैत्य था। (वण्णओ) इस का वर्णन औपपातिक सूत्र में वर्णित पूर्णभद्र चैत्य की तरह जानना चाहिये। (तएणं समणे भगवं महावीरे उप्प-ण्णणाणदंसणधरे जाव समोसरणं) इस विषय का प्रथम शतक में

નગરના (ગુણસિલાઓ ચેઇયાઓ) ગુણશિલક ચૈત્યમાંથી (ઉદ્યાનમાંથી) (પડિનિક્ખમઇ) નીકળ્યા (પડિનિક્ખમિત્તા) ત્યાંથી નીકળીને (બહિયા જણવયવિહારં વિહરઇ) તેઓ બહારના પ્રદેશમાં વિહાર કરવા લાગ્યા (તેણ કાલેણ તેણ સમએણ) તે કાળે અને તે સમયે (કયંગલા નામં નયરી હોત્થા) કૃતંગલા નામની નગરી હતી. (વણ્ણઓ) ઔપપાતિક સૂત્રમાં વર્ણવેલી ચંપા નગરીના જેવું જ તેનું વર્ણન સમજવું (તીસે ણ કયંગલાએ નયરીએ બહિયા ઉત્તરપુરત્થિમે દિસિભાએ છત્તપલાસએ ણામં ચેઇએ હોત્થા) તે કૃતંગલા નગરીની બહાર ઇશાન કોણમાં છત્રપલાશક નામનું ચૈત્ય (ઉદ્યાન) હતું. (વણ્ણઓ) ઔપપાતિક સૂત્રમાં વર્ણવેલા પૂર્ણભદ્ર ચૈત્યના (ઉદ્યાન) જેવું જ તેનું વર્ણન સમજવું (તએણ સમણે ભગવં મહાવીરે ઉપ્પણ્ણણાણદંસણધરે જાવ સમોસરણં) વિષયનું વર્ણન પહેલા

वा हीयते वा, एतावत्तावदाख्याहि उच्यमाने एवम्। ततः खलु स स्कन्दकः कात्यायनगोत्रः पिंगलकेन निर्ग्रन्थेन वैशालिकश्रावकेण द्विरपि त्रिरपि इममाक्षेपं पृष्टः सन् शंकितः कांक्षितो विचिकित्सितो भेदसमापन्नः कलुषसमापन्नो न शक्नोति पिंगलकस्य निर्ग्रन्थस्य वैशालिकश्रावकस्य किंचिदपि प्रमोक्षम् आख्यातुं तुष्णीकः संतिष्ठते ॥ सू० ७ ॥

टीका—'तेणं कालेणं तेणं समएणं' तस्मिन् काले तस्मिन् समये 'समणे भगवं महावीरे' श्रमणो भगवान् महावीरः, 'रायगिहाओ नयराओ' राजगृहात्

सहित है कि विना अन्तका है यावत् जीव किस मरण से मर कर अपने को बढाता है या घटाता है (एवं वुच्चमाणे एतावं ताव आयक्खाहि) इस प्रकार से मेरे द्वारा पूछे गये तुम मेरे इन प्रश्नों का उत्तर दो। तएणं से कच्चायणस्स गोत्ते खदए वेसालियसावएणं पिंगलेणं नियंठेणं दोच्चंपि तच्चंपि इणमक्खेवं पुच्छिए संकिए, कंखिए वितिगिच्छए, भेदसमावन्ने कलुससमावन्ने, णो वेसालियसावयस्स पिंगलस्स णियंठस्स किंचिवि पामोक्खं अक्खाइउ णो संचाएइ तुसणीए संचिट्ठइ) इस प्रकार कात्यायन गोत्री वह स्कन्दक वैशालिक पिंगलक निर्गन्थ के द्वारा दो बार भी तीन बार भी पूछे जाने पर उत्तर देने के लिये समर्थ नहीं हो सका परन्तु शंकित कांक्षित विचिकित्सायुक्त ही बना रहा और भेद को समापन्न होता हुआ कलुषभाव को प्राप्त हो गया। तथा चुपचाप ही रहा।

टीकार्थ—(तेणं कालेणं तेणं समएणं) उस काल और उस समय में (समणे भगवं महावीरे) श्रमण भगवान महावीर (रायगिहाओ नय-

---

હે માગધ! લોક અન્ત સહિત છે કે અંતરહિત છે ત્યાંથી શરૂ કરીને કયા મરણથી મરીને જીવ સંસાર વધારે છે અને કયા મરણથી મરીને સંસાર ઘટાડે છે, ત્યાં સુધીના પ્રશ્નો પૂછયા (एव वुच्चमाणे एताव ताव आयक्खाहि) હે સ્કન્દક! મારા આ પ્રશ્નોના તમે ઉત્તર આપો (तएणं से कच्चायणस्स गोत्ते खदए वेसालियसावएण पिंगलेण नियंठेणं दोच्चंपि तच्चंपि इणमक्खेवं पुच्छिए समाणे संकिए, कंखिए वितिगिच्छिए, भेदसमावन्ने, णो वेसालियसावयस्स पिंगलस्स णियंठस्स किंचि वि पामोक्खं अक्खाइउं णो संचाएइ तुसणीए संचिट्ठइ) આ રીતે વૈશાલિક શ્રાવક નિર્ગ્રંથ વડે બે વાર અને ત્રણ વાર પૂછવા છતાં પણ કાત્યાયન ગોત્રીય સ્કંદક તેમના પ્રશ્નોના ઉત્તર આપી શકયો નહીં પણ શંકિત, કાંક્ષિત, વિચિકિત્સાયુક્ત જ બની ગયાં, અને ભેદસમાપન્ન થઇને કલુષભાવ યુક્ત થયા તથા ચુપચાપ જ બેસી રહ્યા.

(ટીકાર્થ--तेण कालेणं तेण समएणं) તે કાળે અને તે સમયે समणे भगवं महावीरे) શ્રમણ ભગવાન મહાવીર (रायगिहाओ नयराओ) રાજગૃહ

नगरात् 'गुणसिलाओ चेइयाओ' गुणशिलकात् चैत्यात्=उद्यानात् 'पडि निक्ख मइ' प्रतिनिष्क्रामति=निर्गच्छति। 'पडिनिक्खमित्ता' प्रतिनिष्क्रम्य 'बहिया जाणवयविहार विहरइ' बहिः जनपदविहार विहरति।

'तेणं कालेणं तेणं समएणं' तस्मिन्काले तस्मिन् समये 'कयंगला नामंनयरी होत्था' कृतगला नाम नगरी आसीत्, वण्णओ' वर्णको वर्णनप्रकारः औपपातिकसूत्रोक्तचंपानगरीवर्णनवत् विज्ञेयः। 'तीसे णं कयगलाए' नयरीए बहिया' तस्याः कृतंगलाया नगर्या बहिः प्राय प्रदेशे 'उत्तरपौरस्त्ये उत्तर पूर्वदिशोरन्तकाले 'दिसिभाए' दिग्भागे-ईशा नकोणे 'छत्तपलासए नामं चेइए होत्था' छत्रपलाशकं नाम चैत्यमासीत्। 'वण्णओ' वर्णक -वर्णनप्रकारः, इहापि औपपातिकसूत्रोक्तपूर्णभद्रचैत्यवर्णनवत् विज्ञेयः। 'तएण समणे भगवं महावीरे उप्पन्ननाणदसणधरे जाव समोसरणं'

राओ) राजगृह नगर से (गुणसिलाओ चेइयाओ) गुणशिलक चैत्य उद्यान से (पडिनिक्खमइ) निकले। (पडितिक्खमित्ता) निकल कर (बहिया जणवयविहारं विहरइ) वे बाहरके देशमें विहार करने लगे। (तेणं कालेणं तेण समएणं) उस काल और उस समय में (कयंगला नामं नयरी होत्था) कयंगला नाम की एक नगरी थी। (वण्णओ) इसका वर्णन प्रकार औपपातिकसूत्र में वर्णित चंपा नगरी के समान जानना चाहिये। (तीसे णं कयगलाए नयरीए बहिया उत्तरपुरित्थमें दिसिभाए छत्तपलासए णामं चेइए होत्था) उस कयगला नगरी के बाहिर उत्तर पौरस्त्यदिग्विभाग में-ईशानकोण में-छत्रपलाशक नाम का चैत्य था। (वण्णओ) इस का वर्णन औपपातिक सूत्र में वर्णित पूर्णभद्र चैत्य की तरह जानना चाहिये। (तएणं समणे भगव महावीरे उप्प-ण्णणाणदंसणधरे जाव समोसरणं) इस विषय का प्रथम शतक में

નગરના (गुणसिलाओ चेइयाओ) ગુણશિલક ચૈત્યમાંથી (ઉદ્યાનમાંથી) (पडिक्खिमइ) નીકળ્યા (पडिनिक्खमित्ता) ત્યાંથી નીકળીને (बहिया जणवयविहार विहरइ) તેઓ બહારના પ્રદેશમાં વિહાર કરવા લાગ્યા (तेण कालेण तेण समएण) તે કાળે અને તે સમયે (कयगला नामं नयरी होत्था) કૃતગલા નામની નગરી હતી. (वण्णओ) ઔપપાતિક સૂત્રમાં વર્ણવેલી ચંપા નગરીના જેવું જ તેનું વર્ણન સમજવું (तीसे ण कयंगलाए नयरीए बहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसिभाए छत्तपलासए णाम चेइए होत्था) તે કૃતગલા નગરીની બહાર ઈશાન કોણમાં છત્રપલાશક નામનું ચૈત્ય (ઉદ્યાન) હતું (वण्णओ) ઔપપાતિક સૂત્રમાં વર્ણવેલા પૂર્ણભદ્ર ચૈત્યના (ઉદ્યાન) જેવું જ તેનું વર્ણન સમજવું (तएण समणे भगव महावीरे उप्पण्णणाणदसणधरे जाव समोसरण) આ વિષયનું વર્ણન પહેલા

ततः खलु श्रमणो भगवान् महावीर उत्पन्नज्ञानदर्शनधरो यावत् समवसरणम्, एतद्वर्णनं प्रथमशतके प्रथमोद्देशकस्य पञ्चमसूत्रे विलोकनीयम्। 'परिसा निग्गच्छइ' परिषद् निर्गच्छति, 'तीसे णं' तस्याः खलु 'कयंगलाए नयरीए' कृतंगलाया नगर्याः, 'अदूरसामंते सावत्थी नामं नयरी होत्था' अदूरसामन्ते नात्यासन्ने नातिदूरे श्रावस्ती नाम नगरी आसीत् 'वण्णओ' वर्णकः-वर्णनप्रकारः चम्पावद् विज्ञेयः। 'तत्थ णं सावत्थीए नयरीए गद्दभालस्स अंतेवासी खंदए णामं कच्चायणस्स गोत्ते परिव्वायए परिवसइ' तत्र खलु श्रावस्त्यां नगर्यां गर्दभालस्यान्तेवासी=शिष्यः स्कन्दकः कात्यायनगोत्रः परिव्राजकः परिवसति, संप्रति तस्य विद्वत्तां वर्णयन्नाह—'रिउव्वेय' इत्यादि। 'रिउव्वेय-जजुव्वेय-सामवेय-अहव्वण वेयाणं' ऋग्वेदयजुर्वेदसामवेदाथर्वणवेदानाम्, तत्र-ऋग्वेदः=ऋचा प्रधानो

प्रथमउद्देशक के पांचवें सूत्र में देखना चाहिये। (परिसा निग्गच्छइ) सभा निकली (तीसे णं कयंगलाए नयरीए) उस कयंगला नगरी के (अदूरसामंते) न अतिदूर पर और न अति निकट में (सावत्थी नामं नयरी होत्था) श्रावस्ती नाम की नगरी थी। (वण्णओ) इस नगरी का वर्णन चंपा नगरी के वर्णन के जैसा जानना चाहिये। (तत्थ णं सावत्थीए नयरीए गद्दभालस्स अन्तेवासी खंदए णामं कच्चायणस्स गोत्ते परिव्वायए परिवसइ) उस श्रावस्ती नगरी में गर्दभाल का शिष्य कात्यायनगोत्र वाला स्कन्दक नाम का एक परिव्राजक रहता था। यह परिव्राजक कैसा क्या विद्वान् था-सूत्रकार अब इसका वर्णन करते हैं-वह परिव्राजक (रिउव्वेय, जजुव्वेय, सामवेय, अहव्वणवेयाणं ऋचा प्रधानवाले वेद का-ऋग्वेद का, मंत्रप्रधानवाले वेद का-यजुर्वेद

શતકના પહેલા ઉદ્દેશકના પાંચમા સૂત્રમાંથી વાંચી લેવું વિહાર કરતાં કરતાં કેવળજ્ઞાન અને કેવળ દર્શનથી યુક્ત શ્રમણ ભગવાન મહાવીર તે ચૈત્યમાં (ઉદ્યાનમાં) પધાર્યા તેમનો ઉપદેશ સાંભળવા પરિષદ નીકળી ઇત્યાદિ વર્ણન અહીં સમજી લેવું (तीसे णं कयंगलाए नयरीए) તે કૃતંગલા નગરીથી (अदूरसामंते) અતિશય દૂર પણ નહીં અને અતિશય નજીક પણ નહી એવા સ્થળે, (सावत्थी नामं नयरी होत्था) શ્રાવસ્તી નામની નગરી હતી (वण्णओ) તેનું વર્ણન પણ ચંપાનગરીના વર્ણન પ્રમાણે જ સમજવું (तत्थ णं सावत्थीए नयरीए गद्दभालस्स अंतेवासी खंदए णामं कच्चायणस्सगोत्ते परिव्वायए परिवसइ) તે શ્રાવસ્તી નગરીમાં ગર્દભાલનો શિષ્ય, કાત્યાયન ગોત્રી સ્કન્દક નામનો પરિવ્રાજક રહેતો હતો.

હવે સૂત્રકાર સ્કન્દકની વિદ્વતાની વાત કરે છે તે સ્કન્દક પરિવ્રાજક (रिउव्वेय, जजुव्वेय, सामवेय, अहव्वणवेयाण) ઋચા પ્રધાન ઋગ્વેદનો, મંત્ર પ્રધાન યજુ-

वेदः, यजुर्वेदः=यज्ञप्रधानो वेदः, सामवेदः=गानप्रधानो वेदः, अथर्वणवेदः=क्रिया प्रधानो वेदः, तेषाम्, पौदशानामित्यादि–'इतिहासपंचमाणं' इतिहासपंचमानाम्, इतिहासो=महाभारतादिः स पञ्चमो यषां ते इतिहासपञ्चमाः, तेषाम्, 'निघंटु छट्ठाणं' निघण्टुषष्ठानाम्, निघण्टुः वैदिकशब्दानां कोशः, स षष्ठो विद्यते येषां ते निघण्टुषष्ठाः, तेषाम्, एतादृशानां 'चउण्ह वेयाण' चतुर्णां वेदानाम्, कथंभूतानां वेदानाम्? तत्राह–'संगोवंगाण' साङ्गोपाङ्गानाम्, तत्र–अंगानि षट् शिक्षाकल्प–व्याकरण–ज्योतिषच्छन्दो–निरुक्तरूपाणि, उपाङ्गानि = धर्मशास्त्रन्यायपुराणमीमांसा शास्त्ररूपाणि, तैः सहितानाम्, 'सरहस्साणं' सरहस्यानाम्, रहस्यम्=गूढाभिप्रायस्तेन युक्तानाम् चतुर्णामपि वेदानाम् 'सारए' स्मारकः–विस्मृतस्य स्मरणकारकत्वात्, 'वारए' वारक –अशुद्धपाठोच्चारणादि निराकरणात्, 'धारए' धारक –अधीतवेदानां धारणात्, एतावता अपीताः। सर्वेऽपि वेदाः स्कन्दकस्य कण्ठस्था एव सन्ति इति ध्वन्यते 'पारए' पारगः,

का, गानप्रधानवाले वेद का–सामवेद का, क्रियाप्रधानवाले वेद का–अथर्वण वेद का, इन चार वेदों का ज्ञाता था (इतिहासपंचमाणं) पांचवें इतिहास का वेत्ता था (निघंटु छट्ठाण) छठवें निघंटु–वैदिक शब्दकोश का वेत्ता था। इस प्रकार यह (संगोवंगाण सरहस्साण) शिक्षा, कल्प, व्याकरण, ज्योतिष, छन्द, निरुक्त रूप छह अङ्गवाले तथा अङ्गों के अर्थ का विस्तार रूप उपांगों वाले (सरहस्साण) तथा गूढ अभिप्रायवाले (चउण्ह वेयाणं) इन चारों ही वेदों का (सारण) स्मारक था–अर्थात् भूले हुए को स्मरण कराने वाला था। (वारए) अशुद्ध पाठ आदि के उच्चारण करने से दूसरों को रोकने वाला होने से वारक था। (धारए) अधीतवेदों का धारण करने वाला होन से धारक था, एतावता इस पद से यह ध्वनित होता है कि समस्त ही वेद स्कन्दक परिव्राजक के कण्ठ

વેદનો, ગીત પ્રધાન સામવેદનો અને ક્રિયા પ્રધાન અથર્વવેદનો જ્ઞાતા હતો આ રીતે તે ચારે વેદનો જાણકાર હતો (इतिहासपंचमाणं) પાંચમો ઇતિહાસ અને (निघंटुछट्ठाणं) નિઘંટુ–વૈદિક શબ્દકોશ પણ તે જાણતો હતો આ રીતે તે (संगोवंगाण सरहस्साण) શિક્ષા, કલ્પ, વ્યાકરણ, છંદ, જ્યોતિષ, અને વ્યુત્પત્તિ રૂપ છ અંગવાળા, તથા અંગોના અર્થના વિસ્તાર રૂપ ઉપાંગો વાળા (सरहस्साणं) તથા ગૂઢ રહસ્યવાળા (चउण्हं वेयाण) તે ચારે વેદોનો (सारए) સ્મારક હતો એટલે કે ભૂલી ગયેલાને તેનું સ્મરણ કરાવનાર હતો. (वारए) અશુદ્ધ પાઠ વગેરેનું ઉચ્ચારણ કરતાં અન્ય જનોને વારનાર (રોકનાર) હતો. (धारए) ભણેલા વેદોને ધારણ કરનાર હોવાથી તેનો ધારક હતો આ પદનો એવો અર્થ થતો શકાય છે કે બધા વેદો સ્કન્દક પરિવ્રાજકને મોઢે કંઠસ્થ

पारगामी अखिलवेदार्थ विषयकज्ञानवानित्यर्थः, 'सडंगवी' 'षडंगवित्, षण्णामपि वेदाङ्गानां वक्ष्यमाणानां विशेषरूपेण ज्ञानवानित्यर्थ', 'सट्ठितंतविसारए' षष्ठीतंत्रविशारदः ,षष्ठीतंत्र–कापिलं दर्शनम् तत्र विशारदः तद्विषयकज्ञानवानित्यर्थः, 'संखाणे' संख्यानः संख्यानं संख्याप्रधानकं गणितशास्त्रम्, तत्र पंडित इति। अङ्गनामानि दर्शयति–'सिक्खा' इत्यादि। 'सिक्खाकप्पे' शिक्षाकल्पे शिक्षा च कल्पश्चेत्यनयो. समाहारे शिक्षाकल्पं, तस्मिन्, तत्र शिक्षा–शिक्ष्यते वेदार्थोऽनयेति शिक्षा, अक्षरस्वरूपनिरूपकं शास्त्रमित्यर्थः, कल्पः–वेदविहिताचारनिरूपकं शास्त्रम्, तस्मिन्, 'वागरणे' व्याकरणे, शब्दशास्त्रे 'छंदे' छन्दसि पद्यलक्षणशास्त्रे, 'निरुत्ते' निरुक्ते, शब्दानां व्युत्पत्तिनिरूपणपरकशास्त्रे, 'जोइसामयणे' ज्योतिषामयने, ज्योतिःशास्त्रे, पुनरपि 'अन्नेसु य बहूसु बम्हणएसु' अन्येषु च बहुषु ब्राह्मण्यकेषु, ब्राह्मणसंबन्धिषु अन्येष्वपि च बहुषु शास्त्रेषु मनुस्मृ-

---

स्थ ही थे। (पारए) समस्त वेदार्थ विषयक ज्ञान से यह युक्त था। (सडंगवी) वेद के जो छह अङ्ग होते हैं उनका यह विशेषरूप से ज्ञाता था। (सट्ठितंतविसारए) कापिल दर्शन–सांख्यदर्शन में वह विशारद था। सांख्यदर्शन के सिद्धान्त से भी यह विशेषरूप से परिचित था। (संखाणे) संख्यान शब्द का अर्थ संख्याप्रधान गणितशास्त्र है–इसमें वह पण्डित था। (सिक्खाकप्पे) वेद का अर्थ जिसके द्वारा सीखा जाता है वह शिक्षा है, तथा वेदविहित आचार का निरूपक जो शास्त्र है वह कल्प है। शिक्षा और कल्प इन दोनों में तथा (वागरणे) व्याकरण–शब्द शास्त्र में (छंदे) छंदः शास्त्र में (निरुत्ते) शब्दों की व्युत्पत्ति निरूपण परक शास्त्र में व्युत्पत्ति शास्त्र में (जोइसामयणे) ज्योतिषशास्त्र में, तथा (अन्नेसु बहूसु बणएसु) और भी दूसरे अनेक ब्राह्मणसम्बन्धी मनुस्मृति–याज्ञवल्क्यादि स्मृति आदि शास्त्रों में, अथवा

કરી લીધા હતા "पारए" વેદ વિષયક જ્ઞાનમાં તે પારંગત હતો. (सडंगवी) વેદના છએ અંગનો તે વિશેષ રૂપે જ્ઞાતા હતો. (सट्ठित तविसारए) કપિલદર્શન–સાંખ્ય દર્શનનો તે વિશારદ હતો (सखाणे) સંખ્યા પ્રધાન ગણિતશાસ્ત્રનો પણ તે નિષ્ણાત હતો (सिक्खा कप्पे) જેના વડે વેદોનો અર્થ શીખવામાં આવે છે તે "શિક્ષાશાસ્ત્ર" અને વેદકથિત આચારનું નિરૂપક જે કલ્પ શાસ્ત્ર છે તેમાં પણ તે વિશારદ હતો. (वागरणे) વ્યાકરણ શાસ્ત્રમાં, (छंदे) છંદ શાસ્ત્રમાં, (निरुत्ते) વ્યુત્પત્તિ શાસ્ત્રમાં, (जोइसामयणे) જ્યોતિષ શાસ્ત્રમાં તથા (अन्नेसु बहूसु बम्हणएसु) બીજાં પણ અનેક બ્રાહ્મણ શાસ્ત્રોમાં (મનુસ્મૃતિ,) યાજ્ઞવલ્ક્યાદિ સ્મૃતિ, આરણ્યક વગેરે બ્રાહ્મણ

तिषु याज्ञवल्क्यादिस्मृतिषु अथवा ब्राह्मणशास्त्राणि आरण्यादिकानि उपनिषदादीनि तेषु, पुन –' परिव्वायएसु नयसु' पारिव्राजकेषु नयेषु 'सुपरिनिट्ठिए यावि होत्था ' सुपरिनिष्ठिश्चाप्यासीत्, तत्र ' परिव्वाएसु ' पारिव्राजकेषु–परिव्राजक सम्बन्धिषु ' नएसु ' नयेषु सन्यासप्रतिपादकानेकतमेषु ' सुपरिनिट्ठिए ' सुपरिनिष्ठितः =निपुणः तद्विषयसमीचीनज्ञानवानासीदिति।

' तत्थ णं सावत्थीए नयरीए पिंगलए णाम नियठे वेसालियसावए परिवसइ ' तत्र खलु श्रावस्त्यां नगर्यां पिंगलको नाम निर्ग्रन्थो वैशालिकश्रावकः परिवसति, विशालाया अपत्यमिति वैशालिकः, भगवान् महावीरः वैशालिकस्य श्रावक इति वैशालिकश्रावक शृणोति जिनवाक्य यः स श्रावकः तथा च वैशालिकस्य महावीरस्य वचनं शृणोति कर्णाभ्यामिति यः स वैशालिकश्रावक' महावीर

आरण्यक आदि ब्राह्मण शास्त्रों में, तथा–(परिनिव्वायएसु नयेसु) परिव्राजक सम्बन्धी शास्त्रों में भी (सुपरिनिट्ठिए यावि होत्था) यह बहुत अधिक चतुर था, अर्थात् तद्विषयक ज्ञान से युक्त था।

(तत्थ णं सावत्थीए नयरीए) इसी श्रावस्ती नगरी में (पिंगलए णामं नियंठे) पिंगल नाम का एक निर्ग्रन्थ रहता था। यह निर्ग्रन्थ(वेसालियसावए) वैशालिक का श्रावक था–अर्थात् वैशालिक महावीर प्रभुका–श्रावक–उपदेश श्रोता था। विशाला भगवान् महावीर प्रभुकी माताका नाम था। विशालाका जो अपत्य वह वैशालिक अर्थात् भगवान् महावीर प्रभु इनका श्रावक था अर्थात् (शृणोति जिनवाक्यं यः सः श्रावक) इस व्युत्पत्ति के अनुसार यह भगवान् महावीर प्रभु के उपदेश का पान करने वाला था। तात्पर्य कहने का यह था।

શાસ્ત્રોમાં તથા (परिनिव्वायएसु नयेसु) પરિવ્રાજક સબંધી શાસ્ત્રોમાં પણ (सुपरिनिट्ठिए यावि होत्था) તે ઘણો જ નિષ્ણાત હતો.

(तत्थ ण सावत्थीए नयरीए) હવે એ શ્રાવસ્તી નગરીમાં (पिंगलए णाम नियंठे) પિંગલક નામનો એક અણગાર રહેતો હતો. તે અણગાર (वेसालिय सावए) વૈશાલિકના શ્રાવક હતા એટલે કે ભગવાન મહાવીરપ્રભુના શ્રાવક–ઉપદેશ શ્રવણ કરનાર હતા વિશાલા, મહાવીર સ્વામીની માતાનું નામ હતુ તેથી વિશાલાના પુત્ર હોવાથી તેઓ વૈશાલિક કહેવાતા પિંગલક નિર્ગ્રંથ ભગવાન મહાવીરના ઉપાસક હતા તેમને મહાવીર પ્રભુનો ઉપદેશ સાંભળવો ગમતો હતો તેથી તેમને વૈશાલિક શ્રાવક કહે વામાં આવેલ છે શ્રાવક શબ્દની વ્યુત્પત્તિ આ પ્રમાણે થાય છે शृणोति जिनवाक्यं

पारगामी अखिलवेदार्थ विषयकज्ञानवानित्यर्थः, 'सडंगवी' 'षडंगवित्, षण्णामपि वेदाङ्गानां वक्ष्यमाणानां विशेषरूपेण ज्ञानवानित्यर्थ', 'सट्ठितंतविसारए' षष्ठीतंत्रविशारदः ,षष्ठीतंत्र–कापिलं दर्शनम् तत्र विशारदः तद्विषयकज्ञानवानित्यर्थः, 'संखाणे' संख्यानः संख्यानं संख्याप्रधानकं गणितशास्त्रम्, तत्र पंडित इति। अङ्गनामानि दर्शयति–'सिक्खा' इत्यादि। 'सिक्खाकप्पे' शिक्षाकल्पे शिक्षा च कल्पश्चेत्यनयो. समाहारे शिक्षाकल्पं, तस्मिन्, तत्र शिक्षा–शिक्ष्यते वेदार्थोऽनयेति शिक्षा, अक्षरस्वरूपनिरूपकं शास्त्रमित्यर्थः, कल्पः–वेदविहिताचारनिरूपकं शास्त्रम्, तस्मिन्, 'वागरणे' व्याकरणे, शब्दशास्त्रे 'छंदे' छन्दसि पद्यलक्षणशास्त्रे, 'निरुत्ते' निरुक्ते, शब्दानां व्युत्पत्तिनिरूपणपरकशास्त्रे, 'जोइसामयणे' ज्योतिषामयने, ज्योति शास्त्रे, पुनरपि 'अन्नेसु य बहूसु बम्हण्णएसु' अन्येषु च बहुषु ब्राह्मण्यकेषु, ब्राह्मणसंबन्धिषु अन्येष्वपि च बहुषु शास्त्रेषु मनुस्मृ-

स्थ ही थे। (पारए) समस्त वेदार्थ विषयक ज्ञान से यह युक्त था। (सडंगवी) वेद के जो छह अङ्ग होते हैं उनका यह विशेषरूप से ज्ञाता था। (सट्ठितंतविसारए) कापिल दर्शन–सांख्यदर्शन में वह विशारद था। सांख्यदर्शन के सिद्धान्त से भी यह विशेषरूप से परिचित था। (संखाणे) संख्यान शब्द का अर्थ संख्याप्रधान गणितशास्त्र है–इसमें वह पण्डित था। (सिक्खाकप्पे) वेद का अर्थ जिसके द्वारा सीखा जाता है वह शिक्षा है, तथा वेदविहित आचार का निरूपक जो शास्त्र है वह कल्प है। शिक्षा और कल्प इन दोनों में तथा (वागरणे) व्याकरण–शब्द शास्त्र में (छंदे) छंदः शास्त्र में (निरुत्त) शब्दों की व्युत्पत्ति निरूपण परक शास्त्र में व्युत्पत्ति शास्त्र में (जोइसामयणे) ज्योतिषशास्त्र में, तथा (अन्नेसु बहूसु वणएसु) और भी दूसरे अनेक ब्राह्मणसम्बन्धी मनुस्मृति–याज्ञवल्क्यादि स्मृति आदि शास्त्रों में, अथवा

કરી લીધા હતા "पारए" વેદ વિષયક જ્ઞાનમાં તે પારંગત હતો (सडंगवी) વેદના છએ અંગનો તે વિશેષ રૂપે જ્ઞાતા હતો (सट्ठितंतविसारए) કપિલદર્શન–સાંખ્ય દર્શનનો તે વિશારદ હતો (सखाणे) સંખ્યા પ્રધાન ગણિતશાસ્ત્રનો પણ તે નિષ્ણાત હતો (सिक्खा कप्पे) જેના વડે વેદોનો અર્થ શીખવામા આવે છે તે "શિક્ષાશાસ્ત્ર" અને વેદકથિત આચારનું નિરૂપક જે કલ્પ શાસ્ત્ર છે તેમા પણ તે વિશારદ હતો (वागरणे) વ્યાકરણ શાસ્ત્રમા, (छंदे) છંદ શાસ્ત્રમા, (निरुते) વ્યુત્પત્તિ શાસ્ત્રમા, (जोइसामयणे) જ્યોતિષ શાસ્ત્રમા તથા (अन्नेसु बहूसु बम्हण्णएसु) બીજાં પણ અનેક બ્રાહ્મણ શાસ્ત્રોમા (मनुस्मृति,) યાજ્ઞવલ્ક્ય સ્મૃતિ, આરણ્યક વગેરે બ્રાહ્મણ

चित् सर्वथा विनाशो भवति अथवा भवतः प्रवाहरूपेण सर्वदा स्थितिमत्त्वेन अनंत ? ॥ १ ॥ 'स अंते जीवे अणंते जीवे' सान्तः किम् अंतसहितः जीवः अथवा अनंतः–अंतरहितः जीव ? ॥ २ ॥ 'स अंता सिद्धी अणंतासिद्धी' सान्ता –अन्तसहिता सिद्धिः–सिद्धिक्षेत्रम्, अनंता–अन्तरहिता सिद्धिः? ॥३॥ 'स अंते सिद्धे अणंते सिद्धे' सान्तः किम् अंतसहितः सिद्धः अथवा अनंतः अंतरहितः सिद्धः ? ॥४॥ 'केण वा मरणेणं–मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा' केन वा मरणेन म्रियमाणो जीवो वर्धते वा हीयते वा, संसारस्य वर्द्धनात् जीवो वर्द्धते संसारस्य हान्या वा हीयते जीवः कीदृशं मरणं प्राप्य जीवः संसारे परिभ्रमति कीदृशं च मरणं प्राप्य संसारं क्षपयतीति पञ्च प्रश्नाः ॥ ५ ॥ 'एवं पुच्छमाणे'

प्रवाहरूप से सर्वदा स्थिति वाला होने से विनाश रहित है ? तथा स अन्ते जीवे अणंते जीवे" जीव अन्त सहित है अथवा अनन्त है अन्त रहित है ? स अन्ता सिद्धी अणंता सिद्धी " सिद्धीक्षेत्र अन्त सहित है या अन्त रहित है ?" स अन्ते सिद्धे अणंते सिद्धे सिद्ध अन्त सहित है कि अन्त रहित है ? केण वा मरणेण मरमाणे जीवे वड्ढई वा हायइ वा " जीव किस मरणसे मरता हुआ अपने संसार के वधन से बढता है और अपने संसार की हानि से घटता है तात्पर्य कहने का यह है कि जीव में न ह्रास होता है और न बढती होती है, परन्तु संसार के वर्धन से जीव का वधन और संसार के ह्रास से जीव की हानि मानली जाती है। इसी आशय से यह हानि वृद्धि विषयक प्रश्न किया गया है तात्पर्य इस प्रश्न का यही है कि कैसे मरण को प्राप्तकर जीव संसार में घूमता रहता है और कैसे मरण को प्राप्त कर जीव अपने संसार को नष्ट कर देता है ? इस प्रकार से ये पांच प्रश्न हैं। एवं पुच्छ

વાહને કરી નાશ થાય છે કે નથી થતો તથા (स अंते जीवे अणंते जीवे) જીવ અન્ત સહિત છે કે અન્ત રહિત છે (स अंता सिद्धि अणंता सिद्धि ?) સિદ્ધિ–સિદ્ધિ અંતસહિત છે કે અંત રહિત છે (स अंते सिद्धे अणंते सिद्धे) સિદ્ધ અંતસહિત છે ? કે અંતરહિત છે ? (केण वा मरणेण मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा) જીવ કયા મરણથી પોતાના સંસારના વધારાથી વધે છે અને કયા મરણથી પોતાના સંસારની હાનિથી ઘટે છે કહેવાનું પ્રયોજન એ છે કે જીવમાં તો વૃદ્ધિ પણ થતી નથી અને હાનિ હ્રાસ પણ થતી નથી. પણ સંસારના વધનથી જીવની વૃદ્ધિ અને સંસારની હાનિથી જીવની હાનિ અહીં માની લેવામાં આવી છે તેથી આ પ્રશ્નો. આ પ્રમાણે ભાવાર્થ સમજવો જોઈએ કેવા પ્રકારના મરણથી જીવ સંસારમાં વાર વાર પરિભ્રમણ કરે છે અને કેવા પ્રકારના મરણથી જીવ પોતાના સંસારમાં પરિભ્રમણની સ્થિતિનો

वचनामृतपानरसिकः इति, यत्र श्रावस्त्यामनेकप्रकारकवेदवेदाङ्गादिविषयक-समस्तज्ञानवान् स्कन्दोऽभूत्तत्रैव श्रावस्त्या तत्समये जिनमतानुयायी कश्चित् पिंगलकनामको निर्ग्रन्थ आसीदिति समुदितार्थः । 'तएणं से पिंगलए णामं नियंठे-वेसालिय सावए अन्नया कयाइं जेणेव खंदए कच्चायणस्सगोत्ते तेणेव उवागच्छइ' ततः खलु स पिंगलको नाम निर्ग्रन्थो वैशालिकश्रावकः अन्यदा कदाचित्=अन्यस्मिन् कस्मिंश्चित्समये यत्रैव स्कन्दकः कात्यायनगोत्रस्तत्रैवोपाग-च्छति, 'उवागच्छित्ता खंदगं कच्चायणस्सगोत्तं इणमक्खेवं पुच्छे' उपागत्य स्कन्दकं कात्यायनगोत्रं इममाक्षेपम् प्रश्नम् अप्राक्षीत् । किं पृष्टवानित्यत आह— 'मागहा' इत्यादि । 'मागहा' हे मागध ? मगधो मगधदेशस्तत्र भवो मागधः तत्संबोधने हे मागध !-हे मगधदेशोद्भव स्कन्दक ! 'किं स अंते लोए अणते लोए' किं सान्तः लोकः अनंतः लोक, हे स्कन्दक ! किमयं लोकः सांतः एतस्य कदा-

जिस श्रावस्ती नगरी में वेद, वेदाङ्ग आदि के समस्त विषयों के ज्ञान से परिशीलित मतिवाला ऐसा विशेष निष्णात स्कन्दक नाम का परिव्राजक रहता था उसी समय में उस श्रावस्ती नगरी में पिंगलक नाम का एक निर्ग्रन्थ-बाह्याभ्यंतर परिग्रह से वर्जित जैन-धर्मानुयायी निर्ग्रन्थ भी रहता था। (तएणं से पिंगलए णामं नियंठे वेसालिय सावए अन्नया कयाइं जेणेव खंदए कच्चायणस्सगोत्ते तेणेव उवागच्छइ) एक दिन की बात है कि वैशालिय श्रावक वह पिंगलक अनगार जहां कात्यायनगोत्री स्कन्दक परिव्राजन रहता था वहां गया (उवागच्छित्ता) वहां जाकर उसने (इणमक्खेवं) उनको इस प्रकार पूछा हे स्कन्दक ! "किं स अन्ते लोए अणंते लोए" कहो यह लोक सान्त है-अन्त सहित है-इसका कभी सर्वथा नाश होता है ? अथवा अनंत है ?

य स श्रावक જિનેન્દ્ર ભગવાનનો ઉપદેશ શ્રવણ કરનારને શ્રાવક કહે છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે જે શ્રાવસ્તી નગરીમા તે સમયે વેદ, વેદાંગ વગેરે વિષયોનું જ્ઞાન ધરાવનાર સ્કંદક નામનો એક પરિવ્રાજક રહેતો હતો, એજ નગરમાં તે સમયે પિંગલક નામનો એક શ્રમણ નિર્ગ્રંથ પણ રહેતો હતો બાહ્યાભ્યન્તર પરિગ્રહથી રહિત જૈન ધર્માનુયાયી મુનિને શ્રમણ નિર્ગ્રંથ કહે છે (तए णं से पिंगलए-णामं नियंठे वेसालियसावए अन्नया कयाइं जेणेव खदए कच्चायणस्स गोत्ते तेणेव उवागच्छइ) એક દિવસ તે વૈશાલિક શ્રાવક (મહાવીરના ઉપાસક) પિંગલક અણગાર જ્યા કાત્યાયન ગોત્રીય સ્કન્દક પરિવ્રાજક રહેતો હતો ત્યાં ગયા (उवागच्छित्ता) ત્યા જઈને તેમણે તેને (इणमक्खेवं) આ પ્રમાણે પ્રશ્નો પૂછયા (मागहा) હે માગધ! મગધ દેશમા જન્મેલા હે સ્કન્દક (किं स अंते लोए अणते लोए) આ લોક અન્ત સહિત છે કે અન્ત રહિત છે. એટલે કે આ

चित् सर्वथा विनाशो भवति अथवा अनन्त प्रवाहरूपेण सर्वदा स्थितिमत्त्वेन अनन्त ? ॥ १ ॥ 'स अते जीवे अणते जीवे' सान्त किम् अन्तसहित' जीवः अथवा अनंतो-अन्तरहित जीवः? ॥ २ ॥ 'स अता सिद्धी अणतासिद्धी' सान्ता -अन्तसहिता सिद्धि -सिद्धिक्षेत्रम्, अनन्ता-अन्तरहिता सिद्धि ? ॥३॥ 'स अते सिद्धे अणत सिद्धे' सान्तः किम् अन्तसहितः सिद्ध अथवा अनंतः अन्तरहित सिद्ध ? ॥४॥ 'कण वा मरणेणं-मरमाणे जीवे वड्डइ वा हायइ वा' केन वा मरणेन म्रियमाणो जीवो वर्धते या हीयते वा, संसारस्य वर्द्धनात् जीवो वर्द्धते संसारस्य हान्या वा हीयते जीव कीदृशं मरण प्राप्य जीव' संसार परिभ्रमति कीदृशं च मरण प्राप्य संसारं क्षपयतीति पञ्च प्रश्ना ॥ ५ ॥ 'एव बुच्चमाणे'

प्रवाहरूप से सर्वदा स्थिति वाला होने से विनाश रहित है ? तथा स भन्ते जीवे अणते जीवे" जीव अन्त सहित है अथवा अनन्त है अन्त रहित है ? स अन्ता सिद्धी अणता सिद्धी " सिद्धीक्षेत्र अन्त सहित है या अन्त रहित है ?" स अन्ते सिद्धे अणंते सिद्धे सिद्ध अन्त सहित हैं कि अन्त रहित हैं ? केण वा मरणेण मरमाणे जीवे वड्डई वा हायइ वा " जीव किस मरणसे मरता हुआ अपने संसार के बधन से बढता है और अपने संसार की हानि से घटता है तात्पर्य कहने का यह है कि जीव में न ह्रास होता है और न बढती होती है, परन्तु संसार के बधन से जीव का वर्धन और संसार के ह्रास से जीव की हानि मानली जाती है। इसी आशय से यह हानि वृद्धि विषयक प्रश्न किया गया है तात्पर्य इस प्रश्न का यही है कि कैसे मरण को प्राप्तकर जीव संसार में घूमता रहता है और कैसे मरण को प्राप्त कर जीव अपने संसार को नष्ट कर देता है ? इस प्रकार से ये पांच प्रश्न हैं। एवं वुच्च

वोडने। ४ही नाश थाय छे के नथी थते। तथा (स अते जीवे अणते जीवे) જીવ અન્ત સહિત છે કે અન્ત રહિત છે (स अता सिद्धि अणता सिद्धि ?) સિદ્ધિ-સિદ્ધિ અંતસહિત છે કે અંત રહિત છે (स अते सिद्धे अणते सिद्धे) સિદ્ધ અંતસહિત છે ? કે અંતરહિત છે ? (केण वा मरणेण मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा) જીવ કયા મરણથી પોતાના સંસારના વધારાથી વધે છે અને કયા મરણથી પોતાના સંસારની હાનિથી ઘટે છે કહેવાનું પ્રયોજન એ છે કે જીવમાં તો વૃદ્ધિ પણ થતી નથી અને હાનિ હ્રાસ પણ થતી નથી. પણ સંસારના વધનથી જીવની વૃદ્ધિ અને સંસારની હાનિથી જીવની હાનિ અહીં માની લેવામાં આવી છે તેથી આ પ્રશ્નોનો આ પ્રમાણે ભાવાર્થ ઘટાવી શકાય કેવા પ્રકારના મરણથી જીવ સંસારમા વાર વાર પરિભ્રમણ કરે છે અને કેવા પ્રકારના મરણથી જીવ પોતાના સંસારમાં પરિભ્રમણની સ્થિતિનો

एवमुच्यमानः, एवम्=अनेन प्रकारेण उच्यमानः=पृच्छ्यमानः सन् त्वम् 'एतावं ताव आइक्खाहि' एतावत्तावदाख्याहि, ये ये प्रश्नाः मया पृष्टास्तेषामुत्तरं तावत् प्रथमं देहि ततः पुनरहमन्यं प्रश्न करिष्यामीति हृदयम्।

'तएणं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते' ततः खलु स स्कन्दकः कात्यायनगोत्रः, ततस्तदनन्तर पिंगलकस्य प्रश्नश्रवणानन्तरम्, 'पिंगलए णं णियंठेणं' पिङ्गलकेन निर्ग्रन्थेन 'वेसालियसावएणं' वैशालिकश्रावकेण 'इणमक्खेवं' इमम् आक्षेपं प्रश्नमित्यर्थः, 'पुच्छिए समाणे' पृष्टः सन् 'संकिए' शंकितः, शंका संजाताऽस्येति शंकितः, किमेतस्य पिङ्गलकनिर्ग्रंथप्रश्नस्येदमुत्तरमिद वा उत्तरमित्याकारया शंकया संजातशंकितः 'कंखिए' कांक्षितः, काङ्क्षा संजाताऽस्येति काङ्क्षितः, एतस्य प्रश्नस्येदमुत्तरं न सम्यक्, इदमपि न सम्यक् अतः

माणे "इस प्रकार से जब वैशालिक श्रावक ने पूछा और कहा कि तुम "एतावं ताव अक्खाहि" इन मेरे प्रश्नों का पहिले उत्तर दो तब पीछे मैं और प्रश्न पूछुंगा। "तएणं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते" इस प्रकार से कात्यायन गोत्री वह स्कन्दक परिव्राजक "पिंगलएणं नियंठेणं वेसालियसावएणं इणमक्खेवं पुच्छिए समाणे" जो कि वैशालिकश्रावक पिंगलक निर्ग्रन्थ द्वारा इन प्रश्नों के पूछे जाने पर वह 'संकिए' शंकित हो गया उसके चित में यह विचार बार२ उठने लगा कि पिंगलक निर्ग्रन्थ ने जो ये प्रश्न पूछे हैं सो उनका उत्तर यह है कि इस तरह से उसका मन डावाडोल होने लगा वह यह निश्चय नहीं कर सका कि इन प्रश्नों का उत्तर निश्चय रूप से क्या है? "कंखिए" कांक्षायुक्त हो गया

નાશ કરી નાખે છે? આ પ્રકારના પાંચ પ્રશ્નો છે (एवं वुच्चमाणे) જ્યારે વૈશાલિક શ્રાવક પિંગલકે આ પ્રમાણે પૂછયુ અને કહ્યુ કે (एतावं तावअक्खाहि) મારા આ પ્રશ્નોના તમે પહેલા જવાબ આપો પછી હું બીજા પ્રશ્નો પણ પૂછીશ (तए ण से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते) જ્યારે કાત્યાયન ગોત્રીય તે સ્કન્દક પરિવ્રાજકને (पिंगलए ण नियंठेण वेसालियसावएण इणमक्खेवं पुच्छिए समाणे) વૈશાલિક શ્રાવક પિંગલક નિર્ગ્રંથ વડે આ પ્રશ્નો પૂછવામા આવ્યા ત્યારે (संकिए) તેના મનમાં શંકા ઉદ્‌ભવી કે પિંગલક મુનિએ જે પ્રશ્નો પૂછયા છે તેનો અમુક રીતે જવાબ આપી શકાય કે બીજી કોઇ રીતે જવાબ આપી શકાય? તેના મનની સ્થિતિ ડામાડોળ થઈ ગઈ આથી તે પ્રશ્નોનો કયો જવાબ આપવો તેને નિર્ણય તે કરી શકયા નહીં (कंखिए) તેઓ કાંક્ષાયુક્ત થઈ

किमभोचर भविष्यतीत्याकाङ्क्षावानित्यर्थः । 'वितिगिच्छिए' विचिकित्सितः, विचिकित्सा सञ्जाताऽस्येति विचिकित्सितः, अस्मिन्नुत्तरे दत्तेऽस्य निर्ग्रन्थस्य श्रद्धा भविष्यति न वेत्याकारकविचिकित्सायुक्तः, 'भेदसमावन्ने' भेदसमापन्नः भेदं मतेर्भङ्गं किं कर्तव्यता व्याकुलत्वलक्षणं समापन्नः प्राप्त इति भेदसमापन्नः 'कलुस समावन्नए' कलुषसमापन्नः, नाहं किमपि जानामीत्यवरूपेण स्वविषये काळुष्यं दौर्मनस्यं प्राप्त इति कलुषसमापन्नः सन् 'णो संचाएइ' न शक्नोति, न समर्थो भवति उत्तरमाख्यातुमित्यग्रेण सम्बन्धः । कस्मै ? इत्याह-'पिंगलयस्स' इत्यादि । 'पिंगलयस्स नियठस्स-वेसालियसावयस्स' पिङ्गलकाय निर्ग्रन्थाय

इन प्रश्नों का यदि इस प्रकार से उत्तर देता हूं तो यह भी ठीक नहीं है और यदि इस प्रकारसे उत्तर देता हूं तो यह भी ठीक नहीं है अतः इस प्रश्नों का असली उत्तर क्या होना चाहिये इस प्रकार की आकांक्षा उसके चित्त में जग गई । "वितिगिच्छिए विचिकित्सासे युक्त हो गया इस पिंगलक निर्ग्रन्थ को इन प्रश्नों का यदि मैं यह उत्तर देता हूं तो इस पर उसकी श्रद्धा होगी कि नहीं होगी इस प्रकार की विचिकित्सा उसको उत्पन्न हो गई । "भेदसमावन्ने यह भेद समापन्न हो गया अर्थात् अब मैं क्या करूं इस प्रकारसे वह कुछ भी निर्णय नहीं कर सका उसकी बुद्धि किंकर्तव्यता से विमूढबन गई । "कलुससमावन्ने मैं अब इस विषय में कुछ नहीं जान रहा हूं, इस तरह से अब वह कुछ भी निर्णय नहीं कर सका तब वह अपने आपमें झुंझला गया खिसिया गया मन में उसके कलुषता आगई । अत एव वह (वेसालिय सावयस्स पिंगल

अथवा तेमने मनमां એવું થયું કે આ રીતે તે પ્રશ્નોના જવાબ આપું તો પણ ઠીક નહીં લાગે અને તે સિવાયની કોઈ બીજી રીતે પણ યોગ્ય જવાબ આપી શકાય તેમ નથી તે પ્રશ્નોના સાચે સાચા ઉત્તર કયા હશે તે જાણવાની આકાંક્ષા તેમના મનમાં જન્મી. (वितिगिच्छिए) તેમનું મન વિચિકિત્સાથી યુક્ત થઈ ગયું હું આ પિંગલક નિર્ગ્રંથને આ પ્રકારનો ઉત્તર આપીશ તો તેને તેમાં શ્રદ્ધા રહેશે કે નહીં રહે એવા પ્રકારની આશંકા તેમના મનમાં ઉત્પન્ન થઈ (भेदसमावन्ने) તેમની મતિ મૂંઝાઈ ગઈ તે પ્રશ્નોનો શો જવાબ આપવો તેની સમજણ ન પડવાથી તેઓ વિમાસણમાં પડી ગયા (कलुससमावन्ने) જ્યારે તે પ્રશ્નોનો નિર્ણય તેઓ કરી શક્યા નહીં ત્યારે તેઓ પોતાના મનમાં શરમ અનુભવવા લાગ્યા તેમના મનમાં કલુષતા આવી ગઈ તેથી તેઓ (वेसालियसावयस्स पिंगलयस्स नियठस्स किंचि वि पमोक्खं अक्खाइ उ णो

एवमुच्यमानः, एवम्=अनेन प्रकारेण उच्यमानः=पृच्छ्यमानः सन् तम् 'एतावं ताव आइक्खाहि' एतावत्तावदाख्याहि, ये ये प्रश्नाः मया पृष्टास्तेषामुत्तरं तावत् प्रथमं देहि ततः पुनरहमन्यं प्रश्नं करिष्यामीति हृदयम्।

'तएणं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते' ततः खलु स स्कन्दकः कात्यायनगोत्रः, ततस्तदनन्तरं पिंगलकस्य प्रश्नश्रवणानन्तरम्, 'पिंगलए णं णियठेणं' पिङ्गलकेन निर्ग्रन्थेन 'वेसालियसावएणं' वैशालिकश्रावकेण 'इणमक्खेवं' इमम् आक्षेपं प्रश्नमित्यर्थः, 'पुच्छिए समाणे' पृष्टः सन् 'संकिए' शंकितः, शंका संजाताऽस्येति शंकितः, किमेतस्य पिङ्गलकनिर्ग्रंथप्रश्नस्येदमुत्तरमिदं वा उत्तरमित्याकारया शंकया सजातशंकितः 'कंखिए' कांक्षितः, काङ्क्षा संजाताऽस्येति काङ्क्षितः, एतस्य प्रश्नस्येदमुत्तरं न सम्यक्, इदमपि न सम्यक् अतः

माणे " इस प्रकार से जब वैशालिक श्रावक ने पूछा और कहा कि तुम " एतावं ताव अक्खाहि " इन मेरे प्रश्नों का पहिले उत्तर दो तब पीछे मैं और प्रश्न पूछुंगा। " तएणं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते " इस प्रकार से कात्यायन गोत्री वह स्कन्दक परिव्राजक " पिंगलएणं नियंठेणं वेसालियसावएणं इणमक्खेवं पुच्छिए समाणे" जो कि वैशालिकश्रावक पिंगलक निर्ग्रन्थ द्वारा इन प्रश्नों के पूछे जाने पर वह 'संकिए' शंकित हो गया उसके चित्त में यह विचार बार२ उठने लगा कि पिंगलक निर्ग्रन्थ ने जो ये प्रश्न पूछे हैं सो उनका उत्तर यह है कि इस तरह से उसका मन डावाडोल होने लगा वह यह निश्चय नहीं कर सका कि इन प्रश्नों का उत्तर निश्चय रूप से क्या है? " कंखिए " कांक्षायुक्त हो गया

નાશ કરી નાખે છે? આ પ્રકારના પાંચ પ્રશ્નો છે (एवं वुच्चमाणे) જ્યારે વૈશાલિક શ્રાવક પિંગલકે આ પ્રમાણે પૂછયુ અને કહ્યુ કે (एतावं तावअक्खाहि) મારા આ પ્રશ્નોના તમે પહેલાં જવાબ આપો પછી હું બીજા પ્રશ્નો પણ પૂછીશ (तए णं से खंदए कचायणस्स गोत्ते) જ્યારે કાત્યાયન ગોત્રીય તે સ્કન્દક પરિવ્રાજકને (पिंगलए णं नियट्ठेण वेसालियसावएणं इणमक्खेवं पुच्छिए समाणे) વૈશાલિક શ્રાવક પિંગલક નિર્ગ્રંથ વડે આ પ્રશ્નો પૂછવામાં આવ્યા ત્યારે (संकिए) તેના મનમાં શંકા ઉદ્‌ભવી કે પિંગલક મુનિએ જે પ્રશ્નો પૂછયા છે તેનો અમુક રીતે જવાબ આપી શકાય કે બીજી કોઇ રીતે જવાબ આપી શકાય ? તેના મનની સ્થિતિ ડામાડોળ થઈ ગઈ આથી તે પ્રશ્નોનો કયો જવાબ આપવો તેનો નિર્ણય તે કરી શકયા નહીં (कंखिए) તેઓ કાંક્ષાયુક્ત થઈ



मरणेन म्रियमाणो जीवः वर्धते वा हीयते वा? इत्येषामुत्तरं देहि मया पूर्वोक्तप्रकारेण पृच्छ्यमानस्त्वमिति भावः । 'तएणं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते ' खलु स स्कन्दकः कात्यायनगोत्रः 'पिंगलएणं नियंठेणं वेसालिय सावएणं ' पिंगलकेन निर्ग्रन्थेन वैशालिकश्रावकेण 'दोच्चंपि तच्चंपि ' द्विरपि त्रिरपि–द्वितीयवारमपि तृतीयवारमपि 'इणमक्खेवं पुच्छिए समाणे' इममाक्षेपं पृष्टः सन् 'संकिए' शंकितः 'कंखिए ' कांक्षितः 'वितिगिच्छिए ' विचिकित्सितः 'भेदसमावन्ने ' भेदसमापन्नः 'कलुससमावन्ने' कलुषसमापन्नः 'णो संचाएइ' नो शक्नोति, 'पिंगलगस्स णियंठस्स वेसालियसावयस्स ' पिङ्गलकाय निर्ग्रन्थाय वैशालिकश्रावकाय 'किंचिवि ' किंचिदपि 'पमोक्खं' प्रमोक्षम्–उत्तरम्, 'अक्खाइउं ' आख्यातुम् ' पुनः पिंगलकेन पृष्टोपि स्कन्दकः पिंगलकस्य उत्तरं दातुं न समर्थोऽभूदिति भावः, अतएव–'तुसिणीए संचिट्ठइ ' तूष्णीकः संतिष्ठते उत्तरमजानन् न किंचिदप्युक्तवानित्यर्थः ॥ सू० ७ ॥

ततः किम् ? इत्याह—' तएणं ' इत्यादि ।

मूलम्–तएणं सावत्थीए नयरीए सिंघाडग जाव पहेसु महया जणसमद्देइ वा जणवूहेइ वा जाव परिसा निग्गच्छइ तएणं तस्स खंदयस्स कच्चायणस्स गोत्तस्स बहुजणस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म इमे एयारूवे अज्झत्थिए

किस मरण से मरकर जीव बढता है और घटता है तुम पहिले मेरे इन प्रश्नों का उत्तर दो? इस तरह पूर्वोक्त रूप से प्रश्नों को दुहरा कर तिहरा कर निर्ग्रन्थ पिंगलक के द्वारा कृत प्रश्नों का उत्तर देने के लिये पूछा गया वह कात्यायन गोत्री स्कन्दक परिव्राजक शंकित कांक्षित आदि अवस्था वाला बनकर प्रश्नों का उत्तर देने में असमर्थ ही रहा और इसके फल स्वरूप वह केवल चुप चाप ही रहा ॥ सू०७॥

અન્ત સહિત છે કે અન્ત રહિત છે ત્યાંથી શરૂ કરીને કેવા પ્રકારના મરણથી મરીને જીવ સંસાર વધારે છે અને કેવા પ્રકારના મરણથી મરીને જીવ સંસાર ઘટાડે છે ત્યાં સુધીના મારા પ્રશ્નોના તમે ઉત્તર આપો બીજી વાર તથા ત્રીજી વાર એ પ્રશ્નોના જવાબ આપવાનું જ્યારે પિંગલક નિર્ગ્રંથ વડે કાત્યાયન ગોત્રી સ્કન્દક પરિવ્રાજકને કહેવામાં આવ્યું ત્યારે તે સ્કન્દક પરિવ્રાજક શંકિત, કાંક્ષિત, વગેરે સ્થિતિવાળા થઇ જવાને કારણે તે પ્રશ્નોના ઉત્તર આપી શકવાને અસમર્થ બન્યા તેને પરિણામે પ્રશ્નોના ઉત્તર નહીં આપતાં મૌન જ રહેવાનું તેમને યોગ્ય લાગ્યું તેથી તેઓ ચુપ ચાપ બેસી જ રહ્યા ॥ સૂ. ૭ ॥

वैशालिकश्रावकाय चतुर्थ्यर्थे षष्ठी 'किंचि वि पमोक्खं अक्खाइउं' किञ्चिदपि प्रमोक्षम् =उत्तरम् आख्यातुम्=कथयितुम् । अतएव ' तुसिणीए ' तूष्णीकः मौनमासादितः सन् ' संचिट्ठइ ' सतिष्ठते ।

'तएणं से पिंगलए णियंठे वेसालियसावए' ततः खलु स पिंगलको निर्ग्रन्थः वैशालिकश्रावकः, खंदयं' कच्चायणस्स गोत्तं ' स्कन्दकं कात्यायनगोत्रम् 'दोच्चंपि ' द्विरपि -द्वितीयवारमपि ' तच्चपि ' त्रिरपि=तृतीयवारमपि ' इणमक्खेव ' इममापेक्षम्=प्रश्नं ' पुच्छे ' अप्राक्षीत्–' मागहा ' हे मागध !=हे स्कन्दक ! ' किं स अंते लोए' किं सांतो लोकः ' जाव केण वा मरणेणं मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा एतावं ताव आइक्खाहि ' यावत् केन मरणेन म्रियमाणो जीवो वर्द्धते या हीयते वा एतावत्तावदाख्याहि, इह यावत् करणात् जीवसिद्धिसिद्धानां ग्रहणं भवति। 'वुच्चमाणे एवम् ' उच्यमानः कथ्यमानः एवम्–एतद्रूपेण पूर्वोक्तप्रकारेणेति । किं सान्तः लोकः, अनन्तः लोकः? सान्तः जीवः अनन्तो जीवः?,सान्ता सिद्धिः अनन्ता सिद्धिः ? सान्तः सिद्धः अनन्तः सिद्धः ?, तथा केन

यस्स नियंठस्स किंचिवि पमोक्खं अक्खाइउं णो संचाएइ " वैशालिक श्रावक पिंगलक निर्ग्रन्थ के इन प्रश्नों का थोडा सा भी उत्तर देने के लिये समर्थ नहीं हो सका। केवल वह तुसिणीए संचिट्ठइ चुपचाप ही रहा

" तएणं से पिंगलए णियंठे वेसालिय सावए " जब निर्ग्रन्थ वैशालिक श्रावक ने उसे चुप चाप ही बैठा हुआ देखा तब कच्चायणस्स गोत्तं खंदयं " उन्हों ने उस कात्यायन गोत्री स्कन्दक परिव्राजक से " दोच्चंपि दुवारा भी और तच्चंपि तिवारा भी इणमक्खेवं इन्हीं प्रश्नोंको पुच्छे " पूछा कहा " मागहा " हे मागध हे स्कन्दक किं स अंते लोए जाव केण वा मरणेणं मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा एतावं ताव आइक्खाहि " लोक अन्त सहित " है कि अन्त विना का है यावत् इसी प्रकार जीव सिद्धि और सिद्ध अन्त सहित है कि अन्त रहित ? तथा

संचाइए) वैशालिक श्रावक (महावीरना उपासक) पिंगलक निर्ग्रंथना ओ प्रश्नोनो बिलकुल जवाब आपी शकया नही अने तेथी तेओ (तुसिणीए संचिट्ठइ) चुपचाप बेसी ज रह्या

(तएणं से पिंगलए णियंठे वेसालिए सावए) ज्यारे ते महावीरना उपासक पिंगलक निर्ग्रंथे तेमने चुपचाप बेठेला जोया त्यारे तेमणे (कच्चायणस्स गोत्तं खदयं) कात्यायन गोत्रीय स्कन्दक परिव्राजकने (दोच्चंपि) बीजी अने (तच्चंपि) त्रीजी वखत पण (इणमक्खेव) ओज प्रश्नो (पूच्छे)पूछयां के (मागहा !) हे मागध ! (हे स्कन्दक) (किं स अंते लोए जाव केण वा मरणेणं मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा एताव ताव आइक्खाहि) लोक

छाया—तत खलु श्रावस्त्यां नगर्यां शृंगाटक० यावत् पथेषु महाजनसमर्द इति वा जनव्यूह इति वा यावत् पर्षद् निर्गच्छति । तत खलु तस्य स्कन्दकस्य कात्यायनगोत्रस्य बहुजनस्यान्तिके एतमर्थं श्रुत्वा निशम्य अयमेतद्रूप आध्यात्मिकः चिन्तितः कल्पित प्रार्थित मनोगत संकल्पः समुदपद्यत । एव खलु श्रमणो भगवान् महावीरः कृतंगलाया नगर्याः बहिः छत्रपलाशके चैत्ये संयमेन तपसा आत्मानं भावयन् विहरति, तद् गच्छामि खलु श्रमणं भगवन्तं महावीरं

(सिंघाडग जाव पहेसु) जो श्रृङ्गाटक-त्रिकोणमार्ग जहां तीन मार्ग मिलते हों जहां चार मार्ग मिलते हों ऐसे अनेकप्रकारके मार्गों में (महया जण संमदेइ वा जण वूहेइ वा) लोगोंकी बहुत बड़ी भीड इकट्ठी हो गई और लोक भगवानके पधारने की बातें करने लगे (जाव परिसा निगच्छइ) यावत् सभा निकली (तएणं) इसके पश्चात् (कच्चायणस्स गोत्तस्स तस्स खंदयस्स) कात्यायन गोत्र वाले उस स्कन्दक के मन में (बहुजणस्स अन्तिए एयमट्ठ सोच्चा निसम्म) अनेक मनुष्यों के पास से इस अर्थ को भगवान् महावीर के आगमन रूप समाचार को सुन करके और उसे अपने हृदय में निश्चित करके (इमे) यह (एयारूवे) इसरूप (अज्झत्थिए) आध्यात्मिक (चिंतिए) चिन्तित (कप्पिए) कल्पित (पत्थिए) प्रार्थित (मणोगए) मनोगत (संकप्पे) संकल्प (समुप्पज्जित्था) उत्पन्न हुआ । कि (एवं खलु समणे भगवं महावीरे कयंगलाए नयरीए) श्रमण भगवान महावीर कृतंगला नगरी के बहिया (छत्तपलासए) चेइए) जो छत्रपलाशक नाम का चैत्य है उस में (संजमेणं तवसा

(सिंघाडग जाव पहेसु) શ્રૃંગાટકોમાં- જ્યાં ત્રણ માર્ગો મળતા હોય, ચાર માર્ગો મળતાં હોય, એવી રીતે અનેક પ્રકારના માર્ગોમાં (महया जणसंमदेइ वा जणवूहेइ वा) લોકોનો મોટો સમુદાય એકઠો થઈ ગયો અને લોકો ભગવાનના આગમનની વાતો કરવા લાગ્યા (जाव परिसा निगच्छइ) લોકોની પરિષદ પ્રભુનો ઉપદેશ સાંભળવાને નીકળી ઇત્યાદિ તમામ સૂત્રપાઠ અહીં ગ્રહણ કરવો (तएणं) ત્યાર બાદ (कच्चायणस्स गोत्तस्स तस्स खंदयस्स बहुजणस्स अंतिए एयमट्ठ सोच्चा निसम्म) અનેક માણસો પાસેથી ભગવાન મહાવીરના આગમનના સમાચાર સાંભળીને અને તેને પોતાના હૃદયમાં ધારણ કરીને તે કાત્યાયન ગોત્રીય સ્કન્દક પરિવ્રાજકના મનમાં (इमे) આ (एयारूवे) પ્રકારનો (अज्झत्थिए) આધ્યાત્મિક, (चिंतिए) ચિન્તિત, (कप्पिए) કલ્પિત, (पत्थिए) પ્રાર્થિત, (मणोगए) મનોગત (संकप्पे) સંકલ્પ (समुप्पज्जित्था) ઉત્પન્ન થયો- કે (एवं खलु समणे भगवं महावीरे कयंगलाए नयरीए बहिया छत्तपलासए चेइए

चिंतिए कप्पिए पत्थिए मणोगए संकप्प समुप्पज्जित्था एवं खलु समणे भगवं महावीरे कयंगलाए नयरीए वाहिया छत्तपलासए चेइए संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ, तं गच्छामि णं समणं भगवं महावीरं वंदामि नमंसामि। सेयं खलु मे समणं भगवं महावीरं वंदित्ता नमंसित्ता सक्कारित्ता सम्माणित्ता कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं पज्जुवासित्ता, इमाइं च णं एयारूवाइं अट्ठाइं हेऊइं पसिणाइं कारणाइं वागरणाइं पुच्छित्तए त्तिकट्टु एवं संपेहेइ संपेहित्ता जेणेव परिव्वायगावसहे, तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता तिदंडं च कंचणियं च करोडियं च भिसियं च केसरियं च छण्णालयं च अंकुसयं च पवित्तयं च गणेत्तियं च छत्तयं च उवाहणओ य पाउयाओ य धाउरत्ताओ य गेण्हइ गेण्हित्ता परिव्वायगावसहाओ पडिनिक्खमइ परिनिक्खमित्ता तिदंडं कुंडिय-कंचणिय-करोडिय-भिसिय-केसरिय—छण्णालय-अंकुसय पवित्तय-गणेत्तिय-हत्थगए छत्तोवाणहसंजुत्ते धाउरत्तवत्थपरिहिए सावत्थीए नयरीए मज्झं मज्झेणं निग्गच्छइ, निग्गच्छित्ता जेणेव छत्तपलासए चेइए, जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव पहारेत्थ गमणाए ॥ सू० ८ ॥

"तएणं सावत्थीए" इत्यादि ।

सूत्रार्थ-(तएणं) इसके बाद (सावत्थीए नयरीए) उस श्रावस्तीनगरी में

"तए ण सावत्थीए" ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ-(तएण) ત્યાર બાદ (सावत्थीए नयरीए) શ્રાવસ્તી નગરીમાં

छाया—ततः खलु श्रावस्त्यां नगर्यां शृंगाटक० यावत् पथेषु महाजनसंमर्द इति वा जनव्यूह इति वा यावत् पर्षद् निर्गच्छति। ततः खलु तस्य स्कन्दकस्य कात्यायनगोत्रस्य बहुजनस्यान्तिके एतमर्थं श्रुत्वा निशम्य अयमेतद्रूप आध्यात्मिकः चिन्तितः कल्पितः प्रार्थितः मनोगतः संकल्पः समुदपद्यत। एवं खलु श्रमणो भगवान् महावीरः कृतंगलाया नगर्याः बहिः छत्रपलाशके चैत्ये संयमेन तपसा आत्मानं भावयन् विहरति, तद् गच्छामि खलु श्रमणं भगवन्तं महावीरं

(सिंघाडग जाव पहेसु) जो शृङ्गाटक-त्रिकोणमार्ग जहां तीन मार्ग मिलते हों जहां चार मार्ग मिलते हों ऐसे अनेकप्रकारके मार्गों में (महया जण संमदेइ वा जण वूहेइ वा) लोगोंकी बहुत बड़ी भीड़ इकट्ठी हो गई और लोक भगवानके पधारने की बातें करने लगे (जाव परिसा निग्गच्छइ) यावत् सभा निकली (तएणं) इसके पश्चात् (कच्चायणस्स गोत्तस्स तस्स खंदयस्स) कात्यायन गोत्र वाले उस स्कन्दक के मन में (बहुजणस्स अन्तिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म) अनेक मनुष्यों के पास से इस अर्थ को भगवान् महावीर के आगमन रूप समाचार को सुन करके और उसे अपने हृदय में निश्चित करके (इमे) यह (एयारूवे) इसरूप (अज्झत्थिए) आध्यात्मिक (चिंतिए) चिन्तित (कप्पिए) कल्पित (पत्थिए) प्रार्थित (मणोगए) मनोगत (संकप्पे) सकल्प (समुप्पज्जित्था) उत्पन्न हुआ। कि (एवं खलु समणे भगवं महावीरे कयंगलाए नयरीए) श्रमण भगवान महावीर कृतंगला नगरी के बहिया (छत्तपलासए) चेइए) जो छत्रपलाशक नाम का चैत्य है उस में (संजमेणं तवसा

(सिंघाडग जाव पहेसु) शृंगाटमार्ग- ज्यां त्रणु मार्गो मळतां होय, चार मार्गो मळमां होय, એવી રીતે અનેક પ્રકારના માર્ગોમા (महया जणसमद्दे वा जणवूहेइवा) લોકોનો મોટો સમુદાય એકઠો થઇ ગયો અને લોકો ભગવાનના આગમનની વાતો કરવા લાગ્યા (जाव परिसा निग्गच्छइ) લોકોની પરિષદ પ્રભુનો ઉપદેશ સાંભળવાને નીકળી ઇત્યાદિ તમામ સૂત્રપાઠ અહીં ગ્રહણ કરવો (तएण) ત્યાર બાદ (कच्चायणस्स गोत्तस्स तस्स खंदयस्स बहुजणस्स अंतिए एयमट्ठ सोच्चा निसम्म) અનેક માણસો પાસેથી ભગવાન મહાવીરના આગમનના સમાચાર સાંભળીને અને તેને પોતાના હૃદયમાં ધારણ કરીને તે કાત્યાયન ગોત્રીય સ્કન્દક પરિવ્રાજકના મનમાં (इमे) આ (एयारूवे) પ્રકારનો (अज्झत्थिए) આધ્યાત્મિક (चिंतिए) ચિન્તિત (कप्पिए) કલ્પિત, (पत्थिए) પ્રાર્થિત, (मणोगए) મનોગત (संकप्पे) સંકલ્પ (समुप्पज्जित्था) ઉત્પન્ન થયો- કે (एवं खलु समणे भगवं महावीरे कयंगलाए नयरीए बहिया छत्तपलासए चेइए

वन्दे नमस्यामि श्रेयः खलु मम श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दित्वा नमस्यित्वा सत्कृत्य संमान्य कल्याणं मंगलं दैवतं चैत्यं पर्युपास्य इमान् च खलु एतद्रूपान् अर्थान् हेतून् प्रश्नान् कारणानि व्याकरणानि प्रष्टुमिति कृत्वा एवं संप्रेक्षते, संप्रेक्ष्य यत्रैव परिव्राजकावसथः तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य त्रिदण्डं च कुण्डिकां च कांच-

अप्पाणं भावे माणे विहरइ) संयम और तप से अपनी आत्माको भावित करते हुए विराजते हैं (तं गच्छामि णं भगवं महावीर वंदामि नमंसामि इसलिये में उनके पास जाऊँ और उन्हें वंदना करूँ और नमस्कार करूँ (सेयं खलु में) इसी में मेरा कल्याण हैं कि मै (समणं भगवं महावीरं वंदित्ता नमंसित्ता) श्रमण भगवान महावीर को वंदना नमस्का करके (सक्कारित्ता) उनका सत्कार करके (सम्माणित्ता) उनका सन्मान करके तथा (कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं पज्जुवासित्ता) कल्याणस्वरूप मंगलस्वरूप, धर्मदेव स्वरूप चैत्य ज्ञान स्वरूप उनकी पर्युपासना करके (इमाइं च णं एयारूवाइं हेऊइं पसिणाई अट्ठाइं) इन इन रूप अर्थों को हेतुओं को, प्रश्नोंको (कारणाइं वागरणाइं) कारणोंको व्याकरणोंका (पुच्छित्तए) पूछुं। (त्तिकट्टु) ऐसा मनमें विचार करके (एवं संपेहेइ) ऐसा उसने विचार किया (संपेहित्ता) ऐसा विचार करके फिर वह (जेणेव परिवायगावसहे) जहां परिव्राजकों का मठ था (तेणेव उवागच्छइ) वहां पर गया। (उवागच्छित्ता) वहां जाकर के (तिदंडं च कुंडियं कंचणियं च

संजमेणं तवसा अप्पाणं भावे माणे विहरइ) શ્રમણ ભગવાન મહાવીર, કૃતંગલા નગરીની બહાર છત્રપલાશક નામનુ જે ચૈત્ય (ઉદ્યાન) છે તેમા સંયમ અને તપથી પોતાના આત્માને ભાવિત કરતા બિરાજે છે (त गच्छामि ण समण-भगव महावीर वंदामि, नमसामि) તેમની પાસે હુ જઉં અને તેમને વંદન નમસ્કાર કરૂં (सेय खलु मे) એમાં જ મારુ શ્રેય છે (समण भगवं-महावीरं वंदित्ता नमंसित्ता) શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને વંદન નમસ્કાર કરીને (सक्कारित्ता सम्माणित्ता) તેમનો સત્કાર તથા સન્માન કરીને તથા (कल्लाण-मंगल देवयं चेइय पज्जुवासित्ता) કલ્યાણ સ્વરૂપ, મંગળસ્વરૂપ, ધર્મદેવ સ્વરૂપ, ચૈત્ય (જ્ઞાન) સ્વરૂપ, મહાવીર પ્રભુની પર્યુપાસના કરીને (इमाइं च णं एया-रूवाइं अट्ठाइं हेऊइं पसिणाइ) આ પ્રકારના અર્થો, હેતુઓ, પ્રશ્નો (कारणाइं वागरणाइं) કારણો, અને વ્યાકરણો, વિષે (पुच्छित्तए) તેમને પૂછુ (त्ति कट्टु) આ પ્રમાણે મનમા વિચાર કર્યો, (एवं संपेहेइ) એ પ્રમાણે સંકલ્પ કર્યો (संपेहित्ता) એવો વિચાર કરીને (जेणेव परिव्वायगावसहे तेणेव उवागच्छइ) જ્યાં પરિવ્રાજકો રહેતા હતા તે મઠમા તેઓ ગયા. (उवागच्छित्ता) ત્યાં જઈને

निकां च करोटिकां च केशरिकां च षण्णालकां च अङ्कुशं च पवित्रकं च गणेत्रिकां च छत्रकं च उपानहौ च पादुके च धातुरक्ताश्च गृह्णाति, गृहीत्वा परिव्राजकावसथात् प्रतिनिष्क्रामति, प्रतिनिष्क्रम्य त्रिदण्ड-कुण्डिका-कांचनिका-करोटिका वृषिका-केशरिका-षण्णालकांकुशक-पवित्रक-गणेत्रिका-हस्तगतः छत्रोपानत् संयुक्तो धातुरक्तवस्त्रपरिहित श्रावस्त्या नगर्या मध्य मध्येन निर्गच्छति, निर्गत्य

भिसियं च करोडियं च केसरियं च) उसने वहां से त्रिदण्ड कुंडी, रुद्राक्ष माला, करोटिका वृषिका आसन, केशरिका (छण्णालयं च) षण् नालक त्रिकाष्ठिका, (अंकुसयं च) अंकुशक-वृक्षों के ऊपरसे पत्तों आदि को एकत्रित कर ने के निमित्त अंकुश के जैसा एक प्रकारका (पवित्तियं च) पवित्रक अंगुलीयक (गणेत्तियच) गणेत्रिका (छत्तयं च छत्रक (उवाहणाओय) पगरखे (पाउयाओय) काष्टकी खडाऊँ (धाउरत्ताओ) और गैरिक आदि धातुओंसे रक्त शाटिकाको लिया (गेण्हइ) गेण्हित्ता और लेकर (परिव्वायगावसहाओ) परिव्राजकावसथ मठसे (पडिनिक्ख मइ) बहार निकला (पडिनिक्खमित्ता) बाहर निकल कर (तिदंडकुं डिय कंचणियकरोडियभिसिय केसरिय-छण्णालय-अंकुसय-पवित्तय गणेत्तिय हत्थगए) त्रिदण्डि कुण्डिका कांचनिका करोटिका केशरिका, षण्नालका, अंकुशक, पवित्रक, गणेत्रिक, इन सब को हाथ में रखकर (छत्तोवाहणसंजुत्ते) छत्र को तानकर और उपानह पगरखे पहन

(तिदंडं च कुंडियं च कंचणियं च करोडियं च भिसियं च केसरियं च) તેમણે ત્યાંથી ત્રિદંડ, કમંડળ, રુદ્રાક્ષની માળા, કરોટિકા (માટીનું પાત્ર વિશેષ) વૃષિકા-આસન કેશરિકા (મોઢું સાફ કરવા માટેનો રૂમાલ) (छण्णालयं च) ષણ્નાલક-ત્રિકાષ્ઠિકા (अंकुसयं च) અંકુશક વૃક્ષો પરથી પાંદડાઓને એકઠાં કરવા માટેનું અંકુશના આકારનું સાધન, (पवित्तियं च) પવિત્રક અંગૂઠી (गणेत्तियं च) ગણેત્રિકા, (छत्तयं च) છત્ર (उवाहणाओ य) પગરખાં (पाउयाओ य) પાદુકાઓ धाउरत्ताओ) અને ગૈરિક વગેરે ધાતુઓ વડે રંગેલાં વસ્ત્રો (गेण्हइ) લીધાં (गेण्हित्ता) તે બધી વસ્તુઓ લઈને (परिव्वायगावसहाओ) પરિવ્રાજકોના મઠમાંથી (पडिनिक्खमइ) તેઓ બહાર નીકળ્યા, (पडिनिक्खमित्ता) બહાર નીકળીને (तिदंड कुंडिय कंचणिय, करोडिय, भिसिय केसरिय छण्णालय अंकुसय पवित्तय, गणेत्तिय हत्थगए) ત્રિદંડ, કમંડળ, રુદ્રાક્ષનીમાળા કરોટિકા વૃષિકા, કેશરિકા ત્રિકાષ્ઠિકા, અંકુશક અંગૂઠી અને ગણેત્રિકાને હાથમાં પકડીને (छत्तोवाहणसंजुत्त) છત્રી ઉઘાડીને અને પગ

यत्रैव कृतगला नगरी यत्रैव छत्रपलाशकं चैत्यम् यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीर-स्तत्रैव प्राधारयत् गमनाय ॥ सू० ८ ॥

टीका—'तएणं सावत्थीए नयरीए' ततः खलु श्रावस्त्यां नगर्यां 'सिंघाडगजाव पहेसु' शृङ्गाटक यावत् पथेषु, इह यावत्पदेन—त्रिचतुष्क चत्वरमहापथानां संग्रहः करणीयः। तथा च—त्रिकोणमार्गे, मार्गत्रयसंमिलनस्थाने, चतुर्मार्गसंमि-

---

कर (धाउरत्त परिहिए) तथा गैरिक धातुसे रंगे हुए वस्त्रोंको पहिनकर वह स्कन्दक (सावत्थीए नयरीए) श्रावस्ती नगरी के (मज्झं मज्झेणं) ठीक बीच के मार्ग से (निगच्छइ) निकला (निगच्छित्ता) निकल कर (जेणेव कयंगला नयरी) जहां कृतंगला नगरी थी (जेणेव छत्तपलासए चेइए) और जहां वह छत्र पलाशक नाम का चैत्य था (जेणेव समणे भगवं महावीरे) तथा उसमें जहां श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे (तेणेव पहारेत्थ गमणाए) उस तरफ जानेको रवाना हुआ।

टीकार्थ—(तएणं सावत्थीए नयरीए) जब स्कन्दक परिव्राजक से वैशालिक श्रावक निर्ग्रन्थ पिंगलक ने पांच प्रश्न पूछे और केई बार दुहराने पर भी जब स्कन्दक को उनके उत्तर देने में सर्वथा मौनावलम्बन करना पड़ा—उस समय स्वयं स्कन्दक की आत्मा में इन प्रश्नों का यथार्थ उत्तर पानेके लिये जिज्ञासु भाव हुआ। ठीक इसी समय उस श्रावस्ती नगरी में श्रमण भगवान् महावीर का पदार्पण हुआ। लोगोंके मुख से स्कन्दक ने प्रभु का आगमन सुनकर अपने अहोभाग्य की सराहना की

રખા પહેરીને (धाउर परिहिए) ગેરિક ધાતુથી રંગેલાં વસ્ત્રો પહેરીને તે સ્કંદક (सावत्थीए नयरीए मज्झमज्झेण निगच्छइ) શ્રાવસ્તી નગરીના મધ્યના માર્ગેથી નીકળ્યા (निगच्छित्ता) ત્યાથી નીકળીને (जेणेव कयगला नयरी, जेणेव छत्तपलासए चेइए, जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव पहारेत्थ गमणाए) જ્યા કૃતગલા નગરી હતી, અને જ્યા છત્રપલાશક નામનુ ચૈત્ય હતુ તેમાં ત્યમા (ઉદ્યાનમા) શ્રમણ ભગવાન મહાવીર બીરાજતા હતા, તે તરફ જવાને માટે રવાના થયા.

ટીકાર્થ— (तए ण सावत्थीए नयरीए) જ્યારે સ્કન્દક પરિવ્રાજકને વૈશાલિક શ્રાવક મહાવીરના ઉપાસક પિંગલક નિર્ગ્રંથે પાચ પ્રશ્નો પૂછયા અને તે પ્રશ્નો ત્રણ વખત પૂછવા છતા પણ તેઓ તેનો ઉત્તર આપી શકયા નહી ત્યારે તે પ્રશ્નોના યથાર્થ ઉત્તર જાણવાની જિજ્ઞાસા તેમના સ્કન્દકના મનમા જાગી અને તે સમયે યોગ પણ એવો બન્યો કે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરનું એજ સમયે શ્રાવસ્તી નગરીમા શુભાગમન થયુ લોકોને મુખેથી પ્રભુના આગમનના સમાચાર સાભળીને સ્કન્દકે પોતના સૌભાગ્યની પ્રશસા કરી અને તે

लनस्थाने, अनेकमार्गसमिलनस्थाने राजमार्गे सामान्यमार्गे च 'महया जनसंमद्दे
वा ' महाजनसमर्द इति वा–जनानामत्यन्तसघर्षः 'भीड ' इति भाषाप्रसिद्धः,
' जणवूहेइ वा ' जनव्यूह इति वा–वृन्दरूपेण जनसमूहः, इत्यादि 'जाव परिसा
निग्गच्छइ ' यावत् परिपन्निर्गच्छति । विशेषव्याख्यान तु–औपपातिकसूत्रस्य
पूर्वार्धेऽष्टत्रिंशत्तमसूत्रे मत्कृतपीयूषवर्षिणी टीकायामवलोकनीयम् ।

' तएणं ' ततः खलु तदनन्तर परिषदो निर्गमनानन्तरम्, खलु इति वाक्या-
लङ्कारे, ' तस्स खंदयस्स कच्चायणस्स गोत्तस्स ' तस्य स्कन्दकस्य कात्यायन

और इन प्रश्नो के यथार्थ उत्तर पाने की अभीलाषा से वह उनके समीप
पहुँचा इसी बात को सूत्रकार कहते हैं कि पांच प्रश्नों को सुनकर जब
स्कन्दक शंकित कांक्षित आदि विशेषण संपन्न बनचुका तब ठीक इसी
अवसर पर श्रावस्ती नगरी के शृङ्गाटक आदि अनेक मार्गो पर अर्थात्
सिंघाडा के आकार के मार्ग में त्रिकोण मार्ग में–तीन रास्तों से संमि-
लित स्थानमें, चार मार्ग वाले स्थान में अनेक मार्गो से संमिलित स्थान
में, राजमार्ग में और सामान्य मार्ग में, " महया जनसंमद्देइ " मनुष्यों
की बहुत बडी भारी भीड अथवा " जणवूहेइवा " जनव्यूह–प्रभु के
आगमन की आपस में बातें करने वाले जनसमूह 'जाव' यावत्–परि
षत्–सभा निकली। इस विषय का विशेष वर्णन औपपातिक सूत्र के
पूर्वार्ध में अडतीसवें सूत्र की मेरे द्वारा विरचित पीयूषवर्षिणी टीकामें
देख लेना चाहिये। (तएणं) सभाके निकलने के बाद "कच्चायणस्स गोत्त

પ્રશ્નોના યથાર્થ ઉત્તર જાણવાની ઇચ્છાથી તે સ્કન્દક પરિવ્રાજક ભગવાનમહાવીરની
પાસે જાય છે આ પ્રસંગનું આ સૂત્રમાં નિરૂપણ કરવામાં આવ્યુ છે

પિંગલક નિર્ગ્રંથના પાંચ પ્રશ્નોથી શંકિત કાંક્ષિત વગેરે મનોભાવથી
યુક્ત બનેલા તે સ્કન્દકને મહાવીર પ્રભુના આગમનના સમાચાર કેવી રીતે મળ્યા
તે સૂત્રકાર બતાવે છે

' सिंगाडग जाव पहेसु " શ્રાવસ્તી નગરીના શૃંગાટક શિંગોડાના આકારના
વગેરે અનેક માર્ગો પર ત્રણ માર્ગો મળતા હોય તે સ્થાને, ચાર
માર્ગો મળતા હોય તે સ્થાને અનેક માર્ગો મળતા હોય તે સ્થાને, રાજ
માર્ગ પર અને સામાન્ય માર્ગ પર 'महाजन सम इ ' માણસોની ઠઠ જામી
હતી, અને ' जणवूहेइ वा " તે જન સમૂહ ભગવાન મહાવીરના આગમનની
વાત કરી રહ્યો હતો ' जाव પરિસા' અહીં પરિષદ નીકળી ભગવાને ધર્મોપદેશ
દીધો ઇત્યાદિ પાઠ ગ્રહણ કરવો આ વિષયનું વિશેષ વર્ણન ઔપપાતિક સૂત્રના
પૂર્વાર્ધના ૩૮ માં સૂત્રની મારા વડે લખાયલી પીયૂષવર્ષિણી ટીકામાંથી વાંચી
લેવુ ' तए ण " પરિષદ વિસર્જન થયા પછી ' कच्चायणस्स स गोत्त पयमहु

यत्रैव कृतंगला नगरी यत्रैव छत्रपलाशक चैत्यम् यत्रैव श्रमणो भगवान महावीर-स्तत्रैव प्राधारयत् गमनाय ॥ सू० ८ ॥

टीका—'तएणं सावत्थीए नयरीए' ततः खलु श्रावस्त्यां नगर्यां 'सिंघाडगजाव पहेसु' शृङ्गाटक यावत् पथेसु, इह यावत्पदेन–त्रिचतुष्क चत्वरमहापथानां संग्रहः करणीयः। तथा च—त्रिकोणमार्गे, मार्गत्रयसंमिलनस्थाने, चतुर्मार्गसंमि-

---

कर (धाउरत्त परिहिए) तथा गेरिक धातुसे रंगे हुए वस्त्रोको पहिनकर वह स्कन्दक (सावत्थीए नयरीए) श्रावस्ती नगरी के (मज्झं मज्झेणं) ठीक बीच के मार्ग से (निगच्छइ) निकला (निगच्छित्ता) निकल कर (जेणेव कयंगला नयरी) जहां कृतंगला नगरी थी (जेणेव छत्तपलासए चेइए) और जहां वह छत्र पलाशक नाम का चैत्य था (जेणेव समणे भगवं महावीरे) तथा उसमें जहां श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे (तेणेव पहारेत्थ गमणाए) उस तरफ जानेको रवाना हुआ।

टीकार्थ—(तएणं सावत्थीए नयरीए) जब स्कन्दक परिव्राजक से वैशालिक श्रावक निर्ग्रन्थ पिंगलक ने पांच प्रश्न पूछे और केई बार दुहराने पर भी जब स्कन्दक को उनके उत्तर देने में सर्वथा मौनावलम्बन करना पड़ा–उस समय स्वयं स्कन्दक की आत्मा में इन प्रश्नों का यथोर्थ उत्तर पानेके लिये जिज्ञासु भाव हुआ। ठीक इसी समय उस श्रावस्ती नगरी में श्रमण भगवान् महावीर का पदार्पण हुआ। लोगोंके मुख से स्कन्दक ने प्रभु का आगमन सुनकर अपने अहोभाग्य की सराहना की

રખાં પહેરીને (धाउर परिहिए) ગૈરિક ધાતુથી રંગેલા વસ્ત્રો પહેરીને તે સ્કંદક (सावत्थीए नयरीए मज्झमज्झेण निगच्छइ) શ્રાવસ્તી નગરીના મધ્યના માર્ગેથી નીકળ્યા (निगच्छित्ता) ત્યાંથી નીકળીને (जेणेव कयगला नयरी, जेणेव छत्तपलासए चेइए, जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव पहारेत्थ गमणाए) જ્યાં કૃતંગલા નગરી હતી, અને જ્યાં છત્રપલાશક નામનું ચૈત્ય હતું તેમાં ત્યાં (ઉદ્યાનમાં) શ્રમણ ભગવાન મહાવીર બીરાજતા હતા, તે તરફ જવાને માટે રવાના થયા.

ટીકાર્થ– (तए ण सावत्थीए नयरीए) જ્યારે સ્કન્દક પરિવ્રાજકને વૈશાલિક શ્રાવક મહાવીરના ઉપાસક પિંગલક નિર્ગ્રંથે પાંચ પ્રશ્નો પૂછયા અને તે પ્રશ્નો ત્રણ વખત પૂછવા છતાં પણ તેઓ તેનો ઉત્તર આપી શકયા નહીં ત્યારે તે પ્રશ્નોના યથાર્થ ઉત્તર જાણવાની જિજ્ઞાસા તેમના સ્કન્દકના મનમાં જાગી અને તે સમયે યોગ પણ એવો બન્યો કે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરનું એજ સમયે શ્રાવસ્તી નગરીમાં શુભાગમન થયું લોકોને મુખેથી પ્રભુના આગમનના સમાચાર સાંભળીને સ્કન્દકે પોતના સૌભાગ્યની પ્રશંસા કરી અને તે

एव विचार इष्टरूपेण मनसि स्वीकृतः पुष्पित इव ४, 'मणोगए संकप्पे' मनोगतः संकल्प =मनसि दृढरूपेण निश्चयः 'इत्यमेव भगवान् मया प्रष्टव्यः' इत्येवं रूपो विचारः फलित इव ५ 'समुप्पज्जित्था' समुदपद्यत=समुत्पन्नः। तदेवाह- 'एवं खलु समणे' इत्यादि, 'एवं खलु समणे भगवं महावीरे कयंगलाए नयरीए बहिया छत्तपलासए चेइए संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ' एवं खलु श्रमणो भगवान् महावीरः कृतङ्गलायाः नगर्या बहि छत्रपलाशके चैत्ये संयमेन तपसा आत्मानं भावयन् विहरति, 'तं गच्छामि णं' तत्-तस्मात्कार

रूप से यह कल्पनारूप विचार में परिणत होने के कारण पल्लवित की तरह कल्पित था। (पत्थिए) अभिलाप रूप था क्यों कि इस विचार को मन में इष्टरूपसे स्वीकृत किया था इस लिये यह पुष्पित यह संकल्प की तरह प्रार्थित था। यह संकल्प मनोगत था क्यों कि अभीतक यह बाहर में किसी से प्रकट करनेमें नहीं आया था। केवल मन में ही यह इस रूप में दृढरूप से था कि मैं भगवान के पास जाकर इन प्रश्नों का यथार्थ उत्तर पूछू ऐसा फलित की तरह मनोगत था। "एवं खलु समणे भगवं महावीरे कयंगलाए नयरीए बहिया छत्तपलासए चेइए संजमेणं तवसा अप्पाणं भावे माणे विहरइ" क्यों की इस समय श्रमण भगवान महावीर कृतंगला नगरी के बहिर छत्रपलाशक उद्यान में तप और संयम से अपनी आत्माको भावित करते हुए विराजमान हैं। अतः सौभाग्य से यह बड़ा सुन्दर अवसर मिला है। "तं

રૂપમાં તે સંકલ્પ પરિણત થયેલ હોવાથી પલ્લવિત થયો હોય તેમ કલ્પિત હતો "પત્થીએ" અભિલાષા રૂપ હતો એટલે કે તે વિચારને મનમાં ઇષ્ટરૂપે સ્વીકાર્યો હતો તેથી પુષ્પયુક્ત લતાની જેમ પ્રાર્થિત હતો તથા તે સંકલ્પ હજી સુધી કોઈની પાસે પણ પ્રકટ કર્યો ન હતો તે કારણે તે મનોગત હતો પછી તેમણે મનમા એવો દૃઢ નિશ્ચય કર્યો કે ભગવાનની પાસે જઈને આ પ્રશ્નોના યથાર્થ ઉત્તર પૂછીશ જેમ લતાને ફળ આવે છે તેમ તે પ્રશ્નોના ઉત્તર જાણવારૂપ ફળની પ્રાપ્તિ માટે તેઓ આતુર થયા હતા

સ્કન્દક પરિવ્રાજકના મનમાં આ પ્રમાણે વિચાર થયો- 'एवं खलु समणे भगवं महावीरे कयंगलाए नयरीए बहिया छत्तपलासए चेइए संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ' અત્યારે શ્રમણ ભગવાન મહાવીર કૃતંગલા નગરીની બહાર આવેલા છત્રપલાશક ઉદ્યાનમા તપ અને સંયમથી પોતાના આત્માને ભાવિત કરતા બિરાજમાન છે તો ખરે ખર મારા સૌભાગ્યે આ સુંદર અવસર પ્રાપ્ત

गोत्रस्य 'बहुजणस्स अंतिए' बहुजनस्यान्तिके 'एयमट्ठं' एतमर्थं=भगवदागमन तन्महिमारूपं 'सोच्चा' श्रुत्वा 'निसम्म' निशम्य=हृद्यवधार्य 'इमे एयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए कप्पिए पत्थिए मणोगएसंकप्पे समुपज्जित्था' अयमेतद्रूप आध्यात्मिकश्चिन्तितः कल्पितः प्रार्थितः मनोगतः संकल्पः समुदपद्यत, तत्र-'इमेयारूवे' अयमेतद्रूपः=वक्ष्यमाणप्रकारकः 'अज्झत्थिए' आध्यात्मिकः=आत्मगतो विचारः अङ्कुर इव १, तदनु 'चिंतिए' चिन्तितः-'किं सान्तो लोकः, अनन्तो लोकः ?' इत्यादि प्रश्नोत्तररूपो विचारः द्विपत्रित इव २, 'कप्पिए' कल्पितः= स एव व्यवस्थायुक्तः 'इममेवं लोकादीनां सान्तानन्तत्वज्ञानरूपं विषयं प्रक्ष्यामी' -ति कार्याकारेण परिणतो विचारः पल्लवित इव ३। 'पत्थिए' प्रार्थितः=स

स्स तस्स खंदयस्स" उस कात्यान गोत्रवाले स्कन्दक परिव्राजकके मनमें (इमे एयारूवे) यह इस प्रकार का (संकप्पे) संकल्प विचार उत्पन्न हुआ। यह संकल्प कब हुआ तो उसके लिये सूत्रकार कहते हैं कि (बहुजणस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा) जब उसने अनेक जनों के पास से यह भगवान महावीर के आगमन रूप अथवा उनकी महिमारूप अर्थको समाचार को सुना और हृदयमें उसे धारण कर लिया सुनने और हृदय में धारण कर ने के बाद ऐसा संकल्प विचार (समुप्पज्जित्था) उत्पन्न हुआ। वह संकल्प कैसा था इसी बात को इन वक्ष्यमाण विशेषणों से विशेषित करते हुए सूत्रकार कहते हैं (अज्झत्थिए) वह संकल्प अङ्कुर की तरह आत्मगत विचाररूप होने से आध्यात्मिक था "चिंतिए" (किं सान्तो लोकः अनंतो लोकः) इत्यादि प्रश्नोत्तररूप होने के कारण द्विपत्रित की तरह चिन्तित था। (कप्पिए) कल्पित था मैं प्रभु से लोक अलोकादिकों के सान्त अनन्त होने की बात को पूछुंगा इस

सोच्चा" જ્યારે તેણે ઘણા લોકોને મુખેથી ભગવાન મહાવીરના આગમનના સમાચાર સાભળ્યા અને જ્યારે તેને હૃદયમા ધારણ કર્યા ત્યારે ', कच्चायणस्स गोत्तस्स तस्स खंदयस्स" કાત્યાયન ગોત્રીય તે સ્કન્દકના મનમા આ પ્રકારનો સંકલ્પ "समुप्पज्जित्था" ઉત્પન્ન થયો તે સકલ્પ કેવા પ્રકારનો હતો તે સૂત્રકારે નીચેના વિશેષણો દ્વારા બતાવ્યું છે "अज्झत्थिए" એટલે કે અકુશની માફક આત્મગત વિચારરૂપ હોવાથી તે સકલ્પ આધ્યાત્મિક હતો चिंतिए" એટલે કે લોક અન્તસહિત છે કે રહિત છે ઈત્યાદિ પ્રશ્નોત્તર રૂપ હોવાને કારણે દ્વિપત્રની જેમ (અકુરમાથી જે બે કુમળી પાંદડીઓ ફૂટે છે તેને દ્વિપત્ર કહે છે) ચિન્તિત હતો "कप्पिए" કલ્પિત હતો. એટલેકે હું ભગવાનને લોક અન્તસહિત છે કે અન્ત રહિત છે એ વાત પૂછીશ ઇત્યાદિ કલ્પના રૂપ વિચા-

गम्यत्वात् हेतवो लोकस्य सांतत्वानन्तत्वादय एव तान् ' पसिणाइ ' प्रश्नान् प्रश्न विषयत्वात् प्रश्ना एते एव लोकसांतत्वानन्तत्वादयस्तान् ' कारणाई' कारणानि, उपपत्तिमात्र कारणम् , उपपत्ति विषयत्वादेवान्येव लोकसान्तत्वानन्तत्वादीनि कारणानि ' वागरणाइ ' व्याकरणानि-व्याक्रियमाणत्वात्-निर्णीयमानत्वात् व्याकरणानि लोकसांतत्वा नन्तत्वादीनि ' पुच्छित्तए ' प्रष्टुम् , प्रष्टुं श्रेय इति पूर्वे णान्वय, ' त्ति कट्टु ' इति कृत्वा, इति मनसि विचिन्त्य, ' एवं संपे हेइ' एवं समेक्षते, एवं-यथोक्तप्रकारं भगवद्वन्दनादिकरणं संप्रेक्षते=पर्यालोचयति, ' संपेहित्ता ' संप्रेक्ष्य पर्यालोच्य ' जेणेव परिव्वायगावसहे ' यत्रैव परि

सान्तता अनन्तता रूप हेतुओं को (पसिणाइ) प्रश्नों के विषय भूत होने के कारण लोकादिकों की इन सान्तता अनन्तता रूप प्रश्नों को (कारणाई) उपपत्तिके विषय भूत होनेसे इन लोककी सान्तता अनन्तता रूप कारणों को, (वागरणाई) एवं व्याक्रियमाण होनेसे लोककी सान्तता अनन्ततारूप निर्णय करनेयोग्य व्याकरणों को (पुच्छित्तए) पूछ लों (सेयं खलुमें) मेरा कल्याण है। यह बात निश्चित है। (त्तिकट्टु एवं संपेहेइ) इस कारणको लेकर उसने भगवानको वंदना आदि करनेका विचार किया 'संपेहित्ता' विचारकरके फिर वह (जेणेव परिव्वायगावसहे)जहां परिव्राज कों का मठ था (तेणेव उवागच्छई) वहां गया (उवागच्छित्ता) वहां जाकर के वहांसे उसने (तिदंड) त्रिदण्ड को परिव्राजकों के दण्ड विशेष को कुंडीयं' कमण्डलु को 'कंचणियं' रुद्राक्ष मालाको (करोडियं च) मिट्टीके भाजन विशेष को (भिसियं च) आसन विशेष को (केसरियं च) मुखादिक को

રૂપ હેતુઓ પાસિણાઇ " પ્રશ્નોને વિષયભૂત હોવાને કારણે લોક વગેરેની સાન્તતા અથવા અનન્ત રૂપ તે પ્રશ્નો " કારણાઇ " ઉત્પત્તિના વિષય રૂપ હોવાથી તે લોક વગેરેની સાન્તતા અથવા અનન્તતા રૂપ કારણો ' વાગરણાઇ " અને વ્યાક્રિયમાણ હોવાથી લોકની સાન્તતા રૂપ વ્યાકરણો તાત્પર્ય એ છે કે તે બધા પ્રશ્નોના ઉત્તર ભગવાન મહાવીર સ્વામી પાસેથી જ મારે સમજવા જોઈએ એવો વિચાર સ્કન્દકના મનમાં ઉદ્ભવ્યો " ત્તિ કટ્ટુ એવ સપેહેઇ " આ કારણે તેણે ભગવાન મહાવીરને વંદન વગેરે કરવાનો સંકલ્પ કર્યો. "સંપેહિત્તા" એવો સંકલ્પ કરીને તેઓ "જેણેવ પરિવ્વાયગાવસહે તેણેવ ઉવાગચ્છઈ" જ્યા પરિવ્રાજકોનો મઠ હતો ત્યા ગયા 'ઉવાગચ્છિત્તા' ત્યાં જઈને તેમણે ત્યાંથી તિદંડ" ત્રિદંડ પરિવ્રાજકોને (ધારણ કરવાનોખાસ પ્રકારનો દંડ) " કુંડિય " કમંડળ ' કંચણિય ' રુદ્રાક્ષની માળા ' કરોડિયં ચ " માટીનું પાત્ર " ભિસિયં " આસન, " કેસરિયં ચ " મોઢું વગેરેને સાફ કરવા માટેનો કપડાનો

णात् गच्छामि खलु 'समणं भगवं वन्दामि नमसामि' श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दे नमस्यामि 'सेयं खलु मे' श्रेयः खलु मे, 'समणं भगवं महावीरं' श्रमणं भगवन्तं महावीरम् 'वंदित्ता नमंसित्ता सक्कारित्ता सम्माणित्ता' वन्दित्वा नमस्यित्वा सत्कृत्य सम्मान्य 'कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं पज्जुवासित्ता' कल्याणं=कल्याणस्वरूपं, मंगलस्वरूपम्, दैवतम्=धर्मदेवस्वरूपं, चैत्यं-ज्ञानस्वरूपं भगवन्तम् पर्युपास्य 'इमाइं च णं एयारूवाइं' इमान् खलु एतद्रूपान् इमान् = मम मनसि स्थितान् एतद्रूपान्=लोकादीनां सान्तत्वानन्तत्वरूपान् अर्थान् भावान् लोकादिसान्तत्वानंतत्वादीन् 'हेऊइं' हेतून् — अन्वयव्यतिरेकस्वरूपहेतु

गच्छामि णं" इसलिये मैं अब वहीं पर जाऊँ, वहां जाकर मैं पहले "समणं भगवं महावीरं वंदामि नमंसामि" श्रमण भगवान महावीर को वंदन करूँ-उन्हें नमस्कार करूँ। "समणं भगवं महावीरं वंदित्ता नमंसित्ता" श्रमण भगवान महावीर को वंदन नमस्कार करके "सक्कारित्ता सम्माणित्ता" उनका सत्कार करके सन्मान करके तथा "कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं पज्जुवासित्ता" कल्याण स्वरूप, मंगल स्वरूप, धर्मदेव स्वरूप, चैत्य-ज्ञानस्वरूप श्री भगवान महावीर प्रभुकी पर्युपासना करके (इमाइं च णं एयारूवाइं) उनसे इन इस प्रकार के अर्थात् मेरे मन में स्थित लोक आदिकों की सान्त अनन्तरूप (अट्ठाइं) अर्थों को (हेऊयाइं) अन्वय व्यतिरेक रूप हेतु से गम्य होने के कारण। लोकादिकों की इन

थयो छे "त गच्छामि" तो हुं तेमनी पासे जउं त्यां जईने पहेला तो हु "समण भगवं महावीरं वंदामि नमसामि" श्रमण भगवान महावीरने वंदन नमस्कार करुं "समण भगवं महावीर वंदित्ता नमंसित्ता" श्रमण भगवान महावीरने वंदन नमस्कार करीने, सक्कारित्ता सम्माणित्ता" तेमनो सत्कार करीने तथा सन्मान करीने, तथा "कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं पज्जुवासित्ता" कल्याण स्वरूप मंगळ स्वरूप धर्म स्वरूप चैत्य ज्ञान स्वरूप श्री महावीर प्रभुनी पर्युपासना (सेवा) करीने "इमाइं च णं एयारूवाइं" तेमने आ प्रकारना एटले के लोकनी सान्तता अनन्तता वगेरे रूप "अट्ठाइं" अर्थो, "हेऊयाइं" हेतुओ, "पासिणाइं" प्रश्नो, "कारणाइं" कारणो "वागरणाइं" अने व्याकरणो वगेरे "पुच्छित्तए" पूछुं "सेयं खलु मे" एमां ज मारुं श्रेय छे ए वातमां कोई शंकाने स्थान नथी, हवे "अट्ठाइं" वगेरेना अर्थ समजाववामां आवे छे "अट्ठाइं" लोकनी अन्त सहितता के अन्त रहितता वगेरे रूप सामान्य अर्थ "हेऊयाइं" अन्वय, व्यतिरेक रूप हेतुओथी समजी शकाय तेम होवाथी लोकादिकोनी सान्तता के अनन्तता

परिव्राजका वसथात् परिव्राजकावसथात् 'पडिनिक्खमइ' प्रतिनिष्क्रामति निस्सरति, 'पडिनिक्खमित्ता' प्रतिनिष्क्रम्य निरसृत्य 'तिदंड-कुंडिय-कंचणिय-करोडिय मिसिय-केसरिय-छण्णालय-अंकुसय-पवित्तय-गणेत्तिय-हत्थगए' त्रिदण्ड कुण्डिका-कांचनिका-करोटिका-वृषिका-केशरिका-षण्णालकांकुशक पवित्रकगणेत्रिकाहस्तगत त्रिदण्डकादीनि वस्तूनि हस्ते गतानि स्थितानि यस्य स तथा गृहीतसर्वोपकरण इत्यर्थः, 'छत्तोवाहणसंजुत्ते' छत्रोपानत्संयुक्तः 'धाउरत्तवत्थपरिहिए' धातुरक्तवस्त्रपरिहितः, परिहितधातुरक्तवस्त्रः धातुना गैरिकेण रक्तं वस्त्रं परिधापेत्यर्थः, स्कन्दकः 'सावत्थीए नयरीए' श्रावस्त्याः नगर्याः 'मज्झं मज्झेणं' मध्यं मध्येन 'निग्गच्छइ' निर्गच्छति 'निग्गच्छित्ता' निर्गत्य 'जेणेव कयंगला नयरी' यत्रैव कृतंगला नगरी, 'जेणेव छत्तपलासए चेइए' यत्रैव छत्रपलाशकं चैत्यम्-उद्यानम् 'जेणेव समणे भगवं महावीरे' यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीरः विराजते 'तेणेव' तत्रैव 'पहारेत्थ गमणाए' प्रधारितवान् गमनाय, भगवत्समीपे गन्तुं प्रस्थित इत्यर्थः ॥ सू० ८ ॥

इतश्च भगवत्समीपे यज्जातं तदाह—'गोयमा' इत्यादि ।

छाते को तानकर और पगरखों को पैरों में पहिन कर (धाउरत्तवत्थपरिहिए) एवं धातुरक्त वस्त्रों को शरीर पर धारण कर वह स्कन्दक परिव्राजक (सावत्थीए) नयरीए श्रावस्ती नगरीके (मज्झं मज्झेणं) बीचों बीचके रास्ते से होकर (निग्गच्छइ) निकला और (निग्गच्छित्ता) निकलकर (जेणेव कयंगला नयरी) जहां कृतंगला नगरी थी (जेणेव छत्तपलासए चेइए) उसमें जिस तरफ छत्र पलाशक चैत्य था उसमें भी (जेणेव समणे भगवं महावीरे) जहां श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे (तेणेव पहारेत्थ गमणाए) उस ओर उसने चलनेका निश्चय किया अर्थात् भगवानके पास जाने के लिये वह प्रस्थित हुआ ॥ सू० ८ ॥

માથે ઓઢીને અને પગમાં જોડા પહેરીને 'धाउरत्तवत्थपरिहिए' અને ધાતુરક્તથી રંગેલાં વસ્ત્રોને (ભગવા વસ્ત્રોને) શરીર પર ધારણ કરીને સ્કન્દક પરિવ્રાજક सावत्थीए नयरीए શ્રાવસ્તી નગરીના 'मज्झं मज्झेणं' મધ્યના માર્ગે થઈને "निग्गच्छइ" નીકળ્યો. निग्गच्छित्ता" ત્યાંથી નીકળીને जेणेव कयंगला नयरी" જ્યાં કૃતંગલા નગરી હતી "जेणेव छत्तपलासए चेइए' તે નગરીની બહાર છત્ર પલાશક નામનું ચૈત્ય (ઉદ્યાન) હતું जेणेव समणे भगवं महावीरे" અને તે ચૈત્યમાં જ્યાં શ્રમણ ભગવાન મહાવીર બિરાજતા હતા "तेणेव पहारेत्थ गमणाए" તે તરફ જવાનો તેમણે નિશ્ચય કર્યો એટલે કે તે તરફ જવાને માટે રવાના થયા. ॥ સૂ ૮ ॥

व्राजकावसथः, परिव्राजकानां मठ, 'तेणेव उवागच्छइ' तत्रैवोपागच्छति 'उवागच्छित्ता' उपागत्य 'तिदंडं च' त्रिदण्डं च, परिव्राजकानां दण्डविशेषः, तं 'कुंडियं च' कुण्डिकां च, कुण्डिका-कमण्डलुः, ताम्, 'कंचणियं च' कांचनिकां च, कांचनिका रुद्राक्षमाला, ताम्, 'करोडियं च' करोटिकां च, करोटिका मृत्तिकाभाजनविशेषः ताम्, 'भिसियं च' वृषिकां च, वृषिका नाम आसनविशेषः, 'केसरियं च' केशरिकां च, केशरिका नाम मुखादिप्रमार्जनार्थं वस्त्रखण्डम्, ताम्, 'छण्णालयं च' षण्नालकं च, षण्नालकं त्रिकाष्ठिका तत्, 'अंकुसयं च' अङ्कुशकं च, अङ्कुशकं तरुपल्लवग्रहणार्थमंकुशाकृतिकोपकरणविशेषः, तम्, 'पवित्तयं च' पवित्रकं च, अङ्गुलीयकम् 'गणेत्तियं च' गणेत्रिकां च, गणेत्रिका कलचिकोपकरणविशेषः, ताम्, 'छत्तयं च' छत्रकं च 'उवाहणाओ य' उपानहौ च 'पाउयाओ य' पादुके च काष्ठपादुके 'धाउरत्ताओ य' धातुरक्ताश्च शाटिकाः 'गेण्हइ' गृह्णाति 'गेण्हित्ता' गृहीत्वा 'परिव्वायावसहाओ'

साफ करने के लिये वस्त्रखण्ड को छण्णालयं च त्रिकाष्टिका को, (अंकुसयं च) वृक्षोंके पत्तोंको गिरानेके लिये अंकुशकी आकृतिवाले उपकरण विशेष को, (पवित्तयं च) अंगूठी को (गणेत्तियंच) एकजात के कलाई के उपकरणको, (छत्तयं च) छातेको (उवाहणाओ) पगरखोंको (पाउयाओ) पादुकाओं को, (धाउरत्ताओ य) गैरिक आदि धातु ओं से रंगे हुए पहिरने के कपडोंको (गेण्हइ) लिया। (गेण्हित्ता) लेकर फिर वह परिव्वायावसहाओ) परिव्राजकोके मठ से (पडिनिक्खमइ) बाहर निकला। (पडिनिक्खमित्ता) बाहर निकल कर (तिदंडकुंडिय कंचणिय करोडिय भिसिय केसरिय छण्णालय अंकुसय पवित्तय गणेत्तिय हत्थगए) उसने त्रिदंड को कांचनिका को, करोटिकाको वृषिका को केशरिका को, षण्नालक को, अंकुशको, पवित्रिक को गणेत्रिक को हाथ में लेकर तथा

કકડો, "छण्णालय च" ત્રિકાષ્ઠિકા, "अंकुसयं च" વૃક્ષોના પાદડા નીચે પાડવા માટેનુ અંકુશના આકારનુ સાધન, 'पवित्तयं च" અંગૂઠી, "गणेत्तिय च" ગણેત્રિકા કાંડે પહેરવાનુ ઉપકરણ, "छत्तयं च" છત્ર, "उवाहणओ" પગરખા, "पाउयाओ" પાદુકાઓ, "धाउरत्ताओ य" ગૈરિક વગેરે ધાતુઓથી રંગેલા વસ્ત્રો વગેરે વસ્તુઓ "गेण्हइ" લીધી "गेण्हित्ता" તે વસ્તુઓ લઈને परिव्वायावसहाओ पडिनिक्खमइ" તેઓ પરિવ્રાજકોના મઠમાથી બહાર નીકળ્યા "पडिनिक्खमित्ता" તે મઠમાથી બહાર નીકળીને તેમણે "तिदंड कुंडिय कंचणिय करोडिय भिसिय केसरिय छण्णालय, अंकुसय पवित्तय गणेत्तिय हत्थगए" ત્રિદંડ, કમંડળ, રુદ્રાક્ષની માળા, કરોટિકા, વૃષિકા, કેશરીકા ષણ્નાલક ત્રિકાષ્ઠિકા અંકુશ, પવિત્રિક (અંગૂઠી) અને ગણેત્રિકાને હાથમા ગ્રહણ કર્યા તથા છત્ર

परिव्राजका यसयात् परिव्राजकावसथात् 'पडिनिक्खमइ' प्रतिनिष्क्रामति निस्सरति, 'पडिनिक्खमित्ता' प्रतिनिष्क्रम्य निरसृत्य 'तिदंड–कुंडिय–कंचणिय–करोडिय भिसिय–केसरिय–छण्णालय–अंकुसय–पवित्तय–गणेत्तिय–हत्थगए त्रिदण्ड कुण्डिका–काञ्चनिका–करोटिका–वृषिका–केसरिका–षण्णालकांकुशकपवित्रकगणेत्रिकाहस्तगत त्रिदण्डकादीनि वस्तूनि हस्त गतानि स्थितानि यस्य स तथा गृहीत सर्वोपकरण इत्यथ, 'छत्तोवाहणसंजुत्ते' छत्रोपानत्सयुक्त 'धाउरत्तवत्थपरिहिए' धातुरक्तवस्त्रपरिहितः, परिहितधातुरक्तवस्त्र धातुना गैरिकया रक्त वस्त्र परिधायेत्यर्थ, स्कन्दक 'सावत्थीए नयरीए' श्रावस्त्याः नगर्याः 'मज्झं मज्झेणं' मध्य मध्येन 'निगच्छइ' निर्गच्छति 'निगच्छित्ता' निर्गत्य 'जणेव कयंगला नयरी' यत्रैव कृतंगला नगरी, 'जणेव छत्तपलासए चेइए' यत्रैव छत्रपलाशकं चैत्यम्–उद्यानम् 'जेणेव समणे भगवं महावीरे' यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीरो विराजते 'तेणेव' तत्रैव 'पहारेत्थ गमणाए' प्रधारितवान् गमनाय, भगवत्समीपे गन्तु प्रस्थित इत्यर्थ ॥ सू० ८ ॥

इतश्च भगवत्समीपे यज्जातं तदाह—'गोयमा' इत्यादि ।

छाते को तानकर और पगरखों को पैरों में पहिन कर (धाउरत्तवत्थपरिहिए) एवं धातुरक्त वस्त्रों को शरीर पर धारण कर वह स्कन्दक परिव्राजक (सावत्थीए) नयरीए श्रावस्ती नगरीके (मज्झं मज्झेणं) बीचों बीचके रास्ते से होकर (निगच्छइ) निकला और (निगच्छित्ता) निकलकर (जेणेव कयंगला नयरी) जहां कृतंगला नगरी थी (जेणेव छत्तपलासए चेइए) उसमें जिस तरफ छत्र पलाशक चैत्य था उसमें भी (जेणेव समणे भगवं महावीरे) जहां श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे (तेणेव पहारेत्थ गमणाए) बस और उसने चलनेका निश्चय किया अर्थात् भगवानके पास आने के लिये वह प्रस्थित हुआ ॥ सू० ८ ॥

માથે ઓઢીને અને પગમાં જોડા પહેરીને 'धाउरत्तवत्थपरिहिए' અને ધાતુરક્તથી રંગેલાં વસ્ત્રોને (ભગવા વસ્ત્રોને) શરીર પર ધારણ કરીને સ્કન્દક પરિવ્રાજક 'सावत्थीए नयरीए' શ્રાવસ્તી નગરીના "मज्झं मज्झेणं" મધ્યના માર્ગે થઈને 'निगच्छइ' નીકળ્યો 'निगच्छित्ता' ત્યાંથી નીકળીને "जेणेव कयंगला नयरी" જ્યાં કૃતંગલા નગરી હતી "जेणेव छत्तपलासए चेइए" તે નગરીની બહાર છત્ર પલાશક નામનું ચૈત્ય (ઉદ્યાન) હતું "जेणेव समणे भगवं महावीरे" અને તે ચૈત્યમાં જ્યાં શ્રમણ ભગવાન મહાવીર બિરાજતા હતા, तेणेव पहारेत्थ गमणाए તે તરફ જવાનો તેમણે નિશ્ચય કર્યો એટલે કે તે તરફ જવાને માટે રવાના થયા ॥ સૂ ૮ ॥





मूलम्—गोयमा ! इइ समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं एवं वयासी-दच्छसि णं गोयमा ! पुव्वसंगइयं । कं णं भंते ! खंदयं नाम । से काहे वा, कहं वा केवच्चिरेण वा । एवं खलु गोयमा ! तेणं कालेणं तेणं समएणं सावत्थी नाम नयरी होत्था, वण्णओ, तत्थ णं सावत्थीए नयरीए गद्दभालस्स अंतेवासी खंदए नामं कच्चायणस्स गोत्ते परिव्वायए परिवसइ; तं चेव जेणेव ममं अंतिए तेणेव पहारेत्थ गमणाए, से णं अदूरागए बहुसंपत्ते अद्धाणपडिवन्ने अंतरापहे वट्टइ अज्जेव णं दच्छासि गोयमा ! भंतेत्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वदइ नमंसइ; वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी—पहूणं भंते ! खंदए कच्चायणस्स गोत्ते देवाणुप्पियाणं अंतिए मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए । हंता पभू ! जावं च णं समणे भगवं महावीरे भगवओ गोयमस्स एयमट्ठं परिकहेइ, तावं च णं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते तं देसं हव्वं आगए ॥सू० ९॥

छाया—गौतम ! इति श्रमणो भगवान् महावीरो भगवन्तं गौतममेवमवादीत्—द्रक्ष्यसि गौतम ! पूर्व सांगतिकम् । कं खलु भदन्त ! स्कन्दकं नाम । स कुत्र वा

अब इस तरफ भगवान के समीप जो हुआ उसका वर्णन सूत्रकार करते हैं— (गोयमा) इत्यादि ।

सूत्रार्थ— (गोयमाइ) हे गौतम इस प्रकार से संबोधित करके (समणे-भगवं महावीरे) श्रमण भगवान महावीर ने (भगवं गोयमं) भगवान गौतम से (एवं वयासी) इस प्रकार कहा (गौयमा) हे गौतम ! (पुव्व-संगइयं णं दच्छसि) तुम अपने पूर्व के संबंधी को आज देखोगे । (भंते कं णं) हे भदन्त ! किस पूर्वके सम्बन्धीको ? तब प्रभुने कहा (खंदयं नाम)

હવે આ તરફ ભગવાનની પાસે શું બન્યુ તેનું સૂત્રકાર વર્ણન કરે છે.

સૂત્રાર્થ—(गोयमाइ) હે ગૌતમ ! આ પ્રમાણે સંબોધન કરીને (समणे भगवं महावीरे) શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે (भगवं गोयमं एवं वयासी) ભગવાન ગૌતમને આ પ્રમાણે કહ્યુ-(गोयमा !) હે ગૌતમ ! (पुव्वसंगइयं णं दच्छसि) તું આજે તારા ભૂતકાળના સંબંધીને જોઈશ (भंते ! कं णं) હે ભગવન્ ! કયા મારા પૂર્વ સંબંધીને હું જોઈશ ? પ્રભુએ કહ્યુ-(खंदं नाम) સ્કન્દકને તું

कथं वा कियच्चिरेण वा ? । एवं खलु गौतम ! तस्मिन् काले तस्मिन् समये श्रावस्ती नाम नगरी आसीत् वर्णकः । तत्र खलु श्रावस्त्यां नगर्यां गर्दभालस्यान्तेवासी स्कन्दको नाम कात्यायनगोत्रः परिव्राजकः परिवसति, तदेव यावत् यत्रैव ममान्तिकं तत्रैव प्राधारयत् गमनाय स खलु अदूरागतो बहुसमाप्तः अध्वप्रतिपन्नो ऽन्तरापथि वर्तते अद्यैव द्रक्ष्यसि गौतम !। भदन्त ! इति भगवान् गौतमः श्रमणं

स्कन्दकको (से काहे वा, कहं वा केवच्चिरेण वा) हे प्रभो ! मैं उसे कहांपर किस तरह से और कितने समय के बाद देखूंगा ? (एवं खलु गोयमा) तब प्रभु ने कहा है गौतम ! (तेणं कालेणं तेण समएण सावत्थी नाम नयरी होत्था) उस काल में और उस समय में श्रावस्ती नाम की नगरी थी । (वण्णओ) वर्णक (तत्थ णं सावत्थीए नयरीए) उस श्रावस्ती नगरी में (गद्दभालस्स अंतेवासी) गर्दभालका शिष्य (खंदए नाम) स्कन्दक नामका कि जिसका (कच्चायणस्स गोत्ते) गोत्र कात्यायन है (परिव्वायए परिवसइ) परिव्राजक रहता है (तंचेव जाव जेणेव ममं अंतिए तेणेव पहारेत्थ गमणाए) इस विषय का समस्त वर्णन पहिले कहा जैसा ही जानना चाहिये, यावत् वह स्कन्दक परिव्राजक जहां मैं हूं उस तरफ आनेके लिये प्रस्थित हुआ है । (से णं अदूरागए बहुसंपत्ते अद्धाणपडिवन्ने अंतरापहे वट्टइ) अब वह जिस स्थान पर अपन सब हैं वहांसे लगभग वह बहुत दूर नहीं है-बहुत नजदीक आ चुका है-बीच रास्ते में ही है (गोयमा) हे गौतम ! (अज्जेव णं दक्ख

જોઇશ (से काहे वा कहं वा केवच्चिरेण वा) હે પ્રભો ! હું તેને ક્યાં, કેવી રીતે અને કેટલા સમય પછી જોઈશ ? (एवं खलु गोयमा !) ત્યારે પ્રભુએ કહ્યું હે ગૌતમ ! (तेणं कालेणं तेणं समएणं सावत्थी नाम नयरी होत्था) તે કાળે અને તે સમયે શ્રાવસ્તી નામની નગરી હતી. (वण्णओ) તેનું વર્ણન ચંપાનગરી પ્રમાણે સમજવું (तत्थणं सावत्थीए नयरीए) તે શ્રાવસ્તી નગરીમાં (गद्दभालस्स अंतेवासी कच्चायणस्सगोत्ते) ગર્દભાલનો શિષ્ય કાત્યાયન ગોત્રી (खंदए नाम परिव्वायए परिवसइ) સ્કંદક નામનો પરિવ્રાજક રહે છે (तं चेव जाव जणेव ममं अंतिए तणेव पहारेत्थ गमणाए) આ વિષયનું સમસ્ત વર્ણન આગળ કહ્યા પ્રમાણે જ સમજવું તે સ્કન્દક પરિવ્રાજક મારી પાસે આવવા માટે રવાના થઈ ચૂક્યો છે (से णं अदूरागए बहुसंपत्ते अद्धाणपडिवन्ने अंतरापहे वट्टइ) હવે તે આ સ્થાનથી બહુ દૂર નથી ઘણો જ નજીક આવી ગયો છે-રસ્તાની વચ્ચે જ છે (गोयमा!) હે ગૌતમ ! (अज्जेव णं दक्खसि)

भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमवादीत्, प्रभुः खलु भदन्त! स्कन्दकः कात्यायनगोत्रो देवानुप्रियाणामन्तिके मुंडो भूत्वा खलु अगारादनगारितां प्रव्रजितुम्? हंत प्रभुः यावच्च श्रमणो भगवान् महावीरो भगवंतं गौतममेतमर्थं परिकथयति तावच्च खलु स स्कन्दकः कात्यायनगोत्रस्तं देशं हव्यमागतः॥

टीका—'गोयमा इइ समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं एवं वयासी' गौतम! इति श्रमणो भगवान् महावीरो भगवन्तं गौतमम् एवम्—वक्ष्यमाणप्रकारेण अवा-

---

सि) तुम उसे अभी ही देखोगे। (भंते त्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ) हे भगवंत इस प्रकार से संबोधित करके भगवान गौतम ने श्रमण भगवान महावीर को वंदना की (नमंसइ) उन्हें नमस्कार किया (वंदित्ता नमंसित्ता) वंदना नमस्कार कर के (एवं वयासी) फिर उन्होंने ऐसा कहा—(पहूणं भंते! खंदए कच्चायणस्स गोत्ते देवाणुप्पियाणं अंतिए मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए) हे भदन्त! क्या वह कात्यायनगोत्रवाला स्कंदक आप देवानुप्रिय के पास मुंडित होकर अगारावस्था से अनगारावस्था धारण करने के लिये शक्तिशाली है? (हंता पभू) हां गौतम वह समर्थ—शक्तिशाली है (जावं च णं समणे भगवं महावीरे भगवओ गोयमस्स एयमट्ठं परिकहेइ, तावं च णं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते तं देसं हव्वं आगए) जब श्रमण भगवान महावीर गौतम स्वामी से इस बात को कह रहे थे कि इतने ही में कात्यायनगोत्रवाला वह स्कन्दक उस स्थान पर शीघ्र आ पहूँचा॥

टीकार्थ—"गोयमाइ" हे गौतम! इस प्रकार संबोधित करके

તું હમણા જ તેને જોઈશ (भंते त्ति भगवं गोयमे समण भगवं महावीर वंदइ नमंसइ) હે ભગવન્! એવું સંબોધન કરીને ભગવાન મહાવીરને વંદન નમસ્કાર કર્યા (वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी) વંદન નમસ્કાર કરીને તેમણે મહાવીર પ્રભુને આ પ્રમાણે કહ્યું—(पहूण भंते! खंदए कचायणस्स गोत्ते देवाणुप्पियाणं अंतिए मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए?) હે ભગવન્! શું તે કાત્યાયન ગોત્રીય સ્કન્દક આપ દેવાનુપ્રિયની પાસે દીક્ષા ગ્રહણ કરીને, અગારાવસ્થાનો ત્યાગ કરી અણગારાવસ્થા ધારણ કરવાને સમર્થ છે? (हंता पभू) હા, ગૌતમ! તે સમર્થ છે. (जाव च ण समणे भगव महावीरे भगवओ गोयमस्स एयमट्ठं परिकहेइ, तावं च ण से खंदए कचायणस्स गोत्ते तं देसं हव्व आगए) શ્રમણ ભગવાન મહાવીર પ્રભુ ગૌતમ સ્વામીને આ વાત કરતા હતા ત્યારે જ કાત્યાયન ગોત્રી સ્કન્દક પરિવ્રાજક ત્યાં આવી પહોંચ્યો.

दीत्-कथितवान्, यस्मिन् समये स स्कन्दक सर्वामेव सामाग्रीमादाय कृतंगला नगरीतः प्रस्थान कृतवान तस्मिन्नेव समये भगवान् महावीरो गौतमं हे गौतम इति सम्बोध्य प्रोवाचेति समुदितार्थ । किमुवाचेत्याह—'द्रक्ष्यसि' इत्यादि । 'दच्छसि णं गोयमा' द्रक्ष्यसि खलु गौतम । 'पुव्वसंगइयं' पूर्वसंगतिकम्-गृहस्थावस्थापरिचितं पूर्वभवमित्रं वा कमपि पुरुषम् । अतर्कितमाकस्मिकं भगव द्वाक्य श्रुत्वा आश्चर्ययुक्तो गौतमो भगवन्तं पृच्छति—'क णं भंते' कं खलु भदन्त !, हे भदन्त ! क पूर्वपरिचितं द्रक्ष्यामीत्यर्थः, भगवान् कथयति-' खंदयं-नाम' स्कन्दकं नाम, स्कन्दकं द्रक्ष्यसीत्यर्थः । पुनर्गौतमः पृच्छति-' से काहे वा

"समणेभगवं महावीरे" श्रमण भगवान महावीर ने "भगवं गोयमं" भगवान गौतम से (एवं वयासी) ऐसा कहा जिस समय में वह स्कन्दक समस्त सामग्री को साथ में लेकर कृतगला नगरी से प्रस्थित हुआ था उसी समय में भगवान महावीर ने गौतम से हे गौतम। ऐसा संबोधित करके कहा क्या कहा? इसके लिये सूत्रकार कहते हैं कि (दच्छसि णं गोयमा) हे गौतम! तुम देखोगे (पुव्वसंगइय) गृहस्थावस्था में परिचित हुए अथवा पूर्वभव के मित्र, किसी पुरुष को अतर्कित एवं आकस्मिक भगवान के वचन सुनकर आश्चर्य से चकित हुए गौतम ने भगवान से पूछा 'क णं भंते! हे भदन्त! मैं किस पूर्व परिचित को देखूंगा तब भगवान ने उनसे कहा (खंदयं नाम) स्कन्दक को

टीकार्थ—"गोयमाइ" हे गौतम! એવું સંબોધન કરીને "समणे भगवं महावीरे" શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે "भगवं गोयमं" ભગવાન ગૌતમને "एवं वयासी" આ પ્રમાણે કહ્યું—

(જ્યારે તે સ્કન્દક પરિવ્રાજક પોતાની બધી સામગ્રીઓને સાથે લઈને કૃતંગલા નગરીમાંથી ભગવાન મહાવીર પાસે આવવા માટે ઉપડયો ત્યારે) ભગવાન મહાવીરે ગૌતમને 'હે ગૌતમ!' એવું સંબોધન કરીને શું કહ્યું તે સૂત્રકાર બતાવે છે-'दच्छसि णं गोयमा ! पुव्वसंगइयं" હે ગૌતમ! તું તારા કોઈ પૂર્વપરિચિત સંબંધીને જોઈશ-ગૃહસ્થાવસ્થામાં જેની સાથે પરિચય કે મિત્રતા થઈ હોય એવી વ્યક્તિને જોઈશ આ પ્રકારના અતર્કિત અને આકસ્મિક વચનો મહાવીરસ્વામીને મુખેથી સાંભળીને આશ્ચર્યચકિત થયેલા ગૌતમસ્વામીએ મહાવીર પ્રભુને પૂછયું- कं णं भंते હે ભગવાન્ કયા પૂર્વપરિચિતને જોઈશ ત્યારે ભગવાને કહ્યું કે 'खंदयं नाम' સ્કંદને જોઈશ ત્યારે ફરીથી પ્રભુને ગૌતમસ્વામીએ

भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमवादीत्, प्रभुः खलु भदन्त ! स्कन्दकः कात्यायनगोत्रो देवानुप्रियाणामन्तिके मुंडो भूत्वा खलु अगारादनगारितां प्रव्रजितुम् ? हंत प्रभुः यावच्च श्रमणो भगवान् महावीरो भगवंतं गौतममेतमर्थं परिकथयति तावच्च खलु स स्कन्दकः कात्यायनगोत्रस्तं देशं हव्यमागतः ॥

टीका—'गोयमा इइ समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं एवं वयासी' गौतम ! इति श्रमणो भगवान् महावीरो भगवन्तं गौतमम् एवम्—वक्ष्यमाणप्रकारेण अवा-

---

सि) तुम उसे अभी ही देखोगे। (भंते त्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ) हे भगवंत इस प्रकार से संबोधित करके भगवान गौतम ने श्रमण भगवान महावीर को वंदना की (नमंसइ) उन्हें नमस्कार किया (वंदित्ता नमंसित्ता) वंदना नमस्कर कर के (एवं वयासी) फिर उन्होंने ऐसा कहा—(पहूणं भंते ! खंदए कच्चायणस्स गोत्ते देवाणुप्पियाणं अंतिए मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए) हे भदन्त ! क्या वह कात्यायनगोत्रवाला स्कंदक आप देवानुप्रिय के पास मुंडित होकर अगारावस्था से अनगारावस्था धारण करने के लिये शक्तिशाली है ? (हंता पभू) हां गौतम वह समर्थ—शक्तिशाली है (जावं च णं समणे भगवं महावीरे भगवओ गोयमस्स एयमट्ठं परिकहेइ, तावं च णं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते तं देसं हव्वं आगए) जब श्रमण भगवान महावीर गौतम स्वामी से इस बात को कह रहे थे कि इतने ही में कात्यायनगोत्रवाला वह स्कन्दक उस स्थान पर शीघ्र आ पहूँचा ॥

टीकार्थ—„ गोयमाइ " हे गौतम ! इस प्रकार संबोधित करके

तुं હમણાં જ તેને જોઈશ (भंते त्ति भगवं गोयमे समण भगवं महावीर वंदइ नमंसइ) હે ભગવન્! એવું સંબોધન કરીને ભગવાન મહાવીરને વંદન નમસ્કાર કર્યા (वंदिता नमसित्ता एवं वयासी) વંદન નમસ્કાર કરીને તેમણે મહાવીર પ્રભુને આ પ્રમાણે કહ્યું—(पहूण भंते ! खंदए कच्चायणस्स गोत्तो देवाणुप्पियाणं अंतिए मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए ?) હે ભગવન્! શું તે કાત્યાયન ગોત્રીય સ્કન્દક આપ દેવાનુપ્રિયની પાસે દીક્ષા ગ્રહણ કરીને, અગારાવસ્થાનો ત્યાગ કરી અણગારાવસ્થા ધારણ કરવાને સમર્થ છે ? (हंता पभू) હા, ગૌતમ ! તે સમર્થ છે (जाव च ण समणे भगव महावीरे भगवओ गोयमस्स एयमट्ठं परिकहेइ,तावं च ण से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते तं देसं हव्व आगए) શ્રમણ ભગવાન મહાવીર પ્રભુ ગૌતમ સ્વામીને આ વાત કરતા હતા ત્યારે જ કાત્યાયન ગોત્રી સ્કન્દક પરિવ્રાજક ત્યાં આવી પહોંચ્યો.

दीत्-कथितवान्, यस्मिन् समये स स्कन्दकः सर्वामेव सामाग्रीमादाय कृतंगला नगरीतः प्रस्थानं कृतवान् तस्मिन्नेव समये भगवान् महावीरो गौतम हे गौतम इति संबोध्य प्रोवाचेति समुदितार्थः । किमुवाचेत्याह—'दच्छसि' इत्यादि । 'दच्छसि णं गोयमा' द्रक्ष्यसि खलु गौतम ! 'पुव्वसंगइयं' पूर्वसंगतिकम्-गृहस्थावस्थापरिचितं पूर्वभवमित्रं वा कमपि पुरुषम् । अतर्कितमाकस्मिकं भगव द्वाक्यं श्रुत्वा आश्चर्ययुक्तो गौतमो भगवन्तं पृच्छति—'क णं भंते' क खलु भदन्त !, हे भदन्त ! कं पूर्वपरिचितं द्रक्ष्यामीत्यर्थः, भगवान् कथयति–' खदयं-नाम' स्कन्दक नाम, स्कन्दक द्रक्ष्यसीत्यर्थः । पुनर्गौतमः पृच्छति–' से काहे वा

"समणेभगवं महावीरे" श्रमण भगवान महावीर ने "भगवं गोयमं" भगवान गौतम से (एवं वयासी) ऐसा कहा जिस समय में वह स्कन्दक समस्त सामग्री को साथ में लेकर कृतंगला नगरी से प्रस्थित हुआ था उसी समय में भगवान महावीर ने गौतम से हे गौतम । ऐसा संबोधित करके कहा क्या कहा ? इसके लिये सूत्रकार कहते हैं कि (दच्छसि णं गोयमा) हे गौतम ! तुम देखोगे (पुव्वसंगइयं) गृहस्थावस्था में परिचित हुए अथवा पूर्वभव के मित्र, किसी पुरुष को अतर्कित एवं आकस्मिक भगवान के वचन सुनकर आश्चर्य से चकित हुए गौतम ने भगवान से पूछा 'कं णं भंते ! हे भदन्त ! मैं किस पूर्व परिचित को देखूंगा तब भगवान ने उनसे कहा (खदय नाम) स्कन्दक को

टीकार्थ—"गोयमाइ" हे गौतम ! એવું સંબોધન કરીને "समणं भगवं महावीरे" श्रमણ ભગવાન મહાવીરે "भगवं गोयमं" ભગવાન ગૌતમને "एवं वयासी" આ પ્રમાણે કહ્યું—

(જ્યારે તે સ્કન્દક પરિવ્રાજક પોતાની બધી સામગ્રીઓને સાથે લઈને કૃતંગલા નગરીમાંથી ભગવાન મહાવીર પાસે આવવા માટે ઉપડયો ત્યારે) ભગવાન મહાવીરે ગૌતમને 'હે ગૌતમ !" એવું સંબોધન કરીને શું કહ્યું તે સૂત્રકાર બતાવે છે–"दच्छसि णं गोयमा ! पुव्वसंगइयं હે ગૌતમ ! તું તારા કોઈ પૂર્વપરિચિત સગાંને જોઈશ–ગૃહસ્થાવસ્થામાં જેની સાથે પરિચય કે મિત્રતા થઈ હોય એવી વ્યક્તિને જોઈશ. આ પ્રકારના અતર્કિત અને આકસ્મિક વચનો મહાવીરસ્વામીને મુખેથી સાંભળીને આશ્ચર્યચકિત થયેલા ગૌતમસ્વામીએ મહાવીર પ્રભુને પૂછયું– 'कं णं भंते' હે ભગવાન્ હું કયા પૂર્વ પરિચિતને જોઈશ ત્યારે ભગવાને કહ્યું કે "खदय नाम" સ્કંદકને જોશો ત્યારે ફરીથી પ્રભુને ગૌતમસ્વામીએ

कहं वा केवच्चिरेण वा ' अथ कुत्र वा कथं वा कियच्चिरेण वा ' से ' अथ तं ' काहे ' इति वा कुत्र स्थाने द्रक्ष्यामि ' कहं वा ' इति कथं वा, केन वा प्रकारेण साक्षाद्दर्शनतः श्रवणतो वा, द्रक्ष्यामि ? 'केवच्चिरेण वा' इति, कियच्चिरेण वा कियता कालेन द्रक्ष्यामि ? भगवानाह—' एवं खलु गोयमा' एवं खलु हे गौतम ! ' तेणं कालेणं तेणं समएणं ' तस्मिन् काले तस्मिन् समये, आवयोर्वार्त्तालापसमये सावत्थीनाम नयरी ' श्रावस्ती नाम नगरी ' होत्था ' अस्ति, अत्र ' होत्था ' इत्यस्य ' अस्ती—त्यर्थों भवति । ' वण्णओ '—वर्णकः, चंपावत् वर्णको विज्ञेयः, चम्पानगरीसदृशी अस्तीत्यर्थः । ' तत्थ णं सावत्थीए नयरीए ' तत्र खलु श्रावस्त्यां नगर्याम् ' गद्दभालस्स ' गर्दभालस्य, गर्दभालनामकपरिव्राजकस्य ' अंतेवासी ' अन्तेवासी शिष्यः ' खंदए नाम ' स्कन्दको नाम ' कच्चायनस्स गोत्ते ' कात्यायनगोत्रः ' परिव्वायए' परिव्राजकः ' परिवसइ ' परिवसति ' त चेव '

देखोगे तब प्रभु से गौतमने पुनः पूछा (से काहे वा कहं वा केवच्चिरेण वा हे भदन्त ! मैं उसे काहे कहां पर देखूंगा कैसे देखूंगा अपनी आंखों से देखूंगा या उसे अपने कानों से सुनूंगा? तथा कितने काल के बाद उसे देखूंगा? तबभगवान ने कहा (एवं खलु गोयमा !) हे गौतम ! सुनो बात इस प्रकार से है "तेणं कालेणं तेणं समएणं" उस काल में और उस समयमें "सावत्थी नाम नयरी होत्था" श्रावस्ती नामकी प्रसिद्ध नगरी है। यहां पर "होत्था" इस क्रिया पद का अर्थ "अस्ति" है—ऐसा होता है। 'वण्णओ' इस नगरी का वर्णक चंपानगरी के वर्णन की तरह जानना चाहीये। तात्पर्य यह की यह नगरी चंपा नगरी के जैसी है। " तत्थ णं सावत्थीए नयरीए " उस श्रावस्ती नगरी में " गद्दभालस्स " गर्दभाल नाम के परिव्राजक का " अंतेवासी " शिष्य " खंदए नाम" स्कन्दक नामका

કહ્યુ કે " से काहे वा कहं वा केवच्चिरेण वा " હે ભગવાન ! હુ તેને કયા જોઇશ ? કેવી રીતે જોઇશ ? મારી આંખોથી જોઈશ—અથવા તો મારા કાને સાભળીશ ? હુ તેને કેટલા સમય પછી જોઇશ ? ત્યારે ભગવાને કહ્યુ "एवं खलु गोयमा !" હે ગૌતમ ! સાભળ વાત આ પ્રમાણે છે—" तेणं कालेणं तेणं समएणं " તે કાળે અને તે સમયે " सावत्थी नाम नयरी होत्था શ્રાવસ્તી નામે નગરી હતી. (અહીં ભૂતકાળનો પ્રયોગ થયો હોવા છતા વર્તમાનકાળ ગ્રહણ કરવાનો છે—એટલે કે આ કાળે અને આ સમયે શ્રાવસ્તી નામની નગરી છે " वण्णओ " તેનુ વર્ણન ચંપાનગરીના વર્ણન પ્રમાણે જ સમજવુ એટલે કે શ્રાવસ્તી નગરી ચપાનગરીના જેવી છે, "तत्थणं सावत्थीए नयरीए " તે શ્રાવસ્તી નગરીમા "गद्दभालस्स " ગર્દભાલ નામના પરિવ્રાજકનો " अंतेवासी " શિષ્ય " खंदए नाम परिव्वायए कच्चायणस्स गोत्ते परिवसइ "

तदेव=पूर्वोक्तमेव स्कन्दकवर्णनं सर्वमत्र वाच्यम् 'जाव' यावत्, अत्र यावत्पदेन- 'रिउव्वेय जजुव्वेय०' इत्यारभ्य 'जेणेव छत्तपलासए चेइए' इत्यन्त सर्वोऽपि पाठोऽत्र सग्राह्य । 'जेणेव मम अंतिए तेणेव पहारेत्थ गमणाए' यत्रैव ममान्तिकं तत्रैव प्राधारयद् गमनाय, मम समीपे-समागन्तुं तापसाश्रमात् प्रस्थानं कृतवान्। 'से णं अदूरागए बहुसपत्ते अद्धाणपडिवन्ने अतरापहे वहइ' स खलु अदूरागतो बहुसंप्राप्तोऽध्वप्रतिपन्नोऽन्तरापथि वर्तते, स स्कन्दकः खलु 'अदूरागए' अदूरे आगतः समीपं प्राप्त इत्यर्थः, अदूरत्वं चावधिस्थानापेक्षयापि स्यात्, अथवा दूरतरमार्गापेक्षया द्विक्रोशादिकमपि अदूरं स्यात् इत्यत आह-'बहुसपत्ते'

"परिव्वायए" परिव्राजक जो कि "कच्चायणस्स गोत्ते" कात्यायन गोत्र का है "परिवसइ" रहता है। "त चेव" यहां पर स्कन्दक संबधी पूर्वोक्त समस्त वर्णन करलेना चाहिये। "जाव" पद यहां यह समझाता है कि रिउव्वेय, जजुव्वेय, यहां से लेकर "जेणेव छत्तपलासए चेइए" यहां तकका समस्त पाठ यहां ग्रहण कर लेना चाहिये। "जेणेव मम अतिए तेणेव पहारेत्थ गमणाए" इस तरह वह परिव्राजक वहां से अर्थात् तापसाश्रम से मेरे पास आने के लिये प्रस्थित हो चुका है। (से णं अदूरागए बहुसपत्ते अद्धाणपडिवन्ने अतरापहे वहइ) इन पदोंके विषय में खुलासा अर्थ इस प्रकार से है कि वह स्कन्दक परिव्राजक "अदूरे आगतः" समीप में आ चुका है। यह अदूरता अवधिस्थान की अपेक्षा से भी हो सकता है अथवा दूरतर मार्ग की अपेक्षा से दो कोश आदि भी अदूर हो सकते हैं-तो इस के लिये कहा है कि

કાત્યાયન ગોત્રનો સ્કંદક નામનો પરિવ્રાજક રહે છે તે કાત્યાયન ગોત્રનો છે અને તેનુ નામ સ્કન્દક છે તે સ્કન્દક પરિવ્રાજક છે "त चेव" અહીં સ્કન્દક પરિવ્રાજકનું વર્ણન સૂત્ર ૭ પ્રમાણે જ કરાયુ છે તેમ સમજવુ "जाव" પદ એ બતાવે છે કે 'रिउव्वेय जजुव्वे य' થી શરૂ કરીને "जेणेव छत्तपलासए चेइए सुधीनो समस्त सूत्रपाठ अहीं ग्रहण करवो.

"जेणेव मम अंतिए तेणेव पहारेत्थ गमणाए" આ રીતે તે સ્કંદક પરિવ્રાજક તેના મઠમાંથી મારી પાસે આવવા માટે ઉપડી ચુક્યો છે 'से णं अदूरागए बहुसपत्ते अद्धाणपडिवन्ने अतरापहे वहइ" આ પદોનુ સ્પષ્ટીકરણ આ પ્રમાણે છે-"अदूर आगत" તે નજીકમા જ આવી પહોંચ્યો છે તે અદૂરતા અવધિસ્થાનની અપેક્ષાએ પણ સમજી શકે છે અથવા દૂરના માર્ગની અપેક્ષાએ બે ગાઉ વગેરેનું અતર પણ સમજી શકે છે તો તેનુ નિરાકરણ

वहुसंप्राप्तः, अत्यन्तसमीपमार्गसमागतः, वहुसंप्राप्तता च विश्रामादिकारणतः आरामादिगतोपि संभवति, अत उच्यते 'अद्धाणपडिवन्ने' अध्वप्रतिपन्नः, अध्वानं प्रतिपन्नः मार्गे चलन्नित्यर्थः 'अंतरापहे वट्टइ' अंतरापथि वर्तते, अत्यन्त समीपे वर्त्तते, अतस्त्वं 'अज्जेव णं दच्छसि गोयमा' अद्यैव खलु द्रक्ष्यसि गौतम! हे गौतम! यः खलु तव पूर्वपरिचितः स्कन्दकस्तं त्वमद्यैव=अधुनैव स्वल्पेनैव कालेन तव दृष्टिपथे समागमिष्यतीति भावः 'भंतेत्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ' भदंत! इति सम्बोध्य भगवान गौतमः श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति, 'वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी' वंदित्वा नमस्यित्वा एवं वक्ष्यमाणप्रकारेणावादीत्–पृष्टवान्–'पहूणं भंते' प्रभुः=समर्थः खलु भदंत!

(बहु संपत्ते) कि वह अत्यन्त समीप के मार्ग में आचुका है। यह वहु संप्राप्तता विश्राम आदि कारण की वजह से बगीचा आदि में भी गये हुए में हो सकती है सो इसके लिये कहा गया है कि (अद्धाणपडिवन्ने) वह अभी मार्ग मे ही चल रहा है। विश्रामादि के निमित्त बगीचा आदि में नहीं गया है। अत. वह "अंतरापहे वट्टइ" वीच रास्ते में ही है। विल कुल समीप आचुका है। इसलिये तुम उसे (अज्जेव णं दच्छसि) अभी ही देखोगे। तात्पर्य यह है कि हे गौतम! तुम अपने पूर्वपरिचित स्कन्दक को अभी ही वहुत थोडे ही समय के बाद दृष्टिपथ में आया हुआ देख लोगे। (भंते त्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ) हे भदन्त। ऐसा कह कर भगवान महावीर को वंदना की और उन्हे नमस्कार किया (वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी वदना नमस्कार करके फिर उन्होंने उनसे ऐसा पूछा (भंते! खंदए कच्चाय-

---

કરવા માટે કહ્યુ છે કે "वहुसपत्ते" તે અત્યન્ત નજીકને માર્ગે આવી ગયો છે, અહીં એમ માનવાને કારણ ન રહે કે તે કોઇ નજીકના ઉદ્યાન વગેરેમાં વિશ્રામ લઇ રહ્યો છે, તે બતાવવા માટેકહ્યુ કે "अद्धाण पडिवन्ने" તે હજી રસ્તા પર ચાલી રહેલ છે-વિશ્રામ વગેરે માટે કોઇ બાગ વગેરેમાં ગયેલ નથી અને તેથી તે "अ तरापहे वट्टइ" રસ્તામાજ છે કહેવાનુ પ્રયોજન એ છે કે તે સ્કન્દક નિરતર પથ કાપીને આ જગ્યાની સમીપે આવી ચૂકયો છે તેથી હે ગૌતમ! તું તેને "अज्जेव ण दच्छसि" હમણા જ જોઇ શકીશ એટલે કે હે ગૌતમ! તું તારા પૂર્વપરિચિત સ્કદકને થોડી જ વારમા પ્રત્યક્ષ નિહાળીશ "भते त्ति भगव गोयमे समणं भगव महावीर वदइ नमंसइ" હે ભગવન્! એવું સબોધન કરીને ભગવાન્ ગૌતમે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને વદન કરી, નમસ્કાર કર્યા "व दित्ता

'खंदए कच्चायणस्स गोत्ते देवाणुप्पियाणं अंतियं मुंडे भवित्ता' स्कन्दकः कात्यायनगोत्रो देवानुप्रियाणामन्तिके मुंडो भूत्वा 'अगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए' आगारादनगारितां प्रव्रजितुं, अनगारितां साधुतां प्रव्रजितुं प्राप्तुम् अथवा विभक्ति विपरिणामात् अनगारितया प्रव्रजितुं, प्रव्रज्यां प्रतिपत्तुं किम् समर्थः ? भगवन् योऽयं स्कन्दको भवत्समीपमागच्छति तस्य किं तादृशं योग्यता शक्तिश्च विद्यते यद् गृहं परित्यज्य भवत्समीपे दीक्षितो भविष्यति ? इति गौतमस्य जिज्ञासा प्रादुरभूत् । भगवानाह—'हंत' इत्यादि । 'हंतापभू' हन्त प्रभुः, हे गौतम ! स स्कन्दको मत्समीपे चारित्रग्रहणे समर्थोऽस्तीति । 'जावं च णं समणे भगवं महावीरे भगवओ गोयमस्स एयमट्ठं परिकहेइ' यावच्च खलु श्रमणो भगवान् महावीरो भगवते गौतमाय एतमर्थं परिकथयति, 'तावं च णं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते तं देसं हव्वं आगए' तावत् च खलु स स्कन्दकः कात्यायनगोत्रस्त्वं

यणस्स गोत्ते देवाणुप्पियाणं अंतिए मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए पहूणं) हे भदंत ! कात्यायन गोत्रवाला यह स्कन्दक आप देवानुप्रिय के पास मुंडित होकर क्या गृहस्थावस्था से अनगारावस्था को धारण करने के लिये क्या समर्थ है ? हे भगवन् ! जो यह स्कन्दक आप के समीप आ रहा है उसमें क्या ऐसी योग्यता है कि वह घर को छोड़ कर आप के पास में दीक्षित हो जावे ? इस प्रकार से गौतम को जानने की इच्छा प्रकट हुई-तब प्रभु ने इसका उन्हें उत्तर दिया (हंता पभू) हां गौतम ! यह स्कन्दक मेरे पास चारित्र के ग्रहण करने में समर्थ है। (जावंच णं समणे भगवं महावीरे भगवओ गोयमस्स एयमट्ठं परिकहेइ) जब श्रमण भगवान महावीर गौतम से इस बात को कह रहे थे कि

નમસ્કાર કરીને તેમણે તેમને આ પ્રમાણે પૂછ્યું ' भंते ! खंदए कच्चायणस्स गोत्ते देवाणुप्पियाणं अंतिए मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए पहूणं " હે ભગવન્ ! કાત્યાયન ગોત્રી સ્કંદક પરિવ્રાજક શું આપ દેવાનુપ્રિયની પાસે મુંડિત થઈને (દીક્ષા અંગીકાર કરીને) ગૃહસ્થાવસ્થાનો ત્યાગ કરીને અણગારાવસ્થા ધારણ કરવાને માટે શક્તિમાન છે ? હે ભગવાન ! આપની સમક્ષ જે સ્કંદક આવી રહ્યો છે તેનામાં ઘર છોડીને આપની પાસે દીક્ષા અંગીકાર કરવાની યોગ્યતા છે ખરી ? ગૌતમની એ પ્રકારની જિજ્ઞાસા જાણીને ભગવાન મહાવીરે આ પ્રમાણે જવાબ આપ્યો-" हंता पभू " હા, ગૌતમ ! તે સ્કંદક મારી પાસે દીક્ષા લેવાને સમર્થ છે " जावं च णं समणे भगवं महावीरे भगवओ गोयमस्स एयमट्ठं परिकहेइ ' જ્યારે શ્રમણ ભગવાન મહાવીર ગૌતમ સ્વામીને આ પ્રમાણે કહી રહ્યા હતા ' जावं च णं " ત્યારે

बहुसंप्राप्तः, अत्यन्तसमीपमार्गसमागतः, बहुसंप्राप्तता च विश्रामादिकारणतः आरामादिगतोपि संभवति, अत उच्यते 'अद्धाणपडिवन्ने' अध्वप्रतिपन्नः, अध्वानं प्रतिपन्नः मार्गे चलन्नित्यर्थः 'अंतरापहे वट्टइ' अ तरापथि वर्तते, अत्यन्त समीपे वर्त्तते, अतस्त्वं 'अज्जेव णं दच्छसि गोयमा' अद्यैव खलु द्रक्ष्यसि गौतम ! हे गौतम ! यः खलु तव पूर्वपरिचितः स्कन्दकस्तं त्वमद्यैव=अधुनैव स्वल्पेनैव कालेन तव दृष्टिपथे समागमिष्यतीति भावः 'भंतेत्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ' भदंत ! इति सम्बोध्य भगवान् गौतमः श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति, 'वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी' वंदित्वा नमस्यित्वा एवं वक्ष्यमाणप्रकारेणावादीत्-पृष्टवान्-'पहूणं भंते' प्रभुः=समर्थः खलु भदंत !

(बहु संपत्ते) कि वह अत्यन्त समीप के मार्ग में आचुका है। यह बहु संप्रासता विश्राम आदि कारण की वजह से बगीचा आदि में भी गये हुए में हो सकती है सो इसके लिये कहा गया है कि (अद्धाणपडिवन्ने) वह अभी मार्ग मे ही चल रहा है। विश्रामादि के निमित्त बगीचा आदि में नहीं गया है। अतः वह "अंतरापहे वट्टइ" बीच रास्ते में ही है। बिल कुल समीप आचुका है। इसलिये तुम उसे (अज्जेव णं दच्छसि) अभी ही देखोगे। तात्पर्य यह है कि हे गौतम ! तुम अपने पूर्वपरिचित स्कन्दक को अभी ही बहुत थोडे ही समय के बाद दृष्टिपथ में आया हुआ देख लोगे। (भंते त्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ) हे भदन्त । ऐसा कह कर भगवान महावीर को वंदना की और उन्हे नमस्कार किया (वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी वदना नमस्कार करके फिर उन्होंने उनसे ऐसा पूछा (भंते ! खंदए कच्चाय-

---

કરવા માટે કહ્યુ છે કે "बहुसपत्ते" તે અત્યન્ત નજીકને માર્ગે આવી ગયો છે, અહીં એમ માનવાને કારણુ ન રહે કે તે કોઇ નજીકના ઉદ્યાન વગેરેમાં વિશ્રામ લઇ રહ્યો છે, તે બતાવવા માટેકહ્યુ કે "अद्धाण पडिवन्ने" તે હજી રસ્તા પર ચાલી રહેલ છે-વિશ્રામ વગેરે માટે કોઇ બાગ વગેરેમાં ગયેલ નથી અને તેથી તે "अंतरापहे वट्टइ" રસ્તામાજ છે કહેવાનુ પ્રયોજન એ છે કે તે સ્કન્દક નિરતર પથ કાપીને આ જગ્યાની સમીપે આવી ચૂક્યો છે તેથી હે ગૌતમ! તુ તેને "अज्जेव ण दच्छसि" હમણુા જ જોઇ શકીશ એટલે કે હે ગૌતમ! તું તારા પૂર્વપરિચિત સ્કદકને થોડી જ વારમા પ્રત્યક્ષ નિહાળીશ "भते त्ति भगव गोयमे समण भगवं महावीर वदइ नमंसइ" હે ભગવન્! એવુ સબોધન કરીને ભગવાન્ ગૌતમે શ્રમણુ ભગવાન માહાવીરને વદન કરી, નમસ્કાર કર્યા "वदित्ता

से खदए कच्चायणस्स गोत्ते भगव गोयमे एव वयासी– से के से णं गोयमा! तहारूवे णाणी वा–तवस्सी वा, जे ण तव एस अट्ठे मम ताव रहस्सकडे हव्व अक्खाए जओण तुम जाणसि। तएण से भगव गोयमे खदय कच्चा यणस्स गोत्त एव वयासी–एव खलु खदया! मम धम्मा यरिए धम्मोवएसए समणे भगव महावीरे उप्पन्ननाणदस णधरे अरहा जिणे केवली तीयपडुप्पन्नमणागयवियाणए सव्वण्णू सव्वदरिसी जे ण मम एस अट्ठे तव ताव रहस्स कडे हव्व अक्खाए जओण अह जाणामि खदया ।। तएणं से खदए कच्चायणस्सगोत्ते भगव गोयम एव वयासी गच्छामो णं गोयमाइ तवधम्मायरिय धम्मोवदेसय समण भगव महावीर वदामो नमसामो जाव पज्जुवासामो। अहासुह देवा णुप्पिया मा पडिबध करेह, तएण से भगव गोयमे खदएण कच्चायणस्स गोत्तेण सद्धिं जेणेव समणे भगव महावीरे तेणेव पहारेत्थ गमणाए ॥ सू०१०॥

छाया—तत खलु भगवान् गौतमः स्कन्दक कात्यायनगोत्रं अनुरागत ज्ञात्वा क्षिप्रमेव अभ्युत्तिष्ठति, अभ्युत्थाय क्षिप्रमेव अभ्युपगच्छति, अभ्युपगत्य

इस के बाद क्या हुआ–सो सूत्रकार कहते हैं–'तएणं भगवं गोयमे' इत्यादि।

सूत्रार्थ – (तएणं) तब (भगवं गोयमे) भगवान गौतम (कच्चा यणस्स गोत्तं खदयं) कात्यायन गोत्रवाले उस स्कन्दकको (अणुरागयं जाणित्ता) पास में आया हुआ जानकर (खिप्पामेव अब्भुट्ठेइ) बहुत

त्यारबाद शुं बन्युं ते सूत्रकार कहे छे 'तएणं भगवं गोयमे' इत्यादि

सूत्रार्थ–(तएणं) त्यारपछी (भगवं गोयमे) भगवान गौतम (कच्चा यणस्स गोत्तं खंदयं, कात्यायन गोत्रवाळा ते स्कन्दकने (अणुरागयं जाणित्ता) नजीकमां आवी पहोंचेला जाणीने (खिप्पामेव अब्भुट्ठेइ) पोताने आसनेथी

देशं शीघ्रमागतः, योऽसौ स्कन्दको भगवत्समीपमागच्छति स किमत्र प्रव्रजितो भविष्यतीति गौतमो भगवन्तं पृच्छति-भगवांश्च स स्कन्दको दीक्षां ग्रहीष्यती-त्युत्तरं ददाति तावत्येव काले स स्कन्दक आगच्छन् दृष्ट इति भाव. ॥सू० ९॥

ततः किमित्याह—' तएणं ' इत्यादि ।

मूलम्—तएणं भगवं गोयमे खंदयं कच्चायणस्स गोत्तं अदूरागयं जाणित्ता खिप्पामेव अब्भुट्ठेइ अब्भुट्ठित्ता खिप्पामेव पच्चुवगच्छइ पच्चुवगच्छित्ता जेणेव खंदए कच्चायणस्स गोत्ते तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता खंदयं कच्चायणस्स गोत्तं एवं वयासी खंदया! सागयं, खंदया ! सुसागयं, खंदया ! अणुरागयं, खंदया! सागयमणुरागयं, खंदया ! से णूणं तुमं खंदया सावत्थीए नयरीए पिंगलएणं नियंठेणं वेसालिय सावयेणं इणमक्खेवं पुच्छिए—मागहा ! किं स अंते लोगे ? अणंते लोगे ? तं चेव जेणेव इहं तेणेव हव्व मागए से णणं खंदया अट्ठे समट्ठे ? हंता अत्थि ! तएणं

(तावंच णं) इतने में ही (से खंदए कच्चायणस्सगोत्ते) कात्यायन गोत्र वाला वह स्कन्दक तं देसं हव्वं आगच्छइ) उस स्थान पर शीघ्र आ पहूँचा । तात्पर्य यह है कि जो स्कन्दक आपके पास आरहा है वह क्या यहां प्रव्रजित हो जावेगा इस प्रकार गौतम भगवान से जिस समयमें पूछ रहे थे और भगवान जब ऐसा कह रहे थे कि हां दीक्षित हो जावेगा ठीक उसी समय में आता हुआ स्कन्दक दीखलाई दिया ॥सू०९॥

સમયે જ "से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते" કાત્યાયન ગોત્રવાળો તે સ્કન્દક "तं देसं हव्वं आगच्छइ" એ સ્થાને શીઘ્ર આવી પહોચ્યો. તાત્પર્ય એ છે કે જ્યારે ગૌતમસ્વામી ભગવાન મહાવીરને સ્કન્દક પરિવ્રાજકમા દીક્ષા લેવાનુ સામર્થ્ય છે કે નહીં એવુ પૂછી રહ્યા હતા અને જ્યારે મહાવીર પ્રભુ ગૌતમને એવો જવાબ આપી રહ્યા હતા કે 'હા, તેનામા દીક્ષા લેવાનુ સામર્થ્ય રહેલુ છે" બરાબર એજ વખત સ્કન્દકે ભગવાન બિરાજતા હતા તે સ્થાનમાં પ્રવેશ કર્યો ॥ સૂ.૯॥

नता लोक, तदेष यत्रैवेह तत्रैव इव्यमागत तन्नून स्कन्दक! अयमर्थः समर्थः? हन्त अस्ति। तत खलु स स्कन्दकः कात्यायनगोत्रो भगवन्त गौतममेवमवादीत् तद् एष का खलु गौतम! तथा रूपो ज्ञानी वा तपस्वी वा येन खलु तव एषोऽर्थो मम तावद् रहस्यकृतः इव्यमाख्यातः यतः खलु त्व जानासि?। ततः स भगवान् गौतमः स्कन्दक कात्यायनगोत्रमेवमवादीत्–एवं खलु स्कन्दक! मम

का है? (तचेव जेणेव इह तेणव इव्यमागए) इत्यादि प्रश्न पूछे गये, उनके उत्तर न जानने के कारण तुम शंकित आदि अवस्थावाले बनकर यहां जल्दी से जल्दी आये हो। (से णूणं खंदया! अट्ठे समट्ठे) कहो खंदक! यह बात सत्य है न? (हंता अत्थि) हां गौतम! यह बात सत्य है। (तएण से खंदए कच्चायणस्सगोत्ते भगवं गोयमं एवं वयासी) इस के बाद कात्यायन गोत्र वाले उस स्कन्दक परिव्राजक ने गौतम से ऐसा कहा–(से के सेण गोयमा!) हे गौतम! यह ऐसा कौन (तहारूवे) तथारूप (णाणी) ज्ञानी अथवा (तवस्सी) तपस्वी पुरुष है (जे ण तव एस अट्ठे मम ताव रहस्सकडे हव्वं अक्खाए) जिसने मेरे इस रहस्यकृत–गुप्त–अर्थ को तुमसे बिलकुल स्पष्टरूप से उसी समय जानकर कहदिया है। (जओ ण तुमं जाणासि) जिससे तुम इस बात को जान सके हो। (तएण से भगवं गोयमे खंदयं कच्चायणस्स गोत्तं एवं वयासी) इस प्रकार से स्कन्दक के कहने के बाद भगवान् गौतम ने कात्यायन गोत्रीय स्कन्दक से ऐसा कहा–(एवं खलु

तेणव इव्यमागए) ઇત્યાદિ જે પ્રશ્નો તમને પૂછયા હતા તેનો જવાબ નહીં આપવાને કારણે તમે શંકિત વગેરે મનોભાવથી યુક્ત બનીને અહીં અને તેટલી ઉતાવળથી આવ્યા છો. (से णूणं खंदया! अट्ठे समट्ठे?) હે સ્કંદક! કહો તે વાત સાચી છે ને? (हंता अत्थि) હા, ગૌતમ! એ વાત ખરેખર સાચી છે (तएणं से खंदए कच्चायणस्सगोत्ते भगवं गोयमं एवं वयासी) ત્યાર બાદ કાત્યાયન ગોત્રવાળા તે સ્કંદકે ભગવાન ગૌતમને આ પ્રમાણે પૂછયું (से के स णं गोयमा! तहारूवे णाणी तवस्सी) હે ગૌતમ! આ કયા તથારૂપ જ્ઞાની અથવા તપસ્વી પુરુષ કોણ છે કે (जे णं तव एस अट्ठे मम ताव रहस्सकडे हव्वं अक्खाए) જેણે મારા ગુપ્ત અર્થને (વિચારોને) અત્યારે ને અત્યારે જ જાણીને તમારી સમક્ષ એટલી બધી સ્પષ્ટતા પૂર્વક પ્રકટ કર્યો છે કે (जओ णं तुमं जाणासि) જેથી તમે તે વાતને મારા મનોગત વિચારને જાણી ગયા છો! (तएणं से भगवं गोयमे खंदयं कच्चायणस्सगोत्तं एवं वयासी) ત્યારે ભગવાન ગૌતમે કાત્યાયન ગોત્રી તે સ્કંદકને આ પ્રમાણે કહ્યું (एवं खलु खंदया!) હે

यत्रैव स्कन्दकः कात्यायनगोत्रस्तत्रैवोपागच्छति उपागत्य स्कन्दकं कात्यायनगोत्रमेवमवादीत्–हे स्कन्दक ! स्वागतं स्कन्दक ! सुस्वागतं, स्कन्दक ! अन्वागतं, स्कन्दक ! स्वागतमन्वागतं, तद् नून त्वं स्कन्दक ! श्रावस्त्यां नगर्यां पिंगलकेन निर्ग्रंथेन वैशालिकश्रावकेणेदमाक्षेपं पृष्टः–मागध ! किं सांतो लोकोऽ-

---

ही शीघ्र अपने आसन से ऊठे हैं और (अब्भुट्ठित्ता) और ऊठकर (खिप्पामेव) शीघ्र ही (पच्चुवगच्छइ) उसके सामने जाते है। (पच्चुवगच्छित्ता) सामने जाकर फिर वे (जेणेव खंदए कच्चायणस्सगोत्ते तेणेव उवागच्छइ) जहां कात्यायन गोत्रवाला वह स्कन्दक था वहां पर गये। (उवागच्छित्ता कच्चायणस्स गोत्तं खंदयं एवं वयासी) वहां आकर के उन्हों ने कात्यायन गोत्र वाले उस स्कन्दक से ऐसा कहा (खंदया-सागयं) हे स्कन्दक तुम्हारा स्वागत है (खंदया सुसागयं) हे स्कन्दक तुम्हारा सुस्वागत है। (खंदया अणुरागयं) हे स्कन्दक ! तुम्हारा अन्वागत है (खंदया सागयमणुरागयं) हे स्कन्दक ? तुम्हारा स्वागत अन्वागत है। (खंदया) हे स्कन्दक! (से णूणं तुमं खंदया सावत्थीए नयरीए पिंगलएणं नियंठेणं वेसालियसावएणं इणमक्खेवं पुच्छिए तुम से श्रावस्ती नगरी में वैशालिक श्रावक पिंगलक निर्ग्रन्थ ने इन प्रश्नों को इस प्रकार पूछा कि (मागहा) मागध ! (किं स अंते लोए अणंते लोए ?) लोक अन्त सहित है अथवा अन्त विना

तुरत ज ઉઠયા (अब्भुट्ठित्ता) ઉઠીને (खिप्पामेव) तुरत ज (पच्चुवगच्छइ) तेनी सामे गया (पच्चुवगच्छित्ता जेणेव खंदए कच्चायणस्सगोत्ते तेणेव उवागच्छइ) ज्यां कात्यायन गोत्रीय स्कन्दक परिव्राजक हतो त्यां सुधी तेओ गया (उवागच्छित्ता कच्चायणस्स गोत्तं खंदयं एवं वयासी) त्यां जईने तेमणे कात्यायन गोत्री स्कन्दकने आ प्रमाणे कह्यु (खंदया सागयं) हे स्कन्दक तमारुं स्वागत हो (खंदया सुसागयं) हे स्कन्दक तमारुं सुस्वागत हो (खंदया! अणुरागयं) हे स्कन्दक तमारुं आगमन अन्वागत हो तमारुं अहीं आगमन थवानुं उचित ज थयुं छे तेथी जरूर कल्याण थाओ (खंदया सागयं अणुरागयं) हे स्कन्दक तमारुं स्वागत अने अन्वागत हो (खंदया!) हे स्कन्दक (से णूणं तुमं खंदया सावत्थीए नयरीए पिंगलएण नियंठेण वेसालिय सावएणं इणमक्खेवं-पुच्छिए) तमने श्रावस्ती नगरीमां वैशालिक श्रावक पिंगलक निर्ग्रंथे आ प्रकारना प्रश्नो पूछ्या हता के (मागहा) हे मागध (किं सअंते लोए, अणंते लोए ?) लोक अन्त सहित छे के अन्त रहित छे. (तं चेव जेणेव इहं

नतो लोकः, तदेव यत्रैवेह तत्रैव हव्यमागत' तन्नून स्कन्दक! अयमर्थः समर्थः ! हन्त अस्ति। ततः खलु स स्कन्दकः कात्यायनगोत्रो भगवन्तं गौतममेवमवादीत् तद् एष कः खलु गौतम ! तथा रूपो ज्ञानी वा तपस्वी वा येन खलु तव एषोऽर्थो मम तावद् रहस्यकृतः हव्यमाख्यात यत खलु त्वं जानासि ?। ततः स भगवान् गौतमः स्कन्दक कात्यायनगोत्रमेवमवादीत्-एवं खलु स्कन्दक ! मम

का है ? (तत्थेव जेणेव इहं तेणाव हव्वमागए) इत्यादि प्रश्न पूछे गये, उनके उत्तर न जानने के कारण तुम शंकित आदि अवस्थावाले बनकर यहां जल्दी से जल्दी आये हो। (से णूणं खंदया! अट्ठे समट्ठे) कहो खंदक! यह बात सत्य है न ? (हंता अत्थि) हां गौतम! यह बात सत्य है। (तएण से खंदए कच्चायणस्सगोत्ते भगवं गोयमं एवं वयासी) इस के बाद कात्यायन गोत्र वाले उस स्कन्दक परिव्राजक ने गौतम से ऐसा कहा-(से के सेणं गोयमा!) हे गौतम! वह ऐसा कौन (तहारूवे) तथारूप (णाणी) ज्ञानी अथवा (तवस्सी) तपस्वी पुरुष है (जे ण तव एस अट्ठे मम ताव रहस्सकडे हव्वं अक्खाए) जिसने मेरे इस रहस्यकृत-गुप्त-अर्थ को तुमसे बिलकुल स्पष्टरूप से उसी समय जानकर कहदिया है। (जओ ण तुमं जाणासि) जिससे तुम इस बात को जान सके हो। (तएण से भगवं गोयमे खंदयं कच्चायणस्स गोत्तं एवं वयासी) इस प्रकार से स्कन्दक के कहने के बाद भगवान् गौतम ने कात्यायन गोत्रीय स्कन्दक से ऐसा कहा-(एवं खलु

तेणेव हव्वमागए) ઇત્યાદિ જે પ્રશ્નો તમને પૂછ્યા હતા તેનો જવાબ નહીં જાણવાને કારણે તમે શંકિત વગેરે મનોભાવથી યુક્ત બનીને અહીં બને તેટલી ઉતાવળથી આવ્યા છો (से णूणं खंदया! अट्ठे समट्ठे ?) હે સ્કન્દક! કહો તે વાત સાચી છે ને ? (हंता अत्थि) હા, ગૌતમ! એ વાત ખરેખર સાચી છે (तएणं से खंदए कच्चायणस्सगोत्ते भगवं गोयमं एवं वयासी) ત્યાર બાદ કાત્યાયન ગોત્રવાળા તે સ્કન્દકે ભગવાન ગૌતમને આ પ્રમાણે પૂછ્યું (से के सणं गोयमा! तहारूवे णाणी तवस्सी) હે ગૌતમ! એવાં કયા જ્ઞાની અથવા તપસ્વી પુરુષ હોય છે કે (जे णं तव एस अट्ठे मम ताव रहस्सकडे हव्वं अक्खाए) જેણે મારા ગુપ્ત અર્થને (વિચારોને) અત્યારે ને અત્યારે જ આપની સમક્ષ એકદમ બધી સ્પષ્ટતા પૂર્વક પ્રકટ કર્યો છે કે (जओ णं तुमं जाणासि) જેથી તમે તે વાતને મારા મનોગત વિચારને જાણી શક્યા છો ! (तएणं से भगवं गोयमे खंदयं कच्चायणस्स गोत्तं एवं वयासी) ત્યારે ભગવાન ગૌતમે કાત્યાયન ગોત્રી તે સ્કન્દકને આ પ્રમાણે કહ્યું (एवं खलु खंदया!) હે

धर्माचार्यो धर्मोपदेशकः श्रमणो भगवान् महावीर उत्पन्न ज्ञानदर्शनधरः अर्हन् जिनः केवली अतीतप्रत्युत्पन्नानागत विज्ञायकः सर्वदर्शी येन मम एषोऽर्थस्तव तावत् रहस्यकृतः हव्यमाख्यातः यतोऽहं जानामि स्कन्दक ! ततः स स्कन्दकः कात्यायनगोत्रो भगवन्तं गौतममेवमवादीत्-गच्छामः खलु गौतम ! तव धर्माचार्यं धर्मोपदेशकं श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दामहे नमस्यामो यावत् पर्युपास्महे।

खंदया) स्कन्दक! सुनो बात इस प्रकार से है-(मम धम्मायरिए धम्मोवएसए समणे भगवं महावीरे उप्पण्णनाणदंसणधरे अरहा जिणे केवली तीयपडुप्पन्नमणागयवियाणए सव्वण्णू सव्वदरिसी) मेरे धर्माचार्य धर्मोपदेशक श्रमण भगवान महावीर हैं। वे उत्पन्न ज्ञान दर्शन के धारी हैं अरिहंत हैं। जिन हैं। केवली हैं। अतीत वर्तमान और अनागत इन सब विषयोंको वे हस्तामलकवत् जानते हैं। सर्वदर्शि हैं (जेणं मम एस अट्ठे तव ताव रहस्सकडे हव्वं अक्खाए) उन्हों ने ही तुम्हारा रहस्यकृत मनोगतरूप अर्थ मुझ से यथावत् कहा है(जयाणं अहं जाणामि खंदया) इसीसे मैं हे स्कन्दक! इस तुम्हारे रहस्यकृत अर्थ को जानता हूं। (तएणं से खदए कच्चायणस्स गोत्ते भगवं गोयमं एवं वयासी) गौतम के द्वारा इस बात को सुनने के बाद कात्यायन गोत्री स्कन्दक ने उन भगवान गौतम से ऐसा कहा (गच्छामो णं गोयमा ! तव धम्मायरियं धम्मोवएसयं समणं भगवं महावीरं वदामो नमंसामो जाव पज्जुवासामो) हे गौतम ? चलो आपके धर्माचार्य धर्मोपदेशक श्रमण भगवान महावीर

સ્કંદક! સાંભળો, વાત આ પ્રમાણે છે (मम धम्मायरिए धम्मोवएसए समणे भगवं महावीरे उप्पण्णनाण दंसणधरे अरहा जिणे केवली तीयपडुप्पन्नमणागयवियाणए सव्वण्णू सव्वदरिसी) મારા ધર્માચાર્ય અને ધર્મોપદેશક શ્રમણ ભગવાન મહાવીર છે. તેઓ ઉત્પન્ન કેવલજ્ઞાનદર્શનના ધારક છે, અરિહંત છે, જિન છે, કેવલી છે. તેઓ ભૂત વર્તમાન અને ભવિષ્યકાળના વિષયોને હસ્તામલકની જેમ (હાથમા રહેલા આમળાની જેમ) જાણી શકે છે, અને સર્વદર્શી છે (जेणं मम एस अट्ठे तव ताव रहस्सकडे हव्वं अक्खाए) તેમણે જ તમારા આ ગૂઢ, મનોગત અર્થ (વિચારો પ્રશ્નો) મને યથાર્થ રૂપે કહ્યા છે (जयाणं अहं जाणामि खंदया) હે સ્કન્દક! તેથી જ હું તમારા તે ગુપ્ત પ્રશ્નો જાણું છું. (तएणं से खदए कच्चायणस्स गोत्ते भगवं गोयमे एवं वयासी) ગૌતમની પાસેથી તે વાત જાણીને કાત્યાયન ગોત્રીય સ્કંદકે ભગવાન ગૌતમને આ પ્રમાણે કહ્યું (गच्छामो णं गोयमा ! तव धम्मायरियं समणं भगवं महावीरं वंदामो नमंसामो जाव पज्जुवासामो) હે ગૌતમ! ચાલો. તમારા ધર્માચાર્ય ધર્મોપદેશક, શ્રમણ ભગવાન્

यथा सुखं देवानुप्रिय ! मा प्रतिबन्धं कुरु। ततः खलु स भगवान् गौतमः स्कन्दकेन कात्यायनगोत्रेण सार्धं यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीरस्तत्रैव प्राधारयद्गमनाय॥१०॥

टीका—' तएणं भगवं गोयमं खंदयं कच्चायणस्सगोत्त अदूरागयं जाणित्ता खिप्पामेव अब्भुट्ठेइ ' ततः खलु भगवान् गौतम स्कन्दकं कात्यायनगोत्रमदूरागतम्=समीपमागतं ज्ञात्वा क्षिप्रमेवाभ्युत्तिष्ठति यद्यपि भगवान् गौतम संयत स्कन्दकश्चासंयतस्ततश्चासंयताय संयतस्याभ्युत्थानादिकं न युक्तमिति न वक्तव्यम्, गौतमस्यागमव्यवहारित्वादिति । ' अब्भुट्ठित्ता खिप्पामेव पच्चुवगच्छइ ' अभ्यु-

को वंदन करें, नमस्कार करें यावत् उनकी पर्युपासना करें। (अहासुहं देवाणुप्पिया) तब गौतम ने कहा हे देवानुप्रिय आप को जैसे सुख हो वैसा करो। (मा पडिबंधं करेह) विलम्ब मत करो। (तएणं से भगवं गोयमे खंदएणं कच्चायणस्सगोत्तेणं सद्धिं जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव पहारेत्थ गमणाए) इस प्रकार कहने के बाद वे भगवान गौतम कात्यायन गोत्री स्कन्दक के साथ जहां श्रमण भगवान् महावीर विराजमान थे-उसी ओर चल दिये।

टीकार्थ—" तएणं भगवं गोयमे खंदयं कच्चायणस्सगोत्तं अदूरागयं जाणित्ता खिप्पामेव अब्भुट्ठेइ " इस सूत्र पाठ का अर्थ सूत्रार्थ में ही लिख दिया गया है। विशेष यहां पर कोई ऐसी आशंका कर सकता है कि भगवान गौतम तो संयत थे और वह स्कन्दक परिव्राजक असंयत था। अतः असंयत के लिये इस तरह से संयत को अभ्युत्थान आदि करना उचित नहीं है। इसमें सम्यग्दर्शन में अतिचार आता है

મહાવીરને આપણે વંદન કરીએ નમસ્કાર કરીએ અને યાવત્ તેમની પર્યુપાસના કરીએ. (अहासुहं देवाणुप्पिया) ત્યારે ગૌતમે જવાબ આપ્યો હે દેવાનુપ્રિય! આપને જેમ સુખ ઉપજે તેમ કરો. (मा पडिबंधं करेह) પરન્તુ વિલંબ ન કરો. (तएणं से भगवं गोयमे खंदएणं कच्चायणस्स गोत्तेणं सद्धिं जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव पहारेत्थ गमणाए) ત્યાર બાદ ભગવાન ગૌતમ કાત્યાયન ગોત્રવાળા સ્કંદકને સાથે લઈને જ્યાં શ્રમણ ભગવાન મહાવીર બિરાજતા હતા તે તરફ જવા ઉપડ્યા.

ટીકાર્થ- तएणं भगवं गोयमे खंदयं कच्चायणस्स गोत्तं अदूरागयं जाणित्ता खिप्पामेव अब्भुट्ठेइ આ સૂત્રપાઠનો અર્થ સૂત્રાર્થમાં જ બતાવી દીધો છે. અહીં કોઈને કદાચ એવી શંકા થાય કે ગૌતમસ્વામી તો સંયત હતા અને સ્કન્દક પરિવ્રાજક તો અસંયત હતો. તો આ રીતે અસંયતનું સન્માન કરવાને સંયતને ઉભા થઈને સામે જવું પડે તે વાત ઉચિત લાગતી નથી એમ કરવાથી સમ્યક્ત્વમાં અતિચાર (મિથ્યાત્વનો દોષ) લાગે છે પણ અહીં તે પ્રકારની

स्थाय क्षिप्रमेव प्रत्युपगच्छति, 'पच्चुवगच्छित्ता' प्रत्युपगत्य 'जेणेव खंदए कच्चायणस्स गोत्ते तेणेव उवागच्छइ' यत्रैव स्कन्दकः कात्यायनगोत्रस्तत्रैवोपागच्छति 'उवागच्छित्ता खंदयं कच्चायनस्स गोत्तं एवं वयासी' उपागम्य स्कन्दकं कात्यायनगोत्रमेववादीत् 'हे खंदया' हे स्कन्दक! आगम्यताम्, भगवत्समीपे समागमनस्य कल्याणहेतुत्वात्, 'सागयं खंदया' स्वागतं स्कन्दक! हे स्कन्दक! तवागमनमत्रसुशोभनम्, भगवत्संपर्कस्य कल्याणकारकत्वादिति 'सुसागयं

सो इस प्रकार की आशंका यहां ठीक नहीं है। कारण कि गौतम ने जो ऐसा किया वह आगम व्यवहारी होने के कारण से किया तात्पर्य कहने का यह है कि भगवान के मुख से गौतम को यह ज्ञात हो ही चुका था कि स्कन्दक अगार से अनगार अवस्थावाला बन जावेगा-अतः स्वयं रागवाले होने के कारण उसकी उस स्थिति के प्रति पक्षपात हो जाने से, तथा महावीर प्रभु के ज्ञानातिशय को प्रकट करने के निमित्त प्रभु द्वारा प्रतिपादित बात को स्कन्दक से कह कर उनके प्रति उसका बहुमान हो इस अभिप्राय से गौतम का स्कन्दक के सामने जाना दोषावह नहीं है। इसलिये (अब्भुट्ठित्ता) गौतम उठकर (पच्चुवगच्छइ) स्कन्दक के समक्ष गये। (पच्चुवगच्छित्ता) स्कन्दक के समक्ष जाकर फिर वे (जेणेव खंदए कच्चायणस्स गोत्ते तेणेव उवागच्छइ) जहां पर कात्यायन गोत्री स्कन्दक थे वहां गये। (उवागच्छित्ता) वहां जाकर उन्हों ने खंदयं कच्चायणस्स गोत्तं एवं वयासी) उन कात्यायन गोत्री स्कन्दक से ऐसा कहा (खंदया) हे स्कन्दक आओ (सागयं) तुम्हारा स्वाग है कारण

આશંકા અસ્થાને છે કારણ કે ગૌતમસ્વામીએ એવું જે કર્યું તે આગમવ્યવહારી હોવાને કારણે કર્યું છે કહેવાનો ભવાર્થ એ છે કે ગૌતમસ્વામીએ ભગવાન મહાવીરને મુખે એ વાત સાંભળી હતી કે સ્કન્દક આગાર અવસ્થાનો ત્યાગ કરીને અણગાર અવસ્થા અંગીકાર કરશે તેથી તેમના પ્રત્યે પ્રેમ ઉત્પન્ન થવાથી અને તેની તે અવસ્થા તરફ પ્રમોદ ઉદ્‌ભવવાથી તથા મહાવીર પ્રભુના જ્ઞાનાતિશયને પ્રકટ કરવાના ઉદ્દેશથી, પ્રભુ વડે સ્કંદકના વિષે જે ગુપ્ત વાત પોતાની પાસે પ્રકટ કરવામા આવી હતી તે વાત સ્કન્દકને કહીને પ્રભુ પ્રત્યે તેનામાં માનની લાગણી જાગૃત કરવા માટે ગૌતમસ્વામી સ્કન્દકની સામે જાય તેમાં દોષ જેવું કંઇ લાગતુ નથી તેથી "अब्भुट्ठित्ता" ઉઠીને "पच्चुवगच्छइ" ગૌતમસ્વામી સ્કન્દકની પાસે ગયા, "पच्चुवगच्छित्ता" સ્કંદકની પાસે જઈને તેમણે "खदयं कच्चायणस्सगोत्तं एव वयासी" કાત્યાયન ગોત્રના તે સ્કન્દક ને આ પ્રમાણે કહ્યુ "खदया" હે સ્કન્દક પધારો "सागयं" તમારૂં સ્વાગત હો

संदया ' सुस्वागतं स्कन्दक ! हे स्कन्दक ! अतिशयेन शोभनमागमनं तव मम निर्णयहेतुकत्वात् । 'अणुरागय खंदया ' अन्वागत स्कन्दक ! हे स्कन्दक ! अनु रूपं ते आगमनम् कल्याणस्य विरचास भाविरवात्, सागयमणुरागयं खंदया ' स्वागतान्वागत स्कन्दक! हे स्कन्दक ! शोभनत्वानुरूपत्वयुक्तं तवागमनं, अत्र शिवसुखप्रापकत्वात् । ' से णूणं तुम खंदया सावत्थीए नयरीए पिंगलएणं नामं नियंठेणं वेसालिय सावएणं इणमक्खेवं पुच्छिए ' तन्नूनं त्वं स्कन्दक श्रावस्त्यां

कि भगवान के पासमें तुम्हारा आना तुम्हारे कल्याणका कारण हुआ है इसलिये तुम बहुत अच्छे आये। (सुसागयं खंदया) हे स्कन्दक ! तुम्हारा यह आगमन बहुत ही अधिक बधाई के योग्य बना है क्यों कि यहां आने से तुम्हारे प्रश्नों का निर्णय हो जायगा अतः प्रश्नों के निर्णय का हेतु होने से तुम्हारा यह आगमन बहुत अधिक शोभास्पद हुआ है (अणुरागय खंदया) हे स्कन्दक। यह तुम्हारा आगमन उचित हुआ है क्यों कि यहां आने से तुम्हारा कल्याण बहुत जल्दी हो जावेगा। (सागय मणुरागय खंदया) हे स्कन्दक । यह तुम्हारा आगमन शोभनत्व और अनुरूपत्व इन दोनों से युक्त है । क्यों कि यह तुम्हें शिवसुख का प्रापक है । अब गौतम (स्कन्दक के प्रति जो पिंगलक निर्ग्रन्थक ने प्रश्न किये हैं और यह उनके उत्तर देने में सर्वथा असमर्थ रहा है (इस विषयका उनसे वर्णन करते हैं (से णूणं खंदया सावत्थीए नयरीए पिंगलए णामं नियंठेणं वेसालियसावएणं इणमक्खेवं पुच्छिए) हे स्कन्दक !

કારણ કે ભગવાન મહાવીરની પાસેનું તમારૂં આગમન તમારે માટે કલ્યાણકારી જ નીવડશે તમે અહીં પધાર્યા તે ઘણુ સારૂં કર્યું " સુસાગય ખંદયા " હે સ્કન્દક ! તમારૂં અહીં જે આગમન થયું છે તે ઘણુ જ ખુશ થવા જેવું બન્યુ છે કારણ કે તમે અહીં આવ્યા તેથી તમારા પ્રશ્નોના યથાર્થ જવાબ તમને મળશે. પ્રશ્નોના નિર્ણય કરવાના હેતુ રૂપ હોવાથી તમારૂં આગમન શોભાસ્પદ બન્યું છે " અણુરાગયં ખંદયા " હે સ્કન્દક ! તમે અહીં આવ્યા તે ઠીક જ થયુ છે કારણ કે અહીં આવવાથી તમારૂં કલ્યાણ ઘણી જ ઝડપથી થવાનું છે ' सागयमणुरागय खंदया ! " હે સ્કન્દક ! તમારૂં આગમન શોભા રૂપ અને અનુરૂપ (ઉચિત) બન્યું છે કારણ કે તે આગમન તમોને શાશ્વત સુખ અપાવનાર નીવડવાનું છે હવે ગૌતમસ્વામી સ્કન્દકને પિંગલક નિર્ગ્રન્થ પૂછેલા પ્રશ્નો અને તેમના જવાબો આપવાની તેમની અસમર્થતા ના વિષયમાં આ પ્રમાણે પૂછે છે से णूणं तुम खंदया ! सावत्थीए नयरीए पिंगलएणं णाम नियंठेणं वेसालियसावएणं इणमक्खेवं पुच्छिए ' હે સ્કન્દક ! શ્રાવસ્તી નગરીમાં

स्याय क्षिप्रमेव प्रत्युपगच्छति, 'पच्चुवगच्छित्ता' प्रत्युपगत्य 'जेणेव खंदए कच्चायणस्स गोत्ते तेणेव उवागच्छइ' यत्रैव स्कन्दकः कात्यायनगोत्रस्तत्रैवोपागच्छति 'उवागच्छित्ता खंदयं कच्चायनस्स गोत्तं एवं वयासी' उपागम्य स्कन्दकं कात्यायनगोत्रमेववादीत् 'हे खंदया' हे स्कन्दक ! आगम्यताम्, भगवत्समीपे समागमनस्य कल्याणहेतुत्वात्, 'सागयं खंदया' स्वागतं स्कन्दक ! हे स्कन्दक ! तवागमनमत्रसुशोभनम्, भगवत्संपर्कस्य कल्याणकारकत्वादिति 'सुसागयं

सो इस प्रकार की आशंका यहां ठीक नहीं है। कारण कि गौतम ने जो ऐसा किया वह आगम व्यवहारी होने के कारण से किया तात्पर्य कहने का यह है कि भगवान के मुख से गौतम को यह ज्ञान हो ही चुका था कि स्कन्दक अगार से अनगार अवस्थावाला बन जावेगा–अतः स्वयं रागवाले होने के कारण उसकी उस स्थिति के प्रति पक्षपात हो जाने से, तथा महावीर प्रभु के ज्ञानातिशय को प्रकट करने के निमित्त प्रभु द्वारा प्रतिपादित बात को स्कन्दक से कह कर उनके प्रति उसका बहुमान हो इस अभिप्राय से गौतम का स्कन्दक के सामने जाना दोषावह नहीं है। इसलिये (अब्भुट्ठित्ता) गौतम उठकर (पच्चुवगच्छइ) स्कन्दक के समक्ष गये। (पच्चुवगच्छित्ता) स्कन्दक के समक्ष जाकर फिर वे (जेणेव खंदए कच्चायणस्स गोत्ते तेणेव उवागच्छइ) जहां पर कात्यायन गोत्री स्कन्दक थे वहां गये। (उवागच्छित्ता) वहां जाकर उन्हों ने खंदयं कच्चायणस्स गोत्तं एवं वयासी) उन कात्यायन गोत्री स्कन्दक से ऐसा कहा (खंदया) हे स्कन्दक आओ (सागयं) तुम्हारा स्वागत है कारण

આશંકા અસ્થાને છે કારણ કે ગૌતમસ્વામીએ એવું જે કર્યું તે આગમવ્યવહારી હોવાને કારણે કર્યું છે કહેવાનો ભાવાર્થ એ છે કે ગૌતમસ્વામીએ ભગવાન મહાવીરને મુખે એ વાત સાંભળી હતી કે સ્કન્દક આગાર અવસ્થાનો ત્યાગ કરીને અણગાર અવસ્થા અંગીકાર કરશે. તેથી તેમના પ્રત્યે પ્રેમ ઉત્પન્ન થવાથી અને તેની તે અવસ્થા તરફ પ્રમોદ ઉદ્ભવવાથી તથા મહાવીર પ્રભુના જ્ઞાનાતિશયને પ્રકટ કરવાના ઉદ્દેશથી, પ્રભુ વડે સ્કંદકના વિષે જે ગુપ્ત વાત પોતાની પાસે પ્રકટ કરવામાં આવી હતી તે વાત સ્કન્દકને કહીને પ્રભુ પ્રત્યે તેનામાં માનની લાગણી જાગૃત કરવા માટે ગૌતમસ્વામી સ્કન્દકની સામે જાય તેમાં દોષ જેવું કંઇ લાગતું નથી તેથી "अब्भुट्ठित्ता" ઉઠીને "पच्चुवगच्छइ" ગૌતમસ્વામી સ્કન્દકની પાસે ગયા, "पच्चुवगच्छित्ता" સ્કંદકની પાસે જઇને તેમણે "खंदयं कच्चायणस्सगोत्तं एव वयासी" કાત્યાયન ગોત્રના તે સ્કન્દક ને આ પ્રમાણે કહ્યું "खंदया" હે સ્કન્દક પધારો "सागयं" તમારું સ્વાગત હો

अर्थ समर्थः किं यन्मया कथ्यते स अर्थः समर्थः युक्तः किम् ? एवं गौतम कथ नानन्तरं स्कन्दकः कथयति-'हंता अत्थि' त्ति 'हंता अस्थि' हंत अस्ति हंतेति स्वीकारे, यत्त्वया कथितं तत्सर्वं सत्यमिति भाव । 'तएणं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते भगवं गोयमं एवं वयासी '-तत खलु स स्कन्दकः कात्यायनगोत्रो भग वन्तं गौतममेवमवादीत्=कथितवान्-' से के से णं गोयमा ' हे गौतम ! स क एषः ' तहारूवे णाणी वा तवस्सी वा ' तथारूपो ज्ञानी वा तपस्वी वा अस्ति 'जे णं तव एस अट्ठे मम ताव रहस्सकडे हव्वं अक्खाए' येन तुभ्यमेषोऽर्थो मम तावत् रहस्य कृत शीघ्रमाख्यातः, रहस्ये एकान्ते कृत इति रहस्य कृतः मच्छब सपादितो हृदये एवावधारितत्वात्, 'जओ णं तुमं जानासि ' यतः खलु त्वं

कहो स्कन्दक ! जो मैं कह रहा हूं वह युक्त है न ? इस प्रकार गौतम के कहने पर स्कन्दक ने उनसे कहा-" हंता अत्थि " हां युक्त है। अर्थात् जैसा आप कह रहे हैं वह सर्वथा सत्य है-हा ऐसी ही बात है। " हंता " यह शब्द स्वीकार अर्थ में आया है। अतः जो तुम कहते हो वह सब सत्य है। गौतम द्वारा इस प्रकारकी परोक्षार्थ की बात सुनकर स्कन्दक के हृदय में बडा आश्चर्य हुआ और वह तुरत बोले कि (से के से णं गोयमा तहारूवे णाणी वा) हे गौतम ! वह कौन ऐसा तथारूप ज्ञानी) (वा) अथवा (तवस्सी) तपस्वी है (जेणं तव एस अट्ठे मम ताव रहस्सकडे हव्वं अक्खाए) जिसने तुमसे इस मेरे गुप्त अर्थको शीघ्र कह दीया है। (रहस्य कृत रहस्ये कृतः) इति रहस्य कृतः गुप्त प्रच्छन्न संपादित क्यों कि अभीतक यह अर्थ हृदय में धारित होता है। बाहर प्रकाशित नहीं किया गया है। (जओ णं तुमं जणासि) कि जिससे

સાચી છે કે નહીં ? ત્યારે સ્કન્દકે તેમને કહ્યું, 'हंता अत्थि' હે ગૌતમ ! તમારી વાત તદ્દન સાચી છે ' हंता " પદ અહિં સ્વીકારના અર્થમાં વપરાયું છે તેથી એ વાત નક્કી થાય છે કે ગૌતમની વાત સાચી છે તેમ સ્કન્દક સ્વીકારે છે આ રીતે ગૌતમ વડે પોતાની હૃદયગત વાત સાંભળીને સ્કન્દકના આશ્ચર્યનો પાર ન રહ્યો. તેઓ બોલી ઉઠયા " से के से णं गोयमा ! तहारूवे णाणी वा तवस्सी ગૌતમ ! એવો જ્ઞાની અથવા તપસ્વી કોણ છે કે " जे णं तव एस मट्ठे मम ताव रहस्सकडे हव्वं मक्खाए ' જેમણે તમારી પાસે મારા આ ગુપ્ત અર્થ (પ્રશ્નો) ને આટલી બધી ઝડપથી પ્રકટ કર્યો છે ? रहस्य कृतः इति रहस्य कृतः (ગુપ્ત એટલે કે છુપા) સ્કન્દકે પોતાના વિચારો કોઇની પાસે પ્રકટ કર્યા ન હતા. હજી તે વિચારો ને તેમણે મનમાં જ રાખેલા હતા, સ્કન્દકના પ્રશ્નનો આ બાબ

नगर्यां पिंगलकेन नाम निर्ग्रन्थकेन वैशालिकश्रावकेणेममाक्षेपं पृष्टः, किं पृष्ट्वा नित्याह-'मागहा' इत्यादि। 'मागहा' हे मागध! स्कन्दक! 'किं स अंते लोए अणंते लोए' किं सान्तः लोकः, अनंतो वा लोकः, 'तं चेव' तदेव =पिङ्गलकनिर्ग्रन्थस्कन्दकविषयकः सर्वोऽपि पाठः संग्राह्यः। तथाहि-किम्-सान्तः जीवः अनन्तः जीवः ?, सान्ता सिद्धिः ?, अनन्ता सिद्धिः सान्तः सिद्धः, अनन्तः सिद्धः? केन वा मरणेन म्रियमाणो जीवो वर्धते वा हीयते वा?" इत्यादि। 'जेणेव इहं' यत्रैव इह यत्रेदं भगवतो महावीरस्य समवसरणम् 'तेणेव' तत्रैव 'हव्व-मागए' शीघ्रमागत इति। 'से णूणं खंदया' तद् नूनं स्कन्दक 'अट्ठे समट्ठे'

श्रावस्ती नगरी में पिंगल निर्ग्रन्थ ने जो कि भगवान महावीर प्रभु का भक्त है-उनके वचनोंपर ही जिसके हृदयमें अगाधश्रद्धा है-तुमसे इस प्रकार के प्रश्न पूछे हैं न, कि "मागहा" हे मागध स्कन्दक। "किं स अन्ते लोए अणंते लोए" लोक सान्त है अथवा लोक अनन्त है? "तं चेव" यह पद यह प्रकट करता है कि पिंगलक निर्ग्रन्थ और स्कन्दक के विषय का समस्त ही पाठ यहां ग्रहण कर लेना चाहिये-जो इस प्रकार से है- क्या जीव सान्त है अथवा जीव अनन्त है? सिद्धि सान्त है अथवा सिद्धि अनन्त है? सिद्ध सान्त है अथव सिद्ध अनन्त है, किस मरण से मर कर जीव बढता है तथा घटता है? इत्यादि। "जेणेव इहं" जहां भगवान महावीर का यह समवसरण है "तेणेव" वहीं पर "हव्वं आगए" तुम आये हो। 'से णूणं खंदया! अट्ठे समट्ठे"

રહેતા મહાવીરના અનુયાયી પિંગલક નિર્ગ્રંથે તમને આ પ્રમાણે પ્રશ્નો પૂછયા હતા "मागहा!" હે માગધ! (મગધ દેશ નિવાસી હે સ્કંદક!) "किं स अंते लोए अणते लोए?" લોક સાન્ત (અન્ત સહિત-અન્તવાળો) છે કે અનન્ત (અંતરહિત-અન્ત વગરનો) છે! "त चेव" આ પદવડે એમ બતાવવામા આવ્યું છે કે પિંગલક નિર્ગ્રન્થવડે સ્કન્દકને પૂછાયેલા સઘળા પ્રશ્નો અહી ગ્રહણ કરવા જોઈએ જે પાઠ આ પ્રમાણે છે શુ જીવ અન્તસહિત છે કે અન્તરહિત છે? સિદ્ધિ સાન્ત છે કે સિદ્ધિ અનન્ત છે? સિદ્ધ સાન્ત છે? કે સિદ્ધ અનન્ત છે? કયા મરણેથી મરવાથી જીવ સંસાર વધારે છે અને કયા મરણથી મરવાથી જીવ સંસાર ઘટાડે છે? આ પ્રશ્નોના ઉત્તર વિષે તમારા મનમા શંકા, કંખા વગેરે ઉદ્ભવવાથી તેના યથાર્થ ઉત્તર જાણવાને માટે "जेणेव इह" જ્યાં ભગવાન મહાવીર સ્વામીનુ સમવસરણ છે "तेणेव" ત્યા આગળજ 'हव्वं आगए" તમે આવ્યા છો "से णूणं खंदया! अट्ठे समट्ठे" હે સ્કન્દક! કહો મારી વાત

केवलज्ञानवान् अतएव 'तीय पच्चुप्पन्नमणागयवियाणए' अतीत प्रत्युत्पन्ना-नागतविज्ञायक अतीता नागतवर्तमानपदार्थविषयज्ञातेत्यर्थः, देशतः त्रिकालज्ञानवानपि एतादृशः सम्भवेत्तत्राह 'सव्वण्णू' सर्वज्ञः त्रैकालिकसर्वपदार्थविषयकज्ञानवत्वात् 'सव्वदरिसी' सर्वदर्शी सकलपदार्थानां करतलगतमुक्ताफलवत्साक्षाद्दर्शकत्वात्। 'जे णं मम एस अट्ठे तव ताव रहस्सकडे हव्व मक्खाए' येन मम

"तीयपच्चुप्पन्नमणागयवियाणए,, भूत, वर्तमान और भविष्यत् काल की सब बातों को जानते हैं। एकदेश की अपेक्षा से त्रिकाल ज्ञानवाला भी ऐसा हो सकता है अतः वे ऐसे नहीं हैं किन्तु "सव्वण्णू" सर्वज्ञ हैं–त्रैकालिक सर्व पदार्थों को जाननेवाले ज्ञान से युक्त हैं। तथा "सव्वदरिसी,, सकलपदार्थों के करतलगत मुक्ताफल की तरह साक्षात् दर्शक होने से वे सर्वदर्शी हैं। "जेणं मम एस अट्ठे तव रहस्सकडे हव्वं अक्खाए,, ऐसे भगवान ने मुझ से आपका यह रहस्यकृत अर्थ स्पष्ट शीघ्र कहा है, अर्थात् जिस समय पिंगलक निग्रन्थने तुमसे प्रश्न किये और तुमने अपने मन में जो ऐसा विचार किया वह सब उसी समय उनके ज्ञान में दर्पण में प्रतिबिम्ब की तरह स्पष्ट झलक गया है यह बात (हव्व) यह पद बतलाता है। अतः इसीसे हे स्कन्दक मैं इसे जान सका हूं। तात्पर्य यह कि हे स्कन्दक। मेरे धर्माचार्य धर्मोपदेशक अर्हन् जिन केवली भगवान् महावीर हैं वे समुत्पन्न केवल ज्ञान आदि से

वियाणए" भूत वर्तमान अने भविष्यकाळनी बधी वातो जाणे छे (त्रिकाळज्ञानी पण एक दृष्टिए तो एवा ज होय छे पण अही त्रिकाळज्ञाननी वात नथी ए बताववा माटे "सव्वण्णू' तथा "सव्वदरिसी' विशेषणोनो प्रयोग कर्यो छे "सव्वण्णू' तेओ सर्वज्ञ छे त्रिकाळ संबंधी तमाम रूपी अने अरूपी पदार्थोनुं यथार्थ ज्ञान धरावे छे तथा "सव्वदरिसी' सर्वदर्शी छे हाथमां रहेलां मुक्ता फळनी जेम तमाम पदार्थोने जोई शकता होवाथी तेओ सर्वदर्शी छे "जेणं मम एस अट्ठे तवताव रहस्सकडे हव्व मक्खाए" एवा ते भगवाने आपना ते रहस्यकृत (गुप्त) विचारो मारी पासे तुरत ज प्रकट कर्या छे एटले के पिंगलक निर्ग्रंथे तमने ज्यारे प्रश्नो कर्या, अने तमे तमारा मनमां जे विचार कर्यो ते त्यारे ज दर्पणमां जेम प्रतिबिंब देखाय तेम तेमना ज्ञानमां स्पष्ट रीते देखाया एज वात 'हव्व' पद बतावे छे हे स्कन्दक! तेमनी पासेथी हुं ते जाणी शक्यो छु तात्पर्य ए छे के हे स्कन्दक! मारा धर्माचार्य, धर्मोपदेशक, अर्हंत, जिन, केवली भगवान महावीर छे तेओ

जानासि, हे गौतम कास्ति एतादृशो ज्ञानी तपस्वी वा यो हि मम हृदयान्तर्नि· हितमप्यर्थं ज्ञात्वा तुभ्यं प्रकाशितवान् येन त्वमपि ममान्तर्विचारितं सम्यगवगत्य मां कथयसीति भावः। 'तएणं से भगवं गोयमे खंदयं कच्चायणस्सगोत्तं एवं वयासी' ततः खलु स भगवान् गौतमः स्कन्दकं कात्यायनगोत्रमेवमवादीत् 'एवं खलु खंदया' एवं खलु हे स्कन्दक ? 'मम धम्मायरिए' मम धर्माचार्यः, 'समणे भगवं महावोरे' श्रमणो भगवान् महावीरः 'उप्पन्ननाणदंसणधरे' उत्पन्नज्ञानदर्शनधरः 'अरहा' अर्हन् केवलज्ञानकेवलदर्शनार्हत्वात्, 'जिणे' जिनः रागादीनां जेतृत्वात् 'केवली' केवली असहाय ज्ञानवत्वात्, यतो यं

तुम जानते हो। तात्पर्य कहने का यह है कि गौतम से स्कन्दक कह रहा है कि हे गौतम! ऐसा ज्ञानी अथवा तपस्वी कौन है कि जिसने मेरे हृदयस्थित अर्थ को भी जान कर तुम से प्रकाशित किया है कि जिससे तुम भी मेरे अन्तर्विचारित अर्थको अच्छी तरह जानकर मुझ से कह रहे हो। स्कन्दक की इस प्रकार से बात को सुन कर गौतम ने उस कात्यायन गोत्री स्कन्दक से कहा सुनो स्कन्दक मैं तुम्हें बताता हूं यहां (मम धम्मायरिए) मेरे धर्माचार्य (समणे भगवं महावीरे) श्रमण भगवान महावीर विराजमान हैं वे (उप्पन्ननाणदंसणधरे) उत्पन्न हुए ज्ञान और दर्शन के धारी हैं (अरहा) अर्हन हैं अर्थात् उत्पन्न केवल ज्ञान और केवल दर्शक के धारी वे इस लिये हैं कि वें उनके योग्य हैं (जिणे) उनके योग्य वे इस लिये हैं कि उन्होंने अपनी आत्मा से राग द्वेष आदिकों जीत लिया है। रागद्वेष आदि उन्होंने जीत लिये हैं इस कारण वे „ केवली„ असहाय ज्ञानवाले होने से केवली है–केवलज्ञान शाली हैं' इसी लिये

આ પ્રમાણે છે હે ગૌતમ! એવો જ્ઞાની અથવા તપસ્વી કોણુ છે કે જેણે મારા મનોગત વિચારોને જાણીને તમારી પાંસે પ્રકટ કર્યા છે. જેથી તમે પણ મારા મનોગત વિચારોને બરાબર જાણી ગયા છો ? સ્કન્દકનો આ પ્રકારનો પ્રશ્ન સાંભળીને ગૌતમસ્વામીએ તેને કહ્યુ, હે સ્કન્દક! "मम धम्मायरिए" મારા ધર્માચાર્ય, 'समणे भगवं महावीरे" શ્રમણ ભગવાન મહાવીર અહીં બિરાજમાન છે. "उप्पन्ननाणदंसणधरे" તેઓ ઉત્પન્ન થયેલા કેવલજ્ઞાન અને દર્શનના ધારક છે (अरहा) તેઓ અર્હંત છે એટલે કે- તેઓ ઉત્પન્ન કેવળજ્ઞાન અને કેવળદર્શનના ધારક એ માટે છે કે તેઓ તેને માટે યોગ્ય છે "जिणे" તેઓ જિન છે કારણ કે તેમણે રાગદ્વેષ વગેરેને જીતી લીધા છે. "केवली" તેઓ કેવળી છે કેવળજ્ઞાની છે તેથી તેઓ तीय पच्चुप्पन्नमणाग·

मानसिक्या पर्युपासनया इति सम्प्राप्तम् । गौतमेन कथितम्-' अहासुह देवाणुप्पिया ' यथासुखं देवानुप्रिय ! हे स्कन्दक ! यथा भवद्भिः रोचते । 'मा पडिबंध करेह' मा प्रतिबन्धं कुरुत एतदर्थे विलम्बं मा कुरुत, 'तएण से भगव गोयमे खंदए ण कच्चायणस्स गोत्ते णं सद्धिं जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव पहारेत्थ गमणाए ' ततः खलु स भगवान् गौतम स्कन्दकेन कात्यायनगोत्रेण सार्द्धं यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीर तत्रैव प्राधारयत् गमनाय गन्तु प्रवृत्त ॥ सू० १० ॥

मूलम्—तेण कालेण तेण समएण समणे भगव महावीरे वियट्टभोई यावि होत्था । तएण समणस्स भगवओ महावीरस्स वियट्टभोइस्स सरीरय ओराल सिंगार कल्लाण सिव धन्न मगल सस्सिरीय अणलकियविभूसिय, लक्खणवजण गुणोववेय सिरीए अईव अईव उवसोभेमाणे चिट्ठइ। तएणं से खदए कच्चायणस्सगोत्ते समणस्स भगवओ

का सम्बद्ध हुआ है अर्थात् तीन प्रकार की कायिक वाचिक मानसिक पर्युपासना से। स्कन्दक का ऐसा हार्दिक अभिप्राय जानकर गौतम ने उनसे कहा (अहासुह देवाणुप्पिया) जैसा आपको रुचे वैसा करो (मा पडिबंध करेह) परन्तु अच्छे काम में ढील करना उचित नहीं है। (तएणं से भगवंत गोयमे खदएणं कच्चायणस्स गोत्तेण सद्धिं जेणेव समणे भगव महावीरे तेणेव पहारेत्थ गमणाए) इस प्रकार जब गौतम कह चुके तब वे भगवान गौतम स्वयं कात्यायन गोत्र वाले स्कन्दक के साथ जहां श्रमणभगवान महावीर विराजमान थे उस तरफ प्रस्थित हुए ॥सू१०॥

સૂત્ર પાઠ ગ્રહણ કરવાનો છે એટલે કે મન, વચન અને કાયાથી ભગવાન ભગવાન મહાવીરની પર્યુપાસના (સેવા) કરીએ એવો સ્કન્દકનો આશય પ્રકટ થયો છે સ્કન્દકની એવી હાર્દિક ઈચ્છા જાણીને ગૌતમે તેમને કહ્યું "अहासुह देवाणुप्पिया હે દેવાનુપ્રિય ! આપને જેમ સુખ ઉપજે તેમ કરો." मा पडिबंध करेह સારા કામમા વિલબ કરવો નહીં 'तएणं से भगव गोयमे खंदएणं कच्चायणस्स गोत्तेणं सद्धिं जेणेव समणे भगव महावीरे तेणेव पहारेत्थ गमणाए ' આ પ્રમાણે કહીને ભગવાન ગૌતમ પોતે જ કાત્યાયન ગોત્રીય સ્કન્દકને સાથે લઈને શ્રમણ ભગવાન મહાવીર જ્યાં બિરાજતા હતા ત્યાં જવા ઉપડયા ॥સૂ. ૧૦ ॥

एषोऽर्थस्तत्र तावत् रहस्यकृतः शीघ्रमाख्यातः, 'जओ णं अहं जाणामि खंदया' यतः खलु अहं जानामि स्कन्दक ! हे स्कन्दक ! अस्तिमे धर्माचार्यो धर्मोपदेशकोऽर्हन् जिनः केवली भगवान् महावीरः समुत्पन्नकेवलज्ञानादिमान् यस्त-वान्तःकरणविचारितमप्यर्थं जानाति तेन मह्यमेषोऽर्थ कथितस्तस्मात्कारणादहं जानामीति भावः।

'तएणं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते भगवं गोयमं एवं वयासी' ततः खलु स स्कन्दकः कात्यायनगोत्रो भगवंतं गौतममेवमवादीत्। 'गच्छामो णं गोयमा' गच्छामः खलु हे गौतम ! 'तव धम्मायरियं धम्मोवदेसगं' धर्माचार्यं धर्मोपदेशकम् 'समणं भगवं महावीरं वंदामो नमंसामो जाव पज्जुवासामो श्रमणं भगवन्तं महावीरं वदामो नमस्यामो यावत्पर्युपास्यामः, यावत्पदेन–तिविहाए काइयाए वाइयाए माणसियाए – पज्जुवासणाए' त्रिविधया कायिक्या वाचिक्या

युक्त है। वे तुम्हारे मन में विचारी हुई बात को भी जानते हैं। उन्होंने मुझ से यह सब कहा है इस कारण मैं इस अर्थ को जान गया हूं। (तएणं) गौतम की इस प्रकार की बात को सुनने के बाद में (से खंदए) उस स्कन्दक ने जो कि (कच्चाणायस्स गोत्ते) कात्यायन गोत्री थे (भगवं गोयमं एव वयासी) भगवान गौतम से इस प्रकार कहा-(गच्छामो णं गोयमा) हे गौतम ? चलो चले (तव धम्मायरियं धम्मोवएसय समणं भगवं महावीरं वंदामो नमंसामो जाव पज्जुवासामो) (तुम्हारे धर्माचार्य धर्मोपदेशक श्रमण भगवान महावीर के पास उन्हें वंदना करें नमस्कार करें यावत् उनकी पर्युपासना करें। यहां (यावत्) पदसे (तिविहाए काइयाए, माणसियाए पज्जुवासणाए) इस पाठ

કેવળજ્ઞાન અને કેવળદર્શનથી યુક્ત છે. તેઓ તમારા મનની વાત પણ જાણી શકે છે, તેમણે મને એ બધી વાત કહી છે તેથી જ હું તમારા મનોગત પ્રશ્નો જાણી શકયો છુ. "तएण" ગૌતમની તે પ્રકારની વાત સાંભળીને "से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते કાત્યાયન ગોત્રી સ્કન્દકે "भगव गोयमं एव वयासी" ભગવાન ગૌતમને આ પ્રમાણે કહ્યુ "गच्छामो ण गोयमा!" હે ગૌતમ ચાલો "तव्व धम्मायरिय धम्मोवएसय समण भगव महावीरं वदामो नमंसामो जाव पज्जुवासामो" તમારા ધર્માચાર્ય ધર્મોપદેશક, શ્રમણ ભગવાન મહાવીર પાસે આપણે જઇએ અને તેમને વંદન નમસ્કાર કરિએ અને ત્રણ પ્રકારે (કાયિક, વાચિક અને માનસિક) એ ત્રણ પ્રકારે તેમની પર્યુપાસના કરિએ અહીં जाव (यावत्) પદથી "तिविहाए-काइयाए, वाइयाए, माणसियाए पज्जुवासणाए" આ

कात्यायनगोत्र श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य व्यावृत्तभोजिनः शरीरकम् उदार यावदतीवातीवोपशोभमानं पश्यति दृष्ट्वा हृष्टतुष्टचित्तानन्दितः प्रीतमनाः परमसौमनस्थितः हर्षवशविसर्पद् हृदयो यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीरस्तत्रैवोपागच्छति उपागत्य श्रमण भगवन्तं महावीरं त्रिः-कृत्व आदक्षिण प्रदक्षिणं करोति यावत्पर्युपास्ते । स्कन्दक ! इति श्रमणो भगवान् महावीर स्कन्दक कात्यायन गोत्रमेवमवादीत् ॥ सू-११ ॥

लक्षणों से, व्यञ्जनों से एव गुणों से युक्त था । उस समय उनका वह शरीर अपनी शोमा से पहुत अधिकशोभित हो रहा था । (तएण से संदए कच्चाणस्स गोत्ते समणस्स वियट्टभोइस्स सरीरयं ओराल जाव अईव अईव उवसोभेमाण पासइ) कात्यायन गोत्रीय स्कन्दक ने व्यावृत्तभोजी श्रमण भगवान महावीर के उस उदार आदि विशेषणों से युक्त शरीर को ज्यों ही देखा । तो " पासित्ता " देखकर हट्टतुट्ठचित्तमाणदिए वह बहुत हर्षित हुआ, बहुत सतुष्ट हुआ और अत्यन्त आनंदयुक्त मन वाला हुआ ।(पीइमणे परमसोमणस्सिये, हरिस वसविसप्पमाणहियए जेणेव समणे भगव महावीरे तेणेव उवागच्छइ) तथा उसके मन में बहुत गहरा उनके प्रति प्रेम जग उठा । उसका मन अत्यत सुन्दर बन गया । हर्ष के वश से उसका हृदय उछलने लगा । इस तरह की स्थिति वाला बना हुआ वह जहा श्रमण भगवत महावीर विराजमान थे वहां पहुँचा । (उवागच्छित्ता समण भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिण

વ્યજનોની અને ગુણોથી યુક્ત હતું ભગવાનનું શરીર કુદરતી સૌંદર્યથી અતિશય શોભાયમાન લાગતું હતું (तएणं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स वियट्टभोइस्स सरीरयं ओराल जाव अईव अईव उवसोभेमाणं पासइ) ત્યાર બાદ કાત્યાયન ગોત્રના તે સ્કન્દકે વ્યાવૃત્ત ભોજી શ્રમણ ભગવાન મહાવીરનું ઉદાર યાવત્ અતીવ શોભાયમાન શરીર જોયું (पासित्ता) તે શરીર જોઈને (हट्टतुट्ठ चित्तमाणंदिए) તેના મનમાં ઘણો હર્ષ થયો, તેને સંતોષ થયો અને તેના આનંદનો પાર ન રહ્યો (पीइमणे परमसोमणस्सिये) हरिसवसविसप्पमाणहियए जेणेव समणे भगवंमहावीरे तेणेव उवागच्छइ) તેના મનમાં તેમના પ્રત્યે ઘણો જ ઉત્કટ પ્રેમ જાગ્યો. તેનું મન ઘણું જ સુંદર બની ગયું આનંદથી તેનું હૃદય નાચી ઉઠ્યું આ રીતે અત્યંત હર્ષ સાથે તે ભગવાન મહાવીર જ્યાં વિરાજમાન હતા ત્યાં પહોંચ્યા (उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिण पयाहिणं करेइ) ત્યાં જઈને તેમણે

महावीरस्स वियट्टभोइस्स सरीरयं ओरालं जाव अईव अईव उवसोभेमाणं पासइ पासित्ता हट्ठतुट्ठ चित्तमाणंदिए पीइमणे परमसोमणस्सिए हरिसवसविसप्पमाणहियए जेणेव समणे भगवं महावीरं तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ जाव पज्जुवासइ। खंदयाइ समणे भगवं महावीरे खंदयं कच्चायणस्स गोत्तं एवं वयासी ॥ सू० ११ ॥

छाया—तस्मिन् काले तस्मिन् समये श्रमणो भगवान् महावीरो व्यावृत्त-भोजी चाप्यासीत्। ततः खलु श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य व्यावृत्तभोजिनः शरीरकमुदारम् शृङ्गारम् शिवं धन्यं मागल्यं सश्रीकम् अनलंकृतभूषितं लक्षण व्यञ्जनगुणोपपेतं श्रियाऽतीवातीवोपशोभमानं तिष्ठति। ततः खलु स स्कन्दकः

सूत्रार्थ—(तेणं कालेणं तेणं समएणं) उस काल में और उस समय में (समणे भगवं महावीरे वियट्टभोई यावि होत्था) श्रमण भगवान महावीर व्यावृत्तभोजी प्रासुक निर्दोष आहार करनेवाले थे। (तएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स वियट्ट भोइस्स सरीरयंत ओरालं सिंगारं कल्लाणं सिव धन्नं मंगलं सस्सिरीयं अणलंकियविभूसियं लक्खणवंजण-गुणोववेय सिरीए अईव अईव उवसोभेमाणं चिट्ठइ) व्यावृत्तभोजी उन श्रमण भगवंत महावीरका शरीर उदार, शृङ्गार से युक्त किया जैसा, कल्याण रूप, शिव रूप, धन्य, मंगलरूप, अलंकारोंके विना भी शोभित, समस्त

"तेण कालेण" ઈત્યાદિ

સૂત્રાર્થ--(तेण कालेण तेण समएण) તે કાળે અને તે સમયે (समणे भगवं महावीरे वियट्टभोई यावि होत्था) શ્રમણ ભગવાન મહાવીર, વ્યાવૃત્ત ભોજી હતા–એષણીય આહાર–વિશુદ્ધ આહાર–કરનાર હતા (तएण समणस्स भगवओ महावीरस्स वियट्टभोइस्स सरीरयं ओरालं सिंगार कल्लाण सिव धन्न मंगलं सस्सिरीयं अणलंकियभूसियं लक्खणवजणगुणोववेय सिरीए अईव अईव उवसोभेमाणे चिट्ठइ) વ્યાવૃત્ત ભોજી તે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરનું શરીર ઉદાર આભૂષણ વગેરે શૃંગારથી રહિત હોવા છતાં પણ શૃંગારથી યુક્ત હોય તેવું, કલ્યાણ સ્વરૂપ, શિવરૂપ, મંગળરૂપ, અતિશય સુંદર, સમસ્ત લક્ષણોથી,

म्यात् शृंगारमिव शृंगारम् अतिशयितशोभासम्पन्नमित्यर्थः आभरणादि शृंगारं विनैव भगवतः शरीरं स्वाभाविकशोभासम्पन्नमेव भवतीति भावः। 'कल्लाणं' कल्याणम् कल्याणस्वरूपम् 'सिवं' शिवम् शिवमनुपद्रवं निरुपद्रवस्वरूपम्, 'धन्नं' धन्यम् प्रशंसायुक्तम् 'मंगल्लं' मंगल्यम् मंगलस्वरूपम् 'सस्सिरीयं' सश्रीकम् लोकोत्तरशोभायुक्तम् 'अणलंकियविभूसियं' अनलङ्कृतविभूषितम् मुकुटादिभिरलङ्क्रियते वस्त्रादिभिर्विभूष्यते प्रकृते चोभयोर्निषेधात् अनलङ्कृतविभूषितम्, यद्वा-अनलङ्कृतेऽलङ्कारवर्जितेऽपि विभूषितं=विभूषासम्पन्नम् अतिशयसुन्दर-

शरीर ओराल उदार प्रधान था। सिंगारं' अलकार आदि से कृत जो शोभा उस शोभा के संबंध से शृंगार की तरह वह शरीर शृंगार वाला जैसा था। अर्थात शृंगार से युक्त होने पर जो शोभा होती है वैसी शोभा भगवान् के शरीर की थी। तात्पर्य यह कि आभरण आदि शृंगार के विना भगवान का शरीर स्वाभाविक शोभा से संपन्न था। क्यों कि भगवान का शरीर स्वभावतः प्रारंभ से ही शोभा सपन्न होता है। (कल्लाणं) भगवान का वह शरीर कल्याण स्वरूप था। कारण कि भगवान स्वयं कल्याणस्वरूप होते हैं। 'सिवं' भगवान का वह शरीर छकीय रक्षक होने के कारण निरुपद्रव स्वरूप था। (धन्न) प्रशंसा युक्त होने के कारण भगवान् का शरीर धन्यरूप था। (मंगलं) शिवसुखदाता होने से अथवा पापों का नाशक होने से भगवान का शरीर मंगलरूप था। (सस्सिरीयं) अलौकिक शोभा से संपन्न होने के कारण भगवान का शरीर लोकोत्तर (अपार्थिव) शोभावाला था। (अणलंकियविभूसियं) शरीर की शोभा अलकारों से विशेष हो जाती है परन्तु भगवान के

શરીર 'ઓરાલ (ઉદાર સૌથી સુંદર) હતું 'सिंगार" શૃંગારથી યુક્ત શરીર જેવું સુંદર લાગે છે તેવું સુંદર ભગવાનનું શરીર લાગતું હતું એટલે ભગવાનનું શરીર એટલું બધું શોભાયમાન હતું કે આભૂષણો વગેરે શૃંગાર વિના પણ તે અતિશય સુંદર હતું 'कल्लाणं" ભગવાન પોતે જ કલ્યાણ સ્વરૂપ હોય છે તેથી તેમનું શરીર કલ્યાણ સ્વરૂપ હતું "सिवं" ભગવાન છકાયના જીવોની રક્ષા કરનાર હતા તેથી તેમનું શરીર દરેક જીવન માટે નિરુપદ્રવ રૂપ હતું 'धन्न"પ્રશસ્ત હોવાને લીધે તે શરીર ધન્યરૂપ હતું "मंगलं' શિવસુખદાતા હોવાથી અથવા પાપોનું નાશકર્તા હોવાથી ભગવાનનું શરીર મંગલરૂપ હતું "सस्सिरीयं" અલૌકિક શોભાવાળુ હોવાથી ભગવાનનું શરીર લોકોત્તર (અપાર્થિવ) શોભા વાળુ હતું 'अणलंकियविभूसियं" શરીરની શોભા અલંકારોથી વધે છે પણ ભગવાનના શરીરની શોભા

टीका—'तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे वियट्टभोई यावि होत्था' तस्मिन् काले तस्मिन् समये श्रमणो भगवान् महावीरो व्यावृत्तभोजी चाप्यभवत् 'वियट्टभोई' व्यावृत्तभोजी—व्यावृत्तम्—अनेषणीयान्निवृत्तम् एषणीयम् आहारं भुङ्क्ते यः स व्यावृत्तभोजी=विशुद्धाहारकारक इत्यर्थः। 'तएणं समणस्स भगवओ महावीरस्य वियट्टभोइस्स' ततः खलु श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य व्यावृत्तभोजिन विशुद्धाहारिणः 'सरीरयं ओरालं' शरीरकमुदारम्, उदारं प्रधानमित्यर्थः 'सिंगारं' शृङ्गारम् शृङ्गारोऽलंकारादिकृता शोभा तत् सम्त्र-

पयाहिण करेइ) वहां जाकर उसने श्रमण भगवान महावीर की तीन बार प्रदक्षिणा पूर्वक वन्दन नमस्कार किया (जावपज्जुवासइ) यावत् पर्युपासना की। (खंदयाइ समणे भगवं महावीरे खंदयं कच्चायणस्स गोत्तं एव वयासी) हे स्कन्दक! ऐसा कहकर श्रमण भगवान् महावीर ने कात्यायन गोत्रीय उन स्कन्दक से ऐसा कहा ॥

टीकार्थ—'तेणं कालेणं इत्यादि। 'तेणं कालेणं तेणं समएणं' उस कालमें और उस समय में (समणे भगवं महावीरे) श्रमण भगवान महावीर 'वियट्टभोई यावि होत्था' व्यावृत्त भोजी थे। व्यावृत्त भुङ्क्तेइति व्यावृत भोजी' इस व्युत्पत्ति के अनुसार अनेषणीय से निवृत्त जो भोजन है अर्थात् एषणीय निर्दोष जो आहार है वह व्यावृत्त भोजन है। इस व्यावृत्त भोजनको करने वाला व्यावृत्त भोजी है अर्थात् विशुद्ध आहार लेने वाला व्यावृत्त भोजी है। (तएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स वियट्टभोइस्स) विशुद्धाहार करने वाले उन श्रमण भगवान महावीर का "सरीरयं"

ભગવાન મહાવીરને ત્રણ વાર પ્રદક્ષિણા પૂર્વક વંદન નમસ્કાર કર્યા, (जावपज्जुवासइ) અને યાવત્ પર્યુપાસના કરી (खंदयाइ समणे भगवं महावीरे खंदयं-कच्चायणस्सगोत्त एव वयासी) હે સ્કન્દક! એવું સંબોધન કરીને શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે કાત્યાનગોત્રી તે સ્કન્દકને આ પ્રમાણે કહ્યુ

ટીકાર્થ—"तेणं कालेण तेण समएण" તે કાળે અને તે સમયે "समणे भगवं महावीरे" શ્રમણ ભગવાન મહાવીર "वियट्टभोईयावि होत्था" વ્યાવૃત્તભોજી હતા. વ્યવૃત્તભોજીની વ્યુત્પત્તિ આ પ્રમાણે થાય છે "व्यावृत्तं भुङ्क्ते इति व्यावृत्तभोजी" એષણીય (એષણા સમિતિ યુક્ત) આહારને વ્યાવૃત્ત આહાર કહેવાય છે તે વ્યાવૃત્ત યાને નિર્દોષ આહારનું ગ્રહણ કરનારને વ્યાવૃત્તભોજી કહે છે એટલે કે પ્રાસુક (વિશુદ્ધ) આહાર લેનારને વ્યાવૃત્તભોજી કહે છે "तएण भगवओ महावीरस्स वियट्टभोइस्स" વિશુદ્ધ આહાર કરનાર તે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરનું "सरीरय"

न्यात् शृंगारमिव शृंगारम् अतिशयितशोभासम्पन्नमित्यर्थः आभरणादि शृङ्गारं विनैव भगवतः शरीरं स्वाभाविकशोभासम्पन्नमेव भवतीति भावः। 'कल्लाणं' कल्याणम् कल्याणस्वरूपम् 'सिवं' शिवम् शिवमनुपद्रवं निरुपद्रवस्वरूपम्, 'धन्नं' धन्यम् प्रशंसायुक्तम् 'मगल्ल' मगल्यम् मगलस्वरूपम् 'सस्सिरीयं' सश्रीकम् लोकोत्तरशोभायुक्तम् 'अणलंकियविभूसियं' अनलंकृतविभूषितम् मुक्तादिभिः अलंक्रियते वस्त्रादिभिर्विभूष्यते प्रकृते चोभयोर्निषेधात् अनलङ्कृतविभूषितम्, यद्वा-अनलङ्कृते=अलङ्कारवर्जितेऽपि विभूषित=विभूषासम्पन्नम् अतिशयसुन्दर-

शरीर ओराल उदार प्रधान था। सिंगारं' अलकार आदि से कृत जो शोभा उस शोभा के संबंध से शृंगार की तरह वह शरीर शृंगार वाला जैसा था। अर्थात शृंगार से युक्त होने पर जो शोभा होती है वैसी शोभा भगवान् के शरीर की थी। तात्पर्य यह कि आभरण आदि शृंगार के बिना भगवान का शरीर स्वाभाविक शोभा से सपन्न था। क्यों कि भगवान का शरीर स्वभावतः प्रारंभ से ही शोभा सपन्न होता है। (कल्लाणं) भगवान का यह शरीर कल्याण स्वरूप था। कारण कि भगवान स्वयं कल्याणस्वरूप होते हैं। 'सिवं' भगवान का यह शरीर छःकाय रक्षक होने के कारण निरुपद्रव स्वरूप था। (धन्न) प्रशंसा युक्त होने के कारण भगवान् का शरीर धन्यरूप था। (मगलं) शिवसुखदाता होने से अथवा पापों का नाशक होने से भगवान का शरीर मंगलरूप था। (सस्सिरीयं) अलौकिक शोभा से संपन्न होने के कारण भगवान का शरीर लोकोत्तर (अपार्थिव) शोभावाला था। (अणलंकियविभूसियं) शरीर की शोभा अलंकारों से विशेष हो जाती है परन्तु भगवान के

શરીર 'ઓરાલ" (ઉદાર સૌથી સુંદર) હતુ 'સિંગાર" શ્રૃગારથી યુક્ત શરીર જેવુ સુંદર લાગે છે તેવુ સુંદર ભગવાનનુ શરીર લાગતુ હતુ એટલે ભગવાનનુ શરીર એટલુ બધુ શોભાયમાન હતુ કે આભૂષણો વગેરે શ્રૃંગાર વિના પણ તે અતિશય સુંદર હતુ "કલ્લાણં" ભગવાન પોતે જ કલ્યાણ સ્વરૂપ હોય છે તેથી તેમનુ શરીર કલ્યાણ સ્વરૂપ હતુ "સિવં" ભગવાન છકાયના જીવોની રક્ષા કરનાર હતા તેથી તેમનુ શરીર દરેક જીવન માટે નિરુપદ્રવ રૂપ હતુ 'ધન્ન"પ્રશસ્ત હોવાને લીધે તે શરીર ધન્યરૂપ હતુ "મંગલં' શિવસુખદાતા હોવાથી અથવા પાપોનુ નાશકર્તા હોવાથી ભગવાનનુ શરીર મગલરૂપ હતુ 'સસ્સિરીયં" અલૌકિક શોભાવાળુ હોવાથી ભગવાનનુ શરીર લોકોત્તર (અપાર્થિવ) શોભા વાળુ હતુ 'અણલંકિય વિભૂસિય" શરીરની શોભા અલંકારોથી વધે છે પણ ભગવાનના શરીરની શોભા

मित्यर्थः। 'लक्खणवंजणगुणोववेयं' लक्षणव्यंजनगुणोपपेतम् तत्र लक्षणानि सामुद्रिकशास्त्रोक्तरक्तहस्तपादतलादिरूपाणि, व्यञ्जनानि तिलमषकादीनि, गुणाः–औदार्यगाम्भीर्यादयः, तैरुपपेतं युक्तं यत् तत् तथा। 'सिरीए अईव–अईव उवसोभेमाणे' श्रिया=शोभया अतीवातीवोपशोभमानं 'चिट्ठइ' तिष्ठति वर्त्तते। 'तएणं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स वियट्टभोइस्स' ततः खलु स स्कन्दकः कात्यायनगोत्रः श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य व्यावृत्तभोजिनः, 'सरीरयं ओरालं जाव अईव अईव उवसोभेमाणं पासइ' शरीरम् उदारम् यावत् अतीवातीवोपशोभमानं पश्यति, इह यावत् पदेन शृंगार–कल्याण–शिवधन्यमंगल्य–सश्रीकानलंकृतविभूषितलक्षणव्यञ्जनगुणोपपेतत्वादीनां

शरीर की जो शोभा थी वह विना अलंकारों से ही अधिक थी अतः वह अनलंकृत विभूषित था, अथवा अनलंकृत होने पर भी विभूषित संपन्न था अर्थात् अतिशय सुन्दर था। (लक्खणवंजणगुणोववेयं) सामुद्रिक शास्त्रोक्त रक्त हाथ, पादतल आदिरूप लक्षणों से, तिल मषा आदिरूप व्यञ्जनों से, एवं औदर्य गांभीर्य ,आदि गुणों से युक्त भगवान का शरीर था। (सिरिए अईव अईव उवसोभेमाणे चिट्ठई) इस कारण भगवान का शरीर शोभासे अतीव–अत्यंत–शोभित हो रहा था। (तएणं से खंदए कच्चायणस्सगोत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स वियट्टभोइस्स) कात्यायन गोत्रीय स्कन्दक ने वियट्टभोजी श्रमण भगवान महावीर के (सरीरयं) शरीर को (ओरालं जाव अईव अईव उवसोभेमाणं पासई) उदार यावत् अत्यंत शोभासंपन्न देखा। इस तरह स्कन्दक ने उदार, शृंगाररूप, कल्याणरूव, शिवरूप,

---

તો અલંકારો ધારણ કર્યા વિનાપણ અતિશય સુંદર લાગતી હતી. "लक्खण वंजणगुणोववेय" સામુદ્રિક લક્ષણોથી (હાથ પગ આદિનાં શાસ્ત્રોક્ત શુભ લક્ષણોથી (તલ મષા વગેરે રૂપ શુભ વ્યંજનો તથા ઔદાર્ય અને ગાંભીર્ય વગેરે ગુણોથી યુક્ત ભગવાનનું શરીર હતું सिरीए अईव अईव उवसोभेमाणे चिट्ठइ તેકારણે ભગવાનનુ શરીર અતિશય શોભાયમાન લાગતું હતુ. तएणं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स वियट्ट भोइस्स કાત્યાયન ગોત્રના સ્કન્દકે વિશુદ્ધ આહાર લેનાર શ્રમણ ભગવાન મહાવીરના "ओरालं जाव अईव अईव उवसोभेमाणं पासई" ઉદાર વગેરે પૂર્વોક્ત અત્યંત સુંદર શરીરના દર્શન કર્યા કહેવાનું પ્રયોજન એ છે કે સ્કન્દકે ભગવાન મહાવીરના ઉદાર, શૃંગાર રૂપ, કલ્યાણ રૂપ, શિવસ્વરૂપ, ધન્ય રૂપ, મંગલ રૂપ,

सर्वेषां प्रहण भवति । तथा च शृंगार कल्याण शिवं धन्य मगत्य सश्रीकमनलंकृत विभूषित लक्षणव्यञ्जनगुणोपपेतं श्रियाऽतीवोपशोममानं भगवत शरीर पश्यतीति भावः । 'पासित्ता' दृष्ट्वा 'हट्ठतुट्ठचित्तमाणंदिए' हृष्टतुष्टचित्तमानन्दितः, हृष्टतुष्टम् अतिशयेन तुष्टम् अथवा हृष्टम् विस्मितम् तुष्ट च तोषवत् चित्तम् मनो यस्य स तथा, तत् हृष्टतुष्टचित्त यथा भवति तथा आनन्दित —आनन्दयुक्त । तथा 'णंदिए' नन्दित मुखसौम्यादिभावैः समृद्धतरतामुपगत, 'पीइमणे' प्रीतिमना, प्रीति—प्रेम मनसि यस्य स प्रीतमना इति प्रीतमनाः, प्रीतमानन्दातिशयेन मनो यस्य प्रीतमनाः भगवत शरीरसंबन्धिनं गुणादिकं दृष्ट्वाऽतिशयेन मुदित । तथा 'परमसोमणस्सिए' परम सौमनस्यितः परम सौमनस्य सजातं यस्य स परमसौमनस्यितः, अथवा परम सौमनस्यं सुमनस्कताविद्यते यस्य स परमसौमनस्यितः उत्कृष्टसौम्यभावयुक्त, 'हरिसवसविसप्पमाणहियए' हर्षवशविसर्पद्

धन्यरूप, मंगलरूप, सश्रीक, अनलकृतविभूषित, व्यञ्जन एवं गुणों से युक्त भगवान के शरीर को देखा। (पासित्ता) देख करके (हट्ठतुट्ठचित्तमाणंदिए) वह हृष्टतुष्ट—अत्यन्त तुष्ट—सतुष्टचित्तवाला, अथवा हृष्ट—विस्मित एव तुष्ट—तोष युक्त चित्तवाला हुआ। और विशेषरूप से आनन्द वाला हुआ। (णंदिए) मुख सौन्दर्य आदि भावों द्वारा वह बहुत अधिक प्रसन्न हुआ। (पीइमणे) उसका मन अत्यन्त आनद के कारण भगवान की ओर बहुत अधिक प्रीतियुक्त बन गया। अर्थात् भगवान के शरीर संबंधी गुणादिक को देखकर वह अत्यन्त हर्षित हो गया। (परम सोमणस्सिए) उसका मन अपने आप में बिलकुल निश्चित हो जाने के कारण अपनी चञ्चलता का परित्याग कर भगवान की तरफ ही लग गया। इसीसे वह सौम्यभाव से युक्त हो गया।

सश्रीक, अनलंकृतविभूषित (विना अलंकारे पण अलंकारोथी शोभायमान होय तेवु) तथा शुभ लक्षणो व्यजनो अने गुणोथी युक्त शरीरने जोयु "पासित्ता" भगवाननु सौंदय युक्त शरीर जोइने स्कन्दकने 'हट्ठ तुट्ठ चित्तमाणंदिए' घणो हर्ष थयो, अतिशय सतोष थयो अने तेना आनंदनो पार न रह्यो. (अथवा हृष्ट एटले विस्मित अने तुष्ट एटले सतुष्ट चित्तवाळो "णंदिए" भगवाननी मुखाकृति, सौंदर्य वगेरे जोइने ते घणो ज आनंदित थयो "पीइमणे" तेने भगवान महावीर प्रत्ये अत्यत प्रीति लागी एटले के भगवाननु शारीरिक सौंदर्य तथा गुण वगेरे जोइने ते घणो ज खुशी थयो "परम सोमणस्सिए" तेनु मन चचलतानो परित्याग करीने भगवाननी अदर ज लीन थई गयु तेथी ते सौम्यभावथी युक्त बनी गया तेने ते वखते

हृदयः, हर्षवशेन प्रमोदातिरेकेण विसर्पद्=विस्तारं गच्छद् हृदयं=मनो यस्य स हर्षवशविसर्पद् हृदयः अपूर्वं हर्षोल्लसितहृदयः सन् 'जेणेव समणे भगवं महावीरे' यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीरः विराजते 'तेणेव उवागच्छइ' तत्रैव उपागच्छति 'उवागच्छित्ता' उपागत्य 'समणं भगवं महावीरं' श्रमणं भगवन्तं महावीरम् 'तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ' त्रिकृत्वः आदक्षिणप्रदक्षिणां करोति त्रिकृत्वः त्रिवारम् 'आयाहिणं' आदक्षिणतः दक्षिणक्रमेण प्रदक्षिणां करोति 'जाव पज्जुवासइ' यावत् पर्युपास्ते अत्र यावत् पदेन वन्दननमस्कारादिकं कृत्वा त्रिविधया मनोवाक्कायरूपया पर्युपासनया इति संग्राह्यम्। 'खंदयाइ' हे स्कन्दक! इति 'समणे भगवं महावीरे' श्रमणो भगवान महावीरः 'खंदय-कच्चायणस्सगोत्तं एवं वयासी' स्कन्दकं कात्यायनगोत्रमेवमवादीत् ॥सू० ११॥

उसे किसी भी प्रकार की चिन्ता नहीं रही। 'हरिसवसविसप्पमाण-हियए) प्रमोद के अतिरेक से वह उस समय इतना अधिक आनन्द मग्न हो गया कि उसका हृदय उछलने लगा। इस तरह वह अपूर्व हर्ष के उत्कर्ष से उल्लसित होता हुआ (जेणेव समणे भगवं महावीरे) जहां श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे (तेणेव उवागच्छइ) वहां पहुँचा (उवागच्छित्ता) वहां जाकर के उसने (समणं भगव महावीरं) श्रमण भगवान महावीर की (तिक्खुत्तो) तीन वार (आयाहिण पयाहिणं करेइ जाव पज्जुवासइ) प्रदक्षिणा पूर्वक वन्दन नमस्कार करके मन वचन कायरूप तीन प्रकार की पर्युपासना से पर्युपासना करने लगा। फिर (खंदयाइ) हे स्कन्दक! ऐसा कह कर (समणे भगवं महावीरे) श्रमण भगवान महावीर ने (खंदयं कच्चायणस्स गोत्तं एवं वयासी) कात्यायन गोत्रीय स्कन्दक से ऐसा कहने लगे ॥सू० ११॥

કોઈ પણ પ્રકારની ચીન્તા રહી નહીં 'हरिसवसविसप्पमाणहियए" તેના હૃદયમાં એટલો બધો આનંદ થયો કે આનંદથી તેનું હૃદય નાચી ઉઠ્યું. આ રીતે મનમાં અતિશય આનંદ અને ઉલ્લાસ સાથે (जेणेव समणे भगव महावीरे तेणेव उवागच्छइ) જ્યાં શ્રમણ ભગવાન મહાવીર બીરાજતા હતા ત્યાં તે પહોંચી ગયો. (उवागच्छित्ता) ત્યાં જઈને તેણે "समणं भगव महावीरं) શ્રમણ ભગવાન મહાવીરની (तिकखुत्तो) ત્રણ વાર आयाहिण पयाहिण करेइ जाव पज्जुवासइ) પ્રદક્ષિણાપૂર્વક વંદનમસ્કાર કરીને યાવત્ મન વચન અને કાયરૂપ ત્રણે પ્રકારે પર્યુપાસના (સેવા) કરી ત્યાર બાદ (खंदयाइ) હે સ્કન્દક! એવું સંબોધન કરીને (समणे भगवं महावीरे) શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે (खंदय कचायणस्सगोत्तं एवं वयासी "કાત્યાયન ગોત્રી સ્કન્દક પરિવ્રાજકને આ પ્રમાણે કહ્યું ॥ સૂ-૧૧ ॥

मूलम्—से णूणं तुम खंदया ! सावत्थीए नयरीए पिंग लए णं नियठेण वेसालिय सावएणं इणं अक्खेव पुच्छिए-मागच्छा ! किं स अते लोए अणते लोए एव त चेव जाव जेणेव मम अतिए तेणेव हव्व आगए, से णूण खंदया ! अयमट्ठे समट्ठे ? । हता अत्थि । जे वि य ते खंदया अय मेयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए पत्थिए कप्पिए मणोगए स कप्पे समुप्पज्जित्था—किं स अते लोए अणते लोए०तस्स वि य ण अय अट्ठे एव खलु मए खदया चउव्विहे लोए पन्नत्ते त जहा—दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ । दव्वओ ण एगे लोए स अते१, खेत्तओ णं लोए असखेज्जाओ जोयण कोडाकोडीओ आयामविक्खभेण, असखेज्जाओ जोयण कोडाकोडीओ परिक्खेवेण पण्णत्ताओ । अत्थिपुण स अते२, कालओ णं लोए ण कयाइ न आसी, न कयाइ न भवइ, न कयाइ न भविस्सइ भविंसु य भवई य भविस्सइ य धुवे णियए सासए अक्खए अव्वए अवट्ठिए णिच्चे नत्थि पुण से अते ३ । भावओ ण लोए अणंता वण्णपज्जवा, अणता गंध पज्जवा, अणता रसपज्जवा, अणता फासपज्जवा, अणता सठाण पज्जवा, अणता गरुयलहुयपज्जवा, अणता अगुरुयलहुयपज्जवा, नत्थि पुण से अते ४, से त खदगा दव्वओ लोए स अते खेत्तओ लोए स अते कालओ लोए अणंते भावओ लोए अणते ?॥ १ ॥ जे वि य ते खदया जाव स अंते जीवे

हृदयः, हर्षवशेन प्रमोदातिरेकेण विसर्पद्=विस्तारं गच्छद् हृदयं=मनो यस्य स हर्षवशविसर्पद् हृदय. अपूर्वं हर्षोल्लसितहृदयः सन् 'जेणेव समणे भगवं महावीरे' यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीरः विराजते 'तेणेव उवागच्छइ' तत्रैव उपागच्छति 'उवागच्छित्ता' उपागत्य 'समणं भगवं महावीरं' श्रमणं भगवन्तं महावीरम् 'तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ' त्रिकृत्वः आदक्षिणप्रदक्षिणां करोति त्रिकृत्वः त्रिवारम् 'आयाहिणं' आदक्षिणतः दक्षिणक्रमेण प्रदक्षिणां करोति 'जाव पज्जुवासइ' यावत् पर्युपास्ते अत्र यावत् पदेन वन्दननमस्कारादिकं कृत्वा त्रिविधया मनोवाक्कायरूपया पर्युपासनया इति संग्राह्यम् । 'खंदयाइ' हे स्कन्दक ! इति 'समणे भगवं महावीरे' श्रमणो भगवान् महावीरः 'खंदयं-कच्चायणस्सगोत्त एव वयासी' स्कन्दकं कात्यायनगोत्रमेवमवादीत् ॥सू०११॥

उसे किसी भी प्रकार की चिन्ता नही रही । 'हरिसवसविसप्पमाण-हियए) प्रमोद के अतिरेक से वह उस समय इतना अधिक आनन्द मग्न हो गया कि उसका हृदय उछलने लगा । इस तरह वह अपूर्व हर्ष के उत्कर्ष से उल्लसित होता हुआ (जेणेव समणे भगवं महावीरे) जहां श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे (तेणेव उवागच्छइ) वहां पहुँचा (उवागच्छित्ता) वहां जाकर के उसने (समणं भगव महावीरं) श्रमण भगवान महावीर की (तिक्खुत्तो) तीन बार (आयाहिण पयाहिणं करेइ जाव पज्जुवासइ) प्रदक्षिणा पूर्वक वन्दन नमस्कार करके मन वचन कायरूप तीन प्रकार की पर्युपासना से पर्युपासना करने लगा । फिर (खंदयाइ) हे स्कन्दक ! ऐसा कह कर (समणे भगवं महावीरे) श्रमण भगवान महावीर ने (खंदयं कच्चायणस्स गोत्तं एवं वयासी) कात्यायन गोत्रीय स्कन्दक से ऐसा कहने लगे ॥सू०११॥

કોઈ પણ પ્રકારની ચીન્તા રહી નહીં 'हरिसवसविसप्पमाणहियए" તેના હૃદય-માં એટલો બધો આનંદ થયો કે આનંદથી તેનુ હૃદય નાચી ઉઠ્યું. આ રીતે મનમા અતિશય આનંદ અને ઉલ્લાસ સાથે (जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ) જ્યા શ્રમણ ભગવાન મહાવીર બીરાજતા હતા ત્યાં તે પહોંચી ગયો (उवागच्छित्ता) ત્યા જઈને તેણે "समणं भगव महावीरं") શ્રમણ ભગવાન મહાવીરની (तिक्खुत्तो) ત્રણ વાર आयाहिण पयाहिण करेइ जाव पज्जुवासइ) પ્રદક્ષિણાપૂર્વક વંદનમસ્કાર કરીને યાવત્ મન વચન અને કાયરૂપ ત્રણે પ્રકારે પર્યુપાસના (સેવા) કરી ત્યાર બાદ (खंदयाइ) હે સ્કન્દક ! એવુ સંબોધન કરીને (समणे भगवं महावीरे)શ્રમણ ભગવાન મહા-વીરે (खंदय कचायणस्सगोत्तं एवं वयासी "કાત્યાયન ગોત્રી સ્કન્દક પરિવ્રાજકને આપ્રમાણે કહ્યુ ॥ સૂ-૧૧ ॥

पएसिए, असखेज्जपएसोगाढे, अत्थि पुण से अते। कालओ णं सिद्धे सादिए अपज्जविए नत्थि पुण से अते। भावओ ण सिद्धे अणंता णाणपज्जवा, अणंता दसण पज्जवा, अणंता अगुरुलहुयपज्जवा, नत्थि पुण से अते। से त्त दव्वओ णं सिद्धे स अते, खेत्तओ णं सिद्धे स अते कालओ णं सिद्ध अणते, भावओ णं सिद्धे अणते ॥ ४॥ जे वि य ते खदया इमेयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए जाव समुपज्जित्था केण वा मरणेणं मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा तस्स वि य णं अयमट्ठे एव खलु खदया! मए दुविहे मरणे पन्नत्ते, त जहा –बालमरणे य पडियमरणे च। से किं बालमरणे बालमरणे दुवालसविहे पन्नते, त जहा–बलयमरणे १, वसट्टमरणे २, अतो सल्लमरणे ३, तब्भवमरणे ४, गिरिपडणे ५, तरुपडणे ६, जलप्पवेसे ७, जलणप्पवेसे ८, विसभक्खणे ९, सत्थोवाडणे १०, वेहाणसे ११, ,गिद्धपिट्ठे १२। इच्चेतेण खदया दुवालसविहे णं बालमरणेण मरमाणे जीवे अणंतेहिं नेरइयभवग्गहणेहिं अप्पाण सजोएहिइ तिरिय मणुय देव भवग्गहणेहिं अप्पाण सजोएइ अणाइय च ण अणवदग्गं दीहमद्ध चाउरतससार कतार अणुपरियट्टइ, से त्त यालमरणेण मरमाणे जीवे वड्ढइ से त्त बालमरण। से किं त पडियमरण पडियमरणे दुविहे पन्नत्ते, त जहा–पाओवगमणे य भत्तपच्चक्खाणे य। से किं त पाओवगमणे पाओवगमणे दुविहे पण्णत्ते त जहा–नीहा

अणंते जीवे तस्स वि य णं अयं अट्ठे–एवं खलु जाव दव्वओ णं एगे जीवे स अंते ?, खेत्तओ णं जीवे असंखेज्जपएसिए, असंखेज्जपएसोगाढे अत्थि पुण से अंते २, कालओ णं जीवे न कयाइ न आसी जीवे निच्चे नत्थि पुण से अंते ३, भावओ णं जीवे अणंता णाणपज्जवा, अणंता दंसण पज्जवा, अणंता चारित्तपज्जवा, अणंता अगुरुलहुय पज्जवा, नत्थि पुण से अंते४, से त्तं दव्वओ जीवे स अंते। खेत्तओ जीवे स अंते, कालओ जीवे अणंते ॥२॥ जे वि य ते खंदया पुच्छा जाव किं स अंता सिद्धि अणंता सिद्धी तस्स वि य णं अयमट्ठे–मए खंदया एवं खलु चउव्विहा सिद्धी पण्णत्ता तं जहा–दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ, दव्वओ एगासिद्धी स अंता, खेत्तओ णं सिद्धी पणयालीसं जोयणसयसहस्साइं आयामविक्खंभेणं एगा जोयणकोडी बायालीसं च जोयणसयसहस्साइं तीसं च जोयणसहस्साइं दोण्णि य अउणा पन्नजोयणसए किंचि विसेसाहिए परिक्खेवेणं पण्णत्ता, अत्थि पुण से अंते कालओ णं सिद्धी न कयाइ न आसी जाव णिच्चा भावओ य जहा लोयस्स तहा भाणियव्वा, तत्थ दव्वओ सिद्धी स अंता, खेत्तओ सिद्धी स अंता, कालओ सिद्धी अणंता, भावओ सिद्धी अणंता ॥३॥ जे वि य ते खंदया जाव किं अणंते सिद्धे तं चेव जाव दव्वओ णं एगे सिद्धे स अंते। खेत्तओ णं सिद्धे असंखेज्ज-

पएसिए, असखेज्जपएसोगाढे, अत्थि पुण से अंते। कालओ णं सिद्धे सादिए अपज्जविए नत्थि पुण से अंते। भावओ ण सिद्धे अणंता णाणपज्जवा, अणंता दसण पज्जवा, अणंता अगुरुलहुयपज्जवा, नत्थि पुण से अंते। से त्त दव्वओ णं सिद्धे स अंते, खेत्तओ णं सिद्धे स अंते कालओ णं सिद्ध अणते, भावओ णं सिद्धे अणते ॥२॥ जे वि य ते खदया इमेयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए जाव समुपज्जित्था केण वा मरणेणं मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा तस्स वि य ण अयमट्ठे एव खलु खदया! मए दुविहे मरणे पन्नत्ते, त जहा —बालमरणे य पडियमरणे य। से किं बालमरणे बालमरणे दुवालसविहे पन्नते, त जहा—बलयमरणे १, वसट्टमरणे २, अंतो सल्लमरणे३, तब्भवमरणे ४, गिरिपडणे ५, तरुपडणे६, जलप्पवेसे७, जलणप्पवेसे८, विसभक्खणे९, सत्थोवाडणे१०, वेहाणसे ११, ,गिद्धपिट्ठे १२। इच्चेतेण खदया दुवालसविहे णं बालमरणेण मरमाणे जीवे अणंतेहिं नेरइयभवग्गहणेहिं अप्पाण सजोएहिइ तिरिय मणुय देव भवग्गहणेहिं अप्पाण सजोएइ अणाइय च ण अणवदग्गं दीहमद्ध चाउरतससार कतार अणुपरियट्टइ, से त्त बालमरणेण मरमाणे जीवे वड्ढइ से त्त बालमरण। से किं त पडियमरणे पडियमरणे दुविहे पन्नत्ते, त जहा--पाओवगमणे य भत्तपच्चक्खाणे य। से किं त पाओवगमणे पाओवगमणे दुविहे पण्णत्ते त जहा—नीहा

रिमे य अनिहारिमे य, नियमा अप्पडिकम्मे से त्तं पाओवगमणमरणे। से किं तं भत्तपच्चक्खाणे ? भत्तपच्चक्खाणे दुविहे पन्नत्ते तं जहा--नीहारिमे य अनीहारिमे य नियमा सप्पडिक्कमे से त्तं भत्तपच्चक्खाणे। इच्चेत्तेणं खंदया दुविहेणं पंडियमरणेणं मरमाणे जीवे अणंतेहिं नेरइयभवग्गहणेहिं अप्पाणं विसंजोएइ जाव वीइवयइ से त्तं पंडियमरणेण मरमाणे जीवे हायइ से त्तं पंडियमरणे। इच्चेएणं खदया दुविहेणं मरणेणं मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा ॥सू०१२॥

छाया—तद् नूनं त्वं स्कन्दक ! श्रावस्त्यां नगर्यां पिंगलकेन निर्ग्रंथेन वैशालिकश्रावकेण अयमाक्षेपः पृष्टः—मागध ! किं सांतो लोकोऽनन्तो कः । एवं

'से णूणं तुमं खंदया!' इत्यादि।

सूत्रार्थ-(से णूणं तुमं खंदया !) हे स्कन्दक ! तुम (सावत्थीए नयरीए) श्रावस्ती नगरी में (नियठेणं पिंगलएणं) निर्ग्रन्थ पिंगलक ने (वेसालिय सावएणं) जो कि वैशालिक-भगवान् महावीर का-श्रावक है अर्थात् भगवान महावीर के उपदेशपान करने में रसिक है (इणं अक्खेव पुच्छिए) इस प्रश्न को पूछा है-(मागहा) हे मगध-मगधदेशोद्भव हे स्कन्दक ! (किं स अंते लोए अणते लोए) लोक क्या सान्त है अथवा अनन्त है इत्यादि ? (एवं तं चेव जाव जेणेव ममं अंतिए तेणेव हव्वंमागए) इस प्रकार पूछे जाने पर उसके प्रश्नो से

"से णूण तुमं खंदया" ઇત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ--(से णूणं तुम खंदया !) હે સ્કન્દક ! (सावत्थीए नयरीए नियं णं पिंगलएण वेसालियसावएण) શ્રાવસ્તી નગરીમાં વૈશાલિક શ્રાવકભગવાન મહાવીરના ઉપાસક-પિંગલક નિર્ગ્રન્થે તમને (इणं अक्खेवं पुच्छिए) આ પ્રમાણે પ્રશ્નો પૂછયા છે-(मागहा) હે માગધ ! "મગધદેશમાં જન્મેલા હે સ્કન્દક!" (किं स अन्ते लोए अणते लोए ?) લોક અન્ત સહિત છે કે અન્ત રહિત છે ? ઇત્યાદિ પ્રશ્નો તેમણે પૂછયા હતા. (एवं त चेव जाव जेणेव मम अतिए तेणेव हव्वमागए) તે પ્રશ્નો સાભળીને તમારા મનમાં

यदेव यावत् यत्रैव ममांतिकं तत्रैव हव्यमागतः। तद् नून स्कन्दक ! अयमर्थः समर्थः। इत अस्ति योपि च ते स्कन्दक ! अयमेतद्रूप आध्यात्मिकश्चिन्तितः प्रार्थितो कल्पितो मनोगतः सङ्कल्पः समुदपद्यत किं सान्तो लोकोऽनंतो लोकः (इत्यादि) तस्यापि चायमर्थ -एवं खलु मया स्कन्दक ! चतुर्विधो लोकः प्रज्ञप्तः। तद्यथा-द्रव्यतः क्षेत्रतः कालतो भावतः। द्रव्यत खलु एको लोकः सांतः१, क्षेत्रतः खलु लोकोऽसंख्याताः योजनकोटिकोटयआयामविष्कम्भेण असंख्येया योजनकोटिकोटय परिक्षेपेण प्रज्ञप्ताः, अस्ति पुनस्तस्यान्त ॥ २ ॥ कालतो

शंकित आदि वृत्तिवाले बनकर तुम यहाँ मेरे पास आये हो। (से णूण खदया ! अयमट्ठे समट्ठे) सो कहो स्कन्दक यह सत्य बात है न ! (हंता अत्थि) तब स्कन्दक ने कहा हाँ सत्य बात है।

(जे वि य ते खदया ! अयमेयारूवे अज्झत्थिए, चिंतिए, पत्थिए, कप्पिए, मणोगए सकप्पे समुप्पज्जित्था) तथा-हे स्कन्दक ! जो तुम्हें यह इसरूप आध्यात्मिक, चिन्तित, प्रार्थित, कल्पित, मनोगत सकल्प उत्पन्न हुआ है कि (किं स अन्ते लोए अणते लोए० तस्स विय णं अयमट्ठे) लोक अन्तसहित है कि अन्त विना का है इत्यादि। सो इनका यह अर्थ है-(एवं खलु मए खदया ! चउव्विहे लोए पन्नत्ते) हे स्कन्दक ! मैंने लोक चार प्रकार का प्रज्ञप्त किया है, (तंजहा) वह इस प्रकार से है-(दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ) द्रव्य की अपेक्षा से, क्षेत्र की अपेक्षा से, काल की अपेक्षा और भाव की अपेक्षा से। (दव्वओ णं एगे लोए स अंते खेत्तओ णं लोए असखेज्जाओ जोयण कोडाको

શંકા કાંક્ષા વગેરે ઉત્પન્ન થવાથી તમે તેના ઉત્તર જાણવા માટે મારી પાસે આવ્યા છો. (से णूणं खदया ! अयमट्ठे समट्ठे) હે સ્કન્દક ! કહો તે વાત સાચી છે ? (हंता अत्थि) સ્કન્દકે જવાબ આપ્યો ' હા, આ તની વાત સાચી છે (जे वि य ते खदया ! अयमेयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए पत्थिए कप्पिए मणोगए, सकप्पे समुप्पज्जित्था) તથા હે સ્કન્દક ! તમને આ પ્રકારનો આધ્યાત્મિક ચિન્તિત પ્રાર્થિત કલ્પિત, મનોગત સંકલ્પ ઉત્પન્ન થયો છે (किं स अंते लोए अणंते लोए० तस्स वि य णं अयमट्ठे) કે લોક અન્તસહિત છે કે અન્ત રહિત છે ? ઇત્યાદિ તો તે પ્રશ્નોનો આ પ્રમાણે અર્થ થાય છે—(एवं खलु मए खदया ! चउव्विहे लोए पन्नत्ते) હે સ્કન્દક ! મેં ચાર પ્રકારના લોક કહ્યા છે—(तं जहा) તે ચાર પ્રકારો આ પ્રમાણે दव्वओ खेत्तओ, कालओ, भावओ) (૧) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ. (૩) કાળની અપેક્ષાએ અને (૪) ભાવની અપેક્ષાએ (दव्वओ णं एगे लोए स अंते खेत्तओ णं लोए असंखेज्जाओ जोयण कोडाकोडीओ आयामविक्खंभेण, असंखेज्जाओ जोयण

लोको न कदाचित् नासीत् न कदाचिन्नभवति, कदाचिन्न भविष्यति अभूत च भवति च भविष्यति च, ध्रुवो नियतः शाश्वतोऽक्षयोऽव्ययोऽवस्थितो नित्यः, नास्ति पुनस्तस्यान्तः ॥ ३ ॥ भावतो लोकः अनंता वर्णपर्यवाः, अनताः गंधपर्यवाः,

डीओ आयामविक्खंभेणं, असंखेज्जाओ जोयणकोडाकोडीओ परिक्खेवेणं पण्णत्ताओ) द्रव्य की अपेक्षा से लोक एक है और वह अन्त सहित है। क्षेत्र की अपेक्षा से लंबाई चौडाई को लेकर वह लोक असंख्यात कोडाकोडी योजन तक लंबा चौडा है और परिक्षेप परिधि की अपेक्षा से वह क्षेत्र लोक असंख्यात कोडा कोडी योजन की परिधि वाला कहा गया है। (अत्थि पुण से अंते) इस तरह से उसका अंत है। (कालओ णं लोए न कयाइ न आसी, न कयाइ न भवइ न भविस्सइ) तथा काल की अपेक्षा से वह भूतकाल में कभी नहीं था ऐसा नहीं वर्तमान में वह नहीं है ऐसा भी नहीं है और भविष्यकाल में वह कभी कोई दिन नहीं होगा ऐसा भी नहीं है। (भविंसु य भवइ य, भविस्स इ) किन्तु वह लोक भूतकाल में था, वर्तमान में वह है और भविष्यत् काल में वह रहेगा। (धुवे, णियए, सासए अक्खए, अव्वए अवट्ठिए,णिच्चे, नत्थि पुण से अंते) इस तरह यह काल से लोक ध्रुव है, नियत है, शाश्वत है। अक्षय है, अव्यय है, नित्य है, इसलिये इसका अंत नहीं है। (भावओ णं लोए अणंता वण्णपज्जवा, अणंता

कोडाकोडीओ परिक्खेवेण पण्णत्ताओ) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ લોક એક છે અને તે અંત સહિત છે. ક્ષેત્રની દૃષ્ટિએ તો લોક લંબાઇ અને પહોળાઇની અપેક્ષાએ અસંખ્યાત કોડા કોડી યોજન લાંબો પહોળો છે. અને પરિધિની અપેક્ષાએ તે અસંખ્યાત યોજન કોડાકોડી પરિધિવાળો છે (अत्थि पुण स अते) અને વળી તે અન્ત સહિત છે (कालओ ण लोए न कयाइ न आसी, न कयाइ न भविस्सइ) કાળની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો ભૂતકાળમા કોઈ પણ એવો સમય ન હતો કે જ્યારે તેનુ અસ્તિત્વ ન હોય, વર્તમાન-કાળમાં પણ કોઈ એવો સમય જોવામા આવતો નથી કે જ્યારે તેનુ અસ્તિત્વ ન હોય, અને ભવિષ્યમા પણ તેનુ અસ્તિત્વ ન હોય એવો સમય આવશે નહી (भविंसु य, भवइ य, भविस्सइ य) પરંતુ તે લોકનુ અસ્તિત્વ ભૂતકાળમા હતું વર્તમાનકાળે છે અને ભવિષ્યમા પણ રહેવાનું છે. (धुवे, णियए, सासए, अक्खए, अव्वए, अवट्ठिए, णिच्चे, नत्थि पुण से अंते) આ રીતે કાળની અપેક્ષાએ વિચારવામા આવે તો લોક ધ્રુવ છે, નિયત છે, શાશ્વત છે, અક્ષય છે, અવ્યય છે અને નિત્ય છે. તેથી તેનો અંત નથી. (भावओ णं

अनंता रसपर्यवाः अनन्ताः स्पर्शपर्यवाः, अनंताः संस्थानपर्यवा, अनंतागुरुलघुकपर्यवा, अनंता अगुरुलघुकपर्यवा नास्ति पुनरन्तस्यान्त ॥ ४ ॥ तदेतद् स्कन्दक ! द्रव्यतो लोकः सांत क्षेत्रतो लोक सांत कालतो लोकोऽनंत, भावतो लोकोऽनंत ॥ १ ॥ यो पि च स स्कन्दक ! यावत् सांतो जीवः अनंतो जीव तस्यापि चायमर्थ - एव खलु यावत् द्रव्यतः खलु एको जीव सांत । क्षेत्रतो

गंधपज्जवा, अणंता रस पज्जवा अणंता फासपज्जवा अणंता संठाण - पज्जवा, अणंता गरुयलहुयपज्जवा, अणंता, अगुरुलहुयपज्जवा नत्थि पुण स अंते) भाव की अपेक्षा से लोक अनन्त वर्ण पर्यायरूप है, अनन्त गंध पर्याय रूप, अनन्त रस पर्याय रूप, अनन्त स्पर्श पर्याय रूप, अनन्त संस्थान पर्यायरूप, अनन्त गुरु लघु पर्याय रूप, तथा अनन्त अगुरु लघु पर्याय रूप है । भाव से लोक का अन्त नहीं है । इस तरह से (से तं खंदगा ! दव्वओ लोए स अंते, खेत्तओ लोए स अंते, कालओ लोए अणंते, भावओ लोए अणंते) हे स्कन्दक द्रव्य की अपेक्षा लोक अन्त सहित है, क्षेत्र की अपेक्षा लोक सान्त-अन्त सहित है । पर लोक की अपेक्षा से लोक अनन्त-अन्त रहित है, भाव की अपेक्षा से लोक अनन्त-अन्त रहित है १ ।

(जे वि य ते खंदया ! जाव सअंते जीवे, अणंते जीवे, तस्स वि य णं अयं अट्ठे) तथा हे स्कन्दक ! जो तुम्हें यावत जीव के विषय में विकल्प उत्पन्न हुआ था कि जीव अन्त सहित है कि अन्त रहित है उसका भी इस तरह से समाधान है कि (एव खलु जाव दव्वओ णं एगे जीवे स

લોએ અણંતા વણ્ણપજ્જવા અણંતા ગંધ પજ્જવા અણંતા રસપજ્જવા, અણંતા ફાસ પજ્જવા, અણંતા ગરુયલહુય પજ્જવા અણંતા અગુરુલહુય પજ્જવા, નત્થિ પુણ સે અંતે) અને ભાવની અપેક્ષાએ લોક અનંત વર્ણપર્યાયરૂપ છે અનંત ગંધ પર્યાયરૂપ છે અનંત રસપર્યાયરૂપ છે અનંત સ્પર્શપર્યાયરૂપ છે અનંત સંસ્થાનપર્યાયરૂપ છે અનંત ગુરુલઘુ પર્યાયરૂપ છે તથા અનંત અગુરુલઘુ પર્યાયરૂપ છે તથા અંતરહિત છે આ રીતે (સે તં ખંદયા ! દવ્વઓ લોએ સ અંતે કાલઓ લોએ અણંતે ભાવઓ લોએ અણંતે) હે સ્કંદક ! દ્રવ્યની અપેક્ષાએ લોક સાંત (અન્તયુક્ત) છે ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ લોક સાન્ત (અન્તસહિત) છે પણ કાળની અપેક્ષાએ લોક અનંત (અંત રહિત) છે અને ભાવની અપેક્ષાએ પણ લોક અંત રહિત છે,

(જે વિ ય તે ખંદયા ! જાવ સ અંતે જીવે અણંતે જીવે તસ્સવિ ય ણં અયં અટ્ઠે) હે સ્કંદક ! તમને જીવના વિષયમાં ‘જીવ અંત સહિત છે કે અંત રહિત છે ?’ એવી જે શંકા ઉદ્ભવી છે તેનું સમાધાન આ પ્રમાણે છે-

लोको न कदाचिन्नासीत् न कदाचिन्नभवति, कदाचित् भविष्यति अभूत च भवति च भविष्यति च, ध्रुवो नित्यः शाश्वतोऽक्षयोऽव्ययोऽवस्थितो नित्यः, नास्ति पुनस्तस्यान्तः ॥ २ ॥ भावतो लोकः अनन्ता वर्णपर्यवाः, अनन्ताः गंधपर्यवाः,

डीओ आयामविक्खंभेणं, असंखेज्जाओ जोयणकोडाकोडीओ परिक्खेवेण पण्णत्ता) द्रव्य की अपेक्षा से लोक एक है और वह अन्त सहित है। क्षेत्र की अपेक्षा से लंबाई चौडाई को लेकर यह लोक असंख्यात कोडाकोडी योजन तक लम्बा चौडा है और परिक्षेप परिधि की अपेक्षा से यह लोक असंख्यात कोडा कोडी योजन की परिधि वाला कहा गया है। (अत्थि पुण से अंते) इस तरह से उसका अंत है। (कालओ णं लोए न कयाइ न आसी, न कयाइ न भवइ न भविस्सइ) काल की अपेक्षा से वह भूतकाल में कभी नहीं था ऐसा नहीं वर्तमान में वह नहीं है ऐसा भी नहीं है और भविष्यकाल में वह कभी कोई दिन नहीं होगा ऐसा भी नहीं है। (भविंसु य भवइ य, भविस्सइ य) किन्तु वह लोक भूतकाल में था, वर्तमान में वह है और भविष्यत्काल में वह रहेगा। (धुवे, णियए, सासए अक्खए, अव्वए अवट्ठिए, णिच्चे, नत्थि पुण से अंते) इस तरह यह काल से लोक ध्रुव है, नियत है, शाश्वत है। अक्षय है, अव्यय है, नित्य है, इसलिये इसका अंत नहीं है। (भावओ णं लोए अणंता वण्णपज्जवा, अणंता

कोडाकोडीओ परिक्खेवेणं पण्णत्ताओ) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ લોક એક છે અને તે અંત સહિત છે ક્ષેત્રની દૃષ્ટિએ તો લોક લંબાઈ અને પહોળાઈની અપેક્ષાએ અસંખ્યાત કોડા કોડી યોજન લાંબો પહોળો છે અને પરિધિની અપેક્ષાએ તે અસંખ્યાત યોજન કોડાકોડી પરિધિવાળો છે (अत्थि पुण स अंते) અને વળી તે અન્ત સહિત છે (कालओ ण लोए न कयाइ न आसी, न कयाइ न भविस्सइ) કાળની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો ભૂતકાળમાં કોઈ પણ એવો સમય ન હતો કે જ્યારે તેનું અસ્તિત્વ ન હોય, વર્તમાન-કાળમાં પણ કોઈ એવો સમય જોવામાં આવતો નથી કે જ્યારે તેનું અસ્તિત્વ ન હોય, અને ભવિષ્યમાં પણ તેનું અસ્તિત્વ ન હોય એવો સમય આવશે નહીં (भविंसु य, भवइ य, भविस्सइ य) પરંતુ તે લોકનું અસ્તિત્વ ભૂતકાળમાં હતું વર્તમાનકાળે છે અને ભવિષ્યમાં પણ રહેવાનું છે. (धुवे, णियए, सासए, अक्खए, अव्वए, अवट्ठिए, णिच्चे, नत्थि पुण से अंते) આ રીતે કાળની અપેક્ષાએ વિચારવામાં આવે તો લોક ધ્રુવ છે, નિયત છે, શાશ્વત છે, અક્ષય છે, અવ્યય છે અને નિત્ય છે. તેથી તેનો અંત નથી. (भावओ णं

अनंता रसपर्यवाः अनन्ता स्पर्शपर्यवाः, अनंताः संस्थानपर्यवा, अनंतागुरुलघुकपर्यवा, अनंता अगुरुलघुकपर्यवा नास्ति पुनस्तस्यान्त ॥ ४ ॥ तदेतत् स्कन्दक! द्रव्यतो लोकः सांत क्षेत्रतो लोकः सांत कालतो लोकोऽनंत, भावतो लोकोऽनंत ॥ १ ॥ यो पि च स स्कन्दक! यावत् सांतो जीव अनंतो जीव तस्यापि चायमर्थः- एवं खलु यावत् द्रव्यतः खलु एको जीव सांत । क्षेत्रतो

गंधपज्जवा, अणता रस पज्जवा अणता फासपज्जवा अणंता संठाण-पज्जवा, अणंता गरुयलहुयपज्जवा, अणंता, अगुरुलहुयपज्जवा नत्थि पुण से अंते) भाव की अपेक्षा से लोक अनंत वर्ण पर्यायरूप है, अनंत गंध पर्याय रूप, अनंत रस पर्याय रूप, अनंत स्पर्श पर्याय रूप, अनंत संस्थान पर्यायरूप, अनंत गुरु लघु पर्याय रूप, तथा अनंत अगुरु लघु पर्याय रूप है। भाव से लोक का अंत नहीं है। इस तरह से (से तं खंदगा! दव्वओ लोए स अंते, खेत्तओ लोए स अंते, कालओ लोए अणंते, भावओ लोए अणंते) हे स्कन्दक द्रव्य की अपेक्षा लोक अंत सहित है, क्षेत्र की अपेक्षा लोक सान्त-अन्त सहित है। पर लोक की अपेक्षा से लोक अनन्त-अन्त रहित है, भाव की अपेक्षा से लोक अनन्त-अन्त रहित है १।

(जे वि य ते खंदया! जाव सअंते जीवे, अणंते जीवे, तस्स वि य णं अयं अट्ठे) तथा हे स्कन्दक! जो तुम्हें यावत् जीव के विषय में विकल्प उत्पन्न हुआ था कि जीव अन्त सहित है कि अन्त रहित है उसका भी इस तरह से समाधान है कि (एवं खलु जाव दव्वओ णं एगे जीवे स

लोए अणंता वण्णपज्जवा अणंता गंध पज्जवा अणंता रसपज्जवा, अणंता फास पज्जवा, अणंता गरुयलहुय पज्जवा अणंता अगुरुलहुय पज्जवा, नत्थि पुण से अंते) અને ભાવની અપેક્ષાએ લોક અનંત વર્ણપર્યાયરૂપ છે અનંત ગંધ પર્યાયરૂપ છે અનંત રસપર્યાયરૂપ છે અનંત સ્પર્શપર્યાયરૂપ છે અનંત સંસ્થાનપર્યાયરૂપ છે અનંત ગુરુલઘુ પર્યાયરૂપ છે તથા અનંત અગુરુલઘુ પર્યાયરૂપ છે તથા અંતરહિત છે આ રીતે (સે તં ખંદગા! દવ્વઓ લોએ સ અંતે ખેત્તઓ લોએ સ અંતે કાલઓ લોએ અણંતે ભાવઓ લોએ અણંતે) હે સ્કન્દક! દ્રવ્યની અપેક્ષાએ લોક સાન્ત (અન્તયુક્ત) છે ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ લોક સાન્ત (અન્તસહિત) છે પણ કાળની અપેક્ષાએ લોક અનંત (અંત રહિત) છે અને ભાવની અપેક્ષાએ પણ લોક અંત રહિત છે

(જે વિ ય તે ખંદયા! જાવ સ અંતે જીવે અણંતે જીવે તસ્સવિ ય ણં અયં અટ્ઠે) હે સ્કન્દક! તમને જીવના વિષયમાં જીવ અંત સહિત છે કે અંત રહિત છે!" એવી ... કલ્પના છે તેનું સમાધાન આ પ્રમાણે છે-

जीवोऽसंख्येयप्रदेशिकः असंख्येयप्रदेशावगाढः, अस्ति पुनस्तस्यान्तः। कालतो जीवो न कदाचित् नासीत् नित्यो नास्ति पुनस्तस्यान्तः। भावतो जीवोऽनंता ज्ञानपर्यवा, अनंता दर्शनपर्यवाः, अनंता चारित्रपर्यवा, अनंता अगुरुलघुपर्यवा नास्ति पुनस्तस्यान्तः। तदेतद् द्रव्यतो जीवः सांतः क्षेत्रतो जीवः सांतः कालतो

अंते खेत्तओ णं जीवे असंखेज्ज पएसिए असंखेज्जपएसोगाढे, अत्थि पुण से अंते) यावत् द्रव्य की अपेक्षा से जीव एक है और वह अन्त सहित है। क्षेत्र की अपेक्षा से जीव असंख्यात प्रदेशी है तथा असंख्यात प्रदेशो में वह अवगाढ है। अतः वह अन्त सहित है। (कालओ णं जीवे न कयाइ न आसी जाव निच्चे नत्थि पुण से अंते) काल की अपेक्षा जीव भूतकाल में कभी कोई समय नहीं था ऐसा नहीं है यावत् वह नित्य है-वह अन्त सहित नहीं है। (भावओ णं जीवे अणंता णाणपज्जवा अणंता दंसणपज्जवा, अणंता चरित्तपज्जवा, अणंता अगुरुलहुयपज्जवा, नत्थि पुण से अंते) भाव की अपेक्षा जीव अनंत ज्ञानपर्यायरूप है, अनन्त दर्शनपर्याय रूप है, अनन्त चारित्रपर्याय रूप है, अनंत अगुरु लघु पर्यायरूप है। इस अपेक्षा वह अन्त सहित नहीं है। (से त्तं दव्वओ जीवे स अंते, खेत्तओ जीवे स अंते कालओ जीवे

(एवं खलु जाव दव्वओ ण एगे जीवे स अंते, खेत्तओ ण जीवे असंखेज्ज पएसिए, असंखेज्जपएसोगाढे, अत्थि पुण से अंते) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ જીવ એક છે અને તે અન્તસહિત (સાન્ત) છે, ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ જીવ અસંખ્યાત પ્રદેશી છે અને અસંખ્યાત પ્રદેશોમાં અવગાઢ છે. તેથી તે ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પણ અન્તસહિત છે (कालओ णं जीवे न कयाइ न आसी जाव निच्चे नत्थि पुण से अंते) કાળની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો ભૂતકાળમાં કોઈ એવો સમય ન હતો કે જ્યારે જીવનું અસ્તિત્વ ન હોય ત્યાંથી શરૂ કરીને તે નિત્ય છે તે અંતરહિત છે ત્યાં સુધીનો સૂત્રપાઠ ગ્રહણ કરવો. "આગળ લોકને કાળની અપેક્ષાએ અંતરહિત પ્રતિપાદિત કરવા માટે જે સૂત્રપાઠ આપ્યો છે તે અહીં ગ્રહણ કરવો" भावओ णं जीवे अणंता णाणपज्जवा, अणंतादंसणपज्जवा, अणंता चारित्तपज्जवा, अणंता अगुरुलहुयपज्जवा, नत्थि पुण से अंते) ભાવની અપેક્ષાએ જીવ અનંત જ્ઞાનપર્યાયરૂપે છે, અનંત દર્શનપર્યાયરૂપ છે, અનંત ચારિત્રપર્યાયરૂપ છે, અનંત અગુરુલઘુપર્યાયરૂપ છે. અને તેથી ભાવની અપેક્ષાએ તે અંતસહિત નથી પણ અંતરહિત જ છે (से त्तं दव्वओ जीवे स अंते, खेत्तओ जीवे स अंते, कालओ जीवे अणंते,

जीवोऽनत भावतो जीवोऽनतः ॥ २ ॥ या पि च ते स्कन्दक! पृच्छा यावत् किं साता सिद्धिरनता सिद्धि तस्यापि चायमर्थ –मया स्कन्दक! एव खलु चतु विधा सिद्धि मज्ञप्ता, तद्यथा–द्रव्यत क्षेत्रत कालतो भावत द्रव्यत खलु एका सिद्धि सान्ता। क्षेत्रत सिद्धि पचचत्वारिंशद् योजनशतसहस्राणि आयामवि ष्कम्भेण, एका योजनकोटि द्विचत्वारिंशत् च योजनशतसहस्राणि द्वे च एकोन पचाशत् योजनशते किंचिद्विशेषाधिके परिक्षेपेण मज्ञप्ता अस्ति पुनस्तस्या अन्ता।

अणंत, भावओ जीवे अणंते) इस तरह द्रव्य से जीव सान्त–अन्त सहित है, क्षेत्र से जीव सान्त–अन्त सहित है। परन्तु काल से जीव अनन्त–अन्तरहित है, भाव से जीव अनन्त–अन्त रहित है।

(जे वि य ते खंदया! पुच्छा जाव किं स अंता सिद्धि, अणंता सिद्धि तस्स वि य ण अयं अट्ठे) हे स्कन्दक! तुम्हें जो सिद्धि, के विषय में विकल्प उठा है–कि सिद्धि सान्त–अन्त सहित है–कि अनन्त है उसका समाधान इस प्रकार से है–(मए खंदया एव खलु चउव्विहा-सिद्धी पण्णत्ता) हे स्कन्दक! मैंने सिद्धि चार प्रकार की कही है (तंजहा) जैसे (दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ) द्रव्य से, क्षेत्रसे, काल से और भाव से। (दव्वओ एगा सिद्धी स अंता) द्रव्य से सिद्धि एक है और वह अन्त सहित है। (खेत्तओ णं सिद्धी पणयालीसं जोयणसयसहस्साइं आयामविक्खंभेणं, एगा जोयणकोडी बायालीसं च जोयणसयसहस्साइं तीसंच जोयणसहस्साइं दोण्णि य अउणापण्ण-

भावओ जीवे अणते) આ રીતે દ્રવ્યની અપેક્ષાએ જીવ સાન્ત (અન્ત સહિત છે, ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પણ જીવ સાન્ત (અન્ત સહિત) છે પણ કાળની અપેક્ષાએ જીવ અનંત છે અને ભાવની અપેક્ષાએ પણ જીવ અનંત ' અંત રહિત " છે (૨) (जे वि य ते खंदया! पुच्छा जाव किं स अंता सिद्धि, अणंता सिद्धी तस्स वि य णं अट्ठे हे स्कन्दक! સિદ્ધિના વિષયમા તમને એવી શંકા ઉદ્ભવી છે કે સિદ્ધિ સાન્ત છે કે અનંત છે તેનુ સમાધાન આ પ્રમાણે છે (मए खंदया! एव खलु चउव्विहा सिद्धी पण्णत्ता) હે સ્કન્દક! મે સિદ્ધિ ચાર પ્રકારની કહી છે "तंजहा" તે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે (दव्वओ, खेत्तओ, कालओ भावओ) (૧) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ (૨) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ (૩) કાળની અપેક્ષાએ અને (૪) ભાવની અપેક્ષાએ (दव्वओ एगा सिद्धी स अंता) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ સિદ્ધિ એક છે અને તે અન્ત સહિત છે (खेत्तओ णं सिद्धी पण यालीसं जोयणसयसहस्साइं आयामविक्खंभेणं एगा जोयणकोडी बायालीसं च जोयणसयसहस्साइं तीसं च जोयणसहस्साइं दोण्णि य अउणापण्णजोयणसए किंचि

जीवोऽसंख्येयप्रदेशिकः असंख्येयप्रदेशावगाढः, अस्ति पुनस्तस्यान्तः। कालतो जीवो न कदाचित् नासीत् नित्यो नास्ति पुनस्तस्यान्तः। भावतो जीवोऽनंता ज्ञानपर्यवा, अनंता दर्शनपर्यवाः, अनंता चारित्रपर्यवा, अनंता अगुरुलघुपर्यवा नास्ति पुनस्तस्यान्तः। तदेतद् द्रव्यतो जीवः सांतः क्षेत्रतो जीवः सांतः कालतो

अंते खेत्तओ णं जीवे असंखेज्ज पएसिए असंखेज्जपएसोगाढे, अत्थि पुण से अंते) यावत् द्रव्य की अपेक्षा से जीव एक है और वह अन्त सहित है। क्षेत्र की अपेक्षा से जीव असंख्यात प्रदेशी है तथा असंख्यात प्रदेशो में वह अवगाढ है। अतः वह अन्त सहित है। (कालओ ण जीवे न कयाइ न आसी जाव निच्चे नत्थि पुण से अंते) काल की अपेक्षा जीव भूतकाल में कभी कोई समय नहीं था ऐसा नहीं है यावत् वह नित्य है-वह अन्त सहित नहीं है। (भावओ णं जीवे अणंता णाणपज्जवा अणंता दंसणपज्जवा, अणंता चरित्तपज्जवा, अणंता अगुरुलहुयपज्जवा, नत्थि पुण से अंते) भाव की अपेक्षा जीव अनंत ज्ञानपर्यायरूप है, अनन्त दर्शनपर्याय रूप है, अनन्त चारित्रपर्याय रूप है, अनंत अगुरु लघु पर्यायरूप है। इस अपेक्षा वह अन्त सहित नहीं है। (से त्तं दव्वओ जीवे स अंते, खेत्तओ जीवे स अंते कालओ जीवे

(एव खलु जाव दव्वओ ण एगे जीवे स अंते, खेत्तओ ण जीवे असंखेज्ज पएसिए, असंखेज्जपएसोगाढे, अत्थि पुण से अंते) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ જીવ એક છે અને તે અન્તસહિત (સાન્ત) છે, ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ જીવ અસંખ્યાત પ્રદેશી છે અને અસંખ્યાત પ્રદેશોમાં અવગાઢ છે તેથી તે ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પણ અન્તસહિત છે (कालओ णं जीवे न कयाइ न आसी जाव निच्चे नत्थि पुण से अंते) કાળની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો ભૂતકાળમાં કોઈ એવો સમય ન હતો કે જ્યારે જીવનું અસ્તિત્વ ન હોય ત્યાંથી શરૂ કરીને તે નિત્ય છે તે અંતરહિત છે ત્યાં સુધીનો સૂત્રપાઠ ગ્રહણ કરવો "આગળ લોકને કાળની અપેક્ષાએ અંતરહિત પ્રતિપાદિત કરવા માટે જે સૂત્રપાઠ આપ્યો છે તે અહીં ગ્રહણ કરવો" भावओ णं जीवे अणंता णाणपज्जवा, अणंतादंसणपज्जवा, अणंता चारित्तपज्जवा, अणंता अगुरुलहुयपज्जवा, नत्थि पुण से अंते) ભાવની અપેક્ષાએ જીવ અનંત જ્ઞાનપર્યાયરૂપે છે, અનંત દર્શનપર્યાયરૂપ છે, અનંત ચારિત્રપર્યાયરૂપ છે, અનંત અગુરુલઘુપર્યાયરૂપ છે. અને તેથી ભાવની અપેક્ષાએ તે અંતસહિત નથી પણ અંતરહિત જ છે (से त्तं दव्वओ जीवे स अंते, खेत्तओ जीवे स अंते, कालओ जीवे अणंते,

असंख्येयप्रदेशावगाढः, अस्ति पुनस्तस्यान्त, यावतः सिद्धः सादिकः अपर्यव सितः, नास्ति पुनस्तस्यान्तः। भावत सिद्धः अनन्ता ज्ञानपर्यवा, अनंता दर्शन पर्यवा, अनंता अगुरुलघुपर्यवा नास्ति पुनस्तस्यांतः तदेतद् द्रव्यत खलु सिद्धा सांत, क्षत्रतः खलु सिद्धः सांत, कालतः खलु सिद्धोऽनत, भावतः खलु सिद्धोऽनतः। योऽपि च त स्कन्दक! अयमेतद्रूप आध्यात्मिकचिन्तितो यावत् समुत्प न्न-केन वा मरणेन म्रियमाणो जीवो वर्धते वा हीयते वा तस्यापि चायमर्थ -

सोगाढे, अत्थि पुण से अते) तथा- हे स्कन्दक! जो तुम्हे एसा विक ल्प उठा है कि सिद्ध सान्त-अन्त सहित है कि अनन्त है, उसका समाधान इस प्रकार से है यहां सब पहिले जैसा कहना चाहिये-यावत् द्रव्य से सिद्ध एक है, वह अन्त सहित है, क्षेत्र से सिद्ध असख्यात प्रदेशी वाले हैं और असख्यात प्रदेशों में उनका अवगाह है। इस अपेक्षा से भी वे अन्त सहित हैं। (कालओ णं सिद्धे साहिए अपज्ज वसिए नत्थिपुण से अंते) कालसे सिद्ध होते तो सादि हैं पर वे फिर अवसान रहित हो जाते हैं। इस तरह वे अन्त रहित हैं। (भावओ णं सिद्धे अणंतणाणपज्जवा, अणंता दंसणपज्जवा, अता अणंगुरुलहुय पज्जवा, नत्थिपुण से अंते) भाव से सिद्ध अनंत ज्ञान पर्यायरूप हैं, अनन्त दर्शन पर्यायरूप हैं। उनका अन्त नहीं है ४।

(जे वि य ते खंदया! इमेयारूवे अज्झत्थिए, चिंतिए जाव समुप्प ज्जित्था-केण वा मरणेणं मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा तस्स वि य

वगाढपएसोगाढे अत्थि पुण स अंते) तथा હે સ્કન્દક તમને સિદ્ધ સાન્ત (અન્ત સહિત) છે કે અનત (અત રહિત) એવી જે શકા છે તેનું સમાધાન આ પ્રમાણે છે-અહીં બધું આગળ કહ્યા પ્રમાણે જ સમજવાનું છે દ્રવ્યની અપેક્ષાએ સિદ્ધ એક છે તે અત સહિત છે ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ સિદ્ધ અસખ્યાત પ્રદેશવાળા છે અને અસખ્યાત પ્રદેશાવગાહી છે એ રીતે ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પણ તેઓ અત સહિત છે (कालओ ण सिद्धे साहिए नत्थि पुण से अंते) કાળની અપેક્ષાએ સિદ્ધ સાદિ (આદિ યુક્ત) હોય છે પણ ત્યાર બાદ તેઓ અવસાન રહિત થઈ જાય છે આ રીતે તેઓ અન્ત રહિત છે તાત્પર્ય એ છે કે સાદિ અનત છે (भावओ णं सिद्धे अणंतणाणपज्जवा, अणंता दंसणपज्जवा, अणंता अगुरुलहुय पज्जवा, नत्थि पुण से अंते) અને ભાવની અપેક્ષાએ સિદ્ધ અનત જ્ઞાન પર્યાય રૂપ છે અનત દર્શન પર્યાય રૂપ છે અનત અગુરુલઘુ પર્યાય રૂપ છે તથા તેમનો અત હોતો નથી

(जे वि य ते खंदया! इमेयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए जाव समुप्पज्जित्था केण वा मरणेणं मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा तस्स वि य णं अयमट्ठे) હે સ્કન્દક!

कालतः खलु सिद्धिर्न कदाचिन्नासीन् यावत नित्या। भावतश्च यथा लोकस्य तथा भणितव्या तत्र द्रव्यतः सिद्धिः सांता, क्षेत्रतः सिद्धि सांता, कालतः सिद्धिरनंता, भावतः सिद्धिरनन्ता ॥३॥ योऽपि च ते स्कन्दक! यावत् किमनन्तः सिद्धः तदेव यावत द्रव्यतः खलु एक सिद्धः सांत, क्षेत्रतः सिद्धोऽसंख्येयप्रदेशिको-

---

जोयणसए किंचि विसेसाहिए परिक्खेवेणं पण्णत्ता) क्षेत्र से सिद्धि की लंबाई और चौडाई ४५ पैतालीस लाख योजन की है। और इसकी परिधि एक करोड ४२ बयालीस लाख तीस हजार दो सो गुनचास ४९ योजन से भी कुछ अधिक है (अत्थि पुण से अंते) इस अपेक्षा वह सिद्धि अन्त सहित है। (कालओ णं सिद्धी न कयाइ न आसी जाव णिच्चा) काल से सिद्धि भूतकाल में कभी नहीं हुई ऐसी बात नहीं है, यावत वह नित्य है (भावओ य जहा लोयस्स तहा भाणियव्वा) भाव से सिद्धि लोक की तरह जाननी चाहिये। इस तरह (दव्वओ सिद्धि स अंता, खेत्तओ सिद्धी स अंता कालओ सिद्धी अणंता, भावओ सिद्धी अणंता) द्रव्य से सिद्धि अन्त सहित है, क्षेत्र से भी सिद्धि अन्त सहित है। पर काल से सिद्धि अन्त रहित है-अनन्त है और भाव से भी सिद्धि अन्त रहित है-अनन्त है ३।

(जे वि य ते खंदया जाव किं अणंते सिद्धे-तं चेव जाव दव्वओ णं एगे सिद्धे स अते, खेत्तओ णं सिद्धे असंखेज्जपएसिए, असंखेज्जपए-

---

विसेसाहिए परिक्खेवेण पण्णत्ता) क्षेत्रनी અપેક્ષાએ સિદ્ધિની લંબાઇ અને પહોળાઇ ૪૫ લાખ યોજનની છે, અને તેની પરિધ (પરિમિતિ) એક કરોડ બેતાળીસ લાખ ત્રીસ હજાર બસો ઓગણપચાસ યોજનાથી કાંઇક વધારે છે (अत्थि पुण से अंते) આ દૃષ્ટિએ વિચારવામાં આવે તો સિદ્ધિ અંત સહિત છે (कालओ ण सिद्धी न कयाइ न आसी जाव णिच्चा) "કાળની અપેક્ષાએ ભૂતકાળમાં કદી પણ સિદ્ધિનું અસ્તિત્વ ન હોય એવું બન્યું નથી" ત્યાંથી શરૂ કરીને તે નિત્ય છે" ત્યાં સુધીનો પાઠ ગ્રહણ કરવો (भावओ जहा लोयस्स तहा भाणियव्वा) ભાવની અપેક્ષાએ સિદ્ધિના વિષયમાં લોકની જેમ જ સમજવું. આ રીતે (दव्वओ सिद्धि सअंता, खेत्तओ सिद्धी सअंता, कालओ सिद्धी-अणंता, भावओ सिद्धी अणंता) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ સિદ્ધિ અંત સહિત છે ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પણ સિદ્ધિ અંત સહિત છે અને ભાવની અપેક્ષાએ પણ સિદ્ધિ અંત રહિત છે (जे वि य ते खंदया जाव किं अणंते सिद्धे तं चेव-जाव दव्वओ णं एगे सिद्धे सअंते, खेत्तओणं सिद्धे असंखेज्जपएसिए, असंखे

जीवोऽनन्तैर्नैरयिकभवग्रहणैरात्मानं संयोजयति, तिर्यग्मनुष्यदेव भवग्रहणैरात्मानं संयोजयति अनादिकं च खलु अनवदग्रं दीर्घाध्वं चातुरन्तसंसारकान्तारमनुपर्यटति, तदेतद् बालमरणेन म्रियमाणो जीवो वर्धते, तदेतत् बालमरणम्। अथ किं तद्

शरीर के भीतर शस्त्रादिक के प्रवेश होनेपर मरना, तद्भवमरण ४-जिस भव में है उस भव से पर्यायान्तरित होकर फिर उसी भव में जन्मलेना, गिरिपतन ५-पहाड से गिरकर मरना, तरूपतन ६-वृक्ष से गिर कर मरना, ७ जलप्रवेश ८-जल में डूब कर मरना, ज्वलनप्रवेश -अग्नि में प्रवेश करके मरना ८ विषभक्षण ९-विष खाकर मरना, शस्त्रोपपात १०-शस्त्र की चोट खाकर मरना, वैहायस ११-वृक्ष आदि की डाल आदि पर कपडा आदि की फांस बना उसमें अपना गला फँसा कर मरना, गृध्रस्पृष्ठ १२-गृध्र आदि जानवरों के द्वारा अपने को खुखा कर मरना (इच्चेएणं खंदया! दुवालसविहेणं बालमरणेणं मरमाणे जीवे अणंतेहिं नेरइयभवग्गहणेहिं अप्पाणं संजोएइ) इस प्रकार इन बारह प्रकार के बालमरण से मरता हुआ जीव अपने आपको अनन्त नैरयिक भवों से युक्त करता है। (तिरियमणुय देव भवग्गहणेहिं अप्पाणं संजोएइ (तिर्यञ्च, मनुष्य और देवों के भव -ग्रहणों से अपने आपको युक्त करता है। (अणाइयं च णं-अणवदग्गं दीहमद्धं चाउरंत संसारकंतारं अणुपरियट्टइ) अनादि, अनत, दीर्घरास्तावाले, चारगतिरूप संसारकान्तार में वारवार भटकता

थतु भरणु (४) तद्भवमरणु-જે પર્યાયમાં રહેલા હોય તે ભવને છોડીને ફરીથી એજ પર્યાયમાં જ મધારણુ કરવો પડે તેવુ મરણુ (૫) ગિરિપતન-પહાડ પરથી પડી જવાથી થતુ મરણુ (૬) તરુપતન-વૃક્ષ પરથી પડી જવાથી થતુ મરણુ (૭) જળપ્રવેશ-પાણીમાં ડૂબી જવાથી થતુ મરણુ (૮) જ્વલન મરણ-આગથી બળીને થતુ મરણુ (૯) વિષભક્ષણથી મરણુ-ઝેર ખાવાથી થતુ મરણુ (૧૦) શસ્ત્રોપપાત-શસ્ત્રનો ઘા વાગવાથી થતુ મરણુ (૧૧) વૈહાયસમરણ ફાંસો ખાઇને થતુ મરણુ અને (૧૨) ગૃધ્રસ્પૃષ્ટ મરણુ-ગીધ વગેરે પક્ષીઓ કે જાનવરોદ્વારા ફાડી ખવાથી થતુ મરણુ (इच्चेएणं खंदया! दुवालसविहेणं बालमरणेणं मरमाणे जीवे अणंतेहिं नेरइयभवग्गहणेहिं अप्पाणं संजोएइ) આ રીતે બાર પ્રકારના બાલ મરણથી મરતો જીવ પોતાને અનંત નારક ભવોથી યુક્ત કરે છે (तिरिय मणुय देव भवग्गहणेहिं अप्पाणं संजोएइ) તિર્યંચ, મનુષ્ય અને દેવના ભવ ગ્રહણથી પોતાને યુક્ત કરે છે (अणाइयं च णं अणवदग्गं दीहमद्धं चाउरंतसंसारकंतारं अणुपरियट्टइ) તેમજ અનાદિ અનંત દીર્ઘ માર્ગવાળા, ચાર ગતિરૂપ સંસાર કાંતારમાં (સંસાર રૂપી વનમાં) વારવાર

एवं खलु स्कन्दक ! मया द्विविधं मरणं प्रज्ञप्तम् तद्यथा–बालमरणं च पंडितमरणं च । अथ किं तद् बालमरणम् ? बालमरणं द्वादशविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा–वलयमरणं १, वशार्तमरणम्, अंत शल्यमरणम् ३, तद्भवमरणं ४, गिरिपतनम् ५, तरुपतनम् ६, जलप्रवेश ७, ज्वलनप्रवेशः ८, विषभक्षणम् ९, शस्त्रापाटनम् १०, वैहायसं ११, गृध्रस्पृष्टम् १२। इत्येतेन स्कन्दक ! द्वादशविधेन बालमरणेन म्रियमाणो-

---

णं अयमट्ठे) तथा–हे स्कन्दक ! जो तुम्हे यह इस प्रकार का आध्यात्मिक, चिन्तित यावत् मनोगत संकल्प उत्पन्न हुआ है कि जीव किस मरण से मरकर अपने संसार की वृद्धि से बढता है और किस मरणसे मर कर वह अपने संसार को हानि से घटता है–सो उसका भी यह समाधान है की–(एवं खलु खंदया) हे स्कन्दक । (मए दुविहे मरणे पन्नत्ते) मैने मरण दो प्रकार का कहा है–(तंजहा) वे उसके दो प्रकार ये हैं–(बालमरणे य पंडियणे य) १ बालमरण और दूसरा पण्डितमरण । (से किं तं बालमरणे) बाल मरणक्या है ? उत्तर (बालमरणे दुबालसविहे पन्नत्त) बालमरण बारह प्रकार का कहा गया है । (तजहा) जैसे–(वलयमरणे, वसट्टमरणे, अंतोसल्लमरणे, तब्भमरणे, गिरिपडणे, तरुपडणे, जलप्पवेसे, जलणप्पवेसे, विसभक्खणे, सत्थोवाडणे, वेहाणसे, गिद्धपिट्ठे) वलयमरण १–तडफ तडफ कर मरना, वशार्तमरण २–पराधीनता पूर्वक झूर २ कर मरना, अन्तःशल्यमरण ३

તમારા મનમાં આ પ્રકારનો આધ્યાત્મિક, ચિંતિત (યાવત્) મનોગત સંકલ્પ ઉત્પન્ન થયો છે કે કયા પ્રકારના મરણથી મરીને જીવ પોતાનો સંસાર વધારે છે. અને કયા પ્રકારના મરણથી મરીને જીવ પોતાનો સંસાર ઘટાડે ?–તેનું પણ આ પ્રમાણે સમાધાન છે–(एवं खलु खंदया) હે સ્કન્દક ! (मए दुविहे मरणे पन्नत्ते) મે બે પ્રકારના મરણ કહ્યાં છે, (तंजहा) તે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે–(बालमरणे य पंडियमरणे य) (૧) બાલમરણ અને (૨) પંડિત મરણ (से किं तं बालमरणे ?) બાલમરણ એટલે શું ? ઉત્તર–(बालमरणे दुवालसविहे पन्नत्त) બાલમરણ બાર પ્રકારનાં કહ્યા છે–(त जहा) તે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે (वलयमरणे, वसट्टमरणे, अ तोसल्लमरणे, तब्भवमरणे, गिरिपडणे, तरुपडणे, जलप्पवेसे, जलणप्पवेसे, विसभक्खणे, सत्थोवाडणे, वेहाणसे, गिद्धपिट्ठे) (૧) વલયમરણ–તરફડી તરફડીને થતુ મરણ (૨) વશાર્ત્તમરણ—પરાધીનતા પૂર્વક થતુ મરણ, (૩) અન્તશલ્ય મરણ શરીરમાં શસ્ત્રાદિ પેસી જવાથી

जीवोऽनन्तैर्नैरयिकभवग्रहणैरात्मानं संयोजयति, तिर्यग्मनुष्यदेवभवग्रहणैरात्मानं संयोजयति अनादिकं च खलु अनवदग्रं दीर्घाध्वं चातुरन्तसंसारकान्तारमनुपर्यटति, तदेतद् बालमरणेन म्रियमाणो जीवो वर्धते, तदेतत् बालमरणम्। अथ किं तद्

शरीर के भीतर शस्त्रादिक के प्रवेश होनेपर मरना, तद्भवमरण ४- जिस भव में है उस भव से पर्यायान्तरित होकर फिर उसी भव में जन्मलेना, गिरिपतन ५-पहाड से गिरकर मरना, तरुपतन ६- वृक्ष से गिर कर मरना, ७ जलप्रवेश ८-जल में डूब कर मरना, ज्वलनप्रवेश -अग्नि में प्रवेश करके मरना ९ विषभक्षण ९- विष खाकर मरना, शस्त्रोपपात १०-शस्त्र की चोट खाकर मरना, वैहायस ११-वृक्ष आदि की डाल आदि पर कपडा आदि की फांस बना उसमें अपना गला फँसा कर मरना, गृध्रस्पृष्ट १२-गृध्र आदि जानवरों के द्वारा अपने को खुवा कर मरना (इच्चे तेणं खंदया! दुवालसविहेणं बालमरणेणं मरमाणे जीवे अणंतेहिं नेरइयभवग्गहणेहिं अप्पाणं संजोएइ) इस प्रकार इन बारह प्रकार के बालमरण से मरता हुआ जीव अपने आपको अनन्त नैरयिक भवों से युक्त करता है। (तिरियमणुय देव भवग्गहणेहिं अप्पाणं संजोएइ (तिर्यञ्च, मनुष्य और देवों के भव -ग्रहणों से अपने आपको युक्त करता है। (अणाइयं च णं- अणवदग्गं दीहमद्धं चाउरंतं संसारकंतारं अणुपरियट्टइ) अनादि, अनन्त, दीर्घरास्तावाले, चारगतिरूप संसारकान्तार में वारवार भटकता

થતુ મરણ (૪ તદ્ભવમરણ-જે પર્યાયમાં રહેલા હોય તે પર્યાયને છોડીને ફરીથી એજ પર્યાયમાં જ મધારણ કરવો પડે તેવુ મરણ (૫) ગિરિપતન- પહાડ પરથી પડી જવાથી થતુ મરણ (૬) તરુપતન-વૃક્ષપરથી પડી જવાથી થતુ મરણ (૭) જળપ્રવેશ-પાણીમા ડૂબી જવાથી થતુ મરણ (૮) જ્વલન મરણ-આગથી બળીને થતુ મરણ (૯) વિષભક્ષણથી મરણ-ઝેર ખાવાથી થતુ મરણ (૧૦) શસ્ત્રોપપાત-શસ્ત્રનો ઘા વાગવાથી થતુ મરણ (૧૧) વૈહાયસમરણ ફાંસો ખાઈને થતુ મરણ અને (૧૨) ગૃધ્રસ્પૃષ્ટ મરણ-ગીધ વગેરે પક્ષીઓ કે જાનવરોદ્વારા ફાડી ખવાથી થતુ મરણ (इच्चे तेणं खंदया! दुवालसविहेणं बालमरणेणं मरमाणे जीवे अणंतेहिं नेरइयभवग्गहणेहिं अप्पाणं संजोएइ) આ રીતે બાર પ્રકારના બાલ મરણથી મરતો જીવ પોતાને અનંત નારક ભવોથી યુક્ત કરે છે (तिरिय मनुय देव भवग्गणेहिं अप्पाणं संजोएइ) તિર્યંચ, મનુષ્ય અને દેવના ભવ ગ્રહણથી પોતાને યુક્ત કરે છે (अणाइयं च णं अणवदग्गं दीहमद्धं चाउरंतसंसारकंतारं अणुपरियट्टइ) તેમજ અનાદિ અનંત, દીર્ઘ માર્ગવાળા, ચાર ગતિ સંસાર કાંતારમાં (સંસાર રૂપી વનમાં) વારંવાર

पंडितमरणम् ? पंडितमरणं द्विविधं प्रज्ञप्तम् तद्यथा–पादपोपगमनं च भक्तप्रत्याख्यान च। अथ किं तत्पादपोपगमनम् ? पादपोपगमनं द्विविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा–निर्हारिमं च अनिर्हारिमं च नियमात् अप्रतिकर्मः तदेतत्पादपोपगमम्। अथ किं तत् भक्तप्रत्याख्यानम् ? भक्तप्रत्याख्यानं द्विविधं प्रज्ञप्तं, तद्यथा–निर्हारिम च अनिर्हारिमं च नियमात् स प्रतिकर्म, तदेतद् भक्तप्रत्याख्यानम्। इत्येतेन स्कन्दक!

रहता है। (सेत्तं बालमरणेण मरमाणे जीवे वड्ढइ) इस तरह बालमरण से मरा हुआ जीव अपने संसार के बढ जाने के कारण बढता है (से त्तं बालमरणे) यह बालमरण है–अर्थात्–यह बालमरण का स्वरूप है। (से किं तं पंडियमरणे) वह पण्डित मरण क्या है ? (पंडियमरणे दुविहे पण्णत्ते) पण्डित मरण दो प्रकार का कहा है (तंजहा–पाओवगमणे य भत्तपच्चक्खाणे य) वह इस तरह से पादपोपगमन और भक्त प्रत्याख्यान (से किं तं पाओवगमणे) पादपोपगमन किसे कहते हैं ? (पाओवगमणे दुविहे पण्णत्ते) पादपोपगमन दो प्रकारका होता है–(तंजहा) जैसे (नीहारिमे य अनिहारिमे य) निर्हारिम और अनिर्हारिम) नियमा अप्पडिकम्मे) नियम से ये दोनों पादपोपगमन के प्रकार प्रतिकर्म (सेवाशुश्रूषा) से रहित होते हैं। (से किं तं भत्तपच्चक्खाणे ?) भक्त प्रत्याख्यान का क्या स्वरूप है (भत्तपच्चक्खाणे दुविहे पण्णत्ते) भक्त प्रत्याख्यान दो प्रकार का कहा गया है (तंजहा) जैसे–(नीहारिमे य अनीहारिमे य) नीर्हारिम और अनिर्हारिम (नियमा सप्पडिकम्मे) भक्त प्रत्याख्यान के ये दोनों प्रकार प्रतिकर्म सहित होते हैं। (से त्तं

પરિભ્રમણ કરે છે. (से त्तं बालमरणेण मरमाणे जीवे वड्ढइ) આ રીતે બાલ મરણથી મરતો જીવ પોતાનો સંસાર વધવાથી વધે છે. એટલે કે બાલમરણથી મરતા જીવને સંસારમાં વાર વાર પરિભ્રમણ કરવું પડે છે. (सेत्तं बालमरणे) બાલમરણનું ઉપર કહ્યા પ્રમાણેનું સ્વરૂપ છે

(से किं तं पंडियमरणे) પંડિત મરણનું કેવું સ્વરૂપ છે? ઉત્તર–(पंडियमरणे-दुविहे पण्णत्तं) પંડિત મરણના બે પ્રકાર કહ્યા છે. (तं जहा) તે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે (पाओवगमणे य भत्तपच्चक्खाणे य) (૧) પાદપોપગમન અને (૨) ભક્ત પ્રત્યાખ્યાન (से किं तं पाओवगमणे) પાદપોપગમન એટલે શું ? (पाओवगमणे दुविहे पण्णत्ते) પાદપોપગમન મરણના બે પ્રકાર છે. (तं जहा) તે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે (नीहारिमे य अनिहारिमे य) (૧) નિર્હારિમ અને (૨) અનિર્હારિમ. (नियमा अप्पडिकम्मे) નિયમથી જ પાદપોપગમનના આ

द्विविधेन पण्डितमरणेन म्रियमाणो जीवोऽनन्तैर्नैरयिकभवग्रहणैरात्मान विसयोजयति, यावद्व्यतिव्रजति तदेतद् पण्डितमरणेन म्रियमाणो जीवो हीयते तदेतत्पण्डितमरणम् । इत्येतेन स्कन्दक ! द्विविधेन मरणेन म्रियमाणो जीवो वर्द्धते वा हीयते वा ॥ ५ ॥ सू० १२ ॥

भत्तपच्चक्खाणे) इस प्रकार यह भक्तप्रत्याख्यान का स्वरूप है। (इच्चेएणं खंदया ! दुविहेणं पंडियमरणेणं मरमाणे जीवे अणंतेहिं नेरइयभवग्गहणेहिं अप्पाणं विसंजोएइ, जाव वीइवयइ) इस प्रकार हे स्कन्दक ! इन दोनों प्रकार के पण्डित मरण से मरा हुआ जीव अनन्त नारक आदिजीवों के भव ग्रहणों से अपने आपको युक्त नहीं करता है, यावत वह संसाररूप कान्तार को पार कर देता है । (से तं पंडियमरणेण मरमाणे जीवे हायइ, से तं पंडियमरणे) इस पण्डितमरण से मरा हुआ जीव अपने संसार की हानि होने के कारण घटता है । इस प्रकार से यह पण्डितमरण का स्वरूप है । (इच्चेएणं खंदया दुविहेणं मरणेणं मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा) इस तरह हे स्कन्दक ! इन दो प्रकार के मरणों से मरण करता हुआ जीव अपने संसार के बढ जाने से बढता है और अपने संसार के घट जाने से घटता है ॥

બન્ને પ્રકારના પ્રતિકર્મથી રહિત હોય છે (से किं तं भत्तपच्चक्खाणे ?) ભક્ત-પ્રત્યાખ્યાનનું કેવું સ્વરૂપ છે ? ઉત્તર (भत्तपच्चक्खाणे दुविहे पण्णत्ते) ભક્ત-પ્રત્યાખ્યાનના બે પ્રકાર કહ્યા છે (तं जहा) તે આ પ્રમાણે છે (नीहारिमे य अनीहारिमे य) (૧) નિર્હારિમ અને (૨) અનિર્હારિમ. (नियमा सपडिकम्मे) ભક્તપ્રત્યાખ્યાનના આ બે પ્રકાર પણ પ્રતિકર્મ થી સહિત હોય છે (से त्तं भत्तपच्चक्खाणे) ભક્ત પ્રત્યાખ્યાનનું આ પ્રકારનું સ્વરૂપ હોય છે, (इच्चेतेण खंदया ! दुविहेणं पंडियमरणेणं मरमाणे जीवे अणंतेहिं नेरइयभवग्गहणेहिं अप्पाणं विसंजोएइ, जाव वीइवयइ) હે સ્કન્દક ! એ બન્ને પ્રકારના પંડિત મરણથી મરતો જીવ અનંત નારક, મનુષ્ય તિર્યંચ અને દેવ ભવગ્રહણથી પોતાની જાતને યુક્ત કરતો નથી અને અનાદિ અનંત દીર્ઘમાર્ગવાળા ચાર ગતિરૂપ સંસારકાંતારને તે ઓળંગી જાય છે (से त्तं पंडियमरणेण मरमाणे जीवे हायइ से त्तं पंडियमरणे) આ રીતે પંડિતમરણથી મરતો જીવ પોતાનો સંસાર ઘટાડે છે પંડિત મરણનું આ જાતનું સ્વરૂપ છે. (इच्चेएणं खंदया दुविहेणं मरणेणं मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा) હે સ્કન્દક ! આ રીતે બે પ્રકારના મરણોથી મરણ પામતો જીવ પોતાનો સંસાર વધી જવાથી વધે છે અને પોતાનો સંસાર ઘટી જવાથી ઘટે છે એટલે કે પંડિત મરણથી મરનાર જીવનો સંસાર ઘટે છે પણ બાલ મરણથી મરનાર જીવનો સંસાર વધે છે

पंडितमरणम्? पंडितमरणं द्विविधं प्रज्ञप्तम् तद्यथा–पादपोपगमनं च भक्तप्रत्याख्यानं च। अथ किं तत्पादपोपगमनम्? पादपोपगमनं द्विविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा–निर्हारिमं च अनिर्हारिमं च नियमात् अप्रतिकर्मः तदेतत्पादपोपगमनम्। अथ किं तत् भक्तप्रत्याख्यानम्? भक्तप्रत्याख्यानं द्विविधं प्रज्ञप्तं, तद्यथा–निर्हारिमं च अनिर्हारिमं च नियमात् स प्रतिकर्म, तदेतद् भक्तप्रत्याख्यानम्। इत्येतेन स्कन्दक!

रहता है। (सेत्तं बालमरणेण मरमाणे जीवे वड्ढइ) इस तरह बालमरण से मरा हुआ जीव अपने संसार के बढ जाने के कारण बढता है (सेत्तं बालमरणे) यह बालमरण है–अर्थात्–यह बालमरण का स्वरूप है। (से किं तं पंडियमरणे) वह पण्डित मरण क्या है? (पंडियमरणे दुविहे पण्णत्ते) पण्डित मरण दो प्रकार का कहा है (तंजहा–पाओवगमणे य भत्तपच्चक्खाणे य) वह इस तरह से पादपोपगमन और भक्त प्रत्याख्यान (से किं तं पाओवगमणे) पादपोपगमन किसे कहते हैं? (पाओवगमणे दुविहे पण्णत्ते) पादपोपगमन दो प्रकारका होता है–(तंजहा) जैसे (नीहारिमे य अनिहारिमे य) निर्हारिम और अनिर्हारिम) नियमा अप्पडिकम्मे) नियम से ये दानों पादपोपगमन के प्रकार प्रतिकर्म (सेवाशुश्रूषा) से रहित होते हैं। (से किं त्तं भत्तपच्चक्खाणे?) भक्त प्रत्याख्यान का क्या स्वरूप है (भत्तपच्चक्खाणे दुविहे पण्णत्ते) भक्त प्रत्याख्यान दो प्रकार का कहा गया है (तंजहा) जैसे–(नीहारिमे य अनीहारिमे य) नीहारिम और अनिर्हारिम (नियमा सप्पडिकम्मे) भक्त प्रत्याख्यान के ये दोनों प्रकार प्रतिकर्म सहित होते हैं। (से त्तं

परिभ्रमणु કરે છે. (से त्तं बालमरणेण मरमाणे जीवे वड्ढइ) આ રીતે બાલ મરણથી મરતો જીવ પોતાનો સંસાર વધવાથી વધે છે. એટલે કે બાલમરણથી મરતા જીવને સંસારમા વાર વાર પરિભ્રમણ કરવું પડે છે. (सेत्तं बालमरणे) બાલમરણનું ઉપર કહ્યા પ્રમાણેનું સ્વરૂપ છે.

(से किं त पंडियमरणे) પંડિત મરણનું કેવું સ્વરૂપ છે! ઉત્તર–(पंडियमरणे-दुविहे पण्णत्ते) પંડિત મરણના બે પ્રકાર કહ્યા છે. (त जहा) તે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે (पाओवगमणे य भत्तपच्चक्खाणे य) (૧) પાદપોપગમન અને (૨) ભક્ત પ્રત્યાખ્યાન (से किं त पाओवगमणे) પાદપોપગમન એટલે શું? (पाओवगमणे दुविहे पण्णते) પાદપોપગમન મરણના બે પ્રકાર છે (त जहा) તે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે (नीहारिमे य अनिहारिमे य) (૧) નિર્હારિમ અને (૨) અનિર્હારિમ. (नियमा अप्पडिक्कम्मे) નિયમથી જ પાદપોપગમનના આ

वि य ते खदया' यो पि च ते स्कन्दक! 'अयमेयारूव' अयम् एतद्रूप 'अज्झ त्थिए-चिंतिए पत्थिए कप्पिए मणोगए संकप्पे समुप्पज्जित्था' आध्यात्मिक, चिन्तित कल्पित प्रार्थितो मनोगत संकल्पः समुदपद्यत- कि स अंते लोए अणंते लोए' किं सान्त लोकः अनंतः लोकः, हे स्कन्दक! पिङ्गलकन पृष्टस्य तव मनसि एवंविधो विचार समुत्पन्न यदय लोक सांत अनंतो वेति 'तस्स वि य ण अय अट्ठे' तस्यापि च खलु अयमर्थः 'एव खलु मए खदया चउव्विहे लोए पन्नत्ते' एव खलु मया स्कन्दक! चतुर्विधो लोकः प्रज्ञप्तः, 'त जहा' तद्यथा -'दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ' द्रव्यतः क्षेत्रतः कालतो भावतश्च, तत्र

यथार्थ समाधान निमित्त मैं आपके पास आया हू। स्कन्दक की इस बात को सुनकर प्रभुने कहा कि "खंदया!" हे स्कन्दक सुनो "ते" तुम्हे "जे वि" जो भी पिंगलक निर्ग्रन्थ के पूछने पर अयमेयारूवे यह इस प्रकार का "अज्झत्थिए" आध्यात्मिक, 'चिंतिए' चिन्तित, 'पत्थिए' प्रार्थित, 'कप्पिए' कल्पित 'मणोगए' मनोगत 'सकप्प' संकल्प 'समुप्पज्जित्था उत्पन्न हुआ है कि "किं स अ ते लोए अणते लोए' लोक क्या अन्त सहित है कि अन्तरहित है? सो "तस्स वि य णं अयं अट्ठे पण्णत्ते" इसका विचार सैद्धान्तिक दृष्टि से इस प्रकार किया गया है, सुनो-"खंदया" हे स्कन्दक! 'मए चउव्विहे लोए पण्णत्ते" मैंने लोक की चार प्रकार से प्ररूपणा की है-'तजहा" जो इस प्रकार से है-"दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ" द्रव्य से, क्षेत्र

પ્રશ્નો! અપની વાત સાચી છે અને તેનો યથાર્થ ઉત્તર જાણવાને માટે હું આપની પાસે આવ્યો છુ સ્કન્દકની તે વાત સાભળીને મહાવીર પ્રભુએ તેને કહ્યું- "खंदया!" હે સ્કન્દક! 'ते' તમને "जे वि" પિંગલક નિર્ગ્રન્થે જે પ્રશ્નો પૂછ્યા છે તેને લીધે 'अयमेयारूवे" આ પ્રકારનો "अज्झत्थिए" આધ્યાત્મિક, 'चिंतिए ચિન્તિત, "पत्थिए પ્રાર્થિત "कप्पिए" કલ્પિત 'मणोगए" મનોગત "सकप्पे" સંકલ્પ समुप्पज्जित्था" ઉત્પન્ન થયો છે કે 'किं स अ ते लोए अणंते लोए?" લોક અંતસહિત છે કે અન્તરહિત છે? તો "तस्स वि य ण अयमट्ठे पण्णत्ते' તેનો આ રીતે અર્થ કરવામા આવ્યો છે-"खंदया!" હે સ્કન્દક! 'मए चउव्विहे लोए पण्णत्ते" મે લોકની ચાર પ્રકારે પ્રરૂપણા કરી છે (त जहा) તે આ પ્રમાણે છે 'दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ" (૧) દ્રવ્યની (૨) ક્ષેત્રની, (૩) કાળની અને (૪) ભાવની અપેક્ષાએ મે આ રીતે ચાર પ્રકારે લોકની પ્રરૂપણા કરી છે "दव्वओ णं एगे

टीका-'से णूणं तुमं खंदया' तद् नूनं त्वं स्कन्दक ! 'सावत्थीय-नयरीए' श्रावस्त्यां नगर्याम् 'पिंगलए णं नियंठेणं' पिंगलकेन निर्ग्रन्थेन 'वेसालिय सावयेणं' वैशालिक श्रावकेण 'इणं अक्खेवं पुच्छिए' इममाक्षेपं पृष्टः- तदेवाह-'मागहा' हे मागध ! हे स्कन्दक ! किं स अंते लोए अणंते लोए' किं सान्त. लोकः अनंतः लोकः ? 'एवं तं चेव जाव जेणेव ममं अतिए तेणेव हव्वं- आगए' एवं तदेव यावत् यत्रैव ममान्तिकं तत्रैव शीघ्रमागतः इह यावत्पदेन- पूर्वोक्तं सर्वं वर्णन संग्राह्यम् । 'से णूणं खंदया' तद् नूनं स्कन्दक ! 'अयमट्ठे समट्ठे' अयमर्थ. समर्थः ? । इदं सर्वं सत्यं किम् ? स्कन्दकप्राह-'हंता अत्थि' हन्त अस्ति हे भदन्त ! देवानुप्रियेण कथित तत्सर्वं सत्यमेव । भगवानाह-' जे

टीकार्थ—'से णूणं तुमं खंदया' हे स्कन्दक! तुम 'सावत्थीए नय- रीए" श्रावस्ती नगरी में 'वेसालियसावएणं' वैशालिक श्रावक है अर्थात् जिन प्रवचन के सुनने में रसिक ऐसे "पिंगलएणं नियठेणं" पिंगलक निर्ग्रन्थ द्वारा 'इण अक्खेवं पुच्छीए' इस आक्षेप-प्रश्नको पूछे गये हो कि-"मागहा" हे मगध देशोत्पन्न स्कन्दक ! 'किं सअंते लोए अणंते लोए' लोक सान्त-अन्तसहित है कि अनन्त-अन्तरहित है ? 'एवं तं चेव जाव जेणेव ममं अंतिए हव्वमागए' इसी प्रकार जीव सिद्धि सिद्ध और मरण के विषय में पूछे जाने पर तुम शङ्कित काङ्क्षित आदि हो गये, 'से णूणं खंदया ! अयमट्ठे समट्ठे' हे स्कन्दक ! कहो यह बात सत्य है न ? 'हंता अत्थि' हां प्रभो सत्य है। और उन्हीं के

ટીકાર્થ—"से णूणं तुमं खंदया" હે સ્કન્દક ! તમને "सावत्थीए नयरीए" શ્રાવસ્તી નગરીમા "वेसालिय सावयेणं" મારા અનુયાયી (ભગવાન- ની માતાનું નામ વિશાલા હતુ) વિશાલાનો પુત્ર વૈશાલિક કહેવાય. અહી મહાવીર સ્વામી માટે વૈશાલિ શબ્દ વાપર્યો છે અને પિંગલક તેમનો અનુ- યાયી હોવાથી તેને માટે વૈશાલિક શ્રાવક વિશેષણ વાપર્યું છે) "पिंगलएण नियठेण" પિંગલક નિર્ગ્રંથે "इणं अक्खेवं पुच्छिए" આ પ્રમાણે પ્રશ્નો પૂછયા છે કે "मागहा" હે માગધ ! (મગધ દેશોત્પન્ન સ્કન્દક !) "किं स अंते लोए अणते लोए" લોક સાન્ત (અંતસહિત) છે કે અનન્ત-અન્ત રહિત છે ? "एव त चेव जाव जेणेव ममं अंतिए हव्वमागए" એજ પ્રમાણે જીવ, સિદ્ધિ, સિદ્ધ, અને મરણના વિષયમા તમને પ્રશ્નો પૂછવામા આવ્યા ત્યારે તમારા મનમા શંકા, કાંક્ષા વગેરે ઉત્પન્ન થયા "से णूण खंदया ! अयमट्ठे समट्ठे" હે સ્કન્દક ! કહો, મારી વાત સાચી છે ? "हंता अत्थि" હા

न्सर्वास्य यस्य क्षेत्रलोकः स चासख्येयकोटाकोटी योजनपर्यन्तो दैर्घ्यविस्ताराभ्यामित्यर्थः । असखेज्जाओ जोयणकोडाकोडीओ परिक्खेवेणं पण्णत्ता ' असख्येया योजनकोटी कोटयः परिक्षेपेण प्रज्ञप्ता , तथा तस्य क्षेत्रलोकस्य परिधिरसंख्ययोजनकोटीकोटि परिमितः कथितः ' अत्थि पुण से अंते ' अस्ति पुनस्तस्यान्तः द्रव्यतोऽस्य यथोक्तलक्षणकस्यान्तो विद्यते। स चान्तवानित्यर्थः । ' कालओ ण न कयाइ न आसी न कयाइ न भवइ न कयाइ न भविस्सइ ' कालतः खलु लोको न कदाचित् नासीत् न कदाचित् न भवति न कदाचित् न भविष्यति, अपि

है । तथा इसकी जो परिधि कही गई है वह असख्यात कोडा कोडी योजनों की कही गई है। इस तरह चार प्रकार के लोकों में से जो द्रव्य से लोक एक है और सान्त है। क्षेत्र से लोक असंख्यात कोटा कोटी योजन तक लबाई चौड़ाई वाला है, तथा इसकी परिधि-घिराव भी असंख्यात कोटाकोटी योजन की है इसलिये ' अत्थि पुण से अंते इस प्राकार लोक द्रव्य से और क्षेत्र से सान्त-अन्त सहित है। क्षेत्र की अपेक्षा लोकका वह स्थान लिया गया है जो असख्यात कोडाकोडी योजन तक लबा चौड़ा है। क्यों कि इसी में जीवादिक द्रव्य रहते हैं परिधि भी इस की इतनी ही है। अतः इतना सब कुछ होने पर भी वह समर्यादित बनजाने के कारण सान्त-अन्तसहित कहा गया है। "कालओ णं लोए न कयाइ न आसी न कयाइ न भवइ न कयाइ न भविस्सइ " काल से लोक-भूतकाल में कभी किसि समय नहीं था ऐसा नहीं, वर्तमान में यह कभी किसी समय नहीं है ऐसा भी नहीं है और भविष्यत्काल में वह कभी किसी समय नहीं होगा ऐसा भी नहीं

અસખ્યાત કોડા, કોડી યોજનની કહી છે આ રીતે વિચાર કરતાં તે વાત સિદ્ધ થાય છે કે દ્રવ્યની તથા ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ લોક સાન્ત (અત સહિત) છે ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ લોકને અસખ્યાત કો , કે ડી યોજન લાબો તથા પહોળો કહ્યો છે અને તેમા જ જીવાદિક દ્રવ્ય રહે છે તેનો પરિધિ (ઘેરાવો) પણ એટલો જ છે આ બધુ હોવા છતાં પણ તે મર્યાદા સહિત હોવાથી તેને સાન્ત (અત યુક્ત) કહ્યો છે "कालओ णं लोए न कयाइ न आसी न कयाइ न भवइ न कयाइ न भविस्सइ " કાળની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામા આવે તો ભૂતકાળમા કોઈ એવો સમય ન હતો કે જ્યારે તેનુ અસ્તિત્વ ન હોય વર્ત માન કાળે પણ કોઈ એવો સમય હોતો નથી કે જ્યારે લોકનુ અસ્તિત્વ ન હોય ભવિષ્યમા પણ કોઈ એવો સમય નહીં હોય કે જ્યારે લોકનુ અસ્તિત્વ

द्रव्यतो लोकं दर्शयति-' दव्वओ णं एगे लोए स अंते ' द्रव्यतः खलु एको लोकः सान्तः लोकस्य पंचास्तिकायरूपैकद्रव्यत्वात् असौ लोकः सान्तः लोकान्ते विरामात् ' खेत्तओ णं लोए असंखेज्जाओ-जोयणकोडाकोडीओ आयामविक्खभेणं ' क्षेत्रतः खलु लोकः असंख्यातायोजनकोटाकोटच आयामविष्कंभेण, तत्रायामो दैर्ध्यम् विष्कंभो विस्तारः, चतुर्विधलोकेषु यो द्रव्यलोकः स एकोऽ-

से, काल से और भाव से, उनमें " द्रव्वओ णं एगे लोगे स अंते " द्रव्य से लोक एक है और वह अन्त सहित है। इसका तत्पर्य यह है कि जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल के भेद से द्रव्य छह प्रकार का कहा गया है। इनमें कालद्रव्य को छोड़कर बाकी के पांच द्रव्य बहु प्रदेशी होने के कारण अस्तिकाय कहे गये हैं। जितने आकाश में इन द्रव्योंका सद्भाव है वह लोक है। इसके बाद अलोक है। लोक पंचास्तिकायरूप एकद्रव्य है। अतःपंचास्तिकायरूप एक द्रव्यत्व की विवक्षा से लोक एक है ऐसा कहा गया है। तथा यह सान्त है-अन्त सहित है, इसका तात्पर्य यह है कि पंचास्तिकायरूप एक द्रव्यता लोकान्त तक है आगे नहीं है। क्यों कि आगे आकाशद्रव्यके सिवाय और कोईद्रव्य नहीं है इस अपेक्षा लोकान्तमें इस पंचास्तिकायरूप लोकका विराम होनेके कारण वह लोक सान्त-अन्त सहितहै १। क्षेत्र की अपेक्षा लोक को आयाम -विष्कम्भ-लंबाईचौडाई असंख्यात कोडा कोडी योजनों की कही गई

लोए स अंते " द्रव्यनी दृष्टिએ વિચાર કરવામાં આવે તો લોક એક છે અને તે અંતસહિત છે. કહેવાનું પ્રયોજન એવું છે કે જીવ, પુદ્ગલ, ધર્મ, અધર્મ, આકાશ, અને કાળ, એ છ ભેદની અપેક્ષાએ દ્રવ્યના છ પ્રકાર કહ્યા છે તેમાંથી કાળદ્રવ્ય સિવાયના પાંચદ્રવ્યો બહુ પ્રદેશી હોવાને કારણે તેમને અસ્તિકાય કહેવામા આવેલ છે જેટલા આકાશમાં તેદ્રવ્યોનો સદ્ભાવ (અસ્તિત્વ) છે તેટલા ભાગને લોક કહે છે જ્યા માત્ર આકાશદ્રવ્યજ છે તેને અલોક કહેવામા આવેલો છે. લોક પંચાસ્તિકાયરૂપ એક દ્રવ્ય છે તેથી પંચાસ્તિકાયરૂપ એક દ્રવ્યત્વની દૃષ્ટિએ લોક એક છે, એમ કહ્યુ છે. તથા તે સાન્ત (અન્તસહિત) છે તેનુ તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે-પંચાસ્તિકાયરૂપ એક દ્રવ્યપણુ લોકાન્ત સુધીજ છે-તેનાથી આગળ નથી, કારણ કે આગળ આકાશ દ્રવ્ય સિવાય બીજું કોઇપણ દ્રવ્ય નથી આ રીતે લોક ને અન્તે આ પંચાસ્તિકાય રૂપ લોકનો વિરામ હોવાથી તે લોક સાન્ત (અન્ત સહિત) છે ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ લોકની લંબાઇ તથા પહોળાઇ અસંખ્યાત કોડા, કોડી, યોજનની કહી છે. તથા તેની પરિધિ (ઘેરાવો) પણ

बहुतरप्रदेशापेक्षयापि स्यादत आह-' अव्वए ' अव्ययः तत्प्रदेशानाम् व्ययरहितत्वात् । तत्प्रदेशानामव्ययत्वं च द्रव्यरूपेणापि सम्भवतीत्यत आह—' अवट्ठिए ' अवस्थितः पर्यायाणामनन्ततया अवस्थितत्वात् । एतावता किमुक्तं भवति ? तत्राह -' णिच्चे ' नित्य आद्यन्तरहित सर्वदैकरूपेण स्थितिमान् कालतो लोक इति ' नत्थि पुण से अंते ' नास्ति पुनस्तस्यान्त यतः कालतोय लोकः पूर्वमप्यासीत् इदानीं वर्तते भविष्यति चानागतकालेपि तथा ध्रुवो नियतः शाश्वतोऽक्षयोऽव्ययोऽ-

ऐसा नहीं है किन्तु "अक्खए ' अक्षय है-अविनाशी है-किसी भी कालमें इसका क्षय नहीं है । बहुतर प्रदेशों की अपेक्षा से भी पदार्थ अक्षय माना जा सकता है-सो ऐसा यह लोक नहीं है, किन्तु अव्यय है इसके समस्त प्रदेश व्यय से रहित है । इस में घटती बढती नहीं होती है । उसके प्रदेशों में अव्ययता द्रव्यरूप से भी संभवती है सो इस रूप से ही अव्ययता लोक में नहीं है किन्तु लोक की जो अनन्तपर्यायें हैं वे सदाकाल उसमें अनन्तरूप से अवस्थित रहती हैं अतः इस रूप से-पर्यायकी अवस्थिति की अपेक्षा से लोक " अवट्ठिए " अवस्थित है । इससे यह सारांश निकला कि काल से लोक " णिच्चे " नित्य है सर्वदा एकसी स्थिति वाला है " नत्थि पुण से अंते " अतः इस अपेक्षा यह लोक अन्त सहित है-अनन्त है । क्यों कि काल की अपेक्षा यह लोक पहिले भूतकाल में भी था, इस समय भी है और आगे भविष्यकाल में भी रहेगा, तथा यह लोक ध्रुव है, नित्य है, शाश्वत है, अक्षय

માની શકાય છે પણ લોકની બાબતમાં એવું નથી તે તો " અક્ખએ " અક્ષય (અવિનાશી) છે કોઈ પણ કાળે તેનો ક્ષય થતો નથી. બહુતર (ઘણા) પ્રદેશોની અપેક્ષાએ પણ પદાર્થને અક્ષય માની શકાય છે, પણ આ લોક એવો નથી પણ આ લોક તો અવ્યય છે એટલે કે તેના તમામ પ્રદેશો વ્યય રહિત હોય છે તેમા વધારો કે ઘટાડો થતો નથી તેના પ્રદેશોમાં પણ દ્રવ્યરૂપે અવ્યય પણુ સંભવી શકે છે પણ લોકમા તે પ્રકારનું અવ્યય પણુ નથી પણ લોકની જે અનંત પર્યાયો છે તે સદાકાળ તેમા અનંત રૂપે અવસ્થિત મોજુદ રહે છે તેથી પર્યાયની અવસ્થિતિની અપેક્ષાએ લોક " અવટ્ઠિએ ' અવસ્થિત છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે કાળની અપેક્ષાએ લોક ' ણિચ્ચે " નિત્ય છે, હમેશાં એક સરખી સ્થિતિ વાળો છે " નત્થિ પુણ સે અંતે " કાળની અપેક્ષાએ લોક સાન્ત (અંત સહિત) નથી પણ અનંત (અંત રહિત) છે કારણ કે કાળની અપેક્ષાએ આ લોક ભૂત કાળમાં હતો, વર્તમાન કાળે પણ છે અને ભવિષ્ય કાળે પણ રહેશે, તથા આ લોક ધ્રુવ છે શાશ્વત છે, નિત્ય છે, અક્ષય છે,

तु आसीदेव भवत्येव भविष्यति च नञ् द्वयस्य अस्तित्वरूपप्रकृतार्थबोधकत्व नियमात् तथा च सर्वथैवासीत् भवति भविष्यति चेत्यर्थ, एतदर्थमेव विधिमुखेन स्पष्टयति-' भविंसु य भविस्सइ य' अभूत् चायंलोकः पूर्वमपि, भवति चेदानीम्, भविष्यति चानागतकालेपि, यतः पूर्वमपि लोक आसीदिनानोमपि वर्ततेऽनागत कालेऽपि स्थास्यति अत एव 'धुवे ध्रुवः अचलत्वात्, स चानियतरूपोपि कदाचित् स्यात् अत आह—' णियए ' नियत एकस्वरूपत्वात् नियतरूपः कादाचित्कोपि पदार्थः स्यादत आह-' सासए ' शाश्वतः प्रतिक्षणं सद्भावात् स च नियतकाला-पेक्षयापि स्यादत आह-' अक्खए ' अक्षय क्षयरहितः अविनाशित्वात् अक्षयश्च

है किन्तु भूतकाल में लोक था वर्तमानमें वह है, और भविष्यत् में वह रहेगा। तीनों कालो में लोक का अस्तित्व है। यह लोक था है और रहेगा। इसी बात को सूत्रकार विधिमुख से प्रतिपादन करते हुए कहते हैं कि-' भविंसु भवइ, भविस्सइ ' यह लोक कालकी अपेक्षा पहिले था इस समय है और भविष्यत् काल में रहेगा। इसलिये यह लोक-'धुवे' अचलहोने के कारण ध्रुवहै। ध्रुव होकर भी वह कदाचित् अनियतरूप-वाला भी हो सकता है तो इस आशंका की निवृत्ति के लिए सूत्रकार कहते है कि वह ऐसा नहीं है किन्तु-" नियए " वह लोक एकस्वरूप-वाला होने के कारण नियत है। नियतरूपवाला भी कोई एक पदार्थ कादाचित्कभी हो सकता है सो ऐसा वह लोक नहीं है कि नियत स्वरूपवाला होकर भी कादाचित्कता उसमें हो-वह तो " सासए " शाश्वत है-प्रतिक्षण में उसका सद्भाव रहता है। प्रतिक्षण में पदार्थ का सद्भाव नियतकालकी अपेक्षासे भी माना जा सकता है अतः वह लोक

न હોય પણ ભૂતકાળમાં લોકનુ અસ્તિત્વ હતુ, વર્તમાન કાળે છે અને ભવિષ્યમા પણ રહેશે જ ત્રણે કાળોમાં લોકનુ અસ્તિત્વ હોય છે. એટલે કે લોક હતો, લોક છે અને લોક હશે એજ વાતનુ સૂત્રકાર હવે હકાર વાચક વાક્યો વડે પ્રતિપાદન કરે છે " भविंसु, भवइ, भविस्सइ " કાળની અપેક્ષાએ લોકના અસ્તિત્વનો વિચાર કરવામાં આવે તો તે પહેલાં હતો, હાલમાં છે, અને ભવિ-ષ્યમાં પણ રહેશે તેથી આ લોક " धुवे " અચલ હોવાને કારણે ધ્રુવ છે ધ્રુવ હોવા છતા પણ તે કદાચ અનિયત સ્વરૂપ વાળો સંભવી શકે છે તે આશંકાનુ નિવારણ કરવા માટે સૂત્રકારે તેને " नियए " નિયત કહેલ છે લોક એક સ્વરૂપ વાળો હોવાથી નિયત છે " सासए " તે શાશ્વત છે સદા તેનું અસ્તિત્વ રહે છે કોઇ પણ ક્ષણ એવી નથી હોતી કે જ્યારે તેનું અસ્તિત્વ ન હોય પ્રતિક્ષણે પદાર્થનો સદ્ભાવ (અસ્તિત્વ) નિયત કાળની અપેક્ષાએ પણ

बहुतरप्रदेशापेक्षयापि स्यादत आह–' अव्वए ' अव्ययः तत्प्रदेशानाम् व्ययरहितत्वात् । तत्प्रदेशानामव्ययत्वं च द्रव्यरूपेणापि समवतीत्यत आह—' अवट्ठिए ' अवस्थितः पर्यायाणामनन्ततया अवस्थिततत्वात् । एतावता किमुक्त भवति ? तमाह –' णिच्चे ' नित्यः आद्यन्तरहित सर्वदैकरूपेण स्थितिमान् कालतो लोक इति ' नत्थि पुण से अंते ' नास्ति पुनस्तस्यान्तः यतः कालतोय लोकः पूर्वमप्यासीत् इदानीं वर्तते भविष्यति चानागतकालेपि तथा ध्रुवो नियतः शाश्वतोऽक्षयोऽव्ययोऽव-

ऐसा नहीं है किन्तु "अक्खए ' अक्षय है–अविनाशी है–किसी भी कालमें इसका क्षय नहीं है । बहुतर प्रदेशों की अपेक्षा से भी पदार्थ अक्षय माना जा सकता है–सो ऐसा यह लोक नहीं है, किन्तु अव्यय है इसके समस्त प्रदेश व्यय से रहित है । इस में घटती बढती नहीं होती है । उसके प्रदेशों में अव्ययता द्रव्यरूप से भी संभवती है सो इस रूप से ही अव्ययता लोक में नहीं है किन्तु लोक की जो अनन्तपर्यायें हैं वे सदाकाल उसमें अनन्तरूप से अवस्थित रहती हैं अतः इस रूप से–पर्यायकी अवस्थिति की अपेक्षा से लोक ," अवट्ठिए " अवस्थित है । इससे यह सारांश निकला कि काल से लोक " णिच्चे " नित्य है सर्वदा एकसी स्थिति वाला है " नत्थि पुण से अंते " अतः इस अपेक्षा यह लोक अन्त सहित है–अनन्त है । क्यों कि काल की अपेक्षा यह लोक पहिले भूतकाल में भी था, इस समय भी है और आगे भविष्यकाल में भी रहेगा, तथा यह लोक ध्रुव है, नित्य है, शाश्वत है, अक्षय

માની શકાય છે પણ લોકની બાબતમાં એવું નથી. તે તો " અક્ખય " અક્ષય (અવિનાશી) છે કોઈ પણ કાળે તેનો ક્ષય થતો નથી બહુતર (ઘણા) પ્રદેશોની અપેક્ષાએ પણ પદાર્થને અક્ષય માની શકાય છે, પણ આ લોક એવો નથી પણ આ લોક તો અવ્યય છે એટલે કે તેના તમામ પ્રદેશો વ્યય રહિત હોય છે તેમાં વધારો કે ઘટાડો થતો નથી તેના પ્રદેશોમાં પણ દ્રવ્યરૂપે અવ્યય પણું સંભવી શકે છે પણ લોકમાં તે પ્રકારનું અવ્યય પણું નથી પણ લોકની જે અનંત પર્યાયો છે તે સદા કાળ તેમાં અનંત રૂપે અવસ્થિત મોજુદ રહે છે તેથી પર્યાયની અવસ્થિતિની અપેક્ષાએ લોક " અવટ્ઠિએ " અવસ્થિત છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે કાળની અપેક્ષાએ લોક " ણિચ્ચે ' નિત્ય છે, હંમેશાં એક સરખી સ્થિતિ વાળો છે " નત્થિ પુણ સે અંતે " કાળની અપેક્ષાએ લોક સાન્ત (અંત સહિત) નથી પણ અનંત (અંત રહિત) છે કારણ કે કાળની અપેક્ષાએ આ લોક ભૂત કાળમાં હતો વર્તમાન કાળે પણ છે અને ભવિષ્ય કાળે પણ રહેશે, તથા આ લોક ધ્રુવ છે, શાશ્વત છે, નિત્ય છે, અક્ષય છે,

स्थितो नित्यश्च तस्मादेव कारणादस्य लोकस्य कालतोऽतो विनाशो नैव भवतीत्यर्थः। 'भावओ णं लोए अणंता वण्णपज्जवा' भावतः खलु लोकः अनंता वर्णपर्यवाः वर्णविशेषाः एकगुणकालत्वादयः, भावतो लोकः अनंतवर्णपर्यवरूप इति, तथा 'अणंता गंधपज्जवा' अनन्ता गन्धपर्यवाः, 'अनता रसपज्जवा' अनन्ता रसपर्यवाः 'अनंताफासपज्जवा' अनन्ता स्पर्शपर्यवाः, अनन्तगन्धरसस्पर्शपर्यायरूपो भावतो लोक इति तथा 'अणंता संठाणपज्जवा' अनंताः संस्थानपर्यवाः, अनन्तसंस्थानरूपो लोको भावत इति, तथा 'अणंता गुरुयलहुयपज्जवा' अनता गुरुलघुकपर्यवाः अनंतगुरुलघुपर्यवरूपो लोकः वादरस्कधेषु तत्सद्भावात् 'अणंता अगुरुयलहुय पज्जवा' अनंता अगुरुकलघुकपर्यवाः-अनन्तागुरुलघुपर्यायरूपो

है, अव्यय है, अवस्थित है और नित्य है इसी कारण इस लोक का काल की अपेक्षा कभी भी विनाश नहीं होता है। "भावओ णं लोए अणंता वण्णपज्जवा" भाव से लोक-अनंत वर्णपर्यायरूप है- एक गुणकालत्वआदि वर्ण विशेष है अर्थात् वर्णपर्याय हैं ऐसी एक गुण कालत्व आदि पर्याय से लेकर अनंत वर्ण पर्यायरूप यह लोक भाव की अपेक्षा से है। तथा "अणंतागंधपज्जवा, अणंता रसपज्जवा अणंता फासपज्जवा" इसी तरह से भाव की अपेक्षा यह लोक अनंत गंधप; र्यायरूप अनंत रस पर्यायरूप और अनन्त स्पर्शपर्यायरूपहै। "अणंता संठाणपज्जवा" भाव की अपेक्षा यह लोक संस्थान की अनंत पर्यायों रूप है "अणंता गुरुयलहुयपज्जवा" गुरु लघु गुणों की अनंत पर्याय रूप है। गुरु लघु गुण बादरस्कंधों में रहता है। "अणंता अगुरुयलहुय पज्जवा" तथा भावकी अपेक्षा से यह लोक अगुरु लघुगुण की अनंत

અવ્યય છે અવસ્થિત છે આ દૃષ્ટિએ વિચારવામાં આવે તો કાળની અપેક્ષાએ આ લોકનો કદી પણ નાશ થતો નથી એવુ સિદ્ધ થાય છે.

"भावाओ णं लोए अणंता वण्णपज्जवा" ભાવની અપેક્ષાએ લોક અનંત વર્ણપર્યાય રૂપ છે એક ગુણ કાળત્વ વગેરે વર્ણ વિશેષ છે એટલે કે વર્ણપર્યાય છે ભાવની અપેક્ષાએ એક ગુણ કાળત્વ વગેરે પર્યાયોથી લઈને અનંત વર્ણપર્યાય રૂપ આ લોક છે તથા "अणंता गंधपज्जवा अणंता रसपज्जवा अणंता फासपज्जवा" એજ પ્રમાણે ભાવની અપેક્ષાએ આ લોક અનંત રસપર્યાય રૂપ અનત ગંધપર્યાયરૂપ અને અનત સ્પર્શ પર્યાય રૂપ છે "अणंता संठाणपज्जवा, अणता गुरुयलहुय पज्जवा, अणंता अगुरुयलहुय पज्जवा" ભાવની અપેક્ષાએ આ લોક સંસ્થાનની અનેક પર્યાયો રૂપ છે, ગુરુ લઘુ ગુણોની

पर्यायरूप है। यह अगुरुलघु गुण परमाणुओंमें, सूक्ष्मस्कंधों में और अमूर्त्त द्रव्यों में पाया जाता है। तात्पर्य इस का यह है कि भाव में द्रव्य गत रूप, रस, गंध, स्पर्श, संस्थान आदि लिये जाते हैं। अतः जहां कहीं पर भी भावको लेकर विचार किया जाता है वहां इन्हीं रूप रसादिकों को लेकर ही विचार किया गया है, ऐसा जानना चाहिये। रूप गुण एक ही पर्यायवाला नहीं होता है-किन्तु जिस प्रकार द्रव्य में अनंत पर्यायें होती हैं उसी प्रकार गुणों में भी अनंतपर्यायें हुआ करती हैं। गुणों में जो हीनाधिकता होती है वहीगुणपर्याय हैं। व्यंजनपर्याय द्रव्य में होती है और अर्थपर्याय गुण में होती है। इसी अर्थपर्याय को लेकर षट्स्थानपतित हानि वृद्धि होती रहती है। आगमग्रन्थों में इस विषय को बहुत ही अच्छी तरहसे स्पष्टरूप में समझाया गया है। गुण पर्याय का नाम दूसरे शब्दों में गुणांश कहा गया है। अत भावसे लोक रूप, रस, गंध, स्पर्श की अनंत पर्यायरूप होता है। इसी तरह से वहसंस्थान जो द्रव्यगत होता है वह भी एक २ प्रकार में अनन्त पर्याय वाला होता है अतःभाव से लोक संस्थान की अपेक्षा अनन्त है। अगुरु लघु गुण अमूर्तद्रव्यों में परमाणुओं में एवं सूक्ष्मस्कंधों में पाया

અનંત પર્યાયો રૂપ છે અને અગુરુ લઘુ ગુણની અનંત પર્યાયો રૂપ પણ છે ગુરુ લઘુ ગુણ બાદર (સ્થૂળ) સ્કંધોમાં રહે છે અને અગુરુ લઘુ ગુણ પરમાણુઓમાં, સૂક્ષ્મ સ્કંધોમાં, અને અમૂર્ત દ્રવ્યોમાં રહેલો હોય છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે ભાવમાં દ્રવ્યમાં રહેલાં રૂપ, રસ ગંધ સ્પર્શ, સંસ્થાન વગેરેનો સમાવેશ થાય છે તેથી જ્યારે ભાવની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે ત્યારે તે રૂપ રસ વગેરેની દૃષ્ટિએજ વિચાર કરવામાં આવે છે એમ સમજવું રૂપ રસ વગેરે ગુણો એકજ પર્યાયવાળા હોતા નથી, પણ જેમ દ્રવ્યમાં અનંત પર્યાય હોય છે તેમ ગુણોના પણ અનંત પર્યાયો હોય છે ગુણોમાં જે વૃદ્ધિ અથવા તો હાનિ થાય છે તેનેજ ગુણપર્યાય કહે છે વ્યંજન પર્યાય દ્રવ્યમાં હોય છે અને અર્થ પર્યાય ગુણમાં હોય છે એજ અર્થ પર્યાયની અપેક્ષાએ ષટ્ (છ) સ્થાન પતિત હાનિ વૃદ્ધિ થતી રહે છે આગમ ગ્રંથોમાં આ વિષયને ઘણી સારી રીતે સ્પષ્ટતા પૂર્વક સમજાવામાં આવ્યો છે ગુણ પર્યાયનું બીજું નામ ગુણાંશ કહેલ છે આ રીતે ભાવની અપેક્ષાએ લોક રૂપ રસ ગંધ સ્પર્શ વગેરે અનંત પર્યાય રૂપ હોય છે એજ પ્રમાણે દ્રવ્યગત સંસ્થાન પણ પ્રત્યેક દ્રવ્યમાં અનંત પર્યાયવાળું હોય છે તેથી ભાવની અપેક્ષાએ જોઇએ તો સંસ્થાનની દૃષ્ટિએ પણ લોક અનંત છે અગુરુલઘુ ગુણ અમૂર્ત (અરૂપી) દ્રવ્યોમાં, પરમાણુઓમાં અને સૂક્ષ્મ

स्थितो नित्यश्च तस्मादेव कारणादस्य लोकस्य कालतोऽतो विनाशो नैव भवतीत्यर्थः। 'भावओ णं लोए अणंता वण्णपज्जवा' भावतः खलु लोकः अनंता वर्णपर्यवाः वर्णविशेषाः एकगुणकालत्वादयः, भावतो लोकः अनंतवर्णपर्यवरूप इति, तथा 'अणंता गंधपज्जवा' अनन्ता गन्धपर्यवाः, 'अनंता रसपज्जवा' अनन्ता रसपर्यवाः 'अनंताफासपज्जवा' अनन्ताः स्पर्शपर्यवाः, अनन्तगन्धरसस्पर्शपर्यायरूपो भावतो लोक इति तथा 'अणंता संठाणपज्जवा' अनंताः संस्थानपर्यवाः, अनन्तसंस्थानरूपो लोको भावत इति, तथा 'अणंता गुरुयलहुयपज्जवा' अनंता गुरुलघुकपर्यवाः अनंतगुरुलघुपर्यवरूपो लोकः बादरस्कंधेषु तत्सद्भावात् 'अणंता अगुरुयलहुय पज्जवा' अनंता अगुरुकलघुकपर्यवाः-अनन्तागुरुलघुपर्यायरूपो

है, अव्यय है, अवस्थित है और नित्य है इसी कारण इस लोक का काल की अपेक्षा कभी भी विनाश नहीं होता है। "भावओ णं लोए अणंता वण्णपज्जवा" भाव से लोक-अनंत वर्णपर्यायरूप है- एक गुणकालत्वआदि वर्ण विशेष है अर्थात् वर्णपर्याय हैं ऐसी एक गुण कालत्व आदि पर्याय से लेकर अनंत वर्ण पर्यायरूप यह लोक भाव की अपेक्षा से है। तथा "अणंतागंधपज्जवा, अणंता रसपज्जवा अणंता फासपज्जवा" इसी तरह से भाव की अपेक्षा यह लोक अनंत गंधपर्यायरूप अनंत रसपर्यायरूप और अनन्त स्पर्शपर्यायरूप है। "अणंता संठाणपज्जवा" भाव की अपेक्षा यह लोक संस्थान की अनंत पर्यायों रूप है "अणंता गुरुयलहुयपज्जवा" गुरु लघु गुणों की अनंत पर्याय रूप है। गुरु लघु गुण बादरस्कंधों में रहता है। "अणंता अगुरुयलहुय पज्जवा" तथा भावकी अपेक्षा से यह लोक अगुरु लघुगुण की अनंत

અવ્યય છે અવસ્થિત છે આ દૃષ્ટિએ વિચારવામા આવે તો કાળની અપેક્ષાએ આ લોકોનો કદી પણ નાશ થતો નથી એવું સિદ્ધ થાય છે.

"भावओ णं लोए अणता वण्णपज्जवा" ભાવની અપેક્ષાએ લોક અનંત વર્ણપર્યાય રૂપ છે એક ગુણ કાળત્વ વગેરે વર્ણ વિશેષ છે. એટલે કે વર્ણપર્યાય છે ભાવની અપેક્ષાએ એક ગુણ કાળત્વ વગેરે પર્યાયોથી લઈને અનંત વર્ણપર્યાય રૂપ આ લોક છે તથા "अणंता गंधपज्जवा अणता रसपज्जवा अणंता फासपज्जवा" એજ પ્રમાણે ભાવની અપેક્ષાએ આ લોક અનંત રસપર્યાય રૂપ અનત ગધપર્યાયરૂપ અને અનત સ્પર્શ પર્યાય રૂપ છે. "अणंता संठाणपज्जवा, अणता गुरुयलहुय पज्जवा, अणंता अगुरुयलहुय पज्जवा" ભાવની અપેક્ષાએ આ લોક સંસ્થાનની અનેક પર્યાયો રૂપ છે, ગુરુ લઘુ ગુણોની

पर्यायरूप है। यह अगुरुलघु गुण परमाणुओंमें, सूक्ष्मस्कंधों में और अमूर्त्त द्रव्यों में पाया जाता है। तात्पर्य इस का यह है कि भाव में द्रव्य गत रूप, रस, गंध, स्पर्श, संस्थान आदि लिए जाते हैं। अतः जहां कहीं पर भी भावको लेकर विचार किया जाता है वहां इन्हीं रूप रसादिकों को लेकर ही विचार किया गया है, ऐसा जानना चाहिये। रूप गुण एक ही पर्यायवाला नहीं होता है–किन्तु जिस प्रकार द्रव्य में अनंत पर्यायें होती हैं उसी प्रकार गुणों में भी अनंतपर्यायें हुआ करती हैं। गुणों में जो हीनाधिकता होती है वहीगुणपर्याय हैं। व्यंजनपर्याय द्रव्य में होती है और अर्थपर्याय गुण में होती है। इसी अर्थ पर्याय को लेकर षट्स्थानपतित हानि वृद्धि होती रहती है। आगमग्रन्थों में इस विषय को बहुत ही अच्छी तरहसे स्पष्टरूप में समझाया गया है। गुण पर्याय का नाम दूसरे शास्त्रों में गुणांश कहा गया है। अतःभावसे लोक रूप रस, गंध, स्पर्श की अनंत पर्यायरूप होता है। इसी तरह से षट्संस्थान जो द्रव्यगत होता है वह भी एक २ प्रकार में अनन्त पर्याय वाला होता है अतःभाव से लोक संस्थान की अपेक्षा अनन्त है। अगुरु लघु गुण अमूर्तद्रव्यों में परमाणुओं में एवं सूक्ष्मस्कंधों में पाया

અનંત પર્યાયો રૂપ છે અને અગુરુ લઘુ ગુણની અનંત પર્યાયો રૂપ પણ છે ગુરુ લઘુ ગુણ બાદર (સ્થૂળ) સ્કંધોમાં રહે છે અને અગુરુ લઘુ ગુણ પરમાણુઓમાં, સૂક્ષ્મ સ્કંધોમાં, અને અમૂર્ત્ત દ્રવ્યોમાં રહેલો હોય છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે ભાવમાં દ્રવ્યમાં રહેલાં રૂપ, રસ ગંધ, સ્પર્શ, સંસ્થાન વગેરેનો સમાવેશ થાય છે તેથી જ્યારે ભાવની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે ત્યારે તે રૂપ, રસ વગેરેની દૃષ્ટિએજ વિચાર કરવામાં આવે છે, એમ સમજવું રૂપ રસ વગેરે ગુણો એકજ પર્યાયવાળા હોતા નથી, પણ જેમ દ્રવ્યમાં અનંત પર્યાય હોય છે તેમ ગુણોમાં પણ અનંત પર્યાયો હોય છે ગુણોમાં જે વૃદ્ધિ અથવા તો હાનિ થાય છે તેનેજ ગુણપર્યાય કહે છે વ્યંજન પર્યાય દ્રવ્યમાં હોય છે અને અર્થ પર્યાય ગુણમાં હોય છે એજ અર્થ પર્યાયની અપેક્ષાએ ષટ્, (છ) સ્થાન પતિત હાનિ વૃદ્ધિ થતી રહે છે આગમ ગ્રંથોમાં આ વિષયને ઘણી સારી રીતે સ્પષ્ટતા પૂર્વક સમજાવવામાં આવ્યો છે ગુણ પર્યાયનું બીજુ નામ ગુણાંશ કહેલું છે આ રીતે ભાવની અપેક્ષાએ લોક રૂપ રસ ગંધ સ્પર્શ વગેરે અનંત પર્યાય રૂપ હોય છે એજ પ્રમાણે દ્રવ્યગત સંસ્થાન પણ પ્રત્યેક દ્રવ્યમાં અનંત પર્યાયવાળું હોય છે તેથી ભાવની અપેક્ષાએ લેઇએ તો સંસ્થાનની દૃષ્ટિએ પણ લોક અનંત છે અગુરુલઘુ ગુણ અમૂર્ત્ત (અરૂપી) દ્રવ્યોમાં, પરમાણુઓમાં અને સૂક્ષ્મ

लोक', परमाणुषु सूक्ष्मस्कन्धेषु अमूर्तेषु च तत्सद्भावात् ' नत्थि पुण से अंते ' नास्ति पुनरतस्यान्तः, भावापेक्षया लोकस्यान्तो नास्तीत्यर्थः । उपसंहरन्नाह— ' से त्तं ' इत्यादि । ' से त्तं खंदया दव्वओ लोए स अते खेत्तओ लोए स अंते कालओ लोए अणते भावओ लोए अणते ' तदेतत् स्कन्दक ! द्रव्यतो लोकः सांतः क्षेत्रतो लोकः सांतः कालतो लोकोऽनंतो भावतो लोकोऽनंतः । हे स्कन्दक पूर्वोक्तयुक्तिभिः प्रतिपादितचतुर्विधलोकेषु द्रव्यक्षेत्राभ्यामन्तवत्त्वं लोकस्य, कालभावाभ्यां चानंतत्वमेव पुनर्लोकस्येति भावः । इति प्रथमप्रश्नस्योत्तरम् । १ ।

लोकविषयकप्रश्नस्योत्तर दत्त्वा जीवविषयकप्रश्नस्योत्तरमाह– जे वि' इत्यादि

जाता हैं। यह अगुरुलघुगुण भी अनन्त पर्याय वाला होता है। इसी तरह गुरुलघुगुण बादर स्कंधोंमें पाया जाता है, इस अपेक्षा गुरुलघुगुण भी अनन्त पर्यायवाला होता है। इस तरह भावसे लोक का कभी भी अंत नहीं होता है। अत.वह भाव से लोक अनन्त कहा गया है। यही बात " नत्थि पुण से अंते " इस सूत्र पाठ द्वारा व्यक्त की गई है। अब इस विषय का उपसंहार करते हुए भगवान् स्कन्दक से कहते हैं कि ' से त्तं खंदया ! दव्वओ लोए स अंने, खेत्तओ लोए सअंते, कालओ लोए अणंते, भावओ लोए अणंते ' हे स्कन्दक ! इस तरह विचार करने पर द्रव्य से लोक सान्त-अन्तसहित है, क्षेत्र से लोक सान्त-अन्त सहित है, काल से लोक अनन्त है और भाव से लोक अनन्त है। इस प्रकार से यह प्रथम प्रश्न का उत्तर है।

लोकविषयक प्रथमप्रश्न का उत्तर देकर अब श्रमण भगवान् महा-

સ્કંધોમાં હોય છે તે અગુરુલઘુગુણ પણ અનંત પર્યાયો વાળો હોય છે. ગુરુલઘુગુણ બાદર (સ્થૂળ) સ્કંધોમાં હોય છે ગુરુલઘુગુણ પણ અનંત પર્યાયો વાળો હોય છે આ રીતે ભાવની અપેક્ષાએ લોકનો કદી પણ નાશ થતો નથી તેથી ભાવની અપેક્ષાએ લોકને અનંત (અંત રહિત) કહ્યો છે. એજ વાત " नत्थि पुण से अंते " આ સૂત્રપાઠ વડે વ્યક્ત કરવામાં આવી છે હવે આ વિષયનો ઉપસંહાર કરતાં ભગવાન મહાવીર સ્કન્દકને કહે છે કે-" से त्त खंदया ! दव्वओ लोए स अंते, खेत्तओ लोए स अते, कालओ लोए अणंते, भावओ लोए अणंते " હે સ્કન્દક ! આ રીતે વિચાર કરતાં દ્રવ્યની અપેક્ષાએ લોક સાન્ત (અંતયુક્ત) છે, ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પણ લોક સાન્ત છે. પણ કાળની અપેક્ષાએ લોક અનંત (અંતરહિત) છે, અને ભાવની અપેક્ષાએ પણ લોક અનંત છે. આ પ્રકારનો તમારા પહેલા પ્રશ્નનો ઉત્તર છે.

લોક વિષેના પહેલા પ્રશ્નનો ઉત્તર આપીને હવે શ્રમણ ભગવાન મહા૦

जे वि य ते खंदया जाव स अंते जीवे अणंते जीवे य वि च ते स्कन्दक! यावत् सान्तो जीवोऽनन्तो जीवः यावत्पदेन-तव मनसि अयमेतद्रूप आध्यात्मिकश्चिन्तित कल्पितः प्रार्थितः मनोगत सङ्कल्पः समुदपद्यत किम् इत्यस्य सङ्ग्रहः। 'तस्स वि य णं अयमट्ठे' तस्यापि च खलु अयमर्थः जीवविषयक प्रश्नस्येदमुत्तरम् 'एवं खलु जाव-अत्र यावत्पदेन 'मया स्कन्दक! चतुर्विधो जीवः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-द्रव्यत क्षेत्रत कालतो भावतः' इति। सङ्ग्रहः, 'दव्वओ ण एगे जीवे स अंते' द्रव्यतः खलु एको जीवः सांतः द्रव्यापेक्षया एक जीवमाश्रित्य सान्तो जीव इति।

वीर जीवविषयक द्वितीयप्रश्न का उत्तर स्कन्दक को देते हुए कहते हैं-"जे वि य ते खंदया! जाव स अंते जीवे अणंते जीवे" हे स्कन्दक! जो तुम्हारे चित्त में यह विकल्प उठा जीव सान्त-अन्त सहित है? या अनन्त-अन्त रहित है? 'तस्स वि य णं अयमट्ठे' सो उसका भी यह अर्थ-उत्तर है, अर्थात्-हे स्कन्दक! जो तुम्हें ऐसा मन में संकल्प हुआ है कि क्या जीव सान्त अन्त सहित है या अनन्त -अन्त रहित है? सो उसका उत्तर इस प्रकार है-'एवं खलु जाव' इस प्रकार है स्कन्दक! मैंने जीव चार प्रकार का प्ररूपित किया है वह इस प्रकार से-एक द्रव्य की अपेक्षा दूसरा क्षेत्रकी अपेक्षा से तीसरा काल की अपेक्षा से और चौथा भाव की अपेक्षा से। "दव्वओ णं एगे जीवे स अंते" द्रव्य की अपेक्षासे एक जीव सान्त-अन्त सहित है। तात्पर्य कहने का यह कि यहां द्रव्य की अपेक्षा से एक जीव को लेकर जीव सान्त है ऐसा कहा गया है। क्यों कि एक के बाद दो जब आते हैं तो एक सङ्ख्या सान्त-अन्त सहित हो जाती है। वैसे सिद्धान्त में

वीर स्कन्दके पूछेला જીવ વિષેના બીજા પ્રશ્નનો ઉત્તર આપે છે ,, जे वि य ते खंदया! जाव स अंते जीवे अणंते जीवे" હે સ્કન્દક! તમારા મનમાં જીવના વિષયમાં આ પ્રકારની શંકા ઉદ્ભવેલ છે કે 'જીવ અંત સહિત છે કે અન્ત રહિત?" "तस्स वि य णं अयमट्ठे" તો તેનો ઉત્તર આ પ્રમાણે છે-"एवं खलु जाव' હે સ્કંદક! મેં જીવના ચાર પ્રકાર પ્રરૂપ્યા છે (કહ્યા) તે આ પ્રમાણે છે (૧) દ્રવ્ય (૨) ક્ષેત્ર (૩) કાળ અને (૪) ભાવ આ ચારેની અપેક્ષાએ જીવની સાન્તતા અને અનંતતાનો વિચાર કરવો જોઇએ "दव्वओ णं एगे जीवे स अंते" દ્રવ્યની અપેક્ષાએ એક જીવ સાન્ત-અન્ત સહિત-છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે અહીં દ્રવ્યની અપેક્ષાએ તથા એક જીવની અપેક્ષાએ જીવને સાન્ત (અન્ત સહિત) કહેલ છે કારણ કે

लोक', परमाणुषु सूक्ष्मस्कन्धेषु अमूर्तेषु च तत्सद्भावात् 'नत्थि पुण से अंते' नास्ति पुनरतस्यान्तः, भावापेक्षया लोकस्यान्तो नास्तीत्यर्थः। उपसंहरन्नाह— 'से त्तं' इत्यादि। 'से त्तं खंदया दव्वओ लोए स अते खेत्तओ लोए स अंते कालओ लोए अणंते भावओ लोए अणते' तदेतत् स्कन्दक! द्रव्यतो लोकः सांत! क्षेत्रतो लोकः सांतः कालतो लोकोऽनंतो भावतो लोकोऽनंतः। हे स्कन्दक पूर्वोक्तयुक्तिभिः प्रतिपादितचतुर्विधलोकेषु द्रव्यक्षेत्राभ्यामन्तवत्त्वं लोकस्य, कालभावाभ्यां चानंतत्वमेव पुनर्लोकस्येति भावः। इति प्रथमप्रश्नस्योत्तरम्। १।

लोकविषयकप्रश्नस्योत्तर दत्त्वा जीवविषयकप्रश्नस्योत्तरमाह– 'जे वि' इत्यादि

जाता है। यह अगुरुलघुगुण भी अनन्त पर्याय वाला होता है। इसी तरह गुरुलघुगुण बादर स्कंधोंमें पाया जाता है, इस अपेक्षा गुरुलघुगुण भी अनन्त पर्यायवाला होता है। इस तरह भावसे लोक का कभी भी अंत नहीं होता है। अत.वह भाव से लोक अनन्त कहा गया है। यही बात "नत्थि पुण से अंते" इस सूत्र पाठ द्वारा व्यक्त की गई है। अब इस विषय का उपसंहार करते हुए भगवान् स्कन्दक से कहते हैं कि 'से त्तं खंदया! दव्वओ लोए स अंते, खेत्तओ लोए सअंते, कालओ लोए अणंते, भावओ लोए अणंते' हे स्कन्दक! इस तरह विचार करने पर द्रव्य से लोक सान्त–अन्तसहित है, क्षेत्र से लोक सान्त–अन्त सहित है, काल से लोक अनन्त है और भाव से लोक अनन्त है। इस प्रकार से यह प्रथम प्रश्न का उत्तर है।

लोकविषयक प्रथमप्रश्न का उत्तर देकर अब श्रमण भगवान् महा-

સ્કંધોમા હોય છે તે અગુરુલઘુગુણ પણ અનત પર્યાયો વાળો હોય છે. ગુરુલઘુગુણ બાદર (સ્થૂળ) સ્કંધોમા હોય છે ગુરુલઘુગુણ પણ અનત પર્યાયો વાળો હોય છે આ રીતે ભાવની અપેક્ષાએ લોકનો કદી પણ નાશ થતો નથી તેથી ભાવની અપેક્ષાએ લોકને અનત (અત રહિત) કહ્યો છે. એજ વાત "नत्थि पुण से अंते" આ સૂત્રપાઠ વડે વ્યક્ત કરવામા આવી છે હવે આ વિષયનો ઉપસહાર કરતા ભગવાન મહાવીર સ્કન્દકને કહે છે કે–"से त्त खंदया! दव्वओ लोए स अंते, खेत्तओ लोए स अते, कालओ लोए अणंते, भावओ लोए अणंते" હે સ્કન્દક! આ રીતે વિચાર કરતા દ્રવ્યની અપેક્ષાએ લોક સાન્ત (અતયુક્ત) છે, ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પણ લોક સાન્ત છે. પણ કાળની અપેક્ષાએ લોક અનત (અતરહિત) છે, અને ભાવની અપેક્ષાએ પણ લોક અનંત છે. આ પ્રકારનો તમારા પહેલા પ્રશ્નનો ઉત્તર છે.

લોક વિષેના પહેલા પ્રશ્નનો ઉત્તર આપીને હવે શ્રમણ ભગવાન મહા૦

जे वि य ते संदया जाव स अते जीवे अणते जीवे ये पि च ते स्कन्दक! यावत् सान्तो जीवोऽनन्तो जीवः यावत्पदेन-तव मनसि अयमेतद्रूप आध्यात्मिकश्चिन्तित कल्पित प्रार्थितः मनोगतः सकल्प समुदपद्यत किम् इत्यस्य संग्रह । 'तस्स वि य ण अयमट्ठे ' तस्यापि च खलु अयमर्थ जीवविषयक प्रश्नस्यदमुत्तरम् 'एवं खलु यावत्-अत्र यावत्पदेन 'मया स्कन्दक! चतुर्विधो जीव प्रज्ञप्तः, तद्यथा-द्रव्यत क्षेत्रत कालतो भावत ' इति । संग्रह, 'दव्वओ णं एगे जीवे स अते ' द्रव्यतः खलु एको जीवः सांत द्रव्यापेक्षया एक जीवमाश्रित्य सान्तो जीव इति।

वीर जीवविषयक द्वितीयप्रश्न का उत्तर स्कन्दक को देते हुए कहते हैं-"जे वि य ते संदया । जाव स अंते जीवे अणंते जीवे" हे स्कन्दक! जो तुम्हारे चित्त में यह विकल्प उठा जीव सान्त-अन्त सहित है! या अनन्त-अन्त रहित है? 'तस्स वि य णं अयमट्ठे' सो उसका भी यह अर्थ-उत्तर है, अर्थात्-हे स्कन्दक! जो तुम्हें ऐसा मन में संकल्प हुआ है कि क्या जीव सान्त अन्त सहित है या अनन्त -अन्त रहित है? सो उसका उत्तर इस प्रकार है-' एवं खलु जाव' इस प्रकार हे स्कन्दक! मैंने जीव चार प्रकार का प्ररूपित किया है वह इस प्रकार से-एक द्रव्य की अपेक्षा दूसरा क्षेत्रकी अपेक्षा से तीसरा काल की अपेक्षा से और चौथा भाव की अपेक्षा से। "दव्वओ णं एगे जीवे स अंते" द्रव्य की अपेक्षासे एक जीव सान्त-अन्त सहित है। तात्पर्य कहने का यह कि यहां द्रव्य की अपेक्षा से एक जीव को लेकर जीव सान्त है ऐसा कहा गया है। क्यों कि एक के बाद दो जब आते हैं तो एक संख्या सान्त-अन्त सहित हो जाती है। वैसे सिद्धान्त में

वीर स्कन्दकने पूछेला छव विषेना भीज प्रश्नने उत्तर आपे छे ,, जे वि य ते संदया । जाव स अते जीवे अणते जीवे" हे स्कन्दक! तमारा मनमा छवना विषयमा आ प्रकारनी शंका उद्भवेल छे के 'छव अन्त सहित छे के अन्त रहित?" "तस्स वि य ण अयमट्ठे" तो तेनो उत्तर आ प्रमाणे छे-" एव खलु जाव' हे स्कन्दक! मे छवना चार प्रकार प्ररूप्या छे (कह्या) ते आ प्रमाणे छे (१) द्रव्य (२) क्षेत्र (३) काळ अने (४) भाव आ चारेनी अपेक्षाए छवनी सान्तता अने अनंतताने विचार करवो जोइए. "दव्वओ ण एगे जीवे स अते" द्रव्यनी अपेक्षाए एक छव सान्त-अन्त सहित-छे कहेवानु तात्पर्य ए छे के अहीं द्रव्यनी अपेक्षाए तथा एक छवनी अपेक्षाए छवने सान्त (अन्त सहित) कहेल छे कारण के

'खेत्तओ णं जीवे असंखेज्जपएसिए' क्षेत्रतः खलु जीवोऽसंख्येयप्रदेशिकः, क्षेत्रापेक्षया असंख्येयप्रदेशत्वात् एको जीव इत्यर्थः, तथा 'असखेज्ज पएसोगाढे' 'असंख्येयप्रदेशावगाढः लोकाकाशस्य असंख्येयप्रदेशेषु अवगाहनावानित्यर्थः, 'अत्थिपुण से अंते' अस्ति पुनः 'से' तस्यान्तः जीवः-द्रव्यत एक जीवा

जीव राशि अक्षय अनन्त मानी गई है सो उस अपेक्षा यह विचार नहीं है। यह विचार तो एक जीव की अपेक्षा से किया जा रहा है। क्यों कि एक जीव स्वतंत्र द्रव्य है। अतःद्रव्य की अपेक्षा एक जीव को लेकर सान्त कहा है। (खेत्तओ णं जीवे असंखेज्जपएसिए) क्षेत्रकी अपेक्षा से जब जीव सान्तत्व अनन्तत्व का विचार किया जाता है तब भी जीव सान्त ही फलित होता है। जीव असंख्यात प्रदेशवाला है- अर्थात् एक जीव के असख्यात प्रदेश होते हैं अतः वह लोकाकाश के असंख्यात प्रदेशों में अवगाहनावाला है। यदि यहां पर ऐसी आशंका की जावे कि लब्ध्यपर्याप्तक निगोदिया जीव कि जो असंख्यात प्रदेशी ही होता है उस की जघन्य अवगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण होती है। अतः वह कैसे लोकाकाश के असंख्यात प्रदेशों में अवगाहना वाला हो सकता है ? तो इसका उत्तर यह है कि "एक जीव लोकाकाश के असंख्यात प्रदेशों में अवगाहना वाला होता है"

એક પછી જ્યારે એનો વિચાર કરવામા આવે છે ત્યારે એક સખ્યા સાન્ત (અન્ત સહિત) બની જાય છે. આમ તો સિદ્ધાંતોમાં જીવ રાશિને અક્ષય, અનંત માનવામાં આવેલ છે. પરંતુ અહી એ રીતે વિચાર કરવામાં આવ્યો નથી. અહીં તો એક જીવની અપેક્ષાએ જ વિચાર કરવામાં આવ્યો છે, કારણ કે એક જીવ સ્વતત્ર દ્રવ્ય છે તેથી દ્રવ્યની અપેક્ષાએ એક જીવને સાન્ત (અત યુક્ત) કહેલ છે

ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પણ જીવ સાન્ત (અન્ત સહિત) છે એવું પ્રતિપાદન કરવામા આવ્યુ છે જીવ અસંખ્યાત પ્રદેશ વાળો છે એટલે કે એક જીવના અસંખ્યાત પ્રદેશ હોય છે તેથી તે લોકાકાશના અસખ્યાત પ્રદેશોમા અવગાહના વાળો છે અહીં કદાચ એવી આશકા સેવવામાં આવે કે લબ્ધ પર્યાસક નિગોદિયો જીવ, કે જે અસખ્યાત પ્રદેશી હોય છે, તેની જઘન્ય (ઓછામા ઓછી) અવગાહના અગુલના અસખ્યાતમા ભાગ પ્રમાણુ જ હોય છે તો તે કેવી રીતે લોકાકાશના અસખ્યાત પ્રદેશોમા અવગાહના વાળો હોઇ શકે? તેનુ સમાધાન આ પ્રમાણે છે એક જીવ લોકાકાશના અસખ્યાત પ્રદેશોમા

ऐसा जो कहा गया है वह सामान्य जीव की अपेक्षा को लेकर कहा है। तात्पर्य कहने का यह है की आत्मा का परिमाण आकाश की तरह न व्यापक माना गया है और न परमाणु की तरह अणुरूप माना गया है किन्तु जिस जीव को जो शरीर प्राप्त होता है आत्मा उसी प्रमाण बन जाता है। इस प्रमाण में प्रदेश संख्या की न हानि होती है और न वृद्धि होती है वह तो सब जीवों की बराबर ही रहती है। परन्तु अवगाहना में लंबाई चौडाई आदि में अन्तर आ जाता है। अतः सिद्धान्तकारोंने ऐसा कहा है कि एक जीव का आधार क्षेत्र लोकाकाश के असख्यातवें भाग से लेकर सम्पूर्ण लोकाकाश तक हो सकता है। लोकाकाश के प्रदेशों का परिमाण असंख्यात है-और असख्यात के भी असख्यात भेद कहे गये हैं। अत लोकाकाश के ऐसे असख्यात भागों की कल्पना की जासकती है जो अंगुलासख्येयभागपरिमाण हों। इतना छोटा एक भाग भी असख्यात प्रदेशात्मक ही होता है। उस एक भाग में कोई एक जीव रह सकता है उतने २ दो भागों में भी रह सकता है। इसी तरह एक २ भाग बढते २ आखिरकार सर्वलोक में भी एक जीव रह सकता है। कहने का अभिप्राय ये है कि एक जीव द्रव्य

અવગાહના વાળો હોય છે" આ કથન સામાન્ય જીવને અનુલક્ષીને કહ્યું છે કહેવાનો આશય એ છે કે આત્માનું પરિમાણ આકાશની જેમ વ્યાપક પણ માનવામાં આવ્યું નથી, અને પરમાણુની જેમ અણુ રૂપ પણ માનવામાં આવ્યું નથી. પણ જે જીવને તેના કર્મ અનુસાર જે શરીરની પ્રાપ્તિ થાય છે તે શરીર પ્રમાણ આત્મા બની જાય છે એટલે કે મધ્યમ પરિમાણ માનવામાં આવે છે તે પ્રમાણમાં પ્રદેશોની સખ્યા ન્યૂન અધિક થતી નથી- તે તો બધા જીવોમાં બરાબર જ રહે છે પણ અવગાહના (લંબાઈ પહોળાઈ વગેરે માં ફેર પડે છે તેથી સિદ્ધાતકારોએ એવું કહ્યું છે કે એક જીવનું આધાર ક્ષેત્ર લોકાકાશના અસખ્યાતમાં ભાગથી લઈને સપૂર્ણ લોકાકાશ સુધીનું હોઈ શકે છે લોકાકાશના પ્રદેશોનું પરિમાણ અસખ્યાત છે અને તે અસખ્યાતના પણ અસખ્યાત ભેદ કહેલા છે તેથી લોકાકાશના એવા અસખ્યાત ભાગોની કલ્પના કરી શકાય છે કે જે અંગુલના અસખ્યેય ભાગ પ્રમાણ હોય એવડો નાનો એક ભાગ પણ અસખ્યાત પ્રદેશાત્મક જ હોય છે તેવા એક ભાગમાં પણ કોઈ એક જીવ રહી શકે છે, એને એવા બે ભાગોમાં પણ એક જીવ રહી શકે છે આ રીતે એક એક ભાગ વધતાં વધતા છેવટે સર્વલોકમાં પણ એક જીવ રહી શકે છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે એક જીવ દ્રવ્યનું ઓછામાં ઓછું આધાર ક્ષેત્ર

'खेत्तओ णं जीवे असंखेज्जपएसिए' क्षेत्रतः खलु जीवोऽसंख्येयप्रदेशिकः, क्षेत्रापेक्षया असंख्येयप्रदेशवान् एको जीव इत्यर्थः, तथा 'असखेज्जपएसोगाढे' 'असंख्येयप्रदेशावगाढः लोकाकाशस्य असंख्येयप्रदेशेषु अवगाहनावानित्यर्थः', 'अत्थिपुण से अंते' अस्ति पुनः 'से' तस्यान्तः जीवः-द्रव्यत एक जीवा

जीव राशि अक्षय अनन्त मानी गई है सो उस अपेक्षा यह विचार नहीं है। यह विचार तो एक जीव की अपेक्षा से किया जा रहा है। क्यों कि एक जीव स्वतन्त्र द्रव्य है। अतःद्रव्य की अपेक्षा एक जीव को लेकर सान्त कहा है। (खेत्तओ णं जीवे असंखेज्जपएसिए) क्षेत्रकी अपेक्षा से जब जीव सान्तत्व अनन्तत्व का विचार किया जाता है तब भी जीव सान्त ही फलित होता है। जीव असंख्यात प्रदेशवाला है-अर्थात् एक जीव के असंख्यात प्रदेश होते हैं अतः वह लोकाकाश के असंख्यात प्रदेशों में अवगाहनावाला है। यदि यहां पर ऐसी आशंका की जावे कि लब्ध्यपर्याप्तक निगोदिया जीव कि जो असंख्यात प्रदेशी ही होता है उस की जघन्य अवगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण होती है। अतः वह कैसे लोकाकाश के असंख्यात प्रदेशों में अवगाहना वाला हो सकता है ? तो इसका उत्तर यह है कि "एक जीव लोकाकाश के असंख्यात प्रदेशों में अवगाहना वाला होता है"

એક પછી જ્યારે એનો વિચાર કરવામા આવે છે ત્યારે એક સખ્યા સાન્ત (અન્ત સહિત) બની જાય છે. આમ તો સિદ્ધાંતોમા જીવ રાશિને અક્ષય, અનંત માનવામાં આવેલ છે પરંતુ અહીં એ રીતે વિચાર કરવામાં આવ્યો નથી. અહીં તો એક જીવની અપેક્ષાએ જ વિચાર કરવામાં આવ્યો છે, કારણ કે એક જીવ સ્વતંત્ર દ્રવ્ય છે તેથી દ્રવ્યની અપેક્ષાએ એક જીવને સાન્ત (અંત યુક્ત) કહેલ છે

ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પણ જીવ સાન્ત (અન્ત સહિત) છે એવું પ્રતિપાદન કરવામા આવ્યુ છે જીવ અસંખ્યાત પ્રદેશ વાળો છે એટલે કે એક જીવના અસંખ્યાત પ્રદેશ હોય છે તેથી તે લોકાકાશના અસખ્યાત પ્રદેશોમા અવગાહના વાળો છે અહીં કદાચ એવી આશકા સેવવામાં આવે કે લબ્ધ પર્યાપ્તક નિગોદિયો જીવ, કે જે અસખ્યાત પ્રદેશી હોય છે, તેની જઘન્ય (ઓછામા ઓછી) અવગાહના અગુલના અસંખ્યાતમાં ભાગ પ્રમાણુ જ હોય છે તો તે કેવી રીતે લોકાકાશના અસખ્યાત પ્રદેશોમાં અવગાહના વાળો હોઈ શકે ? તેનુ સમાધાન આ પ્રમાણે છે એક જીવ લોકાકાશના અસંખ્યાત પ્રદેશોમા

त्स्येव, भविष्यत्येव, अतएव ध्रुवो नियतः शाश्वतोऽक्षयोऽव्ययोऽवस्थित इत्यन्वे समासम्। यतो ध्रुवादिस्वभावकोऽत एव 'नत्थिपुण से अंते' नास्ति पुनस्तस्य जीवस्यान्तः। 'भावओ णं जीवे अणंता णाणपज्जवा' भावतः खलु जीव अनंता ज्ञानपर्यवा=ज्ञानपर्यायाः केवलिबुद्धिकृताऽविभागपरिच्छेदाः भावतो जीवोऽनन्तज्ञानपर्यायात्मको भवतीति भावः। "अणंता दंसणपज्जवा' अनंता दर्शन

ऐसा कोइ सा भी काल नहीं है कि जिसमें इसका सद्भाव न रहा हो-भूतकाल में जीव नहीं था, ऐसा नहीं कहा जा सकता वर्तमानकालमें जीव नही है ऐसा भी नहीं कहा जा सकता और भविष्यत् काल में जीव नहीं होगा-ऐसा भी नहीं माना जा सकता। इसलिये ऐसा ही मानना चाहिये कि भूतकाल में जीव था वर्तमान में भी उसका सद्भाव है, और भविष्यत्काल में भी उसका अस्तित्व रहेगा। क्यों कि यह जीव ध्रुव आदि स्वभाववाला है। अत एव 'नत्थि पुण से अंते" इसलिये काल की अपेक्षा से जीवका अन्त नहीं है। "भावओ णं जीवे अणंताणाण पज्जवा" भावकी अपेक्षा जब जीव की सान्तता और अनन्तता का विचार किया जाताहै तो उस समय यह जीव अनंत सिद्ध होता है क्यों कि जीव द्रव्य अनंत ज्ञान पर्यायरूप है। ज्ञान की पर्यायें केवली की बुद्धि से ही कल्पित की जा सकती है ये ज्ञानपर्यायें अविभाग परिच्छेद रूप होती हैं अत भाव की अपेक्षा जीव अनंत ज्ञान पर्यायरूप है, "अणंता दसण पज्जवा" अनत दर्शनगुणपर्यायरूप

કોઇ પણ કાળ નથી કે જ્યારે તેનુ અસ્તિત્વ ન હોય-ભૂતકાળમાં જીવ ન હતો એવું કહી શકાય તેમ નથી, વર્તમાન કાળમા જીવ નથી એવું પણ કહી શકાતું નથી, અને ભવિષ્ય કાળમાં જીવ નહીં હોય એવું પણ માની શકાતું નથી. તેથી એમજ માનવું પડશે કે ભૂતકાળમા જીવ હતો, વર્તમાનમાં છે અને ભવિષ્યમાં પણ રહેશે ત્રણે કાળમાં જીવનુ અસ્તિત્વ હોય છે કારણ કે જીવ ધ્રુવ, શાશ્વત, નિત્ય વગેરે સ્વભાવ વાળો છે (નત્થિ પુણ સ અંતે) તેથી સિદ્ધ થાય છે કે કાળની અપેક્ષાએ જીવ સાન્ત અંત રહિત-છે "ભાવઓ ણં અણંતા ણાણપજ્જવા' ભાવની અપેક્ષાએ જીવની અંત સહિતતા કે અંતરહિતતા નો વિચાર કરવામાં આવે તો જીવને અનન્ત અંતરહિત સાબિત કરી શકાય છે કારણ કે જીવદ્રવ્ય અનંત જ્ઞાન પર્યાય રૂપ છે જ્ઞાનની પર્યાયોની કલ્પના કેવલી ભગવાનના કેવળ જ્ઞાન થી જ થઈ શકે છે- તે જ્ઞાન પર્યાયો અવિભાગ પરિચ્છેદ રૂપ હોય છે તેથી ભાવની અપેક્ષાએ જીવને અનંત જ્ઞાન પર્યાય કહ્યો છે "અણંતા દસણપજ્જવા" જીવદ્રવ્ય અનંત દર્શન ગુણ પર્યાય રૂપ છે

पेक्षया सान्तः। क्षेत्रतोऽपि एकजीवापेक्षया सान्तः। कालओ णं जीवे न कयाइ नासी जाव निच्चे ' कालतः खलु जीवः कदाचित् नासीत् यावत् नित्यः, इह यावत्करणात्-न कदाचिन्न भवति न कदाचिन्न भविष्यति अपि तु आसीदेव भव-

का छोटे से छोटा कम से कम आधार क्षेत्र अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण होता है जो असंख्यात प्रदेशी लोकाकाश का एक असंख्यातवां भागरूप होता है। तथा अधिक से अधिक सम्पूर्ण लोकाकाश भी एक जीवद्रव्य का आधार क्षेत्र होता है। इस कथन से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि लब्धपर्यायउक्त निगोदिया जीव की जघन्य अवगाहना के अनुसार जितना उसका आधार क्षेत्र होगा-वह भी असंख्यातप्रदेशात्मक ही होगा। परन्तु वह असंख्यात प्रदेशी लोकाकाश का असंख्यातवां भागरूप ही कहलायेगा। इस तरह जीव लोक के असंख्यातप्रदेशों में अवगाहनावाला है यह कथन निर्दोष है। " अत्थि पुण से अंते " क्षेत्र की अपेक्षा जीव अन्तसहित है। इस तरह द्रव्य की अपेक्षा से एक जीवद्रव्य सान्त है और क्षेत्र की अपेक्षा से भी एक जीवद्रव्य सान्त है। " कालओ णं जीवे न कयाइ नासी जाव निच्चे " काल की अपेक्षा से जब जीव द्रव्य की सान्तता और अनंतता का विचार किया जाता है तो वह अनंत सिद्ध होता है। क्यों कि तीनों कालों में से

અંગુલના અસંખ્યાતમા ભાગ પ્રમાણુ હોય છે અને તે આધાર ક્ષેત્ર અસંખ્યાત પ્રદેશી લોકાકાશના એક અસંખ્યાતમાં ભાગ રૂપ પણુ હોય છે. તથા એક જીવ દ્રવ્યનું વધારેમાં વધારે આધારક્ષેત્ર સંપૂર્ણ લોકાકાશ પણ હોય છે. આ કથનથી એ વાત સ્પષ્ટ થાય છે કે લબ્ધ પર્યાપ્તક નિગોદિયા જીવની જઘન્ય (ઓછામા ઓછી) અવગાહના પ્રમાણે જ જે તેનું આધારક્ષેત્ર હશે તે પણુ અસંખ્યાત પ્રદેશાત્મક જ હશે પરંતુ તે અસંખ્યાત પ્રદેશી લોકાકાશના અસંખ્યાતમા ભાગ રૂપ જ કહેવાશે આ રીતે જીવ લોકના અસંખ્યાત પ્રદેશોમા અવગાહના વાળો છે, એ કથનમા કોઈ પણુ પ્રકારનો દોષ જણાતો નથી. अत्थि पुण से अंते ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ જીવ સાન્ત (અન્ત યુક્ત) છે આ રીતે દ્રવ્યની અપેક્ષાએ એક જીવદ્રવ્ય સાન્ત (અન્ત સહિત છે, અને ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પણુ એક જીવદ્રવ્ય અન્ત યુક્ત છે

" कालओ ण जीवे न कयाइ नासी जाव निच्चे " કાળની અપેક્ષાએ જીવની સાન્તતા અનંતતાનો જ્યારે વિચાર કરવામાં આવે છે ત્યારે જીવ અનંત (અંત રહિત) છે એવુ સિદ્ધ થાય છે, કારણુ કે ત્રણે કાળમાથી એવો

त्मकत्वात् । इति द्वितीय प्रश्नस्योत्तरम् ॥ २ ॥ 'जे वि य ते खन्दया पुच्छ' यो पि च स स्कन्दक ! पृच्छा, पृच्छापदेन पिंगलकस्य सिद्धिविषयक सर्वोपि प्रश्नो वाच्य, द्विपर्यन्तमित्याह—'जाव' इत्यादि । जाव ' यावत्-यावत्प देन 'अयमेवरूप आध्यात्मिकादिविचार समुत्पन्न' इति संग्रह, 'किं स अता सिद्धी अणता सिद्धी' किं सांता सिद्धिरनन्तासिद्धि 'तस्स वि य ण अयमट्ठे' तस्यापि च खल्वयमर्थ 'एवं खलु मए खंदया ! चउव्विहा सिद्धि पण्णत्ता' एवं खलु मया स्कन्दक ! चतुर्विधा सिद्धि प्रज्ञप्ता, 'त जहा' तद्यथा 'दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ द्रव्यत क्षेत्रत कालतो भावत 'दव्वओ णं एगा सिद्धी स अंता' द्रव्यतः खलु एका सिद्धि सांता एकत्वेन सांतत्वात् 'खेत्तओ णं सिद्धी पण

भी अवस्था में अन्त नहीं आ सकता है, अत जब जीव भाव की अपेक्षा अनत ज्ञान दर्शन आदि पर्यायरूप है-तो इसका अर्थ यही होता है कि भाव की अपेक्षा जीव अनन्त है । इस प्रकार यह द्वितीय प्रश्न का उत्तर है ।

'जे वि य ते खंदया पुच्छा' हे स्कन्दक ! तेरा तीसरा प्रश्न यह है कि सिद्धि सान्त है कि अनन्त ? इसका अर्थ इस प्रकार से है-'एवं खलु मए खंदया ! चउव्विहा सिद्धी पण्णत्ता' हे स्कन्दक ! मैंने सिद्धि चार प्रकार की कही है-'तजहा' जो इस प्रकार से है-'दव्वओ, खेत्तओ, कालओ भावओ' द्रव्य से, क्षेत्र से, कालसे और भाव से । 'दव्वओ ण एगा सिद्धी स अता' द्रव्य से एक सिद्धि है । और वह एक होने के कारण ही सान्त-अन्त सहित है । क्षेत्र की अपेक्षा सिद्धि

છે—તેમનો કોઈ પણ અવસ્થામા અત સભવતો નથી તેથી જો ભાવની અપેક્ષાએ જીવ અનત જ્ઞાન દર્શન વગેરે પર્યાયરૂપ હોય તો તેનો અર્થ જ એ થાય છે કે ભાવની અપેક્ષાએ જીવ અનત અત રહિત છે આ રીતે બીજા પ્રશ્નનુ સમાધાન કરવામા આવ્યુ છે

"જે વિ ય તે ખંદયા પુચ્છા ' હે સ્કન્દક ! તમારો ત્રીજો પ્રશ્ન આ પ્રમાણે છે- સિદ્ધિ સાન્ત (અન્ત સહિત) છે કે અનત (અતરહિત) છે ?"- તેનુ સમાધાન આ પ્રમાણે છે-' एवं खलु मए खंदया ! चउव्विहा सिद्धी पण्णत्ता ' હે સ્કન્દક ! મે સિદ્ધિ ચાર પ્રકારની કહી છે (त जहा) તે ચાર પ્રકારો આ પ્રમાણે છે- दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ ' (૧) દ્રવ્યની (૨) ક્ષેત્રની, (૩) કાળની અને (૪) ભાવની અપેક્ષાએ સિદ્ધિની અતસહિતતા અને અતરહિતતાનો વિચાર કરવો જોઈએ. " दव्वओ ण एगा सिद्धी स अंता द्રવ્યની અપેક્ષાએ સિદ્ધિ એક છે અને તે એક હોવાને કારણે જ અત સહિત છે ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ સિદ્ધિની લબાઈ પહોળાઈ ૪૫ લાખ યોજ

पर्यवाः दर्शन पर्याया इत्यर्थः भावतोऽनंतदर्शनपर्यायात्मकत्वं जीवस्येति। 'अणंता चारित्तपज्जवा' अनंता श्चारित्रपर्यायाः, 'अणंता अगुरुलहुयपज्जवा' अनंता अगुरुलघुपर्यवाः औदारिकशरीराणि प्रतीत्यानंतागुरुलघुपर्यायाः कार्मणादि द्रव्याणि जीवस्वरूपं चाश्रित्यानंता अगुरुलघुपर्याया इति, 'नत्थि पुण से अंते' नास्ति पुनस्तस्यांतः भावतो जीवस्यांतो नास्ति अनंतज्ञानदर्शनादि पर्यायात्मकत्वादितिभावः। 'से त्तं दव्वओ जीवे स अंते' तदेतत् द्रव्यतो जीवः सान्तः, 'खेत्तओ जीवे स अंते' क्षेत्रतो जीवः सान्तः, 'कालओ जीवे अणते' कालतो जीवोऽनंत, 'भावओ जीवे अणंते' भावतो जीवोऽनन्तः अनंतज्ञानदर्शनपर्याया-

है, क्यों कि दर्शन गुण की भी पर्यायें अनंत होती हैं। "अणंता चरित्त पज्जवा" अनन्त चारित्रपर्याय रूप है क्यों कि चारित्र गुणकी भी अनंत पर्यायें होती हैं। "अणंता अगुरु य लहुय पज्जवा" अनंत अगुरुलघु पर्यायरूप है। औदारिक शरीर को लेकर अनंत गुरुलघुपर्यायरूप है तथा कार्मण शरीर, और जीव के स्वरूप को आश्रित करके अनंत अगुरू लघु पर्यायरूप है। "नत्थि पुण से अंते" इस तरह भाव की अपेक्षा से जीव अनन्त-अन्तरहित है। "से त्तं दव्वओ जीवे स अंते, खेत्तओ जीवे स अंते, कालओ जीवे अणंते भावओ जीवे अणंते" इस सब कथनका अब उपसंहार करते हुए सूत्रकार कहते हैं कि द्रव्यसे एक जीव सान्त है, क्षेत्र से भी वह सान्त है। पर काल और भाव की अपेक्षा से वह अनन्त है-सान्त नहीं है। तात्पर्य कहने का यह है कि जीव के ज्ञान, दर्शन और चारित्रपर्याय अनंत रूप है-इनका किसी

કારણ કે દર્શન ગુણની પણ અનંત પર્યાયો હોય છે "अणता चरित्तपज्जवा" જીવ અનંત ચારિત્ર પર્યાય રૂપ છે, કારણ કે ચારિત્ર ગુણની પણ અનત પર્યાય હોય છે 'अणता अगुरुलहुय पज्जवा" જીવ અનંત અગુરુ લઘુ પર્યાયરૂપ છે ઔદારિક શરીરની અપેક્ષાએ અનત ગુરુ લઘુ પર્યાય રૂપ છે તથા કાર્મણ શરીર અને જીવના સ્વરૂપની અપેક્ષાએ અનત અગુરુ લઘુ પર્યાય રૂપ છે. "नत्थि पुण से अंते" આ રીતે ભાવની અપેક્ષાએ જીવ અત રહિત છે,

હવે જીવની સાન્તતા અને અનતતા વિષેના સમસ્ત કથનનો ઉપસહાર કરતાં સૂત્રકાર કહે છે કે "से त्त दव्वओ जीवे स अंते, खेत्तओ जीवे स अंते, कालओ जीवे अणते भावओ जीवे अणते" દ્રવ્યની અપેક્ષાએ એક જીવ સાન્ત અતયુક્ત છે, ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પણ તે સાન્ત છે, પણ કાળ અને ભાવની અપેક્ષાએ જીવ અનંત 'અતરહિત' છે કહેવાનું પ્રયોજન એ છે કે જીવની જ્ઞાન, દર્શન અને ચારિત્રપર્યાય અનતરૂપ

नै कदाचिन्नासीत्, 'जाव णिच्चा' यावन्नित्या अत्र यावत्पदेन 'न कयाइ न भवइ न कयाइ न भविस्सइ, भविंसु य, भवइ य, भविस्सइ य, धुवा, णियया, सासया, अक्खया, अव्वया, अवट्ठिया' इति सङ्ग्राह्यम्। कालत पूर्वमप्यासीत् सिद्धिरिदानीं विद्यते भविष्यति चानागतकालेऽपि अतो ध्रुवाद्यारभ्य नित्या चेति भावः। 'भावओ य जहा लोयस्स तहा भाणियव्वा' भावतश्च यथा लोकस्य तथा भणितव्या, भावतश्च सिद्धेर्वक्तव्यता लोकवदेव ज्ञातव्येति भाव। तथा च-भावतः सिद्धिरनन्तवर्णगन्धरसस्पर्शपर्यायरूपा, अनन्तसंस्थानपर्यायानन्तगुरुलघुपर्यायानन्तागुरुपर्यायरूपा, नास्ति तस्या अन्त इति। 'तत्थ दव्वओ सिद्धी स अंता' तत्र द्रव्यतः सिद्धि सान्ता 'खेत्तओ सिद्धी स अंता' क्षेत्रत सिद्धिः

स्य ही सिद्ध होता है। क्यों कि भूतकाल में कभी भी कोई दिन ऐसा नहीं हुआ कि जब सिद्धिका सद्भाव न रहा हो। 'जाव न कयाइ न भवइ, न कयाइ न भविस्सइ, भविंसु य, भवइ य, भविस्सइ य, धुवा, णियया, सासया, अक्खया अव्वया, अवट्ठिया णिच्चा' कालसे सिद्धि पहिले भी थी अब भी है, और आगे भी रहेगी। इस कारण यह ध्रुव है नियत है शाश्वत है अक्षय है अव्यय है अवस्थित है और नित्य है। 'भावओ जहा लोयस्स तहा भाणियव्वा' भाव की अपेक्षा से सिद्धि विषयक वक्तव्यता भाव से लोक की वक्तव्यता के समान जाननी चाहिये। इस तरह भाव से सिद्धि अनन्तवर्ण, गंध, रस स्पर्श पर्यायरूप है, अनन्तसंस्थान पर्यायरूप है। अनन्त गुरुलघुपर्यायरूप अनंत अगुरुलघु पर्यायरूप है। इसका कभी अन्त नहीं आता है। इस तरह 'दव्वओ सिद्धि स अंता खेत्तओ सिद्धी स अंता' द्रव्य और क्षेत्रसे सिद्धि सान्त है तथा

સાબિત થાય છે કારણ કે ભૂતકાળમાં એવો કોઈ પણ સમય ન હતો કે જ્યારે તેનું અસ્તિત્વ ન હોય 'जाव न कयाइ न भवइ, न कयाइ न भविस्सइ भविंसु य भवइ य, भविस्सइ य धुवा णियया सासया अक्खया, अव्वया अवट्ठिया णिच्चा" કાળની અપેક્ષાએ ભૂતકાળમાં સિદ્ધિનું અસ્તિત્વ હતું વર્તમાન કાળમાં પણ છે અને ભવિષ્યમાં પણ રહેશે. કારણ કે તે ધ્રુવ નિયત શાશ્વત, અક્ષય, અવ્યય, અવસ્થિત અને નિત્ય છે "भावओ य जहा लोयस्स तहा भाणियव्वा' ભાવની અપેક્ષાએ લોકની અનંતતા જે રીતે સાબિત કરવામાં આવી છે એજ રીતે સિદ્ધિની પણ અનંતતાનું પ્રતિપાદન કરી શકાય છે આ રીતે ભાવની અપેક્ષાએ સિદ્ધિ અનંત વર્ણ, ગંધ રસ સ્પર્શ અને સંસ્થાન પર્યાયરૂપ છે. તે અનંત ગુરુલઘુપર્યાયરૂપ છે અનંત અગુરુલઘુ પર્યાયરૂપ છે. તેનો કદી અંત નથી આ રીતે 'दव्वओ सिद्धी स अंता, खेत्तओ सिद्धी स अंता" દ્રવ્યની અને ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ સિદ્ધિ અન્તયુક્ત

यालीसं जोयणसयसहस्साइं आयामविक्खंभेणं' क्षेत्रतः खलु सिद्धिः पंचचत्वारिंशशतसहस्राणि आयामविष्कंभेण, तत्रायामो दैर्घ्यम् विष्कंभो विस्तारस्तथा च दैर्घ्यविस्ताराभ्यां क्षेत्रतः सिद्धिः पंचचत्वारिंशद्योजनशतसहस्रपरिमिता । अथ परिधिमाह–' एगा जोयणकोडी बायालिसं च जोयणसयसहस्साइं तीसं च जोयणसहस्साइं दोण्णि य अउणा पन्नजोयणसए किंचि विसेसाहिए परिक्खेवेणं ' एका योजनकोटि द्विचत्वारिंशत् च योजनशतसहस्राणि त्रिंशत् च योजन सहस्राणि द्वे च एकोनपंचाशद्योजनशते किंचित् विशेषाधिके परिक्षेपेण । यद्यपि इह सिद्धिः परमार्थतः सकलकर्मक्षयरूपा सिद्धाधारा आकाशप्रदेशरूपा वा । तथापि सिद्धानामाधारभूता आकाशप्रत्यासन्नत्वेन ईषत् प्राग्भारा पृथिव्येवेह सिद्धिशब्देन प्रोक्तेति । ' अत्थि पुण से अंते ' अस्ति पुनस्तस्या अतः । द्रव्यक्षेत्राभ्यां सिद्धि विविच्य कालतस्तामाह–' कालओ ण सिद्धी न कयाइ न आसी ' कालतः सिद्धि

पैंतालीस ४५ लाख योजन लंबी चौडी है। इसकी परिधि एक करोड बयालीस लाख तीस हजार दो सौ गुनचास योजन से कुछ अधिक है, यदि सिद्धि का विचार वास्तविक दृष्टि से किया जावे तो वह सकल कर्म क्षयरूप ही है, अथवा सिद्ध जितने आकाश रूप स्थान में बसते हैं वह सिद्धि है। परन्तु फिर भी सिद्धि शब्दसे यहां ईषत्प्राग्भारा–सिद्ध-शिला–पृथिवी ही ली गई है। क्यों कि वह सिद्धों के आधारभूत आकाशरूप स्थान के पास आई हुई है। 'अत्थिपुण से अंते ' इस तरह उसका अन्त है। अतः द्रव्यसिद्धि और क्षेत्रसिद्धि ये दोनों अन्त सहित हैं। 'कालओ णं सिद्धी न कयाइ न आसी ' कालसे जब सिद्धिके सान्तत्व और अनन्तत्व का विचार किया जाता है तब उसका अनन्त-

न प्रमाणु छे तेनी परिधि (घेरावो) એક કરોડ બેતાળીશ લાખ ત્રીસ હજાર બસો ઓગણપચાશ (૧૪૨૩૦૨૪૯) યોજનથી પણ થોડી વધારે છે. જો વાસ્તવિક દૃષ્ટિએ સિદ્ધિનો વિચાર કરવામા આવે તો તે સકળ કર્મના ક્ષયરૂપ જ છે, અથવા જેટલા આકાશરૂપ સ્થાનમા સિદ્ધ ભગવતો વસે છે તે સ્થાનને સિદ્ધિ કહે છે પણ અહીં "સિદ્ધિ" પદ વડે ઇષત્પ્રાગ્ભારા- સિદ્ધ શિલા–પૃથ્વી જ ગ્રહણ કરવામા અવેલ છે, કારણ કે તે સિદ્ધોના અધારભૂત આકાશરૂપ સ્થાનની પાસે આવેલી છે "अत्थि पुण से अंते" તેથી તે અંતવાળી (સાન્ત) છે આ રીતે દ્રવ્યથીસિદ્ધિ અને ક્ષેત્રથીસિદ્ધિ અન્ત યુક્ત છે. "कालओ ण सिद्धी न कयाइ न आसी" કાળની અપેક્ષાએ સિદ્ધિની સાન્તતા અને અનતતાનો વિચાર કરવમા આવે તો તેની અનંતતા જ

'खेत्तओ ण सिद्धे असंखेज्जपएसिए' क्षेत्रतः खलु सिद्धोऽसंख्येयप्रदेशवान् भवति। तदा -' असंखेज्जपएसोगाढे ' असंख्येयप्रदेशावगाढः असंख्येयेषु गगनप्रदेशेषु अवगाहना विद्यते यस्य स असंख्येयप्रदेशावगाढः । ' अत्थि पुण से अंते ' अस्ति पुनस्तस्यान्तः क्षेत्रत खलु अन्तवान् सिद्धो भवतीत्यर्थः । ' कालओ ण सिद्धे सादीए अपज्जवसिए ' कालतः खलु सिद्धः सादिकः अपर्यवसितः, सादिकः एकमाश्रित्य आदिमान् अपर्यवसितः । अशेषकर्मक्षयरूपा हि सिद्धिः, सा च ज्ञान दर्शन चारित्रादिरूपकारणेनोत्पाद्यते इति सिद्धि विशिष्टजीवस्यापि सादित्व मवश्यंभवतिभाव , ' नत्थि पुण से अंते ' नास्ति पुनस्तस्यांत कालापेक्षया सिद्ध

सिद्ध की अपेक्षा सिद्ध सान्त है 'खेत्तओ ण सिद्धे असंखेज्ज पएसिए ' क्षेत्र से सिद्ध असंख्यात प्रदेशवाला है तथा ' असंखेज्जपएसोगाढे ' आकाश के असंख्यातप्रदेशों में वह अवगाहनावाला है। आकाश के असंख्यात प्रदेशों में जिसकी अवगाहना होती है वह असंख्यातप्रदेशावगाढ कहलाता है ' अत्थि पुणसे अंते क्षेत्र की अपेक्षा सिद्ध सान्त अन्तसहित है। 'कालओ णं सिद्धे सादीए अपज्जवसिए' काल से सिद्ध सादिक-आदिसहित और अपर्यवसितअन्त रहित है। एक को आश्रित कर के सादिक है तथा अनेक सिद्धों को आश्रित कर के वह अपर्यवसित-अनन्त है। समस्त कर्मों के क्षयरूप सिद्धि होती है। यह सिद्धि ज्ञान, दर्शन एवं चारित्र आदिरूप कारणों की पूर्णता से उत्पन्न होती है। अत इस सिद्धि से विशिष्ट जो जीव है वह भी एक की अपेक्षा सादि है ऐसा माना जाता है 'नत्थि पुण से अंते' इस

એક સિદ્ધની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો સિદ્ધ સાન્ત છે "खेत्तओ ण सिद्धे असंखेज्जपएसिए" ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ સિદ્ધ અસંખ્યાત પ્રદેશવાળા છે તથા "असंखेज्जपएसोगाढे" તે આકાશના અસંખ્યાત પ્રદેશોમાં અવગાહનાવાળા છે જેની અવગાહના આકાશના અસંખ્યાત પ્રદેશોમાં હોય છે તેને અસંખ્યાત પ્રદેશાવગાઢ કહેવામાં આવે છે 'अत्थि पुण से अंते ' તેથી ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ સિદ્ધ સાન્ત અન્ત સહિત છે कालओ ण सिद्धे सादीए अपज्जवसिए કાળની અપેક્ષાએ સિદ્ધ સાદિ અનંત છે એટલે કે આદિ સહિત છે અને અંત રહિત છે એક સિદ્ધની અપેક્ષાએ સિદ્ધનો જીવ આદિ સહિત છે તથા અનેક સિદ્ધોની અપેક્ષાએ સિદ્ધના જીવો અપર્યવસિત અનાદિ અનંત છે સિદ્ધિ સંપૂર્ણ કર્મોના ક્ષયરૂપ હોય છે તે સિદ્ધિની ઉત્પત્તિ જ્ઞાન, દર્શન, ચારિત્ર વગેરે રૂપ કારણોની પૂર્ણતાથી થાય છે તેથી તે સિદ્ધિથી યુક્ત જે જીવ છે તે સિદ્ધ કહેવાય છે સિદ્ધ જીવની અપેક્ષાએ સાદિ (આદિથી યુક્ત) અને અનંત મનાય છે પરંતુ ઘણા જીવોની અપેક્ષાએ અનાદિ અનંત છે

सांता 'कालओ सिद्धि अणता' कालतः सिद्धिरनता, 'भावओ सिद्धी अणता' भावतः सिद्धिरनंता हे स्कन्दक तव मनसि योयं संकल्पोऽभूत् किमियं सिद्धिः सांता अनंता वेति तस्य संक्षेपत इदमुत्तरम् द्रव्यक्षेत्राभ्यां सिद्धिः सांता कालभावाभ्यां चानंता। इति तृतोयप्रश्नोस्योत्तरम् ॥ ३ ॥ 'जे वि य ते खदया' योपि च ते स्कन्दक ! 'जाव' यावत्-यावत्पदेन-'ते मनसि एवादृश आध्यात्मिकादिविचारः समुदपद्यत किं सांतः सिद्ध.' इति संग्राह्यम्। 'किं अणंते सिद्धे' किं अनन्तः सिद्धः : तं चेव' तदेव लोकवक्तव्यतावदेवात्रापि वाच्यत् कियत्पर्यन्तमित्याह-'जाव' यावत्-यावत्पदेन द्रव्यक्षेत्रकालभावत. सिद्धश्चतुर्विधो मया प्रज्ञप्तस्तत्र-'दव्वओ णं एगे सिद्धे स अंते' द्रव्यतः खलु एक. सिद्ध. सांतः,

'कालओ सिद्धी अणता, भावओ सिद्धी अणता' कालसे सिद्धि अनन्त है और भावसे भी वह सिद्धि अनंत है। हे स्कन्दक ! तुम्हारे मनमें जो यह संकल्प हुआ है कि सिद्धि सान्त-अन्त सहित या अनन्त अन्त रहित है उसका संक्षेप से यह उत्तर है कि द्रव्य और क्षेत्र की अपेक्षा सिद्धि सान्त अन्त सहित है और काल और भाव की अपेक्षा सिद्धि-अनन्त-अन्त रहित है। इस प्रकार यह तृतीय प्रश्न का उत्तर है।

'जे वि य ते खंदया ! जाव किं अणंते सिद्धे' इस तरह हे स्कन्दक ! जो तुम्हारे मन में उत्पन्न हुआ है कि सिद्ध सान्त-अंत सहित हैं कि सिद्ध अनन्त-अन्त रहित हैं सो इस विषय में सुनो हे स्कन्दक ! द्रव्य से, क्षेत्र से, काल से और भाव से मैंने सिद्ध चार प्रकार के प्ररूपित किये हैं-इनमें 'दव्वओ णं एगे सिद्धे स अंते, द्रव्य से एक सिद्ध सान्त-अन्त सहित हैं। अर्थात्-एक

(સાન્ત) છે પણ "कालओ सिद्धी अणंता, भावओ सिद्धी अणता" કાળ અને ભાવની અપેક્ષાએ સિદ્ધિ અનત છે હે સ્કન્દક ! તમારા ત્રીજા પ્રશ્નોનો સક્ષેપમા આ પ્રમાણે ઉત્તર છે.-દ્રવ્ય અને કાળની અપેક્ષાએ સિદ્ધિ સાન્ત છે, પણ કાળ અને ભાવની અપેક્ષાએ સિદ્ધિ અનંત (અન્તરહિત) છે આ રીતે ત્રીજા પ્રશ્નનુ સમાધાન કરવામા આવ્યુ છે.

"जे वि य ते खदया ! जाव किं अण ते सिद्धे" હે સ્કન્દક ! તમારા મનમા એવી શકા કાક્ષા વગેરે ઉદ્ભવેલ છે કે "सिद्ध" સાન્ત (અન્ત યુક્ત) છે કે અનત (અત રહિત) છે ?" તો તેનુ સમાધાન આ પ્રમાણે છે-હે સ્કન્દક ! દ્રવ્યની અપેક્ષાએ, ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ, કાળની અપેક્ષાએ અને ભાવની અપેક્ષાએ એમ ચાર પ્રકારે મે સિદ્ધની પ્રરૂપણા કરી છે "दव्वओ ण एगे सिद्धे-स अंते" દ્રવ્યની અપેક્ષાએ એક સિદ્ધ સાન્ત અન્ત સહિત છે. એટલે કે

'कालओ ण सिद्धे अणंते' कालतः खलु सिद्धोऽनंत 'भावओ णं सिद्धे अणंते' भावतः खलु सिद्धोऽनन्त, द्रव्यक्षेत्रापेक्षया सिद्धस्यान्तत्त्वं कालभावापेक्षया चानन्तत्वम् भावतो ज्ञानदर्शनाऽगुरुलघुपर्यायस्वरूपेण चान्तस्याभावादिति तस्मात् हे स्कन्दक लोकादि पदार्थ द्रव्यक्षेत्राभ्यां सांत एव कालभावाभ्यां त्वनन्त एव भवतीति । इति चतुर्थप्रश्नस्योत्तरम् ॥ ४ ॥

लोकादारभ्य सिद्धपर्यन्तवस्तुषु सान्तत्वानंतत्वविषयकसंशयस्य निराकरणं कृत्वा साम्प्रत मरणविषयकप्रश्न स्पष्टयति-'जे वि य' इत्यादि । 'जे वि य ते खंदया' योपि च ते स्कन्दक ! 'इमेयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए जाव समुप्पज्जित्था अयमेतद्रूप आध्यात्मिकश्चिन्तितो यावत् समुदपद्यत, इह यावत्करणात् 'क

हार करते हैं (से य दव्वओ णं सिद्धे स अंते, खेत्तओ णं सिद्धे स अंते) सान्तद्रव्य से सिद्ध अन्तसहित है तथा क्षेत्र से भी सिद्ध अन्तसहित है परन्तु (कालओ णं सिद्धे अणंते भावओ णं सिद्धे अणंते) काल से सिद्ध अन्तरहित है और भाव से भी सिद्ध अन्तरहित है। इसलिये हे स्कन्दक ! लोकादि पदार्थ द्रव्य और क्षेत्र की अपेक्षा से सांत हैं और काल एवं भाव की अपेक्षा से वे अनंत हैं। इस प्रकार का यह चतुर्थप्रश्न का उत्तर है।

इस तरह लोक से लेकर सिद्धतक की वस्तुओं में सान्तता अनन्तता विषयक संदेह का निवारण करके अब भगवान् मरण विषयक प्रश्न का स्पष्टीकरण करते हैं-'जे वि य ते खंदया इमेयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए जाव समुप्पज्जित्था" हे स्कन्दक ! जो तुम्हें यह इस प्रकार का आध्यात्मिक, चिन्तित यावत् मनोगत संकल्प उत्पन्न हुआ है, कि

'से य दव्वओ ण सिद्धे स अंते, खेत्तओ ण सिद्धे स अंते" द्रव्य अने क्षेत्रनी अपेक्षाओ सिद्ध अंत सहित छे पण 'कालओ ण सिद्धे अणते, भावओण सिद्धे अणते' काળ अने भावनी अपेक्षाओ सिद्ध अंतसहित छे आ प्रमाणे चोथा प्रश्ननु स्पष्टीकरण करवामां आवु छे, हे स्कन्दक ! लोक वगेरे पदार्थो द्रव्य अने क्षेत्रनी अपेक्षाओ सान्त (अंत सहित) छे, पण काળ अने भावनी अपेक्षाओ अनंत (अंत रहित) छे

आ रीते लोकथी शरू करीने सिद्ध सुधीनी सान्तता अने अनंततानी बाबतना प्रश्नोनु समाधान करीने हवे भगवान मरण विषयना प्रश्ननु समाधान करे छे

"जे वि य ते खंदया ! इमेयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए जाव समुप्पज्जित्था" हे स्कन्दक ! तमने आ प्रकारनो आध्यात्मिक, चिन्तित, (यावत्) मनोगत

स्यांतो न भवति सदैवविद्यमानत्वात् । 'भावओ णं सिद्धे अणंता णाणपज्जवा' भावतः खलु सिद्धः–अनता ज्ञानपर्ययाः ज्ञानपर्यायाणामनंतत्वेन ज्ञानस्य च जीवस्वरूपतया ज्ञानात्मकभावेन सिद्ध जीवोप्यनंतो भवतीत्यर्थः, 'अणता दसणपज्जवा' अनंतादर्शनपर्यवाः यथा ज्ञानपर्याया अनंतास्तथा दर्शनपर्याया अनंतःस्तथा दर्शनपर्याया अपीति, 'अणंता अगुरुलहुपज्जवा' अनंता अगुरु लघुपर्यायाः, अनंता अगुरुलघुपर्यायाः जीवस्वरूपमाश्रित्यागुरुलघुत्वपर्यायत्वं बोध्यमिति । 'नत्थि पुण से अंते' नास्ति पुनस्तस्यांतः तस्य सिद्धस्य भावतः कदाचिदपि अन्तो न भवति सदैव विद्यमानत्वादिति भावः । 'से त्तं दव्वओ णं सिद्धे स अंते' तदेतत् द्रव्यतः खलु सिद्धः सांतः 'खेत्तओ णं सिद्धे स अंते' क्षेत्रतः खलु सिद्धः सांतः,

---

सिद्ध जीव का काल की अपेक्षा से अंत नही होता है क्यों कि वह सदा विद्यमान रहता है । 'भावओ णं सिद्धे अणंता णाणपज्जवा' भाव से सिद्ध अनन्तज्ञानपर्यायरूप हैं । तात्पर्य यह है कि–ज्ञान की पर्यायें अनन्त होती हैं–और ज्ञान जीव का निजस्वरूप है इसलिये ज्ञानरूप होने के कारण सिद्ध जीव भी अन्त रहित है–अनन्तहैं. (अणंता दंसण पज्जवा) जिस प्रकार से ज्ञानकी पर्यायें अनन्त है । उसी तरह से दर्शन की भी पर्यायें अनन्त हैं । अणंता अगुरुलहुयपज्जवा ' अगुरुलघु गुण की पर्यायें भी अनन्त हैं–जीव के स्वरूप का आश्रित कर यहां अगुरुलघुपर्यायता जाननी चाहिये । इसलिये (नत्थिपुण से अंते) सिद्ध जीव का कभी भी भाव की अपेक्षा से अन्त नहीं होता हैं । क्यों कि इस अपेक्षा वह सदा विद्यमान माना गया है । इस कथन का अब उपसं–

"नत्थि पुण से अते" પણ તે સિદ્ધ જીવનો અત હોતો નથી કારણ કે તેનુ અસ્તિત્વ સદા કાળ રહે છે માટે અનંત છે (અત રહિત) છે "भावओ णं सिद्धे अण ता णाणपज्जवा" ભાવની અપેક્ષાએ જીવ અનત જ્ઞાન પર્યાય રૂપ હોય છે–તાત્પર્ય એ છે કે જ્ઞાનની પર્યાયો અનંત હોય છે–અને જ્ઞાન જીવતું નિજસ્વરૂપ છે તેથી જ્ઞાન રૂપ હોવાને કારણે સિદ્ધ જીવ પણ અનત (અત. રહિત) હોય છે अणता दंसणपज्जवा" જેમ જ્ઞાનની પર્યાયો અનંત હોય છે તેમ સિદ્ધને દર્શનની પર્યાયો પણ અનત હોય છે "अणंता अगुरुलहुयपज्जवा" અને અગુરુ લઘુ ગુણની પર્યાયો પણ અનત હોય છે– જીવના સ્વરૂપને અનુલક્ષીને અહીં અગુરુ લઘુ પર્યાયો સમજવી તેથી "नत्थि पुण से अते" ભાવની અપેક્ષાએ સિદ્ધજીવનો કદી પણ અત હોતો નથી તે અન્તરહિત હોય છે. હવે આ કથનનો ઉપસંહાર કરતા સૂત્રકાર કહે છે કે

भगवानाह—'बालमरणे' इत्यादि, 'बालमरणे दुवालसविहे पण्णत्ते' बालमरणं द्वादशविध मज्ञप्तम्। 'तं जहा' तद्यथा–'वलयमरणे' वल-मरणम्, बल्वाः बुभुक्षापिपासादि परिगतत्वेन वलवलायमानस्य यद् मरणं तद्वल-मरणम् अथवा संयमात् पतितो जीवस्य यन्मरणं तद् वल-मरणमिति १ 'वसट्टमरणे' वशार्तमरणम्, वशेनेन्द्रियपयाधीनन ऋतस्य पीडितस्य प्रदीप्तप्रदीपगाक्षित चक्षुषः पतगस्येव यन्मरणं तद्वशार्तमरणम् विषयाधीनत्वेन मरणमिति यावत् २। 'अंतो सल्लमरणे' अन्तः शल्यमरणम् अन्तः शरीरमध्य मविष्टस्य मायादिरूप शल्यस्यानुद्धरणेन यन्मरणम् तदन्तः शल्यमरणम् ३। तथा 'तब्भवमरणे' तद्भ

मरणे दुवालसविहे पण्णत्ते' हे स्कन्दक! बालमरण १२ प्रकार का होता है। 'तंजहा' उस के वे प्रकार ये हैं– 'वलयमरणे' वल-मरण। जब बहुत अधिक भूख प्यास आदि से जीव तडफडाने लगता है तब वह तडफडाता हुआ मरण को प्राप्त हो जाता है–इस मरण का नाम वलय मरण –वल-मरण है। अथवा–संयम से भ्रष्ट हुए जीव का जो मरण है वह वलयमरण है १। 'वसट्टमरण–वशार्तमरणे–प्रदीप्त दीपक के प्रकाश से आकृष्ट हुए नेत्रवाले पतंगिये की तरह इन्द्रियों की आधीनता से दुःखित हुए जीव का जो मरण होता है वह वशार्तमरण है २। 'अंतोसल्लमरणे' अन्तः शल्य मरण–शरीर के भीतर प्रविष्ट मायादिशल्य के अनुद्धरण से जो मरण होता है वह अन्त शल्यमरण है ३। 'तब्भवमरणे' तद्भवमरण–मनुष्यादि पर्याय में रहते हुए जीव का

मरणे दुवालसविहे पण्णत्ते" हे स्कंदक! બાલમરણના બાર પ્રકાર કહ્યાં છે (तं जहा) તે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે

१ "वलयमरण" બાલમરણ (वलन्मरण) જ્યારે ઘણી જ ભૂખ, તરસ વગેરેથી તરફડીને જીવ મરણ પામે છે ત્યારે તે મરણને વલયમરણ કહે છે. અથવા સંયમથી ભ્રષ્ટ થયેલા માણસના મરણને પણ વલયમરણ કહે છે

२ "वसट्टमरण" વશાર્તમરણ–સળગતા દીવાથી આકર્ષાઈને જેવી રીતે પતંગિયા મરે છે તેવી રીતે ઇન્દ્રિયોના ગુલામ બનીને દુખિત થયેલા જીવનું જે મરણ થાય છે તેને વશાર્તમરણ" કહે છે

३ "अंतोसल्लमरण" અન્ત શલ્ય મરણ આત્મામાં પ્રવેશેલ માયા વગેરે શલ્યો ન નીકળવાને કારણે જે મરણ થાય છે–એટલે કે માયા વગેરે શલ્યોનો પરિત્યાગ કર્યા વિના જે મરણ થાય છે તેને અન્ત શલ્ય મરણ કહે છે.

४ "तब्भवमरणे" તદ્ભવ મરણ– મનુષ્ય વગેરે પર્યાયમાં ઉત્પન્ન થયેલ જીવનું

लिपतः प्रार्थितो मनोगत संकल्पः ' इत्यादीनां ग्रहणं कर्तव्यम् । यत्-' केण वा मरणेणं मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा ' केन वा मरणेन म्रियमाणो जीवो वर्द्धते वा हीयते वा, कीदृशं हि मरण जीवस्य संसारं वर्द्धयति कीदृशं च मरणं संसारं ह्रासयतीति प्रश्नः । ' तस्स वि य णं अयमट्ठे ' तस्यापि च खलु अयमर्थः ' एवं खलु खंदया ' एवं खलु स्कन्दक ! ' मए दुविहे मरणे पन्नत्ते ' मया द्विविध मरणं प्रज्ञप्तम् , ' तं जहा ' तद्यथा ' बालमरणे य पडियमरणे य ' बालमरणं च पण्डितमरणं च । मरणस्य बालपडितभेदद्वयं श्रुत्वा किमिदं बाल मरणमिति बालमरणविषयकजिज्ञासावानाह-' से किं तं ' इत्यादि । ' से किं तं बालमरणे ' अथ किं तद् बालमरणम् ? हे भगवन् यदिदं देवानुप्रियेण बाल-पांडित्यभेदेन मरणस्य द्वैविध्यं प्रदर्शितं तत्र किमिदं बालमरण नामेति प्रश्नः

" जीवे " जीव ' केण वा मरणेणं मरमाणे वड्ढइ वा हायइ वा ' किस मरण से मरकर बढता है और किस मरण से मरकर घटता है। तात्पर्य इसका यह है कि कैसा मरण जीव के संसार का वर्धक होता है और कैसा मरण जीव के संसार का ह्रास करने वाला होता है । ' तस्स वि य णं अयमट्ठे ' सो इस प्रश्नका भी यह उत्तर है " एवं खलु खंदया ! मए दुविहे मरणे पण्णत्ते ' कि हे स्कन्दक मैंने मरण दो प्रकार का कहा है । ' तंजहा ' जो इस प्रकार से है-'बाल मरणे य पंडिय मरणे य ' एक बाल मरण और दूसरा पंण्डित मरण । स्कन्दक ने जब मरण के ये दो प्रकार सुनें-तब उसे बालमरण का क्या स्वरूप है ऐसी जिज्ञासा हुई अतः उसने प्रभु से पूछा कि ' से किं तं बालमरणे ' हे भगवान् ! आप देवानुप्रिय ने बालमरण और पंडित मरण के भेद से मरण दो प्रकार का कहा है-सो इनमें बालमरण क्या है ? इस प्रकार स्कन्दन की बालमरण की जिज्ञासा जानकर प्रभुने उसे कहा कि ' बाल

સંકલ્પ ઉત્પન્ન થયો છે કે " जीवे केण वा मरणेण मरमाणे वड्ढइ वा हायइ वा " કેવા પ્રકારના મરણે મરવાથી જીવ પોતાનો સંસાર વધારે છે, અને કેવા પ્રકારના મરણે મરવાથી જીવ પોતાનો સંસાર ઘટાડે છે? " तस्स वि य ण अयमट्ठे " તો તમારા તે પ્રશ્નનો ઉત્તર આ પ્રમાણે છે ' एवं खलु खंदया ! मए दुविहे मरणे पण्णत्ते " હે સ્કન્દક ! મેં બે પ્રકારના મરણ કહ્યા છે (त जहा) તે બે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે-" बालमरणे य पंडियमरणे य " (૧) બાલમરણ અને (૨) પંડિતમરણ ત્યારે સ્કન્દકે મહાવીર પ્રભુને પૂછ્યું કે " से किं त बालमरणे ? " હે ભગવન્ ? બાલમરણનું સ્વરૂપ કેવું હોય છે ? આ પ્રમાણે સ્કન્દકની જિજ્ઞાસા જાણીને પ્રભુ તેને કહે કે " बाल-

तरुपतनम् वृक्षाग्रात् पततो यन्मरणं तत् तरुपतनमरणम् ६। तथा 'जलप्पवेसे' जलप्रवेशः, जलं प्रविश्य यन्मरणं तज्जलप्रवेशमरणमिति ७। तथा 'जलणप्पवेसे' ज्वलनप्रवेशः ज्वलति=अग्नौ प्रविश्य यन्मरणं तज्ज्वलनप्रवेशमरणम् ८। तथा 'विसभक्खणे' विषभक्षणम्, विषं पीत्वा यन्मरणं तद्विषभक्षणमरणम् ९। तथा 'सत्थोवाडणे' शस्त्रावपाटनम् शस्त्रेण करवालादिना अवपाटनं विदारणं यस्मिन् मरणे तत् शस्त्रावपाटनमरणम् १०। 'वेहाणसे' वैहायसम्, विहायसि आकाशे भवम् वृक्षादि शाखायामुद्बन्धनेन यत् मरणं तत् वैहायसमरणम् ११। 'गिद्धपट्ठे' गृद्धस्पृष्टम् गृध्रैरामर्मांसभक्षकैः पक्षिविशेषैः, अथवा गृध्रैः मांसलुब्धकैः शृगालादिभिः स्पृष्टस्य=विदारितस्य अथवा करिकरभरासभादिशरीरान्तर्गतत्वेन यन्मरणं

गिर कर मरना यह तरुपतन मरण है ६। 'जलप्पवेसे' जल में डूब कर जो मरण होता है वह जलप्रवेश मरण है ७। 'जलणप्पवेसे' अग्नि में कूद कर जल जाना यह ज्वलन प्रवेश मरण है ८। 'विसभक्खणे' विषभक्षण-विष पान कर मरना यह विषभक्षण मरण है ९। 'सत्थोवाडणे' तलवार आदि शस्त्रों से अपने शरीर को विदारण कर मरना यह शस्त्रावपाटन मरण है १०। 'वेहायसे' वृक्ष आदि की शाखा पर फांसी लटका कर जो मरण होता है यह वेहायसमरण है ११। गिद्धपट्ठे' मांस खाने वाले पक्षिविशेषों के द्वारा विदारित किये जाने पर जो मरण होता है वह गृद्धस्पृष्ट मरण है। अथवा-हाथी, ऊँट आदि के पैरों के नीचे आ जाने पर अर्थात् उनके पांव के नीचे दब जाने पर जो मरण हो जाता है वह गृद्धस्पृष्ट मरण है। अथवा-मांस लुब्धक

थाय छे तेने वृक्ष पतन मरण कहे छे ७ "जलप्पवेसे" पाणीमां डूबी जवाथी जे मरण थाय छे तेने जल प्रवेश मरण कहे छे ८ 'जलणप्पवेसे' अग्निमां कूदी पडी ने बळी मरवाथी जे मरण थाय छे तेने ज्वलन प्रवेश मरण कहे छे 'विसभक्खणे'-विष खावाथी जे मरण थाय छे तेने विष भक्षण मरण कहे छे १० सत्थोवाडणे" तलवार वगेरे शस्त्रोना घाथी जे मरण थाय छे तेने शस्त्रावपाटन मरण कहे छे ११ वेहायसे' गळे फांसो खाई ने जे मरण उपजाववामां आवे छे तेने वैहायस मरण कहे छे १२ "गिद्धपिट्ठे" गीध वगेरे मांसाहारी पक्षीओ वडे फाडी खवावाथी जे मरण थाय छे तेने गृद्धस्पृष्ट मरण कहे छे अथवा- हाथी, ऊंट वगेरे प्राणीओना पग तळे कचडाई जवाथी जे मरण थाय छे तेने गृद्धस्पृष्ट मरण कहे छे, अथवा मांसाहारी शियाळ वगेरे जानवरो वडे भक्षित थवाने कारणे

वमरणम्, तस्मैभवाय मनुष्यादेः सतो मनुष्यादावेव बद्धायुष्कस्य यन्मरणं तत् तद्भवमरणम् मनुष्यदेहं परित्यज्य पुनरपि मनुष्ये एव प्रादुर्भावः एव तिर्यग् शरीरं परित्यज्य पुनस्तत्रैव जन्मग्रहणमिति, इदं च तद्भवमरणं मनुष्यतिरश्चोरेव संभवति न तु देवनारकयोः देवोदेवशरीरं परित्यज्य नैव देवेषु समुत्पद्यते न वा नारको नरकं परित्यज्य पुनर्नरके एव समुत्पद्यते इति ४। 'गिरिपडणे' गिरिपतनम्, पर्वताग्रात् पतित्वा मरणं गिरिपतनमिति ५। तथा 'तरुपडणे'

उसी पर्याय का आयु बंध कर जो मरण होना है वह तद्भव मरण है ४। तात्पर्य कहने का यह है कि जीव जिस पर्याय में है-उस पर्याय को छोड़कर पुनः उसी पर्याय में जन्म धारण करना यह तद्भव मरण है जैसे कोई मनुष्य मनुष्यपर्याय को छोडकर पुनः मनुष्यपर्याय में जन्म करता है तो यह उसका तद्भव मरण है-(तस्मै भवाय मरणं) तद्भव-मरणं ऐसी इसकी व्युत्पत्ति है इसी तरह तिर्यक् शरीर का परित्याग कर कोई तिर्यञ्च जीव पुनः उसी पर्याय में जन्म धारण करता है तो यह उसका तद्भव मरण है। यह तद्भव मरण मनुष्यगति और तिर्यञ्चगति के जीवों में ही संभवता है। देव और नारकगति के जीवों में नहीं, क्यों कि यह सैद्धान्तिक नियम है कि देव मर कर देव नहीं होता और नारक मर कर नारक नहीं होता है। तथा 'गिरिपडणे' गिरिपतन-पर्वत के ऊपर से गिरकर के मरना-यह गिरिपतन मरण है ५। 'तरुपडणे' वृक्ष से

બીજે ભવે તેજ પર્યાયનો આયુષ્ય બધ બાંધીને જે મરણ થાય છે તે મરણને તદ્ભવ મરણ કહે છે એટલે કે જે પર્યાયમાં જીવ જન્મ પામ્યો હોય તે પર્યાયમાંથી મરીને ફરીથી પાછો તેજ પર્યાયમા ઉત્પન્ન થતો હોય તો તેના મરણને તદ્ભવ મરણ કહે છે. જેમ કે કોઈ જીવ મનુષ્ય પર્યાયને છોડીને ફરીથી પાછો મનુષ્ય પર્યાયમાં જ જન્મ ધારણ કરે તો તેના મરણને તદ્ભવ મરણ કહેછે તદ્ભવ મરણની વ્યુત્પત્તિ આ પ્રમાણે થાય છે- "तस्मै भवाय मरणं" એજ પ્રમાણે કોઇ જીવ તિર્યંચ યોનિમા જન્મ ધારણ કરીને ત્યાથી મરીને ફરીથી તિર્યંચ યોનિમા જન્મ ધારણ કરે તો તેના મરણને તદ્ભવ મરણ કહે છે. તે તદ્ભવ મરણ મનુષ્ય ગતિના જીવોમા જ સભવે છે-દેવ અને નારક ગતિના જીવોમા તે મરણ સભવતું નથી, કારણ કે સિદ્ધાતોમા, એવું કહ્યુ છે કે દેવ મરીને દેવ થતો નથી અને નારક જીવ મરીને નારક ભવમા જન્મ લેતો નથી.

૫ "गिरिपडणे" ગિરિપતન- પર્વત પરથી નીચે પડવાથી થતા મરણને ગિરિપતન મરણ કહે છે. ૬ "तरुपडणे" વૃક્ષ પરથી પડી જવાથી જે મરણ



तरुपतनम् वृक्षाग्रात् पततो यन्मरणं तत् तरुपतनमरणम् ६ । तथा 'जलप्पवेसे' जलप्रवेशः, जलं प्रविश्य यन्मरणं तज्जलप्रवेशमरणमिति ७ । तथा 'जलणप्पवेसे' ज्वलनप्रवेशः ज्वलने=अग्नौ प्रविश्य यन्मरणं तज्ज्वलनप्रवेशमरणम् ८ । तथा 'विसभक्खणे' विषभक्षणम्, विषं पीत्वा यन्मरणं तद्विषभक्षणमरणम् ९ । तथा 'सत्थोवाडणे' शस्त्रावपाटनम् शस्त्रेण करवालादिना अवपाटनं विदारणं यस्मिन् मरणे तत् शस्त्रावपाटनमरणम् १० । 'वेहाणस' वैहायसम्, विहायसि आकाशे भवम् वृक्षादि शाखायुद्बन्धनेन यत् मरणं तत् वैहायसमरणम् ११ । 'गिद्धपट्ठे' गृद्धस्पृष्टम् गृध्रैरामिषमांसभक्षकैः पक्षिविशेषैः, अथवा गृध्रैः मांसलुब्धैः शृगालादिभिः स्पृष्टस्य=विदारितस्य अथवा करिकरभरासभादिशरीरान्तर्गतत्वेन यन्मरणं

गिर कर मरना यह तरुपतन मरण है ६। 'जलप्पवेसे' जल में डूब कर जो मरण होता है वह जलप्रवेश मरण है ७। 'जलणप्पवेसे' अग्नि में कूद कर जल जाना यह ज्वलन प्रवेश मरण है ८। 'विसभक्खणे' विषभक्षण-विष पान कर मरना यह विषभक्षण मरण है ९। 'सत्थोवाडणे' तलवार आदि शस्त्रों से अपने शरीर को विदारण कर मरना यह शस्त्रावपाटन मरण है १०। 'वेहायसे' वृक्ष आदि की शाखा पर फांसी लगा कर जो मरण होता है वह वैहायसमरण है ११। 'गिद्धपट्ठे' मांस खाने वाले पक्षिविशेषों के द्वारा विदारित किये जाने पर जो मरण होता है वह गृद्धस्पृष्ट मरण है। अथवा-हाथी, ऊँट आदि के पैरों के नीचे आ जाने पर अर्थात् उनके पाउ के नीचे दब जाने पर जो मरण हो जाता है वह गृद्धस्पृष्ट मरण है। अथवा-मांस लुब्धक

થાય છે તેને વૃક્ષ પતન મરણ કહે છે ૭ "जलप्पवेसे" પાણીમાં ડૂબી જવાથી જે મરણ થાય છે તેને જળ પ્રવેશ મરણ કહે છે ૮ "जलणप्पवेसे" અગ્નિમાં કુદી પડીને બળી મરવાથી જે મરણ થાય છે તેને જ્વલન પ્રવેશ મરણ કહે છે "विसभक्खणे"-વિષ ખાવાથી જે મરણ થાય છે તેને વિષ ભક્ષણ મરણ કહે છે ૧૦ 'सत्थोवाडणे" તલવાર વગેરે શસ્ત્રોના ઘાથી જે મરણ થાય છે તેને શસ્ત્રાવપાટન મરણ કહે છે ૧૧ "वेहायसे" અને ફાંસો ખાઈને જે મરણ ઉપજાવવામાં આવે છે તેને વૈહાયસ મરણ કહે છે ૧૨ "गिद्धपिट्ठे' ગીધ વગેરે માંસાહારી પક્ષીઓ વડે ફાડી ખવાવાથી જે મરણ થાય છે તેને ગૃદ્ધસ્પૃષ્ટ મરણ કહે છે અથવા- હાથી, ઉંટ, વગેરે પ્રાણીઓના પગ તળે ચગદાઇ જવાથી જે મરણ થાય છે તેને ગૃદ્ધ પૃષ્ઠ મરણ કહે છે, અથવા માંસાહારી શિયાળ વગેરે જાનવરો વડે ભક્ષિત થવાને કારણે

तत् गृध्रस्पृष्टं वा अथवा गृध्रैर्भक्षितपृष्ठस्य यन्मरणं तद् गृध्रस्पृष्टमरणमिति १२। 'इच्चेतेणं खंदया दुवालसविहेणं बालमरणेणं मरमाणे जीवे अणंतेहिं नेरइयभवग्गहणेहिं अप्पाणं संजोएइ' इत्येतेन स्कन्दक द्वादशविधेन बालमरणेन म्रिजीवोऽनंतैर्नैरयिकभवग्रहणैरात्मानं संयोजयति, द्वादशविधबालमरणेन म्रियमाणस्य जीवस्यानन्तनारकभवप्राप्तिर्भवतीति भावः। 'तिरियमणुयदेव० अणाइयं च णं अणवदग्गं दीहमद्धं चाउरंतसंसारकंतारं अणुपरियट्टइ' तिर्यग्मनुष्य-

---

श्रृगाल आदि जानवरों द्वारा भक्षित किये जाने पर जो मरण होता है वह गृद्ध स्पृष्ट मरण है। अथवा गिद्धपक्षियों द्वारा पृष्टभाग खा जाने पर जो मरण होता है वह गृद्धस्पृष्ट मरण है। 'करिकरभरासभादि शरीरान्तर्गतत्वेन' इस पद का यह अर्थ होता है कि हाथी के भव में ऊँट के भव में अथवा रासभ-गधा आदि के भव में वर्तमान जीव का गृद्धपक्षियों के द्वारा शरीर विदारित किये जाने पर जो मरण हो जाता है वह गृद्धस्पृष्ट मरण है १२। 'इच्चेतेणं खंदया! दुवालसविहेणं बालमरणेणं मरमाणे जीवे अणंतेहिं नेरइयभवग्गहणेहिं अप्पाणं संजोएइ' हे स्कन्दक! इन बारह प्रकार के बालमरणो से मरता हुआ जीव अनन्त नारक जीवों के भवग्रहणों से अपने को युक्त करता है अर्थात् बारह प्रकार के बालमरण से मरते हुए जीव को अनन्त नारक भवों की प्राप्ति होती है यही उसके संसार बढ जाने से उसकी वृद्धि है। 'तिरियमणुय देव० अणाइयं णं अणवदग्गं दीहमद्धं चाउरंतसंसारकंतारं अणुपरियट्टइ' इसी तरह से इन बारह प्रकार के बालमरणों से

જે મરણ થાય છે તેને ગૃદ્ધસ્પૃષ્ટ મરણ કહે છે અથવા ગીધ વગેરે પક્ષીઓ વડે પૃષ્ટ ભાગનુ ભક્ષણ થઇ જવાને કારણે જે મરણ થાય છે તેને ગૃદ્ધસ્પૃષ્ટ મરણ કહે છે "करिकरभरासभादि शरीरान्तर्गतत्वेन' આ પદોનો આ પ્રમાણે અર્થ થાય છે- હાથીના ભવમા, ઊંટના ભવમા, અથવા ગધેડા વગેરેના ભવમા વિદ્યમાન જીવના શરીરને ગીધો વડે ફાડી ખાવામા આવ્યુ હોય તો તેમના તે મરણને પણ ગૃદ્ધસ્પૃષ્ટ મરણ કહે છે

"इच्चे तेण खंदया! दुवालसविहेण बालमरणेण मरमाणे जीवे अणंतेहिं नेरइयभवग्गहणेहिं अप्पाणं संजोएइ" હે સ્કન્દક! આ બાર પ્રકારના બાલ-મરણોથી મરતો જીવ પોતાની જાતને અનંત નારક જીવોના ભવગ્રહણથી યુક્ત કરે છે એટલે કે એવા જીવોને અનંત નારક ભવોની પ્રાપ્તિ થાય છે. આ રીતે તેનો સંસાર વધી જવાથી તે જીવની વૃદ્ધિ થાય છે એમ કહેવામા આવ્યું છે 'तिरिय-मणुय-देव-अणाइय ण अणवदग्ग दीहमद्धं चाउरंत-संसा-रकंतार अणुपरियट्टइ" આ પ્રમાણે બાર પ્રકારના બાલ મરણથી મરતો જીવ

देव भवग्रहणैरात्मान संयोजयति आनादिकं च खलु अनवदग्र दीर्घाध्वं चातुरन्त संसारकान्तारमनुपर्यटति, 'से च मरमाणे वड्ढइ' तदेतत् म्रियमाणो वर्द्धते अनेन प्रकारेण म्रियमाणो जीवो वर्द्धते संसार दीर्घीकरोतीत्यर्थः, 'से त्तं बालमरणे' तदेतत् बालमरणम्, बालमरणं निरूप्य पण्डितमरणं निरूपयितुमाह—'से किं त पंडियमरणे' इत्यादि। अथ किं तत् पण्डितमरणम्, भगवानाह— 'पंडिय मरणे' इत्यादि। 'पंडियमरणे दुविहे पण्णत्ते' पण्डितमरणं द्विविधं प्रज्ञप्तम्, तत्त्वातत्त्वविवेकनिष्कलस्य जीवस्य यन्मरण तद्बालमरणम्, तथा तत्त्वातत्त्वविवेक

मरा जीव अनन्त तिर्यंच संबंधी अनंत मनुष्य संबंधी और अनंत देव संबंधी भवों में जन्म मरण करता रहता है इस तरह यह अनादि अनंत इसदीर्घ मार्गवाले चतुर्गतिरूप संसार में ही बार २ जन्म मरण के चक्कर में पड़कर अपने लिये संसार बढ़ाता रहता है। 'से त्तं मरमाणे वड्ढइ' इस प्रकार से संसार का जो बढ़ना है वह जीव का बढ़ना है। कहने का तात्पर्य यही है कि बालमरण से मरा हुआ जीव अपने संसार को दीर्घ करता है। 'से त्तं बालमरणे' इस प्रकार से यह बालमरण के विषयमें स्पष्टीकरण है। 'से किं तं पंडियमरणे' हे भदन्त! पण्डित मरण क्या है? 'पंडियमरणे दुविहे पण्णत्ते' पण्डित मरण दो प्रकार का कहा गया है तत्त्व और अतत्त्व के विवेक से विकल बने हुए प्राणी का जो मरण होता है वह तो बाल मरण कहलाता है—और तत्त्व एवं अतत्त्व के विवेक से युक्त हुए प्राणी का जो मरण होता है वह पंडित मरण कहलाता है। यह पादपोपगमन और भक्तप्रत्याख्यान के भेद से

તિર્યંચ, મનુષ્ય અને દેવના અનંત ભવોમાં જન્મ મરણ કરતો રહે છે, એટલે કે તે અનાદિ અનંત અને દીર્ઘ માર્ગ વાળા ચાર ગતિ રૂપ સંસાર કાંતારમાં વાર વાર પરિભ્રમણ કર્યા કરે છે આ રીતે તે જીવનો સંસાર વધતો રહે છે "से च मरमाणे वड्ढइ" આ રીતે સંસારના વધવાને જીવનું વધવું કહેવામાં આવ્યું છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે બાર પ્રકારનાં બાલમરણથી મરેલો જીવ પોતાના સંસારની વૃદ્ધિ કરે છે 'से त्तं बालमरणे" આ પ્રમાણે બાલ મરણનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે

પ્રશ્ન- से किं त पंडियमरणे પંડિત મરણ એટલે શું?

ઉત્તર- पंडियमरणे दुविहे पण्णत्ते' પંડિત મરણ બે પ્રકારનાં કહ્યાં છે તત્ત્વ અને અતત્ત્વના વિવેકથી રહિત જીવનું જે મરણ હોય છે તેને બાલમરણ કહે છે, અને તત્ત્વ અને અતત્ત્વના વિવેકથી યુક્ત જીવનું જે મરણ હોય છે.

यतोमरणं तत् पंडितमरणं तच्च पंडितमरणं द्विविधम् द्विविधप्रकारकं प्रज्ञप्तम्, 'तं जहा' तद्यथा 'पाओवगमणे य भत्तपच्चक्खाणे य' पादपोपगमनं च भक्त प्रत्याख्यानं चेति। 'से किं तं पाओवगमणे' अथ किं तत् पादपोपगमनम्? भगवानाह-'पाओवगमणे' इत्यादि। 'पाओवगमणे दुविहे पण्णत्ते' पादपोपगमनं द्विविधं प्रज्ञप्तम् 'तं जहा' तद्यथा-'नीहारिमे य अनीहारिमेय नियमा अप्पडिकम्मे' निर्हारिमं च अनिर्हारिमं च नियमात् अप्रतिकर्म पादपो वृक्षस्तस्येवोपगमनं निष्क्रियतयाऽवस्थानम् इति पादपोपगमनम्, यथा छिन्नमूलो वृक्षःसमे विषमे वा स्थाने पतितः सन् तथारूपेणैवावतिष्ठते तथैव समे विषमे वाऽवस्थितः सन् यावज्जीवमवस्थितो भवेद् यत्र मरणे तत् पादपोपगमनमरणमित्यर्थः। इह पादपोपगमननामकं मरणं चतुर्विधाहारपरित्यागेन भवतीति, तात्पादपोपगमननामकं मरणं द्विविधम् निर्हा-

दो प्रकार का होता है। पादपोपगमन के निर्हारिम और अनिर्हारिम ऐसे दो भेद किये गये हैं इन दोनों भेदों में प्रतिकर्म नहीं होता है। इस कथन का स्पष्ट अर्थ इस प्रकार से जानना चाहिये-पादप नाम वृक्ष का है सो इस मरण में मुनि कटे हुए वृक्ष की तरह केवल निष्क्रिय रूप से ही रहता है। जिस प्रकार छिन्न मूल वाला वृक्ष जिस किसी स्थान में चाहे वह सम हो अथवा विषम हो जिसरूप में गिरता है उसी रूप में वहीं पड़ा रहता है उसी प्रकार से सम अथवा विषम स्थान में रहता हुआ मुनि यावज्जीव निष्क्रियरूप स्थिति में जिस मरण में रहता है वह पादपोपगमन पण्डित मरण है। यह पादपोपगमन नामका मरण चारों प्रकार के आहार परित्याग कर देने से होता है। इसमें वैयावृत्य कराना

તેને પંડિત મરણ કહે છે. પંડિત મરણના આ પ્રમાણે બે પ્રકાર છે- (૧) પાદપોપગમન અને (૨) ભક્તપ્રત્યાખ્યાન પાદપોપગમન મરણના બે ભેદ છે- (૧) નિર્હારિમ અને (૨) અનિર્હારિમ તે બન્ને ભેદોમાં પ્રતિકર્મ થતુ નથી તે કથનનું સ્પષ્ટીકરણ નીચે મુજબ છે પાદપ એટલે વૃક્ષ પાદપોપગમન મરણમાં મુનિ તૂટી પડેલા વૃક્ષની જેમ જે નિષ્ક્રિય રૂપે રહે છે જેવી રીતે જડમૂળમાથીઉખડી પડેલું વૃક્ષ જે સ્થાને પડ્યુ હોય તે સ્થાને એક જ સ્થિતિમાં પડ્યું રહે છે-સ્થાન સમ હોય કે વિષમ હોય છતાં પડતી વખતે જે સ્થિતિમા વૃક્ષ પડ્યું હોય એજ સ્થિતિમા પડ્યું રહે છે એજ પ્રમાણે સમ અથવા વિષમ સ્થાનમા રહેલો મુનિ જે મરણમાં જીવનો અન્ત આવે ત્યા સુધી નિષ્ક્રિય દશામાજ પડ્યો રહે છે તે મરણને પાદપોપગમન પંડિતમરણ કહે છે આ પાદપોપગમન મરણ ચારે પ્રકારના આહારના પરિત્યાગથી થાય છે, તેમા સેવા કરવામાં આવતી નથી કારણ કે તે નિયમથી

रिमम् अनिर्हारिम च नियमतः मतिकर्मरहितं वैयावृत्यरहितमित्यर्थः । तत्र निर्हारेण ग्रामादर्बहिर्निष्कासनेन निर्वृत्त यन्मरणं तत् निर्हारिमं, य उपाश्रये म्रियते तस्यै तन्मरणं भवति, यः साधुरुपाश्रयादौ शरीर त्यजति तस्य मृतस्य शरीरं साधुभि श्रावकादिभिर्वा बहिर्निष्काश्यते तत् निर्हारिममरणम् । य अरण्यादौ म्रियते तस्य मरणमनिर्हारिममरणम् । इदं च द्विविधमपि मरणं साधुकृतवैयावृत्त्यरहितं भवतीति । 'स त्तं पाओवगमणे ' तदेतत्पादपोपगमनम् । अथ भक्तप्रत्याख्यानमरणस्य स्वरूप दर्शयितुमाह–' से किं तं ' इत्यादि ' से किं त भत्तपच्चक्खाणे

नहीं होता है । क्यों कि यह नियम से वैयावृत्य से रहित होता है इसके जो निर्हारिम और अनिर्हारिम ऐसे जो दो भेद कहे गये हैं सो उनमें से निर्हारिम का तात्पर्य यह है कि जो मरण निर्हार से होता है वह निर्हारिम मरण है अर्थात् जो साधु उपाश्रय में मरता है और फिर उसका मृतक शरीर साधुओं द्वारा या श्रावकों द्वारा जो बाहर निकाला जाता है सो वह निर्हारिम पादपोपगमनमरण है । निर्हार शब्द का अर्थ बाहर काढना है पूर्वोक्त साधुका शव बाहर काढा जाता है–इसलिये उसका ऐसा मरण निर्हारिम कहा जाता है । तथा जो साधु अपने शरीर को अटवी में ही छोडता है उसका शव बाहर काढने में नहीं आता है–अतःऐसा मरण अनिर्हारिम मरण है । दोनों भी प्रकार का यह मरण साधुओं द्वारा किये गये वैयावृत्य से रहित होता है । 'से त्तं पाओवगमणे' इस प्रकार यह पादपोपगमन का कथन है । 'से किं त भत्तपच्चक्खाणे ' भक्तप्रत्याख्यान का

જ સેવાથી રહિત હોય છે તેના નિર્હારિમ અને અનિર્હારિમ એવા જે બે ભેદ કહ્યા છે તે ભેદનું સ્પષ્ટીકરણ આ પ્રમાણે છે– જે મરણ નિર્હારથી થાય છે તેને નિર્હારિમ મરણ કહે છે' નિર્હાર'' એટલે બહાર કાઢવું તે જે સાધુ ઉપાશ્રય વગેરેમા મરણ પામે છે અને પછી તેના મૃતશરીરને શ્રાવકો વડે બહાર કાઢવામાં આવે છે, તે સાધુના મરણને નિર્હારિમ પાદપોપગમન મરણ કહે છે આ રીતે મરણ પામનાં સાધુના શબને બહાર કાઢવામાં આવે છે તેથી તેના મરણને નિર્હારિમ કહે છે પણ જે સાધુ પ્રથમ થી જ ઉપાશ્રય વગેરે છોડી ને વનમાં પહાડ ઉપર જઈને પાદપોપગમન મરણથી વનમાં કે પહાડ ઉપર મરણ પામે છે તેના શબને બહાર કાઢવાની જરૂર રહેતી નથી. એ પ્રકારના મરણને " અનિર્હારિમ મરણ " કહે છે આ બન્નેપ્રકારનાં મરણ સાધુઓ દ્વારા કરવામાં આવતી સેવાથી રહિત હોય છે " સે ત્તં પાઓવગમણે " પાદપોપગમન મરણનું આ પ્રકારનું સ્વરૂપ છે

अथ किं तद् भक्तप्रत्याख्यानम् भगवानाह–' भत्तपच्चक्खाणे दुविहे' पन्नत्ते भक्तप्रत्याख्यानं द्विविधं प्रज्ञप्तम् ' तं जहा ' तद्यथा–' नीहारिमे य अनीहारिमे य नियमासप्पड़िकमे ' निर्हारिमं च अनिर्हारिमं च नियमात् सप्रतिकर्म ' से त्तं भत्तपच्चक्खाणे ' तदेतत् भक्तप्रत्याख्यानम् ' इच्चेतेणं खंदया ' इत्येतेन स्कन्दक ' दुविहेणं पंडियमरणेणं मरमाणे जीवे ' द्विविधेन पंडितमरणेन म्रियमाणो जीवः ' अणंतेहिं नेरइयभवग्गहणेहिं अप्पाणं विसंजोएइ ' अनन्तै नैरयिकभवग्रहणैः आत्मानं विसंयोजयति=पृथक्करोति नरकेषु नैव गच्छतीति भावः। ' जाव ' यावत्–यावत्पदेन ' तिरियमणुयदेवभवग्गणेहिं अप्पाणं विसजोएइ,

स्वरूप क्या है? सो इसका स्वरूप प्रकट किया जाता है–भक्तप्रत्याख्यान भी दो प्रकार का कहा गया है–एक निर्हारिम और दूसरा अनिर्हारिम, यह भक्तप्रत्याख्यान मरण पादपोपगमन मरण की तरह प्रतिकर्मसे रहित नहीं होता है किन्तु 'नियमा सप्पडिक्कमे, यह नियमसे प्रतिकर्म से सहित होता है। 'से त्तं भत्तपच्चक्खाणे' इस तरहसे यह भक्तप्रत्याख्यानका स्वरूप है। ' इच्चेतेणं खंदया! दुविहेणं मरणेणं मरमाणे जीवे अणंतेहिं नेरइयभवग्गहणेहिं अप्पाणं विसंजोएइ' इस प्रकार से हे स्कन्दक! जो जीव भक्त प्रत्याख्यान और पादपोपगमन इन दो प्रकारके मरणोंसे युक्त होकर मरता है अर्थात् इन दो प्रकारके मरणको स्वीकार कर अपने शरीर का त्याग करता हैं, वह जीव अनन्त नैरइक भवसंबंधी भवग्रहण से अपने आपको रहित बना लेता है, अर्थात् –मर कर ऐसा साधुजीव नरकों में जन्म नहीं लेता है।' तिरिय मणुय देव भवग्गहणेहिं अप्पाणं विसंजोएइ' फिर वह अनन्त तिर्यंच भव

પ્રશ્ન–"से किं तं भत्तपचक्खाणे" ભક્તપ્રત્યાખ્યાન મરણનું કેવું સ્વરૂપ છે?

ઉત્તર—ભક્તપ્રત્યાખ્યાનનાં પણ બે પ્રકાર કહ્યાં છે (૧) નિર્હારિમ અને (૨) અનિર્હારિમ તે ભક્તપ્રત્યાખ્યાન મરણ પાદપોપગમન મરણની જેમ પ્રતિકર્મથી રહિત હોતુ નથી. પણ " नियमा सप्पडिक्कमे " તે નિયમથી પ્રતિકર્મથી યુક્ત જ હોય છે " से त्तं भत्तपचक्खाणे " આ પ્રકારનું ભક્તપ્રત્યાખ્યાનનું સ્વરૂપ છે.

" इच्चेतेण खंदया! दुविहेणं मरणेण मरमाणे जीवे अणतेहिं नेरइयभवग्गणेहिं अप्पाण विसजोएइ " હે સ્કન્દક! જે જીવ આ બે પ્રકારના પંડિત મરણથી પોતાના શરીરનો પરિત્યાગ કરે છે તે અનત નારક ભવોથી પોતાની જાતને રહિત બનાવે છે એટલે કે તે પ્રકારનો સાધુ મરણ પામીને નરક ગતિમાં ઉત્પન્ન થતો નથી. " तिरियमणुयदेवभवग्गहणेहिं अप्पाणं विसंजोएइ "

अणाइयं च णं अणवयग्ग दीहमद्धं चाउरंतसंसारकंतारं ' इति संग्रहः, ' वीईवयइ' व्यतिव्रजति, अयं भावः—अनन्तैस्तिर्यङ्मनुजदेवभवग्रहणैरात्मानं वियोजयति= पृथक्करोति नरकतिर्यगादिभवान् न प्राप्नोति इत्यर्थः, तर्हि किं करोतीत्याह- अनादिकं च खलु अनवदाग्रम्—अनन्तं संसारकान्तारं=संसाराटवीं व्यतिव्रजति= उल्लङ्घयति—न पुनः संसारं प्राप्नोतीति भावः । 'से णं मरमाणे हायइ ' तदेतन्म्रियमाणो हीयते पण्डितमरणेन म्रियमाणो जीवः संसारं समुल्लङ्घयतीति भावः ।

संबंधी, अनंत मनुष्य संबंधी, अनंत देवसंबंधी भवों से अपने को दूर करता है। इस तरह यह 'अणाइयं च णं अणवदग्गं दीहमद्धं चाउरंत संसारकंतारं' अनादि अनंतरूप इस संसार अटवी को कि जिसका मार्ग बहुत बड़ा लंबा है और जो चतुर्गतिरूप है ' वीइवयइ' बिलकुल पार कर देता है, अर्थात् मोक्षपद को प्राप्त कर लेता है। 'से णं मर माणे हायइ ' इस तरह से मरने वाला जीव घटता है—अर्थात्—अपने संसार का अंत कर देता है—यही जीव का घटना है। तात्पर्य कहने का यह है कि संसार दशा में जीव का पड़ा रहना बिना कर्म के संबंध के होता नहीं है अतः कर्म के सम्बन्ध का होना मानो यही जीव का वजनदार बनना है और जो चीज वजनदार होती है वह नहीं वजन दार वस्तु की अपेक्षा बड़ी ही मानी जाती है—इसलिये संसार से पार होने वाले जीव की अपेक्षा जो संसार में ही पड़ा हुआ है ऐसा

વળી તે અનંત તિર્યંચ ભવોથી, અનન્ત મનુષ્ય ભવોથી અને અનન્ત દેવ ભવોથી પણ પોતાની જાતને રહિત બનાવે છે એટલે કે તેને તિર્યંચ મનુષ્ય અને દેવોમાં પણ જન્મ લેવા પડતા નથી. આ રીતે તે " अणाइयं च अणव दग्गं दीहमद्धं चाउरंतसंसारकंतारं " અનાદિ, અનંત, દીર્ઘમાર્ગવાળા અને ચારગતિવાળા સંસારરૂપી વનને 'वीइवयइ' ઓળંગી જાય છે, એટલે કે મોક્ષપદને પ્રાપ્ત કરે છે " से णं मरमाणे हायइ ' આ પ્રમાણે મરતાં જીવ સંસારને ઘટાડવાથી ઘટે છે એટલે કે પંડિત મરણથી મરણ પામનાર જીવનો સંસાર ઘટે છે સંસારમાં પરિભ્રમણ કરવાનો અન્ત આવી જાય છે કહેવાનું તાત્પર્ય એવું છે કે કર્મને કારણે જ જીવને સંસારમાં ભ્રમણ કરવું પડે છે. કર્મના સંબંધ વિના જીવને સંસારમાં રહેવું પડતું નથી. કર્મના સંબંધથી જીવ ભારેકર્મી બને છે જેવી રીતે વજનદાર વસ્તુ પાણીમાં ડૂબેલી રહે છે તેમ કર્મના સંબંધથી ભારેકર્મી બનેલા જીવને સંસારસાગરમાં તણા ડૂબેલા રહેવું પડે છે વજનદાર ચીજને હલકી ચીજ કરતાં ભારે માનવામાં આવે છે—તે કારણે સંસારને પાર પામનારા જીવ કરતાં સંસારમાં પોતા

अथ किं तद् भक्तप्रत्याख्यानम् भगवानाह–'भत्तपच्चक्खाणे दुविहे' पन्नत्ते भक्त-प्रत्याख्यानं द्विविधं प्रज्ञप्तम् 'तं जहा' तद्यथा–'नीहारिमे य अनीहारिमे य नियमासप्पडिक्कमे' निर्हारिमं च अनिर्हारिमं च नियमात् सप्रतिकर्म 'से त्तं भत्तपच्चक्खाणे' तदेतत् भक्तप्रत्याख्यानम् 'इच्चेतेणं खंदया' इत्येतेन स्कन्दक 'दुविहेणं पंडियमरणेणं मरमाणे जीवे' द्विविधेन पंडितमरणेन म्रियमाणो जीवः 'अणंतेहिं नेरइयभवग्गहणेहिं अप्पाणं विसंजोएइ' अनन्तै नैरयिक-भवग्रहणैः आत्मानं विसंयोजयति=पृथक्करोति नरकेषु नैव गच्छतीति भावः। 'जाव' यावत्–यावत्पदेन 'तिरियमणुयदेवभवग्गणेहिं अप्पाणं विसंजोएइ,

स्वरूप क्या है? सो इसका स्वरूप प्रकट किया जाता है–भक्तप्रत्याख्यान भी दो प्रकार का कहा गया है–एक निर्हारिम और दूसरा अनिर्हारिम, यह भक्तप्रत्याख्यान मरण पादपोपगमन मरण की तरह प्रतिकर्मसे रहित नहीं होता है किन्तु 'नियमा सप्पडिक्कमे, यह नियमसे प्रतिकर्म से सहित होता है। 'से त्तं भत्तपच्चक्खाणे' इस तरहसे यह भक्तप्रत्याख्यानका स्वरूप है। 'इच्चेतेणं खंदया! दुविहेणं मरणेणं मरमाणे जीवे अणंतेहिं नेरइयभवग्गहणेहिं अप्पाणं विसंजोएइ' इस प्रकार से हे स्कन्दक! जो जीव भक्त प्रत्याख्यान और पादपोपगमन इन दो प्रकारके मरणोंसे युक्त होकर मरता है अर्थात् इन दो प्रकारके मरणको स्वीकार कर अपने शरीर का त्याग करता हैं, वह जीव अनन्त नैरइक भवसंबंधी भवग्रहण से अपने आपको रहित बना लेता है, अर्थात् –मर कर ऐसा साधुजीव नरकों में जन्म नहीं लेता है।' तिरिय मणुय देव भवग्गहणेहिं अप्पाणं विसंजोएइ' फिर वह अनन्त तिर्यंच भव

પ્રશ્ન–"से किं तं भत्तपचक्खाणे" ભક્તપ્રત્યાખ્યાન મરણનું કેવું સ્વરૂપ છે?

ઉત્તર—ભક્તપ્રત્યાખ્યાનનાં પણ બે પ્રકાર કહ્યાં છે (૧) નિર્હારિમ અને (૨) અનિર્હારિમ તે ભક્તપ્રત્યાખ્યાન મરણ પાદપોપગમન મરણની જેમ પ્રતિકર્મથી રહિત હોતુ નથી પણ "नियमा सप्पडिक्कमे" તે નિયમથી પ્રતિ-કર્મથી યુક્ત જ હોય છે "से त्तं भत्तपचक्खाणे" આ પ્રકારનુ ભક્તપ્રત્યા-ખ્યાનનું સ્વરૂપ છે.

"इच्चेतेण खंदया! दुविहेणं मरणेण मरमाणे जीवे अणंतेहिं नेरइयभवग्गणेहिं अप्पाण विसंजोएइ" હે સ્કન્દક! જે જીવ આ બે પ્રકારના પંડિત મરણથી પોતાના શરીરનો પરિત્યાગ કરે છે તે અનંત નારક ભવોથી પોતાની જાતને રહિત બનાવે છે એટલે કે તે પ્રકારનો સાધુ મરણ પામીને નરક ગતિમાં ઉત્પન્ન થતો નથી. "तिरियमणुयदेवभवग्गहणेहिं अप्पाणं विसंजोएइ"

मूलम्-"एत्थ णं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते संबुद्धे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी इच्छामि णं भंते तुब्भं अंतिए केवलिपन्नत्तं धम्मं निसामित्तए, अहासुहं देवाणुप्पिया मा पडिबन्धं करेह, तएणं समणे भगवं महावीरे खंदयस्स कच्चायणस्स गोत्तस्स तीसे य महइ महालयाए परिसाए धम्मं परिकहेइ धम्मकहाओ भाणियव्वा तएणं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सोच्चा णिसम्म हट्टतुट्ठ जाव हियए उट्ठाए उट्ठइ उट्ठित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ करित्ता वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी सद्दहामि णं भंते! णिग्गंथं पावयणं पत्तियामि णं भंते! णिग्गंथं पावयणं रोएमि णं भंते! णिग्गंथं पावयणं अब्भुट्ठेमि णं भंते! णिग्गंथं पावयणं एवमेयं भंते! तहमेयं भंते! अवितहमेयं भंते! असंदिद्धमेयं भंते! इच्छियमेयं भंते! पडिच्छियमेयं भंते! इच्छियपडिच्छियमेयं भंते! से जहेयं तुब्भे वयइत्ति कट्टु समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता, उत्तरपुरत्थिमं दिसिभागं अवक्कमइ अवक्कमित्ता तिदंडं च कुंडियं च जाव धाउरत्ताओ य एगंते एडेइ एडित्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ

कान्तार को पार कर देता है। यही जीव का घन्ना है, इस प्रकार से भगवान ने स्कन्दक के प्रश्नों का उत्तर दिया ॥ सू० १२ ॥

એનું નામ જ છવનું "અથવા છવના સંસારનું" પરતું છે આ પ્રમાણે ભગવાને સ્કન્દક પરિવ્રાજકના પાસે પ્રશ્નોના ઉત્તર આપ્યા ॥ સૂ. ૧૨ ॥

'से त्तं पंडियमरणे' तदेतत् पंडितमरणम् 'इच्चेएण खंदया दुविहेणं मरणेणं मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा' इत्येतेन हे स्कन्दक! द्विविधेन मरणेन म्रियमाणो जीवो वर्द्धते वा हीयते वा, एतयो र्द्विविधमरणयोर्मध्ये बालमरणेन म्रियमाणो जीवः अनन्तैर्नारकादिभवग्रहणैरनादिकमनन्तं दीर्घमार्गं संसारकान्तारं भ्रमति, पण्डितमरणेन च म्रियमाणो जीवः संसारकान्तारं समुल्लङ्घयतीति भावः। अनेन प्रकारेण स्कन्दक प्रश्नानां भगवानुत्तरं दत्तवानिति ॥ सू० १२ ॥

जीव कर्म बंध के कारण वजनदार होने से बढ़ा हुआ है और जो कर्म बंध से रहित हो गया है वह विना वजन के होने के कारण उसकी अपेक्षा हल्का है इस प्रकार हृद्य धारण कर सूत्रकार ने जीव का संसार का बढ़ना है और जीव का संसार का अंत होना घटना है ऐसा कहा है संसार कैसे बढ़ता है और कैसे वह घटता है यह सब विषय ही इस सूत्र द्वारा प्रकट किया गया है। 'से त्तं पंडित मरणे' इस प्रकार से यह पंडित मरण का स्वरूप है। इस कथन का उपसंहार करते हुए प्रभु अंत में स्कन्दक से कहते हैं कि-'इच्चेएण खंदया! दुविहे णं मरणेणं मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा' हे स्कन्दक! इन दो प्रकार के मरणों में से बालमरण से मरता हुआ जीव अनंत नारक आदि के भवग्रहणों से अनादि अनंत दीर्घ मार्ग वाले इस संसार कांतार में भ्रमण करता रहता है यही जीव का बढना है और पण्डित मरण से मरता हुआ जीव इस पूर्वोक्त विशेषण वाले संसार

જીવને કર્મબંધને કારણે ભારે કર્મી માનવામાં આવે છે, પણ કર્મબંધથી રહિત થયેલા જીવને વજન વિનાનો હોવાથી હળુકર્મી માનવામાં આવે છે. આ પ્રકારે સૂત્રકારે જીવના સંસારની વૃદ્ધિને જીવની વૃદ્ધિ કહી છે અને જીવના સંસારની હાનિને જીવનો ઘટાડો કહ્યો છે જીવના સંસારની વૃદ્ધિ કેવી રીતે થાય છે અને ઘટાડો કેવી રીતે થાય છે, તે આ સૂત્રમા સૂત્રકારે સમજાવ્યું છે. "से त्तं पंडियमरणे" પંડિતમરણનું આ પ્રકારનું સ્વરૂપ છે. આ કથનનો ઉપસંહાર કરતા મહાવીર પ્રભુ સ્કન્દકને કહે છે કે- "इच्चेएण खंदया! दुविहेणं मरणेण मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा" હે સ્કન્દક! તે બે પ્રકારનાં મરણોમાંથી બાલમરણથી મરતો જીવ અનાદિ, અનંત, દીર્ઘ માર્ગવાળા આ સંસારરૂપી વનમાં અનંત વાર નરક વગેરે ચારે ગતિમા ભ્રમણ કરે છે. એનું નામ જ જીવનું (અથવા જીવના સંસારનું) વધવું છે. પણ પંડિતમરણથી મરતો જીવ પૂર્વોક્ત વિશેષણોવાળા સંસારરૂપી વનને ઓળંગી જાય છે.

मूलम्-"एत्थ णं से खदए कच्चायणस्स गोत्ते संबुद्धे समणं भगव महावीर वदइ नमसइ वदित्ता नमसित्ता एव वयासी इच्छामि णं भते तुब्भ अतिए केवलिपन्नत्त धम्म निसामित्तए, अहासुह देवाणुप्पिया मा पडिबन्ध करेह, तएणं समणे भगव महावीर खदयस्स कच्चायणस्स गोत्तस्स तीसे य महइ महालयाए परिसाए धम्म परिकहेइ धम्मकहाओ भाणियव्वा तएण से खदए कच्चायणस्स गोत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स अतिए धम्म सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठ जाव हियए उट्ठाए उट्ठइ उट्ठित्ता समणं भगव महावीर तिक्खुत्तो आयाहिण पयाहिणं करेइ करित्ता वदइ नमसइ वदित्ता नमंसित्ता एव वयासी सद्दहामि णं भते! णिग्गंथ पावयण पत्तियामि णं भते! णिग्गंथं पावयणं रोएमि णं भते! णिग्गंथ पावयणं अब्भुट्ठेमि णं भते! णिग्गंथ पावयणं एवमेय भते! तहमेय भते! अवितहमेय भते! असदिद्धमेय भते! इच्छियमेय भते! पडिच्छियमेय भते! इच्छियपडिच्छियमेय भते! से जहेय तुब्भे वयइत्ति कट्टु समणं भगव महावीर वदइ नमं सइ, वदित्ता नमसित्ता, उत्तरपुरत्थिम दिसिभाग अवक्कमइ अवक्कमित्ता तिदड च कुडिय च जाव धाउरत्ताओ य एगंते एडेइ एडित्ता जेणेव समणे भगव महावीरे तेणेव उवागच्छइ

कान्तार को पार कर देता है। यही जीव का घन्ना है, इस प्रकार से भगवान ने स्कन्दक के प्रश्नों का उत्तर दिया ॥ ० १२॥

એનુ નામ જ છવનુ "અથવા છવના સસારનું" ઘટવું છે આ પ્રમાણે ભગવાને સ્કન્દક પરિવ્રાજકના પાંચે પ્રશ્નોના ઉત્તર આપ્યા ॥ સૂ. ૧૨ ॥

उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिण पयाहिणं करेइ-करित्ता वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी, आलित्तेणं भंते! लोए पलित्तेणं भंते! लोए आलित्त-पलित्तेणं भंते! लोए जराए मरणेण य से जहाणामए केइ गाहावई आगारंसि, ज्झियायमाणंसि, जे से तत्थ भंडे भवइ अप्पभारे मोल्लगुरुए तं गहायआयाए एगंतमंतं अवक्कमइ-एस-नित्थारिए समाणे पच्छापुराय हियाए सुहाए खेमाए-निस्सेय साए अणुगामियत्ताए भविस्सइ एवामेव देवाणुप्पिया मज्झवि आया एगे भंडे इट्ठे कंते पिए अणुण्णे मणामे थेज्जे वेस्सा-सिए समए अणुमए बहुमए भंडकरंडगसमाणे माणं सीयं माणं उण्हं माणं खुहामाणं पिवासा माणं चोरा माणं वाला माणं दंसा माणं मसया माणं वाइय पित्तियसेंभिय सन्नि-वाइय विविहा रोगायंका परीसहोवसग्गाफुसंतु त्तिकट्टु एस मे नित्थारिए समाणे परलोयस्स हियाए सुहाए खेमाए नीस्सेयसाए अणुगामियत्ताए भविस्सइ तं इच्छामि णं देवाणुप्पिया सयमेव पव्वावेउं सयमेव मुंडाविउं सयमेव सेहाविउं सयमेव सिक्खाविउं सयमेव आयारगोयरं विणय वेणइय चरणकरणजाया मायावत्तियं धम्ममाइक्खिउं। तएणं समणे भगवं महावीरं खंदयं कच्चा-यणस्सगोत्तं सयमेव पव्वावेइ जाव धम्ममाइक्खइ एवं देवाणुप्पिया गंतव्वं एवं चिट्ठियव्वं एवं निसीइयव्वं एवं तुयट्टियव्वं एवं भुंजियव्वं एवं भासियव्वं एवं उट्ठाए

उट्ठाय पाणेहिं भूएहिं जीवेहिं सत्तेहिं संजमेणं संजमियव्वं अस्सिं च णं अट्ठे णो किंचि वि पमाइयव्वं। तएणं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स इमं एयारूवं धम्मियं उवएसं सम्मं संपडिवज्जइ तमाणाए तह गच्छइ तह चिट्ठइ तह निसीयइ तह तुयट्टइ तह भुंजइ तह भासइ तह उट्ठाए उट्ठाय पाणेहिं भूएहिं जीवेहिं सत्तेहिं संजमेणं संजमेइ अस्सिं च णं अट्ठे णो पमायइ तएणं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते अणगारे जाए इरियासमिए भासासमिए एसणासमिए आयाणभंडमत्तनिक्खेवणासमिए उच्चारपासवणखेलजल्लसिंघाणपारिट्ठावणियासमिए मणसमिए, वयसमिए, कायसमिए, मणगुत्ते, वयगुत्ते, कायगुत्ते, गुत्ते, गुत्तिंदिए, गुत्तबंभयारी, चाई, लज्जु धन्ने, खंतिखमे, जिइंदिए, सोहिए, अणियाणे, अप्पुस्सुए, अबहिल्लेसे सुसामण्णरए दंते इणमेव णिग्गंथं पावयणं पुरओ काउं विहरइ ॥११॥

छाया—अत्र खलु स स्कन्दकः कात्यायनगोत्रः संबुद्धः श्रमणं भगवन्तं महावीरं वंदते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमादीत् इच्छामि खलु भदंत,

---

'एत्थ णं से खंदए' इत्यादि।

सूत्रार्थ—(एत्थ णं से खंदए कच्चायणस्सगोत्ते संबुद्धे) इस विषय में अर्थात् अपने किये हुए प्रश्नों का यथार्थ उत्तर पालने पर वे कात्यायन गोत्रीय स्कन्दक संबुद्ध होगये—बोध प्राप्त होगये, अतः उन्होंने (समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ) श्रमण भगवान महावीर को वंदना की,

---

"एत्थ णं से खंदए" ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—(एत्थ णं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते संबुद्धे) પોતે પૂછેલા પ્રશ્નોનો યથાર્થ ઉત્તર મળવાથી કાત્યાયન ગોત્રી સ્કન્દક સંબુદ્ધ થયા, તેમને બોધની પ્રાપ્તિ થઇ તેથી તેમણે (समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ) શ્રમણ

तवान्तिके केवलिप्रज्ञप्तं धर्मं निशमयितुम् यथा सुखं देवानुप्रिय ! मा प्रतिबन्धं कुरु। तत्र खलु श्रमणो भगवान् महावीरः स्कन्दकाय कात्यायनगोत्राय तस्यै च महातिमहालयायै परिषदे धर्मं परिकथयति। धर्मकथा भणितव्या ततः स स्कन्दकः कात्यायनगोत्रः श्रमणस्य भगवतो महावीरस्यान्तिके धर्मं श्रुत्वा निशम्य हृष्ट तुष्ट यावत् हृदय उत्थानेनोत्तिष्ठति उत्थाय श्रमणं भगवन्तं महावीरं

उन्हें नमस्कार किया। (वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी) वंदना नमस्कार कर फिर उन्होंने प्रभु से इस प्रकार कहा-(इच्छामि णं भंते ! तुब्भं अंतिए केवलिपन्नत्तं धम्मं निसामित्तए) हे भदंत ! मैं आप से केवलि प्रज्ञप्त धर्म सुनने की इच्छा करता हूं (अहासुहं देवाणुप्पिया-मा पडिबंधं करेह) हे देवानुप्रिय ! तुम्हें जैसा अच्छा लगे वैसा करो इस शुभ कार्य में ढील मत करो। (तएणं समणे भगवं महावीरे खंदयस्स कच्चायणस्स गोत्तस्स तीसे य महइ महालयाए परिसाए धम्मं परिकहेइ) इसके बाद श्रमण भगवान महावीर ने कात्यायन-गोत्रीय स्कन्दक को और उपस्थित उस बहुत बड़ी भारी सभा को धर्म का उपदेश दिया। (धम्मकहा भाणियव्वा) यही धर्मकथा कहनी चाहिये। इस धर्मकथा का वर्णन औपपातिकसूत्र के पूर्वार्ध में छप्पनवें सूत्र में देख लेना चाहिये। (तएणं से खंदए कच्चाय-णस्स गोत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठ जाव हियए उट्ठाए उट्ठेइ श्रमण भगवान महावीर

ભગવાન મહાવીરને વંદન કરી, નમસ્કાર કર્યાં. (वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी) વંદન નમસ્કાર કરીને તેમણે મહાવીર પ્રભુને આ પ્રમાણે કહ્યુ-(इच्छामि णं भंते ! तुब्भ अंतिए केवलिपन्नत्तं धम्मं निसामित्तए) હે ભગવાન ! હું આપની પાસેથી કેવલિપ્રરૂપિત ધર્મનું શ્રવણ કરવાની ઇચ્છા રાખું છું (अहासुहं देवाणु-प्पिया मा पडिबंध करेह) હે દેવાનુપ્રિય ! આપને જેમ સુખ ઉપજે તેમ કરો. પરંતુ શુભ કાર્યમાં ઢીલ કરશો નહીં (तएण समणे भगव महावीरे खंदयस्स कच्चायणस्स गोत्तस्स तीसे य महइ महालयाए परिसाए धम्मं परिकहेइ) ત્યાર બાદ શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે કાત્યાયન ગોત્રી સ્કન્દકને તથા ત્યાં ઉપસ્થિત ઘણી જ મોટી પરિષદને ધર્મનો ઉપદેશ આપ્યો. (धम्मकहा भाणियव्वा) અહીં ધર્મકથા કહેવી જોઇએ તે ધર્મકથાનું વર્ણન ઔપપાતિક સૂત્રના પૂર્વાર્ધના છપ્પનમાં સૂત્રમાંથી વાંચી લેવું (तएण से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठ जाव हियए उट्ठाए उट्ठेइ) શ્રમણ ભગવાન મહાવીર પ્રભુને મુખેથી ધર્મકથા સાંભળીને તથા

भिक्षुत्वः आदक्षिणप्रदक्षिणां करोति, कृत्वा वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यि त्वैवमवादीत्-श्रद्दधे खलु भदन्त ! नैर्ग्रन्थ प्रवचनम् प्रत्ययमि खलु भदंत ! नैर्ग्रन्थं प्रवचनम् रोचयामि खलु भदन्त ! नैर्ग्रन्थ प्रवचनम् अभ्युत्तिष्ठामि खलु भदंत ! नैर्ग्रन्थ प्रवचनम्, एवमेतद् भदंत ! तथ्यमेतद् भदंत ! अवितथमेतद् भदंत !

प्रभु के मुख से धर्मकथा सुनकर उसे हृदयमें अवधारण कर के कात्यायन गोत्रीय स्कन्दक बहुत हर्षित हुए, बहुत तुष्ट हुए यावत् विकसित हृदयवाले, हुए और अपनी उत्थान शक्ति से उठे (वंदित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ करित्ता वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता) उठकर उन्हों ने श्रमण भगवान महावीर को विधि पूर्वक वंदना की नमस्कार किया वंदना नमस्कार कर के (एवं वयासी) प्रभु से इस प्रकार कहा-(सद्दहामि णं भंते ! णिग्गंथं पावयणं पत्तियामि णं भंते णिग्गंथं पावयणं) हे भदंत मैं इस निर्ग्रन्थ प्रवचन में श्रद्धा करता हूं हे भदन्त ! मैं इस निर्ग्रन्थ प्रवचन में प्रतीति-प्रीति-रखता हूं (रोएमिणं भंते ! णिग्गंथं पावयणं) हे भदंत ! मैं इस निर्ग्रन्थ प्रवचन में रुचि रखता हूं अर्थात् यह निर्ग्रन्थ प्रवचन मुझे रुचता है। (अब्भुट्ठेमि णं भंते ! णिग्गंथं पावयणं) हे भदन्त ! मैं इस निर्ग्रन्थ प्रवचन को स्वीकार करता हूं ! (एवमेयं भंते ! तहमेयं भंते ! अवितहमेयं भंते) हे भदन्त ! यह निर्ग्रन्थ प्रवचन इसी तरहसे है। हे भदन्त ! यह निर्ग्रन्थ प्रवचन इसी रीतिसे है। हे भदन्त !

તેને હૃદયમાં ધારણ કરીને કાત્યાયન ગોત્રી સ્કન્દકને ઘણો જ હર્ષ થયો, ઘણો જ સંતોષ થયો, (યાવત્) તેનું મન આનંદથી નાચી ઉઠ્યું અને તે પોતાની ઉત્થાનશક્તિથી ઉભા થયા. (वंदित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ करित्ता वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता) ઉઠીને તેમણે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને વિધિપૂર્વક વંદન નમસ્કાર કર્યા. વંદન નમસ્કાર કરીને (एवं वयासी) તેમણે ભગવાનને આ પ્રમાણે કહ્યું-(सद्दहामि णं भंते ! णिग्गंथं पावयणं पत्तियामि णं भंते ! णिग्गंथं पावयणं) હે ભગવન્ ! હું આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચનમાં શ્રદ્ધા રાખું છું, હે ભગવાન ! હું આ નિર્ગ્રંથપ્રવચન પ્રત્યે પ્રીતિ ધરાવું છું (रोएमि णं भंते ! णिग्गंथं पावयणं) હે ભગવાન ! મને આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન રુચે છે (अब्भुट्ठेमि णं भंते ! णिग्गंथं पावयणं) હે ભગવન્ હું આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચનનો સ્વીકાર કરું છું (एवमेयं भंते ! तहमेयं भंते ! अवितहमेयं भंते !) હે ભગવન્ ! આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન સાચું છે હે ભગવન્ ! આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન યથાર્થ છે, હે ભગવન્ ! આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન અ[illegible]

तवान्तिके केवलिप्रज्ञप्तं धर्मं निशमयितुम् यथा सुखं देवानुप्रिय ! मा प्रतिबन्धं कुरु। तत्र खलु श्रमणो भगवान् महावीरः स्कन्दकाय कात्यायनगोत्राय तस्यै च महातिमहालयायै परिषदे धर्मं परिकथयति। धर्मकथा भणितव्या ततः स स्कन्दकः कात्यायनगोत्रः श्रमणस्य भगवतो महावीरस्यान्तिके धर्मं श्रुत्वा निशम्य हृष्ट तुष्ट यावत् हृदय उत्थानेनोत्तिष्ठति उत्थाय श्रमणं भगवन्तं महावीरं

उन्हें नमस्कार किया। (वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी) वंदना नमस्कार कर फिर उन्होंने प्रभु से इस प्रकार कहा-(इच्छामि णं भंते! तुब्भं अंतिए केवलिपन्नत्तं धम्मं निसामित्तए) हे भदंत! मैं आप से केवलि प्रज्ञप्त धर्म सुनने की इच्छा करता हूं (अहासुहं देवाणुप्पिया- मा पडिबंधं करेह) हे देवानुप्रिय! तुम्हें जैसा अच्छा लगे वैसा करो इस शुभ कार्य में ढील मत करो। (तएणं समणे भगवं महावीरे खंदयस्स कच्चायणस्स गोत्तस्स तीसे य महइ महालयाए परिसाए धम्मं परिकहेइ) इसके बाद श्रमण भगवान महावीर ने कात्यायन- गोत्रीय स्कन्दक को और उपस्थित उस बहुत बड़ी भारी सभा को धर्म का उपदेश दिया। (धम्मकहा भाणियव्वा) यहीं धर्मकथा कहनी चाहिये। इस धर्मकथा का वर्णन औपपातिकसूत्र के पूर्वार्ध में छप्पनवें सूत्र में देख लेना चाहिये। (तएणं से खंदए कच्चाय- णस्स गोत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठ जाव हियए उट्ठाए उट्ठेइ श्रमण भगवान महावीर

ભગવાન મહાવીરને વંદન કરી, નમસ્કાર કર્યા (वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी) વંદન નમસ્કાર કરીને તેમણે મહાવીર પ્રભુને આ પ્રમાણે કહ્યુ-(इच्छामि णं भंते! तुब्भं अंतिए केवलिपन्नत्तं धम्मं निसामित्तए) હે ભગવાન! હું આપની પાસેથી કેવલિપ્રરૂપિત ધર્મનું શ્રવણ કરવાની ઇચ્છા રાખું છુ (अहासुहं देवाणु- प्पिया मा पडिबंधं करेह) હે દેવાનુપ્રિય! આપને જેમ સુખ ઉપજે તેમ કરો પરંતુ શુભ કાર્યમા ઢીલ કરશો નહી. (तएणं समणे भगवं महावीरे खंदयस्स कच्चायणस्स गोत्तस्स तीसे य महइ महालयाए परिसाए धम्मं परिकहेइ) ત્યાર બાદ શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે કાત્યાયન ગોત્રી સ્કન્દકને તથા ત્યા ઉપસ્થિત ઘણી જ મોટી પરિષદને ધર્મનો ઉપદેશ આપ્યો. (धम्मकहा भाणियव्वा) અહી ધર્મકથા કહેવી જોઇએ તે ધર્મકથાનુ વર્ણન ઔપપાતિક સૂત્રના પૂર્વા- ર્ધના છપ્પનમા સૂત્રમાથી વાંચી લેવુ (तएणं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठ जाव हियए उट्ठाए उट्ठेइ) શ્રમણ ભગવાન મહાવીર પ્રભુને મુખેથી ધર્મકથા સાંભળીને તથા

भिकृत्वः आदक्षिणप्रदक्षिणां करोति, कृत्वा वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वैवमवादीत्–श्रद्दधे खलु भदन्त ! नैर्ग्रन्थं प्रवचनम् प्रत्येमि खलु भदन्त ! नैर्ग्रन्थं प्रवचनम् रोचयामि खलु भदन्त ! नैर्ग्रन्थ प्रवचनम् अभ्युत्तिष्ठामि खलु भदन्त ! नैर्ग्रन्थं प्रवचनम्, एवमेतद् भदन्त ! तथ्यमेतद् भदन्त ! अवितथमेतद् भदन्त !

प्रभु के मुख से धर्मकथा सुनकर उसे हृदयमें अवधारण कर वे कात्यायन गोत्रीय स्कन्दक बहुत हर्षित हुए, बहुत तुष्ट हुए यावत् विकसित हृदयवाले, हुए और अपनी उत्थान शक्ति से उठे (उट्ठित्ता समण भगव महावीर तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ करित्ता वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता) उठकर उन्हों ने श्रमण भगवान महावीर को विधि पूर्वक वंदना की नमस्कार किया वंदना नमस्कार कर के (एवं वयासी) प्रभु से इस प्रकार कहा–(सद्दहामि णं भंते ! णिग्गंथं पावयणं पत्तियामि णं भंते णिग्गंथ पावयण) हे भदंत मैं इस निर्ग्रन्थ प्रवचन में श्रद्धा करता हूं हे भदन्त ! मैं इस निर्ग्रन्थ प्रवचन में प्रतीति–प्रीति–रखता हूं (रोएमिणं भंते ! णिग्गंथं पावयणं) हे भदंत ! मैं इस निर्ग्रन्थ प्रवचन में रुचि रखता हू अर्थात् यह निर्ग्रंथ प्रवचन मुझे रुचता है। (अब्भुट्ठेमि णं भंते ! णिग्गंथं पावयणं) हे भदन्त ! मैं इस निर्ग्रन्थ प्रवचन को स्वीकार करता हूं। (एवमेयं भंते ! तहमेयं भंते ! अवितहमेयं भंते) हे भदन्त ! यह निर्ग्रन्थ प्रवचन इसी तरहसे है। हे भदन्त ! यह निर्ग्रन्थ प्रवचन इसी रीतिसे है। हे भदन्त !

તેને હૃદયમાં ધારણ કરીને કાત્યાયન ગોત્રી સ્કન્દકને ઘણો જ હર્ષ થયો, ઘણો જ સંતોષ થયો (યાવત્) તેનું મન આનંદથી નાચી ઉઠ્યું, અને તે પોતાની ઉત્થાનશક્તિથી ઉભા થયા (उट्ठित्ता समण भगव महावीर तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिण करेइ करित्ता वदइ नमसइ वंदित्ता नमंसित्ता) ઉઠીને તેમણે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને વિધિપૂર્વક વંદન નમસ્કાર કર્યા. વંદન નમસ્કાર કરીને (एवं वयासी) તેમણે ભગવાનને આ પ્રમાણે કહ્યું –(सद्दहामि णं भंते ! णिग्गंथं पावयणं पत्तियामि णं भंते ! णिग्गंथं पावयणं) હે ભગવન્ ! હું આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચનમાં શ્રદ્ધા રાખું છું હે ભગવાન ! હું આ નિર્ગ્રંથપ્રવચન પ્રત્યે પ્રીતિ ધરાવું છું (रोएमि णं भंते ! णिग्गंथं पावयणं) હે ભગવાન ! મને આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન રુચે છે (अब्भुट्ठेमि णं भंते ! णिग्गंथं पावयणं) હે ભગવન્ હું આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચનનો સ્વીકાર કરું છું 'एवमेयं भंते ! तहमेयं भंते ! अवितहमेयं भंते' હે ભગવન્ ! આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન સાચું છે હે ભગવન્ ! આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન યથાર્થ છે, હે ભગવન્ ! આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન અવિતથ (સત્ય)

तद् भदंत) असंदिग्धमेतद् भदंत ! ईप्सितमेतद् भदंत ! प्रतीप्सितमेतद् भदंत ! ईप्सितप्रतीप्सितमेतद् भदंत ! तद् यथैतद् यूयं वदथ, इति कृत्वा श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा उत्तरपौरस्त्यं दिग् विभागमवक्रामति अवक्रम्य त्रिदंडं च कुण्डिकां च यावत् धातुरक्तांश्चैकान्ते एडयति एडयित्वा यत्रैव

यह निर्ग्रन्थ प्रवचन अवितथ–सत्य है। (असंदिद्धमेयं भंते !) हे भदन्त ! यह निर्ग्रन्थ प्रवचन सर्वथा असंदिग्ध है। (इच्छियमेयं भंते !) हे भदन्त ! यह निर्ग्रन्थ प्रवचन ईप्सित–वांछनीय है। (पडिच्छियमेयं भंते !) हे भदन्त यह निर्ग्रन्थ प्रवचन प्रतीप्सित–अत्यन्त वांछनीय है ! (इच्छियपडिच्छियमेयं भंते !) हे भदंत ! यह निर्ग्रन्थ प्रवचन ईप्सित प्रतीप्सित–एकांतवांछनीय है। (से जहेयं तुब्भं वयह त्ति) यह निर्ग्रन्थ प्रवचन जैसा आपने कहा है वह वैसा ही है ! इस प्रकार (कट्टु) कह कर स्कन्दक ने (समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ) श्रमण भगवान् महावीर को वन्दना की, उन्हें नमस्कार किया। (वंदित्ता नमंसित्ता) वंदना नमस्कार करके फिर वे (उत्तरपुरत्थिमं दिसिभागं अवक्कमइ) उत्तर पौरस्त्य दिग्विभाग में उत्तर पूर्वदिशा के कोने में–अर्थात् ईशानकोण में गये (अवक्कमित्ता तिदंडं च, कुंडियं च, जाव धाउरत्ताओ एगंते एडेइ) वहां जाकर उन्हों ने अपने त्रिदण्ड को, कमण्डलु को यावत् गैरिक आदि धातु से रँगे हुए वस्त्रों को एकान्त में–रख दिया। (एडित्ता) उन्हे एकान्त में

છે. તેમાં કોઇ શંકાને સ્થાન જ નથી 'असदिद्धमेयं भंते ! હે ભગવાન્ આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન સર્વથા અસંદિગ્ધ સ્પષ્ટ છે "इच्छियमेयं भंते !" હે ભગવન્ આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન ઇચ્છવા યોગ્ય છે, 'पडिच्छियमेयं भंते' હે ભગવન્ ! આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન અત્યંત ઇચ્છવા યોગ્ય છે 'इच्छियपडिच्छियमेय भंते ! હે ભગવન્ આ નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન ઇપ્સિત પ્રતીપ્સિત ઇચ્છિત તથા વિશેષ ઇચ્છિત છે. (से जहेय तुब्भ वयहत्ति) આપના કહેવા પ્રમાણે જ તે નિર્ગ્રંથ પ્રવચન છે. આ પ્રમાણે (कट्टु) કહીને સ્કંદકે (समण भगव महावीर वदइ नमंसइ) શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને વંદન કરી, નમસ્કાર કર્યો (वदित्ता नमंसित्ता) વંદન નમસ્કાર કરીને તેઓ (उत्तरपुरत्थिम दिसिभागं अवक्कमइ) ઉત્તર અને પૂર્વદિશા વચ્ચેના ખૂણામાં–ઇશાન ખૂણામા–ગયા. (अवक्कमित्ता तिदंड च, कुडियं च, जाव धाउरत्ताओ एगते एडेइ) ત્યા જઇને તેમણે તેમના ત્રિદંડ, કમંડળ અને આગળ જણાવેલી ભગવા વસ્ત્રો સુધીની બધી વસ્તુઓ એકાંતમાં મૂકી

श्रमणो भगवान् महावीरस्तत्रैवोपागच्छति उपागत्य श्रमण भगवन्त महावीर त्रिकृत्व आदक्षिणप्रदक्षिणां करोति कृत्वा वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमवादीत् आदीप्त खलु भदन्त ! लोकः, प्रदीप्तः खलु भदन्त ! लोक , आदीप्त प्रदीप्त खलु भदन्त ! लोकः, जरया मरणेन च । तद् यथा नाम कश्चिद्गृहपति रगारे ध्मायमाने यत् तत्र भाण्डं भवति अल्पभारमूल्यगुरुकं तद् गृहीत्वा आत्मना

रखकर (जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव- उवागच्छइ) फिर वे जहा श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे वहा आये (उवागच्छित्ता समणं भगवंतं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिण पयाहिणं करेइ करित्ता वंदइ नमंसइ) वहां जाकर उन्होंने श्रमण भगवान महावीर को विधिपूर्वक वदन नमस्कार किया । (वंदित्ता नमंसित्ता) वदना नमस्कार करके (एव वयासी) फिर उन्हों ने श्रमण, भगवान् महावीर से इस प्रकार कहा—(आलित्तेण भंते ! लोए पलित्तेणं भंते ! लोए, आलित्तपलित्तेणं भंते ! लोए) हे भदन्त ! जरा और मरण से यह लोक जला हुआ है । हे भदन्त यह लोक उन दोनों से बहुत अधिक जला हुआ है । हे भदन्त ! यह लोक जरा और मरण से चारों तरफ से आदीप्त प्रदीप्त-ज्वलित-प्रज्वलित हो रहा है, यहां दृष्टान्त कहते हैं (से जहाणामए केइ गाहावई आगारंसि झियायमाणंसि) जैसे कोई गृहस्थ अपने मकान के जलने पर अर्थात् मकान में आग लगने पर (जे से तत्थ अप्पभार मोल्लगुरुए भंडे भवइ) जो

દીધી, (ठवित्ता) તે વસ્તુઓને એકાંતમાં મૂકીને (जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ) તેઓ જ્યાં શ્રમણ ભગવાન મહાવીર સ્વામી બીરાજતા હતા ત્યાં ગયા (उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ करित्ता वंदइ नमंसइ) ત્યાં જઈને તેમણે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને વિધિપૂર્વક વંદન નમસ્કાર કર્યા (वंदित्ता नमंसित्ता) વંદન નમસ્કાર કરીને (एवं वयासी) તેમણે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને આ પ્રમાણે કહ્યું (आलित्तेणं भंते ! लोए, पलित्तेणं भंते लोए, आलित्तपलित्तेणं भंते ! लोए) હે ભગવાન ! આ લોક જરા અને મરણથી બળી રહ્યો છે—સળગી રહ્યો છે હે ભગવાન્ ! આ લોક તે બન્નેથી પ્રજ્વલિત થઈ રહ્યો છે એટલે કે અત્યંત બળી રહ્યો છે હે ભગવન્ ! આ લોક ચોમેરથી જરા મરણથી આદીપ્ત પ્રદીપ્ત (જ્વલિત પ્રજ્વલિત થઈ રહ્યો છે અહીં એક દૃષ્ટાંત આપે છે—(से जहाणामए केइ गाहावई आगारंसि झियायमाणंसि) જેવી રીતે કોઈ ગૃહસ્થના મકાનમાં આગ લાગે ત્યારે તે (जे से तत्थ अप्पभारे मोल्लगुरुए भंडे भवइ त गहाय आयाए

तद् भदंत) असदिग्धमेतद् भदंत ! ईप्सितमेतद् भदंत ! प्रतीप्सितमेतद् भदंत ! ईप्सितप्रतीप्सितमेतद् भदंत ! तद् यथैतद् यूयं वदथ, इति कृत्वा श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा उत्तरपौरस्त्यं दिग् विभागमवक्रामति अवक्रम्य त्रिदंडं च कुण्डिकां च यावत् धातुरक्तांश्चैकान्ते एडयति एडयित्वा यत्रैव

यह निर्ग्रन्थ प्रवचन अवितथ-सत्य है। (असंदिद्धमेयं भंते !) हे भदन्त ! यह निर्ग्रन्थ प्रवचन सर्वथा असंदिग्ध है। (इच्छियमेयं भंते !) हे भदन्त ! यह निर्ग्रन्थ प्रवचन ईप्सित-वांछनीय है। (पडिच्छियमेयं भंते !) हे भदन्त यह निर्ग्रन्थ प्रवचन प्रतीप्सित-अत्यन्त वांछनीय है। (इच्छियपडिच्छियमेयं भंते !) हे भदंत ! यह निर्ग्रन्थ प्रवचन ईप्सित प्रतीप्सित-एकांतवांछनीय है। (से जहेयं तुब्भे वयह त्ति) यह निर्ग्रन्थ प्रवचन जैसा आपने कहा है वह वैसा ही है ! इस प्रकार (कट्टु) कह कर स्कन्दक ने (समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ) श्रमण भगवान् महावीर को वन्दना की, उन्हें नमस्कार किया। (वंदित्ता नमंसित्ता) वंदना नमस्कार करके फिर वे (उत्तरपुरत्थिमं दिसिभागं अवक्कमइ) उत्तर पौरस्त्य दिग्विभाग में उत्तर पूर्वदिशा के कोने में-अर्थात् ईशानकोण में गये (अवक्कमित्ता तिदंडंच, कुंडियं च, जाव धाउरत्ताओ एगंते एडेइ) वहां जाकर उन्हों ने अपने त्रिदण्ड को, कमण्डलु को यावत् गैरिक आदि धातु से रँगे हुए वस्त्रों को एकान्त में-रख दिया। (एडित्ता) उन्हे एकान्त में

છે. તેમા કોઇ શંકાને સ્થાન જ નથી 'असदिद्धमेयं भंते ! હે ભગવાન્ આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન સર્વથા અસંદિગ્ધ સ્પષ્ટ છે "इच्छियमेयं भंते !" હે ભગવન્ આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન ઇચ્છવા યોગ્ય છે, 'पडिच्छियमेयं भंते' હે ભગવન્ ! આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન અત્યંત ઇચ્છવા યોગ્ય છે 'इच्छियपडिच्छियमेयं भंते ! હે ભગવન્ આ નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન ઇપ્સિત પ્રતીપ્સિત ઇચ્છિત તથા વિશેષ ઇચ્છિત છે. (से जहेयं तुब्भ वयहत्ति) આપના કહેવા પ્રમાણે જ તે નિર્ગ્રંથ પ્રવચન છે. આ પ્રમાણે (कट्टु) કહીને સ્કંદકે (समण भगव महावीर वदइ नमंसइ) શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને વંદન કરી, નમસ્કાર કર્યો (वदित्ता नमंसित्ता) વંદન નમસ્કાર કરીને તેઓ (उत्तरपुरत्थिम दिसिभागं अवक्कमइ) ઉત્તર અને પૂર્વદિશા વચ્ચેના ખૂણામા-ઇશાન ખૂણામા-ગયા. (अवक्कमित्ता तिदंड च, कुडियं च, जाव धाउरत्ताओ एगते एडेइ) ત્યા જઇને તેમણે તેમના ત્રિદંડ, કમંડળ અને આગળ જણાવેલી ભગવા વસ્ત્રો સુધીની બધી વસ્તુઓ એકાંતમાં મૂકી

मात व्याला मातं मशका मात वातिकपैत्तिकश्लैष्मिकसांनिपातिका विविधा रोगा तंका परिषहोपसर्गा स्पृशन्तु इति कृत्वा एष मे निस्तारितः सन् परलोकस्य हिताय सुखाय क्षेमाय निःश्रेयसाय आनुगामिकतायै भविष्यति, तदिच्छामि खलु देवानुप्रिय स्वयमेव प्रव्राजयितुम् स्वयमेव मुण्डयितुम् स्वयमेव सेधितु स्वयमेव शिक्षयितुम्

है। (माणं सीयं, माणं उण्हं, माणं खुहा, माणं पिवासा, माण चोरा, माण वाला, माण दंसा, माणं मसया, माणं वाइय पित्तियसें भिय सन्निवाइय विविहारोगायंका परीसहोवसग्गा फुसंतु) इसलिये इसे शीतजन्यबाधा उष्णजन्य बाधा क्षुधा जन्यबाधा, प्यास जन्यबाधा न हो चोर इसे दुःखित न करे व्याल–सर्प इसे कष्ट न पहुँचावे दंशमशक इसे न काटे वात संबंधी, पित्तसंबंधी, श्लेष्म संबंधी सन्निपात संबंधी अनेक प्रकार के रोग और आतंक इसे पीडित न करे, तथा परीषह एवं उपसर्ग इस के पास तक न आवे (त्ति कट्टु) इस प्रकार विचार करके मैं (एस नित्थरिए समाणे) इसे यदि इन पूर्वोक्त विघ्नों से बचाकर जरामरणादि से जलते हुए इस संसाररूप गृह से निकाल दूं तो यह मुझे (परलोयस्स हियाए) परलोक में हितकारक (सुहाए) सुखकारक (खेमाए) क्षेमकारक, (नीस्सेयसाए) कल्याण कारक, तथा (अणुगामियत्ताए) परम्परा के लिये भी कल्याणकारक (भविस्सइ) होगा (तं इच्छामि णं देवाणुप्पिया) इसलिये हे देवानुप्रिय! मैं चाहता हूं

सीय, माण उण्ह माणं खुहा, माण पिवासा, माण चोरा, माण वाला, माण दसा, माण मसया, माण वाइयपित्तियसें भिय—सन्निवाइय–विविहा रोगायका परीसहोवसग्गा फुसंतु) तेथी तेने ठंडी, गरमी, भूख, तरस वगेरे मुश्केलीओ सहन करवी न पडे ते माटे' चोर तेने दुःख न करे ते माटे, व्याल–सर्प तेने कष्ट न पहोंचाडे ते माटे, डांस तथा मच्छर तेने करडे नहीं ते माटे, वात, पित्त, कफ अने सन्निपातना रोगो अने आतंक तेने पीडी शके नहीं ते माटे, तथा परीषह अने उपसर्ग तेनी पासे आवी पण न शके ते माटे (त्ति कट्टु एस नित्थरिए समाणे) मारा मनमां एवो विचार आव्यो छे के तेने पूर्वोक्त विघ्नोमांथी बचावीने जन्म, जरा अने मरण रूपी दुःखना अग्निमां बळता संसाररूपी घरमांथी बहार काढी लउं तो ते मारे माटे (परलोयस्स हियाए) परलोकमां हितकारक (सुहाए) सुखकारक, (खेमाए) क्षेमकारक, (निस्सेयसाए) कल्याण कारक निवडशे अने (अणुगामियत्ताए) परंपरा पण कल्याण कारक (भविस्सइ) थशे (त इच्छामि णं देवाणुप्पिया! सयमेव पव्वाविउं) तो हे देवानुप्रिय! आप पोते ज मने दीक्षा आपो एवी

एकान्तमंतमवक्रामति एतन्मे निस्तारितं सत् पश्चात् पुराच हिताय सुखाय क्षेमाय निःश्रेयसायानुगामिकतायै भविष्यति, एवमेव, देवानुप्रिय ! ममाप्यात्मा एकं भाण्डमिष्टकान्तप्रियो मनोज्ञो मनोऽमः स्थैर्यः, वैश्वासिकः, संमतोऽनुमतो बहुमतो भाण्डकरण्डकसमानः मा खलु तं शीतं मातमुष्णं मातं क्षुधा मातं पिपासा मातं चौराः

सामान वजन में हल्का और कीमत में अधिक होता है (तं गहाय आयाए एगंतमंतं अवक्कमइ) उसे लेकर स्वयं एकान्त स्थान में चला जाता है कारण कि वह इस प्रकार से सामान के बचाने के निमित्त विचार करता है-कि (एस मे नित्थरिए समाणे पच्छापुराए हियाए सुहाए खेमाए निस्सेयसाए, आणुगामियत्ताए भविस्सइ) जो मैं इस जलते हुए घरमेंसे अल्प वजनवाली कीमती वस्तु को निकाल लूंगा तो वह मेरे लिये आगे पीछे हितकारक होगी, सुखकारक होगी क्षेम कारक होगी अभ्युदय (भाग्योदय) के निमित्त होगी और भाविवंश परंपरा के उपभोग के निमित्त होगी इसलिये वह ऐसे विचार से ऐसे सामान को जैसे भी बनता है-निकाल लेता है (एवामेव देवाणुप्पिया ! मज्झ वि आया एगे भंडे इट्ठे, कते, पिए मणुण्णे, मणामे, थेज्जे, वेस्सासिए संमए अणुमए, बहुमए, भंडकरंडगसमाणे) इसी तरह से हे देवानुप्रिय ! मेरा भी आत्मा एक भांड है, वह मुझे इष्ट है, कांत है, प्रिय है, मनोज्ञ है, मनोम है, स्थिर रूप है, वैश्वासिक है संमत है, अनुमत है, बहुमत है और आभूषणों से भरे हुए करंडिये के समान

एगतमंत अवक्कमइ) પોતાના ઘરમાથી ઓછા વજનનો પણ કીમતિ સામાન લઇને કોઇ સુરક્ષિત-સ્થાનમા ચાલ્યો જાય છે. કારણ કે તેના મનમા વિચાર આવે છે કે (एस मे नित्थरिए समाणे पच्छापुराए हियाए सुहाए खेमाए निस्सेयसाए, आणुगामियत्ताए भविस्सइ) જો આ સળગતા ઘરમાથી હુ ઓછા વજનવાળી પણ ભારે કીમતી વસ્તુ બહાર કાઢીશ, તો તે વસ્તુઓ, ભવિષ્યમા મારે માટે હિતકારક, સુખકારક. ક્ષેમકારક, અને અભ્યુદય (ભાગ્યોદય) કારક થઇ પડશે. તથા મારી ભાવી પેઢી માટે તે ઉપયોગી થઈ પડશે આ જાતનો વિચાર કરીને તે બનતો પ્રયત્ન કરીને કીંમતી વસ્તુઓને બળતા ઘરમાંથી બહાર કાઢી લે છે (एवमेव देवाणुप्पिया ! मज्झ वि आया एगे भडे इट्ठे, कते, पिए, मणुण्णे, मणामे, थेज्जे, वेसासिए, संमए, अणुमए, बहुमए, भडकरडगसमाणे) એજ પ્રમાણે હે ભગવન મારો આત્મા પણ એક એવી વસ્તુ છે કે જે મને ઇષ્ટ (ગમતી વસ્તુ) છે. કાંત છે. પ્રિય છે, મનોજ્ઞ છે, મનોમ છે, સ્થિરરૂપ છે વિશ્વાસ યુક્ત છે, સંમત છે, અનુમત છે, બહુમત છે, અને આભૂષણોથી ભરપૂર કરંડિયા સમાન છે. (माणं-

व्यम्, एवं त्वग्वर्तितव्यम्, एवं भोक्तव्यम्, एवं भाषितव्यम्, एवमुत्थयो त्थाय प्राणेषु भूतेषु जीवेषु सत्त्वेषु संयमेन संयमितव्यम्, अस्मिन्नर्थेन किंचिदपि प्रमादयितव्यम्, ततः खलु स स्कन्दकः कात्यायनगोत्रः श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य इममेतद्रूपं धार्मिकमुपदेशं सम्यक् संप्रतिपद्यते। तदाज्ञया तथा गच्छति, तथा

से चलना चाहिये-(एवं चिट्ठियव्वं) इस प्रकार से ठहरना चाहिये (एवं निसिइयव्वं) इस प्रकार से बैठना चाहिये (एवं तुयट्टियव्वं) इस तरह से करवट बदलना चाहिये। (एवं भुंजियव्वं) इस प्रकार से आहार करना चाहिये (एवं भासियव्वं) इस प्रकार से बोलना चाहिये (एवं उट्ठाए उट्ठाय) अपनी आत्मशक्ति से उठकर-प्रमाद निद्रा का परित्याग कर होश समझकर (पाणेहिं) प्राणियों में, (भूएहिं) भूतों में (जीवेहिं) जीवों में (सत्तेहिं) सत्त्वों में (संजमेण संजमियव्वं) संयम से प्रवृत्ति करनी चाहिये (अस्सिंच णं अट्ठे णो किंचि वि पमाइयव्वं) इस विषय में थोड़ा सा भी प्रमाद नहीं करना चाहिये। (तएणं से खंदए कच्चायणस्सगोत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स इमं एयारूवं धम्मियं उवएसं सम्मं संपडिवज्जइ) इसके बाद कात्यायन गोत्रीय स्कन्दक ने श्रमणभगवान महावीर का यह इस प्रकार का धार्मिक उपदेश अच्छी तरह से स्वीकार कर लिया (तमाणाए) श्रमण भगवान महावीर की आज्ञा के अनुसार अब वे स्कन्दक मुनि

चिट्ठियव्वं) આ પ્રમાણે ઉભા રહેવું જોઈએ, (एवं निसीइयव्वं) આ રીતે બેસવું જોઈએ, (एवं तुयट्टियव्वं) આ રીતે પડખું ફેરવવું જોઈએ, (एवं भुंजियव्वं) આ રીતે આહાર કરવો જોઈએ, (एवं भासियव्वं) આ પ્રમાણે બોલવું જોઈએ (एवं उट्ठाए उट्ठाय) આવી રીતે પોતાની આત્મશક્તિથી ઉઠીને-પ્રમાદ નિદ્રાનો પરિત્યાગ કરીને સમજી વિચારીને (पाणेहिं) પ્રાણીઓ પ્રત્યે, (भूएहिं) ભૂતો પ્રત્યે, (जीवेहिं) જીવો પ્રત્યે અને (सत्तेहिं) સત્વો પ્રત્યે (संजमेणं संजमियव्वं) સંયમપૂર્વક વર્તવું જોઈએ તમારી કોઈ પ્રવૃત્તિથી તેમની લાગણી ન દુભાય, તેમની હિંસા ન થાય વગેરે ધ્યાનમાં રાખવું જોઈએ (अस्सिं च णं अट्ठे णो किंचि वि पमाइयव्वं) આ બાબતમાં જરા પણ પ્રમાદ કરવો નહીં. तएणं से खंदए कच्चायणस्सगोत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स इमं एयारूवं धम्मियं उवएसं सम्मं संपडिवज्जइ) ત્યારે તે કાત્યાયન ગોત્રી સ્કંદકે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરનો તે પ્રકારનો ધર્મોપદેશ સારી રીતે ગ્રહણ કર્યો. (तमाणाए) શ્રમણ ભગવાન મહાવીરની આજ્ઞા પ્રમાણે હવે તે સ્કંદક મુનિ

स्वयमेवाचारगोचरं विनयवैनयिकचरणकरणयात्रामात्राप्रत्ययं धर्ममाख्यातुम्। ततः खलु श्रमणो भगवान् महावीरः स्कंदकं कात्यायनगोत्रं स्वयमेव प्रव्राजयति यावत् धर्ममाख्याति एवं देवानुप्रिय! गंतव्यम्, एवं स्थातव्यम्, एवं निषत्त-

कि आप (सयमेव) स्वयं ही (पव्वाविउं) मुझे दीक्षा प्रदान करें। (सयमेव मुंडाविउं) आप स्वयं ही अपने हाथ से मुझे मुंडित करें (सयमेव सेहाविउं) आप स्वयं ही मुझे प्रतिलेखनादि क्रिया सिखावें, (सयमेव सिक्खाविउं) आप स्वयं हो मुझे सूत्र और उनका अर्थ पढावें, तथा (सयमेव आयारगोयर विणयवेणइय चरणकरणजाया मायावत्तियं धम्ममाइक्खिउं) आप स्वयं ही मेरे लिये आचार ज्ञानादि पांच आचार और गोचर-भिक्षाचर्या का उपदेश करें तथा विनयवाले और विनयजन्य फल वाले चरण-व्रतादिचरणसत्तरी, और करण-पिण्डविशुद्धयादि करण सत्तरी, यात्रा-संयमयात्रावाले और मात्रा-आहारादि की मात्रा वाले ऐसे धर्म का उपदेश देवें। (तएणं समणे भगव महावीरे) इसके बाद श्रमण भगवान् महावीर ने (खंदयं कच्चायणसगोत्तं सयमेव पव्वावेइ जाव धम्ममाइक्खइ) कात्यायनगोत्रीय स्कन्दक को अपने हाथ से ही दीक्षित किया यावत् अपने आप ही उन्हें धर्म का उपदेश दिया-इसमें उन्होंने उन्हें समझाया कि (एवं देवाणुप्पिया! गंतव्वं) हे देवानुप्रिय! इस प्रकार

મારી ઇચ્છા છે (सयमेव मुंडाविउं) આપ જાતે જ આપના હાથથી મને મુંડિત કરો-દીક્ષા પ્રદાન કરો, (सयमेव सेहाविउं) આપ જાતે જ મને પ્રતિ-લેખના વગેરે ધર્મ ક્રિયાઓ શિખવો, (सयमेव सिक्खाविउं) આપ પોતે જ મને સૂત્રો અને તેમના અર્થ ભણાવો, તથા (सयमेव आयारगोयरं विणय-वेणइय चरणकरण जायामाया वत्तियं धम्ममाइक्खिउं) આપ પોતે જ મને આચાર (જ્ઞાનાદિ પાંચ આચાર) અને ગોચર (ભિક્ષાચર્યા) તથા વિનયવાળા અને વિનય થી પ્રાપ્ત થતાં ફળવાળાં ચરણ-વ્રતાદિ (ચરણસિત્તરી,) અને કરણ (पिंडविशुद्धि), વગેરે કરણ (સિત્તરી) અને યાત્રા (સંયમ યાત્રા) અને માત્રા (આહારાદિકની માત્રા) વાળા ધર્મનો ઉપદેશ આપો (तएण समणे-भगव महावीरे) ત્યારે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે (खंदयं कच्चायणस्स गोत्तं-सयमेव पव्वावेइ जाव धम्ममाइक्खइ) કાત્યાયન ગોત્રી સ્કંદકને પોતાને હાથે જ દીક્ષા આપી અને (સ્કંદકે ઉપરોક્ત જેવી, ઇચ્છા દર્શાવી હતી તે પ્રકારનો) ધર્મોપદેશ આપ્યો તે ઉપદેશ વડે ભગવાન મહાવીરે તેને સમજાવ્યું કે (एवं-देवाणुप्पिया! गंतव्वं) હે દેવાનુપ્રિય! આ પ્રમાણે ચાલવું જોઈએ. (एवं-

व्यम्, एवं त्वग् वर्तितव्यम्, एवं भोक्तव्यम्, एवं भाषितव्यम्, एवमुत्थायो त्थाय प्राणेषु भूतेषु जीवेषु सत्त्वेषु संयमन संयमितव्यम्, अस्मिन्नर्थेन किंचिदपि प्रमादयितव्यम्, ततः खलु स स्कन्दकः कात्यायन गोत्रः श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य इममेतद्रूप धार्मिकमुपदेशं सम्यक् संप्रतिपद्यते। तदाज्ञया तथा गच्छति, तथा

से चलना चाहिये-(एवं चिट्ठियव्वं) इस प्रकार से ठहरना चाहिये (एवं निसिइयव्वं) इस प्रकार से बैठना चाहिये (एवं तुयट्टियव्वं) इस तरह से करवट बदलना चाहिये। (एवं भुंजियव्वं) इस प्रकार से आहार करना चाहिये (एवं भासियव्वं) इस प्रकार से बोलना चाहिये (एवं उट्ठाए उट्ठाय) अपनी आत्मशक्ति से उठकर-प्रमाद निद्रा का परित्याग कर सोच समझकर (पाणेहिं) प्राणियों में, (भूएहिं) भूतों में (जीवेहिं) जीवों में (सत्तेहिं) सत्वों में (संजमेणं संजमियव्वं) संयम से प्रवृत्ति करनी चाहिये (अस्सिं च णं अट्ठे णो किंचि वि पमाइ यव्वं) इस विषय में थोड़ा सा भी प्रमाद नहीं करना चाहिये। (तएणं से खंदए कच्चायणस्सगोत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स इमं एयारूवं धम्मियं उवएसं सम्मं संपडिवज्जइ) इसके बाद कात्यायन गोत्रीय स्कन्दक ने श्रमणभगवान महावीर का यह इस प्रकार का धार्मिक उपदेश अच्छी तरह से स्वीकार कर लिया (तमाणाए) श्रमण भगवान महावीर की आज्ञा के अनुसार अब वे स्कन्दक मुनि

चिट्ठियव्वं) આ પ્રમાણે ઉભા રહેવું જોઈએ, (एवं निसीइयव्वं) આ રીતે બેસવું જોઈએ (एवं तुयट्टियव्वं) આ રીતે પડખું ફેરવવું જોઈએ, (एवं भुंजियव्वं) આ રીતે આહાર કરવો જોઈએ, (एवं भासियव्वं) આ પ્રમાણે બોલવું જોઈએ, (एवं उट्ठाए उट्ठाय) આવી રીતે પોતાની આત્મશક્તિથી ઉઠીને-પ્રમાદ નિદ્રાનો પરિત્યાગ કરીને સમજી વિચારીને (पाणेहिं) પ્રાણીઓ પ્રત્યે, (भूएहिं) ભૂતો, પ્રત્યે (जीवेहिं) જીવો પ્રત્યે અને (सत्तेहिं) સત્વો પ્રત્યે (संजमेणं-संजमियव्वं) સંયમપૂર્વક વર્તવું જોઈએ તમારી કોઈ પ્રવૃત્તિથી તેમની લાગણી ન દુખાય તેમની હિંસા ન થાય વગેરે ધ્યાનમાં રાખવું જોઈએ (अस्सिं च णं अट्ठे णो किंचि वि पमाइयव्वं) આ બાબતમાં જરા પણ પ્રમાદ કરવો નહીં. तएणं से खंदए कच्चायणस्सगोत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स इमं एयारूवं धम्मियं उवएसं सम्मं संपडिवज्जइ) ત્યારે તે કાત્યાયન ગોત્રી સ્કંદકે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરનો તે પ્રકારનો ધર્મોપદેશ સારી રીતે ગ્રહણ કર્યો. (तमाणाए) શ્રમણ ભગવાન મહાવીરની આજ્ઞા પ્રમાણે હવે તે સ્કંદક મુનિ

तिष्ठति तथा निषीदति तथा त्वग् वर्त्तयति तथा भुंक्ते, तथा भाषते तथोत्थायोत्थाय प्राणेषु भूतेषु जीवेषु, सत्त्वेषु, संयमेन संयमयति, अस्मिंश्च खलु अर्थे न प्रमाद्यति। ततः खलु स स्कंदकः कात्यायनगोत्रोऽनगारो जातः ईर्यासमितो भाषासमित एषणासमितः आदानभाण्डामत्रनिक्षेपणासमितः उच्चारप्रस्रवणखेल-

---

(तह गच्छइ, तह चिट्ठइ, तह निसीयइ, तह तुयट्टइ, तह भुंजइ, तह भासइ, तह उट्ठाए उट्ठाय पाणेहिं भुएहिं जीवेहिं, सत्तेहिं संजमेणं संजमइ) उस प्रकार से चलने लग गये, उस प्रकार से ठहरने लग गये उस प्रकार से बैठने लग गये, उस प्रकार से करवट बदलने लग गये, उस प्रकार से आहार करने लग गये, उस प्रकार से बोलने लग गये, और उस प्रकार से प्रमाद निद्रा का परित्याग पूर्वक सोच समझ कर प्राणियों में, भूतों में, जीवों में, सत्वों में, संयम से प्रवृत्ति करने लग गये। (अस्सिं च णं अट्ठे णो पमायइ) इस विषय में उन्हों ने थोड़ा सा भी प्रमाद नहीं किया। (तएणं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते अणगारे जाए) इस तरह वे कात्यायनगोत्रीय स्कन्दक अनगार हो गये। (ईरियासमिए, भासासमिए, एसणासमिए, आयाणभंड-मत्त निक्खेवणासमिए उच्चारपासवणखेलजल्लसिंघाणपरिट्ठावणियासमिए) इस अवस्था में उन्हों ने ईर्यासमिति, भाषासमिति एषणा समिति, आदानभांडमात्र निक्षेपणासमिति, उच्चार-प्रस्रवण-खेल-

---

(तह गच्छइ) તે પ્રમાણે ચાલવા લાગ્યા, (तह चिट्ठइ) તે પ્રમાણે ઉઠવા લાગ્યા, (तह निसीयइ) તે પ્રમાણે બેસવા લાગ્યા, (तह तुयट्टइ, तह भुंजइ,-तह भासइ) તે પ્રમાણે પડખું ફેરવવા લાગ્યા, તે પ્રમાણે આહાર કરવા લાગ્યા તે પ્રમાણે બોલવા લાગ્યા, (तह उट्ठाए उट्ठाय पाणेहिं, भूएहिं, जीवेहिं, सत्तेहिं-संजमेण सजमइ) અને તે પ્રમાણે પ્રમાદ રહિત બનીને સમજી વિચારીને ભૂતો પ્રત્યે, પ્રાણીઓ પ્રત્યે, જીવો પ્રત્યે અને સત્ત્વો પ્રત્યે સંયમ પૂર્વકનું વર્તન રાખવા લાગ્યા એટલે કે એ જીવોને દુઃખ ન થાય એ રીતે યતનાપૂર્વક સંયમી જીવન જીવવા લાગ્યા (अस्सिं च णं अट्ठे णो पमायइ) આ બાબતમાં તેઓ બિલકુલ પ્રમાદ કરતા નહી, (तएण से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते अणगारे जाए) આ રીતે કાત્યાયન ગોત્રી તે સ્કંદક અણગાર બની ગયા (ईरिया समिए, भासासमिए एसणासमिए, आयाणभंडमत्तनिक्खेवणासमिए, उच्चारपासवण खेलजल्लसिंघाणपरिट्ठावणियासमिए) તેઓ (૧) ઈર્યાસમિતિ (૨) ભાષા-સમિતિ (૩) એષણા સમિતિ (૪) આદાન ભાંડ-માત્ર નિક્ષેપણા સમિતિ

सिंघाणजल्लपरिष्ठापनिका समितः मनस्समित' वचः समित कायसमित मनो गुप्तो वचोगुप्त कायगुप्तो गुप्तो गुप्तेन्द्रियो गुप्तः ब्रह्मचारी त्यागी लज्जावान् ऋजुः धन्य क्षांति क्षमो जितेन्द्रिय शोधितः अनिदानोऽनुत्सुकोऽपरिलेश्यः सुश्रामण्यरतो दान्त, इदमेव नैर्ग्रन्थ प्रवचन पुरत कृत्वा विहरति ॥ सू० १२ ॥

जल्ल सिंघानक परिष्ठापनिकासमिति, इन पांच समितियों का अच्छी तरह से पालन करने लगे, इसलिये वे (मनसमिए, वयसमिए, काय समिए, मणगुत्ते, वयगुत्ते कायगुत्ते) वे मन की क्रिया में सावधान होने से मनः समित, वचन की क्रिया में सावधान होने से वच समित, काय की क्रिया में सावधान होने से कायसमित, तथा मन को वश में करने से मनोगुप्ति से युक्त, वचन को वश में करने से वचनगुप्ति से युक्त और काय को वश में करने से कायगुप्ति से युक्त हो गये, (गुत्ते गुत्तिंदिए, गुत्तबंभयारी, चाई, लज्जू धन्ने, खंतिखमे, जिइंदिए, सोहिए, अणियाणे अप्पुस्सुए, अबहिल्लेसे सुसामण्णरए दंते इणमेव णिग्गथं पावयणं पुरओ काउं विहरइ) तथा जीवों की रक्षा करने वाला होने से गुप्त अपनी पांचों ही इन्द्रियों को अपने वश में करने से गुप्तेन्द्रिय, नव वाडसहित ब्रह्मचर्यके पालने से गुप्त ब्रह्मचारी हो गये। चाई–सच्चे त्यागी बन गये। लज्जू–सरल प्रकृति से संपन्न हो गये। धन्न–उन्हों ने अपने जीवन को धन्य बना लिया। खंतिखमे–वे क्षान्ति

(૫) ઉચ્ચાર–ખેલ–જલ્લ શિઘાનક પરિષ્ઠાપનિકા સમિતિ નું યથાર્થ પાલન કરવા લાગ્યા (मनसमिए वयसमिए, कायसमिए मणगुत्ते वयगुत्ते कायगुत्ते) તેઓ મનની ક્રિયામાં સાવધાન હોવાથી મન સમિતિ થઈ ગયા, વચનની ક્રિયામાં સાવધાન હોવાથી વચન સમિત થઈ ગયા અને કાયાની ક્રિયામાં સાવધાન હોવાથી કાય સમિતિ થઈ ગયા મન વચન અને કાયા પર કાબૂ રાખવાને કારણે તેઓ મનોગુપ્તિ વચન ગુપ્તિ અને કાય ગુપ્તિથી યુક્ત બની ગયા. (गुत्ते, गुत्तिंदिए गुत्तबंभयारी चाई, लज्जू धन्ने खंति, खमे जिइंदिए, सोहिए, अणियाणे अप्पुस्सुए, अबहिल्लेसे सुसामण्णरए दंते इणमेव णिग्गंथं पावयणं पुरओ काउं विहरइ) તથા તેઓ જીવોની રક્ષા કરનારા હોવાથી ગુપ્ત પોતાની પાંચે ઇન્દ્રિયોને કાબૂમાં રાખતા હોવાથી ગુપ્તેન્દ્રિય અને નવ વાડ સહિત બ્રહ્મચર્યનું પાલન કરતા હોવાથી ગુપ્તબ્રહ્મચારી બન્યા. તેઓ "चाई"–સાચા ત્યાગી બન્યા (लज्जू) સરળ સ્વભાવના બન્યા તેમણે તેમના જીવનને ધન્ય સાર્થક બનાવ્યું खंतिखमे' તેઓ ક્ષમા અને

टीका—"एत्थ णं से खंदए कच्चायणस्सगोत्ते" अत्र खलु स स्कंदकः कात्यायन गोत्रः "संवुद्धे" संबुद्धः सम्यग् रूपेण बोधं प्राप्तः लोकजीवसिद्धिसिद्धमरणविषयकोत्तरं भगवतः सकाशात् संप्राप्य यथार्थविषयकज्ञानवान् भवति ततः संजातवोधो भगवति समुत्पन्नश्रद्धो भूत्वा "समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ" श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति "वंदित्ता नमंसित्ता एवं

क्षम, जितेन्द्रिय, शोधित-आत्मशुद्धि वाले और अनियाणे-निदान बंध से विहीन बन गये। अप्पुस्सुए- उत्कंठाभाव उनके भीतर बिलकुल नहीं रहा। अबहिल्लेसे-असंयम संबंधी मनोवृत्ति से बहिर्भूत हो गये सुसामण्णरए-श्रमणधर्म में तीन योगों से युक्त बन गये। दंते-क्रोधादि कषायों पर उन्हों ने विजय प्राप्त कर लिया। इस प्रकार निर्दोष निर्ग्रन्थ अनगार बनकर वे स्कन्दक मुनि इस जिनोक्त नैर्ग्रन्थ प्रवचन को आगे करके विचरने लगे॥ सू-१३॥

टीकार्थ—"एत्थ णं से खंदए कच्चायणसगोत्ते" लोक, जीव, सिद्धि, सिद्ध एवं मरण इन पदार्थो की सान्तता अनंतता के विषय में वे कात्यायनगोत्रीय स्कन्दक भगवान से यथार्थ उत्तर प्राप्त कर जब अच्छी तरह से बोध को प्राप्त हो गये-यथार्थ विषयक ज्ञान संपन्न बन गये-तब भगवान के ऊपर उन्हें सच्ची श्रद्धा उत्पन्न हो गई। इस तरह सच्ची श्रद्धा से युक्त बन कर उन्होंने "समणं भगवं महाविरं वंदइ"

શાન્તિથી યુક્ત જિતેન્દ્રિય "શોધિત" આત્મ શુદ્ધિ વાળા, "અને અનિયાણુ" નિયાણુથી રહિત બન્યા. "अप्पुस्सुए" તેઓ કુતૂહલવૃત્તિ થી રહિત બન્યા. "अवहिल्लेसे તેઓ અસંયમી વૃત્તિથી તદ્દન રહિત થયા. "सुसामण्णरए" મન, વચન અને કાયના યોગથી તેઓ શ્રમણ ધર્મમા લીન થયા, "दते" તેમણે ક્રોધાદિ કષાયો પર વિજય મેળવી લીધો, આ રીતે નિર્દોષ નિર્ગ્રંથ-અણુગાર બનીને, સ્કંદક મુનિ જિનેશ્વર ભગવાને કહેલ નિર્ગ્રન્થ પ્રવચનનું પાલન કરતા કરતા વિહરવા લાગ્યા

ટીકાર્થ—' एत्थ णं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते" લોક, જીવ, સિદ્ધિ, સિદ્ધ, અને મરણુની સાન્તતા (અન્ત યુક્તતા) અને અનંતતાના વિષયમાં કાત્યાયન ગોત્રી સ્કંદક ભગવાન મહાવીર વડે યથાર્થ ઉત્તર મળવાથી ભગવાન મહાવીર ઉપર તેમને સાચી શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન થઇ, અને તેઓ તે વિષયના યથાર્થ જ્ઞાની બન્યા આ રીતે ભગવાન મહાવીરમાં તેમને શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન થવાથી તેમણે "समण भगव महावीर वंदइ" શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને વંદન કરી

वयासी " वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमवादीत् वन्दनादि करणानन्तरमेवमुक्तवान्, किमुक्तवान् तत्राह—" इच्छामिणं भंते " इत्यादि " इच्छामिणं भंते " इच्छामि खलु भदंत ! " तुज्झ अंतिए केवलिपन्नत्तं धम्मं निसामित्तए " युष्माकमंतिके केवलिप्रज्ञप्तं धर्मं निशमयितुम् " तुज्झ " युष्माकम् अंतिए " अंतिके-समीपे इत्यर्थः " केवलिपन्नत्त " केवलिप्रज्ञप्तं केवलिना समुत्पन्नकेवलज्ञानवता पुरुषेण प्रज्ञप्तम् प्रकाशितम् " धम्म " धर्मम् " निसामित्तए " निशमयितुम् श्रोतुम्—हे भगवन् ! अहं भवन्मुखात् केवलिप्रतिपादित धर्मं श्रोतुमिच्छामि इति भावः । भगवानाह—" अहासुहं देवाणुप्पिया " यथा सुखं देवानुप्रिय ! हे देवानुप्रिय ! यथे रोचते तथा कुरु किन्तु " मा पडिबन्धं करेह " मा प्रतिबन्धं कुरु विलम्बं मा कुरु " तएणं समणे भगवं महावीरे " ततः खलु श्रमणो भगवान् महावीरः " खंदयस्स कच्चायणस्स गोत्तस्स " स्कन्दकाय कात्यायनगोत्राय " तीसेय महइ

श्रमण भगवान् महावीर को वंदना की उन्हें नमस्कार किया। "वंदित्ता नमंसित्ता" वंदना नमस्कार करके उन्हों ने प्रभु से " एवं वयासी " इस प्रकार कहा-" इच्छामि णं भंते ! तुज्झ अंतिए केवलिपन्नत्तं धम्मं निसामित्तए " हे भदन्त ! मैं आपसे-अर्थात् आप के मुख से केवलिप्रज्ञप्त-समुत्पन्न केवलज्ञानशाली भगवान द्वारा प्ररूपित प्रकाशित-धर्म श्रुतचारित्ररूप धर्म-सुनना चाहता हूं। इस प्रकार केवलिप्रज्ञप्त धर्म सुनने की स्कन्दक की तीव्र जिज्ञासा जानकर भगवान ने उससे कहा-"अहासुहं देवाणुप्पिया ! " हे देवानुप्रिय ! जैसा तुम्हें रुचे-वैसा करो परन्तु 'मा पडिबंधं करेह' विलम्ब मत करो। 'तएणं समणे भगवं महावीरे इसके बाद श्रमण भगवान् महावीर ने 'खंदयस्स कच्चायणस्स गोत्तस्स' कात्यायनगोत्रीय स्कन्दक के लिये-तथा (तीसे य महइ महालयाए)

નમસ્કાર કર્યાં " वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी " વંદન નમસ્કાર કરીને તેમણે પ્રભુને આ પ્રમાણે વિનતિ કરી. " इच्छामि णं भंते ! तुज्झं अंतिए केवलिपन्नत्तं धम्मं निसामित्तए " હે ભગવન્ હું આપને મુખેથી કેવલિપ્રરૂપિત ધર્મ સાંભળવા માગુ છુ આ પ્રકારની કેવલિ પ્રરૂપિત ધમ સાંભળવાની તેમની જિજ્ઞાસા જોઈને ભગવાન મહાવીરે તેમને કહ્યું- " अहासुहं देवाणुप्पिया ! " હે દેવાનુપ્રિય ! તમને જેમ સુખ ઉપજે તેમ કરો. " मा पडिबंधं करेह " શુભ કામમાં વિલબ કરવો જોઈએ નહીં- " तएणं समणे भगवं महावीरे " ત્યાર બાદ શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે " खंदयस्स कच्चायणस्स गोत्तस्स ' કાત્યાયન ગોત્રી સ્કન્દક તથા " तीसे य महइ महालयाए " ત્યાં

टीका—"एत्थ णं से खंदए कच्चायणस्सगोत्ते" अत्र खलु स स्कंदकः कात्यायन गोत्रः "संवुद्धे" संवुद्धः सम्यग् रूपेण वोधं प्राप्तः लोकजीवसिद्धि-सिद्धमरणविषयकोत्तरं भगवतः सकाशात् संप्राप्य यथार्थविषयकज्ञानवान् भवति ततः संजातवोधो भगवति समुत्पन्नश्रद्धो भूत्वा "समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ" श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति "वंदित्ता नमंसित्ता एव

क्षम, जितेन्द्रिय, शोधित–आत्मशुद्धि वाले और अनियाणे–निदान वंध से विहीन वन गये। अप्पुस्सुए– उत्कंठाभाव उनके भीतर बिलकुल नहीं रहा। अवहिल्लेसे–असंयम संबंधी मनोवृत्ति से बहिर्भूत हो गये सुसामण्णरए–श्रमणधर्म में तीन योगों से युक्त वन गये। दंते–क्रोधादि कषायों पर उन्हों ने विजय प्राप्त कर लिया। इस प्रकार निर्दोष निर्ग्रन्थ अनगार वनकर वे स्कन्दक मुनि इस जिनोक्त नैर्ग्रन्थ प्रवचन को आगे करके विचरने लगे॥ सू–१३ ॥

टीकार्थ—"एत्थ णं से खंदए कच्चायणसगोत्ते" लोक, जीव, सिद्धि, सिद्ध एवं मरण इन पदार्थों की सान्तता अनंतता के विषय में वे कात्यायनगोत्रीय स्कन्दक भगवान से यथार्थ उत्तर प्राप्त कर जय अच्छी तरह से वोध को प्राप्त हो गये–यथार्थ विषयक ज्ञान संपन्न वन गये–तव भगवान के ऊपर उन्हें सच्ची श्रद्धा उत्पन्न हो गई। इस तरह सच्ची श्रद्धा से युक्त वन कर उन्होंने "समणं भगवं महाविरं वंदइ"

શાન્તિથી યુક્ત જિતેન્દ્રિય "શોધિત" આત્મ શુદ્ધિ વાળા, "અને અનિયાણુ" નિયાણુથી રહિત બન્યા "अप्पुस्सुए" તેઓ કુતૂહલવૃત્તિ થી રહિત બન્યા. "अवहिल्लेसे તેઓ અસંયમી વૃત્તિથી તદ્દન રહિત થયા "सुसामण्णरए" મન, વચન અને કાયના યોગથી તેઓ શ્રમણુ ધર્મમા લીન થયા, "दंते" તેમણે ક્રોધાદિ કષાયો પર વિજય મેળવી લીધો, આ રીતે નિર્દોષ નિર્ગ્રંથ-અણુગાર બનીને, સ્કંદક મુનિ જિનેશ્વર ભગવાને કહેલ નિર્ગ્રન્થ પ્રવચનનું પાલન કરતા કરતા વિહરવા લાગ્યા.

ટીકાર્થ—'एत्थ णं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते" લોક, જીવ, સિદ્ધિ, સિદ્ધ, અને મરણુની સાન્તતા (અન્ત યુક્તતા) અને અનંતતાના વિષયમાં કાત્યાયન ગોત્રી સ્કંદક ભગવાન મહાવીર વડે યથાર્થ ઉત્તર મળવાથી ભગવાન મહાવીર ઉપર તેમને સાચી શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન થઇ, અને તેઓ તે વિષયના યથાર્થ જ્ઞાની બન્યા આ રીતે ભગવાન મહાવીરમા તેમને શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન થવાથી તેમણે "समण भगव महावीर ––" શ્રમણુ ભગવાન મહાવીરને વંદન કરી

वयासी " वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमवादीत् वन्दनादि करणानन्तरमेवमुक्तवान्, किमुक्तवान् तत्राह—" इच्छामि णं भंते " इत्यादि "इच्छामि णं भंते" इच्छामि खलु भदन्त ! " तुम्भं अंतिए केवलिपन्नत्तं धम्मं निसामित्तए " युष्माकमंतिके केवलिप्रज्ञप्तं धर्मं निशमयितुम् " तुम्भं " युष्माकम् अंतिए " अंतिके-समीपे इत्यर्थः " केवलिपन्नत्तं " केवलिप्रज्ञप्तं केवलिना समुत्पन्नकेवलज्ञानवता पुरुषेण प्रज्ञप्तम् प्रकाशितम् " धम्मं " धर्मम् " निसामित्तए " निशमयितुम् श्रोतुम्—हे भगवन् ! अहं भवन्मुखात् केवलिप्रतिपादित धर्मं श्रोतुमिच्छामि इति भावः ! भगवानाह—" अहासुहं देवाणुप्पिया " यथा सुखं देवानुप्रिय ! हे देवानुप्रिय ! ते रोचते तथा कुरु किन्तु " मा पडिबन्धं करेह " मा प्रतिबन्धं कुरु विलम्बं मा कुरु " तएणं समणे भगवं महावीरे " ततः खलु श्रमणो भगवान् महावीरः खंदयस्स कच्चायणस्स गोत्तस्स " स्कन्दकाय कात्यायनगोत्राय " तीसे य मह

श्रमण भगवान् महावीर को वंदना की उन्हें नमस्कार किया। "वंदित्ता नमंसित्ता" वंदना नमस्कार करके उन्हों ने प्रभु से " एवं वयासी " इस प्रकार कहा–" इच्छामि णं भंते ! तुम्भं अंतिए केवलिपन्नत्तं धम्मं निसामित्तए " हे भदन्त ! मैं आपसे–अर्थात् आप के मुख से केवलि प्रज्ञप्त-समुत्पन्न केवलज्ञानशाली भगवान द्वारा प्ररूपित प्रकाशित-धर्म श्रुतचारित्ररूप धर्म–सुनना चाहता हूं। इस प्रकार केवलिप्रज्ञप्त धर्म सुनने की स्कन्दक की तीव्र जिज्ञासा जानकर भगवान ने उससे कहा–"अहा सुहं देवाणुप्पिया ! " हे देवानुप्रिय ! जैसा तुम्हें रुचे–वैसा करो परन्तु 'मा पडिबंध करेह' विलम्ब मत करो। 'तएणं समणे भगवं महावीरे इसके बाद श्रमण भगवान् महावीर ने 'खंदयस्स कच्चायणस्स गोत्तस्स' कात्यायनगोत्रीय स्कन्दक के लिये–तथा (तीसे य महइ महालयाए)

नमस्कार कर्यो "वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी" वंदन नमस्कार करीने तेमणे प्रभुने आ प्रमाणे विनंति करी. "इच्छामि णं भंते ! तुम्भं अंतिए केवलिपन्नत्तं धम्मं निसामित्तए" हे भगवन् हुं आपने मुखेथी केवलिप्ररूपित धर्म सांभळवा मागुं छुं आ प्रकारनी केवलि प्ररूपित धर्म सांभळवानी तेमनी जिज्ञासा जोईने भगवान महावीरे तेमने कह्युं– ' अहासुहं देवाणु प्पिया ! " हे देवानुप्रिय ! तमने जेम सुख उपजे तेम करो ' मा पडिबंध करेह " शुभ कामभां विलंब करवो जोईए नहीं– तएणं समणे भगवं महावीरे ' त्यार बाद श्रमण भगवान महावीरे " खंदयस्स कच्चायणस्स गोत्तस्स ' कात्यायन गोत्री स्कन्दक तथा " तीसे य महइ महालयाए " त्यां

महालयाए परिसाए " तस्यै च महातिमहालयायै परिषदे " धम्मं परिकहेइ " धर्मं परिकथयति " धम्मकहा भाणिअव्वा " कर्मकथा भणितव्या " अत्थि लोए अत्थि अलोए " इत्यादि रूपा धर्मकथा औपपातिकसूत्रस्य पूर्वार्धे षट्पञ्चाशत्तमे सूत्रे विलोकनीया, "तएणं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते" ततः खलु स स्कन्दकः कात्यायन गोत्रः " समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं " श्रमणस्य भगवतो महावीरस्यांतिके धर्मं " सोच्चा " श्रुत्वा " णिसम्म " निशम्य हृदि अवधार्य " हट्ठ तुट्ठ जाव हियए" अत्र यावत्पदेन " चित्तमाणंदिए पीइमणे परमसो-

उस आई हुई बडी भारी परिषद को (धम्मं परि कहेइ) चारित्र रूप धर्म का उपदेश दिया। (धम्मकहा भाणियव्वा) धर्मकथा कहनी चाहिये-(अत्थि लोए अत्थि अलोए) इत्यादिरूप धर्मकथा औपपातिक के पूर्वार्ध में छप्पनवेंसूत्र के अंदर है, सो वहां से देख लेनी चाहिये। (तएण से खंदए कच्चायणसगोत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स अतिए धम्मं सोच्चा णिसम्म हट्ठ तुट्ठ जाव हियए) स्कन्दक परिव्राजक ने श्रमण भगवान महावीर के मुख से जब धर्मकथा सावधान होकर सुनी तो सुनकर और उसे हृदय में अवधारण कर उसका चित्त बहुत हर्षित हुए, अतितुष्ट हुए, हृष्ट तुष्ट का तात्पर्य अतितुष्ट है। अथवा -हृष्ट शब्द का अर्थ हर्षित और तुष्ट शब्द का अर्थ-धर्मकथा के श्रवण से प्राप्त संतोषवाला ऐसा है चित्त जिसका-वह हृष्ट तुष्ट चित्त है। इसी लिये आनंद को प्राप्त हुए-मानसिक उल्लासवाले हुए (पीइमणे) मन में तृप्ति से युक्त हुए अर्थात् भगवान् की अमृत जैसी

ભેગી થયેલી ઘણી જ મોટી સભાને " धम्म परिकहेइ " શ્રુત ચારિત્ર રૂપ ધર્મનો ઉપદેશ દીધો " धम्मकहा भाणियव्वा " અહીં ધર્મ કથા કહેવી જોઈએ તે ધર્મકથા કઈ? " अत्थि लोए अत्थि अलोए " ઈત્યાદિ રૂપ ધર્મકથા ઔપપાતિક સૂત્રના પૂર્વાર્ધમા છપ્પનમા સૂત્રથી જિજ્ઞાસુઓએ તે ધર્મકથા વાચી લેવી. " तएण से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठ जाव हियए " કાત્યાયન ગોત્રીય સ્કંદક પરિવ્રાજકે જ્યારે તે ધર્મકથા શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને મુખેથી એકચિત્તે સાભળી અને હૃદયમા અવધારણ કરી ત્યારે તેમને ઘણો હર્ષ થયો, અને તેમને ઘણો સતોષ થયો (હૃષ્ટ તુષ્ટ એટલે અતિશય તુષ્ટ અથવા હૃષ્ટ એટલે હર્ષિત અને તુષ્ટ એટલે ધર્મકથા સાંભળીને સંતોષ પામેલ) તેમના ઉલ્લાસનો પાર ન રહ્યો, " पीइमणे " ભગવાનની અમૃત જેવી વાણી સાભળીને તેમનુ મન પ્રસન્ન થયુ, તેમનુ મન " परमसो-

मणस्सिए हरिसवसविसप्पमाण " इति समह "हट्टतुट्ठचित्तमाणंदिए" हृष्टतुष्ट चित्तानन्दितः-हृष्टतुष्टम्=अतितुष्टम् , यद्वा हृष्टं=हर्षितम् , तुष्टम्=धर्मकथा श्रवणेन प्राप्तसन्तोषम् , तादृश चित्त यस्य स हृष्टतुष्टचित्तः, अतएव आनन्दितः= आनन्दं प्राप्तः समागतमानसोल्लास इत्यर्थः "पीइमणे" प्रीतिमना -प्रीतिः=तृप्ति र्मनसि यस्य स प्रीतिमनाः अमृतोपमवाणीश्रवणेन तृप्तमानसः अतएव "परम सोमणस्सिए" परमसौमनस्यित -परमम्=उत्कृष्टञ्च तत् सौमनस्यं=प्रसन्नचित्तता चेति परमसौमनस्यं, तदस्य सञ्जात परमसौमस्यितः परमानुरागपूर्णमनस्कः। "हरिसवसविसप्पमाणहियए" हर्षवशविसर्पद् हृदय हर्षवशेन विसर्पत्=परितः उच्छलत् हृदयं यस्य तथा भगवदुक्तधर्मश्रवणादमन्दानन्दतरङ्गसमुच्छलितचित्त इत्यर्थः "उट्ठाए उट्ठेइ" उत्थया उत्थानक्रियया उत्तिष्ठति, "उट्ठित्ता" उत्थाय "समणं भगवं महावीरं" श्रमणं भगवन्तं महावीरम्। तिक्खुत्तो त्रिकृत्वः त्रिवार मित्यर्थः "आयाहिणपयाहिणं करेइ" आदक्षिणप्रदक्षिणा करोति "करित्ता" 'वंदइ नमसइ' वन्दते नमस्यति 'वंदित्ता नमंसित्ता" वन्दित्वा नमस्यित्वा' "एवं वयासी" एवम्=वक्ष्यमाण वचनम्-अवादीत् उक्तवान् "सद्दहामि णं

वाणी के सुनने से तृप्त मन वाले हुए इसी से (परमसोमणस्सिए) जिनका चित्त परम प्रसन्नता से भर गया है-अर्थात् परम अनुराग से पूर्ण मन वाले ऐसे वे स्कन्दक परिव्राजक उस समय अपार हर्ष के मारे प्रफुल्लित हुए उनका हृदय (हरिसवसविसप्पमाणहियए) भगवान द्वारा कथित धर्म के श्रवण से होने वाले हर्षोल्लास क उत्कर्ष से फूल गया। वह उसी समय (उट्ठाए उट्ठेइ) अपनी उत्थानशक्ति से उठे 'उट्ठित्ता' और उठकर (समणं भगवं महावीरं) उन्हों ने भगवान महावीर को (तिक्खुत्तो) तीन वार (आयाहीणपयाहीणं करेइ करीत्ता वंदइ नमंसइ) आदक्षिणप्रदक्षिणापूर्वक वन्दना नमस्कार करते हैं (वंदित्ता नमंसित्ता) वन्दना नमस्कार करके (एवं वयासि) फिर श्रमण

मणस्सिए" प्रसन्नताथी भराई गयु- मोटले के भक्ति भावथी पूर्ण मनवाળा સ્કન્દક પરિવ્રાજકનું હૃદય "हरिसवसविसप्पमाणहियए' ભગવાનનો ધર્મો- પદેશ સાંભળીને હર્ષોલ્લાસથી નાચી ઉઠ્યું

એજ સમયે 'उट्ठाए उट्ठेइ' તેઓ પોતાની ઉત્થાનશક્તિથી ઉઠ્યા. "उट्ठित्ता" અને ઉઠીને समणं भगवं महावीरं' તેમણે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને "तिक्खुत्तो" ત્રણ વાર 'आयाहिणपयाहिणं करेइ करित्ता वंदइ नमंसइ" આદક્ષિણ પ્રદક્ષિણાપૂર્વક વંદન નમસ્કાર કર્યા "वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी' વંદન નમસ્કાર કરીને તેમણે ભગવાન મહાવીરને આ પ્રમાણે કહ્યું

भंते " श्रद्धे इदं यथार्थमेवास्तीति विश्वसिमि० खलु भदंत ! "णिग्गंथं पाव-यणं" निर्ग्रंथं प्रवचनम् निर्ग्रंथसंबन्धिशास्त्रे मे श्रद्धा समुत्पन्ना यस्य शास्त्रस्यानुगामी भवत्सदृशः केवली तत् शास्त्रमवश्यमेवोपादेयमित्याकारिका मे श्रद्धा समुत्पन्ना-ऽतोहं श्रद्धे प्रवचनमितिभावः । "पत्तियामि णं भंते निग्गंथं पावयणं " प्रत्येमि खलु भदन्त । निर्ग्रंथं प्रवचनम् , लोकादि स्वरूपमित्थमेवेति प्रीतिं प्रत्ययं विश्वासं वा करोमि " रोएमि णं भंते णिग्गंथं पावयणं " रोचे खलु भदंत । नैर्ग्रंथं प्रवच-नम् रोचे पीयूषधारावत् वांछामि निर्ग्रंथप्रवचनम् " अब्भुट्ठेमि णं भंते णिग्गंथं पावयणं " अभ्युत्तिष्ठामि खलु भदंत । नैर्ग्रंथं प्रवचनम् अभ्युत्तिष्ठामि । अङ्गीक-

---

भगवान महावीर से इस प्रकार कहा-(सद्दहामि ण भंते । णिग्गंथं पावयणं) हे भदन्त ! यह निर्ग्रन्थ प्रवचन ही यथार्थ है-इस कारण मैं इस पर श्रद्धा करता हूं। श्रद्धा करने का कारण यह है कि आप जैसे केवली इसकी प्ररूपणा करने वाले हैं अतः यह अवश्य ही उपादेय है, इस प्रकार की श्रद्धा मुझे उत्पन्न हो गइ है अतः मैं इस निर्ग्रन्थ प्रवचन के ऊपर अटूट श्रद्धा वाला बन गया हूं। (पत्तियामि णं भंते । निग्रन्थं पावयणं) हे भदन्त ! लोकादिक का स्वरूप जैसा आपने प्रतिपादित किया है वह ऐसा ही है इस प्रकार मैं इस निर्ग्रन्थ प्रवचन पर प्रीति-प्रत्यय -विश्वास करता हूं। (रोएमि णं भंते ! णिग्गंथं पावयणं) जिस प्रकार अमृत हरएक प्राणी की रुचि का एकान्ततःविषयभूत बनता है उसी प्रकार से हे भदन्त । यह निर्ग्रन्थ प्रतिपादित प्रवचन भी मेरी रुचि का विषयभूत बन गया है। (अब्भुट्ठेमि णं भंते। णिग्गंथं पावयणं) इसलिये हे भदन्त ! मैं आज से इस निर्ग्रन्थ प्रवचन को अंगीकार करता हूं, (एवमेयं भंते।) हे भदन्त ! आपने जो उपदेश दिया है वह ऐसा ही

" सद्दहामि ण भते ! णिग्गंथं पावयणं " હે ભગવાન્ ! આ નિર્ગ્રંથ પ્રવ-ચન જ યથાર્થ છે, તે કારણે મને તેમાં શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન થઇ છે. શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન થવાનું મુખ્ય કારણ એ છે કે આપ જેવા કેવલી ભગવાન તેની પ્રરૂપણા કરનાર છો તેથી તે અવશ્ય ગ્રહણ કરવા યોગ્ય છે એવી શ્રદ્ધા મારા મનમા ઉત્પન્નથઇ છે તેથી આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચનમા હુ અતૂટ શ્રદ્ધા યુક્ત બની ગયો છું. " पत्ति-यामि ण भते ! निग्गिंथं पावयणं " હે ભગવાન્ ! લોક વગેરેનું સ્વરૂપ આપે પ્રતિપાદિત કર્યા પ્રમાણે જ છે એવી પ્રતીતિ મને થઇ ગઇ છે તેથી નિર્ગ્રંથ પ્રવચન પર મારી પ્રીતિ-વિશ્વાસ વ્યક્ત કરૂં છું " रोएमि णं भंते ! णिग्गंथ-पावयण " જેમ અમૃત દરેક જીવને રુચિ કારક થઈ પડે છે તેમ આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન શ્રવણ કરવાની મારી રુચિ પણ વધતી જ જાય છે " अब्भुट्ठेमि णं भंते ! णिग्गंथं पावयणं " તેથી હે ભગવાન્ ! આજથી હું આ નિર્ગ્રંથ પ્રવ-

रोमीत्यर्थ "एवमेयं भंते" एवमेतत् भदन्त! हे भगवन्! यद् भवानुपदिशति तद् एवमेवास्ति "तहमेयं भंते" तथैतद् भदंत! हे भगवन्! भवता यदुपदिष्ट तथैव। "अवितहमेयं भंते" अवितथमेतद् भदंत! हे भगवन्! भवदुक्तमेतत् सर्वं सत्यमेव। "असंदिद्धमेयं भंते" असदिग्धमेतत् भदंत! हे भगवन्! एतत् सन्देहरहितं—देशशंका सर्वशङ्का वर्जितम्। "इच्छियमेयं भंते" इष्टमेतद् भदंत! = हे भगवन्! एतद् भवद्वचन सव मया वाञ्छितमेव पडिच्छियमेयं भंते" प्रतीष्टमेतद् भदन्त! = हे भगवन्! पुनः पुनरिष्ट-मेतद् भवद्वचनम् 'इच्छियपडिच्छियमेयं भंते' इष्टप्रतीष्टमेतद् भदत= हे भगवन्! एतद् भगवद् वचनम् इष्टप्रतीष्टोभयरूपं वर्तते 'से जहेयं तुब्भे वदह' तद् यथैतद् यूय वदथ = तदेतद् यथा भवान् कथयति तथैव 'त्ति कट्टु' इति कृत्वा=इत्युक्त्वा 'समणं भगवं महावीरं वंदइ नमसइ' श्रमणं

है, (तहमेयं भंते) हे भदन्त! जैसा आपने प्रतिपादित किया है वह अक्षर शः बिलकुल वैसा ही है। (अवितहमेयं भंते! हे भदन्त! आपके द्वारा कहा हुआ यह सब सत्य ही है। (असंदिद्धमेयं भंते!) हे भदन्त! इस आपके प्रवचन में न देशशंका का स्थान है और न सर्वशंका का ही स्थान यह सर्व प्रकार से शंका रहित है 'इच्छियमेयं भंते!' हे भदन्त! ये आपके वचन मेरे लिये वांछित ही हैं। 'पडिच्छियमेयं भंते' हे भदन्त आपके ये वचन पुनः पुनः इष्ट हैं।। इच्छियपडियच्छियमेयं भंते!' हे भदन्त! ये आपके वचन इष्ट हैं प्रतीष्ट दोनों रूप हैं। 'से जहेयं तुब्भ वदह' आपने जैसा कहा है वह सर्वप्रकार से

વચનને અંગીકાર કરું છું "एवमेयं भंते!" હે ભગવાન્ આપે જે તત્ત્વોનો ઉપદેશ આપ્યો છે તે યથાર્થ જ છે, तहमेयं भंते! આપે જે તત્ત્વોનું પ્રતિ પાદન કર્યું છે, તે અક્ષરે અક્ષર સત્ય છે-તેમાં કોઇ પણ પ્રકારની શંકાને સ્થાન નથી 'अवितहमेयं भंते!" હે ભગવાન્! આપે જે કહ્યું છે તે સત્ય જ છે 'असंदिद्धमेयं भंते!" હે ભગવન્! આપની વાત સંદેહ રહિત છે તેમાં શંકાને માટે બિલકુલ અવકાશ જ નથી તે સર્વ પ્રકારે શંકા રહિત જ છે "इच्छियमेयं भंते!' હે ભગવન્! આપનાં વચન ઇચ્છવા યોગ્ય છે—આપનાં વચન સાંભળવાની અભિલાષા મને થયા કરે છે 'पडिच्छियमेयं भंते!" હે ભગવન્ આપનાં વચનો અતિશય ઇષ્ટ છે 'इच्छियपडिच्छियमेयं भंते!" હે ભગવાન્! આપનાં વચન ઇષ્ટ અને પ્રતીષ્ટ છે 'से जहेयं तुब्भे वदह" આપે જે કહ્યું તે સર્વ પ્રકારે યથાર્થ જ છે, "इति कट्टु' આ પ્રમાણે કહીને

भंते " श्रद्धे इदं यथार्थमेवास्तीति विश्वसिमि० खलु भदंत ! " णिग्गंथं पाव-यणं" निर्ग्रंथं प्रवचनम् निर्ग्रंथसंबन्धिशास्त्रे मे श्रद्धा समुत्पन्ना यस्य शास्त्रस्यानुगामी भवत्सदृशः केवली तत् शास्त्रमवश्यमेवोपादेयमित्याकारिका मे श्रद्धा समुत्पन्ना-ऽतोऽहं श्रद्धे प्रवचनमितिभावः । " पत्तियामि णं भंते निग्गंथं पावयणं " प्रत्येमि खलु भदन्त ! निर्ग्रंथं प्रवचनम् , लोकादि स्वरूपमित्थमेवेति प्रीतिं प्रत्ययं विश्वासं वा करोमि " रोएमि णं भंते णिग्गंथं पावयणं " रोचे खलु भदंत ! नैर्ग्रंथं प्रवच-नम् रोचे पीयूषधारावत् वांछामि निर्ग्रंथप्रवचनम् " अब्भुट्ठेमि णं भंते णिग्गंथं पावयणं " अभ्युत्तिष्ठामि खलु भदंत ! नैर्ग्रंथं प्रवचनम् अभ्युत्तिष्ठामि । अङ्गीक-

भगवान महावीर से इस प्रकार कहा-(सद्दहामि ण भंते ! णिग्गंथं पावयणं) हे भदन्त ! यह निर्ग्रन्थ प्रवचन ही यथार्थ है-इस कारण मैं इस पर श्रद्धा करता हूं । श्रद्धा करने का कारण यह है कि आप जैसे केवली इसकी प्ररूपणा करने वाले हैं अतः यह अवश्य ही उपादेय है, इस प्रकार की श्रद्धा मुझे उत्पन्न हो गई है अतः मैं इस निर्ग्रन्थ प्रवचन के ऊपर अटूट श्रद्धा वाला बन गया हूं । (पत्तियामि णं भंते ! निर्ग्रन्थं पावयणं) हे भदन्त ! लोकादिक का स्वरूप जैसा आपने प्रतिपादित किया है वह ऐसा ही है इस प्रकार मैं इस निर्ग्रन्थ प्रवचन पर प्रीति-प्रत्यय -विश्वास करता हूं । (रोएमि णं भंते ! णिग्गंथं पावयणं) जिस प्रकार अमृत हरएक प्राणी की रुचि का एकान्ततः विषयभूत बनता है उसी प्रकार से हे भदन्त ! यह निर्ग्रन्थ प्रतिपादित प्रवचन भी मेरी रुचि का विषयभूत बन गया है । (अब्भुट्ठेमि णं भंते ! णिग्गंथं पावयणं) इसलिये हे भदन्त ! मैं आज से इस निर्ग्रन्थ प्रवचन को अंगीकार करता हूं, (एवमेयं भंते !) हे भदन्त ! आपने जो उपदेश दिया है वह ऐसा ही

" सद्दहामि ण भंते ! णिग्गंथं पावयण " હે ભગવાન્ ! આ નિર્ગ્રંથ પ્રવ-ચન જ યથાર્થ છે, તે કારણે મને તેમા શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન થઇ છે. શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન થવાનું મુખ્ય કારણ એ છે કે આપ જેવા કેવલી ભગવાન તેની પ્રરૂપણા કરનાર છો તેથી તે અવશ્ય ગ્રહણ કરવા યોગ્ય છે એવી શ્રદ્ધા મારા મનમા ઉત્પન્નથઇ છે તેથી આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચનમા હું અતૂટ શ્રદ્ધા યુક્ત બની ગયો છું " पत्ति-यामि ण भते ! निग्गिथं पावयणं " હે ભગવાન્ ! લોક વગેરેનુ સ્વરૂપ આપે પ્રતિપાદિત કર્યા પ્રમાણે જ છે એવી પ્રતીતિ મને થઇ ગઇ છે તેથી નિર્ગ્રંથ પ્રવચન પર મારી પ્રીતિ-વિશ્વાસ વ્યક્ત કરૂ છું " रोएमि णं भते ! णिग्गंथ-पावयण " જેમ અમૃત દરેક જીવને રુચિ કારક થઈ પડે છે તેમ આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન શ્રવણ કરવાની મારી રુચિ પણ વધતી જ જાય છે " अब्भुट्ठेमि णं भंते ! णिग्गंथ पावयणं " તેથી હે ભગવાન્ ! આજથી હું આ નિર્ગ્રંથ પ્રવ-

श्रमणो भगवान् महावीरः 'तेणेव उवागच्छइ' तत्रैवोपागच्छति 'उवागच्छित्ता' उपागम्य 'समण भगव महावीर' श्रमण भगवन्तं महावीरम् 'तिक्खुत्तो' त्रि कृत्व 'आयाहिणं पयाहिणं करेइ' आदक्षिणप्रदक्षिणां करोति 'करित्ता' कृत्वा 'वदइ नमसइ' वन्दते नमस्यति 'वंदित्ता नमंसित्ता' वन्दित्वा नमस्यित्वा 'एवं वयासी' एवमवादीत् 'आलित्ते ण भंते लोए' आदीप्त खलु भदन्त ! लोका आदीप्तः–आसमन्तात्–दीप्त ज्वलित लोको जीवलोक हे भगवन्! परिदृश्यमानो जीवलोकः सर्वत्र प्रदीप्त इवाभातीत्यर्थः, 'आलित्तपलित्ते ण भंते लोए' आ

विराजमान थे 'तेणेव उवागच्छइ' वहां पर आये 'उवागच्छित्ता' वहा आकर उन्होंने 'समणं भगवं महावीरं' श्रमण भगवान महावीर को 'तिक्खुत्तो' तीन बार 'आयाहिणं पयाहिणं' आदक्षिण प्रदक्षिणा (करेइ) की (करित्ता) तीन बार आदक्षिण प्रदक्षिणा करके 'वदइ नमंसइ' फिर उन्होंने श्रमण भगवान् महावीर को वंदना की उन्हें नमस्कार किया। (वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी) वंदना नमस्कार करके फिर वह भगवान महावीर से इस प्रकार कहने लगा– (आलित्तेणं भंते लोए) हे भदन्त! यह जीवलोक चारों तरफ से जल रहा है अर्थात् जितना भी यह जीवलोक दिखलाई पड़ रहा है वह सब ओर से प्रदीप्त की तरह मालूम होता है (पलित्तेणं भंते! लोए) हे भदन्त! यह जीवलोक सामान्य रूप से ही जल रहा हो सो बात नहीं है किन्तु यह तो बहुत ही अधिक विशेष रूप से प्रज्वलित जैसा हो रहा है (आलित्तपालित्तेणं भंते ! लोए) हे भदन्त! जहा पर भी देखो

શ્રમણ ભગવાન મહાવીર સ્વામી વિરાજમાન હતા "तेणेव उवागच्छइ" ત્યાં આવ્યા "उवागच्छित्ता" ત્યાં આવીને તેમણે 'समण भगव महावीर" શ્રમણ ભગવાન મહાવીરની 'तिक्खुत्तो" ત્રણ વાર 'आयाहिण पयाहिण" આદક્ષિણ પ્રદક્ષિણા 'करेइ" કરી (करित्ता) ત્રણ વાર આદક્ષિણ પ્રદક્ષિણા કરીને (वदइ नमसइ) તેમણે ભગવાન મહાવીરને વંદન કરી નમસ્કાર કર્યો 'वदित्ता नमसित्ता एवं वयासी' વંદન નમસ્કાર કરીને તેમણે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને આ પ્રમાણે કહ્યુ "आलित्तेणं भंते लोए" હે ભગવન્! આ લોક ચારે તરફથી સળગી રહ્યો છે એટલે કે આ આખોય જીવ લોક ચોમેરથી બળી રહ્યો છે 'पलित्तेणं भंते! लोए" હે ભગવન્! આ જીવલોક સામાન્ય રૂપે જ સળગી રહ્યો છે એવુ નથી પણ તે તો ખૂબજ અધિક પ્રમાણમાં પ્રજ્વલિત હોય એવુ લાગે છે આलित्तपलित्तेणं भंते ! लोए"

भगवन्त महावीरं वन्दते नमस्यति "वंदित्ता नमंसित्ता" वन्दित्वा नमस्यित्वा "उत्तरपुरत्थिमं दिसिभायं अवक्कमइ" उत्तरपौरस्त्यं दिग्भागम् अवक्रामति "उत्तरपुरत्थिमं" उत्तरपौरस्त्यम् उत्तरपूर्वयोरन्तरालं "दिसिभायं" दिग्भागम् ईशानकोणम् "अवक्कमइ" अवक्रामति गच्छति "अवक्कमित्ता" अवक्रम्य स स्कन्दक ईशानकोणे गत्वेत्यर्थः, "तिदंडं च कुंडियं च जाव धाउरत्ताओय एगंते एडेइ" त्रिदण्डं च कुण्डिकां च यावत् धातुरक्ताश्चैकान्ते एडयति, त्रिदण्डादिकं संन्यासि सम्बन्धिसर्वमुपकरणं धातुरक्ताः शाटिकाश्च एकान्ते एडयति =मुञ्चति, तापसस्य यानि चिन्हानि आसन् तानि सर्वाण्येव स्कन्दकः परित्यजति "एडित्ता" एडयित्वा परित्यज्य, सदोरकमुखवस्त्रिका-रजोहरण-चोलपट्टक "चद्दरादि" रूपं मुनिवेषं धृत्वा च "जेणेव समणे भगवं महावीरे" यत्रैव

वैसा ही है 'इतिकट्टु' इस प्रकार कहकर उन स्कन्दक ने 'समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ' श्रमण भगवान् महावीर को वंदना की, उन्हें नमस्कार किया। 'वंदित्ता नमंसित्ता' वंदना नमस्कार कर चुकने बाद फिर वह 'उत्तरपुरत्थिमं दिसि भायं अवक्कमइ' उत्तर और पूर्व दिशा के अंतरालवर्ती दिशा में-अर्थात् ईशानकोण में गये। 'अवक्कमित्ता' वहां जाकर उन्हों ने 'तिदडं च, कुंडियं च, जाव धाउरत्ताओ एगंते एडेइ' अपने त्रिदण्ड को, कमण्डलु को, यावत् गैरिक आदि धातु से रंगे वस्त्रों को एकान्त में रख दिया। तात्पर्य कहने का यह है कि स्कन्दक ने अपने तापस संबंधी जितने भी चिह्न थे और उपकरण थे उन सबका परित्याग कर दिया। 'एडित्ता' उन्हें एकान्तस्थान में रखकर "सदोरकमुखवस्त्रिका रजोहरण, चौलपट्टक, चद्दर आदिरूप मुनिवेष को धारण कर 'जेणेव समणे भगवं महावीरे' जहां श्रमण भगवान महावीर

સ્કન્દકે "समणं भगव महावीर वंदइ नमसइ" શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને વંદન નમસ્કાર કર્યા. "वंदित्ता नमंसित्ता" વંદન નમસ્કાર કરીને તેઓ "उत्तरपुरत्थिमं दिसिभाय अवक्कमइ" ઉત્તર અને પૂર્વ દિશાની વચ્ચેના ખૂણામા (ઈશાન ખૂણામા) ગયા (अवक्कामित्ता) ત્યાં જઈને તેમણે "तिदंड च, कुडियं च, जाव धाउरत्ताओ एगंते एडेइ" તેમના ત્રિદંડ, કમંડલ ગૈરિક વગેરે ધાતુથી રંગેલા વસ્રો (ભગવાં કપડાં) વગેરે વસ્તુઓ એકાન્તમાં મૂકી દીધી કહેવાનો ભાવાર્થ એ છે કે સ્કન્દકે પરિવ્રાજક તરીકેના જે જે ચિહ્નો હતાં તેનો પરિત્યાગ કર્યો "एडित्ता" તે બધી વસ્તુઓને એકાન્ત સ્થાનમાં મૂકીને દોરા સહિત મુખવસ્રિકા (મુહપત્તી,) રજોહરણ, ચોલપટ્ટક, પછેડી, વગેરે મુનિવેષ ધારણ કરીને "जेणेव समणे भगवं महावीरे" જ્યાં

तथा हे भगवन् ! यदि अहं विचार्य्य पश्यामि तदाऽयं जीवलोको जरामरणाभ्यां दह्यते तस्य सांत्वने भवत्सदृशवीर एव धीर इति कृत्वा भवता शरणागतोऽस्मतो मां सदुपदेशद्वारा संसारकान्ताराद्रक्षति भावार्थः । एतदेव दृष्टान्तेन स्पष्टयति-'से जहाणामए केइ गाहावई ' तद्यथा नाम कश्चित् गाथापति कश्चिद् गृहस्वामी ' अगारंसि ' अगारे गृहे ' ज्झियायमाणंसि ' ध्यायमाने दह्यमाने प्रज्वलति सति ' जे से तत्थ भंडे भवइ ' यत् तत् तत्र भांडम् उपकरणं भवति स्थित भवतीत्यर्थः । कीदृशमित्याह 'अप्पभारे ' अल्पभारम् अल्पो भारो यस्य तत् अल्पभा

करने के लिये जैसे किसी हाथ में पानी लिये हुए रक्षक वीर की आवश्यता होती है उसी तरह हे भगवन् यह तो निश्चित रूप से दिख लाई ही पड़ रहा है कि यह समस्त जीवलोक रातदिन इस जरा मरण रूप अग्नि से भस्मसात् सा हो रहा है, अतः इसकी रक्षा करने के लिये मैं देख रहा हूं कि हे नाथ ! आपके सिवाय और कोई धीर नहीं है आप ही एक ऐसे वीर हैं-जो इस जरा मरण से बचा सकते हैं-इस लिये मैं इस अग्नि से बचने के लिये आपके चरणों की शरण में आया हुआ हूं-आप मेरी सदुपदेश प्रदान द्वारा इस संसार कान्तार से रक्षा करें । इसी बात को स्कन्दक दृष्टान्त द्वारा पुष्ट करता है-(से जहाणामए केई गाहावई) जैसे कोई गाथापति-धनिक गृहस्थ हो, (अगारंसि ज्झियायमाणंसि) और उसके घर में आग लग जावे तो वह उस स्थिति में (जे से तत्थ भंडे भवई) जो उस मकान में उपकरण होता है- कैसा उपकरण-कि (अप्पभारे मोल्लगुरुए) जिसका भार तो हो

માટે હાથમાં પાણી લઈને અગ્નિને બુઝાવનાર કોઈ વીર પુરુષની જરૂર પડે છે તેવી જ રીતે જરામરણ રૂપ અગ્નિથી અવિરતપણે સળગી રહેલા જીવની રક્ષા માટે આપના સિવાય કોઈ પણ એવો વીર નથી કે જે સમર્થ હોય આપજ એવા વીર છો કે જે જરામરણ રૂપ અગ્નિથી અમારૂ રક્ષણ કરવાને સમર્થ છો. તેથી હે નાથ ! જરા અને મરણરૂપ અગ્નિથી બચવાને માટે હું આપને શરણે આવ્યો છું આપ આપના સદુપદેશ રૂપ વચનનામૃતનું પાન કરાવીને આ સંસાર રૂપી વનમાંથી મને પાર ઉતારો એજ વાતની પુષ્ટિ માટે સ્કન્દક એક દૃષ્ટાંત આપે છે-(से जहाणामए केई गाहावई) જેમ કે હોઈ એક ગાથાપતિ ધનિક (ગૃહસ્થ) છે (अगारंसि ज्झियायमाणंसि) તેના ઘરમાં આગ લાગે છે તો (जे से तत्थ भंडे भवइ अप्पभारे मोल्लगुरुए) તેના ઘરમાં જે ઉપકરણો વજનમાં હલકાં પણ મૂલ્યવાન હોય છે તે ઉપકર

दीप्तप्रदीप्तः खलु भदंत ! लोकः, हे भदंत ! सर्वप्रकारेणायं लोकः ज्वलति चेति· भावः । केन कारणेनेत्याह–'जराए' इत्यादि 'जराए मरणेण य' जरया मरणेन च जरा वार्द्धक्यम् मरणं प्राणपरित्याग रूपम् एतद्रूपेण वन्हिना जरामरणयो रतिशयकष्टकारकत्वाद् वह्निसादृश्यं कथितम्, यथा वह्निना गृहादिर्दह्यते तथा जरामरणाभ्यां जीवलोकोऽहर्निशमतिशयेन ज्वलतीवेतिभावः तथा यथा वह्नि-प्रदीप्तगृहस्य त्राणाय वीरस्य कस्यचिद् रक्षकस्य जलादिहस्तस्यावश्यकता भवति

इस जीवलोक में ऐसा कोइ सा भी स्थान नहीं बचा है कि जहां यह आदीप्त न हो रहा हो। इसे जलाने वाले ये हैं—

(जराए मरणेण य) जरा और मरण। बुढापे का नाम जरा और पर्याय से पर्यायान्तरित होना इसका नाम मरण–अर्थात्- भुज्यमान आयु के समाप्त होने पर प्राणत्यागरूप अवस्था होती है वह मरण है। जरा और मरण ये दोनों एक प्रकार की अग्नि हैं। अग्नि से जले हुए व्यक्ति को मारणान्तिक कष्ट होता है–उसी प्रकार से जरा और मरण से घिरे हुए प्राणी को महादुःख होता है। इसी अतिशय कष्ट कारकता रूप सादृश्य को लेकर जरा मरण को अग्नि की उपमा से उपमित किया गया है। जिस प्रकार अग्नि के संबंध से गृहादिक जल जाते हैं, उसी प्रकार जरा और मरण इन दोनों से यह जीवलोक रात दिन अतिशयरूप से जलता सा रहता है। वह्नि से जलते हुए घर की रक्षा

હે ભગવન્! આ જીવલોકમા એવુ કોઈ પણ સ્થાન નથી કે જે આદીપ્ત થઇ રહ્યુ ન હોય. તેને સળગાવનાર આ વસ્તુઓ છે– "जराए मरणेण य" તેનુ કારણ જરા અને મરણ છે વૃદ્ધાવસ્થાને જરા કહે છે. અને એક પર્યાયમાંથી બીજી પર્યાયમાં ઉત્પન્ન થવુ તેનુ નામ મરણ છે એટલે કે જે ગતિમાં જન્મ થયો હોય તે ગતિનુ આયુષ્ય પૂરૂં થતા પ્રાણત્યાગ રૂપ જે અવસ્થા આવે છે તેને મરણ કહે છે. જરા અને મરણ એ બને પ્રદીપ્ત અગ્નિસમાન છે જેવી રીતે અગ્નિથી બળી ગયેલી વ્યક્તિને અત્યત કષ્ટ થાય છે એવીજ રીતે જરા અને મરણ પણ જીવોને મહાદુ ખ રૂપ થઇ પડે છે. આ રીતે અગ્નિ જેવી રીતે અતિશય કષ્ટ કારક છે તેવી જ રીતે જરા, મરણ પણ અતિશય કષ્ટ કારક છે બન્નેમા કષ્ટકારકતાની સમાનતા હોવાથી જરામરણને પ્રદીપ્ત અગ્નિની ઉપમા આપવામા આવી છે જેવી રીતે અગ્નિથી ઘર વગેરે બળી જાય છે, એજ રીતે જરા અને મરણથી આ જીવલોક રાત દિવસ અતિશય રૂપે બળતો રહે છે જેવી રીતે અગ્નિથી સળગતા ઘરનું રક્ષણ કરવાને

मज्वलद्गृहान्निष्कासितं सत् 'पच्छापुरायए' पश्चात् पुरा च तत्र पश्चात्–आगामिनि काले पुरा च=पूर्वमिदानीमेव "हियाए" हिताय=उपकाराय "सुहाए" सुखाय सुखोत्पादनाय 'खेमाए' क्षेमाय कल्याणाय 'निस्सेयसाए' निःश्रेयसाय= अभ्युदयाय 'आणुगामियत्ताए' आनुगामिकत्वाये भाविवंशपरम्परोपयोगाय 'भविस्सइ' भविष्यति एवं विचार्य गृहपतिः मज्वलद्गृहात् स्वल्पभारं बहुमूल्यं मणिगणादिवस्तुजातमादाय सुरक्षितस्थाने गत्वा निवसतीति भावः। दृष्टान्तं प्रदर्श्य दार्ष्टान्तिकमाह 'एवामेव' इत्यादि 'एवामेव देवाणुप्पिया' एव मेव देवानुप्रियः हे देवानुप्रिय! भगवन्! यथा तस्य गृहपतेस्तादृशमल्पभारं बहुमूल्यकं वस्तु रक्षितं सत् हिताद्यर्थे भविष्यतीति विचारो भवति, विचार्य तत्र

हुए घर से निकाली गई यह अल्पभारवाली कीमती वस्तु (पच्छापुराए) आगामी काल में और इस समय में "हियाए" यह उपकारक हो रही है, इसी तरह से (सुहाए) सुख के लिये, (खेमाए) कल्याण के लिये (निस्सेयसाए) भाग्योदय के लिये (आणुगामियत्ताए) भावी वंश परम्परा के उपभोग के लिये ('भविस्सइ) होगी इस प्रकार विचार कर यह गृहस्थ जलते हुए अपने घर से स्वल्पभारवाली कीमती वस्तु-रत्न मणिक्यादि को-लेकर के सुरक्षित स्थान में आकर रहने लगता है। इस प्रकार दृष्टान्त प्रदर्शित कर इस का समन्वय अब यह दार्ष्टान्त के साथ करते हुए कहते हैं कि-(एवामेव) इसी तरह से (देवाणुप्पिया) हे देवानुप्रिय! भगवन्-जिस प्रकार से उस गृहपति का यह अल्पभारवाली कीमती वस्तु रक्षित होती हुई हितादिक के साधन के लिये है (ऐसा विचार होता है और ऐसा विचार कर ही यह उसके

ઓછા વજનની પણ ભારે મૂલ્યની વસ્તુઓ (पच्छा पुराए) હવે પછીના સમયમા અને (हियाए) હિતકારક, (सुहाए) સુખકારક, (खेमाए) કલ્યાણ કારક, (निस्सेयसाए) અને ભાગ્યોદય કારક બનશે, (आणुगामियत्ताए) અને મારી ભાવી પેઢીને માટે પણ ઉપયોગી (भविस्सइ) થઈ પડશે. આ રીતે વિચાર કરીને, તે ગૃહસ્થ પોતાના સળગતા મકાનમાથી ઘણા ઓછા વજનની પણ કીમતી વસ્તુઓ (રત્ન, મણિ વગેરે) લઈને સુરક્ષિત સ્થાનમાં જઈને રહે છે આ પ્રમાણે દૃષ્ટાંત આપીને હવે સ્કન્દક પોતાની સરખામણી પણ તે ગૃહસ્થની સાથે કરતાં કહે છે કે (एवामेव) એજ પ્રમાણે (देवाणुप्पिया) હે દેવાનુપ્રિય મારી પાસે પણ આત્મા રૂપી રત્ન મોજુદ છે જેવી રીતે પેલા ગૃહસ્થે એવો વિચાર કર્યો કે ઓછા ભાર વાળી પણ કીમતી વસ્તુને જો સળગતા ઘરમાંથી બહાર કાઢી લેવામા આવશે તો તે પોતાને માટે ઉપયોગી,

रम्-यस्मिन् वस्तुनि भारातिशयो न भवेदपितु उत्थापने यत् सरलं लघु भवति तत् तथा 'मोल्लगुरुए' मूल्यगुरुकम् यस्य वस्तुनो मूल्यमधिकं भवति तत् मणिरत्नादिकम् 'त गहाय' तद् गृहीत्वा, 'आयाए एगंतमंतं अवकमइ' आत्मना एकान्तमन्तमवक्रामति, तद् तादृशमल्पभारं वहुमूल्यकं च वस्तु गृहीत्वा आत्मना स्वयमेव एकान्तं जनरहितम् अन्तं=भूभागम् अवक्रामति=गच्छति गृहे दह्यमाने सति गृहपतिर्गृहे यदधिकमूल्यकमल्पभारं च वस्तु भवति तत्स्वयमेव गृहीत्वा सुरक्षितस्थानं गच्छतीत्यर्थः किंविचार्य एकान्तस्थानं गच्छतीत्याह 'एस मे' इत्यादि 'एस मे नित्थारिए समाणे, एतन्मे निस्तारितं सत्-एतत् अल्पभारकमतिमूल्यकमिदमेव वस्तु

हल्का और कीमत हो वहुत बड़ी ऐसे मणिरत्नादिरूप उपकरण को लेकर (आयाए एगंतमंतं अवक्कमइ) अपने आप किसी एकान्त निरूपद्रव स्थान में जाता है मकान में आग लगने पर वजनदार भी कीमती वस्तु का उठाना (उठाने में कठिनता पड़ ने के कारण) नहीं हो सकता है। इसलिये वुद्धिमान् गृहस्थ यही करता है कि जो अल्पभार वाली सारभूत कीमती वस्तु होती है उसको जितनी जल्दी बनता है उठा लेता है क्यों कि इसी में कुशलता और आनंद है देर करने पर तो फिर उठाना ही वड़ा कठिन होता है और उठाने वाले का भी वह नाश कारक हो जाता है। वह गृहस्थ अल्प वजनवाली सारभूत वस्तु रत्नादि को उठाकर जो एकान्त निरूपद्रव स्थान में जाता है उसका कारण यह हैं कि वह विचारता है कि-"एस मे नित्थारिए समाणे" जलते

ણેને (મણિ રત્નાદિ રૂપ વજનમાં હલકાં પણ ભારે મૂલ્યવાળાં) લઈને (आयाए एगतमत अवक्कमइ) તે કોઇ સુરક્ષિત સ્થાને ચાલ્યો જાય છે મકાનને આગ લાગે ત્યારે વજનદાર, કીમતી વસ્તુઓને બહાર કાઢવામાં ઘણી મુશ્કેલી પડે છે તેથી ડાહ્યો માણુસ વજનદાર કીમતી વસ્તુઓને બહાર કાઢવાને બદલે વજનમા હલકી પણ ઘણી મૂલ્યવાન હોય એવી વસ્તુઓને જ બની શકે તેટલી ઝડપથી ઉપાડીને બળતા ઘરમાથી બહાર નીકળી જાય છે. કારણુ કે તેમા જ તેનુ શ્રેય રહેલુ છે જો આમ કરવામાં તે મોડુ કરે તો તે મૂલ્યવાન વસ્તુઓને બચાવવાનું પણ મુશ્કેલ થઈ પડે છે, અને કયારેક તો તે વસ્તુ બહાર કાઢવા જનારને પોતાના પ્રાણુ પણ ગુમાવવા પડે છે તેથી બુદ્ધિમાન માણુસ, હલકા વજનની, સારભૂત, અને મૂલ્યવાન રત્નાદિક વસ્તુઓને જ તદ્દન સુરક્ષિત સ્થાને લઇ જાય છે. કારણુ કે તે એવો વિચાર કરે છે કે (एस मे नित्थारिए समाणे) બળતા ઘરમાથી બહાર કાઢવામા આવતી આ

स्यात्, 'बहुमए बहुमत'-सर्वैरपि माननीयत्वात् 'भंडकरंडगसमाणे' भाण्डकरण्डक समान भाण्डकरण्डकम् आभरणभाजन तत्समानस्तत्तुल्य आदेयत्वादिति। भाण्डसादृश्यमात्मनि कथितम्, भाण्डानामनित्यत्वं प्रत्यक्षदृष्टमिति तत्तुल्यत्वादात्माप्यनित्यो भविष्यति ततश्च कस्य मोक्षः स्यादिति शंकां निराकर्तुमात्मना नित्यत्वप्रतिपादनायाह 'माणं सियं' इत्यादि 'माणं सियं' मां शीतम्=ममात्मानं शीतं मा स्पृशतु=मा पीडयतु-एवमग्रेऽपि सर्वत्र धात्वर्थयथायोगं सम्बन्धः करणीयः 'माणं उण्हं' मां उष्णम् 'माणं खुहा' मां क्षुधा 'माणं पिवासा'

होने से अनुमत है। (बहुमए) समस्त आत्मवादी सिद्धान्तकारों द्वारा स्वीकृत किया गया होने से बहुमत है। (भंडकरंडक समाणे) आभरणों से भरे हुए करंडक समान आदेय होने से यह भाण्ड करण्डक के जैसा है।

यहां कोई ऐसी आशंका कर सकता है कि आत्मा में जो भाण्ड सादृश्यता कही गई है वह ठीक नहीं है, क्यों कि इस प्रकार के कथन से तो अनिष्टापत्ति होती है, कारण-आत्मा नित्य वस्तु माना गया है और भण्ड अनित्य भाण्ड की अनित्यता प्रत्यक्ष दृष्ट होने से दृष्टान्त ठीक नहीं बैठता है। अतः यदि आत्मा में भण्डसादृश्य प्रकट किया जाता है तो आत्मा भी अनित्य हो जायगा फिर मोक्ष किसको प्राप्त होगा सो ऐसी आशंका की निवृत्ति के लिये आत्मा में नित्यत्व का प्रतिपादन करने के निमित्त कहा जाता है कि-(माणं सीयं) मेरी इस आत्मा को शीत पीडा न करे, (माणं उण्हं) उष्ण पीडा न करे, (माणं खुहा) क्षुधा पीडा न करे, (माणं पिवासा) प्यास पीडा न करे

पत्र मान्य होवाथी अनुमत छे) (बहुमए) तमाम आत्मवादी सिद्धान्तकारो वडे स्वीकृत करायेल होवाथी बहुमत छे (भंडकरंडगसमाणे) आभरणो (घरेणां) थी भरेला करंडिया समान अथवा कीमती वस्तुथी भरेली पेटी जेवो छे

अहीं कोई एवी शंका करे के आत्माने आ (भाण्ड) साथे सरखावो ते योग्य नथी कारण के आ कथनमां दोष लागु पडे छे कारण के आत्माने नित्य मानवामां आवेल छे ज्यारे भाण्ड (वासण) नी अनित्यता तो प्रत्यक्ष अनुभवी शकाय छे माटे आ उपमा बराबर लागती नथी आ रीते जो आत्माने भाण्डनी साथे सरखाववामां आवे तो आत्माने पण अनित्य मानवो पडशे. तो पछी मोक्ष कोने मळशे ? आ शंकानुं निवारण करवा माटे आत्मामां नित्यत्वनुं प्रतिपादन करवा माटे कहे छे के (माणं सीयं) मारा आ आत्माने ठंडी पीडा न पहोंचाडे (माणं उण्हं) तने गरमी पीडा न पहोंचाडे (माणं खुहा) मने क्षुधा पीडा न करे,

क्षणाय प्रयतते तथा ममापि एकं रत्नं विद्यते यत् प्रदीप्तगृहाद्रक्षणयोग्यमिवविद्यते इति भावः मज्झवि आया एगे भंडे इट्ठे' ममापि आत्मा एकं भांडम्=भाण्डरूप एक आत्मा इष्टः वाञ्छितार्थपूरकत्वात्, 'कंते!' कान्तः कमनीयः हितप्रापकत्वात् 'पिए' प्रियः-सुखोत्पादकत्वात् 'मणुण्णे' मनोज्ञः शुभगतिदायकत्वात् "मणामे" मनोऽमः अक्षय सुखदायकत्वात् 'थेज्जे' स्थैर्यम् स्थिरस्वरूपः, अविनाशित्वात् 'वेस्सासिए' वैश्वासिकः मोक्ष प्राप्तौ विश्वासपात्रत्वात् 'संमए' संमतः तत्कृतकार्याणां संमतत्वात् 'अणुमए' अनुमतः=अनु पश्चात् मतः=अनुमतः विपरीतकरणादनन्तरमपि माननीय-

---

सरक्षण के लिये प्रयत्न करता है, उसी प्रकार मेरे पास भी एक रत्न मौजूद है जो प्रदिप्त-जलते हुए घर से रक्षा करने योग्य वस्तु की तरह रक्षा करने योग्य है-यही बात वह प्रदर्शित करते हुए कहते हैं-(मज्झ वि आया एगे भंडे) कि हे भदन्त। मेरा आत्मा भी एक भाण्ड कीमती वस्तु है। (इट्ठे) वह मुझे वांछित-मनोरथरूप-अर्थ का पूरक होने से इष्टरूप है। (कंते) हितकी प्राप्ति कराने वाला होने से-कान्त है। (पिए) अव्याबाध सुख का उत्पादक होने से प्रिय है। (मणुण्णे) शुभ-गति का दाता होने से मनोज्ञ है। (मणामे) अक्षय सुखका दाता होने से मनोम है। (थेज्जे) अविनाशी होने से स्थिररूप है। (वेस्सासिए) मोक्ष की प्राप्ति में विश्वास पात्र होने से वैश्वासिक है। (संमए) तत्कृत कार्यों को संमत होने से संमत है। (अणुमए) विपरीत आचरण करने पर भी माननीय होने से-अनुकूल प्रवृत्ति नहीं करने पर भी मान्य

તથા કલ્યાણકારી થઇ પડશે, એવી જ રીતે મારી પાસે પણ એક રત્ન મોજૂદ છે કે જેની પણ બળતા ઘરમાંથી રક્ષા કરવા લાયક વસ્તુની જેમ-રક્ષા કરવાની જરૂર છે. એજ વાત આ રીતે પ્રગટ કરવામા આવી છે- (मज्झ वि आया-एगे भडे) હે ભગવાન્ મારો આત્મા પણ એક અતિશય કીમતી વસ્તુ છે તે એક ભાંડ (પાત્ર) ના સમાન છે (इट्ठे) તે મારે માટે વાછિત-અર્થનો પૂરક હોવાથી ઇષ્ટ રૂપ છે, (कंते) તે હિતની પ્રાપ્તિ કરનાર હોવાથી કાન્ત છે, (पिए) તે અવ્યાબાધ સુખ દેનાર હોવાથી મને પ્રિય છે, (मणुण्णे) તે શુભગતિ અપાવનાર હોવાથી મનોજ્ઞ છે, (मणामे) અક્ષય સુખનો દાતા હોવાથી મનોમ છે, (थेज्जे) અવિનાશી હોવાથી સ્થિરરૂપ છે, (वेस्सासिए) મોક્ષની પ્રાપ્તિ માટે વિશ્વાસ પાત્ર હોવાથી વૈશ્વાસિક છે (समए) તેની મારફત કરાયેલાં કાર્યો સાથે સમત હોવાથી સમત છે, (अणुमए) (વિપરીત આચરણ કરવા છતા પણ માનનીય હોવાથી-અનુકૂલ પ્રવૃત્તિ ન કરવા છતા

स्यात् , 'बहुमए बहुमत –सर्वैरपि माननीयत्वात्'मंडकरंडगसमाणे' भाण्डकरण्डक समानः भाण्डकरण्डकम् आभरणभाजनं तत्समानस्तद्वत् आदेयत्वादिति। भाण्डसादृश्यमात्मनि वर्णितम्, भाण्डानामनित्यत्वं प्रत्यक्षदृष्टमिति तद्वत् स्यादात्मापि अनित्यो भविष्यति ततश्च कस्य मोक्षः स्यादिति शंकां निराकर्तुमात्मनो नित्यत्वमतिपादनायाह 'माणं सियं ' इत्यादि ' माणं सियं ' मान शीतम्=मया रमानं शीतं मा स्पृशतु=मा पीडयतु-एवमग्रेऽपि स्पृश् धात्वर्थयायोगे सम्बन्धः कर्तव्यः ' माण उण्हं ' मामम्–उष्णम् ' माणं खुहा ' मां क्षुधा 'माण पिवासा'

होने से अनुमत है। (बहुमए) समस्त आत्मवादी सिद्धान्तकारों द्वारा स्वीकृत किया गया होने से बहुमत है। (भंडकरंडक समाणे) आभरणों से भरे हुए करंडक समान आदेय होने से यह भाण्ड करण्डक के जैसा है।

यहा कोई एसी आशंका कर सकता है कि आत्मा में जो भाण्ड सादृश्यता कही गई है वह ठीक नहीं है, क्यों कि इस प्रकार के कथन से तो अनिष्टापत्ति होती है, कारण–आत्मा नित्य वस्तु माना गया है और भण्ड अनित्य, भाण्ड की अनित्यता प्रत्यक्ष दृष्ट होने से दृष्टान्त ठीक नहीं बैठता है। अतः यदि आत्मा में भण्डसादृश्य प्रकट किया जाता है तो आत्मा भी अनित्य हो जावेगा फिर मोक्ष किसको प्राप्त होगा सो ऐसी आशंका की निवृत्ति के लिये आत्मा में नित्यत्व का प्रतिपादन करने के निमित्त कहा जाता है कि–(माणं सीयं) मेरी इस आत्मा को शीत पीडा न करे, (माण उण्ह) उष्ण पीडा न करे, (माण खुहा) क्षुधा पीडा न करें, (माणं पिवासा) प्यास पीडा न करे

પણ માન્ય હોવાથી અનુમત છે) (बहुमए) તમામ આત્મવાદી સિદ્ધાંતકારો વડે સ્વીકૃત કરાયેલ હોવાથી બહુમત છે (मडकरडकसमाणे) આભરણો (ઘરેણા) થી ભરેલા કરંડિયા સમાન અથવા કીમતી વસ્તુથી ભરેલી પેટી જેવો છે

અહીં કોઇ એવી શંકા કરે કે આત્માને ભાંડ (વાસણ) સાથે સર ખાવવો તે યોગ્ય નથી, ઉપરોક્ત કથનમાં દોષ જણાય છે કારણ કે આત્માને નિત્ય માનવામા આવેલ છે, જ્યારે ભાંડ (વાસણ) ની અનિત્યતા તો પ્રત્યક્ષ અનુભવી શકાય છે માટે આ ઉપમા બરાબર જણાતી નથી. આ રીતે જો આત્માને ભાંડ-પાત્રની સાથે સરખાવવામાં આવે તો આત્માને પણ અનિત્ય માનવો પડશે. તો પછી મોક્ષની પ્રાપ્તિ કોને થશે ? આ જાતની શંકાનું નિવારણ કરવા માટે આત્મામાં નિત્યપણાનું પ્રતિપાદન કરવા માટે કહ્યું છે કે (माणं सीयं) મારા આ આત્માને ઠંડી કષ્ટ ન પહોંચાડે (माण उण्ह) તેને ગરમી કષ્ટ ન પહોંચાડે, (माणं खुहा) તેને ક્ષુધા સહન કરવી ન પડે

मातं पिपासा ' माणं चोरा ' मातं चौराः ' माणं वाला ' मातं व्यालाः, श्वापद-भुजंगादयः ' माणं दंसा ' मातं दंशाः दशो नाम क्षुद्रजन्तुविशेषो बृहदाकारो मशकवत् रक्तपानकर्त्ता। 'माणं मसया' मातं मशकः 'माणं' मातम् 'वाइय पित्तिय सेंभिय सन्निवाइय' अत्र प्रथमा बहुवचनलोपो बोध्यः तेन वातिकपैत्तिकश्लैष्मिकसांनिपातिकाः इति, वातिकाश्च पैत्तिकाश्च श्लैष्मिकाश्च सांनिपातिकाश्चेति तथा, अत्र वातिकाः=वातविकारजनिताः, पैत्तिकाः पित्तविकारजनिताः, श्लैष्मिकाः=श्लेष्मा कफः, तज्जनिताः कफविकारजनिताः, सांनिपातिकाः=संनिपातः=वातपित्तकफविकाररूपस्त्रिदोषः, तज्जनिता त्रिदोषजनिताः 'विविहा' विविधाः=नानाप्रकाराः ' रोगायंका ' रोगातङ्का' तत्र रोगाः=चिरघातिनो ज्वरादयः, आतङ्काः=सद्योघातिनो हृदयशूलादयः, तथा ' परिसहोवसग्गा ' परिषहोपसर्गाः-परिषहाः द्वाविंशतिभेदभिन्नाः उपसर्गा देवादिकृताः-अथवा परिषहा एव उपसर्गाः विघ्नकारका इति परिषहोपसर्गाः 'फुसंतु ' स्पृशन्तु अत्र 'मा' इतिपदमनु वर्त्तनीयं

(माणं चोरा) चोर पीडा न करें, (माणं वाला) श्वापद भुजग आदि पीडा न करें, ' माण दंसा ' दंश (डांस) पीडा न करें, ' माणं मसया ' मशक-मच्छर पीडा न करें ' माणं वाइय पित्तिय सेंभिय सन्निवाइय ' वात विकार जनित रोग, पित्त विकारजनित रोग और वातपित्तकफ इन तीनों के एक साथ विकार से त्रिदोष से उत्पन्न रोग इत्यादि ' विविहारोगायंका ' अनेक प्रकार के चिरकाल में घातकरने वाले ज्वरादिक रोग और शीघ्रता से घात करने वाले हृदयशूल आदि आतंक इसे पीडा न करें 'परीसहोवसग्गा' बाईस प्रकार के परीषह और देवादिकृत उपद्रवरूप उपसर्ग अथवा-विघ्नकारक होने से परीषहरूप उपसर्ग 'माणं फुसंतु ' इसे पीडा न करें, ये शीतादिक मेरी आत्मा को पीडा न

(माण पिवासा) તેને તૃષા સહન કરવી ન પડે, (माण चोरा) તેને ચોરો વડે પીડા સહન કરવી ન પડે, (माणं वाला) તેને શ્વાપદ, સર્પ વગેરે પીડા ન પહોંચાડે, (माण दंसा) તેને ડાંસ પીડા ન પહોંચાડે, (माण मसया) મચ્છરો તેને પીડા ન પહોંચાડે, (माण वाइय पित्तिय सेमिय सन्निवाइय) તેને વાત, પિત્ત કે કફના વિકારથી ઉત્પન્ન થતા રોગો તથા વાત, પિત્ત અને કફ એ ત્રણેનો એક સાથે વિકાર થવાથી થતા સન્નિપાત વગેરે રોગ સહન કરવા ન પડે, (विविहा रोगायका) લાંબે સમયે પ્રાણ હરનારા અનેક પ્રકારના તાવ વગેરે રોગ તથા ટૂંકા સમયમાં જ પ્રાણ હરનારા હૃદયશૂલ વગેરે તેને સહન કરવા ન પડે, (परीसहोसवग्गा) બાવીસ પ્રકારના પરીષહ અને દેવા મનુષ્ય વગેરે કૃત ઉપદ્રવ રૂપ ઉપસર્ગ અથવા વિઘ્ન કારક હોવાથી પરીષહરૂપ ઉપસર્ગ- (माणं फुसतु) તેને પીડા ન પહોંચાડે- ઠંડી વગેરેના કષ્ટો મારા

तेन मा स्पृशन्तु' इत्यन्वयः, एते शीतादय ममात्मानं मा पीडयन्तु, इतिभावः। 'सिकट्टु' इति कृत्वा-इति सम्यग् विचार्यायमात्मा मया सुष्ठुतया रक्षित इतिभाव । स किमर्थं रक्षित इत्यत आह 'एस मे' इत्यादि 'एस मे नित्थारिए समाणे' एष मे निस्तारितः सन् एष मे मम आत्मा निस्तारित सन् जरामरणादि वह्निना ज्वलतः संसारगृहाद् निष्कासित सन् 'परलोयस्स' परलोकस्य 'हियाए' हिताय 'सुहाए' सुखाय 'खेमाए' क्षेमाय 'निस्सेयसाए' निःश्रेयसाय 'आणुगामियत्ताए' आनुगामिकत्वायै 'भविस्सइ' भविष्यति 'त इच्छामि णं देवाणुप्पिया' तदिच्छामि खलु देवानुप्रियः, तस्मात् कारणात् हे देवानुप्रिय ! भगवन् ! इच्छाम्यह 'सयमेव पव्वाविउं' स्वयमेव प्रव्राजयितुम् स्वयमेव भगवतो हस्तेनैव ममाजयितु प्रव्रज्यां ग्राहयितुम्, सदोरकमुखवस्त्रिकारजो

पहुंचावें-'त्ति कट्टु' ऐसा अच्छी तरह से विचार करके मैंने यह आत्मा अच्छी तरह से रक्षित किया है। यह किस प्रयोजन के लिये मैंने रक्षित किया है? इसे यह स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि-'एस मे नित्थारिए समाणे' जरा और मरण आदि रूप अग्नि से जलते हुए इस ससाररूप गृह से निकाला गया यह आत्मा मुझे 'परलोयस्स' परलोक में 'हियाए' हितके लिये 'सुहाए' सुख के लिये, 'खेमाए' कल्याण के लिये 'निस्सेयसाए' अभ्युदय के लिये और 'आणुगामियत्ताए' अनुगमिकता के लिये अर्थात् परभव में सुख के लिये 'भविस्सइ' होगा 'तं इच्छामि णं देवाणुप्पिया' इसलिये हे देवानुप्रिय! भगवन! मैं चाहता हूं अर्थात् मैं प्रार्थना करता हूं कि-(सयमेव पव्वाविउं) मैं आपके हाथ से ही दीक्षित होऊं-आप स्वयं ही मुझे सदोरकमुखवस्त्रिका,

આત્માને પીડા ન પહોંચાડે- (त्तिकट्टु) એમ સમજીને મે મારા આત્માનું ઘણી સારી રીતે રક્ષણ કર્યું છે શા માટે તેનું રક્ષણ કર્યું છે? તો તેનું સ્પષ્ટીકરણ કરવાને માટે સૂત્રકાર કહે છે કે (एस मे नित्थारिए समाणे) જરા મરણ વગેરે રૂપ અગ્નિથી સળગતા આ સંસાર રૂપી ઘરમાંથી બહાર કાઢવામાં આવેલો આ આત્મા (परलोयस्स) પરલોકમાં (हियाए) મારા હિતને માટે, (सुहाए) સુખને માટે, (खेमाए) કલ્યાણને માટે (निस्सेयसाए) અભ્યુદયને માટે અને (आणुगामियत्ताए) આનુગમિતાને માટે-એટલે કે પરભવમાં સુખને માટે (भविस्सइ) ઉપયોગી થઈ પડશે (तं इच्छामि णं देवाणुप्पिया) તેથી હે દેવાનુપ્રિય! મારી એવી ઇચ્છા છે કે હું આપને વિનંતિ કરૂં છું કે (सयमेव पव्वाविउं) આપ પોતે જ મને દીક્ષા આપો આપ જાતે જ મને દોરા સહિત મુહપત્તિ રજોહરણ વગેરે રૂપ મુનિવેષ

रणादि मुनिवेषदाने 'सयमेव मुंडाविउ' स्वयमेव मुण्डयितुम् केशलुंचनेन 'सयमेव सेहाविउं' स्वयमेव सेधयितुम्, प्रत्युपेक्षणादि क्रियाकलापग्राहणेन 'सयमेव सिक्खाविउं' स्वमेय शिक्षयितुम्, ग्रहणासेवना शिक्षाग्रहणेन 'सयमेव' स्वयमेव=स्वात्मनैव 'आयारगोयरं' आचारगोचरम्, तत्र आचारः= श्रुतज्ञानादि विषयकमनुष्ठानं कालाध्ययनादिः गोचरो भिक्षाटनम्–तथाचाचार-गोचरयोः समाहारद्वन्द्वः तथाचाचारगोचरं स्वयमेवाख्यापयितुमिच्छामीति क्रियया सम्बन्धः। तथा 'विणयवेणइयचरणकरणजायामायापत्तीयं' विनय वैनयिकचरणकरणयात्रामात्रामत्ययिकम् तत्र विनयो गुरुशूषारूपः, वैनायिकं विनयजनितं तत्फलं कर्मक्षयादिकम् कीदृशेन विनयेन शीघ्रं कर्मक्षयो भवतीत्यादिरूपम्, चरणं व्रतादि, करणं पिण्डविशुद्धयादि, यात्रा=संयमयात्रा मात्रा=संयमनिर्वाहार्थमेवाहारमात्रा, अत्र विनयादीनां द्वन्द्वः ततश्च विनयादीनां

रजोहरण आदिरूप मुनिवेष प्रदान करें 'सयमेव मुंडाविउं' आप स्वयं ही मुझे मुण्डित करें–अर्थात्–आपसे ही मैं केशों का लुंचन कराउं, 'सयमेव सेहाविउं, आप से ही प्रतिलेखन आदि क्रियाकलाप को ग्रहण करूँ 'सयमेव सिक्खाविउं' ग्रहणशिक्षा और आसेवनाशिक्षा आप स्वयं ही मुझे सिखावे। तथा 'सयमेव आयारगोयरं' श्रुतज्ञानादि संबधी अनुष्ठान–कालाध्ययन आदि आचार को तथा भिक्षाटनरूप गोचर को इन्हें आप स्वयं मुझे समझावें ऐसा मैं चाहता हूं। तथा—'विणयवेणइयचरणकरणजायामायवत्तियं धम्ममाइक्खिउं' विनय–गुरुशुश्रूषारूप विनय, वैनयिक - कर्मक्षयादि रूप विनयजन्य फल, व्रत वगैरह चरण, पिण्ड विशुद्धि आदि करण, संयम संबंधी यात्रा–सयमयात्रा, तथा संयम के निर्वाह निमित्त ही जो ग्रहण करना वह मात्रा–आहार मात्रा, इन सब विनयादि विषय का जिसमें समा-

ધારણ કરાવો (सयमेव मुंडाविउ) આપ પોતે જ મને મુંડિત કરો મારા કેશનો લોચ કરો (सयमेव सेहाविउ) આપ પ્રતિલેખના વગેરે ક્રિયા આ શીખવાડો (सयमेव सिक्खाविउ) આપ પોતેજ મને ગ્રહણશિક્ષા તથા આસેવના શિક્ષા પ્રદાન કરો તથા (सयमेव आयारगोयरं श्रुतज्ञानादि સ'બંધી અનુષ્ઠાન- કાલાધ્યયન વગેરે આચાર, તથા ભિક્ષાટન રૂપ ગોચરી વગેરે આપની પાસે જ હું શીખવા માગુ છુ તથા विणयवेणइयचरणकरणजायामाया वत्तिय धम्ममाइक्खिउं) વિનય- ગુરુ શુશ્રૂષા રૂપ વિનય, વૈનયિક-કર્મક્ષયાદિ રૂપ વિનયજન્ય ફળ, વ્રત વગેરે ચરણ, પિંડવિશુદ્ધિ વગેરે કરણ, સંયમના નિર્વાહને માટે જ ગ્રહણ કરવાના આહારની માત્ર વગેરે વિષયનો જેમાં

प्रवर्तनं यत्रासौ विनयवैनयिकचरणकरणयात्रामात्रावृत्तिकः, तम् एतादृशम् 'धम्मं' धर्मम् 'आइक्खिउं' आख्यापयितुम् भवत्सकाशादेव विज्ञातुमिच्छामीति भावः। स्कन्दकस्य प्रव्रज्याविषयकमुत्साहं तद्ग्रहणसामर्थ्यं च केवलालोकेन विलोक्य भगवान् स्वयमेव स्कन्दकं प्रव्राजयतीत्याशयेनाह-'तएण समणे' इत्यादि। 'तएण' तत खलु ततस्तदनन्तरम् स्कन्दकस्य प्रार्थनानन्तरम् 'समणे भगवं महावीरे' श्रमणो भगवान् महावीरः 'खंदयं कच्चायणस्सगोत्तं' स्कन्दकं कात्यायनगोत्रम् 'सयमेव पव्वावेइ' स्वयमेव प्रव्राजयति 'जाव-धम्म माइक्खइ, यावत् धर्ममाख्याति' इह यावत्पदेन 'मुंडाविउं' इत्यारभ्य 'माया वत्तियं' इत्यन्तं सर्वमेव पदं बोध्यम्। धर्माख्यानप्रकारमेव दर्शयति 'एवं देवाणुप्पिया, गतव्वं' एवं देवानुप्रिय! गन्तव्यम्, एवम्-मदुक्तप्रकारेण युग-

वेश हो ऐसे धर्म का आप स्वयं मुझे उपदेश करें ऐसा मैं चाहता हूं।" इस तरह प्रभु ने जब स्कन्दक का प्रव्रज्या ग्रहण करने का उत्साह और प्रव्रज्या ग्रहन करने का सामर्थ्य अपने केवलज्ञानरूप आलोक (प्रकाश) से देखलिया तब उन्हों ने उनको स्वय अपने हाथों से दीक्षा दी"। अब सूत्रकार इसी बात को स्पष्ट करने के लिये कहते हैं कि (तएणं) स्कन्दक की प्रार्थना के बाद (समणे भगवं महावीरे) श्रमण भगवान महावीर ने 'खंदयं कच्चायणसगोत्तं' कात्यायनगोत्रीय स्कन्दक को (सयमेव पव्वावेइ) स्वयं अपने हाथ से ही दीक्षा प्रदान की। (जाव धम्म आइक्खइ) यावत् उनको मुनिधर्मका उपदेश दिया। प्रभु ने मुनिधर्म उसे किस रूप से समजाया? यही बात अब सूत्रकार प्रकट करते हैं- (एवं देवाणुप्पिया गंतव्वं) हे देवानुप्रिय! स्कन्दक! इस प्रकार से चलना चाहिये,

સમાવેશ થતો હોય એવા ધર્મનો આપ પોતે જ મને ઉપદેશ આપો એવી મારી ઇચ્છા છે આ રીતે જ્યારે ભગવાન મહાવીરે સ્કન્દકનો પ્રવ્રજ્યા દીક્ષા ગ્રહણ કરવાનો ઉત્સાહ જોયો અને તેનું પાલન કરવાનું તેમનું સામર્થ્ય પોતાના કેવળજ્ઞાનરૂપ પ્રકાશથી જાણી લીધુ, ત્યારે ભગવાને પોતેજ તેને દીક્ષા આપી હવે એજ વાતનું સ્પષ્ટીકરણ કરવાને માટે સૂત્રકાર કહે છે કે (तएण) સ્કન્દકની ઉપરોક્ત વિનંતિ સાંભળીને (समणे भगवं महावीरे) શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે (खंदयं कच्चायणस्सगोत्तं) કાત્યાયન ગોત્રીય સ્કન્દકને (सयमेव पव्वावेइ) પોતાના હાથે જ દીક્ષા આપી (जाव धम्म आइक्खइ) અને ઉપરોક્ત બે પ્રકારની ઇચ્છા તેમણે પ્રકટ કરી હતી તે રીતે મુનિધર્મ તેમને સમજાવ્યો, હવે સૂત્રકાર એ બતાવે છે કે ભગવાન મહાવીરે સ્કન્દકને મુનિધર્મ કેવી રીતે સમજાવ્યો

(एवं देवाणुप्पिया गंतव्वं) હે દેવાનુપ્રિય, સ્કન્દક આ પ્રમાણે ચાલવું

मात्र भून्यस्तदृष्टिरूपया ईर्यासमित्या, हे देवानुप्रिय ! त्वया गन्तव्यम्=गमनं कर्तव्यम् 'एवं चिट्ठियव्वं' एवं स्थातव्यम् जनानां गमनागमनवर्जिते स्थाने संयमात्मप्रवचन-विराधनापरिहारपूर्वकम् ऊर्ध्वस्थाने स्थातव्यम् 'एवं निसीइयव्व' एव निषत्तव्यम्-भूमिभागं प्रमार्ज्य उपवेष्टव्यम् 'एवं तुयट्टियव्वं' एवं

प्रभु ने स्कन्दक अनगार को समझाया-कि हे देवानुप्रिय ! इस मुनि धर्म को निर्दोष रूप से पालन करने के लिये तुम्हें चाहिये कि तुम युग मात्र भूमि को आगे देखते हुए चलो । इससे यह लाभ होता है कि अपनी असावधानी से जीव की विराधना नहीं होवे । इस तरह से चल ने की प्रवृत्ति करने वाला साधु ईर्यासमिति का आराधक कहलाता है । मुनिधर्म को निर्दोप रूप से निर्वाह करने के लिये इस समिति का पालन आवश्यक है । इसमें पर के प्राणों की रक्षा करने के साथ २ अपने अहिंसारूप महाव्रत का रक्षण अच्छी तरह से होता है । (एवं चिट्ठियव्वं) तथा हे देवानुप्रिय ! जिस जगह अनेक लोगों का गमनागमन हो ऐसी जगह में, संयम में बाधा न हो, अपनी निज की कोई बाधा न होय, तथा प्रवचन में कोई बाधा न आवे, इस तरह खड़ा रहना पर चाहिये। (एवं निसीइयव्वं) तथा मुनि का यह भी कर्तव्य है कि जहां वह बैठना चाहते हैं तो पहिले वह उस को अपने प्रमार्जिका से प्रमा-

---

જોઈએ તાત્પર્ય એ છે કે મુનિએ, મુનિધર્મનુ પાલન કરવાને માટે જે માર્ગે ચાલવાનુ હોય તે માર્ગે બરાબર સામે નજર નાખીને ચાલવુ જોઈએ આ પ્રમાણે સાવધાની રાખવાથી જીવની હિંસા થતી નથી આ પ્રમાણે ચાલનાર સાધુ ઈર્યાસમિતિનું પાલન કરનાર ગણાય છે. મુનિધર્મનું નિર્દોષપણે પાલન કરવા માટે ઈર્યાસમિતિનુ પાલન કરવુ આવશ્યક ગણાય છે એમ કરવાથી અન્ય જીવોના પ્રાણોનુ રક્ષણ થાય છે એટલુ જ નહી પણ અહિંસારૂપ મહાવ્રતનું પણ સારી રીતે પાલન થાય છે

(एव चिट्ठियव्वं) હે દેવાનુપ્રિય ! જે જગ્યાએ ઘણા માણુસોની અવર જવર થતી હોય એવી જગ્યામાં, સંયમના પાલનમાં કોઈ મુશ્કેલી ન પડે, તથા પોતાના તરફથી અન્ય જીવોને કોઇ જાતની મુશ્કેલી ન પડે, એ રીતે ઉભા રહેવું જોઇએ.

(एव निसीइयव्वं) મુનિની એ ફરજ છે કે જ્યાં તે બેસવા માગતા હોય તે જગ્યાને પહેલાં રજોહરણથી સાફ કરવી જોઈએ, ત્યારપછી ત્યા બેસવું

त्वग्वर्त्तितव्यम्-प्रमार्जनपूर्वकमेव पार्श्वपरिवर्त्तनं कर्तव्यम्। 'एवं भुंजियव्वं' एवं भोक्तव्यम् अङ्गारधूमादिदोषवर्जितमाहारादि भोक्तव्यमिति भावः 'एवं भासियव्वं' एवं भाषितव्यम्-सावद्यभाषा परिवर्जनेन भाषासमित्या वक्तव्यम्। 'एवं उट्ठाए उट्ठाय' एवमुत्थयोत्थाय एवम्=प्रमादनिद्रानिराकरणेन उत्थया आत्मशक्त्या उत्थाय 'पाणेहिं भूएहिं जीवेहिं सत्तेहिं' प्राणेषु भूतेषु जीवेषु सत्त्वेषु एकेन्द्रियादारभ्य पञ्चेन्द्रियपर्यन्तेषु तत्र प्राणाः=द्वि त्रि चतुरिन्द्रियास्तेषु तथा भूताः=वनस्पतयस्तेषु, जीवाः पञ्चेन्द्रियास्तेषु सत्त्वाः=पृथिव्यप्तेजो वायव स्तेषु 'संजमेणं' संयमेन=तद्रक्षणेन 'संजमियव्वं' संयन्तव्यम्=यतितव्यम् यथा

र्जित करले पश्चात् वहां बैठे। (एवं तुयट्टियव्वं) सोते समय उसे इस बात की सावधानी रखनी चाहिये कि यदि वह करवट बदलता है तो उसे पहिले उस स्थान को और अपने पार्श्वभाग को प्रमार्जिका आदि से प्रमार्जित कर लेना चाहिये, तब जाकर वह करवट बदले। (एवं भुंजियव्वं) इस प्रकार से भोजन करना चाहिये अर्थात् आहार संबंधी दोषों को टालकर एवं अंगार धूम वगैरह दोषों को दूर कर मुनि को शुद्ध आहार करना चाहिये। (एवं भासियव्वं) बोलते समय भाषा समिति के अनुसार ही बोलना चाहिये। साधु को सावद्यभाषा का परिहार सदा करना चाहिये-हित, मित, वचन ही बोलना चाहिये। (एवं उट्ठाए उट्ठाय) अपनी आत्मशक्ति से उठकर-अर्थात् प्रमाद निद्रा का त्याग पूर्वक सावधान होकर-विवेक युक्त होकर (पाणेहिं, भूएहिं, जीवेहिं, सत्तेहिं) श्रमण निर्ग्रन्थ का कर्तव्य है कि वह प्राण, भूत, जीव और सत्त्वों की यतना से सदा रक्षा करता रहे। यही बात (संजमेणं संजमियव्वं) सूत्रपाठ

જોઈએ, (एवं तुयट्टियव्वं) પડખું બદલતી વખતે પણ મુનિએ સાવધાની રાખવી જોઈએ-સૂતી વખતે પડખું બદલવાની જરૂર પડે ત્યારે મુનિએ જે બાજુ પડખું બદલવું હોય તે ભાગને રજોહરણથી સાફ કરીને પડખું ફેરવવું જોઈએ, (एवं भुंजियव्वं) આ પ્રમાણે ભોજન કરવું જોઈએ મુનિએ નિર્દોષ આહાર ગ્રહણ કરવો જોઈએ-આહાર સંબંધી દોષો ટાળીને આહાર લેવો જોઈએ (एवं भासियव्वं) બોલતી વખતે ભાષા સમિતિનું પાલન કરવું જોઈએ. સાધુએ સાવદ્ય (દોષ યુક્ત) ભાષાનો સદા પરિત્યાગ કરવો જોઈએ હિત, મિત વચનો જ બોલવા જોઈએ

(एवं उट्ठाए उट्ठाय) પોતાની આત્મ શક્તિથી ઉઠીને-એટલે કે પ્રમાદ તથા નિદ્રાનો ત્યાગ કરીને, સાવચેતી પૂર્વક-વિવેકયુક્ત થઈને (पाणेहिं भूएहिं जीवेहिं, सत्तेहिं) મુનિએ પ્રાણ ભૂત, જીવ અને સત્ત્વોની યતના પૂર્વક રક્ષા કરવી જોઈએ. એજ વાત (संजमेण संजमियव्व) આ સૂત્ર પાઠ

प्राणादिनां विराधना न भवेत्तथा कर्त्तव्यमित्यर्थः। 'अस्सिच ण अट्ठे णो किंचि वि पमाइयव्वं' अस्मिश्च खलु अर्थे प्राणादि रक्षणरूपे प्रयोजने न किञ्चिदपि प्रमादयितव्यम् हे स्कन्दक! योऽर्थः चारित्रपालनरूपो धर्मः प्रतिपादितस्तस्मिन्नर्थे त्वया कथमपि प्रमादो न विधेय इति, 'तए णं से खंदए कच्चायणसगोत्ते' ततः खलु स स्कन्दकः कात्ययनगोत्रः 'समणस्स भगवओ, महावीरस्स' श्रम-

---

द्वारा समझाई गई है। द्वीन्द्रियजीव, और चौइन्द्रियजीव ये प्राण शब्द से, वनस्पतिकायिक जीव भूतशब्द से, पंचेन्द्रिय जीव जीवशब्द से और पृथिवीकायिक, अप्कायिक, तेजस्कायिक और वायुकायिक ये एकेन्द्रिय जीव सत्त्वशब्द से ग्रहण किये हैं तात्पर्य कहने का यह है कि संयमी साधु को अपनी हरएक प्रकार की प्रवृत्ति ऐसी करनी चाहिये कि जिससे किसी भी जीवका विराधना न हो।

(अस्सिं च णं अट्ठे णो किंचि वि पमाइयव्वं) इस प्राणादि रक्षण रूप प्रयोजन-संयम में थोड़ा सा भी प्रमाद नहीं करना चाहिये। प्रभु स्कन्दक अनगार को समझाते हुए उनसे कह रहे हैं कि हे स्कन्दक! जो चारित्र पालनरूप अर्थधर्म-तुम्हें मैंने पालन निमित्त प्रतिपादित किया है उस अर्थ में-कर्तव्य में कथमपि प्रमाद का सेवन नहीं करना चाहिये। (तएणं से खंदए कच्चायणसगोत्ते) इस प्रकार जब श्रमण भगवान महावीर प्रभुने उनको अनगार धर्म का स्वरूप समझाया-तब उन कात्यायन गोत्रीय स्कन्दक ने (समणस्स भगवओ महावीरस्स इमं

વડે સમજાવવામા આવી છે (પ્રાણ) પદથી દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય અને ચતુરિન્દ્રિય જીવો ગ્રહણ કરવામા આવ્યા છે (ભૂત) પદથી વનસ્પતિકાયના જીવો ગ્રહણ કરાયા છે (જીવ) પદથી પચેન્દ્રિય જીવો અને (સત્વ) પદથી પૃથિવીકાય, અપ્કાય, તેજસ્કાય અને વાયુકાયના જીવો ગ્રહણ કરવામાં આવ્યા છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે સયમી સાધુની પ્રત્યેક પ્રવૃત્તિ એવી હોવી જોઇએ કે જેનાથી જીવોની વિરાધના ન થાય.

(अस्सिं च ण अट्ठे णो किंचि वि पमाइयव्वं) આ પ્રાણ વગેરેના રક્ષણ રૂપ પ્રયોજનમા (સંયમમા) બિલકુલ પ્રમાદ કરવો જોઇએ નહીં ભગવાન મહાવીર સ્કન્દક અણુગારને સમજાવે છે કે હે સ્કન્દક! જે શ્રુતચારિત્ર રૂપ ધર્મનું પાલન કરવાનો મેં તમને ઉપદેશ આપ્યો છે, તેના પાલનમાં તમારે બિલકુલ પ્રમાદ સેવવો નહીં (तएण से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते! આ રીતે જ્યારે ભગવાન મહાવીરે કાત્યાયન ગોત્રી સ્કદકને અણગાર-ધર્મનું ૧૧૩૫ સમજાવ્યું ત્યારે તેમણે (समणस्स भगवओ महावीरस्स इमं एयारूव)

गस्य भगवतो महावीरस्य 'इम एयारूव' इममेतद्रूपम् 'धम्मिय' धार्मिकम् धर्मप्रधानकं चारित्रपालनरूपम् 'उवएस' उपदेशं 'सम्म सपडिवज्जइ' सम्यक् संप्रतिपद्यते, संयमं स्वीकरोतीत्यर्थः। अथासौ स्कन्दकः ततः किंकरोतीत्याह- 'तमाणाए' इत्यादि। 'तमाणाए' तदाज्ञया=भगवदाज्ञया 'तह गच्छइ' तथा गच्छति यथा = ईर्यासमित्या गच्छति = गमनागमनं करोति, 'तह चिट्ठइ' तथा तिष्ठति, संयमात्मप्रवचनविराधनापरिहारेण तिष्ठति 'तह निसीयई' तथा निषीदति भूमिप्रमार्जनपूर्वकमुपविशति 'तह तुयट्टइ' तथा त्वग्वर्तयति=

एयारूव) श्रमण भगवान महावीर के इस प्रकार के (धम्मियं) धार्मिक -धर्मप्रधान-चरित्र पालनरूप (उवएसं) उपदेश को (सम्म पडिवज्जइ) अच्छी तरह से स्वीकार कर लिया अर्थात् संयम को धारण कर लिया।

अब सूत्रकार यह प्रकट करते हैं कि संयम को अंगीकार करने के बाद स्कन्दक ने क्या किया—(तमाणाए तह गच्छइ) अब वे स्कन्दक अनगार प्रभु की आज्ञा के अनुसार (तह गच्छइ) ईर्यासमिति से गमनागमन करने लगे। (तह चिट्ठइ) संयम में अपने में तथा प्रवचन में जिस तरह विराधना न हो इस प्रकार से वे खडे रहने लगे। (तह निसीयई) प्रभु ने बैठने के लिये जैसा उन्हें समझाया था उस माफिक अब वे बैठने लगे-अर्थात् बैठ ने की भूमिका पहिले प्रमार्जन कर लेते बाद में वहां बैठते (तह तुयट्टइ) त्वग्वर्तन-करवट के बदल ने के समय में साधु को क्या करके करवट बदलना चाहिये इस विषय में जैसा प्रभु ने स्कन्दक को उपदेश दिया था वे उस मार्ग के अनुसार यतनापूर्वक अपना पार्श्वपरिवर्तन-करवट बदलना करने लगे अर्थात्

શ્રમણ ભગવાન મહાવીરના તે પ્રકારના (धम्मिय) ધાર્મિક-ચારિત્ર પાલનરૂપ (उवएसं) ઉપદેશનો (सम्म पडिवज्जइ) ઘણી સારી રીતે સ્વીકાર કીધો એટલે કે સંયમ ધારણ કર્યો અને નિર્ગ્રંથ ધર્મનું યથોક્ત રીતે પાલન કરવા માંડ્યું

હવે સૂત્રકાર એ બતાવે છે કે સંયમ અંગીકાર કર્યા પછી સ્કન્દકે અનુસાર શું કર્યું? (तमाणाए तह गच्छइ) હવે તે સ્કન્દક પ્રભુની આજ્ઞાનુસાર ઇર્યાસમિતિનુ પાલન કરીને અવર જવર કરવા લાગ્યા. (तह चिट्ठइ) સંયમમાં તથા પ્રવચનમાં વિરાધના ન થાય તે રીતે ઉભા રહેવા લાગ્યા (तह निसीयई) બેસતી વખતે કેવી રીતે બેસવું, એ બાબતમાં પ્રભુએ જે આજ્ઞા આપી હતી તે પ્રમાણે હવે પ્રમાર્જના કરીને (રજોહરણથી બેસવાની જગ્યા સાફ કરીને) યતના પૂર્વક બેસવા લાગ્યા. (तहतुयट्टइ) પ્રભુની આજ્ઞાનુસાર યતનાપૂર્વક પડખુ ફેરવવા લાગ્યા એટલે કે પડખુ ફેરવતા પહેલાં તે જગ્યાનુ તથા તે

प्राणादिनां विराधना न भवेत्तथा कर्त्तव्यमित्यर्थः । 'अस्सिंच ण अट्ठे णो किंचि वि पमाइयव्वं ' अस्मिंश्च खलु अर्थे प्राणादि रक्षणरूपे प्रयोजने न किञ्चिदपि प्रमादयितव्यम् हे स्कन्दक ! योऽर्थ: चारित्रपालनरूपो धर्मः प्रतिपादितस्तस्मिन्नर्थे त्वया कथमपि प्रमादो न विधेय इति, 'तए णं से खंदए कच्चायणसगोत्ते' ततः खलु स स्कन्दकः कात्ययनगोत्रः ' समणस्स भगवओ, महावीरस्स ' श्रम–

द्वारा समझाई गई है । द्वीन्द्रियजीव, और चौइन्द्रियजीव ये प्राण शब्द से, वनस्पतिकायिक जीव भूतशब्द से, पंचेन्द्रिय जीव जीवशब्द से और पृथिवीकायिक, अप्कायिक, तेजस्कायिक और वायुकायिक ये एकेन्द्रिय जीव सत्त्वशब्द से ग्रहण किये हैं तात्पर्य कहने का यह है कि संयमी साधु को अपनी हरएक प्रकार की प्रवृत्ति ऐसी करनी चाहिये कि जिससे किसी भी जीवका विराधना न हो ।

(अस्सिं च णं अट्ठे णो किंचि वि पमाइयव्वं) इस प्राणादि रक्षण रूप प्रयोजन–संयम में थोड़ा सा भी प्रमाद नहीं करना चाहिये । प्रभु स्कन्दक अनगार को समझाते हुए उनसे कह रहे हैं कि हे स्कन्दक ! जो चारित्र पालनरूप अर्थधर्म–तुम्हें मैंने पालन निमित्त प्रतिपादित किया है उस अर्थ में–कर्तव्य में कथमपि प्रमाद का सेवन नहीं करना चाहिये । (तएणं से खंदए कच्चायणसगोत्ते) इस प्रकार जब श्रमण भगवान महावीर प्रभुने उनको अनगार धर्म का स्वरूप समझाया–तब उन कात्यायन गोत्रीय स्कन्दक ने (समणस्स भगवओ महावीरस्स इमं

વડે સમજાવવામાં આવી છે (પ્રાણ) પદથી દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય અને ચતુરિન્દ્રિય જીવો ગ્રહણ કરવામા આવ્યા છે (ભૂત) પદથી વનસ્પતિકાયના જીવો ગ્રહણ કરાયા છે (જીવ) પદથી પંચેન્દ્રિય જીવો અને (સત્વ) પદથી પૃથિવીકાય, અપ્કાય, તેજસ્કાય અને વાયુકાયના જીવો ગ્રહણ કરવામા આવ્યા છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે સયમી સાધુની પ્રત્યેક પ્રવૃત્તિ એવી હોવી જોઈએ કે જેનાથી જીવોની વિરાધના ન થાય

(अस्सिं च ण अट्ठे णो किंचि वि पमाइयव्व) આ પ્રાણ વગેરેના રક્ષણ રૂપ પ્રયોજનમા (સયમમાં) બિલકુલ પ્રમાદ કરવો જોઈએ નહીં ભગવાન મહાવીર સ્કન્દક અણગારને સમજાવે છે કે હે સ્કન્દક ! જે શ્રુતચારિત્ર રૂપ ધર્મનું પાલન કરવાનો મે તમને ઉપદેશ આપ્યો છે, તેના પાલનમાં તમારે બિલકુલ પ્રમાદ સેવવો નહીં (तएण से खंदए कचायणस्स गोत्ते ! આ રીતે જ્યારે ભગવાન મહાવીરે કાત્યાયન ગોત્રી સ્કંદકને અણગાર-ધર્મનું સ્વરૂપ સમજાવ્યું ત્યારે તેમણે (समणस्स भगवओ महावीरस्स इम एयारूव)

कीदृशो जात इत्याह=' इरिया समिए ' ईर्या समितः=ईरणमीर्या, ईर्या-रागद्वेष राहित्येन यतनया गमनम् = प्रखरतरसहस्रकरकरनिकरप्रकाशितासु दिशासु पदार्थवीक्षणक्षमे चक्षुर्द्वये मनुष्यरथचक्रतुरगखुरक्षुण्णतुषारादौ प्रासुकमार्गे सदेकध्यानमनसो मुनेः शनैर्विन्यस्तचरणस्य सङ्कुचितनिजपूर्वापरगात्रस्य पुरतोभून्य स्तयुगमात्रदृष्ट्या चेष्टनम्, तया समित'=सम्यक्प्रकारेण युक्तः, ईर्यासमितिमानि

तरह से कात्यायनगोत्रीय स्कन्दक अनगार हो गये। अर्थात् भगवान् का उपदेश सुनकर वे भगवत्प्रतिपादित धर्मका आचरण करते हुए द्रव्य और भाव से अनगार हो गये। वे कैसे अनगार हुए ? इसके लिये कहते हैं कि (ईरियासमिए) राग और द्वेष से रहित होकर यतना पूर्वक गमन करना इसका नाम ईर्या है। अर्थात्-जब सूर्यकी प्रखर किरणों से मार्ग अच्छी तरह से प्रकाशित हो चुका हो सब दिशाओं में प्रकाश फैल गया हो-आंखों से किसी भी प्रकार की देखनेमें बाधा न हो, दोनों आंखों से पदार्थका निरीक्षण अच्छी तरह से हो सके ऐसे आयुकी हो तथा तुषार आदि से युक्त मार्ग मनुष्यों के संचार से, रथचक्र के संचार से, तुरग आदि के खुरों से क्षुण्ण-शस्त्र परिणत अर्थात् अचित्त हो चुका हो ऐसे प्रासुक मार्ग पर चलने में उपयोग सहित होते हुए मुनिका जो धीरे २ आगे२ की धुसरा प्रमाण भूमि देख कर शरीरको इधर उधर हिलाये डुलाये बिना गमन है इसका नाम

બન્યા એટલે કે ભગવાનનો ઉપદેશ સાંભળીને તેમણે પ્રરૂપેલ ધર્મનું આચરણ કરતા કરતા દ્રવ્યે અને ભાવે અણગાર થઈ ગયા. તેઓ કેવા અણગાર થઈ ગયા ? તે બતાવવાને માટે સૂત્રકાર કહે છે કે-(ઈરિયાસમિએ) તેઓ ઇર્યાસમિતિ યુક્ત બન્યા. રાગ દ્વેષથી રહિત બનીને યતના પૂર્વક ગમન કરવું, તેનું નામ (ઇર્યા) છે એટલે કે જ્યારે સૂર્યના તેજસ્વી કિરણોથી માર્ગ સારી રીતે પ્રકાશિત થઈ ગયો હોય, ચારે દિશાઓમાં પ્રકાશ ફેલાયો હોય કોઈ પણ વસ્તુને આંખો વડે જોવામાં કોઈ પણ પ્રકારની મુશ્કેલી ન તી ન હોય, બને આંખોથી વસ્તુનું બરાબર નિરીક્ષણ કરી શકાતું હોય, તથા ઝાકળ વગેરેથી રહિત એવો માર્ગ છે જે મનુષ્યોના અવર જવરથી, રથ ચક્રના સંચારથી, અને અશ્વ વગેરે પ્રાણીઓના પગની ખરીથી શસ્ત્રો (અચિત્ત) થઈ ચુકયો હોય એવા પ્રાસુક (દોષ રહિત) માગ પર આગળની ધૂંસરી પ્રમાણ ભૂમિને જોઈને, ધીમે ધીમે શરીરને આમ તેમ ડોલાવ્યા વિના મુનિનું જે ગમન થાય છે તેને ઇર્યા કહે છે તે ઇર્યાથી જે સમિત(યુક્ત)

प्रमार्जनपूर्वकं पार्श्वपरिवर्त्तनं करोति 'तह भुंजइ' तथा भुङ्क्ते=अङ्गारधूमादिदोष वर्जनेनाहारादि करोति । 'तह भासइ' तथा भाषते सावद्यपरिवर्जनेन भाषा समित्या वदति, 'तह उट्ठाए उट्ठाय' तथोत्थायोत्थाय=तथा=निद्राप्रमादवर्जनेन उत्थया उत्थाय आत्मशक्त्या पूर्णरूपेण सावधानीभूयेत्यर्थः 'पाणेहिं भूएहिं जीवेहिं सत्तेहिं' प्राणेषु भूतेषु जीवेषु सत्वेषु=प्राणादिषु 'संजमेणं' संयमेन = रक्षण-रूपेण 'संजमेइ' संयमयति=यतते जीवरक्षायां यतनावान् भवति—इत्यर्थः 'अस्सिं च णं अट्ठे णो पमायइ' अस्मिंश्च खलु अर्थे संयमपालनरूपे नो प्रमाद्यति =प्रमादं न करोतीति । 'तएणं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते' ततः खलु स स्कन्दकः कात्यायनगोत्रः 'अणगारे जाए' अनगारो जातः भगवत उपदेशं श्रुत्वा भग-वत्प्रतिपादित श्रुतचारित्रादि धर्ममाचरन् द्रव्यतो भावतश्चानगारोऽभवदिति भावः।

करवट बदल ने पहिले वे उस करवट और स्थान का प्रमा-र्जन कर लेते—तब कहीं वे करवट बदलते—(तह भुंजइ) अङ्गारदोष और धूमादिदोष से वर्जित वे आहार आदि कर ने लगे।'तह भासइ' सावद्य —वचन का परिहार करके अब वे भाषा समिति के अनुसार बोल ने लगे 'तह उट्ठाए उट्ठाय' तथा अपनी आत्मशक्ति से उठ कर प्रमाद निद्राका त्याग करके सोच समझ कर अर्थात् पूर्णरूप से सावधान होकर—'पाणेहिं, भूएहिं, जीवेहिं, सत्तेहिं, प्राणों में, भूतों में, जीवों में और सत्वों में 'संजमेणं' उनके रक्षण रूप संयम से प्रवृत्ति करने लगे अर्थात्—जीवों की रक्षा करने में वे यतनावान् बन गये । 'अस्सिं च णं अट्ठेणो पमायइ' इस अर्थमें—संयम पालन रूप जिन कर्तव्य में—वे थोडा सा भी प्रमाद नहीं करते । 'तएणं से खंदए-कच्चायणस गोत्ते' इस

પડખાનુ પ્રમાર્જન (પૂજી લેવાની ક્રિયા) કરતા હતા (तह भुंजइ) ભગ-વાનની આજ્ઞાનુસાર નિર્દોષ–પ્રાસુક–અહાર ગ્રહણ કરવા લાગ્યા એટલે કે અગાર દોષ અને ધૂમાદિ દોષથી રહિત આહાર ગ્રહણ કરવા લાગ્યા (तह भासइ) સાવદ્ય વચનનો ત્યાગ કરીને નિર્વદ્ય (દોષ રહિત) વચન બોલવા લાગ્યા –ભાષાસમિતિનુ પાલન કરવા લાગ્યા (तह उट्ठाए उट्ठाय) તથા પોતાની આત્મશક્તિથી ઉઠીને–પ્રમાદ નિદ્રાનો ત્યાગ કરીને, સાવધાની પૂર્વક (पाणेहिं, भूएहिं जीवेहिं, सत्तेहिं, सजमेण) પ્રાણ, ભૂત, જીવ અને સત્વોની રક્ષા થાય એવી રીતે વર્તવા લાગ્યા એટલે કે તેઓ યતના પૂર્વક જીવોની રક્ષા કરવા લાગ્યા. अस्सि च णं अट्ठे णो पमायइ) આ અર્થમા (સયમનુ પાલન કરવા રૂપ પોતાના કર્તવ્યમા) તેઓ બિલકુલ પ્રમાદ કરતા નહી (तएण से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते) આ રીતે કાત્યાયન ગોત્રી સ્કદક સાચા અર્થમા અણગાર

कीदृशो जात इत्याह=' इरिया समिए ' ईर्या समित =ईरणमीर्या ईर्या-रागद्वेष राहित्येन यतनया गमनम् = मखरतरसहस्रकरकरनिकरप्रकाशितासु दिशासु पदार्थवीक्षणक्षमे चक्षुर्द्वये मनुष्यरथचक्रतुरगखुरक्षुण्णतुषारादौ प्रासुकमार्गे सद्येकतानमनसो मुने शनैर्विन्यस्तचरणस्य सङ्कुचितनिजपूर्वापरगात्रस्य पुरतोयून्म स्वयुगमात्रदृष्टया चेष्टनम् , तया समित =सम्यक्प्रकारेण युक्त , ईर्यासमितिमानि

तरह वे कात्यायनगोत्रीय स्कन्दक अनगार हो गये। अर्थात् भगवान् का उपदेश सुनकर वे भगवत्प्रतिपादित धर्मका आचरण करते हुए द्रव्य और भाव से अनगार हो गये। वे कैसे अनगार हुए ? इसके लिये कहते हैं कि (ईरियासमिए) राग और द्वेष से रहित होकर यतना पूर्वक गमन करना इसका नाम ईर्या है। अर्थात्-जब सूर्यकी प्रखर किरणों से मार्ग अच्छी तरह से प्रकाशित हो चुका हो सब दिशा ओं में प्रकाश फैल गया हो-आंखों से किसी भी प्रकार की देखनेमें बाधा न हो, दोनों आंखों से पदार्थका निरीक्षण अच्छी तरह से हो सके ऐसे आयुकी हो तथा तुषार आदि से युक्त मार्ग मनुष्यों के संचार से, रथचक्र के संचार से, तुरग आदि के खुरों से क्षुण्ण-शस्त्र परिणत अर्थात् अचित्त हो चुका हो ऐसे प्रासुक मार्ग पर चलने में उपयोग सहित होते हुए मुनिका जो धीरे २ आगे२ की जुसरा प्रमाण भूमि देख कर शरीरको इधर उधर हिलाये डुलाये विना गमन है इसका नाम

બન્યા એટલે કે ભગવાનનો ઉપદેશ સાંભળીને તેમણે પ્રરૂપેલ ધર્મનું આચરણ કરતાં કરતાં દ્રવ્યે અને ભાવે અણગાર થઈ ગયા. તેઓ કેવા અણગાર થઈ ગયા ? તે બતાવવાને માટે સૂત્રકાર કહે છે કે-(ईरियासमिए) તેઓ ઇર્યાસમિતિ યુક્ત બન્યા. રાગ દ્વેષથી રહિત બનીને યતના પૂર્વક ગમન કરવું, તેનું નામ (ઇર્યા) છે એટલે કે જ્યારે સૂર્યના તેજસ્વી કિરણોથી માર્ગ સારી રીતે પ્રકાશિત થઇ ગયો હોય, જ્યારે દિશાઓમાં પ્રકાશ ફેલાયો હોય કોઇ પણ વસ્તુને આંખો વડે જોવામાં કોઇ પણ પ્રકારની મુશ્કેલી નડતી ન હોય, બન્ને આંખોથી વસ્તુનું બરાબર નિરીક્ષણ કરી શકાતું હોય, તથા ઝાકળ વગેરેથી રહિત એવો માર્ગ છે જે મનુષ્યોના અવર જવરથી, રથ ચક્રના સંચારથી, અને અશ્વ વગેરે પ્રાણીઓના પગની ખરીથી ખૂંદાઓ (અચિત્ત) થઇ ચુક્યો હોય, એવા પ્રાસુક (દોષ રહિત) માર્ગ પર ગાડાની ધૂસરી પ્રમાણ ભૂમિને જોઇને, ધીમે ધીમે શરીરને આમ તેમ ડોલાવ્યા વિના મુનિનું જે ગમન થાય છે તેને ઇર્યા કહે છે તે ઇર્યાથી જે સમિત(યુક્ત)

त्यर्थः १ । 'भासासमिए-भाषासमितः-भाषणं भाषा = कार्कश्यादिरहितहित-मितस्फीतमृदुभाषणरूपा, तया समितः = युक्तः २ । भाषासमितिमानित्यर्थः 'एसणासमिए' एषणा समितः-एषणा - नवकोटिविशुद्धभिक्षाग्रहणरूपा, सा च गवेषणा ग्रहणैषणा-परिभोगैषणादिभेदेन त्रिविधा भवति तया समितः=सम्यगुपयोगयुक्तः, एषणा समितिमान् इत्यर्थः । 'आयाणभंडमत्तनिक्खेवणा-समिए' आदानभाण्डमात्रनिक्षेपणा समितः, तत्र-आदानेन=ग्रहणेन सह भाण्डमात्रायाः=उपकरणसमूहरूपायाः यद्वा भाण्डस्य पात्रस्य, मात्रस्य=वस्त्रादि-रूपोपकरणस्य, यद्वा भाण्डमात्रयोः-इतिच्छाया पक्षे भाण्डस्य या निक्षेपणा=

ईर्या है । इस ईर्या से जो समित हैं- अच्छी तरह से युक्त हैं-वे ईर्या समित हैं। अर्थात् ईर्यासमिति वाले हैं। इस प्रकार की ईर्या समिति वाले वे स्कन्दक अनगार हो गये । भासासमिए' कर्कशता आदि से रहित हित, मित, मृदु भाषण करना इस का नाम भाषा समिति है। इस भाषा समिति से जो युक्त होते हैं वे भाषासमित कहलाते हैं। स्कन्दक अनगार इस भाषा समिति से युक्त बन गये । एसणासमिए' नवकोटि से विशुद्ध भिक्षा का ग्रहण करना इसका नाम एषणा है। यह एषणा- गवेषणा, ग्रहणैषणा और परिभोगैषणा आदि के भेद से तीन प्रकार की है। इस एषणा से जो युक्त होते हैं अर्थात् जो इस में अच्छी तरह से उपयोग रखते हैं वे एषणा समित हैं । वे स्कन्दक मुनि इस एषणा समिति से युक्त बन गये । 'आयाणभंडमत्तनिक्खेवणा-समिए' उपकरण समूह रूप भांड मात्रा के ग्रहण करने में और उठाने में अथवा भांड पात्र, एवं मात्र-वस्त्रादि रूप उपकरणों के धरने में, उठाने

હોય છે, તેને ઇર્યાસમિત અથવા ઇર્યાસમિત વાળા કહે છે. તે સ્કન્દક અણુગાર તે પ્રકારની ઇર્યાસમિતિ વાળા થઇ ગયા. (भासासमिए) કર્કશ પણું વગેરે રહિત, હિત, મિત, મૃદુ વાણી બોલનારને ભાષાસમિતિથી યુક્ત કહેવામા આવે છે. સ્કન્દક અણુગાર ભાષાસમિતિથી પણ યુક્ત બન્યા(एसणा-समिए) વિશુદ્ધ ભિક્ષાને "એષણા" કહે છે. તે એષણાના આ પ્રમાણે ત્રણ પ્રકાર છે- (૧) ગવેષણા, (૨) ગ્રહણૈષણા, અને (૩) પરિભોગૈષણા. આ એષણાથી જે યુક્ત હોય છે એટલે કે તેનુ જે બરાબર પાલન કરે છે તેને એષણા સમિત કહે છે. સ્કન્દક અણુગાર એષણા સમિતિથી યુક્ત બની ગયા—(आयाणभंडमत्तनिक्खेवणासमिए) ભાંડ એટલે પાત્ર અને માત્ર એટલે વસ્ત્રાદિ રૂપ ઉપકરણો પાત્ર અને વસ્ત્રાદિ રૂપ ઉપકરણોને મૂકતી વખતે

न्यासः, तस्यां भाण्डोपकरणानां ग्रहणे स्थापने चेत्यर्थः समित=यतनावान् सुप्र तिलेखित सुप्रमार्जितादि क्रमेण प्रवर्तक इत्यर्थः । 'उच्चारपासवणखेलजल्ल सिंघाणपरिट्ठावणियासमिए' उच्चारप्रस्रवणखेलजल्लशिङ्घाणपरिष्ठापनिका समित' तत्र-उच्चारः=पुरीषं, प्रस्रवण=मूत्र, खेल श्लेष्मा, जल्ल=देहमल, शिङ्घाणं=नासिकामलम्, एतेषां परिष्ठापनिका=व्युत्सर्जनं तत्र समित=यतनावान्

में जो यतना पूर्वक प्रवृत्ति की जाती है अर्थात् जिस स्थानपर-उन्हें धरना हो सो पहिले उस स्थान की प्रमार्जना कर लेनी और जो उपकरण उठाना हो उसको उठानेसे पहिले प्रतिलेखना प्रमार्जना करलेनी इसका नाम आदान भांडमात्रनिक्षेपणसमिति है। इस समिति से जो युक्त होते हैं वे आदानभांडमात्रनिक्षेपणा समिति वाले कहलाते हैं। स्कन्दक अनगार इस समिति से युक्त बन गये। अर्थात् जब वे धर्मोपकरणोंको धरते उठाते थे तब उसकी वे पहिले अच्छी तरह प्रतिलेखना कर लेते और अच्छी तरह से उसकी प्रमार्जना कर लेते-तब कहीं वे उसे धरते और उठाते थे। उच्चारपासवणखेलजल्लसिंघाणपरिट्ठावणिया-समिए, उच्चार नाम बडी नीत का है, प्रस्रवण नाम-लघुनीत का है, खेल नाम खकार-श्लेष्माका है, जल्ल नाम शरीर के मैल का है, शिङ्घा ण नाम नाक के मैलका है। इन सब की परिष्ठापनिका क्रिया में अर्थात् इनके परठने में यतनाकरना इसका नाम उच्चारप्रस्रवण खेल जल्ल

તથા લેતી વખતે યતના પૂર્વક જે પ્રવૃત્તિ કરવામાં આવે છે-એટલે કે તેમને જે સ્થાને મૂકવા હોય તે સ્થાનને પહેલા રજોહરણથી પુંજવાની અને જે ઉપકરણને ઉઠાવવાનું હોય તેને ઉઠાવતા પહેલાં તેની પ્રમાર્જના કરવાની ક્રિયાને આદાનભાંડમાત્ર નિક્ષેપણા સમિતિ કહે છે તે સમિતિથી જે યુક્ત હોય છે તેને આ દાનભાંડમાત્ર નિક્ષેપણા સમિતિ કહે છે સ્કન્દક અણગાર આદાનભ ડમાત્ર નિક્ષેપણા સમિતિથી યુક્ત બન્યા તાત્પર્ય એ છે કે સ્કન્દક મુનિ કોઈ પણ ધર્મોપકરણને મૂકતાં કે ઉપાડતાં પહેલાં તેની સારી રીતે પ્રતિલેખના અને પ્રમાર્જના કરી લેતા હતા (उच्चारपासवणखेलजल्लसिंघाणपरिट्ठावणियासमिए) (उच्चार) એટલે મળ, ઝાડો (प्रस्रवण) એટલે મૂત્ર (પેશાબ,) (खेल) કફ, (जल्ल) એટલે શરીરનો મેલ, (सिंघाण) એટલે નાકમાંથી નીકળતો ચીકણો પદાર્થ (શેડા,) એ બધી વસ્તુઓ પરઠવાની ક્રિયા યતનાપૂર્વક કરવી તેનું નામ ઉચ્ચાર પ્રસ્રવણ ખેલ જલ્લ શિંઘાણ-પરિષ્ઠાપનિકા સમિતિ છે તે સમિતિથી યુક્ત મુનિને ઉચ્ચારપ્રસ્રવણ ખેલ જલ્લ શિંઘાણ પરિષ્ઠાપનિકા સમિત કહે છે. સ્કન્દક

'मणसमिए' मनःसमितः-मनः=अन्तःकरणं, तत्र समितः निरवद्यमनःप्रवृत्तिमान् कुशलमनोयोगवानित्यर्थः। 'वयसमिए' वचः समितः=वचसि अनृत कटुत्वसावद्यादि दोषरहितवचने समितः = उपयोगवान्, हितमितप्रियसत्यवचोयोगवानित्यर्थः 'कायसमिए' कायसमितः काय.= शरीर, तत्र समितः प्राण्युपघातादिदोषपरिहारपूर्वकमाकुञ्चनप्रसारणादि क्रियाकारकः। 'मणगुत्ते' मनोगुप्तः, मनसा=मनोव्यापारेण गुप्तः रक्षितः संयमितमनोव्यापारः मनोजन्या

शिंधाणपरिष्ठापनिका समिति है। इस समिति से जो युक्त होते हैं वे उच्चार प्रस्रवण खेल जल्ल सिंधाणपरिष्ठानिकासमितिवाले कहलाते हैं। ये स्कन्दक अनगार इस समिति से युक्त बन गये। 'मणसमिए' वे मनः समित वाले हो गये मन नाम अन्तः करण का है। इस अन्तःकरण में वे समित यतना शाली हो गये अर्थात् निरवद्यमनः प्रवृत्ति से युक्त हो गये-अकुशल मनोयोगको त्याग कर वे कुशल मनोयोग वाले बन गये। 'वय समिए' वचन में समित हो गये, अर्थात् असत्य, कटुक, सावद्य आदि दोषों से रहित ऐसे वचन में उपयोग वाले हो गये, हित, मित, प्रिय ऐसे सत्यवचन रूप योग से युक्त हो गये। 'कायसमिए' काय नाम शरीर का है, इसमें समित हो गये, अर्थात् जीवों का उपघात अपघात होने रूप दोष का परित्याग करते हुए वे स्कन्दक अनगार अपने शरीर की आकुंचन, प्रसारण आदि क्रिया करने लगे (मणगुत्ते) संयमित मनोव्यापारवाले हो गये, अर्थात् अपने मन को उन्हों ने वश में कर लिया। मनोयोग से जो कर्मरूप कचरा आता था उसका

અણુગાર તે સમિતિથી પણ યુક્ત બની ગયા. (मणसमिए) ત્યાર બાદ તેઓ મન.સમિત બની ગયા. એટલે કે નિરવદ્ય (દોષ રહિત) મનની પ્રવૃત્તિવાળા બની ગયા-અશુભ મનોયોગનો પરિત્યાગ કરીને તેઓ શુભમનોયોગવાળા બની ગયા. (वयसमिए) તેઓ વચન સમિત બની ગયા. એટલે કે અસત્ય, કર્કશ સાવદ્ય (દોષ યુકત) વગેરે દોષોથી રહિત વચનો બોલવા લાગ્યા. હિત, મિત, અને પ્રિય સત્યવચન રૂપ યોગથી યુક્ત બની ગયા (कायसमिए) કાય એટલે શરીર, તેઓ કાયસમિત બની ગયા એટલે કે પોતાના શરીરની ક્રિયાઓ અથવા પોતાના અંગોના હલનચલન એવી રીતે કરવા લાગ્યા કે જેથી કોઇ પણ વિરાધના ન થાય તેનું ધ્યાન રાખતા થઇ ગયા (मणगुत्ते) તેમણે પોતાના મનને પૂરે પૂરૂં વશ કરી લીધું તેઓ મનના સંયમથી યુકત થઇ ગયા મનોયોગથી જે કર્મ રૂપ રજનો પ્રવેશ થતો હતો તેનો

गन्तुकर्मकचयनिरोधका, अकुशलमनोयोगनिरोधको वा । यद्वा मनोगुप्त्या मनो गुप्तिमान् तत्र मनोगुप्तिस्त्रिधा, यथा-आर्त्तरौद्रध्यानानुबन्धिकल्पनाजाल-वियोगलक्षणा प्रथमा १, शास्त्रानुगामिनी परलोकसाधिनी धर्मध्यानानुबन्धिनी माध्यस्थ्यपरिणामरूपा द्वितीया २, कुशलाकुशलमनोवृत्तिनिरोधेन चिराभ्यस्तयोग-सम्पादितावस्था विशेषज या-आत्मस्वरूपरमणरूपा तृतीया ३ ।

उक्तञ्च—" विमुक्तकल्पनाजालं, समत्वे सुप्रतिष्ठितम् ।
आत्मारामं मनस्तज्ज्ञैर्मनोगुप्तिरुदाहृता ॥ १ ॥ " इति ॥

उन्होंने निरोध कर दिया । अथवा-अकुशल मनोयोग को अकुशल मानसिक व्यापार को उन्होंने रोक दिया । अर्थात्-वे मनोगुप्ति से युक्त हो गये । मनोगुप्ति तीन प्रकार की होती है-जैसे आर्त रौद्र ध्यान संबंधी कल्पनाजाल का त्याग करना यह प्रथम मनोगुप्ति है । शास्त्र मार्ग का अनुसरण करने वाली एवं परलोक को सुधारने वाली तथा धर्मध्यान के अनुबंधवाली ऐसी जो माध्यस्थ्य परिणति रूप वृत्ति (मध्यस्थ भाव वाली वृत्ति) होती है वह दूसरी मनोगुप्ति है । कुशल एवं अकुशल मनोवृत्तिके निरोध पूर्वक चिराभ्यस्त योग द्वारा संपादित अवस्थाविशेषसे जनित होती है ऐसी आत्मस्वरूप में रमणरूप तीसरी मनोगुप्ति है ।

कहा भी है—" विमुक्तकल्पनाजालं, समत्वे सुप्रतिष्ठितम् ।
आत्मारामं मनस्तज्ज्ञै-र्मनोगुप्तिरुदाहृता " ॥ १ ॥

मनोगुप्ति इस तरह से तीन प्रकार की कही गई है-एक मनोगुप्ति वह कि जिसमें कल्पनाओं का सर्वथा अभाव रहे-किसी भी प्रकार की

તેમણે નિરોધ કરી લીધો એટલે કે અશુભ મનોયોગને (માનસિક પ્રવૃત્તિને) તેમણે રોકી દીધો એ રીતે તેઓ મનોગુપ્તિથી યુક્ત બની ગયા મનોગુપ્તિના આ પ્રમાણે ત્રણ પ્રકાર છે- આર્ત્ત રૌદ્રધ્યાન વાળી તમામ ઇચ્છાઓનો ત્યાગ કરવો તે પહેલી મનોગુપ્તિ છે શાસ્ત્રમાર્ગ અનુસરનારી અને પરલોકને સુધાર નારી તથા ધર્મધ્યાનના અનુબંધવાળી, એવી જે મધ્યસ્થ ભાવવાળી વૃત્તિ હોય તેને બીજી મનોગુપ્તિ કહે છે કુશલ અને અકુશલ મનોવૃત્તિના નિરોધ પૂર્વક, લાંબા અભ્યાસથી અને યોગ વડે પ્રાપ્ત થયેલી અવસ્થા વિશેષથી આત્મ સ્વરૂપમાં જેમ રમણતા થાય છે તે મનોગુપ્તિ છે, કહ્યું પણ છે કે—

(विमुक्तकल्पनाजालं समत्वे सुप्रतिष्ठितम्)
आत्मारामं मनस्तज्ज्ञै र्मनोगुप्तिरुदाहृता) ॥ १ ॥

મનોગુપ્તિ આ પ્રમાણે ત્રણ પ્રકારની કહી છે એક મનોગુપ્તિ એવી છે કે જેમાં કલ્પનાઓનો વર્જન અભાવ રહે છે કોઈ પણ પ્રકારની કલ્પના મનમાં

'मणसमिए' मनःसमितः-मनः=अन्तःकरणं, तत्र समितः निरवद्यमनःप्रवृत्तिमान् कुशलमनोयोगवानित्यर्थः। 'वयसमिए' वचः समितः=वचसि अनृत कटुत्वसावद्यादि दोषरहितवचने समितः=उपयोगवान्, हितमितप्रियसत्यवचो योगवानित्यर्थः 'कायसमिए' कायसमितः कायः= शरीर, तत्र समितः प्राण्युपघातादिदोषपरिहारपूर्वकमाकुञ्चनप्रसारणादि क्रियाकारकः। 'मणगुत्ते' मनोगुप्तः, मनसा=मनोव्यापारेण गुप्तः रक्षितः संयमितमनोव्यापारः मनोजन्या

शिंधाणपरिष्ठापनिका समिति है। इस समिति से जो युक्त होते हैं वे उच्चार प्रस्रवण खेल जल्ल सिंधाणपरिष्ठाननिकासमितिवाले कहलाते हैं। ये स्कन्दक अनगार इस समिति से युक्त बन गये। 'मणसमिए' वे मनः समित वाले हो गये मन नाम अन्तः करण का है। इस अन्तः-करण में वे समित यतना शाली हो गये अर्थात् निरवद्यमनः प्रवृत्ति से युक्त हो गये-अकुशल मनोयोगको त्याग कर वे कुशल मनोयोग वाले बन गये। 'वय समिए' वचन में समित हो गये, अर्थात् असत्य, कटुक, सावद्य आदि दोषों से रहित ऐसे वचन में उपयोग वाले हो गये, हित, मित, प्रिय ऐसे सत्यवचन रूप योग से युक्त हो गये। 'कायसमिए' काय नाम शरीर का है, इसमें समित हो गये, अर्थात् जीवों का उपघात अपघात होने रूप दोष का परित्याग करते हुए वे स्कन्दक अनगार अपने शरीर की आकुचन, प्रसारण आदि क्रिया करने लगे (मणगुत्ते) संयमित मनोव्यापारवाले हो गये, अर्थात् अपने मन को उन्हों ने वश में कर लिया। मनोयोग से जो कर्मरूप कचरा आता था उसको

અણુગાર તે સમિતિથી પણ યુક્ત બની ગયા (मणसमिए) ત્યાર બાદ તેઓ મનઃસમિત બની ગયા એટલે કે નિરવદ્ય (દોષ રહિત) મનની પ્રવૃત્તિવાળા બની ગયા-અશુભ મનોયોગનો પરિત્યાગ કરીને તેઓ શુભમનોયોગવાળા બની ગયા (वयसमिए) તેઓ વચન સમિત બની ગયા. એટલે કે અસત્ય, કર્કશ સાવદ્ય (દોષ યુક્ત) વગેરે દોષોથી રહિત વચનો બોલવા લાગ્યા. હિત, મિત, અને પ્રિય સત્યવચન રૂપ યોગથી યુક્ત બની ગયા (कायसमिए) કાય એટલે શરીર, તેઓ કાયસમિત બની ગયા. એટલે કે પોતાના શરીરની ક્રિયાઓ અથવા પોતાના અંગોના હલનચલન એવી રીતે કરવા લાગ્યા કે જેથી કોઇ પણ વિરાધના ન થાય તેનુ ધ્યાન રાખતા થઇ ગયા (मणगुत्ते) તેમણે પોતાના મનને પૂરે પૂરૂં વશ કરી લીધું તેઓ મનના સંયમથી યુક્ત થઇ ગયા મનોયોગથી જે કર્મ રૂપ રજનો પ્રવેશ થતો હતો તેનો

द्वितीया-गुरुमापृच्छ्य शरीरसंस्तारकप्रतिलेखनप्रमार्जनादि समयोचितक्रिया समूहसम्पादनपूर्वक शयनासनादि विधेयम्, ततो गुरुनिर्देशेन शयनासननिक्षेपा दानादिषु स्वतन्त्र चेष्टात्यागेन नियतकायचेष्टारूपा।

उक्तञ्च—" उपसर्गप्रसङ्गेऽपि कायोत्सर्गजुषो मुनेः।
स्थिरीभाव शरीरस्य, कायगुप्तिर्निगद्यते ॥ १ ॥
शयनासननिक्षेपाऽऽदानसंक्रमणेषु च।
स्थानेषु चेष्टा नियमः, कायगुप्तिस्तु साऽपरा " ॥२॥ इति।

करता है। द्वितीय प्रकार में-गुरुकी आज्ञा के अनुसार शारीरिक क्रिया ओं का करना होता है। अपनी इच्छा के अनुसार कायिकी क्रिया की स्वतन्त्र प्रवृत्ति साधु नहीं करता है। जैसे शास्त्र की यह आज्ञा है कि साधु जब शयन आसन आदि कार्य करे तो उसे पूछकर ही यह कार्य, अपने शरीर की और संस्तारक की प्रतिलेखना प्रमार्जना आदि करते हुए (तत्समयोचितक्रियासमूहसम्पादन) पूर्वक ही करना चाहीये। इस तरह यह इस द्वितीय प्रकार में गुरु के आदेश से ही शयन, आसन, निक्षेप, आदान आदि क्रियाओं में प्रवृत्ति करता है और अपनी वह स्वतन्त्र चेष्टा का त्याग करता है। इस प्रकार से यह नियत कायचेष्टा रूप द्वितीय प्रकार कायगुप्ति का जानना चाहिये। कहा भी है

" उपसर्गप्रसङ्गेऽपी, कायोत्सर्गजुषो मुनेः।
स्थिरीभाव शरीरस्य, कायगुप्तिर्निगद्यते ॥ १ ॥

બીજો પ્રકાર આ પ્રમાણે છે-તેમાં સિદ્ધાંત પ્રમાણે આજ્ઞાનુસાર શારીરિક ક્રિયાઓ કરવાની હોય છે પોતાની ઇચ્છા મુજબ કાયકી ક્રિયાની સ્વતંત્ર પ્રવૃત્તિ મુનિ કરતા નથી. જેમ કે જ્યારે સાધુ ગૌચરી માટે નીકળે શયન વગેરે ક્રિયા કરે ત્યારે તેણે ગુરુની આજ્ઞા લેવી પડે છે, એવી શાસ્ત્રાજ્ઞા છે. અને કોઈ પણ ઉપકરણ ગ્રહણ કરતી વખતે અથવા કોઇ જગ્યાએ મેલવી વખતે તે જગ્યાનું અને ઉપકરણનું પડીલેહણ (પ્રતિલેખના) તથા પ્રમાર્જન કરવું પડે છે આ રીતે બીજા પ્રકારની કાયગુપ્તિના પાલન માટે સાધુ પોતાના ગુરુની કે વડિલ મુનિની આજ્ઞાનુસાર શયન, આસન નિક્ષેપ, આદાન વગેરે ક્રિયાઓ કરે છે અને પોતાની સ્વતંત્ર પ્રવૃત્તિઓનો પરિત્યાગ કરે છે આ રીતે કાયગુપ્તિનો બીજો પ્રકાર નિયમ મુનિની કાયાની પ્રવૃત્તિનો સમજવો કહ્યું પણ છે—

उपसर्गप्रसङ्गेऽपि, कायोत्सर्गजुषो मुनेः।
स्थिरीभाव शरीरस्य, कायगुप्तिर्निगद्यते ॥ १ ॥

एतादृशमनोगुप्तिमानित्यर्थः 'वयगुत्ते' वचोगुप्तः, निरुद्धवाक् प्रसरः वचोगुप्तिमानित्यर्थः 'कायगुत्ते' कायगुप्तः, कायेन=कायक्रियया गमनागमनप्रचलनस्पन्दादिरूपया गुप्तः=रक्षितः कायक्रियया उपयोगवान्। कायगुप्तिमानित्यर्थः, कायगुप्तिर्द्विधा-चेष्टानिवृत्तिरूपा १, यथागमं चेष्टानियमनलक्षणा २ चेति तत्र। तत्र प्रथमा कायोत्सर्गादिना परीषहसहनपूर्वककायनिश्चलताकरणरूपा

कल्पना मन में न उठे १, द्वितीय मनोगुप्ति वह कि जिसमें मन माध्यस्थ्यपरिणति में बना रहे २ तीसरी वह कि जिसमें मन आत्मारूपी बगीचे में रमण करने वाला बन जाय, अर्थात् आत्मस्वरूप के चिन्तन में लीन हो जाय ३। 'वयगुत्ते' अपनी वाणी का प्रसार रोक देने के कारण वे वचोगुप्तवचनगुप्ति से युक्त-तथा 'कायगुत्ते' कायसबंधी गमन आगमन, प्रचलन, स्पन्दन, आदिरूप क्रिया से रक्षित होने के कारण अर्थात् कायिकी क्रिया में उपयोग वाले होने के कारण कायगुप्ति से युक्त हो गये। कायगुप्ति दो प्रकारकी होती है-एक प्रकार कायगुप्ति का वह है दूसरा की जिसमें कायसंबंधी चेष्टा की निवृत्ति कर दी जाती है। और प्रकार कायगुप्ति का वह है कि जिसमें आगम के अनुसार क्रिया चेष्टा का नियमन किया जाता है। प्रथम प्रकार में साधु कायोत्सर्ग करते समय परीषह और उपसर्ग आजाने पर भी अपने शरीर में निश्चलता रखता है। उस समय वह कायसंबधी किसी भी प्रकार की क्रिया नहीं

ઉદ્‌ભવતી જ નથી. જેમાં મન મધ્યસ્થવૃત્તિવાળુ બની જાય છે એવી બીજા પ્રકારની મનોગુપ્તિ છે ત્રીજી મનોગુપ્તિ એવા પ્રકારની છે કે જેમા મન, આત્મારૂપી બગીચામાં રમણ કર્યા કરે છે અટલે કે આત્મસ્વરૂપના ચિન્તનમાંજ લીન થઇ જાય છે.

(वयगुत्ते) પોતાની વાણીના સયમને કારણે તેઓ વચનગુપ્ત (વચનગુપ્તિથી યુકત) બની ગયા તથા (कायगुत्ते) કાયા સબધી અવર જવર, પ્રચલન, સ્પન્દન વગેરે રૂપ ક્રિયાથી રક્ષિત હોવાને કારણે એટલે કે કાયિકી ક્રિયા યતનાપૂર્વક કરતા હોવાથી-તેઓ કાયગુપ્તિથી યુકત બની ગયા કાયગુપ્તિ બે પ્રકારની હોય છે-તેનો એક પ્રકાર એવો છે કે જેમા કાયાની ચેષ્ટા (પ્રવૃત્તિ) નો નિરોધ કરવામા આવે છે, અને બીજો પ્રકાર એવો છે કે જેમાં આગમ અનુસાર પ્રવૃત્તિ કરવાનો નિયમ કરવામા આવે છે. એટલે કે મુનિ કાયોત્સર્ગ (काउसग्ग) કરતી વખતે પરીષહ અને ઉપસર્ગ આવી પડવા છતાં પણ પોતાના શરીરને નિશ્ચલ રાખે છે તે વખત તેઓ કાયાથી કોઇ પણ પ્રકારની ક્રિયા કરતા નથી. આ કાય[illegible]નો પહેલો પ્રકાર થયો, કાયગુપ્તિનો

रज्जु:=रज्जुरिव रज्जुः सरलत्वात्, पकल्पप्रहाररहित इत्यर्थ यद्वा 'सज्जू' इति लज्जावान, लज्जेति संयम, तद्वान्। 'धण्णे' धन्य:=लब्धधर्मधनः। 'खंतिखमे' क्षान्तिक्षम:-क्षान्त्या=क्षमया क्षमते नत्वसमर्थतया क्षान्तिक्षमः= स्वाभाविकक्षमाशील इत्यर्थः, यत् प्राक् 'गुप्तेन्द्रियः' इत्युक्त तत् तु इन्द्रियविकारगोपनमात्रेणापि स्यादत आह-'जिइंदिए' जितेन्द्रिय =इन्द्रियजन्यविकारामावात्-वशीकृतेन्द्रियः। 'सोहिए' शोधितः=शुद्धिसम्पन्न निराकृतातिचार

गये। अथवा-लज्जा नाम संयम का है, उससे युक्त अर्थात संयमवान् हो गये। 'धन्ने' धर्मरूप धन को उन्हों ने पा लिया। 'खतिखमे' का तात्पर्य है-स्वयं शक्तिसंपन्न होते हुए भी सहनशील बनना। इसप्रकार वे स्कन्दक अनगार स्वयं में विशिष्ट शक्तिशाली होते हुए भी आये दुःखो को शांति पूर्वक सहन करते थे-इसलिये। (क्षान्त्या क्षमते इति क्षांतिक्षम) इस व्युत्पत्ति के अनुसार जो व्यक्ति असमर्थ होनेके कारण दूसरों के अपराधोंको क्षमा कर देता है वह क्षांतिक्षम नहीं है। जो पहिले (गुप्तेन्द्रिय) ऐसा विशेषण स्कन्दक अनगार का कहा है-सो यह गुप्तेन्द्रियता इन्द्रियों के विकारों को छुपाने मात्र से भी हो सकती है-अतः कोई ऐसा यहां न समझले इसके लिये (जिइंदिए) यह पद प्रयुक्त किया गया है। यह पद यह प्रकट करता है कि इन्द्रिय जन्य विकार के अभाव से उनमें वशीकृतेन्द्रियता थी अर्थात् इन्द्रियों को वश

માંથી વક્રતાનો બિલકુલ પરિત્યાગ કરી દીધો અથવા સંયમને લજ્જા કહે છે તેઓ સંયમી બની ગયા એવો અર્થ પણ થઈ શકે છે "धन्ने" તેમણે ધર્મરૂપ ધન પ્રાપ્ત કરી લીધું, (खंतिखमे) શક્તિ શાળી હોવા છતાં પણ ક્ષમાશીલ બન્યા પોતે શક્તિસંપન્ન હોવા છતાં પણ સહનશીલ બનવું, તેનું નામ ક્ષાંતિક્ષમ છે સ્કન્દક અણગાર પોતે વિશિષ્ટ શક્તિ શાળી હોવા છતાં પણ આવી પડતા દુઃખો અને ઉપસર્ગોને શાંતિ પૂર્વક સહન કરતા હતા. તેથી તેમને ક્ષાંતિક્ષમ કહ્યા છે (क्षान्त्या क्षमते इति क्षांतिक्षम) આ વ્યુત્પત્તિ પ્રમાણે નિબળતાને કારણે બીજા લોકોના અપરાધોને માફ કરનાર વ્યક્તિને ક્ષાંતિક્ષમ કહી શકાય નહીં. આગળ સ્કન્દકને 'ગુપ્તેન્દ્રિય' કહેવામાં આવ્યા છે ઇન્દ્રિયોના વિકારોને છુપાવવાથી પણ ગુપ્તેન્દ્રિય પણું સંભવી શકે છે પણ સ્કન્દકના ગુપ્તેન્દ્રિયપણાના વિષયમાં એવી આશંકા કોઇને પણ ન થાય તે માટે તેમને (जिइंदिए) જિતેન્દ્રિય કહ્યા છે આ પદ એ બતાવે છે કે ઇન્દ્રિયોથી ઉત્પન્ન થતા વિકારોના અભાવને કારણે તેમનામાં ઇન્દ્રિયોને વશ

अतएव 'गुत्ते' गुप्तः पूर्वोक्तमनोगुप्त्यादि युक्तः, गुत्तिंदिए' गुप्तेन्द्रियः गुप्तानि=स्वस्वविषयान्निवृत्तानि इन्द्रियाणि यस्य स तथा 'गुत्तबंभयारी' गुप्तब्रह्म चारी-गुप्तः=रक्षितः ब्रह्मणः=कुशलानुष्ठानस्य चारः=चरणं यावज्जीवनं मैथुन-विरमणलक्षणः, स यस्यास्तीति तथा 'चाई' त्यागी=सम्यक्त्यागवान् 'लज्जू'

शयनासननिक्षेपादानसंक्रमणेषु च ।
स्थानेषु चेष्टा नियमःकायगुप्तिस्तु साऽपरा ॥ २ ॥"

तात्पर्य इसका यही है कि कायोत्सर्ग करते समय मुनि को यदि किसी भी प्रकार के उपसर्ग का प्रसङ्ग आजाता है तो वह उस समय जो अपने शरीर में अनिश्चलता न करात, हुआ-अर्थात् समाधि से विच-लित न होता हुआ-स्थिरता कारण करता है एक तो वह कायगुप्ति है, और दूसरी कायगुप्ति वह है, कि जिसमें शयन, आसन, निक्षेप आदि क्रियाओं में शरीर की चेष्टा का संयमन किया जाना है इस प्रकार वे स्कन्दक अनगार पूर्वोक्त इन मनोगुप्ति आदी से संपन्न बन कर (गुत्ते) गुप्त बन गये। (गुत्तिंदिए) उन्हों ने अपनी प्रत्येक इन्द्रिय को अपने ग्राह्य विषय से निवृत्त कर लिया। (गुत्तबंभयारी यावज्जीव वे मैथुन के परित्याग करदेनेसे गुप्त ब्रह्मचारी बन गये। (चाई) सर्वथा निःसंग-असंग हो गये। चक्रतापूर्वक व्यवहार करने का उन्हो ने बिल-कुल परित्याग कर दिया, इसलिये 'लज्जू' रस्सी की तरह सरल हो

शयनासननिक्षेपादानसंक्रमणेषु च ।
स्थानेषु चेष्टा नियमः कायगुप्तिस्तु साऽपरा ॥ २ ॥

ભાવાર્થ-કાયોત્સર્ગ કરતી વખતે કોઈપણ પ્રકારના ઉપસર્ગ આવવા છતાં પણ જો મુનિ પોતાના શરીરને સ્થિર રાખે કાઉસગ્ગમાં સ્થિરતા રાખે, તો તે પહેલા પ્રકારની કાયગુપ્તિથી યુકત ગણાય છે બીજા પ્રકારની કાયગુપ્તિ એ છે કે જેમાં શયન, આસન નિક્ષેપ વગેરે ક્રિયાઓમા શરીરની પ્રવૃત્તિઓ નિયમન કરવામાં આવે છે-પ્રતિલેખના, પ્રમાર્જના, ગુરુઆજ્ઞા વગેરે રૂપ નિયમન કરવામા આવે છે સ્કન્દક અણગાર પણ પૂર્વોકત મનોગુપ્તિ વગેરેથી યુકત થવાથી (गुत्ते) ગુપ્તિઓથી યુકત બની ગયા. (गुत्तिंदिए) તેઓ ગુપ્તેન્દ્રિય બની ગયા એટલે કે તેમણે પોતાની બધી ઈન્દ્રિઓને પોત પોતાના વિષ-યોથી નિવૃત્ત કરી દીધી (गुत्तबंभयारी) જીવન પર્યન્ત અબ્રહ્મનો પરિત્યાગ કરવાથી તેઓ ગુપ્તબ્રહ્મચારી બની ગયા (चाई) બિલકુલ નિઃસંગ-અસંગ થઇ ગયા, (लज्जू) દોરીના જેવા સરળ થઈ ગયા એટલે કે તેમણે જીવન

तस्मिन्निदानम्, तत् अविद्यमानं यस्य स तथा-ऐहिक पारलौकिक सुखलालसारहित इत्यर्थः । 'अप्पुस्सुए' अल्पौत्सुक्य उत्कण्ठावर्जित । 'अबहिल्लसे' अबहिर्लेश्य अविद्यमानावहिः लेश्या=मनोवृत्तिर्यस्यासौ तथा असयममनोवृत्तिरहित इत्यर्थः 'सुसामण्णरए' सुश्रामण्यरत -सु=सुष्ठुतया श्रामण्य=श्रमणधर्मे रत =तत्पर - शुद्धसाधुधर्मपालक इत्यर्थः । 'दंत' दान्त क्रोधादिदमनात्, यद्वा 'द्वयन्त' इतिच्छायापक्षे द्वयोः=रागद्वेषयो अन्त -विनाशो यस्य स तथा रागद्वेषवर्जित

वाले कुठार से उस कुशल कर्मरूप कल्पवृक्ष को काट देता है। ऐसा यह निदान होता है। इस निदान से-इस लोक सबधी और परलोक सबधी सुख की लालसा से ये रहित थे (अप्पुस्सुए) इनके चित्त में किसी पदार्थ आदि के सेवन करने की या उसके अवलोकन करने की बिलकुल किसी तरह से भी उत्कंठा नहीं रही थी। (अबहिल्लेसे) और इनकी मनोवृत्ति सयम आदि अनुष्ठान के परिपालन करने में इतनी तल्लीन बनगई थी कि वह एक क्षण भी उससे बाहिर नहीं जाती थी अर्थात् असयमभावकी तरह इनकी चित्तवृत्ति स्वप्न में नहीं जाती थी। 'सुसामण्णरए' ये अच्छी तरह से शुद्ध साधुधर्म के पालन करने में जी जान से तत्पर रहते थे। (दंते) क्रोधादिकषाय का इन्हों ने एकान्ततः दमन कर दिया था। अर्थात्-(दंते) पद की छाया द्वयन्त भी होती है। इस पक्ष में (उन्होंने राग द्वेष इन दोनो का अन्त-विनाश-कर दिया

અને ઈંદ્ર વગેરે પદવીની પ્રાપ્તિરૂપ પરલોકના સુખની અભિલાષારૂપ તીક્ષ્ણ ધારવાળી નિયાણા રૂપી કુહાડીથી છેદી નાખવામા આવે છે તાત્પર્ય એ છે કે નિયાણુ કરવાથી મોક્ષપ્રાપ્તિ દૂર ઠેલાય છે અને જીવને સ સારમા વારવાર પરિભ્રમણ કરવુ પડે છે સ્કન્દક અણુગાર આ પ્રકારના નિયાણાથી રહિત હતા તેઓ આલોક અને પરલોકના સુખની લાલસાથી રહિત હતા (અપ્પુસ્સુએ)કોઇપણ પદાર્થ નુ સેવન કરવાની કે અવલોકન કરવાની ઉત્કંઠાથી તેઓ રહિત હતા અબહિલ્લેસે સ યમ વગેરે અનુષ્ઠાનના પરિપાલનમા અત્યત લીન બની જવાથી એક ક્ષણમાત્ર પણ તેમની ચિત્તવૃત્તિ અસ યમ ભાવ તરફ વળતી ન હતી એટલે કે તેમની મનોવૃત્તિ અસંયમ ભાવ તરફ સ્વપ્નમાં પણ જતી ન હતી ' સુસામણ્ણરએ " તેઓ શુદ્ધ સાધુ ધર્મનુ પાલન કરવામા સદા તત્પર રહેતા હતા. તાત્પર્ય કે પોતાના પ્રાણની પણ પરવા કર્યા વગર તેઓ સાધુધર્મનુ ઉત્કટ રીતે પાલન કરતા હતા.

દંત ક્રોધાદિ કષાયને તેમણે બિલકુલ દમાવી દીધા હતા અથવા- (દંત) પદની છાયા (દ્વયન્ત) પણ થાય છે તેથી એ અર્થ પણ પ્રકટ થઇ શકાય-કે તેમણે રાગદ્વેષ બ નેનો અન્ત નાશ કરી નાખ્યો હતો આ રીતે સાધુના તમામ

त्वात्, यद्वा 'शोभितः' इतिच्छायापक्षे शोभासम्पन्नः त्यागवैराग्यवत्त्वात्, 'अनियाणे' 'अनिदानः–नि=नितरां दीयते=छिद्यते–आत्मभूमिजात–सम्यक्त्वाङ्कुरित–विविध विमलभावनासलिल संवर्द्धित–ध्यानक्रियापल्लविताऽखण्ड तपः सयमाद्यनुष्ठानपुष्पित–मोक्षफल सुभूषिक कुशलकल्पवृक्षो येन=ऐहिक चक्रवर्त्यादि पारलौकिक देवर्द्ध्यादि पदप्राप्तिजन्यविषयसुखाभिलापरूपनिशितधारकुठारेण

में रखने वाले थे। (सोहिए) पद यह प्रकट करता है कि स्कन्दक अनगार अपने महाव्रतों में निर्दोष थे, अतिचारों से रहित थे। अथवा–शोभित थे। अर्थात् त्याग और वैराग्यशाली होने से शोभासम्पन्न थे। (अणियाणे) महाव्रतों की आराधना करते हुए भी उन्हें इसलोक संबंधी या परलोक संबंधी किसी भी प्रकार के सुखों को चाहना नहीं थी। अर्थात् ये निदान बंध रहित थे। (नितरां दीयते छिद्यते) (इति निदानम्) इस व्युत्पत्ति के अनुसार यह निदान, आत्मा रूप भूमि में उत्पन्न हुए कुशल कर्मरूप कल्पवृक्ष को कि सम्यक्त्वरूप अङ्कुर वाला होता है, तथा अनेक प्रकार की निर्मल भावना रूप जल से सिंचित होकर जो आत्मारूप भूमि में वृद्धिगत होता है, ध्यान रूप क्रिया ही जिसके पल्लव होते हैं, अखण्ड तप एवं संयम आदि रूप अनुष्ठानही जिसके जीवन में सुन्दर २ विकासित पुष्प होते हैं, और मोक्ष रूप फल से जो अच्छी तरह से शोभित होता है वह इसलोक संबंधी चक्रवर्ती आदि पद की प्राप्ति जन्य तथा परलोक संबंधी देवआदि पद की प्राप्ति जन्य विषयसुख की अभिलाषारूप निशित–तीक्ष्णधार

રાખવાનું સામર્થ્ય હતુ. (सोहिए) સ્કન્દક અણગાર મહાવ્રતોમાં નિર્દોષ હતા એટલે કે અતિચારોથી રહિત મહાવ્રતોનું પાલન કરનાર હતા. અથવા ત્યાગ અને વૈરાગ્યના ગુણોથી સુશોભિત હતા. (अणियाणे) મહાવ્રતોની આરાધના કરવા છતાં પણ તેઓ આલોક કે પરલોકના સુખની ઇચ્છા વગરના હતા. એટલે કે તેઓ નિયાણાથી રહિત હતા (नितरां दीयते छिद्यते इति निदानम्) નિદાનની આ પ્રમાણે વ્યુત્પત્તિ થાય છે એટલેકે–આત્મારૂપી ભૂમિમાં ઉત્પન્ન થયેલ કુશલ કર્મ રૂપ કલ્પવૃક્ષ કે જે સમ્યકત્વ રૂપ અંકુર વાળું હોય છે, તથા જે અનેક પ્રકારની નિર્મળ ભાવનાઓ રૂપી જળ વડે સિંચિત થઈને આત્મારૂપી ભૂમિમા વૃદ્ધિ પામતું હોય છે તથા ધ્યાનરૂપી ક્રિયા જ જેનાં પાંદડાં છે તથા અખંડ તપ અને સંયમ રૂપ અનુષ્ઠાનો જ જેના સુંદર પુષ્પો હોય છે, અને મોક્ષ રૂપી ફળથી જે અત્યંત શોભાયમાન હોય છે, તેવા કુશલ કર્મરૂપ કલ્પવૃક્ષને, ચક્રવર્તિ વગેરે પદવીની પ્રાપ્તિ રૂપ આલોકના સુખ

तन्निदानम्, तत् अविद्यमानं यस्य स तथा-ऐहिक पारलौकिक सुखलाभसारहित इत्यर्थ । 'अप्पुस्सुए' अल्पौत्सुक्य उत्कण्ठावर्जित । 'अवहिल्लेस' अबहिर्लेश्या अविद्यमानाबहि लेश्या=मनोवृत्तिर्यस्यासौ तथा असयममनोवृत्तिरहित इत्यर्थ । 'सुसामण्णरए' सुश्रामण्यरत -सु=सुष्ठुतया श्रामण्य=श्रमणधर्म रत=तत्पर — शुद्धसाधुधर्मपालक इत्यर्थ । 'दत' दान्त क्रोधादिदमनात्, यद्वा 'इणन्त' इतिच्छायापक्षे इयो=रागद्वेषयो अन्त -विनाशो यत्र स तथा रागद्वेषवर्जित

वाले कुठार से उस कुशल कर्मरूप कल्पवृक्ष को काट देता है। ऐसा यह निदान होता है। इस निदान से-इस लोक सबधी और परलोकस बधी सुख की लालसा से ये रहित थे (अप्पुस्सुए) इनके चित्त में किसी पदार्थ आदि के सेवन करने की या उसके अवलोकन करने की बिलकुल किसी तरह से भी उत्कठा नहीं रही थी। (अबहिल्लेसे) और इनकी मनोवृत्ति सयम आदि अनुष्ठान के परिपालन करने में इतनी एकाग्र बनगइ थी कि वह एक क्षण भी उससे बाहिर नहीं जाती थी अर्थात् असयमभावकी तरह इनकी चित्तवृत्ति स्वप्न में नहीं जाती थी। 'सुसा मण्णरए' ये अच्छी तरह से शुद्ध साधुधर्म के पालन करन में जी जान से तत्पर रहते थे। (दते) क्रोधादिकषाय का उन्हों ने एकान्ततः दमन कर दिया था। अर्थात्-(दते) पद की छाया इयन्त भी होती है। इस पक्ष में (उन्होंने राग द्वेष इन दोनो का अन्त-विनाश-कर दिया

અને ઇંદ્ર વગેરે પદવીની પ્રાપ્તિરૂપ પરલોકના સુખની અભિલાષારૂપ તીક્ષ્ણ ધાર વાળી નિયાણા રૂપી કુહાડીથી છેદી નાખવામા આવે છે તાત્પર્ય એ છે કે નિયાણુ કરવાથી મોક્ષપ્રાપ્તિ દૂર ઠેલાય છે અને જીવને સ સારમાં વારવાર પરિભ્રમણ કરવુ પડે છે સ્કન્દક અણુગાર આ પ્રકારના નિયાણાથી રહિત હતા તેઓ આલોક અને પરલોકના સુખની લાલસાથી રહિત હતા (અપ્પુસ્સુએ) કોઇપણ પદાર્થ નુ સેવન કરવાની કે અવલોકન કરવાની ઉત્કંઠાથી તેઓ રહિત હતા "અબહિલ્લેસે" સયમ વગેરે અનુષ્ઠાનના પરિપાલનમા અત્યત લીન બની જવાથી એક ક્ષણુમાત્ર પણ તેમની ચિત્તવૃત્તિ અસયમ ભાવ તરફ વળતી ન હતી એટલે કે તેમની મનોવૃત્તિ અસયમ ભાવ તરફ સ્વપ્નમાં પણ જતી ન હતી "सुसामण्णरए" તેઓ શુદ્ધ સાધુ ધર્મનુ પાલન કરવામા સદા તત્પર રહેતા હતા. તાત્પર્ય કે પોતાના પ્રાણની પણ પરવા કર્યા વગર તેઓ સાધુધર્મનુ ઉત્કટ રીતે પાલન કરતા હતા

દત ' ક્રોધાદિ કષાયને તેમણે બિલકુલ દમાવી દીધા હતા અથવા- (દંત) પદની છાયા (इयन्त) પણ થાય છે તેથી એ અર્થ પણ ઘટાવી શકાય-કે તેમણે રાગદ્વેષ બ નેના અન્ત નાશ કરી નાખ્યો હતો આ રીતે સાધુના તમામ

इत्यर्थः, स एतादृशः सन् स्कन्दकः 'इणमेव' इदमेव=जिनोक्तमेव 'निग्गथं पाव-यणं' नैर्ग्रंथं प्रवचन 'पुरओ काउं' पुरतः कृत्वा=अग्रे कृत्वा मार्गानभिज्ञो मार्गज्ञ-जनमिव पुरतः कृत्वा प्रधानीकृत्य 'विहरइ' विहरति तिष्ठतीति ॥ सू० १३ ॥

स्कन्दकस्य दीक्षाग्रहणानन्तरं भगवतो जिनपदविहरणं स्कन्दकस्य तपश्च-रणादिकञ्च दर्शयन्नाह 'तएणं समणे इत्यादि।

मूलम्—तएणं समणे भगवं महावीरे कयंगलाओ नयरीओ छत्तपलासयाओ चेइयाओ पडिनिक्खमइ पडिनिक्खमित्ता बहिया जणवयविहारं विहरइ तएणं से खंदए अणगारे समणस्स भगवओ महावीरस्स तहारुवाणं थेराणं अंतिए सामाइय माइयाइं अंगाइं अहिज्जइ अहिज्जित्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी इच्छामि णं भंते तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे मासियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए अहासुहं देवाणुप्पिया मा पडिबंधं करेह तएणं से खंदए अणगारे समणेणं भगवया महावीरेणं अब्भणुन्नाए समाणे हट्ठे जाव नमंसित्ता मासियं भिक्खुपडिमं उपसंप-ज्जित्ताणं विहरइ। तएणं से खंदए अणगारे मासियं भिक्खु

था। ऐसा अर्थ होता है। इस प्रकार की स्थिति सम्पन्न बने हुए वे स्कन्दक अनगार (इणमेव) इस जिनोक्त ही 'णिग्गथं पावयणं) नैर्ग्रं-न्थ प्रवचन को 'पुरओ काउं' मार्ग को नहीं जानने वाले को आगे कर के चलता है उसी प्रकार ये स्कन्दक अनगार (विहरइ) भगवान के साथ निर्ग्रन्थ प्रवचन को आगे कर के विचरने लगे ॥ सू० १३ ॥

ગુણોથી યુકત બનેલા હોવાથી સ્કન્દક અણુગાર "इणमेव" જિનોકત "णिग्गंथं पावयण पुरओ काउ विहरइ" (જેવી રીતે માર્ગથી અજાણ વ્યકિત માર્ગ જાણનારને આગળ રાખીને તેની પાછળ જાય છે તેવી રીતે નિર્ગ્રંથ પ્રવચનને આગળ કરીને (નિર્ગ્રંથ પ્રવચનને) અનુસરીને ભગવાનની સાથે વિચરવા લાગ્યા. ॥ સૂ ૧૩ ॥

पडिम अहासुत्त अहाकप्प अहामग्गं अहातच्च अहासम्म काएण फासेइ पालेइ सोहेइ तीरेइ पुरेइ किट्टेइ अणुपालेइ आणाए आराहेइ। सम्म काएण फासित्ता जाव आराहेत्ता जेणेव समणे भगव महावीरे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता समण भगव महावीर वदइ नमसइ वदित्ता नमसित्ता एव वयासी इच्छामि णं भते। तुब्भे हिं अब्भणुन्नाए समाणे दोमासिय भिक्खुपडिम उवसपज्जित्ताण विहरित्तए। अहासुह देवाणुप्पिया! मा पडिबध करेह त चेव। एव ते मासिय चउम्मासिय। पचमासिय। छम्मासिय। सत्तमासिय। पढम सत्तराइदिय दोच्च सत्तराइदिय। तच्च सत्तराइदिय। अहोराइदिय। एगराइय। तएण से खदए अणगारे एगराइय भिक्खुपडिम अहासुत्त जाव आराहेत्ता जेणेव समणे भगव महावीरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता समणं भगव महावीर वदइ नमसइ वदित्ता नमसित्ता एव वयासी–इच्छामि णं भते! तुब्भेहिं अब्भणुन्नाए समाणे गुणरयण सवच्छर तवो कम्म उवसपज्जित्ताण विहरित्तए, अहासुह देवाणुप्पिया! मा पडिबध करेह। तएण से खदए अणगारे समणेणं भगवया महावीरेण अब्भणुन्नाए समाणे गुणरयणसवच्छर तवोकम्म उवसपज्जित्ताण विहरइ। त जहा–पढमं मास चउत्थं चउत्थे णं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं दिया ठाणुक्कुडुए सूराभिमुहे आयावणभूमीए आयावेमाणे रत्तिं वीरासणेण अवाउडेणय। एव दोच्च मास छट्ठ छट्ठेण अणिक्खित्तेणं दिया ठाणुक्कुडुए

सूराभिमुहे आयावणभूमीए आयावेमाणे रत्तिं वीरासणेणं अवाउडेण य। एवं तच्चं मासं अट्ठमं अट्ठमेणं। चउत्थं मासं दसमं दसमेणं। पंचमं मासं बारसमं बारसमेणं। छट्ठं मासं चउद्दसमं चउद्दसमेणं। सत्तमं मासं सोलसमं सोलसमेणं)। अट्ठमं मासं अट्ठारसमं अट्ठारसमेणं। नवमं मासं वीसइमं वीसइमेणं। दसमं मासं बावीसइमं बावीसइमेणं। एक्कारसमं मासं चउवीसइमं चउवीसइमेणं। बारसमं मासं छव्वीसइमं छव्वीसइमेणं तेरसमं मासं अट्ठावीसइमेणं अट्ठावीसइमेणं। चउद्दसमं मासं तीसइमं तीसइमेणं। पण्णरसमं मासं बत्तीसइमं बत्तीसइमेणं सोलसं मासं चोत्तीसइमं चोत्तीसइमेणं। अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं दिया ठाणुक्कुडिए सूराभिमुहे आयावणभूमीए आयावेमाणे रत्तिं वीरासणेणं आवाउडेणं, तएणं से खंदए अणगारे गुणरयणसंवच्छरं तवोकम्मं अहासुत्तं, अहाकप्पं जाव आराहेत्ता, जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं वंदइ, नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता बहूहिं चउत्थछट्ठट्ठमदसमदुवालसेहिं मासद्धमासखमणेहिं विचित्तेहिं तवो कम्मेहिं अप्पाणं भावे माणे विहरइ। तएणं से खंदए अणगारे तेणं उरालेणं, विउलेणं, पयत्तेणं, पग्गहिएणं, कल्लाणेणं, सिवेणं, धन्नेणं मंगल्लेणं, सस्सिरिएणं, उदग्गेणं, उदत्तेणं, उत्तमेणं, उदारेणं, महाणुभागेणं, तवोकम्मेणं सुक्के, लुक्खे, निम्मंसे, अट्ठिचम्मावणद्धे किडिकिडियाभूए, किसे धमणिसंतए जाए यावि होत्था। जीवं जीवेण गच्छइ। जीवं

जीवेण चिट्ठइ । भास भासित्ता गिलाइ, भास भासमाणे गिलाइ, भास भासिस्सामीति गिलाइ । से जहानामए कट्ठसगडियाइवा पत्तसगडियाइवा, तिलसगडियाइवा मंडगसगडियाइवा, एरंडकट्ठसगडियाइवा, इंगालसगडियाइवा० उण्हे दिण्णा सुक्का समाणी ससदं गच्छइ, ससदं चिट्ठइ एवामेव खंदए वि अणगारे ससदं गच्छइ, ससदं चिट्ठइ, उवचिए तवेणं अवचिए मंससोणिएणं हुयासणे विव भासरासिपडिच्छण्णे तवेणं, तेएणं, तवतेयसिरीए अईव अईव उवसोभेमाणे चिट्ठइ॥१४॥

छाया—ततः खलु श्रमणो भगवान् महावीरः कृतंगलातो नगरीतः छत्रपलाशकचैत्यात् प्रतिनिष्क्रामति, प्रतिनिष्क्रम्य बहिर्जनपदविहारं विहरति । ततः खलु स स्कन्दकोऽनगारः श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य तथारूपाणां स्थविराणां

स्कन्दक की दीक्षा हो जाने के बाद भगवान बाहर जनपद में विहार किया और स्कन्दक ने तपश्चरण आदि कार्य किये, इस बात को प्रदर्शित करने के लिये सूत्रकार कहते हैं-'तएणं समणे भगवं महावीरे' इत्यादि

सूत्रार्थ–(तएणं समणे भगवं महावीरे) इसके बाद श्रमण भगवान् महावीर (कयंगलाओ नयरीओ) कृतंगला नगरी से (छत्तपलासयाओ चेइयाओ) छत्रपलाशक चैत्य से (पडिनिक्खमइ) निकले (पडिनिक्खमित्ता) निकलकर (बहिया जणवयविहारं विहरइ) वे जनपद में विहार

સ્કન્દકની દીક્ષા થઈ ગયા પછી ભગવાન મહાવીરે દેશ વિદેશમાં વિહાર શરૂ કર્યો અને સ્કન્દકે તપસ્યા કરવા માંડી એ વાત સૂત્રકાર નીચેના સૂત્ર વડે બતાવે છે-'त एणं समणे भगवं महावीरे' ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—(तएणं समणे भगवं महावीरे) ત્યાર બાદ શ્રમણ ભગવાન મહાવીર (कयंगलाओ नयरीओ) કૃતંગલા નગરીના (छत्तपलासयाओ चेइयाओ) છત્રપલાશક નામના ચૈત્યમાંથી (ઉદ્યાન માંથી) (पडिनिक्खमइ) બહાર નીકળ્યા (વિહાર કર્યો) (पडिनिक्खमित्ता) ત્યાંથી નીકળીને (बहिया जणवयविहारं विहरइ) તેઓ જનપદમાં વિહાર કરવા લાગ્યા (तएणं से खंदए अणगारे)

मन्तिके सामायिकादीनि एकादशांगानि अधीते अधीत्य यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीरस्तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमवादीत् इच्छामि खलु भदंत ! युष्माभिरभ्यनुज्ञातः सन् मासिकीं भिक्षुप्रतिमामुपसंपद्य विहर्तुम्। यथासुखं देवानुप्रिय ! मा प्रतिबन्धं

करने लगे। (तएणं से खंदए अणगारे) इसके पश्चात् वे स्कन्दक अनगार (समणस्स भगवओ महावीरस्स) श्रमण भगवान् महावीर के (तहारूवाणं थेराणं अंतिए) तथारूप स्थविरों के पास (सामाइयमाइयाइं एक्कारसअंगाइं अहिज्जइ) सामायिक आदि ग्यारह अङ्गों का अध्ययन करने लगे। (अहिज्जित्ता) अध्ययन कर के फिर वे (जेणेव समणे भगवं महाविरे तेणेव उवागच्छइ) जहां श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे वहां आये (उवागच्छित्ता) आ करके (समणं भगवं महावीरं वंदइ नमसइ) उनने श्रमण भगवान् महावीर को वंदना की और नमस्कार किया (वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी) वंदना नमस्कार करके वे उनसे इस प्रकार कहने लगे (इच्छामि णं भंते ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे मासियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ता णं विहरित्तए) हे भदन्त ! जो आप आज्ञा प्रदान करें तो मैं मासिक भिक्षु प्रतिमा को स्वीकार करके-विचरूं। (अहासुहं देवाणुप्पिया) भगवान महावीरने तब उनसे कहा हे देवानुप्रिय ! तुम्हें जिस प्रकार से सुख हो वैसा करो। (मा पडिबंधं करेह) विलम्ब मत करो।

ત્યારે સ્કન્દક અણુગારે (समणस्स भगवओ महावीरस्स) શ્રમણુ ભગવાન મહાવીરના (तहारूवाण थेराणं अंतिए) તથા પ્રકારના સ્થવિરોની પાસે (सामाइयमाइयाइं एक्कारसअंगाइं अहिज्जइ) સામાયિક વગેરે અગિયાર અંગોનુ અધ્યયન કર્યું (अहिज्जित्ता) અધ્યયન કરીને (जेणेव समण भगव महावीरे तेणेव उवागच्छइ) જ્યાં શ્રમણુ ભગવાન મહાવીર બિરાજતા હતા ત્યાં ગયા. (उवागच्छित्ता) ત્યાં જઈને (समण भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ) તેમણે શ્રમણુ ભગવાન મહાવીરને વંદન નમસ્કાર કર્યાં (वंदित्ता नमंसित्ता-एव वयासी) વંદન નમસ્કાર કરીને તેમણે ભગવાનને આ પ્રમાણે કહ્યું (इच्छामि णं भंते ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे मासियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ता ण विहरित्तए) હે ભગવન્ ! જો આપની આજ્ઞા હોય તો મહિનાની ભિક્ષુપ્રતિમા અંગીકાર કરીને વિચરવાની મારી ઈચ્છા છે (अहासुहं देवाणुप्पिया) ત્યારે મહાવીર ભગવાને તેમને કહ્યુ તમને જેમ સુખ ઉપજે તેમ

कृत्य। ततः खलु स स्कन्दकोऽनगारो मासिकीं भिक्षुप्रतिमां यथा सूत्रं यथाकल्पं यथामार्गं यथा तथ्यं यथा सम्यक् कायेन स्पर्शयति पालयति, शोधयति तीरयति पूरयति कीर्तयति अनुपालयति, आज्ञया आराधयति, सम्यक् कायेन स्पर्शयित्वा यावदाराध्य यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीरस्तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य श्रमणं

(तएणं से खंदए अणगारे समणेणं भगवया महावीरेणं अब्भणुन्नाए समाणे हट्ठे जाव नमंसित्ता मासियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ) इसके बाद उन स्कन्दक अनगार ने श्रमण भगवान श्री महावीर स्वामी से आज्ञा लेकर मासिक भिक्षुप्रतिमा को धारण किया। (तएणं से खंदए अणगारे मासियं भिक्खुपडिमं अहासुत्तं अहाकप्पं, अहामग्गं, अहातच्चं, अहासम्मं काएण फासेइ) इसके बाद उन स्कन्दक अनगार ने उस मासिक भिक्षुप्रतिमा का सूत्र के अनुसार, कल्प के अनुसार, मार्ग के अनुसार, सत्यता पूर्वक बहुत ही अच्छी तरह काय से स्पर्श-आचरण किया (पालेइ) उसका पालन किया (सोहेइ) उसे शोधित किया (तीरेइ, पूरेइ किट्टेइ, अणुपालेइ, आणाए आराहेइ) उसे समाप्त किया, उसे पूर्ण किया, उसका कीर्तन किया, अनुपालन किया और आज्ञा के अनुसार उसे आराधित किया। (सम्मं काएण फासित्ता जाव आराहेत्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ) अच्छी तरह काय से स्पर्श-आचरण कर यावत् उसे आराधित कर फिर वे जहां श्रमण

કરે। (મા પડિબંધ કરેહ) પરંતુ વિલમ્બ કરશો નહીં (तएणं से खंदए अणगारे समणेणं भगवया महावीरेणं अब्भणुन्नाए समाणे हट्ठे जाव नमंसित्ता मासियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ) ત્યારબાદ સ્કન્દક અણગારે ભગવાન મહાવીરની આજ્ઞા લઈને માસિક ભિક્ષુપ્રતિમા અંગીકાર કરી અને પ્રભુને વંદન નમસ્કાર કરીને વિચરવા લાગ્યા (तएणं से खंदए अणगारे मासियं भिक्खुपडिमं अहासुत्तं, अहाकप्पं अहामग्गं अहातच्चं, अहासम्मं काएण फासेइ) ત્યારબાદ તે સ્કંદક અણગારે માસિક ભિક્ષુપ્રતિમાનું સૂત્રાનુસાર, કલ્પાનુસાર, માર્ગાનુસાર અને સત્યતાપૂર્વક ઘણી જ સારી રીતે કાયાથી આરાધન કર્યું, " पालेइ " તેનું પાલન કર્યું (सोहेइ) શોધન કર્યું, (तीरेइ पूरेइ किट्टेइ अणुपालेइ आणाए आराहेइ) તેને સમાપ્ત કર્યું તેને પૂર્ણ કર્યું, તેનું કીર્તન કર્યું તેનું અનુપાલન કર્યું અને આજ્ઞાનુસાર તેની આરાધના કરી. (सम्मं काएण फासित्ता जाव आराहेत्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ) ત્યાર બાદ માસિક ભિક્ષુપ્રતિમાનું કાયાથી સારી રીતે આચરણ કરીને યાવત્ ઉપરોક્ત આરાધના સુધીની વિધિ પૂરી કરીને

मन्तिके सामायिकादीनि एकादशांगानि अधीते अधीत्य यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीरस्तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमवादीत् इच्छामि खलु भदंत ! युष्माभिरभ्यनुज्ञातः सन् मासिकीं भिक्षुप्रतिमामुपसंपद्य विहर्तुम्। यथासुखं देवानुप्रिय ! मा प्रतिबन्धं

करने लगे। (तएणं से खंदए अणगारे) इसके पश्चात् वे स्कन्दक अनगार (समणस्स भगवओ महावीरस्स) श्रमण भगवान् महावीर के (तहारूवाणं थेराणं अंतिए) तथारूप स्थविरों के पास (सामाइय-माइयाइं एक्कारसअंगाइं अहिज्जइ) सामायिक आदि ग्यारह अङ्गों का अध्ययन करने लगे। (अहिज्जित्ता) अध्ययन कर के फिर वे (जेणेव समणे भगवं महाविरे तेणेव उवागच्छइ) जहां श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे वहां आये (उवागच्छित्ता) आ करके (समणं भगवं महावीरं वंदइ नमसइ) उनने श्रमण भगवान् महावीर को वंदना की और नमस्कार किया (वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी) वंदना नमस्कार करके वे उनसे इस प्रकार कहने लगे (इच्छामि णं भंते! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे मासियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ता णं विहरित्तए) हे भदन्त! जो आप आज्ञा प्रदान करें तो मैं मासिक भिक्षु प्रतिमा को स्वीकार करके-विचरूं। (अहासुहं देवाणुप्पिया) भगवान महावीरने तब उनसे कहा हे देवानुप्रिय! तुम्हें जिस प्रकार से सुख हो वैसा करो। (मा पडिबंधं करेह) विलम्ब मत करो।

त्यारे સ્કન્દક અણુગારે (समणस्स भगवओ महावीरस्स) શ્રમણ ભગવાન મહાવીરના (तहारूवाणं थेराणं अंतिए) તથા પ્રકારના સ્થવિરોની પાસે (सामाइयमाइयाइं एक्कारसअंगाइं अहिज्जइ) સામાયિક વગેરે અગિયાર અંગોનું અધ્યયન કર્યું (अहिज्जित्ता) અધ્યયન કરીને (जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ) જ્યાં શ્રમણ ભગવાન મહાવીર બિરાજતા હતા ત્યાં ગયા. (उवागच्छित्ता) ત્યાં જઈને (समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ) તેમણે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને વંદન નમસ્કાર કર્યાં (वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी) વંદન નમસ્કાર કરીને તેમણે ભગવાનને આ પ્રમાણે કહ્યું (इच्छामि णं भंते! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे मासियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ता णं विहरित्तए) હે ભગવન્! જો આપની આજ્ઞા હોય તો મહિનાની ભિક્ષુપ્રતિમા અંગીકાર કરીને વિચરવાની મારી ઈચ્છા છે (अहासुहं देवाणुप्पिया) ત્યારે મહાવીર ભગવાને તેમને કહ્યું. તમને જેમ સુખ ઉપજે તેમ

रात्रि दिवां, तृतीयां सप्तरात्रि 'दिवां, अहोरात्रि दिवां, एकरात्रिकीम्। ततः खलु स स्कन्दकोऽनगार एकरात्रिकीं भिक्षुप्रतिमां यथासूत्रं यावदाराध्य यत्रैव श्रमणो भगवान महावीरस्तत्रैवोपागच्छति उपागत्य श्रमण भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमवादीत्, इच्छामि खलु भदंत, युष्माभिरभ्यनुज्ञातः सन् गुणरत्न संवत्सरं तपःकर्मोपसंपद्य विहर्तुम्। यथासुखं देवा

(दोच्चं सत्तराइ दियं) दूसरी अर्थात नौवीं सात दिनरात की (तच्चं सत्तराइदियं) तीसरी अर्थात्-दसवीं सात रात दिन की (अहोराइंदियं) चौथी अर्थात् ग्यारहवीं एक अहोरात्रकी (एगराइय) पांचवी अर्थात् बारहवीं एक रात की, इस प्रकार इन बारह भिक्षुप्रतिमाओंका उन स्कन्दक अनगार ने आराधन किया। (तएणं से खंदए अणगारे) इसके बाद वे स्कन्दक अनगार (एगराइय भिक्खुपडिम अहासुत्तं जाव आराहेत्ता) एक रातवाली बारहवीं भिक्षुप्रतिमा की यथासूत्र यावत् आराधना करके (जेणेव समणे भगव महावीरे तेणेव उवागच्छइ) जहां श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे वहां आये। (उवागच्छित्ता) वहां आकर उन्होंने (समणं भगवं महावीरं वंदइ नमसइ) श्रमण भगवान महावीर को वंदना की नमस्कार किया (वंदित्ता नमंसित्ता) वंदना नमस्कार करके (एवं वयासी) ऐसा कहा। (इच्छामि णं भंते!) तुब्भेहिं-अब्भणुण्णाए समाणे गुणरयण संवच्छरं तवोकम्मं उवसंपज्जित्ता

પહેલી-એટલે કે આઠમી સાત રાત્રિદિવસની, 'दोच्चं सत्तराइ दियं' બીજી એટલે કે નવમી સાત દિવસ રાતની 'तच्चं सत्तराइ दियं' ત્રીજી એટલે કે દસમી સાત રાત્રિ દિવસની 'अहोराइ दियं' ચોથી-એટલે કે અગિયારમી એક દિવસ રાત્રિની, 'एगराइय' પાંચમી એટલે કે બારમી એક રાત્રિની, આ પ્રમાણે બારે ભિક્ષુ પ્રતિમાનું આરાધન કર્યું 'तएणं से खंदए अणगारे एगराइयं भिक्खुपडिमं अहासुत्तं जाव आराहेत्ता' ત્યાર બાદ એક રાત્રિની બારમી ભિક્ષુપ્રતિમાનું સૂત્રાનુસાર આરાધન કરીને સ્કંદક અણગાર 'जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ' જ્યાં શ્રમણ ભગવાન મહાવીર બિરાજમાન હતા ત્યાં આવ્યા 'उवागच्छित्ता' ત્યાં આવીને તેમણે 'समणं भगवं महावीरं वंदइ नमसइ' શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને વંદન નમસ્કાર કર્યા 'वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी' વંદન નમસ્કાર કરીને તેમણે મહાવીર પ્રભુને આ પ્રમાણે કહ્યું-(इच्छामि णं भंते! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे गुणरयणं संवच्छरं तवोकम्मं उवसंपज्जित्ता णं विहरित्तए) હે ભગવાન્! જો આપ

भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमादीत्, इच्छामि खलु भदंत ! युष्माभिरनुज्ञातः सन् द्वैमासिकीं भिक्षुप्रतिमामुपसंपद्य विहर्तुम्। यथासुखं देवानुप्रिय ! मा प्रतिबन्धं कुरु तदेव, एवं त्रैमासिकीं, चातुर्मासिकीं, पंचमासिकीं, षण्मासिकीं, सप्तमासिकीम् , प्रथमां सप्तरात्रि दिवां, द्वितीयां सप्त

भगवान महावीर विराजमान थे वहां आये (उवागच्छित्ता) वहां आ कर के (समणं भगवं महावीरं जाव नमंसित्ता एवं वयासी) उन्हों ने श्रमण भगवान महावीर को यावत् नमस्कार करके उनसे इस प्रकार कहा—(इच्छामि णं भंते ! तुब्भे हिं अब्भणुण्णाए समाणे दो मासियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ता णं विहरित्तए) हे भदन्त ! जो आप आज्ञा प्रदान करें तो मैं द्विमासिक भिक्षुप्रतिमा को धारण करने की इच्छा करता हूं। (अहासुहं देवाणुप्पिया मा पडिबंधं करेह) हे देवानुप्रिय ! तुम्हें जैसे सुख हो वैसा करो विलम्ब मत करो। (तं चेव एवं ते मासियं) इसके बाद उन स्कन्दक अनगार ने द्विमासिक भिक्षुप्रतिमा को भगवान से आज्ञा प्राप्त कर इत्यादि समस्त कथन यहां पहिली भिक्षुप्रतिमा के विषय में जैसा कहा गया है वैसा अक्षरशः समझ लेना चाहिये। इसी तरह से त्रिमासिक (चउम्मासियं) चतुर्मासिक (पंचमासियं) पंचमासिक (छम्मासियं) छहमासिक (सत्तमासियं) सप्तमासिक तथा (पढमं सत्तराइं दियं) प्रथम अर्थात् आठवीं सात रात्रि दिवस की

તેઓ જ્યાં શ્રમણ ભગવાન મહાવીર બિરાજમાન હતા ત્યા આવ્યા- (उवागच्छित्ता) ત્યાં આવીને " समण भगवं महावीरं जाव नमंसित्ता एवं वयासी " શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને વિધિ પૂર્વક વંદન નમસ્કાર કરીને આ પ્રમાણે કહ્યુ-" इच्छामि णं भंते ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे दो मासियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ता णं विहरित्तए " હે ભગવન્ ! જો આપની આજ્ઞા હોય તો હું દ્વિમાસિક (બે માસની) ભિક્ષુપ્રતિમા અંગીકાર કરવાની ઇચ્છા રાખુ છુ. " अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं करेह " હે દેવાનુપ્રિય ! તમને સુખ ઉપજે તેમ કરો પરંતુ આવા શુભ કાર્યમાં વિલંબ કરશો નહીં. " तं चेव एवं तेमासियं " ત્યાર બાદ ભગવાનની આજ્ઞા લઇને સ્કન્દક અણગારે દ્વિમાસિક ભિક્ષુપ્રતિમા અંગીકાર કરી. માસિક ભિક્ષુ પ્રતિમાના પાલનમાં જે વર્ણન ઉપર કરવામાં આવ્યું છે તેવું વર્ણન દ્વિમાસિક ભિક્ષુ પ્રતિમાના પાલનમાં પણ અક્ષરશઃ સમજી લેવું એજ રીતે સ્કન્દક અણગારે ત્રિમાસિક " चउम्मासियं " ચાર માસિક, पंचमासियं પાંચ માસિક " छम्मासियं " છમાસિક " सत्तमासियं " સાત માસિક, તથા " पढमं सत्तराइं दियं "

रात्रिं दिवां, तृतीयां सप्तरात्रिं दिवां, अहोरात्रिं दिवां, एकरात्रिकीम्। तत खलु स स्कन्दकोऽनगार एकरात्रिकीं भिक्षुप्रतिमा यथासूत्रं यावदाराध्य यत्रैव श्रमणो भगवान महावीरस्तत्रैवोपागच्छति उपागत्य श्रमण भगवन्त महावीरं वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमवादीत्, इच्छामि खलु भदन्त, युष्माभिरभ्यनुज्ञात सन् गुणरत्न संवत्सर तप कर्मविशेषम विहर्तुम्। यथासुखं देवा

(दोच्चं सत्तराइ दियं) दूसरी अर्थात नौवीं सात दिनरात की (तच्चं सत्तराइदियं) तीसरी अर्थात्-दसवीं सात रात दिन की (अहोराइदियं) चौथी अर्थात् ग्यारहवीं एक अहोरात्रकी (एगराइय) पांचवी अर्थात् बारहवीं एक रात की, इस प्रकार इन बारह भिक्षुप्रतिमाओंका उन स्कन्दक अनगार ने आराधन किया। (तएणं से खंदए अणगारे) इसके बाद वे स्कन्दक अनगार (एगराइय भिक्खुपडिम अहासुत्त जाव आराहेत्ता) एक रातवाली बारहवीं भिक्षुप्रतिमा की यथासूत्र यावत् आराधना करके (जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ) जहां श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे वहां आये। (उवागच्छित्ता) वहां आकर उन्होंने (समणं भगव महावीरं वदइ नमसइ) श्रमण भगवान महावीर को वंदना की नमस्कार किया (वंदित्ता नमंसित्ता) वंदना नमस्कार करके (एवं वयासी) ऐसा कहा (इच्छामि णं भंते।) तुब्भेहिं-अब्भणुण्णाए समाणे गुणरयण संवच्छरं तवोकम्मं उवसंपज्जि

પહેલી-એટલે કે આઠમી સાત રાત્રિદિવસની ' दोच्चं सत्तराइ दियं " બીજી એટલે કે નવમી સાત દિવસ રાતની, तच्चं सत्तराइ दियं ' ત્રીજી એટલે કે દસમી સાત રાત્રિ દિવસની ' अहोराइ दियं " ચોથી-એટલે કે અગિયારમી એક દિવસ રાત્રિની ' एगराइय ' પાંચમી એટલે કે બારમી એક રાત્રિની, આ પ્રમાણે બારે ભિક્ષુ પ્રતિમાનું આરાધન કર્યું ' तएणं से खंदए अणगारे एगराइयं भिक्खुपडिमं अहासुत्तं जाव आराहेत्ता " ત્યાર બાદ એક રાત્રિની બારમી ભિક્ષુપ્રતિમાનું સૂત્રાનુસાર આરાધન કરીને સ્કંદક અણગાર " जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ જ્યાં શ્રમણ ભગવાન મહાવીર બિરાજમાન હતા ત્યાં આવ્યા उवागच्छित्ता ' ત્યાં આવીને તેમણે " समणं भगवं महावीरं वंदइ नमसइ શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને વંદન નમસ્કાર કર્યા वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी વંદન નમસ્કાર કરીને તેમણે મહાવીર પ્રભુને આ પ્રમાણે કહ્યું-(इच्छामि णं भंते ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे गुणरयण संवच्छरं तवोकम्मं उवसंपज्जित्ता णं विहरित्तए) હે ભગવાન્! આપ

नुप्रिय मा प्रतिबन्धं कुरु, ततः खलु स स्कन्दकोऽनगारः श्रमणेन भगवता महावीरेण अभ्यनुज्ञातः सन् गुणरत्नसंवत्सरं तपःकर्मोपसंपद्य विहरति तद्यथा प्रथमं मासं चतुर्थचतुर्थेनानिक्षिप्तेन तपः० कर्मणा दिवा स्थानोत्कुटुकः सूर्याभिमुखः आतापनभूमौ आतापयन्, रात्रि वीरासनेनाप्रावृतश्च। एवं द्वितीयं मासं

ता णं विहरित्तए) हे भदन्त ! मैं चाहता हूं कि आप से आज्ञा प्राप्त कर मैं गुण रत्न संवत्सर नामक तप धारण करूं। प्रभुने कहा (अहासुहं देवाणुप्पिया) हे देवानुप्रिय ! तुम्हे जैसा सुख हो वैसा करो। (मा पडिबंधं करेह) इस शुभकार्य में विलम्ब मत करो। (तएणं से खंदए अनगारे समणेणं भगवया महावीरेणं अब्भणुण्णाए समाणे गुणरयणं संवच्छरं तवोकम्मं उवसंपज्जित्ता णं विहरइ) इस प्रकार से श्रमण भगवान महावीर प्रभु की आज्ञा प्राप्त कर उन स्कन्दक अनगार ने गुणरत्न संवत्सर नामक तप धारण किया। (तं जहा) इस तप की विधि इस प्रकार से है-(पढमं मासं चउत्थं चउत्थेणं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं दिया ठाणुक्कुडुए सूराभिमुहे, आयावणभूमीए आयावेमाणे रत्तिं वीरासणेणं अवाउडेण य) पहिले मास में निरन्तर व्यवधान रहित एकान्तर उपवास करे तथा दिवस में उकडा आसन से बैठे और सूर्यकी तरफ मुंह करके आतापना भूमि में आतापना लेवे। तथा रात्रि

આજ્ઞા આપો તો હવે ગુણરત્ન સંવત્સર નામનું તપ કરવાની મારી ઇચ્છા છે ભગવાને કહ્યુ-(अहासुहं देवाणुप्पिया) હે દેવાનુપ્રિય! આપને સુખ ઉપજે તેમ કરો (मा पडिबंधं करेह) પરંતુ શુભકાર્યમાં વિલમ્બ કરવો નહીં (तएणं से खंदए अणगारे समणेणं भगवया महावीरेणं अब्भणुण्णाए समाणे-गुणरयणं संवच्छरं तवोकम्मं उवसंपज्जित्ता णं विहरइ) આ રીતે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરની આજ્ઞા લઇને સ્કન્દક અણગારે ગુણરત્ન સંવત્સર તપની આરાધના કરવા માંડી (तं जहा) તે તપની વિધિ આ પ્રમાણે છે-(पढमं मासं चउत्थं चउत्थेणं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं दिया ठाणुक्कुडुए सूराभिमुहे, आयावणभूमीए आयावेमाणे रत्तिं वीरासणेणं अवाउडेण य) પહેલા મહિનામાં નિરંતર (એક પણ દિવસ છોડયા સિવાય) એકાન્તર ઉપવાસ કરવા દિવસે ઉભડક આસને બેસીને, સૂર્યની તરફ મુખ રાખીને તડકાવાળી જમીનમાં આતાપના લેવી તાપ સહન કરવો અને રાત્રે વસ્ત્ર ઓઢયા વિના વીરાસને બેસવું. (एवं दोच्चं मासं छट्टं छट्टेणं अणिक्खित्तेणं दिया ठाणुक्कुडुए सूराभिमुहे

षष्ठषष्ठेनानिक्षिप्तेन दिवास्थानोत्कुटुकः सूर्याभिमुख आतापनभूमौ आतापयन् रात्रि वीरासनेना प्रावृतश्च । एवं तृतीय मासमष्टमाष्टमेन । चतुर्थं मासं दशम दशमेन । पंचम मास द्वादशद्वादशेन । षष्ठं मास चतुर्दशचतुर्दशेन । सप्तमं

में वस्त्र ओढे बिना वीरासन करे । (एवं दोच्चं मास छट्ठ छट्ठेणं अणिक्खित्तेण दिया ठाणुक्कुडए सूराभिमुहे आयावणभूमीए आयावेह रत्तिं वीरासणेण अवाउडेण य) इसी प्रकार से दूसरे महीने में निरन्तर दो दो उपवास-बेले बेले पारणा करें । दिन में उत्कुटासन करे सूर्य के सामने आतापन भूमि में आतापना लेवे । एवं रात्रि में वस्त्र ओढे बिना वीरासन करें । (एवं तच्चं मासं) अट्ठम अट्ठमेण, चउत्थं मास दसम दसमेण, पंचम मासं बारसमं-बारसमेण, छट्ठ मास चउद्दसम-चउद्दसमेण, सत्तमं मास सोलसमं-सोलसमेण) इसी तरह से तीसरा महिना भी व्यतीत करना चाहिये अर्थात् जैसे प्रथममास और द्वितीयमास के दिन और रात्रि में रहने की विधि कही गई है उसी प्रकार की विधिपूर्वक इस मास में रहना चाहिये परन्तु इस तीसरे मास में निरन्तर अट्ठम की तीन उपवास करने की तपस्या करे। चतुर्थमास में और सबविधि पहिले की तरह से जाननी चाहिये परन्तु उपवास चार चार करें। पांचवें मासमें और सब विधी पहिले जैसी ही है परन्तु उपवास पांच पांच करें। छठवें महिना में भी और सब विधि पहिले जैसी ही जाननी चाहीये परन्तु उपवास छह-छह करें। सातवें महिना में भी दिन रातको सब विधि पहिले जैसी ही है

आयावणभूमीए आयावेइ रत्तिं वीरासणेणं अवाउडेण य) એજ પ્રમાણે બીજા મહિનામાં નિરંતર છટ્ઠને પારણે છઠ્ઠ કરે દિવસે ઉત્કટ આસને સૂર્યની તરફ મુખ રાખીને તડકો વેઠે અને રાત્રે ઓઢયા વિના વીરાસન કરે (एवं तच्चं मास अट्ठमेण चउत्थं मास दसमं दसमेण, पचम मास बारसम बारसमेण, छट्ठ मास चउद्दसम चउद्दसमेण, सत्तम मास सोलसम-सोलसमेण) ત્રીજા મહિનામાં નિરંતર અટ્ઠમ (ત્રણ ઉપવાસને) પારણે અટ્ઠમ કરવા જોઈએ. અને બાકીની તમામ વિધિ પહેલા અને બીજા માસની વિધિ પ્રમાણે જ સમજવી ચોથા મહિનામાં નિરંતર ચાર ઉપવાસને પારણે ચાર ઉપવાસ કરવા જોઈએ અને બાકીની વિધિ પહેલા માસ પ્રમાણે જ સમજવી. પાંચમે મહિને પાંચ ઉપવાસને પારણે પાંચ ઉપવાસ કરવા અને બાકીની સઘળી વિધિ આગળ પ્રમાણે જ સમજવી છઠ્ઠે મહિને ૭ ઉપવાને પારણે ૭ ઉપવાસ કરવા અને બાકીની તમામ વિધિ પહેલા માસ પ્રમાણે જ સમજવી સાતમે મહિને સાત ઉપવાસને પારણે સાત ઉપવાસ કરવા, દિવસ અને રાત્રે કરવાની બીજી વિધિ

मासं षोडशषोडशेन। अष्टमं मासमष्टादशाष्टादशेन। नवमं मास विंशतितम विंशतितमेन। दशमं मासं द्वाविंशतितमद्वाविंशतितमेन। एकादशं मासं चतुर्विंशतितमचतुर्विंशतितममेन। द्वादशं मासं षड्विंशतितमषड्विंशतितमेन। त्रयोदश मासम् अष्टाविंशतितमाष्टाविंशतितमेन। चतुर्दशतम मास त्रिंशत्तमत्रिंशत्त-

---

परन्तु उपवास सात-सात करे। (अट्ठमं मास अट्ठारसमं अट्ठारसमेणं) आठवें मास में भी और सब विधि पहिले जैसी ही है-परन्तु यहां उपवास आठ-आठ करे। (नवमं मासं वीसइमं वीसइमेण) नौमे महिने में भी विधि और सब पहिले जैसी ही है परन्तु उपवास इस में नौ-नौ करे। (दसमं मासं बावीसइमं-बावीसइमेणं) दशवें महिने की विधि भी और सब पहिले जैसी ही है-परन्तु उपवास इसमें दस दस करे। (एक्कारसमं मासं चउवीसइमं-चउवीसइमेणं) ग्यारहवें महिने में भी और सब विधि पूर्वोक्त रूप से ही है-परन्तु उपवास इसमें ग्यारह-ग्यारह करे। (बारसमं मासं छव्वीइसमं-छव्वीसइमेणं) बारहवें महिने में भी दिन रात की जैसी विधि पहिले कही गई है-वैसी ही है परन्तु उपवास यहां बारह-बारह करे। (तेरसम मासं अट्ठावीसइमं अट्ठावीसइमेणं) तेरहवें महिने में भी और सब विधि पहिले जैसी ही है-परन्तु यहां उपवास तेरह-तेरह करे। (चउदसमं मासं तीसइमं तीसइमेणं) चौदहवें महिने में भी और सब विधि पहिले जैसी ही है-

---

આગળ મુજબજ સમજવી (अट्ठम मास अट्ठारसमं अट्ठारसमेण) આઠમે મહિને આઠ ઉપવાસને પારણે આઠ ઉપવાસ કરવા બાકીની વિધિ આગળ મુજબ સમજવી (नवमं मासं वीसइमं वीसइमेण) નવમે મહિને નવ ઉપવાસને પારણે નવ ઉપવાસ કરવા. બાકીની વિધિ આગળ મુજબ જ કરવી (दसमं मास बावीसइम-बावीसइमेणं) દસમે મહિને દસ ઉપવાસને પારણે દસ ઉપવાસ કરવા બાકીની વિધિ આગળ મુજબ જ સમજવી (एक्कारसमं मास चउवीसइम चउवीसइमेण) અગિયારમે મહિને અગિયાર ઉપવાસને પારણે અગિયાર ઉપવાસ કરવા બાકીની બધી વિધિ આગળ મુજબ સમજવી, (बारसम मासं छव्वीसइम छव्वीसइमेण) બારમે મહિને બાર ઉપવાસને પારણે બાર ઉપવાસ કરવા બાકીની બધી વિધિ આગળ પ્રમાણે જ કરવી (तेरसम मासं अट्ठावीसइमं-अट्ठावीसमेण) તેરમે માસે તેર ઉપવાસને પારણે તેર ઉપવાસ કરવા. બાકીની બધી વિધિ પહેલા માસ પ્રમાણે જ કરવી (चउद्दसमं मास तीसइमं तीसइमेणं) ચૌદમે મહિને ચૌદ ઉપવાસને પારણે ચૌદ ઉપવાસ કરવા બાકીની તમામ વિધિ પહેલા માસ મુજબજ સમજવી

मेन । पंचदश मासं द्वात्रिंशत्तमद्वात्रिंशत्तमेन । षोडश मास चतुस्त्रिंशत्तमचतुस्त्रिंशत्तमेनानिक्षिप्तेन तपः कर्मणा दिवास्थानोत्कुटुक सूर्याभिमुख आतापनभूमौ आतापयन् रात्रि वीरासनेनाप्रावृतः । ततः खलु स स्कंदकोऽनगारो गुणरत्नसंवत्सरं तपः कर्म यथासूत्रं यथाकल्प यावदाराध्य यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीरस्त

परन्तु उपवास चौदह चौदह करे । (पण्णरसम मास बत्तीसइमबत्तीसइमेणं) पन्द्रहवें महिने में भी और सब विधि पहिले जैसी ही है परन्तु उपवास यहां पन्द्रह पन्द्रह करे । (सोलस मासं चोत्तीसइमं-चोत्तीसइमेणं) सोलहवें महिने में भी और सब विधि पहिले जैसी ही है, परन्तु इसमें सोलह सोलह उपवास करें । (अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं दिया ठाणुक्कुडिए सूराभिमुहे आयावणभूमिए आयावेमाणे रत्तिं वीरासणेणं अवाउडेण) तीसरे चौथे पांचवें आदि मास से लेकर सोलहवें महिना तक दिन और रात्रि संबंधी कर्तव्य विधि प्रथम मास तथा द्वितीय मास में कथित विधि जैसी ही है-इसी बात को इस सूत्र पाठ द्वारा प्रदर्शित किया है । अर्थात् तीसरे चौथे आदि महिने से लेकर सोलहवें महिने तक दिवस में उत्कुटुक आसन से बैठे सूर्य की तरफ दृष्टि रख कर आतापन भूमि में आतापना लेवे तथा रात्रि में वस्त्र ओढे विना वीरासन से रहे । (तएण से खंदए अणगारे गुणरयण संवच्छरं तवोकम्मं अहासुत्तं, अहाकप्पं, जाव आराहेत्ता) इस प्रकार

(पण्णरसम मास बत्तीसइम बत्तीसइमेण) પંદરમે મહિને પંદર ઉપવાસ ને પારણું પંદર ઉપવાસ કરવા આદિની વિધિ આગળ કહ્યા પ્રમાણે સમજવી. (सोलस मास चोत्तीसइम-चोत्तीसइमेण) સોળમે મહિને સોળ ઉપવાસને પારણે સોળ ઉપવાસ કરવા આદિની વિધિ આગળ કહ્યા પ્રમાણે જ કરવી (अणिक्खित्तेण तवोकम्मेण दिया ठाणुक्कडिए सूराभिमुहे आयावणभूमिए आयावेमाणे रत्तिं वीरासणेण अवाउडेण) ત્રીજાથી લઈને સોળમા માસ સુધી દિવસ અને રાત્રિ સંબંધ કર્તવ્ય વિધિ પહેલા અને બીજા માસની જે વિધિ બતાવી છે તે પ્રમાણે જ છે એજ વાત સૂત્રકારે આ સૂત્રપાઠ વડે બતાવી છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે ત્રીજા મહિનાથી સોળમા મહિના સુધી દિવસે સૂર્યની સામે મુખ રાખીને ઉત્કટુક આસને તડકામાં બેસીને તડકો સહન કરશે અને રાત્રે વસ્ત્ર ઓઢયા વિના વીરાસને બેસી ને ઠંડી સહન કરવી (तएण से खंदए अणगारे गुणरयण संवच्छर तवोकम्म अहासुत्त अहाकप्प जाव आराहेत्ता) આ રીતે સ્કન્દક અણગારે ગુણરત્ન સંવત્સર નામના તપની સૂત્રાનુસાર,

श्रैवोपागच्छति, उपागत्य श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा बहुभिश्चतुर्थषष्ठाष्टमदशमद्वादशैर्मासार्धमासक्षपणैर्विचित्रस्तपःकर्मभिरात्मानं भावयन् विहरति। ततः खलु स स्कन्दकोऽनगारस्तेनोदारेण विपुलेन प्रयत्नेन प्रगृहीतेन कल्याणेन शिवेन धन्येन मांगल्येन सश्रीकेण, उदग्रेण,

स्कन्दक अनगार ने गुणरत्न संवत्सर नाम का तप की यथासूत्र यथाकल्प यावत् आराधना करके फिर वे (जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ) जहां श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे वहां पर आये। (उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ वहां आकर उन्होंने श्रमण भगवान महावीर को वंदना की और नमस्कार किया। (वंदित्ता नमंसित्ता) वदना नमस्कार कर (बहूहिं चउत्थछट्ठट्ठम दसम दुवालसेहिं मासद्धमासखमणेहिं विचित्तेहिं तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणे विहरइ) अनेक उपवास, छट्ठ अट्ठम दशम तथा द्वादशम रूप तपस्या से एवं मासखमण तथा अर्धमास खमण रूप विचित्र तपस्या से अपनी आत्मा को भावित करते हुए विचरने लगे। (तएणं से खंदए अणगारे तेणं उरालेणं, विउलणं पयत्तेणं, पग्गहिएणं, कल्लाणेणं, सिवेणं, धन्नेणं, मंगल्लेणं, सस्सिरीएणं, उदग्गेणं, दउत्तेण, उत्तमेणं उदारेणं, महाणुभावेणं तवोकम्मेणं) इसके बाद वे स्कन्दक अनगार उस उदार, विपुल, प्रगृहीत, कल्याणरूप, शिवरूप, धन्य-

કલ્પાનુસાર (યાવત્) આરાધના કરી (અહી) (યાવત્) પદ વડે પહેલી ભિક્ષુ પ્રતિમામા આવતો તમામ પાઠ આરાધના કરી ત્યા સુધીનો પાઠ ગ્રહણ કરવાનો છે આરાધના કરીને તેઓ (जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ) જ્યાં શ્રમણ ભગવાન મહાવીર વિરાજમાન હતા ત્યા આવ્યા (उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ) ત્યા આવીને તેમણે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરનેવદન નમસ્કાર કર્યા "वंदित्ता नमंसित्ता" વદન નમસ્કાર કરીને "बहूहिं चउत्थ छट्ठट्ठम-दसम-दुवालसेहिं, मासद्धमासखमणेहिं विचि-त्तेहिं-तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणे विहरइ) અનેક ઉપવાસ, છટ્ઠ, અઠમ, દશમ (ચાર ઉપવાસ,) અને દ્વાદશમ (પાચ ઉપવાસ) રૂપ તપસ્યાથી અને માસ ખમણ તથા અર્ધમાસ ખમણ વગેરે વિવિધ પ્રકારની તપસ્યાઓથી પોતાના આત્માને ભાવિત કરતા વિચરવા લાગ્યા (तएणं से खंदए अणगारे तेणं उरालेणं, विउलेणं, पयत्तेणं, पग्गहिएणं, कल्लाणेणं, सिवेणं, धन्नेणं, मंगल्लेणं, सस्सिरीएणं, उदग्गेणं, उदत्तेणं, उत्तमेणं, उदारेणं, महाणुभावेणं तवोकम्मेणं) ત્યાર બાદ તે ઉદાર, વિપુલ, પ્રદત્ત, પ્રગૃહીત, કલ્યાણરૂપ, શિવરૂપ ધન્યરૂપ, મંગલરૂપ,

टहावेन, उदग्रेन उदारेण महानुभावेन तप कर्मणा शुष्को रुक्षो निर्मांसः अस्थि चर्मावनद्धः किटिकिटिकाभूतः कृशः धमनिसन्ततो जातश्चाप्यभूत्। जीवं जीवेन गच्छति, जीवे जीवेन तिष्ठति, भाषां भाषित्वाऽपि ग्लायति भाषां भाषमाणो ग्लायेति भाषां भाषिष्ये इति ग्लायति। तद् यथा नामकाष्ठशकटिका इति वा।

रूप, मंगल रूप, शोभायुक्त, उदग्र उदात्त उज्वल, उत्तम, उदार, महाप्रभावशाली तपकर्म से तपस्या से (सुक्के, लुक्खे, निम्मंसे, अट्ठिचम्मावणद्धे किडिकिडियाभूए, किसे, धमणिसंतए जाए यावि होत्था) सूख गये बिलकुल रूखे हो गये सर्वथा मांस रहित बन गये सिर्फ उनकी हड्डियां चमडी से बंधी रह गई अर्थात् ढकी रह गई चलते समय उनकी हड्डियां आपस में खटखटाकर किट किट शब्द कर बजने लगती इतने वे कृश हो गये। धमनियों का समुदाय उनके उस कृश शरीर में एकदम दिखलाई पडने लगा। (जीवं जीवेण गच्छइ) वे केवल अपने आत्मबल से ही चलते। शरीर बल से नहीं। (जीवं जीवेण चिट्ठइ) आत्मबल से ही वे बैठतेशरीरबल से नहीं। (भासं भासित्ता चिगिलाइ) बोलकर थकजाते। (भासं भासमाणे गिलाइ भासं भासिस्सामि त्ति गिलाइ) बोलते बोलते भी थक जाते। मुझे बोलना होगा–ऐसा ख्याल आने पर भी वे थक जाते। तथा (से जहानामए कट्ठसगडियाइ वा, पत्तसगडियाइ वा, तिलसगडियाइ वा, एरंडकट्ठसगडियाइ वा)

શોભાયુક્ત, ઉદગ્ર ઉદાત્ત, ઉજ્જવલ, ઉત્તમ, ઉદાર અને મહાપ્રભાવશાળી તપ શ્રીધન્ના અણગારનું (सुक्के, लुक्खे, निम्मंसे अट्ठिचम्मावणद्धे किडिकिडिया भूए, किसे, धमणिसंतए जाए यावि होत्था) શરીર સુકાઈ ગયું રૂક્ષ થઈ ગયું (લૂખું સુકું થઈ ગયું) તેમનું શરીર સર્વથા માંસ રહિત બની ગયું શરીરમાં ફક્ત હાડકાં અને ચામડી જ રહી. ચાલતી વખતે તેમના શરીરનાં હાડકાં એક બીજા સાથે ઘસાઈને (કટ કટ) અવાજ કરવા લાગ્યાં તેઓનું શરીર ઘણું જ કૃશ થઈ ગયું તેમના તે કૃશ શરીરની નસો પણ દેખાવા લાગી (जीवं जीवेण गच्छइ) તેઓ પોતાના આત્મબળથી જ ચાલતા હતા, શરીર બળથી નહીં. (जीवं जीवेण चिट्ठइ) તેઓ પોતાના આત્મબળથી જ ઊભા, હતા (भासं भासित्ता चिगिलाइ) આપ બોલીને પણ થાકી જતા (भासं भासमाणे गिलाइ भासं भासिस्सामि त्ति गिलाइ) આપ બોલતાં બોલતાં પણ થાકી જતા મારે બોલવું પડશે–એવો વિચાર આવવાથી પણ તેઓ થાકી જતા તથા (से जहानामए कट्ठसगडियाइ वा, पत्तसगडियाइ वा तिलसगडियाइ वा, एरंडकट्ठसगडियाइ वा) જેવી રીતે લાકડાની ગાડી તલની ગાડીથી

त्रैवोपागच्छति, उपागत्य श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा बहुभिश्चतुर्थषष्ठाष्टमदशमद्वादशैर्मासार्धमासक्षपणैर्विचित्रैस्तपःकर्मभिरात्मानं भावयन् विहरति। ततः खलु स स्कन्दकोऽनगारस्तेनोदारेण विपुलेन प्रयत्नेन प्रगृहीतेन कल्याणेन शिवेन धन्येन मांगल्येन सश्रीकेण, उदग्रेण,

---

स्कन्दक अनगार ने गुणरत्न संवत्सर नाम का तप की यथासूत्र यथाकल्प यावत् आराधना करके फिर वे (जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ) जहां श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे वहाँ पर आये। (उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ वहां आकर उन्होंने श्रमण भगवान महावीर को वंदना की और नमस्कार किया। (वंदित्ता नमंसित्ता) वंदना नमस्कार कर (बहूहिं चउत्थछट्ठट्ठम दसम दुवालसेहिं मासद्धमासखमणेहिं विचित्तेहिं तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणे विहरइ) अनेक उपवास, छट्ठ अट्ठम दशम तथा द्वादशम रूप तपस्या से एवं मासखमण तथा अर्धमास खमण रूप विचित्र तपस्या से अपनी आत्मा को भावित करते हुए विचरने लगे। (तएणं से खंदए अणगारे तेणं उरालेणं, विउलणं पयत्तेणं, पग्गहिएणं, कल्लाणेणं, सिवेणं, धन्नेणं, मंगल्लेणं, सस्सिरीएणं, उदग्गेणं, दउत्तेणं, उत्तमेणं उदारेणं, महाणुभावेणं तवोकम्मेणं) इसके बाद वे स्कन्दक अनगार उस उदार, विपुल, प्रगृहीत, कल्याणरूप, शिवरूप, धन्य-

---

કલ્પાનુસાર (યાવત્) આરાધના કરી (અહીં) (યાવત્) પદ વડે પહેલી ભિક્ષુ પ્રતિમામા આવતો તમામ પાઠ આરાધના કરી ત્યાં સુધીનો પાઠ ગ્રહણ કરવાનો છે. આરાધના કરીને તેઓ (जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ) જ્યાં શ્રમણ ભગવાન મહાવીર વિરાજમાન હતા ત્યા આવ્યા (उवागच्छित्ता समण भगव महावीर वदइ नमंसइ) ત્યાં આવીને તેમણે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરનેવંદન નમસ્કાર કર્યા "वंदित्ता नमंसित्ता" વંદન નમસ્કાર કરીને "बहूहिं चउत्थ छट्ठट्ठम–दसम–दुवालसेहिं, मासद्धमासखमणेहिं विचि-त्तेहिं-तवोकम्मेहिं अप्पाण भावेमाणे विहरइ) અનેક ઉપવાસ, છટ્ઠ, અઠમ, દશમ (ચાર ઉપવાસ,) અને દ્વાદશમ (પાચ ઉપવાસ) રૂપ તપસ્યાથી અને માસ ખમણુ તથા અર્ધમાસ ખમણુ વગેરે વિવિધ પ્રકારની તપસ્યાઓથી પોતાના આત્માને ભાવિત કરતા વિચરવા લાગ્યા (तएण से खदए अणगारे तेणं उरालेणं, विउलेण, पयत्तेणं, पग्गहिएण, कल्लाणेणं, सिवेण, धन्नेण, मगल्लेणं, सस्सिरीएण, उदग्गेण, उदत्तेण, उत्तमेण, उदारेण, महाणुभावेण तवोकम्मेणं) ત્યાર બાદ તે ઉદાર, વિપુલ, પ્રદત્ત, પ્રગૃહીત, કલ્યાણરૂપ, શિવરૂપ ધન્યરૂપ, મંગલરૂપ,

टीका—'तएणं समणे भगवं महावीरे' ततः खलु श्रमणो भगवान् महावीरः "कयंगलाओ" कृतगलात नगरीत "छत्तपलासयाओ चेइयाओ" छत्रपलाशकात् चैत्यात् छत्रपलाशकनामकोद्यानात् "पडिनिक्खमइ" प्रतिनिष्क्रामति "पडिनिक्खमित्ता बहिया जणवयविहारं विहरइ" प्रतिनिष्क्रम्य बहिर्जनपदविहारं विहरति। "तएणं से खंदए अणगारे" ततः खलु स स्कन्दकोऽनगारः" तदनन्तरं भगवतो महावीरस्य विहरणानन्तरम् स्कन्दकनामानगारः "समणस्स भगवओ महावीरस्स" श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य "तहारूवाणं थेराणं अंतिए" तथारूपाणां स्थविराणामन्तिके समीपे "सामाइयमाइयाइं एक्कारसअंगाई अहिज्जइ"

जन्य प्रभाव से उनका आत्मबल विशेषरूप से उद्दीप्त था। अतः वे भस्म से ढकी हुई अग्नि की तरह से प्रकाशित थे। (तवेणं तेयणं तवतेयसिरिए अईव अईव उवसोभेमाणे चिट्ठइ) इस सूत्रपाठ द्वारा यही बात प्रकट की गई है। अर्थात् वे तप से तेज से और तप तथा तेज की शोभा से बहुत बहुत शोभित थे॥ सू० १४॥

टीकार्थ—(तएणं समणे भगवं महावीरे) इसके बाद श्रमण भगवान् महावीर (कयंगलाओ नयरीओ) कृतंगला नगरी से (छत्तपलासयाओ चेइयाओ) छत्रपलाशक चैत्य-उद्यान से (पडिनिक्खमई) निकले। (पडिनिक्खमित्ता) निकलकर (बहिया जणवयविहारं विहरइ) बाहर के जनपद में विहार करने लगे। (तएणं से खंदए अणगारे) भगवान् महावीर के विहार के अनन्तर वे स्कन्दक अनगार (समणस्स भगवओ महावीरस्स) श्रमण भगवान् महावीर के (तहारूवाणं थेराणं अंतिए)

થયું તપના પ્રભાવથી તેમનું આત્મબળ વધારે પ્રદીપ્ત થયું હતું તેથી તેઓ રાખની નીચે ઢંકાયેલા અગ્નિ જેવા દેદીપ્યમાન હતા (तवेणं तेयणं तवतेय सिरीए अईव अईव उवसोभेमाणे चिट्ठइ) આ સૂત્ર પાઠ વડે ઉપરોક્ત વાત જ પ્રકટ કરવામાં આવી છે એટલે કે તેઓ તપથી અને તેજથી તથા તપના તેજથી અતિશય શોભાયમાન લાગતા હતા ॥ સૂ. ૧૪ ॥

ટીકાર્થ—' तएणं समणे भगवं महावीरे " ત્યાર બાદ શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે ' कयंगलाओ नयरीओ " કૃતંગલા નગરીના ' छत्तपलासयाओ चेइयाओ छत्रपलाशक ચૈત્યમાંથી (બગીચા) માંથી (पडिनिक्खमइ) વિહાર કર્યો. पडिनिक्खमित्ता ત્યાંથી વિહાર કરીને बहिया जणवयविहारं विहरइ ' બહારના પ્રદેશોમાં વિચરવા લાગ્યા ' तएणं से खंदए अणगारे ત્યાર બાદ સ્કન્દક અણગાર " तहारूवाणं थेराणं अंतिए ' તથા પ્રકારના સ્થવિરોની પાસે

पत्रशकटिका इति वा तिलशकटिका इति वा भांडकशकटिका इति वा, एरंडकाष्ठशकटिका इति वा, अंगारशकटिका इति वा, उष्णे दत्ता शुष्का सती सशब्दं गच्छति, सशब्दं तिष्ठति। एवमेव स्कंदकोऽपि अनगारः सशब्दं गच्छति सशब्दं तिष्ठति उपचितस्तपसा, अपचितो मांसशोणितेन हुताशन इव भस्मराशि प्रतिच्छन्नस्तपसा तेजसा तपस्तेजः श्रिया अतीवोपशोभमानस्तिष्ठति॥

जैसे कोई लकडियों से भरी हुई गाड़ी हो, पत्तों से भरी हुई गाड़ी हो, तिलों की फलियों से भरी हुई गाड़ी हो, एरंड के काष्ठों से भरी हुई गाड़ी हो, (भंडगसगडियाइ वा) वर्तनों से भरी हुई गाडी हो। (इंगालसगडियाइ वा) अथवा अंगारा-कोयलों से भरी हुई कोई गाडी हो (उण्हे दिण्णा सुक्का समाणी ससदं गच्छइ, ससदं चिट्ठइ) और जब वह धूप में खूब सूक जाती है-तब वह खड़ खड़ शब्द करती हुई चलती है, ठहरने पर भी उसमें से खड़ खड़ शब्द निकलता है (एवामेव) इसी तरह से (खंदए वि अणगारे ससदं गच्छइ, ससदं चिट्ठइ) स्कन्दक अनगार भी जब चलते तब उनके शरीर में से हड्डियों का ढेर अवशिष्ट मात्र रह जाने के कारण उनके परस्पर के संघर्षण से खड़ खड़ शब्द निकलता। (उवचिए तवेण अवचिए मंससोणिएणं हुयासणेविव भासरासिपडिच्छण्णे) इस तरह वे यद्यपि शरीर से कृशता की पराकाष्टा को पहुँच चुके थे-अर्थात् मांस और शोणित से वे बिलकुल विहीन बन चुके थे पर फिर भी वे तप से उपचित थे। अर्थात् तपस्या

એરંડીના સાઠાથી, (भंडगसगडियाइ वा) વાસણોથી, (इंगालसगडियाइ वा) અથવા કોલસાથી ભરેલુ કોઇ ગાડુ હોય (उण्हे दिण्णा सुक्का समाणी ससदं गच्छइ, ससदं चिट्ठइ) અને જ્યારે ઉપરોક્ત વસ્તુઓ ઘણુંજ તાપમે લીધે ઘણીજ શુષ્ક થઇ જાય છે તેવી વસ્તુ ઓથી ભરેલુ ગાડું ચાલતી વખતે (ખટ, ખટ) અવાજ કરતુ ચાલે છે, અને જ્યારે તે ગાડું ઉભું રહે છે ત્યારે પણ (ખટ, ખટ અવાજ થાય છે (एवामेव) એજ પ્રમાણે (खंदए वि अणगारे-ससदं गच्छइ, ससदं चिट्ठइ) જ્યારે સ્કન્દક અણગાર ચાલતા ત્યારે તેમનાં હાડકાં એક બીજા સાથે ઘસાવાથી તેમાથી (ખટ, ખટ) એવો અવાજ થતો હતો તેમનું શરીર હાડકાના માળખા જેવુ બની જવાને કારણે એવું બનતું હતું (उवचिए तवेण अवचिए मंससोणिएणं हुयासणेविव भासरासिपडिच्छण्णे) આ રીતે જો કે તેમનું શરીર કૃશતાની પરાકાષ્ઠાએ પહોંચી ગયું હતું-એટલે કે માંસ અને શોણિત (લોહી) થી બિલકુલ વિહીન બની ગયું હતું-તો

यदि, स्कन्दस्य प्रव्रज्याग्रहणात् पूर्वकाल एव एकादशाङ्गानि आसन्, तर्हि अत्र स्कन्दकस्य वर्णनं कथमभूत्, तदा स्कन्दकस्यानगारत्वस्यैवासत्त्वादिति चेदत्रोच्यते- महावीरस्य भगवतस्तीर्थे नव वाचनाः सन्ति तत्र सर्ववाचनासु स्कन्दकचरितात् पूर्वकाले ये स्कन्दकचरिताभिधेयाः अर्थास्ते चरितान्तरद्वारेण प्रज्ञाप्यन्ते। स्कन्दकचरितोत्पत्तेरनन्तरं भगवता सुधर्मास्वामिना जम्बूनामानं स्वशिष्यमधिकृत्य प्रस्तुतवाचनायामस्यां स्कन्दकचरितमाश्रित्य कृतेति न कोऽपि विरोध इति।

अथ स्कन्दकः किं कृतवानित्याह-'इच्छामि णं भंते' इत्यादि। 'इच्छामि णं भंते' इच्छामि खलु भदन्त! 'तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे' युष्माभिरभ्यनु

घतीसूत्र में जो उनका चरित्र कहने में आया है वह संगत नहीं बैठता है, क्यों कि पहले बने हुए ग्यारह अंगो में भी यह चरित्र कहा गया है तो उस समय में स्कन्दक अनगार थे ही नहीं। क्यों कि वे तो अनगारावस्थापन्न अब हुए हैं। अतः यह बात परस्पर विरोधवाली बन जाती है सो इस का समाधान इस प्रकार से है- भगवान महावीर के तीर्थ में नौ वाचनाएँ थीं। उन सब वाचनाओं में स्कन्दक चरित्र से पहिले जो स्कन्दक चरित्र-अभिधेय का अर्थ था वह दूसरे चरित्र द्वारा प्रज्ञापित किया गया था। स्कन्दकचरित्र का उत्पत्ति के अनन्तर भगवान सुधर्मा स्वामी ने अपने शिष्य जंबूस्वामी को लेकर इस प्रस्तुत वाचना में स्कन्दक के चरित्र की प्ररूपणा की है। इस तरह से इसमें विरोध आने जैसी कोई बात नहीं है।

भगवान से स्कन्दक ने क्या कहा? सो कहते हैं-(इच्छामि णं भंते) तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे मासियं भिक्खुपडिमं उवसंप-

---

तेमनुं जे जीवन चरित्र वर्णव्युं छे ते सुसंगत लागतुं नथी कारण के पहेलां बनेलां अगियार अंगोनी रचना वखते तो स्कन्दक अणगार हता ज नहीं- तेओ अणगार तो त्यारपछी ज बन्या हता तेथी आ वातमां विरोधाभास लागे छे तो ते शंकानुं आ प्रमाणे समाधान करी शकाय छे-भगवान महावीरना शासनमां नव वाचनाओ हती ते बधी वाचनाओमां स्कन्दकचरित्रना पहेलां जे स्कन्दकचरित्र अभिधेय अर्थ हतुं ते बीजा चरित्र वडे प्रगट करवामां आव्युं हतुं स्कन्दकचरित्रनी उत्पत्ति पछी भगवान सुधर्मास्वामीए पोताना शिष्य जंबूस्वामीने संबोधीने आ प्रस्तुत वाचनामां स्कन्दकना चरित्रनी प्ररूपणा करी छे आ रीते तेमां विरोधाभास जेवुं कंइ रहेतुं नथी. स्कन्दके भगवानने शुं कह्युं? सूत्रकार ते बतावे छे- इच्छामि णं भंते! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे, मासियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए' हे भगवन्! जो आपनी आज्ञा होय तो मासिक भिक्षु

सामायिकादीनि एकादशांगानि अधीते "अहिज्जित्ता" अधीत्य "जेणेव समणे भगवं महावीरे" यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीरः। "तेणेव उवागच्छइ" तत्रैवोपागच्छति "उवागच्छित्ता" उपागत्य "समणं भगवं महावीरं" श्रमणं भगवन्तं महावीरम् "वंदइ नमसइ" वन्दते नमस्यति "वंदित्ता नमंसित्ता" वन्दित्वा नमस्यित्वा "एवं वयासी" एवं वक्ष्यमाणप्रकारेणावादीत्=उक्तवान् अत्रैकादशाङ्गविषये कश्चिदेवं शङ्कते-ननु अनेन स्कन्दक चरितात् पूर्वकाले एव एकादशाङ्गानां निष्पत्तिः पर्यवस्यति, पञ्चमाङ्ग श्री भगवतीसूत्रस्यान्तर्भूतमिदं स्कन्दकचरितमुपलभ्यते ततः कथं न विरोधो भवति।

तथारूप स्थवीरों के समीप (सामाइय माइयाइं एक्कारसअंगाइं) सामायिक आदि ग्यारह अङ्गों को (अहिज्जइ) पढने लगे। (अहिज्जित्ता) पढ़कर (जेणेव समणे भगवं महावीरे) वे जहां श्रमण भगवान महावीर थे (तेणेव उवागच्छइ) वहां पर आये। (उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ) वहां आकर के उन्होंने श्रमण भगवान महावीर को वंदना की-नमस्कार किया और (वंदित्ता नमंसित्ता) वंदना नमस्कार करके (एवं वयासी) फिर उन्होंने प्रभु से इस प्रकार कहा-

यहां एकादशाङ्ग के विषय में कोई ऐसी आशंका करता है-(स्कन्दक अनगार ने ग्यारह अंगों का अध्ययन किया) सो इस कथन से तो यही बात साबित होती है कि ग्यारह अंग स्कन्दक अनगार के पहिले ही वन चुके थे, यदि यह बात न होती तो फिर वे उन्हें पढ़ते कैसे? तथा जब यह बात निश्चित हो जाती है-तो फिर इस पंचम अंग भग-

---

"सामाइयमाइयाइं एक्कारसअंगाइं" सामायिक आदि अगियार अंगोनो "अहिज्जइ" अभ्यास करवा लाग्या. "अहिज्जित्ता" तेनो अभ्यास करीने "जेणेव समणे भगवं महावीरे" ज्यां श्रमण भगवान महावीर विराजमान हता "तेणेव उवागच्छइ" त्यां आव्या. (उवागच्छित्ता) त्यां आवीने "समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ" तेमणे श्रमण भगवान महावीरने वंदन नमस्कार कर्या "वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी" अने वंदन नमस्कार करीने आप्रमाणे कह्यु

शंका-अहीं कोईने आ प्रकारनी शंका उद्‌भवे के" स्कन्दक अणुगारे अगियार अंगोनो अभ्यास कर्यो." आ कथन मुजब तो एम ज मानवु पडे के अगियार अंगनी रचना स्कन्दक अणुगारनी पहेलां ज थई गई हशे. जो एवु न बन्यु होत तो तेमणे केवी रीते ते अंगोनो अभ्यास कर्यो होत? जो ए वात सिद्ध थाय तो आ पांचमा अंगरूप भगवतीसूत्रमां

मासिकी भिक्षुप्रतिमा गच्छान्निर्गत्य स्वीक्रियते। अस्यामेकमासपर्यन्त प्रतिदिन मेकादत्तिर्भोजनस्य, एकैव च पानकस्य गृह्यते।

उक्तञ्च—"गच्छा विणिक्खमित्ता, पडिवज्जइ मासियं महापडिमं।
दत्तेग भोयणस्स, पाणस्स वि एगजा मास"॥ १॥

छाया—गच्छाद्विनिष्क्रम्य प्रतिपद्यते मासिकीं महाप्रतिमाम्।
दत्तिमेकां भोजनस्य, पानस्यापि एकां यावन्मासम्॥ इत्यादि।

अस्याः स्वरूप सविस्तर दशाश्रुतस्कन्धसूत्रे सप्तमाध्ययने तृतीयसूत्रा दारभ्य द्वाविंशतितमसूत्रपर्यन्त विलोकनीयम्। व्याख्यापि तत्रैव मत्कृतायां मुनिहर्षिणीटीकायामवलोकनीया इति।

एक मास में पूर्ण होती है। इसमें भिक्षु अभिग्रहविशेषों का पालन करता है—यह गच्छ से बाहर रहकर आराधित की जाती है। इसमें एक मास तक प्रतिदिन एक दत्ति आहार की ली जाती है और एक दत्ति पानी की ली जाती है। कहा भी है—

"गच्छा वि णिक्खमित्ता, पडिवज्जइ मासियं महापडिमं।
दत्तेगभोयणस्स य, पाणस्स वि एग जामास"॥ १॥

इस गाथा द्वारा यही बात समझाई गई है इसका विस्तार सहित स्वरूप दशाश्रुत स्कंधसूत्र में सप्तम अध्ययन में तृतीय सूत्र से लेकर बाईसवें सूत्र तक लिखा गया है सो वहां से जान लेना चाहिये। इन सूत्रों की व्याख्या सो वहीं मुनिहर्षिणी नाम टीका में देख लेना चाहिये। कोई यहां पर इस प्रकार की शंका करता है कि स्कन्दक अनगार तो ग्यारह अंग के ही पाठी–धारक थे और प्रतिमाओं की भी आराधना इन्होंने की है सो ऐसा जो कहा गया है वह समझ में नहीं

અમુક પ્રકારના અભિગ્રહનું પાલન કરે છે–તેની આરાધના ગચ્છની બહાર રહીને કરાય છે તેની આરાધના કરનાર એક માસ સુધી દરરોજ એક દત્તિ આહારની અને દત્તિ પાણીની લે છે દત્તિ એટલે ધારાવાહી તૂટયા વિના જેટલું વહોરાવવામા આવે તેટલા ભાગને એક દત્તિ કહેવાય છે. કહ્યું પણ છે

"गच्छा वि णिक्खमित्ता, पडिवज्जइ मासिय महापडिम॥
दत्तेग भोयणस्स य, पाणस्स वि एग जा माम॥ १॥

આ ગાથા વડે ઉપરોક્ત વાત જ સમજાવવામા આવી છે દશાશ્રુતસ્કંધ સૂત્રના સાતમા અધ્યયનના ત્રીજા સૂત્રથી લઈને બાવીસમા સૂત્ર સુધીમાં તેનું સ્વરૂપ વિસ્તારથી સમજાવ્યું છે તો જિજ્ઞાસુઓએ ત્યાંથી વાચી લેવું તે સૂત્રોની વ્યાખ્યા પણ તેમાંજ આપેલી મુનિહર્ષિણી નામની ટીકામાંથી વાચી લેવી

ज्ञातः सन् "मासियं भिक्खुपडिमं" मासिकीं भिक्षुप्रतिमाम् 'उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए" उपसंपद्य खलु विहर्तुम्। हे भगवन् यदि देवानुप्रियाणामाज्ञा भवेत्तदाहं मासिकीं भिक्षुप्रतिमां स्वीकर्तुं मिच्छामीति भावः, भगवान् कथयति 'अहासुहं देवाणुप्पिया मा पडिबंधं करेह" यथासुखं देवानुप्रिय ? यथा ते रोचते तथा कुरु किन्तु मा प्रतिबन्ध कुरु=विलम्बं मा कुरु इति भावः। 'तएणं से खंदए अणगारे" ततः खलु स स्कन्दकोऽनगारः "समणेण भगवया महावीरेण" श्रमणेन भगवता महावीरेण "अब्भणुन्नाए समाणे" अभ्यनुज्ञातः प्राप्ताज्ञः सन् "हट्ठे जाव नमंसित्ता" हृष्टो यावत् नमस्यित्वा, अत्र यावत्पदेन तुष्टचित्तानन्दितः प्रीतिमनाः परमसौमनस्यितः हर्षवशविसर्पितहृदयः श्रमणं भगवन्त महावीरं वन्दते नमस्यति वन्दित्वा' इत्यस्य ग्रहणं कर्त्तव्यम्। एतादृशः स्कन्दको भगवन्तं नमस्कृत्य "मासियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ" मासिकीं भिक्षुप्रतिमामुपसंपद्य खलु विहरति, 'मासियं' इति एकमाससंपाद्याम् 'भिक्खुपडिमं' भिक्षुप्रतिमाम् — समाराधनीयमभिग्रहविशेषं स्वीकृत्य तिष्ठति, इय

जित्ताणं विहरित्तए) हे भदन्त! यदि आप देवानुप्रिय! आज्ञा प्रदान करें तो मैं मासिक भिक्षुप्रतिमा की आराधना करना चाहता हूं। तब प्रभु ने कहा (अहासुहं देवाणुप्पिया मा पडिबंधं करेह) जैसा विचार किया है वैसा सुखपूर्वक करो परन्तु शुभ काम में विलम्ब मत करो। (तएणं से खंदए अणगारे) तब उन स्कन्दक अनगार ने (समणेणं भगवया महावीरेणं) श्रमण भगवान महावीर से (अब्भणुन्नाए समाणे) आज्ञा प्राप्तकर (हट्ठे जाव नमंसित्ता) हृष्ट यावत् तुष्ट आनन्दित चित्त होकर नमस्कार कर (मासियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ता णं विहरइ) मासिक भिक्षु प्रतिमा धारण करली। यह प्रथम भिक्षुप्रतिमा

પ્રતિમાની આરાધના કરવાની મારી ઇચ્છા છે ત્યારે ભગવાન મહાવીરે તેમને જવાબ આપ્યો- "अहासुहं देवाणुप्पिया! मा पडिबंधं करेह" તમારી ઇચ્છા પ્રમાણે સુખેથી કરો પરતુ શુભ કાર્યમાં વિલબ કરવો નહીં "तएणं से खंदए अणगारे" ત્યારે તે સ્કન્દક અણગારને "अब्भणुन्नाए समाणे" "समणेणं-भगवया महावीरेण" શ્રમણ ભગવાન મહાવીરની આજ્ઞા મળવાથી "हट्ठे जाव नमंसित्ता" ઘણો હર્ષ તથા સંતોષ પામ્યા અને તેઓએ ભગવાન મહાવીરને વંદન નમસ્કાર કર્યા. વંદન નમસ્કાર કરીને "मासियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ" તેમણે માસિય ભિક્ષુપ્રતિમાની આરાધના કરવા માંડી આ પહેલી ભિક્ષુપ્રતિમા એક માસમાં પૂર્ણ થાય છે તેની આરાધના કરનાર ભિક્ષુ

वीरं तीर्थकरोपदेशेन प्रवृत्तत्वान्न कोऽपि दोषः सर्वज्ञा हि द्रव्य-क्षेत्र-कालभावं ज्ञात्वैव यत्किञ्चित् कथयन्ति इति ।

"तएणं से खंदए अणगारे" ततः खलु स स्कन्दकोऽनगारः "मासियं भिक्खुपडिमं" मासिकीं भिक्षुप्रतिमाम् "अहासुत्तं" यथासूत्रम्=सूत्रनिर्दिष्ट-विध्यनुसारम्। 'अहाकप्पं' यथा कल्पम्=कल्पं=स्थविरादिकल्पमनतिक्रम्य-कल्पानुसारमित्यर्थः। 'अहामग्गं' यथामार्गम्=ज्ञानदर्शनचारित्ररूपमोक्षमार्गानतिक्रमेण, क्षयोपशमभावानतिक्रमेण वा। 'अहातच्चं' यथा तत्त्वम्=तत्त्वानतिक्रमेण यद्वा 'यथा तथ्यम्' इतिच्छायापक्षे सत्यानुसारम्, 'अहा सम्मं' यथा साम्य = समभावमनतिक्रम्य — सुष्ठुप्रकारेण कर्मनिर्जरणभावनयेत्यर्थ 'काएण' कायेन=शरीरेण न पुनरभिलापमात्रेण 'फासेइ' स्पृशति-समुचितकाले सविधिग्रहणात् 'पालेइ' पालयति = वारंवारमुपयोगेन तस्यां तत्परत्वात्।

इस लिये इस कथन में कोई विरोध नहीं है। क्यों कि सर्वज्ञ भगवान जो कुछ कहते हैं वह द्रव्य क्षेत्र कालभाव को देखकर ही कहते हैं। (तएणं से खंदए अणगारे) मासिकी प्रथम भिक्षु प्रतिमा धारण कर लेने के बाद उन स्कन्दक अनगार ने उस (मासियभिक्खुपडिमं) मासिक भिक्षु प्रतिमा को (अहासुत्त) सूत्रकथित विधि के अनुसार (अहाकप्पं) स्थविरादि कल्प के अनुसार (अहामग्गं) सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान और सम्यक् चारित्र रूप मोक्षमार्ग के अनुसार अथवा यथातथ्य-सत्य के अनुसार, (अहासम्मं) समभाव के अनुसार अथवा कर्म निर्जरा की भावना के अनुसार, (काएण) अपने शरीर से किन्तु अभिलाषा मात्र से नहीं (फासेइ) स्पर्श किया अर्थात्-समुचित काल में विधि सहित उसे ग्रहण किया। अत (पालेइ) वारंवार

મહાવીર પ્રભુની આજ્ઞા લઈને ભિક્ષુપ્રતિમાનુ આરાધન કર્યુ હતુ તેથી તે કથનમા કોઈ શંકા રહેતી નથી. કારણ કે સર્વજ્ઞ ભગવાન જે કંઇ કહે છે તે દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાળ અને ભાવને જોઈને જ કહે છે

"तएणं से खंदए अणगारे" त्यार બાદ સ્કન્દક અણગારે "मासियं भिक्खुपडिमं" માસિક ભિક્ષુપ્રતિમાનુ 'अहासुत्त' સૂત્રમાં બતાવેલી વિધિ પ્રમાણે, "अहामग्गं" સમ્યક્ દર્શન સમ્યક્ જ્ઞાન અને સમ્યક્ ચારિત્ર રૂપ મોક્ષમાર્ગાનુસાર અથવા પોતાના ક્ષયોપશમ ભાવઅનુસાર 'अहा तच्च" તત્ત્વ અનુસાર અથવા સત્યને અનુસરીને, "अहासम्म' સમભાવ અનુસાર અથવા કર્મનિર્જરાની ભાવના અનુસાર, 'काएण' પોતાના શરીરથી નહી કે માત્ર અભિલાષાથી જ-'फासेइ' સ્પર્શ કર્યો-એટલે કે એક માસ સુધી વિધિ સહિત તેની આરાધના કરી पालेइ યતના પૂર્વક આરાધના કરવાને

अथायमेकादशांगधारीकथितः, प्रतिमाश्च विशिष्य श्रुतवानेव करोति तदुक्तम्—

" गच्छे च्चिय निम्माओ, जा पुव्वा दस भवे असंपुण्णा ।
नवमस्स तइय वत्थू होइ जहन्नो सुयाहिगमो ॥ १ ॥ "

छाया—गच्छे एव कुशलः निर्मातो यावत् पूर्वाणि दश भवंत्यसंपूर्णानि ।
नियमस्य तृतीय वस्तु भवति जघन्य श्रुताधिगमः ॥ १ ॥ इति ॥

इत्यादि शास्त्रादेवमवगतं भवति यत् यो हि उत्कृष्टेन किञ्चिदून दश पूर्वधरः, जघन्येन नवमपूर्वस्य तृतीय वस्तु पाठको भवेत् स एव भिक्षुप्रतिमां कर्तुं शक्नुयात् स्कन्दकस्तु न पूर्वधारी तत्कथमेतस्यैतादृश तपो विशेषेऽधिकारः कथितः इति चेदुच्यते—प्रकृतश्रुतनियमः पुरुषान्तरविषयः । स्कन्दकस्य तु सर्वविन्महा-

आता कारण कि प्रतिमाओं की आराधना तो जो विशिष्ट श्रुतज्ञान वाला होता है वही कर सकता है ऐसा ही सिद्धान्त में कहा गया है को—

" गच्छे च्चिय निम्माओ, जा पुव्वा दस भवे असंपुण्णा ।
नवमस्स तइय वत्थू, होइ जहण्णो सुयाहिगमो " ॥ १ ॥

जो गच्छ में कुशल और उत्कृष्ट से कुछ कम दश पूर्वका धारी हो तथा जघन्य से नौवें पूर्वकी तृतीय वस्तु का ज्ञाता हो, वही भिक्षु प्रतिमाओं की आराधना कर सकता है स्कन्दक अनगार तो पूर्व के धारी थे नहीं तो फिर इनका इस प्रकार के तपोविशेष में अधिकार कैसे कहा ? । उत्तर—शास्त्र में जो ऐसा कहा गया है सो ऐसा यह नियम दूसरे पुरुषों के लिये हैं-स्कन्दक अनगार के लिये यह नियम लागू नहीं पडता है क्यों कि वे जो भिक्षु प्रतिमा पालन करने में प्रवृत्त हुए सो साक्षात् सर्वज्ञ भगवान महावीर तीर्थंकर के उपदेश से ही हुए हैं।

શંકા—ભિક્ષુ પ્રતિમાઓનું આરાધન તો વિશિષ્ટ શ્રુતજ્ઞાન વાળા જ કરી શકે છે એવું સિદ્ધાંતમાં કહ્યું છે જેમ કે—

" गच्छे च्चिय निम्माओ, जा पुव्वा दसभवे असंपुण्णा ।
नवमस्स तइय वत्थू, होइ जहण्णो सुयाहिगमो " ॥ १ ॥

ભિક્ષુપ્રતિમાની આરાધના એજ મુનિ કરી શકે છે કે જે ગચ્છમાં કુશલ હોય, જે વધારેમાં વધારે દસ પૂર્વથી કંઈક ઓછા જ્ઞાનનો ધારી હોય અને ઓછામાં ઓછો નવમાં પૂર્વની ત્રીજી વસ્તુનો (વત્થુનો) જ્ઞાતા હોય. જ્યારે સ્કન્દક અણગાર તો પૂર્વના ધારક ન હતા તેઓ તો અગિયાર અંગના જ પાઠી (ધારક) હતા તો આ પ્રકારના વિશિષ્ટ તપની આરાધના કરવાનો અધિકાર તેમને કેવી રીતે હોઈ શકે ?

ઉત્તર—શાસ્ત્રનો એ નિયમ બીજી વ્યક્તિઓને માટે છે પણ સ્કન્દક અણગારને તે નિયમ લાગુ પાડી શકાય નહીં, કારણ કે તેમણે સાક્ષાત્ સર્વજ્ઞ

" अणुपालेइ " अनुपालयति-प्रतिमासमाप्तौ तदनुमोदनात्। किमुक्तं भवति? " आणाए आराहेइ " आज्ञया=भावदाज्ञानुसारेण आराधयति। " सम्मं काएण फासित्ता " सम्यक् कायेन स्पृष्ट्वा ' जाव आराहेत्ता " यावत्=माराध्य, अत्र यावत्पदेन- ' पालित्ता सोहित्ता तीरित्ता पूरित्ता किट्टित्ता अणुपालित्ता आणाए" इति छाया—पालयित्वा शोधयित्वा (शोभयित्वा तीरयित्वा पूरयित्वा कीर्तयित्वा अनुपालयित्वा आज्ञया) इति संग्रह।

स्कन्दकोऽनगारो मासिकीं भिक्षुप्रतिमां सविधि समाराध्य "जेणेव समणे भगवं महावीरे " यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीरः " तेणेव उवागच्छइ " तत्रै

प्रतिमा में अच्छी तरहसे आराधित हुआ है अतः मैं प्रतिमा को अच्छी तरह से पालित कर चुका हूं इस प्रकार से उसका कीर्तन करते। (अणुपालेइ) प्रतिमा की समाप्ति होने पर भी वे उसकी अनुमोदना किया करते। इस तरह उन स्कन्दक अनगारने उस पहिली भिक्षु प्रतिमा का (आणाए आराहेइ) प्रभुकी आज्ञा के अनुसार आराधन किया। (सम्मं काएण फासित्ता) इस प्रकार वे स्कन्दक अनगार प्रथम भिक्षु प्रतिमा का अपने शरीर से स्पर्श करके (जाव आराहेत्ता) यावत् उसका सविधि आराधन करके यावत्शब्द से " पालित्ता, सोहित्ता, तीरित्ता, पूरित्ता, किट्टित्ता अणुपालित्ता आणाए " इस पाठ का यहां संग्रह किया गया है-इन पदों का अर्थ-पालन करके, शोधित या शोभित करके, तोरित करके, पूरित करके, कीर्तित करके, अणुपालीत करके, आज्ञा से आराधित करके (जेणेव समणे भगवं महावीर) जहां श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे (तेणेव उवागच्छइ) वहां पर आये।

હતો અને મે આ ભિક્ષુપ્રતિમાના તે અભિગ્રહનુ સારી રીતે પાલન કર્યુ છે તે કારણે ભિક્ષુપ્રતિમાનુ બરાબર પાલન કર્યુ છે એ પ્રમાણે તેનુ કીર્તન ગુણગાન કર્યુ અણુપાલેइ ભિક્ષુપ્રતિમાની સમાપ્તિ થયા પછી પણ તેઓ તેની અનુમોદના કરતા હતા આ પ્રમાણે સ્કંદક અનગારે પહેલી ભિક્ષુ પ્રતિમાનુ आणाए आराहेइ પ્રભુની આજ્ઞા અનુસાર આરાધન કર્યુ ' सम्मं काएण फासित्ता આ રીતે પહેલી ભિક્ષુપ્રતિમાનુ પોતાની કાયાથી બરાબર આરાધન કરીને जाव आराहेत्ता તેનુ પાલન કરીને તેને શોધિત અથવા શોભિત કરીને તીરિત કરીને પૂરિત કરીને, કીર્તિત કરીને, અનુપાલિત કરીને અને ભગવાનની આજ્ઞાનુસાર આરાધન કરીને " जेणेव समणे भगवं महावीरे જ્યાં શ્રમણ ભગવાન મહાવીર બિરાજમાન હતા, ' तेणेव

'सोहेइ' शोधयति-अतिचारपङ्कप्रक्षालनात्, यद्वा 'शोभयति' इति-छायायां पारणदिने गुर्वादिदत्तावशिष्टभोजनात्। 'तीरेइ' तीरयति-पूर्णेऽपि तदवधौ स्वल्पकालावस्थानात् 'पूरेइ' पूरयति-पूर्णेऽपि तदवधौ तत्कृतपरिमाणपूरणात्। 'किट्टेइ' कीर्तयति-पारणादिने "अयमयं चाभिग्रहविशेषः कृत आसीत्, अस्यां प्रतिमायां स चाराधित एव, अधुना पारितप्रतिमोऽहम्, इति गुरुसमक्षं कीर्त्तनात्।

उपयोग पूर्वक उसमें तत्पर रहने के कारण उन्होंने उसका अच्छी तरह से पालन किया। (सोहेइ) इसमें किसी भी प्रकार से अतिचार रूप पङ्क मैल न लग जाय इस बात का सदा ध्यान रखने के कारण अथवा लगे हुए अतिचाररूप पङ्क (कीचड) के प्रक्षालन करने के कारण उन्होंने उसे शोधित किया। अथवा (सोहेइ) की छाया (शोभयति) ऐसी भी हो सकती है सो इस पक्ष में इसका अर्थ ऐसा होता है कि पारणा के दिन गुरु आदि द्वारा दिये गये अवशिष्ट भोजन करने से उसको उन्होंने शोभायुक्त किया। 'तीरेइ' उसकी अवधि समाप्त हो जाने पर भी वे उसे थोडे समय तक और भी पालन करते रहते इस कारण मानों वे उसे उन्होंने तीरयुक्त किया अर्थात् समाप्त किया। 'पूरेइ' उसकी अवधि समाप्त हो जाने पर भी उस संबंधी कार्यों के परिमाण की वे पूर्ति करते रहते इस कारण उन्हों उसे पूरा किया। 'किट्टेइ' जब पारणा करने का दिन आता तब वे गुरु के समक्ष जाकर ऐसा कहते कि मैंने ऐसा अभिग्रह लिया था-और वह मेरा अभिग्रह इस

કારણે તેમણે સારી રીતે તેનું પાલન કર્યું. "सोहेय" તેમા કોઇ પણ પ્રકારના અતિચાર (દોષ) રૂપ મેલ લાગી ન જાય તેની કાળજી રાખવાને કારણે અથવા જે અતિચારરૂપ મેલ લાગ્યો હોય તેને સાફ કરવાને કારણે તેમણે તેને શોધિત કર્યું-શુદ્ધ કર્યું અથવા-"सोहेइ"ની છાયા "शोभयति" પણ થઇ શકે છે જો એ દૃષ્ટિએ તેના અર્થનો વિચાર કરવામા આવે તો તેનો અર્થ આ પ્રમાણે પણ ઘટાવી શકાય કે પારણાને દિવસે ગુરુ વગેરે મારફત અપાયેલું વધેલું ભોજન કરવાથી તેમણે તપસ્યાની શોભામા અભિવૃદ્ધિ કરી. "तीरेइ" તપની સમયમર્યાદા પૂરી થયા પછી પણ થોડા સમય સુધી તેમણે તેનું પાલન કર્યા કર્યું. તે કારણે જાણે કે તેઓ તેને તરી ગયા એટલે તેમણે ભિક્ષુપ્રતિમાને સમાપ્ત કરી. (पूरेइ) તપની અવધિ પૂર્ણ થઇ જવા છતા પણ તપસ્યા સંબંધી કાર્યોના પરિમાણની તેઓ પૂર્તિ કરતા રહ્યા, તે કારણે તેમણે તે પૂરી કરી, (किट्टेइ) જ્યારે પારણાનો દિવસ આવ્યો ત્યારે તેમણે ગુરુની પાસે જઇને એવું કહ્યું કે મે આ પ્રકારનો અભિગ્રહ લીધો

विशेषस्त्वेतावानेव-अत्र द्वैमासिक्यां भिक्षुप्रतिमायां द्वे दत्ती भोजनस्य द्वे प मतिदिन मासद्वयपर्यन्तं ग्रहीतव्ये भवतः ।

शेष सर्वं मासिकी भिक्षुप्रतिमावदेव विज्ञेयमिति 'एवं' एवम्-अनेनैव प्र "तेमासिय, चाउमासियं, पंचमासियं, छमासियं, सत्तमासियं, ' त्रैमासि चातुर्मासिकी पञ्चमासिकी, पाण्मासिकी, सप्तमासिकी, भिक्षुप्रतिमा इति सह इमा विज्ञेया यथाविधि समाराधयति। विशेषः केवलमयम् यत्-त्रैमासि भोजनपानयोस्तिस्रस्तिस्रो दत्तयः, चातुर्मासिक्यां चतस्रः२, पञ्च मासिक्यां प पाण्मासिक्या पट ६, सप्तमासिक्यां सप्तसप्तदत्तयो ग्रहीतव्या भवन्ति

और पान-पानी की एक-एक दत्ति होती है-यहां वे दो दो होती अर्थात् आहार की दो दत्तियां और पानी की दो दत्तियां दो महिने प्रतिदिन ली जाती हैं। बाकी का और सब कथन प्रथम भिक्षुप्रतिमा तरह से ही जानना चाहिये। इसी प्रकार से (त मासिय, चाउमासी पंचमासिय, छम्मासिय, सत्तमासियं) तीनमासवाली तीसरी भि प्रतिमा, चारमासवाली चौथी भिक्षुप्रतिमा, पांचमासवाली पांचवीं भि प्रतिमा छहमासवाली छठी भिक्षुप्रतिमा, सातमासवाली सातवीं भिक्षु प्रतिमा के विषय में भी जानना चाहिये। विशेषता केवल इनमें इतन ही है कि तीनमासवाली भिक्षुप्रतिमा में आहार और पानी की तीन तीन दत्तियां होती हैं, चारमासवाली चौथी भिक्षुप्रतिमा में आहा और पानी की चार-चार दत्तियां होती हैं। पांचमास की अवधि वाली पांचमी भिक्षुप्रतिमा में आहार और पानी की पांच-पांच दत्तियां होती हैं। छहमासवाली छट्ठी भिक्षुप्रतिमा में आहार और पानी की छ छह दत्तियां होती हैं। सातमासवाली सातवीं भिक्षुप्रतिमा में आहार

અને પાણીના એક એક દાત ગ્રહણ કરાય છે જ્યારે બીજી ભિક્ષુપ્રતિમામાં આહાર અને પાણીની બે બે દાત ગ્રહણ કરવામાં આવે છે આહારની બે દત્તિયો બે માસ સુધી દરરોજ લેવામાં આવે છે બાકીનું સમસ્ત કથન પહેલી ભિક્ષુપ્રતિમા પ્રમાણે જ સમજવુ એ જ પ્રમાણે "તેમાસિય, ચાઉમાસિયં, પંચમાસિય, છમ્માસિય, સત્તમાસિયં' ત્રૈમાસિક ચતુર્માસિક, પંચમાસિક છમા સિક અને સપ્તમાસિક પ્રતિમાઓના વિષયમાં પણ સમજવું તેમાં વિશેષતા આ પ્રમાણે છે-ત્રમાસિક ભિક્ષુપ્રતિમામાં આહાર અને પાણીની ત્રણ ત્રણ દત્તિયો લેવાય છે ચતુર્માસિક ભિક્ષુ પ્રતિમામાં આહાર અને પાણીની ચાર ચાર દત્તિયો લેવાય છે પાંચ માસ આવતી પાંચમી ભિક્ષુ પ્રતિમામાં આહાર અને પાણીની પાંચ પાંચ દત્તિયો લેવાય છે છ માસની અવધિવાળી છઠ્ઠી ભિક્ષુ પ્રતિમામાં આહાર અને પાણીની છ છ દત્તિયો લેવાય છે સાત માસની

वोपागच्छति "उवागच्छित्ता" उपागत्य "समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता" श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा "एवं वयासी" एवं वक्ष्यमाणप्रकारेणावादीत्—'इच्छामि णं भंते" इच्छामि खलु हे भदन्त! "तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे" युष्माभिरभ्यनुज्ञातः सन् "दोमासियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ता विहरित्तए" द्वैमासिकीं भिक्षुप्रतिमामुपसंपद्य खलु विहर्तुम् भवदाज्ञया द्वैमासिकीं भिक्षुप्रतिमां स्वीकर्तुमिच्छामीति भावः, ततो भगवान्-अवादीत् "अहासुहं देवाणुप्पिया" यथासुखं देवानुप्रिय! "मा पडिबंधं करेह" मा प्रतिबन्धं कुरु शुभकार्ये विलम्बो न करणीय इति भावः "तं चेव" तदेव-मासिकी भिक्षुप्रतिमावदेव-सर्वोऽपि पाठोऽध्येतव्यः।

(उवागच्छित्ता) वहां आकर उन्हों ने (समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ) श्रमण भगवान महावीर को वंदन किया उन्हें नमस्कार किया। (वंदित्ता नमंसित्ता) वंदना नमस्कार करके फिर उन्हों ने प्रभु से (एवं वयासी) इस प्रकार कहा-(इच्छामि णं भंते!) हे भदन्त! मैं चाहता हूं कि (तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे) मैं आप से आज्ञा प्राप्त कर (दो मासीयं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ता णं विहरित्तए) दो मास की अवधिवाली भिक्षुप्रतिमा का पालन करूँ। तब भगवान ने उनसे कहा-(अहासुहं देवाणुप्पिया मा पडिबंधं करेह) हे देवानुप्रिय! तुम्हें जैसा रुचे वैसा करो-शुभकार्य में विलम्ब मत करो। (तचेव) इस द्वितीय भिक्षुप्रतिमा के संबंध में भी प्रथम भिक्षु प्रतिमा की तरह समस्त पाठ लगा लेना चाहिये। यहां पर जो विशेषता है वह इस प्रकार से है-कि जिस प्रकार से प्रथम भिक्षु प्रतिमा में अन्न-आहार

उवागच्छइ" त्यां गया. 'उवागच्छित्ता" त्यां જઈને તેમણે "समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ" શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને વંદન નમસ્કાર કર્યા "वंदित्ता नमंसित्ता" વંદન નમસ્કાર કરીને તેમણે તેમને "एवं वयासी" આ પ્રમાણે કહ્યુ-"इच्छामि णं भंते!" હે ભગવન્! મારી એવી ઇચ્છા છે કે "तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे" આપનીજો આજ્ઞા હોય તો 'दो मासियं-भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए" બે માસની અવધિવાળી ભિક્ષુપ્રતિમાની આરાધના કરૂં ત્યારે ભગવાને સ્કન્દક અણગારને કહ્યુ-'अहासुहं देवाणुप्पिया मा पडिबंधं करेह" હે દેવાનુપ્રિય! તમને જેમ સુખ ઉપજે તેમ કરો. શુભ કાર્યોમાં વિલંબ કરશો નહીં'. "तं चेव" આ બીજી ભિક્ષુપ્રતિમાના વિષયમાં પણ તમામ સૂત્ર પાઠ પહેલી ભિક્ષુપ્રતિમા પ્રમાણે જ સમજી લેવો. પણ તેમાં આ પ્રમાણે વિશેષતા છે-પહેલી ભિક્ષુપ્રતિમામાં દરરોજ આહાર

भिक्षुप्रतिमामुपसम्पद्य खन्दको विहरति, विधिपूर्वकं समाराध्य आज्ञया आराधको भवति इति। तत्राष्टम्यां भिक्षुप्रतिमायां चतुर्विधाहारपरित्यागपूर्वकमेकान्तरोपवाससेवनम्, ग्रामाद्बहिः कायोत्सर्गकरणम्, उत्तानक-पार्श्विक-नैषधिकेति त्रिषु आसनेषु एकस्यासनस्य स्वीकरणम्। तत्र यदि शयीत तदा उत्तान एकपार्श्वो वा शयीत। यदि आसीत तदा नैषधिकेनासनेन आसीत। निषद्यायां भवं नैषधिकम्। निषद्यानाम-उपवेशनप्रकारः सा पञ्चविधा-समपादपुता-१, गोनिषद्यिका-२, हस्तिशुण्डिका ३, पर्यङ्का-४, अर्द्धपर्यङ्का५, चेति। तत्र यस्यां समौ

होती है, तथा तृतीय भिक्षु प्रतिमा को अर्थात् दशवीं भिक्षु प्रतिमा को कि जो सात दिनरात में आराधित होती है उन स्कन्दक अनगार ने सविधि आराधित कर के (आज्ञया आराधको भवति) आज्ञा से इनका आराधन करने वाले बन गये। इन प्रथमा, द्वितीया और तृतीया प्रतिमाओं के बीच में जो प्रथमा-आठवीं-भिक्षुप्रतिमा है-उसमें चतुर्विध आहार का परित्याग करते हुए एकान्तरोपवास करना चाहिये। गांव से बाहर कायोत्सर्ग करना चाहिये। उत्तानक, पार्श्विक, एवं नैषधिक इन तीन आसनों में से किसी एक आसन को स्वीकार करना चाहिये। यदि सोवे तो उस समय उत्तानक या एक पार्श्व होकर सोवे यदि बैठे तो उस समय नैषधिक आसन से बैठे। (निषद्या) यह बैठने का एक प्रकार होता है इससे होने वाला नैषधिक कहलाता है। निषद्या पांच प्रकार की कही गई है-१ समपादपुता, २ गोनिषद्यिका ३ हस्तिशुण्डिका, ४ पर्यङ्का और ५ अर्द्धपर्यङ्का। जिस आसन में दोनों पैर और पुत-बैठक भूमि का स्पर्श

અને ત્રીજી પ્રતિમા એટલે કે દસમી ભિક્ષુ પ્રતિમા કે જેની આરાધના પણ સાત દિનરાત કરવી પડે છે તેનું પણ સ્કન્દક અણગારે વિધિપૂર્વક "आज्ञया आराधको भवति" શાસ્ત્રાજ્ઞા પ્રમાણે આરાધન કર્યું. આ ત્રણ પ્રતિમાઓમાંની પહેલી (આઠમી ભિક્ષુપ્રતિમા) નું આરાધન કરનારે ચાર પ્રકારના આહારનો ત્યાગ કરીને એકાન્તર ઉપવાસ કરવા જોઈએ. ગામની બહાર કાયોત્સર્ગ કરવો જોઈએ ઉત્તાનક પાર્શ્વિક અને નૈષધિક એ ત્રણમાંના કોઈ પણ એક આસને બેસવું જોઈએ સૂવે ત્યારે ચત્તા અથવા એક પડખે સૂવે બેસે ત્યારે નૈષધિક આસને બેસે निषद्या એ બેસવાની એક રીત છે તે દ્વારા બનતાં આસનને નૈષધિક કહે છે તે નિષદ્યા પાંચ પ્રકારની કહી છે-(૧) સમપાદપુત (૨) ગોનિષદ્યિકા (૩) હસ્તિશુંડિકા, (૪) પર્યંકા અને (૫) અર્ધપર્યંકા

सर्वं पूर्ववदेव। एतास्तिस्रः प्रथमा द्वितीया तृतीयेति शब्देन कथ्यन्ते। ता एवाह- अष्टमी नवमी दशमी एतास्तिस्रोऽपि सप्त सप्त रात्रिन्दिवा संपाद्या भवन्ति। "पढमं सत्तराइंदियं" इत्यादि। 'पढमं' प्रथमाम् तत्राष्टम्यां भिक्षुप्रतिमायां चतुर्विधाहारपरित्यागपूर्वक = अष्टम्यादिषु तिसृषु प्रथमाम् = अष्टमीमित्यर्थः "सत्तराइंदिय" सप्तरात्रिन्दिवां = सप्ताहोरात्रसम्पाद्यां भिक्षु-प्रतिमामुपसम्पद्य स्कन्दको विहरतीति सम्बन्धः। 'एवम्' 'दोच्चं' द्वितीयां = नवमीमित्यर्थः। "सत्तराइंदिय" सप्तरात्रिन्दिवां = सप्ताहोरात्रसम्पाद्याम्। 'तच्चं" तृतीयां दशमीमित्यर्थः 'सप्तराइंदिय' सप्तरात्रिन्दिवां सप्ताहोरात्रसम्पाद्यां

और पानी की सात-सात दत्तियां होती हैं। बाकी का सब कथन पहिली प्रतिमा की तरह से इन प्रतिमाओं में भी जानना चाहिये। इनके बाद आठवीं भिक्षु प्रतिमा आती है सो यह (प्रथमा) इस शब्द से और नवमीं प्रतिमा (द्वितीया) शब्द से और दसवीं प्रतिमा (तृतीया) शब्द से कही जाती है। ये तीनों ही प्रतिमाएँ सात-सात दिनरात के प्रमाणवाली होती हैं-अर्थात् इनके पालन करने का प्रमाण सात-सात दिनरात का है। यही बात (पढम सत्तराइंदियं) इस सूत्रपाठ द्वारा समझाई गई है। अष्टमीं-नवमीं और दशवीं इनमें से जो पहिली भिक्षु प्रतिमा है अर्थात्-आठवीं भिक्षु प्रतिमा है वह सात दिनरात में आराधित होती है। इस सात दिन रात की मर्यादावाली भिक्षु प्रतिमा को उन स्कन्दक अनगार ने धारण किया। इसी तरह द्वितीय प्रतिमा को अर्थात् नवमी भिक्षु प्रतिमा को कि जो सात दिनरात में आराधित

અવધિવાળી સાતમી ભિક્ષુ પ્રતિમામાં આહાર અને પાણીની સાત સાત દત્તિયો લેવાય છે બાકીનુ સમસ્ત કથન આ પ્રતિમાઓમાં પણ પહેલી પ્રતિમા પ્રમાણેજ સમજવું. ત્યાર બાદ આઠમી ભિક્ષુપ્રતિમા આવે છે તેને "પ્રથમા" શબ્દથી ઓળખવામા આવે છે નવમી પ્રતિમાને "દ્વિતીયા" શબ્દથી અને દસમી પ્રતિમાને "તૃતીયા" શબ્દથી ઓળખવામાં આવે છે તે ત્રણ પ્રતિમાઓની આરાધના કરવાની અવધિ સાત સાત દિનરાતની છે એજ વાત 'પઢમં સત્ત-રાઇદિય" સૂત્ર દ્વારા સમજાવવામા આવેલ છે આઠમી નવમી અને દસમી પ્રતિમાઓમાથી જે પહેલી ભિક્ષુપ્રતિમા છે તેનું, એટલે કે આઠમી પ્રતિમાનુ સાત દિનરાત આરાધન કરવું પડે છે તે સાત દિનરાતની અવધિવાળી ભિક્ષુ પ્રતિમાનું પણ સ્કન્દક અણગારે આરાધન કર્યું એજ પ્રમાણે બીજી પ્રતિમા, એટલે કે નવમી ભિક્ષુ પ્રતિમા કે જેની આરાધના સાત દિનરાત કરવી પડે છે,

न्येन यदासन तत्-लगण्डासनम् । २ उत्कुटुकासने नाम-पुतस्य (भोणिभागस्य) भूमावलगनेनोपवशनमिति ३ ।

दशम्यां प्रतिमायां तपश्चरण पूर्ववदेव । अत्रेमानि त्रीणि आसनानि-वीरासनं गोदोहिकासन, आम्रकुब्जासन चेति । तत्र वीरासनम्-निरालम्बेऽपि सिंहासनोपविष्टवत् भून्यस्तचरणमुक्तजानुकमुपवेशनम् । सिंहासनोपविष्टस्य सिंहासनेऽपसारिते यादृगवस्थान भवति तदाकारेणावस्थान वीरासनमुच्यते वीरपुरुषाचरणीयत्वेनातिदुष्करत्वादस्येति । गोदोहिकासनम् – गोदोहिका=गोदोहनं तद्वद् यदासन तद्गोदोहिकासनम्, यथा गोदोहको गोदोहनवेलायामास्ते तद्वद् पारा-

सबध रखते हैं और पीठ-पृष्टभाग-जमीन से संबंध नहीं रखना, अर्थात् वह उससे ऊपर-अस्पृष्ट रहता है अतः ऐसा जो आसन होता है वह लगण्डासन है २। जिस आसन में बैठने में पुत-बैठक जमीन से न लगें-ऊपर ही रहें वह आसन उत्कुटुक आसन है ३। दशवीं प्रतिमा में तपस्या पहिले की तरह ही सात दिन रात तक की होती है। इसमें ये तीन आसन होते हैं वीरासन १, गोदोहिकासन २, आम्र कुब्जासन ३। वीरासन यह है कि किसी आदमी को कुर्सी पर बैठा दो और फिर उसके नीचे से वह कुर्सी नीकाल दो-इस स्थिति में वह व्यक्ति जैसे पहिले कुर्सी पर बैठा था कुर्सी के निकालने पर यदि उसी स्थिति में बैठा रहता है-तो वह वीरासन है। इसको वीरासन इसलिये कहते हैं कि यह आसन वीरपुरुषों द्वारा ही आचरणीय होता है २। जिस प्रकार गाय का दूध निकालने वाला व्यक्ति गाय को दुहते समय बैठता है-ऐसे आसन से जो बैठना होता है वह गोदोहिकासन है।

भूमिने स्पर्शतो नथी જે આસનમાં બેસતી વખતે પુત "કુલા" જમીનથી અદ્ધર જ રહે છે તે આસનને ઉત્કુટુકાસન કહે છે

દસમી ભિક્ષુપ્રતિમામાં પણ પહેલી બે-આઠમી અને નવમી પ્રતિમા પ્રમાણે જ સાત દિનરાતની તપસ્યા કરાય છે પણ દસમી પ્રતિમામાં આ ત્રણ આસનો થાય છે-(૧) વીરાસન, (૨) ગોદોહિકાસન અને (૩) આમ્રકુબ્જાસન ખુરશી પર બેઠેલા માણસની નીચેથી ખુરશીને ખસેડી લેવામાં આવે છતાં પણ ખુરશી પર બેઠો હોય એજ રીતે જે આસનમાં બેસવામાં આવે છે તે આસનને વીરાસન કહે છે તેને વીરાસન કહેવાનું કારણ એ છે કે તે આસન વીર પુરુષો દ્વારા આચરણીય છે ગાયને દોહતી વખતે જે રીતે બેઠ

पादौ पुतौ च भूमिं स्पृशतः सा समपादपुता १, यस्यां गोरिवोपवेशनं सा गोनिषद्यिका २, यस्यां च समपादाभ्यां समपुताभ्यां चोपविश्यैकस्य पादस्य हस्तिशुण्डाकारेण प्रसारणं भवति सा हस्तिशुण्डिका ३। पर्यङ्का=पद्मासनरूपा ४, यस्यामेकं जानुमुत्पादयति सा—अर्धपर्यङ्का ५, इति।

नवम्यां भिक्षुप्रतिमायामपि चतुर्विधाहारपरिहारपूर्वकमेकान्तरोपवाससेवनम्। विशेषस्त्वासनविषयक एव। अत्र दण्डासनं, लगण्डासनम्, उत्कुटुकासनं चेति। तत्र—दण्डासनं नाम पादाग्रादिप्रसारणेन दण्डवत्पतनरूपम्। १ लगण्डं वक्रकाष्ठम्, तद्वत् मस्तक पार्ष्ण्यादि भागानां भूमिसम्बन्धेन, पृष्टस्य च सम्ब-

करते हैं वह समपादपुतानिषद्या है। जिस में गाय के जैसा बैठना होता है वह गोनिषद्यिका है। जिस निषद्या में दोनों पैरों से और दोनों पुतों से समान बैठ कर फिर हाथी कीसूंड के समान एक पैर फैलाकर जो बैठना होता है वह हस्तिशुण्डि का है। पद्मासन माडकर बैठना यह पर्यङ्का निषद्या है। जिसमें एक पैर को दूसरे पैर पर बैठना होता है वह अर्धपर्यङ्का निषद्या है। नौमी भिक्षुप्रतिमा में भी चतुर्विध आहार का परित्याग करके एकान्तरोपवास किया जाता है। इनमें विशेषता केवल आसन को लेकर होती है। इसमें दण्डासन १, लगण्डासन २ उत्कुटुकासन ३ ये तीन आसन होते हैं। पावों के अग्रभाग आदि के फैलाने से दण्ड की तरह पडजाना यह दण्डासन है १। वक्र काष्ठ का नाम लगण्ड है इस आसन में मस्तक एवं पार्ष्णि-ऐडि आदि भाग भूमि से

જે આસનમા બન્ને પગ અને પુત (કુલા) બેસવાની ભૂમિને સ્પર્શે છે, તે આસનને (સમપાદપુત નિષદ્યા) કહે છે જે આસનમાં ગાયની જેમ બેસવું પડે છે તે આસનને "गोनिषद्यिका" કહે છે જે નિષદ્યામા બન્ને પગ અને બન્ને પુતોથી સમાન બેસીને એક પગને હાથીની સૂંઢની જેમ લબાવીને બેસવામા આવે છે તે આસનને (હસ્તિ શુડિકા) કહે છે પદ્માસને બેસવાની રીતને (પર્યંકાનિષદ્યા) કહે છે જે આસનમા એક પગને બીજા પગ પર રાખીને બેસવામા આવે છે તે આસનને "અર્ધપર્યંકા નિષદ્યા" કહે છે

નવમી ભિક્ષુ પ્રતિમામા પણ ચાર પ્રકારના આહારનો પરિત્યાગ કરીને એકાન્તર ઉપવાસ કરવા પડે છે જેમાં આસનની જ વિશિષ્ટતા હોય છે. તેમાં (૧) દડાસન, (૨) લગડાસન અને (૩) ઉત્કુટુકાસન એ ત્રણ આસનો હોય છે જે આસનમા પગના અગ્રભાગ આદિને ફેલાવીને દંડની જેમ પડી જવાય છે તે આસનને દડાસન કહે છે "લગંડ" એટલે વક્રકાષ્ઠ લગંડાસનમાં મસ્તક અને એડી આદિ ભાગ ભૂમિને સ્પર્શે છે પણ પીઠનો ભાગ

समाराध्य आज्ञया आराधको भवति। अस्यां प्रतिमायां ग्रामाद्बहिः कायोत्सर्गकरणम्। अपानक षष्ठ भक्तम्-उपवासद्वय करणीयं भवति। ऊर्ध्वस्थानेन स्थितस्य द्वौ पादौ किञ्चित्संकोच्य प्रलम्बित हस्तस्य जानुपर्यन्त प्रसारितभुजस्यावस्थानम्।

अथ द्वादशीं प्रतिमामाह-"एगराइयं" इत्यादि। 'एगराइय'-एकरात्रिकीम्-एकरात्रिसमाप्यां द्वादशीं भिक्षुप्रतिमामुपसंपद्य स्कन्दको विहरतीति। एषा चतुर्विधाहारपरित्यागपूर्वकमुपवासत्रयेण समाराध्यते। ग्रामादेर्बहिः कायोत्सर्गकरणम्। अस्यामीषत्प्रग्भारता नम्रीभूतेन कायेन, एकपुद्गलस्थितयाऽनिमेषया दृष्ट्या स्थिरीकृतशरीरावयवैः पादद्वयसमलनेन, अवलम्बितभुजाभ्यामवस्थानं भवति। एतादृशावस्थायां य कश्चित् देवमनुष्यतिर्यक्कृता उपसर्गा समुपस्थिता भवन्ति ते सुप्रणिहितमनोवाक्काये सम्यक्सोढव्या इत्येवं रूपां द्वादशीं भिक्षुप्रतिमां स्कन्दको

एक रात्रि से आराधित होनेवाली बारहवीं भिक्षुप्रतिमा को सविधि आराधित कर वे स्कन्दक अनगार आज्ञा के आराधक बने। यह बारहवीं प्रतिमा ग्यारहवीं प्रतिमा के बाद तेला करके उसरात को गाम से बाहर श्मसान आदि शून्यस्थान में जाकर वहां एक रात्रिभर कायोत्सर्ग करके आराधन की जाती है, इसमें जो अवस्थान होता है-आगे का शरीर कुछ झुका सा होता है। आंखें टिमकार रहित होती हैं अर्थात् आखों पलकमार बिना की रखी जाती हैं, दोनों पैर आपस में जुड़े हुए रखे जाते हैं। हाथ दोनों लटकते रहते हैं। दृष्टि एक किसी पुद्गल पर लगाई जाती है। इस अवस्था में जो कुछ भी देव, मनुष्य, तिर्यच कृत उपसर्ग उपस्थित होते हैं वे मन वचन और कायकी एकाग्रता करते हुए सहन करते हैं। इस प्रकार स्कन्दक अनगार ने इस बारहवीं भिक्षु

રાત્રિમા જેની આરાધના થાય છે તે બારમી ભિક્ષુપ્રતિમાનું સ્કન્દક અણગાર વિધિપૂર્વક આરાધન કરવા લાગ્યા બારમી ભિક્ષુપ્રતિમાની વિધિ આ પ્રમાણે છે અગિયારમી પ્રતિમાનું આરાધન કર્યા પછી અઠ્ઠમ કરીને-ત્રણ ઉપવાસ કરીને- ગામની બહાર સ્મશાન આદિ નિર્જન જગ્યામા જઈને રાત્રિભર કાયોત્સર્ગ કરીને આ પ્રતિમાની આરાધના કરાય છે તે પ્રતિમાના આરાધકે નીચે દર્શાવ્યા પ્રમાણે ઉભા રહીને કાયોત્સર્ગ કરવો પડે છે-શરીરને આગલો ભાગ સહેજ ઝુકેલો હોય છે આખો અનિમિષ (અપલક) રહે છે બન્ને પગ એક બીજા સાથે જોડાયેલા અને બન્ને હાથ લટકતા રહે છે નજર કોઈ એક પુદ્ગલ પર સ્થિર કરાય છે આ અવસ્થામા મનુષ્ય દેવ અને તિર્યચો દ્વારા જે ઉપસર્ગો થાય છે તેને મન વચન અને કાયાની એકાગ્રતા રાખીને સહન કરે છે સ્કન્દક

प्रतलाख्यामवस्थानम् । आम्रकुब्जासनम्=आम्रवत् कुब्जासनम्, सर्वं शरीरं संकोच्योपवेशनमिति । आसु-अष्टमी-नवमी-दशमीरूपासु तिसृषु प्रतिमासु प्रत्येक प्रतिमायामुक्तानामासनानामन्यतमासनावलम्बनेनावस्थानमिति समुदितार्थः । अथैकादशीं भिक्षुप्रतिमामाह—'अहोराइंदियं' इत्यादि । अहोराइंदियं । अहोरात्रिन्दिवाम्, एकादशी भिक्षुप्रतिमा 'अहोरात्रिन्दिवा' इति नाम्ना कथ्यते । ताम् एकाहोरात्रसंपाद्या भिक्षुप्रतिमामुपसंपद्य स्कन्दको विहरति । एनां विधिपूर्वकं

इस आसन में दोनों पैरों के अग्रभाग से बैठना होता है २ । समस्त शरीर को संकुचित करके जिस आसन से बैठा जाता है वह आम्रकुब्जासन है ३ । इन आठवीं नौवीं दसवीं भिक्षुप्रतिमाओं में जो ये आसन कहे गये हैं उनमें से किसी एक आसन का अवलम्बन कर बैठना चाहिये (१०) अब ग्यारहवीं भिक्षुप्रतिमा को सूत्रकार कहते हैं (अहोराइंदिए) ग्यारहवीं जो भिक्षुप्रतिमा है वह (अहोरात्रिन्दिवा) इस नाम से कही जाती है । इस (अहोरात्रिन्दिवा)(दिनरात) भिक्षुप्रतिमा को विधिपूर्वक पालन करके वे स्कन्दक आज्ञा के आराधक बनें । इस प्रतिमा में ग्राम से बाहर कायोत्सर्ग किया जाता है । चतुर्विधाहारत्याग पूर्वक षष्ठभक्त की तपस्या की जाती है । इस प्रतिमा में दोनों पैर कुछ सकोच कर और दोनों हाथ जानु पर्यन्त लटकाकर खडे रहना होता है । अर्थात् इस रूप से कायोत्सर्ग किया जाता है ११ । अब बारहवीं भिक्षु प्रतिमा का कथन करते हुए सूत्रकार कहते है कि (एगराइयं)

નાર વ્યક્તિ બેસે છે તેવી રીતે જે આસનમા બેસવુ પડે છે તે આસનને ગોદોહિકાસન કહે છે. તે આસનમાં બન્ને પગના અગ્રભાગ પર બેસવું પડે છે. સમસ્ત શરીરને સકુચિત કરીને જે આસનમા બેસાય છે તે આસનને આમ્રકુબ્જાસન કહે છે આઠમી, નવમી, અને દસમી ભિક્ષુપ્રતિમામાં જે આસનો દર્શાવ્યા છે તેમાના કોઈ પણ એક આસને આરાધકે બેસવુ જોઈએ, હવે સૂત્રકાર અગિયારમી ભિક્ષુપ્રતિમાનુ કથન કરે છે-"अहोराइंदिए" અગિયારમી ભિક્ષુપ્રતિમાને 'अहोरात्रिन्दिवा" નામથી ઓળખવામા આવે છે. સ્કન્દક અણગારે તે અગિયારમી ભિક્ષુપ્રતિમાનું વિધિપૂર્વક આરાધન કર્યું આ પ્રતિમાની આરાધના કરનારે ગામની બહાર જઈને કાયોત્સર્ગ કરવો પડે છે અને ચાર પ્રકારના આહારના પરિત્યાગ પૂર્વક ષષ્ઠભક્તની તપસ્યા કરવી પડે છે, એટલે કે છઠ્ઠ કરવો પડે છે કાયોત્સર્ગ કરતી વખતે બન્ને પગ એક બીજા સાથે સ્પર્શે તેમ ઉભા રહેવુ પડે છે. અને બન્ને હાથ લટકતા રહે છે. હવે સૂત્રકાર બારમી ભિક્ષુપ્રતિમાનુ વર્ણન કરતાં કહે છે-(एगराइयं) એક જે

उवागच्छइ ' यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीरस्तत्रैवोपागच्छति 'उवागच्छित्त
उपागत्य ' समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ वंदित्ता, नमंसित्ता ' श्रमणं भग
न्तं महावीरं वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा ' एवं वयासी ' एवमवादीत्
' इच्छामि णं भंते ! इच्छामि खलु हे भदन्त ! ' तुब्भेहिं अब्भणुन्नाए समाणे
युष्माभिरभ्यनुज्ञात सन् गुणरयण संवच्छरं तवोकम्मं ' गुणरत्न संवत्सरं त
कर्म ' उवसंपज्जित्ता णं विहरित्तए' उपसंपद्य खलु विहर्तुम् , गुणरत्नसंवत्सरत

प्रतिमा का विधिपूर्वक आराधन किया। इस तरह वे स्कन्दक अनगा
(एगराइय भिक्खुपडिम) एक रात की अवधिवाली इस बारहवीं भिक्षु
प्रतीमा को ' अहासुत्तं ' सूत्र में इसके आराधन करने की जैसी विधि
कही गई है उसके अनुसार 'जाव आराहेत्ता यावत आराधित करके
' जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ ' जहां श्रमण भग
वान् महावीर विराजमान थे वहां पर आये । (उवागच्छित्ता) श्रमण
भगवान् महावीर के पास आ करके उन्होंने (समणं भगवं महावीरं
वंदइ नमंसइ) श्रमण भगवान महावीर को वंदना की नमस्कार किया
(वंदित्ता नमंसित्ता) वन्दना नमस्कार करके फिर उन्होंने उनसे
इस प्रकार प्रार्थना की (इच्छामि णं भंते !) हे भदन्त ! मैं चाहता हूं
कि 'तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे ' आप से आज्ञा प्राप्त कर
गुणरयण संवच्छरं तवोकम्मं ' गुणरत्न संवत्सर नामक तप
स्वीकार करूं। अर्थात मैं गुणरत्न संवत्सर नामका तप स्वीकार
करना चाहता हूं। ' गुणरयण संवच्छरं ' इसकी संस्कृत छाया

અણગારે તે બારમી ભિક્ષુપ્રતિમાનું વિધિપૂર્વક આરાધન કર્યું આ રીતે
સ્કન્દક અણગારે (एगराइय भिक्खुपडिम) એક રાતની અવધિવાળી બારમી
ભિક્ષુપ્રતિમાનું (अहासुत्तं) સૂત્રમાં તેના આરાધનાની જે વિધિ બતાવી છે તે
પ્રમાણે (जाव आराहेत्ता) યાવત્ આરાધન કરીને (जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव
उवागच्छइ)ત્યારપછી જ્યાં શ્રમણ ભગવાન મહાવીર વિરાજતા હતા ત્યાં તેઓ
ગયા (उवागच्छित्ता) ત્યાં જઈને (समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ) તેમણે
શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને વંદણા નમસ્કાર કર્યા (वंदित्ता नमंसित्ता) વંદણા
નમસ્કાર કરીને તે વો તેમને આ પ્રમાણે વિનતિ કરી- (इच्छामि णं भंते)
હે ભદન્ત ! મારી એવી ઇચ્છા છે કે (तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे) આપની
આજ્ઞા પ્રાપ્ત કરીને (गुणरयण संवच्छरं तवोकम्मं) ગુણરત્ન સંવત્સર નામના
તપની આરાધના કરું એટલે કે હું ગુણરત્ન સંવત્સર તપની આરાધના કરવા
માગું છું (गुणरयणं संवच्छरं) ની સંસ્કૃત છાયા (गुणरत्न संवत्सर)

विधिपूर्वकं समराधयतीति। तत किमित्याह–'तएणं से' इत्यादि। 'तएणं से खंदए अणगारे' ततः खलु स स्कन्दकोऽनगार 'एगराइयं भिक्खुपडिमं' एकरात्रिकीं भिक्षुप्रतिमाम् 'अहासुत्तं' यथासूत्रम् सूत्रमनतिक्रम्य सूत्रप्रदर्शित मार्गानुसारेण 'जाव–आराहेत्ता' यावत्–आराध्य अत्र यावत्पदेन 'यथाकल्पम्, इत्यारभ्य, आज्ञया इति पर्यन्तानां मासिकी भिक्षुप्रतिमोक्तानां सर्वपदानां संग्रहः कार्यः तेन आराध्येति, आज्ञया आराध्य 'जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव

२१ प्रतिमायंत्र

प्रतिमा	समयः	विशेषविधिः
१ प्रथमा	एकमासिकी	भोजनपानयोरेकैका दत्तिर्ग्राह्या।
२ द्वितीया	द्वैमासिकी	भोजनपानयोर्द्वेद्वे दत्तिर्ग्राह्ये।
३ तृतीया	त्रैमासिकी	भोजनपानयोस्तिस्रस्तिस्रो दत्तयो ग्राह्याः।
४ चतुर्थी	चातुर्मासिकी	भोजनपानयोश्चतस्रश्चतस्रो दत्तायो ग्राह्याः।
५ पञ्चमी	पञ्चमासिकी	भोजनपानयोः पञ्च पञ्चदत्तायो ग्राह्याः।
६ षष्ठी	षाण्मासिकी	भोजनपानयोः षट् षट् दत्तयो ग्राह्याः।
७ सप्तमी	सप्तमासिकी	भोजनपानयोः सप्त सप्त दत्तायो ग्राह्याः।
८ अष्टमी	सप्तरात्रिन्दिवा	अपानकैकान्तरोपवासपारणके आचामाम्ले तपः) ग्रामादेर्बहिः कायोत्सर्गः, उत्तानकेमेकपार्श्विकेनैषधिकमिति त्रिष्वेकस्यासनस्य सेवनम् तत्रागत परिषहोपसर्गसहनं च।
९ नवमी	सप्तरात्रिन्दिवा	अन्यत्सर्वमष्टमी प्रतिमावत्करणम्। विशेष आसने–दण्डासन–लगण्डासनोत्कुटुकासनेष्वेकस्य सेवनम्।
१० दशमी	सप्तरात्रिन्दिवा	वीरासन गोदोहिकासननाम कुब्जासनमिति। अन्यत्सर्व पूर्ववत् स्थातव्यम्।
११ एकादशी	एकाहोरात्रा	अपानकषष्ठं तपः ग्रामादेर्बहिः प्रलम्बितभुजाभ्यां कायोत्सर्गकरणम्।
१२ द्वादशी	एकरात्रिकी	अपानकमष्टमं तपः ग्रामादेर्बहि एक पुद्गलस्थापित। निर्मेष दृष्टया ईषदवनतकायेन प्रलम्बितभुजाभ्यां कायोत्सर्गः तत्रागत परिषहोपसर्गसहनञ्च —



पडिबंध करेह ' मा प्रतिबन्धं विलम्बं कुरु, अथ स्कन्दको गुणरत्नकसंवत्सरतपः स्वीकरोतीत्याह ' तएणं से ' इत्यादि । ' तएणं से खंदए अणगारे ' ततः खलु स स्कन्दकोऽनगार: ' समणेणं भगवया महावीरेण ' श्रमणेन भगवता महावीरेण ' अब्भणुण्णाए समाणे ' अभ्यनुज्ञातः सन् 'जाव नमंसित्ता' यावत् नमस्यित्वा अत्र, ' हट्ठ ' इत्यग्रे ' जाव ' पदेन ' तुट्ठचित्तमाणंदिए पीइमणे पीइसोमणस्सिए हरिसवसविसप्पमाणहियए समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ वंदित्ता ' इति पदानां संग्रह । व्याख्यातस्त्रैव प्रकरणे पूर्व कृता ततोऽवसेयेति । ' गुणरयणसंवच्छरं तवोकम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ ' गुणरत्नसंवत्सरतपः कर्म उपसं-

वह तप गुणरत्न संवत्सर है। इस गुणरत्न संवत्सर तप के विषय में स्कन्दक ने जब प्रभु से पूछा तब प्रभु ने उनसे कहा- अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं करेह) हे देवानुप्रिय ! तुम्हें जिस प्रकार से सुख हो वैसा करो-पर शुभकार्य में विलम्ब मत करो। इस तरह प्रभु की आज्ञा प्राप्त कर स्कन्दक ने इस गुणरत्न संवत्सर तप को स्वीकार कर लिया-इसी बात को अब सूत्रकार समझाने के लिये कहते हैं—(तएणं से खंदए अणगारे समणेणं भगवया महावीरेणं अब्भणुण्णाए समाणे जाव नमंसित्ता गुणरयणसंवच्छरतवोकम्मं उवसंपज्जित्ता णं विहरइ) जब स्कन्दक अनगार के लिये श्रमण भगवान महावीर ने गुणरत्न संवत्सर तपको आराधित करने की आज्ञा प्रदान कर दी तब वे हृष्ट तुष्ट चित्त में आनन्दित होते हुए मन की प्रसन्नता के साथ हर्षित हृदय होकर उस तप को श्रमण भगवान महावीर को वंदन नमस्कार कर

ગુણરત્ન સંવત્સર છે આ ગુણરત્ન સંવત્સર તપની આરાધના કરવા માટે જ્યારે સ્કન્દક અણગારે મહાવીર પ્રભુની આજ્ઞા માગી ત્યારે પ્રભુએ કહ્યું (अहासुहं देवाणुप्पिया मा पडिबंधं करेह) હે દેવાનુપ્રિય ! તમને સુખ ઉપજે તેમ કરો પણ શુભકાર્યમાં વિલંબ કરવો જોઈએ નહીં આ રીતે મહાવીર પ્રભુની અનુજ્ઞા મેળવીને સ્કન્દક અણગારે તે ગુણરત્ન સંવત્સર તપને અંગીકાર કર્યું એજ વાત સૂત્રકાર હવે પછીના સૂત્રમાં કહે છે-(तएणं से खंदए अणगारे समणेणं भगवया महावीरेणं अब्भणुण्णाए समाणे जाव नमंसित्ता गुणरयणसंवच्छरतवोकम्मं उवसंपज्जित्ता णं विहरइ) જ્યારે શ્રમણ ભગવાને સ્કન્દક અણગારને તે ગુણરત્ન સંવત્સર તપની આરાધના કરવાની રજા આપી ત્યારે સ્કન્દકને ઘણો સંતોષ થયો. ચિત્તની પ્રસન્નતા અને મનના આનંદ સહિત તે તપનો સ્વીકાર કર્યો. ભગવાન મહાવીરને વંદણા નમસ્કાર કરીને તેઓ ત્યાંથી

कर्मस्वीकर्तुमिच्छामीत्यर्थः 'गुणरयणं संवच्छरं' इत्यस्य गुणरचनसंवत्सरमिति-च्छाया, तत्र गुणानां कर्मनिर्जराविशेषाणां रचनं संवत्सरेण सत्रिभागवर्षेण यस्मिन् तपोविशेषे भवति तद् गुणरचनं संवत्सरम्-अथवा 'गुणरयणं संवच्छरं' इत्यस्य गुणरत्नसंवत्सरमितिच्छायापक्षे गुणा निर्जरा विशेषा एव रत्नानि यस्मिन् स गुण-रत्नः गुणरत्नश्चासौ संवत्सरश्चेति गुणरत्नसंवत्सरः गुणरत्नसंवत्सरो विद्यते यत्र तपोविशेषे तत् गुणरत्नसंवत्सरम्। तदेवं गुणरत्नसंवत्सरतपोविषये स्कन्द-केन पृष्टो भगवान् कथयति 'अहासुहं देवाणुप्पिया' यथासुखं देवानुप्रिय ? मा

'गुणरचनं संवत्सरं' ऐसी होती है इसका अर्थ-(गुणानां कर्मनिर्जराविशेषाणां रचनं संवत्सरेण सत्रिभागवर्षेण यस्मिन् तपोविशेषे भवति तत् गुणरचनं संवत्सरं) अपने तीसरे भागसहित एक वर्ष तक अर्थात्-सोलह महिने तक जिस तपविशेष में एक जात की कर्मनिर्जरा विशेष रूप गुणों की रचना-उत्पत्ति होती है वह तप गुणरचन संवत्सर है। अथवा जब (गुणरत्नं संवत्सरं) ऐसी छाया रखते हैं तब इस पक्ष में इसका अर्थ ऐसा होता है कि- "गुणा निर्जरा विशेषा एव रत्नानि यस्मिन् स गुणरत्नः, गुणरत्नश्चासौ संवत्सरश्चेति गुणर-त्नसंवत्सरः, गुणरत्नसंवत्सरो विद्यते यत्र तपोविशेषे तत् गुणरत्न संवत्सरम्) अर्थात् निर्जराविशेष गुणरूप रत्न जिसमें हों वह गुणरत्न है, गुणरत्न रूप जो संवत्सर है वह गुणरत्न संवत्सर है। यह गुणरत्न संवत्सर जिस तपविशेष में मौजूद रहता है वह तप गुणरत्न संवत्सर है। तात्पर्य-इस कथन का यह है कि-पूरा एक वर्ष जिस तप में कर्मों की निर्जरा विशेष गुणरूप रत्नों से युक्त हुआ व्यतीत किया जाता है

થાય છે તેનો અર્થ આ પ્રમાણે થાય છે-(गुणाना कर्मनिर्जरा विशेषाणां रचन संवत्सरेण सत्रिभागवर्षेण यस्मिन् तपो विशेषे भवति तत् गुणरचन संवत्सरं એક પૂર્ણાંક એક તૃત્યાંશ વર્ષ સુધી-એટલે કે ૧૬ માસ સુધી જે તપની આરાધના કરીને કર્મનિર્જરા રૂપ ગુણોની રચના (ઉત્પત્તિ) થાય છે તે તપનુ નામ ગુણરચના સંવત્સર છે જો (गुणरत्न संवत्सरं) એ છાયા રાખવામા આવે તો તેનો અર્થ આ પ્રમાણે થાય છે-(गुणा निर्जरा विशेषा एव रत्नानि यस्मिन्-स गुणरत्न) નિર્જરાવિશેષ ગુણ રૂપ રત્ન જેમા હોય તેને ગુણરત્ન કહે છે (गुणरत्नश्चासौ संवत्सरश्चेति गुणरत्नसंवत्सर गुणरत्नसंवत्सरो विद्यते यत्र तपोविशेषे तत् गुणरत्नसंवत्सरम्) તે ગુણરત્ન રૂપ જે સંવત્સર છે તેને ગુણરત્ન સંવત્સર કહે છે જે તપમા ગુણરત્ન સંવત્સરનુ અસ્તિત્વ હોય છે તે તપને ગુણરત્ન સંવત્સર તપ કહે છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે જે તપની આરાધનામાં આખું વર્ષ કર્મોની નિર્જરા રૂપ ગુણરત્નથી યુક્ત વ્યતીત થાય છે, તે તપનુ નામ

स्वशरीर तापयन्, तथा 'रत्तिं' रात्रौ=रात्रिसमये 'वीरासणेणं' वीरासनेन=पूर्वोक्तप्रकारेण, तथा 'अवाउडेण' अप्रावृतेन=सदोरकमुखवस्त्रिकारजोहरणचोलपट्टकातिरिक्तवस्त्ररहितेन शरीरेण तिष्ठतीति।

'एवं दोच्चं मासं' एवं द्वितीयं मासम् एवम्=अनेनैव विधिना द्वितीयमासम् 'छट्ठं छट्ठेणं' षष्ठ षष्ठेन, द्विकद्विकोपवासेन। शेषं सर्वं प्रथममासवदेव विज्ञेयम् 'एवं तच्चं मासं अट्ठमं अट्ठमेणं' एवं तृतीयं मासम् त्रिगुपवासेन अष्टमाष्टमेन,

---

जाती है। आतापना का अर्थ है सूर्य की धूप से अपने शरीर को तपाना. इस तरहकी स्थिति सपक्ष बनकर वे दिवस को व्यतीत करे और रात्रि में शरीर को खुला करके वीरासन से रहे। "अवाउडेण" जो ऐसा पद दिया है-सो इससे यह बात प्रकट की गई है कि उस साधु को सदोर कमुखवस्त्रिका, रजोहरण और चोलपट्टक इनके अतिरिक्त और वस्त्र अपने शरीर पर नहीं रखना चाहिये। "एवं दोच्चं मासं" इसी तरह से द्वितीय मास को भी इसी पूर्वोक्त विधि के अनुसार उसे व्यतीत करना चाहिये-पर इस महिने में, उसे दो दो उपवास करना चाहिये-बाद में पारणा करना चाहिये-फिर दो उपवास करना चाहिये बाद में पारणा करना चाहिये। इस तरह बीस दिन तपस्या के होते हैं। और दस दिन परणा के होते हैं। "एवं तच्चं" इसी विधि के अनुसार तृतीय मास को भी समाप्त करना चाहिये। पर यहां "अट्ठमं अट्ठमेणं" तीन ३ उपवास करके पारणा करना चाहिये। इस तरह इस मास में चौवीस दिन तपस्या के होते है और आठ दिन पारणा के होते हैं।

આ રીતે તે આખો દિવસ વ્યતીત કરે છે અને રાત્રે શરીર ખુલ્લુ રાખીને વીરાસને બેસે છે "अवाउडेण" પદ દ્વારા એ દર્શાવવામાં આવ્યું છે કે આરાધક મુનિ દોરા સહિતની મુહપત્તિ રજોહરણ અને ચોલપટ્ટક સિવાય કોઈ પણ વસ્ત્ર કપડું પોતાના શરીરપર રાખી શકતો નથી. "एवं दोच्चं मासं" બીજો માસ પણ પૂર્વોક્ત વિધિ પ્રમાણે જ તેણે વ્યતીત કરવો પડે છે પણ બીજા માસ દરમિયાન તેણે છઠ (બે ઉપવાસ) ને પારણે છઠ કરવા જોઈએ. આ રીતે વીસ દિવસ ઉપવાસના અને દસ દિવસ પારણાંના આવે છે 'एवं तच्चं' આ વિધિ પ્રમાણેજ ત્રીજો માસ પણ વ્યતીત કરવો જોઈએ. પણ ત્રીજા માસ દરમિયાન અઠ્ઠમને પારણે અઠ્ઠમ (ત્રણ ઉપવાસને પારણે ત્રણ ઉપવાસ) કરવા જોઈએ આ રીતે ત્રીજે મહિને ચોવીસ દિવસ તપસ્યાના અને આઠ

म्पद्य खलु विहरति। गुणरत्नतपसो विधिं दर्शयन्नाह-'तं जहा' इत्यादि। 'तं जहा तद्यथा 'पढमं मासं चउत्थं चउत्थे ण' प्रथमं मासं चतुर्थं चतुर्थेण, एकान्तरोपवासेन 'अणिक्खित्तेणं' अनिक्षिप्तेन निरन्तरेण=व्यवधानवर्जितेन 'तवोकम्मेणं' तपः कर्मणा 'दिया' दिवा=दिवसे 'ठाणुक्कुडुए' स्थानोत्कुटुकः स्थानेन=आसनेन उत्कुटुकः उत्कुटुकासनस्थित इत्यर्थ 'सूराभिमुहे' सूराभिमुखः=सूर्य सम्मुखस्थितः सन् 'आयावणभूमीए' आतापनभूमौ-आतापनार्थ मेव नियतीकृतप्रमार्जितप्रत्युपेक्षितस्थाने 'आयावेमाणे' आतापयन् सूर्यातपेन

अंगीकार किया इस गुणरत्नसंवत्सर तप की विधि क्या है इस बात को प्रदर्शित करने के निमित्त सूत्रकार कहते हैं-तं जहा-वह विधि इस प्रकार से है—(पढमं मासं चउत्थं चउत्थेणं आणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं दिया ठाणुक्कुडुए सूराभिमुहे आयावणभूमिए आयावेमाणे, रत्तिं वीरासणेणं अवाउडेण य) प्रथम महिनों में एकान्तर उपवास-एक दिन उपवास एक दिन पारणा ऐसे निरंतर अर्थात् व्यवधान रहित करना चाहिये। इस तरह प्रथम महिनो में निरन्तर एकान्तर उपवास करना चाहिये—इस कथन के अनुसार यह बात समझ में आ जाती है कि प्रथम महिने में पन्द्रह उपवास और पन्द्रह पारणा हो जाते हैं। इस तपस्या वाले साधु को दिवस में 'ठाणुक्कुडुए' उत्कुटुक आसन से बैठना चाहिये और सूर्यकी तरफ मुंह करके आतापना भूमि में आतापना लेना चाहिये। यह आतापनभूमि पहिले से ही नियत की हुई होती है। इस भूमि की प्रत्युपेक्षणा प्रमार्जना करके आतापना ली

વિહાર થયા અને ગુણરત્ન સંવત્સર તપની આરાધના કરવા લાગ્યા હવે તે ગુણરત્ન સંવત્સર તપની વિધિ સૂત્રકાર બતાવે છે(तंजहा) તેની વિધિ આ પ્રમાણે છે (पढमं मास चउत्थं चउत्थेणं आणिक्खित्तेण तवोकम्मेणं दिया ठाणुक्कुडुए सूराभिमुहे आयावणभूमिए आयावेमाणे, रत्तिं वीरासणेण अवाउडेण य) પહેલે મહિને નિરંતર એકાન્તર ઉપવાસ કરવા જોઈએ-એટલે કે ઉપવાસને પારણે ઉપવાસ કરવા જોઈએ આ રીતે પહેલે મહિને ૫ંદર ઉપવાસ અને ૫ંદર પારણા થાય છે ઉપવાસ અને પારણાને દિવસે આરાધક સાધુએ "ठाणुक्कुडुए" ઉત્કુટુકાસને (ઉભડક આસને-પગના અગ્રભાગને આધારે) સૂર્યની તરફ મુખ રાખીને તડકા વાળી ભૂમિમાં સૂર્યનો તાપ સહન કરવો જોઈએ તે તડકાવાળી જગ્યા પહેલેથી જ નિયત કરવામાં આવેલી હોય છે તે ભૂમિની પ્રત્યુપેક્ષણા પ્રમાર્જના કરીને જ ત્યાં તાપમાં બેસવામાં આવે છે

स्वशरीर शापयन् , तथा ' रत्ति ' रात्रौ=रात्रिसमये ' वीरासणेण ' वीरासनेन पूर्वोक्तप्रकारेण, तथा ' अवाउडेण ' अपावृतेन=सदोरकमुखवस्त्रिकारजोहरणचोलपट्टकातिरिक्तवस्त्ररहितेन शरीरेण तिष्ठतीति ।

'एवं दोच्चं मासं ' एवं द्वितीयं मासम् एवम्=अनेनैव विधिना द्वितीयमासद् ' छट्ठं छट्ठेण ' षष्ठ षष्ठेन, द्विकद्विकोपवासेन । शेष सर्वं प्रथममासवदेव विज्ञेयम् ' एवं तच्चं मासं अट्ठमं अट्ठमेणं ' एवं तृतीय मासम् त्रिण्युपवासेन अष्टमाष्टमेन

जाती है । आतापना का अर्थ है सूर्य की धूप से अपने शरीर को तपाना इस तरहकी स्थिति संपन्न बनकर वे दिवस को व्यतीत करे और रात्रि में शरीर को खुला करके वीरासन से रहे । "अवाउडेण" जो ऐसा पद दिया है-सो इससे यह बात प्रकट की गई है कि उस साधु को सदोर कमुखवस्त्रिका, रजोहरण और चोलपट्टक इनके अतिरिक्त और वस्त्र अपने शरीर पर नहीं रखना चाहिये । " एवं दोच्चं मास " इसी तरह से द्वितीय मास को भी इसी पूर्वोक्त विधि के अनुसार उसे व्यतीत करना चाहिये-पर इस महिने में उसे दो दो उपवास करना चाहिये-बाद में पारणा करना चाहिये-फिर दो उपवास करना चाहिये बाद में पारणा करना चाहिये । इस तरह वीस दिन तपस्या के होते हैं । और दस दिन पारणा के होते हैं । "एवं तच्चं" इसी विधि के अनुसार तृतीय मास को भी समाप्त करना चाहिये । पर यहां " अट्ठमं अट्ठमेणं " तीन ३ उपवास करके पारणा करना चाहिये । इस तरह इस मास में चौबीस दिन तपस्या के होते है और आठ दिन पारणा के होते है ।

આ રીતે તે આખો દિવસ વ્યતીત કરે છે અને રાત્રે શરીર ખુલ્લું રાખીને વીરાસને બેસે છે ' અવાઉડેણ " પદ દ્વારા એ દર્શાવવામાં આવ્યું છે કે આરાધક મુનિ દોરા સહિતની મુહપત્તિ રજોહરણ અને ચોલપટ્ટક સિવાય કોઈ પણ વસ્ત્ર કપડું પોતાના શરીરપર રાખી શકતો નથી. "एवं दोच्चं मासं" બીજો માસ પણ પૂર્વોક્ત વિધિ પ્રમાણે જ તેણે વ્યતીત કરવો પડે છે પણ બીજા માસ દરમિયાન તેણે છઠ (બે ઉપવાસ) ને પારણે છઠ કરવા જોઈએ. આ રીતે વીસ દિવસ ઉપવાસના અને દસ દિવસ પારણાના આવે છે ' एवं तच्चं ' આ વિધિ પ્રમાણેજ ત્રીજો માસ પણ વ્યતીત કરવો જોઈએ પણ ત્રીજા માસ દરમિયાન અઠ્ઠમને પારણે અઠ્ઠમ (ત્રણ ઉપવાસને પારણે ત્રણ ઉપવાસ) કરવા જોઈએ. આ રીતે ત્રીજે મહિને ચોવીસ દિવસ તપસ્યાના અને આઠ

त्रिष्पुपत्रासेन 'चउत्थं मासं दसमं दसमे णं' चतुर्थं मास दशमदशमेन, चतुश्चतुरुपवासेन "पंचमं मासं बारसमं बारसमेण" पंचमं मासं द्वादशद्वादशेन, पंच पंचोपवासेन "छट्टं मासं चउदसमं चउद्दसमेण" षष्ठं मास चतुर्दशचतुर्दशेन, षष्ठमासे षड्पत्रासेन "सत्तमं मासं सोलसमं सोलसमेण" सप्तमं मासं षोडशषोडशेन सप्तसप्तोपवासेन "अट्ठमं मासं अट्ठादसमं अट्ठादसमेणं" अष्टमं मासम् । अष्टा-

"चउत्थं मासं दसमं दसमेणं" चतुर्थमासको भी इसी प्रकारकी विधिके अनुसार व्यतीत करना चाहिये। पर इस में चार चार उपवास करके पारणा करना चाहिये। इस तरह दस मास में तपस्याके दिनों की संख्या चौवीस २४ आती है और छह दिन पारणाके आते हैं। "पंचमं मासं बारसमं बारसमेणं" पांचवें महिने में पांच पांच उपवास के बाद पारणा किया जाता है। बाकी सब विधि पहिलो जैसी ही है। इसमें तपस्या के दिन पच्चीस होते हैं और पारणा के पांच दिन होते हैं। "छट्ठं मासं चउद्दसमं चउद्दसमेणं" छठे महिने में छह-छह उपवास करने के बाद पारणा किया जाता है। इस तरह इस महिने में तपस्या के दिन चौवीस आते हैं और पारणा के दिन चार होते हैं। "सत्तमं मासं सोलसमं सोलसमेणं" सातवें महीने में सात-सात उपवास करके पारणा किया जाता है। बाकी सबविधि पहिले जैसी ही है। इस महिने में तपस्या के दिनों की संख्या इक्कीस आती है और तीन पारणा के दिन होते हैं। "अट्ठमं मासं अट्ठादसमं अट्ठादसमेणं"

દિવસ પારણુના આવે છે (चउत्थ मासं दसमेण) ચોથો મહિને પણ પૂર્વોક્ત વિધિ પ્રમાણે જ વ્યતીત કરવો જોઇએ પણ ચોથા મહિનામાં ચાર ઉપવાસને પારણે ચાર ઉપવાસ કરવા જોઈએ ચોથા મહિનામા ઉપવાસના ૨૪ દિવસ અને પારણુાના ૬ દિવસ આવે છે (पंचमं मास बारसम बारसमेण પાચમા મહિનામા પાચ ઉપવાસને પારણે પાચ ઉપવાસ કરવા જોઈએ, બાકીની બધી વિધિ આગળ કહ્યા પ્રમાણે સમજવી તેમા તપસ્યાના દિવસ પચીસ અને પારણુાના દિવસ પાચ આવે છે. (छट्ठं मास चउद्दसम चउद्दसमेणं) છઠ્ઠે મહિને છ ઉપવાસને પારણે છ ઉપવાસ કરવા જોઇએ આ રીતે તપસ્યાના ચોવીસ દિવસ અને પારણુાના ચાર દિવસ આવે છે. (सत्तम मासं सोलसमं-सोलसमेणं) સાતમાં મહિના દરમિયાન સાત ઉપવાસને પારણે સાત ઉપવાસ કરવા પડે છે બાકીની બધી વિધિ આગળ કહ્યા પ્રમાણે જ સમજવી સાતમાં મહિનામા તપસ્યાના દિવસો ૨૧ આવે છે અને પારણાંના દિવસો ૩ આવે છે (अट्ठम मासं अट्ठारसम अट्ठारसमेणं) આઠમા મહિના દરમિયાન આઠ ઉપ-

दशाष्टादशेन, अष्टाष्टोपवासेन " नवम मास वीसइम वीसइमेण " नवम मास विंशतितमविंशतितमेन, नवनवोपवासेन " दसमं मास बावीसइम बावीसइमेण " दशम मास द्वाविंशतितमद्वाविंशतितमेन, दशदशोपवासेन ' एक्कारसमं मासं चउवीसइमं चउवीसइमेण" एकादश मास चतुर्विंशतितमचतुर्विंशतितमन, एकादशैकादशोपवासेन । "बारसममास छव्वीसइम छव्वीसइमेण" द्वादशं मास षड्विंशतितम

आठवें महिने में आठ-आठ उपवास करके पारणा किया जाता है। बाकी और सबविधि पहिले की तरह से ही है। इसमें तपस्या के दिनों की संख्या चौबीस आती है और पारणा के दिन तीन होते हैं। " नवमं मास वीसइमं वीसइमेणं " नौमे महिने में नौ उपवास करके पारणा किया जाता है, बाकी अवशिष्ट विधि पहिले जैसे ही है। इस मास में तपस्या के दिनों की संख्या सत्ताइस आती है और पारणा के दिन तीन होते हैं। " दसमं मासं बावीसइमं बावीसइमेणं " दसवें मासमें दस-दस उपवास करके पारणा किया जाता है। इसमें तपस्या के दिनों की संख्या तीस आती है और पारणा के दिन तीन होते हैं। " एक्कारसमं मासं चउवीसइमं चउवीसइमेण" ग्यारहवें महिने में ग्यारह-ग्यारह उपवास करके पारणा किया जाता है। इसमें तपस्या के दिनों की संख्या तेतीस आती है, और पारणा के दिन तीन होते हैं। (बारसमं मासं छव्वीसइमेण छव्वीसइमेण " बारहवें महिने में बारह-बारह उपवास करके पारणा किया जाता है। इस मास में तपस्या के दिनों

वासने पारणे आठ उपवास करवा पडे छे आ महिनामां तपस्याना २४ दिवस आवे छे अने पारणाना त्रण दिवस आवे छे बाकीनी बधी विधि पहेला मास प्रमाणे ज छे (नवम मास वीसइम वीसइमम) नवमां महिने नव उपवासने पारणे नव उपवास करवा पडे छे बाकीनी समस्त विधि पहेला महिना जेवीज छे आ मासमा तपस्याना २७ सत्तावीश दिवसो अने पारणाना त्रण दिवसो आवे छे (दसम मास बावीसइम बावीसइमेण) दसमां महिना दरमियान दस उपवासने पारणे दस उपवास करवा पडे छे बाकीनी विधि आगल मुजब होय छे आ मासमां तपस्याना दिवस ३० तीस अने पारणाना दिवस त्रण आवे छे (एक्कारसम मास चउवीसइम चउवीसइमेण) अगियारमा महिने अगियार उपवासने पारणे अगियार उपवास कराय छे ते मासमां उपवासना दिवसो तेत्रीस अने पारणाना दिवसो त्रण आवे छे (बारसमं मास छव्वीसइमं छव्वीसइमेण) बारमां मास दरमियान बार उपवासने पारणे बार उपवास करवा पडे छे ते मासमां तपस्याना दिवस चोवीस अने बार

त्रिष्युपवासेन 'चउत्थं मासं दसमं दसमेणं' चतुर्थं मासं दशमदशमेन, चतुश्चतुरुपवासेन 'पंचमं मासं बारसमं बारसमेण' पंचमं मासं द्वादशद्वादशेन, पंच पंचोपवासेन "छट्ठं मासं चउदसमं चउद्दसमेण" षष्ठं मासं चतुर्दशचतुर्दशेन, षण्ठमासे षड्ड्युपवासेन "सत्तमं मासं सोलसमं सोलसमेण" सप्तमं मासं षोडशषोडशेन सप्तसप्तोपवासेन "अट्ठमं मासं अट्ठादसमं अट्ठादसमेणं" अष्टमं मासम्। अष्टा-

---

"चउत्थं मासं दसमं दसमेणं" चतुर्थमासको भी इसी प्रकारकी विधिके अनुसार व्यतीत करना चाहिये। पर इस में चार चार उपवास करके पारणा करना चाहिये। इस तरह दस मास में तपस्याके दिनों की संख्या चौवीस २४ आती है और छह दिन पारणाके आते हैं। "पंचमं मासं बारसमं बारसमेणं" पांचवें महिने में पांच पांच उपवास के बाद पारणा किया जाता है। बाकी सब विधि पहिलो जैसी ही है। इसमें तपस्या के दिन पच्चीस होते हैं और पारणा के पांच दिन होते हैं। "छट्ठं मासं चउद्दसमं चउद्दसमेणं" छठे महिने में छह-छह उपवास करने के बाद पारणा किया जाता है। इस तरह इस महिने में तपस्या के दिन चौवीस आते है और पारणा के दिन चार हाते हैं। "सत्तमं मासं सोलसमं सोलसमेणं" सातवें महीने में सात-सात उपवास करके पारणा किया जाता है। बाकी सबविधि पहिले जैसी ही है। इस महिने में तपस्या के दिनों की संख्या इक्कीस आती है और तीन पारणा के दिन होते हैं। "अट्ठमं मासं अट्ठादसमं अट्ठादसमेणं"

દિવસ પારણુંના આવે છે. (चउत्थं मासं दसमेण) ચોથો મહિને પણ પૂર્વોક્ત વિધિ પ્રમાણે જ વ્યતીત કરવો જોઇએ. પણ ચોથા મહિનામા ચાર ઉપવાસને પારણે ચાર ઉપવાસ કરવા જોઈએ ચોથા મહિનામા ઉપવાસના ૨૪ દિવસ અને પારણુાંના ૬ દિવસ આવે છે (पंचमं मास बारसमं बारसमेण પાચમા મહિનામા પાચ ઉપવાસને પારણે પાંચ ઉપવાસ કરવા જોઇએ, બાકીની બધી વિધિ આગળ કહ્યા પ્રમાણે સમજવી તેમા તપસ્યાના દિવસ પચીસ અને પારણાના દિવસ પાચ આવે છે. (छट्ठं मास चउद्दसम चउद्दसमेण) છઠ્ઠે મહિને છ ઉપવાસને પારણે છ ઉપવાસ કરવા જોઇએ આ રીતે તપસ્યાના ચોવીસ દિવસ અને પારણુાંના ચાર દિવસ આવે છે. (सत्तम मासं सोलसमं-सोलसमेणं) સાતમાં મહિના દરમિયાન સાત ઉપવાસને પારણે સાત ઉપવાસ કરવા પડે છે બાકીની બધી વિધિ આગળ કહ્યા પ્રમાણે જ સમજવી સાતમાં મહિનામાં તપસ્યાના દિવસો ૨૧ આવે છે અને પારણુાંના દિવસો ૩ આવે છે. (अट्ठमं मासं अट्ठारसम अट्ठारस) આઠમા મહિના દરમિયાન આઠ ઉપ-

पूर्वोक्ततपसा "दिया ठाणुक्कुडुए" दिवा स्थानोत्कुटुक दिवसे उत्कुटुकासन "सूराभिमुहे" सूर्याभिमुखः "आयावणभूमीए आयावमाणे" आतापनभूमौ आतापयन् "रत्तिं वीरासणेणं" रात्रौ वीरासनेन "अवाउडेणं" अप्रावृतेन विहरतीति पूर्वेण सम्बन्धः "तएणं से खंदए अणगारे" ततः खलु स स्कन्दकोऽनगारः "गुणरयणसंवच्छरं तवोकम्मं" गुणरत्नसंवत्सरं तपः कर्म, "अहासुत्तं" यथासूत्रं सूत्रानतिक्रमेण 'अहाकप्पं" यथाकल्पं कल्पानतिक्रमेण 'जाव आराहेत्ता" यावदाराध्य, अत्र यावत्पदेन अहामग्गं अहातच्चं अहासम्मं कारण फासेइ, पालेइ सोहेइ, तीरेइ, पूरेइ, किट्टेइ, अणुपालेइ, आणाए" इत्येतत्पदसमूहस्य ग्रहण कर्तव्यम्। तथा च यथा सूत्रादिकम् आज्ञया आराधनं इत्यर्थः। गुणरत्नसंवत्सर तपो यथा—

तपःकर्म से वे स्कन्दक मुनि अपना समय व्यतीत करते। दिवस में वे उत्कुट आसन से स्थिर होकर सूर्य की ओर मुख करके आतापन भूमि में आतापना लेते तथा रात्रि में वीरासन से स्थित रहते और सर्वथा कर्मुहपत्ति, रजोहरण एवं चोलपट्टक के सिवाय और वस्त्र नहीं रखते। इस तरह "तएणं से खंदए अणगारे" वे स्कन्दक अनगार "गुणरयण संवच्छरं तवोकम्मं" गुणरत्न संवत्सर तप कर्म की "अहासुत्तं" सूत्र के अनुसार "अहाकप्प" कल्प के अनुसार 'जाव आराहेत्ता' यावत् आराधना करके 'जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ' जहां श्रमण भगवान् महावीर विराजमान थे-वहां पर आये। कहने का तात्पर्य यह है कि स्कन्दक अनगार ने गुणरत्न संवत्सर तपकी आराधना प्रभु की आज्ञा के अनुसार यथासूत्र आदि मर्यादा से की। और करके फिर वे प्रभु महावीर के पास आये।

સંવત્સર તપની આરાધના કરતા સ્કન્દક મુનિ પોતાનો સમય પસાર કરતા હતા. દિવસે તેઓ ઉત્કટ આસને બેસીને સૂર્યની તરફ મુખ રાખીને આતાપના ભૂમિમાં (તડકા વાળી જગ્યામાં) આતાપના લેતા હતા અને રાત્રે વીરાસને બેસતા હતા. સદોરકમુહપત્તિ, રજોહરણ અને ચોલપટ્ટક સિવાય બીજું કોઇ પણ વસ્ત્ર રાખતા નહીં. આ રીતે (तएणं से खंदए अणगारे) તે સ્કન્દક અણગાર (गुणरयणसंवच्छरं तवोकम्मं) ગુણરત્ન સંવત્સર તપની (अहासुत्तं) સૂત્રની આજ્ઞાનુસાર (अहाकप्पं) કલ્પ પ્રમાણે (जाव आराहेत्ता) આરાધના કરીને (जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ) જ્યાં શ્રમણ ભગવાન મહાવીર બિરાજતા હતા ત્યાં આવ્યા. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે સ્કન્દક અણગારે ગુણરત્નસંવત્સર તપની આરાધના ભગવાનની આજ્ઞાનુસાર, સૂત્રાનુસાર આદિ મર્યાદાનું પાલન કરીને કરી અને આરાધના પૂરી કરીને તેઓ

षड्विंशतितमेन द्वादशद्वादशोपवासेन "तेरसम मासं अट्ठावीसइमं अट्ठावीसइमेण" त्रयोदशं मासमष्टाविंशतितमाष्टाविंशतितमेन, त्रयोदशत्रयोदशोपवासेन "चउद्दसमं मासं तीसइम तीसइमेण" चतुर्दशं मासं त्रिंशत्तमत्रिंशत्तमेन, चतुर्दशचतुर्दशोपवासेन "पण्णरसमं मासं बत्तीसइमं बत्तीसइमेण" पंचदशमासं द्वात्रिंशत्तम द्वात्रिंशत्तमेन पंचदशपंचदशोपवासेन। "सोलसमं मास चोत्तीसइमं चोत्तीसइमेणं" षोडशं मासं चतुस्त्रिंशत्तमचतुस्त्रिंशत्तमेन, षोडशषोडशोपासेन, "अणिक्खित्तेणं" अनिक्षिप्तेन निरन्तरकृतेन "तवोकम्मेणं" तपः कर्मणा

की संख्या चोवीस आती है, पारणा के दिन दो होते हैं। "तेरसमं मासं अट्ठावीसइमं अट्ठावीसइमेण" तेरहवे मास में तेरह-तेरह उपवास करके पारणा किया जाता है। इस महिने में तपस्या के दिनों की संख्या छाईस आती है, और दो दिन पारणा के होते हैं। "चउदसमं मासं तीसइमं तीसइमेण" चौदहवें महिने मे चौदह-चौदह उपवास करके पारणा किया जाता है। इस महिने में तपस्या के दीनों की संख्या अट्ठाईस आती है, और पारणा के दो दिन होते हैं। "पण्णरसम मासं बत्तीसइमं बत्तीसइमेणं" पन्द्रहवें महीने में पन्द्रह-पन्द्रह उपवास कर के पारणा किया जाता है। इस मास में तपस्या के दिनों की संख्या तीस ३० आती है, और पारणा के दो दिन होते हैं। "सोलसमं मासं चोत्तीसइमं चोत्तीसइमेणं" सोलहवें मास में सोलह-सोलह उपवास करके पारणा किया जाता है। इस मास में तपस्या के दिनों की संख्या बत्तीस आती है, और पारणा के दिन दो होते हैं। इन सब उपवासों को "अणिक्खित्तेणं" निरन्तर-व्यवधान-रहित करना चाहिये। ऐसे

ણાંના દિવસો બે આવે છે, (तेरसम मास अट्ठावीसइम अट्टावीसइमेणं) તેરમા મહિનામા તેર ઉપવાસને પારણે તેર ઉપવાસ કરવા જોઇએ આ માસમાં તપસ્યાના દિવસો ૨૬ છવ્વીસ અને પારણાના દિવસ બે આવે છે (चउद्दसमं मास तीसइम तीसइमेण) ચૌદમા મહિને ચૌદ ઉપવાસને પારણે ચૌદ ઉપવાસ કરવા પડે છે આ મહિનામા તપસ્યાના ૨૮અઠ્યાવીસ અને પારણાના ૨ બે દિવસ આવે છે, (पण्णरसम मास बत्तीसइम बत्तीसइमेण) પંદરમા મહિને પંદર ઉપવાસને પારણે પંદર ઉપવાસ કરવા પડે છે તે માસમા તપસ્યાના ૩૦ તીસ અને પારણાના ૨ બે દિવસો આવે છે, (सोलसमं मास चोत्तीसइमं चोत्तीसइमेण) સોળમે મહિને સોળ ઉપવાને પારણે સોળ ઉપવાસ કરવા પડે છે, તે મહિનામાં તપસ્યાના ૩૨ બત્રીસ અને પારણાના ૨ બે દિવસ આવે છે તે બધા ઉપવાસ (अणिक्खित्तेण) નિરંતર-આંતરો પાડયા વિના કરવા જોઇએ. આ પ્રકારની ગુણરત્ન

षष्ठ मासे–षट्षष्ठोपवासेन चतुर्विंशतिस्तपोदिनानि चत्वारि च पारणकदिनानि॥६॥
सप्तमे मासे–सप्तसप्तोपवासेन एकविंशतिस्तपोदिनानि त्रीणि च पारणकदिनानि॥
अष्टमे मासे–अष्टाष्टोपवासेन–चतुर्विंशतिस्तपोदिनानि त्रीणि च पारणकदिनानि॥
नवम मासे–नवनवोपवासेन सप्तविंशतिस्तपोदिनानि त्रीणि च पारणकदिनानि॥९॥
दशमे मासे–दशदशोपवासेन त्रिंशत्तपोदिनानि त्रीणि च पारणकदिनानि ॥१०॥
एकादशे मासे–एकादशैकादशोपवासेन त्रयस्त्रिंशत्तपोदिनानि त्रीणि च पारणकदिनानि ॥ ११ ॥

(६) छठे महीनेमें ६–६ छह–छह उपवासकी तपस्यासे २४ चौवीस दिन तो तपस्या के होते हैं और ४ चार दिन पारणा के होते हैं।

(७) सातवे महिने में ७–७ सात सात उपवास की तपस्या से २१ इकीस दिन तो तपस्या के होते हैं और ३ दिन पारणा के होते हैं।

(८) आठवे महिने में ८–८ आठ–आठ उपवास की तपस्या से २४ चौवीश दिन तो तपस्या के होते हैं और ३ तीनदिन पारणा के होते हैं।

(९) नवमें महिनेमें नौ–नौ ९–९ उपवासकी तपस्यासे २७ सत्तावीस दिन तो तपस्या के होते हैं और ३ तीन दिन पारणा के होते हैं।

(१०) दशवे महिने में १०–१० दस–दस उपवासकी तपस्यासे ३० तीस दिन तो तपस्याके होते हैं और ३ तिन दिन पारणा के होते हैं।

(११) ग्यारहवे महिनेमें ११–११ ग्यारह–ग्यारह उपवासकी तपस्या से ३३ तेत्तीस दिन तो तपस्या के होते हैं और ३ तिन दिन पारणा के होते हैं।

(૬) છઠ્ઠા માસમાં ૬–૬ છ–છ ઉપવાસની તપસ્યાના ૨૪ ચોવીસ દિવસ અને પારણાના ૪ ચારદિવસ હોય છે

(૭) સાતમાં માસમાં ૭–૭ સાત–સાત દિવસના ઉપવાસની તપસ્યાના ૨૧ એકવીસ દિવસ અને પારણાના ૩ ત્રણ દિવસ હોય છે

(૮) આઠમા માસમાં ૮–૮ આઠ–આઠ દિવસના ઉપવાસની તપસ્યાના ૨૪ ચોવીશ દિવસ અને પારણાના ૩ દિવસ હોય છે

(૯) નવમાં માસમાં ૯–૯ નવ–નવ દિવસના ઉપવાસની તપસ્યાના ૨૭ સત્યાવીસ દિવસ અને પારણાના ૩ ત્રણ દિવસ હોય છે

(૧૦) દશમા માસમાં ૧૦ ૧૦ દશ–દશ ઉપવાસની તપસ્યાના ૩૦ ત્રીસ દિવસ અને પારણાના ૩ ત્રણ દિવસ હોય છે

(૧૧) અગિયારમા માસમાં ૧૧–૧૧ અગ્યાર અગ્યાર દિનના ઉપવાસની તપસ્યાના ૩૩ તેત્રીસ દિવસો અને પારણાના ૩ ત્રણ દિવસહોય છે

प्रथमे मासे एकान्तरोपवासेन पञ्चदश तपोदिनानि पञ्चदशैव पारणकदिनानि भवन्ति ॥ १ ॥
द्वितीये मासे–षष्ठ षष्ठतपसा विंशतिस्तपोदिनानि दश च पारणकदिनानि ॥२॥
तृतीये मासे–अष्टमाष्टमतपसा चतुर्विंशतिस्तपोदिनानि, अष्टपारणकदिनानि ॥३॥
चतुर्थमासे–चतुश्चतुरुपवासेन चतुर्विंशतिस्तपोदिनानि षट् च पारणकदिनानि ॥४॥
पञ्चमे मासे पञ्चपञ्चोपवासेन पञ्चविंशतिस्तपोदिनानि पञ्च च पारणकदिनानि॥५॥

यह गुणरत्न संवत्सर इस प्रकार से आराधित करने पर तपस्या और पारणा के दिनों की संख्या इस प्रकार से है ।

(१) प्रथम मास में एकान्तरोपवास के दिन १५ पंदर होते हैं और पारणा के दिन भी पन्दरह १५ ही होते हैं ।

(२) द्वितीयमासमें २–२ दो–दो उपवास की तपस्या से बीस २० बीस दिन तो तपस्या के होते हैं और दस १० दिन पारणा के होते हैं।

(३) तृतीय मास में ३–३ तीन–तीन उपवास की तपस्या से २४ चौबीस दिन तो तपस्या के होते हैं और आठ ८ दिन पारणा के होते हैं ।

(४) चौथे मासमें चार–चार ४–४ उपवासकी तपस्यासे २४ चौबीस दिन तो तपस्या के होते हैं और छह ६ पारणा के दिन होते हैं ।

(५) पांचवे महिने में पांच–पांच ५–५ उपवास की तपस्या से २५ पचीस दिन तो तपस्याके होते हैं और पांच ५ दिन पारणा के होते हैं।

મહાવીર પ્રભુની પાસે આવ્યા આ ગુણરત્ન સવત્સર તપની આરાધના ઉપરોક્ત વિધિથી કરવામા આવે છે. તેમા પ્રત્યેક માસના ઉપવાસ અને પારણાના દિવસોની સખ્યા નીચે પ્રમાણે છે-

(૧) પહેલા માસમા એકાન્તર ઉપવાસના દિવસો ૧૫ પન્દર હોય છે અને પારણાના દિવસ પણ ૧૫ પંદર હોય છે.

(૨) બીજા માસમા ૨–૨ બે–બે ઉપવાસની તપસ્યાના ૨૦ વીસ દિવસ, અને ૧૦ દસ દિવસ પારણાના હોય છે

(૩) ત્રીજા માસમા ૩–૩ ત્રણ-ત્રણ ઉપવાસની તપસ્યાના ૨૪ ચોવીસ દિવસ અને પારણાના આઠ ૮ દિવસ હોય છે

(૪) ચોથા માસમાં ૪–૪ ચાર–ચાર ઉપવાસની તપસ્યાના ૨૪ ચોવીસ દિવસ, અને પારણાના ૬ છ દિવસ હોય છે.

(૫) પાચમા માસમા ૫–૫ પાચ–પાચ ઉપવાસની તપસ્યા થવાથી ૨૫ પચીસ દિવસો તપસ્યાના અને પાચ દિવસ પારણાના હોય છે.

तपोदिनानि सप्तोत्तर चतुश्शतम् (४०७)		पारणकदिनानि त्र्युत्तरसप्तति (७३)
३२	१६–१६	२
३०	१५–१५	२
२८	१४–१४	२
२६	१३–१३	२
२४	१२–१२	२
३३	११–११–११	३
३०	१०–१०–१०	३
२७	९—९—९	३
२४	८—८—८	३
२१	७—७—७	३
२४	६–६–६–६	४
२५	५–५–५–५–५	५
२४	४–४–४–४–४–४	६
२४	३–३–३–३–३–३–३–३	८
२०	२–२–२–२–२–२–२–२–२–२	१०
१५	१–१–१–१–१–१–१–१–१–१–१–१–१–१–१	१५
४०७		७३

तपोदिनानि (४०७) पारणकदिनानि (७३) च मिलित्वा सर्वदिनानि अशीत्युत्तरं चतुश्शतम् (४८०) त्रिंशद्दिनैर्भागे हृते भवता षोडशमासाः (१६) एतत्तपः षोडशमासैः सम्पन्न भवति, अत्र यत्र मासे अष्टमादि तपसो वाचनि

से कुल दिन ४८० होते हैं। इनमें ३० दिनों का भाग करने से १६ मास आते हैं। इस तरह यह तप सोलह महिनों में सपन्न होता है। यहां पर कोई ऐसी आशंका करसकता है कि महिने के दिन तो कुल ३० ही होते हैं–पर ३२ बत्तीस और तेतीस दिन भी बतलाये गये हैं–

बीने कुल ४८० ચારસોએંસી દિવસો થાય છે તેને ૩૦ ત્રીસ વડે ભાગવાથી ૧૬ સોળ માસ આવે છે આ તપ સોળ માસમાં પૂરૂ થાય છે અહીં–કોઈ એવી શંકા ઉઠાવે કે મહિનાના દિવસો ૩૦ જ હોય છે છતાં અહીં ૩૨ અને તેત્રીસ દિવસ પણ બતાવ્યા છે તથા કોઈ કોઈ માસમાં તપસ્યાના દિવસો ૩૦ થી ઓછા પણ

द्वादशे मासे–द्वादश द्वादशोपवासेन चतुर्विंशतिस्तपोदिनानि द्वे च पारणकदिने ॥
त्रयोदशे मासे–त्रयोदशत्रयोदशोपवासेन–षड्विंशतिस्तपोदिनानि द्वे च पारणकदिने ॥ १३ ॥
चतुर्दशे मासे—चतुर्दशचतुर्दशोपवासेन – अष्टाविंशतिस्तपोदिनानि द्वे च पारणकदिने ॥ १४ ॥
पञ्चदशे मासे—पञ्चदश पञ्चदशोपवासेन–त्रिंशत्तपोदिनानि द्वे च पारणकदिने
षोडशे मासे—षोडशषोडशोपवासेन–द्वात्रिंशत्तपोदिनानि द्वे च पारणकदिने ॥
गुणरत्नसंवत्सरतपः सूचकयन्त्रमिदम्—

---

(१२) बारहवें महिना में १२–१२ बारह–बारह उपवासकी तपस्यासे २४ चौबीस दिन तो तपस्याके होते है और दो २ दिन पारणाके होते हैं।

(१३) तेरहवे महिनामें १३–१३ तेरह–तेरह उपवास की तपस्यासे २६ छब्बीस दिन तो तपस्याके होते हैं और २ दो दिन पारणाके होते हैं।

(१४) चउदहवें महिने में १४–१४ चौदह–चौदह उपवासकी तपस्यासे २८ अठाईस दिन तो तपस्याके होते हैं और २ दो दीन पारणाके होते हैं।

(१५) पन्द्रहवें महिने में १५–१५ पंदरह–पंदरह उपवासकी तपस्यासे ३० तीस दीन तो तपस्याके होते हैं और २ दो दिन पारणा के होते हैं।

(१६) सोलहवें महिनेमें १६–१६ सोलह–सोलह उपवासकी तपस्यासे ३२ बत्तीस दिन तो तपस्याके होते हैं और २ दो दिन पारणा के होते हैं।

इस प्रकार तपस्या के दिन ४०७ और पारणा के दिन ७३ मिलाने

---

(૧૨) બારમા માસમા ૧૨–૧૨ બાર બાર દિવસના ઉપવાસની તપસ્યાના ૨૪ ચોવીસ દિવસ અને પારણાના ૨ બે દિવસ હોય છે

(૧૩) તેરમે મહિને ૧૩–૧૩ તેર–તેર દિવસોના ઉપવાસની તપસ્યાના ૨૬ છવ્વીસ દિવસ અને પારણાના ૨ બે દિવસ હોય છે

(૧૪) ચૌદમા માસમા ૧૪–૧૪ ચૌદ–ચૌદ દિવસના ઉપવાસની તપસ્યાના ૨૮ અઠ્યાવીશ દિવસ અને પારણાના ૨ બે દિવસ હોય છે

(૧૫) પંદરમા માસમા ૧૫–૧૫ પંદર–પંદર દિવસના ઉપવાસની તપસ્યાના ૩૦ તીસ દિવસ અને પારણાના ૨ બે દિવસ હોય છે,

(૧૬) સોળમાં માસમા ૧૬–૧૬ સોળ–સોળ દિવના ઉપવાસની તપસ્યાના ૩૨ બત્રીસ દિવસ અને પારણાના ૨ બે દિવસ હોય છે,
આ રીતે તપસ્યાના ૪૦૭ ચારસોસાત દિવસો અને પારણાના ૭૩ તોતેર દિવસો મ-

र्द्धमासखमणेहिं " मासार्द्धमासक्षपणे " विचित्तेहिं तवोकम्मेहिं " विचित्रैः नानामकारकैः तप कर्मभिः 'अप्पाणं भावेमाणे विहरइ " आत्मानं भावयन् विहरति तदनन्तर स स्कन्दकोऽनेकमकारकतपसः स्वरूपं ज्ञात्वा भगवतो नमस्कारादिकं कृत्वा नानाविधैस्तप कर्मभिरात्मानं भावयन् विहरतिस्मेत्यर्थः ॥

पूर्वोक्ततपः करणात् स्कन्दकस्य कीदृशी स्थितिरभूदिति प्रदर्शयितुमाह- ' तएणं से खंदए ' इत्यादि ' तएणं से खंदए अणगारे ' ततः खलु स स्कन्दकोऽनगार ' तेणं उरालेणं ' तेनं उदारेणं प्रधानेन-इहलोकपरलोकाशंसाराहित्यात् प्रधानश्च स्वल्पमपि स्यादत आह-' विउलेणं ' विपुलेन विस्तीर्णेन बहुदिवसव्यापित्वात् (विपुलश्च) गुर्वाज्ञामन्तरेण प्रयत्नराहित्येनापि वा भवदत आह-'पयत्तेणं ' प्रदत्तेन गुरुभिर्वितीर्णत्वात् अथवा ' पयत्तेणं ' इत्यस्य ' प्रयत्नेन ' इतिच्छायायां प्रयत्नेन प्रयत्नवता प्रमादरहितत्वात् एवविधं सामान्यतोऽङ्गीकरणेऽपि स्यादित्यत आह ' पग्गहिएणं ' प्रगृहीतेन बहुमानेन स्वीकृतत्वात्

स्वीकृतं तु इहलोकपरलोकाशंसा निमित्तमपिस्यादत आह 'कल्लाणेणं' कल्याणेन नैरुज्यकारणत्वात्, नैरुज्यं तु ऐहिकपारलौकिकमपि स्यादत आह-'सिवेणं' शिवेन सर्वदुःखान्तकारकत्वात्। एव विधंतु सामान्येनापि स्यादत आह-'धन्नेणं' धन्येन श्रुतचारित्ररूपधनमापकत्वात्।

एतावदेव नेत्याह-' मंगल्लेणं ' मंगल्येन दुरितोपशमनकारकत्वात्। अतएव 'सस्सिरीएणं' सश्रीकेण सम्यगाराधनेन शोभामपन्नत्वात् सश्रीकंतु सामान्यरूपेणापि स्यादत आह-' उदग्गेणं,' उदग्रेण=वर्धमानपरिणामादुत्तरोत्तरवृद्धिं गतत्वात्

उपवासोथी) अनेक पंचोला (पांच उपवासो) थी, अनेक मास खमणोथी तथा अनेक अर्धमासखमणोथी पोताना आत्माने भावित करता रह्या. आ प्रकारनां तप करता करता स्कन्दक अणगारनी शारीरिक स्थिति केवी थई गई ते हवे सूत्रकार बतावे छे

(तएणं से खंदए अणगारे तेणं उरालेणं विउलेणं पयत्तेणं, पग्गहिएणं, कल्लाणेणं सिवेणं धन्नेणं मंगल्लेणं, सस्सिरीएणं उदग्गेणं उदत्तेणं, उत्तमेणं,

ओं से अनेक पंचौलाओं से तथा अनेक मास खमणों से एवं अनेक अर्धमासखमणों से अपनी आत्मा को भावित करते रहे।

इस तरह पूर्वोक्त इन अनेक तपों के तपते २ स्कन्दक अनगार की शारीरिक स्थिति कैसी हो गई यह सूत्रकार इस बात को प्रकट करने के लिये कहते हैं (तएणं से खंदए अणगारे तेणं उरालेणं विउलेणं पयत्तेणं पग्गहिएणं कल्लाणेणं, सिवेणं, धन्नेणं, मंगल्लेणं, सस्सिरीएणं,

दिनानि न पूर्यन्ते तावन्ति दिनानि–अग्रेतनमासादाकृष्य पूरणीयानि अधिकानि चाग्रेतनमासे क्षेप्तव्यानीति विज्ञेयम् ॥ इति गुणरत्नसंवत्सरनामकं तपः ॥

एवं गुणरत्नसंवत्सरं तपः कृत्वा स्कन्दकोऽनगारः–"जेणेव समणे भगवं महावीरे" यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीरः "तेणेव उवागच्छइ" तत्रैवोपागच्छति "उवागच्छित्ता" उपागत्य "समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ" श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति "वंदित्ता नमंसित्ता" वन्दित्वा नमस्यित्वा बहूहिं चउत्थछट्ठट्ठमदसमदुवालसेहिं" बहुभिश्चतुर्थषष्टाष्टमदशमद्वादशैः "मास-

---

तथो तपस्या के ३० तीस दिनों में से कहीं दो कम भी बतलाये गये हैं तो फिर एक एक मास की तपस्या के दिनों का प्रमाण कैसे माना जा सकता है ? तो इसका उत्तर यह है कि इस तप में जिस महिने में अष्टमादितपस्या के दिनों का प्रमाण पूरा न होता हो–घटता हो तो–उतने दिनों को आगे के मास में से लेकर उस प्रमाण को पूरा करना चाहिये, तथा जिस मास में अधिक दिन होते हों उनको आगे के मास में शामिल कर देना चाहिये। इस प्रकार से गुणरत्नसंवत्सर नाम का तप होता है।

इस गुणरत्नसंवत्सरतप को समाप्त कर वे स्कन्दक अनगार श्रमण भगवान महावीर के पास आये। (उवागच्छित्ता) वहां आकर उन्हों ने (समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ) श्रमण भगवान् महावीर को वंदना और नमस्कार किया (वंदित्ता नमंसित्ता) वन्दना नमस्कार करके (बहूहिं चउत्थछट्ठट्ठमदसमदुवालसेहिं) वे अनेक चतुर्थ–उपवासों से अनेक बेलाओं से अनेक तेलाओं से, अनेक चोला-

---

બતાવ્યા છે તો તે પ્રમાણને એક એક માસની તપસ્યાનુ પ્રમાણ કેવી રીતે ગણી શકાય ! તો તે શંકાનો ખુલાસો આ પ્રમાણે આપી શકાય–જે માસમા અટ્ઠમ આદિ તપસ્યાના દિનોનુ પ્રમાણ પૂરું થતું ન હોય, તે મહિનામાં પછીના માસના ખૂટતા દિવસો લઈને તે પ્રમાણ પૂરું કરવું જોઈએ જે માસમા તપસ્યાના અધિક દિવસો- આવતા હોય તે માસના એટલા દિવસોને પછીના માસમાં શામિલ કરી લેવા જોઈએ. આ પ્રકારનુ ગુણરત્ન સવત્સર તપ હોય છે.

તે ગુણરત્ન સંવત્સર તપ પૂરું કરીને સ્કન્દક અણુગાર શ્રમણ ભગવાન મહાવીર પાસે આવ્યા. (उवागच्छित्ता) ત્યા આવીને તેમણે (समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ) શ્રમણ ભગવાન ! મહાવીરને વંદણા નમસ્કાર કર્યા (वंदित्ता नमंसित्ता) વંદણા કરીને તેઓ (बहूहिं चउत्थछट्ठट्ठमदसमदुवालसेहिं અનેક ઉપવાસોથી, અનેક છઠથી, અનેક અટ્ઠમોથી, અનેક ચોલાઓથી (ચાર

ऐसी भी होती है-सो इसका तात्पर्य ऐसा होता है कि प्रमाद से रहित होकर ही प्रयत्न पूर्वक यह तपःकर्म आचरित किया था। गुरु द्वारा दिये गये आने पर भी यह तपःकर्म सामान्यरूप से भी गृहीत महीकृत हो सकता है-सो यह तप कर्म ऐसा नहीं था किन्तु अनगार स्कन्दक ने इस तप'कर्म को (पग्गहिएणं) बहुमान के साथ गुरुमहाराज के समीप स्वीकार किया हुआ था। गुरु महाराज के समीप स्वीकृत किया गया तप कर्म इसलोक तथा पर परलोक की आशंसा के निमित्त भी हो सकता है सो यह तप'कर्म स्कन्दक अनगार के द्वारा इस निमित्त से स्वीकार नहीं किया गया होने से यह (कल्लाणेणं) कल्याणरूप था अर्थात् यह तप निरोगिता का कारण था इसलिये कल्याणस्वरूप था। निरोगिता का जो कारण होता है वह इस लोक संबंधी भी निरोगिता का कारण हो सकता है परलोक संबंधी भी निरोगिता का कारण हो सकता है सो यह तप'कर्म ऐसा नहीं था-यह तो सर्व दुःखों का अन्त कारण होने से (सिवेणं) शिवस्वरूप था। सर्वदुःखों का अन्त करने वाला यह सामान्यरूप से भी हो सकता है-तो इसके लिये कहा गया है कि सामान्यरूप से ऐसा नहीं था-किन्तु (धन्नेणं) श्रुतचारित्र रूप धनकी प्राप्ति कराने के कारण यह धन्य था। दुरितों-पापों के

પણ થાય છે તે તપ પ્રમાદથી રહિત થઈને પ્રયત્ન પૂર્વક કરવામાં આવ્યું હતું એવું તેનું તાત્પર્ય છે તે તપ ગુરુદ્વારા દેવામાં આવેલ હોવા છતાં સામાન્ય રીતે ગૃહીત થયેલ પણ હોઈ શકે છે પણ સ્કંદક અણગારનું તપ એવું ન હતું સ્કન્દક અણગારે તે તપનો (पग्गहिएण) બહુ માન સહિત ગુરુમહારાજ પાસે સ્વીકાર કરેલો હતો ગુરુમહારાજની સમક્ષ અંગીકૃત કરાયેલ તપ આલોક તથા પરલોકની આકાંક્ષા પરિપૂર્ણ કરવાને માટે પણ કરાયું હોય છે પણ સ્કન્દક અણગારે એવાં કોઈ નિમિત્તથી આ તપની આરાધના કરી ન હતી તેથી તેમનું તપ (कल्लाणण) કલ્યાણરૂપ-નીરોગી તાના કારણરૂપ હતું, માટે જ તેને કલ્યાણકારી કહ્યું છે જે વસ્તુ નીરોગીતાના કારણરૂપ હોય છે તે આલોક સબંધી નીરોગીતા અને પારલૌકિક નીરોગીતાના કારણ રૂપ હોય છે પણ સ્કન્દકનું તપકર્મ એ પ્રકારનું ન હતું તે તો સમસ્ત દુઃખોનું અન્તકારક હોવાથી (सिवेण) શિવસ્વરૂપ હતું તે સામાન્ય રૂપે સમસ્ત દુઃખોનું અંતકારક પણ હોઈ શકે છે, પણ સ્કન્દક અણગારનું તપ તે પ્રકારનું ન હતું પણ તે (धन्नेण) શ્રુતચારિત્રરૂપ ધનની પ્રાપ્તિ કરાવનાર હોવાથી (ધન્ય) હતું, પાપોનું ઉપશમન કરવાના કારણભૂત હોવાથી

उदग्गेण, उदत्तेणं उत्तमेणं, उदारेणं महाणुभावेण तवोकम्मेणं) वे स्कन्दक अनगार उस उदार, विपुल, प्रदत्त, प्रगृहीत, कल्याणरूप, शिवरूप, धन्यरूप, मंगलरूप, शोभायुक्त, उत्तम, उदात्तसुदर, उदार बडे प्रभावशाली तप से (सुक्के) शुष्क हो गये (लुक्खे) रूक्ष हो गये। (निम्मंसे) मांस विहीन हो गये, सिर्फ (अट्ठिचम्मावणद्धे) हाड चमडी से ही ढके रहे। तप के यहां जो उदार आदि अनेक विशेषण दिये हैं-उनकी सार्थकता इस प्रकार से है-स्कन्दक अनगार ने इस तप को किसी भी प्रकार की इस लोक परलोक संबधी आशंसा-इच्छा से प्रेरित होकर नहीं किया था अतःआशंसा से रहित होने के कारण यह तपःकर्म (उरालेणं) प्रधान था। प्रधान होकर भी कोई २ अल्प भी होता है-अतःयह तपःकर्म ऐसा नहीं था-किन्तु अनेक वर्षों तक लगातार सेवित होने के कारण (विउलेणं) विपुल-विस्तृत था। कोइ २ विपुल ऐसा भी होता है कि जिसमें गुरुमहाराज की अनुमती नहीं होती, अथवा-जिसके प्रारंभ करने में विशेष प्रयत्न की आवश्यकता नहीं होती है-तो इसके लिये सूत्रकार कहते हैं कि यह तप कर्म ऐसा नहीं था किन्तु (पयत्तेणं) गुरु महाराज द्वारा दिया हुआ और विशेष प्रयत्न द्वारा साध्य था। अथवा (पयत्तेणं) की संस्कृत छाया (प्रयत्नेन)

उदारेण महाणुभावेण तवोकम्मेण) સ્કન્દક અણુગાર તે ઉદાર, વિપુલ, પ્રદત્ત પ્રગૃહીત કલ્યાણકારી, શિવરૂપ, ધન્યરૂપ, મંગળરૂપ, શોભાયુક્ત, ઉત્તમ, ઉદાત્ત, સુંદર, ઉદાર અને અતિશય પ્રભાવશાળી તપથી (सुक्के लुक्खे) શરીરે શુષ્ક તથા રુક્ષ થઈ ગયા (निम्मंसे) તેમનુ શરીર માંસ રહિત થઇ ગયું. (अट्ठिचम्मावणद्धे) અને હાડ અને ચામડીના માળખા જેવું દેખાવા લાગ્યું. હવે (ઉદાર) આદિ વિશેષણોની સાર્થકતા બતાવવામા આવે છે સ્કન્દક અણુગારે આલોક કે પરલોકની કોઈ પણ પ્રકારની આકાંક્ષાથી પ્રેરાઈને તે તપ કર્યું ન હતુ આ રીતે નિઃસ્વાર્થ ભાવે થયેલુ હોવાને કારણે તેને માટે યોજવામા આવેલું (ઉદાર) વિશેષણ સાર્થક છે તે તપ સામાન્ય ન હતું. લગાતાર અનેક વર્ષો સુધી તેની આરાધના કરી હતી તે કારણે તે (विउलेणं) વિપુલ-વિસ્તૃત હતુ. કોઈ કોઈ વિપુલ તપ એવુ હોય છે કે જેમાં ગુરુમહારાજની અનુમતિ મળી હોતી નથી, અથવા જેનો પ્રારંભ કરવામાં વિશેષ પ્રયત્નની જરૂર રહેતી નથી પણ સ્કન્દક અણુગારનુ તપ એવું ન હતુ તે તપ તો (पयत्तेण) ગુરુમહારાજ દ્વારા દેવામા આવેલું હતું અને વિશેષ પ્રયત્ન દ્વારા સાધ્ય હતુ અથવા (पयत्तेण) ની સંસ્કૃત છાયા (प्रयत्नेन)

अट्ठिचम्मावणद्ध" अस्थिचर्मावनद्धः अस्थीनि चर्ममात्रेण अवनद्धानि आवृतानि यस्य स अस्थिचर्मावनद्ध प्रायो मांसशोणितरहितत्वात्। अतएव "किडकिडिया भूए" किटिकिटिकाभूतः किटिकिटिकानाम उत्थानोपवेशनादि क्रियाजनित शब्दविशेषः तादृशीं किटिकिटिकां भूत प्राप्तो यः स किटि किटिकाभूत', उत्थानादि क्रियासु किटिकिटिकाशब्द समायते, "किसे" कृशः दुर्बलः-प्रकीर्णित

था। जब मनुष्य के शरीर में मांस और खून नहीं रहता है-तब केवल हाडों का एक पिंजर मात्र ही शेष रह जाता है। वह जब उठता है या बैठता है अथवा चलता है-तब उस समय हाडकों के खोखावाले शरीर में से जो आवाज निकलती है उसका नाम किटि किटिका है। वह स्कन्दक अनगार की हड्डियां उठते बैठते फिरते समय किट किट आवाज करती थीं। प्रायःमांस और शोणित से रहित जब स्कन्दक का शरीर हो गया तब (अट्ठिचम्मावणद्धे) उनके शरीर की हड्डियां उस समय चर्ममात्र से अवनद्ध-मढी हुई थीं-इससे उनके बन्धन खुल नहीं पाये और न वे आपस में विखर ही पाईं। जैसे पट्टी से कोई वस्तु कस दी जाती है इसी प्रकार से वे सबकी सब आपस में चमडी से कसी रहीं। यही बात (अट्ठिचम्मावणद्धे) इस पद से सूत्रकार ने प्रकट की है। इसी कारण से स्कन्दक अनगार के शारीरिक गतिक्रिया करते समय शरीर में से कट कट-खट खट इस तरह की आवाज निकलने लग गई। (किसे) उनकी शारीरिक शक्ति का बिल्कुल एक तरह से ह्रास

હતુ જ્યારે માણસના શરીરમા માસ અને રક્ત રહેતા નથી ત્યારે તે શરીર હાડપિંજરના માળખા જેવું થઇ જાય છે આવો માણસ જ્યારે હલનચલન કરે છે ત્યારે તેના હાડકાંના પાલાણુથી જે અવાજ થાય છે તેને 'કિટિકિટિકા' કહે છે સ્કન્દક મુનિના હાડકા પણ ઉઠતા બેસતા તથા ચાલતાં કિટકિટનો અવાજ કરતા હતા જ્યારે સ્કન્દક અણુગારનુ શરીર લગભગ માંસ અને રક્તથી રહિત થઇ ગયું ત્યારે 'અટ્ઠિચમ્માવણદ્ધે' તે શરીર ફક્ત ચામડીથી મઢેલું હોય એવું લાગતુ હતુ તેથી તે અસ્થિના બંધન છૂટાં પડી ગયાં નહીં અને તે એક બીજાથી અલગ પણ થયાં નહીં જેમ પટ્ટીની મદદથી કોઈ વસ્તુને બીજી વસ્તુ સાથે બાંધી રાખવામા આવે છે તેમ સ્કન્દક મુનિનાં અસ્થિ ચામડીરૂપી પટ્ટી વડે બંધાયેલા રહ્યાં એજ વાત સૂત્રકારે (અટ્ઠિચમ્માવણદ્ધે) પદ દ્વારા બતાવી છે આ કારણે શરીરનુ હલન ચલન કરતી વખતે તેમના હાડકાંના પાલાણુથી ખટ-ખટ અવાજ નીકળતો હતો (કિસે) તેમની શારીરિક શક્તિનો

अतएव ' उदत्तेणं ' उदात्तेन उच्चपरिणामस्य स्थैर्यात्। एवं तु सामान्येनापि स्यादत आह 'उत्तमेणं' उत्तमेन मलिनभावराहित्यात् एतत्तु सस्पृहमपिस्यादतआह उदारेण" औदार्येण, निस्पृहत्वातिशयात्। एतादृशं सम्भाव्यपि भवेदत आह- ' महाणुभावेणं ' महानुभावेन लोकातिशायिप्रभावजनकत्वात्। एतादृशेन तपः कर्मणा " सुक्के " शुष्कः शोणितरहितत्वात् " लुक्खे " रूक्षः क्षुभावशेन रूक्षी भूतत्वात् " निम्मंसे " निर्मासः यथेष्टाहाराभावेन शुष्कमांसत्वात्, अतएव

उपशमन का कारण होने से यह (मंगल्लेण) स्वयं मंगलरूप था। तथा सम्यक आराधना से शोभासंपन्न होने के कारण यह तप कर्म (सस्सि-रीएणं) सश्रीक था। इस तप कर्म को आचरित करते समय स्कन्दक अनगार के परिणाम इसकी आराधना करने में उत्तरोत्तर वृद्धिसंपन्न होते रहते थे इसलिये यह तप कर्म (उदग्गेणं) उदग्र उन्नत था। इसकी आराधना में उच्चपरिणामों की स्थिरता होने से (उदत्तेणं) उदात्त था। इस तप के करने में किसी भी प्रकार से परिणामों में मलिनता नहीं आने से यह (उत्तमेणं) उत्तम था। इस तप कर्म में निस्पृहता की पराकाष्ठा होने के कारण यह (उरालेण) उदार था। यह स्कन्दक द्वारा आचरित तपःकर्म सामान्यप्रभाववाला नहीं था किन्तु (महाणुभावेणं) लोकातिशायी प्रभाव का जनक था। ऐसे तपकर्म के निरन्तर करने से स्कन्दक अनगार का शरीर खून रहित होने के कारण काष्ठ के जैसा शुष्क हो गया था। भूख के प्रभाव से वह बिलकुल रुखा हो गया था। (निम्मसे) यथेष्ट आहार के अभाव के कारण वह मांस रहित हो गया

તે (मंगल्लेण) 'મંગળસ્વરૂપ' હતું, સમ્યક આરાધનાથી શોભાયમાન હોવાથી તે તપ કર્મ (सस्सिरीएण) (સશ્રીક) હતું, આ તપ કર્મ કરતી વખતે સ્કન્દક અણુગારના પરિણામ તેની આરાધના કરવામા ઉત્તરોત્તર વૃદ્ધિ પામતા રહેતાં હતા, તેથી તે તપ કર્મ (उदग्गेण) ઉદગ્ર-ઉન્નત હતું, તેની આરાધનામા ઉચ્ચ પરિણામોની .સ્થિરતા હોવાથી તે (उदत्तेण) ઉદાત્ત હતુ આ તપની આરાધના કરતા પરિણામોમા કોઈ પણ પ્રકારની મલિનતા પ્રવેશવાથી તે (उत्तमेण) ઉત્તમ હતુ તે તપમાં નિસ્પૃહતાની પરાકાષ્ઠતા હોવાથી તે (उरालेणं) ઉદાર હતુ. તે તપ સામાન્ય પ્રભાવવાળુ નહતુ પણ (महाणु भावेण અલૌકિક પ્રભાવનુ જનક હતુ આ પ્રકારની તપસ્યા નિરંતર કર્યા કર-વાથી સ્કન્દક અણુગારનુ શરીર લોહીથી રહિત થઈ ગયુ હતું તેથી તે કાષ્ઠ જેવું શુષ્ક લાગતું હતુ ભૂખના પ્રભાવથી તે તદ્દન રુક્ષ થઇ ગયુ હતુ (निम्मसे) આવશ્યક આહારને અભાવે તેમનુ શરીર માસરહિત થઇ ગયુ

तिष्ठति, आत्मबलेनैव स्थित्यादि क्रियां करोति न तु शरीरबलेन पुनश्च "भ मासित्ता गिलाइ" भाषां भाषित्वाऽपि ग्लायति । "भासं भासमाणे गिला भाषां भाषमाणो ग्लायति " भास भासिस्सामीति गिलायति " भाषां भाषि इति ग्लायति, अनेन कालत्रयेऽपि भाषमाणे ग्लानि सूचिता ।

स स्कन्दकोऽनगारः पुनः कीदृशो जात', इति दृष्टान्तेन निरूपयति 'से ज हाणामए ' इत्यादि, ' से जहानामए ' तद् यथा नाम यथा ' कट्ठसगडिया वा काष्ठशकटिका इति वा काष्ठेन भृता परिपूरिता शकटिका काष्ठशकटिका, इ काष्ठपरिपूरितशकटिकेत्यर्थः "पत्तसगडियाइ वा " पत्रशकटिका इति वा शुष्क मृतशकटिका तिलसगडियाइ वा। तिलशकटिका इति वा तिलफलीभिभृता शकटि "मंडसगडियाइ वा" भांडशकटिका इति वा, भाण्डानां मृन्मयभाजनानां भृता श टिका "एरंडकट्ठसगडियाइ वा" एरण्डकाष्ठशकटिका इति वा, एरण्डकाष्ठभृता व

तरह वे आत्मबल से ही खडे रहते थे शरीर बल से नहीं। पुन (भासं भासित्ता गिलाइ, भासं भासमाणे गिलाइ, भास भासिस्सामिति गिलाइ) इन पदों से कालत्रय में भी बोलने में उन्हें रुचि नहीं होती थी, अपि तु ग्लानि ही होती थी यह बात सूचित की है। स्कन्दक अनगार की स्थिति-शारीरिकदशा-अब सूत्रकार दृष्टान्त द्वारा स्पष्ट प्रकट करते हुए कहते हैं-(से जहाणामए कट्ठसगडियाइवा) जैसे मानों कोई काष्ट समूह से-लकडियों से-भरीहुई गाडी हो-(पत्तसगडियाइवा) पत्रों के समूह से लबालब भरी हुई कोई गाडी हो, (तिलसगडियाइवा) तिलफली से भरी हुइ कोइ गाडी हो, (भंडगसडियाइवा) भाण्ड-मिट्टी के बने हुए बर्तनों से भरी हुई कोई गाडी हो (एरंडसगडियाइवा एरंड के काष्टसे भरी हुई कोइ गाडी हो (इंगालसगडिया

ઉભા રહેતા હતા શરીરબળથી નહીં (भास भासित्ता गिलाइ भास भासमाणे गिलाइ, भास भासिस्सामिति गिलाइ) આ પદો દ્વારા સૂત્રકાર એ દર્શાવવા માગે છે કે ત્રણે કાળમાં તેમને બોલવાની રુચિ થતી નહીં, બોલવાનો પ્રસંગ આવે તો ગ્લાનિ જ થતી હતી. સ્કન્દક અણગારની શારીરિક હાલત કેવી થઇ ગઇ હતી તેનું સૂત્રકાર દૃષ્ટાન્ત દ્વારા સ્પષ્ટીકરણ કરે છે (से जहाणामए कट्ठसगडियाइवा) લાકડાથી ભરેલી કોઇ ગાડી હોય, (पत्तसगडियाइ वा) પાંદડાના સમૂહથી ખીચો ખીચ ભરેલી કોઇ ગાડી હોય, (तिलसगडियाइ वा) તલની શિંગોથી ભરેલી કોઇ ગાડી હોય, (मडगसगडियाइ वा) માટીનાં વાસણોથી ભરેલી કોઇ ગાડી હોય, (इंगालसगडियाइ वा) કોલસા થી ભરેલી કોઇ ગાડી હોય, (एरंडसगडियाइ वा) એરંડાના કાષ્ઠથી ભરેલી

"धमणिसंतए" धमनीसंततः धमनीसंततो नाडीव्याप्तः मांसक्षयेण परिदृश्यमान नाडीक इत्यर्थः" जाए यावि होत्था" जातश्चाप्यभूत् पूर्वोक्तरूपो जातः, घोरातिघोरतपश्चरणात्। ननु यदि तपः करणेन शरीरमेतादृशं जातं तदा उत्थानादि क्रिया तस्य कथं भवतीत्याह-'जीवं जं वेणं' इत्यादि। 'जीवं जीवेणं' जीवजीवेन अत्र प्रथमो जीवशब्दः आत्मवाचकः द्वितीयजीवशब्दो बलवाचकस्तेन जीवजीवेन जीवबलेन 'गच्छइ' गच्छति गमनादिक्रियां करोति, आत्मबलेनैव चलनादि क्रियां करोति, न तु शरीरबलेनेति भाव "जीवं जीवेण चिट्ठइ" जीवं जीवेन

हो चुका था-अतएव-वे दुर्बल हो गये थे। (धमणिसंतए) मांसरहित हो जाने के कारण उनके शरीर में नाडियां स्पष्ट नजर पड़ने लगीं थीं। सो यह सब उनके शरीर की हालत घोरातिघोरतपस्या के करने से हुई। अर्थात्-घोरातीघोर तपस्या के करने से उनका शरीर पूर्वोक्त स्थितिवाला बन गया पर उत्थानादि क्रिया वे कैसे करते थे, तो इस आशंका के परिहार निमित्त सूत्रकार कहते हैं-"जीवं जीवेणं गच्छइ" जीव जीवेन गच्छति-वे शरीर के बल से नहीं चलते थे, अपि तु आत्मबल से ही चलते थे। यहां प्रथम जीव शब्द आत्मा का वाचक है और द्वितीय जीव शब्द बल का वाचक है। आत्मबल से ही गमनादि क्रिया करते थे शरीर के बल से नहीं। इस तरह स्कन्दक अनगार शारीरिक बलकी क्षीणता होने पर भी आत्मबल से ही चलनादि रूप क्रिया करते थे-शरीर के बल से नहीं। (जीवं जीवेण चिट्ठइ) इसी

બિલકુલ હ્રાસ થઇ ગયો હતો તેથી તેઓ અતિશય દુર્બળ થઈ ગયા હતા. (धमणिसतए) તેમના માંસ રહિત શરીરમાંથી તેમની નસો સ્પષ્ટ દેખાતી હતી કઠિનમાં કઠિન તપસ્યાને કારણે તેમના શરીરની જે એવી હાલત થઈ ગઇ હતી, તો એવા શરીરે તેઓ ઉત્થાન આદિ ક્રિયાઓ કેવી રીતે કરતા હશે? તો આ શંકાના નિવારણ માટે સૂત્રકાર કહે છે કે-(जीव जीवेण गच्छइ) जीव जीवेन गच्छति ! તેઓ શરીરના બળથી ચાલતા નહીં પણ તેમના આત્મબળથી જ ચાલતા હતા અહીં પહેલો (જીવ) શબ્દ આત્માનો વાચક છે અને બીજો (જીવ) શબ્દ શારીરિક બળનો વાચક છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે તેઓ આત્મબળથી જ ગમનાદિ ક્રિયા કરતા હતા, શારીરિક બળથી નહી. શારીરિક બળ ન હોવા છતા તેઓ આત્મબળથી જ ચલનાદિ ક્રિયા કરતા હતા (जीवं जीवेण चिट्ठइ) એજ પ્રમાણે તેઓ આત્મબળથી

अयमाशय यथा भस्मप्रतिच्छन्नो वह्निर्बाह्यतस्था तेजोरहित इव लक्ष्यते अन्तस्तु तेजसा ज्वलत्येव तथा स्कन्दकोऽपि अपगतमांसशोणितत्वात् बहिस्तेजोरहितः अन्तस्तु शुभध्यानतपसा जाज्वल्यमानोऽस्त्येवेति ॥ सू०१४ ॥

अथ विलक्षणानेकतपःकर्मकरणानन्तरं स्कन्दकः किं करोतीत्याह-'तेणं कालेणं तेणं समएणं' इत्यादि ।

मूलम्—तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे नयरे समोसरणं जाव-परिसा पडिगया तएणं तस्स खंदयस्स अणगारस्स अण्णया कयाइ-पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि धम्मजागरियं जागरमाणस्स इमेयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए जाव समुप्पज्जित्था एवं खलु अहं इमेणं एयारूवेणं ओरालेणं जाव किसे धमणिसंतए जाए जीवं जीवेणं गच्छामि। जीवं जीवेणं चिट्ठामि जाव गिलामि । जाव एवामेव अहंपि ससदं गच्छामि ससदं चिट्ठामि तं अत्थि ता मे उट्ठाणे कम्मे बले वीरिए पुरिसक्कारपरक्कमे तं जाव । ता मे अत्थि उट्ठाणे कम्मे बले वीरिए पुरिसक्कारपरक्कमे जाव य मे धम्मायरिए

से (अईव अईव उवसोभेमाणे चिट्ठइ) बहुत बहुत शोभायमान हो रहे थे। तात्पर्य कहने का यह है कि जिस प्रकार से भस्म से ढकी हुई अग्नि बाहर में तो तेज रहित जैसी प्रतीत होती है, परन्तु भीतर में वह तेज से प्रज्वलित ही रहती है, उसी प्रकार से स्कन्दक अनगार भी मांस और शोणित से रहित होने के कारण बाहर में तेज से रहित थे-परन्तु फिर भी भीतर में शुभध्यान और तप से जाज्वल्यमान ही थे ॥ सू० १४ ॥

(अग्निथी) (अईव अईव उवसोभेमाणे चिट्ठई) अतिशय शोभता हता. कहेवानुं तात्पर्य ए छे के जेम राखथी अग्नि बहारथी लेतां तो तेजहीन लागे छे पण अंदरथी तो तेजथी सळगतो रहे छे तेम स्कन्दक अणगारनुं शरीर मांस अने शोणितथी रहित होवाने कारणे बहारथी तो निस्तेज लागतुं हतुं पण तेमनो आत्मा तो शुभ ध्यान अने तपथी देदीप्यमान हतो ॥ सू. १४ ॥

शकटिका " इंगालसगडियाइ वा " अङ्गारशकटिका इति वा । अङ्गारपरिपूरिता कोयला इति भाषा प्रसिद्ध वस्तुजात संभृता शकटिका "उण्हे दिण्णा" उष्णे दत्ता उष्णे=आतपादौ दत्ताः प्रसारिता अत एव 'सुक्का समाणी' शुष्कासती " ससद्दं गच्छइ " सशब्दं गच्छति " ससद्दं चिट्ठइ " सशब्दं तिष्ठति, यथा शुष्ककाष्ठादि परिपूरिता शकटिका यदि चलति तिष्ठति वा तदा काष्ठपत्रादीनां शुष्कत्वेन शब्दं करोत्येवेत्यर्थः "एवामेव खंदए वि अणगारे " एवमेव स्कन्दकोप्यनगारः " ससद्दं गच्छइ" सशब्दं गच्छति "ससद्दं चिट्ठइ" सशब्दं तिष्ठति उपविशतीत्यर्थः गतिस्थितिसमयेऽस्थिसंघर्षेण शरीरस्य शब्दायमानत्वात् ।

स स्कन्दकोऽनगारः "उवचिएतवेण" उपचितस्तपसा "अवचिए मससोणिएणं" अपचितो मांसशोणितेन, मांसशोणितराहित्येनापचितः क्षीणतां प्राप्तः । "हुयासणेविव भासराशिपडिच्छण्णे " हुताशन इव भस्मराशिप्रतिच्छन्नः ' तवेणं तेएणं " तपसा तेजसा " तवतेयसिरीए " तपस्तेजःश्रिया " अतीव अतीव उवसोभेमाणे चिट्ठइ " अतीवातीवोपशोभमानस्तिष्ठति ।

वा) कोयलों से भरी हुई कोइ गाड़ी हो, (उण्णे दिण्णा) और वह घाम-धूप में सूखाई गई हो, इस प्रकार (सुक्का समाणी) सूख जाने पर जैसे वह (ससद्दं गच्छइ) खट खट शब्द करती हुई चलती है (ससद्दं चिट्ठइ) खट-खट शब्द करती हुइ ठहरती है, उसी तरह स्कन्दक अनगार का शरीर भी गति, और स्थिति के समय में आपस में अस्थियों के संघर्ष से शब्दायमान होता था वे स्कन्दक अनगार (उवचिए तवेण) तप से उपचित पुष्ट थे परन्तु (अवचिए मंससोणिएणं) मांस और शोणित से अपचित-क्षीण थे, (हुयासणे विव भासरासिपडिच्छण्णे) परन्तु फिर वे स्कन्दक अनगार भस्मराशि से प्रच्छन्न अग्नि की तरह (तवेणं तेएणं) तप और तेज की श्री-शोभा

કોઈ ગાડી હોય, (उण्हे दिण्णा) અને તે સૂર્યના તાપથી સૂકાઇ ગયેલી હોય, (सुक्का समाणी) એ રીતે સૂકાઈ જવાને લીધે જેમ તે (ससद्दं गच्छइ) ખટ-ખટ અવાજ કરતી ચાલે છે. (ससद्दं चिट्ठइ) અને તેને ચાલતી અટકાવીએ ત્યારે ખટ ખટ અવાજ કરતી ઉભી રહે છે, એજ પ્રમાણે હલન ચલન કરતી વખતે સ્કન્દક અણુગારના હાડકા પણુ એક બીજા સાથે ઘસાવાથી ખટ ખટ અવાજ થતો હતો સ્કન્દક અણુગાર (उवचिए तवेण) તપથી ઉપચિત (પુષ્ટ) હતા, પણુ (अवचिए मंससोणिएण) પણુ માસ અને રક્તથી અપચિત (ક્ષીણુ) હતા (हुयासणे विव भासरासिपडिच्छण्णे) પણુ તેઓ રાખની નીચે ઢંકાયેલા અગ્નિની જેમ (तेवेण तएण') તપ અને તેજની શ્રીથી

पत् प्रतिगता ततः खलु तस्य स्कन्दकस्यानगारस्यान्यदा कदाचित् पूर्वरात्राप रात्रकालसमये धर्मजागरिकां जाग्रत अयमेतद्रूप आध्यात्मिकश्चिन्तितो यावत् समुदपद्यत० अहं खलु अनेनैतद्रूपेणोदारेण यावत् कृशो धमनीसन्ततो जात

अतिविलक्षण अनेक तप करने के बाद स्कन्दक अनगार ने क्या किया सो कहते हैं—(तेणं कालेणं) इत्यादि।

सूत्रार्थ—(तेणं कालेणं तेणं समएणं) उस काल में और उस समय में (रायगिहे नयरे) राजगृह नगर था वहां (समोसरणं) भगवान का आगमन हुआ (जाव परिसा पडिगया) यावत्-धर्मकथा सुनकर सभा विसर्जित हो गई (तएणं तस्स खंदयस्स अणगारस्स) इसके बाद उस स्कन्दक अनगार को (अण्णया कयाई) किसी समय (पुव्वरत्तावरत्तकाल समयंसि) रात्रीके पिछले प्रहर में (धम्मजागरियं जागरमाणस्स) धर्म जागरण करते समय (इमेयारूवे अज्झत्थिए, चिंतिए, जाव, समुप्पज्जित्था) इस प्रकार का आध्यात्मिक, चिंतित यावत् मनोगत संकल्प उत्पन्न हुआ, (एवं खलु अहं इमेणं एयारूवेणं ओरालेणं जाव किसे धमणिसंतए जाए) मैं इस प्रकार के उदार तप के आराधन करने से यावत् दुर्बल हो गया हूं-तथा मेरे शरीर की समस्त धमनियां-नाडियां बाहर स्पष्ट

આ પ્રકારે । અનેક અતિ વિલક્ષણ તપ કર્યા પછી સ્કન્દક અણગારે શું કર્યું તે હવે સૂત્રકાર કહે છે 'तेणं कालेणं इत्यादि।'

સૂત્રાર્થ: (तेणं कालेणं तेणं समएणं) તે કાળે અને તે સમયે (रायगिहे नयरे) રાજગૃહ નામે નગર હતુ (समोसरणं) ત્યાં મહાવીર પ્રભુ પધાર્યા ત્યાં સમોસરણ રચાયું (जाव परिसा पडिगया) (પરિષદ ધર્મ કથા નીકળી સ્વામી શરૂ કરીને (ધર્મકથા સાંભળીને સભા વિસર્જન થઇ) ત્યાં સુધીનું કથન આગળ પ્રમાણે સમજવું (तएणं तस्स खंदयस्स अणगारस्स" ત્યાર બાદ તે સ્કન્દક અણગારને अण्णया कयाई એક વખત 'पुव्वरत्तावरत्तकाल-समयंसि" રાત્રિના છેલ્લા પહોરે 'धम्मजागरियं जागरमाणस्स" ધર્મજાગરણ કરતી વખતે (इमेयारूवे अज्झत्थिए, चिंतिए जाव समुप्पज्जित्था) આ પ્રકારનો આધ્યાત્મિક, ચિંતિત મનોગત સંકલ્પ થયો -(અહીં મનોગત પર્યન્તના વિશેષણો આગળ પ્રમાણે સમજવા) (एवं खलु अहं इमेणं एयारूवेणं ओरालेणं जाव किसे धमणिसंतए जाए) આ પ્રકારનું ઉદાર તપ કરવાથી હું કૃશ થઈ ગયો છું, મારા શરીરની નસો બહાર સ્પષ્ટ દેખાય છે (जीवं जीवेण

धम्मोवदेसए समणे भगवं महावीरे जिणे सुहत्थी विहरइ तावता मे सेयं कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए फुल्लुप्पलकमलकोमलुम्मिलियम्मि अहापंडुरे पभाए, रत्तासोयप्पगासे किंसुयसुयमुहगुंजद्धरागसरिसे कमलागरसंडवोहए, उट्ठियम्मि सूरे सहस्सरस्सिम्मि दिणयरे तेयसा जलंते समणं भगवं महावीरं वंदित्ता नमंसित्ता जाव पज्जुवासित्ता, समणेणं भगवया महावीरेणं अब्भणुण्णाए समाणे सयमेव पंच महव्वयाइं आरोवेत्ता समणाय समणीओ य खामेत्ता तहारूवेहिं थेरेहिं कडाईहिं सद्धिं विउलं पव्वयं सणियं सणियं दुरुहित्ता मेहघणसंनिगासं देवसन्निवायं पुढवीसिलापट्टयं परिलेहित्ता दब्भसंथारगं संथरित्ता दब्भसंथारोवगयस्स संलेहणा झोसणा झूसियस्स भत्तपाणपडियाइक्खियस्स, पाओवगयस्स, कालं अणवकंखमाणस्स विहरित्तए त्तिकट्टु एवं संपेहेइ संपेहित्ता कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए जाव जलंते जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव जाव पज्जुवासइ खंदयाइ समणे भगवं महावीरे खंदयं अणगारं एवं वयासी से णूणं खंदया, पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि, धम्मजागरियं जागरमाणस्स इमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था, एवं खलु अहं इमेणं एयारूवेणं तवेणं ओरालेणं विउलेणं तं चेव जाव कालं अणवकंखमाणस्स विहरित्तए त्तिकट्टु एवं संपेहेइ संपेहित्ता कल्लं पाउप्पभायाए जावजलंते जेणेव मम अंतिए तेणेव हव्वमागए से णूणं खंदया अट्ठे समट्ठे ? हंता अत्थि अहासुहं देवाणुप्पिया मा पडिबन्धं करेह ॥सू०१५॥

छाया-तस्मिन्काले तस्मिन् समये राजगृहे नगरे समवसरणम् यावत् परि-

पद् भविगता ततः खलु तस्य स्कन्दस्यानगारस्यान्यदा कदाचित् पूर्वरात्रा
रात्रकालसमये धर्मजागरिकां जाग्रत अयमेतद्रूप आध्यात्मिकश्चिंतितो यावत्
समुदपद्यत० अहं खलु अहमनेन एतद्रूपेणोदारेण यावत् कृशो धमनीसंततो भव

अतिविलक्षण अनेक तप करने के बाद स्कन्दक अनगार ने क्या किया सो कहते हैं—(तेण कालेणं) इत्यादि।

सूत्रार्थ—(तेण कालेणं तेणं समएणं) उस काल में और उस समय में (रायगिहे नयर) राजगृह नगर था वहां (समोसरण) भगवान का आगमन हुआ (जाव परिसा पडिगया) यावत्–धर्मकथा सुनकर सभा विसर्जित हो गई (तएणं तस्स खंदयस्स अणगारस्स) इसके बाद उस स्कन्दक अनगार को (अण्णया कयाई) किसी समय (पुव्वरत्तावरत्तकाल समयंसि) रात्रीके पिछले प्रहर में (धम्मजारियं जागरमाणस्स) धर्म जागरण करते समय (इमेयारूवे अज्झत्थिए, चिंतिए, जाव, समुप्पज्जित्था) इस प्रकार का आध्यात्मिक, चिंतित यावत् मनोगत संकल्प उत्पन्न हुआ, (एवं खलु अहं इमेणं एयारूवेणं ओरालेणं जाव किसे धमणिसंतए जाए) मैं इस प्रकार के उदार तप के आराधन करने से यावत् दुर्बल हो गया हूं–तथा मेरे शरीर की समस्त धमनियां–नाडियां बाहर स्पष्ट

આ પ્રકાર । અનેક અતિ વિલક્ષણ તપ કર્યા પછી સ્કંદક અણગારે શું કર્યું તે હવે સૂત્રકાર કહે છે ' तेणं कालेणं इत्यादि ।

સૂત્રાર્થ: (तेण कालेणं तेणं समएणं) તે કાળે અને તે સમયે (रायगिहे नयरे) રાજગૃહ નામે નગર હતું (समोसरणं) ત્યાં મહાવીર પ્રભુ પધાર્યા ત્યાં સમોસરણ રચાયું (जाव परिसा पडिगया) (પરિષદ ધર્મ કથા સાંભળી ત્યાંથી શરૂ કરીને (ધર્મકથા સાંભળીને સભા વિસર્જન થઈ) ત્યાં સુધીનું કથન આગળ પ્રમાણે સમજવું (तएणं तस्स खंदयस्स अणगारस्स " ત્યાર બાદ તે સ્કન્દક અણગારને ' अण्णया कयाई એક વખત ' पुव्वरत्तावरत्तकाल समयंसि " રાત્રિના છેલ્લા પ્રહરે " धम्मजागरियं जागरमाणस्स " ધર્મજાગરણ કરતી વખતે (इमेयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए जाव समुप्पज्जित्था) આ પ્રકારનો આધ્યાત્મિક, ચિંતિત મનોગત સંકલ્પ થયો –(અહીં મનોગત પર્યન્તના વિશેષણો આગળ પ્રમાણે સમજવા) (एवं खलु अहं इमेणं एयारूवेणं ओरालेणं जाव किसे धमणिसंतए जाए) આ પ્રકારનું ઉદાર તપ કરવાથી હું દુર્બળ થઈ ગયો છું, આખા શરીરની નસો બહાર સ્પષ્ટ દેખાય છે (जीवं जीवेण

जीवं जीवेन गच्छामि जीवं जीवेन तिष्ठामि यावत् ग्लायामि यावदेवमेवाहमपि सशब्दं गच्छामि सशब्दं तिष्ठामि, तदस्ति तावन्ममोत्थानं कर्मबलं वीर्यं पुरुषकार पराक्रमस्तद् यावत्तावन्ममास्ति उत्थानं कर्मबलं वीर्यम् पुरुषकारपराक्रमो यावच्च मम धर्माचार्यो धर्मोपदेशकः श्रमणो भगवान् महावीरो जिनः सुहस्ती विहरती तावता मम श्रेयः कल्यं प्रादुष्प्रभातायां रजन्यां फुल्लोत्पलकमलकोमलोन्मीलिते

रूप से दीख रही हैं (जीवं जीवेण गच्छामि)मैं शरीर बल से नहीं, किन्तु आत्मबल से चलता हूं, (जीव जीवेण चिट्ठामि) आत्मबल से ही ठहरता हूं (जाव गिलामि) यावत् बोलते २ भी ग्लानियुक्त हो जाता हूं (जाव एवामेव अहंपि ससद्दं गच्छामि, ससद्दं चिट्ठामि) यवत् इसी तरह से मैं भी चट-चट शब्द करते हुए चलता हूं और चट-चट शब्द करते हुए ही बैठता हूं (तं अत्थि ता मे उट्ठाणे) फिर भी मुझ में अभी उत्थान शक्ति है (कम्मे, बले, वीरिए, पुरिसक्कारपरक्कमे) कर्म है बल है, वीर्य है, पुरुषकार पराक्रम है (तं जाव ता मे अत्थि उट्ठाणे, कम्मे, बले, वीरिए, पुरिसक्कारपरक्कमे) तो जबतक मुझ में उत्थान कर्म, बल, वीर्य, और पुरुषार्थ पराक्रम हे और (जाव य मे धम्मायरिए-धम्मोवदेसए सुहत्थी समणे भगवं महावीरे) जबतक मेरे धर्माचार्य धर्मोपदेशक श्रमण भगवान् महावीर (जिणे) जिन (सुहत्थी) पुरुषों में गन्धहस्ती जैसे (वीहरइ) विचरते हैं अर्थात् विद्यमान हैं (तावता-मे सेय कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए) तबतक अर्थात् भगवान् महावीर

गच्छामि) હું શરીરબળથી નહી પણ આત્મબળથી ચાલુ છુ (जीव जीवेण चिट्ठामि) આત્મબળથી જ સ્થિર રહુ છુ, (जाव गिलामि) બોલતાં પણ ગ્લાનિ અનુભવુ છુ (जाव एवामेव अहंपि ससद्द गच्छामि ससद्द चिट्ठामि) હું જ્યારે ચાલુ છું ત્યારે મારા હાડકાના ઘર્ષણથી ખટ-ખટ અવાજ થાય છે, બેસતી વખતે પણ ખટ ખટ અવાજ થાય છે (त अत्थि ता मे उट्ठाणे) છતા પણ હજી મારામાં ઉત્થાન શક્તિ છે (कम्मे' बले, वीरिए पुरिसक्कार-परक्कमे) કર્મ છે, બળ છે વીર્ય છે અને પુરુષકાર પરાક્રમ છે (तं जावता मे अत्थि उट्ठाणे, कम्मे, बले, वीरिए, पुरिसक्कारपरक्कमे) તો જ્યા સુધી મારામા ઉત્થાન શક્તિ, બળ, વીર્ય અને પુરુષાર્થ પરાક્રમ મોજુદ છે, (जाव य मे धम्मायरिए धम्मोवदेसए सुहत्थी समणे भगव महावीरे जिणे विहरइ) જ્યાસુધી પુરુષોમા ગન્ધહસ્ની સમાન મારા ધર્માચાર્ય ધર્મોપદેશક, જિનેશ્વર શ્રમણ ભગવાન મહાવીર વિદ્યમાન છે, (तावता मे सेय कल्ल पाउप्प-भायाए रयणीए) ત્યા સુધી મારૂ શ્રેય છે. તો આવતી કાલે રાત્રિ પૂરી થાય

यथा पांडुरे प्रभाते रक्ताशोकप्रकाशे किंशुकशुकमुखगुंजार्द्धरागसदृशे कमलाकरषंड बोधके उत्थिते सूर्ये सहस्ररश्मौ दिनकरे तेजसा ज्वलति सति भगवन्त महावीरं वन्दित्वा नमस्यित्वा यावत् पर्युपास्य भगवता महावीरेणाभ्यनुज्ञातः सन् स्वयमेव पञ्चमहाव्रतान्यारोप्य श्रमणांश्च श्रमणीश्च क्षमयित्वा तथारूपैः स्थविरैः

प्रभु के समक्ष "मे श्रेय, मेरे लिये श्रेयस्कार है आगामी दिवस जब रात्रि प्रकाशवाली हो जायगी तथा (फुल्लुप्पलकमलकोमलुम्मिलियम्मि अहापण्डुरे पभाए) जब ऐसा प्रभात हो जावेगा कि जिसमें सामान्य तथा विकसित हुए कमल के दलों का और हरिणविशेष के नेत्रों का उन्मीलन–खिलना हो जावे अर्थात् धवल प्रकाश फैल जावे, तथा (रत्ता सोयप्पगासे) रक्त अशोक वृक्ष के जैसे प्रकाशवाला (किंसुय-सुयमुहगुंजद्धरागसरिसे) किंशुक–पलाश पुष्प शुकमुख–तोते का मुख एवं गुंजार्ध–रक्तिका के अर्धभाग जैसा (कमलागरसंडबोहए) सरोवर आदि में कमल समूह को विकसित करने वाला (सहस्सरस्सिम्मि) एक हजार किरणों वाला, (दिनयरे) दिवस करने वाला (तेयसा जलंते सूरे उट्ठियम्मि) तेजसे प्रदिप्त ऐसा सूर्य जब उदित हो जावेगा तब मैं (समणं भगवं महावीरं वंदित्ता नमंसित्ता जाव पज्जुवासित्ता) श्रमण भगवान् महावीर के पास जाकर उनको वंदना करूंगा और नमस्कार करूंगा। वंदना नमस्कार करके यावत् उनकी पर्युपासना करके (समणेणं भगवया महावीरेण अब्भणुन्नाए समाणे) उन श्रमण भगवान महावीर की आज्ञा प्राप्त करूंगा, आज्ञाप्राप्त कर फिर मैं (सयमेव) अपने आप (पंच

फुल्लुप्पलकमलकोमलुम्मिलियम्मि अहा पंडुरे पभाए) अने કમળોને તથા હરિણોના નેત્રોને વિકસાવનાર સૂર્યનો પ્રકાશ ફેલાઈ જાય (रत्तासोयप्पगासे) લાલ અશોકવૃક્ષના જેવા પ્રકાશ વાળો (किंसुयसुयमुहगुंजद्धरागसरिसे) કિંશુક પલાશ ખાખરાનું પુષ્પ પોપટના મુખ સમાન, અને ચણોઠીના અર્ધ ભાગ સમાન લાલ રંગનો, (कमलागरसंडबोहए) સરોવર આદિમાં કમલ વૃન્દોને વિકસિત કરનારો (सहस्सरस्सिम्मि) એક હજાર કિરણો વાળો (दिनयरे) દિવસ કરનારો (तेयसा जलंते सूरे उट्ठियम्मि) તેજથી દેદીપ્યમાન સૂર્ય જ્યારે ઉદય પામશે ત્યારે (समणं भगवं महावीरं वंदित्ता जाव पज्जुवासित्ता) હું શ્રમણ ભગવાન મહાવીર પાસે જઈને તેમને વંદણા નમસ્કાર કરીશ વંદણા નમસ્કાર કરીને તેમની પર્યુપાસના પર્યન્તની વિધિ કરીને (समणेणं भगवया महावीरेणं अब्भणुन्नाए समाणे) હું શ્રમણ ભગવાન મહાવીરની આજ્ઞા લઈશ. આજ્ઞા લઈને (सयमेव) મારી જાતે જ (पंचमहव्वयाइं आरोवेत्ता)

जीवेन गच्छामि जीवं जीवेन तिष्ठामि यावत् ग्लायामि यावदेवमेवाहमपि सशब्दं गच्छामि सशब्दं तिष्ठामि, तदस्ति तावन्ममोत्थानं कर्मबलं वीर्यं पुरुषकारपराक्रमस्तद् यावत्तावन्ममास्ति उत्थानं कर्मबलं वीर्यम् पुरुषकारपराक्रमो यावच्च धर्माचार्यो धर्मोपदेशकः श्रमणो भगवान् महावीरो जिनः सुहस्ती विहरती तावता मम श्रेयः कल्यं प्रादुष्प्रभातायां रजन्यां फुल्लोत्पलकमलकोमलोन्मीलिते

से दीख रही हैं (जीवं जीवेण गच्छामि)मैं शरीर बल से नहीं, किन्तु आत्मबल से चलता हूं, (जीवं जीवेण चिट्ठामि) आत्मबल से ही ठहरता हूं (जाव गिलामि) यावत् बोलते २ भी ग्लानियुक्त हो जाता (जाव एवामेव अहंपि ससद्दं गच्छामि, ससद्दं चिट्ठामि) यवत् इसी तरह से मैं भी चट-चट शब्द करते हुए चलता हूं और चट-चट शब्द करते हुए ही बैठता हूं (तं अत्थि ता मे उट्ठाणे) फिर भी मुझ में अभी उत्थान शक्ति है (कम्मे, बले, वीरिए, पुरिसक्कारपरक्कमे) कर्म है बल है, वीर्य है, पुरुषकार पराक्रम है (तं जाव ता मे अत्थि उट्ठाणे, कम्मे, बले, वीरिए, पुरिसक्कारपरक्कमे) तो जबतक मुझ में उत्थान कर्म, बल, वीर्य, और पुरुषार्थ पराक्रम हे और (जाव य मे धम्मायरिए-धम्मोवदेसए सुहत्थी समणे भगवं महावीरे) जबतक मेरे धर्माचार्य धर्मोपदेशक श्रमण भगवान् महावीर (जिणे) जिन (सुहत्थी) पुरुषों में गन्धहस्ती जैसे (वीहरइ) विचरते हैं अर्थात् विद्यमान हैं (तावता-मे सेय कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए) तबतक अर्थात् भगवान् महावीर

गच्छामि) હુ શરીરબળથી નહીં પણ આત્મબળથી ચાલુ છુ (जीवं जीवेण चिट्ठामि) આત્મબળથી જ સ્થિર રહુ છુ, (जाव गिलामि) બોલતાં પણ ગ્લાનિ અનુભવું છુ (जाव एवामेव अहंपि ससद्दं गच्छामि ससद्दं चिट्ठामि) હું જ્યારે ચાલુ છું ત્યારે મારા હાડકાંના ઘર્ષણથી ખટ-ખટ અવાજ થાય છે, બેસતી વખતે પણ ખટ ખટ અવાજ થાય છે (तं अत्थि ता मे उट्ठाणे) છતા પણ હજી મારામાં ઉત્થાન શક્તિ છે (कम्मे बले, वीरिए पुरिसक्कारपरक्कमे) કર્મ છે, બળ છે વીર્ય છે અને પુરુષકાર પરાક્રમ છે (तं जावता मे अत्थि उट्ठाणे, कम्मे, बले, वीरिए, पुरिसक्कारपरक्कमे) તો જ્યા સુધી મારામા ઉત્થાન શક્તિ, બળ, વીર્ય અને પુરુષાર્થ પરાક્રમ મોજુદ છે, (जाव य मे धम्मायरिए धम्मोवदेसए सुहत्थी समणे भगवं महावीरे जिणे विहरइ) જ્યાસુધી પુરુષોમા ગન્ધહસ્તી સમાન મારા ધર્માચાર્ય ધર્મોપદેશક, જિનેશ્વર શ્રમણ ભગવાન મહાવીર વિદ્યમાન છે, (तावता मे सेयं कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए) ત્યા સુધી મારૂ શ્રેય છે. તો આવતી કાલે રાત્રિ પૂરી થાય

मिति कृत्वा एवं समेक्षते सप्रेक्ष्य कल्यं प्रादुष्प्रभातायां रजन्यां यावत् ज्वलति यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीरस्तत्रैव यावत्पर्युपास्ते । स्कन्दक इति श्रमणो भगवान् महावीर स्कन्दकमनगारमेवमवादीत्, तद् नूनं तव स्कन्दक ! पूर्वरात्रापररात्र कालसमये धर्मजागरिकां जाग्रतोऽयमेतद्रूपआध्यात्मिको यावत् समुदपद्यत, एवं खल्वहमनेनैतद्रूपेण तपसोदारेण विपुलेन तदेव यावत्कालमनवकांक्षतो

मैं अपने मरण की आशंका- इच्छा नहीं करूंगा । (त्तिकट्टु) इस प्रकार की भावना से प्रेरित होकर उन स्कन्दक अनगार ने (एवं संपेहेइ) ऐसा विचार किया। (सपेहित्ता) इस प्रकार विचार कर के कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए जाव जलते) जब प्रातःकाल हुआ यावत् सूर्य का प्रकाश फैल चुका तब वे स्कन्दक अनगार (जेणेव समणे भगवं महावीरे) जहां श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे (तेणेव जाव पज्जुवासइ) वहां आये। यावत् उनकी वे पर्युपासना करने लगे। (खंदयाइ समणे भगवं महावीरे खंदयं अणगारं एवं वयासी) हे स्कन्दक ! इस प्रकार संबोधित करते हुए श्रमण भगवान महावीर ने स्कन्दक अनगार से ऐसा कहा-(से णूणं खंदया पुव्वरत्तावरत्तकाल समयंसि) हे स्कन्दक रात्री के पिछले प्रहर में (धम्मजागरियं जागरमाणस्स) धर्मजागरणा करते हुए तुम्हें (इमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था) यह इस प्रकार का आध्यात्मिक यावत् मनोगत संकल्प उत्पन्न हुआ कि (एवं

મરણની આકાંક્ષા નહીં કરૂ (ત્તિ કટ્ટુ) આ પ્રકારની ભાવનાથી પ્રેરાઈને સ્કન્દક અણગારે (एवं सपेहेइ) ઉપર બતાવ્યા પ્રમાણે સંકલ્પ કર્યો. (संपेहित्ता) આ પ્રકારનો સંકલ્પ કરીને (कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए जाव जलंते) જ્યારે પ્રાતઃકાળ થયો જ્યારે સૂર્યનો પ્રકાશ ફેલાયો-અહીં સૂર્યનો પ્રકાશ ફેલાયો ત્યાં સુધીનું કથન ઉપર મુજબ ગ્રહણ કરવાનું છે-ત્યારે સ્કન્દક અણગાર (जेणेव समणे भगवं महावीरे) જ્યાં શ્રમણ ભગવાન મહાવીર વિરાજતા હતા (तेणेव जाव पज्जुवासइ) ત્યાં આવ્યા ત્યાં આવીને ત્રણ્યથી પર્યુપાસના પર્યન્તની ક્રિયા કરી. (खंदयाइ समणे भगवं महावीरे खंदयं अणगारं एवं वयासी) ત્યારે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે સ્કન્દક અણગારને આ પ્રમાણે કહ્યું હે સ્કન્દક ! (से णूणं खंदया पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि) રાત્રિના છેલ્લા પ્રહરે (धम्मजागरियं जागरमाणस्स) ધર્મજાગરણ કરતી વખતે તમને (इमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था) આ પ્રકારનો આધ્યાત્મિક, મનોગત સંકલ્પ ઉત્પન્ન થયો છે કે (एवं खलु अहं इमेणं एयारूवेणं तवेणं ओरालेणं विउलेणं

कृतादिभिः सार्धं विपुलं पर्वतं शनैः शनैर्दुरुह्य मेघसंनिकाशं देवसन्निपातं पृथिवीशिलापट्टकं प्रतिलेख्य दर्भसंस्तारकं संस्तीर्य्य, दर्भसंस्तारकोपगतस्य संलेखनाजोषणाजुषितस्य भक्तपानप्रत्याख्यातस्य पादपोपगतस्य कालमनवकांक्षतः विहर्तुं-

महव्वयाइं आरोवेत्ता) पांच महाव्रतों को स्वीकार करके (समणा य समणीओ य खामेत्ता) श्रमण तथा श्रमणीओं से (क्षमापना) खमतखामणा करूँगा, खमत खामणा करके कराके (तहारूवेहिं थेरेहिं कडाईहिं सद्धिं) तथारूप स्थविरों के साथ कि जो संथारे में स्थित साधु के संरक्षक होते हैं अर्थात् सहायता करते हैं (विउलं पव्वयं) विपुल पर्वत पर विपुलाचल पर (सणियं सणियं) धीरे२ (दुरुहित्ता) चढकर (मेहघणसंनिगासं) मेघ के समूह जैसे वर्ण वाले (देवसन्निवायं) देवों के सन्निपात वाले ऐसे (पुढवीसिलापट्टयं) पृथवी शिलापट्टक की प्रतिलेखना करूँगा (पडिलेहित्ता) प्रतिलेखना करके उस पर (दब्भसंथारियं संथरित्ता) दर्भका संथारा बिछाऊँगा-बिछाकर (दब्भसंथारोवगयस्स) उस दर्भ के संथारे पर स्थित हुआ मैं (संलेहणा झोसणा झूसियस्स) संल्लेखना को बडे ही आदर भाव से धारण करता हुआ (भत्तपाण पडियाइक्खियस्स) चतुर्विध आहार का परित्याग करूँगा और (पाओवगयस्स) पादपोपगमन संथारे में रहता हुवा (कालं अणवकंखमाणस्स विहरित्तए) इस स्थिति में रहा हुआ

પાંચ મહાવ્રતો અંગીકાર કરીશ (समणा य समणीओ य खामेत्ता) અને સાધુ સાધ્વીઓને ખમત-ખમાસણા કરીશ ખમત ખમાસણા કરીને તથા કરાવીને (तहारूवेहिं थेरेहि कडाईहिं सद्धिं) સંથારો કરનારા સાધુઓને જેવો સહાયતા કરે છે તેવા સ્થવિરોની સાથે (विउल पव्वय) વિપુલ પર્વત પર વિપુલાચલ પર (सणियं सणियं) ધીરે ધીરે (दुरुहित्ता) ચઢીશ ત્યાં ચડીને (मेहघणसंनिगासं) મેઘના સમૂહ જેવા વર્ણ વાળા, (देवसन्निवायं) દેવોના નિવાસ સ્થાન વાળા (पुढवीसिलापट्टयं) પૃથ્વીશિલાપટ્ટકની પ્રતિલેખના કરીશ (पडिलेहित्ता) તેની પ્રતિલેખના કરીને તેના ઉપર (दब्भसंथारियं संथरित्ता) દર્ભનો સંથારો બિછાવીશ (दब्भसंथारोवगयस्स) તે દર્ભના સંથારા પર ઉભા રહીને (संलेहणा झोसणा झूसियस्स) હું ઘણા આદર ભાવ સહિત સંલ્લેખના (સંથારો) અંગીકાર કરીશ (भत्तपाणपडियाइक्खियस्स) ચાર પ્રકારના આહારનો ત્યાગ કરીશ (पाओवगयस्स) હું પાદપોપગમન સંથારો કરીશ (काल अणवकखमाणस्स विहरित्तए) એ સ્થિતિમાં રહેલો હું મારા

समवसरणम् " जाव परिसा पडिगया " यावत् पर्षत् प्रतिगता " तएणं तस्स खन्दयस्स अणगारस्स " ततः खलु तस्य स्कन्दकस्य तथाभूतानगारस्य " अण्णया कयाई " अन्यदा कदाचित्, अन्यस्मिन् कस्मिंश्चित्काले इत्यर्थः – " पुव्वरत्ता वरत्तकालसमयंसि " पूर्वरात्रापररात्रकालसमये पूर्वरात्रम् रात्रेः पूर्वो भागः अपर रात्रमपकृष्टा रात्रिः पश्चिमस्तद् भाग इत्यर्थः पूर्वरात्रापररात्रका यः कालसमय काल स्वरूप समयः स पूर्वरात्रापररात्रकालसमयस्तस्मिन् पूर्वरात्रापररात्रकाल-समये, रात्रेर्मध्यभागे पश्चिमभागे वा ' धम्मजागरियं जागरमाणस्स " धर्म-जागरिका जाग्रतः धर्मजागरिकां कुर्वत इत्यर्थः ' इमेयारूवे " अयमेतद्रूप " अज्झ त्थिए " आध्यात्मिक आत्मगत मनसि स्थित इत्यर्थः "चिंतिए" चिन्तित "जाव

प्रभुका आगमन हुआ। (जाव परिसा पडिगया) यावत् सभा विसर्जित हुई। (तएणं) तब (तस्स खंदयस्स अणगारस्स) उन स्कन्दक अन गार को (अण्णया कयाइ) किसी समय में (पुव्वरत्तावरत्तकाल-समयंसि) रात्रि के मध्यभाग में अथवा रात्रि के पश्चिमभाग में जब कि वे (धम्मजागरियं जागरमाणस्स) धर्मजागरणा कर रहे थे—तब इस प्रकार का मनोगत संकल्प-विचार उत्पन्न हुआ, (रात्रि का पूर्व भाग पूर्वरात्र और रात्रि का अपरभाग अपररात्र है। पूर्वरात्र और अपररात्र रूप जो कालसमय-कालस्वरूप समय वह पूर्वरात्रापररात्र कालसमय है-उसमें अर्थात् रात्रि के मध्यभाग में अथवा रात्रि के पश्चिम भाग में धर्म के निमित्त जो की जाती है वह धर्मजागरणा है। धर्म जागरण करते समय स्कन्दक अनगार के (इमेयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए जाव समुप्पज्जित्था) इस प्रकार के आध्यात्मिक चिन्तित,

આગમન થયું ત્યાંથી શરૂ કરીને ' जाव परिसा पडिगया ' સભા વિસર્જિત થઈ,-ત્યાં સુધીનું કથન અહીં આગળ મુજબ કહેવું કરવું ' तएणं " જ્યારે સભા વિસર્જિત થઈ ત્યાર બાદ तस्स खंदयस्स अणगारस्स " તે સ્કંદક અણગારને ' अण्णया कयाई " કોઈ એક સમયે ' पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि ' રાત્રિના પાછલા ભાગે (મધ્ય રાત્રિ પછી) " धम्मजागरियं जागरमाणस्स ' ધર્મ જાગરણ કરતા આ પ્રકારનો મનોગત વિચાર ઉત્પન્ન થયો (રાત્રિના આગલા ભાગને પૂર્વરાત્રિ અને પાછલા ભાગને અપરરાત્રિ કહે છે પૂર્વરાત્ર અને અપરરાત્ર રૂપ જે કાળ સમય છે તેને ' पुव्वरत्तावरत्त काल समय " કહે છે તે સમયે-એટલે કે મધ્યરાત્રે અથવા પાછલી રાત્રે ધર્મને નિમિત્તે જે જાગરણ કરાય છે તેને ધર્મ જાગરણ કહે છે) આ પ્રકારનું ધર્મ જાગરણ કરતા સ્કંદક અણગારને ' इमेयारूवे अज्झत्थिए चिंतिए जाव समुप्पज्जित्था '

विहर्तुमिति कृत्वा एवं संप्रेक्षसे संप्रेक्ष्य कल्यं प्रादुष्प्रभातायां यावत् ज्वलति यत्रैव ममान्तिकं तत्रैव शीघ्रमागतः तन्नूनं स्कन्दक ! अर्थः समर्थः ? हन्त अस्ति यथा सुखं देवानुप्रिय ! मा प्रतिबन्धं कुरु ॥ सू० १५ ॥

टीका—' तेणं कालेणम् ' इत्यादि " तेणं कालेणं " तस्मिन् काले " तेणं समएणं " तस्मिन् समये " रायगिहे नयरे " राजगृहे नगरे " समोसरणं "

खलु अहम् इमेणं एयारूवेणं तवेणं ओरालेणं विउलेणं तंचेव जाव कालं अणवकखमाणस्स विहरित्तए) मैं इस प्रकार के पूर्वोक्त उदार विपुल आदि विशेषण वाले तप से बहुत दुर्बल हो गया हूं (यहां सब पहिले जैसा कहा गया है—वैसा कह लेना चाहिये) अतः यावत् काल की आकांक्षा किये बिना मैं पादपोपगमन संथारा करूँ इसी में मेरा कल्याण है (त्ति कट्टु एवं संपेहइ—संपेहित्ता कल्लं पाउप्पभायाए जाव जलंते जेणेव ममं अंतिए तेणेव हव्वमागए) इस प्रकार विचार कर तुम प्रातःकाल होते ही यावत् सूर्य का प्रकाश फैलते ही जल्दी मेरे पास आये हो (से णूणं खंदया ! अट्ठे समट्ठे ।) कहो हे स्कन्दक ! यह बात सत्य है न ? तब स्कन्दक कहते हैं (हंता अत्थि) हां भदन्त ! यह बात सच है (अहासुहं देवाणुप्पिा मा पडिबंधं करेह) हे देवानुप्रिय ! तुम्हें जैसे सुख हो वैसा करो। शुभ कार्यमें विलम्ब मत॥सू०१४॥

टीकार्थ—'तेणं कालेणं तेणं समएणं' उस काल और उस समय में (रायगिहे नयरे) राजगृह नगर था वहां (समोसरणं) भगवान् महावीर

तं चेव जाव कालं अणवकखमाणस्स विहरित्तए) हु આ પ્રકારના પૂર્વોક્ત ઉદાર, વિપુલ આદિ વિશેષણોવાળા તપથી ઘણો જ દુર્બળ થઈ ગયો છુ.–અહી સમગ્ર આગળ કહ્યા પ્રમાણે સ્કન્દકના સકલ વર્ણન કરવાનુ છે–મરણની અપેક્ષા રાખ્યા વિના હું પાદપોપગમન સથારો કરૂં ત્યા સુધીનુ પૂર્વોક્ત કથન અહીં સમજી લેવુ તેમાં જ મારૂ કલ્યાણ છે, (त्ति कट्टु एव सपेहेइ–संपेहित्ता कल्लं पाउप्पभायाए जाव जलंते जेणेव ममं अंतिए तेणेव हव्वमागए) આ પ્રકારનો સંકલ્પ કરીને પ્રાતઃકાળ થતા જ અને સૂર્યનો પ્રકાશ ફેલાતાજ તમે જલ્દી મારી પાસે આવ્યા છો– (से णूणं खंदया ! अट्ठे समट्ठे) હે સ્કન્દક! મારી વાત સાચી છે ને? ત્યારે સ્કન્દકે કહ્યુ– (हंता अत्थि) હે ભદન્ત ! આપની વાત સાચી છે. (अहासुहं देवाणुप्पिया मा पडिबंधं करेह) ભગવાન મહાવીરે તેમને કહ્યુ હે દેવાનુપ્રિય ! તમને રુચે તેમ કરો શુભ કાર્યમાં વિલબ કરવો જોઇએ નહીં ॥સૂ૧૫॥

ટીકાર્થ—વિવેચન–" तेण कालेण तेणं समएणं " તે કાળે અને તે સમયે " रायगिहे नयरे " રાજગૃહ નગરમા " समोसरण " ભગવાન મહાવીરનું

रूपेण विचारः समुदपद्यत, ' अहं इमेणं एयारूवेणं ओरालेणं " अहमनेनैतद्रूपेण उदारेण ' जाव किसे धमणिसंतए जाए' यावत् कृशः धमनीसन्ततो जातोऽस्मि, अत्र यावत्पदेन विपुलेन प्रयत्नेन प्रगृहीतेन कल्याणेन शिवेन धन्येन मंगल्येन सश्रीकेणोदग्रेणोदात्तेनाचमनोदारेण महानुभावेन तपःकर्मणा शुष्को रूक्षो निर्मांसोऽस्थिचर्मावनद्धः किटिकिटिका भूत इति पर्यन्तविशेषणानां ग्रहण भवति। " जीव जीवेण गच्छामि " जीवो जीवेन गच्छामि। जीवबलेन गमनादि क्रियां करोमि न तु शरीरबलेनेति " जीवं जीवेण चिट्ठामि " जीवो जीवेन तिष्ठामि "जाव गिलामि यावत् ग्लायामि। यत्र यावत्पदेन भाषां भाषित्वाऽपि ग्लायामि

ध्यान ही शाश्वतसिद्धिपद का दायक है) इस तरह की दत्ततारूप से युक्त होने के कारण तथा बाहिर अभीतक प्रकाशित न करने के कारण वह मनोगत कहा गया है। इस प्रकार के विचार उत्पन्न होने के कारण क्या था-सो सूत्रकार इस बात को स्पष्ट करते हुए कहते हैं-उन स्कन्दक अनगार ने जब देखा कि " अहं इमेणं एयारूवेणं ओरालेणं जाव किसे धमणिसंतए जाए' मैं इस २ प्रकार के उदार आदि पूर्वोक्त विशेषणों वाले तप से कृश हो गया हूं, शरीर की समस्त धमनियों-नाडियों का समूह बाहर में बिलकुल स्पष्ट नजर लगा है। (जीव जीवेण गच्छामि) शारीरिक बल तो क्षीण हो गया है मैं आत्मा के ही बल से चलता हूं और (जीवं जीवेण चिट्ठामि) आत्मा के ही बल से ठहरता हूं, शरीर बल से न चलता हूं और न ठहरता हूं (जाव गिलामि) यावत् जब मैं बोलते २ भी ग्लानियुक्त हो जाता हूं (बोलना पड़ेगा) ऐसा समझकर भी ग्लानियुक्त हो जाता हूं और जैसे सूखे काष्ट से सूखे पत्तों से सूखी तिल-

प्रत्याख्यान शाश्वत सिद्धिपद अपावनार छे" ते प्रकारनी दक्षताथी युक्त होवाने कारणे तथा ते विचार हजु कोईनी समक्ष प्रकट करवामां आव्यो न हतो तेथी तेने मनोगत कहेवामां आवेल छे आ प्रकारनो विचार आववानुं कारण शुं हतुं? सूत्रकार हवे तेनुं कारण बतावे छे-" अहं इमेणं एयारूवेणं ओरालेणं जाव किसे धमणिसंतए जाए" स्कन्दक अणगारे ज्यारे जोयुं के आ प्रकारना उदार आदि पूर्वोक्त विशेषणो वाळा तपथी मारुं शरीर दुर्बळ थई गयुं छे शरीरनी बधी नसोनो समूह बहारथी पूरे पूरो देखावा लाग्यो छे "जीव जीवेण गच्छामि' मारुं शारीरिक बळ क्षीण थई गयुं छे पण हुं आत्माना बळथी चालुं छुं ' जीवं जीवेणं चिट्ठामि " आत्माना बळथी ज स्थिर रही शकुं छुं एटले के शारीरिक बळथी शरीरनुं हलनचलन आदि थतुं नथी. " जाव गिलामि " बोलतां बोलतां पण ग्लानि

समुपज्जित्था " यावत् समुदपद्यत, अत्र यावत्पदेन कल्पितः प्रार्थितो मनोगतः संकल्पः इत्यस्य ग्रहणं भवति तेन आध्यात्मिकः, चिन्तितः, कल्पितः, प्रार्थितः, मनोगतः संकल्पः, इति संग्रहो भवति । तत्र आध्यात्मिकः, अहं भक्तप्रत्याख्यानं करोमीति–आत्मगतः–अङ्कुर इव समुत्पन्नः । ' चिंतिए ' चिन्तित –स एव पुनः पुनः विचारः स्मरणरूपो विचारः द्विपत्रित इव । ' कप्पिए ' कल्पितः–भगवदाज्ञा पुरस्सरभक्तप्रत्याख्यानकरणेच्छारूपो विचारः पल्लवित इव । 'पत्थिए' प्रार्थितः भक्तप्रत्याख्यानार्थं भगवदग्रे प्रार्थनारूपो विचारः पुष्पित इव "मणोगए संकप्पे" मनोगतः संकल्पः ' इदमेव भक्तप्रत्याख्यानं शाश्वतसिद्धिपददायकम् , इति दृढ·

कल्पित प्रार्थित और मनोगत संकल्प उत्पन्न हुए । आध्यात्मिक आदि विशेषणों की सार्थकता यहां इस प्रकार से जानना चाहिये—स्कन्दक अनगार ने जब ऐसा विचार किया कि मैं " भक्त प्रत्याख्यान करूँगा" तब इस प्रकार का यह विचार अंकुर की तरह उनकी आत्मा में उत्पन्न हुआ, इस लिये वह आत्मगत होने के कारण आध्यात्मिक कहा गया। पीछे यही विचार बारंबार होने लगा अतः द्विपत्रित की तरह यही विचार, चिंतित–स्मरणरूप कहा गया । "भगवान् की आज्ञापूर्वक ही मैं भक्तप्रत्याख्यान करूँगा" इस प्रकार से वही विचार भगवदाज्ञापुरस्सर भक्तप्रत्याख्यानकरणेच्छारूप विशेषता वाला होने से पल्लवित हुए की तरह कल्पित कहा गया। "भक्तप्रत्याख्यान के लिये मैं भगवान् के आगे प्रार्थना करूँगा" इस प्रकार वही विचार अधिक विशेषता वाला होने से पुष्पित की तरह प्रार्थितरूप से कहा गया। तथा यह 'भक्तप्रत्या-

આ પ્રકારનો આધ્યાત્મિક, ચિન્તિત, કલ્પિત, પ્રાર્થિત અને મનોગત સંકલ્પ ઉત્પન્ન થયો હવે આધ્યાત્મિક આદિ વિશેષણોની સાર્થકતા બતાવવામાં આવે છે–સ્કન્દક અણગારે જ્યારે એવો વિચાર કર્યો કે હું ઉપવાસના પ્રત્યાખ્યાન લઈશ " ત્યારે તે વિચાર અંકુરની જેમ તેમના આત્મામાં ઉત્પન્ન થયો હતો, તે વિચાર આત્મગત હોવાથી તેને માટે આધ્યાત્મિક વિશેષણ યોગ્ય છે પાછ· ળથી તે વિચાર વારવાર આવવા લાગ્યો તેથી દ્વિપત્રિતની જેમ એજ વિચાર ચિંતિત–સ્મરણરૂપ કહેવાયો ભગવાનની આજ્ઞાપૂર્વક હું ઉપાસના પ્રત્યાખ્યાન કરીશ " આ રીતે તે વિચાર ભગવાનની આજ્ઞા લઈને પ્રત્યાખ્યાન કરવાની ઇચ્છારૂપ વિશેષતા વાળો બની જવાથી પલ્લવિત થયો હોય એવો બનાવથી તેને કલ્પિત વિશેષણ લગાડયું છે " ઉપવાસના પ્રત્યાખ્યાન માટે હું ભગવા· નની સમક્ષ પ્રાર્થના કરીશ " આ પ્રકારનો વિચાર વધારે વિશિષ્ટતાવાળો બન· વાથી તેને પ્રાર્થિત વિશેષણ લગાડવામાં આવ્યું છે. તથા " આ ઉપવાસના

पुरिसक्कारपरक्कमे' उत्थानं कर्म बलं वीर्यं पुरुषकारपराक्रमः तथा 'जाव य मे धम्मायरिए धम्मोवदेसए' यावच्च मे धर्माचार्यः धर्मोपदेशकः 'समणे भगवं महावीरे' श्रमणो भगवान् महावीरः 'जिणे' जिनः 'सुहत्थी' सुहस्ती पुरुषवरगन्धहस्ती 'विहरइ' विहरति। एतच्चिन्तनं भगवत्सानिध्ये विभिर्महाफलो भविष्यति इत्यभिप्रायेण कृत मनेनेति। अथवा भगवन्निर्वाणे शोकदु खमागमन मा भूत्मम् इत्यभिप्रायेण चिन्तितमनेनेति। तावता मे सेयं' तावता मम श्रेयः तावदेव मम श्रेमस्कर हितकरमित्यर्थः यत् 'कल्ल' कल्यम्–मागामिनिदिने 'पाउप्पभायाए' प्रादुष्प्रभातायाम् प्रादुर्भविष्यत्प्रभातायाम् 'रयणिए' रजन्यां प्रात काले इत्यर्थः

'फुल्लुप्पलकमलकोमलुम्मिलियम्मि' फुल्लोत्पलकमलकोमलोन्मीलिते फुल्लं सामान्यतया विकसितं तच्चतत् उत्पलंचेति फुल्लोत्पलम् तच्च तथा कमलम्–

वीर्य है, पुरुषकार है, पराक्रम है। इसलिये "त जाव ता मे अत्थि उट्ठाणे, कम्मे बले, वीरिए, पुरिसक्कारपरक्कमे" जबतक मुझ में ये सब उत्थान कर्म, बल वीर्य, पुरुषकार, पराक्रम बने हुए हैं, और 'जाव य मे धम्मायरिये धम्मोवएसए" जबतक मेरे धर्माचार्य धर्मोपदेशक "समणे भगव महावीरे" श्रमण भगवान् महावीर जिनपुहस्ती –गन्धहस्ती के समान विचर रहे हैं "तावता मे सेयं" तबतक मेरे लिये श्रेयस्कर है कि मैं "कल्लं" आगामी दिन जब कि "पाउप्पभायाए रयणीए" रात्रि प्रभात के प्रकाश से युक्त हो जायेगी अर्थात् प्रात काल हो जावेगा तथा "फुल्लुप्पलकमलकोमलुम्मिलियम्मि" जब यह प्रभात कमल के पत्र खिल जाय और कमल नामक

बले, वीरिए पुरिसक्कारपरक्कमे" कर्म छे बળ छे वीर्य छे અને पुरुषार्थ પરાક્રમ પણ છે 'त जाव तामे अत्थि उट्ठाणे, कम्मे बले वीरिए पुरिसक्कार परक्कमे' જ્યાં સુધી મારામાં ઉત્થાન કર્મ બળ વીર્ય અને પુરુષાર્થ પરાક્રમ મોજૂદ છે અને 'जाव य मे धम्मायरिये धम्मोवएसए' જ્યાં સુધી મારા ધર્માચાર્ય ધર્મોપદેશક "समणे भगव महावीरे' જિનેન્દ્ર ભગવાન ગન્ધહસ્તી સમાન શ્રમણ ભગવાન મહાવીર વિદ્યમાન છે 'तावता मे सेय" ત્યાં સુધીમાં આ પ્રમાણે કરવામાં જ મારૂં કલ્યાણ છે "कल्लं' આવતી કાલે જ્યારે 'पाउप्पभायाए रयणीए' પ્રાતઃકાળ થાય (રાત્રિના અંધકારની જગ્યાએ પ્રકાશ દેખાય) 'फुल्लुप्पलकमलकोमलुम्मिलियम्मि" જ્યારે કમળ પત્ર ખિલી જાય અને કમલ નામના હરણના બ ને કોમલ નયનો જ્યારે વિકસિત થાય,

भाषां भाषमाणो ग्लायामि भाषां भाषिष्ये इति ग्लायामि इति "जाव एवामेव अहंपि" यावदेवमेवाहमपि अत्र यावत्पदेन तद् यथा नाम काष्ठशकटिका तिल- शकटिका भाण्डशटिका एरण्डकाष्ठशकटिका अंगारशटिका उष्णे दत्ताशुष्कासती सशब्दं गच्छति सशब्दं तिष्ठति इत्यंतस्य पदजातस्य ग्रहणं भवति तद्वदहमपि "ससद्द गच्छामि" सशब्दं गच्छामि। काष्ठादिपूरितशकटादिवत् अहमपि सशब्दं गच्छामि इत्यर्थः "ससदं चिट्ठामि" सशब्दं तिष्ठामि अस्थि संघर्षजन्यशब्दयु- क्तस्तिष्ठामीत्यर्थः "तं अत्थिताये" तदस्तितावन्मे 'उट्ठाणे' उत्थानम् तदेव- मपि सर्वथा शारीरिकबलरहितस्यापि तावन्मे उत्थानादि न सर्वथा क्षीणमिती "कम्मे बले वीरिए पुरिसक्कारपरक्कमे" कर्म बलम् वीर्यम् पुरुषकारपराक्रमोऽस्ति "तं तावता मे अत्थि" तत् यावत् तावत् मे अस्ति "उट्ठाणे कम्मे बले वीरिए

फलियों से मिट्टी के भोंडों से भरी हुई गाडी खड खड आवाज करती हुई चलती है और ठहरती है (एवामेव अहंपि) उसी प्रकार से मैं भी अस्थिमात्रावशिष्ट होने के कारण (ससद्द गच्छामि) उनके संघर्ष से होने वाले शब्द से युक्त होकर चलता हूं और (ससदं चिट्ठामि) शब्द से युक्त होकर ठहरता हूं इस प्रकार से यह मेरे शरीर की दशा हो रही है अर्थात्-मैं शारीरिक बल से इस समय सर्वथा रहित हो रहा हूं "फिर भी मुझ में उत्थानादिक कर्म सर्वथा क्षीण नहीं हुए हैं" यही बात दिखाने के लिये सूत्रकार कहते हैं कि वे स्कन्दक अनगार विचारते हैं कि इस स्थिति में भी अभीतक मुझ में "तं अत्थि ता मे उट्ठाणे" उत्थान है "कम्मे, बले, वीरिए, पुरिसक्कारपरक्कमे" कर्म है, बल है,

મુક્ત થઇ જાઉ છું "બોલવુ પડશે" એવા વિચારથી પણ મનમાં ગ્લાનિ અનુભવું છું અને સૂકા કાષ્ઠ, સૂકા પાન, સૂકી તલ શિંગો, કે માટીનાં વાસણોથી ભરેલી ગાડી જેમ ખટ-ખટ અવાજ કરતી ચાલે છે કે ખટ-ખટ અવાજ કરતી ઉભી રહે છે "एवामेव अहपि" એજ પ્રમાણે મારા શરીરમા પણ માત્ર હાડકાં જ હોવાને કારણે 'ससद्द गच्छामि' હુ ખટ-ખટ અવાજ કરતો ચાલુ છું-(હાડકાના ઘર્ષણુથી તે અવાજ થતો હોય છે) "ससद्द चिट्ठामि" અને ઉઠતા તથા બેસતા પણ ખટ-ખટ અવાજ થાય છે આ રીતે હુ શારી રિક રીતે નિર્બળ થઈ ગયો છુ, મારામા શારીરિક શક્તિ તો બિલકુલ રહી જ નથી છતાં પણ ઉત્થાન આદિ કર્મ કરવા જેટલી શક્તિ તો હજી પણ બાકી રહી હતી તે બતાવવાને સૂત્રકાર કહે છે-"त अत्थि तामे उट्ठाणे" સ્કન્દક અણગાર વિચાર કરે છે કે હજી પણ મારામા ઉત્થાન છે, "कम्मे,

'समण भगवं महावीरं' श्रमणं भगवन्तं महावीरं, 'वंदित्ता नमंसित्ता जाव पज्जुवासित्ता' वन्दित्वा नमस्यित्वा यावत् शुश्रूषया विनयेन पर्युपास्य 'समणे ण भगवया महावीरे णं' श्रमणेन भगवता महावीरेण 'अब्भणुन्नाए' अभ्यनुज्ञातः आज्ञप्तः सन् 'सयमेव पंचमहव्वयाणि आरोवेत्ता' स्वयमेव पंचमहाव्रतानि आरोप्य भगवतो महावीरस्याज्ञामादाय पुनः स्वयमेव पंचमहाव्रतानि स्वीकृत्येत्यर्थ 'समणा य समणीओ य खामेत्ता' श्रमणांश्च श्रमणीश्च क्षमयित्वा 'तहारूवेहिं थेरेहिं कडाईहिं सद्धिं' तथारूपैः स्थविरैः कृतादिभिः संस्तारकसंस्थितस्य रक्षकैः सार्धम् 'विपुलं पव्वयं सणियं सणियं दुरुहित्ता' विपुलं तदाख्यं पर्वतं शनैः शनैः मन्दगत्या दूरुह्य अधिरुह्य 'मेघघणसंनिगासं' मेघघनसंनिकाशं घनमेघसदृशं सान्द्रजलदसमानं कृष्णवर्णमित्यर्थः 'देवसन्निवायं'

श्रमण भगवान् महावीर को वंदन करके 'नमंसित्ता नमस्कार करके 'जाव पज्जुवासित्ता' यावत् शुश्रूषाद्वारा-विनयद्वारा उनकी पर्युपासना करके 'समणेणं भगवया महावीरेण' उन श्रमण भगवान् महावीर से पादपोपगमन संथारा धारण करने की अनुमति मांग 'अब्भणुन्नाए' अब वे इसे धरण करने की मुझे अपनी अनुमति दे देंगे तब मैं 'सयमेव पंच महव्वयाइं आरोवेत्ता'' अपने आप पांच महाव्रतों को स्वीकार करके (समणाय समणीओ य खामेत्ता) श्रमण और श्रमणोओं से क्षमापन (खमतखामणा) करके (तहारूवेहिं थेरेहिं सद्धिं) फिर मैं तथारूप स्थविरों के साथ कि जो (कडाईहिं) संस्तारक में स्थित मुनि के सहायक होते हैं, उनके साथ (विउलं पव्वयं) विपुलाचल-पर्वत पर (सणियं सणियं) धीरे २ चढ़ (दुरुहित्ता) चढ़कर फिर मैं (पुढवीसिलापट्टयं) ऐसे पृथिवीसिलापट्टक कि जो (मेहघणसंणिगासं) काले मेघ के

वीरने वंदणा करीने " नमंसित्ता ' नमस्कार करीने " जाव पज्जुवासित्ता " अने सेवा शुश्रूषा द्वारा-विनय द्वारा तेमनी पर्युपासना करीने " समणेणं भगवया महावीरेणं " ते श्रमण भगवान महावीर पासे पादपोपगमन संथारो करवानी रजा मागीश. ' अब्भणुन्नाए ' तेओ ते माटे अनुमति आपे त्यारे "सयमेव पंच महव्वयाइं आरोवेत्ता" मारी जाते पांच महाव्रतो अंगीकार करीने "समणा य समणीओय खामेत्ता" साधु तथा साध्वीओनी साथे क्षमापना करीने ' तहारूवेहिं थेरेहिं सद्धिं कडाईहिं ' संथारो करनारा साधुने सहायरूप थाय एवा स्थविरोनी साथे ' विउलं पव्वयं " विपुलाचल पर्वत उपर ' सणियं सणियं दुरुहित्ता " धीमे धीमे चढीने " पुढवीसिलापट्टयं मेहघणसंणिगासं देवसन्नि

हरिणविशेष इतिफुल्लोत्पलकमलौ तयोः कोमलमकठोरम् उन्मीलितम्-उत्पल दलानां मृगनयनयोश्च उन्मीलनं यस्मिन् तत् तथा तस्मिन् फुल्लोत्पलकमलकोमलोन्मीलिते ' अहा ' अथेति रजनीविभातानन्तरं ' पंडुरे ' पाण्डुरे-धवले प्रकाशयुक्ते एतादृशे ' पभाए ' प्रभाते सति तथा—' रत्तासोयप्पगासे ' रक्ताशोक प्रकाशे रक्ताशोकसदृशप्रकाशसंपन्ने पुनः ' किंसुय-सुयमुहगुंजद्धरागसरिसे ' किंशुकशुकमुखगुञ्जार्द्धरागसदृशे किंशुकस्य पलाशपुष्पस्य शुकमुखस्य गुंजार्द्धस्य च रागेण सदृशः तुल्यस्तस्मिन् किंशुकशुकमुखगुंजार्द्धरागसदृशे पुन ' कमलागरसंडबोहए ' कमलाकरपण्डबोधके कमलाकराः सरोवरादयस्तेषु ये पण्डाः= कमलसमूहाः तेषां बोधको विकाशको यः स कमलाकरपण्डबोधकस्तस्मिन् कमलाकरपण्डबोधके ' उट्ठियम्मि ' उत्थिते उदिते 'सूरे ' सूर्ये कथंभूते सूर्ये त आह–' सहस्सरस्सिम्मि ' सहस्रश्मौ सहस्रकिरणधारके ' दिणयरे दिनं करोति यः स दिनकरस्तस्मिन् दिनकरे पुनश्च ' तेयसा जलंते ' तेजसा ज्वलतिसति यदा रात्रिरपगता भविष्यति अथ च तेजसा सूर्यः प्रकाशकरो भविष्यति तदनन्तरं,

हरिण विशेष के कोमल दोनों नयन खुल जायेगा और "अहा पंडुरे" रात्रि के समाप्त होजाने के बाद जब वह प्रकाश से युक्त हो जावेगा तथा –"रत्तासोयप्पगासे" लाल अशोक के जैसे प्रकाशसे युक्त,(किंसुय-सुयमुह-गुंजद्धरागसरिसे" किंशुक-पलाशपुष्प, शुकमुखतोते का मुंह और गुंजा के आधे भाग के राग जैसे लाल ' कमलागरसंडबोहए " सरोवर आदि में रहे हुए कमलों को विकसित करने वाले 'सहस्सरस्सिम्मि ' हजारकिरणोंवाले 'दिणयरे ' तथा दिवस को करने वाले, एवं, 'तेयसा जलंते ' तेज से प्रकाशित ऐसे 'सूरे' सूर्य के (उत्थिए) उदित हो जाने पर अर्थात् जब रात्रि व्यतीत हो जायेगी और सूर्य अपने तेज से जब चमकने लगेगा तब उसके बाद ' समणं भगवं महावीरं वंदित्ता '

"अहापंडुरे" રાત્રિ પૂરી થઇને જ્યારે તે પ્રકાશયુક્ત થશે તથા "रत्तासोयप्पगासे" લાલ અશોકના જેવા પ્રકાશથી યુક્ત, "किंसुय-सुयमुह-गुजद्धरागसरिसे" કિંશુક-પલાશપુષ્પ, શુકમુખ (પોપટનુ મુખ) અને ચણોઠીના અર્ધભાગનાં જેવા લાલ, "कमलागरसडबोहए" સરોવરોમા રહેલા કમલવૃન્દોને વિકસાવનાર "सहस्सरस्सिम्मि" હજાર કિરણો વાળો, "दिणयरे" દિવસ કરનારો, "तेयसे जलते" તેજથી પ્રકાશિત એવો "सूरे उत्थिए" સૂર્ય જ્યારે ઉદય પામશે ત્યારે–એટલે કે રાત્રિ વ્યતીત થઇ ગયા પછી જ્યારે સૂર્ય પ્રકાશવા લાગશે ત્યારે "समण भगव ... वंदित्ता" શ્રમણ ભગવાન મહા

' एव सपेहेइ ' एवं सम्प्रेक्षते एवं पूर्वोक्तप्रकारेण संप्रेक्षते=विचारयति ' संपेहित्ता ' समेक्ष्य पूर्वोक्तप्रकारेण विचार्य ' कल्लं पाउप्पभाए रयणीए ' कल्यं प्रादुष्प्रभातायां रजन्याम् प्रकाशयुक्तप्रभातमायाया रात्री जाव जलंते ' यावत् ज्वलति अत्र यावत् पदेन रक्ताशोकप्रकाशे किंशुकशुकमुखगुञ्जार्धरागसदृशे कमलाकरषण्ड बोधके उत्थिते सूर्ये सहस्ररश्मौ दिनकरे ' जणेव समणे भगव महावीरे ' यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीर ' तेणेव ' तत्रैव ' जाव पज्जुवासइ ' अत्र यावत् पदेन वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा शुश्रूषया विनयेन प्राञ्जलिपुटः त्रिविधया पर्युपासनया पर्युपास्ते ।

स्कन्दकपर्युपासनाकाले भगवान् यत्कथयति तदाह–खंदयाइ ' इत्यादि– ' खंदयाइ ' स्कन्दक इति हे स्कन्दक इति एवं रूपेण संबोध्य ' समणे भगवं महावीरे ' श्रमणो भगवान् महावीर ' खंदयं अणगारं एवं वयासी ' स्कन्दक

निश्चय करके (सपेहेइ) ऐसा पूर्वोक्त रूप से विचार किया (संपेहित्ता) ऐसा विचार करके (कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए) वे आगामी दिवस में जब कि रजनी प्रभात प्राय हो रही थी (जाव जलंते) यावत् सूर्य अपने तेज से चमकने लग गयाथा उस समय (जेणेव समणे भगवं महावीरेतेणेव जाव पज्जुवासइ) जहां श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे वहां आये वहां आकर उन्होंने यावत् उनकी पर्युपासना की।

स्कन्दक अनगार जब भगवान् की पर्युपासना करने में लगे हुए थे उस समय भगवान ने जो उनसे कहा उसे प्रकट करते हुए सूत्रकार कहते हैं–(समणे भगवं महावीरे) श्रमण भगवान महावीर ने उस समय उनको (खंदयाइ) हे स्कन्दक ! इस रूप से संबोधित करते हुए (खंदयं अणगारं) उन स्कन्दक अनगार को (एवं वयासी) इस प्रकार कहा–

સ્કન્દક અણગારે મનમાં એ પ્રમાણે નિશ્ચય કરીને " સપેહેઇ " પૂર્વોક્ત સંકલ્પ કર્યો " સંપેહિત્તા " એવો સંકલ્પ કરીને " કલ્લં પાઉપ્પભાયાએ, રયણીએ " બીજે દિવસે જ્યારે રાત્રિ પસાર થઈ અને પ્રાતઃકાળ થયો, " જાવ જલંતે " જ્યારે સૂર્ય પોતાનો પ્રકાશ ફેલાવવા લાગ્યો ત્યારે " જેણેવ સમણે ભગવં મહાવીરે, તેણેવ જાવ પજ્જુવાસઇ " તેઓ જ્યાં ભગવાન મહાવીર પ્રભુ બિરાજમાન હતા ત્યાં ગયા અને ત્યાં જઈને નમસ્કારથી પર્યુપાસના પર્યન્તની વિધિ કરી.

સ્કન્દક અણગાર જ્યારે ભગવાનની પર્યુપાસના કરી રહ્યા હતા ત્યારે ભગવાને તેમને જે વચનો કહ્યા તે સૂત્રકાર પ્રકટ કરે છે– " સમણે ભગવં મહાવીરે " શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે ત્યારે " ખંદયાઇ " હે સ્કન્દક ! એવું સંબોધન કરીને " ખંદયં અણગારં " સ્કન્દક અણગારને " એવં વયાસી "

देवसंनिपातम्–देवानां संनिपातः समागमो रमणीयत्वात् यत्र स देवसंनिपात स्तम् 'पुढवीसिलापट्टयं' पृथिवीशिलापट्टकं पृथिवीशिलारूपमासनं 'पडिलेहित्ता' प्रतिलेख्य 'दब्भसंथारगं संथरित्ता' दर्भसंस्तारकं संस्तीर्य 'दब्भसंथारोवगयस्स' दर्भसंस्तारकोपगतस्य 'संलेहणाझोसणाझूसियस्स' संलेखनाजोषणाजुषितस्य संलिख्यते कृशीक्रियते शरीरं कषायश्चानया इति संलेखनतपोविशेषः तस्यास्तपोरूपायाः जोषणा=सेवनं तया जुष्टः युक्तस्तस्य 'भत्तपाणपडियाइक्खियस्स' भक्तपानप्रत्याख्यातस्य=प्रत्याख्यातभक्तपानकस्य 'पाओवगयस्स' पादपोपगतस्य स्वीकृतपादपोपगमनसंस्तारकस्य 'कालं अणवकंखमाणस्स' कालमनवकांक्षतः उपलक्षणात् जीवितमप्यनिच्छतः 'विहरित्तए' विहर्तुम्–श्रेयइति पूर्वेण सम्बन्धः 'त्तिकट्टु' इति कृत्वा=इति मनसि निश्चित्य

जैसा कृष्णवर्णवाला है और (देवसंनिवायं) सुन्दरता के कारण जिसपर देवों का समागम होता है उसकी 'पडिलेहित्ता' प्रतिलेखना करके 'दब्भसंथारगं' उस पर दर्भके संस्तारकको बिछाऊ 'संथरित्ता' बिछाकर 'दब्भ संथारोवगयस्स संलेहणा झोसणा झूसियस्स' मैं उस पर बैठ जाऊ और रागद्वेप से रहित बन कर मैं काय एवं कषाय को कृश करनेवाली संल्लेखना को आदर के साथ स्वीकार करूं उस समय मैं 'भत्तपाणपडियाइक्खियस्स' चारों प्रकार के आहार का यावज्जीव प्रत्याख्यान करूं। इस तरह 'कालं अणवकंखमाणस्स' मैं अपने मरण और जीवन की आशंसा से रहित हो कर 'पाओवगयस्स' पादपोपगमन संथारा धारण करूं–तो इसीमें मेरा कल्याण है। 'त्तिकट्टु' इस प्रकार से स्कन्दक अनगार ने धर्मजागरणा करते समय अपने मनमें

वायं" त्यां चडीने काळा मेघना जेवा श्याम वर्णवाळा अने जेना पर देवोनो समागम थाय छे एवा सुंदर पृथ्वीशिलापट्टकनी "पडिलेहित्ता" प्रतिलेखना करीने "दब्भ संथारगं" तेना उपर दर्भनो संस्तारक बिछावीश "संथारित्ता" संस्तारक बिछावीने "दब्भसंथारोवगयस्स संलेहणा झोसणा झूसियस्स" तेना पर बेसीश अने रागद्वेषथी रहित बनीने शरीर अने कषायने क्षीण करनारी संल्लेखना (संथारो) आदर सहित अंगीकार करीश. 'भत्तपाणपडियाइक्खियस्स" चारे प्रकारना आहारनो जीवन पर्यन्त त्याग करवाना प्रत्याख्यान करीश आ रीते "काल अणवकंखमाणस्स" हुं अने मारा जीवन अने मरणनी आशंसा राख्या विना "पाओवगयस्स" पादपोपगमन संथारो अंगीकार करुं तो तेमा मारुं कल्याण छे. "त्तिकट्टु" धर्मजागरण करती वखते

मादुष्ममावायां यावत् ज्वलति यत्रैव ममान्तिकः तत्रैव शीघ्रमागत इह यावत् पदेन ' रयणीए फुल्लुप्पलकमलकोमलुम्मिलियम्मि अहापांडुरे पभाए रत्तासोय प्पगास किंसुयसुयमुहगुंजद्धरागसरिसे कमलागरसरिसे कमलागरसंडबोहए उट्ठि यम्मि सूरे सहस्सरस्सिम्मि दिणयरे तेजसा ' इत्यतया ग्रहण भवति । 'से पूर्ण खंदया ' तन्नूनं हे स्कन्दक ! ' अट्ठे समट्ठे ' अर्थः समर्थः हे स्कन्दक ! तत् किमयमर्थः समर्थः सत्य ? स्कन्दकः कथयति 'हंता अस्थि-हन्त अस्ति यद् देवानु प्रियैरुच्यते तत्सर्व सत्यमिति ।

ततो भगवान् कथयति ' अहासुहं देवाणुप्पिया ' यथा सुखं देवानुप्रिय ! हे देवानुप्रिय ! यथा सुखं यथा तव सुखं भवतु तथा कुरु ' मा पडिबंध करेह ' मा प्रतिबन्धं कुरु अत्र शुभकार्ये विलम्बं मा कुरु त्वया संस्तारकविषय यद्विचारितं तत् शीघ्रं समाचरति भाव ॥ सू-१५ ॥

भगवता तीर्थंकरेण तपोविषयेऽनुज्ञात स्कन्दकोऽनगारः किं कृतवान् इत्याह ' तएणं से खंदए ' इत्यादि ।

मूलम्-"तएणं से खंदए अणगारे समणेणं भगवया महा वीरेणं अब्भणुण्णाए समाणे हट्ठतुट्ठ जाव हियए उट्ठाए उट्ठेइ

ही यावत् सूर्यका प्रकाश फैलने पर मेरे पास शीघ्र आये हो । (से णूणं खंदया ! अट्ठे समट्ठे) तो कहो हे स्कन्दक ! यह बात सच है न ? अब प्रभु का इस प्रकार का कथन स्कन्दक अनगार ने सुना-तब वे बोले- (हंता अत्थि) हां भदन्त ! यह आपका कथन सर्वथा सत्य है । तब प्रभु ने स्कन्दक अनगार से कहा- (अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं करेह) हे देवानुप्रिय ! तुम्हें जिस प्रकार से सुखहो-तुम वैसा ही करो किन्तु इस शुभकार्य में विलम्ब मत करो । अर्थात्-संथार के विषय में जैसा तुमने निश्चय किया है वैसा ही पादपोपगमनसंथारा करके अपना कल्याण करो ॥ १५ ॥

तेणव हव्वमागए " भातःकाल थतां अने सूर्यनो प्रकाश फेलावता ज तमे शीघ्र मारी पासे आव्या छो. ' से णूणं खंदया ! अट्ठे समट्ठे ' तो कहो, हे स्कन्दक ! ते वात साची छे ने ? प्रभुनुं एवुं कथन सांभळीने स्कन्दक अणगारे कह्युं, " हंता अत्थि " हा, भदन्त ! आपनुं कथन सर्वथा सत्य छे त्यारे प्रभुए स्कन्दक अणगारने कह्युं ' अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं करेह " हे देवानुप्रिय ! तमने जे रीते सुख उपजे तेम करो आ शुभ कार्यमां विलंब करवो जोईए नहीं. एटले के तमे पादपोपगमन संथारो करवानो जे निर्णय कर्यो छे ते निर्णय अमलमां मूकीने तमारुं कल्याण करो ॥ सू. १५ ॥

मनगारमेवमवादीत्–' से णूणं तव खंदया ' तन्नूनं तव हे स्कन्दक ! ' पुव्वरत्ताव-रत्तकालसमयंसि ' पूर्वरात्रापररात्रकालसमये ' धम्मजागरियं जागरमाणस्स ' धर्म जागरिकां जाग्रतः "इमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था" अयमेतद्रूपो आध्यात्मिको यावत् समुदपद्यत इह यावत् पदेन चिन्तितः प्रार्थितः कल्पितो मनोगतः संकल्पः, इतिग्रहणम् तदेव दर्शयति ' एवं खलु अहं इमेणं एयारूवेणं तवेणं ओरालेणं विपुलेण तं चेव जाव कालं अणवकंखमाणस्स विहरित्तए ' एवं खलु अहमनेनैतद्रूपेण तपसोदारेण विपुलेन तदेव यावत्कालमनवकांक्षतो विहर्तुम्। यावत् पदेन ' पयत्तेग ' इत्यारभ्य ' पाओवगयस्स ' इत्यन्तं पूर्वोक्तंसर्वं ग्राह्यम् ' त्तिकट्टु ' इति कृत्वा ' एवं संपेहेसि ' एवं सम्प्रेक्षसे ' संपेहित्ता ' संप्रेक्ष्य ' कल्लंपाउप्पभायाए जाव जलंते जेणेव मम अंतिए तेणेव हव्वमागए ' कल्ये

(से णूणं तव खंदया) हे स्कन्दक ! तुम्हें (पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि) पूर्वरात्र और अपररात्र के समय में-जब तुम (धम्मजागरियं जागरमाणस्स) धर्मजागरणा कर रहे थे तब (इमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था) यह इस प्रकार का आध्यात्मिक यावत् मनोगत संकल्प उत्पन्न हुआ था कि—(एवं खलु अहं इमेणं एयारूवेणं तवेणं ओरालेणं विउलेणं तंचेव जाव कालं अणवकंखमाणस्स विहरित्तए) मैं इस प्रकार के तप से कि जो उदार, विपुल आदि विशेषणों वाला है उससे बहुत दुर्बल हो गया हूं। अत यावत् मरणाशंसा से रहित होकर मैं पादपोपगमन संथारा करूँ तो इसी में मेरा कल्याण है। (त्तिकट्टु) सो तुमने अपने मन में ऐसा निश्चय कर (एवं संपेहेसि) ऐसा विचार किया है और ऐसा (संपेहित्ता) विचार करके (कल्ल पाउप्पभायाए जाव जलंते जेणेव मम अंतिए तेणेव हव्वमागए) तुम प्रात काल होते

આ પ્રમાણે કહ્યું–" से णूण तव खंदया ! " હે સ્કન્દક ! તમને " पुव्वरत्तावरत्तकालसमयसि " પૂર્વ અને અપરરાત્રિના સમયે " धम्मजागरिय जागरमाणस्स " ધર્મજાગરણ કરતી–વખતે " इमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पजित्था " — એવો આધ્યત્મિક, ચિંતિત, કલ્પિત પ્રાર્થિત, મનોગત વિચાર થયો હતો કે " एव खलु अह एयारूवेणं तवेणं ओरालेण विउलेणं त चेव जाव कालं अणवकंखमाणस्स विहरित्तए " હું આ પ્રકારના ઉદાર, વિપુલ, આદિ વિશેષણોથી યુક્ત તપથી દુર્બળ થઇ ગયો છું ત્યાથી શરૂ કરીને જો હું મરણની આકાંક્ષા રાખ્યા વિના પાદપોપગમન સથારો કરૂ તો તેથી મારૂ કલ્યાણ થશે સુધીનો સૂત્રપાઠ આગળ પ્રમાણે સમજી લેવો. " त्तिकट्टु " તો તમે તમારા મનમાં એવો નિશ્ચય કરીને " एवं संपेहेसि " એ પ્રકારનો સંકલ્પ કર્યો છે (संपेहित्ता એવો સંકલ્પ કરીને " कल्लं पाउप्पभायाए जाव जलवे जेणेव मम अंतिए

धीरस्स तहारूवाणं थेराणं अंतिए सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जित्ता बहुपडिपुण्णाइं दुवालसवासाइं सामण्ण परियागं पाउणित्ता मासियाए संलेहणाए अत्ताणं झूसित्ता सहि भत्ताइं अणसणाए छेदित्ता, आलोइय पडिक्कंते समाहिपत्ते आणुपुव्वीए कालं गए ॥ सू० १६ ॥

छाया—ततः खलु स स्कन्दकोऽनगारः श्रमणेन भगवता महावीरेणाभ्यनुज्ञातः सन् हृष्टतुष्ट यावद्हृदय उत्थया उत्तिष्ठति-उत्थाय श्रमणं भगवन्तं महावीरं त्रिकृत्व आदक्षिण प्रदक्षिणं करोति (कृत्वा वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा स्वयमेव पञ्चमहाव्रतानि आरोपयति) आरोप्य श्रमणांश्च श्रमणीश्च क्षमयति क्षमयित्वा तथारूपैः

भगवान् से संथारा करने के बाद संथारा के विषय में आज्ञा प्राप्त कर स्कन्दक अनगार ने क्या किया-सो कहते हैं-(तएणं से) इत्यादि।

सूत्रार्थ—(तएणं) इस के बाद (से खंदए अनगारे) वे स्कन्दक अनगार (भगवया महावीरेणं) भगवान् महावीर से (अब्भणुण्णाए समाणे) अनुमति प्राप्त कर (हट्ठतुट्ठ जाव हियए) बहुत अधिक हर्षित हुए, बहुत अधिक संतोष संपन्न हुए यावत् बहुत अधिक विकसित हृदयवाले हुए (उट्ठाए उट्ठेइ) बाद में वे अपनी उत्थानशक्ति से उठे (उट्ठित्ता समणं भगवं महावीरं) उठकर उन्हों ने श्रमण भगवान् महावीर को (तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ करित्ता वंदइ नमंसइ) प्रदक्षिणापूर्वक वंदन किया नमस्कार किया (वंदित्ता नमंसित्ता) वंदना नमस्कार करके (सयमेव) अपने आप फिर उन्हों ने (पंच

તીથ કર ભગવાન પાસેથી સંથારો કરવાની અનુજ્ઞા પ્રાપ્ત કરીને સ્કન્દક અણગારે શું કર્યું તે સૂત્રકાર કહે છે-" तएणं से " ઇત્યાદિ।

સૂત્રાર્થ—(तएणं) ત્યાર બાદ (से खंदए अणगारे) તે સ્કન્દક અણગાર (भगवया महावीरेणं) ભગવાન મહાવીરની (अब्भणुण्णाए समाणे) અનુમતિ મેળવીને (हट्ठ तुट्ठ जाव हियए) અતિશય હર્ષ પામ્યા, અતિશય સંતુષ્ટ થયા અને તેમનું હૃદય પ્રફુલ્લિત થયું (उट्ठाए उट्ठेइ) પછી તેઓ તેમની ઉત્થાન શક્તિથી ઉઠયા (उट्ठित्ता समणं भगवं महावीरं) ઉઠીને તેમણે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને (तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ करित्ता वंदइ नमंसइ) પ્રદક્ષિણા પૂર્વક વંદણા કરી નમસ્કાર કર્યા (वंदित्ता नमंसित्ता) વંદણા નમસ્કાર કરીને (सयमेव) પોતાની જાતે જ (पंचमहव्वय

उट्ठित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिण पयाहिणं करेइ--करित्ता वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता सय-मेव पंच महव्वयाइं आरोवेइ, आरोवित्ता समणा य समणी ओय खामेइ, खामित्ता तहारूवेहिं थेरेहिं कडाइहिं सद्धिं विउलं पव्वयं सणियं सणियं दुरुहेइ दुरुहित्ता मेहघणसंनिगासं देव-संनिवायं पुढवीसिलावट्टयं पडिलेहेइ पडिलेहित्ता उच्चार-पासवणभूमिं पडिलेहेइ पडिलेहित्ता, दब्भसंथारगं संथरइ, संथरित्ता पुरत्थाभिमुहे संपलियंकानिसन्ने करयलपरिग्गहियं दसनहं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी, नमोत्थुणं अरिहंताणं भगवंताणं जावसंपत्ताणं नमो-त्थुणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव संपाविउकामस्स वंदामि णं भगवंतं तत्थगयं इहगए पासउ मे भगवं तत्थगए इह गयं ति कट्टु वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी पुव्विं पि मए समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए सव्वे पाणाइवाए पच्चक्खाए जावज्जीवाए, जाव मिच्छादंसणसल्ले पच्चक्खाए जावज्जीवाए, इयाणिं पि य णं समणस्स भग-वओ महावीरस्स अंतिए सव्वं पाणाइवायं पच्चक्खामि जावज्जीवाए जाव मिच्छादंसणसल्लं पच्चक्खामि जावज्जीवाए एवं सव्वं असणपाणं खाइमं साइमं चउव्विहं पि आहारं पच्चक्खामि, जावज्जीवाए जं पि य णं इमं सरीरं इट्ठं कंतं पियं जाव मा फुसंतु त्ति कट्टु एयं पि णं चरमेहिं उस्सास-नीसासेहिं वोसिरामि त्ति कट्टु संलेहणा झूसणा झूसिए, भत्तपाणपडियाइक्खिए, पाओवगये कालं अणवकंखमाणे विहरइ, तएणं से खंदए अणगारे समणस्स भगवओ महा-

एवमवादीत् नमोऽस्तु खलु अर्हभ्यो यावत् भगवद्भ्यो संप्राप्तेभ्य नमोस्तु श्रमणाय भगवते महावीराय यावत् सप्राप्तुकामाय वन्दे खलु भगवन्तं तत्र गतम् इहगतः पश्यतु मां भगवान् तत्रगत इहगतमितिकृत्वा वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमवादीत् पूर्वमपि मया श्रमणस्य भगवतो महावीरस्यांतिके सर्वं

करके पर्यकासन से विराजमान हो गये। (करयलपरिग्गहियं दसनहं सिरसावत्तियं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी) पर्यकासन से विराजमान होकर दशनख सहित दोनों हाथों को अंजलि के रूप में जोड़कर उन्हें मस्तक पर लगाया और लगा कर फिर इस प्रकार कहा (नमोत्थुणं अरिहंताणं भगवंताणं जाव संपत्ताणं) अर्हंत भगवंतों को मेरा नमस्कार हो जो आदिकर यावत् सिद्धिगति नाम के स्थान को प्राप्त हो चुके हैं तथा (नमोत्थुणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव संपाविउकामस्स) सिद्धिगति को प्राप्त करने वाले श्रमण भगवान् महावीर को मेरा नमस्कार हो। (वंदामि णं भगवंतं तत्थ गयं इह गए) यहां पर रहा हुआ मैं वहां पर विराजमान भगवान् महावीर को मैं नमस्कार करता हूं (पासउ मे भगवं तत्थगए इहगयंति) वहां विराजमान श्रमण भगवान् महावीर यहां रहे हुए मुझे देखें। (त्ति कट्टु वंदइ नमंसइ) ऐसा कहकर उन्हों ने श्रमण भगवान् महावीर को वंदना की—उन्हें नमस्कार किया (वंदित्ता नमंसित्ता) वंदना नमस्कार करके (एवं वयासी) फिर उन स्कन्दक अनगार ने ऐसा

वत्तियं-मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी) पर्यंकासने બેસીને દસ નખ સહિત બન્ને હાથોને અંજલિરૂપે જોડીને, તેમને મસ્તક પર ગોઠવીને તેમણે આ પ્રમાણે બોલ્યા-(नमोत्थुणं अरिहंताणं भगवंताणं जाव संपत्ताणं) સિદ્ધ ગતિ પ્રાપ્ત કરનાર અર્હંત ભગવંતોને મારા નમસ્કાર હો (અહીં સિદ્ધિગતિ પર્યન્તનો સમગ્ર પાઠ ગ્રહણ કરવો જોઈએ) "नमोत्थुणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव संपाविउकामस्स" સિદ્ધિગતિને ભવિષ્યમાં પ્રાપ્તકરનારા શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને મારા નમસ્કાર હો." वंदामि णं भगवं तं तत्थगयं इहगए" અહીં રહેલો હું ત્યાં વિરાજતા ભગવાન મહાવીરને નમસ્કાર કરું છું (पासउ मे भगवं तत्थगए इह गयंति) ત્યાં વિરાજતા મહાવીર ભગવાન ત્યાં રહ્યા રહ્યા મને નિહાળે. (त्ति कट्टु वंदइ नमसइ) આ પ્રમાણે કહીને તેમણે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને વંદણા કરી, નમસ્કાર કર્યા (वंदित्ता नमंसित्ता) વંદણા નમસ્કાર કરીને (एवं वयासी) આ પ્રમાણે બોલ્યા (पुव्विं वि मए समणस्स

स्थविरैः कृतादिभिः सार्द्धं विपुलं पर्वतं शनैः शनैर्दूरो हति दूरुह्य मेघघनसंनिकाशं देवसंनिपातं पृथिवीशिलापट्टकं प्रतिलेखयति प्रतिलेख्योच्चारप्रस्रवणभूमिं प्रतिलेखयति प्रतिलेख्य दर्भसंस्तारकं संस्तृणोति संस्तीर्य पौरस्त्याभिमुखः संपल्यंकनिषण्णः करतलपरिगृहीतं दशनखं शिरसावर्त्तं मस्तकेऽञ्जलिंकृत्वा

महव्वयाइं आरोवेइ) पांच महाव्रतों को स्वीकार किया (आरोवित्ता) पांच महाव्रतों को स्वीकार करके (समणा य समणीओ य खामेइ) श्रमण एवं श्रमणियों आदिसे क्षमापना (खमतखामणा) किया (खामित्ता) खमा कर तहारूवेहिं थेरेहिं कडाइहिं सद्धिं) बाद में तथारूप स्थविरों के साथ, कि जो संथारा करने वाले के सहायक होते हैं उनके साथ (विउलं पव्वयं) विपुलाचल पर्वत पर (सणियं सणियं) धीरे २ (दुरुहेइ) चढे (दुरुहित्ता) वहां चढ कर (मेहघणसंन्निगासं देवसंनिवायं पुढवी सिलावट्टयं पडिलेहेइ) उन्हों ने सान्द्र मेघ के समान वाले तथा देवों के सन्निपात वाले पृथिवीशिलापट्टककी प्रतिलेखना की (पडिलेहित्ता उच्चारपासवणभूमिं पडिलेहेइ) उसकी प्रतिलेखना करके फिर उन्हों ने उच्चारप्रस्रवण भूमि की प्रतिलेखना की (पडिलेहित्ता) उसकी प्रतिलेखना करके फिर उन्होंने (दब्भसंथारगं संथरइ) पृथिवि शिलापट्टक पर अपना दर्भका संथारा बिछाया। (संथरित्ता पुरत्थाभिमुहे संपलियंक निसन्ने) संथारा बिछाकर फिर वे उस पर पूर्व दिशाकी तरफ मुँह

याइं आरोवेइ) પાચ મહાવ્રતો અંગીકાર કર્યા (आरोवित्ता) પાંચ મહાવ્રતો અંગીકાર કરીને (समणा य समणीओ य खामेइ) તેમણે સાધુ અને સાધ્વીઓને ખમતખામણા કર્યા (खामिता तहारूवेहिं थेरेहिं कडाइहिं सद्धिं) ત્યાર બાદ સથારો કરનાર સાધુઓને સહાયરૂપ થાય એવા સ્થવિરોની સાથે(विउलं पव्वयं) વિપુલાચલ પર્વત પર (सणियं सणियं दुरुहेइ) ધીમે ધીમે આરોહણ કર્યું (दुरुहिता) તેના ઉપર આરોહણ કરીને (मेहघणसंनिगासं देवसंनिवायं पुढवीसिलावट्टयं पडिलेहेइ) તેમણે મેઘના જેવા કાળા વર્ણવાળા તથા દેવોના સમાગમ વાળા પૃથ્વીશિલાપટ્ટકની પ્રતિલેખના કરી (पडिलेहित्ता उच्चारपासवणभूमिं पडिलेहेइ) તેની પ્રતિલેખના કર્યા પછી તેમણે ઉચ્ચાર પ્રસ્રવણ ભૂમિની પ્રતિલેખના કરી (पडिलेहित्ता) તેની પ્રતિલેખના કરીને તેમણે (दब्भसंथारगं संथरइ) પૃથ્વીશિલાપટ્ટક પર દર્ભનો સંથારો બિછાવ્યો (संथरित्ता पुरत्थाभिमुहे संपलियंकनिसन्ने) સથારો બિછાવીને તેઓ તેના પર પૂર્વ દિશામાં મુખ રાખીને પર્યંકાસને બેસી ગયા (करयलपरिग्गहियं दसनहं सिरसा

मैरुच्छ्वासनिःश्वासैः व्युत्सृजामि इति कृत्वा संलेखना जोषणा जुषित भक्तपानमस्याख्यातः पादपोपगत कालमनवकाङ्क्षन् विहरति। तत खलु स स्कन्दकोऽनगार' श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य तथारूपाणां स्थविराणामन्तिके सामायिकादीनि एकादशांगान्यधीत्य बहु प्रतिपूर्णानि द्वादश वर्षाणि श्रामण्य

हूं। (ज पि य णं इमं सरीरं इट्ठं कंत पिय जाव फुसतु त्तिकट्टु एयं पि णं चरमेहिं ऊसास नीसासेहिं वोसिरामि) तथा जो यह मेरा शरीर कि जो मुझे पहिले इष्ट था कान्त था प्रिय था यावत् इसे किसी भी प्रकार के उपसर्ग और परीषह पीडित न करें इस भावना से मैंने इस को सुरक्षित रखा था सो अब चरम उच्छ्वास निःश्वासों से- अर्थात् मरने के समय में इसको भी छोड़ता हूं (त्तिकट्टु) इस प्रकार विचार करके उन स्कन्दक अनगार ने (संलेहणा झूसणा झूसिए) काय और कषायको कृश करने वाली संलेखना को आदर पूर्वक धारण कर लिया। (भत्तपाणपडियाइक्खिए) भक्तपान का प्रत्याख्यान कर दिया (पाओवगय कालं अणवकंखमाणे विहरइ) पादपोपगमन संथारे में स्थिर बन गये और मरणाशंसा और जीविताशंसा से बिलकुल रहित हो गये।

(तएणं से खंदए अणगारे समणस्स भगवओ महावीरस्स तहारूवाणं थेराणं अंतिए सामाइयमाइयाइं एक्कारसअंगाइं अहिज्जित्ता बहुपडिपुण्णाइं दुवालसवासाइं सामण्णपरियागं पाउणित्ता) इस प्रकार उन

णं इमं सरीरं इट्ठं कंत पिय जाव मा फुसतु त्ति कट्टु एयं पि णं चरमेहिं ऊसास नीसासेहिं वोसिरामि) આ મારૂં શરીર કે જે પહેલાં મને ઈષ્ટ હતું કાન્ત હતું પ્રિય હતું અને કોઈ પ્રકારના પરીષહ અને ઉપસર્ગ તેને પીડા પહોંચાડી ન શકે એવી ભાવનાથી હું જે શરીરની રક્ષા કરતો હતો હવે ચરમ ઉચ્છ્વાસ નિઃશ્વાસો લેતી વખતે એટલે કે મરણ કાળે તેનો પણ હું ત્યાગ કરૂં છું (त्ति कट्टु) આ પ્રમાણે વિચાર કરીને સ્કન્દક અણગારે (संलेहणा झूसणा झूसिए) કાયા અને કષાયોને ક્ષીણ કરનારી સંલેખના (સંથારો) આદરપૂર્વક ધારણ કર્યો. (भत्तपाणपडियाइक्खिए) ચારેય ચારે પ્રકારના આહારના પ્રત્યાખ્યાન કર્યા (पाओवगय कालं अणवकंखमाणे विहरइ) પાદપોપગમન સંથારામાં સ્થિર થઈ ગયા અને મરણની આશંસા કે જીવનની આકાંક્ષાથી રહિત બની ગયા (तएणं से खंदए अणगारे समणस्स भगवओ महावीरस्स तहारूवाणं थेराणं अंतिए सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जित्ता बहुपडिपुण्णाइं दुवालसवासाइं सामण्णपरियागं पाउणित्ता) આ રીતે તે સ્કન્દક અણગારે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરના સ્થવિર

प्राणातिपातः प्रत्याख्यातः यावज्जीवं यावन्मिथ्यादर्शनशल्यं प्रत्याख्यातं यावज्जीवम् इदानीमपिच श्रमणस्य भगवतो महावीरस्यांतिके सर्वं प्राणातिपातं प्रत्याख्यामि यावज्जीवम् यावन् मिथ्यादर्शनशल्यं प्रत्याख्यामि यावज्जीवम् एवं सर्वमशनपानखादिमस्वादिमं चतुर्विधमप्याहारं प्रत्याख्यामि यावज्जीवम् यदपि च खल्विदं शरीरम् इष्टं कान्तं प्रियं यावत् मा स्पृशन्तु इति कृत्वा एतदपि चर-

---

कहा- (पुव्विंपि मए समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए जावज्जीवाए सव्वं पाणाइवाए पच्चक्खाए) मैं पहिले भी श्रमण भगवान् महावीर के समीप यावज्जीव-जीवनपर्यन्त समस्त प्राणातिपात का प्रत्याख्यान कर चुका हूं, (जाव) यावत् (मिच्छादंसणसल्ले पच्चक्खाए जावज्जीवाए) मृषावाद से लेकर मिथ्यादर्शन शल्यतक का भी जीवनपर्यन्त प्रत्याख्यान कर चुका हूं (इयाणिं पि य णं समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए सव्वं पाणाइवाए पच्चक्खामि) अब भी मैं श्रमण भगवन्त महावीर के समीप समस्त प्राणातिपात का प्रत्याख्यान करता हूं (जावज्जीवाए) जीवन पर्यन्त और (जावज्जीवाए) जीवनपर्यन्त ही (जाव) यावत्-मृषावाद से लेकर (मिच्छा दंसण सल्लं पच्चक्खामि) मिथ्यादर्शन शल्यतक का प्रत्याख्यान करता हूं (एवं सव्वं असणं-पाण-खाइमं-साइमं चउव्विहं पि आहारं जावज्जीवाए पच्चक्खामि) इसी प्रकार से समस्त अशन, पान खाद्य जो चार प्रकार का आहार है उसका भी जीवन पर्यन्त प्रत्याख्यान करता

भगवओ महावीरस्स अंतिए जावज्जीवाए सव्वं पाणाइवाए पच्चक्खाए) में पहेला पण श्रमण भगवान महावीरनी समक्ष જીવનપર્યન્ત સમસ્ત પ્રાણાતિપાતના પ્રત્યાખ્યાન કરેલાં છે (जाव मिच्छादसणसल्ले पच्चक्खाए जावज्जीवाए) મિથ્યાવાદથી લઇને મિથ્યાદર્શન શલ્ય પર્યન્તના પણ જીવનપર્યન્તના મેં પ્રત્યાખ્યાન કરેલાં છે. (इयाणिं पि य ण समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए सव्वं पाणाइवाए पच्चक्खामि) અત્યારે પણ શ્રમણ ભગવાન મહાવીરની સમક્ષ સમસ્ત પ્રાણાતિપાતના પ્રત્યાખ્યાન કરું છું -(जावज्जीवाए) જીવનપર્યન્ત તે પ્રત્યાખ્યાન કરું છું. (जावज्जीवाए जाव मिच्छादंसणसल्लं पच्चक्खामि) મૃષાવાદથી લઇને મિથ્યા દર્શન શલ્ય પર્યન્તના જીવન પર્યન્ત પ્રત્યાખ્યાન કરું છું (एवं सव्वं असणं-पाणं-खाइमं-साइमं चउव्विहंपि आहारं जावज्जीवाए पच्चक्खामि) એજ પ્રમાણે સમસ્ત અશન, પાન, ખાદ્ય અને સ્વાદ્ય, એ ચારે પ્રકારના આહારનું પણ જીવનપર્યન્ત પ્રત્યાખ્યાન કરું છું (जं पि य

विसर्पेद् हृदयः इत्यन्वयः इजातस्य मरणं भवति "उट्ठाए उट्ठेइ" उत्थया उत्थि
" उट्ठित्ता " उत्थाय " समणं भगवम् महावीरम् " श्रमण भगवन्तं मह
" तिक्खुत्तो " त्रिकृत्व त्रिवारम् "आयाहिणपयाहिणं करेइ " आदक्षिणप्रद
करोति ' करित्ता वंदइ नमसइ वंदित्ता नमंसित्ता" कृत्वा वन्दते नमस्यति वन्दि
नमस्यित्वा "सयमेव पंचमहव्वयाइं आरोवेइ" स्वयमेव पञ्चमहाव्रतान्यारोपय
स्वीकरोति आरोवित्ता आरोप्य "समणाय समणीओय खामेइ" श्रमणांश्च श्रम
क्षमयति 'खामित्ता' क्षमयित्वा तहारूवेहिं थेरेहिं कडाइहिं सद्धिं तथारूपैः स्थवि
कृतादिभि सार्द्धम् विउलं' विपुलम् 'पव्वयं' पर्वतम् 'सणियं सणियं' शनैः श
'दुरुहेइ ' दुरारोहति विपुलगिरिनामक पर्वतं कृतादिस्थविरै सह मन्दगत्या स
रोहति इत्यर्थ 'मेहघणसंनिगासं' मेघघनसंनिकाशम् घनमेघसदृशं कृष्णवर्णम् 'दे

मर गया ' तब वे उसी समय 'उट्ठाए उट्ठेइ 'अपनी ही उत्थान शक्ति
से उठे और 'उट्ठित्ता ' उठकर उन्हों ने 'समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो
आयाहिणपयाहिणं करेइ ' श्री श्रमण भगवान् महावीर प्रभु को ती
बार प्रदक्षिणा पूर्वक 'वंदइ नमंसइ ' वंदना की नमस्कार ,किय
' वंदित्ता नमंसित्ता ' वंदना नमस्कार कर 'सयमेव पंचमहव्वयाइं
आरोवेइ ' अपने आप ही उन्हों ने पांच महाव्रतों को स्वीकार क
लिया। ' आरोवित्ता ' पांच महाव्रतों को स्वीकार करने के बाद फिर
उन्हों ने 'समणा य समणीओ य खामेइ ' श्रमण और श्रमणीयों से
क्षमतक्षामणा किया। ' खामित्ता ' क्षमतक्षामणा करके फिर वे
'तहारूवेहिं थेरेहिं कडाइहिं सद्धिं विउलं पव्वयं सणियं सणियं दुरुहेइ'
विपुलाचल पर्वत पर उन तथारूप कडाइ–स्थविरों के साथ

એજ વખતે ' उट्ठाए उट्ठेइ " તેઓ તેમની ઉત્થાનશક્તિથી ઉઠ્યા, અને
" उट्ठित्ता " ઉઠીને ' समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ "
તેમણે ત્રણ વાર પ્રદક્ષિણા પૂર્વક શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને " वंदइ नमंसइ "
વંદણા નમસ્કાર કર્યા वंदित्ता नमंसित्ता " વંદણા નમસ્કાર કરીને " सयमेव
पंचमहव्वयाइं आरोवेइ " પોતાની જાતે જ તેમના પાંચ મહાવ્રતો અંગીકાર
કર્યા ' आरोवित्ता " પાંચ મહાવ્રતોનો સ્વીકાર કરીને તેમણે ' समणा य
समणीओ य खामेइ ' શ્રમણ અને શ્રમણિયોથી (સાધુ સાધ્વીને) ખમતખા
મણાં કર્યાં ' खामित्ता ' ખમતખામણાં કરીને ' तहारूवेहिं थेरेहिं कडाइहिं
सद्धिं विउलं पव्वयं सणियं सणियं दुरुहेइ " જે સ્થવિરો સંલેખના (સંથારા)
ની વિધિ કરાવવામાં કુશળ હતા એવા સ્થવિરોને સાથે લઈને ધીમે ધીમે

पर्यायं पालयित्वा मासिक्या संलेखनयाऽऽत्मान जोषयित्वा षष्टिभक्तानि अनशनेन छित्त्वा आलोचितप्रतिक्रान्तः समाधिप्राप्तः आनुपूर्व्या कालं गतः॥सू०१६॥

टीका—"तएणं से खंदए अणगारे" ततः खलु स स्कन्दकोऽनगारः "समणेणं भगवया महावीरेणं" श्रमणेन भगवता महावीरेण "अब्भणुन्नाए समाणे" अभ्यनुज्ञातः सन् "हट्ठतुट्ठे जाव हियए" हृष्टतुष्ट यावद् हृदय इह यावत् पदेन हृष्टतुष्टचित्तानन्दितः प्रीतमनाः परमसौमनस्यितः हर्षवश

स्कन्दक अनगार ने श्रमण भगवान् महावीर के तथारूप स्थविरों के पास सामायिक आदि ग्यारह अंगों का अच्छी तरह से अध्ययन करके' पूरे बारह वर्षतक श्रामण्य पर्याय का पालन करके (मासियाए संलेहणाए) एक मास की संलेखना से (अत्ताणं झूसित्ता) अपने आप को युक्त कर के' (सर्ट्ठि भत्ताइं अणसणाए छेदेत्ता) साठ भक्तों का अनशन द्वारा छेदन करके' (आलोइयपडिक्कंते) एवं आलोचना तथा प्रतिक्रमण करके (समाहिते) समाधि प्राप्तकर (आणुपुव्वीए कालधम्मगए) क्रमशः काल-धर्म को (मरणको) प्राप्त किया ॥ सू० १६ ॥

टीकार्थ—(तएणं से खंदए अणगारे समणेणं भगवया महावीरेणं अब्भणुन्नाए समाणे) इसके बाद अर्थात् संथारा करनेकी आज्ञाजब स्कन्दक अनगार ने श्रमण भगवान् महावीर प्रभु से प्राप्त करली तब वे स्कन्दक अनगार भगवान् की उस आज्ञा की प्राप्ति सेअपने आप बहुत ही अधिक हर्षित हुए ' उन्हें चित्त में इतना अधिक संतोष प्राप्त हुआ कि कुछ कहा नहीं जा सकता उनका हृदय आनंदोल्लास से अत्यन्त

સ્થવિરોની પાસે સામાયિક આદિ અગિયાર અંગોનું સારી રીતે અધ્યયન કર્યું અને પૂરાં બાર વર્ષ સુધી શ્રમણ પર્યાયનુ પાલન કરીને (मासियाए संलेहणाए) એક માસના સંથારાથી (अत्ताणं झूसित्ता) પોતાને યુક્ત કરીને (सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदेत्ता) સાઠ ભક્તોનુ અનશન દ્વારા છેદન કરીને-એટલે કે ૨૯ ઉપવાસો પૂરા કરીને (आलोइयपडिक्कंते) આલોચના તથા પ્રતિક્રમણ કરીને (समाहिपत्ते) સમાધિ પ્રાપ્ત કરીને (आणुपुव्वीए कालधम्मगए) ક્રમશઃ કાળધર્મ પામ્યા-મરણ પામ્યા ॥ સૂ-૧૬ ॥

ટીકાર્થ—"तएण से खंदए अणगारे समणेण भगवया महावीरेणं अब्भणुन्नाए समाणे" જ્યારે સ્કન્દક અણગારને શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે સંથારો કરવાની અનુજ્ઞા આપી ત્યારે તેમને મનમા ઘણો જ હર્ષ થયો, તેમના ચિત્તમાં અવર્ણનીય સંતોષ થયો, અને તેમનુ હૃદય આનંદોલ્લાસથી પરિપૂર્ણ થઇ ગયું

यस्यासौ शिरस्यावर्त तम् शिरसि परिभ्रमणयुक्तम् "मत्थए अंजलिं कट्टु" मस्तके अञ्जलिं कृत्वा पूर्वोक्तप्रकारेणाञ्जलिं मस्तके कृत्वेत्यर्थः "एवं वयासी" एवं वक्ष्यमाणप्रकारेणावादीत् उक्तवान्। किमुक्तवान् तत्राह "नमोत्थुणं" इत्यादि। "नमोत्थुणं अरिहंताणं भगवंताणं जाव संपत्ताणं" नमोऽस्तु खलु अर्हद्भ्यो भगवद्भ्यो यावत्संप्राप्तेभ्यः सिद्धिगतिनामकस्थानं गतेभ्यो यावत्पदेन "नमोत्थुण" इत्यस्य सर्वोऽपि पाठः संग्राह्यः "नमोत्थुणं समणस्स भगवओ महावीरस्स" नमोऽस्तु खलु श्रमणाय भगवते महावीराय 'जाव संपाविउकामस्स' यावत् समाप्तुकामाय सिद्धिगतिनामधेयस्थानं प्राप्तये प्रयतमानाय "वंदामि णं भगवंतं तत्थगयं इहगए" वन्दे खलु भगवन्तं तत्रगतं समवसरणेस्थितमिहगत इहैव स्थितोऽहमित्यर्थः "पासउ मे भगवं तत्थगये इहगयं" पश्यतु मां भग-

के रूप में जोड़ा कि जिससे दशों ही नख आपस में एक दूसरे नखों के साथ मिल जावे-फिर उस अंजलि को उन्हों ने मस्तक के पास से दक्षिण की ओर से लेकर तीन बार घुमाया, घुमाकर फिर उन्हों ने उस अंजलि को अपने मस्तक-ललाट के पास रखा-और इस प्रकार से उच्चारण किया-उन्होंने क्या कहा सो कहा जाता है—(नमोत्थुणं अरिहंताणं भगवंताणं जाव संपत्ताणं) यावत् सिद्धिगति नामक स्थान को प्राप्त हुए अर्हत भगवंतों को मेरा नमस्कार हो। (नमोत्थुणं समणस्स भगवओ महावीरस्स) श्रमण भगवान् महावीर को मेरा नमस्कार हो। (जाव संपाविउकामस्स) क्यों कि वे यावत् सिद्धिगति नामक स्थान की प्राप्ति करने वाले हैं। (वंदामि णं भगवंतं तत्थगयं इहगए) यहां पर रहा हुआ मैं समवसरणमें स्थित उन श्रीश्रमण भगवान महावीरप्रभु को वन्दना करता हूं (पासउ मे भगवं तत्थगए इहगयं)

त्यार पछी तेमणे पोताना अंजलिबद्ध हस्तोने मस्तकनी पासेथी जमणी बाजूथी शरू करीने वंदणा करवा माटे त्रण वार घुमाव्या अने त्यार बाद मस्तक (ललाट) नी पासे अंजलि राखीने आ प्रमाणे बोल्या-"नमोत्थुणं अरिहंताणं भगवंताणं जाव संपत्ताणं" सिद्धि गति नामना स्थानमां बिराजमान अर्हंत भगवंतोने मारा नमस्कार हो. "नमोत्थुणं समणस्स भगवओ महावीरस्स" श्रमण भगवान महावीरने मारां नमस्कार हो. "जाव संपाविउ कामस्स" भगवान महावीरने नमस्कार शा माटे करे छे? तेओ सिद्धिगति प्राप्त करवाना होवाथी तेमने नमस्कार करे छे "वंदामि णं भगवंतं तत्थगयं इह गए" आ स्थाने रहेलो हुं समोसरणमां बिराजमान श्री श्रमण भगवान महावीरप्रभुने वंदणा करूं छुं (पासउ मे भगवं तत्थगए इहगयं) समोसरणमां

संनिवायं' देवसन्निपातं देवागमनस्थानं रमणीयत्वात् 'पुढवीसिलापट्टयं 'पृथिवीशिलापट्टकम् "पडिलेहेइ" प्रतिलेखयति "पडिलेहित्ता" प्रतिलेख्य प्रतिलेखनं कृत्वा 'उच्चारपासवणभूमिं पडिलेहेइ' उच्चारप्रस्रवणभूमिं प्रतिलेखयति "पडिलेहित्ता" प्रतिलेख्य" दब्भसंथारगं सथरइ " दर्भसंस्तारकं संस्तृणोति "संथरित्ता" संस्तीर्य 'पुरत्थाभिमुहे" पौरस्त्याभिमुखः पूर्वाभिमुखः " संपलियकनिसन्ने " संपल्यक निषण्णः पल्यङ्कासनेनोपविष्टः " करयलपरिग्गहियं " करतलपरिगृहीतम् करतलाभ्यां परिगृहीतम् " दसनहं " दशनखम संयोजितहस्तद्वयस्य दशनखं भवति " सिरसावत्तं " शिरस्यावर्त्तम् । शिरसि आवर्त्तः दक्षिणावर्त्तेनावर्तनं परिभ्रमणं

मन्दगती से यतनापूर्वक चढे कि जो कडाइ स्थविर सलेखना की विधि संपादन कराने में कुशलमनि थे । वहां जाकर उन्हों ने 'मेहघणसन्निगासं देवसन्निवायं पुढवीसिलावट्टयं पडिलेहेइ ' काले मेघ के जैसे वर्णवाले-काले पृथवी शिला पट्ट की जिसकी सुन्दरता से आकृष्ट होकर जिस पर देव आते रहते थे प्रतिलेखना की । (पडिलेहित्ता (उसकी प्रतिलेखना करने के बाद फिर उन्हों ने (उच्चार पासवणभूमिं पडिलेहेइ) उच्चार प्रस्रवण योग्य भूमि की प्रतिलेखना की । (पडिलेहित्ता) इस तरह जब उनका प्रतिलेखना का कार्य समाप्त हो चुका-तब उसके बाद उन्होंने (दब्भसंथारगं संथरइ) दर्भ का संथारा बिछाया (संथारित्ता) बिछाकर फिर वे उस पर (पुरत्थाभिमुहे) पूर्वदिशा की ओर मुँह करके (संपलियंकनिसन्ने) पद्मासन से बैठ गये । बैठकर (करयलपरिग्गहियं दसनहं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एव वयासी) उन्हों ने अपने दोनो हाथों को इस प्रकार से अंजलि

યતનાપૂર્વક, તેમણે વિપુલાચલ પર્વત પર આરોહણ કર્યું ત્યાં જઇને " मेहघणसन्निगासं देवसन्निवायं पुढवीसिलावट्टयं पडिलेहेइ " કાળા મેઘના જેવા શ્યામ વર્ણવાળા, અને જેની સુંદરતાને કારણે દેવો પણ આકર્ષાઇને ત્યાં આવતાં હતા એવા પૃથ્વીશિલાપટ્ટકની તેમણે પ્રતિલેખના કરી " पडिलेहित्ता " તેની પ્રતિલેખના કરીને " उच्चारपासवणभूमिं पडिलेहेइ " ઉચ્ચાર પ્રસ્રવણને યોગ્ય ભૂમિની પ્રતિલેખના કરી " पडिलेहित्ता " તેની પ્રતિલેખના કરીને ' दब्भसंथारग सथरइ " દર્ભનો સંથારો બિછાવ્યો " संथारित्ता " સંથારો બિછાવીને તેના પર " पुरत्थाभिमुहे " પૂર્વ દિશા તરફ મુખ કરીને " संपलियक निसन्ने" પદ્માસન કરીને બેસી ગયા એ આસને બેસીને "करयलपरिग्गहियं दसनहं सिरसावत्त मत्थए अंजलिं कट्टु एव वयासी " તેમણે તેમના બન્ને હાથ એવી રીતે જોડયા કે એક હાથના નખ બીજા હાથના નખના સ્પર્શ કરે

प्रत्याख्यामि यावज्जीवम् " जाव मिच्छादंसणसल्लं पच्चक्खामि" यावत् मिथ्या दर्शनशल्यं प्रत्याख्यामि "एवं सव्वं असणपाणखाइमसाइमं चउव्विहं पि आहारं पच्चक्खामि जावज्जीवाए" एवं सर्वमशनपानखादिमं चतुर्विधमप्याहारं प्रत्याख्यामि यावज्जीवम् " जं पि य णं इमं सरीरं इट्ठं कंतं पियं जाव फुसंतु " यद् पि च खलु इदं शरीरमिष्टं कान्तं प्रियं यावत् स्पृशन्तु, इह यावत्पदेन "मणुन्नं" मनोज्ञम् इत्यारभ्य 'परीसहोवसग्गा' परीषहोपसर्गाः, इत्यन्तानां पदानां ग्रहणं कर्तव्यम् 'फुसंतु' इति मा स्पृशन्तु इति सम्बन्धः, 'त्ति कट्टु' इति कृत्वा-इति विचार्य प्रयत्नेन परिपोषितम् " एवं पि णं ' एतदपि खलु शरीरमपि "चरमेहिं उस्सासनिसासेहिं ' चरमैरन्तिमैः उच्छ्वास-निःश्वासैः "वोसिरामि" व्युत्सृजामि

भी मैं उन्हीं श्रमण भगवान महावीर की साक्षी पूर्वक समस्त प्राणातिपात का यावज्जीव-जब तक जीवन है तब तक-परित्याग करता हूं (जाव मिच्छादंसणसल्लं पच्चक्खामि) यावत्-मृषावाद से लेकर मिथ्या दर्शन शल्य तक के अठारह पापों का भी परित्याग करता हूं। (एवं) इसी तरह से सव्वं असणं, पाणं, खाइमं साइमं चउव्विहं पि आहारं पच्चक्खामि जावज्जीवाए) समस्त अशन का, पान का, खाद्यका, और स्वाद्यका इन चारों प्रकार के आहार का जीवन पर्यन्त के लिये त्याग करता हूं। तथा-'जं पि य णं इमं सरीरं इट्ठं कंतं पियं जाव फुसंतु' जो यह मेरा शरीर है कि जिसे मैंने पहिले इष्ट 'कान्त' प्रिय आदि रूप में मान रखा था तथा इसे किसी भी परीषह आदि का स्पर्श न हो इस विचार से जिसे मैंने परिपालित किया था सो 'एयं पि य णं चरमेहिं उस्सासनिस्सासेहिं ' अब इस शरीर को भी मैं चरम उच्छ्वास निः

वीरनी साक्षीए हुं समस्त प्राणातिपातनो જીવનપર્યન્ત ત્યાગ કરૂં છું ' जाव मिच्छादंसणसल्लं पच्चक्खामि " મિથ્યાદર્શન શલ્ય પર્યંત તમામ પાપસ્થાનોનો પણ જીવનપર્યંત પરિત્યાગ કરૂં છું " एवं " આ રીતે 'सव्वं असणं पाणं खाइमं साइमं चउव्विहं पि आहारं पच्चक्खामि जावज्जीवाए ' સમસ્ત અશન પાન, ખાદ્ય અને સ્વાદ્ય એ ચારે પ્રકારના આહારનો જીવનપર્યન્ત ત્યાગ કરૂં છું તથા " जं पि य णं इमं सरीरं इट्ठं कंतं पियं जाव फुसंतु" આ શરીર કે જેને મેં પહેલાં ઇષ્ટ, કાન્ત પ્રિય આદિ માન્યું હતું અને તેને કોઈ પણ પ્રકારની પીડા સહન કરવી ન પડે તે માટે હું ધ્યાન રાખતો હતો અને તે પ્રકારે તેનું પરિપાલન કરતો હતો એ શરીરનો પણ " एयं पि य णं चरमेहिं उस्सास निस्सासेहिं ' ચરમ ઉચ્છ્

वान् तत्र गत इह गतम् ज्ञानदृष्ट्या " त्ति कट्टु " इति कृत्वा, ' वंदइ नमंसइ " वन्दते नमस्यति " वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी " वन्दित्वा नमस्यित्वा एवम् वादीत् " पुव्विं पि मए " पूर्वमपि मया " समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए" श्रमणस्य भगवतो महावीरस्यान्तिके = समीपे " सव्वे पाणाइवाए पच्चक्खाए जावज्जीवाए " सर्वः प्राणातिपातः प्रत्याख्यातो यावज्जीवम् " जावमिच्छादंसण- सल्ले पच्चक्खाए जावज्जीवाए " यावत् मिथ्यादर्शनशल्यं प्रत्याख्यातं यावज्जी- वम् । अत्र यावत्पदेन ' मुसावाए पच्चक्खाए " इत्यारभ्य " मायामोसा पच्च- क्खाए" इत्यन्तानां अष्टादशानां पापानां ग्रहणं कार्यम् ' इयाणिं पियणं " इदानी- मपि च खलु " समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए श्रमणस्य भगवतो महावीर स्यान्तिके " सव्वे पाणाइवाए पच्चक्खामि जावज्जीवाए " सर्वं प्राणातिपातं

समवसरण में स्थित हुए वे भगवान् अपनी ज्ञानदृष्टिद्वारा यहां रहे हुए मुझे देखें। (त्तिकट्टु) ऐसा कहकर उन स्कन्दक अनगार ने (वंदइ नमंसइ) श्रमण भगवान् महावीर को वहां से वंदना की उन्हें नमस्कार किया (वंदित्ता नमंसित्ता) वंदना नमस्कार कर फिर उन्होंने (एवं वयासी) इस प्रकार से कहा-(पुव्विं पि मए समणस्स भग वओ महावीरस्स अंतिए) मैंने पहिले भी श्रमण भगवन महावीर के समीप (सव्वे पाणाइवाए पच्चक्खाए जावज्जीवाए) समस्त प्राणातिपातों का जीवन पर्यन्त त्याग कर दिया था (जाव मिच्छा दंसण सल्ले पच्चक्खाए जावज्जीवाए) यावत् मृषावाद से -लेकर मिथ्यादर्शन शल्य तक के अठारह पापों का भी जीवन पर्यन्त त्याग कर दिया था। (इयाणिं पि य णं समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए सव्वे पाणाइवाए पच्चक्खामि जावज्जीवाए) अब इस समय

વિરાજતા ભગવાન મહાવીર તેમની જ્ઞાનદૃષ્ટિ દ્વારા અહીં રહેલા મને જુવે " त्ति कट्टु " એ પ્રમાણે કહીને તે સ્કન્દક અણુગારે " वंदइ नमंसइ " શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને ત્યાંથી જ વંદણા નમસ્કાર કર્યા " वंदित्ता नमंसित्ता एव वयासी " વંદણા નમસ્કાર કરીને આ પ્રમાણે બોલ્યા " पुव्विं पि मए सम- णस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए " મે પહેલા ભગવાન મહાવીરની સમક્ષ " सव्वे पाणाइवाए पच्चक्खाए जावज्जीवाए " સમસ્ત પ્રાણાતિપાતોનો જીવન પર્યન્ત ત્યાગ કર્યો હતો " जाव मिच्छादंसणसल्ले पच्चक्खाए जावज्जीवाए " તથા મૃષાવાદથી લઇને મિથ્યાદર્શન શલ્ય પર્યન્તના અઢારે પાપોનો મે જીવનપર્યન્ત ત્યાગ કર્યો હતો " इयाणिं पि य ण समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए सव्वे पाणाइवाए पच्चक्खामि जावज्जीवाए " અત્યારે પણ ભગવાન મહા-

ज्जित्ता" एकादशाङ्गानि अधीत्य "बहुपडिपुण्णाइं" बहुप्रतिपूर्णानि "दुवालसवासाइं" द्वादशवर्षाणि "समणपरियागं पाउणित्ता" श्रामण्यपर्यायं पालयित्वा "मासियाए संलेहणाए" मासिक्या संलेखनया "अत्ताणं झूसित्ता" आत्मानं जोषयित्वा "सर्टि भत्ताइं अणसणाए छेदित्ता" षष्टिं भक्तानि अनशनेन छित्वा "आलोइय पडिक्कन्ते" आलोचितप्रतिक्रान्तः=आलोचितं गुरवे निवेदितं यदति चारजातं तत्प्रतिक्रान्तम्=अकरणविषयीकृतं येनासौ आलोचितप्रतिक्रान्तः अथवा आलोचितश्चासौ आलोचना पापप्रकाशनमालोचनाग्रहणात् प्रतिक्रान्तश्चमिथ्यादुष्कृतप्रदानात्। इति आलोचितप्रतिक्रान्तः। "समाहिपत्ते" समाधिप्राप्तः शान्तचित्त "आणुपुव्विए" आनुपूर्व्या=क्रमेण 'कालगए" कालगतः मरणं प्राप्तः ॥१९॥

भगवान् महावीर के (तहारूवाणं थेराणं अंतिए) तथा रूपवाले स्थविरों के समीप (सामाइयमाइयाइं) सामायिक आदि (एक्कारस अंगाइं) ग्यारह अंगों का (अहिज्जित्ता) अच्छी तरह से अध्ययन करके (बहुपडिपुण्णाइं) ठीक (दुवालसवासाइं) बारह वर्षतक (सामण्णपरियागं पाउणित्ता) श्रामण्यपर्याय का पालन किया-उसे पालन करके (मासियाए संलेहणाए) एक मास की संलेखना द्वारा उन्होंने 'अत्ताणं झूसित्ता' अपनी आत्मा को युक्त करते हुए अर्थात्-लगातार एक महिने तक संलेखना का पालन करते हुए 'सट्ठि भत्ताइं अणसणाए छेदित्ता' अनशन द्वारा साठ भक्तों का छेदन करके 'आलोइयपडिक्कंते' गुरु के समक्ष अपने अतिचारों का निवेदन करने से, उनसे फिर नहीं करने के कारण प्रतिक्रान्त बन अथवा अपने पापों के प्रकाशन द्वारा गृहीत मिथ्या दुष्कृत से आलोचित होकर प्रतिक्रान्त बन 'समाहिपत्ते' शान्त चित्त होकर 'आणुपुव्वीए' क्रमशः 'कालगए' कालधर्म को प्राप्त किया ॥सू०१९॥

ભગવાન મહાવીરના તે પ્રકારના સ્થવિરો પાસે "સામાઇયમાઇયાઇં" સામાયિક આદિ "એક્કારસઅંગાઇં" અગિયાર અંગોનું "અહિજ્જિત્તા" સારી રીતે અધ્યયન કરીને "બહુપડિપુણ્ણાઇં" પૂરાં "દુવાલસવાસાઇં" બાર વર્ષ સુધી "સામણ્ણપરિયાગં પાઉણિત્તા" શ્રમણ્ય પર્યાયનું પાલન કર્યું તેનું પાલન કરીને "માસિયાએ સંલેહણાએ" એક માસના સંથારાથી "અત્તાણં ઝૂસિત્તા" પોતાની જાતને યુક્ત કરીને— "સટ્ઠિં ભત્તાઇં અણસણાએ છેદિત્તા" અનશન દ્વારા સાઠ ભક્તોનું છેદન કરીને (૬૦ ઉપવાસ પૂરા કરીને) "આલોઇય પડિક્કંતે" ગુરૂની સમક્ષ પોતાના અતિચારો (દોષો) નું નિવેદન કરીને અને એ રીતે તેની આલોચના દ્વારા પ્રતિક્રાન્ત બનીને "સમાહિપત્તે" શાન્ત ચિત્તે "આણુપુવ્વીએ" ક્રમશઃ "કાલ ગએ" કાળધર્મ પામ્યા ॥ સૂ૦ ૧૯ ॥

=परित्यजामि शरीरविषयं मोहमपि परित्यजामीति भावः "त्तिकट्टु" इति कृत्वा=इति परिचिन्त्य "संलेहणा झूमणा झूसिए" संलेखना जोषणा जुष्टः भत्तपाणपडियाइक्खिए" भक्तपानप्रत्याख्यातः=प्रत्याख्यातभक्तपानः "पाओवगए" पादपोपगतः पादपोपगमननामकं संस्तारकं संप्राप्तः "कालं अणवकंखमाणे विहरइ" कालं मृत्युम् अनवकांक्षन् अनिच्छन् विहरति तिष्ठतीति। "तएणं से खंदए अणगारे" ततः खलु स स्कन्दकोऽनगारः "समणस्स भगवओ महावीरस्स" श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य "तहारूवाणं थेराणमतिए" तथारूपाणां स्थविराणामंतिके "सामाइयमाइयाइं" सामायिकादीनि "एक्कारसअंगाइ अहि-

श्वास तक छोड़ता हूं। अर्थात् मैं शरीरविषयक मोह का भी परित्याग करताहूं। 'त्तिकट्टु' इसप्रकार मन में विचार कर 'संलेहणा झूसणा झूसिए' काय और कषाय की कृश करनेवाली संलेखना को स्वीकार लिया 'भत्तपाणपडियाइक्खिए' उन स्कन्दक अनगार ने भक्त पान का प्रत्याख्यान कर दियाऔर 'पाओवगए' पादपोपगमन नामक संथारे में स्थित हो गये। उस स्थिति में उन्हों ने 'कालं अणवकंखमाणे विहरइ' अपने मरण की चाहना नहीं की, तात्पर्य कहने का यह है कि संलेखना में स्थित हुआ मुनि यदि अपने मरण की या जीवन की आशंका करता है-तो उसमें उसको अतिचार का पात्र होना पड़ता है। इसलिये यहां कहा गया है कि स्कन्दक अनगार ने पादपोपगमन संथारा धारण कर अपने मरण की आकांक्षा नहीं की अर्थात्-वह पादपोपगमन संथारा उनका बिलकुल निरतिचार था। (तएणं से खंदए अणगारे) इस तरह उन स्कन्दक अनगार ने (समणस्स भगवओ महावीरस्स) श्रमण

વાસ નિશ્વાસ પર્યન્ત ત્યાગ કરૂ છું-એટલે કે એ શરીરનો મોહ પણ છોડું છું. "त्तिकट्टु" મનમાં એવો વિચાર કરીને "संलेहणा झूसणा झूसिए" કાયા અને કષાયોને ક્ષીણ કરનાર સંથારો કર્યો. "भत्तपाणपडियाइक्खिए" તેમણે ચારે પ્રકારના આહારનો ત્યાગ કર્યો "पाओवगए" પાદપોપગમન નામનો સંથારો કર્યો એ સ્થિતિમા તેમણે "काल अणवकंखमाणं विहरइ" પોતાના મરણની પણ આકાક્ષા રાખી નહીં. કારણ કે સંથારો કરનાર મુનિ જો પોતાના મરણની કે જીવનની આકાંક્ષા રાખે તો તેને અતિચાર દોષ લાગે છે. તેથી જ અહીં કહ્યુ છે કે સ્કન્દક અણગારે પાદપોપગમન સંથારો કરીને પોતાના મરણની આકાક્ષા કરી નહી. એ રીતે તેમનો પાદપોપગમન સંથારો અતિચાર દોષથી રહિત હતો "तएण से खंदए अणगारे" આ રીતે તે સ્કન્દક અણગારે "समणस्स भगवओ महावीरस्स तहारूवाणं थेराणं अंतिए

बावीसं सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता से णं भंते खंदए देवताओ देवलोयाओ आउक्खएणं भवक्खएणं ठिइक्खएणं अणंतरं च णं चइत्ता कहिं गच्छिहिइ कहिं उववज्जिहिइ गोयमा महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ बुज्झिहिइ मुच्चिहिइ परिणिव्वाहिइ सव्वदुक्खाणं अंतं करेहिइ ॥ सू०१७ ॥

॥ बितियसयस्स पढमो उद्देसो समत्तो ॥ २ ॥

छाया—ततः खलु ते स्थविरा भगवन्तः स्कन्दकमनगारं कालगतं ज्ञात्वा परिनिर्वाणप्रत्ययं कायोत्सर्गं कुर्वन्ति कृत्वा पात्रचीवराणि गृह्णन्ति गृहीत्वा विपुलात् पर्वतात् शनैः शनैः प्रत्यवरोहन्ति प्रत्यवरुह्य यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीरः स्तत्रैवोपागच्छन्ति उपागत्य श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दन्ते नमस्यन्ति वन्दित्वा

'तएणं ते' इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तएणं) इस के बाद (ते थेरा भगवंतो) उन स्थविर भगवंतों ने (खंदयं अणगारं) स्कन्दक अनगार को (कालगयं जाणित्ता) कालगत जान कर (परिनिव्वाणवत्तियं काउसग्गं करेंति) उनके परिनिर्वाण निमित्त कायोत्सर्ग किया (करित्ता पत्तचीवराइं गिण्हंति) कायोत्सर्ग करके फिर उन्हों ने पात्र और चीवरों का-वस्त्रों को लिया (गिण्हित्ता) लेकर फिर वे (विउलाओ पव्वयाओ) उस विपुल पर्वत से (सणियं सणियं) धीरे २-ईर्यापथ शोधन करते हुए मन्दगति से (पच्चोरुहंति) नीचे उतरे। (पच्चोरुहित्ता) नीचे उतर कर (जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छंति)

" तएणं ते " इत्यादि ।

સૂત્રાર્થ— (तएणं) ત્યાર બાદ (ते थेरा भगवंता) તે સ્થવિર ભગવંતોએ આપનુ કે (खंदय अणगार) સ્કન્દક અણગાર (कालगयं जाणित्ता) કાળધર્મ પામ્યા છે તે જાણીને (परिनिव्वाणवत्तियं काउस्सग्गं करेंति) તેમણે તેમના પરિનિર્વાણ નિમિત્તે કાયોત્સર્ગ કર્યો (करित्ता पत्तचीवराइं गिण्हंति) કાયોત્સર્ગ કરીને તેમણે તેમના પાત્ર અને વસ્ત્રો લીધાં (गिण्हित्ता) તે લઈને તેઓ (विउलाओ पव्वयाओ) વિપુલાચલ પર્વત ઉપરથી (सणियं सणियं) મંદ ગતિથી (યતના પૂર્વક) (पच्चोरुहंति) નીચે ઉતર્યા (पच्चोरुहित्ता) નીચે ઉતરીને (जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छंति) જ્યાં શ્રમણ ભગવાન મહાવીર

मूलम्-तएणं ते थेरा भगवंतो खंदयं अणगारं कालगयं जाणित्ता परिनिव्वाणवत्तियं काउसग्गं करेंति करित्ता पत्त-चीवराइं गिण्हंति गिण्हित्ता विउलाओ पव्वयाओ सणियं सणियं पच्चोरुहंति, पच्चोरुहित्ता जेणेव समणे भगवं महा-वीरे तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं वंदंति नमंसंति वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी, एवं खलु देवाणुप्पियाणं अंतेवासी खंदए नामं अणगारे पगइ भद्दए पगइ विणीए पगइ उवसंते पगइ पयणु कोहमाणमायालोभे मिउमद्दवसंपन्ने अल्लीणे भद्दए विणीए से णं देवाणुप्पिए णं अब्भणुन्नाए समाणे सयमेव पचमहव्वयाइं आरोवित्ता समणाय समणीओय खामेत्ता, अम्हेहिं सद्धिं विउलं पव्वयं तं चेव निरवसेसं जाव अणुपुव्वीए कालंगए इमेयसे आयार भंडए भंते, त्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी एवं खलु देवाणुप्पि-याणं अंतेवासी खंदए नामं अणगारे कालमासे कालं किच्चा कहिं गए कहिं उववन्ने गोयमाइ समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं एवं वयासी एवं खलु गोयमा मम अंतेवासी खंदए णामं अणगारे पगइ भद्दए जाव से णं मए अब्भणुन्नाए समाणे सयमेव पंचमहव्वयाइं तं चेव सव्वं अवसेसिअं नेयव्वं जाव आलोइअपडिक्कंते समाहिपत्ते कालमासे कालं किच्चा अच्चुए कप्पे देवत्ताए उववन्ने तत्थ णं अत्थे गइयाणं देवाणं बावीसं सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता तस्स णं खंदयस्स वि देवस्स

तदेव निरवशेष यावदानुपूर्व्या कालं गतः इदञ्च तस्याचारमाण्डकम् १ भदंत इति भगवान् गौतमः श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमवादीत्-एवं खलु देवानुप्रियाणामन्तेवासी स्कन्दको नामानगारः कालमासे कालं कृत्वा कुत्र गत कुत्रोत्पन्नः गौतम इति श्रमणो भगवान् महावीरो भगवन्तं गौतममेवमवादीत् एवं खलु गौतम ! ममान्तेवासी स्कन्दको नामानगारः प्रकृतिभद्रः

(विउलं पव्वयं तं चेव निरवसेसं जाव आणुपुव्वीए कालं गए) विपुल पर्वतपर गये थे-(यहाँ सब अवशिष्ट कथन जैसा पहिले लिखा जाचुका है समझ लेना चाहिये) अब वे स्कन्दक अनगार क्रमशःकालधर्म को प्राप्त हो चुके हैं (इमेय से आयारभंडए) ये उनके आचारभाण्डक -उपकरण हैं। इतने में (भंतेत्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ) हे भदन्त ! ऐसा कहकर भगवान् गौतम ने श्रमण भगवान् महावीर को वंदना की नमस्कार किया। (वंदित्ता नमंसित्ता) वन्दना नमस्कार कर (एवं वयासी) फिर प्रभु से उन्होंने इस प्रकार पूछा। (एवं खलु देवाणुप्पियाणं अंतेवासी खंदए णाम अणगारे कालमासे कालं किच्चा कहिंगए, कहिं उववन्ने) हे भदन्त ! आप देवानुप्रिय के शिष्य स्कन्दक नामके अनगार काल अवसर में काल करके कहां गये हैं ! कहां उत्पन्न हुए हैं ! (गोयमा) हे गौतम ! इस प्रकार संबोधित करके (समणे भगवं महावीरे) श्रमण भगवान् महावीर ने (भगवं गोयमं एवं वयासी) भगवान् गौतम से इस प्रकार कहा

(अम्हेहिं सद्धिं) અમારી સાથે । विउलं पव्वयं तं चेव निरवसेसं जाव आणुपुव्वीए कालं गए) વિપુલાચલ પર્વત પર ગયા હતા (અહીં સમસ્ત કથન આગળ કહ્યા પ્રમાણે સમજવું) તે સ્કન્દક અણગાર ક્રમશઃ કાળધર્મ પામ્યા છે (इमे य से आयारभंडए) આ તેમના પાત્ર વસ્ત્ર આદિ ઉપકરણો છે ત્યારે (भंते त्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ) ભગવાન ગૌતમે શ્રમણ ભગવાન મહાવીર ને ' હે ભદન્ત ! " એવું સંબોધન કરીને વંદણા નમસ્કાર કર્યા. (वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी) વંદણા નમસ્કાર કરીને તેમણે મહાવીર પ્રભુને આ પ્રમાણે પ્રશ્ન પૂછ્યો. (एवं खलु देवाणुप्पियाणं अंतेवासी खंदए णामं अणगारे कालमासे कालं किच्चा कहिं गए कहिं उववन्ने ?) હે ભદન્ત ! આપ દેવાનુપ્રિયના શિષ્ય સ્કંદક નામના અણગાર કાળ અવસરે કાળધર્મ પામીને ક્યાં ગયા છે ? ક્યાં ઉત્પન્ન થયા છે ? (એટલે કે કઈ ગતિમાં ગયા છે) (गोयमा !) હે ગૌતમ !' એ પ્રમાણે સંબોધન કરીને (समणे भगवं महावीरे) શ્રમણ ભગવાન મહાવીરે (भगवं गोयमं एवं

नमस्यित्वा एवमादिषुः । एवं खलु देवानुप्रियाणामन्तेवासी स्कन्दको नामागारः प्रकृतिभद्रकः प्रकृतिविनीतः प्रकृत्युपशान्तः प्रकृति प्रतनु क्रोधमानमायालोभो मृदुमार्दवसंपन्न आलीनो भद्रको विनीतः स खलु देवानुप्रियैरभ्यनुज्ञातः सन् स्वयमेव पञ्चमहाव्रतान्यारोप्य श्रमणांश्च श्रमणीश्च क्षमयित्वा अस्माभिः सार्धं विपुलं पर्वतं

जहां श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे वहां पर वे आये। (उवागच्छित्ता) वहां आकर (समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ) उन्हों ने श्रमण भगवान् महावीर को वंदना की-नमस्कार किया (वदित्ता नमंसित्ता) वंदना नमस्कार कर (एवं वयासी) फिर वे इस प्रकार से कहने लगे-(एवं खलु देवाणुप्पियाण अंतेवासी खंदए णामं अणगारे पगइभद्दए पगइविणीए' पगइउवसंते' पगइपयणुकोहमाणमायालोभे) हे भदन्त! आप देवानुप्रिय के शिष्य स्कन्दक नाम के अनगार कि जो प्रकृति से विनीत थे 'प्रकृति से उपशान्त थे' प्राकृति से प्रतनु क्रोध मान, माया और लोभ वालेथे (मिउमद्दवसंपन्ने) प्रकृति से अत्यन्त निरभिमानी थे (अल्लीणे भद्दए विणीए) तथा तप संयम आदि अनुष्ठानों के करने में जो सदा तत्पर रहते थे ' भद्रक थे ' और विनीत थे (से णं देवाणुप्पिएणं अब्भणुन्नाए समाणे) वे आप देवानुप्रिय से आज्ञा प्राप्त कर (सयमेव पंच महव्वयाइं अरोवित्ता) अपने आप पांच महाव्रतों को आरोपित करके (समणा य समणीओ खामेत्ता) तथा श्रमण और श्रमणियांसे (क्षमापना) खमतखामणा करके (अम्हेहिं सद्धिं) हमलोगोंके साथ

વિરાજતા હતા ત્યાં આવ્યા (उवागच्छित्ता) ત્યાં આવીને (समण भगवं महावीर वदइ नमंसइ) શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને વંદણા નમસ્કાર કર્યાં (वदित्ता नमंसित्ता) વંદણા નમસ્કાર કરીને (एव वयासी) આ પ્રમાણે કહ્યુ— (एवं खलु देवाणुप्पियाण अंतेवासी खंदए णाम अणगारे पगइ भद्दए, पगइ विणीए, पगइ उवसंते, पगइपयणुकोहमाणमायालोभे) હે ભદન્ત! આપ દેવાનુપ્રિયના શિષ્ય, સ્કન્દક નામના અણુગાર કે જે ભદ્ર, વિનીત અને ઉપશાન્ત પ્રકૃતિવાળા હતા જેનામાં સ્વાભાવિક રીતે જ ક્રોધ, માન, માયા અલ્પ પ્રમાણુ મા જ હતા, (मिउमद्दवसंपन्ने) જેઓ અત્યંત નિરભિમાની હતા, (अल्लीणे भद्दए विणीए) જેઓ તપ, સયમ આદિ અનુષ્ઠાનો કરવા માટે સદા તત્પર રહેતા હતા, જેઓ ભદ્ર અને વિનીત પ્રકૃતિવાળા હતા, (से णं देवाणुप्पिएण अमणुन्नाए समाणे) તેઓ આપ દેવાનુપ્રિયની અનુજ્ઞા લઈ ને (सयमेव पंचमहव्वयाइं आरोवित्ता) પોતાની જાતે જ પાચ મહાવ્રતો અંગીકાર કરીને (समणा य समणीओ खामेत्ता) સાધુ અને સાધ્વીઓને ખમાવીને

न्तरम् खलु च्युत्वा कुत्र गमिष्यति कुत्र उपपत्स्यते गौतम ! महाविदेहे वर्षे सेत्स्यति मोत्स्यते मोक्ष्यते परिनिर्वास्यति सर्वदुःखानामन्तं करिष्यति ॥ सू० १७ ॥

टीका—"तएण ते थेरा भगवंतो" ततः स्कन्दकस्य कालगमनानन्तरम् खलु ते स्थविरा भगवन्तः " खंदय अणगार कालगयं जाणित्ता" स्कन्दकम् अनगारं कालगतं ज्ञात्वा " परिनिव्वाणवत्तिय काउसग्गं करेंति " परिनिर्वाणप्रत्ययं कायोत्सर्गं कुर्वन्ति । परिनिर्वाणं मरणं तत्र मरणे यत् शरीरस्य परिष्ठापनं तदपि परिनिर्वाणमेव तदेव प्रत्ययो हेतुर्यस्य स परिनिर्वाणप्रत्ययस्तम् परिनिर्वाणप्रत्ययम्

कहिं गच्छिहिइ, कहिं उववज्जिहिइ) हे भदन्त ! वे स्कन्दक देव देव लोक से अपनी आयु के क्षय होने पर, भव के क्षय होने पर, स्थिति के क्षय होने पर च्यवकर कहां जावेंगे, कहां उत्पन्न होंगे ? (गोयमा) हे गौतम ! (महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ, बुज्झिहिइ मुच्चिहिइ, परि णिव्वाहिइ, सव्वदुक्खाण अंतं करेहिइ) वे स्कन्दक देव अच्युत देवलोक सेच्यव कर महाविदेह क्षेत्र में सिद्ध होंगे, बुद्ध होंगे मुक्त होंगे परि निवृत होंगे और समस्त दुःखों का अन्त करेंगे ॥ सू० १७ ॥

टीकार्थ—(तएण ते थेरा) स्कन्दक के कालगत हो जाने केबाद उन स्थविर भगवन्तों ने (खदयं अणगारं कालगयं जाणित्ता) स्कन्दक अन गार को कालगत जानकर (परिनिव्वाणवत्तियं काउसग्गं करेंति) परि निर्वाणप्रत्ययवाला कायोत्सर्ग किया । परिनिर्वाण शब्द का अर्थ मरण है । इस मरण में जो शरीर का परिष्ठापन होता है वह भी परिनिर्वाण ही है । यह परिनिर्वाण जिसे कायोत्सर्ग करने में कारण होता है, वह

ववज्जिहिइ) હે ભદન્ત ! તે સ્કન્દકદેવ દેવલોકમાંથી તેમના આયુનો ક્ષય થતા, ભવનો ક્ષય થતા, સ્થિતિનો ક્ષય થતા ત્યાંથી ચ્યવીને ક્યાં જશે ? ક્યાં ઉત્પન્ન થશે ? (गोयमा !) હે ગૌતમ ! (महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ, बुज्झिहिइ मुच्चिहिइ, परिणिव्वाहिइ सव्वदुक्खाणं अंतं करेहिइ) તે સ્કન્દક દેવ અચ્યુત દેવલોકમાંથી ચ્યવીને મહાવિદેહ ક્ષેત્રમાં સિદ્ધ થશે, બુદ્ધ થશે મુક્ત થશે, પરિનિવૃત થશે અને સમસ્ત દુઃખોનો અંત કરનાર થશે ॥ સૂ૦ ૧૭ ॥

ટીકાર્થ-(तएण ते थेरा खदयं अणगारं कालगयं जाणित्ता) તે સ્થવિરોએ જ્યારે જાણ્યું કે સ્કન્દક અણગાર કાળધર્મ પામ્યા છે, ત્યારે તેમણે (परिनिव्वाणवत्तियं काउसग्गं करेंति) પરિનિર્વાણ પ્રત્યયવાળો કાયોત્સર્ગ કર્યો પરિનિર્વાણ એટલે મરણ આ મરણમાં જે શરીરનું પરિષ્ઠાપન થાય છે તેનું નામ પણ પરિનિર્વાણ જ છે આ પરિનિર્વાણ જે કાયોત્સર્ગ કરવામાં કારણરૂપ

यावत् स खलु मयाभ्यनुज्ञातः सन् स्वयमेव पञ्चमहाव्रतान्यारोप्य तदेव सर्वमवशिष्ट नेतव्यं यावदालोचितप्रतिक्रान्तः समाधिप्राप्तः कालमासे कालं कृत्वा अच्युते कल्पे देवतयोत्पन्नः तत्रास्त्येकेषां देवानां द्वाविंशतिः सागरोपमाणि स्थितिः प्रज्ञप्ता। तस्य स्कन्दकस्यापि देवस्य द्वाविंशतिः सागरोपमाणि स्थितिः प्रज्ञप्ता। स भदन्त! स्कन्दको देवस्तस्मात् देवलोकादायुः क्षयेण भवक्षयेण स्थितिक्षयेणान-

-(एवं खलु गोयमा) हे गौतम! (मम अंतेवासी खंदए णामं अणगारे पगइ भद्दए जाव से णं मए अब्भणुन्नाए समाणे सयमेव पंच महव्वयाइं तं चेव सव्वं अवसेसियं नेयव्व जाव आलोइय पडिक्कंते समाहिपत्ते कालमासे कालं किच्चा अच्चुए कप्पे देवत्ताए उववन्ने) मेरा अंतेवासी स्कन्दक अनगार कि जो प्रकृति भद्र आदि पूर्वोक्त विशेषणों वाले थे यावत् वे मुझ से आज्ञा लेकर स्वयं पांच, महाव्रतों को अंगीकार करके यावत् आलोचित प्रतिक्रान्त होकर समाधि प्राप्त कर, काल अवसरमें कालकर अच्युत नामके बारहवें देवलोक में देव की पर्याय से उत्पन्न हुए हैं। (तत्थ णं अत्थेगइयाणं देवाणं बावीसं सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता) वहां पर कितनेक देवों की बाईस सागरोपम प्रमाण स्थिति कही गई है। (तस्स णं खंदयस्स वि देवस्स बावीसं सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता) वहां उस स्कन्दक देव की भी बाईस सागरोपम प्रमाण स्थिति है। (से णं भंते! खंदए देवे ताओ देवलोयाओ आउक्खएणं भवक्खएणं ठिइक्खएणं अणंतरं चयं चइत्ता

वयासी) ભગવાન ગૌતમને આ પ્રમાણે કહ્યું, (एवं खलु गोयमा!) હે ગૌતમ! (मम अंतेवासी खंदए णाम अणगारे पगइ भद्दए जाव से णं मए अब्भणुन्नाए समाणे सयमेव पंचमहव्वयाइं त चेव सव्व अवसेसियं नेयव्व जाव आलोइयपडिक्कंते समाहिपत्ते कालमासे कालं किच्चा अच्चुए कप्पे देवत्ताए उववन्ने) મારા શિષ્ય સ્કન્દક અણગાર કે જેઓ પ્રકૃતિ ભદ્ર આદિ પૂર્વોક્ત વિશેષણોવાળા હતાં, જેમણે મારી અનુજ્ઞા મેળવીને સ્વય પાચ મહાવ્રતો ધારણ કરીઓ (અહીં પૂર્વોક્ત સમસ્ત કથન ગ્રહણ કરવાનુ છે તે કથન ક્યા સુધી ગ્રહણ કરવુ જોઇએ ?) આલોચન દ્વારા પ્રતિક્રાન્ત થઇને, શાન્ત ચિત્તે, કાળધર્મ પામીને અચ્યુત નામના બારમા દેવલોકમા દેવની પર્યાયે ઉત્પન્ન થયા છે. (तत्थणं अत्थेगइयाण देवाण बावीसं सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता) તે દેવલોકમા દેવોની સ્થિતિ બાવીસ સાગરોપમની કહી છે (तस्स ण खंदयस्स वि देवस्स बावीस सागरोवमाइ ठिई पण्णत्ता) ત્યા આ સ્કન્દક અણગારની કાળ-સ્થિતી પણ બાવીસ સાગરોપમની છે (से णं भंते! खंदए देवे ताओ देवलोयाओ आउक्खएण भवक्खएण [illegible] अणंतर चय चइत्ता कहिं गच्छिहिइ, कहिं

'उवागच्छित्ता' उपागत्य "समणं भगवं महावीरं वंदति नमसति" श्रमण भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति "वंदित्ता नमंसित्ता" वन्दित्वा नमस्यित्वा "एवं वयासी" एवं वक्ष्यमाणप्रकारेणावादीत् । किमवादीदित्याह "एवं खलु देवानुप्रियाणामन्तेवासी । " खंदए नाम अणगारे पगइ भद्दए" स्कन्दक नामानगारः प्रकृतिभद्रकः प्रकृत्या स्वभावेन भद्रक इति प्रकृतिभद्रकः "पगइ विणीए" प्रकृति विनीतः स्वभावेनैव विनयवान् "पगइ उवसंते" प्रकृत्युप शान्तः प्रकृत्या स्वभावेनैवोपशमवृत्तिमानित्यर्थः । "पगइपयणुकोहमाणमाया लोभे" प्रकृति प्रतनुक्रोधमानमायालोभ स्वभावत एव प्रतनुक्रोधमानमायालोभ "मिउमद्दवसंपन्ने" मृदुमार्दवसंपन्न परिणामसुन्दरमार्दवयुक्तः "अल्लीणे"

जहां श्री श्रमण भगवान महावीरप्रभु विराजमान थे वहां पर आये। 'उवागच्छित्ता' वहां आकर उन्होंने 'समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ' श्रमण भगवान महावीर को वंदना की नमस्कार किया 'वंदित्ता नमंसित्ता' वंदना नमस्कार करके 'एवं वयासी' फिर उन्होंने उनसे इस प्रकार कहा, क्या कहा-सो सूत्रकार इसी बात को प्रकट करते हैं- 'एवं खलु देवाणुप्पियाणं अंतेवासी खंदए नाम अणगारे पगइभद्दए' हे भदन्त ! आप देवानुप्रिय के अंतेवासी स्कन्दक नाम के अनगार जो स्वभाव से भद्र थे 'पगइविणीए' स्वभाव से ही विनीत थे 'उवसंते' स्वभाव से ही जो उपशान्त वृत्ति वाले थे 'पगइपयणुकोहमाणमायालोभे' स्वभाव से ही जिनके क्रोध, मान, माया और लोभ अतिशय अल्प मात्रा में थे 'मिउमद्दवसंपन्ने' स्वभाव से ही सुन्दर परिणामवाले मार्दव धर्म से जो युक्त थे 'अल्लीणे' तप और संयम आदि की

ज्यां श्रीश्रमण भगवान महावीरप्रभु बिराजता हता त्यां आव्या "उवागच्छित्ता" त्यां आवीने तेमणे "समणं भगवं महावीरं वंदइ नमसइ" श्रमण भगवान महावीरने वंदणा नमस्कार कर्या "वंदित्ता नमंसित्ता" वंदणा नमस्कार करीने "एवं वयासी" आ प्रमाणे कह्युं- "एवं खलु देवाणुप्पियाणं अंतेवासी खंदए नामं अणगारे पगइभद्दए" हे भदन्त ! आ देवानुप्रियना शिष्य स्कन्दक नामना अणगार के जे स्वभावे भद्र हता, "पगइविणीए" जेओ स्वभावे विनीत हता, "उवसंते" जेओ स्वभावे उपशान्तवृत्तिवाळा हता" "पगइ पयणु कोहमाणमाया लोभे" स्वाभाविक रीते ज जेमना क्रोध, मान, माया अने लोभ अतिशय अल्प प्रमाणमां हता, "मिउमद्दवसंपन्ने" स्वभावथी ज सुन्दर परिणामवाळा मार्दव धर्मथी जेओ युक्त हता, "अल्लीणे" तप, संयम

कायोत्सर्गम् मरणनिमित्तं मरणानन्तरं क्रियमाणं कायोत्सर्गं कुर्वन्ति, अथवा मरणनिमित्तकं ध्यानविशेषं कुर्वन्तीत्यर्थः 'करित्ता' कायोत्सर्गं कृत्वा 'पत्तचीवराइ गिण्हंति' पात्रचीवराणि गृह्णन्ति, तदीयपात्रवस्त्रादीनां ग्रहणं कुर्वन्ति "गेण्हित्ता" गृहीत्वा "विउलाओ पव्वयाओ सणियं सणियं पच्चोरुहन्ति" विपुलात् पर्वतात् शनैः शनैः प्रत्यवरोहन्ति-अधोऽवतरन्ति - विपुलनामकपर्वते स्कन्दकस्य मरणमभूत् । मृतं तदीयं शरीरं परिष्ठाप्य तदीयोपकरणानि - उपादाय ते स्थविरास्ततः पर्वतात् निवृत्ता बभूवु इति भाव । "पच्चोरुहित्ता" प्रत्यवरुह्य "जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ" यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीरस्तत्रैवोपागच्छन्ति

कायोत्सर्ग परिनिर्वाण प्रत्यय कायोत्सर्ग कहलाता है इस कयोत्सर्ग का कारण मरण होता है और यह मरण के अनन्तर किया जाता है। अथवा-(परिनिव्वाणवत्तियं काउसग्गं) का तात्पर्य ऐसा भी होता है, कि मरण है निमित्त जिसका ऐसा जो ध्यान विशेष किया जाता है वह परिनिर्वाणप्रत्यय कायोत्सर्ग है । (करित्ता) इस कायोत्सर्ग को करके ' पत्तचीवराइं ' स्कन्दक अनगार के जो पात्र वस्त्र आदि थे वे सब उन्हों ने ले लिये ' गेण्हित्ता ' उठाकर (विउलाओ पव्वयाओ सणियं सणियं पच्चोरुहंति) वे उस विपुल पर्वत से धीरे २ मन्द चाल से यतनापूर्वक नीचे उतरे। अर्थात्विपुल पर्वत पर स्कन्दक का मरण हो गया सोउनके मृत शरीर की परिष्ठापना करके वे उनके ' उपकरणों को लेकर वहां से वापिस लौट आये। ' पच्चोरुहित्ता वापिस लौटकर वे ' जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ '

હોય છે, તે કાયોત્સર્ગને (પરિનિર્વાણ પ્રત્યય કાયોત્સર્ગ કહે છે તે કાયોત્સર્ગનુ કારણ મરણ હોય છે, અને તે મરણ પછી કરવામા આવે છે અથવા (परिनिव्वाणवत्तिय काउसग्गं) નું એવુ તાત્પર્ય થાય છે કે જેનું નિમિત્ત મરણ છે એવા વિશિષ્ટ ધ્યાનને (પરિનિર્વાણ પ્રત્યય કાયોત્સર્ગ) કહે છે. (करित्ता) એવો કાયોત્સર્ગ કરીને, (पत्तचीवराइं) સ્કન્દક અણુગારનાં પાત્ર, વસ્ત્ર આદિ ઉપકરણ તેમણે લઈ લીધા ((गेण्हित्ता) તે ઉપકરણોને લઇને (विउलाओ पव्वयाओ सणिय सणिय पच्चोरुहंति) તેઓ વિપુલાચલ પર્વત પરથી ધીરે ધીરે-મંદ ગતિયે-યતના પૂર્વક નીચે ઉતર્યા એટલે કે વિપુલાચલ પર્વત પર સ્કન્દક અણુગાર મરણ પામ્યા પછી તેમના મૃત શરીરની પરિષ્ઠાપના કરીને, તેઓ તેમના ઉપકરણોને લઈને ત્યાથી પાછા ફર્યા (पच्चोरुहित्ता) ત્યાંથી નીચે પાછા ફરીને તેઓ. (जेणेव समणे भगव महावीरे तेणेव उवागच्छइ)

स्कन्दकस्य पारलौकिकं वृत्तान्तं ज्ञातुं भगवन्तं पृच्छति भंते इत्यादि। "भंते त्ति भगवं गोयमे" भदंत इति सम्बोध्य भगवान् गौतमः "समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ" श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति "वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी" वन्दित्वा नमस्यित्वा एवं वक्ष्यमाणप्रकारेणावादीत् किमवादीत् तत्राह 'एवं खलु' इत्यादि एवं खलु देवाणुप्पियाणं अंतेवासी खंदए नाम अणगारे कालमासे कालं किच्चा कहिंगए कहिं उववन्ने" एवं खलु देवानुप्रियाणामंतेवासी स्कन्दको नामानगारः कालमासे कालं कृत्वा। कुत्रगतः कुत्रोत्पन्नः? भगवान् कथयति "गोयमा" हे गौतम इति संबोध्य "समणे भगवं महावीरे" श्रमणो भगवान् महावीरः "भगवं गोयमं एवं वयासी" भगवन्तं गौतममेवमवादीत् "एवं खलु गोयमा" एवं खलु हे गौतम! "मम अंतेवासी खंदए नाम अणगारे" ममान्तेवासी स्कन्दको नामानगारः "पगइ भद्दए" प्रकृति भद्रकः 'जाव'

के मुख से ऐसे वचनों को सुनकर 'भगवं गोयमे' भगवान् गौतम ने स्कन्दक के पारलौकिक वृत्तान्त को जानने के लिये 'भंते त्ति' हे भदन्त! इस प्रकार संबोधित करके 'समणं भगवं महावीरं वंदइ, नमंसइ' पहिले श्रमण भगवान् महावीर को वंदना की, नमस्कार किया। 'वंदित्ता नमंसित्ता' वंदना नमस्कार कर 'एवं वयासी' फिर उन्हों ने प्रभु से इस प्रकार पूछा-' एवंखलु देवाणुप्पियाणं अंतेवासी खंदए नामं अणगारे' हे भदंत! आप देवानुप्रिय के अंतेवासी स्कन्दक अनगार 'कालमासे कालं किच्चा' कालमास में-कालके अवसर काल करके (कालं गए) मर और (कहिं गए) कहां गए हैं 'कहिं उववन्ने' और कहा पर उत्पन्न हुए हैं? उत्तर देते हुए तब प्रभु ने उनसे कहा -'गोयमा' हे गौतम! 'मम अंतेवासी खंदए णामं अणगारे' मेरा अंतेवासी स्कन्दक अनगार जो 'पगइ भद्दए' प्रकृति से भद्र थे 'से णं

જાણવાની જિજ્ઞાસાથી 'ભંતેત્તિ" હે ભદન્ત! એવું સંબોધન કરીને, "સમણં ભગવં મહાવીરં વંદઇ નમંસઇ' શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને પહેલાં તો વંદણા કરી, નમસ્કાર કર્યા 'વંદિત્તા નમંસિત્તા એવં વયાસી" વંદણા નમસ્કાર કરીને તેમણે મહાવીર પ્રભુને આ પ્રમાણે પૂછ્યું-" એવં ખલુ દેવાણુપ્પિયાણં અંતેવાસી ખંદએ ણામં અણગારે" હે ભદન્ત! આપ દેવાનુપ્રિયના અંતેવાસી (શિષ્ય) સ્કન્દક અણગાર 'કાલમાસે કાલં કિચ્ચા" કાળમાસે-કાળ અવસરે કાળ પામીને-" કાલગએ" કાળધર્મ (મરણ) પામીને 'કહિં ગએ" ક્યાં ગયા છે? (કહિંઉવવન્ને" ક્યાં ઉત્પન્ન થયા છે? ત્યારે પ્રભુએ તેમને આ પ્રમાણે જવાબ આપ્યો- "ગોયમા!" હે ગૌતમ! "મમ અંતેવાસી ખંદએ ણામં અણગારે "મારા અંતેવાસી સ્કન્દક અણગાર, કે જેઓ પગઇ ભદ્દએ' ભદ્ર

आलीनः=तपः संयमादितत्परः "भद्दए" भद्रकः=कल्याणस्वरूपः "विणीए" विनीतः=विनयसंपन्नः "सेणं देवाणुप्पिएहिं अब्भणुन्नाए समाणे" स खलु देवानुप्रियैरभ्यनुज्ञातः सन् "सयमेव पंचमहव्वयाइं आरोवित्ता" स्वयमेव पञ्चमहाव्रतान्यारोप्य "समणाय समणीओय खामेत्ता" श्रमणांश्च श्रमणीश्च क्षमयित्वा "अम्हेहिं सद्धिं" अस्माभिः सार्धम् "विउलं पव्वयं" विपुल पर्वतम् "तं चेव निरवसेसं" तदेव निरवशेषम्=पूर्वोक्तमेव सर्वम् अत्र वाच्यम्। कियत्पर्यन्त मित्याह="जाव आणुपुव्वीए कालं गए" यावदानुपूर्व्या कालं गतः, अत्र यावत्पदेन "सणियं सणियं दुरुहइ" इत्यारभ्य "समाहिपत्ते" इत्यन्तस्य ग्रहण कर्त्तव्यम्। आनुपूर्व्या मरण प्राप्तः। "इमेयसे आयारभंडए" इदश्च भवदग्रे स्थापितं तस्याचारभण्डकमस्तीति स्थविराणामेतादृशं वाक्यमाकर्ण्य गौतमः

आराधना में ही जिन्हों ने अपना शेप जीवन व्यतीत किया' 'भद्दए' अतएव कल्याण स्वरूप 'विणीए' विनीत ऐसे 'सेणं' वे स्कन्दक अनगार 'देवाणुप्पिएहिं अब्भणुन्नाए समाणे' आप देवानुप्रिय से आज्ञा प्राप्त कर 'सयमेव पंचमहव्वयाइं' अपने आप पांच महाव्रतों को आरोपित करके 'समणाय समणीओ य' श्रमण एवं श्रमणियों से क्षमा याचना कर 'अम्हेहिं सद्धिं' हमलोगों के साथ 'विउल पव्वयं' विपुल पर्वत पर 'सणियं सणियं' धीरे २ चढे यहां पर 'तं चेव निरवसेसं जाव आणुपुव्वीए कालं गए' बाकी का और सब पूर्वोक्त कथन 'जाव आणुपुव्वीए कालं गए' यहां तक लगा लेना चाहिये। 'इमे य से आयारभंडए' ये जो हम लोगों ने लाकर आप के समक्ष स्थापित किये हैं। उन्हीं स्कन्दक अनगार के आचार भाण्डक—उपकरण है। स्थविरों

આદિની આરાધનામા જ જેમણે પોતાનું બાકીનું જીવન વ્યતીત કર્યું હતું, "भद्दए" જેઓ અતિશય ભદ્રિક પ્રકૃતિવાળા હતા, "विणोए" જેઓ વિનીત હતા, એવા "सेण" સ્કન્દક અણગાર "देवाणुप्पिएहिं अब्भणुन्नाए समाणे" આપ દેવાનુપ્રિયની આજ્ઞા લઇને "सयमेव पचमहव्वयाइं" પોતાની જાતે જ પાંચ મહાવ્રતો અંગીકાર કરીને "समणा य समणीओ य" શ્રમણ અને શ્રમણિને (સાધ્વીઓ) ખમાવીને "अम्हेहिं सद्धिं" અમારી સાથે "विउल-पव्वय" વિપુલાચલ પર્વત પર "सणिय सणिय" ધીરે ધીરે આરોહણ કરીને "त चेव निरवसेस जाव आणुपुव्वीए कालंगए" "जाव अ णुपुव्वीए कालं गए" સુધી સૂત્રમા આવતુ સમસ્ત કથન ગ્રહણ કરવું "इमे य से आयारभद्दए" આ તેમના પાત્ર વસ્ત્ર આદિ ઉપકરણ છે તેમ સ્થવિરોના મુખથી આ પ્રકારનાં વચનો સાંભળીને "भगवं गोयमे" ભગવાન ગૌતમે સ્કન્દકનું પારલૌકિક વૃત્તાંત

अच्युतकल्पे देवो जात इति भावः "तत्थ णं अत्थेगइयाणं देवाणं बावीसं सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता" तत्र खलु अच्युतकल्पे देवानां द्वाविंशतिः सागरोपमाणि स्थितिः प्रज्ञप्ता "तत्थ णं खंदयस्स वि देवस्स बावीसं सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता" तत्र खलु स्कन्दकस्यापि देवस्य द्वाविंशतिः सागरोपमाणि स्थितिः प्रज्ञप्ता। गौतमः पृच्छति "से णं भंते" स खलु भदन्त ! "खंदए देवे" स्कन्दको देवः 'ताओ देवलोगाओ" तस्मात् देवलोकात् "आउक्खएणं भवक्खएणं ठिइक्खएणं" आयुःक्षयेण भवक्षयेण स्थितिक्षयेण, तत्र आयुःक्षयेणायुष्कर्मदलिक निर्जरणेन भवक्षयेण, देवभवनिबन्धकर्मणां गत्यादीनां निर्जरणेन स्थितिक्षयेण आयुष्कर्मणः स्थितिवेदनेन "अणंतरं" अनन्तरम् "चयं" देवभवसम्बन्धि शरीर "चइत्ता" त्यक्त्वा "कहिं गच्छिहिइ" कुत्र गमिष्यति "कहिं उववज्जि

स्कन्दक अनगार मर कर अच्युत कल्प में देव की पर्याय से उत्पन्न हुए हैं। (तत्थ णं अत्थेगइयाणं देवाणं बावीसं सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता) वहाँ पर कई एक देवों की बाईस सागरोपमप्रमाण स्थिति कही गई है सो (तत्थ णं खंदयस्स वि देवस्स बावीसं सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता) उस स्कन्दक देव की भी बाईस सागरोपम प्रमाण स्थिति है। अब भगवान गौतमस्वामी उस देव के विषय में पुनः प्रभु से पूछते हैं-(से णं भंते ! खंदए देवे ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं, भवक्खएणं, ठिइक्खएणं, अणंतरं चयं चइत्ता कहिं गच्छिहिइ) हे भदन्त ! वह स्कन्दक देव उस देवलोक से आयुष्कर्म के दलिकों की निर्जरा होनेसे, देवभव के कारणभूत गत्यादिक कर्मों की निर्जरा होने से तथा आयुष्कर्म की स्थिति का वेदन कर लेने से देव भवसंबंधी शरीर का परित्याग कर कहाँ जायेगा, कहाँ उत्पन्न होगा ?। इसका उत्तर देते हुए प्रभु कहते हैं-

બારમાં દેવલોકમાં દેવની પર્યાયે ઉત્પન્ન થયા. 'तत्थणं अत्थेगइयाणं देवाणं बावीसं सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता" તે દેવલોકમાં કેટલાક દેવોનું આયુષ્ય બાવીસ સાગરોપમનું હોય છે 'तत्थ णं खंदयस्स वि देवस्स बावीसं सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता" એજ પ્રમાણે તેમનું સ્કન્દક અણગારનું આયુષ્ય પણ બાવીસ સાગરોપમનું સમજવું. ગૌતમસ્વામી તે દેવના વિષયમાં બીજો પ્રશ્ન પૂછે છે 'से णं भंते! खंदए देवे ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं भवक्खएणं ठिइक्खएणं अणंतरं चयं चइत्ता कहिं गच्छिहिइ' હે ભદન્ત! તે સ્કન્દક દેવ, તે દેવલોકમાં આયુ કર્મના દલિકોની નિર્જરા થતાં, દેવભવના કારણરૂપ ગત્યાદિક કર્મોની નિર્જરા થતાં તથા આયુષ્ય કર્મની સ્થિતિનું વેદન કરી લીધા પછી દેવભવ સંબંધી શરીરનો પરિત્યાગ કરીને ક્યાં જશે, ક્યાં ઉત્પન્ન થશે? તેનો ઉત્તર

यावत् अत्र यावत्पदेन 'पिगइ त्रिगीए' इत्यारभ्य 'त्रिणीए' इत्यन्त स्कन्दक विशेषणानां ग्रहणं कर्त्तव्यम् "सेणं मए अब्भणुन्नाए समाणे" स स्कन्दकः खलु मयाऽभ्यनुज्ञातः सन् "सयमेव पचमहव्वयाइं आरोवित्ता" स्वयमेव पञ्चमहाव्रतान्यारोप्य "तं चेव सव्वं अवसेसियं नेयव्वं" तदेव सर्वमवशिष्टं नेतव्यम् समणा य समणीओ य खमित्ता" इत्यारभ्य "सट्ठिभत्ताइं अणसणाए छेदित्ता" इति पर्यन्तं सर्वं ज्ञातव्यम् 'आलोइय पडिक्कंते" आलोचित प्रतिक्रान्तः "समाहिपत्ते" समाधिप्राप्तः "कालमासे कालं किच्चा" कालमासे कालं कृत्वा "अच्चुए कप्पे देवत्ताए उववन्ने" अच्युते कल्पे द्वादशदेवलोके देवतया उपपन्नः देवो भूत्वा समुत्पन्नः विलक्षण तपश्चरणयुक्तं संयमं समाराध्य मृत्वा स्कन्दकः

मए अब्भणुन्नाए समाणे सयमेव पंच महव्वयाइं आरोहेत्ता त चेव सव्वं अवसेसियं नेयव्वजाव आलोइयपडिक्कंते समाहिपत्ते कालमासे कालं किच्चा अच्चुए कप्पे देवत्ताए उववन्ने' यावत् मेरी अनुमति से स्वयं पंच महाव्रतों को आरोपित करके (यहां पर बाकी का समस्त कथन पहिले कहे हुए कथन की तरह ही समझ लेना चाहिये) यावत्-आलोचित प्रतिक्रान्त बने समाधि प्राप्त कर कालमास में कालकरके अच्युत देवलोक में गये हैं और वहां देव की पर्याय से उत्पन्न हुए हैं। 'त चेव सव्वं अंवसेसियं नेयव्वं) ऐसा जो कहा है, सो उससे (समणाय समणीओ य खामेत्ता) यहां से लगाकर (सट्ठि भत्ताइं अणसणाए छेदित्ता) यहां तक का सब पाठ ग्रहण करलेना चाहिये। तात्पर्य कहने का यह है कि-विलक्षण तपश्चरण से युक्त संयम को आराधित करके

પ્રકૃતિના હતા. "से ण मए अब्भणुन्नाए समाणे सयमेव पचमहव्वयाइ आरोहेत्ता तं चेव सव्वं अवसेसिय नेयव्व जाव आलोइयपडिक्कंते समाहिपत्ते कालमासे कालं किच्चा अच्चुए कप्पे देवत्ताए उववन्ने" મારી અનુજ્ઞા લઇને પોતાની જાતે જ પાંચ મહાવ્રતો અંગીકાર કરીને (અહીં બાકીનું સમસ્ત કથન પૂર્વોક્ત કથન પ્રમાણે જ ગ્રહણ કરવાનું છે) કયાં સુધી તે કથન ગ્રહણ કરવાનું છે? તો સૂત્રકાર કહે છે કે "આલોચના દ્વારા પ્રતિક્રાન્ત બનીને શાન્તચિત્તે કાળધર્મ પામ્યા, ત્યાંસુધી પૂર્વોક્ત કથન ગ્રહણ કરવું કાળધર્મ પામીને તેઓ અચ્યુતદેવલોકમાં દેવની પર્યાયે ઉત્પન્ન થયા છે "त चेव सव्व अवसेसिय नेयव्व" આ પ્રમાણે જે કહેલું છે તેથી "समणाय समणीओ य खामेत्ता"થી શરૂ કરીને 'सट्ठिं भत्ताइ अणसणाए छेदित्ता" પર્યંતનો પાઠ ગ્રહણ કરવો જોઇએ, કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે વિલક્ષણ તપસ્યાથી યુક્ત સંયમની આરાધના કરીને સ્કન્દક અણગાર મરીને અચ્યુત દેવલોક નામના

॥ अथ द्वितीयशतके द्वितीयोद्देशकः प्रारभ्यते ॥

द्वितीय शतकीय द्वितीयोद्देशकस्य संक्षेपेण विचारणीया विषयाः, कति समुद्घाताः कियन्त इति गौतमस्य प्रश्नः। वेदनासमुद्घात–कषायसमुद्घात–मरणसमुद्घात वैक्रियसमुद्घात – तैजससमुद्घात–आहारकसमुद्घात–केवलिसमुद्घातभेदात् सप्तसमुद्घाताः इति भगवतः उत्तरम् भावितात्मानगारस्य वर्णनमिति॥

केन मरणेन मृतस्य जीवस्य संसारो वर्द्धते इति अस्यैव शतकस्य प्रथमोद्देशके कथितम् मरणञ्च समुद्घातसमवहतस्य भवति प्रकारान्तरेणापि भवतीति प्रार

दूसरे शतक का द्वितीय उद्देशक प्रारंभ

द्वितीय शतक संबंधी द्वितीय उद्देशक में जिन २ विषयों का विचार किया गया है, वे संक्षेप से इस प्रकार हैं।

प्रश्न—समुद्घात कितने होते हैं–ऐसा गौतम का प्रश्न

उत्तर–समुद्घात सात होते हैं–एक वेदना समुद्घात, दूसरा कषाय समुद्घात, तीसरा मरण समुद्घात, चौथा वैक्रिय समुद्घात, पांचवां तैजस समुद्घात, छट्ठा आहारक समुद्घात, और सातवां केवली समुद्घात, इस प्रकार से ये सात समुद्घात होते हैं–ऐसा प्रभु का उत्तर, भावितात्मा अनगारका वर्णन (किस मरण से मरे हुए जीव का संसार बढता है) ऐसा प्रश्न द्वितीय शतक के प्रथम उद्देशक में किया गया और उसका उत्तर भी वहीं पर दे दिया गया। इसी प्रश्न से यह बात भी संबंध रखती है कि मरण दो प्रकारसे हो सकता है–एक मारणांतिकसमुद्घातपूर्वक और दूसरा मारणांतिकसमुद्घात के बिना, इसलिये प्रार गाथा

બીજા શતકના બીજા ઉદ્દેશકનો પ્રારંભ

બીજા શતક ના બીજા ઉદ્દેશકમાં જે જે વિષયોનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે, તે વિષયો સંક્ષેપમાં આ પ્રમાણે છે—

ગૌતમનો પ્રશ્ન સમુદ્ઘાત કેટલા હોય છે?

ઉત્તર—સમુદ્ઘાત સાત હોય છે (૧) વેદના સમુદ્ઘાત, (૨) કષાય સમુદ્ઘાત (૩) મરણ સમુદ્ઘાત (૪) વૈક્રિય સમુદ્ઘાત (૫) તૈજસ સમુદ્ઘાત (૬) આહારક સમુદ્ઘાત અને (૭) કેવલિ સમુદ્ઘાત આ પ્રકારનો પ્રભુ નો ઉત્તર ભાવિતાત્મા અનગારનું વર્ણન.

"કયા મરણથી મરતા જીવનો સંસાર વધે છે?" આવો પ્રશ્ન પહેલા શતકમાં પૂછવામાં આવ્યો છે અને તેનો ઉત્તર આપવામાં આવ્યો છે તે પ્રશ્ન સાથે આ વાતનો પણ સંબંધ છે કે મરણ બે પ્રકારના છે-(૧) મારણાંતિક

हिइ" कुत्रोत्पत्स्यते भगवानाह—' गोयमा ' हे गौतम ! "महाविदेहेवासे सिज्झिहिति" महाविदेहे वर्षे महाविदेहक्षेत्रे सेत्स्यति सिद्धो भविष्यति 'बुज्झिहिइ' भोत्स्यते केवलालोकेन लोकालोकं ज्ञास्यति "मुच्चिहिइ" मोक्ष्यते कर्मबन्धनात् पृथक् भविष्यति "परिणिव्वाहिइ" परिनिर्वास्यति कर्मसंतापाभावेन शीतली भविष्यति "सव्वदुक्खाणं अन्तं करिहिइ" सर्वदुःखानाम्=शारीरमानसदुःखानाम् अन्तं नाशं करीष्यतीति ॥ सू० १७ ॥

इति श्रीविश्वविख्यात–जगद्वल्लभ–प्रसिद्धवाचकपञ्चदशभाषाकलितललितकलापालापक–प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक–वादिमानमर्दक–श्रीशाहूछत्रपतिकोल्हापुरराजप्रदत्त–' जैनशास्त्राचार्य ' पदभूषित–कोल्हापुरराजगुरु–बालब्रह्मचारि–जैनाचार्य–जैनधर्मदिवाकरपूज्यश्री–घासीलालव्रतिविरचितायां श्रीभगवतीसूत्रस्य प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां व्याख्यायां द्वितीयशतके प्रथमोद्देशकः समाप्तः ॥२–१॥

(गोयमा ! महाविदेहे वासे सिज्झिहिन्ति, बुज्झहिइ, मुच्चिहिइ, परिणिव्वाहिइ सव्वदुक्खाणमंतं करिहिइ) हे गौतम ! वह स्कन्दक देव वहां से च्युत होकर महाविदेह क्षेत्र से (सिज्झहिइ) सिद्ध होगे, (बुज्झिहिइ) केवल ज्ञानरूप आलोक से लोकालोकके जानने वाले होंगे, (मुच्चिहिइ) कर्मबन्धन सेसर्वथा पृथक्भूत होजावेंगे (परिनिव्वाहिइ) शारीरिक, मानसिक समस्त दुःखों का अन्त–अभाव–करदेंगे ॥ १७ ॥

श्री जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्य श्रीघासीलालजी महाराजकृत भगवतीसूत्रकी प्रमेयचन्द्रिका व्याख्या के दूसरे शतकका पहला उद्देशक समाप्त ॥२–१॥

આપતાં પ્રભુ કહે છે–" गोयमा ! महाविदेहे वासे सिज्झिहिन्ति, बुज्झिहिइ, मुच्चिहिइ, परिनिव्वाहिइ, सव्वदुक्खाणमंतं करिहिइ " હે ગૌતમ ! તે સ્કન્દક દેવ ત્યાંથી ચ્યવીને મહાવિદેહ ક્ષેત્રમાંથી " सिज्झिहिइ " સિદ્ધ પદ પામશે, ' बुज्झिहिइ " કેવળ જ્ઞાનરૂપ આલોકથી લોકાલોકને જાણનાર થશે, " मुच्चिहिइ " કર્મબંધનથી સર્વથા મુક્ત થઇ જશે, " परिनिव्वाहिइ " કર્મરૂપ સંતાપના અભાવને લીધે બિલકુલ શીતલ થઇ જશે, અને (सव्वदुक्खाणमंतं करिहिइ " શારીરિક, માનસિક સમસ્ત દુઃખોનો અન્ત (અભાવ) કરશે ॥ સૂ ૧૬ ॥

॥ઇતિશ્રી જૈનાચાર્ય જૈનધર્મદિવાકર પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજકૃત ભગવતીસૂત્રની પ્રિયદર્શિની વ્યાખ્યાના બીજા શતકનો પહેલો ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥૨–૧॥

॥ अथ द्वितीयशतके द्वितीयोद्देशकः प्रारभ्यते ॥

द्वितीय शतकीय द्वितीयोद्देशकस्य संक्षेपेण विषयानुक्रमणिका यथा, कति समुद्घाताः कियन्त इति गौतमस्य प्रश्नः । वेदनासमुद्घात-कषायसमुद्घात-मरणसमुद्घात-वैक्रियसमुद्घात-तैजससमुद्घात-आहारकसमुद्घात-केवलिसमुद्घातभेदात् सप्तसमुद्घाताः इति भगवतः उत्तरम् आभिगमिकसूत्रस्य वर्णनमिति॥

केन मरणेन मृतस्य जीवस्य संसारः वर्द्धते इति प्रश्नोऽयं प्रथमोद्देशके कथितम् मरणञ्च समुद्घातावस्थायां भवति यथा तस्यापि भवतीति द्वार

दूसरे शतक का द्वितीय उद्देशक प्रारंभ

द्वितीय शतक संबंधी द्वितीय उद्देशक में जिन २ विषयों का विचार किया गया है, वे संक्षेप से इस प्रकार हैं ।

प्रश्न—समुद्घात कितने होते हैं—ऐसा गौतम का प्रश्न

उत्तर—समुद्घात सात होते हैं—एक वेदना समुद्घात, दूसरा कषाय समुद्घात, तीसरा मरण समुद्घात, चौथा वैक्रिय समुद्घात, पांचवां तैजस समुद्घात, छट्ठा आहारक समुद्घात, और सातवां केवली समुद्घात, इस प्रकार से ये सात समुद्घात होते हैं—ऐसा प्रभु का उत्तर, आभिगमिक सूत्र का वर्णन (जिस मरण से मर कर जीव का संसार बढ़ता है) ऐसा प्रश्न द्वितीय शतक के प्रथम उद्देशक में किया गया और उसका उत्तर भी वहीं पर दे दिया गया। इसी प्रश्न से यह बात भी संबंध रखती है कि मरण दो प्रकारका हो सकता है—एक मारणान्तिकसमुद्घातपूर्वक और दूसरा मारणान्तिकसमुद्घात के बिना, इसलिये यहां सूत्र

બીજા શતકના બીજા ઉદ્દેશકનો પ્રારંભ

બીજા શતકના બીજા ઉદ્દેશકમાં જે જે વિષયોનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે, તે વિષયો સંક્ષેપમાં આ પ્રમાણે છે—

ગૌતમનો પ્રશ્ન સમુદ્ઘાત કેટલા હોય છે ?

ઉત્તર—સમુદ્ઘાત સાત હોય છે (૧) વેદના સમુદ્ઘાત, (૨) કષાય સમુદ્ઘાત (૩) મરણ સમુદ્ઘાત (૪) વૈક્રિય સમુદ્ઘાત (૫) તૈજસ સમુદ્ઘાત (૬) આહારક સમુદ્ઘાત અને (૭) કેવલિ સમુદ્ઘાત આ પ્રકારનો પ્રશ્ન ને ઉત્તર આભિગમિક સૂત્રનું વર્ણન

"ક્યા મરણથી મરતા જીવનો સંસાર વધે છે ?" આ પ્રશ્ન પહેલા ઉદ્દેશકમાં પૂછવામાં આવ્યો છે અને તેનો ઉત્તર આપવામાં આવ્યો છે. તે પ્રશ્ન સાથે આ વાતનો પણ સંબંધ છે કે મરણ બે પ્રકારનું છે (૧) મારણાંતિક

गाथोक्त समुद्घातस्वरूपं निरूपयति "कइणं भन्ते समुद्ग्घाया" इत्यादि।

मूलम्–कइणं भंते ! समुग्घाया पन्नत्ता गोयमा ! सत्त समुग्घाया पन्नत्ता तं जहा वेयणासमुग्घाए एवं समुग्घाय पदं छाउमत्थियसमुग्घायवज्जं भाणियव्वं जाव वेमाणियाणं कसायसमुग्घाया अप्पाबहुयं। अणगारस्स णं भंते! भावियप्पणो केवलिसमुग्घाये जाव सासयं, अणागयद्धं कालं चिट्ठन्ति, समुग्घायपदं नेयव्वं ॥ १ ॥

छाया–कति खलु भदन्त! समुद्घाताः प्रज्ञप्ताः? गौतम! सप्त समुद्घाताः प्रज्ञप्ताः तद्यथा वेदनासमुद्घातः एवं समुद्घातपदं छाद्मस्थिकसमुद्घातवर्जं भणितव्यम् यावद्वैमानिकानाम् कषायसमुद्घाताः अल्पबहुत्वम्। अनगारस्य खलु भदन्त!

में कहे हुए समुद्घात का स्वरूप सूत्रकार निरूपित करते हैं–(कइणं भंते समुग्घाया) इत्यादि।

सूत्रार्थ–(कइणं भंते समुग्घाया पण्णत्ता) हे भदन्त! समुद्घात कितने प्रकारके हैं?। (गोयमा) हे गौतम! (सत्त समुग्घाया पण्णत्ता) समुद्घात सात प्रकारसे कहे गये हैं। (तं जहा) जो इस प्रकार से हैं (वेयणासमुग्घाए) वेदना समुद्घात, (एवं समुग्घायपदं छाउमत्थियसमुग्घायवज्जं भाणियव्व) इस तरह समुद्घात पद जानना चाहिये। परंतु इसमें आए हुए छाद्मस्थिक–छद्मस्थ सम्बन्धी समुद्घात नहीं कहना चाहिये। (जाव वेमाणियाणं कसायसमुग्घाया अप्पा बहुयं) इस तरह यावत् वैमानिक तक जानना चाहिये। कषायसमुद्घात तथा अल्पबहुत्व कहना

સમુદ્ઘાતપૂર્વક અને (૨) મારણાતિક સમુદ્ઘાત વગર, તેથી દ્વારગાથામાં કહેલા સમુદ્ઘાતનુ સૂત્રકાર નિરૂપણ કરે છે—"कइण भंते! समुग्घाया" ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—(कइणं भंते! समुग्घाया पण्णत्ता?) હે ભગવન્ સમુદ્ઘાત કેટલા પ્રકારના છે? (गोयमा!) હે ગૌતમ! (सत्तसमुग्घाया पण्णत्ता) સમુદ્ઘાત સાત પ્રકારના કહ્યા છે (तजहा) તે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે (वेयणा समुग्घाए) વેદના સમુદ્ઘાત (एव समुग्घायपद छाउमत्थियसमुग्घयवज्ज भाणियव्व) આદિના ભેદથી જે પ્રમાણે પ્રજ્ઞાપના સૂત્રમા દર્શાવ્યા છે તે પ્રમાણે સાત સમુદ્ઘાત સમજવા પણ તેમા આવતા છાદ્મસ્થિક સમુદ્ઘાતનો અહીં સમાવેશ કરવો જોઇએ નહી (जाव वेमाणियाण कसायसमुग्घाया अप्पाबहुय) એજ પ્રમાણે વૈમાનિક પર્યન્ત જાણવુ કષાય સમુદ્ઘાત તથા અલ્પ બહુત્વ કહેવું.

भावितात्मनः केवलिसमुद्‌घातः यावत् शाश्वतम् अनागताद्धा कालं तिष्ठंति समुद्‌घातपदं नेतव्यम् ॥

टीका-'कइ णं भंते ! समुग्घाया पन्नत्ता' कति खलु भदन्त ! समुद्‌घाताः प्रज्ञप्ताः तत्र हनूधातोः समुत्पूर्वकात् क्तप्रत्यये कृते सति समुद्घात इतिपदं सिध्यति हन् धातोर्हनन मितिरूपं भवति तत्र हननं निर्गरणम् समुपसर्गस्य एकीभावोऽर्थः 'उत्' इत्युपसर्गस्य प्राबल्यमर्थः तथा चैकीभावेन प्राबल्येन च घातोनिर्गरणं समुद्घातः अथैकीभावः केन सह कस्यात्र विवक्षित ? इतिचेदुच्यते यदा खलु आत्मा वेदनादिसमुद्‌घातगतो भवति तदा वेदनादि विषयकानुभवज्ञानाकारेण परिणतो भवतीतिवेदनाद्यनुभवज्ञानेन सहात्मन एकीभावो भवति। अयाय भावः भाव-

(अणगारस्स णं भंते ! भावियअप्पणो केवलिसमुग्घाए जाव सासयं अणागयद्धं कालं चिट्ठंति ?) हे भदन्त ! भावितात्मा अनगार के केवलिसमुद्‌घात होता है। यावत् वे सिद्ध शाश्वत अनागताद्धाकालतक रहते हैं क्या ? (समुग्घायपदं नेयव्वं) समुद्‌घात पद जानना चाहिये ॥

टीकार्थ—(कइणं भंते ! समुग्घाया पण्णत्ता) हे भदन्त ! समुद्‌घात कितने प्रकार के कहे गये हैं ? एकीभाव से प्रबलतापूर्वक हनन करना याने आत्मप्रदेशों का बाहार निकालना समुद्‌घात कहलाता है।

शंका—आपने जो समुद्‌घात का ऐसा शब्दार्थ किया है—सो यह एकी भाव किसका किसके साथ यहां विवक्षित हुआ है ? उत्तर—जब आत्मा वेदना आदि समुद्‌घातवाला होता है उस समय वह वेदनादि के विषय करने वाला अनुभवरूप ज्ञानके आकारसे परिणत हो जाता है। तात्पर्य-इस कथन

(अणगारस्स णं भंते ! भावियप्पणो केवलिसमुग्घाए जाव सासयं अणागयद्धं कालं चिट्ठंति ?) हे भदन्त ! भावितात्मा अणगारने केवलि समुद्घात થાય છે? (ત્યાંથી શરૂ કરીને) તે સિદ્ધ શાશ્વત, અનાગતાદ્ધાકાલ સુધી રહે છે ? (પર્યન્તનું કથન ગ્રહણ કરવું) (समुग्घायपदं नेयव्वं) આ પ્રશ્નનો જવાબ પ્રજ્ઞાપનાસૂત્રના સમુદ્‌ઘાત પદમાં દર્શાવ્યા પ્રમાણે સમજવો.

ટીકાર્થ—"कइणं भंते ! समुग्घाया पणत्ता ?" હે ભદન્ત ! સમુદ્‌ઘાત કેટલા પ્રકારના કહ્યા છે ? એકજ ભાવથી પ્રબળતાપૂર્વક ઘાત નિર્ગરણ કરવું તેનું નામ સમુદ્‌ઘાત છે.

શંકા—આપ સમુદ્‌ઘાતનો અર્થ સમજાવતા જે એક જ ભાવની વાત કરો છો તે કોનો કોની સાથેનો એકજ ભાવ અહીં સમજવો ?

ઉત્તર— જ્યારે આત્મા વેદના આદિ સમુદ્‌ઘાત વાળો થાય છે ત્યારે તે વેદનાદિને વિષય કરનાર અનુભવ રૂપ જ્ઞાનના આકારે પરિણમે છે કહેવાનું

ल्येन कथं भवतीतिचेदत्र कथ्यते यस्मात्कारणात् वेदनादिसमुद्घाते परिणत आत्मा बहून् वेदनीयादिकर्मप्रदेशान् कालान्तरेऽनुभवयोग्यान् उदीरणाकरणेनाकृष्योदये प्रक्षिप्य अनुभूयच निर्जरयति आत्मप्रदेशैः सह श्लिष्टान् शातयति ततः प्राबल्येन घातइति कथ्यते भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि "गोयमा" हे गौतम!

का यह है कि जिस प्रकार घट को जानने वाला आत्मा घट को जानते समय ताद्विषयक ज्ञान केआकारसे परिणत हो जाता है-तभी वह घट को जानता है-इसी प्रकार वेदना आदि समुद्घात करने वाला आत्मा भी जब तक वेदना आदि समुद्घात को विषय करनेवाले ज्ञान से युक्त नहीं होगा, तबतक वह वेदनादि समुद्घात को नहीं जान सकेगा, अतः जब वह उन्हें जानेगा तो यह बात निश्चित है कि वह तद्विषयक ज्ञान के आकार में परिणत हो गया है। तभी वह उन्हें जान सका है। इस तरह से जो वेदनाआदि के अनुभव-ज्ञान केसाथ आत्मा का तदा कारस्प से परिणमन होता है वही आत्मा और वेदना आदि अनुभव ज्ञान का एकीभाव है। तात्पर्य कहने का यही है कि जिस समुद्घात में आत्मा की प्रवृत्ति हो रही हो उसके अनुभव ज्ञान के साथ वह आत्मा एकमेक होकर उन संबधी कर्मों को आत्मप्रदेशोंसे बहार निकालना यही समुद्घात का शब्दार्थ है। और जब आत्मा वेदना आदि समुद्घात के रूप में परिणत हो जाता है-तब वह वेदनीय आदि कर्म के प्रदेशों को कि जो कालान्तर में अनुभव करनेके योग्य हों उन्हें उदीरणा के द्वारा खींचकर उदय में लाता है-उदय में

તાત્પર્ય એ છે કે જેમ ઘટ (ઘડો) ને જાણનારો આત્મા ઘડાને જાણતી વખતે તે ઘટને જાણે છે- એજ પ્રમાણે વેદના આદિ સમુદ્ઘાત કરનારો આત્મા પણ જ્યાં સુધી વેદના આદિ સમુદ્ઘાત વિષયક જ્ઞાન વાળો નહીં થાય, ત્યા સુધી તે વેદનાદિ સમુદ્ઘાતને જાણી શકશે નહીં જો તે તેને જાણશે તો તે વાત નિશ્ચિત છે કે તે તેના વિષેના જ્ઞાનના આકારમા પરિણત થઇ ગયો છે. ત્યારે જ તે તેને જાણી શકે છે એજ પ્રમાણે વેદના આદિના અનુભવ-જ્ઞાનની સાથે આત્માનું જે તદાકાર રૂપે પરિણમન થાય છે તેને જ આત્મા અને વેદના આદિ અનુભવ જ્ઞાનનો એકીભાવ કહે છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે જે સમુદ્ઘાતમા આત્મા એકમેક થઇને તેની સાથે સંબંધ રાખનારા કર્મોને આત્મપ્રદેશોથી અલગ કરે છે, એનુ નામજ સમુદ્ઘાતછે-એજ સમુદ્ઘાતનો શબ્દાર્થ છે, અને જ્યારે આત્મા વેદના આદિ સમુદ્ઘાતરૂપે પરિણમે છે ત્યારે તે કાલાન્તરે અનુભવવાને યોગ્ય કર્મપ્રદેશોને ઉદીરણા દ્વારા ખેંચીને

'सत्तसमुग्घाया पन्नत्ता' सप्तसमुद्घाताः प्रज्ञप्ता 'तंजहा' तद्यथा 'वेदना समुग्घाए' वेदनासमुद्घातः एते च वेदना समुद्घातादयः यथा प्रज्ञापनासूत्रे कथितास्तथैव इहापि ज्ञातव्या इत्याशयेनाह 'एवं' इत्यादि "एवं समुग्घायपयं छाउमत्थियसमुग्घायवज्जं भाणियव्वं' एवं समुद्घातपदं छाद्मस्थिकसमुद्घातवर्जं भणितव्यम् 'छाउ

लाकर उनका वेदन करता है-फिर उनकी निर्जरा करता है। अर्थात्-आत्मप्रदेशों के साथसंश्लिष्ट हुए उन वेदनीय आदि कर्म प्रदेशों की यह आत्मा परिशाटना करता है, यही प्रबलता पूर्वक घात है। तात्पर्य यह है कि जो वेदनीय आदि कर्मों के प्रदेश कालान्तर में उदय आने केयोग्य थे उन्हें वेदनीयादि समुद्घातवाला हुआ आत्मा उदीरणा करणरूप प्रबलता-के बल से उदय में लाकर खपा देता-दूर कर देता है-सो इस प्रकार से यह खपा देना-दूर करना ही प्रबलता पूर्वक घात है। इस तरह समुद्घात का अर्थ स्पष्ट करके भगवान गौतम स्वामी के प्रश्न का उत्तर देते हुए कहते हैं कि—(गोयमा) हे गौतम! (सत्त समुग्घायापन्नत्ता) ये समुद्घात सात कहे गये हैं। ये वेदना समुद्घात आदि के भेद से सात हो जाते हैं। और जिस प्रकार से ये प्रज्ञापना सूत्र में कहे गये हैं उसी प्रकार से यहां पर भी जानना चाहिये, इसी आशय से सूत्रकार ने (एवं समुग्घायपयं छाउमत्थियं समुग्घायवज्जं भाणियव्वं) ऐसा कहा है (छाद्मस्थिक समुद्घातको छोडकर) इसका

ઉદયમાં લાવે છે-ઉદયમાં લાવીને તેમનું વેદન કરે છે અને ત્યાર બાદ તેની નિર્જરા કરે છે એટલે કે આત્મપ્રદેશોની સાથે સંશ્લિષ્ટ (લાગેલાં) તે વેદનીય આદિ કર્મ પ્રદેશોની તે આત્મા પરિશાટના કરે છે, એનું નામ જ પ્રબળતા પૂર્વક ઘાત (નિર્જરણ) -છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે વેદનીય આદિ કર્મના જે પ્રદેશો કાળાન્તરે ઉદયમાં આવવા યોગ્ય હતા તેમને વેદનીય આદિ સમુદ્ઘાત યુક્ત થયેલો આત્મા ઉદીરણાકરણ રૂપ પ્રબળતા દ્વારા ઉદયમાં લાવીને ખપાવી નાખે છે-દૂર કરી નાખે છે- એ પ્રમાણે તેને દૂર કરવાની અથવા ખપાવવાની ક્રિયાને જ "પ્રબળતા પૂર્વક ઘાત" કરે છે

આ પ્રમાણે સમુદ્ઘાતનો અર્થ સ્પષ્ટ કરીને હવે સૂત્રકાર ગૌતમસ્વામીના પ્રશ્નોનો ભગવાન મહાવીરે જે ઉત્તર આપ્યો તે સમજાવે છે (गोयमा!) હે ગૌતમ! (सत्तसमुग्घाया पण्णत्ता) સમુદ્ઘાત સાત કહ્યા છે વેદના સમુદ્ઘાત આદિના ભેદથી તેના સાત પ્રકાર પડે છે તેનું પ્રજ્ઞાપનાસૂત્રમાં જે વર્ણન કર્યું છે તે અહીં ગ્રહણ કરવાનું છે એમ સમજાવવા માટે સૂત્રકારે કહ્યું છે કે (एवं समुग्घायपयं छाउमत्थियसमुग्घायवज्जं भाणियव्वं) છાદ્મસ્થિક સમુદ્ઘાતને

मस्थिय समुग्धायवज्जं ' इति यथा ' कइणं भंते ! छाउमत्थिअसमुदघायापन्नत्ता ' इत्यादि प्रकरणमत्र न वाच्यम् तेषां पटकत्वात्, अत्रतु सप्तसमुद्घातानां प्रकरण मिति। " समुग्धायपयं " इतिप्रज्ञापनायाः पट्त्रिंशत्तमं समुद्घातपदमिहनेतव्यम् तच्चेत्थम् ' कइणं भन्ते ! समुग्धाया पण्णत्ता ' ' गोयमा ! सत्त समुग्धा पण्णत्ता ' " ते जहा " " वेयणा समुग्धाए इत्यादि समुद्घातविपये भवति इयं गाथा–

" वेयणकसायमरणे वेउव्वियतेउए आहारे ॥
केवलिए चेवभवे, जीवमणुस्साणसत्तेव " ॥

तात्पर्य इस प्रकार से है–(कइणं भंते ! छाउमत्थिय समुग्धाया पन्नत्ता) हे भदन्त ! छाद्मस्थिक समुद्घात कितने कहेगये हैं ? सो इस प्रकरणको यहां छोड देना–अर्थात्–यह प्रकरण यहां ग्रहण नहीं करना चाहिये, क्यों कि छाद्मस्थिक समुद्घात छह होते हैं और यहां प्रकरण चल रहा है सात समुद्घातका सो प्रज्ञापना सूत्र में जो सात समुद्घात का प्रकरण आया है उसे ही यहां समुद्घात प्रकरण समझनेके लिये ग्रहण करना चाहिये, छह समुद्घात का वर्णन करनेवाला प्रकरण यहां ग्रहण नहीं करना चाहिये । शेष सब ग्रहण कर लेना चाहिये । (समुग्घायपयं) यह प्रज्ञापना का छत्तीसवां पद है इसमें समुद्घात संबंधी विवेचन हुआ है सो इस पद को यहां लेना चाहिये, यह पद इस प्रकार से है (कइणं भंते । समुद्घाया पण्णत्ता गोयमा सत्त समुद्घाया पण्णत्ता, ते जहा वेयणा समुद्घाए, कसायसमुद्घाए) इत्यादि । समुद्घातके विषयमें यह गाथा भी है–

છોડીને આ કથનનુ તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે—(कइणं भंते ! छाउमत्थिय समुग्घाया पन्नत्ता ?) હે ભદન્ત ! છાદ્મસ્થિક સમુદ્ઘાત કેટલા છે ? તો તેને લગતા પ્રકરણને અહીં છોડી દેવાનુ છે–તે પ્રકરણ અહી ગ્રહણ કરવાનું નથી, કારણ કે છાદ્મસ્થિક સમુદ્ઘાત છ હોય છે અને અહીં સાત સમુદ્ઘાતોનું પ્રકરણ ચાલી રહ્યુ છે પ્રજ્ઞાપના સૂત્રમા સાત સમુદ્ઘાતોનુ જે પ્રકરણ છે તે પ્રકરણ જ અહી સમુદ્ઘાત પદથી ગ્રહણ કરવાનું છે, છ સમુદ્ઘાતોનું વર્ણન કરનાર પ્રકરણ અહી ગ્રહણ કરવાનુ નથી કારણ કે સમુદ્ઘાત તો સાત છે. (समुग्घायपय) તે પ્રજ્ઞાપના સૂત્રનું છત્રીસમુ પદ છે તેમા સમુદ્ઘાતોનું વર્ણન કર્યું છે તો તે છત્રીસમુ પદ અહી ગ્રહણ કરવાનું છે. તે પદ આ પ્રમાણે છે (कइण भंते ! समुग्घाया पण्णत्ता ! गोयमा ! सत्तसमुग्घाया पण्णत्ता, तं जहा– वेयणासमुग्घाए, कसायसमुग्घाए) ઇત્યાદિ ! સમુદ્ઘાત વિષે આ ગાથા પણ છે

छाया—वेदनाकषायमरणे वैक्रियतैजसे चाहारकः।
केवलिकश्चैव भवेत् जीवमनुष्याणां सप्तैव ॥

तत्र जीवपदे मनुष्यपदे च सप्तापि समुद्घाताः। भवन्ति नारकादिषु यथायोग्यं विज्ञेयाः। तत्र वेदनासमुद्घातेन समवहत आत्मा वेदनीयकर्मपुद्गलानां शातनं विनाशं करोति ।१। कषायसमुद्घातेन समवहत आत्मा कषायपुद्गलानां शातनं करोति ।२। मारणान्तिकसमुद्घातेन समवहत आत्मा आयुष्कर्मपुद्गलानां शातनं करोति ।३। वैक्रियसमुद्घातेन समवहत आत्मा स्वप्रदेशान् शरीराद् बहिर्निष्कास्य शरीरविष्कम्भबाहल्यमात्रम्, आयामतश्च संख्येययोजनपरिमितं दण्डं निसृजति निसृज्य

"वेयणकसायमरणे, वेउव्विय तेयए य आहारे।
केवलिए चेव भवे, जीवमणुस्साण सत्तेव ॥ १ ॥

इस गाथा के अनुसार जीव पद और मनुष्यपद में ये सात समुद्घात होते हैं। नारक आदि जीवों में तो इन सातों में से यथायोग्य समुद्घात ही होते हैं। सात नहीं होते हैं।

वेदना समुद्घात वाला जीव वेदनीय कर्म के पुद्गलों का नाश करता है १। कषाय समुद्घातवाला जीव कषायक पुद्गलों का नाश करता है २। मारणान्तिक समुद्घात से युक्त हुआ आत्मा आयुष्क कर्म के पुद्गलों का नाश करता है ३। वैक्रियसमुद्घात से युक्त हुआ जीव अपने आत्मप्रदेशों को शरीर से बाहर निकाल कर उनका एक मोटा संख्यात योजनतक लंबा दंड बनाता है, इस दंड की चौड़ाई दंड बनाने वाले व्यक्ति के शरीर के जितनी ही होती है। दंड करने के बाद वह आत्मा यथास्थूल वैक्रियशरीर नाम कर्म के पुद्गलों को कि जिन्हें इसने पहिलेसे

वेयण कसाय मरणं वेउव्वियतेजसमाहार ॥
केवलिय चेव भवे, जीवमणुस्साण सत्तेव ॥ १ ॥

આ ગાથાની વ્યાખ્યા પ્રમાણે જીવપદ અને મનુષ્યપદમાં સાત સમુદ્ઘાત હોય છે નારકાદિ જીવોમાં તો તે સાતમાંથી યોગ્યતા અનુસાર સમુદ્ઘાતો જ થાય છે, સાતે સમુદ્ઘાત થતા નથી, વેદના સમુદ્ઘાતવાળો જીવ વેદનીય કર્મોના પુદ્ગલોનો નાશ કરે છે કષાય સમુદ્ઘાત વાળો જીવ કષાયના પુદ્ગલોનો નાશ કરે છે મારણાન્તિક સમુદ્ઘાત વાળો જીવ આયુષ્કકર્મના પુદ્ગલોનો નાશ કરે છે વૈક્રિય-સમુદ્ઘાત વાળો જીવ પોતાના આત્મપ્રદેશોને શરીરની બહાર કાઢીને તેનો મોટો જાડો, સંખ્યાત યોજન પ્રમાણ લાંબો દંડ બનાવે છે, તે દંડની પહોળાઈ તે દંડ બનાવનાર વ્યક્તિના શરીર જેટલી જ હોય છે દંડ બનાવ્યા પછી તે આત્મા યથાસ્થૂલ વૈક્રિય શરીર નામ કર્મના પુદ્ગલો કે જેમને તેણે

च यथास्थूलान् वैक्रियशरीरनामकर्मपुद्गलान् प्राग्बद्धान् शातयति = विनाशयति, यथा सूक्ष्मांश्चादत्ते ।

"वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहन्नइ संखेज्जाइंजोयणाइं दंडं निसिरइ अहावायरे-पोग्गले परिसाडेइ अहासुहुमे पोग्गले आइन्ति"

वैक्रियसमुद्घातेन समवहंति. संख्येयानि योजनानि दण्डं निसृजति यथा वादरान् पुद्गलान् परिशातयति यथा सूक्ष्मान् पुद्गलानाददातीति । छाया--

एवं तैजसाहारकसमुद्घातावपि व्याख्येयौ केवलिसमुद्घातेन समवहतः केवलि वेदनीयादिकर्म पुद्गलान् शातयति इति ।

एतेषु सर्वेषु समुद्घातेषु शरीरात् जीवप्रदेशानां वहिर्निर्गमनं भवति. सर्वे चैते-समुद्घाता अन्तर्मुहूर्त्तमाना भवन्ति । केवलं केवलिसमुद्घातोऽष्टसामयिकः। एते च

बांध रक्खा है नष्ट करता है और उनके नष्ट करनेके बाद वह आत्मा यथासूक्ष्म वैक्रियशरीरनामकर्मके पुद्गलोंको ग्रहण करता है । कहा भी है ।

"वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहन्नइ, संखेज्जाइं जोयणाइं दंडं निसिरइ, अहाबायरे पोग्गले परिसाडेइ, अहासुहुमे पोग्गले आइयंति" जीव वैक्रियसमुद्घात करता है। इस समुद्घात में वह संख्यात योजनतक अपने आत्मप्रदेशों को दण्डाकार रूप में लंबा करता है, यथा बादर पुद्गलों की वह परिशाटना करता है और यथासूक्ष्म पुद्गलों को वह ग्रहण करता है। इसी तरह से तैजस समुद्घात और आहारक समुद्घात इन दो समुद्घातों को भी जानना चाहिये।

इन समस्त समुद्घातों में शरीर से जीव के प्रदेशों का बाहर निकलना होता है । इन सब समुद्घातों का काल अन्तर्मुहूर्त का होता है।

પહેલેથી બાંધી રાખ્યાં હોય છે, તેમને નષ્ટ કરે છે અને તેમનો નાશ કર્યા પછી તે આત્મા યથાસૂક્ષ્મ વૈક્રિય શરીર નામકર્મના પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરે છે. કહ્યુ પણ છે- (वेउव्वय समुग्घाएणं समोहन्नइ, सखेज्जाइ जोयणाइ दंडं निसिरइ, अहावायरे पोगले परिसाडेइ अहासुहुमे पागले आइयंति) જીવ વૈક્રિય સમુદ્ઘાત કરે છે તે સમુદ્ઘાતમાં તે પોતાના આત્મપ્રદેશોને દડાકારે સંખ્યાત યોજન સુધી લંબાવે છે, યથા બાદર પુદ્ગલોની તે પરિશાટના કરે છે અને યથાસૂક્ષ્મ પુદ્ગલોને તે ગ્રહણ કરે છે એજ પ્રમાણે તૈજસ સમુદ્ઘાત અને આહારક સમુદ્ઘાત વિષે પણ સમજવું તે બધા સમુદ્ઘાતોમા આત્મપ્રદેશોનું શરીરમાંથી બહાર નિર્ગમન (નીકળવાની ક્રિયા) થાય છે તે બધા સમુદ્ઘાતોનો સમય અન્તર્મુહૂર્તનો હોય છે. ફક્ત કેવલિ ---નો કાળ આઠ સમયનો કહ્યો છે.

समुद्घाता एकेन्द्रिय विकलेन्द्रियाणा माद्यास्त्रय एव भवन्ति । वायुनारकाणां चत्वारः समुद्घाताः । देवानां पञ्चेन्द्रियतिरश्चां च पञ्च । मनुष्याणां तु सप्त समुद्घाता भवन्तीति । एकेन्द्रियादारभ्य मनुष्यपर्यन्त समुद्घातेषु अल्पत्वबहुत्वं विदर्शयितुमाह 'जाव इत्यादि " जाव वेमाणियाणं ' यावत् वैमानिकानाम् एकेन्द्रियादारम्य वैमानिकपर्यन्तं समुद्घातप्रकरण प्रज्ञापनातो विज्ञेयमिति "कसायसमुग्घाया अप्पाबहुयं " कषायसमुद्घाताः अल्पबहुत्वं च वक्तव्यम् । सप्तसमुद्घाता भवन्ति । तत्र वेदनासमुद्घात पूर्वं कथितः, अन्ये च षट् कषायसमुद्घा-

सिर्फ एक केवलि समुद्घात ही ऐसा है कि जिस का काल आठ समय का कहा गया है । एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय जीवों के आदि के तीन अर्थात्–वेदनीय , कषाय और मारणान्तिक समुद्घात होते हैं । वायु कायिक जीवों के और नारक जीवों के आदिके चार अर्थात्–पूर्वोक्त तीन और चौथा वैक्रिय समुद्घात होते हैं । देव और पंचेन्द्रिय तिर्यंच इन के पांच अर्थात् पूर्वोक्त चार और पांचवा तैजस समुद्घात होते है । मनुष्यों के सातों ही समुद्घात होते है ।

एकेन्द्रिय से लेकर मनुष्यपर्यन्त जो समुद्घात कहे गये है उनमें सूत्रकार अल्पबहुत्व कहने के लिये (जाव वेमाणियाण) ऐसा कहते हैं- इसका तात्पर्य यह है कि एकेन्द्रियसे लेकर वैमानिक देवों तक समुद्घात का प्रकरण प्रज्ञापना सूत्र में कहा गया है सो वहांसे यह प्रकरण जान लेना चाहिये । ' कसायसमुग्घाया अप्पाबहुयं ' कषाय समुद्घात तथा अल्प बहुत्व कहना चाहिये समुद्घात सात होते हैं । इनमें वेदना

એકેન્દ્રિય અને વિકલેન્દ્રિય જીવો શરૂઆતના ત્રણ-એટલે કે વેદનીય, કષાય અને મારણાન્તિક-સમુદ્ઘાત કરે છે વાયુકાયિક જીવો તથા નારક જીવો શરૂઆતના ચાર સમુદ્ઘાત કરે છે-એટલે કે પૂર્વોક્ત ત્રણ સમુદ્ઘાત અને ચોથો વૈક્રિયસમુદ્ઘાત કરે છે દેવ અને પંચેન્દ્રિય તિર્યંચ શરૂઆતના પાંચ-પૂર્વોક્ત ચાર અને તૈજસ-સમુદ્ઘાત કરે છે મનુષ્યો સાતે સાત સમુદ્ઘાત કરે છે

એકેન્દ્રિયથી લઈને મનુષ્ય પર્યન્તના જે સમુદ્ઘાતો કહ્યા છે તેમાં અલ્પ બહુત્વ બતાવવા માટે સૂત્રકાર કહે છે-(जाव वेमाणियाण) તેનું તાત્પર્ય એ છે કે એકેન્દ્રિયથી લઈનેવૈમાનિક દેવો સુધીના જીવનું સમુદ્ઘાતનું પ્રકરણ પ્રજ્ઞાપના સૂત્રમાં આપેલું છે તો અહીં તે પ્રકરણમાં આપ્યા પ્રમાણે કથન સમજવું (कसाय समुग्घाया अप्पाबहुय) કષાય સમુદ્ઘાત તથા અલ્પબહુત્વ કહેવુ જોઈએ. સમુદ્ઘાત સાત છે તેમાંથી વેદના સમુદ્ઘાતના વિષયમાં આગળ

तमारणान्तिकसमुद्घात-वैक्रियसमुद्घात-तैजससमुद्घाताहारकसमुद्घातकेवलिसमुद्घातभेदात्. अत्र प्रज्ञापनासूत्रे षट्त्रिंशत्तमं चरमं समुद्घातपदं ज्ञातव्यं केवलं छाद्मस्थिकसमुदघातो नाध्येतव्यः अनेनैव प्रकारेण यावद्वैमानिकानां वैमानिक पर्यन्तं ज्ञातव्यम् तथा अल्पबहुत्वश्चापि तत्रत्यमेव विज्ञेयमिति समुदितार्थ इति.

गौतमः पुनः पृच्छतिः 'अणगारस्स इत्यादि " अणगारस्स णं भंते ! भाविययप्पणो ' अनगारस्य खलु भदन्त ! भावितात्मनः " केवलिसमुग्घाए " केवलि समुद्घातो भवति। अस्य वर्णनं केवलिसमुद्घातगतं प्रज्ञापनासूत्रस्य षट्त्रिंशत्तमसमुद्घातपदोक्तं सर्वं संग्राह्यम् किंपत्पर्यन्तमित्याह ' जाव' इति=यावत्-तथाहि-

समुद्घात पहिले कहा गया हैं) अन्य और छह (कषायसमुद्घात, मारणान्तिक समुद्घात, वैक्रियसमुद्घात तैजस्स-समुद्घात आहारकसमुद्घात और केवलिसमुद्घात) ये समुद्घात हैं । प्रज्ञापना - सूत्र में अन्तिम छत्तीसवां समुद्घात पद हैं-सो केवल छद्मास्थिक समुद्घात यहां नहीं लेना चाहिये । इसी तरह से वैमानिक पर्यन्त जानना चाहिये । तथा अल्प बहुत्व भी प्रज्ञापना सूत्र से ही जान लेना चाहिये । गौतम स्वामी भगवानसे पुनः पूछते हैं कि (अणगारस्स णं भंते भावियप्पणो केवलिसमुग्घाए) हे भदन्त ! भावितात्मा अनगार के केवलि समुद्घात होता हैं । इसका वर्णन केवलि समुद्घात प्रकरणगत प्रज्ञापना सूत्र के छत्तीसवें समुद्घात पदमें किया गया हैं । सो वह सब वर्णन यहां ग्रहण कर लेना चाहिये । यह वर्णन कहां तक का ग्रहण करना चाहिये इसके लिये कहा गया है कि (जाव) तात्पर्य यह है कि (तत्थसिद्धो भवइ-तेणं तत्थ सिद्धा भवंति, असरीरा जीवघणा णाणदं

કહેવામા આવ્યુ છે. બાકીના છ સમુદ્ઘાત નીચે પ્રમાણે છે-કષાય સમુદ્ઘાત, મારણાન્તિક સમુદ્ઘાત, વૈક્રિયસમુદ્ઘાત, તૈજસસમુદ્ઘાત, આહારકસમુદ્ઘાત અને કેવલિસમુદ્ઘાત. પ્રજ્ઞાપના સૂત્રમાં છેલ્લુ સમુદ્ઘાતપદ છે-પણ છાદ્મસ્થિકસમુદ્ઘાત અહીં ગ્રહણ કરવાનો નથી એજ પ્રમાણે વૈમાનિક પર્યન્ત સમજી લેવું, તથા અલ્પબહુત્વ પણ પ્રજ્ઞાપનાસૂત્રમાથી જાણી લેવુ ગૌતમસ્વામી મહાવીર પ્રભુને પૂછે છે (अणगारस्स णं भंते! भावियप्पणो केवलिसमुग्घाए) હે ભદન્ત ! ભાવિતાત્મા અણગારને કેવલિ સમુદ્ઘાત થાય છે ? તેનુ વર્ણન કેવલિસમુદ્ઘાત પ્રકરણમા પ્રજ્ઞાપના સૂત્રના છત્રીસમા સમુદ્ઘાત પદમાં કર્યુ છે તો તે સમસ્ત વર્ણન અહી ગ્રહણ કરવુ, જોઈએ તે વર્ણન કયા સુધી ગ્રહણ કરવુ જોઈએ તે બતાવવા માટે કહેવામા આવ્યુ છે કે (तत्थसिद्धो भवइ-तेण तत्थ सिद्धा भवति

"तत्यसिद्धो भवइ तेण तस्य सिद्धा भवति असरीराजीवघणादंसणणाणोवउ णिट्ठियट्ठाणीरया णिरेयणा वितिमिरा विसुद्धा ' इति समाप्य ' सासय मणागय कालं चिट्ठंति ' इत्यनेन सयोजनीयम् । ते सिद्धाःशाश्वताऽनागताद्धा कालपर्यं तम तिष्ठन्ति इति भावः ।

प्रज्ञापनासूत्रस्य षट्त्रिंशत्तमसमुद्घातविषयस्य सविस्तरं विवेचनं कृत तत्ि संक्षेपेण प्रदर्श्यते—" इह सप्तसमुद्घाता तथाहि वेदनाकषायमरणवैक्रिय तैज साहारककेवलिसमुद्घातभेदात् ।

वेदनासमुद्घातः असद्वेद्यकर्माश्रयः१। कषायसमुद्घात कषायाख्यचारित्रमोहनी कर्माश्रयः२। मारणान्तिकसमुद्घातोऽन्तर्मुहूर्तशेषायु कर्माश्रयः३। वैक्रियतैजसाहा

सणोवउत्ता णिट्ठियट्ठा, णीरया, णिरेयणा, वितिमिरा विसुद्धा) इ पाठ को लेकर (सासयमणागयद्ध कालं चिट्ठति) इस पाठ के सा जोड लेना चाहिये , इससे यह अर्थ होता है कि वे सिद्ध शाश्व अनागताद्धकाल पर्यन्त रहते हैं ।

प्रज्ञापनासूत्र के छत्तीसवें समुद्घात पद में समुद्घात विषय का विस्ता रपूर्वक विवेचन किया गया है सो यह सक्षेप से यहां प्रकट किया जाता है—यहा समुद्घात सात कहे गये हैं—एक वेदना समुद्घात, दूसरा कषाय समुद्घात, तीसरा मरण समुद्घात, चतुर्थ वैक्रिय समुद्घात, पांचवां तेजस समुद्घात, छट्ठा आहारकसमुद्घात और सातवां केवलिसमुद्घात।

इनमें जो वेदनासमुद्घात है वह असातावेदनीय कर्म के आश्रय को लेकर होता है १ । कषायसमुद्घात कषायनामक चारित्र मोहनीय कर्म के आश्रय को लेकर होता है २ । मरणान्तिकसमुद्घात अंतर्मुहूर्त

અસરીરાજીવઘણા णाणदसणोवउत्ता णिट्ठियट्ठा, णिरया णिरेयणा वितिमिरा विसुद्धा) આ પાઠથી લઈને (सासयमणागयद्धं कालं चिट्ठति) આ પાઠની સાથે જોડી દેવુ જોઈએ. તેથી એવો અર્થ થાય છે કે તેઓ સિદ્ધ શાશ્વત અનાગતાદ્ધાકાલ પર્યન્ત રહે છે

પ્રજ્ઞાપનાસૂત્રના છત્રીસમાં સમુદ્ઘાત પદમાં સમુદ્ઘાતો વિષે વર્ણન વિસ્તારથી કરવામા આવ્યુ છે તો તેનુ અહી સંક્ષિપ્ત વર્ણન કરવામાં આવે છે અહી સમુદ્ઘાત સાત કહ્યા છે (૧) વેદના સમુદ્ઘાત, (૨) કષાયસમુદ્ઘાત (૩) મરણસમુદ્ઘાત, (૪) વૈક્રિયસમુદ્ઘાત (૫) તૈજસ સમુદ્ઘાત, આહારક સમુદ્ઘાત અને (૭) કેવલિ સમુદ્ઘાત

(૧) વેદના સમુદ્ઘાત અસાતાવેદનીય કર્મનો આધાર લઈને થાય છે (૨) કષાય સમુદ્ઘાત કષાય નામના ચારિત્ર મોહનીય કર્મને આધારે થાય છે (૩) મારણાન્તિક સમુદ્ઘાત અંતર્મુહૂર્ત પ્રમાણ આયુ બાકી રહે ત્યારે કરાય છે. તેથી

काः समुद्घाताः यथासंख्य वैक्रियशरीरतैजसशरीराहारकशरीरनामकर्माश्रयाः ६। केवलिसमुद्घातः सदसद्वेद्यशुभाशुभनामोच्चनीचैर्गोत्रिकर्माश्रयः७। तत्र वेदनासमुद्घातगतआत्मा असातावेदनीयकर्मपुद्गलानां परिशाटं करोति, तथाहि वेदनापीडितो जीवः स्वप्रदेशात् अनन्तानन्तकर्मस्कन्धवेष्टितान् शरीराद्बहिरपि निक्षिपति। तैश्च प्रदेशैर्वदनजठरादिरंध्राणि कर्मस्कन्धाद्यन्तरालानिचापूर्य्यायामतो विष्कम्भ-

---

प्रमाण आयु शेष रहने पर कियाजाता है अतः यह अन्तर्मुहूर्त शेषायुकर्म के आश्रय को लेकर किया जाता है३। वैक्रियसमुद्घात४, तैजसमुद्घात५, आहारकसमुद्घात६ यथाक्रम से वैक्रिय शरीर,तैजसशरीर और आहारक शरीर नामकर्म के आश्रय को लेकर किये जाते हैं। केवलि समुद्घात साता वेदनीय,और असाता वेदनीय शुभनाम अशुभनाम,उच्चगोत्र तथा नीचगोत्र इन तीन अघातिया कर्मों के आश्रय को लेकर किया जाता है ७। तात्पर्य इस कथन का यह है कि वेदना समुद्घात में रहा हुआ आत्मा असाता वेदनीय कर्म के पुद्गलों का नाश करता है-अर्थात्-जब कोई जीव वेदना से अत्यंत पीडित हो रहा हो ऐसी स्थिति में वह अपने आत्मा के प्रदेशों को कि जिनपर अनंतानंत कर्मपुद्गल चिपके रहते हैं अपने शरीर से बाहर निकालता है-उन्हें फैलाता है। वे प्रदेश, मुख, जठर आदि के रन्ध्रों छिन्द्रों को और कर्मस्कन्ध आदि के अंतराल को भरकर, अर्थात्-इन सब के छिन्द्रों में अन्तराल में भरकर-व्याप्त हो कर-आयाम और विष्कंभ की अपेक्षा शरीरमात्रक्षेत्र में व्याप्त हो जाते

તે અનતર્મુહૂર્તશેષ આયુકર્મને આધારે કરાય છે (૪) વૈક્રિય સમુદ્ઘાત, (૫) તૈજસ સમુદ્ઘાત અને (૬) આહારક સમુદ્ઘાત અનુક્રમે વૈક્રિય શરીર તૈજસ શરીર અને આહારક શરીર નામકર્મને આધારે કરાય છે. (૭) કેવલિ સમુદ્ઘાત સાતાવેદનીય અને અસાતાવેદનીય, શુભનામ અને અશુભનામ, ઉચ્ચગોત્ર અને નીચગોત્ર, એ ત્રણ અઘાતિયા કર્મોના આધારે કરાય છે, કહેવાનુ તાત્પર્ય એ છે કે વેદના સમુદ્ઘાતમા રહેલો આત્મા અસાતા વેદનીય કર્મના પુદ્ગલોનો નાશ કરે છે. એટલે કે વેદના સમુદ્ઘાત કરતી વખતે વેદનાથી અત્યત પીડાતો જીવ, જેના પર અનંતાનંત કર્મપુદ્ગલો ચોટી રહેલા હોય છે એવા પોતાના આત્મપ્રદેશોને બહાર કાઢે છે-તેમને ફેલાવે છે તે આત્મપ્રદેશો, મુખ, જઠર આદિના છિદ્રોને અને કર્મસ્કંધ આદિના અંતરાલોને ભરી દઈને એટલે કે તે સૌના છિદ્રોમા અને અંતરાલોમાં વ્યાપીને-લંબાઇ અને પહોળાઇની અપેક્ષાએ શરીરમાત્ર વ્યાપી જાય છે

वक्षशरीरमात्र क्षेत्रमभिव्याप्यान्तर्मुहूर्तं यावदवतिष्ठते। तस्मिन्नन्तर्मुहूर्ते प्रभूतासातावेदनीयकर्मपुद्गलानां परिशाट करोति१। कषायसमुद्घात समवहत आत्मा कषाय नामकचारित्रमोहनीयकर्मपुद्गलानां परिशाट करोति, तथाहि-कषायोदय समाकुलो जीवः स्वप्रदेशान् शरीराद्बहिर्निक्षिपति, तैः प्रदेशैः वदनोदरादिरंध्राणि कर्मस्कन्धायपान्तरालानिचापूर्य्यायामतो विस्तारतश्चदेहमात्रं क्षेत्रमभिव्याप्यावस्थितो भवति तथाभूतश्च प्रभूतान् कषायकर्मपुद्गलान्. परिशाटयति २। एव मरणसमुद्घात गतो जीवः आयु कर्मपुद्गलान् शाटयति विशेषः केवल मरणसमुद्घातगतो विक्षिप्त-

हैं और वहां पर वे एक अन्तमुहूर्तसमय तक ठहरे रहते हैं। इस अन्त मुहूर्त काल में ये प्रभूत असातावेदनीय कर्मपुद्गलों की निर्जरा कर डालता है। इस क्रिया के करने का नाम ही वेदनासमुद्घात है १। कषाय समुद्घात में रहा हुआ आत्मा कषायनामक चारित्रमोहनीय कर्मपुद्गलों का नाश करता है, अर्थात्-जब जीव कषाय के उदय से अत्यन्त आकुल व्याकुल हो उठता है, तब वह अपने प्रदेशों को शरीर से बाहर निकाल कर उन्हें फैलाता है। वह उन प्रदेशों से वदन, उदर आदि के छिन्द्रों को और कर्मस्कंध आदि के अन्तराल को पूर्णकर (भरकर) आयाम और विस्तार की अपेक्षा देहमात्र क्षेत्र को व्याप्त कर ठहरता है। यह इस स्थिति में एक अन्तर्मुहूर्त तक ही रहता है। इतने समय में यह कषायवेदनीय कर्म के पुद्गलों को अपने ऊपर से विखेर देता है-नष्ट कर देता है २। इस तरह मरणसमुद्घात में रहा हुआ आत्मा आयुकर्म के पुद्गलों को नष्ट करता है। अर्थात्-अपने भुज्यमान

અને ત્યાં તેઓ એક અંતર્મુહૂર્ત સમય સુધી રહે છે તે અન્તર્મુહૂર્ત કાળમાં તેઓ ઘણા જ અસાતાવેદનીય કર્મપુદ્ગલોની નિર્જરા કરી નાખે છે આ ક્રિયાનું નામજ વેદના સમુદ્ઘાત છે

કષાય સમુદ્ઘાતમા રહેલો આત્મા કષાય નામના ચારિત્રમોહનીય કર્મ પુદ્ગલોનો નાશ કરે છે એટલે કે જ્યારે કષાયના ઉદયથી જીવ અત્યંત આકુળ-વ્યાકુળ થતો હોય છે, ત્યારે તે પોતાના પ્રદેશોને શરીરની બહાર કાઢીને ફેલાવે છે તે વદન ઉદર આદિના છિદ્રોને તથા કર્મસ્કંધોના અંતરાલોને તે આત્મપ્રદેશોથી ભરી દઈને લંબાઈ અને પહોળાઈની અપેક્ષાએ શરીર પ્રમાણ ક્ષેત્રમાં વ્યાપી જાય છે એ સ્થિતિમાં તે એક અંતર્મુહૂર્તકાળ સુધીજ રહે છે. એટલા કાળમા તે કષાયવેદનીય કર્મના પુદ્ગલોની નિર્જરા કરી નાખે છે

એજ રીતે મરણસમુદ્ઘાતમાં રહેલો આત્મા આયુકર્મના પુદ્ગલોનો નાશ કરે છે એટલે કે તે સમુદ્ઘાત કરતો જીવ પોતે જેટલું આયુષ્ય ભોગવવાનું

काः समुद्घाताः यथासंख्यं वैक्रियशरीरतैजसशरीराहारकशरीरनामकर्माश्रयाः ६। केवलिसमुद्घातः सदसद्वेद्यशुभाशुभनामोच्चनीचैर्गोत्रिकर्माश्रयः७। तत्र वेदनासमुद्घातगतआत्मा असातावेदनीयकर्मपुद्गलानां परिशाटं करोति, तथाहि वेदनापीडितो जीवः स्वप्रदेशात् अनन्तानन्तकर्मस्कन्धवेष्टितान् शरीराद्बहिरपि निक्षिपति। तैश्च प्रदेशैर्वदनजठरादिरन्ध्राणि कर्मस्कन्धाद्यन्तरालानिचापूर्यायामतो विष्कम्भ-

प्रमाण आयु शेष रहने पर कियाजाता है अतःयह अन्तर्मुहूर्त शेषायुकर्म के आश्रय को लेकर किया जाता है३। वैक्रियसमुद्घात४, तैजसमुद्घात५, आहारकसमुद्घात६ यथाक्रम से वैक्रिय शरीर,तैजसशरीर और आहारक शरीर नामकर्म के आश्रय को लेकर किये जाते हैं। केवलि समुद्घात साता वेदनीय,और असाता वेदनीय शुभनाम अशुभनाम,उच्चगोत्र तथा नीचगोत्र इन तीन अघातिया कर्मों के आश्रय को लेकर किया जाता है ७। तात्पर्य इस कथन का यह है कि वेदना समुद्घात में रहा हुआ आत्मा असाता वेदनीय कर्म के पुद्गलों का नाश करता है-अर्थात्-जब कोई जीव वेदना से अत्यंत पीडित हो रहा हो ऐसी स्थिति में वह अपने आत्मा के प्रदेशों को कि जिनपर अनंतानंत कर्मपुद्गल चिपके रहते हैं अपने शरीर से बाहर निकालता है-उन्हें फैलाता है। वे प्रदेश, मुख, जठर आदि के रन्ध्रों छिन्द्रों को और कर्मस्कन्ध आदि के अंतराल को भरकर, अर्थात्-इन सब के छिन्द्रों में अन्तराल में भरकर-व्याप्त हो कर-आयाम और विष्कंभ की अपेक्षा शरीरमात्रक्षेत्र में व्याप्त हो जाते

ते अनतर्मुहूर्तशेष आयुकर्मने आधारे कराय छे (४) वैक्रिय समुद्घात, (५) तैजस समुद्घात अने (६) आहारक समुद्घात अनुक्रमे वैक्रिय शरीर तैजस शरीर अने आहारक शरीर नामकर्मने आधारे कराय छे (७) केवलि समुद्घात सातावेदनीय अने असातावेदनीय, शुभनाम अने अशुभनाम, उच्चगोत्र अने नीचगोत्र, ए त्रण अघातिया कर्मोना आधारे कराय छे, कहेवानुं तात्पर्य ए छे के वेदना समुद्घातमा रहेलो आत्मा असाता वेदनीय कर्मना पुद्गलोनो नाश करे छे एटले के वेदना समुद्घात करती वखते वेदनाथी अत्यत पीडातो जीव, जेना पर अनंतानंत कर्मपुद्गलो चोटी रहेलां होय छे एवा पोताना आत्मप्रदेशोने बहार काढे छे-तेमने फेलावे छे ते आत्मप्रदेशो, मुख, जठर आदिना छिद्रोने अने कर्मस्कध आदिना अतरालोने भरी दईने एटले के ते सौना छिद्रोमा अने अंतरालोमां व्यापीने-लबाइ अने पहोळाइनी अपेक्षाए शरीरमात्र-व्यापी थाय छे

पुद्गलान् पूर्ववदेव शाटयति ४ एवमेव तैजसाहारकसमुद्घातावपि चिन्तनीयौ नवरं तैजससमुद्घातः तेजोलेश्याविनिर्गमनकाले भवति, स च तैजसनामकर्म-पुद्गलशाटने कारणम् ५। आहारसमुद्घातगतस्तु आहारकशरीरनामकर्मपुद्गलान् परिशाटयति ६। केवलिसमुद्घातगतो जीवः सदसद्वेद्यादिकर्मपुद्गलानां परिशाटनं करोति ७। नारकजीवानामाद्याश्चत्वारः समुद्घाता भवन्ति। असुरकुमारादीनां सर्वेषामपि देवानामाद्याः पञ्चसमुद्घाता भवन्ति। वायुकायवर्जितैकेन्द्रियविकलेन्द्रियाणामाद्यास्त्रयः समुद्घाता भवन्ति। वायुकायिकानामाद्यास्त्रयः समुद्घाताः, वैक्रियसमुद्घातसहिताश्चत्वारः समुद्घाता भवन्ति। पंचेन्द्रियतिर्यग्-

शरीर नाम कर्म के पुद्गलों की निर्जरा करता है ४। इसी तरह से तैजस-समुद्घात ५ और आहारकसमुद्घात ६ भी जानना चाहिये परन्तु विशेषता यह है, कि तैजस समुद्घात तेजोलेश्या के विनिर्गम-निकलने के काल में होता है, और इसके बल से जीव तैजस नामकर्म के पुद्गलों का विनाश करता है अतः यह तैजस नामकर्म के विनाश करनेमें कारण होता है ६। आहारक समुद्घातमें रहा हुआ जीव आहारक शरीर नामकर्मके पुद्गलों की परिशातना करता है ७ नारक जीवों के आदि के चार समुद्घात होते हैं असुरकुमार आदि सब देवों के आदि के पांच समुद्घात होते हैं। वायुकायिक को छोडकर एकेन्द्रिय जीवो के और विकलेन्द्रिय जीवों के आदि के तीन समुद्घात होते हैं। वायुकायिक जीवों के पहिले के तीन समुद्घात और चौथा वैक्रिय समुद्घात इस तरह चार समुद्घात होते हैं। पंचेन्द्रियतिर्यंचों के आदि

પ્રમાણે તૈજસ સમુદ્ઘાત અને આહારક સમુદ્ઘાતના વિષયમાં પણ સમજવું પણ તેમાં નીચે પ્રમાણે વિશેષતા છે—તૈજસ સમુદ્ઘાત તેજોલેશ્યા નિકળવાના સમયે થાય છે અને તેના પ્રભાવથી જીવ તૈજસ નામકર્મનાં પુદ્ગલોનો નાશ કરે છે તેથી તે સમુદ્ઘાત તૈજસ નામકર્મના વિનાશમાં કારણ ભૂત બને છે (૬) આહારક સમુદ્ઘાત કરતો જીવ આહારક શરીર—નામકર્મની નિર્જરા કરે છે

નારક જીવો શરૂઆતના ચાર સમુદ્ઘાત કરે છે અસુરકુમાર આદિ ચપળ દેવો શરૂઆતના પાંચ સમુદ્ઘાત કરે છે વાયુકાયિક સિવાયના એકેન્દ્રિય જીવો અને વિકલેન્દ્રિય જીવો શરૂઆતના ત્રણ સમુદ્ઘાત કરે છે. વાયુકાયિક જીવો શરૂઆતના ત્રણ અને ચોથો વૈક્રિય એમ ચાર સમુદ્ઘાત કરે છે પંચેન્દ્રિય તિર્યંચો શરૂઆતના પાંચ સમુદ્ઘાત કરે છે મનુષ્યો સાત

स्वप्रदेशो वदनोदरादिरंध्राणि स्कन्धाद्यपान्तरालानि चापूर्य्य विष्कम्भवाहल्याभ्यां स्वशरीरप्रमाणमायामतः स्वशरीरव्यतिरेकतोजघन्यतोऽङ्गुलासंख्येयभागम् उत्कर्षतोऽसंख्येयानि योजनानि एकदिशि क्षेत्रमभिव्याप्य वर्तते इति ३। वैक्रियसमुद्घातगतो जीवस्तु आत्मप्रदेशान् शरीराद्वहिर्निष्कास्य शरीरविष्कंभवाहल्यमानम् आयामतः संख्येययोजनप्रमाणं दण्डं निसृजति निसृज्य च यथास्थूलान् वैक्रियशरीरनामकर्म-

आयुकर्म को भोगते हुए किसी जीवका आयुकर्म एक अन्तर्मुहूर्त प्रमाण जब बाकी रहता है तब वह अपने आत्म प्रदेशों को शरीर से बाहर निकालता है। बाहर निकाल कर वह वदन, उदर आदि के छिद्रों को और कर्मस्कन्धादिक के अंतराल को उनसे पूरित कर फिर वह अपने शरीर की अपेक्षा कम से कम अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण लंबी और अधिक से अधिक असंख्यातयोजन लंबी ऐसी एक दिशा संबंधी जगह में व्याप्त होकर एक अन्तर्मुहूर्ततक ठहरा रहता है। इतने समय में वह आयुष्य कर्म के अनेक पुद्गलों को नष्ट कर देता है। इसका नाम मरण समुद्घात है ३। वैक्रियसमुद्घात में रहा हुवा जीव वैक्रिय शरीर नाम कर्म के पुद्गलों का नाश करता है, अर्थात्- वैक्रियसमुद्घात वाला जीव अपने आत्मप्रदेशों को शरीर से बाहिर निकाल कर उन्हें शरीर का जितना विष्कंभ और बाहल्य होता है उतने प्रमाण वाले और आयाम की अपेक्षा से संख्यात योजन प्रमाणवाले दण्ड के रूप में बनाता है। बनाकर फिर वह यथास्थूल वैक्रिय

હોય છે તેટલા આયુકર્મને ભોગવતા ભોગવતા જ્યારે એક અંતર્મુહૂર્ત પ્રમાણુ આયુકર્મ બાકી રહે ત્યારે પોતાના આત્મપ્રદેશોને શરીરની બહાર કાઢે છે અને તે આત્મપ્રદેશોથી મુખ, ઉદર આદિના છિદ્રોને, તથા કર્મસ્કન્ધ આદિના અંતરાલોને ભરી દઈ ને પોતાના શરીરની અપેક્ષાએ ઓછામાં ઓછા અંગુલના અસંખ્યાતમાં ભાગ પ્રમાણુ લાંબી અને વધારેમા વધારે અસંખ્યાત યોજન લાંબી એવી એક દિશા સંબંધી જગ્યામા વ્યાપીને એક અંતર્મુહૂર્ત કાળ સુધી તે સ્થિતિ રહે છે એટલા સમયમા તે આયુકર્મના અનેક પુદ્ગલોનો નાશ કરી નાખે છે તે ક્રિયાનું નામ મરણુસમુદ્ઘાત છે. વૈક્રિયસમુદ્ઘાત કરતો જીવ વૈક્રિય શરીરનામકર્મના પુદ્ગલોનો નાશ કરે છે એટલે કે વૈક્રિયસમુદ્ઘાત વાળો જીવ પોતાના આત્મપ્રદેશોને શરીરની બહાર કાઢીને, તેમને શરીર પ્રમાણુ વિષ્કંભ (પહોળાઇ) અને બાહલ્યવાળા અને સંખ્યાતયોજન પ્રમાણુ લાંબા

 બનાવીને વૈક્રિય શરીર નામકર્મના પુદ્ગલોનો નાશ કરે છે. એજ

योनिकानामाद्याः पञ्चसमुद्घाता भवन्ति । मनुष्याणां तु सप्तैव समुद्घाता भवन्तीति प्रज्ञापनासूत्रस्य संक्षिप्तो विचारः इति ॥

इति श्री विश्वविख्यात–जगद्वल्लभ – प्रसिद्धवाचकपञ्चदशभाषाकलित–ललितकलापालापक–प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक– वादिमानमर्दक–श्रीशाहू छत्रपतिकोल्हापुरराजप्रदत्त 'जैनशास्त्राचार्य' पदभूषित–कोल्हापुरराजगुरु–बालब्रह्मचारि–जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकरपूज्यश्री घासीलालव्रतिविरचिता श्री भगवतीसूत्रस्य प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां व्याख्यायां द्वितीयशतकस्य द्वितीयोद्देशकः समाप्तः

के पांच समुद्घात होते हैं। मनुष्यों के सात समुद्घात होते हैं– ऐसा प्रज्ञापना सूत्र का यह संक्षिप्त विचार प्रस्तुत किया है। इस तरह उपर्युक्त यंत्रसे यह स्पष्ट हो जाता है कि किस समुद्घातको कौन जीव करता है, समुद्घात का काल कितना है, किस कर्म से समुद्घात होता है और किस समुद्घात करने का क्या परिणाम–फल है ॥ १ ॥

जैनाचार्य श्री घासीलालजी महाराजकृत "भगवती सूत्र "की प्रियदर्शिनी व्याख्या के द्वितीय शतक के दूसरा उद्देशक समाप्त

समुद्घात करे छे प्रज्ञापना सूत्रमां तद्विषय माहिती अही संक्षिप्तमां आपवामां आवी छे

आ उपरथी ए स्पष्ट थाय छे के कयो समुद्घात कयो जीव करे छे, तेनो काळ केटलो होय छे, कया कर्मथी समुद्घात थाय छे, अने कया समुद्घातनुं शुं फळ मळे छे ॥ १ ॥

जैनाचार्य श्री घासीलालजी महाराज कृत भगवती सूत्र नी प्रियदर्शिनी व्याख्याना बीजा शतकना बीजो उद्देशो समाप्त थयो

समुद्घातनाम	केषां भवति	कियान् समयः	केन कर्मणा	परिणामः
१ वेदनासमुद्घातः	सर्वछद्मस्थ जीवानाम्	अन्तर्मुहूर्तम्	असातावेदनीय कर्मतः	असातावेदनीयकर्माणूनां विनाशः
२ कषायसमुद्घातः	,,	,,	कषायनामकचारित्र मोहनीय कर्मतः	कषायकर्माणूनां विनाशः
३ मरणसमुद्घातः	,,	,,	आयुष्य कर्मतः	आयुष्यकर्माणूनां विनाशः
४ वैक्रियसमुद्घातः	नैरयिक भवनपति-व्यन्तर० ज्योतिष्क-वैमानिकपञ्चेन्द्रियणाम् तिर्यग् छद्मस्थमनुष्याणाम्	,,	वैक्रियनामकर्मतः	वैक्रियशरीर नामकर्मणां प्राचीन पुद्गलानां विनाशस्तथा नवीन-पुद्गलानां ग्रहणम्
५ तैजससमुद्घातः	भवनपतिव्यंतर ज्योतिष्क वैमानिकपञ्चेन्द्रियतिर्यक् छद्मस्थमनुष्याणाम्	,,	तैजसशारीरनाम कर्मतः	तैजस शरीरनामकर्मपुद्गलानां विनाशः
६ आहारकसमुद्घातः	मनुष्याणां चतुर्दश पूर्व धराणाम्	,,	आहारक शरीर नाम कर्मतः	आहारकशरीरनामकपुद्गलानां विनाशः
७ केवलिसमुद्घातः	मनुष्याणां केवलज्ञान-वताम्	अष्टौ समयाः	आयुष्यवर्जित त्रिभ्योऽ-घातिकर्मभ्यः	आयुष्यवर्ज त्रयाणामघातिकर्म पुद्गलानां विनाशः

पिताः। तेषु च समुद्घातेषु मारणान्तिक समुद्घातोऽपि विद्यते। मारणान्तिक समुद्घातेन च समवहता केचन पृथिवीषु च समुत्पद्यन्ते इतिजीवोत्पत्तिकारणभूता पृथिव्यः इतिपृथिवीप्रतिपादनं तथा द्वितीयशतकस्य द्वारगाथायां "पुढवी" इति कथित तत्प्रतिपादनश्च भवतीत्यनेन सबन्धेनायातस्यास्य तृतीयोद्देशकस्येदमादिमं सूत्रम् " कइण भंते पुढवीओ " इत्यादि ॥ सू०१ ॥

मूलम्—कइणं भते पुढवीओ पण्णत्ताओ, जीवाभिगमे नेरइयाण जो बितिओ उद्देसो सो णेयव्वो पुढवी ओगाहित्ता, निरया सठाणमेव बाहल्लं " विक्खंभपरिक्खेवो वण्णो गधोय फासोय ॥ १ ॥ जाव किं सव्वे पाणा४ उव वन्नपुव्वा, हंता गोयमा ! असइं अदुवा अणतक्खुत्तो पुढवी उद्देसो ॥सू०१॥

उद्देशक के साथ इस प्रकार से सम्बन्ध है—द्वितीय उद्देशक में समुद्घातों की निरूपणा हुई है। इन समुद्घातों में एक मारणान्तिक समुद्घात भी है। मारणान्तिक समुद्घात करने वाले कितनेक जीव पृथिवीयों में उत्पन्न हो जाते हैं। इसलिये जीवों की उत्पत्ति के स्थानभूत उन पृथिवियों का प्रतिपादन करना तथा द्वितीयशतक की द्वारगाथा में प्रतिपादित पृथिवी का निरूपण करना यह प्रसङ्गोपात्त ही है अतः इस सम्बन्ध को लेकर इस तृतीय उद्देशक का प्रारंभ हुआ है। इसका सर्वप्रथम यह सूत्र है—(कइणं भंते) इत्यादि।

सबंध छे—बीजा उद्देशकमां समुद्घातोनी निरूपणा करवामां आवी छे ते समुद्घातोमां एक मारणान्तिक समुद्घात पण छे मारणान्तिक समुद्घात करनार केटलाक जीवो नरकोमां (पृथ्वीओमां) उत्पन्न थाय छे तेथी जीवोनी उत्पत्तिना स्थान रूप ते पृथ्वीओनु प्रतिपादन करवानुं तथा बीजा शतकनी द्वारगाथामा प्रतिपादित पृथ्वीनु निरूपण करवानु प्रसंगोचित लागे छे. तो ए प्रकारनो संबंध होवाथी आ त्रीजा उद्देशकनो प्रारंभ करवामां आव्यो छे तेनुं सौथी पहेलुं सूत्र आ प्रमाणे छे—" कइण भंते ! " इत्यादि

॥ अथ द्वितीयशतके तृतीयोद्देशकः प्रारभ्यते ॥

तृतीयोद्देशकस्य संक्षिप्तविषयविचारः कतिपृथिव्यः सन्ति? इतिप्रश्नः। सप्तपृथिव्यः रत्नप्रभा. शर्कराप्रभा वालुका-प्रभा. पंकप्रभा. धूमप्रभा. तमःप्रभा. तमस्तमःप्रभा इत्युत्तरम्। सर्वे जीवाः पूर्वं नरकेऽनेकवारं समुत्पन्नाः किमिति गौतमस्य प्रश्नः, सर्वे अनेकवारं नरके समुत्पन्ना इत्युत्तरं भगवतः। जीवाजीवाभिगमसूत्रीय द्वितीयोद्देशकस्यातिदेशः। उद्देशकपरिसमाप्तिश्चेति॥

द्वितीयशतके द्वितीयोद्देशकं समाप्य तृतीयोद्देशकः प्रारभ्यते। अस्य तृतीयोद्देशकस्य द्वितीयोद्देशकेन सहायमभिसंबन्धः-द्वितीयोद्देशके समुद्घाताः निरू-

---

॥ दूसरे शतक के तीसरे उद्देशक का प्रारंभ ॥

तृतीय उद्देशक के विषयों का विवरण संक्षेपमे इस प्रकार से है-पृथिवी कितनी हैं ऐसा प्रश्न।

पृथिवी सात हैं-रत्नप्रभापृथिवी १, शर्कराप्रभापृथिवी २, वालुकाप्रभापृथिवी ३, पंकप्रभापृथिवी ४, धूमप्रभापृथिवी ५, तमःप्रभापृथिवी ६, तमस्तमःप्रभापृथिवी ७, ऐसा उत्तर। समस्त जीव क्या पहिले अनेक बार नरकों में उत्पन्न हुए हैं ऐसा गौतम का प्रश्न। हां, समस्त जीव पहिले अनेक बार नरकों में उत्पन्न हुए हैं ऐसा भगवान् का उत्तर। जीवाजीवाभिगमसूत्र संबंधी द्वितीय उद्देशक का अतिदेश, उद्देशक की परिसमाप्ति।

द्वितीय शतक में द्वितीय उद्देशक को समाप्त करके सूत्रकार अब तीसरे उद्देशक को प्रारंभ करते हैं। इस तृतीय उद्देशक का द्वितीय

બીજા શતકના ત્રીજા ઉદ્દેશકનો પ્રારંભ—

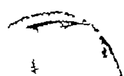
ત્રીજા ઉદ્દેશકના વિષયોનું સંક્ષિપ્ત વર્ણન આ પ્રમાણે છે.

પ્રશ્ન–પૃથ્વી કેટલી છે?

ઉત્તર—પૃથ્વી સાત છે–(૧) રત્નપ્રભાવપૃથ્વી (૨) શર્કરાપ્રભા (૩) વાલુકાપ્રભા (૪) પંકપ્રભા (૫) ધૂમપ્રભા (૬) તમઃપ્રભા (૭) તમસ્તમાપ્રભા પૃથ્વી

ગૌતમનો પ્રશ્ન–શું સમસ્ત જીવો પહેલાં અનેકવાર નરકોમાં ઉત્પન્ન થયા હોય છે? ઉત્તર–હા સમસ્ત જીવો અનેકવાર નરકોમા ઉત્પન્ન થાય હોય છે. જીવાજીવાભિગમ સૂત્રના બીજા ઉદ્દેશકનો અતિદેશ–ઉદ્દેશકની સમાપ્તિ.

બીજા શતકના બીજા ઉદ્દેશકની પૂર્ણાહુતિ કરીને હવે સૂત્રકાર ત્રીજા ઉદ્દેશકનો પ્રારંભ કરે છે આ ત્રીજા ઉદ્દેશકનો બીજા ઉદ્દેશક સાથે આ પ્રકારનો



टीका-' कइण भंते पुढवीओ पण्णत्ताओ " कति खलु भदन्त ! पृथिव्य नारक पृथिव्यः प्रज्ञप्ताः ? हे भदंत ! नारकजीवानामाधारभूताः पृथिव्यः कतिसंख्यकाः सन्तीतिप्रश्नः । भगवानाह-" जीवाभिगमे ' इत्यादि " जीवाभिगमे नेरवियाण जो विलिओ उद्देसो सो नेयव्वो' जीवाभिगमे नैरयिकाणां यो द्वितीयउद्देशकः सः नेतव्यः=ज्ञातव्य अत्रार्थे संग्रहगाथेयम् 'पुढवी' इत्यादि तस्मिन् द्वितीयोद्देशके पृथिवी संबन्धिविचार , नारकविषयो विचारः, नारकाणां संस्थानसंबन्धी विचार। तथा नरकपृथिव्याः स्वरूपादिसर्वविवेचनमेतत्सर्वं जीवाभिगम द्वितीयोद्देशकस्य एव

टीकार्थ-(कइणं भंते ! पुढवीओ पण्णत्ताओ) हे भदन्त नारकपृथिवियां कितनी कही गई हैं ? इस प्रश्न का सारांश यह है कि गौतम महावीर प्रभुसे यह पूछ रहे हैं कि नारक जीव जिन पृथिवियों में रहते हैं वे पृथिवियां कितनी हैं ? इस प्रश्न के उत्तर में सूत्रकार जीवाभिगम सूत्र का निर्देश करते हैं—" जीवाभिगमे नेरयियाण जो विलिओ उद्देसो सो नेयव्वो " जीवाभिगम सूत्र में जो द्वितीय उद्देशक है-वह इस प्रश्न के उत्तर में जानलेना चाहिये, इसविषय को स्पष्ट करनेवाली संग्रहगाथा इस प्रकार से है- (पुढवी ओगाहेत्ता इत्यादि संग्रह गाथा द्वारा यह स्पष्ट किया गया है कि जीवाभिगमसूत्र के द्वितीय उद्देशक में पृथिवी संबंधी विचार किया गया है, उन पृथिवियों में रहे हुए नरकावासों का विचार किया गया है, नरकावासों के संस्थान का विचार किया गया है । तथा- नरकपृथिवियों के स्वरूप आदि का विचार किया

ટીકાર્થ—(कइण भंते ! पुढवीओ पण्णत्ताओ) હે ભદન્ત ! નરકો (પૃથ્વીઓ) કેટલી છે ? કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે જે પૃથ્વીઓ (નરકો) માં નારક જીવો રહે છે એ પૃથ્વીઓ કેટલી છે ? આ પ્રશ્નનો ઉત્તર આપવા માટે સૂત્રકાર જીવાભિગમસૂત્રનો નિર્દેશ કરે છે (जीवाभिगमे नेरयियाणं जो बिइओ उद्देसो सो नेयव्वो) જીવાભિગમસૂત્ર । બીજા ઉદ્દેશકમાથી આ પ્રશ્નનો ઉત્તર જાણી લેવો જોઈએ આ વિષયને સ્પષ્ટ કરનારી સંગ્રહગાથા આ પ્રમાણે છે—

पुढवी ओगाहेत्ता ઇત્યાદિ

આ સંગ્રહગાથામાં એ વાતનું સ્પષ્ટીકરણ કરવામા આવ્યું છે કે જીવાભિગમસૂત્રના બીજા ઉદ્દેશકમાં પૃથ્વીઓ વિષે વિચાર કરવામાં આવ્યો છે, તે પૃથ્વીઓમાં રહેનારા નારક જીવોનો વિચાર કરવામાં આવ્યો છે નારક જીવોનાં સંસ્થાનોનો વિચાર કરવામા આવ્યો છે તથા તે નરકો (પૃથ્વીઓ) ના સ્વરૂપ આદિનું નિરૂપણ કરવામા આવ્યું છે તેથી

छाया-कति भदंत ! पृथिव्यः प्रज्ञप्ताः, १जीवाभिगमे नैरयिकाणां यो द्वितीय उदेशकः स नेतव्यः पृथिवीमवगाह्य निरयाः संस्थानमेव बाहल्यविष्कम्भपरिक्षेपौ वर्णो गन्धश्च स्पर्शश्च ॥ १ ॥ यावत्. किं सर्वे प्राणा उत्पन्नपूर्वाः ? हन्त गौतम! असकृत् अथवा अनन्तकृत्वः पृथिव्युदेशकः) ६ सू०१॥

द्वितीयशतकस्य तृतीयउद्देशः समाप्तः

सूत्रार्थ—(कइणं भंते ! पुढवीओ पण्णत्ताओ) हे भदन्त ! पृथिवियां कितनी कहीगई हैं ? (जीवाभिगमे नेरइयाणं जो वितिओ उद्देसो सो णेयव्वो) जीवाभिगम सूत्र में कहा गया जो नारक संबंधी दूसरा उद्देशक है वह यहां जानना चाहिये। यहां द्वारगाथा है

" पुढवी ओगाहित्ता निरया संठाणमेव बाहल्लं ।
विक्खंभ परिक्खेवो वण्णो गंधो य फासो य ॥ १ ॥

इस उद्देशक में पृथिवी संबंधी, (पृथिवी को अवगाहन करके कितनी दूर नारक रहते हैं) इस संबंधी, संस्थान संबंधी, पृथिवियों की मोटाई संबंधी, विष्कंभ परिक्षेप संबंधी, वर्ण, गंध और स्पर्श संबंधी कथन है। (जाव किं सव्वे पाणा उववन्नपुव्वा) हे भदन्त। वहां क्या समस्त जीव उपपन्नपूर्व-पहले-उत्पन्न होये हुए-हैं क्या ?। (हंता गोयमा ! असइं, अदुवा अणंतक्खुत्तो पुढवी उद्देसो) हां, गौतम ! अनेकबार अथवा अनन्तबार उनपृथिवियों में समस्त जीव उपपन्नपूर्व हैं। इस प्रकार यह पृथिवी उद्देशक है ॥ सू० १ ॥

સૂત્રાર્થ-(कइणं भंते ! पुढवीओ पण्णत्ताओ) હે ભદન્ત ! પૃથ્વીઓ (નરકો) કેટલી કહી છે ? (जीवाभिगमे नेरइयाण जो वितिओ उद्देसो सो णेयव्वो) જીવાભિગમસૂત્રના નારક વિષેના બીજા ઉદ્દેશકમાંથી આ વિષય જાણી લેવો. તેના વિષે આ દ્વાર ગાથા છે—

" पुढवी ओगाहित्ता निरया सठणमेव वाहल्ल ।
विक्खंभपरिक्खेवो वण्णो गंधो य फासो य ॥ १ ॥

આ ઉદ્દેશકમા પૃથ્વી વિષે " પૃથ્વીની અવગાહના કરીને કેટલે દૂર સુધી નારકો રહે છે " તે વિષે, સંસ્થાન વિષે, પૃથ્વીઓના વિસ્તાર વિષે, પૃથ્વીઓના વિષ્કભ અને પરિક્ષેપ વિષે, વર્ણ ગધ અને સ્પર્શ વિષે વર્ણન કર્યું છે (जाव किं सव्वे पाणा उववन्नपुव्वा) હે ભદન્ત ! સમસ્ત જીવો શુ ત્યા પહેલાં ઉત્પન્ન થઇ ગયા હોય છે ? (हता गोयमा ! असइं, अदुवा, अणंत-क्खुतो पुढवी उद्देसो) હા, ગૌતમ ! અનેકવાર અથવા અનત વાર સમસ્ત જીવો તે પૃથ્વીઓમા ઉત્પન્ન થઇ ચુકયા હોય છે. પૃથ્વી ઉદ્દેશક આ પ્રકારનો છે ।સૂ૦૧।

पित्वा तत्र त्रिंशल्लक्षनरकावासाः सन्ति १। एवमेवशर्करा प्रभादि पृथिवीषु यथा-योग वक्तव्यमिति तथाहि–द्वितीयायां शर्कराप्रभायां पृथिव्यां द्वात्रिंशत्सहस्रोत्तरयो जनलक्षबाहल्यायामुपर्येक योजनसहस्रमवगाह्याऽधोऽप्येक योजनसहस्र वर्जयित्वा तत्र पञ्चविंशतिलक्षनरकवासाः सन्ति २। तृतीयस्यां बालुकाप्रभायां पृथिव्यामष्टविंशतिसहस्रोत्तरयोजनलक्षबाहल्यायामुपर्येक योजनसहस्रमवगाह्याऽधोऽप्येकं योजनसहस्र वर्जयित्वा तत्र पञ्चदशलक्षनरकावासा सन्ति ३ ॥ चतुर्थपङ्कप्रभायां पृथिव्यां विंशतिसहस्रोत्तरयोजन लक्षबाहल्यायामुपर्येक योजनसहस्रमवगाह्याऽधोऽप्येकं योजनसहस्र वर्जयित्वा तत्र दशलक्षनरकावासाः सन्ति ४॥ पञ्चमधूमप्रभायां पृथिव्या

इसमें से एक हजार योजन ऊपर के भाग को तथा एक हजार योजन नीचेके भागको छोडकर अवशिष्ट स्थान में तीस लाख नरकावास हैं। इसी तरह से शर्करा आदी पृथिवीयों में भी निम्नोक्त प्रकार से समझ लेना चाहिये। जैसे– शर्कराप्रभा नामकी जो दूसरी पृथिवी है–उसकी मोटाई एक लाख बत्तीस हजार योजन की है– सो इसमें भी ऊपर नीचे का एक–एक हजार योजन प्रमाण भाग छोडकर बाकी के स्थान में पच्चीस लाख नरकावास हैं। तीसरी पृथिवी जो बालुकाप्रभा है उसकी मोटाई एक लाख अट्ठाईस हजार योजन की है सो इसमें ऊपर नीचे के एक–एक हजार योजन प्रमाण भाग को छोडकर बाकी के बीच के भागों में पन्द्रह लाख नरकावास–नारक जीवों के रहने के स्थान हैं। चौथी पृथिवी जो पङ्कप्रभा है उसकी मोटाई एक लाख बीस हजार योजन की है सो उसका भी एक–एक हजार योजन प्रमाण भाग ऊपर नीचे का छोड कर बाकी के भागों में दस लाख नर

તેમાંનો ઉપરનો એક હજાર યોજન પ્રમાણ ભાગ છોડીને અને એક હજાર પ્રમાણ નીચેના ભાગ ને છોડીને બાકીની જગ્યામાં ત્રીસ લાખ નરકાવાસ છે એજ પ્રમાણે શર્કરાપ્રભા આદિ પૃથ્વીઓમાં પણ નીચે પ્રમાણે સમજવું– શર્કરા નામની બીજી પૃથ્વીનો વિસ્તાર એક લાખ બત્રીસ હજાર યોજનનો છે તેનો ઉપરનો એક હજાર યોજન પ્રમાણ ભાગ અને નીચેનો એક હજાર યોજન પ્રમાણ ભાગ છોડીને બાકીની જગ્યામાં પચીસ લાખ નરકાવાસ છે ત્રીજી વાલુકાપ્રભા પૃથ્વી ની ઊંચાઇ એક લાખ અઠ્યાવીસ હજાર યોજનની છે તેમાં ઉપર તથા નીચેનો એક એક હજાર યોજન પ્રમાણ ભાગ છોડીને બાકીના પંદર લાખ નરકાવાસ છે ચોથી પંકપ્રભા નામની પૃથ્વીની ઊંચાઈ એક લાખ વીસ હજાર યોજનની છે તેનો પણ ઉપરનો તથા નીચેનો

ज्ञातव्यम् । तत्र (पुढवीओ) पृथिव्यो वाच्याः। ताश्चैवम् "कइणं भंते पुढवीओ पन्नत्ताओ' कति खलु भदंत ! पृथिव्यः प्रज्ञप्ताः ? इतिपृथिवीसंख्याविषयको गौतमस्य प्रश्नः भगवानाह-'गोयमा सत्तपुढवीओ पन्नत्ताओ' हे गौतम ! सप्त पृथिव्यः प्रज्ञप्ताः 'तं जहा' तद्यथा 'रयणप्पभा शर्कराप्रभा वालुकाप्रभा पंकप्रभा धूमप्रभा तमःप्रभा तमस्तमःप्रभा इमाः सप्त नारकपृथिव्याः प्रज्ञप्ताः=कथिताः "ओगाहित्ता निरया" इति अवगाह्य निरयाः, पृथिवीमवगाह्य कियद्दूरे नारकावसन्तीतिवक्तव्यम् तत्र सप्तसु पृथिवीषु मध्ये या प्रथमा रत्नप्रभापृथिवीतस्याम्-अशीतिसहस्रोत्तरयोजनलक्षवाहल्यायाम्. उपर्य्येकं योजनसहस्रमवगाह्याधोप्येकं योजनसहस्रं वर्ज-

गया है। इसलिये जीवाभिगम सूत्र के द्वितीय उद्देशक से ही सब कुछ नरकसंबधि आदि विचार जानना चहिये। पृथिवी संबंध में वहां ऐसा पूछा गया है कि-(भंते) हे भदंत! (कइणं पुढवीओ पन्नत्ताओ) पृथिवियां कितनी कही गई हैं? इस प्रकार से गौतम ने जब पृथिवी की संख्या के विषय में प्रभु से पूछा-तब प्रभु ने उन्हें कहा -(गोयमा सत्त पुढवीओ पन्नत्ताओ) हे गौतम ! पृथिवी सात कही गई हैं-(तं जहा) वे इस प्रकार से हैं-(रयणप्पभा) इत्यादि- रत्नप्रभा १, शर्कराप्रभा २, वालुकाप्रभा ६, पंकप्रभा ४, धूमप्रभा५, तमप्रभा६, और सातवीं तमस्तमःप्रभा ७। (ओगाहित्ता निरया) पृथिवी को अवगाहित करके कितनी दूर जाने पर नारक जीव रहते हैं? इस प्रश्न का भाव इस प्रकार से है-कि-कितनी पृथिवी को छोडकर नारक जीवपृथिवी अवशिष्ट भाग में रहते हैं ? तो इसका उत्तर इस प्रकार से है-जैसे सात पृथिवीयों में से जो पहिली पृथिवी रत्नप्रभाहै वह एक लाख अस्सी हजार योजन की मोटी है,

જીવાભિગમ સૂત્રના બીજા ઉદ્દેશકમાંથી નરકો વિષે સમસ્ત વર્ણન વાચવાનું કહેવામા આવ્યુ છે પૃથ્વી વિષે અહીં એવુ પૂછવામાં આવ્યુ છે કે (भंते!) હે ભદન્ત, (कइण पुढवीओ पण्णत्ताओ?) પૃથ્વીઓ કેટલી કહી છે? ત્યારે ભગવાન મહાવીર ગૌતમસ્વામીને ઉત્તર આપે છે કે (गोयमा) હે ગૌતમ! (सत्त पुढवीओ पन्नत्ताओ) પૃથ્વી સાત કહી છે (त जहा) તેમના નામ આ પ્રમાણે છે—(रयणप्पभा) ઈત્યાદિ રત્નપ્રભા, શર્કરાપ્રભા, વાલુકાપ્રભા, પંકપ્રભા, ધૂમપ્રભા, તમપ્રભા, અને તમસ્તમા પ્રભા (ओगाहित्ता निरया) કેટલી પૃથ્વીને છોડીને નારક જીવો પૃથ્વીના અવશિષ્ટ (બાકીના) ભાગમાં રહે છે? તેનો ઉત્તર આ પ્રમાણે છે-સાત નરકો (પૃથ્વીઓ) માંથી પહેલી રત્નપ્રભા નામની પૃથ્વી એક લાખ એંશી હજાર યોજનના વિસ્તાર વાળી છે.

' बाहल्लं ' इतिनरकावासानां बाहल्यमपि वक्तव्यम् तच्च बाहल्यं त्रीणियोजनसहस्राणि। तत्कथम् ? अध एकम् योजनसहस्रम् मध्ये एक योजनसहस्रं शुषिरम् उपरि च योजनसहस्र संकोचो विद्यते इति=' विक्खंभपरिक्खेवो ' विष्कंभपरिक्षेपौ वक्तव्यौ तत्र सख्यातविस्तारवतां नरकवासनाम् आयामो विष्कम्भःपरिक्षेपश्च प्रत्येकं सख्यातयोजनप्रमाणोऽस्ति। तदन्येषा तु आयामविष्कम्भपरिक्षेपाविभिन्नरूपाएवभवन्तीति। " वण्णो गंधो य फासो य" वर्णो गन्धश्च नरकावासनां वर्णगन्धरसस्पर्शा वक्तव्याः ते च वर्णादयोऽत्यन्तमनिष्टः। इत्यादिबहुवक्तव्य विद्यते तत्सर्वमुद्देशकान्तमिहवक्तव्यम्। "किंसव्वे पाणाउववन्नपुव्वा" किं सर्वे प्राणा उपपन्नपूर्वाः सर्वेजीवा

गोल होता है, तिखूटा होता है और चौखूटा होता है तथा इनके सिवाय जो नरकावास हैं वे अनेक आकार वाले होते हैं (बाहल्लं) बाहल्य नाम मोटाई का है सो नरकावासों का बाहल्य-जाडाई-तीन हजार योजन की है। यह किस प्रकार से है? सो कहते हैं-नीचे एक हजार योजन, मध्य में एक हजार योजन शुषिर (पोल) ऊपर में एक हजार योजन संकुचित है। (विक्खंभपरिक्खेवो) संख्यातविस्तार वाले जो नरकावास हैं उनका आयाम, विष्कंभ और परिक्षेप ये प्रत्येक सख्यात योजन प्रमाण हैं। इनसे अतिरिक्त जो नरकावास हैं उनका आयाम, विष्कंभ और परिक्षेप ये सब भिन्न २ प्रमाण में हैं। (वण्णो गंधोय फासो य) नरकावासों के वर्ण, गंध, स्पर्श, ये सब अत्यन्त अनिष्ट होते हैं इत्यादि सब इस उद्देशक के अंततक समझ लेना है। (किं सव्वे पाणा० ४ उववन्नपुव्वा) यहां प्रश्न इस प्रकार से करना

આકાર ગોળ, ત્રિકોણીઓ કે ચોખૂણીઓ હોય છે તે સિવાયના જે નરકાવાસો છે તે અનેક આકારવાળા હોય છે (बाहल्ल) બાહલ્ય એટલે જાડાઇ નરકાવાસોનું બાહલ્ય ત્રણ હજાર યોજનનું હોય છે તે કેવી રીતે હોય છે? તો તેના જવાબમાં કહે છે કે-નીચે એક હજાર યોજન મધ્યમાં એક હજાર યોજન અને ઉપર એક હજાર યોજન

(विक्खंभपरिक्खेवो) સંખ્યાત વિસ્તારવાળા જે નરકાવાસો છે તેમનો આયામ (લંબાઈ) વિષ્કંભ (પહોળાઈ) અને પરિક્ષેપ (પરિમિતિ) સંખ્યાત યોજન પ્રમાણ છે તે સિવાયના જે નરકાવાસો છે તેમનો આયામ, વિષ્કંભ અને પરિક્ષેપ ભિન્ન ભિન્ન પ્રમાણવાળા છે-(वण्णो गंधो य फासो य) નરકાવાસોના વર્ણ રસ, ગંધ અને સ્પર્શ અત્યંત અનિષ્ટ હોય છે ઇત્યાદિ સમસ્ત આ ઉદ્દેશકના અંતભાગ સુધીમાં સમજાવવામાં આવ્યું છે

(किं सव्वे पाणा उववन्नपुव्वा) અહીં આ પ્રકારનો પ્રશ્ન સમજવો-

मष्टादशसहस्रोत्तरयोजनलक्षबाहल्यायामुपर्येकं योजनसहस्रमवगाह्याऽधोऽप्येकं-योजनसहस्रं वर्जयित्वा तत्र त्रिलक्षनरकावासाः सन्ति ५॥ षष्ठतमः प्रभायां पृथिव्यां षोडशसहस्रोत्तरलक्षबाहल्यायामुपर्येकं योजनसहस्रमवगाह्याऽधोऽप्येकं योजन सहस्रं वर्जयित्वा तत्र पञ्चन्यूनैकलक्षनरकावासाः सन्ति६॥ सप्तमतमस्तमः-प्रभायां पृथिव्यामष्टसहस्रोत्तरलक्षबाहल्यायामुपरि सार्धद्विपञ्चाशद्योजनसहस्रमवगाह्याऽधोऽपि सार्धद्विपञ्चाशद्योजनसहस्रं वर्जयित्वा तत्र पञ्चसंख्यका नरकावासाः सन्तीति ७। "संठाणमेव" इति-संस्थानमेव तत्र ये आवलिकाप्रविष्टाः पंक्तिप्रविष्टाः नरकवासास्ते वृत्ताः त्र्यस्राः चतुरस्राश्च, इतरेतु नानासंस्थानाः नरकवासा भवन्ति।

कावास हैं। पांचवी पृथिवी जो धूमप्रभा है उसकी मोटाई एक लाख अठारह हजार योजन की है सो उसमें भी ऊपर नीचे के एक-एक हजार योजन के भाग को छोड़कर बाकी के भागों में तीन लाख नरकावास हैं। छट्ठी पृथिवी जो तम प्रभा है उसकी मोटाई एक लाख सोलह हजार योजन की है-सो उसके ऊपर नीचे के एक-एक हजार योजन प्रमाण भागको छोड़कर अवशिष्ट भागों में नारकजीवों के रहने के पांचकम एक लाख नरकावास है। तथा सातवीं पृथिवी जो तमस्तमःप्रभा है उसकी मोटाई एक लाख आठ हजार योजन की है-सो ऊपर नीचे के साढेबावन-साढेबावन (५२॥-५२॥) हजार योजन प्रमाण भागों को छोड़कर अवशिष्ट भागों में केवल पांच ही नरकावास हैं। (संठाणमेव) संस्थान नाम आकार का है-सो जो नारक जीवों के आवास आवलिका में प्रविष्ट हैं-पंक्ति में प्रविष्ट हैं-उनका आकार

એક એક હજાર યોજન પ્રમાણુ ભાગ છોડીને બાકીના ભાગમાં દસ લાખ નરકાવાસ છે પાચમી ધૂમપ્રભા નામની પૃથ્વીની ઉંચાઇ એક લાખ અઢાર હજાર યોજનની છે તેના પણુ ઉપર તથા નીચેના એક એક હજાર યોજન પ્રમાણુ ભાગોને છોડીને બાકીના ભાગમા ત્રણુ લાખ નરકવાસ છે. છઠ્ઠી તમપ્રભા પૃથ્વીની ઊંચાઈ એકલાખ સોળહજાર યોજનની છે તેને પણુ ઉપર તથા નીચેના એક એક હજાર યોજનપ્રમાણુ ભાગ છોડીને બાકીની જગ્યામાં ૯૯૯૯૯ નવણુહજાર નવસોનવ્વાણુ નરકાવાસ છે. સાતમી તમસ્તમપ્રભા નામની પૃથ્વીની ઊંચાઇ એક લાખ આઠ હજાર યોજનની છે તેના ઉપર સાડા બાવન હજાર (પ૨ા હજાર) અને નીચેના સાડા બાવન હજાર પ્રમાણુ ભાગને છોડીને બાકીના ભાગમા ફક્ત પાચ જ નરકાવાસ છે, (संठाणमेव) સંસ્થાન એટલે આકાર જે નારક જીવોના અવાસ આવલિકા (પંક્તિ) મા આવેલ છે, તેમનો



'बाहल्लं' इतिनरकावासानां बाहल्यमपि वक्तव्यम् तच्च बाहल्य त्रीणियोजनसहस्राणि। तत्कथम्? अध एकम् योजनसहस्रम् मध्ये एक योजनसहस्रं शुषिरम् उपरि च योजनसहस्र सकोचो विद्यते इति=' विक्खंभपरिक्खेवो ' विष्कंभपरिक्षेपं वक्तव्यौ तत्र सख्यातविस्तारवतां नरकावासनाम् आयामो विष्कभ परिक्षेपश्च प्रत्येकं सख्यातयोजनप्रमाणोऽस्ति। तद्न्येषां तु आयामविष्कंभपरिक्षेपाविभिन्नरूपाएवमन्तीति। "वण्णो गंधो य फासो य" वर्णों गन्धश्च नरकावासानां वर्णगंधरसस्पर्शा वक्तव्या ते च वर्णादयोऽत्यन्तमनिष्ट। इत्यादिकंतु वक्तव्य विद्यते तत्सर्वमुद्देशकान्तमिहवक्तव्यम्। "किंसव्वे पाणाउववन्नपूर्वा" किं सर्वे प्राणा उपपन्नपूर्वाः सर्वेजीवा

गोल होता है, तिखूटा होता है और चौखूटा होता है तथा इनके सिवाय जो नरकावास हैं वे अनेक आकार वाले होते हैं (बाहल्लं) बाहाल्य नाम मोटाई का है सो नरकावासों का बाहल्य-जाडाई-तीन हजार योजन की है। यह किस प्रकार से हैं? सो कहते हैं-नीचे एक हजार योजन, मध्य में एक हजार योजन शुषिर (पोल) ऊपर में एक हजार योजन संकुचित है। (विक्खभपरिक्खेवो) संख्यातविस्तार वाले जो नरकावास हैं उनका आयाम, विष्कंभ और परिक्षेप ये प्रत्येक सख्यात योजन प्रमाण हैं। इनसे अतिरिक्त जो नरकावास हैं उनका आयाम, विष्कंभ और परिक्षेप ये सब भिन्न २ प्रमाण में हैं। (वण्णो, गंधोय फासोय) नरकावासों के वर्ण, गंध, स्पर्श, ये सब अत्यन्त अनिष्ट होते हैं इत्यादि सब इस उद्देशक के अततक समझ लेना है। (किं सव्वे पाणा० ४ उववन्नपुव्वा) यहां प्रश्न इस प्रकार से करना

આકાર ગોળ, ત્રિકોણાકાર કે ચોખૂણીઆ હોય છે તે સિવાયના જે નરકાવાસો છે તે અનેક આકારવાળા હોય છે (बाहल्ल) બાહલ્ય એટલે જાડાઈ નરકાવાસોનું બાહલ્ય ત્રણ હજાર યોજનનું હોય છે તે કેવી રીતે હોય છે? તો તેના જવાબમાં કહે છે કે-નીચે એક હજાર યોજન, મધ્યમાં એક હજાર યોજન અને ઉપર એક હજાર યોજન

(विक्खंभपरिक्खेवो) સંખ્યાત વિસ્તારવાળા જે નરકાવાસો છે તેમનો આયામ (લબાઈ) વિષ્કભ (પહોળાઈ) અને પરિક્ષેપ (પરિમિતિ) સંખ્યાત યોજન પ્રમાણ છે તે સિવાયના જે નરકાવાસો છે તેમનો આયામ, વિષ્કભ અને પરિક્ષેપ ભિન્ન ભિન્ન પ્રમાણમાં છે-(वण्णो गंधो य फासो य) નરકાવાસોના વર્ણ રસ, ગંધ અને સ્પર્શ અત્યત અનિષ્ટ હોય છે ઇત્યાદિ સમસ્ત આ ઉદ્દેશકના અતભાગ સુધીમાં સમજાવવામાં આવ્યુ છે

(कि सव्वे पाणा उववन्नपुव्वा) અહીં આ પ્રકારનો પ્રશ્ન સમજવો-

किं रत्नप्रभादिपृथिवीषु पूर्वं समुत्पन्नाः? अस्य चैवं प्रयोगः–अस्यां रत्नप्रभापृथिव्याम् त्रिंशदन्तरकलक्षेषु किं सर्वे प्राणादयः उत्पन्नपूर्वाः, इतिप्रश्नः। भगवानाह–"हन्त गोयमा" हन्त गौतम! "असइं" असकृत्. अनेकशोऽनेकवारम्.अनेकवारन्तु द्विवारापेक्षयाऽपि स्यादतआह–"अहवा" अथवा. "अणंतक्खुत्तो" अनन्तकृत्व अनंतवारम्। सर्वे जीवा रत्नप्रभादिषु सर्वासु पृथिवीषु पूर्वं समुत्पन्नाइति॥

इति श्रीविश्वविख्यात–जगद्वल्लभ–प्रसिद्धवाचकपञ्चदशभाषाकलितललितकला-
पालापक–प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक–वादिमानमर्दक–श्रीशाहूछत्रप-
तिकोल्हापुरराजप्रदत्त–'जैनशास्त्राचार्य' पदभूषित–कोल्हापुरराज-
गुरु–बालब्रह्मचारि–जैनाचार्य–जैनधर्मदिवाकरपूज्यश्री–घासीलाल–
व्रतिविरचितायां श्रीभगवतीसूत्रस्य प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां
व्याख्यायां द्वितीयशतके तृतीयोद्देशकः समाप्तः॥२–१॥

चाहिये–रत्नप्रभा पृथिवी में जो तीस लाख नरकावास हैं उनमें समस्त प्राणी पहिले उत्पन्न हुए हैं क्या? इसका उत्तर देते हुए प्रभु गौतम से कहते हैं कि–(हंता गोयमा!) हां, गौतम! समस्त प्राणी (असइं) अनेक वार (अदुवा) अथवा (अणंतक्खुत्तो) अनंतवार इन पूर्वोक्त रत्नप्रभा आदि पृथिवियों में पहिले उत्पन्न हुए हैं॥ सू० १॥

श्री जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्य श्रीघासीलालजी
महाराजकृत भगवतीसूत्रकी प्रमेयचन्द्रिका व्याख्या
के दूसरे शतकका तीसरा उद्देशक समाप्त॥२–१॥

રત્નપ્રભાપૃથ્વીમા જે ત્રીસ લાખ નરકાવાસ છે તેમા સમસ્ત જીવો શુ પૂર્વે ઉત્પન્ન થયેલા હોય છે ? તેનો ઉત્તર દેતા પ્રભુ ગૌતમસ્વામીને કહે છે (हंता गोयमा!) હા, ગૌતમ! સમસ્ત જીવો (असइं) અનેક વાર (अदुवा) અથવા–अणंतक्खुत्तो) અનત વાર રત્નપ્રભા આદિ સાતે પૃથ્વીઓમા પહેલા ઉત્પન્ન થયા હોય છે ॥ સૂ ૧ ॥

॥ઇતિશ્રી જૈનાચાર્ય જૈનધર્મદિવાકર પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજકૃત ભગવતીસૂત્રની
પ્રિયદર્શિનીવ્યાખ્યાના બીજા શતકનો ત્રીજો ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥૨–૧॥

॥ अथ द्वितीयशतके चतुर्थोद्देशक प्रारभ्यते ॥

चतुर्थोद्देशकोक्ता: संक्षिप्तविषया इमे कति इन्द्रियाणीति गौतमस्य प्रश्नः। पञ्चेन्द्रियाणि श्रोत्रेन्द्रिय-चक्षुरिन्द्रिय-घ्राणेन्द्रिय-रसनेन्द्रिय-स्पर्शनेन्द्रिय भेदादित्युत्तरम्। प्रज्ञापनासूत्रस्येन्द्रियसंबन्धिप्रथमोद्देशकस्योद्धरणम् ? इन्द्रियाणां भेदप्रदर्शनम् इन्द्रियाणां संस्थानम् इन्द्रियाणां दीर्घत्वम्। इन्द्रियविषयादीनां विचारः उद्देशक परिसमाप्तिश्च।

अथ द्वितीयशतकीयतृतीयोद्देशकं परिसमाप्य चतुर्थोद्देशकः प्रारभ्यते तृतीयोद्देशक निरूपणानन्तरं चतुर्थोद्देशकनिरूपणेऽयमभिसंबन्धः तृतीयोद्देशके नारकाणां निरूपणं

द्वितीय शतक का चतुर्थ उद्देशक प्रारंभ—

इस चतुर्थ उद्देशक में जो विषय प्रतिपादित किया है उनका विवरण इस प्रकार से है—

प्र०—इन्द्रियां कितनी हैं—ऐसा गौतम का प्रश्न।

उ०—इन्द्रियां पांच हैं—श्रोत्रेन्द्रिय, चक्षुइन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, रसना इन्द्रिय और स्पर्शन इन्द्रिय ऐसा उत्तर।

प्रज्ञापना सूत्र में इन्द्रियों के संबंध को लेकर जो प्रथम उद्देशक कहा गया है उसका उद्धरण, इन्द्रियों के भेदों का प्रदर्शन, इन्द्रियों का आकार इन्द्रियों की दीर्घता, इन्द्रियों के विषय आदि का विचार, उद्देशक की परिसमाप्ति।

द्वितीय शतक के तृतीय उद्देशक को समाप्त कर अब सूत्रकार चौथे उद्देशक को प्रारंभ करते हैं। तृतीय उद्देशक के निरूपण के बाद चतुर्थ उद्देशक के निरूपण करने में संबंध इस प्रकार से है—तृतीय

બીજા શતકનો ચોથો ઉદ્દેશક પ્રારંભ

આ ચોથા ઉદ્દેશકમાં જે વિષયોનુ પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યુ છે તે વિષયોનુ સંક્ષિપ્ત વિવેચન આ પ્રમાણે છે

ગૌતમસ્વામીનો પ્રશ્ન-ઈન્દ્રિયો કેટલી હોય છે ?

પ્રભુનો ઉત્તર ઇન્દ્રિયો પાંચ છે-શ્રોત્રેન્દ્રિય, ચક્ષુરિન્દ્રિય ઘ્રાણેન્દ્રિય, રસનેન્દ્રિય અને સ્પર્શેન્દ્રિય પ્રજ્ઞાપના સૂત્રમા ઈન્દ્રિયોના વિષયમા જે પહેલો ઉદ્દેશક કહ્યો છે તેનો ઉલ્લેખ ઇન્દ્રિયોના ભેદો, ઈન્દ્રિયોના આકાર ઈન્દ્રિયોની દીર્ઘતા, ઈન્દ્રિયોના વિષયો આદિનું નિરૂપણ-ઉદ્દેશકની સમાપ્તિ બીજા શતકનો ત્રીજો ઉદ્દેશક પૂરો કરીને હવે સૂત્રકાર ચોથા ઉદ્દેશકનો પ્રારંભ કરે છે ત્રીજા ઉદ્દેશક સાથે ચોથા ઉદ્દેશકનો આ પ્રકારનો સંબંધ છે-ત્રીજા ઉદ્દેશકમાં નારક

कृतम्, ते च नारकाः पञ्चेन्द्रिया भवन्तीति-इन्द्रियप्ररूपणाय तथा द्वितीय शतकादौ द्वारगाथायाम् 'इंदिय' इत्युक्तमितीन्द्रियप्रतिपादनाय च चतुर्थोद्देशकः प्रारभ्यते, तदनेन संबन्धेनायातस्य चतुर्थोद्देशकस्येदमादिमं सूत्रम् "कइणं भंते! इंदिया पन्नत्ता" इत्यादि॥

मूलम्-"कइणं भंते! इंदिया पन्नत्ता? गोयमा! पंच इंदिया पन्नत्ता। तं जहा-पढमिल्लो इंदियउद्देसओ नेयव्वो, संठाणं, बहल्लं, पोहत्तं, जाव अलोगो; इंदिय उद्देसो॥॥ सू० १॥

॥ द्वितियसए चउत्थो उद्देसो समत्तो॥ २-४॥

छाया-कति खलु भदंत! इन्द्रियाणि प्रज्ञप्तानि? गौतम! पञ्चेन्द्रियाणि प्रज्ञप्तानि। तद्यथा-प्रथमः इन्द्रियोद्देशको ज्ञातव्यः संस्थान वाहुल्यं पृथुत्वं यावत् अलोकः इन्द्रियोद्देशकः॥ सू० १॥

॥ द्वितीयशतके चतुर्थ उद्देशः समाप्तः॥ २-४॥

उद्देशक में नारक जीवों का निरूपण किया गया है, वे नारक जीव पांच इन्द्रियों वाले होते हैं अतः इन्द्रियों की प्ररूपणा के लिये तथा द्वितीय शतक की आदि में द्वार गाथा में अभिहित इन्द्रिय पद के प्रतिपादन के लिये इस चतुर्थ उद्देशक को प्रारंभ किया गया हैं। इस संबंध से आये हुए इस चतुर्थ उद्देशक का यह पहिला सूत्र है—(कइणं भंते) इ०।

सूत्रार्थ—(भंते) हे भदन्त! (कइणं इंदिया पन्नत्ता) इन्द्रियां कितनी कही गई हैं? (गोयमा) हे गौतम! पंच इंदिया पन्नत्ता) इन्द्रियां पांच कही गई हैं। (तंजहा) वे इस प्रकार से हैं- (पढमिल्लो इंदिय उद्देसओ नेयव्वो) प्रज्ञापना सूत्र के पंद्रहवें इन्द्रिय पद के प्रथम उद्देशक

જીવોનુ નિરૂપણુ કર્યું છે, તે નારકો પાચ ઇન્દ્રિયો વાળા હોય છે, તેથી ઇન્દ્રિયોની પ્રરૂપણાને માટે તથા બીજા શતકની શરૂઆતમા આવતી દ્વાર ગાથામા આવતા ઇન્દ્રિય પદનું પ્રતિપાદન કરવા માટે આ ચોથો ઉદ્દેશક શરૂ કર્યો છે તેનું પહેલુ સૂત્ર આ પ્રમાણે છે (कइणं भंते। ઇત્યાદિ।

સૂત્રાર્થ-(भंते) હે ભદન્ત! (कइणं इंदिया पण्णत्ता!) ઇન્દ્રિયો કેટલી કહી છે? (गोयमा) હે ગૌતમ! (पंच इंदिया पण्णत्ता) ઇન્દ્રિયો પાંચ કહી છે. (तंजहा) તે આ પ્રમાણે છે-(पढमिल्लो इंदिय उद्देसओ नेयव्वो) પ્રજ્ઞાપના સૂત્રના પહેલા ઉદ્દેશકમા પંદરમાં ઇન્દ્રિયપદનું અહીં કથન કરવું જોઈએ

टीका—"कइण भंते इंदिया पण्णत्ता" कति खलु भदन्त ! इन्द्रियाणि प्रज्ञप्तानि । भगवानाह-'गोयमा' इत्यादि "गोयमा" हे गौतम ! पंच इंदिया पण्णत्ता" पञ्चेन्द्रियाणि प्रज्ञप्तानि "तं जहा" तद्यथा "पढमिल्लो इंदिय उद्देसओ नेयव्वो" प्रथम इन्द्रियोद्देशको नेतव्य प्रज्ञापनायामिन्द्रियपदाभिधानस्य पञ्चदशपदस्य प्रथमतद्देशकोऽत्र नेतव्यो ज्ञातव्य इति ।

तत्र गाथा प्रदर्शितानीमानि द्वाराणि-"संठाणं" इत्यादि "संठाणं बाहल्ल पोहत्तं जाव अलोगो इंदिय उद्देसो" संस्थानं बाहल्य पृथुत्वं यावत्

का यहां कथन करना चाहिये (संठाणबाहल्ल पोहत्तं जाव अलोगो) तथा उसमें कहे अनुसार इन्द्रियों का आकार, बाहल्य- पृथुत्व भी कहना चाहिये यावत् अलोक तक का विवेचन वाला समस्त इन्द्रिय उद्देशक यहां कह देना चाहिये ।

टीकार्थ—(कइणं भंते ! इंदिया पण्णत्ता) हे भदन्त ! इन्द्रियां कितनी कही गई हैं ? तात्पर्य इस प्रश्न का यह है कि जिनके द्वारा जीव की पहिचान की जाती है वे जीव की लिङ्गरूप इन्द्रियां कितनी होती है ?

इस प्रश्न का उत्तर देते हुए प्रभु महावीर गौतम से कहते हैं कि (गोयमा) हे गौतम ! (इंदिया) वे इन्द्रियां (पंच पण्णत्ता) पांच कही गई हैं । (तंजहा) वे इस प्रकार से हैं—(पढमिल्लो इंदिय उद्देसओ नेयव्वो) प्रज्ञापनासूत्रमें इन्द्रिय पद नाम का पन्द्रहवां पद है, उस पद का प्रथम उद्देशक यहा जानना चाहिये । यह उद्देशक कहां तक लेना चाहिये ? इसके लिये कहते हैं (संठाणबाहल्लं पोहत्तं जाव अलोगो इंदिय उद्देसो) संस्थान बाहल्य पृथुत्वसे लेकर (अलोक) पर्यन्त पच्चीस द्वारों से युक्त दो गाथाएँ ग्रहण करनी चाहिये वे दो गाथाएँ इस प्रकारसे हैं—

(संठाण बाहल्ल पोहत्तं जाव अलोगो) तथा तेमां કહ્યા પ્રમાણે ઇન્દ્રિયોનો આકાર, દીર્ઘતા આદિનું પણ વર્ણન કરવું જોઇએ અલોક પર્યંતના વિવેચન વાળો સમસ્ત ઇન્દ્રિય ઉદ્દેશક અહીં કહેવો જોઇએ.

ટીકાર્થ—(कइणं भंते ! इंदिया पण्णत्ता) હે ભદન્ત ! ઇન્દ્રિયો કેટલી કહી છે ? પ્રશ્નનું તાત્પર્ય એ છે કે જેમના દ્વારા જીવને ઓળખવામાં આવે છે તે જીવની નિશાની રૂપ ઇન્દ્રિયો કેટલી છે ? આ પ્રશ્નનો મહાવીર પ્રભુ આ પ્રમાણે જવાબ આપે છે—(गोयमा ! इंदिया पंच पण्णत्ता) હે ગૌતમ ! ઇન્દ્રિયો પાંચ કહી છે (तंजहा) તે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે—(पढमिल्लो इंदियउद्देसओ नेयव्वो) પ્રજ્ઞાપના સૂત્રમાં (ઇન્દ્રિય) નામનું પંદરમું પદ છે, તે પદનો પહેલો ઉદ્દેશક વાંચવાથી આ વિષે જાણવા મળશે તે ઉદ્દેશક ક્યાં સુધી વાંચવો ? (संठाण बाहल्ल पोहत्त जाव अलोगो इंदिय उद्देसो) संस्थान બાહુલ્ય પૃ-

अलोकः इन्द्रियोद्देशः ।

मूले गाथाखण्डमुक्त्वा 'जाव' इत्युक्तमिति यावत्पदेन संपूर्णं पञ्चविंशति द्वारयुक्तं गाथाद्वयं संग्राह्यम् । अत्र कियत्पर्यन्तमित्याह-'अलोगो' अलोकः अलोकशब्दपर्यन्तमिति । गाथाद्वय चेदम्--

"संठाणं वाहल्लं पोहत्तं कइपदेस ओगाढे ।
अप्पावहुपुट्ठविट्ठ, विसय अणगार आहारे ॥ १ ॥
अद्दाय असीयमणी, दुद्धपाणे तेल्ल फाणिय वसाय,
कंवल थूणा थिग्गल, दीवोदहि लोगऽलोय ॥ २ ॥

छाया-संस्थानं १, वाहल्यं २, पृथुत्वं ३, कतिप्रदेशाः ४, अवगाढानि ५, अल्पवहुत्वं ६, स्पृष्टानि ७, प्रविष्टानि ८, विषयाः ९, अनगारः१०, आहारः११ ॥ १ ॥ आदर्शश्च १२, असिश्च १३, मणिः १४ दुग्धं १५, पानं १६, तैलं १७, फाणितं १८, वसा च १९, कम्वल २०, स्थूणा २१, थिग्गलं (देशी भित्ति द्वारम् २२, द्वीपोदधि २३, लोकः २४, अलोकः २५ ॥ २ ॥ इति । "इंदिय उद्देसो' इन्द्रियोद्देशः गाथाद्वयोक्त पञ्चविंशति विषययुक्त इन्द्रिय प्रति-

---

(संठाणं वाहल्लं पोहत्तं कइ पएस ओगाढे ।
अप्पाबहु पुट्ठपविट्ठ, विसय अणगार आहारे ॥ १ ॥
अद्दा य असी य मणी, दुद्धपाणे तेल्ल फाणिय वसाय ।
कंवल, थूणा थिग्गल दीवोदहि लोगाऽलोय ॥ २ ॥

(इति इंदियउद्देसो) इन दो गाथाओं द्वारा यह कहा गया है कि इन पचीस द्वारों से युक्त इन्द्रियों के प्रतिपादन करने वाले इन्द्रियनामक प्रज्ञापना सूत्र के पन्द्रहवें पद का प्रथम उद्देशक है-सो वह उद्देशक यहां सम्पूर्ण रूप से कह लेना चाहिये । ताकि इन्द्रिय संबंधी समस्त कथन

त्यथी श३ करीने (अलोक) सुधीनी पचीस द्वारोथी युक्त बे गाथाओ ग्रहणु करवी जोईओ ते बे गाथाओ नीचे प्रमाणे छे

(संठाणं वाहल्लं पोहत्त कइपएस ओगाढे)
(अप्पावहु पुट्ठपविट्ठ, विसय अणगार आहारे ॥ १ ॥
(अद्दाय असीय मणी, दुद्धपाणे तेल्ल फाणिय वसा य ।
(कवल थूणा थिग्गल दीवोदहि लोग ऽ लोय ॥ २ ॥

(इति इंदियउद्देसो) आ बे गाथाओ द्वारा ओ कहेवामा आव्युं छे के आ पचीश द्वारो वाळी, ईन्द्रियोनु प्रतिपादन करनार, प्रज्ञापना सूत्रना ईन्द्रिय नामना पदनो पहेलो उद्देशक छे, ते उद्देशक अही पूरे पूरो कहेवो जोइओ. तेम करवाथी ईन्द्रियो विषेनु समस्त वर्णन समजी शकाशे. ते

पादक इन्द्रियामिधपश्चदशपदस्य प्रथमउद्देश सर्वोऽत्र वाच्य इति भावः। तत्र "संठाण" इति संस्थानम् श्रोत्रेन्द्रियादीनां वक्तव्यम् संस्थानमाकारविशेषः तच्च संस्थानमिदम् श्रोत्रेन्द्रिय कदम्बपुष्पसंस्थितम्। चक्षुरिन्द्रियं मसूरकचन्द्र-संस्थितम् मसूरदालिकावत्, चन्द्रवच्च गोलाकार चक्षुरिन्द्रियमिति, घ्राणेन्द्रिय-मतिमुक्तकचन्द्रकसंस्थितम् अतिमुक्तकचन्द्रकइति पुष्पविशेषदलम् तथा चाति मुक्तकचन्द्रकपुष्पविशेषदलसन्निभं घ्राणेन्द्रियमिति। रसनेन्द्रिय क्षुरप्रसंस्थितम् क्षुरप्र घासोत्पाटनाय प्रयुज्यमान शस्त्रविशेष 'खुरपा' इति भाषाप्रसिद्धः' क्षुराकारवत् रसनेन्द्रियमिति। स्पर्शनेन्द्रिय नानाकार भवतीति संस्थानविचारः। "बाहल्ल" इति-इन्द्रियाणां श्रोत्रादीनां बाहल्य वक्तव्यम् तच्चेत्थम्-सर्वाणी-न्द्रियाणि अगुलाऽसख्येयभागबाहल्यानि २॥ 'पोहत्त" पृथुत्वम् इन्द्रियाणाम्,

अच्छी तरह से समज में आ जावे। इन दोनों गाथाओं का अर्थ इस प्रकार से है – (सठाण) द्वार में इन्द्रियों का आकार कैसा होता है यह प्रकट किया है-जैसे-श्रोत्रेन्द्रिय का आकार कदंब पुष्प के समान, चक्षु इन्द्रिय का आकार मसूर की दाल के समान, और चन्द्रमा के समान गोल है। घ्राणेन्द्रिय का आकार अति मुक्तक पुष्प के समान है। रसनेन्द्रिय का आकार क्षुरप्र – खुरपा के जैसा है। स्पर्शन इन्द्रिय का आकार नियत नहीं है। यह अनियत आकार वाली होती है। बाहल्ल द्वार में श्रोत्रादिक इन्द्रियोंका बाहल्य–जाडापना प्रकट किया गया है जो इस प्रकार से है – जितनी भी इन्द्रिया हैं वे सब अंगुल के असंख्या-तवें भाग प्रमाण मोटी हैं। पोहत्तद्वार में इन्द्रियों का पृथुत्व- लंबापना कहा गया है जो इस प्रकार से है-श्रोत्र, चक्षु और घ्राण इन का पृथुत्व अंगुल के असंख्यातवे भाग प्रमाण है। जिह्वा इन्द्रिय का पृथुत्व भी

બન્ને ગાથાઓનો અર્થ આ પ્રમાણે થાય છે-(સઠાણ) દ્વારમાં ઇન્દ્રિયોના આકારો કેવા હોય છે તે બતાવ્યું છે જેમકે શ્રોત્રેન્દ્રિય નો આકાર કદંબના પુષ્પ જેવો, ચક્ષુ ઇન્દ્રિયનો આકાર મસૂરની દાળ જેવો અને ચન્દ્રમા જેવો ગોળ હોય છે ઘ્રાણેન્દ્રિયનો આકાર મુક્તક પુષ્પ જેવો, રસના ઇન્દ્રિયનો આકાર ખુરપી જેવો છે અને સ્પર્શેન્દ્રિયનો કોઇ ચોક્કસ આકાર હોતો નથી (બાહલ્ય દ્વારમા) ઇન્દ્રિયોની જાડાઇનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે તે વર્ણન આ પ્રમાણે છે— જેટલી ઇન્દ્રિયો છે તે બધી આંગળના અસંખ્યાત ભાગ પ્રમાણ જાડી છે (પોહત્તદ્વાર) મા ઇન્દ્રિયોની દીર્ઘતાનું વર્ણન કર્યું છે તે વર્ણન આ પ્રમાણે છે-શ્રોત્ર, ચક્ષુ અને ઘ્રાણેન્દ્રિયની દીર્ઘતા એક આંગળના

तच्चेदम्-श्रोत्रचक्षुर्घ्राणानाम् अङ्गुलासंख्येयभागपरिमितं पृथुत्वम्. जिह्वेन्द्रियस्य नवाङ्गुलपरिमितं पृथुत्वम्। स्पर्शनेन्द्रियस्य शरीरमानम्. यस्य यादृश शरीरमल्पं वा वहु वा भवति तावदेव पृथुत्वम् तदीय स्पर्शेन्द्रियस्य भवति ३। "कइपएस" कतिप्रदेशम्. अनन्त प्रदेशिकानि पञ्चापीन्द्रियाणि अर्थात् प्रत्येकेन्द्रियेण असंख्याताऽसंख्याताऽऽकाशप्रदेशा अवगाढा प्रत्येकमिन्द्रिये अनन्ताऽनन्त पुद्गलाः सन्ति। अत एव पञ्चापीन्द्रियाणि अनन्तप्रदेशकानि सन्ति४ ॥'ओगाढे त्ति' अवगाढम्. असंख्येय-प्रदेशावगाढानि पञ्चापीन्द्रियाणि ५ ॥ " अप्पाबहु " इति अल्प बहुत्वम्. सर्वस्तोकं चक्षुरिन्द्रियमवगाहनातः, ततः श्रोत्रेन्द्रियं संख्यात-गुणम्। घ्राणेन्द्रियं संख्यात गुणम्। ततो रसनेन्द्रियमसंख्येयगुणम्. ततः स्पर्शने-

---

अंगुल प्रमाण है। स्पर्शन इन्द्रिय का पृथुत्व-अपने २ शरीर के प्रमाण तुल्य होता है जिसका शरीर जैसा छोटा बड़ा होता है उसकी स्पर्शन इन्द्रिय की पृथुता वैसी ही होती है। " कइपएस " द्वार में यह स्पष्ट किया गया है कि पांचों ही इन्द्रियां अनंत प्रदेशों से निष्पन्न हुई हैं। अर्थात् प्रत्येक इन्द्रियने असंख्यात२ आकाशप्रदेशोंका अवगाढ किया हैं, और एक एक इन्द्रियमें अनंत अनंत पुद्गल लगे हुए हैं। ओगाढ द्वार में यह कहा गया है कि ये समस्त इन्द्रियां असंख्यात प्रदेशों में अवगाढ हैं। अप्पा बहुत द्वार में यह समझाया गया है कि अवगाहना की अपेक्षा सब से स्तोक चक्षु इन्द्रिय है। चक्षु इन्द्रिय से संख्यातगुणी अवगाहना वाली श्रोत्रेन्द्रिय है। श्रोत्रेन्द्रिय से संख्यात-गुणी अवगाहनावाली घ्राणेन्द्रिय है। घ्राणेन्द्रिय से असंख्यातगुणी

અસંખ્યાતમાં ભાગપ્રમાણુ છે, જીભની દીર્ઘતા નવ આગળ પ્રમાણુ છે, સ્પર્શે-ન્દ્રિયની દીર્ઘતા પોત પોતાના શરીરના પ્રમાણુ જેટલી હોય છે શરીર જેવુ નાનુ કે મોટુ હોય છે તે પ્રમાણે જ સ્પર્શેન્દ્રિય પણ નાની મોટી દીર્ઘતા-વાળી હોય છે. (कइपएसे) નામના દ્વારમા એ સ્પષ્ટ કરવામા આવ્યુ. છે. કે પાચે ઇન્દ્રિયો અનત પ્રદેશોથી નિષ્પન્ન છે એટલે કે પ્રત્યેક ઇદ્રિયને અસં-ખ્યાત અસખ્યાત આકાશ પ્રદેશ અવગાઢયા છે અને દરેક ઇદ્રિયમા અનંત પુદ્ગલ લાગેલા છે (ओगाढ) દ્વારમાં એ બતાવ્યુ છે કે બધી ઈન્દ્રિયો અસખ્યાત પ્રદેશોમા અવગાઢે છે (अप्पाबहुय) દ્વારમાં એ બતાવ્યુ છે કે અવગાહનાની અપેક્ષાએ સૌથી સૂક્ષ્મ ચક્ષુઈન્દ્રિય છે ચક્ષુ ઈન્દ્રિયથી સખ્યાતગણી અવગાહના શ્રોત્રેન્દ્રિયની હોય છે શ્રોત્રેન્દ્રિયથી સખ્યાતગણી અવગાહના ઘ્રાણેન્દ્રિયની હોય છે ઘ્રાણેન્દ્રિયથી અસખ્યાત ગણી અવગાહના

न्द्रियं सख्येयगुणमिति ६ ॥ "पुट्ठ" स्पृष्टम् श्रोत्रादीनीन्द्रियाणि चक्षुर्व्यर्जि कानि स्पृष्टमर्थं गृह्णन्ति चक्षुरिन्द्रियमप्राप्यकारि इतराणि सर्वाण्यपीन्द्रिया प्राप्यकारीणि चक्षुर्विषयमप्राप्यैव विषयं प्रकाशयति इतराणि तु इन्द्रियाणि वि प्राप्यैव विषयप्रकाशकानि भवन्तीति भावः ७ ॥ एवमेव "पविट्ठ" प्रविष्ट चक्षुरिन्द्रियं वर्जयित्वा सर्वेन्द्रियेषु पुद्गलाः समागत्य प्रविशन्ति ।

चक्षुरिन्द्रिये तु पुद्गला न प्रविशन्ति, अप्राप्यकारित्वात् ८ ॥ 'विषये' विषयः सर्वेषामिन्द्रियाणां सामान्येन जघन्यतोऽङ्गुलासख्येयभागो विषयः । उत्क

अवगाहनावाली रसनाइन्द्रिय है । रसनाइन्द्रियकी अपेक्षा संख्यातगुणी अवगाहना वाली स्पर्शन इन्द्रिय है । (पुट्ठ द्वार में यह कहा गया है कि श्रोत्रादिक इन्द्रियां केवल चक्षु इन्द्रिय के सिवाय स्पृष्ट हुए अपने विषय को प्रकाशित करती हैं । चक्षु इन्द्रिय विषय को स्पर्शकर अपने ग्राह्य विषय को प्रकाशित नहीं करती है क्यों कि-अन्य इन्द्रियों की तरह यह प्राप्यकारी सिद्धान्त में नहीं कही गई है । जो अपने विषय को स्पर्शकर उसे प्रकाशित करती हैं वे इन्द्रियां प्राप्यकारी मानी गई हैं और ऐसी स्पर्शन रसना घ्राण और कर्ण ये चार इन्द्रियाँ हैं । (पविट्ठ) इस द्वार में यह समझाया गया है कि चक्षु इन्द्रिय को छोडकर बाकी चार इन्द्रियों में पुद्गल आकार प्रविष्ट होते हैं तभी जाकर वे अपने२ विषयों को ग्रहण कर सकती हैं । चक्षु इन्द्रिय में पुद्गल प्रविष्ट नहीं होते हैं-क्यों कि यह अप्राप्यकारी है (विसय) द्वार में यह स्पष्ट किया गया है कि समस्त इन्द्रियों का विषय सामान्य से

વાળી રસનાઇન્દ્રિય છે અને રસના ઇન્દ્રિય કરતા સખ્યાત ગણી અવગાહના સ્પર્શેન્દ્રિયની હોય છે (पुट्ठ) દ્વારમાં એ બતાવવામા આવ્યુ કે કેવળ ચક્ષુઇન્દ્રિય સિવાયની શ્રોત્રાદિક ઇન્દ્રિયો સ્પૃષ્ટ થયેલા (સ્પર્શ પામેલા) પોતાના વિષયને પ્રકાશિત કરે છે ચક્ષુઇન્દ્રિય વિષયનો સ્પર્શ કરીને પોતાના ગ્રાહ્ય વિષયને પ્રકાશિત કરતી નથી કારણ કે બીજી ઇન્દ્રિયોની જેમ તેને પ્રાપ્યકારી કહેલ નથી. જે ઇન્દ્રિયો પોતાના વિષયનો સ્પર્શ કરીને તેને પ્રકાશિત કરે છે તે ઇન્દ્રિયોને પ્રાપ્યકારી કહેવામાં આવે છે સ્પર્શેન્દ્રિય, ઘ્રાણેન્દ્રિય, રસનેન્દ્રિય અને શ્રોત્રેન્દ્રિય પ્રાપ્યકારી છે (पविट्ठ) આ દ્વારમા એવુ બતાવવામાં આવ્યુ છે ચક્ષુઇન્દ્રિય સિવાયની ચાર ઇન્દ્રિયોમાં જ્યારે પુદ્ગલો આવીને પ્રવેશ કરે છે ત્યારે જ તેઓ પોત પોતાના વિષયોને ગ્રહણ કરી શકે છે ચક્ષુઇન્દ્રિયમા પુદ્ગલો પ્રવેશતાં નથી કારણ કે તે અપ્રાપ્યકારી છે (વિસય) આ દ્વારમાં એ બતાવવામાં આવ્યુ છે કે બધી ઇન્દ્રિયોનો વિષય સામાન્ય

र्यतस्तु श्रोत्रेन्द्रियं शब्दान्तरैर्वातादिभिश्चाप्रतिहतं शब्दं द्वादशयोजनपर्यन्तं शृणोति। चक्षुपस्तु सातिरेकं योजनलक्षं विषयः। शेषाणां घ्राणरसनस्पर्शानां नव योजनानि विषयः ९। "अणगार" अनगार इति। अनगारस्य समुद्घातयुक्तस्य ये निर्जराः पुद्गलाः तान् छद्मस्थो मनुष्यो न पश्यतीति १०॥ "आहारे" आहारः–निर्जरान् पुद्गलान् नारकादयो न जानन्ति न पश्यन्ति न आहारयन्ति च॥

अत्र––द्वारगाथोक्तादशाख्यद्वादशद्वारादारभ्य चतुर्विंशतितमकोकद्वारपर्यन्तं बहुवक्तव्यमस्ति तत्तु सर्वं प्रज्ञापनासूत्रे इन्द्रियपदे प्रथमोद्देशके विलोकनीयम्

जघन्यरूप में अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण है। और उत्कृष्टरूप में श्रोत्र इन्द्रिय का विषय बारह योजनतकका है। यदि इसका वह शब्द-रूप विषय शब्दान्तरों द्वारा या प्रतिकूल वायु द्वारा प्रतिहत न किया गया हो तो श्रोत्रेन्द्रिय बारह योजनपर्यन्त के शब्द को विषय कर लेती है और चक्षु का विषय कुछ अधिक एक लाख योजनतक का है बाकी घ्राण, रसना और स्पर्शन इन तीन इन्द्रियों का अपना २ विषय नौ-नौ योजन तक का है। (अनगार) इस द्वार में यह समझाया गया है कि समुद्घात युक्त अनगार के जो निर्जरा संबंधी पुद्गल है उन्हें छद्मस्थ मनुष्य नहीं देख सकता है। (आहारे) इस द्वार में यह व्यक्त किया गया है कि निर्जरा संबंधी पुद्गलों को नारक जीव न जान सकते हैं, न देख सकते हैं किन्तु उनका आहार कर सकते हैं।

इन द्वार प्रदर्शक गाथाओं में कहे गये द्वारों में से ग्यारह द्वारों तक

રીતે ઓછામા ઓછો આગળના અસંખ્યાતમા ભાગ પ્રમાણ છે. અને વધારેમાં વધારે શ્રોત્રેન્દ્રિયનો વિષય બાર યોજન સુધીનો છે જો તેનો તે શબ્દરૂપ વિષય શબ્દાન્તરો દ્વારા કે પ્રતિકૂળ પવન દ્વારા પ્રતિહત થયો ન હોય તો શ્રોત્રેન્દ્રિય બાર યોજન પર્યન્તના શબ્દને ગ્રહણ કરી શકે છે ચક્ષુઈન્દ્રિય એક લાખ યોજન કરતા પણ દૂરના વિષયને ગ્રહણ કરી શકે છે. બાકીની ઈન્દ્રિયો-ઘ્રાણેન્દ્રિય, રસનેન્દ્રિય અને સ્પર્શેન્દ્રિય નવ નવ યોજન પર્યન્તના વિષયોને ગ્રહણ કરી શકે છે (અનગાર) આ દ્વારમાં એ વાત સમજાવી છે કે સમુદ્ઘાતથી યુકત અણગારના નિર્જરા સબંધી જે પુદ્ગલો હોય છે તેમને છદ્મસ્થ મનુષ્યો જોઈ શકતા નથી. (આહારે) આ દ્વારમાં એ બતાવવામા આવ્યુ છે કે નિર્જરા સબંધી પુદ્ગલોને નારક જીવો જાણી શકતા નથી, જોઈ શકતા નથી અને તેમનો આહાર પણ કરી શકતા નથી.

એ દ્વારપ્રદર્શન ગાથાઓમાં કહેલા અગિયાર દ્વારોનુ વિવેચન ઉપર

विस्तरभयाद्नोच्यते अथ ' जाव अलोगो इति पदेन पञ्चविंशतितमद्वारमाह—' अलोगेण भंते ' इत्यादि । "अलोगेण भंते ! किण्णा फुडे कइहिं वा काएहिं पुच्छा, गोयमा ! नो धम्मत्थिकाएणं फुडे जाव नो आगासत्थिकाएणं फुडे-आगासत्थिकायस्स देसेणं फुडे आगासत्थिकायस्स पएसेहिं फुडे, नो पुढवीकाएणं फुडे जाव नो अद्धासमएणं फुडे एगे अजीवदव्वदेसे अगुरुलहुएहिं अणंतेहिं अगुरुलहुयगुणेहिं संजुत्ते सव्वागासअणंतभागूणे "

छाया—अलोकः खलु भदन्त ! केन स्पृष्टः कतिभिर्वा कायैः " पृच्छा " गौतम ! नो धर्मास्तिकायेन स्पृष्टः यावत् नो आकाशास्तिकायेन स्पृष्टः आकाशास्तिकायस्य देशेन स्पृष्टः आकाशास्तिकायस्य प्रदेशैः स्पृष्टः नो पृथिवीकायेन स्पृष्टः यावत् नो अद्धासमयेन स्पृष्टः एकः अजीवप्रदेशः अगुरुलघुकैरनन्तैः अगुरुलघुकगुणैः संयुक्तः सर्वाकाशाऽनन्तभागोनः " इति "।

का तो विवेचन इस प्रकार से है बाकी के बारहवें आदर्श द्वार से चौवीस वे लोकद्वारतक जो और द्वार हैं उनके विषय में वक्तव्य बहुत है सो यह सब प्रज्ञापना सूत्र में, इन्द्रियपद में, प्रथम उद्देशक में देख लेना चाहिये, विस्तार हो जाने के भय से यहां नहीं कहा जाता है। (जाव अलोगो) इस पद द्वारा सूत्रकार ने पचीसवां द्वार कहा है, इस द्वार में गौतमस्वामी ने प्रभु से ऐसा प्रश्न किया है कि-(अलोगे णं भंते ! किण्णा फुडे, कइहिं वा काएहिं पुच्छा ? " उत्तर-(गोयमा ! नो धम्मत्थिकाएणं फुडे, जाव नो आगासत्थिकाएणं फुडे, आगासत्थिकायस्स देसेणं फुडे, आगासत्थिकायस्स पएसेहिं फुडे, नो पुढवीकाएणं फुडे, जाव नो अद्धा समएणं फुडे एगे अजीवदव्वदेसे अगुरुलहुएहिं अणंतेहिं अगुरुलहुय गुणेहिं संजुत्ते सव्वागास अणंतभागूणे)

પ્રમાણે છે બાકીના બારથી લઈને ચોવીસમા દ્વાર સુધીનું એટલે કે (આદર્શ દ્વાર) થી લઈ ને (લોકદ્વાર) સુધીનું વિવેચન વધારે લાંબુ છે વિસ્તાર થઈ જવાના ભયથી તે દ્વારોનું વિવેચન અહીં આપ્યુ નથી. તે વિવેચન પ્રજ્ઞાપના સૂત્રના પહેલા ઉદ્દેશકના (ઇન્દ્રિયપદ) માંથી વાંચી લેવું (जाव अलोगो) આ પદ દ્વારા સૂત્રકારે પચીસમાં દ્વારનો ઉલ્લેખ કર્યો છે આ દ્વારમાં ગૌતમ સ્વામીએ મહાવીર પ્રભુને પૂછયુ છે કે-(अलोगे णं भंते ! किण्णा फुडे, कइहिं वा काएहिं पुच्छा) ઉત્તર- (गोयमा ! नो धम्मत्थिकाएण फुडे, जाव नो आगासत्थिकाएण फुडे आगासत्थिकायस्स देसेण फुडे, आगासत्थिकायस्स पएसेहिं फुडे नो पुढवीकाएण फुडे जाव नो अद्धासमए ण फुडे, एगे अजीवदव्वदेसे अगुरुलहुएहिं अणंतेहिं अगुरुलहुयगुणेहिं संजुत्ते सव्वागास अणंत

"अलोगेणं भंते किण्णा फुडे" अलोकः खलु भदंत ! केन स्पृष्टः? "कइहिं काएहिं पुच्छा" कतिभिर्वाकायैः पृच्छा हे भगवन् ! अलोकं कः स्पृशति कियन्तः कायाः अलोकं स्पृशन्तीति अलोकस्पर्शविषयकः प्रश्नो गौतमस्य ! भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि "गोयमा" हे गौतम ! 'नो धम्मत्थिकाएणं फुडे जाव नो आगासत्थिकाएणं फुडे" नो धर्मास्तिकायेन स्पृष्टो यावन्नो आकाशास्तिकायेन स्पृष्टः इह यावत्पदेन अधर्मास्तिकाय–जीवास्तिकाय–पुद्गलास्तिकायानां संग्रहो भवति. किन्तु "आगासत्थिकायस्स देसेणं फुडे. आगासत्थिकायस्स पएसेहिं फुडे" आकाशास्तिकायस्य प्रदेशैः स्पृष्टः आकाशास्तिकायस्य देशप्रदेशाभ्यां स्पृष्टो भवत्यलोक इत्यर्थः ।

"नो पुढवीकाएणं फुडे, जाव नो अद्धासमएणं फुडे" नो पृथिवीकायेन

इसका अर्थ इस प्रकार से है–गौतमस्वामी प्रभु से प्रश्न करते हैं कि–हे भदन्त ! अलोकाकाश किस द्रव्यसे अथवा कितने कायों से स्पष्ट है ? तब गौतम स्वामी को समझाते हुए प्रभु कहते हैं कि हे गौतम ! अलोकाकाश किसी भी द्रव्य से किसी अस्तिकाय से स्पृष्ट नहीं है, न वह धर्मास्तिकाय से स्पृष्ट है, और न वह यावत्–आकाशास्तिकाय से स्पृष्ट है। यहां जो (जाव) पद आया है उससे (अधर्मास्तिकाय, जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय) इन तीन अस्तिकायों का ग्रहण किया गया है। तात्पर्य यह कि अलोकाकाश में न कोई द्रव्य है और न कोइ अस्तिकाय ही है–किन्तु वह अलोकाकाश (आगासत्थिकायस्स देसेणं फुडे) आकाशास्तिकाय के देश से स्पृष्ट है, (आगासत्थिकायस्स पएसेहिं फुडे) आकाशास्ति काय प्रदेशों से स्पृष्ट है। (नो पुढवी काएणं फुडे, जाव नो अद्धासमएणं फुडे) पृथिवीकाय

भागूणे) તેનો અર્થ આ પ્રમાણે છે ગૌતમ સ્વામી પૂછે છે–હે ભદન્ત ! આલોકાકાશ કયા દ્રવ્યથી અથવા કેટલા અસ્તિકાયોથી સ્પૃષ્ટ છે? ઉત્તર- હે ગૌતમ ! આલોકાકાશ કોઇ પણ દ્રવ્યથી, કે કોઇ પણ અસ્તિકાયથી સ્પૃષ્ટ નથી. તે ધર્માસ્તિકાયથી લઇને આકાશાસ્તિકાય પર્યન્તના કોઇ પણ અસ્તિકાયથી સ્પૃષ્ટ નથી અહીં જે (जाव) પર્યન્ત પદ આવ્યું છે તેના દ્વારા અધાર્માસ્તિકાય, જીવાસ્તિકાય અને પુદ્ગલાસ્તિકાયને ગ્રહણ કરવામાં આવ્યા છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે અલોકાકાશમા કોઇ દ્રવ્ય પણ નથી અને કોઈ અસ્તિકાય પણ નથી પણ તે અલોકાકાશ (अगासत्थिकायस्स देसेण फुडे) આકાશાસ્તિકાયના દેશથી સ્પૃષ્ટ છે, (आगासत्थिकायस्स पएसेहिं फुडे) આકાશાસ્તિકાયના પ્રદેશથી સ્પૃષ્ટ છે. (नो पुढवीकाएणं फुडे, जाव नो अद्धासम

स्पृष्ट यावत् नो अद्धासमयन स्पृष्ट अयमलोको न पृथिवीकायन स्पृश्यते न वा यावत् अद्धासमयन स्पृष्टो भवतीति । यदि न कोऽपि समलोक स्पृशति तदा कीदृशोऽसौ पदार्थस्तत्राह " एगे अजीवदव्वदेसे अगुरुलहुएहिं अणतेहिं अगुरु लहुयगुणेहि सजुत्ते " एक अजीवद्रव्यप्रदेश अगुरुलघुभिरनन्तै अगुरुलघुगुणै- सयुक्त " सव्वागासअणतभागूणे " सर्वाकाशाऽनन्तभागोनः अयमलोक । यो धर्मास्तिकायादिभिर्नस्पृष्टो भवति स च न, खरविषाणवत् अत्यन्तमसत् किन्तु

से यह अलोकाकाश स्पृष्ट नहीं है यावत्–अद्धासमय से यह अलोकाकाश स्पृष्ट नहीं है–इस प्रकार प्रभु का कथन सुनकर प्रभु से गौतम स्वामी ने पूछा–हे भदन्त ! जब अलोकाकाश को कोई द्रव्य या कोई अस्तिकाय स्पर्श नहीं करता है तो यह अलोकाकाशरूप पदार्थ कैसा है ? इस विषय को गौतमस्वामी को लिए समझाते हुए प्रभु उनसे कहते हैं–(एगे अजीवदव्वदेसे अगुरुलहुएहिं अणतेहिं अगुरुलहुयगुणेहिं सजुत्ते) यह अलोकाकाशरूप पदार्थ एक अजीव द्रव्य का देश रूप पदार्थ है और यह अनन्त अगुरुलघुगुणों से संयुक्त है । (सव्वागास अणंतभागूणे) तथा अनन्तभाग से न्यून हुआ सर्वाकाशरूप है । यहां पर कोइ ऐसी आशका न कर सके कि (जब अलोकाकाश धर्मास्तिकायादिकों से स्पृष्ट नहीं है तो फिर यह खरवीषाण की तरह अत्यन्त असत् हो हुआ–क्यों कि यह अजीव द्रव्य प्रदेशरूप है, तथा अनंत

पर्श કરે) તે અલોકાકાશ પૃથ્વીકાયથી સ્પૃષ્ટ નથી અદ્ધાસમય પર્યન્તના પણ અસ્તિકાયોથી સ્પૃષ્ટ નથી.

ભગવાનનું આ પ્રકારનું કથન સાંભળીને ગૌતમ સ્વામીએ પૂછયું–હે ભદન્ત ! જો અલોકાકાશને કોઇ પણ દ્રવ્ય કે અસ્તિકાય સ્પર્શતા નથી તો તે અલોકાકાશરૂપ પદાર્થ કેવો છે ? તે વિષયનું સ્પષ્ટીકરણ કરવા માટે પ્રભુ તેમને કહે છે કે (एगे अजीवदव्वदेसे अगुरुलहुएहिं अणंतेहिं अगुरुलहुय गुणेहिं सजुत्ते) તે અલોકાકાશરૂપ પદાર્થ એક અજીવ દ્રવ્યના દેશ રૂપ પદાર્થ છે અને તે અનત અગુરુલઘુ ગુણોથી યુક્ત છે (सव्वागास अणंतभागूणे) તથા અનત ભાગથી ન્યૂન એવા સર્વાકાશ રૂપ છે અહીં કોઇ એવા પ્રકાર ની શકા ન કરી શકે કે (જો અલોકાકાશ ધર્માસ્તિકાય આદિથી સ્પૃષ્ટ નથી તો તે કલ્પનાના ઘોડાના જેવું અત્યત અસત્ જ માનવું પડે– કારણ કે તે અજીવ દ્રવ્ય પ્રદેશરૂપ છે, તથા અનત અગુરુલઘુ ગુણોથી તે યુક્ત છે અને

"अलोगेणं भंते किण्णा फुडे" अलोकः खलु भदंत ! केन स्पृष्टः? "कइहिं काएहिं पुच्छा" कतिभिर्वाकायैः पृच्छा हे भगवन् ! अलोकं कः स्पृशति कियन्तः कायाः अलोकं स्पृशन्तीति अलोकस्पर्शविषयकः प्रश्नो गौतमस्य ! भगवानाह—'गोयमा' इत्यादि "गोयमा" हे गौतम ! 'नो धम्मत्थिकाएणं फुडे जाव नो आगासत्थिकाएणं फुडे" नो धर्मास्तिकायेन स्पृष्टो यावन्नो आकाशास्तिकायेन स्पृष्टः इह यावत्पदेन अधर्मास्तिकाय-जीवास्तिकाय-पुद्गलास्तिकायानां संग्रहो भवति. किन्तु "आगासत्थिकायस्स देसेणं फुडे. आगासत्थिकायस्स पएसेहिं फुडे" आकाशास्तिकायस्य प्रदेशैः स्पृष्टः आकाशास्तिकायस्य देशप्रदेशाभ्यां स्पृष्टो भवत्यलोक इत्यर्थः ।

"नो पुढवीकाएणं फुडे, जाव नो अद्धासमएणं फुडे" नो पृथिवीकायेन

इसका अर्थ इस प्रकार से है-गौतमस्वामी प्रभु से प्रश्न करते हैं कि-हे भदन्त ! अलोकाकाश किस द्रव्यसे अथवा कितने कायों से स्पष्ट है? तब गौतम स्वामी को समझाते हुए प्रभु कहते हैं कि हे गौतम ! अलोकाकाश किसी भी द्रव्य से किसी अस्तिकाय से स्पृष्ट नहीं है, न वह धर्मास्तिकाय से स्पृष्ट है, और न वह यावत्-आकाशास्तिकाय से स्पृष्ट है। यहां जो (जाव) पद आया है उससे (अधर्मास्तिकाय, जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय) इन तीन अस्तिकायों का ग्रहण किया गया है। तात्पर्य यह कि अलोकाकाश में न कोई द्रव्य है और न कोइ अस्तिकाय ही है-किन्तु वह अलोकाकाश (आगासत्थिकायस्स देसेणं फुडे) आकाशास्तिकाय के देश से स्पृष्ट है, (आगासत्थिकायस्स पएसेहिं फुडे) आकाशास्ति काय प्रदेशों से स्पृष्ट है। (नो पुढवी काएणं फुडे, जाव नो अद्धासमएणं फुडे) पृथिवीकाय

भागुणे) तेनो अर्थ आ प्रमाणे छे गौतम स्वामी पूछे छे-हे भदन्त! आलोकाकाश कया द्रव्यथी अथवा केटला अस्तिकायोथी स्पृष्ट छे? उत्तर-हे गौतम! आलोकाकाश कोइ पण द्रव्यथी, के कोइ पण अस्तिकायथी स्पृष्ट नथी. ते धर्मास्तिकायथी लईने आकाशास्तिकाय पर्यन्तना कोइ पण अस्तिकायथी स्पृष्ट नथी अहीं जे (जाव) पर्यन्त पद आव्युं छे तेना द्वारा अधार्मास्तिकाय, जीवास्तिकाय अने पुद्गलास्तिकायने ग्रहण करवामा आव्या छे. कहेवानु तात्पर्य ए छे के अलोकाकाशमा कोइ द्रव्य पण नथी अने कोई अस्तिकाय पण नथी पण ते अलोकाकाश (अगासत्थिकायस्स देसेणं फुडे) आकाशास्तिकायना देशथी स्पृष्ट छे, (आगासत्थिकायस पएसेहिं फुडे) आकाशास्तिकायना प्रदेशथी स्पृष्ट छे. (नो पुढवीकाएण फुडे, जाव नो अद्धासम

लोके सर्वेन लोकाभावविरोधिनो लोकस्य कथमवस्थानम् अनवस्थाने च लोकस्यालोके स्पर्शः न हि अविद्यमानस्य स्पर्शः क्वचिद् दृष्टः श्रुतः संभवतिवेति आकाशास्तिकायस्य देशप्रदेशाभ्यामलोकस्य स्पर्शो भवति आकाशास्तिकाय देशप्रदेशयोरलोकाग्रसलग्नत्वात् एकश्चासौ अलोक अजीवद्रव्यप्रदेश आकाशद्रव्यदेशरूपत्वादिति ॥ सू० १ ॥

इति श्री विश्वविख्यात–जगद्वल्लभ – प्रसिद्धवाचकपञ्चदशभाषाकलितललितकलापालापक–प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक– वादिमानमर्दक–श्रीशाहू छत्रपतिकोल्हापुरराजप्रदत्त 'जैनशास्त्राचार्य' पदभूषित–कोल्हापुरराजगुरु–बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकरपूज्यश्री घासीलालव्रतिविरचिता श्री भगवतीसूत्रस्य प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां व्याख्यायां द्वितीयशतकस्य चतुर्थों देशक समाप्तः

अवस्थान कैसे माना जा सकता है। इस लिये जब वहां लोक का अवस्थान (अन्त)ही नहीं है तो फिर लोक का अलोक में स्पर्श कैसा। जो वस्तु जहां अविद्यमान होती है उसका स्पर्श वहां नहीं होता है। अविद्यमान वस्तु का स्पर्श न कहीं सुना गया है और न कहीं देखा भी गया है। आकाशास्तिकाय के देश प्रदेशों द्वारा अलोक का स्पर्श होता है ऐसा जो कहा गया है सो उसका कारण यह है कि आकाशास्तिकाय के देश और प्रदेश में अलोक का अग्रभाग संलग्न है। यह अलोकाकाश एक है और आकाशद्रव्य देशरूप होने के कारण यह अजीव द्रव्य का देश और प्रदेशरूप है ॥ सू० १ ॥

जैनाचार्य श्री घासीलालजी महाराजकृत "भगवती सूत्र" की प्रियदर्शिनी व्याख्या के द्वितीय शतक के चौथा उद्देशक समाप्त

કેવી રીતે માની શકાય ? તેથી જ ત્યાં જો લોકનું અવસ્થાન જ નથી તો લોકનો અલોકને સ્પર્શ પણ કેવી રીતે સંભવી શકે ? જે વસ્તુ જ્યાં મોજૂદ જ ન હોય ત્યાં તેનો સ્પર્શ જ સંભવી શકે નહીં અવિદ્યમાન વસ્તુનો સ્પર્શ કોઇ પણ ઠેકાણે દેખ્યો નથી કે સાંભળ્યો નથી આકાશાસ્તિકાયના દેશ અને પ્રદેશો દ્વારા અલોકનો સ્પર્શ થાય છે એમ જે કહેવામાં આવ્યું છે તેનું કારણ એ છે કે આકાશાસ્તિકાયના દેશ અને પ્રદેશોમાં અલોકનો અગ્રભાગ સલગ્ન છે તે અલોકાકાશ એક છે અને આકાશદ્રવ્ય દેશરૂપ હોવાને લીધે તે અજીવદ્રવ્યના પ્રદેશરૂપ છે ॥ ૧ ॥

જૈનાચાર્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ કૃત ભગવતી સૂત્રની પ્રિયદર્શિની વ્યાખ્યાના બીજા શતકનો ચોથો ઉદ્દેશો સમાપ્ત થયો

अगुरुलघुरूपः अजीवद्रव्यप्रदेशस्तथाऽनन्तागुरुलघुकगुणविशिष्टः सर्वाकाशान्तभागन्यूनः, लोकाकाश विरहात् ' यतोऽयमाकाशस्य स्वरूपभूतोऽनन्ता गुरुलघुकगुणैः स्पृष्टोऽत एव नायमलोकोऽत्यंतमसत् भवति किन्तु सद्रूप एव केवलं पृथिव्यादिकायैः धर्मास्तिकायादिना समयेन च अस्पृष्टः न व्याप्त इत्यर्थः। कुतोऽलोकमाकाशास्तिकायादयो न स्पृशन्ति इति चेदत्रोच्यते, यदि पृथिव्यादयः अलोके भवेयुस्तदा पृथिव्यादय एव लोकपदवाच्याः पृथिव्यादि कायादिना आलोकस्य स्पर्शो भवेत् किन्तु नत्वेवम् तत्रालोके पृथिव्यादि कायादीनामवर्तमानत्वादेवालोकस्यालोकत्वम् यत् तत्र लोकस्याभावो विद्यते। ततश्च लोकाभावस्या-

अगुरुलघुगुणों से यह विशिष्ट है। एवं लोकाकाश के इसमें विरह होने से यह अनंतभागन्यून सर्वाकाशरूप है। अतः जब यह अलोकाकाश आकाश का स्वरूप भूत है और अनंत अगुरुलघुगुणों से युक्त है तब यह खरविषाण की तरह अत्यन्त असत् रूप नहीं हो सकता है। किन्तु यह एक सद्रूप पदार्थभूत ही है। लोकाकाश की तरह यह केवल पृथिव्यादिक कायो द्वारा, धर्मास्तिकयादिक द्वारा और समयद्वारा स्पृष्ट नहीं हुआ है-व्याप्त नहीं हुआ है। यह अलोकाकाश आकाशास्तिकायादिकों द्वारा स्पृष्ट क्यों नहीं होता है ? तो इसका उत्तर यह है कि-यदि पृथिव्यादिक काय अलोकाकाश में होते तो वे उसे स्पर्श करते वहां तो पृथिव्यादिक काय हैं ही नहीं-तब इसे स्पर्श कौन करे। अलोक में अलोकता इसी कारण से तो है कि वहां पर पृथिव्यादिक कायरूप लोक नहीं है। जिस कारण वहां लोक का अभाव है इसी कारण अलोके में लोकाभाव का सत्व है, अतःलोकाभाव के विरोध लोक का वहां

તેમા લોકાકાશને વિરહ (અભાવ હોવાથી તે અનત ભાગ ન્યૂન સર્વાકાશ રૂપ છે.) તે માટે નીચે પ્રમાણે ખુલાસો કર્યો છે—આ અલોકાકાશ આકાશ ના સ્વરૂપ ભૂત છે અને અનત અગુરુલઘુ ગુણોથી યુક્ત છે તેથી તે કલ્પનાના ઘોડા જેવુ અસત્ રૂપ હોઇ શકે નહી પણ તે એક સદ્રૂપ (અસ્તિત્વ ધરાવનાર) પદાર્થ રૂપ છે લોકાકાશની જેમ તે ફક્ત પૃથ્વી આદિ કાયો દ્વારા, ધર્માસ્તિકાય આદિ દ્વારા અને સમય દ્વારા સ્પૃષ્ટ નથી—વ્યાપ્ત નથી તે અલોકાકાશ આકાશાસ્તિકાય આદિ દ્વારા સ્પૃષ્ટ કેમ નથી ?

ઉત્તર —જો પૃથ્વીકાય આદિ અલોકાકાશમાં હોત તો તેઓ તેને સ્પર્શ કરતા હોત પણ ત્યા તો પૃથ્વીકાય આદિ છે જ નહી —તો તેને સ્પર્શ કોણ કરે! અલોકમા અલોકતા એ કારણે જ રહેલી છે કે ત્યા પૃથ્વીકાય આદિ કાય રૂપ લોક નથી જે કારણે ત્યા લોકને અભાવ છે તેજ કારણે અલોકમા લોકાભાવનુ સત્વ છે, તેથી લોકાભાવથી વિરોધી લોકનુ ત્યાં અવસ્થાન-અસ્તિત્વ

अण्णेसिं देवाण देवीओ आहिजुंजिय आहिजुंजिय परियारेइ णो अप्पणिच्चियाओ देवीओ अहिजुजिय अहिजुजिय परियारेइ अप्पणामेव अप्पाण विउव्विय विउव्विय परियारेइ, एगे वि य ण जीवे एगेण समएण दो वेय वेएइ त जहा इत्थिवेय पुरिसवेय च एव परउत्थियवत्तव्वया नेयव्वा जाव इत्थिवेय च पुरिसवेय च से कहमेय भते एवं? गोयमा ज ण ते अन्नउत्थिया एव आइक्खति जाव इत्थिवेय च पुरिसवेय च जे ते एव आहसु मिच्छंते एव आहसु अह पुण गोयमा! एव आइक्खामि भासामि पन्नवेमि परूवेमि एव खलु णियठे कालगए समाणे अन्नयरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवइ महड्डिएसु जाव महाणुभावेसु, दूरगइएसु चिरट्टिईएसु, से णं तत्थ देवे भवइ महड्डिए जाव दसदिसाओ उज्जोवेमाणे, पभासेमाणे जाव पडिरूवे सेण तत्थ अन्नेदेवे अन्नेसिं देवाण देवीओ अभिजुजिय अभिजुजिय परियारेइ, अप्पणिच्चियाओ देवीओ अभिजुजिय अभिजुजिय परियारेइ नो अप्पणामेव अप्पाणं विउव्विय, विउव्विय परियारेइ, एगेवि य ण जाव एगेण समएणं एग वेय वेएइ । त जहा इत्थिवेय वा पुरिसवेयं वा ज समय इत्थियवेय वेएइ णो तं समय पुरिसवेय वेएइ ज समय पुरिसवेय वेएइ, नो त समय इत्थियवेय वेएइ इत्थियवेयस्स उदएण नो पुरिसवेय वेएइ, पुरिसवेयस्स उदयेणं नो इत्थियवेय वेएइ एव खलु एगे जीवे

॥ द्वितीयशतके पञ्चमोद्देशकः प्रारभ्यते ॥

द्वितीयशतके चतुर्थमुद्देशकं निरूप्य तदनन्तरम् पञ्चमोद्देशको निरूप्यते. चतुर्थपञ्चमोद्देशकयोरयं संवन्धः चतुर्थोद्देशके इन्द्रियाणि उक्तानि. इन्द्रियवलादेव विषयभोगरूपा परिचारणासंभवेदित्यतस्तन्निरूपणाय तथा द्वितीयशतकादौ द्वार गाथायम् "अन्नउत्थिय" इति कथितमित्यन्ययूथिकवक्तव्यता प्रतिपादनाय च पञ्चमोद्देशकः प्रारभ्यते, तदनेन संवन्धेनायातस्य पञ्चमोद्देशकस्येदमादिमं सूत्रम्–" अण्णउत्थिया " इत्यादि—

मूलम्–अण्णउत्थियाणं भंते ! एवं आइक्खंति भासंति पन्नवेन्ति, परूवेंति, तं जहा–एवं खलु नियंठे कालगए समाणे देवब्भूएणं अप्पाणेणं से णं तत्थ णो अन्ने देवे. नो

दूसरे शतकका पांचवां उद्देशक प्रारम्भ—

द्वितीयशतक में चौथे उद्देशक का निरूपण करके अब सूत्रकार पंचम उद्देशक निरूपण करते हैं। चतुर्थ उद्देशक का और इस पचम उद्देशक का संबंध इस प्रकार से है – चतुर्थ उद्देशक में इन्द्रियां कही गई हैं – सो उन इन्द्रियों के बल से ही विषय भोगरूप परिचारणा हो सकती है। इसलिये उस विषय भोगरूप परिचारणा को निरूपण करने के लिये तथा द्वितीय – शतक की आदि में द्वार गाथा में (अन्न उत्थिय) इस रूप से कथित अन्य – यूथिकों की वक्तव्यता को प्रतिपादन करने के लिये सूत्रकार ने इस पंचम उद्देशक का प्रारंभ किया है। इस संबंध से आये हुए इस पंचम उद्देशक का यह आदि सूत्र है—(अण्ण उत्थिया णं भंते ! ' इत्यादि ।

બીજા શતકનો પાંચમો ઉદ્દેશક પ્રારંભ

બીજા શતકના ચોથા ઉદ્દેશકનુ નિરૂપણ પૂરૂ કરીને હવે સૂત્રકાર પાચમા ઉદ્દેશકનું નિરૂપણ કરે છે ચોથા ઉદ્દેશક સાથે પાચમા ઉદ્દેશકનો સબધ આ પ્રમાણે છે–ચોથા ઉદ્દેશકમા ઇન્દ્રિયોનુ નિરૂપણ કર્યું છે તે ઇન્દ્રિયો દ્વારા જ વિષય ભોગરૂપ પરિચારણા થઇ શકે છે તેથી તે વિષય ભોગરૂપ પરિચારણાનું નિરૂપણુ કરવા માટે તથા બીજા શતકની શરૂઆતમાં આવતી દ્વારગાથામાં (अन्न उत्थिय) અન્ય યૂથિકો (અન્ય મતવાદીઓ) નું પ્રતિપાદન કરવા માટે સૂત્રકારે આ પાચમો ઉદ્દેશક શરૂ કર્યો છે આ પ્રકારના સંબધથી શરૂ થતા આ પાંચમા ઉદ્દેશકનુ પહેલુ સૂત્ર આ પ્રમાણે છે—(अण्ण उत्थिया णं भंते !) ૯૦

परिचारयति एकोऽपि च खलु जीवः एकेन समयेन द्वौ वेदौ वेदयति । तद् यथा स्त्रीवेदं च पुरुषवेदं च एवं परयूथिकवक्तव्यता नेतव्या, यावत् स्त्रीवेदं च पुरुषवेदं च तत्कथमेतद् भदन्त ! एवम्, गौतम ! यत् खलु ते अन्ययूथिका एवमाख्यान्ति यावत् स्त्रीवेदं च पुरुषवेदं च, यत्ते एवमाहुर्मिथ्या ते एवमाहुः अहं पुन गौतम! एवमाख्यामि भाषे प्रज्ञापयामि प्ररूपयामि, एवं खलु निर्ग्रंथः कालगतः सन् अन्य

यपरियारेइ) वह देव अपने आप से अर्थात्-अपनी विक्रियाशक्ति से अपने दो रूप बनाता है इनमें एक रूप देव का होता है और दूसरारूप देवी का होता है । इस तरह दो रूप में विभक्त हुआ वह देव स्वयं ही देवीरूपमें विभक्त हुए अपने ही दूसरे रूप के साथ विषयभोग करता है इस तरह (एगे वि य णं जीवे एगेणं समएणं दो वेए वेएइ) एक ही जीव एक ही समय में दो वेदों का अनुभव करता है । (तं जहा) वे दो वेद इस प्रकार से हैं (इत्थिवेयं च पुरिसवेयं च) एक स्त्रीवेदका और दूसरे पुरुषवेदका । (एवं परउत्थिय वत्तव्वया नेयव्वा) इस प्रकारसे परतीर्थिक जनोंकी वक्तव्यता जाननी चाहिये (जाव इत्थियवेयं च पुरिसवेयं च) यावत स्त्री वेद और पुरुषवेद तक (से कहमेयं भंते एवं) तो क्या हे भदन्त! यह परतीर्थिक जनों की मान्यता ठीक है ? (गोयमा) हे गौतम ! (जं णं ते अन्नउत्थियाएवं आइक्खंति जाव इत्थियवेयं च पुरिसवेयं च) हे गौतम! जो वे अन्यतीर्थिक जन ऐसा कहते हैं यावत् एक जीव एक समयमें दो वेदों को-स्त्रीवेदको और पुरुष वेद-अनुभवता है (जे

परियारेइ) ते દેવ પોતાની વૈક્રિય શક્તિથી પોતાના બે રૂપ બનાવે છે. તેમાનું એક રૂપ દેવનું અને બીજૂ દેવીનું હોય છે આ રીતે બે સ્વરૂપમાં વિભક્ત થયેલો તે દેવ દેવીરૂપે વિભક્ત થયેલા પોતાનાજ બીજા રૂપની સાથે વિષયભોગ સેવે છે આ રીતે (एगे वि य णं जीवे एगेणं समएणं दो वेए वेएइ) એક જ જીવ એક જ સમયે બે વેદોનો અનુભવ કરે છે (तंजहा) તે બે વેદ આ પ્રમાણે છે-(इत्थिवेयं च पुरिसवेयं च) (૧) સ્ત્રીવેદ અને (૨) પુરુષવેદ (एवं परउत्थियवत्तव्वया नेयव्वा) આ પ્રમાણેનું અન્ય મતવાદીઓનું વક્તવ્ય છે તેમ સમજવું (जाव इत्थियवेयं च पुरिसवेयं च) સ્ત્રીવેદ પુરુષવેદ પર્યન્તનું (से कहमेयं भंते एवं) હે ભદન્ત ! અન્યમતવાદીઓની તે માન્યતા શું સાચી છે ? હે (गोयमा !) હે ગૌતમ ! (जं णं ते अन्नउत्थिया एवं आइक्खंति जाव इत्थिवेयं च पुरिसवेयं च) અન્યમતવાદિઓ એવું જે કહે છે કે એકજ જીવ એક જ સમયે સ્ત્રીવેદ અને પુરુષવેદનો અનુભવ કરે છે (અહીં

एगेणं समएणं एगं वयं वेएइ तं जहा इत्थिवेयं वा पुरिसवेयं वा इत्थी इत्थिवेएणं उदिण्णेणं पुरिसं पत्थेइ, पुरिसो पुरिसवेएणं उदिण्णेणं इत्थिं पत्थेइ, दो वि ते अण्णमण्णं पत्थेंति तं जहा इत्थी वा पुरिसं, पुरिसे वा इत्थिं ॥सू०१॥

छाया—अन्य यूथिकाः खलु भदन्त ! एवमाख्यांति भाषन्ते प्रज्ञापयन्ति प्ररूपयन्ति । तद् यथा एवं खलु निर्ग्रंथः कालगतः सन् देवभूतेनात्मना स खलु तत्र नोऽन्यान् देवान् , नोऽन्येषां देवानां देवीरभियुज्याभियुज्य परिचारयति, नो आत्मीया देवीरभियुज्याभियुज्य परिचारयति । आत्मनैवात्मानं विकुर्व्य विकुर्व्य

सूत्रार्थ-(भंते ? अन्नउत्थियाणं एवं आइक्खंति, भासंति, पन्नवेंति परूवेंति) हे भदन्त ! अन्यतीर्थिकजन ऐसा कहते हैं, ऐसा भाषण करते हैं, ऐसी प्रज्ञापना करते हैं ऐसी प्ररूपणा करते हैं (तंजहा) कि (एवं खलु नियंठे कालगए समाणे) जब निर्ग्रन्थ कालगत हो जाता है तब वह (देवभूएणं तु अप्पाणेणं) देव की पर्याय से देवलोक में उत्पन्न हो जाता है। उस पर्याय से (से णं) वह (नो अन्ने देवे) न अन्यदेवों को, तथा (नो अन्नेसिं देवाण देवीओ) न अन्य देवों की देवियों को (अहिजुंजिय अहिजुंजिय) अपने वश में कर करके (परियारेइ) विषयभोग करता है (णो अप्पणिच्चियाओ देवीओ अहिजुंजिय अहिजुंजिय परियारेइ) और न अपनी देवियों को वश में करके उनके साथ विषय भोग करता है किन्तु (अप्पणामेव अप्पाणं विउव्वि-

---

सूत्रार्थ-(भंते ! अन्नउत्थिकाण एवं आइक्खति भासति, पन्नवेंति, परूवेंति) હે ભદન્ત ! અન્ય મતવાદીઓ એવુ કહે છે, એવું ભાષણ કરે છે, એવી પ્રજ્ઞાપના કરે છે, એવી પ્રરૂપણા કરે છે (तंजहा) કે (एवं खलु नियंठे कालगए समाणे) જ્યારે નિર્ગ્રંથ કાળ પામે છે ત્યારે (देवभूएणं तु अप्पाणेणं) તે દેવલોકમાં દેવની પર્યાયે ઉત્પન્ન થાય છે તે પર્યાયમાં ઉત્પન્ન થયેલ (से ण) તે (नो अन्नेदेवे, नो अन्नेसिं देवाण देवीओ) અન્ય દેવોને અથવા અન્ય દેવોની દેવીઓને (अहिजुंजिय अहिजुंजिय) પોતાને વશ કરીને (परियारेइ) વિષયભોગ ભોગવતો નથી, (णो अप्पणिच्चियाओ देवीओअहिजुंजिय अहिजुंजिय परियारेइ) અથવા તો પોતાની દેવીઓને વશ કરીને તેમની સાથે વિષયભોગ કરતો નથી પણ (अप्पणामेव अप्पाण विउव्विय विउव्विय

परिचारयति आत्मीयादेवीरभियुज्याभियुज्य परिचारयति नो आत्मनैवात्मानं विकुर्व्य विकुर्व्य परिचारयति। एकोऽपि च खलु जीव एकस्मिन् समये एकं वेदं वेदयति तद्-यथा स्त्रीवेद वा पुरुषवेद वा यस्मिन् समये स्त्रीवेदं वेदयति नो तस्मिन् समये पुरुषवेद वेदयति, यस्मिन् समये पुरुषवेदं वेदयति नो तस्मिन्

दिशाओं को प्रकाशित करता है देदीप्यमान करता है। यावत् प्रत्येक देखने वाले को जिसके रूप में नवीनता ही नवीनता दिखलाई पड़ती है।(से ण तत्थ अन्ने दवे अन्नेसिं देवाण देवीओ) वह वहांपर अन्य दूसरे देवों को तथा देवों कि देवियों को (अभिजुंजिय अभिजुंजिय) अपने वश में करके (परियारेइ) उनके साथ वैषयिक सुख भोगता है। (नो अप्पणामेव अप्पाणं विउव्वियपरियारेइ) अपने आपके विक्रियाशक्ति से देवी और देव के दो रूप बना कर वैषयिक सुखों का भोग नहीं करता है। (एगे वि य णं जीवे एगेण समएणं एगं वेय वेएइ) इसी तरह एक जीव एक समयमें एक ही वेदका अनुभव करता है। (त जहा) जो इस प्रकारसे है (इत्थिवेयं वा पुरिसवेय वा) स्त्रीवेद का अथवा पुरुषवेद का दोनों वेदों का एक ही समय में एक जीव अनुभव नहीं करता क्यों कि (जं समयं इत्थिय वेयं वेएइ णो तं समयं पुरिसवेयं वेएइ) जिस समय में वह स्त्री वेद का वेदन करता है उस समय में वह पुरुषवेद का वेदन नहीं करता है (जं समयं पुरिसवेयं वेएइ, नो तं समयं इत्थियवेय वेएइ) और जिस

दिशाओने प्रकाशित करतुं होय तथा प्रत्येक जोनारने तेना रूपमां नवीनतानां दर्शन थतां होय (से णं तत्थ अन्ने देवे अन्नेसिं देवाणं देवीओ) एवो ते देव त्यां अन्य देवोने तथा अन्य देवोनी देवीओने (अभिजुंजिय अभिजुंजिय) पोताने वश करीने (परियारेइ) तेमनी साथे विषयभोग भोगवे छे (नो अप्पणामेव अप्पाणं विउव्विय विउव्विय परियारेइ) पोताना शरीरना वक्रिय शक्तिथी देव अने देवीना बे रूप बनावीने ते विषयभोग भोगवतो नथी. (एगे वि य णं जीवे एगणं समएणं एगं वेय वेयइ) आ रीते एक जीव एक समये एक ज वेदनो अनुभव करे छे (तजहा) ते वेद आ प्रमाणे छे (इत्थिवेयं वा पुरिसवेयं वा) स्त्रीवेद अथवा पुरुषवेद एक ज जीव एक ज समये स्त्रीवेद अने पुरुषवेदनो अनुभव करतो नथी कारण के (जं समयं इत्थियवेय वेएइ णो त समयं पुरिसवेयं वेएइ) जे समये ते स्त्रीवेदनो अनुभव करे छे ते समये ते पुरुषवेदनो अनुभव करतो नथी, (ज समय पुरिसवेयं

तरेषु देवलोकेषु देवतया उपपन्नो भवति महर्द्धिकेषु, यावन्महानुभावेषु दूरगतिकेषु चिरस्थितिकेषु स खलु तत्र देवो भवति महर्द्धिको यावत् दशदिश उद्योतयन् प्रभासयन् यावत् प्रतिरूपः। स खलु तत्र अन्यान् देवान् अन्येषां देवानां देवीरभियुज्य-

ते एवं आहंसु) सो जो उन्हों ने ऐसा कहा है (मिच्छं ते एवं आहंसु) सो ऐसा वह उन्हों ने मिथ्या कहा है। (अहं पुण गोयमा! एवं आइक्खामि भासामि, पन्नवेमि परूवेमि) मैं तो हे गौतम! ऐसा कहता हूं -ऐसा ही भाषण करता हू ऐसी ही प्रज्ञापना करता हूं ऐसी ही प्ररूपणा करता हूं कि (एवं खलु नियंठे कालगए समाणे) कोई निर्ग्रन्थ - कालगत होकर अन्नयरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवइ) किसी एक देवलोक में देवकी पर्याय से उत्पन्न हो जाता है (महड्ढिएसु जाव महाणुभावेसु दूरगइएसु चिरट्ठिइएसु) सो भी वह सामान्य देवलोकों में उत्पन्न नहीं होता किन्तु जो देवलोक बडी बडी ऋद्धियों से संपन्न होते हैं-यावत् महाप्रभावशाली होते हैं, दूरतक जाने की शक्ति से युक्त ऐसे देवों से सहित होते हैं तथा जिनमें आयु बहुत लंबी होती है ऐसे देवलोकों में से किसी एक देवलोक में वह उत्पन्न होता है। (से णं तत्थ देवे भवइ महड्ढिए जाव दस दिसाओ उज्जोवेमाणे पभासेमाणे जाव पडिरूवे) वहां उत्पन्न होकर वह निर्ग्रन्थ ऐसा देव होता है कि जिसकी महान् ऋद्धि होती है यावत् जो दशों

પ્રશ્નમાંનુ સમસ્ત કથન ગ્રહણ કરવાનુ) (जे ते एवं आहंसु) તેમણે એવું જે કહ્યુ છે તે (मिच्छं ते एवं आहंसु) તેમણે મિથ્યા (ખોટૂ) કહ્યુ છે. (अहं पुण गोयमा! एवं आइक्खामि, भासामि, पन्नवेमि, परूवेमि) હે ગૌતમ! હું તો એવુ કહુ છુ, એવું ભાષણ કરૂ છું, એવી પ્રજ્ઞાપના કરૂ છું અને એવી પ્રરૂપણા કરૂ છુ કે (एव खलु नियंठे कालगए समाणे) કોઇ નિર્ગ્રંથ કાળ પામીને (अन्नयरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवइ) કોઇ એક દેવલોકમાં દેવની પર્યાયે ઉત્પન્ન થઇ જાય છે, (महड्ढिएसु जाव महाणुभावेसु दूरगइएसु चिरट्ठिइएसु) ભલે તે સામાન્ય દેવલોકમા ઉત્પન્ન થયો ન હોય, પણ અનેક ઋદ્ધિયોથી ભરપૂર દેવલોકમા ઉત્પન્ન થયો હોય, મહા પ્રભાવશાળી દેવલોકમા ઉત્પન્ન થયો હોય, લાંબા આયુષ્યવાળા અને ઘણે દૂર સુધી જવાની શક્તિથી યુક્ત દેવલોકમા તે ઉત્પન્ન થયો હોય, (से णं तत्थ देवे भवइ महड्ढिए जाव दस दिसाओ उज्जोवेमाणे पभासेमाणे जाव पडिरूवे) ત્યા ઉત્પન્ન થયેલા તે દેવની મહાન ઋદ્ધિ હોય, એવુ દેદીપ્યમાન સ્વરૂપ હોય કે જે દસે



टीका—"अन्नउत्थियाणं भंते !" अन्ययूथिकाः खलु भदंत ! "एवं आइक्खंति" एवं वक्ष्यमाणप्रकारेण आख्यान्ति-हे भगवन् ! परदर्शनानुयायिनो वक्ष्यमाणप्रकारेण कथयन्ति । 'भासंति' भाषन्ते "पन्नवेंति" प्रज्ञापयन्ति "परूवेंति" प्ररूपयंति । किमाख्यान्ति-इत्याह-"तं जहा" तद् यथा-तदेव दर्शयति-"एवं खलु" इत्यादि "एवं खलु नियंठे कालगए समाणे" एवं खलु निर्ग्रंथः कालगतः सन् निर्ग्रंथः=साधु "कालगए" कालगत "देवभूएणं अप्पाणेणं" देवभूतनात्मना कारणभूतेन नो परिचारयति-इति अग्रिमेण संबन्धः देवभूतेन देवभाव प्राप्तेन देवीभूत्वेत्यर्थः "से णं तत्थ णो अन्ने देवे" स खलु-निर्ग्रंथ जीवदेवः 'तत्थ' तत्र-देवलोके "णो अन्ने देवे" नो अन्यान् देवान् स्वव्यतिरिक्तान् 'णो अण्णेसिं देवाणं देवीओ" नो अन्येषां देवानां देवी अन्येषामात्मव्यतिरिक्तदेवानां देवी अन्यदेवसबन्धिनी देवी "अहिजुंजिय अहिजुंजिय परियारेइ" अभियुज्याभियुज्य स्ववशं कृत्वा नो परिचारयति न परिभुक्ते

टीकार्थ—(अन्नउत्थिया णं भंते) प्रभु से प्रश्न करते हुए गौतम पूछते हैं कि हे भदन्त ! अन्यतीर्थिकजन (एवं आइक्खंति) जो ऐसा कहते हैं-वक्ष्यमाणरूप से इस प्रकार से कथन करते हैं (भासंति) जनसमुदाय के बीच में ऐसा ही भाषण करते हैं (पन्नवेंति) हेतु दृष्टान्त आदि द्वारा ऐसा ही जताते हैं (परूवेंति, शास्त्रों में वे ऐसी ही प्ररूपणा करते हैं-(तं जहा) कि-(एवं खलु नियंठे) कोई भी निर्ग्रन्थ साधु (कालगए) जब मृत्यु को प्राप्त हो जाता है तब वह परभव में देवगति को प्राप्त करता है अर्थात्-देवगति में जाकर जन्म लेता है वह वहां पर (देवभूएणं अप्पाणेणं) देवरूप हुए अपने शरीर से (सेणं तत्थ) वह देव वहां पर अपने शरीर से (णो अन्ने देवे णो अन्नेसिं देवाणं देवीओ अहिजुंजिय अहिजुंजिय परियारेइ) वह निर्ग्रन्थ साधु

ટીકાર્થ-ગૌતમસ્વામી મહાવીરસ્વામીને આ પ્રકારનો પ્રશ્ન પૂછે છે (अन्नउत्थियाणं भंते !) હે ભદન્ત ! અન્ય મતવાદીઓ (एवं आइक्खंति) એવું કહે છે (एवं भासंते) જનસમૂહની વચ્ચે એવું ભાષણ કરે છે,(एवं पन्नवेंति) દૃષ્ટાંતાદિ દ્વારા એવું બતાવે છે, (एवं परूवेंति) શાસ્ત્રોમાં એવી પ્રરૂપણા કરે છે (तं जहा) કે (एवं खलु नियंठे) કોઈ પણ નિર્ગ્રંથ સાધુ (कालगए) મૃત્યુ પામીને દેવલોકમાં દેવગતિ પ્રાપ્ત કરે છે ત્યાં જઈને તે (देवभूएणं अप्पाणेणं) દેવરૂપ બનેલા પોતાના શરીરથી (सेणं तत्थ णो अन्ने देवे णो अन्नेसिं देवाणं देवीओ अहिजुंजिय अहिजुंजिय परियारेइ) અન્ય દેવોને અને અન્ય દેવીઓને પોતાને વશ કરીને તેમની

समये स्त्रीवेदं वेदयति. स्त्रीवेदस्योदयेन नो पुरुषवेदं वेदयति पुरुषवेदस्योदयेन नो स्त्रीवेदं वेदयति. एव खलु एको जीव एकेन समयेनैकं वेदं वेदयति तद् यथा स्त्रीवेदं वा पुरुषवेदं वा. स्त्री स्त्रीवेदेनोदीर्णेन पुरुषं प्रार्थयते. पुरुषः पुरुषवेदेनोदीर्णेन स्त्रियं प्रार्थयते द्वावपि तौ अन्योन्यं प्रार्थयते. तद् यथा स्त्री वा पुरुषं पुरुषो वा स्त्रियम् ॥ सू० १ ॥

समय में वह पुरुष वेद का वेदन करता है-उस समय में स्त्री वेद का वेदन नहीं करता। (इत्थियवेयस्स उदएणं नो पुरिसवेयं वेएइ, पुरिसवेयस्स उदएणं नो इत्थियवेयं वेएइ) तथा स्त्रीवेद के उदय से पुरुषवेदका वेदन नहीं करता और न पुरुषवेदके उदयसे स्त्रीवेदका वेदन नहीं करता है। (एवं खलु एगे जीवे एगेणं समएणं एगं वेयं वेएइ) इस तरह एक जीव एक समय में एक वेद का वेदन करता है। (तंजहा-इत्थियवेयं वा पुरिसवेयं वा) या तो स्त्रीवेदका वेदन करता हैं या पुरुषवेद का वेदन करता है। (इत्थी इत्थीवेएणं उदिण्णेणं पुरिसं पत्थेइ, पुरिसो पुरिसवेएणं उदिण्णेणं इत्थिं पत्थेइ) स्त्री स्त्रीवेद के उदय होने पर पुरुष की अभिलाषा करती है और पुरुषवेद के उदय में पुरुष स्त्री की अभिलाषा करता है। इस तरह (दो वि ते अण्णमण्णं पत्थेंति-तंजहा-इत्थीवा पुरिसं पुरिसे वा इत्थिं) स्त्री और पुरुष दोनों ही स्त्रीवेद और पुरुषवेद के उदय में एक दूसरे की चाहना किया करते हैं-स्त्री पुरुष की और पुरुष स्त्री की ॥ सू० १ ॥

वेएइ, नो ं समयं इत्थियवेयं वेएइ) અને જ્યારે તે પુરુષવેદનુ વેદન કરતો હોય છે ત્યારે તે સ્ત્રીવેદનું વેદન કરતો નથી, (इत्थियवेयस्स उदएण नो पुरिसवेयं वेएइ, पुरिसवेयस्स उदएणं नो इत्थियवेय वेएइ) તથા સ્ત્રીવેદના ઉદયથી પુરુષવેદનુ વેદન કરતો નથી અને પુરુષવેદના ઉદયથી સ્ત્રીવેદનુ વેદન કરતો નથી (एवं खलु एगे जीवे एगेण समएण एग वेयं वेएइ આ રીતે એક જીવ એક સમયે એક જ વેદનુ વેદન કરે છે-(तंजहा इत्थियवेय वा पुरिसवेयं वा) કાતો સ્ત્રીવેદનુ વેદન કરે છે કાંતો પુરુષવેદનુ વેદન કરે છે (इत्थी इत्थीवेएण उदिण्णेण पुरिस पत्थेइ) સ્ત્રીવેદનો ઉદય થતાં સ્ત્રી પુરુષની અભિલાષા કરે છે (पुरिसो पुरिसवेएण उदिण्णेणं इत्थिं पत्थेइ) અને પુરુષવેદનો ઉદય થતાં પુરુષ સ્ત્રીનો સમાગમ ઇચ્છે છે આ રીતે (दो वि ते अण्णमण्ण पत्थेंति-त जहा-इत्थी वा पुरिसं पुरिसे वा इत्थी) સ્ત્રી અને પુરુષ બન્ને જ સ્ત્રીવેદ અને પુરુષવેદના ઉદયમા એક બીજાની અભિલાષા કરતા હોય છે-સ્ત્રી પુરુષની અને પુરુષ સ્ત્રીની અભિલાષા કરતા હોય છે.

देवस्य नान्यासामग्री भवति अपितु स्वात्मनैव देव्यादिकं सपाय परिभुक्ते ई
अथवा-इदं प्रतिपादयति-'एगे वि य इत्यादि "एगे वि य णं जीवे" एकोऽपि
खलु जीव "एगेणं समएणं" एकस्मिन समये "दो वेय वेएइ" द्वौ वे
वेदयति "तं जहा" तद् यथा "इत्थिवेय च पुरिसवेय च" स्त्रीवेदं च पु
वेद च " एवं परउत्थियवत्तव्वया नेयव्वा " एवं परयूथिकवक्तव्यता नेत
ज्ञातव्या "जाव इत्थिवेयं च पुरिसवेयं च" यावत् स्त्रीवेद च पुरुषवेदं च प
यूथिक वक्तव्यता च इत्यम्। यावत्पदेन इदं द्रष्टव्यम्-" जं समयं इत्थिवेयं वे
तं समयं पुरिसवेयं वेएइ जं समयं पुरिसवेयं वेएइ तं समयं इत्थिवेयं वेएइ इत्थि
वेयस्स वेयणाए पुरिसवेयं वेएइ, पुरिसवेयस्स वेयणाए इत्थिवेयं वेएइ ए
खलु एगे वि य णं जीवे एगेणं समएणं दो वेयं वेएइ इत्थिवेयं च पुरिसवेयं च

शरीर के दो रूप बनाता है। एक देव का रूप और दूसरा देवीका रूप
सो देव का रूप देवी के साथ वैषयिक सुख का अनुभव करता है।
इस तरह से अपने ही दो रूप होने के कारण वही एक ही समय में
दो वेदों का अनुभव करता है-एक पुरुष वेद का दूसरे स्त्रीवेद का
इस तरह से एक ही जीव एक ही काल में दो वेदों का अनुभव करता
है यह कथन बन जाता है। (एवं परउत्थियवत्तव्वया नेयव्वा) इस
प्रकार से अन्यतीर्थिकों की वक्तव्यता जाननी चाहिये (जाव इत्थिवेयं
च पुरिसवेयं च) इस पाठ को लगाने के लिये (जाव) पदसे सूचित
पाठ इस प्रकार से है—" जं समयं इत्थियवेयं वेएइ, तं समयं पुरिस
वेयं वेएइ, जं समयं पुरिसवेयं वेएइ, तं समयं इत्थिअवेयं वेएइ, इत्थि
वेयस्स वेयणाए पुरिसवेयं वेएइ, पुरिसवेयस्स वेयणाए इत्थियवेयं वेएइ,
एवं खलु एगे वि य णं जीवे एगेणं समएणं दो वेयं वेएइ, इत्थिवेयं च

બનાવે છે—એક દેવનુ રૂપ અને બીજુ દેવીનુ રૂપ. તે દેવનુ સ્વરૂપ દેવીરૂપની
સાથે વિષયસુખ ભોગવે છે આ રીતે પોતાનાં જ બે રૂપ બનાવવાને કારણે
તે જીવ એક સાથે પુરુષવેદ અને સ્રીવેદનો અનુભવ કરે છે આ રીતે એક
જ જીવ એક સમયે બે વેદનુ વેદન કરે છે આ પ્રકારની માન્યતા અન્ય
તીર્થિકો બતાવે છે

(एवं परउत्थियवत्तव्वया नेयव्वा) આ પ્રકારની અન્યતીર્થિકોની
માન્યતા સમજવી (जाव इत्थिवेयं च पुरिसवेयं च) આ પાઠને બેસાડવા માટે
(जाव) પદથી સૂચિત થતો પાઠ આ પ્રમાણે છે-(जं समयं इत्थियवेयं
वेएइ, तं समयं पुरिसवेयं वेएइ जं समयं पुरिसवेयं वेएइ, तं समयं इत्थि
यवेयं वेएइ, इत्थीवेयास वेयणाए पुरिसवेयं वेएइ पुरिसवेयस्स वेयणाए इत्थियवेयं
वेएइ, एवं खलु एगे वि य णं जीवे एगेणं समएणं दो वेयं वेएइ, इत्थि

इत्यर्थः "अप्पणिच्चियाओ देवीओ अहिजुंजिय अहिजुंजिय परियारेइ" नो आत्मीयादेवीरभियुज्याभियुज्य परिचारयति. न परकीयादेवीः वशीकृत्य परिभुंक्ते न वा स्वकीयादेवीः वशीकृत्य परिभुंक्ते, किन्तु "अप्पणामेव अप्पाणं विउव्विय परियारेइ" आत्मनैवात्मानं विकुर्व्य विकुर्व्य परिचारयति स्वात्मनैव स्वात्मानं देवीरूपेण देवरूपेण वा विकुर्व्य परिचारयति. तत्र देवलोकगतस्य निर्ग्रंथजीव-

का जीव जो देवलोक में देव की पर्याय से उत्पन्न हो गया है वह अन्य देवों को और अन्यदेवों की देवियों को (अहिजुंजिय अहिजुंजिय) वश में कर कर के उनके साथ विषयसुख नहीं भोगता है यहां पर जो (अन्ने देवे, अन्नेसिं देवाणं देवीओ) ऐसा पाठ कहा गया है उसका तात्पर्य यह है कि वह अपने से भिन्न देवों के साथ और अपने से भिन्न देवों की देवियों के साथ वैषयिक सुख नहीं भोगता है। और (णो अप्पणिच्चियाओ देवीओ अहिजुंजिय अहिजुंजिय परियारेइ) नहीं वह अपनी निज देवियों के साथ भी उन्हें वशीभूत कर वैषयिक सुख भोगता है यदि ऐसा है तो फिर वह किस तरह से वहां वैषयिक सुख भोगता है? इस बात को स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि-(अप्पाणमेव अप्पाणं विउव्विय परियारेइ) वह देव अपनी वैक्रिय शक्ति के द्वारा अपने निज के ही दो रूप बनाता है और उनके साथ ही वैषयिक सुख भोगता है-तात्पर्य यह कि देवलोक में गये हुए उस निर्ग्रन्थ जीव देव के पास अन्य सामग्री तो होती नहीं है-इसलिये वह (अप्पणामेव) अपने आप ही-अर्थात्-अपनी वैक्रिय शक्ति से ही-अपने

સાથે વિષયસુખ ભોગવતો નથી. અહીં (अन्ने देवे, अन्नेसिं देवाण देवीओ) એવો જે પાઠ આવે છે તેનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે-તે પોતાનાથી ભિન્ન દેવોની સાથે અને પોતાનાથી ભિન્ન દેવોની દેવીઓ સાથે વિષયસુખ ભોગવતો નથી અને (णो अप्पणिच्चियाओ देवीओ अहिजुंजिय अहिजुंजिय परियारेइ) તે પોતાની દેવીઓને વશ કરીને તેમની સાથે પણ વિષયસુખ ભોગવતો નથી તો તે ત્યાં કેવી રીતે વિષયસુખ ભોગવે છે? તે કહે છે-(अप्पाणमेव अप्पाणं विउव्विय विउव्विय परियारेइ) તે દેવ પોતાની વૈક્રિયશક્તિ દ્વારા પોતાના જ બે રૂપ બનાવે છે-એક દેવનું રૂપ અને બીજું દેવીનું રૂપ અને તેની સાથે જ વિષયસુખ ભોગવે છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે દેવલોકમાં ગયેલા તે નિર્ગ્રંથજીવ દેવની પાસે અન્ય સામગ્રી તો હોતી નથી તેથી તે (अप्पणामेव) પોતાની જાતે જ-એટલે કે પોતાની વૈક્રિયશક્તિથી પોતાના શરીરનાં બે રૂપ

"जाव इत्थियेद् च पुरिसवेद् च" यावत् स्त्रीवेद च पुरुषवेद च । इह यावत् करणात् मापन्ते मज्ञापयन्ति, मरूपयन्ति असौ निर्ग्रंथदेवो न परकीयां देवीमासाद्य स्वकी यान्वा आसाद्य परिचारयन्ति किन्तु स्वात्मानमव विकुर्व्य देवी रूपतया या परि भुंक्ते तथा एकोजीव एकस्मिन् समये स्त्रीवेदं पुरुषवेदमुभयमपि वेदयतीत्यादीनां ग्रहणं कर्तव्यमिति "जे ते एवं आहंसु" यद् ते परतीर्थिका एवमाहु "मिच्छं ते एवं माहंसु" मिथ्या ते एवमाहु, यतो हि–स्त्रीरूपकरणेऽपि तस्य निर्ग्रन्थ जीवदेवस्य पुरुषरूपत्वात् पुरुषवेदस्यैव एकस्मिन् समये उदय समवेत् न तु स्त्री वेदस्य स्त्रीवेदपरिवर्तने स्त्रीवेदस्यैवोदयः स्यात् न पुरुषवेदस्योदयः कथमपि सम मति स्त्रीवेदपुरुषवेदयोः परस्परविरुद्धत्वेनैकस्य एकसमय उदयस्यासंभवात् यथोः

इत्थियवेयं च पुरिसवेय च) कि यावत् एक समय में स्त्रीवेद और पुरुषवेद इन दो वेदों का वेदन करता है, (जे ते एव आहंसु) सो अन्यतीर्थिक जनों ने जो ऐसा कहा है (मिच्छ ते एव आहंसु) यह उन्होंने मिथ्या कहा है। क्योंकि यह देव जब स्त्री का रूप करता है तब भी स्वय पुरुष होने के कारण उसके पुरुष वेद का ही उस समय में उदय सभवता है स्त्रीवेद का नहीं। स्त्रीवेद के परिवर्तन होने पर स्त्री वेद का ही उदय होता है पुरुष वेद का नहीं। क्यों कि पुरुष वेद और स्त्री वेद ये दोनों वेद आपस में एक दूसर से विरुद्ध होते हैं। तात्पर्य कहने का यह है कि देव अपने मूल शरीर में रहता हुआ भी एक समय में अनेकरूप बना सकता है । एक ही समय में यह स्त्री और पुरुष दोनों रूपों में बन जाया करता है परन्तु जब उसका स्त्री और पुरुष दोनों का रूप होगा-तब भी उस समय उस रूप के-कृत्रिम स्त्री के एक पुरुष

च) કે એક જ જીવ એક જ સમયે સ્ત્રીવેદ અને પુરુષવેદનુ વેદન કરે છે (અહી ગૌતમના પ્રશ્નમા આવતુ સમગ્ર કથન ગ્રહણ કરવું જોઈએ) (जे ते एव आहंसु) અન્ય મતવાદીઓએ એવું જે કહ્યું છે તે (मिच्छ ते एव आहंसु) તેમણે મિથ્યા કહેલુ છે એટલે કે તેમનું કથન સાચુ નથી કારણ કે તે દેવ જ્યારે સ્ત્રીનું રૂપ ધારણ કરે છે ત્યારે પણ પોતે પુરુષ હોવાથી તે સમયે તેના પુરુષવેદનો જ ઉદય સભવી શકે છે–સ્ત્રીવેદનો નહી સ્ત્રીવેદનુ પરિવર્તન કરવામા આવે ત્યારે સ્ત્રીવેદનો જ ઉદય રહે છે પુરુષવેદનો નહી કારણ કે સ્ત્રીવેદ અને પુરુષવેદ એ બન્ને પરસ્પર વિરુદ્ધ જ ભાવ છે કહેવાનુ તાત્પર્ય એ છે કે દેવ પોતાના મૂળ શરીરમા રહેવા છતાં પણ એક સમયે અનેક રૂપ બનાવી શકે છે એક જ સમયે તે સ્ત્રી અને પુરુષ બની જઈ શકે છે પણ જ્યારે તે પુરુષ અને સ્ત્રી બન્નેનુ રૂપ ધારણ કરતુ હોય ત્યારે પણ તે કૃત્રિમ સ્ત્રીરૂપના એકાદ પુરુષવેદનો જ ઉદય હ

इति। यस्मिन् समये स्त्रीवेदं वेदयति तस्मिन् समये पुरुषवेदं वेदयति यस्मिन् समये पुरुषवेदं वेदयति तस्मिन् समये स्त्रीवेदं वेदयति स्त्रीवेदस्य वेदनया पुरुषवेदं वेदयति पुरुषवेदस्य वेदनया स्त्रीवेदं वेदयति एवम् एकोऽपि च खलु जीव एकस्मिन् समये द्वौ वेदौ वेदयति स्त्रीवेदश्च पुरुषवेदश्चेति एवं हि परतीर्थिकाः निर्ग्रंथजीवदेवविषये कथयन्ति तत्र गौतमो भगवन्तं पृच्छति "से कहमेयं भंते एवं" तत् कथम् एतत् भदंत! एवम्। हे भगवन्! तत् उक्त प्रकारेण परतीर्थिकोपन्यस्तं किमेवं यथा कथयति तथा संभवेदिति प्रश्नः। भगवानाह— 'गोयमा' इत्यादि "गोयमा" हे गौतम! "जं णं तं अन्नउत्थिया एवं आइक्खंति" यत् खलु ते अन्ययूथिका एवमाख्यान्ति एवं पूर्वोक्तरूपेण कथयन्ति.

पुरिसवेयं च" जिस समय जीव स्त्रीवेद को वेदताहै उसी समय वह पुरूषवेद को भी वेदता है, और जिस समय जीव पुरुष वेद को वेदता है उसी समय वह स्त्रीवेद को भी वेदता है। पुरूषवेद के वेदन से जीव स्त्रीवेद को वेदता है, (१) और स्त्रीवेद के वेदन से जीव पुरुषवेद को वेदता है (२) इस प्रकार से एक जीव एक समय में दो वेदों को वेदता है। एक स्त्रीवेद को और दूसरे पुरुषवेदको। इस तरह से परतीर्थिक जन निर्ग्रन्थ जीव देव के विषय में कहते हैं–सो गौतम स्वामी भगवान् से पूछते हैं कि–' से कहमेयं भंते एवं ' हे भदंत! ऐसा अन्यतीर्थिकजनों का कहना जैसा वे कहते हैं उस प्रकार से वह संभवित होता है क्या? इसका उत्तर देते हुए भगवान गौतम स्वामी से कहते हैं (गोयमा) हे गौतम! (जं णं तं अन्नउत्थिया एवं आइक्खंति) जो वे अन्यतीर्थिक जन ऐसा कहते हैं (जाव

वेय च पुरिसवेय च) જે સમયે જીવ સ્ત્રીવેદનુ વેદન કરતો હોય છે તે સમયે તે પુરુષવેદનું પણ વેદન કરતો હોય છે જે સમયે જીવ પુરુષવેદનું વેદન કરતો હોય છે તે સમયે તે સ્ત્રીવેદનુ પણ વેદન કરતો હોય છે. (૧) પુરુષ વેદના વેદનથી જીવ સ્ત્રીવેદનુ વેદન કરે છે અને (૨) સ્ત્રીવેદના વેદનથી જીવ પુરુષવેદનુ વેદન કરે છે. આ રીતે જીવ એક સમયે બે વેદનું વેદન કરે છે–(૧) સ્ત્રીવેદનુ અને (૨) પુરુષવેદનુ જે નિર્ગ્રંથ મરીને દેવગતિમા ઉત્પન્ન થયો હોય, તેને વિષે પરતીર્થિકો ઉપરોક્ત જે મતવ્ય ધરાવે છે તે વિષે ગૌતમ સ્વામી ભગવાન મહાવીરપ્રભુને પૂછે છે–(से कहमेय भते एव) હે ભદન્ત! અન્ય તીર્થિકોનું તેમના વિષેનુ તે કથન શુ સભવિત છે? તેનો મહાવીર પ્રભુ આ પ્રમાણે ઉત્તર આપે છે–(गोयमा!) હે ગૌતમ! (जं णं तं अन्नउत्थिया एवं आइक्खंति) તે અન્ય તીર્થિકો એવું જે કહે છે (जाव इत्थियवेय च पुरिसवेयं

णियंठे कालगए समाणे" एव खलु निर्ग्रन्थः कालगतः सन् "अन्नयरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवइ" अन्यतरेषु देवलोकेषु देवतया उत्पत्ता भवति कीदृशेषु देवलोकेषु तत्राह-"महड्ढिएसु जाव महाणुभावेसु" महर्द्धिकेषु यावत् महानुभावेषु "महड्ढिएसु" महर्द्धिकेषु=विशिष्टविमानपरिवारादियुक्तेषु 'जाव-महाणुभावेसु' यावत् महानुभावेषु=अचिन्त्यप्रभावयुक्तेषु अत्र यावत् पदेन 'महज्जुइएसु महब्बलेसु महाजसेसु महासोक्खेसु' छाया-महाद्युतिकेषु महाबलेषु महायशस्सु महासौख्येषु इति संग्रह कार्यः "महज्जुइएसु" महाद्युतिकेषु=विशिष्टप्रभाभास्वरेषु 'महब्बलेसु" महाबलेषु=विशिष्टबलसंपन्नेषु 'महाजसेसु' महायशस्सु=विशाल कीर्तियुक्तेषु 'महासोक्खेसु' महासौख्येषु = विशिष्टसुखसंकुलेषु "दूरगइएसु" दूरगतिकेषु=दूरगमनशक्तिसंपन्नदेवयुक्तेषु 'चिरट्ठिइएसु' चिरस्थितिकेषु चिर=प्रभूतकालं स्थितिः=अवस्थान यत्र, तेषु एकपल्यादि सागराम

करता हूं कि (एव खलु नियंठे कालगए समाणे) निर्ग्रन्थ- साधु काल गत होकर सामान्य देवलोकों में उत्पन्न नहीं होता है-किन्तु वह तो (महड्ढिएसु जाव महाणुभावेसु दूरगइएसु चिरट्ठिइएसु देवलोएसु अन्नयरेसु देवलोएसु उववत्तारो भवइ) उन देवलोकों में से किसी एक देवलोक में उत्पन्न होता है कि जिन देवलोकों में विशिष्ट विमान परिवार आदिरूप ऋद्धि होती है, यावत् जो अपने अचिन्त्य प्रभाव से सदा युक्त बने हुए रहते हैं तथा (जाव) शब्द गृहीत (महज्जुईएसु, महब्बलेसु, महाजसेसु महासोक्खेसु) इन पदों के अर्थानुसार जो अपनी विशिष्टप्रभा से सदा चमकते रहते हैं, जो विशिष्ट बल से सपन्न होते हैं, विशालकीर्ति के जो भंडार होते हैं, और जो विशिष्टसुखों के विधान होते हैं तथा-दूर दूर तक गमन करने वाले देवों से जो सर्वदा

કહું છું કે (एव खलु नियंठे कालगए समाणे) નિર્ગ્રંથ સાધુ કાળધર્મ પામીને સામાન્ય દેવલોકોમાં ઉત્પન્ન થતો નથી, પણ તે તો (महड्ढिएसु जाव महाणुभावेसु दूरगइएसु चिरट्ठिइएसु देवलोएसु अन्नयरेसु देवलोएसु उववत्तारो भवइ) એવા કોઈ દેવલોકમાં ઉત્પન્ન થાય છે કે જ્યાં વિશિષ્ટ વિમાન પરિવાર આદિ રૂપ ઋદ્ધિ હોય છે જ્યાંના દેવો પોતાના અચિન્ત્ય પ્રભાવથી સદા યુક્ત હોય છે અહીં (जाव) (પર્યન્ત) પદ દ્વારા (महज्जुइएसु महब्बलेसु, महाजसेसु महासोक्खेसु) આ પદો ગ્રહણ કરાયાં છે તેમનો અર્થ આ પ્રમાણે છે-જે દેવલોકો પોતાની વિશિષ્ટ પ્રભાથી સદા ચમકતા રહે છે જે વિશિષ્ટ બળથી યુક્ત હોય છે જે વિશાળ કીર્તિના ભંડાર હોય છે, જે વિશિષ્ટ સુખોના ભંડાર હોય છે, તથા દૂર દૂર ગમન કરનારા દેવોથી જે સદા ભરેલા રહે છે અને જ્યાં રહેનારા

परस्पर विरोधो न तयोरेकत्रैकदाऽवस्थानं दृश्यते यथा तमः प्रकाशयोः तथैव प्रकृतेऽपि स्त्रीवेदपुरुषवेदयोः परस्परविरुद्धतया नैकस्मिन्नधिकरणे सहावस्थानं संभवत्यतः परयूथिकमतं मिथ्येति। एतदेव भगवान् सविस्तरं प्रतिपादयति-'अहं पुण' इत्यादि। 'अहं पुण गोयमा' अहं पुन गौतम! 'एवं आइक्खामि' एवमाख्यामि 'भासामि पन्नवेमि परूवेमि' भाषे प्रज्ञापयामि प्ररूपयामि. किं तत् तत्राह 'एवं खलु

उदय माना जावेगा-क्यों कि यह रूप मूल में जिसके पुरुषवेद का उदय है-उसी वेद वाले का एक रूपान्तर है। इसलिये एक समय में दो वेदों का उदय मानना न्यायसंगत नहीं है। क्यों कि एक ही समय में एक जगह दो वेदों का उदय होना विरुद्ध है। जिनका आपस में विरोध होता है-उनका एक ही जगह एक समय में अवस्थान होना नहीं देखा जाता है। जैसे-अन्धकार और प्रकाश का। उसी प्रकार से प्रकृत में भी स्त्रीवेद और पुरुषवेद ये दोनों आपस में विरुद्ध होने के कारण एक ही समय में एक साथ एक ही जगह किसी तरह से उदित नहीं हो सकते हैं। अत परयूथिकों का एक ही जगह एक ही काल में दोनों स्त्रीवेद और पुरुषवेद का उदय मानना मिथ्या है ऐसा जानना चाहिये। इसी विषय को विस्तार पूर्वक समझाने के लिये भगवान् कहते हैं—(अहं पुण) इत्यादि। (अहं पुण गोयमा! एवं आइक्खामि भासामि पन्नवेमि परूवेमि) हे गौतम! मैं तो ऐसा कहता हूं ऐसा भाषण करता हूं ऐसी प्रज्ञापना करता हूं और ऐसी प्ररूपणा

છે, કારણકે પુરુષવેદનો જેનામા ઉદય છે એવા જીવનુ તે એક રૂપાતર જ હોય છે. તેથી એક જ સમયે બે વેદોનો ઉદય માનવો તે ન્યાયસગત લાગતું નથી કારણકે એક જ સમયે એક જ જગ્યાએ બે વેદનો ઉદય થવો શકય નથી જેમની વચ્ચે પરસ્પર વિરોધ હોય છે તેમનું એક જ જગ્યાએ એક જ સમયે અસ્તિત્વ જોવામા આવતુ નથી. જેમકે જ્યા પ્રકાશ હોય ત્યા અંધકાર ન હોય કુદરતી રીતે જ સ્ત્રીવેદ અને પુરુષવેદ એક બીજાના વિરોધી હોવાથી એક જ સમયે અને એક જ જગ્યાએ તે બન્નેનુ અસ્તિત્વ સભવી શકતુ નથી તેથી ' એક જ જગ્યાએ એક જ સમયે સ્ત્રીવેદ અને પુરુષવેદ એ બન્નેનો ઉદય થાય છે," એવી પરતીર્થિકોની માન્યતા મિથ્યા છે આ વિષયને વિસ્તારથી સમજાવવા માટે ભગવાન મહાવીર સ્વામી ગૌતમ સ્વામીને કહે છે કે (अहं पुण गोयमा! एवं आइक्खामि, भासामि, पन्नवेमि, परूवेमि) હે ગૌતમ! હું તો એવુ કહું છુ, એવું ભાષણ કરું છુ, એવી પ્રજ્ઞાપના કરૂ છું, અને એવી પ્રરૂપણા

विशेष यशशाली 'महाजसे' महायशाः = विशालकीर्तिसम्पन्नः, 'महासोक्खे' महासौख्य =विशिष्ट सुखशाली 'महाणुभाव' महानुभावः=अचिन्त्यप्रभावयुक्तः "हारविराइयवच्छे" हारविराजितवक्षा =हारशोभितवक्षस्थलः "कडयतुडियथंभियभुए" कटकत्रुटितस्तम्भितभुजः, तत्र कटके =वलये, त्रुटिते = बाहुरक्षक भूषणविशेषैः स्तम्भितास्तब्धीभूता सज्जितेत्यर्थः भुजा यस्य स तथा वलयबाहुरक्षिकाभिधालङ्कारयुक्त इत्यर्थः। "अंगयकुंडलमट्ठगंडयलकण्णपीठधारी" अङ्गदकुण्डलमृष्टगण्डतलकर्णपीठधारी—अङ्गदानि बाह्वाभरणानि, कुण्डलाभ्यां मृष्टे= घर्षिते गण्डतले=कपोलयुगले, कर्णपीठं=कर्णाभरणम्, तेषां धारकः, तच्छीलो यः स तथा बाह्वाभरणकुण्डलकर्णपीठाभिधभूषणभूषित इत्यर्थः 'विचित्तवत्थाभरणे' विचित्रवस्त्राभरण =विचित्राणि नानाप्रकाराणि वस्त्राणि आभरणानि च यस्य स तथा "विचित्तमालामउलिमउडे" विचित्रमालामौलिमुकुटः अत्र प्राकृतत्वात् मौलिशब्दस्य परनिपातस्तेन मौलिशब्दो विचित्रशब्दात्पूर्वं सयोज्यः। अतःमौलिविचित्रमालायुक्तः इति, तथा च मौलौ = मस्तके विचित्रा = नानाप्रकारा माला=पुष्पस्रजः मुकुटश्च यस्य स तथा "कल्लाणगपवरवत्थपरिहिए" कल्याणकप्रवरवस्त्रपरिहितः, अत्रापि 'परिहित' शब्दस्य व्यत्ययस्तेन परिहित कल्याणकम

अचिन्त्य प्रभाव से जो युक्त होता है, जिसका वक्षःस्थल सदा हारसे सुशोभित रहा करता है जिसकी दोनों भुजाएँ वलय और त्रुटित-बाहुरक्षक भूषणविशेषों से सज्जित रहती हैं, अगदों को, भुजाओं के भूषणों से, कुडलो से मृष्ट दोनों कपोलों को, तथा कर्णपीठ-कर्ण के आभूषणविशेष को जो सदा धारण किये रहता है-अर्थात्-जिसके दोनों भुजा अंगदों से सदा मंडित रहते हैं, गोल कपोलपाली जिसकी कुडलों की कांति से सदा चमकती रहती है और कर्णाभरणविशेषों से जिसके दोनों कान विशेषरूप से विभूषित रहते हैं, वस्त्र और आभरण जिसके विविध प्रकार के होते हैं, जिसके मस्तक ऊपर नाना प्रकार की पुष्प

હોય છે જેનું વક્ષસ્થળ સદા હારથી શોભતું હોય છે જેની બન્ને ભુજાઓ વલય અને ત્રુટિત (બાહુ રક્ષક આભૂષણો) થી વિભૂષિત હોય છે, જેના બન્ને હાથ અંગદો (આભૂષણ વિશેષ) થી સદા વિભૂષિત હોય છે જેમના ગાલ કુંડળોની કાન્તિથી સદા ચમકતા રહે છે અને કર્ણપીઠ (કર્ણના આભૂષણ) થી જેમના બન્ને કર્ણ સદા વિભૂષિત રહે છે, જેના વસ્ત્ર અને આભૂષણો વિવિધ પ્રકારના હોય છે, જેમના મસ્તક પર વિવિધ પ્રકારની પુષ્પમાળાઓ અને મુગટ રહે છે, માંગલિક અને શ્રેષ્ઠ વસ્ત્રોને જે સદા ધારણ કરે છે

स्थितिकेषु इत्यर्थः । एतादृशेषु देवलोकेषु निर्ग्रन्थो देवतया उववत्ता भवति इति संबन्धः । तत्र स कीदृशो भवतीत्याह–' से णं ' इत्यादि ' से णं तत्थ ' स खलु तत्र–देवलोकेषु कस्मिंश्चिद्देवलोके ' देवे भवइ ' देवो भवति देवतयोत्पद्यते । सदेव स्तत्र कीदृशो भवतीत्याह–' महड्ढिए ' महर्द्धिकः विमानपरिवारादि ऋद्धियुक्तः ' जाव ' यावत्, यावत्पदेन ' महज्जुइए महाबले महाजसे महासोक्खे महाणुभावे हारविराइयवच्छे कडयतुरियथभियभुए अंगयकुंडलमट्ठगंडयलकण्णपीठधारी विचित्तवत्थाभरणे विचित्तमालामउलिमउडे कल्लाणगपवरवत्थपरिहिए कल्लाणगपवर मल्लाणुलेवणे भासुरबोंदी पलंबवणमालधरे दिव्वेणं वण्णेणं दिव्वेणं गंधेण दिव्वेणं रूवेणं एवं फासेणं संघाएणं संठाणेणं दिव्वाए इड्ढीए जुईए पभाए छायाए दिव्वाए अच्चीए दिव्वेणं तेएणं दिव्वाए लेस्साए ॥

छाया—महाद्युतिकः महाबलः महायशा. महासौख्यः महानुभावः हारविराजितवक्षाः कटकत्रुटितस्तम्भितभुजः अङ्गदकुण्डल मृष्ट गण्डतलकर्णपीठधारी विचित्रवस्त्राभरणः विचित्र मालामौलिमुकुट. कल्याणकप्रवरवस्त्रपरिहितः कल्याणकप्रवरमाल्यानुलेपनः भास्वरबोन्दिः प्रलम्बवनमालाधरः दिव्येन वर्णेन दिव्येन गन्धेन दिव्येन रूपेण एवं स्पर्शेन संघातेन, संस्थानेन दिव्यया ऋद्ध्या द्युत्या प्रभया छायया दिव्येन अर्चिषा दिव्येन तेजसा दिव्यया लेश्यया ' इति संग्रहः " महज्जुइए " महा तिकः=विशिष्टशरीराभरणादि प्रभाभास्वरः, ' महाबले ' महाबलः

भरे हुए रहते हैं एव जहां पर रहने वाले देवों की स्थिति एक दो आदि सागरोपम की होती है । ऐसे देवलोकों में से किसी एक देवलोक में वह निर्ग्रन्थ साधु का जीव देव की पर्याय से उत्पन्न होता है । वहां पर वह कैसा देव होता है तो इसके लिये समझाते हुए प्रभु कहते हैं कि (से णं तत्थ देवे भवइ महिड्ढिए जाव महज्जुइए) वह वहां पर ऐसा देव होता है कि जिस की विमानपरिवारादिरूप ऋद्धि बहुत अच्छी होती है–जिसकी द्युति बहुत अधिक होती है, जो विशिष्ट बलशाली होता है, विशाल कीर्ति से जो संपन्न होता है, विशिष्ट सुखशाली होता है,

---

દેવોની ભવસ્થિતિ એક, બે આદિ સાગરોપમની હોય છે એવા દેવલોકોમાંના કોઈ એક દેવલોકમા તે નિર્ગ્રંથ સાધુનો જીવ દેવની પર્યાયે ઉત્પન્ન થાય છે તે દેવની ઋદ્ધિ કેવી હોય છે તે બતાવવાને માટે પ્રભુ ગૌતમને કહે છે કે (से ण तत्थ देवे भवइ महिड्ढिए जाव महज्जुइए) ત્યા તે એવા દેવ બને છે કે જેની વિમાન પરિવાર આદિ રૂપ ઋદ્ધિ ઘણી જ સારી હોય છે, જેની દ્યુતિ ઘણી જ વધારે હોય છે, જે વિશિષ્ટ બળસંપન્ન હોય છે, જે વિશિષ્ટ કીર્તિ અને વિશિષ્ટ સુખસંપન્ન હોય છે, અને જે અચિન્ત્ય પ્રભાવવાળો

'पभाए' प्रभया-दिव्यया प्रभया=विमानदीप्त्या 'छायाए' छायया-दिव्यया छायया=शरीरशोभया "दिव्वाए अच्चीए" दिव्येन अर्चिषा शरीरस्थरत्नादि समुद्भूत तेजसा, 'दिव्वेणं तेएणं' दिव्येन तेजसा = शरीरसम्बन्धिकान्त्या "दिव्वाए लेस्साए" दिव्यया लेश्यया=देहसौन्दर्येण, इति समासः ॥

'दस दिसाओ' दशदिशः=दिग्विदिगूर्ध्वाधोरूपाः दशापिदिशः "उज्जोवेमाणे" उद्योतयन्=प्रकाशयन् 'पभासेमाणे' प्रभासमान=देदीप्यमान 'जाव पडिरूवे' यावत् प्रतिरूपः-प्रकार प्रकार प्रतिरूपं=नानारूपं यस्य स तथा, अत्र यावत्पदेन "पासाईए दरिसणिज्जे अभिरूवे" इति संग्रहः, तत्र 'पासाइए' प्रासादीय दर्शकानां चित्त प्रसादजनक 'दरिसणिज्जे' दर्शनीय यद्दर्शने चक्षु श्रमो न जायते । 'अभिरूवे' अभिरूपः=मनोज्ञरूपः इति ॥

"सेणं तत्थ अन्ने देवे अन्नेसिं देवाणं देवीओ अभिजुंजिय अभिजुंजिय परियारेइ" स खलु तत्र अन्यान देवान् अन्येषां देवानां देवीरभियुज्याभियुज्य परिचारयति 'सेण" स खलु निर्ग्रन्थ जीवदेवः "तत्थ' तत्र-देवलोके "अन्ने देवे" अन्यान् देवान् आत्मव्यतिरिक्तान् देवान् "अन्नेसिं देवाण देवीओ"

शरीर में पहिने हुए रत्नादि की दिव्यकान्ति से, तथा शरीर संबंधी कांति से एव देह के सौन्दर्य से (दसदिसाओ) दश दिशाओं को-चार पूर्वादिदिशाओं को, तथा चार पूर्वादिविदिशाओं के चार कोनों को एव ऊपर और नीचे को-(उज्जोवेमाणे) उद्योतित करता हुआ (पभासे माणे) प्रकाशित करता हुआ, (जाव पडिरूवे) यावत्-वह देखने वालों के चित्त में प्रसन्नता का जनक होता है, देखने वालोंकी आंखे उसे देखते २ कभी अघाती नहीं हैं वह मनोज्ञ रूप वाला होता है और प्रतिरूप देखनेवालों के लिये क्षण २ में नवीन २ रूप से युक्त हुआ ज्ञात होता है। (से णं तत्थ अन्ने देवे अन्नेसिं देवाण देवीओ अभिजुंजिय, अभिजुंजिय परियारेइ) इस प्रकारके देवलोकों में से किसी एक देवलोक

શરીરે પહેરેલાં રત્નાદિની દિવ્ય કાન્તિથી તથા શરીરની કાંતિ અને દેહ સૌંદર્યથી (दस दिसाओ) દશે દિશાઓને (પૂર્વાદિ ચાર દિશા, અગ્નિ આદિ ચાર ખૂણા તથા ઉપરની અને નીચેની દિશાઓ) (उज्जोवेमाणे) પ્રકાશિત કરતા (पभासेमाणे) પ્રભાયુક્ત કરતા, (जाव पडिरूवे) જોનારના ચિત્તને પ્રસન્ન કરતા-તેમનું રૂપ એટલું બધું મનોજ્ઞ હોય છે કે તેમને જોનારની આંખો તેમનું રૂપ જોતા તૃપ્તિનો અનુભવતી નથી. તેઓ જોનારની નજરે ક્ષણે ક્ષણે નવીન રૂપ ધારણ કરતા હોય એવું લાગે છે (से ण तत्थ अन्ने देवे अन्नेसिं देवाणं देवीओ अभिजुंजिय अभिजुंजिय परियारेइ) ઉપરોક્ત સમૃદ્ધિ

वरवस्त्रः-परिहितानि = यथास्थानं धृतानि कल्याणकानि = माङ्गलिकानि प्रवराणि श्रेष्ठानि वस्त्राणि येन स तथा - समीचीनधृतश्रेष्ठवस्त्र इत्यर्थः, " कल्लाणगपवरमल्लाणुलेवणे " कल्याणकप्रवरमाल्यानुलेपनः कल्याणकानि=कल्याणकारीणि प्रवराणि=सुन्दराणि माल्यानि = पुष्पमाला अनुलेपनानि=चन्दनादिविलेपनानि च यस्य स तथा। सुन्दराति सुन्दरपुष्पमाला चन्दनादि विलेपन युक्त इत्यर्थः । "भासुर बोंदी " भास्वरबोन्दिः=भास्वारा=देदीप्यमाना बोन्दिः=शरीरं यस्य स तथा भासमानदेहधारीत्यर्थ । " पलंबवणमालधरे " प्रलम्बवनमालाधरः, प्रलम्बः=झुम्बनकं तद् युक्ता वनमाला पादपर्यन्तलम्बमाना माला तस्याः धरः-धारकः-झुम्बनकयुक्तपादपर्यन्तलम्बमानमालायुक्त इत्यर्थः । एतादृशः स देवः " दिव्वेणं वण्णेणं " दिव्येन वर्णेन देवसम्बन्धिवर्णेन, " दिव्वेणं गंधेणं " दिव्येन गन्धेन=देवसम्बन्धि सुरभिगन्धेन " दिव्वेणं रूवेणं " दिव्येन रूपेण=दिव्याकारेण, एवम्-अनेन पूर्वोक्तेक दिव्यविशेपणयुक्तप्रकारेण " फासेणं " स्पर्शेन=दिव्येन स्पर्शेन सुकुमारादि रूपेण, " संघाएणं " संघातेन दिव्येन संघातेन दिव्येन देवयोग्येन संहननेन = शरीररचनारूपेण " संठाणेणं " संस्थानेन दिव्येन संस्थानेन = शरीराकारेण, तथा ' दिव्वाए इड्ढिए ' दिव्यया ऋद्धया विमानपरिवारादिरूपया, 'जुईए' द्युत्या ' दिव्यया ' इति विशेपणमग्रेऽपि योज्यम् , तेन दिव्यया द्युत्या=शरीरदीप्त्या,

---

मालएँ और मुकुट रहता है, मांगलिक एवं श्रेष्ठ ऐसे वस्त्रों को जो सदा पहिने रहता हैं,कल्याणकारी पुष्पमालाओं से एवं चन्दन आदि के सुगंधिवाले लेपोंसे जो हमेशा विराजित रहता है, शरीर जिसका सर्वदा चमकीला बना रहता है, (पलंबवणमालधरे) और झुम्बनयुक्त ऐसी पैरोतक लटकती हुइ वनमाला से जो युक्त रहता है। ऐसा वह देव अपनेदिव्यवर्णसे, दिव्यगन्ध से-देवसंबन्धि सुरभिगंध से-दिव्य आकार से, दिव्य स्पर्श से,-सुकुमार आदि रूप स्पर्श से-दिव्यसंघात से, दिव्यसंहनन से, दिव्य संस्थान से, विमानपरिवार आदिरूप दिव्य ऋद्धि से, दिव्यद्युति से-

---

કલ્યાણકારી પુષ્પમાળાઓથી તથા ચન્દન આદિના સુગંધિત લેપથી જેઓ સદા શોભતા હોય છે, જેનુ શરીર સદા દેદીપ્યમાન હોય છે, (पलंबवणमालधरे) પગ સુધી લટકતી અને ઝોલા લેતી વનમાળાથી જે યુક્ત હોય છે, એવો તે દેવ પોતાના દિવ્ય વર્ણથી દિવ્યગંધથી-દેવસંબંધી સુરભિગંધથી, દિવ્ય આકારથી, દિવ્ય સ્પર્શથી-સુકુમાર આદિરૂપ સ્પર્શથી દિવ્ય સંઘાતથી, દિવ્ય સંહનનથી, દિવ્ય સંસ્થાનથી, વિમાન પરિવાર આદિરૂપ દિવ્ય ઋદ્ધિથી, દિવ્ય દ્યુતિથી-શારીરિક દીપ્તિથી, દિવ્ય વિમાનના પ્રભાવથી દિવ્ય શરીર સૌંદર્યથી,



यस्मिन् समये स्त्रीवेद वेदयति नो तस्मिन् समय पुरुषवेद वेदयति। 'जं समय' इत्यत्र द्वितीया सप्तम्यर्थे " ज समय पुरिसवेय वेएइ नो तं समय इत्थिवेयं वेएइ" यस्मिन् समये पुरुषवेद् वेदयति नो तस्मिन् समये स्त्रीवेद वेदयति, "इत्थिय वेयस्स उदएण नो पुरिसवेयं वेएइ" स्त्री वेदस्योदयेन नो पुरुषवेद वेदयति " पुरिसवेयस्स उदयेणं नो इत्थिवेयं वेएइ" पुरुषवेदस्योदयेन नो स्त्रीवेदं वेद यति " एवं खलु एगे जीवे एगेणं समएणं एगं वेयं वेएइ" एवं खलु एको जीवः एकस्मिन् समये एकं वेदं वेदयति " तं जहा" तद् यथा 'इत्थीवेयं वा' " पुरिसवेयं वा" स्त्रीवेदम्वा पुरुषवेदम्वा एकेन जीवेन एकदा एक एव वेदो वेद्यते न तु वेदान्तर मित्यत्र कारणमाह–" इत्थीइत्थिवेएण" इत्यादि। "इत्थी

कि (जं समयं इत्थियवेयं वेएइ) जिस समय में वह स्त्री वेदका वेदन करता है (णो तं समयं पुरिसवेयं वेएइ) उस समय में वह पुरुषवेद का वेदन नहीं करता है (जं समयं पुरिस वेयं वेएइ) और जिस समय में वह पुरुष-वेद का वेदन करता है (तं समय इत्थियवेयं नो वेएइ) उस समय में वह स्त्रीवेद का वेदन नहीं करता है। (इत्थिय वेयस्स उदएणं नो पुरिसवेयं वेएइ) स्त्रीवेद के उदय से पुरुषवेद का वेदन वह नहीं करता है और (पुरिसवेयस्स उदएणं नो इत्थियवेयं वेएइ) पुरुषवेद के उदय से स्त्रीवेद का वेदन वह नहीं करता है। (एवं खलु एगे जीवे) इस तरह एक जीव (एगेणं समएणं) एक समय में (एगं वेयं वेएइ) एक ही वेद का वेदन करता है। (तं जहा इत्थिवेय वा पुरिसवेयंवा) जैसे – या तो वह स्त्री वेद का वेदन करता है या पुरुषवेद का वेदन करता है। एक जीव एक समय में एक ही वेद का वेदन करता है– दूसरे वेद का नहीं इसमें क्या कारण है? सो

એક જ સમયે એક સાથે વેદન કરતો નથી. કારણ કે (जं समय इत्थियवेयं वेएइ) જે સમયે તે સ્ત્રીવેદનું વેદન કરતો હોય (णो तं समयं पुरिसवेय वेएइ) તે સમયે તે પુરુષવેદનું વેદન કરતો નથી, (जं समयं पुरिसवेय वेएइ तं समयं णो इत्थियवेयं वेएइ) જ્યારે તે પુરુષવેદનું વેદન કરતો હોય છે ત્યારે તે સ્ત્રીવેદનું વેદન કરતો નથી (इत्थियवेयस्स उदएणं नो पुरिसवेयं वेयइ) સ્ત્રીવેદના ઉદયમાં તે પુરુષવેદનું વેદન કરતો નથી અને (पुरिसवेयस्स उदएणं नो इत्थियवेयं वेएइ) પુરુષવેદના ઉદયથી તે સ્ત્રીવેદનું કરતો નથી. (एवं खलु एगे जीवे एगेणं समएणं एगं वेयं वेएइ) આ રીતે એક જીવ એક સમયે એક જ વેદનું વેદન કરે છે (तं जहा-इत्थीवेयं वा पुरिसवेयं वा) કાંતો સ્ત્રીવેદનું વેદન કરે છે, કાંતો પુરુષવેદનું વેદન કરે છે એક જીવ એક જ સમયે એક જ વેદનું વેદન કરે છે,

अन्येषां स्वात्मव्यतिरिक्तानां देवानां सम्बन्धिनीः देवीः "अभिजुंजिय अभिजुंजिय" अभियुज्याभियुज्य वशीकृत्य वशीकृत्य परिचारयति, तैः सह वैषयिकं भोगं परिभुंक्ते इत्यर्थः २। "अप्पणिच्चियाओ देवीओ अभिजुंजिय अभिजुंजिय परियारेइ" आत्मीयादेवीः स्वसम्बन्धिनीः देवीः अभियुज्याभियुज्य परिचारयति २। "अप्पणामेव अप्पाणं विउव्विय विउव्विय परिचारेइ" आत्मनैव स्वेनैव आत्मानं स्वं देवत्वेन देवीत्वेन वा विकुर्व्य विकुर्व्य.नो परिचारयति। ३। "एगे वि य णं जीवे" एकोऽपि च खलु जीवः "एगेणं समएणं एगं वेदं वेएइ" "एकस्मिन् समये एकमेव वेदं वेदयति. "तं जहा इत्थिवेयं वा पुरिसवेयं वा" स्त्रीवेदं वा पुरुषवेदं वा " जं समयं इत्थिवेयं वेएइ णो तं समयं पुरिसवेयं वेएइ"

में उत्पन्न हुआ वह देव अन्यदेवों को तथा अन्य देवों की देवियों को बार बार अपने वश में करके उनके साथ परिचारणा करता है। तथा-(अप्पणिच्चियाओ देवीओ अभिजुंजिय अभिजुंजिय परियारेइ) अपनी देवियों को बार बार अपने वशमें करके उनके साथ परिचारणा करता है। (अप्पणामेव अप्पाणं) अपने आप से अपने आपको (विउव्विय विउव्विय) वैक्रियशक्ति द्वारा देव और देवी के रूप में उत्पन्न कर के (नो परियारेइ) परिचारणा नहीं करता है। अतःइस कथन से यही निष्कर्ष निकलता है कि (एगे वि य णं जीवे) एकजीव (एगेणं समएणं) एकसमय में (एगं वेयं वेएइ) एक ही वेद का वेदन करता है। (तं जहा) जैसे (इत्थियवेयं वा पुरिसवयं वा) या तो वह एक समय में स्त्री वेद का वेदन करेगा या पुरुषवेद का -दो वेदों का युगपत् एक समय में वह वेदन नहीं करेगा। क्यों

આદિથી યુક્ત દેવલોકોમાંના કોઈ પણ એક દેવલોકમા ઉત્પન્ન થયેલો તે દેવ, અન્ય દેવોને તથા અન્ય દેવોની દેવીઓને વાર વાર પોતાને વશ કરીને તેમની સાથે વિષયસુખ ભોગવે છે તથા (अप्पणिच्चियाओ देवीओ अभिजुंजिय अभिजुंजिय परियारेइ) પોતાની દેવીઓને વશ કરીને વાર વાર તેમની સાથે વિષયસુખ ભોગવે છે (अप्पणामेव अप्पाणं) પોતે જ પોતાની જાતને (विउव्विय विउव्विय) વૈક્રિય શક્તિથી દેવ અને દેવી રૂપે ઉત્પન્ન કરીને (नो परियारेइ) વિષયસુખ ભોગવતા નથી. આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે-કે-(एगे वि य ण जीवे) એક જીવ (एगेण समएणं) એક સમયે (एग वेयं वेएइ) એક જ વેદનુ વેદન કરે છે (त जहा-इत्थियवेयं वा पुरिसवेयं वा) કાતો તે સ્ત્રીવેદનુ વેદન કરે છે, કાતો પુરુષવેદનું વેદન કરે છે બન્ને વેદનું

(कइविहेणं भंते! वेए पण्णत्ते) कतिविधः खलु भदन्त! वेदः प्रज्ञप्तः?–हे भदन्त! वेद कितने प्रकार का होता है? (गोयमा! तिविहे वेए पण्णत्ते) गौतम त्रिविधो वेदः प्रज्ञप्तः–हे गौतम! वेद तीन प्रकार का होता है–(तं जहा) तद्यथा–वे प्रकार ये हैं (इत्थीवेए, पुरिसवेए नपुंसगवेए) स्त्रीवेदः पुरुषवेदः नपुंसकवेदः–स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसकवेद। (णेरइयाणं भंते! किं इत्थीवेया, पुरिसवेया णपुंसगवेया पण्णत्ता) हे भदंत! नैरयिकाः किं स्त्रीवेदाः पुरुषवेदाः नपुंसकवेदाः प्रज्ञप्ताः–हे भदंत! नारकजीव क्या स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसकवेद वाले कहे गये हैं? (गोयमा! णो इत्थीवेया, णो पुरिसवेया णपुंसगवेया पण्णत्ता) गौतम! नो स्त्रीवेदाः नो पुंवेदाः नपुंसकवेदाः प्रज्ञप्ताः–हे गौतम! नारक जीव न स्त्री वेदवाले कहे गये हैं, न पुरुषवेद वाले कहे गये हैं, किन्तु नपुंसक वेद वाले कहे गये हैं। (असुरकुमाराणं भंते! किं इत्थीवेया णपुंसगवेया?) असुरकुमाराः खलु भदन्त! किं स्त्रीवेदाः पुरुषवेदाः नपुंसकवेदाः?–हे भदंत! असुरकुमारदेव क्या स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसकवेद वाले होते हैं? (गोयमा! इत्थीवेया पुरिसवेया णो णपुंसगवेया) हे गौतम! असुरकुमाराः स्त्रीवेदाः पुरुषवेदाः नो नपुंसकवेदाः–असुरकुमारदेव स्त्रीवेद और पुरुषवेद वाले ही होते हैं नपुंसकवेदवाले नहीं होते हैं। (जाव थणियकुमारा) यावत्स्तनितकुमाराः–इसी तरह

શબ્દાર્થ—(कइविहेणं भंते! वेए पण्णत्ते) कतिविधः खलु भदन्त! वेदः प्रज्ञप्तः?–હે ભદંત! વેદ કેટલા પ્રકારના હોય છે? (गोयमा! तिविहे वेए पण्णत्ते) गौतम! त्रिविधो वेदः प्रज्ञप्तः–હે ગૌતમ! વેદ ત્રણ પ્રકારના છે (तं जहा) तद्यथा–પ્રકારો આ પ્રમાણે છે–(इत्थीवेए, पुरिसवेए, नपुंसगवेए) સ્ત્રીવેદ, પુરુષવેદ અને નપુંસકવેદ णेरइयाणं भंते! किं इत्थीवेया, णपुंसगवेया पण्णत्ता?) किं स्त्रीवेदाः, पुरुषवेदाः नपुंसकवेदाः प्रज्ञप्ताः–નારકીજીવો સ્ત્રીવેદ, પુરુષવેદવાળા છે? (गोयमा! णो इत्थीवेया, णो पुरिसवेया णपुंसगवेया पण्णत्ता) गौतम! नो स्त्रीवेदाः, नो पुंवेदाः नपुंसकवेदाः प्रज्ञप्ताः–હે ગૌતમ! નારકીજીવ સ્ત્રીવેદવાળા નથી, પુરુષવેદવાળા પણ નથી નપુંસકવેદવાળા કહેલા છે (असुरकुमाराणं भंते! किं इत्थीवेया, पुरिसवेया, णपुंसगवेया?) असुरकुमाराः खलु भदन्त! किं स्त्रीवेदाः, पुरुषवेदाः नपुंसकवेदाः? હે ભદંત! અસુરકુમાર દેવો સ્ત્રીવેદવાળા હોય છે, કે પુરુષવેદવાળા હોય છે કે નપુંસકવેદવાળા હોય છે" (गोयमा! इत्थीवेया, पुरिसवेया, णो णपुंसगवेया) हे गौतम! असुरकुमाराः स्त्रीवेदाः पुरुषवेदाः नो नपुंसकवेदाः–હે ગૌતમ! અસુરકુમાર દેવો સ્ત્રીવેદ વાળા અને પુરુષવેદવાળા હોય છે નપુંસકવેદવાળા હોતા નથી. (जाव थणियकुमारा) यावत् स्तनितकुमाराः–

से स्तनित कुमारान्तक जो नौ प्रकार के भवनपति देव हैं वे भी इन दोनों वेदवाले ही होते हैं नपुसक वेद वाले नहीं। (पुढवीआऊ तेऊ वाऊ वणस्सइ बिति चउरिंदिय संमुच्छिम पंचिंदियतिरिक्खसमुच्छिमम णुस्सा णपुसगवेया) पृथिव्यप्तेजो वायुवनस्पति द्वि त्रि चतुरिन्द्रिय समु र्च्छिममनुष्णाः-पृथ्वीकायिक, अप्कायिक, तेजस्कायिक, वायुकायिक, वनस्पतिकायिक, दो इन्द्रिय, ते इन्द्रिय चौ इन्द्रिय, संमूर्च्छिम पचेन्द्रिय-तिर्यंच और समूर्च्छिमनुष्य य सब नपुसक वेद वाले होते हैं। स्त्रीवेद पुरुषवेद वाले नहीं होते हैं। (गब्भवक्कंतियमणुस्सा पंचिंदियतिरिया य तिवेया) गर्भव्युत्क्रान्तिक मनुष्या पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चश्च त्रिवेदा — तथा जो गर्भजमनुष्य और पचेन्द्रियतिर्यंच हैं वे तीनों ही वेदवाले होते हैं। (जहा असुरकुमारा तहा वाणमतरा जो इसिय वेमाणिया वि) यथा असुर कुमारास्तथाव्यन्तर ज्योतिषिक वैमानिका अपि–जिस प्रकार असुरकुमार देव पुरुष और स्त्रीवेद वाले होते हैं, उसी प्रकार से व्यन्तर देव, ज्योतिषिकदेव, और वैमानिक देव भी होते हैं। देवों में नपुसक वेद नहीं होता है ॥सू १९४॥

टीकार्थ—'कइविहेण भंते! वेए पण्णत्ते' इत्यादि—हे भदन्त! वेद

એ જ પ્રમાણે સ્તનિતકુમાર સુધીના જે નવ ભવનપતિ દેવો છે તેઓ પણ એ બે વેદવાળા હોય છે નપુંસક વેદવાળા હોતા નથી पुढवी आऊ तेऊ वाऊ वणस्सइ बितिचउरिंदिय समुच्छिम पचिंदिय तिरिक्ख संमुच्छिम मणुस्सा णपुस गवेया) पृथिव्यप्तेजोवायुवनस्पति द्वित्रिचतुरिन्द्रिय संमूर्च्छिम पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च संमूर्च्छिममनुष्या :—પૃથ્વીકાયિક, અપકાયિક, તેજસ્કાયિક, વાયુકાયિક દ્વીન્દ્રિય ત્રીન્દ્રિય ચતુરિન્દ્રિય સમૂર્ચ્છિમ પંચેન્દ્રિય તિર્યંચ, અને સમૂર્ચ્છિમ મનુષ્યો એ બધા નપુંસક વેદવાળા હોય છે પણ સ્ત્રીવેદ કે પુરુષવેદવાળા હોતા નથી (गब्भ वक्कंतिया मणुस्सा पचिंदिय तिरिया य तिवेया) गर्भव्युत्क्रान्तिक मनुष्या पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चाश्च त्रिवेदाः ગર્ભજ મનુષ્યો અને પંચેન્દ્રિય તિર્યંચો ત્રણે વેદ વાળાં હોય છે (जहा असुरकुमारा तहा वाणमंतरा जोइसिय वेमाणिया वि) यथा असुरकुमारास्तथा व्यन्तर ज्योतिषिक वैमानिकापि—જેમ અસુર કુમાર દેવો પુરુષ અને સ્ત્રીવેદવાળા હોય છે તે જ પ્રમાણે વ્યતર દેવો અને વૈમાનિક દેવો પણ પુરુષ અને સ્ત્રીવેદ વાળા હોય છે દેવોમાં નપુંસકવેદ હોતો નથી ાસૂ. ૧૯૪॥

ટીકાર્થ—'कइविहेणं भंते! वेए पण्णत्ते' इत्यादि—હે ભદન્ત! વેદ કેટલા

टीका—'कइविहेण भंते' इत्यादि—'कइविहेणं भंते ! वेए पण्णत्ते' कतिविधः खलु भदन्त ! वेदः प्रज्ञप्तः ? 'गोयमा ! तिविहे वेए पण्णत्ते' त्रिविधो वेदः प्रज्ञप्तः, 'तं जहा' तद्यथा—'इत्थीवेए' स्त्रीवेदः—पुंस्कामिता, 'पुरिसवेए' पुरुषवेदः—स्त्रीकामिता, 'नपुंसयवेए' नपुंसकवेदः—स्त्रीपुंस्कामिता । 'नेरइयाणं भंते' नैरयिकाः खलु भदन्त ! 'किं इत्थीवेया पुरिसवेया णपुंसगवेया पण्णत्ता' किं स्त्रीवेदाः पुरुषवेदा नपुंसकवेदाः प्रज्ञप्ताः? स्त्रीवेदादयो मत्वर्थीयाच्प्रत्ययान्तास्तेन स्त्रीवेदवन्तः पुरुषवेदवन्तो नपुंसकवेदवन्त इत्यर्थो बोध्यः । भगवानुत्तरयति—'गोयमा !' हे गौतम ! 'णो इत्थीवेया णो पुवेया णपुंसगवेया पण्णत्ता' नो स्त्रीवेदाः नो पुवेदाः अपि तु नपुंसकवेदाः प्रज्ञप्ताः । 'असुरकुमारा णं भंते असुरकुमाराः खलु भदन्त ! 'किं इत्थीवेया पुरिसवेया णपुंसगवेया' किं स्त्रीवेदा पुरुषवेदाः नपुंसकवेदाः ? गोयमा ! इत्थीवेया पुरिसवेया णो णपुंसगवेया' हे गौतम ! असुरकुमाराः स्त्रीवेदाः पुरुषवेदा नो नपुंसकवेदाः । 'जाव थणियकुमारा' यावत्स्तनितकुमाराः—असुरकुमारातिरिक्ताः स्तनितकुमारान्ताः शेषा नव भवनपतयो देवा अपि स्त्रीवेदाः पुरुषवेदा नो नपुंसकवेदाः । तथा—'पुढवी आउ तेउ वाउ वणस्सई बिति चउरिंदियसंमुच्छिमपंचिंदियतिरिक्खसंम-

कितने प्रकार का होता है ? हे गौतम ! वेद तीन प्रकार का होता है। वे प्रकार ये हैं—स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसकवेद। हे भदंत नारक जीव क्या स्त्रीवेद या पुरुषवेद अथवा नपुंसकवेदवाले कहे गये हैं। हे गौतम ! नारक जीव न स्त्रीवेदवाले कहे गये हैं न पुरुषवेद वाले कहे गये हैं, किन्तु नपुंसक वेद वाले कहे गये हैं। हे भदंत! असुरकुमार देव क्या स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसक वेद वाले होते है ? हे गौतम असुरकुमार देव स्त्रीवेद और पुरुषवेद वाले ही होते है—नपुंसकवेद वाले नहीं होते हैं। इसी तरह से स्तनितकुमारान्ततक जो नौ प्रकार के भवनपति देव हैं वे भी इन दोनों वेद वाले ही होते है— नपुंसक वेद वाले नहीं। पृथ्वीकायिक, अप्कायिक, तेजस्कायिक,

પ્રકારના હોય છે ? હે ગૌતમ ! વેદના નીચે પ્રમાણે ત્રણ પ્રકાર છે—સ્ત્રીવેદ, પુરુષવેદ અને નપુંસકવેદ હે ભદંત ! નારકજીવો સ્ત્રીવેદવાળા છે કે પુરુષવેદવાળા છે અથવા નપુંસકવેદવાળા છે ? હે ગૌતમ ! નારકજીવો પુરુષવેદવાળા નથી, સ્ત્રીવેદવાળા પણ નથી તેઓ નપુંસક વેદવાળા હોય છે હે ભદંત ! અસુરકુમાર દેવો પુરુષવેદ વાળા હોય છે, કે સ્ત્રીવેદવાળા હોય છે કે નપુંસકવેદવાળા હોય છે ? હે ગૌતમ ! અસુરકુમાર દેવો પુરુષવેદ અને સ્ત્રીવેદવાળા જ હોય છે નપુંસક વેદવાળા હોતા નથી એ જ પ્રમાણે સ્તનિતકુમાર સુધીના જે નવ ભવનપતિ દેવો છે તેઓ પણ એ બેજ વેદવાળા હોય છે, પણ નપુંસક વેદવાળા હોતા નથી

च्छिममणुस्सा' पृथिव्यप्तेजोवायुवनस्पतिद्वित्रिचतुरिन्द्रियसमूर्च्छिमपञ्चेन्द्रियतिर्य क्संमूर्च्छिममनुष्या, 'णपुंसगवेया' नपुंसकवेदाः। तथा– गब्भवक्कंतियमणुस्सा पंचिंदियतिरिया य तिवेया' गर्भव्युत्क्रान्तिकमनुष्याः पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चश्च त्रिवेदाः। 'जहा असुरकुमारा तहा वाणमंतरा जोइसियवेमाणिया वि' यथा असुरकुमारा स्तथा व्यन्तरज्योतिषिकवैमानिका अपि–असुरकुमारवद् व्यन्तरज्योतिषिकवैमा निका अपि स्त्रीवेदाः पुंवेदा नो नपुंसकवेदा इति भाव ॥सू १९४॥

पूर्वोक्ताः सर्वपदार्थाः समवसरणे स्थितेन भगवता प्रोक्ता', अत समवसरणवक्तव्यतां कथयति—

मूलम्—तेण कालेणं तेण समएणं कप्पस्स समोसरणं णेयव्वं, जाव गणहरा सावच्चा निरवच्चा वोच्छिण्णा ॥सू १९५॥

वायुकायिक, वनस्पतिकायिक, दो इन्द्रिय, ते इन्द्रिय चौइन्द्रिय, संमूर्च्छिम पचेन्द्रिय तिर्यंच, और संमूर्च्छिम मनुष्य ये सब नपुंसकवेदवाले होते हैं। स्त्रीवेद, पुरुषवेद वाले नहीं होते हैं। तथा जो गर्भज मनुष्य और पंचेन्द्रियतिर्यंच हैं वे तीनों ही वेदवाले होते हैं। जिस प्रकार असुरकुमार देव पुरुष और स्त्रीवेदवाले होते हैं, उसी प्रकार से व्यन्तर देव ज्योतिषिक देव और वैमानिकदेव भी होते हैं। देवों में नपुंसकवेद नहीं होता है॥सू०१९४॥

ये पूर्वोक्त समस्तपदार्थ समवसरण में स्थित हुए भगवानने कहे हैं अत समवसरण के विषय में सूत्रकार कहते हैं—

शब्दार्थ—(तेणं कालेणं) तस्मिन् काले–उस काल में–दुःषम सुषम नामके चतुर्थआरे में जब कि (तेण समएणं) तस्मिन् समये–भगवान्

પૃથિવી કાયિક અપકાયિક તેજસ્કાયિક વાયુકાયિક વનસ્પતિકાયિક, દ્વિન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય ચતુરિન્દ્રિય સમૂર્ચ્છિમ પચેન્દ્રિય તિર્યંચ અને સમૂર્ચ્છિમ મનુષ્યો તે બધા નપુંસકવેદવાળા જ હોય છે સ્ત્રીવેદ કે પુરુષવેદવાળાં હોતાં નથી તથા ગર્ભજ મનુષ્યો અને પંચેન્દ્રિય તિર્યંચો ત્રણે વેદવાળાં હોય છે વ્યંતર જ્યોતિષિક અને વૈમાનિક દેવો, અસુરકુમાર દેવોની જેમ પુરુષવેદ અને સ્ત્રીવેદવાળા હોય છે દેવોમાં નપુંસક વેદ હોતો નથી. ॥સૂ ૧૯૪॥

પૂર્વોક્ત સમસ્ત પદાર્થોનું કથન સમવસરણમાં ભગવાન દ્વારા કરાયું છે તેથી હવે સૂત્રકાર સમવસરણનું વર્ણન કરે છે—

શબ્દાર્થ—(तेण कालेणं) तस्मिन् काले–તે કાળે–દુઃષમ સુષમ નામના ચોથા આરામાં જ્યારે (तेणं समएणं)तस्मिन् समये–ભગવાન મહાવીર સ્વામી વિહાર

टीका–'तेणं' इत्यादि–'तेणं कालेणं' तस्मिन् काले खलु=दुःषमसुषम नामके चतुर्थेऽरे 'तेणं समयेणं' तस्मिन् समये खलु भगवान् महावीरस्वामी यदा विचरति स्म तस्मिन समये इत्युपक्रम्य'कप्पस्स समोसरणं णेयव्वं' कल्पस्य समवसरणं नेतव्यम्=कल्पे यथा समवसरणवक्तव्यता प्रोक्ता तथैव वक्तव्या, कियत्पर्यन्तं वक्तव्या ? इत्याह–'जाव गणहरा सावच्चा निरवच्चा वोच्छिण्णा' यावद् गणधराः सापत्या निरपत्या व्युच्छिन्नाः=शिष्यप्रशिष्यसहितगणधरस्य सुधर्मस्वा-

महावीर स्वामी विहार कर रहे थे उस समय में–इस पाठ से लेकर (कप्पस्स समोसरण णेयव्वं) कल्पस्य समवसरणं नेतव्यम्–कल्पसूत्र में जिस प्रकार से समवसरण के विषय में कथन किया गया है उसी प्रकार का कथन (जाव गणहरा सावच्चा निरवच्चा वोच्छिण्णा)यावद् गणधराः सापत्या निरपत्या व्युच्छिन्नाः–यावत् शिष्य प्रशिष्य सहित सुधर्मस्वामी और दूसरे गणधर और उनके शिष्य प्रशिष्य दूसरे गणधर मोक्ष चले गये यहां तक का ग्रहण करना चाहिये ।सू०१९५।

टीकार्थ—'तेणं कालेणं तेणं समएणं' इत्यादि—उस काल में दुःषम सुषम नामके चतुर्थ आरे में–जब कि भगवान् महावीर स्वामी विहार कर रहे थे–उस समय में–इस पाठ से लेकर कल्पसूत्र में जिस प्रकार से समवसरण के विषय में कथन किया गया है उसी प्रकार का कथन यावत् शिष्य प्रशिष्य सहित सुधर्मस्वामी और दूसरे गणधर शिष्यप्रशिष्य रहित दूसरे गणधर मोक्ष चले गये यहां तक का ग्रहण करना चाहिये। तात्पर्य इसका यह है कि समवसरण के विषय का कथन कल्पसूत्र में किया गया है–सो वह सब कथन "तेणं कालेणं तेणं समएणं" यहां से लेकर–"गणहरा

करता હતા ત્યારે–આ પાઠથી શરૂ કરીને (कप्पस्स समोसरणं णेयव्वं) कल्पस्य समवसरणं नेतव्यम्–કલ્પસૂત્રમા જે રીતે સમવસરણ વિષે વર્ણન કર્યું છે તે પ્રકારનુ વર્ણન (जाव गणहरा सावच्चा निरवच्चा वोच्छिण्णा) यावद् गणधराः सापत्या निरपत्या व्युच्छिन्नाः–શિષ્ય પ્રશિષ્ય સહિત સુધર્માસ્વામી અને તે સિવાયના બીજા ગણધરો મોક્ષે સિધાવ્યા ત્યા સુધીનુ કથન ગ્રહણ કરવુ ।।સૂ ૧૯૫।।

ટીકાર્થ—'तेणं कालेणं तेणं समएण' इत्यादि—'તે કાળે-દુઃષમ નામના ચોથા આરામા જ્યારે ભગવાન મહાવીર સ્વામી વિહાર કરતા હતા ત્યારે' ત્યાથી શરૂ કરીને કલ્પસૂત્રમા જે પ્રકારે સમવસરણ વિષે કથન કર્યું છે એ જ પ્રકારનુ કથન શિષ્યપ્રશિષ્યો સહિત સુધર્માસ્વામી અને બીજા ગણધરો મોક્ષ ગયા' ત્યા સુધીનું કથન ગ્રહણ કરવુ જોઈએ. તેનું તાત્પર્ય એ છે કે સમવસરણ વિષેનુ કથન કલ્પસૂત્રમા કરવામાં આવ્યું છે. તો તે સમસ્ત કથન 'तेणं कालेणं तेणं

जिनन्तरहितगणधराणां च मोक्षवक्तव्यता पर्यन्त तत्पर्यन्त कल्पस्य समवसरण वक्तव्यमित्यर्थः ॥ सू १९५ ॥

एतत्समवसरणनायको भगवान् महावीर कुलकरस्य वंशे समुत्पन्नो महापुरुषमासीत्, अत कुलकराणां महापुरुषाणां च वक्तव्यतामाह—

मूलम्—जबुद्दीवे ण दीव भारहे वासे तीयाए उस्सप्पिणीए सत्त कुलगरा होत्था, त जहा—मित्तदामे सुदामे य, सुपासे य, सयपभे। विमलघोसे सुघोसे य, महाघोसे य सत्तमे॥१॥ जम्बुद्दीवे ण दीवे भारहे वासे तीयाए ओसप्पिणीए दस कुलगरा होत्था, त जहा—सयजले सयाऊ य अजियसेणे अणतसेणे य। कज्जसेणे भीमसेणे, महाभीमसेणे य सत्तमे॥२॥ दढरहे दसरहे सयरहे॥ जम्बुद्दीवे ण दीव भारहे वासे इमीसे ण ओसप्पिणीए समाए सत्त कुलगरा होत्था, त जहा—पढमेत्थविलवाहण (चक्खुमजसमचउत्थमभिचदे। तत्तोय पसेणईए मरुदेव चेव नाभी या॥३॥) एतेसि ण सत्तण्ह कुलगराण सत्त भारिया होत्था, त जहा—चदजसा चदकता (सुरूव पडिरूव चक्खुकता य। सिरिकता मरुदेवी कुलगर पत्तीण णामाइ ॥४॥) ॥ सू० १९६ ॥

सावज्जा निरवज्जा वोच्छिण्णा" यहांतक समवसरण के विषय का है। सो उसे वहां से लगाकर "गणहरा सावज्जा" आदि पाठतक यहां लगा लेना चाहिये ।सू० १९५॥

इस समवसरण के नायक भगवान् महावीर कुलकर के वंश में उत्पन्न हुए थे और महापुरुष थे। अब कुलकरों और महापुरुषों का कथन

समण्ग' थी लइने 'गणहरा सावज्जा निरवज्जा वोच्छिण्णा' सुधी सम वसरण विषे कहेवामा आव्यु छे त्यांथी ग्रहण करीने 'गणहरा सावज्जा' आदि पाठ सुधीनु वर्णन त्यांथी जोई लेवु ॥सू १९५॥

आ समवसरणना नायक भगवान महावीर कुलकरना वंशमां जन्म पाम्या हता अने महापुरुष हता तेथी हवे सूत्रकार कुलकरो अने महापुरुषोनु कथन करे छे—

अब सूत्रकार करते हैं—

शब्दार्थ—(जंबूदीवेणं दीवे भारहे वासे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे-जम्बूद्वीप नामके द्वीप में भारतवर्ष में (तीयाए उस्सप्पिणीए) तृतीयस्यामुत्सर्पिण्याम्-तीसरे उत्सर्पिणी काल में (सत्तकुलगरा होत्था) सप्त कुलकराः आसन्-सात कुलकर हुए हैं (तं जहा) तद्यथा-वे इस प्रकार हैं (मित्तदामे) मित्रदामा-मित्रदामन् १, (सुदामे) सुदामा-सुदामन् २ (सुपासे) सुपार्श्वः-सुपार्श्व ३, (सयपभे) स्वयंप्रभः-स्वयप्रभ ४, (विमलघोसे) विमलघोपः-विमलघोप ५, (सुघोसे) सुघोपः-सुघोष ६, (सत्तमे महाघोसे य) सप्तमः महाघोपश्च-सातवें महाघोष ७। (जंबूदीवे णं दीवे भारहे वासे तीयाए ओसप्पिणीए दसकुलगरा होत्था) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे तृतीयस्यामवसर्पिण्यां दस कुलकरा-आसन-इस जम्बूद्वीप नामके द्वीप में तृतीय अवसर्पिणीकाल में दस कुलकर हुए हैं (तं जहा) तद्यथा-उनके नाम इस प्रकार हैं-(सयंजले सयाऊ य) स्वय जलः शतायुश्च-स्वयजल १, शतायु २ (अजियसेणे) अजितसेनः-अजितसेन ३ (अणंतसेणे य) अनन्तसेनश्च-अनंतसेन ४ (कज्जसेणे) कार्यसेनः कार्यसेन ५ (भीमसेणे) भीमसेनः-भीमसेन ६ (सत्तमे महाभीमसेणे य) सप्तमः महाभीमसेनश्च-सातवें महाभीमसेन ७ (दढ

શબ્દાર્થ—(जंबूदीवेणं दीवे भारहे वासे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारतवर्षे-જમ્બૂદ્વીપ નામના દ્વીપમા આવેલા ભારતવર્ષમા (तीयाए उस्सप्पिणीए) तृतीयस्यामुत्सर्पिण्याम्-ત્રીજા ઉત્સર્પિણી કાળમા (सत्त कुलगरा होत्था) सप्त-कुलकराः आसन्-સાત કુલકરો થઈ ગયા છે (तंजहा) तद्यथा તેમના નામ આ પ્રમાણે છે-(मित्तदामे) मित्रदामा-(૧) મિત્રદામન્ (सुदामे) सुदामा- (૨) સુદામન્ (सुपासे) सुपार्श्वः-(૩) સુપાર્શ્વ, (सयंपभे-स्वयंप्रभः (૪) સ્વય પ્રભ, (विमलघोसे) विमलघोपः-(૫) વિમલઘોષ, (सुघोसे) सुघोपः-(૬) સુઘોસ અને (सत्तमे-महाघोसे य) सप्तमः महाघोपश्च-(૭) મહાઘોષ (जंबूदीवेण दीवे भारहे वासे तीयाए ओसप्पिणीए दसकुलगरा होत्था)-जम्बू द्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे तृतीयस्यामवसर्पिण्यां दसकुलकरा आसन्-જમ્બૂદ્વીપ નામના દ્વીપમા આવેલા ભારતવર્ષમા ત્રીજા અવસર્પિણી કાળમા દસ કુલકરો થઈ ગયા છે, (तंजहा) तद्यथा-તેમનાનામ આ પ્રમાણે છે- (सयजले सयाऊ य) स्वय जल शतायुश्च-(૧) સ્વય જલ (૨) શતાયુ ((अजियसेणे) अजितसेन -(૩) અજિતસેન, (अणंतसेणे य) अनन्तसेनः-(૪) અનંતસેન, (कज्जसेणे) कार्यसेनः-(૫) કાર્યસેન, (भीमसेणे) भीमसेनः-(૬) ભીમસેન, (सत्तमे महाभीमसेणे य) सप्तमः महाभीमसेनश्च-

रहे) दसरथो–दशरथ८(दसरहे) दशरथः–दशरथ९ (सयरहे) शतरथ –दशवें शतरथ। (जम्बूदीवेण दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणी समाए सत्त कुलगराहोत्था) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे अस्यामवसर्पिण्यां समायां सप्तकुलकरा आसन्–इस जम्बूद्वीप नामक प्रथम द्वीप में भारतवर्ष में इस काल अवसर्पिणी काल में सात कुलकर हुए हैं (तं जहा) तद्यथा–उनके नाम ये हैं–(पढमेत्थविमलवाहण) प्रथमोऽत्रविमलवाहन –प्रथम विमलवाहन (चक्खुम) चक्षुष्मान्–द्वितीयचक्षुष्मान् (जसम) यशोमान्–तृतीय यशोमान् (चउत्थमभिचंदे) चतुर्थोऽभिचन्द्र –चतुर्थ अभिचन्द्र (तत्तो य) ततश्च–इनके बाद (पसेणईए) प्रसेनजित्–पांचवे–प्रसनजित् (मरुदेवे) मरुदेव –छठवें मरुदेव (चेव नाभी य) चैव नाभिश्च–और सातवें नाभिराय। (एतेसि णं सत्तण्हं कुलगराणं) एतेषां खलु सप्तानां कुलकराणां–इन सात कुलकरों की (सत्त भारिया होत्था) सप्तभार्या आसन्–सात स्त्रीयां थीं। (तं जहा) तद्यथा–उनके नाम इस प्रकार से हैं–(चंद जसा) चन्द्रयसा–चंद्रयशा१, (चंदकता) चन्द्रकान्ता–चन्द्रकान्ता२ (सुरूवपडिरूवचक्खु कंता य) सुरूपा प्रतिरूपा चक्षुष्कान्ता च–सुरूपा३, प्रतिरूपा४ चक्षुष्कान्ता५ (सिरिकंता मरुदेवी) श्रीकान्ता मरुदेवी–श्रीकांता६ और मरुदेवी७। (कुलगर

---

(७) મહાસેનસેન, (दसरहे) दसरथो–(८) દશરથ, (दसरहे) दशरथा–શતરથ (सयरहे) शतरथः–અને (१०) શતરથ. (जंबुद्दीवेणं दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीसमाए सत्तकुलगराहोत्था) जम्बुद्वीपे खलु द्वीपे भारतेवर्षे अस्या मवसर्पिण्यां समायां सप्तकुलकरा आसन्–આ જ બૂદ્રીપ નામના પહેલા દ્વીપમા આવેલા ભારતવર્ષમાં આ ચાલુ અવસર્પિણીકાળમાં સાત કુલકરો થયા છે (तं जहा) तद्यथा–તેમનાં નામ આ પ્રમાણે છે (पढमेत्थ विमलवाहण) प्रथमोऽत्र विमलवाहनः–(१) વિમલવાહન, (चक्खुम) चक्षुष्मान्–(२) ચક્ષુષ્માન, (जसम) यशोमान्–(३) યશોમાન, (चउत्थमभिचंदे) चतुर्थोऽभिचन्द्र –(४) અભિચન્દ્ર, (तत्तोय पसेणईए) ततश्च प्रसेनजित्–(५) પ્રસેનજિત, (मरुदेव) मरुदेवा–(६) મરુદેવ અને (चेवनाभीय) चैवनाभिश्च–(७) નાભિરાય (एतेसिणं सत्तण्हं कुलगराणं) एतेषां खलु सप्तानां कुलकराणां–આ સાત કુલકરોની (सत्तभारिया होत्था) सप्तभार्या आसन–સાત પત્નીઓ હતી. (तं जहा) तद्यथा–તેમનાં નામ આ પ્રમાણે છે—(चंदजसा) (१) ચન્દ્રયશા (२) (चंदकंता) ચન્દ્રકાન્તા, (सुरूव पडिरूव चक्खुकंता य) (३) સુરૂપા (४) પ્રતિરૂપા (५) ચક્ષુષ્કાન્તા (सिरिकंता

टीका–'जंबुद्दीवेणं' इत्यादि–'जबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे' जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे 'तीयाए उस्सप्पिणीए' अतीतायामुत्सर्पिण्याम् 'सत्तकुलगरा' सप्तकुलकराः 'होत्था' आसन, 'तं जहा' तद्यथा–मित्तदामे सुदामेय सुपासे य सयंपभे। विमलघोसे सुघोसे य महाघोसे य सत्तमे मित्रदामा सुदामा च सुपार्श्वश्च स्वयंप्रभः। विमलघोषः सुघोषश्च महाघोषश्च सप्तमः ॥१॥ 'जंबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे तीयाए ओसप्पिणीए दस कुलगरा होत्था' जम्बुद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे तृतीयस्यामवसर्पिण्या दश कुलकरा आसन, 'त जहा' तद्यथा–'सयंजले सयाऊय, अजियसेणे अणतसेणे य। कज्जसेणे भीमसेणे, महाभीमसेणे य सत्तमे॥ दढरहे दसरहे सत्तरहे॥' स्वयंजलः शतायुश्च, अजितसेनोऽनन्तसेनश्च। कार्यसेनो भीमसेनो महाभीमसेनश्च सप्तमः॥२॥ दृढरथो दशरथः शतरथः। 'जम्बुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणी समाए

पत्तीण णामाइ) कुलकर पत्नीना नामानि–कुलकरपत्नीनां नामानि–ये कुलकरों की पत्नियों के नाम हैं ॥सू० १९६॥

टीकार्थ—'जंबुद्दीवे ण दीवे' इत्यादि—जंबूद्वीप नामके द्वीप में भारतवर्ष में भूतकाल की उत्सर्पिणीकाल में सात कुलकर हुए। वे इस प्रकार से हैं।–मित्रदामन१ सुदामन२ सुपार्श्व३ स्वयंपभ४ विमलघोष५ सुघोष६ और सातवें महाघोष७। इस जम्बूद्वीप नाम के द्वीप में भारतवर्ष में तृतीय अवसर्पिणीकाल में दस कुलकर हुए हैं। उनके नाम इस प्रकार से हैं–स्वयंजल१, शतायु२ अजितसेन३, अनतसेन४ कार्यसेन५ भीमसेन६ सातवें महाभीमसेन७ दृढरथ८ दशरथ९ दशवें शतरथ१०। इस जम्बुद्वीप–नामके प्रथम द्वीप में भारतवर्ष में इस चालू अवसर्पिणी काल में सात कुलकर-

---

मरुदेवी) (६) श्रीकान्ता अने (७) मरुदेवी (कुलगरपत्तीणणामाइं) कुलकर पत्नीना नामानि–એ પ્રમાણે કુલકરોના પત્નીઓના નામો હતાં ॥સૂ ૧૯૬॥

ટીકાર્થ—જંબૂદ્દીવેણં દીવે ઇત્યાદિ–જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપમા આવેલા ભારતવર્ષમા ત્રીજા ઉત્સર્પિણીકાળમા સાત કુલકરો થયા હતા તેમના નામ આ પ્રમાણે હતા–(૧) મિત્રદામન્ (૨) સુદામન્ (૩) સુપાર્શ્વ, (૪) સ્વયંપ્રભ, (૫) વિમલઘોષ, (૬) સુઘોષ, અને (૭) મહાઘોષ. આ જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપમા આવેલા ભારતવર્ષમા ત્રીજા અવસર્પિણીકાળમાં દસ કુલકરો હતા તેમના નામ આ પ્રમાણે છે–(૧) સ્વયંજલ, (૨) શતાયુ, (૩) અજિતસેન, (૪) અનંતસેન, (૫) કાર્યસેન, (૬) ભીમસેન, (૭) મહાભીમસેન, (૮) દઢરથ, (૯) દશરથ અને (૧૦) શતરથ આ જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપમા આવેલા ભારતવર્ષમાં વર્તમાન અવસર્પિ-

रहे) दढरथो–दढरथ८(दसरहे) दशरथः–दशरथ९ (सयरहे) शतरथ –दशवें शतरथ। (जंबुद्दीवेण दीव भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणी समाए सत्त कुलगराहोत्था) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे अस्यामवसर्पिण्यां समायां सप्तकुलकरा आसन्–इस जम्बूद्वीप नामक प्रथम द्वीप में भारतवर्ष में इस चालु अवसर्पिणी काल म सात कुलकर हुए हैं (तं जहा) तद्यथा–उनके नाम ये हैं–(पढमेत्थविमलवाहण) प्रथमोऽत्रविमलवाहनः–प्रथम विमलवाहन (चक्खुम) चक्षुष्मान्–द्वितीयचक्षुष्मान् (जसम) यशोमान्–तृतीय यशोमान् (चउत्थमभिचंदे) चतुर्थोऽभिचन्द्रः–चतुर्थ अभिचंद्र (तत्तो य) ततश्च–इनके बाद (पसेणईए) प्रसेनजित्–पाचवे–प्रसनजित् (मरुदेवे) मरुदेव – छठें मरुदेव (चेव नाभी य) चैव नाभिश्च–और सातवें नाभिराय। (एतेसि ण सत्तण्हं कुलगराण) एतेषां खलु सप्तानां कुलकराणां–इन सात कुलकरों की (सत्त भारिया होत्था) सप्तभार्या आसन्–सात स्त्रीयां थीं। (तं जहा) तद्यथा–उनके नाम इस प्रकार से हैं–(चंद जसा) चन्द्रयशा–चंद्रयशा१, (चंदकन्ता) चन्द्रकान्ता–चन्द्रकान्त२ (सुरूवपडिरूवचक्खु कंता य) सुरूपा प्रतिरूपा चक्षुष्कान्ता च–सुरूपा३, प्रतिरूपा४ चक्षुष्कान्ता५ (सिरिकंता मरुदेवी) श्रीकान्ता मरुदेवी–श्रीकान्ता६ और मरुदेवी७। (कुलगर

---

(७) महासीमसेन, (दढरहे) दढरथो–(८) દઢરથ (દસરહે) દશરથા–દશરથ (सयरहे) शतरथः–અને (૧૦) શતરથ. (जंबुद्दीवेण दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीसमाए सत्तकुलगराहोत्था) जम्बुद्वीपे खलु द्वीपे भारतेवर्षे अस्या मवसर्पिण्यां समायां सप्तकुलकरा आसन्–આ જમ્બૂદ્વીપ નામના પહેલા દ્વીપમા આવેલા ભારતવર્ષમા આ ચાલુ અવસર્પિણીકાળમા સાત કુલકરો થયા છે (तं जहा) तद्यथा–તેમના નામ આ પ્રમાણે છે (पढमेत्य विमलवाहण) प्रथमोऽत्र विमल वाहनः–(૧) વિમલવાહન, (चक्खुम) चक्षुष्मान्–(૨) ચક્ષુષ્માન, (जसम) यशोमान्–(૩) યશોમાન, (चउत्थमभिचंदे) चतुर्थोऽभिचन्द्रः–(૪) અભિચન્દ્ર, (तत्तोय पसेणईए) ततश्च प्रसेनजित्–(૫) પ્રસેનજિત, (मरुदेव) मरुदेव – (૬) મરુદેવ અને (चेयनाभीय) चैवनाभिश्च–(૭) નાભિરાય (एतेसिय सत्तण्ह कुलगराणं) एतेषां खलु सप्तानां कुलकराणां–આ સાત કુલકરોની (सत्तभारिया होत्था) सप्तभार्या आसन्–સાત પત્નીઓ હતી (तं जहा) तद्यथा–તેમના નામ આ પ્રમાણે છે–(चंदजसा) (૧) ચન્દ્રયશા (૨) (चंदकंता) ચન્દ્રકાન્તા, (सुरूव पडिरूव चक्खुकंता य) (૩) સુરૂપા (૪) પ્રતિરૂપા (૫) ચક્ષુષ્કાન્તા (सिरिकंता

चउवीसं तित्थगराणं मायरो होत्था, तं जहा–मरुदेवी विजयासेणा [सिद्धत्था मंगला सुसीमा य। पुहवी लक्खणा रामा नंदा विण्हू जया सामा॥९॥ सुजसा सुव्वयअइरा सिरियादेवी पभावई पउमा । वप्पा सिवा य वामा तिसला देवी य जिणमाया ॥१०॥ ॥सू. १९७॥

शब्दार्थ–(जंबुद्दीवे ण दीवे भारहे वासे इमीसे णं ओसप्पिए चउवीसं तित्थगराणं पियरो होत्था) जम्बुद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षेऽस्यामवसर्पिण्यां चतुर्विंशतिस्तीर्थङ्कराणां पितर आसन्–इस जंबूद्वीप नामके द्वीप में भारतवर्ष में इस अवसर्पिणी काल में चौबीस तीर्थंकरों के पिता हुए हैं। (त जहा) तद्यथा–उनके नाम इस प्रकार से है–[णाभी य) नाभि१, (जियसत्तू य) जितशत्रुश्च–जितशत्रु२ (जियारी) जितारिः–जितारि३, (संवरे इय) संवर इति–संवर४, (मेहे धरे) मेघो धरः–मेघ५, धर६, (पइट्ठे य) प्रतिष्ठश्च–प्रतिष्ठ७ (महासेणे य) महासेन८ (खत्तिए) क्षत्रियः–क्षत्रिय (सुग्गीवे) सुग्रीवो–सुग्रीव९ (दढरहे) दृढरथो–दृढरथ१०, (विण्हू) विष्णुः–विष्णु११ (वसुपूज्जे य) वसुपूज्यश्च–वसुपूज्य१२ (खत्तिए) क्षत्रियः–क्षत्रिय, (कयवम्मा) कृतवर्मा–कृतवर्मा१३, (सीहसेणे) सिंहसेनो–सिंहसेन१४ (भाणू) भानुः–भानु, विस्ससेणे इय) विश्वसेन इति–विश्वसेन१६, (सूरे, सुदंसणे, कुंभे सुमित्त विजए समुद्दविजए य) सूर सुदर्शनः कुम्भः सुमित्रो विजयः समुद्रविजयश्च–सूर१७ सुदर्शन१८ कुंभ१९ सुमित्र२० विजय२१ समुद्रविजय२२

शब्दार्थ—जंबुद्दीवे ण दीवे भारहेवासे इमीसे णं ओसप्पिणीए चउवीसं तित्थगराणं पियरो होत्था) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षेऽस्यामवसर्पिण्यां चतुर्विंशतिस्तीर्थंकराणां पितर आसन्–આ જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપમા ભારતવર્ષમા આ અવસર્પિણીકાળમા ૨૪ તીર્થંકરેના પિતા થઇ ગયા છે (तं जहा) तद्यथा–તેમના નામ આ પ્રમાણે છે–(णाभी य) (૧) નભિ, (जियसत्तू य) (૨)જિતશત્રુ, (जियारी) (૩) જિતારિ, (सावरेइय) (૪) સવર, (मेहे धरे) (૫) મેઘ, (૬) ધર, (पइट्टेय) (૭) પ્રતિષ્ઠ, (महासेणे य) (૮) મહાસેન (खत्तिए) (૯), ક્ષત્રિય, (सुग्गीवे) સુગ્રીવ, (दढरहे) (૧૦) દઢરથ, (विण्हू) (૧૧) વિષ્ણુ (वासुपुज्जेय) (૧૨) વાસુપૂજ્ય, (खत्तिए कयवम्मा) (૧૩) ક્ષત્રિય કૃતવર્મા, (सीहसेणे) सिंहसेनो (૧૪) સિહસેન, (भाणू) (૧૫) ભાનુ (विसससेणे इय) (૧૬)વિશ્વસેન, (सूरे, सुदसणे,, कुभे, सुमित्त विजए समुद्दविजए य) (૧૭) સૂર, (૧૮) સુદર્શન, (૧૯) કુભ, (૨૦) સુમિત્ર, (૨૧) વિજય, (૨૧) સમુદ્રવિજય, (रायाय

मघकुलगरा होत्था' जम्बुद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे अस्यामवसर्पिण्यां समायां सप्त कुलकरा आसन्, 'त जहा' तद्यथा-'पढ़मत्थविमलवाहण चक्खुमजसम चउत्थमभिचन्दे । तत्तो य पसणई्ण मरुदेवे चेव नाभी य । प्रथमोऽत्रविमलवाह नश्चक्षुष्मान यशोमान चतुर्थोऽभिचन्द्रः । ततश्च प्रसेनजित् मरुदेवश्चैव नाभिश्च॥३॥ 'एतसिणं सत्तण्ह कुलगराणं' एतेषां खलु सप्तानां कुलकराणां 'सत्त भारिया होत्था' सप्तभार्या आसन, 'त जहा' तद्यथा-'चदजसा चंदकता सुरूवपडिरूव चक्खुकंता य । सिरिकंता मरुदेवीकुलगरपत्तीणं णामाई ॥४॥' चन्द्रयशाश्चन्द्र कान्ता सुरूपा प्रतिरूपा चक्षुष्कान्ता च । श्रीकान्ता मरुदेवी कुलकरपत्नीनां नामानि ॥४॥ सू १९६ ॥

मूलम्—जबुद्दीवे ण दीवे भारहे वासे इमीसे ण ओसिप्पणीए चउवीस तित्थगराण पियरो होत्था, त जहा—णाभी य जियसत्तू य (जियारी सवरे इय । मेहे घरे पइट्ठे य, महसेणे य खत्तिए ॥५॥ सुग्गीव दढरहे विण्हू वसुपुज्जे य खत्तिये । कयवम्मा सीहसेणे भाणू विस्ससेणे इय॥६॥ सूरे सुदसणे कुभे सुमित्तविजए समुद्दविजए य। राया य आससेणे य सिद्धत्थे च्चिय खत्तिए॥७॥) उदितोदियकुलवसा विसुद्धवसा गुणेहि उववेया। तित्थप्पवत्तयाण एए पियरो जिण वराण ॥८॥ जबुद्दीवे ण दीवे भारहे वासे इमीसे ण ओसप्पिणीए

हुए हैं उनके नाम ये हैं–प्रथम विमल वाहन, द्वितीय चक्षुष्मान् तृतीय यशोमान चतुर्थ अभिचन्द्र इनके बाद पांचवे प्रसेनजित् छठवें मरुदेव और सातवें नमिराया। इन सात कुलकरों की सात स्त्रीयां थीं। उनके नाम इस प्रकार से हैं–चद्रयशा१ चद्रकान्ता२ सुरूपा३ प्रतिरूपा४ चक्षुष्कान्ता५, श्री कांता६ और मरुदेवी७ ये कुलकरों की पत्नियों के नाम हैं ॥सू० १९६॥

જીંબૂદ્વીપમાં સાત કુલકરો થયા છે તેમના નામ આ પ્રમાણે છે-(૧) વિમલવાહન, (૨) ચક્ષુષ્માન્ (૩) યશોમાન્ (૪) અભિચન્દ્ર, (૫) પ્રસેનજિત, (૬) મરુદેવ અને (૭) નમિ ૧૫ તે સાત કુલકરોની સાત સ્ત્રીઓનાં નામ નીચે પ્રમાણે છે- (૧) ચન્દ્રયશા (૨) ચન્દ્રકાન્તા (૩) સુરૂપા (૪) પ્રતિરૂપા, (૫) ચક્ષુષ્કાન્તા, (૬) શ્રીકાન્તા અને (૭) મરુદેવી. ॥સૂ ૧૯૬॥

चउवीसं तित्थगराणं मायरो होत्था, तं जहा-मरुदेवी विजयासेणा [सिद्धत्था मंगला सुसीमा य। पुहवी लक्खणा रामा नंदा विण्हू जया सामा॥९॥ सुजसा सुव्वयअइरा सिरियादेवी पभावई पउमा । वप्पा सिवा य वामा तिसला देवी य जिणमाया ॥१०॥ ॥सू. १९७॥

शब्दार्थ-(जंबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे इमीसे णं ओसप्पिए चउवीसं तित्थ गराणं पियरो होत्था) जम्बुद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षेऽस्यामवसर्पिण्यां चतुर्विंशतिस्तीर्थकराणां पितर आसन्-इस जंबूद्वीप नामके द्वीप में भारतवर्ष मे इस अवसर्पिणी काल में चौवीस तीर्थंकरों के पिता हुए हैं। (तं जहा) तद्यथा-उनके नाम इस प्रकार से हैं-[(णाभी य) नाभि१, (जियसत्तू य) जितशत्रुश्च-जितशत्रु२ (जियारी) जितारिः-जितारि३, (संवरे इय) संवर इति-संवर४, (मेहे धरे) मेघो धरः-मेघ५, धर६, (पइट्ठे य) प्रतिष्ठश्च-प्रतिष्ठ७ (महासेणे य) महासेन८ (खत्तिए) क्षत्रियः-क्षत्रिय (सुग्गीवे) सुग्रीवो-सुग्रीव९ (दढरहे) दृढरथो-दृढरथ१०, (विण्हू) विष्णुः-विष्णु११ (वसुपूज्जे य) वसुपूज्यश्च-वसुपूज्य१२ (खत्तिए) क्षत्रियः-क्षत्रिय, (कयवम्मा) कृतवर्मा-कृतवर्मा१३, (सीहसेणे) सिंहसेनो-सिंहसेन१४ (भाणू) भानुः-भानु, विस्ससेणे इय) विश्वसेन इति-विश्वसेन१६, (सूरे, सुदंसणे, कुंभे सुमित्त विजए समुद्दविजए य) सूर सुदर्शनः कुम्भः सुमित्रो विजयः समुद्रविजयश्च-सूर१७ सुदर्शन१८ कुंभ१९ सुमित्र२० विजय२१ समुद्रविजय२२

શબ્દાર્થ—जंबुद्दीवे ण दीवे भारहेवासे इमीसे णं ओसप्पिणीए चउचीसं तित्थगराणं पियरो होत्था) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षेऽस्यामवसर्पिण्यां चतुर्विंशतिस्तीर्थंकराणां पितर आसन्-આ જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપમા ભારતવર્ષમા આ અવસર્પિણીકાળમા ૨૪ તીર્થંકરેના પિતા થઇ ગયા છે (तं जहा) तद्यथा-તેમના નામ આ પ્રમાણે છે-(णाभी य) (૧) નભિ, (जियसत्तू य) (૨)જિતશત્રુ, (जियारी) (૩) જિતારિ, (सावरेइय) (૪) સવર, (मेहे धरे) (૫) મેઘ, (૬) ધર, (पइट्ठेय) (૭) પ્રતિષ્ઠ, (महासेणे य) (૮) મહાસેન (खत्तिए) (૯), ક્ષત્રિય, (सुग्गीवे) સુગ્રીવ, (दढरहे) (૧૦) દઢરથ, (विण्हू) (૧૧) વિષ્ણુ (वासुपुज्जेय) (૧૨) વાસુપૂજ્ય, (खत्तिए कयवम्मा) (૧૩) ક્ષત્રિય કૃતવર્મા, (सीहसेणे) सिंहसेनो (૧૪) સિહસેન, (भाणू) (૧૫) ભાનુ (विस्ससेणे इय) (૧૬)વિશ્વસેન, (सूरे, सुदंसणे,, कुभे, सुमित्त विजए समुद्दविजए य) (૧૭) સૂર, (૧૮) સુદર્શન, (૧૯) કુભ, (૨૦) સુમિત્ર, (૨૧) વિજય, (૨૧) સમુદ્રવિજય, (रायाय

(राया य आससेणे य सिद्धत्थेचिय खत्तिए) राजा च अश्वसेन सिद्धार्थ इतिच क्षत्रिय –राजा अश्वसन२३ और क्षत्रियसिद्धार्थ२४। (तित्थप्पवत्त याण जिणवराण) तीर्थप्रवर्त्तकानाम् जिनवराणाम्–तीर्थ प्रवर्तक जिनवरों के (एए पियरा) एते पितरो–ये पिता (उदिओदिय–कुलवंसा) उदितोदित कुलवंशा –उत्तरोत्तर उत्कर्षता को प्राप्त हुए कुलरूप वंश वाले थे। (विसुद्धवंसा गुणेहिं उववेया) विशुद्धवंशा गुणैरुपेताः–मातपितृसंबन्धी वंश की निर्मलता से युक्त थे। सम्यग्दर्शनादि तथा दयादान आदि सद्‌गुणों से संपन्न थे। जंबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षेऽस्यामवसर्पिण्याम्–जम्बूद्वीप नाम के इस द्वीप में भारतवर्ष में इस अवसर्पिणी काल में(चउवीसं तित्थगराणं मायरो होत्था) चतुर्विंशति तीर्थकराणां मातर आसन्–चौबीस तीर्थकरों की माताएँ हुई हैं (तं जहा) तद्यथा–जो इस प्रकार हैं–(मरुदेवी, विजया–सेणा सिद्धत्था, मंगला, सुसीमा य, पुहवी, लक्खणा, रामा, नंदा, विण्हू जया, सामा) मरुदेवी विजया सेना सिद्धार्था मङ्गला सुसीमा च पृथिवी लक्ष्मणा रामा नन्दा विष्णुर्जया श्यामा–मरुदेवी१, विजया२ सेना३ सिद्धार्था४ मंगला५ सुसीमा६ पृथिवी७ लक्ष्मणा८ रामा९ नन्दा१० विष्णु११ जया१२ श्यामा१३ (सुजसा सुव्वय अइरा गेवीपभावई पउमा वप्पा सिवा वामा–तिसला देवी

आससेणे य सिद्धत्थेचिय खत्तिए) (२३) राजा अश्वसेन अने (२४) क्षत्रिय सिद्धार्थ (तित्थप्पवत्तयाण जिणवराण) तीर्थप्रवर्त्तकानाम् जिनवराणाम्–तीर्थप्रवर्तक जिनवरोना (ए ए पियरो) एते पितरो–ओ पिता (उदिओदिय कुलवंसा) उदितोदित–कुलवंशा –उत्तरोत्तर उत्कर्ष पामता कुलरूप वंश वाळा हता (विसुद्धवंसा गुणेहिं उववेया)विशुद्धवंशा गुणैरुपपेताः–मातृवंशनी अने पितृवंशनी शुद्धताथीयुक्त हता सम्यग्दर्शन आदि तथा दया, दान आदि सद्‌गुणोथी युक्त हता (जम्बुद्दीवेण दीवे भारहेवासे इमीसे ओसप्पिणीए)जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षेऽस्यामवसर्पिण्याम्–जम्बूद्वीप नामना आ द्वीपमां आवेला भारत वर्षमां आ अवसर्पिणी काळमां (चउवीसं तित्थगराणं मायरो होत्था) चतुर्विंशति तीर्थकराणां मातर आसन–२४ तीर्थंकरोनी २४ माताओ थई गई छे (तं जहा) तद्यथा–तेमना नाम आ प्रमाणे छे–(मरुदेवी विजया, सेणा, सिद्धत्था, मंगला, सुसीमा य पुहवी, लक्खणा, रामा नंदा, विण्हू, सामा) (१) मरुदेवी ( ) विजया (३) सेना, (४) सिद्धार्था, (५) मंगला, (६) सुसीमा (७) पृथिवी, (८)लक्ष्मणा (९)रामा, (१०) नंदा, (११) विष्णु (१२) जया, (१३) श्यामा

टीका-'जंबुद्दीवे णं'इत्यादि-'जंबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे इमीसे णं ओसप्पिणीए चउवीसं तित्थगराणं पियरो होत्था' जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षेऽस्याम वमर्पिण्या चतुर्विंशतिस्तीर्थकराणां पितरआसन, 'तं जहा' तद्यथा-'णाभी य १ जियसत्तू य२ जियारी३ संवरे इय४। मेहे५ धरे६ पइट्ठे य७ महसेणे य ८ खत्तिए॥५॥' नाभिश्च जितशत्रुश्च जितारिः संवर इति। मेघो धरः प्रतिष्ठश्च महासेनश्च क्षत्रियः॥५॥ 'सुग्गीव९ दढरहे१० विण्हू११ वसुपुज्जे य खत्तिए१२। कयवम्मा१३ सीहसेणे१४ भाणू१५ विस्ससेणे१६ इय ॥६॥' सुग्रीवो दृढरथो विष्णुर्वसुपूज्यश्च क्षत्रियः। कृतवर्मा सिंहसेनो भानुर्विश्वसेन इति॥६॥ 'सूरे१७ सुदंसणे१८ कुंभे१९ सुमित्त२० विजए२१ समुद्दविजए य२२। राया य आससेणे य२३ सिद्धत्थेच्चिय२४ खत्तिए॥७॥' सूरः सुदर्शनः कुम्भः सुमित्रोविजयः

य जिणमाया) सुयशाः सुव्रता श्री देवी प्रभावती पद्मावप्रा शिवा च वामा त्रिशला देवी च जिनमातरः-सुयशा१४, सुव्रता१५, अचिरा१६, श्री१७ देवी१८ प्रभावती१९ पद्मा २० वप्रा२१ शिवा२२ वामा२३ और त्रिशला २४ ये चौवीस२४ तीर्थकरो की माताएँ हैं ॥ सू० १९७॥

टीकार्थ—'जंबूद्दीवे णं दीवे' इत्यादि—इस जंबूद्वीप नामके प्रथम द्वीप में भारत वर्ष में इस अवसर्पिणी काल में चौवीस तीर्थकरों के पिता हुए है। उनके नाम इस प्रकार से है-नाभि१ जितशत्रु२ जितारि३ संवर४ मेघ५ धर६ प्रतिष्ठ७ महासेन८ क्षत्रिय सुग्रीव९ दृढरथ१० विष्णु ११ वसुपूज्य१२ क्षत्रिय कृतवर्मा१३, सिंहसेन१४ भानु१५ विश्वसेन१६ सूर१९ सुदर्शन१८ कुंभ१९ सुमित्र२० विजय२१ समुद्रविजय२२ राजा

(सुजग्गा सुव्वय,अइरादेवी पभावइ पउमा-वप्पा सिवा य वामा तिसला देवी य जिणमाया) (१४) સુયશા, (૧૫) સુવ્રતા, (૧૬) અચિરા, (૧૭) શ્રી, (૧૮) દેવી (૧૯) પ્રભાવતી, (૨૦) પદ્મા, (૨૧) વપ્રા, (૨૨) શિવા, (૨૩) વામા અને ત્રિશલા ચોવીસ તીર્થંકરોની ૨૪ માતાઓના નામ ઉપર મુજબ છે. ॥ સૂ ૧૯૭॥

ટીકાર્થ—"जंबुद्दीवे णं दीवे" इत्यादि—આ જબૂદ્વીપમાં આવેલા આ ભારતવર્ષમા આ અવસર્પિણીકાળમા થયેલા ૨૪ તીર્થંકરોના પિતાના નામ આ પ્રમાણે (૧) નાભિ, (૨) જિતશત્રુ (૩) જિતારિ, (૪) સંવર, (૫) મેઘ) (૬) ધર (૭) પ્રતિષ્ઠ, (૮) મહાસેન, (૮) ક્ષત્રિય સુગ્રીવ, (૧૦) દઢરથ, (૧૧) વિષ્ણુ (૧૧)વસુપૂજ્ય, (૧૩) કૃતવર્મા, (૧૪) સિંહસેન, (૧૫) ભાનુ, (૧૬) વિશ્વસેન (૧૭ સૂર ૧૮) સુદર્શન (૧૯) કુભ, (૨૦) સુમિત્ર, (૨૧) વિજય,[૨૨] સમુદ્રવિજય (૨૩) રાજા અશ્વસેન અને

(राया य आससेणे य सिद्धत्थेचिय खत्तिए) राजा च अश्वसेन सिद्धार्थ इतिच क्षत्रिय –राजा अश्वसन२३ और क्षत्रियसिद्धार्थ२४। (तित्थप्पवत्ता याग जिणवराण) तीर्थप्रवर्त्तकानाम् जिनवराणाम्–तीर्थ वर्तक जिनवरों के (एए पियरो) एते पितरो–ये पिता (उदिवोदिय–कुलवंसा) उदितोदित कुलवंशा–उत्तरोत्तर उत्कर्षता को प्राप्त हुए कुलरूप वश वाले थे। (विसुद्धवंसा गुणेहिं उववेया) विशुद्धवंशा गुणैरुपेता–मातृपितृसबन्धी यश की निर्मलता से युक्त थे। सम्यग्दर्शनादि तथा दयादान आदि सद्गुणों स संपन्न थे। जंबुद्दीवे ण दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षेऽस्यामवसर्पिण्याम्–जम्बूद्वीप नाम के इस द्वीप में भारतवर्ष में इस अवसर्पिणी काल में(चउवीस तित्थगराण मायरो होत्था) चतुर्विंशति तीर्थंकराणां मातर आसन्–चौवीस तीर्थंकरों की माताएँ हुई हैं (त जहा।) तद्यथा–जो इस प्रकारहैं–(मरुदेवी, विजया–सेणा सिद्धत्था, मगला, सुसीमा य, पुहवी, लक्खणा, रामा, नंदा, विण्हू जया, सामा) मरुदेवी विजया सेना सिद्धार्था मङ्गला सुसीमा च पृथिवी लक्ष्मणा रामा नन्दा विष्णुर्जया श्यामा–मरुदेवी१, विजया२ सेना३ सिद्धार्था४ मगला५ सुसीमा६ पृथिवी७ लक्ष्मणा८ रामा९ नंदा१० विष्णु११ जया१२ श्यामा१३ (सुजसा सुव्वय अइरा देवीपभावई पउमा वप्पा सिवा वामा–तिसला देवी

आससेणे य सिद्ध त्थेचिय खत्तिए) (२३) राजा अश्वसेन अने (२४) क्षत्रिय सिद्धार्थ (तित्थप्पवत्तयाण जिणवराण) तीर्थप्रवर्त्तकानाम् जिनवराणाम–तीर्थप्रवर्तक जिनवरोना (ए ए पियरो) एत पितरो–ओ पिता (उदितोदिय कुलवंसा) उदितोदित–कुलवंशा –उत्तरोत्तर उत्कर्ष पामता कुलरूपवंश वाळा हता (विसुद्धवंसा गुणेहिं उववेया)विशुद्धवंशा गुणैरुपेता–मातृवंशनी अने पितृ वंशनी शुद्धताथीयुक्त हता सम्यग्दर्शन आदि तथा दया दान आदि सद्गुणोथी युक्त हता। (जंबुद्दीवेण दीवे भारहेवासे इमोसे ओसप्पिणीए)जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षेऽस्यामवसर्पिण्याम्–जम्बूद्वीप नामना आ द्वीपमां आवेला भारत वर्षमां आ अवसर्पिणी काळमा (चउवीसं तित्थगराण मायरो होत्था) चतुर्विंशति तीर्थंकराणां मातर आसन्–२४ तीर्थंकरोनी २४ माताओ थई गइ छे, (तं जहा) तद्यथा–तेमना नाम आ प्रमाणे छे–(मरुदेवी विजया, सेणा, सिद्धत्था, मगला, सुसीमा य पुहवी, लक्खणा, रामा नंदा, विण्हू, सामा) (१) मरुदेवी ( ) विजया, (३) सेना, (४) सिद्धार्था, (५) मंगला, (६) सुसीमा, (७) पृथिवी (८)लक्ष्मणा,(९)रामा (१०) नंदा (११) विष्णु (१२) जया (१३) श्यामा

मूलम्--जंबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे इमीसे णं ओसप्पिणीए चउवीसं तित्थगरा होत्था, तं जहा–उसभ१, अजिय२, संभव३, अभिनंदण४, सुमइ५, पउमप्पह६, सुपास७, चंदप्पह८, सुविहिपुप्फदंत९, सीयल१०, सिज्जंस११, वासुपुज्ज१२, विमल१३, अनंत१४, धम्म१५, संति१६, कुंथु१७, अर१८, मल्लि१९. मुनिसुव्वय२०, णमि२१, णेमि२२, पास२३, वद्धमाणो२४ य। एएसिं चउवीसाए तित्थगराणं चउवीसं पुव्वभवया णामधेया होत्था। तं जहा–पढमेत्थ वइरणाभे विमले तह विमलवाहणे चेव। तत्तो य धम्मसीहे सुमित तह धम्ममित्ते य ॥११॥ सुंदरबाहु तह दीहबाहु जुगबाहू लट्ठबाहू य। दिण्णे य इंददत्ते सुंदर माहिंदे चेव ॥१२॥ सीहरहे मेहरहे रुप्पि य सु ंसणे य बोद्धव्वे। ततो य नंदणे खलु सीहगिरी चेव वीसइमे॥१३॥ अदीणसत्तू संखे सुदंसणे नंदणे य बोद्धव्वे। ओसप्पिणीए एए तित्थयराणं तु पुव्वभवा ॥१४॥ एएसिं चोवीसाए तित्थगराणं चोवीसं सीयाओ होत्था, तं जहा–सीया सुदंसणा सुप्पभा य सिद्धत्थ सुप्पसिद्धा य। विजया य वेजयंती जयंति अपराजिया चेव ॥१५॥ अरुणप्पभ चंदप्पभ सूरप्पभ अग्गिसप्पभा चेव। विमला य पंचवण्णा सागरदत्ता य णागदत्ता य ॥१६॥ अभय निव्वुयकरा मणोरमा तह मणोरहा चेव। देवकुरूत्तरकुरा विसाल चंदप्पभा सीया ॥१७॥ एयाओ सीयाओ सव्वेसि चेव जिणवराणं। सव्वजग-

---

१५, अचिरा१६ श्री१७ देवी१८ प्रभावती१९ पद्मा२० वप्रा२१ शिवा२२ वामा२३ और त्रिशला२४ये चौवीस तीर्थंकरों की२४ माताएँ हैं ॥सू० १९७॥

શ્રી, (૧૮) દેવી, (૧૯) પ્રભાવતી, (૨૦) પદ્મા, (૨૧) વપ્રા, [૨૨] શિવા, (૨૩) વામા અને (૨૪) ત્રિશલા એ પ્રમાણે ૨૪ તીર્થંકરોની માતાઓના નામ હતા ॥સૂ ૧૯૭॥

समुद्रविजयश्च । राजा च अश्वसेनः सिद्धार्थ इति च क्षत्रियः॥७॥ 'उदितोदियकुलवंसा विसुद्धवंसा गुणेहिं उववेया। तित्थप्पवत्तयाण एए पियरो जिणवराण॥८।' उदितोदितकुलवंशा विशुद्धवंशागुणैरुपपेता । तीर्थप्रवर्तकानामेते पितरो जिनवराणाम् ॥ 'उदितोदियकुलवंसा' उदितोदितकुलवंशाः=उदितोदित =उत्तरोत्तरमुत्कर्ष प्राप्तः कुलवंशो येषां ते तथोक्ताः, तथा–'विसुद्धवंसा विशुद्धवंशाः–विशुद्ध =निर्मल , वंश –मातृपितृवंशो यषां ते तथोक्ता , तथा–'गुणेहिं उववेया गुणैरुपपेता =गुणयुक्ता 'एए' एते नाभ्यादय 'तित्थप्पवत्तयाणं' तीर्थप्रवर्तकानां जिणवराण' जिनवराणाम् ऋषभादीनां 'पियरो' पितरो विज्ञेयाः इति भाव । जंबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए' जम्बूद्वीपे खलु द्वीप भारते वर्षेऽस्यामवसर्पिण्याम्, 'चउवीसं तित्थगराणं मायरो होत्था' चतुर्विंसति तीर्थकराणां मातर आसन, 'त जहा' तद्यथा– मरुदेवी-विजया सेणा सिद्धत्था मंगला सुसीमा य । पुहवीलक्खणा-रामा नंदाविण्हू जया सामा॥९॥ सुजसा सुव्वयअइरा देवी पभावई पउमा । वप्पा सिवा य वामातिसलादेवीय जिणमाया ॥१०॥ मरुदेवीविजया सेनासिद्धार्थामङ्गला सुसीमा च । पृथिवी लक्ष्मणा रामा नन्दा विष्णुर्जया श्यामा ॥९॥ सुयशा सुव्रता अचिरा श्रीदेवी प्रभावतीपद्मा । वप्रा शिवा च वामा त्रिशला देवी च जिनमातर ॥सू १९७॥

अश्वसेन२३ और क्षत्रिय सिद्धार्थ २४। तीर्थप्रवर्तक जिनवरों के य पिता उत्तरोत्तर उत्कर्षता को प्राप्त हुए कुलरूपवंश वाले थे। मातृपितृ वंशकी निर्मलता से युक्त थे। सम्यग्दर्शनादि तथा दयादान आदि सद्गुणों से सपन्न थे। जम्बूद्वीप नामके इस द्वीप में भारतवर्ष में इस अवसर्पिणीकाल में तीर्थंकरों की चौवीस माताएँ हुई हैं। वे इस प्रकार से हैं– मरुदेवी१ विजया२, सेना३ सिद्धार्था४ मंगला ५ सुसीमा६ पृथिवी७ लक्ष्मणा८ रामा९ नंदा१० विष्णु११ जया१२ श्यामा१३, सुयशा१४, सुव्रता

[२४] क्षत्रिय सिद्धार्थ तीर्थंप्रवर्तक जिनवरोना ते पिता उत्तरोत्तर उत्कर्षता पामता कुणरूप वंशवाला हता अने मातृवंश अने पितृवंशनी विशुद्धताथी युक्त हता सम्यग् दर्शन आदि तथा दयादान आदि गुणवाला हता. आ जम्बूद्वीपमां आवेला भारत वर्षमां आ अवसर्पिणी काळमां २४ तीर्थंकरोनी जे २४ माताओ हती तेमना नाम आ प्रमाणे छे-(१) मरुदेवी (२) विजया, (३) सेना (४) सिद्धार्था (५) मंगळा, (६) सुसीमा (७) पृथिवी (८) लक्ष्मणा (९) रामा (१०) नंदा, (११) विष्णु (१२) जया, (१३) श्यामा (१४) सुयशा (१५) सुव्रता (१६) अचिरा (१७)

मूलम्--जंबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे इमीसे णं ओसप्पिणीए चउवीसं तित्थगरा होत्था, तं जहा–उसभ१, अजिय२, संभव३, अभिनंदण४, सुमइ५, पउमप्पह६, सुपास७, चंदप्पह८, सुविहिपुप्फदंत९, सीयल१०, सिज्जंस११, वासुपुज्ज१२, विमल१३, अनंत१४, धम्म१५, संति१६, कुंथु१७, अर१८, मल्लि१९, मुनिसुव्वय२०, णमि२१, णेमि२२, पास२३, वद्धमाणो२४ य। एएसिं चउवीसाए तित्थगराणं चउवीसं पुव्वभवया णामधेया होत्था। तं जहा–पढमेत्थ वइरणाभे विमले तह विमलवाहणे चेव। तत्तो य धम्मसीहे सुमित तह धम्ममित्ते य ॥११॥ सुंदरबाहु तह दीहबाहु जुगबाहू लट्ठबाहू य। दिण्णे य इंददत्ते सुंदर माहिंदे चेव ॥१२॥ सीहरहे मेहरहे रुप्पि य सुदंसणे य बोद्धव्वे। ततो य नंदणे खलु सीहगिरी चेव वीसइमे॥१३॥ अदीणसत्तू संखे सुदंसणे नंदणे य बोद्धव्वे। ओसप्पिणीए एए तित्थयराणं तु पुव्वभवा ॥१४॥ एएसिं चोवीसाए तित्थगराणं चोवीसं सीयाओ होत्था, तं जहा–सीया सुदंसणा सुप्पभा य सिद्धत्थ सुप्पसिद्धा य। विजया य वेजयंती जयंति अपराजिया चेव ॥१५॥ अरुणप्पभ चंदप्पभ सूरप्पभ अग्गिसप्पभा चेव। विमला य पंचवण्णा सागरदत्ता य णागदत्ता य ॥१६॥ अभय निव्वुयकरा मणोरमा तह मणोरहा चेव। देवकुरूत्तरकुरा विसाल चंदप्पभा सीया ॥१७॥ एयाओ सीयाओ सव्वेसि चेव जिणवराणं। सव्वजग-

---

१५, अचिरा१६ श्री१७ देवी१८ प्रभावती१९ पद्मा२० वप्रा२१ शिवा२२ वामा२३ और त्रिशला२४ ये चौवीस तीर्थंकरों की२४ माताएँ हैं ॥सू० १९७॥

श्री, (१८) देवी, (१९) प्रभावती, (२०) पद्मा, (२१) वप्रा, [२२] शिवा, (२३) वामा अने (२४) त्रिशला से प्रमाणे २४ तीर्थंकरोनी माताओना नाम हता ॥सू १९७॥

वच्छलाण सव्वोउगसुभाए छायाए ॥१८॥ पुव्विं ओक्खित्ता माणुसेहिं साहट्टु रोमकूवेहिं। पच्छा वहंति सीयं असुरिंद सुरिंद नागिंदा ॥१९॥ चलचवलकुंडलधरा सच्छंद विउविया भवणधारी। सुर असुरवंदियाणं वहंति सीयं जिणिंदाणं ॥२०॥ पुरओ वहंति देवा नागा पुण दाहिणम्मि। पच्चत्थिमेण असुरा गुरुला पुण उत्तरे पासे ॥२१॥ उसभो य विणीयाए बारवईए अरिट्ठनेमी। अवसेसा तित्थयरा निक्खंता जम्मभूमीसु ॥२२॥ सव्वे वि एगदूसेण णिग्गया जिणवरा चउव्वीसं। ण य णाम अण्णलिंगे ण य गिहिलिंगे कुलिंगे य ॥२३॥ एक्को भगवं वीरो पासो मल्लि य तीहिं तीहिं सएहिं। भगवं पि वासुपुज्जो छहिं पुरिससएहिं णिक्खंतो ॥२४॥ उग्गाणं भोगाणं राइण्णाणं य खत्तियाणं य। चउहिं सहस्सेहिं उसभो सेसा उ सहस्स परिवारा ॥२५॥ सुमइत्थ णिच्चभत्तेण णिग्गओ वासुपुज्ज चोत्थेण। पासो मल्ली य अट्ठमेण सेसा उ छट्ठेण ॥२६॥सू० १९८॥

शब्दार्थ—(जंबुद्दीवे णं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे—जंबूद्वीप नामक द्वीप में (भारहे वासे) भारते वर्षे भारत वर्ष (इमीसेणं ओसप्पिणीए) अस्यामवसर्पिण्यां इस अवसर्पिणी काल में (चउवीसं तित्थगरा होत्था) चतुर्विंशतिस्तीर्थकरा आसन्—चौबीस तीर्थंकर हुए हैं (तं जहा) तद्यथा—उनके नाम ये हैं (उसभ-अजिय-संभव-अभिणंदण-सुमइ-पउमप्पह सुपास-चंदप्पह, सुविहि-पुप्फदंत-सीयल-सिज्जंस-वासुपुज्ज-विमल-अणंत

શબ્દાર્થ—(जंबुद्दीवेणं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे—જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપમાં (भारहे वासे) भारते वर्षे—ભારતવર્ષમાં (इमीसेणं ओसप्पिणीए) अस्यामवसर्पिण्याम्—આ અવસર્પિણી કાળમાં (चउवीसं तित्थगरा होत्था) चतुर्विंशतिस्तीर्थकरा अभवन् ચોવીસ તીર્થંકરો થઈ ગયા છે (तं जहा) તેમનાં નામ આ પ્રમાણે છે (उसभ) अजिय संभव अभिनंदण सुमई पउमप्पह सुपास चंदप्पह, सुविहि पुप्फदंत सीयल सिज्जंस वासुपुज्ज विमल अणंत धम्म संति

धम्म-संतिकुंथु-अर-मल्लि-मुनिसुव्वय णमि णेमि पास वद्धमाणो य) ऋषभः अजितः, संभवः अभिनन्दनः सुमतिः पद्मप्रभः सुपार्श्वः चन्द्रप्रभः सुविधिः पुष्पदन्तः, शीतलः श्रेयांसः वासुपूज्यः विमलः अनन्तः धर्मः शान्ति. कुन्थु. अरः मल्लिः मुनिसुव्रतः नमिः नेमिः पार्श्व, वर्द्धमानश्च-ऋषभ१, अजित२, संभव३, अभिनंदन४, सुमति५. पद्मप्रभ६ सुपार्श्व७ चन्द्रप्रभ८ सुविधि-पुष्पदन्त९, शीतल१० श्रेयांस११, वासुपूज्य१२, विमल१३, अनंत १४, धर्म१५, शान्ति१६, कुन्थु१७ अर१८, मल्लि१९, मुनिसुव्रत२० नमि २१ नेमि२२ पार्श्व२३ और वर्धमान२४। (एएसिं चउवीसाए तित्थगराणं चउवीसं पुव्वभवया णामधेया होत्था) एतेषां चतुर्विंशतेस्तीर्थंकराणां चतुर्विंशतिः पूर्वभवकानि नामधेयानि आसन चौवीस तीर्थंकरों के पूर्वभव संबंधीनाम चौवीस थे (तं जहा) तद्यथा-वे इसप्रकार से हैं-(पढमेत्थ वइरणाभे विमले तह विमलवाहणे चेव) प्रथमोऽत्र वज्रनाभो विमलस्तथा विमलवाहनश्चैव-वज्रनाभ१, विमल२ विमलवाहन३ (धम्मसीहे) धर्मसिंहः धर्मसिंह४ (सुमित्त) सुमित्रः-सुमित्र५, । (धम्ममित्ते य) धर्ममित्रश्च-धर्ममित्र६,(सुंदरबाहुतह दीहबाहु जुगबाहू लट्ठबाहू य) सुन्दरबाहुस्तथा दीर्घबाहु. जुगबाहुः लष्टबाहुश्च-सुंदरबाहु७ दीर्घबाहु८ जुगबाहु९ लष्टबाहु१० (दिण्णे

कुंथु अर मल्लि मुनिसुव्वय णमि णेमि पासवद्धमाणो य) ऋषभ,ःअजित,ः संभव,ः अभिनन्दनः, सुमतिः. पद्मप्रभ,ः सुपार्श्व, चन्द्रप्रभा,ः सुविधि.ः पुष्पदन्त,ः शीतल,ः श्रेयास,ः वासुपूज्यः, विमलः, अनन्तः, धर्म, शान्ति.ः कुन्थु,ः अर,ः मल्लि,ः मुनिसुव्रत,ः नमि,ः नेमि,ः पार्श्व, वर्द्धमानश्च-(१) ઋષભ, (૨) અજિત, [૩] સંભવ, (૪) અભિનંદન, (૫) સુમતિ, (૬) પદ્મપ્રભ, (૭) સુપાર્શ્વ, (૮) ચંદ્રપ્રભ (૯)સુવિધિપુષ્પદન્ત, [૧૦] શીતલ, (૧૧) શ્રેયાંસ, (૧૨) વાસુપૂજ્ય, [૧૩] વિમલ, (૧૪) અનંત, (૧૫) ધર્મ, [૧૬] શાન્તિ, (૧૭) કુન્થુ, (૧૮) મલ્લિ. (૧૯) અર, (૨૦) મુનિસુવ્રત, (૨૧) નમિ, (૨૨) નેમિ, (૨૩) પાર્શ્વ, અને (૨૪) વર્ધમાન.(एएसिं चउवीसाए तित्थगराणं चउवीसं पुव्वभवया णामधेया होत्था) एतेषां चतुर्विंशतेस्तीर्थंकराणां चतुर्विंशतिः पूर्वभवकानि नामधेयानि आसन्-તે તીર્થંકરોના પૂર્વભવના ચોવીસ નામો (तं जहा) તે આ પ્રમાણે હતા (पढमेत्थ वइरणाभे विमले तह विमलवाहणे चेव)प्रथमोऽत्र वज्रनाभो विमलस्तथा विमलवाहनश्चैव-(૧) વજ્રનાભ, (૨) વિમલ, (૩) વિમલવાહન, (धम्मसीहे) धर्मसिंहः-(૪) ધર્મસિંહ, (૫) (सुमित्त) સુમિત્ર, (धम्ममित्ते य) धर्ममित्रश्च (૬) ધર્મમિત્ર, (सुंदरबाहुतहदीहबाहुजुगबाहू लट्ठबाहू य)सुन्दरबाहुस्तथादीर्घबाहुः जुगबाहुः लष्टबाहुश्च-(૭) સુંદરબાહુ, (૮) દીર્ઘબાહુ, (૯)

वच्छलाण सव्वोउगसुभाए छायाए ॥१८॥ पुव्विं ओक्खित्ता माणु सेहि साहट्टु रोमकूवहिं। पच्छा वहंति सीयं असुरिंद सुरिंद नागिंदा ॥१९॥ चलचवलकुंडलधरा सच्छंद विउविया भवणधारी। सुर असुरवंदियाण वहंति सीयं जिणिंदाण ॥२०॥ पुरओ वहंतिदेवा नागा पुण दाहिणम्मि। पच्चत्थिमेण असुरा गुरुला पुण उत्तरे पासे ॥२१॥ उसभो य विणीयाए बारवईए अरिट्ठनेमी। अवसेसा तित्थयरा निक्खंता जम्मभूमीसु ॥२२॥ सव्वे वि एगदूसेण णिग्गया जिणवरा चउव्वीसं। ण य णाम अण्णलिंगे ण य गिहिलिंगे कुलिंगे वा॥२३॥ एक्को भगवं वीरो पासो मल्लि य तीहिं तीहिं सएहिं। भगवं पि वासुपुज्जो छहिं पुरिससएहिं णिक्खंतो ॥२४॥ उग्गाण भोगाणं राइण्णाण य खत्तियाण य। चउहिं सहस्सेहिं उसभो सेसा उ सहस्स परिवारा ॥२५॥ सुमइत्थ णिच्चभत्तेण णिग्गओ वासुपुज्ज चोत्थेण। पासो मल्ली य अट्ठमेण सेसा उ छट्ठेण ॥२६॥सू० १९८॥

शब्दार्थ—(जंबुद्दीवे णं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे-जंबूद्वीप नामक द्वीप में (भारहे वासे) भारते वर्षे भारत वर्ष (इमीसेणं ओसप्पिणीए) अस्यामवसर्पिण्यां इस अवसर्पिणी काल में (चउवीसं तित्थगरा होत्था) चतुर्विंशतिस्तीर्थकरा आसन्-चौवीस तीर्थकर हुए हैं (त जहा) तद्यथा-उनके नाम ये हैं (उसभ-अजिय-संभव-अभिणंदण-सुमइ-पउमप्पह सुपास-चंदप्पह, सुविहि-पुप्फदंत-सीयल-सिज्जंस-वासुपुज्ज-विमल-अनंत

शब्दार्थ—(जंबुद्दीवे णं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे-જ બૂદ્વીપ નામના દ્વીપમાં (भारहे वासे) भारते वर्षे-ભારતવર્ષમાં (इमीसेण ओसप्पिणीए) अस्यामवसर्पिण्याम्-આ અવસર્પિણી કાળમાં (चउवीसं तित्थगरा होत्था) चतुर्विंशतिस्तीर्थकरा अभवन् ચોવીસ તીર્થંકરો થઈ ગયા છે (त जहा) તેમના નામ આ પ્રમાણે છે (उसभ) अजिय संभव अभिनंदण सुमई पउमप्पहसुपासचंदप्पह, सुविहि पुप्फदंत सीयल सिज्जंस वासुपुज्ज विमल अनंत धम्म मल्लि

धम्म-संतिकुंथु-अर-मल्लि-मुनिसुव्वय णमि णेमि पास वद्धमाणो य) ऋषभः अजितः, संभवः अभिनन्दनः सुमतिः पद्मप्रभः सुपार्श्वः चन्द्रप्रभः सुविधिः पुष्पदन्तः, शीतलः श्रेयांसः वासुपूज्यः विमलः अनन्तः धर्मः शान्तिः कुन्थुः अरः मल्लिः मुनिसुव्रतः नमिः नेमिः पार्श्व, वर्द्धमानश्च-ऋषभ१, अजित२, संभव३, अभिनंदन४, सुमति५, पद्मप्रभ६ सुपार्श्व७ चन्द्रप्रभ८ सुविधि-पुष्पदन्त९, शीतल१० श्रेयांस११, वासुपूज्य१२, विमल१३, अनंत १४, धर्म१५, शान्ति१६, कुन्थु१७ अर१८, मल्लि१९, मुनिसुव्रत२० नमि २१ नेमि२२ पार्श्व२३ और वर्धमान२४। (एएसिं चउवीसाए तित्थगराणं चउवीसं पुव्वभवया णामधेया होत्था) एतेषां चतुर्विंशतेस्तीर्थंकराणां चतुर्विंशतिः पूर्वभवकानि नामधेयानि आसन् चौवीस तीर्थंकरों के पूर्वभव संबंधीनाम चौवीस थे (तं जहा) तद्यथा-वे इसप्रकार से हैं-(पढमेत्थ वइरणाभे विमले तह विमलवाहणे चेव) प्रथमोऽत्र वज्रनाभो विमलस्तथा विमलवाहनश्चैव-वज्रनाभ१, विमल२ विमलवाहन३ (धम्मसीहे) धर्मसिंहः धर्मसिंह४ (सुमित्त) सुमित्रः-सुमित्र५, । (धम्ममित्ते य) धर्ममित्रश्च-धर्ममित्र६,(सुंदरबाहुतह दीहबाहु जुगबाहू लट्ठबाहू य) सुन्दरबाहुस्तथा दीर्घबाहु, जुगबाहुः लष्टबाहुश्च-सुंदरबाहु७ दीर्घबाहु८ जुगबाहु९ लष्टबाहु१० (दिण्णे

कुंथु अर मल्लि मुनिसुव्वय णमि णेमि पासवद्धमाणो य) ऋषभ,ःअजित,ः संभव,ः अभिनन्दनः, सुमतिः, पद्मप्रभ,ः सुपार्श्व, चन्द्रप्रभा,ः सुविधि,ः पुष्पदन्त,ः शीतल,ः श्रेयांस,ः वासुपूज्यः, विमलः, अनन्तः, धर्म, शान्ति,ः कुन्थु,ः अर,ः मल्लि,ः मुनिसुव्रत,ः नमि,ः नेमि,ः पार्श्व, वर्द्धमानश्च-(१) ઋષભ, (૨) અજિત, [૩] સંભવ, (૪) અભિનંદન, (૫) સુમતિ, (૬) પદ્મપ્રભ, (૭) સુપાર્શ્વ, (૮) ચંદ્રપ્રભ (૯)સુવિધિપુષ્પદન્ત, [૧૦] શીતલ, (૧૧) શ્રેયાંસ, (૧૨) વાસુપૂજ્ય, [૧૩] વિમલ, (૧૪) અનંત, (૧૫) ધર્મ, [૧૬] શાન્તિ, (૧૭) કુન્થુ, (૧૮) મલ્લિ. (૧૯) અર, (૨૦) મુનિસુવ્રત, (૨૧) નમિ, (૨૨) નેમિ, (૨૩) પાર્શ્વ, અને (૨૪) વર્ધમાન.(एएसिं चउवीसाए तित्थगराणं चउवीसं पुव्वभवया णामधेया होत्था) एतेषां चतुर्विंशतेस्तीर्थंकराणां चतुर्विंशतिः पूर्वभवकानि नामधेयानि आसन्-તે તીર્થંકરોના પૂર્વભવના ચોવીસ નામો (तं जहा) તે આ પ્રમાણે હતા (पढमेत्थ वइरणामे विमले तह विमलवाहणे चेव)प्रथमोऽत्र वज्रनाभो विमलस्तथा विमलवाहनश्चैव-(૧) વજ્રનાભ, (૨) વિમલ, (૩) વિમલવાહન, (धम्मसीहे) धर्मसिंहः-(૪) ધર્મસિંહ, (૫) (सुमित्त) સુમિત્ર, (धम्ममित्ते य) धर्ममित्रश्च (૬) ધર્મમિત્ર, (सुंदरबाहुतहदीहबाहुजुगबाहू लट्ठबाहू य)सुन्दरबाहुस्तथादीर्घबाहुः जुगबाहुः लष्टबाहुश्च-(૭) સુંદરબાહુ, (૮) દીર્ઘબાહુ, (૯)

य इददत्ते सुन्दर माहिंद चेव) दशरथ इन्द्रस्य सुन्दरो माहेन्द्रश्चैव–दत्त११, इन्द्रदत्त१२ सुन्दर १३ माहेन्द्र१४, (सीहरह) सिंहरथः–सिंहरथ१५ (मेह रहे रुप्पि य सुदंसणे य बोद्धव्वे) मेघरथ रुक्मी च सुदर्शनश्च बोद्धव्य– मेघरथ१६ रुक्मी१७ सुदर्शन१८ (नदणे) नन्दन –नन्दन१९ (सीह गिरी) सिंहगिरि –सिंहगिरि२० (अदीणसत्तू सखे सुदंसणे णंदणे य बोद्धव्वे) अदीनशत्रु शङ्ख सुदर्शना नन्दनश्च बोद्धव्य –अदीनशत्रु२१ शङ्ख२२ सुदर्शन२३ और नन्दन२४। (एए ओसप्पिणीए तित्थगराण तु पुव्वभवा) अवसर्पिण्यामेते-तीर्थंकराणां तु पूर्वभवा –ये अवसर्पिणी काल के तीर्थंकरों के पूर्वभव के नाम हैं। (एएसिं चौवीसाए तित्थगराण चौवीस सीयाओ होत्था) एतेषां चतुर्विंशतितीर्थंकराणां चतुर्विंशति शिबिका आसन्–इन चतुर्विंशति तीर्थंकरों की चौवीस शिबिकाएँ (पालखी) थी (त जहा) तद्यथा–उनके नाम इस प्रकार से हैं–(सीया सुदंसणा सुप्पभा य सिद्धित्थ सुप्पसिद्धा य विजया य वेजयंती जयंति अपराजिया चेव, अरुणप्पभ चंदप्पभ सूरप्पभा चेव, विमला य पंचवण्णा सागरदत्ता य णागदत्ता य, अभयनिष्फुयकरा मणोरमा तह मणोरहा चेव, देवकुरुत्तरकुरा विसाल चंदप्पभा सिया) शिबिका सुदर्शना–सुप्रभाच सिद्धार्था सुप्रसिद्धा च,विजया च वैजन्ती जयन्ती

सुनक्खत्त (२०) धम्मसुह (दिण्ण य इंददत्ते सुन्दरमाहिंदे चेव) दत्तश्च इन्द्रदत्त सुन्दरो माहेन्द्रश्चैव (११) दत्त [१२] ઇન્દ્રદત્ત (१३) સુંદર [१४] મહેન્દ્ર (सिंहरहे) सिंहरथ –(१५) સિંહરથ (मेहरहे रुप्पियसुदसणे य बोद्धव्वे) मघरथ, रुक्मी च सुदर्शनश्च बोद्धव्य –[१६] મેઘરથ (१७) રુક્મી, [१८ સુદર્શન (नदणे) (१९) નંદન (सीहगिरि) (२०) સિંહગિરિ (अदीणसत्तू संखे सुदंसणे णंदणे य बोद्धव्वे) अदीनशत्रुः शङ्ख सुदर्शनो नन्दनश्च बोद्धव्य –(२१) અદીનશત્રુ (२२) શંખ (२३) સુદર્શન, અને (२४) નંદન. (एए ओसप्पिणीए तित्थगराण तु पुव्वभवा) अवसर्पिण्यामेते तीर्थंकराणां तु पूर्वभवा –અવસર્પિણીકાળના તીર્થંકરોના પૂર્વભવના ઉપરોક્ત નામો હતા (एए सिं चौवीसाए तित्थगराण चौवीस सीयाओ होत्था) एतेषां चतुर्विंशते स्तीर्थंकराणां चतुर्विंशति शिबिका आसन्–તે ચોવીસ તીર્થંકરોની ચોવીસ શિબિકાઓ હતી (त जहा) तद्यथा–તેમનાં નામ આ પ્રમાણે છે–(सीया सुदंसणा सुप्पभा य सिद्धत्थसुप्पसिद्धा य, विजया य वेजयंतीजयंती अपराजिया चेव, अरुणप्पभ चंदप्पभ अग्गिप्पभा चेव, विमला य पंचवण्णा सागरदत्ता य अभयनिव्वुयकरामणोरमा तह मणोरहा चेवदेवकुरुत्तरकुरा विसाल चंदप्पभा सीया)शिबिकासुदर्शना सुप्रभाच सिद्धार्था सुप्रसिद्धा च,

अपराजिता चैव, अरुणप्रभा चंन्द्रप्रभा सूरप्रभा चैव विमला च पञ्चवर्णा सागरदत्ता च नागदत्ता च, अभयकरा निर्वृतिकरा मनोरमा तथा मनोहरा चैव, देवकुरा-उत्तरकुरा विशाला तथा चन्द्रप्रभा नाम्नी शिबिका-सुदर्शना१ सुप्रभा२, सिद्धार्था३ सुप्रसिद्धा४ विजया५ वैजन्ती६ जयन्ती७ अपराजिता८ अरुणप्रभा९ चन्द्रप्रभा१० सूरप्रभा ११ अग्निप्रभा१२, विमला१३ पञ्चवर्णा, १४ सागरदत्ता१५ नागदत्ता१६, अभयकरा१७, निर्वृतिकरा१८, मनोरमा१९ मनोहरा२० देवकुरा२१, उत्तरकुरा२२, विशाला २३ और चन्द्रप्रभा२४। (एयाओ सीयाओ सव्वेसिं चेव जिणवरिंदाण सव्वजगवच्छलाणं सव्वोउग सुभाए छायाए) एताः शिबिकाः सर्वेषामेव जिनवराणाम् सर्वजगद्वत्सलानां सर्वऋतुक शुभया छायया-ये शिबिकाएँ सर्वजगत के वत्सल जिनवरों की थीं, समस्त ऋतुओं के सुखों से ये युक्त थीं, शुभ छाया से ये सब अन्वित थीं। (पुव्विं) पूर्वं-पहिले इन शिबिकाओं को (रोमकूएहिं माणुसेहिं) रोमकूपैः मानुषैः-रोमकूपयुक्त अर्थात् हर्ष से युक्त मनुष्य (साहट्टु) संहृत्य -लाकरके (ओक्खित्ता) अवक्षिप्ताः-उपस्थित करते हैं, अर्थात् सबसे पहिले इन शिबिकाओं को मनुष्य उठाते हैं (पच्छा) पश्चात बाद में (असुरिंद-

---

विजया च वैजयन्तीजयन्ती अपराजिताचैव, अरुणप्रभा चन्द्रप्रभा सूरप्रभा अग्निसप्रभा चैव विमला च पञ्चवर्णासागरदत्ता च नागदत्ता च, अभय-करा निर्वृतिकरा मनोरमा तथा मनोहरा चैव,देवकुराविशाला तथा चन्द्रप्रभा नाम्नी शिबिका-(१) સુદર્શના, (२) સુપ્રભા, (३) સિદ્ધાર્થા, (४) સુપ્રસિદ્ધા, (५) વિજયા, (६) વૈજયન્તી, (७) જયન્તી, (८) અપરાજિતા, (९) અરુણપ્રભા (१०) ચન્દ્રપ્રભા, (११) સૂરપ્રભા, (१२) અગ્નિસપ્રભા, (१३) વિમલા (१४) પંચવર્ણા, (१५) સાગરદત્તા, (१६)નાગદત્તા, (१७) અભયકરા, (१८) નિર્વૃત્તિકર (१९) મનો-રમા, (२०) મનોહરા, (२१) દેવકુરા, (२२) ઉત્તરકુરા, (२३) વિશાલા અને (२४) ચન્દ્રપ્રભા (एयाओ सीयाओ सव्वेसिं चेव जिणवरिंदाणं सव्वजगवच्छलाणं सव्वोउग सुभाए छायाए) एताः शिबिकाः सर्वेषामेव जिनवराणाम् सर्व-जगद्वत्सलानां सर्वऋतुकशुभया छायया-સમસ્ત જગત પર વાત્સલ્યભાવ ગણનારા તે જિનવરોની તે શિબિકાઓ સમસ્ત ઋતુઓના સુખથી અને શુભ છાયાથી યુક્ત હતી. (पुव्विं) पूर्वं પહેલા તે શિબિકાઓને (रोमकूएहिं माणु सेहिं) रोमकूपैः मानुषैः-હર્ષથી યુક્ત મનુષ્યો (साहट्टु) संहृत्य-લાવીને (ओक्खित्ता) अवक्षिप्ता-ત્યાં હાજર કરે છે એટલે કે સૌથી પહેલા તે શિબિ કાઓને મનુષ્યો ઉપાડે છે (पच्छा) पश्चात्-ત્યાર બાદ (असुरिंद सुरिंद नागिंदा

सुरिंदनागिंदा सीयंवहंति) असुरेन्द्रसुरेन्द्रनागेन्द्राः शिबिकां वहन्ति-इस शिबिकाओं को असुरेन्द्र, सुरेन्द्र और नागेन्द्र उठाते हैं। (सुरअसुरवंदियाण जिणिंदाण चलचवलकुंडलधरा सच्छंदविउव्वियाभरणधारी) सुरासुरवन्दितानां जिनेन्द्राणां चलचपलकुण्डलधराः स्वच्छन्दविकुर्विताभरणधारिण –सुर और असुर से वंदित उन जिनेन्द्रों की शिबिका को चलचपल कुंडलधारी देव कि जो अपनी इच्छानुसार विकुर्वित आभूषणों को धारण करने वाले होते हैं पूर्व की तरफ आगे२ वहन करते हैं (उठाते)। (नागा पुणो दाहिणम्मि पासम्मि) नागकुमारा देवाः पुनर्दक्षिणे पार्श्वे नागकुमारदेव दक्षिणपार्श्व में (पच्छिमेण असुरा) पश्चिमेन असुरा –असुरकुमारा पश्चिमपार्श्व में (गरुला पुण उत्तरे-पासे गरुडाः पुनः उत्तरे पार्श्वे–और उत्तर पार्श्व में सुपर्णकुमार नाम के भवनपति देव उस शिबिका को वहन करते हैं। अब सूत्रकार तीर्थंकरों के दीक्षा स्थान का वर्णन करते हैं–(उसभो य विणीयाए) ऋषभश्च विनीतायां–ऋषभ देव ने विनीतानगरी में दीक्षा धारण की है (अरिट्ठवरणेमीबारवईए) अरिष्टनेमि द्वारावत्याम्–अरिष्टनेमि–भगवान ने द्वारवती में दीक्षा धारण की है (अवसेसा तित्थयरा निक्खंता जम्मभूमिसु) अवशेषास्तीर्थंकराः

सीयंवहंति) असुरेन्द्र सुरेन्द्र नागेन्द्र शिबिकां वहन्ति–ते શિબિકાને અસુરેન્દ્ર સુરેન્દ્ર અને નાગેન્દ્ર ઉપાડે છે (सुरअसुरवंदियाण जिणिंदाण चलचवलकुंडलधरा सच्छंदविउव्वियाभरणधारी) सुरासुरवन्दितानां जिनेन्द्राणां चलचपल कुण्डलधराः स्वच्छन्दविकुर्विताभरणधारिणः–સુર અને અસુરેથી વંદિત તે જિનેન્દ્રોની શિબિકાને ચલચપલ (હાલતાચાલતા) કુંડલધારી દેવો કે જે પોતાની ઇચ્છા પ્રમાણે વિકુર્વિત આભૂષણોને ધારણ કરતા હોય છે, પૂર્વ તરફથી વહન કરીને આગળને આગળ ચાલે છે (नागा पुणो दाहिणम्मि पासम्मि) नागकुमार देवाः पुनर्दक्षिणे पार्श्वे–નાગકુમારદેવો દક્ષિણબાજુથી, (पच्छिमेण असुरा) पश्चिमेन असुराः–અસુરકુમારદેવો પશ્ચિમ તરફથી (गरुला पुण उत्तरे पासे) गरुडाः पुनः उत्तरे पार्श्वे–અને ઉત્તર તરફથી સુપર્ણકુમાર નામના ભવનપતિ દેવો તે શિબિકાને ઉપાડે છે હવે સૂત્રકાર તીર્થંકરોનાં દીક્ષાસ્થાનનું વર્ણન કરે છે (उसभो य विणीयाए) ऋषभश्च विनीतायां–ઋષભદેવે વિનીતા નગરીમાં દીક્ષા લીધી હતી (अरिट्ठवरणेमीबारवईए) अरिष्टनेमिः द्वारावत्याम्–અરિષ્ટનેમિ ભગવાને દ્વારાવતીમાં દીક્ષા અંગીકાર કરી હતી (अवसेसा तित्थयरानिक्खंता जम्मभूमिसु) अवशेषास्तीर्थंकराः निष्क्रान्ता जन्मभूमिषु–બાકીના બાવીસ

निष्क्रान्ता जन्मभूमिसु-बाकी के बावीस २२ तीर्थंकरों ने अपने २ जन्मस्थान में दीक्षा धारण की है। अब सूत्रकार यह कहते हैं कि किस रीति से इन तीर्थंकरों ने दीक्षा धारण की हैं (सव्वे वि चउव्वीस जिणवरा एगदूसेण णिग्गया) सर्वेऽपि चतुर्विंशति जिनेन्द्रा एक दूष्येण निर्गता:-समस्त चोवीस तीर्थंकरोंने एक दूष्य वस्त्र धारण करके दीक्षा धारणकी है। (णय णाम अण्णलिंगे ण य गिहिलिंगे कुलिंगे य) न च नाम अन्यलिङ्ग न च गृहिलिङ्गे कुलिङ्गे च इनतीर्थंकरोंने जो दीक्षा धारण की सो वे स्थविर कल्पित आदिरूप अन्यलिङ्ग में-दीक्षित नही हुए, न गृहस्थरूपलिङ्ग में दीक्षित हुए और न शाक्यादिरूप कुलिङ्ग में ही दीक्षित-हुए किन्तु तीर्थंकर रूप में ही दीक्षित हुए। अब सूत्रकार यह प्रकट करते हैं कि कौन २ से तीर्थंकर कितने २ परिवार के साथ दीक्षित हुए हैं (एक्को भगवं वीरो) एकाकी भगवान वीर:-भगवान् महावीर ने एकाकी दीक्षा धारण की है (पासो मल्ली य तिहिं तिहिं सएहिं) पार्श्वो मल्लिश्च त्रिभिस्त्रिभि: शतै-तथा पार्श्वनाथ भगवान् और मल्लिनाथ भगवान् ने तीन २ सौ परिवारों के साथ दीक्षा धारण की है। (भगवंपि वासुपूज्जो छहिं पुरिससएहिं णिक्खंतो) भगवान् वासुपूज्यो षड्भि:पुरुषशतै:निष्क्रान्त:-भग-

તીર્થંકરોએ પોતપોતાના જન્મસ્થાનોમા દીક્ષા લીધી હતી. હવે સૂત્રકાર એ બતાવે છે કે તે તીર્થંકરોએ કેવી રીતે દીક્ષા ધારણ કરી હતી (सव्वे वि चउव्वीसं जिणवरा एगदूसेण णिग्गया) सर्वेऽपि चतुर्विंशति जिनेन्द्रा एक दूष्येण निर्गता:-સમસ્ત તીર્થંકરોએ એક જ દૂષ્યવસ્ત્ર ધારણ કરીને દીક્ષા અંગીકાર કરી હતી (णयणामअण्णलिंगे ण य गिहिलिंगे कुलिंगे य) नचनाम अन्यलिङ्गे नच गृहलिङ्गे कुलिङ्गे च-તે તીર્થંકરોએ સ્થવિરકલ્પક આદિરૂપ અન્યલિંગમા દીક્ષા લીધી ન હતી. ગૃહસ્થરૂપલિંગમા પણ દીક્ષા લીધી ન હતી, શાક્યાદિરૂપ કુલિંગમા પણ દીક્ષા લીધી ન હતી પણ તીર્થંકરરૂપે જ દીક્ષિત થયા હતા. હવે સૂત્રકાર એ વાત બતાવે છે કે કયા કયા તીર્થંકરે કેટલા કેટલા પરિવાર સહિત દીક્ષા ગ્રહણ કરી હતી.-(एक्को भगवंवीरो) एकाकि भगवान् वीर:-ભગવાન મહાવીરે એકલા જ દીક્ષા લીધી હતી (पासो मल्लीय तिहि तिहि सएहिं) पार्श्वो मल्लिश्च त्रिभिस्त्रिभि: शतै:-તથા પાર્શ્વનાથ ભગવાને અને મલ્લિનાથ ભગવાને ૩૦૦-૩૦૦ ત્રણસો-ત્રણસોના પરિવાર સહિત દીક્ષા ગ્રહણ કરી હતી (भगवं पि वासुपूज्जो छहिं पुरिससएहिं णिक्खंतो) भगवान् वासुपूज्यो षड्भि: पुरुषशतै: निष्क्रान्त:-ભગવાન વાસુપૂજ્યે ૬૦૦ છસો પુરુષો સાથે

टीका– जंबुद्दीवे णं' इत्यादि–जम्बूद्वीप स्वलु द्वीपे भारतवर्षे अस्यामवस र्पिण्यां चतुर्विंसस्तीर्थकरा अभूवन्, तद्यथा—ऋषभः१, अजितः२ संभवः३,

थान् वासुपूज्य ने छह सो पुरुषों के साथ दीक्षा धारण की है। (उग्गाण भोगाण राइण्णाण य खत्तियाणं य चउहिं सहस्सहिं उसभो) उग्राणां भोगाणां राज्ञां च क्षत्रियाणां च चतुर्भि सहस्रैः ऋषभः– उग्रवंश के भोगवंश के राजाओं और क्षत्रियों के चार ४ हजार परिवार के साथ ऋषभदेव ने दीक्षा धारण की हैं। (सेसाउ सहस्सपरिवारा) शेषास्तु सहस्रपरिवारैः—तथा इनसे अवशिष्ट जो तीर्थंकर हैं उन्होंने एक एक १–१ हजार परिवार के साथ दीक्षा धारण की हैं। (सुमइत्थ णिच्चभत्तेण णिग्गओ) सुमतिरत्र नित्यभक्तेन निर्गतः–भगवान सुमतिनाथ ने बिना उपवास के ही जिनदीक्षा धारण की है। (वासुपूज्जचउत्थेणं) वासुपूज्य चतुर्थेन–वासुपूज्य भगवान् ने एक उपवास करके जिन दीक्षा धारण की है (पासो मल्ली य अट्ठमेण)पार्श्वो मल्लिश्चाष्टमेन–तथा पार्श्वनाथ भगवानने और मल्लिनाथ भगवान् दो उपवास करके (सेसाउ छट्ठेणं) शेषास्तु षष्ठेन– अवशिष्ट तीर्थंकरों ने छट्ठ की तपस्या करके जिनदीक्षा धारण की है॥सू० १९८॥

टीकार्थ—'जंबुद्दीवेणं' इत्यादि जम्बूद्वीप नामक द्वीप में भारत वर्ष में इस अवसर्पिणी काल में चौवीस तीर्थंकर हुए हैं। उनके नाम ये हैं–

દીક્ષા ગ્રહણ કરી હતી (उग्गाणं भोगाण राइण्णाणं य खत्तियाणं य चउहिं सहस्सेहिं उसभो) उग्राणां भोगाणां राज्ञां च क्षत्रियाणां च चतुर्भि सहस्रैः ऋषभः–ઉગ્રવંશના ભોગવંશના રાજાઓ અને ક્ષત્રિયોના ચાર હજારના પરિવાર સહિત ભગવાન ઋષભદેવે દીક્ષા અંગીકાર કરી હતી (सेसाउ सहस्स परिवारा) शेषास्तु सहस्रपरिवारैः–બે સિવાયના તીર્થંકરોએ એક એક હજાર પુરુષો સાથે દીક્ષા લીધી હતી (सुमइत्यणिच्चभत्तेण णिग्गओ) सुमतिरत्र नित्यभक्तेन निर्गतः–ભગવાન સુમતિનાથે ઉપવાસ કર્યો વિના જ દીક્ષા લીધી હતી (वासुपुज्ज चउत्थेणं) वासुपूज्यश्चतुर्थेन–ભગવાન વાસુપૂજ્યે એક ઉપવાસ કરીને દીક્ષા ગ્રહણ કરી હતી (पासोमल्ली य अट्ठमेणं) पार्श्वो मल्लिश्चाष्टमेन– પાર્શ્વનાથ ભગવાને તથા મલ્લિનાથ ભગવાને અઠ્ઠમ કરીને (सेसाउ छट्ठेणं) शेषास्तु षष्ठेन–બાકીના તીર્થંકરોએ છઠ્ઠની તપસ્યા કરીને જિનદીક્ષા ધારણ કરી હતી. ॥ સૂ. ૧૯૮ ॥

ટીકાર્થ—'जंबुद्दीवेण दीवे' इत्यादि—જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપમાં આવેલા ભરતવર્ષમાં આ અવસર્પિણી કાળમાં નીચે પ્રમાણે ૨૪ તીર્થંકરો થયા છે (૧)

अभिनन्दनः४, सुमतिः५, पद्मप्रभः६, सुपार्श्वः७, चन्द्रप्रभः८, सुविधिः, तस्यै-वापरनामपुष्पदन्तः९, शीतलः१०, श्रेयांसः११, वासुपूज्यः१२, विमलः१३, अनन्तः१४, धर्मः१५, शान्तिः१६, कुन्थुः१७, अरः१८, मल्लिः१९, मुनिसुव्रतः२०, नमिः२१, नेमिः२२, पार्श्व२३, वर्द्धमानश्च२४। एतेषां चतुर्विंशतेस्तीर्थंकराणां चतुर्विंशतिः पूर्वभवकानि नामधेयानि आसन, तद्यथा—प्रथमोऽत्र वज्रनाभो१, विमलस्तथा२, विमलवाहनश्चैव३। ततश्च धर्मसिंहः४, सुमित्रस्तथा५, धर्ममित्रश्च६॥११॥ सुन्दरबाहुस्तथा७, दीर्घबाहुः८, जुगबाहुः९, लष्टबाहुश्च१० दत्तश्च११, इन्द्रदत्तः१२, सुन्दरो१३, माहेन्द्रश्चैव१४।१२॥ सिंहरथः१५, मेघरथः१६, रुक्मी१७ च सुदर्शनश्च बोद्धव्यः। ततश्च नन्दनः१९ खलु सिंहगिरिश्चैव विंशतितमः॥१३॥ अदीनशत्रु २१ शंखः२२ सुदर्शनो२३ नन्दनश्च२४ बोद्धव्यः। अवसर्पिण्यामेते तीर्थंकराणा तु पूर्वभवाः।१४। एतेषां चतुर्विंशते-

---

ऋषभ१, अजित२, सभव३ अभिनंदन४, सुमति५, पद्मप्रभ६, सुपार्श्व७ चन्द्रप्रभ८ सुविधि–पुष्पदन्त ९ शीतल १०, श्रेयास ११, वासुपूज्य १२, विमल १३, अनत १४, धर्म १५, शान्ति १६, कुन्थु १७, अर १८, मल्लि १९ मुनिसुव्रत २० नमि २१ नेमि २२ पार्श्व २३ और वर्धमान २४। इन चौवीस तीर्थंकरों के पूर्वभव संबधी नाम चोवीस थे। वे इस प्रकार से हैं–वज्रनाभ१, विमल २, विमलवाहन ३ धर्मसिंह ४ सुमित्र ५, धर्ममित्र ६, सुंदरबाहु ७. दीर्घबाहु ८, जुगबाहु ९, लष्टबाहु १० दत्त ११, इन्द्रदत्त १२ सुन्दर १३ माहेन्द्र १४ सिंहरथ १५, मेघरथ १६ रुक्मी १७, सुदर्शन १८ नंदन१९, सिंहगिरि२० अदीनशत्रु२१, शंख २२, सुदर्शन २३, और नंदन२४। ये अवसर्पिणीकाल के तीर्थंकरों के पूर्वभव के नाम है। इन चतु

ઋષભ, (૨) અજિત, (૩) સભવ, (૪) અભિનદન, (૫) સુમતિ, (૬) પદ્મપ્રભ, (૭) સુપાર્શ્વ, (૮) ચન્દ્રપ્રભ, (૯) સુવિધિ–પુષ્પદન્ત, (૧૦) શીતલ, (૧૧) શ્રેયાસ, (૧૨) વાસુપૂજ્ય, (૧૩) વિમલ,(૧૪) અનત, (૧૫) ધર્મ (૧૬) શાન્તિ, (૧૭) કુન્થુ, (૧૮) અર, (૧૯) મલ્લિનાથ, (૨૦) મુનિસુવ્રત, (૨૧) નમિ, (૨૨) નેમિ, (૨૩) પાર્શ્વ, અને (૨૪)વર્ધમાન એ ૨૪ તીર્થંકરોના પૂર્વભવના નામો અનુક્રમે આ પ્રમાણે હતાં— (૧) વજ્રનાભ, [૨] વિમલ, (૩) વિમલવાહન, (૪) ધર્મસિંહ, (૫) સુમિત્ર, [૬] ધર્મમિત્ર, (૭) સુંદરબાહુ,(૮) દીર્ઘબાહુ (૯) જુગબાહુ, (૧૦) લષ્ટબાહુ (૧૧) દત્ત (૧૨) ઈન્દ્રદત્ત,(૧૩)સુંદર, (૧૪) માહેન્દ્ર, (૧૫)સિંહરથ, (૧૬) મેઘરથ, (૧૭) રુકમી, (૧૮) સુદર્શન, (૧૯) નંદન, (૨૦) સિંહગિરિ, [૨૧] અદીનશત્રુ, (૨૨) શખ, (૨૩) સુદર્શન અને (૨૪) નન્દન, અવસર્પિણી કાળના તીર્થંકરોના પૂર્વભવના નામ ઉપર

स्तीर्थंकराणां चतुर्विंशतिः शिबिकाः भासन, तद्यथा-'सीया सुदंसणा' सुदर्शनाऽख्या शिबिका, तथा-सुप्रभा च सिद्धार्था सुप्रसिद्धा च। विजया च वैजयन्ती अपराजिता चेव॥१५॥ अरुणप्रभा चन्द्रप्रभा सूरप्रभा अग्निसप्रभा चैव। विमला च पञ्चवर्णा सागरदत्ता च नागदत्ता च ॥१६॥ अभयकरा निर्वृतिकरा मनोरमा तथा मनोहरा चैव। देवकुरा उत्तरकुरा विशाला तथा चन्द्रप्रभा नाम्नी शिबिका ॥१७॥ 'एयाओ सीयाओ' एता शिबिका सर्वेषामेव जिनवराणाम्। सर्वजगद्वत्सलानां सर्वर्त्तुकशुभया छायया=सर्वर्त्तुसुखसम्पन्ना सच्छायाश्च जिनवराणां शिबिका भवन्तीति भाव। 'पुव्विं' पूर्वं 'रोमकूवेहिं माणुसहिं' रोमकूपै मानुषै=सहर्षै पुरुषैः 'साहट्टु' संहृत्य आनीत्य 'मोक्खित्ता' अवक्षिप्ताः स्थापिताः। पश्चात् 'सीय' शिबिकाम् 'असुरिंदनागिंदा' असुरेन्द्रसुरेन्द्रनागेन्द्रा वहन्ति॥१९॥ चत्र

विंशति तीर्थंकरों की २४ शिबिकाएँ (पालखियां) थीं। उनके नाम इस प्रकार से हैं—सुदर्शना, १, सुप्रभा २, सिद्धार्था ३, सुप्रसिद्धा ४, विजया ५, वैजयन्ती ६ जयन्ति ७, अपराजिता ८, अरुणप्रभा ९, चन्द्रप्रभा १०, सूरप्रभा ११, अग्निसप्रभा १२, विमला १३, पञ्चवर्णा १४, सागरदत्ता १५, नागदत्ता १६, अभयकरा १७, निर्वृतिकरा १८, मनोरमा, १९, मनोहरा २०, देवकुरा २१, उत्तरकुरा २२ विशाला २३ और चन्द्र प्रभा २४। यहां 'सीया' शब्द शिबिका अर्थका बोधक है। ये शिबिकाएँ सर्वजगत के वत्सल जिनवरों की थीं। समस्त ऋतुओं के सुखों से ये युक्त थीं। शुभ छाया से ये सब अन्वित थीं। पहिले इन शिबिकाओं को रोमकूप युक्त अर्थात् हर्ष से युक्त मनुष्य ला करके उपस्थित करते हैं-अर्थात सब से पहिले इन शिबिकाओं को मनुष्य उठाते हैं बाद में इन शिबिकाओं को असुरेन्द्र, सुरेन्द्र और नागेन्द्र उठाते हैं। बाद में

પ્રમાણે છે તે ૨૪ તીર્થંકરોની ૨૪ શિબિકાઓ હતી તેમનાં નામ આ પ્રમાણે છે-(૧) સુદર્શના (૨) સુપ્રભા (૩) સિદ્ધાર્થા, (૪) સુપ્રસિદ્ધા, (૫) વિજયા (૬) વૈજયન્તી (૭) જયન્તી, (૮) અપરાજિતા, (૯) અરુણપ્રભા (૧૦) ચન્દ્રપ્રભા (૧૧) સૂરપ્રભા (૧૨) અગ્નિસપ્રભ, (૧૩) વિમલા, (૧૪) પંચવર્ણા, (૧૫) સાગરદત્તા (૧૬) નાગદત્તા (૧૭) અભયકરા (૧૮) નિવૃત્તિકરા, (૧૯) મનોરમા (૨૦) મનોહરા (૨૧) દેવકુરા (૨૨) ઉત્તરકુ। (૨૩) વિશાલા અને (૨૪) ચન્દ્રપ્રભા અહીં "સીયા" શબ્દનો અર્થ, શિબિકા (પાલખી) થાય છે તે શિબિકાઓ આખા જગતપર વાત્સલ્ય ભાવ રાખનારા જિનવરોની હતી તે શિબિકાઓ સઘળી ઋતુઓનાં સુખથી યુક્ત હતી તે શુભ છાયાવાળી હતી. પહેલા રોમકૂપ યુક્ત—હર્ષ થી યુક્ત મનુષ્યો તે શિબિકાઓને ઉપાડે છે ત્યાર બાદ અસુરેન્દ્ર સુરેન્દ્ર અને નાગેન્દ્ર તે શિબિકાઓને ઉપાડે છે ત્યાર બાદ

चपलकुण्डलधराः स्वच्छन्दविकुर्विताभरणधारिणः-स्वेच्छानुसारविकुर्वितभूषणधारिणो देवाः सुरासुरवन्दितानां जिनेन्द्राणां शीविकां वहन्ति ॥२०॥ 'पुरओ' पुरतो देवा वहन्ति, 'नागापुणो दाहिणम्मि पासम्मि' नागकुमारा देवाः पुनर्दक्षिणे पार्श्वे। 'पच्छिमेण असुरा' असुरकुमाराः पश्चिमे खलु वहन्ति। 'गरुलापुणउत्तरे पासे' पुनः उत्तरे पार्श्वे गरुडाः-सुपर्णकुमाराख्या भवनपतिदेवाः वहन्ति॥२१॥ अथ तीर्थकराणां दीक्षास्थानं वर्ण्यते-'उसभो य विणीयाए' ऋषभश्च विनीतायां नगर्यां निष्क्रान्तः, 'बारवईए अरिट्ठवरणेमी' अरिष्टनेमिभगवान् द्वारावत्याम्। 'अवसेसातित्थयरा' अवशेषास्तीर्थकराः 'निक्खंता जम्मभूमिसु' निष्क्रान्ता-जन्मभूमिषु=अवशिष्टास्तीर्थकृतः स्व स्व जन्मस्थाने दीक्षां गृहीतवन्तइत्यर्थः॥२२॥ कया रीत्या निष्क्रान्ताइत्याह-'सव्वेवि' सर्वेऽपि चतुर्विंशतिर्जिनेन्द्रा 'एगदूसेण' एकदूष्येण-एकं वस्त्रमादाय 'निग्गया' निर्गताः-निष्क्रान्ताः दीक्षिता इत्यर्थः,

सुर और असुर से वंदित उन जिनेन्द्रों की शिबिका को चलचपल कुंडल धारी देव कि जो अपनी इच्छानुसार विकुर्वित आभूषणों को धारण करनेवाले होते हैं पूर्व की तरफ आगे २ वहन करते है। अर्थात् आगे २ चलते है। दक्षिण पार्श्व में नागकुमार देव, पश्चिम पार्श्व में असुरकुमार, और उत्तर पार्श्व में सुपर्णकुमार नाम के भवनपतिदेव उस शिबिका को वहन करते है-अब सूत्रकार तीर्थकरों के दीक्षास्थान का वर्णन करते है-ऋषभदेव ने विनीता नगरी में दीक्षा धारण की है। अरिष्टनेमि भगवानने द्वारावती में दीक्षा धारण की हैं। बाकी के बाईस २२ तिर्थकरों ने अपने २ जन्मस्थान में दीक्षा धारण की हैं। अबसूत्रकार यह कहते हैं कि किस रीति से इन तीर्थकरोंने दीक्षा धारण की है। समस्त चौवीस तीर्थकरों ने एक दूष्यवस्त्र धारण कर दीक्षा धारण की है। इन तीर्थकरोंने जो दीक्षा धारण की सो वे स्थवि-

પોતાની ઈચ્છાનુસાર વિકુર્વિત આભૂષણોને ધારણકરનાર, ચલચપલ કુંડલધારી દેવો; સુર અને અસુરો દ્વારા વંદાતા એવા તે જિનેન્દ્રોની શિબિકાઓને પૂર્વની તરફથી વહન કરે છે, દક્ષિણ તરફથી નાગકુમાર દેવો, પશ્ચિમ તરફથી અસુરકુમાર દેવો અને ઉત્તર તરફથી સુપર્ણકુમાર નામના ભવનપતિ દેવો તે શિબિકાઓને વહન કરે છે હવે સૂત્રકાર તીર્થંકરોના દીક્ષાસ્થાનોનું વર્ણન કરે છે- ઋષભદેવે વિનીતા નગરીમાં, અને અરિષ્ટનેમિ ભગવાને દ્વારાવતી નગરીમા દીક્ષા અંગીકાર કરી હતી બાકીના બાવીસ તીર્થંકરોએ પોતપોતાના જન્મસ્થાનોમાં દીક્ષા લીધી હતી. હવે સૂત્રકાર એ બતાવે છે કે તે તીર્થંકરોએ કેવી રીતે દીક્ષા ગ્રહણ કરી હતી-સમસ્ત ચોવીસે ચોવીસ-તીર્થંકરોએ એક એક દૂષ્ય વસ્ત્ર ધારણ કરીને દીક્ષા ગ્રહણ કરી

न च नाम–नाम इति निश्चय, अन्नलिंगे' न परलिङ्गे=स्थविरकल्पिकादिरूपे, 'न य गिहिलिंगे' न च गृहिलिङ्गे=गृहस्थरूपे तथा–न च कुलिङ्गे=शाक्यादिरूपे निष्क्रान्ताः। किन्तु तीर्थङ्कररूपणैव निष्क्रान्ता ॥२३॥ कस्तीर्थङ्करः कियद्भिः परिवारैः सह निष्क्रान्त इत्याह–'एको भगवं वीरो' भगवान् महावीर एकाकी-निष्क्रान्त। तथा–पासोमल्लीयतिहितिहिसएहिं' पार्श्वोमल्लिश्च त्रिभिस्त्रिभिः शतैः परिवारैः सह निष्क्रान्त। भगवं वि वासुपुज्जो' वासुपूज्यो भगवान् 'छहिं पुरिससएहिं पद्मि पुरुषशतै सह निष्क्रान्त ॥२४॥ तथा–'उग्गाण भोगाण राइण्णाण च खत्तियाण च' उग्राणां भोगानां राज्ञां च क्षत्रियाणां च 'चउहिं सहस्सेहिं' चतुर्भिः सहस्रैः सह 'उसभो' ऋषभो निष्क्रान्तः। 'सेसाओ सहस्सपरिवारा' शेषास्तु तीर्थङ्करा सहस्रसहस्रपरिवारैः सह निष्क्रान्ता इत्यर्थ ॥२५॥ 'सुमइत्थ णिच्चभत्तेण णिग्गओ' सुमतिरभनित्यभक्तेन निर्गत =भगवान् सुमतिनाथोऽकृतोप

रकल्पिक आदिरूप अन्यलिङ्ग में दीक्षित नहीं हुए, न गृहस्थरूपलिङ्ग में दीक्षित हुए और न शाक्यादिरूप कुलिङ्ग में ही दीक्षित हुए किन्तु तीर्थकररूप में ही दीक्षित हुए। अब सूत्रकार यह प्रकट करते हैं–कि कौन २ से तीर्थकर कितने २ परिवार के साथ दीक्षित हुए हैं–भगवान् महावीर ने एकाकी दीक्षा धारण की है। तथा पार्श्वनाथ भगवान् और मल्लिनाथ भगवान् ने तीन २ सौ परिवारों के साथ दीक्षा धारण की है। भगवान वासुपूज्य ने छह सौ पुरुषों के साथ दीक्षा धारण की है। उग्रवंश के भोगवंश के राजाओं और क्षत्रियों के ४ हजार परिवार के साथ ऋषभदेवने दीक्षा धारण की है। तथा इनसे अवशिष्ट जो तीर्थकर हैं उन्होंने एक २ हजार परिवार के साथ धारण की है। भगवान् सुमतिनाथ ने बिना उपवास के ही जिन दीक्षा धारण की है। तथा–पार्श्वनाथ

હતી. તે તીર્થંકરોએ સ્થવિર કલ્પિક આદિરૂપ અન્યલિંગમાં દીક્ષા લીધી ન હતી ગૃહસ્થરૂપ લિંગમાં પણ તેઓ દીક્ષિત થયા ન હતા અને શાક્યાદિ રૂપ કુલિંગમાં પણ તેઓ દીક્ષિત થયા ન હતા પણ તેઓ તીર્થંકરરૂપે જ દીક્ષિત થયા હતા હવે સૂત્રકાર એ બતાવે છે કે કયા તીર્થંકરે કેટલો પરિવાર સહિત દીક્ષા અંગીકાર કરી હતી–ભગવાન મહાવીરે એકાકી (કોઇ પણ પરિવાર વિના) દીક્ષા ધારણ કરી હતી પાર્શ્વનાથ ભગવાને તથા મલ્લિનાથ ભગવાને ૩–૩ સો માણસો સાથે દીક્ષા લીધી હતી ભગવાન વાસુપૂજ્યે ૬ સો પુરુષો સહિત દીક્ષા લીધી હતી ઉગ્રવંશ અને ભોગવંશના ૪ હજાર રાજાઓ અને ક્ષત્રિયોના પરિવાર સાથે ભગવાન ઋષભદેવે દીક્ષા લીધી હતી બાકીના તીર્થંકરોએ એક એક હજારના પરિવાર સહિત દીક્ષા લીધી હતી ભગવાન સુમતિનાથે ઉપવાસ કર્યા વિના જ દીક્ષા ધારણ કરી હતી વાસુપૂજ્ય

वासएव निष्क्रान्त इत्यर्थः । 'वासुपुज्जचउत्थेणं' वासुपूज्यश्चतुर्थेन=वासुपूज्यो भगवानेकमुपवासं कृत्वा दीक्षितः । 'पासोमल्लीय अट्ठमेण' पार्श्वो मल्लिश्चाष्टमेन, 'सेसा उ छट्ठेणं' शेषास्तु षष्ठेन=अवशिष्टास्तीर्थङ्कराः षष्ठ कृत्वा निष्क्रान्ताः॥सू.१९८।

मूलम्—एएसिं णं चउवीसाए तित्थगराणं चउवीसं पढमभिक्खा दायारो होत्था, तं जहा–सिज्जंस वंभदत्ते सुरिंददत्ते य इंददत्ते य। पउमे य सोमदेवे माहिंदे तह सोमदत्ते य॥२७॥ पुस्से पुणव्वसू पुण्णणंदे सुणंदे जए य विजए य। तत्तो य धम्मसीहे सुमित्त तह वग्गसीहे य॥२८॥ अपराजिय विस्ससेणे वीसइमे होइ उसभसेणे य। दिण्णे वरदत्ते धणे बहुले य अणुपुव्वीए ॥२९॥ एए विसुद्धलेसा जिणवरभत्तीए अंजलिउडा उ। तं कालं तं समयं पडिलाभेइ जिणवरिंदे ॥३०॥ संवच्छरेण भिक्खा लद्धा उसभेण लोयणाहेण। सेसेहि बीयदिवसे लद्धाओ पढमभिक्खाओ ॥३१॥ उसभस्स पढमभिक्खा खोयरसो आसि लोगणाहस्स। सेसाणं परमण्णं अमियरसरसोवमं आसि ॥३२॥ सव्वेसिं जिणाणं जहियं लद्धाउ पढमभिक्खाउ। तहियं वसुधाराओ सरीरमेत्तीओ वुट्ठाओ३३ ॥सू० १९९॥

भगवान् ने और मल्लिनाथ भगवान् ने तीन उपवास अट्ठम कर के और अवशिष्ट तीर्थंकरों ने छट्ठ की तपस्या करके जिनदीक्षा धारण की है॥सू०१९८॥

शब्दार्थ—(एएसिणं चउवीसाए तित्थगराणं)एतेषां खलु चतुर्विंशतेस्तीर्थंकराणां इन चौवीस तीर्थंकरों के लिये (पढमभिक्खा दायारो चउवीसं होत्था) प्रथम भिक्षादातारः चतुर्विंशतिः आसन्–सब से पहिले

ભગવાને દીક્ષા અંગીકાર કરી હતી પાર્શ્વનાથ તથા મલ્લિનાથ ભગવાને ત્રણ ઉપવાસ કરીને અને બાકીના તીર્થંકરોએ બે ઉપવાસ-છઠ્ઠ-ની તપસ્યા કરીને દીક્ષા ધારણ કરી હતી ॥ સૂ૦ ૧૯૮॥

શબ્દાર્થ—(एए सिणं चउवीसाए तित्थगराणं) एतेषां खलु चतुर्विंशतेस्तीर्थकराणां–ને ચોવીસ તીર્થંકરોને (पढमभिक्खा दायारो चउवीसं होत्था) प्रथमभिक्षादातारः चतुर्विंशतिः अभूवन्–સૌથી પહેલા ભિક્ષા

भिक्षा देने वाले चौवीस २४ हुए हैं। (तंजहा) तद्यथा-उनके नाम ये हैं (सिज्जंसबम्भदत्ते सुरिंददत्ते य इंददत्ते य, पउमेय सोमदेवे माहिंदे तह सोमदत्ते य) श्रेयांसो ब्रह्मदत्तः सुरेन्द्रदत्तश्च, इन्द्रदत्तश्च, पद्मश्च सोमदेवो माहेन्द्रस्तथा सोमदत्तश्च-श्रेयांस १ ब्रह्मदत्त २, सुरेन्द्रदत्त ३, इन्द्रदत्त ४ पद्म ५, सोमदेव ६, माहेन्द्र ७ सोमदत्त ८, (पुस्से, पुणव्वसू पुण्णणंदे सुणंदे जए य विजए य, तत्तो य धम्मसीहे सुमित्त तह वग्गसीहे य) पुष्य पुनर्वसुश्च पूर्णानन्द सुनन्दो जयश्च विजयश्च, ततश्च धर्मसिंहः सुमित्र-स्तथा वर्गसिंहश्च-पुष्य ९, पुनर्वसु १०, पूर्णानन्द ११, सुनंद १२, जय १३ विजय १४, धर्मसिंह १५ सुमित्र १६ वर्गसिंह १७, (अपराजिय विस्ससेणे वीसइमे होइ उसमसेणे दिण्णे वरदत्ते धणे बहुले य आणुपुव्वीए) अपराजितो विश्वसेनो विंशतितमो भवति ऋषभसेनश्च, दत्तो वरदत्तो धनो बहुलश्च आनुपूर्व्या—अपराजित १८, विश्वसेन १९ तथा बीसवें ऋषभसेन २० दत्त २१ वरदत्त २२ धन २३ और बहुल २४। ये क्रमशः २४ प्रथम भिक्षा दाता हैं। (एए) एते-इन २४ प्रथम भिक्षा दाता जनोंने(जिणभत्तीए) जिनभक्त्या-प्रभु भक्ति के वश से (विसुद्धलेसा) विशुद्ध लेश्या युक्त होकर (पंजलिउडा) प्राञ्जलिपुटाः-और दोनों हाथ

દેનારા જે ચોવીસ ભિક્ષાદાતાઓ હતા (तंजहा) तद्यथा-તેમના નામ આ પ્રમાણે છે- (सिज्जंसबम्भदत्ते सुरिंददत्ते य इंददत्ते य पउमे य सोमदेवे माहिंदे तह सोमदत्ते य) श्रेयांसो ब्रह्मदत्तः सुरेन्द्रदत्तश्च इन्द्रदत्तश्च पद्मश्च सोमदेवो माहेन्द्रस्तथा सोमदत्तश्च-( ) શ્રેયાંસ, (૨) બ્રહ્મદત્ત, (૩) સુરેન્દ્રદત્ત, (૪) ઇન્દ્રદત્ત (૫) પદ્મ (૬) સોમદેવ [૭] માહેન્દ્ર (૮) સોમદત્ત (पुस्से, पुणव्वसू पुण्णणंदे सुणंदे जए य विजए य तत्तो य धम्मसीहे सुमित्त तह वग्गसीहे य) पुष्य, पुनर्वसुश्च पूर्णानन्दः सुनन्दो जयश्च विजयश्च ततश्च धर्मसिंहः सुमित्रस्तथा वर्गसिंहश्च-(૯) પુષ્ય (१) પુનર્વસુ [११] પૂર્ણાનંદ (૧૨) સુનંદ (૧૩) જય (૧૪) વિજય (૧૫) ધર્મસિંહ (૧૬) સુમિત્ર (૧૭) વર્ગસિંહ (अपराजिय विस्ससेणे वीसइमे होइ उसमसेणे दिण्णे वरदत्ते धणे बहुले य आणुपुव्वीए) अपराजितो विश्वसेनो विंशतितमो भवति ऋषभसेनश्च दत्तो वरदत्तो धनो बहुलश्च आनुपूर्व्या (१८) અપરાજિત (૧૯) વિશ્વસેન (૨૦) ઋષભસેન (૨૧) દત્ત (૨૨)વરદત્ત (૨૩) ધન અને (૨૪)બહુલ ઉપર પ્રમાણે ક્રમશઃ ૨૪ પ્રથમ ભિક્ષાદાતાઓ હતા. (एए) एते-તે ચોવીસ ભિક્ષાદાતાઓએ (जिणभत्तीए) जिनभक्त्या-પ્રભુપ્રત્યેની અનન્ય ભક્તિથી પ્રેરાઈને (विसुद्धलेसा)विशुद्धलेश्याः-વિશુદ્ધ લેશ્યાથી યુક્ત થઈને (पंजलिउडा) प्राञ्जलिपुटाः-બન્ને હાથ જોડીને (त कालं तं

जोडकर (तं कालं त समयं) तस्मिन् काले तस्मिन समये-उसकाल मे और उससमय में (जिणवरिंदे पडिलाभेइ) जिनवरेन्द्रान् प्रतिलम्भयति-जिनेन्द्रों को आहारदान दिया था। (संवच्छरेण भिक्खा लद्धा उसभेण लोयणाहेण) संवत्सरेण भिक्षालब्धा ऋषभेण लोकनाथेन-लोक के नाथ ऋषभनाथ भगवान् ने एक वर्ष में प्रथम भिक्षा प्राप्त की है (सेसेहि वीय दिवसे लद्धाओ पढमभिक्खाओ) शेषैर्द्वितीयदिवसे लब्धाः प्रथमभिक्षा बाकी के तेवीस २३ तीर्थकरों ने दूसरे दिन भिक्षा प्राप्त की हैं। (उस भस्स पढमभिक्खा खोयरसो आसि लोगणाहस्स)ऋषभस्य प्रथमभिक्षा इक्षु रस आसीत् लोकनाथस्य—लोकनाथ ऋषभदेव की प्रथम भिक्षा इक्षु रसकी थी (सेसाणं परमण्णं अमिय रस रसोवमं आसि) शेषाणां परमान्नं अमृतरसरसोपमं आसीत्-तेवीस तीर्थकरों की प्रथम भिक्षा अमृतरसके समान खीर की थी।(सव्वेसिं जिणाण जहिय लद्धा उ पढमभिक्खाउ तहियंवसुधाराओ सरीरमेत्तीओ वुट्ठाओ) सर्वैरपि जिनैर्यत्रलब्धाः प्रथम-भिक्षाः-तत्र वसुधाराः शरीरमात्राः वृष्टा-समस्त तीर्थकरों ने जहां २ प्रथमभिक्षा ग्रहण की, वहां २ शरीर प्रमाण द्रव्य की वर्षा हुई है॥सू०१९९॥

समयं)तस्मिन् काले तस्मिन् समये-તે કાળે અને તે સમયે (जिणवरिंदे पडिलाभेइ) जिनवरेन्द्रान् प्रतिलम्भयति જિનેન્દ્રોને આહારદાન દીધું હતું (संवच्छरेण भिक्खालद्धा उसभेण लोयणाहेण) सवत्सरेण भिक्षा लब्धा ऋषभेण लोकनाथेन-લોકના નાથ ભગવાન ઋષભદેવે એક વર્ષે પહેલી ભિક્ષા પ્રાપ્ત કરી હતી (सेसेहिं वीयदिवसे लद्धाओ पढमभिक्खाओ) शेषैर्द्वितीयदिवसे लब्धाः प्रथम भिक्षाः-બાકીના તીર્થંકરે એ બીજે દિવસે જ પ્રથમ ભિક્ષા પ્રાપ્ત કરી હતી. (उसभस्स पढमभिक्खा खोयरसो आसि लोगणाहस्स)ऋषभस्य प्रथमभिक्षा इक्षुरस आसीत्-लोकनाथस्य-લોકનાથ ઋષભદેવને પ્રથમ ભિક્ષા ઇક્ષુરસ (શેરડીનો રસ) ની મળી હતી (सेसाणं परमण्णं अमियरसरसोवमं आसि) शेषाणां परमान्नं अमृतरस रसोपमं आसीत्-બાકીના તેવીસ તીર્થંકરોને પ્રથમ ભિક્ષામા અમૃતરસ જેવી ખીર મળી હતી (सव्वेसिं जिणाणं जहियं लद्धाउ पढम भिक्खाउ, तहिय वसुधाराओ सरीरमेत्तीओ वुट्ठाओ) सर्वैरपि जिनैर्यत्रलब्धाः प्रथमभिक्षाः तत्र वसुधाराः शरीरमात्राः वृष्टा-સમસ્ત તીર્થંકરોએ જ્યા જ્યા પહેલી ભિક્ષા ગ્રહણ કરી, ત્યા ત્યાં શરીરપ્રમાણ દ્રવ્યની વૃષ્ટિ થઈ હતી ॥ સૂ ૧૯૯ ॥

टीका-'एएसि णं' इत्यादि-एतेषां खलु चतुर्विंशतस्तीर्थकराणां चतुर्विंशतिः 'पढमभिक्खादायारो' प्रथमभिक्षादातारः 'होत्था' अभूवन्, तद्यथा-श्रेयांसो ब्रह्मदत्त सुरेन्द्रदत्तश्च इन्द्रदत्तश्च। पद्मश्च सोमदेवो माहेन्द्रस्तथा सोमदत्तश्च॥२७॥ पुष्य पुनर्वसुश्च पूर्णानन्द सुनन्दो जयश्च विजयश्च। ततश्च धर्मसिंह सुमित्र स्तथा वर्गसिंहश्च॥२८॥ अपराजिता विश्वसेना विंशतितमो भवति ऋषभसेनश्च। दत्ता वरदत्तो धनो बहुलश्च आनुपूर्व्या॥२९॥ 'एए' एते उपरि निर्दिष्टाश्चतुर्विंशतिमनाः 'जिणभत्तीए' जिनभक्त्या=जिनभक्तिवशात् 'विसुद्धलेसा' विशुद्धलेश्याः-विशुद्धलेश्यावन्तः 'पंजलिउडा' प्राञ्जलिपुटाः=कृताञ्जलयः 'तं कालं तं समयं' तस्मिन् काले तस्मिन् समये 'पडिलाभेई जिणवरिंदे' प्रतिलम्भयति जिनवरेन्द्रान्। ३॥ संवत्सरेण भिक्षा लब्धा ऋषभेण लोकनाथेन। शेषैर्द्वितीय

टीकार्थ—'एएसि णं चउवीसाए' इत्यादि—इन चौवीस तीर्थकरों के लिये सब से पहिले भिक्षा देनेवाले चौवीस २४ हुए हैं। उनके नाम ये हैं-श्रेयांस १, ब्रह्मदत्त २, सुरेन्द्रदत्त ३, इन्द्रदत्त ४, पद्म, ५, सोमदेव ६, माहेन्द्र ७ सोमदत्त ८, पुष्य ९, पुनर्वसु १०, पूर्णानंद ११, सुनन्द १२, जय १३, विजय १४, धर्मसिंह १५ सुमित्र १६ वर्गसिंह १७ अपराजित १८ विश्वसेन १९ तथा २० वें ऋषभसेन, दत्त २१ वरदत्त २२ धन २३ और बहुल २४। ये क्रमशः २४ प्रथम भिक्षा दाता हैं। इन २४ प्रथम भिक्षादाता जनोंने प्रभुभक्ति के वश से विशुद्ध लेश्या युक्त होकर और दोनों हाथ जोडकर उसकाल में और उस समय में जिनेन्द्रों को आहार दान दिया था। लोक के नाथ ऋषभनाथ भगवान ने एक वर्ष में प्रथमभिक्षा प्राप्त की है। लोकनाथ ऋषभदेव की प्रथमभिक्षा

ટીકાર્થ—"एएसिण चउवीसाए" इत्यादि—તે ચોવીસ તીર્થંકરોને સૌથી પહેલી ભિક્ષા અર્પણ કરનારા ૨૪ ચોવીસ ભિક્ષુદાતાઓનાં નામ આ પ્રમાણે છે-(૧) શ્રેયાંસ (૨) બ્રહ્મદત્ત, (૩) સુરેન્દ્રદત્ત (૪) ઇન્દ્રદત્ત, (૫) પદ્મ, (૬) સોમદેવ (૭) માહેન્દ્ર, (૮) સોમદત્ત (૯) પુષ્ય, (૧૦) પુનર્વસુ, (૧૧) પૂર્ણાનંદ, (૧૨) સુનંદ (૧૩) જય (૧૪) વિજય (૧૫) ધર્મસિંહ, (૧૬) સુમિત્ર, (૧૭) વર્ગસિંહ (૧૮) અપરાજિત (૧૯) વિશ્વસેન (૨૦) ઋષભસેન, (૨૧) દત્ત, (૨૨) વરદત્ત, (૨૩) ધન અને (૨૪) બહુલ. એ પ્રમાણે અનુક્રમે ૨૪ તીર્થંકરોના ૨૪ ભિક્ષુદાતાઓ થયા છે. તે ૨૪ પ્રથમ ભિક્ષાદાતાઓએ પ્રભુભક્તિથી પ્રેરાઈને વિશુદ્ધ લેશ્યાયુક્ત થઈને બન્ને હાથ જોડીને, તે કાળે અને તે સમયે જિનેન્દ્રદેવોને આહારદાન દીધું હતું. લોકનાથ ઋષભદેવે પ્રથમ ભિક્ષા એક વર્ષે પ્રાપ્ત કરી હતી.

दिवसे लब्धाः प्रथमभिक्षाः ॥३१॥ ऋषभस्य प्रथमभिक्षा इक्षुरस आसीत् लोकनाथस्य। शेषाणां तीर्थंकराणां 'परमण्णं' परमान्नम्=पायसम् 'अमियरसरसोवमं' अमृतरसरसोपमम्=अमृतरसतुल्यं प्रथमा भिक्षा आसीत् ॥३२॥ सर्वैरपि जिनैर्यत्र लब्धाः प्रथमभिक्षाः। तत्र वसुधाराः वृष्टा शरीरमात्राः ॥३३॥ सू १९९॥

मूलम्—एएसिं चउव्वीसाए तित्थगराणं चउवीसं चेइयरुक्खा होत्था, तं जहा—णग्गोह सत्तिवणे साले पियए पियंगु छत्ताहे। सिरिसे य णागरुक्खे माली य पिलंक्खु रुक्खे य ॥३४॥ तिंदुक पाडल जंबू आसत्थे खलु तहेव दहिवण्णे। णंदीरुक्खे तिलए अंबयरुक्खे असोगे य ॥३५॥ चंपय वउले य तहा वेडसरुक्खे य धायईरुक्खे। साले य वद्धमाणस्स चेइयरुक्खा जिणवराणं॥३६॥ वत्तीसं धणुयाइं चेइयरुक्खो य वद्धमाणस्स। णिच्चोउगो असोगो ओच्छण्णो सालरुक्खेणं॥३७॥ तिण्णेव गाउआइं चेइयरुक्खो जिणस्स उसभस्स। सेसाणं पुण रुक्खा सरीरओ वारसगुणा उ ॥३८॥ सछत्ता सपडागा सवेइया तोरणेहिं उववेया। सुरअसुर गरुल महिया चेइयरुक्खा जिणवराणं ॥३९॥सू० २००॥

इक्षुरस की थी। और २३ तीर्थंकरों की प्रथमभिक्षा अमृतरस के समान खीर की थी। समस्त तीर्थंकरों ने जहां २ प्रथमभिक्षा ग्रहण की, वहां २ शरीर प्रमाण द्रव्य की वर्षा हुई है ॥सू० १९९॥

शब्दार्थ—(एएसिं चउवीसाए तित्थगराणं चउवीसं चेइयरुक्खा होत्था) एतेषां चतुर्विंशतेस्तीर्थंकराणां चतुर्विंशतिश्चैत्यवृक्षा आसन्—चौवीस तीर्थ-

---

અને બાકીના ૨૩ તીર્થંકરોએ બીજે દિવસે જ પ્રથમ ભિક્ષા મેળવી હતી. લોકનાથ ઋષભદેવને પહેલી ભીક્ષામાં ઇક્ષુરસ મળ્યો હતો, અને બાકીના ૨૩ તીર્થંકરોને પહેલી ભિક્ષામા અમૃતરસ સમાન ખીર મળી હતી સમસ્ત તીર્થંકરોએ જે જે સ્થાને પહેલી ભિક્ષા ગ્રહણ કરી, તે તે સ્થાને શરીર પ્રમાણ દ્રવ્યનો વરસાદ થયો હતો, ॥સૂ. ૧૯૯॥

શબ્દાર્થ-(एए सिं चउव्वीसाए तित्थगराणं चउवीसं चेइयरुक्खा होत्था) एतेषां चतुर्विंशतेस्तीर्थंकराणां चतुर्विंशतिश्चैत्यवृक्षा आसन्—

करोंके चोवीस चैत्यवृक्ष-ये जिनके नीचे केवलज्ञान उत्पन्न हुआ व वृक्ष (तजहा) तद्यथा-उनके नाम य हैं (णग्गोह सत्तिवण्णे साले पियए पियगु छत्ताहे सिरिसे य णागरुक्खे माली य पिलक्खुरुक्खे य) न्यग्रोध सप्तपर्णः शालः प्रियकः प्रियगु छत्रामः शिरीषश्च नागवृक्षः मालीच पिलङ्खुवृक्षश्च-न्यग्रोध, सप्तपर्ण, शाल, प्रियक, प्रियगु, छत्राभ, शिरीष, नागवृक्ष, माली, पिलंखुवृक्ष, (तिंदुकपाडल जंबू आसत्थे खलु तहेव दहिवण्णे,णदीरुक्खे तिलए मयपरुक्खे असोगे य) तिन्दुक पाटलो जम्बूरश्वत्थः खलु तथैव दधिपर्णः नन्दीवृक्षस्तिलक आम्रवृक्षोऽशोकश्च तिंदुक, पाटल, जम्बू अश्वत्थ, दधिपर्ण, नंदीवृक्ष, तिलक, आम्रवृक्ष अशोक, (चपय वउले य तहा वेडसरुक्खे य धाईयरुक्खे, साले य वद्धमाणस्स चेइयरुक्खा जिणवराणं) चपको बकुलश्च तथा वेतसवृक्षो धातकी वृक्षश्च,सालश्च वर्द्धमानस्य चैत्यवृक्षा जिनवराणाम्-चंपक, बकुल, वेतसवृक्ष धातकीवृक्ष और वर्द्धमान भगवान का सालवृक्ष ये जिनवरों के चैत्यवृक्ष है। (बत्तीस धणुयाइ चेइयरुक्खा य वद्धमाणस्स) द्वात्रिंशद् धनूंषि चैत्यवृक्षश्च वर्द्धमानस्य-वर्द्धमान भगवान का चैत्यवृक्ष बत्तीस ३२ धनुष ऊचा था। (णिच्चोउगो असोगो ओच्छण्णो सालरुक्खेणं)

ते चोवीस तीर्थंकरोना चोवीस चैत्यवृक्ष हता जे वृक्षनी नीचे केवलज्ञान थयु होय ते वृक्षने चैत्यवृक्ष कहे छ (त जहा) तद्यथा-तेमना नाम आ प्रमाणे छे-(णग्गोहमत्तिवण्णे साल पियए पियगु छत्ताहे सिरिसे य णागरुक्खे माली य पिलक्खु रुक्खे य)न्यग्रोध सप्तपर्णः शालः प्रियक प्रियगु छत्राभः शिरीषश्च नागवृक्षः माली च पिलङ्खुवृक्षश्च-न्यग्रोध, सप्तपर्ण, शाल प्रियक, प्रियगु छत्राभ शिरीष, नागवृक्ष, माली, पिलखुवृक्ष,(तिंदुक पाडलजबू आसत्थे खलु तहेय दहिवण्णे णदीरुक्खे तिलए अंबयरुक्खे असोगे य)तिन्दुक, पाटलो जम्बू श्वत्थ खलु तथैव दधिपर्ण, नन्दीवृक्षस्तिलक आम्रवृक्षोऽशोकश्च-तिंदुक पाटल जंबू अश्वत्थ दधिपर्ण, नंदीवृक्ष, तिलक, आम्रवृक्ष, अशोक (चपयवउलय तहा वेडसरुक्खे य धाईयरुक्खे, सालेय वद्धमाणस्स चेइयरुक्खा जिणवराण) चपकोबकुलश्च तथा वेतसवृक्षो धातकीवृक्षश्च, सालश्च वर्धमानस्य चैत्यवृक्षा जिनवराणाम्-चंपक, बकुल वेतसवृक्ष, धातकी वृक्ष अने वर्धमान भगवानतु सालवृक्ष जिनवरोनां ते चैत्यवृक्षो हतां (बत्तीस धणुयाई चेइयरुक्खो य वद्धमाणस्स) द्वात्रिंशद् धनूंषि चैत्यवृक्षश्च वर्द्धमानस्य-वर्धमान भगवानतु चैत्यवृक्ष बत्रीस (३२) धनुषप्रमाण उंचु हतु (णिच्चोउगो असोगो ओच्छण्णो सालरुक्खेणं) नित्यर्तुकोऽशोकोऽवच्छिन्नः

टीका—'एएसिं' इत्यादि–एतेषां चतुर्विंशतेस्तीर्थंकराणां चतुर्विंशतिश्चैत्यवृक्षा आसन्, तद्यथा–न्यग्रोधः सप्तपर्णः शालः प्रियकः प्रियङ्गुः छत्राभः । शिरीषश्च नागवृक्षः माली च पिलङ्क्षुवृक्षश्च ।३४।। तिन्दुकः पाटलो जम्बुरश्वत्थः खलु तथैव

नित्यर्तुकोऽशोकोऽव्यच्छिन्नः सालवृक्षैः–समस्त ऋतुओं से वह युक्त था। शोकउपद्रव आदि से वह रहित था, तथा सालवृक्षों से वह घिरा हुआ था (तिण्णेव गाउयाइं चेइयरुक्खो जिणस्स उसभस्स) त्रीण्येव गव्यूतानि चैत्यवृक्षो जिनस्य ऋषभस्य–ऋषभनाथ भगवान् का चैत्य वृक्ष तीनकोश को ऊँचा था। (सेसाणं पुणरुक्खा सरीरओ बारस गुणाउ) शेषाणं पुनर्वृक्षाः शरीरतो द्वादश गुणास्तु–अवशिष्ट तीर्थंकरों के चैत्यवृक्ष उनकी शरीर को ऊँचाई से बारह गुणी ऊँचाईवाले थे। (सच्छत्ता सपडागा सवेइया तोरणेहिं उववेया) सच्छत्राः सपताका सवेदिकास्तोरणैरुपपेताः–ये सब चैत्यवृक्ष छत्र सहित थे पताका सहितथे, वेदिकासहित थे, और तोरण सहित थे। (सुर असुर गरुल महिया चेइयरुक्खा जिणवराणं) सुरासुरगरुडमहिताश्चैत्यवृक्षा जिनवराणाम्–सुर, असुर और गरुल–सुपर्णकुमारों से ये सब जिनेन्द्रों के चैत्यवृक्ष सेवितथे ।।सू० २००।।

टीका—'एएसिचउव्वीसाए' इत्यादि इन चौवीस तीर्थंकरों के चौवीस चैत्यवृक्ष थे। उनके नाम ये हैं–न्यग्रोध १, सप्तपर्ण २, शाल ३, प्रियक ४, प्रियंगु ५, छत्राभ ६, शिरीष ७, नागवृक्ष ८ माली ९, पिलङ्क्षुवृक्ष १०

सालवृक्षैः–તે સમસ્ત ઋતુઓથી યુકત હતુ, શોક–ઉપદ્રવ આદિથી રહિત હતું અને સાલવૃક્ષોથી ઘેરાયેલુ હતું (तिण्णेव गाउयाइं चेइयरुक्खो जिणस्स उसभस्स) त्रीण्येवगव्यूतानि चैत्यवृक्षो जिनस्य ऋषभस्य–ઋષભદેવ ભગવાનનુ ચૈત્યવૃક્ષ ત્રણ કોશ ઊંચુ હતુ (सेसाणं पुणरुक्खा सरीरओ बारसगुणाउ) शेषाणं पुनर्वृक्षाः शरीरतो द्वादशगुणास्तु–બાકીના તીર્થંકરોના ચૈત્યવૃક્ષો તેમના શરીરની ઊંચાઈ કરતા બાર ગણી ઊંચાઇવાળા હતા (सच्छत्ता सपडागा सवेइया तोरणेहिं उववेया) सच्छत्राः सपताका सवेदिकास्तोरणैरुपपेताः–તે બધા ચૈત્યવૃક્ષો છત્ર, પતાકા, વેદિકા અને તોરણોથી યુકત હતા. (सुरअसुर गरुलमहिया चेइयरुक्खा जिणवराण) सुरासुरगरुडमहिताश्चैत्यवृक्षा जिनवराणाम्–તે બધા ચૈત્યવૃક્ષો સુર, અસુર, અને સુપર્ણકુમારો દ્વારા સેવાતાં હતાં ।।સૂ.૨૦૦।।

ટીકાર્થ—'एएसिं चउव्वीसाए' इत्यादि–તે ચોવીસ તીર્થંકરોનાં ચોવીસ ચૈત્યવૃક્ષો હતા. તે ચૈત્યવૃક્ષોનાં નામ આ પ્રમાણે છે—(૧), ન્યગ્રોધ, (૨) સપ્તપર્ણ, (૩) શાલ, (૪) પ્રિયક, (૫) પ્રિયગુ, (૬) છત્રાભ, (૭) શિરીષ, (૮)

दधिपर्णः । नन्दीवृक्षस्तिलक आम्रवृक्षोऽशोकश्च ॥३५॥ चम्पको बकुलश्च तथा वेतसवृक्षो धातकीवृक्षश्च । सालश्च वर्द्धमानस्य चैत्यवृक्षा जिनवराणाम् ॥३६॥ द्वात्रिंशद् धनूंषि चैत्यवृक्षश्च वर्द्धमानस्य । नित्यर्तुकोऽशोकोऽवच्छिन्न सालवृक्षेण ॥३७॥ त्रीण्येव गव्यूतानि चैत्यवृक्षो जिनस्य ऋषभस्य । शेषाणां पुनर्वृक्षाः शरीरतो द्वादशगुणास्तु ॥३८॥ सच्छत्राः सपताकाः सवेदिकास्तोरणैरुपेताः । सुरासुरगरुडमहिताश्चैत्यवृक्षा जिनवराणाम् ॥३९॥ सू २० ॥

मूलम्—एएसिं चउवीसाए तित्थगराणं चउव्वीसं पढमसीसा होत्था, तं जहा—पढमेत्थ उसभसेणे बीइए पुण होइ सीहसेणे य । चारू य वज्जणाभे चमरे तह सुव्वय विदब्भे ॥४०॥ दिण्णे य वराहे

तिन्दुक ११ पाटल १२, जम्बू १३, अश्वत्थ १४ दधिपर्ण १५, नंदीवृक्ष १६, तिलक १७, आम्रवृक्ष १८, अशोक १९ चंपक २० बकुल २१, वेतस वृक्ष २२, धातकीवृक्ष २३, और वर्द्धमान भगवान् का सालवृक्ष २४। ये जिनवरों के चैत्यवृक्ष हैं। वर्द्धमान भगवान का चैत्यवृक्ष ३२ धनुष ऊंचा था। समस्त ऋतुओं से वह युक्त था। शोक–उपद्रव आदि से वह रहित था। तथा सालवृक्षों से वह घिरा हुआ था। ऋषभनाथ भगवान का चैत्यवृक्ष तीन कोश का ऊंचा था। तथा अवशिष्ट तीर्थंकरों के चैत्यवृक्ष उनकी शरीर की ऊंचाई से बारह गुणी ऊंचाईवाले थे ये सब चैत्यवृक्ष छत्र सहित थे, पताका सहित थे वेदिका सहित थे और तोरण सहित थे। सुर असुर और गरुड–सुपर्णकुमारों से ये सब जिनेन्द्रों के चैत्यवृक्ष सेवित थे ॥सू० २०॥

नागवृक्ष (९) माली, (१०) पिंलक्षुवृक्ष,(११) तिंदुक (१२) पाटल (१३) જાંબુ (१४) અશ્વત્થ, (१५) દધિપર્ણ, (१६) નંદીવૃક્ષ, (१७) તિલક, (१८) આમ્રવૃક્ષ (१९) અશોક (२०) ચંપક (२१) બકુલ (२२) વતસવૃક્ષ (२३) ધાતકીવૃક્ષ અને (२४) વર્ધમાન ભગવાનનું સાલવૃક્ષ આ પ્રકારે જિનવરોનાં ચૈત્યવૃક્ષોનાં નામ હતા વર્ધમાન ભગવાનનું ચૈત્યવૃક્ષ બત્રીસ ધનુષપ્રમાણ ઊંચુ હતુ તે બધી ઋતુઓથી યુક્ત હતુ તે શોક–ઉપદ્રવ આદિથી રહિત હતુ તથા સાલવૃક્ષોથી ઘેરાયેલુ હતુ ઋષભનાથ ભગવાનનું ચૈત્યવૃક્ષ ત્રણ કોશ ઊંચુ હતુ બાકીના તીર્થંકરોના ચૈત્યવૃક્ષો તેમના શરીર કરતા બાર ગણી ઊંચાઈના હતાં તે બધાં ચૈત્યવૃક્ષો છત્ર પતાકા વદિકા અને તોરણથી યુક્ત હતાં તે બધાંએ જિનેન્દ્રોના ચૈત્યવૃક્ષો સુર અસુર અને ગરુડસુપર્ણકુમારો દ્વારા સેવિત હતા ॥સૂ ૨૦॥

पुण आणंदे गोथुभे सुहम्मे य। मंदर जसे अरिट्ठे चक्काह सयंकु कुंभे य ॥४१॥ इंदकुभे य सुभे वरदत्ते दिण्ण इंदभूई य। उदितोदिय कुलवंसा गुणेहि उववेया। तित्थपवत्तयाणं पढमा सिस्सा जिणवराणं ॥४२॥सू० २०१॥

शब्दार्थ-(एएसिं चउवीसाए तित्थगराणं) एतेषां चतुर्विंशतेस्तीर्थंकराणां इन चौवीस तीर्थकरों के (चउव्वीसं पढमसीसा होत्था) चतुर्विंशतिः प्रथम शिष्या अभूवन्-चौवीस प्रथमशिष्य थे (तं जहा) तद्यथा-उनके नाम ये है (पढमेत्थ उसभसेणे) प्रथमोऽत्र ऋषभसेनो-प्रथमऋषभसेन (बीइए पुण होइ सीहसेणे य) द्वितीयः पुनर्भवति सिंहसेनश्च द्वितीय सिंहसेन (चारुसेन (चारु य वज्जणाभे चमरे तह सुव्वय विदब्भे) चारुश्च वज्रनाभश्चमरस्तथा सुव्रतोविदर्भः तृतीयचारू, चतुर्थ वज्रनाभ, पंचम चमर. छठवें सुव्रत, सातवें विदर्भ, (दिण्णे य वराहे पुण आणंदे गोथुभे सुहम्मे य, मंदर जसे अरिट्ठे चक्काह सयंकुभे य) दत्तश्च वराहः पुनरानन्दो गोस्तुभः सुधर्माच, मंदरो यशा अरिष्टश्चक्राभः स्वयम्भु कुम्भश्च-आठवें दत्त, नौवे वराह, दशवें आनंद, ग्यारहवें गोस्तुभ, बारहवें सुधर्मा, तेरहवें मन्दर, चौदहवें यश, पन्द्रहवे अरिष्ट, सोलहवे चक्राभ, सत्रहवे स्वयंभू, अट्ठारहवे कुभ, (इंदकुंभे य सुभे, वरदत्त दिण्ण इंदभूईय) इन्द्रःकुम्भश्च शुभो वरदत्तो दत्त इन्द्र-

शब्दार्थ-(एएसिं चउवीसाए तित्थगराणं)एतेषां चतुर्विंशतेस्तीर्थंकराणां-એ ચોવીસ તીર્થંકરોના જે (चउव्वीसं पढमसीसा होत्था) चतुर्विंशतिः प्रथम शिष्या अभूवन्-ચોવીસ પહેલા શિષ્યો થયા (तं जहा) तद्यथा-તેમના નામ આ પ્રમાણે છે-(पढमेत्थउसभसेणे)प्रथमोऽत्र ऋषभसेनो-પહેલો ઋષભસેન (बीइए पुण होइ सीहसेणेय)द्वितीयः पुनर्भवति सिंहसेनश्च-બીજો સિંહસેન, (चारु य वज्जणाभे चमरे तह सुव्वयविदब्भे) चारुश्च वज्रनाभश्च चमरस्तथा सुव्रतोविदर्भः-(૩) ચારુ (૪) વજ્રનાભ, (૫) ચમર (૬) સુવ્રત (૭) વિદર્ભ, (दिण्णे य वराहे पुणआणंदे गोथुभे सुहम्मे य मंदरजसे अरिट्ठे चक्काहसयंकुकुंभे य) दत्तश्च वराह पुनरानन्दो गोस्तुभः सुधर्मा च, मंदरो यशा अरिष्टश्चक्राभः स्वयम्भुः कुम्भश्च-(૮) દત્ત, (૯) વરાહ (૧૦) આનંદ, (૧૧) ગોસ્તુભ, (૧૨) સુધર્મા, (૧૩) મન્દર, [૧૪] યશ, (૧૫) અરિષ્ટ (૧૬) ચક્રાભ, (૧૭) સ્વયંભૂ, (૧૮) કુંભ, (इंदकुंभे य सुभे, वरदत्तेदिण्ण इंदभूईय) इन्द्रः कुम्भश्च शुभो

टीका—'एएसिं' इत्यादि–एतेषां चतुर्विंशतस्तीर्थंकराणां चतुर्विंशतिः प्रथमशिष्या अभूवन्, तद्यथा–प्रथमो ऋषभसेनो द्वितीयः पुनर्भवति सिंहसेनः। चारुश्च वज्रनाभश्चमरस्तथा सुव्रतो विदर्भः ॥४१॥ दत्तश्च वराहः पुनरानन्दो गोस्तुभः सुधर्मा च। मन्दरो यशा अरिष्टश्चक्राम स्वयम्भूः कुम्भश्च ॥४१॥ इन्द्रः कुम्भश्च शुभो वरदत्तो दत्त इन्द्रभूतिश्च। उदितोदितकुलवंशा विशुद्धवंशा गुणैरुपेता। तीर्थप्रवर्तकानां प्रथमाः शिष्याः जिनवराणाम् ॥४२॥सू २०१॥

भूतिश्च–१९वें इन्द्र २०वें कुम्भ, २१वें शुभ, २२वें वरदत्त, २३वें दत्त और २४वें इन्द्रभूति। (उदितादियकुलवंसा गुणेहिं उववेया, तित्थपवत्तयाणं पढमा सिस्सा जिणवराण) उदितोदितकुलवंशा विशुद्धवंशा गुणैरुपेता तीर्थप्रवर्तकानां प्रथमाः शिष्य जिनवराणाम् य सब शिष्या उत्तरोत्तर उत्कर्ष को प्राप्त हुए कुलरूपवंश वाले ये मातृपितृसपक्षीवंश की निर्मलता से युक्त थे। तथा सम्यग्दर्शन आदिगुणों से विराजित थे। इस प्रकार तीर्थप्रवर्तक जिनेन्द्र देवों के ये प्रथम शिष्य थे ॥सू० २०१॥

टीकार्थ—'एएसिं चउवीसाए तित्थगराण' इत्यादि–इन चौबीस तीर्थंकरों के चौबीस प्रथम शिष्य थे उनके नाम ये हैं–प्रथम ऋषभसेन, द्वितीय सिंहसेन, तृतीय चारु चतुर्थ वज्रनाभ, पंचमचमर, छठवें सुव्रत सातवें विदर्भ, आठवें दत्त, नौवें वराह, दशवें आनद, ग्यारहवें गोस्तुभ बारहवें सुधर्मा, तेरहवें मन्दर चौदहवें यश, पन्द्रहवें अरिष्ट सोलहवें चक्राम, सत्रहवें स्वयंभू अट्ठारहवें कुम्भ, उन्नीसवें इंद्र बीसवें कुम्भ इकीसवें

वरदत्तोदत्त इन्द्रभूतिश्च–(१९) ઈંદ્ર (२०) કુંભ, (२१) શુભ, [२२] વરદત્ત, (२३) દત્ત, અને (२४) ઇન્દ્રભૂતિ (उदितोदियकुलवंसा गुणेहिं उववेया तित्थ पवत्तयाणं पढमासिस्सा जिणवराण) उदितोदितकुलवंशाः विशुद्धवंशा गुणैरुपेताः तीर्थप्रवर्तकानां प्रथमाः शिष्या जिनवराणाम्–તે બધા શિષ્યો ઉત્તરોત્તર ઉત્કર્ષ પામતા કુળરૂપ વંશવાળા હતા અને માતૃવંશ અને પિતૃવંશની વિશુદ્ધતાવાળા હતા, તથા તેઓ સમ્યગ્દર્શન આદિ ગુણોથી યુક્ત હતા. તીર્થપ્રવર્તક જિનેન્દ્ર ભગવાનોના એ પ્રથમ શિષ્યો ઉપરોક્ત પ્રકારના હતા ॥સૂ. २०१॥

ટીકાર્થ–"एएसिं चउवीसाए तित्थगराण" इत्यादि–એ ચોવીસ તીર્થંકરોના જે પહેલા ચોવીસ શિષ્યો થયા તેમનાં નામ આ પ્રમાણે છે—(१) ઋષભસેન (२) સિંહસેન, [३] ચારુ, (४) વજ્રનાભ [५] ચમર (६) સુવ્રત, (७) વિદર્ભ, (८) દત્ત, (९) વરાહ [१०] આનંદ (११) ગોસ્તુભ, (१२) સુધર્મા, (१३) મન્દર (१४) યશ (१५) અરિષ્ટ (१६) ચક્રામ, (१७) સ્વયંભૂ (१८) કુંભ (१९) ઈન્દ્ર,

मूलम्--एएसि णं चउवीसाए तित्थगराणं चउवीसं पढमसिस्सिणी होत्था, तं जहा--बंभी य फग्गु सामा अजिया कासवीरई सोमा। सुमणा वारुणि सुलसा धारणि धरणीय धरणिधरा ॥४३॥ पउमा सिवा सुयी तह अंजुया भावियप्पा य रक्खी य। बंधुवती पुप्फवती अज्जा अमिला य अहिया य ॥४४॥ जक्खिणी पुप्फचूला य चंदणज्जा य आहियाउ। उदितोदियकुलवंसा विसुद्धवंसा गुणेहिं उववेया। तित्थप्पवत्तया णं पढमा सिस्सिणी जिणवराणं॥सू.२०२॥

शुभ बाईसवें वरदत्त तेईसवे दत्त और चौवीसवें इन्द्रभूति। ये सब शिष्य उत्तरोत्तर उत्कर्ष को प्राप्त हुए कुलरूपवंश वाले थे मातृपितृ संबंधी वंश की निर्मलता से युक्त थे। तथासम्यग्दर्शन आदि गुणो से विराजित थे। इस प्रकार तीर्थप्रवर्तक जिनेन्द्रदेवों के ये प्रथम शिष्य थे ॥सू० २०१॥

शब्दार्थ--(एएसि ण चउवीसाए तित्थगराण) एतेषां खलु चतुर्विंशतेस्तीर्थकराणां इन चौवीस तीर्थकरों की (चउवीसं पढमसिस्सिणी होत्था) चतुर्विंशतिः प्रथम शिष्या आसन्-चौवीस प्रथम शिष्या थीं (तंजहा) तद्यथा उनके नाम इस प्रकार से है-(बंभी य फग्गु सामा अजिया कासवीरई सोमा, सुमणा वारुणि सुलसा धारणि धरणी य धरणिधरा) ब्राह्मी च फल्गुः श्यामा अजिता काश्यपी रतिः सोमा, सुमना वारुणी सुलसा धारणी धरणी च धरणीधरा-ब्राह्मी १ फल्गु २ श्यामा ३, अजिता ४,

---

(२०) कुंभ, (२१) शुभ, (२२) वरदत्त, (२३) दत्त અને ૨૪) ઇન્દ્રભૂતિ તે સઘળા શિષ્યો ઉત્તરોત્તર ઉત્કર્ષ પામતા કુળરૂપ વંશવાળા હતા તેઓ માતૃ અને પિતૃ વંશની નિર્મળતાથી યુકત હતા, અને સમ્યગ્દર્શન આદિ ગુણોથી શોભતા હતા એ પ્રકારના તીર્થપ્રવર્તક જિનેન્દ્રદેવોના પ્રથમ શિષ્યો હતા ॥સૂ. ૨૦૧॥

શબ્દાર્થ—(एएसिं चउवीसाए तित्थगराणं) एतेषां खलु चतुर्विंशतेस्तीर्थकराणां—તે ચોવીસ તીર્થંકરોની (चउवीसं पढमसिस्सिणी होत्था) चतुर्विंशतिः प्रथमशिष्या आसन्—ચોવીસ પહેલી શિષ્યાઓ હતી (तं जहा) तद्यथा—જેમના નામ આ પ્રમાણે છે-(बंभीय फग्गुसामा अजियाकासवीरई सोमा, सुमणावारुणि सुलसाधारणिधरणी य धरणिधरा) ब्राह्मी च फल्गुः श्यामा अजिता काश्यपी रतिः सोमा सुमनावारुणी सुलसाधारणीधरणी च धरणिधरा-(૧) બ્રાહ્મી, (૨) ફલ્ગુ, (૩) શ્યામા, (૪) અજિતા, (૫) કાશ્યપી,

टीका–'एएसि णं' इत्यादि–एतेषां खलु चतुर्विंशतेस्तीर्थकराणां चतुर्विंशतिः प्रथमशिष्या आसन्, तं जहा–बम्भी य फग्गु' श्यामा अमिता काश्यपीरतिः

काश्यपी ५, रति ६ सोमा ७ सुमना ८ वारुणी ९ सुलसा १० धारणी ११ धरणि १२ धरणिधरा १३ (पउमा सिवा सुयी तह अज्जुया भावियप्पा य रुक्खीय यंधुवती पुप्फवती अज्जा अनिला य अहिया य) पद्मा शिवा श्रुतिस्तथाऽञ्जुका भावितात्मा रक्षी च, बन्धुमती पुष्पवती आर्याऽमिला चाभिहिता–पद्मा १४ शिवा १५ श्रुति १६ अञ्जुका १७ रक्षी १८ बन्धु मती १९ पुष्पवती २० अमिला २१ (जक्खिणी पुप्फचूला य चंदणज्जा य माहियाउ) यक्षिणी पुष्पचूला च चन्दनार्या च आख्याता –यक्षिणी २२ पुष्पचूला २३ और चन्दना २४। ये आर्यायें भावितात्मायीं। "उदितो दितकुलवंसा विसुद्धवंसा गुणेहिं उववेया" इन पदों का अर्थ पहिले स्पष्ट कर दिया गया है। मा उसी के अनुसार जानना चाहिये। (तित्थप्पव त्तगाण पढमा सिस्सिणी जिणवराणं) तीर्थप्रवर्तकानां प्रथमाः शिष्या जिन वराणाम्–ये सब पूर्वोक्त आर्यायें तीर्थप्रवर्तक जिनेन्द्र देवों की प्रथम शिष्याएँ थीं ॥सू० २०२॥

टीकार्थ—'एएसिं णं चउवीसाए' इत्यादि–इन चौबीस तीर्थंकरों की चौबीस प्रथम शिष्या थीं। उनके नाम इस प्रकार से हैं—ब्राह्मी १

(६) રતિ (૭) સો (૮) સુમના, (૯) વારુણી, (૧૦) સુલસા (૧૧) ધારણી, (૧૨) ધરણિ (૧૩) ધરણિધરા, (पउमासिवासुयी तह अज्जुया भावियप्पा य रुक्खी य बंधुवती, पुप्फवती अज्जा अमिला य अहिया य) पद्मा शिवा श्रुतिस्तथाञ्जुका भावितात्मारक्षी च, बन्धुमती पुष्पवती आर्याऽमिला चाभिहिता-(૧૪) પદ્મા, (૧૫) શિવા, [૧૬] શ્રુતિ, (૧૭) અંજુકા, (૧૮) રક્ષી (૧૯) બંધુમતી (૨૦) પુષ્પવતી, (૨૧) અમિલા, (जक्खिणी पुप्फचूला य चंदणज्जा य आहिया उ) यक्षिणी पुष्पचूला च चन्दनार्या च आख्याता -(૨૨) યક્ષિણી (૨૩) પુષ્પચૂલા અને (૨૪) ચન્દના તે આર્યાઓ ભાવિતાત્મા હતી. "उदितोदित कुलवंसा विसुद्धवंसा गुणेहिं उववेया" આ પદોના અર્થની સ્પષ્ટતા આગળનાં સૂત્રમાં કરવામાં આવી છે તો તેમનો અર્થ તે સૂત્રમાં જોઈ લેવા (तित्थप्पवत्तयाणं पढमासिस्सिणी जिणवराणम्) तीर्थप्रवर्तकानां प्रथमा शिष्या जिनवराणाम्–પૂર્વોક્ત તે આર્યાઓ તીર્થપ્રવર્તક જિનેન્દ્રદેવોની પ્રથમ શિષ્યાઓ હતી ॥ સૂ ૨૦૨ ॥

ટીકાર્થ—'एएसिं णं चउवीसाए' इत्यादि–તે ચોવીસ તીર્થકરોની પ્રથમ ચોવીસ શિષ્યાઓના નામ આ પ્રમાણે હતાં-[૧] બ્રાહ્મી (૨) ફલ્ગુ (૩) શ્યામા (૪)

मामा। सुमना वारुणी सुलसा धारणी धरणी च धरणीधरा ॥४३॥ पद्मा शिवा श्रुतिस्तथाऽञ्जुका भावितात्मारक्षी च। बन्धुमती पुष्पवती आर्याऽमिला चाभिहिता। यक्षिणी पुष्पचूला च चन्दनार्या च आख्याताः। उदितोदितकुलवंशा विशुद्धवंशा गुणैरुपपेताः। तीर्थप्रवर्त्तकानां प्रथमाः शिष्या जिनवराणाम्॥४५॥सू.२०२॥

सम्प्रति द्वादशचक्रवर्तिनां पितृनामान्याह---

मूलम्---जंबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए बारसचक्कवट्टिपियरो होत्था, तं जहा---उसभे सुमित्ते विजए समुद्दविजए य आससेणे य। विस्ससेणे य सूरे सुदंसणे कत्तवीरिए चेव॥४६॥ पउमुत्तरे महाहरि विजए राया तहेव य। बंभे बारमे उत्ते पिउनामा चक्कवट्टीणं॥४७॥ सू. २०३॥

फल्गु २ श्यामा ३ अजिता ४ काश्यपी ५ रति ६ सोमा ७ सुमना ८ वारुणी ९ सुलसा १० धारणी ११ धरणि १२ धरणिधरा १३ पद्मा १४ शिवा १५ श्रुति १६ अञ्जुका१७ रक्षी १८ बंधुमती १९ पुष्पवती २० अमिला२१, यक्षिणी२२, पुष्पचूला२३, और चन्दना२४। ये आर्याएँ भावितात्मा थीं। 'उदितोदितकुलवंसा विशुद्धवंसा गुणेहिं उववेया' इन पदों का अर्थ पहिले स्पष्टकर दिया गया है। सो उसी के अनुसार जानना चाहिये। ये सब पूर्वोक्त आर्याये तीर्थप्रवर्तक जिनेन्द्र देवों की प्रथम शिष्याएँ थीं॥सू.२०२॥

शब्दार्थ---(जंबूद्दीवे णं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे-जंबुद्वीप नामके इस द्वीप में(भारहे वासे)भारते वर्षे-भारत वर्ष मे(इमीसे ओसप्पिणीए)अस्यामवसर्पिण्यां इस अवसर्पिणीकाल में(बारस चक्कवट्टिपियरो होत्था)द्वादश-

---

અજિતા, (૫) કાશ્યપી, (૬) રતિ, (૭) સોમા, (૮) સુમના, (૯) વારુણી, [૧૦] સુલસ, (૧૧) ધારણી, (૧૨) ધરણિ, (૧૩) ધરણિધરા. (૧૪) પદ્મા, (૧૫) શિવા, (૧૬) શ્રુતિ, (૧૭) અજ્જુકા, (૧૮) રક્ષી, (૧૯) બંધુમતી, (૨) પુષ્પવતી, (૨૧) અમિલા, (૨૨) યક્ષણી, (૨૩) પુષ્પચૂલા, અને (૨૪) ચન્દના તે આર્યાઓ ભાવિતાત્મા હતી "उदितोदितकुलवंसा विशुद्धवंसा गुणेहिं उववेया" તે પદોનો અર્થ આગળ આપી દીધો છે તો ત્યાં જોઈ લેવો એ સઘળી પૂર્વોક્ત આર્યાઓ તીર્થપ્રવર્તક જિનેન્દ્રદેવોની પહેલી શિષ્યાઓ હતી.॥ સૂ. ૨૦૨॥

શબ્દાર્થ---(जम्बूद्दीवेणं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे-જંબૂદ્વીપ નામના આ દ્વીપમાં (भारहे वासे) भारते वर्षे-ભારતવર્ષમાં (इमीसे ओसप्पिणीए) अस्यामवसर्पिण्याम्-આ અવસર્પિણીકાળમાં (बारसचक्कवट्टिपियरो होत्था)

टीका—'जंबुद्दीवे णं' इत्यादि—जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षेऽस्यामवसर्पिण्यां द्वादश चक्रवर्तिपितर आसन, तद्यथा—ऋषभः सुमित्र विजय समुद्रविजयश्च सनश्च। विश्वसेनश्च सुरः सुदर्शनः कार्तवीर्यश्चैव ॥४६॥ पद्मोत्तरो महाहरि विजया राजा तथैव च। ब्रह्मा द्वादश उक्तानि पितृनामानि चक्रवर्तिनाम् ॥४७॥सू २०३॥

चक्रवर्ति पितर आसन्-या इ चक्रवर्तियों के पितृजन हुए हैं(त जहा)तद्यथा—उनके नाम इस प्रकार से हैं-(उसमे) ऋषभ -ऋषभ (सुमित्ते) सुमित्र-सुमित्र, (विजए) विजयः-विजय (समुद्दविजए य) समुद्रविजयश्च समुद्र विजय, (आससेणे य) अश्वसेनश्च-अश्वसेन (विस्ससेणे य) विश्वसेनश्च-विश्वसेन (सूरे) सूर -शूर (सुदंसणे) सुदर्शन, (कत्तवीरिए चेव) कार्तवीर्यश्चैव-कार्तवीर्य (पउमुत्तरे) पद्मोत्तर -पद्मोत्तर, (महाहरी) महाहरि-महाहरि (राया विजए) राजा विजय —राजा विजय (बारसमे बंभे) द्वादश ब्रह्मा—बारहवें ब्रह्म (चक्कवट्टीण पिउनामा उत्ते) चक्रवर्तिनां पितृनामानि उक्तानि—ये चक्रवर्तियों के पितृजनों के नाम कहे हैं ॥सू० २॥

टीकार्थ—जंबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे' इत्यादि—जबूद्वीप नाम के इस द्वीप में भारतवर्ष में इस अवसर्पिणी काल में बारह चक्रवर्तियों के पिता हुए हैं। उनके नाम इस प्रकार से हैं-ऋषभ, सुमित्र विजय, समुद्रविजय अश्वसेन, विश्वसेन, सूर सुदर्शन, कार्तवीय पद्मोत्तर, महाहरि, राजा विजय और बारहवें ब्रह्मा ये चक्रवर्तियों के पिता के नाम कहे हैं॥सू २०३॥

द्वादशचक्रवर्तिपितर आसन्—બાર ચક્રવર્તિઓના પિતાનાં નામો હતાં (त जहा) तद्यथा —આ પ્રમાણે છે-(उसमे) ऋषभ -ઋષભ, (सुमित्ते) सुमित्र -सुमित्र, (विजए) विजयः-વિજય, (समुद्दविजए य) समुद्रविजयश्च-સમુદ્રવિજય, (आससेणे य) अश्वसेनश्च-અશ્વસેન, (विस्ससेणे य) विश्वसेनश्च-વિશ્વસેન (सूरे) सूरः શૂર (सुदंसणे) सुदर्शन -સુદર્શન, (कत्तवीरिए चेव) कार्तवीर्यश्चैव-કાર્તવીર્ય (पउमुत्तरे) पद्मोत्तरः-પદ્મોત્તર, (महाहरी) महाहरिः-મહાહરિ (रायाविजए)राजाविजय -રાજવિજય, (बारसमे बंभे)द्वादश ब्रह्मा-અને બારમા બ્રહ્મા (चक्कवट्टीण पिउनामा उत्ते) चक्रवर्तिनां पितृनामानि उक्तानि—એ પ્રમાણે ચક્રવર્તિઓના પિતાઓનાં નામ કહેલ છે ॥સૂ. ૨ ૩॥

ટીકાર્થ—'जंबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे'इत्यादि—જંબૂદ્વીપમાંના ભારતવર્ષમાં આ અવસર્પિણીકાળમાં જે બાર ચક્રવર્તિઓ થયા તેમના પિતાનાં નામ અનુક્રમે આ પ્રમાણે છે—ઋષભ સુમિત્ર, વિજય સમુદ્રવિજય અશ્વસેન વિશ્વસેન શૂર સુદર્શન, કાર્તવીર્ય પદ્મોત્તર મહાહરિ રાજવિજય અને બ્રહ્મ ઉપરોક્ત નામો ચક્રવર્તિઓના પિતાનાં છે ॥સૂ ૨ ૩॥

संप्रति चक्रवर्तिना मातृनामान्याह--

मूलम्--जंबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए बारसचक्कवट्टीमायरो होत्था, तं जहा-सुमंगला जसवती भद्दा सहदेवी अइरा सिरिदेवी । तारा जाला मेरा वप्पा चुल्लणि य पच्छिमा ॥ सू० २०४ ॥

टीका-'जंबुद्दीवे' इत्यादि-जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षेऽस्यामवसर्पिण्यां

चक्रवर्तियों की माताओं के नाम अब सूत्रकार कहते हैं-

शब्दार्थ--जंबुद्दीवे णं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे-इस जंबूद्वीप नामके द्वीप में (भारहे वासे) भारते वर्षे-भारतवर्ष में (इमीसे ओसप्पिणीए) अस्यामवसर्पिण्यां-इस अवसर्पिणी काल में (चक्कवट्टिमायरो बारस होत्था) द्वादश चक्रवर्ति मातरोऽभूवन्-चक्रवर्तियों की बारह माताएँ थीं। (तंजहा) तद्यथा-उनके ये नाम हैं (सुमंगला जसवती भद्दा सहदेवी अइरासिरिदेवी, तारा जाला मेरा वप्पा चुल्लणि य पच्छिमा) सुमङ्गला यशस्वती भद्रा सहदेवी अचिरा श्री देवी, तारा ज्वाला मेरा वप्रा चुल्लनी च पश्चिमा सुमंगला १ यशस्वती २, भद्रा ३ सहदेवी ४ अचिरा ५ श्री ६ देवी ७ तारा ८ ज्वाला ९ मेरा १० वप्रा ११ और अन्तिम चुल्लनी १२ ॥सू०१०४॥

टीका--'जंबुद्दीवे ण दीवे' इत्यादि-इस जंबूद्वीप नामके द्वीप में भारत

હવે સૂત્રકાર ચક્રવર્તિઓની માતાના નામ કહે છે -

શબ્દાર્થ-(जंबूदीवे णं दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए चक्कवट्टिमायरो बारस होत्था) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे अस्यामवसर्पिण्यां द्वादश चक्रवर्त्तिमातरोऽभूवन्-જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપમાં આવેલા ભારતવર્ષમાં આ અવસર્પિણીકાળમાં જે ચોવીસ તીર્થંકરો થયા તેમની માતાઓના નામ અનુક્રમે આ પ્રમાણે છે (तं जहा) तद्यथा-આ પ્રમાણે--(सुमंगला, जसवती, भद्दा, सहदेवी, अइरा, सिरिदेवी, तारा, जाला, मेरा, वप्पा, चुल्लणि य पच्छिमा) सुमङ्गला यशस्वती भद्रा सहदेवी अचिरा श्रीदेवी, तारा ज्वाला मेरा वप्रा चुल्लनी च पश्चिमा-(૧) સુમંગલા, (૨) યશસ્વતી, (૩) ભદ્રા, (૪) સહદેવી, (૫) અચિરા, (૬)શ્રી, (૭) દેવી, (૮) તારા, (૯) જવાલા, (૧૦) મેરા, (૧૧) વપ્રા, અને છેલ્લાં (૧૨) ચુલ્લની. ॥સૂ ૨૦૪॥

ટીકાર્થ-'जंबुद्दीवे णं दीवे' इत्यादि-આ જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપમાં

द्वादश चक्रवर्तिमातरोऽभूवन्, तद्यथा–सुमङ्गलायशस्वती भद्रा सहदेवी अचिरा श्रीर्देवी। तारा ज्वाला मेरा वप्रा चुल्लनी च पश्चिमा ॥सू० २०४॥

सम्प्रति चक्रवर्तिनां तत्स्त्रीरत्नानां च नामान्याह—

मूलम्—जम्बुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए बारसचक्कवट्टी होत्था, तं जहा–भरहो सगरो मघव सणकुमारो य रायसद्दूलो। सती कुंथू य अरो हवइ सुभूमो य कोरव्वो॥४८॥ नवमो य महापउमो हरिसेणे चेव रायसद्दूलो। जयनामो य नरवई बारमो बंभदत्तो य ॥४९॥ एएसिं बारसण्हं चक्कवट्टीणं बारस इत्थिरयणा होत्था, तं जहा–पढमा होइ सुभद्दा भद्द सुणंदा जया य विजया य। किण्हसिरी सूरसिरी पउमसिरी वसुंधरादेवी ॥५०॥ लच्छिमई कुरुमई इत्थिरयणाण नामाइं ॥सू० २०५॥

वर्ष में इस अवसर्पिणी काल में चक्रवर्तियों की बारह माताएँ थीं। उनके ये नाम हैं–सुमंगला यशस्वती भद्रा, सहदेवी, अचिरा, श्री, देवी तारा, ज्वाला, मेरा, वप्रा, और अन्तिम चुल्लनी ॥सू० २०४॥

अब सूत्रकार चक्रवर्तियों के तथा उनके स्त्री रत्नों के नाम प्रकट करते हैं—

शब्दार्थ—(जंबुद्दीवे णं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे–जम्बूद्वीप नामके द्वीप में (भारहे-वास) भारते वर्षे–भारत वर्ष में (इमीसे ओसप्पिणीए) अस्या मवसर्पिण्यां–इस अवसर्पिणी काल में (बारस चक्कवट्टि होत्था) द्वादश चक्र

આવેલા ભારતવર્ષમાં આ અવસર્પિણીકાળે ૧૨ ચક્રવર્તિઓની ૧૨ માતાઓનાં નામ અનુક્રમે આ પ્રમાણે હતાં–સુમંગળા, યશસ્વતી ભદ્રા, સહદેવી, અચિરા, શ્રી દેવી તારા, જ્વાલા મેરા વપ્રા અને છેલ્લી ચુલ્લની. ॥સૂ ૨૦૪॥

હવે સૂત્રકાર ચક્રવર્તિઓનાં તથા તેમના પત્નીરત્નોનાં નામ બતાવે છે—

શબ્દાર્થ—(जंबुद्दीवे णं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे–જબુદ્દીપ નામના દ્વીપમાં આવેલા (भारहे वास) भारतेवर्षे–ભારતવર્ષમાં (इमीसे ओसप्पिणीए) अस्यामवसर्पिण्याम्–આ અવસર્પિણીકાળમાં (बारस चक्कवट्टि होत्था) જે બાર

वर्तिनोऽभूवन्-बारह चक्रवर्ती हुए है (तंजहा) तद्यथा-उनके नाम ये है (भरहो सगरोमघव सणकुमारो य रायसद्दूलो संती कुंथु य अरो य हवइ सुभूमो य कोरव्वो) भरतः सगरो मघवा सनत्कुमारश्च राजशार्दूलः शान्तिः कुन्थुश्च अरो भवति सुभूमश्च कौरव्यः-भरत १ सगर २, मघवा ३ सनत्कुमार ४ शांति ५ कुन्थु ६ अर ७ सुभूम. ८ (नवमो य महापउमो हरिसेणे चेव रायसद्दूलो जयनामो य नरवई बारसमो बंभदत्तो य) नवमश्च महापद्मो हरिषेणश्चैव-राजाशार्दूलः जयनामा च नरपति द्वादशो ब्रह्मदत्तश्च-महापद्म ९, हरिषेण १०, जय ११ और ब्रह्मदत्त १२। (एएसिं बारसण्हं चक्कवट्टीणं बारसइत्थिरयणा होत्था) एतेषां द्वादशानां चक्रवर्तिनां द्वादश स्त्रीरत्नान्यासन्-इन बारह चक्रवर्तियों के बारह स्त्री रत्न थे। (तंजहा) तद्यथा-उनके नाम ये है-(पढमो होइ सुभद्दा, भद्द सुणंदा, जया य विजया य किण्हसिरी सूरसिरी पउमसिरी वसुंधरा देवी लच्छी मई कुरुमई) प्रथमा भवति सुभद्रा, भद्रा सुनन्दा जया य च विजया च, कृष्णश्रीः सूर श्रीः पद्मश्री वसुन्धरा देवी लक्ष्मीवती कुरुमती-पहिली सुभद्रा फिर दूसरी भद्रा, तीसरी सुनंदा, चौथी जया. पांचवी विजया छठवीं कृष्णश्री सातवीं सूर श्री आठवी पद्मश्री नववी वसुधरा दसवीं देवी

ચક્રવર્તિયો થયા તેમના નામ આ પ્રમાણે છે-(भरहोसगरो मघवंसणंकुमारो य रायसद्दूलो, संतीकुंथु य अरो य हवइ सुभूमो य कोरव्वो)भरतः सगरोमघवासनत्कुमारश्च राजशार्दूलः, शान्तिः कुन्थुश्च अरो भवति सुभूमश्च कौरव्यः-(१) ભરત, (૨) સગર, (૩) મઘવા, (૪) સનત્કુમાર, (૫) શાન્તિ, [૬] કુન્થુ, (૭) અર, (૮) સુભૂમ (नवमो य महापउमो हरिसेणे चेव रायसद्दूलो, जयनामो य नरवई बारमो बभदत्तो य) नवमश्च महापद्मो हरिषेणश्चैव राजशार्दूलः जयनामा च नरपतिर्द्वादशो ब्रह्मदत्तश्च-(૯) મહાપદ્મ, (૧૦) હરિષેણ, (૧૧) જય અને (૧૨) બ્રહ્મદત્ત (एएसिं बारसण्हं चक्कवट्टीणं बारसइत्थिरयणा होत्था)एतेषां द्वादशानां चक्रवर्तिनाम् द्वादशस्त्रीरत्नान्यासन्-તે બાર ચક્રવર્તિયોનાં બાર સ્ત્રીરત્નો હતા (तं जहा) તેઓના નામ આ પ્રમાણે હતાં-(पढमो होइ सुभद्दा, भद्द सुणदा, जया य विजया य, किण्हसिरी सूरसिरी, पउमसिरी वसुंधरादेवीलच्छीमईकुरुमई) प्रथमा भवति सुभद्रा,भद्रा सुनंदा जया च विजया च, कृष्णश्रीः सूरश्रीः पद्मश्रीः वसुन्धरादेवी, लक्ष्मीवती कुरुमती-(૧) સુભદ્રા, (૨) ભદ્રા, (૩) સુનંદા (૪) જયા, (૫) વિજયા, (૬) કૃષ્ણશ્રી, (૭) સૂરશ્રી, (૮) પદ્મશ્રી, (૯) વસુંધરા, (૧૦) દેવી, (૧૧) લક્ષ્મીવતી,

टीका–'जंबुद्दीवे णं' इत्यादि–जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षेऽस्यामवसर्पिण्यां द्वादश चक्रवर्तिनोऽभूवन् तद्यथा–भरतः सगरो मघवा सनत्कुमारश्च राजशार्दूलः । शान्तिः कुन्थुश्च अरो भवति सुभूमश्च कौरव्यः ।४८।। नवमश्च महापद्मो हरिषेणश्चैव राजशार्दूलः । जयनामा च नरपतिर्द्वादशो ब्रह्मदत्तश्च।।४९।। एतेषां द्वादशानां चक्रवर्तिनां द्वादशस्त्रीरत्नान्यासन्, तद्यथा–प्रथमा भवति सुभद्रा भद्रा सुनन्दा जया च विजया च । कृष्णश्री सुरश्री पद्मश्रीर्वसुन्धरा देवी ।।५०।। लक्ष्मीवती कुरुमती स्त्रीरत्नानां नामानि ।।सू० २०५।।

सम्प्रति बलदेववासुदेवानां मातृपितृनामान्याह–

मूलम्–जंबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए नव बलदेव नव वासुदेवपियरो होत्था, तं जहा–पयावई य बंभे य

ग्यारहवीं लक्ष्मीवती और बारहवीं कुरुमती(इत्थी रयणाण नामाइं)स्त्रीरत्नानां नामानि इस प्रकार उन चक्रवर्तियो के स्त्री रत्नों के ये नाम हैं ।।सू०२०५।।

टीकार्थ– जंबुद्दीवे णं दीवे इत्यादि–जम्बूद्वीप नामके द्वीप में भारतवर्ष में इस अवसर्पिणीकाल में बारह चक्रवर्ती हुए है। उनके नाम ये हैं–भरत सगर, मघवा, सनत्कुमार, शान्ति, कुंथु, अर, सुभूम, महापद्म, हरिषेण जय और ब्रह्मदत्त। ये सब चक्रवर्ती राजाओं में सिंह जैसे विशिष्ट शक्ति शाली होते हैं। ये बारह चक्रवर्तियों के नाम हैं। इन बारह चक्रवर्तियों के बारह स्त्री रत्न थे। उनके नाम ये हैं–पहिली सुभद्रा, फिर दूसरी भद्रा, तीसरी सुनंदा, चौथी जया, पांचवी विजया छठी कृष्णश्री, सातवीं सुरश्री आठवीं पद्मश्री, नवमीं वसुंधरा, दसवीं देवी, ग्यारहवीं लक्ष्मीवती और बारहवीं कुरुमती, इस प्रकार उन चक्रवर्तियों के स्त्री रत्नों के ये नाम हैं ।।सू० २०५।।

અને (૧૨) કુરૂમતી (इत्थीरयणाण नामाइं) स्त्रीरत्नानां नामानि–ઉપરોક્ત પ્રકારના તે ચક્રવર્તિઓની પત્નીના નામ હતા. ।।સૂ. ૨૦૫।।

ટીકાર્થ–'जंबुद्दीवे णं दीवे' इत्यादि–આ અવસર્પિણીકાળમાં જમ્બૂદ્વીપ નામના દ્વીપમાં આવેલા ભારતવર્ષમાં બાર ચક્રવર્તિઓ થયા છે. તેમના નામ આ પ્રમાણે છે–ભરત, સગર, મઘવા, સનત્કુમાર, શાન્તિ, કુંથુ, અર, સુભૂમ, મહાપદ્મ, હરિષેણ, જય અને બ્રહ્મદત્ત. તે બધા ચક્રવર્તિ રાજાઓમાં સિંહ સમાન વિશિષ્ટ શક્તિ ધરાવતા હતા. તે બાર ચક્રવર્તિઓની બાર સ્ત્રીઓનાં નામ અનુક્રમે આ પ્રમાણે હતા–સુભદ્રા, ભદ્રા, સુનંદા, જયા, વિજયા, કૃષ્ણશ્રી, સુરશ્રી, પદ્મશ્રી, વસુંધરા, દેવી, લક્ષ્મીવતી અને કુરૂમતી. ।।સૂ. ૨૦૫।।

द्दो सोमो सिवेइ य ॥ महासीहे अग्गिसीहे दसरह नवमे य वसुदेवे॥५१॥ जंबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए णव वासुदेवमायरो होत्था, तं जहा—मियावई उमा चेव पुढवी सीया य अम्मया। लच्छिमई सेसमई केकेइ देवई तहा॥५२॥ जंबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए णवबलदेवमायरो होत्था, तं जहा—भद्दा तह सुभद्दा य सुप्पभा य सुदंसणा। विजया वेजयंती य जयंती अपराजिया ॥५३॥ णवमीया रोहिणी य बलदेवाण मायरो ॥ सू० २०६ ॥

अब सूत्रकार वलदेव और वासुदेव आदिकों के मातापिताओं के नाम स्पष्ट करते हैं—

शब्दार्थ--(जंबुद्दीवे णं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे—इस जम्बूद्वीप नाम द्वीप में (भारहेवासे) भारतवर्षे—जो भरत नाम का क्षेत्र है उसमें—(इमीसे ओसप्पिणीए)अस्यामवसर्पिण्यां इस अवसर्पिणी काल मे(नव वलदेव नव वासुदेव पियरो होत्था) नवबलदेवनववासुदेवपितरोऽभूवत्—नौवलदेव के और नौ वासुदेव के पिता हुए हैं। (तजहा)तद्यथा उनके नाम इस प्रकार हैं (पयावई य, बंभे य रुद्दो सोमो सिवेइ य, महासीहे अग्गिसीहे दसरह नवमें य वसुदेवे)प्रजापतिश्च ब्रह्मा च रुद्रः सोमः शिव—इति च, महासिंहो ऽग्निशिखो दशरथो नवमश्च वसुदेवः—प्रजापति १, ब्रह्मा २, रुद्र ३, सोम

હવે સૂત્રકાર બલદેવો અને વાસુદેવો આદિના માતાપિતાના નામ કહે છે—

શબ્દાર્થ—(जंबुद्दीवे णं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे—આ જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપમા (भारहे वासे) भारतवर्षे—જે ભરત નામનુ ક્ષેત્ર છે તેમાં (इमीसे ओसप्पिणीए) अस्याम वसर्पिण्याम्—આ અવસર્પિણીકાળમા (नव वलदेव नव वासुदेव पियरो होत्था) नवबलदेव नववासुदेव पितरोऽभूवन्—નવ બળદેવના અને નવ વાસુદેવના પિતા થયા છે, (तं जहा) तद्यथा—તેમનાં નામ આ પ્રમાણે છે-(पयावई य बंभे य रुद्दो सोमो सिवेइय, महासीहे अग्गिसीहे दसरह नवमे य वसुदेवे) प्रजापतिश्च ब्रह्मा च, रुद्रः सोमः शिवइति च, महासिंहोऽग्निशिखो दशरथो नवमश्च वसुदेवः—(૧) પ્રજાપતિ, (૨) બ્રહ્મા

४, शिव ५, महासिंह ६, अग्निशिख ७, दशरथ ८ और नवमां–वसुदेव ९। (जंबुद्दीवे णं दीवे) जम्बूद्वीप खलु द्वीपे–इस जम्बूद्वीप में(भारहे वासे) भारते वर्षे–भारतवर्ष में (इमीसे ओसप्पिणीए)इस अवसर्पिणी काल में (णववासुदेव मायरो होत्था) नव वासुदेवमातरोऽभूवन् नौ वासुदेव की माताएँ हुई हैं (तजहा) तद्यथा–उनके नाम ये हैं–(मियावइ उमाचेव पुहवी सीया य अम्मया,लच्छिमई सेसमइ केकेइ देवई तहा)मृगावती उमा चैव पृथिवी सीता च अम्बिका लक्ष्मीवती शेषमती कैकेयी देवकी तथा मृगावती १ उमा २ पृथिवी ३ सीता ४ अम्बिका ५, लक्ष्मीवती ६ शेषमती७ कैकेयी८ और नवमीं देवकी९। (जंबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए णव बलदेवमायरो होत्था) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षेऽस्यामवसर्पिण्यां नव बलदेव मातरो बभूवुः–इस जम्बूद्वीप नाम क द्वीप में भारत वर्ष में अवसर्पिणीकाल में नौ बलदेव की माताएँ हुई हैं। (तजहा) तद्यथा–उनके नाम इस प्रकार हैं–(भद्दा तह सुभद्दा य सुप्पभा य सुदंसणा विजया वेजयंती य जयंती अपराजिया) भद्रा तथा सुभद्रा च सुप्रभा च सुदर्शना, विजया वैजयन्ती च जयन्ती अपराजिता–भद्रा १ सुभद्रा २, सुप्रभा ३, सुदर्शना ४, विजया ५, वैजयंती ६, जयंती

(४) रुद्र, (४) સોમ (૫) શિવ, (૬) મહાસિંહ, (૭) અગ્નિશિખ, (૮) દશરથ અને (૯) વસુદેવ (जंबुद्दीवेणं दीवे) जम्बूद्वीप खलु द्वीपे–આ જંબૂદ્વીપમાં (भारहे वासे) भारते वर्षे–ભારતવર્ષ નામના ક્ષેત્રમાં (इमीसे ओसप्पिणीए) આ અવસર્પિણી કાળમાં (णव वासुदेवमायरो होत्था)नव वासुदेवमातरोऽभूवन्–નવ વાસુદેવો ની નવ માતાઓ થઈ ગઈ છે (तं जहा) તેમનાં નામ આ પ્રમાણે છે– (मियावई उमाचेव पुहवीसीया य अम्मयालच्छिमईसेसमई केकईदेवई तहा)मृगावती उमाचैव पृथिवी सीता च अम्बिकालक्ष्मीवतीशेपमतीकैकेयी देवकी तथा–(૧) મૃગાવતી, (૨) ઉમા, (૩) પૃથિવી, (૪) સીતા (૫) અમ્બિકા (૬) લક્ષ્મીવતી (૭) શેષમતી, (૮) કૈકેયી અને (૯) દેવકી (जंबुद्दीवे णं दीवे) जम्बूद्वीपेण खलु द्वीपे–જંબૂદ્વીપમાં (भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए बलदेवमायरो होत्था) भारते वर्षेऽस्यामवसर्पिण्यां नवबलदेवमातरो बभूवुः–ભારતવર્ષમાં આ અવસર્પિણીકાળમાં નવ બળદેવોની જે નવ માતાઓ થઈ ગઈ છે (तं जहा) तद्यथा–તેમના નામ આ પ્રમાણે છે–(भद्दा तह सुभद्दा य सुप्पभा य सुदंसणा विजया वेजयंती य जयंती अपराजिया)–भद्रा तथा सुभद्रा च सुप्रभा च सुदर्शना, विजया वैजयन्ती च जयन्ती अपराजिता–(૧) ભદ્રા (૨) સુભદ્રા (૩) સુપ્રભા (૪) સુદર્શના (૫) વિજયા, (૬) વૈજયન્તી (૭) જયંતી

टीका-'जंबुद्दीवेणं' इत्यादि-जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षेऽस्यामवसर्पिण्यां नवबलदेवनववासुदेवपितरोऽभूवन्, तद्यथा-प्रजापतिश्च ब्रह्मा च रुद्रः सोमः शिव इति च। महासिंहोऽग्निशिखो दशरथो नवमश्च-वासुदेवः ॥५१॥ जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारतेवर्षेऽस्यामवसर्पिण्यां नववासुदेवमातरोऽभूवन्, तद्यथा-मृगावती उमा चैव पृथिवी सीता च अम्बिका लक्ष्मीवतीशेषमती कैकेयी देवकीतथा॥५२॥ जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारतेवर्षेऽस्यामवसर्पिण्यां नवबलदेवमातरो बभूवुः, तद्यथा-भद्रा तथा सुभद्रा च सुप्रभा च सुदर्शना। विजयावैजयन्ती च जयन्ती अपराजिता। नवमिका रोहिणी च बलदेवानां मातरः ॥५३॥ सू. २०६॥

७, अपराजिया ८ (णवमीया रोहिणी य) नवमिका-रोहिणी च-नौमी रोहिणी। (बलदेवाण मायरो) बलदेवानां मातरः-इस प्रकार ये नौ बलदेवों की नौ माताएँ हैं ॥सू० २०६॥

टीकार्थ--'जंबुद्दीवेणं दीवे' इत्यादि-इस जंम्बूद्वीप नामके द्वीप में जो भरत नामका क्षेत्र है उसमें इस अवसर्पिणी कालमें नौ बलदेव और नौ वासुदेव के पिता हुए हैं। उनके नाम इस प्रकार से है-प्रजापति, ब्रह्मा, रुद्र, सोम, शिव, महासिंह, अग्निशिख, दशरथ और नवमां वसुदेव। इस जंबूद्वीप में भारतवर्ष में इस अवसर्पिणीकाल में नौ वासुदेव की माताए हुई हैं। उनके नाम ये है मृगावती १, उमा २ पृथिवी ३ सीता ४ अम्बिका ५ लक्ष्मीवती ६ शेषमती७, कैकेयी८ और नववीं देवकी९। इस जंबूद्वीप नाम के द्वीप में भारत वर्ष में इस अवसर्पिणी काल में नौ बलदेव की माताएँ हुई हैं। उनके नाम इस प्रकार से है

---

(८) અપરાજિતા (णवमीया रोहिणी य) नवमिका रोहिणी च--અને (૯) રોહિણી (बलदेवाण मायरो) बलदेवानां मातरः-એ નવ બળદેવોની નવ માતાઓનાં નામ હતાં ॥સૂ ૨૦૬॥

ટીકાર્થ—'जंबुद्दीवे णं दीवे' इत्यादि—આ જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપમા આવેલા ભરત નામના ક્ષેત્રમા આ અવસર્પિણીકાળમાં નવ બળદેવ અને નવ વાસુદેવના પિતા થયા છે, તેમના નામ આ પ્રમાણે છે-પ્રજાપતિ, બ્રહ્મા, રૂદ્ર, સોમ, શિવ, મહાસિંહ, અગ્નિશિખ. દશરથ અને નવમા વસુદેવ. આ જંબૂદ્વીપમા આવેલા ભારતવર્ષમા આ અવસર્પિણીકાળમા નવ વાસુદેવોની જે નવ માતાઓ હતી તેમના નામ આ પ્રમાણે છે-(૧) મૃગાવતી, (૨) ઉમા, (૩) પૃથિવી, (૪) સીતા, (૫) અમ્બિકા, (૬) લક્ષ્મીવતી, (૭) શેષમતી, (૮) કૈકેયી અને (૯) દેવકી આ જંબૂદ્વીપમાં આવેલા ભરતક્ષેત્રમા આ અવસર્પિણીકાળમાં નવ બળદેવની જે નવ

अधुना बलदेववासुदेवानां गुणनिर्देशपूर्वकं नामान्याह–

मूलम्—जंबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए नव दसारमंडला होत्था, तं जहा—उत्तमपुरिसा मज्झिमपुरिसा पहाणपुरिसा ओयंसी तेयंसी वच्चंसी जसंसी छायंसी कंता सोमा सुभगा पियदंसणा सुरूआ सुहसीलसुहाभिगमसव्वजणणयणकंता ओहबला अनिबला महाबला अनिहता अपराइया सत्तुमद्दणा रिपुसहस्समाणमहणा साणुक्कोसा अमच्छरा अचवला अचंडा मियमंजुलपलावहसियगंभीरमधुरपडिपुण्णसच्चवयणा अब्भुवगयवच्छला सरण्णा लक्खणवंजणगुणोववेया माणुम्माणपमाणपडिपुण्णसुजायसव्वंगसुंदरंगा ससिसोमागारकंतपियदंसणा अमरिसणा पयंडदंडप्पयारा गंभीरदरिसणिज्जा तालद्ध आविद्धगरुलकेऊ महाधणुविकड्ढया महासत्तसायरा दुद्धरा धणुद्धरा धीरपुरिसा जुद्धकित्तिपुरिसा विउलकुलसमुब्भवा महारयणविहाडगा अद्धभरहसामी सोमा रायकुलवंसतिलया अजिया अजियरहा हलमुसलकणकपाणी संखचक्कगयसत्तिनंदगधरा पवरुज्जलसुक्कंतविमलगोत्थुभतिरीडधारी कुंडलउज्जोइयाणणा पुंडरीयणयणा एकावलिकंठलइयवच्छा सिरिवच्छसुलंछणा वरजसासव्वोउय सुरभिकुसुमरचितपलंबसोभंतकंतविकसंतविचित्तवरमालरइयवच्छा अट्ठसयविभत्तलक्खणपसत्थसुंदरविरइयमंगा मत्तगयवरिंदललियविक्कमविलसियगई सारयनवथणियमहुरगंभीर

भद्रा, सुभद्रा, सुप्रभा, सुदर्शना, विजया, वैजयन्ती, जयन्ती, अपराजिता और नौवी रोहिणी। इस प्रकार ये नौ बलदेवों की नौ माताएं हैं ॥ सू०२०६॥

માતાઓ થઈ ગઈ તેમના નામ આ પ્રમાણે છે-ભદ્રા સુભદ્રા સુપ્રભા સુદર્શના, વિજયા વૈજયન્તી જયન્તી અપરાજિતા અને રોહિણી ॥સૂ. ૬ ॥

कुचनिग्घोसदुंदुभिसरा कडिसुत्तगनीलपीयकोसेज्जवाससा पवरदित्त-तेया नरसीहा नरवई नरिंदा नरवसहा मरुयवसभकप्पा अब्भहिय-रायतेयलच्छीए दिप्पमाणा नीलगपीयगवसणा दुवे दुवे रामकेसवा भायरो होत्था, तं जहा-तिविट्ठू जाव कण्हे अयले जाव रामे यावि अपच्छिमे ॥५४॥ सू० २०७॥

अब सूत्रकार बलदेव और वासुदेवों के गुण निर्देशपूर्वक नामो का कथन करते हैं--

शब्दार्थ--(जंबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षेऽस्यामवसर्पिण्यां-इस जंबूद्वीप के वर्तमान भरतक्षेत्र के अन्दर इस अवसर्पिणीकाल में (नव दसारमंडला होत्था) नव दशारमण्डलानि आसन्-नौ वासुदेव और बलदेव हुए है (तंजहा) तद्यथा-(उत्तम-पुरिसा) उत्तमपुरुषाः-तीर्थंकरादिक ५४ उत्तमपुरुषों के मध्यवर्ती होने के कारण उत्तमपुरुष, (मज्झिम पुरिसा) मध्यमपुरुषाः-तीर्थंकर चक्रवर्ती और वासुदेव आदिकों के बल आदि की अपेक्षा मध्यवर्ती होने के कारण मध्यमपुरुष,(पहाणपुरिसाः) प्रधानपुरुषाः-उनके समय में उत्पन्न हुए पुरुषों में शौर्य आदि की अपेक्षा प्रधान होने के कारण प्रधानपुरुष माने जाते हैं (ओजंसी)ओजस्विनः-ओजस्वी प्रतापशाली थे,(तेयसी)तेजस्विनः-तेजस्वी थे,

---

હવે સૂત્રકાર બળદેવો અને વાસુદેવોના ગુણોના નિર્દેશ સહિત તેમના નામો કહે છે—

શબ્દાર્થ—(जंबूद्दीवे णं दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारतेवर्षेऽस्यामवसर्पिण्यां—આ જંબૂદ્વીપના ભરતક્ષેત્રમા આ અવસર્પિણી કાળમા (नवदसारमंडला होत्था) नव दशारमण्डलानि आसन्—નવ વાસુદેવ અને બળદેવ થયા છે (तं जहा) तद्यथा-(उत्तमपुरिसा) उत्तम-पुरुषाः—તીર્થંકરાદિ ૫૪ ઉત્તમ પુરુષોમાં મધ્યવર્તી હોવાને કારણે ઉત્તમપુરુષ, (मज्झिमपुरिसा) मध्यमपुरुषाः-તીર્થંકર, ચક્રવતી અને વાસુદેવ આદિના બળની અપેક્ષાએ મધ્યવર્તી હોવાને કારણે મધ્યમપુરુષ અને (पहाणपुरिसा)प्रधानपुरुषाः—તેમના સમકાલીન પુરુષોની અપેક્ષાએ શૌર્ય આદિ બાબતમા પ્રધાન હોવાને કારણે તેમને પ્રધાન પુરુષો ગણવામા આવે છે (ओजंसी) ओजस्विनः-તેઓ ઓજસ્વી, (तेयंसी) तेजस्विनः--તેજસ્વી, (वचंसी) वर्चस्विनः-વર્ચસ્વી,

(वचंसी) वर्चस्विनः वर्चस्वी थे। (जसंसी) यशस्विनः -यशस्वी थे। (छायंसी) छायावन्तः छायावन्त-चमकीले शरीरवाले थे (कंता) कान्ताः कान्त थे (सोमा) सौम्याः सौम्य थे (सुभगा) सुभगाः -सुभग थे। (पियदंसणा) प्रियदर्शनाः -प्रियदर्शन थे (सुरूवा) सुरूपाः -सुरूपवाले थे, (सुहसील सुहाभिगमसव्वजणनयणकंता) शुभशील सुखाभिगम्य सर्वजननयनकान्ताः -इनका स्वभाव बड़ा अच्छा था, हरएक प्राणी इनसे बिना किसी हिचक के मिल सकता था। समस्तजन उन्हें देखकर बहुत खुश होते थे। (ओहबला) ओघबलाः -ओघबलवाले (स्वाभाविक) थे (अइबला) अतिबलाः -अधिक बलिष्ठ थे (महाबला) महाबलाः -इनका पराक्रम प्रशस्त था (अनिहता) अनिहताः -निरुपक्रम आयुवाले होने के कारण ये घातवर्जित थे (अपराइया) अपराजिताः -अपराजित थे (सत्तुमद्दणा) शत्रुमर्दनाः -शत्रुओं के ये मर्दक थे (रिपुसहस्समाणमहणा) रिपुसहस्रमानमथनाः -हजारों शत्रुओं का इनके समक्ष मान मथित हो जाता था (साणुक्कोसा) सानुक्रोशाः -जो इनके समक्ष झुक जाता था उनके ऊपर ये सदा दयालु रहते थे। (अमच्छरा) अमत्सराः -मत्सरभाव से ये रहित थे। (अचवला) अचपलाः -मन, वचन और काय की चपलता इनमें नहीं थी। (अचंडा) अचण्डाः -ये बिना कारण किसी के ऊपर कभी भी क्रोध

(जसंसी) यशस्विनः -यशस्वी (छायंसी) छायावन्तः -છાયાવન્ત-દેદીપ્યમાન શરીરવાળા (कंता) कान्ताः -કાન્ત, (सोमा) सौम्याः -સૌમ્ય, (सुभगा) सुभगाः -સુભગ (पियदंसणा) प्रियदर्शनाः -પ્રિયદર્શન-જેમનું દર્શન પ્રિય લાગે તેવા અને (सुरूवा) सुरूपाः -સુરૂપવાળા હતા (सुहसील सुहाभिगमसव्वजणनयणकंता) शुभशीलसुखाभिगम्यसर्वजननयनकान्ताः -તેમનો સ્વભાવ ઘણો સારો હતો, દરેક મનુષ્ય તેમને કોઈપણ જાતના સંકોચ વિના મળી શકતા હતા અને તેમને જોઈને સઘળાં લોકો ઘણા ખુશ થતા હતા (ओहबला) ओघबला- તેમનામાં બળનો તો ઓઘ હતો (अइबला) अतिबला -તેઓ ઘણા બળવાન હતા (महाबला) महाबलाः -તેઓ પ્રશસ્ત પરાક્રમવાળા હતા, (अनिहया) अनिहता -નિરુપદ્રવ આયુવાળા હોવાથી કોઈથી પણ તેમની હત્યા થઈ શકતી નહીં (अपराइया) अपराजिता -તેમને કોઈ હરાવી શકતું નહીં, (सत्तुमद्दणा) शत्रुमर्दना -તેઓ શત્રુઓનું મર્દન કરનાર હતા (रिपुसहस्समाणमहणा) रिपुसहस्रमानमथनाः -હજારો શત્રુઓના દર્પ-માન-નું મર્દન કરનારા હતા (साणुक्कोसा) सानुक्रोशा -તેમને નમનારા તરફ તેઓ સદા દયાળુ રહેતા હતા (अमच्छरा) अमत्सरा -અભિમાનથી રહિત હતા (अचवला) अचपलाः - મન વચન અને કાયાની ચંચળતાથી રહિત હતા (अचंडा) अचण्डाः -કોઈપણ

नहीं करते थे (मियमंजुलपलावहसिया) मितमञ्जुलप्रलापहसिताः- ये परिमित बातचीत करते थे तथा जो भी कुछ कहते वह बहुत आनंददायक होता था इनका जो हास्य होता था वह भी परिमित एवं बडा मनोमुग्धकारी होता था। (गभीरमधुरपडिपुण्णसच्चवयणा) गम्भीर मधुरप्रतिपूर्णसत्यवचनाः-रोषतोष और शोक आदि विकार से वर्जित होने के कारण गभीर श्रवण-सुखकारी होने के कारण मधुर और अर्थ बोधजनक होने के कारण प्रतिपूर्ण ऐसे इनके सत्यवचन होते हैं। (अब्भुगयवच्छला) अभ्युपगतवत्सला ये शरणागतवत्सल होते हैं। (सरण्णा) शरण्याः-दीन हीनजनों की रक्षा करने में ये कटिबद्ध रहते हैं (लक्खण-वंजणगुणोववेया) लक्षणव्यञ्जनगुणोपपेताः-वज्र स्वस्तिक और चक्र आदि चिह्नरूप लक्षणों तथा तिल, मसा आदिरूप व्यंजनों के महर्द्धिलाभादि रूप गुणों से ये युक्त होते है। (माणुम्माणपमाणपडिपुण्णसुजायसव्वंग सुंदरंगा) मानोन्मानप्रमाणप्रतिपूर्णसुजातसर्वाङ्गसुन्दराङ्गाः-मान, उन्मान और प्रमाण से परिपूर्ण होने के कारण यथोचित सन्निवेशवाले हैं अंग जिसमें ऐसे सुन्दर शरीरवाले ये होते है। (ससि सोमागारकंतपियदंसणा) शशिसौम्याकारकान्तप्रियदर्शनाः-जिनका अवलोकन चन्द्रमा के समान

વ્યકિત પર તેઓ વિના કારણુ ક્રોધ કરતા નહતા, (मियमजुलपलावहसिया) मितमञ्जुलप्रलापहसिताः--તેઓ પરિમિત વાતચીત કરનારા, આનંદદાયક વચનવાળા અને પરિમિત તથા મનેહર હાસ્યવાળા હતા (गंभीरमधुरपडिपुण्ण-सच्चवयणा) गम्भीर मधुर प्रतिपूर्ण सत्यवचनाः-રોષ, શોક આદિ વિકારથી રહિત હોવાને કારણે ગભીર, સાંભળનારને સુખદાયી હોવાથી મધુર, અને અર્થ-બોધક હોવાને કારણે પ્રતિપૂર્ણ એવા સત્યવચન બોલનારા હતા (अब्भुगयवच्छला) अभ्युपगतवत्सला-તેઓ શરણાગતવત્સલ હતા, (सरण्णा) शरण्याः-દીન, અને નિરાધારનું રક્ષણ કરવાને માટે સદા તત્પર રહેતા હતા, (लक्खणवंजण गुणोववेया) लक्षण व्यञ्जनगुणोपपेता-વજ્ર, સ્વસ્તિક, ચક્ર આદિ શુભ લક્ષણો તથા તલ, મસા આદિરૂપ વ્યંજનોના મહર્દ્ધિલાભાદિરૂપ ગુણોથી તેઓ યુક્ત હોય છે, (माणुम्माणपमाणपडिपुण्णसुजायसव्वंगसुंदरंगा) मानोन्मानप्रमाण प्रतिपूर्णसुजातसर्वाङ्गसुन्दराङ्गाः--માન, ઉન્માન અને પ્રમાણની પરિપૂર્ણતાને લીધે તેમના અવયવો સપ્રમાણ અને સુડોળ લાગે છે. અને સપ્રમાણ અંગોને લીધે તેમના શરીર અતિશય સુંદર લાગે છે (ससिसोमागारकंतपियंदसणा) शशिसौम्याकारकान्तप्रियदर्शनाः--જેમનું દર્શન ચન્દ્રમાની જેમ આનંદજનક

आह्लादजनक और विष को हरण करनेवाला होता है। तथा दर्शकजन के मन में अपूर्व आह्लाद का कारण होता है। (अमरिसणा) अमर्षणाः- अपकारी जनों पर भी इन्हें रोष नहीं आता है। (पयंडदंडप्पगारा) प्रकाण्डदण्डप्रकारा -इनका नीतिका भेदरूप दण्ड प्रकार उत्कृष्ट होता है। (गमीर दरिसणिज्जा) गम्भीर दर्शनीया -इनकी अन्तःवृत्ति अलक्ष्यमाण होने से ये बहुत ही गंभीर दिखलाई देते हैं। (तालज्झ ओविद्ध गरुलकेऊ) तालध्वजोविद्धगरुडकेतव -बलदेवों की पताकाएँ-ध्वजाएँ-तालवृक्ष के चिह्नों से अंकित होती हैं और वासुदेवों की ध्वजाएँ गरुड के चिह्न से युक्त होती हैं। (महाधिकड्ढगा) महा विकृष्टकाः-बड़े से बड़े वीर भी जिस धनुष को नहीं चढा सकते हैं उस धनुष को ये चढाते हैं। (महासत्तसागरा महासत्त्वसागरा -विशिष्टबल के ये धारी होते हैं (दुद्धरा) 'दुर्धरा'-रणाङ्गण में प्रहार के समय कोई भी धनुर्धारी इन्हें धारण नहीं कर सकता है अर्थात् इन पर उसके धनुष का वार नहीं होता है। (धनुद्धरा) धनुर्धराः-ये बड़े भारी धनुर्धारी होते हैं (धीरपुरिसा) धीरपुरुषा -धीर पुरुषों में ही इनका पुरुषकार विशिष्ट होता है। कातरों में नहीं। (जुद्ध कित्तिपुरिसा) युद्ध कीर्तिपुरुषाः-ये युद्ध जनितकीर्ति प्रधान पुरुष होते हैं। (विउलकुलसमुब्भवा) विपुलकुलसमुद्भवा -ये बड़े ऊँचे खानदान के

અને ચિત્તાકર્ષક હોય છે અને વશકને (વિનાશને) મનમાં અપૂર્વ આહ્‌લાદકારક હોય છે (अमरिसणा) अमर्पणा-અપકારી લોકો પર પણ તેમને ક્રોધ થતો નથી (पयंडदंडप्पगारा) प्रकाण्डदण्डप्रकाराः-તેમનો નીતિના ભેદરૂપ દંડપ્રકાર ઉત્કટ હોય છે (गमीरदरिसणिज्जा) गम्भीरदर्शनीयाः- તેમની અન્તર્વૃત્તિ સમજી શકાય તેવી હોતી નથી, તેથી તેઓ ખહુ ગંભીર દેખાય છે (तालज्झ ओविद्ध गरुलकेऊ) तालध्वजोविद्धगरुडकेतवः—બળદેવની પતાકાઓ તાલવૃક્ષનાં નિશાનવાળી હોય છે અને વાસુદેવની પતાકાઓ ગરુડના નિશાનવાળી હોય છે (महाविकड्ढगा) महाविकृष्टकाः—જે ધનુષ્યને વીરમાં વીર પુરુષ પણ ચડાવી શકતો નથી તે ધનુષ્યને તેઓ ચડાવી શકે છે (महासत्तसागरा) महासत्त्वसागरा—તેઓ વિશિષ્ટ બળથી યુક્ત હોય છે (दुद्धरा) दुर्धरा —સમરાંગણમાં કોઇપણ ધનુર્ધારી પોતાના ધનુષ્યમાંથી તેમના પર પ્રહાર કરી શકતો નથી. અથવા બીજા કોઇપણ ધનુર્ધારી ધારણ ન કરી શકે તેવા ધનુષ્યને ધારણ કરનારા હોય છે (धणुद्धरा) धनुर्धराः—તેઓ મહા ભારે ધનુર્ધારી હોય છે (धीरपुरिसा) धीरपुरुषा—ધીરપુરુષોમાં જે તેમનો પુરુષાકાર વિશિષ્ટ થાય છે, કાયરોમાં નહીં (जुद्धकित्तिपुरिसा) युद्धकीर्तिपुरुषा — તેઓ યુદ્ધજનિત કીર્તિવાળા પુરુષો હોય છે (विउलकुलसमुब्भवा) विपुलकुल

होते हैं (महारणविहाडगा) महारणविघाटकाः–अपने पराक्रम से ये भयंकर से भी भयंकर रण को छिन्न भिन्न कर डालते हैं। (अद्धभरहसामी) अर्द्धभारतस्वामिनः–आधे भरतक्षेत्र के ये स्वामी होते हैं। (सोमा) सौम्याः–समस्त मनुष्यों को इनसे बडा सुख–आनंद मिलता है। (रायकुलवंसतिलया) राजकुलवंशतिलकाः–राजवंश के तिलक समान थे। (अजिया) अजिताः–इन्हें कोई भी नहीं जीत सकता था। (अजियरहा) इनके रथ पर कोई शत्रु कब्जा नहीं कर सकता था। (हलमुसलकणकपाणी) हलमुसलकणकपाणयः––हल, मुसल और बाण इनके हाथों में रहा करते हैं। (संखचक्कगयनंदणधरा) शङ्खचक्रगदानन्दकधराः–शंख, चक्र, गदा और नन्दक–तलवार को ये धारण किये रहते थे (पवरुज्जलसुक्कंतविमलगोत्थुभतिरीडधारी) प्रवरोज्ज्वलशुक्लान्तविमलकौस्तूभतिरीटधारिणः–इनका स्वभाव श्रेष्ठ, देदीप्यमान, और शुभ्र अवयवों से युक्त कौस्तुभमणि को और मुकुट को धारण करने का होता है। (कुंडलउज्जोइयाणणा) कुण्डलोद्योतिताननाः–कुंडलों की चमक से इनका मुख सदा प्रकाशित रहता है। (पुंडरीयणयणा) पुण्डरीकनयनाः–इनके नेत्रकमल जैसे होते हैं। (एकावलिकण्ठलइयवच्छा) एकावलिकण्ठ-

---

समुद्भवाः–તે ઘણા ખાનદાન કુટુંબના હોય છે (महारणविहाडगा) महारणविघाटकाः–તેઓ પોતાના પરાક્રમથી ભયંકરમા ભયંકર સંગ્રામને પણ છિન્નભિન્ન કરી શકે છે (अद्धभरहसामी) अर्द्धभारतस्वामिनः–તેઓ અર્ધા ભરતક્ષેત્રના શાસક હોય છે (सोमा) सौम्या–સૌમ્ય હોય છે સઘળા લોકોને સુખદાયી હોય છે (रायकुलवंसतिलया) राजकुलवंशतिलकाः–રાજવંશમા તિલક સમાન હતા (अजिया) अजिताः–તેઓ અજેય હતા. (अजियरहा) કોઈપણ શત્રુ તેમનો રથ કબજે કરી શકતો નહી. (हलमुसलकणकपाणी) हलमुसलकणकपाणयः–તેઓ હલ, મુસળ અને બાણને પોતાના હાથમા ધારણ કરતા હતા, (संखचक्कगयनंदणधरा] शङ्खचक्रगदानन्दकधराः–તેઓ શંખ, ચક્ર, ગદા અને તલવારને ધારણ કરતા હતા (पवरुज्जलसुक्कंत विमलगोत्थुभतिरीडधारी) प्रवरोज्ज्वलशुक्लान्तविमलकौस्तूभतिरीटधारिणः– તેઓ શ્રેષ્ઠ, દેદીપ્યમાન અને શુભ્ર કૌસ્તુભમણિને તથા મુગટને ધારણ કરતા હતા (कुंडलउज्जोइयाणणा) कुण्डलोद्योतिताननाः–કુંડળોની દ્યુતિ (તેજ) થી તેમના વદન સદા પ્રકાશિત રહેતા હતા (पुंडरीयणयणा) पुण्डरीकनयनाः–તેમના નયન કમળ જેવા સુંદર હતા. (एकावलिकण्ठलइयवच्छा) एकावलिकण्ठलग्नवक्षसः–તેમનો એક સેરનો

लम्बवक्षस -ये जिस एकावली हार को अपने कण्ठ में धारण किये रहते हैं वह इनकी छातीतक लटकता रहता है (सिरीवच्छसुलच्छणा) श्रीवत्ससुलाञ्छना-श्रीवत्सस्वस्तिक का इनके चिह्न होता है (वरजसा) वरयशस -ये बड़े यशस्वी होते हैं। (सव्वउयसुरभिकुसुमरइयपलंबसोभंतकंतविकसंतविचित्तवरमालरइयवच्छा) सर्वर्तुकसुरभिकुसुमरचितप्रलम्बशोभमानकान्तविकसद्विचित्रवरमालारचितवक्षस्का -इनका वक्षः स्थल सर्वऋतुसंबधीसुरभित कुसुमों से रचितलम्बीर मालाओं से कि जिनकी रचना विचित्रप्रकार की होती है और जो बड़ी सुहावनी लगती हैं उनसे युक्त रहा करता है। (अट्ठसयविभत्तलक्खणपसत्थसुंदरविरइयंगमगा) अष्टोत्तरशतविभक्तलक्षणप्रशस्तसुन्दरविरचिताङ्गाङ्गा —इनके प्रत्येक अंग पृथक् २ अवस्थित एकसौ आठ १०८ शंख, चक्र आदि चिह्नों से युक्त रहा करते थे अत वे बड़े प्रशस्त और सुन्दर होते हैं। (मत्तगयवरिंदललियविक्कमविलसियगई) मत्तगजवरेन्द्रललितविक्रमगतय -मदोन्मत्त श्रेष्ठ गजराजों की मनोहर गति जैसी इनकी गति-चाल विलास युक्त होती है। (सारयनवथणियमहुरगंभीरकुंचनिग्घोसदुंदुभिसरा) शारदनवस्तनितमधुरगंभीरक्रौञ्चनिर्घोषदुन्दुभिस्वरा —इनकी दुंदुभियों का निर्घोष शारदऋतुसबधी मेघ के समान तथा क्रौंच पक्षी के शब्द जैसा होता

હાર તેમની છાતી સુધી લટકતે રહેતો (सिरीवच्छसुलच्छणा) श्रीवत्स सुलाञ्छना-તેમને શ્રીવત્સ સ્વસ્તિકનુ ચિહ્ન હોય છે (वरजसा) वरयशसः-તેઓ બહુ યશસ્વી હતા (सव्वउयसुरभिकुसुमरइयपलंबसोभंतकंतविकसंतविचित्तवरमालरइयवच्छा) सर्वर्तुसुरभिकुसुमरचितप्रलम्बशोभमानकान्तविकसद् विचित्रवरमालारचितवक्षस्का'-સર્વ ઋતુનાં સુગંધિદાર પુષ્પોમાંથી બનાવેલી, અદ્ભુત પ્રકારની રચનાવાળી અને અતિશય સુંદર, અને લાંબી લાંબી માળાઓથી તેમના વક્ષઃસ્થળ શોભતાં રહેતાં હતાં (अट्ठसयविभत्तलक्खणपसत्थसुंदरविरइयंगमगा) अष्टोत्तरशतविभक्तलक्षणप्रशस्त सुन्दरविरचिताङ्गाङ्गा- છૂટા છવાયા આવેલા શંખ ચક્ર આદિ १०८ એકસો આઠ ચિહ્નોથી તેમના પ્રત્યેક અંગ સુશોભિત હોય છે તેથી તે અંગો ઘણાં સુંદર લાગે છે (मत्तगयवरिंदललिय विक्कमविलसियगई) मत्तगजवरेन्द्रललितविक्रमगतयः-મદોન્મત્ત શ્રેષ્ઠ ગજરાજોની મનોહર ગતિ જેવી તેમની ગતિ-ચાલ વિલાસયુક્ત હોય છે (सारयनवथणियमहुरगंभीरकुंचनिग्घोसदुंदुभिसरा) शारदनवस्तनितमधुरगंभीरक्रौञ्चनिर्घोषदुन्दुभिस्वराः—તેમના દુંદુભીઓનો નાદ શરદ ઋતુના મેઘનાદ જેવો તથા ક્રૌંચ પક્ષીના અવાજ જેવો હોય છે (कडिसुत्तग

है। (कडिसुत्तगनीलपीयकोसेज्जवाससा) कटिसूत्रकनीलपीतकौशेयवाससः–इनके नील पीत रेशमीवस्त्र कणदोरे–करधनी से युक्त होते हैं। (पवरदित्ततेया) प्रवरदीप्ततेजसः––इनका प्रवरतेज सदा दीप्त रहता है। (नरसीहा) नरसिंहा–ये मनुष्यों में सिंह जैसे रहा करते हैं (नरवई) नरपतयः–ये नरपति (नरिंदा) नरेन्द्रा.–नरेन्द्र (नरवसहा) नरवृषभाः–और नरवृषभ कहलाते हैं। (मरुयवसभकप्पा) मरुद्वृषभकल्पाः–देवराज इन्द्र जैसे होते हैं। (अब्भहियरायतेयलच्छीए दिप्पमाणा) अभ्यधिक राजतेजोलक्ष्म्या दीप्यमानाः–ये राजलक्ष्मी के तेजसे बहुत अधिक दीपते रहते हैं। (नीलगपीयगवसणा) नीलकपीतकवसनाः–ये जिनवस्त्रों को पहिरते हैं वे नीले और पीले होते हैं। [दुवे दुवे रामकेसवा भायरो] द्वौ द्वौ रामकेशवौ भ्रातरौ–"ऐसे ये दो दो राम और केशव आपस में भाई२ होते है" इस क्रम से नव वासुदेव और नव बलदेव होते हैं। [तिविट्ठ जाव कण्हे) त्रिपिष्ठो यावत् कृष्णः–त्रिपृष्ठ से लेकर कृष्णतक तो नौ वासुदेव हुए हैं [अयले जाव रामे यावि अपच्छिमे] अचलो यावद्रामश्चापि अपश्चिमः–अचलसे लेकर रामतक नौ बलदेव हुए हैं॥सू.२०७॥

नीलपीयकोसेज्जवाससा) कटिसूत्रक नील पीतकौशेयवाससः–તેમના નીલ, પીળા, રેશમી વસ્ત્રો કદોરાથી યુક્ત હોય છે. (पवरदित्ततेया) प्रवरदीप्ततेजसः–તેઓ શ્રેષ્ઠ પ્રકારના સદા દેદીપ્યમાન તેજવાળા હોય છે. (नरसीहा) नरसिंहाः–તેઓ માણુસોમા સિંહ જેવા બળવાન હોય છે (नरवई) नरपतयः–તેમને નરપતિ, (नरिंदा) नरेन्द्राः–નરેન્દ્ર, (नरवसहा) नरवृषभाः–અને નરવૃષભ કહેવામા આવે છે (मरुयवसभकप्पा) मरुद् वृषभकल्पाः–તેઓ દેવરાજ ઇન્દ્રના જેવા હોય છે. (अब्भहियरायतेयलच्छीए दिप्पमाणा) अभ्यधिकराजतेजोलक्ष्म्या दीप्यमानाः–રાજ્યલક્ષ્મીના તેજથી તેઓ અધિક દેદીપ્યમાન લાગે છે (नीलगपीयगवसणा) नीलकपीतकवसनाः–તેઓ નીલ અને પીળાં વસ્ત્રો ધારણ કરે છે (दुवेदुवे रामकेसवा भायरो) द्वौ द्वौ रामकेशवौ भ्रातरौ–"ઉપરોક્ત પ્રકારના રામ અને કેશવ એ બન્ને ભાઈઓ હોય છે આ ક્રમ પ્રમાણે નવ વાસુદેવ અને નવ બળદેવ થયા છે. (तिविट्ठ जाव कण्हे) त्रिपृष्ठो यावत् कृष्णः–ત્રિપૃષ્ઠથી લઇને કૃષ્ણ સુધીના નવ વાસુદેવો થયાં છે (अयले जाव रामे यावि अपच्छिमे) अचलो यावद्रामश्चापि अपश्चिमः–અને અચળથી લઇને રામ સુધીના નવ બળદેવ થયા છે ॥સૂ. ૨૦૭॥

टीका-'जंबुद्दीवे णं' इत्यादि-जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षेऽस्यामवसर्पिण्यां नव 'दसारमंडला' दशाराव्यतिरिक्तत्वाद् दशारा वासुदेवबलदेवास्तेषां मण्डलानि=समुदायाः=वासुदेवबलदेवद्वयसमुदाया इत्यर्थ, 'होत्था' आसन् 'तं जहा' तद्यथा-'उत्तमपुरिसा' उत्तमपुरुषाः, तीर्थंकरादीनां चतुष्पञ्चाशद् उत्तमपुरुषाणां मध्यवर्तित्वात्, 'मज्झिमपुरिसा' मध्यमपुरुषाः—तीर्थंकराणां चक्रवर्तिनां वासुदेवादीनां च बलाद्यपेक्षया मध्यवर्तित्वात्, 'पहाणपुरिसा' प्रधानपुरुषाः-तत्कालोत्पन्नपुरुषेषु शौर्यादिभिः प्रधानत्वात्, 'ओजसी' ओजस्विनः=मनोबलयुक्ता, 'तेयसी' तेजस्विनः-देदीप्यमानशरीरा 'वच्चंसी' वर्चस्विनः-शारीरबलयुक्ताः 'जसंसी' यशस्विनः-पराक्रमित्वात्प्रसिद्धिं प्राप्ताः, 'छायंसी'

टीका—'जंबुद्दीवे णं दीवे' इत्यादि-इस जंबूद्वीप के वर्तमान भरत क्षेत्र के अन्दर इस अवसर्पिणीकाल में नौ वासुदेव और बलदेव हुए हैं। यहां दशारशब्द अपने से अव्यतिरिक्त-अभिन्न होने के कारण वासुदेव और बलदेव का वाचक है। मंडल शब्द समुदाय का वाचक है। अर्थात् एक बलदेव और एक वासुदेव इस तरह से इनके दो दो के नौ युगल हुए हैं। ये तीर्थंकरादिक ५४ चोपन उत्तमपुरुषों के मध्यवर्ती होने के कारण उत्तमपुरुष, तीर्थंकरचक्रवर्ती और वासुदेव आदिकों के बल आदि की अपेक्षा मध्यवर्ती होने के कारण मध्यपुरुष तथा उनके समय में उत्पन्न हुए पुरुषों में शौर्य आदि की अपेक्षा प्रधान होने के कारण प्रधानपुरुष माने जाते हैं। ये मनोबल से युक्त थे-अत ओजस्वी थे, इनका शरीर देदीप्यमान था इसलिये तेजस्वी थे। शारीरिक बल से ये संपन्न थे इसलिये वर्चस्वी थे। पराक्रमी होने के

टीकार्थ-'जंबुद्दीवे णं दीवे' इत्यादि-आ जंबूद्वीपमां आवेला भरतक्षेत्रमां आ अवसर्पिणी कालमां नव वासुदेव अने नव बलदेव थई गया छे अहीं 'दशार' शब्द अभिन्न होवाने कारणे वासुदेव अने बलदेवनो वाचक छे एटले के एक बलदेव अने एक वासुदेव ए प्रमाणे तेमना बन्नेनां नव युगल थया छे तीर्थंकरादि ५४ चोपन पुरुषोमां तेमनी गणना थती होवाथी तेमने उत्तम पुरुषो कह्या छे तीर्थंकर चक्रवर्ती वगेरेनी अपेक्षाए बळ आदिनी अपेक्षाए तेओ मध्यवर्ती होय छे तेथी तेमने मध्यमपुरुष कह्या छे तथा तेमना समकालीन पुरुषोमां शौर्य आदिनी अपेक्षाए तेओ श्रेष्ठ हता तेथी तेमने प्रधानपुरुषो कह्या छे तेओ मनोबळवाळा होवाने कारणे ओजस्वी हता तेमनुं शरीर देदीप्यमान हतुं तेथी तेओ तेजस्वी हता. शारीरिक बळवाळा होवाथी तेओ वर्चस्वी

छायावन्तः-शोभासंपन्नशरीराः, अतएव 'कंता' कान्ताः=कमनीयरूपलावण्य-संपन्ना. 'सोमा' सोम्याः-आल्हादकाकारसंपन्नाः 'सुभगा' सुभगाः-जगद्वल्लभाः 'पियदसणा' प्रियदर्शनाः-दर्शकजननयनानन्दजनकाः 'सुरूवा' सुरूपाः-सर्वातिशायिरूपलावण्योपेताः, तथा-'सुहसीलसुहाभिगमसव्वजणनयणकंता-शुभशील-सुखाभिगम्यसर्वजननयनकान्ताः-शुभशीलाः=सुस्वभावाः, सुखाभिगम्याः=सर्व-जनप्राप्याः, सर्वजननयनकान्ताः-सर्वजननयनानन्दजनकाः, एतेषां कर्मधारयः। तथा-'ओहबला' ओघबला.-पराक्रमप्रवाहयुक्ताः, 'अइबला' अतिबलाः-शेष पुरुषापेक्षया प्रबलबलवन्तः, 'महाबला' महाबलाः=प्रशस्तपराक्रमयुक्ताः, 'अनि

कारण इनकी बहुत अधिक प्रसिद्धिथी इसलिये ये यशस्वी थे। इनका शरीर विशिष्ट प्रकार की शोभा से सहित था इसिलिये ये छायंसी-छायावन्त थे। और इसी कारण से ये कमनीय रूप, लावण्य से मनोहर थे अतः कान्त थे। लोगों को इनके देखने से बडा आह्लाद होता था इसलिये ये सौम्य थे। जगज्जनो को विशेष प्रिय होने के कारण ये सुभग थे। दर्शकजनों के नेत्रों को आनंदजनक होने के कारण ये प्रियदर्शन थे। सर्वातिशायीरूप और लावण्य से युक्त होने के कारण सज्जनोचित याने सुरूपवाले थे। तथा इन का स्वभाव बडा अच्छा था, हरएक प्राणी इनसे विना किसी झिझक के मिल सकता था। समस्तजन इन्हें देखकर बहुत खुश होते थे। इनके पराक्रम का प्रवाह सदा एकसा रहता था-इसलिये ये ओघबलवाले थे। शेष मनुष्यों की अपेक्षा ये अधिक बलिष्ट थे। इनका पराक्रम प्रशस्त था। निरुपद्रव आयुवाले

હતા. તેઓ પરાક્રમી હતા, તેથી તેમની પ્રસિદ્ધિને કારણે તેઓ યશસ્વી હતા. તેમનુ શરીર વિશિષ્ટ પ્રકારની શોભાવાળુ હોવાથી તેમને છાયાંસી-છાયાવન્ત કહેલ છે, અને એજ કારણે કમનીયરૂપ અને લાવણ્યથી તેઓ મનોહર હતા તથા તેઓ કાન્ત હતા. તેમના દર્શનથી લોકોના હૃદયમા આનંદ થતો તેથી તેમને સૌમ્ય કહ્યા છે. જગતના લોકોને તેઓ ઘણા પ્રિય હોવાથી સુભગ હતા. દર્શકોના નેત્રોને અત્યંત આનંદજનક હોવાથી તેઓ પ્રિયદર્શન હતા. સર્વાતિશાયીરૂપ અને લાવણ્યવાળા હોવાથી તેઓ સુરૂપ હતા. તેમનો સ્વભાવ એટલો બધો સારો હતો કે દરેક મનુષ્ય કોઇ પણ પ્રકારના ડર સિવાય તેમને મળી શકતા હતા. તેમને જોઇને સઘળા લોકોને ઘણો આનંદ થતો હતો. તેમના પરાક્રમનો પ્રવાહ સદા એકધારો રહેતો હતો તેથી તેમને ઓઘબળવાળા કહ્યા છે. બીજા મનુષ્યો કરતા તેઓ વધારે બળવાન હતા. તે પ્રશસ્ત પરાક્રમવાળા હતા. નિરુપદ્રવ આયુ-

हता' अनिहताः निरुपद्रवायुष्कत्वाद् घातवर्जिताः, 'अपराइया' अपराजिताः-शत्रुकृतपराभवरहिताः 'सत्तुमद्दणा' शत्रुमर्दनाः-शत्रुमर्दका इत्यर्थः, 'रिपुसहस्समानमहणा' रिपुसहस्रमानमथनाः-रिपुमानमर्दका इत्यर्थः, 'साणुक्कोसा' सानुक्रोशाः-प्रणतेषु दयाकारका इत्यर्थः, 'अमच्छरा' अमत्सराः-परगुणलवस्यापि ग्राहका, 'अचवला' अचपला =मनोवाक्कायचापल्यवर्जिता, 'अचंडा' अचण्डा - निष्कारणकोपवर्जिता, 'मियमंजुलपलावहसिया' मितमञ्जुलप्रलापहसिताः मितमञ्जुले प्रलापहसिते येषां ते तथोक्ताः-परिमितकोमलवचनवन्त परिमित मनोहरहास्यवन्तश्चेत्यर्थः, तथा-'गंभीरमधुरपडिपुण्णसच्चवयणा' गम्भीरमधुरप्रतिपूर्णसत्यवचनाः-तत्र गम्भीरम्-रोषतोषशोकादिविकारवर्जितम्, मधुरं=श्रवणसुखकरं, प्रतिपूर्णम्=अर्थबोधजनकं, सत्यं=यथार्थं वचनं येषां ते तथोक्ताः,

होने के कारण ये घातवर्जित थे। शत्रुओं द्वारा ये कभी पराजित नहीं हो सकने के कारण अपराजित थे। शत्रुओं के ये मर्दक थे। हजारों शत्रुओं का इनके समक्ष मानमथित हो जाता था। जो इनके समक्ष झुक जाता था उनके ऊपर ये सदा दयालु रहते थे। मत्सरभाव से ये रहित थे। दूसरों में थोडा सा भी यदि कोई गुण होता था तो उसे ये ग्रहण कर लेते थे। मन, वचन, और काय की चपलता इनमें नहीं थी। ये बिना कारण किसी के ऊपर कभी भी क्रोध नहीं करते थे। ये परिमित बातचीत करते थे तथा जो भी कुछ कहते वह बहुत आनन्ददायक होता था। इनका जो हास्य होता था वह भी परिमित एवं बडा मनोमुग्धकारी होता था। रोष, तोष और शोक आदि विकार स वर्जित होने के कारण गंभीर, श्रवणसुखकारी होने के कारण मधुर और अर्थबोधजनक होने के कारण प्रतिपूर्ण ऐसे इनके सत्यवचन

વાળા હોવાથી તેમને ઘાતરહિત કહેલા છે શત્રુઓ દ્વારા તેમનો પરાજય થતો નહીં તથી તેમને અપરાજિત કહ્યા છે તેઓ શત્રુઓનું મર્દન કરનારા હતા. તેઓ હજારો શત્રુઓનુ માનમર્દન કરનારા હતા તેમને નમનારા તરફ તેઓ સદા દયાદ્રષ્ટિ રાખતા હતા મત્સર ભાવ (અભિમાન) થી રહિત હતા અન્યના થોડા ગુણનો પણ તેઓ આદર કરતા હતા મન વચન અને કાયાની ચપળતા તેમનામા ન હતી તેઓ વિના કારણ કોઈના ઉપર ક્રોધ કરતા નહીં તેઓ મિતભાષી હતા તેમની વાણી મનને આનંદ દેનારી હતી તેમનુ હાસ્ય પણ પરિમિત અને મનને મુગ્ધ કરનારૂ હતુ રોષ તોષ અને શોક આદિ વિકારોથી રહિત હોવાને કારણે ગંભીર શ્રવણ સુખકારી હોવાથી મધુર અને અર્થબોધક હોવાને કારણે પ્રતિપૂર્ણ એવા તેમના સત્યવચનો હતા તેઓ શરણાગત વત્સલ હતા દીન દુઃખીની સેવા કરવાન

'अब्भुवगयवच्छला' अभ्युपगतवत्सला=शरणागतवत्सला इत्यर्थः, तथा-'सरण्णा' शरण्याः=दीनहीनजनपरित्राणपरायणाः तथा-'लक्खणवंजणगुणोववेया' लक्षण-व्यञ्जनगुणोपपेताः-तत्र लक्षणानि=वज्रस्वस्तिक चक्रादीनि चिह्नानि व्यञ्जनानि=तिलकमशकादीनि तेषा ये गुणाः-महर्द्धिलाभादयस्तैरुपपेताः=युक्ताः, तथा-'माणुम्माणपमाणपडिपुण्णसुजायसव्वंगसुंदरंगा' मानोन्मानप्रमाणप्रतिपूर्णसुजात-सर्वाङ्गसुन्दराङ्गा=तत्र-मानम्-मीयते परिच्छिद्यते पदार्थोऽनेनेतिमानम्, तुलाङ्गुली-प्रस्थादिना तोलनम्, यद्वा-जलपरिपूर्णकुण्डादिप्रविष्टे पुरुषादौ यदा द्रोणपरिमित जलं निस्सरति तदा स पुरुषादिर्मानवानित्युच्यते तदत्र, उन्मानम्=ऊर्ध्वमान, यद्वा-अर्द्धभाररूपः परिमाणविशेषः, प्रमाणं=सर्वतो मानम्, यद्वा-निजाङ्गुलीभि रष्टोत्तरशताङ्गुलिपरिमितोच्छ्रायः, इत्थं च मानं चोन्मानं च प्रमाणं चेत्येतेषा

होते है। ये शरणागतवत्सल होते है। दीनहीनजनो की रक्षा करने में ये सदा कटिबद्ध रहते है। वज्र, स्वस्तिक और चक्र आदि चिह्नरूप लक्षणों, तथा तिल, मस्सा आदिरूप व्यञ्जनो के महर्द्धिलाभादिरूप गुणों से ये युक्त होते हैं। मान, उन्मान और प्रमाण से परिपूर्ण होने के कारण यथोचित अवयवसन्निवेशवाले हैं अंग जिसमें ऐसे सुन्दर शरीर वाले ये होते हैं। जल से परिपूर्ण कुण्ड आदि में प्रविष्ट होने पर द्रोणपरिमित जल यदि उस कुंड से बाहिर निकल जाता है तो वह प्राणी मानवाला कहा जाता है। अथवा पदार्थ का वजन जिससे मापा जावे उसका नाम मान है। तुला, अंगुली और प्रस्थादि से जैसे व्यवहार में माप किया जाता है। इस मान का ही नाम उन्मान है। अथवा अर्धभाररूप परिमाणविशेष का नाम उन्मान है। अपनी अंगुलियों से १०८ एकसौआठ अंगुलीप्रमाण शरीर की ऊंचाई का नाम प्रमाण है।

તેઓ સદા તત્પર રહેતા હતા વજ્ર, સ્વસ્તિક, ચક્ર આદિ ચિહ્નરૂપ લક્ષણો તથા તલ, મસા આદિરૂપ વ્યંજનોના મહાઋદ્ધિ, લાભ આદિથી તે યુક્ત હતા માન, ઉન્માન અને પ્રમાણથી પરિપૂર્ણ હોવાને કારણે યોગ્ય અવયવ સન્નિવેશવાળા અંગોથી યુક્ત સુંદર શરીરવાળા હતા એટલે કે તેમના અંગ ઉપાંગો સપ્રમાણ હતા. પાણીથી પરિપૂર્ણ કુંડ આદિમાં પ્રવેશ કરતા દ્રોણ પરિમિત જળ જો તે કુંડ આદિમાંથી બહાર નીકળે તો તે મનુષ્યને માનવાળો કહેવાય છે અથવા પદાર્થનું વજન જેનાથી માપી શકાય તેને માન કહે છે તુલા, અંગુલી આદિથી જેવી રીતે વ્યવહારમાં માપ લેવામાં આવે છે તે માનને જ ઉન્માન કહે છે અથવા અર્ધભારરૂપ પરિમાણ વિશેષને ઉન્માન કહે છે પોતાની આગળી કરતાં ૧૦૮ એકસો આઠ ગણી શરીરની ઊંચાઈને પ્રમાણ કહે છે માથાથી પગ સુધીના

इइ माना मानप्रमाणानि, ते परिपूर्णानि=सम्पन्नानि अतएव सुजातानि= यथोचितावयवसन्निवेशवन्ति सर्वाणि=सकलानि अङ्गानि-मस्तकादारभ्य चरणा न्तानि यस्मिन् शरीरे तन्मानोन्मानप्रमाणपरिपूर्णसुजातसर्वाङ्गम् अतएव सर्वाङ्ग सुन्दरमङ्गं येषां ते तथोक्ता, तथा-'ससिसोमागारकंतपियदंसणा' शशिसौम्या कारकान्तप्रियदर्शनाः, शशिवत्सौम्यम्=आह्लादकम् कान्तं=कमनीयं=चित्तहारि, प्रियं=द्रष्टुःजनमनआह्लादजनकं, दर्शनम्=अवलोकनं येषां ते तथोक्ता, तथा- अमरिसणा' अमसणा=कार्येषु अनलसा यद्वा-अमर्षणा=निरंतरापकारिष्वपि क्रोधरहिताः, तथा-'पयंडदंडप्पगारा' प्रकाण्डदण्डप्रकारा -प्रकाण्डः=उत्कटो दण्डप्रकारः-दण्डनीतिभेदो येषां ते तथोक्ताः, तथा-'गंभीरदरिसणिज्जा' गम्भी रदर्शनीयाः-अलक्ष्यमाणान्तर्वृत्तित्वेन गम्भीरा दृश्यन्ते ये ते तथोक्ताः, तथा- 'तालद्धओविद्धगरुलकेऊ' तालध्वजोद्विद्धगरुडकेतवः-तालः=तालवृक्षाङ्कित

मस्तक से लगाकर चरणतक के अवयवों का नाम अग है। तात्पर्य कहने का यह है कि इनके शारीरिक अवयवों की रचना बड़ी सुन्दर प्रमा णोपेत होती है। शरीर की अपेक्षा जिस अग की जितनी लंबाई चौडाई होनी चाहिये उस अग की उतनी ही लंबाई चौडाई और मोटाई होती है। किसी भी अग में किसी भी प्रकार की मान उन्मान आदि की अपेक्षा हीनाधिकता नहीं रहती है। जिनका अवलोकन चन्द्रमा के समान आह्लादजनक और चित्त को हरण करने वाला होता है। तथा दर्शकजन के मन में अपूर्व आह्लाद का कारण होता है। ये सदा कार्य में आलस्य रहित होते हैं-अथवा-अपकारीजनों पर भी इन्हें क्रोध नहीं आता है। इनकी नीति का भेदरूप दण्डप्रकार उत्कट होता है। इनकी अन्तःवृत्ति अलक्ष्यमाण होने से ये बहुत ही गम्भीर दिखाई देते हैं।

અવયવોને અગ કહે છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે તેમના શારીરિક અવયવોની રચના ઘણી સુદર અને પ્રમાણયુક્ત હતી શરીરની અપેક્ષાએ જે અગની જેટલી લબાઇ પહોળાઈ અને પહોળાઈ હોવી જોઈએ તેટલી જ તે અગની લબાઈ પહોળાઈ અને જાડાઈ હતી કોઇ પણ અગના માપમાં કોઈપણ પ્રકારની ન્યૂનતા કે અધિકતા હોતી નથી તેમનાં દર્શન ચન્દ્રમાના દર્શનની જેમ હમેશાં આનદદાયક અને ચિત્તને હરી લેનાર હોય છે અને દર્શકોના મનમાં અપૂર્વ આહ્લાદ ઉત્પન્ન કરે છે તેઓ હમેશા કામમા આળસ રહિત હોય છે-અથવા અપકારી લોકો ન ઉપર પણ તેમને ક્રોધ થતો નથી તેમનો નીતિના ભેદરૂપ દડપ્રકાર ઉત્કટ હોય છે તેમના મનોભાવોને સમજવા મુશ્કેલ હોવાથી તેઓ ગભીર લાગે છે તથા

ध्वजो येषां ते तालध्वजा बलदेवाइत्यर्थः, उद्विद्धः=उच्छ्रितः गरुडः=गरुडलक्षितः केतुः पताका येषां ते-उद्विद्धगरुडकेतव, अनयोर्द्वन्द्वसमासः, तथा-'महाविकट्टया' महाविकृष्टकाः-महाधनुर्विकर्षकाः-महाप्राणादुर्धुर्षधनुरुत्तोलिन इत्यर्थः, तथा-'महासत्तसायरा' महासत्त्वसागराः=महासत्त्वानामक्षयाधारस्थानानीत्यर्थः, तथा-'दुद्धरा' दुर्धराः-रणाङ्गणे प्रहरणसमये केनापि धनुर्धरेण धारयितुमशक्याः, 'धणुद्धरा' धनुर्धराः=धनुर्धारिणः अथवा-'दुद्धरधणुद्धरा' दुर्धरधनुर्धराः=अन्यधनुष्मदशक्यधारणधनुर्धरा इत्यर्थः, 'धीरपुरिसा' धीरपुरुषाः-धीरेष्वेव पुरुषाः=पुरुषकारवन्तो न तु कातरेषु, 'जुद्धकित्तिपुरिसा' युद्धकीर्त्तिपुरुषाः=युद्धजनिता या कीर्तिस्तत्प्रधानाः पुरुषाः इत्यर्थः, 'विउलकुलसमुब्भवा' विपुलकुलसमुद्भवाः, 'महारणविहाडगा' महारणविघाटकाः स्वपराक्रमेण महारणविघटनपरायणाः,

बलदेवों की पताकाएँ-ध्वजाएँ-तालवृक्ष के चिह्नो से अंकित होती हैं और वासुदेवों की ध्वजाएँ गरुड के चिह्न से युक्त होती हैं। बडे से बडे वीर भी जिस धनुष को नहीं चढा सकते हैं उस धनुष को ये चढाते हैं। विशिष्टबल के ये धारी होते है। रणाङ्गण में प्रहार के समय कोई भी धनुर्धारी इन्हें धारण नहीं कर सकता है अर्थात् इन पर उसके धनुष का वार नहीं होता है। ये बडे भारी धनुर्धारी होते हैं। अथवा-"दुद्धर धणुद्धरा" जिस धनुष को अन्य धनुषधारी धारण नहीं कर सकते हैं उस धनुष को ये धारण करते है। धीर पुरुषों में ही इनका पुरुषकार विशिष्ट होता है। कातरों में नहीं। अर्थात् धीर पुरुषों की अपेक्षा ही इनका पुरुषकार-सामर्थ्य विशिष्ट माना गया है। कातरों की अपेक्षा नहीं। ये युद्धजनित कीर्तिप्रधान पुरुष होते हैं। ये बडे ऊँचे खानदान के होते हैं। अपने पराक्रम से ये भयंकर से भी भयंकर

वोनी पताकाओ-ध्वजाओ-तालवृक्षोना चिह्नोथी अंकित होय छे अने वासुदेवनी ध्वजाओ गरुडना चिह्नथी अंकित होय छे जे धनुष्य चडाववाने वीरमां वीर पण समर्थ होतो नथी ते धनुषने तेओ चडावी शके छे तेओ विशिष्ट बळवाळा होय छे. समरांगणमा कोई पण धनुर्धर तेमना उपर धनुषमाथी तीरनो प्रवाह करी शकतो नथी. तेओ महान धनुर्धर होय छे. अथवा 'दुद्धर धणुद्धरा' जे धनुषने अन्य धनुर्धर धारण करी शकता नथी ते धनुषने तेओ धारण करे छे. धीरपुरुषोमा ज तेमनो पुरषकार विशिष्ट थाय छे. कायरोमा नहीं एटले के धीरपुरुषोनी अपेक्षाए ज तेमनुं सामर्थ्य विशिष्ट मनाय छे-कायरोनी अपेक्षाए नहीं. तेओ युद्धजनित कीर्तिप्रधान पुरुषो होय छे तेओ ऊंचा कुळना होय छे. पोताना पराक्रमथी भयंकरमां भयंकर शत्रुसैन्यने पण अस्तव्यस्त करी नाखे छे तेओ

स्तद्वै मानोन्मानप्रमाणानि, तैः परिपूर्णानि=सम्पन्नानि अतएव सुजातानि=यथोचितावयवसन्निवेशवन्ति सर्वाणि=सकलानि अङ्गानि-मस्तकादारभ्य चरणान्तानि यस्मिन् शरीरे तत् मानोन्मानप्रमाणपरिपूर्णसुजातसर्वाङ्गम् अतएव तादृशं सुन्दरमङ्गं येषां ते तथोक्ताः, तथा-'ससिसोमागारकंतपियदंसणा' शशिसौम्याकारकान्तप्रियदर्शनाः, शशिवत्सौम्यम्=आह्लादकम् कान्तं=कमनीयं=चित्तहारि, प्रियं=दर्शकजनमनआह्लादजनकं, दर्शनम्=अवलोकनं येषां ते तथोक्ताः, तथा-'अमरिसणा' अमर्षणाः=कार्येष्वनलसाः यद्वा-अमर्षणाः=निरन्तरापकारिष्वपि कोपरहिताः, तथा-'पयंडदंडप्पयारा' प्रकाण्डदण्डप्रचाराः-प्रकाण्डः=उत्कटो दण्डप्रकारः-दण्डनीतिभेदो येषां ते तथोक्ताः, तथा-'गंभीरदरिसणिज्जा' गम्भीरदर्शनीयाः-अलक्ष्यमाणान्तर्वृत्तित्वेन गम्भीरा दृश्यन्ते ये ते तथोक्ताः, तथा-'तालद्धओविद्धगरुलकेऊ' तालध्वजोद्विद्धगरुडकेतवः-तालः=तालवृक्षाङ्कितो

मस्तक से लगाकर चरणतक के अवयवों का नाम अंग है। तात्पर्य कहने का यह है कि इनके शारीरिक अवयवों की रचना बड़ी सुन्दर प्रमाणोपेत होती है। शरीर की अपेक्षा जिस अंग की जितनी लंबाई चोडाई होनी चाहिये उस अंग की उतनी ही लंबाई चौडाई और मोटाई होती है। किसी भी अंग में किसी भी प्रकार की मान उन्मान आदि की अपेक्षा हीनाधिकता नहीं रहती है। जिनका अवलोकन चन्द्रमा के समान आह्लादजनक और चित्त को हरण करने वाला होता है। तथा दर्शकजन के मन में अपूर्व आह्लाद का कारण होता है। ये सदा कार्य में आलस्य रहित होते हैं-अथवा-अपकारीजनों पर भी इन्हें क्रोध नहीं आता है। इनका नीति का भेदरूप दण्डप्रकार उत्कट होता है। इनकी अन्तर्वृत्ति अलक्ष्यमाण होने से ये बहुत ही गम्भीर दिखाई देते हैं।

અવયવોને અંગ કહે છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે તેમના શારીરિક અવયવોની રચના ઘણી સુંદર અને સપ્રમાણ હતી શરીરની અપેક્ષાએ જે અંગની જેટલી લંબાઈ પહોળાઈ અને જાડાઈ હોવી જોઈએ એટલી જ તે અંગની લંબાઈ પહોળાઈ અને જાડાઈ હતી કોઈ પણ અંગના માપમાં કોઈપણ પ્રકારની ન્યૂનતા કે અધિકતા હતી નહીં તેમનાં દર્શન ચન્દ્રમાનાં દર્શનની જેમ હંમેશાં આનંદદાયક અને ચિત્તને હરી લેનાર હોય છે અને લોકોના મનમાં અપૂર્વ આહ્લાદ ઉત્પન્ન કરે છે તેઓ હંમેશા કામમાં આળસ રહિત હોય છે-અથવા અપકારી લોકો પર પણ તેમને ક્રોધ થતો નથી તેમનો નીતિના ભેદરૂપ દંડપ્રકાર ઉત્કટ હોય છે તેમના મનોભાવોને સમજવા મુશ્કેલ હોવાથી તેઓ ગંભીર લાગે છે તથા

ध्वजो येषां ते तालध्वजा बलदेवा इत्यर्थः, उद्विद्धः=उच्छ्रितः गरुडः=गरुडपक्षिरूपः केतुः पताका येषां ते-उद्विद्धगरुडकेतव, अनयोर्द्वन्द्वसमासः, तथा-'महाविकट्टया' महाविकर्षकाः-महाधनुर्विकर्षकाः-महाप्राणादुर्दुर्धरधनुरुत्तोलिन इत्यर्थ, तथा-'महासत्तसायरा' महासत्त्वसागराः=महासत्वानामक्षयाधारस्थानानीत्यर्थः, तथा-'दुद्धरा' दुर्धराः-रणाङ्गणे प्रहरणसमये केनापि धनुर्धरेण धारयितुमशक्याः, 'धणुद्धरा' धनुर्धराः=धनुर्धारिणः अथवा-'दुद्धरधणुद्धरा' दुर्धरधनुर्धराः=अन्यधनुष्मदशक्यधारणधनुर्धरा इत्यर्थः, 'धीरपुरिसा' धीरपुरुषाः-धीरेष्वेव पुरुषाः=पुरुषकारवन्तो न तु कातरेषु, 'जुद्धकित्तिपुरिसा' युद्धकीर्त्तिपुरुषाः=युद्धजनिता या कीर्तिस्तत्प्रधानाः पुरुषाः इत्यर्थः, 'विउलकुलसमुब्भवा' विपुलकुलसमुद्भवाः, 'महारणविहाडगा' महारणविघाटकाः स्वपराक्रमेण महारणविघटनपरायणाः,

---

बलदेवों की पताकाएँ-ध्वजाएँ-तालवृक्ष के चिह्नो से अंकित होती हैं और वासुदेवों की ध्वजाएँ गरुड के चिह्न से युक्त होती हैं। बडे से बडे वीर भी जिस धनुष को नहीं चढा सकते हैं उस धनुष को ये चढाते हैं। विशिष्टबल के ये धारी होते है। रणाङ्गण में प्रहार के समय कोई भी धनुर्धारी इन्हें धारण नहीं कर सकता है अर्थात् इन पर उसके धनुष का वार नहीं होता है। ये बडे भारी धनुर्धारी होते हैं। अथवा- "दुद्धर धणुद्धरा" जिस धनुष को अन्य धनुषधारी धारण नहीं कर सकते हैं उस धनुष को ये धारण करते है। धीर पुरुषों में ही इनका पुरुषकार विशिष्ट होता है। कातरों में नहीं। अर्थात् धीर पुरुषों की अपेक्षा ही इनका पुरुषकार-सामर्थ्य विशिष्ट माना गया है। कातरों की अपेक्षा नहीं। ये युद्धजनित कीर्तिप्रधान पुरुष होते हैं। ये बडे ऊँचे खानदान के होते हैं। अपने पराक्रम से ये भयंकर से भी भयंकर

वोनी पताकाओ-ध्वजाओ-तालवृक्षोना चिह्नोथी अंकित होय छे अने वासुदेवनी ध्वजाओ गरुडना चिह्नथी अंकित होय छे जे धनुष्य चडाववाने वीरमां वीर पण समर्थ होतो नथी ते धनुषने तेओ चडावी शके छे तेओ विशिष्ट बळवाळा होय छे. समरांगणमां कोई पण धनुर्धर तेमना उपर धनुषमांथी तीरनो प्रवाह करी शकतो नथी. तेओ महान धनुर्धर होय छे. अथवा 'दुद्धर धणुद्धरा' जे धनुषने अन्य धनुर्धर धारण करी शकता नथी ते धनुषने तेओ धारण करे छे. धीरपुरुषोमां ज तेमनो पुरुषकार विशिष्ट थाय छे. कायरोमां नहीं एटले के धीरपुरुषोनी अपेक्षाए ज तेमनुं सामर्थ्य विशिष्ट मनाय छे-कायरोनी अपेक्षाए नहीं. तेओ युद्धजनित कीर्तिप्रधान पुरुषो होय छे तेओ ऊंचा कुळना होय छे. पोताना पराक्रमथी भयंकरमां भयंकर शत्रुसैन्यने पण अस्तव्यस्त करी नाखे छे तेओ

तथा-'भद्दभरहसामी' भद्रभारतस्वामिन , तथा-'सोमा' सौम्या -सकलजना ल्हादजनका, 'रायकुलवसतिलया' राजकुलवसतिलका -राज्ञां तिलक सदृशा इत्यर्थ , 'अजिया' अजिता -न केनापि जिता इत्यर्थ , 'अजियरहा' अजित रथा -न केनापि जिता रथा यषां ते तथोक्ता , 'हलमुसलकणकपाणी' हलमु सलकणकपाणय -हलमुसले कणका=वाणा पाणौ यषां ते तथोक्ता , सखच क्रगयसत्तिनन्दगधरा शङ्खचक्रगदाशक्तिनन्दकधरा , नन्दक खड्ग , 'पवरुज्जलसुक्कतविमल गोथुभतिरीडधारी' प्रवरोज्ज्वलशुक्लविमलकौस्तुभतिरीटधारिण -प्रवर-श्रेष्ठम् उज्ज्वलम्-देदीप्यमानम् शुक्ला व-शुभ्रावयवयुक्तम् कौस्तुभ-मणिविशेषम्, तिरीट-मुकुट च धर्तुंशील यषां स तथोक्ता , 'कुंडलउज्जोइयाणणा' कुण्डलो द्योतितानना -कुण्डलनोद्योतितमाननं-मुख यषां ते तथोक्ताः, कुण्डलप्रकाशि तमुखा इत्यर्थ , 'पुंडरीयनयणा' पुण्डरीकनयना -पद्मनया इत्यर्थ , एकावलि कण्ठलग्यवच्छा' एकावलिकण्ठलग्नवक्षसः-एकावलीहारविशेष , स कण्ठे लग्ना यसो वक्षसि वर्तते यषा ते तथोक्ता, 'सिरिवच्छसुलछणा' श्रीवत्ससुलाञ्छना -

रण को छिन्नभिन्न कर डालते हैं। आधे भरतक्षेत्र के ये स्वामी होते हैं। समस्त मनुष्यों को इनसे बड़ा सुख-आनंद मिलता है। राजवंश के तिलक समान हैं। इन्हें कोई भी नहीं जीत सकता है। इनके रथ पर कोई भी शत्रु कब्जा नहीं कर सकता है। हल, मुसल, और बाण इनके हाथों में रहा करते हैं। शख, चक्र, गदा और नन्दक-तलवार को ये धारण किये रहते हैं। इनका स्वभाव श्रेष्ठ, देदीप्यमान और शुभ्र अवयवों से युक्त कौस्तुभमणि को और मुकुट को धारण करने का होता है। कुंडलों की चमक से इनका मुख सदा प्रकाशित रहता है। इनके नेत्र कमल जैसे सुन्दर होते हैं। ये जिस रत्नमय एकावली हार को अपने कण्ठ में धारण किये रहते हैं वह इनकी छातीतक लटकता रहता है।

અર્ધા ભરતક્ષેત્રના સ્વામી હોય છે સમસ્ત લોકોને તેમના તરફથી ઘણું સુખ પ્રાપ્ત થાય છે તેઓ રાજવંશમાં તિલક સમાન હોય છે. તેઓ અજેય હોય છે કોઈ પણ શત્રુ તેમનો રથ કબજે કરી શકતો નથી તેમના હાથોમાં હળ મુસળ અને બાણ રહે છે શંખ ચક્ર ગદા અને તલવારને તેઓ ધારણ કરતા હોય છે શ્રેષ્ઠ દેદીપ્યમાન અને શુભ્ર અવયવોથી યુક્ત એવા અલંકારો અને વાસુદેવોનો સ્વભાવ કૌસ્તુભમણિ અને મુગટને ધારણ કરવાનો હોય છે કુંડળોના ચળકાટથી તેમનું વદન સદા પ્રકાશિત રહે છે તેમનાં નયન કમળ જેવાં સુંદર હોય છે એકાવલી હારને જે રત્નમય હાર તેઓ ગળામાં પહેરે છે તે તેમની છાતી સુધી પહોંચે છે શ્રીવત્સ

श्रीवत्सस्वस्तिकस्य शुलाञ्छनं येषां ते तथोक्ताः, 'वरजसा' वरयशसः=वरं श्रेष्ठं यशो येषां ते तथोक्ताः, महायशस्विन इत्यर्थः, तथा-'सव्वउयसुरभिकुसुमरइयपलंबसोभंतकंतविकसतविचित्तवरमालरइयवच्छा' सर्वर्तुकसुरभिकुसुमरचितप्रलम्बशोभमानकान्तविकसद्विचित्रवरमालारचितवक्षस्काः-तत्र सर्वर्तुकानि=सर्वर्तुसम्बन्धीनि यानि सुरभिकुसुमानि, तै रचिताः प्रलम्बा लम्बायमानाः शोभमानाः कान्ताः-कमनीयाः विकसन्त्यो विचित्राः विचित्रगुम्फाः या वरमालास्ताभिः रचितानि वक्षांसि=वक्षःस्थलानि येषां ते तथोक्ताः, 'अट्ठसयविभत्तलक्खणपसत्थसुंदरविरइयंगमंगा' अष्टोत्तरशतविभक्तलक्षणप्रशस्तसुन्दरविरचिताङ्गाङ्गाः=तत्र-अष्टोत्तरशतसंख्यकानि विभक्तानि=पृथक्पृथगवस्थितानि यानि लक्षणानि=शङ्खचक्रादीनि तैः प्रशस्तानि=माङ्गल्यानि सुन्दराणि=मनोहराणि च विरचितानि=विहितानि अङ्गाङ्गानि-प्रत्यङ्गानि येषां ते तथोक्ताः, अष्टोत्तरशतप्रशस्तलक्षणधारिण इत्यर्थः, तथा-'मत्तगयवरिंदललियविक्कमविलसियगई' मत्तगजवरेन्द्रललितविक्रमगतयः-मत्तगजवरेन्द्राणां यो ललितो-मनोहरो विक्रमः=पादविक्षेपः, तद्वत् विलसिताः=विलासयुक्ता गतिर्येषां ते तथोक्ताः, तथा-'सारयनवथणियमहुरगभीरकुंचनिग्घोसदुंदुभिसरा' शारदनवस्तनितमधुरगभीरक्रौञ्चनिर्घोषदुन्दुभिस्वराः-शारदो यो नवस्तनितः=शरदृतुसम्बन्धी मेघशब्दः, तथा-मधुरगभीरो यः क्रौञ्चनिर्घोषः=क्रौञ्चपक्षिशब्दः, दुन्दुभीनां-भेरीणां स्वरः=शब्द-

---

श्रीवत्स स्वस्तिक का इनके चिह्न होता है। ये बडे यशस्वी होते है। इनका वक्षःस्थल सर्वऋतुसंबधी सुरभित कुसुमों से रचित लम्बी२ मालाओं से कि जिनकी रचना विचित्र प्रकार की होती है और जो देखने में बडी सुहावनी लगती है युक्त रहा करता है। इनके प्रत्येक अंग पृथक् २ अवस्थित शंख, चक्र आदि १०८ एकसो आठ चिह्नों से युक्त रहा करते हैं अतः वे बडे प्रशस्त और सुन्दर होते है। मदोन्मत्त श्रेष्ठ गजराजों की मनोहर गति जैसी इनकी गति-चाल विलासयुक्त होती है। इनको स्वर शारदऋतु संबंधी मेघ के गर्जन के समान तथा क्रौंच

સ્વસ્તિનું ચિહ્ન તેમને હાય છે તેઓ ઘણા યશસ્વી હાય છે સર્વઋતુના સુગંધયુકત પુષ્પોમાથી બનાવેલી અપૂર્વ શોભાવાળી લાબી લાબી માળાઓથી તેમનુ વક્ષ.સ્થલ યુકત હાય છે તેમના પ્રત્યેક અંગ પર શંખ, ચક્ર, આદિ ૧૦૮ એકસો આઠ લક્ષણો અલગ અલગ સ્થાને હાય છે તેથી તેઓ ઘણા પ્રશસ્ત અને સુંદર હાય છે તેમની ચાલ મદોન્મત્ત શ્રેષ્ઠ ગજરાજોની મનોહર ગતિ જેવી વિલાસયુકત હાય છે તેમનો અવાજ શરદઋતુના મેઘની ગર્જના જેવો, ક્રૌંચ પક્ષીના મધુર ગંભીર

स्वरत् यथा त थयाक्ताः तथा– कडिसुत्तगनीलपीयकोसेज्जवाससा' कटिसूत्र कनीलपीतकौशेयवाससः–कटिसूत्रकं–कटिभूषण 'कणदोरा' इति प्रसिद्धम्, तेन युक्तानि नीलानि पितानि कौशेयवासांसि 'रेशमी' ति भाषाप्रसिद्धवस्त्राणि येषां ते तथोक्ता', तथा–'पवरदीत्ततया' प्रवरदीप्ततेजस –प्रवर दीप्तं तेजो येषां ते तथोक्ताः, तथा–'नरसीहा' नरसिंहा–नरेषु सिंहा इव य ते तथोक्ताः, 'नरवई' नरपतयः 'नरिंदा' नरेन्द्राः नरवसहा' नरवृषभा'–नरश्रेष्ठा 'मरुयवसभकप्पा' मरुद्वृषभकल्पाः=मरुतो देवास्तेषु वृषभ श्रेष्ठ–देवराजस्तस्य कल्पाः सदृशा , 'अब्भहियरायतेयलच्छीए दिप्पमाणा' अभ्यधिकराजतेजोलक्ष्म्या दीप्यमाना' 'नीलगपीयगवसणा' नीलकपीतकवसना –नीलपीतवस्त्रधारिणः 'दुवे दुवे रामकेसवा भायरो' द्वौ द्वौ रामकेशवौ भ्रातरौ, इतिक्रमेण नववासुदेवा नव बलदेवाः 'होत्था' बभूवुः 'तं जहा' तद्यथा–'तिविट्ठू जाव कण्हे' त्रिपिष्ठा यावत्–कृष्णाः,'अयले जाव रामे यावि अपच्छिमे' अचलो यावद्रामश्चापि अपश्चिमः॥सू २०७॥

पक्षी के मधुर, गंभीर शब्द के समान और दुन्दुभी के स्वर के समान होता है। इनके नीलपीत रेशमीवस्त्र कमदोरे–करधनी से युक्त होते हैं। इनका प्रवर तेज सदा दीप्त रहता है। ये मनुष्यों में सिंह जैसे रहा करते हैं। ये नरपति नरेन्द्र और नरवृषभ कहलाते हैं। एवं देवराज इन्द्र जैसे होते हैं। यहां वृषभ शब्द श्रेष्ठ अर्थका वाचक है। ये राज लक्ष्मी के तेज से बहुत अधिक दिपते रहते हैं। ये जिनवस्त्रों को पहिरते हैं वे नीले और पीले होते हैं। अर्थात् बल्देव नीलाम्बर कहलाते है और वासुदेव पीताम्बर होते हैं। ऐसे ये 'दो दो राम और केशव आपस में भाई होते हैं' इस क्रम से नव वासुदेव और नव बलदेव होते हैं। त्रिपृष्ठ से लेकर कृष्णतक ये नौ वासुदेव हुए हैं और अचल से लेकर रामतक नौ बलदेव हुए हैं॥सू. २०७॥

શબ્દ સમાન અને દુંદુભીના નાદ સમાન હોય છે તેમનાં નીલ અને પીળાં વસ્ત્રો ચર કંદોરો હોય છે તેમનું શ્રેષ્ઠ તેજ સદા દેદીપ્યમાન રહે છે મનુષ્યોમાં તેઓ સિંહ જેવા હોય છે. તેમને નરપતિ, નરેન્દ્ર અને નરવૃષભ કહે છે ત । દેવરાજ ઇન્દ્રના જેવાં હોય છે અહીં વૃષભ એટલે શ્રેષ્ઠ સમજવાનું છે તેઓ રાજ લક્ષ્મીના તેજને લીધે ઘણા શોભે છે તેમનાં વસ્ત્રો નીલાં કે પીળાં હોય છે એટલે કે બળદેવને નીલામ્બર હોય છે અને વાસુદેવને પીતામ્બર હોય છે એવાં તે 'રામ અને કેશવ' બન્ને ભાઈ–ભાઈનું સગપણ હોય છે આ પ્રમાણે નવ વાસુદેવ અને નવ બળદેવ થયા છે ત્રિપૃષ્ઠથી લઈને કૃષ્ણ સુધીના નવ વાસુદેવ અને અચળથી લઈને રામ સુધીના નવ બળદેવ થયા છે ॥સૂ. ૨૦૭॥

बलदेववासुदेवाना पूर्वभविकानि नामान्याह—

मूलम्—एएसि णं णवण्हं बलदेववासुदेवाणं पुव्वभविया नव नामधेज्जा होत्था, तं जहा—विस्सभूई पव्वयए धनदत्त समुद्ददत्त इसिवाले। पियमित्त ललियमित्ते, पुणव्वसु गंगदत्ते य ॥५५॥ एयाइं णामाइं पुव्वभवे वासुदेवाणं। एत्तो बलदेवाणं जहक्कमं कित्तइस्सामि ॥५६॥ विसनंदी य सुबंधू सागरदत्ते असोगललिए य। वाराह धम्मसेणे अपराइयरायललिए य ॥५७॥ सू० २०८॥

शब्दार्थ—(एएसि णं णवण्हं बलदेववासुदेवाणं) एतेषां खलु नवानां बलदेव वासुदेवानां—इन नौ बलदेव और वासुदेवों के पुव्वभविया नव नामधेज्जा होत्था। पूर्वभविकानि नव नामधेयानि आसन्—पूर्वभवसंबंधी जो नाम थे (तं जहा) तद्यथा—वे इस प्रकार से हैं—(विस्सभूई पव्वयए) विश्वभूतिः पर्वतकः—विश्वभूति१, पर्वतक२ (धनदत्त समुद्ददत्त इसिवाले) धनदत्तः समुद्रदत्त ऋषिपालः—धनदत्त३, समुद्रदत्त४, ऋषिपालः५, (पियमित्त ललियमित्ते) प्रियमित्रो ललितमित्रः—प्रियमित्र६, ललितमित्र७, (पुणव्वसु गंगदत्ते य) पुनर्वसुर्गङ्गदत्तश्च—पुनर्वसु८ और गंगदत्त९। (एयाइं णामाइं पुव्वभवे वासुदेवाणं) एतानि नामानि पूर्वभवे आसन् वासुदेवानाम्—ये पूर्वभव संबंधी नाम वासुदेवों के हैं। (एत्तो बलदेवाणं जहक्कमं कित्तइस्सामि) इतो बलदेवानां यथाक्रमं कीर्तयिष्यामि—अब बलदेवों के पूर्वभवके नाम

शब्दार्थ—(एएसिं णं णवण्हं बलदेववासुदेवाणं) एतेषां खलु नवानां बलदेववासुदेवानां—ने नव બળદેવ અને વાસુદેવોના (पुव्वभविया नव नामधेज्जा होत्था) पूर्वभविकानि नवनामधेयानि आसन्—પૂર્વભવના નવ નામ હતા. (तं जहा) तद्यथा—તે નામો આ પ્રમાણે હતા–(विस्सभूई पव्वयए) विश्वभूतिः पर्वतकः—વિશ્વભૂતિ૧, પ્રર્વતક૨, (धनदत्त समुद्ददत्त इसिवाले) धनदत्तः, समुद्रदत्तः, ऋषिपालः—ધનદત્ત૩, સમુદ્રદત્ત૪, ઋષિપાલ૫, (पियमित्तललियमित्त) प्रियमित्रो ललितमित्रः—પ્રિયમિત્ર૬, લલિતમિત્ર૭, (पुणव्वसु गंगदत्तेय) पुनर्वसुर्गङ्गदत्तश्च-પુનર્વસુ૮ અને ગંગદત્ત૯ (एयाइं णामाइं पुव्वभवे वासुदेवाणं) एतानि नामानि पूर्वभवे आसन वासुदेवानाम्—વાસુદેવોના પૂર્વભવનાં તે નામો હતા (एत्तो बलदेवाणं जहक्कमं कित्तइस्सामि) इतो बलदेवानां यथाक्रम कीर्तं

टीका—'एएसि णं' इत्यादि । एतेषां खलु नवानां बलदेववासुदेवानां पूर्वभविकानि नव नामधेयानि 'हास्या आसन्, तद्यथा-विश्वभूतिः पर्वतका धनदत्त समुद्रदत्त ऋषिपालः । प्रियमित्रो ललितमित्र पुनर्वसुर्गङ्गदत्तश्च ।५५॥ एतानि नामानि पूर्वभवे आसन् वासुदेवानाम् । इतो बलदेवानां पूर्वभवनामानि 'जहकम' यथाक्रम 'कित्तइस्सामि' कीर्तयिष्यामि ॥५६॥ तानि नामान्याह- विश्वनन्दी च सुबन्धुः सागरदत्तोऽशोकोललितश्च । वाराहो धर्मसेनाऽपराजितो राजललितश्च ।।५७॥ सू० २०८॥

यथाक्रम से कहूंगा (विसनंदी य सुबंधू सागरदत्ते असोगललिए य वाराहधम्मसेणे अपराइय रायललिए य) विश्वनन्दी च सुबन्धुः सागर दत्ताऽशोकोललितश्च, वाराहो धर्मसेनोऽपराजितो राजललितश्च—विश्वनंदी१ सुबंधु२, सागरदत्त३, अशोक४, ललित५, वाराह६, धर्मसेन७, अपराजित८ और राजललित९। ॥ सू २०८॥

टीकार्थ—'एएसि णं णवण्ह' इत्यादि—इन नौ वासुदेवों के पूर्वभव सबंधी जो नाम थे, वे इस प्रकार से हैं-विश्वभूति१, पर्वतक२, धनदत्त३, समुद्रदत्त४, ऋषिपाल५, प्रियमित्र६, ललितमित्र७, पुनर्वसु८ और गंगदत्त९ । अब बलदेवों के पूर्वभव के नाम यथाक्रम से कहता हूं-विश्वनंदी, सुबंधु, सागरदत्त, अशोक, ललित, वाराह, धर्मसेन, अपराजित और राजललित ॥सू २०८॥

यिष्यामि—હવે બળદેવોના પૂર્વભવનાં નામો અનુક્રમે કહીશ (विसनंदी य सुबंधू सागरदत्ते असोगललिए य वाराहधम्मसेणे अपराइयरायललिए य) विश्वनन्दी च सुबन्धुः सागरदत्तोऽशोको ललितश्च, वाराहो धर्मसेनो ऽपराजितो राजललितश्च-વિશ્વનંદી સુબંધુ સાગરદત્ત, અશોક, લલિત વારાહ ધર્મસેન, અપરાજિત અને રાજલલિત. ॥સૂ. ૨૦૮॥

ટીકાર્થ—'एएसिं णं णवण्ह' इत्यादि—તે નવ વાસુદેવોનાં પૂર્વભવનાં નામો અનુક્રમે આ પ્રમાણે હતાં-(૧) વિશ્વભૂતિ, (૨) પર્વતક (૩) ધનદત્ત (૪) સમુદ્રદત્ત, (૫) ઋષિપાલ (૬) પ્રિયમિત્ર (૭) લલિતમિત્ર, (૮) પુનર્વસુ અને (૯) ગંગદત્ત બળદેવોના પૂર્વભવનાં નામો અનુક્રમે નીચે પ્રમાણે હતાં-(૧) વિશ્વનંદી (૨) સુબંધુ (૩) સાગરદત્ત, (૪) અશોક (૫) લલિત, (૬) વારાહ, (૭) ધર્મસેન (૮) અપરાજિત (૯) રાજલલિત ॥સૂ. ૨૦૮॥

मूलम्—एएसि नवण्हं बलदेववासुदेवाणं पूवभविया नव-धम्मायरिया होत्था, तं जहा—संभूय सुभद्दसुदंसणे य सेयंस कण्ह गंगदत्ते। सागरसमुद्दनामे दुमसेणे य णवमए ॥५८॥ एए धम्मा-यरिया कित्तीपुरिसाण वासुदेवाणं। पुव्वभवे एयासिं जत्थ निया-णाइं कासी य ॥५९॥ सू० २०९॥

शब्दार्थ—(एएसिं णवण्हं बलदेववासुदेवाणं) एतेषां नवानां बलदेव वासुदेवानां—इन नौ बलदेव और वासुदेवों के (पुव्वभविया) पूर्वभविका—पूर्वभव में जो (नव धम्मायरिया होत्था) नव धर्माचार्य हुए हैं (तं जहा) तद्यथा—वे इस प्रकार से हैं—(संभूयसुभद्दसुदंसणे य सेयंस कण्ह गंगदत्ते, सागरसमुद्दनामे दुमसेणे य णवमए, संभूतः सुभद्रः सुदर्शनश्च श्रेयांसः कृष्णो गङ्गदत्तश्च, सागरः समुद्रनामा द्रुमसेनश्च नवमकः—संभूत, सुभद्र, सुदर्शन, श्रेयांस, कृष्ण, गंगदत्त, सागर, समुद्र और नौमे द्रुमसेन। (एए धम्मायरिया कित्ती पुरिसाण वासुदेवाणं, पुव्वभवे एयासिं जत्थ-नियाणाइं कासी य) एते धर्माचार्याः कीर्तिपुरुषाणां वासुदेवानाम्, पूर्वभवे आसन् यत्र निदानान्यकार्षुश्च—ये नौ धर्माचार्य इन कीर्तिपुरुष वासुदेवों के पूर्वभव में हुए है ॥सू० २०९॥

શબ્દાર્થ—(एएसिं णवण्हं बलदेववासुदेवाणं पुव्वभविया नव धम्मायरिया होत्था) एतेषां नवानां बलदेववासुदेवानां पूर्वभविकाः नव धर्माचार्याः अभवन्—તે નવ બળદેવો અને વાસુદેવોના પૂર્વભવના જે નવ ધર્માચાર્યો હતા. (तं जहा) तद्यथा—તેમના નામ આ પ્રમાણે છે—(संभूयसुभद्दसुदंसणे य सेयंसकण्हगंगदत्ते, सागरसमुद्दनामे दुमसेणे य णवमए) संभूतः सुभद्रः सुदर्शनश्च श्रेयांसः कृष्णो गङ्गदत्तश्च, सागरः समुद्रनामा द्रुमसेनश्च नवमकः—(१) સંભૂત, (૨) સુભદ્ર, (૩) સુદર્શન, (૪) શ્રેયાંસ, (૫) કૃષ્ણ, (૬) ગંગદત્ત, (૭) સાગર, (૮) સમુદ્ર અને (૯) દ્રુમસેન (एए धम्मायरिया कित्तीपुरिसाण वासुदेवाणं, पुव्वभवे एयासिं जत्थनियाणाइं कासी य) एते धर्माचार्याः कीर्तिपुरुषाणां वासुदेवानाम् पूर्वभवे आसन् यत्र निदानान्यकार्षुश्च—એ કીર્તિપુરુષ વાસુદેવોના પૂર્વભવમા તે નવ ધર્માચાર્યો થયા હતા ॥સૂ૦ ૨૦૯॥

टीका—'एएसिं' इत्यादि–एतेषां नवानां बलदेववासुदेवानां पूर्वभविका नव धर्माचार्या आसन, तद्यथा-संभूत सुभद्र सुदर्शनश्च श्रेयांसः कृष्णो गङ्गदत्तश्च। सागर समुद्रनामा द्रुमसेनश्च नवमः ॥५८। एते धर्माचार्याः कीर्तिपुरुषाणां वासुदेवानाम्। पूर्वभवे 'एयासि' आसन् यत्र निदा नान्यकार्षुः ॥५९॥ सू २०९॥

मूलम्—एएसिं नवण्हं वासुदेवानां नवनियाणभूमीओ होत्था, तं जहा—महुरा य कणगवत्थू सावत्थी पोयण च रायगिहं। कायंदी कोसंबी मिहिलपुरी हत्थिणपुरं च ॥६०॥ एएसि णं णवण्हं वासुदेवाणं नव नियाणकारणा होत्था, तं जहा—गावी जुवे संगामे तह इत्थीपराइओ रंगे। भज्जाणुरागपरङ्गी माउया इय ॥६१॥ एएसिं णवण्हं वासुदेवाणं नव पडिसत्तू होत्था, तं जहा—अस्सगीवे तारए मेरए महुकेढवे निसुभे य। बलिपहराए तह रावणे य जरासंधे॥६२॥ एए खलु पडिसत्तु कित्तिपुरिसाण वासुदेवाण। सव्वेवि चक्कजोही सव्वे वि हया सचक्केहिं ॥६३॥ एक्को य सत्तमीए पंच य छट्ठीए पंच मीए एक्को। एक्को य चउत्थीए कण्हो पुण तच्च पुढवीए ॥६४॥ अणियाणकडारामा सव्वे वि य केसवा णियाणकडा। उड्ढगामी

टीकार्थ—'एएसिं णवण्हं' इत्यादि–इन नौ बलदेव और वासुदेवों के पूर्वभव में जो नौ धर्माचार्य हुए हैं। वे इस प्रकार से हैं–संभूत, सुभद्र सुदर्शन श्रेयांस, कृष्ण, गंगदत्त, सागर, समुद्र और नौमे द्रुमसेन। ये नौ धर्माचार्य इन कीर्तिपुरुष वासुदेवों के पूर्वभव में हुए हैं ॥सू० २०९॥

ટીકાર્થ—'एएसिं णवण्ह इत्यादि–તે નવ બળદેવ અને વાસુદેવોના પૂર્વભવમાં જે નવ ધર્માચાર્ય થઈ ગયા તેમનાં નામ નીચે પ્રમાણે છે–(૧) સંભૂત, (૨) સુભદ્ર, (૩) સુદર્શન, (૪) શ્રેયાંસ, (૫) કૃષ્ણ (૬) ગંગદત્ત, (૭) સાગર (૮) સમુદ્ર અને (૯) દ્રુમસેન તે કીર્તિ પુરુષ વાસુદેવોના પૂર્વભવમાં તે નવ ધર્માચાર્યો થયા હતા ॥ સૂ, ૨૦૯ ॥

रामा केसवा सव्वे अहोगामी॥६५॥ अन्तकडा राम एगो पुणबंभलोय कप्पम्मि। एक्कासे गब्भवसही सिज्झिस्सइ आगमिस्सेणं॥६६॥ सू.२१०॥

अब हम इन वासुदेवों की इन निदानभूमियों को कहते हैं कि जहां पर इन्होंने निदान किया था—

शब्दार्थ-(एएसिं नवण्हं वासुदेवाणं) एतेषां नवानां वासुदेवानां-इन नौ वासुदेवों की (नव नियाणभूमीओ होत्था) नव निदानभूमय आसन्-नौ निदानभूमियां थीं (त जहा) तद्यथा-वे इस प्रकार से हैं (महुरा य कणगवत्थू सावत्थीपोयणं च रायगिहं, कायंदी कोसंबी, मिहिलपुरी हत्थिणपुर च) मथुरा कनकवास्तुश्च श्रावस्ती पोतनं च राजगृहम्, काकन्दी कौशाम्बी मिथिलापुरी हस्तिनापुरं च-मथुरा, कनकवास्तु, श्रावस्ती, पोतन, राजगृह, काकन्दी, कौशाम्बी, मिथिलापुरी और हस्तिनापुर। (एएसिं णं णवण्हं वासुदेवाणं णव नियाणकारणा होत्था) एतेषां खलु नवानां वासुदेवानां नव निदानकारणान्यभूवन्-इन नौ वासुदेवों के जो नौ निदान कारण हुए हैं (तं जहा) तद्यथा-वे इस प्रकार से हैं (गावी जुवे संगामे तह इत्थीपराइओ रंगे, भज्जाणुरागपरइड्ढी माउयाइय) गौर्यूपः संग्रामः स्त्रीपराजित रङ्गः, भार्यानुरागो गोष्ठीपरऋद्धिर्मातेति-गाय, यूप, सग्राम, स्त्रियों से पराजय, रङ्ग, भार्यानुराग, गोष्ठी, परऋद्धि और माता।

હવે સૂત્રકાર તે વાસુદેવોની તે નિદાનભૂમિયો વિષે કહે છે કે જ્યાં તેમને નિદાન કર્યું હતું-

શબ્દાર્થ—(एएसिं नवण्ह वासुदेवाणं) एतेषां नवानां वासुदेवानां-તે નવ વાસુદેવોની (नवनियाणभूमिओ होत्था) नव निदानभूमय आसन्-નવ નિદાનભૂમિયો હતી, (तं जहा) तद्यथा-તેમના નામ આ પ્રમાણે છે-(महुरा य कणगवत्थू सावत्थीपोयणं च रायगिहं, कायंदीकोसंबी, मिहिलपुरी हत्थिणपुरं च) मथुराकनकवास्तुश्च श्रावस्तीपोतनं च राजगृहम् काकन्दी कौशाम्बीमिथिलापुरी हस्तिनापुरं च-મથુરા, કનકવાસ્તુ, શ્રાવસ્તી, પોતન, રાજગૃહ, કાકન્દી, કૌશામ્બી, મિથિલાપુરી અને હસ્તિનાપુર (एएसिं णं णवण्हं वासुदेवाणं णव नियाणकारणा होत्था)एतेषां खलु नवानां वासुदेवानां नव निदानकारणान्यभूवन्-તે નવ વાસુદેવોનાં જે નવ નિદાનકારણો હતા (तं जहा) तद्यथा-તે આ પ્રમાણે છે-(गावीजुवे संगामे तह इत्थीपराइओ रंगे, भज्जाणुरागपरइड्ढीमाउयाइय) गौर्यूपः संग्रामः स्त्रीपराजितं रङ्गः, भार्यानुरागो गोष्ठीरऋद्धिर्मातेति-ગાય, યૂપ (ખીલો), સંગ્રામ, સ્ત્રીઓ દ્વારા પરાજય,

(एएसिं णवण्हं वासुदेवाण नवपडिसत्तू होत्था) एतेषां नवानां वासुदेवाना नव प्रतिशत्रव आसन्-इन नव वासुदेवों के जो प्रतिशत्रु प्रतिनारायण हुए हैं, (त जहा) तद्यथा-उनके नाम इस प्रकार से हैं (अस्सग्गीवे तारए मेरए मेहुकेढवनिसुंभे य, बलिपहराए तह रावणे जरासंधे) अश्वग्रीवस्तारको मेरको मधुकैटभो निशुम्भश्च, बलिप्रभराजस्तथारावणश्च नवमो जरासन्ध-अश्वग्रीव१, तारक२, मेरक३ मधुकैटभ४ निशुम्भ५, बलि६, प्रभराज७, रावण८ और जरासन्ध९। (एए खलु पडिसत्तू कित्तिपुरिसाणं वासुदेवाणं) एते खलु प्रतिशत्रवः कीर्तिपुरुषाणां वासुदेवानाम्-इस प्रकार ये कीर्ति पुरुष वासुदेवों के प्रतिशत्रु हुए हैं (सव्वे वि चक्कजोही सव्वे वि हया सच क्केहिं) सर्वेऽपि चक्रयोधिन सर्वे हता स्वचक्रेण-ये सब प्रतिवासुदेव वासुदेवों के साथ चक्र से युद्ध करते हैं और अपने उसी चक्र से अन्त में मारे जाते हैं। (एक्को य सत्तमीए पंच य छट्ठीए पंचमीए एक्को, एक्को य चउत्थीए कण्हो पुण तच्च पुढवीए) एकश्च सप्तम्यां पञ्च च षष्ठ्यां पञ्च म्यामेकः, एकश्च चतुर्थ्यां कृष्ण पुनस्तृतीयपृथिव्याम्-वासुदेवों में से एक-प्रथम वासुदेव सप्तमनरक में गये हैं, पांच वासुदेव अर्थात्-द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, पंचम और षष्ठ वासुदेव छठे नरक में गये हैं, एक-सातवें वासु

रूपे आपेलुं तेम ठोडी पराक्रमी अने भत। (एएसिं णवण्हं वासुदेवाण नव पडिसत्तू होत्था) एतेषां नवानां वासुदेवानां नव प्रतिशत्रव आसन्-वे नव वासुदेवाना जे प्रतिस्पर्धी प्रतिनारायणो थया तेमनां नाम आ प्रमाणे छे-(अस्सग्गीवे तारए मेरए मेहुकढवे निसुंभे य, बलिपहराए तह रावणे जरासंधे) अश्वग्रीवस्तारको मेरको मधुकैटभो निशुम्भश्च, बलि प्रभराजस्तथा रावणश्च नवमो जरासंधः-(१) अश्वग्रीव (२) तारक (३) मेरक (४) मधुकैटभ (५) निशुम्भ, (६) बलि (७ प्रभराज, (८) रावण (९) जरासंघ (एए खलु पडिसत्तू कित्तिपुरिसाण वासुदेवाण) एते खलु प्रतिशत्रव कीर्तिपुरुषाणां वासुदेवानाम् आ प्रमाणे कीर्तिपुरुष वासुदेवोना प्रतिशत्रुओ थया छे (सव्वे वि चक्कजोही सव्वे वि हयासचक्केहिं)सर्वेऽपि चक्रयोधिनः सर्वे हताः स्वच क्रेण-ते बधा प्रतिवासुदेवो वासुदेवोनी सामे चक्र वडे लडता हता अने पोताना तेज चक्रथी आखरे मार्या जता (एक्कोय सत्तमीए पंच य छट्ठीए पंचमीए एक्को, एक्कोय चउत्थीए कण्हो पुणतच्च पुढवीए) एकश्च सप्तम्यां पञ्च च षष्ठ्यां, पञ्चम्यामेकः, एकश्च चतुर्थ्यां कृष्ण पुनस्तृतीय पृथिव्याम्-वासु देवोमांना एक प्रथम वासुदेव सातमी नरकमां गया छे बीजा त्रीजा चोथा पांचमा अने छठ्ठा ए पांच वासुदेवो छठ्ठी नरकमां गया छे सातमां वासुदेव

टीका-'एएसिं' इत्यादि-एतेषां नवानां वासुदेवानां पूर्वभवे नव निदानभूमय आसन्, 'तं जहा'-तद्यथा-मथुरा कनकवास्तुश्च श्रावस्तीपोतनं च राज-

देव पंचम नरक में गये हैं, एक-आठवें वासुदेव चतुर्थनरक में गये हैं, और नवमें वासुदेव कृष्णवासुदेव तृतीय नरक में गये हैं। (अणियाणकडा रामा सव्वे वि केसवा नियाणकडा, उड्ढंगामी रामा केसवा सव्वे अहो गामी) अनिदानकृता रामाः सर्वेऽपि च केशवा निदानकृताः, उर्द्धगामिनो रामाः केशवाः सर्वेऽधोगामिनः--जितने भी बलदेव होते हैं वे सब विना निदान के होते हैं अर्थात् ये निदानबंध नहीं करते हैं। तथा जितने भी वासुदेव होते हैं ये सब निदान करके होते हैं, बलदेव उर्ध्वगामी और केशव-वासुदेव नरकगामी होते हैं। (अट्ठंतकडारामा एगो पुण बंभलोयकप्पम्मि, एका से गब्भवसहीसिज्झिसइ आगमिस्सेणं) अष्टान्तकृता रामाः एकः पुनर्ब्रह्मलोककल्पे, एका तस्य गर्भवसतिः सेत्स्यति आगमिष्यति खलु (काले)-आठ बलदेव तो मोक्षगामी हुए हैं, एक ब्रह्मलोककल्प में गये हैं। अतः ये ब्रह्मलोकगत बलदेव भी मनुष्यपर्याय पाकर आगामीकाल में मोक्ष जावेंगे ॥सू. २१०॥

टीकार्थ—'एएसिं णवण्ह वासुदेवाणं' इत्यादि-इन नौ वासुदेवों की नौ निदानभूमियां थीं। वे इस प्रकार से है-मथुरा, कनकवास्तु, श्रावस्ती,

પાચમી નરકમા ગયા છે, આઠમા વાસુદેવ ચોથી નરકમા ગયા છે, અને નવમા કૃષ્ણ વાસુદેવ ત્રીજી નરકમા ગયા છે (अणियाणकडा रामासव्वे वि य केसवा नियाणकडा, उड्ढगामीरामाकेसवा सव्वे अहोगामी) अनिदानकृता रामाः सर्वेऽपि च केशवाः निदानकृताः, उर्ध्वगामिनो रामाः केशवाः सर्वेऽधोगामिनः-જેટલા બળદેવો થાય છે તેઓ નિદાન વિનાના હોય છે-એટલે કે નિયાણુ બાધતા નથી પણ જેટલા વાસુદેવો થાય છે તે બધા નિયાણું બાધીને થાય છે બળદેવો ઉર્ધ્વગામી હોય છે પણ કેશવ-વાસુદેવો અધોગામી-નરકગામી હોય છે (अट्ठंतकडारामा एगोपुण बंभलोयकप्पम्मि, एक्का से गब्भवसहीसिज्झिस्सइ आगमिस्सेणं) अष्टान्तकृतारामाः एकः पुनर्ब्रह्मलोककल्पे, एका तस्य गर्भवसतिः सेत्स्यतिः आगमिष्यति खलु (काले)-આઠ બળદેવો તો મોક્ષે ગયા છે, એક બળદેવ બ્રહ્મલોક કલ્પમા ગયા છે, તેથી તે બ્રહ્મલોકમા ગયેલ બળદેવ પણ મનુષ્યપર્યાય પામીને આગામીકાળે મોક્ષે જશે ॥સૂ ૨૧૦॥

ટીકાર્થ—'एएसिं णवण्ह वासुदेवाणं' इत्यादि-તે નવ વાસુદેવોની નવ નિદાનભૂમિ હતી તેમના નામ આ પ્રમાણે છે-મથુરા, કનકવાસ્તુ, શ્રાવસ્તી પોતન

गृहम् । काकन्दी कौशाम्बी मिथिलापुरी हस्तिनापुरं च ॥६०॥ एतेषां खलु नवानां वासुदेवानां नवनिदानकारणा अभूवन्, तद्यथा-गौयूपः संग्रामः स्त्रीपराजित रङ्गः । भार्यानुरागो गोष्ठी परऋद्धिर्मातेति ॥६१॥ एतेषां नवानां वासुदेवानां नवप्रतिशत्रव आसन तद्यथा—अश्वग्रीवस्तारको मेरको मधुकैटभो निशुम्भश्च । बलि' प्रभराजस्तथा रावणश्च नवमो जरासंध ॥६२॥ एते खलु प्रतिशत्रवःकीर्तिपुरुषाणां वासुदेवानाम । सर्वेऽपि चक्रयोधिन सर्वे हताः स्वचक्रैः ॥६३॥ एकश्च सप्तम्यां पञ्च च षष्ठयां पञ्चम्यामेकः । एकश्च चतुर्थ्यां कृष्ण पुनस्तृतीयपृथिव्याम् । ६४॥ अनिदानकृता रामाः सर्वेऽपि च केशवा

पोतन राजगृह, काकन्दी, कौशाम्बी मिथिलापुरी और हस्तिनापुर । इन नौ वासुदेवों के जो नौ निदानकारण हुए हैं, वे इस प्रकार से हैं- गाय, यूप संग्राम, स्त्रीयों से पराजय, रङ्ग, भार्यानुराग, गोष्ठी, पर ऋद्धि और माता । इन नौ वासुदेवों के जो प्रतिशत्रु-प्रतिनारायण नौ हुए हैं । उनके नाम इस प्रकार से हैं-अश्वग्रीव, तारक मेरक, मधुकैटभ, निशुम्भ बलि, प्रभराज, रावण और जरासंध । इस प्रकार ये कीर्तिपुरुष वासुदेवों के प्रतिशत्रु हुए हैं । ये सब प्रतिवासुदेवों के साथ चक्र से युद्ध करते हैं और अपने उसी चक्र से अन्त में मारे जाते हैं । वासुदेवों में से एक-प्रथमवासुदेव सप्तम नरक में गये हैं, पांच वासुदेव अर्थात्--द्वितीय, तृतीय चतुर्थ, पंचम, और षष्ठ वासुदेव छठे नरक में गये हैं एक-सातवें वासुदेव पंचम नरक में गए हैं एक-आठवें वासुदेव चतुर्थ नरकमें गए हैं और नवमें वासुदेव कृष्णवासुदेव तृतीय पृथिवीमें गये हैं। जितने भी बलदेव होते हैं वे सब विना निदान के होते हैं अर्थात्-ये निदानबंध नहीं करते हैं। तथा जितने भी वासुदेव

રાજગૃહ કાકંદી કૌશામ્બી, મિથિલાપુરી અને હસ્તિનાપુર તે નવ વાસુદેવોના નિદાન કા ણો નીચે પ્રમાણે હતાં-ગાય, યૂપ, સંગ્રામ, સ્ત્રીઓદ્વારા પરાજય રંગ ભાર્યાનુરાગ ગોષ્ઠી પરઋદ્ધિ અને માતા. તે નવ વાસુદેવોના જે નવ પ્રતિશત્રુ-પ્રતિવાસુદેવો થઇ ગયા તેમનાં નામ નીચે પ્રમાણે છે—અશ્વગ્રીવ, તારક, મેરક મધુકૈ ભ નિશુમ્ભ બલિ પ્રભરાજ રાવણ અને જરાસંધ તે કીર્તિપુરુષ વાસુદેવોના પ્રતિ ાસુદેવો ઉપર પ્રમાણે હતા. તે બધા પ્રતિવાસુદેવો વાસુદેવોની સામે ચક્રથી યુદ્ધ કરતાં હતાં અને પોતાનાં જ તે ચક્રથી આખરે માર્યા જતાં વાસુદેવોમાંથી એક-પ્રથમ વાસુદેવ સાતમી નરકમાં ગયા છે, પાંચ વાસુદેવો-એટલે કે બીજાથી છઠ્ઠા સુધીના વાસુદેવો છઠ્ઠી નરકમાં ગયા છે, સાતમા વાસુદેવ પાંચમી નરકે ગયા છે આઠમાં વાસુદેવ ચોથી નરકે અને નવમાં વાસુદેવ કૃષ્ણવાસુદેવ ત્રીજી નરકે ગયા છે એટલા બળદેવો થાય છે તે વિના નિદાનના હોય છે—એટલે

निदानकृताः। ऊर्ध्वगामिनो रामाः केशवाः सर्वेऽधोगामिनः ॥६५॥ अष्टावन्तकृताः रामाः एकः पुनर्ब्रह्मलोककल्पे। एका तस्य गर्भवसतिः सेत्स्यति आगमिष्यति खलु (काले) ॥६६॥ सू. २१०॥

मूलम्--जंबुद्दीवे णं दीवे एरवए वासे इमीसे ओसप्पिणीए चउवीसं तित्थयरा होत्था, तं जहा-चंदाणणं सुचंदं अग्गीसेणं च नंदिसेणं च। इसिदिण्णं वयहारिं वंदिमो सोमचंदं च॥६७॥ वंदामि जुत्तिसेणं अजियसेण तहेव सिवसेणं। बुद्धं च देवसम्मं सययं निक्खित्तसत्थं च॥६८॥ असंजलं जिणवसहं वंदे य अणंतयं अमियणाणिं। उवसंतं च धुयरयं वंदे खलु गुत्तिसेणं च॥६९॥ अतिपासं च सुपासं देवेसरवंदियं च मरुदेवं। निव्वाणगयं च धरं खीणदुहं सामकोट्ठं च ॥७०॥ जियरागमग्गिसेणं वंदे खीणमग्गि उत्तंच। वोक्कसियपिज्जदोसं वारिसेणं गयं सिद्धि ॥७१॥ सू० २११॥

होते हैं ये सब निदान करके होते हैं। बलदेव उर्ध्वगामी और केशव-वासुदेव-पृथिवीगामी होते हैं। आठ बलदेव तो मोक्षगामी हुए हैं, एक ब्रह्मलोककल्प में गये हैं। अतः ये ब्रह्मलोकगत बलदेव भी मनुष्यपर्याय पाकर आगामीकाल में मोक्ष जावेंगे ॥सू. २१०॥

शब्दार्थ—(जबुद्दीवे णं दीवे एरवए वासे इमीसे ओसप्पिणीए चउवीसं तित्थयरा होत्था) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे ऐरवते वर्षेऽस्यामवसर्पिण्यां चतुर्विंशस्तीर्थङ्करा आसन्-जम्बूद्वीप नामक द्वीप में ऐरवतक्षेत्र में

કે નિયાણુ ગ ધતા નથી. પણ જેટલા વાસુદેવો થાય છે તે બધા નિયાણુ બાધીને થાય છે બ ળદેવ ઉર્ધ્વગ ામી હોય છે, વાસુદેવ નરકગામી હોય છે આઠ બળદેવ તો મોક્ષ ગયા છે, અને એક બળદેવ બ્રહ્મલોક કલ્પમા ગયા છે. તે બ્રહ્મકલ્પમા ગયેલ બળદેવ પણ મનુષ્યભવ પામીને મોક્ષે જશે ॥સૂ. ૨૧૦॥

શબ્દાર્થ—(जबुद्दीवे णं दीवे एरवए वासे इमीसे ओसप्पिणीए चउवीसं तित्थयरा होत्था) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे ऐरवते वर्षेऽस्यामवसर्पिण्यां चतुर्विंशतिस्तीर्थङ्करा आसन्-જમ્બૂદ્વીપ નામના દ્વીપમા આવેલા ઐરવતક્ષેત્રમા

इस उत्सर्पिणीकाल में चौबीस तीर्थंकर हुए (तं जहा) यथा—उनके नाम इस प्रकार हैं (चंदाणणं, सुचंदं, अग्गीसेणं च नंदिसेणं च) चन्द्राननं सुचन्द्रमग्निसेनं नन्दिसेनं च—चन्द्रानन१ सुचन्द्र२, अग्निसेन३, नन्दिसेन४ (इसिदिण्णं वयहारिं वंदिमो सोमचंदं च) ऋषिदत्तं व्रतधारिणं वन्दामहे सोमचन्द्रं च—ऋषिदत्त५ व्रतधारी६ और सोमचन्द्र७ मैं उनके लिए नमस्कार करता हूं। (वंदामि जुत्तिसेणं अजियसेणं तहेव सिवसेणं) वन्दे युक्तिसेनमजितसेनं तथैव शिवसेनम्—तथा युक्तिसेन८ अजितसेन९ शिवसेन१०, (बुद्धं देवसम्मं सययं निक्खित्तसत्थं च) बुद्धं च देवशर्माणं सततं निक्षिप्तशस्त्रं च—बुद्ध—उत्पन्नदेवशर्मा११, तथा निक्षिप्तशस्त्र नामक जिनदेव१२ को नमस्कार करता हूं। (असंजलं जिणवसहं वंदे य अणंतयं अमियणाणिं, उवसंतं धुयरयं वंदे खलु गुत्तिसेणं च) असंज्वलं जिनवृषभं वन्दे चानन्तकममितज्ञानिनम्, उपशान्तं च धुतरजसं वन्दे खलु गुप्तिसेनं च असंज्वल१३ जिनवृषभ१४ को मैं नमस्कार करता हूं। अमितज्ञानी अनन्तनाथ को मैं नमस्कार करता हूं१५। जिन्होंने कर्मरज का नाशकर दिया है—ऐसे उपशान्त नामक जिन को मैं नमस्कार करता हूं१६। गुप्तिसेन को मैं नमस्कार करता हूं१७। (अतिपासं च सुपासं देवेसर

આ ઉત્સર્પિણીકાળમાં ચોવીસ તીર્થંકરો થયા છે (तं जहा) तद्यथा—તેમનાં નામ આ પ્રમાણે છે (चंदाणणं सुचंदं, अग्गीसेणं, च नंदिसेणं च) चन्द्राननं सुचन्द्रमग्निसेनं नन्दिसेनं च—(૧) ચન્દ્રાનન, (૨) સુચન્દ્ર, (૩) અગ્નિસેન (૪) નંદીસેન (इसिदिण्णं वयहारिं वंदिमो सोमचंदं च) ऋषिदत्तं व्रतधारिणं वन्दामहे सोमचन्द्रं च—(૫) ઋષિદત્ત, (૬) વ્રતધારી (૭) સોમચન્દ્ર તેમને હું નમસ્કાર કરું છું (वंदामि जुत्तिसेणं अजियसेणं तहेव सिवसेणं) वन्दे युक्तिसेनमजितसेनं तथैव शिवसेनं—તથા (૮) યુક્તિસેન, (૯) અજિતસેન અને (૧૦) શિવસેનને હું વંદન કરું છું (बुद्धं देवसम्मं सययं निक्खित्तसत्थं च) बुद्धं च देवशर्माणं सततं निक्षिप्तशस्त्रं च—(૧૧) બુદ્ધ તત્ત્વદેવશર્મા, અને (૧૨) નિક્ષિપ્તશસ્ત્ર નામના જિનદેવને પણ નમસ્કાર કરું છું (असंजलं जिणवसहं वंदे य अणंतयं अमियणाणिं, उवसंतं धुयरयं वंदे खलु गुत्तिसेणं च) असंज्वलं जिनवृषभं वन्दे चानन्तकममितज्ञानिनम् उपशान्तं च धुतरजसं वन्दे खलु गुप्तिसेनं च—(૧૩) અસંજ્વલ અને (૧૪) જિનવૃષભ, ને નમસ્કાર કરું છું (૧૫) અમિતજ્ઞાની અનન્તનાથને હું નમન કરું છું (૧૬) જેમણે કર્મરજનો નાશ કર્યો છે એવા ઉપશાન્ત નામના જિનેશ્વરને હું નમન કરું છું (૧૭) ગુપ્તિ

टीका-'जंबुद्दीवे णं' इत्यादि-जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे ऐरवते वर्षेऽस्यामवस-र्पिण्यां चतुर्विंशतिस्तीर्थङ्करा आसन, तद्यथा-चन्द्रानन सुचन्द्रमग्निसेन नन्दि-सेन च। ऋषिदत्तं व्रतधारिण वन्दामहे सामचन्द्रं च ६७॥ वन्दे युक्तिसेन-मजितसेनं तथैव शिवसेनम्। बुद्धं च देवशर्माणं सततं निक्षिप्तशस्त्रं च ॥६९॥

(अतिपासं च सुपासं देवेसरवंदियं च मरुदेवं, निव्वाणगयं च धरं खीणदुहं सामकोट्ठं च) अतिपार्श्वं सुपार्श्वं देवेश्वरवन्दितं च मरुदेवम्, निर्वाणगतं क्षीणदुःखं श्यामकोष्ठं धरं जिनं वन्दे-अतिपार्श्व१८, सुपार्श्व१९ और देवेश्वरवंदित मरुदेव २० जिन को मैं नमस्कार करता हूं। निर्वाणगत, दुःख का क्षयकरने वाले और श्यामकोष्ठवाले धर नामक जिन को मैं नमस्कार करता हूं २१। (जियरायमग्गिसेणं वंदे खीणरायमग्गि उत्तं च, वोकसियपिज्जदोसं वारि-सेणं गयं सिद्धिं) जितरागमग्निसेननामानं जिन वन्दे, क्षीणरागमग्निपुत्र-नामानं जिनं च वन्दे, व्युत्कृष्टप्रेमद्वेष वारिसेन गतं सिद्धिम्-जितरागवाले अग्निसेन को२२, क्षीणरागवाले अग्निपुत्र को२३ एवं रागद्वेषरहित होकर सिद्धिगति को प्राप्त हुए वारिसेन२४जिनको मैं नमस्कार करता हू॥सू.२११॥

टीकार्थ- जंबूदीवे णं दीवे' इत्यादि-जम्बूद्वीप नामक द्वीप में ऐरवतक्षेत्र में इस उत्सर्पिणीकाल में चौबीस तीर्थंकर हुए, उनके नाम इस प्रकार है-चंद्रानन१, सुचंद्र२, अग्निसेन३, नन्दिसेन४, ऋषिदत्त५, व्रतधारी६ और सोमचन्द्र७ मैं इनको नमस्कार करता हू। तथा युक्तिसेन८ अजि

सेनने हुं नमन करुं छुं (अतिपासं च सुपासं देवेसरवंदियं च मरुदेवं, निव्वाणगयं च धरं खीणदुहं सामकोट्ठंच) अतिपार्श्वं च सुपार्श्वं देवेश्वर वन्दितं च मेरुदेवं, निर्वाणगतं क्षीणदुःखं श्यामकोष्ठं धरं जिनं वन्दे-(१८) अतिपार्श्व, (१९) सुपार्श्व, (२०) देवेश्वर वंदित मरुदेव, એ જિનદેવોને હું વંદન કરું છું (૨૧) નિર્વાણ પામેલા, દુઃખનો ક્ષય કરનારા અને શ્યામ કોઠવાળા ધર નામના જિનદેવને હું નમું છું (जियरायमग्गिसेण वंदे खीणरायमग्गिउत्तं च, वोकसिय पिज्जदोसवारिसेण गयं सिद्धिं) जितरागमग्निसेननामान जिन वन्दे, क्षीणरागमग्निपुत्रनामान जिनं च वन्दे, व्युत्कृष्टप्रेमद्वेष वारिसेन गतं सिद्धिम्-(૨૨) રાગને જિતનાર અગ્નિસેનને (૨૩) ક્ષીણરાગવાળા અગ્નિપુત્રને અને (૨૪) રાગદ્વેષ રહિત થઈને સિદ્ધિગતિ પ્રાપ્ત કરનાર વારિસેન જિનદેવને હું નમસ્કાર કરું છું ।।સૂ ૨૧૧।

ટીકાર્થ—'जंबूदीवे ण दीवे' इत्यादि—જંબૂદ્વીપના ઐરવતક્ષેત્રમાં આ ઉત્સર્પિણીકાળમાં જે ચોવીસ તીર્થંકરો થઈ ગયા તેમના નામ આ પ્રમાણે છે—(૧) ચન્દ્રાનન, (૨) સુચન્દ્ર, (૩) અગ્નિસેન, (૪) નન્દિસેન (૫) ઋષિદત્ત, (૬) વ્રતધારી, અને (૭) સોમચન્દ્ર, એ જિનદેવોને હું નમસ્કાર કરું છું (૮) યુક્તિસેન,

असज्वल जिनवृषभं च वन्दे भान-तकममितज्ञानिनम्। उपशान्त च धुतरजस वन्दे खलु गुप्तिसेन च॥६९॥ अतिपार्श्वं च सुपार्श्वं देवेश्वरवन्दित च मरुदेवम्। निर्वाणगतं क्षीणदुःखश्यामकोष्ठ धर=धरनामक जिन वन्दे॥७०॥ जितराग मग्निसेननामान जिनं च क्षीणरागमग्निपुत्रनामानं जिनं च वन्दे। व्युत्कृष्टप्रेमद्वेष रागद्वेषरहित सिद्धिं गत वारिसेननामानं च जिनं वन्दे॥७१॥ सू २११॥

मूलम्—जंबुद्दीवे णं दीवे आगमिस्साए उस्सप्पिणीए भारहे वासे सत्त कुलगरा भविस्संति, तं जहा—मियवाहणे सुभूमे य सुप्पभे य सयपभे। दत्ते सुहुमे सुबंधू य आगमिस्सा ण होक्खंति॥७२॥ जम्बुद्दीवे णं दीवे आगमिस्साए उस्सप्पिणीए एरवए वासे दस कुलगरा

तसेन९ शिवसेन१०, बुद्ध-तत्त्वज्ञदेवशर्मा११ तथा निक्षिप्तशस्त्र नामक जिनदेव१२ को नमस्कार करता हूं। असञ्ज्वल१३, जिनवृषभ१४ को मैं नमस्कार करता हूं। अमितज्ञानी अनंतनाथ को मैं नमस्कार करता हूं१५। जिन्होंने कर्मरज का नाशकर दिया है—एसे उपशांत नामक जिन को मैं नमस्कार करता हूं१६। गुप्तिसेन को मैं नमस्कार करता हूं१७ अतिपार्श्व१८ सुपार्श्व१९ और देवेश्वर वंदित मरुदेव२० जिनको मै नमस्कार करता हूं। निर्वाणगत, दुःख का क्षय करनेवाले और श्यामकोष्ठ वाले धर नामक जिनको मैं नमस्कार करता हूं २१। जितरागवाले अग्निसेन को२२, क्षीणरागवाले अग्निपुत्र को२३ एवं रागद्वेष रहित होकर सिद्धिगति को प्राप्त हुए वारिसेन२४ जिनको मैं नमस्कार करता हूं॥सू २११॥

---

(९) ※ज्वितसेन, (१०) शिवसेन, (११) बुद्ध-तत्त्वज्ञदेवशर्मा, तथा (१२) निक्षिप्त शस्त्र नामना जिनदेवने हुं नमन करुं छु (१३) असञ्ज्वल अने (१४) जिन वृषभने हुं वंदन करुं छु (१५) अमितज्ञानी अनंतनाथने हुं नमस्कार करुं छु (१६) कर्मरजनो नाश करनार उपशांत नामना जिनदेवने हुं वंदन करुं छु (१७) गुप्तिसेनने हुं नमुं छु (१८) अतिपार्श्व, (१९) सुपार्श्व अने (२०) देवेश्वर वंदित मरुदेव जिनेन्द्रने हुं वंदन करुं छु (२१) निर्वाण पामेल, दुःखनो क्षय करनार श्याम कोठवाळा धर नामना जिनदेवने हुं नमस्कार करुं छु (२२) राग पर विजय मेळवनार अग्निसेनने (२३) रागनो क्षय करनार अग्निपुत्रने तथा (२४) रागद्वेष रहित थईने सिद्धिगति प्राप्त करनार वारिसेन नामना जिनदेवने हुं नमन करुं छु ॥सू २११॥

भविस्संति, तं जहा–विमलवाहणे सीमंकरे सीमंधरे खेमंकरे खेमंधरे दढधणू, दसधणू, सयधणू, पडिसुई सुमइत्ति ॥७३॥ सू० २१२॥

शब्दार्थ–(जंबूदीवे णं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे–इस जंबूद्वीप नामके द्वीप में (आगमिस्साए उस्सप्पिणीए भारहे वासे) आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां भारते वर्षे–आनेवाले उत्सर्पिणीकाल में भारतवर्ष में (सत्त कुलगरा भविस्संति) सप्त कुलकरा भविष्यन्ति–सात कुलकर होगे। (तं जहा) तद्यथा-उनके नाम इस प्रकार से है (मियवाहणे सुभूमेय सुप्पभे य सयंपभे, दत्ते सुहुमे सुबंधू य आगमिस्सा ण होक्खंति) मितवाहनः सुभूमा च सुप्रभश्च स्वयंप्रभः, दत्तः सूक्ष्मः सुबन्धुश्च आगमिष्यति खलु भविष्यन्ति–मितवाहन१, सुभूम२, सुप्रभ३, स्वयंप्रभ४, दत्त५, सूक्ष्म६ और सुबंधु ये आगामीकाल में होवेंगे। (जंबूदीवे णं दीवे आगमिस्साए उस्सप्पिणीए एरवए वासे दस कुलगरा भविस्संति) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यामैरवते वर्षे दश कुलकरा भविष्यन्ति–जंबूद्वीप नामके द्वीप में आगामी उत्सर्पिणीकाल में ऐरवतक्षेत्र में दस कुलकर होवेंगे। (तं जहा) तद्यथा–उनके नाम ये हैं–(विमलवाहणे सीमंकरे सीमंधरे खेमंकरे खेमंधरे दढधणू दसधणू सयधणू पडिसूई सुमइत्ति) विमलवाहनः सीमङ्करः

शब्दार्थ—(जंबूदीवे णं दीवे) जंबूद्वीपे खलु द्वीपे–જંબૂદ્વીપ નામના આ દ્વીપમા (आगमिस्साए उस्सप्पिणीए भारहे वासे) आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां भारते वर्षे––આગામી ઉત્સર્પિણીકાળે ભારતવર્ષમા (सत्तकुलगरा भविस्संति) सप्तकुलकरा भविष्यन्ति–સાત કુલકર થશે (तं जहा) तद्यथा–તેમના નામ આ પ્રમાણે હશે-(मयवाहणे सुभूमेय सुप्पभे य सयपभे दत्ते सुहुमे सुबधू य आगमिस्सा ण होक्खति) मितवाहनः सुभूमा च, सुप्रभश्च स्वयंप्रभः, दत्तः सूक्ष्मः सुबन्धुश्च आगमिष्यति खलु भविष्यन्ति–(૧) મિતવાહન, (૨) સુભૂમ, (૩) સુપ્રભ, (૪) સ્વયપ્રભ, (૫) દત્ત, (૬) સૂક્ષ્મ અને (૭) સુબધુ, તે કુલકરો આગામી કાળમા થશે (जंबूदीवे णं दीवे आगमिस्साए उस्सप्पिणीए एरवये वासे दस कुलगरा भविस्सति) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यामैरवते वर्षे दश कुलकरा भविष्यन्ति––જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપમાં આગામી ઉત્સર્પિણીકાળમા ઐરવતક્ષેત્રે દસ કુલકર થશે (तं जहा) तद्यथा––તેમના નામ આ પ્રમાણે છે-विमलवाहणे सीमंकरे सीमंधरे खेमंकरे खेमधरे दढधणू दसधणू सयधणू पडिसूई सुमइत्ति)विमलवाहनः सीमङ्करः सीमन्धरः

टीका—'जम्बुद्दीवे णं' इत्यादि जम्बुद्वीपे खलु द्वीपे आगामिन्यामुत्सर्पिण्यां भारते वर्षे सप्त कुलकरा भविष्यन्ति, तद्यथा—मितवाहनः सुभूमः सुप्रभश्च स्वयम्प्रभः दत्तः सूक्ष्मः सुबन्धुश्च 'आगमिस्सा' आगमिष्यति खलु काले 'होक्खति'=भविष्यन्ति ॥७२॥ जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यामैरवते वर्षे दश कुलकरा भविष्यन्ति, तद्यथा—विमलवाहनः सीमङ्करः क्षेमङ्करः क्षेमन्धरः दृढधनुर्दशधनुः शतधनुः प्रतिश्रुतिः सुमतिरिति। ७३।सू २१२

मूलम्—जबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे आगमिस्साए ओस्सप्पिणीए चउवीस तित्थगरा भविस्सति, तं जहा—महापउमे सुरदेवे, सुपासे य सयपभे । सव्वाणुभूई अरहा देवस्सुए य होक्खइ॥७३॥ उदए पेढालपुत्ते य पोट्टिले सत्तकित्ति य। मणिसुव्वय य अममे,

---

मीमन्धर क्षेमङ्कर क्षेमन्धर दृढधनुर्दशधनु शतधनु प्रतिश्रुति सुमतिरिति–विमलवाहन१, सीमकर२, सीमधर ३, क्षेमकर४ क्षेमधर५ दृढधनु६ दशधनु७ शतधनु८ मतिश्रुति९ और सुमति१० ॥सू २१२॥

टीकार्थ—'जंबूदीवे णं दीवे' इत्यादि-इस जम्बूद्वीप नामके द्वीप में आने वाले उत्सर्पिणीकाल में भारतवर्ष में सात कुलकर होंगे। उनके नाम इस प्रकार से है-मितवाहन१ सुभूम२, सुप्रभ३, स्वयंप्रभ४, दत्त५, सूक्ष्म६ और सुबंधु। ये आगामीकाल में होवेंगे। जंबूद्वीप नामक द्वीप में आगामी उत्सर्पिणीकाल में ऐरवतक्षेत्र में दस कुलकर होंगे। उनके नाम ये हैं-विमलवाहन१, सीमकर२, सीमधर३, क्षेमकर ४, क्षेमधर५ दृढधनु ६, दशधनु७, शतधनु८, प्रतिश्रुति९ और सुमति१० ॥सू २१२॥

क्षेमङ्करः क्षेमन्धर दृढधनुर्दशधनु शतधनु प्रतिश्रुति सुमतिरिति–
(१) विमलवाहन, (२) सीमंकर (३) सीमंधर (४) क्षेमंकर (५) क्षेमंधर (६) દઢધનુ (૭) દશધનુ (૮) શતધનુ (૯) પ્રતિશ્રુતિ અને (૧૦) સુમતિ ।સૂ ૨૧૨।

ટીકાર્થ—'जंबूदीवे णं दीवे' इत्यादि—આ જમ્બૂદ્વીપમાં આગામી ઉત્સર્પિણીકાળમાં ભરતક્ષેત્રમાં સાત કુલકરો થશે તેમના નામ આ પ્રમાણે છે—(૧) મિતવાહન, (૨) સુભૂમ (૩) સુપ્રભ (૪) સ્વયંપ્રભ, (૫) દત્ત, (૬) સૂક્ષ્મ, અને (૭) સુબંધુ જમ્બૂદ્વીપ નામના દ્વીપમાં આગામી ઉત્સર્પિણી કાળમાં ઐરવત ક્ષેત્રમાં દસ કુલકર થશે. તેમનાં નામ આ પ્રમાણે છે-(૧) વિમલવાહન (૨) સીમંકર (૩ સીમંધર (૪) ક્ષેમંકર, (૫) ક્ષેમંધર (૬) દઢધનુ (૭) દશધનુ (૮) શતધનુ (૯) પ્રતિશ્રુતિ અને (૧૦) સુમતિ, ।।સૂ. ૨૧૨।।

सव्वभावविऊ जिणे॥७४॥ अरहा णिक्कसाए य, निप्पुलाए य निम्ममे चित्तउत्ते समाही य आगमिस्से णं होक्खइ ॥७५॥ संवरे अणियट्टी य विजए विमलेति च। देवोववाए अरहा अणंतविजए इय ॥७६॥ एए वुत्ता चउव्वीसं भरहे वासम्मि केवली। आगमिस्से णं होक्खंति धम्मतित्थस्स देसगा ॥७७॥सू० २१३॥

शब्दार्थ—जंबूद्दीवेण दीवे भारहे वासे आगमिस्साए उस्सप्पिणीए चउवीसं तित्थगरा भविस्संति) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां चतुर्विंशतिस्तीर्थंकरा भविष्यन्ति—जम्बूद्वीप नामके द्वीप मे भारतवर्ष में आगामी उत्सर्पिणीकाल में चौवीस तीर्थंकर होंगे। (तं जहा) तद्यथा—उनके नाम इस प्रकार से है—(महापउमे, सूरदेवे, सुपासे य सयंपभे, सव्वाणुभूई अरहा देवस्सुए य होक्खइ) महापद्मः—सूरदेवः सुपार्श्वश्च स्वयंप्रभः सर्वानुभूतिरर्हन् देवश्रुतश्च भविष्यति महापद्म १, सूरदेव २, सुपार्श्व ३, स्वयंप्रभ ४ सर्वानुभूति ५, देवश्रुत ६, (उदये पेढालपुत्ते य पोट्टीले सत्तकित्ति य, मुणिसुव्वए य अममे सव्वभावविऊ जिणे) उदयः पेढालपुत्रश्च पोट्टिलः सप्तकीर्तिश्च, मुनिसुव्रतश्च अममः सर्वभावविद्‌जिनः—उदय ७ पेढालपुत्र ८ पोट्टिल ९, सप्तकीर्ति १० मुनिसुव्रत ११ अमम १२ सर्वभाववित् १३ (अरहा णिक्कसाए य निप्पुलाए य निम्ममे, चित्त उत्ते समाही य आगमिस्से

शब्दार्थ—(जंबूदीवे णं दीवे भारहे वासे आगम्मिस्साए उस्सप्पिणीए चउवीसं तित्थगरा भविस्संति) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां चतुर्विंशतिस्तीर्थंकरा भविष्यन्ति—જમ્બૂદ્વીપ નામના દ્વીપમાં આવેલા ભરતક્ષેત્રમાં આગામી ઉત્સર્પિણીકાળમાં ૨૪ ચોવીસ તીર્થંકરો થશે (तं जहा) तद्यथा—તેમના નામ આ પ્રમાણે હશે—(महापउमे सूरदेवे सुपासे य सयंपभे, सव्वाणुभूई अरहा देवस्सुए य होक्खइ)महापद्मःसूरदेवः सुपार्श्वश्च स्वयंप्रभः, सर्वानुभूतिरर्हन् देवश्रुतश्च भविष्यन्ति—(१) મહાપદ્મ, (૨) સૂરદેવ, (૩) સુપાર્શ્વ, (૪) સ્વયંપ્રભ, (૫) સર્વાનુભૂતિ, (૬) દેવશ્રુત (उदये पेढालपुत्ते य पोट्टिले सत्तकित्ति य, मुणिसुव्वय य अममे सव्वभाव विऊ जिणे) उदयः पेढालपुत्रश्च पोट्टिलः सप्तकीर्तिश्च,मुनिसुव्रतश्च अममः सर्वभावविद् जिनः—(૭) ઉદય, (૮) પેઢાલપુત્ર, (૯) પોટ્ટિલ, (૧૦) સપ્તકીર્તિ, (૧૧) મુનિસુવ્રત (૧૨) અમમ, (૧૩) સર્વભાવવિત (अरहा णिक्कसाए य निप्पुलाए य निम्ममे, चित्तउत्त समाही य आगमिस्से ण होक्खइ) अर्हन् निष्कषायश्च निष्पुला

सव्वभावविऊ जिणे॥७४॥ अरहा णिक्कसाए य, निप्पुलाए य निम्ममे चित्तउत्ते समाही य आगमिस्से णं होक्खइ ॥७५॥ संवरे अणियट्टी य विजए विमलेति च। देवोववाए अरहा अणंतविजए इय ॥७६॥ एए वुत्ता चउव्वीसं भरहे वासम्मि केवली। आगमिस्से णं होक्खंति धम्मतित्थस्स देसगा ॥७७॥सू० २१३॥

शब्दार्थ—जंबूद्दीवेण दीवे भारहे वासे आगमिस्साए उस्सप्पिणीए चउवीसं तित्थगरा भविस्संति) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां चतुर्विंशतिस्तीर्थंकरा भविष्यन्ति—जम्बूद्वीप नामके द्वीप में भारतवर्ष में आगामी उत्सर्पिणीकाल में चौवीस तीर्थंकर होंगे। (तं जहा) तद्यथा—उनके नाम इस प्रकार से हैं—(महापउमे, सूरदेवे, सुपासे य सयंपभे, सव्वाणुभूई अरहा देवस्सुए य होक्खइ) महापद्मः—सूरदेवः सुपार्श्वश्च स्वयंप्रभः सर्वानुभूतिरर्हन् देवश्रुतश्च भविष्यति महापद्म १, सूरदेव २, सुपार्श्व ३, स्वयंप्रभ ४ सर्वानुभूति ५, देवश्रुत ६, (उदये पेढालपुत्ते य पोट्टीले सत्तकित्ति य, मुणिसुव्वए य अममे सव्वभावविऊ जिणे) उदयः पेढालपुत्रश्च पोट्टिलः सत्तकीर्तिश्च, मुनिसुव्रतश्च अममः सर्वभावविद्जिनः—उदय ७ पेढालपुत्र ८ पोट्टिल ९ सत्तकीर्ति १० मुनिसुव्रत ११ अमम १२ सर्वभाववित् १३ (अरहा णिक्कसाए य निप्पुलाए य निम्ममे, चित्त उत्ते समाही य आगमिस्से

शब्दार्थ—(जंबूदीवे णं दीवे भारहे वासे आगमिस्साए उस्सप्पिणीए चउवीसं तित्थगरा भविस्संति) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां चतुर्विंशतिस्तीर्थंकरा भविष्यन्ति—જંબુદ્વીપ નામના દ્વીપમાં આવેલા ભરતક્ષેત્રમાં આગામી ઉત્સર્પિણીકાળમાં ૨૪ ચોવીસ તીર્થંકરો થશે (तं जहा) तद्यथा—તેમના નામ આ પ્રમાણે હશે—(महापउमे सूरदेवे सुपासे य सयंपभे, सव्वाणुभूई अरहा देवस्सुए य होक्खइ)महापद्मःसूरदेवः सुपार्श्वश्च स्वयंप्रभः, सर्वानुभूतिरर्हन् देवश्रुतश्च भविष्यन्ति—(१) મહાપદ્મ, (२) સૂરદેવ, (३) સુપાર્શ્વ, (४) સ્વયંપ્રભ, (५) સર્વાનુભૂતિ, (६) દેવશ્રુત (उदये पेढालपुत्ते य पोट्टिले सत्तकित्ति य, मुणिसुव्वए य अममे सव्वभाव विऊ जिणे) उदयः पेढालपुत्रश्च पोट्टिलः सत्तकीर्तिश्च,मुनिसुव्रतश्च अममः सर्वभावविद् जिनः—(७) ઉદય, (८) પેઢાલપુત્ર, (९) પોટ્ટિલ, (१०) સત્તકીર્તિ, (११) મુનિસુવ્રત (१२) અમમ, (१३) સર્વભાવવિત (अरहा णिक्कसाए य निप्पुलाए य निम्ममे, चित्तउत्त समाही य आगमिस्से णं होक्खइ) अर्हन् निष्कषायश्च निष्पुला

टीका—'जंबुद्दीवे णं' इत्यादि जम्बुद्वीपे खलु द्वीपे आगामिन्यामुत्सर्पिण्यां भारते वर्षे सप्त कुलकरा भविष्यन्ति, तद्यथा—मितवाहनः सुभूमश्च सुप्रभश्च स्वयंप्रभः। दत्तः सूक्ष्मः सुबन्धुश्च 'आगमिस्सा' आगमिष्यति खलु काले 'होक्खंति'=भविष्यन्ति ॥७२॥ जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यामैरवते वर्षे दश कुलकरा भविष्यन्ति, तद्यथा-विमलवाहनः सीमङ्करः क्षेमङ्करः क्षेमन्धरः दृढधनुर्दशधनुः शतधनुः प्रतिश्रुतिः सुमतिरिति। ७३। सू २१२

मूलम्—जंबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे आगमिस्साए ओसप्पिणीए चउवीसं तित्थगरा भविस्संति, तं जहा—महापउमे सूरदेवे, सुपासे य सयंपभे। सव्वाणुभूई अरहा देवस्सुए य होक्खइ ॥७३॥ उदए पेढालपुत्ते य पोट्टिले सत्तकित्ति' य। मणिसुव्वय य अममे,

सीमंधर क्षेमङ्करः क्षेमन्धरः दृढधनुर्दशधनुः शतधनुः प्रतिश्रुतिः सुमतिरिति-विमलवाहन१, सीमंकर२, सीमंधर ३, क्षेमंकर४ क्षेमंधर५ दृढधनु६ दशधनु७ शतधनु८ प्रतिश्रुति९ और सुमति१० ॥सू. २१२॥

टीकार्थ—'जंबुद्दीवे णं दीवे' इत्यादि-इस जम्बूद्वीप नामक द्वीप में आने वाले उत्सर्पिणीकाल में भारतवर्ष में सात कुलकर होंगे। उनके नाम इस प्रकार से हैं-मितवाहन१ सुभूम२, सुप्रभ३, स्वयंप्रभ४, दत्त५, सूक्ष्म और सुबन्धु। ये आगामीकाल में होवेंगे। जंबूद्वीप नामक द्वीप में आगामी उत्सर्पिणीकाल में ऐरवतक्षेत्र में दस कुलकर होवेंगे। उनके नाम ये हैं-विमलवाहन१, सीमंकर२, सीमंधर३, क्षेमंकर ४, क्षेमंधर५, दृढधनु६, दशधनु७, शतधनु८ प्रतिश्रुति९ और सुमति१० ॥सू २१२॥

क्षेमङ्करः क्षेमन्धरः दृढधनुर्दशधनुः शतधनुः प्रतिश्रुतिः सुमतिरिति-
(१) विमलवाहन (२) सीमंकर (३) सीमंधर (४) क्षेमंकर (५) क्षेमंधर (६) दृढधनु (७) दशधनु (८) शतधनु (९) प्रतिश्रुति अने (१०) सुमति। सू २१२॥

टीकार्थ—'जंबुद्दीवे णं दीवे' इत्यादि—आ जंबूद्वीपमां आगामी उत्सर्पिणीमां भरतवर्षमां सात कुलकरो थशे. तेमनां नाम आ प्रमाणे छे—(१) मितवाहन, ( ) सुभूम (३) सुप्रभ (४) स्वयंप्रभ (५) दत्त, (६) सूक्ष्म अने (७) सुबन्धु जंबूद्वीप नामना द्वीपमां आगामी उत्सर्पिणी कालमां ऐरवत क्षेत्रमां दस कुलकर थशे. तेमनां नाम आ प्रमाणे छे-(१) विमलवाहन ( ) सीमंकर (३ सीमंधर (४) क्षेमंकर, (५) क्षेमंधर (६) दृढधनु (७) दशधनु (८) शतधनु (९) प्रतिश्रुति अने (१) सुमति, ॥सू. २१२॥

सव्वभावविऊ जिणे॥७४॥ अरहा णिक्कसाए य, निप्पुलाए य निम्ममे चित्त उत्ते समाही य आगमिस्से णं होक्खइ ॥७५॥ संवरे अणियट्टी य विजए विमलेति च। देवोववाए अरहा अणंतविजए इय ॥७६॥ एए वुत्ता चउव्वीसं भरहे वासम्मि केवली। आगमिस्से णं होक्खंति धम्मतित्थस्स देसगा ॥७७॥सू० २१३॥

शब्दार्थ—जंबूदीवेणं दीवे भारहे वासे आगमिस्साए उस्सप्पिणीए चउवीसं तित्थगरा भविस्संति) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां चतुर्विंशतिस्तीर्थंकरा भविष्यन्ति—जम्बूद्वीप नामके द्वीप में भारतवर्ष में आगामी उत्सर्पिणीकाल में चौवीस तीर्थंकर होंगे। (तं जहा) तद्यथा—उनके नाम इस प्रकार से है—(महापउमे, सूरदेवे, सुपासे य सयंपभे, सव्वाणुभूई अरहा देवस्सुए य होक्खइ) महापद्मः—सूरदेवः सुपार्श्वश्च स्वयंप्रभः सर्वानुभूतिरर्हन् देवश्रुतश्च भविष्यति महापद्म १, सूरदेव २, सुपार्श्व ३, स्वयंप्रभ ४ सर्वानुभूति ५, देवश्रुत ६, (उदये पेढालपुत्ते य पोट्टिले सत्तकित्ति य, मुणिसुव्वय य अममे सव्वभावविऊ जिणे) उदयः पेढालपुत्रश्च पोट्टिलः सप्तकीर्तिश्च, मुनिसुव्रतश्च अममः सर्वभावविद् जिनः—उदय ७ पेढालपुत्र ८ पोट्टिल ९ सप्तकीर्ति १० मुनिसुव्रत ११ अमम १२ सर्वभाववित् १३ (अरहा णिक्कसाए य निप्पुलाए य निम्ममे, चित्त उत्ते समाही य आगमिस्से

शब्दार्थ—(जंबूद्दीवे णं दीवे भारहे वासे आगम्मिस्साए उस्सप्पिणीए चउवीसं तित्थगरा भविस्संति) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां चतुर्विंशतिस्तीर्थंकरा भविष्यन्ति—જબૂદ્વીપ નામના દ્વીપમા આવેલા ભરતક્ષેત્રમા આગામી ઉત્સર્પિણીકાળમા ૨૪ ચોવીસ તીર્થંકરો થશે (तं जहा) तद्यथा—તેમના નામ આ પ્રમાણે છે—(महापउमे सूरदेवे सुपासे य सयंपभे, सव्वाणुभूई अरहा देवस्सुए य होक्खइ) महापद्मःसूरदेवः सुपार्श्वश्च स्वयंप्रभः, सर्वानुभूतिरर्हन् देवश्रुतश्च भविष्यन्ति—(१) મહાપદ્મ, (२) સૂરદેવ, (૩) સુપાર્શ્વ, (૪) સ્વયપ્રભ, (૫) સર્વાનુભૂતિ, (૬) દેવશ્રુત (उदये पेढालपुत्ते य पोट्टिले सत्तकित्ति य, मुणिसुव्वय य अममे सव्वभाव विऊ जिणे) उदयः पेढालपुत्रश्च पोट्टिलः सप्तकीर्तिश्च,मुनिसुव्रतश्च अममः सर्वभावविद् जिनः—(૭) ઉદય, (૮) પેઢાલપુત્ર, (૯) પોટ્ટિલ, (૧૦) સપ્તકીર્તિ, (૧૧) મુનિસુવ્રત (૧૨) અમમ, (૧૩) સર્વભાવવિત (अरहा णिक्कसाए य निप्पुलाए य निम्ममे, चित्तउत्त समाही य आगमिस्से णं होक्खइ) अर्हन् निष्कषायश्च निष्पुला

टीका—'जंबुद्दीवे ण दीवे' इत्यादि–जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे 'आगमिस्साए' आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां चतुर्विंशतिस्तीर्थकरा भविष्यन्ति, तद्यथा–महापद्मः१ सूरदेवः२ सुपार्श्वः३ स्वयंप्रभ ४। सर्वानुभूतिरर्हन्५, देव श्रुतश्च६ भविष्यति ॥७३॥ उदय ७ पेढालपुत्रश्च८ पोट्टिल ९ शतकीर्तिश्च१०। मुनिसुव्रतश्च११ अमम १२ 'सव्वभावविऊ' सर्वभाववित्१३ जिन ॥७४॥ अर्हन् (य होक्खइ) अर्हन् निष्कषायश्च निष्पुलाकश्च निर्ममः। चित्रगुप्त समाधिश्च आगमिष्यति काले भविष्यति–अर्हत निष्कषाय १४, निष्पुलाक १५, निर्मम १६ चित्रगुप्त १७, समाधि १८, संवरे अणियट्टी य विजए विमले त्ति य देवोववाए अरहा अणंतविजए इय) संवरोऽनिवृत्तिश्च विमलाविजय इति च, देवोपपातोऽर्हन्ननन्त विजय इति–संवर १९, अनिवृत्ति २० विजय २१ विमल २२ देवोपपात और अर्हत अनन्तविजय २४ (एए वुत्ता चउव्वीस भरहे वासम्मि केवली, आगमिस्से ण होक्खंति धम्मतित्थस्स देसगा) एते उक्ताश्चतुर्विंशति भीरते वर्षे केवलिन आगमिष्यति काले भविष्यति धर्मतीर्थस्य देशका ये पूर्वोक्त चौबीस तीर्थकर भारतवर्ष म आगामीकाल में धर्मतीर्थ के उपदेशक केवली होंगे ॥सू० २१३॥

टीकार्थ—'जंबुद्दीवेण दीवे' इत्यादि—जम्बूद्वीप नामके द्वीप में भारतवर्ष में आगामी उत्सर्पिणीकाल में चौबीस तीर्थंकर होंगे। उनके नाम इस प्रकार से हैं—महापद्म १, सूरदेव २ सुपार्श्व ३ स्वयंप्रभ ४ सर्वानुभूति ५ देवश्रुत ६ उदय ७ पेढालपुत्र ८ पोट्टिल ९ शतकीर्ति १०, मुनिसुव्रत

कश्च निर्ममः चित्रगुप्त समाधिश्च आगमिष्यति काले भविष्यति–(१४)અર્હંત નિષ્કષાય (૧) નિષ્પુલાક (૧૬) નિર્મમ (૭) ચિત્રગુપ્ત (૧૮) સમાધિ (संवरे अणियट्टी य विजए विमलेति य देवोववाए अरहा अणंतविजए इय) संवरोऽनिवृत्तिश्च विमलो विजय इति च देवोपपातोऽर्हननन्त विजय इति–(૧૯) સંવર (૨૦) અનિવૃત્તિ, (૨૧) વિજય, (૨૨)વિમલ (૨૩) દેવોપપાત, (૨૪) અર્હંત અનન્તવિજય (एए वुत्ता चउवीस भरहे वासे केवली, आगमिस्स ण होक्खंति धम्मतित्थस्स देसगा) एते उक्ताश्चतुर्विंशतिर्भारते वर्षे केवलिनः, आगमिष्यतिकाले भविष्यन्ति धर्मतीर्थस्य देशकाः–પૂર્વોક્ત ૨૪ ચોવીસ તીર્થંકરો આગામીકાળે ભારતવર્ષમાં ધર્મતીર્થના ઉપદેશક કેવલી થશે. ॥સૂ ૨૧૩॥

ટીકાર્થ—'जंबुद्दीवे णं दीवे' इत्यादि–જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપમાં આવેલા ભારતવર્ષમાં આગામી ઉત્સર્પિણીકાળમાં ચોવીસ તીર્થંકર થશે. તેમનાં નામ આ પ્રમાણે છે—(૧) મહાપદ્મ, (૨) સૂરદેવ, (૩) સુપાર્શ્વ, (૪) સ્વયંપ્રભ (૫) સર્વાનુભૂતિ (૬) દેવશ્રુત, (૭) ઉદય (૮) પેઢાલપુત્ર, (૯) પોટ્ટિલ (૧૦) શતકીર્તિ

निष्कषायश्च१४ निष्पुलाकश्च१५ निर्ममः१६ । चित्रगुप्तः १७ समाधिश्च १८ 'आगमिस्सेण' आगमिष्यति काले भविष्यति ॥७५॥ संवरोऽनिर्वृत्तिश्च २० विमलो२१ विजय२२ इति च । देवोपपातोऽर्हन्२३ नन्तविजय२४ इति॥७६॥ एते उक्ताश्चतुर्विंशतिर्भारते वर्षे केवलिनः । आगमिष्यति काले भविष्यन्ति धर्मतीर्थस्य देशका. ॥७७॥ सू. २१३॥

मूलम्—एएसि णं चउव्वीसाए तित्थकराणं पुव्वभविया चउव्वीसं नामदेज्जा भविस्संति, तं जहा—सेणिए[1] सुपास[2] उदए[3] पोट्टिल्ले[4] अणगार तह दढाऊ[5] य । कत्तिय[6] संखे[7] य तहा नंद[8] सुनंदे[9] य सत्तए[10] य ॥७८॥ बोद्धव्वा देवई[11] य कण्हे[12] य तह सच्चई[13] य बलदेवे[14] । रोहिणि[15] सुलसा[16] चेव तत्तो खलु रेवई[17] चेव॥७९॥ ततो हवइ सयाली[18] बोद्धव्वे, खलु तहा भयाली[19] य । दीवायणे[20] य कण्हे, तत्तो खलु नारए[21] चेव॥८०॥ अंबडे[22] दारुमडे[23] य साईबुद्धे[24] य होइ बोद्धव्वे। भावी तित्थगराणं णामाइं पुव्वभवियाइं॥८१॥ एएसि णं चउव्वीसाए तित्थगराणं चउव्वीसं पियरो भविस्संति, चउव्वीसं मायरो भविस्संति, चउव्वीसं पढमसीसा भविस्संति, चउव्वीसं पढमसिस्सिणीओ भविस्संति, चउव्वीसं पढमभिक्खादायगा भविस्संति, चउव्वीसं चेइयरुक्खा भविस्संति ॥ सू० २१४ ॥

११, अमम १२ सर्वभाववित् १३ अर्हत निष्कषाय १४, निष्पुलाक १५ निर्मम १६ चित्रगुप्त १७ समाधि १८ संवर १९ अनिवृत्ति २० विजय २१, विमल २२, देवोपपात २३ और अर्हन अनंत विजय २४। ये पूर्वोक्त चौबीस तीर्थंकर भारतवर्ष में आगामीकाल में धर्मतीर्थ के उपदेशक केवली होंगे। सू० २१३॥

---

[११] મુનિસુવ્રત્ત, (૧૨) અમમ, (૧૩) સર્વભાવવિત, (૧૪) અર્હંત નિષ્કાય,(૧૫) નિષ્પુલાક, (૧૬) નિર્મમ, (૧૭) ચિત્રગુપ્ત, (૧૮) સમાધિ, (૧૯) સવર, (૨૦) અનિર્વૃત્તિ, (૨૧) વિજય, (૨૨) વિમલ, (૨૩) દેવોપપાત અને (૨૪) અર્હંત અનતવિજય. તે પૂર્વોક્ત ૨૪ ચોવીસ તીર્થંકરો ભારતવર્ષમા આગામીકાળમાં ધર્મતીર્થના ઉપદેશક કેવલી થશે ।।સૂ ૨૧૩।

शब्दार्थ—(एएसि णं चउव्वीसाए तित्थगराणं) एतेषां खलु चतुर्विंशते स्तीर्थकराणां इन चौवीस तीर्थंकरों के (पुव्वभविया चउव्वीसं नामधेज्जा भविस्सति) पूर्वभविकानि चतुर्विंशतिं नामधेयानि भविष्यन्ति—पूर्वभव संबंधी जो चौवीस नाम थे वे य हैं (सेणिय सुपास उदए पोट्टिल अणगार तह दढाऊ य, कत्ति य संखे य तहा नंद सुनंदे य सतए य) श्रेणिकः सुपार्श्वः उदयः पोट्टिलोऽनगारस्तथा दृढायुश्च, कार्तिकः शंखश्च तथा नन्दः सुनन्दश्च शतकश्च—श्रेणिक १, सुपार्श्व २, उदय ३ अनगार पोट्टिल ४ दढायु ५ कार्तिक ६ शंख ७ नंद ८ सुनंद ९ शतक १० (बोद्धव्वा देवई य कण्हय तह सचई य बलदेवे रोहिणि सुलसा चेव तत्तो खलु रेवईचेव—बोद्धव्या देवकी च कृष्णश्च तथा सात्यकिश्च बलदेव रोहिणी सुलसा चैव ततःखलु रेवती चैव—)देवकी ११ कृष्ण १२ सात्यकि १३ बलदेव १४ रोहिणी १५ सुलसा १६ रेवती १७ (तत्तो हवई सयाली बोद्धव्वे खलु तहा भयाली य दीवायणे य कण्हे तत्तो खलु नारए चेव) ततो भवति शताली र्बोद्धव्य खलु तथा भयालिश्च द्वैपायनश्च कृष्णस्ततः खलु नारदश्चैव—शतालि १८ भयालि १९ कृष्णद्वैपायन २० नारद २१ (अंबड दारुमडे य साईबुद्धे य होइ बोद्धव्वे भावी तित्थगराणं णामाइं पुव्वभवियाइं—अम्बडो दारुमृत स्वाति

भावार्थ—(एएसि णं चउव्वीसाए तित्थगराणं) एतेषां खलु चतुर्विंशतेस्तीर्थंकराणां—ते चोवीस तीर्थंकरोना (पुव्वभविया चउव्वीसं नामधेज्जा भविस्सति) पूर्वभविकानि चतुर्विंशति नामधेयानि भविष्यन्ति—पूर्वभवना जे नाम हता ते आ प्रमाणे हता (सेणिय सुपास उदए पोट्टिल अणगार तह दढाऊ य, कत्ति य संखे य तहा नंद सुनंदे य सतए य)श्रेणिकः सुपार्श्व उदयः पोट्टिलोऽनगारस्तथा दृढायुश्च, कार्तिकः शंखश्च तथा नन्दः सुनन्दश्च शतकश्च—(१) श्रेणिक, (२) सुपार्श्व (३) उदय, (४) अणगार पोट्टिल (५) दृढायु (६) कार्तिक (७) शंख (८) नंद (९) सुनंद (१०) शतक (बोद्धव्वा देवई य कण्हय तह सचई य बलदेव, रोहिणि सुलसा चेव, तत्तो खलु रेवईचेव) बोद्धव्या देवकी च कृष्णश्च तथा सात्यकिश्च बलदेव,रोहिणी सुलसाचैव ततः खलु रेवती चैव—(११) देवकी (१२) कृष्ण (१३) सात्यकि, (१४) बलदेव (१५) रोहिणी (१६) सुलसा (१७) रेवति (तत्तो हवई सयाली बोद्धव्व खलु तहा भयाली य दीवायणे य कण्हे तत्तो खलु नारएचेव) ततो भवति शताली र्बोद्धव्यः खलु तथा भयालिश्च, द्वैपायनश्च कृष्णस्ततः खलु नारदश्चैव—(१८) शतालि (१९) भयालि (२०) कृष्णद्वैपायन, (२१) नारद, (अंबरदारुमडे य साइबुद्धे य होइ बोद्धव्वे, भावीतित्थगराणं णामाइं पुव्वभविया) अम्बडो

बुद्धश्च भवति बोद्धव्यः भावि तीर्थंकराणां नामानि पूर्वभविकानि) अम्बड २२ दारुमृत २३ और स्वातिबुद्ध २४। ये भावितीर्थंकरों के पूर्वभव संबंधी नाम हैं। (एएसिणं चउव्वीसाए तित्थगराणं चउव्वीसं पियरो भविस्संति, चउव्वीसं मायरो भविस्संति) एतेषां चतुर्विंशते तीर्थंकराणा चतुर्विंशतिः पितरो भविष्यन्ति, चतुर्विंशति मातरो भविष्यन्ति-इन चौवीस तीर्थंकरों के २४ पिता होंगे और चौवीस माताएँ होंगी (चउव्वीसं पढमसीसा भविस्संति) चतुर्विंशतिः प्रथमशिष्या भविष्यन्ति-वृषभसेन आदि की तरह चौवीस प्रथम शिष्य होंगे। (चउव्वीस पढमसिस्सीणीओ भविस्संति) चतुर्विंशतिः प्रथमशिष्या भविष्यन्ति-ब्राह्मी आदि की तरह २४ प्रथमशिष्याएं होंगी। (चउव्वीस पढमभिक्खादायगा भविस्संति) चतुर्विंशतिः प्रथमभिक्षादायका भविष्यन्ति-श्रेयांस आदि की तरह चौवीस प्रथम भिक्षा के दाता होंगे। (चउव्वीसं चेइयरुक्खा भविस्संति) चतुर्विंशतिश्चैत्यवृक्षा भविष्यन्ति-जिनके नीचे तीर्थंकरों को केवलज्ञान उत्पन्न होता है, ऐसे बद्धवेदिकावाले वृक्ष चैत्यवृक्ष कहलाते हैं। ये चैत्यवृक्ष इन तीर्थंकरों के २४ चौवीस होंगे ॥सू० २१४॥

दारुमृतः स्वातिबुद्धश्च भवति बोद्धव्यः, भावितीर्थंकराणां नामानि पूर्वभविकानि-[२२] अम्भड, (२३) दारुमृत अने (२४) स्वातिबुद्ध, એ ભાવિ તીર્થંકરોના પૂર્વભવના નામો છે (एएसिं चउव्वीसाए तित्थगराणं चउव्वीसं पियरो भविस्संति, चउव्वीस मायरो भविस्संति) एतेषां चतुर्विंशतेर्तीर्थंकराणां चतुर्विंशतिः पितरो भविष्यन्ति, चतुर्विंशतिर्मातरो भविष्यन्ति-તે ચોવીસ તીર્થંકરોના ૨૪ પિતા થશે અને ૨૪ માતા થશે (चउव्वीसं पढमसीसा भविस्संति) चतुर्विंशतिः प्रथमशिष्याः भविष्यन्ति-વૃષભસેન આદિની જેમ ચોવીસ શિષ્યો થશે. (चउव्वीस पढमसिस्सीणीओ भविस्संति) चतुर्विंशतिः प्रथमशिष्या भविष्यन्ति-બ્રાહ્મી આદિની જેમ ૨૪ પ્રથમ શિષ્યાઓ થશે. (चउव्वीस पढमभिक्खादायगा भविस्संति) चतुर्विंशतिः प्रथमभिक्षादायका भविष्यन्ति-શ્રેયાંસ આદિની જેમ ચોવીસ પ્રથમ ભિક્ષાદાતાઓ થશે (चउव्वीसं चेइयरुक्खा भविस्संति) चतुर्विंशतिश्चैत्यवृक्षा भविष्यन्ति-તે તીર્થંકરોના ચોવીસ ચૈત્યવૃક્ષો હશે જેની નીચે તીર્થંકરોને કેવળજ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે, એવાં બાંધેલી વેદિકાવાળા વૃક્ષને ચૈત્યવૃક્ષ કહે છે ॥ સૂ. ૨૧૪॥

टीका—'एएसि णं' इत्यादि-एतेषां चतुर्विंशतस्तीर्थकराणां 'पुव्वभविया' पूर्वभविकानि चतुर्विंशतिनामधेयानि भविष्यन्ति, तद्यथा-श्रेणिकः१ सुपार्श्व २ उदयः३ पोट्टिलोऽनगारस्तथा४ दृढायुश्च५। कार्तिकः६ शङ्खश्च७ तथा नन्द ८ सुनन्दश्च९ शतकश्च१० ॥७८॥ बोद्धव्या देवकी११ च कृष्णश्च१२ तथा सात्य किश्च१३ बलदेव १४। रोहिणी१५ सुलसा१६ चैव ततः खलु रेवती१७चैव ॥७९॥ ततो भवति शतालि१८ बोद्धव्यः खलु तथा भयालिश्च१९। द्वीपा यनश्च कृष्णस्ततः खलु नारदश्चैव ॥८०॥ अम्बडा२२ दारुमृता२३ स्वातिबु द्धश्च२४ भवति बोद्धव्य । भावितीर्थकराणां नामानि पूर्वभविकानि ॥८१॥ अयं भावः-श्रणिकादयो महापद्मादिनामानस्तीर्थंकरा भविष्यन्ति। तत्र-श्रेणिको प्रथमो महापद्मनामा जिनो भविष्यति, तथा-सुपार्श्व सुरदेवो द्वितीयः, उदयः सुपार्श्वनामकस्तृतीय, पोट्टिलानगार स्वयमभनामकश्चतुर्थः, दृढायु सर्वानुभूति

टीकार्थ—'एएसि णं चउव्वीसाए' इत्यादि—इन चौवीस तीर्थंकरों के पूर्वभव संबंधी जो चौवीस नाम थे वे य हैं-श्रेणिक सुपार्श्व उदय अनगार पोट्टिल दृढायु कार्तिक शङ्ख नन्द सुनन्द शतक देवकी कृष्ण सात्यकि बलदेव रोहिणी सुलसा रेवती शतालि भयालि कृष्णद्वीपायन नारद अम्बड दारुमृत और स्वातिबुद्ध। ये भावि तीर्थंकरों के पूर्वभव संबधी नाम हैं। इसका तात्पर्य यह है-श्रेणिक आदि ये पूर्वोक्त नामधारी मनुष्य भविष्यत्काल में अर्थात् आनेवाले उत्सर्पिणीकाल में महापद्म आदि नामके तीर्थंकर होंगे। इनमें श्रेणिक प्रथम महापद्म नामके जिन होंगे। सुपार्श्व सुरदेव नामके द्वितीय जिन होंगे। उदय सुपार्श्व नामके तीसरे जिन होंगे। पोट्टिल अनगार स्वयंप्रभ नामके चौथे जिन होंगे। दृढायु सर्वा

टीकार्थ—'एएसिणं चउव्वीसाए' इत्यादि—ते चोवीस तीर्थंकरोना पूर्वभवनां नामो आ प्रमाणे हतां-श्रेणिक सुपार्श्व उदय, अणगार पोट्टिल, दृढायु कार्तिक शंख नंद, सुनंद, शतक, देवकी, कृष्ण, सात्यकि बलदेव, रोहिणी, सुलसा, रेवती, शतालि भयालि, कृष्णद्वीपायन नारद, अम्बड, दारुमृत, अने स्वातिबुद्ध आ भावितीर्थंकरोना पूर्वभवना नामो छे तेनुं तात्पर्य ओ छे के-श्रेणिक आदि पूर्वोक्त नामना मनुष्यो भविष्यकाळमां एटले के आगामी उत्सर्पिणी काळमां महापद्म आदि नामना तीर्थंकर थशे श्रेणिक महापद्म नामना पहेला तीर्थंकर थशे, सुपार्श्व, सुरदेव नामना बीजा जिनदेव थशे उदय, सुपार्श्व नामना त्रीजा जिनेश्वर थशे. पोट्टिल अणगार स्वयंप्रभ नामना चोथा तीर्थंकर थशे दृढायु

नाम पञ्चमः, तथा-कार्तिको देवश्रुतनामा षष्ठः, शंखः उदयो नामसप्तमः, नन्दः पेढालपुत्राख्योऽष्टमः, सुनन्दः पोट्टिलो नाम नवमः, शतकः शतकीर्त्तिर्नाम दशमस्तीर्थङ्करो भविष्यति। तथा-देवकीमुनि सुव्रतनामा एकादशोऽर्हन् भवि- ष्यति, कृष्णश्च अममो नाम द्वादशो भविष्यति, तथा-सात्यकिः सर्वभावविद् नाम त्रयोदशः, बलदेवो निष्कषायो नाम चतुर्दशः, रोहिणी निष्पुलाको नाम पञ्चदशः, सुलसा निर्ममो नाम षोडशः, रेवती चित्रगुप्तो नामसप्तदशः, शतालिः समाधिर्नाम अष्टादशः, भयालिः संवरो नामैकोनविंशतितमः, कृष्णद्वीपायनो- ऽनिवृत्तिर्नामविंशतितमः, नारदो विजयो नामैकविंशतितमः, अम्बडो विमलो नाम द्वाविंशतितमो, दारूमृतो देवोपपातनामत्रयोविंशतितमस्तथा स्वातिबुद्धश्च

नुभूति नामके पांचवें जिन होंगे। कार्तिक देवश्रुति नामके छठवें जिन होंगे। शंख उदय नामके सातवें जिन होंगे। नन्द पेढालपुत्र नामके आठवें जिन होंगे। सुनन्द पेट्टिल नामके नौवे जिन होंगे। शतक शतकीर्ति नामके दशवें जिन होंगे। देवकी मुनिसुव्रत नामके ग्यारहवें तीर्थंकर होंगी। कृष्ण अमम नामके बारहवें तीर्थंकर होंगे। सात्यकि सर्वभाववित् नामके तेरहवें तीर्थंकर होंगे। बलदेव निष्कषाय नामके चौदहवें तीर्थंकर होंगे। रोहिणी निष्पुलाक नामके पन्द्रह वे तीर्थंकर होंगी। सुलसा निर्मम नामके सोलहवें तीर्थंकर होंगी। रेवती चित्रगुप्त नामके १७ वें तीर्थंकर होंगी। शतालि समाधि नामके १८ वें तीर्थंकर होंगे। भयालि संवर नामके १९ वें तीर्थंकर होंगे। कृष्णद्वैपायन अनिवृत्ति नामके बीसवें तीर्थंकर होंगे। नारद विजय नामके इकीसवें तीर्थंकर होंगे। अम्बड विमल नामके बावीसवें तीर्थंकर होंगे। दारुमृत देवोपपात नामके तेवीसवें तीर्थंकर होंगे। तथा स्वातिबुद्ध अनन्तविजय नामके

સર્વાનુભૂતિ નામના પાંચમા તીર્થંકર થશે કાર્તિક, દેવશ્રુતિ નામના છઠ્ઠા જિનદેવ થશે શંખ, ઉદય નામના સાતમા તીર્થંકર થશે નન્દ, પેઢાલપુત્ર નામના આઠમા જિન થશે સુનન્દ પોટ્ટિલ નામના નવમા જિનદેવ થશે શતક, શતકીર્તિ નામે દસમા તીર્થંકર થશે દેવકી, સુનિસુવ્રત નામે અગીયારમા તીર્થંકર થશે કૃષ્ણ. અમમ નામે બારમા તીર્થંકર થશે સાત્યકિ બળદેવ અને રોહિણી અનુક્રમે સર્વ ભાવવિત, નિષ્કષાય અને નિષ્પુલાક નામના તેરમા ચૌદમા અને પંદરમા તીર્થંકર થશે સુલસા, અને રેવતી અનુક્રમે નિર્મમ અને ચિત્રગુપ્ત નામના સોળમા અને સત્તરમા તીર્થંકર થશે શતાલિ ભયાલિ અને કૃષ્ણદ્વૈપાયન અનુક્રમે સમાધિ અને અનિવૃત્તિ નામના ૧૮મા ૧૯માં અને ૨૦ મા તીર્થંકર થશે નારદ, અમ્મડ, દારુમૃત અને સ્વાતિબુદ્ધ અનુક્રમે વિજય, વિમલ, દેવોપપાત અને અનન્તવિજય

नन्दविजयनामा चतुर्विंशतितमो जिनो भविष्यतीति । 'एएसिं चउव्वीसाए ति त्थगराणं' एतेषां चतुर्विंशतेः महापद्मादीनां भाविनां तीर्थंकराणां चतुर्विंशतिः पितरो भविष्यन्ति, चतुर्विंशतिर्मातरो भविष्यन्ति, वृषभसेनादिवत् चतुर्विंशतिः प्रथम शिष्या भविष्यन्ति, तथा 'चउव्वीसं पढमसिस्सणीओ भविस्संति' ब्राह्मीप्रभृतिवत् चतुर्विंशतिः प्रथमशिष्या भविष्यन्ति, श्रेयांसादिवत् चतुर्विंशतिः प्रथम भिक्षादायका भविष्यन्ति, 'चउव्वीसं चेइयरुक्खा भविस्संति' चतुर्विंशतिश्चैत्य वृक्षा भविष्यन्ति=येषामधस्तीर्थंकराणां केवलज्ञानमुत्पद्यते ते बद्धपीठा वृक्षाः चैत्यवृक्षा उच्यन्ते, ते च ऋषभादि तीर्थंकराणां न्यग्रोधादिवत् भाविनीर्थंकराणामपि चतुर्विंशतिसंख्यका भविष्यन्ति ॥सू २१४॥

मूलम्—जंबुद्दिवे णं दीवे भारहे वासे आगमिस्साए उस्सप्पिणीए बारस चक्कवट्टिणो भविस्सति, तं जहा—भरहे य दीहदंते गूढदंते य सुद्धदंते य । सिरिउत्ते सिरिभूई सिरिसोमे य सत्तमे॥८२॥ पउमे य महापउमे विमलवाहणे विपुलवाहणे चेव । वरिट्ठे बारसमे वुत्ते आगमिसा भरहाहिवा ॥८३॥ एएसि णं बारसण्हं चक्कवट्टीण

२४वें तीर्थंकर होंगे। इन चौवीस तीर्थंकरों के २४ पिता होंगे और २४ माताएँ होंगी। वृषभसेन आदिकी तरह चौवीस शिष्य होंगे। ब्राह्मी आदि की तरह २४ प्रथम शिष्याएँ होंगी। श्रेयांस आदि की तरह चौवीस प्रथम भिक्षा देनेवाले होंगे। जिनके नीचे तीर्थंकरों को केवलज्ञान उत्पन्न होता है उसे बद्धचबूतरावाले चौतरावाले वृक्ष चैत्यवृक्ष कहलाते हैं। ये चैत्यवृक्ष इन चौवीस तीर्थंकरों के चौवीस होंगे। जैसे पहिले ऋषभ आदि तीर्थ करों के न्यग्रोध आदि चैत्यवृक्ष २४ हुए हैं ॥सू० २१४॥

નામના ૨૪મા બાવીસમાં, તેવીસમાં અને ચોવીસમાં તીર્થંકર થશે. તે ચોવીસ તીર્થંકરોના ૨૪ પિતા અને ૨૪ માતા થશે. વૃષભસેન આદિની જેમ ચોવીસ પ્રથમ શિષ્ય થશે બ્રાહ્મી આદિની જેમ ચોવીસ પ્રથમ શિષ્યાઓ થશે શ્રેયાંસ આદિની જેમ ૨૪ પ્રથમ ભિક્ષાદાતા થશે જેની નીચે તીર્થંકરોને કેવળજ્ઞાન થાય છે એવા બદ્ધ વેદિકા યુક્ત વૃક્ષને ચૈત્યવૃક્ષ કહે છે જેવીરીતે ઋષભદેવ આદિ તીર્થંકરોના ન્યગ્રોધ આદિ ચોવીસ ચૈત્યવૃક્ષો થયા છે તે પ્રમાણે ઉપરોક્ત તીર્થંકરોના પણ ચોવીસ ચૈત્યવૃક્ષો થશે. ॥સૂ. ૨૧૪॥

बारसपियरो भविस्संति, बारस मायरो भविस्संति, बारस इत्थीरयणा भविस्संति ॥ सू० २१५ ॥

शब्दार्थ—(जंबूदीवे णं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे–जम्बूद्वीप नामके द्वीप में (भारहे वासे आगमिस्साए उस्सप्पिणीए) भारते वर्षे आगमिष्यन्त्या मुत्सर्पिण्यां–भारतवर्ष में आगामी उत्सर्पिणीकाल में (बारस चक्कवट्टिणो भविस्संति) द्वादश चक्रवर्तिनो भविष्यन्ति–बारह चक्रवर्ती होंगे। (तं जहा) तद्यथा–उनके नाम इस प्रकार से हैं (भरहे य दीहदंते गूढदंते य सुद्धदंते य सिरिउत्ते सिरिभूई सिरिसोमे य सत्तमे) भरतश्च दीर्घदन्तो गूढदन्तश्च शुद्धदन्तश्च, श्रीपुत्रः श्रीभूतिः श्रीसोमश्च सप्तमः–भरत दीर्घदन्त, गूढदन्त, शुद्धदन्त, श्रीपुत्र, श्रीभूति, सप्तम श्रीसोम, (पउमेय महापउमे विमलवाहणे विपुलवाहणे चेव, वरिट्ठे बारसमे वुत्ते आगमिस्साभरहाहिवा) पद्मश्च महापद्मो विमलवाहनो विपुलवाहनश्च वरिष्ठो द्वादशउक्तः आगमिष्यन्तो भरताधिपाः–पद्म महापद्म विमलवाहन विपुलवाहन और बारहवें वरिष्ठ। ये आगामीकाल में भरतक्षेत्र के–अधिपति होंगे। (एएसि णं बारसण्हं चक्कवट्टीणं बारसपियरो भविस्संति) एतेषां द्वादशाना चक्रवर्तिनां द्वादश पितरो भविष्यन्ति–इन बारह चक्रवर्तियों के बारह पिता होंगे बारह

શબ્દાર્થ–(जंबुद्दीवे णं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे–જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપમાં (भारहे वासे) भारत वर्षे–ભરતક્ષેત્રમાં (आगमिस्साए उस्सप्पिणीए) आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां આગામી ઉત્સર્પિણી કાળમાં (बारसचक्कवट्टिणो भविस्संति) द्वादश चक्रवर्तिनो भविष्यन्ति–બાર ચક્રવર્તિઓ થશે (तंजहा) तद्यथा–તેમના નામ આ પ્રમાણે હશે (भरहे य दीहदंते गूढदंते य सुद्धदंते य सिरिउत्ते सिरिभूई सिरिसोमे य सत्तमे) भरतश्च दीर्घदन्तो गूढदन्तश्च शुद्धदन्तश्च श्रीपुत्र श्रीभूति श्री सोमश्च सप्तमः–(૧) ભરત, (૨) દીર્ઘદન્ત, (૩) ગૂઢદન્ત, (૪) શુદ્ધદન્ત (૫) શ્રીપુત્ર, (૬) શ્રીભૂતિ, (૭) શ્રી સોમ, (पउमे महापउमे विमलवाहणे विपुलवाहणेचेव वरिट्ठे बारसमे वुत्ते आगमिस्सा भरहाहिवा) पद्मश्च महापद्मो विमलवाहनो विपुलवाहनश्चैव वरिष्ठो द्वादश उक्तः आगमिष्यन्तो भरताधिपाः (૮) પદ્મ, (૯) મહાપદ્મ (૧૦) વિમલવાહન, (૧૧) વિપુલવાહન, અને (૧૨) વરિષ્ઠ, તેઓ આગામી કાળમાં ભરતક્ષેત્રના અધિપતિ થશે (एएसि णं बारसण्हं चक्कवट्टीण बारस पियरो भविस्संति) एतेषां द्वादशानां चक्रवर्तिनाम् द्वादशपितरो भविष्यन्ति તે બાર ચક્રવર્તિઓના બાર પીતા થશે,

टीका–'जंबुद्दीवे णं दीवे' इत्यादि–जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां द्वादश चक्रवर्तिनो भविष्यन्ति, तद्यथा–भरतश्च१ दीर्घदन्तो २ गूढदन्तश्च ३ शुद्धदन्तश्च ४। श्रीपुत्रः ५ श्रीभूतिः ६ श्रीसोमश्च७ सप्तम ॥८२। पद्मश्च८ महापद्मो९ विमलवाहनो१० विपुलवाहनश्चैव। वरिष्ठो१२ द्वादश उक्त, एते द्वादश 'आगमिसा भरहाहिवा'=आगमिष्यन्तो भारताधिपा ॥८३॥ एतेषां द्वादशानां चक्रवर्तिनां द्वादशपितरो भविष्यन्ति, द्वादश मातरो भविष्यन्ति, द्वादश स्त्रीरत्नानि भविष्यन्ति ॥सू २१५॥

मूलम्—जंबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे आगमिस्साए उस्सप्पिणीए नवबलदेववासुदेवपियरो भविस्संति, नव वासुदेवमायरो भविस्संति, नव बलदेवमायरो भविस्संति, नव दसारमंडला भविस्संति, तं जहा–उत्तमपुरिसा, मज्झिमपुरिसा पहाणपुरिसा ओयंसीतेयंसी एवं सो चेव वण्णओ भाणियव्वो जाव नीलगपीयगवसणा दुवे दुवे रामकेसवा भायरो भविस्संति, तं जहा–नंदे य नंदमित्ते दीहबाहू तहा महाबाहू। अइबले महाबले बलभद्दे य सत्तमे॥८४॥ दुविट्ठू य

मायरो भविस्संति(द्वादश मातरो भविष्यन्ति–बारह माताएँ होंगे (बारस इत्थीरयणा भविस्संति)द्वादश स्त्री रत्नानि भविष्यन्ति-बारह स्त्री रत्न होंगे॥सू २१५॥

टीकार्थ—'जंबुद्दीवेणं दीवे' इत्यादि–जम्बूद्वीप नामके द्वीप में भरतवर्ष में आगामी उत्सर्पिणीकाल में बारह चक्रवर्ती होंगे उनके नाम इस प्रकार से हैं–भरत दीर्घदन्त गूढदन्त शुद्धदन्त श्रीपुत्र श्रीभूति सप्तम श्रीसोम पद्म महापद्म विमलवाहन विपुलवाहन और बारहवें वरिष्ठ। ये आगामीकाल में भरतक्षेत्र के अधिपति होंगे ॥सू० २१५॥

(बारस मायरो भविस्संति) द्वादशमातरो भविष्यन्ति–અને બાર માતાઓ થશે (बारस इत्थीरयणा भविस्संति) द्वादश स्त्रीरत्नानि भविष्यन्ती–અને બાર સ્ત્રીરત્નો થશે ॥સૂ, ૨૧૫॥

ટીકાર્થ—'जंबुद्दीवेणं दीवे' इत्यादि—જમ્બૂદ્વીપ નામના દ્વીપમાં આવેલા ભારતવર્ષમાં આગામી ઉત્સર્પિણી કાળમાં બાર ચક્રવર્તિઓ થશે. તેમનાં નામ આ પ્રમાણે છે–ભરત, દીર્ઘદન્ત ગૂઢદન્ત શુદ્ધદન્ત શ્રીપુત્ર, શ્રીભૂતિ સોમ પદ્મ મહાપદ્મ, વિમલવાહન વિપુલવાહન અને બારમા વરિષ્ઠ તેઓ આગામી કાળમાં ભરતક્ષેત્રના અધિપતિ થશે ॥સૂ ૨૧૫॥

तिवहूं य आगमिस्साण विण्हुणो। जयंते विजए भद्दे सुप्पभे य सुदंसणे। आणंदे नंदणे पउमे संकरिसणे य अपच्छिमे ॥८५॥ एएसि णं नवण्हं बलदेववासुदेवाणं पुव्वभविया णव नामधेज्जा भविस्संति, नव धम्मायरिया भविस्संति, नवनियाणभूमीओ भविस्संति नव नियाणकारणा भविस्संति, नव पडिसत्तू भविस्संति, तं जहा— तिलए य लोहजंघे वइरजंघे य केसरी पहराए। अपराइए य भीमे महाभीमे य सुग्गीवे ॥८६॥ एए खलु पडिसत्तू कित्तिपुरिसाण वासुदेवाणं। सव्वे वि चक्कजोही हम्मिहिंति सचक्केहिं॥८७॥ सू० २१६॥

शब्दार्थ—(जंबूद्दीवे णं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे-इस जंबूद्वीप नामके द्वीप में (भारहे वासे) भारते वर्षे—भारत वर्ष में (आगमिस्साए उस्सप्पिणीए) आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां—आगामी उत्सर्पिणीकाल में (नव बलदेव वासुदेव पियरो भविस्संति) नव बलदेववासुदेव पितरो भविष्यन्ति—नौ बलदेव और नौ वासुदेव के नौ पिता होंगे। (नव वासुदेव मायरो भविस्संति) नव वासुदेवमातरो भविष्यन्ति— नौ वासुदेव की माताए होंगी, (नव बलदेव मातरो भविष्यन्ति—नौ बलदेव की माताए होंगी, (नव दसारमंडला भविस्संति) नव दशार्ह मण्डलानि भविष्यन्ति—इस तरह नौ बलदेव और नौ वासुदेव के मंडल होंगे—अर्थात्—एक बलदेव एक वासुदेव इस तरह से इनके दो दो के नौ युगल होंगे। (उत्तमपुरिसा, मज्झिमपुरिसा

શબ્દાર્થ--(जंबूद्दीवेणं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे—જંબૂદ્વીપ નામના આ દ્વીપમા (भारहे वासे) भारते वर्षे—ભારતવર્ષમાં (आगमिस्साए उस्सप्पिणीए) आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां—આગામી ઉત્સર્પિણી કાળમા (नव बलदेव वासुदेव पियरो भविस्संति) नव बलदेव—वासुदेवपितरो भविष्यन्ति—નવ બળદેવ અને નવ વાસુદેવના નવ પિતા થશે (नव वासुदेवमायरो भविस्संति) नव वासुदेवमातरो भविष्यन्ति—નવવાસુદેવોની નવમાતાઓ થશે (नव बलदेव मायरो भविस्संति) नव बलदेवमायरो भविष्यन्ति—નવબળદેવોની નવ માતાઓ થશે (नव दसारमंडला भविस्संति) नव दशार्हमण्डलानि भविष्यन्ति—આ રીતે નવ બળદેવ અને નવવાસુદેવના નવ મંડળ થશે—એટલે કે એક બળદેવ અને એક વાસુદેવ, એમ બન્નેના નવ યુગલ થશે (उत्तमपुरिसा, मज्झिम

पहाणपुरिसा ओयसी तेयसी एवं सो चेव वण्णओ भाणियव्वो जाव नीलगपीयगवसणा दुवे दुवे रामकेसवा भायरो भविस्संति) उत्तमपुरुषा मध्यमपुरुषा प्रधानपुरुषा ओजस्विनः तेजस्विनः एवं स एव वर्णको भणितव्यः यावत् नीलक पीतक वसना द्वौ द्वौ रामकेशवौ भ्रातरौ भविष्यन्ति इन सब पदों का अर्थ २१३ सूत्र की व्याख्या करते समय लिख दिया गया है। (तंजहा) तद्यथा-उनके नाम इस प्रकार से होंगे। (नंदे य नंदमित्ते दीहबाहू तहा महाबाहू, अइबले महाबले बलभद्दे य सत्तमे दुविट्ठू य तिविट्ठू य) नन्दश्च नन्दमित्रो दीर्घबाहुस्तथा महाबाहुः अतिबलो महाबलो बलभद्रश्च सप्तम द्विपृष्ठश्च त्रिपृष्ठश्च-नन्द, नन्दमित्र, दीर्घबाहु महाबाहु, अतिबल, महाबल, सातवें बलभद्र, द्विपृष्ठ और त्रिपृष्ठ। (आगमिस्साण विण्हुणो) आगमिष्यन्त खलु विष्णवः-ये नाम आगामीकाल में उत्पन्न होने वाले विष्णु-वासुदेव के होंगे। (जयंते विजये भद्दे सुप्पभे य सुदंसणे आणंदे, नंदणे पउमे संकरिसणे य अपच्छिमे) जयन्तः विजयो भद्र सुप्रभश्च सुदर्शन आनन्दो नन्दन पद्म संकर्षणश्च अपश्चिमः-जयन्त विजय, भद्र, सुप्रभ, सुदर्शन, आनंद, नंदन, पद्म और अन्तिम संकर्षण। ये नौ नाम आगामीकाल में उत्पन्न होनेवाले बलदेवों के होंगे। (एएसिं णं नवण्हं

पुरिसा, पहाणपुरिसा ओयसी तेयसी एव सो चेव वण्णओ भाणियव्वो जाव नीलग पीयगवसणा दुवे दुवे रामकेसवा भायरो भविस्संति) उत्तमपुरुषा मध्यमपुरिषा प्रधानपुरुषाः ओजस्विनः तेजस्विनः एष स एव वर्णको भणितव्यः यावत् नीलकपीतकवसना द्वौ द्वौ रामकेशवौ भ्रातरौ भविष्यन्ति-आ बधा पदोना अर्थ सूत्र २१३मां आपी दीधेल छे (तंजहा) तद्यथा-तेमना नाम आ प्रमाणे हशे-(नंदेय नंदमित्ते दीहबाहू तहा महाबाहू, अइबले महाबले बलभद्दे य सत्तमे दुविट्ठू य तिविट्ठू य) नन्दश्च नन्दमित्रो दीर्घबाहु स्तथा महाबाहुः अतिबलो महाबलो बलभद्रश्च सप्तमः द्विपृष्ठश्च त्रिपृष्ठ-(१) नन्द (२) नन्दमित्र (३) दीर्घबाहु (४) महाबाहु (५) अतिबल (६) महाबल (७) बळभद्र, (८) द्विपृष्ठ अने (९) त्रिपृष्ठ (आगमिस्साण विण्हुणो) आगमिष्यन्त खलु विष्णवः-आगामी काळमां उत्पन्न थनारा विष्णुओ-वासुदेवोना ते नामो हशे.(जयंते विजय भद्दे सुप्पभे य सुदंसणे आणंदे नंदणे पउमे संकरिसणे य अपच्छिमे) जयन्तो विजयो भद्रः सुप्रभश्च सुदर्शन आनन्दो नन्दन पद्मः संकर्षणश्च अपश्चिमः-(१) जयंत (२) विजय (३) भद्र (४) सुप्रभ (५) सुदर्शन (६) आनंद (७) नंदन (८) पद्म अने छेल्ला संकर्षण आ नव आगामी काळमां बळदेवो थशे (ए ए सिं णं नवण्हं बलदेव-वासु

बलदेववासुदेवाणं पुव्वभविया णव नामधेज्जा। भविस्संति, नव धम्मायरिया भविस्संति, (नव नियाण भूमीओ भविस्संति नव नियाण करणा भविस्संति) एतेषां खलु नवानां बलदेववासुदेवानां पूर्वभवकानि नव नामधेयानि भविष्यन्ति, नव धर्माचार्याः भविष्यन्ति, नव निदानभूमयो भविष्यन्ति, नव निदानकारणानि भविष्यन्ति-इन नौ बलदेव और वासुदेवों के पूर्वभव संबंधी नौ नौ नाम होंगे, नौ धर्माचार्य होंगे, नव निदानभूमियां होंगी, नव निदान कारण होंगे (नव पडिसत्तू भविस्संति) नव प्रतिशत्रवो भविष्यन्ति-नौ प्रतिशत्रु होंगे, (तं जहा) तद्यथा-उन नौ प्रतिशत्रुओं के ये नाम हैं(तिलए य लोहजंघे य वइरजंघे य केसरी पहराए अपराइए य भीमे महाभीमे य सुग्गीवे)तिलको लोहजङ्घो वज्रजङ्घश्च केसरी, प्रह्लादः अपराजितश्च भीमो महाभीमश्च सुग्रीवः- तिलक १, लोहजंघ २, वज्रजंघ ३ केशरी ४, प्रह्लाद ५, अपराजित ६, भीम ७, महाभीम ८, सुग्रीव ९, (एए खलु पडिसत्तू कित्तिपुरिसाणवासुदेवाणं) एते खलु प्रतिशत्रवः कीर्तिपुरुषाणां वासुदेवानाम्-ये पूर्वोक्त प्रतिशत्रु कीर्तिपुरुष वासुदेवों के होंगे। (सव्वेवि चक्कजोही हम्मर्हिति सचक्केहिं) सर्वेऽपि चक्रयोधिनः सर्वे

देवाणं पुव्वभविया णव नामधेज्जा भविस्संति नव धम्मयरिया भविस्संति नवनियाणभूमीओ भविस्संति नवनियाणकारणा भविस्संति) एतेषां खलु नवानां बलदेववासुदेवाना पूर्वभवकानि नव नामधेयानि भविष्यन्ति नव धर्माचार्याः भविष्यन्ति नव निदानभूमियो भविष्यन्ति, नव निदानकारणानि भविष्यन्ति-ते બળદેવો અને વાસુદેવે ના પૂર્વભવના નવ નામ હશે, નવ ધર્મા ચાર્યો થશે, નવ નિદાનભૂમિયો થશે અને નવ નિદાનકારણો થશે (नव पडिसत्त भविस्संति) नवप्रतिशत्रवो भविष्यन्ति-નવ પ્રતિશત્રુ વાસુદેવો થશે, (तं जहा) तद्यथा-તે નવ પ્રતિવાસુદેવોનાં નામ આ પ્રમાણે હશે-(तिलए य लोहजंघे वइरजंघे य केसरी पहराए अपराइए भीमे महाभीमे य सुग्गीवे) तिलको लोहजङ्घो वज्रजङ्घश्च केशरीप्रह्लादः अपराजितश्च भीमो महाभीमश्च सुग्रीवः- (૧) તિલક, (૨) લોહજંઘ, (૩) વજ્રજંઘ, (૪) કેશરી, (૫) પ્રહ્લાદ, (૬) અપરાજિત, (૭) ભીમ, (૮) મહાભીમ અને (૯) સુગ્રીવ (एए खलु पडिसत्तू कित्तिपुरिसाण वासुदेवाणं) एते खलु प्रतिशत्रवः कीर्तिपुरुषाणां वासुदेवानां-પૂર્વોક્ત પ્રતિવાસુદેવો કીર્તિપુરુષ વાસુદેવોના પ્રતિશત્રુઓ થશે. (सव्वेवि चक्कजोही हम्मर्हिति सचक्केहिं) सर्वेऽपि चक्रयोधिनः सर्वे हनिष्यन्ते

टीका—'जम्बुद्दीवे णं दीवे' इत्यादि-जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां नव बलदेववासुदेवपितरो भविष्यन्ति, नव वासुदेवमातरो भविष्यन्ति, नव दशार्हमण्डलानि भविष्यन्ति, तद्यथा—उत्तमपुरुषाः मध्यमपुरुषाः प्रधानपुरुषा ओजस्विन तेजस्विनः 'एव=अनेन प्रकारेणारभ्य 'सो चेव वण्णओ भणियव्वो' स एव वर्णको भणितव्यः—पूर्वं यथा बलदेववासुदेवानां वर्णन कृतं तथैवात्रा पि विज्ञेयम्। कियत्पर्यन्त तत्तत्राह विज्ञेयमित्याह ? 'जाव' यावत् 'नीलगपीयगवसणा दुवे दुवे रामकेसवा भायरा' नीलकपीतकवसना द्वौ द्वौ रामकेशवौ भ्रातरौ इति कृत्वा नव बलदेवा नव वासुदेवा 'भविस्सति' भविष्यन्ति, इदं सर्वं व्याख्यात

इनिष्यन्ते स्वचक्रेण-ये सब प्रतिवासुदेव युद्ध में चक्र से मरेंगे और अन्त में अपने उसी चक्र से मारे जावेंगे ॥ सू० २१६ ॥

टीकार्थ—'जम्बूद्दीवे ण दीवे' इत्यादि—इस जम्बूद्वीप नामके द्वीप में भरत क्षेत्र के अन्दर आगामी उत्सर्पिणीकाल में नौ बलदेव और नौ वासुदेव के नौ पिता होंगे। बलदेव और वासुदेव के पिता एक ही होते हैं। और माता भिन्न २ होती हैं। इसलिये यहाँ पर नौ पिता इन दोनो के कहे गये हैं। तथा—नौ वासुदेव की माताएँ होंगी और नौ बलदेव की माताएँ होंगी ऐसा सूत्रकार ने माताओं के विषय में अलग २ कहा है। इस तरह नौ बलदेव और नौ वासुदेव के मंडल होंगे-अर्थात् एक बलदेव एक वासुदेव इस तरह से इनके दो दो के नौ युगल होंगे। यहाँ पर 'उत्तमपुरिसा'' से लेकर (''दुवे दुवे रामकेसवा मायरो भविस्संति)'' यहाँ तकका पाठ भविष्यकाल का प्रयोग करते हुए लगा लेना चाहिये।

સ્વચક્રેણ-તે બધા પ્રતિવાસુદેવો યુદ્ધમાં ચક્રની મદદથી લડશે અને અંતે પોતાના જ તે ચક્રથી માર્યા જશે ॥ સૂ ૨૧૬ ॥

ટીકાર્થ—'जंबुद्दीवे ण दीवे' इत्यादि—આ જમ્બૂદ્વીપ નામના દ્વીપમાં ભારતક્ષેત્રની અંદર આગામી ઉત્સર્પિણીકાળમાં નવ બળદેવ અને નવ વાસુદેવના નવ પિતા થશે બળદેવ અને વાસુદેવના પિતા એક જ હોય છે, અને માતા જુદી જુદી હોય છે તેથી અહીં તે બન્નેના નવ પિતા કહેલ છે તથા નવ વાસુદેવોની નવ માતાઓ થશે અને નવ બળદેવોની નવ માતાઓ થશે એમ સૂત્રકારે કહેલ છે આ રીતે નવ બળદેવ અને નવ વાસુદેવના મંડળ થશે-એટલે કે એક બળદેવ અને એક વાસુદેવ એ પ્રમાણે બન્નેનાં નવ જોડ થશે અહીં 'उत्तमपुरिसा' થી લઈને 'दुवे दुवे रामकेसवो मायरो भविस्संति' અહીં સુધીનો પાઠ સૂત્ર ૨૧૩ પ્રમાણે ભવિષ્યકાળનો પ્રયોગ કરીને સમજી લેવો.જેઉએ

पूर्वम् । किमभिधानास्ते भविष्यन्तीत्याह- तं जहा' तद्यथा-नन्दश्च१ नन्दमित्रो२ दीर्घबाहुस्तथा३ महाबाहुः४। अतिबलो५ महाबलो६ बलभद्रश्च७ सप्तमः॥८४॥ द्विपृष्ठश्च८ त्रिपृष्ठश्च९ एते 'आगमिस्साणं विण्हुणो' आगमिष्यन्तः खलु विष्णवः= भाविनो वासुदेवा विज्ञेया इत्यर्थः । अथ नव बलदेव नामान्याह--जयन्तो१ विजयो२ भद्रः३ सुप्रभश्च४ सुदर्शनः५। आनन्दो६ नन्दनः७ पद्मः८ सङ्कर्षणश्च९ 'अपच्छिमे' अपश्चिमः=न विद्यते पश्चिमो यस्मादसौ अपश्चिम=अन्तिमो बलदेवो विज्ञेयः॥८५॥ एतेषां खलु नवानां बलदेववासुदेवानां पूर्वभविकानि नव नामधेयानि भविष्यन्ति, नव धर्माचार्याः भविष्यन्ति, नव निदानभूमयो भविष्यन्ति, नव निदानकारणानि भविष्यति, नव प्रतिशत्रवो भविष्यन्ति, तद्यथा-तिलको१ लोहजङ्घो२ वज्रजङ्घश्च३ केशरी४ प्रह्लादः५। अपराजितश्च६ भीमो७ महा-

इन सब पदों का अर्थ २१३ सूत्र की व्याख्या करते समय लिख दिया गया है। भविष्यत् काल में इनके क्या २ नाम होंगे? इस शंका का निवारण करने के लिये सूत्रकार कहते है कि-उनके नाम इस प्रकार से होंगे-नन्द, नन्दमित्र, दीर्घबाहु, महाबाहु, अतिबल, महाबल सातवें बलभद्र, द्विपृष्ठ और त्रिपृष्ठ। ये नाम आगामीकाल मे उत्पन्न होने वाले विष्णु-वासुदेव के होंगे। जयत, विजय, भद्र, सुप्रभ, सुदर्शन, आनंद, नंदन, पद्म, और अन्तिम संकर्षण। ये नौ नाम आगामीकाल में उत्पन्न होने वाले बलदेवों के होंगे। इन नौ बलदेव और वासुदेवों के पूर्वभव संबंधी नौ नौ नाम होंगे, नौ धर्माचार्य होंगे, नौ निदानभूमियां होंगी, नौ प्रतिशत्रु होंगे, उन नौ प्रतिशत्रुओं के ये नाम हैं-तिलक, लोहजघ, वज्रजंघ, केशरी, प्रह्लाद, अपराजित, भीम, महाभीम

તે બધા પદોના અર્થ સૂત્ર ૨૧૩ની વ્યાખ્યા કરતી વખતે આપી દીધેલ છે ભવિષ્યકાળમાં તેમના કયા કયા નામ હશે? તેનો જવાબ આપતા સૂત્રકાર કહે છે કે તેમના નામ આ પ્રમાણે હશે—નન્દ, નન્દમિત્ર, દીર્ઘબાહુ, મહાબાહુ, અતિબલ, મહાબલ, બલભદ્ર, દ્વિપૃષ્ઠ અને ત્રિપૃષ્ઠ એ નવ વિષ્ણુ-વાસુદેવો આગામીકાળમા થશે. જયત, વિજય, ભદ્ર, સુપ્રભ, સુદર્શન, આનદ, નદન, પદ્મ અને સકર્ષણ એ નવ બળદેવો આગામીકાળમા થશે તે નવ બળદેવો અને નવ વાસુદેવોના પૂર્વભવના નવ, નવ નામ હશે, તેમના નવ ધર્માચાર્યો થશે, નવ નિદાનભૂમિયો હશે, નવ નિદાનકારણો હશે અને નવ પ્રતિવાસુદેવો થશે. તે નવ વાસુદેવોના નવ પ્રતિશત્રુઓ-પ્રતિવાસુદેવો-નાં નામ આ પ્રમાણે હશે--તિલક, લોહજંઘ, વજ્રજંઘ, કેશરી, પ્રહ્લાદ, અપરાજિત, ભીમ, મહાભીમ, અને સુગ્રીવ. કીર્તિપુરુષ

भीमश्च८ सुग्रीवः९। ८६॥ एते खलु प्रतिशत्रवः=प्रतिवासुदेवाः कीर्तिपुरुषाणां वासुदेवानाम्। सर्वेऽपि चक्रयोधिनः सर्वे हनिष्यन्ते स्वचक्रेण॥८७॥सू २१६॥

मूलम्—जंबुद्दीवे णं दीवे एरवए वासे आगमिस्साए उस्सप्पिणीए चउव्वीस तित्थगरा भविस्संति, तं जहा—सुमंगले' य सिद्धत्थे निव्वाणे' य महाजसे'। धम्मज्झए य अरहा आगमिस्साण होक्खइ ॥८८॥ सिरिचंदे' पुप्फकेऊ' महाचंदे य केवली। सुयसागरे य अरहा आगमिस्साण होक्खइ ॥८९॥ सिद्धत्थे पुण्णघोसे य, महाघोसे'' य केवली। सच्चसेणे' य अरहा आगमिस्साण होक्खइ॥९०॥ सूरसेणे'' य अरहा, महासेणे'' य केवली। सव्वाणंदे'' य अरहा, देवउत्ते य होक्खइ॥९१॥ सुपासे' सुव्वए अरहा, अरहे य सुकोसले'। अरहा अणंत विजए आगमिस्साण होक्खइ ॥९२॥ विमले उत्तरे'' अरहा, अरहा य महाबले। देवाणंदे य अरहा, आगमिस्साण होक्खइ॥९३॥ एए वुत्ता चउव्वीस, एरवयम्मि केवली। आगमिस्साण होक्खंति, धम्मतित्थस्स देसगा ॥९४॥ सू० ११७॥

और सुग्रीव। ये पूर्वोक्त प्रतिशत्रु कीर्तिपुरुष वासुदेवों के होंगे। ये सब प्रतिवासुदेव युद्ध में चक्र से लडेंगे और अन्त में अपने उसी चक्र से मारे जावेंगे। प्रतिवासुदेव युद्ध में वासुदेव के ऊपर मारने के लिये चक्र चलाते है—सो वह चक्र वासुदेव का कुछ भी बिगाड नहीं कर सकता है—प्रत्युत वापिस होकर अपने चलानेवाले प्रतिवासुदेव का हनन कर देता है। ऐसा शास्त्रीय कथन है। उसी का यह सूचन है ॥सू० २१६॥

वासुदेवोना ते नव प्रतिशत्रुओ थशे ते सघळा प्रतिवासुदेवो युद्धमां चक्रथी लडशे अने अन्ते पोताना ज ते चक्रथी तेओ मार्या जशे. प्रतिवासुदेव युद्धमां वासुदेवने मारवाने माटे चक्र छोडे छे पण ते चक्र वासुदेवने कंई पण नुकसान पहोंचाडी शकतुं नथी पण ते पाछुं फरीने प्रतिवासुदेवनी ज हत्या करे छे एवुं शास्त्रीय कथन छे ते कथनतुं ज अहीं सूचन करवामां आव्युं छे ॥सू.२१६॥

शब्दार्थ—(जंबूदीवे णं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे—जम्बूद्वीप नामके इसद्वीप में (एरवए वासे) ऐरवते वर्षे—ऐरवत क्षेत्र के अन्दर जो कि सातवां क्षेत्र है (आगमिस्साए उस्सप्पिणीए चउव्वीसं तित्थगरा भविस्संति) आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां चतुर्विंशतिस्तीर्थकरा भविष्यन्ति आगामीउत्सर्पिणी में चौवीस तीर्थंकर होंगे। (तं जहा) तद्यथा—उनके नाम इस प्रकार हैं (सुमंगले य सिद्धत्थे निव्वाणे य महाजसे, धम्मज्झए य अरहा आगमिस्साण होस्सइ) सुमङ्गलश्च सिद्धार्थो निर्वाणश्च महायशाः धर्मध्वजश्च अर्हन् आगमिष्यति काले खलु भविष्यति—सुमंगल१ सिद्धार्थ २, निर्वाण ३, महायश ४ धर्मध्वज ५, (सिरिचंदे पुप्फकेऊ—महाचंदे य केवली, सुयसागरे य अरहा आगमिस्साण होस्सइ) श्रीचन्द्रः पुण्यकेतु महाचन्द्रश्च केवली, श्रुतसागरश्चार्हन् आगमिष्यति काले खलु भविष्यति—श्रीचंद्र, ६ पुष्पकेतु ७ महाचंद ८ अर्हत श्रुतसागर ९ (सिद्धत्थे पुण्णघोसे य महाघोसे य केवली सच्चसेणे य अरिहा आगमिस्साणहोस्स इ) सिद्धार्थः पुण्यघोषश्च महाघोषश्च केवली, सत्यसेनश्चार्हन् आगामिष्यति काले भविष्यन्ति—सिद्धार्थ १० पुण्यघोष ११, महाघोष १२ सत्यसेन १३ (सूरसेणे य अरिहा महासेणे य केवली, सव्वाणंदे य अरहा देवउत्ते य

शब्दार्थ—(जंबूदीवे णं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे—જંબૂદ્વીપ નામના આ દ્વીપમાં (एरवए वासे) ऐरवते वर्षे—ઐરવતક્ષેત્ર નામના સાતમા ક્ષેત્રમાં (आगमिस्साए उस्सप्पिणीए चउव्वीसं तित्थगरा भविस्संति) आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां चतुर्विंशतिस्तीर्थकरा भविष्यन्ति—આગામી ઉત્સર્પિણીકાળમાં ચોવીસ તીર્થંકરો થશે (तं जहा) तद्यथा—તેમના નામ આ પ્રમાણે છે—(सुमंगले य सिद्धत्थे निव्वाणे य महाजसे धम्मज्जए य अरहा आगमिस्साण होस्सइ) सुमङ्गलश्च सिद्धार्थो निर्वाणश्च महायशाः धर्मध्वजश्च अर्हन् आगमिष्यति खलु काले भविष्यन्ति—(१) સુમંગલ, (૨) સિદ્ધાર્થ, (૩) નિર્વાણ, (૪) મહાયશ, (૫) ધર્મધ્વજ, (सिरिचंदे पुप्फकेऊ महाचंदे य केवली सुयसागरे य अरहा आगमिस्साण होस्सइ) श्रीचन्द्रः पुष्पकेतुः महाचन्द्रश्च केवली, श्रुतसागरश्चार्हन् आगमिष्यति काले खलु भविष्यति—(६) શ્રીચન્દ્ર, (૭) પુષ્પકેતુ, (૮) મહાચન્દ્ર, (૯) અર્હંતશ્રુતસાગર (सिद्धत्थे पुण्णघोसे य महाघोसे य केवली, सच्चसेणे य अरिहा आगमिस्साण होस्सइ) सिद्धार्थः पुण्यघोषश्च महाघोषश्च केवली, सत्यसेनश्चार्हन् आगमिष्यति काले भविष्यन्ति—(૧૦) સિદ્ધાર્થ, (૧૧) પુણ્યઘોષ, (૧૨) મહાઘોષ, (૧૩) સત્યસેન, (सूरसेणे य अरिहामहासेणे य केवली, सव्वाणंदे य अरहा देवउत्ते य होस्सइ) सूर

मीमश्८ सुग्रीवः९। ८६॥ एते खलु प्रतिशत्रवः-प्रतिवासुदेवा कीर्तिपुरुषाणां वासुदेवानाम् । सर्वेऽपि चक्रयोधिनः सर्वे हनिष्यन्ते स्वचक्रेण॥८७॥सू २१६॥

मूलम्--जंबुद्दीवे णं दीवे एरवए वासे आगमिस्साए उस्स प्पिणीए चउव्वीस तित्थगरा भविस्ससंति, तं जहा--सुमंगले य सिद्धत्थे निव्वाणे य महाजसे । धम्मज्झए य अरहा आगमिस्साण होस्सइ ॥८८॥ सिरिचंदे पुप्फकेऊ महाचंदे य केवली । सुयसागरे य अरहा आगमिस्साण होस्सइ ॥८९॥ सिद्धत्थे पुण्णघोसे य, महाघोसे य केवली । सच्चसेणे य अरहा आगमिस्साण होस्सइ॥९०॥ सूरसेणे य अरहा, महासेणे य केवली । सव्वाणंदे य अरहा, देवउत्ते य होस्सइ॥९१॥ सुपासे सुव्वंए अरहा, अरहे य सुकोसले । अरहा अणंते विजए आगमिस्साण होस्सइ ॥९२॥ विमले उत्तरे अरहा, अरहा य महाबले । देवाणंदे य अरहा, आगमिस्साण होस्सइ॥९३॥ एए वुत्ता चउव्वीस, एरवयम्मि केवली । आगमिस्साण होस्संति, धम्मतित्थस्स देसगा ॥९४॥ सू० २१७॥

और सुग्रीव। ये पूर्वोक्त प्रतिशत्रु कीर्तिपुरुष वासुदेवों के होंगे। ये सब प्रतिवासुदेव युद्ध में चक्र से लडेंगे और अन्त में अपने उसी चक्र से मार जावेंगे। प्रतिवासुदेव युद्ध में वासुदेव के ऊपर मारने के लिए चक्र चलाते है-सो वह चक्र वासुदेव का कुछ भी बिगाड नहीं कर सकता है-प्रत्युत वापिस होकर अपने चलानेवाले प्रतिवासुदेव का हनन कर देता है। ऐसा शास्त्रीय कथन है। उसी का यह सूचन है ॥सू० २१६॥

વાસુદેવોના તે નવ પ્રતિશત્રુઓ થશે તે સઘળા પ્રતિવાસુદેવો યુદ્ધમાં ચક્રથી લડશે અને અન્તે પોતાના જ તે ચક્રથી તેઓ માર્યા જશે પ્રતિવાસુદેવ યુદ્ધમાં વાસુદેવને મારવાને માટે ચક્ર છોડે છે પણ તે ચક્ર વાસુદેવને કંઈ પણ નુકસાન કરી શકતુ નથી પણ તે પાછું ફરીને પ્રતિવાસુદેવની જ હત્યા કરે છે એવું શાસ્ત્રીય કથન છે તે કથનનું જ અહીં સૂચન કરવામાં આવ્યું છે ॥સૂ.૨૧૬॥

शब्दार्थ—(जंबूद्दीवे णं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे—जम्बूद्वीप नामके इसद्वीप में (एरवए वासे) ऐरवते वर्षे—ऐरवत क्षेत्र के अन्दर जो कि सातवां क्षेत्र है (आगमिस्साए उस्सप्पिणीए चउव्वीसं तित्थगरा भविस्संति) आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां चतुर्विंशतिस्तीर्थंकरा भविष्यन्ति आगामीउत्सर्पिणी में चौवीस तीर्थंकर होंगे। (तं जहा) तद्यथा—उनके नाम इस प्रकार हैं (सुमंगले य सिद्धत्थे निव्वाणे य महाजसे, धम्मज्झए य अरहा आगमिस्साण होस्सइ) सुमङ्गलश्च सिद्धार्थो निर्वाणश्च महायशाः धर्मध्वजश्च अर्हन् आगमिष्यति काले खलु भविष्यति—सुमंगल१ सिद्धार्थ २, निर्वाण ३, महायश ४ धर्मध्वज ५, (सिरिचंदे पुप्फकेऊ—महाचंदे य केवली, सुयसागरे य अरहा आगमिस्साण होस्सइ) श्रीचन्द्रः पुण्यकेतु महाचन्द्रश्च केवली, श्रुतसागरश्चार्हन् आगमिष्यति काले खलु भविष्यति—श्रीचंद्र, ६ पुष्पकेतु ७ महाचंद ८ अर्हत श्रुतसागर ९ (सिद्धत्थे पुण्णघोसे य महाघोसे य केवली सच्चसेणे य अरिहा आगमिस्साणहोस्स इ) सिद्धार्थः पुण्यघोपश्च महाघोषश्च केवली, सत्यसेनश्चर्हम आगामिष्यति काले भविष्यन्ति—सिद्धार्थ १० पुण्यघोष ११, महाघोष १२ सत्यसेन १३ (सूरसेणे य अरिहा महासेणे य केवली, सव्वाणंदे य अरहा देवउत्ते य

શબ્દાર્થ—(जवूद्दीवे णं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे—જમ્બૂદ્વીપ નામના આ દ્વીપમાં (एरवए वासे) ऐरवते वर्षे—ઐરવતક્ષેત્ર નામના સાતમા ક્ષેત્રમાં (आगमिस्साए उस्सप्पिणीए चउव्वीसं तित्थगरा भविस्संति) आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां चतुर्विंशतिस्तीर्थंकरा भविष्यन्ति—આગામી ઉત્સર્પિણીકાળમાં ચોવીસ તીર્થંકરો થશે (तं जहा) तद्यथा—તેમના નામ આ પ્રમાણે છે—(सुमंगले य सिद्धत्थे निव्वाणे य महाजसे धम्मज्जए य अरहा आगमिस्साण होस्सइ) सुमङ्गलश्च सिद्धार्थो निर्वाणश्च महायशाः धर्मध्वजश्च अर्हन् आगमिष्यति खलु काले भविष्यन्ति—(૧) સુમંગલ, (૨) સિદ્ધાર્થ, (૩) નિર્વાણ, (૪) મહાયશ, (૫) ધર્મધ્વજ, (सिरिचंदे पुप्फकेऊ महाचंदे य केवली सुयसागरे य अरहा आगमिस्साण होस्सइ) श्रीचन्द्रः पुष्पकेतुः महाचन्द्रश्च केवली, श्रुतसागरश्चार्हन् आगमिष्यति काले खलु भविष्यति—(૬) શ્રીચન્દ્ર, (૭) પુષ્પકેતુ, (૮) મહાચન્દ્ર, (૯) અર્હંતશ્રુતસાગર (सिद्धत्थे पुण्णघोसे य महाघोसे य केवली, सच्चसेणे य अरिहा आगमिस्साण होस्सइ) सिद्धार्थः पुण्यघोषश्च महाघोषश्च केवली, सत्यसेनश्चार्हन् आगमिष्यति काले भविष्यन्ति—(૧૦) સિદ્ધાર્થ, (૧૧) પુણ્યઘોષ, (૧૨) મહાઘોષ, (૧૩) સત્યસેન, (सूरसेणे य अरिहामहासेणे य केवली, सव्वाणंदे य अरहा देवउत्ते य होस्सइ) सूर

टीका—'जंबुद्दीवे ण दीवे' इत्यादि–जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे ऐरवते वर्षे आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां चतुर्विंशतिस्तीर्थंकरा भविष्यन्ति, तद्यथा-सुमङ्गलश्च१ सिद्धार्थो२ निर्वाणश्च३ महायशा ४। धर्मध्वजश्च५ अर्हन् आगमिष्यति काले

...स्सइ) सूरसेनश्चार्हन् महासेनश्च केवली, सर्वानन्दश्चार्हन् देवगुप्तश्च भवि ष्यति-सूरसेन १४, महासेन १५ सर्वानंद १६, (सुपास सुव्वए अरहा अरहे य सुकोसले) सुपार्श्वः सुव्रतोऽर्हन् अर्हंश्च सुकोसलः-सुपार्श्व १७ सुव्रत १८ सुकोशल १९ (अरहा अणंत विजए) अर्हन्ननन्तविजय -अन न्तविजय २० (विमए-उत्तरे अरहा अरहा य महाबले, देवाणंद य अरहा आगमिस्साण-होस्सइ) विमल उत्तरोऽर्हन् अर्हंश्च महाबल देवानन्दश्चार्हन् आगमिष्यति काले खलु भविष्यति-विमल २१, उत्तर २२ महाबल २३ देवानंद २४ (एए वुत्ता चउव्वीस एरवयम्मि केवली, आगमिस्साण-होस्सति धम्मतित्थस्स देसगा)एते उक्ताश्चतुर्विंशतिरैरवते केवलिनः, आगमिष्यति काल खलु भविष्यन्ति, धर्मतीर्थस्य देशका -ये ऐरवतक्षेत्र के भविष्यत् काल में होनेवाले तीर्थकर कहे गये हैं। व वहां आगामीकाल में धर्म तीर्थ के उपदेशक होंगे ॥ सू० २१७॥

टीकार्थ—'जंबुद्दीवे ण' इत्यादि–जंबूद्वीप नाम के इस द्वीप में ऐरवत क्षेत्र के अन्दर जो कि सातवां क्षेत्र है। आगामी उत्सर्पिणीकाल में चौबीस तीर्थंकर होंगे। उनके नाम इस प्रकार हैं। सुमंगल, सिद्धार्थ,

सेनश्चार्हन् महासेनश्च केवली, सर्वानन्दश्चार्हन् देवगुप्तश्च भविष्यन्ति-(१४) सूरसेन (१५) महासेन (१६) सर्वानंद, (सुपासे सुव्वए अरहा अरहे य सुको सले) सुपार्श्व सुव्रतोऽर्हन्, अर्हंश्च सुकोसले-(१७) सुपार्श्व (१८) सुव्रत (१९) सुकोशल (अरहा अणतविजए) अर्हन्ननन्तविजय -(२०) अनन्तविजय, (विमले उत्तरे अरहा अरहा य महाबले, देवाणंदे य अरहा आगमिस्साण होस्सइ) विमल उत्तरोऽर्हन् अर्हंश्च महाबलः देवानन्दश्च अर्हन्, आगमिष्यति काले खलु भविष्यन्ति-(२१) विमल, (२२) उत्तर (२३) महाबल અને (२४) દેવાનંદ 'एए वुत्ता चउव्वीस एरवयम्मि केवली, आगमिस्साण होस्संति, धम्मतित्थस्स देसगा) एते उक्ताश्चतुर्विंशतिरैरवते केवलिन, आगमिष्यति काले भविष्यन्ति,धर्मतीर्थस्य देशका એ ભવિષ્યકાળમાં ઐરવતક્ષેત્રમાં થનારા તીર્થંકરોના નામ કહેલાં છે તેઓ ત્યાં આગામીકાળમાં ધર્મ તીર્થના ઉપદેશક થશે ।સૂ.૨૧૭

ટીકાર્થ—'जंबुद्दीवेण' इत्यादि—જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપમાં આવેલ ઐરવત નામના સાતમાં ક્ષેત્રમાં આગામી ઉત્સર્પિણી કાળમાં ચોવીસ તીર્થંકર થશે. તેમનાં નામ આ પ્રમાણે છે સુમંગલ, સિદ્ધાર્થ નિર્વાણ, મહાયશ ધર્મધ્વજ શ્રીચંદ્ર

खलु भविष्यति ॥८८॥ श्रीचन्द्रः६ पुष्पकेतु७ महाचन्द्रश्च८ केवली। श्रुतसागरश्चार्हन्९, आगमिष्यतिकाले खलु भविष्यति॥८९॥ सिद्धार्थः१० पुण्यघोषश्च११ महाघोषश्च१२ केवली। सत्यसेनश्चार्हन्१३ आगमिष्यति काले भविष्यन्ति॥९०॥ सूरसेनश्चार्हन् महासेनश्च१५ केवली। सर्वानन्दश्चार्हन् देवगुप्तश्च=देवगुप्तः=देववृन्दसेवितः सर्वानन्दनाम यः षोडशस्तीर्थंकरो भविष्यति॥९१॥ सुपार्श्वः१७ सुव्रतोऽर्हन्१८, अर्हंश्च सुकोशलः१९। अर्हन्ननन्तविजयः२० आगमिष्यति काले भविष्यति॥९२॥ विमल२१ उत्तरोऽर्हन२२, अर्हंश्च महाबलः२३। देवानन्दश्च२४ अर्हन, आगमिष्यतिकाले खलु भविष्यति॥९३॥ एते उक्ताश्चतुर्विंशतिरैरवते केवलिनः। आगमिष्यति काले खलु भविष्यन्ति, धर्मतीर्थस्य देशकाः=धर्मोपदेशका इत्यर्थः ॥९४॥ सू २१७॥

निर्वाण, महायश, धर्मध्वज, श्रीचंद्र, पुष्पकेतु, महाचन्द्र, अर्हतश्रुतसागर, सिद्धार्थ, पुण्यघोष. केवली महाघोष, अर्हत सत्यसेन, अर्हत सूरसेन केवली महासेन, अर्हत सर्वानद ये देववृन्दों से सेवित १६ वें तीर्थंकर होंगे। सुपार्श्व, सुव्रत, सुकोशल, अर्हत अनंतविजय, विमल, अर्हत उत्तर, अर्हत महाबल और अर्हत देवानद। यहा पर प्रत्येक गाथा में जो "आगामिस्साण होस्सइ" ऐसा पाठ आया है उसका तात्पर्य ऐसा है कि ये भविष्यत् काल में तीर्थंकर होंगे। "देवगुप्त" यह विशेषण सर्वानन्द तीर्थंकर के साथ जो आया है वह सर्व तीर्थंकरों के साथ भी सुघटित होता है। क्यों कि सब ही तीर्थंकर देववृन्दो से सेवित होते हैं। अर्हन् विशेषण चार घातियाकर्मों को नाश करने के अर्थ का द्योतक है। सो यह भी प्रत्येक तीर्थंकर के साथ लगाया जा सकता है। पादपूर्ति के निमित्त ही इन विशेषणों की सूत्रकार ने कहीं २ पर इनकी घटना

પુષ્પકેતુ, મહાચ‌ંદ્ર, અર્હંત શ્રુતસાગર, સિદ્ધાર્થ, પુણ્યઘોષ, કેવલી મહાઘોષ, અર્હંત સત્યસેન, અર્હંત સૂરસેન, કેવલી મહાસેન, અર્હંત સર્વાનંદ, તે દેવવૃન્દોથી સેવિત ૧૬મા તીર્થંકર થશે સુપાર્શ્વ, સુવ્રત, સુકોશલ અર્હંત અનંતવિજય, વિમલ, અર્હંત ઉત્તર અર્હંત મહાબલ અને અર્હંત દેવાનંદ. આ સૂત્રમાં પ્રત્યેક ગાથામા જે "आगमिस्साण होस्सइ" એવો પાઠ આવ્યો છે તેનુ તાત્પર્ય એ છે કે તેઓ ભવિષ્યકાળમા તીર્થંકર થશે "देवगुप्त" આ વિશેષણ 'સર્વાનન્દ' તીર્થંકરની સાથે આવેલુ છે છતા તેને બધા તીર્થંકરો સાથે લઈ શકાય છે કારણ કે સઘળા તીર્થંકરોને દેવવૃન્દો વંદન કરે છે–તેમની સેવા કરે છે 'अर्हन्' વિશેષણ ચાર ઘાતિયા કર્મોનો નાશ કરવાના અર્થનુ દર્શક છે તે વિશેષણ પણ સર્વે તીર્થંકરોને લગાડી શકાય છે પાદપૂર્તિ [illegible] સૂત્રકારે તે વિશેષણો કોઈ કોઈ

मूलम्—बारस चक्कवट्टिणो भविस्सति, बारस चक्कवट्टिपियरो भविस्सति, बारस चक्कवट्टिमायरो भविस्सति, बारस इत्थीरयणा भविस्सति, नव बलदेववासुदेवपियरो भविस्सति, नव वासुदेवमायरो भविस्सति, नव बलदेवमायरो भविस्सति, नव दसारमंडला भविस्संति, तं जहा—उत्तमपुरिसा मज्झिमपुरिसा पहाणपुरिसा जाव दुवे दुवे रामकेसवा भायरो भविस्संति, णव पडिसत्तू भविस्सति, नव पुव्वभवणामधेज्जा, नव धम्मायरिया, नव नियाणभूमीओ, नव नियाणकारणा, आयाए एरवए आगमिस्साए भाणियव्वा। एवं दोसु वि आगमिस्साए भाणियव्वा ॥सू० २१८॥

की है। ये ऐरवतक्षेत्र के भविष्यत् काल में होनेवाले तीर्थंकर कहे गये हैं। ये वहां आगामीकाल में धर्मतीर्थ के उपदेशक होंगे ॥ सू०२१७॥

शब्दार्थ—(बारस चक्कवट्टिणो भविस्संति) द्वादश चक्रवर्तिनो भविष्यन्ति बारह चक्रवर्ती होंगे (बारस चक्कवट्टि पियरो भविस्सति) द्वादशचक्रवर्ति पितरो भविष्यन्ति बारहचक्रवर्तियों के पिता होंगे। (बारसचक्कवट्टिमायरो भविस्संति) द्वादशचक्रवर्ति मातरो भविष्यन्ति—चक्रवर्तियों की बारह माताएं होंगी। (बारस इत्थीरयणा भविस्सति) द्वादश स्त्रीरत्नानि भविष्यन्ति बारह स्त्री रत्नो होंगे। (नव बलदेव वासुदेव पियरो भविस्सति) नव बलदेववासुदेवपितरो भविष्यन्ति—नव बलदेवों और नव वासुदेवों

આ બારમાં છ ઐરવત ક્ષેત્રમાં ભવિષ્યકાળમાં ઉપરોક્ત તીર્થંકરો થવાના છે અને તેઓ આગામી કાળમાં ત્યાં ધર્મતીર્થના ઉપદેશક થશે ॥સૂ ૨૧૭॥

શબ્દાર્થ-(बारस चक्कवट्टिणो भविस्संति) द्वादश चक्रवर्तिनो भविष्यन्ति-બાર ચક્રવર્તિઓ થશે (बारस चक्कवट्टिपियरो भविस्संति) द्वादश चक्रवर्ति पितरो भविष्यन्ति-બાર ચક્રવર્તિઓના બાર પિતા થશે (बारस चक्कवट्टिमायरो भविस्संति) द्वादश चक्रवर्तिमातरो भविष्यन्ति-ચક્રવર્તિઓની બાર માતાઓ થશે (बारसइत्थीरयणा भविस्संति) द्वादशस्त्रीरत्नानि भविष्यन्ति-બાર સ્ત્રીરત્નો થશે (नव बलदेववासुदेवपियरो भविस्संति) नव बलदेववासुदेवपितरो भविष्यन्ति-નવ બળદેવો અને નવ વાસુદેવોના નવ પિતા થશે (नव वासुदेवमायरो

के नौ पिता होंगे। (नव वासुदेव मायरो भविस्संति, नव बलदेव मायरो भविस्संति) नव वासुदेव मातरो भविष्यन्ति, नव बलदेव मातरो भविष्यन्ति–नव वासुदेवों की नौ माताए होंगी और नव बलदेवोंकी नौ माताएँ होंगी। (नव दसार मंडला भविस्संति) नव दशार्ह मण्डलानि भविष्यन्ति नौ दशार्हमंडल होंगे। (तं जहा) तद्यथा–(उत्तमपुरिसा, मज्झिमपुरिसा पहाणपुरिसा जाव दुवे दुवे रामकेसवा भायरो भविस्संति) उत्तमपुरुषाः मध्यमपुरुषाः प्रधानपुरुषाः यावद् द्वौ द्वौ रामकेशवौ भ्रातरौ भविष्यन्ति इन पदों का अर्थ २१३ सूत्र की व्याख्या में लिख दिया है। सो उसे यहां पर भविष्यत्काल परक लगा लेना चाहिये (णव पडिसत्तू भविस्संति) नव प्रतिशत्रवो भविष्यन्ति–नौ प्रतिवासुदेव होंगे। (नव पुव्वभवणामधेज्जा) नव पूर्वभव नामधेयानि–नौ इनके पूर्वभव संबंधी नाम (नव धम्मायरिया) नव धर्माचार्याः–नौ इनके धर्माचार्य, (नव नियाणभूमीओ) नव नव निदान भूमयः–नौ इनकी निदानभूमियां (नव नियाणकारणा) नव निदान कारणानि च–नौ निदान कारण, (आयाए एरवए) आदाय ऐरवतम्–ऐरवत क्षेत्र के वीच में (आगमिस्साए) आगमिष्यन्त्याम्–आने वाले उत्सर्पिणीकाल में होंगे ऐसा (भाणियव्वा) भणितव्यानि–कथन कर लेना

भविस्संति, नव बलदेवमायरो भविस्संति) नव वासुदेव मातरो भविष्यन्ति, नवबलदेवमातरो भविष्यन्ति–નવ વાસુદેવોની નવ માતાઓ થશે અને નવ બળદેવોની નવ માતાઓ થશે (नवदसारमंडला भविस्संति) नवदशार्हमण्डलानि भविष्यन्ति–નવ દશાર્હમંડલ થશે.(तं जहा) तद्यथा–(उत्तमपुरिसा, मज्झिमपुरिसा, पहाणपुरिसा, जाव दुवे दुवे रामकेसवा भायरो भविस्संति) उत्तमपुरुषाः मध्यमपुरुषाः प्रधानपुरुषाः यावद् द्वौ द्वौ रामकेशवौ भ्रातरौ भविष्यन्ति–આ પદોના અર્થ ૨૧૩મા સૂત્રમા આપી દીધા છે. અહીં ત્યા તેમને ભવિષ્યકાળની અપેક્ષાએ સમજવા જોઈએ. (णव पडिसत्तू भविस्संति) नव प्रतिशत्रवो भविष्यन्ति–તે વાસુદેવોના પ્રતિશત્રુ નવ પ્રતિવાસુદેવો થશે. (नव पुव्वभवणामधेज्जा) नव पूर्वभवनामधेयानि–તેમનાં પૂર્વભવના નવ નામ હશે. (नव धम्मायरिया) नव धर्माचार्याः–તેમના નવ ધર્માચાર્યો થશે, (नव नियाणभूमीओ) नव निदानभूमयः–તેમની નવ નિદાનભૂમિયો હશે (नव नियाण कारणा) नवनिदान कारणानि–નિયાણાના નવ કારણો હશે (आयाए एरवए) आदाय ऐरवतम्–તેઓ ઐરવતક્ષેત્રમા (आगमिस्साए–आगमिष्यन्त्याम्–આગામી ઉત્સર્પિણીકાળમા થશે એમ (भाणियव्वा) भणितव्यानि–

टीका--'बारस चक्कवट्टिणो' इत्यादि-द्वादश चक्रवर्तिनो भविष्यन्ति, द्वादश चक्रवर्तिपितरो भविष्यन्ति, द्वादशचक्रवर्तिमातरो, द्वादश स्त्रीरत्नानि भविष्यन्ति। नव बलदेववासुदेवपितरो भविष्यन्ति, नव वासुदेवमातरो भविष्यन्ति, नव बलदेव मातरो भविष्यन्ति, नव दशार्हमण्डलानि भविष्यन्ति, तद्यथा-उत्तमपुरुषा मध्य मापुरुषाः प्रधानपुरुषाः यावत् द्वौ द्वौ रामकेशवौ भ्रातराविति कृत्वा नव बल देववासुदेव भविष्यन्ति। नव प्रतिशत्रवो भविष्यन्ति। नव पूर्वभवनामधेयानि, नव धर्माचार्याः, नव निदानभूमयः, नव निदानकारणानि च 'आयाए एरवए'

ज्ञातव्याः। (एवं दोसु वि आगमिस्साए भाणियव्वा) एवं द्वयोरपि आगमिष्यन्त्यां भणितव्या -इस तरह भरत और ऐरवत क्षेत्र के बीच में आगामी उत्स पिंणी काल में बलदेव और वासुदेव आदि होंगे ऐसा जानना चाहिये॥सू २१८॥

टीकार्थ—'बारस चक्कवट्टिणो' इत्यादि। बारह चक्रवर्ती होंगे। बारह चक्रवर्तियों के पिता होंगे। चक्रवर्तियों की बारह माताएँ होंगी। बारह स्त्री रत्न होंगे। नव बलदेवों के और नव वासुदेवों के नौ पिता होंगे। नव वासुदेवों की नौ माताएँ होंगी और नव बलदेवो की नौ माताए होंगी। नौ दशार्हमंडल होंगे। "उत्तमपुरिसा" से लेकर "रामकेसवा मायरो भविस्संति" यहां तक इन पदों का अर्थ २१३ सूत्र की व्याख्या में लिख दिया है। सो उसे यहां पर भविष्यत् काल परक लगा लेना चाहिये। नौ प्रतिवासुदेव होंगे। नौ इनके पूर्वभव संबंधी नाम नौ इनके धर्माचार्य, नौ इनकी निदान भूमियां, और नौ निदानकारण, ऐरवतक्षेत्र

કથન સમજી લેવાનુ છે (एवं दोसुवि आगमिस्साए भाणियव्वा) एव द्वयो रपि आगमिष्यन्त्यां भणितव्या –આ પ્રમાણે બળદેવો અને વાસુદેવો ભરત અને ઐરવતક્ષેત્રમાં આગામી ઉત્સર્પિણીકાળમાં થશે તેમ સમજવુ સૂ. ૨૧૮॥

ટીકાર્થ—' बारसचक्कवट्टिणो ' इत्यादि—બાર ચક્રવર્તિઓ થશે. બાર ચક્રવર્તિ ઓના બાર પિતા થશે. બાર ચક્રવર્તિઓની બાર માતાઓ થશે અને બાર સ્ત્રીરત્નો થશે નવ બળદેવો તથા નવ વાસુદેવોનાં નવ પિતા થશે. નવવાસુદેવોની નવ માતાઓ થશે અને બળદેવોની નવ માતાઓ થશે નવ દશાર્હ મંડળ થશે એટલે કે એક બળદેવ અને એક વાસુદેવ એમ બન્નેના નવ યુગલ થશે. "उत्तमपुरिसा" થી "राम केसवा मायरो भविस्सति" સુધીના પદોના અર્થ ૨૧૩માં સૂત્રમાં આપી દીધા છે તે અહીં ભવિષ્યકાળમાં તેમને સમજવાના છે તે વાસુદેવોમાં નવ પ્રતિશત્રુ-પ્રતિવાસુદેવો થશે. તે વાસુદેવોના પૂર્વભવનાં નવ નામ હશે નવ ધર્માચાર્યો થશે, નવ નિદાનભૂમિયો અને નવ નિદાનકારણો થશે, તેઓ આગામી ઉત્સર્પિણીકાળમાં

आदाय ऐरवतम्—ऐरवतक्षेत्रमधिकृत्य=एरवतक्षेत्रमध्ये इत्यर्थः, प्राकृतत्वाद् द्विती यास्थाने सप्तमी, 'आगमिस्साए' आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां भणितव्यानि=कथनीयानि। उक्तमपि अर्थं पुनरपि स्पष्टयति—'एवम्' अनेन प्रकारेण 'दोसु वि' द्वयोरपि=भरतैरवतक्षेत्रमध्ये इत्यर्थः, 'आगमिस्साए' आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां रामवासुदेवादयो भणितव्याः ॥ सू० २१८ ॥

अनेन प्रकारेण अनेकविधपदार्थान् प्रदर्श्य संप्रति अधिकृतशास्त्रस्य गुणनिष्पन्ननामान्याह--

सूलम्—इच्चेइयं एवमाहिज्जइ, तं जहा—कुलगरवंसेइ य एवं तित्थगरवंसेइ य गणधरवंसेइ य चक्कवट्टिवंसेइ य दसारवंसेइ य ईसिवंसेइय जइवंसेइ य। मुणिवंसेइ य। सुएइवा सुअंगेइ वा सुयसमासे वा सुयखंधेइ वा समवाएइ वा संखेइ वा संमत्तमंगमक्खायं अज्झयणंति बेमि ॥सू. २१९॥

॥ इय समवायं चउत्थमंगं समत्तं ॥

के बीच में आनेवाले उत्सर्पिणीकाल में होंगे ऐसा कथन कर लेना चाहिये। इस प्रकार से उक्त अर्थ को सूत्रकार पुनः स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि—इस तरह भरत और ऐरवत क्षेत्र बीच में आगामी उत्सर्पिणी काल में बलदेव और वासुदेव आदि होंगे ऐसा जानना चाहिये ॥सू०२१८॥

इस प्रकार से अनेकविध पदार्थों का कथन करके अब सूत्रकार इस अधिकृत शास्त्र के गुणनिष्पन्न नामों का कथन करते हैं।—

शब्दार्थ—(इच्चेइयं एवमाहिज्जइ)(इत्येतत् एवमाख्यायते-यह शास्त्र इस प्रकारसे इन नामों द्वारा कहा जाता है (तं जहा) तद्यथा—वे नाम ये

रवतक्षेत्रमां थशे ओ प्रमाणे समज्ी लेवुं जोईओ. आ प्रमाणे उक्त अर्थोने फरीथी स्पष्ट करतां सूत्रकार कहे छे के—आगामी उत्सर्पिणीकाळमां भरत अने ऐरवतक्षेत्रनी अंदर उपरोक्त वासुदेव, बळदेव आदि थशे ॥सू २१८॥

आ प्रमाणे अनेक प्रकारना पदार्थोनुं कथन करीने हवे सूत्रकार आ अधिकृत शास्त्रना गुणयुक्त नामोनुं कथन करे छे—

शब्दार्थ—(इ इयं एवमाहिज्जइ) इत्येतत् एवमाख्यायते—आशास्त्र जे नामोथी ओळखाय छे. (तंजहा) तद्यथा—ते नामो आ प्रमाणे छे—(कुलगरवंसे

टीका—'बारस चक्कवट्टिणो' इत्यादि—द्वादश चक्रवर्तिनो भविष्यन्ति, द्वादश चक्रवर्त्तिपितरो भविष्यन्ति, द्वादशचक्रवर्तिमातरो, द्वादश स्त्रीरत्नानि भविष्यन्ति। नव बलदेववासुदेवपितरो भविष्यन्ति, नव वासुदेवमातरो भविष्यन्ति, नव बलदेव मातरो भविष्यन्ति, नव दशार्हमण्डलानि भविष्यन्ति, तद्यथा—उत्तमपुरुषा मध्यमापुरुषाः प्रधानपुरुषाः यावत् द्वौ द्वौ रामकेशवौ भ्रातराविति कृत्वा नव बलदेववासुदेव भविष्यन्ति। नव प्रतिशत्रवो भविष्यन्ति। नव पूर्वभवनामधेयानि, नव धर्माचार्याः, नव निदानभूमयः, नव निदानकारणानि च 'आयाए एरवए' चाहिय। (एवं दोसु वि आगमिस्साए भाणियव्वा) एवं द्वयोरपि भागमिष्यन्त्यां भणितव्या—इस तरह भरत और ऐरवत क्षेत्र के बीच में आगामी उत्सर्पिणी काल में बलदेव और वासुदेव आदि होंगे ऐसा मानना चाहिये॥सू २१८॥

टीकार्थ—'बारस चक्कवट्टिणो' इत्यादि। बारह चक्रवर्ती होंगे। बारह चक्रवर्तियों के पिता होंगे। चक्रवर्तियों की बारह माताएँ होंगी। बारह स्त्री रत्न होंगे। नव बलदेवों के और नव वासुदेवों के नौ पिता होंगे। नव वासुदेवों की नौ माताएँ होंगी और नव बलदेवों की नौ माताएं होंगी। नौ दशार्हमंडल होंगे। "उत्तमपुरिसा" से लेकर "रामकेसवा भायरो भविस्संति" यहां तक इन पदों का अर्थ २१३ सूत्र की व्याख्या में लिख दिया है। सो उसे यहां पर भविष्यत् काल परक लगा लेना चाहिये। नौ प्रतिवासुदेव होंगे। नौ इनके पूर्वभव संबंधी नाम नौ इनके धर्माचार्य, नौ इनकी निदान भूमियां, और नौ निदानकारण, ऐरवतक्षेत्र

મેન સમજી લેવાનું છે (एवं दोसुवि भागमिस्साए भाणियव्वा) एवं द्वयोरपि आगमिष्यन्त्यां भणितव्या —આ પ્રમાણે બળદેવો અને વાસુદેવો ભરત અને એરવતક્ષેત્રમાં આગામી ઉત્સર્પિણીકાળમાં થશે તેમ સમજવું ॥સૂ. ૨૧૮॥

ટીકાર્થ—"बारसचक्कवट्टिणो" इत्यादि—બાર ચક્રવર્તિઓ થશે. બાર ચક્રવર્તિઓના બાર પિતા થશે. બાર ચક્રવર્તિઓની બાર માતાઓ થશે અને બાર સ્ત્રીરત્નો થશે. નવ બળદેવો તથા નવ વાસુદેવોના નવ પિતા થશે. નવવાસુદેવોની નવ માતાઓ થશે અને બળદેવોની નવ માતાઓ થશે નવ દશાર્હ મંડળ થશે એટલે કે એક બળદેવ અને એક વાસુદેવ એમ બન્નેના નવ યુગલ થશે "उत्तमपुरिसा" थी "राम केसवा भायरो भविस्संति" સુધીના પદોના અર્થ ૨૧૩માં સૂત્રમાં આપી દીધા છે તે અહીં ભવિષ્યકાળમાં તેમને સમજવાના છે તે વાસુદેવોમાં નવ પ્રતિશત્રુ–પ્રતિવાસુદેવો થશે. તે વાસુદેવોના પૂર્વભવનાં નવ નામ હશે, નવ ધર્માચાર્યો થશે, નવ નિદાનભૂમિયો અને નવ નિદાનકારણો થશે, તેઓ આગામી ઉત્સર્પિણીકાળમાં

आदाय ऐरवतम्—ऐरवतक्षेत्रमधिकृत्य=एरवतक्षेत्रमध्ये इत्यर्थः, प्राकृतत्वाद् द्वितीयास्थाने सप्तमी, 'आगमिस्साए' आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां भणितव्यानि=कथनीयानि। उक्तमपि अर्थं पुनरपि स्पष्टयति—'एवम्' अनेन प्रकारेण 'दोसु वि' द्वयोरपि=भरतैरवतक्षेत्रमध्ये इत्यर्थः, 'आगमिस्साए' आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां रामवासुदेवादयो भणितव्याः ॥ सू० २१८ ॥

अनेन प्रकारेण अनेकविधपदार्थान् प्रदर्श्य संप्रति अधिकृतशास्त्रस्य गुणनिष्पन्ननामान्याह——

मूलम्—इच्चेइयं एवमाहिज्जइ, तं जहा—कुलगरवंसेइ य एवं तित्थगरवंसेइ य गणधरवंसेइ य चक्कवट्टिवंसेइ य दसारवंसेइ य ईसिवंसेइय जइवंसेइ य। मुणिवंसेइ य। सुएइवा सुअंगेइ वा सुयसमासे वा सुयखंधेइ वा समवाएइ वा संखेइ वा संमत्तमंगमक्खायं अज्झयणंति बेमि ॥सू. २१९॥

॥ इय समवायं चउत्थमंगं समत्तं ॥

के बीच में आनेवाले उत्सर्पिणीकाल में होंगे ऐसा कथन कर लेना चाहिये। इस प्रकार से उक्त अर्थ को सूत्रकार पुनः स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि—इस तरह भरत और ऐरवत क्षेत्र बीच में आगामी उत्सर्पिणी काल में बलदेव और वासुदेव आदि होंगे ऐसा जानना चाहिये ॥सू०२१८॥

इस प्रकार से अनेकविध पदार्थों का कथन करके अब सूत्रकार इस अधिकृत शास्त्र के गुणनिष्पन्न नामों का कथन करते हैं।—

शब्दार्थ—(इच्चेइयं एवमाहिज्जइ)(इत्येतत् एवमाख्यायते—यह शास्त्र इस प्रकारसे इन नामों द्वारा कहा जाता है (तं जहा) तद्यथा—वे नाम ये

રવતક્ષેત્રમા થશે એ પ્રમાણે સમજી લેવું જોઈએ. આ પ્રમાણે ઉકત અર્થોને ફરીથી સ્પષ્ટ કરતા સૂત્રકાર કહે છે કે—આગામી ઉત્સર્પિણીકાળમાં ભરત અને ઐરવતક્ષેત્રની અંદર ઉપરોકત વાસુદેવ, બળદેવ આદિ થશે ॥સૂ ૨૧૮॥

આ પ્રમાણે અનેક પ્રકારના પદાર્થોનું કથન કરીને હવે સૂત્રકાર આ અધિકૃત શાસ્ત્રના ગુણયુકત નામોનું કથન કરે છે—

શબ્દાર્થ—(इ इयं एवमाहिज्जइ) इत्येतत् एवमाख्यायते—આ શાસ્ત્ર જે નામોથી ઓળખાય છે. (तंजहा) तद्यथा—તે નામો આ પ્રમાણે છે—(कुलगरवंसे

है-(कुलगर वंसेइ य एवं तित्थगर वंसेइ य गणहर वंसेइ य चक्कवट्टिवंसेइ य दसार वंसेइ य) कुलकर वंशोति च एवम् तीर्थकरवंशोति च-गणधर वंशोति च चक्रवर्तिवंशोति च दशार्हवंशोति च-कुलकरों के वंश का प्रतिपादक होने के कारण इस शास्त्र का नाम कुलकर वंश है। तीर्थकरों के वंश का कथन करनेवाला होने के कारण इस शास्त्र का नाम तीर्थंकर वंश है। इसी तरह से गणधरों के वंश का प्रतिपादक होने के-कारण इस शास्त्र का नाम गणधर वंश है। चक्रवर्तियों के वंश का प्रतिपादक होने से इसका नाम चक्रवर्तिवंश, तथा दशार्हवंश का प्रतिपादक होने से दशार्हवंश (इसि वंसेइ य जइ वंसेइ य मुनिवंसेइ य) ऋषिवंशइति च, यतिवंश इति च, मुनि वंश इति च-ऋषियों-गणधरों से अतिरिक्त तीर्थंकर शिष्यों के वंश का प्रतिपादक होने से ऋषिवंश तथा ऋषि मुनि, यति ये शब्द समान अर्थ वाले होने से यतिवंश मुनिवंश है। (सुए वा सुअंगेइ वा सुयसमासेइ वा सुयखंधेइ वा समवाएइ वा संखेइ वा) श्रुतेति वा श्रुताङ्गेति वा श्रुतसमासेति वा श्रुतस्कन्धेति वा समवायेति वा संख्येति वा-तथा त्रिकाल संबंधी अर्थ के बोधन कराने में समर्थ होने के कारण इसका नाम श्रुत है। प्रवचन पुरुष का अंग होने के कारण इसका नाम श्रुताङ्ग ऐसा भी है। समस्त सूत्रों के अर्थों का यहां संक्षेप में प्रतिपादन होने से इसका नाम श्रुतसमास ऐसा भी है। श्रुत समुदायरूप होने से इसका नाम श्रुत

इ य एवं तित्थगरवंसेइ य गणहरवंसेइ य चक्कवट्टिवंसेइ य दसारवंसेइ य) कुलकर वंशोति च एवम् तीर्थकरवंशोति च गणधरवंशोति च चक्रवर्तिवंशोति च दशार्ह वंशोति च-કુલકરોના વંશનું પ્રતિપાદક હોવાથી આ શાસ્ત્રનું નામ 'કુલકરવંશ' છે તીર્થંકરોના વંશનું પ્રતિપાદક હોવાથી આ શાસ્ત્રનું નામ 'તીર્થંકરવંશ' છે એ જ પ્રમાણે ગણધરોના વંશનું કથન કરનાર હોવાથી આ શાસ્ત્રનું નામ ગણધરવંશ છે ચક્રવર્તિઓના વંશનું પ્રતિપાદક હોવાથી આ શાસ્ત્રનું નામ 'ચક્રવર્તિવંશ' છે તથા દશાર્હવંશનું પ્રતિપાદક હોવાથી તેનું નામ દશાર્હવંશ પણ છે (इसिवंसेइय जइवंसेइय मुनिवंसेइय) ऋषिवंश इति च, यतिवंश इति च, मुनिवंश इति च-ઋષિઓ-ગણધરો સિવાયના તીર્થંકરોના શિષ્યોના વંશનું પ્રતિપાદક હોવાથી તેનું નામ ઋષિવંશ છે ઋષિ, મુનિ, યતિ, એ શબ્દો સમાન અર્થવાળા હોવાથી તેનું નામ યતિવંશ મુનિવંશ છે (सुएइवा सुअंगेइवा सुय समासेइ वा सुयखंधेइ वा समवाएइ वा संखेइ वा) श्रुतेति वा, श्रुताङ्गेति वा श्रुतसमासेति वा श्रुतस्कन्धेति वा समवायेति वा संख्येति वा-તથા ત્રિકાળના અર્થનું બોધક હોવાથી તેનું નામ "શ્રુતસમાસ" પણ છે શ્રુતસમુદાયરૂપ હોવાથી તેનું

टीका--'इच्चेइय' इत्यादि-'इच्चेइयं' इत्येतत् शास्त्रम् 'एवं' अनेन प्रकारेण वक्ष्यमाणनामभिः 'आहिज्जइ' आख्यायते-कथ्यते, 'त जहा' तद्यथा-'कुलगरवंसेइ य' कुलकरवंशेति च-कुलकराणां वंशस्य प्रतिपादकत्वादयं 'कुलकरवंश' इति नाम्ना कथ्यते, इति शब्दःस्वरूपप्रतिपादकः, च शब्दः समुच्चयार्थः, श्रुत-

स्कंध ऐसा भी है। तथा समग्र जीव और अजीव आदि पदार्थों को यहां अभिधेयरूप मिलने के कारण इसका नाम समवाय ऐसा भी है। एक आदि संख्याक्रम से पदार्थों का इसमें प्रतिपादन हुआ है इससे इसका नाम संख्या ऐसा भी है। (सम्मत्तमंगमक्खाय) समस्तमङ्गमाख्यातं-भगवान् इस समवायाङ्ग को संपूर्णरूप से कहा है। (अज्झयणं) अध्ययनमिति-यह एक ही अध्ययन है। (त्तिबेमि) इति ब्रवीमि-जंबूस्वामी से सुधर्मास्वामी कहते हैं कि हे जंबू! जैसा यह समवायाङ्ग सूत्र भगवान् से मैंने सुना है वैसा ही मैंने यह तुम से कहा है। अपनी तरफ से मैंने इस में कुछ भी-घटाया बढाया नहीं है। "इति" यह शब्द शास्त्र की समाप्ति का बोधक है॥सू० २१९॥

टीकार्थ—'इच्चेइयं एवमाहिज्जइ' इत्यादि-यह शास्त्र इस प्रकार से इन नामो द्वारा कहा जाता है-वे नाम ये हैं-कुलकर वंश-इसशास्त्र में कुलकरों के वंश का प्रतिपादन हुआ है अतः उनके वंश का प्रतिपादक होने के कारण इस शास्त्र का नाम कुलकर वंश है। यहां इति शब्द स्वरूप का और "च" शब्द समुचय अर्थ का प्रतिपादक है। इसी तरह से

નામ 'શ્રુતસ્કંધ' પણ છે. તથા સમગ્ર જીવ અને અજીવ આદિ પદાર્થોનો આ અંગમાં સમાવેશ થતો હોવાથી તેનું નામ 'समवाय' પણ છે એક બે આદિ સંખ્યાક્રમથી પદાર્થોનું આ અંગમાં પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું હોવાથી તેનું નામ "संख्या" પણ છે (सम्मत्तमंगमक्खायं)समस्तमङ्गमाख्यातम्-ભગવાનને આ સમવાયાંગને સંપૂર્ણરૂપે કહેલ છે (अज्झयणं) अध्ययनमिति તેમાં એક જ અધ્યયન છે (त्तिबेमि) इति ब्रवीमि-સુધર્માસ્વામી જંબૂસ્વામીને કહે છે કે 'હે જંબૂ! જે પ્રમાણે આ સમવાયાંગ સૂત્ર મેં ભગવાન પાસેથી સાંભળ્યું છે તે પ્રમાણે જ તમને તે કહું છું મારી તરફથી મેં તેમાં કંઇ પણ વધારો ઘટાડો કર્યો નથી" "इति" આ પદ શાસ્ત્રની સમાપ્તિનું બોધક છે ॥સૂ ૨૧૯॥

ટીકાર્થ—"इच्चेइय एवमाहिज्जइ" इत्यादि—આ શાસ્ત્રના આ પ્રમાણે જુદાં જુદાં નામો છે—કુલકરવંશ-આ શાસ્ત્રમાં કુલકરોના વંશનું પ્રતિપાદન કરાયું છે તેથી તેમના વંશનું પ્રતિપાદક હોવાને કારણે આ શાસ્ત્રનું નામ 'કુલકરવંશ' છે. અહીં 'इति' શબ્દ સ્વરૂપનો અને 'च' શબ્દ સમુચ્ચય અર્થનો પ્રતિપાદક છે.

रत्रापि इति शब्दभेदमर्थकएषामिगन्तव्य। 'एवम्' अनेनैव प्रकारेण तित्थ गरवंसेइय' तीर्थकरवंशेति च-तीर्थकरवंशप्रतिपादकत्वादिदं 'तीर्थकरवंश' इति नाम्ना कथ्यते, तथा-गणधरवंशप्रतिपादकत्वादिदं शास्त्रं 'गणधरवंसेइ य' गण धरवंश इति नाम्ना च कथ्यते। तथा-चक्रवर्तिवंशप्रतिपादकत्वादिदं 'चक्कव ट्टिवंसेइ य' चक्रवर्तिवंश इति च, तथा दशार्हवंशप्रतिपादकत्वादिदं 'दसारवंश' इति, तथा-गणधरातिरिक्तास्तीर्थकरशिष्या ऋषय उच्यन्ते, तत्प्रतिपादकत्वादिदं शास्त्रं 'इसिवंसेइ य' ऋषिवंश इति च, ऋषिमुनियतीनां समानार्थत्वादिदं 'जइ वसेइ य'='यतिवंश' इति च, 'मुणिवंसेइ य'=मुनिवंश इति चाभिधीयते। तथा-त्रिकालार्थबोधने समर्थत्वादिदं 'सुयइवा' श्रुतेतिवा-श्रुतमिति मोच्यते। श्रुतस्य प्रवचनपुरुषस्याङ्गत्वादिदं 'सुयगेइवा' श्रुताङ्गेतिवा=श्रुताङ्गमिति, तथा-समस्त

"तित्थगरवंसेइ य" इत्यादि पदों के साथ आये हुए इन "इति" और "च" के विषय में जानना चाहिये। तीर्थंकर वंश-तीर्थंकर के वंश का कथन करने वाले होने के कारण इस शास्त्र का नाम तीर्थंकर वंश है। इसी तरह से चक्रवर्तियों के वंश का प्रतिपादक होने से इसका नाम चक्रवर्तिवंश, तथा दशार्हवंश का प्रतिपादक होने से दशार्हवंश, ऋषियों के गणधरों से अतिरिक्त तीर्थंकर शिष्यो यहां ऋषि कहे गये हैं उनके वंश का प्रतिपादक होने से ऋषिवंश, तथा ऋषि, मुनि और यति ये शब्द समान अर्थवाले होने से यतिवंश एवं मुनिवंश है। तथा-त्रिकाल संबंधी अर्थ के बोधन कराने में समर्थ होने के कारण इसका नाम श्रुत है। प्रवचन पुरुष का अंग होने के कारण इसका नाम श्रुताङ्ग ऐसा भी है। समस्त सूत्रों के अर्थों का यहां

'तित्थगरवंसेइ य' ઇત્યાદિ પદોની સાથે વપરાયેલ 'इति' અને 'च'ની બાબત માં પણ એ પ્રમાણે જ સમજવું तीर्थंकरवंश-તીર્થંકરોના વંશનું કથન કરનાર હોવાથી આ શાસ્ત્રનું નામ તીર્થંકરવંશ પણ છે એજ પ્રમાણે ચક્રવર્તિઓના વંશનું પ્રતિપાદક હોવાથી તેનું નામ ચક્રવર્તિવંશ છે, તથા દશાર્હવંશનું પ્રતિપાદક હોવાથી તેનું નામ દશાર્હવંશ છે ગણધરો સિવાયના તીર્થંકરને અહીં ઋષિયો કહેલ છે તે ઋષિઓના વંશનું પ્રતિપાદક હોવાથી આ શાસ્ત્રને 'ઋષિવંશ,' તથા ઋષિ, મુનિ અને યતિ, એ સમાનાર્થી શબ્દો હોવાથી 'યતિવંશ' અને 'મુનિવંશ' એ નામે પણ આ શાસ્ત્રને ઓળખાય છે તથા ત્રણે કાળના અર્થનું બોધક હોવાને કારણે તેનું નામ 'શ્રુત' પણ પડયું છે પ્રવચનપુરુષનું એક અંગ હોવાથી તેનું નામ 'શ્રુતાંગ' છે સમસ્ત સૂત્રોના અર્થનું આ શાસ્ત્રમાં સંક્ષિપ્તમાં પ્રતિપાદન

सूत्रार्थानामत्र संक्षेपेण प्रतिपादनादिदं 'सुयसमासेइ वा' श्रुतसमासेति वा श्रुतसमासमिति, तथा—श्रुतसमुदायरूपत्वादिदं 'सुयकंधेइवा' श्रुतस्कन्धेतिवा–श्रुतस्कन्धमिति, तथा समग्राणां जीवाजीवादि पदार्थानामभिधेयतयेह समवायतान्मीलनादिदं 'समवाएइवा' समवायेतिवा=समवायमितिवा, तथा—एकादिसंख्याक्रमेण पदार्थानामत्र प्रतिपादनादिदं 'संखेइ वा' संख्येति वा आख्यायते। तथा 'सम्मत्तमंगमक्खायं' समस्तमङ्गमाख्यातं=भगवता, इदं समवायाङ्गं संपूर्णमुक्तम्, न तु आचाराङ्गवदत्रापि विभागद्वयमस्ति। तथा—'अज्झयणं' अध्ययनमिति—इदं सम्पूर्णमेकमेवाध्ययनम्, अत्र आचाराङ्गादिसूत्रस्य शस्त्रपरिज्ञादिवद् अध्ययनोद्देशादि विभागो नास्ति, 'त्तिबेमि' इति ब्रवीमि—इति शब्दः शास्त्र समाप्तिसूचकः, सुधर्मास्वामी ब्रवीति—हे जम्बूः! यथेदं समवायङ्गं भगवतः सकाशान्मया श्रुतम्, तथैव त्वां प्रतिब्रवीमि ॥ सू. ११९॥

इतीश्री विश्वविख्यात–जगद्वल्लभ–प्रसिद्धवाचकपञ्चदशभाषाकलितललित–
कलापालापकप्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक–वादिमानमर्दक–श्री
शाहू छत्रपतिकोल्हापुरराजप्रदत्त–'जैनशास्त्राचार्य'–पदभूषित–
कोल्हापुरराजगुरु–बालब्रह्मचारिजैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर–
पूज्यश्री–घासीलाल–व्रतिविरचिता श्री चतुर्थङ्गस्य
समवायाङ्गसूत्रस्य भाववोधिनीटीका समाप्ता ॥
॥ शुभ भूयात ॥
॥ श्रीरस्तु ॥

संक्षेप में प्रतिपादन होने से इसका नाम श्रुत समास ऐसा भी है। श्रुत समुदायरूप होने से इसका नाम श्रुतस्कंध सा भी है। तथा समग्रजीव और अजीव आदि पदार्थों को यहां अभिधेयरूप मिलने के कारण इसका नाम समवाय ऐसा भी है। एक आदि संख्याक्रम से पदार्थों का इसमें प्रतिपादन हुआ हैं। इससे इसका नाम संख्या ऐसा भी है। भगवान इस समवायाङ्ग को संपूर्णरूप से कहा है। आचाराङ्ग की तरह इस में दो विभाग नहीं है। यह एक ही अध्ययन है। आचाराङ्ग आदि सूत्र के

થયેલ હોવાથી તેનુ નામ 'શ્રુતસમાસ' પણ છે. શ્રુતસમુદાયરૂપ હોવાથી તેનું નામ 'શ્રુતસ્કધ' પણ છે સમગ્ર જીવ અને અજીવ આદિ પદાર્થોનો આ અંગમા અભિધેયરૂપે સમાવેશ થતો હોવાથી તેનું નામ 'સમવાય' પણ છે. એક, બે આદિ સંખ્યાક્રમથી તેમા પદાર્થોનુ પ્રતિપાદન થયું છે, તેથી તેનુ નામ 'સંખ્યા' પણ છે ભગવાને પોતે સપૂર્ણરીતે આ સમવાયાગનુ કથન કર્યું છે. આચારાંગની જેમ તેમાં બે વિભાગ નથી, તે એક જ અધ્યયનનું બનેલું છે. આચારાંગ આદિ શાસ્ત્રના

शस्त्रपरिज्ञा आदि की तरह अध्ययन उद्देश आदि का इसमें कोई विभाग नहीं है। "त्तिबेमि" यहां "इति" यह शब्द शास्त्र की समाप्तिका पोषक है। जम्बूस्वामी से सुधर्मास्वामी कहते हैं-कि हे जंबू! जैसा यह समवायाङ्ग सूत्र भगवान् से मैंने सुना है वैसा ही मैंने यह तुमसे कहा है। अपनी तरफ से मैंने इस में कुछ भी घटाया बढाया नहीं है ॥सू० २१९॥

समवायाङ्गसूत्र का हिन्दी अनुवाद सपूर्ण हुआ ॥

॥ श्रीरस्तु ॥

શસ્ત્રપરિજ્ઞા આદિ અધ્યયનો જેવાં કોઈ પણ વિભાગો આ સમવાયાંગમાં નથી, 'त्तिबेमि' અહીં 'इति' શબ્દ શાસ્ત્રની સમાપ્તિનો બોધક છે સુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામીને કહે છે કે જમ્બૂ! મે જે પ્રમાણે આ સમવાયાંગનુ ભગવાન પાસે શ્રવણ કર્યું છે એ પ્રમાણે જ તમને તે કહી બતાવ્યુ છુ મારી તરફથી તેમાં કોઈપણ પ્રકારનો વધારો ઘટાડો કરવામાં આવ્યો નથી" ॥સૂ ૨૧૯॥

—સમવાયાંગસૂત્રનો ગુજરાતી અનુવાદ સમાપ્ત—

॥ श्रीरस्तु ॥